RA
२१२
५

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
पुस्तकालय

विषय संख्या 2.९३ RA
पुस्तक संख्या
गत पञ्जिका संख्या
क पर सर्व प्रकार की निशानियां
त है। कृपया १५ दिन से अधिक
अपने पास न रखें।

वाचस्पति
लय गुरुकुल कांगड़ी
को सप्रेम भेंट

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
कृपया पुस्तक के ऊपर कोई निशान आदि
न लगायें।

३७६६१
५-१-८२

पुस्तकालय

गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

वर्ग संख्या ...RP...... आगत संख्या 37660

पुस्तक विवरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित 30 वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापस आ जानी चाहिए अन्यथा 50 पैसे प्रति दिन के हिसाब से विलम्ब दण्ड लगेगा।

श्रीरामपंचायतन

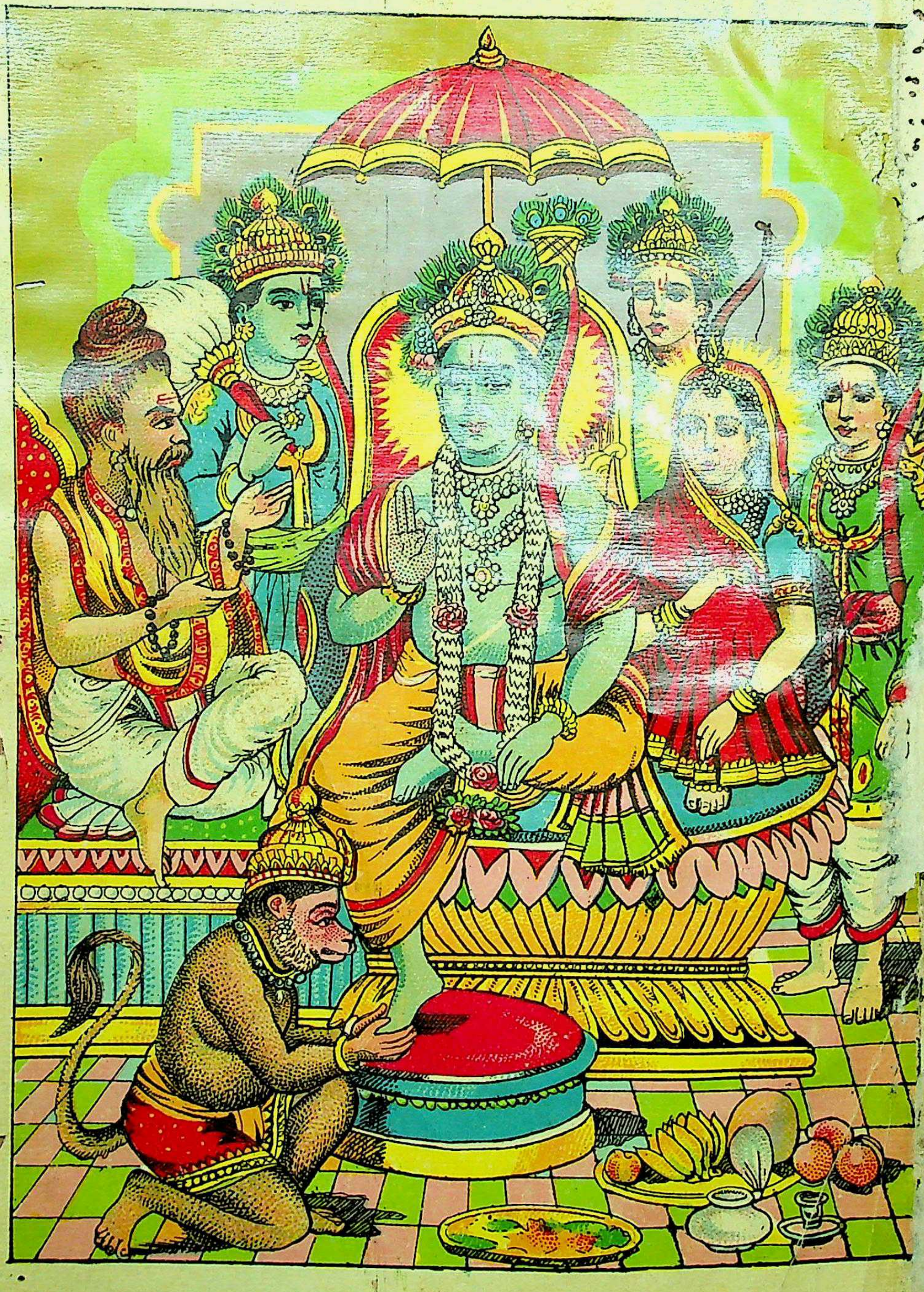

॥ श्रीः ॥

भूमिका ॥

"यतो धर्मस्ततो जयः"

अनेक कोटि धन्यवाद हैं उन दशरथनन्दन दशवदननिकन्दन भक्तउरचन्दन जानकीनाथको, कि जिनकी पूर्ण कृपासे आज मुझे सटीक **रामायण** की भूमिका लिखनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ । **रामायण** आजदिन मनुष्यमात्रके हाथका आभूषण हो रही है, इसकी अनुपमता सबपर विदित है इसका एक २ अक्षर अमूल्य रत्नवत् माननीय है ऐसा कहनाभी अत्युक्ति न होगा, जैसे देवोंमें इन्द्रकी, ग्रहगणमें सूर्यकी, नक्षत्रोंमें चंद्रकी, पुष्पोंमें कमलकी, वृक्षोंमें कल्पतरुकी, और नदियोंमें परमपाविनी गंगाकी गणना है उसी प्रकार आजदिन पुराणोंमें **रामायण**की मान्यता हो रही है. देश २ में, नगर २ में, गांव २ में, गली २ में, घर २ में, सर्वत्र ही इसकी चर्चा फैल रही है. क्या राजा, क्या रंक, क्या पंडित, क्या मूर्ख, सबही लोग इसको पढ सुनकर अपनेको जीवन्मुक्त और बडभागी मानते हैं और इसका वेदवत् आदर करते हैं। कहनेको तौ भाषा है परंतु कहीं २ इसके गूढ और गंभीर अर्थांशके विचाररूपी सागरके किनारे पर बडे २ विद्वानोंकी बुद्धि बिचारी अबलाके समान हाथ बाँध मौन खडी रहती है ॥ यह **रामायण** कोई साधारण पुस्तक नहीं है किन्तु इसे राजनीति और धर्मनीतिकी खान समझनी चाहिये । यदि मनुष्य सदाचरणशील, धर्मात्मा और सांसारिकव्यवहारमें कुशल हुआ चाहै तौ इसमें बडी २ अपूर्व शिक्षा भरी हैं। देखिये महाराज **दशरथजी**-का **कौशल्यादि** रानियोंके साथ कैसा सद्व्यवहार था ? **दशरथजी** कैसे सत्यप्रतिज्ञ थे, कि जिन्होंने रामबनवास सरीखे अनर्थ होने परभी "**रघुकुलरीति सदा चलि आई। प्राण जाइ पर बचन न जाई ॥**" इस अपने वचनको उदाहरण करके हस्तामलकवत् दिखा दिया। उनका पुत्रोंपर कैसा गाढ प्रेम था और मुख्यकर **रामचन्द्रजी**पर सो इससे स्पष्ट है कि "**अजस होउ वरु सुजस नसाऊ। नरक परौं वरु सुरपुर जाऊ ॥ सब दुख दुसह सहावहु मोहीं। लोचनओट**

राम जनि होहीं ॥" अंतमें हा राम २ कह कर प्राणही छोड दिये, इससे वढकर पिताका पुत्रपर क्या प्रेम होसक्ता है ? फिर जब पिता ऐसे थे तौ पुत्रभी तदनुसारही होने चाहियें. जैसा कहा है कि-**"आत्मा वै जायते पुत्रः"** अतएव **रामजी**भी कैसे आज्ञाकारी थे और उनकी माता पितामें कैसी अगाध भक्ति थी सो सब बनबासके समय उनके कथनसे स्पष्ट है कि–**"सुनु जननी सोइ सुत बडभागी । जो पितुमातुवचनअनुरागी ॥"** इत्यादि. पुनि **रामजी**की निर्लोभताकी स्त्रियोंतकने प्रशंसा करी है कि **"नाहिन राम राज्यकर भूखे । धरमधुरीन विषय रस रूखे ॥"** इनके भ्रातृस्नेह, धर्म और धैर्यको विचारिये. यथा–**"भरत प्रानप्रिय पावहिं राजू। बिधि सब बिधि मोहिं सन्मुख आजू ॥ आयसु पालि जन्मफलपाई । अइहौं वेगहि होइ रजाई ॥"** इतना होनेपरभी सब माताओंपर कैसा समान प्रेम था कि–**"मातु सकल मोरे विरह, जेहि न होयँ दुखदीन। सो उपाय तुम करब सब, पुरजन परम प्रवीन ॥"** **रामजी**की पितापर कैसी ममता थी. **रामजी** कैसे दृढप्रतिज्ञ थे, उनके साक्षी देनेवाले बचनको बिचारिये जो **रामजी**ने जटायुसे स्वर्गगमनके समय कहा था कि **"सीताहरन तात जनि, कहहु पितासन जाइ। जो मैं राम तौ कुलसहित, कहहि दसानन आइ ॥"** इस बचनमें करुणा और वीरत्वका कितना अटल भाव दरसता है कि जिसकी सीमा नहीं । **रामजी** शंकरके बडे भक्त थे । सागरके किनारेपर इनके इस वाक्यसे कि **"परमरम्य सुन्दर यह धरनी। महिमा असित जाय नहिं बरनी ॥ करिहौं यहाँ शंभुथापना। मोरे हृदय परम कल्पना ॥"** शंकरमें इनकी भक्ति कितनी सरस है कि पढतेही हृदय भक्तिरससे आर्द्र हुआ जाता है, **रघुनाथजी**का शिवजीमें कितना आग्रह कि **"शंकरप्रिय मम द्रोही, शिवद्रोही मम दास। ते नर करहिं कल्प भरि, घोर नरकमहँ वांस ॥"** और रामजीका यह कथन **"जे रामेश्वरदर्श करहीं। ते तनु तजि मम धाम सिधरहीं ॥ जो गंगाजल आनि चढ वहिं। सो सायुज्य मुक्ति नर पावहिं ॥"** शंकरमें कैसा दृढ विश्वासोत्पा है कि जिसके सुस्वर पढतेही शरीर रोमांचित और कंठ गद्‌ २ होता है, और ध्यान नेसे ऐसा भान होता है मानो शिवजीके दर्शनही हो रहे हैं और गंगाजल चढ रहा ॥ **रामजी** साक्षात् परमेश्वरही थे इसलिये इनके जितने चरित्र हैं सब अद्भुत औ र्ष-जनक हैं. रावणके हननके लियेही इनको नररूप धारण करना पडा था जैसा गीतामें कहाहै–**"यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्"** अर्थात् हे भारत ! जब २ धर्मकी हानि होती है तब २ मैं अधर्मके नाशके लिये अपनेको उत्पन्न करताहूं ॥ दशावतारोंमें का अव-

तार मर्यादापुरुषोत्तम हुआ क्योंकि साक्षात् परब्रह्म सर्वशक्तिमान् होकरभी इन्होंने संपूर्ण कार्य मनुष्यवत् ही करे और मर्यादासे बाह्य नहीं हुये. इसीसे इनकी मर्यादापुरुषोत्तमता स्पष्ट है. और वैकुंठ जाते समय संपूर्ण अयोध्यावासियोंको अपने साथ ले जाना, गौतमनारीको तारना, शबरीका उद्धार करना, धनुषभंग, वालीको मोक्ष देना इत्यादि कार्य इनके ईश्वरत्वके पूर्ण साक्षी हैं ॥ परंतु रामजीके भेदोंका जानना कठिन है, जैसा-कहा है कि-**"उमा रामगुण गूढ, पण्डित मुनि पावहिं विरति । पावहिं मोह बिमूढ जे हरिविमुख न धर्मरति ॥"** अधिक क्या कहैं ? सब **रामायण-ही राम**के चरित्रसे संपूरित है ॥

कैकेयी जैसी रूप लावण्यमें सुन्दर थी वैसीही विलक्षण बुद्धिमती थी । यद्यपि राजाका प्रेम सबही रानियोंपर समान था तथापि इसपर कुछ विशेष कृपा थी; कारण एकबार जब इन्द्र दैत्योंसे युद्धमें हार गये, तब दशरथजीको सहायताके लिये बुलाया. युद्धके समय दशरथके रथकी धुरी टूट गई कि जिसे कैकयीने हाथके सहारेसे रोक लिया. इसी बातसे प्रसन्न हो राजाने दो वरदान देनेकी प्रतिज्ञा की थी । कैकेयी रामबनवाससे पूर्व कौशल्यादिमें भेद नहीं मानती थी और **रामपर** इसका **भरतजी**सेभी अधिक स्नेह था । **राम**को अपना प्राण आधार जानती थी, परंतु उसपर भवितव्यतारूपी भूतिनी ऐसी चढी कि कुबरीके बचनसे इसने साक्षात् कठोरताका रूपही धारण कर लिया, स्त्रियोंके सहज स्वभावपर आगई और **राम**सरीखे शांत, कोमलस्वभाव, कमलदललोचन पुत्रको वनवास भेजनेके लिये राजासे ऐसे २ कटु बचन कहे कि जिनको सुन वज्रकाभी हृदय विदीर्ण हो जाय । अंतमें राजाने दुखी और निराश हो यही कहा कि-**"फिर पछितैहै अंत अभागी । मारेसि माय नाहरूलागी ॥"** और विकल हो मूर्छित हो गये । यद्यपि अंतमें भलेही पछताई, परंतु इसकी इस समयकी दशा विचार **भरतजी**ने अनेक दुर्वचनोंके अतिरिक्त यह सत्य कहा कि-**"हंसबंस दसरथ जनक, रामलषनसे भाइ । जननी तू जननी भई, विधिसों कहा बसाइ ॥"** कैकेयीके आचरणमें भवितव्यता प्रधान है और नीति यह निकली कि, दुष्टोंके बहँकानेसे सज्जन भी दुराचरण करने लगते हैं.

ऐसे कुअवसरमें महारानी **कौशल्याका** धीरज धर्म कितना बढकर प्रशंसनीय है, कि जिन्होंने अपनी छातीको पत्थरकी करके यही बिचारा कि **"राखौं सुतहिं करौं अनुरोधू । धर्म जाइ अरु बंधुविरोधू ॥"** और सौतोंमें जो सहज वैर होता है उसकी उनके जीमें आभामात्रभी नहीं थी बरन कितना स्नेह था कि ऐसा स्त्रीमात्रमें होना दुर्लभ है कि-**"जो केवल पितुआयसुताता । तौ जनि जाहु जानि बड़ि माता ॥ जो पितु मात कहेहु बन जाना । तौ कानन सतअवधस-**

माना ॥" अब इस नीतिपर ध्यान दीजिये कि **कौशल्याने** अपने पुत्र रामजीको **"पितुर्दशगुणा माता गौरवेणाऽतिरिच्यते । मातुर्दशगुणा मान्या विमाता धर्मभीरुणा ॥"** अर्थात् पितासे माताका दशगुणा गौरव रखना चाहिये और धर्मात्माको मातासे दशगुणा विमाताका मान्य करना योग्य है, इस वाक्यको यथार्थ करने और अपनेसे विमाताका अधिक गौरव रखनेके लिये कितना उत्तेजित किया है और **भरतजीको रामजी**के तुल्यही मानती थी ॥ अहो ! **कौशल्या**का धैर्य कि पुत्रवधू जनकनन्दिनीपर इतना परम प्रेम होतेभी कि–**"जिवन मूरिजिमि जुगवति रहऊँ । दीपबाति नहिं टारन कहऊँ ॥"** अपनी प्राणआधार सीताजीको पतिव्रतधर्म रखनेके लिये मोह त्याग, निष्ठुर बनकर व्याल बाघयुक्त महाविकराल सघन बनमें शीत घाम मेघ आदिका कुछ बिचार न कर **रामजी**के साथ भेजदिया. कहो **कौशल्या**के धैर्यका क्या ठिकाना है ? हाय ! **सीताजी**के इस विपत्तिकालका स्मरण करनेसे शरीर रोमांचित और कंठ गद्गद् होता है और नेत्रोंसे अश्रुधारा निरंतर बहती है । फिर उन राजा रानीकी विरहदशाको कौन वर्णन करसक्ता है ? रनवासमें कोलाहल मचगया होगा, धैर्यने धैर्य छोड़दिया होगा । धन्य **सीताजी !** तुम्हारे सुन्दर आचरण और पतिव्रत धर्मको, कि अंगकी इतनी सुकुमारता होनेपरभी तुमने राज्यके वैभव और सुखका तृणवत् परित्याग किया और बनमें भाँति २ के कष्ट सहकर और पतिव्रत धर्म रख अपना जन्म सफल किया । तुम्हारा यह मूलमंत्र कि–**"जहँलगि नाथ नेह अरु नाते । पिय बिनु तियहिं तरनितें ताते ॥ तनु धन धाम धरनि पुरराजू । पतिबिहीन सब शोकसमाजू ॥"** इत्यादि परम प्रशंसनीय है ॥ उन स्त्रियोंके परम धन्य भाग्य समझने चाहियें कि जो मिथिलेशनन्दिनी रामदुलारी **जानकी**के पतिव्रतधर्मका अनुकरण करके अपने पतिकी सेवामें तनमनसे लवलीन रहती हैं ॥

सुमित्राजीकाभी रामजानकीपर कुछ साधारण प्रेम न था ! इन्होंने जो बचन वनबासके समय **लक्ष्मणजी**से कहे थे कि **"तात तुम्हार राम वैदेही । पिता राम सब भांति सनेही ॥ जो पै सीय राम बन जाहीं । अवध तुम्हार काज कछु नाहीं ॥"** इससे स्पष्ट है । और फिर **लक्ष्मणजी**से जो कहा कि **"तुम्हरेहि भाग्य रामबन जाहीं । दूसर हेतु तात कछु नाहीं ॥ सकल सुकृतकर फल सुत एहू । सीयरामपद सहज सनेहू ॥"** तौ अब देखिये कि **सुमित्राजी**के हृदयमें कितना प्रेम भरा है और **लक्ष्मणजी**को **सीतारामजी**की भक्ति और सेवाके लिये कितना प्रोत्साहित किया है, कि उसे लिखना लेखनीकी शक्तिसे बाहर है ॥

अब **लक्ष्मणजी** के आचरणकी ओर टुक ध्यान धरिये कि ये **रघुनाथजी** के कैसे

आज्ञाकारी थे और इनका **रामजी**में कितना भ्रातृधर्म और प्रेम झलकता है कि **"गुरु**
पितु मातु न जानौं काहू। कहौं स्वभाव नाथ पतियाहू॥ मोरे सबै एक तुम
स्वामी। दीनबन्धु उर अंतरयामी॥" इन वाक्योंसे उनकी भक्ति **रामचन्द्र-**
जीमें कैसी सच्ची और दर्पणके समान निर्मल झलक रही है. **लक्ष्मणजी**का स्वभाव
रामजीसे विपरीत था। **रामजी** जैसे शांत और सहनशील थे. वैसेही ये क्रोध और
वीरत्वकी मूर्त्ति और असहनशील थे इनका क्रोध धनुषभंगके समय **जनक**पर, राज्य-
त्याग परिवारसहित रामजीसे मिलने जानेपर भरतजीपर, **सीता**सुध भूलनेसे सुग्रीवपर
और मार्ग न देनेसे समुद्रपर होना स्पष्ट है। इनके कार्योंमें एक तौ शूर्पनखाके कर्ण
नासिका काटना और दूसरा परशुरामसंवाद अतिप्रसिद्ध और पढनेमें अति रोचक है।
रामजीकी इनपर कैसी प्रीति थी सो शक्ति लगनेके समय उनके रुदनसे विदित है।

शत्रुघ्नजीके आचरणका वर्णन गोसाँईंजीने विशेष नहीं किया परंतु जैसे लक्ष्मणजीने
करनेमें ना सर्वस्व मान रक्खा था उसी प्रकार इन्होंने अपना तन मन भरतजीको
देनेमें धर्मन मणजीके और इनके स्वभावमें इतनाही अंतर है कि लक्ष्मणजीका बात
राज्य देकर अ स झलकता है और इनका स्वभाव सरल और शांत है. इनका
के मिलाये जयव एक बारही पाया जाता है कि जब इन्होंने कुबरीके कूबरमें,
नीतिसे भगवान् चोटी पकडकर घसीटा था॥ फिर तबसे शांतरूप धारण कर

हनूमान सेवामें तत्पर रहे॥

"योगिनरतजी, उनके सदाचरणके विषयमें यही कहना होगा कि **"न भूतो**
हस औ रामजीने सत्य कहा है कि–**"जो न होत जग जन्म भरतको।**
ये. **धुर धरनि धरत को॥"** भला जिन भरतजीके गुणगण गान करनेमें
चारि बुद्धि काम नहीं करती और जिनका रामसे इतना गाढ प्रेम था कि **"जहँ**
त बिधि हरि हरको" उनकी प्रशंसा लिखकर कोई क्या पार पा सक्ता
है इतनाही कहना होगा कि, भरतजीका निष्कपट प्रेम, मृदुल गंभीर और सहन-
तीर स्वभाव था कि जिसके कारण उन्होंने अपनी माता कैकेयीके कार्यरूपी कालोंचको
अपने परिवार और प्रजाके चित्तमेंसे धोकर निश्शेषित कर दिया. और राज्य संपत्तिको
त्याग, च पादुकाओंकी सेवा ग्रहण कर संसारमार्गसे विरक्त हो और नंदिग्राममें निवास
कर राम ार अपनी सच्ची भक्ति और प्रीतिका चित्र खेंचकर दिखा दिया॥ यदि भरत-
री जीमें ी राजमद होता और स्वार्थ तथा संसारके सुखोंमें प्रेम होता, तौ रामवि-
और ... सागरमें सब परिवार डूब कर अवश्यही नष्ट हो जाता।
और
॥ रघुकुलके सद्व्यवहार औ सदाचरण लिखनेके अनन्तर सुग्रीव बिभीषण आ-
दिके सदाचरण संतोषदायक समझ दिखलाया जाता है।

रामजीके साथ मित्रता करके सुग्रीवका निर्वाह बहुत उत्तम रीतिसे हुआ. बडे जिस प्रकार छोटोंसे मित्रता कर निवाह लेते हैं उसीप्रकार रामजीने सुग्रीवका निर्वाह किया और बडोंसे मित्रता करके जो फल होता है सो इसे भले प्रकारसे हुआ कि रामजीने वालीको मार सुग्रीवके सब संशय दूर कर किष्किन्धाका राज्य दे दिया और **"जे न मित्रदुख होहिं दुखारी। तिन्हैं विलोकत पातक भारी ॥"** इस अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण कर उसे सब प्रकार संतुष्ट किया। और जब वह राज्यके मदसे मदान्ध सीतान्वेषणकी सुध भूल गया तब रामजीने ऐसी प्रतिज्ञा करकेभी कि **"जेहि स यक मैं मारा वाली। तेहि सर हतौं मूढकहँ काली ॥"** मित्रधर्मसे उसे क्ष ही किया, अंतमें सुग्रीवभी तौ वालीका भाईही था। जैसा पराक्रमी था वैसाही बु मान् और साहसी था। इसने अपने वचनके अनुसार बातकी बातमें, जाम्बवंतकी ऋच्छ सेनाको छोड, १८०००००००००००० वानरी सेना एकत्रितकर ली। अहा! जिस मय धौंसा बजाकर प्रस्थान किया होगा और समुद्रसे इतनी विपुल सेना पार मच- उस समयकी शोभाका कौन वर्णन कर सक्ता है? सुग्रीवका पराक्रम औ आचरण स्पष्ट है कि अठारह पद्म बन्दरोंकी सेनाके साथ सेनापति बनकर रावणके वैभव और शत्रुपर चढकर जाना कुछ हँसी नहीं है ॥ अठारह पद्म बानरोंकी पतिव्रत धर्म लंकामें जो कौतुक हुआ होगा सो इसीसे अनुमान कर लेना चा**नाथ नेह अरु** घरपर एक साधारण बंदर आजाता है तौ घरके छोटे बडे सबही **रनि पुररा-** लगै" मचाकर लकडी ले उसके पीछे दौडते हैं फिर लंकामें तौ १॥ उन त्रि- जिसमेंभी भगवान्की यह आज्ञा कि **"खाहु जांहु फल मूल सु**ानकीके लंकाकी यही दशा होनी थी जो हुई, रघुनाथजीने सुग्रीवसे मित्रता करके ॥ दिखलाई है कि **"यानि कानि च सित्राणि कर्तव्यानि शतानि** जो कोई हों मनुष्यको सैकडो मित्र बनाने चाहियें। नहीं तौ कहां रघुकुलभूष**णी।** और कहां वानर? नर वानरका संग तौ कैसेभी नहीं, परंतु आपत्कालमें ब नहीं करना पडता इसका दृश्य भगवान्ने दिखाया है. और दूसरी नीति यह कि मित्रसे अपना काम न बने तबतक बिगाडै नहीं, क्रोध शांत कर साम दाम उप जाय. जैसा भगवानने किया कि क्रोध छोड सुग्रीवसे यही कहा कि **"तुम प्रि हिं भरतकी नाई ॥"**

युवराज अंगद रामजीके आज्ञाकारी सेवक थे। दूतके काममें हनूम गणनामें इनहीको समझना चाहिये. यह बातचीतमें बडे चतुर थे, लंकामें इ रावणका परस्पर संवाद अतिरुचिर और कर्णसुखदायक है. इनका अतुल पर्कैसे साहस रावणकी सभामें चरण रोपनेसे स्पष्ट है। रघुनाथजीकी इनपर पूर्ण

उत्तरकांडमें बिदाके समय जो अंगदने रामजीसे विनय की है यथा **"शृणु सर्वज्ञ कृपासुखसिंधो"** इत्यादि उसमें सेवकधर्म कितना दृढ और प्रेम कितना गाढा झलकता है ॥ और यद्यपि वाली और रामजीका आपसमें मेल हो गया था औरभी रघुनाथजीने अंगदको अपना वनाकर युवराजभी कर दिया था तथापि राजसंपत्ति पाकर और अपने पिताके पूर्ववैरका स्मरण न कर निष्कपटतासे सेवा करना इसमें और भी अधिक अलौकिक सेवकत्व पाया जाता है ॥

बिभीषण सहज स्वभावसे रामजीके भक्त और नीतिनिपुण थे । जिस समय रघुनाथजीकी शरण आये तौ भगवान्नेभी अपने शरणागतवत्सल नामको सार्थक किया और जो फल छोटोंको वडोंकी शरणसे प्राप्त होता है सो हुआ, अर्थात् रामजीने आतेही उन्हैं लंकाका राज्यतिलक कर दिया । भगवान् भक्तवत्सल हैं, इनके दर्शनका अमोघ फल है, राज्य दिया सो ठीक है परंतु भगवानने नररूप धारण किया है, शत्रुपर चढकर गये हैं, इसलिये महाराजकी नीति बात २ में झलकती है ॥ बिभीषणके साथ मेल करनेमें भगवानने धर्मनीति और राजनीति दोनोंसे काम लिया है ॥ शरणागतको शरण देनेमें धर्मनीति है, क्यौंकि न देनेसे पाप होता है और शत्रुके भाई और घरके भेदीको राज्य देकर अपनी ओर मिलालेनेमें सुन्दर राजनीति है, क्योंकि विना किसी मुख्य भेदी के मिलाये जयके होनेमें संशय रहता है । बिभीषण नीतिमें बडे कुशल थे, इन्हींकी नीतिसे भगवान्ने समुद्रसे मार्ग माँगा. औरभी कई बार काम निकाला ॥

हनूमान् रामजीके अनन्य सेवक हुये । सेवकका धर्म जो इतना कठिन है कि **"योगिनामप्यगम्यः"** उसको हनूमान्ने परम कोटिको पहुँचाया । यह इनकाही साहस और अतुल पराक्रम था कि समुद्रको लँघ लंकाको भस्म कर सीताजीकी सुध लाये. इनका अवतारही केवल रामकी सेवाके लिये हुआ था और सेवकमें जो जो गुण चाहियें वे इनमें संपूर्ण थे ॥

पवनपुत्रके दो कार्य यथार्थमें वहुतही बढकर और आश्चर्यजनक हुये । एक तौ समुद्र फाँदकर लंकासे जानकीजीके समाचार लाना और दूसरा लक्ष्मणजीके शक्ति लगनेपर संजीविनी बूँटीके पहाडके पहाडको उठा लाना । हनूमान्जी बडे बुद्धिमान्, सुशील, और रामजीके आज्ञाकारी थे. स्वार्थताकी तौ पवनभी इनके पास होकर नहीं निकली थी; क्योंकि सुग्रीव और रामजीकी जो आपसमें मित्रता हुई उसमें दोनों ओर स्वार्थता पाई जाती है. सुग्रीवको बालीके हनन और राज्यकी चिंता थी और रघुनाथजीको सीताजीकी सुधकी लगी थी, और सोही बिभीषणकी दशा थी कि जब भाईने लात मारकर निकाल दिया तब जीवनकी आशा छोड रामकी शरणमें आया और रामजीने घरका भेदी समझ सुग्रीवके मने करते २ सामदामद्वारा उसे मिला लिया. अब विचारना चाहिये कि राम-

जीने तो सीताजीको पाया, सुग्रीव और बिभीषणने राज्य पाया, अंगद युवराज हुये और हनूमान् जिन्होंने सबसे बढकर काम किये उनको कुछ नहीं मिला. कहिये हनूमान्के सेवकधर्ममें कितना परोपकार और स्वार्थताका अभाव पाया जाता है? भगवान्ने इनके कार्य और निर्लोभतासे प्रसन्न होकर सत्य कहा है कि–"**सुनु कपि तोहिं समान उपकारी। नहिं कोउ सुर नर मुनि तनुधारी॥ प्रत्युपकार करौं का तोरा। सनमुख हुइ न सकत मन मोरा॥**" अहा! रघुनाथजीके इस गद्गद वचनके सामने राज्य तो क्या इन्द्रकी पदवीभी तुच्छ और इसकी नौछावर है॥ और भगवान्के जीमें यह बात बस रही थी कि–"**सुर नर मुनि सबकी यह रीती। स्वारथ लाग करैं सब प्रीती॥**" सो इसका उपरोक्त चौपाईसे स्वयं खंडन कर और हनूमान्के आचरणको स्वार्थताके दोषसे निर्दूषित कर परम उज्वल यश का भागी बनाया और निस्संदेह हनूमान् ऐसेही थे, क्योंकि जब २ रामजीने प्रसन्न हो इनसे वर माँगनेके लिये कहा, तब २ इन्होंनें निरभिमान होकर सूखेसे मुखसे यही कह दियाकि–"**नाथ भक्ति तव अति अनपाइनि। देहु दयाकर सिवमनभाइनि॥**" और हनुमान्जीकी जैसी पूर्ण भक्ति थी वैसाही रामजीमें अटल प्रेम था, यथा–"**प्रभुपदपंकज कपिकर सीसा। सुमिरि सो दसा मगन गौरीसा॥**" अहा! धन्य प्रेमको! गोसाँईजीने इस चौपाईका कैसा सुन्दर भाव दरसाया है कि मानों एक २ अक्षरमेंसे प्रेम और करुणारस टपक रहा है। भला जिस प्रेमकी दशाको स्मरण कर महादेवजी मगन हो, अपने तनमनकी सुधि भूल गये उस प्रेमकी दशाका क्या ठिकाना है? उसी गाढ प्रेम और अविरल भक्तिका कारण है कि भगवान्ने हनूमान्जीको अमर किया, और जहां रामजी हैं वहां इनकाभी मूर्तिस्थापन और पूजन आजतक अवश्य होता चला आता है॥ सुग्रीव और बिभीषणका कोई नामभी नहीं लेता, कारण इन दोनोंकी सेवा भक्तिमें स्वार्थताका पुट लग रहा था॥

रावणका आचरण सर्व साधारण लोगोंकी दृष्टिमें निन्दनीय ठहरताहै, परंतु यदि विचारिये तो रामावतार होनेमें और रामायण बननेमें रावणही मुख्य कारण है, न रावण होता, न इसे मारनेके लिये रामजी अवतार लेते, न रामायण बनती और न रामचर्चा फैलती, फिर हे पाठको! "**उत्तम कुल पुलस्त्यकर नाती। शिव विरंचि पूजे बहु भांती॥**" ऐसा रावणभी धन्यवादका पात्र और प्रशंसाका भागी है वा नहीं? रावण छओं शास्त्रका बडा धुरंधर पण्डित और वेदवेदांगका तत्त्वज्ञाता था। उसने जो वेदपर भाष्य बनाया है उसकी अद्यावधि मान्यता होरही है। रावण बडा शूर, पराक्रमी और महासाहसी था और शंकरका ऐसा अनन्य भक्त था कि "**न भूतो न भविष्यति**"। शंकरके पूज में प्रफुल्लित पुष्पोंकी जगह अपने मस्तक काट २ कर चढाता था अतएव औढरदानी

शिवजीने उसे दश शिर, बीस भुजा और अनेक वरदान दिये थे. इस भक्तिका यह फल हुआ कि उसने रामजीकी पूर्ण भक्ति पाई. क्योंकि बिना शिवजीके रघुनाथजीकी भक्ति मिल नहीं सक्ती. जैसा रामजीने कहा है कि–"**शंकरविमुख भक्ति चह मोरी। सो नर मूढ मंदमति थोरी ॥**" संसारके देखनेमें रावण रामजीका शत्रु था, परंतु जैसा शिवजीका भक्त था उससे बढकर रामभक्त था। उसकी भीतरी इच्छा यही थी कि रामजीके हाथसे मरकर और राक्षसी देह त्याग मुक्ति पावै, सो वह बिना वैर करे पाना असंभव था, जैसा उसने कहा है कि–"**सुररंजन भंजन महिभारा। जो जगदीश लीन्ह अवतारा ॥ तौ मैं जाइ वैर हठि करिहौं। प्रभुकर मरि भवसागर तरिहौं ॥**" इसलिये यह जानकीजीके प्रतिबिंबको हर लेगया कि जैसा कहा है "**निजप्रतिबिंब राखि तहँ सीता**" और भक्तिपूर्वक उन्हें अशोकवाटिकामें अलग स्थापित किया और मरणपर्यन्त उन्हैं वहांही रहने दिया ॥ यदि उसके चित्तमें किंचिन्मात्रभी पाप होता तौ भला अलग रखनेका क्या काम था? जब कभी जानकीजीके पास जाता तौ आंतरिक भक्तिभावसे यही कहता कि–"**एकबार बिलोकु मम ओरा**" अर्थात् हे भगवती! एकबारभी मुझे अपने मुखका दर्शन दो तौ मैं कृतार्थ हो जाऊं। और जानकीजीसे जो यह कहता था कि "**काटौं तव शिर कठिन कृपाणा**" इत्यादि, सो केवल इसलिये कि भगवान् अंतर्यामी हैं इनका दुःख समझ, शीघ्र आकर मुझे भवसागरसे छुटावेंगे ॥ इसी कारण जो उससे सीताजीके दे देनेको कहता था उसेही लात मारता और दुर्वचन कहता था क्योंकि दे देनेसे उसका अभिमत सिद्ध नहीं हो सक्ता था। उसका जो संकल्प था कि रामके हाथसे मरकर मुक्ति पाऊं सो ऐसा दृढ था कि केवल आपही मुक्त नहीं हुआ बरन सब भाई बेटोंको रणभूमिद्वारा अपने सामने मरवाकर मुक्त करवा गया। धन्य रावण! भक्ति इसका नाम है, "**सोना और सुगन्ध**"–मुक्तिका होना और सोभी रामके हाथसे मरकर ॥

इसप्रकार अनेक शिक्षा और राजनीतियोंसे युक्त इस रामायणके बनानेमें गोसाँईजीने बहुतसा भाग तौ शिवजीकृत **अध्यात्मरामायण**मेंसे लिया है और शेष नानापुराण और छओं शास्त्रका सार लेकर और अपने अनुभवोंका मथन कर ग्रन्थको पूर्ण किया है. जैसा उन्होंने कहा है कि–"**नानापुराणनिगमागमसंमतं यद्रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि**", गोसाँईजीने जहांतक हुआ **वाल्मीकिरामायण**मेंसे अधिक अंश नहीं लिया. उसमें दो कारण दीखते हैं. प्रथम तौ यह कि वे शिवजीके भक्त थे और दूसरे **अध्यात्मरामायण**के प्राचीन होनेमें उनका अधिक विश्वास था इसी लिये **वाल्मीकिरामायण**से जो इसका मिलान किया तौ कई स्थानोंमें भेद पाया. जैसे वाल्मीकिने लिखा है कि धनुषको ५००० योद्धा रंगभूमिमें उठाकर लाये. गोसाँईजीका

वचन है कि "भूप सहसदश एकहिबारा", फिर वाल्मीकिमें परशुरामजी रामविवाहके पीछे मिले हैं. इस रामायणमें विवाहके पूर्वही उनका आगमन लिखा है इत्यादि बहुतसे भेद मिलते हैं, स्थानकी संकोचताके कारण दिग्दर्शनमात्र लिखा दिया है। कथाओंमें कल्पान्तरोंके कारण भेद है इसमें संदेह नहीं करना चाहिये ॥

इस रामायणके बनानेमें गोसांईजीका आन्तरिक उद्देश यह था कि किसी प्रकार भवसागरसे कलिके जीवोंका निस्तारा सहजमें हो, क्योंकि जब सतयुगमें मनुष्यकी आयु लक्ष वर्षकी होती थी तब प्राणी भगवान्‌का ध्यान, जप, व्रतादि करते थे, त्रेतामें जब मनुष्यकी आयु दशहजार वर्षकी होती थी तब अनेक यज्ञादि करते थे, द्वापरमें जब एक हजारवर्षकी आयु होती थी तब हरिका पूजन कर मोक्ष पाते थे, परंतु इस कलियुगमें कोई योग, यज्ञ, व्रत, नियमानुसार नहीं बन सक्ता, कारण, मुख्य तौ कलिका प्रभाव, और दूसरे इसमें आयुका प्रमाण किसीने १०० वर्ष और किसीने १२० वर्षका निश्चय किया है, उस प्रमाणकोभी मनुष्य नहीं भोग सक्ते बरन अपने कर्मोंके अनुसार बीचहीमें काल के कवल बनजाते हैं. तौ विचारना चाहिये, कि न जाने पूर्वजन्मके किस शुद्ध संस्कारके कारण तौ मनुष्यदेह पाई, और उसमेंभी कमसे कम चतुर्थांश निद्रामें गँबाई, फिर शेष आयुमें क्या तौ संसारमें धंधाकर मनुष्य अपने कुटुंबका उदरपोषण करै और थोडे समयमें क्या यज्ञ, जप और तप तीर्थाटनादिकरै ? इस लिये चारों वेद, छओंशास्त्र अठारहों पुराणोंका यही सार है कि कलियुगमें रामनामके सिवाय कोई उपाय इस भवसागरसे तरनेका नहीं है. जैसा कहा है कि-"**रामनाम कलि अभिमतदाता। हित परलोक लोक पितुमाता ॥ नहिं कलि कर्म न भक्तिविवेकू। रामनाम अवलंबन एकू ॥**" इस लिये दो घडी, एक घडी, आधी घडी, पाव घडी रामायणकी कथा अवश्य पढनी, सुननी, चाहिये क्योंकि रामजीका नाम रामजीसेभी बडा है; कारण, रामजीने तौ केवल विरले भक्तोंकोही तारा, और इनका नाम सर्व साधारण प्राणियोंको भवसागरसे तारनेवाला है। यदि मनुष्य श्रद्धापूर्वक रामनामकीही रटना करैं और रामके सदाचरणोंका अल्पमात्रभी अनुकरण करैं तौ क्या कहना है? फिर तौ धर्म, अर्थ, काम तीनोंको साथ लिये मोक्ष हाथ बाँधे मानो सामनेही खडी है॥

गोसाँईजीकी रामायण जैसी दिव्य बनी है वैसाही इसका इतना अधिक प्रचार हुआ कि अन्य पुस्तकका होना कठिन है. इसका मूल कारण यह है कि रामके अनन्य भक्त होनेपरभी गोसाँईजीने शिव और राममें भेद नहीं माना। मानते कैसे, गोसाँईजीको अपनेहृदयमें पूर्ण विश्वास था कि जो कुछ है सब शंकरकी कृपासे तारकमंत्रका प्रभाव है कि जिस मंत्र को हनूमानूजीने इन्हैं रामदर्शनके लिये बताया था इसीलिये इन्होंने शिवजीके स्मरणका पीछा नहीं छोडा। उन्होंने **बालकांड**के पूर्वमें जो शिवपार्वतीका स्मरण किया है कि "**भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ। याभ्यां विना न पश्यन्ति**

सिद्धाः स्वान्तस्थमीश्वरम्॥" इस श्लोकके पिछले चरणसे पाठक लोग विचारैं कि गुसाँईंजीके हृदयमें भवानीशंकरकी कैसी अविरल भक्ति और अटल विश्वास था। उनका मन इस बातकी साक्षी देता था कि जो कुछ होगा शिवजीकी कृपासे होगा इसलिये उन्होंने **"वंदे बोधमयं"** इत्यादिसे शिवजीकोही अपना गुरु माना और रामायणके पूर्वमें शिवपार्वतीका विवाह लिख प्रत्येक कांडमें शंकरको मनाया है। शिवजीके स्मरणके अतिरिक्त गोसाँईजीने ग्रन्थारंभमें गणेश वा सरस्वतीके ध्यानकी पुरानी परिपाटीभी नहीं छोडी और कोई ऐसा प्राणी नहीं बचा, कि जिसकी प्रार्थना अपनी मानस भूमिकामें न करी हो। गोसाँईंजीकी इस प्रभावशाली प्रार्थना और दीनवचनोंकीं सुनाई परमेश्वरके यहाँ ऐसीहुई और उसमें इनके अंतःकरणको परम निर्मल कर उसमें इतनी भारी कल्पनाशक्तिकी सामर्थ्य दी, कि जहाँ कहीं जो कुछ और जितना इन्होंने मनुष्योंके स्वभाव, स्थानका सौन्दर्य, ऋतु की शोभा और शूरोंके वीरत्व आदिका वर्णन किया है उसे इस अपूर्व और विचित्र भावसे किया है कि मानों प्रत्येक दृश्य नेत्रोंके सामनेही हो रहा है॥ रसोंको इस युक्तिके साथ दरसाया है कि जिस रसको पढिये उसीमें तन्मय हो जाइये। यद्यपि एकसे एक बढकर दृष्टि अता है, परंतु करुणारससे कोई कांड नहीं बचा, और अयोध्याकांडके पूर्वार्द्धमें तौ वह इस गंभीरताके साथ अक्षर २ में घुसा है कि पढनाभी भारी पडता है. चौपाई के पढतेही नेत्रोंसे अश्रुओंकी झडी लग जाती है श्रोता और पाठकगणोंको श्रावण भादोंकी वर्षाका भान होने लगता है, और मुख्यकर दशरथविलापको पढकर तौ ऐसा ज्ञान होता है मानो साक्षात् करुणारस शृंगाररसके वियोगमें प्रत्येक अक्षरद्वारा लक्ष धारसे आँसू टपका रहा है॥ और प्रत्येक दोहे और चौपाई छन्द आदिमें अलंकारकी इतनी भरमार है कि जिसकी चकाचोंधसे किसी भाषाके कविने आजतक गोसाँईंजीकी कविताके सामने अपना शिर ऊँचा नहीं किया॥

संस्कृत विद्वानोंने ऐसा मान रक्खा है कि **"उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्। दण्डिनः पदलालित्यं माघे संति त्रयो गुणाः॥"** जैसे उपमामें **कालिदास**, अर्थगौरवमें **भारवि**, पदलालित्यमें **दंडीकवि** इन सबसे बढकर एक २ विषयमें कोई नहीं हुआ परंतु जैसे माघमें ये उपमादि तीनों गुण पाये जाते हैं इसी प्रकार भाषामें गोसाँईंजीने अपनी कविताको तीनों गुणोंसे ऐसा अलंकृत किया है कि एकबार संस्कृताभिमानियोंकोभी पढकर चकित होना पडता है। अलंकारको पुस्तक में जिधर जी चाहे देखिये, अर्थगौरवताको बालकांडके पूर्वमें, अयोध्याके मध्यमें और उत्तरके अंतमें देखिये क्या दशा है? अनेक चौपाइयाँ अर्थगौरवतासे ऐसी जकडीहुई हैं कि उनका यथार्थ तात्पर्य नहीं निकलता॥ सबसे बढकर उत्तरकांडमें ज्ञानदीपकका विषय अर्थगौरवताकी सीमा है। उपमासेभी कोई चौपाई खाली नहीं, नवीनसे नवीन उपमा देख लीजिये। यदि आप उपमाओंका कौतुक एकही जगह देखा चाहैं तो किष्किन्धाकांडके २१

दोहेसे २६ दोहेतक देखिये। अहा! कैसी २ विचित्र उपमा कहाँ २ से आकर ऐसी जुडी हैं मानों सीताजीके वियोगमें रामजीका शोक बँढाने और आश्वासन करनेको एकत्रित हुई हैं॥

धन्य गोसाँईजीकी कविता! यद्यपि गोसाँईजीसे पूर्व और २ भी अनेक वैष्णवाचार्य होगये परंतु उन सबकी आंतरिक इच्छा यही रही कि किसी न किसी प्रकार नवीन २ मत स्थापित हों और शिष्य किये जायँ, और उन लोगोंको अपने मतका इतना दुराग्रह था कि वैष्णवोंमेंभी कई भेद होगये जैसा **"रामानुजीय"** "गोकुलस्थी (वल्लभीय)" "राधावल्लभी" "राधारमणी" इत्यादि॥ जब इनके आपसमेंही इतना भेद है कि अलग कंठी अलग छाप और एक दूसरेको नहीं देख सक्ते तौ इनकी शैवोंसे कब पट सक्ती थी॥ यदि गोसाँईंजीभी इसी प्रकार करते तौ नतौ उनकी पुस्तक इस प्रकार आदरपूर्वक प्रचलित होती और न इस समय वैष्णवमतका इतना प्रचार होता, परंतु धन्य है गोसाँईजीको कि जिन्होंने पक्षपातरहित होकर शिव और विष्णुमें इतना अभेद दरसाया कि **"शिवस्य हृदयं विष्णुर्विष्णोश्च हृदयं शिवः"** इस वाक्यको केवल यथार्थही करके नही दिखाया, बरन लोगोंके चित्तपर अंकित करदिया और लोगोंके देखनेमें तौ रामकथाका प्रचार हुआ परंतु गोसाँईंजीने शैवभक्तिरूपी गंगाकी और वैष्णवभक्तिरूपी यमुनाकी जो अनेक लोगोंने अलग २ धारें बहरही थीं उनका आपसमें इस प्रकार संगम करदिया. यथा–**"शंकरप्रिय मम द्रोही, शिवद्रोही मम दास। ते नर करहिं कल्पभरि, घोर नरकमहँ वास"** और शिव विष्णुमें भेदवादियोंकी बुद्धिको इस प्रकार इस संगममें स्नान कराया कि उनकी बुद्धिमें जो भेदरूपी मल जम रहाथा सो धुलकर साफ होगया और घर २ में चेलेही चेले दृष्टि पडने लगे॥ जो गोसाँईंजीमेंभी किसीएक मतका आग्रह होता तौ भला विचारिये कि उनका विमल यश जो स्वदेशको छोड द्वीपान्तरोंमें भी छारहा है कहाँ संभव था॥

गोसाँईंजीकी कविता ऐसी अनवद्य और सर्वांगसुन्दर है और उसमें परमेश्वरने वह मोहिनी शक्ति दी है कि **भरतखंड**वासियोंके अतिरिक्त **इंग्लैंड** आदि निवासियोंने भी इसके सारगर्भित तथा नीतियुक्त आशयोंके कारण मोहित और चकित होकर मुक्त कंठसे इसकी प्रशंसा की है और निज निज भाषाओंमें इसका अनुवाद कर अपने हृदयको रामभक्तिसे पवित्र किया है! रामायणकी प्रशंसा कहांतक करें! जैसे रामसे उनके नामकी महिमा बडी है, उसी प्रकार रामायणसे उसकी प्रशंसा अधिक होसक्ती है परंतु स्थानाभावसे इतनाही कहकर लेखनीको विश्राम देते हैं कि इस रामायणके कर्त्ता गोसाँईजी के समान प्रारब्धीपुरुष एकभी नहीं निकलेगा कि जिसकी पुस्तकने सर्वगुणआगरी नागरीमें इतना बडा आदर पाया हो। गोसाँईंजी कैसे विद्वान् और सिद्ध पुरुष थे, रामके कैसे भक्त थे, उनका हृदय कैसा कोमल और शुद्ध था, बुद्धि कैसी विलक्षण और निर्मल थी इन सब बातोंका नमूना इस रामायणको समझना चाहिये॥

रामायणकी अनेक पुस्तकें मूल और सटीक छप चुकीं परंतु जैसे ईश्वरकृत सांसारिक मनुष्योंकी आकृति एकसी नहीं मिलती उसी प्रकार जितनी पुस्तकें देखनेमें आईं सब अपने २ ढँगपर हैं, और किसी २ रामायणके मूलमेंभी बडा भेद पाया जाता है, परंतु जैसे बेरवाला अपने बेरोंको खट्टे नहीं बतलाता उसी प्रकार सबने अपनी २ पुस्तककी प्रशंसा करी है सो सत्य है, यह पुस्तक ऐसीही है. इसकी जितनी प्रशंसा हो थोडी है. मूलमें भलेही भेद हो। शुद्धतापर जिसकी अधिक प्रीति हो वह दो चार पुस्तकें भिन्न २ छापेकी लेकर भ्रमजालका कौतुक देख अपने संदेहोंको दूर करे, न हो किसी एक पुस्तकपर विश्वास करले। ऐसा होसक्ता है, परंतु अब एक और नया प्रचार हुआ है कि मूलके साथ अनेक क्षेपक जुडते चले जाते हैं. क्षेपकोंपर मेरी अधिक श्रद्धा नहीं. मेरी इच्छा थी कि मूलके साथ एकभी क्षेपक न हो, जो लिखा जाय सो टिप्पणीमें हो परंतु मैं क्या करूँ? मेरा और श्रीयुत **तुकाराम जावजी** महाशयका ऐसा संबन्ध है, कि मुझे वही करना पडता है कि जो उनको अभिमत हो, और उनकोभी मेरा कथन बहुधा मान्य होता है, किन्तु इस समय जहांतक देखागया है और पुस्तकविक्रेताओंसे पूँछागया है तौ यही निश्चय हुआ है कि शतग्राहकोंमेंसे पाँच ग्राहक ऐसे आते हैं जो क्षेपकोंका निरादर करते हैं, बाकी प्रत्येक ग्राहक पूँछ लेता है कि अमुक छापेकी पुस्तकमें क्षेपक हैं वा नहीं? अब विचारिये कि जिसके विना बिक्रीमें अवरोध हो उसमें धन लगाकर कोई क्या लाभ उठा सक्ता है? जो लोग क्षेपकोंसे घृणा करते हैं सोभी वृथाही है, कारण ये क्षेपक कोई इन्द्रायनके फल नहीं हैं-रामायणमें जो अनेक कथा प्रसंगवशात् रहगई हैं उनको भक्तजनोंने छन्दोबद्ध करके यथास्थल लिख दिया है, और कोई प्रसंगानुकूल नवीनभी हैं परंतु पाठकोंको बहुतसा सावकाश दिया गया है, क्षेपक और मूलको अलग २ लिखकर स्पष्ट कर दिया है, उसको पढना वा छोडना पाठकोंकी रुचिपर निर्भर है॥

थोडे दिनसे एक **लवकुशकांड**का प्रचार हुआ है और वह इस रामायणमेंभी है॥ लोगोंने इसे गोसाँईजीकृत प्रसिद्ध कर रक्खा है परंतु इसके तुलसीदासकृत होनेमें मेरी पूर्ण अश्रद्धा है, इसमें कई कारण हैं। प्रथम तौ यह कोई तुच्छ वात नहीं थी कि गोसाँईजी छोड जाते, यह तौ एक पूरा २ विषय था। यदि वे बनाते तौ परंपरासे वह रामायणके साथ होता। सो न तो वह किसी प्राचीन हस्तलिपिके साथ है और न किसी प्राचीनसे प्राचीन छापेकी पुस्तकमें दीखता है॥ दूसरे इसकी कविताभी गोसाँईजीसे नहीं मिलती, श्वानकी एक कथाभी निपट अधूरी और निष्फल थी, उसको मैंने निकालकर इस क्षेपकको यथामति शुद्ध करदिया। अब जो इसमें पुराणान्तरोंकी कथाएँ हैं वे सत्य हैं परंतु लोगोंको इसेभी क्षेपकही समझना चाहिये॥

क्षेपकोंके विषयमें बहुतसे पाठक ऐसा तर्क कर सक्ते हैं, कि क्षेपकोंके द्वारा जो कथा नवीन रीतिसे अन्तर्गत करी हैं यदि उनकी आवश्यकता होती तौ गोसाँईजी स्वयं लिखते

उनके पीछे मिलानेसे तौ उनकी भ्रांति स्पष्ट होती है। इसका यही उत्तर हो सक्ता है कि गोसाँईजी स्वयं बडे भारी विद्वान् थे और जो ऐसे विद्वान् होते हैं वे ऐसी पुराणान्तरोंकी कथाओंको कि जिनका संसारमें बहुधा प्रचार होता है लिखकर अपने ग्रन्थको वृथा नहीं बढाते; क्योंकि बीच २ में अन्य कथाओंके लिखनेसे उनके लेख्यप्रसंगमें विक्षेप पडता है जैसा कि "बात चलरही है खेतकी ले बैठे खलियानकी"। सो सत्कवीश्वर ऐसा कदापि नहीं करते. वे स्वयं अधिक विद्वान् होनेके कारण समझ लेते हैं कि अमुक कथा तौ प्रसिद्ध है इसे सब लोग जानते हैं। परंतु जानते तौ वेहीं हैं जिन्होंने सत्संग किया है वा एकवारभी कोई रामायण, महाभारत, भागवतादि सुन रक्खी हैं; और जो नवशिक्षित हैं और यहभी नहीं जानते कि पुराण किस चिडियाका नाम है उन्हे विना क्षेपक और प्रसंगोत्थित इतिहासके लिखे किस प्रकार सम्पूर्ण कथा स्वयं ज्ञात हो सक्ती है ?। यहां एक उदाहरण देनेकीभी आवश्यकता हुई-**किष्किन्धाकांड**में सुग्रीवने बालीके विषयमें रामजीसे कहा है कि-"**यहां सापबस आवत नाहीं**" तौ जिस मनुष्यने कभी बालीके शापकी कथा सुनीही नहीं उसका संदेह कैसे दूर हो ? यही हाल प्रसंगोत्थित इतिहासोंका है, कि न लिखनेसे काम नहीं चलता। **बालकांड**के पूर्वमें एक चौपाई है-"**वालमीकि नारद घटयोनी ॥ निज २ मुखन कही निजहोनी ॥**" अब यदि ऋषियोंका इतिहास नहीं लिखें तौ उन्होंने जो अपनी २ होनी कही, सो क्या ज्ञात हो सक्ती है ? अतएव जिन लोगोंके लिये भाषा रामायणकीभी भाषा बनाई गई है उन्हींके लिये यह क्षेपकादि लिखनेका उद्योग किया गया है, और जो रामायणके स्वयं ज्ञाता हैं उनके लिये न तौ यह टीका है और न कोई क्षेपकादि हैं॥

सहस्रों पाठकोंको विदित है कि संवत् १९५३ में **तुकाराम जावजी** महाशयने रामायणकी एक प्रति मुझसे शुद्ध कराकर गुटकारूपमें छापकर प्रसिद्ध की थी। छापनेके समय इस बातकी स्वप्नमेंभी आशा नहीं थी, कि रघुनाथजीके प्यारे अन्य बडी २ पुस्तकोंके होते इसका इतना समादर करेंगे। परंतु छपतेही यह फल हुआ कि तीन मासके अनन्तरही द्वितीय संस्करण और एक वर्षके अनन्तर तृतीय संस्करण शुद्धतापूर्वक छाप कर प्रकाशित करनेका सौभाग्य हुआ. ऐसा कोई देश, नगर और गाँव नहीं, कि जहाँ गुटका न पहुँचा हो, अबभी उसका चतुर्थ संस्करण छप रहा है। जिस समय मैंनें गुटका रामायणको शुद्ध किया था उस समय मेरे पास अनेक छापेकी पुस्तकोंके साथ एक हस्तलिपिभी बडी प्राचीन थी कि जिसपर मेरा अधिक विश्वास था। यद्यपि जहाँतक होता था छापेकी सबही पुस्तकोंसे पाठान्तर मिलाता था परंतु अपना गुरु उस हस्तलिपिवाली पुस्तककोही समझकर जहाँ कहीं संदेह होता था निवृत्त कर लेता था। इस प्रकार उस रामायणको शुद्ध कर यह गुटका छापा, क्रमशः प्रथम द्वितीय तृतीय संस्करणमें कदाचित् कहीं विशेष दोष रहगया हो इस कारण इसबार अर्थांशपर अधिक

विचार कर मूलको फिर बडी सावधानीसे शोधकर इस सटीक पुस्तकमें छापा है और तदनुसारही टीका हुई है।

भाषाटीका करते समय अन्य छापेकी पुस्तकोंके साथमें एक पुस्तक मैनपुरीनिवासी लालासुखलालकृत टीकासहितभी मेरे दृष्टिगोचर हुई॥ उसमें अरण्यकांडकी **"चले राम त्यागा बन सोऊ"** इस चौपाईसे **अरण्यकांड** सब अंतिमभाग **किष्किन्धाकांडके** पूर्वमें मिला दिया गया है इत्यादि बातोंको दूर रहने दीजिये; उसमें एक बड़ा कौतुक तौ यह है कि प्रत्येक दोहेके साथ गिनतीकी आठ २ चौपाई रक्खी हैं, शेष चौपाइयाँ क्षेपकका लांछन लगाकर निकालदी हैं। कहिये गोसाँईजीकी कविताको शुद्ध करना कितना बड़ा काम है ? जैसा उनकी बुद्धिमें आया सो अच्छा है, बातही क्या है ? किसीने क्षेपक बढा दिये, किसीने मूलको काटकर कम कर दिया, परिश्रम तौ दोनोंही बातोंमें होता है, इसलिये किसी टीकाकारपर कटाक्ष न कर और सबको हार्दिक धन्यवाद देकर पुस्तकोंकी उत्तमताको पाठकोंकी रुचिपर छोडताहूं। जिसको जो पुस्तक रुचै वही सर्वोत्तम है जैसा एक कविता है कि—**"दधि मधुरं मधु मधुरं द्राक्षा मधुरा सितापि मधुरैव। तस्य तदेव हि मधुरं यस्य मनो यत्र संलग्नम्॥"** अर्थात् दधि, शहद, दाख, और शर्करा सबहि मधुर हैं, परंतु इनमेंसे जिसके मनमें जो भावै उसको वही मधुर है॥ फिर गोसाँईजीका वचन है कि—**"कहहिं वेद इतिहास पुराना। विधिप्रपञ्च गुन अवगुन साना"** जब संसारमें वस्तुमात्रकी यह दशा है और मुझे स्वयं अपनी टीका पर विश्वास नहीं है कि पाठकलोग देखकर क्या कहैंगे तब अन्य टीकाओंकी समालोचना करनाभी मैं अपने लिये योग्य नहीं समझताहूं, कारण, दोष निकालना जितना सहज है लिखकर छपवाना उससे कहीं कठिनतर है॥

सम्प्रति इस भाषाटीकाके बनानेमें उन प्रचलित और सरल शब्दोंका प्रयोग किया गया है कि जिनको सर्व साधारण मनुष्य समझ सकैं। यदि कहीं उर्दूशब्द आगया हो तो भी आश्चर्य नहीं, कारण, मूलमेंभी उर्दू अर्बी शब्द पाये जाते हैं॥

जो बात तात्पर्य समझानेके लिये अथवा गूढाई प्रकाश करनेके लिये मूलके अर्थसे अलग लिखी है उसे ऐसे ( ) चिह्नविशेषमें लिखदिया है॥ जहां कहीं जिस प्रसंग का प्रमाण **वाल्मीकीय, अध्यात्मरामायण, महारामायण, रामगीता, भगवद्गीता** आदिमें मिलसका है उसको टिप्पणीमें लिखकर उसका अर्थभी भाषामें लिखदिया है कि जिससे जो लोग संस्कृत नहीं पढे हैं उनकोभी समझनेमें सुगमता हो, परंतु कहीं २ जिस श्लोकका अर्थ बहुतही सहज है अथवा चौपाईसे मिलता है उसे नहीं लिखा. टिप्पणीमें अनेक प्रसंगोत्थित इतिहासभी भागवत और संस्कृतरामायणोंमेंसे उद्धृत करके लिखे गये हैं और प्रसंगानुकूल अनेक नीतिके श्लोक, छन्द, कवित्त आदि श्रोता और

पाठकोंके चित्तविनोदके लिये लिखे हैं. इन छन्द-कवितोंमें वहुतसे तो प्राचीन कवियोंके हैं और बहुतसे नवीन अपनी युक्तिसे वनाकर धरे हैं ॥

बहुतसे पाठकोंको यह बात अच्छे प्रकारसे विदित है कि रामायणसरीखी अनुपम और निश्शंकित पुस्तकपर लोग अनेक प्रकारकी झूंठी २ शंका कर भ्रमजालमें गिरे हुए हैं. इनमेंसे बहुतसी शंकाओंका समाधान तौ यथास्थलपर किया गया है, परंतु यदि लोग निपट निर्मूल शंका करतेही चले जाँय, जैसा कि–"रावणके दश शिर थे तौ करवट कैसे लेता होगा" इत्यादि, तौ ऐसी २ शंकाओंका समाधान कहांतक हो सक्ता है? ऐसी २ शंका रूपीसन्निपातज्वरसे पीडित मनुष्योंकी क्या औषधि है? यथा "**मूर्खस्य नास्त्यौषधम्**" ॥

इसी प्रकार अर्थांशका विचार किया गया है कि जो अर्थ साधारण रीतिपर मूलपरसे निकल सक्ता है वह लिखकर कहीं कुछ विशेषभी दरसाया है, परंतु अक्षरोंकी ऐंचातानी करके बहुतसे लोग जो झूठे कपोलकल्पित अर्थ करते हैं, वे इस टीकामें नहीं मिलेंगे, कारण, गोसाँईजीका अभिमत तौ एकही अर्थसे है और कूट अर्थ रामायणमें कहीं पाया नहीं जाता, फिर दो २ चार २ अर्थ प्रसंगके प्रतिकूल करना पाठकोंको भूलमें डालना है। अर्थ वही ठीक हो सक्ता है जो ऊपरसे नीचे तक घटता चला आवै; और अक्षरोंकी ऐंचातानी इस प्रकार अर्थ करना व्यर्थ है जैसे कहैं कि–"**जिहि सुमिरत सिधि होय**" इसका सीधा अर्थ तौ यही है कि जिनका स्मरण करनेसे कार्य सिद्ध हो, परंतु कई लोगोंको ऐसा अर्थ करते देखा कि–"सि" कहिये सीताजीको "धि" कहिये धीरज हुआ। अब पाठकगण इस लीलाको बिचारैं कि ऐसे २ अर्थ कहाँतक ठीक हो सक्ते हैं? ऐसेही ऐसे अर्थोंसे आजकलके नवशिक्षित लोग इस परम पुनीत पुस्तकपर आक्षेप और अनास्था करने लगे हैं ॥

मेरी इच्छा यह थी कि मैं संपूर्ण रामायणके अलंकार लिखता परंतु जब ऐसा करनेको उद्यत हुआ तौ एक २ चौपाईमें कई २ अलंकार भासित होने लगे; फिर स्थानाभावसे मानसभूमिकाके केवल दोहोंपरही लिखकर दिग्दर्शन मात्र कराना पडा। इसके न लिखनेमें एक दूसरा कारणभी है कि अलंकारके ज्ञाता १००० मनुष्योंमें अधिकसे अधिक दो चार निकल सक्ते हैं, सो जब वे स्वयं जानते हैं तौ उनके लिये लिखना वृथा है और जो नहीं जानते हैं उनके लिये लिखना केवल प्रयास उठाना समझागया, कारण बिना लक्षण वे कैसे समझ सक्ते हैं कि अलंकार क्या वस्तु है? और जो लक्षण लिखे जाते तो इस अल्पकलेवर गुटकेमें स्थान नहीं ॥

इसी प्रकार रामायणके अंतमें कोशभी नहीं लगाया, क्योंकि एक तौ रामायण भाषा, उसकीभी भाषा की गई और दोहे चौपाई आदिका भावसहित पूर्ण अर्थ लिखदिया, फिर उसी अर्थको शब्दद्वारा कोशमें धर पुस्तकाकारको बढाना केवल पिष्टपेषण समझ कर नहीं किया ॥

यद्यपि आजकल रामायणकी पुस्तकें सुन्दरसे सुन्दर और भाँति भाँतिकी प्रस्तुत हैं, तिसपरभी इस पुस्तकके छपवानेका अवसर मिला, उसमें दो कारण हैं. प्रथम तौ यह कि **"सब जानत प्रभुप्रभुता सोई। तदपि कहे विन रहा न कोई"**। और दूसरा मुख्य कारण यह कि आजतक जितनी सटीक पुस्तकें छपी हैं उनका मूल्य पाँच २ और आठ २ रुपये इतना अधिक रक्खा गया है कि उनसे सर्व साधारणको भला नहीं होसक्ता ॥ धनवान् तौ द्रव्यव्ययकर आनन्द उठाते हैं परंतु निर्धन मन मार करही रह जाते हैं. इसलिये ऐसे अभावको दूर करनेके लिये श्रीयुत परोपकारी **तुकाराम जावजी**ने मुझसे एक सरल सुबोध टीका बनानेके लिये अनुरोध किया। यद्यपि मैं अपनेको कदापि इस योग्य नहीं समझताहूं कि रामायणपर टीका बनानेका साहस करता–क्योंकि जिस रामचरित्ररूपी अथाह समुद्रमें बडे २ पण्डितोंकी बुद्धिरूपी बल्ली थाह नहीं पाती उसके लिखनेके लिये मुझसरीखे मतिमन्दका सहसा उद्यत होजाना कहो कैसी महामुग्धता है–परंतु जो राम जडसे चैतन्य और चैतन्यसे जड करसक्ते हैं उनके कृपाकटाक्षसे अथवा रामनवमी पुष्य नक्षत्र कर्क लग्नमें मेरा जन्म होनेके कारण यदि मुझसरीखे जडसेभी उनका कुछ परम पवित्र चरित्र लिखा गया तौ क्या आश्चर्य है ?

हे प्रिय पाठकगण ! इस रामायणका अर्थ जैसा गूढ और गंभीर है उसके समझने और लिखनेके लिये तौ मेरी बुद्धि छोटेसे बालककीसीभी नहीं, और न मैं कोई बडा भारी पण्डित और हिन्दीभाषाका प्रसिद्ध लेखक हूं, मैं तौ केवल **तुकाराम जावजीकी** इच्छासे जैसी कुछ मेरी स्थूल बुद्धि है तदनुसार लिखकर आपके दृष्टिगोचर कराताहूं कि यदि आप लोग भी मेरी अल्पबुद्धिपर ध्यान न देकर भक्तिपक्षसे इसका अवलोकन करैंगे और शबरीके बेर तथा सुदामाके तंदुलोंके समान इसका किंचिन्मात्रभी आदर करैंगे तौ भला विचारिये कि मुझे कितनी प्रसन्नता होगी और मैं अपनेको कितना बडभागी और कृतकृत्य समझूंगा—

अब उपसंहारमें सज्जन और विशेष कर दुर्जनोंसे विनय करताहूं कि जहाँ कहीं मूलमें अथवा मेरे लेखमें भ्रमादिदोषसे त्रुटि रहगई हो, अथवा किसी चौपाईका अर्थ रहगया हो, अथवा कोई मात्रा अनुस्वारादि इधरकी उधर अधिक लगगई वा रहगई हो तौ वे क्षमा कर मुझे कृतार्थ करैं। यदि इस टीकासे पाठकोंको कुछभी लाभ पहुँचैगा तौ मैं अपने परिश्रमको सफल मानूँगा ॥

संवत् १९५६.
भाद्रपदशुक्ला १५ चन्द्रे.

रामचरणकमलानुरागी
रामेश्वरभट्ट,
निवासी गोकलपुरा–आगरा.

विज्ञप्ति.

विदित हो कि संवत् १९५३ में हमने **रामायण**को आगरानिवासी पंडित **रामेश्वर** भट्टजीसे शुद्ध कराकर गुटकारूपमें छापकर प्रकाशित कियाथा उस समयसे उसकी इस प्रकार बिक्री होरही है कि तृतीय संस्करणमेंभी जितनी सहस्र पुस्तकें छापकर प्रस्तुत की थीं सब हो चुकनेको आईं। कोई ऐसा देश नगर और गांव नहीं कि जहां उस गुटके ने अपनी छटा न दिखाई हो, बरन इसकी मनमोहिनी मूर्तिको देख द्वीपान्तरनिवासियोंतकको मोहित होना पडा है—बस ग्राहकोंकी इसी गुणग्राहकताको देख आज हमको दूसरी सटीक **गुटका रामायण** छापकर प्रकाशित करनेका सौभाग्य इस हर्षके साथ हुआ है कि जिसकी सीमा नहीं. अनेक रामचरणकमलानुरागी जो बिचारे निर्धनताके कारण मूलमात्रसे कार्य निकालते थे और पांच २ और आठ २ रुपयेवाली सटीक पुस्तकें देख मन मारकर रह जाते थे उन्होंके प्रसन्नार्थ यह पुस्तक छापनेका उद्योग किया गया है। पाठकोंको अच्छे प्रकारसे स्पष्ट होगा कि जहाँतक हुआ है हमने उक्त **भट्टजी**की कृपासे कोई विषय ऐसा नहीं छोडा जो बडी पुस्तकोंमें हो और इसमें न हो, बरन २।४ ढंग नवीन और निरालेही दीखेंगे, और यहभी विदित होगा कि हमारे छापेका काम कितना सस्ता और साफ होता है। उसका यही कारण है कि हम नाम मात्रको नफा लेकर रामकथाका प्रचार किया चाहते हैं। यद्यपि इस पुस्तकका संशोधन बडी सावधानीसे कराया है तथापि भूल मनुष्यमात्रसे होती है. यदि कहीं छापनेमें त्रुटि रह गई हो तौ सज्जन हमारे ऊपर कृपा कर उसे क्षमा करैं और भाषाकर्ताको वृथा दोष न दें.

इस पुस्तकके छपानेसे हमारी आंतरिक इच्छा किसीकी पुस्तकपर वा उसके भाषाकर्त्तापर आक्षेप वा दोषारोपण करनेकी नहीं और न अपनी पुस्तककी अपने मुखसे प्रशंसा करना मंजूर है कि जैसा प्रचार हो रहा है, क्योंकि **"न हि कस्तूरिकामोदः शपथेन विभाव्यते—"**

अंतमें आशा है कि पाठक जन इसे निष्पक्षपात दृष्टिसे अवलोकन करैंगे और हमको कृतार्थकर द्वितीय संस्करणके समय अनेक धन्यवादके भागी बनेंगे.

तुकाराम जावजी,
निर्णयसागर प्रेसके मालिक,
मुंबई.

संवत् १९५६.
आश्विन कृष्ण ८ चन्द्रे.

॥ श्रीः ॥

सप्तम संस्करण.

आज श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे हम अपने गुणग्राहक रामभक्त पाठक गणोंको अनेक धन्यवाद देते हैं कि जिन्होंनें हमारे यहाँकी छपी सटीक रामायण खरीदकर और अपने मित्रगणोंमें प्रचार कर हमको कृतार्थ किया है। छपनेके उपरान्त थोडे वर्षके लगभगही ८० सहस्रसे अधिक पुस्तकोंका विकजाना और अब सातवें संस्करणका होना हमारे लिये असीम हर्षका कारण हुआ है। यदि पाठकगण इसी प्रकार प्रोत्साहित करते रहे तौ पूर्ण आशा है कि हमको यह सटीक रामायण मोटे टैपमें बडे सजधजके साथ छाप कर अपने ग्राहकोंको शीघ्रही प्रसन्न करना होगा.

प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पंचम और षष्ठ संस्करणमें जो छपनेके समय भ्रमादि दोष रह गये थे और किसी २ महानुभावोंने लिखभी भेजेथे उनको फिर हमने जहांतक हो सका है बडी सावधानीसे शुद्ध करा दिया है, और इस सातवें संस्करणमें दोषोंको शुद्ध करनेके सिवाय टीकामें जो कहीं २ कठिन शब्द थे उनकी जगह सरल शब्द लिखकर पाठकोंके लिये सरलता करादी गई है।

अंतमें उनलोगोंको हमारा अनेक धन्यवाद है कि जिन्होंने सटीक रामायणके विषयमें बडे २ प्रशंसापत्र भेजकर हमारा उत्साह बढाया है।

कृपाकांक्षी,

श्रावण शुक्ला ७ बृहसतिवार,
संवत् १९८१.

पांडुरंग जावजी,
अध्यक्ष, निर्णयसागर प्रेस, मुंबई.

तुलसीदासकृत रामायणके चित्रोंका सूचीपत्र ।

चित्र ... पृष्ठ.

१ श्रीरामपंचायतन चित्र. ... २
२ गोसाँई तुलसीदासजीका चित्र ... ११
३ रामजीके गलेमें सीताजीका जयमाल डालना चित्र. ... १८९
४ वनगमनसमय श्रीराम कौशल्याकी भेट चित्र. ... ३१२
५ श्रीरामजीका नौकारूढ़ हो गंगापार होना चित्र. ... ३८३
६ सीताहरण चित्र. ... ५३६
७ जटायु रावणका संग्राम तथा घायल जटायुके पास राम लक्ष्मणका आना चित्र. ५८१
८ वालि सुग्रीवका युद्ध चिंत्र. ... ६०२
९ वालीका माराजाना, ताराविलाप और सुग्रीवको राजतिलक चित्र. ... ६१९
१० अशोकवाटिका चित्र. ... ६४६
११ मेघनादका हनूमान्को नागपाशमें बांधकर रावणकी सभामें लेजाना चित्र. ... ६६३
१२, रामरावणका युद्ध चित्र. ... ६९८
१३ लक्ष्मणजीकी रणशय्या और अयोध्यामें भरतजीका द्रोणागिरि ले जाते हुए हनूमान्को वाण मारना चित्र. ... ७५०
१४ भरतजीका मिलाप चित्र. ... ८४०
१५ श्रीरामचंद्रजीको राजगद्दी चित्र. ... ८५२
१६ लवकुशयुद्ध चित्र. ... ९६०

इति रामायणान्तर्गत चित्रोंकी सूची समाप्त ।

श्रीगणेशाय नमः ।

अथ

रामायणविषयाऽनुक्रमणिका ।

मंगलाचरण. ३
गुरुचरणवंदना. ५
संतसमाज और लक्षण. ७
दुष्टजनोंकी वन्दना. १०
गोसाँईजीका स्वविषयमें लघुत्ववर्णन. १५
वाल्मीकि सरस्वती गुरु माता पिता शिवपार्वती आदिको प्रणाम २३–२४
रामके नामकी महिमा. २८
रामनाममाहात्म्य. ३३
रामायणका माहात्म्य. ३९
मानससरोवरवर्णन. ४६
कथाप्रसंग तथा याज्ञवल्क्य और भरद्वाजमुनिका संवाद. ५४
शिवजी और अगस्त्यसंवाद. ५६
पार्वतीजीको रामका भ्रम होना और जाकर उनकी परीक्षा करना. ५८
शिवजीका सतीको त्यागना. ६३
सतीका दक्षके यज्ञमें जानेके लिये आज्ञा लेना. ६६
सतीका दक्षके यज्ञमें जाकर शरीरत्याग करना और शिवजीका वीरभद्र आदिके द्वारा
  यज्ञका विध्वंस करना. ६८
पार्वतीजीका जन्म और नारदजीके उपदेशसे तपस्या करना. ६८
शिवजीका सप्तर्षियोंके द्वारा पार्वतीकी परीक्षा लिवाना. ७६
कामदेवका शिवजीके पास जाना और भस्म होना. ८०
शिवजीकी बरात और विवाहका वर्णन. ८७
महादेवपार्वतीका संवाद. १००
जलंधरकी कथा. ११२
नारदजीका शीलनिधि राजाकी कन्यापर आसक्त होना और भगवानसे रूप मांगना और
  बंदरका रूप पाकर हँसी कराना. ११७

नारदका प्रभुको शाप देना और उनके शापसे प्रभुका अवतार लेना. १२१
स्वायंभुव मुनिकी कथा. १२४
राजा प्रतापभानुकी कथा. १३१
कपटमुनिका चरित्र. १३५
रावण कुंभकर्ण आदिका जन्म, उनका तप करना और ब्रह्माका वर देना. १४५

(क्षेपक.)

राजावलि और वालीसे रावणका मानमर्दन होना. १५०
सहस्रबाहुसे रावणका हारना. १५४
नलकूबरका रावणको शाप देना. १५५
रावणका ब्राह्मणोंसे दंड लेना, फिर ब्राह्मणोंका उसको शाप देना. ... १५६
सीताजीकी उत्पत्ति. १५७

(इति क्षेपक.)

पृथ्वीका गोरूप धारणकरके देवता और ऋषियोंके साथ ब्रह्माजीपास जाना और स्तुति करना. १६१
भगवानका प्रसन्न होकर अभयदान देना और दशरथजीके यहां जन्म लेनेकी प्रतिज्ञा करना. १६३

(क्षेपक.)

राजा दिलीपका रावणसे वैर होना और कौशल्याकी कथा. १६४

(इति क्षेपक.)

राजा दशरथका यज्ञ करना और यज्ञकुंडसे अग्निका पायस लेकर निकलना. १६८
राजा दशरथका रानियोंको पायस देना और रानियोंका गर्भधारण करना. १६८
श्रीराम लक्ष्मण आदि चारों भ्राताओंका जन्म होना और उनके बालचरित्रका वर्णन. ... १६९
रामजीका कौशल्याको विराट्स्वरूप दिखाना. १७९
हनूमानजीका संमेलन (क्षेपक). १८१
विश्वामित्रजीका अयोध्यामें आना और राजासे यज्ञरक्षाके लिये रामजीको मांगना. ... १८३
राजाको पुत्र देनेमें शोकित होना, वसिष्ठजीसे रामप्रताप जानकर देना. १८४
रामजीका ताड़का और मारीच सुबाहुको मारना. १८६
रामजीका जनकपुरगमनमें अहल्याका शाप दूर करना. १८७
गंगाजीकी उत्पत्ति (क्षेपक). १९०
मुनिका रामलक्ष्मणसहित जनकपुर पहुँचना. २०१
रामजीका लक्ष्मणसहित जनकपुर देखने जाना और पुरवासियोंका देखकर प्रसन्न होना. २०५
उपवनमें रामजानकीका आपसमें दृष्टिमिलाप. २१२
सीताजीका पार्वतीजीसे वर पाकर लौटना. २१८
श्रीरामजीका सीताजीकी छबिका वर्णन करना. २१९
रामजीका मुनिके साथ धनुषयज्ञमें जाना. २२०
रामजीका सिंहासनपर बैठना और राजाओंका खिसियाना. २२४
राजाओंसे धनुषका न उठना और सभामें जनकराजका ताहिना देना. २२८
लक्ष्मणजीका क्रुद्ध होना. २२९

श्रीरामजीका सब राजाओंके बीच धनुषका तोड़ना. २३६
सीताजीका रामजीके गलेमें जयमाला पहिराना. २३८
परशुरामजीका आगमन और उनके साथ लक्ष्मणजीका संवाद. २४१
रामजीका विष्णुधनुप चढ़ाना और परशुरामका स्तुति कर वनको जाना. २५२
दशरथजीको पत्र भेजना और जनकपुरमें मंडप बनाना. २५४
दशरथजीका जनकपत्र पढ़ना. २५६
राजा दशरथका बरात लेकर मिथिलापुरीको आना. २६१
कन्यादान. २८०
रामकलेवा (क्षेपक). २८६
राजा दशरथका गोदान करना. २९१
बरातका बिदा होकर अवधमें पहुँचना और मंगलाचार होना. २९५
ऋषियोंका विदा होना. ३०९

इति बालकांडम्.

अयोध्याकाण्ड २.

मंगलाचरण. ३१३
अयोध्यामें प्रसन्नता फैलना. ३१४
नारदजीका आकर रामजीकी स्तुति करना (क्षेपक). ३१५
दशरथजीका रामजीके अर्थ राज्याभिषेकके लिये मनोरथ करना. ३१८
राज्याभिषेकके लिये सामग्री तयार करना और वनवासमें हर्ष होना. ३२०
देवताओंका सरस्वतीजीको भेजकर मंथरा और कैकेयीकी बुद्धि भ्रष्ट करके राज्याभिषेकमें विघ्न डालना. ३२३
कैकेयी और मंथराका संवाद. ३२४
कैकेयीका रूसकर शोकभवनमें जाना. ३३१
राजा दशरथका आना और कोपभवनमें जाकर कैकेयीसे कोपका कारण पूछना. ... ३३२
कैकेयीका रामवनवास और भरतको राज्य ये दो वर मांगना. ३३५
राजाका सुनकर विषाद करना और कैकेयीको समझाकर मूर्च्छित होना, फिर कैकेयीका राजाको धमकाना. ३३६
रामजीका राजाके पास आना, पुरवासियोंका विषाद करना. ३४२
कैकेयीका रामको समझाना. ३४२
रामजीका राजाको धैर्य देना. ३४५
रामजीका मातासे बिदा मांगना. ३५१
रामजीके साथ जानेके लिये सीताका तयार होना और रानियों तथा रामजीका समझाना. ३५४
लक्ष्मणजीका संवाद. ३६१

रामजीका वनके लिये विदा होना, राजाका विकल हो सुमंतको समझाना और पुरवासियोंका विलाप करना. ३६८
रामजीका शृंगवेरपुरमें आना, गुहका कंद मूल फल लेकर रामजीसे मिलना. ३७२
सुमंतका रामजीसे लौटनेकी प्रार्थना करना. ३७७
रामजीका सुमंत सारथीको समझाकर विदा करना. ३८१
केवटसे नाव मँगाकर रामजीका गंगा उतरना और प्रयागराजमें भरद्वाजके दर्शन करना. ३८१
भरद्वाज मुनिसे विदा होकर जाना. ३८८
रामजीका वाल्मीकिजीसे मिलना. ३९९
रामजीका चित्रकूटमें जाकर निवास करना. ४०४
सुमंतका निषादको विदा करना और अयोध्यामें आगमन. ४१३
सुमंतका दशरथजीसे आकर मिलना और उनका विलाप करना. ४१४

(क्षेपक).

सरवनकी कथा और दशरथ राजाका मरण. ४१८
वसिष्ठजीका आना और पुराने राजाओंका इतिहास कहकर रानियोंको धैर्य देना. ... ४१९
वसिष्ठजीका भरतको बुलवाना. ४२०
भरतजीका आना और आकर मातासे रामवनवास सुनकर उदास होना और कुवरीसे दुर्वचन कहना. ४२१
भरतजीका कौशल्यासे मिलना और संवाद. ४२४
भरतजीका पितृसंस्कार करना. ४२८
वसिष्ठजीका भरतजीको राज्यके लिये समझाना. ४२९
भरतजीका संपूर्ण पुरवासियोंको लेकर रामजीके दर्शनको चित्रकूट जाना और मार्गमें गुहसे मिलना. ४३९
प्रयागमें भरतजीका आना और भरद्वाजजीसे मिलना. ४५०
भरतजीका विदा होकर चित्रकूटको पयान करना. ४५८
कोलकिरातोंका रामसे भरतजीका आना कहना और रामका भरतआगमन सुन सोच करना और लक्ष्मणजीका क्रोध करना. ४६६
रामजीका लक्ष्मणजीको समझाना और भरतजीकी बड़ाई करना. ४७०
रामचंद्रजीके साथ भरतजीका मिलाप. ४७६
कैकेयीका पश्चात्ताप करना और राम लक्ष्मण सीताको लौटानेका यत्न करना. ... ४७८
भरतजी और रामजीका संवाद. ४८५
जनकदूतोंका चित्रकूटमें आना. ४९५
चित्रकूटसे दूतोंका लौटना और वृत्तांत सुन जनकजीका चित्रकूटको पयान करना. ... ४९७
जनकराजका रामजीसे मिलना. ४९९
कोलकिरातोंका भेट देना. ५०१
सुनयना और कौशल्याका मिलाप और वार्ता. ५०२

जनकजीका भरतस्वभाववर्णन और संवाद. ५०७
रामजीका अपनी खड़ाऊँ देकर भरतजीको विदा करना. ५२६
भरतजीका अयोध्याजीमें प्रवेश. ५३०
भरतजीका नन्दिग्राममें आकर बसना और पादुकापूजन. ५३१

इति अयोध्याकांडम्.

आरण्यकाण्ड ३.

मंगलाचरण. ५३७
जयंतका काकरूप धारण कर सीताजीके चरणमें चोंचमार रामजीकी परीक्षा लेना. ... ५३९
रामजीका अत्रिऋषिसे मिलाप. ५४१
अत्रिमुनिका रामजीकी स्तुति करना. ५४१
अनुसूयाका जानकीको उपदेश देना. ५४३
विराधका वध और शरभंग मुनिका दर्शन. ५४७
रामजीका सुतीक्ष्णसे मिलना और मुनिका स्तुति करना. ५५०
रामजीका अगस्त्यजीसे मिलाप. ५५५
रामजीका पंचवटीमें प्रवेश. ५५८
रामलक्ष्मणका संवाद. ५५८
शूर्पनखा और रामजीका परस्पर संवाद और रामजीकी आज्ञासे लक्ष्मणजीका शूर्पनखाके नाक कान काटना. ५६१
शूर्पनखाका खरदूषणसे जाकर रोना, खरदूषणका चढ़कर आना और घोर संग्राम कर माराजाना. ५६३
शूर्पनखाका रावणके पास जाना. ५६८
रावणका रथपर बैठ पयान करना. ५७१
रामजीका सीताजीको अग्निको सौंप मायाकी जानकी बनाना. ५७२
रावणका मारीचके पास जाकर रोना और मारीचका रावणको समझाना. ५७३
रावणके उपदेशसे मारीचका सुवर्णमृग बनना और सीताजीको मोहित करना. ... ५७४
रावणका सीताजीको हरना. ५७७
जटायुका सीताको देखना और रावणके संग युद्ध करना. ५७९
ब्रह्माजीका इन्द्रद्वारा सीताको पायस भेजना. ५८२
रामजीका व्याकुल हो सीताको ढूंढ़ते २ जटायुसे मिलना और खबर पाकर उसे तारना. ... ५८३
जटायुका स्तुति करना. ५८६
रामजीकरके कबंध राक्षसका माराजाना. ५८७
रामजीका शबरीके आश्रममें आना और उससे नवप्रकारकी भक्ति कहना तथा उसे गति देकर पंपासरोवरको जाना. ५८८
वसंतऋतुका वर्णन और रामजीका नारदजीके साथ मायाका संवाद. ५९१

इति आरण्यकाण्डम्.

किष्किन्धाकाण्ड ४.

मंगलाचरण. ६०३
हनुमान और रामजीका संवाद. ६०४
रामचन्द्रजी और सुग्रीवकी मित्रता. ६०७
वाली सुग्रीवके जन्मकी कथा (क्षेपक). ६०८
दुंदुभि और वालीका आपसमें युद्ध और शापका चरित्र (क्षेपक). ६११
रामजीका वालीको मारनेकी प्रतिज्ञा करना. ६१२
तालवृक्षकी उत्पत्ति और सर्पका वालीको शाप देना (क्षेपक). ६१३
सुग्रीव और वालीका युद्ध. ६१५
रामजीका वालीकी छातीमें बाण मारना. ६१६
रामजीका और वालीका संवाद और रामजीका वालीको अपने लोक भेजना. ... ६१७
ताराका विलाप और रामजीका उसे धीरज देना और सुग्रीवका राज्याभिषेक. ... ६१८
रामजीका प्रवर्षण पर्वतपर रहना और लक्ष्मणजीसे वर्षा और शरदका वर्णन करना. ... ६२१
रामजीका सुग्रीवपर क्रोध करना. ६२५
सुग्रीवका हनुमान्को वानर बुलानेके लिये भेजना (क्षेपक). ६२६
लक्ष्मणजीका क्रोधित हो किष्किन्धानगरमें जाना और तारा सुग्रीवका चरणोंमें पड़ना. ६२९
सुग्रीवका आकर फिर रामजीसे मिलना. ६३०
सुग्रीवका सीताजीको ढूंढ़नेके लिये वानरोंको भेजना (क्षेपक). ६३१
सुग्रीवका नील अंगद हनुमानादिको दक्षिणदिशाको भेजना. ६३३
वंदरोंको स्वयंप्रभाका मिलना. ६३४
समुद्रके तटपर वानरोंका संपातीसे मिलना. ६३६
संपातीका अपनी युवावस्थाका वर्णन करना. ६३७
संपातीका सीताकी सुध बताना (क्षेपक). ६३८
वानरोंका अपनी उड्डानशक्ति कहना (क्षेपक). ६३९
हनुमानजीके जन्मका वर्णन (क्षेपक). ६४१
जाम्बवन्तका हनुमानको समुद्रलंघनके लिये उद्यत करना. ६४३

इति किष्किन्धाकाण्डम्.

सुन्दरकाण्ड ५.

मंगलाचरण. ६४७
जाम्बवन्तके वचनसे हनुमानजीका समुद्रलंघन और मैनाक और हनुमानका संवाद. ६४८
सुरसा और पवनसुतका संवाद; हनुमानजीका समुद्रके निशिचरको मार लंका जाना. ६४९
लंकापुरीकी शोभाका वर्णन और हनुमानजीका लंकिनीराक्षसीको जीतकर लंकामें प्रवेश करना. ६५०

हनुमानजीका सीताजीसे मिलनेका विचार करना और हनुमान बिभीषणका संवाद. ६५३
हनुमानका अशोकवाटिकामें जाना और तरुपल्लवमें छुपकर बैठना. ६५५
अशोकवाटिकामें रावण और जानकीजीका संवाद. ६५५
त्रिजटाका स्वप्नका वर्णन और सीताजीका दुखी होकर विलाप करना और त्रिजटासे मृत्युमें सहायता मांगना. ६५६
हनुमानजीका वृक्षपरसे मुद्रिका डालना और जानकीजीसे मिलाप होना. ६५८
सीता हनुमानका संवाद. ६५८
हनुमानजीको भूख लगना और सीताजीकी आज्ञा पाकर अशोकवाटिका उजाड़ना. ... ६६२
हनुमानजीका अक्षय कुमारको मारना और मेघनादका हनुमानजीको नागफासमें बांधकर रावणकी सभामें लेजाना. ६६२
हनुमानजी और रावणका परस्पर संवाद. ६६५
रावणका हनुमानजीके अंगभंग करनेके लिये पूछमें रुई लपटाना और आग लगवाना. ६६८
हनुमानजीका लंकादहन करना (क्षेपक). ६६८
हनुमानजीका सीतासे चूड़ामणि ले रामजीके पास बिदा होना. ६७१
हनुमानजीका मधुवनके फल भक्षण करना. ६७२
हनुमानजीका रामजीसे मिलना और चिन्ह दे सीताजीकी अवस्था कहना. ६७३
रामजीका लंकाके लिये पयान. ६७६
मंदोदरी और रावणका संवाद. ६७७
विसीषण और रावणका संवाद. ६७९
बिभीषणका रामजीकी शरणमें जाना. ६८१
रामजीका बिभीषणसे मिलना और संवाद. ६८४
रामजीका बिभीषणसे तिलक करना. ६८७
रामजीका समुद्रसे विनय करना. ६८८
रामजीकी सेनामें वेष पलटकर एक राक्षसका आना और दण्डित होकर लक्ष्मणजीका पत्र लेकर रावणके पास लौट जाना और वृत्तांत कहना. ६८८
शुकका रावणको समझाना. ६८९
रामजीका समुद्रपर क्रोध करना और समुद्रका घबराकर रामशरणमें आना और नल, नीलसे अपने बँधानेको समझाना. ६९२

इति सुंदरकाण्डम्.

लंकाकाण्ड ६.

मंगलाचरण. ६९९
रामजीका रामेश्वरजीकी स्थापना करना और माहात्म्य. ७०१
समुद्रकी आज्ञासे नल और नीलका सेतु बनाना और रामजीका समुद्र उतरना. ... ७०२
मंदोदरी और रावणका संवाद. ७०४
रावणका राक्षसोंसे संमति करना. ७०५

रामजीका चन्द्रमाके उदयका वर्णन करना. ७०८
रामजीका रावणके छत्र मुकुट आदि भंग करना. ७०९
रावणके आगे शुकसारनका वानरोंकी संख्याका वर्णन करना (क्षेपक) ७१२
रामजीका रावणके पास संदेशा देकर अंगदको भेजना. ७१८
अंगद और रावणका संवाद. ७२०
अंगदका सभामें पैर रोपना ७३२
रावण और मन्दोदरीका संवाद. ७३३
अंगदका फिर आना और उसका वचन सुन रामजीका वानरोंसे लंकाको घिरवाना और युद्ध करना. ७३५
माल्यवंत और रावणका संवाद. ७४२
मेघनादका युद्धवर्णन. ७४४
लक्ष्मणजीके शक्तिका लगना. ७४७
हनुमानका सुषेणको लाना और संजीविनी औषधि लेनेजाना; मार्गमें हनुमानका और कालनेमिका संवाद. ७४७
हनुमानका संजीविनी औषधी ले लंकाको जाना और मार्गमें भरतसे मिलना और बातचीतकर विलाप करना. ७४९
हनुमानका लंकामें पहुँचना और लक्ष्मणजीका मूर्च्छासे उठना तथा रावणका कुंभकर्णको जाकर जगाना. ७५३
कुंभकर्णका रावणको समझाना फिर मदिरापान और भैंसे खाकर युद्धको जाना. ... ७५४
कुंभकर्णका वध होना. ७६०
मेघनादके युद्धसे रामका नागफांसमें बँधाना और सेनाका मूर्च्छित होना और गरुड़जीका आकर उसे सचेत करना. ७६२
मेघनादका जाकर यज्ञ करना और लक्ष्मणजीका सेना साथ ले यज्ञविध्वंस कर उसे मारना. ७६३
देवताओंका रामजीकी स्तुति करना और बानरोंका मेघनादका शिर रामजीके सन्मुख रखना. (क्षेपक.) ७६६
शरीरको लंकाके द्वारे धरना और रामजीसे मेघनादके मरणका समाचार कहना. ... ७६६
सुलोचनाकी कथा (क्षेपक). ७६७
अहिरावणकी कथा (क्षेपक). ७८४
राक्षसोंकी सेनाका तयार होना. ७९६
रावणका रामलक्ष्मणके साथ युद्ध करना. ७९७
रावणका पराजित हो यज्ञ करना. ८०२
वानरोंका यज्ञभंग कर लौटना और राक्षसी सेनासे फिर युद्ध होना. ८०२
इन्द्रका रामजीके लिये रथ भेजना. ८०६
रावणका विभीषणके मारनेको शक्ति चलाना और रामजीका मोहित होना. ८१०
रावणका माया रचना. ८१२
त्रिजटा और जानकीका संवाद. ८१५
रामरावणका घोर संग्राम. ८१७

रामजीके द्वारा रावणका वध, वानरोंका रावणके शिरको मंदोदरीके पास धरना, उधर देवोंका स्तुति करना. ... ८१९
रानी मन्दोदरीका विलाप. ... ८२१
रावणकी क्रिया और बिभीषणका राज्याभिषेक. ... ८२२
रामजीका हनुमानको सीताके पास लंका भेजना. ... ८२३
रामजी और जानकीजीका मिलाप. ... ८२५
सीताजीका अग्निमें प्रवेश और रामजीका मातलिको बिदा करना. ... ८२६
देवताओंकी स्तुति. ... ८२७
दशरथजीका आकर मिलाप. ... ८२९
इंद्रका रामजीकी स्तुति करना. ... ८२९
इन्द्रका अमृत बरसाकर वानरोंको जिलाना. ... ८३१
शिवजीका आगमन (क्षेपक). ... ८३१
शिवजीका रामजीकी स्तुति करना. ... ८३२
बिभीषणका आकाशमें जाकर मणि वसन इत्यादि वानरोंको लुटाना. ... ८३४
रामजीका पुष्पक विमानरूढ़हो मुख्य २ वानरोंको साथ लेकर चित्रकूट आदिमें होते हुए अयोध्याको जाना. ... ८३५

इति लंकाकाण्डम्.

उत्तरकाण्ड ७.

मंगलाचरण. ... ८४१
अयोध्यामें शुभशकुन. ... ८४२
हनुमानजीका अयोध्यामें जाना. ... ८४३
भरतमिलाप. ... ८४६
रामजीका कैकेयी आदि माताओंसे मिलना. ... ८४८
श्रीरामजीका राज्याभिषेक. ... ८५३
वेदोंका और शिवजीका रामजीकी स्तुति करना. ... ८५४
रामजीका सुग्रीव आदि वानरोंको विदा करना. ... ८५९
रामजीके राज्यका वर्णन. ... ८६२
रामजीके दर्शनके लिये सनकादिकोंका आना. ... ८७०
रामजीका भरतजीसे संतअसंतोंके लक्षण कहना. ... ८७३
रघुनाथजीका प्रजाके लिये सदुपदेश. ... ८७८
गरुड़जीका कागभुशुंडिसे कथाश्रवणका वर्णन. ... ८८७
कागभुशुंडि और गरुड़का रामकथाके विषयमें संवाद और मूलरामायणका कथन. ... ८९४
कागभुशुंडिका मोहवर्णन. ... ८९७
कागभुशुंडिके पूर्वजन्मकी कथा और कलियुगकी महिमा. ... ९०२

गुरुकी अवज्ञासे ब्राह्मणको शिवजीका शाप. ... ९२८
रुद्राष्टक. ... ९२९
ज्ञान और भक्तिका अभेद तथा ज्ञानदीपक. ... ९३५
गरुड़जीका कागभुशुंडिजीसे ७ प्रश्न करना. ... ९४५
ग्रन्थकी समाप्तिमें रामायणमाहात्म्य और तुलसीदासजीकी विनय. ... ९५५
रामायणकी स्तुति. ... ९५७
रामायणकी आरती. ... ९५८

इति उत्तरकाण्डम्.

लवकुशकाण्ड ८.

भुशुंडी और गरुड़संवाद. ... ९६१
रामजीका काशी जाना. ... ९६२
ब्राह्मणका आना. ... ९६५
एक रजकका ताहिना सुनकर रामजीका लक्ष्मणजीको सीताके त्याग आनेकी आज्ञा देना. ९६६
वाल्मीकिजीका सीताको धैर्य देना. ... ९७२
रामजीका अश्वमेध करनेका विचार. ... ९७४
शत्रुघ्नका सेना लेकर अश्वके साथ जाना और लवणासुरका वध करना. ... ९८२
लवकुश और शत्रुघ्नका संग्राम. ... ९९०
लवकुशकी विजय और पवनपुत्र और सिताका मिलाप. ... १०००
सीताजीका पातालप्रवेश. ... १००१
यज्ञ समाप्त होना और राजाओंकी विदा. ... १००२
रामचन्द्रजीका पुरवासियोंको साथ ले स्वर्गगमन. ... १००७

इति लवकुशकाण्डम्.

अधिक विषयोंकी अनुक्रमणिका.

रामवनवास तिथिपत्र. ... १००९
वैराग्यसंदीपिनी. ... १०१६
हनुमानचालीसा. ... १०२०
गूढ़ार्थचिन्तामणि. ... १०२२
अक्षौहिणी सेनाका चक्र. ... १०२४
ज्ञानमय भजन. ... १०२५
अंतिम ज्ञानमय भजन. ... १०२५
ग्रन्थसमाप्ति. ... १०२६

इति ।

श्रीयुत गोसाँईं तुलसीदासजी.

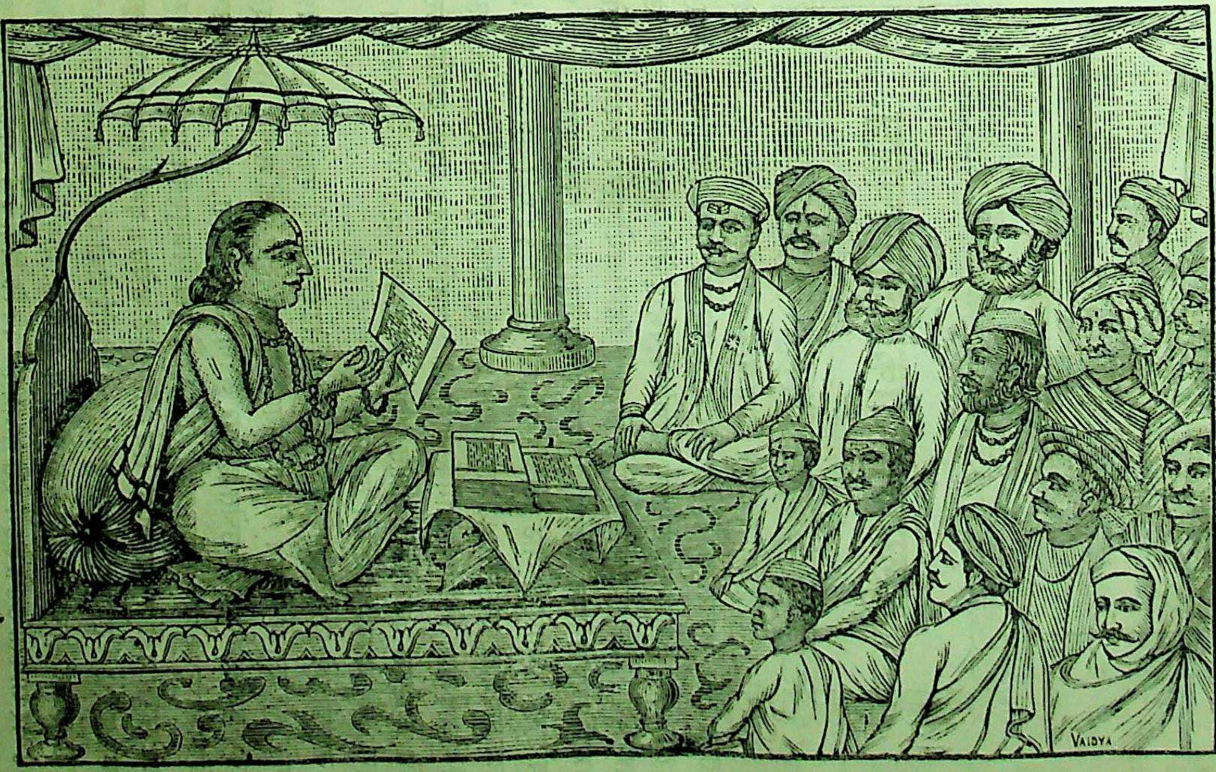

॥ श्रीः ॥

श्रीगोस्वामी

तुलसीदासजीका जीवनचरित्र.

गोस्वामी तुलसीदासजी **राजापुर** जिला **बांदा**के रहनेवाले सरयूपारी ब्राह्मण थे । उनके पिताका नाम **आत्माराम** द्विवेदी और गोत्र **पाराशर** था । उनका जन्म संवत् १५८९ में हुआ, किन्तु मूलनक्षत्रके प्रथम चरणमें उत्पन्न होनेके कारण मातापिताने उसी क्षण त्याग दिया, जैसा मुहूर्तचिन्तामणिमें लिखा है कि **“अथोचुरन्ये प्रथमाष्टघट्यो मूलस्य शाक्रान्तिमपञ्चनाड्यः । जातं शिशुं तत्र परित्यजेद्वा मुखं पितास्याष्टसमा न पश्येत्”** अर्थात् मूलके आदिकी आठ घटी और ज्येष्ठाके अन्तकी १३ घटी अभुक्तमूल है. इसमें जो बालक उत्पन्न हो उसे त्याग दे. अथवा आठ वर्षतक उसका मुख न देखै और उसके प्रमाणमें गोसाईंजीकी विनयपत्रिकामें लिखा है कि **“जननि जनक तज्यो जनमि करम विन विधि हुँ सृज्यो अवडेरे”** अर्थात् मुझको जन्मतेही मातापिताने तजदिया था और ईश्वरने मुझे भाग्यविन उत्पन्न कर पटका था.

मातापिताके त्याग देनेपर गोसाँईजीको **नृसिंहदास** नामी एक साधु **शूकरक्षेत्र**में उठा ले गये और उनका पालन पोषण किया । बालकपनहीसे उक्त साधुने तुलसीदासजीको रामकंथाका प्रेमी बनाकर सचेत होनेपर अपना शिष्य बनाया. यह प्रकरण **बालकाण्ड**के नीचे लिखेहुए पदोंसे प्रमाणित भी होताहै, **“मैं पुनि निजगुरुसन सुनी, कथा सुशूकरखेत ॥ समुझ नहीं तसु बालपन, तब अति रहेउँ अचेत ॥ वन्दौं गुरुपदकंज, कृपासिंधु नररूप हरि ॥”** महात्मा **दीनबन्धु** पाठकने गोसाँईजीको एक सुयोग्य रामभक्त जानकर अपनी गुणवती कन्याका विवाह उनके साथ करदिया. गोसाँईजी जब अपनी स्त्रीको सुसरालसे घर लाये तो उसके स्नेहमें ऐसे तन्मय हो गये कि विना देखे उनको चैन न पडता था। कई बार स्त्रीके पिताने मनुष्य भेजकर बुला भेजा पर गोसाँईजीने बिदा नहीं की, अन्तमें गोसाँईजीका साला बुलाने आया तिसपर भी नहीं भेजते थे, तब एक दिन ज्यों ही गो-

साँईजी बाजार सौदा लेने गये उनकी स्त्री अपने भाईके साथ छिपकर विना कहे सुने चलदी। बाहरसे लौट आनेपर गोसाँईजीने घरमें स्त्रीको न देखकर पडोसियोंसे पूछा। जब उनको विदित हुआ कि अपनी स्त्री पीहर चलीगई है तौ उसी क्षण उन्होंनेभी सुसरालकी राह ली। अभी स्त्री अपने पिताके घर पहुँचकर लोगोंसे मिलने भेटने भी नहीं पाई थी कि पीछे २ आपभी जा पहुँचे। गोसाँईजीको देखतेही स्त्री बहुत क्रोधित हुई और झुंझलाकर कह बैठी कि जैसी प्रीति तुम्हारी मेरे इस हाडमांसके शरीरपर है यदि ऐसीही प्रीति कहीं रामचन्द्रजीमें होती तौ क्या बात थी, क्योंकि जो सुन्दरताई रामचन्द्रजीमें है वह संसारकी वस्तुमात्रमें दुर्लभ है। स्त्रीके मुखसे इस बातको सुनतेही गोसाँईजीको वैराग्य उत्पन्न होगया और उसी समय घरको छोड काशीपुरीमें आ बसे और ईश्वरके आराधनमें तत्पर हुए। गोसाँईजीके ज्ञानका मूलसूत्र यही वाक्य है। गोसाँईजीका नियम था कि जब वह प्रातःकाल शौच जाते थे तौ लौटते समय जो जल बचजाताथा उसको एक बेरके वृक्षकी जडमें डालदेतेथे। एक दिन जब वे उसी पेडके पास पहुँचे तौ संयोगसे लोटेमें जल नहीं बचा था, वह सोचमें खडे रह गये। इतनेहीमें वृक्षपरसे एक भूत बोल उठा कि तुम्हारे नित्यके जलदानसे हम सन्तुष्ट हैं, कोई चिन्ता नहीं, जो आज जल नहीं है. हम तुमसे प्रसन्न हैं, जो चाहो माँगो। गोसाँईजीने रामका दर्शन माँगा. तब प्रेत हँसकर बोला यदि हम इसी योग्य होते तौ इस योनिको क्यों भोगते? पर कोई चिन्ता नहीं. मैं तुमको एक उपाय बतलाताहूं, उससे अभीष्टदर्शन होजायगा। उपाय यही है कि कर्णघंटापर रामायणकी कथा होती है. उसके सुननेके लिये नित्यप्रति हनूमानजी एक कोढी दरिद्री मनुष्यका वेष बना कर अमुक समयपर आते हैं, तुम जाकर उनका दर्शन करो तौ उनके द्वारा रामदर्शनभी सुलभ होगा। गोसाँईजी प्रसन्न होकर वहाँसे चले और प्रेतके बतलाये हुए स्थान और समयपर जा पहुँचे। कथा समाप्त होनेपर जब हनूमानजी चले तब एकान्तमें गोसाँईजी उनके चरणोंमें जा लिपटे। हनूमानजीने कहा तू कौन है? और मुझे क्यों सताता है? मैं कुछ नहीं जानता, मुझे छोड दे परन्तु गोसाँईजीने पैर नहीं छोडे और कहा कि मैं भूतका लगाया हुआ हूँ, जबतक रामजीका दर्शन न पाऊँगा तबतक न छोडूंगा. अन्तको जब हनूमान्जीने रामका दर्शन करादेनेकी प्रतिज्ञा की तब पैर छोडे.

हनूमान्जीने गोसाँईजीको शिवमंत्रका उपदेश करके आज्ञा दी कि चित्रकूट जाकर इसका साधन करो. छः महीने पीछे तुमको रामजीका दर्शन होगा. गोसाँईजी चित्रकूट जाकर मंत्र जपने लगे। एक दिन जंगलमें गये तौ क्या देखते हैं कि दो बालक धनुषबान हाथमें लिये घोडेपर चढे मृगया करते हुए आगेसे चले जारहे हैं। गोसाँईजीने उनको कोई अन्य मृगयाशील जानकर उनकी ओरसे दृष्टि हटाली। हनुमानजीने प्रगट ही-

कर गोसाँईजीसे पूछा दर्शन हुए? गोसाँईजीने पछताकर कहा कि हमने पहिचाना नहीं, इससे आँख हटा ली. और प्रेममय होकर उसी समय यह पद बनाकर गाया-

"लोचन रहे वैरी होय।
जान बूझ अकाज कीन्हों गये भूमें गोय।
अवगति जो तेरी गति न जान्यों रह्यो जागत सोय।
सबैं छबिकी अवधिमें है निकस गये ढिंग होय।
कर्महीन मैं पाय हीरा दयो पलमें खोय।
दासतुलसी राम बछुरे कहो कैसी होय॥"

यह पद सुनकर हनूमानजी प्रसन्न हुए और फिर दर्शन दिलानेकी प्रतिज्ञा करके अन्तर्ध्यान हो गये। एक दिन गोसाँईजी अनायास बनमें पर्यटन करने निकले तौ क्या देखा कि एक स्थानमें रामलीला बडी धूमधामसे हो रही है. रामचन्द्र, सीता, लक्ष्मण विराजमान हैं; लंकाको जीत बिभीषणको राजतिलक होरहा है. तुलसीदासजी यह लीला देख जब घरकी ओर लौटे तब मार्गमें एक ब्राह्मण मिला. गोसाँईजीने उससे रामलीलाका समाचार कहा. तब ब्राह्मण हँसकर बोला कि गोसाँईजी! आप तौ आज पागलोंकीसी बातें करते हो; भला रामलीला आश्विनमें होती है, इन दिनोंमें रामलीलाका क्या काम? इसपर गोसाँईजी बडे झुंझलाये, कहा कि मैं तौ अभी देखकर आयाहूं, निदान उसको दिखलाने लेगये परन्तु वहाँ तौ कुछ भी नहीं था; तब बडे लज्जित हुए, और चित्तमें हनूमानजीके वचनका स्मरण आया कि मुझे यही रामचन्द्रजीके दर्शन हुए। फिर तौ प्रसन्न हो अयोध्याजीमें आ पधारे.

कहते हैं कि यहाँ रामचन्द्रजीने गोसाँईजीको स्वप्नमें भाषामें रामायण बनानेकी आज्ञा दी, फिर गोसाँईजीने संवत् १६३१ चैत्र सुदी नवमी मंगलवारको रामायणका बनाना आरंभ किया. जैसा कि बालकांडमें लिखा है—

"संवत् सोलहसौ इकतीसा। करौं कथा हरिपद धरि सीसा।
नौमी भौमवार मधुमासा। अवधपुरी यह चरित प्रकासा॥"

परन्तु वे आरण्यकाण्डतकभी नहीं बनाने पाये थे कि वैष्णवोंसे कुछ झगडा होजानेके कारण बनारसमें चले आए और अस्सीघाटपर लोलार्क कुंडके समीप रहने लगे. गोसाँईजी जब बनारसमें आये तौ चारों ओर रामचर्चा फैली, इसपर वहांके शास्त्री लोग गोसाँईजीसे शास्त्रार्थ करनेके लिये आये और कहा कि भाषाका प्रमाण बतलाइये, तब गोसाँईजीने यह दोहा पढा-

"हरहरिजस सुरनरगिरा, बरनहिं संत सुजान।
हांड़ी हाटक चारु चिर, रांधै स्वाद समान॥"

और बोले कि मैं वादविवाद नहीं करताहूं, तब सब पण्डितोंने यह बात मधुसूदनाचार्य दंडी स्वामीजीसे जाकर कही, उन्होंने यह श्लोक पढ गोसाँईजीको धन्यवाद दिया कि

"परमानन्दपत्रोऽयं जंगमस्तुलसीतरुः ।
कवितामञ्जरी यस्य रामभ्रमरभूषितः ॥ १ ॥

अर्थात् परम आनन्दस्वरूप पत्रोंसे शोभित, कवितारूपी मञ्जरीसे युक्त और रामरूपी भ्रमरसे भूषित यह तुलसीका वृक्ष है. यह सुन शास्त्री लोगोंने गोसाँईजीके पास जाकर अपना अपराध क्षमा कराया । फिर एक समय एक हत्यारा भीख मांगता २ राम २ कहताहुआ काशीमें चला आया. गोसाँईजीने उसे स्नान कराकर पास बैठाय, पंक्तिमें भोजन कराया, यह बात सुन दुष्ट ब्राह्मणोंने सभा की और गोसाँईजीको वहां बुलाकर पूछा कि इसका पाप कैसे गया जो आपने इसे पंक्तिमें बैठाकर भोजन कराया? गोसाँईजीने उत्तर दिया कि तुमने पुस्तकें पढ २ कर धूलमें मिलाई और रामनामका माहात्म्य पढकरभी जानते नहीं हो, अब जिस बातसे तुमको निश्चय होय सो कहो. वे सब बोले कि जो इसके हाथसे विश्वेश्वरनाथका नादिया खाय तो विश्वास आवे कि इसकी हत्याका निवारण हुआ । गोसाँईजी प्रसाद बनाकर उसके हाथ मन्दिरमें लिवा ले गये और नादियेके मुखसे लगातेही वह खागया और जय २ ध्वनि होने लगी, तब तौ ब्राह्मण बडे लज्जित हो गोसाँईजीके चरणोंपर गिरे.

एक समय एक साधु अलख २ कहताहुआ गोसाँईजीके पास भिक्षा मांगने आया और कहने लगा कि बाबा अलख कहो २. यह सुन गोसाँईजीने कुछ ध्यान न दिया तब वह क्रोध कर गोसाँईजीको गालियाँ देने लगा. तब गोसाँईजीने झुंझलाकर उसके सामने यह दोहा पढा–

"हमलख हमहिं हमार लख, हम हमारके बीच ।
तुलसी अलखहिं का लखै, रामनाम जपु नीच ॥"

यह सुन साधु लजित हो उनके चरणोंपर गिरा ।

एक समय काशीमें वैष्णव और योगियोंमें बडा शास्त्रार्थ हुआ । निदान जब योगियोंका पराजय हुआ तब उनके गुरुने अपनी योगविद्यासे सूबेदारको उठवा मँगाया और आज्ञा दी कि सब वैष्णवोंकी कंठी माला छीनलो. तब सूबेदार उस योगीको साथ ले वैष्णवोंकी कंठी माला छीनता हुआ गोसाँईजीके पास गया तौ उस समय सब लोगोंके पाँव बँध गये और सूबेदार और योगीने देखा कि एक बडा भयंकर पुरुष सोटा लिये मारता चला आता है. तब तौ घबराकर त्राहि २ कर गोसाँईजीके चरणोंमें गिरे और उन दोनोंने अपना अपराध क्षमा कराया और जिनकी कंठी माला छीनी थीं उन सबकी लौटादीं

एक दिन गोसाँईजी माघमासमें प्रातःकाल कटिपर्यन्त जलमें खडे तप कर रहेथे उस समय एक वेश्याने आकर कहा कि इस ब्राह्मणको अपने शरीरका कुछभी मोह नहीं है. यह बात गोसाँईजीने सुनली और जब गंगाजीमेंसे निकल धोतीपर छींटा देकर पहिरने लगे तब एक छींटा वेश्याके ऊपर भी पडगया तब तौ उसकी दिव्य दृष्टि होगई. स्वर्ग, नरक, पाताललोक दीखने लगे, यमयातना तथा परपुरुषसे विषयादि पाप करनेका जो दण्ड मिल रहाथा उसे देख बडी चकराई। थोडी देर यह चमत्कार देख गोसाँईजीके चरणोंमें पडी और सब प्रपंच छोड रामभजनमें लवलीन होगई.

एक दिन बनारसमें गोसाँईजी अँधेरी रातको घरपर आ रहेथे कि अचानक चोरोंने आकर उनको घेर लिया. तब निर्भय हो उन्होंने यह दोहा पढा कि—

"बासर ढासनिके ढका, रजनी चहुँ दिसि चोर।
दलत दयानिधि देखिये, कपि केसरीकिसोर॥"

अर्थात् दिनमें तौ ठगबाज ढक्के देते हैं और रात्रिमें चोरोंने घेरलिया. हे हनूमानजी। मुझको दुःख सहता देखिये। यह पढतेही हनूमानजी आये और चोर सब विह्वल हो पृथ्वीपर गिर पडे और गोसाँईजी आनन्दसे घर पहुँच गये.

गोसाँईजीकी अकबर बादशाहके मंत्री खानखानाके पुत्र अबदुलरहीमसे बडी मित्रता थी. एक दिन गोसाँईजीने उसे यह समस्या लिखकर भेजी कि "सुरतिय नरतिय नागतिय, सह वेदन सब कोय" अर्थात् देवताओंकी स्त्रियां नागोंकी स्त्रियाँ और मनुष्योंकी स्त्रियां जननेकी पीडाको सहती हैं। इसके उत्तरमें उसने यह लिख समस्यापूर्ति करीकि "गर्भ लिये हुलसी फिरै, तुलसीसौ सुत होय" अर्थात् तिसपरभी स्त्रियाँ प्रसन्नतासे गर्भ लिये फिरती हैं कि तुलसीके समान पुत्र होय. इसपर गोसाँईजी बहुत प्रसन्न हुए.

गोसाँईजीकी यह व्यवस्था थी की पूजा तथा रसोईके बर्तन योंही पडे रहते थे। एकबार रातको चोर कईबार चुराने आये परन्तु जब आवें तभी किसी श्यामवर्ण पुरुषको धनुषबाण हाथमें लिये पहारा देते देखें. निदान लज्जित हो प्रातःकाल गोसाँईजीकी शरण आकर कहने लगे कि महाराज! सांबले सिपाही जो आपके यहां रात्रिको पहरा देते हैं सो कौन हैं? तब गोसाँईजीको ध्यान हुआ कि हमारे बर्तनोंके पीछे श्रीरामजीको दुःख सहना पडता है, यह सोचकर जितनी सम्पत्ति आश्रममें थी सब लुटादी. यह चरित्र देख सब चोर उनके शिष्य हो गये.

एकसमय एक ब्राह्मण मरगया। उसकी स्त्री सती होनेको चली जाती थी; उसने देखा कि गोसाँईजी मार्गमें खडे हैं। उन्हें देख प्रणाम किया. इनके मुखसे निकला कि सौभाग्यवती हो। तब उस मृतकके भाई बन्धु जो साथमें थे कहने लगे कि महाराज! यह तौ आज विधवा होगई है और अपने पतिके साथ सती होने जाती है, आपके आशीर्वाद

का फल कैसे हो सक्ता है? गोसाँईजीने कहा अभी इसका अग्निसंस्कार मत करना, मैं थोडी देरमें आताहूँ । फिर वहाँ जाय गंगास्नान कर रामके भजनमें मग्न हो गये कुछ कालमें वह मनुष्य इसप्रकार उठ बैठा कि जैसे कोई गहरी नींदसे उठ बैठताहै. और गोसाँईजीकी महिमाका फल सुनकर उनके चरणोंमें गिर पडा. "जय राम जय राम" शब्द होने लगा और सब अपने अपने घर गये.

गोसाँईजीके ऐसे ऐसे चरित्र जब बादशाहके कानतक पहुँचे तब उसने अपने मंत्रीको उनके बुलानेको भेजा । गोसाँईजीने यही उत्तर दिया कि मैं तौ केवल रामका नाम जानताहूं, और मेरे पास कोई चमत्कार नहीं है. तब बादशाहने कहा रामचन्द्रजीकोही दिखाओ । यह कहकर उनको कारागृहमें भेज दिया । उस समय गोसाँईजीने दुखी होकर यह पद बनाया—

पद

ऐसी तुम्हें न बूझये हनुमान हठीले ।
साहब सीतानाथसे तुम सेवकसीले ॥
तुम्हरे देखत सिंहके सिसु मेंडुक लीले ।
जानत हों कलि तेरेहू गुणगण सब कीले ॥
हांक सुनत दसकंधके बंधन भये ढीले ।
सो बल गयो किधों भये अब गर्व गहीले ॥
सेवकको परदा फटै तुम समरथ सीले ।
सासति तुलसीदासकी सुन सुजस तुहीं ले ॥
तिहूँ काल तिनको भलो जो रामरँगीले ।

इस पदके बनातेही लाखों बानर कोटपर चढ आये और अनेक उपाधि मचाने लगे, गढके कंगूरे तोड २ महलमें घुस गये, प्रलयसा करने लगे । लूटना, तोडना, फाडना सब नगरमें फैला दिया. प्रियादास लिखते हैं कि—

ताही समय फैलगये कोटि २ कपि नये,
नोचैं तनु खैंचैं चीर भयो यों बिहाल हो ।
फोरैं कोट मारैं चोट किये डारैं लोट पोट,
लीजै कौन ओट जानि भायों प्रलयकाल हो ॥

बादशाह यह दशा देखकर बडे घबराये । तब लोगोंने कहा कि हजरत सलामत ! आपने जिनको कैद किया है उनके हनूमानजी इष्टदेव हैं, उनको छोड दीजिये नहीं तौ और अधिक उपद्रव होगा. तब बादशाह आकर उनके चरणोंमें गिरा और कहा कि मेरा अपराध क्षमा करिये. गोसाँईजी बोले कि तू रामजीको देखना चाहताथा इसलिये उन्होंने

पहिलेसे अपनी सेना भेजदी है. अपभी अब आवैंगे सो तुम देख लेना. बादशाह बडा लज्जित हुआ और बहुतसी भेट आगे धरी। तब गोसाँईजीने कहा हमको कुछ नहीं चाहिये किन्तु यह नगर अब रघुनाथजीका हुआ और झंडा गडा; अब तुम और जगह नया स्थान बनवाकर रहो; इसमें तुम्हारा भला है. यह सुन बादशाह पुरानी दिल्ली छोड अपने रहनेके लिये शाहजाहानाबाद एक नया शहर बसा कर वहां जारहा.

गोसाँईजी दिल्लीसे लौटते समय वृन्दावन गये और वहां नाभाजीसे मिले. उन्होंने इनका बडा आदरसत्कार किया और रामायणकी प्रशंसामें यह छप्पय बनाकर पढा कि—

त्रेता काव्यनिबन्ध करी सतकोटि रामायण।
इक अच्छर उद्धरै ब्रह्महत्यादिपरायण ॥
अब भक्तन सुखदैन बहुरि लीला विस्तारी।
रामचरणरसमत्त रटत अह निसि व्रतधारी ॥
संसार अपारके पारको सुगमरूप नौका लयो।
कलिकुटिल जीव निस्तारहित, वाल्मीकि तुलसी भयो ॥ १ ॥

गोसाँईजी जहाँ जातेथे वहाँ सीताराम कहतेथे, परन्तु वहाँ चारों ओरसे "राधाकृष्ण २" ऐसा शब्द सुनकर उन्होंने यह दोहा पढा—

दोहा

राधाकृष्ण सबै कहैं, आक ढाक अरु कैर।
तुलसी या व्रजमें कहा, सीयरामसों वैर ॥

वहाँ वे एक कुटीमें ठहर रहे. इधर उधर कहीं न जाँय. तब एक वैष्णव धोखा देकर मदनगोपालजीके मन्दिरमें लेगये कहा कि चलिये रामचन्द्रके दर्शन करावैं. गोसाँईजी वहां गये और मदनगोपालजीके हाथमें वंशी देख यह दोहा पढा—

"कहा कहौं छबि आजकी, भले बने हौ नाथ।
तुलसी मस्तक जब नवै, धनुषबाण लो हाथ ॥"

यह सुन मदनगोपालजीने बंशी छिपाकर धनुषबाण हाथमें लेकर इनको दर्शन दिया. तब गोसाँईजीने यह दोहा पढा—

"क्रीट मुकुट माथे धऱ्यो, धनुष बाण लिय हाथ।
तुलसी निज जन कारने, नाथ भये रघुनाथ ॥"

फिर यहांसे गोसाँइझी काशीको पधारे ॥

ऐसे गोसाँईजीके औरभी अनेक चरित्र हैं, और गोसाँईजीकी बनाई हुई निम्न लिखित पुस्तकोंका प्रचार अबतक हो रहा है ॥

कवित्तरामायण. २ गीतावली. ३ दोहावली. ४ विनयपत्रिका. ५ रामसतसई.
६ ावली. ७ रामलता. ८ नहछू. ९ बैराग्यसंदीपिनी. १० बरवारामायण.
१ र्वतीमंगल. १२ जानकीमंगल. १३ रामशकुनावली. १४ चौपाईरामायण.
१५ंकटमोचन. १६ हनूमानबाहुक. १७ रामशलाका. १८ कुंडलियारामायण.
ड्डकारामायण. २० रोलारामायण और झूलनारामायण.

साँईजीका देहान्त संवत् १६८० में श्रावण शुक्ल ७ को हुआथा; जैसाकि निम्नलि-
दोहेसे प्रकट है:-

"संवत सोलहसौ असी, असी गंगके तीर।
स्रावण शुक्ला सप्तमी, तुलसी तज्यो शरीर॥"

जीके अन्तिम वचन ये थे

दोहा

रामनामजस बरनिकै, भयो चहत अब मौन।
तुलसीके मुख दीजिये, अबहीं तुलसी सौन॥

इति

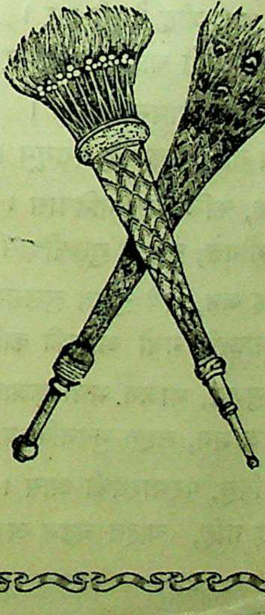

फल
कहीं
हियें.
हां "।"
नहीं
२
ना
कों-
॥
॥
करो.
४
खोटे
५
श है,
॥
॥,
ध्यम
॥

श्रीः

अथ तुलसीदासकृत रामनामरटना.

दोहा.

रामवामदिसि जानकी, लषण दाहिनी ओर ।
ध्यान सकल कल्यानमय, सुरतरु तुलसी तोर ॥ १ ॥
रामनाम मनि दीप धरु, जीह देहरी द्वार ।
तुलसी भीतर बाहिरहु, जो चाहसि उजियार ॥ २ ॥
रामनामको अंक है, सब साधन हैं सून ।
अंक गये कछु हाथ नहिं, अंक रहे दसगून ॥ ३ ॥
रामनामको कल्पतरु, कलि कल्याननिवास ।
जो सुमिरत भयो भाँगते, तुलसी तुलसीदास ॥ ४ ॥
रामनाम जपि जीह जन, भये सुकृत सुखसालि ।
तुलसी यहाँ जो आलसी, गयो आजुकी कालि ॥ ५ ॥
रामनाम सुमिरत सुजस, भाजन भयो कुजात ।
कुतरु कुसुरपुर राज मग, लहत भुवनविख्यात ॥ ६ ॥
रामनाम अवलंब विनु, परमारथकी आस ।
बरसत बारिद बूंद गहि, चाहत चढन अकास ॥ ७ ॥

तुलसीदासकृत रामनामरटना.

रामनाम बर बरन जग, सावन भादौं मास ।
वर्षाऋतु रघुपतिभगति, तुलसीदास सुदास ॥ ८ ॥
रामनाम नरकेसरी, कनककसिपु कलिकाल ।
जापक जन प्रह्लादजिमि, पालहिं दलि सुरसाल ॥ ९
रामनाम कलि कामतरु, सकल सुमंगलकन्द ।
सुमिरत करतल सिद्धि सब, पग पग परमानन्द ॥ १०
रामनाम कलि कामतरु, रामभक्ति सुरधेनु ।
सकल सुमंगलमूल जग, गुरुपदपंकजरेनु ॥ ११ ॥
रामनाम परतापते, प्रीति प्रतीति भरोस ।
सो तुलसी सुमिरत सकल, सगुन सुमंगलकोस ॥ १२ ॥
रामनाम सब धर्ममय, जानत तुलसीदास ।
यथा भूमि वस बीजमें, नखतनिवास अकास ॥ १३ ॥
रामनाम नित कहत हर, गावत वेद पुरान ।
हरन अमंगल अघ अखिल, करन सकल कल्यान ॥ १४ ॥
रामनाम सुमिरत मिटहिं, तुलसी कठिन कलेस ।
स्वारथ सुख सुपनेहु अगम, परमारथ परबेस ॥ १५ ॥
रामनामकी लूट है, लूटी जाय सो लूट ।
अंतकाल पछतायगो, प्रान जायँगे छूट ॥ १६ ॥
रामनाम कहवो करौं, जबलगि घटमें प्रान ।
कबहूँ दीनदयालुके, भनक परैगी कान ॥ १७ ॥
रामनामरति रामगति, रामनाम बिस्वास ।
सुमिरत सुभ मंगल कुसल, चहुँ दिसि तुलसीदास ॥ १८
नाम ललित लीला ललित, ललितरूप रघुनाथ ।
ललित वसन भूषन ललित, ललित अनुज सिसुसाथ ॥ १९ ।
राम भरत लछ्मन ललित, सत्रुसमन सुभ नाम ।
सुमिरत दसरथसुवन सब, पूजहिं सब मनकाम ॥ २० ॥

इति रामनामरटना सम्पूर्ण ॥

श्रीगोस्वामी
ीदासकृत रामशलाका प्रश्न.

		वि	हो	मुं	ग	व	सु	नु	वि	ध	धि	इ	द
	फ	सि	सि	रें	वस	है	सं	ल	न	ल	य	न	अं
		सु	कु	म	स	ग	त	न	ई	ल	धा	वे	नो
	[illegible]	कु	जो	म	रि	र	र	अ	की	हो	सं	रा	य
	थ	सी	जें	इ	ग	म	सं	क	रे	हो	स	स	नि
	त्र	र	स	ह	ह	व	व	प्र	चि	स	य	स	तु
ा	ा	र	र	मा	मि	मी	म्हा	ा	जा	हू	हीं	ा	जू
	रे	री	ह्र	का	फ	खा	जिं	ई	र	स	पू	द	ल
ो	सि	गो	न	स	ज	य	ने	मणि	क	ज	प	स	ल
ा	म	स	रि	ग	द	न	ब	सु	खि	जि	म्नि	त	जं
	न	न	कौ	मि	ज	र	गु	धु	ख	सु	का	स	र
रु	स	अ	ध	नि	म	ल	ा	न	व	ती	[illegible]	रि	भ
पु	व	अ	ढा	र	ल	का	ए	तु	र	न	नु	क	थ
हु	सु	म्ह	रा	र	स	हि	र	त	न	ष	ा	जा	ा
सा	[illegible]	ला	धी	ा	री	ज	हू	हीं	खा	जू	ई	रा	रे

दो०—श्रीगणेशकौं सुमरिके, शारदकौ धरि ध्यान ।
लिखित प्रश्नकी रीति सों, उत्तर लीजौ जान ॥ १ ॥

है कि प्रश्नकर्त्ता श्रीरामचंद्रजीका हृदयमें ध्यान स अक्षरको किसी अलग कागज अथवा पट्टी- वाँ अक्षर वहाँतक लेलेकर लिखे कि जिस

कोष्टकपर उँगली धरी थी. ऐसा करनेसे एक चौपाई बनेगी. उसीसे अपने प्रश्नका फल जानना चाहिये—परन्तु इतना ध्यान रहै कि कहीं तौ चौपाई ठीक निकलती है और कहीं अक्षर ऊपरके नीचे और नीचेके ऊपरभी होजाते हैं सो यथायोग्य मिलालेनें चाहियें. उसमें कुछ कठिनता नहीं है. पढनेसे स्पष्ट दीख पडते हैं और कोष्टकोंमें जहां "ा" ऐसा संकेत है वह दीर्घका है. यदि बीचकी गणनामें आपडे तौ कुछ काम नहीं परन्तु जिस अक्षरसे दशवीं संख्यापर हो उस अक्षरको दीर्घ करना चाहिये ॥

उदाहरण-(१) पहिले कोष्टकपर हाथ धरा तौ प्रथम (सु) आया फिर दशम २ अक्षर लेनेसे यह चौपाई बनी. (सुनु सिय सत्य असीस हमारी । पूजहि मनकामना तुम्हारी ॥) अब इस चौपाईसे "हमारी" का मकार और "तुम्हारी" का म्हकार कोष्टकोंमें ह्रस्व हैं परन्तु इनसे १० संख्यापर "ा" है इसलिये दीर्घ कर दिये ॥

ऊपरके प्रश्नमें जो चौपाइयाँ निकलती हैं उनको फलसहित लिखते हैं ॥

नु सिय सत्य असीस हमारी । पूजहि मनकामना तुम्हारी ॥ १ ॥
प्रविसि नगर कीजै सब काजा । हृदय राखि कोसलपुरराजा ॥ २ ॥

प्रश्न उत्तम है, कार्य सिद्ध होगा ॥ १ ॥ भगवान्का स्मरण करके कार्यका आरंभ करो. सिद्ध होगा, फल शुभ है ॥ २ ॥

उघरे अंत न होइ निबाहू । कालनेमि जिमि रावण राहू ॥ ३ ॥
विधिबस सुजन कुसंगति परहीं । फणिमणिसमनिजगुणअनुसरहीं ४

जो कार्य तुमने विचारा उसके अंतमें भलाई नहीं है फल मध्यम है ॥ ३ ॥ खोटे ष्योंका संग छोडो, कार्यमें विलंब है ॥ ४ ॥

होइ है सोइ जो राम रचि राखा । कोकरि तरक बढ़ावहि साखा ५
मुदमंगलमय संतसमाजू । जिमि जग जंगम तीरथराजू ॥ ६ ॥

अपने कामको भगवान्के ऊपर छोडो. कार्य होनेमें संदेह है ॥५॥ प्रश्न अच्छा है, कार्य होगा ॥ ६ ॥

गरल सुधा रिपु करै मिताई । गोपद सिंधु अनल सितलाई ॥ ७ ॥
वरुण कुबेर सुरेस समीरा । रणसन्मुख धरि काहु न धीरा ॥ ८ ॥
सफल मनोरथ होइँ तुम्हारे । राम लषन सुनि भये सुखारे ॥ ९ ॥

प्रश्न अच्छा है, शत्रुओंका नाश होगा ॥७॥ कार्य सिद्ध होनेमें सन्देह है, फल मध्यम है ॥ ८ ॥ सब मनोरथ सिद्ध होंगे, धनकी प्राप्ति होगी, फल बहुत श्रेष्ठ है ॥ ९ ॥

अथ

तुलसीदासकृत प्रभाती ॥

गाइये गणपति जगवन्दन । शंकरसुवन भवानीनंदन ॥ टेक ॥
सिद्धिसदन गजवदन विनायक, कृपासिन्धु सुन्दर सबलायक ॥
मोदकप्रिय मुद मंगलदाता, विद्यावारिध बुद्धिविधाता ॥
माँगत तुलसिदास कर जोरे, बसहिं राम सिय मानस मोरे ॥ १ ॥

जागिये रघुनाथ कुँवर पंछी बन बोले ॥ टेक ॥
चन्द्रकिरण शीतल भइ चकई पियमिलन गई
त्रिविध मंद चलत पवन पल्लव द्रुम डोले ॥ १ ॥

प्रात भानु प्रकट भयो रजनीको तिमिर गयो
भृंग करत गुंजगान कमलन दल खोले ॥ २ ॥

ब्रह्मादिक धरत ध्यान सुर नरमुनि करत गान
जागनकी वेर भई नयनपलक खोले ॥ ३ ॥

तुलसिदास अतिअनंद निरखके मुखारविन्द
दीननको देत दान भूषण बहुमोले ॥ ४ ॥

जागिये कृपानिधान जानराय रामचन्द्र, जननी कहे बार बार भोर भयो प्यारे ॥ राजिवलोचन विशाल पीतबापिकामराल, ललित कमलबदनउपर मदन कोटि वारे ॥ १ ॥ अरुण उदित विगत शर्बरी शशांककिरण हीन, दीन दीपज्योति मलिन द्युतिसमूह तारे ॥ मनोज्ञानघनप्रकाश बीते सब भवविलास, आसत्रासतिमिर तोष तरणितेज जारे ॥२॥ बोलत खगनिकर मुखर मधुर कर प्रतीत सुनो, श्रवण प्राणजीवनधन मेरे तुम बारे ॥ भनैं वेद बंदी मुनीवृंद सूत मागधादि, बिरद बदत जै

जै जै जैति कैटभारे ॥ ३ ॥ विकसत कमलावली सुचले पुंज चंचरीक, गुंजत कल कोकिल धुन त्याग कुंज न्यारे ॥ मनो विराग पाय सलिल शोककूप गृह विहाय, भृत्य प्रेममत्त फिरत गुनत गुन तिहारे ॥ ४ ॥ सुनत बचन प्रिय रसाल जागे अतिशय दयाल, भागे जंजाल विपुल दुखकदंब टारे ॥ तुलसिदास अतिअनंद देखके मुखारविंद छूटे भ्रम परमफंद मंद द्वंद्वभारे ॥ ५ ॥

सायंकालकी वंदना.

राग गौरी

श्रीरामचन्द्र कृपालु भजु मन हरण भवभयदारुणं ।
नव कंज लोचन कंज मुख कर कंज पद कंजारुणं ॥
कन्दर्प अगणित अमित छवि नवनील नीरदसुन्दरं ।
पट पीत मानहुँ तड़ित रुचि शुचि नौमि जनकसुतावरं ॥
भज दीन बन्धु दिनेश दानव दैत्यवंशनिकन्दनं ।
रघुनन्द आनँद कन्द कोशलचन्द दशरथनंदनं ॥
शिर मुकुट कुंडल तिलक चारु उदार अंगविभूषणं ।
आजानु भुज शर चापधर संग्रामजितखरदूषणं
इति बदति तुलसीदास शंकर शेष मुनिमनरंजनं ।
मम हृदयकंज निवास करु कामादिखलदलगंजनम् ॥ १ ॥

॥ श्री ॥

रामायणप्रशंसा.

कवित्त.

वेद्बन घनतें उपारि रामनाम बूँटी बुद्धिरस सान मन घोटातें घुटाई है॥ नरभाषा रांगमें मिलाय ज्ञान अग्निआन भक्तिभाव तापनसों अतिही तपाई है॥ बरनत भट्ट सोधी सुबुध सराफनुने संतजन साह हाथ हाटनु बिकाई है॥ तुलसिदास दास अघ दारिद् दरन हेत रामायण रुचिर रसाइन बनाई है ॥ १ ॥ सुन्दर सु सोरठा सुमेरु मणि मध्यठाय दोहरा अनूप पाँति हीरोंकी सुहाई है॥ चारु २ चौपई अमोल मोतियोंकी लर ललित सुछन्द लाल छवि छहराई है॥ बरनत भट्ट राम सगुन सुगुनमाँझ सप्तकांड कंचनके हारन पुहाई है॥ तुलसिदास दास भूप हियके बिभूषणकों रामायण रत्नमाल रुचिर बनाई है॥ २॥ ग्रहनु दिनेश ज्यों महेश योगि शेषनमें सुरन सुरेश व्रज देशनमें चारु है॥ रागनमें दीपक विरागनमें ब्रह्मज्ञान कागन भुशुंडि बाग नन्दन बहार है॥ धातनमें कंचन सुहाथिनमें ऐरावत जातिनमें विप्र कर्ण दातनु अगार है॥ पावनमें नागर विमान सब याननमें सकल पुरानन त्यों रामायण सार है॥ ३॥ कासीसी पवित्र सो है सुरसरितासी खासी कलपलतासी कीर्ति छविकी छटासी है ॥ बरनत भट्ट पूर्ण प्रेमकी कतासी कमलासी कलिकालमें कलंककों कटासी है ॥ बिमल विचित्र चारु परम पवित्र सिय रामके चरित्रनकी भरी सकटासी है॥ सुबुध गुसाँई तुलसीकी कविताई यह ज्ञानकी घटासी धर्म धामके अटासी है॥ ४॥ राजैं बीच बीच चारु २ चौपाइनके सुमणिगणमध्य जैसे हीरनके जोहरा ॥ हाव भाव भूषण भरे हैं विन दूषणके अक्षर अनूप रस राजनके छोहरा॥ बरनत भट्ट अघ ओघनके नाशनको परम पवित्र गंगजलके झकोहरा॥ देखे न दुनीमें पचे लाखन गुनीपै जैसे रचे हैं रसीले तुलसीने दिव्य दोहरा॥५॥ तर्क तम नाशनकों अर्ककी अमल ज्योति भवअघ छेदनकों ईशके त्रिशूलसी॥ कलिमल महिष छारनकों कालिकासी क्लेश कंस मारनकों गिरिधर तूलसी॥ बरनत भट्ट बुद्धि

बेलिके बढ़ावनकों ज्ञानरस धार ध्रुव धर्मतरुमूलसी । रामकी कथा या तुलसीने रची जक्तमांझ भक्तभौंर रंजनकों कंचनके फूलसी ॥ ६ ॥ वर्म कलिकर्मनकी शर्म शुभ धर्मनकी सत्यताकी सीम सबहीकों सुख दैनी है ॥ शाला सब शास्त्रनकी मंत्रनकी माला वर कलमष नाशनकों विमल त्रिवेनी है ॥ बरनत भट्ट ज्ञानदीपककी दिव्य ज्योत्ति जगमग होति मुक्तिभवन निसैनी है ॥ श्रीयुत गुसाँईं तुलसीकी कविताई यह कलिमलकाठकों करोंत अति पैनी है ॥ ७ ॥ मानी मुनिदेवन मनुष्यनने आनी उर जानी जगमांझ जाकी सुयश कहानी है ॥ हिय हरषानी प्रगटानी पुण्य मारगकी वेदन प्रमानी विष्णुपद परसानी है ॥ बरनत भट्ट सरसानी सुखसंपतिकी सगुन स्वरूपकों प्रतच्छ दरसानी हैं ॥ मुक्तिकी निसानी भक्तिभाव वरसानी रामप्रेम रससानी श्रीगुसाँई जीकी बानी है ॥ ८ ॥ नावतौ कि सीस यमराज तुच्छ जीवनकों पीवनकों काव्य सुधा कबन उपावतौ ॥ पावतौ विराम कलिमाँझ कहँ भक्तनकौ भाव भक्तिज्ञान योगपंथ को बतावतौ ॥ तावतौ त्रिकाल परिताप बुध लोगनकों वेदनकौ भेद कहुं नजर न आवतौ ॥ आवतौ कि धीरज धरामें धर्मधारिनकों जो न यह रामकथा तुलसी बनावतो ॥ ९ ॥ जा छिनतें श्रीमत गुसाँईजीके आननतें रामायणरूप या अनूप रस छैगयो ॥ ताछिनतें कंपि उठ्यो कुमति कुचाली कलि कपट कलेसनको मूलनास ह्वै गयो ॥ बरनत भट्ट मुद मंगल महीमें भयो सीस यमराजको जु बीसों बिसे नैगयौ ॥ तैगयौ तमाम तनु ताप परितापनकौ पाप पर पुंजनको प्रलैकाल ह्वै गयौ ॥ १० ॥ मानी मन हिन्दुन बखानी यह यवनहू पारसी फिरंगिनहू उर अभिलाखी है ॥ बाइबिल कुरान आदि अखिल जहाँनमाँझ वेद औ पुरान रहे जाकी सब साखी है ॥ बरनत भट्ट कलिकालमें कृपाल व्हैकै तुलसी गुसाँई ऐसी भाषा यह भाखी है ॥ शक्ति धर्म कर्मनकी भक्तिभाव भर्मनकी शर्म सब ग्रन्थनकी जाने जग राखी है ॥ ११ ॥ कोऊ कहै मेटनि कलंकनके अंकनकों कोऊ कहै रंकनकों ऋद्धिसिद्धिदैनी है ॥ कोऊ कहै जनमें सिटावनि सकल ताप कोऊ कहै पापपुंज काटनकों पैनी है ॥ कोऊ कहै गंग यमुनाकी यह तीजी भैन कोऊ कहै कलिमें कथामय त्रिवैनी है ॥ पूरव परार्द्ध बाजू सप्तकांड डंडा लगे भट्ट भने रामायण सुरगनिसैनी है ॥१२॥ जादिनतें रामकथा रची है गुसाँईजूनें तादिनतें भक्ति

सुख साजनतें सोवती ॥ योग जप यज्ञ व्रत तीरथ अभय भये पापन की मात तनु तापन सँजोवती ॥ बरनत भट्ट महिमण्डल पवित्र भयौ सुरगनिसैनी दिनरैन भार ढोवती ॥ धोवती शरीर निजआँसुनसों पाइ श्रम जमकी जमात जमद्वारे परी रोवती ॥ १३ ॥ जैसे मंजु कंजन कों प्रबल तुषारमार जैसे तूलगंजनकों अग्नि उनमानिये ॥ जैसे वारिवाहनको परम प्रचंड पौन जैसे मृगझुंडनकों छीता पहिचानियें ॥ बरनत भट्ट जैसे भानुतम मारनकौ मनसिज जारनकौं शंभु मन मानियें जैसे चापभंजनकों राज रघुवंशमणि तैसे पापपुंजनकों रामायण जानियें ॥ १४ ॥ आला है पुराणनमें परम प्रसिद्ध यह ऋद्धिसिद्धि बैठन की बैठक विशाला है ॥ शाला है सुज्ञान भक्ति सगुन स्वरूपनकी निगम निरूपनकी अमृत रसाला है ॥ भट्ट भनै बुद्धिकी है मंजन मसाला वर पापपाला भेटनकों ऊनिया दुसाला है ॥ माला महा मंत्रनुकी टाला दुष्टतंत्रनुकी रामायण हिन्दूधर्म राखनकी ढाला है ॥ १५ ॥ जादिनतें जगमें सुजीवनके आननतें रामायण शब्द कहूं काननमें परिगे तादिनतें गरिगे अमाम ताप पापपुंज भूत प्रेत भेष देष २ तें निकरिगे ॥ बरनत भट्ट दुख टरिगे तमाम हरि दासनके धाम २ आनँदसो भरिगे॥ गरिगे गुमान यमदूत बलवाननके चित्रगुप्त जाननके कागद बिगरिगे ॥ १६ ॥ जादिनतेंतुलसी मुखारविन्द चारुहीतें रामायणसार गंगधार की निकासभइ॥ तादिनतें पापनके बास भये पट्ट चहूँ पुण्य परिवारनकी प्रभुता प्रकास भइ॥ ह्रास भई हिंसाकी अहिंसाकी हुलास भई देवनके मुँह जय जयति अकास भइ ॥ त्रास भई यमके निरास भई नर्क सब दासनकों भगवत भेटनकी आस भइ ॥ १७ ॥ चीनीमें न चन्द्रवदनीके होठ चुंबनमें नाहिं रसगुल्लन न पेठाकी मिठाईमें ॥ मेवामें न माखनमें मिसरी मगदमें न मोहन विभोगमें न मिलत मलाईमें ॥ बरनत भट्ट है न आमन अँगूरनमें दाखन अनारनमें नहीं लखि पाई मैं ॥ ऊखमें महूखमें पियूखमें न पाई जात जैसी मधुराई तुलसीकी कविताईमें ॥ ॥ १८ ॥ जौलों चन्द सूरज अखंड नभमंडलमें धारे धरणीको जौलौं सहस फनी रहै । बरनत भट्ट सनकादिक ऋषीशजौलों नारद मुनीश जौलों इन्द्रकी अनी रहै ॥ जौलौं विष्णु करत विलास रमा संग जौलौं शिव औ शिवामें प्रीति पूरन सनी रहै ॥ ध्रुव ध्रुवजौलौं पंचतत्त्वनको सत्व जौलौं तौलौ श्रीगुसाँईजीकी कविता बनी रहै ॥ १९ ॥

विद्याको विलास है विवेकको विभास नीको भक्तिको निवास नवौ रसको सुपास है ॥ सुखकौ सुवास सब सिद्धिनको आम खास सगुन स्वरूपको अनूपम अवास है ॥ बरनत भट्ट वेद विधिको विकास पूर्ण मेटै यमत्रास करै पापनको नास है ॥ पूरै मनआस याहि राखौ नित पास यह रामायण परम पुनीत इतिहास है ॥ २० ॥ आस उरमाँझ जो पै सुरग सिधारनकी इन्द्र पदवीको अनायास अभिलाखौ रे ॥ मुक्ति मगमाझ धर्‍यौ चाहौ जोपै पाइ अरु भक्तिकी जु भावना विशेष उर राखौ रे ॥ बरनत भट्ट हरिधामके सिधावनकी कामना कछू जो मनते न दूर नाखौ रे ॥ चाखौ चाहौ रामरस रसना लगाय तौ या रामके चरित्रनकी चौपईनु भाखौ रे ॥ २१ ॥ सुन्दर असन चाहौ भूखन वसन चाहौ धर्ममें धसन चाहौ वसन भलाई में ॥ अंगन अरोग चाहौ भांति भांति भोग चाहौ सिद्ध कियो योग चाहौ जो पै जग याईमें ॥ बरनत भट्ट लेन अद्भुत उक्ति चाहौ मुक्तिहूकी युक्ति तौ पै प्रगट बताई मैं ॥ दारिद दरन चाहौ भव भै हरन चाहौ करन लगाओ तुलसीकी कविताई में ॥ २२ ॥

सवैया.

जो फल कोटिनयज्ञ किये अरु जो फल मक्र प्रयाग अन्हाये ॥
जो फल योग अखंड करे अरु जो फल पूरन नेम निभाये ॥
जो फल धामनके परसे पुनि जो फल क्षेत्रनु वास बसाये ॥
जो फल दान अमाम किये इक सो यह रामकथा पल गाये ॥ २३ ॥
छांडि वृथा बकवाद सबै निहचै करिकै नित चित्त लगावै ॥
भक्तिसमेत भलीविधिसौं करि पूजन पुस्तक शीश चढावै ॥
उच्छवसों कर ले करि आरति पुष्प चहूँ दिशिमें बरसावै ॥
पावै तिहूँ पुरकी प्रभुता तुलसीकृत रामचरित्र जो गावै ॥ २४ ॥
जो बरण्यों न गयौ वलमीकसों जान्यो नहीं सनकादि यथा है ॥
कागभुशुंडिहि कै भ्रम भो हिय शंभु उमाहुँ बतायो अथा है ॥
श्रीरघुबीर कृपा हुलसी मति सो तुलसीहु कछूक कथा है ॥
ताकी प्रशंसा कहै किमि भट्ट कि चींटीहू पावै समुद्र की था है? ॥२५॥

इति

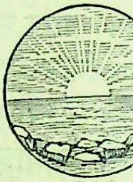

राम **राममहामंत्र.** राम

राम राम राम राम राम

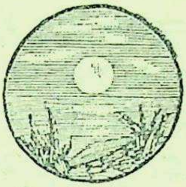

शिव उवाच.

राम **राम** राम **रामेति** राम **रामेति** राम राम
राम राम राम राम राम
राम **रमे** राम **रामे** राम राम **मनोरमे ॥** राम
राम राम राम राम राम
राम राम राम **श्रीसीताराम.** राम राम राम
राम राम राम राम राम राम
राम राम
राम राम
राम राम
राम राम
राम राम
राम राम
राम राम
राम राम
राम राम
राम राम

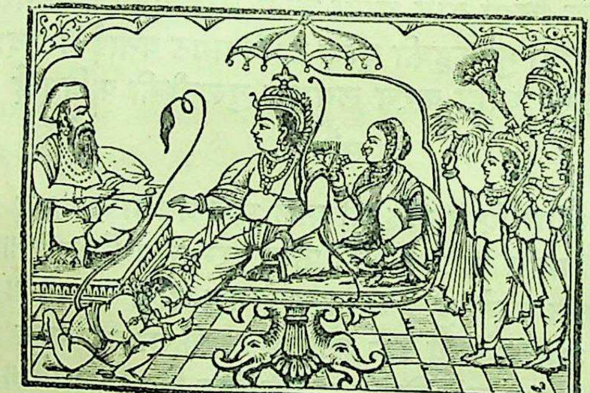

राम
राम **सहस्रनाम** राम **तत्तुल्यं** राम राम राम
राम राम राम राम राम
राम **रामनाम** राम **वरानने ॥१॥** राम
राम राम राम

"राम" इस गोप्य महामंत्रका शिवजीने पार्वतीजीसे बड़ा माहात्म्य वर्णन किया है. इसका फल विष्णुके सहस्रनामके तुल्य है. जो मनुष्य इसका जप करेंगे वे धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष चारों पदार्थ पावेंगे, और क्रोधादि महाबली शत्रुओंको जीत भवसागरसे पार उतर परम पदको सिधावेंगे.

॥ श्रीः ॥

रामायणमाहात्म्यप्रारम्भः ।

मंगलाचरण.

दो०–महितनयामुखचन्द्रके, जिहि चख चारु चकोर ॥
ताहि बन्दि फल कहत हौं, रामायणकर थोर ॥ १ ॥

जानकीजीके मुखचन्द्रके लिये जिनके सुन्दर नेत्र चकोरके समान हैं उन रामचन्द्रजीको प्रणाम करके रामायणका थोड़ासा फल कहता हूं ॥ १ ॥

चौ०–मंगलमय रामायण नामू ❀ ताहि प्रथमही करत प्रणामू ॥ १ ॥
सकल पुराणशिरोमणि सोई ❀ भाषा जिहिसम ललित न कोई ॥ २ ॥

जो रामायण मंगलदायिनी है उसे प्रथम प्रणाम करता हूं ॥ १ ॥ वह सब पुराणोंकी शिरोमणि है और जिसकी भाषाके समान कोई सुन्दर नहीं है ॥ २ ॥

शुभदायक सोरठा सुहाये ❀ पाये सब सुख जिहिं मुख गाये ॥ ३ ॥
दिव्य दोहरा जे बिच ठाये ❀ भाये जिनहिं ते सब मन भाये ॥ ४ ॥

जिसमें सुन्दर शुभदायक सोरठे हैं; जिसने उनको गाया उसीने सब सुख पाया ॥ ३ ॥ जिनके बीच २ में दोहे हैं; जिनको वे दोहे अच्छे लगे वे जन सबके मनमें भाये ॥ ४ ॥

चार पदारथदा चौपाई ❀ ललित छन्द गति अद्भुत पाई ॥ ५ ॥
अलंकार भासत अतिनीके ❀ पूरत लखत मनोरथ जीके ॥ ६ ॥

चौपाइयाँ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) चार पदार्थकी देनेवाली हैं और सुन्दर छन्दोंकी गति बड़ी विचित्र है ॥ ५ ॥ परम सुन्दर अलंकार शोभायमान हैं जो देखतेही मनके मनोरथ पूरे करते हैं ॥ ६ ॥

ललित लक्षणा परति लखाई ❀ विविध व्यंजना वृत्तन छाई ॥ ७ ॥
सुन्दर शब्द अर्थ मनभावन ❀ भाव विभाव हाव रस पावन ॥ ८ ॥

सुन्दर लक्षणा[१] दिखाई पड़ती हैं और वृत्तोंमें अनेक प्रकारकी व्यंजना छारही हैं ॥ ७ ॥ सुन्दर शब्द और उनका अर्थ बड़ा मनहरन है और इसमें हाव, भाव, विभाव और नवों रस परम पवित्र हैं ॥ ८ ॥

दो०–संचारी शोभित सकल, शुभ संयोग वियोग ॥
नाना धुनि गुनि गावहीं, पावहिं पूरण भोग ॥ २ ॥

---

[१] लक्षणा और व्यञ्जना शब्दोंकी शक्तियाँहैं जिनसे उनके अर्थमें भेद होता है.

इसमें संपूर्ण संचारी और सुन्दर संयोग वियोग हैं और गुणीजन अनेक धुनिसे गाते हैं और पूर्ण आनन्द पाते हैं ॥ २ ॥

चौ०–अद्भुत कवितामय यह गंगा ❀ सुमिरत करन पातकनिभंगा ॥ १ ॥
विघ्न तीरतरु तोरनहारी ❀ परम पवित्र चरित्र सुबारी ॥ २ ॥

यह कवितारूपी बड़ी अद्भुत गंगा है, स्मरण करतेही पापोंको नाश करनेवाली है ॥ १ ॥ विघ्नरूपी तीरके वृक्षोंको तोड़नेवाली है और इसमें परमपवित्र चरित्ररूपी जल भरा हुआ है ॥ २ ॥

जनमन मीन मकर बहु जाती ❀ आनँदलहरि लतनु लहराती ॥ ३ ॥
हरमनहरिपदतैं कढ़ि आई ❀ भक्तिधार भुवमाँझ सिधाई ॥ ४ ॥

इसमें अनेक जातिके भक्तजनोंके मनरूपी मत्स्य और मगर हैं और इसकी आनन्दरूपी लहर तनुरूपी लताओंको लहराती है ॥ ३ ॥ शंकरके मनरूपी विष्णुचरणसे निकली है और इसकी भक्तिरूपी धार भूमंडलमें सिधारी है ॥ ४ ॥

सादर पान करहिं जे आई ❀ चिंता तृष्णा तुरत नशाई ॥ ५ ॥
जे अन्हायँ इहि अद्भुत गंगा ❀ रामचरितमय सुरस प्रसंगा ॥ ६ ॥

जो इसका आदरपूर्वक पान करते हैं तौ च्चिन्ता तृष्णा तुरंत नष्ट हो जाती हैं ॥ ५ ॥ और सरस प्रसंगोंसे पूर्ण ऐसी इस रामकथारूपी गंगामें जो स्नान करते हैं ॥ ६ ॥

तिनकहँ जग दुर्लभ कछु नाहीं ❀ सत्य कहौं लिखि कागदमाहीं ॥ ७ ॥
जे जन श्रवण सुनहिं इहिं छिनहूँ ❀ मिलहि मोक्ष दुर्लभ योगिनहूँ ॥ ८ ॥

उनको संसारमें कुछ दुर्लभ नहीं है. मैं कागजमें लिखकर सत्य २ कहता हूं ॥ ७ ॥ जो मनुष्य इसे क्षणभरभी कानोंसे सुनते हैं उनको वह मोक्ष मिलती है जो योगियोंकोभी दुर्लभ है ॥ ८ ॥

दो०–वाल्मीकि मुनि जे भये, त्रेतायुगके द्वार ॥ ❀
सो अब इहि कलिकालमें, लिय तुलसीअवतार ॥ ३ ॥ ❀

त्रेतायुगके प्रारंभमें जो वाल्मीकि ऋषि हुये थे उनहीने इस कलियुगमें तुलसीदासका अवतार लिया है ॥ ३ ॥

चौ०–रामायणकी संख्या सारी ❀ सत करोरि निजमुख बिस्तारी ॥ १ ॥
ताकर सारभाग इनु लीना ❀ रामचरित अतिउत्तम कीना ॥ २ ॥

उन्होंने अपने मुखसे रामायणकी संपूर्ण संख्या सौ करोड़ कही है ॥ १ ॥ उसीका सार भाग तुलसीदासजीने लेकर इस रामचरित्रको अतिउत्तम बनाया है ॥ २ ॥

बालकांड प्रथमहिं जो राखा ❀ जन्म विवाह रामकर भाखा ॥ ३ ॥
द्वितीय अयोध्याकांड बखाना ❀ पितुआयसु रघुवर बन जाना ॥ ४ ॥

प्रथमही जो बालकांड धरा है उसमें रघुनाथजीका जन्म विवाहआदि कहा है ॥ ३ ॥ दूसरा अयोध्याकांड वर्णन किया है उसमें पिताकी आज्ञासे रामजीका वनोवास कहा है ॥ ४ ॥

अरु अरण्य किष्किन्धा गाई ❀ बननिवास सुग्रीवमिताई ॥ ५ ॥
सन्दर सुन्दरकांड सुभाषा ❀ सीतासुधि हनुमंत प्रकाशा ॥ ६ ॥

फिर अरण्यकांडमें वनका निवास और किष्किन्धामें सुग्रीवकी मित्रता कही है ॥ ५ ॥ परमसुन्दर सुन्दरकांडमें हनुमान्‌जी सीताजीकी खबर लाये यह प्रकाश किया है ॥ ६ ॥

षष्टम लंकाकांड बनावा ✿ सिंधुसेतु रावणबध गावा ॥ ७ ॥
अंतिम उत्तरकांड सुहावन ✿ रामराज उत्सव गृह आवन ॥ ८ ॥

छटा लंकाकाण्ड बनाया है जिसमें समुद्रसेतु और रावणका वध कहा है ॥ ७ ॥ अंतका सुन्दर उत्तरकांड है, जिसमें रघुनाथजीका गृहागमन और राज्यके उत्सवोंका वर्णन है ॥ ८ ॥

दो०-रामायण यह रुचिर है, नव रत्नकी माल ॥ ✿
जे उर धारहिं ते लहैं, शोभा परम विशाल ॥ ४ ॥ ✿

यह रामायण सुन्दर नव रत्नोंकी माला है, जो इसको अपने हृदयमें धारण करते हैं उनकी वड़ी विशाल शोभा हो जाती है ॥ ४ ॥

चौ०-रामायण नव नजरिबगीची ✿ शब्द अर्थ तरु रस जल सींची ॥ १ ॥
चारु चरित्र विविध फुलवारी ✿ निरखत होत मोद मन भारी ॥ २ ॥

पुनि यह रामायण नवीन नजरवगीची है इसमें शब्द अर्थरूपी वृक्ष लगे हैं और इनको रसरूपी जलसे सींचा है ॥ १ ॥ सुन्दर चरित्ररूपी इसमें फुलवारी फूल रही हैं जिसे देखतेही मनमें वड़ा हर्ष होता है ॥ २ ॥

सबकहँ सुखद विविध फलदायक ✿ भक्ति छाँह शीतल मनभायक ॥ ३ ॥
रामायण पुनि रुचिर तलाई ✿ विमल रामगुण जल झलकाई ॥ ४ ॥

यह सवको सुख और अनेक फलोंकी देनेवाली है और इसमें भक्तिरूपी छाया वड़ी शीतल और मनभावन छारही है ॥ ३ ॥ पुनि यह रामायण सुन्दर तलय्या है, इसमें रामगुणरूपी निर्मल जल झलक रहा है ॥ ४ ॥

दोहा छन्द चारु चौपाई ✿ सोई कमल खिले छवि छाई ॥ ५ ॥
चुवत चरित मकरंद सुधासम ✿ भक्त भ्रमर पीवहिं बिनही श्रम ॥ ६ ॥

और सुन्दर २ जो दोहे छन्द और चौपाई हैं सोई मानों खिले हुये कमलोंकी छबि छारही है ॥ ५ ॥ इन कमलोंमेंसे रामचरित्ररूपी मकरंद अमृतके समान चूरहा है, जिसको भक्तरूपी भ्रमर बिनाही परिश्रम पान करते हैं ॥ ६ ॥

बुध विहंग विहरहिं रसहेतू ✿ पाय प्रमोद गहहिं गुण सेतू ॥ ७ ॥
जे मज्जहिं इहि तनु मन लाई ✿ होय भक्तिमय शीतलताई ॥ ८ ॥

गुणी पंडितरूपी पक्षी इस रसके लिये बिहार करते हैं और पाकर प्रसन्न होते हैं ॥ ७ ॥ जो प्राणी इसमें तनमनसे स्नान करते हैं तौ उनको भक्तिरूपी शीतलता प्राप्त होती है ॥ ८ ॥

दो०-जो चाहै भवबारिधिहिं, तरन बिनहिं श्रम चित्त ॥ ✿
तौ तुलसीरामायणहिं, हित करि बाँचै नित्त ॥ ५ ॥ ✿

जो प्राणी संसाररूपी समुद्रको चित्तके परिश्रमविना तरा चाहै तौ वह तुलसीकृतरामायणको नित्य प्रेमसे बाँचै ॥ ५ ॥

चौ०-नवनिधिदाइनि यह रामायनि ✿ सकल मनोरथ सिद्धिरसायनि ॥ १ ॥
सप्तकांड सीढ़ी सुरपुरकी ✿ पूरत सकल कामना उरकी ॥ २ ॥

यह रामायण नौनिधिकी देनेवाली और संपूर्ण मनोरथोंकी सिद्ध रसायन है ॥ १ ॥ सात कांडयुक्त यह मानों वैकुंठकी निसेनी है और यह हृदयकी सब कामनाओंको पूरा करती है ॥ २ ॥

प्रथम सोरठा नित जपि लेई ❀ ताकहँ सिद्धि गजानन देई ॥ ३ ॥
द्वितिय सोरठा चित्त लगाई ❀ जपहि तौ दरश देहि रघुराई ॥ ४ ॥

इसका जो प्रथम सोरठा जपै तो उसको गणेशजी सिद्धि देते हैं ॥ ३ ॥ और जो दूसरे सोरठे को मन लगाकर जपै तो उसे भगवान् दर्शन देते हैं ॥ ४ ॥

तृतिय सोरठा जो मन लावै ❀ शंभुकृपासों संपति पावै ॥ ५ ॥
चतुरथ जपै सोरठा जोई ❀ गुरुकी कृपा पाव शुभ सोई ॥ ६ ॥

जो तीसरे सोरठेमें मन लगाता है वह महादेवजीकी कृपासे संपत्ति पाता है ॥ ५ ॥ जो चतुर्थ सोरठेको जपता है वह गुरुकी सुन्दर कृपा पाता है ॥ ६ ॥

यह चौपाई नित जो गावै ❀ रामकृपासों सब सख पावै ॥ ७ ॥
बंदौं रामनाम रघुवरके ❀ हेतु कृशानु भानु हिमकरके ॥ ८ ॥

जो इस चौपाईको नित्य गाता है सो रामकी कृपासे सब सुख पाता है ॥ ७ ॥ "बंदौं रामनाम रघुवरके । हेतु कृशानु भानु हिमकरके" ॥ ८ ॥

दो०-मन क्रम वचन लगाय हित, यह दोहा जो गाय ॥ ❀
रामभक्ति नर पावही, सब संशय मिटि जाय ॥ ६ ॥ ❀

जो मन क्रम वचनसे इस नीचेके दोहेको गाता है वह प्राणी रामभक्तिको पाता है और उसके सब सन्देह मिट जाते हैं ॥ ६ ॥

"भक्तकल्पतरु प्रणतहित, कृपासिंधु सुखधाम ॥ ❀
सोइ निजभक्ति मोहिं प्रभु, देहु दया करि राम" ॥ ७ ॥ ❀

चौ०-परम मंत्र यह रामायणके ❀ पूरन करन मनोरथ जनके ॥ १ ॥
पढ़हि प्रथम नित यह चौपाई ❀ तासु निकट संशय नहिं जाई ॥ २ ॥

ये रामायणके परममंत्र भक्तजनोंके मनोरथोंको पूर्ण करनेवाले हैं ॥ १ ॥ जो नित्य प्रथम इस नीचेकी चौपाईको पढ़ता है उसके पास संदेह नहीं जाता है ॥ २ ॥

"रामकथा सुन्दर करतारी ❀ संशयविहग उड़ावनहारी" ॥ ३ ॥
अरु यह संपूरण चौपाई ❀ जपहि तौ सकल सुलभ जग आई ॥४॥

और जो इस नीचेकी संपूर्ण चोपाईको जपता है तौ उसको जगतमें सब सुलभ हो जाता है ४

"सुनि सेवकसुरतरु सुरधेनू ❀ बिधिहरहरिबंदित पदरेनू" ॥ ५ ॥
अरु यह सियकृत अस्तुति गावै ❀ मनवांछित वर कन्या पावै ॥ ६ ॥

और जो यह सीताजीकृत स्तुति गावै तौ कन्या मनोवांछित वर पाती है ॥ ६ ॥

"जै जै जै गिरिराजकिशोरी ❀ जय महेश मुखचन्द्रचकोरी" ॥ ७ ॥
यह सोरठा जपै नर कोई ❀ संभ्रम सकल दूरि तिहिं होई ॥ ८ ॥

और जो मनुष्य नीचे लिखे सोरठेका जप करता है उसका सब संदेह दूर हो जाता है ॥ ८ ॥

सो०-"सुर नर मुनि कोउ नाहिं, जिहि न मोह माया प्रबल ॥ ❀
अस बिचारि मनमाहिं, भजिय सदा सीतारमन" ॥ १ ॥ ❀

चौ०-जो यह पढ़ि चढ़ि रणमें जाई ❀ तासु शत्रु सब जाहिं पराई ॥ १ ॥

जो नर इस नीचेकी चौपाईको पढ़कर लड़ाईमें जाता है उसके सब शत्रु भाग जाते हैं ॥ १ ॥

"हनूमान अंगद रण गाजे ❀ हाँक सुनत रजनीचर भाजे" ॥ २ ॥
अरु यह जो चौपाई गावै ❀ शत्रु तासु सन्मुख नहिं आवैं ॥ ३ ॥

और जो यह नीचेकी चौपाई गाता है उसके सामने शत्रु नहीं आता ॥ ३ ॥

"कर सारंग विसिष कटि भाथा ❀ मृगपतिठवनि चले रघुनाथा" ॥ ४ ॥
पढ़ै प्रथम नित यह चौपाई ❀ ताकहँ ज्ञान होय दृढ़ आई ॥ ५ ॥
"छिति जल पावक गगन समीरा ❀ पंचरचित यह अधम सरीरा" ॥ ६ ॥

और जो प्रथम यह उत्तम चौपाई नित्य गावै तौ उसे दृढ़ ज्ञान होय ॥ ५ ॥ "छिति जल पावक गगन समीरा । पंचरच्चित यह अधम सरीरा" ॥ ६ ॥

अरु यह नित्त चारु चौपाई ❀ जपहि तौ आभूषनगन पाई ॥ ७ ॥
"रामचरित चिन्तामनि चारू ❀ संत सुमति तिय सुभग सिँगारू" ॥८॥

और जो इस सुन्दर चौपाईको नित्य जपै तौ उसे बहुतसे आभूषण मिलैं ॥ ७ ॥ "रामचरित चिंतामनि चारू । संत सुमति तिय सुभग सिंगारू" ॥ ८ ॥

अरु इक यह दोहा फल भारी ❀ पढ़हि ताहि नहिं चढ़हि तिजारी ॥ ९ ॥

और जो इस नीचेके दोहेको पढ़ै तौ उसका बड़ा फल यह है कि उसे तिजारी नहीं चढ़े ॥ ९ ॥

दो०-"कोटि पंचसत मर्कट, रहहिं सर्वदा साथ ॥ ❀
कालहुते रणमें लरहिं, कुमुद आदि कपिनाथ" ॥ ८ ॥ ❀

चौ०-पढ़हि चौपाई यह तुक दोई ❀ ताकहँ भक्ति रामकी होई ॥ १ ॥
"शंकर रामरूप अनुरागे ❀ नयन पंचदश अतिप्रिय लागे" ॥ २ ॥

जो इस चौपाईकी दोनों तुकोंको पढ़ै तौ उसको रामकी भक्ति हो ॥ १ ॥
"शंकर रामरूप अनुरागे । नयन पंचदश अतिप्रिय लागे" ॥ २ ॥

यह चौपई पढ़हि सहुलासु ❀ अतिउछाह उमगहि उर जासु ॥ ३ ॥
"भुवन चारि दस भरे उछाहू ❀ जनकसुता रघुवीरविवाहू" ॥ ४ ॥

और जो यह चौपाई प्रसन्न मनसे पढै तौ उसके हृदयमें बड़ी प्रसन्नता हो ॥ ३ ॥
"भुवन चारि दस भरे उछाहू । जनकसुता रघुवीरविवाहू" ॥ ४ ॥

कहँ लग कहौं एक मुख गाईं ❀ रामायणफल अगणित भाई ॥ ५ ॥
शेष सहसमुखसन नित गावैं ❀ रामायणफल कहत न आवै ॥ ६ ॥

मेरे एक मुख है, कहांतक गाकर कहूं ? हे भाई ! रामायणके अनगिनती फल हैं ॥ ५ ॥ जो शेष नाग हजार मुखसे नित्य गावैं तौ उनसेभी रामायणका फल कहते न बनै ॥ ६ ॥

इक इक बरन करन सब काजा ❀ सबकर पुनि बरनौं किहिसाजा ॥ ७ ॥
निज रसनाको पावन करनों ❀ तासों कछु महात्म इहि बरनों ॥ ८ ॥

एक २ अक्षर सब कामनाओंका करनेवाला है फिर मैं किस साजसमाजसे सबका वर्णन करूं ॥७॥ अपनी जीभको किसी प्रकार पवित्र करना चाहिये इसीलिये थोड़ासा माहात्म्य वर्णन कर दिया है ॥८॥

दो०-इहि कलिकाल करालते, जप तप भये विनास ॥ ❀
रामायण तिनहित रची, रुचिकरि तुलसीदास ॥ ९ ॥ ❀

इस कराल कलिकालसे जप तप विनाश होगये इसी लिये तुलसीदासजीने रामायण बड़ी रुचिसे बनाई है ॥ ९ ॥

चौ०-रामायण यह तीव्र कुठारी ❀ कलि कलेशतरु काटनहारी ॥ १ ॥
दारिदमत्तद्विरदहदलसिंहनि ❀ पापपुंजतम रविकरसम गनि ॥ २ ॥

यह रामायण पैनी कुल्हाड़ी कलियुगके क्लेशरूपी वृक्षोंको काटनेवाली है ॥ १ ॥ दरिद्ररूपी मतवाले हाथियोंके दलको मारनेके लिये सिंहके समान और पापोंके पुंजरूपी अंधकारके दूर करनेके लिये सूर्यकी किरणोंके समान है ॥ २ ॥

मोहमदनभंजनको भवसी ❀ लोभ क्रोध वनगनको दवसी ॥ ३ ॥
रोग शोक भय घनहिं पवनसी ❀ तृष्णा तूलहि अगिन अवनसी ॥ ४ ॥

मोहरूपी कामदेवके भस्म करनेको शिवजीके समान और लोभ क्रोधरूपी वनके समूहको वनकी अग्निके समान है ॥ ३ ॥ रोग शोक भयरूपी मेघको पवनके समान और तृष्णारूपी रुईको अग्निके पुंजके समान है ॥ ४ ॥

बुद्धिवृद्धिहित शुभ शारदसी ❀ रस वारिहि बरसत बारिदसी ॥ ५ ॥
भववारिधिको नवनौकासी ❀ जन चकोर चितचंद्रप्रभासी ॥ ६ ॥

बुद्धिके बढ़ानेके लिये सुन्दर सरस्वतीके समान और रसरूपी जल बरसानेके लिये मेघके समान है ॥ ५ ॥ संसाररूपी समुद्र तरनेके लिये नवीन नौकाके समान और भक्तजनके चित्तरूपी चकोरके लिये चन्द्रमाकी प्रभाके समान है ॥ ६ ॥

कविकमलनकहँ भोरभानसी ❀ कुमतिकागकहँ निशित बानसी ॥ ७ ॥
सब पुराण तनु प्रगट प्रानसी ❀ तुलसिदासकृत चरित मानसी ॥ ८ ॥

कविरूपी कमलोंके खिलानेके लिये प्रातःकालके सूर्यके समान और कुमतिरूपी कागके लिये पैने वाणके समान है ॥ ७ ॥ पुनि सब पुराणोंके शरीरको यह तुलसीदासकृत रामायण साक्षात् प्राणके समान है ॥ ८ ॥

दो०-रामचरित्र विचित्र यह, चिंतामणि कलिकाल ॥ ❀
जे राखै इहि जतन करि, तिनकहँ करत निहाल ॥ १० ॥ ❀

यह बिचित्र रामचरित्र इस कलिकालमें चिंतामणि है; जो इसको यत्न करके रखता है उसको निहाल कर देती है ॥ १० ॥

चौ०-गोघातीहू याकहँ गावै ❀ अघविन होय परमपद पावै ॥ १ ॥
क्रूर कृतघ्नी कायर जोऊ ❀ याहि पढ़े पावैं गति सोऊ ॥ २ ॥

जो गौघातीभी इसे गावै तौ वह पापरहित होकर मुक्ति पावै ॥ १ ॥ क्रूर कृतघ्नी और कायर हैं वेभी इसको पढ़कर सुगति पाते हैं ॥ २ ॥

विप्रघात हू जो करि आवै ❀ पढ़त याहि सुरपुरहिं सिधावै ॥ ३ ॥
तन मन बचन एक करि गावै ❀ अंधहु नयन नलिनसम पावै ॥ ४ ॥

जो ब्रह्म घात कर आवै वहभी इसके पढ़नेसे वैकुंठ पासक्ता है ॥ ३ ॥ जो अंधा इसको तन मन वचनसे एक होकर गावै तौ वह कमलसमान नेत्र पावै ॥ ४ ॥

पंगुहु जो नितप्रति इहि बाँचै ❀ रामकृपा पातुरज्यों नाचै ॥ ५ ॥
मूकहु जो नयननि नित देखै ❀ सुरगुरुसम बाणी सुविशेखै ॥ ६ ॥

जो लूला लँगड़ा इसे नितप्रति वांचै तौ वह रामकी कृपासे पातुरके समान नाचने लगै ॥ ५ ॥ जो गूँगा नित्य इसके दर्शन करै उसकी बृहस्पतिके समान वाणी होजाय ॥ ६ ॥

योग यज्ञ जप तप विधि नाना ❀ तीरथअटन अनेकविधाना ॥ ७ ॥
पूजन भजन भाँति बहु दाना ❀ यहिके गानसमान न आना ॥ ८ ॥

अनेक योग, यज्ञ, जप, तप हैं और अनेक प्रकारके तीर्थाटन हैं ॥ ७ ॥ अनेक भांतिके पूजन भजन और बहुत दान हैं परंतु इसके गानके समान एकभी नहीं है ॥ ८ ॥

दो०–चार वेद अरु आठ दश, करैं पुराण प्रकास ॥
सबते अतिउत्तम कह्यो, रामायण इतिहास ॥ ११ ॥

चार वेद अठारह पुराण यही कहते हैं कि रामायणकी कथा सबसे उत्तम है ॥ ११ ॥

चौ०–सकल पाप त्रयताप नशावै ❀ जो जन चित लगाय नित गावै ॥ १ ॥
जासु सदन पूजन इहि साधा ❀ होय न भूत प्रेतकी बाधा ॥ २ ॥

जो मनुष्य इसे नित्य चित्त लगाकर गावै तौ यह सब पाप और तीनों तापोंको दूर करनेवाली है ॥ १ ॥ जिस घरमें इसका पूजन होता है उसमें भूतप्रेतकी बाधा नहीं होती ॥ २ ॥

जासु सदन रामायण रहही ❀ यमकिंकर न तासु मग गहहीं ॥ ३ ॥
जो नितप्रति रामायण गावै ❀ पुत्र पौत्र सुख संपति पावै ॥ ४ ॥

जिस घरमें रामायण रहती है उस रास्ते होकर यमदूत नहीं निकलते ॥ ३ ॥ जो नित्य रामायणको गावै तौ पुत्र पौत्र और संपत्ति पावै ॥ ४ ॥

रामायण अतिरुचिर पुराना ❀ रसिक सजन नित ठानहिं गाना ॥ ५ ॥
जगउपकार विचारि गुसाँई ❀ कीन दया जगजीवन पाँई ॥ ६ ॥

रामायण अतिसुन्दर पुराण है. रसिक और सज्जन नित्य इसका गान करते हैं ॥ ५ ॥ गोसाँईजीने संसारका उपकार विचार कर जगके जीवनके अर्थ इसे दयाकर रचा है ॥ ६

योग यज्ञ जप नियम विधाना ❀ इहि कलिकाल कठिन जग जाना ॥ ७ ॥
विन श्रम भवबंधनकर नाशहि ❀ कीन प्रगट यह वर इतिहासहि ॥ ८ ॥

और यह जानकर कि योग, यज्ञ, जप, नियमके विधान इस कलिकालमें बड़े कठिन हैं ॥ ७ ॥ यह सुन्दर इतिहास बनाया है कि जिसमें विनाही श्रम संसारबंधनका नाश हो जाय ॥ ८ ॥

दो०–तुलसी रामायण दई, जबते जगत प्रचारि ॥
भीर भई वैकुण्ठमें, यमपुरि भई उजारि ॥ १२ ॥

तुलसीदासने जबसे जगतमें रामायणका प्रचार किया तबसे वैकुंठमें भीड़ होगई और यमलोक ऊजड़ होगया ॥ १२ ॥

चौ०–अरु यह इक इतिहास पुराना ❀ सुनहु सजन सादर दै काना ॥ १ ॥
रामचरित सुनिकै इक पापी ❀ चलाधाम निज काम सुरापी ॥ २ ॥

और एक पुराना इतिहास है, सज्जन इसे आदरसहित कान लगाकर सुने ॥ १ ॥ रामके चरित्र सुनकर एक पापी जो बड़ा कामी और शराबी था अपने घर चला ॥ २ ॥

विधिवश परा धरणिमें जाई ❀ मारगमाँझ मृत्यु तिहिं पाई ॥ ३ ॥
आये यमकिंकर अतिघोरा ❀ दुहुँ भुज बाँधि लीन बरजोरा ॥ ४ ॥

दैववश वह पृथ्वीपर गिरा और उसकी मार्गमेंही मृत्यु होगई ॥ ३ ॥ तौ यमके बड़े भयंकर दूत आये और उन्होंने बरजोर उसकी दोनों भुजा बांधलीं ॥ ४ ॥

इहि अंतरहि दूत ठाकुरके ❀ आये धाय विष्णुपुर धुरके ॥ ५ ॥
दई छुड़ाय भुजा क्षणमाहीं ❀ मारन लगे भजे यमपाहीं ॥ ६ ॥

इसी बीच भगवान्के दूत विष्णुपुरसे दौड़कर आये ॥ ५ ॥ उन्होंने एक क्षणभरमें दोनों भुजा छुड़ा दीनी और जब मारने लगे तब वे यमके पास भाजे ॥ ६ ॥

तिहिं लै गये निकट श्रीहरिके ❀ दयो सुधाम अभय जिय करिके ॥ ७ ॥
ते तब दूत गये यमपासा ❀ सूखे मुँह कंपत अतित्रासा ॥ ८ ॥

और (विष्णुके) दूत उस पापीको भगवान्के पास ले गये और उसके चित्तको सावधान करके उसको स्वर्ग दिया ॥७॥ वेयमदूत यमके पास गये, उनका मुँह सूखगया और भयके मारे काँपने लगे८

दो०–हाथ जोरि सन्मुख गये, कंपत थरथर गात ॥ ❀
आँखिनते अँसुवा ढरत, कढत न मुखते बात ॥ १३ ॥ ❀

हाथ जोड़कर सामने गये, शरीर थर २ काँपने लगा, आँखोंसे आँसू ढरने लगे और मुखसे बात नहीं निकलती ॥ १३ ॥

चौ०–जब यम तिहिं पूंछी कुशलाता ❀ किहि कारण कंपत तुम ताता ॥ १ ॥
परमाकुल चित परमउदासा ❀ मुख तुमार भा रहित विकासा ॥ २ ॥

तब यमने कुशल पूँछी कि हे प्यारे! कहो तुम क्यों काँपते हो? ॥ १ ॥ तुम परमव्याकुल और बड़े उदास दीखते हो और तुम्हारा मुख मलीन हो रहा है ॥ २ ॥

किन दुख दीन दीन किन त्रासा ❀ मोरे उर संशय अति भासा ॥ ३ ॥
युग कर जोरि वचन तिन भाखे ❀ नाथ प्राण विधना हठि राखे ॥ ४ ॥

तुम्हैं किसने दुःख और भय दिया है? हे प्यारे! मेरे मनमें बड़ा संदेह है ॥ ३ ॥ फिर उन्होंने हाथ जोड़कर यह कहा कि हे नाथ! हमारे प्राण ज्यों त्यों करके आज विधाताने रक्खे ॥ ४ ॥

तब यह कहा कहहु किन बाता ❀ किहि कारण कंपत सब गाता ॥ ५ ॥
तब तिन कहा सुनहु महराजा ❀ बात कहत आवत उर लाजा ॥ ६ ॥

तब यमने कहा कि बात क्यों नहीं कहते हो कि तुम्हारा सब शरीर क्यों कांप रहा है? ॥ ५ ॥ तब दूतोंने कहा हे महाराज! सुनिये, हमें तौ बात कहतेमें लज्जा आती है ॥ ६ ॥

जो राउर आयसु नहिं मानैं ❀ सेनापति शिर दंडहि ठानैं ॥ ७ ॥
अरु जो शासन करहिं तुम्हारी ❀ तौ यह गति तनु होय हमारी ॥ ८ ॥

जो आपकी आज्ञा नहीं मानते हैं तौ सेनापति हमारे शिर दंड़ करता है? ॥ ७ ॥ और जो आपकी आज्ञा मानते हैं तौ हमारे शरीरकी यह गति होती है ॥ ८ ॥

दो०–इक पापीके सदन हम, गे आयसु तव पाय ॥ ❀
लये पकरि कपिराजने, दये बहुत दुख काय ॥ १४ ॥ ❀

हम तुम्हारी आज्ञा पाकर एक पापीके घर गये तौ हनूमानने हमें पकड़कर हमारे शरीरको बड़े २ दुःख दिये ॥ १४ ॥

चौ०–बहुत भाँति हम करे निहोरे ❀ बार बार चरनन शिर ढोरे ॥ १ ॥
जोरे हाथ देहु जिन मारा ❀ हम आयसु शिर धरैं तुम्हारा ॥ २ ॥

हमने बहुत भांति निहोरे करे और वारंवार चरणोंमें शिर नवाया ॥ १ ॥ और हाथ जोड़कर कहा कि हमें मारो मत, हम तुम्हारी आज्ञा शिरपर धरते हैं ॥ २ ॥

तब तिन कहा सुनहु यमदूता ❀ जो हम कहहिं सो करहु सबूता ॥ ३ ॥
जहँ जहँ रामचरित सुनि पावहु ❀ तहँ तहँ तुम कबहूँ मति जावहु ॥ ४ ॥

तब उसने कहा, यमदूत! सुनो, जो हम कहैं उसे पक्के होकर करना कि ॥ ३ ॥ जहाँ २ रामचरित्रको सुन पाओ वहां २ तुम कभी मत जाओ ॥ ४ ॥

अरु जे रामचरित यह गावैं ❀ तहँ सुनिवे कहँ जे जन आवैं ॥ ५ ॥
तिय अरु पुरुष पशू परवारे ❀ बारे युवा वृद्ध जे सारे ॥ ६ ॥

और जो इस रामायणको गावैं और जो सुननेके लिये वहां आवैं ॥ ५ ॥ वे स्त्री हों वा पुरुष, पशु हों वा पक्षी, बालक, वृद्ध, युवा कोई हों ॥ ६ ॥

जिनके श्रवण शब्द इहिं आवैं ❀ अरु जे पुस्तकपूजन ठावैं ॥ ७ ॥
तिनके निकट न निकसहु भाई ❀ जो तुम चाहहु अपन भलाई ॥ ८ ॥

जिनके कानोंमें इसका शब्द पड़े, और जो पुस्तकका पूजन करैं ॥ ७ ॥ उनके पास होकर जो अपनी भलाई चाहो तौ कभी मत निकलो ॥ ८ ॥

दो०-तब हम तुम्हरे चरणकी, तिहिसन कीनी सौंह ॥ ❀
सुनु प्रभु बहु विधि कहे हम, दीन वचन निज गौंह ॥ १५ ॥ ❀

हे प्रभो! सुनो, तब हमने उनसे तुम्हारे चरणोंकी सौगन्द खाई और अपनी गौंके कारण उनसे बहुत भांतिके दीन वचन कहे ॥ १५ ॥

चौ०-सुनि यम कहा कौन सो अहही ❀ कहा नाम किहि ठाम सु रहही ॥ १ ॥
तब दूतन यों कहा बुझाई ❀ सुनहु धर्म भूपति चित लाई ॥ २ ॥

यह सुनकर यमने कहा वह कौन है? उसका नाम क्या है? और वह किस जगह रहता है? ॥ १ ॥ तब दूतोंने समझाकर यों कहा कि हे यमराज! चित्त लगाकर सुनिये ॥ २ ॥

भरतखंड महिमंडलमाहीं ❀ अंतरवेद देश इक आहीं ॥ ३ ॥
तुलसीदास नाम विख्याता ❀ भयउ गुसाँई पूरणज्ञाता ॥ ४ ॥

पृथ्वीमंडलके भरतखंडमें एक अंतरवेद जगह है ॥ ३ ॥ वहां तुलसीदास गोसाँई बड़े विख्यात और पूर्णज्ञाता हुये हैं ॥ ४ ॥

तिन रामायण रुचिर बनाई ❀ दोहा छन्द बन्द चौपाई ॥ ५ ॥
ताके सम नहिं और पुराना ❀ सुर नर मुनि सब सुनहिं सुजाना ॥६॥

उन्होंने सुन्दर रामायण बनाई है. उससें दोहा, छन्द, सोरठा, चौपाई रक्खे हैं ॥ ५ ॥ उसके समान दूसरा पुराण नहीं है, उसको सुर नर मुनि और सब सज्जन सुनते हैं ॥ ६ ॥

गावहिं नितप्रति कवि विद्वाना ❀ अति उत्तम इतिहासविधाना ॥ ७ ॥
सुनहिं सो सादर सब इतिहासा ❀ पुनि गवनहिं जहँ नित्त निवासा ॥ ८ ॥

और कवि पण्डित नित्य उसे गाते हैं, उसमें कथाकी रीति बड़ी उत्तम है ॥ ७ ॥ जो आदरसहित सब इतिहास सुनता है तो फिर वह भगवान्‌के पासही पहुँचजाता है ॥ ८ ॥

दो०-इहि विधि जहँ जहँ हरिचरित, करहिं नारि नर गान ॥ ❀
तहँ तहँ कपि बहुरूप धरि, करहिं श्रवणपुटपान ॥ १६ ॥ ❀

इस प्रकार स्त्री पुरुष जहां २ चरित्र गाते हैं वहाँ २ कपि अनेक प्रकारके रूप धरकर कानरूपी दोनोंसे पान करते हैं ॥ १६ ॥

चौ०-रामचरित सुनि सुनि कपिराई ❀ श्रवन नयन जल पुलकत जाई ॥ १ ॥
गद्‌गद गिरा हृदय भरि आवै ❀ प्रति चौपई शीश महि नावै ॥ २ ॥

हनूमान्जी जब रामचरित्र सुनते हैं तब उनके नेत्रोंमें आँसु आजाते हैं और शरीर पुलकायमान हो जाता है ॥ १ ॥ बाणी गद्‌गद हो जाती है, हृदय भर २ आता है और हरएक चौपाईके समय पृथ्वीपर शीश झुका देते हैं ॥ २ ॥

दूतवचन सुनि यम डर पाई ❀ गयउ जहां त्रिभुवनकर राई ॥ ३ ॥
शिर नवाय पुनि कीन्ह प्रणामा ❀ विष्णु कहा आये किहि कामा ॥ ४ ॥

दूतोंके वचन सुनकर यमराज डरा और त्रिलोकीनाथ भगवान्के पास गया ॥ ३ ॥ फिर शिर झुकाकर प्रणाम किया, तब विष्णु भगवान्ने पूछा कि कहो क्यों आये हो? ॥ ४ ॥

हाथ जोरि बोले यमराजा ❀ विनय एक सुनिये महराजा ॥ ५ ॥
शोधहिं धर्म अधर्म विचारा ❀ दंड दैनकर काम हमारा ॥ ६ ॥

यमराज हाथ जोड़कर बोले कि हे महाराज! हमारी एक विनती सुनिये ॥ ५ ॥ धर्म और अधर्मके विचारको हम शोधते हैं और हमारा काम दंड देनेका है ॥ ६ ॥

नित नव रीति निहारि तिहारी ❀ अनुशासन उठि चली हमारी ॥ ७ ॥
महा महा पापी जे पावैं ❀ तिनकहँ दूत पकरि तव लावैं ॥ ८ ॥

परंतु आपकी नित्य नई रीति देखकर हमारा राज्य तौ उठचला ॥ ७ ॥ क्योंकि जिन बड़े २ पापियोंको हम पकड़ते हैं उनको तुम्हारे दूत छिना २ कर ले आते हैं ॥ ८ ॥

कुंडलिया

पहले ही गंगा यमुन, मम दूतन दुख दैनि ॥ ❀
अब रामायण तुलसिकृत, प्रगटी तीजी भैनि ॥ ❀
प्रगटी तीजी भैनि रैनि दिन पापिन तारै ॥ ❀
भली बुरी करतूति नेक हू नाहिं बिचारै ॥ ❀
सुनहु विष्णु महराज देहु हम पिन्शन मागैं ॥ ❀
चलै न जगमें हुकुम आपके चरितन आगैं ॥ ❀

हे महाराज! पहिले तौं गंगा यमुनाही हमारे दूतोंको दुःखदायिन थीं, अब तीसरी बहन तुलसीदासकृत रामायण पैदा होगई सो रातदिन पापियोंको तारती है. कुछ भली बुरी करतूत नहीं विचारती. इसलिये हे महाराज विष्णु भगवान्! हम छुट्टी मांगते हैं. क्योंकि आपके चरित्रोंके आगे हमारा हुकम नहीं चलता है ॥ १ ॥

मारौ भावै छाँडिये, श्रीपति कृपानिधान ॥ ❀
काम सवारो अपनो करहु न बनती आन ॥ ❀
करहु न बिनती आन राम यह चरित तुम्हारो ॥ ❀
घर घर में नित बचै कियो जग पावन सारो ॥ ❀
जहा जहा कहिं जाय तहा तहँ ते कहैं टारो ॥ ❀
महिमंडलके मध्य हुकुम उठि गयो हमारो ॥ २ ॥ ❀

हे कृपानाथ भगवान्! मारो वा छोड़ो, हमारी तौ यही विनती है कि अपना काम आप सँभालिये. क्योंकि हे राम! आपका यह चरित्र नित्य घर २ में बँचता है और सब जगतको पवित्र कर

दिया है; जहां जहां जाते है वहां लोग यही कहते हैं कि इनको टालो, और पृथ्वीमंडलमेंसे हमारा सव हुकुम टल गया है ॥ २ ॥

मारे सरमनके लुकैं, निज निज भवनन जाय ॥ ❀
त्रास पायकै आपकी, कहैं न सन्मुख आय ॥ ❀
कहैं न सन्मुख आय कथा रामायणकेरी ॥ ❀
जहा जहा सो वचै पारषद दें तह फेरी ॥ ❀
बिगरे पत्र तमाम सुधारत हम हियहारे ॥ ❀
श्रीपति हमरे दूत फिरत हैं घर घर मारे ॥ ३ ॥ ❀

सो हम मारे शरमके अपने घरमें जा छुपते हैं और डरके मारे आपके सामने नहीं कहते ॥ जहां २ रामायणकी कथा होती है वहां २ आपके गण फेरी देते हैं, सो हमारे सब बही खाते बिगड़ गये और हम सुधारते २ हृदयमें हार गये, और हे श्रीपते ! हमारे दूत घर २ मारे २ फिरते हैं ॥३॥

दो०-विष्णु कहा यमराजसन, भरौ न उरमह क्रोध ॥ ❀
जो हम कहैं सुजिय धरौ, करो न वृथा विरोध ॥ १७ ॥ ❀

भगवान्ने यमराजसे कहा कि हृदयमें क्रोध मत करो. जो हम कहैं उसे जीमें धरो और वृथा विरोध मत करो ॥ १७ ॥

चौ०-जे रामायण सुनैं सुनावै ❀ अरु गंगा यमुनामहँ न्हावै ॥ १ ॥
तिनके सदन कबहुँ जनि जावहु ❀ निजदूतनसन यह समझावहु ॥ २ ॥

जो मनुष्य रामायण सुनैं सुनावै और गंगा यमुनामें स्नान करैं ॥ १ ॥ उनके घर तुम कभी न जाओ, यह बात अपने दूतोंको समझादो ॥ २ ॥

अरु पुस्तक पावहिं जिहिधामा ❀ तिनको लैंय न कबहूँ नामा ॥ ३ ॥
यह सुनि यम निजसदन सिधावा ❀ सब दूतनसन टेरि सुनावा ॥ ४ ॥

वे जिस घरमें रामायणकी पुस्तक पावैं उन पुरुषोंका कभी नामतक न लें ॥ ३ ॥ यह सुनकर यमराज अपने घर गये और सब दूतोंको बुलाकर कह दिया ॥ ४ ॥

सुनहु दूत मम परम प्रवीना ❀ करहु जो हरि अनुशासन दीना ॥ ५ ॥
रामचरित जहँ २ सुनि आवो ❀ अरु पुस्तक जिन धामन पावो ॥ ६ ॥

हे दूतो ! तुम तौ बड़े चतुर हो, अब भगवान्ने जो आज्ञा दीनी है सो करो ॥ ५ ॥ जहां २ रामचरित्र सुन आओ और जिसके घरमें पुस्तक धरी हुई पाओ ॥ ६ ॥

जे अन्हायँ बिच यमुना गंगा ❀ नाम लेय कहुँ पाय प्रसंगा ॥ ७ ॥
तिनहिं न देहु दरश तुम जाई ❀ याहीमें तुम्हरी चतुराई ॥ ८ ॥

और जो गंगा यमुनामें स्नान करैं अथवा कहीं प्रसंग पाकर नामही लें ॥ ७ ॥ वहां जाकर अपनी सूरत मत दिखलाओ. इसीमें तुम्हारी चतुरता है ॥ ८ ॥

दो०-और एक मत तुम सुनहु, सकल दूत दै कान ॥ ❀
योजन महि परिहरहु जहँ, होय रामको गान ॥ १८ ॥ ❀

और हे दूतो ! तुम सब हमारी एक सलाहको ध्यान देकर और सुनो कि जिस प्राणीको पृथ्वीपर लेने जाओ और वहां रामचरित्रका गान होता हो तो एक योजन दूर रहो ॥ १८ ॥

चौ०-अरु जिन रामचरित शिर नावा ❀ पूजनकरि प्रसादकहँ पावा ॥ १ ॥
अथवा आरतहू सुनि पाई ❀ श्रोतनकी संगति कहँ ठाईं ॥ २ ॥

अथवा जिसने रामायणको शिर नवाया हो और पूजन कर प्रसाद पाया हो ॥ १ ॥ अथवा किसी दुखीने श्रोताओंकी संगतिके कारण सुन पाई हो ॥ २ ॥

भक्तनकी सेवा कहुँ कीनी ❀ भक्तनसों अस्तुति सुनि लीनी ॥ ३ ॥
तिनतें दूरि रहहु तुम भाई ❀ वृथा न ठानहु जाय लराई ॥ ४ ॥

अथवा कहनेवालोंकी सेवा करी हो अथवा भक्तोंसे रामायणकी स्तुति सुनी हो ॥ ३ ॥ हे भाई ! उनसे दूर रहो वृथा जाकर लड़ाई मत ठानो ॥ ४ ॥

और एक इतिहास नवीना ❀ रामचरितकर सुनहु प्रवीना ॥ ५ ॥
काशीपति अरु द्रविड़ नृपाला ❀ रहे एक आसन कछु काला ॥ ६ ॥

अब हे चतुर ! एक रामायणकी कथाका दूसरा नवीन इतिहास सुनो ॥ ५ ॥ काशीके राजा और द्रविड़ देशके राजा थोड़े दिन किसी एकही स्थानमें रहे थे ॥ ६ ॥

अतिशय प्रीति परस्पर बाढ़ी ❀ विहरत एक सदन छल छाँड़ी ॥ ७ ॥
नृपसन नृप रानीसन रानी ❀ कपट न उनकहँ मन क्रम बानी ॥ ८ ॥

उनके आपसमें बड़ी प्रीति बढ़ गई और छल छोड़ एकही स्थानमें रहने सहने लगे ॥ ७ ॥ राजाके साथ राजाका रानीके साथ रानीका और मनक्रमवचनसे कुछभी कपट नहीं रहा ॥ ८ ॥

दो०-इहि विधि बीते काल कछु, इक थल करतविहार ॥ ❀
दान ध्यान अस्नान सँग, अशन बसन इक सार ॥ १९ ॥ ❀

इसप्रकार एक जगह विहार करते २ कुछ दिन बीत गये. वे एकही साथ स्नान, ध्यान और दान करतेथे और एकसेही वस्त्र आभूषण पहिरतेथे ॥ १९ ॥

चौ०-दुहुँ राजे मनमहँ अनुरागे ❀ ह्वै संबंध बिचारन लागे ॥ १ ॥
अरु रानिनहू यह मन ठानी ❀ निज २ पतिसन सुरुचि बखानी ॥ २ ॥

दोनों राजा विचारने लगे कि कैसेही आपसमें संबन्ध हो ॥ १ ॥ और उधर रानियोंनेभी अपने २ मनमें यही ठानी और अपनी २ रुचि अपने २ पतिसे कही ॥ २ ॥

तब नृपसन नृप कहा बुझाई ❀ बात एक हमरे मन भाई ॥ ३ ॥
तुमरे घर कन्या जो होई ❀ पुत्र होय हमरे जो कोई ॥ ४ ॥

तब एक राजाने दूसरेसे समझाकर कहा हमारे मनमें एक बात आई है कि ॥ ३ ॥ तुम्हारे घर कन्या हो और हमारे घर जो कोई पुत्र हो ॥ ४ ॥

अथवा होय सुता मम धामा ❀ तुम्हरे होय तनय अभिरामा ॥ ५ ॥
तौ सम्बन्ध परस्पर करहू ❀ यह प्रण निश्चय उरमें धरहू ॥ ६ ॥

अथवा हमारे घर लड़की हो और तुम्हारे घर सुन्दर पुत्र हो ॥ ५ ॥ तौ आपसमें संबन्ध करैं. यह प्रण निश्चय करके मनमें रखलो ॥ ६ ॥

बात यहै दोउन मन भाई ❀ सौंह खाय मन रहे दृढ़ाई ॥ ७ ॥
इहि बिधि बीति गयो कछु काला ❀ दुहुँ गृह गर्भवती भइँ बाला ॥ ८ ॥

यह बात दोनोंके मनमें अच्छी लगी और सौगन्द खाकर जीमें पक्की ठहराली ॥ ७ ॥ इस प्रकार कुछ काल बीत गया और दोनोंके घर रानियां गर्भवती हुईं ॥ ८ ॥

दो०-भावीवश कन्या भई, दोउनके घर आय ॥
पुत्र खबरि द्राविड़ दई, काशीनृपहिं पठाय ॥ २० ॥

प्रारब्धवश दोनोंके घर कन्या उत्पन्न हुई परंतु द्रविड़ देशके राजाने काशीवाले राजाको पुत्र होनेकी खबर कहलाभेजी ॥ २० ॥

चौ०-अरु इक प्रथम बात यह भई ❀ द्रविड़नृपति रानीसन कही ॥ १ ॥
जो कन्या ह्वैहैं दुहुँ ओरा ❀ तजहुँ प्राण निहचै प्रण मोरा ॥ २ ॥

सो इसमें पहिले यह बात हुई कि द्रविड़के राजाने रानीसे कहा कि ॥ १ ॥ जो दोनों ओर कन्या होंगी तौ मैं अपने प्राण तजदूंगा, यही मेरा निश्चय है ॥ २ ॥

रानी यह जियमाँझ विचारी ❀ भई बात अतिअनुचित भारी ॥ ३ ॥
कीन कठिन प्रण नृप मनमाहीं ❀ तजहिं देह कछु संशय नाहीं ॥ ४ ॥

रानीने मनमें यह विचारा कि यह बात तो बड़ी अनुचित हुई ॥ ३ ॥ राजाने मनमें बड़ा भारी प्रण किया । क्या ठीक है कहीं राजा सचोंही प्राण न छोड़ दें ? ॥ ४ ॥

तियचरित्र उर अंतर धारी ❀ पुत्र भयो यह बात प्रचारी ॥ ५ ॥
तिहि क्षण नारि निकट जे आईं ❀ तिनहिं द्रव्य दे बात छिपाईं ॥ ६ ॥

तब हृदयमें स्त्रियाचरित्रको धर कर यह बात प्रगट करदी कि पुत्र हुआ है ॥ ५ ॥ और उस समय जो २ स्त्रियां पास आईं उन्हें धन देकर बात छिपादी ॥ ६ ॥

अरु प्रबंध कीना तिहि सोई ❀ बारह वर्ष लखै नहिं कोई ॥ ७ ॥

और उसने वह प्रबन्ध किया कि लड़केको बारह वर्षतक कोई न देखने पावै ॥ ७ ॥

दो०-काशीनृप कन्या भई, जबहीं योग विवाह ॥
लग्न सगाई द्रविड़गृह, दीनी सहित उछाह ॥ २१ ॥

जब काशीवाले राजाकी कन्या विवाहयोग्य हुई तौ बड़े उत्साहसे लग्न और सगाई द्रविड़देशके राजाके यहां भेज दी ॥ २१ ॥

दुहू ओर आनंद भये, ठये सुमंगलचार ॥
राजरीति अति प्रीतिसों, गै बरात नृपद्वार ॥ २२ ॥

दोनों ओर आनंद हुये, मंगलाचार होने लगे और जैसी राजाओंमें रीति होती है उस प्रकारसे बरात लेकर राजाके द्वारपर गये ॥ २२ ॥

चौ०-नेग चारु सब द्विजन कराये ❀ जे विवाहपद्धतिबिच गाये ॥ १ ॥
मित्र शत्रु सबके जग आहीं ❀ भले बुरे कछु संशय नाहीं ॥ २ ॥

ब्राह्मणोंने विवाहपद्धतिके अनुसार सब नेग चार कराये ॥ १ ॥ संसारमें बुरे भले मित्र शत्रु तौ सबही के होते हैं इसमें क्या संदेह है ? ॥ २ ॥

किहुँ विधि प्रगट भई सो बाता ❀ सुन काशी नृप जरिगे गाता ॥ ३ ॥
धरि उर क्रोध कह्यो महिपाला ❀ इहिं शिर काटहुँ निज करवाला ॥ ४ ॥

सो किसी प्रकार लड़की होनेकी वह बात खुल गई, यह सुनतेही काशीवाले राजाका सब शरीर जलगया ॥ ३ ॥ और राजाने क्रोधकर कहा कि इसका अपनी तलवारसे शिर काटूंगा ॥ ४ ॥

सुनि द्राविड़ डरपे मनमाहीं ❀ निजअपराध समुझि संकुचाहीं ॥ ५ ॥
बात यहै उपजी उरमाँईं ❀ मेटहिं दुख हरि दास गुसाँईं ॥ ६ ॥

यह सुन द्रविड़देशके राजाके छके छूट गये और अपना अपराध समझकर बड़ा सकुचाया॥५॥ और मनमें यह बात उपजी कि इस दुःखको विष्णुके दास गोसांईजी मेट सक्ते हैं ॥ ६ ॥

तब नृप तुलसिदासगृह आये ❀ समाचार सब कहि समुझाये ॥ ७ ॥
भाँति भाँति पुनि अस्तुति कीन्ही ❀ चरणपादुका शिर धर लीन्ही ॥ ८ ॥

तब राजा तुलसीदासजीके आश्रममें आये और सब समाचार कहकर समझाये ॥ ७ ॥ फिर अनेक भाँति उनकी स्तुति करी और उनकी चरणपादुका शिरपर धर लीन्ही ॥ ८ ॥

दो०-द्रविडभूपकी विनय सुनि, श्रीमत् तुलसीदास ॥ ❀
कहा धीर धारहु नृपति, जिन जिय होहु उदास ॥ २३ ॥ ❀

द्रविड़राजकी बिनती सुनकर श्रीमान् गोसाँई तुलसीदासजीने कहा कि हे राजन्! धीरज धरो और चित्तमें उदास मत होओ ॥ २३ ॥

चौ०-श्रीरघुवीरकृपासो राजा ❀ सुधरहिं सब भक्तनकर काजा ॥ १ ॥
अब तुम धाम सिधारहु आछे ❀ समझै हौं काशीपहिं पाछे ॥ २ ॥

हे राजा! श्रीरघुनाथजीकी कृपासे भक्तोंके सब काम सिद्ध होते हैं ॥ १ ॥ अब तुम अच्छी तरह अपने घरको सिधारो, मैं पीछेसे काशीनरेन्द्रको समझा दूंगा ॥ २ ॥

गये भूप निज डेरनि माहीं ❀ संशय वश जियमें कल नाहीं ॥ ३ ॥
वहाँ गुसाँई हृदय विचारा ❀ पठवा भूपभवन हलकारा ॥ ४ ॥

राजा अपने डेरेको तौ गये पर सन्देहके वश जीमें कल नहीं पड़ी ॥ ३ ॥ वहां गोसाँईजीने हृदयमें विचारा और राजाके घर एक हलकारा भेजा ॥ ४ ॥

काशीपतिसन कहा सुजाई ❀ तुमहिं बुलावत तुलसि गुसाँई ॥ ५ ॥
सुनि भूपति आतुर उठि धावा ❀ एकाकी तुलसीपहँ आवा ॥ ६ ॥

उसने जाकर काशीके राजासे कहा कि तुमको गोसाँई तुलसीदासजी बुलाते हैं ॥ ५ ॥ सुनते ही राजा तुरंत उठ धाया और अकेला तुलसीदास गोसाँईके पास आया ॥ ६ ॥

कही कथा पुनि सब तिनपाहीं ❀ सुन करि बोले तुलसि गुसाँई ॥ ७ ॥
तजहु क्रोध भूपति जियमेंसैं ❀ करहु जो विधि मैं बरणौं जैसैं ॥ ८ ॥

और फिर उसने सब कथा कही, उसे सुनकर तुलसीदास गोसाँई बोले कि ॥ ७ ॥ हे राजा! जीमेंसे क्रोध छोड़ दो और जो उपाय मैं कहूं सो करो ॥ ८ ॥

दो०-सादरते नव दिवस लग, रघुवरचरित अनूप ॥ ❀
सुनहु तौ कन्या होय वर, रामकृपा ते भूप ॥ २४ ॥ ❀

जो आदरसहित नव दिनतक सुन्दर रामायण सुनो तौ हे राजा! रामजीकी कृपासे कन्या पुत्र होजाय ॥ २४ ॥

चौ०-तब नृप कहा करहु प्रभु सोई ❀ जिहि बिधि पूरण कारज होई ॥ १ ॥
सुनि भूपतिके बचन बिनीता ❀ श्रीमत तुलसीदास पुनीता ॥ २ ॥

तब राजाने कहा, हे महाराज! सोही करो कि जिसमें कार्य पूर्ण हो ॥ १ ॥ राजाके नम्रवचन सुनकर गोसाँई तुलसीदासजी जो परमपवित्र थे ॥ २ ॥

लै पुस्तक रामायणकेरी ❀ आये जहँ वर कन्या हेरी ॥ ३ ॥
नव दिनतक रामायण कीनी ❀ तब आरती नृपति कर लीनी ॥ ४ ॥

वे अपनी रामायणकी पुस्तक लेकर आये और कन्या वरको बुलाया ॥ ३ ॥ नवदिनतक रामायण कही तब राजाने आरती उतारी ॥ ४ ॥

यह चौपाई पढ़ि कहि धन्या ❀ तिहि क्षण वर है गई सु कन्या ॥ ५ ॥
"मंत्र महामणि विषय व्यालके ❀ मेटत कठिन कुअंक भालके ॥ ६ ॥"

और जब धन्य २ कहकर यह चौपाई पढ़ी उसी क्षण कन्या सुन्दर पुत्र होगई ॥ ५ ॥ "मंत्रमहामणि विषय व्यालके । मेटत कठिन कुअंक भालके" ॥ ६ ॥

मंगलचार भये दुहुँओरा ❀ बजे निशान भयो जग सोरा ॥ ७ ॥
कन्या बरसों भाँवरि भई ❀ जय जय धुनि अकासलौं गई ॥ ८ ॥

फिर तौ दोनों ओर मंगलाचार होने लगे, निशान बजने लगे और जगमें शोर फैल गया ॥ ७ ॥ कन्या बरकी भाँवरें पड़ीं और जय २ ध्वनि आकाशतक पहुँची ॥ ८ ॥

दो०–नारद सनत्कुमारसन, जो बरनौं धरि ध्यान ॥ ❀
सो अब मैं भाषौं कछुक, रामायणसुविधान ॥ २५ ॥ ❀

अब मैं रामायणके थोड़ेसे उस विधानको कहताहूं कि जो नारदजीने ध्यान धरधर सनत्कुमारसे कहा था ॥ २५ ॥

चौ०–कार्त्तिक माघ मास जब आवै ❀ नवदिन नितप्रति कथा कहावै ॥ १ ॥
राम लषण सिय मूरति ठानै ❀ हनूमानप्रतिमा तहँ आनै ॥ २ ॥

कार्त्तिक और माघ मास जब आवै तौ नवदिनतक नित्य कथा कहालावै ॥ १ ॥ राम लक्ष्मण सीताजीकी वहाँ मूर्त्ति स्थापन करै और हनूमानजीकीभी वहां प्रतिमा लावै ॥ २ ॥

चंदन धूप प्रदीप चढ़ावै ❀ भेरी शंख मृदंग बजावै ॥ ३ ॥
भक्तिसहित हरिभजननि गावै ❀ श्रद्धासंयुत द्रव्य चढ़ावै ॥ ४ ॥

---

(१) क्षेपकोंकी गणना नहीं है उन्हें छोड़कर पाठ करना चाहिये.

प्रथम दिवस–"जेहि सुमिरत सिधि होय" इस पहिले सोरठेसे लेकर "हिय हर्षे कामारि" इस १२९ वें दोहेतक ॥

द्वितीय दिवस–"सुनु शुभ कथा भवानि" इस १७ वें सोरठेसे "सतानन्द पदवंति प्रभु" इस २७७ वें दोहेतक ॥

तृतीय दिवस–"सीयस्वयंवर देखिय जाई" इस चौपाईसे "कीन्ह शौच सब सहजशुचि" इस ३९१ दोहेतक ॥

चतुर्थ दिवस–"भूप विलोकि लिये उर लाई" इस अयोध्याकांडकी चौपाईसे "श्यामल गौर किशोरवर" इस ११६ दोहेतक ॥

पंचम दिवस–"कोटि मनोजलजावनिहारे" इस चौपाईसे "राम शैलशोभा निरखि" इस २६१ वें दोहेतक ॥

षष्ठ दिवस–"तब केवट ऊँचे चढ़ जाई" इस आरण्यकांडकी चौपाईसे "करि परितोष दूरि करि शोका" इस चौपाईतक ॥

सप्तम दिवस–"जेहि विधि कपटकुरंग" इस आरण्यकांडके दोहेसे लंकाके १४ वें "कह हनुमंत सुनहु प्रभु" इस दोहेतक ॥

अष्टम दिवस–"पवनतनयके वचन सुनि" इस लंकाकाण्डके दोहेसे उत्तरकांडके "जहँ तहँ धावन पठिय पुनि" इस २३ वें दोहेतक ॥

नवम दिवस–"अवधपुरी अतिरुचिर बनाई" इस चौपाईसे पूर्ण उत्तरकांडतक ॥

चन्दन, धूप, नैवेद्य आदि लगावै और शंख, भेरी मृदंग आदि बजावै ॥ ३ ॥ भक्तिपूर्वक भगवान्‌के भजन गावै और श्रद्धासे द्रव्य चढ़ावै ॥ ४ ॥

करै आरती मंगल गावै ❀ पुनि प्रसूनमाला बरषावै ॥ ५ ॥
चरणामृत प्रसाद पुनि पावै ❀ वक्ता श्रोता सबन बँटावै ॥ ६ ॥

फिर आरती करके मंगलाचार गावै और पुष्पोंकी माला बरसावै ॥ ५ ॥ फिर चरणामृत प्रसाद पावै और वक्ता और श्रोताओंको प्रसाद बाँटै ॥ ६ ॥

जबलगि चरित होय रघुबरको ❀ करत रहै जप श्रीहरिहरको ॥ ७ ॥
इहि विधि रामचरित्र बँचावै ❀ ऋद्धि सिद्धि सुख संपति पावै ॥ ८ ॥

और जबतक रघुनाथजीकी कथा हो तबतक भगवान् और शिवजीका जप करता रहै ॥ ७ ॥ इस प्रकार रामायण वँचवावै तौ ऋद्धि, सिद्धि, सुख और संपत्ति पावै ॥ ८ ॥

दो०–रामचन्द्रलक्ष्मणसहित, सुमिर वीर हनुमान ॥ ❀
करहि दंडवत जोरि कर, करि सबकौ सनमान ॥ २६ ॥ ❀

फिर रामचन्द्र, लक्ष्मण और वीर हनुमानजीका स्मरण करके हाथ जोड़कर दंडवत् करै और सबका सन्मान करै ॥ २६ ॥

चौ०–पुत्र चहै अथवा धन होई ❀ रामकृपातें पावै सोई ॥ १ ॥
अरु जो जो जन मनमहँ लावै ❀ याहि जपे सो सो सब पावै ॥ २ ॥

पुत्र चाहै अथवा धन चाहै, वही रामकृपासे पावे ॥ १ ॥ और जो जो बात मनमें चाहै वही २ इस कथाके कहलानेसे मिलसक्ती है ॥ २ ॥

जन्मकथा रामायणकेरी ❀ कहौं यथामति ग्रंथन हेरी ॥ ३ ॥
रामायण जब प्रथम बनाई ❀ काशीपति पेषनहीं मँगाई ॥ ४ ॥

अब अपनी बुद्धिके अनुसार रामायणकी जन्मकथा कहताहूं कि जैसि कुछ ग्रन्थोंमें लिखी है ॥३॥ गोसाँईजीने जब प्रथमही प्रथम रामायण बनाई तौ काशीनरेशने देखनेके लिये मँगाई ॥ ४ ॥

देखि सुभग भूपतिमन भाई ❀ तब सब पंडित लीन बुलाई ॥ ५ ॥
अरु कीनी बहु भाँति बड़ाई ❀ बोले वे तब सब हरषाई ॥ ६ ॥

सुन्दर देखतेही जब राजाके मनमें भाई तौ सब पण्डितोंको बुला लिया ॥ ५ ॥ और बहुत भांति बड़ाई करी फिर वे पण्डित प्रसन्न होकर बोले ॥ ६ ॥

कीन बहुत सुन्दर यह भाषा ❀ अति अनूप याके इतिहासा ॥ ७ ॥
पै प्रसिद्ध यह जब जग होई ❀ जो हम कहैं करब नृप सोई ॥ ८ ॥

यह भाषा बहुत सुन्दर बनाई है इसके इतिहास बड़ेही अनोखे हैं, ॥ ७ ॥ परंतु यह जगतमें प्रसिद्ध तब होगी कि जब जो हम कहैं सो राजा करै ॥ ८ ॥

दो०–तब भूपति परसन्न है, तिन सन कहाबुझाय ॥ ❀
सादर हम करिहैं सकल, जो तुम देहु रजाय ॥ २७ ॥ ❀

तब राजाने प्रसन्न हो उन पण्डितोंको समझाकर कहा कि जो आप आज्ञा दोगे उसे हम आदरपूर्वक करैंगे ॥ २७ ॥

चौ०–तब बोले विद्वान विचारी ❀ सुनहु नाथ इक विनय हमारी ॥ १ ॥
श्रीआनंदकान्ह ब्रह्मचारी ❀ जिनकी महिमा सब जग भारी ॥ २ ॥

तब पण्डित विचारकर बोले कि हमारी एक बिनती है उसे सुनो ॥ १ ॥ एक श्रीआनंदकंद ब्रह्मचारीजी हैं जिनकी महिमा सब जगतमें बड़ी भारी है ॥ २ ॥

सतगुरु सकल शिरोमणि सोई ❀ जो आदरहिं तजे नहिं कोई ॥ ३ ॥
तासु निकट पुस्तक पठवावहु ❀ अथवा सादर यहां बुलावहु ॥ ४ ॥

वे बड़े सद्गुरु और सबके शिरोमणि हैं जो वे उसका आदर करैंगे तो इसका कोई त्याग नहीं करैगा ॥ ३ ॥ इसलिये इस पुस्तकको उनके पास भिजवाइये अथवा आदरपूर्वक यहां बुलवाइये ॥ ४ ॥

पुनि नृप पुस्तक पठई तहँवा ❀ श्रीआनंदकान्ह रहँ जहँवा ॥ ५ ॥
पेषि परम सुन्दर इतिहासा ❀ आनंदकानहिं बढयो हुलासा ॥ ६ ॥

फिर राजाने पुस्तकको जहाँ आनंदकंदजी रहतेथे वहां भेजा ॥ ५ ॥ इतिहासको परम सुन्दर देखकर आनन्दकन्दजीको बड़ा आनन्द हुआ ॥ ६ ॥

अतिप्रिय लगी तासु जिय भाषा ❀ बहुत दिनन राखी निजपासा ॥ ७ ॥
पूजन भजन तजे सब झारी ❀ निशि दिन मगन रहे ब्रह्मचारी ॥ ८ ॥

और चित्तमें उसकी भाषा बड़ी प्यारी लगी और उन्होंने इसे अपने पास बहुत दिनतक रक्खा ॥ ७ ॥ ब्रह्मचारीजीने सब पूजन, भजन छोडा और रातदिन इसीमें लगगये ॥ ८ ॥

दो०–राखी पुस्तक पास तिहिं, गये बहुत दिन बीत ॥ ❀
तब भूपतिउर सुधि भई, रघुवरचरित पुनीत ॥ २८ ॥ ❀

जब उन्होंने पुस्तक बहुतदिनतक रखली और बहुत दिन बीतगये तब फिर राजाके हृदयमें रघुनाथजीके पवित्र चरित्रकी याद आई ॥ २८ ॥

दूत पठाये पुनि तुरत, गये जहाँ द्विजराज ॥ ❀
हाथ जोरि बोले नृपति, पठये पुस्तककाज ॥ २९ ॥ ❀

और फिर राजाने ब्रह्मचारीजीके पास दूत भेजे सो उन्होंने हाथ जोड़कर कहा कि राजाने हमें पुस्तक लेनेके लिये भेजा है ॥ २९ ॥

चौ०–सुनि आनंदकान्ह ब्रह्मचारी ❀ पुस्तकप्रतिमा और उतारी ॥ १ ॥
वहि पुस्तकपर यह लिख दीनो ❀ धन्य २ जिहिं यह गथ कीनो ॥ २ ॥

आनन्दकन्द ब्रह्मचारीजीने सुनकर पुस्तककी दूसरी नकल करी ॥ १ ॥ और उस पुस्तकपर यह लिख दिया कि उनको धन्य है जिन्होंने यह कथा बनाई है ॥ २ ॥

अतिउत्तम भाषा यह जैसी ❀ भई न ह्वै है न कहूं ऐसी ॥ ३ ॥
अष्टादश पुराण हम पेखे ❀ भाषा देव नाग नर लेखे ॥ ४ ॥

यह ऐसी उत्तम भाषा है कि न कहीं ऐसी हुई, न होगी, और न है ॥ ३ ॥ हमने अठारहों पुराण देख डाले और देव, नाग, और नरोंकी भाषा देख डालीं ॥ ४ ॥

सुने विबिध इतिहास अनेका ❀ काव्य विचित्र एकतें एका ॥ ५ ॥
बर्ण विच्चित्र अर्थ बहुतेरे ❀ रस धुनि अलंकार गुण हेरे ॥ ६ ॥

और नानाप्रकारके अनेक इतिहास सुने और एकसे एक विच्चित्र काव्य देखे ॥ ५ ॥ और उनमें वर्णोंकी विच्चित्रता, बहुतेरे अर्थ, रस, ध्वनि, अलंकार आदि गुण देखे ॥ ६ ॥

पर तुलसीकृत यह गथ आगे ❀ सुनत सुनावत फीके लागे ॥ ७ ॥
अरु श्लोक लिखा यहु एका ❀ समुझहिं जिन हिय परम विवेका ॥ ८ ॥

परंतु तुलसीदासजीके इस ग्रन्थके आगे सुनते सुनातेमें वे सब फीके लगते हैं ॥ ७ ॥ और उसपर एक यह श्लोक लिख दिया, जिनके हृदयमें परम ज्ञान हो वे इसे समझें ॥ ८ ॥

॥ श्लोक ॥

आनन्दकानने ह्यस्मिन् जंगमस्तुलसीतरुः ॥
कवितामंजरी यस्य रामभ्रमरभूषिता ॥ १ ॥

इस आनन्दवनमें तुलसीदास जंगम वृक्ष हैं, जिनकी कवितारूपी मंजरी रामरूपी भ्रमरसे भूषित है ॥ १ ॥

छन्द

जय जयति तुलसीदास जिन इतिहास यह उत्तम कहा ॥
महिमा अपार महात्म्यकी नहिं पार श्रुति शारद लहा ॥
निजबुद्धिसम कहि भट्ट कछु फल सुमरि सतगुरु पद रहा ॥
सादर प्रमोदहिं सुजन सुनि रघुवीर यश उत्तम महा ॥ १ ॥

उन तुलसीदास गोसाँईजीको वारंवार धन्य है कि जिन्होंने इस इतिहासको बनाया इसके माहात्म्यकी महिमा अपार है. वेद और सरस्वतीनेभी पार नहीं पाया ॥ अपनी बुद्धिके अनुसार गुरुके चरणकमलोंका स्मरण करके भट्टने इसका थोड़ासा फल कहा है. इस रघुनाथजीके महा उत्तम यशको सुनकर, जो सज्जन होंगे वे आदरपूर्वक प्रसन्न होंगे ॥ १ ॥

दोहा

रामचरित्रमाहात्म्य यह, सादर सज्जन लेहु ॥
तुलसीदास प्रसन्न है, मोपर करहु सनेहु ॥ १ ॥
गुणमंडित गोकुलपुरा, अकबरनगरमँझार ॥
पंडित बालमुकुंदबर, तहँ द्विजकुल अवतार ॥ २ ॥
तिनकर तनय विचारि मैं, रामेश्वर मतिमन्द ॥
रामकथामाहात्म्य यह, पूरण आनन्दकन्द ॥ ३ ॥
सम्बत ऋतु शर रस मही, मास असाढ़हि पाय ॥
सित सातैं पूरण करयो, रामचरण चित लाय ॥ ४ ॥

इति

एकश्लोकी रामायणम्.

आदौ रामतपोवनादिगमनं हत्वा मृगं कांचनं ॥
वैदेहीहरणं जटायुमरणं सुग्रीवसंभाषणम् ॥
वालीनिग्रहणं समुद्रतरणं लंकापुरीदाहनं ॥
पश्चाद्रावणकुंभकर्णहननं एतद्धि रामायणम् ॥ १ ॥

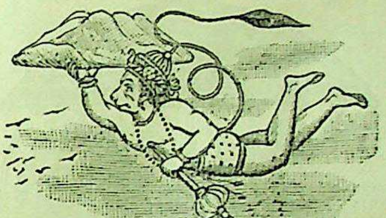

श्रीगोस्वामी

तुलसीदासकृतरामायणम्

पीयूषधाराहिंदीभाषाटीकासहितम्।

(बालकांडम्)

श्रीरामपंचायतन.

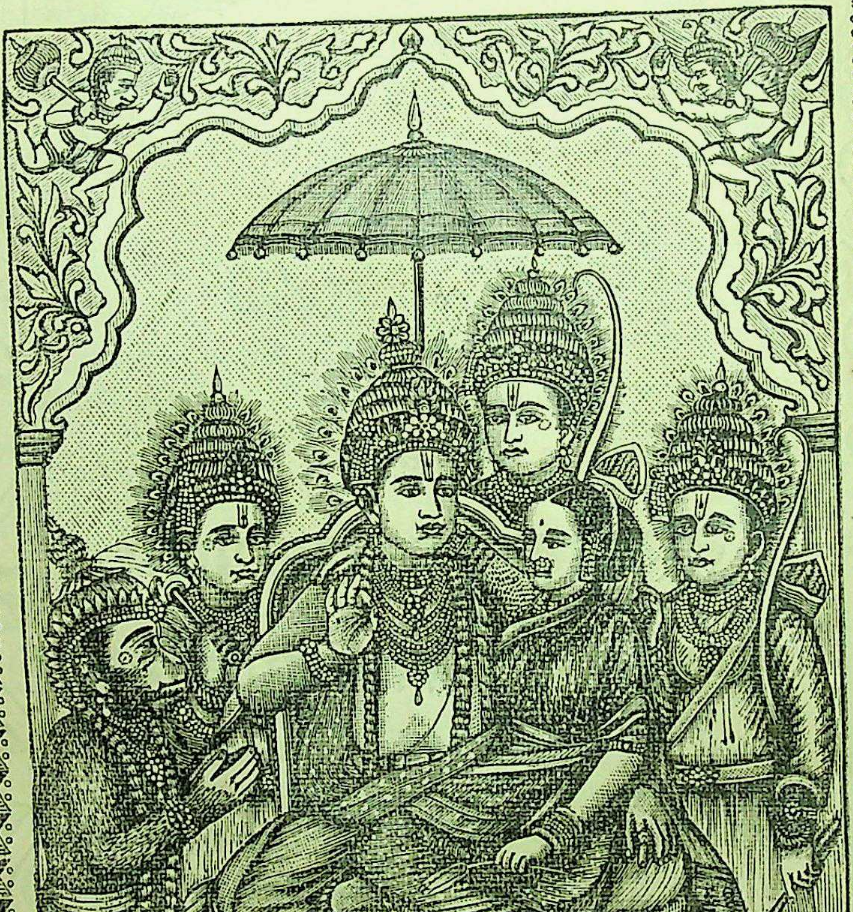

॥ श्रीः ॥

श्रीगोस्वामी

तुलसीदासकृतरामायणम् ।

बालकांडप्रारंभः ।

श्रीगोस्वामी तुलसीदासजी ग्रन्थके आरंभमें निर्विघ्न समाप्तिकेअर्थ मंगलाचरण करते हैं ॥

❀ मंगलाचरण ❀

श्लोकाः–वर्णानामर्थसंघानां रसानां छंदसामपि ॥ ❀
मंगलानां च कर्तारौ वंदे वाणीविनायकौ ॥ १ ॥ ❀
भवानीशंकरौ वंदे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ॥ ❀
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वांतःस्थमीश्वरम् ॥ २ ॥ ❀

छन्द–शिखरिणी.

जटा सोहैं गंगा शशिशिर अनंगा हरन हैं। भावनी अर्द्धंगा गणपति उछंगा धरन हैं ॥
लसैं गोरे अंगा सित भस भुजंगाभरन हैं। करौ भौभै भंगा शिवशिव तुह्मारी शरन हैं ॥ १ ॥
शिवास्वामी तेरी सुभग तनु[1] हेरी अभयदा । नई नीकी मेवा तव चरणसेवा.विजयदा ।
रच्यौ चाहौं सीतापतिचरितगीता हितमयी।दया कीजै दीजै मति अति पुनीता नित नयी ॥२॥

[2]वर्ण और अर्थसमूहोंके तथा रस, छन्द और मंगलोंके करनेवाले सरस्वती और गणेशजीको प्रणाम करता हूं ॥१॥ जिनकेविना सिद्धजन अपने अन्तःकरणमें स्थित ईश्वरको नहीं देखते हैं ऐसे श्रद्धा और विश्वासके स्वरूप पार्वती और शंकरको प्रणाम करताहूं ॥ २ ॥

---

(१) मूर्ति. (२) वर्ण, अर्थ, रस और छन्द आदिको गूढार्थदीपिकामें देखो.

वंदे बोधमयं नित्यं गुरुं शंकररूपिणम् ॥
यमाश्रितो हि वक्रोऽपि चंद्रः सर्वत्र वंद्यते ॥ ३ ॥

सीतारामगुणग्रामपुण्यारण्यविहारिणौ ॥
वंदे विशुद्धविज्ञानौ कवीश्वरकपीश्वरौ ॥ ४ ॥

जिनका आश्रय पाकर वक्र चंद्रमाभी सर्वत्र वन्दना किया जाता है ऐसे उन शंकररूप ज्ञानमय और नाशरहित गुरुको प्रणाम करताहूं ॥ ३ ॥ जनकनन्दिनी और रामचन्द्रजीके गुणोंका समूहही मानों पवित्र वन है, उसमें विहार करनेवाले अधिक पवित्र और बड़े ज्ञानी कविशिरोमणि वाल्मीकिजी और हनुमानजीको प्रणाम करताहूं ॥ ४ ॥

उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेशहारिणीम् ॥
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम् ॥ ५ ॥

यन्मायावशवर्ति विश्वमखिलं ब्रह्मादिदेवाः सुरा
यत्सत्त्वादमृषैव भाति सकलं रज्जौ यथाहेर्भ्रमः ॥
यत्पादप्लवमेकमेव हि भवांभोधेस्तितीर्षावतां
वंदेऽहं तमशेषकारणपरं रामाख्यमीशं हरिम् ॥ ६ ॥

उत्पन्न, पालन और नाशकारिणी, क्लेशहारिणी संपूर्ण कल्याणदायिनी और राममनभाविनी सीताजीको नमस्कार करताहूं ॥ ५ ॥ जिनकी मायाके वश सम्पूर्ण विश्व और ब्रह्मा आदि देवता हैं और जिनके सत्त्वसे यह अनित्य संसार रस्सीमें सर्पके भ्रमके समान नित्यसा प्रतीत होताहै और जिनके केवल चरणही संसाररूपी समुद्र पार करनेकी इच्छावालोंको एक नौकारूप हैं, ऐसे संपूर्ण कारणोंसे परे स्थित विष्णुस्वरूप ईश्वर रामचन्द्रको मैं प्रणाम करताहूं ॥ ६ ॥

नानापुराणनिगमागमसंमतं य-
द्रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि ॥
स्वांतःसुखाय तुलसी रघुनाथगाथा-
भाषानिबंधमतिमंजुलमातनोत्ति ॥ ७ ॥

अनेक पुराण, वेद और शास्त्रोंका संमत जो रामायणमें कहाहै और कहीं अन्यत्र अर्थात् अपने अनुभव आदिसे एकत्र कर तुलसीदास अपने चित्तके आनन्दके लिये रघुनाथजीकी कथाको भाषाके मनोहर छन्दादि रूपमें विस्तारपूर्वक बनाता है ॥ ७ ॥

---

(१) इस श्लोकका यह सारांश है कि जैसे शिवजीके मस्तकपर आश्रय पानेके कारण लोग टेढ़े चन्द्रमाकोभी प्रणाम करतेहैं उसी प्रकार गुरुकी कृपासे इस रामायणमेंभी भूलचूक होते इसका आदर करेंगे ॥ गुरुकी प्रार्थना इस लिये करी कि गुरुके विना भक्ति नहीं मिलती और कोई सांसारिक या पारमार्थिक कार्य नहीं होसकते, इसलिये गुरुकी प्रार्थना मुख्य है ॥ जो कहो कि अन्य देवताओंके होते गुरुको शंकरस्वरूपही क्यों माना तहां कहते हैं कि गुसाईंजी श्रीरघुनाथजीके परम भक्त थे और रामजीको केवल शंकरकाही पूर्ण इष्ट था, जैसा कहा है कि–"शंकरविमुख भक्ति चह मोरी । सो नर मूढ मन्दमति थोरी" पुनि ऐसाही विनयपत्रिकामें लिखा है कि–"विनु शिवकृपा रामपदपंकज सपनेहु भक्ति न मोरी;" अतएव गुसांईजीने गुरुको शिवस्वरूपही मानकर वन्दना की और रामजीकी परम भक्ति पाई.

सो०-जेहि सुमिरत सिधि होय, गणनायक करिवरवदन ॥
करौ अनुग्रह सोइ, बुद्धिराशि शुभगुणसदन ॥ १ ॥*

जिनका स्मरण करनेसे सब काम पूरे होते हैं और जिनका हाथीके समान सुन्दर मुख है और जो बुद्धिके समूह और सुन्दर गुणोंके धाम हैं ऐसे गणेशजी मेरे ऊपर दया करो ॥ १ ॥

मूक होइ वाचाल, पंगु चढै गिरिवर गहन ॥
जासुकृपासुदयालु, द्रवौ सकल कलिमलदहन ॥ २ ॥†

जिनकी कृपासे गूंगे सुन्दर भाषा बोलने लगते हैं और लंगड़े लूले बड़े ऊंचे २ पर्वतोंपर चढ़ जातेहैं ऐसे दयालु और कलिके पापोंको नाश करनेवाले भगवान् मेरे ऊपर कृपा करो ॥ २ ॥

नीलसरोरुहश्याम, तरुणअरुण-वारिजनयन ॥
करौ सो मम उर धाम, सदा क्षीरसागरशयन ॥ ३ ॥‡

नील कमलके समान श्यामवदन, खिले हुए लाल कमलके समान नेत्रवाले और जो सदा क्षीरसागरमें शयन करते हैं, ऐसे भगवान् मेरे मनरूपी मन्दिरमें निवास करो ॥ ३ ॥

कुंदइंदुसम देह, उमारमण करुणाअयन ॥
जाहि दीनपर नेह, करौ कृपा मर्दनमयन ॥ ४ ॥§

कुन्दके पुष्प और शरदके चन्द्रमाके समान शरीरवाले, पार्वतीजीके साथ विहार करते हुए, करुणाके धाम और भक्तोंपर जिनकी प्रीति है, एसे कामदेवके भस्म करनेवाले शंकर मेरे ऊपर कृपा करो ॥ ४ ॥

वंदौं गुरुपदकंज, कृपासिंधु नररूपहरि ॥
महामोह तमपुंज, जासु बचन रविकरनिकर ॥ ५ ॥¶

गुरुके चरणकमलोंको वन्दना करताहूं कि जो गुरु कृपाके समुद्र और मनुष्य देह धारण किये विष्णुरूप हैं और महा अज्ञान मानों अंधकार है उसके समूहके दूर करनेके लिये जिनके वचन सूर्यकी किरणोंके समूहके समान हैं, अर्थात् जैसे सूर्यकी किरणोंसे अंधेरा मिट जाताहै तैसेही गुरुके उपदेशसे हृदयका अज्ञान मिट जाताहै ॥ ५ ॥

चौ०-वंदौं गुरुपदपदमपरागा ❀ सुरुचि सुवास सरस अनुरागा ॥ १ ॥
अमिय मूरिमय चूरण चारू ❀ शमन सकल भवरुज परिवारू ॥ २ ॥

गुरुके चरणकमलोंकी रजको प्रणाम करताहूं कि जो सुन्दर प्रकाशमान, सुगन्धित, रसयुक्त और

---

* काव्यलिंग अलंकार. † लुप्तोपमा. ‡ उपमा. § रूपक. ¶ दृष्टान्त.

---

(१) यहां गुसाईंजीने रामकथाके वर्णन करनेमें अन्य अच्छे २ कवियोंके होते अपनेको गूंगा और अपने प्रबंधको लंगड़ा माना है अर्थात् न तो मैं बोल सक्ताहूं और न मेरी कविता पण्डितोंके मध्यमें चलकर आदर पासकती है किन्तु परमेश्वरकी कृपासे ये दोनों दोष मिट सकते हैं अर्थात् मैंभी सुन्दर भाषा बोल सकताहूं और यह मेरा ग्रन्थभी बड़े २ ग्रन्थोंके ऊपर हो सकता है। इस सोरठेमें जिसका गुणवर्णन किया उसको प्रगट नहीं किया, इसी लिये कोई २ सूर्य पक्षमेंभी लगाते हैं, क्योंकि सूर्यभी अपने दिनोंके द्वारा गूंगेपन और पंगुपनेको दूरकर देतेहैं और सूर्यकुलमें रामचन्द्रजीका जन्मभी है; परन्तु गुसाईंजी विष्णुस्वरूप रघुनाथजीके उपासक थे इसलिये विष्णुपक्षही ठीक है, और व्यासजीनेभी ऐसा कहाहै कि "मूकं करोति वाचालं पंगुं लंघयते गिरिम्। यत्कृपा तमहं बन्दे परमानन्दमाधवम्"। (२) गुसांईंजीके जीवनचरित्र आदिसे प्रगट है कि उनके गुरुजीका नाम नरसिंहदास था अतएव गुसांईंजीने "नररूप हरि" पदसे अपने गुरुकी गुप्त प्रार्थना करी है, क्योंकि, हरि नाम सिंहकाभी है.

भक्तिको उत्पन्न करनेवाली है ॥ १ ॥ अमिय मूरिमय अर्थात् अमृतकी जड़ उसका नाम है, और वह सुन्दर चूर्णरूप है और संसारके जन्ममरणादि सम्पूर्ण रोगोंके प्रकारोंको नाश कर देती हैं[1] ॥ २ ॥

सुकृत शंभु तन विमल विभूती ❀ मंजुल मंगल मोद प्रसूती ॥ ३ ॥
जन मन मंजु मुकुर मलहरणी ❀ कियें तिलक गुणगण बशकरणी ॥ ४ ॥

वह गुरुके चरणकमलोंकी रज कैसी है कि श्रीमहादेवजीके शरीरमें लगी हुई उजली भवूतके समान है और सुन्दर मंगल और आनन्दको उत्पन्न करनेवाली है ॥ ३ ॥ और सज्जनोंका चित्त मानों दर्पण है उसके मलको दूर करनेवाली है, और तिलक करनेसे गुणोंके समूहको वशमें करनेवाली है॥ भावार्थ यह है कि जो भक्तजन गुरुचरणकी रजका सेवन करते हैं उनका चित्त दर्पणके समान निर्मल होजाता है और जो उसको अपने मस्तकमें लगाकर किसी राजा आदिकेपास जाते हैं तो वे अपने वशमें हो जाते हैं[2] ॥ ४ ॥

श्रीगुरुपदनख मणिगण ज्योती ❀ सुमिरत दिव्य दृष्टि हिय होती ॥ ५ ॥
दलन मोह तम हंस प्रकासू ❀ बडे भाग्य उर आवहिं जासू ॥ ६ ॥

यहांतक चित्तके रोगोंको दूर करनेकी औषधी कही, अब आगे जिन रोगोंके कारण चित्तकी दृष्टि मन्द होगई थी, उसकी ज्योति वढ़ानेके लिये गुरुके चरणनखोंकी वन्दना करते हैं॥ श्रीगुरुके चरणोंके नखोंकी ज्योति मणियोंके समूहके प्रकाशके समान है कि जिसके स्मरण करतेही हृदयमें दिव्य दृष्टि हो जाती है ॥ ५ ॥ और उसका प्रकाश मोहरूपी अंधकारको दूर करनेमें सूर्यके समान है, और वह जिसके हृदयमें आवै वह वड़भागी है ॥ ६ ॥

उघरहिं विमल विलोचन हीके ❀ मिटहिं दोष दुख भवरजनीके ॥ ७ ॥
सूझहिं रामचरित मणिमानिक ❀ गुप्त प्रगट जहँ जो जेहि खानिक ॥८॥

हृदयमें आतेही हृदयके निर्मल नेत्र खुल जाते हैं और संसाररूपी रात्रिके दोष अर्थात् अंधकार और दुःख कहिये जन्ममरणादि मिट जाते हैं ॥ ७ ॥ और रामचरित्ररूपी मणि और माणिक गुप्त और प्रगट जहां जो जिस खानके हैं वे दीखने लगतेहैं ॥ ८ ॥

दो०–यथा सुअंजन आँजि दृग, साधक सिद्ध सुजान ॥ ❀
कौतुक देखहिं शैल बन, भूतल भूरिनिधान ॥ १ ॥* ❀

* यहां दृष्टान्तालंकार है.

---

(१) यदि यह शंका की जाय कि, अनेक दिव्य शास्त्रोंको छोड़ गुसांईंजीने वैद्यक शास्त्रोंके अनुसार रामचरित्र वनानेका आरंभ क्यों किया? उसका यह कारण है कि, गुसांईंजी अपनेको संसारके रोगोंसे ग्रसित होनेके कारण अपनी निर्वलताको गुरुचरणकी धूलिरूपी चूर्णसे पुष्ट कर रामचरित्र वनानेका मनोरथ सिद्ध किया चाहते हैं. (२) ऊपर कही हुई चौपाइयोंसे चार प्रकारके प्रयोग अर्थात् मारण, मोहन, उच्चाटन और वशीकरणकी सिद्धि स्पष्ट होती है, तहां १ "शमन सकल भवरुज परिवारू" मारण है, २ "मंजुल मंगल मोदप्रसूती" यह मोहन है, ३ "जन मन मंजु मुकुर मलहरणी" यह उच्चाटन है-४ और "किये तिलक गुणगण वशकरणी" यह वशीकरण है. (३) गुप्त चरित्र ये हैं–जैसे वालकाण्डमें "मास दिवसका दिवसभा मर्म न जाने कोइ–" फिर "लक्ष्मण हू यह मर्म न जाना । जो कछु चरित कीन भगवाना" तथा "क्षणमहँ सवहि मिले भगवाना । उमा मर्म यह काहु न जाना"– इत्यादि. (४) प्रगट चरित्र तौ रामायण मात्रही है.

जैसे सिद्धताका अंजन नेत्रोंमें आंजकर साधक लोग सिद्ध हो जाते हैं और उससे पृथिवीतलपर पर्वत वन आदि बहुतसे स्थानोंमें कौतुक देखतेहैं ॥ १ ॥

चौ०-गुरुपदरज मृदु मंजुल अंजन ❀ नयन अमिय दृग दोषविभंजन ॥ १ ॥
तेहिकरि विमल विवेक विलोचन ❀ बरणौं रामचरित भवमोचन ॥ २ ॥

उसी प्रकार गुरुके चरणकी रज सुन्दर अंजन है और नयनामृत उसका नाम है, अर्थात् नेत्रोंको अमृतके तुल्य शीतल और उजले करनेवाली है (और उसका गुण है कि,) नेत्रोंके विकारको नाश कर देती है ॥ १ ॥ उसी रजरूपी अंजनसे ज्ञान वा विचाररूपी नेत्रोंको निर्मल करके संसारके आवागमनको छुटानेवाले रामचरित्रको वर्णन करताहूं ॥ २ ॥

वंदौं प्रथम महीसुरचरणा ❀ मोहजनित संशय सब हरणा ॥ ३ ॥
सुजनसमाज सकल गुणखानी ❀ करौं प्रणाम सप्रेम सुबानी ॥ ४ ॥

अज्ञानसे उत्पन्न हुये संपूर्ण संदेहको दूर करनेवाले ब्राह्मणोंके चरणोंको प्रथम[1] प्रणाम करताहूं ॥ ३ ॥ फिर सब गुणोंकी खान ऐसे सज्जनोंके समाजको मीठी २ वाणीसे (स्तुति करके) बड़े प्रेमसे प्रणाम करता हूं ॥ ४ ॥

साधुचरित शुभ सरिस कपासू ❀ निरस विशद गुणमय फल जासू ॥ ५ ॥
जो सहि दुख परछिद्र दुरावा ❀ वंदनीय जेहि जग यश पावा ॥ ६ ॥

साधुओंका चरित्र सुन्दर कपासके[3] तुल्य है कि जिसका फल रसरहित उज्ज्वल और गुणमय अर्थात् सूतयुक्त है ॥ ५ ॥ और जो आप दुःख सहकर पराये छिद्रको ढकता है और जिसने संसारमें वन्दनीय अर्थात् प्रशंसाके योग्य यश पाया है ॥ ६ ॥

मुद मंगलमय संतसमाजू ❀ जौं जग जंगम तीरथराजू ॥ ७ ॥
रामभक्ति जहँ सुरसरि धारा ❀ सरस्वति ब्रह्मबिचार प्रचारा ॥ ८ ॥

संतोंका समाज आनन्द मंगलका स्वरूप अर्थात् देनेवाला है और वह संसारमें चलनेवाला ती-

---

(१) गुसाँईजीने ऊपर इतनी वन्दना करकेभी ब्राह्मणोंकी वन्दनामें "प्रथम" यह शब्द इसलिये धरा है कि ऊपर स्वर्गवासी देवताओं तथा देवतुल्य गुरुकी वन्दना करी, परंतु पृथ्वीपर मनुष्योंमें प्रथम ब्राह्मणही पूज्य हैं अथवा गुसाँईजीने अपने काव्यमें प्रथम मगण धरा है यथा "वर्णानां" इसकी देवता भूमि है और भूमिके देवता ब्राह्मण हैं अतएव प्रथम शब्दका प्रयोग है. (२) जैसा कहा है कि-"भक्तितात अनुपम सुखमूला। मिलहिं जो संत होहिं अनुकूला ॥". (३) जैसा कहा है कि-"नीरसान्यपि रोचन्ते कार्पासस्य फलानि मे ॥ येषां गुणमयं जन्म परेषां गुह्यगुप्तये" अर्थात् रुईके नीरस फलभी मुझे रुचते हैं क्योंकि उनका जन्म गुणमय है अर्थात् उनमेंसे औरोंके ढकनेके लिये सूत निकलता है। और यहां कपासकी उपमा देनेसे और उसके नीरस आदि गुण कहनेका यह तात्पर्य है कि, साधुकी संगतभी नीरस अर्थात् संसारके विषयसे रहित है, विशद अर्थात् उनका अंतःकरण मलरहित है और गुण अर्थात् सुशीलता आदि गुणभी उनमें हैं. (४) यहां यह सारांश है कि-"जैसे कपास, शीत, वर्षा, गरमीका दुःख जंगलमें भोगकर सूखनेपर चरखीमें ओटाजाता है धुनियेसे धुना जाताहै-चरखेमें काता जाताहै-कोलीके यहां बुना जाताहै-धोबीके यहां पछाटा जाताहै और फिर दरजीके यहां कतरे जाकर और सुइयोंसे छिदनेपरभी वह औरोंका शरीर ढकताहै उसी प्रकार महात्मा लोग आप दुःख सहकर दूसरोंका उपकार करते और छिद्र छुपातेहैं. जैसा कहाहै-"कुपथ निवारि सुपन्थ चलावा। गुण प्रगटें अवगुणहिं दुरावा ॥" पुनि तुलसी सतसईमें कहाहै कि-"तुलसी संत सु अंतवरु फूल फलहिं परहेत। इततें वे पाहन हनैं उततें वे फल देत ॥"

थ[1]राज अर्थात् प्रयागराज है ॥ ७ ॥ जहां श्रीरघुनाथजीकी भक्ति गंगाजीकी धार है और परमेश्वरके विचारका प्रचार सरस्वती है ॥ ८ ॥

विधिनिषेधमय कलिमलहरणी ❀ कर्मकथा रविनंदिनि बरणी ॥ ९ ॥
हरि हर कथा बिराजति बेनी ❀ सुनत सकल मुद मंगल देनी ॥ १० ॥

विधि[2] निषेध[3]सहित कलिके पापोंको दूर करनेवाली जो कर्मोंकी कथा है उसीको यमुनाजी वर्णन किया है ॥ ९ ॥ और विष्णुभगवान् तथा शंकरकी कथा ये तीन मिलकर जहां त्रिवेणीरूप शोभायमान है और श्रवण करतेही आनन्दमंगलकी देनेवाली है ॥ १० ॥

वट विश्वास अचल निज धर्मा ❀ तीरथराज समाज सुकर्मा ॥ ११ ॥
सबहिं सुलभ सब दिन सब देशा ❀ सेवत सादर शमन कलेशा ॥ १२ ॥
अकथ अलौकिक तीरथराऊ ❀ देइ सद्य फल प्रगट प्रभाऊ ॥ १३ ॥

संतसमाजरूपी प्रयागमें विश्वासही वटवृक्ष है और अपना धर्मही (वटवृक्षकी) अचलता है और सुन्दर कर्मही तीर्थराजका समाज है ॥११॥ और यह सत्संगरूपी तीर्थराज सबको सब दिन और सब देशोंमें[4] सुलभ है और आदरपूर्वक सेवन करनेसे क्लेशका नाश करनेवाला है ॥ १२ ॥ और जिसकी महिमा कहनेमें न आवै ऐसा यह अलौकिक अर्थात् अपूर्व तीर्थराज है और इसका प्रभाव प्रगट है कि तत्काल फल देता है ॥ १३ ॥

दो०-सुनिसमुझहिं जन मुदितमन, मज्जहिं अति अनुराग ॥ ❀
लहहिं चारिफल अछततनु, साधुसमाज प्रयाग ॥ २ ॥* ❀

जो मनुष्य प्रसन्न चित्तसे साधुसमाजरूपी प्रयागका माहात्म्य[5] सुनतेहैं, समझतेहैं और इसमें अत्यन्त प्रीतिसे स्नान करतेहैं अर्थात् सुनकर मग्न हो जाते हैं वे इसी शरीरसे चार फल (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) पाते हैं ॥ २ ॥

चौ०-मज्जनफल देखिय ततकाला ❀ काक होहिं पिक बकहु मराला ॥ १ ॥
सुनि आश्चर्य करहिं जनि कोई ❀ सतसंगतिमहिमा नहिं गोई ॥ २ ॥

इस तीर्थमें स्नान करनेका फल तत्काल मिलताहै कि काक तौ कोकिल और बगुले हंस हो जाते हैं ॥ १ ॥ सो इस बातको सुनकर किसीको आश्चर्य नहीं करना चाहिये. (कि काकसे कोकिला और बगुलेसे हंस कहां भये) तहां कहतेहैं कि, सत्संगकी महिमा छुपी नहीं है ॥ २ ॥

बालमीक नारद घटयोनी ❀ निज निज मुखनि कही निज होनी ॥ ३ ॥
जलचर थलचर नभचर नाना ❀ जे जड़ चेतन जीव जहाना ॥ ४ ॥

* दृष्टान्त अलंकार.

---

(१) जैसे तीर्थराज प्रयागमें त्रिवेणी अक्षय वट हैं वैसेही संतसमाजमें भी हैं ॥ जैसे वहां त्रिवेणीकी गंगा यमुना सरस्वती तीन धारा हैं वैसेही संतसमाजमें भी रामभक्तिआदि हैं ॥ प्रयागराज स्थिर है और संतसमाज चल है अर्थात् प्रत्येक देश वा स्थानमें होसकताहै. (२) जिसमें अच्छे कामोंकी आज्ञा है उसे विधि कहते हैं जैसा लिखा है कि-"अहरहः सन्ध्यामुपासीत" अर्थात् नित्य प्रति संध्या करनी चाहिये और न करनेसे पाप होता है. (३) जिसमें बुरे कामोंका त्याग है वह निषेध कहलाता है जैसे-"सुरां न पिबेत्" अर्थात् मदिरा न पीनी चाहिये. (४) वह मुख्य तीर्थराज अचल होनेसे सब देशोंमें और सब कालमें सुलभ नहीं है. उसकी प्राप्ति विशेष करके मकरसंक्रान्तिपरही होती है. (५) इसका यह सारांश है कि माहात्म्य सुनना किनारेपर पहुँचना, सुनकर समझना धारामें घुसना, और कथामें लवलीन होना गोता लगाना है.

वाल्मीकि[1], नारद[2] और अगस्त्य[3]जीने अपने २ मुखसे अपनी २ होनी कहीहै (यह सब सत्संगकाही प्रभाव है) ॥ ३ ॥ जलचर[4] थलचर (पृथ्वीपर चलनेवाले) आकाशमें चलनेवाले अनेक प्रकारके जो जड़ चेतन जीव संसारमें हैं ॥ ४ ॥

मति कीरति गति भूति भलाई ❀ जब जेहि जतन जहाँ जेई पाई ॥ ५ ॥
सो जाने सतसंगप्रभाऊ ❀ लोकहुँ बेद न आन उपाऊ ॥ ६ ॥

उन्होंने बुद्धि, यश, गति, ऐश्वर्य और भलाई जब जिस यत्नसे जहां जो पाई है ॥ ५ ॥ वेही सत्संगका प्रभाव जानते हैं, क्योंकि लोक और वेदमें और कोई अन्य उपाय नहीं है ॥ ६ ॥

बिनु सतसंग विवेक न होई ❀ रामकृपा बिनु सुलभ न सोई ॥ ७ ॥
सतसंगति मुद मंगलमूला ❀ सोइ फल सिधि सब साधन फूला ॥८॥

विना सत्संगके ज्ञान नहीं होता है और रघुनाथजीकी कृपाके सत्संग विना मिल नहीं सकता ॥ ७ ॥ सत्संगही आनन्द मंगल (रूपी वृक्ष) की जड़ है और सब दान, यज्ञ, तप आदि साधन उसके फूल हैं और सिद्धि फल है ॥ ८ ॥

शठ सुधरहिं सतसंगति पाई ❀ पारस परसि कुधातु सुहाई ॥ ९ ॥
विधिवश सुजन कुसंगति परहीं ❀ फणिमणिसम निजगुण अनुसरहीं १०

सत्संग पाकर शठलोग ऐसे सुधर जाते हैं कि, जैसे पारसके लगनेसे लोहा सुवर्ण हो जाता है॥९॥और

---

(१) वाल्मीकि ऋषिने रामचन्द्रसे अपना वृत्तान्त कहा कि मैं पहिले व्याधा था और मनुष्योंको लूट मारकर कुटुंब पालताथा। एकवार मुझे कई ऋषि मिले और जब मैंने उन्हें लूटना चाहा; तब उन्होंने कहा कि तू इस पापकर्म करके कुटुंब पालता है सो तेरा कुटुंब खानेकाही साथी है अथवा तुझे जो पापका फल मिलेगा उसकाभी साथी है? यह सुन मैंने कुटुम्बियोंसे पूछा, उन्होंने कहा, हम तो खानेके साथी हैं, पापके नहीं तब मैंने सबको छोड़ ऋषियोंके पास जाकर उनसे धर्मविषय सुना और आपका उलटा नाम मरा २ जपते २ इस परमगतिको प्राप्त हुआहूं कि घर बैठे आपका दर्शन हुआ. (२) नारदजीने व्यासजीसे अपना वृत्तान्त यह कहा कि मैं एक दासीके उदरसे उत्पन्न हुआथा और जिस साधुके यहां मेरी माता टहल करती थी वहां मैंभी उसके साथ जाया करताथा और अनेक साधु जो वहां आकर भोजन करतेथे उनका उच्छिष्ट खाते २ और सेवा करनेसे ऐसी बुद्धि शुद्ध होगई कि माताके देहान्त होतेही मैं एकान्तमें जाकर तप करने लगा. अंतमें मरकर उस प्रभावसे ब्रह्माके घर उत्पन्न हुआ. (३) अगस्त्यमुनिने शिवजीसे अपना वृत्तान्त यह कहा कि, मेरे पिताका नाम मित्रावरुण था। एक समय उन्होंने तप करते २ आकाशमें रंभाको जाते देख कामातुर हो अपना वीर्य घटमें डाला कि जिससे मैं उत्पन्न हुआ. इसी कारणसे मेरा नाम घटज है और मैं जो इस उत्तम दशाको प्राप्त हुआहूं यह केवल सत्संगका प्रभाव है. (४) जलचर–थलचर–नभचर–जड़ और चेतन इन पांच प्रकारके जीवोंके साथ आगेकी चौपाईमें कहे हुए बुद्धि–यश–गति–ऐश्वर्य और भलाईका संबन्ध क्रमपूर्वक है. जैसे–जलचरकी बुद्धि, थलचरका यश, नभचरकी गति, जड़का ऐश्वर्य और चैतन्यकी भलाई ॥ (जैसे) १ राघव मत्स्य जलचरकी बुद्धिमें आया कि रावणसे सौंपी गई कौशिल्याको उसके पिताको इसलिये सोंपदिया कि रावणका नाश हो, २ थलचरोंमें गजेन्द्रका यश भागवतमें लिखाही है, ३ नभचरोंमें जटायुकी गति प्रसिद्ध है कि जिसको रघुनाथजीने परम धामको पहुंचाया, ४ जड़ोंमें अहिल्या है जिसने रामचन्द्रजीके चरणोंकी धूल लगनेसे अपने पतिका ऐश्वर्य पाया. ५ चैतन्योंमें सुग्रीव हनुमान आदिको कितनी भलाई मिली कि रामजीने अपनेको उनका ऋणी माना–जैसा लंकाकाण्डमें लिखा है कि–"सुनु सुत तोहि उरनमैं नाहीं। देख्यौ करि विचार मनमाहीं". (५) पर निष्कपट होकर संग करनेसे सुधरैगा और जिसके मनमें थोड़ाभी छल है वह नहीं सुधर सकता–जैसे लोहे और पारसके बीचमें महीन कागद धरदेनेसे लोहा सोना नहीं होगा। यह तद्गुणालंकार है. यथा भाषाभूषणमें "तद्गुण निजगुण त्यागकरि संगतिके गुणलेय। नालामोती अधर मिलि पद्मराग छविदेय ॥"

जो सज्जन दैवयोगसे बुरी संगतिमें पड़ जाते हैं वे सर्पके मणिके समान अपने गुणको नहीं छोड़तेहैं १०

विधि हरि हर कवि कोविद वानी ❀ कहत साधु महिमा सकुचानी ॥ ११ ॥
सो मोसन कहि जात न कैसें ❀ शाकवणिक मणिगुणगण जैसें ॥ १२ ॥

ब्रह्मा विष्णु महेश कवि पण्डित और सरस्वतीभी साधुकी महिमाको कहनेमें सकुचाते हैं ॥ ११ ॥ सो मुझसे किस प्रकार नहीं कही जाती है कि जैसे शाक अर्थात् तरकारी बेचनेवाला मनुष्य मणियोंके गुणोंको नहीं कह सकता है ॥ १२ ॥

दो०-वंदौं संत समान चित, हित अनहित नहिं कोय ॥*
अंजलिगत शुभ सुमन जिमि, सम सुगंध कर दोय ॥ ३ ॥

मैं अब समान चित्तवाले संतोंकी वन्दना करताहूं, कि जिनका (संसारमें) मित्र शत्रु कोई नहीं है वे सुन्दर सुगन्धित पुष्पोंके समान हैं जो अंजलीमें लेनेसे दोनों हाथोंको बराबर सुगन्धित कर देते हैं॥३॥

संत सरलचित जगत हित, जानि सुभाव सनेहु ॥†
बालविनय सुनि करि कृपा, रामचरणरति देहु ॥ ४ ॥

(इसलिये) संतजन कि जिनका सरल चित्त है और संसारके हित करनेवाले हैं वे मेरे सुभाव और स्नेहको जानकर मुझ बालककी विनती सुन कृपा करके श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रीति दें॥४॥

चौ०-बहुरि बंदि खलगण सति भाए ❀ जे बिनकाज दाहिने बांए ॥ १ ॥
परहित हानि लाभ जिनकेरे ❀ उजरे हर्षविषाद बसेरे ॥ २ ॥

(अब दुष्टोंकी वन्दना, कर्म और स्वभावको कहते हैं)

अब मैं दुष्टोंके समाजकी वन्दना करताहूं जिनका यह स्वभाव है कि विना प्रयोजन दायें बायें रहतेहैं. अर्थात् भलाई करनेवालोंके साथभी बुराई करनेकी घात टटोला करते हैं ॥ १ ॥ और पराये हितकी हानि जिनका लाभ है और किसीके घर आदि, उजड़नेसे उनको प्रसन्नता और बसनेसे दुःख होताहै ॥ २ ॥

हरिहरयशराकेश राहुसे ❀ पर अकाज भट सहसबाहुसे ॥ ३ ॥
जे परदोष लखहिं सहसाखी ❀ परहित घृत जिनके मन माखी ॥ ४ ॥

विष्णु और महादेवजीका यश मानों पूर्ण चन्द्रमा है उसको (ग्रसनेके लिये) राहुके समान हैं अर्थात् कहीं भागवतरामायण होती हो तो वहां जाकर मिथ्या बातें मार २ कर श्रोताओंके सुननेमें विघ्न डालें. अतएव जितनी देर कथामें विघ्न हुआ उतनेही समय मानो ग्रहण भया और

---

* दृष्टान्तालंकार. † पर्यायोक्ति अलंकार.

---

(१) यह संसार एक सर्परूप है. इसमें सज्जन मणिरूप औ असाधु विषरूप हैं. जैसे सर्पका मणि विषके अवगुण नहीं छूता उसी प्रकार सज्जनभी न तो अपने गुणको छोड़ता है और न असज्जनके अवगुणोंको लेता है. जैसा कहाहै कि-"सत्संगाद्भवति हि साधुता खलानां, साधूनां न हि खलसंगमात्खलत्वम् । आमोदं कुसुमभवं मृदेव धत्ते, मृद्गन्धं न हि कुसुमानि धारयन्ति ॥" अर्थात् सज्जनके संगसे दुष्ट साधुता पाता है पर साधुमें खलके संगसे खलत्व नहीं आता, जैसे मट्टीमें पुष्पकी गन्ध आजाती है पर पुष्पमें मट्टीकी नहीं आती, यहां अतद्गुणालंकार है, यथा-"सुअतद्गुणसंगति किये जब गुण लागै नाहिं । प्रिय अनुरागी ना भयो वसि रागी मनमाहिं ॥". (२) भाव यह है कि, जैसे पुष्प वाम व दक्षिण हाथका विचार नहीं करता अथवा अमुक हाथने मुझे तोड़ा है, इसको सुगंध न दे सो नहीं. ऐसेही संत हैं कि भलाई बुराई करनेवालोंपर समान कृपा करते हैं.

पराया कार्य बिगाड़नेमें सहस्रबाहुके बराबर हैं. जो कहो कि सहस्रबाहुके तो १००० भुजा थीं इनके तो दोही भुजा हैं? तहां कहते हैं कि ये दोही भुजासे हजार भुजाके समान तनमनसे पराक्रम करनेको तयार हो जाते हैं ॥ ३ ॥ जो दुष्ट पराये दोषको हजार नेत्रोंसे देखतेहैं (नेत्र तो दोही होतेहैं पर उनहीसे १००० नेत्रका काम लेतेहैं अर्थात् वार २ पराये अवगुण देखते फिरतेहैं कि एकभी मिल जाय तो धूल उड़ावै) और पराया हित मानों घृत हैं उसमें विघ्न डालनेके लिये जिनका मन मक्खीके समान है अर्थात् प्राण भलेंही जाते रहैं पर दूसरे भले मनुष्यका काम बिगाड़ें (जैसा कहाहै कि नाक भलेहीं कटे पर दूसरेका सगुन विगाड़ें) ॥ ४ ॥

तेज कृशानु रोष महिषेशा ❀ अव अवगुण धन धनिक धनेशा ॥ ५ ॥
उदय केतुसम हित सबहीके ❀ कुंभकरण सम सोवत नीके ॥ ६ ॥

और जिनका तेज अग्निके समान है अर्थात् सज्जनोंसे सहा नहीं जाता और महिषासुरकासा[1] क्रोध है और वे पाप और अवगुणरूपी धनसे कुबेरके समान धनवान् हैं अर्थात् कुबेरके पास जैसा अतुल धन है वैसा इनके पास पाप और अवगुण भरा है ॥५॥ और केतुके[2] उदयके समान सबको बराबर हित करनेवाले हैं. अर्थात् इनका बढ़ना सबको बराबर दुखदायी है. (किसीको कमती बढ़ती नहीं) इसलिये कुंभकर्णके समान सोते रहैं सोई अच्छे हैं ॥ (६ महीने तो सज्जनोंको सुख मिलै) ॥६॥

पर अकाज लगि तनु परिहरहीं ❀ जिमि हिमउपल कृषीदल गरहीं ॥७॥
बंदौं खल जस शेष सरोषा ❀ सहसबदन बरणै परदोषा ॥ ८ ॥

और पराये काम विगाड़नेके लिये अपने शरीरको ऐसे नाशकर देतेहैं जैसे ओले खेतीका नाश करके आपभी गल जाते हैं ॥ ७ ॥ अब मैं दुष्टोंको फिर प्रणाम करताहूं कि जो शेषनागके समान शूरतासे पराये दोषको हजार मुखसे वर्णन करतेहैं. अर्थात् जैसे शेषजी शूरतासहित हजार मुखसे श्रीरघुनाथजीका यश वर्णन करते हैं ऐसेही दुष्ट हजार प्रकारसे सज्जनोंके दोष कहते फिरतेहैं ॥८॥

पुनि प्रणवौं पृथुराज समाना ❀ पर अव सुनैं सहस दश काना ॥ ९ ॥
बहुरि शक्रसम बिनवौं तेही ❀ संतत सुरा नीक हित जेही ॥ १० ॥
बचन वज्र जेहिं सदा पियारा ❀ सहस नयन परदोष निहारा ॥ ११ ॥

फिर मैं उन दुष्टोंको पृथुराजके समान जानकर प्रणाम करताहूं (क्योंकि जैसे पृथुराजने भगवान से वर मागा था कि मैं दो कानसे ईश्वरका यश १००० कानके समान सुनूं वैसेही ये दुष्ट) पराया पाप १००० कानोंसे सुनतेहैं (और कभी अलकसाते नहींहैं) ॥ ९ ॥ फिर मैं उनको इन्द्रके समान जानकर नमस्कार करताहूं. क्योंकि जैसे इन्द्रको सुर कहिये देवताओंकी अनीक अर्थात् सेना प्यारी लगती है वैसेही इनको सदा सुरा कहिये मदिरा नीक अर्थात् अच्छी प्यारी लगती है ॥ १० ॥ और

---

(१) प्रथम कल्पमें दैत्योंका स्वामी महिषासुर और देवताओंका स्वामी इन्द्र था–सौवर्षतक आपसमें युद्ध हुआ, अन्तमें महिषासुर देवताओंको जीतकर आपही इन्द्र बन वैठा और सब देवताओंके अधिकार अपने हाथ करलिये. तब तो देवता तनछीन मनमलीन हो आशुतोष शंकरके पास गये. उनका समाचार सुन शंकर बड़े क्रोधित हुए और अपने मुखसे एक बड़ा तेज निकाला और फिर उनकी देखादेखी और देवताओंने भी तेज निकाले फिर सब तेजोंके समूहसे दुर्गा भवानी प्रगट भई और इन्होंने महिषासुरका वध किया और सब देवताओंको पूर्ववत् अधिकार मिलगया. यह सम्पूर्ण वृत्तान्त दुर्गासप्तशतीके दूसरे अध्यायमें है. (२) जैसे आकाशमें केतु उदय होय तो राजा प्रजामें अग्नि, चौरादि भय और अनेक २ प्रकारके उपद्रव मचाय २ जीवोंको दुःख देता है, वैसेही खलके उदय होनेसे अर्थात् उनकेपास अधिक सम्पत्ति होनेसे सबको दुःख होता है. किसीके चोरी करावें. कहीं आग लगवादें. किसीको जहर देदें और धनके बलसे फिर साफ बचैं वा भोगें जैसा भाग्यमें हो.

जैसे इन्द्रको वज्र प्यारा है वैसेही इनको कठोर वचन प्यारा है (जब बोलेंगे तब टेढ़ेही बोलेंगे) और जैसे इन्द्र हजार नेत्रोंसे परगुण देखते हैं वैसेही ये पराये दोषोंको देखते हैं ॥ ११ ॥

दो॰–उदासीन अरि मीत हित, सुनत जरहिं खल रीति ॥* ❀
जानि पाणियुग जोरिकरि, बिनती करौं सप्रीति ॥ ५ ॥ ❀

खलोंकी यह रीति है कि उदासीन, शत्रु[१] और मित्र इन तीनोंका हित सुनकर वे जल मरते हैं ऐसा दोनों हाथ जोड़कर प्रीतिसे इनकी विनती करताहूं ॥ ५ ॥

चौ॰–मैं आपनि दिशि कीन्ह निहोरा ❀ तिन निज ओर न लाउब भोरा ॥ १ ॥
पायस पालिय अति अनुरागा ❀ होइ निरामिष कबहुँ कि कागा ॥ २ ॥

मैंने अपनी ओरसे निहोरा किया है परन्तु वे अपनी ओरसे भोलापन न लावेंगे अर्थात् दुष्टता करनेसे कमी नहीं चूकेंगे ॥ १ ॥ जैसे कागको पायस अर्थात् खीर खिलाकर अधिक प्रीतिसे भलेहीं पालो, परन्तु कहीं मांसको खाना छोड़ सक्ता है? ॥ २ ॥

वंदौं संत असज्जन चरणा ❀ दुखप्रद उभय बीच कछु बरणा ॥ ३ ॥
बिछुरत एक प्राण हरिलेहीं ❀ मिलत एक दारुण दुख देहीं ॥ ४ ॥

अब संतों और दुष्ट जनोंके चरणोंको (एकसाथ) नमस्कार करताहूं. कि दोनों दुःखके दाता हैं किन्तु इनमें कुछ भेद कहा है ॥ ३ ॥ एक अर्थात् साधु तो बिछुड़तेही प्राणोंको हरते हैं और दुष्ट मिलतेही कठिन दुःख देतेहैं ॥ ४ ॥

उपजहिं एक संग जलमाहीं ❀ जलज जौंक जिमि गुण बिलगाहीं ॥ ५ ॥
सुधा सुरा सम साधु असाधू ❀ जनक एक जग जलधि अगाधू ॥ ६ ॥

जैसे जलमें कमल और जोंक एकसाथ उत्पन्न होते हैं किन्तु उनके गुण अलग २ हैं (इसी प्रकार संत असंत दोनों संसारमें होते हैं और उनके गुण अलग २ होते हैं[२] ॥ ५ ॥ अमृत और मदिराके समान साधु और असाधु हैं. पर पिता इनका एक है अर्थात् साधु असाधुओंका अथाह संसार और मदिरा और अमृतका अथाह समुद्र ॥ ६ ॥

भल अनभल निज निज करतूती ❀ लहत सुयशअपलोकविभूती ॥ ७ ॥
सुधा सुधाकर सुरसरि साधू ❀ गरल अनल कलिमलसरि ब्याधू ॥ ८ ॥
गुण अवगुण जानत सब कोई ❀ जो जेहि भाव नीक तेहि सोई ॥ ९ ॥

भले और बुरे अर्थात् संत और खल अपनी २ करनीसे सुन्दर यश और बुराईकी संपत्ति लेते हैं अर्थात् भले भलाई और बुरे बुराई ॥ ७ ॥ साधुजन कैसे हैं कि अमृत चन्द्रमा और गंगाजीके समान हैं (और इनका गुण क्रमसे अमरता शीतलता और पापरहित कर देनाहै) और दुष्टजन,

* तुल्ययोगिता अलंकार.

---

(१) ऊपरके दोहेका अर्थ इसप्रकारभी करते कि–'उदासीन कहिये महादेवजी उनका शत्रु कामदेव उसके मित्र भगवान् उनके हित कहिये संतजन तिनको सुनकर खल जल मरते हैं अथवा उदासीन कहिये मुनिजन उनका शत्रु रावण उसके मित्र शिवजी उनके हित कहिये रघुनाथजी, उनका यश सुनकर खल जल मरतेहैं परन्तु इसप्रकारके सब अर्थ कूट हैं और ऐसी रीति रामायणमें नहीं 'उदासीन' का अर्थ मध्यस्थ (न शत्रु न मित्र) होना ठीक है. और इस चौपाईसेभी प्रकट है–यथा "संतपुरान कहैं अस नीती । खलसे कलह नहीं भलप्रीती । उदासीन नित रहिय गुसाँई । खल परिहरिय स्वानकी नाईं". (२) यहां जलको संसार–संतोंको कमल–और दुष्टोंको जौंक जानना.

विष, अग्नि और कर्मनाशा नदीके समान हैं. (कि जिनका गुण क्रमसे मारना जलाना और कर्मोंका नाश करदेना है) ॥ ८ ॥ सब लोग गुण और अवगुणको जानते हैं परंतु जो जिसको भावै वह उसीको अच्छा मान लेता है ॥ ९ ॥

दो०–भले भलाईपै लहहिं, लहहिं निचाई नीच ॥*
सुधा सराहिय अमरता, गरल सराहिय मीच ॥ ६ ॥

भले भलाईसे और नीच नीचतासे बड़ाई पातेहैं. जैसे अमृत अमर करनेसे और विष[2] मारनेसे सराहा जाता है ॥ ६ ॥

चौ०–खल गह अगुण साधु गुणगाहा ❀ उभय अपार उदधि अवगाहा ॥ १ ॥
तेहिते कछु गुण दोष बखाने ❀ संग्रह त्याग न बिनु पहिचाने ॥ २ ॥

खल मनुष्य अवगुणोंको लेतेहैं और साधुजन गुणोंका ग्रहण करते हैं और ये दोनों गहरे और अपार समुद्रके समान हैं ॥ १ ॥ इस लिये कुछ गुण और दोषोंका वर्णन किया है क्योंकि विना पहिचाने ग्रहण करना और छोड़ना बन नहीं सकता ॥ २ ॥

भलेउ पोच सब विधि उपजाए ❀ गनि गुण दोष वेद विलगाए ॥ ३ ॥
कहहिं वेद इतिहास पुराना ❀ विधि प्रपंच गुण अवगुण साना ॥ ४ ॥

भले और बुरे सब विधाताने उपजाये हैं. परन्तु वेदने गुण और दोषोंको कहकर अलग २ कर दिये हैं ॥ ३ ॥ और वेद इतिहास–पुराण आदि कहते हैं कि, विधाताका प्रपंच कहिये संसार गुण और अवगुणसे मिला हुआ है अर्थात् इस संसारमें गुण और अवगुण दोनों हैं ॥ ४ ॥

दुख सुख पाप पुण्य दिनराती ❀ साधु असाधु सुजाति कुजाती ॥ ५ ॥
दानव देव ऊँच अरु नीचू ❀ अमिय सजीवन माहुर मीचू ॥ ६ ॥

(विधाताके प्रपंचमें जो गुण और अवगुण हैं उनको कहते हैं ॥)

सुख और दुःख, पुण्य और पाप, दिन और रात्रि, साधु, और असाधु, सुजात और कुजात॥५॥ देव और दानव, उंच और नीच, जिलानेवाला अमृत और मारनेवाला विष ॥ ६ ॥

माया ब्रह्म जीव जगदीशा ❀ लक्षि अलक्षि रंक अवनीशा ॥ ७ ॥
काशी मग सुरसरि कर्मनाशा ❀ मरु मालव महिदेव गवाशा ॥ ८ ॥
स्वर्ग नरक अनुराग विरागा ❀ निगमागम गुण दोष विभागा ॥ ९ ॥

माया और ब्रह्म, जीव और जगदीश, लक्ष्मी और दरिद्रता, रंक और राजा ॥७॥ काशी और मगह देश, गंगा और कर्मनाशा[3], मरुदेश और मालव, ब्राह्मण और कसाई ॥ ८ ॥ स्वर्ग और नरक, प्रेम और विराग (ये सब मिले हैं) और वेद शास्त्रने इनके गुण और दोषोंका विभाग कर दिया है ॥९॥

दो०–जड़ चेतन गुण दोषमय, विश्व कीन्ह करतार ॥†
संत हंस गुण गहहिं पय, परिहरि वारिविकार ॥ ७ ॥

(यद्यपि) विधाताने संसारमें सब जड़ और चेतनको गुण और दोषसे युक्त किया है, परन्तु हंसरूपी संत जलरूपी विकारको छोड दुग्धरूपी गुणको ग्रहण करते हैं ॥ ७ ॥

---

* प्रतिवस्तूपमा अलंकार. † रूपक अलंकार.

---

(१) इस कथाको अयोध्याकाण्डमें देखो. (२) विषकी इसप्रकार सराहना होसकती है. जैसे कहैं कि, उसको ऐसा विष दिया कि पीतेही प्राणान्त होगये. (३) अयोध्याकाण्डमें देखना.

चौ०–अस विवेक जब देहि विधाता ❀ तब तजि दोष गुणहिं मन राता ॥१॥
काल सुभाव कर्म बरिआई ❀ भलेउ प्रकृति बश चूक भलाई ॥ २ ॥

जब विधाता ऐसा ज्ञान देता है तब दोषोंको त्याग कर गुणोंमें मन लगता है ॥१॥ और समय स्वभाव और कर्मकी प्रवलताके कारण भले मनुष्यभी मायाके वश होकर भलाई करनेसे चूक जाते हैं ॥ २ ॥

सो सुधारि हरिजन जिमि लेहीं ❀ दलि दुख दोष बिमल यश देहीं ॥३॥
खलउ करहिं भल पाइ सुसंगू ❀ मिटहि न मलिन सुभाव अभंगू ॥४॥

और जैसे हरिजन उस चूकको सुधारलेते हैं और निर्मल यश देते हैं ॥ ३ ॥ वैसेही खलभी अच्छा संग पाकर भलाई करतेहैं परन्तु उनका मलिन सहज सुभाव नहीं जाता ॥ ४ ॥

कर सुवेष जगबंचक जेऊ ❀ वेश प्रताप पूजियत तेऊ ॥ ५ ॥
उघरहिं अंत न होय निबाहू ❀ कालनेमि जिमि रावण राहू ॥ ६ ॥

और जो संतोंका सुन्दर भेस बनाकर संसारको ठगते हैं वे भेसके प्रतापसे पूजे तो जातेहैं॥५॥ (पर वह ठगविद्यापन) अन्तमें खुल जाताहै,उसका निवाह नहीं होता. अर्थात् चल नहीं सकता. जैसे कालनेमि[1] रावण[2] और राहु[3]का ॥ ६ ॥

किये सुवेश साधु सनमानू ❀ जिमि जग जामवंत हनुमानू ॥ ७ ॥
हानि कुसंग सुसंगति लाहू ❀ लोकहु बेद बिदित सब काहू ॥ ८ ॥

जो साधु कुवेशमें पड़ गयेहैं अन्तमें उन्होंनेभी साधुओंके समान सनमानको पायाहै. जैसे संसारमें (रीछकी योनिमें) जामवन्त (और वानरयोनिमें) हनुमान ॥ ७ ॥ और कुसंगसे हानि और अच्छे संगमें लाभ है यह बात संसारमें और वेदमें प्रगट है और सब लोग जानते हैं ॥ ८ ॥

गगन चढै रज पवनप्रसंगा ❀ कीचइ मिलइ नीच जलसंगा ॥ ९ ॥
साधुअसाधुसदनशुकसारी ❀ सुमिरहिं राम देहिं गण गारी ॥ १० ॥

जैसे (ऊंचेको जानेवाली) पवनके संगमें धूल आकाशमें चढ़ जाती है और नीचेको जानेवाले जलके संगसे कीचमें मिल जाती है ॥ ९ ॥ इसी प्रकार साधुके घरके तोता मैना रामजीका स्मरण करते और असाधुके घरके गाली देते हैं ॥ १० ॥

धूम कुसंगति कारिख होई ❀ लिखिय पुराण मंजु मसि सोई ॥११॥
सोइ जल अनल अनिल संघाता ❀ होइ जलद जग जीवन दाता ॥ १२ ॥

और जो धुआं (भड़भूंजेके) कुसंगसे कालोंच कहाता है वही (विद्यार्थीके अच्छे संगसे) सुन्दर स्याही होकर पुराण लिखनेके काममें आता है ॥ ११ ॥ और वही जल पवन और अग्निके संगसे वादल होकर संसारको जल देताहै ॥ १२ ॥

---

(१) यह कथा लंकाकाण्डमें है. (२) रावणकी कथा प्रसिद्ध है. यतीका भेस धर सीताजीको हराथा. (३) जब भगवान्‌नें क्षीरसमुद्र मथा तब १४ रत्न निकले और जब भगवान् देवताओंको अमृत पिलाने लगे, तब राहुभी देवताका रूप धरकर जा बैठा. भगवान्‌ने उसका छल जान अपने चक्रसे उसका शिर काट गेरा. (४) जैसा कहाहै कि–"कान्तारभूमिरुहमौलिनिवासशीलाः प्रायः पलायनपरा जनवीक्षणेन। कूजन्ति तेऽपि हि शुकाः खलु रामनाम संगः स्वभावविपरीतविधौ निदानम् ॥ १ ॥" अर्थात् वनके वृक्षोंकी चोटियोंपर रहनेवाले और मनुष्यको देखकर भागनेवाले तोतेभी सत्संगके प्रभावसे राम २ जपते हैं, इसलिये स्वभावके पलटनेमें संगही मूलकारण है.

दो०-ग्रह भेषज जल पवन पट, पाइ कुयोग सुयोग ॥* ❀
होइ कुवस्तु सुवस्तु जग, लखहिं सुलक्षण लोग ॥ ८ ॥ ❀

ऐसेही ग्रह[1], औषधि[2], जल[3], पवन[4] और वस्त्र[5] ये कुसंग और सत्संग पाकर संसारमें भले और बुरे होजाते हैं इसको अच्छे लोग पहिचानते हैं ॥ ८ ॥

सम प्रकाश तम पाख दुहुँ, नाम भेद विधि कीन्ह ॥ ❀
शशि पोषक शोषक समुझि, जग यश अपयश दीन्ह ॥ ९ ॥ ❀

दोनों पक्षोंमें प्रकाश और अंधकार बराबर है. किन्तु विधाताने नाममें भेद कर दिया है कि एकको चन्द्रमाका बढ़ानेवाला और एकको घटानेवाला समझकर जगमें यश और अपयश दीन्हा है, अर्थात् उनके कर्मके अनुसार एकका नाम कृष्ण (काला) और एकका शुक्ल (गोरा) कर दिया है ॥९॥

जड़ चेतन जग जीव जे, सकल राममय जानि ॥ ❀
वंदौं सबके पदकमल, सदा जोरि युगपानि ॥ १० ॥ ❀

संसारमें जितने जड़ और चेतन जीव हैं, वे सब मानों रामही हैं ऐसा जानकर सबके चरण-कमलोंको दोनों हाथ जोड़ कर सदा प्रणाम करताहूं ॥ १० ॥

देव दनुज नर नाग खग, प्रेत पितर गंधर्व ॥ ❀
वंदौं किन्नर रजनिचर, कृपा करहु अब सर्व ॥ ११ ॥ ❀

देवता, दैत्य, मनुष्य, नाग, पक्षी, प्रेत, पितर, गंधर्व, किन्नर और राक्षस इन सबको नमस्कार करताहूं, अब सब कृपा करो ॥ ११ ॥

चौ०-आकर चारि लाख चौरासी ❀ जाति जीव नभजलथलवासी ॥ १ ॥
सियाराममय सब जग जानी ❀ करौं प्रणाम जोरि युगपानी ॥ २ ॥

जीवोंकी चार खानि हैं और उनमें चौरासी[6] लाख भेद हैं और वे आकाश, जल और थलमें रहनेवाले हैं ॥ १ ॥ सब संसारको सीताराममय जान[7] दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम करताहूं ॥ २ ॥

जानि कृपाकरि किंकर मोहू ❀ सब मिलि करहु छाँड़ि छल छोहू ३
निज बल बुधि भरोस मोहिं नाहीं ❀ तातें बिनय करहुँ सब पाहीं ॥ ४ ॥

कृपाकर मुझे अपना सेवक जान छलको छोड़कर मेरे ऊपर दया करो ॥ ३ ॥ क्योंकि मुझे अपने बल और बुद्धिका भरोसा नहीं है, इसलिये सबसे विनती करताहूं ॥ ४ ॥

---

* क्रमालंकार.

---

(१) जैसे सूर्यादि नवग्रहोंको लिये ज्योतिषमें जो अच्छे स्थान कहे हैं उनमें बैठनेसे उत्तम कहा है और जो बुरे स्थानमें नियत हैं उनमें बैठनेसे अशुभ कहाते हैं. (२) जो औषधि रोगीको नीरोग करै वह अच्छी कहाती है और जो रोग बढ़ावै वह बुरी है. (३) मेघका जल जो गंगामें पड़ै तौ पवित्र गिनाजाय और पोखरमें पड़नेसे अशुद्ध होजाय. (४) वायु जो सुन्दर गुलाब चमेली सुगन्धसे मिलकर आवै वह अच्छी लगती है और दुर्गन्धयुक्त होनेसे बुरी है. (५) वस्त्रभी जो देवतापर चढ़ै. अथवा सुन्दर स्त्रीपुरुष धारण करैं तौ अच्छा और मुरदेके ऊपर पड़नेसे वही अशुद्ध और बुरा समझा जाता है. (६) गूढार्थदीपिकामें देखो, (७) यथा महारामायणे-"भूमौ जले नभसि देवनरासुरेषु भूतेषु देवसकलेषु चराचरेषु। पश्यन्ति शुद्धमनसा खलु रामरूपं रामस्य ते क्षितितले समुपासकाश्च ॥ १ ॥" सनत्कुमारसंहितायां-"रामं सत्यं परं ब्रह्म रामात् किंचिन्न विद्यते। तस्माद्रामस्य रूपोऽयं सत्यं सत्यमिदं जगत् ॥ १ ॥"-स्पष्टार्थः.

करन चहौं रघुपति गुण गाहा ❀ लघुमति मोर चरित अवगाहा ॥ ५ ॥
सूझ न एकौ अंग उपाऊ ❀ मम मति रंक मनोरथ राऊ ॥ ६ ॥

मैं श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंकी कथा बनाया चाहताहूं. पर मेरी बुद्धि छोटी और चरित्र बड़ा अथाह है ॥५॥ (और कविताके अंग अनेक और अंगोंके अनेक उपाय हैं उनमेंसे) मुझे एकभी अंग और उपाय नहीं सूझता. क्योंकि, मेरी बुद्धि कंगाल है और मनोरथ राजाके समान है ॥ ६ ॥

मति अति नीच ऊँच रुचि आछी ❀ चहिय अमिय जग जुरै न छाछी ॥७॥
क्षमिहहिं सज्जन मोर ढिठाई ❀ सुनिहहिं बालवचन मन लाई ॥ ८ ॥

फिर बुद्धि तौ अति नीची और इच्छा ऊंची और उत्तम है. सो ऐसे है, जैसे संसारमें छाछ तौ जुड़तीही नहींहै और जी अमृतको चाहताहै ॥ ७ ॥ इसलिये सज्जन मेरी ढिठाईको क्षमा करेंगे और बालकके वचनके समान मन लगाकर सुनेंगे ॥ ८ ॥

जौं बालक कह तोतरि बाता ❀ सुनहिं मुदितमन पितु अरु माता ९
हँसिहहिं कूर कुटिल कुबिचारी ❀ जे परदूषणभूषणधारी ॥ १० ॥

जैसे बालक तोतली बातें कहता है और उनको मातापिता मन लगाकर सुनतेहैं॥९॥और बूरे कुटिल वो जिनका विचार ठीक नहीं है और जो पराये दूषणरूपी भूषणको धारण करनेवाले हैं वे हंसेंगे ॥१०॥

निजकवित्त केहि लाग न नीका ❀ सरस होउ अथवा अति फीका ॥११॥
जे परभणित सुनत हरषाहीं ❀ ते वरपुरुष बहुत जग नाहीं ॥१२॥

और अपनी कविता किसको अच्छी नहीं लगती है अर्थात् सभीको लगतीहै. वह रसीली हो अथवा निरी फीकी हो ॥ ११ ॥ और जो पराई कविताको सुनकर प्रसन्न होते हैं ऐसे उत्तम पुरुष संसारमें बहुतसे नहीं हैं अर्थात् बहुत थोड़े हैं ॥ १२ ॥

जग बहु नर सरितासम भाई ❀ जे निज बाढ़ि बढहिं जल पाई ॥१३॥
सज्जन सुकृति सिंधुसम कोई ❀ देखि पूर विधु बाढ़हिं जोई ॥ १४ ॥

हे भाई ! संसारमें बहुतसे मनुष्य नदीके समान हैं जो जलको पाकर अपनी बाढ़से बढ़ जाती हैं ऐसेही थोड़ीही विद्या पाकर मनुष्य अपनी मर्यादा छोड़ बाहर निकल जाते हैं ॥१३॥ और कोई २ सज्जन उन पुण्यशील समुद्रोंके समान हैं कि जो पूरे चन्द्रमाको देखकर बढ़ते हैं. अर्थात् जैसे समुद्र पूर्ण चन्द्रमाको देख बढ़ता है वैसेही सज्जन दूसरोंकी उन्नति देख प्रसन्न होते हैं ॥ १४ ॥

दो०–भाग छोट अभिलाष बड़, करउँ एक विश्वास ॥* ❀
पैहहिं सुख सुनि सुजन जन, खल करिहैं उपहास ॥ १२ ॥† ❀

मेरा भाग्य तौ छोटा है और अभिलाषा बड़ी है पर एक मुझे भरोसा है कि, अच्छे मनुष्य सुनकर सुख पावेंगे और दुष्ट जन हँसी करेंगे ॥ १२ ॥

चौ०–खल परिहास होय हित मोरा ❀ काक कहहिं कलकंठ कठोरा ॥ १ ॥
हंसहि बक दादुर चातकही ❀ हँसहिं मलिन खल बिमल बतकही २

खल पुरुषोंके हास करनेसेभी मेरा हितही होगा (कुछ बुराई न होगी) क्योंकि हमें तो हँसाना; और काग तो कोकिलाके कंठको कठोर कहाही करतेहैं ! ॥ १ ॥ और जैसे बगुले हंसोंपर और मेंड़क पपीहोंपर हँसतेहैं वैसेही नीच खल सुन्दर बातपर हंसतेहैं ॥ २ ॥

---

* विषमालंकार. † भाविक अलंकार.

कवित रसिक न रामपद नेहू ❀ तिन्ह कहँ सुखद हास्यरस एहू ॥ ३ ॥
भाषा भणित मोर मति थोरी ❀ हँसिबे योग हँसे नहिं खोरी ॥ ४ ॥

और जो कविताके रसको जानते हैं परंतु जिनका रघुनाथजीके चरणोंमें प्रेम नहीं है उनको यह (ग्रन्थ) हास्यरस होकर सुख देगा अर्थात् वे हँसेंगे ॥ ३ ॥ (सो ठीक है क्योंकि प्रथम तौ) यह भाषाकी कविता (और दूसरे) मेरी बुद्धि छोटी है इसलिये हँसनेके योग्यही है इसमें हँसी करनेवालोंकी क्या खोट है ॥ ४ ॥

प्रभुपदप्रीति न सामुझि नीकी ❀ तिन्हहिं कथा सुनि लागिहि फीकी ॥५॥
हरिहरपदरति मति न कुतरकी ❀ तिन्ह कहँ मधुर कथा रघुवरकी ॥६॥

और जिनकी श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें न तौ प्रीति है और न समझ अच्छी है उनको यह कथा सुनकर फीकी लगैगी ॥ ५ ॥ और जिनकी विष्णु भगवान् और महादेवजीके चरणोंमें प्रीति है और जिनकी बुद्धिमें कुतर्क[1] नहीं है तिनको श्रीरघुपतिकी कथा मीठी लगैगी ॥ ६ ॥

रामभक्तिभूषित जिय जानी ❀ सुनिहहिं सुजन सराहि सुबानी ॥ ७ ॥
कबि न होउँ नहिं बचन प्रवीना ❀ सकल कला सब विद्याहीना ॥ ८ ॥

और सुजन लोग इस कथाको मनमें श्रीरामजीकी भक्तिसे शोभायमान जानकर सुन्दर वाणीसे सराह कर सुनेंगे ॥ ७ ॥ क्योंकि न तो मैं कवि हूं और न बोलनेमें चतुर हूं और संपूर्ण कला और सब विद्याओं[3]से रहित हूं ॥ ८ ॥

आखरअर्थ अलंकृत नाना ❀ छंद प्रबंध अनेक विधाना ॥ ९ ॥
भावभेद रसभेद अपारा ❀ कबित दोष गुण विविध प्रकारा ॥१०॥
कबित बिबेक एक नहिं मोरे ❀ सत्य कहौं लिखि कागद कोरे ॥ ११ ॥

अक्षरोंके अर्थ और अलंकार[4] अनेक प्रकारके हैं और छन्दों[5]की रचना अनेक भांतिकी हैं ॥९॥ और भावोंके भेद और रसोंके भेद अनगिनती हैं और कविताके दोष और गुण अनेक प्रकारके हैं ॥ १० ॥ सो कविताका विचार मुझमें एकभी नहीं है, मैं कोरे[6] कागदपर लिखकर सत्य २ कहता हूं अर्थात् शपथ खाताहूं ॥ ११ ॥

दो०–भणित मोर सब गुणरहित, विश्वविदितगुण एक ॥* ❀
सो बिचारि सुनिहहिं सुमति, जिन्हके बिमल बिबेक ॥ १३ ॥❀

मेरी कविता सब गुणरहित है परन्तु इसमें एक गुण है जो संसारमें विख्यात है. यह विचारकर वे अच्छे मनुष्य सुनेंगे, जिनको निर्मल ज्ञान है ॥ १३ ॥

चौ०–एहिमहँ रघुपतिनाम उदारा ❀ अतिपावन पुराणश्रुतिसारा ॥ १ ॥
मंगलभवन अमंगलहारी ❀ उमासहित जेहि जपु त्रिपुरारी ॥ २ ॥

---

* भाविक अलंकार.

---

(१) कुतर्क उसको कहते हैं जैसे कोई कहै कि रामजी परमेश्वर थे तौ उन्होंने रावणको घर बैठेही क्यों न मार दिया. (२) गूढ़ार्थदीपिकामें देखो. (३) श्लोकौ–"ब्रह्मज्ञानं रसज्ञानं वेदाः स्वरधरं तथा ॥ व्याकृतिर्ज्योतिषं चैव धनुर्विद्या तथा मता ॥ १ ॥ जलोत्तारणकं न्यायः कोकाश्वारोहणे तथा ॥ नटविद्या कृषिर्वैद्यं विद्या ह्येताश्चतुर्दश. ॥ २ ॥ (४) अलंकार–भावोंके भेद–कविताके गुणदोष साहित्यदर्पण आदि पुस्तकोंमें लिखे हैं. (५) पिंगलके ग्रन्थोंसे विदित होगा. (६) यहां गुसांईजीने अपनी विद्याकी निर्धनता दिखाई है. जैसे हनूमानजीने श्रीरामजीकी गोदमें बैठकर कहा है कि–"तापर मैं रघुवीर दुहाई। नहिं जानहुं कछु भजन उपाई ॥".

इसमें एक बड़ा श्रीरामजीका नाम है जो कि बड़ा पवित्र और वेद पुराणका सार है ॥१॥ (और वह नाम कैसा है कि) मंगलोंका स्थान अर्थात् करनेवाला और अमंगल कहिये दुःखका दूर करनेवाला है और जिसको पार्वतीजीसहित महादेवजी जपते हैं ॥ २ ॥

भणित विचित्र सुकबिकृत जोऊ ❀ रामनाम बिनु सोह न सोऊ ॥ ३ ॥
बिधुबदनी सब भाँति सँवारी ❀ सोह न बसन बिना वर नारी ॥ ४ ॥

जो कविता विचित्र हो और अच्छे कविसे रची गईभी हो, परंतु वह रामके नामविना ऐसे शोभा नहीं देती ॥३॥ कि जैसे चन्द्रमाके समान मुखवाली और सब प्रकार (आभूषण आदिसे) शोभायमान सुन्दर स्त्री विना वस्त्रोंके शोभा नहीं देती है ॥ ४ ॥

सब गुणरहित कुकबिकृत बानी ❀ रामनाम यश अंकित जानी ॥ ५ ॥
सादर कहहिं सुनहिं बुध ताही ❀ मधुकरसरिस संत गुणग्राही ॥ ६ ॥

और सब गुण अर्थात् छन्द प्रवन्ध भाव अलंकार आदिसे रहित और बुरे कविकी रची हुई कविताकोभी रामनामके यशसे चिन्हित जानकर ॥ ५ ॥ पण्डित लोग उसीको आदरपूर्वक कहते और सुनते हैं. क्योंकि संतजन भौंरेके समान गुणके लेनेवाले होते हैं ॥ ६ ॥

यदपि कवितरस एकौ नाहीं ❀ रामप्रताप प्रगट इहिमाहीं ॥ ७ ॥
सोइ भरोस मोरे मन आवा ❀ केहि न सुसंग बड़ापन पावा ॥ ८ ॥

यद्यपि कविताका रस एकभी नहीं है परंतु इसमें रामजीका प्रताप प्रगट है ॥ ७ ॥ यही भरोसा मुझे अपने मनमें है. क्यौंकि किसने [3]अच्छे संगसे बड़प्पन नहीं पाया है अर्थात् सभीने पाया है ॥८॥

धूमहु तजै सहज करुआई ❀ अगरप्रसंग सुगंध वसाई ॥ ९ ॥
भणित भदेस वस्तु भलि वरणी ❀ रामकथा जग मंगलकरणी ॥ १० ॥

धुंआभी अपने स्वाभाविक कड़वेपनको अगरके साथ सुगन्धित होनेसे छोड़ देता है ॥९॥ मेरी कविता तौ बुरी है परंतु एक वस्तु अच्छी वर्णन की है सो क्या? कि रामजीकी कथा जो संसारमें मंगल करनेवाली है ॥ १० ॥

छं०–मंगलकरनि कलिमलहरनि तुलसी कथा रघुनाथकी । ❀
गति कूर कविता सरितकी ज्यौं परम पावन पाथकी ॥ ❀
प्रभु सुयश संगति भणित भलि, होइहि सुजन मनभावनी । ❀
भव अंग भूति मसानकी, सुमिरत सुहावन पावनी ॥ १ ॥ ❀

तुलसीदास कहते हैं कि श्रीरघुनाथजीकी कथा मंगलके करनेवाली और कलिके पापोंको हरनेवाली है ॥ और इस कवितारूपी नदीकी गति श्रीगंगाजीके मार्गके समान [4]टेढ़ी है परन्तु श्रीराम-

---

(१) "पवित्राणां पवित्रोऽयं मंगलानां च मंगलम् ॥". (२) सारांश यह है कि जैसे भौंरा रसका लोभी है. पुष्प चाहै जिसका हो–ऐसेही कविता अच्छे कविकी हो वा बुरे कविकी, सन्तजन तो जिसमें भगवानका नाम होगा उससे प्रयोजन रखते हैं. (३) "असज्जनः सज्जनसंगिसंगात् करोति दुःसाध्यमपीह साध्यम् । पुष्पाश्रयाच्छंभुशिरोधिरूढा पिपीलिका चुम्बति चन्द्रविम्बम् ॥१॥" अर्थात् असज्जनभी सज्जनके संगसे कठिन कार्यको ठीक कर लेता है देखो पुष्पके आश्रयसे चैंटी शंकरके शिरपर स्थित चन्द्रमाको चूमती है ॥ फिर सूरदासका वचन जलके विषयमें है कि–"सीप गयौ मोती भयौ कदली भयौ कपूर । अहिगण गयौ तौ विष भयौ संगतकौ फलसूर ॥ १ ॥". (४) जैसे गंगाजीका मार्ग टेढ़ा है उसी प्रकार कवितामेंभी खंडान्वयके अनुसार उलटपलटके अर्थ सिद्ध होते हैं; पर जैसे जलके संयोगसे नदीकी टेढ़ाईपर लोग ध्यान नहीं देते, ऐसेही रामनामयुक्त होनेसे मेरी कविताकाभी मान करेंगे.

चन्द्रजीके सुन्दर यशके संगसे यह कविता सुन्दर होकर सज्जनोंके मनको भावेगी ॥ जैसे मसानकी भवूत महादेवजीके शरीरमें लगकर स्मरण करनेयोग्य–सुन्दर और पवित्र होती है ॥ १ ॥

**दो०–प्रिय लागहिं अति सबहिं मम, भणित रामयशसंग ॥*\
दारु विचारु कि करइ कोउ, वंदिय मलयप्रसंग ॥ १४ ॥**

मेरी कविता श्रीरामजीके यशके संगसे सबको बड़ी प्यारी लगैगी जैसे मलयाचलके [1]प्रसंगसे काठका विचार कोई नहीं करता, किन्तु उस काठका चन्दनके समान आदर किया जाता है ॥ १४ ॥

**श्याम सुरभि पय विशद अति, गुणद करहिं तेहि पान ॥†\
गिरा ग्राम सियराम यश, गावहिं सुनहिं सुजान ॥ १५ ॥**

जैसे गौ काली हो परंतु दूध उज्ज्वल और अधिक गुणदायक है इसलिये लोग उसको पीते हैं, वैसेही भाषा गँवारू हो परंतु इसमें सीतारामका यश होनेसे ज्ञानी पुरुष उसे गाते और सुनते हैं ॥ १५ ॥

**चौ०–मणि माणिक मुक्ता छबि जैसी ❀ अहि गिरि गज शिर सोह न तैसी ॥१॥\
नृपकिरीट तरुणीतनु पाई ❀ लहहिं सकल शोभा अधिकाई ॥ २ ॥**

[2]मणि, माणिक और मोतीकी छबि जैसी है वैसी सर्प, पर्वत और हाथीके शिरपर शोभा नहीं देती है १ परन्तु जैसे राजाका मुकुट और नवयौवना स्त्रीका शरीर पाकर ये सब अधिक शोभा पाते हैं ॥ २॥

**तैसें सुकवि कबित बुध कहहीं ❀ उपजहिं अनत अनत छबि लहहीं ॥३॥\
भक्तिहेतु विधिभवन बिहाई ❀ सुमिरत शारद आवति धाई ॥ ४ ॥**

तैसेही पंडितजन कहते हैं कि अच्छे कवियोंकी कविता एक देशमें बनती है और दूसरे देशमें शोभा पाती है ॥ ३ ॥ और ग्रन्थारंभमें जब ध्यान करते हैं तब सरस्वती भक्तिके कारण ब्रह्माजीके घरको छोड़कर स्मरण करतेही दौड़कर आती है ॥ ४ ॥

**रामचरितसर बिनु अन्हवाये ❀ सो श्रम जाइ न कोटि उपाये ॥ ५ ॥\
कवि कोबिद अस हृदय बिचारी ❀ गावहिं हरिगुण कलिमलहारी ॥ ६ ॥**

पर उसे रामचरित्ररूपी सरोवरमें विना स्नान कराये उसके ब्रह्मलोकसे आनेका श्रम करोड़ उपाय करनेपरभी नहीं जाता. (सार यह है कि, परमेश्वर वाणी दे तो उसीका गुणानुवाद करै) ॥ ५ ॥ और कवि–पण्डित अपने हृदयमें इस प्रकार विचारकर भगवानके गुणको गाते हैं कि जो कलिके पापोंको दूर करनेवाला है ॥ ६ ॥

**कीन्हें प्राकृतजनगुणगाना ❀ शिर धुनि गिरा लागि पछिताना ॥७॥\
हृदय सिंधु मति सीपसमाना ❀ स्वाती शारद कहहिं सुजाना ॥ ८ ॥\
जो बरषै बर बारि बिचारू ❀ हौंहिं कबित मुक्तामणि चारू ॥ ९ ॥**

---

* दृष्टान्त. † हेतु.

---

(१) जैसा कहा है कि–"किं तेन हेमगिरिणा रजताद्रिणा वा॰ यत्राश्रिताश्च तरवस्तरवस्त एव । मन्यामहे मलयमेव यदाश्रयेण कंकोलनिम्बकुटजा अपि चन्दनाः स्युः ॥१॥" अर्थ–उन सोने चांदीके पर्वतोंसे क्याहै ? कि जिनके आश्रित वृक्ष सदा वृक्षही बने रहते हैं. हम तो मलयाचलको मानते हैं; जिसके आश्रयसे कंकोल नीम और कुटज भी चन्दन हो जाते हैं ॥ १ ॥. (२) सर्पके शिरपर मणि, पर्वतमें माणिक और हाथीके मस्तकपर मोती होता है.

संसारके साधारण मनुष्योंके गुणोंका गान करनेसे सरस्वती शिर धुन कर पछताने लगती है ॥७॥ हृदय मानो समुद्र है और मति सीपके समान है और सरस्वती स्वाति नक्षत्र है ऐसा ज्ञानी जन कहते हैं ॥ ८ ॥ जो श्रेष्ठ विचाररूपी जल बरसे तौ कवितारूपी सुन्दर मुक्तामणि होते हैं ॥ ९ ॥

दो०-युक्ति वेधि पुनि पोहिये, रामचरित वर ताग ॥ ❀
पहिरहिं सज्जन बिमल उर, शोभा अति अनुराग ॥ १६ ॥ ❀

(उन कवितारूपी मुक्तामणियोंको कविताईकी) युक्तिसे वेधकर और रामचरित्ररूपी उत्तम तागेमें पोहकर सज्जन अपने शुद्ध हृदयमें धारण करते हैं और रघुनाथजीमें जो सच्चा प्रेम है वही मानो शोभा है ॥ १६ ॥

चौ०-जे जनमे कलिकाल कराला ❀ करतब बायस वेषमराला ॥ १ ॥
चलत कुपंथ बेदमग छाँड़े ❀ कपट कलेवर कलिमल भाँड़े ॥ २ ॥

जो मनुष्य कराल कलिकालमें जन्मे हैं उनका करतब कौओंकासा और वेश हंसोंकासा है ॥१॥ वे वेदका मार्ग छोड़ कुमार्गमें चलते हैं, उनका कपटका शरीर है, अर्थात् बड़े कपटी हैं और कलिमलके पात्र हैं ॥ २ ॥

बंचक भक्त कहाइ रामके ❀ किंकर कंचन कोह कामके ॥ ३ ॥
तिनमहँ प्रथम रेख जग मोरी ❀ धृक धरमध्वज धंधक धोरी ॥ ४ ॥

और वे ठग हैं परंतु रामजीके भक्त कहाते हैं और सुवर्ण, क्रोध और कामके दास हैं अर्थात् धनके लोभी क्रोधी और कामी हैं ॥ ३ ॥ उनमेंसे संसारमें प्रथम मेरी गिनती है (इस लिये) धर्मध्वजासे धंधा करनेवालोंमें मुख्य ऐसे मुझको धिक्कार है ॥ ४ ॥

जो अपने अवगुण सब कहऊँ ❀ बाढ़ै कथा पार नहिं लहऊँ ॥ ५ ॥
तातें मैं अति अलप बखाने ❀ थोरे महँ जानिहहिं सयाने ॥ ६ ॥

जो मैं अपने सब अवगुण कहूँ तौ कथा बढ़ जायगी और पार नहीं पाऊंगा ॥ ५ ॥ इस लिये मैंने बहुत थोड़े अवगुण कहे हैं चतुर मनुष्य थोड़ेहीमें जान लेंगे ॥ ६ ॥

समुझि विविधविधि बिनती मोरी ❀ कोउ न कथा सुनि दैइहि खोरी ॥ ७ ॥
एतेहु पर करिहहिं जे शंका ❀ मोहितें अधिक ते जड़मति रंका ॥८॥

और मेरी अनेक भाँतिकी बिनती समझकर कोई कथा सुन मुझे बुराई नहीं देगा ॥ ७ ॥ और जो इतने परभी संदेह करेंगे वे मुझसे भी मूर्ख और मतिके दरिद्री हैं ॥ ८ ॥

†कबि न होउँ नहिं चतुर कहाउँ ❀ मतिअनुरूप रामगुण गाउँ ॥ ९ ॥
‡कहँ रघुपतिके चरित अपारा ❀ कहँ मति मोरि निरतसंसारा ॥ १० ॥

न तौ मैं कवि हूं और न चतुर कहलाता हूं; केवल अपनी मतिके अनुसार रघुनाथजीका यश गाताहूं ॥ ९ ॥ सो कहां तो रघुनाथजीके अपार चरित्र और कहां संसारमें फँसी हुई मेरी बुद्धि अर्थात् बड़ा अंतर है ॥ १० ॥

जेहि मारुत गिरि मेरु उड़ाहीं ❀ कहहु तूल केहि लेखेमाहीं ॥ ११ ॥
समुझत अमित राम प्रभुताई ❀ करत कथा मन अति कदराई ॥ १२ ॥

---

* रूपक. † विभावना. ‡ विषमालंकार.

---

(१) जैसा कहाहै कि–"कलिमल ग्रसे धर्म सब गुप्त भये सदग्रन्थ । दंभिन निज मत कल्पि करि प्रगट किये बहुपन्थ–".

२.१३/५ ३८,६६८

जिस पवनसे[1] मेरु उड़ जाता है तो कहो कि रुई किस गिनतीमें है? (सारांश यह हुआ कि जिन रामजीके गुण वर्णन करनेमें शेष, शारदा आदिकी सामर्थ्य नहीं फिर मेरी क्या गिनती है) ॥ ११ ॥ श्रीरामचन्द्रजीकी प्रभुताईको अधिक समझकर उनकी कथा कहनेमें मन बड़ा हिचकता है ॥ १२ ॥

दो०–शारद शेष महेश विधि, आगम निगम पुरान ॥
नेति नेति कहि जासु गुण, करहिं निरंतर गान ॥ १७ ॥*

क्योंकि सरस्वती, शेषनाग, महादेवजी, ब्रह्मा, शास्त्र, वेद और पुराण ये सब नेति २ अर्थात् इनका अंत नहीं है २ यह कहकर जिसके गुणोंका रात्रिदिन गान करते हैं ॥ १७ ॥

चौ०–सब जानत प्रभुप्रभुता सोई ❀ तदपि कहे विन रहा न कोई ॥ १ ॥
तहाँ बेद अस कारण राषा ❀ भजन प्रभाव भाँति बहु भाषा ॥ २ ॥

सब जानते हैं कि रघुनाथजीकी वह प्रभुता ऐसी है तौभी कहेविना कोई नहीं रहा ॥ १ ॥ तहाँ वेदने ऐसा कारण धरा है कि भजनका प्रभाव अनेक भाँतिसे वर्णन किया है जैसा कहना[2], सुनना, समझना और बनाना आदि ॥ २ ॥

एक अनीह अरूप अनामा ❀ अज सच्चिदानंद परधामा ॥ ३ ॥
व्यापक विश्वरूप भगवाना ❀ तेहि धरि देह चरित कृत नाना ॥ ४ ॥

उसीके अनुसार परमेश्वर एक, चेष्टा अर्थात् अनेक भाँति जो हर्ष, शोक, प्रसन्नता, उदासीनता और स्थूलता और निर्बलता आदि इससे रहित है, रूपहीन, नामरहित, जन्मरहित, सच्चिदानन्दरूप है और जिसका धाम परे है ॥३॥ वह सब जगह (सूर्यके समान) व्यापक[3] है; जिसका संसाररूप है ऐसा जो षट्ऐश्वर्य युक्त ईश्वर है वही देह धरके अनेक भाँतिके चरित्र करता है ॥ ४ ॥

सो केवल भक्तन हित लागी ❀ परम कृपालु प्रणतअनुरागी ॥ ५ ॥
जेहि जनपर ममता अरु छोहू ❀ तेहि करुणाकर कीन्ह न कोहू ॥ ६ ॥

वह भक्तोंका हितकारी, अत्यन्त कृपालु और भक्तोंसे प्रीति करनेवाला है ॥ ५ ॥ जिन जन पर इसकी ममता और छोह है तिनके ऊपर करुणा करनेवालेने क्रोध नहीं किया ॥ ६ ॥

गई बहोरि गरीबनिवाजू ❀ सरल सबल साहिब रघुराजू ॥ ७ ॥
बुध बरनहिं हरियश अस जानी ❀ करहिं पुनीत सुफल निज बानी ॥ ८ ॥

श्रीरघुनाथजी कैसे हैं कि गई वस्तुको फिर देनेवाले, गरीब निवाजे[4] सीधे[5] और बलवान्[6] हैं ॥ ७ ॥ पण्डित लोग भगवान्के यशको ऐसा जानकर अपनी वाणीको पवित्र और सुफल करनेके लिये वर्णन करते हैं ॥ ८ ॥

---

* विशेषालंकार.

---

(१) यहां पवनको रामचरित्र, मेरुको शेषआदि और तूलके समान गुसांईजी आप बने हैं. (२) भागवतमेंभी ऐसा कहा है कि–"यत्कीर्तनं यत्स्मरणं यदीक्षणं यद्वन्दनं यच्छ्रवणं यदर्हणम्। लोकस्य सद्यो विधुनोति कल्मषं तस्मै सुभद्रश्रवसे नमो नमः ॥" अर्थात् जिसका कीर्तन, स्मरण, दर्शन, वन्दना, और कथाश्रवण आदि संसारके पापको हरता है ऐसे कल्याणस्वरूप परमेश्वरको नमस्कार है. (३) जैसा ब्रह्माण्डपुराणमें रामजीने वसिष्ठजीसे कहाहै कि–"यथानेकेषु कुम्भेषु रविरेकोऽपि दृश्यते । तथा सर्वेषु भूतेषु चिन्तनीयोस्म्यहं सदा," अर्थात् जैसे अनेक घड़ोंमें एक सूर्य चमकता है ऐसेही सब प्राणियोंमें मुझको विचारना चाहिये. (४) गरीब निवाज ऐसे कि सुग्रीवको राज्य दिला दिया. (५) सीधे ऐसे कि केवटसे उठकर मिले. (६) बलवान् ऐसे कि शंकरकेभी ध्यानमें न आवैं.

तेहि बल मैं रघुपतिगुण गाथा ❀ कहिहौं नाइ रामपद माथा ॥ ९ ॥
मुनिन्ह प्रथम हरिकीरति गाई ❀ तेहि मगु चलत सुगम मोहि भाई ॥१०॥

और उसीके बलसे मैं श्रीरघुनाथजीके गुणोंकी कथाको रामजीके चरणोंमें मस्तक नवाकर कहूंगा ॥ ९ ॥ और वाल्मीकि आदि मुनियोंनें प्रथम जिस प्रकार रामचन्द्रजीका यश गाया है उसी मार्गसे चलना मुझे सुगम दीखता है ॥ १० ॥

दो०-अति अपार जे सरितवर, जो नृप सेतु कराहिं ॥ ❀
चढ़ि पिपीलिका परम लघु, बिनु श्रम पारहि जाहिं ॥ १८ ॥* ❀

यदि राजा लोग अत्यन्त अपार सुन्दर नदियोंका पुल बंधवा देते हैं, तौ उसपर चढ़कर बहुत छोटी चींटीभी विना श्रमके पार चली जाती है ॥ १८ ॥

चौ०-यहि प्रकार बल मनहिं दृढ़ाई ❀ करिहौं रघुपतिकथा सुहाई ॥ १ ॥
व्यास आदि कविपुंगव नाना ❀ जिन्ह सादर हरिचरित बखाना ॥ २ ॥

इस प्रकार बलपूर्वक अपने मनमें पकावट करके रामजीकी मनोहर कथा कहूंगा ॥ १ ॥ व्यासजी आदि जो अनेक बड़े २ कवि हैं जिन्होंने आदरसे भगवान्के चरित्र कहे हैं ॥ २ ॥

चरणकमल वंदौं सबकेरे ❀ पुरवहु सकल मनोरथ मेरे ॥ ३ ॥
कलिके कविन्ह करौं परनामा ❀ जिन बरणे रघुपतिगुणग्रामा ॥ ४ ॥

उन सबके चरणकमलोंको प्रणाम करताहूं कि मेरे सब मनोरथोंको पूरा करो ॥ ३ ॥ कलियुगके कवियोंकोभी प्रणाम करताहूं, जिन्होंनें रघुनाथजीके अनेक गुणोंका वर्णन किया है ॥ ४ ॥

जे प्राकृत कवि परम सयाने ❀ भाषा जिन्ह हरिचरित बखाने ॥ ५ ॥
भए जे अहहिं होइहैं आगे ❀ प्रणवौं सबहिं कपट सब त्यागे ॥ ६ ॥

जो साधारण कवि बड़े चतुर हैं, कि जिन्होंने भाषामें भगवानका चरित्र कहाहै ॥ ५ ॥ और जो हुए हैं, अब उपस्थित हैं, और जो आगे होंगे, उन सबको कपट और छल त्यागकर प्रणाम करताहूं ॥६॥

होहु प्रसन्न देहु वरदानू ❀ साधु समाज भनित सनमानू ॥ ७ ॥
जो प्रबंध बुध नहिं आदरहीं ❀ सो श्रम वादि बाल कवि करहीं ॥ ८ ॥

(और चाहताहूं कि) सब प्रसन्न हो, यह वर दो कि साधुओंके समाजमें मेरी कविताका आदर हो ॥ ७ ॥ पण्डितजन जिस कविताका आदर नहीं करते हैं, वह श्रम वृथा है और वे कवि बालकके समान हैं. सार यह है कि कविता वही जिसको पण्डित सरा हैं, नहीं बालकोंका खेल है ॥ ८ ॥

कीरति भणित भूति भलि सोई ❀ सुरसरि सम सबकर हित होई ॥ ९ ॥
राम सुकीरति भणित भदेसा ❀ असमंजस अस मोहि अँदेसा ॥ १० ॥

यश, काव्य और ऐश्वर्य वही अच्छा है जिसमें गंगाजीके समान सबका हित हो अर्थात् जैसे गंगाजी नीच, ऊंच, ज्ञानी, अज्ञानी, पापी, पुण्यात्माका समान हित करैं हैं वैसेही यहां जानों ॥९॥ श्रीरघुनाथजीकी कीर्ति तौ सुन्दर है परन्तु मेरी कविता भद्दी है. इसलिये मैं दुबिधामें पड़ाहूं और मुझे अंदेशा है. (कि जो साधुजन मेरी कविताको ग्रहण न करेंगे तो इससे नहीं बनानाही अच्छा है. पर क्या करूं? मुझसे रहा नहीं जाता) ॥ १० ॥

---

* सुसिद्धि.

---

(१) यहां गोसांईजीने रामजीकी कथाको बड़ी नदी, बड़े बड़े वाल्मीकि ऋषि आदिको राजा, उनके कहनेको पुल और अपनेको चींटीरूप माना है.

तुमरी कृपा सुलभ सोउ मोरे ❀ सिअनि सुहावनि टाट पटोरे ॥ ११ ॥
करहु अनुग्रह अस जिय जानी ❀ विमल यशहिं अनुहरै सुवानी ॥ १२ ॥

सो तुमारी कृपासे वहभी मुझे सीधी हो जायगी और टाटमें रेशमकी सीमनके समान सुन्दर लगैगी ॥ ११ ॥ इस प्रकार मनमें जानकर ऐसी दया करो कि जिससे मेरी वाणी (श्रीरामजीके) निर्मल यश वर्णन करनेमें समर्थ हो ॥ १२ ॥

दो०–सरल कवित कीरति विमल, सोउ आदरहिं सुजान ॥ ❀
सहज वैर बिसराइ रिपु, जो सुनि करहिं बखान ॥ १९ ॥* ❀

कविता सरल हो और कीर्ति निर्मल हो, उसको सज्जन आदर करतेहैं और शत्रुभी स्वाभाविक वैरको छोड़कर जिसको सुनकर प्रशंसा करतेहैं ॥ १९ ॥

सो न होइ बिनु बिमल मति, मोहि मतिबल अतिथोर ॥ ❀
करहु कृपा हरियश कहौं, पुनि पुनि करौं निहोर ॥ २० ॥† ❀

ऐसी कविता निर्मल बुद्धिके विना नहीं होती और मुझे बुद्धिका बल बहुत थोड़ा है. इस लिये आप लोग कृपा करो, क्योंकि मैं भगवानका यश वर्णन करताहूं और वारंवार आपका निहोरा करताहूं ॥ २० ॥

कविकोविद रघुवरचरित, मानस मंजु मराल ॥ ❀
बालविनय सुनि सुरुचि लखि, मोपर होहु कृपाल ॥ २१ ॥‡ ❀

श्रीरघुनाथजीका चरित्र मानससरोवर है और कवि पण्डित सुन्दर हंस हैं, वे मुझ बालककी विनय सुनकर और अधिक प्रीति देखकर मुझपर कृपालु होवें । भाव यह हुआ कि रामचरित्ररूपी मानसरोवरकी महिमा कवि पण्डितरूपी हंसही खूब जानते हैं. मेरी विनती तो इस विषयमें बालकोंकीसी है उसे सुनकर पण्डितजन कृपा करें ॥ २१ ॥

सो०–वंदौं मुनिपदकंज, रामायण जिन निर्मयउ ॥ ❀
सखर सकोमल मंजु, दोषरहित दूषणसहित ॥ ६ ॥¶ ❀

उन मुनि वाल्मीकिके चरणकमलोंको प्रणाम करताहूं कि जिन्होंने रामायण बनाई है (कैसी रामायण है?) सखर अर्थात् खरनाम राक्षसकी कथा करके युक्त तो है परन्तु कोमल है अर्थात् उसमें कठोर शब्द नहीं है और मंजु कहिये मनोहर है और दूषण (की कथा) सहित तो है परन्तु दोषरहित है ॥ ६ ॥

वंदौं चारिहु वेद, भववारिधि बोहितसरिस ॥ ❀
जिनहिं न सपनेहुँ खेद, बरणत रघुपति विशद यश ॥ ७ ॥$ ❀

मैं चारों वेदोंकी वन्दना करताहूं, जो संसाररूपी समुद्रके (पार करनेके लिये) जहाजके तुल्य हैं और जिनको रघुनाथजीके उज्ज्वल यश वर्णन करनेमें सपनेमेंभी खेद नहीं है ॥ ७ ॥

वंदौं विधिपदरेणु, भवसागर जिन्ह कीन्ह यह ॥ ❀
संत सुधा शशि धेनु, प्रगटे खल विष वारुनी ॥ ८ ॥§ ❀

---

* विधिसिद्धि. † पर्यायोक्ति. ‡ रूपक. ¶ श्लेषालंकार. $ रूपक. उदात्तसंसृष्टि. § रूपक.

(१) यहां यह सारांश है कि यद्यपि टाटमें टाटकी और रेशममें रेशमकीही सीमन शोभा देतीहै, तथापि आप कवियोंकी कृपासे मेरी टाटरूपी भाषा कविता रामचरित्ररूपी रेशमी डोरेकी सीमनसे शोभा देगी. (२) (स्वाभाविक वैर उसे कहते हैं कि जो विनाकारण हो. जैसे बिल्ली चूहेका). (३) कहीं इस सोरठेका अन्तका पद ऐसाभी है कि 'भूषणसहित' तो वहां अनेक अलंकारोंसे युक्त है ऐसा अर्थ जानना, जैसा कहा कि–"नमस्तस्मै कृता येन पुण्या रामायणी कथा। सदूषणाऽपि निर्दोषा सखरापि सकोमला ॥" श्लोकका अर्थ दोहेसे मिलता है,

मैं ब्रह्माजीके चरणोंकी धूलिकी वन्दना करताहूं, कि जिन्होंने इस भवसागरको रचा है और जिसमें सन्तजन तो अमृत, चन्द्रमा और कामधेनुके रूपमें प्रकटे और दुष्ट जन विष और वारुणी (शराब) रूप होकर प्रगट हुए हैं ॥ ८ ॥

दो०-विबुध विप्र बुध गुरुचरण, वंदि कहौं कर जोरि ॥
हुइ प्रसन्न पुरवहु सकल, मंजु मनोरथ मोरि ॥ २२ ॥*

देवता, ब्राह्मण, पण्डित और गुरुके चरणोंको वन्दन करके और हाथ जोड़कर कहताहूं कि प्रसन्न होकर मेरे सम्पूर्ण सुन्दर मनोरथोंको पूरा करिये ॥ २२ ॥

चौ०-पुनि वंदौं शारद सुरसरिता ❀ युगल पुनीत मनोहरचरिता ॥ १ ॥
मज्जन पान पापहर एका ❀ कहत सुनत इक हर अबिबेका ॥ २ ॥

फिर मैं सरस्वती और गंगाजीको प्रणाम करताहूं, क्योंकि उन दोनोंके पवित्र और सुन्दरचरित्र हैं ॥ १ ॥ एक (अर्थात् गंगाजी) स्नान तथा जलपान करनेसे पापको हरती है और दूसरी (अर्थात् सरस्वती) कहने सुननेमें अज्ञानको हर लेती है ॥ २ ॥

गुरु पितु मातु महेश भवानी ❀ प्रणवौं दीनबंधु दिन दानी ॥ ३ ॥
सेवक स्वामि सखा सियपीके ❀ हित निरुपधि सब बिधि तुलसीके ॥ ४ ॥

गुरु और मातापिता जो शिवपार्वती हैं, उनको प्रणाम करताहूं. वे दीनोंके रक्षक और सुन्दर दिन कहिये अवसरके देनेवाले हैं अथवा नित्य मनोरथके देनेवाले हैं ॥ ३ ॥ सीताजीके प्रिय कहिये रामचन्द्रजी उनके सेवक[1], स्वामी[2] और सखा[3] हैं और तुलसीदासके सब प्रकारसे हित करनेवाले हैं ॥४॥

कलि विलोकि जगहित हर गिरिजा❀ शाबरमंत्रजाल जिन सिरिजा ॥ ५ ॥
अनमिल आखर अरथ न जापू ❀ प्रगट प्रभाव महेशप्रतापू ॥ ६ ॥

कलियुगको देखकर संसारके हितके लिये जिन महादेव पार्वतीने शाँवरमंत्रको उत्पन्न किया है ॥ ५ ॥ उसमें अक्षरोंका मेल नहीं और न विधिपूर्वक अर्थ है, परंतु केवल जप करनेसेही शंकरके प्रतापका प्रभाव प्रकट होता है ॥ ६ ॥

सो महेश मोपर अनुकूला ❀ करौं कथा मुदमंगलमूला ॥ ७ ॥
सुमिर शिवा शिव पाइ पसाऊ ❀ बरणौं रामचरित चित चाऊ ॥ ८ ॥

सो महादेवजी मेरे ऊपर प्रसन्न हों. मैं हर्ष और मंगलकी देनेवाली कथाको बनाताहूं ॥ ७ ॥ पार्वती और शिवजीको स्मरण करके और उनका प्रसाद पाकर प्रसन्न चित्तसे रामचरित्रका वर्णन करताहूं ॥ ८ ॥

---

* अनुप्रास.

---

(१) सेवकका लक्ष्य यह भया कि=चौ. "सो प्रभु मोर चराचरस्वामी । रघुवर सब उर अंतरजामी ॥' (२) स्वामीका लक्ष्य चौ. "पूजि प्राथि नायउ माथा". (३) सखाका लक्ष्य="शिवसमान प्रिय मोहि न दूजा ॥' अथवा "शंकर प्रिय मम द्रोही शिवद्रोही मम दास" अथवा "शिवस्य हृदयं विष्णुर्विष्णोश्च हृदयं शिवः ॥" (४) सिद्ध सावर एक वड़ा ग्रन्थ है उसमें अनेक प्रकारके मंत्र हैं. पाठकोंके चित्तमें यह होगा कि, वे मंत्र कैसे हैं? अतएव एक मंत्र लिखते हैं ॥ मंत्र कालीजीका="वद खकारी गलसुआ तथेला रोगोंको झाडनेका ॥ गौरा जाई अंजनी सुत जाये हनुमंत । वद्द खकारी गलासुआ तथैला ये चारों भसमंत ॥ काली कंकाली कहां चली कैलास पर्वतको चली कैलास पर्वतपै जायकै कहा करैगी निहानी वसूली घढ़ावैगी निहानी वसूली गढ़ाकर कहाकरैगी वद्दकौं कखारीकौं गलसुएकौं तथेलेकौं ओंनीकौं कोनीकौं काटैगी कपटैगी करैगी विचार देखूं तेरी शक्ति गुरुकी भक्ति फुरो मंत्र ईश्वर उवाच ॥ २ ॥"

भणित मोरि शिवकृपा बिभाती ❀ शशिसमाज मिलि मनहुँ सुराती ॥ ९ ॥
जो यह कथा सनेहसमेता ❀ कहिहहिं सुनिहहिं समुझि सचेता ॥१०॥
होइहहिं रामचरणअनुरागी ❀ कलिमलरहित सुमंगलभागी ॥ ११ ॥

मेरी कविता शिवजीकी कृपासे ऐसी अच्छी लगैगी कि जैसे तारागणसहित चन्द्रमाके मिलनेसे रात्रि शोभायमान होती है॥ ९॥ जो इस कथाको प्रीतिसमेत कहेंगे, सुनेंगे, और ध्यान देकर समझेंगे ॥१०॥ वे श्रीरघुनाथजीके चरणोंके भक्त, कलिके पापोंसे रहित और अच्छे २ मंगलोंके भागी होंगे॥११॥

दो०–सपनेहु साँचहु मोहिपर, जो हर गौरि पसाउ ॥ ❀
तौ फुर होउ जो कहउँ सब, भाषा भणित प्रभाउ ॥ २३ ॥* ❀

जो सुपनेमेंभी मेरे ऊपर शिव पार्वती सच्चे प्रसन्न हों, तौ जो भाषा कविताका प्रभाव कहताहूं सब सत्य होय ॥ २३ ॥

चौ०–वंदौं अवधपुरी अति पावनि ❀ सरयू सरि कलिकलुष नसावनि ॥ १ ॥
प्रणवौं पुरनरनारि बहोरी ❀ ममता जिनपर प्रभुहि न थोरी ॥ २ ॥

अत्यन्त पवित्र अयोध्यापुरीकी[1] वन्दना करताहूं, कि जहां कलिपापहारिणी सरयूनदी बहती है ॥ १ ॥ फिर मैं पुरके स्त्रीपुरुषोंको नमस्कार करताहूं कि जिनके ऊपर प्रभु रामजीकी थोड़ी ममता नहीं है अर्थात् बहुत है ॥ २ ॥

सियनिंदक अघओघ नसाए ❀ लोक विशोक बनाइ बसाए ॥ ३ ॥
वंदौं कौशल्या दिशि प्राची ❀ कीरति जासु सकल जग माची ॥ ४ ॥

जिन्होंने सीताजीकी निन्दा[2] करनेवाले (धोवी) के पापसमूहोंको नाश किया और शोकरहित लोक (अर्थात् नवीन अयोध्यापुरी) वनाकर उसमें वसाया ॥ ३ ॥ कौशिल्याको प्रणाम करताहूं, कि जो पूर्व दिशाके समान है और जिसकी कीर्ति सब संसारमें फैल रही है ॥ ४ ॥

प्रगटेउ जहँ रघुपति शशि चारू ❀ विश्वसुखद खलकमल तुषारू ॥ ५ ॥
दशरथ राउ सहित सब रानी ❀ सुकृत सुमंगलमूरति मानी ॥ ६ ॥

और जहां रघुनाथजी सुन्दर चन्द्रमाके समान संसारको सुख देनेवाले और खलरूपी कमलके लिये तुषार (पाले) के समान प्रकट हुए (खलको कमल और रामजीको चन्द्रमाके तुल्य कहनेका यह तात्पर्य है कि चन्द्रमा और कमलका आपसमें वैर है) ॥ ५ ॥ सब रानियोंसहित राना दशरथको सुकृति और अच्छे २ मंगलोंकी मूर्ति जानकर–॥ ६ ॥

---

* संभावनालंकार.

---

(१) अयोध्यापुरीकी बड़ी महिमा है. यह सातों पुरियोंमें मुख्य है. यथा="अयोध्या मथुरा माया काशी कांची अवन्तिका । पुरी द्वारावती ज्ञेया सप्तैता मोक्षदायकाः ॥१॥" ये सातों पुरी विष्णु गुणवती भगवान्‌के अंगमें विराजमान हैं औ वहांभी अयोध्या मस्तकमें है. जैसा लिखा है="विष्णोः पाद अवन्तिका गुणवती मध्ये च कांचीपुरी नाभौ द्वारवती वदन्ति हृदये मायापुरी योगिनः । ग्रीवामूल उदाहरंति मथुरां नासाग्रवाराणसीमेतद्ब्रह्मपदं वदन्ति मुनयोऽयोध्यापुरी मस्तके ॥ १ ॥" अर्थ सीधा है. (२) जब अयोध्यामें रामचन्द्रजीका राज्य था तब एक दिन किसी धोबीकी स्त्री अपने पतिके विनापूछे पिताके घर गई और तीन दिन पीछे आई. तब वह उसे देख बड़ा क्रोधित हुआ और बोला कि मैं राम नहीं हूं कि जिन्होंने सीताको ११ महीने रावणके यहां रहनेपरभी रानी बनालिया. उस धोबीके वचनसे रामने लज्जित हो सीताजीको वनवास दिया और धोबीसे प्रसन्न हो उसे वैकुंठ पहुंचाया ॥

करौं प्रणाम कर्म मन वानी ❀ करहु कृपा सुत सेवक जानी ॥ ७ ॥
जिनहिं विरचि बढ़ भयउ विधाता ❀ महिमाअवधि राम पितुमाता ॥ ८ ॥

कर्म, मन और वाणीसे प्रणाम करताहूं, मुझे अपना पुत्र और सेवक जानकर कृपा करो ॥ ७ ॥ जिनको रचकर विधातानेभी बड़ाई पाई. क्योंकि रामजीके मातापिता महिमाकी हद हैं अर्थात् जब साक्षात् परमेश्वर रामचन्द्रजीके मातापिता हैं तौ फिर इससे बढ़कर क्या होता! ॥ ८ ॥

सो०–वंदौं अवध भुआल, सत्य प्रेम जेहि रामपद ॥ ❀
बिछुरत दीनदयाल, प्रिय तनु तृणइव परिहरेउ ॥ ९ ॥* ❀

अब राजा दशरथजीकी वन्दना करताहूं कि जिनका रघुनाथजीके चरणोंमें सच्चा प्रेम है कि दीनदयाल रामजीके बिछुड़तेही अपने प्यारे शरीरको तृणके समान छोड़ दिया ॥ ९ ॥

चौ०–प्रणवौं परिजनसहित विदेहू ❀ जाहि रामपद गूढ़ सनेहू ॥ १ ॥
योग भोग महँ राखेउ गोई ❀ राम विलोकित प्रगटेउ सोई ॥ २ ॥

परिजन सहित राजा विदेहको प्रणाम करताहूं जिनका रामजीके चरणोंमें गुप्त स्नेह है ॥ १ ॥ उस स्नेहको योग और भोगमें छुपा कर रक्खा था सो वह रामजीको देखतेही प्रकट हो गया ॥२॥

प्रणवौ प्रथम भरतके चरणा ❀ जासु नेम व्रत जाइ न वरणा ॥ ३ ॥
रामचरणपंकज मन जासू ❀ लुब्ध मधुपइव तजै न पासू ॥ ४ ॥

प्रथम भरतजीके चरणोंको प्रणाम करताहूं कि जिनका नेम और व्रत वर्णन नहीं किया जाता ॥ ३ ॥ रघुनाथजीके चरणकमलोंमें जिनका मन लोभी भौंरेके समान उनकी निकटता नहीं तजता है ॥ ४ ॥

बंदौं लक्ष्मण पदजलजाता ❀ शीतल सुभग भक्तसुखदाता ॥ ५ ॥
रघुपतिकीरति विमल पताका ❀ दंडसमान भएउ यश जाका ॥ ६ ॥

पुनि लक्ष्मणजीके चरणकमलोंकी वन्दना करताहूं कि जो शीतल सुन्दर और भक्तोंको सुख देनेवाले हैं ॥५॥ रघुनाथजीकी कीर्ति विमल पताकाके समान है उसमें उनका यश दंडके समान हुआ ॥६॥

शेष सहस्रशीस जगकारन ❀ जो अवतरेउ भूमिभयटारन ॥ ७ ॥
सदा सो सानुकूल रहु मोपर ❀ कृपासिंधु सौमित्रि गुणाकर ॥ ८ ॥

हजार शिरवाले शेषनागजीने संसारमें भूमिका भार दूर करनेके लिये अवतार लिया है ॥ ७ ॥ सर्वदा वे कृपाके समुद्र, गुणोंकी खान सुमित्रानन्दन मेरेऊपर अनुकूल रहो ॥ ८ ॥

रिपुसूदनपदकमल नमामी ❀ शूर सुशील भरतअनुगामी ॥ ९ ॥
महावीर विनवौं हनुमाना ❀ राम जासु यश आपु बखाना ॥ १० ॥

शत्रुघ्नजीके चरणकमलोंको नमस्कार करताहूं कि जो शूर, सुशील और भरतजीके आज्ञाकारी हैं ॥ ९ ॥ महावीर हनुमानजीको प्रणाम करताहूं कि जिनका यश रघुनाथजीने आप वर्णन किया ॥१०॥

---

* पूर्णोपमा.

---

(१) जैसा कहाहै कि—चौपाई–"सहज विरागरूप मन मोरा । थकित होत जिमि चन्द्रचकोरा ॥ १ ॥ इनहिं देख मन अति अनुरागा । वर वस ब्रह्मसुखहिं मन त्यागा ॥". (२) "सुन कपि तोहि समान उपकारी । नहिं कोउ सुर नर मुनि तनुधारी ॥"

सो०–वंदौं पवनकुमार, खलवनपावक ज्ञान घन ॥ ❀
जासु हृदय आगार, बसहिं राम शरचापधर ॥ १० ॥* ❀

पवनपुत्रकी वन्दना करताहूं, कि जो दुष्टोंके वनके लिये अग्निके समान हैं और ज्ञानके समूह हैं और जिनके हृदयरूपी घरमें धनुषबाणको धारण करें रामजी विराजमान हैं ॥ १० ॥

चौ०–कपिपति ऋक्ष निशाचर राजा ❀ अंगदादि जे कीशसमाजा ॥ १ ॥
वंदौं सबके चरण सुहाये ❀ अधम शरीर राम जिन पाये ॥ २ ॥

पुनि वानरोंके पति सुग्रीव और रीछोंके स्वामी जामवन्त तथा राक्षसोंके राजा विभीषण और अंगद आदि और वानरोंके समाज ॥ १ ॥ इन सबके सुन्दर चरणोंकी वन्दना करताहूं कि जिन्होंने अधम शरीर पाकर रघुनाथजीको पाया ॥ २ ॥

रघुपतिचरणउपासक जेते ❀ खग मृग सुर नर असुर समेते ॥ ३ ॥
बंदौं पदसरोज सबकेरे ❀ जे बिनुकाज रामके चेरे ॥ ४ ॥

जितने रामजीके चरणोंके उपासक गरुड़, काग भुशुंडि पक्षी, मृग, देवता और मनुष्य, राक्षस हैं इनसमेत ॥ ३ ॥ इन सबके चरणकमलोंको प्रणाम करताहूं कि जो बिनाकाज रामजीके दास हैं ॥ ४ ॥

शुक सनकादि आदि मुनि नारद ❀ जे मुनिवर विज्ञानविशारद ॥ ५ ॥
प्रणवौं सबहिं धरणि धरि शीशा ❀ करहु कृपा जन जानि मुनीशा ॥ ६ ॥

शुकदेवजी, सनक, सनन्दन, सनातन, सनत्कुमार, नारदमुनि और जो मुनियोंमें श्रेष्ठ विशेष ज्ञानी पण्डित हैं ॥ ५ ॥ उन सबको भूमिपर शिर नवाय प्रणाम करताहूं. हे मुनीश्वरो! मुझे अपना जन जान कृपा करिये ॥ ६ ॥

जनकसुता जगजननि जानकी ❀ अतिशय प्रिय करुणानिधानकी ॥ ७ ॥
ताके युगपदकमल मनाऊँ ❀ जासु कृपा निरमल मति पाऊँ ॥ ८ ॥

जनकनन्दिनी, जगतकी माता, करुणानिधान, श्रीरघुनाथजीकी अत्यन्त प्यारी जो जानकीजी हैं ॥ ७ ॥ उनके दोनों चरणकमलोंको मनाताहूं. कि जिनकी कृपासे निर्मल बुद्धि पाउँ ॥ ८ ॥

पुनि मन बचन कर्म रघुनायक ❀ चरणकमल वंदौं सब लायक ॥ ९ ॥
राजिवनयन धरें धनु सायक ❀ भक्तविपतिभंजन सुखदायक ॥ १० ॥

फिर मैं मन वाणी कर्मसे श्रीरामचंद्रजीके चरणकमलोंकी वन्दना करताहूं. जो सबलायक हैं ॥ ९ ॥ (कैसे हैं रामजी कि) कमलके समान नेत्रवाले, धनुषबाण लिये, भक्तोंके दुखको नाश करनेवाले और सुखके दाता हैं ॥ १० ॥

दो०–गिरा अर्थ जलबीचिसम, कहियत भिन्न न भिन्न ॥ ❀
वंदौं सीता रामपद, जिनहिं परम प्रिय खिन्न ॥ २४ ॥† ❀

जैसे वाणी और अर्थ ये दोनों जल और उसकी तरंगके समान कहनेमें जुदे हैं किन्तु यथार्थमें

---

* रूपक. † उपमादृष्टान्तअलंकार.

(१) अन्य देवता आदिकोंकी प्रार्थना करनेपर भी रामचरित्र जाननेके लिये जानकीजीकी इस लिये प्रार्थना करी कि जितना भेद रामजीका यह जानती हैं इतना दूसरे नहीं जानते.

जुदे नहीं हैं. इसी प्रकार सीता और रामजीको एक मानकर उनके चरणोंको नमस्कार करताहूं कि जिनको दुखी वहुत प्यारे हैं ॥ २४ ॥ अथ रामनामवंदना.

चौ०–वंदौं रामनाम रघुवरके ❀ हेतु कृशानुभानुहिमकरके ॥ १ ॥
विधि हरि हरमय वेद प्रानसे ❀ अगुण अनूपम गुणनिधानसे ॥ २ ॥

श्रीरघुकुलमें श्रेष्ठ ऐसे रामके नामकी वन्दना करताहूं कि जो कृशानु (अग्नि) भानु (सूर्य) और हिमकर (चंद्रमा) के कारण हैं ॥१॥ फिर रामनाम कैसा है कि, विधि कहिये ब्रह्मा, हरि कहिये विष्णु और हर कहिये महादेव मय एकरूप हो रहाहै, अर्थात् रकार विधिमय, अकार हरिमय और मकार हरमय है और पुनि वेदका प्राण है. क्यौं कि वेदका मूल जो ओंकार है वह रामनामसे ही निकला है और निर्गुण उपमारहित वो गुणका निधान है ॥ २ ॥

महामंत्र जोइ जपत महेशू ❀ काशीमुक्तिहेतु उपदेशू ॥ ३ ॥
महिमा जासु जान गणराऊ ❀ प्रथम पूजियत नाम प्रभाऊ ॥ ४ ॥

जिस रामनाम महामंत्र[3]को शिवजी जपते हैं और जिसका उपदेशही, काशीमें मुक्तिका कारण है ॥३॥

---

(१) रघुवरके कहनेसे परशुराम आदिकोंका निषेध किया है. यह रामका नाम कैसा है? जिसमें रकार कृशानु कहिये अग्निका वीज है और उसका गुण यह है कि वह शुभाशुभ कर्मको भस्म कर देता है और जो रकारमें आकार है वह भानु कहिये सूर्यका वीज है इसका गुण मोहान्धकारको नाश करना है, मकारमें चन्द्रवीज है इसका गुण तीन प्रकारके संतापोंको मिटाकर शीतल करना है और रामनाम वैराग्य, ज्ञान और भक्तिका हेतु है; क्यौंकि रकार वैराग्यका हेतु है. कारण, कर्मवासनारूपी काठको भस्म करनेके लिये अग्निरूप है और अकार ज्ञानका हेतु है. क्यौंकि मोहरूपी अंधकारको नाश करनेके लिये सूर्यरूप है और मकार भक्तिका हेतु है. क्यौंकि जीवका संताप मिटानेके लिये चन्द्ररूप है. जैसा महारामायणमें लिखा है कि–

"रकारोऽनलवीजं स्यात् थे सर्वे वड़वादयः । कृत्वा मनोमलं सर्वं भस्म कर्म शुभाशुभम् ॥ १ ॥
आकारो भानुवीजं स्यात् वेदशास्त्रप्रकाशकः । नाशयत्येव सो दीप्त्या हृत्स्थमज्ञानजं तमः ॥ २ ॥
मकारश्चन्द्रवीजं स्याद्यदपां परिपूरणम् । त्रैतापं हरते नित्यं शीतलत्वं करोति च ॥ ३ ॥
वैराग्यहेतुः परमो रकारः कथ्यते बुधैः । आकारो ज्ञानहेतुश्च मकारो भक्तिहेतुकः ॥ ४ ॥

यदि कहो कि रामनाम कृशानु, भानु और हिमकरका कैसे कारण भया? तहां कहते हैं कि, जो कृशानुमें रकार न हो तो कशानु, भानुमें आकार न हो तौ भनु होजाय और हिमकरमें मकार न हो तौ हिकर हो जाय ॥ "और यद्यपि अग्नि सूर्य चन्द्रके और २ भी नाम हैं, परन्तु प्रसंगके अनुकूल इनही नामोंका धरना यह गुसांईजीकी निर्मल बुद्धिका उदाहरण है, क्यौंकि जब इन नामोंमेंसे वीज निकल जाँय तौ ये निरर्थक हो जाते हैं" ॥ यदि कहो कि ईश्वरके तो अनेक नाम हैं फिर रामनामकीही वंदना क्यौं करी? तहां कहते हैं कि यह सब नामोंका आत्मारूप है. जैसा शंकरने पार्वतीजीसे कहा है कि–"परमेश्वरनामानि सन्त्यनेकानि पार्वति । परंतु रामनामेदं सर्वेषामुत्तमोत्तमम् ॥ १ ॥ नारायणादिनामानि कीर्त्तनानि वहून्यपि । आत्मा तेषां च सर्वेषां रामनामप्रकाशकः ॥ २ ॥"

(२) "रामनाम्नः समुत्पन्नः प्रणवो मोक्षदायकः । रूपं तत्त्वमसेश्चासौ वेदतत्वाधिकारिणः ॥" अर्थात् राम नामसे उत्पन्न हुआ ओंकार मोक्षका दाता है और वेदके अधिकारीको तत्त्वमसिरूप है ॥ १ ॥

(३)अध्यात्मरामायणे–"अहो भवन्नाम जपन् कृतार्थो वसामि काश्यामनिशं भवान्या । मुमूर्षमाणस्य विमुक्तयेऽहं दिशामि मंत्रं तव राम नाम ॥ १ ॥" महादेवजी रामचन्द्रसे कहते हैं कि, मैं आपका नाम जपता हुआ पार्वतीजीसहित काशीमें रहताहूं और मरते हुये प्राणीको मुक्तिके लिये हे राम! तुमारा नाम मैं उसे उपदेश करताहूं ॥ १ ॥

काशीखण्डे–"पेयं पेयं श्रवणपुटके रामनामाभिरामं ध्येयं ध्येयं मनसि सततं तारकं ब्रह्मरूपम् । जल्पन् जल्पन् प्रकृतिविकृतौ प्राणिनां कर्णमूले वीथ्यां वीथ्यामटति जटिलः कोपि काशीनिवासी ॥ २ ॥" अर्थात् कोई काशीनिवासी जटाधारी प्राणियोंके कानमें गली गली यह कहता फिरता है कि सुन्दर रामनाम वारंवार सुनना चाहिये और मनमें वारंवार निरंतर उसीका ध्यान करना चाहिये, कि जो तारकमंत्रके समान है और साक्षात् ब्रह्मस्वरूप है.

और जिसकी महिमा गणेशजी जानते हैं. कि जिसके प्रभावसे उनकी प्रथम पूजा होती है ॥ ४ ॥

जान आदिकवि नामप्रतापू ❀ भयउ सिद्ध करि उलटा जापू ॥ ५ ॥
सहसनाम सम सुनि शिववानी ❀ जपि जेंई पिय संग भवानी ॥ ६ ॥

आदिकवि वाल्मीकिजी भी नामका प्रताप जानते हैं कि जिसका उलटा जप अर्थात् मरा मरा जपते २ सिद्ध हो गये ॥५॥ यह मंत्र सहस्र नामके समान है. शिवजीकी ऐसी वाणी सुनकर और राम इस मंत्रको जपकर पार्वतीजी शिवजीके साथ भोजन करनेको बैठीं ॥ ६ ॥

हरषे हेतु हेरि हरहीकौ ❀ किय भूषण तिय भूषण तीकौ ॥ ७ ॥
नाम प्रभाउ जान शिवनीके ❀ कालकूट फल दीन्ह अमीके ॥ ८ ॥

शिवजी पार्वतीके हृदयकी प्रीतिको देखकर प्रसन्न हुए और उनको ब्रह्मांडकी सब स्त्रियोंकी शिरोमणि करके अपने अंगकी भूषण अर्थात् अर्धांगिनी बना ली ॥ ७ ॥ रामनामका प्रभाव शिवजीही अच्छे प्रकारसे जानते हैं. जिसके प्रभावसे विषने उन्हे अमृतका फल दिया ॥ ८ ॥

दो०–बरषाऋतु रघुपति भगति, तुलसी शालिसुदास ॥ ❀
रामनाम बर बरण युग, श्रावण भादौं मास ॥ २५ ॥* ❀

श्रीरघुनाथजीकी भक्ति वर्षाऋतु है और परम भक्त तुलसीदास धान हैं और रामनाम ये सुन्दर दो अक्षर श्रावण और भादों मास हैं ॥ २५ ॥

---

* रूपक.

---

(१) ब्रह्माजीने सब देवताओंसे पूछा कि, प्रथम पूजनेयोग्य कौन है ? यह सुन वे परस्पर तर्क करने लगे, तब ब्रह्मा बोले कि जो कोई पृथ्वीकी प्रदक्षिणा पहिले कर आवेगा उसको हम यह पद देंगे. यह सुन सब देवता अपने २ वाहनपर चढ़ चले और गणेशजी चूहेपर चलेथे सो पीछे रह गये. तब मनमें दुखी हुए, इतनेहीमें उन्हें नारदजी मिले उन्होंने यह युक्ति बताई कि पृथ्वीमें रामका नाम लिख परिक्रमा करो और पितामहके पास चले जाओ. निदान उन्होंने ऐसाही किया. इस रीतिसे यह पहिले आये और सब देवता इनके पीछै. तब ब्रह्माजीने रामनामकी महिमा जान प्रथम पूजनीय गणेशजीकोही किया.

इसी प्रकार एकवार शिवजीने स्कंद और गणेशजीसे कहाथा. तबभी गणेशजी रामनामकी युक्तिसे स्कंदसे पहिले पहुंचे और प्रथम पदके अधिकारी हुए.

(२) एक दिन शिवजी भोजन करने बैठे उस समय उन्होंने पार्वतीजीको बुलाया कि आइये भोजन जिये यह सुन उन्होंने कहा कि मैंने अभी विष्णुसहस्रनामका पाठ नहीं किया पाठ करके आऊंगी तब होंने कहा कि, ‘रामरामेति रामेति रमे रामे मनोरमे ॥ सहस्रनाम तत्तुल्यं रामनाम वरानने ॥’ अर्थात् वरानने ! रामका एकवार नाम विष्णुसहस्रनामके तुल्य है. यह सुन पार्वतीजी रामका नाम ले भोजन करने लगीं. तब महादेवजीने उनको अपने वचनोंपर आरूढ़ देख बड़ी प्रीति करी और उन्नोंको पतिव्रताशिरोमणि कर अपने अंगमें अर्धांगी कर लिया. (३) जैमिनिपुराणमें व्यासजीका वाक्य है. यथा–“रामनाम परं ब्रह्म सर्वदेवप्रपूजितम् । महेश एव जानाति नान्यो जानाति वै मुने ॥ १ ॥” अर्थ सीधा है. (४) विष जब कच्छावतार लेकर समुद्र मथा, तब उसमेंसे चौदह रत्न निकले। उनको प्रत्येककी इच्छानुसार बांट न्तु जब वह हलाहल निकला और उसकी उष्णतासे देवता जलने लगे, तब हाहाकार कर पुकारे कि हे शंकर ! हमें बचाओ, नहीं तो क्षणमात्रमें सब जले जाते हैं. निदान शिवजीने दया विचार रामका नाम ले उस विषको पीलिया कि जो कंठमें पहुंचतेही अमृत होगया ॥ (५) तुलसीदासजीने अपनेको धानकी उपमा इसलिये दी है कि धान वर्षाऋतुके विना नहीं होता, और गेहूं आदि अनाज तो कुआ पोखरसेभी होजाते हैं. अतएव गुसांईजीरूपी भक्तको केवल श्रावण भादोंरूपी “राम” इन दो अक्षरोंकाही भरोसा है.

चौ०–अक्षर मधुर मनोहर दोऊ ꕥ बरण विलोचन जनजिय जोऊ ॥ १ ॥
सुमिरत सुलभ सुखद सबकाहू ꕥ लोक लाहु परलोक निवाहू ॥ २ ॥

रकार मकार दोनों अक्षर मधुर और मनोहर हैं वे वर्णोंके नेत्र हैं. अर्थात् सब अक्षरोंके ऊपर रहते हैं और भक्तजनोंके हृदयके नेत्र हैं अर्थात् जिसके यह हियके नेत्र नहीं, वह अंधा परमेश्वरको कैसे देख सकता है? ॥ १ ॥ स्मरण करनेसे सबको सुलभ हैं अर्थात् जपनेमें क्लेश नहीं होता और सुखके देनेवाले हैं और संसारमें लाभ और परलोकमें निर्वाह करतेहैं अर्थात् मोक्षके देनेवाले हैं ॥ २ ॥

कहत सुनत सुमिरत सुठिनीके ꕥ राम लखनसम प्रिय तुलसीके ॥ ३ ॥
बरणत वरण प्रीति बिलगाती ꕥ ब्रह्मजीव सम सहज सँघाती ॥ ४ ॥

कहने सुनने समझनेमें (ये दोनों अक्षर रकार मकार) विशेष सुन्दर हैं और मुझ तुलसीदासको तो रामलक्ष्मणके समान प्यारे हैं ॥ ३ ॥ दोनों अक्षरोंके वर्णन करनेमें प्रीति अलग नहीं है, क्योंकि वह ब्रह्मजीवके समान स्वभावहीसे मिली हैं ॥ ४ ॥

नरनारायणसरिस सुभ्राता ꕥ जगपालक विशेषि जनत्राता ॥ ५ ॥
भक्ति सुतिय कल करण विभूषण ꕥ जगहितहेतु विमल विधु पूषण ॥ ६ ॥

ये दोनों अक्षर नरनारायणके समान सुन्दर भाई हैं, संसारके पालक और विशेष करके मनुष्योंके रक्षक हैं ॥ ५ ॥ भक्तिरूपी सुन्दर कामिनीके कर्णोंके भूषण अर्थात् झूमके हैं. और संसारके हितके लिये निर्मल चन्द्रमा और पूषण कहिये सूर्यके समान हैं ॥ ६ ॥

स्वादुतोषसम सुगति सुधाके ꕥ कमठशेषसम धर वसुधाके ॥ ७ ॥
जनमनमंजुकंज मधुकरसे ꕥ जीह जसोमति हरि हलधरसे ॥ ८ ॥

पुनि ये दोनों अक्षर सुन्दर मुक्तिरूप अमृतके[1] स्वाद और उससे तृप्ति होजानेके समान हैं और कछुए और शेषनागके समान दोनों पृथिवीको धारण करनेवाले हैं. क्योंकि रकार ब्रह्मरूप होनेसे ब्रह्मरूपके समान निराधार है और मकार जीवरूप है. अतएव जैसे जीवका आधार ब्रह्म है ऐसेही शेषनागका आधार कच्छप है. इसलिये इन दोनोंके समान ब्रह्म और जीवरूप रकार मकार पृथिवीको धारण किये हैं ॥ ७ ॥ संतजनोंके मनरूपी सुन्दर कमलके[2] लिये (दोनों अक्षर) भ्रमर हैं अर्थात् जैसे कमलपरसे भ्रमर नहीं हटता, वैसेही ये दो अक्षरभी सन्तजनोंके चित्तमें रहते हैं और जिव्हारूपी यशोदाको श्रीकृष्ण[3] और बलरामके समान प्रिय है ॥ ८ ॥

दो०–एक छत्र एक मुकुटमणि, सब बरणन पर जोउ ॥
तुलसी रघुबर नामके, बरण बिराजत दोउ ॥ २६ ॥*

---

* दृष्टान्त.

---

(१) रकारके, उच्चारणके लिये जब मुख खुलता है तब अमृतका स्वाद और मकारके लिये जब बंद होता है तब अमृतपानसे तृप्ति होनेका स्वाद आता है. तुलसीदासका अन्य दोहाभी इसको पुष्ट करता है यथा="तुलसी" "र"के कहतही निकसत पापपहार ॥ फिर आवन पावत नहीं देत मकार किवार (२) यहां एक संदेह होता है कि मधुकर शब्द भौंरेकेविषे करैं तौ भ्रमर एक है और कमलको दुःख देनेवाला है. ये अक्षर दो हैं और सन्तजनोंके मनको सुखदाता होने चाहियें इसलिये मधुका अर्थ जल किया और कर शब्दसे सूर्यकी किरणोंका अर्थ किया तौ यह अर्थ हुआ कि संतजनोंके मनरूपी सुन्दर कमलको जल और सूर्यकिरणके समान सुखदायी हैं. (३) अर्थात् जैसे जसोदाके आंगनमें कृष्ण बलराम खेलतेथे वैसेही यहां जिव्हा मानो यशोदा है मुख मानो आंगन है उसमें रकार मानों कृष्ण, मकार मानों बलराम खेलते हैं.

तुलसीदासजी कहते हैं कि देखो रघुनाथजीके नामके दो अक्षरोंमेंसे रकार (जलतुम्बिकान्यायसे अर्थात् जैसे जलके उपर तोंवा तैरता है) छत्रके (१) समान सब अक्षरोंके शिरपर और मकार 'मोनुस्वारः' इस सूत्रसे दिव्य मुकुट मणिके समान सब वर्णोंपर विराजमान है ॥ २६ ॥

चौ०–समुझत सरस नाम अरु नामी ❀ प्रीति परस्पर प्रभु अनुगामी ॥ १ ॥
नाम रूप दोउ ईश उपाधी ❀ अकथ अनादि सु सामुझि साधी ॥ २ ॥

समझनेमें नाम और नामी कहिये स्वरूप ये समान हैं और इनकी प्रीति ऐसी है कि जैसे प्रभुकी सेवकपर और सेवककी स्वामीपर ॥ १ ॥ नाम और रूप दोनों ईश्वरकी उपाधि अर्थात् माया है, क्योंकि जबतक मायाका ग्रहण न होगा तबतक नाम और रूप कुछ नहीं है, और जब ईश्वर मायाको ग्रहण करता है तब संसारमें नाम और रूपमय हो जाता है. यद्यपि नाम कहनेमें नहीं आता और रूपका आदि नहीं मिलता, परंतु केवल जगत्के नाम और रूपको कहते हैं और ईश्वरका नाम और रूप नित्य है ॥

दूसरा अर्थ यह है–नाम और रूप ईश अर्थात् समर्थ हैं और उपाधि कहिये समीप रहनेवाले हैं. तहां नाम अकथ है और रूप अनादि है और श्रेष्ठ बुद्धिसे जाने जाते हैं ॥ २ ॥

को बड़ छोट कहत अपराधू ❀ सुनि गुण भेद समुझिहैं साधू ॥ ३ ॥
देखिय रूप नामआधीना ❀ रूपज्ञान नहिं नामविहीना ॥ ४ ॥

नाम और रूपमें कौन छोटा है कौन बड़ा है ऐसा कहनेसे अपराध होता है, इसलिये साधु लोग गुणोंका भेद सुनकर आप समझ लेंगे ॥ ३ ॥ रूप नामके आधीन है ऐसा देखा जाता है, क्योंकि रूपका ज्ञान बिना नामके नहीं होता है ॥ ४ ॥

रूप विशेष नाम विनु जाने ❀ करतलगत न परहिं पहिचाने ॥ ५ ॥
सुमिरिय नाम रूपबिनु देखे ❀ आवत हृदय सनेह विशेषे ॥ ६ ॥

बिना नामके जाने हथेलीपर धरा हुआभी पदार्थ (रूप विशेष) नहीं दहिचान पड़ताहै ॥५॥ रूपके विना देखेंभी नामके स्मरण करनेसे हृदयमें स्नेह अधिक हो जाताहै ॥ ६ ॥

नामरूपगति अकथ कहानी ❀ समुझत सुखद न परति बखानी ॥ ७ ॥
अगुण सगुण बिच नाम सुसाखी❀ उभय प्रबोधक चतुर दुभाखी ॥ ८ ॥

नाम और रूपकी गतिकी कथा कही नहीं जासकती. समझनेमें सुखकी देनेवाली है पर उस सुखका बखान नहीं होसकताहै ॥७॥ निर्गुण और सगुण इन दोनोंके बीचमें नामही एक सच्चा साक्षी (गवाह) है क्योंकि दोनोंका समझानेवाला और चतुर दुभाषिया अर्थात् दोनों ओरकी

) महारामायणे–"निर्वर्णं रामनामेदं केवलं च स्वराधिकम् । सर्वेषां मुकुटं छत्रं मकारोरेफव्यंजनम् र्थात् अकेला रामनाम बड़ा अद्भुत है और सब स्वरोंका स्वामी है, एक तौ सब अक्षरोंका मुकुट ौर दूसरा छत्र है ॥ पुनि कहा है कि–"यन्नामसंसर्गवशाद्विवर्णौ नष्टस्वरौ मूर्ध्निगतौ स्वराणाम् । तद्रामपादौ हृदये निधाय देही कथं नोर्ध्वगतिं प्रयाति ॥२॥' अर्थात् जिसके नामके संसर्गसे दो अक्षर स्वर नष्ट होतेही स्वरोंके सिरपर चले जाते हैं ऐसे रामजीके पदोंको हृदयमें रखनेसे प्राणी ऊर्ध्वगतिको क्यौं नहीं पहुंचैगा ? (२) सारांश यह है कि जैसे सेवक स्वामीके आधीन होता है वैसेही नामके आधीन नामी है और नाम नामीके आधीन है अर्थात् जब किसीका नाम लोगे तब वह आजायगा. जैसा आगे कहाभीहै कि–"देखियरूप राम आधीना " यहां कौन सेवक और कौन स्वामी है सो न जानना ॥ जैसा गीतामें कहाहै कि–"यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति" और "ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् ॥". (३)जैसे किसीको कोई लाल रत्न मिला उसने रूप तौ देख लिया कि लाल है परन्तु उसका ज्ञान नहीं भया कि क्या है ? पर जब किसीने बताया कि यह माणिक है तव उसको ज्ञान हुआ कि यह तो अमूल्य रत्न है अतएव नामविना रूपका ज्ञान नहीं.

कहनेवाला है जैसे रामशब्द रमनेवाले और रमानेवाले दोनोंका अर्थवाची है तहां रमनेवाला निर्गुण और रमानेवाला सगुण है ॥ ८ ॥

दो०-राम नाम मणिदीप धरु, जीह देहरी द्वार ॥
तुलसी भीतर बाहिरौ, जो चाहसि उजियार ॥ २७ ॥*

तुलसीदास कहते हैं कि, जो तू बाहर और भीतर उजियाला चाहता है, तो रामनामरूपी मणि दीपकको जीभरूपी देहलीके[1] द्वारपर धर ॥ २७ ॥

चौ०-नाम जीह जपि जागहिं योगी ❀ बिरति बिरंचि प्रपंच वियोगी ॥ १ ॥
ब्रह्मसुखहिं अनुभवहिं अनूपा ❀ अकथ अनामय नाम न रूपा ॥ २ ॥

योगी जीभसे नाम जपकर संसारको वैराग्यसे त्यागकर मोहरूपी रातमें जागते हैं ॥१॥ जागनेसे वे उस ब्रह्मानन्द सुखका अनुभव करतेहैं कि जो उपमारहित, अकथनीय, रोगरहित है और जिसका नाम और रूप नहीं है ॥ २ ॥

जाना चहहिं गूढ़गति जेऊँ ❀ नाम जीह जपि जानहिं तेऊँ ॥ ३ ॥
साधक नाम जपहिं लय लाये ❀ हौंहि सिद्ध अणिमादिक पाये ॥ ४ ॥

जो गूढ़ गतिको जानना चाहते हैं तौ वे नामको जीभसे जपकर जानतेहैं, जैसे प्रहलाद आदि ॥ ३ ॥ जो साधक नामको मन लगाकर जपते हैं वे अणिमा आदि आठ सिद्धियां पाकर सिद्ध हो जाते हैं (ये अर्थार्थी भक्त हुए जैसे सुग्रीव, बिभीषण आदि) ॥ ४ ॥

जपहिं नाम जन आरतभारी ❀ मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी ॥ ५ ॥
रामभक्त जग चारिप्रकारा ❀ सुकृती चारिउ अनघ उदारा ॥ ६ ॥

महा दुखी मनुष्य जो नामको जपते हैं उनके संकट मिट जाते हैं और वे सुखी होते हैं. (ये आरत भक्त गज, द्रौपदी आदि हुए) ॥५॥ संसारमें रामजीके भक्त चार[2] प्रकारके हैं (अर्थात् १ जिज्ञासु, २ अर्थार्थी, ३ आरत, ४ ज्ञानी) और वे चारों पुण्यात्मा, पापहीन और उदार हैं ॥ ६ ॥

चहुँ चतुरनकहँ नाम अधारा ❀ ज्ञानी प्रभुहिं विशेष पियारा ॥ ७ ॥
चहुँयुग चहुँश्रुति नाम प्रभाऊ ❀ कलि विशेष नहिं आन उपाऊ ॥ ८ ॥

चारों चतुर जनोंको नामका आधार है, इनमें प्रभु रघुनाथजीको ज्ञानी विशेष प्यारा है ॥ ७ ॥ चारों युग और चारों वेदमें नामका प्रभाव है. किन्तु कलियुगमें[3] विशेष करके नामको छोड़ अन्य उपाय नहीं है ॥ ८ ॥

दो०-सकल कामनाहीन जे, राम भक्तिरस लीन ॥
नाम सप्रेम पियूष ह्रद, तिनहु किये मनमीन ॥ २८ ॥†

जो सब कामना ओंसें (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष आदि) हीन हैं और रामकी भक्तिके रसमें लीन हैं, उन्होंनेभी रामनामरूपी सुन्दर प्रेमके अमृतकुण्डमें अपने मनको मछली बनाया है ॥२८॥

* रूपक. † रूपक.

---

(१) इससे भीतरके चित्त, बुद्धि, मन, अहंकारका और बाहरकी दशों इन्द्रियोंका अंधकार दूर हो जायगा ॥ मणिदीपक इसलिये कहा कि विषयरूपी पवनकी बाधा न हो, जैसा कहाहै कि-"आवत देखी विषयबयारी." (२) "चतुर्विधा भजंते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन । आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ ॥ १ ॥ तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते । प्रियो हि ज्ञानिनोत्यर्थमहं स च मम प्रियः ॥ २ ॥" स्पष्टार्थ. (३) "रामेतिवर्णद्वयमादरेण सदा स्मरन्मुक्तिमुपैति जन्तुः । कलौ युगे कल्मषमानुषाणामन्यत्र धर्मे खलु नाधिकारः ॥ १ ॥" स्पष्टार्थः.

चौ०–अगुण सगुण दोउ ब्रह्मसरूपा ❀ अकथ अगाध अनादि अनूपा ॥ १ ॥
मोरे मत बड़ नाम दुहूते ❀ किय जेहि युग निज बस निज बूते ॥ २ ॥

निर्गुण और सगुण ये दोनों ब्रह्मके स्वरूप हैं और कहनेमें नहीं आते; अतिगंभीर हैं, आदिरहित और उपमारहित हैं॥ १॥ मेरे मतसे नाम दोनोंसे बड़ा है कि जिसने अपने बलसे दोनों निर्गुण और सगुणको वसमें किया है॥ २॥

प्रौढ़ सुजन जन जानहिं जनकी ❀ कहउँ प्रतीति प्रीति रुचि मनकी ॥ ३ ॥
एक दारुगति देखिय एकू ❀ पावक युगसम ब्रह्मविवेकू ॥ ४ ॥

बड़े चतुर जन जनोंके मनकी जानते हैं. मैं अपनी प्रतीति, प्रीति और मनकी रुचि कहताहूँ ॥३॥ ब्रह्मका विचार दो प्रकारका है, जैसे–अग्नि एक तो लकड़ीमें व्याप्त है और एक प्रत्यक्ष देखनेमें आती है (जो लकड़ीके भीतर है वह निर्गुण है और जो बाहर है वह सगुण है)॥ ४॥

उभय अगम युग सुगम नामते ❀ कहउँ नाम बड़ ब्रह्मरामते ॥ ५ ॥
व्यापक एक ब्रह्म अविनाशी ❀ सत चेतन घन आनँदराशी ॥ ६ ॥

निर्गुण और सगुण दोनोंके साधन कठिन हैं और नामसे दोनों सुगम हैं, परन्तु मैं ब्रह्म कहिये निर्गुण और राम कहिये सगुण इनसे नामको बड़ा कहताहूँ॥ ५॥ एक अविनाशी, सच्चिदानन्द, सर्वव्यापक आनन्दकी राशि परब्रह्म सबमें व्यापक है॥ ६॥

अस प्रभु हृदय अछत अविकारी ❀ सकल जीव जग दीन दुखारी ॥ ७ ॥
नाम निरूपण नाम यतनते ❀ सो प्रगटत जिमि मोल रतनते ॥ ८ ॥

ऐसा पूर्ण विकारहित प्रभु हृदयमें विराजमान है तौभी सब जीव जगत्में दीन और दुखी हैं. (क्योंकि वह पंचभूतजनित देहमें अपनापन मान रहाहै, अपने भीतर जो ब्रह्म है उसे नहीं पहिचानता; जो जाने तो दुखी न होय. क्योंकि जीवब्रह्म तौ आपसमें मिल रहे हैं)॥ ७॥ नामका निरूपण अर्थात् वास्तविक रूप नामके यत्न करनेपर ऐसे प्रगट हो जाता है कि जैसे रत्नसे मोल प्रगट होता है. (भाव यह है कि जैसे विनायत्न रत्नका मोल प्रगट नहीं होसकता तैसेही ब्रह्मका निरूपण नहीं होसकता. जब नामके जपनेमें यत्न करैगा तो हृदयमें ब्रह्म प्रगट होगा और तब जीव अपने स्वरूपको पहिचानेगा)॥ ८॥

दो०–निर्गुण ते इहिं भाँति बड़, नामप्रभाव अपार ॥* ❀
कहउँ नामबड़ रामतें, निज विचार अनुसार ॥ २९ ॥ ❀

इसभाँति निर्गुणसे नामका प्रभाव बड़ा और अपार है. अब अपने विचारके अनुसार रामसे नामको बड़ा कहताहूँ॥ २९॥

चौ०–राम भक्तहित नरतनुधारी ❀ सहि संकट किय साधु सुखारी ॥ १ ॥
नाम सप्रेम जपत अनयासा ❀ भक्त होहिं मुदमंगलवासा ॥ २ ॥

श्रीरघुनाथजीने भक्तोंके हितके लिये नररूप धारण किया और संकटको सहकर साधुओंको सुखी किया॥ १॥ जो नामको प्रेमसे जपते हैं वे भक्त अनायास हर्ष और मंगलके स्थान होजाते हैं॥ २॥

राम एक तापस तिअ तारी ❀ नाम कोटि खल कुमति सुधारी ॥ ३ ॥
ऋषिहित राम सुकेतुसुताकी ❀ सहित सेन सुत कीन्ह विवाकी ॥ ४ ॥

---

* व्यतिरेकालंकार.

श्रीरामजीने एक तपस्वीकी स्त्री (अहल्या) को तारदिया किन्तु नामने करोड़ दुष्टोंकी कुबुद्धिको सुधारा है ॥ ३ ॥ श्रीरघुनाथजीने (विश्वामित्र आदि) ऋपियोंके हितके लिये ताड़का और उसके पुत्र सुबाहु मारीच आदिकी सेनासहित बेबाकी करदी ॥ ४ ॥

सहित दोष दुख दासदुरासा ❀ दलइ नाम जिमि रवि निशिनासा ॥५॥
भंजेउ राम आपु भवशापू ❀ भवभयभंजन नामप्रतापू ॥ ६ ॥

दोष और दुःखसहित भक्तोंकी दुराशाको नाम इस प्रकार नाश कर देता है जैसे रात्रिके अंधकारको सूर्य; अथवा दास कहिये ईश्वरके परम भक्त जो ऋषि हैं उन्होंकी "दोष और दुःखरूप सुबाहु मारीचसहित" दुराशारूप ताड़काको मारकर ऐसा नष्ट कर दियाहै, जैसे सूर्य अंधकारको ॥ ५ ॥ रघुनाथजीने आप शंकरका धनुष तोड़ा है; परन्तु नामका प्रताप संसारके भय अर्थात् मरण, जीवन, आवागमन आदि दुःखका नाश करनेवाला है ॥ ६ ॥

दंडकवन प्रभु कीन्ह सुहावन ❀ जनमन अमित नाम किय पावन ॥ ७ ॥
निशिचरनिकर दलेउ रघुनंदन ❀ नाम सकल कलिकलुषनिकंदन ॥ ८ ॥

श्रीरामजीने दंडकवनकोही पवित्र किया और नामने अनेक जनोंके मनरूप वनोंको पवित्र किया ७ रामजीने राक्षसोंके समूहका नाश किया और नाम सब कलिके पापोंका नाश करनेवाला है ॥ ८ ॥

दो०–शबरी गिद्ध सुसेवकनि, सुगति दीन्ह रघुनाथ ॥*
नाम उधारे अमित खल, बेदविदित गुणगाथ ॥ ३० ॥

रघुनाथजीने शबरी (भीलनी) गिद्ध और अच्छे भक्तोंको मुक्ति दीनी और नामने अनेक दुष्टोंका उद्धार करदिया उनके गुणोंकी कथा वेदमें विदित है ॥ ३० ॥

चौ०–राम सुकंठ बिभीषण दोऊ ❀ राखे शरण जान सबकोऊ ॥ १ ॥
नाम अनेक गरीब निवाजे ❀ लोक वेद वर बिरद बिराजे ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीने सुग्रीव और बिभीषण इन दोनोंको शरणमें रक्खा यह बात सबही जानते हैं (अर्थात् सुग्रीवको सहायताके लिये और बिभीषणको भेद लेनेके लिये) ॥१॥ किन्तु नामने अनेक (अजामेल, गणिकाआदि) गरीबोंको तार दिया उनका सुन्दर यश लोक और वेदमें प्रगट है ॥ २ ॥

राम भालुकपिकटक बटोरा ❀ सेतुहेतु श्रम कीन्ह न थोरा ॥ ३ ॥
नाम लेत भवसिंधु सुखाहीं ❀ करहु बिचार सुजन मनमाहीं ॥ ४ ॥

श्रीरामजीने रीछ और वंदरोंका कटक एकत्र किया और पुल बांधनेके लिये कुछ थोड़ा श्रम नहीं किया अर्थात् बहुत श्रम किया ॥ ३ ॥ और नामके लेतेही संसाररूपी समुद्र सूख जाता है. हे सन्तजनो ! मनमें विचार करो ॥ ४ ॥

राम सकुल रण रावण मारा ❀ सीयसहित निजपुर पगधारा ॥ ५ ॥
राजा राम अवध रजधानी ❀ गावत गुण सुर मुनि वर वानी ॥ ६ ॥

रामजीने रणमें कुटुम्बसहित रावणको मारा और फिर सीतासहित अपनी नगरीमें चरण धरा ॥ ५ ॥ और राजा रामचन्द्रजीकी अवध राजधानी है कि जिसके गुण देवता और मुनि सुन्दर वाणीसे गाते हैं ॥ ६ ॥

---

* व्यतिरेकालंकार.

सेवक सुमिरत नाम सप्रीती ❀ बिनु श्रम प्रबल मोह दल जीती ॥ ७ ॥
फिरत सनेहमगन सुख अपने ❀ नाम प्रसाद शोच नहिं सपने ॥ ८ ॥

और जो सेवक प्रीतिसे नामका स्मरण करते हैं वे विनापरिश्रम बड़े बली मोहके दलको जीतते हैं ॥ ७ ॥ और नामके प्रसादसे स्नेहमें मगन हुए अपने सुखमें फिरते हैं, (उनको) सुपनेमेंभी सोच नहीं रहता ॥ ८ ॥

दो०–ब्रह्मरामतें नाम बड़, वरदायक वरदानि ॥*
रामचरित शतकोटि महँ, लिय महेश जिय जानि ॥ ३१ ॥

ब्रह्म (निर्गुण) और राम (सगुण) से नाम बड़ा है, वर देनेवाले ब्रह्माआदिकोभी वरदेनेवाला है; इसे सौ करोड़ रामायणोंका जीव जानकर महादेवजीने निकाला है ॥ ३१ ॥

चौ०–नामप्रसाद शंभु अविनाशी ❀ साज अमंगल मंगलराशी ॥ १ ॥
शुकसनकादि सिद्ध मुनि योगी ❀ नामप्रसाद ब्रह्मसुख भोगी ॥ २ ॥

नामके प्रसादसे शिवजी अविनाशी हैं और अमंगल (जो रुंडमाला, सर्प और स्मशानकी धूलि आदि हैं) इनके ठाठ करसें भी मंगलके समूह हैं ॥१॥ और शुक सनक आदि सिद्ध, मुनि और योगी नामके प्रसादसे ब्रह्मानन्दका सुख भोगते हैं ॥ २ ॥

नारद जानेउ नामप्रतापू ❀ जगप्रिय हरि हर हरि प्रियआपू ॥ ३ ॥
नाम जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू ❀ भक्तशिरोमणि भै प्रहलादू ॥ ४ ॥

नारदजीने नामका प्रताप जाना–क्योंकि शिवजी और विष्णुभगवान् जो जगत्को प्यारे हैं उन दोनोंको नारदजी प्यारे हैं ॥ ३ ॥ नामके जपतेही प्रभुने ऐसी प्रसन्नता प्रकट की कि प्रल्हादजी भक्तोंमें शिरोमणि होगये ॥ ४ ॥

ध्रुव सगलानि जपेउ हरिनामू ❀ पायेउ अचल अनूपम ठामू ॥ ५ ॥
सुमिरि पवनसुत पावन नामू ❀ अपने बशकरि राखेउ रामू ॥ ६ ॥

---

* व्यतिरेकालंकार.

(१) ऐसा लिखा है कि वाल्मीकिजीने शतकोटि रामायण लिखी तब शिवजीकेपास सुनानेके लिये ले गये और जब यह समाचार देवताओंको विदित हुए कि कैलासपर्वतपर रामायण होती है तब सब देवता सुननेके लिये वहां पहुंचे । शंकरने आदरसे उन्हें वहां बैठाया और एक वर्षमें कथा समाप्त हुई । कथा सुन सब देवता बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने शिवजीसे कहा कि रामायणमेंसे हम लोगोंकोभी भाग मिलै तो तीनों लोकमें प्रसिद्ध करैं. महादेवजीने प्रसन्न होकर ३३ कोटि ३३ लाख ३३ हजार ३३३ श्लोक और १० अक्षर ब्रह्मादि देवताओंको दीन्हें, सो वे लेकर स्वर्गको गये; और इतनेही शेषजीको दीन्हें सो पातालको लेगये और इतनाही भाग मुनियोंको दीन्हा सो सात द्वीप और नव खण्डोंमें बँट गया. अब केवल दो अक्षर (राम) रह गये इनके तीन भाग हो नहीं सक्तेथे. सो महादेवजीने लेकर अपने हृदयमें धरे–यह शंका मत करना कि जब सबका सार "राम" इन दो अक्षरोंको तौ शिवजीने लेलिया तो फिर रामायणमें क्या रहा? तहां कहते हैं कि रामायणका साधारण अर्थ है–रामका स्थान तौ जहां राम स्वयं विद्यमान हैं वहां नाम अवश्य है और रामायण सब राममय है. कोई ऐसी वस्तु नहीं है कि जिसमें ये दो अक्षर न हों. जैसा तुलसीदासजीने कहा है कि,–"नाम चतुर्गुण पंचयुत द्विगुणित वसुहृत शेष। रम्यौ राम सब जगतमें तुलसी यह मति लेष."

(२) प्रल्हादजी राम २ जपा करते थे और पिता मने करता था और भांति २ के कष्ट देता था. अंतमें भगवानने भक्तिवश होकर रक्षा करी और भक्तोंका शिरोमणि बनाया. पूरी कथा भागवतमें है.

ध्रुव[1]ने ग्लानिसे भगवान्‌का नाम जपा तौभी अचल और उपमारहित स्थान पाया ॥ ५ ॥ हनूमानजीने पवित्र नामका स्मरण करके श्रीरघुनाथजीको अपने वश[2] कर रक्खा है ॥ ६ ॥

अपर अजामिल गज गणिकाऊ ❀ भए मुक्त हरिनामप्रभाऊ ॥ ७ ॥
कहहुँ कहाँलगि नाम बड़ाई ❀ राम न सकहिं नामगुण गाई ॥ ८ ॥

और दूसरे अजामेल[3] गज[4] और गणिका[5] भगवान्‌के नामके प्रभावसे मुक्त होगये ॥ ७ ॥ नामकी बड़ाई कहांतक कहूं ? राम[6]जीभी तो अपने नामके गुण नहीं गासकते हैं ॥ ८ ॥

दो०–राम नामको कल्पतरु, कलिकल्याणनिवास ॥* ❀
जो सुमिरत भये भाँगतें, तुलसी तुलसीदास ॥ ३२ ॥ ❀

रामनामरूपी कल्पवृक्ष कलिकालमें कल्याणका स्थान है; कि जिसके स्मरण करनेसे मैं तुलसीदास भांगके समान अयोग्य वस्तुसे तुलसीके पत्रके समान भगवान्‌का प्यारा हो गया ॥ ३२ ॥

चौ०–चहुँ युग तीनि काल तिहुँ लोका ❀ भए नाम जपि जीव विशोका ॥ १ ॥
वेद पुराण संतमत एहू ❀ सकल सुकृतफल नामसनेहू ॥ २ ॥

चारों युग, तीन काल और तीनों लोकोंमें नामको जपकर जीव शोकरहित होगये ॥ १ ॥ वेद, पुराण और संतोंका यही मत है कि नाममें स्नेह करना सब पुण्योंका फल है ॥ २ ॥

ध्यान प्रथम युग मख विधि दूजे ❀ द्वापर परितोषत प्रभु पूजे ॥ ३ ॥
कलि केवल मलमूल मलीना ❀ पाप पयोनिधि जनमन मीना ॥ ४ ॥

प्रथम युग अर्थात् सतयुगमें ध्यानसे, दूसरे (त्रेता) में यज्ञसे और द्वापरमें पूजनसे भगवान्

---

*रूपक.

---

(१) स्वायंभुमनु और शतरूपाके राजा उत्तानपाद हुए. इनकी दो रानियां थीं, बड़ी रानीसे ध्रुव हुए थे, एकदिन राजा छोटी रानीके पास (जिसपर अधिक स्नेह था) बैठेथे, उस समय ध्रुव जाकर राजाकी गोदमें बैठे, इसपर छोटी रानीने उन्हें गोदसे उतारके कहा कि तुम मुझसे उत्पन्न होते तौ इस गोदके योग्य थे. यह सुनके ध्रुवको बड़ी लज्जा हुई औ अपनी मातासे तपकी आज्ञा लेकर जाने लगे. फिर राजाने समझाया, और राज्यतक देना चाहा; पर वे न माने और नारदके उपदेशसे तप कर अचल लोकके स्वामी हुए. (२) जैसे–"अति उपकार करौं का तोरा, सन्मुख व्है न सकत मन मोरा" (३) अजामेल बड़ा पापी था। एक दिन वह बाहर गया था उस समय थोड़े साधु उसके घरपर आये। उसकी गर्भवती स्त्रीने उनका अच्छे प्रकारसे अतिथिसत्कार किया। उन्होंने प्रसन्न हो आशीर्वाद दिया कि, तेरे पुत्र होगा और तू उसका नाम "नारायण" धरियो. फिर उस स्त्रीने वैसाही किया. अजामेल पुत्रको प्यार करने लगा और अंतसमय जब मरने लगा और अधिक पापी होनेके कारण यमदूत भय दिखाने लगे, तब उसने अपने पुत्र नारायणको पुकारा और नाम लेतेही भगवान्‌के दूत आये और उन्होंने उसको सुन्दर गति दीन्ही. (४) जब ग्राहने गजेंद्रको पकड़ा और अधिक युद्ध होनेपर जब ग्राह उसे जलमें डुबाने लगा और शुंडका थोड़ासा भाग ऊपर रह गया, तब उसने भगवान्‌को पुकारा कि भगवान्! रक्षा करो २–ऐसी टेर सुनकर भगवानने उसे आकर छुड़ाया. (५) एक गणिका (रंडी) थी उसका नाम पिंगला था। एक दिन अनेक प्रकारसे शृंगार करके बैठी कि कोई विषयी आवै तौ धन हरण करूं पर घात न लगी, कोई न आया, तब खाटपर लेटकर विचारने लगी कि, जितनी देर पुरुषकी राह देखी उतनी देर भगवतका स्मरण करती तौ संसारबंधनसे छूटती. (६) यहां गुसांईजीने रामजीको व्यंगस्तुतिसे अधिक प्रसन्न किया है, जैसे कोई धनवान् लोभी पात्र होय और उससे कोई कहै कि आपतो बड़े कंजूस हो पर बाजारमें आपके नामकी ऐसी धाक बंध रही है कहो आपके नामसे एक लक्षका माल ले आवें, तौ वह धनी कंजूसके कहेका बुरा न मानेगा किंतु अपने नामके प्रभावको सुन और भी प्रसन्न होगा। यहां यही सारांश दीखता है.

प्रसन्न होते हैं ॥ ३ ॥ कलियुग केवल मलकी जड़ है और उस मलीन पापके समुद्रमें मनुष्योंका मन मछलीके समान लग रहा है ॥ ४ ॥

नाम कामतरु काल कराला ❀ सुमिरत शमन सकल जगजाला ॥ ५ ॥
रामनाम कलि अभिमतदाता ❀ हित परलोक लोक पितु माता ॥ ६ ॥

नाम कल्पवृक्ष है और कलियुगमें उसके स्मरण करतेही जगतके सम्पूर्ण जाल नाश हो जाते हैं ॥ ५ ॥ रामनामही कलिमें मनोरथका दाता है और लोक तथा परलोकमें माता पिताके समान हित करनेवाला है ॥ ६ ॥

नहि कलि कर्म न भक्ति विवेकू ❀ रामनाम अवलंबन एकू ॥ ७ ॥
कालनेमि कलि कपट निधानू ❀ नाम सुमति समरथ हनुमानू ॥ ८ ॥

कलिमें कर्म भक्ति तथा ज्ञान कुछ नहीं है, केवल रामके नामका एक सहारा है ॥७॥कलियुग कपटका घर दूसरा कालनेमि राक्षस है. और रामका नाम (उसके मारनेके लिये) श्रेष्ठ बुद्धिवाले समर्थ हनुमान हैं ॥ ८ ॥

दो०-रामनाम नरकेशरी, कनककशिपु कलिकाल ॥[*] ❀
जापक जन प्रहलाद जिमि, पालहि दलि सुरसाल ॥ ३३ ॥ ❀

इति नामवन्दना.

रामका नाम नृसिंहरूप है और कनककशिपु कलिकाल है. प्रल्हाद भक्तजन है और वह नाम शत्रुओंके दलको मारकर रक्षा करता है (भाव यह है कि, नृसिंहजीने कनककशिपु शत्रुको मार प्रल्हादकी रक्षा करी वैसेही रामका नाम कलिरूपी शत्रुको मार भक्तजनकी रक्षा करता है) ॥३३॥

चौ०-भाय कुभाय अनख आलसहूं ❀ नाम जपत मंगल दिशिदशहूं ॥ १ ॥
सुमिरि सो रामनाम गुणगाथा ❀ करौं नाइ रघुनाथहिं माथा ॥ २ ॥

जिस नामको प्रीतिसे वा वैरसे, ईर्षासे वा आलस्यसे जपतेही दशों दिशाओंमें मनुष्यका कल्याण होता है ॥ १ ॥ उसी नामको स्मरण करके रामजीके गुणोंकी कथाको श्रीरघुनाथजीको मस्तक नवाकर करताहूं ॥ २ ॥

मोरि सुधारहिं सो सब भाँती ❀ जासु कृपा नहिं कृपा अघाती ॥ ३ ॥
राम सुस्वामि कुसेवक मोसे ❀ निजदिशि देखि दयानिधि पोसे ॥ ४ ॥

वह भगवान् मेरी (बनाई कथाको) सब भांति सुधारेंगे जिनकी कृपा, कृपा करनेमें नहीं अघाती है ॥ ३ ॥ रामजी सरीखे सुंदर स्वामी और मुझसा बुरा सेवक (नहीं चाहिये था); किन्तु दयानिधि (रामजी) ने अपनीही ओर देखकर मेरा पालन किया ॥ ४ ॥

[*] रूपक.

---

(१) "रामेति वर्णद्वयमादरेण सदा स्मरन्मुक्तिमुपैति जंतुः । कलौ युगे कल्मषमानसानामन्यत्र धर्मे खलु नाधिकारः ॥ १ ॥" अर्थात् राम इन दो अक्षरोंको सदा आदरपूर्वक जपनेसे प्राणी मुक्ति पाता है, कलियुगमें पापी मनुष्योंको और धर्ममें अधिकार नहीं है. (२) जैसे प्रल्हादने पितासे कहा है कि-" रामनाम जपतां कुतो भयं सर्वपापशमनैकभेषजम् । पश्य तात मम गात्रसन्निधौ पावकोऽपि सलिलायतेऽधुना" अर्थात् हे पिता ! सब पाप दूर करनेकी औषधि ऐसा रामनाम जपनेवालोंको भय कहां है ? देखो मेरे शरीरके पास अग्निभी जलके समान शीतल लगती है.

लोकहुँ वेद सुसाहिबरीती ❀ बिनय सुनत पहिचानत प्रीती ॥ ५ ॥
धनी गरीब ग्रामनर नागर ❀ पंडित मूढ़ मलीन उजागर ॥ ६ ॥

लोकमें और वेदमें अच्छे स्वामीकी रीति है कि विनय सुनतेही प्रीति पहिचानते हैं ॥ ५ ॥ और (राजाके देशमें तो) धनवान्, गरीब, गंवार, चतुर, पण्डित, मूर्ख, मलीन, प्रसिद्ध ॥ ६ ॥

सुकबि कुकबि निजमति अनुहारी ❀ नृपहिं सराहत सब नर नारी ॥ ७ ॥
साधु सुजान सुशील नृपाला ❀ ईशअंशभव परम कृपाला ॥ ८ ॥

अच्छे कवि और बुरे कवि (सबही रहते हैं) और सब स्त्रीपुरुष अपनी २ मतिके अनुसार राजाकी बड़ाई करते हैं ॥ ७ ॥ क्योंकि राजा लोग साधु कहिये सुंदर मार्गमें चलनेवाले चतुर, सुशील, ईश्वरके अंशसे उत्पन्न और अत्यंत कृपालु होते हैं ॥ ८ ॥

सुनि सनमानहिं सबहिं सुबानी ❀ भणित भक्ति मति गति पहिंचानी ॥९॥
यह प्राकृत महिपाल सुभाऊ ❀ जानि शिरोमणि कोशलराऊ ॥ १० ॥
रीझत रामसनेह निसोते ❀ को जग मंद मलिन मति मोते ॥ ११ ॥

वे सबकी सुन्दर वाणी सुनकर उनका सन्मान करते हैं और सुनतेही सबकी भक्ति, मति और गतिको पहिचानते हैं ॥ ९ ॥ यह साधारण राजाओंका स्वभाव है, फिर जिसमें कोशलराउ तौ सबके शिरोमणि हैं सो क्यों न जानेंगे? अर्थात् जानतेही हैं ॥ १० ॥ रामजी तो खरे स्नेहसे रीझते हैं और मेरे समान जगत्में कौन मंद और मलीन बुद्धिवाला है? अर्थात् कोईभी नहीं मैं तो मैंही हूं मेरे ऊपर कैसे रीझेंगे ॥ ११ ॥

दो०–शठ सेवककी प्रीति रुचि, रखिहहिं राम कृपालु ॥* ❀
उपल किये जलयान जेहि, सचिव सुमति कपि भालु ॥३४॥ ❀

श्रीरघुनाथजी कृपालु हैं इसलिये मुझसरीखे मूर्ख सेवककी प्रीति और रुचि रक्खेंगे, क्योंकि उन्होंने पत्थरोंको जलमें तैरा दिया और रीछ बन्दरोंको बुद्धिमान मंत्री बनाया ॥ ३४ ॥

होउँ कहावत सब कहत, राम सहत उपहास ॥ ❀
साहिब सीतानाथसे, सेवक तुलसीदास ॥ ३५ ॥† ❀

मैं कहाताभी हूं और सब कहते हैं और इस हँसीको रामजीने सहभी लिया है कि रामचन्द्रजी सरीखे तो स्वामी और तुलसीदाससरीखा सेवक ॥ ३५ ॥

चौ०–अति बड़ि मोर ढिठाई खोरी ❀ सुनि अघ नरकहुँ नाक सकोरी ॥ १ ॥
समुझि सहमि मोहि अपडर अपने ❀ सो सुधि राम कीन्ह नहिं सपने ॥ २ ॥

(इतने बड़े स्वामी और मैं तुच्छ मनुष्य अपनेको उनका सेवक कहताहूं इस) मेरी बड़ी भारी ढिठाई और खोटको सुनकर पापी नरकभी तौ नाक सिकोड़ता है (औरकी क्या चलाई है) ॥ १ ॥ मैं सेवकके योग्य नहीं हूं, इस अपनी खोटको समझकर मुझे अपने आप तो उसका डर है. परन्तु रामजीने उसकी सुधि सुपनेमेंभी नहीं करी ॥ २ ॥

सुनि अवलोकि सुचित चखु चाही ❀ भक्ति मोर मति स्वामि सराही ॥ ३ ॥
कहत नशाइ होइ अतिनीकी ❀ रीझत राम जानि जन जीकी ॥ ४ ॥

---

* काव्यलिंग. † विषमालंकार.

(१) जैसा मनुजीने लिखा है कि–"अष्टाभिश्च सुरेन्द्राणां मात्राभिर्निर्मितो नृपः । तस्मादभिभवत्येष सर्वभूतानि तेजसा." ॥

(यह कैसे जान पड़ा कि सुध नहीं की)

क्यौंकि सुनकर जब अपने निर्मल हृदयमें दिव्य दृष्टिसे देखना चाहा, तब स्वामीने मेरी भक्ति-
की अपने मनसे बड़ाई की (ऐसाही जान पड़ा) ॥ ३ ॥ कहनेमें बुरी हो वा अच्छी हो रामजी
तो भक्तजनके हृदयकी भक्ति जानकर रीझते हैं ॥ ४ ॥

रहत न प्रभुचित चूक कियेकी ❀ करत सुरति सौ वार हियेकी ॥ ५ ॥
जेहि अघ बधेउ व्याध जिमि बाली ❀ फिरि सुकंठ सोइ कीन्ह कुचाली ॥ ६ ॥

प्रभुके चित्तमें भक्तजनोंसे करी हुई चूक नहीं रहती है, परन्तु सौवार उनके हृदयकी (भक्ति-
की) सुरत करते हैं ॥ ५ ॥ क्यौंकि जिस पापके कारण (रघुनाथजीने) बहेलियेके समान बाली-
को मारा था फिर सुग्रीवनेभी वही कुचाल कीथी, अर्थात् जबतक राज्यपर न बैठा तबतक तो यह
कहता रहा कि–"सुखसंपति परिवार बड़ाई । सब परिहरि करिहौं सेवकाई" पर राज्य मिलतेही
विषयमें मगन होगया. किन्तु रघुनाथजी अपनी ओरसे मनमें बुरी बात न लाये ॥ ६ ॥

सोइ करतूति विभीषण केरी ❀ सपनेहु सो न राम हिय हेरी ॥ ७ ॥
ते भरतहिं भेटत सनमाने ❀ राजसभा रघुबीर बखाने ॥ ८ ॥

और वही करतूत विभीषणने करीथी. परन्तु रामजीने स्वप्नमेंभी उसका ध्यान अपने हृदयमें न
किया ॥ ७ ॥ बरन रघुनाथजीने भरत मिलापमें उन दोनोंका सन्मान किया और राजसभामें
उनकी बड़ी प्रशंसा करी ॥ ८ ॥

दो०–प्रभु तरुतर कपि डारपर, किये ते आपु समान ॥*
तुलसी कहूँ न रामसे, साहिब शीलनिधान ॥ ३६ ॥

प्रभु रामजी तो वृक्षके नीचे और वानर डालियोंके ऊपर (रामजीके कार्यकी ऐसी चिन्तामें हैं
कि ऊपर नीचेका ज्ञानही नहीं, ऐसे अज्ञानियोंको भी) अपने समान करलिया. तुलसीदास कहते
हैं कि रामजीके समान सुन्दर स्वभाववाला और दूसरा स्वामी कोई नहीं है ॥ ३६ ॥

राम निकाई रावरी, है सबहीकौं नीक ॥
जो यह साँची है सदा, तौ नीकौ तुलसीक ॥ ३७ ॥†

हे रामचन्द्रजी ! आपकी भलाई सबको नीकी अर्थात् लाभदायक है, सो जो यह बात सचमुच
ठीक है, तौ तुलसीदासकोभी लाभकारक होहीगी इसमें संदेहही क्या है ? अर्थात् मैं या मेरे कर्म
तौ ऐसे हैं नहीं कि इस पुस्तकके बनानेसे मेरा यश फैलै और मुक्ति मिलै. परन्तु आपकी कृपासे
जो सबकी होती आई है तौ मेरीभी होगी ॥ ३७ ॥

यहि बिधि निज गुणदोष कहि, सबहिं बहुरि शिरनाइ ॥
बरणौं रघुबर बिसद जस, सुनि कलिकलुष नशाइ ॥ ३८ ॥‡

इस प्रकार अपने गुण और दोष कहकर और सबको फिर शिर नवाकर श्रीरघुनाथजीके निर्मल
यशका वर्णन करता हूं. कि जिसके सुननेसे कलिके पाप नष्ट हो जाते हैं ॥ ३८ ॥

चौ०–याज्ञवल्क्य जो कथा सुहाई ❀ भरद्वाज मुनिवरहिं सुनाई ॥ १ ॥
कहिहौं सोइ संवाद बखानी ❀ सुनहुँ सकल सज्जन सुखमानी ॥ २ ॥

---

* काव्यलिंग अनन्वय. † संभावना. ‡ हेतु.

---

(१) जैसा उत्तरकांडमें लिखा है कि–"हनुमदादि सब वानर वीरा । धरे मनोहर परम शरीरा"
यह सब रामजीकीही कृपा थी.

याज्ञवल्क्यजीने जो सुन्दर कथा श्रेष्ठ मुनि भरद्वाजजीको सुनाई थी ॥ १ ॥ उसी संवादका वर्णन करूंगा, संपूर्ण सज्जन सुख मानकर सुनो ॥ २ ॥

शंभु कीन्ह यह चरित सुहावा ❀ बहुरि कृपा करि उमहिं सुनावा ॥ ३ ॥
सोइ शिव काकभुशुंडहिं दीन्हा ❀ रामभक्तिअधिकारी चीन्हा ॥ ४ ॥

पहले यह सुन्दर रामचरित मानस शिवजीने बनाया और फिर कृपा करके श्रीपार्वतीजीको सुनाया॥३॥और फिर उसीको शंकरने रामकी भक्तिका अधिकारी जानकर कागभुशुंडिको दिया ॥४॥

तेहिसन याज्ञवल्क्य पुनि पावा ❀ तिन्ह पुनि भरद्वाजप्रति गावा ॥ ५ ॥
ते श्रोता वक्ता समशीला ❀ समदरशी जानहिं हरिलीला ॥ ६ ॥

उनसे फिर याज्ञवल्क्य मुनिने पाया और उन्होंने फिर भरद्वाज मुनिको सुनाया ॥ ५ ॥ ये सुननेवाले और कहनेवाले समशील कहिये समान बुद्धिवाले और समदर्शी कहिये सबको समान देखनेवाले थे और भगवान्‌की लीला जानते थे ॥ ६ ॥

जानहिं तीनि काल निजज्ञाना ❀ करतलगत आमलकसमाना ॥ ७ ॥
औरौ जे हरिभक्त सुजाना ❀ कहहिं सुनहिं समुझहिं विधिनाना ॥८॥

क्यौंकि अपने ज्ञानसे तीनों कालकी लीलाको हथेलीपर धरे हुए आमलेके समान जानते थे॥७॥ और भी जो भगवान्‌के चतुर भक्त हैं, वे भी अनेक प्रकारसे कहते, सुनते और समझते हैं ॥ ८ ॥

दो०-मैं पुनि निज गुरुसन सुनी, कथा सु सूकर खेत ॥ ❀
समुझि नहीं तसु बालपन, तब अति रहेउँ अचेत ॥ ३९ ॥* ❀

मैंने अपने गुरुसे यह कथा शूकर क्षेत्रमें पहले सुनी थी; परन्तु उस बालकपनमें मुझे समझ नहीं थी, क्यौंकि तब मैं बहुतही अज्ञान था[१] ॥ ३९ ॥

श्रोता वक्ता ज्ञाननिधि, कथा रामकी गूढ़ ॥ ❀
किमि समुझै यह जीव जड़, कलिमलग्रसित विमूढ़ ॥ ४० ॥† ❀

और समझभी कैसे पड़ती क्यौंकि रामजीकी कथा बड़ी गंभीर है उसको सुननेवाला और सुनानेवाला दोनों ज्ञानके समुद्र हों तब काम चलै, तौ फिर कलिके पापोंमें फसा हुआ यह मूर्ख जीव (तुलसीदास) कैसे समझे ॥ ४० ॥

चौ०-तदपि कही गुरु बारहिं बारा ❀ समुझिपरी कछु मतिअनुसारा ॥ १ ॥
भाषाबंध करब मैं सोई ❀ मोरे मन प्रबोध जेहि होई ॥ २ ॥

तौभी गुरुजीने वारम्वार सुनाई तब कुछ अपनी मतिके अनुसार समझमें आई ॥ १ ॥ उसीको मैं भाषा छन्दोंमें बनाताहूं कि जिससे मेरे मनमें ज्ञान हो जाय ॥ २ ॥

जसु कछु बुधिविबेकबल मेरे ❀ तस कहिहौं हिय हरिके प्रेरे ॥ ३ ॥
निज संदेहमोहभ्रमहरणी ❀ करौं कथा भवसागरतरणी ॥ ४ ॥

जैसा कुछ बुद्धि और ज्ञानका बल मुझमें है उसी प्रकार हृदयमें भगवान्‌की प्रेरणासे कहूंगा ॥३॥ अपना संदेह, मोह, और भ्रमको हरनेवाली कथा रचताहूं, कि जो संसारसागरकी नौका है ॥४॥

---

* भाविक. † विषमालंकार.

---

(१) दोहेमें अति कहनेका यह भाव है कि अबभी मैं अचेत हूं, तब बहुत था अब थोड़ा हूं.

बुधविश्राम सकलजनरंजनि ❀ रामकथा कलिकलुषविभंजनि ॥ ५ ॥
रामकथा कलि पन्नग भरणी ❀ पुनि विवेकपावक कहँ अरणी ॥ ६ ॥

श्रीरघुनाथजीकी कथा पण्डितोंको विश्राम देनेवाली, सब जनोंको प्रसन्न करनेवाली और कलिके पापोंका नाश करनेवाली है ॥ ५ ॥ पुनि यह रामजीकी कथा कलियुगरूपी सर्पके लिये भरणी[1]नाम पक्षी है अथवा झाड़नेका मंत्र है; और ज्ञानरूपी अग्निके बढ़ानेको अरणी (लकड़ी) है अर्थात् अत्यन्त ज्ञान बढ़ानेवाली है ॥ ६ ॥

रामकथा कलि कामदगाई ❀ सुजन सजीवनमूरि सुहाई ॥ ७ ॥
सोइ वसुधातल सुधातरंगिनि ❀ भवभंजनि भ्रमभेक भुजंगिनि ॥ ८ ॥

रामकथा कलिमें कामधेनु है और संतजनोंको सुन्दर सजीवनमूरि है, अर्थात् जो इसको पढ़ता है (उसको) अविनाशी कर देती है ॥७॥ वही कथा पृथ्वीतलपर अमृतकी नदी है. भव कहिये संसारके आवागमनको छुड़ानेवाली है और भ्रमरूपी भैड़कके निगल जानेको सर्पिणी है ॥ ८ ॥

असुरसेनसम नरकनिकंदनि ❀ साधुबिबुधकुलहित गिरिनंदिनि ॥ ९ ॥
संतसमाजपयोधि रमासी ❀ विश्वभारधर अचल क्षमासी ॥ १० ॥

राक्षसोंकी सेनाके समान जो नरक हैं उनका नाश करनेवाली है और साधु और देवताओंके कुलके हितके लिये पार्वती अर्थात् दुर्गास्वरूप है ॥९॥ संतसमाजरूपी समुद्रकी लक्ष्मी और संसारके भार धारण करनेको अचल पृथ्वीके समान है ॥ १० ॥

यमगणमुहँमसि जग जमुनासी ❀ जीवनमुक्तिहेतु जनु कासी ॥ ११ ॥
रामहिं प्रिय पावनि तुलसीसी ❀ तुलसिदास हित हिय हुलसीसी ॥ १२ ॥

यमके गणोंके मुखपर स्याही लगानेके लिये संसारमें यमुना[2]के समान है और जीवोंको मुक्तिकेलिये काशीके समान है ॥ ११ ॥ रामजीको पवित्र तुलसीके समान प्यारी है और तुलसीदासके लिये हुलसी[3]के समान हृदयसे हित करनेवाली है ॥ १२ ॥

शिव प्रिय मेकलशैलसुतासी ❀ सकलसिद्धिप्रद संपतिरासी ॥ १३ ॥
सदगुण सुरगण अंब अदितिसी ❀ रघुबरभक्तिप्रेम परमितिसी ॥ १४ ॥

शिवजीको नर्मदाके समान प्यारी है, सब सिद्धियोंकी देनेवाली और संपत्तियोंकी राशि है ॥१३॥ सुन्दर गुणवाले देवताओंको अदिति[4] माताकेसमान है और रघुनाथजीकी भक्ति और प्रेमकी सीमा है १४

दो०–रामकथा मंदाकिनी, चित्रकूट चितचारु ॥* ❀
तुलसी सुभग सनेह वन, सिय रघुबीर विहारु ॥ ४१ ॥ ❀

तुलसीदासजी कहते हैं कि रामकथा मंदाकिनी है और निर्मल चित्त चित्रकूट है और सुन्दर स्नेह श्रीसीतारामके विहारका वन है ॥ ४१ ॥

---

* रूपक.

---

(१) भरणी एक प्रकारका पक्षी होता है, वह सर्पको देख गोल मटोल हो जाता है और जब सर्प उसे खोलता है तब वह पंख फैलाकर सर्पका नाश करता है, जैसा लिखा है कि–"जैसे भरणी गोल व्है करत सर्प संहार" ॥ कोई २ ऐसाभी अर्थ करते हैं कि, कलिरूपी सर्पको भरणी अर्थात् गरुड़ मंत्रके समान है. पुनि कोई कहता है कलिरूपी सर्पको मोरनीके समान है. (२) यमुना सूर्यकी पुत्री है और यम पुत्र है. यमुनाने यमसे वर मांगलिया था कि जो मुझमें स्नान करें उनको तुम्हारे दूत दंड न दें. (३) हुलसी तुलसीदासकी माका नाम था. (४) अदिति देवताओंकी माताका नाम है.

चौ०–रामचरित चिंतामणि चारू ॥ संतसुमतितिय सुभग सिंगारू ॥ १ ॥
जगमंगल गुणग्राम रामके ॥ दानि मुक्ति धनधर्म धामके ॥ २ ॥

पीछेतक कथाका प्रकरण स्त्रीलिंगरूपमें वर्णनकर अब पुल्लिंगरूपमें वर्णन करते हैं ॥ रामचन्द्रका चरित्र सुन्दर चिन्तामणि है (जो मांगो सो दे) और संतोंकी सुन्दरमतिरूपी कामिनीका सुन्दर श्रृंङ्गार है ॥ १ ॥ श्रीरामजीके गुणोंके समूह संसारमें मङ्गल करनेवाले हैं और मुक्ति, धन, धर्म और परम धामके देनेवाले हैं ॥ २ ॥

सदगुरु ज्ञान बिराग योगके ॥ विबुधवैद्य भव भीम रोगके ॥ ३ ॥
जननि जनक सियरामप्रेमके ॥ बीज सकल व्रतधरमनेमके ॥ ४ ॥

ज्ञान, विराग और योग इनका बोध करानेके लिये श्रेष्ठ गुरु हैं और संसाररूपी भयंकर रोगके लिये अश्विनीकुमार हैं ॥ ३ ॥ सीता और रामजीका प्रेम उत्पन्न करनेके लिये मातापिता हैं और संपूर्ण व्रत, धर्म और नेमके बीज हैं ॥ ४ ॥

शमन पापसंतापशोकके ॥ प्रिय पालक परलोक लोकके ॥ ५ ॥
सचिव सुभट भूपति विचारके ॥ कुंभज लोभ उदधि अपारके ॥ ६ ॥

पाप, संताप और शोकके नाशक हैं, परलोक और इस लोकके बड़े प्यारसे पालनेवाले हैं॥५॥विचाररूपी राजाकी रक्षाको सुभट मंत्री हैं और लोभरूपी अपार समुद्रके सोखनेको अगस्त्य ऋषि हैं॥६॥

काम कोह कलिमल करिगणके ॥ केहरिशाबक जनमन बनके ॥ ७ ॥
अतिथि पूज्य प्रियतम पुरारिके ॥ कामदघन दारिद दवारिके ॥ ८ ॥

संतोंके मनरूपी वनमें काम, क्रोध, और कलिके पापरूपी हाथियोंके समूहके लिये सिंहके बच्चे हैं ॥ ७ ॥ श्रीमहादेवजीको अतिथिकेसमान पूज्य और प्यारे हैं और दरिद्ररूपी वनकी अग्निको पूर्ण रीतिसे बुझानेके लिये मेघ हैं. ॥ ८ ॥

मंत्र महामणि विषयव्यालके ॥ मेटत कठिन कुअंक भालके ॥ ९ ॥
हरण मोहतम दिनकरकरसे ॥ सेवक शालिपाल जलधरसे ॥ १० ॥

विषयरूपी सर्पके (विष उतारनेको) मंत्र और महामणि हैं और (विधातासे लिखे गये ऐसे) ललाटके कठिन अभाग्य अंकोंको मेटनेवाले हैं ॥९॥ मोहरूपी अंधकारको नाश करनेके लिये सूर्यकी किरणोंकेसमान हैं और धानरूपी सेवकको पालनेमें मेघके तुल्य हैं ॥ १० ॥

अभिमतदानि देवतरुवरसे ॥ सेवत सुलभ सुखद हरिहरसे ॥ ११ ॥
सुकवि शरद नभ मन उडुगणसे ॥ रामभक्तिजन जीवनधनसे ॥ १२ ॥

वांछित (जो चाहो सो) देनेके लिये कल्पवृक्षकेसमान हैं और सेवा करतेही शंकर और भगवान्के समान सुलभ और सुखदायक हैं ॥ ११ ॥ शरदरूपी श्रेष्ठकवियोंके आकाशरूपी मनमें तारागणके सदृश और रामके भक्तजनोंको जीवनधनके समान हैं ॥ १२ ॥

सकल सुकृतफल भूरि भोगसे ॥ जगहित निरुपधि साधुलोगसे ॥ १३ ॥
सेवक मनमानस मरालसे ॥ पावन गंगतरंगमालसे ॥ १४ ॥

---

(१) सिंहका और हाथीका स्वाभाविक वैर है। फिर यह भावभी स्पष्ट होता है कि सिंहका बच्चा इस लिये कहा कि यह पुण्यरूप बच्चा नित्य बढ़ेगा और तबतक हाथीरूपी कामक्रोध नष्ट होजावेंगे. (२) एक मणि होती है कि जिसे सर्पके काटे घावपर धरनेसे विष उतर जाता है.

सम्पूर्ण यज्ञादि सुकर्मोंके फलोंके भोगरूप हैं और संसारके छलरहित हितकेलिये साधुलोगोंके समान हैं ॥ १३ ॥ भक्तोंके मनरूपी मानससरोवरके लिये हंसके समान और पवित्र करनेको गंगाकी तरंगोंकी मालाकेसमान हैं ॥ १४ ॥

दो०–कुपथ कुतर्क कुचालि कलि, कपट दंभ पाषंड ॥*
दहन राम गुणग्राम इमि, इंधन अनल प्रचंड ॥ ४२ ॥†

रामजीके गुणोंका समूह कलियुगके खोटे मार्ग, बुरे तर्क, कुचाल, कपट, दंभ और पाखंडरूपी इंधनके भस्म करनेके लिये प्रचण्ड अग्निकेसमान है ॥ ४२ ॥

रामचरित राकेश कर, सरस सुखद सब काहु ॥
सज्जन कुमुद चकोर चित, हित विशेष बड़ लाहु ॥ ४३ ॥‡

श्रीरघुनाथजीका चरित्र पूर्ण चन्द्रमाकी किरणोंके समान है और सबही जनोंको सुख देनेवाला है किंतु कुमुद और चकोररूपी सज्जनोंके चित्तको विशेष हित और लाभकारी है ॥ ४३ ॥

चौ०–कीन्ह प्रश्न जेहि भांति भवानी ❀ जेहि विधि शंकर कहा बखानी ॥ १ ॥
सो सब हेतु कहब मैं गाई ❀ कथा प्रबंध विचित्र बनाई ॥ २ ॥

जिस प्रकार पार्वतीजीने प्रश्न किये और जिस प्रकार शंकरने विस्तारपूर्वक कहा ॥ १ ॥ सो सब कारण मैं गाकर और कथाकी विचित्र रीति बनाकर कहूंगा ॥ २ ॥

जिन्ह यह कथा सुनी नहिं होई ❀ जनि आश्चर्य करैं सुनि सोई ॥ ३ ॥
कथा अलौकिक सुनहिं जे ज्ञानी ❀ नहिं आश्चर्य करहिं अस जानी ॥ ४ ॥

जिसने यह कथा न सुनी हो, वे सुनकर आश्चर्य न करैं ॥ ३ ॥ जो ज्ञानी इस अपूर्व कथाको सुनेंगे वे ऐसा जानकर आश्चर्य नहीं करेंगे. क्योंकि–॥ ४ ॥

रामकथाकी मिति जग नाहीं ❀ अस प्रतीति जिनके मनमाहीं ॥ ५ ॥
नाना भाँति रामअवतारा ❀ रामायण शतकोटि अपारा ॥ ६ ॥

संसारमें रघुनाथजीकी कथाकी सीमा नहीं है, उनको तौ अपने मनमें ऐसी प्रतीति लानी चाहिये कि–॥ ५ ॥ रामजीके अवतार अनेक प्रकारके हुए हैं और रामायणभी सौकरोड़ और अपार है ॥ ६ ॥

कलपभेद हरिचरित सुहाए ❀ भाँति अनेक मुनीशन गाए ॥ ७ ॥
करिय न संशय अस उर आनी ❀ सुनिय कथा सादर रतिमानी ॥ ८ ॥

कल्पके भेदसे भगवान्‌के सुन्दर चरित्र अनेक प्रकारसे मुनीश्वरोंने गाये हैं ॥ ७ ॥ ऐसा चित्तमें

---

* अनुप्रास. † दृष्टांत. ‡ रूपक.

(१) इकतीस नंबरके दोहेमें देखो.
जैसा कहा है कि–"चरितं रघुनाथस्य शतकोटिप्रविस्तरम् । एकैकमक्षरं पुंसां महापातकनाशनम् ॥"
अर्थात् रामजीके चरित्रका विस्तार सौ करोड़ अक्षरोंमें है, जिनका एक एक अक्षर बड़े २ पातकोंका नाश करनेवाला है.

(२) कल्प किसे कहते हैं सो सुनो–ब्रह्माजीके एक दिनको कल्प कहते हैं और एक कल्पमें चौदह मन्वन्तर और चौदह इन्द्र होजाते हैं ॥ अब मन्वन्तर कितनेका होता है? तहां कहते हैं कि–सतयुग, द्वापर, त्रेता और कलियुग इस चौकड़ीके इकहत्तर बार बीतनेको मन्वन्तर कहते हैं, सतयुगकी संख्या १७२८०००, त्रेतायुग १२९६०००, द्वापरयुग ८६४०००, और कलियुग ४३२००० है. सब मिलकर ४३२०००० वर्ष हुए इस रीतिसे मन्वन्तरके ३०६७२०००० वर्ष होते हैं. और ब्रह्माका एक दिवस जो कल्प है, सो ४२९४०८०००० वर्ष उपरांत समाप्त हो जाकर प्रलय होता है और इतनीही रात्रि होती हैं.

विचार करके संशय नहीं करना चाहिये और कथाको आदरसे रुचिपूर्वक सुनना चाहिये ॥ ८ ॥

दो०–राम अनंत अनंत गुण, अमित कथाविस्तार ॥
सुनि आचरज न मानिहहिं, जिनके विमल विचार ॥ ४४ ॥*

रामजी अनन्त हैं अर्थात् इनका अन्त नहीं है और गुणभी इनके अनन्त हैं और कथाका विस्तार भी सीमारहित है इसलिये जिनको निर्मल ज्ञान है, वे सुनकर आश्चर्य नहीं मानेंगे ॥ ४४ ॥

चौ०–इहि बिधि सब संशय करि दूरी ❀ शिर धरि गुरुपदपंकजधूरी ॥ १ ॥
पुनि सबही बिनवौं करजोरी ❀ करत कथा जेहि लाग न खोरी ॥ २ ॥

इस प्रकार सब संदेहको दूर करके और गुरुके चरणकमलोंकी धूलिको शिरपर धरके ॥ १ ॥ फिर हाथ जोड़कर सबकी विनती करताहूं कि जिससे कथाके रचनेमें कुछ दोष न लगे ॥ २ ॥

सादर शिवहिं नाइ अब माथा ❀ बरणौं विशद रामगुणगाथा ॥ ३ ॥
संवत सोरहसै इकतीसा ❀ करौं कथा हरिपद धरि सीसा ॥ ४ ॥

और अब शिवजीको आदरपूर्वक शिर नवाय रामचन्द्रके गुणोंकी निर्मल कथाका वर्णन करताहूं ॥ ३ ॥ संवत् १६३१ में वैकुंठनाथके चरणोंको शिरपर धर कथा रचताहूं ॥ ४ ॥

नौमी भौमवार मधु मासा ❀ अवधपुरी यह चरित प्रकासा ॥ ५ ॥
जेहि दिन रामजन्म श्रुति गावहिं ❀ तीरथ सकल तहाँ चलि आवहिं ॥ ६ ॥

चैत्र मास नवमी तिथि भौमवारके दिन अवधपुरीमें इस चरित्रको प्रकाशित किया. अर्थात् इसके बनानेका आरंभ किया॥ ५ ॥ जिस दिन वेदोंने रामजीका जन्म गाया है उस दिन संपूर्णतीर्थ वहां अर्थात् अयोध्यामें चले आते हैं ॥ ६ ॥

असुर नाग खग नर मुनि देवा ❀ आय करहिं रघुनायकसेवा ॥ ७ ॥
जन्ममहोत्सव रचहिं सुजाना ❀ करहिं राम कलकीरति गाना ॥ ८ ॥

असुर, (प्रह्लाद विभीषण आदि) नाग, (अनन्त) खग, (काकभुशुंडी गरुड़ इत्यादि) नर, (अर्जुन आदि) मुनि, (अगस्त्य, व्यास और वाल्मीकि आदि) और देवता (शिव ब्रह्मादि) आकर रघुनाथजीकी सेवा करते हैं ॥ ७ ॥ और वे भक्तजन जन्मदिनकी बड़ी २ रचना कर उत्सव मनाते हैं और रामजीके सुन्दर यशका गान करते हैं ॥ ८ ॥

दो०–मज्जहिं सज्जनवृंद बहु, पावन सरजूनीर ॥
जपहिं राम धरि ध्यान उर, सुंदर श्याम शरीर ॥ ४५ ॥†

सज्जनोंके समूह सरयूके पवित्र जलमें स्नान करते हैं और हृदयमें सुन्दर श्यामवर्ण रामजीका ध्यान धरकर रामनाममहामंत्रको जपते हैं ॥ ४५ ॥

चौ०–दरस परस मज्जन अरु पाना ❀ हरै पाप कह वेद पुराना ॥ १ ॥
नदी पुनीत अमित महिमा अति ❀ कहि न सकै शारदा विमलमति ॥ २ ॥

---

* अनुप्रास भाविक. † स्मरणालंकार.

---

(१) कोई ज्योतिषी इस बातका संदेह करै कि नवमी रिक्तातिथि है और वारभी क्रूर है तौ इस मुहूर्तमें क्या श्रेष्टता है ? तहां कहते हैं कि–तुलसीदासजीने नवमी इसलिये ली कि रामजीका जन्मदिन है, दूसरी वात यह कि नवमी दुर्गाजीकी तिथि है और जानकीजी उनका अवतार हैं, और मंगलवार हनुमानजीका है और गुसांईजी सीता, राम और हनुमान् इन तीनोंकेही मुख्य उपासक थे और वसन्त ऋतु तौ उत्तमही है जैसा भगवान्ने गीतामें कहा है कि–''ऋतूनां कुसुमाकरः''

सरयूका दर्शन, स्पर्शन स्नान और आचमन करना पापको हरता है ऐसा वेद और पुराण कहते हैं ॥ १ ॥ यह सरयू नदी बड़ी पवित्र है और इसकी बड़ी महिमा है कि जिसको सुन्दर बुद्धिवाली सरस्वतीभी नहीं कह सकती है ॥ २ ॥

रामधामदा पुरी सुहावनि ❀ लोक समस्त विदित जगपावनि ॥ ३ ॥
चारि खानि जग जीव अपारा ❀ अवध तजे तनु नहिं संसारा ॥ ४ ॥

अयोध्याका वर्णन.

सुन्दर पुरी (अयोध्या) रामके धामको देनेवाली है, सब लोकमें विदित है और संसारको पवित्र करनेवाली है ॥ ३ ॥ जगत्में चार प्रकारके अनगिनती जीव हैं उनमेंसे जो अयोध्यामें शरीर त्याग करते हैं उनको संसार नहीं मिलता अर्थात् वे मुक्त हो जाते हैं ॥ ४ ॥

सब बिधि पुरी मनोहर जानी ❀ सकल सिद्धिप्रद मंगलखानी ॥ ५ ॥
विमलकथाकर कीन्ह अरंभा ❀ सुनत नसाहिं काम मद दंभा ॥ ६ ॥

पुरीको सब प्रकारसे मनोहर, सब सिद्धियोंकी विशेष करके देनेवाली और मंगलोंकी खान जानकर ॥ ५ ॥ उसकी दोषरहित कथाका आरम्भ किया है कि जिसके सुननेसे काम, मद और पाखण्ड नष्ट हो जाते हैं ॥ ६ ॥

रामचरितमानस यह नामा ❀ सुनत श्रवण पाइय विश्रामा ॥ ७ ॥
मनकरि विषयअनलबन जरहीं ❀ होइ सुखी जे इहि सर परहीं ॥ ८ ॥

इसका नाम रामचरित्रमानस है, जिसके श्रवण करनेसे प्राणियोंको विश्राम मिलता है ॥ ७ ॥ मनरूपी हाथी विषयरूपी अग्निके बनमें जलता है, परन्तु जो इस सरोवरमें आन पड़े सो सुखी हो जाता है ॥ ८ ॥

रामचरितमानस मनभावन ❀ बिरचेउ शंभु सुहावन पावन ॥ ९ ॥
त्रिविधदोष दुख दारिद दावन ❀ कलि कुचाल कलिकलुषनसावन ॥ १० ॥

इस मनभावन, सुन्दर और पवित्र रामचरित्ररूपी मानससरोवरको शिवजीने रचा है ॥९॥ तीन प्रकारके दोष, (मनसा, वाचा और कर्मणा अथवा दैहिक-दैविक-और भौतिक) दुःख और दरिद्र इनका नाशक है और कलियुगकी कुचाल और कलिके पापोंको दूर करनेवाला है ॥ १० ॥

रचि महेश निज मानस राखा ❀ पाइ सुसमय शिवासन भाखा ॥ ११ ॥
तातें रामचरितमानस बर ❀ धरेउ नाम हिय हेरि हरषि हर ॥ १२ ॥
कहौं कथा सोउ सुखद सुहाई ❀ सादर सुनहु सुजन मन लाई ॥ १३ ॥

पहले शंकरने रचकर इसे अपने मनमें धारण किया और सुन्दर अवसर पाकर पार्वतीजीको सुनाया ॥११॥ इसलिये इसका "रामचरितमानस" यह सुन्दर नाम शिवजीने प्रसन्न होकर धरा है ॥१२॥ वही मनभाविनी और सुखदायिनी कथा कहताहूं,हे भक्तजनो!आदरपूर्वक चित्त लगाकर सुनो॥१३॥

---

(१) पद्मपुराणे-"मन्वन्तरसहस्रेषु काशीवासेन यत्फलम् । तत्फलं समवाप्नोति सरयूदर्शने कृते ॥ १ ॥ प्रयागे यो नरो गत्वा माघानां द्वादशं वसेत् । तत्फलादधिकं प्रोक्तं सरयूदर्शने कृते ॥ २ ॥ मथुरायां कल्पमेकं वसते मानवो यदि । तत्फलादधिकं प्रोक्तं सरयूदर्शने कृते ॥ ३ ॥ अर्थ सीधा है. (२) पद्मपुराणे-"षष्टिवर्षसहस्राणि काशीवासेन यत्फलम् । तत्फलं निमिषार्धेन कलौ दाशरथी पुरी ॥ ४ ॥ यदा मतिं प्रकुरुते अयोध्यागमनं प्रति । तदा नरकनिर्मुक्ता गायन्ति पितरो दिवि ॥ ५ ॥ अर्थ सीधा है. (३) ज्वर आदि. (४) वज्रपात आदि. (५) सर्प पशु आदिसे भय.

अथ मानसप्रारम्भः

दो०-जसमानस जेहि विधि भयउ, जग प्रचार जेहि हेतु ॥* ❀
अब सोइ कहौं प्रसंग सब, सुमिरि उमा वृषकेतु ॥ ४६ ॥† ❀

रामचरित्रमानसका यश जिस प्रकार हुआ और जगत्में जिस कारण इसका प्रचार हुआ, अब वही सब प्रसंग शिवपार्वतीको स्मरण करके कहताहूं ॥ ४६ ॥

चौ०-शंभुप्रसाद सुमति हिय हुलसी ❀ रामचरितमानसकवि तुलसी ॥ १ ॥
करउँ मनोहर मति अनुहारी ❀ सुजन सुचित सुनि लेहु सुधारी ॥ २ ॥

शिवजीकी प्रसन्नतासे हृदयमें निर्मल बुद्धिका प्रकाश हुआ, इसलिये रामचरितमानसका मैं तुलसीदास कवि हुआ हूं ॥ १ ॥ सो अपनी बुद्धिके अनुसार तो मनहरणही बनाताहूं (किन्तु जो भूलचूक रह जाय उसे) सज्जन लोग ध्यानसे सुनकर सुधारलें ॥ २ ॥

सुमति भूमिथल हृदय अगाधू ❀ वेद पुराण उदधि घन साधू ॥ ३ ॥
बरषहि रामसुयश वरवारी ❀ मधुर मनोहर मंगलकारी ॥ ४ ॥

सुन्दर बुद्धि पृथ्वी थल है; हृदय गहराई है, वेद पुराण समुद्र हैं और साधुजन बादल हैं (अर्थात् जैसे मेघ समुद्रसे जल लेकर मानसरोवरको भर देते हैं, तैसेही साधुजन वेद पुराणका सार लेकर भक्तजनोंके मानसरूपी हृदयको भरते हैं ॥३॥ रामका सुन्दर यशरूपी श्रेष्ठ जल साधुरूपी मेघोंके द्वारा वरसे वह जल मीठा, मनोहर और मंगल कहिये शरीरको पुष्टि (देनेवाला) और काम, क्रोध, लोभ और मोहादि रोगोंका नाश करनेवाला है ॥ ४ ॥

लीला सगुण जो कहहिं बखानी ❀ सोइ स्वच्छता करै मलहानी ॥ ५ ॥
प्रेमभक्ति जो वरणि न जाई ❀ सोइ मधुरता सुशीतलताई ॥ ६ ॥

जो सगुण लीलाका वर्णन करते हैं वही मलकी हानि करनेवाली निर्मलता है ॥५॥ और वर्णन नहीं किये जा सकें ऐसे जो प्रेम और भक्ति हैं वेही इस जलकी मधुरता और सुन्दर शीतलता हैं ॥ ६ ॥

सो जल सुकृतशालि हित होई ❀ रामभक्त जनजीवन सोई ॥ ७ ॥
मेधा महिगत सो जल पावन ❀ सिमिटिश्रवणमगु चलेउ सुहावन ॥ ८ ॥
भरेउ सुमानस शिथल थिराना ❀ सुखद शीत रुचि चारु चिराना ॥ ९ ॥

वह जल पुण्यरूपी धनका हित करनेवाला होता है और वही रामजीके भक्तजनोंका जीवन है ॥७॥ वह पवित्र जल बुद्धिरूपी पृथ्वीपर बरसा और इकट्ठा होकर सुन्दर कानके मार्गको चला ॥८॥ और सुन्दर मानससरोवरमें शिथिल होकर भर गया और रुचिरूपी शरद्ऋतु है उसको पाकर और पुराना[1] होकर सुखदाई हुआ ॥ ९ ॥

दो०-सुठि सुंदर संवाद वर, बिरचेउ बुद्धि बिचारि ॥‡ ❀
तेइ यहि पावन सुभगसर, घाट मनोहर चारि ॥ ४७ ॥ ❀

वड़े सुन्दर (चार[2]) संवाद जो बुद्धिके विचारसे रचे हैं वेही इस पवित्र सुन्दर सरोवरके चार मनहरन घाट हैं ॥ ४७ ॥

---

* भाविक. † स्मरणालंकार. ‡ रूपक.

---

(१) वर्षाका जल शरद ऋतुमें जाकर निर्मल होता है; क्यौंकि तब उसकी धूल छटकर सब नीचे बैठ जाती है. (२) चार संवाद-१ याज्ञवल्क्य और भरद्वाजका, २ शिव और पार्वतीका, ३ काकभुशुंड और गरुड़का. ४ गुसाईंजी और उनके भक्तोंका.

चौ०–सप्तप्रबंध सुभग सोपाना ॐ ज्ञाननयन निरखत मनमाना ॥ १ ॥
रघुपतिमहिमा अगुण अबाधा ॐ बरणव सोइ वर वारिअगाधा ॥ २ ॥

सात कांडरूपी सात सीढ़ियां हैं, कि जिनको ज्ञानरूपी नेत्रोंसे देखतेही मन प्रसन्न हो जाता है ॥ १ ॥ रघुनाथजीकी महिमा अगुण (अर्थात् सत रज और तम इनसे परे) बाधारहित अर्थात् न घटै न बढ़ै ऐसी है. उसको सुन्दर पानीकी गहराई वर्णन करताहूं ॥ २ ॥

रामसीययशसलिल सुधासम ॐ उपमा बीचि विलास मनोरम ॥ ३ ॥
पुरइनि सघन चारु चौपाई ॐ युक्ति मंजु मणि सीप सुहाई ॥ ४ ॥

उसमें राम जानकीका यशरूपी नीर अमृतसमान भराहै, और उसमें उपमारूपी तरंगोंका विलास (कहिये कविताकी युक्तिरूपी पवनसे वारम्वार उठना) मनको लुभाता है ॥३॥ सुन्दर चौपाइयां पुरइन (कमलकी सघनवेल) हैं और कविताकी युक्ति उज्ज्वल मोतीकी सुन्दर सीपी है ॥ ४ ॥

छंद सोरठा सुंदर दोहा ॐ सोइ बहुरंग कमलकुलसोहा ॥ ५ ॥
अर्थ अनूप सुभाव सुभासा ॐ सोइ पराग मकरंद सुवासा ॥ ६ ॥

जो सुन्दर छन्द, सोरठे और दोहे हैं वेही रंगविरंगके शोभायमान कमलोंके समूह हैं ॥५॥ दोहे आदिके उपमारहित अर्थ, सुन्दरभाव और अच्छीभाषा ये (सरोवरके पुष्पोंके) पराग, पुष्परस और सुगंधि हैं; अर्थात, अर्थपराग, भाव पुष्परस और सुन्दर कविताई सुगंधि है ॥ ६ ॥

सुकृतपुंज मंजुल अलिमाला ॐ ज्ञान बिरागविचार मराला ॥ ७ ॥
धुनि अबिरेव कवित गुण जाती ॐ मीन मनोहर ते बहुभाँती ॥ ८ ॥

"पुष्प होते हैं तहां भ्रमर होते हैं सो" पुण्यात्मा भक्तजनोंके समूह सुंदर भ्रमरोंकी माला हैं और ज्ञान वैराग्यका विचार हंस हैं ॥ ७ ॥ "अब मछली चाहिये सो" ध्वनि[1], अवरेव[2], गुण[3], और जाति[4] ४ प्रकारके जो कवित्त होते हैं वेही अनेक भांतिकी मानो मनोहर मछलियां हैं ॥ ८ ॥

अर्थ धर्म कामादिक चारी ॐ कहब ज्ञान विज्ञान विचारी ॥ ९ ॥
नवरस जप तप योग बिरागा ॐ ते सब जलचर चारु तडागा ॥ १० ॥

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष (ये चार फल); ज्ञानविज्ञानका विचार; नवरस, जप, तप, योग और विराग ये सब सुन्दर सरोवरके जलचर हैं ॥ ९ ॥ १० ॥

सुकृती साधु नाम गुण गाना ॐ ते विचित्र जलबिहँगसमाना ॥ ११ ॥
संतसभा चहुँदिशि अँबराई ॐ श्रद्धा ऋतु वसंतसम गाई ॥ १२ ॥

पुण्यात्मा साधुजनोंके नामके गुणोंके गान वेही रंगविरंगे जल पक्षी हैं ॥ ११ ॥ संतोंकी सभा यही चारों ओर अमरियां हैं(आमके वृक्षोंकी बगीचियां)हैं और श्रद्धा वसंतऋतुके समान है॥१२॥

भक्तिनिरूपण विविध विधाना ॐ क्षमा दयाद्रुम लता विताना ॥ १३ ॥
संयम नियम फूल फल ज्ञाना ॐ हरिपदरति रस बेद बखाना ॥ १४ ॥
औरौं कथा अनेक प्रसंगा ॐ तेइ शुक पिक बहु बरन बिहंगा ॥ १५ ॥

अनेक प्रकारसे भक्तिका विचार, क्षमा और दया ये सब वृक्षों और लताओंपर फैले हुए वितान

---

(१) ध्वनि–चेल्हवा मछली है जो चमकती है. (२) अवरेव–बांबामछली है उसकी चाल सर्पकीसी है. (३) गुण–छोटी २ मछली जो बहुतसी एकसाथ चलैं. (४) जाति–एक बड़े मीनको कहते हैं.

(चन्दोये) हैं ॥ १३ ॥ संयम और नियम फूल हैं और ज्ञान फल हैं और रघुनाथजीके चरणोंमें स्नेह होना यही रस है ऐसा वेद कहता है ॥ १४ ॥ प्रसंगके वशसे जो अनेक कथायें कही हैं वेही तोते कोकिला आदि रंगविरंगे पक्षी हैं ॥ १५ ॥

दो०–पुहुपवाटिका बाग बन, सुख सुबिहंग बिहारु ॥* ❀
माली सुमन सनेह जल, सींचत लोचन चारु ॥ ४८ ॥ ❀

कथा सुननेमें पुलकायमान होना यही पुष्पोंका बर्गाचा बाग और वन है और श्रवणसे सुख मिलता है वेही मानो सुन्दर शुक, कोकिला आदि पक्षी वहां विहार करते हैं, अपना मनरूपी माली स्नेहरूपी जलको सुन्दरनेत्ररूपी घड़ोंसे सींचता है ॥ ४८ ॥

चौ०–जे गावहिं यह चरित सँभारे ❀ ते यहि ताल चतुर रखवारे ॥ १ ॥
सदा सुनहिं सादर नर नारी ❀ तेइ सुरवर मानस अधिकारी ॥ २ ॥

जो इस चरित्रको अच्छीतरह गाते हैं अर्थात् अपनी युक्तिसे कोई विलक्षण बात निकालते हैं वेही इस सरोवरके चतुर, अथवा चतुर कहिये चार अर्थात् शिव, काकभुशुंडी, याज्ञवल्क्य और गुसांईजी रखवाले हैं ॥ १ ॥ जो नरनारी इसे आदरपूर्वक सर्वदा सुनते हैं वेही देवताओंमें श्रेष्ठ ऐसे इस मानसके अधिकारी हैं ॥ २ ॥

अतिखल जे विषयी बक कागा ❀ इहि सर निकट न जाहिं अभागा ॥ ३ ॥
जंबुक भेक सिवार समाना ❀ इहाँ न विषय कथा रस नाना ॥ ४ ॥

जैसे मानसपर बगले और काग नहीं जाते वैसेही इनके समान जो अत्यन्त दुष्ट और विषयी लोग हैं वे इस सरोवररूपी कथाके निकट नहीं जाते हैं. (वे तो इधर उधर बक २ करते और घात टटोलते फिरते हैं) ॥ ३ ॥ क्योंकि घोंघा, मेड़क और छोटे २ कीड़ोंके समान इसमें अनेक प्रकारके रसोंकी विषय कथा नहीं है ॥ ४ ॥

तेहि कारण आवत हिय हारे ❀ कामी काक बलाक बिचारे ॥ ५ ॥
आवत इहिसर अति कठिनाई ❀ रामकृपा विनु आय न जाई ॥ ६ ॥

इसी कारण विचारे कामी जनरूपी काक और बगुले (कि जिनका चारा यहां नहीं वे) यहां आतेमें हिया हारते हैं. अर्थात् उनको आनेकी इच्छा नहीं होती ॥ ५ ॥ इस सरोवरपर आनेमेंभी बड़ी कठिनाई है, क्योंकि रामजीकी कृपा विना आया नहीं जाता ॥ ६ ॥

कठिन कुसंग कुपंथ कराला ❀ तिन्हके बचन व्याघ्र हरि ब्याला ॥ ७ ॥
गृहकारज नाना जंजाला ❀ तेइ अति दुर्गम शैल बिशाला ॥ ८ ॥
बन बहु विषय मोहमद माना ❀ नदी कुतर्क भयंकर नाना ॥ ९ ॥

क्योंकि उधर मानससरोवरका मार्ग तो बड़ा ऊंचा नीचा और भयङ्कर है और यहां मानस कथामें आते समय कुसंग बड़ा उलझाव है. उधर सिंघ, वाघ और सर्पोंका भय है, इस कुसंग मार्गमें

---

* रूपक.

---

(१) गायत्रीभाष्ये–"अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यं दयार्जवम् । क्षमा धृतिर्मिताहारः शौचं च दश संयमाः ॥ १ ॥" अर्थात् १ अहिंसा २ सत्य ३ चोरी न करना ४ ब्रह्मचर्य ५ दयां ६ नम्रता ७ क्षमा ८ धृति ९ थोड़ा भोजन १० शुद्धता ये १० बातें संयमकी हैं. (२) "शौचं त्यागस्तपो दानं स्वाध्यायश्च प्रतिग्रहः । व्रतोपवासमौनानि स्नानं च नियमा दश ॥ २ ॥" अर्थात् १ शौच २ होम ३ तप ४ दान ५ विद्याध्ययन ६ इन्द्रियोंका रोकना ७ व्रत चांद्रायण आदि अथवा प्रण ८ उपवास एकादशी आदि ९ मौन रहना १० स्नानसे त्रिकालसन्ध्या समझना ये १० नियम हैं ॥

कुसंगियोंके वचनही व्याघ्र, सिंह और सर्पके समान हैं (अर्थात् प्रथम तो आनेको मनही नहीं करैगा और आया चाहैं तो दुष्ट संगी ऐसे टेढ़े वचन कह देगें कि भाई ! तुम जाकर क्या करोगे, कथा सुनकर पाप करोगे तो अवश्य नरक होगा. अभी तो चाहै जो करो दंडके भागी नहीं हो; क्योंकि विना जाने पाप नहीं होता) ॥८॥ और उधर सरोवर मार्गमें तो वड़े २ दुर्गम पर्वत हैं और इस (मानस कथामें आनेके लिये) घरके कामही अनेक प्रकारके जंजाल हैं कि जो पर्वतोंके समान विघ्नकारक हैं ॥ ८ ॥ और उस मानस मार्गमें दुर्गम वन हैं और (मानस कथामें आनेके लिये) गहरे वनके समान विषय, मोह, मद और मान हैं (अर्थात् सम्पत्ति और वड़ी ज्ञातिके अभिमानसे नहीं आते. सोचते हैं कि हम इतने वड़े मनुष्य वहां सबके साथ कैसे बैठेंगे इत्यादि) और उधर भयंकर नदीके कारण न जांय और इधर नदीरूप मनकी अनेक भांतिकी कुतर्कना नहीं आने देती-(जैसे कहैं कि परलोक क्या वस्तु है ? किसीनेभी वहां जाकर पत्र लिखा है, कि हम आपहुँचे ? अथवा कथा सुननेसे किसीके लिये विमान आता नहीं देखा. यही मनकी कुतर्कना जानों) ॥ ९ ॥

दो०-जे श्रद्धा शंबलरहित, नहिं संतन कर साथ ॥* ❀
तिनकहुँ मानस अगम अति, जिनहिं न प्रिय रघुनाथ ॥४९॥ ❀

जिन मनुष्योंके पास मार्गके लिये श्रद्धारूपी खर्च नहीं है और न संतोंका साथ है और न जिनको रघुनाथजी प्यारे हैं उनको यह मानस अधिक कठिन है ॥ ४९ ॥

चौ०-जो करि कष्ट जाय पुनि कोई ❀ जातहि नींद जुड़ाई होई ॥ १ ॥
जड़ताजाड़ विषम उर लागा ❀ गयेउ न मज्जन पाव अभागा ॥ २ ॥

और फिर जो कोई कष्ट करके जायभी तो जातेही नींदरूपी जाड़ेका बुखार आजाता है ॥ (जैसे मानस सरोवरपर जानेसे सरदी लगती है उसी प्रकार यहां नींद आने लगती है) ॥१॥ अथवा मूर्खता का कठिन जाड़ा हृदयमें लगा कि गया तो सही पर अभागा स्नानभी न करने पाया ॥ २ ॥

करि न जाय सर मज्जन पाना ❀ फिर आवै समेत अभिमाना ॥ ३ ॥
जो बहोरि कोउ पूछन आवा ❀ सर निंदा करि ताहि सुनावा ॥ ४ ॥

सरोवरमें स्नान और पान तो किया नहीं जाता और अभिमानसहित फिर आता है ॥३॥ जो फिर कोई पूछने आवै, तो सरोवरकी निन्दा करके उसे सुनादी (कि स्नान करनेसे क्या होताहै?) ॥४॥

सकल विघन व्यापहि नहिं तेही ❀ राम कृपा करि चितवहिं जेही ॥ ५ ॥
सोइ सादर सरमज्जन करहीं ❀ महाघोर त्रयताप न जरहीं ॥ ६ ॥

उसको कोई विघ्न नहीं व्यापता है कि जिसको रामजी कृपापूर्वक देखते हैं ॥ ५ ॥ और वेही (भक्तजन) आदरपूर्वक इस सरोवरमें मज्जन करते हैं और महाघोर तीन तापोंसे नहीं जलते हैं ॥६॥

ते नर यह सर तजहिं न काऊ ❀ जिनके रामचरित भल भाऊ ॥ ७ ॥
जो नहाइ चह इहिं सरु भाई ❀ सो सतसंग करै मनलाई ॥ ८ ॥

वे मनुष्य इस सरोवरको कभी नहीं त्यागते हैं, कि जिनकी वैकुंठनाथके चरित्रमें सच्ची भक्ति है ॥ ७ ॥ हे भाई ! इस सरोवरमें स्नान किया चाहै तो मन लगाकर सज्जनोंका संग करै ॥ ८ ॥

---

* रूपक.

---

(१) १ दैहिक-ज्वरादिक २ दैविक-वज्रपात आदि और ३ आधिभौतिक-सर्प, पशु आदिसे भय.

अस मानस मानस चखु चाही ❀ भइ कविबुद्धि विमल अवगाही ॥ ९ ॥
बढ्यौ हृदय आनंद उछाहू ❀ उमगेउ प्रेम प्रमोद प्रवाहू ॥ १० ॥

ऐसे मानसके स्नान करनेके लिये हृदयके नेत्र चाहियें कि जिस स्नान करनेसे कविकी बुद्धि निर्मल होगई ॥ ९ ॥ हृदयमें आनन्द और उत्साह हुआ और प्रेमके आनंदकी धारा उमगी ॥ १० ॥

चली सुभग कविता सरितासो ❀ राम विमल यश जल भरितासो ॥ ११ ॥
सरयूनाम सुमंगल मूला ❀ लोक वेद मत मंजुल कूला ॥ १२ ॥
नदी पुनीत सुमानस नंदिनि ❀ कलिमल तटतरुमूलनिकंदिनि ॥ १३ ॥

उससे सुन्दर कवितारूपी धारा चली कि जिसमें रामजीका निर्मल यशरूपी जल भर रहाथा ॥११॥ उस कवितारूपी नदीका नाम सरयू है और वह सुन्दर मंगलोंकी जड़ है. लोक और वेदका मत उसके मनोहर किनारे हैं ॥ १२ ॥ यह सुन्दर मानस नदी पवित्र और आनन्द देनेवाली है, कलिके पाप मानों तटके वृक्ष हैं उनको जड़से उखाडनेवाली है ॥ १३ ॥

दो०-श्रोता त्रिविधि समाजपुर, ग्राम नगर दुहुँकूल ॥*
संतसभा अनुपम अवध, सकल सुमंगलमूल ॥ ५० ॥

तीन प्रकारके श्रोताओंके समूह मानों सरयूनदीके दोनों किनारोंपर पुर नगर और ग्राम हैं और संतोंकी सभा मानों सम्पूर्ण सुंदर मंगलोंकी जड़ और उपमारहित अवधपुरी है ॥ ५० ॥

चौ०-रामभक्ति सुरसरि तहिं जाई ❀ मिली सुकीरति सरजु सुहाई ॥ १ ॥
सानुज राम समर यश पावन ❀ मिलेउ महानद शोण सुहावन ॥ २ ॥

रामभक्ति मानों गंगाजी हैं, उनमें जाकर निर्मल यशवाली सुन्दर सरयू मिली है ॥१॥ छोटे भाई लक्ष्मणके सहित रामजीके युद्धका पवित्र यश मानों सुन्दर महानद शोण (आकर) मिला है ॥२॥

युग बिच भक्ति देवधुनि धारा ❀ सोहतिसहित सुबिरति बिचारा ॥ ३ ॥
त्रिविधताप त्रासक त्रिमुहानी ❀ रामस्वरूप सिंधु समुहानी ॥ ४ ॥

इन दोनोंके बीचमें गंगाजीकी धारा कैसी शोभायमान लगती है जैसे ज्ञान वैराग्यके बीचमें भक्ति ॥ ३ ॥ इस प्रकार तीन प्रकारके तापोंके भय देनेवाली त्रिमुहानी अर्थात् तीन मुखकी होकर रामस्वरूपी समुद्रको चली ॥ ४ ॥

मानस मूल मिली सुरसरिहीं ❀ सुनत सुजन मन पावन करहीं ॥ ५ ॥
बिच बिच कथा बिचित्र विभागा ❀ जनु सरतीर तीर वन बागा ॥ ६ ॥

इस सरयूनाम नदीका एक तो मूल अर्थात् पिता रामचरित्र मानससर और दूसरे गंगाजीमें मिली, (अतएव इसका आदि अंत सब शुद्ध हुआ) इसलिये श्रवण करनेवालेको सज्जन और उसके मनको पवित्र कर देती है ॥ ५ ॥ और इस कथारूपी नदीके बीचमें जो विचित्र भिन्न २ कथा हैं वे मानों नदीके किनारे, वन और बाग हैं ॥ ६ ॥

---

* रूपक.

---

(१) १ मुक्त २ मुमुक्षु और ३ विषयी. (२) अर्थात् १ याज्ञवाल्क्य और भरद्वाजका संवाद २ पार्वतीका जन्म, ३ पार्वतीका तप, ४ महादेवपार्वतीका विवाह, ५ शंकर उमाका संवाद, ६ स्वायंभू सत्यरूपाकी कथा ये बाग हैं. और १ सतीका मोह, २ सीताका तनुत्याग, ३ नारदजीका मोह, ४ प्रतापभानुकी कथा. ५ रावणका जन्म और ६ रावणका दिग्विजय ये कथा वनरूप हैं.

उमामहेशबिबाहवराती ❀ ते जलचर अगणित बहु भाँती ॥ ७ ॥
रघुबरजन्म अनंद बधाई ❀ भँवर तरंग मनोहरताई ॥ ८ ॥

और शिवपार्वतीके विवाहके जो वराती हैं वे अनगिनती अनेक भाँतिके जलचर हैं ॥७॥ श्रीरघुनाथजीके जन्मके आनन्द और बधाई उस नदीके भँवर और मनोहर तरंग हैं अर्थात् आनन्द भँवर हैं और बधाई तरंग हैं ॥ ८ ॥

दो०-बालचरित चहुँ बंधुके, बनज बिपुल बहुरंग ॥* ❀
नृपरानी परिजन सुकृत, मधुकर वारि विहंग ॥ ५१ ॥ ❀

चारों भाइयोंके जो बालचरित्र हैं वेही बहुतसे रंगोंके कमल हैं और राजा रानी और परिवारके जो पुण्य हैं सो भौंरे और जलके पक्षी हैं ॥ ५१ ॥

चौ०-सीयस्वयंवर कथा सुहाई ❀ सरित सुहावनि सो छबिछाई ॥ १ ॥
नदी नाव पटु प्रश्न अनेका ❀ केवट कुशल उतर सविवेका ॥ २ ॥

सीताजीके स्वयंवरकी जो सुन्दर कथा है सोही उस सुन्दर नदीकी शोभा छारहीहै ॥ १॥ (जैसे सरयूमें नाव हैं और उनपर केवट हैं वे पारकर देतेहैं) वैसेही इस कथारूपी नदीमें सुन्दर अनेक प्रकारके प्रश्नही नाव हैं और विवेकसहित उत्तर देनेवाले चतुर केवट हैं ॥ २ ॥

सुनि अनु कथन परस्पर होई ❀ पथिक समाज सोह सर सोई ॥ ३ ॥
घोर धार भृगुनाथ रिसानी ❀ घाट सुबंधु राम बरबानी ॥ ४ ॥

कथा सुनकर पीछै जो परस्पर बातें होती हैं, सोही उस नदीके किनारेका पथिकसमाज कहिये मार्गमें जानेवालोंकी भीडभाड़ है ॥३॥ श्रीपरशुरामजीका रिस इस नदीकी धारा है (जिसमें अनेक नावें फटगईं) और रामजीकी जो सुन्दर (भृगुजीको शांत करनेवाली) वाणी है वही सुन्दर घाट हैं ॥ ४ ॥

सानुज रामबिवाह उछाहू ❀ सो शुभ उमँग सुखद सबकाहू ॥ ५ ॥
कहत सुनत हरषहिं पुलकाहीं ❀ ते सुकृतीजन मुदित नहाहीं ॥ ६ ॥

भाइयोंसहित जो रघुनाथजीके विवाहकी उमंगें हैं वेही सबको सुख देनेवाली जलकी सुन्दर तरंगें हैं ॥ ५ ॥ कहते सुनतेमें जो प्रसन्न और पुलकायमान होते हैं, वेही पुण्यात्माजन मानों प्रसन्न हो स्नान करते हैं ॥ ६ ॥

रामतिलकहित मंगलसाजा ❀ पर्वयोग जनु जुरेउ समाजा ॥ ७ ॥
काई कुमति केकयीकेरी ❀ परी जासु फल विपति घनेरी ॥ ८ ॥

श्रीरामजीके राजतिलकके लिये जो मंगल सजाया गया है वही पर्वयोगपर मानों समाज जुड़ा है ॥ ७॥ केकईकी कुबुद्धि इस नदीकी काई है और उससे जो रामवनोवास, दशरथमरण आदि अत्यन्त विपत्तियाँ पड़ी हैं, वह उसका फल हैं ॥ ८ ॥

दो०-शमन अमित उतपात सब, भरत चरित जप याग ॥ ❀
कलि अघ खल अवगुण कथन, ते जल मल बक काग ॥५२॥ ❀

---

* रूपक.

---

(१) आनन्दको भवँर इसलिये कहा कि भंवर मनको अपनेमें डुबा लेता है; और बधाईको तरंग कहा क्यौंकि वह बाहर रहती है ऐसा भाव दीखता है. (२) राजा रानी और परिवारके सुकृतोंको भ्रमर कहनेसे यह भाव निकलता है–जैसे भ्रमर कमलका रस पीता है ऐसेही वेभी पुत्रका मुख चूमते हैं.

विपत्तिके पड़नेसे जो अनगिनती (रामवनगमन आदि) उत्पात हैं, उन सबको शांत करनेके लिये भरतजीका चरित्रही जप और यज्ञ है और कलिका पाप और दुष्टोंके अवगुणोंका जो कथन है वेही जलके मैल, वगुले और काग हैं ॥ ५२ ॥

चौ०-कीरति सरित छहूँ ऋतु रूरी ❀ समय सुहावनि पावन भूरी ॥ १ ॥
हिम हिमशैलसुता शिवव्याहू ❀ शिशिर सुखद प्रभुजन्मउछाहू ॥ २ ॥

यह कीर्तिरूपी नदी छओं ऋतुमें भरी रहती और समयपर अधिक सुन्दर और पवित्र होजाती है ॥१॥ शिवपार्वतीजीका विवाह हिम[1] ऋतु है और प्रभुके जन्मका उत्सव सुखदायक शिशिर[2]ऋतु है ॥२॥

बरनन रामविवाहसमाजू ❀ सो सुद मंगलमय ऋतुराजू ॥ ३ ॥
ग्रीषम दुसह राम बनगमनू ❀ पंथकथा खर आतपपवनू ॥ ४ ॥

रामचंद्रजीके विवाहके समाजका वर्णन आनन्द और मंगलयुक्त वसन्त[3] है ॥ ३ ॥ और रामजीका वनगमन कठिन ग्रीष्म[4] ऋतु है और मार्गकी कथा कड़ी, धूप और लू है ॥ ४ ॥

वर्षा घोरनिशाचररारी ❀ सुरकुलशालि सुमंगलकारी ॥ ५ ॥
रामराजसुख विनय बड़ाई ❀ विशद सुखद सोइ शरद सुहाई ॥ ६ ॥

भयंकर (रावण मेघनाद आदि) राक्षसोंकी लड़ाई वर्षा[5]ऋतु है; वह देवताओंके कुलरूपी धानोंकी सुन्दर मंगल करनेवाली है ॥ ५ ॥ और रामजीके राज्यमें जो सुख नीति और बड़ाई है वही सुन्दर सुख देनेवाली शरद[6]ऋतु है ॥ ६ ॥

सतीशिरोमणि सियगुणगाथा ❀ सोइ गुण अमल अनूपम पाथा ॥ ७ ॥
भरत सुभाउ सुशीतलताई ❀ सदा एकरस बरणि न जाई ॥ ८ ॥

सती स्त्रियोंकी शिरोमणि जनकनन्दिनीके गुणोंकी कथा (इस जलके) निर्मल और उपमारहित गुण हैं ॥ ७ ॥ भरतजीका स्वभावही सुन्दर शीतलता है और वह सदा एकसी रहती है और वरणी नहीं जासक्ती है ॥ ८ ॥

दो०-अवलोकनि बोलनि मिलन, प्रीति परस्पर हास ॥ ❀
भायप भलि चहुं बंधुकी, जल माधुरी सुवास ॥ ५३ ॥ ❀

---

(१) जैसे हिम ऋतुमें जल अथवा जाड़ेको देख भय लगता है वैसेही शिवजीके विवाहमें भूतप्रेतोंको देख स्त्रियां भयभीत हुईं. यथा-"विकटरूप जब रुद्रहिं देखा । अवलन उर भय भयेउ विशेखा."

(२) जैसा नाचरंग आदिका आनन्द शिशिर ऋतुमें होता है (क्योंकि होली आजाती है) वही रामजन्मोत्सव पर हुआ. यथा-दशरथ पुत्रजन्म सुनि काना । मानहु ब्रह्मानन्द समाना ॥ १ ॥ मृगमद चंदन कुंकुम सींचा । मची सकल वीथिन विच कीचा ॥ २ ॥

(३) जैसे वसंत ऋतुमें वृक्षोंपर नवीन पल्लव पुष्प और फल आते हैं वैसेही रानचन्द्रजीके विवाहमें जो लोगोंने नवीन २ वस्त्र पहिरे हैं वही मानो पल्लव हैं, और विवाहके समाजमें जो हास्य होता है वह मानो पुष्पोंका खिलना है, और विवाह हो जाना यह फलोंका विकास है-ऐसा सारांश दीखता है.

(४) जैसे ग्रीष्म ऋतुनें लोग कड़ी धूप और लूके कारण व्याकुल होजाते हैं और मरजाते हैं वैसेही रामवनगमनसे दशरथजीका मरण और परिजन पुरजन आदि लोगोंको वड़ी व्याकुलता हुई.

(५) जैसे वर्षा ऋतुमें मेघकी झड़ी लगती है वैसेही युद्धमें वाणोंकी झड़ी लगती है । मेघकी वर्षासे खेतोंका भला होता है, वाणोंकी वर्षासे राक्षस मरे, देवताओंको आनन्द हुआ. इसीलिये राक्षसोंकी रारको वर्षाऋतु कहा है.

(६) जैसे शरदऋतुमें आकाश तथा सरोवरोंके जल निर्मल हो जाते हैं, वैसेही रामराज्य निर्मल हो गया. उसमें कोई कष्ट न रहा सब ओर सुख फैलगया.

चारों भाइयोंका आपसमें देखना, बोलना, मिलना और सुन्दर भाईपना यह जलका मिठास और सुगंधि है ॥ ५३ ॥

चौ०–आरत बिनय दीनता मोरी ❀ लघुता ललित सुवारि न खोरी ॥ १ ॥
अदभुत सलिल सुनत गुणकारी ❀ आस पिआस मनोमलहारी ॥ २ ॥

मेरी लगातार विनती और (बुद्धि विद्या आदिकी) दीनताही सुन्दर जलकी हलकाई[१] और निर्मलताई है गदलाई नहीं ॥ १ ॥ (जैसे सरयूका नीर पीतेही सब पीर और संसारी आशाको दूर करता है ऐसेही) इस रामकथामें रामचरित्ररूपी जल बड़ा अनौखा है कि सुनतेही गुण करता है और आशारूपी प्यास और मनके विचारको दूर करनेवाला है ॥ २ ॥

राम सुप्रेमहि पोषत पानी ❀ हरत सकल कलिकलुष गलानी ॥ ३ ॥
भवश्रमशोषक तोषक तोषा ❀ शमन दुरित दुख दारिद दोषा ॥ ४ ॥

यह जल रघुनाथजीके सुन्दर प्रेमको पुष्ट करता है और कलियुगके सब पापोंकी ग्लानिको हरता है ॥ ३ ॥ संसारके आवागमनसे जो श्रम होताहै उसे सोखनेवाला है. अर्थात् जो इस जलका सेवन करै वह जन्ममरणसे छूट जाता है और जैसे रोगीको भोजनमें सन्तुष्टता होती है वैसेही इसके पान करनेसे संसारके व्यवहाररूपी रोगोंमें संतोष होता है अर्थात् फिर नहीं व्यापते हैं और कठिन दुख और दरिद्रताके दोषोंको हरता है ॥ ४ ॥

काम कोह मद मोह नसावन ❀ विमल विवेक बिराग बढ़ावन ॥ ५ ॥
सादर मज्जन पान कियेतें ❀ मिटहि पाप परिताप हियेतें ॥ ६ ॥

काम, क्रोध, मद और मोहका नाश करनेवाला और निर्मल ज्ञान और वैराग्यका बढ़ानेवाला है ॥ ५ ॥ और आदरपूर्वक स्नान और पान करनेसे पाप और संताप हृदयसे मिट जाते हैं ॥ ६ ॥

जिन यहिंबार न मानस धोए ❀ ते कायर कलिकाल विगोए ॥ ७ ॥
तृषित निरखि रविकर भव वारी ❀ फिरहिं मृगा जिमि जीव दुखारी ॥ ८ ॥

जिन्होंने इस पानीसे अपने मनको नहीं धोया उन कायरोंको कलिकालने बिगाड़ दिया है ॥७॥ जैसे प्यासके मारे हरिण सूर्यकी किरणोंसे (रेतीमें) उत्पन्न हुए मिथ्या जलको देखकर भटकते फिरते हैं, इसी प्रकार जीव दुखी फिरते हैं ॥ ८ ॥

दो०–मति अनुहारि सुवारि वर, गुणगण मन अन्हवाइ ॥* ❀
सुमिरि भवानी शंकरहिं, कह कवि कथा सुहाइ ॥ ५४ ॥ ❀

अपनी बुद्धिके अनुसार सुन्दर जलके श्रेष्ठ गुणोंके समूहमें अपने मनको स्नान कराकर और भवानीशंकरका स्मरण करके मैं कवि तुलसीदास मनहरण कथाको कहता हूं ॥ ५४ ॥

अब रघुपतिपदपंकरुह, हिय धरि पाइ प्रसाद ॥ * ❀
कहौं युगल मुनिवर्य वर, मिलन सुभग संवाद ॥ ५५ ॥ ❀

और उस कथामेंभी अब श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंको हृदयमें धरकर और उनकी प्रसन्नताको पाकर दोनों श्रेष्ठ मुनियोंके मिलानेका दोषरहित और मनोहर संवाद कहता हूं ॥ ५५ ॥

---

* स्मरणालंकार.

---

(१) जिस जलमें हलकाई होती है उसका समीलोग आदरसे पान करते हैं सोही बात यहां स्पष्ट है, कि जो इस पुस्तकमें गुसाईंजी अपनी विनती और दीनता न लिखते तो रामायणका ऐसा प्रचार न होता कि जैसा अब घर २ में होरहाहै और वैष्णव और शैव सभी बिना पक्षपातके इसको बड़े आदरसे पढ़ते हैं.

भरद्वाज जिमि प्रश्न किय, याज्ञवलिक मुनिपाय ॥*
प्रथम मुख्य संवादसोइ, कहिहौं हेतु बुझाय ॥ ५६ ॥

जिस प्रकार भरद्वाज मुनिने याज्ञवल्क्य मुनिको पाकर प्रश्न किया था, उसी प्रकार मुख्य संवादको कारण समझाकर प्रथम कहूंगा ॥ ५६ ॥

चौ०-भरद्वाज मुनि बसहिं प्रयागा ❀ जिनहिं रामपद अति अनुरागा ॥ १ ॥
तापस-शम-दम-दया-निधाना ❀ परमारथपथ परम सुजाना ॥ २ ॥

भरद्वाज मुनि प्रयागराजमें निवास करते हैं और जिनकी रघुनाथजीके चरणोंमें अत्यन्त प्रीति है ॥१॥ तप-शम-दम और दया इनके स्थान अर्थात् करनेवाले और परलोकके मार्गमें बड़े चतुर हैं ॥ २ ॥

माघ मकरगत रवि जब होई ❀ तीरथपतिहिं आव सब कोई ॥ ३ ॥
देव दनुज किन्नर नर श्रेणी ❀ सादर मज्जहिं सकल त्रिवेणी ॥ ४ ॥

माघमासमें जब मकर राशिपर सूर्य आता है, अर्थात् मकरकी संक्रान्ति होती है तब सब (ऋषि मुनि देव दानव गन्धर्व) तीर्थराजको आते हैं ॥ ३ ॥ और देवता, दैत्य, किन्नर और मनुष्योंकी टोलियांकी टोलियां सब भक्तिपूर्वक त्रिवेणीमें स्नान करती हैं ॥ ४ ॥

पूजहिं माधवपद जलजाता ❀ परसि अछयवट हर्षित गाता ॥ ५ ॥
भरद्वाजआश्रम अति पावन ❀ परमरम्य मुनिवरमनभावन ॥ ६ ॥

और (सब) वेनीमाधवके चरणकमलोंका पूजन करते हैं और प्रसन्न चित्त होकर अक्षयवटको स्पर्श करते हैं ॥ ५ ॥ वहाँ अधिक पवित्र अत्यंत सुन्दर मुनिजनोंके मनको हरनेवाला ऐसा भरद्वाज मुनिका आश्रम है ॥ ६ ॥

तहाँ होइ मुनिऋषयसमाजा ❀ जाहिं जे मज्जन तीरथराजा ॥ ७ ॥
मज्जहिं प्रात समेत उछाहा ❀ कहहिं परस्पर हरिगुणगाहा ॥ ८ ॥

उस आश्रममें उन मुनि और ऋषियोंका समाज होता है कि जो तीर्थराजमें स्नान करने जाते हैं ॥७॥ प्रातःकाल बड़ी लालसासे स्नान करते हैं और आपसमें भगवानके गुणोंकी कथा कहते हैं ॥ ८ ॥

दो०-ब्रह्मनिरूपण धर्मविधि, वरणहिं तत्त्वविभाग ॥
कहहिं भक्ति भगवंतकी, संयुत ज्ञान विराग ॥ ५७ ॥

ब्रह्मनिरूपण अर्थात् वेदांत, धर्मविधि कहिये कर्मकाण्ड मीमांसा और तत्त्वविभाग अर्थात् सांख्यशास्त्र और ज्ञान और वैराग्यकी रीतिसे भगवानकी भक्तिका वर्णन करते हैं ॥ ५७ ॥

चौ०-इहि प्रकार भरि मकर नहाहीं ❀ पुनि सब निज निज आश्रम जाहीं ॥ १ ॥
प्रति संवत असि होइ आनंदा ❀ मकरमज्ज गवनहिं मुनिवृंदा ॥ २ ॥

---

* भाविक.

---

(१) गूढ़ार्थदीपिकामें देखो.

(२) "माघे मासि गमिष्यन्ति गंगायामुनसंगमम् । ब्रह्मविष्णुमहादेवरुद्रादित्यमरुद्गणाः ॥ १ ॥
प्रयागे माघमासे तु त्र्यहं स्नानस्य यद्भवेत् । नाश्वमेधसहस्रेण तत्फलं लभते भुवि ॥ २ ॥"
अर्थ सरल है.

(३) माघमासमें प्रातःकालके स्नानका बड़ा फल है. जैसा शास्त्रमें लिखा है कि—"माघमासे रटन्त्यापः किंचिदभ्युदिते रवौ । ब्रह्मघ्नं वा सुरापं वा तं पतन्तं पुनीमहे ॥१॥" अर्थात् जल कहता है कि माघमासमें जो सूर्योदयपर जलमें स्नान करता है वह ब्रह्मघाती हो, वा सुरापान करनेवाला हो, उसे मैं पवित्र करताहूं ॥१॥

इस प्रकार मकरभर स्नान करते हैं और फिर सब अपने २ आश्रमको जाते हैं ॥ १॥ हरएक सम्वतमें इस प्रकार आनन्द होता है कि मकरका स्नान कर मुनियोंके समूह जहाँके तहाँ चले जाते हैं ॥२॥

एकबार भरि मकर नहाए ❀ सब मुनीश आश्रमनि सिधाए ॥ ३ ॥
याज्ञवल्क्य मुनि परम बिबेकी ❀ भरद्वाज राखेउ पदटेकी ॥ ४ ॥

एकबार मकरभर स्नानकर जब सब मुनीश्वर अपने २ आश्रमोंको चले गये ॥ ३ ॥ तब भरद्वाज मुनिने बड़े ज्ञानी अर्थात् रामचरित्रको सुन्दर रीतिसे जाननेवाले याज्ञवल्क्य मुनिको (प्रेमके कारण) पद टेकी कहिये हठसे रखलिया ॥ ४ ॥

सादर चरणसरोज पखारे ❀ अति पुनीत आसन बैठारे ॥ ५ ॥
करि पूजा मुनि सुजस बखानी ❀ बोले अति पुनीत मृदुबानी ॥ ६ ॥

और आदरसे उनके चरणकमलोंको धोया और उन्हें अधिक पवित्र कहिये कुशाके आसनपर बैठाया ॥५॥ फिर पूजन करके और मुनिके सुन्दर यशको बखानकर अति पवित्र और कोमलवाणीसे बोले ॥६॥

नाथ एक संशय बहु मोरे ❀ करतल बेदतत्त्व सब तोरे ॥ ७ ॥
कहत मोहि लागत भय लाजा ❀ जो न कहौं बड़ होइ अकाजा ॥ ८ ॥

हे नाथ ! मुझे एक बड़ा भारी संशय है और आपको बेदका सब तत्त्व हथेलीपर होरहा है ॥ ७ ॥ परन्तु मुझे कहतेमें [1]भय और [2]लज्जा लगती है और जो नहीं कहताहूं तो बड़ी हानि होती है ॥ ८ ॥

दो०–संत कहहिं अस नीति प्रभु, श्रुति पुराण जो गाव ॥ ❀
होइ न विमल विवेक उर, गुरुसन किये दुराव ॥ ५८ ॥ ❀

हे प्रभो ! संतजन ऐसी नीति कहते हैं और वेद तथा पुराणमें भी जो कहा है (वह यही है) कि गुरुके साथ छिपाव करनेसे हृदयमें निर्मल ज्ञान नहीं होता है ॥ ५८ ॥

चौ०–अस बिचार प्रगटौं निज मोहू ❀ हरहु नाथ करि जन पर छोहू ॥ १ ॥
राम नाम कर अमित प्रभावा ❀ संत पुराण उपनिषद गावा ॥ २ ॥

ऐसा विचार कर अपने अज्ञानको प्रगट करताहूं. आप इस जनपर कृपा करके (उस अज्ञानको) दूर करिये ॥१॥ रामके नामका बड़ा प्रभाव है ऐसा सन्तजनोंने पुराण और उपनिषदोंमें कहा है ॥२॥

संतत जपत शंभु अविनाशी ❀ शिव भगवान ज्ञानगुणराशी ॥ ३ ॥
आकर चारि जीव जग अहहीं ❀ काशीमरत परम पद लहहीं ॥ ४ ॥

और अविनाशी कल्याणस्वरूप तथा ज्ञान और गुणकी राशि ऐसे [3]भगवान् शिवजीभी (उस रामनामको) निरंतर अर्थात् दिनरात जपते हैं ॥ ३ ॥ और [4]चार प्रकारके जीव इस संसारमें हैं वे काशीमें मरते हैं और परमपद अर्थात् मुक्तिको पाते हैं ॥ ४ ॥

सोपि राममहिमा मुनिराया ❀ शिव उपदेश करत करि दाया ॥ ५ ॥
राम कवन प्रभु पूछौं तोही ❀ कहहु बुझाय कृपानिधि मोही ॥ ६ ॥

सो हे मुनिश्रेष्ठ ! वह भी रामकीही महिमा है, शिवजी कृपा करके यह उपदेश करते हैं॥ ५॥ सो हे प्रभो ! मैं आपसे पूछताहूं कि कोनसे राम हैं ? कृपानिधे ? मुझे समझा कर कहिये ॥ ६ ॥

---

(१) भय इसलिये होता है कि कहीं याज्ञवल्क्यजी यह न समझें कि परीक्षा लेते हैं. (२) लाज इस लिये होती है कि वे अपने चित्तमें यह न समझें कि यह इतना वृद्ध है और कुछ नहीं जानता.

(३) जो छः ऐश्वर्ययुक्त हो उसे भगवान् कहते हैं जैसा कहा है–दोहा "श्रीऐश्वर्य विराग अरु मोक्ष, धर्म यश ज्ञान । ए षड भगकी खानि जो, तिहि कहिये भगवान् ॥ १ ॥ (४) गूढ़ार्थदीपिका देखो.

एक राम अबधेश कुमारा ❀ तिनकर चरित विदित संसारा ॥ ७ ॥
नारिविरह दुख लहेउ अपारा ❀ भएउ रोष रण रावण मारा ॥ ८ ॥

एक तौ राम अवधके राजा (दशरथजी) के पुत्र हैं और उनका चरित्र संसारमें विदित है ॥७॥ कि उन्होंने स्त्रीके विरहका बड़ा भारी दुःख सहा है और क्रोधित होकर संग्राममें रावणको मारा है ॥८॥

दो०–प्रभु सोइ राम कि अपर कोउ, जाहि जपत त्रिपुरारि ॥ ❀
सत्य धाम सर्वज्ञ तुम, कहहु विवेक विचारि ॥ ५९ ॥ ❀

वही (कामक्रोधयुक्त) राम हैं कि कोई दूसरे हैं ? कि जिनको शिवजी जपते हैं. आप सत्यके स्थान हैं और सब जानते हैं; ज्ञानसे विचार कर कहिये ॥ ५९ ॥

चौ०–जैसें मिटै मोर भ्रम भारी ❀ कहहु सो कथा नाथ बिस्तारी ॥ १ ॥
याज्ञवल्क्य बोले मुसुकाई ❀ तुमहिं विदित रघुपति प्रभुताई ॥ २ ॥

और जिस प्रकार मेरा भारी भ्रम मिटै हे नाथ ! उस कथाका विस्तारपूर्वक वर्णन करिये ॥१॥ याज्ञवल्क्यजी मुसकुराकर बोले कि तुमको श्रीरामजीकी महिमा (सब अच्छी रीतिसे) विदित है ॥२॥

रामभक्त तुम मन क्रम बानी ❀ चतुराई तुम्हारि मैं जानी ॥ ३ ॥
चाहहु सुनै रामगुण गूढ़ा ❀ कीन्हेऊ प्रश्न मनहुँ अतिमूढ़ा ॥ ४ ॥

क्योंकि, मन वाणी और कर्मसे तुम रामके भक्त हो और मैंने तुमारी चतुरता जानलीनी ॥३॥ तुम रामजीके गूढ़ कहिये जो छिपे हुये हैं और किसीको मालूम नहीं ऐसे गुणोंको सुना चाहते हो और इस प्रकार प्रश्न किया है, मानों कोई महामूर्ख करता है ॥ ४ ॥

तात सुनहु सादर मन लाई ❀ कहहुँ रामकी कथा सुहाई ॥ ५ ॥
महामोह महिषेश विशाला ❀ रामकथा कलि कालि कराला ॥ ६ ॥

हे प्यारे ! तुम आदरपूर्वक मन लगाकर सुनो. मैं रामजीकी सुन्दर कथाको कहता हूं ॥५॥ कलियुगमें रघुनाथजीकी कथा महा अज्ञानरूपी बड़े महिषासुरके मारनेके लिये भयंकर कालिका है ॥ ६ ॥

रामकथा शशिकिरणसमाना ❀ संत चकोर करिहिं तेहि पाना ॥ ७ ॥
ऐसे संशय कीन्ह भवानी ❀ महादेव तब कहा बखानी ॥ ८ ॥

फिर रामकथा चन्द्रमाकी किरणके समान है और उसको संतरूपी चकोर पान करते हैं ॥ ७ ॥ और ऐसेही सन्देह पार्वतीजीने करे थे, तब महादेवजीने समझाकर कहाथा ॥ ८ ॥

दो०–कहौं सो मतिअनुहारि अब, उमाशंभुसंवाद ॥ ❀
भयेउ समय जेहि हेतु जिहि, सुनि मुनि मिटहिं विषाद ॥६०॥ ❀

सो अब मैं अपनी मतिके अनुसार पार्वती और शिवजीका वही संवाद कहताहूं. कि जिस समय और जिस कारण वह हुआ और जिसके सुननेसे मुनियोंका विषाद कहिये संदेहोंसे उत्पन्न हुआ दुख मिट जाता है ॥ ६० ॥

चौ०–एकवार त्रेतायुगमाहीं ❀ शंभु गये कुंभज ऋषिपाहीं ॥ १ ॥
संग सती जगजननि भवानी ❀ पूजे ऋषि अखिलेश्वर जानी ॥ २ ॥

एकवार त्रेतायुगमें महादेवजी कुंभज ऋषिके पास गये ॥ १ ॥ उनके संगमें सती जगतकी माता पार्वतीजीभी थीं. ऋषिने उन्हें सबका ईश्वर जानकर पूजा की ॥ २ ॥

रामकथा मुनिवर्य बखानी ❀ सुनी महेश परम सुख मानी ॥ ३ ॥
ऋषि पूछा हरिभक्ति सुहाई ❀ कही शंभु अधिकारी पाई ॥ ४ ॥

फिर मुनिराजने रामकथा विस्तारसे कही और महादेवजीने अत्यन्त प्रीतिसे सुनी ॥ ३ ऋषिने भगवान्की सुन्दर भक्ति पूछी और शंभुने अधिकारी पाकर कही ॥ ४ ॥

कहत सुनत रघुपतिगुणगाथा ❀ कछु दिन तहाँ रहे गिरिनाथा ॥ ५ ॥
मुनिसन विदा मांगि त्रिपुरारी ❀ चली भवन सँग दक्षकुमारी ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीके गुणोंकी कथाको कहते सुनते महादेवजी कुछ दिनतक वहां रहे ॥५॥ फिर महादेवजी मुनिसे विदा मांगकर और दक्षकुमारी पार्वतीजीको साथ लेकर अपने स्थानको चले ॥ ६ ॥

तेहि अवसर भंजन महिभारा ❀ हरि रघुवंश लीन्ह अवतारा ॥ ७ ॥
पिता वचन तजि राज उदासी ❀ दंडक बन विचरत अविनाशी ॥ ८ ॥

उसी समय पृथ्वीका भार उतारनेके लिये विष्णु भगवानने रघुके वंशमें अवतार लियाथा ॥ ७ ॥ और पिताके वचनसे राजको छोड़, उदास हो अविनाशी रामचन्द्र दण्डकवनमें बिचरते थे ॥ ८ ॥

दो०-हृदय विचारत जात हर, केहि विधि दरशन होय ॥ ❀
गुप्तरूप अवतरेउ प्रभु, गये जान सब कोय ॥ ६१ ॥ ❀

महादेवजी हृदयमें विचारते जाते थे कि किस प्रकारसे (रामजीका) दरशन होय? भगवान् गुप्तरूपसे प्रगट हुए हैं यह बात सब कोई जानगये हैं ॥ ६१ ॥

सो०-शंकर उर अति छोभ, सती न जानहि मर्म सोइ ॥ ❀
तुलसी दरशन लोभ, मनडर लोचन लालची ॥ ११ ॥ ❀

महादेवजीके हृदयमें अत्यन्त असमंजस था, (सो इस बातका था कि न तो जाना बनता था और न विना दर्शन संतोष होता था) और सतीभी उस मर्मको नही जानतीथीं. तुलसीदासजी कहते हैं कि दरशनका लोभ था पर मनमें डर भी था कि कोई जान न ले और नेत्रभी दर्शनके लिये ललचा रहेथे ११

चौ०-रावणमरण मनुज कर जाँचा ❀ प्रभु विधिवचन कीन चह साँचा ॥ १ ॥
जो नहीं जाउँ रहै पछतावा ❀ करत विचार न बनत बनावा ॥ २ ॥

रावणका मरना मनुष्यके हाथसे निश्चय हुआ है और भगवान् विधाताका वचन सत्य किया चाहते हैं ॥ १ ॥ जो (दर्शनके लिये) नहीं जाता हूं तो पछतावा रहता है ऐसा विचार करते हैं पर वनाव नहीं वनता ॥ २ ॥

इहिविधि भए शोचबश ईशा ❀ ताही समय जाइ दशदीशा ॥ ३ ॥
लीन्ह नीच मारीचहि संगा ❀ भएउ तुरत सोइ कपट कुरंगा ॥ ४ ॥

इस प्रकार जब महादेवजी सोच करने लगे उसी समय रावणने जाकर ॥ ३ ॥ नीच मारीचको संग लिया और वह तुरंत कपटका मृग बनगया ॥ ४ ॥

करि छल मूढ़ हरी बैदेही ❀ प्रभु प्रताप उर बिदित न तेही ॥ ५ ॥
मृगवधि बंधुसहित हरि आए ❀ आश्रम देखि नयन जल छाए ॥ ६ ॥

उस मूर्खने छलकरके जनकनन्दिनीको हरा. क्यौंकि वह प्रभुका प्रताप अपने जीमें नहीं जानता था ॥५॥ मृगको मारकर रामजी भाईके साथ आये और (खाली) आश्रम देखकर नेत्रोंमें आंसू भरलाये ॥६॥

---

(१) आंसू भरनेका यह कारण कि विनाखीके संसारमें गृहस्थ नहीं चलसक्ता अथवा इसलिये कि संबंधियोंमें हमारे अच्छे कुलकी निन्दा होगी और हमें लज्जित होना पड़ेगा.

विरहविकल नरइव रघुराई ❀ खोजत विपिन फिरत दोउ भाई ॥ ७ ॥
कबहूँ योगवियोग न जाके ❀ देखा प्रगट विरह दुख ताके ॥ ८ ॥

और रामचन्द्रजी मनुष्यके समान विरहसे व्याकुल हुए और दोनों भाई वनमें ढूंढते फिरने लगे ॥ ७ ॥ जिनके कभी योग वियोग नहीं था उसको विरहका दुख प्रगट देखनेमें आया ॥ ८ ॥

दो०-अति विचित्र रघुपतिचरित, जानहिं परम सुजान ॥ ❀
जे मतिमंद विमोहवश, हृदय धरहिं कछु आन ॥ ६२ ॥ ❀

रामचन्द्रजीका चरित्र बड़ा विचित्र है. उसको बड़े २ भक्तजन जानते हैं (कि उन्होंने देवताओंके हित और राक्षसोंके नाशके लिये अवतार लियाहै. जैसा कहाहै कि "गिरिजा सुनहु रामकी लीला । सुरहित दनुजविमोहन शीला") और जो मूर्ख हैं और मोहके वशमें पड़े हुए हैं, वे अपने हृदयमें कुछ औरका औरही समझते हैं (वे कहते हैं कि जो राम परब्रह्म होते तौ जानकीजीको क्यौं ढूंढते फिरते ?) जैसा कहा है कि "खोजत सो कि अज्ञ इव नारी । ज्ञान धाम श्रीपति असुरारी," सो यहां गुसाईंजीकाही वचन ठीक मिलता है; यथा-"उमा राम गुणगूढ़, पंडित मुनि पावहिं विरति; पावहिं मोह विमूढ़, जे हरिविमुख न धर्म रति ॥" पुनि यहां एक लोक दृष्टान्तभी कहते हैं कि जैसे पवनसे जलमें शीतलता आती है और अग्निमें अधिक प्रचण्डता आती है ऐसेही रामचरित्र से भक्तजनोंको सुन्दर शिक्षा होती है और मूर्खोंको मोह होता है ॥ ६२ ॥

चौ०-शंभु समय तेहि रामहिं देखा ❀ उपजा हिय अति हर्ष विशेखा ॥ १ ॥
भरि लोचन छबि सिंधु निहारी ❀ कुसमय जानि न कीन्ह चिन्हारी ॥ २ ॥

महादेवजीने उस समय रामचन्द्रजीको देखा और उनके हृदयमें अत्यन्त हर्ष उत्पन्न हुआ॥१॥नेत्रभर कर कान्तिके समुद्र रामजीका दर्शन किया, किन्तु कुसमय जानकर उनका जानना प्रगट नहीं किया॥२॥

जय सच्चिदानंद जगपावन ❀ असकहि चलेउ मनोज नसावन ॥ ३ ॥
चले जात शिव सतीसमेता ❀ पुनि पुनि पुलकित कृपानिकेता ॥ ४ ॥

हे सच्चिदानन्द ! जगत्को पावन करनेवाले ! आपकी जय होय ! ऐसा कहकर कामको भस्म करनेवाले महादेवजी चले ॥ ३ ॥ कृपाके स्थान शिवजी वारंवार पुलकायमान होते हुए सतीजीके साथ २ चले जाते थे ॥ ४ ॥

सती सो दशा शंभुकी देखी ❀ उर उपजा संदेह विशेखी ॥ ५ ॥
शंकर जगतवंद्य जगदीशा ❀ सुरनर मुनि सब नावत सीसा ॥ ६ ॥

सतीजीने महादेवजीकी वह दशा देखी और हृदयमें बड़ा संदेह हुआ कि ॥५॥ शंकर जिनको जगत् वंदना करता है और जगतके स्वामी हैं और देवता, मनुष्य और मुनि सब उनको शिर नवाते हैं ॥६॥

तिन्ह नृपसुतहिं कीन्ह परणामा ❀ कहि सच्चिदानंद परधामा ॥ ७ ॥
भये मगन छबि तासु बिलोकी ❀ अजहु प्रीति उर रहत न रोकी ॥ ८ ॥

उन्होंने राजपुत्रको सच्चिदानन्द और परधाम कहिये परब्रह्म अथवा पर कहिये मोक्ष उसके धाम कहिये स्थान अर्थात् मोक्षके देनेवाले ऐसा कहकर प्रणाम किया ॥ ७ ॥ और उनकी छबि देखकर ऐसे मगन हो गये कि अबतक हृदयमें प्रीतिको नहीं रोक सकते हैं ॥ ८ ॥

दो०-ब्रह्म जो व्यापक विरज अज, अकल अनीह अभेद ॥ ❀
सोकि देह धरि होय नर, जाहि न जानत वेद ॥ ६३ ॥ ❀

जो ब्रह्म व्यापक मायारहित, जन्मरहित, कलारहित, चेष्टारहित और भेदरहित है; सो किस प्रकार देह धरकर मनुष्य हो सक्ता है ? जिसको वेदभी नहीं जानता है ॥ ६३ ॥

चौ०–विष्णु जो सुरहित नरतनुधारी ❀ सोउ सर्वज्ञ यथा त्रिपुरारी ॥ १ ॥
खोजत सोकि अज्ञ इव नारी ❀ ज्ञानधाम श्रीपति असुरारी ॥ २ ॥

जिन विष्णु भगवानने देवताओंके हितके लिये मनुष्यका रूप धारण किया है, सो तौ शंकरके समान सर्वज्ञ हैं ॥ १ ॥ और ज्ञानके स्थान, लक्ष्मीके पति और असुरोंके शत्रु होकर शोकसे विकल मूर्खके समान स्त्रीको खोजते फिरते हैं. (यह ठीक नहीं) ॥ २ ॥

शंभु गिरा पुनि वृथा न होई ❀ शिव सर्वज्ञ जान सब कोई ॥ ३ ॥
अस संशय मन भयउ अपारा ❀ होय न हृदय प्रबोध प्रचारा ॥ ४ ॥

और फिर महादेवजीकी वाणीभी मिथ्या नहीं हो सक्ती है. क्योंकि सब कोई शिवजीको सर्वज्ञ जानते हैं ॥ ३ ॥ ऐसा बहुतसा सन्देह मनमें हुआ; और हृदयमें विशेष ज्ञान नहीं होता ॥ ४ ॥

यद्यपि प्रगट न कहेउ भवानी ❀ हर अंतरजामी सब जानी ॥ ५ ॥
सुनहु सती तब नारिसुभाऊ ❀ संशय अस न धरिय उर काऊ ॥ ६ ॥

और यद्यपि पार्वतीजीने प्रकट नहीं कहा, किन्तु अंतर्यामी महादेवजीने सब जान लिया (और कहने लगे कि) ॥ ५ ॥ हे सती ! सुनों तुमारा स्त्रीका स्वभाव है, ऐसा किसीका सन्देह हृदयमें नहीं करना चाहिये ॥ ६ ॥

जासु कथा कुंभज ऋषि गाई ❀ भक्ति जासु मैं मुनिहि सुनाई ॥ ७ ॥
सोइ मम इष्टदेव रघुवीरा ❀ सेवत जाहि सदा मुनि धीरा ॥ ८ ॥

जिनकी कथा कुम्भज ऋषिने गाई और जिनकी भक्ति मैंने मुनिको सुनाई ॥ ७ ॥ वही रामचन्द्र मेरे इष्टदेव हैं, कि जिनकी सेवा मुनिराज सर्वदा करते हैं ॥ ८ ॥

छं०–मुनि धीर योगी सिद्ध संतत विमल मन जेहि ध्यावहीं ॥ ❀
कहि नेतिनिगम पुराण आगम जासु कीरति गावहीं ॥ ❀
सोइ राम व्यापक ब्रह्म भुवन निकाय पति मायाधनी ॥ ❀
अवतरेउ अपने भक्तहित निज तंत्र नित रघुकुलमनी ॥ २ ॥ ❀

मुनि धीर (व्यास पराशर आदि) योगी (कपिल आदि) सिद्ध (शुकसनकादि) निर्मल अंतःकरणसे जिनका ध्यान सर्वदा करते हैं और (चारों) वेद (अठारहों) पुराण, (छओं) शास्त्र जिसकी कीर्तिको नेति २ अर्थात् अनन्त हैं २ ऐसा कह कर गाते हैं, वही रामजी सर्वव्यापक, सम्पूर्ण ब्रह्माण्डोंके स्वामी, मायाके (कि जिससे ब्रह्मादि[1] देवता मोहित हो रहे हैं उसके) स्वामी, और रघुकुलके शिरोमणिने अपने भक्तोंके लिये अपनी इच्छासे अवतार लिया है ॥ २ ॥

सो०–लाग न उर उपदेश, यदपि कहेउ शिव बार बहु ॥ ❀
बोले बिरस महेश, हरिमाया बल जानि जिय ॥ १२ ॥ ❀

यद्यपि शिवजीने बहुत बार समझाया, परंतु पार्वतीजीके हृदयमें उपदेश नहीं लगा, तब महादेवजी भगवान्‌की मायाको चित्तमें प्रबल जानकर उकताकर बोले कि– ॥ १२ ॥

---

(१) जैसे कहा है कि "रुद्रं समाश्रिता देवा रुद्रो ब्रह्माणमाश्रितः । ब्रह्मा समाश्रितो नित्यं नाऽहं कंचिदुपाश्रितः ॥ १ ॥" अर्थात् सब देवता महादेवजीके आश्रित हैं, महादेवजी ब्रह्माके आश्रित हैं और ब्रह्मा मेरे आश्रित हैं और मैं किसीके आश्रित नहीं हूं.

चौ०-जो तुह्मरे मन अति संदेहू ❀ तो किन जाइ परीक्षा लेहू ॥ १ ॥
तबलगि बैठि रहौं बटछाहीं ❀ जबलगि तुम ऐहहु मोहि पाहीं ॥ २ ॥

जो तुमारे मनमें अधिक सन्देह है तौ जाकर परीक्षा क्यौं नहीं लेती हो ? ॥ १ ॥ और जबतक तुम लौटकर मेरेपास आओगी तबतक मैं वटकी छांहमें बैठा रहूंगा ॥ २ ॥

जैसें जाइ मोह भ्रम भारी ❀ करहु सो यतन विवेक विचारी ॥ ३ ॥
चली सती शिव आयसु पाई ❀ करहि विचार करौं का माई ॥ ४ ॥

और जिसप्रकार यह बड़ा मोहका भ्रम जावै सो यतन ज्ञानसे विचार कर करो ॥ ३ ॥ सती शिवजीकी आज्ञा पाकर चलीं और विचार करती जातीं थीं कि हे माई ! क्या करूं ? ॥ ४ ॥

उहाँ शंभु अस मन अनुमाना ❀ दक्षसुता कहँ नहिं कल्याना ॥ ५ ॥
मोरे कहेउ न संशय जाहीं ❀ विधि विपरीत भलाई नाहीं ॥ ६ ॥

और वहाँ महादेवजीने मनमें ऐसा अनुमान किया कि पार्वतीजीका कल्याण नहीं है ॥ ५ ॥ मेरे कहनेपर भी जो संशय नहीं जाते हैं तौ विधाता उलटा है और भलाई नहीं दीखतीहै ॥ ६ ॥

होइहि सोइ जो राम रचि राखा ❀ को करि तर्क बढ़ावहि साखा ॥ ७ ॥
अस कहि लगे जपन हरिनामा ❀ गई सती जहँ प्रभु सुखधामा ॥ ८ ॥

क्यौंकि वही होगा जो रामने रच रक्खा है, कौन वादविवाद करके घटा बढ़ा सक्ता है ॥ ७ ॥ ऐसा कहकर (शिवजी) भगवानका नाम जपने लगे और सती पार्वती वहां गईं कि जहां सुखके धाम प्रभु (रामचन्द्र) थे ॥ ८ ॥

दो०-पुनि पुनि हृदय विचार करि, धरि सीता कर रूप ॥ ❀
आगे हुइ चलि पंथ तेहि, जेहि आवत नरभूप ॥ ६४ ॥ ❀

वारंवार हृदयमें विचारकर और सीताजीका रूप धरकर आगे होकर उस मार्गसे चलीं कि जिससे राजपुत्र आ रहे थे ॥ ६४ ॥

चौ०-लक्ष्मण दीख उमा कृतवेषा ❀ चकित हृदय भ्रम भएउ विशेषा ॥ १ ॥
कहि न सकत कछु अति गंभीरा ❀ प्रभु प्रभाव जानत मतिधीरा ॥ २ ॥

लक्ष्मणजीको पार्वतीजीका बना हुआ वेश दीखा कि जिससे चकित हुए और उनके मनमें बड़ा भ्रम हुआ ॥१॥ पर कुछ कह नहींसके क्यौंकि बड़े गम्भीर और बुद्धिमान् हैं और प्रभुका प्रभाव जानते हैं॥२॥

सती कपट जानेउ सुरस्वामी ❀ समदरशी सब अंतरजामी ॥ ३ ॥
सुमिरत जाहि मिटै अज्ञाना ❀ सोइ सर्वज्ञ राम भगवाना ॥ ४ ॥

फिर सतीजीका कपट देवताओंके स्वामी (रघुनाथजी) ने जाना. क्यौंकि वे सबको समान देखनेवाले और सबके घट २ की जानते हैं ॥ ३ ॥ जिनके स्मरण करनेसे अज्ञान मिट जाता है, यह वेही सर्वज्ञ भगवान् राम हैं ॥ ४ ॥

सती कीन्ह चह तहउँ दुराऊ ❀ देखहु नारिसुभावप्रभाऊ ॥ ५ ॥
निज मायाबल हृदय बखानी ❀ बोले बिहँसि राम मृदुबानी ॥ ६ ॥

सती वहांभी छिपाव किया चाहती हैं. देखो स्त्रीके सुभावका प्रभाव ! ॥ ५ ॥ अपनी मायाके बलको हृदयमें विचारकर रामजी हँसकर कोमल वाणी बोले ॥ ६ ॥

जोरि पाणि प्रभु कीन्ह प्रणामू ❀ पितासमेत लीन्ह निज नामू ॥ ७ ॥
कहेउ बहोरि कहाँ वृषकेतू ❀ विपिन अकेलि फिरति केहिहेतू ॥ ८ ॥

प्रभुने हाथ जोड़कर प्रणाम किया और पितासमेत अपना नाम वताया. अर्थात् यह कहा कि मैं दशरथका पुत्र हूं और मेरा नाम राम है॥ ७॥ फिर कहा कि [1]महादेवजी कहां हैं और तुम वनमें अकेली किसलिये फिरती हो? ॥ ८॥

दो०–रामवचन मृदु गूढ़ सुनि, उपजा अति संकोच ॥ ❀
सती सभीत महेश पहँ, चली हृदय वड़ शोच ॥ ६५ ॥ ❀

रामजीके कोमल और गूढ़ वचन सुनकर मनमें वड़ा संकोच हुआ और सतीजी [2]डरतीं २ शिवजीके पास चलीं. क्योंकि मनमें वड़ा [3]सोच था कि ॥ ६५ ॥

चौ०–मैं शंकर कर कहा न माना ❀ निज अज्ञान रामपहँ आना ॥ १ ॥
जाइ उतर अब देहौं काहा ❀ उर उपजा अति दारुण दाहा ॥ २ ॥

मैंने शंकरका कहा नहीं माना और अपने अज्ञानसे रामजीके पास आई ॥ १॥ अव जाकर क्या उत्तर दूंगी (यह सोच २ कर) हृदयमें वड़ी दुस्सह अर्थात् जो सही न जाय ऐसी जलन होनेलगी २

जाना राम सती दुख पावा ❀ निज प्रभाव कछु प्रगट जनावा ॥ ३ ॥
सती दीख कौतुक मग जाता ❀ आगे राम सहित सिय भ्राता ॥ ४ ॥

रामजीने यह जाना कि सतीने मनमें दुखपाया इसलिये अपना कुछ प्रभाव प्रकट जताया ॥३॥ सतीने मार्गमें जाते हुए क्या कौतुक देखा कि आगे रामजी सीता और लक्ष्मणजीसहित जारहेहैं ॥४॥

फिरि चितवा पाछे प्रभु देषा ❀ सहित वंधु सिय सुंदर वेषा ॥ ५ ॥
जहँ चितवति तहँ प्रभु आसीना ❀ सेवहिं सिद्ध मुनीश प्रवीना ॥ ६ ॥

फिर पीछे की ओर देखा तो प्रभु रघुनाथजीको भाई और सुन्दर वेष किये सीताजीसहित देखा ॥५॥ जहां सती देखतीं हैं, वहां प्रभु विराजमान हैं और चतुर सिद्ध और ऋषि मुनि सेवा कर रहेहैं ॥६॥

देखे शिव विधि विष्णु अनेका ❀ अमित प्रभाव एकतें एका ॥ ७ ॥
वंदत चरण करत प्रभुसेवा ❀ विविध वेष देखे सब देवा ॥ ८ ॥

और अनेक शिव, ब्रह्मा और विष्णु देखे कि जिनका प्रभाव एकसे एकका अधिक था ७ और भगवानके चरणोंमें वन्दना करते हुए और प्रभुकी सेवा करते हुए नानाप्रकारके वेश वनाये सम्पूर्ण देवता देखे ८

दो०–सती विधात्री इंदिरा, देखीं अमित अनूप ॥ ❀
जेहि जेहि वेष अजादि सुर, तेहि तेहि तनुअनुरूप ॥ ६६ ॥ ❀

सतीने सरस्वती और लक्ष्मीको परम सुन्दर उपमारहित जिस २ वेशमें ब्रह्मादिक देवता थे उन्हीं उनके शरीरके अनुसार उन्हें देखा ॥ ६६ ॥

चौ०–देखे जहँ तहँ रघुपति जेते ❀ शक्तिनसहित सकल सुर तेते ॥ १ ॥
जीव चराचर जे संसारा ❀ देखे सकल अनेक प्रकारा ॥ २ ॥

जहां तहां अर्थात् अपने आगे, पीछे, आकाश, पाताल, दिशा, विदिशाओंमें जितने रामचन्द्रके रूप देखे, उतनेही अपनी २ शक्तियोंसहित सम्पूर्ण देवता, (ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इन्द्रादि भगवान्की सेवा-करते) देखे ॥ १ ॥ चर और अचर जो संसारमें जीव हैं वे सव अनेकप्रकारके देखे ॥ २ ॥

---

(१) इस चौपाईमें वृषकेतु कहनेसे ऐसा भाव दीखता है कि रामजीने गुप्तरीतिसे यह कहा कि वृष कहिये धर्म उसके केतु कहिये ध्वजारूप शिवजी कहां हैं ? तुम पतिव्रता होकर पतिको छोड़ अकेली कहां फिरती हो ?

(२) भय इसलिये कि शंकर कोप करेंगे.

(३) सोच इस कारण कि किस उपायसे मेरा छल प्रगट न हो.

पूजहिं प्रभुहिं देव बहु वेषा ❀ रामरूप दूसर नहिं देषा ॥ ३ ॥
अवलोके रघुपति बहुतेरे ❀ सीतासहित न वेष घनेरे ॥ ४ ॥

पुनि भांति २ के वेशको धारण किये देवता प्रभुको पूज रहे हैं यह तो देखा. परन्तु रामजीका स्वरूप दूसरा नहीं देखा ॥ ३ ॥ सीतासहित बहुतेरे रामचन्द्रभी देखे परंतु बहुतरूप नहीं थे ॥ ४ ॥

सोइ रघुवर सोइ लक्ष्मण सीता ❀ देखि सती अति भईं सभीता ॥ ५ ॥
हृदय कंप तनु सुधि कछु नाहीं ❀ नयन मूदि बैठी मगुमाहीं ॥ ६ ॥

उन्हीं राम, उन्हीं लक्ष्मण और उन्हीं सीताको देखकर सती अत्यन्त भयभीत हुई ॥ ५ ॥ हृदय कांपने लगा, शरीरकी कुछ सुध बुध नहीं रही और नेत्र बन्द करके मार्गमें बैठ गई ॥ ६ ॥

बहुरि विलोकेउ नयन उघारी ❀ कछु न दीख तहँ दक्षकुमारी ॥ ७ ॥
पुनि पुनि नाइ रामपद शीशा ❀ चली तहाँ जहँ रहे गिरीशा ॥ ८ ॥

फिर नेत्र खोलके देखा तौ दक्षकुमारी (पार्वती) को कुछ नहीं दीखा ॥ ७ ॥ वारंवार रामजीके चरणोंमें शिर नवाकर जहाँ महादेवजी थे वहाँ चलीं ॥ ८ ॥

दो०–गईं समीप महेश तब, हँसि पूछी कुशलात ॥
लीन्ह परीक्षा कवन बिधि, कहहु सत्य सब बात ॥ ६७ ॥

और जब पास गईं तब महादेवजीने हँसकर कुशल पूछी और कहा कि किस प्रकार परीक्षा लीनी सो सब बात सत्य २ कहो ॥ ६७ ॥

चौ०–सती समुझि रघुवीरप्रभाऊ ❀ भयवश शिवसन कीन्ह दुराऊ ॥ १ ॥
कछु न परीक्षा लीन्ह गोसाँईं ❀ कीन्ह प्रणाम तुह्मारिहि नाईं ॥ २ ॥

सतीने श्रीरामचन्द्रजीके प्रभावको समझकर भयकेवश हो महादेवजीसे छिपाव किया और कहाकि ॥ १ ॥ हे स्वामी! कुछ परीक्षा नहीं लीनी. जैसे आप प्रणाम करते हैं, ऐसेही मैंनेभी करलिया ॥ २ ॥

जो तुम कहा सो मृषा न होई ❀ मोरे मन प्रतीति असि सोई ॥ ३ ॥
तब शंकर देखेउ धरि ध्याना ❀ सती जो कीन्ह चरित सब जाना ॥ ४ ॥

जो आपने कहा है वह झूंठ नहीं हो सकता. मेरे मनमें ऐसी प्रतीत है ॥ ३ ॥ फिर शंकरने ध्यान धरकर देखा और सतीने जो चरित्र किया था सो सब जान लिया ॥ ४ ॥

बहुरि राम मायहिं शिर नावा ❀ प्रेरि सतिहिं जेहि जूँठ कहावा ॥ ५ ॥
हरिइच्छा भावी बलवाना ❀ हृदय विचारत शंभु सुजाना ॥ ६ ॥

फिर रामचन्द्रजीकी मायाको शिर नवाया कि जिसने सतीको प्रेरणा करके झूठ कहवाया ॥ ५ ॥ सुजान शंकरने हृदयमें यह विचारा कि भगवान्‌की इच्छा जो होनहार है बड़ी बलवान् है ॥ ६ ॥

सती कीन्ह सीता कर वेशा ❀ शिवउर भयउ विषाद विशेषा ॥ ७ ॥
जो अब करौं सती सन प्रीती ❀ मिटे भक्तिपथ होय अनीती ॥ ८ ॥

सतीने सीताजीका वेश बनाया इसलिये शिवजीके हृदयमें बड़ा विषाद हुआ ॥ ७ ॥ (और सोचा कि) जो अब सतीसे प्रीति करताहूं तौ भक्तिका मार्ग मिटा जाता है और अनीति होती है ॥ ८ ॥

---

(१) श्रीगुसांईजीने रघुनाथजीको एकरूपवान् कहा. फिर जानकीजी सहित फिर लक्ष्मणजीसहित कहा इसका यह आशय है कि वेदके जो तीन मत हैं अर्थात् अद्वैत-द्वैत-विशिष्टाद्वैत उन तीनोंको रामायणके अनुसार दिखाया–पहिले तो राम नित्य, फिर सीतारूपी मायायुक्त, फिर लक्ष्मणजीरूपी जीवयुक्त.

दो०–परमप्रेम नहिं जान तजि, किये प्रेम बड़ पाप ॥
प्रगट न कहत महेश कछु, हृदय अधिक संताप ॥ ६८ ॥

और प्रेम इतना अधिक है कि छोड़ा नहीं जाता और प्रेम करनेमें बड़ा पाप होता है. महादेवजी प्रगट कुछ नहीं कहते हैं परन्तु हृदयमें बड़ा संताप है ॥ ६८ ॥

चौ०–तबहिं शंभु प्रभुपद शिर नावा ❀ सुमिरत राम हृदय अस आवा ॥ १ ॥
इहि तनु सतिहि भेट मोहि नाहीं ❀ शिव संकल्प कीन्ह मनमाहीं ॥ २ ॥

उस समय शिवजीने श्रीरामजीके चरणोंमें शिर नवाया और रामजीका स्मरण करतेही चित्तमें यह आया कि–॥१॥"इस शरीरसे सतीकेसाथ मेरी भेट नहीं है" फिर यही संकल्प शिवजीने मनमें किया २

अस बिचारि शंकर मति धीरा ❀ चले भवन सुमिरत रघुवीरा ॥ ३ ॥
चलत गगन भइ गिरा सुहाई ❀ जय महेश भलि भक्ति दृढ़ाई ॥ ४ ॥

और ऐसा विचार कर धीरजवान् शिवजी रामजीका स्मरण करके अपने स्थानको चले ॥३॥ चलते समय सुन्दर आकाशवाणी हुई कि हे शंकर! आपकी जय होय, आपकी भक्ति बड़ी पक्की है ॥४॥

अस प्रण तुम बिनु करै को आना ❀ रामभक्तसमरथ भगवाना ॥ ५ ॥
सुनि नभगिरा सती उर सोचू ❀ पूछा शिवहिं समेत सँकोचू ॥ ६ ॥

ऐसा प्रण तुमारे विना कौन कर सकता है! आपही भगवान् रामकी भक्तिमें समर्थ हैं ॥ ५ ॥ आकाशवाणी सुनकर सतीके हृदयमें सोच हुआ और शिवजीसे सकुचा कर पूछा ॥ ६ ॥

कीन्ह कवन प्रण कहहु कृपाला ❀ सत्यधाम प्रभु दीनदयाला ॥ ७ ॥
यदपि सती पूछा बहु भाँती ❀ तदपि न कहेउ त्रिपुरआराती ॥ ८ ॥

हे कृपालु! कहिये आपने कौनसा प्रण किया है? आप सत्यके स्थान, प्रभु, और दीनदयालु हो ॥ ७ ॥ यद्यपि सतीजीने बहुत भाँति छलबलसे पूछा तबभी शिवजीने नहीं कहा ॥ ८ ॥

दो०–सती हृदय अनुमान किय, सब जानेउ सर्वज्ञ ॥
कीन्ह कपट मैं शंभुसन, नारि सहज जड़ अज्ञ ॥ ६९ ॥

तब सतीने हृदयमें अनुमान कर लिया कि सर्वज्ञ शंकरने सब जान लिया और मैंने जो महादेवजीके साथ छल किया सो स्त्रीस्वभावहीसे मूर्ख और अज्ञान होती है ॥ ६९ ॥

सो०–जलपय सरिस बिकाय, देखहु प्रीतिकि रीति भल ॥
बिलग होइ रस जाय, कपटखटाई परतही ॥ १३ ॥

जले और दूध एक भाव विकता है यह प्रीतिकी रीति भले प्रकारसे देखलो और कपटरूपी खटाईके पड़तेही रस फट जाता है ॥ १३ ॥

चौ०–हृदय शोच समुझत निजकरनी ❀ चिंता अमित जाइ नहिं बरनी ॥ १ ॥
कृपासिंधु शिव परम अगाधा ❀ प्रगट न कहेउ मोर अपराधा ॥ २ ॥

---

(१) "क्षीरेणात्मगतोदकाय हि गुणा दत्ताः पुरा तेऽखिलाः। क्षीरे तापमवेक्ष्य तेन पयसा ह्यात्मा कृशानौ हुतः। गन्तुं पावकमुन्मनास्तदभवद्दृष्ट्वा तु मित्रापदं युक्तं तेन जलेन शाम्यति सतां मैत्री पुनस्त्वीदृशी ॥ १ ॥ कुंडलिया ॥ पानी मिलतहिं पय दये अपने गुन सब झार। तत्त देखताहूं दयो अपनो अंग प्रजार ॥ अपनौ अंग प्रजारि वारिको जरतहिं जानी। उफनिचल्यौ बिच अगिनि मित्रकौं आपति मानी। पुनि ऊपरतें पर्यौ दया जलने उरआनी। सतपुरुषनकी प्रीति रीति ज्यौं पय अरु पानी."

हृदयमें अपनी करनी समझकर सोच हुआ और इतनी अधिक चिन्ता हुई कि जिसका वर्णन नहीं हो सकताहै ॥१॥ कृपाके समुद्र शिवजी बड़े गम्भीर हैं. क्योंकि मेरा अपराध प्रगट नहीं कहा ॥२॥

शंकर रुख अवलोकि भवानी ❀ प्रभु मोहि तजेउ हृदय अकुलानी ॥ ३ ॥
निज अघ समुझि न कछु कहि जाई ❀ तपै अवा इव उर अधिकाई ॥ ४ ॥

पार्वतीजीने महादेवजीका रुख देखकर जाना कि प्रभुने मुझे त्याग दिया और इसकारण हृदयमें बड़ी अकुलाई ॥ ३ ॥ अपना पाप समझकर कुछ कहा नहीं जाता है. किन्तु उनका हृदय अवेके समान अधिक तपता है ॥ ४ ॥

सतिहिं ससोच जानि वृषकेतू ❀ कहेउ कथा सुंदर सुखहेतू ॥ ५ ॥
वरनत पंथ बिबिधि इतिहासा ❀ विश्वनाथ पहुँचे कैलासा ॥ ६ ॥

सतीको सोचमें जानकर भोलानाथने सुखकी देनेवाली सुन्दर कथा कहना प्रारम्भ किया ॥५॥ मार्गमें अनेक प्रकारके इतिहास वर्णन करते हुए विश्वनाथ कैलासमें पहुँचे ॥ ६ ॥

तहँ पुनि शंभु समुझि प्रण आपन ❀ बैठे बटतरु करि कमलासन ॥ ७ ॥
शंकर सहज सरूप सँभारा ❀ लागि समाधि अखंड अपारा ॥ ८ ॥

फिर महादेवजी अपना प्रण समझकर वटवृक्षके नीचे कमलासन करके विराजमान हो गये ॥ ७ ॥ शंकरने अखण्ड तथा अपार समाधि लगाकर अपना स्वाभाविक स्वरूप सँभाला ॥ ८ ॥

दो०-सती बसहिं कैलास तव, अधिक सोच मनमाहिं ॥ ❀
मर्म न कोऊ जान कछु, युगसम दिवस सिराहिं ॥ ७० ॥ ❀

जब सती कैलासमें बसने लगीं, तब मनमें बड़ा अधिक सोच हुआ-मर्म कोई कुछ नहीं जानता था और युगके समान दिवस बीतने लगे ॥ ७० ॥

चौ०-नित नव सोच सतीउर भारा ❀ कब जैहौं दुखसागरपारा ॥ १ ॥
मैं जु कीन्ह रघुपतिअपमाना ❀ पुनि पतिबचन मृषा करि जाना ॥ २ ॥

सतीके मनमें नित्य नवीन बड़ा सोच होने लगा (कहने लगीं कि) दुखसागरके पार कब जाऊँगी ॥ १ ॥ मैंने जो श्रीरामजीका अपमान किया और पतिका वचन झूठा करके जाना ॥ २ ॥

सो फल मोहि बिधाता दीन्हा ❀ जो कछु उचित रहा सो कीन्हा ॥ ३ ॥
अब विधि अस बूझिह नहिं तोही❀ शंकरविमुख जिआवहु मोही ॥ ४ ॥

उसका फल मुझे विधाताने दिया और जो कुछ उचित था सो किया ॥ ३ ॥ हे विधाता ! अब तुझे ऐसा उचित नहीं है कि शंकरके विमुख मुझे जिलाता है ॥ ४ ॥

कहि न जाय कछु हृदयगलानी ❀ मनमहँ रामहिं सुमिरि सियानी ॥ ५ ॥
जो प्रभु दीनदयालु कहावा ❀ आरतिहरण वेद यश गावा ॥ ६ ॥

हृदयकी ग्लानि कुछ कही नहीं जाती. मनमें रामजीको स्मरण करके उस चतुर(पार्वतीने कहा कि) ॥ ५ ॥ जो प्रभु दीनोंके दयालु कहाते हैं और दुख हरण हैं कि जैसा वेदमें यश गाया है ॥६ ॥

तौ मैं विनय करौं कर जोरी ❀ छूटै वेगि देह अब मोरी ॥ ७ ॥
जो मेरे शिवचरण सनेहू ❀ मन क्रम बचन सत्य व्रत एहू ॥ ८ ॥

तौ मैं हाथ जोड़कर विनती करती हूं कि अब मेरा शरीर शीघ्र छूट जाय ॥७॥ जो मेरा शिवजीके चरणोंमें स्नेह है और मन, कर्म तथा वाणीसे सत्य व्रत है-॥ ८ ॥

दो०–तौ समदरशी सुनिय प्रभु, करौ सो वेगि उपाइ ॥
होइ मरण जेहि विनहिं श्रम, दुसह विपत्ति विहाइ ॥ ७१ ॥

तौ हे समान देखनेवाले प्रभो! सुनिये. वह उपाय शीघ्र करो कि जिससे विनाश्रम मेरा मरण होय और कठिन विपत्ति दूर होय ॥ ७१ ॥

चौ०–इहि विधि दुखित प्रजेशकुमारी ❀ अकथनीय दारुण दुख भारी ॥ १ ॥
वीते संवत सहस सतासी ❀ तजी समाधि शंभु अविनासी ॥ २ ॥

इस प्रकार राजा दक्षकी कन्या दुखीथी और उसका कठिन और भारी दुःख कहनेके योग्य न था ॥ १ ॥ जब ८७००० हजार वर्ष वीत गये तब अविनाशी शंकरने अपनी समाधि खोली ॥ २ ॥

रामनाम शिव सुमिरनलागे ❀ जानेउ सती जगतपति जागे ॥ ३ ॥
जाइ शंभुपद वंदन कीन्हा ❀ संमुख शंकर आसन दीन्हा ॥ ४ ॥

शिवजी रामनामका स्मरण करनेलगे और जब सतीने जाना कि जगत्के स्वामी जागे ॥ ३ ॥ तव जाकर शङ्करके चरणोंको नमस्कार किया और महादेवजीने उन्हें अपने सामने आसन दिया ॥४॥

लगे कहन हरिकथा रसाला ❀ दक्ष प्रजेश भये तेहि काला ॥ ५ ॥
देखा विधि विचारि सब लायक ❀ दक्षहिं कीन्ह प्रजापतिनायक ॥ ६ ॥

और भगवान्की सुन्दर कथा कहने लगे और उस समय (सतीजीके पिता ब्रह्माके पुत्र) दक्षराजा प्रजापति हुए ॥ ५ ॥ क्यौंकि जब ब्रह्माजीने उन्हें विचार कर सब प्रकार लायक देखा तौ दक्षको प्रजापतियोंका नायक कर दिया ॥ ६ ॥

बड़ अधिकार दक्ष जब पावा ❀ अति अभिमान हृदय तब आवा ॥ ७ ॥
नहिं कोउ असजनमेउ जगमाहीं ❀ प्रभुता पाइ जाहि मद नाहीं ॥ ८ ॥

जब दक्षने यह बड़ा अधिकार पाया तब मनमें बड़ा घमंड आगया ॥ ७ ॥ संसारमें ऐसा कोई[1] उत्पन्न नहीं हुआ है कि जिसको प्रभुता पाकर मद नहीं हुआ ॥ ८ ॥

दो०–दक्ष लिये मुनि बोलि सब, करन लगे बड़ याग ॥
नेवते सादर सकल सुर, जे पावत मखभाग ॥ ७२ ॥

दक्षने सब मुनियोंको बुलवाया और बड़ा यज्ञ करने लगे और जो यज्ञका भाग पातेथे उन संपूर्ण देवताओंको आदरसे न्योंता दिया ॥ ७२ ॥

चौ०–किन्नर नाग सिद्ध गंधर्वा ❀ बधुनसमेत चले सुर सर्वा ॥ १ ॥
विष्णु विरंचि महेश विहाई ❀ चले सकल सुर यान बनाई ॥ २ ॥

किन्नर, नाग, सिद्ध, गंधर्व और सब देवता अपनी २ स्त्रियोंको साथ ले लेकर चले ॥ १ ॥ विष्णु, ब्रह्मा और शिवजीको छोड़ सब देवता अपने २ विमान सजा २ कर चले ॥ २ ॥

सती विलोके-गगन विमाना ❀ जात चले सुंदर विधि नाना ॥ ३ ॥
सुरसुंदरी करहिं कल गाना ❀ सुनत श्रवण छूटहिं मुनि ध्याना ॥ ४ ॥

सतीने आकाशमें देखा कि, अनेक २ प्रकारके सुन्दर २ विमान चले जा रहे हैं ॥३॥ और देवताओंकी स्त्रियां सुन्दर २ गान करती जा रही हैं कि जिसके सुननेसे मुनियोंके ध्यान छूटते हैं ॥४॥

---

(१) इस चौपाईका यहभी अर्थ समझमें आता है कि "जिसको प्रभुता पाकर अभिमान नहीं हुआ ऐसा कोई मनुष्य फिर जगत्में नहीं उत्पन्न हुआ अर्थात् घमण्ड न करनेसे मुक्त होजाता है" किन्तु यह व्यंग्य अर्थ है ॥

पूछेउ कछु शिव कहेउ बखानी ❀ पिता यज्ञ सुनि कछु हरखानी ॥ ५ ॥
जो महेश मोहि आयसु देहीं ❀ कछु दिन जाय रहौं मिसि एहीं ॥ ६ ॥

जब सतीने सकुचकर पूछा तब शिवजीने समाचार कहा और पिताके यहां यज्ञ सुनकर कुछ प्रसन्न हुई ॥ ५ ॥ (और मनमें विचार करने लगीं कि) जो शिवजी मुझे आज्ञा दें तौ थोड़े दिन इसी बहानेसे (वहां) जा रहूं ॥ ६ ॥

पति परित्याग हृदय दुख भारी ❀ कहै न निज अपराध विचारी ॥ ७ ॥
बोली सती मनोहर बानी ❀ भय संकोच प्रेमरस सानी ॥ ८ ॥

पतिके परित्याग करदेनेसे हृदयमें बड़ा दुःख है, पर अपना अपराध विचारकर नहीं कहती हैं ॥ ७ ॥ फिर सती भय, संकोच और प्रेमके रससे भरी हुई सुन्दर वाणी बोलीं कि-॥ ८ ॥

दो०-पिताभवन उत्सव परम, जो प्रभु आयसु होय ॥
तौ मैं जाउँ कृपायतन, सादर देखन सोय ॥ ७३ ॥

हे कृपानाथ ! पिताके घर बड़ा उत्सव है; जो प्रभुकी आज्ञा होय तौ मैं आदरसे उसे देखनेको जाऊं ॥ ७३ ॥

चौ०-कहेउ नीक मोरे मनभावा ❀ यह अनुचित नहिं नेवत पठावा ॥ १ ॥
दक्ष सकल निज सुता बुलाईं ❀ हमरे बयर तुमहुँ बिसराईं ॥ २ ॥

शिवजी बोले कि तुमने यह अच्छा कहा और मेरे मनमें भाया पर यह बात नहीं चाहिये थी कि दक्षने नेवता नहीं भेजा ॥ १ ॥ दक्षने अपनी सब पुत्रियोंको बुलाया और हमारे साथ वैरके कारण तुमकोभी छोड़ दिया ॥ २ ॥

ब्रह्मसभा हमसन दुख माना ❀ तेहि तें अजहुँ करहिं अपमाना ॥ ३ ॥
जौं बिनु बोले जाउ भवानी ❀ रहै न शील सनेह न कानी ॥ ४ ॥

ब्रह्माकी सभामें उसने हमसे बुरा मानाथा इसलिये आजतक अपमान ही कर रहे हैं ॥ ३ ॥ हे भवानी ! जो तुम विना बुलाये जाओगी तो शील, स्नेह और मर्यादा कुछ न रहैगी ॥ ४ ॥

यदपि मित्र प्रभु पितु गुरुगेहा ❀ जाइय बिनु बोलेहु न सँदेहा ॥ ५ ॥
तदपि विरोध मान जहँ कोई ❀ तहाँ गये कल्याण न होई ॥ ६ ॥

यद्यपि मित्र, प्रभु, पिता और गुरुके घर विना बुलाये भी अवश्य जाना चाहिये ॥ ५ ॥ तथापि जहां कोई लड़ाई माने वहां जानेसे कल्याण नहीं होता है ॥ ६ ॥

भाँति अनेक शंभु समुझावा ❀ भावीवस न ज्ञान उर आवा ॥ ७ ॥
कह प्रभु जाउ जो बिनहिं बुलाए ❀ नहिं भलि बात हमारे भाए ॥ ८ ॥

शिवजीने वहुत भांतिसे (ऊंच नीच) समझाया पर होनहारके वस हृदयमें ज्ञान नहीं आया ॥ ७ ॥ महादेवजीने कहा कि जो विना बुलाये जाओगी तौ हमारी समझमें अच्छी बात नहीं है ॥ ८ ॥

दो०-कहि देखा हर यतन बहु, रहै न दक्षकुमारि ॥
दिये मुख्य गण संग तब, बिदा कीन्हि त्रिपुरारि ॥ ७४ ॥

---

(१) शिवजी वोले कि हे प्रिये ! एक दिन मैं और विष्णु आदि सब देवता ब्रह्माकी सभामें बैठेथे वहाँपर तुम्हारे पिता दक्ष आये, उन्हें देख सब उठे पर मैं और विष्णु दोनों नहीं उठे, इस वातपर उन्होंने मुझसे बुरा माना और मुझको श्राप दिया कि तुम्हें यज्ञका भाग न मिलैगा, तभीसे ईर्षा मान कर मेरे मानभंग करनेमें लगरहेहैं. इसीसे उन्होंने मुझे अपने यज्ञमें नहीं बुलाया.

शिवजीने बड़े यतनसे कह देखा. परन्तु जब दक्षसुता न मानी तब मुख्यगण संग दिये और शिवजीने (उन्हें) विदा किया ॥ ७४ ॥

चौ०–पिताभवन जब गई भवानी ❀ दक्ष त्रास काहु न सनमानी ॥ १ ॥
सादर भलेहि मिली एक माता ❀ भगिनी मिलीं बहुत मुसुकाता ॥ २ ॥

जब पार्वतीजी पिताके घर गई तब दक्षके डरसे किसीने आदर नहीं किया ॥ १ ॥ केवल माता आदरसे मिली और बहनें तो बड़ी मुसकुराकर मिलीं ॥ २ ॥

दक्ष न कछु पूछी कुशलाता ❀ सतिहिं बिलोकि जरे सब गाता ॥ ३ ॥
सती जाइ देखेउ तब यागा ❀ कतहुँ न दीख शंभुकर भागा ॥ ४ ॥

दक्षने कुछ कुशलता नहीं पूछी वरन सतीको देखकर उसके सब शरीरके अंग जल उठे ॥३॥ फिर सतीने जाकर यज्ञ देखा और जब शिवजीका भाग कहींभी नहीं दीख पड़ा–॥ ४ ॥

तब चित चढ़ेउ जो शंकर कहेऊ ❀ प्रभुअपमान समुझि उर दहेऊ ॥ ५ ॥
पाछिल दुख न हृदय अस व्यापा ❀ जस यह भयउ महापरितापा ॥ ६ ॥

तब तौ वही चित्तमें चढ़ा कि जो शंकरने कहाथा, और प्रभुका अपमान समझ कर छाती जलने लगी ॥ ५ ॥ पिछला दुःख हृदयमें ऐसा नहीं व्यापा कि जैसा यह बड़ा भारी संताप हुआ ॥ ६ ॥

यद्यपि जग दारुण दुख नाना ❀ सबतें कठिन जातिअपमाना ॥ ७ ॥
समुझि सोच तिहिं भा अतिक्रोधा ❀ बहुविधि जननी कीन्ह प्रबोधा ॥ ८ ॥

यद्यपि संसारमें अनेक प्रकारके कठिन २ दुःख हैं पर सबमें कठिन जातिका अपमान है ॥ ७॥ सोच समझकर उनको बड़ा क्रोध हुआ और माताने बहुत प्रकारसे समझाया ॥ ८ ॥

दो०–शिवअपमान न जाइ सहि, हृदय न होत प्रबोध ॥ ❀
सकल सभहिं हठि हठकि तब, बोली बचन सक्रोध ॥ ७५ ॥❀

जब न तो शिवजीका अपमान सहा गया और न हृदयमें ज्ञान हुआ, तब सब सभाको झिड़क २ कर क्रोधसे वचन बोलीं कि–॥ ७५ ॥

चौ०–सुनहु सभासद सकल मुनिंदा ❀ कही सुनी जिहि शंकरनिंदा ॥ १ ॥
सो फल तुरत लहब सबकाहू ❀ भली भाँति पछिताव पिताहू ॥ २ ॥

हे सभाके सज्जन सब मुनियो ! सुनो. जिसने शंकरकी निन्दा कही सुनी है ॥ १ ॥ सो फल तुरतही सब कोई पावैगा और पिताभी अच्छीतरह पछतावैगा ॥ २ ॥

संत शंभु श्रीपति अपवादा ❀ सुनिय जहाँ तहँ अस मर्यादा ॥ ३ ॥
काटिय तासु जीभ जु बसाई ❀ श्रवण मूंदि नहिं चलिय पराई ॥ ४ ॥

संतजन, शिवजी और भगवान् इनकी निन्दा जहां सुनी जाती है वहां यह मर्यादा है कि– ॥ ३ ॥ जो अपनी चलै तौ उसकी जीभ काट ले और नहीं तौ कान मूंदकर भाग जाय ॥ ४ ॥

जगदात्मा महेश त्रिपुरारी ❀ जगतजनक सबके हितकारी ॥ ५ ॥
पिता मंदमति निंदत तेही ❀ दक्षशुक्रसंभव यह देही ॥ ६ ॥

त्रिपुरारी शंकर जगत्के आत्मा हैं, जगत्के पिता हैं और सबके हित करनेवाले हैं ॥ ५ ॥ मूर्ख पिता उनकी निन्दा करता है। और यह देह तौ दक्षके वीर्यसे उत्पन्न हुई है ॥ ६ ॥

तजिहौं तुरत देह तेहि हेतू ❀ उर धरि चंद्रमौलि वृषकेतू ॥ ७ ॥
असकहि योग अगनि तनु जारा ❀ भयउ सकल मख हाहाकारा ॥ ८ ॥

इसलिये चन्द्रमाको[१] ललाटपर धारण करनेवाले और वृष कहिये धर्मकी ध्वजा वाले शंकरको हृदयमें धारणकर उस (पिता) के कारणसे इस देहको तुरंत त्याग दूंगी ॥ ७ ॥ इस प्रकार कहकर योगबलसे अग्निमें शरीर जलादिया; फिर तौ संपूर्ण यज्ञमण्डलमें हाहाकार होनेलगा ॥ ८ ॥

दो०-सतीमरण सुनि शंभुगण, लगे करन मख खीस ॥ ❀
यज्ञविधंस विलोकि भृगु, रक्षा कीन्ह मुनीस ॥ ७६ ॥ ❀

सतीका मरण सुनकर शिवजीके गण यज्ञको बिगाड़ने लगे. तब यज्ञका विध्वंस देखकर भृगुजी और मुनीश्वरोंने रक्षा करी ॥ ७६ ॥

चौ०-समाचार जब शंकर पाये ❀ वीरभद्र करि कोप पठाये ॥ १ ॥
यज्ञविधंस जाइ तिन्ह कीन्हा ❀ सकल सुरन विधिवत फल दीन्हा ॥ २ ॥

जब शिवजीने यह समाचार पाये तब कोप करके वीरभद्रको भेजा ॥ १ ॥ उन्होंने जाकर यज्ञ विध्वंस किया और सब देवताओंको यथायोग्य फल दिया ॥ २ ॥

भै जगविदित दक्षगति सोई ❀ जस कछु शंभुविमुखकी होई ॥ ३ ॥
यह इतिहास सकल जग जाना ❀ तातें मैं संक्षेप बखाना ॥ ४ ॥

दक्षकी वही गति संसारमें विदित होगई कि जैसी कुछ शिवजीके विमुखकी होती है ॥ ३ ॥ इस कथाको सब जगत् जानता है, इसलिये मैंने थोड़ेसेमें कहा है ॥ ४ ॥

सती मरत हरिसन बर मागा ❀ जन्म जन्म शिवपद अनुरागा ॥ ५ ॥
तेहि कारण हिमगिरिगृह जाई ❀ जननी पारवती तनु पाई ॥ ६ ॥

सतीने मरतेही भगवान्से यह वर मांगा कि मेरी प्रीति जन्म २ में शिवजीके चरणोंमें रहै ॥ ५ ॥ इस कारण हिमाचलके घर जाकर पार्वतीजीने शरीर पाय जन्म लिया ॥ ६ ॥

जबतें उमा शैलगृह आई ❀ सकल सिद्धि संपति तहँ छाई ॥ ७ ॥
जहँ तहँ मुनिन सुआश्रम कीन्हें ❀ उचित बास हिमभूधर दीन्हें ॥ ८ ॥

जबसे उमा हिमाचलके घर आई तबसे वहां सब प्रकारकी सिद्धि और संपत छागई ॥७॥ जहां तहां मुनियोंने अच्छे २ आश्रम बनालिये और हिमाचलनेभी सबको उचित वास दिया ॥ ८ ॥

दो०-सदा सुमनफलसहित सब, द्रुम वन नाना जाति ॥ ❀
प्रगटी सुंदर शैलपर, मणिआकर बहु भाँति ॥ ७७ ॥ ❀

सब वृक्ष फलफूलोंसे सदा लदने लगे और वन नानाप्रकारके रमणीय होगये और शैलपर भांति २ की सुन्दर मणियोंकी खानें होगई ॥ ७७ ॥

चौ०-सरिता सब पुनीत जल बहई ❀ खग मृग मधुप सुखी सब रहई ॥ १ ॥
सहज बयर सब जीवन त्यागा ❀ गिरिपर सकल करहिं अनुरागा ॥ २ ॥

---

[१] (१) चंद्रमौलि कहनेसे यह भाव झलकता है–चंद्रमें सुधा है इसलिये फिर जिलालेंगे; और वृषकेतुसे यह भाव है कि धर्मध्वज होनेसे मेरा अपराध क्षमा करेंगे, क्योंकि यहभी एक धर्मका लक्षण है जैसा कहा है– “धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः । धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम् ॥ १ ॥” इति.

सब नदियोंमें(१) निर्मल और पावन नीर बहने लगा. (कीर आदि) पक्षी मृग और भ्रमर सब सुखसे रहने लगे ॥१॥ सब जीवोंने अपना २ स्वाभाविक वैर त्याग दिया और पर्वतपर सब प्रीति करने लगे २

सोह शैल गिरिजा गृह आये ❀ जिमि जन रामभक्तिके पाये ॥ ३ ॥
नित नूतन मंगल गृह तासू ❀ ब्रह्मादिक गावहिं यश जासू ॥ ४ ॥

पार्वतीजीके घरमें आनेसे पर्वत ऐसा शोभायमान लगताथा कि जैसे मनुष्य रामकी भक्ति पानेसे लगता है॥३॥उसके घर नित नये २ मंगल होने लगे और ब्रह्मादिक देवता उसका यश गाने लगे ॥४॥

नारद समाचार सव पाये ❀ कौतुक हिमगिरिगेह सिधाये ॥ ५ ॥
शैलराज बड़ आदर कीन्हा ❀ पद पखारि बर आसन दीन्हा ॥ ६ ॥

नारदजीने सब समाचार पाये और कौतुक देखनेके लिये हिमाचलके घर आये ॥ ५ ॥ शैलराज हिमवान्‌ने बड़ा आदर किया और चरण धोय चरणामृत ले सुन्दर आसन बैठनेको दिया ॥ ६ ॥

नारिसहित मुनिपद शिरनावा ❀ चरणसलिल सब भवन सिंचावा ॥ ७ ॥
निज सौभाग्य बहुत गिरि बरना ❀ सुता बोलि मेली मुनिचरना ॥ ८ ॥

अपनी स्त्री सहित मुनिके चरणोंमें शिर नवाया और चरणोदक सब भवनमें छिड़कवाया॥७॥हिमाचलने अपने सुन्दर भाग्यकी बड़ाई करी और पुत्रीको बुलाकर मुनिके चरणोंमें रखदी (और कहा)कि८

दो०-त्रिकालज्ञ सर्वज्ञ तुम, गति सर्वत्र तुम्हारि ॥ ❀
कहहु सुताके दोष गुण, मुनिवर हृदय विचारि ॥ ७८ ॥ ❀

आप (भूत, भविष्य, वर्तमान) तीनों कालके जाननेवाले और सर्वज्ञ हो और सर्वत्र आपकी गति है अर्थात् जाते आते हो. इसलिये हे मुनिराज! आप अपने हृदयमें विचार कर पुत्रीके गुण और दोष कहिये ॥ ७८ ॥

चौ०-कह मुनि विहँसि गूढ़ मृदुबानी ❀ सुता तुम्हारि सकल गुणखानी ॥ १ ॥
सुंदर सहज सुशील सयानी ❀ नाम उमा अंबिका भवानी ॥ २ ॥

नारदमुनिनें हँसकर गूढ़ और कोमल वाणीसे कहा कि तुमारी पुत्री सब गुणोंकी खान है ॥१॥ स्वभावसेही सुन्दर, सुशील और चतुर है और इसका नाम उमा, अंबिका और भवानी है ॥ २ ॥

सब लक्षणसंपन्न कुमारी ❀ होइहि संतत पियहि पियारी ॥ ३ ॥
सदा अचल एहिकर अहिबाता ❀ एहितें यश पैहहिं पितु माता ॥ ४ ॥

यह पुत्री सब लक्षणोंसे युक्त है और सदा अपने पतिको प्यारी होगी ॥३॥ इसका सौभाग्य सदा अचल रहैगा और इससे मातापिता जस पावेंगे ॥ ४ ॥

होइहि पूज्य सकल जगमाहीं ❀ एहि सेवत कछु दुर्लभ नाहीं ॥ ५ ॥
एहिकर नाम सुमिरि संसारा ❀ तिय चढ़िहहिं पतिव्रत असिधारा ॥ ६ ॥

यह सब संसारमें पूज्य होगी और इसकी सेवा करनेसे कुछ दुर्लभ नहीं होगा ॥ ५ ॥ संसारमें स्त्रियां इसके नामका स्मरण करके पतिव्रतरूपी तलवारकी धारपर चढ़ैंगी ॥ ६ ॥

शैल सुलक्षणि सुता तुम्हारी ❀ सुनहु जे अब अवगुण दुइ चारी ॥ ७ ॥
अगुण अमान मातु पितु हीना ❀ उदासीन सब संशय छीना ॥ ८ ॥

---

(१) भागीरथी, मन्दाकिनी, यमुना, अलकनन्दा, शेषगंगा, विष्णुगंगा, रामगंगा, व्यासगंगा, स्वर्णगंगा, नन्दगंगा, कर्णगंगा, पातालगंगा, तुंगभद्रा-आदि.

हे शैलराज ! तुमारी पुत्री वहुत सुन्दर लक्षणयुक्त है। अब जो दोचार अवगुण हैं सो सुनो ॥ ७ ॥ गुणहीन, मानरहित, मातापिताहीन, उदासीन, सब संशयसे रहित- ॥ ८ ॥

दो०-योगी जटिल अकाम तन, नगन अमंगल भेख ॥
अस स्वामी इहिकहँ मिलिहि, परी हस्त अस रेख ॥ ७९ ॥

योगी, जटावाला, कामरहित शरीरवाला, नग्न और अमंगल भेखवाला ऐसा स्वामी इसको मिलैगा, इसके हाथमें ऐसी रेखा पड़ी है ॥ ७९ ॥

चौ०-सुनि मुनिगिरा सत्य जिय जानी ॥ दुख दंपतिहि उमा हरखानी ॥ १ ॥
नारदहू यह भेद न जाना ॥ दशा एक समुझत बिलगाना ॥ २ ॥

मुनिकी वाणी सुनकर जीमें सत्यजान मातापिताको दुख हुआ, पर उमा प्रसन्न हुई ॥१॥ नारद मुनिनेभी यह भेद नहीं जाना. क्योंकि उन सबकी दशा तौ एक थी और समझ अलग २ थी. (माता पिताने कुछ सोचा और पार्वतीने कुछ और, अथवा नारदजीने बुरा भला भेस जानकरभी यह भेद नहीं जाना कि विवाह किसके साथ होगा. पर आगे जब जो दशा बताई थी वह शिवजीकी देखी तो सब भेद दूर होगया) ॥ २ ॥

सकल सखी गिरिजा गिरि मयना ॥ पुलक शरीर भरे जल नयना ॥ ३ ॥
होइ न मृषा देवऋषिभाखा ॥ उमा सो बचन हृदय धरि राखा ॥ ४ ॥

सब सखी, पार्वती, हिमाचल और मयना (हिमाचलकी स्त्री) इनका शरीर पुलकायमान होगया और नेत्रोंमें आंसू भर आये ॥ ३ ॥ देवता और ऋषियोंका वचन झूठ नहीं होता है यह वचन उमाने हृदयमें धरलिया ॥ ४ ॥

उपजेउ शिवपदकमल सनेहू ॥ मिलन कठिन मन यह संदेहू ॥ ५ ॥
जानि कुअवसर प्रीति दुराई ॥ सखि उछंग बैठी पुनि जाई ॥ ६ ॥

शिवजीके चरणकमलोंमें स्नेह उत्पन्न हुआ पर मनमें यह संदेह हुआ कि मिलना कठिन है ॥ ५ ॥कुसमय जानकर प्रीतिको छुपाली और सखीकी गोदीमें फिर जाकर बैठ गई ॥ ६ ॥

झूठि न होइ देवऋषिबानी ॥ शोचहिं दंपति सखी सयानी ॥ ७ ॥
उर धरि धीर कहै गिरिराऊ ॥ कहहु नाथ का करिय उपाऊ ॥ ८ ॥

हिमवान्, उसकी स्त्री और चतुर सखियां यह चिन्ता करने लगीं कि देवता और ऋषियोंकी वाणी झूठ नहीं होती है ॥ ७ ॥ फिर मनमें धीरज धरकर गिरिराजने कहा कि हे नाथ ! कहो क्या उपाय करना चाहिये ॥ ८ ॥

दो०-कह मुनीश हिमवंत सुनु, जो बिधि लिखा लिलार ॥
देव दनुज नर नाग मुनि, कोउ न मेटनहार ॥ ८० ॥

मुनिने कहा कि हे हिमवान् ! सुन. जो विधाताने कपालमें लिख दिया है उसको देवता, दैत्य, मनुष्य, नाग और मुनि कोई मेटनेहारा नहीं है ॥ ८० ॥

चौ०-तदपि एक मैं कहौं उपाई ॥ होइ करै जो दैव सहाई ॥ १ ॥
जसु वर मैं बरणेउँ तुम पाहीं ॥ मिलिहि उमहिं कछु संशय नाहीं ॥ २ ॥

तौभी मैं एक उपाय कहताहूं. जो दैव सहायता करै, तो वह हो सक्ता है ॥ १ ॥ मैंने जैसे वरका तुमसे वर्णन किया है वैसाही उसको मिलैगा इसमें कुछ सन्देह नहीं ॥ २ ॥

जे जे वरके दोष बखाने ❀ ते सब शिवपहि मैं अनुमाने ॥ ३ ॥
जो विबाह शंकरसन होई ❀ दोषौ गुणसम कह सब कोई ॥ ४ ॥

और मैंने जो जो वरके दोष कहे हैं वे सब शिवमें अनुमान किये हैं ॥ ३ ॥ और जो महादेव जीसे विवाह होगा तौ सब कोई दोषोंकोभी गुणके समान कहैगा ॥ ४ ॥

जौ अहिसेज शयन हरि करहीं ❀ बुध कछु तिन्हकर दोष न धरहीं ॥ ५ ॥
भानु कृशानु सर्व रस खाहीं ❀ तिन्हकहँ मंद कहत कोउ नाहीं ॥ ६ ॥

जैसे सर्पकी शय्यापर भगवान् शयन करते हैं, पण्डितलोग उनको कुछ दोष नहीं धरते हैं. ॥ ५ ॥ और सूर्य, तथा अग्नि सब रस खाते हैं उनको कोई बुरा नहीं कहता है ॥ ६ ॥

शुभ अरु अशुभ सलिल सब बहई ❀ सुरसरि कोउ अपुनीत न कहई ॥ ७ ॥
समरथकहँ नहिं दोष गुसाँई ❀ रवि पावक सुरसरिकी नाईं ॥ ८ ॥

बुरा और भला सब पानी बहता है, परंतु गंगाजीको कोई अपवित्र नहीं कहता है ॥ ७ ॥ हे गुसाँई ! रवि, अग्नि, और गंगाजीके समान समर्थको कछु दोष नहीं है ॥ ८ ॥

दो०-जो अस ईर्षा करहिं नर, जड़विवेक अभिमान ॥ ❀
परहिं कलपभरि नरकमहँ, जीव कि ईश समान ॥ ८१ ॥ ❀

परंतु जो मूर्ख मनुष्य ज्ञानके अभिमानसे (देवताओंका कर्म देखकर) ऐसी ईर्षा करते हैं कि हमभी वैसाही वर्ताव करैं तो वे कल्पभर (१००० वर्ष)नरकमें पड़ते हैं. क्यौं कि जीव क्या ईशके समान हो सकता है ? अर्थात् कभी नहीं हो सकता ॥ ८१ ॥

चौ०-सुरसरि जलकृत वारुणि जाना ❀ कबहुँ न संत करै तिहि पाना ॥ १ ॥
सुरसरि मिलैं सो पावन जैसें ❀ ईश अनीशहिं अंतर तैसें ॥ २ ॥

गंगाजलसे वनीहुईभी वारुणीको जानकर संत उसको कभी नहीं पीता है ॥ १ ॥ पर वही मदिरा गंगाजलमें मिल जानेसे जैसे पवित्र हो जाती है उसी प्रकार जीव और ईश्वरमें भेद है, (जीव जबतक अलग है तबतक दोषी ठहरता है और ईश्वरमें मिल जानेसे फिर दूषित नहीं होता) ॥ २ ॥

शंभु सहज समरथ भगवाना ❀ एहि बिबाह सब विधि कल्याना ॥ ३ ॥
दुराराध्य पै अहहिं महेशू ❀ आशुतोष पुनि किये कलेशू ॥ ४ ॥

भगवान् शिवजी स्वभावहीसे समर्थ हैं (इसलिये) यह विवाह सब प्रकारसे कल्याणका देनेवाला है ॥ ३ ॥ और यद्यपि महादेवजीका मिलना बड़ा कठिन है पर क्लेश सहनेसे आशुतोष अर्थात् शीघ्र प्रसन्न होनेवालेभी हैं ॥ ४ ॥

जौ तप करै कुमारि तुम्हारी ❀ भाविउ मेटि सकैं त्रिपुरारी ॥ ५ ॥
यद्यपि वर अनेक जगमाहीं ❀ यहि कहँ शिव तजि दूसर नाहीं ॥ ६ ॥

जो तुम्हारी कन्या तप करै तौ शिवजी होनहारकोभी मेट सकते हैं ॥ ५ ॥ यद्यपि संसारमें अनेक वर हैं परंतु इस पार्वतीके लिये शिवजीको छोड़ और दूसरा नहीं है ॥ ६ ॥

वरदायक प्रणतारतिभंजन ❀ कृपासिंधु सेवकमनरंजन ॥ ७ ॥
इच्छितफल बिनु शिव आराधे ❀ लहइ न कोटि योग जप साधे ॥ ८ ॥

वरके देनेवाले, भक्तोंके दुःखनाशक, कृपाके समुद्र और सेवकके मनको प्रसन्न करनेवाले हैं ॥ ७ ॥ शिवजीकी आराधनाके विना करोड़ों योग और जपके साधन करनेसेभी (प्राणी) मनोरथोंके फल नहीं पासकता है ॥ ८ ॥

दो०-अस कहि नारद सुमिरि हरि, गिरिजहिं दीन्ह अशीश ॥ ❀
होइहि यहि कल्याण अब, संशय तजहु गिरीश ॥ ८२ ॥ ❀

ऐसा कहकर नारदजीने भगवानका स्मरण करके पार्वतीजीको आशीर्वाद दिया कि अब इसका कल्याण होगा· हे गिरीश ! संदेह मत करो ॥ ८२ ॥

चौ०-कहि अस ब्रह्मभवन मुनि गयेउ ❀ आगिल चरित सुनहु जस भयेउ ॥ १ ॥
पतिहिं इकांत पाय कह मयना ❀ नाथ न मैं समुझेउँ मुनिबयना ॥ २ ॥

इस प्रकार वर्णनकर नारदमुनि ब्रह्मलोकको गये· फिर आगे जो चरित्र हुआ उसे सुनो ॥ १ ॥ मयनाने पतिको एकांतमें पाकर कहा कि हे नाथ! मैं मुनिके वचन नहीं समझी ॥ २ ॥

जो घर वर कुल होइ अनूपा ❀ करिय बिबाह सुता अनुरूपा ॥ ३ ॥
नतु कन्या वर रहै कुमारी ❀ कंत उमा मम प्राणपियारी ॥ ४ ॥

जो घर, वर और कुल सुंदर और पुत्रीके अनुरूप हो तौ विवाह कीजिये ॥ ३ ॥ नहीं तौ कन्याका क्वारीही रहना अच्छा है, क्योंकि हे कन्त ! उमा मुझे प्राणोंसेभी प्यारी है ॥ ४ ॥

जो न मिलहि वर गिरिजहि योगू ❀ गिरि जड सहज कहहिं सब लोगू ॥ ५ ॥
सो बिचारि पति करहु बिबाहू ❀ जेहि न बहोरि होइ उदराहू ॥ ६ ॥

जो पार्वतीके योग्य वर न मिलै तौ यह सब लोग कहैंगे कि पर्वत स्वभावहीसे जड़ है ॥ ५ ॥ हे पति ! वह बात विचारकर विवाह करिये कि जिससे पीछे चित्तमें पछतावा न हो ॥ ६ ॥

असकहि परी चरण धरि शीशा ❀ बोले सहित सनेह गिरीशा ॥ ७ ॥
वरु पावक प्रगटै शशिमाहीं ❀ नारदबचन अन्यथा नाहीं ॥ ८ ॥

ऐसा कहकर चरणोंमें शिर धरकर गिर गई· तब बड़े स्नेहसे गिरिराज बोले कि,–॥ ७ ॥ चन्द्रमामें अग्नि भलेही प्रकट होजाय परंतु नारदका वचन उलटा नहीं हो सकता ॥ ८ ॥

दो०-प्रिया शोच परिहरहु सब, सुमिरहु श्रीभगवान ॥ ❀
पारवती जिन निरमयउ, सोइ करिहहिं कल्याण ॥ ८३ ॥ ❀

हे प्यारी ! सब सोचको दूर करो और श्रीभगवान्का स्मरण करो कि जिन्होंने पार्वतीको बनाया है वेही कल्याण करेंगे ॥ ८३ ॥

चौ०-अब जो तुमहिं सुतापर नेहू ❀ तौ अस जाय सिखावन देहू ॥ १ ॥
करै सो तप जेहि मिलहिं महेसू ❀ आन उपाय न मिटिहिं कलेसू ॥ २ ॥

अब जो तुम्हारा पुत्रीपर अधिक स्नेह है, तौ जाकर ऐसी शिक्षा दो कि–॥ १ ॥ वह तप करै कि जिससे महादेवजी मिलैं; और दूसरे उपायसे क्लेश नहीं मिटैगा ॥ २ ॥

नारदबचन सगर्भ सहेतू ❀ सुंदर सब गुणनिधि वृषकेतू ॥ ३ ॥
अस विचारि तुम तजु सब शंका ❀ सबहिं भाँति शंकर अकलंका ॥ ४ ॥

नारदजीके वचन सार और कारणयुक्त हैं और शिवजी सब सुन्दर गुणोंकी खान हैं ॥ ३ ॥ और सब भाँति कलंक रहित हैं ऐसा विचारकर तुम सब संदेहको दूर करो ॥ ४ ॥

सुनि पतिबचन हर्षि मनमाहीं ❀ गई तुरित उठि गिरिजा पाहीं ॥ ५ ॥
उमहिं बिलोकि नयन भरिवारी ❀ सहित सनेह गोद बैठारी ॥ ६ ॥

पतिका वचन सुनकर मनमें प्रसन्न हुई और तुरत उठकर पार्वतीके पास गई ॥ ५ ॥ उमाको देखकर और नेत्रोंमें आँसू भरकर बड़े स्नेहसे गोदीमें बैठाला ॥ ६ ॥

बारहिं बार लेति उरलाई ❀ गद्गद कंठ न कछु कहि जाई ॥ ७ ॥
जगतमातु सर्वज्ञ भवानी ❀ मातुसुखद बोली मृदुबानी ॥ ८ ॥

वारंवार छातीसे लगाती है और कंठ गद्गद होगया (अर्थात् प्रेमके वस गला भरआया) और कुछ नहीं कहा गया ॥ ७ ॥ फिर जगतकी माता, घट २ की जाननेवाली, माताको सुख देनेवाली पार्वती कोमल वाणीसे बोली–॥ ८ ॥

दो०–सुनहु मातु मैं दीख अस, स्वप्न सुनाऊँ तोहि ॥
सुंदर गौर सुविप्रवर, अस उपदेशउ मोहि ॥ ८४ ॥

सुन माता ! मैंने जैसा सुपना देखा है सो तुझे सुनाती हूँ कि एक सुन्दर गोरा ब्राह्मण मुझे ऐसा उपदेश करता है कि–॥ ८४ ॥

चौ०–करहु जाइ तप शैलकुमारी ❀ नारद कहा सो सत्य विचारी ॥ १ ॥
मातु पितुहि पुनि यह मतभावा ❀ तप सुखप्रद दुख दोष नसावा ॥ २ ॥

हे शैलपुत्री ! नारदजीने जो कहा है उसे सत्य विचार और तू जाकर तपकर ॥१॥ और तेरे माता पिताकोभी यह मत अच्छा लगा है क्यौं कि तप सुखका दाता और दुख दोषका नाश करनेवाला है ॥२॥

तपबल रचै प्रपंच विधाता ❀ तपबल विष्णु सकल जगत्राता ॥ ३ ॥
तपबल शंभु करहिं संहारा ❀ तपबल शेष धरहिं महिभारा ॥ ४ ॥

विधाता तपके बलसे संसारको रचताहै और तपके बलसे विष्णु भगवान् संपूर्ण जगतकी रक्षा करते हैं ॥ ३ ॥ तपके बलसे शिवजी संहार करते हैं और तपके बलसे शेषनाग पृथिवीका भार धारण करते हैं ॥ ४ ॥

तप अधार सब सृष्टिभवानी ❀ करहु जाइ तप अस जियजानी ॥ ५ ॥
सुनत बचन विस्मित महतारी ❀ सपन सुनायेउ गिरिहि हँकारी ॥ ६ ॥

और तपके आधारसे सब सृष्टि है ऐसा हृदयमें जानकर, हे पार्वती ! जाकर तप करो ॥ ५ ॥ यह वचन सुनकर माता बड़ी अचरजमें हुई और हिमवान्को बुलाकर सुपना सुनाया ॥ ६ ॥

मातु पितहिं बहुविधि समुझाई ❀ चली उमा तपहित हरषाई ॥ ७ ॥
प्रिय परिवार पिता अरु माता ❀ भये विकल मुख आव न बाता ॥ ८ ॥

फिर मातापिताको बहुत भाँति समझाकर उमा तपके लिये प्रसन्न होकर चली ॥ ७ ॥ प्यारा परिवार, पिता और माता सब विकल होगये और मुखसे बात न कर सके ॥ ८ ॥

दो०–बेदशिरा मुनि आइ तब, सबहिं कहा समुझाय ॥
पारवती महिमा सुनत, रहे प्रबोधहि पाय ॥ ८५ ॥

तब वेदशिरामुनिने आकर सबको समझाकर कहा और पार्वतीकी महिमा सुनतेही ज्ञान पाकर रह गये ॥ ८५ ॥

चौ०–उरधरि उमा प्राणपतिचरना ❀ जाइ विपिन लागी तप करना ॥ १ ॥
अति सुकुमारि न तनु तपयोगू ❀ पतिपद सुमिरि तजेउ सब भोगू ॥ २ ॥

उमाने प्राणपति शिवजीके चरणोंको हृदयमें धरकर जंगलमें जाकर तप करना आरंभ किया

॥ १ ॥ वह बड़ी सुकुमारी थी और शरीर तपके योग्य न था. तौभी पतिके चरणोंका स्मरण करके सब भोग (एकसाथही) त्याग दिया ॥ २ ॥

नित नव चरण उपज अनुरागा ❀ बिसरी देह तपहि मन लागा ॥ ३ ॥
संवत सहस्र मूल फल खाये ❀ शाक खाइ शत वर्ष गँवाये ॥ ४ ॥

नित्य नवीन २ स्नेह चरणोंमें उत्पन्न होने लगा. देह बिसर गई और तपमें मन लग गया ॥ ३ ॥ एक हजार वर्षतक मूल फल खाये और सौ वर्ष शाकपात खाकर बिताये ॥ ४ ॥

कछु दिन भोजन वारि बतासा ❀ किये कठिन कछु दिन उपावासा ॥ ५ ॥
वेल पात महि परेउ सुखाई ❀ तीन सहस संवत सो खाई ॥ ६ ॥

कुछ दिनतक जल और पवनही भोजन करती रही और कुछ दिनतक कठिन उपवास किये, ॥ ५ ॥ और तीन हजार वर्षतक उसने धरतीपर पड़ेहुए सूखे वेलपत्र खाये ॥ ६ ॥

पुनि परिहरेउ सुखानेउ पर्णा ❀ उमा नाम तब भयेउ अपर्णा ॥ ७ ॥
देखि उमहिं तपक्षीणशरीरा ❀ ब्रह्मगिरा भइ गगन गँभीरा ॥ ८ ॥

फिर जब सूखे पत्तेभी खाना छोड़ दिया, तब उमाका नाम अपर्णा हुआ ॥ ७ ॥ उमाको तपके कारण शरीरसे कृश देखकर आकाशमें गंभीर वाणी हुई ॥ ८ ॥

दो०-भयउ मनोरथ सुफल तब, सुनु गिरिराजकुमारि ॥ ❀
परिहर दुसह कलेश सब, अब मिलिहहिं त्रिपुरारि ॥ ८६ ॥ ❀

हे गिरिराजकुमारी! सुन तेरा मनोरथ सफल हुआ; सब कठिन क्लेश दूरकर, अब शिवजी मिलेंगे८६

चौ०-अस तप काहु न कीन्ह भवानी ❀ भये अनेक धीर मुनि ज्ञानी ॥ १ ॥
अब उर धरहु ब्रह्मवरबानी ❀ सत्य सदा संतत सुचि जानी ॥ २ ॥

हे भवानी ऐसा तप किसीने नहीं किया. अनेक पण्डित, मुनि, और ज्ञानी, होगये ॥ १ ॥ अब आकाशवाणीको सदा सत्य और शुद्ध जानकर हृदयमें धर ॥ २ ॥

आवै पिता बुलावन जबहीं ❀ हठ परिहर घर जायहु तबहीं ॥ ३ ॥
मिलहिं तुमहिं जब सप्तऋषीशा ❀ जानेहु तब प्रणाम वागीशा ॥ ४ ॥

जब पिता बुलाने आवै तभी हठको छोड़ घर जाना ॥ ३ ॥ और जब तुमको सात ऋषि मिलैं तब आकाशवाणीका प्रमाण जानलेना ॥ ४ ॥

सुनत गिरा विधि गगनबखानी ❀ पुलक गात गिरिजा हरखानी ॥ ५ ॥
उमाचरित मैं सुंदर गावा ❀ सुनहु शंभुकर चरित सुहावा ॥ ६ ॥

आकाशवाणी सुनकर पार्वतीजीका शरीर पुलकायमान हो गया (अर्थात् रोम खड़े होगये) और प्रसन्न हुई ॥५॥ मैंने उमाका चरित्र सुन्दर रीतिसे गाया है, अब शंकरका सुन्दर चरित्र सुनो ॥६॥

जबतें सती जाइ तनु त्यागा ❀ तबतें शिवमन भयेउ विरागा ॥ ७ ॥
जपहिं सदा रघुनायकनामा ❀ जहँ तहँ सुनहिं रामगुणग्रामा ॥ ८ ॥

जबसे सतीने जाकर शरीर त्यागा तबसे शिवजीका मन (संसारके) रागसे रहित होगया ॥ ७ ॥ श्रीरामनाम सदा जपने लगे और जहाँ तहाँ रामचन्द्रके गुणसमूह सुनतेथे ॥ ८ ॥

दो०-चिदानंद सुखधाम शिव, विगतमोह मद काम ॥ ❀
विचरहिं महि धरि हृदय हरि, सकल लोक अभिराम ॥ ८७ ॥ ❀

शिवजी चैतन्यरूप, सुखके धाम और मोह, मद और कामरहित हैं और भगवान्‌को हृदयमें धरकर पृथ्वीपर विचरते हैं और संपूर्ण लोकोंको आनन्दके दाता हैं ॥ ८७ ॥

चौ०–कतहुँ मुनिन उपदेशहिं ज्ञाना ❀ कतहुँ रामगुण करहिं बखाना ॥ १ ॥
यदपि अकाम तदपि भगवाना ❀ भक्तविरहदुखदुखित सुजाना ॥ २ ॥

कहीं मुनियोंको ज्ञानका उपदेश करते हैं और कहीं रामके गुणोंका वर्णन करते हैं ॥ १ ॥ यद्यपि कामनारहित हैं तौ भी भगवान् शिवजी भक्त अर्थात् पार्वतीके विरहके दुखसे दुखी हुए, क्योंकि सब जानते हैं ॥ २ ॥

यहि विधि गयेउ काल बहु बीती ❀ नित नव होइ रामपदप्रीती ॥ ३ ॥
नेम प्रेम शंकर कर देखा ❀ अविचल हृदय भक्तिकी रेखा ॥ ४ ॥

इस प्रकार बहुत काल बीतगया और रामजीके चरणोंमें नित्य नवीन प्रीति होने लगी ॥ ३ ॥ और जब रामजीने महादेवजीका (सतीके त्यागका) नेम और सतीपर प्रेम देखा और हृदयमें भक्तिकी अविचल रेखा देखी ॥ ४ ॥

प्रगटे राम कृतज्ञ कृपाला ❀ रूपशीलनिधि तेजविशाला ॥ ५ ॥
बहुप्रकार शंकरहिं सराहा ❀ तुम विनु अस व्रत को निरवाहा ॥ ६ ॥

तब उपकारको माननेवाले कृपालु, रूप और शीलके समुद्र और बड़े तेजस्वी रामजी प्रगट हुए५ बहुत प्रकारसे शंकरकी सराहना करी कि तुम्हारे विना ऐसे व्रतका कौन निर्वाह कर सकताहै ॥६॥

बहु विधि राम शिवहिं समुझावा ❀ पारवतीकर जन्म सुनावा ॥ ७ ॥
अति पुनीत गिरिजाकी करनी ❀ विस्तरसहित कृपानिधि बरनी ॥ ८ ॥

अनेक भाँति रामजीने शंकरको समझाया और पार्वतीजीका जन्म सुनाया ॥ ७ ॥ और कृपानिधि रघुनाथजीने अत्यन्त पवित्र पार्वतीजीकी करनीका विस्तारपूर्वक वर्णन किया ॥ ८ ॥

दो०–अब बिनती मम सुनहु शिव, जो मोपर निज नेहु ॥ ❀
जाइ बिवाहहु शैलजहि, यह मोहि माँगे देहु ॥ ८८ ॥ ❀

हे शंकर ! जो मुझपर स्नेह है तौ अब मेरी विनती सुनो कि जाकर हिमाचलकी पुत्रीके साथ विवाह करो और यह बात मुझे माँगी दो ॥ ८८ ॥

चौ०–कह शिव यदपि उचित अस नाहीं ❀ नाथवचन पुनि मेटि न जाहीं ॥ १ ॥
शिर धरि आयसु करिय तुम्हारा ❀ परम धरम यह नाथ हमारा ॥ २ ॥

शिवजीने कहा कि यद्यपि ऐसा उचित नहीं है परन्तु स्वामीका वचन मेटा नहीं जासकता ॥ १ ॥ आपकी आज्ञा शिर धरके करूँगा. हे नाथ ! यह हमारा परम धर्म है ॥ २ ॥

मातु पिता गुरु प्रभुकी बानी ❀ बिनहिं बिचार करिय शुभ जानी ॥ ३ ॥
तुम सब भाँति परम हितकारी ❀ आज्ञा शिरपर नाथ तुम्हारी ॥ ४ ॥

माता, पिता और गुरुकी वाणीको विनाही विचारे सुन्दर जान करनी चाहिये ॥ ३ ॥ आप सब प्रकार अत्यन्त हित करनेवाले हो इसलिये हे नाथ ! आपकी आज्ञा शिरपर है ॥ ४ ॥

प्रभु तोषेउ सुनि शंकरबचना ❀ भक्ति विवेक धर्मयुत रचना ॥ ५ ॥
कह प्रभु हर तुम्हार प्रण रहेऊ ❀ अब उर राखेहु जो हम कहेऊ ॥ ६ ॥

शिवजीका वचन सुनकर भगवान् प्रसन्न हुए, क्योंकि यह वातचीत भक्ति, ज्ञान और धर्मसे भरीथी

॥ ५ ॥ प्रभुने कहा कि, हे शिवजी ! आपका प्रण रहा अब जो हमने कहा है उसे हृदयमें रखना ॥ ६ ॥

अंतरध्यान भये अस भाखी ❀ शंकर सोइ मूरति उर राखी ॥ ७ ॥
तबहि सप्तऋषि शिवपहँ आये ❀ बोले प्रभुसन वचन सुहाये ॥ ८ ॥

ऐसा कह कर (रामचन्द्र) अन्तर्ध्यान होगये और महादेवजीने वही (श्यामसुन्दरकी) मूर्ति हृदयमें धरली ॥ ७ ॥ उसी समय सप्तऋषि (कश्यप, अत्रि, वशिष्ठ, विश्वामित्र, भारद्वाज, गौतम, जमदग्नि) शिवजीके पास आये और प्रभु शंकर ने उनसे ये सुन्दर वचन कहे कि ॥ ८ ॥

दो०-पारवती पहँ जाइ तुम, प्रेमपरीक्षा लेहु ॥ ❀
गिरिहि प्रेरि पठवहु भवन, दूरि करहु संदेहु ॥ ८९ ॥ ❀

आप पार्वतीजीके पास जाकर प्रेमकी परीक्षा लो और हिमाचलसे कहकर उन्हें घर भेज संदेह दूर करना ॥ ८९ ॥

चौ०-ऋषिन गौरि देखीं तहँ कैसी ❀ मूरतिवंत तपस्या जैसी ॥ १ ॥
बोले मुनि सुनु शैलकुमारी ❀ करहु कवन कारण तप भारी ॥ २ ॥

ऋषियोंने वहाँ पार्वतीको कैसा देखा कि जैसे मूर्त्तिमान् तपस्या हीहो ॥ १ ॥ मुनि बोले कि हे शैलकुमारी ! सुन. तू किसलिये भारी तप कर रही है ॥ २ ॥

केहि आराधहु का तुम चहहू ❀ हमसन सत्य मर्म किन कहहू ॥ ३ ॥
सुनत ऋषिनिके बचन भवानी ❀ बोली गूढ़ मनोहरबानी ॥ ४ ॥

किसकी आराधना करती है और क्या चाहती है ? हमसे सच्चा २ भेद क्यों नहीं कहती है ?॥३॥ ऋषियोंके वचन सुनकर पार्वतीजी गूढ़ कहिये छुपी हुई और मनके हरनेवाली वानी बोलीं ॥ ४ ॥

कहत मरम मन अति सकुचाई ❀ हँसिहहु सुनि हमारि जड़ताई ॥ ५ ॥
मनहठ परा न सुनै सिखावा ❀ चहत वारिपर भीति उठावा ॥ ६ ॥

मनका मरम कहनेमें अधिक लजाई (और कहा कि) तुम हमारी मूर्खता सुनकर हँसोगे ॥ ५ ॥ मन हठके वश दूसरेका उपदेश नहीं सुनता है और पानीपर भीत उठाना चाहता है ॥ ६ ॥

नारद कहा सत्य सोइ जाना ❀ बिनु पंखन हम चहहिं उड़ाना ॥ ७ ॥
देखिय मुनि अविवेक हमारा ❀ चाहत प्रति शंकर अविकारा ॥ ८ ॥

नारदजीने जो कहा है उसको हमने सत्य जाना है और मैं विना पंखके उड़ा चाहती हूँ ॥ ७ ॥ हे मुनियो ! हमारा अज्ञान देखिये कि वह विकाररहित शंकरको चाहता है ॥ ८ ॥

दो०-सुनत बचन बिहँसे ऋषय, गिरिसंभव तव देह ॥ ❀
नारदकर उपदेश सुनि, कहहु बसे को गेह ॥ ९० ॥ ❀

उमाका वचन सुनकर ऋषिजन हँसे (और कहा कि,) पर्वतसे उत्पन्न तेरी देह है और नारदका उपदेश सुन कर कहो कौन घरमें वसे हैं अर्थात् रहे हैं ॥ ९० ॥

चौ०-दक्षसुतन्हि उपदेशिनि जाई ❀ तिन फिरि भवन न देखे आई ॥ १ ॥
चित्रकेतुकर घर उन घाला ❀ कनककशिपुकर पुनि अस हाला ॥ २ ॥

दक्षके[१] पुत्रोंको जाकर उपदेश दिया था उन्होंने फिर लौटकर घर नहीं देखा ॥ १ ॥ चित्रकेतु[२] का घर उन्होंनेही बिगाड़ा और कनककशिपुका[३] फिर यह हाल हुवा ॥ २ ॥

नारद सिख जु सुनहिं नरनारी ❀ अवशि भवन तजि होहिं भिखारी ॥ ३ ॥
मन कपटी तन सज्जन चीन्हा ❀ आप सरिस सबही चहँ कीन्हा ॥ ४ ॥

जो मनुष्य और स्त्री नारदजीका उपदेश सुनते हैं वे घरको छोड़कर अवश्य भिखारी होते हैं ॥ ३ ॥ उनका मन कपटी है और शरीर सज्जनोंकासा दीखता है और अपने समान सबको करना चाहते हैं ॥ ४ ॥

तेहिके बचन मानि विश्वासा ❀ तुम चाहहु पति सहज उदासा ॥ ५ ॥
निर्गुण निलज कुबेष कपाली ❀ अकुल अगेह दिगंबर ब्याली ॥ ६ ॥

उनके वचनोंका विश्वास मानकर तुम ऐसे पतिको चाहती हो कि जो स्वभावहीसे उदास, ॥ ५ ॥ गुणरहित, लाजहीन, बुरे वेशवाले, कपालको धारण किये, कुलहीन, घररहित, नग्न, और सर्प लपेटें रहते हैं ॥ ६ ॥

कहहु कवन सुख अस वर पाये ❀ भलि भूलिउ ठगके बौराये ॥ ७ ॥
पंच कहैं शिव सती बिबाही ❀ पुनि अवडेरि मराइनि ताही ॥ ८ ॥

कहो ऐसा वर पानेसे कौनसा सुख मिलैगा? तूने ठगके बहकानेसे अच्छी भूल करी ॥ ७ ॥ क्योंकि शिवजीने पहिले तो पंचोंके कहेसे सतीके साथ व्याह किया फिर त्याग कर उनको मरवा डाला ॥ ८ ॥

दो०–अब सुख सोवत सोच नहिं, भीख मांगि भव खाहिं ॥ ❀
सहज इकाकिनके भवन, कबहुँ कि नारि खटाँहिं ॥ ९१ ॥ ❀

अब शिवजी सुखसे सोते हैं, कुछ सोच नहीं है और भीख मांग कर खाते हैं. भला ऐसे इकलट्टुओंके घरमें भी कभी स्त्रियां खप सकती है ॥ ९१ ॥

चौ०–अजहूँ मानहु कहा हमारा ❀ हम तुम कहँ वर नीक विचारा ॥ १ ॥
अति सुंदर शुचि सुखद सुशीला ❀ गावहिं वेद जासु यशलीला ॥ २ ॥

---

(१) दक्षप्रजापतिने जब पहिले पुत्र उत्पन्न किये तब उनसे कहा कि तुम सृष्टि रचो. यह सुन वे इसकेलिये तप करने वनमें गये। वहाँ नारदजीने उन सबको ऐसा उपदेश दिया कि वे विरक्त होगये और एकभी लौटकर न आया। फिर प्रजापतिने कन्या उत्पन्न करके सृष्टि बढ़ाई और नारदजीको यह श्राप दिया कि तुम दो घड़ीसे अधिक कहीं न ठहरोगे। सो हे पार्वती! नारदजीके उपदेशका यह फल है कि वे घर छोड़ भिक्षा मांगने लगे. (२) चित्रकेतुराजाके करोड़ स्त्रियां थीं, पर लड़का एककेभी न था। जब अंगिरा मुनिने उन्हें आशीष दी कि पुत्र होगा तब सबसे छोटीरानीके गर्भसे लड़का हुआ। इसलिये राजा उसे अधिक प्यार करताथा. निदान जब वह लड़का एक वर्षका हुआ तब अन्य स्त्रियोंने डाहसे लड़केको विषदे मारडाला। उस समय राजाने विलाप किया। नारदजीने आकर राजाको अनेक प्रकारसे ज्ञानोपदेश किया पर सब वृथा हुआ। तब मुनिने लड़केकी आत्माको बुला उससे कहा कि तू शरीरमें प्रवेश कर राजाका दुःख दूर कर. वह बोला कौन किसका बेटा और कौन किसका बाप है? पूर्वजन्ममें मैंभी राजा था, फिर विरक्त हो वनमें तप करता था; वहां एक दिन एक स्त्रीने मुझे फल दिया; उसमें लाखों चींटियां थीं मैंने उसे अग्निमें भूंजा इससे वे सब मरगईं। अब वही चींटियां राजाकी स्त्री हैं उन्हींने मुझे मार अपना बदला लिया है। और जिसने मुझे फल दियाथा वह मेरी माता है–यह कह वह आत्मा चलागया. तब चित्रकेतुको ज्ञान हुआ और सबको छोड़ वनमें तप करने चला गया. (३) हिरण्यकश्यपकी स्त्री गर्भवती थी। एक दिन नारदजी ने आनकर ज्ञान उपदेश किया. उसे तो ज्ञान न हुआ, पर गर्भके बालकको ज्ञान होगया. यह वही प्रल्हाद हैं जिनके लिये विष्णुने नृसिंहरूप धारण कर उसे राज्य दिया और दैत्यकुलका नाश किया.

अबभी हमारा कहा मानों। हमने तुम्हारे लिये सुन्दर वर विचारा है ॥ १ ॥ अत्यन्त सुन्दर, पवित्र, सुखके दाता, और सुशील हैं और वेद जिनके यश और लीलाको गाते हैं ॥ २ ॥

दूषणरहित सकलगुणरासी ❀ श्रीपति पुर वैकुंठनिवासी ॥ ३ ॥
अस वर तुमहिं मिलाउब आनी ❀ सुनत बिहँसि कह बचन भवानी ॥ ४ ॥

दूषणसे रहित, सम्पूर्ण गुणोंकी खान, लक्ष्मीके पति और वैकुंठमें निवास करनेवाले हैं ॥ ३ ॥ ऐसे वरको तुमसे मिलानेके लिये लावेंगे. यह सुनकर पार्वतीजीने हँसकर यह वचन कहा ॥ ४ ॥

सत्य कहहु गिरिभव तनु एहा ❀ हठ न छुटे छूटे बरु देहा ॥ ५ ॥
कनकौ पुनि पखानतें होई ❀ जारेहु सहज न परिहर सोई ॥ ६ ॥

तुम सत्य कहते हो कि पर्वतसे उत्पन्न हुआ यह शरीर है. शरीर भलेही छुट जाय पर हठ नहीं छुटैगा ॥ ५ ॥ (और यह बा तौ जो पत्थरमें उत्पन्न होता उसीमें होती है) जैसे सुवर्ण, पत्थरसे होता है और तपानेपरभी अपना सुभाव नहीं छोड़ता है ॥ ६ ॥

नारदबचन न मैं परिहरऊँ ❀ बसौ भवन उजरौ नहिं डरऊँ ॥ ७ ॥
गुरुके बचन प्रतीति न जेही ❀ सपनेहु सुगम न सुख सिधि तेही ॥ ८ ॥

नारदजीका वचन मैं नहीं छोड़ूंगी. घर वसे वा उजड़ै इससे नहीं डरती हूँ ॥ ७ ॥ जिसकी गुरुके वचनमें प्रतीति नहीं है उसको स्वप्नमेंभी सुखका लाभ सहज नहीं है ॥ ८ ॥

दो०–महादेव अवगुण भवन, विष्णु सकलगुणधाम ॥ ❀
जेहिकर मन रम जाहिसन, ताहि ताहि सन काम ॥ ९२ ॥ ❀

महादेवजी अवगुणके घर हैं और विष्णु भगवान् संपूर्ण गुणोंके धाम हैं. परन्तु जिसका मन(१) जिसके साथ रमता है उसको उसी के साथ काम है ॥ ९२ ॥

चौ०–जो तुम मिलतेहु प्रथम मुनीशा ❀ सुनतेहु सिख तुम्हारि धरि शीशा ॥ १ ॥
अब मैं जन्म शंभुहित हारा ❀ को गुणदोषहिं करै बिचारा ॥ २ ॥

जो तुम पहिलेसे मिलते तो हे मुनीश्वरो! तुमारी सीख शिर धरके सुनती ॥ १ ॥ अब मैंने अपना जन्म शिवजीके लिये हार दिया है, गुणका और दोषका कौन विचार करै? ॥ २ ॥

जो तुमरे हठ हृदयविशेषी ❀ रहि न जाइ बिनकियें बरेषी ॥ ३ ॥
तौ कौतुकिअन्ह आलस नाहीं ❀ बर कन्या अनेक जगमाहीं ॥ ४ ॥

जो तुमारे हृदयमें विशेष हठ है और व्याहकी बातचीत करे विना नहीं रहा जाता है ॥ ३ ॥ और (तुम सरीखे) खिलाड़ियोंको आलकस नहीं है, तौ संसारमें कन्या वरोंकी भी कमी नहींहै ॥४॥

जन्म कोटि लगि रगर हमारी ❀ बरौं शंभु नतु रहौं कुमारी ॥ ५ ॥
तजौं न नारदकर उपदेशू ❀ आपु कहहिं शतवार महेशू ॥ ६ ॥

करोड़ों जन्मतक हमारा यही हठ है कि, शिवजीको वरूँगी नहीं तौ कुँआरी रहूंगी ॥ ५ ॥ जो महादेवजी आपभी सो वार कहैं तौभी नारदजीका उपदेश नहीं छोड़ूँगी ॥ ६ ॥

---

(१) "दधि मधुरं मधु मधुरं द्राक्षा मधुरा सितापि मधुरैव। तस्य तदेव हि मधुरं यस्य मनो यत्र संलग्नम्. १" अर्थात् दधि, शहद, दाख, शक्कर सभी मीठे हैं. पर जहां जिसका मन लगा है उसको तो वही मीठा है. ॥ पुनि दोहा–"मीठी मीठी वस्तु है मीठी जाकी चाह। अमली मिसरी छांड़के आफू खात सराह. ॥"

मैं पापरौं कहै जगदंबा ❀ तुम गृह गवनहु भयउ विलंबा ॥ ७ ॥
देखि प्रेम बोले मुनिज्ञानी ❀ जयजयजय जगदंब भवानी ॥ ८ ॥

(फिर) जगदम्बाने कहा कि मैं तुम्हारे चरणोंमें पड़ती हूँ, तुम अपने घर जाओ बहुत देर हुई ७ प्रेम देखकरके मुनि ज्ञानी बोले कि हे जगतकी माता पार्वती ! तुम्हारी वारंवार जय होय ॥ ८ ॥

दो०-तुम माया भगवान शिव, सकल जगतपितु मात ॥
नाइ चरण शिर मुनि चले, पुनि पुनि हर्षित गात ॥ ९३ ॥

मायारूप तुम और भगवान् शंकर जगत्के माता पिता हो. ऐसे कह चरणोंमें शिर नवाय वारंवार पुलकायमान होतेहुए मुनिजन (हिमवानके पास) गये ॥ ९३ ॥

चौ०-जाइ मुनिन्ह हिमवंत पठाये ❀ करि विनती गिरिजहिं गृह ल्याये ॥ १ ॥
बहुरि सप्तऋषि शिवपहँ जाई ❀ कथा उमाकी सकल सुनाई ॥ २ ॥

जाकर मुनियोंने हिमवानको भेजा और वह विनती कर पार्वतीको घर लिवालाये ॥ १ ॥ फिर सातों ऋषियोंने शिवजीके पास जाय पार्वतीकी सब कथा सुनाई ॥ २ ॥

भये मगन शिव सुनत सनेहा ❀ हरषि सप्तऋषि गवने गेहा ॥ ३ ॥
मन थिर कर तव शंभु सुजाना ❀ लगे करन रघुनायकध्याना ॥ ४ ॥

शिवजी उसकी प्रीति सुनकर मगन हुये और सप्त ऋषि प्रसन्न हो अपने २ स्थानको गये ॥३॥ और ज्ञानी शिवजी अपना मन स्थिर कर रामचन्द्रजीका ध्यान करने लगे ॥ ४ ॥

तारक असुर भयेउ तेहिकाला ❀ भुजप्रताप बल तेज विशाला ॥ ५ ॥
तेहि सब लोक लोकपति जीते ❀ भये देव सुख संपति रीते ॥ ६ ॥

उसीसमय तारक नाम राक्षस हुआ । उसकी भुजाओंका प्रतापबल और तेज बड़ा भारीथा ॥ ५ ॥ उसने सब लोक और लोकपालोंको जीत लिया और सब देवता सुखसंपत्तिसे खाली हो गये ॥ ६ ॥

अजर अमर सो जीति न जाई ❀ हारे सुर करि विविध लराई ॥ ७ ॥
तब विरंचिसन जाइ पुकारे ❀ देखे बिधि सब देव दुखारे ॥ ८ ॥

वह अजर अमर था इससे जीता नहीं जाता था । जब देवता अनेक प्रकारसे युद्ध कर २ के हार गये ॥ ७ ॥ तब ब्रह्माके पास जा पुकारे । ब्रह्माजीने सब देवताओंको दुखी देखा ॥ ८ ॥

दो०-सबसन कहा बुझाय विधि, दनुजनिधन तब होय ॥
शंभुशुक्रसंभूत सुत, एहि जीतै रण सोय ॥ ९४ ॥

फिर ब्रह्माजी सब देवताओंको समझाकर बोले कि इस दैत्यका मरण तब होय कि, जब शिवजीके वीर्य्यसे पुत्र उत्पन्न होय, क्योंकि वही इसे युद्धमें जीतेगा ॥ ९४ ॥

चौ०-मोर कहा सुनि करहु उपाई ❀ होइहि ईश्वर करिहि सहाई ॥ १ ॥
सती जो तजी दक्षमख देहा ❀ जनमी जाइ हिमाचल गेहा ॥ २ ॥

मेरी बात सुन उपाय करो. यदि ईश्वर सहाय करैगा तो कार्य्य सिद्ध होगा ॥ १ ॥ सतीजीने जो दक्ष प्रजापतिके यज्ञमें देह त्यागीथी उन्होंनेही जाकर हिमाचलके घर जन्म लिया है ॥ २ ॥

तेहि तप कीन्ह शंभु पतिलागी ❀ शिव समाधि बैठे सब त्यागी ॥ ३ ॥
यदपि अहै असमंजस भारी ❀ तदपि बात इक सुनहु हमारी ॥ ४ ॥

और उसने महादेजीके पति होनेके लिये तप किया है और शिवजी सबको त्याग समाधि लगाकर बैठे हैं ॥ ३ ॥ यद्यपि इसमें अधिक दुविधा है (अर्थात् प्रथम तो शंकरकी समाधिका छूटना और जो छूटभी गई तौ कामदेवका बचना कठिन है) तौभी हमारी एक वात सुनों ॥ ४॥

पठवहु काम जाइ शिवपाहीं ❀ करै क्षोभ शंकरमनमाहीं ॥ ५ ॥
तब हम जाइ शिवहिं शिरनाई ❀ करवाउब विवाह बरिआई ॥ ६ ॥

तुम कामदेवको शिवजीके पास भेजो. वह जाकर उनके मनको चलायमान करै ॥ ५ ॥ तब हम शवजीके पास जाय प्रार्थना कर जोरावरी विवाह करवावेंगे ॥ ६ ॥

यहि विधि भलेहि देव हित होई ❀ मत अति नीक कहेउ सब कोई ॥ ७ ॥
अस्तुति सुरन कीन्ह अति हेतू ❀ प्रगटेउ विषमबाण झषकेतू ॥ ८ ॥

इस रीतिसे सब देवताओंका भला होगा (यह सुन) सबने कहा कि यह सम्मति बहुत अच्छी है ॥ ७ ॥ फिर देवताओंने इस कामके लिये कामदेवकी बड़ी स्तुति करी और पंचबाणधारी मछलीके चिन्हकी ध्वजावाले (कामदेव) प्रगट हुये ॥ ८ ॥

दो०-सुरन कही निज बिपति सब, सुनि मन कीन्ह बिचार ॥ ❀
❀ शंभु विरोध न कुशल मोहिं, बिहँसि कहेउ अस मार ॥९५॥ ❀

तब देवताओंने अपनी सब आपदा कही और कामदेवने सुन मनमें विचार किया और हँसकर[1] यह कहा कि (यद्यपि) शिवजीसे विरोध करनेमें मेरा भला नहीं ॥ ९५ ॥

चौ०-तदपि करव मैं काज तुम्हारा ❀ श्रुति कह परम धर्म उपकारा ॥ १ ॥
❀ परहित लागि तजै जो देही ❀ संतत संत प्रशंसहिं तेही ॥ २ ॥

तौभी मैं तुम्हारा काम करूंगा. क्योंकि वेदमें उपकार करना बड़ा धर्म कहा है ॥ १ ॥ जो कोई पराये भलेके लिये देह छोड़ता है, अच्छे लोग सदा उसकी बड़ाई किया करते हैं ॥ २ ॥

असकहि चलेउ सबहिं शिरनाई ❀ सुमन धनुष कर सहित सहाई ॥ ३ ॥
चलत मार अस हृदय बिचारा ❀ शिवविरोध ध्रुव मरण हमारा ॥ ४ ॥

ऐसे कह सबको शिर नवाय पुष्पका धनुष हाथमें चढ़ाय अपने (वसंत आदि) सहायकों सहित (कैलासको) चला ॥ ३ ॥ और चलते समय कामने मनमें यह विचार किया कि शिवजीसे विरोध करनेमें निश्चय हमारा मरण होगा ॥ ४ ॥

तब आपन प्रभाव विस्तारा ❀ निजबश कीन्ह सकल संसारा ॥ ५ ॥
कोपेउ जबहिं बारिचरकेतू ❀ क्षणमहँ मिटेउ सकल श्रुतिसेतू ॥ ६ ॥

ऐसा अनुमानकर अपने प्रभावको फैलाया कि जिससे सब संसारको अपने वशमें कर लिया था ॥ ५ ॥ जिस समय कामदेवने कोप किया तौ क्षणभरमें वेदका पुल टूट गया अर्थात् मर्य्यादा मिट गई ॥ ६ ॥

ब्रह्मचर्य व्रत संयम नाना ❀ धीरज धर्म ज्ञान विज्ञाना ॥ ७ ॥
सदाचार जप जोग बिरागा ❀ सभय विवेक कटक सब भागा ॥ ८ ॥

---

(१) कामदेवके हँसनेका यह भाव है कि जैसा गीतामें कहा है कि-"हँतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम् ॥" अर्थात् जो मरूँगा तौ स्वर्ग मिलैगा, अथवा जीतकर पृथ्वीका राज करूँगा.

और ब्रह्मचर्य्यव्रत(१), भांति २ के संयम, अर्थात् इन्द्रियोंका रोकना; धीरज, धर्म, ज्ञान और विचार ॥ ७ ॥ सदाचार जप योग वैराग इनके साथ विवेकका सब कटक डरकर भाग गया ॥ ८ ॥

छं०–भागेउ विवेक सहाइ सहित सो सुभट संयुग महिंमुरे ।
सदग्रंथ पर्वत कंदरनमहँ जाइ तेहि अवसर दुरे ॥
होनहार का करतार को रखवार जग खरभर परा ।
दुइमाथ केहि रतिनाथ जेहि कहँ कोप धनुशरकरधरा ॥ ३ ॥

जब कामकी सेनाके योधा रणभूमिकी ओर मुड़े तब ज्ञान अपने सहायकों समेत भागा और उस समय सद्ग्रंथ पर्वतोंकी कंदराओंमें जाकर छिपे. सब संसारमें खलवली पड़गई और कहने लगे कि, अब क्या होनहार है! और कौन हमारी रक्षा करैगा? ऐसा कौन दो माथेका है जिसपर क्रोध कर कामदेवने धनुष वाण हाथमें लिया ॥ ३ ॥

दो०–जे सजीव जग अचर चर, नारि पुरुष असनाम ॥
ते निज निज मर्याद तजि, भये सकल वश काम ॥ ९६ ॥

जितने जीवधारी संसारमें चर अचर थे कि जिनका स्त्री पुरुष नाम था, वे सब अपनी २ मर्य्यादा छोड़ २ कामके वश हो गये ॥ ९६ ॥

चौ०–सबके हृदय मदनअभिलाखा ❀ लता निहारि नवहि तरु शाखा ॥ १ ॥
नदी उमगि अंबुधि कहँ धाई ❀ संगम करहिं तलाव तलाई ॥ २ ॥

सबके चित्तमें कामकी इच्छा होने लगी, वेलोंको देख २ वृक्षोंके गुद्दे झुकने लगे ॥ १ ॥ और नदीयाँभी उमड़ २ कर समुद्रकी तरफ चलीं और तालाव तलय्यांभी आपसमें मिलने लगे ॥ २ ॥

जहँ अस दशा जड़नकी वरणी ❀ को कहिसकै सचेतन करणी ॥ ३ ॥
पशु पक्षी नभ जल थल चारी ❀ भये कामवश समय बिसारी ॥ ४ ॥

जब जड़ पदार्थोंकी यह दशा वर्णन करी है, तौ चैतन्यजीवोंकी करनी कोई क्या कहै ॥ ३ ॥ आकाश, जल, और पृथ्वीके रहनेवाले पशुपक्षी समयको भूलकर सब कामके वश हो गये ॥ ४ ॥

मदनअंध व्याकुल सब लोका ❀ निशिदिन नहिं अवलोकहिं कोका ॥ ५ ॥
देव दनुज नर किन्नर व्याला ❀ प्रेत पिशाच भूत बैताला ॥ ६ ॥

सब संसार कामांध हो व्याकुल होगया. चकवा चकवीभी रात दिनको नहीं देखते थे ॥ ५ ॥ देवता, दैत्य, मनुष्य, किन्नर, नाग, भूत, प्रेत, पिशाच और वैताल ॥ ६ ॥

इनकी दशा न कहेउ बखानी ❀ सदा कामके चेरे जानी ॥ ७ ॥
सिद्ध विरक्त महामुनि योगी ❀ तेपि कामवश भये वियोगी ॥ ८ ॥

इनको सदा कामके चेले जान इनकी दशा मैंने वर्णन नहीं की है ॥ ७ ॥ सिद्ध, विरक्त बड़े २ मुनी, योगीभी कामके वशसे वियोगी हो गये अर्थात् उनका योग छुट गया ॥ ८ ॥

छं०–भये कामवश योगीश तापस पामरनकी को कहै ।
देखहिं चराचर नारिमय जे ब्रह्ममय देखत रहै ॥

---

(१) आठ प्रकारके मैथुनसे बचनेको ब्रह्मचर्य्य कहते हैं. आठ भाँतिके मैथुन ये हैं. यथा–"दर्शनं स्पर्शनं केली रहस्यं गुह्यभाषणम् । संकल्पोऽध्यवसायश्च क्रियानिर्वृत्तिरेव च । एतन्मैथुनमष्टांगं प्रवदन्ति मनीषिणः॥" दोहा–"सर्व त्याग संकल्प रति तन्मय गुप्त विचार ॥ कीर्तन सुमरन देखि वौ मैथुन अष्ट प्रकार ॥"

अबला विलोकहिं पुरुषमय जग पुरुष सब अबलामयं । ❀
दुइ दंड भरि ब्रह्मांड भीतर काम कृतकौतुक अयं ॥ ४ ॥ ❀

जब बड़े २ योगीश्वर तपस्वी कामके वश होगये, तब छोटे छोटोंकी कोई क्या कहे? जो सबको ब्रह्ममय[1] देखतेथे, वे चर और अचरको स्त्रीमय देखने लगे, उस समय स्त्रियां जगत्को पुरुषमय और पुरुष स्त्रीमय देखतेथे. दो घड़ीभरतक ब्रह्मांडभरमें कामदेवने यह खेल किया ॥ ४ ॥

सो०-धरा न काहू धीर, सबके मन मनसिज हरे[2] ॥ ❀
जेहि राखेउ रघुवीर, ते उबरे तेहि काल महँ ॥ १४ ॥ ❀

उस समय किसीने धीरज नहीं धरा. कामदेवने सबके मन हरलिये (केवल) रघुनाथजीने जिसकी रक्षा करी वह ही उस काल बच रहा ॥ १४ ॥

चौ०-उभय घरी अस कौतुक भयउ ❀ जबलगि काम शंभुपहँ गयऊ ॥ १ ॥
शिवहिं विलोकि सशंकेउ मारू ❀ भयेउ यथाथित सब संसारू ॥ २ ॥

दो घड़ीतक[3] ऐसा खेल होता रहा. जबतक कामदेव शिवजीके पास गया ॥ १ ॥ शंभुको देख कामदेव डरा उस समय संसार ज्योंका त्यों होगया ॥ २ ॥

भये तुरत जगजीव सुखारे ❀ जिमि मद उतरिगये मतवारे ॥ ३ ॥
रुद्रहिं देखि मदन भय माना ❀ दुराधर्ष दुर्गम भगवाना ॥ ४ ॥

तुरंतही सब संसारी जीव (ऐसे) प्रसन्न होगये जैसे मतवाला मदके उतरनेसे हो जाय ॥ ३ ॥ महादेवजीको देख कामदेव डरा, क्योंकि भगवान्[4] शिवजी दुराधर्ष कहिये वश होनेके और दुर्गम कहिये मिलनेके अयोग्य हैं ॥ ४ ॥

फिरत लाज कछु कहि नहिं जाई ❀ मरण ठानि मन रचेसि उपाई ॥ ५ ॥
प्रगटेसि तुरत रुचिर ऋतुराजा ❀ कुसुमित नव तरु राजि बिराजा ॥ ६ ॥

यदि लौट आवे तौ ऐसी लाज हो कि, कुछ कहा नहीं जाय. इसलिये अपना मरना जीमें ठान मनमें उपाय रचने लगा ॥ ५ ॥ शीघ्रही सुन्दर वसंत ऋतु प्रगट कर दी कि, जिससे नये वृक्षोंकी पंक्तियां पुष्पोंसे शोभायमान होगईं ॥ ६ ॥

---

(१) जैसा वेदमें लिखा है. कि-"सर्वं खल्विदं ब्रह्मे"ति श्रुतेः अर्थात् यह सब संसार ब्रह्ममय है. (२) इस प्रसंगमें ज्ञान, कर्म और उपासना इन तीनोंका वर्णन है कि, जिनकी वेदमेंभी प्रधानता कही है सो इनमेंसे ज्ञान तौ सहायकोंसमेत प्रथमही भाग गयाथा. और सद्ग्रंथ कि जिनसे कर्म होता है, कंदरामें जा छुपे अतएव केवल उपासना रह गई इसको रामजीने बचालिया. (३) घड़ी दिनसे घड़ीभर रात्रितक ऐसा, जानना-क्योंकि पीछै कह आये कि-"निशिदिन नहिं अवलोकत कोका." (४) "ऐश्वर्यस्य समग्रस्य वीर्यस्य यशसः श्रियः ॥ ज्ञानवैराग्ययोश्चैव पण्णां भग इति स्मृतम् ॥ उत्पत्तिं प्रलयं चैव भूतानां गतिमागतिम् ॥ वेत्ति विद्यामविद्यां च स वाच्यो भगवानिति ॥" अर्थात्, सब ऐश्वर्य, वीर्य, यश, श्री, ज्ञान, और वैराग्य इनको भग कहते हैं ये जिसमें हों, और उत्पन्न नाश और आवागमन, विद्या, अविद्या इनको जो जाने, उसे भगवान् कहते हैं.

कवित्त.

(५) धारिकर धनुष मनोज महादेवढिंग आयौ जा समें में सोचि छायौ भुम्मि सारीके ।
प्रगटि वसंत किये पल्लवित वृच्छवृन्द परत परागपुंज पुष्पनकी डारीके ।

बन उपबन वापिका तड़ागा ❀ परम सुभग सब दिशाविभागा ॥ ७ ॥
जहँ जहँ जनु उमगत अनुरागा ❀ देखि मुएहु मन मनसिज जागा ॥ ८ ॥

वन, बगीचा, बावड़ी, सरोवर और सब दिशा और विदिशा बहुतही सुहावनी लगने लगीं ॥ ७ ॥ उस समय जहाँ तहाँ मानों प्रेम उमगने लगा कि, जिसको देख मरेहुओंके मनमेंभी कामदेव उत्पन्न होगया ॥ ८ ॥

छं०–जागेउ मनोभव मुए मन बन सुभगता न परै कही । ❀
शीतल सुगंध सुमंद मारुत मदन अनलसखा सही ॥ ❀
बिकसे सरन्हि बहुकुंज गुंजत पुंज मंजुल मधुकरा । ❀
कलहंस पिक शुक सरस रव कर गान नाचहिं अपसरा ॥५॥ ❀

जिस समय कामदेव मरेहुओंके मनमेंभी चैतन्य हुआ, उस समय वनकी सुंदरता नहीं कही जाती है! कामरूपी अग्निकी सच्ची मित्रता करनेवाली शीतल, मंद, सुगंध पवन चलने लगी. तलावोंमें अनेक प्रकारके कमल खिल गये कि, जिनपर भौंरोंके झुंडकेझुंड मधुर २ गूंजने लगे और सुंदर हंस कोयल और तोते मीठी २ बोलियाँ बोलने लगे और अप्सरा गानकर नाचने लगीं ॥ ५ ॥

दो०–सकल कला करि कोटिविधि, हारेउ सेनसमेत ॥ ❀
चली न अचल समाधि शिव, कोपेउ हृदय निकेत ॥ ९७ ॥ ❀

कामदेव किरोड़ों प्रकारकी सब कला करके सेनासहित हार गया और जब शिवजीकी अचल समाधि न डिगी तब कामदेवने हृदयमें बड़ा कोप किया ॥ ९७ ॥

चौ०–देखि रसाल बिटप वर शाखा ❀ तेहि पर चढ़ेउ मदन मन माखा ॥ १ ॥
सुमनिचाप निज शर संधाने ❀ अति रिसताकि श्रवणलगि ताने ॥ २ ॥

आमके वृक्षकी सुंदर शाखा देख कामदेव मनमें खिसयाकर तिसपर चढ़ गया ॥ १ ॥ और

शीतल सुगन्ध मन्द त्रिविध समीर चहूँ गूंजत मिलंद मंजुरवरुचि भारीके ।
फूल्यौ है अशोकहू पै पेषि पायजेवजेव परसत न पाँय पद्म परमपियारीके ॥ १ ॥
फूली फुलवारी वर मालती सुमोरलसी मोतिया अगस्त मानवेला की जुक्यारी है ।
गुलपैंचा गुल्लाला गुड़हर गुलाव चहूँ गुलसब्बो गुलअनार कुंदकतारी है ।
वरनतभट्ट पियावाँस गुलाबाँस जुही गुलतुर्रा गुंज जेंदा दाउदी पियारी है ।
चाँदनी चमेली चंपा सेवतीं सुफूलीं सब ऐसी ऋतुराजके समाजकी तयारी हैं ॥ २ ॥

सवैय्या.

पूरि रही धुनि पंछिनुकी जु पढ़ावत कोक कथा जनु पाँड़े । कूकत कोकिलमत्त भये सुनिकैं पुनि मानति मानहुँ छाँड़े । फूल अनेक प्रकार झरैं ते परे वनजारनके मनो टाँड़े । वौरे रसालन पै अलि सोहत मानों मनोज सुनामहिमाँड़े ॥२॥ कलकेलिके कोकिला कोकिलहू मिलि काम कथानकों गान लगे । मचलाने लगे मन मोरनके भ्रमरा भ्रमरी लपटाने लगे । मदमत्त भये हिरनाहिरनी सँग व्है सिंगियानु खुजाने लगे । वरनौं किमि औरनकी मैं पृथा पशुपंछि सनेह समाने सगे ॥ ३ ॥ दिन द्वारहि दंपति केलि करें उर नेक नहीं सरमाने लगे । छिनहूँ माह छूटत छोभभरे मुनिलोभ भरे घर आने लगे । ललचाने लगे जिय जोगिनके हिय सोगिनुके सरसाने लगे । रति चाने लगे जी नपुंसक हू मन मूये मनोज जगाने लगे ॥ ४ ॥ उमगे नदि औ नदियानके व्यूह जु वारिधि कौं वहिजाने लगे । तट तोरि तलाव तलाइ मिले जु पखान शिला पिघलाने लगे । तरु लमकैं भूमि पैं झूमि सबै वर वेलिन सौं लपटाने लगे । चरचा का करौं चित चेतनुकी जड़हू जिय ज्वानी जताने लगे ॥५॥

पुष्पके धनुषपर अपने बाण[1] चढ़ाये और अत्यंत क्रोध करके कानतक ताने ॥ २ ॥

छाँड़े विषम विशिख उर लागे ❀ छूटि समाधि शंभु तब जागे ॥ ३ ॥
भये ईश मन छोभ विशेखी ❀ नयन उघारि सकल दिशि देखी ॥ ४ ॥

फिर जब पंचबाणोंको छोड़ा और वह शिवजीके हृदयमें लगे, तब शिवजीकी समाधि छुटी और महादेवजी जागे ॥ ३ ॥ उस समय शिवजीके मनमें बड़ा क्षोभ हुआ. अर्थात् चित्त डिगमिगाने लगा और वे नेत्र खोलकर सब ओर देखने लगे ॥ ४ ॥

सौरभ पल्लव मदन विलोका ❀ भयउ कोप कंपेउ त्रयलोका ॥ ५ ॥
तब शिव तीसर नयन उघारा ❀ चितवत काम भयउ जरि छारा ॥ ६ ॥

और आमके पत्तोंमें कामदेवको (छिपा हुआ) देखा और देखतेही शिवजीने ऐसा कोप किया कि, जिससे तीनों लोक थर २ काँप उठे ॥ ५ ॥ फिर शिवजीने[2] तीसरा नेत्र खोला (कि जिसको सृष्टिके संहारके समय उघाड़ते हैं) और देखतेही काम जलकर भस्म हो गया ॥ ६ ॥

हाहाकार भयउ जग भारी ❀ डरपे सुर भये असुर सुखारी ॥ ७ ॥
समुझि काम सुख शोचहिं भोगी ❀ भये अकंटक साधक योगी ॥ ८ ॥

उस समय संसारमें बड़ा हाहाकार हुआ. देव तौ डरे[3] और दैत्य प्रसन्न हुये ॥ ७ ॥ कामके सुखको समझकर भोगी सोचने लगे और साधना करनेवाले योगी वेखटके हो गये ॥ ८ ॥

छं०-योगी अकंटक भयेउ पतिगति सुनत रति मूर्छित भई। ❀
रोदति वदति बहुभाँति करुणा करत शंकरपहँ गई ॥ ❀
अति प्रेम करि बिनती बिबिधबिध जोरिकर संमुख रही। ❀
प्रभु आशुतोष कृपालु शिव अबला निरखि बोले सही ॥ ९ ॥ ❀

योगी वे खटके हो गये और पतिकी दशा सुनि रति मूर्छा खाकर गिर पड़ी और बहुत रोती और (पतिके प्रतापको) कहती करुणा करती हुई शंकरके पास गई. और बड़े प्रेमसे नाना प्रकारकी विनती कर हाथ जोड़ सामने खड़ी हो गई. तब प्रभु शीघ्र प्रसन्न होनेवाले कृपालु महादेवजी स्त्रीको देख ठीक २ बोले ॥ ९ ॥

दो०-अबतें रति तव नाथ कर, होइहि नाम अनंग ॥* ❀
बिनु वपु व्यापिहिं सबहिं पुनि, सुनु निज मिलन प्रसंग ॥ ९८ ॥ ❀

हे रति! अबसे तेरे पतिका नाम अनंग होगा और यह विनाही अंगके सबको व्यापेगा और अपने पतिके मिलनेकी कथा सुन ॥ ९८ ॥

---

*भाविक विभावना.

---

(१) कामदेवके पांच वाण हैं. यथा-श्लोकः-"अरविन्दमशोकं च चूतं च नवमल्लिका। नीलोत्पलं च पञ्चैते पञ्चबाणस्य सायकाः" अर्थात् लाल कमल, अशोकपुष्प, आमका मौर; चमेली और नीलकमल। इनके लक्षण यथा दोहा-"वसीकरन मोहन कहत आकर्षण कवि लोग। उच्चाटन मारन समुझि पंच वाण ये योग॥" (२) जैसा शिवपुराणमें लिखा है-"क्रोधं संहर हे देव! इति यावत् वदन्ति खे। इन्द्रादिसकला देवास्तावद्भस्मीचकार तम् ॥" अर्थात् जबतक आकाशमें इन्द्रादि सब देवता कहैं कि हे शंकर! क्रोधको जानेदो २ तबतक उन्होंने कामदेवको भस्म कर दिया. (३) देवता तौ इस लिये डरे कि उनका काम सिद्ध करनेके लिये कामदेव गयाथा सो भस्म हो गया अब दैत्य दुःख देंगे, और दैत्योंकी प्रसन्नता तौ स्पष्ट है कि, देवताओंका कार्य बिगड़ गया. (४) यहां रतिको यह शंका हुई कि फिर मेरा क्या काम करेगा? अब शिवजीके मिलनेका प्रसंग कहते हैं.

चौ०–जब यदुवंश कृष्ण अवतारा ❀ होइहि हरण महामहिभारा ॥ १ ॥
कृष्णतनय होइहि पति तोरा ❀ बचन अन्यथा होइ न मोरा ॥ २ ॥

जब यदुवंशमें कृष्णका अवतार पृथ्वीका बड़ा भार उतारनेको होगा ॥ १ ॥ उन कृष्णजीका पुत्र तेरा पति होगा. ये वचन मेरा झूँठा न होगा ॥ २ ॥

रति गवनी सुनि शंकरबानी ❀ कथा अपर अब कहौं बखानी ॥ ३ ॥
देवन समाचार सब पाये ❀ ब्रह्मादिक वैकुंठ सिधाये ॥ ४ ॥

शिवजीके वचन सुन रति गई. -अब आगे दूसरी कथा कहता हूँ ॥ ३ ॥ जब यह सब समाचार देवताओंने पाये, तब तौ ब्रह्मादिक देवता वैकुंठको आये ॥ ४ ॥

सब सुर विष्णु विरंचिसमेता ❀ गये जहाँ शिव कृपानिकेता ॥ ५ ॥
पृथक् पृथक् तिन कीन्ह प्रशंसा ❀ भये प्रसन्न चंद्रअवतंसा ॥ ६ ॥

और वहाँसे फिर सब देवता, ब्रह्मा, विष्णुसमेत वहाँ गये कि, जहाँ कृपाके धाम शिवजी विराजमान थे ॥ ५ ॥ और उन्होंने अलग २ शिवजीकी स्तुति करी. तब चंद्रशेखर प्रसन्न हुये ॥ ६ ॥

बोले कृपासिंधु वृषकेतू ❀ कहहु अमर आयेहु केहि हेतू ॥ ७ ॥
कह विधि तुम प्रभु अंतरजामी ❀ तदपि भक्तिवश बिनवउँ स्वामी ॥ ८ ॥

और कृपासिंधु शिवजी बोले कि, हे देवताओ! यहाँ किसकारण आयेहो सो कहो ॥ ७ ॥ (इतनी सुन) ब्रह्माजी बोले कि, हे प्रभो! आप अंतरजामी हो तौभी भक्तिवश हो, इस लिये हे स्वामी! मैं विनती कर कहता हूँ ॥ ८ ॥

दो०–सकल सुरनके हृदय अस, शंकर परम उछाह ॥ ❀
निज नयनन देखा चहहिं, नाथ तुह्मार विवाह ॥ ९९ ॥ ❀

हे शंकर! सब देवताओंके मनमें यह अधिक लालसा है कि, हे नाथ! अपने नेत्रोंसे आपका विवाह देखा चाहते हैं ॥ ९९ ॥

चौ०–यह उत्सव देखिय भरिलोचन ❀ सो कछु करिय मदनमदमोचन ॥ १ ॥
काम जारि रति यहँ वर दीना ❀ कृपासिंधु यह अतिभल कीना ॥ २ ॥

सो हे कामारि! जैसे इस उत्सवको नेत्र भरि देख लें वही कुछ उपाय कीजिये ॥ १ ॥ कामको जलाकर रतिको जो यह वरदान दिया है, हे दयासागर! यह आपने बहुत अच्छा किया ॥ २ ॥

शासति करि पुनि करहिं पसाऊ ❀ नाथ प्रभुनकर सहज सुभाऊ ॥ ३ ॥
पारवती तप कीन अपारा ❀ करहु तासु अब अंगीकारा ॥ ४ ॥

हे नाथ! एकवार धमकाकर वे फिर उसपर कृपा करते हैं यह बड़ोंका सहज सुभाव होता है ॥ ३ ॥ और पारवतीजीनेभी बड़ा भारी तप किया है अब उसेभी स्वीकार करिये ॥ ४ ॥

सुनु बिधिबचन समुझ प्रभुबानी ❀ ऐसोइ होउ कहा सुखमानी ॥ ५ ॥
तब देवन दुंदुभी बजाई ❀ बरषि सुमन जय जय सुरसाई ॥ ६ ॥

ब्रह्माके वचन सुन और विष्णु भगवानकी बाणी समझ शिवजीने प्रसन्न हो कहा कि, अब ऐसाही होगा ॥ ५ ॥ तब तौ देवताओंने (प्रसन्न) हो डमाडम नगाड़े बजाये और फूल वर्षाय २ लगे कहने कि, हे देवताओंके स्वामी! तुह्मारी जय होय ॥ ६ ॥

अवसर जानि सप्तऋषि आये ❀ तुरतहि विधि गिरिभवन पठाये ॥ ७ ॥
प्रथम गये जहँ रही भवानी ❀ बोले वचन मधुर छल सानी ॥ ८ ॥

ऐसा समय जान सप्तऋषी वहाँ आये और शीघ्रही ब्रह्माजीने हिमवानके घर भेजा ॥ ७ ॥ वे पहिले वहाँ गये. जहाँ पारवतीजी थीं और कपटसे मिलेहुये मीठे २ वचन बोले कि ॥ ८ ॥

दो०–कहा हमार न सुनेहु तब, नारद कर उपदेश ॥ ❀
अब भा झूट तुह्मारि प्रण, जारेउ काम महेश ॥ १०० ॥ ❀

तब तौ हमारा कहा न माना और नारदके उपदेशमें रहीं, अब तुह्मारा प्रण झूँटा हुआ क्योंकि शिवजीने कामदेवको भस्म कर दिया ॥ १०० ॥

चौ०–सुनि बोलीं मुसुकाय भवानी ❀ उचित कहेउ मुनिवर विज्ञानी ॥ १ ॥
तुह्मरे जान काम हर जारा ❀ अब लगि शंभु रहे सविकारा ॥ २ ॥

पारवतीजी यह सुन मुसकुराकर बोलीं कि, हे मुनिराज! ज्ञानवानों! ये आपने ठीक कहा ॥१॥ आपके जानमें शिवजीने कामदेवको जलादिया और अबतक क्या महादेवजी कामी थे ॥ २ ॥

हमरे जान सदाशिव योगी ❀ अज अनवद्य अकाम अभोगी ॥ ३ ॥
जो मैं शिव सेवउँ असजानी ❀ प्रीतिसमेत कर्म मन बानी ॥ ४ ॥

हमारे जान तौ शिवजी सदा योगी हैं और जन्म, निंदा, काम और भोगरहित हैं ॥ ३ ॥ और जो मैंने ऐसा जान प्रीतिसमेत मन, वाणी और कर्मसे शिवजीकी सेवा करी है ॥ ४ ॥

तौ हमार प्रण सुनहुँ मुनीशा ❀ करहहिं सत्य कृपानिधि ईशा ॥ ५ ॥
तुम जु कहा हर जारेउ मारा ❀ सो अति बड़ अविवेक तुह्मारा ॥ ६ ॥

तौ हे मुनीश्वरो! सुनों. हमारे प्रणको कृपासिंधु महादेवजी पूराही करेंगे ॥ ५ ॥ तुमने जो यह कहा कि, शिवजीने कामदेवको जलादिया यह तुह्मारी वड़ी भारी अज्ञानता है ॥ ६ ॥

तात अनलकर सहज सुभाऊ ❀ हिम तेहि निकट जाइ नहिं काऊ ॥ ७ ॥
गये समीप सो अवशि नसाई ❀ ज्यों संपाती पक्ष गँवाई ॥ ८ ॥

हे तात! अग्निका सुभाव सहजही (गरम) होता है कि, जाड़ा उसके पास कभी नहीं जाता ॥ ७ ॥ (और जो जाय तौ) पास जातेही अवश्य नाश हो जाता है कि जैसे संपातीने सूर्यके पास जाकर पंख गँवाये ॥ ८ ॥

दो०–हिय हरखे मुनि वचन सुनि, देखि प्रीति विश्वास ॥ ❀
चले भवानिहिं नाइ शिर, गये हिमाचल पास ॥ १०१ ॥ ❀

सप्तऋषि ऐसे वचन सुन प्रसन्न हुए और प्रीति विश्वास देखकर पार्वतीजीको दंडवतकर हिमवानके पास गये ॥ १०१ ॥

चौ०–सब प्रसंग गिरिपतिहि सुनावा ❀ मदनदहन सुनि अति दुख पावा ॥ १ ॥
बहुरि कहेउ रतिकर वरदाना ❀ सुनि हिमवंत बहुत सुख माना ॥ २ ॥

और सब कथा गिरिराजको सुनाई. वह कामदेवका जलाना सुन मनमें बड़ा दुखी हुआ ॥१॥ फिर रतिका वरदान कहा कि, जैसे शंकरने प्रसन्न हो रतिको वर दिया यह सुन हिमवान बडे प्रसन्न हुये ॥२॥

---

(१) इसकी पूरी कथा किष्किंधाकांड ४५ न. के दोहेसे जानना.

हृदय बिचारि शंभु प्रभुताई ❀ सादर मुनिवर लिये बुलाई ॥ ३ ॥
सुदिन सुनखत सुघरी सुहाई ❀ बेगि बेदविधि लगन धराई ॥ ४ ॥

और हृदयमें शिवजीकी प्रभुता विचार आदरपूर्वक मुनियोंको बुलवालिया ॥ ३ ॥ और अच्छा दिन, नक्षत्र और सुंदर घड़ी देख जल्दीसे वेदकी रीतिसे लग्न ठराई ॥ ४ ॥

पत्री सप्तऋषिन सोइ दीन्ही ❀ गहि पद विनय हिमाचल कीन्ही ॥ ५ ॥
जायविधिहिं तिन दीन्ह सो पाती ❀ वाँचत प्रीति न हृदय समाती ॥ ६ ॥

और चिठ्ठी लिख सप्त ऋषियोंको दीनी और हिमवानने चरण छूकर विनती करी ॥ ५ ॥ उन्होंने उस चिठ्ठीको ब्रह्माजीको दी वह उसे पढ़ ऐसे प्रसन्न हुये कि, हृदयमें फूले न समाये ॥६॥

लगन वाँचि अज सबहि सुनाई ❀ हरषे मुनि सब सुरसमुदाई ॥ ७ ॥
सुमनवृष्टि नभ वाजन बाजे ❀ मंगल कलश दशहुँ दिशि साजे ॥ ८ ॥

ब्रह्माजीने उस लग्नपत्रको वाँच सबको सुनाया उसे सुन सब मुनि और सब देवता बड़े प्रसन्न भये ॥ ७ ॥ आकाशसे फूलोंकी वृष्टि होने लगी और वाजे बजने लगे और दशों दिशाओंमें मंगलकलश सजने लगे ॥ ८ ॥

दो०-लगे सँवारन सकल सुर, वाहन विविध विमान ॥ ❀
होहिं सगुन मंगल सुभग, करहिं अपसरा गान ॥ १०२ ॥ ❀

सब देवता नाना प्रकारके अपने वाहन और विमान सजाने लगे. उस समय आनंदके सगुन होने लगे और अप्सरा गान करने लगीं ॥ १०२ ॥

चौ०-शिवहिं शंभुगण करहिं सिंगारा ❀ जटा मुकुट अहिमौर सँवारा ॥ १ ॥
कुंडल कंकण पहिरे ब्याला ❀ तन विभूति पट केहरिछाला ॥ २ ॥

महादेवजीके गण शिवजीका शृंगार करने लगे अर्थात् जटाओंका मुकुट बनाया, और सर्पोंकी मौर बनाई ॥ १ ॥ कानोंमें सर्पोंके कुंड़ल, और हाथोंमें सर्पोंकेही कंकण पहिराये और तनमें भस रमाकर वाघंबर उढ़ाया ॥ २ ॥

शशि ललाट सुंदर शिर गंगा ❀ नयन तीन उपवीत भुजंगा ॥ ३ ॥
गरल कंठ उर नरशिरमाला ❀ अशिव भेष शिव धाम कृपाला ॥ ४ ॥

माथेमें सुन्दर चंद्रमा और शिरपर गंगाजी शोभायमान हैं, ललाटमें तीसरा नेत्र और (गलेमें) सर्पका जनेऊ (पड़ाहुआहै) ॥ ३ ॥ कंठमें विष, हृदयमें नरमुंडोंकी माला धारण किये भयंकर रूप और कल्याणके धाम, कृपा करनेवाले ॥ ४ ॥

कर त्रिशूल अरु डमरु विराजा ❀ चले वृषभ चढ़ि बाजहिं बाजा ॥ ५ ॥
देखि शिवहिं सुरतिय मुसुकाहीं ❀ बरलायक दुलहिन जग नाहीं ॥ ६ ॥

जिनके हाथमें त्रिशूल और डमरू शोभायमान हैं (ऐसे महादेव) जब नाँदियेपर चढ़कर चले उस समय बाजे बजने लगे ॥ ५ ॥ शिवजीको देख देवताओंकी स्त्रियाँ मुसकाँई और कहने लगीं कि अहा ! इस वरके योग्य दुलहिन संसारमें नहीं है ॥ ६ ॥

विष्णु विरंचि आदि सुरव्राता ❀ चढ़ि चढ़ि बाहन चले वराता ॥ ७ ॥
सुरसमाज सब भाँति अनूपा ❀ नहि बरात दूलह अनुरूपा ॥ ८ ॥

ब्रह्मा, विष्णु आदि सब देवता अपने २ वाहनोंपर चढ़कर बरातको चले ॥७॥ देवताओंका समाज सब प्रकारसे अच्छा था तौभी कोई २ लगे कहने कि, दूलहके समान बरात नहीं सजी ॥ ८ ॥

दो०–विष्णु कहा अस बिहँसि तब, बोलि सकल दिशि राज ॥ ❀
बिलग बिलग होइ चलहु सब, निज निज सहित समाज १०३ ❀

तब विष्णु भगवान्ने सब दिक्पालोंको बुलाय हंसकर यों कहा कि, सब जने अपने २ समाजसहित अलग २ चलो ॥ १०३ ॥

चौ०–बर अनुहार बरात न भाई ❀ हँसी करैहहु परपुर जाई ॥ १ ॥
विष्णु बचन सुनि सुर मुसुकाने ❀ निज निज सेनसहित बिलगाने ॥ २ ॥

क्यौंकि वरके योग्य बरात नहीं बनी. हे भाइयो ! बिराने नगरमें जाकर क्या हँसी कराओगे ॥१॥ विष्णुके ऐसे वचन सुन देवता मुसकुराये और अपनी अपनी सेनासहित अलग २ होगये ॥२॥

मनहीं मन महेश मुसुकाहीं ❀ हरिके व्यंग बचन नहिं जाहीं ॥ ३ ॥
अति प्रिय बचन सुनत हरि केरे ❀ भृंगी प्रेरि सकल गण टेरे ॥ ४ ॥

यह देख महादेवजी मनही मनमें हँसने लगे और कहने लगे कि, विष्णुके टेढ़ेअर्थात् हँसीके वचन नहीं जाते ॥ ३ ॥ (शिवजीने) विष्णुके बड़े प्यारे वचन सुन भृंगीनामें द्वारपालको भेज सब गणोंको बुला लिया ॥ ४ ॥

शिवअनुशासन सुनि सब आये ❀ प्रभुपदजलज सीस तिन नाये ॥ ५ ॥
नाना वाहन नाना वेषा ❀ बिहँसे शिव समाज निजदेषा ॥ ६ ॥

शिवजीकी आज्ञा पाय सबोंनें आय २ उनके चरणकमलोंमें शिर नवाया ॥ ५ ॥ जिन्होंकी भाँति २ की सवारी और अनेक २ प्रकारके भेष थे ऐसे अपने समाजको देख शिवजी हँसे ॥ ६ ॥

कोउ मुखहीन बिपुलमुख काहू ❀ बिनुपद कर कोउ बहुपद बाहू ॥ ७ ॥
बिपुलनयन कोउ नयनविहीना ❀ रिष्टपुष्ट कोउ अति तनुछीना ॥ ८ ॥

किसीके मुख नहीं, किसीके बहुतसे मुख, किसीके पैर नहीं, किसीके हाथ नहीं, और किसी २ के बहुतसे पाँव और भुजा थीं ॥ ७ ॥ किसी २ के बहुतसे नेत्र थे और कोई २ अंधे थे, और कोई २ बड़े मोटे ताजे और कोई बड़े दुबले थे ॥ ८ ॥

छं०–तनुछीन कोउ अतिपीन पावन कोउ अपावन तनुधरे । ❀
भूषण कराल कपाल कर सब सद्य शोणित तनु भरे ॥ ❀
खर स्वान सुअर शृगाल मुख गण वेष अगनित को गनै । ❀
बहु जिनिस प्रेत पिशाच योगिनि भाँति बरनत नहिं बनै ॥७॥ ❀

कोई २ गण दुबला, कोई मोटा, कोई सुन्दर भेष किये और कोई २ शरीरका मैला भेष बनाये सब भयंकर मुंडोंकी माला पहिरें. हाथमें कपाल लिये और जिनके शरीरमें हालका निकला हुआ रुधिर लग रहाथा. किसीका कुत्तेकैसा, किसीका गधेकैसा किसीका सूअरकासा, और किसी २

---

(१) व्यंग वचन वे हैं जिनसे चमत्कृत टेढ़ा अर्थ निकलै. विष्णुभगवान्को सीधी भाँति यों कहना था कि बरातके योग्य वर नहीं है और इसी प्रकार यह कि, तुम पराये नगरमें जाकर हँसी कराओगे, सो तौ न कहा. उलटी रीतिसे कहा यही व्यंग रीति है. (२) इसका अर्थ यह भी हो सक्ता है कि अपनी भृंगी नाम जो पपीरी है उसे बजाकर सबको बुला लिया कि, जैसे बुगल बजतेही सब सेना एकत्र हो जाती है.

का श्यारकैसा मुख था. इसी भाँति अनेक प्रकारके जितने गण थे उतनेही अनगिनती भेष थे कि, जिनको कौन गिन सक्ता है? और बहुत प्रकारके भूत, प्रेत, पिशाच, योगिनी डाकिनी संग थीं कि जिनका वर्णन नहीं हो सकता ॥ ७ ॥

सो०-नाचहिं गावहिं गीत, परम तरंगी भूत सब ॥ ❀
देखत अति बिपरीति, बोलहिं बचन विचित्र विधि ॥ १५ ॥ ❀

सब बड़े २ तरंगी भूत मार्गमें नाचते और गीत गाते चले जाते हैं. जो देखनेमें भयावने लगते हैं और भाँति २ की विचित्र बोलियाँ बोलते हैं ॥ १५ ॥

चौ०-जस दूलह तस बनी बराता ❀ कौतुक विविध होइ मग जाता ॥ १ ॥
इहाँ हिमाचल रचेउ बिताना ❀ अति विचित्र नहिं जाय बखाना ॥ २ ॥

जैसे दूलह थे वैसीही यह बरातभी सजी थी. और मार्गमें चलते २ अनेक प्रकारके खेल होते जाते थे ॥ १ ॥ यहाँ हिमवानने ऐसा सुन्दर विचित्र मंडप और चँदोआ बनवाया कि, जिसका वर्णन नहीं हो सकता ॥ २ ॥

शैल सकल जहँ लगि जगमाहीं ❀ लघु बिशाल नहिं बरनि सिराहीं ॥ ३ ॥
बन सागर नद नदी तलावा ❀ हिमगिरि सब कहँ नेवत पठावा ॥ ४ ॥

सब पर्वत कि जितने संसारमें थे, क्या छोटे, क्या बड़े, कि जिनका वर्णन नहीं हो सकता ॥३॥ और जितने बन, समुद्र, पोखर नदियां और सरोवर थे, हिमवानने सबके पास नौता भेजा ॥ ४ ॥

कामरूप सुंदर तनुधारी ❀ सहित समाज सहित बरनारी ॥ ५ ॥
आये सकल हिमाचल गेहा ❀ गावहिं मंगल सहित सनेहा ॥ ६ ॥

वे सब अपनी २ इच्छानुसार सुन्दर भेष बनाय २ अपनी २ सुंदर स्त्रियों और समाजसहित, ॥ ५ ॥ हिमवानके घर आये और प्रीतिपूर्वक मंगलाचार गाने लगे ॥ ६ ॥

प्रथमहिं गिरि बहु गृह सँबराये ❀ यथायोग जहँ तहँ सब छाये ॥ ७ ॥
पुरशोभा अवलोकि सुहाई ❀ लागे लघु बिरंचि निपुनाई ॥ ८ ॥

पहिलेहीसे हिमवानने बहुतसे घर सजा रक्खे थे और उनमें उसी प्रकार जैसा जिसको चाहिये था तहाँ सब टिक गये ॥ ७ ॥ पुरकी शोभा और सुन्दरताको देख ब्रह्माजीकी चतुराई थोड़ी लगने लगी ॥ ८ ॥

छं०-लघुलाग विधिकी निपुनता अबलोकि पुरशोभा सही। ❀
बन बाग कूप तड़ाग सरिता सुभगता सक को कही ॥ ❀
मंगल बिपुल तोरण पताका केतु गृह गृह सोहहीं। ❀
बनिता पुरुष सुंदर चतुर छबि देखि मुनिमन मोहहीं ॥ ८ ॥ ❀

जब नगरकी शोभाकोही देख विधाताकी चतुरता थोड़ी लगने लगी, तौ वहाँके वन, बाग, कुये, सरोवर, और नदियोंकी सुंदरता कौन कहसकताहै? वहाँ घरघरमें मंगलके बड़े २ तोरन, पताका और झंडे शोभायमान हैं और स्त्रीपुरुष ऐसे सुंदर और चतुर हैं कि, उनकी छविको देख मुनियोंकेभी मन मोहित होते हैं ॥ ८ ॥

दो०–जगदंबा जहँ अवतरी, सो पुर बरणि न जाय ॥
ऋद्धि सिद्धि संपति सकल, नित नूतन अधिकाय ॥ १०४ ॥

जिस नगरमें जगतकी माताने अवतार लिया उस पुरका वर्णन नहीं हो सकता. क्योंकि ऋद्धिसिद्धिआदि सब संपत्ति नित नई और अधिक होने लगीं ॥ १०४ ॥

चौ०–नगरनिकट बरात जब आई ❀ पुर खरभर शोभा अधिकाई ॥ १ ॥
करिबनाव सजि वाहन नाना ❀ चले लैन सादर अगवाना ॥ २ ॥

नगरके पास जब बरात आई तब पुरमें धूमधाम मची कि वड़ी अच्छी वरात आई है ॥ १॥ तौ इहाँसे अनेक प्रकारकी बनावट और सवारियोंकी सजावट करके आदरसहित अगवानी लेने चले ॥ २ ॥

हिय हरषे सुरसेन निहारी ❀ हरिहिं देखि अति भये सुखारी ॥ ३ ॥
शिव समाज जब देखन लागे ❀ बिडर चले बाहन सब भागे ॥ ४ ॥

देवताओंका समाज देख सब मनमें प्रसन्न हुये और विष्णु भगवानको देखकरके तौ बहुतही आनन्दित हुए ॥ ३ ॥ और जब शंभुका समाज देखने लगे, तब नगरनिवासियोंके वाहन सब डरकर भागने लगे ॥ ४ ॥

धरि धीरज तहँ रहे सयाने ❀ बालक सब लै जीव पराने ॥ ५ ॥
गये भवन पूछहिं पितु माता ❀ कहहिं बचन भय कंपित गाता ॥ ६ ॥

जो चतुर थे वे धीरज धर वहाँ खड़े रहे और बालक तौ अपने २ प्राण लेलेकर भाग आये॥५॥जब घरमें आये और उनके माता पिता पूछने लगे, तब भयके मारे काँपते २ बातें कहने लगे कि– ॥ ६ ॥

कहिय कहा कहि जाय न बाता ❀ यमकरधार किधौं बरियाता ॥ ७ ॥
बर बौराह बरद असवारा ❀ व्याल कपाल बिभूषण छारा ॥ ८ ॥

क्या कहैं कुछ बात तो कही नहीं जाती. बरात क्या है मानों यमराजका काटनेवाला लशकर है ॥ ७॥ दूलह बावलासा बैलपर बैठा हुआ है और जिसके अंगमें सर्प लिपटे हैं. मुंडोंकी माला पहिरे है और भस्म लगीहुई है. बस यही आभूषण हैं ॥ ८ ॥

छं०–तनु छार ब्याल कपाल भूषण नगन जटिल भयंकरा ।
सँग भूत प्रेत पिशाच योगिनि बिकट मुख रजनीचरा ॥
जो जियत रहहिं बरात देखत पुण्य बड़ तिनकर सही ।
देखिहिं सो उमाबिबाह घर घर बात अस लरिकन कही ॥९॥

तनमें भस्म लगी हुई है, सर्प और मुंडोंकी मालाके आभूषण पहिरेहुए, नंगे भेष, जटा बढ़ाये, भयंकर भूत, प्रेत, पिशाच, योगिनी और टेढ़े मुखके राक्षस उनके संग हैं. जो बरात देखकर जीते रहेंगे उनका निश्चय कोई बड़ा पुण्य है और वेही पारवतीका विवाह देखेंगे. ये बात लड़कोंने घर २ में कही ॥ ९ ॥

दो०–समुझि महेश समाज सब, जननि जनक मुसकाय ॥
बाल बुझाये बिबिध बिधि, निडर होउ डर नाँय ॥ १०५ ॥

महादेवजीके समाजको मनमें समझ मातापिताओंने मुसकुराकर अपने २ बालकोंको अनेक प्रकारसे समझाया कि डरो मत, कुछ डर नहीं है ॥ १०५ ॥

चौ०–लै अगवाँन वरातहिं आये ❀ दिये सवहिं जनवास सुहाये ॥ १ ॥
मैना शुभ आरती सँवारी ❀ संग सुमंगल गावहिं नारी ॥ २ ॥

अगवानी लोग वरातको लेकर आये और सवको सुन्दर जनवासा दिया ॥ १ ॥ मयनाने सुन्दर आरती सजाई, और संगमें स्त्रियां सुन्दर मंगलाचार गाने लगीं ॥ २ ॥

कंचनथार सोह वर पानी ❀ परिछन चलीं हरहिं हरषानी ॥ ३ ॥
विकट भेष जब रुद्रहिं देखा ❀ अवलन उर भय भयउ विशेखा ॥ ४ ॥

सुवर्णके सुन्दर थालको सजाकर सुन्दर हाथोंमें ले प्रसन्न होतीं हुई शिवजीकी आरती उतारने चलीं ॥३॥ जिस समय शिवजीका विकटरूप देखा, तव उन स्त्रियोंके हृदयमें वड़ा भय उत्पन्न हुआ॥४॥

भागि भवन पैठीं अतित्रासा ❀ गयेउ महेश जहाँ जनवासा ॥ ५ ॥
मयना हृदय भयउ दुख भारी ❀ लीन्ही बोलि गिरीशकुमारी ॥ ६ ॥

वे भागकर अधिक डरके मारे घरमें जा घुसीं और महादेवजी वहाँ लौट गये कि, जहाँ जनवासा था ॥ ५ ॥ उस समय मयनाके हृदयमें वड़ा भारी दुख हुआ और पारवतीको वुलाया ॥ ६ ॥

अधिक सनेह गोद बैठारी ❀ श्याम सरोज नयन भरि बारी ॥ ७ ॥
जेहिं विधि तुमहिं रूप अस दीन्हा ❀ तेइ जड़ वर वावर कसकीन्हा ॥ ८ ॥

और वड़े प्रेमसे प्यार कर गोदमें वैठाई और नील कमलके समान नेत्रोंमें आँसू भरकर–॥ ७ ॥ (कहने लगी कि,) जिस विधाताने तुझको ऐसी सुंदरता दीनी, उसने (तेरे) वरको मूर्ख और वावला कैसे वनाया ! ॥ ८ ॥

छं०–कस कीन्ह वर वौराह विधि जेइ तुमहिं सुंदरता दई । ❀
जो फल चहिय सुरतरुहिं सो वरवस ववूरहिं लागई ॥ ❀
तुम सहित गिरितें गिरौं पावक जरौं जलनिधिमहँ परौं । ❀
घरजाउ अपजस होउ जग जीवत विवाह न हौं करौं ॥ १० ॥ ❀

जिस विधाताने तुझको सुन्दरता दीनी, उसने वावला वर कैसे किया, जो फल कल्पवृक्षमें चाहिये था वह वरवस् ववूलमें लगा दिया. अव मैं तुझे लेकर पहाड़परसे गिरूँगी, या अग्निमें जल जाउंगी, अथवा समुद्रमें डूव मरूँगी और चाहे घर उजड़े और संसारमें अपयश भलेही हो. मैं जीतेजी विवाह नहीं करूँगी ॥ १० ॥

दो०–भईं विकल अवला सकल, दुखित देखि गिरिनारि ॥ ❀
करि विलाप रोदति वदति, सुता सनेह सँभारि ॥ १०६ ॥ ❀

गिरिकी स्त्रीको दुखित देख सव स्त्रियां दुखी हुई. क्यों कि वह सनेहको स्मरण करके और विलाप कर रोती और कहतीथी कि–॥ १०६ ॥

चौ०–नारदकर मैं कहा विगारा ❀ भवन मोर जिन वसत उजारा ॥ १ ॥
अस उपदेश उमहिं जिन दीना ❀ वौरे बरहिं लागि तप कीना ॥ २ ॥

कवित्त–सागरमें वौरौं तन फोरौं सिलमारि सीस तोरौं हाथ पांव डरौं काहूके न डर तैं । हिमविच गारौं वर धारौं उर कालकूट कंठ काटि डारौं करवाल लै सुकर तैं ॥ चाहे जस होय चाहै अयस जगत मांहिं रहौ घर वार चाहैं जावौ वहि जर तैं । ज्वालहूमें जरौं जाय कूपहूमें परौं पर जीयत न व्याह करौं ऐसे वौरे वरतें ॥ १ ॥

मैने नारदका क्या बिगाड़ा था. कि जिन्होंने मेरा घर बसा हुआ उजाड़ दिया ॥ १ ॥ उन्होंने उमाको ऐसा उपदेश दिया कि, जिसने बावरे पतिके लिये तप किया ॥ २ ॥

सांचेउ उनके मोह न माया ❀ उदासीन धन धाम न जाया ॥ ३ ॥
पर घर घालक लाज न भीरा ❀ बाँझ कि जान प्रसवकी पीरा ॥ ४ ॥

सच मुच उनके न मोह है, न माया है, न उनका कोई मित्र है, न शत्रु है, और न धन है, न घर है और न कोई स्त्री है ॥ ३ ॥ बिराने घरके नाश करनेवाले हैं, न उन्हें लाज है और न किसीका डर है क्योंकि वांझ[1] स्त्री पुत्र जननेकी पीरको क्या जानें ॥ ४ ॥

जननिहिं विकल विलोकि भवानी❀ बोली युत विवेक मृदुबानी ॥ ५ ॥
अस विचार सोचहु मति माता ❀ सो न टरै जो रचा विधाता ॥ ६ ॥

पारवती माताको देखकर ज्ञानसे भरी हुई कोमलवाणी बोली कि-॥ ५ ॥ हे माता ! जो विधाताने रचदिया है वह तो टल नहीं सकता ऐसा विचार कर सोच मत करो ॥ ६ ॥

करम लिखा जो बावर नाहू ❀ तौ कत दोष लगाइय काहू ॥ ७ ॥
तुमसन मिटहिं कि विधिके अंका ❀ मातु व्यर्थ जनि लेहु कलंका ॥ ८ ॥

जो हमारी प्रारब्धमें बावला[2] पति लिखा है, तौ किसीको क्यों दोष लगाना चाहिये ॥ ७ ॥ क्या तुम विधाताके अंक मिटा सकती हो ? हे माता ! (इसलिये) वृथा कलंक मतलो ॥ ८ ॥

छं०-जनि लेहु मातु कलंक करुणा परिहरहु अवसर नहीं । ❀
दुख सुख जो लिखा लिलार हमरे जाव जहँ पाउव तहीं ॥ ❀
सुनि उमाबचन बिनीत कोमल सकल अबला शोचहीं । ❀
बहु भाँति विधिहिं लगाइ दूषण नयनवारि विमोचहीं ॥११॥ ❀

हे माता ! अब कलंक मतलो और माया मोह छोड़ो, क्यौंकि यह समय नहीं. जो कुछ दुख सुख हमारे माथेमें लिखा है, वह जहाँ जाऊँगी वहां पाऊँगी, ऐसे पारवतीके विनीत और कोमल वचन सुन सब स्त्रियां सोच करने लगीं और दैवको अनेक प्रकारका दोष लगाय नेत्रोंसे आंसू टपकाने लगीं॥

दो०-तेहि अवसर नारद ऋषय, अरु ऋषि सप्तसमेत ॥ ❀
समाचार सुनि तुहिनगिरि, गवने तुरत निकेत ॥ १०७ ॥ ❀

उस समय नारद मुनि यह समाचार सुनकर शीघ्रही सप्त ऋषिको साथ ले हिमवानके घर आये ॥ १०७ ॥

चौ०-तब नारद सबही समुझावा ❀ पूरव कथाप्रसंग सुनावा ॥ १ ॥
मयना सत्य सुनहु मम बानी ❀ जगदंबा तव सुता भवानी ॥ २ ॥

फिर नारदजीने सबको समझाया और पूर्व जन्मकी कथाका प्रसंग सुनाया ॥ १ ॥ हे मयना ! मेरी सच्ची बात सुनों कि, तुह्मारी पुत्री पारवती जगतकी माता हैं ॥ २ ॥

---

(१) जैसा कहा है कि-"नहि वंध्या विजानाति गुर्वीं प्रसववेदनाम्"

(२) **सवैय्या**-जो हमकौं वर दीन दयौ विधि बावरौ स्यानौं जुहै सोइ नीकौ ।
साथी नहीं सुख औ दुखकौ कोउ भोगि है जापै परै चाहै झीकौ ।
लेहु विचारि विवाह समें अब क्लेस करौ सुलगै अतिफीकौ ।
नाहिं मिटैं तुमसौं विधि अंक जु लेहुं न मात कलंककौ टीकौ ।

अज अनादि शक्ति अविनाशिनि ❀ सदा शंभुअरधांगनिवासिनि ॥ ३ ॥
जगसंभव पालन लय कारिणि ❀ निज इच्छा लीला वपुधारिणि ॥ ४ ॥

यह जन्म और आदिरहित शक्ति, नाशरहित हैं और सदा शिवजीके आधे अंगमें निवास करनेवाली हैं ॥ ३ ॥ और जगतको उत्पन्न, पालन और नाश करनेवाली हैं. और जब इच्छा करती हैं, तभी लीला करनेको शरीर धारण करती हैं ॥ ४ ॥

जन्मी प्रथम दक्षगृह जाई ❀ नाम सती सुंदर तनु पाई ॥ ५ ॥
तहहुँ सती शंकरहिं बिबाहीं ❀ कथा प्रसिद्ध सकल जगमाँहीं ॥ ६ ॥

प्रथम यह दक्षप्रजापतिके यहाँ जाकर जन्मीथीं और वहाँ इनका नाम सती था और इन्होंने सुन्दर शरीर पायाथा ॥५॥ वहाँभी सतीजी शिवजीकोही व्याही गईथीं यह कथा सब संसारमें विख्यात है ॥ ६ ॥

एकवार आवत शिव संगा ❀ देखेउ रघुकुल कमल पतंगा ॥ ७ ॥
भएउ मोह शिव कहा न कीन्हा ❀ भ्रमवश वेष सीयकर लीन्हा ॥ ८ ॥

एक वार ये महादेवजीके संग आ रहींथीं, उस समय इन्होंने रामचन्द्रजीको देखा ॥ ७ ॥ यह मोहके वश हो गई और शिवजीका कहा न माना और संदेहके वश इन्होंने सीताजीका भेष कर लिया ॥ ८ ॥

छं०-सियबेष सती जो कीन्ह तेहि अपराध शंकर परिहरी । ❀
हरविरह जाइ बहोरि पितुके यज्ञ योगानल जरी ॥ ❀
अब जनमि तुह्मरे भवन निजपति लागि दारुण तप किया । ❀
अस जानि संशय तजहु गिरिजा सर्वदा शंकरप्रिया ॥ १२ ॥ ❀

सतीजीने जो सीताजीका भेष किया इसी अपराधसे शिवजीने उन्हें त्याग दीन्हाथा. और फिर यह शिवजीकी जुदाईसे पिताके यज्ञमें योगानलसे जल मरींथीं. अब इन्होंने तुह्मारे यहाँ जन्म लेकर अपने पतिके लिये कठिन तप कियाहै, ऐसा जान तुम अपना संदेह दूर करो. क्यौं कि पार्वती सदासे महादेवजीकी स्त्री हैं ॥ १२ ॥

दो०-सुनि नारदके बचन तब, सब कर मिटा विषाद ॥ ❀
छिनमहँ व्यापेउ सकल पुर, घर घर यह संवाद ॥ १०८ ॥ ❀

तब नारदजीके वचन सुनकर सबका दुख दूर हुआ और क्षणभरमें सब नगरके घर घरमें यह चरचा फैल गई ॥ १०८ ॥

चौ०-तब मैना हिमवंत अनंदे ❀ पुनि पुनि पारवतीपद वंदे ॥ १ ॥
नारि पुरुष शिशु युवा सयाने ❀ नगरलोग सब अति हरषाने ॥ २ ॥

उस समय मैना और हिमवान बड़े प्रसन्न भये और वारंवार पारवतीके चरणोंकी वंदना करने लगे ॥ १ ॥ स्त्री, पुरुष, लड़के, जवान, और बड़े जितने नगरके लोग थे, बड़े प्रसन्न भये ॥ २ ॥

लगे हौंन पुर मंगल गाना ❀ सजे सबहि हाटक घट नाना ॥ ३ ॥
भाँति अनेक भईं जेवनारा ❀ सूपशास्त्र जस कछु व्यवहारा ॥ ४ ॥

और नगरमें अनेक प्रकारके आनंद बधाईके गान होने लगे और सबोंने नानाप्रकारके सोनेके कलश सजाये ॥ ३ ॥ और व्यंजन शास्त्रकी रीतिसे बहुतसी जेवनार भई कि, जैसा कुछ व्यवहार था ॥ ४ ॥

सो जेवनार कि जाइ बखानी ❀ बसहिं भवन जेहिं मातुभवानी ॥ ५ ॥
सादर बोले सकल बराती ❀ विष्णु विरंचि देव सब जाती ॥ ६ ॥

उस जिवनारका किस प्रकार वर्णन किया जाय कि, जिसके घरमें जगदंवा वास करती है ॥ ५ ॥ आदरपूर्वक सव वरातियोंको बुलवाया और ब्रह्मा, विष्णु आदि सब देवता और जातिके आये ॥ ६ ॥

विविध भाँति बैठी जेवनारा ❀ लगे परोसन निपुण सुआरा ॥ ७ ॥
नारिवृंद सुर जेंबत जानी ❀ लगीं देन गारी मृदुबानी ॥ ८ ॥

अनेक भाँतिकी पंगति कर जीमने बैठे और चतुर रसोइये परोसने लगे ॥ ७ ॥ स्त्रियोंके झुंड देवताओंको जीमते हुये जान कोमल वाणीसे गालियाँ गाने लगे ॥ ८ ॥

छं०–गारी मधुर सुर देहिं सुंदर व्यंग वचन सुनावहीं। ❀
भोजन करहिं सुर अतिविलंब विनोद सुनि सुख पावहीं ॥ ❀
जेंवत बढ़्यौ जो उछाह सो मुख कोटिहूँ न परै कह्यौ। ❀
अँचवाइ दीने पान गवने वास जहँ जाकौ रह्यौ ॥ १३ ॥ ❀

मीठी २ वाणीसे स्त्रियाँ गाली गाती हैं और देवता उन्हें सुंदर व्यंग वचन सुनाते हैं. देवता लोग (अति आनंदमें मगन हो) धीरे धीरे भोजन करतेथे और आनंदसे सुन सुख पातेथे. जीमते समय जो आनन्द बढ़ा, वह किरोड़ मुखसे नहीं कहा जा सकता. फिर हाथ धुलवाय कुल्ला कराय उन्हें पान दिया और वे सब अपने २ डेरेको गये ॥ १३ ॥

दो०–बहुरि मुनिन हिमवंत कहँ, लगन जनाई आय ॥ ❀
समय बिलोकि विवाहकर, पठये देव बुलाइ ॥ १०९ ॥ ❀

फिर मुनियोंने आनकर हिमवानको लगन जतलाई और उसने विवाहसमय देखकर सब देवताओंको बुलावा भेजा ॥ १०९ ॥

चौ०–बोलि सकल सुर सादर लीन्हे ❀ सबहिं यथोचित आसन दीन्हे ॥ १ ॥
वेदी बेदविधान सँवारी ❀ सुभग सुमंगल गावहिं नारी ॥ २ ॥

आदरसहित सब देवताओंको बुलवाय सबको यथायोग्य बैठनेको आसन दीन्हें ॥ १ ॥ वेदकी रीतिसे वेदी बनाई और सुंदर स्त्रियाँ मंगलाचार गाने लगीं ॥ २ ॥

सिंहासन अति दिव्य सुहावा ❀ जाइ न बरनि बिरंचि बनावा ॥ ३ ॥
बैठे शिव विप्रन शिरनाई ❀ हृदय सुमिर निज प्रभु रघुराई ॥ ४ ॥

एक बहुत सुन्दर सिंहासन जिसका वर्णन नहीं हो सकता, और जिसे ब्रह्माजीने अपने आप बनाया था ॥ ३ ॥ उसपर शिवजी ब्राह्मणोंको प्रणाम कर और हृदयमें अपने स्वामी श्रीरामचंद्रजीका स्मरण करके बैठे ॥ ४ ॥

बहुरि मुनीशन उमा बुलाई ❀ करि शृंगार सखी लै आई ॥ ५ ॥
देखत रूप सकल सुर मोहै ❀ बरने छबि अस जग कवि को है ॥ ६ ॥

फिर मुनीश्वरोंने पारवतीको बुलाया और सखी उनका सिंगारकर लिवालाई ॥ ५ ॥ उनका रूप देखकर सव देवता मोहित होगये, भला संसारमें ऐसा कौनसा कवीश्वर है जो उस शोभाका वर्णन करै ॥ ६ ॥

जगदंबिका जानि भवबामा ❀ सुरन मनहिं मन कीन्ह प्रणामा ॥ ७ ॥
सुंदरता मर्याद भवानी ❀ जाइ न कोटिहु वदन बखानी ॥ ८ ॥

जगदंबिकाको शिवजीकी स्त्री जान सब देवताओंने मनही मन प्रणाम किया ॥ ७ ॥ पारवतीजी सुंदरताकी सीमा हैं, इसलिये उनका वर्णन किरोड़ों मुखसेभी नहीं हो सक्ता ॥ ८ ॥

छं०–कोटिहु वदन नहिं बनै वरणत जगजननिशोभा महा। ❀
सकुचहिं कहत श्रुति शेष शारद मंदमति तुलसी कहा ॥ ❀
छबिखानि मातु भवानि गवनी मध्य मंडप शिव जहाँ। ❀
अवलोकि सकहि न सकुचि पतिपद कमल मनमधुकर तहाँ १४

किरोड़ों मुखसेभी शोभा वर्णन नहीं हो सकती. क्योंकि, वह जगत्की माता और उनकी बड़ी शोभा थी–जिसका वर्णन करनेमें वेद शेष और सरस्वतीभी सकुचाते हैं फिर तुलसीदासजी कहते हैं कि, मुझ छोटी बुद्धिवालेकी क्या गिनती है? शोभाकी खान पारवती माता मंडपके बीचमें गई कि, जहाँ शिवजी विराजमान थे उनको देख लाजके कारण पतिके चरणकमलोंको नहीं छूसकीं पर मनरूपी भोंरेको वहाँ लगा दिया ॥ १४ ॥

दो०–मुनि अनुशासन गणपतिहि, पूजेउ शंभु भवानि ॥ ❀
कोउ सुनि संशय करै जनि, सुर अनादि जियजानि ॥११०॥ ❀

फिर मुनिकी आज्ञासे महादेवजी और पार्वतीजीने गणेशजीका पूजन करा. यह सुन कोई संदेह न करै और देवताओंको जीमें अनादि जानें ॥ ११० ॥

चौ०–जस विवाहकी विधि श्रुति गाई ❀ महा मुनिन सो सब करवाई ॥ १ ॥
गहि गिरीश कुश कन्या पानी ❀ शिवहिं समर्पी जानि भवानी ॥ २ ॥

जैसी विवाहकी रीति वेदमें कही है. बड़े २ मुनियोंने सब वही करवाई ॥ १ ॥ हिमवानने कुश और कन्याका हाथ हाथमें लेकर भवानी जान शिवजीको समर्पण करी ॥ २ ॥

पाणिगहन जब कीन्ह महेशा ❀ हिय हर्षे तव सकल सुरेशा ॥ ३ ॥
वेदमंत्र मुनिवर उच्चरहीं ❀ जय जय जय शंकर सुर करहीं ॥ ४ ॥

जब महादेवजीने पार्वतीका हाथ पकड़ा उस समय सब देवता और इंद्र प्रसन्न भये ॥ ३ ॥ श्रेष्ठ मुनि वेदके मंत्र बोलते थे और देवता शंकरकी जय जय करने लगे ॥ ४ ॥

वाजहिं बाजे विविध विधाना ❀ सुमनवृष्टि नभ भइ विधिनाना ॥ ५ ॥
हर गिरिजाकर भयेउ विवाहू ❀ सकल भुवन भरि रहा उछाहू ॥ ६ ॥

अनेक प्रकारके बाजे बजने लगे और आकाशसे नानाप्रकारके फूल वर्षने लगे ॥ ५ ॥ जिस समय महादेवपार्वतीका विवाह हुआ, तब सब भुवनोंमें आनंद छागया ॥ ६ ॥

दासी दास तुरग रथ नागा ❀ धेनु वसन मणि वस्तु विभागा ॥ ७ ॥
अन्न कनकभाजन भरियाना ❀ दाइज दीन्ह न जाय बखाना ॥ ८ ॥

दासी, दास, हाथी, घोड़े, रथ, गौ, वस्त्र, रत्न, और अनेक प्रकारकी वस्तु ॥ ७ ॥ सुवर्णके वर्तनोंमें भरकर और अन्न (मिठाई) वेंहगियोंमें भरकर इतना दायज दिया कि, जिसका वर्णन नहीं हो सक्ता ॥ ८ ॥

छं०–दाइज दियो बहु भाँति पुनि करजोरि हिम भूधर कह्यौ। ❀
का देउँ पूरण काम शंकर चरणपंकज गहि रह्यौ ॥ ❀
शिव कृपासागर सुसरकर परतोष सब भाँतिन कियौ। ❀
पुनि गहेउ पद पाथोज मयना प्रेम परिपूरण हियौ ॥ १५ ॥ ❀

हिमवानने बहुत भाँतिका दायजा दिया और फिर हाथ जोड़कर कहा कि, हे शंकर! आप पूर्णकाम हो अर्थात् आपके यहां सब कुछ है मैं आपको क्या दे सक्ताहूं ऐसे कह चरणकमल पकड़ लिये. तब दयासिंधु शिवजीने अपने सुसरका सब प्रकार समाधान किया. फिर मयनाने चरणकमलोंको छुआ और उसका हृदय प्रेमसे भर गया ॥ १५ ॥

दो०-नाथ उमा मम प्राणसम, गृह किंकरी करेहु ॥
क्षमहु सकल अपराध अब, हुय प्रसन्न वर देहु ॥ १११ ॥

(और कहने लगी कि) हे नाथ! पार्वती मुझे प्राणसमान प्यारी है इसे अपने घरकी टहलनी करो और (मैंने जो आपकी महिमाको न जानकर व्यंग बचन कहे हैं) सो मेरा सब अपराध क्षमा करो और प्रसन्न होकर वरदान दो ॥ १११ ॥

चौ०-बहुविधि शंभु सासु समुझाई ❀ गवनी भवन चरण शिरनाई ॥ १ ॥
जननी उमा बोलि तब लीनी ❀ लै उछंग सुंदर सिख दीनी ॥ २ ॥

शिवजीने सासको बहुत भाँतिसे समझाया[2] और वह चरणोंमें शिर नवाय घरमें गई ॥ १ ॥ और तब माताने पारवतीको बुलाया और गोदमें बैठाया सुन्दर शिक्षा दी की ॥ २ ॥

करहु सदा शंकरपदपूजा ❀ नारि धर्म पतिदेव न दूजा ॥ ३ ॥
बचन कहत भरिलोचन बारी ❀ बहुरि लाइ उर लीन्ह कुमारी ॥ ४ ॥

शिवजीके चरणोंकी सदा पूजा करियो. क्यौंकि स्त्रीका यही धर्म है कि, पतिको छोड़ उसको दूसरा देवता नहीं है ॥३॥ बात कहते २ नेत्रोंमें आँसू भरलाई और फिर पुत्रीको छातीसे लगाई॥४॥

कत विधि सिरज नारि जगमाहीं ❀ पराधीन सपनेहु सुख नाहीं ॥ ५ ॥
भइ अतिप्रेम बिकल महतारी ❀ धीरज कीन्ह कुसमय विचारी ॥ ६ ॥

और कहने लगी कि, संसारमें ब्रह्माने स्त्रीको क्यौं बनाया! काहेसे कि, पराधीनको सुपनेमेंभी सुख नहीं होता ॥ ५ ॥ माता प्रेममें बड़ी विकल होगई परंतु कुसमय जान धीरज धरा ॥ ६ ॥

पुनिपुनि मिलति परिति गहि चरणा ❀ परम प्रेम कछु जाइ न बरणा ॥ ७ ॥
सब नारिन मिलि भेट भवानी ❀ जाइ जननि उर पुनि लपटानी ॥ ८ ॥

वारंवार मिलती हैं और पावोंमें पड़ती है और जिसके अत्यंत प्रेमका वर्णन कछु नहीं हो सक्ता ॥ ७ ॥ फिर पार्वती सब स्त्रियोंसे मिलकर माताकी छातीसे जा लिपटी ॥ ८ ॥

छं०-जननिहिं बहुरि मिलि चली उचित अशीस सब काहू दई । ❀
फिर फिर विलोकति मातुतन तव सखी लै शिव पहँ गई ॥ ❀
याचक सकल संतोष शंकर उमा सह भवनहिं चले । ❀
सब अमर हरषे सुमन वरषि निशान नभ बाजहिं भले ॥१६॥ ❀

---

(१) इस दोहेके पिछले आधेका यह भावभी निकलता है कि पार्वतीके (पूर्वजन्मकृत) सब अपराध क्षमा करना जैसा पूर्वजन्ममें तिरस्कार कियाथा, सो न करना इस बातका आप प्रसन्न होकर वरदान दो. अर्थात् हाँमी भरो.

(२) यह समझाया कि, तुम जो यह मेरा भयंकर स्वरूप देखती हो सो नहीं है मैं तौ सुन्दर कल्याणस्वरूप हूं मैंने भगवानके कहे से असुरोंके मोहनके लिये यह रूप धारण कर लिया है, जैसा पद्मपुराणमें लिखा है–"विष्णुरुवाच–त्वं च रुद्र महाभाग मोहनार्थं सुरद्विषाम् । पाखंडाचरणं धर्मं कुरुष्व सुरसत्तम ॥१॥" अर्थात् हे रुद्र ? हे देवताओंमें श्रेष्ठ ! आप असुरोंके मोहनके लिये पाखंड आचरण करो अर्थात् अपना भयंकर रूप धरलो-

और फिर जब पार्वती मातासे मिलकर चली तब सब किसीने उचित आशीस दीनी, परंतु वह वारंवार लौट २ कर माताकी ओर देखने लगी और फिर सखी उसे शिवजीके पास ले गई. महादेवजी सब याचकोंको प्रसन्नकर पार्वतीसहित घरको चले; उस समय सब देवता प्रसन्न हुए और आकाशमें मधुर २ बाजे बजाय २ फूल बरसाने लगे ॥ १६ ॥

दो०–चले संग हिमवंत तब, पहुचावन अति हेतु ॥
बिबिध भाँति परतोष करि, बिदा कीन्ह वृषकेतु ॥ ११२ ॥

उस समय बड़े प्रेमसे हिमवान् पहुँचाने चले तब शिवजीने बहुत समझा बुझाकर उन्हें विदा किया ॥ ११२ ॥

चौ०–तुरत भवन आये गिरिराई ❀ सकल शैल सर लिये बुलाई ॥ १ ॥
आदर दान बिनय बहु माना ❀ सब कर बिदा कीन्ह हिमवाना ॥ २ ॥

हिमवान् शीघ्र घर आये और सब पर्वत और सरोवरोंको बुलालिया ॥ १ ॥ हिमवानने आदरसे विदाई दी और विनयकर बड़ा सन्मान किया और सबको विदा किया ॥ २ ॥

जबहि शंभु कैलासहिं आये ❀ सुर सब निज निज लोक सिधाये ॥ ३ ॥
जगत मातु पितु शंभु भवानी ❀ तेहि शृंगार न कहौं बखानी ॥ ४ ॥

जब शिवजी कैलासमें आगये तब सब देवता अपने २ लोकको सिधारे ॥ ३ ॥ (कवि कहते हैं कि) महादेव पार्वती जगतके मातापिता हैं इसलिये मैंने उनका शृंगार वर्णन नहीं किया ॥ ४ ॥

करहिं बिबिध बिधि भोग बिलासा ❀ गणन समेत बसहिं कैलासा ॥ ५ ॥
हरगिरिजाविहार नित नयऊ ❀ इहिं बिधि बिपुल काल चलि गयऊ ॥ ६ ॥

वे नानाप्रकारके भोग विलास करते और गणोंसहित कैलासपर रहतेथे ॥ ५ ॥ शिव पार्वतीको नित नवीन विहार करते २ जब इस प्रकार बहुत समय बीत गया ॥ ६ ॥

तब जन्मे षट्बदन कुमारा ❀ तारक असुर समर जिन मारा ॥ ७ ॥
आगम निगम प्रसिद्ध पुराना ❀ षण्मुख जन्मकर्म जगजाना ॥ ८ ॥

तब स्वामिकार्तिक उत्पन्न हुए जिन्होंने युद्धमें तारक राक्षसको मारा ॥ ७ ॥ वेद, शास्त्र और पुराणोंमें स्वामिकार्तिकके जन्मकी कथा प्रसिद्ध है इसको सब संसार जानता है ॥ ८ ॥

---

(१) जिस समय हिमाचलकी प्रेरणासे पार्वतीने शंकरके मिलनेके लिये तप करना आरंभ किया उसी समयमें तारक नाम राक्षसने बड़ा कठिन तप करके ब्रह्माजीसे वर पाया और सब देवताओंको दुख देने लगा। तब सब इन्द्रादि देव ब्रह्माजीके पास गये और निवेदन किया कि हे भगवन्! आपने तारकासुरको ऐसा वर दिया है कि उसने तीनों लोक कंपा रक्खे हैं; इसके नाशका उपाय सोचिये । ऐसा सुन ब्रह्माजी बोले कि हमने तौ उसे वरही दिया है, हम नहीं मारेंगे. इसको सिवाय शिवजीके पुत्रके कोई नहीं मार सकता और आजकल शंकरके पानेकी इच्छासे पार्वती तप कर रहीं हैं उनको वहां भेजो. जब शंकर प्रसन्न होकर पार्वतीको वरैं और पुत्र उत्पन्न करैं, तब आपकी चिन्ता दूर हो. यह सुन इन्द्रने महादेवजीके पास कामदेवको भेजा. उसने वसंतकी सहायतासे महादेवका आसन डिगाया और ज्योंही शंकरकी समाधि खुली और कामदेवको सन्मुख पुष्पोंका धनुषबाण चढ़ाये देखा त्योंही तीसरे नेत्रसे उसे भस्म किया. उसे भस्म देख पार्वती आशा छोड़ घरगई पर जब पिताने फिर आशा बंधाई तब फिर अति कठिन तप करने लगीं और खानपान सब त्यागदिया. फिर जब बहुत काल बीतगया तब शंकर प्रसन्न हुये और वर दियाकि तुम्हारा मनोरथ पूरा होगा–और सप्तऋषियोंके द्वारा हिमवान्से विवाहका निश्चय कराय यथाविधि व्याह किया। फिर इनसे जब स्वामिकार्तिक उत्पन्न हुए उन्होंने जब उस असुरको मार त्रिलोकीका भार उतारा, तब देवता प्रसन्न होकर पुष्पोंकी वर्षा करनेलगे । इसकी सम्पूर्ण कथा शिवपुराणमें है.

छं०–जग जान षण्मुखजन्म कर्म प्रताप पुरुषारथ महा ।
तिहि हेतु मैं वृषकेतुसुतकर चरित संक्षेपहि कहा ॥
यह उमाशंभुविवाह जे नर नारि सुनहिं जे गावहीं ।
कल्याणकाज विवाहमंगल सर्वदा सुख पावहीं ॥ १७ ॥

संसार स्वामिकार्तिकके जन्मकी कथा और बड़े पुरुषार्थको जानता है. इसलिये गुसाँईजी कहते हैं कि मैंने शिवजीके पुत्रका चरित्र थोड़ाही कहाहै; और महादेवपार्वतीके इस विवाहको जो स्त्रीपुरुष सुनेंगे अथवा गावेंगे वे कल्याणके कार्य तथा विवाह मंगलोंमें सर्वदा सुख पावेंगे ॥ १७ ॥

दो०–चरितसिंधु गिरिजारमण, वेद न पावहिं पार ॥
बरने तुलसीदास किमि, अति मतिमंद गँवार ॥ ११३ ॥

महादेवपार्वतीजीके चरित्र समुद्रके समान अगाध हैं, उनका वेदभी पार नहीं पा सकते. फिर तुलसीदास कि जिसकी बुद्धि अत्यन्त मन्द है और जो गँवार है, सो कैसे वर्णन करै ? ॥ ११३ ॥

चौ०–शंभुचरित सुनि सरस सुहावा ❀ भरद्वाज मुनि अति सुख पावा ॥ १ ॥
बहु लालसा कथा पर बाढ़ी ❀ नयन नीर रोमावलि ठाढ़ी ॥ २ ॥

भरद्वाज मुनिने शंकरका रसयुक्त और सुन्दर चरित्र सुनकर बड़ा सुख पाया ॥ १ ॥ और कथापर बड़ी लालसा बढ़ी, उनके नयनोंमें नीरभर आया और रोमांच खड़े होगये ॥ २ ॥

प्रेमविवश मुख आव न वानी ❀ दशा देखि हरषे मुनिज्ञानी ॥ ३ ॥
अहो धन्य तव जन्म मुनीशा ❀ तुमहिं प्राणसम प्रिय गौरीशा ॥ ४ ॥

प्रेमके कारण सब सुध बुध जाती रही, मुखसे कुछ बात नहीं निकलने लगी; यह दशा देख ज्ञानी मुनि प्रसन्न हुये ॥ ३ ॥ याज्ञवल्क्य मुनि बोले कि अहो मुनियोंके स्वामी भरद्वाजजी! तुम्हारा जन्म धन्य है कि तुमको शंकर प्राणके समान प्यारे हैं ॥ ४ ॥

शिवपदकमल जिनहिं रति नाहीं ❀ रामहिं ते सपनेहुँ न सुहाहीं ॥ ५ ॥
विनु छल विश्वनाथपदनेहू ❀ रामभक्त कर लक्षण एहू ॥ ६ ॥

जिन मनुष्योंकी प्रीति शिवजीके चरणकमलोंमें नहीं वे रामजीको सुपनेमेंभी नहीं सुहाते हैं ॥ ५ ॥ विश्वनाथ शिवजीके चरणोंमें छलरहित प्रीति होना यही लक्षण रामभक्तके हैं ॥ ६ ॥

शिवसम को रघुपतिव्रतधारी ❀ विनु अघ तजी सती अस नारी ॥ ७ ॥
प्रण करि रघुपति भक्त दृढ़ाई ❀ को शिवसम रामहिं प्रियभाई ॥ ८ ॥

शिवजीके समान रामजीके व्रतका रखनेवाला कौन है? कि जिन्होंनेविनों पापके सतीके समान

---

(१) "विन अघ तजी सतीसी नारी" इसके अर्थमें लोग यह शंका करते हैं कि यहां तो यह लिखाकि विना पापके सतीजीको त्यागा और वहां १२ वें छन्दमें लिखा है कि "सिय वेष सती जो कीन तेहि अपराध शंकर परिहरी"। यहां वृथाकी शंका है. कारण प्रथम यहभी तौ सोचना है कि अपराध और पापमेंभी कुछ भेद है वा नहीं। जब अपराध पाकर तजी, तौ विना पापके त्यागी यह अर्थ सिद्ध हुआ, क्योंकि जबतक स्त्री परपुरुपसे संसर्ग न करै तबतक पापिनी नहीं हो सक्ती; इसलिये गुसाँईजीका तात्पर्य तौ ऐसाही है, परन्तु इस चौपाईके औरभी एक दो अर्थ हो सक्ते हैं सो सुनों–विन अघ शब्दको शिवजीका विशेषण बनाया अर्थात् पाप करके रहित जो शिवजी हैं उन्होंने जरासे अपराधपर सतीसी नारीको त्याग दिया। पुनि दूसरा अर्थ यों है कि विन अघको क्रियाविशेषण किया अर्थात् शिवजीने दुखरहित होकर सतीसी नारीको त्यागा।

अपनी स्त्रीको छोड़ दिया ॥ ७ ॥ और जिन्होंने प्रणकर रामजीकी भक्तिको दृढ़ करदिया, फिर प्रभुको शिवजीके समान और कौन प्यारा भाई है? ॥ ८ ॥

दो०–प्रथम कहा मैं शिवचरित, बूझा मरम तुम्हार ॥ ❀
शुचि सेवक तुम रामके रहित समस्त विकार ॥ ११४ ॥ ❀

इसलिये मैंने पहिले शिवजीका चरित्र वर्णन किया और तुम्हारा मर्म जानलिया कि तुम रामजीके सच्चे सेवक हो और सब विकार रहित हो ॥ ११४ ॥

चौ०–मैं जानत तुम्हार गुण शीला ❀ कहौं सुनहु अब रघुपतिलीला ॥ १ ॥
सुनि मुनि आजु समागम तोरे ❀ कहि नजाय जस सुख मन मोरे ॥ २ ॥

मैं तुमारे शील और गुणको जानताहूँ. इसलिये रघुनाथजीकी लीलाको कहताहूँ, तुम चित्त लगाकर सुनो ॥ १ ॥ हे मुनीश्वर ! सुनो. आज तुमारे मिलनेसे जो आनन्द मेरे मनमें हुआ है वह मुझसे कहा नहीं जाता ॥ २ ॥

रामचरित अति अमित मुनीशा ❀ कहि न सकहिं शतकोटि अहीशा ॥ ३ ॥
तदपि यथाश्रुति कहौं बखानी ❀ सुमिरि गिरापति प्रभु धनु पानी ॥ ४ ॥

हे मुनीश ! रघुनाथजीके चरित्रका अंत नहीं जिसको सौ करोड़ शेषजी भी वर्णन नहीं करसक्ते हैं ॥ ३ ॥ तौभी वेदके अनुसार हाथमें धनुषको लिये ऐसे वाणिपति प्रभु रामजीको स्मरण करके वर्णन करताहूँ ॥ ४ ॥

शारद दारुनारि सम स्वामी ❀ राम सूत्रधर अंतरजामी ॥ ५ ॥
जेहिपर कृपा करहिं जन जानी ❀ कविउर अजर नचावहिं वानी ॥ ६ ॥

हे स्वामी ! सरस्वतीको तौ कठपुतलीके समान और अंतर्यामी रघुनाथको नटुएके समान जानो ॥ ५ ॥ जिसपर वे अपना जन जान कृपा करैं उसी कविके हृदयरूपी आंगनमें सरस्वतीको नचाते हैं ॥ ६ ॥

प्रनवौं सोइ कृपालु रघुनाथा ❀ वरनौं विशद तासु गुनगाथा ॥ ७ ॥
परम रम्य गिरिवर कैलासू ❀ सदा जहाँ शिवउमानिवासू ॥ ८ ॥

ऐसे कृपा करनेवाले श्रीरामजीको प्रणाम कर उनके दोषरहित गुणोंकी कथाको वर्णन करता हूं ॥ ७ ॥ अति रमणीय कैलास पर्वत है कि जहां सदाशिव और पार्वती रहते हैं ॥ ८ ॥

दो०–सिद्ध तपोधन योगिजन, सुर किन्नर मुनिवृंद ॥ ❀
वसहिं तहां सुकृती सकल, सेवहिं शिव सुखकंद ॥ ११५ ॥ ❀

वड़े२ सिद्ध, तपस्वी, योगीजन, किन्नर, बहुतसे मुनिजन और पुण्यात्मा वहां निवास करते हैं और आनन्दकन्द शंकरकी सेवा करते हैं ॥ ११५ ॥

चौ०–हरिहरविमुख धर्मरत नाहीं ❀ ते नर तहाँ न सुपनेहुँ जाहीं ॥ १ ॥
तेहि गिरिपर बट बिटप विशाला ❀ नित नूतन सुंदर सब काला ॥ २ ॥

क्यौंकि अघ नाम कोशमें दुखकाभी है यथा–"अघं तु वृजिने दुःखे" परन्तु जब विना दुखके त्याग दिया तौ फिर उत्तरकांडमें सतीसे यह क्यौं कहा कि "तब अतिसोच भयेउ मन मोरे। दुखी भयेहुँ वियोग प्रिय तोरे" सो इसका समाधान यह हो सक्ता है कि दुख जो भया वह भक्तपक्षसे हुआ कुछ पत्नीपक्षसे न भया. जैसा कहा है कि "यदपि अकाम तदपि भगवाना। भक्त विरह दुखदुखी सुजाना."

जो मनुष्य विष्णु और शिवजीसे विमुख हैं और जिनकी धर्ममें रुचि नहीं, वे नर सुपनेमेंभी वहां नहीं जाते॥१॥उस पहाड़पर बड़े वरगदके वृक्ष नित नये और सब कालमें सुन्दर बने रहते हैं ॥२॥

त्रिविध समीर सुशीतल छाया ❀ शिव विश्राम विटप श्रुतिगाया ॥ ३ ॥
एकबार तेहि तर प्रभु गयेऊ ❀ तरु बिलोकि उर अतिसुख भयेउ ॥ ४ ॥

जहाँ तीन प्रकारकी शीतल मन्द सुगन्ध पवन चला करती है और सुन्दर ठंडी छाया है वहाँ शिवजीके विश्राम करनेका वृक्ष है ऐसा वेदने कहा है ॥ ३ ॥ एकवार उस वृक्षके नीचे प्रभु गये और उस वृक्षको देख हृदयमें वड़ा आनन्द हुआ ॥ ४ ॥

निज कर डास नाग-रिपु-छाला ❀ बैठे सहजहिं शंभु कृपाला ॥ ५ ॥
कुंदइंदुवरगौरशरीरा ❀ भुज प्रलंब परिधन मुनिचीरा ॥ ६ ॥

अपने हाथसे वाघंवर विछाय कृपाल शंकर साधारण बैठे हुए थे ॥ ५ ॥ जिनका कुन्दके पुष्प और पूर्णचन्द्रके समान गौर शरीर है, लम्वी २ भुजा हैं और मुनियों कीसी कौपीन लगाये ॥ ६ ॥

तरुन अरुन अंबुजसम चरना ❀ नखद्युति भक्तहृदयतमहरना ॥ ७ ॥
भुजगभूतिभूषण त्रिपुरारी ❀ आनन शरदचंद्रछविहारी ॥ ८ ॥

नवीन लाल कमलसमान अपने चरणके नखोंकी ज्योतिसे भक्तोंके हृदयके अंधकारको दूर करते हुए ॥ ७ ॥ सर्पोंके आभूषण पहिरे, भबूत रमाये, त्रिपुरासुरके भस्म करनेवाले और अपने मुखसे शरद ऋतुके चन्द्रमाकी छविको हरनेवाले ॥ ८ ॥

दो०-जटामुकुट सुरसरित सिर, लोचन नलिन विशाल ॥
नीलकंठ लावण्यनिधि, सोह बालविधुभाल ॥ ११६ ॥

जटाओंका मुकुट और ललाटमें गंगाजीको धारण किये, कमलके सदृश वड़े बड़े नेत्रवाले, नीलकंठ, सुंदरताके समुद्र, जिनके भालमें वाल कहिये द्वितीयाका चन्द्र विराजमान है ॥ ११६ ॥

चौ०-बैठे सोह कामरिपु कैसें ❀ धरे शरीर शांतरस जैसें ॥ १ ॥
पारबती भल अवसर जानी ❀ गईं शंभुपहँ मातु भवानी ॥ २ ॥

इसप्रकार वहां बैठे हुए कामारि भोलानाथ कैसे शोभायमान लगते थे मानो शांत रस शरीर धारण किये बैठाहो ॥ १ ॥ माता भवानी पार्वती सुन्दर समय जान शिवजीके पास गईं ॥ २ ॥

जानि प्रिया आदर अति कीन्हा ❀ वामभाग आसन हर दीन्हा ॥ ३ ॥
बैठी शिवसमीप हरषाई ❀ पूरबजन्मकथा चितआई ॥ ४ ॥

शंकरने उनको अपनी प्रिया जान बड़ा आदर किया और अपने बाईं ओर वैठनेका आसनदिया ॥ ३ ॥ पार्वतीजी शिवजीके पास प्रसन्न होकर बैठगईं और पूर्वजन्मकी कथा याद आई ॥ ४ ॥

पति हियहेतु अधिक अनुमानी ❀ बिहँसि उमा बोली प्रियबानी ॥ ५ ॥
कथा जो सकललोकहितकारी ❀ सोइ पूछन चह शैलकुमारी ॥ ६ ॥

स्वामीका अपने ऊपर बड़ा प्रेम जान पार्वतीजी हँसकर मीठी वाणीसे बोलीं ॥ ५ ॥ जो कथा सब संसारके मंगल करनेवाली है उसेही पार्वती पूछना चाहती हैं ॥ ६ ॥

विश्वनाथ मम नाथ पुरारी ❀ त्रिभुवन महिमा विदित तुम्हारी ॥ ७ ॥
चर अरु अचर नाग नर देवा ❀ सकल करहिं पदपंकजसेवा ॥ ८ ॥

कहने लगीं कि हे विश्वनाथ ! हे मेरे स्वामी ! हे त्रिपुरारी ! तीनों लोकोंमें तुमारी महिमा प्रसिद्ध

है ॥ ७ ॥ जितने चर, अचर, नाग, नर, देवता हैं सब तुमारे चरणकमलोंकी सेवा करते हैं ॥ ८ ॥

दो०–प्रभु समर्थ सर्वज्ञ शिव, सकलकलागुणधाम ॥ ❀
योगज्ञानवैराग्यनिधि, प्रणत कल्पतरु नाम ॥ ११७ ॥ ❀

हे प्रभो! हे शंकर! तुम समर्थ हो घट २ की जाननेवाले कल्याणस्वरूप तथा सम्पूर्ण कला और गुणोंके धाम हो और योग, ज्ञान और वैराग्यकी खान हो, और आपका नाम भक्तोंको कल्पवृक्षके समान है अर्थात् सब पदार्थोंका देनेवाला है ॥ ११७ ॥

चौ०–जो मोपर प्रसन्न सुखरासी ❀ जानिय सत्य मोहि निजदासी ॥ १ ॥
तौ प्रभु हरहु मोर अज्ञाना ❀ कहि रघुनाथकथा विधि नाना ॥ २ ॥

हे आनन्दकन्द! जो मुझपर प्रसन्न हो और सच मुच मुझे अपनी दासी जानते हो तौ ॥ १ ॥ हे स्वामी! श्रीरामजीकी अनेक प्रकारकी कथाओंको सुनाकर मेरे अज्ञानको दूर करो ॥ २ ॥

जासु भवन सुरतरु तर होई ❀ सह कि दरिद्रजनित दुख सोई ॥ ३ ॥
शशिभूषण अस हृदय विचारी ❀ हरहु नाथ मम मतिभ्रम भारी ॥ ४ ॥

भला जिसके घरमें कल्पवृक्ष होगा वह दरिद्रताका दुख कैसे सह सकैगा? ॥ ३ ॥ हे चन्द्रशेखर! हे नाथ! ऐसा हृदयमें जान मेरी बुद्धिके बड़े भ्रमको दूर करो ॥ ४ ॥

प्रभु जे मुनि परमारथवादी ❀ कहहिं रामकहँ ब्रह्म अनादी ॥ ५ ॥
शेष शारदा वेद पुराना ❀ सकल करहिं रघुपतिगुन गाना ॥ ६ ॥

हे प्रभो! जो मुनि परमार्थके कहनेवाले हैं वे रामजीको अनादि ब्रह्म कहते हैं ॥ ५ ॥ और शेष, सरस्वती, वेद, पुराण सब रामचन्द्रजीके गुणोंका गान करते हैं ॥ ६ ॥

तुम पुनि रामनाम दिनराती ❀ सादर जपहु अनंगअराती ॥ ७ ॥
राम सो अवधनृपतिसुत सोई ❀ की अज अगुण अलखगति कोई ॥ ८ ॥

और हे कामको भस करनेवाले! तुमभी रामके नामको रात्रिदिन आदरसे जपते हो ॥ ७ ॥ वह राम वेही हैं कि जो अयोध्याके राजाके पुत्र हैं, या दूसरे कोई जन्म और रजोगुण, तमोगुण और सतोगुणरहित अलख गतिवाले हैं ॥ ८ ॥

दो०–जौ नृपतनय तौ ब्रह्म किमि, नारिविरहमति भोरि ॥ ❀
देखि चरित महिमा सुनत, भ्रमित बुद्धि अति मोरि ॥ ११८ ॥ ❀

जो रामचन्द्रजी राजाके पुत्र हैं तो ब्रह्म कैसे हो सक्ते हैं? कि जिनकी मति स्त्रीके विरहमें भोरी अर्थात् बावलोंकीसी होगई है। ऐसे चरित्र देखकर और महिमा सुनकर मेरी बुद्धि तौ सन्देह सागर में डूब गई है ॥ ११८ ॥

चौ०–जो अनीह व्यापक विभु कोऊ ❀ कहहु बुझाय नाथ मोहि सोऊ ॥ १ ॥
अज्ञ जानि रिस जनि उर धरहू ❀ जेहिंविधि मोह मिटै सोइ करहू ॥ २ ॥

और जो निर्गुण ब्रह्म सबमें व्यापक है वह कोई दूसरा होय तौ हे नाथ! मुझे समझाकर कहो ॥१॥ मुझे मूर्ख जान हृदयमें क्रोध मत करना पर जिस प्रकार मेरा अज्ञान दूर होय सो उपाय करिये ॥२॥

मैं बन दीख रामप्रभुताई ❀ अतिभयबिकल न तुमहिं सुनाई ॥ ३ ॥
तदपि मलिन मन बोध न आवा ❀ सो फल भलीभाँति मैं पावा ॥ ४ ॥

मैने वनमें रामजीकी प्रभुताई देखी परन्तु अति भयसे व्याकुल हो मैंने आपको नहीं सुनाई ॥ ३ ॥ तौभी मेरे मलिन मनमें ज्ञान नहीं आया उसका फल मैंने भली भाँति पालिया ॥ ४ ॥

अजहूँ कछु संशय मन मोरे ❀ करहु कृपा विनऊँ करजोरे ॥ ५ ॥
प्रभु तब मोहि बहुभाँति प्रबोधा ❀ नाथ सो समुझि करहु जनि क्रोधा ॥६॥

अबभी मेरे मनमें कुछ २ सन्देह है इसलिये कृपा करिये, मैं हाथ जोड़ विनती करती हूं ॥५॥ हेप्रभो ! तब तुमने मुझे बहुत भाँति समझायाथा पर मुझे बोध नहीं हुआ, यह समझ मेरे ऊपर क्रोध न करना॥६

तबकर अस विमोह मोहि नाहीं ❀ रामकथापर रुचि मनमाहीं ॥ ७ ॥
कहहु पुनीत रामगुनगाथा ❀ भुजगराजभूषन सुरनाथा ॥ ८ ॥

पहिलासा अधिक अज्ञान अब मुझे नहीं हैं और मेरे मनमें रामकथा सुननेकी बड़ी लालसा है॥७॥ हे सुरनाथ ! हे शेषरूपी भूषणको धारण करनेवाले ! रामजीके गुणोंकी पवित्र कथाको कहिये ॥८॥

दो०-वंदौं पद धरि धरनि शिर, बिनय करौं कर जोरि ॥
बरनहु रघुबरविशदयश, श्रुतिसिद्धांत निचोरि ॥ ११९ ॥

धरतीपर शिर टेक चरणोंको प्रणाम कर हाथ जोड़ विनती करतीहूं कि रामजीके निर्मल यशको सब वेदोंका सिद्धान्त निचोड़ कर वर्णन करिये ॥ ११९ ॥

चौ०-यदपि योषिता अनअधिकारी ❀ दासी मन क्रम बचन तुम्हारी ॥ १ ॥
गूढ़ौतत्व न साधु दुरावहिं ❀ आरत अधिकारी जहँ पावहिं ॥ २ ॥

यद्यपि स्त्रीको अधिकार नहीं है, परंतु मैं तो मन, कर्म और वाणीसे आपकी दासी हूँ ॥ १ ॥ साधुजन गूढ़तत्वको नहीं छुपाते हैं, कि जहाँ दुखित अधिकारीको पाते हैं ॥ २ ॥

अतिआरति पूछौं सुरराया ❀ रघुपतिकथा कहहु करि दाया ॥ ३ ॥
प्रथम सो कारन कहहु विचारी ❀ निर्गुन ब्रह्म सगुनवपुधारी ॥ ४ ॥

हे देवताओंके ईश ! मैं बहुत दुखी हो पूछती हूँ; कृपाकरके रामचन्द्रजीकी कथा कहिये ॥३॥ प्रथम तौ वह कारण विचार कर कहो कि निर्गुण ब्रह्मने सगुण अवतार कैसे लिया ? ॥ ४ ॥

पुनि प्रभु कहहु रामअवतारा ❀ बालचरित पुनि कहहु उदारा ॥ ५ ॥
कहहु यथा जानकीविवाहा ❀ राज तजा सो दूषन काहा ॥ ६ ॥

फिर प्रभु रामजीका अवतार कहो और फिर सुन्दर बालचरित्र वर्णन करो ॥५॥ पीछे जैसे जानकीजीका विवाह हुआ और फिर राजा रामचन्द्रजीने राज त्यागा उसमें क्या दूषण था सो कहो ॥ ६ ॥

बन बसि कीन्हेउ चरित अपारा ❀ कहहु नाथ जिमि रावण मारा ॥ ७ ॥
राज बैठि कीन्ही बहु लीला ❀ सकल कहहु शंकर सुखशीला ॥ ८ ॥

बनमें बसकर जैसे अनेक चरित्र किये पुनि जैसे रावणको मारा सो कहो ॥ ७ ॥ हे आनन्ददाता शंकर ! फिर जैसे राजसिंहासनपर बैठकर बहुतसी लीला करीं उन सबको मुझसे कहो ॥ ८ ॥

दो०-बहुरि कहहु करुनायतन, कीन्ह जो अचरज राम ॥
प्रजासहित रघुवंशमनि, किमि गवने निजधाम ॥ १२० ॥

हे दयानिधान ! फिर वहभी कहो कि जो रामजीने आश्चर्यसा किया अर्थात् रघुनाथजी प्रजासहित वैकुण्ठको कैसे गये ॥ १२० ॥

चौ०-पुनि प्रभु कहहु सो तत्व बखानी ❀ जेहि विज्ञानमगन मुनि ज्ञानी ॥ १ ॥
भक्ति ज्ञान विज्ञान विरागा ❀ पुनि सब वरनहु सहितविभागा ॥ २ ॥

हे प्रभो ! फिर उस तत्त्वका वर्णन करो कि जिस विशेष ज्ञानमें ज्ञानी और मुनि मगन रहते हैं ॥ १ ॥ पुनि भक्ति, ज्ञान, विज्ञान और वैराग्य सब अलग २ वर्णन करिये ॥ २ ॥

औरौ रामरहस्य अनेका ❀ कहहु नाम अतिबिमल बिबेका ॥ ३ ॥
जो प्रभु मैं पूछा नहिं होई ❀ सोउ दयालु राखिहु जनि गोई ॥ ४ ॥

और जो रामके अनेक रहस्य हैं उन्हैं, और हे नाथ ! जिससे निर्मल ज्ञान हो सो सब वर्णन करो ॥ ३ ॥ और हे प्रभो ! जो मैंने नहीं पूछा हो, हे दयालु ! उसेभी मत छुपा रखना ॥ ४ ॥

तुम त्रिभुवनगुरु वेद बखाना ❀ आन जीव पामर का जाना ॥ ५ ॥
प्रश्न उमाके सहज सुहाये ❀ छलविहीन सुनि शिवमन भाये ॥ ६ ॥

वेदने आपको तीनों लोकका गुरु वर्णन किया है, और नीच जीव आपको क्या जानैं ? ॥ ५ ॥ पार्वतीके साधारण सुन्दर और छलरहित प्रश्न सुनकर शिवजीके मनमें अच्छे लगे ॥ ६ ॥

हरहिय रामचरित सब आये ❀ प्रेमपुलक लोचनजल छाये ॥ ७ ॥
श्रीरघुनाथरूप उर आवा ❀ परमानंद अमितसुख पावा ॥ ८ ॥

शिवजीके हृदयमें रामजीके सब चरित्र आये और उस समय शरीर पुलकायमान हो गया और नेत्रोंमें जल छागया और साक्षात्-॥ ७ ॥ रामचन्द्रजीकी झाँकी हृदयमें हुई जिससे बड़े आनन्दमें मगन हो अत्यन्त सुख पाया ॥ ८ ॥

दो०-मगन ध्यानरस दंड युग, पुनि मन बाहिर कीन्ह ॥ ❀
रघुपतिचरित महेश तब, हर्षित बरनै लीन्ह ॥ १२१ ॥ ❀

दो घड़ीतक ध्यानके आनन्दमें मगन रहे, फिर मनको बाहरकर शंकर मनमें प्रसन्न हो रामचरित्र वर्णन करने लगे ॥ १२१ ॥

चौ०-झूँठौ सत्य जाहि बिनु जाने ❀ जिमि भुजंग बिनु रजु पहिचाने ॥ १ ॥
जेहि जाने जग जाइ हराई ❀ जागे यथा स्वप्नभ्रम जाई ॥ २ ॥

जिसके विनाजाने झूठाभी सच्चा जानपड़ता है कि जैसे रस्सीके विना पंहिचाने सर्प सच्चाजान पड़ता है॥१॥और जिसके जाननेसे संसार (ऐसे) छूट जाता है जैसे जागनेसे स्वप्नका भ्रम जातारहता है ॥२॥

बंदौं बालरूप सोइ रामू ❀ सब सिधि सुलभ जपत जस नामू ॥३॥
मंगलभवन अमंगलहारी ❀ द्रवौ सो दशरथ अजिरबिहारी ॥ ४ ॥

उन्हीं बालस्वरूप रामजीकी वन्दना करता हूं जिनका नाम जपनेसे अनायास सब कार्य सिद्ध होजाते हैं ॥ ३ ॥ मंगलके स्थान और विपत्तिके दूर करनेवाले और दशरथजीके आँगनमें खेलते हुए रामजी मेरे ऊपर कृपा करो ॥ ४ ॥

करि प्रणाम रामहिं त्रिपुरारी ❀ हरषि सुधासम गिरा उचारी ॥ ५ ॥
धन्य धन्य गिरिराजकुमारी ❀ तुमसमान नहिं कोउ उपकारी ॥ ६ ॥

शिवजी रामजीको प्रणाम कर प्रसन्न हो अमृतसमान वाणी बोले ॥ ५ ॥ हे गिरिराजकुमारी तुमको धन्य है ! धन्य है ! तुमारे समान कोई उपकारी नहीं है ! ॥ ६ ॥

पूछेउ रघुपतिकथाप्रसंगा ❀ सकल लोक जग पावनि गंगा ॥ ७ ॥
तुम रघुबीरचरनअनुरागी ❀ कीन्हेउ प्रश्न जगतहितलागी ॥ ८ ॥

क्यौं कि तुमने रघुनाथजीकी कथाका प्रसंग पूछा कि जो सब लोगोंको गंगासमान पवित्र करनेवाला है ॥७॥ तुमारा रामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रेम है, क्यौंकि तुमने संसारके हितके लिये प्रश्न कियेहैं ॥८॥

दो०-रामकृपातें पारबति, सपनेहु तव मनमाहिं ॥
सोकमोहसंदेहभ्रम, मम बिचार कछु नाहिं ॥ १२२ ॥

हे पार्वती ! रामजीकी कृपासे तुम्हारे मनमें सुपनेमें भी शोक, मोह, सन्देह और भ्रम मेरे जाने कुछभी नहीं है ॥ १२२ ॥

चौ०-तदपि असंका कीन्हेहु सोई ❀ कहत सुनत सबकर हित होई ॥ १ ॥
जिन्ह हरिकथा सुनी नहिं काना ❀ श्रवणरंध्र अहिभवनसमाना ॥ २ ॥

इसमें कुछ शंका नहीं है. तौभी तुमने वही प्रश्न किया कि, जिसके कहने सुननेसे सबका भला होय ॥१॥ जिन्होंने भगवान्‌की कथा कानोंसे नहीं सुनी, उनके कान सर्पकी बाँबीके समान हैं ॥ २ ॥

नयनन संत दरस नहिं देखा ❀ लोचन मोरपंखकर लेखा ॥ ३ ॥
ते सिर कटुतूंबीसम तूला ❀ जे न नमत हरिगुरुपदमूला ॥ ४ ॥

जिन्होंने नेत्रोंसे संतोंके दरशन नहीं किये उनके नेत्र मोरपंखोंकी गिनतीमें हैं ॥ ३ ॥ वह शिर कड़वे तोंबेके समान है जो विष्णु और गुरु के चरणोंमें न झुका हो ॥ ४ ॥

जिन्ह हरि भक्ति हृदय नहिं आनी ❀ जीवत शबसमान तेहि प्रानी ॥ ५ ॥
जे नहिं करहिं रामगुनगाना ❀ जीह सो दादुरजीहसमाना ॥ ६ ॥

जिन्होंने विष्णुकी भक्ति हृदयमें नहीं की वे प्राणी जीतेही मुरदेके समान हैं ॥ ५ ॥ जो मनुष्य रामजीके गुणोंका गान नहीं करते हैं उनकी जीभ मेड़ककी जीभके समान है ॥ ६ ॥

कुलिसकठोर निठुर सोइ छाती ❀ सुनि हरिचरित न जो हरखाती ॥ ७ ॥
गिरिजा सुनहु रामकी लीला ❀ सुरहित दनुज बिमोहन सीला ॥ ८ ॥

वह छाती वज्रसेभी कड़ी और निठुर है जो भगवान्‌के चरित्र सुनकर प्रसन्न नहीं होती है॥७॥हे पार्वती ! रामजीकी लीला सुनो कि जो देवताओंको हित और दैत्योंको अधिक अज्ञानके करनेवालीहै ॥८॥

दो०-रामकथा सुरधेनुसम, सेवत सब सुखदानि ॥
संतसभा सुरलोकसम, को न सुनै अस जानि ॥ १२३ ॥

रामजीकी कथा कामधेनुके समान है और सेवा करतेही सुखकी देनेवाली है, और सन्तोंकी सभा स्वर्गके समान है ऐसा जानकर कौन है जो न सुने ॥ १२३ ॥

चौ०-रामकथा सुंदर करतारी ❀ संशयबिहँग उड़ावनिहारी ॥ १ ॥
रामकथा कलिबिटपकुठारी ❀ सादर सुनु गिरिराजकुमारी ॥ २ ॥

रघुनाथजीकी कथा सुन्दर हाथकी तालीके समान सन्देहरूपी पक्षीके उड़ानेवाली है, अर्थात् जैसे ताली बजानेसे पक्षी उड़जाते हैं वैसेही रामकथा सुनकर संदेह दूर हो जाते हैं॥१॥ रामजीकी कथा कलियुगरूपी वृक्षके लिये अथवा कलिके वृक्ष जो जन्ममरणादि हैं उनके लिये कुल्हाड़ीके समान है अर्थात् जैसे कुल्हाड़ीसे वृक्ष कट जाता है ऐसेही रामकथासे पापरूप कलि अथवा जन्ममरणादि कट जाते हैं (और मुक्ति हो जाती है) इसलिये हेपार्वती ! उसे आदरसे सुनो ॥ २ ॥

रामनामगुनचरित सुहाए ॐ जनम करम अगनित श्रुति गाए ॥ ३ ॥
यथा अनंत रामभगवाना ॐ तथा कथाकीरतिगुन गाना ॥ ४ ॥

रामजीके नाम, गुण, सुन्दर चरित्र, जन्म और कर्म अनगिनती हैं ऐसा वेदोंने गाया है ॥ ३ ॥ और राम जिस प्रकार भगवान् अनन्त हैं अर्थात् उनका अन्त नहीं, वैसेही उनकी कथाके गुणभी अनेकभांतिके हैं ॥ ४ ॥

तदपि यथाश्रुति जसमति मोरी ॐ कहिहौं देखि प्रीति असि तोरी ॥ ५ ॥
उमा प्रश्न तव सहज सुहाई ॐ सुखद संत संमत मुहि भाई ॥ ६ ॥

तौभी जैसा वेदमें कहा है और जैसी मेरी बुद्धि है वैसीही तुम्हारी अधिक प्रीति देखकर कहूँगा ॥ ५ ॥ हे गिरिराजनन्दिनी ! तुम्हारे प्रश्न साधारणही सुन्दर और सन्तोंको सुख देनेवाले हैं और मुझको अच्छे लगे ॥ ६ ॥

एक बात नहिं मोहि सोहानी ॐ यदपि मोहवश कहेउ भवानी ॥ ७ ॥
तुम जो कहा राम कोउ आना ॐ जेहि श्रुति गाव धरहिं मुनि ध्याना॥८॥

एक बात मुझे अच्छी नहीं लगी, यद्यपि हे भवानी ! तुमने मोहवश होकर कही है॥७॥(वह यह है) कि तुमने जो कहा कि जिसे वेद गाते और मुनि ध्यान लगाते हैं वे राम कोई और हैं (अथवा येही हैं)८

दो०-कहहिं सुनहिं अस अधम नर, ग्रसे जे मोहपिशाच ॥
पाषंडी हरिपदविमुख, जानहिं झूँठ न साँच ॥ १२४ ॥

सो ऐसी बात नीच कहते और सुनते हैं कि जिन्हें मोहरूपी पिशाचने घेर लिया हो और जो ऐसे पाखण्डी मनुष्य हैं कि जो भगवान्से विमुख हैं और झूठे-सच्चेके भेदको नहीं जानते हैं ॥१२४॥

चौ०-अज्ञ अकोविद अंध अभागी ॐ काई विषय मुकुरमन लागी ॥ १ ॥
लंपट कपटी कुटिल विशेषी ॐ सपनेहु संतसभा नहिं देषी ॥ २ ॥

और जो मूर्ख अज्ञानी कहिये शास्त्ररूपी नेत्रोंकरके अंधे[१]हैं, और अभागे हैं और जिनके मनरूपी दर्पणमें विषयरूपी काई लगी है ॥ १ ॥ और लपाटिये, कपटी और विशेष कुटिल हैं और जिन्होंने सुपनेमेंभी सन्तोंकी सभा नहीं देखी ॥ २ ॥

कहहिं ते वेद असंमत बानी ॐ जिनहिं न सूझ लाभ नहिं हानी ॥ ३ ॥
मुकुरमलिन अरु नयनबिहीना ॐ रामरूप देखहिं किमि दीना ॥ ४ ॥

वे वेदके विरुद्ध बात करते हैं कि जिन्हें अपनी हानि और अपना लाभ नहीं सूझता है ॥ ३ ॥ जिनका[२] मनरूपी दर्पण धुंधला हो रहा है और (शास्त्ररूपी) नेत्रोंसे रहित हैं, वे विचारे रामजीके रूपको कैसे देख सकते हैं ॥ ४ ॥

जिनके अगुण न सगुण विवेका ॐ जलपहिं कल्पित बचन अनेका ॥ ५ ॥
हरिमायावश जगतभ्रमाहीं ॐ तिनहिं कहत कछु अघटित नाहीं ॥ ६ ॥

जिनको निर्गुण और सगुणका विचार नहीं है वे बहुतसे वचन कल्पित अर्थात् झूठे २

---

(१) जैसा कहा है कि-"श्रुतिस्मृती उभे नेत्रे ब्राह्मणानां प्रकीर्तिते । एकेन विकलः काणो द्वाभ्यामन्धः प्रकीर्तितः ॥ १ ॥" अर्थात् ब्राह्मणोंके श्रुति और स्मृति ये दो नेत्र कहे हैं, जो श्रुति स्मृति इन दोनोंमेंसे एककरके रहित है वह काणा है और जिसको दोनों न आवें वह अन्धा है ॥ (२) जैसा भगवान्ने गीतामें कहा है कि-"अवजानन्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितम्" अर्थात् मूर्ख मनुष्य मुझे मनुष्यरूप जान तिरस्कार करते हैं.

जोड़कर बका करते हैं ॥ ५ ॥ जो भगवान्‌की मायाके वशहो संसारमें भ्रमते हैं उनको कहनेके लिये कुछभी बड़ी बात नहीं है ॥ ६ ॥

वातुलभूत बिबस मतवारे ❀ ते नहिं बोलहिं बचन सँभारे ॥ ७ ॥
जिन कृत महामोहमदपाना ❀ तिनकर कहा करिय नहिं काना ॥ ८ ॥

क्योंकि जो सन्निपातके वश बावले हो रहे हैं वे सँभालकर वचन नहीं कहते हैं ॥ ७ ॥ और जिन्होंने महामोहरूपी मदिरापान किया है उनके कहनेपर कान नहीं करना चाहिये अर्थात् बुरा न मानना चाहिये ॥ ८ ॥

सो०-अस निज हृदय विचार, तजु संशय भजु रामपद ॥ ❀
सुनु गिरिराजकुमारि, भ्रम तम रबिकर बचन मम ॥ १६ ॥ ❀

ऐसा अपने हृदयमें विचारकर संदेह छोड़ो और रामजीके चरणोंका ध्यान करो. और हे पार्वती ! सन्देहरूपी अंधकारके लिये सूर्यकी किरणोंके समान मेरे वचनको सुनो ॥ १६ ॥

चौ०-सगुनहिं अगुनहिं नहिं कछु भेदा ❀ गावहिं मुनि पुरान बुध बेदा ॥ १ ॥
अगुन अरूप अलख अज जोई ❀ भक्तप्रेमवश सगुन सो होई ॥ २ ॥

सगुण और निर्गुण ब्रह्ममें कुछ भेद नहीं है ऐसा वेद, पुराण, मुनि, और पण्डितजन कहते हैं ॥१॥ जो निर्गुण ब्रह्म है कि जिसका न कुछ रूप है और न किसीको दीखता है और न जन्म लेता है वही भक्तोंके प्रेमवश सगुण अवतार लेता है ॥ २ ॥

जो गुनरहित सगुन सो कैसें ❀ जल हिमउपल बिलग नहिं जैसें ॥ ३ ॥
जासु नाम भ्रमतिमिरपतंगा ❀ तिमि किमि कहिय बिमोहप्रसंगा ॥ ४ ॥

जो निर्गुण है, वह सगुण कैसे हो जाता है ? कि जैसे जलसे ओले अलग नहीं होते हैं ॥ ३ ॥ जिसका नाम सन्देहरूपी अंधकारको सूर्यके समान है उसको मोहके वशमें क्यों कहना चाहिये॥४॥

राम सच्चिदानंद दिनेशा ❀ नहिं तहँ मोहनिशालवलेशा ॥ ५ ॥
सहजप्रकाशरूप भगवाना ❀ नहिं तहँ पुनि विज्ञानबिहाना ॥ ६ ॥

रामचन्द्र सच्चिदानन्द सूर्य हैं उनके पास मोहरूपी रातका लवलेशभी नहीं है ॥ ५ ॥ भगवान्‌का रूप सहजही प्रकाशमान है फिर वहां ज्ञानरूपी सवेरा नहीं होता ॥ ६ ॥

हरष बिषाद ज्ञान अज्ञाना ❀ जीवधर्म अहमिति अभिमाना ॥ ७ ॥
राम ब्रह्म व्यापक जग जाना ❀ परमानंद परेश पुराना ॥ ८ ॥

सुख, दुख, ज्ञान, अज्ञान और अहमत्व (अर्थात् मैंही हूं) यह अभिमान ये सब जीवके धर्म हैं ॥ ७ ॥ रामजी ब्रह्म और सबमें व्यापक हैं, संसार जानता है; और परमानन्दस्वरूप, सबसे परे और पुराणपुरुष हैं अर्थात् सनातनसे चले आये हैं ॥ ८ ॥

दो०-पुरुषप्रसिद्ध प्रकाशनिधि, प्रकट परावरनाथ ॥ ❀
रघुकुलमणि सोइ स्वामि मम, कहि शिव नायउ माथ ॥ १२५॥ ❀

---

१ जैसा कहा है "रामः सत्यपरं ब्रह्म रामात्किंचिन्न विद्यते ॥" अर्थात् राम सच्चिदानन्द परब्रह्म हैं और ऐसी कोई वस्तु नहीं जिसमें राम नहों ॥ यथा महारामायणे–"भूमौ जले नभसि देवनरासुरेषु भूतेश देवि सकलेषु चराचरेषु । पश्यन्ति शुद्धमनसा खलु रामरूपं रामस्य वै भुवितले समुपासकाश्च ॥" अर्थात् हे देवि ! रामके उपासक लोग पृथ्वीतलपर रामके स्वरूपको भूमि, जल, आकाश, देव, नर, असुर और संपूर्ण चराचर प्राणियोंमें शुद्धमनसे देखतेहैं ॥ १ ॥

जो सांख्यशास्त्रमें पुरुषके नामसे प्रसिद्ध हैं, प्रकाशकी खान हैं, अर्थात् निर्मल ज्ञानस्वरूप हैं वही मायाजीवके नाथ रघुकुलके मणिरूप रामचन्द्रजी मेरे स्वामी प्रकट हुए हैं ऐसा कह शिवजीने दंडवत करी ॥ १२५ ॥

चौ०-निजभ्रम नहिं समुझहिं अज्ञानी ❀ प्रभुपर मोह धरहिं जड़ प्रानी ॥ १ ॥
यथा गगनघनपटल निहारी ❀ झंपेउ भानु कहहिं कुबिचारी ॥ २ ॥

अज्ञानी पुरुष अपने भ्रमसे कुछ नहीं समझते, वे मूर्ख मनुष्य प्रभुपर मोह धरते हैं ॥ १ ॥ जैसे आकाशकी वदलीमें सूर्यको छुपा देखकर अज्ञानी कहते हैं कि सूर्य अस्त होगया ॥ २ ॥

चितब जो लोचन अंगुलि लाये ❀ प्रकट जुगल ससि तेहिके भाये ॥ ३ ॥
उमा रामविषयक अस मोहा ❀ नभ तम धूम धूरि जिमि सोहा ॥ ४ ॥

और जो कोई आँखोंके आगे उँगली लगाकर सूर्य चन्द्रमाके देखै, तौ प्रत्यक्षमें उसे दो २ सूर्य चन्द्रमा दीखते हैं ॥ ३ ॥ हे पार्वती ! रामजीके विषयमें मोह करना ऐसा है कि जैसे आकाशमें धुयें और धूलका अंधेरा लगता है (क्यों कि आकाश तो निर्मल है वहाँ धुआँ-धूल कैसे पहुँच सक्ता है, केवल देखना मात्र है इसी प्रकार रामजी शुद्ध परब्रह्मसच्चिदानन्द हैं वहाँ मोहका क्या काम है?)॥४॥

विषय करन सुर जीवसमेता ❀ सकल एकतें एक सचेता ॥ ५ ॥
सब कर परम प्रकाशक जोई ❀ राम अनादि अवधपति सोई ॥ ६ ॥

शब्दादि विषय, दश इन्द्रियाँ, देवता और जीव ये सब एकसे एक चैतन्य होते हैं; अर्थात् विषय इन्द्रियद्वारा, इन्द्रिय देवताद्वारा जैसे नेत्रका स्वामी सूर्य है उससे नेत्र इन्द्रिय सचेता होती है और देवता जीवद्वारा ॥ ५ ॥ और इन सबसे पूर्ण प्रकाश करनेवाले जो हैं सो अनादि और अवधके राजा रामचन्द्रजी हैं ॥ ६ ॥

जगत प्रकाश्य प्रकाशक रामू ❀ मायाधीश ज्ञानगुनधामू ॥ ७ ॥
जासु सत्यतातें जड़ माया ❀ भास सत्य इव मोहसहाया ॥ ८ ॥

जगत् प्रकाशमान है और रामजी उसके प्रकाश करनेवाले हैं और मायाके स्वामी और ज्ञान और गुणके धाम हैं ॥ ७ ॥ जिनकी सत्यतासे झूँठी माया मोहकी सहायतासे सत्यसी जान पड़ती है ॥ ८ ॥

दो०-रजत सीपमहँ भास जिमि, यथा भानुकर वारि ॥ ❀
यदपि मृषा तिहुँ काल सोइ, भ्रम न सकै कोउ टारि ॥१२६॥ ❀

जैसे सीपमें चांदीका और सूर्यकी किरणोंमें जलका आभास होना यद्यपि यह तीनों कालमें झूठ है पर इस भ्रमको कौन टाल सकता है ? ॥ १२६ ॥

चौ०-येहि विधि जग हरिआश्रित रहई ❀ यदपि असत्य देत दुख अहई ॥ १ ॥
ज्यों स्वपने शिर काटै कोई ❀ बिनुजागें दुख दूरि न होई ॥ २ ॥

इसी भाँति वह संसार भगवान्के आसरे रहता है यद्यपि यह झूँठा और दुखदाई है ॥ १ ॥ जो कहो कि झूठे संसारका दिया हुआ दुःख सत्यसा क्यों भासता है ? तहां कहतेहैं कि जैसे कोई सुपनेमें शिर काट डालै और जबतक जागे नहीं तबतक यह दुःख दूर नहीं होता (इसी प्रकार संसारसे छुटे विना संसारका काम सत्यसाही दीखता है) ॥ २ ॥

जासु कृपा अस भ्रम मिटि जाई ❀ गिरिजा सोइ कृपालु रघुराई ॥ ३ ॥
आदि अंत कोउ जासु न पावा ❀ मतिअनुमान निगम अस गावा ॥ ४ ॥

जिसकी कृपासे ऐसे २ भ्रम मिटजायँ, हे पार्वती ! वही कृपा करनेवाले रामजी हैं ॥ ३ ॥ जिनका आदि अंत तौ किसीने पाया नहीं, परंतु अपनी बुद्धिके अनुसार वेदशास्त्रमें ऐसा गाया है ॥ ४ ॥

विनुपद चलै सुनै विनुकाना ❀ करबिनु कर्म करै बिधिनाना ॥ ५ ॥
आननरहित सकलरस भोगी ❀ बिनुबानी वक्ता बड़ योगी ॥ ६ ॥

वह विना पांवके चलता, विना कानके सुनता और विना हाथ अनेक कर्म करता है ॥ ५ ॥ विना मुखके सब रसोंका भोग करनेवाला, विना वाणीके बोलनेवाला और वड़ा योगी है ॥ ६ ॥

तनुबिनु परस नयनबिनु देषा ❀ ग्रहै घ्राणबिनु बास अशेषा ॥ ७ ॥
अस सब भाँति अलौकिक करनी ❀ महिमा जासु जाइ नहिं बरनी ॥ ८ ॥

विना शरीरके छूता और बिना नेत्रोंके देखता और विना नाकके सब सुगन्ध सूँघनेवाला है ॥ ७ ॥ ऐसेही सव प्रकार (भगवानकी) करनी ऐसी अलौकिक है कि जिसकी महिमा वर्णन नहीं हो सकती है ॥ ८ ॥

दो०–जेहि इमि गावहिं वेद बुध, जाहि धरहिं मुनि ध्यान ॥ ❀
सोइ दरशरथसुत भक्तहित, कोशलपति भगवान ॥ १२७ ॥ ❀

जिसे वेद और पंडित इस प्रकार गाते हैं और मुनी जिसका ध्यान धरते हैं, वेही दशरथनन्दन भक्तहितकारी अवधविहारी भगवान् रामजी हैं ॥ १२७ ॥

चौ०–काशी मरत जंतु अवलोकी ❀ जासु नामबल करौं बिशोकी ॥ १ ॥
सोइ प्रभु मोर चराचरस्वामी ❀ रघुबर सबउर अंतरजामी ॥ २ ॥

काशीमें मरतेहुये प्राणियोंको देखकर जिसके केवल नामके वलसे शोकरहित करता हूँ अर्थात् मुक्ति देताहूँ ॥ १ ॥ वही मेरे प्रभु और चरअचरके स्वामी रामजी सबके हृदयके अंतरजामी हैं ॥ २ ॥

बिवशहुँ जासु नाम नर कहहीं ❀ जन्म अनेक सँचित अघ दहहीं ॥ ३ ॥
सादर सुमिरन जो नर करहीं ❀ भवबारिधि गोपद इव तरहीं ॥ ४ ॥

जो मनुष्य बेवशं[2] होकरभी जिसका नाम[3] लेते हैं उनके अनेक जन्मके इकट्ठे भये पाप[4] दूर हो

---

[1] श्वेताश्वतरोपनिषदि–"अपाणिपादो जवनो ग्रहीता पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः । स वेत्ति वेद्यं नच तस्यास्ति वेत्ता तमाहुरग्र्यं पुरुषं महान्तम्" इति ॥ १ ॥

(२) आदिपुराणे कृष्णवाक्यम्–"श्रद्धया हेलया नाम वदन्ति मनुजा भुवि । तेषां नास्ति भयं पार्थ रामनामप्रसादतः ॥ १ ॥" अर्थात् जो मनुष्य श्रद्धासे वा अश्रद्धासेभी पृथ्वीतलपर नाम लेते हैं हे पार्थ ! उनको, रामके नामके प्रभावसे, कुछ भय नहीं होता ॥ (२) "प्रमादादपि संस्पृष्टो यथानलकणो दहेत् । तथौष्ठपुटसंस्पृष्टं रामनाम दहेदघम् ॥" अर्थात् प्रमादसे भी स्पर्श किया गया अग्निका कण जैसे जला देता है वैसेही होठसे लगतेही रामका नाम पापको नाश करता है ॥ पद्मपुराणे–"सकृदुच्चारयेद्यस्तु रामनाम परात्परम् । शुद्धान्तःकरणो भूत्वा निर्वाणमधिगच्छति ॥" अर्थात् रामनाम सर्वोपरि है जो इसको शुद्ध मनसे एकवार भी उच्चारण करै तो मोक्षको प्राप्त होता है ॥ १ ॥ (४) जैसा प्रपन्नगीतामें कहा है कि "नारायणो नाम नरो नराणां प्रसिद्धचौरः कथितः पृथिव्याम् । अनेकजन्मार्जितपापसंचयं हरत्यशेषं स्मृतमात्र एव ॥" अर्थात् मनुष्योंमें नारायणनाम पृथ्वीपर प्रसिद्ध चौर कहा गया है क्योंकि स्मरणमात्रसे अनेक जन्मोंके इकट्ठेहुए पापोंके समूहको हरलेता है ॥ १ ॥ पुनि कहा है कि–"सप्तकोटिमहामंत्राश्चित्तविभ्रमकारकाः । एक एव परो मंत्रो राम इत्यक्षरद्वयम् ॥" अर्थात् सातकोटि वड़े २ मंत्र सब भ्रम करनेवाले हैं पर "राम" इन दो अक्षरोंका मंत्र सर्वोपरि है ॥ २ ॥

जाते हैं ॥ ३ ॥ और जो नर आदरपूर्वक स्मरण करते हैं वे गौके खुरके समान संसाररूपी समुद्रसे पार हो जाते है ॥ ४ ॥

राम सो परमातमा भवानी ❀ तहँ भ्रम अतिअविहित तव वानी ॥ ५ ॥
असंसंशय आनत उरमाहीं ❀ ज्ञान विराग सकल गुण जाहीं ॥ ६ ॥

हे भवानी! वह रामजी परमात्मा हैं, उनमें भ्रम करना और ऐसे अनुचित वचन कहना बहुत अयोग्य है ॥ ५ ॥ ऐसा भ्रम हृदयमें करतेही ज्ञान वैराग्य सब गुण चले जाते हैं ॥ ६ ॥

सुनि शिवके भ्रमभंजन बचना ❀ मिटि गइ तब कुतर्ककी रचना ॥ ७ ॥
भइ रघुपतिपदप्रीति प्रतीती ❀ दारुण असंभावना बीती ॥ ८ ॥

सब संदेहोंको दूर करनेवाले शिवजीके वचन सुनकर वृथा विवाद करना (अर्थात् "जो नृपतनय तो ब्रह्म किमि" इत्यादि) मिटगया ॥ ७ ॥ और रघुनाथजीके चरणोंमें प्रीति और प्रतीति हुई और चित्तमें जो कठिन अविश्वास था सो दूर हुआ ॥ ८ ॥

दो०-पुनि पुनि प्रभुपदकमल गहि, जोरि पंकरुहपानि ॥
बोली गिरिजा वचनवर, मनहुं प्रेमरस सानि ॥ १२८ ॥

पार्वती वारंवार प्रभु शंकरके चरणकमलोंको छूकर और कमल समान कोमल हाथ जोड़ प्रेमके रसमें मानों सनेहुए सुन्दर वचन बोली ॥ १२८ ॥

चौ०-शशिकर सम सुनि गिरा तुम्हारी ❀ मिटा मोह शरदातप भारी ॥ १ ॥
तुम कृपालु सब संशय हरेऊ ❀ रामस्वरूप जानि मोहि परेऊ ॥ २ ॥

चन्द्रमाकी किरणोंके समान तुम्हारी वाणी सुनकर शरत्कालके आतप अर्थात् भादोंक्वारकी धूपके समान मेरा भारी भ्रम मिटगया ॥ १ ॥ हे दयालु! आपने मेरा सब सन्देह दूर कर दिया और रामजीका स्वरूप मुझे जानपड़ा ॥ २ ॥

नाथ कृपा अब गयेउ विषादा ❀ सुखी भयेउँ प्रभुचरणप्रसादा ॥ ३ ॥
अब मोहिं आपनि किंकरि जानी ❀ यदपि सहज जड़ नारि अयानी ॥ ४ ॥

हे नाथ! तुम्हारी कृपासे अब मेरे मनका सब दुःख दूर हुआ और तुम्हारे चरणोंकी कृपासे प्रसन्न हुई ॥ ३ ॥ अब मुझे अपनी चेरी जानो और यद्यपि स्त्रियाँ स्वभावकी मूर्ख और अचतुर होतीहैं॥४॥

प्रथम जो मैं पूछा सोइ कहहू ❀ जो मोपर प्रसन्न प्रभु अहहू ॥ ५ ॥
राम ब्रह्म चिन्मय अविनाशी ❀ सर्वरहित सबउरपुरवासी ॥ ६ ॥

तौभी जो मुझपर प्रसन्न हो तौ जो मैने [2]पैहिले पूछा है सो कहो ॥ ५ ॥ अर्थात् जो राम ब्रह्म, व्यापक, अविनाशी, सबसे रहित, और सब घट २ के वासीहैं-॥ ६ ॥

नाथ धरेउ नरतनु केहि हेतू ❀ मोहि समुझाय कहहु वृषकेतू ॥ ७ ॥
उमा बचन सुनि परम विनीता ❀ रामकथापर प्रीति पुनीता ॥ ८ ॥

---

(१) वराहपुराणे-"दैवाच्छूकरशावकेन निहतो म्लेच्छो जराजर्जरो हा रामेति हतोऽस्मि भूमिपतितो जल्पंस्तनुं त्यक्तवान् । तीर्णो गोपदवद्भवार्णवमहो नाम्नः प्रभावात् पुनः किं चित्रं यदि रामनामरसिकास्ते यान्ति रामास्पदम् ॥" अर्थात् दैवयोगसे शूकरसे मारागया म्लेच्छभी मरतीसमय 'हा राम राम' ऐसा कहता हुआ भूमिपर गिरकर प्राण छोड़े तो वह रामनामके प्रभावसे संसारसागरको गौके खुरके समान पार करजाता है, फिर रामरसिक यदि रामपदको पावैं तो क्या आश्चर्य है? ॥ १ ॥

(२) प्रथम सो कारन कहहु विचारी ॥ निर्गुन ब्रह्म सगुन वपुधारी इत्यादि.

तौ हे नाथ ! उन्होंने किस कारणसे मनुष्यका अवतार लिया. हे शंकर ! यह मुझे समझाकर कहो ॥ ७ ॥ जब भोलानाथने पार्वतीजीके अति विनयके वचन सुने और रामजीकी कथामें सच्ची प्रीति देखी ॥ ८ ॥

दो०–हिय हरषे कामारि तब, शंकर सहज सुजान ॥ ❀
बहु विधि उमहिं प्रशंसि पुनि, बोले कृपानिधान ॥ १२९ ॥ ❀

तब कामदेवके शत्रु और स्वभावहीसे चतुर कृपानिधान भोलानाथ हृदयमें प्रसन्न हुए और अनेक भांति पार्वतीकी बड़ाईकर बोले ॥ १२९ ॥

सो०–सुनु शुभ कथा भवानि, रामचरित मानस बिमल ॥ ❀
कहा भुशुंडि बखानि, सुना बिहगनायक गरुड ॥ १७ ॥ ❀
सोइ संवाद उदार, जिहिविधि भा आगे कहव ॥ ❀
सुनहु रामअवतार, चरित परम सुन्दर अनघ ॥ १८ ॥ ❀

हे गिरिराजकिशोरी ! रामचरित्र मानस बड़ा निर्मल है इसकी कथा सुनो. जिसको कागभुशुंडिने कहा था और पक्षिराज गरुड़जीने सुना था ॥ १७ ॥ वही सुन्दर संवाद जिस प्रकार हुआ है सो आगै कहूँगा. अब रामके अवतारका चरित्र कि जो परम सुन्दर और पापोंका नाशक है उसे सुनो ॥१८॥

हरिगुन नाम अपार, कथारूप अगणित अमित ॥ ❀
मैं निजमतिअनुसार, कहौं उमा सादर सुनहु ॥ १९ ॥ ❀

भगवान्के नाम और गुण बहुत हैं और कथाभी अपार और अनगिनती हैं; उन्हें मैं अपनी बुद्धिके अनुसार कहताहूँ. हे पार्वती ! आदरसे सुनो ॥ १९ ॥

चौ०–सुनु गिरिजा हरिचरित सुहाये ❀ बिपुल बिशद निगमागम गाये ॥ १ ॥
हरिअवतार हेतु जेहि होई ❀ इदमित्थं कहिजाइ न सोई ॥ २ ॥

हे पार्वती ! सुनो. भगवान्के सुन्दर निर्मल चरित्र बहुतसे हैं, सो सब वेदशास्त्रोंमें कहे हैं॥ १ ॥ और भगवान्का अवतार जिसलिये होता है वह कारण अर्थात् इसीलिये होता है यह मुझसे नहीं कहा जासकता है ॥ २ ॥

राम अतर्क्यबुद्धि मनं बानी ❀ मति हमार अस सुनहु भवानी ॥ ३ ॥
तदपि संत मुनि बेद पुराना ❀ जस कछु कहहिं स्वमति अनुमाना ॥ ४ ॥

हे उमा ! सुनो. मेरी समझमें तौ रामजी बुद्धि, मन और वाणीकी तर्कनासे परे हैं, अर्थात् उनके विषयमें किसी प्रकारकी तर्कना नहीं हो सक्ती है ॥ ३ ॥ तौभी सन्त मुनि वेद पुराण जैसा कुछ अपनी बुद्धिके अनुमानसे कहते हैं ॥ ४ ॥

तस मैं सुमुखि सुनावहुँ तोही ❀ समझि परै जस कारन मोही ॥ ५ ॥
जब जब होय धर्मकी हानी ❀ बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी ॥ ६ ॥

हे सुमुखी ! तैसाही मैं तुमको सुनाता हूँ, कि जैसा कारण मुझे समझ पड़ता है ॥ ५ ॥ जब २ पृथ्वीपर धर्मकी हानि होती है और अधर्मी और अभिमानी राक्षस बढ़ते हैं ॥ ६ ॥

करहिं अनीति जाइ नहिं बरनी ❀ सीदहिं बिप्र धेनु सुर धरनी ॥ ७ ॥
तब तब प्रभु धरि बिबिध शरीरा ❀ हरहिं कृपानिधि सज्जनपीरा ॥ ८ ॥

और वे ऐसी अनीति करते हैं जिसका वर्णन नहीं हो सक्ता है, अर्थात् ब्राह्मण, गौ, देवता और पृथ्वी को दुख देते हैं॥७॥तबं २ कृपानिधान भगवान् अनेक रूप धरकर अपने भक्तोंका दुख दूर करते हैं॥८॥

दो०–असुर मारि थापहिं सुरन्ह, राखहिं निज श्रुतिसेतु ॥
जग विस्तारहिं विशद यश, रामजन्म कर हेतु ॥ १३० ॥

राक्षसोंको मार देवताओंको राज्य दे आप वेदका पुल बाँधते हैं अर्थात् वेदकी मर्यादा रखते हैं, और संसारमें सुन्दर यश फैलाते हैं. यह कारण रामजीके जन्म लेनेका है ॥ १३० ॥

चौ०–सोइ यश गाइ भक्त भव तरहीं ❀ कृपासिंधु जनहित तनु धरहीं ॥ १ ॥
रामजन्मके हेतु अनेका ❀ परम विचित्र एकतें एका ॥ २ ॥

उसी यशको भक्तलोग गाकर संसाररूपी समुद्रसे पार होते हैं और कृपासागर प्रभु अपने भक्तोंके लिये अवतार लेते हैं॥१॥रामजीके जन्म लेनेके बहुतसे कारण हैं और एकसे एक अधिक विचित्र हैं॥२॥

जन्म एक दुइ कहौं बखानी ❀ सावधान सुनु सुमति भवानी ॥ ३ ॥
द्वारपाल हरिके प्रिय दोऊ ❀ जय अरु बिजय जान सब कोऊ ॥ ४ ॥

रामजीके जन्म लेनेके एक दो कारण कहता हूं. हे भवानी! सुन्दर बुद्धिवाली! तुम सावधान होकर सुनो ॥३॥ भगवान्के प्यारे दो द्वारपाल जय और विजय, कि जिनको सब कोई जानता था ॥४॥

विप्रशापतें दोनौ भाई ❀ तामस असुरदेह तिन पाई ॥ ५ ॥
कनककशिपु अरु हाटकलोचन ❀ जगतबिदित सुरपतिमदमोचन ॥ ६ ॥

ब्राह्मणके [2]शापसे दोनों भाइयोंने तमोगुणी असुरोंकी देह पाई ॥ ५ ॥ प्रथम उनका नाम हिरण्यकश्यप और हिरण्याक्ष था और वे इन्द्रके मदको दूर करनेवाले थे, यह संसारमें प्रसिद्ध है ॥ ६ ॥

बिजयी समरवीर विख्याता ❀ धरि बराहबपु एक निपाता ॥ ७ ॥
हुइ नरहरि पुनि दूसर मारा ❀ जन प्रहलादसुजस विस्तारा ॥ ८ ॥

वे सबके जीतनेवाले और युद्धमें बड़े वीर थे। प्रभुने शूकरका अवतार धर हिरण्याक्षको मारा॥७॥और फिर नृसिंहरूप धारणकर दूसरे हिरण्यकश्यपको मारा और अपने भक्त प्रह्लादका सुन्दर यशफैलाया ८

दो०–भए निशाचर जाइ ते, महावीर बलवान ॥
कुंभकर्ण रावण सुभट, सुरविजयी जग जान ॥ १३१ ॥

फिर वेही बड़े वीर बलवान् राक्षस जाकर रावण और कुंभकर्णके नामसे बड़े योद्धा और देवताओंके जीतनेवाले हुए कि जिनको संसार जानता है ॥ १३१ ॥

चौ०–मुक्त न भयेउ हते भगवाना ❀ तीन जन्म द्विजबचनप्रमाना ॥ १ ॥
एकवार तिनके हितलागी ❀ धरेउ शरीर भक्तअनुरागी ॥ २ ॥

---

[1] गीतायाम्–"यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत । अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥ १ ॥ परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् । धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ॥ २ ॥" अर्थात् हे भारत! जब २ धर्मकी हानि होती है तब २ मैं अधर्मके नाशके लिये अपनेको उत्पन्न करताहूं और साधुओंकी रक्षा और दुष्टोंका नाश और धर्मके स्थापनके लिये युग २ में अवतार लेताहूं ॥

[2] एकवार सनकादिऋषि भगवान्का दरशन करने वैकुण्ठको गये. द्वारपालोंने भगवान्की बिन आज्ञा किसीको भीतर न जाने दिया. इस बातपर ऋषियोंने शाप दिया कि तुम राक्षस होगे और तीसरे जन्ममें तुमारी मुक्ति होगी। इस मकार इन्होने असुरयोनि पाई थी ॥

यद्यपि भगवान्ने उनको दोवार मारा तौभी मुक्त न हुए क्योंकि ब्राह्मणका वचन तीसरे जन्ममें मुक्ति होनेका था ॥ १ ॥ एक वार उनके भलेके लिये भक्तोंके प्रेमवस हो भगवान्ने फिर अवतारलिया ॥ २ ॥

कश्यप अदिति तहाँ पितुमाता ❀ दशरथ कौसल्या विख्याता ॥ ३ ॥
एक कल्प एहिबिधि अवतारा ❀ चरित पवित्र किये संसारा ॥ ४ ॥

और वहां कश्यप अदिति जो उनके मातापिता थे वेही यहां दशरथ और कौशल्याके नामसे विदित हुए ॥ ३ ॥ एक कल्पमें इसप्रकार अवतार लेकर संसारमें वहुतसे पवित्र चरित्र किये ॥ ४ ॥

एक कल्प सुर देखि दुखारे ❀ समर जलंधर सन सब हारे ॥ ५ ॥
शंभु कीन्ह संग्राम अपारा ❀ दनुज महाबल मरै न मारा ॥ ६ ॥
परम सती असुराधिपनारी ❀ तेहि बल ताहि न जीत पुरारी ॥ ७ ॥

एक कल्पमें सब देवता युद्धमें जलंधरसे हार गये और दुखी हुये । यह देखकर ॥५॥ शिवजीने उससे बड़ा भारी युद्ध कियाथा । परंतु वह दैत्य वड़ा वलवान् था, माराही न मरै ॥ ६ ॥ क्योंकि उस जलंधर दैत्यकी स्त्री वड़ी पतिव्रता[1] थी तिसके वलसे जब सदाशिव उसे नहीं जीत सके-॥ ७ ॥

दो०-छलकर टारेउ तासु व्रत, प्रभु सुरकारज कीन्ह ॥ ❀
जब तेहि जानेउ मरम तब, शाप कोपकरि दीन्ह ॥ १३२ ॥ ❀

तब भगवान्ने कपटकर[2] उसका पतिव्रत खंडन किया और देवताओंका काम पूरा किया । पीछै जब यह भेद उसकी स्त्रीने जाना तब उसने क्रोधकर भगवान्को शाप दिया ॥ १३२ ॥

चौ०-तासु शाप हरि कीन्ह प्रमाना ❀ कौतुकनिधि कृपालु भगवाना ॥ १ ॥
तहाँ जलंधर रावण भयेऊ ❀ रण हत राम परमपद दयेऊ ॥ २ ॥

उसका शाप प्रभुने अंगीकार किया. क्योंकि भगवान् बड़े कौतुकी और कृपालु हैं ॥ १ ॥ वही जलन्धर दूसरे जन्ममें रावण हुआ जिसे रामजीने युद्धमें मार परमपद दिया ॥ २ ॥

एक जन्मकर कारन एहा ❀ जेहिलगि राम धरी नरदेहा ॥ ३ ॥
प्रतिअवतार कथा प्रभुकेरी ❀ सुनि मुनि बरनी कविन घनेरी ॥ ४ ॥

प्रभुके एक जन्म लेनेका कारण यही है कि जिसके लिये रामजीने नरतनु धारण कियाथा ॥ ३ ॥ भगवान्के हरएक अवतारकी कथाको मुनियोंसे सुनकर बहुत कवियोंने वर्णन करा है ॥ ४ ॥

---

(१) 'यस्य पत्नी भवेत्साध्वी पतिव्रतपरायणा । स जयी सर्वलोकेषु स सुखी स धनी पुमान् ॥ १ ॥' अर्थात् जिसकी पत्नी पतिव्रता है और पतिकी सेवामें तत्परहै, उस पुरुषकी सब लोंकोमें जय होती है और वही पुरुष सुखी और धनी है ॥ १ ॥ "कंपन्ते सर्वतेजांसि दृष्ट्वा पातिव्रतं महः । भर्ता सदा सुखं भुंक्ते रममाणः पतिव्रताम् ॥ २ ॥" पतिव्रताके तेजके सामने सब तेज काँपते हैं और ऐसी स्त्रीसे रमण करता पुरुष सदा सुखी रहता है ॥ २ ॥ (२) वैकुण्ठनाथ जलंधरके घरपर साधुका वेष धरकर बैठगये और जब उसकी सती स्त्री इनसे युद्धका समाचार पूछने लगी, उसी समय जलंधरके शरीरके सब अंग वहांआन गिरे जिन्हें देख स्त्री महाविलाप करने लगी । साधुरूप भगवान्ने कहा कि तू तौ सती है इसका सब शरीरजोड़ दे; तेरे सत्तसे जी उठैगा । फिर जब उसने वैसा किया तब जलंधरमें प्राण आये । उसकी स्त्री वृंदा पैर दावने लगी तब तो अंगस्पर्श होतेही सतीपन नष्ट हुवा और इधर वहां संग्राममें शंकरने उसे मारा । उसके मरतेही यहां साधु और जलंधरका कृत्रिम शरीर लोप होगया. उसकी स्त्रीने यह भेद जान भगवान्को शाप दिया कि, तुम स्त्रीके विरहमें बड़े दुखी होगे और मेरा पति तुम्हारी स्त्रीको चुरावैगा ॥

नारद शाप दीन्ह एकवारा ❀ कल्प एक तहिं लय अवतारा ॥ ५ ॥
गिरिजा चकित भई सुनि बानी ❀ नारद विष्णुभक्त मुनि ज्ञानी ॥ ६ ॥

एकवार नारदमुनिने भगवानको शाप दियाथा, सो एक कल्पमें इसलिये अवतार लियाथा ॥ ५ ॥ शिवजीकी ऐसी वाणी सुन पार्वती चकित हुई कि नारदजी तौ वड़े ज्ञानी और विष्णुभक्त थे ॥ ६ ॥

कारन कवन शाप मुनि दीन्हा ❀ का अपराधरमापति कीन्हा ॥ ७ ॥
यह प्रसंग मोहि कहहु पुरारी ❀ मुनिमनमोह सो अचरज भारी ॥ ८ ॥

किस कारण मुनिने प्रभुको शाप दिया, ऐसा भगवानने मुनिका क्या अपराध कियाथा? ॥ ७ ॥ हे शंकर! इस चरित्रको मुझसे कहो. मुनिके मनमें मोह होना यह वड़े आश्चर्यकी बात है ॥ ८ ॥

दो०–बोले विहँसि महेश तब, ज्ञानी मूढ़ न कोय ॥ ❀
जेहि जस रघुपति करहिं जब, सो तस तेहि क्षण होय ॥ १३३ ॥ ❀

तब शिवजी हँसकर बोले कि संसारमें न कोई मूर्ख है, न ज्ञानी है, जिसको रघुनाथजी जिस समय जैसा कर दें वह वैसाही हो जाता है ॥ १३३ ॥

सो०–कहौं रामगुनगाथ, भरद्वाज सादर सुनहु ॥ ❀
भवभंजन रघुनाथ, भजु तुलसी तजि मानमद ॥ २० ॥ ❀

याज्ञवल्क्य मुनि बोले सुनो भरद्वाजजी! मैं रामके गुणोंकी कथा कहताहूँ. तुम आदरपूर्वक सुनो कि संसारसे छुड़ानेवाले रामचन्द्रजी हैं. तुलसीदास कहते है कि मान और मदको छोड़ उनका भजन करो ॥ २० ॥

चौ०–हिमगिरिगुहा एक अतिपावनि ❀ वह समीप सुरसरित सुहावनि ॥ १ ॥
आश्रम परम पुनीत सुहावा ❀ देखि देवऋषिमन अति भावा ॥ २ ॥

हिमालय पर्वतमें एक वहुत पवित्र गुफा है, जिसके निकट सुन्दर गंगाजी बह रही हैं ॥ १ ॥ ऐसा पवित्र और सुन्दर आश्रम देखकर नारदजीको वहुत अच्छा लगा ॥ २ ॥

निरखि शैलसरि विपिनविभागा ❀ भयेउ रमापतिपदअनुरागा ॥ ३ ॥
सुमिरत हरिहिं श्रापगति बाधी ❀ सहज विमल मन लागि समाधी ॥ ४ ॥

पर्वत, नदी और बनके विभाग देखकर उनका प्रेम नारायणके चरणोंमें हुआ ॥३॥ और भगवान्का स्मरण करतेही शापकी गति नष्ट हो गई. अर्थात् दक्षप्रजापतिने जो शाप दियाथा कि तुम घूमते रहोगे अधिक कहीं नहीं ठहरोगे सो जाता रहा, और उनका स्वभावहीसे निर्मल मन समाधिमें लग गया ४

मुनिगति देखि सुरेश डराना ❀ कामहिं बोलि कीन्ह सनमाना ॥ ५ ॥
सहितसहाय जाउ मम हेतू ❀ चलेउ हरषि हिय जलचरकेतू ॥ ६ ॥

मुनिकी यह दशा देख इन्द्र अपने मनमें डरा और कामदेवको बुलाकर आदर किया ॥ ५ ॥

---

(१) दक्षने नारदमुनिको शाप इस लिये दिया था कि दक्षने पुत्रोंको सृष्टिरचनेके लिये तपस्याकी आज्ञा दीनी थी और जब वे तप करने लगे, उस समय नारदजीने योगसाधनका उपदेश करा और जब दक्षने सुना कि पुत्र मेरी आज्ञा भंगकर नारदका उपदेश सुन नष्ट हुये, तब दक्षने वड़े क्रोधित होकर वड़ा धिक्कारा और यह शाप दिया कि "तंतुकृन्तन यन्नस्त्वमभद्रमचरः पुनः। तस्माल्लोकेषु ते मूढ न भवेत् भ्रमतः पदम् ॥१॥" अर्थात् हे पुत्रनाशक! तैंने वड़ा अमंगल आचरण किया है इसलिये हे मूढ़! तू लोकमें घूमताही रहेगा और तेरा कहीं ठिकाना न लगेगा यह सुन नारदजीने भी इस शापको अंगीकार किया. यह सब कथा भागवतके छठे अध्यायमें है.

और कहा कि, तुम मेरे लिये अपने सहायक अर्थात् वसन्त आदि सहित मुनिके पास जाओ, (ऐसी आज्ञा पाय) कामदेव मनमें प्रसन्न होता वहां चला ॥ ६ ॥

सुनासीर मनमहँ अति त्रासा ❀ चहत देवऋषि ममपुर बासा ॥ ७ ॥
जे कामी लोलुप जगमाहीं ❀ कुटिल काकइव सबहिं डराहीं ॥ ८ ॥

इन्द्रके मनमें बड़ा भय था कि नारदजी मेरे पुरका वास चाहते हैं ॥ ७ ॥ जो संसारमें कामी और लालची हैं वे कुटिल कौवेकी भाँति सबसे डरते हैं ॥ ८ ॥

दो०–सूखहाड़ ले भागु शठ, श्वान निरखि मृगराज ॥ ❀
छीन लेइ जनि जानि जड़, तिमि सुरपतिहि न लाज ॥१३४॥ ❀

जैसे मूर्ख कुत्ता सिंहको देख सूखा हाड़ ले भागै और वह मूर्ख मनमें यह जाने कि सिंह कहीं छीन न ले; तैसेहीं इन्द्रको कुछ लाज नहीं कि देवर्षि नारदरूपी सिंहसे सूखे हाड़के समान अपने पुरके लिये मैं काकके समान क्या कर्म करताहूं ॥ १३४ ॥

चौ०–तेहि आश्रमहिं मदन जब गयेऊ ❀ निज माया वसंत निर्मयेऊ ॥ १ ॥
कुसुमित विविध विटपबहुरंगा ❀ कूजहिं कोकिल गुंजहिं भृंगा ॥ २ ॥

उस आश्रममें जब कामदेव गया तब उसने अपनी मायासे वसन्त ऋतु बनाई ॥१॥ नाना प्रकारके वृक्षोंमें भांति २ के फूल खिल गये, उनपर कोकिला कूजने लगीं, भौंरोंके झुंड गुंजारनेलगे॥२॥

चली सुहावनि त्रिविध बयारी ❀ कामकृशानु बढ़ावनहारी ॥ ३ ॥
रंभादिक सुरनारि नवीना ❀ सकल असमशरकलाप्रवीना ॥ ४ ॥

तीन प्रकारकी शीतल मंद सुगन्ध पवन कामरूपी अग्निके बढ़ानेवाली चलने लगी ॥ ३ ॥ रंभादिक देवताओंकी नई २ स्त्रियां जो सब कामकी कला बढ़ानेमें चतुर थीं–॥ ४ ॥

करहिं गान बहु तान तरंगा ❀ बहुविधि क्रीडहिं पानि पतंगा ॥ ५ ॥
देखि सहाय मदन हरषाना ❀ कीन्हेसि पुनि प्रपंच विधिनाना ॥ ६ ॥

नाना भाँतिकी तान भरकर लयसे गान करती थीं, बहुत प्रकारसे हाथको सूर्याकार करके नाचती थीं ॥ ५ ॥ ऐसे २ अपने सहायकोंको देख कामदेव प्रसन्न हुआ और फिर उसने अनेक भांतिके प्रपंच रचे ॥ ६ ॥

कामकला कछु मुनिहिं न व्यापी ❀ निज भय डरेउ मनोभव पापी ॥ ७ ॥
सीमकि चापिसकैं कोउ तासू ❀ बड़ रखबार रमापति जासू ॥ ८ ॥

परन्तु कामकी कला मुनिको कुछ नहीं व्यापी, और पापी कामदेव अपने भयसे आपही डर गया ॥ ७ ॥ उसके पासभी कोई नहीं फटक सकता कि जिसके नारायण बड़े रक्षक हैं ॥ ८ ॥

दो०–सहित सहाय सभीत अति, मानि हारि मन मैन ॥ ❀
गहेसि जाइ मुनिबरचरन, कहि सुठि आरतबैन ॥ १३५ ॥ ❀

कामदेव अपनी सेनासहित अधिक डरा और मनमें हार मान नारदमुनिके चरण जाकर छुए और सुन्दर दीन बचन कहे ॥ १३५॥

चौ०–भयउ न नारदमन कछु रोषा ❀ कहि प्रियवचन काम परितोषा ॥ १ ॥
नाइ चरन शिर आयसु पाई ❀ गयेउ मदन तब सहितसहाई ॥ २ ॥

नारदजीके मनमें कुछभी क्रोध न हुआ, बरन मीठे वचन कह उसको प्रसन्न किया ॥ १ ॥ चरणोंमें शिर नवाय आज्ञा पाय कामदेव सहायकोंसहित देवलोकको गया ॥ २ ॥

मुनि सुसीलता अपनी करनी ❀ सुरपतिसभा जाय सब बरनी ॥ ३ ॥
सुनि सबके मन अचरज आवा ❀ मुनिहि प्रशंसि हरिहिं शिर नावा ॥ ४ ॥

और मुनिकी सुशीलता और अपनी करनी इन्द्रकी सभामें जाकर वर्णन करी ॥ ३ ॥ यह सुन सबके मनमें आश्चर्य हुआ, सबने मुनिकी प्रशंसा कर प्रभुको दंडवत करी ॥ ४ ॥

तब नारद गवने शिवपाहीं ❀ जीतकाम अहमिति मनमाहीं ॥ ५ ॥
मारचरित शंकरहिं सुनावा ❀ अतिप्रिय जानि महेश शिखावा ॥ ६ ॥

फिर नारदजी शिवजीके पास गये. उस समय उनको कामदेवके जीतनेका बड़ा अभिमान था॥५॥ और कामदेवकी कथा शिवजीसे सब कही तब महादेवजीने उन्हें अधिक प्यारा जान शिक्षादी कि॥६॥

बारबार बिनवउँ मुनि तोही ❀ जिमि यह कथा सुनायउ मोही ॥ ७ ॥
तिमि जनिहरिहिं सुनावहु कबहूँ ❀ चलेउ प्रसंग दुरायहु तबहूँ ॥ ८ ॥

हे मुनि! मैं तुम्हारी वारंवार विनती करताहूं कि जैसे यह कथा तुमने मुझे सुनाई है ॥ ७ ॥ तैसे भगवान्‌को कभी मत सुनाना, वरन चर्चाभी चलै तौभी बाते उड़ाजाना ॥ ८ ॥

दो०–शंभु दीन्ह उपदेशहित, नहि नारदहिं सुहान ॥ ❀
भरद्वाज कौतुक सुनहु, हरिइच्छा बलवान ॥ १३६ ॥ ❀

शिवजीने भलेके लिये शिक्षा दीनी; परंतु नारदजीको अच्छी नहीं लगी. हे भरद्वाजजी! अब जो कौतुक हुआ उसे सुनों, प्रभुकी इच्छा बडी बलवान् है ॥ १३६ ॥

चौ०–राम कीन्ह चाहहिं सो होई ❀ करे अन्यथा अस नहिं कोई ॥ १ ॥
शंभुबचन सुनि मन नहिं भाये ❀ तब विरंचिके लोक सिधाये ॥ २ ॥

रघुनाथजी किया चाहैं सोही होता है. ऐसा कोई नहीं जो उससे विपरीत कर दे ॥ १ ॥ शिवजीके वचन नारदजीको अच्छे न लगे, तब वे ब्रह्मलोकको गये ॥ २ ॥

एकबार करतल बरबीना ❀ हरियश गावत परमप्रवीना ॥ ३ ॥
क्षीरसिंधु गवने मुनिनाथा ❀ जहँ बस श्रीनिवास श्रुतिनाथा ॥ ४ ॥

एक समय हाथमें सुन्दर वीणा लिये हरिके यश गानेमें बड़े चतुर ॥ ३ ॥ नारदजी क्षीरसमुद्रमें गये कि जहां लक्ष्मीपति वेदोंके स्वामी वैकुंठनाथ विराजमान थे ॥ ४ ॥

हरषि मिले उठि रमानिकेता ❀ बैठे आसन ऋषिहि समेता ॥ ५ ॥
बोले बिहँसि चराचरराया ❀ बहुत दिनहिं कीन्ही मुनि दाया ॥ ६ ॥

मुनिको देख नारायण प्रसन्न हो उठकर मिले और ऋषिसमेत आसनपर विराजे ॥ ५ ॥ पुनि चराचरके स्वामी हँसकर बोले कि हे मुनिजी! बहुत दिनमें कृपा करी ॥ ६ ॥

कामचरित नारद सब भाखे ❀ यद्यपि प्रथम बरजि शिव राखे ॥ ७ ॥
अति प्रचंड रघुपतिकी माया ❀ जेहि न मोह अस को जगजाया ॥ ८ ॥

पीछे नारदजीने कामदेवकी सब कथा कही. यद्यपि शंकरने मने कर दिया था ॥ ७ ॥ (परंतु) रघुनाथजीकी माया बड़ी प्रबल है. ऐसा संसारमें कौन है? जिसे वह न मोहै ॥ ८ ॥

दो०-रूख वदन करि बचन मृदु, बोले श्रीभगवान ॥
तुम्हरे सुमिरनतें मिटहिं, मोह मार मद मान ॥ १३७ ॥

मुनिकी बात सुन प्रभु रूखा मुँह कर कोमल वचन बोले कि तुम्हारा स्मरण करनेसे मोह, काम, मद और अभिमान नाश होजाते हैं ॥ १३७ ॥

चौ०-सुनि मुनि मोह होइ मन ताके ❀ ज्ञान विराग हृदय नहिं जाके ॥ १ ॥
ब्रह्मचर्यव्रतरत मतिधीरा ❀ तुमहिं कि करै मनोभव पीरा ॥ २ ॥

हे मुनि ! सुनों; कामदेव उसके मनमें मोह उत्पन्न करता है कि जिसके हृदयमें ज्ञान और वैराग्य न हों ॥१॥ ब्रह्मचर्यके करनेमें तुम्हारी प्रीति है. पुनि धैर्यवान् हो. तुम्हें काम क्या पीड़ा दे सक्ताहै २

नारद कहेउ सहित अभिमाना ❀ कृपा तुम्हारि सकल भगवाना ॥ ३ ॥
करुनानिधि मन दीख विचारी ❀ उर अंकुरेउ गर्वतरु भारी ॥ ४ ॥

नारदजीने अभिमानसे कहा कि हे भगवन् ! यह सब आपकी कृपा है ॥ ३ ॥ करुणानिधान भगवान्ने अनुमान किया कि मुनिके हृदयमें गर्वरूपी वृक्षका भारी अंकुर जम गया ॥ ४ ॥

वेगि सो मैं डारिहौं उपारी ❀ प्रन हमार सेवकहितकारी ॥ ५ ॥
मुनिकर हित मम कौतुक होई ❀ अवशि उपाय करव मैं सोई ॥ ६ ॥

इसलिये जल्दी उखाड़ दूर करूँगा क्योंकि हमारा प्रण अपने सेवकका भला करनेका है ॥ ५ ॥ मुनिका जिसमें भला हो, और मेरे लिये कौतुक हो, मैं उसी उपायको अवश्य करूँगा ॥ ६ ॥

तब नारद हरिपद शिर नाई ❀ चले हृदय अहमिति अधिकाई ॥ ७ ॥
श्रीपति निजमाया तब प्रेरी ❀ सुनहु कठिन करनी तेहिकेरी ॥ ८ ॥

फिर नारदजी भगवान्को दंडवत करके चले और उस समय उनके मनमें बड़ा अभिमान था॥७॥ तब भगवान्ने अपनी मायाको आज्ञा दीनी और उसने जो कठिन करतब किया उसे सुनो ॥ ८॥

दो०-विरचेउ मगुमहँ नगर तेहि, सतजोजन विस्तार ॥
श्रीनिवासपुरतें अधिक, रचना विविध प्रकार ॥ १३८ ॥

जहाँ नारदजी जाते थे उस मार्गमें सौ योजनके विस्तारका नगर बहुत सुन्दर, वैकुंठसेभी मनोहर, नानाभाँतिकी रचनाकर बनाया ॥ १३८ ॥

चौ०-बसहि नगर सुंदर नर नारी ❀ जनु बहु मनसिज रति तनुधारी ॥ १ ॥
तेहि पुर बसे शीलनिधि राजा ❀ अगनित हय गज सेनसमाजा ॥ २ ॥

उस नगरमें सुन्दर स्त्री पुरुष रहने लगे और वे ऐसे लगते थे मानो कामदेव और रति बहुतसे रूप धरके शोभायमान हों ॥ १ ॥ उस नगरमें शीलनिधि नाम राजा वास करता था कि जिसके यहाँ अनगिनती घोड़े, हाथी और सेनाका समाज था ॥ २ ॥

शत सुरेशसम विभवविलासा ❀ रूप तेज बल नीत निवासा ॥ ३ ॥
विश्वमोहनी तासु कुमारी ❀ श्रीविमोह जेहि रूप निहारी ॥ ४ ॥

सौ इन्द्रके समान जिसके प्रतापका आनन्द था और रूप, बल, तेज और नीतिका मानों घर था ॥ ३ ॥ उसके एक लड़की थी कि जिसका नाम विश्वमोहिनी था, और ऐसी कि जिसके रूपरंगको देख लक्ष्मीजीभी मोहित हो जाँय ॥ ४ ॥

सो हरिमाया सवगुनखानी ※ सोभा तासु कि जाय बखानी ॥ ५ ॥
करै स्वयंवर सो नृप बाला ※ आये तहँ अगनित महिपाला ॥ ६ ॥

वह प्रभुकी माया सब गुणोंकी खान है. उसकी शोभा किसीसे नहीं कही जाती ॥ ५ ॥ राजाने अपनी कन्याका स्वयंवर रचा. इस कारण वहां अनगिनती राजा आये थे ॥ ६ ॥

मुनि कौतुकी नगर तेहि गयेऊ ※ पुरबासिन सन बूझत भयेऊ ॥ ७ ॥
सुनि सब चरित भूप गृह आये ※ करि पूजा नृप मुनि बैठाये ॥ ८ ॥

नारदजी भी उस सुन्दर नगरमें जाकर नगरनिवासियोंसे पूछने लगे ॥ ७ ॥ और सब चरित्र सुन राजाके घर आये. राजाने मुनिकी पूजा कर बैठाया ॥ ८ ॥

दो०–आन दिखाई नारदहिं, भूपति राजकुमारि ॥ ※
कहहु नाथ गुणदोष सब, एहि कर हृदय बिचारि ॥ १३९ ॥ ※

राजाने राजकन्या लाकर नारदमुनिको दिखाई और कहा कि हे नाथ! अपने हृदयमें विचार कर इसके गुण और दोष वर्णन करो ॥ १३९ ॥

चौ०–देखि रूप मुनि बिरति बिसारी ※ बड़ी बारलगि रहे निहारी ॥ १ ॥
लक्षण तासु बिलोकि भुलाने ※ हृदय हर्ष नहिं प्रगट बखाने ॥ २ ॥

उसका रूप देख मुनिका ज्ञान जाता रहा और बड़ी देरतक टकटकी बांध देखते रहे ॥ १ ॥ उसके लक्षण देख आपको भूल गये और हृदयमें प्रसन्न हो प्रत्यक्षमें कुछ नहीं कहे ॥ २ ॥

जो इह बरे अमर सो होई ※ समरभूमि तेहि जीत न कोई ॥ ३ ॥
सेवहिं सकल चराचर ताही ※ बरै शीलनिधिकन्या जाही ॥ ४ ॥

(मनमें सोचने लगे कि) जो कोई इसके साथ विवाह करैगा, वह अमर होगा और युद्धमें उससे कोई नहीं जीतैगा ॥ ३ ॥ और सब चराचर जीव उसकी सेवा करेंगे कि जिसको यह शीलनिधिकी कन्या बरैगी ॥ ४ ॥

लक्षण सब बिचारि उर राषे ※ कछुक बनाइ भूपसन भाषे ॥ ५ ॥
सुता सुलक्षणि कहि नृपपाहीं ※ नारद चले सोच मनमाहीं ॥ ६ ॥

उसके सब लक्षण विचार [1]मनमें रक्खे और दूसरे कुछ बनाकर राजासे कह दिये ॥ ५ ॥ कन्याके सुन्दर लक्षण हैं राजासे ऐसा कह नारदजी मनमें सोच विचार करते हुए चले कि–॥ ६ ॥

करौं जाइ सोइ जतन बिचारी ※ जेहि प्रकार मोहि बरै कुमारी ॥ ७ ॥
जप तप कछु न होय इहि काला ※ हे बिधि मिलै कवन विधि बाला ॥ ८ ॥

मैं जाकर वही यत्न करूं कि जिससे यह कन्या मुझकोही बरै ॥ ७ ॥ इस समय जप तप कुछभी नहीं हो सक्ता. हे ब्रह्मन्! किस रीतिसे यह कन्या मुझे मिलै ॥ ८ ॥

दो०–यहि अवसर चाहिय परम, सोभा रूप बिसाल ॥ ※
जो बिलोकि रीझै कुमरि, तब मेलै जयमाल ॥ १४० ॥ ※

---

(१) सब लक्षण मनमें इसलिये धरे कि जो उत्तम २ सब लक्षण कहदूँगा तौ यह मुझे क्यौं देगा, यह परम सुन्दर भगवान्को देगा और थोड़े साधारण लक्षण इस कारण कहे कि यदि मैं नहीं कहूंगा और राजा किसी औरसे पूछैगा तो मुझे मूर्ख जानेगा.

इस समय बहुत शोभा और सुन्दर रूप चाहिये, जिसे देख कन्या रीझकर गलेमें जयमाल डाल दे ॥ १४० ॥

चौ०–हरिसन मागों सुंदरताई ❀ होइहि जात गहरु अति भाई ॥ १ ॥
मोरे हित हरिसम नहिं कोऊ ❀ यहि अवसर सहाय सो होऊ ॥ २ ॥

यदि इस समय भगवान्के पास सुंदरता मागने जाऊं तौ आनेजानेमें बहुत देर होगी ॥ १ ॥ और हमारा कल्याण करनेवाला प्रभुके समान और कोई नहीं कि जो इस अवसरपर सहायक हो॥ २॥

बहुविधि बिनय कीन्ह तेहि काला ❀ प्रगटेउ प्रभु कौतुकी कृपाला ॥ ३ ॥
प्रभु बिलोकि मुनिनयन जुड़ाने ❀ होइहि काज हिये हरखाने ॥ ४ ॥

वहाँपर नारदजीने भगवान्की अनेक भाँतिसे विनती करी तब कौतुकी और कृपालु भगवान् प्रकट भये ॥ ३ ॥ भगवान्को देख मुनि ठड़े हुए और हृदयमें यह प्रसन्न हुये कि अब काम हो जायगा ॥४॥

अति आरति कहि कथा सुनाई ❀ करहु कृपा प्रभु होउ सहाई ॥ ५ ॥
आपन रूप देहु प्रभु मोही ❀ आनभाँति नहिं पावों ओही ॥ ६ ॥

नारदजीने बहुत दुखी हो अपनी सब कथा सुनाई और कहा कि हे नारायण! कृपा करो और मेरे सहायक हूजिये ॥ ५ ॥ हे प्रभो! मुझे अपना स्वरूप दो, क्योंकि और किसी प्रकारसे मैं उस राजकन्याको नहीं पा सक्ता हूं ॥ ६ ॥

जेहि बिधि नाथ होइ हित मोरा ❀ करौ सो बेगि दास मैं तोरा ॥ ७ ॥
निज मायाबल देखि बिसाला ❀ हिय हँसि बोले दीनदयाला ॥ ८ ॥

और हे नाथ! जिस रीतिसे मेरा भला होय वही उपाय शीघ्र कीजिये. मैं आपका दास हूं ॥ ७ ॥ अपनी मायाको प्रबल देख मनमें हँसकर दीनदयाल बोले ॥ ८ ॥

दो०–जेहि बिधि होइहि परम हित, नारद सुनहु तुम्हार ॥ ❀
सोइ हम करब न आनि कछु, बचन न मृषा हमार ॥१४१॥ ❀

हे नारदजी! सुनों जिस रीतिसे तुम्हारा परम कल्याण होगा वही हम करैंगे और कुछ नहीं, यह वचन हमारा झूठा नहीं है ॥ १४१ ॥

चौ०–कुपथ माँगु रुजव्याकुल रोगी ❀ बैद्य न देइ सुनहु मुनियोगी ॥ १ ॥
इहिबिधि हित तुम्हार मैं ठयऊ ❀ कहि अस अंतरहित प्रभु भयऊ ॥ २ ॥

हे मुनि योगीश्वर! जैसे जो रोगी बीमारीसे व्याकुल है और वह गरिष्ठवस्तुखानेको मागे तौ वैद्य उसे नहीं देता है॥१॥ इसी भांति मैं भी तुमारा भला करूंगा. ऐसा कह भगवान् अन्तर्ध्यान हो गये॥२॥

मायाविवश भये मुनि मूढ़ा ❀ समुझी नहिं हरिगिरा निगूढ़ा ॥ ३ ॥
गवने तुरत तहाँ ऋषिराई ❀ जहाँ स्वयंवरभूमि बनाई ॥ ४ ॥

और नारदमुनि मायाके वश ऐसे अज्ञानी हो रहे थे कि भगवान्के गुप्त वचन न समझे ॥ ३॥ और ऋषिराज शीघ्रतासे वहां गये कि जहां स्वयंवरकी भूमि वनी हुईथी ॥ ४ ॥

निजनिज आसन बैठे राजा ❀ बहु बनाव करि सहितसमाजा ॥ ५ ॥
मुनिमन हर्ष रूप अति मोरे ❀ मोहितजि आन बरै नहिं भोरे ॥ ६ ॥

वहाँ अपने २ आसनोंपर सब राजा अपने २ समाजसहित सज २ कर बैठेथे॥५॥नारदमुनि अपने मनमें प्रसन्न थे कि मेरा बड़ा सुन्दर रूप है इसलिये कन्या मुझे छोड़ दूसरेको भूलकरभी न बरैगी॥६

मुनिहितकारन कृपानिधाना ❀ दीन्ह कुरूप न जाइ बखाना ॥ ७ ॥
सो चरित्र लखि काहु न पावा ❀ नारद जानि सबहिं सिर नावा ॥ ८ ॥

मुनिका भला करनेके लिये भगवानने (उस समय) ऐसा बुरा रूप करदिया कि जो कहा नहीं जाता ॥ ७ ॥ यह चरित्र किसीको न जानपड़ा. सबने नारद[1]मुनि जानकर दंडवत करी ॥ ८ ॥

दो०–रहे तहाँ दुइ रुद्रगण, ते जानहिं सब भेउ ॥ ❀
विप्रभेष देखत फिरहिं, परम कौतुकी तेउ ॥ १४२ ॥ ❀

वहाँपर महादेवजीके दो गण थे वे सब भेद जानते थे. और ब्राह्मणका रूप धरे हुए देखते फिरते थे. क्योंकि वे बड़े कौतुकी अर्थात् खिलाड़ी थे ॥ १४२ ॥

चौ०–जेहि समाज बैठे मुनि जाई ❀ हृदय रूप अहमिति अधिकाई ॥ १ ॥
तहँ बैठे महेशगण दोऊ ❀ बिप्रभेष गति लखै न कोऊ ॥ २ ॥

जिस समाजमें नारदमुनि अपने मनमें अधिक सुन्दर रूपका अभिमान कर बैठे थे ॥ १ ॥ वहाँही शिवके दो गण ब्राह्मणका भेस किये बैठे और कोई इस गतिको नहीं देखता था ॥ २ ॥

करहिं कूट ' नारदहिं सुनाई ❀ नीकि दीन्ह हरि सुंदरताई ॥ ३ ॥
रीझहि राजकुमरि छबि देखी ❀ इनहिं बरहि हरि जानि विशेखी ॥ ४ ॥

वे नारदजीको सुना २ कर ठठ्ठाकर बोलियाँ ठोलियाँ मारतेथे कि भगवान्ने[2] बड़ी अच्छी सुन्दरताई दी है ॥ ३ ॥ इस शोभाको देख राजकन्या मोहित[3] हो जायगी और इन्हींको भगवान् जान अवश्य वरैगी ॥ ४ ॥

मुनिहिं मोह मन हाथ पराये ❀ हँसहिं शंभुगन अति सचुपाये ॥ ५ ॥
जदपि सुनहिं मुनि अटपट बानी ❀ समुझि न परै बुद्धिभ्रमसानी ॥ ६ ॥

नारदजी मोहके वश थे और उनका मन विराने हाथ था. और महादेवके गण प्रसन्नतासे हँसते थे ॥ ५ ॥ यद्यपि मुनि उनकी अटपटी वानी सुनते थे, परन्तु बुद्धिमें भ्रम हो गया था इससे उनको समझ नहीं पड़ता था ॥ ६ ॥

काहु न लखा सो चरित विशेखी ❀ सो स्वरूप नृपकन्या देखी ॥ ७ ॥
मर्कटवदन भयंकर देही ❀ देखत हृदय क्रोध भा तेही ॥ ८ ॥

इस मुख्य चरित्रको किसीने न देखा, पर उस रूपको राजकन्याने देखा ॥ ७ ॥ और वंदरका मुख और भयंकर शरीर देखतेही उसके हृदयमें बड़ा क्रोध हुआ ॥ ८ ॥

दो०–सखी संग ले कुमरि तब, चलि जनु राजमराल ॥ ❀
देखति फिरै महीप सब, करसरोज जयमाल ॥ १४३ ॥ ❀

---

(१) नारदजीके ३ प्रकारके रूप हो गये—नारदजीको अपना रूप भगवान्कासा विदित होता था, राजा लोग उन्हें यथार्थ नारदरूप देखते थे. और राजकन्याने उनका रूप वन्दरकासा देखा.

(२) अथवा हरिनाम वन्दरकाभी है. अत एव यहभी कूट अर्थ निकलता है कि बन्दरकी सुन्दरता दी है.

(३) अथवा जब हरि शब्दको बानरके अर्थमें लगावैं, तो व्यंग्य अर्थ और काकुन्यायसे यहभी निकलता है कि राजकन्या इनको देखकर और इनको हरि कहिये वानर जान, क्या रीझेगी, अर्थात् नहीं रीझेगी. वरन विशेष कहिये अधिक वरहि कहिये जल जायगी.

तब सखियोंको संग ले राजकन्या ऐसे चली मानों राजहंसिनी चलती हो और कमलसमान हाथोंमें जयमाल लिये सब राजाओंको देखती थी ॥ १४३ ॥

चौ०–जेहि दिसि बैठे नारद फूली ❀ सो दिसि तेइ न बिलोकेउ भूली ॥ १ ॥
पुनि पुनि मुनि उकसहिं अकुलाहीं ❀ देखि दसा हरगन मुसुकाहीं ॥ २ ॥

जिस दिशामें नारदजी फूलेहुये बैठे थे उस ओरको उसने भूलकरभी न देखा ॥ १ ॥ वारंवार मुनि अकुलाकर उचकते थे, और यह दशा इनकी देखि शिवजीके गण मुसकुराते थे ॥ २ ॥

धरि नृपतनु तहँ गयेउ कृपाला ❀ कुमरि हर्ष मेली जयमाला ॥ ३ ॥
दुलहिन ले गयेउ लक्ष्मिनिवासा ❀ नृपसमाज सब भयेउ निरासा ॥ ४ ॥

पुनि राजाका[१] रूप धरि प्रभु आपभी वहां गये उन्हें देखि कन्याने प्रसन्न हो गलेमें जयमाल डालदी ॥ ३ ॥ और नारायण दुलहिनको लेगये, उस समय राजसमाजमें सब राजा निरास हो गये ॥ ४ ॥

मुनि अति विकल मोहिमति नाठी ❀ मनि गिरि गई छूटि जनु गाँठी ॥ ५ ॥
तब हरगन बोले मुसुकाई ❀ निजमुख मुकुर बिलोकहु जाई ॥ ६ ॥

नारदमुनि वड़े विकल भये· क्यौंकि बुद्धि तौ मोहवश ऐसी विगड़ गई थी मानों किसीकी गांठमेंसे खुलकर मणि गिरजाय ॥ ५ ॥ तब शंकरके गण हँसकर बोले कि जरा अपना मुख शीशेमें तौ जाकर देखो ॥ ६ ॥

अस कहि दोउ भागे भय भारी ❀ बदन दीख मुनि बारि निहारी ॥ ७ ॥
भेष बिलोकि क्रोध अति बाढ़ा ❀ तिनहिं शाप दीना अति गाढ़ा ॥ ८ ॥

ऐसा कह दोनों बड़े डरके मारे भागे और नारदजीने अपना मुख पानीमें देखा ॥ ७ ॥ अपना भेष देखतेही उन्हें क्रोध वढ़ा और उन गणोंको बड़ा भारी शाप दिया ॥ ८ ॥

दो०–होहु निशाचर जाइ तुम, कपटी पापी दोउ ॥ ❀
हँसेउ हमहिं सो लेउ फल, बहुरि हँसेउ मुनि कोउ ॥ १४४ ॥ ❀

अरे ! तुम दोनों वड़े कपटी और पापी हो, तुम दोनों असुर हो जाओ· जैसे तुम मुझपर हँसे थे उसका फल लो और फिर किसी मुनिकी हँसी करना ॥ १४४ ॥

चौ०–पुनि जल दीख रूप निज पावा ❀ तदपि हृदय संतोष न आवा ॥ १ ॥
फरकत अधर कोप मनमाहीं ❀ सपदि चले कमलापतिपाहीं ॥ २ ॥

फिर जलमें देखा और अपना पहिला रूप पाया तौभी हृदयमें संतोष न हुआ ॥ १ ॥ होठ फड़कने लगे, मनमें वड़ा क्रोध हुआ और शीघ्रतासे विष्णु भगवान्‌के पास चले ॥ २ ॥

देहौं शाप कि मरिहौं जाई ❀ जगत् मोर उपहास कराई ॥ ३ ॥
बीचहिं पंथ मिले दनुजारी ❀ संग रमा सोइ राजकुमारी ॥ ४ ॥

और मनमें कहने लगे कि या तौ मैं उनको शाप दूंगा अथवा जाकर मरूंगा ? क्यौंकि संसारमें मेरी हँसी कराई॥३॥मार्गमेंही भगवान् मिल गये जिनके संगमें लक्ष्मी और वही राजकन्या थी॥ ४॥

बोले मधुर बचन सुरसाईं ❀ मुनि कहँ चले बिकलकी नाईं ॥ ५ ॥
सुनत बचन उपजा अति क्रोधा ❀ मायावश न रहा मन बोधा ॥ ६ ॥

---

(१) राजाका रूप धर इस लिये गये कि नारदसे लज्जित न होना पड़ै, फिर यह कि यदि राजसभामें चतुर्भुजरूप धारणकर बरते तो इनका आश्चर्य न होता.

मुनिको देखि भगवान् मीठे वचन बोले कि हे मुनीश्वर ! विकलकी भाँति कहाँ जाते हो ॥ ५ ॥ इतना वचन सुनतेही उनके हृदयमें बड़ा क्रोध हुआ और उनको मायाके वशसे मनमें कुछ ज्ञान नहीं रहा ॥ ६ ॥

परसंपदा सकहु नहिं देपी ❀ तुम्हरे ईर्षा कपट विशेषी ॥ ७ ॥
मथत सिंधु रुद्रहि बौरायेउ ❀ सुरन प्रेरि विषपान करायेउ ॥ ८ ॥

और भगवान्से बोले कि तुम विरानी संपत्ति नहीं देख सक्ते. तुम्हारे मनमें ईर्षा और कपट बहुतहै ॥७॥ समुद्रमथनके समय तुमने शिवजीको सिड़ी कर दिया, देवताओंको भेज उन्हें विष पिलाया॥ ८ ॥

दो०-असुर सुरा विष शंकरहिं, आपु रमा मनि चारु ॥ ❀
स्वारथसाधक कुटिल तुम, सदा कपटव्यवहारु ॥ १४५ ॥ ❀

और दैत्योंको मदिरा और शिवजीको विष दिया और आपने लक्ष्मी और सुंदर कौस्तुभ मणि लीनी. तुम बड़े स्वारथी और कुटिल हो, सदा छलके काम किया करते हो ॥ १४५ ॥

चौ०-परम स्वतंत्र न सिरपर कोई ❀ भावै मनहिं करहु तुम सोई ॥ १ ॥
भलेहि मंद मंदहि भल करहू ❀ विस्मय हर्ष न हिय कछु धरहू ॥ २ ॥

तुम बड़े स्वतंत्र हो. तुम्हारे शिरपर कोई नहीं है, इससे जो तुम्हें अच्छा लगता है वही तुम करतेहो ॥१॥ अच्छेको बुरा और बुरेको अच्छा करते और अपने हृदयमें दुख और हर्ष कुछ नहीं धरतेहो॥२॥

डहकि डहकि परचेहु सब काहू ❀ अति असंक मन सदा उछाहू ॥ ३ ॥
कर्म सुभासुभ तुमहिं न बाधा ❀ अबलगि तुमहि न काहू साधा ॥ ४ ॥

ठग २ कर सबकी परीक्षा लेते हो, अत्यन्त निशंक हो, इसीलिये मनमें सदा उत्साह रहता है॥ ३ ॥ भले बुरे कर्मका तुम्हैं कुछ भय नहीं, और अबतक तुम्हैं किसीने सीधामी नहीं किया है ॥ ४ ॥

भले भवन अब बायन दीन्हा ❀ पावहुगे फल आपन कीन्हा ॥ ५ ॥
बंचेहु मोहि जबन धरि देहा ❀ सोइ तनु धरहु शाप मम एहा ॥ ६ ॥

अब अच्छे घर वायना दिया सो अपने कियेका फल पाओगे ॥ ५ ॥ जैसी देह धरि मुझे आपने ठगा है, उसी तनको धारण करो, यही मेरा शाप है ॥ ६ ॥

कपिआकृति तुम कीन्ह हमारी ❀ करिहहिं कीश सहाइ तुम्हारी ॥ ७ ॥
मम अपकार कीन्ह तुम भारी ❀ नारिविरह तुम होव दुखारी ॥ ८ ॥

तुमने मेरी सूरत बंदरकीसी बनाई, इस लिये बंदरही तुम्हारी सहायता करेंगे ॥ ७ ॥ तुमने मेरा बड़ा भारी अपकार किया है इसलिये तुम भी स्त्रीके विरहमें दुखी होगे ॥ ८ ॥

दो०-शाप सीस धरि हरष हिय, प्रभु सुरकारज कीन्ह ॥ ❀
निजमायाकी प्रबलता, कर्षि कृपानिधि लीन्ह ॥ १४६ ॥ ❀

मुनिका शाप सीसपर धरि और मनमें प्रसन्न हो भगवान्ने देवताओंका कार्य्य किया और पीछे कृपानिधानने अपनी मायाकी प्रबलता खैंचलीनी ॥ १४६ ॥

चौ०-तब हरिमाया दूरि निवारी ❀ नहिं तहँ रमा न राजकुमारी ॥ १ ॥
तब मुनि अति सभीत हरिचरना ❀ गहे पाहि प्रनतारतिहरना ॥ २ ॥

जब भगवानने अपनी माया दूर करी तब वहां न लक्ष्मी रही न राजकन्या ॥ १ ॥तब तौ नारदजी भयभीत हो प्रभुके चरणोंमें गिर पड़े और कहने लगे कि हे भक्तोंके दुख हरनेवाले ! मेरी रक्षा करो॥२॥

मृषा होहु मम शाप कृपाला ❀ मम इच्छा यह दीनदयाला ॥ ३ ॥
मैं दुर्वचन कहेउ बहुतेरे ❀ कह मुनि पाप मिटहिं किमि मेरे ॥ ४ ॥

हे कृपालु ! मेरा शाप झूठा होजाय, हे दीनदयाल ! यह मेरी इच्छा है ॥ ३ ॥ नारदजी कहते हैं कि मैंने जो आपको बहुतसे बुरे वचन कहे हैं ये मेरे पाप कैसे दूर होयँ ? ॥ ४ ॥

जपहु जाइ शंकरशतनामा ❀ होइहि हृदय तुरत विश्रामा ॥ ५ ॥
कोउ नहिं शिवसमान प्रिय मोरे ❀ अस प्रतीति त्यागेउ जनि भोरे ॥ ६ ॥

तब भगवान् बोले कि तुम जाकर सौ वार शिव २ जपो तौ तुम्हारा हृदय तुरंत शांत हो जायगा ॥५॥ क्यौंकि, मुझे शिवके तुल्य कोई प्यारा नहीं है ऐसा निश्चय तुम भूलकरभी मत छोड़ना ॥६॥

जेहिपर कृपा न करहिं पुरारी ❀ सो न पाव मुनि भक्ति हमारी ॥ ७ ॥
अस उर धरि महि बिचरहु जाई ❀ अब न तुमहिं माया नियराई ॥ ८ ॥

जिसपर शिवजी कृपा न करैं, हे मुनि ! वह हमारी भक्ति नहीं पाता है ॥ ७ ॥ ऐसा हृदयमें धरि पृथ्वीपर घूमो. अब मेरी माया तुम्हारे पासभी न आवैगी ॥ ८ ॥

दो०–बहुबिधि मुनिहिं प्रबोधि प्रभु, तब भए अंतरध्यान ॥ ❀
सत्यलोक नारद चले, करत रामगुनगान ॥ १४७ ॥ ❀

अनेक भांति मुनिको समझाय बुझाय भगवान् अंतरध्यान हुये और नारदजी रामके गुण गाते हुये सत्यलोकको गये ॥ १४७ ॥

चौ०–हरगन मुनिहिं जात पथ देषी ❀ विगतमोह मन हर्षविशेषी ॥ १ ॥
अतिसभीत नारद पहँ आये ❀ गहि पद आरत बचन सुनाये ॥ २ ॥

शिवजीके गणोंने मुनिको मार्गमें जाते हुये देखा कि उनका मोह दूर हो गया है और मनमें अत्यन्त प्रसन्न है ॥ १ ॥ वे दोनों बहुत डरते २ नारदजीके पास आये और उनके पाँव पकड़ दुखित हो ये वचन बोले कि–॥ २ ॥

हरगन हम न विप्र मुनिराया ❀ बड़ अपराध कीन्ह फल पाया ॥ ३ ॥
शाप अनुग्रह करहु कृपाला ❀ बोले नारद दीनदयाला ॥ ४ ॥

हे मुनिराज ! हम शिवके गण हैं, ब्राह्मण नहीं. हमने आपका बड़ा अपराध किया और उसका फल पाया ॥ ३ ॥ हे कृपालु ! अब अपने शापका अनुग्रह करो ! तब दीनदयाल नारदजी बोले ॥४॥

निशिचर जाइ होहु तुम दोऊ ❀ वैभव विपुल तेज बल होऊ ॥ ५ ॥
भुजबल विश्व जितव तुम जहिआ ❀ धरहहिं विष्णु मनुजतनु तहिआ ॥ ६ ॥

तुम दोनों जाकर राक्षस होओ और तुम्हारा प्रताप, तेज और बल अधिक हो ॥ ५ ॥ तुम अपनी भुजाओंके बलसे जहांतक पृथ्वी है, जब सबको जीतोगे; तब विष्णु मनुष्यका अवतारधारण करेंगे ॥ ६ ॥

समरमरन हरिहाथ तुम्हारा ❀ होइहहु मुक्त न पुनि संसारा ॥ ७ ॥
चले जुगल मुनिपद सिर नाई ❀ भए निशाचर कालहि पाई ॥ ८ ॥

और युद्धमें विष्णुके हाथसे तुम्हारा मरण होगा. तुम मुक्त होगे और फिर संसारमें न फँसोगे ॥ ७ ॥ वे दोनों मुनिके चरणोंकी वंदना कर गये और समय पाकर राक्षस हुये ॥ ८ ॥

दो०–एक कल्प इहि हेतु प्रभु, लीन्ह मनुज अवतार ॥
सुररंजन सज्जनसुखद, हरि भंजन भूभार ॥ १४८ ॥

एक कल्पमें भगवान्ने इस कारण मनुष्यका अवतार लेकर देवताओंको आनंद, सज्जनोंको सुख दे, पृथ्वीका भार उतारा था ॥ १४८ ॥

चौ०–एहिविधि जन्मकर्म हरिकेरे ❀ सुंदर सुखद विचित्र घनेरे ॥ १ ॥
कल्पकल्पप्रति प्रभु अवतरहीं ❀ चारु चरित नानाविधि करहीं ॥ २ ॥

इस प्रकार भगवान्के अनेक जन्म हैं और उनके सुंदर सुखदाई वहुतसे अनोंखे चरित्र हैं ॥ १॥ प्रत्येक कल्पमें भगवान् अवतार लेते हैं और नानाप्रकारके सुन्दर चरित्र करते हैं ॥ २॥

तब तब कथा मुनीसन गाई ❀ परम पुनीत विचित्र सुहाई ॥ ३ ॥
विविध प्रसंग अनूप बखाने ❀ करहिं न सुनि आश्चर्य सयाने ॥ ४ ॥

तव तव परम पवित्र सुन्दर विच्त्रि कथाको मुनीश्वरोंने गाया है ॥ ३ ॥ कई प्रकारके अनोंखे २ प्रसंग वर्णन किये हैं कि जिसको सुनकर चतुर लोग आश्चर्य नहीं करते हैं ॥ ४ ॥

हरि अनंत हरिकथा अनंता ❀ कहहिं सुनहिं बहुविधि श्रुतिसंता ॥ ५ ॥
रामचंद्रके चरित सुहाये ❀ कल्पकोटिलगि जाइ न गाये ॥ ६ ॥

भगवान् अनंत हैं और उनकी कथाभी अनंत हैं जिसको अनेक प्रकारसे वेद और संत कहते सुनते हैं ॥ ५ ॥ रामचंद्रजीके सुंदर चरित्र करोड़ कल्पतक नहीं गाये जा सकते ॥ ६ ॥

यह प्रसंग मैं कहा भवानी ❀ हरिमाया मोहहिं मुनि ज्ञानी ॥ ७ ॥
प्रभु कौतुकी प्रणतहितकारी ❀ सेवत सुलभ सकल दुखहारी ॥ ८ ॥

हे भवानी! यह प्रसंग मैंने तुमसे कहा कि भगवान्की माया बड़े २ ज्ञानी मुनियोंको मोह लेती है ॥ ७ ॥ भगवान् भक्तोंके हितकारी और कौतुकी हैं और वे सेवा करनेसे सहजहीमें सब दुख दूर करनेवाले हैं ॥ ८ ॥

सो०–सुर नर मुनि कोउ नाहिं, जेहि न मोह मायाप्रबल ॥
अस बिचारि मनमाहिं, भजिय महामायापतिय ॥ २१ ॥

देवता, मनुष्य, मुनि कोई ऐसा नहीं जिसे भगवान्की प्रवल मायाने न मोहलिया हो; ऐसा जी में विचार महामायापतिका भजन करना चाहिये ॥ २१ ॥

चौ०–अपर हेतु सुनु शैलकुमारी ❀ कहौं बिचित्र कथा बिस्तारी ॥ १ ॥
जेहि कारन अज अगुन अनूपा ❀ ब्रह्म भये कोसलपुरभूपा ॥ २ ॥

हे पार्वती! भगवान्के जन्मका दूसरा कारण सुनों जिसकी विच्त्रि कथा विस्तारपूर्वक कहता हूं ॥१॥ जिस कारण जन्मरहित निर्गुण उपमारहित ब्रह्म (अवतार लेकर) अयोध्याके राजा हुये ॥२॥

जो प्रभु बिपिन फिरत तुम देषा ❀ बंधुसमेत किये मुनिवेषा ॥ ३ ॥
जासु चरित अवलोकि भवानी ❀ सतीशरीर रहेउ वौरानी ॥ ४ ॥

और जिन प्रभुको तुमने बनमें भाईसहित मुनिभेष धरे फिरते हुए देखा ॥ ३ ॥ हे भवानी! जिनके चरित्र देख जब तुम सतीके शरीरमें वावलीसी हो गईथीं ॥ ४ ॥

अजहु न छाया मिटति तुम्हारी ❀ तासु चरित सुनु भ्रमरुजहारी ॥ ५ ॥
लीला कीन्ह जो तेहि अवतारा ❀ सो सब कहिहौं मतिअनुसारा ॥ ६ ॥

और अबभी तुमारी (भ्रमरूप) छाया नहीं मिटती है, इसलिये भ्रमरूपी रोगके दूर करनेवाले उन रामजीके चरित्रको सुनो ॥ ५ ॥ जो २ लीला उस अवतारमें करी हैं सो सब मैं अपनी मतिके अनुसार कहूँगा ॥ ६ ॥

भरद्वाज सुनि शंकरबानी ❀ सकुचि सप्रेम उमा मुसकानी ॥ ७ ॥
लगे बहुरि बरने वृषकेतू ❀ सो अवतार भयेउ जेहि हेतू ॥ ८ ॥

(याज्ञवल्क्यमुनि कहने लगे) हे भरद्वाज! पारवतीजी शिवजीके ऐसे वचन सुन कुछ सकुचीं और प्रेमसहित मुसकुराईं॥७॥पुनि शिवजी, जिस कारण प्रभुका अवतार हुआ था उसे वर्णन करने लगे॥८॥

दो०-सो मैं तुमसन कहौं सब, सुनु मुनीश मन लाय ॥ ❀
रामकथा कलिमलहरन, मंगलकरनि सुहाय ॥ १४९ ॥ ❀

वही मैं तुमसे सब कहताहूँ. हे मुनीश! तुम मन लगाकर सुनो. क्योंकि रामकी कथा कलियुगके मलके हरनेवाली और सुंदर मंगल करनेवाली है ॥ १४९ ॥

चौ०-स्वायंभुवमनु अरु शतरूपा ❀ जिनते भै नरसृष्टि अनूपा ॥ १ ॥
दंपतिधर्म आचरन नीका ❀ अजहुँ गाव श्रुति जिनकी लीका ॥ २ ॥

स्वायंभुमनु और शतरूपासे सुंदर मनुष्योंकी सृष्टि हुई है ॥ १ ॥ उन दोनोंका सुंदर आचरण देखकर अबभी वेद जिनकी लीला गाते हैं ॥ २ ॥

नृप उत्तानपाद सुत तासू ❀ ध्रुव हरिभक्त भये सुत जासू ॥ ३ ॥
लघु सुत नाम प्रियव्रत ताही ❀ वेद पुराण प्रशंसत जाही ॥ ४ ॥

उसका पुत्र उत्तानपाद नाम राजा हुआ कि जिसके पुत्र हरिभक्त ध्रुवजी हुये ॥ ३ ॥ उसके छोटे लड़केका नाम प्रियव्रत था कि जिसकी वेद पुराण प्रशंसा करते हैं ॥ ४ ॥

देवहूति पुनि तासु कुमारी ❀ जो मुनि कर्दमकी प्रिय नारी ॥ ५ ॥
आदिदेव प्रभु दीनदयाला ❀ जठर धरेउ जेहि कपिल कृपाला ॥ ६ ॥

फिर उसकी देवहूती नाम कन्या हुई जो कर्दम मुनिकी प्यारी स्त्री थी ॥ ५ ॥ जिसके उदरसे आदिदेव दीनदयाल प्रभुने कपिलदेवका जन्म लिया ॥ ६ ॥

सांख्यशास्त्र जिन प्रगट बखाना ❀ तत्त्वविचारनिपुन भगवाना ॥ ७ ॥
तेहि मनु राज कीन्ह बहुकाला ❀ प्रभु आयसु बहुबिधि प्रतिपाला ॥ ८ ॥

और जिन्होंने प्रगट होकर सांख्यशास्त्र वर्णन किया क्योंकि वे भगवान् तत्त्वके विचारमें बड़े निपुण थे ॥ ७ ॥ तिस राजामनुने बहुत दिनोंतक राज किया और अनेक रीतिसे प्रभुकी आज्ञाका प्रतिपालन किया ॥ ८ ॥

सो०-होइ न विषयविराग, भवन वसत भा चौथपन ॥ ❀
हृदय बहुत दुख लाग, जन्म गयेउ हरिभक्तिबिनु ॥ २२ ॥ ❀

उन्हें विषयसे विराग न हुआ और घरमें रहते २ चौथापन आगया तब हृदयमें बड़ा दुख हुआ कि भगवान्की भक्ति विना जन्म बीत गया ॥ २२ ॥

चौ०-बरबस राज सुतहि तब दीन्हा ❀ नारिसमेत गमन बन कीन्हा ॥ १ ॥
तीरथवर नैमिष विख्याता ❀ अतिपुनीत साधकसिधिदाता ॥ २ ॥

फिर बेबस हो पुत्रको राज्य दे रानीसहित बनको चल दिये ॥ १ ॥ तीर्थोंमें सुन्दर नैमिषारण्य अति पवित्र और साधक लोगोंको सिद्धिका देनेवाला प्रसिद्ध है ॥ २ ॥

बसहि जहाँ मुनिसिद्धसमाजा ❀ तहँ हिय हर्षि चले मनुराजा ॥ ३ ॥
पंथ जात सोहहिं मतिधीरा ❀ ज्ञान भक्ति जनु धरे शरीरा ॥ ४ ॥

मुनि और सिद्ध लोगोंका समाज जहाँ रहताथा तहां मनुराजा हृदयमें प्रसन्न होकर गये ॥ ३ ॥ मार्गमें जातेहुए ये दोनों धैर्यवान् स्त्रीपुरुष ऐसे जान पड़तेथे मानों ज्ञान और भक्ति शरीर धारण किये शोभित हों ॥ ४ ॥

पहुँचे जाइ धेनुमतितीरा ❀ हर्ष नहाने निर्मल नीरा ॥ ५ ॥
आए मिलन सिद्ध मुनि ज्ञानी ❀ धर्मधुरंधर नृप ऋषि जानी ॥ ६ ॥

वे गोमती नदीके किनारे पहुँचे और प्रसन्न हो निर्मल जलमें स्नान किया ॥ ५ ॥ बड़े २ मुनि सिद्ध ज्ञानी उन्हें धर्मधुरंधर राजर्षि जान मिलनेको आये ॥ ६ ॥

जहँ तहँ तीरथ रहे सुहाए ❀ मुनिन सकल सादर करवाए ॥ ७ ॥
कृश शरीर मुनिपट परिधाना ❀ संतसभा नित सुनहिं पुराना ॥ ८ ॥

जहाँ २ जो २ सुंदर तीर्थ थे मुनियोंने सब आदरसहित कराये ॥ ७ ॥ उनका शरीर दुर्बल होगयाथा. वे मुनियोंका वस्त्र कहिये कौपीन पहिरकर संतोंकी सभामें नित्य पुराण सुनने लगे ॥८॥

दो०–द्वादशअक्षरमंत्रवर, जपहिं सहितअनुराग ॥ ❀
वासुदेवपदपंकरुह, दंपतिमन अतिलाग ॥ १५० ॥ ❀

बारह अक्षरका जो श्रेष्ठ मंत्र है अर्थात् "ओं नमो भगवते वासुदेवाय" उसे प्रेमसहित नित्य जपते थे और उन दोनों स्त्रीपुरुषोंका मन वासुदेवके चरणकमलोंमें अत्यन्त लग गया ॥ १५० ॥

चौ०–करहिं अहार शाक फल कंदा ❀ सुमिरहिं ब्रह्म सच्चिदानंदा ॥ १ ॥
पुनि हरिहेतु करन तप लागे ❀ बारि अहार मूल फल त्यागे ॥ २ ॥

शाककंदफल भोजन करते थे और सच्चिदानंद ब्रह्मका स्मरण करते थे ॥१॥ पुनि वे भगवान्को प्रसन्न करनेके लिये तप करने लगे. जलका आहार करना आरंभ किया और मूलफलको छोड़दिया २

उर अभिलाष निरंतर होई ❀ देखिय नयन परमप्रभु सोई ॥ ३ ॥
अगुन अखंड अनंत अनादी ❀ जेहि चिंतहिं परमारथवादी ॥ ४ ॥

उनके हृदयमें सदा यही अभिलाषा रहती थी कि उन सच्चिदानंद भगवान्को नयनोंसे देखना चाहिये ॥ ३ ॥ जो भगवान्, निर्गुण, अखंड, अनंत और अनादि हैं और मोक्ष चाहनेवाले जिनकी चिंतना करते हैं ॥ ४ ॥

नेति नेति जेहि बेद निरूपा ❀ चिदानंद निरुपाधि अनूपा ॥ ५ ॥
शंभु विरंचि विष्णु भगवाना ❀ उपजहिं जासु अंशते नाना ॥ ६ ॥

और जिसको वेदनेभी नेति २ कहा वही चिदानंद उपाधि और उपमारहित हैं ॥ ५ ॥ शिव, ब्रह्मा और विष्णु जिसके अंशसे[१] नानाप्रकारके अवतार लेते हैं ॥ ६ ॥

ऐसे प्रभु सेवकबस अहहीं ❀ भक्तहेतु लीलातनु गहहीं ॥ ७ ॥
जो यह बचन सत्य श्रुति भाषा ❀ तौ हमार पूरहिं अभिलाषा ॥ ८ ॥

ऐसे भगवान् सेवकोंके वशमें हैं और भक्तोंके लिये लीलासे शरीर धारण करते हैं ॥ ७ ॥ यदि यह वचन वेदने सत्य २ कहा है तौ हमारा मनोरथ पूरा हो जायगा ॥ ८ ॥

---

(१) महारामायणे शिववाक्यं–"यस्यांशेन समद्भूता ब्रह्म-विष्णु-महेश्वराः । नानाकृतिधरा भूताः सर्वे ध्यायंति तं सदा ॥" स्कान्दे–"ब्रह्मविष्णुमहेशाद्या यस्यांशे लाभसाधकाः ॥ तमादिदेवं श्रीरामं विशुद्धं परमं भजे ॥ २ ॥" अर्थ सरल है.

दो०-इहिविधि बीते बरष षट, सहस बारिआहार ॥
संवत सप्तसहस्र पुनि, रहे समीर अधार ॥ १५१ ॥

इस प्रकार छैहजार वर्ष पानी पीकर वीतगये और फिर सात हजार वर्ष वायुके आधारसे रहे१५१

चौ०-बरष सहसदश त्यागेउ सोऊ ❀ ठाढ़े रहे एक पग दोऊ ॥ १ ॥
बिधि हरि हर तप देखि अपारा ❀ मनुसमीप आये बहुबारा ॥ २ ॥

और दशहजार वर्षतक वहभी छोड़ दिया और वे दोनों एक पांवसे खड़े रहे ॥ १ ॥ ब्रह्मा, विष्णु, महेश ऐसा भारी तप देख कर मनुके पास कईवार आये ॥ २ ॥

मागहु बर बहुभाँति लुभाये ❀ परमधीर नहिं चलहिं चलाये ॥ ३ ॥
अस्थिमात्र हुइ रहे सरीरा ❀ तदपि मनाक नाहिं मन पीरा ॥ ४ ॥

और उनसे कहा कि वर मागो और वहुत भांति उन्हें लुभाया पर वे धैर्यवान् थे चलयेसे नहीं चले ॥ ३ ॥ शरीरमें केवल हाड़ बाकी रहगये थे तौभी मनको कुछ पीड़ा न हुई ॥ ४ ॥

प्रभु सर्वज्ञ दास निज जानी ❀ गति अनन्य तापस नृपरानी ॥ ५ ॥
माँगु माँगु वर भै नभबानी ❀ परम गँभीर कृपामृतसानी ॥ ६ ॥

घट २ की सब जाननेवाले भगवान्‌ने अपना दास जाना और राजा रानीकी तपस्वियोंकीसी ऐसी गति देखी कि जैसी किसी दूसरेकी नहो ॥ ५ ॥ इतनेहीमें वड़ी गंभीर और कृपारूपी अमृतसे मिलीहुई आकाशवाणी हुई कि वर माँगो वर माँगो ! ॥ ६ ॥

मृतकजिआवनि गिरा सुहाई ❀ श्रवणरंध्र होइ उर जब आई ॥ ७ ॥
हृष्टपुष्ट तनु भये सुहाये ❀ मानहुँ अबहिं भवनतें आये ॥ ८ ॥

मरेहुएको जीवदानके समान यह सुंदर वाणी कानोंद्वारा जब हृदयमें पहुंची-॥ ७ ॥ (उस समय आनंदके कारण) उनका शरीर ऐसा हृष्ट पुष्ट सुन्दर होगया मानों अभी घरसे आये हैं ॥ ८ ॥

दो०-श्रवणसुधासम वचन सुनि, पुलकप्रफुल्लितगात ॥
बोले मनु करि दंडवत, प्रेम न हृदय समात ॥ १५२ ॥

कानोंमें अमृतसमान वाणीको सुन पुलकित और प्रफुल्लित शरीर हो मनु दंडवत करके बोले और उनके हृदयमें इतना प्रेम था कि समाता नहीं था ॥ १५२ ॥

चौ०-सुनु सेवकसुरतरु सुरधेनू ❀ विधिहरिहरबंदितपदरेनू ॥ १ ॥
सेवत सुलभ सकलसुखदायक ❀ प्रनतपाल सचराचरनायक ॥ २ ॥

हे सेवकोंके कल्पवृक्ष ! हे कामधेनु ! आपके चरणोंकी धूलिको ब्रह्मा, विष्णु और शिव वंदना करते हैं ॥ १ ॥ सेवा करनेसे सहजहीमें उनको सब सुख देनेवाले हो और भक्तोंके पालनेवाले और चराचरके स्वामी हो ॥ २ ॥

जौं अनाथहित हमपर नेहू ❀ तौ प्रसन्न होइ यह वर देहू ॥ ३ ॥
जो स्वरूप बस शिवमनमाहीं ❀ जिहि कारन मुनि जतन कराहीं ॥ ४ ॥

हे अनाथोंके भला करनेवाले ! जो आपका हमपर स्नेह है तौ प्रसन्न होकर हमें यह वर दीजिये कि-॥ ३ ॥ जो स्वरूप शिवके मनमें वसता है और जिसको पानेके लिये मुनि यत्न करते हैं ॥ ४ ॥

---

(१) क्योंकि वे तो केवल भगवान्से वर चाहते थे. जैसा कहा है कि-"वनै तो रघुवरतें बनै की बिगरै भरिपूर । तुलसीवनै जो अवरतें ता वनिवे भें धूर ॥ १ ॥"

जो भुशुंडिमनमानसहंसा ❀ सगुन अगुन जेहि निगम प्रसंसा ॥ ५ ॥
देखहिं हम सो रूप भरि लोचन ❀ कृपा करहु प्रनतारतिमोचन ॥ ६ ॥

और जो कागभुशुंडिके मनरूपी मानससरोवरके हंस हैं; और जो सगुण और निर्गुण हैं और वेद जिसकी बड़ाई करते हैं ॥ ५ ॥ उसी रूपको हम नेत्रभरिकर देखें. हे भक्तोंके दुख दूर करनेवाले! ऐसी कृपा करो ॥ ६ ॥

दंपतिबचन परम प्रिय लागे ❀ मृदुल बिनीत प्रेमरस पागे ॥ ७ ॥
भक्तवछल प्रभु कृपानिधाना ❀ बिश्वबास प्रकटे भगवाना ॥ ८ ॥

दोनों स्त्रीपुरुषोंके कोमल विनयपूर्वक प्रेमके रससे सनेहुये बचन बड़े अच्छे लगे ॥ ७ ॥ भक्तवत्सल, कृपानिधान, विश्वव्यापी भगवान् प्रकट भये ॥ ८ ॥

दो०–नीलसरोरुह नीलमनि, नीलनीरधरश्याम ॥ ❀
लाजहिं तनुसोभा निरखि, कोटिकोटिसतकाम ॥ १५३ ॥ ❀

नीलकमल नीलमणि और नीले २ मेघके समान श्यामवर्ण कि जिसकी शोभा देख सौकरोड़ कामदेव लाजको प्राप्त होते हैं ॥ १५३ ॥

चौ०–शरदमयंकवदन छबि सीवा ❀ चारु कपोल चिबुक दरग्रीवा ॥ १ ॥
अधर अरुन रद सुंदर नासा ❀ बिधुकरनिकर बिनिंदक हासा ॥ २ ॥

शरदऋतुके चंद्रमाके समान जिनके मुखकी कान्तिकी सीमा थी, जिनके सुन्दर गाल, ठोढ़ी और शंखके समान गर्दन थी ॥ १ ॥ लाल २ होठ, सुंदर दांत और नाक और जिनका हँसना चंद्रकिरणके समूहकी बड़ी निंदा करनेवाला था ॥ २ ॥

नवअंबुजअंबकछबि नीकी ❀ चितबनि ललित भावती जीकी ॥ ३ ॥
भ्रकुटि मनोजचापछबिहारी ❀ तिलक ललाटपटलद्युतिकारी ॥ ४ ॥

नवीन कमलसमान सुन्दर जिनके नेत्रोंकी शोभा थी और जिनकी चितवन ऐसी सुंदर थी, (जो सबके मनको) अच्छी लगती थी ॥ ३ ॥ उनकी भौंयें कामदेवके धनुषकी शोभाको हरतीं थीं, और चौड़े माथेपर तिलक शोभायमान था ॥ ४ ॥

कुंडल मकर मुकुट सिर भ्राजा ❀ कुटिल केस जनु मधुपसमाजा ॥ ५ ॥
उर श्रीवत्स रुचिर बनमाला ❀ पदिकहार भूषन मनिजाला ॥ ६ ॥

जिनसे (कानोंमें) मकराकृति कुंडल, शिरमें मुकुट विराजमान, और घूंघरवाले बाल, मानों भौंरोंके झुंडके समान थे ॥ ५ ॥ हृदयमें श्रीवत्सका चिन्ह और (गलेमें) सुंदर वनमाला, हीरोंका हार और मणिजटित कंठा शोभायमान था ॥ ६ ॥

केहरिकंधर चारु जनेऊ ❀ बाहुबिभूषन सुंदरतेऊ ॥ ७ ॥
करिकरसरिस सुभग भुजदंडा ❀ कटि निषंग कर सरकोदंडा ॥ ८ ॥

सिंहकेसे कंधे सुंदर जनेऊ और भुजाओंमें वे सुंदर भूषण पहिरे हुये– ॥ ७ ॥ हाथीकी सूंड़समान जिनके सुन्दर भुजदंड थे और कमरमें तरकस और हाथमें धनुषबाण शोभित थे ॥ ८ ॥

दो०–तडितविनिंदक पीत पट, उदररेख वरतीनि ॥ ❀
नाभि मनोहर लेति जनु, जमुनभँवरछबि छीनि ॥ १५४ ॥ ❀

बिजलीकी निंदा करनेवाले पीले वस्त्र और पेटपर सुंदर तीन रेखा थीं और नाभि ऐसी सुहावनी थी मानों यमुनाके भँवरकी शोभाको छीनती थी ॥ १५४ ॥

चौ०–पदराजीव बरनि नहिं जाहीं ❀ मुनिमनमधुप बसहिं जेहिमाहीं ॥ १ ॥
बामभाग सोभति अनुकूला ❀ आदिशक्ति छबिनिधि जगमूला ॥ २ ॥

कमलके समान चरणोंका वर्णन नहीं होसकता, कि जिनमें मुनियोंके मन भ्रमर समान वसते हैं ॥ १ ॥ जिसकी बाँई ओर सुन्दर आदिशक्ति, छविकी खान और जगत्की मूलकारण शोभित थीं ॥२॥

जासु अंश उपजहिं गुनखानी ❀ अगनित रमा उमा ब्रह्मानी ॥ ३ ॥
भ्रुकुटिबिलास जासु जग होई ❀ राम वामदिशि सीता सोई ॥ ४ ॥

जिनके अंशसे गुणकी खान, अनगिनती लक्ष्मी, पार्वती और ब्रह्माणी उत्पन्न होती हैं ॥३॥ जिसकी भौंहके हलानेसे संसार होता है वही सीताजी रामकी वाम दिशामें शोभायमान थीं ॥ ४ ॥

छबिसमुद्र हरिरूप बिलोकी ❀ एकटक रहे नयनपट रोकी ॥ ५ ॥
चितवहिं सादर रूप अनूपा ❀ तृप्ति न मानहिं मनु शतरूपा ॥ ६ ॥

छबिके समुद्र विष्णुका रूप देखि पलकोंको रोक टकटकी बांध रह गये ॥ ५ ॥ मनु और शतरूपा आदरसहित सुंदर रूपको देखते थे और तृप्त नहीं होते थे ॥ ६ ॥

हर्षविवश तनुदशा भुलानी ❀ परे दंडइव गहि पद पानी ॥ ७ ॥
सिर परसे प्रभु निजकरकंजा ❀ तुरत उठाए करुनापुंजा ॥ ८ ॥

प्रसन्नताके वश तनकी दशा भूल गये और लकड़ीकी भाँति पृथ्वीमें गिर हाथोंसे पांव पकड़ लिये ॥ ७ ॥ करुणाके पुंज भगवान्‌ने अपने कमल समान हाथोंसे शीघ्र सिरको छुआ और तुरंत उठाया ॥ ८ ॥

दो०–बोले कृपानिधान पुनि, अति प्रसन्न मोहि जानि ॥ ❀
माँगहु वर जोइ भाव मन, महादानि अनुमानि ॥ १५५ ॥ ❀

फिर कृपानिधानने कहा मैं तुमसे बड़ा प्रसन्न हुआ; मुझे बड़ा दानी समझकर जो तुम्हारे मनको अच्छा लगे सो वर माँगो ॥ १५५ ॥

चौ०–सुनि प्रभुबचन जोरि जुगपानी ❀ धरि धीरज बोले मृदुबानी ॥ १ ॥
नाथ देखि पदकमल तुम्हारे ❀ अब पूरे सब काम हमारे ॥ २ ॥

भगवान्‌के वचन सुन दोनों हाथ जोड़ धीरज धरि कोमलवाणी बोले ॥ १ ॥ हे नाथ ! अब तुम्हारे चरणकमलोंको देख हमारे सब काम पूरे हुये ॥ २ ॥

एक लालसा बड़ि मनमाहीं ❀ सुगम अगम कहि जात सुनाहीं ॥ ३ ॥
तुमहिं देत अति सुगम गुसाँई ❀ अगम लागि मोहि निज कृपनाई ॥ ४ ॥

हमारे मनमें एक बड़ी अभिलाषा है और सुगम और अगम दोनों है, वह हमसे कही नहीं जाती ॥ ३ ॥ हे गुसांई ! आपको देनेमें तौ अति सुगम है पर मुझे मिलनेमें अपनी कृपणाईसे कठिन लगती है ॥ ४ ॥

यथा दरिद्र बिबुधतरु जाई ❀ बहु संपति माँगत सकुचाई ॥ ५ ॥
तासु प्रभाव जान नहिं सोई ❀ तथा हृदय मम संशय होई ॥ ६ ॥

जैसे दरिद्री कल्पवृक्षके नीचे जाकर बहुत संपत्ति मांगनेमें सकुचाता है ॥ ५ ॥ क्योंकि वह उसका प्रभाव नहीं जानता, तैसेही मेरे हृदयमें संशय है ॥ ६ ॥

सो तुम जानहु अंतरजामी ❀ पुरवहु मोर मनोरथ स्वामी ॥ ७ ॥
सकुच बिहाय माँगु नृप मोही ❀ मोरे नहिं अदेय कछु तोही ॥ ८ ॥

उसको हे अंतरजामी! आप जानतेही हो सो मेरे मनोरथको पूरा करो ॥७॥ तब प्रभु बोले कि हे राजा! सकुचको छोड मुझसे मांगो, मेरे यहां तेरे लिये कोई वस्तु ऐसी नहीं जिसे न दे सकूं ॥८॥

दो०–दानिशिरोमणि कृपानिधि, नाथ कहौं सतभाव ॥ ❀
चाहौं तुमहिं समान सुत, प्रभुसन कवन दुराव ॥ १५६ ॥ ❀

तब राजाने कहा हे कृपानिधे! आप दानियोंमे शिरोमणि हो, मैं सत्यभावसे कहता हूं कि मैं तुम्हारे समान पुत्र चाहता हूं, प्रभुसे कौनसा छिपाव है ॥ १५६ ॥

चौ०–देखि प्रीति सुनि बचन अमोले ❀ एवमस्तु करुनानिधि बोले ॥ १ ॥
आपसरिस खोजों कहँ जाई ❀ नृप तव तनय होव मैं आई ॥ २ ॥

प्रीतिको देख और अमोल वचन सुनकर करुणानिधि प्रभुने एवमस्तु (ऐसाही होय) कहा ॥१॥ अपने समान मैं किसे और कहां जाकर ढूँढूँ. इसलिये हे राजा! मैंही तेरा पुत्र होउंगा ॥ २ ॥

शतरूपहि बिलोकि कर जोरे ❀ देवि माँगु वर जो रुचि तोरे ॥ ३ ॥
जो वर नाथ चतुर नृप माँगा ❀ सो कृपालु मोहिं अति प्रिय लागा ॥४॥

पुनि शतरूपाको हाथ जोडे देख बोले–हे रानी! जो तेरी इच्छा हो सो तूभी वर माँग ॥ ३ ॥ यह सुन रानी बोली कि हे महाराज! जो वर चतुर राजाने मांगा, सो हे कृपालु! वही मुझे वहुत अच्छा लगा ॥ ४ ॥

प्रभु परंतु सुठि होति ढिठाई ❀ जदपि भक्तहित तुमहि सुहाई ॥ ५ ॥
तुम ब्रह्मादिजनक जगस्वामी ❀ ब्रह्म सकल उर अंतरजामी ॥ ६ ॥

परंतु हे प्रभो! वह बड़ी भारी ढिठाई होती है, यद्यपि भक्तके हितके कारण आपको अच्छीलगी ॥५॥ तुम ब्रह्मादिकके पिता, जगत्के स्वामी, साक्षात् परब्रह्म और सबके हृदयके जाननेवाले हो ॥६॥

अस समुझत मन संशय होई ❀ कहा जो प्रभु प्रमाण पुनि सोई ॥ ७ ॥
जे निजभक्तनाथ तुम अहईं ❀ जो सुख पावहिं सो गति लहईं ॥ ८ ॥

ऐसा समझनेसे मनको संदेह होता है. पर प्रभुने जो कहा है सो ठीकही है ॥ ७ ॥ हे नाथ! जो तुम्हारे निजके भक्त हैं, उनके लिये आप वही करते हैं जिसमें वे सुख पावें ॥ ८ ॥

दो०–सोइ सुख सोइ गति सोइ भगति, सोइ निजचरनसनेहु ॥ ❀
सोइ विवेक सोइ रहन प्रभु, हमहिं कृपा करि देहु ॥ १५७ ॥ ❀

हे प्रभु! हमको वही सुख, वही दशा, वही भक्ति, वही अपने चरणोंमें स्नेह, वही ज्ञान और वही रहन कृपाकरके दो ॥ १५७ ॥

चौ०–सुनि मृदु गूढ़ रुचिरवर रचना ❀ कृपासिंधु बोले मृदुबचना ॥ १ ॥
जो कछु रुचि तुम्हरे मनमाहीं ❀ मैं सो दीन्ह सब संशय नाहीं ॥ २ ॥

कोमल, और भीतरे सुन्दर वचनोंकी वनावट सुनि कृपासिंधु भगवान् कोमल बचन बोले ॥१॥ जो कुछ इच्छा तुम्हारे मनमें है वही मैनें तुम्हें सब दीनी इसमें संदेह नहीं ॥ २ ॥

मातु विवेक अलौकिक तोरे ❀ कबहुँ न मिटै अनुग्रह मोरे ॥ ३ ॥
वंदि चरण मनु कहेउ बहोरी ❀ अवर एक विनती प्रभु मोरी ॥ ४ ॥

हे माता ! यह तेरा अनोंखा ज्ञान मेरी कृपासे कभी दूर नहोगा ॥ ३ ॥ पुनि मनुने प्रभुके चरणोंकी वंदनाकर कहा कि हे महाराज ! एक विनती मेरी और है कि ॥ ४ ॥

सुतविषयक तव पदरति होऊ ❀ मोहि बरु मूढ़ कहै किन कोऊ ॥ ५ ॥
मनिबिनुफनिजिमि जलबिनुमीना ❀ मम जीवन तिमि तुमहिं अधीना ॥ ६ ॥

पुत्रकरके मैं आपको मानूँ; पर आपके चरणोंमें प्रीति वनी रहै. चाहें कोई मुझे मूर्ख भलेही क्यों न कहै॥५॥जैसे मणि बिना सर्प और जल बिना मछली, ऐसेही मेरा जीवन तुम्हारे आधीन रहै॥६॥

अस वर माँगि चरन गहि रहेऊ ❀ एवमस्तु करुनानिधि कहेऊ ॥ ७ ॥
अब तुम मम अनुसासन मानी ❀ बसहु जाइ सुरपतिरजधानी ॥ ८ ॥

ऐसा वर माँग चरण पकड़के रह गये. तव करुणानिधान प्रभुने कहा ऐसाही होगा ॥ ७ ॥ अब तुम मेरी आज्ञा मानकर इंद्रलोकमें जाकर वास करो ॥ ८ ॥

सो०-तहँ करि भोगबिलास, तात गये कछु काल पुनि ॥ ❀
होहुहु अवध भुआल, तब मैं होव तुम्हार सुत ॥ ६३ ॥ ❀

वहाँ भोगविलास करके हे तात ! फिर जब कुछ दिन पीछे तुम अवधके राजा होगे तब मैं तुम्हारा पुत्र होउँगा ॥ ६३ ॥

चौ०-इच्छामय नरवेष सँवारे ❀ होइहौं प्रगट निकेत तुम्हारे ॥ १ ॥
अंशनसहित देह धरि ताता ❀ करिहौं चरित भक्तसुखदाता ॥ २ ॥

हे तात ! अपनी इच्छासे मनुष्य तन धारण कर तुम्हारे घरमें प्रगट हूँगा अर्थात् जन्म लूंगा ॥ १ ॥ और हे तात ! अंशोंसहित देह धरके भक्तोंके सुखदायक चरित्र करूंगा. कि-॥ २ ॥

जे सुनि सादर नर बड़भागी ❀ भव तरहहिं ममतामदत्यागी ॥ ३ ॥
आदिशक्ति जेहिं जग उपजाया ❀ सो अवतरहि मोर यह माया ॥ ४ ॥

जिनको बड़भागी नर आदरसहित सुनकर संसाररूपी समुद्रसे ममता मदको छोड़ पारहोंगे ॥ ३ ॥ आदिशक्ति जिसने संसार उत्पन्न किया है, वह मेरी मायाभी अवतार लेगी ॥ ४ ॥

पुरउब मैं अभिलास तुम्हारा ❀ सत्य सत्य प्रण सत्य हमारा ॥ ५ ॥
पुनि पुनि अस कहि कृपानिधाना ❀ अंतर्ध्यान भए भगवाना ॥ ६ ॥

और मैं तुम्हारी अभिलाषा पूरी करूंगा यह हमारा सच्चा २ प्रण है ॥ ५ ॥ कृपानिधान भगवान् वारंवार ऐसेही कह अंतर्ध्यान होगये ॥ ६ ॥

दंपति उर धरि भक्ति कृपाला ❀ तेहि आश्रमनि बसे कछु काला ॥ ७ ॥
समय पाइ तनु तजि अनयासा ❀ जाइ कीन्ह अमरावति बासा ॥ ८ ॥

और वे दोनों स्त्रीपुरुष प्रभुकी भक्ति हृदयमें धरि उस आश्रममें कुछ दिन रहे ॥ ७ ॥ और समय पाकर अनायास शरीर छोड़ इंद्रपुरीमें जाकर वास करने लगे ॥ ८ ॥

---

(१) सनत्कुमारसंहितायां-"शेषोऽभूल्लक्ष्मणो लक्ष्मीर्जानकी शंखचक्रके । जातौ भरतशत्रुघ्नौ देवाः सर्वेपि वानराः । तत्र नारायणो देवः श्रीराम इति विश्रुतः" । (२) अध्यात्मरामायणे-"योगमायापि सीतेति जनकस्य गृहे तदा । उत्पत्स्यते तया सार्द्धं सर्वं संपादयाम्यहम् ॥" इति ।

दो०-यह इतिहास पुनीत अति, उमहिं कहेउ वृषकेतु ॥
भरद्वाज सुनु अपर पुनि, रामजन्मकर हेतु ॥ १५८ ॥

इस अत्यन्त पवित्र कथाको शिवजीने पार्वतीसे कहा और हे भरद्वाज ! औरभी दूसरा कारण रामके जन्म लेनेका सुनों ॥ १५८ ॥

चौ०-सुनु मुनि कथा पुनीत पुरानी ❀ जो गिरिजाप्रति शंभु बखानी ॥ १ ॥
विश्वविदित इक केकय देशू ❀ सत्यकेतु तहँ बसै नरेशू ॥ २ ॥

हे मुनि ! और पवित्र पुरानी कथा सुनों जो शिवजीने पार्वतीसे कही है, ॥ १ ॥ एक केकय देश संसारमें प्रसिद्ध है वहां सत्यकेतु नाम राजा रहता था ॥ २ ॥

धर्मधुरंधर नीतिनिधाना ❀ तेजप्रतापशील बलवाना ॥ ३ ॥
तेहिके भये युगल सुत वीरा ❀ सबगुणधाम महारणधीरा ॥ ४ ॥

वह वड़ा धर्मधुरंधर, नीतिका स्थान, तेजस्वी, प्रतापी, शीलवान् और बलवान् था ॥ ३ ॥ उसके दो लड़के सव गुणोंके धाम और रणमें धीरवीर थे ॥ ४ ॥

राजधानि जेठे सुत आही ❀ नाम प्रतापभानु अस ताही ॥ ५ ॥
अपर सुतहिं अरिमर्दन नामा ❀ भुजबल अतुल अचल संग्रामा ॥ ६ ॥

राजगद्दी वड़े पुत्रको मिली कि जिसका नाम प्रतापभानु था ॥ ५ ॥ और दूसरा पुत्र जिसका नाम अरिमर्दन था, उसने अपने अतुल भुजवलसे वड़े २ संग्राम जीते ॥ ६ ॥

भाइहिं भाइहिं परम सुमीती ❀ सकल दोषछलवर्जित प्रीती ॥ ७ ॥
जेठे सुतहिं राज नृप दीन्हा ❀ हरिहित आपु गवन वन कीन्हा ॥ ८ ॥

दोनों भाइयोंमें वड़ी मित्रता थी और उनकी प्रीति सव ईर्षादि दोष और छलरहित थी ॥ ७ ॥ राजाने वड़े पुत्रको राज्य दिया और आप प्रभुके मिलनेके लिये वनको गया ॥ ८ ॥

दो०-जब प्रतापरवि भयउ नृप, फिरी दुहाई देश ॥
प्रजापाल अति बेदबिधि, कतहुँ न रह अघलेश ॥ १५९ ॥

जब प्रतापभानु राजा हुवा तव देशमें उसकी दुहाई फिरी और वह बेदकी रीतिसे प्रजाका पालन करता था । उसके समयमें पापका लेश कहींभी न रहा ॥ १५९ ॥

चौ०-नृपहितकारक सचिव सुजाना ❀ नाम धर्मरुचि शुक्रसमाना ॥ १ ॥
सचिव सयान बंधु बलवीरा ❀ आपु प्रतापपुंज रणधीरा ॥ २ ॥

राजाके शुभचिंतक और चतुर मंत्रीका नाम धर्मरुचि था और (वह नीतिमें) शुक्राचार्यके समान था ॥ १ ॥ चतुर मंत्री, बलवान् भाई, और आपभी प्रतापका पुंज और रणमें धीर था ॥२॥

सेन संग चतुरंग अपारा ❀ अमित सुभट सब समरजुझारा ॥ ३ ॥
सेन बिलोकि राउ हरषाना ❀ अरु बाजे गहगहे निसाना ॥ ४ ॥

संगमें वहुतसी चतुरंगिनी सेना थी और वेगिनती वड़े २ योद्धा थे, और सव युद्धमें जुझार थे ॥ ३ ॥ अपनी सेनाको देख राजा प्रसन्न हुआ और वड़े भारी निशान वजने लगे ॥ ४ ॥

विजयहेतु कटकही बनाई ❀ सुदिन साधि नृप चलेउ बजाई ॥ ५ ॥
जहँ तहँ परी अनेक लराई ❀ जीते सकल भूप वरआई ॥ ६ ॥

जीतनेके लिये दल सजाकर सुंदर दिन और घड़ी देख राजा धौंसा वजाकर चला ॥ ५ ॥ जहांतहां वहुत लड़ाइयां हुईं और सव राजाओंको जोरावरी जीत लिया ॥ ६ ॥

सप्तदीप भुजबल बस कीन्हे ❀ ले ले दंड छाँड़ि नृप दीन्हे ॥ ७ ॥
सकल अवनिमंडल तेहि काला ❀ एक प्रतापभानु महिपाला ॥ ८ ॥

अपनी भुजाके बलसे सातों द्वीप बसमें करलिये और सब राजाओंसे दंड ले लेकर उन्हें छोड़ दिया ॥ ७ ॥ उस समय सब पृथ्वीमंडलका राजा एक प्रतापभानुही था ॥ ८ ॥

दो०-स्ववश विश्व करि बाहुबल, निज पुर कीन्ह प्रवेश ॥
अर्थ धर्म कामादि सुख, सेवहि समय नरेश ॥ १६० ॥

अपनी भुजाके बलसे संसारको वशकर अपने नगरको आया. और उस समय राजा धन धर्म और कामआदिका सुख भोगने लगा ॥ १६० ॥

चौ०-भूप प्रतापभानु बल पाई ❀ कामधेनु भइ भूमि सुहाई ॥ १ ॥
सब दुखवर्जित प्रजा सुखारी ❀ धर्मशील सुंदर नरनारी ॥ २ ॥

राजा प्रतापभानुका बल पाकर सुन्दर पृथ्वी कामधेनु होगई ॥ १ ॥ सब प्रजा प्रसन्न थी, किसीको कुछ दुख न था और स्त्रीपुरुष सुन्दर धर्मशील थे ॥ २ ॥

सचिव धर्मरुचि हरिपदप्रीती ❀ नृपहितहेतु सिखावत नीती ॥ ३ ॥
गुरु सुर संत पितर महिदेवा ❀ करै सदा नृप सबकी सेवा ॥ ४ ॥

धर्मरुचि, मंत्रीकी प्रभुके चरणोंमें प्रीति थी, और वह राजाके हितके लिये नीति सिखाताथा ॥ ३ ॥ और गुरु, देवता, संत, पितर और ब्राह्मण इन सबकी सदा सेवा करता था ॥ ४ ॥

भूपधर्म जे वेद बखाने ❀ सकल करै सादर सुख माने ॥ ५ ॥
दिनप्रति देइ बिबिध बिधि दाना ❀ सुनै शास्त्रवर वेद पुराना ॥ ६ ॥

वेदमें जो राजाके धर्म कहे हैं उनको आदरसहित सुखपूर्वक करता था ॥ ५ ॥ नित्य २ नाना प्रकारकी रीतिसे दान देता और सुन्दर वेदशास्त्र और पुराण सुनता ॥ ६ ॥

नाना वापी कूप तड़ागा ❀ सुमनबाटिका सुंदर बागा ॥ ७ ॥
विप्रभवन सुरभवन सुहाये ❀ सब तीरथन बिचित्र बनाये ॥ ८ ॥

अनेक बावड़ियां, कूए, तालाब, फूलोंकी बगीची और सुन्दर बाग बनवाये ॥७॥ ब्राह्मणोंके घर और देवताओंके सुन्दर मंदिर सब तीर्थोंमें तरह २ के बनवाये ॥ ८ ॥

दो०-जहँलगि कहैं पुरानश्रुति, एक एक सब याग ॥
वार सहस्र सहस्र नृप, किए सहितअनुराग ॥ १६१ ॥

जहांतक वेदपुराणमें एक २ यज्ञ लिखा है राजाने उसे प्रीतिसहित हजार २ बार किये ॥ १६१ ॥

चौ०-हृदय न कछु फलअनुसंधाना ❀ भूप विवेकी परम सुजाना ॥ १ ॥
करै जो धर्म कर्म मन बानी ❀ वासुदेवअर्पित नृप ज्ञानी ॥ २ ॥

हृदयमें कुछ उनके फलकी इच्छा नहीं करी क्योंकि राजा बड़ा चतुर और ज्ञानी था ॥ १ ॥ जो कुछ धर्म मन वाणी और कर्मसे करता उनको वासुदेवके अर्पन करता ॥ २ ॥

चढ़ि वरवाजि वार एक राजा ❀ मृगया कर सब साजि समाजा ॥ ३ ॥
विंध्याचल गँभीर वन गयेऊ ❀ मृग पुनीत बहु मारत भयेऊ ॥ ४ ॥

एकवार राजा सुन्दर घोड़ेपर चढ़कर और आखेट कहिये शिकारका सब समाज सजाकर ॥ ३ ॥ विंध्याचलके गहरे वनमें गया और बहुतसे पवित्र मृगोंको मारा ॥ ४ ॥

फिरत बिपिन नृप दीख बराहू ❀ जनु बन दुरेउ शशिहिं ग्रसि राहू ॥ ५ ॥
बड़बिधु नहिं समात मुखमाहीं ❀ मनहुँ क्रोधवश उगिलत नाहीं ॥ ६ ॥

फिर राजाने उस बनमें फिरते हुए एक शूकर देखा. मानों बनमें छुपेहुए चंद्रमाको ग्रसनेको राहु आया होय ॥ ५ ॥ और चंद्रमा वड़ा होनेसे मुखमें नहीं समासकता और वह क्रोधवश उसे उगलता नहो ॥ ६ ॥

कोल कराल दशन छवि गाई ❀ तनु विशाल पीवर अधिकाई ॥ ७ ॥
घुरघुरात हय आरव पाये ❀ चकित विलोकत कान उठाये ॥ ८ ॥

उस शूकरके वड़े २ दांत अति शोभायमान थे और उसकी ऊंची देहकी बड़ी मुटाई थी ॥७॥ घोड़ेकी टापोंका आहट पाय अपना घुरघुर शब्द करता था और कान उठाय २ चकित होकर देखता था ॥८॥

दो०-नील महीधरशिखरसम, देखि बिशाल बराह ॥ ❀
चपरि चलेउ हय सुटिक नृप, हाँकि न होइ निबाह ॥ १६२ ॥❀

नील पर्वतके शिखरके समान बड़ा सूकर देखकर राजा हठ करके घोड़ेको चाबुक मार चला. क्यौंकि बिना हाँके निवाह न था अर्थात् वहां नहीं पहुंच सक्ता था ॥ १६२ ॥

चौ०-आवत देखि अधिक रव बाजी ❀ चलेउ बराह मरुतगति भाजी ॥ १ ॥
तुरत कीन्ह नृप शरसंधाना ❀ महि मिलि गयेउ बिलोकत बाना ॥ २ ॥

घोड़ेका अधिक शब्द आता देख वाराह हवाकी भांति भागा ॥ १ ॥ राजाने तुरंत वाण चढ़ाया और वह वाण देख पृथ्वीमें चिपटगया ॥ २ ॥

तकि तकि तीर महीश चलावा ❀ कर छल सुअर शरीर बचावा ॥ ३ ॥
प्रगट दुरत जाई मृग भागा ❀ रिसबस भूप चलेउ सँग लागा ॥ ४ ॥

राजानें तक २ कर तीर चलाये और शूकरने छल कर २ के अपनी देह वचाई ॥ ३ ॥ कभी छिपै कभी दीखै, इस प्रकार मृग भागा और राजा क्रोधवश हो उसके संग लगाहुआ चला गया ॥ ४ ॥

गयेउ दूरि घन गहन वराहू ❀ जहँ नाहीं गजबाजिनिबाहू ॥ ५ ॥
अति अकेल बन विपुल कलेशू ❀ तदपि न मृगमग तजै नरेशू ॥ ६ ॥

फिर शूकर बड़े भारी घने जंगलमें पहुँचा. जहां हाथी घोड़ेका निवाह न होय ॥ ५ ॥ राजा अकेला था और वनमें वड़े २ दुख थे. तौभी राजाने उस वाराहका पीछा न छोड़ा ॥ ६ ॥

कोलि बिलोकि भूप बड़धीरा ❀ भागि पैठि गिरिगुहा गँभीरा ॥ ७ ॥
अगम देखि नृप अति पछिताई ❀ फिरेउ महाबन परेउ भुलाई ॥ ८ ॥

और राजाको बड़ा धीरजवाला देख शूकर भागकर वड़ी लंबी पर्वतकी गुफामें घुस गया ॥ ७ ॥ उसे अगम देख राजा मनमें वड़ा पछताया और लौटा तौ उस बड़े जंगलमें (रस्ता) भूल गया ॥ ८ ॥

दो०-खेदखिन्न क्षुधित तृषित, राजा वाजिसमेत ॥ ❀
खोजत व्याकुल सरित सर, जलबिनु भयेउ अचेत ॥ १६३ ॥ ❀

राजा थकावट, प्यास और भूखके कारन घोड़ेसमेत घबराकर नदी वा तालाव ढूँढ़ने लगा और बिना जलके अचेत हो गया ॥ १६३ ॥

चौ०-फिरत बिपिन आश्रम एक देषा ❀ तहँ वस नृपति कपटमुनिवेषा ॥ १ ॥
जासु देश नृप लीन्ह छुड़ाई ❀ समरसेन तजि गयेउ पराई ॥ २ ॥

वनमें फिरते २ एक आश्रम देखा. जहां एक राजा कपटसे मुनिका भेष बनाये रहता था ॥ १ ॥ जिसका देश इस राजाने छीन लिया था और वह राजा युद्धमें सेनाको छोड़ भाग गया था ॥ २ ॥

समय प्रतापभानुकर जानी ❀ आपन अति असमय अनुमानी ॥ ३ ॥
गयेउ न गृह मन बहुत गलानी ❀ मिला न राजहिं नृप अभिमानी ॥ ४ ॥

उसने प्रतापभानुका अच्छा समय जान और अपना बड़ा बुरा समय अनुमान ॥ ३ ॥ अपने घर न गया क्योंकि मनमें बड़ी ग्लानि हुई और न वह अभिमानी राजा (प्रतापभानु) से मिला ॥ ४ ॥

रिसउर मारि रंक जिमि राजा ❀ विपिन बसै तापसके साजा ॥ ५ ॥
तासु समीप गमन नृप कीन्हा ❀ यह प्रतापरवि तेहि तब चीन्हा ॥ ६ ॥

क्रोधको हृदयमें मार दरिद्रीकी भांति वह राजा तपस्वीका भेष बनाय वनमें रहता था ॥ ५ ॥ उसके पास प्रतापभानु गया और उसने पहिचान लिया कि यह प्रतापभानु है ॥ ६ ॥

राज तृषित नहिं सो पहिचाना ❀ देखि सुवेष महामुनि जाना ॥ ७ ॥
उतर तुरँगतें कीन्ह प्रणामा ❀ परम चतुर न कहेउ निजनामा ॥ ८ ॥

और यह राजा प्यासा था इसलिये इसने उसे नहीं पहिचाना और सुन्दर भेस देख उसे बड़ा मुनीश्वर जाना ॥ ७ ॥ और घोड़ेसे उतर प्रणाम किया पर वह बड़ा चतुर था उसने अपना नाम न बताया ॥ ८ ॥

दो०-भूपति तृषित विलोकि तेइ, सरवर दीन्ह दिखाइ ॥
मज्जन पान समेत हय, कीन्ह नृपति हरखाइ ॥ १६४ ॥

उसने राजाको प्यासा देख तालाब दिखा दिया. वहां राजाने प्रसन्न हो स्नान किया और घोड़ेसमेत पानी पिया ॥ १६५ ॥

चौ०-गइ श्रम सकल सुखी नृप भयऊ ❀ निज आश्रम तापस लइ गयऊ ॥ १ ॥
आसन दीन्ह अस्त रवि जानी ❀ पुनि तापस बोले मृदुबानी ॥ २ ॥

जब उसका सब श्रम दूर होगया और राजा सुखी हुआ, तब तपस्वी राजाको अपने आश्रममें लेगया ॥ १ ॥ और आसन दिया और सूर्यास्त जान तपस्वी, कोमल बाणीसे बोला ॥ २ ॥

को तुम कस बन फिरहु अकेले ❀ सुंदर युवा जीव पर हेले ॥ ३ ॥
चक्रवर्तिके लक्षण तोरे ❀ देखत दया लागि अति मोरे ॥ ४ ॥

तुम कौन हो और वनमें अकेले कैसे फिरते हो, सुन्दर युवावस्था पाकर प्राणोंपर क्यौं खेलतेहो अर्थात् जीवको क्यौं दुख देते हो ॥३॥ तुमारे चक्रवर्तीके चिन्ह देखकर मुझे बड़ी दया लगती है ॥४॥

नामप्रतापभानु अवनीशा ❀ तासु सचिव मैं सुनहु मुनीशा ॥ ५ ॥
फिरत अहेरहिं परेउ भुलाई ❀ बड़े भाग्य देखेउ पद आई ॥ ६ ॥

तब उसने कहा हे मुनीश! सुनों. मैं राजा प्रतापभानुका मंत्री हूं ॥ ५ ॥ मैं आखेट करते २ भूलगया, अब मेरे बड़े भाग्य हैं जो तुम्हारे चरणका दर्शन पाया ॥ ६ ॥

हम कहँ दुर्लभ दरश तुम्हारा ❀ जानत हौं कछु भल होनहारा ॥ ७ ॥
कह मुनि तात भयेउ अँधियारा ❀ योजन सत्तर नगर तुम्हारा ॥ ८ ॥

नहीं तौ हमको तुम्हारा दर्शन दुर्लभ था. अब मैं जानता हूं कि मेरा कुछ भला होनेको है ॥ ७ ॥ मुनिने कहा हे प्रिय! अब अँधियारा होगया और तुम्हारा नगर यहांसे सत्तर योजन है ॥ ८ ॥

दो०-निशा घोर गंभीर वन, पंथ न सूझ सुजान ॥
बसहु आजु अस जानि तुम, जाएहु होत बिहान ॥ १६५ ॥

हे चतुर ! डरवानी रात है अ॑· यह सुन राजा फि· दीखता ऐसा जान तुम आज वास करो, सवेरा होतेही चले जाना ॥ने नामका अर्थ पूरा २ क

तुलसी जसि भवितव्यतं, तव उतप्ले हाय ॥ ❀
आपु न आवै ताहि पै, ताह न हाँ लै जाय ॥ १६६ ॥ ❀

तुलसीदासजी कहतेहैं कि जैसी होनहार होती है वैसाही बानक बनजाता है; आप चाहे उसके पास न आवे पर उसे वहां लेजाती है ॥ १६६ ॥

चौ०-भलेहि नाथ आयसु धरि शीशा ❀ बांधि तुरग तरु बैठ महीशा ॥ १ ॥
नृप बहु भाँति प्रशंसेउ ताही ❀ चरन बंदि निजभाग्य सराही ॥ २ ॥

स्वामीकी आज्ञा शिरधर कहा अच्छा. (मैं ऐसाही करूंगा यह कह) घोड़ेको वृक्षसे बाँध राजा बैठ गया ॥ १ ॥ राजाने उसकी बड़ी बड़ाई करी और उसके चरणोंकी वंदना कर अपने भाग्यकी सराहना की ॥ २ ॥

पुनि बोलेउ मृदुगिरा सुहाई ❀ जानि पिता प्रभु करौं ढिठाई ॥ ३ ॥
मोहि मुनीश सुत सेवक जानी ❀ नाथ नाम निज कहहु बखानी ॥ ४ ॥

पुनि राजा कोमल और सुन्दर बचन बोला कि हे स्वामी ! मैं आपको पिता जान ढिठाई करता हूं ॥ ३ ॥ हे मुनीश ! मुझे अपना पुत्र वा सेवक जानकर हे नाथ ! अपना नाम बताइये ॥ ४ ॥

तेहि न जान नृप नृपहिं सो जाना ❀ भूप सुहृदय सो कपट सयाना ॥ ५ ॥
वैरी पुनि क्षत्री पुनि राजा ❀ छल बल कीन्ह चहै निज काजा ॥ ६ ॥

प्रतापभानुने उसे न जाना और वह तौ राजाको जानही गया. क्यौंकि राजाका हृदय निर्मल था और वह कपटमें चतुर था ॥ ५ ॥ एक तौ वह राजाका शत्रु और जातिका क्षत्री, दूसरे फिर राजासे छल बल कर अपना कार्य किया चाहता है ॥ ६ ॥

समुझि राज सुख दुखित अराती ❀ अवा अनलइव सुलगै छाती ॥ ७ ॥
सरल वचन नृपके सुनि काना ❀ बैर सँभार हृदय हरषाना ॥ ८ ॥

वह शत्रु अपने राजका सुख जीमें जान बड़ा दुखी था और उसकी छाती अवेकी आँचके समान सुलगने लगी ॥ ७ ॥ राजाके सीधे बचन कानोंसे सुन और अपने वैरको याद कर जीमें प्रसन्न हुआ ॥ ८ ॥

दो०-कपट बोरि बानी मृदुल, बोलेउ युक्तिसमेत ॥ ❀
नाम हमार भिखारि अब, निर्धन रहित निकेत ॥ १६७ ॥ ❀

कपटमें बोरकर बड़ी जुगतसे कोमल वाणी बोला कि अब हमारा नाम भिखारी है, न हमारे घर है, न धन है ॥ १६७ ॥

चौ०-कह नृप जे विज्ञाननिधाना ❀ तुम सारिखे गलित अभिमाना ॥ १ ॥
सदा अपनपौ रहहिं दुराये ❀ सबविधि कुशल कुवेष बनाये ॥ २ ॥

राजा बोला तुम बड़े ज्ञानवान् हो; तुमसरीखे अभिमानरहित ॥ १ ॥ सदा अपनेको छिपाये और सब प्रकार चतुर होनेपरभी बुरा भेष किये रहते हैं ॥ २ ॥

तेहि तें कहहिं संत श्रुतिटेरे ❀ परम अकिंचन प्रिय हरिकेरे ॥ ३ ॥
तुमसम अधन भिखारि अगेहा ❀ होत बिरंचि शिवहिं संदेहा ॥ ४ ॥

इसीसे संत और वेदभी पुकारकर कहते हैं कि जो अत्यन्त निर्धन वा इच्छारहित हैं वे भगवान

पं० इन्द्र विद्या वाचस्पति प्रदत्त संग्रह

के प्यारे हैं ॥ ३ ॥ तुमारे समान (जनों हां एक राजा कपटसे मु और भिखारी देखकर शिव और ब्रह्माकोभी संदेह होता है (कि कहीं ह था और वह राजा युद्धमें ान न छीन लें) ॥ ४ ॥

योसि सोसि तव चरण ·ज्ञानी ❀ अ र कृप ा करिय अब स्वामी ॥ ५ ॥
सहजप्रीति भूपतिकी दे·नी ❀ ापविषैं वि श्वास विशेषी ॥ ६ ॥

तुम तौ तुमही हो अर्थात् तुमारे समान दूसरा नहीं (इस लिये) तुम्हारे चरणोंको नमस्कार है. हे स्वामी ! अब मेरे ऊपर कृपा करो ॥ ५ ॥ राजाकी साधा रण प्रीति देख और अपने ऊपर अधिक भरोसा जान कर ॥ ६ ॥

सब प्रकार राजहिं अपनाई ❀ बोलेउ अधिक सनेह जनाई ॥ ७ ॥
सुनु सतिभाव कहौं महिपाला ❀ इहाँ बसत बीते बहु काला ॥ ८ ॥

राजाको सब प्रकार अपना बनाया और ऊपरसे अधिक प्रीति दिखाकर बोला ॥ ७ ॥ सुनों राजा ! मैं सत्यभावसे कहता हूं कि यहां रहते मुझे बहुत समय होगया ॥ ८ ॥

दो०–अबलगि मोहि न मिलेउ कोउ, मैं न जनायेउ काहु ॥ ❀
लोकमान्यता अनलसम, कर तप कानन दाहु ॥ १६८ ॥ ❀

अबतक मुझे कोई नहीं मिला. इससे मैंने अपनेको नहीं जताया. क्यौंकि संसारकी प्रतिष्ठा अग्निसमान है यह तपरूपी वनको भस्म कर देती है ॥ १६८ ॥

सो०–तुलसी देखि सुबेष, भूलहिं मूढ़ न चतुर नर ॥ ❀
सुंदर केकिहिं पेखि, बचन सुधासम अशन अहि ॥ २४ ॥ ❀

तुलसीदासजी कहते हैं कि सुन्दरभेष देखकर केवल मूर्ख नर ही नहीं किन्तु चतुरभी भूल जाते हैं. सुन्दर मोरको देखो जिसकी वाणी अमृतसमान है, परंतु सर्पकोभी निगल जाता है. सारांश यह है कि मनुष्यकी मयूरके समान वाणी सुन उसका सहसा विश्वास न करना चाहिये. वे कपटी पण्डितोंकोभी धोखा दे देते हैं फिर मूर्ख किस गिनतीमें हैं ॥ २४ ॥

चौ०–तातें गुप्त रहौं जगमाहीं ❀ हरि तजि किमपि प्रयोजन नाहीं ॥ १ ॥
प्रभु जानत सब बिनहिं जनाये ❀ कहहु कवन सिधि लोक रिझाये ॥ २ ॥

इस लिये मैं संसारमें छिपा हुआ रहता हूं. मुझे सिवाय भगवान्के औरसे कुछ प्रयोजन नहीं ॥१॥ प्रभु तौ विना जतायेही सब जानते हैं कहो संसारको रिझानेसे क्या फलसिद्धि होती है ॥ २ ॥

तुम शुचि सुमति परम प्रिय मोरे ❀ प्रीति प्रतीति मोहिपर तोरे ॥ ३ ॥
अब जो तात दुरावौं तोहीं ❀ दारुन दोष बढ़े अति मोही ॥ ४ ॥

तुम पवित्र, सुन्दर बुद्धिवान् मेरे अधिक प्यारे हो और तुम्हारी प्रीति और विश्वास मुझपर बहुत है ॥ ३ ॥ हे तात ! अब जो मैं तुमसे छिपाव करूं तौ मुझे बड़ा दोष लगे ॥ ४ ॥

जिमि जिमि तापस कहै उदासा ❀ तिमि तिमि नृपहि उपज विश्वासा ॥ ५ ॥
देखा स्ववश कर्ममनवानी ❀ तब बोलेउ तापस बकध्यानी ॥ ६ ॥

ज्यों ज्यों तपस्वी उदासीनताके वचन कहै, त्यों त्यों राजाको विश्वास होता जाय ॥ ५ ॥ जब उसने देखा कि राजा मन वाणी और कर्मसे मेरे बसमें है तब बगला भगत तपस्वी बोला ॥ ६ ॥

नाम हमार एकतनु भाई ❀ सुनि नृप बोलेउ पुनि शिर नाई ॥ ७ ॥
कहहु नाम कर अर्थ बखानी ❀ मोहि सेवक अति आपन जानी ॥ ८ ॥

हे भाई ! मेरा नाम एकतन है. यह सुन राजा फिर दंडवत कर बोला ॥ ७ ॥ हे महाराज ! मुझे अपना सच्चा सेवक जान अपने नामका अर्थ पूरा २ कहो ॥ ८ ॥

दो०–आदि सृष्टि उपजी जबहिं, तब उतपति भइ मोरि ॥ ❀
नाम एकतनु हेतु तेहि, देह न धरी बहोरि ॥ १६९ ॥ ❀

(वह बोला) जब पहिलेही सृष्टि उत्पन्न हुई तब मेरा जन्म हुआ. इसीसे मेरा नाम एकतन है. मैंने फिर दूसरा शरीर धारण नहीं किया ॥ १६९ ॥

चौ०–जनि आश्चर्य करहु मनमाहीं ❀ सुत तपतें दुर्लभ कछु नाहीं ॥ १ ॥
तपबलते जग सृजै विधाता ❀ तपबल विष्णु भए परित्राता ॥ २ ॥

हे पुत्र ! यह सुन मनमें आश्चर्य मत करो. तप करनेसे कुछ दुर्लभ नहीं है ॥ १ ॥ क्योंकि ब्रह्मा तपोबलसे सृष्टिको रचते और तपसेही विष्णु सबको पालते हैं ॥ २ ॥

तपबल शंभु करहिं संहारा ❀ तपतें अगम न कछु संसारा ॥ ३ ॥
तपबल शेष धरहि महिभारा ❀ तप अधार सब सृष्टि अपारा ॥ ४ ॥

और शिवजी तपोबलसे संहार करते हैं. इसलिये तपसे संसारमें कुछ कठिन नहीं ॥३॥ तपके बलसेही शेषजी पृथ्वीका भार धरते हैं और जितनी अपार सृष्टि है यह सब तपके आधारसे है ॥ ४ ॥

भयउ नृपहि सुनि अति अनुरागा ❀ कथा पुरातन कहै सो लागा ॥ ५ ॥
कर्म धर्म इतिहास अनेका ❀ करै निरूपण विरति विवेका ॥ ६ ॥

यह सुन राजाको बहुत प्रेम हुआ और वह तपसी पुरानी कथा वर्णन करने लगा ॥ ५ ॥ अनेक कर्म धर्म इतिहास ज्ञान और वैराग्य वर्णन किये ॥ ६ ॥

उद्भव पालन प्रलय कहानी ❀ कहेसि अमित आश्चर्य बखानी ॥ ७ ॥
सुनि महीश तापसबश भयऊ ❀ आपन नाम कहन तब लयऊ ॥ ८ ॥
कह तापस नृप जानों तोही ❀ कीन्हेउ कपट लागु भल मोही ॥ ९ ॥

सृष्टिकी रचना, पालन, और प्रलयकी कहानी कही और बहुतसी अचरजकी बातें वर्णन करीं ॥ ७ ॥ यह बात सुन राजा तपस्वीके बस हो अपना नाम बताने लगा ॥ ८ ॥ तपस्वी बोला मैं तुम्हें जानता था, पर तुमने जो छल किया सो मुझे अच्छा लगा ॥ ९ ॥

सो०–सुनु महीश अस नीत, जहँ तहँ नाम न कहहिं नृप ॥ ❀
मोहि तोहिपर अति प्रीति, परम चतुरता निरखि तव ॥ २५ ॥ ❀

हे राजा ! सुनों, नीतिमें ऐसा कहा है कि राजा अपना नाम जहां तहां न बतावै. तुमारी चतुरता देख तुम्हारे ऊपर मेरी बड़ी प्रीति है ॥ २५ ॥

चौ०–नाम तुम्हार प्रतापदिनेशा ❀ सत्यकेतु तब पिता नरेशा ॥ १ ॥
गुरुप्रसाद सब जानिय राजा ❀ कहिय न आपन जान अकाजा ॥ २ ॥

तुम्हारा नाम प्रतापभानु और राजासत्यकेतु तुम्हारे पिताका नाम था ॥ १ ॥ हे राजा ! गुरुकी कृपासे सब जानताहूं, पर अपना काम बिगड़ता जान किसीसे नहीं कहता ॥ २ ॥

देखि तात तब सहजसुधाई ❀ प्रीति प्रतीति नीति निपुनाई ॥ ३ ॥
उपजि परी ममता मन मोरे ❀ कहौं कथा निज बूझे तोरे ॥ ४ ॥

हे प्यारे ! तुमारा साधारन ही सीधापन देख और तुमको नीतिमें निपुण जान तुमारी प्रीतिकी प्रतीत होगई ॥ ३ ॥ और मेरे मनमें ममता उत्पन्न हुई और तुमारे बूझनेसे मैं अपनी कथाभी कहता हूं ॥४॥

अब प्रसन्न मैं संशय नाहीं ❀ माँगु जु भूप भाव मनमाहीं ॥ ५ ॥
सुनि सुवचन भूपति हरषाना ❀ गहि पद विनय कीन्ह विधिनाना ॥ ६ ॥

और अब मैं तुमसे निःसंदेह प्रसन्न हूं. हे राजा ! जो तुझे मनमें अच्छा लगे वर मांग ले ॥५॥ ऐसे सुन्दर वचन सुन राजा प्रसन्न हुआ और पावों पड़ भांति २ की विनती करी ॥ ६ ॥

कृपासिंधु मुनि दर्शन तोरे ❀ चारि पदारथ करतल मोरे ॥ ७ ॥
प्रभुहिं तथापि प्रसन्न विलोकी ❀ माँगि अगमवर होउँ अशोकी ॥ ८ ॥

हे मुनि ! आप तौ कृपाके समुद्र हो. आपके दर्शनसेही चार पदार्थ अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष मेरी हथेलीपर हैं ॥ ७ ॥ तौभी मैं आपको प्रसन्न जान कर बड़ाभारी वर मांग शोकरहित होजाऊं ॥८॥

दो०-जरामरनदुखरहित तनु, समर न जीते कोउ ॥ ❀
एकछत्र रिपुहीन महि, राज कल्पशत होउ ॥ १७० ॥ ❀

मेरा शरीर बुढ़ापे और मरणके दुखरहित अर्थात् अमर होजाय; युद्धमें मुझसे कोईभी न जीते और पृथ्वीपर सौ कल्पतक शत्रुहीन हो एकछत्र राज करूं ॥ १७० ॥

चौ०-कह तापस नृप ऐसेंइ होऊ ❀ कारण एक कठिन सुनु सोऊ ॥ १ ॥
कालहु तव पद नाइहि शीशा ❀ एक विप्रकुल छाँडि महीशा ॥ २ ॥

तपस्वी कहने लगे कि हे राजा ! ऐसाही होय; पर इसमें एक कठिन कारण है सो सुन ॥ १ ॥ हे राजा ! एक ब्राह्मणको छोड़ काल भी तेरे चरणोंमे शिर नवावेगा. अर्थात् ब्राह्मण तेरे वश नहीं होंगे ॥ २ ॥

तपबल बिप्र सदा बरियारा ❀ तिनके कोप न कोउ रखवारा ॥ ३ ॥
जौं विप्रन वश करहु नरेशा ❀ तौ तब वश विधिविष्णुमहेशा ॥ ४ ॥

क्योंकि ब्राह्मण तपके बलसे सदा बलवान् हैं. जिनके कोपसे कोईभी नहीं बचा सक्ता ॥ ३ ॥ हे राजा ! जो तुम ब्राह्मणोंको वश कर लो तौ ब्रह्मा, विष्णु, महेश सब बशमें हो जाँय ॥ ४ ॥

चल न ब्रह्मकुलसें बरिआई ❀ सत्य कहौं दोउ भुजा उठाई ॥ ५ ॥
विप्रशापबिनु सुनु महिपाला ❀ तोर नाश नहिं कवनिहुँ काला ॥ ६ ॥

ब्राह्मणके कुलसे किसीका बल नहीं चलता यह बात मैं दोनों भुजा उठाके सत्य २ कहता हूँ ॥ ५ ॥ सुनों राजा ! विना ब्राह्मणोंके शापके तेरा नाश किसी कालमें कभी नहीं होगा ॥ ६ ॥

हरषेउ राउ वचन सुनि तासू ❀ नाथ न होइ मोर अब नासू ॥ ७ ॥
तब प्रसाद प्रभु कृपानिधाना ❀ मोकहँ सर्वकाल कल्याना ॥ ८ ॥

उसका वचन सुन राजा प्रसन्न हुआ और कहने लगा कि हे नाथ ! (ऐसा करो कि) जिससे मेरा अब नाश न होय ॥ ७ ॥ हे प्रभो ! तुम दयानिधान हो तुम्हारे प्रसादसे सब कालमें मेरा भला है ॥ ८ ॥

दो०-एवमस्तु कहि कपटमुनि, बोला कुटिल बहोरि ॥ ❀
मिलव हमार भुवाल निज, कहहु तौ मोर न खोरि ॥ १७१ ॥ ❀

कपटमुनि "एवमस्तु" अर्थात् ऐसेही होय यह कहकर फिर टेढ़ाही बोला कि हे राजा ! अपना और मेरा मिलना (किसीसे न कहना) नहीं तौ मेरा दोष नहीं (जो तेरा काम बिगड़ जाय)-॥१७१॥

चौ०–तातें मैं तोहि बरजौं राजा ❀ कहे कथा तव परम अकाजा ॥ १ ॥
छठे श्रवण यह परत कहानी ❀ नाश तुम्हार सत्य मम बानी ॥ २ ॥

हे राजा ! इसलिये तुझे मने करता हूं कि यह कथा कहनेमें तेरा काम बहुत बिगड़ जायगा ॥ १ ॥ छठे कानमें यह बात पड़तेही तेरा नाश होजायगा यह मेरी सत्य सत्य वाणी है ॥ २ ॥

यह प्रगटे अथवा द्विजशापा ❀ नाश तोर सुनु भानुप्रतापा ॥ ३ ॥
आन उपाय निधन तब नाहीं ❀ जो हरिहर कोपहिं मनमाहीं ॥ ४ ॥

और हे प्रतापभानु ! सुन इसके प्रगट होने अथवा ब्राह्मणके शापसे तेरा नाश है ॥ ३ ॥ और जो विष्णु और शिवभी मनमें कोप करैं तोभी दूसरे उपायसे तेरा मरना नहीं हो सकता ॥ ४ ॥

सत्य नाथ पद गहि नृप भाषा ❀ द्विज गुरु कोप कहहु को राषा ॥ ५ ॥
राखै गुरु जो कोप विधाता ❀ गुरुविरोध नहिं कोउ जग त्राता ॥ ६ ॥

राजाने चरण छूकर कहा कि हे नाथ ! यह बात सत्य है कि गुरु और ब्राह्मण कोप करें तौ कहो कौन रक्षा कर सकता है ?॥ ५ ॥ जो विधाता कोप करै तो गुरु रक्षा कर सकता है, और गुरुके विरोधसे संसारमें कोई भी नहीं बचा सकता ॥ ७ ॥

जौं न चलव हम कहे तुम्हारे ❀ होइ नाश नहिं सोच हमारे ॥ ७ ॥
एकहि डर डरपत मन मोरा ❀ प्रभु महिदेवशाप अति घोरा ॥ ८ ॥

जो हम तुम्हारे कहेपर न चलेंगे तौ अवश्य हमारा नाश होगा और इसमें हमें कुछ सोच न होगा ॥७॥ हे प्रभु ! एकही डरसे मेरा मन डरता है कि ब्राह्मणोंका शाप बड़ा कठिन होता है ॥८॥

दो०–होहिं बिप्रवश कवनविधि, कहहु कृपा करि सोइ ॥ ❀
तुम तजि दीनदयाल निज, हितू न देखौं कोइ ॥ १७२ ॥ ❀

ब्राह्मण कैसे वशमें होय मुझसे कृपाकरके कहो· हे दीनदयाल ! तुम्हें छोड़ और किसीको मैं अपना हितू नहीं देखता ॥ १७२ ॥

चौ०–सुनु नृप विविध जतन जगमाहीं ❀ कष्टसाध्य पुनि होहिं कि नाहीं ॥ १ ॥
अहै एक अतिसुगम उपाई ❀ तहाँ परंतु एक कठिनाई ॥ २ ॥

कपटी बोला, सुनों राजा ! संसारमें अनेक प्रकारके उपाय हैं और वे कष्टसे होसकते हैं, और फिर भी हों वा नहों (सोभी संदेह है) ॥ १ ॥ हे राजा ! एक बहुत सीधा उपाय है परंतु उसमें एक कठिनता है ॥ २ ॥

मम आधीन युक्ति नृप सोई ❀ मोर जाव तब नगर न होई ॥ ३ ॥
आजु लगे अरु जबते भयऊँ ❀ काहूके गृह ग्राम न गयऊँ ॥ ४ ॥

वह जुगत मेरे आधीन है परंतु मेरा जाना तेरे नगरमें हो नहीं सकता है ॥ ३ ॥ आजतक जबसे मेरा जन्म हुआ है, किसीके घर वा गांवमें नहीं गया हूं ॥ ४ ॥

जो न जाव तब होइ अकाजू ❀ बना आय असमंजस आजू ॥ ५ ॥
सुनि महीप बोले मृदु बानी ❀ नाथ निगम अस नीति बखानी ॥ ६ ॥

और जो न जाऊंगा तौ तेरा काम बिगड़ जायगा, ऐसी दुविधा आज आन पड़ी है ॥ ५ ॥ इतनी सुन, राजा कोमल बचन बोला कि हे नाथ ! शास्त्रमें ऐसी नीति कही है कि· ॥ ६ ॥

बड़े सनेह लघुनपर करहीं ❀ गिरि निज सिरन सदा तृन धरहीं ॥ ७ ॥
जलधि अगाध मौलि बहु फेनू ❀ संतत धरनि धरत सिर रेनू ॥ ८ ॥

वड़े छोटोंपर प्यार करते हैं, जैसे पर्वत अपने शिरपर सदा तृणको धरते हैं ॥७॥ और समुद्र अथाह है पर उसके शिरपर वहुतसे झाग होते हैं, और ऐसेही पृथ्वीभी सदा शिरपर धूलिको रखती है ॥ ८ ॥

दो०-अस कहि गहे नरेस पद, स्वामी होहु कृपालु ॥
मोहिलागि दुख सहिय प्रभु, सज्जन दीनदयालु ॥ १७३ ॥

ऐसे कह राजाने उसके पांव पकड़े और कहा हे स्वामी ! कृपालु होओ. और हे प्रभु ! मेरे लिये दुख सहो. क्योंकि आप सज्जन और दीनदयालु हो ॥ १७३ ॥

चौ०-जानि नृपहिं आपन आधीना ❀ बोला तापस कपट प्रबीना ॥ १ ॥
सत्य कहौं भूपति सुनु तोही ❀ जगमहँ नहिं दुर्लभ कछु मोही ॥ २ ॥

राजाको अपने वश जान कपटमें प्रवीन तपस्वी बोला ॥ १ ॥ हे राजा ! मैं तुझसे सत्य २ कहताहूं सो सुन कि संसारमें मुझे कुछभी दुर्लभ नहीं ॥ २ ॥

अवश काज मैं करिहौं तोरा ❀ मन क्रम बचन भक्त तें मोरा ॥ ३ ॥
योगयुक्ति तप मंत्रप्रभाऊ ❀ फलै तबहिं जब करिय दुराऊ ॥ ४ ॥

मैं तेरा काम अवश्य करूंगा. क्यौंकि तू मन वाणी और कर्मसे मेरा भक्त है ॥ ३ ॥ योगकी युक्ति, तप और मंत्रका प्रभाव तब फल करता है जब इसे छिपाकर करै ॥ ४ ॥

जौ नरेश मैं करौं रसोई ❀ तुम परसहु मोहि जाल न कोई ॥ ५ ॥
अन्न सो जोइ जोइ भोजन करई ❀ सोइ सोइ तब आयसु अनुसरई ॥ ६ ॥

हे राजा ! जो मैं तौ रसोई करूं और तुम परोसो और मुझको कोई न जानें ॥५॥ उस अन्नको जो जो भोजन करेंगे वेही २ तेरी आज्ञामें चलेंगे ॥ ६ ॥

पुनि तिनके गृह जैंवे जोई ❀ तवबश होइ भूप सुनु सोई ॥ ७ ॥
जाइ उपाय रचहु नृप एहू ❀ संवतभरि संकल्प करेहू ॥ ८ ॥

पुनि उनके घर आकर जो कोई जीमेंगा हे राजा ! सुन, वहभी तेरे वशमें होजायगा ॥ ७ ॥ हे राजा ! जाकर यह करो और एक वर्षका यह संकल्प करो ॥ ८ ॥

दो०-नित नूतन द्विज सहसशत, वरेहु सहितपरिवार ॥
मैं तुम्हरे संकल्पलगि, दिनहिं करब जेवनार ॥ १७४ ॥

नित्य नये सौ हजार ब्राह्मण परिवारसहित न्योंतकर जिमाओ और मैं तुम्हारे संकल्पतक नित्य प्रति जेवनार किया करूंगा ॥ १७४ ॥

चौ०-एहि बिधि भूप कष्ट अति थोरे ❀ होइहिं सकल विप्र बस तोरे ॥ १ ॥
करहिं विप्र होम मख सेवा ❀ तेहि प्रसन्न सहजहि वश देवा ॥ २ ॥

इस भाँति थोड़ेसे कष्टमें हे राजा ! सब ब्राह्मण तेरे वशमें होजाँयगे ॥ १ ॥ ब्राह्मण यज्ञ होम और सेवा करते हैं. इसलिये उनसे सहजहीमें देवता प्रसन्न और उनके वशमें हैं ॥ २ ॥

और एक तोहि कहौं लखाऊ ❀ मैं यहि वेष न आउब काऊ ॥ ३ ॥
तुम्हरे उपरोहित कह राया ❀ हरि आनब मैं करि निजमाया ॥ ४ ॥

औरभी मैं एक बात तुझे जताताहूं, कि मैं इस भेषसे कभी नहीं आऊँगा ॥ ३ ॥ और हे राजा! मैं अपनी मायासे तुमारे पुरोहितको हरलाऊँगा ॥ ४ ॥

तपबल तेहि करि आपुसमाना ❀ रखिहौं इहाँ बरषपरमाना ॥ ५ ॥
मैं धरि तासुवेष सुनु राजा ❀ सबविधि तोर समारब काजा ॥ ६ ॥

तपोबलसे उसको अपने समान करके एक वर्षतक यहां रक्खूंगा ॥ ५ ॥ और हे राजा! सुन मैं उसका भेष धर सब प्रकारसे तेरे कामको सँवारूंगा ॥ ६ ॥

गइ निशि बहुत शयन अब कीजै ❀ मोहिं तोहि भूप भेट दिन तीजै ॥ ७ ॥
मैं तपबल तोहि तुरँगसमेता ❀ पहुँचैहों सोवतहि निकेता ॥ ८ ॥

अब बहुत रात्रि गई शयन करो. हे राजा! मेरा तेरा मिलाप तीसरे दिन होगा ॥ ७ ॥ मैं अपने तपोबलसे तुझे घोड़ेसमेत सोता हुआ घर पहुँचादूंगा ॥ ८ ॥

दो०–मैं आउब सोइ वेष धरि, पहिचानेउ तब मोहि ॥ ❀
जब एकांत बुलाइ सब, कथा सुनावौं तोहि ॥ १७५ ॥ ❀

मैं वहीं भेस धरकर आऊंगा. तुम मुझे पहिचान लेना, फिर मैं तुझे अलग बुलाकर सब कथा सुनाऊंगा ॥ १७५ ॥

चौ०–शयन कीन्ह नृप आयसु मानी ❀ आसन जाइ बैठि छलज्ञानी ॥ १ ॥
श्रमित भूप निद्रा अति आई ❀ सो किमि सोव सोच अधिकाई ॥ २ ॥

राजाने आज्ञा मान शयन किया और वह छलिया ज्ञानी आसनपर जाकर बैठगया ॥ १ ॥ राजा थका हुआ था उसे बहुतसी नींद आई; पर वह कैसे सोवै जिसे अधिक सोच होय ? ॥ २ ॥

कालकेतु निशिचर तहँ आवा ❀ जेहि सूकर होइ नृपहि भुलावा ॥ ३ ॥
परममित्र तापसनृप केरा ❀ जाने सो अति कपट घनेरा ॥ ४ ॥

इतनेमें कालकेतु नाम राक्षस वहाँ आया कि जिसने शूकर बनकर राजाको (जंगलमें) भुलाया था ॥ ३ ॥ और वह तपस्वीराजाका परम मित्र था और बहुतसी छलविद्या जानता था ॥ ४ ॥

तेहिके शत सुत अरु दस भाई ❀ खल अति अजय देवदुखदाई ॥ ५ ॥
प्रथमहिं भूप समर सब मारे ❀ विप्र संत सुर देखि दुखारे ॥ ६ ॥

जिसके सौ बेटे और दश भाई थे और वे बड़े दुष्ट कि जो किसीसे न हारैं और देवताओंको दुख देनेवाले थे ॥ ५ ॥ राजाने ब्राह्मण संतदेवताओंको दुखी देख पहिले उन सबको युद्धमें मारा था ॥६॥

तेहि खल पाछिल बयर सँभारा ❀ तापस नृप मिलि मंत्र विचारा ॥ ७ ॥
जेहि रिपुक्षय सोइ रचेसि उपाऊ ❀ भावीवश न जान कछु राऊ ॥ ८ ॥

तिस दुष्ट कालकेतुनेभी अपना पिछला वैर सँभाला और तपस्वी राजासे मिलकर सलाह करने लगा कि ॥ ७ ॥ जिससे शत्रुका नाश होय वह उपाय करो. और होनहारके वशमें पड़ राजाने कुछ नहीं जाना.

दो०–रिपु तेजसी अकेल अपि, लघु करि गनिय न ताहु ॥ ❀
अजहुँ देत दुख रविशशिहिं, शिरअवशेषित राहु ॥ १७६ ॥ ❀

तेजस्वी शत्रु अकेलाभी हो पर उसको छोटा नहीं गिनना चाहिये. जैसा राहुका शिरमात्र रह गया है, तौभी अबतक सूर्यचंद्रमाको दुख देता है ॥ १७६ ॥

चौ०–तापस नृप निजसखहिं निहारी ❀ हरषि मिलेउ उठि भयउ सुखारी ॥ १ ॥
मित्रहि कहि सब कथा सुनाई ❀ जातुधान बोला सुख पाई ॥ २ ॥

तपस्वी राजा अपने मित्रको देख प्रसन्न हो उठकर मिला और सुखी हुआ ॥ १ ॥ और अपने मित्रको सब कथा कहकर सुनाई फिर दैत्य प्रसन्न हो बोला ॥ २ ॥

अब साधेउ रिपु सुनहुँ नरेशा ❀ जो तुम कीन्ह मोर उपदेशा ॥ ३ ॥
परिहरि शोच रहहु तुम सोई ❀ बिनु औषधहि व्याधि बिधि खोई ॥ ४ ॥

हे राजा! सुनो. जो तुमने मेरा उपदेश माना तौ अपने शत्रुको वसमें करलिया ॥ ३ ॥ और अब तुम सोच छोड़ सो रहो. इस व्याधिको तौ विधाताने विनाही औषधके खोदीनी ॥ ४ ॥

कुलसमेत रिपुमूल बहाई ❀ चौथे दिवस मिलव मैं आई ॥ ५ ॥
तापसनृपहिं बहुत परतोषी ❀ चला महाकपटी अतिरोषी ॥ ६ ॥

कुटुंबसमेत शत्रुका जड़से नाश कर चौथे दिन मैं तुमसे आकर मिलूंगा ॥ ५ ॥ इस प्रकार वह बड़ा छली और क्रोधी तपस्वी राजाको संतोष देकर चला ॥ ६ ॥

भानुप्रतापहि बाजिसमेता ❀ पहुँचायेसि सोवतहि निकेता ॥ ७ ॥
नृपहिं नारिपहँ शयन कराई ❀ हयगृह बाँधेसि बाजि बनाई ॥ ८ ॥

और भानुप्रतापको घोड़ेसमेत, सोता हुआ उठाकर घर पहुंचा दिया ॥ ७ ॥ राजाको रानीके पास सुलाय घोड़ेको घुड़सालमें बांधा ॥ ८ ॥

दो०–राजाके उपुरोहितहिं, हरि लैगयउ बहोरि ॥ ❀
लै राखेसि गिरिखोहमहँ, माया करि मति भोरि ॥ १७७ ॥ ❀

फिर राजाके पुरोहितको हर लेगया और लेजाकर पर्वतकी कंदरामें रक्खा और अपनी मायासे उसकी मति भोली करदीनी ॥ १७७ ॥

चौ०–आपु बिरचि उपुरोहितरूपा ❀ परा जाय तेहि सेज अनूपा ॥ १ ॥
जागेउ नृप अनभयउ बिहाना ❀ देखि भवन अति अचरज माना ॥ २ ॥

और आप पुरोहितका रूप धरि उसकी सुन्दर सेजपर जाकर सोगया ॥ १ ॥ जब राजा सबेरे अंधेरेही जागा तो अपनेको घरमें देख जीमें बड़ा अचरज माना ॥ २ ॥

मुनिमहिमा मनमहँ अनुमानी ❀ उठे गवहिं जेहिं जान न रानी ॥ ३ ॥
कानन गयेउ बाजि चढ़ि तेही ❀ पुरनरनारि न जानेउ केही ॥ ४ ॥

अपने मनमें मुनिकी महिमा जानी और उठके बाहरको चला जिसमें रानी नजाने ॥ ३ ॥ उसी घोड़ेपर बैठ वनको गया और किसी नगरके स्त्रीपुरुषनेभी न जाना ॥ ४ ॥

गये यामयुग भूपति आवा ❀ घरघर उत्सव बाज बधावा ॥ ५ ॥
उपुरोहितहिं दीख जब राजा ❀ चकित बिलोकि सुमिरि सोइ काजा ॥ ६ ॥

दुपहरको राजा नगरमें आये यह सबने जाना और घर २ उत्सव होने लगे और बधाई वजने लगी ॥ ५ ॥ जब उपरोहितको राजाने देखा तब चकित हो देख उस कामकी याद आगई ॥ ६ ॥

युगसम नृपहिं गये दिन तीनी ❀ कपटी मुनि नृपमति हर लीनी ॥ ७ ॥
समय जानि उपुरोहित आवा ❀ नृपहि मतौ सब कहि समुझावा ॥ ८ ॥

तीन दिन राजाको युगसमान वीते क्योंकि उस कपटी मुनिने राजाकी मति हरलीनी थी ॥ ७ ॥ समय जानि उपरोहित आया और राजाको सब मता कहकर समझाया ॥ ८ ॥

दो०-नृप हर्षेउ पहिचान गुरु, भ्रमवस रहा न चेत ॥ ❀
वरे तुरत शतसहसवर, विप्रकुटुंबसमेत ॥ १७८ ॥ ❀

गुरुको पहिचान राजा प्रसन्न हुआ और भ्रमके वश उसे कुछ चेत न रहा. शीघ्रही कुटुंब समेत एकलक्ष अच्छे ब्राह्मणोंको नोता दिया ॥ १७८ ॥

चौ०-उपुरोहित जेवनार बनाई ❀ छरस चारिविधि जस श्रुति गाई ॥ १ ॥
मायामय ते कीन्ह रसोई ❀ व्यंजन बहु गनि सकै न कोई ॥ २ ॥

पुरोहितने षड्रसके[१] भोजनपदार्थ चार[२] प्रकारसे बनाये कि जैसी विधि शास्त्रमें कही है ॥ १ ॥ उसने अपनी मायासे ऐसी रसोई बनाई कि जिसके बहुतसे व्यंजनोंको कोई नहीं गिन सकता २

विविध मृगनकर आमिष राँधा ❀ तेहिमहँ विप्रमाँस खल साँधा ॥ ३ ॥
भोजन कहँ सब विप्र बुलाये ❀ पद पखारि सादर बैठाये ॥ ४ ॥

कई प्रकारके पशुओंका मांस राँधा और उस दुष्टने उसमें ब्राह्मणकाभी मांस मिला दिया ॥ ३ ॥ और ब्राह्मणोंको भोजनके लिये बुलाया और पांव धोय आदरसहित बैठाया ॥ ४ ॥

परसन लागु जबहिं महिपाला ❀ भई अकासबानि तेहि काला ॥ ५ ॥
विप्रवृंद उठि उठि गृह जाहू ❀ है बड़ि हानि अन्न जनि खाहू ॥ ६ ॥

और जब राजा परोसने लगा, उसी समय आकाशवाणी हुई कि-॥ ५ ॥ हे ब्राह्मणो! उठ उठ कर घर जाओ इस अन्नको मत खाना इसमें बड़ी हानि है ॥ ६ ॥

भयेउ रसोई भूसुरमाँसू ❀ सब द्विज उठे मानि विश्वासू ॥ ७ ॥
भूप विकलमति मोहभुलानी ❀ भावीबस न आव मुख बानी ॥ ८ ॥

इस रसोईमें ब्राह्मणोंका मांस मिला है. यह विश्वास करके सब ब्राह्मण उठ बैठे ॥ ७ ॥ राजा मोहमें भूल गया और उसकी मति विकल होगई और होनहारके वश कुछ मुंहसे न बोला गया ॥ ८ ॥

दो०-बोले विप्र सकोप तब, नहिं कछु कीन्ह विचार ॥ ❀
जाइ निशाचर होहु नृप, मूढ़ सहितपरिवार ॥ १७९ ॥ ❀

तब ब्राह्मणोंने कुछभी विचार न किया और क्रोधकर ये शाप दिया कि हे राजा! हे मूर्ख! तू कुटुम्बसमेत जाकर राक्षस हो जा ॥ १७९ ॥

चौ०-क्षत्रबंधतें विप्र बुलाई ❀ घालै लिये सहितसमुदाई ॥ १ ॥
ईश्वर राखा धर्म हमारा ❀ जैहसि तैं समेतपरिवारा ॥ २ ॥

हे राजा! तैने नोता दे ब्राह्मणोंको बुलाया और सबोंको नष्ट करना चाहा ॥ १ ॥ परंतु ईश्वर ने हमारा धर्म रक्खा इससे तेरा परिवारसमेत नाश होगा ॥ २ ॥

संवतमध्य नाश तब होऊ ❀ जलदाता न रहहि कुल कोऊ ॥ ३ ॥
नृप सुनि शापबिकल अतित्रासा ❀ भइ बहोरि वरगिरा अकासा ॥ ४ ॥

एक सालके बीचमें तेरा नाश हो और तेरे कुलमें कोई पानी देनेवाला न रहै ॥ ३ ॥ राजा ऐसा शाप सुनि विकल हो डरा, पुनि आकाशसे सुन्दर वाणी हुई-॥ ४ ॥

---

(१) गूढ़ार्थदीपिका देखो. (२) चार प्रकार-यथा भक्ष्य, भोज्य, चोष्य, और लेह्य ॥

बिप्रहु शाप बिचारि न दीन्हा ❀ नहिं अपराध भूप कछु कीन्हा ॥ ५ ॥
चकित बिप्र सब सुनि नभवानी ❀ भूप गये जहँ भोजनखानी ॥ ६ ॥

हे ब्राह्मणों ! तुमने सोचकर शाप नहीं दिया. क्यौंकि राजाने इसमें कुछभी अपराध नहीं किया ॥ ५ ॥ ऐसी आकाशवाणी सुनकर ब्राह्मण आश्चर्यमें होगये और राजा वहां गया जहां रसोईथी ॥ ६ ॥

तहाँ न असन न बिप्रसुआरा ❀ फिरेउ राउ मन सोच अपारा ॥ ७ ॥
सब प्रसंग महिसुरन सुनाई ❀ त्रसित परेउ अवनी अकुलाई ॥ ८ ॥

वहां न भोजन थे न ब्राह्मण रसोईया था ! तब तौ राजा मनमें बड़ा सोच करता हुआ लौटा ॥७॥ और राजाने पिछली सब कथा ब्राह्मणोंको सुनाई और भयभीति हो घबराकर पृथ्वीपर गिर पड़ा ॥८॥

दो०-भूपति भावी मिटै नहिं, जदपि न दूषन तोर ॥ ❀
किये अन्यथा होइ नहिं, बिप्रशाप अतिघोर ॥ १८० ॥ ❀

तब ब्राह्मण बोले कि हे राजा ! यद्यपि तेरा दोष नहीं है, पर होनहारभी नहीं मिटती; और अब ब्राह्मणोंका वह बड़ा भारी शाप झूंठा नहीं हो सक्ता ॥ १८० ॥

(क्षेपक.)

चौ०-जो करि कपट छलै जग काहू ❀ देइहि ईश अधमगति ताहू ॥ १ ॥
बिप्रबचन सुनि नृप अकुलाना ❀ उठि पुनि बिनय कीन्ह बिधि नाना॥२॥

जो कोई किसीको कपट कर छलता है तौ ईश्वर उसको बुरी गति देता है ॥ १ ॥ ब्राह्मणोंका वचन सुनकर राजा घबराया और फिर उठकर अनेक भांतिकी बिनती करी ॥ २ ॥

पुनि पुनि पद गह कहेउ भुआला ❀ शापअनुग्रह करब कृपाला ॥ ३ ॥
जब तुम होब निसाचर जाई ❀ ब्रह्मवंश तामसतनु पाई ॥ ४ ॥

वारंवार राजाने उनके पाँव पकड़े और बोला कि हे कृपालो ! शापका अनुग्रह करो ॥ ३ ॥ यह सुन ब्राह्मण बोले कि जब तुम जाकर दैत्य होगे और ब्रह्मवंशमें तामस शरीर पाओगे ॥ ४ ॥

अजर अमर अतुलित प्रभुताई ❀ जगविख्यात वीर दोउ भाई ॥ ५ ॥
होइहहि जबहि पराभव चारी ❀ तब तुम सेउब देव पुरारी ॥ ६ ॥

और दोनों भाई अजर अमर और बड़े प्रतापी, संसारमें प्रसिद्ध और वीर होगे ॥ ५ ॥ और जब तुम्हारी हार हो तब तुम शिवजीकी तपस्या करना ॥ ६ ॥

शिवप्रसाद वरु पाइ बहोरी ❀ होइहै सब जग प्रभुता तोरी ॥ ७ ॥
मिलहहिं तुहि तब सनतकुमारा ❀ तब तुम समुझब शाप हमारा ॥ ८ ॥

पुनि शंभुकी कृपासे वरदान पाकर सब संसारमें तुम्हारी प्रभुता होगी ॥ ७ ॥ और जब तुम्हें सनत्कुमार मिलें तब तुम जानना कि हमारे शापका समय आगया ॥ ८ ॥

दो०-तुम पूछब निस्तार निज, सादर सुनहु नरेस ॥ ❀
सब परिवार उधार तब, होइहै मुनिउपदेस ॥ १८१ ॥ ❀

इति क्षेपक.

हे राजा ! तुम उनसे आदरपूर्वक अपना निस्तार पूछना, और उन मुनिके उपदेशसे परिवार समेत तुम्हारा उद्धार हो जायगा ॥ १८१ ॥. (यहांतक क्षेपक है.)

चौ०-अस कहि तब महिदेव सिधाए ❀ समाचार पुरलोगन पाए ॥ १ ॥
सोचहिं दूषन दैवहिं देहीं ❀ विरचित हंस काक किय जेहीं ॥ २ ॥

ऐसे कह सब ब्राह्मण अपने २ घरको गये और ये समाचार नगरके लोगोने सुने ॥ १ ॥ तौ मनमें सोच करते हैं और दैवको दोष देनेलगे कि जिसने हंस बनाकर कौआ बनादिया ॥ २ ॥

उपरोहितहिं भवन पहुँचाई ❀ असुर तापसहिं खबरि जनाई ॥ ३ ॥
तेहि खल जहँ तहँ पत्र पठाये ❀ सजि सजि सैन्य भूप सब आये ॥ ४ ॥

उस दुष्ट असुरने उपरोहितको घर पहुँचाकर तपस्वीसे सब समाचार कहे ॥ ३ ॥ फिर उस दुष्टने जहां तहां पत्र भेजे तब सब अपनी सेना साजि २ चढ़ि आये ॥ ४ ॥

घेरिन्ह नगर निसान बजाई ❀ विविधभाँति नित होत लराई ॥ ५ ॥
जूझे सकल सुभटकै करनी ❀ बंधुसमेत परेउ नृप धरनी ॥ ६ ॥

और धोंसा बजा नगरको घेरा और अनेक भाँतिकी नित्य लड़ाइयाँ होने लगीं ॥ ५ ॥ सब बड़े २ योद्धाओंकी करनीकर जूझे और राजा भाईसमेत पृथ्वीमें गिर पड़ा ॥ ६ ॥

सत्य केतुकुल कोइ नहिं बाँचा ❀ विप्रशाप किमि होइ असाँचा ॥ ७ ॥
रिपुहिं जीति नृप नगर बसाई ❀ निज निज पुरगे जय जस पाई ॥ ८ ॥

पुनि सत्यकेतुके कुलमें कोईभी न बचा, भला ब्राह्मणोंका शाप कैसे झूठा होय ॥ ७ ॥ शत्रुको जीत राजा नगरको बसाय जयका यश पाय अपने २ नगरको गये ॥ ८ ॥

दो०-भरद्वाज सुनु जाहि जब, होत बिधाता वाम ॥ ❀
धूरि मेरु सम जनक यम, ताहि ब्यालसम दाम ॥ १८२ ॥ ❀

हे भरद्वाजजी ! जब जिसका दैव उलटा हो जाता है तब धूल सुमेरुके, पिता यमके और रस्सी सर्पके समान बन जाती है ॥ १८२ ॥

चौ०-काल पाइ मुनि सुनु सोइ राजा ❀ भयेउ निसाचर सहितसमाजा ॥ १ ॥
दससिर ताहि बीस भुजदंडा ❀ रावन नाम वीर बरिबंडा ॥ २ ॥

हे मुनि ! सुनों, समय पाय वह राजा समाजसहित राक्षस हुआ ॥ १ ॥ उसके दश शिर और बीस भुजा थीं और बड़ा बाँका वीर था, और रावण उसका नाम हुआ ॥ २ ॥

भूपअनुज अरिमर्दन नामा ❀ भयेउ सो कुंभकरन बलधामा ॥ ३ ॥
सचिव जो रहा धर्मरुचि जासू ❀ भयेउ बिमात्र बंधु लघु तासू ॥ ४ ॥

और राजाके भाईका नाम अरिमर्दन था, वह बलवान् कुंभकरण हुआ ॥ ३ ॥ उसका मंत्री कि जिसका नाम धर्मरुचि था, वह उसका छोटा भाई दूसरी मातासे हुआ ॥ ४ ॥

नाम बिभीषन जेहिं जग जाना ❀ विष्णुभक्त विज्ञाननिधाना ॥ ५ ॥
रहे जे सुत सेवक नृपकेरे ❀ भये निसाचर घोर घनेरे ॥ ६ ॥

उसका नाम विभीषण था और उसको संसार जानता था कि वह विष्णुका भक्त और बड़ा बुद्धिवान् है ॥ ५ ॥ और जो राजाके पुत्र और सेवक थे वे बहुतसे भयंकर राक्षस हुये ॥ ६ ॥

कामरूप खल जटिल कुभेका ❀ कुटिल भयंकर विगतविवेका ॥ ७ ॥
कृपारहित हिंसक सब पापी ❀ बरनि न जाइ विश्वपरितापी ॥ ८ ॥

सव कामरूप (अर्थात् चाहे जैसा रूप धरलें) स्वभावके दुष्ट, जटा वढ़ायें, बुरे भेख किये, वड़े कुटिल भयंकर, और ज्ञानहीन अर्थात् मूर्ख थे ॥ ७ ॥ वे सव निर्दयी हत्यारे, पापी, संसारको ऐसे दुखदाई थे कि जिनका वर्णन नहीं हो सकता ॥ ८ ॥

दो०-उपजे जदपि पुलस्त्यकुल, पावन अमल अनूप ॥
तदपि महीसुरशापबस, भये सकल अघरूप ॥ १८३ ॥

यद्यपि वे पुलस्त्यजीके उत्तम पवित्र और अच्छे कुलमें उत्पन्न हुये थे, तौभी ब्राह्मणोंके शापसे सव पापरूप हुये ॥ १८३ ॥

चौ०-कीन्ह विविध तप तीनिहु भाई ❀ परम उग्र सो वरनि न जाई ॥ १ ॥
गयेउ निकट तप देखि विधाता ❀ माँगहु वर प्रसन्न मैं ताता ॥ २ ॥

तीनों भाइयोंने अनेक भांतिका वड़ा भारी तप किया कि जिसका वर्णन नहीं हो सकता ॥ १ ॥ उनके तपको देख ब्रह्माजी पास जाय बोले कि मैं तुमसे प्रसन्न हूँ; हे तात! तुम वर मांगो ॥ २ ॥

करि विनती पद गहि दससीसा ❀ बोलेउ बचन सुनहु जगदीसा ॥ ३ ॥
हम काहूकर मरहिं न मारे ❀ बानर मनुज जाति दुइ वारे ॥ ४ ॥

तव रावण पाँव पकड़ विनती कर बोला कि हे जगदीश! सुनो ॥ ३ ॥ हमें यह वर दो कि मनुष्य और वंदर इन दोनों जातिको छोड़कर हम किसीसे मारे न मरें ॥ ४ ॥

एवमस्तु तुम बड़ तप कीन्हा ❀ मैं ब्रह्मा मिलि तोहि वर दीन्हा ॥ ५ ॥
पुनि प्रभु कुंभकरन पहँ गयेऊ ❀ तेहि बिलोकि मन बिस्मय भयेऊ ॥ ६ ॥

तव वे बोले ऐसाही होगा, तुमने वड़ा तप किया है इसलिये मुझ ब्रह्माने मिलके तुझे यह वर दिया है ॥ ५ ॥ पुनि ब्रह्माजी कुंभकर्णके पास गये उसे देख मनमें वड़ा अचरज हुआ ॥ ६ ॥

जौ यह खल नित करव अहारा ❀ होइहहि सब उजारि संसारा ॥ ७ ॥
सारदप्रेरि तासु मति केरी ❀ मांगेसि नींद मास षटकेरी ॥ ८ ॥

---

(१) जब ब्रह्माजीके पुत्र पुलस्त्यजीने मेरु पर्वतपर तृणबिंदुके आश्रममें तप करना आरंभ किया, उस समय अनेक देवकन्या वहां आने लगीं। पर जव पुलस्त्यजीने अपना मन डिगता हुआ देखा तव उन्होंने यह भय दिखा दिया कि जो कन्या मेरे सामने आवेगी उसके गर्भ रह जायगा। इस कारण सवने आना छोड़ दिया। पर एकदिन तृणविन्दुकी कन्या भूलसे आ निकली अत एव गर्भवती हो गई और तृणविन्दुने उसे पुलस्त्यजीको दान करदी। उससे विश्रवा हुए। उन्हें भरद्वाजने अपनी कन्या दी उससे कुवेर भये। उन्होंने तप किया। ब्रह्माजीने प्रसन्न हो इन्हें पुष्पक विमान दिया और खजानेका स्वामी वनाया. यह सुन इनके पिता विश्रवाने इनको लंका दी कि जो राक्षसोंके पाताळ चले जानेसे खाली थी। उस समय सुमाली राक्षस अपनी पुत्री केकसीको लिये आया और कुवेरको सुन्दर देख पुत्रीको उसके पास भेजा। उन्होंने अभिप्राय जान शाप दिया कि। तू संध्याकालमें पुत्रकी कामनासे आई है इसलिये तेरे पुत्र राक्षस होंगे. कन्याने कहा आपके समान महात्मासे राक्षस पुत्रोंका होना कैसे होसक्ता है? तव उन्होंने कहा कि खैर तीसरा पुत्र धर्मात्मा होगा। इस प्रकार इसी केकसीके रावण आदि तीनो भाई और शूर्पणखा हैं.

रावणको तप की यों सूझी कि एक समय उसके पिता विश्रवाके पास कुबेरजी आये। उनकी उन्होंने वड़ी खातिर की। यह देख रावणने पूछा कि यह कौन है? उसने कहा यह तुमारा भाई है, तपके बलसे देवता हो गया है; तुम वृथा समय खोते हो। यह सुन रावणको अति लज्जा भई और अपने दोनों भाइयोंको साथ ले तप करने लगा.

जो यह दुष्ट रोज २ भोजन करैगा तौ संसार उजड़ जायगा ॥ ७ ॥ तब उन्हींने सरस्वतीसे प्रेरणा कर उसकी मति फेरदीनी और उसने छै महीनेकी नींद माँगी ॥ ८ ॥

दो०-गयेउ विभीषन्न पास तब, कहा पुत्र वर माँगु ॥
तेहि माँगेउ भगवंतपद, कमल अमल अनुरागु ॥ १८४ ॥

फिर विभीषणके पास जाय कहा कि हे पुत्र! वर माँग. उसने भगवान्के चरणकमलोंकी निर्मल भक्ति माँगी ॥ १८४ ॥

चौ०-तिनहिं देइ वर ब्रह्म सिधाए ❀ हर्षित ते अपने गृह आए ॥ १ ॥
मयतनुजा मंदोदरि नामा ❀ परम सुंदरी नारिललामा ॥ २ ॥

उनको वर दे ब्रह्माजी ब्रह्मलोकको गये और ये प्रसन्न होकर अपने घर आये ॥ १ ॥ मयदैत्यकी लड़की जिसका नाम मंदोदरी था बहुत सुन्दर और स्त्रियोंमें रूपवती थी ॥ २ ॥

सोइ मय दीन्ह रावणहि आनी ❀ भई सो जातुधानपतिरानी ॥ ३ ॥
हर्षित भयेउ नारि भलि पाई ❀ पुनि दोइ बंधु बिबाहेसि जाई ॥ ४ ॥

उसको लाकर मयदैत्यने रावणको दीनी इसीसे वह दैत्यराजकी रानी कहलाई ॥ ३ ॥ सुन्दरी स्त्रीको पाकर बड़ा प्रसन्न हुआ. फिर जाकर अपने दोनों भाइयोंके विवाह किये ॥ ४ ॥

गिरित्रिकूट एक सिंधुमझारी ❀ विधिनिर्मित दुर्गम अति भारी ॥ ५ ॥
सोइ मयदानव बहुरि सँवारा ❀ कनकरचित मनिभवन अपारा ॥ ६ ॥

समुद्रके बीच त्रिकूट पर्वतके ऊपर ब्रह्माका बनाया हुआ एक बड़ा भारी दुर्गम गढ़ था ॥ ५ ॥ उसको मयदैत्यने फिर सँवारा और उसमें सोनेके मणिजटित बहुतसे घर बनाये ॥ ६ ॥

भोगवती जस अहिकुलबासा ❀ अमरावति जस शक्रनिवासा ॥ ७ ॥
तिन्हते अधिक रम्य अति बंका ❀ जगविख्यात नाम तेहि लंका ॥ ८ ॥

जैसे भोगवतीमें नागकुल रहते हैं और अमरावतीमें इंद्र बसते हैं ॥ ७ ॥ इन सबसे यह बहुत सुन्दर पक्कीथी और इसका नाम संसारमें लंका विख्यात हुआ ॥ ८ ॥

दो०-खाई सिंधु गँभीर अति, चारिउ दिसि फिरि आव ॥
कनककोटिमनिखचित दृढ़, बरनि न जाइ बनाव ॥ १८५ ॥

जिसके चारों ओर समुद्रकी बड़ी गहरी खाई थी और सोनेके मणियोंसे खचित और बड़े पक्के उसके परकोटे थे कि जिनके बनावका कुछ वर्णन नहीं हो सकता ॥ १८५ ॥

दो०-हरिप्रेरित जिहि कलप जोइ, जातुधानपति होय ॥
सूर प्रतापी अतुलबल, दलसमेत बस सोय ॥ १८६ ॥

भगवान्की इच्छासे जिस कल्पमें जो राक्षसोंका स्वामी होता है वही सूर, प्रतापी और बड़ा बली सेनासमेत वहां रहता है ॥ १८६ ॥

चौ०-रहे तहाँ निसिचरभट मारे ❀ ते सब सुरन समर संहारे ॥ १ ॥
अब तहँ रहहिं शक्रके प्रेरे ❀ रक्षक कोटि यक्षपतिकेरे ॥ २ ॥

---

(१) कुंभकर्णका विवाह वैरोचनकी धेवती वज्रज्वालाके संग और विभीषणका व्याह शैल्यप नाम गन्धर्वकी सरमा नाम कन्यासे हुआ ॥

वहाँ बड़े भारी जोधा दैत्य रहते थे, कि जिन्होंने युद्धमें सब देवताओंको मारा था ॥ १ ॥ अब तहाँ इंद्रकी प्रेरणासे किलेकी रक्षाके लिये कुबेरकी ओरसे रक्षक रहने लगे ॥ २ ॥

दशमुख जबहु खबरि असि पाई ❀ सेन साजि गढ़ घेरिसि धाई ॥ ३ ॥
देखि बिकट भट बड़ि कटकाई ❀ यक्ष जीव लै गए पराई ॥ ४ ॥

जब एक समय रावणने यह खबर पाई, तब उसने सेना सजाई और जाकर गढ़को घेरा ॥ ३ ॥ विकट जोधाओंकी बड़ी सेनाको देख यक्ष अपना जीव बचाकर भाग गये ॥ ४ ॥

फिरि सब नगर दसानन देखा ❀ गयेउ सोच सुख भयेउ बिसेखा ॥ ५ ॥
सुंदर सहज अगम अनुमानी ❀ कीन्ह तहाँ रावन रजधानी ॥ ६ ॥

फिर रावणने सब नगरको देखा तौ उसका सोच दूर हुआ और मनमें बड़ा प्रसन्न हुआ ॥ ५ ॥ उसको स्वभावहीसे सुन्दर और अगम जानकर रावणने उसे अपनी राजधानी बनाया ॥ ६ ॥

जेहि जस जोग बाँटि गृह दीने ❀ सुखी सकल रजनीचर कीने ॥ ७ ॥
एकबार कुबेरपहँ धावा ❀ पुष्पकयान जीति लै आवा ॥ ८ ॥

जो जिसके रहने योग्य थे, उन सबको घर बाँट दिये और सब दैत्योंको प्रसन्न कर दिया ॥ ७ ॥ एकबार कुबेरपर धावा किया तौ पुष्पक विमान जीतकर ले आया ॥ ८ ॥

दो०–कौतुकही कैलास पुनि, लीन्हेसि जाइ उठाय ॥ ❀
मनहुँ तोलि भट बाहुबल, चला अधिक सुख पाय ॥ १८७ ॥ ❀

पुनि खेलके समान कैलास[१] पर्वतको उठाया मानों उस जोधाने अपने बाहुबलको तोला और मनमें अधिक प्रसन्न होताहुआ चला ॥ १८७ ॥

चौ०–सुख संपति सुत सेन सहाई ❀ जय प्रताप बल बुद्धि बड़ाई ॥ १ ॥
नित नूतन सब बाढ़त जाई ❀ जिमि प्रतिलाभ लोभ अधिकाई ॥ २ ॥

सुख, संपति, पुत्र, सेना, सहायक, जय, प्रताप, बल, बुद्धि और बड़ाई ॥ १ ॥ ये सब नित्य नये बढ़ने लगे, जैसे लाभ होनेसे अधिक लोभ बढ़ता है ॥ २ ॥

अतिबल कुंभकर्ण अस भ्राता ❀ जेहिं कहँ नहिं प्रतिभट जग जाता ॥ ३ ॥
करि मदपान सोव षट मासा ❀ जागत होइ तिहूँपुरत्रासा ॥ ४ ॥

उसका भाई कुंभकरण ऐसा बड़ा बली था कि जिसका सामना करनेवाला कोई जोधा संसारमें हुआही नहीं ॥ ३ ॥ वह मदिरा पानकर छः महीने सोता था और जब जागता तब तीनों लोकको भय होता था ॥ ४ ॥

जो दिनप्रति अहार करु सोई ❀ विश्व बेगि सब चौपट होई ॥ ५ ॥
समरधीर नहिं जाइ बखाना ❀ तेहिसम अधिक न कोउ बलवाना ॥ ६ ॥

जो वह प्रतिदिन भोजन करता तौ सब संसार शीघ्रही चौपट हो जाता ॥ ५ ॥ युद्धमें बड़ा धीर, (हटाया न हटै) जिसका वर्णन नहीं हो सकता और उसके समान कोई अधिक बलवान् नहीं था ॥ ६ ॥

बारिनाद जेठसुत तासू ❀ भटमहँ प्रथमलीक जग जासू ॥ ७ ॥
जेहि न होइ रणसंमुख कोई ❀ सुरपुर नितहि परावन होई ॥ ८ ॥

---

(१) जब रावणको अपने बलका बड़ा गर्व हुआ तौ एक दिन कैलासको हाथपर उठालिया, यह देख शंकर घबराये, फिर पार्वतीजीको व्याकुल देख शिवजीने अपने चरणके अंगूठेसे दबाया और रावणका हाथ पिच गया. तब तो शिवजीकी बड़ी स्तुति करने लगा फिर आशुतोष भोलानाथने इसका अपराध क्षमा कर डाला.

और जिसका बड़ा पुत्र मेघनाद था, कि संसारके जोधाओंमें जिसकी पहिलीही गिनती है ॥७॥ और लड़ाईमें जिसके सन्मुख कोई होताही न था और जिसके कारण देवलोकमें रोज भाजड़ रहती थी ॥८॥

दो०-कुमुख अकंपन कुलिशरद, धूमकेतु अतिकाय ॥ ❀
एक एक जग जीतसक, ऐसे सुभट निकाय ॥ १८८ ॥ ❀

कुमुख, अकंपन, वज्रकेतु, धूम्रकेतु और अतिकाय ये ऐसे थे कि इनमेंसे एकही अकेला संसारको जीत ले, और ऐसे बहुतसे जोधा थे ॥ १८८ ॥

चौ०-कामरूप जानहिं सब माया ❀ सपनेहु जिनके धर्म न दाया ॥ १ ॥
दशमुख बैठि सभा एकवारा ❀ देखि अमित आपन परिवारा ॥ २ ॥

कामरूप कहिये इच्छानुसार रूप धरनेवाले, सब माया जानते थे कि सुपनेमेंसी जिनको धर्म और दया नहीं थी ॥१॥ एकवार रावण अपनी सभामें बैठकर अपना अनगिनती परिवार देखने लगा ॥ २ ॥

सुतसमूह जन परिजन नाती ❀ गनै को पार निसाचरजाती ॥ ३ ॥
सेन बिलोकि सहज अभिमानी ❀ बोला वचन क्रोधमदसानी ॥ ४ ॥

बहुतसे बेटे, पोते और नातेगोतेके राक्षसोंकी जातिकी कौन गिनती कर सकता है! ॥ ३ ॥ सुभावका घमंडी रावण ऐसी सेनाको देखकर क्रोध और मदसे सनेहुये वचन बोला ॥ ४ ॥

सुनहु सकल रजनीचरजूथा ❀ हमरे बैरी विबुधबरूथा ॥ ५ ॥
ते सन्मुख नहिं करहिं लराई ❀ देखि सकल रिपु जाहिं पराई ॥ ६ ॥

हे दैत्यो! सब सुनों कि हमारा शत्रु देवताओंका समूह है ॥ ५ ॥ वे सामने लड़ाई नहीं करते, वैरीको देख सब भाग जाते हैं ॥ ६ ॥

तिनकर मरन एकविधि होई ❀ कहौं बुझाइ सुनहु अब सोई ॥ ७ ॥
द्विजभोजन मख होम सराधा ❀ सब कहँ जाय करहु तुम बाधा ॥ ८ ॥

उनका मरण एक प्रकारसे होगा उसे समझाकर अब तुमसे कहताहूँ सो सुनो. ॥ ७ ॥ जहां २ ब्राह्मणोंका भोजन, यज्ञ, होम और श्राद्ध होय, वहां २ तुम जाकर बाधा करो ॥ ८ ॥

दो०-छुधाछीन बलहीन सुर, सहजहिं मिलहहिं आय ॥ ❀
तब मारिहौं कि छाँड़िहौं, भली भाँति अपनाय ॥ १८९ ॥ ❀

जब भूखके मारे बलहीन होकर वे देवता सहजहीमें आ मिलेंगे तब उनको चाहे मारूंगा अथवा अच्छी तरह अपना करके छोड़ दूंगा ॥ १८९ ॥

चौ०-मेघनाद कहँ पुनि हँकरावा ❀ दीन्ह सीख बल वयर बढ़ावा ॥ १ ॥
जे सुर समरधीर बलवाना ❀ जिनके लरिबेकौ अभिमाना ॥ २ ॥

पुनि मेघनादको बुलाकर उसे बलसे सीख देकर देवताओंसे वैर बढ़ाया ॥ १ ॥ जो देवता युद्धमें धीर और बलवान् हैं और जिनको अपने लड़नेका घमंड है-॥ २ ॥

तिनहिं जीत रन आनसि बाँधी ❀ उठि सुत पितु अनुसासन साधी ॥ ३ ॥
इहि विधि सबहिं आज्ञा दीन्ही ❀ आपुन चलेउ गदा कर लीन्ही ॥ ४ ॥

उनको लड़ाईमें जीतकर बांध लाओ; और वह पिताकी आज्ञा मान उठ खड़ा हुआ ॥ ३ ॥ इसी भांति सबको आज्ञा दी और आपभी गदा हाथमें लेकर चला ॥ ४ ॥

चलत दसानन डोलत अवनी ❀ गर्जत गर्भ स्रवत सुररमनी ॥ ५ ॥
रावन आवत सुनेउ सकोहा ❀ देवन तकेउ मेरुगिरिखोहा ॥ ६ ॥

रावणके चलनेसे धरणी डिगमिगाती थी और जिस समय वह गर्जताथा (तौ शब्द सुन) देवताओंकी स्त्रियोंका गर्भ गिरता था ॥५॥ जब रावणको क्रोधसहित आता सुना, तब देवताओंने सुमेरु पर्वतकी कन्दरा तकीं ॥ ६ ॥

दिकपालनके लोक सिधाए ❀ सूने सकल दसानन पाये ॥ ७ ॥
पुनि पुनि सिंहनाद करि भारी ❀ देइ देवतन गारि प्रचारी ॥ ८ ॥

फिर रावण दिक्पालोंके लोकमें गया. वहां उसे सवघर सूने मिले ॥ ७ ॥ वारंवार बड़ा भारी सिंहके समान शब्द कर और ललकारके देवताओंको गालियां देने लगा ॥ ८ ॥

रणमदमत्त फिरै जग धावा ❀ प्रतिभट खोजत कतहुँ न पावा ॥ ९ ॥

लड़ाईके मदसे मतवाला संसारमें दौड़ा २ फ़िरता था पर अपने समान योद्धा खोजनेपरभी नहीं पाता था ॥ ९ ॥

अथ क्षेपक.

दो०–सप्तद्वीप नवखंडलगि, सप्तपताल अकाश ॥ ❀
कंपमान धरणी धसत, सरितपतिन्हि मन त्रास ॥ १९० ॥ ❀

रावणके फिरनेके समय सात द्वीप, नौ खंड, सात पाताल, और आकाश कंपायमान हुये धरती नीचेको धसकने लगी और समुद्रोंके मनमेंभी खलवली पड़ गई ॥ १९० ॥

चौ०–नारद मिले कहिसि मुसुकाई ❀ देव कहाँ मुनि देहु दिखाई ॥ १ ॥
सुनत अनख नारदहिं न भावा ❀ श्वेतदीप तिहि तुरत पठावा ॥ २ ॥

तब नारदजी मिले; उनसे हँसके कहा. हे मुनि! देवता कहां हैं मुझे दिखा दो ॥ १ ॥ यह बुरा वचन सुनकर नारदजीको अच्छा न लगा. तब उसे तुरंत श्वेतद्वीपको भेज दिया ॥ २ ॥

सागर उतरि पार सो गयऊ ❀ नारिवृंद तहँ देखत भयऊ ॥ ३ ॥
तिन्हसन कहा पतिनपहुँ जाऊ ❀ कहेऊ कि आव निशाचरनाहू ॥ ४ ॥

वह रावण समुद्र उतर पार गया और वहां स्त्रियोंके झुंडके झुंड देखे ॥ ३ ॥ और उन स्त्रियोंसे कहा कि अपने पतियोंसे जाके कहो कि राक्षसोंका राजा आया है ॥ ४ ॥

तब मैं तिनहिं जीति संग्रामा ❀ लै जैहों तुमकौं निजधामा ॥ ५ ॥
सुनत बचन एक जरठ रिसानी ❀ धाइ चरन गहि गगन उड़ानी ॥ ६ ॥
गई दूरि धरि धरि झकझोरा ❀ डारिसि सिंधुमध्य अति जोरा ॥ ७ ॥

तब मैं उनको लड़ाईमें जीतकर तुमको अपने घर ले जाऊंगा ॥ ५ ॥ ऐसे वचन सुनतेही उनमेंसे एक बुढ़िया क्रोधित हो दौड़के रावणका पाँव पकड़कर आकाशको ले उड़ी ॥६॥ और दूर जाके पकड़ २ के झकझोरे दे बहुत जोरसे समुद्रके वीचमें डाल दिया ॥ ७ ॥

दो०–गयो पाताल अचेत व्है, मरै न विप्रप्रसाद ॥ ❀
सावधान उठि गर्ज पुनि, हिये न हरष विषाद ॥ १९१ ॥ ❀

तव रावण अचेत हो पातालमें गया· परन्तु ब्राह्मणकी कृपासे मरा नहीं· फिर सावधान हो गर्ज गर्जकर उठा और हृदयमें कुछ आनन्द और दुःख न हुआ ॥ १९१ ॥

चौ०–जीतेसि नागनगर सब झारी ❀ गयो बहुरि बलिलोक सुरारी ॥ १ ॥
वैरोचनसुत आदर दयऊ ❀ कुशल बूझि तब बोलत भयऊ ॥ २ ॥

देवताओंके वैरी रावणने सब नागलोक झाड़कर जीत लिया फिर बलिलोकको गया ॥ १ ॥ वहाँ वैरीचनके बेटे (बलि) नें आदर देकर कुशल पूछी तब रावण बोला–॥ २ ॥

तुमहू निज शत्रुहि गहि लीजे ❀ चलि महिलोक राज नित कीजे ॥ ३ ॥
कह बलि कनककशिपुके मंडन ❀ पहरि लेहु तुम सुखदुखखंडन ॥ ४ ॥

तुमभी अपने वैरी अर्थात् भगवान्‌को पकड़ लो और भूलोकपर चलकर अपना राज्य करो ॥ ३ ॥ बलिने कहा, हमारे बाबा हिरण्यकशिपुके आभूषण जो दुखके नाश करनेवाले हैं, इनको तौ तुम सुखपूर्वक पहन लो ॥ ४ ॥

लाग उठावन उठा न कोई ❀ याही पौरुषते जय होई ॥ ५ ॥
जिन यह भूषण अंगन धारे ❀ ते भट गे एक छिनमें मारे ॥ ६ ॥

रावण उठाने लगा और उनमेंसे कोई न उठा (तब बलिने कहा क्या) इसी पराक्रमसे जीत होगी ॥ ५ ॥ और जिन्होंने यह गहने शरीरमें पहरेथे वे योधाभी एक क्षणमें मारे गये ॥ ६ ॥

तेहिते भवन जाहु ले प्राना ❀ चला तुरत मनमाहिं लजाना ॥ ७ ॥
वामन रावन आवत जाना ❀ किये देवऋषि सन अपमाना ॥ ८ ॥

इससे प्राण ले अपने घर जाओ (तब रावण) मनमें लज्जित हो तुरंत चल दिया ॥ ७ ॥ वामनजीने जाना कि देवऋषि बलिसे निरादर किया हुआ रावण आता है ॥ ८ ॥

खेलत रहे नगरशिशु नाना ❀ निजबल तिनहिं दीन्ह भगवाना ॥ ९ ॥
धाइ धरा तिहि पुर लै आए ❀ नगरनारिनर देखन धाए ॥ १० ॥

तौ नगरके अनेक बालक जो वहां खेलते थे, उनको भगवान्‌ने अपना बल दिया ॥९॥ उन्होंने दौड़के (रावणको) पकड़ लिया और शहरमें ले आये· तब नगरके स्त्री पुरुष देखनेको दौड़े आये १०

बीस बाहु दसकंधर जाई ❀ विधि यह गढ़नि कहांकी आई ॥ ११ ॥
राखिन्हि बाँधि खिजावहिं भारी❀ नाम न कहै सहै बरु गारी ॥ १२ ॥

और कहने लगे कि हे ब्रह्मा! यह कहां की गढ़नि आई. जिसके बीस भुजा और दश शीश हैं॥११॥ और बांधकर रख लिया और बहुत खिजाने लगे, गाली भले ही सहता है पर नाम नहीं बतलाता ॥१२॥

वामन दीख बहुत सकुचाना ❀ तब छुड़ाइ दिय कृपानिधाना ॥ १३ ॥
चला तुरंत निसाचरनाहा ❀ लाज शंक कछु नहिं मनमाहा ॥ १४ ॥

जब कृपानिधान वामनजीने देखा कि यह बहुत सकुचाया तौ छुड़ा दिया ॥१३॥ तब राक्षसोंका राजा (रावण) तुरंत चल दिया और मनमें लाज और भय कुछ नहीं माना ॥ १४ ॥

दो०–अतिनिर्लज्ज दयारहित, हिंसापर अति प्रीति ॥ ❀
रामविमुख दशकंठ शठ, तापर चाहत जीति ॥ १९२ ॥ ❀

मूर्ख रावण बड़ा बेशरम, दयाहीन, हिंसा करनेमें प्रीति रखनेवाला और रामचन्द्रजीसे विमुख है और तिसपर भी अपनी जय चाहता है ॥ १९२ ॥

भरद्वाज सुनु जाहि जब, होइ विधाता बाम ॥ ❀
मनिहु काँच व्है जाइ तब, लहै न कौड़ी दाम ॥ १९३ ॥ ❀

हे भरद्वाज! सुनो. जब जिससे ब्रह्मा टेढ़ा होता है, तब उसको मणि भी काँच होजाता है और उसके दाममें एक कौड़ी नहीं मिलती ॥ १९३ ॥

चौ०–जहँ कहुँ फिरत देव द्विज पावै ❀ दंड लेइ बहु त्रास दिखावै ॥ १ ॥
इहि आचरन फिरै दिनराती ❀ महामलिन मन खल उतपाती ॥ २ ॥

जहाँ कहीं देवता और ब्राह्मण डोलते मिलजाँय तौ (उनसे) दंड लेकर बहुत भय दिखाने लगा ॥१॥ मनका बड़ा मैला खोटा और उत्पात करनेवाला (रावण) इसी आचरणसे फिरने लगा ॥२॥

तब तुरंग पंपापुर आवा ❀ बालिनाम कपिपति जिहिं ठावा ॥ ३ ॥
देखि तहाँ इक सरवरशोभा ❀ जेहि मन महामुनिन कर लोभा ॥ ४ ॥

और जिस जगह वालि नाम वन्दरोंका राजा था उसी पंपापुरमें शीघ्र आया ॥ ३ ॥ तहां एक सुन्दर सरोवरकी शोभा देखी जिसमें बड़े २ मुनियोंका मनभी इलझता था ॥ ४ ॥

तहाँ कपीस करै निजध्याना ❀ दसकंधरहिं देखि मुसुकाना ॥ ५ ॥
जाइ ठाढ़ तहँ भा रजनीसा ❀ ठोक बाहु गर्जित भुजबीसा ॥ ६ ॥

वहाँ बन्दरोंका राजा (वालि) अपना ध्यान कर रहा था. सो रावणको देखकर हँसने लगा ॥५॥ उसी जगह राक्षस (रावण) वीसों भुजाओंकी ताल ठोककर गर्जता हुआ जा खड़ा हुआ ॥६॥

तब कपीस चितवा मुसुकाई ❀ ध्यानकी औसर रिस बिसराई ॥ ७ ॥
तब रावन बोला करि क्रोधा ❀ बकध्यानी कपि सठ सुनु बोधा ॥ ८ ॥
नाम तोर सुनि आयो धाई ❀ दे कपि युद्ध छांड़ि कदराई ॥ ९ ॥

तब बन्दरोंके राजा (वालि) ने हँसकर देखा परन्तु ध्यानका समय था इसलिये क्रोधको छोड़ दिया ॥ ७ ॥ तब रावण क्रोधकर बोला, (अरे) वगुलाभगत मूर्ख बन्दर! ज्ञान सुन ॥ ८ ॥ तेरा नाम सुनकर दौड़के आया हूं. हे बन्दर! काहिली छोड़ लड़ाई दे, अर्थात् मुझसे लड़ ॥ ९ ॥

दो०–मोहि जीतेबिनु समर सुनु, वृथा ध्यान तव कीस ॥ ❀
अंजुलि देइ न पाइ है, सपथ करौं अज ईस ॥ १९४ ॥ ❀

हे बन्दर! सुन. मुझे लड़ाईमें जीते विना तेरा ध्यान निष्फल है. मैं ब्रह्मा और महादेवकी सौंगंध खाकर कहता हूँ कि तू अंजली नहीं देनें पावेगा ॥ १९४ ॥

चौ०–तब बाली बोला बिहँसाई ❀ बल तुम्हार ऐसौ है भाई ॥ १ ॥
रबि अंजुलि मैं देउँ सप्रीती ❀ ठाढ़ होउ जायहु मुहि जीती॥ २ ॥

तब वालि हँसकर बोला. हे भाई! तुम्हारा बल ऐसाही है ॥ १ ॥ मैं प्रीतिसहित सूर्यको अंजुली देलूं (तबतक) खड़े रहो मुझे जीतके जाना ॥ २ ॥

तब निसिचरपति उठा रिसाई ❀ दे कपि युद्ध छाँड़ि कदराई ॥ ३ ॥
तबहिं कीसपति मनहि बिचारा ❀ सिव बल दीन्ह मरहि नहिं मारा ॥४॥

तब राक्षसोंका राजा रिस होकर उठा. (और बोला) अरे बन्दर! काहिली छोड़ लड़ाई दे अर्थात् मुझसे लड़ ॥ ३ ॥ तब बन्दरोंके राजा (वालि) ने मनमें विचार किया कि इसे शिवजीने बल दिया है, यह मारनेसे न मरेगा ॥ ४ ॥

दसकंधर घर जाहु बिचारी ❀ अजय तुम्हारि सुनी बिधि चारी ॥ ५ ॥
बहुतभाँति कहिकहि समुझावा ❀ कौनेहु भाँति बोध नहिं आवा ॥ ६ ॥

इसलिये कहा कि, रे रावण! विचारके घर जाओ· क्यों कि हमने चार प्रकारसे तुम्हारी हार सुनी है ॥ ५ ॥ बहुत भांतिसे कहके समझाया परन्तु किसी तरह ज्ञान न आया ॥ ६ ॥

तब सकोप हुइ धरा कपीसा ❀ धरि तिहिं काँख चापि दससीसा ॥ ७ ॥
अंजुलि दीन्ह रविहिं मनवानी ❀ अंचई सप्त उदधिकरपानी ॥ ८ ॥
जपा आदि शंकर मन बानी ❀ तिहिं छिन संध्या बंदि सिरानी ॥ ९ ॥

तब वन्दरोंके राजा (वालि) ने क्रोधित हो (रावणको) पकड़के उसे कांखमें दवाके रखलिया ॥७॥ (फिर) मन बचनसे सूर्यको अंजुली दी और सात समुद्रोंके जलसे आचमन किया ॥ ८ ॥ आदिदेव कल्याण करनेवाले महादेवको मन वचनसे जपकर उस समय संध्यावन्दनसे निवृत्त हुआ ॥ ९ ॥

दो०-आवा घरहिं कपीस तब, काँख रहा लंकेस ॥
इहि विधि वीते मास षट, पाए बहुत कलेस ॥ १९५ ॥

तब वन्दरोंका राजा (वाली) अपनी काँखमें लंकापति रावणको दवाये अपने घर आया और इस तरह वहुत दुःख पाते हुये (रावणको) छः महीने वीतगये ॥ १९५ ॥

चौ०-तेइ कलेसबस करै उपाई ❀ तहँ न चलै कछु आतुरताई ॥ १ ॥
बहु प्रस्वेद कखरीमहँ जामा ❀ अति कुवास तहाँ भई घामा ॥ २ ॥

उसी दुखके मारे (रावण) उपाय करता है, परंतु वहाँ कुछ उतावली नहीं चलती ॥ १ ॥ बहुतसा पसीना काँखमें जमनेसे वहाँ बहुत दुर्गंधका ढेर होगया ॥ २ ॥

कलमलाइ रिस दसननि काटा ❀ कचकर जीव मनहुँ भ्रम चाटा ॥ ३ ॥
एक दिवस रवि अंजुलि साजा ❀ काँखते निसरि महाधुनि गाजा ॥ ४ ॥

तव किचपिचाके रिस हो दाँतोसे काटा तौ (वालीको ऐसा) सन्देह हुआ मानों वालोंके जीव जुआँने काटाहै ॥ ३ ॥ फिर जब एक दिन सूर्यको अन्जुली सजाई तौ (रावण) कांखसे निकलकर बड़े शब्दसे गर्जा ॥ ४ ॥

तब पुनि धरि कपीस सो बाँधा ❀ लेआयौ अंगदके राँधा ॥ ५ ॥
बीस भुजा दश सीस सुधारा ❀ चरन दोउ पुनि धरि उरपारा ॥ ६ ॥

तव फिर वन्दरोंके राजा (वाली) ने पकड़के बांधलिया और अंगदके पास ले आया ॥ ५ ॥ वीस वाँह और दश माथोंको सुधार फिर दोनों चरणोंको हृदयके ऊपर रक्खा ॥ ६ ॥

धरि समेटि झूमरि सम कीन्हा ❀ बाँधि सेजपर सोभा दीन्हा ॥ ७ ॥
अंगद खेलि लात सिर मारा ❀ किलकिलाइ किलकै किलकारा ॥ ८ ॥

और पकड़के इकट्ठाकर झोंरेके समान बांधकर खाटपर डाल दिया ॥ ७ ॥ खेलतेमें अंगदने (रावणके) माथेमें लात मारी और वह किलकिलाकर किलकारने लगा ॥ ८ ॥

दो०-तारा चीन्हेउँ रावनहिं, तिहिं छिन दीन्ह छुड़ाइ ॥
जाहु तुरत लंकेस गृह, बहुरि धरिहिं कपिराइ ॥ १९६ ॥

उस समय ताराने रावणको पहिचान छुड़ा दिया (और कहा कि) हे लंकाके स्वामी! जल्दी घर जाओ नहीं तो फिर बन्दरोंका राजा (वाली) पकड़ लेगा ॥ १९६ ॥

चौ०-पुनि रावन आवा तिहिं ठाँई ❀ सहसबाहु जहँ रास बनाई ॥ १ ॥
जलक्रीड़ा जु करहिं सब नारी ❀ विविधभाँति सोभा अति भारी ॥ २ ॥

फिर रावण उस जगह आया जहाँ सहस्रबाहुने रास बनाया था ॥ १ ॥ वहाँ बहुत भाँति और अधिक सुन्दरतासे संपूर्ण स्त्रियां जलमें विहारकर रहीं थीं ॥ २ ॥

आस रासमंडल जहँ रेवा ❀ सुर नर नाग करहिं सब सेवा ॥ ३ ॥
जाइ दीख रावन सुख नाना ❀ हरषसमेत हृदय सुख माना ॥ ४ ॥

और जहाँ गंडकी नदीमें रासमंडल होता था और देवता, मनुष्य और नाग सब आकर सेवा करते हैं ॥३॥ वहां जाकर रावणनें भांति २ का सुख देख प्रसन्नतासे हृदयमें आनन्द माना ॥ ४ ॥

तहँ लंकेश जाइ शिव देखा ❀ शांतरूप अति सुन्दर बेखा ॥ ५ ॥
कमल प्रसून बिल्व पुनि लायऊ ❀ तिहिं चढ़ाय मस्तक पद नायऊ ॥ ६ ॥

तहां लंकेश रावणने जाकर शांतरूप और सुन्दर वेषवाले महादेवजीके दर्शन किये ॥५॥ और कमलपुष्प और बिल्वपत्र जो लाया था सो उनको चढ़ाकर शिवजीके चरणोंमें मस्तक नवाया ॥६॥

जाकै जल क्षोभेउ दससीसा ❀ पढ़े मंत्र सुमिरै गौरीसा ॥ ७ ॥
निलज अशंक आव पुनि तहँवा ❀ कर भुजकेलि सहसभुज जहँवा ॥ ८ ॥

फिर रावणने मंत्र पढ़ महादेवजीका स्मरण किया और जा कर नदीके जलको क्षोभित किया अर्थात् बढ़ाया ॥ ७ ॥ फिर निर्लज्ज और निडर (रावण) वहां आया कि जहां सहस्रबाहु अपनी हजार भुजाओंसे क्रीड़ा कर रहाथा ॥ ८ ॥

दो०–जब प्रचंड जल क्षोभएउ, बूड़ै लाग समाज ॥ ❀
सहसबाहु अति शंक मन, सकल तियनउर लाज ॥ १९७ ॥ ❀

जब बहुत जल बढ़ा और समाज डूबने लगा तौ सहस्रबाहुके मनमें बहुत डर और सब स्त्रियोंके हृदयमें लज्जा हुई ॥ १९७ ॥

चौ०–तब राजासन बोलहिं नारी ❀ अति हि सुंदरी राजकुमारी ॥ १ ॥
सुनहु नृपति आवा कोउ गाढ़ा ❀ अकस्मात नरवद जल बाढ़ा ॥ २ ॥

तब अति सुन्दरी राजकुमारी स्त्रियाँ राजासे बोलीं–॥१॥ हे राजा! सुनो कोई बली आया है कि जिससे अचानक नर्मदाका जल बढ़ा ॥ २ ॥

सुनि राजहिं भा क्रोध अपारा ❀ जस त्रिपुरारि त्रिपुर कहँ जारा ॥ ३ ॥
जाइ दीख रावन तहँ ठाढ़ा ❀ जासु मंत्र जनु जलनिधि बाढ़ा ॥ ४ ॥

सुनकर राजाको इतना अधिक क्रोध हुआ कि जैसा महादेवको त्रिपुर (दैत्य) के भस्म करते समय हुआथा ॥३॥ और तहां जाकर रावणको खड़ा देखा मानों उसीके मंत्रसे समुद्र बढ़ा है ॥४॥

माया प्रबल महाबल भारी ❀ लंकेश्वर कहँ धरिसि प्रचारी ॥ ५ ॥
लै पुनि बांधि गयौ तियपासा ❀ गढ़नि देखि सब परम हुलासा ॥ ६ ॥

(सहस्रबाहुने) बहुत बड़े मायावी, भारी बलवान् रावणको ललकारके पकड़ लिया ॥ ५ ॥ फिर बांधके स्त्रियोंके पास ले आया. वे सब उसकी गढ़निको देखकर बहुत प्रसन्न हुईं ॥ ६ ॥

करि असनान पूजि गौरीसा ❀ हयशाला बाँधिसि दससीसा ॥ ७ ॥
लज्जित दुष्ट भ्रष्ट करि रहई ❀ रिस उर मारि कष्ट बहु सहई ॥ ८ ॥

तब राजाने स्नानकर और महादेवकी पूजा करके रावणको घुड़सालमें बांध दिया ॥ ७ ॥ दुष्ट (रावण) लज्जित हो रहजाता है और हृदयमें गुस्सा रोककर बहुत दुःख सहता है ॥ ८ ॥

दो०-सुनु गिरिजा पावन परम, अब यह कथा रसाल ॥
लै हयशाला बाँधितिहि, बीस भुजा दस भाल ॥ १९८ ॥

(महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! अब बड़ी पवित्र और रसीली इस कथाको सुनो कि उस दस सीस और बीस भुजाओंवाले रावणको लेकर उन्होंने घुड़सालमें बांधलिया ॥ १९८ ॥

चौ०-सकल आइ देखहिं नरनारी ❀ मारहिं लात हँसहिं दे गारी ॥ १ ॥
नाम न कहै रहै सकुचाना ❀ बहुविधि पूछहिं नृपति सुजाना ॥ २ ॥

सब स्त्री पुरुष आकर देखते हैं और लात मारकर गाली देके हँसते हैं ॥ १ ॥ (यद्यपि) चतुर राजा बहुत तरह पूछता है (परन्तु) वह नाम नहीं बतलाता, लजाकर रहजाता है ॥ २ ॥

नृत्य करहिं रंभादिक नारी ❀ दसहु माथ दसदीपक बारी ॥ ३ ॥
कछुक दिवस इहि भाँति गवाँवा ❀ सो पुलस्त्यमुनि जाइ छुड़ावा ॥ ४ ॥

दशों मस्तकोंके ऊपर दशदीपक जलाके रंभादिक अर्थात् देवांगना आदि नाच करती हैं ॥ ३ ॥ कुछ दिन इस भाँति बिताये फिर पुलस्त्य मुनिने जाकर छुड़ादिया ॥ ४ ॥

चला तुरंत महाअभिमानी ❀ नलकी शाप आइ नियरानी ॥ ५ ॥
मारग जात दीख विबुधारी ❀ अति अनूप सुंदरबर नारी ॥ ६ ॥

बड़ा अभिमानी (रावण) शीघ्र चला और नल (कूवर) का शाप पास आन पहुँचा ॥ ५ ॥ राक्षस (रावण) ने एक बड़ी अनौखी और सुन्दर स्त्रीको मार्गमें जाते हुये देखा कि-॥ ६ ॥

चंदनपुष्पपत्र कर थारी ❀ पूजन चलीजाय त्रिपुरारी ॥ ७ ॥
देखि उर्वशी मन सकुचानी ❀ तब रावन बोला मृदु बानी ॥ ८ ॥
को तुम कहाँ गमन तिय कीन्हा ❀ लज्जावश उन्ह उतर न दीन्हा ॥ ९ ॥

जो हाथमें चन्दन, फूल और पत्रोंकी थाली लिये हुये महादेवजीको पूजने चली जातीथी ॥७॥ वह उर्वशी इसे देखकर मनमें लज्जित हुई· तब रावण मीठी २ वाणीसे बोला ॥ ८ ॥ हे कामिनी ! तुम कौन हो ? कहां जाती हो ? पर उसने सकुचाकर उत्तर न दिया ॥ ९ ॥

दो०-निकट जाइ लंकेस तब, गहै अंक भरि लीन्ह ॥
पुत्रवधू जु कुबेरकी, नहिं विचार कछु कीन्ह ॥ १९९ ॥

तब रावणने पास जाकर और पकड़कर गोदमें भरली । वह कुबेरके बेटेकी बहू थी (परन्तु रावणनें) कुछ विचार न किया ॥ १९९ ॥

चौ०-चीन्हताहि मन शंका आई ❀ घाटिकर्म कीने पछिताई ॥ १ ॥
मन पछिताइ सोच उर भयेउ ❀ लंकेश्वर लंका कहँ गयेऊ ॥ २ ॥

उसको पहचान मनमें डर हुआ और नीच कर्म किया (इससे) पछिताता है ॥ १ ॥ रावण मनमें पछिताया और हृदयमें सोच हुआ (फिर वह) लंकाको लौट गया ॥ २ ॥

चली उर्वशी आई ताहाँ ❀ अलकापुर नलकूबर जाहाँ ॥ ३ ॥
समाचार सब पतिहिं सुनावा ❀ सुनी कथा मनमहँ पछितावा ॥ ४ ॥

उर्वशी वहाँ चली आई जहाँ अलकापुरीमें नलकूबर था ॥ ३ ॥ सब हाल (अपने) पतिको सुनाया (वह) कथा सुनकर मनमें पछिताया ॥ ४ ॥

दीन्ह शाप करि क्रोध अपारा ❀ रावनवंस होहु क्षयकारा ॥ ५ ॥
चलेउ शाप लंकामहँ आई ❀ दशकंधर बैठेउ जिहिं ठाई ॥ ६ ॥

और अपार कोपकर शाप दिया कि हे रावण! तेरे वंशका नाश हो ॥ ५ ॥ वह शाप चला चला लंकामें उस जगह चला आया कि जहां रावण बैठा था ॥ ६ ॥

आगे आइ ठाढ़ि भा शापा ❀ तब लंकेश्वर अतिभय काँपा ॥ ७ ॥
सडर सकोप चितव तिहिं ओरा ❀ नलकूबरकर शाप सुघोरा ॥ ८ ॥

(जब) शाप आगे जा खड़ा हुआ तब रावण बहुत डरसे कांपने लगा ॥ ७ ॥ (और) नलकूबरके बड़े शापकी तरफ भय और क्रोधसहित देखा ॥ ८ ॥

दो०-शापहिं अंगीकार कर, मनमहँ कीन्ह विचार ॥
ऋषिन्ह दंड नहिं दीन्ह मैं, रोषेउ लंकभुवार ॥ २०० ॥

रावणने शापको अंगीकार कर मनमें विचार किया कि मैने ऋषियोंको दंड नहीं दिया और क्रोधित हुआ ॥ २०० ॥

चौ०-दूत चारि तिहिं पठव भवानी ❀ भरद्वाजमुनि कथा बखानी ॥ १ ॥
आये दूत ऋषिन्हके गेहा ❀ देखत सबहिं भये संदेहा ॥ २ ॥

(याज्ञवल्क्य)ने भरद्वाज मुनिसे कथा वर्णन की, (महादेव कहते हैं) हे पार्वती! फिर उस(रावण)ने चार दूत भेजे ॥१॥ जब दूत ऋषियोंके घर आये तौ देखतेही सबको सन्देह हुआ ॥ २ ॥

पूछहिं ऋषय कहाँ पगुधारा ❀ कहहु कुसल लंकेसभुवारा ॥ ३ ॥
तात कुसल अब भइ विपरीता ❀ तुमसन मागिन्ह दंड अभीता ॥ ४ ॥

ऋषि पूछने लगे कि कहो, कहां चरण फेरे अर्थात् कहां पधारे, और रावणकी कुशल कहो ॥३॥ (दूत बोले) हे प्यारे! अब कुशल उलटी हुई कि जो तुमसे निडर हो दंड मांगा है ॥ ४ ॥

देहु दंड अस कहहि रिसाई ❀ कै गिरिकंदर जाहु पराई ॥ ५ ॥
सुनि अस वचन सबहिं दुख पावा ❀ तुरत एक तिन्ह पात्र मँगावा ॥ ६ ॥

क्रोधित होकर ऐसा कहा है कि (यातो) दंड दो नहीं पहाड़ोंकी कन्दराओंमें भाग जाओ ॥ ५ ॥ ऐसे वचन सुनकर सभीने दुख पाया और उन्होंने तुरंतही एक पात्र मंगवाया ॥ ६ ॥

जिहिं दरबार नीति नहिं भाई ❀ खलमंडली जुरी तहँ आई ॥ ७ ॥
सब मिलकरि बिचार इकठाए ❀ भरि घट रुधिर ऋषय लै आए ॥ ८ ॥
दूतनसौंपि कहा मुनि ज्ञानी ❀ हुइ सकोप बोले यह बानी ॥ ९ ॥

और कहा हे भाई! जिस दरबारमें नीति नहीं है, वहाँ खोटे मनुष्योंका समाज आकर इकट्ठा होता है ॥ ७ ॥ ऐसा विचार सब ऋषि मिलके इकट्ठे हो रुधिरका घड़ा भरकर ले आये ॥ ८ ॥ और दूतोंको सौंपकर मुनि ज्ञानियोंने क्रोधकर यह कहा कि-॥ ९ ॥

दो०-घट उघरत क्षय होइहहु, सहित सकलपरिवार ॥
लेय दूत तहँ आयउ, जहँ रह लंकभुवार ॥ २०१ ॥

घड़ेके उघरतेही संपूर्ण कुटुम्बसमेत (रावण) का नाश होगा। (फिर घड़ेको लेकर) दूत वहाँ आये जहां रावण रहता था ॥ २०१ ॥

चौ०-आये दीख दूत जब रावन ❀ परम हुलास भयो मनभावन ॥ १ ॥
अग्र आनि घट धरा उतारी ❀ देखि शंक लंकापति भारी ॥ २ ॥

जब रावणने इन दूतोंको आये हुये देखा तो मनमें बड़ा प्रसन्न हुआ ॥ १ ॥ (दूतोंने) आगे आकर घड़ा उतारके रखदिया (उसे देख) रावणको बड़ा भय हुआ ॥ २ ॥

बोलिन्ह बचन कहा यह भाई ❀ सकल कथा तिन्ह नृपहिं सुनाई ॥ ३ ॥
यह घटतैं लंकापति नासा ❀ सब दूतन्ह अस बचन प्रकासा ॥ ४ ॥

(रावण) यह वचन बोला हे भाई ! यह क्या है ? तब उन दूतोंने सब कथा राजाको सुनाई ॥ ३ ॥ सब दूतोंने ऐसा वचन प्रकाशित किया कि इस घड़ेसे रावणका नाश होगा ॥ ४ ॥

यह घट ले उत्तर दिशि जाहू ❀ जतनसमेत धरहु लै ताहू ॥ ५ ॥
सुनि नृपबचन चले ते तैसें ❀ जनकरायके देशहि पैसें ॥ ६ ॥
करहिं बिचार करिय अब सोई ❀ उत्तम थल घट राखिय जोई ॥ ७ ॥

(तब रावणने कहा) इस घड़ेको लेकर उत्तर दिशामें जाओ और तहां उपायसमेत (इसे) रक्खो ॥ ५ ॥ वे (दूत) राजाके वचन सुनकर वैसेही चले और राजा जनकके देशमें पहुंचे ॥ ६ ॥ (वहां) विचार करने लगे कि अब वही करना चाहिये जिससे घड़ा अच्छी जगहमें रक्खा जावे ॥ ७ ॥

दो०–अति उत्तम उत्तर दिशा, जनकरायकर देस ॥
दूतन्ह करी विचारि मन, कीन्हौं सुथल प्रवेस ॥ २०२ ॥

अत्यंत श्रेष्ठ उत्तर दिशामें राजा जनकका देश है, दूतोंने मनमें ऐसा विचार कर सुन्दर जगहमें प्रवेश किया ॥ २०२ ॥

चौ०–क्षेत्रमाँझ घट धरा उतारी ❀ सो न पुनीतहेतु बिबुधारी ॥ १ ॥
दैवयोग तहँ परा अकाला ❀ बिन बरसें भइ प्रजा बिहाला ॥ २ ॥

घड़ा उतारकर खेतमें रक्खा जो राक्षस (रावण) के लिये अच्छा कारण नहीं था ॥ १ ॥ दैवयोग कहिये ईश्वरकी इच्छासे वहाँ (जनकके देशमें) अकाल पड़ा और विना (जल) वरसे प्रजा दुखी हुई ॥२॥

रोग सोक चहुँ ओर निहारी ❀ भई बिकलता भूपतिभारी ॥ ३ ॥
सतानन्द तब कहेउ विचारी ❀ करहु यज्ञ नृप बरखै वारी ॥ ४ ॥

चारों ओर रोग तथा दुःख देखकर राजाको बड़ी व्याकुलता हुई ॥ ३ ॥ तब सतानन्द (मुनि) ने विचारके कहा–हे राजा ! यज्ञ करो (जिससे) जल वर्षे ॥ ४ ॥

जनक यज्ञ तहँ कीन्ह अरंभा ❀ रचे कनककदलीके खंभा ॥ ५ ॥
कियौ मेखला मनिमय पूरी ❀ भूमि सुहावन पावन भूरी ॥ ६ ॥

वहां जनकने यज्ञका आरंभ किया और सुवर्णके केलोंके खंभ बनाये ॥५॥ बहुत सुन्दर शोभायमान पवित्र पृथ्वीमें मणिसहित मेखला बनाई ॥ ६ ॥

नृपति पुरोहितसासन पाई ❀ चामीकरहल रचा बनाई ॥ ७ ॥
हाटकलांगल मही सुधारी ❀ तहाँ प्रगट भइ ऋषियकुमारी ॥ ८ ॥

राजाने पुरोहितकी आज्ञा पाकर सुवर्णका हल रचके बनाया ॥ ७ ॥ सुवर्णके हलसे पृथ्वी जोती, वहाँ ऋपिकन्या उत्पन्न हुई ॥ ८ ॥

भुजा नाम कहि निकट बुलाई ❀ लीनी नृपतिहि कंठ लगाई ॥ ९ ॥
कन्या देखि अनूप भवानी ❀ सुता मानि राजा गृह आनी ॥ १० ॥
नाम जानकी परमपुनीता ❀ नारद आइ कहा पुनि सीता ॥ ११ ॥

राजा (जनक) ने पृथ्वीकी कन्या कहकर पास बुलाई और कंठसे लगाली ॥९॥ पार्वतीके समान

सुन्दर कन्याको देख राजा (अपनी) बेटी मानकर घर ले आया ॥ १० ॥ और बहुत श्रेष्ठ जानकी नाम रक्खा· फिर नारदजीने आकर सीता कहा ॥ ११ ॥

छं०-कहि पुनि सीता परमपुनीता आदि ज्योतकी शक्ति सही । ❀
नृप नीतिविधाना परम सुजाना आदि मध्य अवसानमही ॥ ❀
भवउद्भवकरनी पालनहरनी नेति नेति यह वेद कहै । ❀
तुव कृत्यप्रकाशी भुजाबिलासी तीनिलोकमहँ पूरि रहै ॥१८॥ ❀

फिर (नारदजीने) कहा, हे नीतिके जाननेवाले ! हे अति चतुर राजा ! सीता अत्यन्त पवित्र और निश्चय करके आदि ज्योतिकी शक्ति और पृथ्वीकी आदि, मध्य तथा अन्तरूपी है, और वेद निश्चय कर २ के कहते हैं कि यह संसारको उत्पन्न पालन, और नाश करनेवाली है और तुम्हारे सुन्दर कर्मोंको प्रकाशित करनेवाली आनन्दस्वरूप तीनों लोकोंमें पूर्ण रहैगी ॥ १८ ॥

दो०-सकल कथा नृपजनकसों, नारद कही बखानि ॥ ❀
सकल सुलक्षणि लक्ष्मिगुण, जगदंबा जिय जानि ॥ २०३ ॥ ❀

नारदजीने राजा जनकसे सम्पूर्ण कथा वर्णन कर कही कि तुम अपने मनमें इसे सम्पूर्ण सुन्दर लक्षणोंसे भरीपूरी लक्ष्मीके समान गुणवाली जगन्माता जानो ॥ २०३ ॥

चौ०-जनक सविनय कहत कर जोरे ❀ नाथ मनोरथ पूजे मोरे ॥ १ ॥
चरन पखारि सुथल बैठारी ❀ विनय कीन्ह अस्तुति विस्तारी ॥ २ ॥

जनक आधीनीसे हाथ जोड़कर कहनेलगे कि हे स्वामी ! मेरी इच्छा पूरी हुई ॥१॥ चरण धोय सुन्दर आसनपर बिठलाय विनयसे बखानकर स्तुति की ॥ २ ॥

परम हुलास बचन शुभ भाषा ❀ चरणोदक ले माथे राषा ॥ ३ ॥
धन्य धन्य कहि सुताप्रभाऊ ❀ पुनि असिप्रीति कीन्हि नहिं काऊ ॥ ४ ॥

बड़े आनन्दसे शुभवचन कहे और चरणामृत ले मस्तकपर रक्खा ॥३॥ (प्रथम) बेटीके प्रभावकी बड़ाईकर कहा-(हे मुनि !) ऐसी प्रीति किसीने नहीं की ॥ ४ ॥

जो तुम कृपा कीन्ह पगु धारे ❀ मिटे अमंगल दोष हमारे ॥ ५ ॥
अब मोहि भा भरोस मुनिनाथा ❀ भयो धन्य मैं गुनगनगाथा ॥ ६ ॥

जो तुमने दया करके चरण धारे इससे हमारे दुःख दोष दूर हुये ॥ ५ ॥ हे गुणोंके समूह ! हे मुनिनाथ ! अब मुझे भरोसा हुआ कि मेरा जीवन धन्य हुआ ॥ ६ ॥

साधु विदेह राजश्री जाकी ❀ उपमा और कहौं नृप काकी ॥ ७ ॥
तुम उपमा उपमेय और सब ❀ जहाँ प्रगट भइ भुजा आइ अब ॥ ८ ॥

(नारद बोले) हे साधु राजा जनक ! जिसको लक्ष्मी वश होरही है उसको और किस राजाकी उपमादूँ ॥७॥ तुम आपही उपमा और सब उपमेय हो कि जहां अब आकर सीताजी उत्पन्न हुईं ॥८॥

दो०-जोग भोगमें गोइ मन, कियो न प्रगट प्रभाउ ॥ ❀
भये विदेह विदेह सुनि, बिदा भये मुनिराउ ॥ २०४ ॥ ❀

जोग भोगमें मनको छिपाकर प्रभाव प्रगट नहीं किया । (ऐसे बचन) सुनकर जनकजीको देहकी सुध न रही और मुनिराज नारद बिदा हुये ॥ २०४ ॥

चौ०-कहि सुकथा ऋषिराउ सिधाए ❀ बहुरि दूत लंकापुर आए ॥ १ ॥
कहहिं जाइ आए हम राषी ❀ सो शंकर गिरिजा मन भाषी ॥ २ ॥

सुन्दर कथा कहकर ऋषिराज नारदजी विदाहुये. फिर दूत लंकापुरीमें आये ॥ १ ॥ (और कहा) हम जाके रख आये सो (वही कथा) महादेवजीने पार्वतीजीसे चित्तलगाकर कही ॥ २ ॥

याज्ञवल्क्य सुनि कथा रसाला ❀ साधु साधु मुनि परम कृपाला ॥ ३ ॥
पुनि मुनि कहिउ कथाउपदेसा ❀ जग जीतिहुँ सब लंक नरेसा ॥ ४ ॥

याज्ञवल्क्य (बोले) हे कृपानिधान साधु मुनि ! इस रसीली कथाको सुनो ॥ ३ ॥ फिर मुनि (याज्ञवल्क्य) ने कथाका उपदेश कहा कि रावणने सब संसार जीत लिया ॥ ४ ॥

चारिठाउँ हारिसि भइ त्रासा ❀ सकल देव कीन्हे निजदासा ॥ ५ ॥

इति क्षेपक.

रवि ससि पवन बरुन धनधारी ❀ अग्नि काल यम सब अधिकारी॥ ६ ॥

(रावणको) चार जगह हार जानेसे दुःख हुआ (इस लिये) सब देवता अपने सेवक कर लिये ॥५॥ (इति क्षेपक) और सूर्य, चन्द्रमा, पवन, वरुण, कुवेर, अग्नि, काल, यमराज, और सम्पूर्ण अधिकारी ६

किन्नर सिद्ध मनुज सुर नागा ❀ हठि सबहीके पंथहि लागा ॥ ७ ॥
ब्रह्मसृष्टि जहँलगि तनुधारी ❀ दशमुखवशवर्ती नरनारी ॥ ८ ॥
आयसु करहिं सकल भयभीता ❀ नमइँ आइ नित चरन विनीता ॥ ९ ॥

किन्नर, सिद्ध, मनुष्य, देवता, और नाग इन सबके पीछै पड़गया ॥ ७ ॥ ब्रह्माकी सृष्टिमें जहांतक देहधारी और नरनारी हैं (वे सम्पूर्ण) रावणके आज्ञाकारी हैं ॥ ८ ॥ सब डरसे दुखी हो आज्ञा मानते हैं और नित्य आकर झुक २ कर (रावणके) चरणोंको नमस्कार करते हैं ॥ ९ ॥

दो०-भुजबल विश्वहि वश्य कर, राखेसि कोउ न स्वतंत्र ॥ ❀
मंडलीक महि रावन, राज करै निज मंत्र ॥ २०५ ॥ ❀

भुजाओंके बलसे संसारको वशकर किसीको स्वतंत्र न रक्खा. पृथ्वीपर रावण चक्रवर्ती राजा होगया और अपनेही विचारसे राज्य करने लगा ॥ २०५ ॥

देव जक्ष गंधर्व नर, किन्नर नागकुमारि ॥ ❀
जीति बरी निजबाहुबल, बहु सुंदरि वरनारि ॥ २०६ ॥ ❀

देवता, यक्ष, गंधर्व, मनुष्य, किन्नर और नागोंकी कन्या और बहुतसी सुन्दर श्रेष्ठ स्त्रियां अपने बाहुबलसे जीतके व्याहीं ॥ २०६ ॥

चौ०-इंद्रजीत सन जो कछु कहेऊ ❀ सो सब जनु पहिलै करि रहेऊ ॥ १ ॥
प्रथमहिं जिन कहँ आयसु दीन्हा ❀ तिन्हकर चरित सुनहु जो कीन्हा ॥ २ ॥

मेघनादसे जो कुछ कहा वह सब मानों पहलेही कर रहा है ॥ १ ॥ प्रथम जिनको आज्ञा दीनी उनके चरित्र सुनो जो किये ॥ २ ॥

देखत भीमरूप सब पापी ❀ निसिचरनिकर देवपरितापी ॥ ३ ॥
करहिं उपद्रव असुरनिकाया ❀ नाना रूप धरहिं करि माया ॥ ४ ॥

देखनेमें भयानक स्वरूप संपूर्ण पापी राक्षसोंके झुंड देवताओंको दुःख देनेवाले, ॥ ३ ॥ असुरोंके समूह मायासे बहुतसे रूप धारण करके उपद्रव करने लगे ॥ ४ ॥

जेहिविधि होइ धर्म निर्मूला ❀ सो सब करहिं वेदप्रतिकूला ॥ ५ ॥
जेहि जेहि देस धेनु द्विज पावहिं ❀ नगर ग्राम पुर आगि लगावहिं ॥ ६ ॥

जिस प्रकार धर्म नाश हो, सो वे सब वेदविरुद्ध करते हैं ॥ ५ ॥ जिस २ देशमें गौ और ब्राह्मण पाते हैं, (उसी) शहर, गांव और नगरमें आग लगाते हैं ॥ ६ ॥

सुभ आचरन कतहुँ नहिं होई ❀ वेद विप्र गुरु मान न कोई ॥ ७ ॥
नहिं हरिभक्ति यज्ञ जप दाना ❀ सपनेहु सुनिय न वेद पुराना ॥ ८ ॥

अच्छे काम कहीं नहीं होते. वेद, ब्राह्मण और गौको कोई नहीं मानता ॥ ७ ॥ भगवानकी भक्ति, यज्ञ और जप, दान, कहीं नहीं होते हैं और वेद पुराण स्वप्नमेंभी नहीं सुनाई देते ॥ ८ ॥

छं०-जप जोग विरागा तप मख भागा स्रवन सुनै दससीसा । ❀
आपुन उठि धावै रहै न पावै धरि सब घालै खीसा ॥ ❀
अस भ्रष्ट अचारा भा संसारा धर्म सुनिय नहिं काना । ❀
तेहि बहुविधि त्रासै देस निकासै जो कह वेदपुराना ॥ १९ ॥ ❀

रावण जहाँ कहीं जप, योग, वैराग्य, तप, यज्ञभाग सुनै (वहांही) आप उठ दौड़े और खिस्यायकर सब (यज्ञ) विध्वंसकर डाले, रहने नहीं देय, संसारमें ऐसा बुरा प्रचार हुआ कि धर्म कानोंसे सुनाई नहीं देने लगा, और जो वेद पुराण कहताथा उसे बहुत प्रकार दुःख दे देशसे निकाल देताथा १९

सो०-बरनि न जाइ अनीति, घोर निसाचर जो करहिं । ❀
हिंसापर अति प्रीति, तिनके पापहिं कवन मिति ॥ २६ ॥ ❀

राक्षस जो भयंकर अनीती करते हैं वह वर्णन नहीं की जाती. (जिनकी) हिंसापर बहुत प्रीति है उनके पापोंका क्या ठिकाना है ? ॥ २६ ॥

चौ०-बाढ़े बहु खल चोर जुआरी ❀ जे लंपट परधन परनारी ॥ १ ॥
मानहिं मातु पिता नहिं देवा ❀ साधुनसों करवावहिं सेवा ॥ २ ॥

बहुतसे दुर्जन, चोर और ज्वारी बढ़ गये, जो पराये धन और पराई स्त्रीके चाहनेवाले धूर्त हैं ॥ १ ॥ माता, पिता और देवताओंको नहीं मानते, साधुओंसे सेवा कराते हैं ॥ २ ॥

जिनके यह आचरन भवानी ❀ ते जानहुँ निसिचरसम प्रानी ॥ ३ ॥
अतिशय देखि धर्मकी हानी ❀ परम सभीत धरा अकुलानी ॥ ४ ॥

(महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! जिनके ये चाल चलन हैं, वे प्राणी राक्षसोंके समान जानों ॥ ३ ॥ धर्मकी अत्यंत हानि देखकर पृथ्वी बहुत डरी और अकुलाई ॥ ४ ॥

गिरि सरि सिंधु भार नहिं मोही ❀ जस मोहि गरुअ एक परद्रोही ॥ ५ ॥
सकल धर्म देखहिं विपरीता ❀ कहि न सकैं रावन भयभीता ॥ ६ ॥

(और वह कहने लगी कि) पहाड़, नदी और समुद्रोंका बोझ मुझको (ऐसा भारी) नहीं जैसा एक दूसरेसे जलनेवाला भारी है ॥ ५ ॥ सब लोग उलटे धर्म देखते हैं पर रावणके डरके मारे कह नहीं सकते ॥ ६ ॥

---

१ जैसा प्रपन्नगीतामें शेषजीका वचन है कि–

"न भूमिपर्वतानां च न मे भारो वनस्पतेः । विष्णुभक्तिविहीनस्य तस्य भारः सदा मम ॥ १ ॥

अर्थात् मुझे भूमि पर्वत वनस्पतिका भार कुछ नहीं है. मुझे तौ विष्णुकी भक्तिरहित मनुष्यका भार व्यापता है.

धेनुरूप धरि हृदय विचारी ❀ गई तहाँ जहँ सुरमुनि झारी ॥ ७ ॥
निजसंताप सुनायसि रोई ❀ काहूते कछु काज न होई ॥ ८ ॥

(पृथ्वी) गौका रूप धारणकर और हृदयमें विचारकर (वहाँ) गई जहाँ संपूर्ण देवता और मुनीश्वर थे ॥ ७ ॥ रोकर अपना दुःख सुनाया पर किसीसे कुछ काम न हुआ ॥ ८ ॥

छं०–सुर मुनि गंधर्वा मिलिकर सर्वा गये विरंचिके लोका। ❀
सँग गोतनुधारी भूमिविचारी परम विकल भय शोका ॥ ❀
ब्रह्मा सब जाना मन अनुमाना मेरौ कछु न बसाई। ❀
जाकरि तैं दासी सो अविनासी हमरउ तोर सहाई ॥ २० ॥ ❀

देवता, मुनि और गंधर्व सब मिलकर ब्रह्माके लोकको गये. (उनके) संग अत्यंत व्याकुल और डरसे दुखी विचारी पृथ्वीभी गौका शरीर धारण कर गई. ब्रह्माने सब मर्म जान मनमें ठानकर कहा कि मेरा कुछ वश नहीं. (किन्तु) जिसकी तू दासी है, वही अविनाशी हमारा और तेरा सहायक है ॥ २० ॥

सो०–धरनि धरहु मन धीर, कह विरंचि हरिपद सुमरि ॥ ❀
जानत जनकी पीर, प्रभु भंजहिं दारुन विपति ॥ २७ ॥ ❀

ब्रह्माने भगवान्के चरणोंका स्मरणकर कहा; हे पृथ्वी ! मनमें धीरज धरो. भगवान् भक्तोंके दुःखको जानते हैं, (वेही) कठिन विपत्तिका नाश करेंगे ॥ २७ ॥

चौ०–बैठे सुर सब करहिं विचारा ❀ कहँ पाइय प्रभु करिय पुकारा ॥ १ ॥
पुर बैकुंठ जान कह कोई ❀ कोउ कह पयनिधिमहँ बस सोई ॥ २ ॥

संपूर्ण देवता बैठे विचार करते हैं कि भगवान्को कहां पावें ? और पुकार करैं ॥ १ ॥ कोई वैकुंठ लोकमें जानेको कहता है कोई कहता है कि वह समुद्रमें रहते हैं ॥ २ ॥

जाके हृदय भक्ति जस प्रीती ❀ प्रभु तेहि प्रगट सदा यह रीती ॥ ३ ॥
तेहि समाज गिरिजा मैं रहेऊँ ❀ अवसर पाय बचन इक कहेऊँ ॥ ४ ॥

सदाकी यह रीति है कि जिसके मनमें जैसी भक्ति और प्रीति है, उसको भगवान् तैसेही प्रत्यक्ष होते हैं ॥३॥ हे पार्वती ! उस समाजमें मैं भी था सो समय पाकर मैंने (यह) एक वचन कहा कि– ॥४॥

हरि व्यापक सर्वत्र समाना ❀ प्रेमते प्रगट होहिं मैं जाना ॥ ५ ॥
देस काल दिसि विदिसिहुमाहीं ❀ कहहु सो कहाँ जहाँ प्रभु नाहीं ॥ ६ ॥

मैं जानताहूँ कि, प्रभु सब जगह[1] समान व्यापक हैं और प्रेमसे प्रगट होते हैं ॥ ५ ॥ देश, काल, दिशा और विदिशाओंमेंभी कहो वह कौनसी जगह है जहाँ भगवान् नहीं हैं ॥ ६ ॥

अग जगमय सब रहित बिरागी ❀ प्रेमतें प्रगट होहिं जिमि आगी ॥ ७ ॥
मोर बचन सबके मन माना ❀ साधु साधु करि ब्रह्म बखाना ॥ ८ ॥

अग अर्थात् जो न चले, जैसे पर्वत वृक्षआदि. और जग कहिये जंगम, जैसे मनुष्य पशुआदि इन सबमें व्याप्त हैं और सबसे रहित हैं और संसारके राग द्वेषादि उनमें नहीं. ऐसे भगवान् प्रेमसे ऐसे प्रगट होते हैं. जैसे (काठसे) अग्नि उत्पन्न होती है ॥ ७ ॥ मेरा वचन सबके मन भाया (तब) ब्रह्माजीने साधु २ अर्थात् बहुत अच्छा २ ऐसा कहकर बड़ाई करी ॥ ८ ॥

---

(१) "जले विष्णुः स्थले विष्णुर्विष्णुः पर्वतमस्तके । ज्वालमालाकुले विष्णुः सर्वं विष्णुमयं जगत् ॥१॥" अर्थ स्पष्ट है ॥

दो०-सुनि बिरंचि मन हरषतनु, पुलक नयन वह नीर ॥
अस्तुति कर अज जोरि कर, सावधान मतिधीर ॥ २०७ ॥

और सुनकर ब्रह्माजीके मनमें आनन्द हुआ, शरीर पुलकायमान होगया, और नेत्रोंसे नीर बहने लगा. फिर ब्रह्मा मतिको स्थिरकर सावधान हो हाथ जोड़कर स्तुति करने लगे ॥ २०७॥

छं०-जयजय सुरनायक जनसुखदायक प्रनतपाल भगवंता ।
गोद्विजहितकारी जय असुरारी सिंधुसुताप्रियकंता ॥
पालन सुरधरनी अदभुत करनी मर्म न जानै कोई ।
जो सहजकृपाला दीनदयाला करो अनुग्रह सोई ॥ २१ ॥

हे देवताओंके स्वामी! मनुष्योंको सुख देनेवाले! दीनोंकी रक्षा करनेवाले भगवन्! तुम्हारी जय होय! हे गौब्राह्मणोंके हित करनेवाले! राक्षसोंके नाश करनेवाले! लक्ष्मीजीके प्यारे स्वामी! तुम्हारी जय होय. देवता और पृथ्वीके पालन करनेवाले! अचंभित कर्म करनेवाले! जिनका भेद कोई नहीं जानता, स्वभावहीसे कृपालु, दीन मनुष्योंपर कृपा करनेवाले! (मेरे ऊपर) कृपा करो ॥ २१॥

जयजय अविनासी सब घटवासी व्यापक परमानंदा ।
अभिगति गोतीता चरितपुनीता मायारहित मुकुंदा ॥
जिहिंलागि बिरागी अतिअनुरागी विगतमोहमुनिवृंदा ।
निसिवासर ध्यावहिं हरिगुण गावहिं जयति सच्चिदानंदा २२

हे भगवन्! अविनाशी घट २ वासी! सर्वव्यापक! परम आनन्दस्वरूप! गति और इन्द्रियोंसे परे पवित्र चरित्रवाले! मायासे रहित, मोक्षके देनेवाले, जिनको मुनिलोग, रागको छोड़ बड़ी प्रीतिसे मोहरहित हो, रात्रिदिन ध्यान करते हैं और भगवान्के गुणोंको गाते हैं ऐसे सच्चिदानन्दको नमस्कार है ॥ २२ ॥

जेहि सृष्टि उपाई त्रिविध बनाई संग सहाय न दूजा ।
सो करहु अघारी चिंत हमारी जानिय भक्ति न पूजा ॥
जो भवभयभंजन मुनिमनरंजन गंजन विपतिवरूथा ।
मन बच क्रम बानी छाँड़ि सयानी सरन सकल सुरजूथा ॥२३॥

जिसने विना किसीकी सहायताके सृष्टि उत्पन्न (करने) के लिये तीन विधि (अर्थात् रजोगुण सतोगुण और तमोगुणरूपी ब्रह्मा, विष्णु, महादेवकी मूर्त्तियां) वनाई, सो हे पापोंके हरता! हमारी चिन्ता दूर करो. हम भक्ति पूजा कुछ नही जानते हैं. जो जगत्के भयको नाश करनेवाले, भक्तजनोंके चित्तको प्रसन्न करनेवाले, दुःखके समूहको नाश करनेवाले हैं, और सब देवताओंके समूह मन क्रम बचनसे चतुराईकी वाणीको छोड़कर जिनकी शरणमें हैं ॥ २३ ॥

शारद श्रुति शेषा ऋषय अशेषा जा कहँ कोउ नहिं जाना ।
जेहि दीन पियारे वेद पुकारे द्रवो सो श्रीभगवाना ॥
भववारिधिमंदर सब बिधि सुंदर गुणमंदिर सुखपुंजा ।
मुनि सिद्ध सकल सुर परम भयातुर नमत नाथपदकंजा॥२४॥

और सरस्वती, वेद, शेषनाग और संपूर्ण ऋषि जिनको कोई नहीं जान सकता है, और जिनको दीन प्यारे हैं, यह वेद पुकारते हैं, सो श्रीभगवान हमारे उपर कृपा करैं, संसाररूपी समुद्र मथनेके

लिये मन्दराचलके समान, सब प्रकारसे सुन्दर, गुणोंके मन्दिर और सुखस्वरूप हैं. यह सुनकर अत्यन्त भयसे उतावले हो, हम संपूर्ण देवता तुम्हारे चरणकमलोंको नमस्कार करते हैं ॥ २४ ॥

दो०–जानि भयातुर भूमिसुर, वचन समेतसनेह ॥ ❀
गगनगिरा गंभीर भइ, हरनशोकसंदेह ॥ २०८ ॥ ❀

पृथ्वी और देवताओंको डरसे दुखी जानकर प्रीतिसहित वचनोंसे दुःख और सन्देहकी नाश करनेवाली गंभीर आकाशवाणी हुई ॥ २०८ ॥

चौ०–जनि डरपहु मुनिसिद्धसुरेशा ❀ तुमहिं लागि धरिहौं नरभेषा ॥ १ ॥
अंशनसहित मनुजअवतारा ❀ लइहौं दिनकरवंश उदारा ॥ २ ॥

हे मुनि, सिद्ध और देवताओंके स्वामी ! (तुम) मत डरो. मैं तुम्हारेही लिये मनुष्यकी देह धारण करूंगा ॥ १ ॥ और बड़े उदार सूर्यवंशमें अंशोंसहित मनुष्यका अवतार लूँगा ॥ २ ॥

कश्यपअदिति महातप कीन्हा ❀ तिनकहँ मैं पूरव बर दीन्हा ॥ ३ ॥
ते दशरथ कौशल्यारूपा ❀ कोशलपुरी प्रगट नरभूपा ॥ ४ ॥

क्यौं कि जब कश्यप[1] अदितिने बड़ा तप किया, (तब) मैंने पहले उनको वर दियाथा ॥ ३ ॥ और वे दशरथ और कौशल्याके रूपसे अयोध्यापुरीमें राजा हुये हैं ॥ ४ ॥

तिनके गृह अवतरिहौं जाई ❀ रघुकुलतिलक सो चारिउ भाई ॥ ५ ॥
नारदवचन सत्य सब करिहौं ❀ परमशक्तिसमेत अवतरिहौं ॥ ६ ॥

सो (हम) चारों भाई रघुवंशमें तिलकरूप उनके घर अवतार लेंगे ॥ ५ ॥ (और मैं) नारदजीके सब वचन सच्चे करूंगा और परम लक्ष्मीसमेत अवतार लूंगा ॥ ६ ॥

हरिहौं सकल भूमि गरुआई ❀ निर्भय होहु देवसमुदाई ॥ ७ ॥
गगनब्रह्मबानी सुनि काना ❀ तुरत फिरे सुर हृदय जुड़ाना ॥ ८ ॥
तब ब्रह्मा धरनिहिं समुझावा ❀ अभय भई भरोस जिय आवा ॥ ९ ॥

(मैं) सब पृथ्वीका भार हरूंगा. हे देवताओ! तुम डरो मत ॥ ७ ॥ आकाशवाणीको कानोंसे सुन तुरंत फिरे और देवताओंकी छाती ठंढी हुई ॥ ८ ॥ फिर ब्रह्माजीने पृथ्वीको समझाया तौ वह निडर हुई और उसके जीमें भरोसा हुआ ॥ ९ ॥

दो०–निजलोकहिं विरंचि गये[2] देवन्हइहै सिखाइ ॥ ❀
बानरतनु धरि धरनिमहँ, हरिपद सेवहु जाइ ॥ २०९ ॥ ❀

ब्रह्माजी देवताओंको यों समझाकर अपने लोकको गये कि पृथ्वीपर कपिशरीर धारण कर भगवान्‌के चरणोंका सेवन करो ॥ २०९ ॥

---

(१) अध्यात्मरामायणे—

कश्यपस्य वरो दत्तस्तपसा तोषितेन मे ॥ याचितः पुत्रभावाय तथेत्यंगीकृतं मया ॥ १ ॥
स इदानीं दशरथो भूत्वा तिष्ठति भूतले ॥ तस्याहं पुत्रतामेत्य कौशल्यायां शुभे दिने ॥ २ ॥
चतुर्धात्मानमेवाहं सृजामीतरयोः पृथक् ॥ योगमायाऽपि सीतेति जनकस्य गृहे तदा ॥ ३ ॥
उत्पत्स्यते तया सार्द्धं सर्वं संपादयाम्यहम् ॥ (इसका अर्थ चौपाइयोंसे मिलता है इसलिये नहीं लिखा).

(२) यहां यह शंका होगई कि देवता तो ब्रह्मलोकको गये, और यहां लिखा है कि ब्रह्मा अपने लोकको गये तहां ऐसा जानना कि ब्रह्माका एक निजलोक, दूसरा सुमेरु पर्वतपर सभालोक है. वहां देवता पहुंचे और वहांसे ब्रह्मा अपने लोकको गये.

चौ०–गये देव सब निज निज धामा ❀ भूमिसहित पायउ विश्रामा ॥ १ ॥
जो कछु आयसु ब्रह्मै दीन्हा ❀ हर्षे देव विलंब न कीन्हा ॥ २ ॥

सब देवता अपने २ धामको गये और पृथ्वीसमेत विश्राम पाया ॥ १ ॥ ब्रह्माजीने जो कुछ आज्ञा दी (उसे करनेके लिये सब) देवता प्रसन्न हुये और शीघ्र ॥ २ ॥

बानरदेह धरी क्षितिमाहीं ❀ अतुलितबल प्रताप तिनपाहीं ॥ ३ ॥
गिरि तरु नख आयुध सब वीरा ❀ हरिमारग चितवहिं रणधीरा ॥ ४ ॥
गिरि कानन जहँ तहँ भरिपूरी ❀ रह निज निज अनीक रचि रूरी ॥ ५ ॥

पृथ्वीपर वानरदेह धारण की और उनमें बड़ाभारी, अतुल बल और पराक्रम हुआ ॥ ३ ॥ सब योधा (कि जिनके) पर्वत वृक्ष और नखही हथियार हैं, वे भगवान्की बाट देखने लगे ॥ ४ ॥ और जहाँ तहाँ पर्वत और वनोंमें अपनी २ भरपूर वहुत सुन्दर सेना सजा २ कर रहने लगे ॥५॥

अथ क्षेपक ॥

चौ०–यह चरित्र दशकन्धर जाना ❀ निजमनमहँ उन यह अनुमाना ॥ १ ॥
सूर्यवंशकर जो हैं राजा ❀ ते नहिं करसक मोर अकाजा ॥ २ ॥

जब यह चरित्र रावणने जाना तौ उसने अपने मनमें विचार किया कि–॥ १ ॥ जो सूर्यवंशके राजा हैं वह मेरा विगाड़ नहीं कर सकते ॥ २ ॥

नाम दिलीप भूप जब भयऊ ❀ तिनसमीप रावण तब गयऊ ॥ ३ ॥
सो राजा सरयूतट जाई ❀ सन्ध्याबन्दन करत सुहाई ॥ ४ ॥

जब दिलीप नाम राजा हुआ, तब रावण उसकेपास गया ॥ ३ ॥ वह राजा तौ (उस समय) सरयू (नदी) के किनारे जाकर संध्यावंदन कर रहा था ॥ ४ ॥

बिप्ररूप धरि रावण आवा ❀ पूजाकरि रानिन बैठावा ॥ ५ ॥
तब रावण प्रगटित निजदेहा ❀ रानिन उर भा अतिसंदेहा ॥ ६ ॥

रावण जो ब्राह्मणका रूप धरकर आया था, सो रानियोंने (उसे) पूजा करके बिठाया ॥ ५ ॥ तब रावणने अपनी देह प्रकट की (उसे देख) रानियोंके हृदयमें बड़ा संदेह हुआ ॥ ६ ॥

भाजिगईं सब मन्दिरमाहीं ❀ पुनि वह आवा भूपति पाहीं ॥ ७ ॥
देखा नृप हरिध्यान लगावा ❀ इकचरित्र तहँ भूप दिखावा ॥ ८ ॥

वे सब महलोंमें भाग गई. फिर वह (रावण) राजाके पास आया ॥ ७ ॥ और देखा कि राजा भगवान्के ध्यानमें मगन है तो उसने राजाको एक चरित्र दिखाया. (वह क्या था कि–) ॥ ८ ॥

उत्तरदिशि इक कानन जाई ❀ घेरिस सिंह धेनु वरियाई ॥ ९ ॥
कियौ भीति जब धेनु लवाई ❀ निजमुख आरति कूक सुनाई ॥ १० ॥

उत्तर दिशाके वनमें सिंहने एक गायको हठसे घेर लिया है ॥ ९ ॥ और जब उसने हालकी व्याई गाय डरपाई, तब वह दुखी होकर रँभाई ॥ १० ॥

दो०–धर्मधुरंधर नीतियुत, सुन दिलीप महिपाल ॥
रक्षा मम तुम करहु अब, सिंह मार तत्काल ॥ २१० ॥

हे राजा दिलीप ! सुनो, तुम धर्मात्मा और नीति जाननेवाले हो, इसलिये तुम सिंहको मारकर अब तुरंत मेरी रक्षा करो ॥ २१० ॥

चौ०–सुनि महीप यह आरतबानी ❀ तंदुल इक मार्‍यो शर जानी ॥ १ ॥
मंत्र पढ़ा तंदुल शर आवा ❀ तुरत सिंहकहँ मार गिरावा ॥ २ ॥

राजा (दिलीप) ने ऐसा दुःखका शब्द सुनकर एक चावल वाणके समान मारा ॥ १ ॥ मंत्र पढ़ा हुआ चावलका वाण आया (उसने) शीघ्रही सिंहको मारके गिरा दिया ॥ २ ॥

धरि बटुरूप पूंछ सबकाहू ❀ उत्तरदिशिगा निश्चरनाहू ॥ ३ ॥
मरा सिंह लख निजगृह आवा ❀ देख अमितबल मन भय पावा ॥ ४ ॥

ब्रह्मचारीका रूप धारण कर रावण सबसे पूछता हुआ उत्तर दिशाको गया ॥ ३ ॥ (वहाँ) सिंहको मरा हुआ देखकर अपने घर आया और भारी वल देखकर मनमें डरा ॥ ४ ॥

जब दिलीप निजमन्दिर आये ❀ रानिननें सब वचन सुनाये ॥ ५ ॥
अमितक्रोध करि कर लै पानी ❀ मंत्र पढ़ा मन यह अनुमानी ॥ ६ ॥

जब राजा दिलीप अपने महलोंमें आये, तौ रानियोंने सब वचन सुनाये ॥ ५ ॥ राजाने अत्यंत कोपकर हाथमें जल ले मनमें ऐसा विचारकर मंत्र पढ़ा कि–॥ ६ ॥

गिरित्रिकूट सह लंका सारी ❀ बुड़वहु सब कहँ सिन्धुमझारी ॥ ७ ॥
दक्षिण दिशि नृप जलहिं चलावा ❀ बहुशर हुइ लंका कहँ आवा ॥ ८ ॥

त्रिकूट पर्वतसमेत सब लंका और सब (मनुष्यादिकों) को समुद्रमें डुवा दो ॥ ७ ॥ राजाने (उस) जलको दक्षिण दिशामें फेंका और (वह) वहुतसे वाण होकर लंकाको आया ॥ ८ ॥

दो०–तोड़ फोड़ तिहि लंकको, कछुक बुड़ाइस आय ॥ ❀
मन्दोदरि अतिदीन ह्वै, वचन कहै विलखाय ॥ २११ ॥ ❀

(उस जलने) आकर लंकाको तोड़ फोड़कर कुछ डुवा दिया. तब मन्दोदरी अत्यन्त दीन और दुखी हो वचन कहने लगी ॥ २११ ॥

चौ०–अवधनृपतिकी खैंचि दुहाई ❀ लंका कहँ उनलीन्ह बचाई ॥ १ ॥
तब शरनिकर नृपतिपहँ आये ❀ मन्दोदरिके वचन सुनाये ॥ २ ॥

उन्होंने अयोध्याके राजा (दिलीप) की दुहाई खैंचकर लंकाको वचालिया ॥ १ ॥ तब वाणोंके समूह राजाके पास आये (और उन्होंने) मन्दोदरीके वचन सुनाये ॥ २ ॥

पुनि बहु दिवस गये रघुराजा ❀ प्रगटे अवध कीन यह काजा ॥ ३ ॥
पवन मंत्र पढ़ बाण चलावा ❀ लंका गढ़ कहँ कछुक गिरावा ॥ ४ ॥

फिर वहुत दिवस वीतनेपर अयोध्यामें रघुराजा उत्पन्न हुये और उन्होंने यह कार्य किया कि– ॥ ३ ॥ पवनका मंत्र पढ़के वाण चलाये और लंका गढ़को कुछ गिरा दिया ॥ ४ ॥

मयतनया विनती बहु कीन्ही ❀ भइ वकसीस छाँड़ि शरदीन्ही ॥ ५ ॥
पुनि अज भये नृपति तिहिठामा ❀ वीरधुरीण महाबलधामा ॥ ६ ॥

मय (नाम दैत्य) की बेटी मन्दोदरीने बहुतप्रार्थना की, तो वक्सीस कर वाणोंने छोड़ दी ॥ ५ ॥ फिर उसी जगह (अयोध्या) में बड़े पराक्रमी, अत्यन्त वलके समुद्र, अज नाम राजा हुये ॥ ६ ॥

कछु लंका उन फोर ढहाई ❀ मयतनयाने फेरि बचाई ॥ ७ ॥
अजसुत दशरथ भये नृपाला ❀ रावण उर भा सोच कराला ॥ ८ ॥

कुछ लंका इन्होंने फोड़के ढहा दी फिर मन्दोदरीने बचाई ॥ ७ ॥ फिर, जब अजके पुत्र दशरथ राजा हुये तौ रावणके हृदयमें कठिन सोच हुआ ॥ ८ ॥

भेज दूत यह वचन सुनावा ❀ रावण तुमसन कर मँगवावा ॥ ९ ॥
दशरथ नृप बोले अखवानी ❀ हमहुँ सुना रावण अभिमानी ॥ १० ॥

और दूत भेजकर यह वचन कहाया कि रावणने तुमसे कर मँगवाया है ॥ ९ ॥ राजा दशरथ ऐसे वचन सुन बोले कि हमनेभी सुना है कि रावण बड़ा अभिमानी है ॥ १० ॥

जो वह निजबल कर पट खोलै ❀ अवशिदेहुँ कर गिरा न डोलै ॥ ११ ॥
दूत आय जब वचन सुनाये ❀ रावण तुरत अवधपुर आये ॥ १२ ॥

जो वह अपना बलकर (हमारी पुरी) के किवाड़ खोल ले तौ मैं अवश्य "कर" दूंगा और अपने वचनसे नहीं टलूंगा ॥ ११ ॥ जब दूतने आकर वचन कहे तौ रावण तत्काल अयोध्यापुरीको आया ॥ १२ ॥

पट भेड़े दशरथभूपाला ❀ रावण बहुबल कीन्ह कराला ॥ १३ ॥
खुले न पट तब चला लजाई ❀ करन तपस्याकी मन आई ॥ १४ ॥

राजा दशरथने किवाड़ बन्द किये और रावणने बड़ा कठिन बल किया ॥ १३ ॥ जब किवाड़ न खुले तौ लज्जित होकर चला और मनमें तपस्या करनेकी समाई ॥ १४ ॥

दो०-लग्यौ तपस्या करन अति, विनअहार विनुवारि ॥ ❀
विधि लख तप तिहि असुर कर, बोले वचन सँभारि ॥२१२॥ ❀

बिना भोजन और बिना जलके भारी तपस्या करने लगा. (तब) ब्रह्माजी उस राक्षसकी तपस्याको देख संभालकर बचन बोले ॥ २१२ ॥

चौ०-पुत्र माँगु मोसों वरदाना ❀ जो तेरे चितमहँ अनुमाना ॥ १ ॥
रावण तब बोला मुसक्याई ❀ देहु मोहिं वरदान सुहाई ॥ २ ॥

हे पुत्र! जो तैंने अपने चित्तमें विचारा है, सो मुझसे बरदान मांग ॥ १ ॥ तब रावण हँसकर बोला, मुझे यह सुन्दर वरदान दो कि-॥ २ ॥

दशरथ अंश नाहिं सुत होई ❀ धाता तुम राखहु जनि गोई ॥ ३ ॥
तब ब्रह्मा निजमन दुख पावा ❀ एवमस्तु कह ताहि सुनावा ॥ ४ ॥

दशरथके अंशसे पुत्र न हो. हे ब्रह्मा! तुम छुपाकर मत रक्खो ॥ ३ ॥ तब ब्रह्माने अपने मनमें दुःखपाया परन्तु उससे कहा ऐसाही हो ॥ ४ ॥

हुइ प्रसन्न रावण गृह आवा ❀ कौशलपुर कहँ पुनि किय धावा ॥ ५ ॥
पहुँचि तहाँ बहु कीन उपाई ❀ कौशल्या कहँ लीन चुराई ॥ ६ ॥

तब रावण प्रसन्न हो घर आया और फिर अयोध्यापर चढ़ाई की ॥ ५ ॥ वहाँ पहुँचकर बहुतसे उपाय कर कौशल्याको चुरा लिया ॥ ६ ॥

गयो सिंधुपहँ मच्छ बुलायो ❀ सौंपि ताहि निजघर पुनि आयो ॥ ७ ॥
विधि रखि देह तुरत रावण कर ❀ कन्या जाय लीन्ह तिहितें वर ॥ ८ ॥

और समुद्रपर जाकर मच्छ बुलाकर उसे सौंप फिर अपने घर आया ॥ ७ ॥ तब ब्रह्माने तुरंत ही रावणकी देह धर उस (मच्छ) से सुन्दर कन्या माँग ली ॥ ८ ॥

दो०–मञ्जूषामें बन्दकरि, गे विरंचि निजलोक ॥
रोदन इमि कन्या करै, जिमि वनकूकै कोक ॥ २१३ ॥

और ब्रह्माजी संदूकमें बन्दकर अपने लोकको गये, तब कन्या इस प्रकार रोती हुई जैसे वनमें कोयल कूकती है ॥ २१३ ॥

चौ०–तब सुमंत वनसें चलि आवा ❀ रोदनशब्द सुना तिहिं ठाँवा ॥ १ ॥
बलकर खोलेसि जाय किवारी ❀ कौशल्या यह गिरा उचारी ॥ २ ॥

तब सुमंत वनमें चला आया और उस जगह रोनेका शब्द सुना ॥ १ ॥ फिर जाकर बलसे किवाड़ खोला तौ कौशल्याने यह वात कही कि–॥ २ ॥

मोहिं ले चलहु पितुके धामा ❀ तब सुमन्त ले गयउ ललामा ॥ ३ ॥
देख सुमंतहिं नृपति उचारे ❀ को हौ तुम कहु भेद दुलारे ॥ ४ ॥

मुझे पिताके घर ले चलो. तब सुमन्त सुन्दर स्त्रीको ले चला ॥ ३ ॥ सुमंतको देखकर राजा यह वात बोले कि हे प्यारे ! तुम कौन हो ? अपना भेद कहो ॥ ४ ॥

अवधपुरी दशरथ भूपाला ❀ मंत्री तिनकर हौं भूआला ॥ ५ ॥
सुनि दशरथहिं नृपति बुलवायो ❀ कन्या दे निजमन सुख पायो ॥ ६ ॥

(तब सुमंतने कहा) हे राजा ! अयोध्यापुरीमें राजा दशरथ हैं (मैं) उनका मंत्री हूं ॥ ५ ॥ यह सुनकर राजाने दशरथको बुलवाया और कन्या दे अपने मनमें आनन्दित हुये ॥ ६ ॥

इति क्षेपक.

यह सब रुचिर चरित मैं भाषा ❀ अब सो सुनहु जो बीचहि राषा ॥ ७ ॥
अवधपुरी रघुकुलमनिराऊ ❀ वेदविदित तेहि दशरथनाऊ ॥ ८ ॥
धर्मधुरंधर गुननिधि ज्ञानी ❀ हृदयभक्ति मति शारँगपानी ॥ ९ ॥

यह सब सुन्दर चरित्र मैंने कहा अब उसे सुनो जो बीचमें रह गया ॥ ७ ॥ अयोध्यापुरीमें रघुकुलमें शिरोमणि राजा दशरथ कि जिसका नाम वेदोंमें विदित है ॥ ८ ॥ बड़ा धर्मज्ञ, गुणकी खान, ज्ञानवान् था और शारंगपाणि कहिए भगवान्की भक्ति और श्रद्धा हृदयमें थी ॥ ९ ॥

दो०–कौशल्यादिक नारि प्रिय, सब आचरन पुनीत ॥
पति अनुकूल प्रेम दृढ़, हरिपदकमल बिनीत ॥ २१४ ॥

उसकी कौशल्यादिक प्यारी रानियां सुंदर आचरणवाली थीं सदा पतिकी आज्ञा माननेवाली और भगवान्के चरणकमलोंमें सच्चा प्रेम करनेवाली और बड़ी नम्र थीं ॥ २१४ ॥

चौ०–एकबार भूपति मनमाहीं ❀ भइ गलानि मोरे सुत नाहीं ॥ १ ॥
गुरुगृह गये तुरत महिपाला ❀ चरन लागि करि बिनय विशाला ॥ २ ॥

एकवार राजा (दशरथ) के मनमें चिंता हुई कि मेरे पुत्र नहीं है ॥ १ ॥ राजा तुरंत गुरूके घर गये उनके चरणछूकर बड़ी विनती की ॥ २ ॥

निज सुखदुख नृपगुरुहिं सुनायउ ❀ कहि वसिष्ठ बहुविधि समुझायउ ॥ ३ ॥
धरहु धीर होइहिं सुत चारी ❀ त्रिभुवनविदित भक्तभयहारी ॥ ४ ॥

राजाने अपना सुखदुःख गुरुको सुनाया (तव) वसिष्ठजीने बहुत भाँति कहकर समझाया ॥ ३ ॥ (हे राजन् !) धीरज धरो. तुम्हारे तीनों लोकमें प्रसिद्ध, भक्तोंके दुःखके नाश करनेवाले चार पुत्र होंगे ॥ ४ ॥

श्रृंगीऋषिहिं वसिष्ठ बुलावा ❀ पुत्रलागि शुभ यज्ञ करावा ॥ ५ ॥
भक्तिसहित मुनि आहुति दीन्हे❀ प्रगटे अगिनि चरू कर लीन्हे ॥ ६ ॥

और वसिष्ठजीने शृंगी[1]ऋषिको बुलाकर पुत्रकामनाके लिये सुन्दर यज्ञ कराया ॥ ५ ॥ तव मुनियोंनें भक्तिसहित आहुति दी तौ अग्निदेव हाथमें चरु लेकर प्रत्यक्ष हुए ॥ ६ ॥

बोले अनल प्रेमयुत बानी ❀ अति प्रसन्न नहिं परै बखानी ॥ ७ ॥
जो वसिष्ठ कछु हृदय विचारा ❀ सकलकाज भा सिद्ध तुम्हारा ॥ ८ ॥
यह हवि बाँटि देहि नृप जाई ❀ यथायोग जेहिं भाग बनाई ॥ ९ ॥

अग्नि बहुत प्रसन्न हो ऐसे प्रेमसमेत वचन बोले कि जिसका वखान नहीं होसकता ॥ ७ ॥ (कहने लगे कि) जो कुछ वसिष्ठजीने हृदयमें विचार किया है वह संपूर्ण काम तुम्हारा सिद्ध हुआ ॥ ८ ॥ हे राजन् ! यह खीर ले जाकर यथायोग्य भाग बनाकर (रानियोंको) वाँटदो ॥ ९ ॥

दो०-तब अदृश्य पावक भये, सकल सभहिं समुझाइ ॥ ❀
परमानंदमगन नृप, हरष न हृदय समाइ ॥ २१५ ॥ ❀

तब अग्नि सब सभाको समझाय बुझाय अन्तर्ध्यान हुये. और राजा ऐसे बड़े आनन्दमें मगन हुए कि आनन्द हृदयमें नहीं समाया ॥ २१५ ॥

चौ०-तबहिं राउ प्रियनारि बुलाईं ❀ कौशल्यादि तहाँ चलि आईं ॥ १ ॥
अर्धभाग कौशल्यहि दीन्हा ❀ उभय भाग आधे कर कीन्हा ॥ २ ॥

तब राजाने प्यारी स्त्रियां बुलाईं और वहाँ कौशल्या आदि (सब) चली आईं ॥ १ ॥ आधा भाग कौशल्याको दिया और आधेमेंसे दो भाग कर दिये ॥ २ ॥

कैकयि कहँ नृपभाग सो दयऊ ❀ रहेउ सो उभयभाग पुनि भयऊ ॥ ३ ॥
कौशल्या कैकयी हाथ धरि ❀ दीन्ह सुमित्रहिं मन प्रसन्न करि ॥ ४ ॥

राजाने कैकेयीको एक भाग (अर्थात् चौथाई) दिया और जो (चौथाई) रहा उसके दो भाग हुये ॥ ३ ॥ कौशल्याने कैकेयीके हाथमें रखकर मनमें प्रसन्न हो सुमित्राको दिये ॥ ४ ॥

यहि विधि गर्भसहित सब नारी❀ भयउ हृदय हर्षित सुख भारी ॥ ५ ॥
या दिनते हरि गर्भहिं आये ❀ सकललोक सुखसंपति छाये ॥ ६ ॥

---

(१) ऋष्यशृंग विभांडकऋषिके पुत्र और कश्यपजीके पौत्र थे. अंगदेशके राजा रोमपादने जब प्रजामें बड़ा अत्याचार फैलाया, तब वृष्टिका होना बंद हुआ. राजाने घबराकर वेदके ज्ञाता बड़े विद्वानोंको बुलाया और विनय करी. कि आप ऐसा उपाय बतलाइये जिससे वृष्टि होय. पण्डितोंने कहा कि जो तुम शृंगीऋषिको बुलवाओ और वेदकी विधिसे अपनी शांतानाम कन्या व्याह दो तौ वृष्टि हो। राजाने मंत्रियोंसे कहा उन्होंने सोचा कि शृंगीऋषि जन्मके ब्रह्मचारी हैं हमारे बुलाये कैसे आसक्ते हैं? तब उन्होंने वेश्याओंको उपाय करनेके लिये भेजा. वेश्या वहां अनेक प्रकारके पकवान तथा फल लेकर पहुचीं और जिस समय उनके पिता बाहर गयेथे उससमय उनके आश्रमके पास नाचरंग करने लगीं. तब कदाचित् दैवयोगसें ऋषि उधर आनिकले और वारांगनाओंको देख मनमें चकित हुए. क्योंकि उन्होंने ऐसी स्त्रियोंको काहेको देखा था ? उन्हें अपने आश्रमपर लेगये और कंदमूलफल दिये। फिर वेश्याओंनेभी मोदक आदि अलभ्य पदार्थ दिये जिसे खाकर वे बड़े प्रसन्न भये और पिताके भयसे वेश्याओंको विदा किया. फिर दूसरे दिन उनको कहां चैन था, वेश्याओंकी टोहमें निकले तब तौ वेश्या हावभावसे उनको वशकर घर ले आईं, आतेही मूसलधारा वृष्टि होने लगी. राजाने ऋषिका बड़ा आदरसत्कार किया और फिर अपनी लड़कीका व्याह उनसे करदिया, इसकी संपूर्ण कथा विस्तारपूर्वक वाल्मीकीय रामायणमें है ॥

इस भाँति रानियाँ गर्भवती हुईं और हृदयमें बड़ी प्रसन्नता तथा भारी सुख छाया ॥ ५ ॥ जिस दिनसे भगवान् गर्भमें आये (तबसे) सम्पूर्ण लोक सुख और सम्पत्तिसे छाये ॥ ६ ॥

संदिरमहँ सब राजहिं रानी ❀ शोभा शील तेजकी खानी ॥ ७ ॥
सुखयुत कछुक काल चलि गयऊ ❀ जेहिं प्रभु प्रगट सो अवसर भयऊ ॥ ८ ॥

सब रानी शोभा शील और तेजकी खान महलोंमें शोभायमान रहती थीं ॥ ७ ॥ आनन्दसे कुछ समय व्यतीत हुआ और वह अवसर आया कि जिसमें भगवान् प्रगट होनेवाले थे ॥ ८ ॥

दो०–योग लग्न ग्रह बार तिथि, सकल भये अनुकूल ॥ ❀
चर अरु अचर हर्षयुत, रामजन्मसुखमूल ॥ २१६ ॥ ❀

योग, लग्न, ग्रह, वार, और तिथि, यह सब अनुकूल हुये और सुखके मूल रामचन्द्रजीके जन्म समयमें चर और अचर सब आनन्दमें मगन हुये ॥ २१६ ॥

रामजन्मकुंडली.

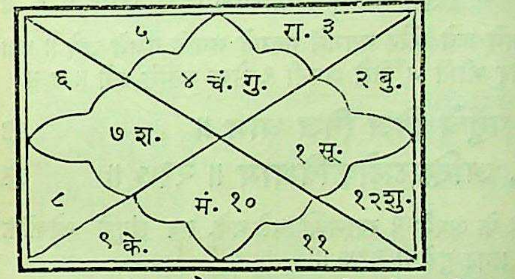

भरतजन्मकुंडली.

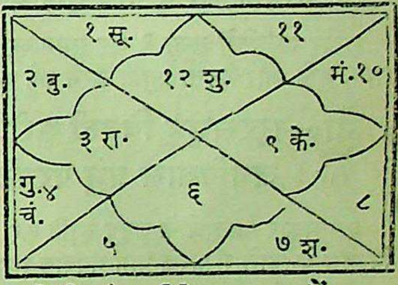

लक्ष्मण और शत्रुघ्नकी कुंडली रामजीकी कुंडलीके समान हैं.

चौ०–नवमी तिथि मधुमास पुनीता ❀ शुक्लपक्ष अभिजित हरिप्रीता ॥ १ ॥
मध्यदिवस अति शीत न घामा ❀ पावनकाल लोकविश्रामा ॥ २ ॥

नौमी तिथि, पवित्र चैतका महीना, शुक्लपक्ष, भगवतको प्यारा अभिजित मुहूर्त, प्रीति योग ॥ १ ॥ मध्यान्ह काल, न अति शीत और न अति घाम, संसारको विश्राम देनेवाला पवित्र समय (आया)॥२॥

कवित्त (१) समय वसन्त मधुमास मुददायकत्यौं शुक्लपक्ष पुण्यतिथि नौमि भौमवार है ॥
प्रवल पुनर्वसु नक्षत्र दिन मध्य मिल्यौ कर्क लग्न मांहि गुरु चन्द्रको अधार है ॥
तुलके ज्ञु मन्द मक्र मंगल सुमीन शुक्र मेख रवि युक्त अभिषेकको प्रचार है ॥
वृषके सुबुद्ध शुद्ध सकल मुहूर्त्तमाहिं रानी कौशलाके लियो राम अवतार है ॥
जा छिनमें रामचन्द्र लीनों अवतार औधि आइकै विराजे कौशिलाके परजंकमें।
ताछिन तें आनन्दको उमगि प्रवाह चल्यो देव नर नाग मुनिराज अरु रंकमें ॥
वरनत भट्ट वलवान हनूमान उठे उछलि अचानकही अंजनीके अंकमें।
पंकभई सागर मयंक भये दुष्ट मौन, डंक भये बंवन पै शंक भई लंकमें ॥ २ ॥

भरतजन्म.

सोई चारु चैत्र पक्ष चांदनी समक्ष शुभ नवमी नियुत भौमवार अभिराम हैं,
प्रवल नक्षत्र पुष्य योग कर्ण चर्ण चारु मीन लग्न लीन लाभ लक्षन ललाम हैं,
वरनत भट्ट मेष अर्क कर्क इन्दु जीव मकरके भौम मंद तुल गुण ग्राम हैं,
वृषके सुबुद्ध शुद्ध सकल मुहूरतमें भरत सिधारे ध्रुव कैकयीके धाम हैं.

लक्ष्मण शत्रुघ्नजन्म.

दोहा–मास पक्ष तिथि वार वर अश्लेषा नक्षत्र। कर्क लग्न जनमत भये रिपुसूदन सौमित्र ॥ १ ॥

शीतल मंद सुरभि बह बाऊ ❀ हर्षित सुर संतन मन चाऊ ॥ ३ ॥
बन कुसुमित गिरिगण मणियारा ❀ स्रवहिं सकल सरितामृतधारा ॥ ४ ॥

शीतल, मन्द, सुगंधित पवन चलने लगीं, देवता प्रसन्न होने और साधुओंके मन उमँगने लगे ॥ ३ ॥ वनमें वृक्ष फूलने फलने लगे, पर्वतोंपर मणियोंकी खान निकलने लगीं और सम्पूर्ण नदियोंसे अमृतकी धारा वहने लगी ॥ ४ ॥

सो अवसर विरंचि जब जाना ❀ चले सकल सुर साजि विमाना ॥ ५ ॥
गगन विमल संकुल सुरजूथा ❀ गावहिं गुन गंधर्वबरूथा ॥ ६ ॥

ऐसा समय जब ब्रह्माजीने जाना तौ सब देवता अपने २ विमान सजा २ कर चले ॥ ५ ॥ निर्मल आकाशमें देवताओंकी टोलियांकी टोलियां छागईं और गंधर्वोंके समूह गान करने लगे ॥ ६ ॥

वर्षहिं सुमन सुअंजुलि साजी ❀ गहगह गगनदुंदुभी बाजी ॥ ७ ॥
अस्तुति करहिं नाग मुनि देवा ❀ बहुविधि लावहिं निज निज सेवा ॥ ८ ॥

सुन्दर अंजुलिमें सजा २ कर सुमन वरसाने लगे और गगनमें गहगहे नगाड़े वजने लगे ॥ ७ ॥ नाग, मुनि और देवता स्तुति करने लगे और भाँति भाँतिसे अपनी २ सेवा जताने लगे ॥ ८ ॥

दो०–सुरसमूह बिनती करी, पहुँचे निज निज धाम ॥ ❀
जगनिवास प्रभु परगटे, अखिललोकविश्राम ॥ २१७ ॥ ❀

इस प्रकार देवताओंके समूह स्तुति कर २ के अपने २ स्थानको चले गये. तब संपूर्ण लोकोंके विश्राम देनेवाले संसारके धाम भगवान् राम प्रगट हुये ॥ २१७ ॥

छं०–भये प्रगट कृपाला दीनदयाला कौशल्याहितकारी । ❀
हर्षित महतारी मुनिमनहारी अद्भुत रूप निहारी ॥ ❀
लोचन अभिरामा तनुघनश्यामा निज आयुध भुजचारी । ❀
भूषणवनमाला नयनविशाला शोभासिंधु खरारी ॥ २५ ॥ ❀

जब कृपा करनेवाले, दीनदयालु, कौशल्याके हित करनेवाले उत्पन्न हुये तौ मुनीश्वरोंके मन हरनेवाले उनके अद्भुत रूपको देखकर माता प्रसन्न हुई और सुन्दर नेत्रवाले, मेघके समान श्याम शरीरवाले, अपनी भुजाओंमें (शंख, चक्र, गदा, पद्म) चारों आयुध धारण किये, वनमालारूपी भूषण पहिरे हुए और विशाल नेत्रवाले, शोभाके समुद्र, राक्षसोंके शत्रु ॥ २५ ॥

कह दुहुँकर जोरी अस्तुति तोरी केहिविधि करौं अनंता । ❀
मायागुणज्ञानातीत अमाना वेदपुराणभनंता ॥ ❀
करुणासुखसागर सबगुणआगर जेहि गावहिं श्रुतिसंता । ❀
सो ममहितलागी जनअनुरागी प्रगट भये श्रीकंता ॥ २६ ॥ ❀

(ऐसे भगवान्से) दोनों हाथ जोड़कर बोली कि तुम्हारी स्तुति किस प्रकार करूँ? क्योंकि तुम अनन्त हो और वेद पुराण कहते हैं कि आप माया गुण और ज्ञानसे परे और मोहरहित हो, और जिनको वेद और संत, दया और सुखके समुद्र और सब गुणोंके धाम कहते हैं, सो वेही मेरे हितके लिये भक्तोंपर प्रीति करनेवाले लक्ष्मीके पति (भगवान्) प्रगट हुये हैं ॥ २६ ॥

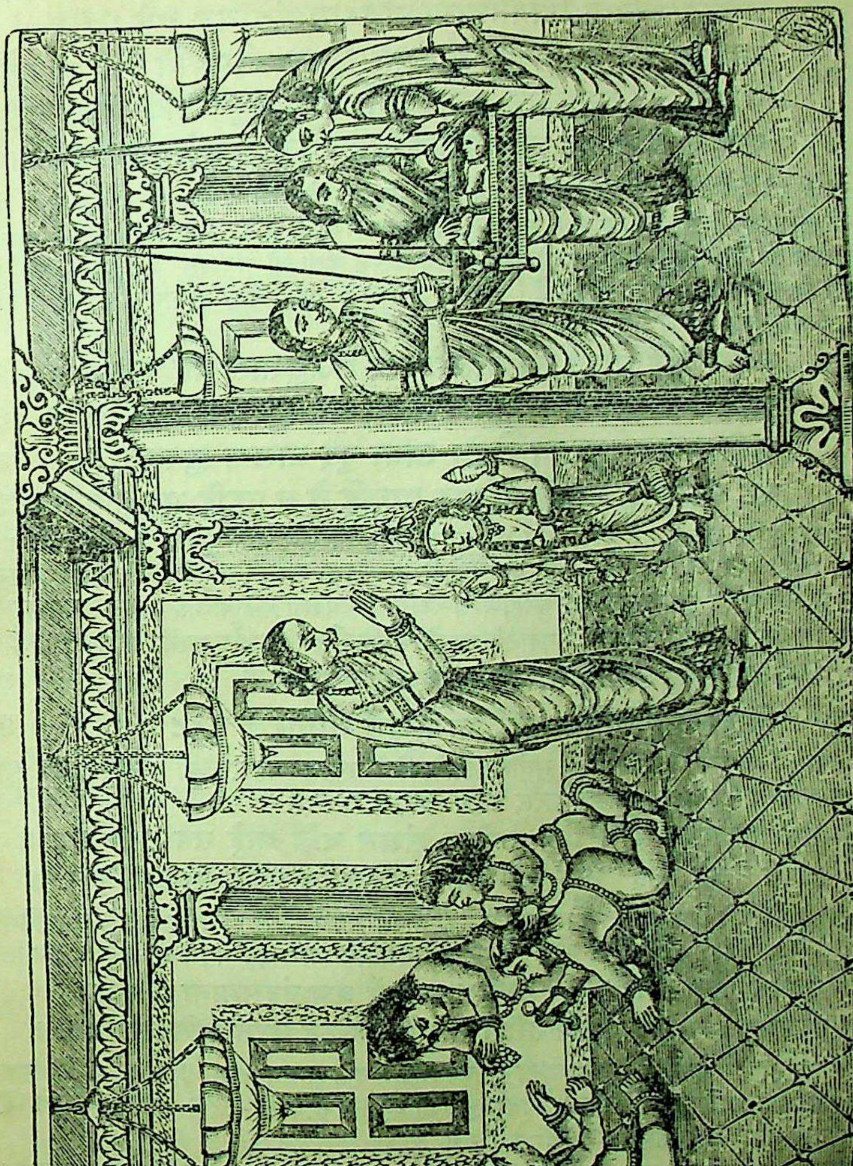

ब्रह्मांडनिकाया निर्मितमाया रोमरोमप्रति वेद कहै। ❀
मम उर सो वासी यह उपहासी सुनत धीरमति थिर न रहै❀
उपजा जब ज्ञाना प्रभु मुसुकाना चरित बहुतविधि कीन्ह चहै❀
कहि कथा सुनाई मातु बुझाई जेहिप्रकार सुत प्रेम लहै ॥२७॥ ❀

वेद कहते हैं कि मायासे बने हुये अनेक [1]ब्रह्माण्ड आपके रोम २ में बसते हैं सो आप मेरे उदरमें रहे यह हँसी (की बात) सुनकर धीरजवानोंकीभी बुद्धि स्थिर नहीं रहती अर्थात् डाँवाडोल हो जाती है (जब माताको ऐसा) ज्ञान उत्पन्न हुआ तौ भगवान् मुसकुराये. क्यौं कि बहुतसे विचित्र चरित्र किया चाहते हैं (फिर पूर्वजन्मकी) कथा कह सुनाकर माताको समझाया जिससे वह पुत्रका प्रेम करै ॥ २७॥

माता पुनि बोली सो मति डोली तजहु तात यह रूपा। ❀
कीजै शिशुलीला अतिप्रियशीला यह सुख परमअनूपा॥ ❀
सुनि वचन सुजाना रोदन ठाना हुइ बालक सुरभूपा। ❀
यह चरित जे गावहिं हरिपद पावहिं ते न परहिं भवकूपा॥२८॥❀

जब वह बुद्धि चलायमान हुई अर्थात् भ्रम जाता रहा, तौ फिर माता बोली हे प्यारे ! इस रूपको छोड़ो और अत्यन्त प्यारी शील बढ़ानेवाली बाललीला करो. (क्यौंकि) यह सुख अत्यन्त सुन्दर है, ऐसे वचन सुन चतुर और देवताओंके स्वामी (भगवान्) ने बालक होकर रोना आरम्भ किया. जो इस चरित्रको गावेंगे वे भगवान्के पदको पावेंगे और संसार[2]रूप कूपमें नहीं पड़ेंगे॥ २८॥

दो०-विप्रधेनुसुरसंतहित, लीन्ह मनुजअवतार॥ ❀
निजइच्छा निर्मित तनू, मायागुन गोपार॥ २१८॥ ❀

[3]भगवान्ने ब्राह्मण गौ देवता और संतोंके हितके लिये मनुष्यअवतार लिया है और माया गुण और इन्द्रियोंसे परे अपनी इच्छासे शरीर धारण किया है॥ २१८॥

चौ०-सुन शिशुरुदन परम प्रिय बानी ❀ संभ्रम चलि आईं सब रानी॥ १॥
हर्षित जहँ तहँ धाईं दासी ❀ आनँदमगन सकल पुरवासी॥ २॥

बालकके रोनेकी अत्यन्त प्यारी वाणीको सुनकर तुरंत सब रानियाँ चली आईं॥ १॥ दासियाँ प्रसन्न हो २ कर जहाँ तहाँ दौड़ीं और सब नगरके रहनेवाले आनन्दमें मगन हो गये॥ २॥

दशरथ पुत्रजन्म सुन काना ❀ मानहुँ ब्रह्मानंदसमाना॥ ३॥
परमप्रेम मन पुलकशरीरा ❀ चाहत उठन करत मतिधीरा॥ ४॥

राजा दशरथजीने कानोंसे पुत्रका जन्म सुनकर ब्रह्मानन्दके समान जाना॥ ३॥ मनमें बड़ा प्रेम उपजा और शरीर पुलकायमान होगया. बुद्धिको बहुतेरा सावधान करके उठना चाहते हैं (परन्तु उठा नहीं जाता कहने लगे कि-)॥ ४॥

---

(१) अध्यात्मरामायणे "जठरे तव दृश्यन्ते ब्रह्माण्डाः परमाणवः। त्वं ममोदरसंभूत इति लोकान् विडम्बसे" (२) यथा भगवद्गीतायां-"जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः॥ त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोर्ऽजुन"॥ १॥ दोहा-"मेरे जन्म अरु कर्म कहँ, तत्त्व लहै जो जानि॥ देह तजै मोकों मिलै, बहुरि न जनमें आनि॥" (३) जैसा गीतामें कहा है कि-"परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्। धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे॥ १॥" अर्थात् साधुओंकी रक्षाके लिये, दुर्जनोंके नाश हेत और धर्मके स्थापनके लिये युगयुगमें मैं अवतार लेताहूं॥ १॥

जाकर नाम सुनत सुभ होई ❀ मोरे गृह आवा प्रभु सोई ॥ ५ ॥
परमानंदपूरिमन राजा ❀ कहा बुलाइ बजावहु बाजा ॥ ६ ॥

जिसका नामही सुननेसे कल्याण होता है वही भगवान मेरे घर आये ॥ ५ ॥ राजाका मन बड़े आनन्दमें भरगया (उसने सेवकोंको) बुलाकर कहा कि बाजे बजाओ ॥ ६ ॥

गुरु वसिष्ठ कहँ गयउ हँकारा ❀ आए द्विजन्हसहित नृपद्वारा ॥ ७ ॥
अनुपम बालक देखि न जाई ❀ रूपरासिगुन कहि न सिराई ॥ ८ ॥

गुरु वशिष्ठजीके लिये बुलावा गया, तौ वे ब्राह्मणोंको साथ लेकर राजाके द्वारपर आये ॥ ७ ॥ उपमारहित बालक (विशेष कांतिके कारण) देखा नहीं जाता. अर्थात् दृष्टिको चकाचौंध लगतीथी और स्वरूप और गुणका वर्णन नहीं होसकता था ॥ ८ ॥

दो०–तब नांदीमुखश्राद्ध करि, जातकर्म सब कीन्ह ॥
हाटक धेनु बसन मनि, नृप विप्रनकहँ दीन्ह ॥ २१९ ॥

तब राजाने नांदीमुख श्राद्ध करके संपूर्ण जातकर्म किया और सुवर्ण, गौ, वस्त्र और मणि ब्राह्मणोंको दीं ॥ २१९ ॥

चौ०–ध्वज पताक तोरन पुर छावा ❀ कहि न जाइ जेहि भाँति बनावा ॥ १ ॥
सुमनवृष्टि आकाशते होई ❀ ब्रह्मानंदमगन सब कोई ॥ २ ॥

ध्वजा, पताका, तोरण और वन्दनवारोंसे नगरको छादिया और जिस भांति बनाया वह वर्णन नहीं होसकता॥१॥आकाशसे फूलोंकी वर्षा होने लगी और सब लोग ब्रह्मानन्दमें मगन होगये॥२॥

वृंद वृंद मिलि चलीं लुगाई ❀ सहजसिँगार किये उठि धाईं ॥ ३ ॥
कनककलस मंगल भरि थारा ❀ गावत पैठहिं भूपदुआरा ॥ ४ ॥

स्त्रियोंके झुण्डके झुण्ड मिलकर साधारणही शृंगार किये हुये उठकर चले ॥ ३ ॥ सुवर्णके कलशे और मंगल थार सजाके गाती हुई राजाके द्वारपर जाने लगीं ॥ ४ ॥

करि आरती निछावर करहीं ❀ बार बार सिसुचरनन परहीं ॥ ५ ॥
मागध सूत बंदिगन गायक ❀ पावन गुन गावहिं रघुनायक ॥ ६ ॥

आरती करके नौछावर करने लगीं और वारंवार बालकके पावों पड़ने लगीं ॥५॥ मागध पुराण कहनेवाले और भाटोंके समूह तथा गानेवाले रामचन्द्रजीके पवित्र गुणोंको गाने लगे ॥ ६ ॥

सर्बस दान दीन्ह सब काहू ❀ जेहिं पावा राखा नहिं ताहू ॥ ७ ॥
मृगमद चंदन कुंकुम सींचा ❀ मची सकल बीथिनविच कीचा ॥ ८ ॥

सबने सर्वस दान देदिया, जिसे जो मिला.उसने वहभी न रक्खा ॥ ७ ॥ (नगरको) कस्तूरी, चंदन और कुंकुमसे ऐसा सींचा है कि संपूर्ण गलियोंमें कीच मचगई ॥ ८ ॥

दो०–गृहगृह बाज बधाव सुभ, प्रगटेउ सुखमाकंद ॥
हरषवंत सब जहँ तहाँ, नगरनारिनरवृंद ॥ २२० ॥

शोभाकी खान (भगवान) ने जन्म लिया तौ घर २ सुंदर बाजे बजने लगे, बधावे होने लगे और जहां तहां सब नगरके नरनारियोंके समूह प्रसन्न होगये ॥ २२० ॥

चौ०–केकयसुता सुमित्रा दोऊ ❀ सुंदरसुत जन्मत भईं ओऊ ॥ १ ॥
वह सुखसंपति समय समाजा ❀ कहि न सकै सारद अहिराजा ॥ २ ॥

कैकेयी और सुमित्रा दोनों सुंदर पुत्र जनती हुईं ॥१॥ उस समयके समाजकी सुख संपत्तिको सरस्वती और शेषजीभी नहीं कह सकते ॥ २ ॥

अवधपुरी सोहै यहि भाँती ❀ प्रभुहि मिलन आई जनु राती ॥ ३ ॥
देखि भानु जनु मन सकुचानी ❀ तदपि बनी संध्या अनुमानी ॥ ४ ॥

अयोध्यापुरी इस भांति शोभायमान थी मानो भगवानसे रात मिलनेको आई है ॥ ३ ॥ (वह) मानो सूर्यको देख सकुची तौभी अनुमानसे सांझ होगई. (ऐसा दीखपड़ा) ॥ ४ ॥

अगरुधूप जनु बहु अँधियारी ❀ उड़ै अबीर मनहुँ अरुनारी ॥ ५ ॥
मंदिरमनिसमूह जनु तारा ❀ नृपगृहकलस सो इंदु उदारा ॥ ६ ॥

अगरुकी धूप मानो अपार अन्धकार है और अबीर गुलाल उड़ता है सो मानो लाली है ॥ ५ ॥ राजमंदिरमें मणियोंकी कतारें मानो तारे और राजाके घरका कलश सो पूर्ण चन्द्रमा है ॥ ६ ॥

भवन वेदधुनि अति मृदु बानी ❀ जनु खगमुखर समय सुखसानी ॥ ७ ॥
कौतुक देखि पतंग भुलाना ❀ एक मास तेहि जात न जाना ॥ ८ ॥

और राजभवनोंमें जो अति कोमल वाणीसे वेदध्वनि होती है तोही मानो पक्षियोंके मुखकी रसीली सुखसे सनी हुई (सबेरेके समयकी) चहचहाट है ॥ ७ ॥ इस कौतुकको देखकर सूर्यनारायण भूल गये और उन्होंने एक महीना वीतते न जाना ॥ ८ ॥

दो०-मासदिवस कर दिवस भा, मरम न जानै कोई ॥ ❀
रथसमेत रवि थाकेउ, निसा कवनविधि होई ॥ २२१ ॥ ❀

एक महीनेका एक दिन हुआ. परंतु यह मर्म किसीने न जाना कि सूर्यनारायण (रामजन्मोत्सवको देखकर) रथसमेत स्थिर होरहे हैं और रात्रि किस प्रकार होगी? ॥ २२१ ॥

चौ०-यह रहस्य काहू नहिं जाना ❀ दिनमनि चले करत गुनगाना ॥ १ ॥
देखि महोत्सव सुरमुनि नागा ❀ चले भवन बरनत निजभागा ॥ २ ॥

जब यह भेद किसीने न जाना तौ सूर्यनारायण आपही भगवानका गुण[1] गान करते चले ॥ १ ॥ देवता, मुनीश्वर और नाग इस महोत्सवको देखकर अपने २ भाग्यको सराहते हुये अपने २ धामको विदा हुये ॥ २ ॥

औरौ एक कहौं निज चोरी ❀ सुनु गिरिजा अतिदृढ़ मति तोरी ॥ ३ ॥
काकभुशुंडिसंग हम दोऊ ❀ मनुजरूप जानै नहिं कोऊ ॥ ४ ॥

(महादेवजी कहते हैं) हे पार्वती! तुम्हारी अत्यंत दृढ़ बुद्धि है (इसलिये) और भी एक अपनी चोरी कहताहूं सो सुनो ॥ ३ ॥ कागभुशुंड और हम दोनों मनुष्यके रूपमें संग थे इसे कोई नहीं जानता था ॥ ४ ॥

परमानंद प्रेमसुख फूले ❀ बीथिन फिरहिं मगनमन भूले ॥ ५ ॥
यह सब चरित जानपै सोई ❀ कृपा रामकी जापर होई ॥ ६ ॥

बड़े आनन्द और स्नेहके सुखमें फूले हुये मनमें मगन गलियोंमें भूले हुये फिरतेथे (क्योंकि घर २ में बधाई होरही थी) ॥ ५ ॥ इस सब चरित्रको कि जिसे हम ढूंढ़नेके लिये गयेथे उसको वही जान सकता है जिसके ऊपर रामचन्द्रजीकी कृपा हो ॥ ६ ॥

---

(१) गुण गाते इस लिये कि उनके वंशमें भगवान्ने अवतार लिया.

तेहि अवसर जो जेहि विधि आवा ❀ दीन्ह भूप जो जेहि मन भावा ॥ ७ ॥
गज रथ तुरग हेम गो हीरा ❀ दीन्हे नृप नानाविध चीरा ॥ ८ ॥

उस समय जो जिस भांति आया और जिसने जो मांगा, राजाने वही उसे दिया ॥ ७ ॥ राजाने हाथी, रथ, घोड़े, सुवर्ण, गौ, हीरा और बहुत भांतिके कपड़े दिये ॥ ८ ॥

दो०-मन संतोषे सबनके, जहँ तहँ देहिं असीस ॥ ❀
सकल तनय चिर जीवहु, तुलसिदासके ईस ॥ २२२ ॥ ❀

सबोंके मनको संतुष्ट किया, सो वे जहां तहां आशीर्वाद देने लगे कि तुलसीदासके स्वामी संपूर्ण पुत्र चिरंजीव रहो ॥ २२२ ॥

चौ०-कछुक दिवस बीते यहि भाँती ❀ जात न जानहिं दिन अरु राती ॥ १ ॥
नामकरन कर अवसर जानी ❀ भूप बोलि पठये मुनि ज्ञानी ॥ २ ॥

कुछ दिन इस प्रकार बीते कि, रात और दिन जाते हुये नहीं जाने जाते ॥ १ ॥ राजाने नाम धरानेका समय जान ज्ञानवान मुनीश्वरको बुलावा भेजा ॥ २ ॥

करि पूजा भूपति अस भाषा ❀ धरिय नाम जो मुनि गुनि राषा ॥ ३ ॥
इनके नाम अनेक अनूपा ❀ मैं नृप कहब स्वमतिअनुरूपा ॥ ४ ॥

राजाने पूजा कर यों कहा, हे मुनि ! नाम रखिये जो विचार रक्खा है ॥ ३ ॥ (मुनिबोले) हे राजा ! यद्यपि इनके अनेक सुन्दर नाम हैं, (तथापि) मैं अपनी बुद्धिके अनुसार कहताहूं ॥४॥

जो आनंदसिंधु सुखराशी ❀ सीकरतें त्रैलोक्यनिवासी ॥ ५ ॥
सो सुखधाम राम अस नामा ❀ अखिललोकदायक विश्रामा ॥ ६ ॥

जो आनन्दके समुद्र और सुखके समूह हैं और जिनकी कृपासे तीनों लोक सुखी होते हैं ॥५॥ और जो सुखके धाम सब संसारको विश्राम देनेवाले हैं उनका राम यह नाम है ॥ ६ ॥

विश्वभरण पोषण करु जोई ❀ ताकर नाम भरत अस होई ॥ ७ ॥
जाके सुमिरनते रिपुनाशा ❀ नाम शत्रुहन बेदप्रकाशा ॥ ८ ॥

जो संसारका भरण, पोषण करै, उसका भरत यह नाम है ॥ ७ ॥ जिसके स्मरणसे वैरियोंका नाश हो, उसका नाम वेदोंमें शत्रुहन प्रगट है ॥ ८ ॥

दो०-लक्ष्मिसुधाम रामप्रिय, सकल जगत आधार ॥ ❀
गुरु वसिष्ठ तेहि राखेउ, लक्ष्मण नाम उदार ॥ २२३ ॥ ❀

जो लक्ष्मीके सुन्दर धाम, रामचन्द्रके अभिराम और संपूर्ण संसारके विश्राम हैं, उनका गुरु वशिष्ठजीने बड़ा सुन्दर लक्ष्मण नाम रक्खा ॥ २२३ ॥

चौ०-धरे नाम गुरु हृदय बिचारी ❀ वेदतत्त्व नृप तव सुत चारी ॥ १ ॥
मुनिजन धन सर्वस शिवप्राणा ❀ बालकेलिरस तेहिं सुख माना ॥ २ ॥

गुरु वशिष्ठने हृदयमें विचार नाम रखकर कहा हे राजा ! तुम्हारे चारों पुत्र वेदोंके तत्त्व कहिये प्राण हैं ॥ १ ॥ मुनियोंके धन भक्तजनोंके सर्वस्व और बाललीलाके रसका आनन्द जिन्होंने माना ऐसे शिवजीके प्राण हैं ॥ २ ॥

कवित्त.

१ तनुकी दुति स्याम सरोरुहलोचन कंज कि मंजुलताई हरैं । अति सुन्दर सोहत धूरिभरे छबिभूरि

बारहिंते निज हितपति जानी ❀ लक्ष्मण रामचरनरति मानी ॥ ३ ॥
भरत शत्रुहन दोनों भाई ❀ प्रभुसेवक जसप्रीति बढ़ाई ॥ ४ ॥

लक्ष्मणजीने बालकपनहीसे अपने हितकारी और स्वामी जानकर रामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रीति की ॥ ३ ॥ भरत और शत्रुघ्न दोनों भाइयोंने स्वामि और सेवककीसी प्रीति बढ़ाई ॥ ४ ॥

श्याम गौर सुंदर दोउ जोरी ❀ निरखहिं छवि जननी तृन तोरी ॥ ५ ॥
चारिउ सील रूप गुनधामा ❀ तदपि अधिक सुखसागर रामा ॥ ६ ॥

सुन्दर साँवली गोरी युगल जोड़ीकी शोभाको देखकर माता तिनका तोड़ती हैं कि (जिसमें नजर न लगै) ॥ ५ ॥ (यद्यपि) चारों भाई रूप, शील और गुणके धाम हैं, तौ भी सुखके समुद्र रामचन्द्र अधिक हैं कि–॥ ६ ॥

हृदय अनुग्रह इंदुप्रकासा ❀ सूचत किरन मनोहर हासा ॥ ७ ॥
कबहुँ उछंग कबहुँ वरपालन ❀ मातु दुलारहिं कहि प्रियलालन ॥ ८ ॥

जिनके हृदयमें कृपारूपी चन्द्रमाका उजेला मनके हरनेवाली मृदुमुसक्यान रूपी किरणोंसे प्रगट होता है ॥७॥ कभी गोदी, और कभी सुन्दर पालनेमें माता प्यारे लाला कह २ कर प्यार करतीहैं ॥८॥

दो०–व्यापक ब्रह्म निरंजन, निर्गुन विगतविनोद ॥ ❀
सो अज प्रेमभक्तिवश, कौशल्याकी गोद ॥ २२४ ॥ ❀

जो (सर्वत्र) व्यापक, ब्रह्म निरंजन (मायारहित) तीनों गुणोंसे परे, हर्ष शोकरहित हैं सो अजन्मा भगवान प्रेम और भक्तिके वश हो कौशल्याकी गोदमें (खेलते) हैं ॥ २२४ ॥

चौ०–कामकोटि छवि स्यामसरीरा ❀ नीलकंज वारिद गंभीरा ॥ १ ॥
अरुनचरनपंकजनखज्योती ❀ कमलदलन बैठे जनु मोती ॥ २ ॥

(श्रीरामचन्द्रजीका) शरीर करोड़ों कामदेवकी शोभाके समान है और नील कमल और गंभीर मेघके समान श्याम है ॥ १ ॥ और कमलसे लाल २ चरणोंमें नखोंकी ज्योति (इस भांति होती है) मानो कमलकी पखुरियोंपर मोतीही आ बैठे हैं ॥ २ ॥

रेख कुलिस ध्वज अंकुस सोहै ❀ नूपुरधुनि सुनि मुनिमन मोहै ॥ ३ ॥
कटि किंकिनी उदर त्रय रेखा ❀ नाभि गभीर जान जेहिं देखा ॥ ४ ॥

और वज्र, ध्वजा और अंकुशकी रेखा शोभायमान हैं, और झाँझनोंका शब्द सुनकर मुनिजनोंके मन मोहित होते हैं ॥ ३ ॥ कमरमें तागड़ी उदरपर तीन रेखा और गहरी नाभि (इन को) वही जानता है, जिसने दर्शन किये हैं ॥ ४ ॥

भुज विशाल भूषनयुत भूरी ❀ हिय हरिनख सोभा अति रूरी ॥ ५ ॥
उर मनिहार पदिककी सोभा ❀ विप्रचरन देखत मन लोभा ॥ ६ ॥

(भगवानकी) लंबी २ भुजा बहुतसे आभूषणोंमें पूरी हैं और हृदयमें सिंह[2]के नखोंकी शोभा-

---

अनंग कि दूरि धरैं। दमकैं दँतियाँ दुति दामिनि जौं किलकैंकर बाल विनोद करैं। अवधेसके बालक चारि सदा तुलसी मन मन्दिरमें विहरैं ॥ १ ॥ कबहूं ससि मांगत आरि करैं कबहूं प्रतिबिम्ब निहारि डरैं। कबहूँ करताल बजाइकै नाचत मातुसबै मनमोद भरैं ॥ कबहूँ रिसिआय कहैं हठिकै पुनि लेत सोई जेहि लागि अरैं। अवधेसके बालक चारि सदा तुलसी मन मन्दिरमें विहरैं ॥ २ ॥

(१) यहां ब्रह्मसे तात्पर्य है कि जो नाभिसे उत्पन्न हुए हैं ॥ (२) स्त्रियां लड़कोंके गलेमें शेरका नख सोनेमें मढ़वाकर पहिरा देती हैं, जिसमें उन्हें डर और नजर न लगै ॥

अति रूरी हैं ॥ ५ ॥ हृदयमें मणियोंका हार और हीरा शोभित है और भृगुलत्ताको देखतेही मन लोभित होता है ॥ ६ ॥

कंबुकंठ अति चुबुक सुहाए ❀ आनन अमित मदन छवि छाए ॥ ७ ॥
दुइ दुइ दसन अधर अरुनारे ❀ नासा तिलक को बरने पारे ॥ ८ ॥

शंखके समान कंठ और ठोड़ी अति शोभायमान हैं, और मुखपर अनगिनती कामदेवकी शोभा छा रही है ॥ ७ ॥ दो २ दांत और लाल होठ हैं, और नाकके ऊपरके तिलकका कौन वर्णन कर पार पा सकता है ? ॥ ८ ॥

सुंदर स्रवन सुचारु कपोला ❀ अति प्रिय मधुर सुतोतरि बोला ॥ ९ ॥
नील कमल दोउ नयन विसाला ❀ विकटभृकुटि लटकनि बर भाला ॥ १० ॥

सुन्दर कान और मनोहर चिकने २ गाल और बहुत प्यारा मीठा सुन्दर तोतला बोल ॥ ९ ॥ नील कमलसमान दोनों बड़े २ नेत्र, टेढ़ी भौंहैं और माथेपर सुन्दर अलकें लटकती हैं ॥ १० ॥

चिक्कनकच कुंचित गभुआरे ❀ बहु प्रकार रचि मातु सँवारे ॥ ११ ॥
पीत झिंगुलिया तनु पहिराए ❀ जानु पानि विचरत महि भाए ॥ १२ ॥
रूप सकहिं नहिं कहि श्रुतिशेषा ❀ सो जानै सपनेहु जिन्ह देषा ॥ १३ ॥

चिकने काले घूँघुरवाले बालोंको माताने बहुत रचकर सँभाले हैं ॥ ११ ॥ शरीरमें पीली झिंगुलिया पहराई है. घुटनों और हाथोंसे पृथ्वीपर चलते हुये शोभायमान लगते हैं ॥ १२ ॥ वेद और शेषनागभी उस रूपका वर्णन नहीं कर सक्के, वही जानता है जिसने स्वप्नमेंभी देखा है ॥ १३ ॥

दो०–सुखसंदोह मोह पर, ज्ञानगिरागोतीत ॥ ❀
दंपति परम प्रेमवश, करि शिशुचरित पुनीत ॥ २२५ ॥ ❀

सुखके धाम, अज्ञानके परे, ज्ञान, वाणी और इन्द्रियोंसे अलग ऐसे (रामचन्द्र) स्त्रीपुरुष कहिये कौशल्या दशरथके अत्यन्त प्रेमके वश हो सुंदर बाललीला करते हैं ॥ २२५ ॥

चौ०–यहि विधि राम जगतपितु माता ❀ कोसलपुरवासिन सुखदाता ॥ १ ॥
जिन रघुनाथचरनरति मानी ❀ तिनकी यह गति प्रगट भवानी ॥ २ ॥

जगत्के मातापिता रामचन्द्र इस भाँति अयोध्यावासियोंको सुख देने लगे ॥ १ ॥ (शिवजी कहते हैं) हे पार्वती ! जिन्होंने रामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रीति की उनकी यह दशा प्रगट है (कि राम स्वयं अवतार लेकर उनके पुत्र बने) ॥ २ ॥

---

(१) एक समय बहुतसे ऋषि सरस्वती नदीके तीरपर तप कर रहे थे । तहाँ यह चर्चा चली कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इनमें बड़ा कौन है ? किसीने कहा कुछ और किसीने कुछ. तब बड़े राजर्षियों और महर्षियोंने यह बात कही कि ! हम तो उसकी बात मानेंगे जो परीक्षा कर आवैगा और धर्मकी बात कहैगा । फिर ब्रह्माके पुत्र भृगुको तीनों देवोंकी परीक्षा लेनेकी आज्ञा दी । भृगुजी चले २ प्रथम ब्रह्मलोकमें ब्रह्माकी सभामें चुपकेसे जा बैठे न दंडवत की न स्तुति करी । इस अनाचारको देख ब्रह्माको बड़ा क्रोध भया । तौ भृगु इन्हें रजोगुणमें भरा देख कैलास गये । इन्हें देख शिवजी खड़े हो गये और ज्योंही मिलनेको हुए त्योंही भृगु बैठ गये । यह देख शिवजीने क्रोधित हो मारनेको त्रिशूल उठाया, पर वहां पार्वतीजीने बचाया. इस प्रकार भृगुजी महादेवजीको तमोगुणमें लीन देखे चले २ वैकुंठमें पहुँचे । वहाँ देखा कि भगवान् कंचनकी शय्यापर फूलोंकी सेज लगाये लक्ष्मीजीके साथ सो रहे हैं । भृगुने जातेही उनकी छातीमें एक लात ऐसी मारी कि वे नींदसे चौंक उठे और भृगुजीको देख उनका चरण दावने लगे और कहने लगे कि मेरा अपराध क्षमा करो, मेरा हृदय कठोर है, आपके कमलसमान कोमल चरणमें चोट आगई होगी । यह सुन भृगुजी स्तुति करते २ सरस्वतीतीरपर आये और देवताओंको भेद सुनाया ॥

रघुपतिविमुख जतन कर कोरी ❀ कवन सकै भवबंधन छोरी ॥ ३ ॥
जीव चराचर वस करि राषे ❀ सो माया प्रभुसों भय भाषे ॥ ४ ॥

रामचन्द्रजीसे विमुख करोड़ों[1] उपाय करनेपरभी संसारके बन्धनसे कौन छूट सकता है ॥ ३ ॥ (जिस मायाने) चराचर जीव वशमें कर रक्खे हैं, वह माया भगवान्‌से डर मानती है ॥ ४ ॥

भृकुटिबिलास नचावें ताही ❀ अस प्रभु छाँड़ि भजिय कहु काही ॥ ५ ॥
मन क्रम बचन छांड़ि चतुराई ❀ भजतहिं कृपा करैं रघुराई ॥ ६ ॥

क्योंकि भगवान् मायाको अपनी भृकुटीके विलाससे नचाते हैं, फिर ऐसे प्रभुको छोड़ और किसका भजन करै? ॥ ५ ॥ मन कर्म वचनसे छलको छोड़ भजन करतेही भगवान् कृपा करते हैं ॥ ६ ॥

इहि बिधि शिशुबिनोदप्रभु कीन्हा ❀ सकल नगरबासिन सुख दीन्हा ॥ ७ ॥
लै उछंग कबहूँ हलरावैं ❀ कबहुँ पालने घालि झुलावैं ॥ ८ ॥

इस भांति भगवान्‌ने बाललीला करी और सब नगरवासियोंको सुख दिया ॥ ७ ॥ माता गोदमें लेकर कभी हिलाती हैं और कभी पालनेमें सुलाकर झुलाती हैं ॥ ८ ॥

दो०–प्रेममगन कौसल्या, निसिदिन जात न जान ॥ ❀
सुतसनेहबस मात सब, बालचरित करि गान ॥ २२६ ॥ ❀

कौसल्या प्रेममें मगन हो गई. रात दिन जाते हुये नहीं जान पड़ने लगे. पुत्रोंके प्रेमके वश हो सब माता बाललीलाओंकी (आपसमें) बड़ाई करती हैं ॥ २२६ ॥

चौ०–एकबार जननी अन्हवाए ❀ करि शृंगार पालना पौढ़ाए ॥ १ ॥
निज कुल इष्ट देव भगवाना ❀ पूजाहेतु कीन्ह पकवाना ॥ २ ॥

एकबार माताने स्नान कराया और शृंगार कराय पालनेमें लिटा दिया ॥ १ ॥ और अपने कुलके इष्टदेव भगवान्‌की पूजाके लिये पकवान बनाया ॥ २ ॥

करि पूजा नैवेद्य चढ़ावा ❀ आपु गई जहँ पाक बनावा ॥ ३ ॥
बहुरि मातु तहँवाँ चलि आई ❀ भोजन करत दीख रघुराई ॥ ४ ॥

पूजा कर नैवेद्य चढ़ाय आप वहां गई जहां पाक बनाया था ॥ ३ ॥ फिर माता वहांही लौटकर चली आई तौ रामचन्द्रजीको भोजन करते देखा ॥ ४ ॥

गइ जननी शिशुपहँ भयभीता ❀ देखा बाल तहाँ पुनि सूता ॥ ५ ॥
बहुरि आइ देखा सुत सोई ❀ हृदयकंप मन धीर न होई ॥ ६ ॥

फिर माता डरती हुई बालकके पास गई, तौ वहां बालकको सोता हुआ देखा ॥ ५ ॥ फिर आके जब उसी पुत्रको देखा तौ हृदय काँपने लगा और मनमें धीरज नहीं होताथा ॥ ६ ॥

इहाँ वहाँ दुइ बालक देखा ❀ मति भ्रम मोरि कि आन विशेखा ॥७॥
देखि राम जननी अकुलानी ❀ प्रभु हँसिदीन्ह मधुर मुसुकानी ॥ ८ ॥

यहां वहां दो बालकोंको देख (विचारा कि) मेरी बुद्धिमें संदेह है कि और कोई दूसरा बालक है ॥ ७ ॥ जब रामचन्द्रजीने देखा कि माता अकुलानी तौ भगवान् मृदुमुसिक्यानसे हँसदिये ॥८॥

---

[1] ऐसा गीतावलीमें लिखा है कि, (छंद)—

जपजोग विराग महामख साधन दान दया दमकोटि करै। मुनि सिद्ध सुरेस गनेस महेससे सेवत जन्म अनेक मरै ॥
निगमागम जानि पुरान पढ़ै तपसानलमहँ जुगपुंज भरै। भयसों मन रोपि कहै तुलसी रघुनाथ विनादुख कौन हरै॥

दो०–दिखरावा माताहि निज, अद्भुत रूप अखंड ॥ ❀
रोमरोमप्रति राजहिं, कोटि कोटि ब्रह्मंड ॥ २२७ ॥ ❀

और माताको अपना अनूठा अखंड अर्थात् विराट्रूप[1] दिखलाया. जिसके रोम २ में कोटि २ ब्रह्मांड शोभायमान होरहे हैं ॥ २२७ ॥

चौ०–अगनित रवि ससिसिवचतुरानन ❀ बहु गिरि सरित सिंधु महि कानन ॥१॥
काल कर्म गुन ज्ञान सुभाऊ ❀ सो देखा जो सुना न काऊ ॥ २ ॥

वहां अनगिनती सूर्य, चन्द्रमा, महादेव और ब्रह्मा देखे; बहुतसे पर्वत, नदी, समुद्र, पृथ्वी और वन देखे ॥ १ ॥ काल देखा, कर्म देखा, उनका गुण, ज्ञान और स्वभाव देखा और वह देखा जो कभी किसीने नहीं सुना था ॥ २ ॥

देखी माया सबविधि गाढ़ी ❀ अति सभीत जोरे कर ठाढ़ी ॥ ३ ॥
देखा जीव नचावै जाही ❀ देखी भक्ति जु छोरै ताही ॥ ४ ॥

सब भांति प्रबल उस मायाको देखा जो अधिक भयके मारे हाथ बाँधे खड़ी थी ॥ ३ ॥ उस जीवको देखा कि जिसे माया नचाती है और भगवान्‌की उस भक्तिको देखा जो जीवको मायाके जालसे छुड़ाती है ॥ ४ ॥

तनु पुलकित मुख बचन न आवा ❀ नयन मूंदि चरनन सिर नावा ॥ ५ ॥
विस्मयवंत देखि महतारी ❀ भये बहुरि सिसुरूप खरारी ॥ ६ ॥

शरीरके रोम खड़े होगये, मुखसे वचन नहीं आने लगा, फिर नेत्र बन्दकर चरणोंमें शिर नवाया ॥ ५ ॥ असुरनिकन्दन (दशरथनन्दन) माताको अचरजमें देखकर फिर बालस्वरूप होगये ॥ ६ ॥

अस्तुति करि न जाइ भय माना ❀ जगतपिता मैं सुत करि जाना ॥ ७ ॥
हरि जननिहिं बहुविधि समुझाई ❀ यह जनि कतहुँ कहसि सुनु माई ॥ ८ ॥

भयके मारे विनती नहीं की जाती, (विचारती है) संसारके पिताको मैंने बेटा समझा ॥ ७ ॥ भगवान्‌ने माताको बहुत भांति समझाया कि सुनो माता! यह बात कहीं मत कहना ॥ ८ ॥

दो०–बारबार कौसल्या, बिनय करै करजोरि ॥ ❀
अब जनि कबहूँ व्यापई, प्रभु मोहिं माया तोरि ॥ २२८ ॥ ❀

कौशल्या वारंवार[2] हाथ जोड़कर विनती करने लगीं कि हे भगवन्! तुम्हारी माया अब मुझे कभी न सतावे ॥ २२८ ॥

चौ०–बालचरित हरि बहुविधि कीन्हा ❀ अति अनंद दासनकहँ दीन्हा ॥ १ ॥
कछुककाल बीते सब भाई ❀ बड़े भये परिजनसुखदाई ॥ २ ॥

भगवानने बहुत भांति बाललीला की और भक्तोंको बहुत आनन्द दिया ॥ १ ॥ कुछ समय वीतनेपर कुटुंबियोंके सुखदाई सब भाई बड़े हुये ॥ २ ॥

चूड़ाकरन कीन्ह गुरु आई ❀ बिप्र दक्षिणा पुनि बहु पाई ॥ ३ ॥
परममनोहर चरित अपारा ❀ करत फिरत चारिउ सुकुमारा ॥ ४ ॥

---

(१) विराट् स्वरूपका वर्णन उत्तरकाण्डमें देखना. (२) इस दोहेके अर्थ योंभी सुन्दर होसकते हैं–कौशल्याका बालबाल हाथ जोड़कर यह कहता है कि–हे प्रभु! तुम्हारी माया अब न व्यापै अथवा कौशल्याने हाथ जोड़कर प्रत्येक बाल अर्थात् रोमसे कि जिसमें अनेक ब्रह्मांड देखेथे विनतीकी कि यह तुह्मारी माया मुझे फिर न व्यापै ।

फिर गुरुने आकर मुंडनकी रीति कराई और ब्राह्मणोंने बहुतसी दक्षिणा पाई ॥ ३ ॥ चारों सुकुमार बालक राम लक्ष्मण आदि अधिक मनके हरनेवाले अपार चरित्र करते फिरने लगे ॥ ४ ॥

मन क्रम बचन अगोचर जोई ❀ दशरथ अजिर विचर प्रभु सोई ॥ ५ ॥
भोजन करत बुलावत राजा ❀ नहिं आवहिं तजि बालसमाजा ॥ ६ ॥

जो मन क्रम वचनसे परे हैं, वे दशरथके आंगनमें खेलते फिरते हैं ॥ ५ ॥ भोजन करतेमें राजा बुलाते हैं परन्तु वे बालकोंके समाजको छोड़कर नहीं आते हैं ॥ ६ ॥

कौसल्या जब बोलन जाई ❀ ठुमुकि ठुमुकि प्रभु चलहिं पराई ॥ ७ ॥
निगम नेति शिव अंत न पावा ❀ ताहि धरै जननी हठि धावा ॥ ८ ॥
धूसर धूरि भरे तनु आए ❀ भूपति विहँसि गोद बैठाए ॥ ९ ॥

जब कौशल्या बुलानेके लिये जाती है तौ भगवान् ठुमकी २ कर भागते हैं ॥७॥ वेदभी जिसका भेद नहीं पाता है और शिवजीने जिसका अंत नहीं पाया उसे माता हठसे दौड़ २ कर पकड़लेती है(देखो कैसा आश्चर्य है !) ॥८॥ जब शरीरमें मैली कुचैली धूल लपेटे आये, तब राजाने गोदमें बिठाये ॥ ९ ॥

दो०-भोजन करत चपल चित, इत उत औसर पाइ ॥ ❀
भाजि चलैं किलकत बदन, दधिओदन लपटाइ ॥ २२९ ॥ ❀

भोजन करतेमें चित्तकी चंचलताके कारण औसर पाकर इधर उधर भाजि जाते हैं और दही भात लिपटे मुखसे किलकारी मारते हैं ॥ २२९ ॥

चौ०-बालचरित अति सरल सुहाए ❀ शारद शेष शंभु श्रुति गाए ॥ १ ॥
जिनकर मन इनसन नहिं राता ❀ ते जगवंचित किये विधाता ॥ २ ॥

ऐसे सरल सुहावने बालचरित्रोंको सरस्वती, शेष, महेश और वेदनेभी गाया है ॥ १ ॥ जिनका मन इनमें नहीं लगा, उनको विधाताने संसारमें वृथा पैदा किया ॥ २ ॥

भए कुमार जबहिं सब भ्राता ❀ दीन्ह जनेऊ गुरु पितु माता ॥ ३ ॥
गुरुगृह गए पढन रघुराई ❀ अलपकाल विद्या सब पाई ॥ ४ ॥

जब सब भाई कुमार हुये तब गुरु पिता माताने उनका जनेऊ करदिया ॥ ३ ॥ रामचन्द्र गुरुके घर पढ़ने गये और थोड़े समयमें चतुर्दश विद्यानिधान हुये ॥ ४ ॥

जाकी सहज स्वास श्रुति चारी ❀ सो हरि पढ़ यह कौतुक भारी ॥ ५ ॥
विद्याविनयनिपुन गुनशीला ❀ खेलहिं खेल सकल नृपलीला ॥ ६ ॥

स्वभावसेही जिसके श्वासमें चारों वेद हैं वह भगवान् पढ़ते हैं यह बड़ा तमाशा है ॥ ५ ॥ जब भगवान् विद्या और नम्रतामें चतुर और गुणवान् हुये, तब राजाओंकीही लीलाके सब खेल खेलते थे ॥६॥

करतल वाण धनुष अति सोहा ❀ देखत रूप चराचर मोहा ॥ ७ ॥
जिन बीथिन बिहरहिं सब भाई ❀ थकित होहिं सब लोगलुगाई ॥ ८ ॥

हाथमें धनुष[1] वाण अत्यन्त शोभित है और जिनके स्वरूपके दर्शनसे[2] चराचर मोहित है ॥ ७ ॥ जिन गलियोंमें सब भाई विचरते हैं, (वहांही) सब लोग लुगाई थकित होते हैं ॥ ८ ॥

---

(१) "पदकंजनि मंजुवनी पनहीं धनुहीं सर पंकज पानि लिये। लरिका सँग खेलत डोलत हैं सरजूतट चौहट हाटहिये ॥ तुलसी असबालकसों नहिं नेह कहा जप योग समाधि किये। नर ते खर सूकर स्वान समान कहौ जगमें फल कौन जिये ॥

(२) चारों भाइयोंके डोलनेसे लोग लुगाई क्यों थकते हैं ? तहां ऐसा भाव है कि, सब पुरवासी उन्हें प्राणसमान जानते हैं, और प्राणोंके थकनेसे प्राणीभी थक जाते हैं ॥

दो०-कोसलपुरवासी नर, नारिवृंद अरु बाल ॥ ❀
प्रानहुँ ते प्रिय लागहीं, सब कहँ राम कृपाल ॥ २३० ॥ ❀

अयोध्या पुरीमें रहनेवाले नरनारियोंके समूह और बालकोंको करुणानिधान रामचन्द्र प्राणोंसे भी अधिक प्यारे लगते हैं ॥ २३० ॥

अथ क्षेपक.

चौ०-इक दिन एक सलूका आयउ ❀ भूपतिद्वारे कपिहिं नचायउ ॥ १ ॥
देख राम मचिलाई ठानी ❀ मो कहँ कीस मँगावहु आनी ॥ २ ॥

एक दिन एक बन्दरवालेने आकर राजाके द्वारपर बन्दर नचाया ॥ १ ॥ रामचन्द्रजी देखकर विचल गये कि, मुझको बन्दर मँगादो ॥ २ ॥

तब नरेस बहु कीस मँगाये ❀ एकहु रघुपति मनहिँ न भाये ॥ ३ ॥
गुरुपहँ जाइ भूप सिर नाये ❀ सकल रामहठ कह समुझाये ॥ ४ ॥

तब राजाने बहुतसे बन्दर मँगाये परन्तु रामचन्द्रजीके मनमें एकभी न आया ॥ ३ ॥ राजाने गुरुके पास जा मस्तक नवाया, रामचन्द्रजीकी सब हठ कहकर सुनाई ॥ ४ ॥

तब वसिष्ठ बोले मुसक्याई ❀ कहौं तजै हठ सोइ उपाई ॥ ५ ॥
पंपापुरवासी हनुमाना ❀ जहाँ रहत नृप बालिसयाना ॥ ६ ॥

तब वसिष्ठजी हँसकर बोले मैं वह उपाय कहता हूँ जिससे वह हठ छोड़े ॥ ५ ॥ पंपापुरके रहनेवाले हनुमान् हैं जहांका वालि राजा है ॥ ६ ॥

दो०-दूत तहाँ तुम भेजकरि, बोल पठावहु कीस ॥ ❀
तिहि मर्कटको देखकरि, हर्षित हों सुरईस ॥ २३१ ॥ ❀

वहां तुम दूत भेजकर बन्दरको बुलवाओ, उस बन्दरको देखकर देवताओंके स्वामी (रामचन्द्र) प्रसन्न होंगे ॥ २३१ ॥

चौ०-सुन गुरुवचन दूत पठवाये ❀ तिनजा वचन सुकण्ठ सुनाये ॥ १ ॥
सुन सँदेस हनुमन्त हँकारी ❀ कहेउ अवधपुर जाउ सुखारी ॥ २ ॥

गुरुके वचन सुनकर दूत भिजवाये, उन्होंने जाकर सुग्रीवको सँदेशा कह सुनाया ॥ १ ॥ उसने सुनकर हनुमान्को बुलाकर कहा. तुम आनन्दसे अयोध्यापुरीको जाओ ॥ २ ॥

रघुपति निरखि पवनसुत आये ❀ कण्ठलाय निज सखा बनाये ॥ ३ ॥
जहँ खेलहिं श्रीराम कृपाला ❀ संग रहैं तहँ केसरिलाला ॥ ४ ॥

रामचन्द्रजी हनुमानको देखकर आये और छातीसे लगाय अपना मित्र बनाया ॥ ३ ॥ जहां कृपानिधान श्रीरामचन्द्र खेलते हैं वहाँ ही हनुमान् संग रहने लगे ॥ ४ ॥

राम एक दिन चंग उड़ाई ❀ इन्द्रलोकमें पहुंची जाई ॥ ५ ॥
सुरपतिसुतवधु चंग निहारी ❀ पकड़लीन्ह अस हृदय विचारी ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीने एक दिन पतंग उड़ाई वह इन्द्रलोकमें जा पहुँची ॥ ५ ॥ इन्द्रके बेटेकी बहूने पतंग देखकर पकड़ली और मनमें ऐसा विचार किया कि-॥ ६ ॥

जासु चंग अस सुन्दरताई ❀ सो जन त्रिभुवनमें अधिकाई ॥ ७ ॥
इहाँ राम पकड़ी चँग जानी ❀ कहेहु जाहु देखहु कपि मानी ॥ ८ ॥

जिसकी पतंगकी ऐसी शोभा है वह मनुष्य तीनों लोकमें बड़ा सुन्दर होगा ॥ ७ ॥ यहां रामचन्द्रजीने पतंगको पकड़ी हुई जानकर कहा. हे अभिमानी वानर हनूमान्! तुम जाओ ॥ ८ ॥

सुरपुर पहुँचि नारिके हाथा ❀ बोले देखि छाँडु हरिनाथा ॥ ९ ॥
बिहँसि कह्यो बिन दरसन पाये ❀ छाँड़ब नाहिं राम मन भाये ॥ १० ॥

हनूमान् देवताओंके लोकमें पहुँचकर और स्त्रीके हाथमें पतंग देखकर बोले कि इसे छोड़दे ॥ ९ ॥ स्त्रीने हँसकर कहा रामचन्द्रजीके दर्शन किये बिना नहीं छोडूँगी. क्योंकि वे मेरे मनमें अच्छे लगे हैं ॥ १० ॥

प्रेमबिवस तिहिं लखि हनुमाना ❀ आइ सकल प्रभुपास बखाना ॥ ११ ॥
जाइ कहहु बोले भगवाना ❀ चित्रकूट दर्शन मनमाना ॥ १२ ॥

हनूमानने उसको स्नेहके वश देखकर सब समाचार भगवान्के पास आकर कहा ॥ ११ ॥ भगवान् बोले (उससे) जाकर कहो कि तुझे चित्रकूटमें मनमाना दर्शन होगा ॥ १२ ॥

दो०-प्रभुकी बानी सुनतही, जाय कह्यो हनुमान ॥ ❀
चित्रकूटमें जाहु तुम, दरशन निश्चय जान ॥ २३२ ॥ ❀

भगवान्की वाणी सुनतेही हनूमानने जाकर उससे कहा कि तुम मनमें दर्शनका विश्वास करके चित्रकूटको जाओ ॥ २३२ ॥

तिन तब करते तुरत ही, दीन्हीं छोड़ पतंग ॥ ❀
खैंचलई प्रभु वेगही, खेलत बालकसंग ॥ २३३ ॥ ❀

तब उस स्त्रीने शीघ्रही हाथसे पतंग छोड़दी और बालकोंके साथ खेलते हुये भगवानने उसे खींचली ॥ २३३ ॥

इति क्षेपक ॥

चौ०-बंधु सखा सँग लेहिं बुलाई ❀ बन मृगया नित खेलहिं जाई ॥ १ ॥
पावन मृग मारहिं जिव जानी ❀ दिनप्रति नृपहिं देखावहिं आनी ॥ २ ॥

साथमें मित्रोंको बुलालेते हैं और नित्य वनमें जाकर शिकार खेलते हैं ॥ १ ॥ हृदयमें जिसे पवित्र[1] समझते हैं उस हिरणको मारते हैं और प्रतिदिन लाकर राजाको दिखाते हैं ॥ २ ॥

जो मृग रामबानके मारे ❀ ते तनु तजि सुरलोक सिधारे ॥ ३ ॥
अनुज सखा सँग भोजन करहीं ❀ मातुपिताआज्ञा अनुसरहीं ॥ ४ ॥

जो हिरण रामचन्द्रजीके बाणसे मरे वे शरीर छोड़ देवताओंके लोकको गये ॥ ३ ॥ छोटे भाई और मित्रोंके साथ भोजन करते हैं, और माता पिताकी आज्ञाका पालन करते हैं ॥ ४ ॥

जेहि बिधि सुखी होहिं पुरलोगा ❀ करहिं कृपानिधि सोइ संयोगा ॥ ५ ॥
वेद पुरान सुनहिं मनलाई ❀ आपु कहहिं अनुजहिं समुझाई ॥ ६ ॥

जिस प्रकार नगरके लोग सुखी होते हैं कृपानिधि (रामचन्द्र) वही काम करते हैं ॥ ५ ॥ (रामचन्द्र) मन लगाकर वेद पुराण सुनते हैं और छोटे भाइयोंको समझाकर आप कहते हैं ॥ ६ ॥

---

(१) पवित्र कहनेसे यह तात्पर्य है कि जिनके पूर्वजन्मके कर्म अच्छे हैं और दैववश मृगयोनिमें आपड़े हैं वेही पवित्र हैं । उनको मारकर वैकुंठ पहुँचाते हैं और जो साधारण हैं उनकों तौ योनि भुगतनीही पड़ैगी, और फिर जाने कौनसी योनिमें जाँयगे ?

प्रातकाल उठिकै रघुनाथा ❀ मातु पिता गुरु नावहिं माथा ॥ ७ ॥
आयसु माँगि करहिं पुरकाजा ❀ देखि चरित हरषहिं मन राजा ॥ ८ ॥

रामचन्द्र प्रातःकालही उठकर माता, पिता और गुरुके चरणोंको मस्तक नवाते हैं ॥ ७ ॥ आज्ञा माँग नगरका काम करते हैं ऐसी लीलाओंको देख राजा दशरथ मनमें आनंदित होते हैं ॥ ८ ॥

दो०–व्यापक अकल अनीह अज, निर्गुन नाम न रूप ॥ ❀
भक्तहेतु नानाविधहिं, करत चरित्र अनूप ॥ २३४ ॥ ❀

जो सबमें व्याप्त कला और चेष्टारहित, जिसका जन्म नहीं, गुणोंसे परे, (जिसका कोई) नाम नहीं है और न रूप है, सो (भगवान्) भक्तोंके लिये अनेक भांतिकी अद्भुत लीला करते हैं ॥ २३४ ॥

चौ०–यह सब चरित कहा मैं गाई ❀ आगलि कथा सुनहु मन लाई ॥ १ ॥
विश्वामित्र महामुनि ज्ञानी ❀ बसहिं बिपिन शुभ आश्रम जानी ॥ २ ॥

यह सब चरित मैंने गाकर कहा. (अब) मन लगाकर आगेकी कथा सुनो ॥ १ ॥ मुनीश्वर विश्वामित्र बड़े ज्ञानी थे और सुन्दर आश्रम-स्थान समझ वनमें रहा करते थे ॥ २ ॥

तहँ जप जज्ञ जोग मुनि करहीं ❀ अति मारीच सुबाहुहिं डरहीं ॥ ३ ॥
देखत यज्ञ निशाचर धावहिं ❀ करहिं उपद्रव मुनि दुख पावहिं ॥ ४ ॥

वहां मुनीश्वर जप, योग, यज्ञ करते थे, पर मारीच और सुबाहुसे बड़ा डरते थे ॥ ३ ॥ यज्ञके देखतेही राक्षस दौड़ते थे और उपद्रव करते थे और मुनीश्वर दुःख पाते थे ॥ ४ ॥

गाधितनयमन चिंता व्यापी ❀ हरिबिनु मरहिं न निसिचर पापी ॥ ५ ॥
तब मुनिवर मन कीन्ह बिचारा ❀ प्रभु अवतरेउ हरनमहिभारा ॥ ६ ॥

विश्वामित्रके मनमें चिन्ता व्यापी कि भगवान्के बिना पापी राक्षस न मरेंगे ॥ ५ ॥ तब मुनिराज (विश्वामित्र)ने मनमें विचार किया कि पृथ्वीका भार उतारनेको भगवान्ने अवतार लिया है ॥ ६ ॥

इहिमिस देखौं प्रभुपद जाई ❀ करि बिनती आनौं दोउ भाई ॥ ७ ॥
ज्ञानबिरागसकलगुनअयना ❀ सो प्रभु मैं देखत भरि नयना ॥ ८ ॥

इसी बहानेसे भगवान्के चरणोंके दर्शन करूँ और विनतीकर दोनों भाइयोंको लिवालाऊं ॥ ७ ॥ जो भगवान् ज्ञान वैराग्य और संपूर्ण गुणोंके धाम हैं उनको मैं नेत्र भरकर देखूंगा ॥ ८ ॥

दो०–इहिबिधि करत मनोरथ, जात न लागी बार ॥ ❀
करि मज्जन सरजूसलिल, गये भूप दरबार ॥ २३५ ॥ ❀

इस प्रकार इच्छा करते हुये चले और जातेमें देर न लगी, फिर सरयू नदीके जलमें मज्जनकर राजाके दरबारको गये ॥ २३५ ॥

चौ०–मुनिआगमन सुना जब राजा ❀ मिलन गयउ लै बिप्रसमाजा ॥ १ ॥
करि दंडवत मुनिहिं सनमानी ❀ निज आसन बैठारिन आनी ॥ २ ॥

---

(१) यहां यह शंका है कि क्या मुनि अपने प्रभावसे राक्षसोंको नहीं मार सकतेथे? इसका यह समाधान है कि मार तो सकते थे, परन्तु यज्ञमें क्रोधकर मारना और अपना तप क्षीण करना योग्य न समझा.

राजा (दशरथ) ने जब विश्वामित्रका आगमन सुना, तौ ब्राह्मणोंके समाज लेकर मिलने गये ॥ १ ॥ (मुनीश्वरको) दंडवत करके आदरपूर्वक अपने आसनपर लाकर विठाया ॥ २ ॥

चरन पखारि कीन्ह अति पूजा ❀ मोसम आजु धन्य नहिं दूजा ॥ ३ ॥
बिबिधभाँति भोजन करवावा ❀ मुनिवर हृदय हरष अति पावा ॥ ४ ॥

चरण धोकर बहुत पूजा की और कहा कि मेरे समान आज दूसरा कोई धन्य नहीं ॥३॥ मुनीश्वरको अनेक भांतिका अर्थात् षड्रस भोजन कराया और उन्होंने अपनें हृदयमें बड़ा आनन्द पाया ॥ ४॥

पुनि चरनन मेले सुत चारी ❀ राम देखि मुनि बिरति बिसारी ॥ ५ ॥
भये मगन देखत मुखसोभा ❀ जनु चकोर पूरनससि लोभा ॥ ६ ॥

फिर चारों पुत्र चरणोंमें लिटा दिये, तौ रामचन्द्रजीको देख मुनीश्वरने वैराग्य[1] छोड़ दिया ॥ ५ ॥ और मुखकी शोभाको देखतेही ऐसे प्रसन्न हुये मानो पूरे चन्द्रमाके लोभ चकोर ॥ ६ ॥

तब मनहरषि बचन कह राऊ ❀ मुनि असकृपा कीन्ह नहिं काऊ ॥ ७ ॥
केहिकारन आगमन तुम्हारा ❀ कहहु सो करत न लाउब बारा ॥ ८ ॥

तब राजा मनमें प्रसन्न हो बोले कि हे मुनीश्वर ! ऐसी कृपा आपने कभी मेरे ऊपर नहीं कीनी (कि घर वैठे झाँकी दीनी हो) ॥ ७॥ किस कारण आपका आगमन हुआ सो कहिये देर न लगाइये ॥ ८॥

असुरसमूह सतावहिं मोहीं ❀ मैं याचन आयउँ नृप तोही ॥ ९ ॥
अनुजसमेत देहु रघुनाथा ❀ निशिचरबध मैं होब सनाथा ॥ १० ॥

(विश्वामित्रजी कहने लगे कि) हे राजन् ! राक्षसोंके झुंड मुझे सताते हैं (इसकारण) में तुझसे यह याचना करने आया हूँ कि ॥ ९ ॥ छोटे भाई (लक्ष्मण)सहित रामचन्द्रजीको दो (जिससे) मैं राक्षसोंको मार सनाथ होजाऊं ॥ १० ॥

दो०–देहु भूप मनहरषित, तजहु मोह अज्ञान ॥ ❀
धरमसुजस नृप तुमकहँ, इन कहँ अतिकल्यान ॥ २३६ ॥ ❀

हे राजा ! मनमें प्रसन्न होकर (पुत्रोंको) दो और मोह और अज्ञानको[2] छोड़ो (यह तुम्हारा धर्म है) तुमको सुन्दर यश मिलैगा और इनकाभी अधिक कल्याण[3] होगा ॥ २३६ ॥

चौ०–सुनि राजा अति अप्रिय बानी ❀ हृदयकंप मुखदुति कुँभिलानी ॥ १ ॥
चौथेपन पायउँ सुतचारी ❀ विप्र बचन नहिं कहेउ बिचारी ॥ २ ॥

राजा इस अति अप्रिय वाणीको सुनकर हृदयमें काँपने लगे और उनका मुख कुम्हला गया ॥ १ ॥ हे मुनीश्वर ! मैंने चौथेपन कहिये बुढ़ापेमें तौ चार पुत्र पाये हैं ! आपने विचार कर बात नहीं कही ॥२॥

माँगहु भूमि धेनु धन कोषा ❀ सर्वस देहु आज तजि रोषा ॥ ३ ॥
देह प्रानतें प्रिय कछु नाहीं ❀ सोउ मुनि देउँ निमिषइकमाहीं ॥ ४ ॥

---

(१) अर्थात् वैराग्यमें किसीसे स्नेह नहीं रहता परन्तु रामचन्द्रजीसे स्नेह उत्पन्न हुआ और गृहस्थाश्रमको धन्य माना ॥ (२) अज्ञान यही कि राक्षसोंको बालक कैसे मारैंगे ? ॥ (३) अति कल्याणसे यह तात्पर्य है कि इनको त्रिलोकीकी विजय मिलैगी और विवाह होजायगा ॥

पृथ्वी, गौ, धन और खजाना मांगो, आज मैं क्रोधको छोड़ सर्वस्व दूंगा ॥ ३ ॥ हे मुने! शरीर और प्राणसे प्यारा कुछ नहीं है सो वहभी एक पलमें दे सकता हूँ ॥ ४ ॥

सब सुत प्रिय मोहिं प्रानकिनाईं ❀ राम देत नहिं बनै गुसाईं ॥ ५ ॥
कहँ निसिचर अतिघोर कठोरा ❀ कहँ सुंदर सुत परमकिसोरा ॥ ६ ॥

(यद्यपि) सब पुत्र मुझे प्राणोंके समान प्यारे हैं (परंतु) हे गोसाईं ! रामचन्द्रजीके देतेमें नहीं बनती ॥ ५ ॥ कहां अधिक भयंकर और कठोर राक्षस, और कहाँ मेरा सुन्दर छोटासा बालक ! ॥ ६ ॥

सुनि नृपगिरा प्रेमरससानी ❀ हृदयहरष माना मुनि ज्ञानी ॥ ७ ॥
तब वसिष्ठ बहुविधि समुझावा ❀ नृपसंदेह नाशकहँ पावा ॥ ८ ॥

राजाकी प्रेमके रसमें सनीहुई वाणीको सुनकर ज्ञानी मुनि विश्वामित्रने अपने हृदयमें आनंद माना ॥ ७ ॥ तब वसिष्ठने बहुत भांति समझाया तब राजाका संदेह दूर हुआ ॥ ८ ॥

अतिआदर दोउ तनय बुलाये ❀ हृदयलाइ बहु भाँति सिखाये ॥ ९ ॥
मेरे प्रान नाथ सुत दोऊ ❀ तुम मुनि पिता आन नहिं कोऊ ॥१०॥

बड़े आदरसे दोनों पुत्रोंको बुलाया और छातीसे लगाय बहुत भांति समझाया ॥ ९ ॥ हे मुनिनाथ ! ये दोनों पुत्र मेरे जीवन अधार हैं, अब तुमही इनके पिता हो और कोई नहीं है ॥ १० ॥

दो०-सौंपे भूपति ऋषिहि सुत, बहुविधि देइ असीस॥ ❀
जननीभवन गए प्रभु, चले नाइ पद सीस ॥ २३७ ॥ ❀

राजाने बहुत भांति आशीर्वाद देकर ऋषिको पुत्र सौंपे, फिर भगवान माताके महलमें गये और चरणोंमें माथा नवाकर चले ॥ २३७ ॥

सो०-पुरुषसिंह दोउ वीर, हरषि चले मुनिभयहरन ॥ ❀
कृपासिंधु मतिधीर, अखिलविश्वकारनकरन ॥ २७ ॥ ❀

नृसिंहावतारके समान बड़े वीर, मुनीश्वरके भयको दूर करनेवाले, दयाके समुद्र, धीरजवान्, और सब संसारके कार्योंके साधन, ऐसे दोनों भाई (रामलक्ष्मण) प्रसन्न होकर चले ॥ २७ ॥

चौ०-अरुननयन उर बाहु विशाला ❀ नील जलज तनु श्याम तमाला ॥ १ ॥
कटि पट पीत कसे वर भाथा ❀ रुचिर चाप सायक दुहुँहाथा ॥ २ ॥

(राम कैसे हैं कि) लाल २ नेत्र, चौड़ी छाती और लंबी भुजावाले, और नील कमल और तमाल वृक्षके समान श्यामसुन्दर शरीर धारण किये ॥ १ ॥ कमरमें पीताम्बर पहरे और सुन्दर तरकस कसे और दोनों हाथोंमें सुन्दर धनुषबाण लिये ॥ २ ॥

---

(१) यह समझाया कि रामका अवतार भूमीका भार उतारनेको हुआ है. पुनि विश्वामित्रसरीखे राजर्षि आपसे याचना करने आये हैं, आपके तपका कोई बड़ा प्रताप है, फिर आप यह प्रतिज्ञा करचुके हैं कि-"कहहु सो करत न लाऊं वारा"-और आपके कुलकी यह रीति है कि "रघुकुलरीति सदा चलि आई ! प्रान जाइ वरु बचन न जाई ॥" अव न देनेसे धर्म जायगा और मुनि नजानै क्या शाप दें, इसलिये भेज दीजिये-

स्याम गौर सुंदर दोउ भाई ❀ विश्वामित्र महानिधि पाई ॥ ३ ॥
प्रभु ब्रह्मण्य देव मैं जाना ❀ मो हित पिता तजेउ भगवाना ॥ ४ ॥

विश्वामित्रने साँवले गोरे सुन्दर दोनों भाइयोंको बड़े भारी खजानेके समान पाकर-॥ ३ ॥ विचारा कि मैंने जान लिया, प्रभु ब्राह्मण और देवताओंके भक्त हैं; क्योंकि भगवानने मेरे लिये पिताको तज दिया ॥ ४ ॥

चलेजात मुनि दीन्ह दिखाई ❀ सुनि ताडका क्रोध करि धाई ॥ ५ ॥
एकहिं बान प्रान हरि लीन्हा ❀ दीन जानि तेहि निजपद दीन्हा ॥ ६ ॥

चलते जातेमें मुनीश्वरने ताड़का[1] (राक्षसी) दिखलाई, और वह देखतेही क्रोधकर दौड़ी ॥ ५॥ (भगवानने) एकही बाणमें उसके प्राण हरलिये और उसको दीन जान अपना परमधाम दिया ॥ ६ ॥

तब ऋषि निजनाथहिं जिय चीन्हा❀ विद्यानिधिकहँ बिद्या दीन्हा ॥ ७ ॥
जाते लाग न क्षुधा पिपासा ❀ अतुलित बल तनुतेज प्रकासा ॥ ८ ॥

तब ऋषि (विश्वामित्र)ने अपने स्वामीको[2] हृदयमें पहिचाना और विद्याके खान श्रीरघुनाथजीको वह विद्या[3] दानदिया कि-॥ ७ ॥ जिससे भूख प्यास न सतावै, शरीरमें अतुल बल आवै और तेजका प्रकाश बढ़ै ॥ ८ ॥

दो०-आयुध सकल समर्पिकरि, प्रभु निजआस्रम आनि ॥ ❀
कंदमूलफल भोजनहिं, दिये भक्तहित जानि ॥ २३८ ॥ ❀

संपूर्ण अस्त्रशस्त्र[4] सौंपकर ऋषि रामचन्द्रजीको अपने आश्रममें ले आये और उन्हें भक्तहितकारी जानकर कन्दमूलफल भोजनको दिये ॥ २३८ ॥

चौ०-प्रात कहा मुनिसन रघुराई ❀ निर्भय यज्ञ करहु तुम जाई ॥ १ ॥
होम करनलागे मुनि झारी ❀ आपु रहे मखकी रखवारी ॥ २ ॥

---

(१) सुकेतुनाम एक यक्ष था उसने संततिके लिये ब्रह्माजीका तप किया। उन्होंने उसे ताड़का नाम कन्या दी और उसमें हजार हाथीका बल दिया ! कुछकालमें कन्या बढ़कर रूपवती हुई तब सुकेतुने जंभके पुत्र सुन्दसे व्याह दी । फिर उसके मारीच पुत्र भया ! जब अगस्त्यजीके शापसे सुन्द मारागया तौ ताड़का पुत्रको साथ ले मुनिके खानेको दौड़ी तब उन्होंने शाप दिया कि तुम राक्षसयोनिमें होजाओ ॥ (२) विश्वामित्रजीने तौ प्रथमही जान लियाथा कि प्रभुने अवतार लिया है–जैसा लिखा है कि "तब मुनिवर मन कीन्ह विचारा। प्रभु अवतरेउ हरनमहिभारा" और यहाँ लिखा कि "तब ऋषि निजनाथहिं जिय चीन्हा" यह पूर्वापर विरोध मिलता है. इसका यह समाधान है कि विश्वामित्रको ज्ञान तौ पूर्वही था, परंतु जब राजा दशरथने इन्हें पुत्र सौंपकर यह कहा कि–"मेरे प्रान नाथ सुत दोऊ । तुम मुनि पिता आन नहिं कोऊ ॥" तबसे मुनिका इनपर वात्सल्य अधिक बढ़गया और प्रेम अधिक होनेसे और इनके बालकों कैसे कौतुक देख कर प्रथम विचारकी सुधि बुधि न रही, परंतु जब रामजीने एक बाणसे ताड़काका वध किया तब इनका पराक्रम देखकर फिर स्मरण हुआ और इनको हृदयमें अपना स्वामी पहिचाना ॥ (३) विद्याओंका नाम बला अतिबला था. उनका फल वही था जो आगेकी चौपाईमें लिखा है ॥ (४) दण्डचक्र, धर्मचक्र, कालचक्र, विष्णुचक्र, ऐन्द्रचक्र, वज्रास्त्र, शैवशूलवत्, ब्रह्मशिर, ऐषीक, ब्रह्मास्त्र, मोदकी और शिखरी गदा, धर्मपाश, कालपाश, वरुणपाश, शुष्क और आर्द्र ये दो वज्र, पैनाकास्त्र, नारायणास्त्र, आग्नेयास्त्र, शिखरनामक वायव्यास्त्र, हयशिरोस्त्र, क्रौंचास्त्र, दोशक्ति, वैद्याधरास्त्र, नन्दन उत्तम खड्ग, गान्धर्वास्त्र, मोहन नाम प्रस्वापन, प्रशमन सौम्य, वर्षण, संतापनशस्त्र, विलापन कामका प्रिय मदनास्त्र, गंधर्वास्त्र, माननामक पैशाचास्त्र, मोहन नाम तामस, सोमन, संवर्त्त, मौशल, सत्यास्त्र, मायामय तेजःप्रभावनामक सौरास्त्र, शिशिरनामक सौमास्त्र, त्वाष्ट्रास्त्र, भगास्त्र सीलेषु और मानव, कंकाल नाम मुशल, कापाल किंकणी ॥

भोर होतेही रघुनाथजीने मुनिसे कहा, तुम बेखटके जाकर यज्ञ करो ॥ १ ॥ सब मुनीश्वर होम करने लगे और भगवान् आप यज्ञकी रखवालीपर रहे ॥ २ ॥

सुनि मारीच निसाचर कोही ❀ लै सहाय धावा मुनिद्रोही ॥ ३ ॥
विनुफर बान राम तेहिं मारा ❀ सतजोजन गा सागरपारा ॥ ४ ॥

जब क्रोधी राक्षस मारीचने सुना तौ मुनियोंके वैरीने अपने कटकको साथ लेकर धावा किया ॥ ३ ॥ रामचन्द्रजीने उसके विना नोंकका ऐसा वाण मारा कि वह सौ योजन समुद्रके पार चला गया ॥ ४ ॥

पावकसर सुबाहु पुनि मारा ❀ अनुज निसाचरकटक सँहारा ॥ ५ ॥
मारि असुर द्विज निर्भयकारी ❀ अस्तुति करहिं देव मुनि झारी ॥ ६ ॥

फिर सुबाहु (राक्षस) के अग्निवाण मारा और छोटे भाई (लक्ष्मण) ने राक्षसोंकी सेनाका नाश किया ॥ ५ ॥ राक्षसोंको मार ब्राह्मणोंको निडर किया, तौ सब देवता और मुनीश्वर स्तुति करने लगे ॥ ६ ॥

तहँ पुनि कछुक दिवस रघुराया ❀ रहे कीन्ह विप्रनपर दाया ॥ ७ ॥
भक्तिहेतु बहु कथा पुराना ❀ कहैं विप्र जद्यपि प्रभु जाना ॥ ८ ॥

फिर वहां रामचन्द्रजी कुछ दिन रहे और ब्राह्मणोंपर दया की ॥ ७ ॥ यद्यपि भगवान् सब जानते हैं, तौभी ब्राह्मण, भक्तिके कारण, बहुतसी कथा पुराण सुनाने लगे ॥ ८ ॥

तब मुनि सादर कहा बुझाई ❀ चरित एक देखिय प्रभु जाई ॥ ९ ॥
धनुषयज्ञ सुनि रघुकुलनाथा ❀ हरषि चले मुनिवरके साथा ॥ १० ॥

तब मुनीश्वरने आदरपूर्वक समझाकर कहा कि हे भगवन्! (राजा जनकने जानकीके स्वयंवरके लिये धनुषयज्ञ रचा है यह तौ) चलकर एक चरित्र देखना चाहिये ॥ ९ ॥ रामचन्द्रजी धनुषयज्ञको सुनकर प्रसन्न हो मुनियोंके शिरोमणि विश्वामित्रजीके साथ चले ॥ १० ॥

आस्रम एक दीख मगमाहीं ❀ खग मृग जीव जंतु तहँ नाहीं ॥ ११ ॥
पूछा मुनिहिं सिला प्रभु देषी ❀ सकल कथा ऋषि कही बिसेषी ॥ १२ ॥

मार्गमें एक आश्रम देखा कि जहाँ पक्षी, हिरण और जीवजंतु नहीं हैं ॥ ११ ॥ भगवानने शिलाको देख मुनिसे पूछा तौ ऋषिने सब कथा पूरी २ कही ॥ १२ ॥

दो०-गौतमनारी सापवस, उपलदेह धरि धीर ॥ ❀
चरनकमलरज चाहती, कृपा करहु रघुबीर ॥ २३९ ॥ ❀

हे रामचन्द्र ! गौतमकी स्त्री शापके वश पाषाणकी देह धारणकर धीरज धरे आपके चरणकमलोंकी रज चाहती है, सो कृपा कीजिये ॥ २३९ ॥

---

(१) एक समय ब्रह्माजीने अपनी इच्छासे एक कन्या अहल्या नाम उत्पन्न करी. वह परम मनोहर थी कि जिसकी सुन्दरता देख सब देवता मोहित होते थे. ब्रह्माजी उस कन्याको गौतमऋषिको धरोहरकी भाँति सौंपकर चले गये. कुछ दिन पीछे फिर ब्रह्माजीने कन्या माँगी. ऋषिने उसे ज्योंकी त्यों सौंपदी, तब ब्रह्माजी उनके जितेन्द्रियपनेको देख बड़े प्रसन्न हुए और उस कन्याको उन्हेंही विवाह दी. यह वात इन्द्रको बुरी लगी. एक दिन वह छल करके गौतम ऋषिका भेष बना अहल्याके पास आय उसे विषय कर रहाथा कि; गौतम आगये तब अहल्याने घबराकर इन्द्रसे पूछा कि तू सत्य कह कौन है ? उसने नाम बताया. तब इसे छिपाकर देरसे द्वार खोलने आई तब ऋषिने देरसे आनेका कारण पूछा और जब अहल्याने छिपाया तब गौतमने तपोबलसे उसका सब मर्म जान इंद्रको शाप दिया कि, तेरे शरीरमें सहस्र भग होवें, और हे अहल्या ! तू मुझसे झूठ बोली इस पापसे तूं शिला होजा और जब श्रीरामचन्द्रजी तुझे दरशन देंगे तब तेरा उद्धार होगा ॥

छं०-परसत पदपावन सोकनसावन प्रगट भई तपपुंजसही। ❀
देखत रघुनायक जनसुखदायक संमुख होइ करजोरि रही ॥ ❀
अतिप्रेमअधीरा पुलकशरीरा मुख नहिं आवै वचन कही। ❀
अतिसय बड़भागी चरनन लागी जुगलनयन जलधार वही २९❀

रामचन्द्रजीके पवित्र दुःख दूर करनेवाले चरणोंको छूतेही वह तपकी पुञ्ज नारी प्रगट हुई. और भक्तहितकारी अवधविहारी रामचन्द्रजीको देखतेही उनके सन्मुख हो हाथ जोड़े रहगई. अधिक स्नेहके कारण धीरज जाता रहा और शरीरके रोम खड़े होगये, मुखसे वचन नहीं निकसने लगा तब बड़भागिनी पैरों पड़ी और उसके दोनों नेत्रोंसे नीरकी धारा वहने लगी ॥ २९ ॥

धीरज मन कीन्हा प्रभु कहँ चीन्हा रघुपति कृपा भक्ति पाई। ❀
अति निर्मल बानी अस्तुति ठानी ज्ञानगम्य जय रघुराई ॥ ❀
मैं नारि अपावन प्रभु जगपावन रावनरिपु जन सुखदाई। ❀
राजीवसुलोचन भवभयमोचन पाहि पाहि सरनहिं आई ॥ ३० ॥❀

फिर मनमें धीरज धर स्वामीको पहिचाना और रामचन्द्रजीकी दयासे भक्ति मिली. तब अत्यंत निर्मल वाणीसे स्तुति करने लगी कि हे रामजी ! आपकी जय होय. आप ज्ञानसे जानने योग्य हैं. और हे भगवन् ! आप संसारको पवित्र करनेवाले, रावणके शत्रु, भक्तोंको सुख देनेवाले, कमलसे सुन्दर नेत्रवाले और संसारके भयको दूर करनेवाले हो, मैं अपवित्र स्त्री आपकी शरण आई हूं मेरी रक्षा करो रक्षा करो ॥ ३० ॥

मुनि शाप जो दीन्हा अति भल कीन्हा परम अनुग्रह मैं माना। ❀
देखेउँ भरि लोचन हरि भवमोचन यहै लाभ शंकर जाना ॥ ❀
बिनती प्रभु मोरी मैं मति भोरी नाथ न बर मागौं आना। ❀
पदपद्मपरागा रसअनुरागा ममममनमधुप करै पाना ॥ ३१ ॥❀

मुनीश्वरने जो शाप दिया सो वहुत अच्छा किया. मैंने वड़ी कृपा समझी कि जिनके दर्शनको महादेवजी अपना बड़ा लाभ मानते हैं उन संसारसे छुड़ानेवाले भगवानको मैंने नेत्रोंभर देखा हे भगवन् ! मेरी यही विनती है कि मैं बुद्धिकी वड़ी भोली हूँ इसलिये और कुछ वर नहीं माँगती हूं. (केवल यही माँगती हूं कि, आपके) चरणकमलोंकी रजके रसको मेरा मन भ्रमरके समान प्रेमसे पान करै ॥ ३१ ॥

जेहि पदसुरसरिता परम पुनीता प्रगट भई सिव सीस धरी। ❀
सोई पदपंकज जेहि पूजत अज मम सिर धरेउ कृपालु हरी ॥ ❀
यहि भांति सिधारी गौतमनारी बार बार हरिचरन परी। ❀
जो अति मनभावा सो वर पावा गइ पतिलोक अनंद भरी॥३२॥ ❀

जिनके चरणोंसे परम पवित्र गंगाजी उत्पन्न हुई और उन्हें महादेवजीने अपने मस्तकमें धारण करी और जिन चरणकमलोंको ब्रह्माजी पूजते है उनही चरणोंको भक्तहितकारी भगवानने मेरे मस्तकपर रक्खा (मुझे धन्य है) इस भांति गौतमकी स्त्री अहल्या वारंवार भगवानके चरणोंमें गिरकर और जिसकी मनमें इच्छा थी उस वरको पाकर आनन्दमें उमँगती हुई पतिके लोकको गई ॥ ३२ ॥

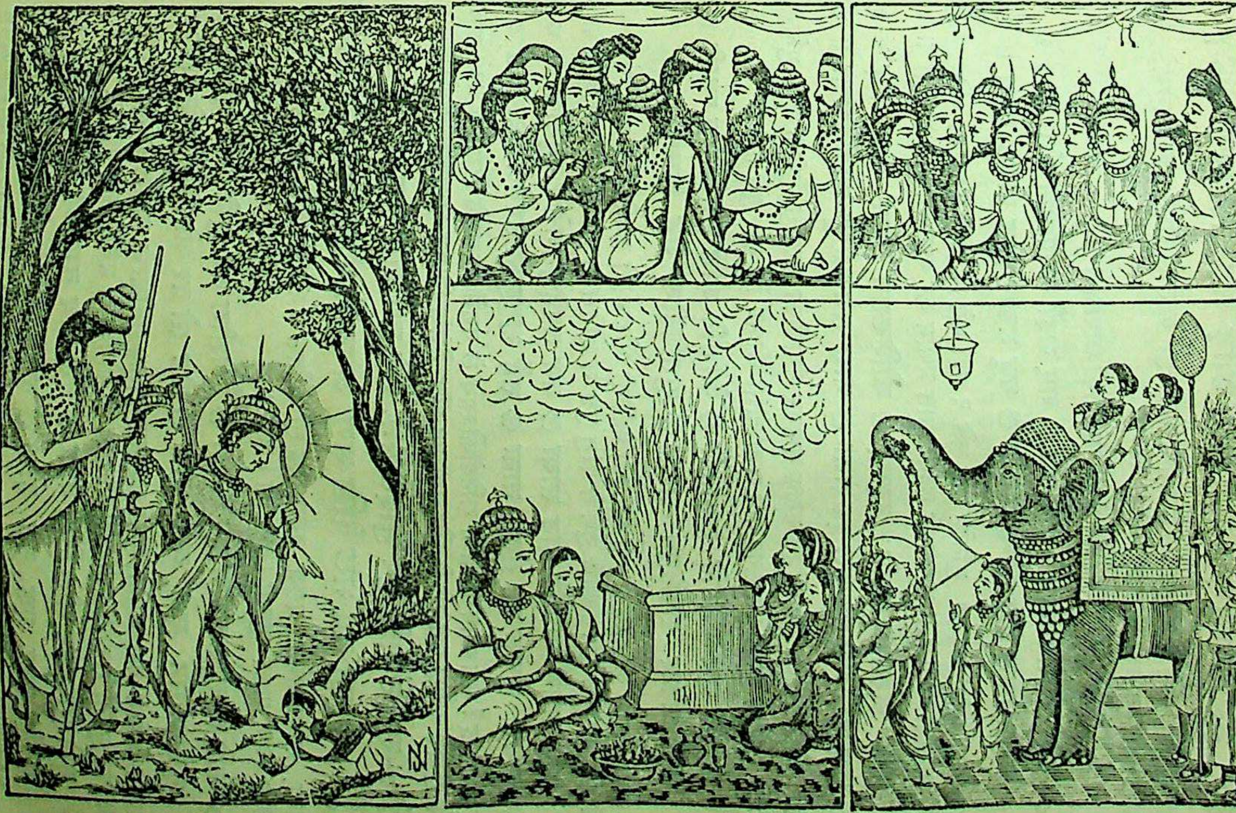

दो०–अस प्रभु दीनबंधु हरि, कारनरहित कृपालु । ❀
तुलसिदास सठ ताहि भजु, छाँड़ि कपटजंजालु ॥ २४० ॥ ❀

तुलसीदास कहते हैं हे मूर्ख ! ऐसे समर्थ, दीनबन्धु, कारणसे रहित दया करनेवाले भगवान्‌को कपटरूपी जंजालको छोड़कर भजो ॥ २४० ॥

अथ क्षेपक गंगाजीकी उत्पत्ति ॥

चौ०–चले रामलछमन मुनिसंगा ❀ गए जहाँ जगपावनि गंगा ॥ १ ॥
अनुजसहित प्रभु कीन्ह प्रनामा ❀ बहु प्रकार सुख पायउ रामा ॥ २ ॥

रामचन्द्र और लक्ष्मण मुनिके साथ चले २ वहाँ गये कि जहाँ संसारको पवित्र करनेवाली गंगाजी बह रही थी ॥ १ ॥ भगवान्‌ने लक्ष्मणसमेत प्रणाम कर बहुत भांति सुख पाया ॥ २ ॥

पुनि सुरसरिउतपति रघुराई ❀ कौशिकसन पूँछा सिर नाई ॥ ३ ॥
कह मुनि प्रभु तव कुल इक राजा ❀ नाम सगर तिहुँ लोकविराजा ॥ ४ ॥

फिर रामचन्द्रजीने विश्वामित्रसे मस्तक नवाकर गंगाजीकी उत्पत्ति पूँछी ॥ ३ ॥ मुनिने कहा हे राम ! तुम्हारे कुलमें एक सगर नाम राजा तीनों लोकमें विख्यात हुये ॥ ४ ॥

तिहिंके जुग भामिनि सुकुमारी ❀ केशिनि ज्येष्ठ सुमति लघु प्यारी ॥ ५ ॥
सब प्रकार संपतिगुन आजा ❀ सुतबिहीन मन विस्मय राजा ॥ ६ ॥

उनकी कोमल अंगवाली दो स्त्री थीं. बड़ी केशिनी और छोटी सुमति और बड़ी प्यारी थीं ॥५॥ उनमें सब प्रकारके संपत्ति आदि गुण थे परंतु पुत्र न होनेसे राजाके मनमें बड़ा दुःख था ॥६॥

एक समय भामिनि दोउ साथा ❀ बन तपहेतु गये रघुनाथा ॥ ७ ॥
सघन सुफल तरु सुंदर नाना ❀ तहँ भृगुमुनि तपतेजनिधाना ॥ ८ ॥

हे रामचन्द्र ! एक समय वह दोनों रानियोंको साथ ले वनमें तपस्याके लिये गये ॥७॥ फलसहित अनेक सुन्दर २ वृक्ष लग रहे थे और वहाँ तप और तेजके निधान भृगुमुनि (रहते थे) ॥ ८ ॥

दो०–सहितनारि नृप मुदित मन, रहे वर्ष शत एक ॥ ❀
कीन्हा तप भल देखि भृगु, अस्तुति कीन्ह अनेक ॥ २४१ ॥ ❀

राजा रानियोंसमेत प्रसन्न बनसे एक सौ वर्षतक बनमें रहे और कठिन तप किया और भृगुजीके दर्शन पाकर बहुतसी स्तुति की ॥ २४१ ॥

चौ०–कहि निजदुख प्रनाम नृप कीन्हा ❀ दैअशीश तब मुनि वर दीन्हा ॥ १ ॥
नृपरानीसन मुनि अस भाषा ❀ लेउ सो वर जो जिहिं अभिलाषा ॥ २ ॥

राजाने प्रणाम कर अपना दुःख कह सुनाया. तब मुनीश्वरने आशीर्वाद देकर वरदान दिया ॥ १ ॥ फिर मुनिने राजाकी रानियोंसे यों कहा कि जो जिसके मनमें आवे वही वर मांगो ॥ २ ॥

सुनि मुनिचरन सीस तिन्ह नावा ❀ देउ नाथ तुम कहँ जो भावा ॥ ३ ॥
एकहि कहा एक सुत होना ❀ दूसरि सहससाठि सुत होना ॥ ४ ॥

उन्होंने सुनकर मुनीश्वरके चरणोंको माथा नवाकर कहा हे स्वामी ! जो तुम्हारे मनमें आवे वही वरदान दो ॥ ३ ॥ उन्होंने एकको एक पुत्र होनेके लिये और दूसरीको सुन्दर साठ हजार पुत्र होनेका वरदान दिया ॥ ४ ॥

हर्षित भयउ सुभग वर पाई ❀ हाथ जोरि चरननि शिर नाई ॥ ५ ॥
सहित भामिनिन्ह अवधहिं आयउ ❀ हरषसहित कछु दिवस गमायउ ॥ ६ ॥

सुन्दर वर पाकर प्रसन्न हुये और हाथ जोड़कर चरणोंमें माथा नवाया ॥ ५ ॥ (राजा) स्त्रियोंसमेत अयोध्यापुरीमें आये और आनन्दसहित कुछ दिन बिताये ॥ ६ ॥

जानि सुघरी नखत सुखदाई ❀ तब केशिनि असमंजस जाई ॥ ७ ॥
सुमतिप्रसव तुम्बरि इक सोई ❀ भए सुत प्रगट कहे मुनि जोई ॥ ८ ॥

सुन्दर घड़ी और सुखदायक नक्षत्र जानकर केशिनीने असमंजसको उत्पन्न किया ॥ ७ ॥ और सुमतिके प्रसवसे एक तूँबा हुआ उसमेंसे उतने पुत्र उत्पन्न हुये जितने मुनिने कहे थे ॥ ८ ॥

हरषसहित दिय दान नरेशू ❀ पूजि विप्र गुरु गौरि गनेशू ॥ ९ ॥
घृतघट सुंदर तुरत मँगाए ❀ ते सब सुत नृप तिन्हमहँ नाए ॥ १० ॥

राजाने ब्राह्मण, गुरु, पार्वती और गणेशजीको पूजकर आनन्दसहित दान दिये ॥ ९ ॥ राजाने शीघ्र सुन्दर घीके घड़े मँगाये और उनमें वे सब पुत्र पधराये ॥ १० ॥

दो०-इहिविधि भए सकल सुत, पूरे सब मन काम ॥ ❀
जाइ दिवस निसि हरषबस, सुनहु राम घनश्याम ॥ २४२ ॥ ❀

इस भांति सब पुत्र उत्पन्न हुये और सब मनोकामना पूरी हुई. हे घनश्याम ! रामचन्द्र ! सुनो (फिर तौ) रातदिन आनन्दके वश बीतने लगे ॥ २४२ ॥

चौ०-परिजन पुरजन रानि नरेसू ❀ अति आनँद तनु मिटा कलेसू ॥ १ ॥
बालकेलि करि भयउ कुमारा ❀ लीला करैं अगम संसारा ॥ २ ॥

कुटुम्बी, नगरके लोग, रानी और राजा सब आनन्दके वश अंगमें फूले न समाये और दुःख मिट गये ॥ १ ॥ बाललीलाकर कुमार बड़े हुए और इस अगम संसारमें चरित्र करने लगे ॥ २ ॥

होहिं सुकाज सकल मन चीते ❀ इहि सुख बसत बहुत दिन बीते ॥ ३ ॥
सरयूनदी अवधि जो अहई ❀ बिमल सलिल उत्तरदिशि बहई ॥ ४ ॥

सब मन चीते सुन्दर काम होने लगे और इसी सुखमें रहते २ बहुत दिन बीत गये ॥ ३ ॥ सरयू नदी अयोध्यापुरीमें उत्तरदिशाकी ओर बहती है और उसमें निर्मल नीर भरा है ॥ ४ ॥

प्रजालोगके बालक नाना ❀ नित उठि तहाँ करहिं अस्नाना ॥ ५ ॥
असमंजस तहँ तरनी आनी ❀ तिन्हहिं चढ़ाइ बोर गहि पानी ॥ ६ ॥

वहां प्रजाके लोगोंके बहुतसे बालक नित्य उठकर स्नान करते हैं ॥ ५ ॥ तहां असमञ्जस नाव लाया और उनको हाथ पकड़कर उसपर चढ़ाय पानीमें डुबा दिया ॥ ६ ॥

भए प्रजा सब परम दुखारी ❀ बालकवध लखि सुनहु खरारी ॥ ७ ॥
सकल गए जहँ बैठ नृपाला ❀ बोले बचन नाइ पद भाला ॥ ८ ॥

हे भगवन् ! सुनो. बालकोंका मरना सुनकर सब प्रजाके लोग बड़े दुखी हुये ॥ ७ ॥ वे सब वहाँ गये, जहाँ राजा बैठाथा (और उसके) चरणोंको माथा नवाकर वचन बोले- ॥ ८ ॥

तजब देस बरु सुनहु नरेसू ❀ बिना तजे नहिं मिटब कलेसू ॥ ९ ॥
तुम नृप चहहु प्रजापतिपाला ❀ सुत तुम्हार भा सबकर काला ॥ १० ॥

हे राजा ! सुनो. यह अच्छा है कि हम देश छोड़ देंगे. क्योंकि बिना छोड़े दुःख दूर नहीं होगा ॥ ९ ॥ क्योंकि हे राजा ! आप तो प्रजाका पालन किया चाहते हो, परंतु तुम्हारा पुत्र सबका काल हुआ है ॥ १० ॥

दो०-तव सुत कीन्हे पाप बहु, मारे बालकवृंद ॥
तुम कहँ प्रानसमान सुत, सकल प्रजनि कहँ मंद ॥ २४३ ॥

तुम्हारे पुत्रने बड़ा पाप किया जो बालकोंका समूह मारडाला. तुमको पुत्र प्राणोंके समान है और सब प्रजाको बुरा लगता है ॥ २४३ ॥

चौ०-प्रजागिरा सुनि धीरज दीन्हा ❀ सुतहि देसते बाहर कीन्हा ॥ १ ॥
तासु तनय जगविदित प्रभाऊ ❀ गुननिधि अंशुमान तिहिं नाऊँ ॥ २ ॥

प्रजाकी वाणी सुनकर धीरज दिया और पुत्रको देशसे बाहर किया ॥ १ ॥ उसका पुत्र अंशुमान् गुणोंका सागर हुआ कि जिसका प्रभाव संसारमें उजागर हुआ ॥ २ ॥

बसत हृदय नृपके सो कैसे ❀ फनिमनि मीन सलिल रह जैसे ॥ ३ ॥
गए प्रजा सब निज निज धामा ❀ भये विसोच मनहिं विस्रामा ॥ ४ ॥

वह राजाके हृदयमें कैसे बसता हुआ ! जैसे सर्पके पास मणि और जलमें मछली रहती है ॥ ३ ॥ सब प्रजाके लोग अपने २ धामको गये और शोचहीन होकर मनमें विश्राम पाया ॥ ४ ॥

बहुरि नृपति मन कीन्ह बिचारा ❀ आइ गयउ पनचौथ हमारा ॥ ५ ॥
द्विज मंत्रिनि गुरु सुतनि बुलाए ❀ हिमगिरि विंध्य मध्य तब आए ॥ ६ ॥

फिर राजाने मनमें विचार किया कि हमारा चौथापन अर्थात् बुढ़ापा आगया ॥ ५ ॥ ब्राह्मण मंत्री, गुरु और पुत्र बुलाये और वे हिमाचल और विन्ध्याचलके बीचमें आये ॥ ६ ॥

रुचिर बेदिका एक बनाई ❀ देखत बनै बरनि नहिं जाई ॥ ७ ॥
मख अरंभ छोड़ेउ तब तुरगा ❀ बेगवंत देखिय जिमि उरगा ॥ ८ ॥

(जिन्होंने) एक सुन्दर वेदी बनाई जो देखनेहीसे बन आवै, वर्णन नहीं कीजाती ॥ ७ ॥ तब यज्ञका आरंभकर घोड़ा छोड़ा. वह ऐसा शीघ्र चलनेवाला था जैसे सर्व देखते हैं ॥ ८ ॥

दो०-सुरपति सुनि मख दारुन, मनमहँ करि अनुमान ॥
आइ तुरँग तिन्ह लीन्हेउ, मर्म न कोऊ जान ॥ २४४ ॥

इन्द्रने इस कठिन यज्ञका आरंभ सुनकर मनमें विचार किया और आकर घोड़ा (चुरा) लिया और यह भेद किसीने नहीं जाना ॥ २४४ ॥

चौ०-राखेउ आनि कपिलमुनि पाहीं ❀ कोउ न जान काऊ गति नाहीं ॥ १ ॥
जुगवत रहे जे सुभट सयाने ❀ लेत तुरंग तिनहु नहिं जाने ॥ २ ॥

फिर उसे लाकर कपिलमुनिके पास रक्खा इसे कोई नहीं जानता और न किसीकी पहुँच है ॥ १ ॥ जो चतुर योधा रखवाले थे उन्होंनेभी घोड़ा लेते न जाना ॥ २ ॥

तिन सब आइ कहा नृपपाहीं ❀ महाराज हम कहत डराहीं ॥ ३ ॥
लीन्ह तुरँग यह जान न कोई ❀ कहा करिय जो आयसु होई ॥ ४ ॥

उन सबने आकर राजासे कहा कि हे महाराज ! हम कहतेमें डरते हैं ॥३॥ घोड़ा किसीने हर लिया और इसे कोई नहीं जानता. अब क्या करना चाहिये ? जो आज्ञा हो सो करें ॥ ४ ॥

सुनत बचन नृप बिस्मय पायउ ❀ सकल सुतनकहँ तुरत बुलायउ ॥ ५ ॥
जाइ तुरग तुम हेरहु भाई ❀ सकल चले चरनन सिर नाई ॥ ६ ॥

वचन सुनतेही राजाको दुःख हुआ और शीघ्रही सब पुत्रोंको बुलाया और कहा ॥५॥ हे भाई ! तुम जाकर घोड़ेको देखो, यह सुन सब चरणोंमें माथा नवाकर चले ॥ ६ ॥

सुरपतिसम देखिय बल बीरा ❀ सकल धनुर्धर अतिरनधीरा ॥ ७ ॥
तिनहिं चलत धरनी अकुलाई ❀ बलि पशु जीव भए सब आई ॥ ८ ॥

वे सब धनुषके धारण करनेवाले, लड़ाईमें बड़े धीरजधारी और बलमें इन्द्रके समान वीर दिखाई देते थे ॥७॥ उनके चलतेमें पृथ्वी अकुलाई और सब जीव बलिपशुके समान भयभीत होने लगे ॥ ८ ॥

सुमनबाटिका उपबनबागा ❀ सरितकूप बापिका तड़ागा ॥ ९ ॥
नगर गाउँ मुनिआस्रम नाना ❀ गिरि कानन कंदरअस्थाना ॥ १० ॥

फूलोंकी बगीची, वन, बाग, नदी, कुए, बावड़ी, तलाव ॥ ९ ॥ नगर, ग्राम, बहुतसे मुनीश्वरोंके धाम, पर्वत और गुफाओंके ठाम इनमें ॥ १० ॥

सो०–इहि बिधि सोधेउ जाइ, आए सब मिलि भूपपहिं ॥ ❀
चरनन माथहि नाइ, बोले प्रभु कहुँ अश्व नहिं ॥ २८ ॥ ❀

इस भाँति जाकर पता लगाया और सब मिलकर राजाके पास आये और राजाके चरणोंको माथा नवाकर बोले हे स्वामी ! घोड़ा कहीं नहीं मिलता ॥ २८ ॥

चौ०–खोदब महि सुत फेरि पठाए ❀ चले सकल पूरबदिसि आए ॥ १ ॥
तिनके कर जनु बज्रसमाना ❀ जोजनभरि खोदहिं बलवाना ॥ २ ॥

फिर पुत्र भेजे कि, धरती खोदो. वे सब चले २ पूर्वदिशामें आये ॥ १ ॥ उनके हाथ मानों वज्रके समान थे, और वे ऐसे बली थे कि चार कोस पृथ्वी नित्य खोदते थे ॥ २ ॥

देखि अतुलबल बिबुध डराने ❀ करिहहिं कहा सकल सकुचाने ॥ ३ ॥
सोधत महि पताल सब आए ❀ दिग्गज देखि सबन सिर नाए ॥ ४ ॥

इस अतुल बलको देखकर देवता डरे और सब सकुचकर विचारने लगे कि क्या करें ॥३॥ धरतीको ढूँढते हुये सब पातालमें आये. और वहाँ दिशाके हाथीको देखकर सबने मस्तक नवाये ॥ ४ ॥

तिहिं पूछा सब कथा सुनायउ ❀ बहुरि सकल दक्षिण दिसि आयउ ॥५॥
इहिबिधि पुनि दूसर गज देखा ❀ अति उत्तम गुन बिमल बिसेखा ॥ ६ ॥

उसने पूँछा तौ सब समाचार सुनाये और फिर सब दक्षिण दिशाको आये ॥ ५ ॥ फिर इसी भाँति दूसरा हाथी देखा उसमें बहुत अच्छे निर्मल गुण थे ॥ ६ ॥

ताहूकहँ प्रनाम पुनि कीन्हा ❀ चले खनत पश्चिम चित दीन्हा ॥ ७ ॥
तीसर देखि प्रदक्षिण कीन्हा ❀ पुनि उत्तरदिसि सोधन लीन्हा ॥ ८ ॥

फिर उसकोभी प्रणाम किया और खोदते हुए पश्चिम दिशामें चित्त लगाकर चले ॥ ७ ॥ तीसरे (हाथी) को देखकर परिक्रमा की और फिर उत्तर दिशाको ढूढ़ते चले ॥ ८ ॥

दिग्गज स्वेत देखि सुख पाए ❀ सकल कपिलमुनिपहँ चलि आए ॥ ९ ॥
खोदत महि कोउ पार न पावा ❀ सोइभा चहुँ दिसि जलधि सुहावा ॥१०॥

दिशाके श्वेत हाथीको देख सुख पाये और (पृथ्वीको खोदते हुए) सब कपिल मुनिके पास चले

आये ॥ ९ ॥ खुदी हुई पृथ्वीका किसीको छोर न मिला. वह मानों चारों दिशाओंमें सुहावना समुद्र होगया ॥ १० ॥

दो०–देखिनि आइ तुरंग तब, बांधा मुनिवरपास ॥ ❀
बोले बचन सक्रुद्ध हुइ, भा चह सबकर नास ॥ २४५ ॥ ❀

तव आकर श्रेष्ठ मुनीश्वर (कपिल) के पास घोड़ेका वँधा हुआ तौ क्रोधमें भरकर वचन वोले (महादेव कहते हैं हे पार्वती!) सबका नाश हुआ चाहता है ॥ २४५ ॥

चौ०–खोदी महि हम चारिउ कोधा ❀ रे रे दुष्ट बहुत तोहिं सोधा ॥ १ ॥
कोउ कह चोर दीख बहु होई ❀ इहिसम छली और नहिं कोई ॥ २ ॥

अरे दुष्ट! हमने पृथ्वीके चारों कोने खोदडाले और मुझे बहुत ढूँढा ॥ १ ॥ कोई कहता है यह बड़ा चोर दिखाई देता है, इसके बराबर छलिया दूसरा कोई नहीं ॥ २ ॥

सुनत बचन मुनि चितवा जबहीं ❀ भए भस्म छिनमहँ सब तबहीं ॥ ३ ॥
उमाबचन जिहिं समुझि न बोला ❀ सुधा होइ विष तिहिं कृमि डोला ॥४॥

वचन सुनतेही जब मुनीश्वरने देखा तब उसी क्षणभरमें सब भस्म होगये ॥३॥ (महादेवजी बोले) हे पार्वती! जिसने समुझकर वचन न बोले, उसको अमृतभी विषका कीडा हो डोलने लगता है ॥४॥

पावक जानि धरैं कर प्रानी ❀ जरहिं न काहे ते अभिमानी ॥ ५ ॥
जानि गरल जे संग्रह करहीं ❀ सुनहु राम ते काहे न मरहीं ॥ ६ ॥

जो प्राणी जानबूझकर अग्निको पकड़ैं वे अभिमानी क्यों नही जलैंगे ॥ ५ ॥ (विश्वामित्र) कहने लगे! हे राम! सुनों. जो जानकर विष इकठ्ठा करते हैं वे क्यों नहीं मरते हैं? ॥ ६ ॥

क्रोध कीन्ह बिन करे बिचारा ❀ भए सकल तिहिं ते जरि छारा ॥ ७ ॥
वहाँ नृपति अँशुमान बुलाए ❀ नहिं आए सुत तिन्हहिं पठाए ॥ ८ ॥

विना विचारे क्रोध किया इससे सब जलकर राख होगये ॥ ७ ॥ और जब बेटे नहीं आये, तब राजाने अंशुमानको वहाँ बुलाया और उनके लानेके लिये उसे भेजा ॥ ८ ॥

दो०–दीन्हि नृपति आसीस तब, अति हित बारहिं बार ॥ ❀
बेगि फिरहु लै तुरत सुत, मेरे प्रान अधार ॥ २४६ ॥ ❀

राजाने बड़े प्यारसे वारंवार आशीर्वाद दिया और कहा कि मेरे प्राणोंके आधार पुत्र और घोड़ेको लेकर जल्दी लौटना ॥ २४६ ॥

चौ०–चलेउ नाइ पद सीस कुमारा ❀ विष्णुभक्त दुहुँकुल उजियारा ॥ १ ॥
जहँ कहँ निरखि मुनिनके धामा ❀ पूछि खबरि करि दंडप्रनामा ॥ २ ॥

कुमार अंशुमान् चरणोंको शीस नवाकर चला. जो विष्णु (भगवान्) का भक्त, और दोनों कुलोंका उजेला करनेवाला था ॥ १ ॥ जहाँ कहीं मुनीश्वरोंके स्थान देखता वहाँ दण्डवत् प्रणामकर खबर पूछता ॥ २ ॥

चले मुनिन्हसन पाइ असीसा ❀ खोजहु पैहहु जाहु महीसा ॥ ३ ॥
इहिंविधि खोजत मगमहँ जाता ❀ मिलेउ गरुड़ सुमनीकर भ्राता ॥ ४ ॥

मुनियोंसे यह आशीर्वाद पाकर चला कि हे राजा! जाकर ढूंढो (घोड़ेको) पाओगे ॥ ३ ॥ इस प्रकार मार्गमें ढूंढतेहुये चले तौ सुमनिके भाई गरुड मिले ॥ ४ ॥

चरन परत तब आसिस दयऊ ❀ जरे सकल जिहिंविधि सो कहेऊ ॥ ५ ॥
सुनतहि बचन सोच भा भारी ❀ लै खगेस देखेउ थलबारी ॥ ६ ॥

तब चरण छूतेही आशीस दी और जिसभाँति सब पुत्र जले थे, सो सब कथा कही ॥ ५ ॥ वचन सुनतेही बड़ा शोच हुआ तब गरुडजीने लेजाकर जलका स्थान दिखलाया ॥ ६ ॥

अंशुमान तहँ मज्जन कीन्हा ❀ क्रमक्रम सबहिं तिलांजलि दीन्हा ॥ ७ ॥
वहुरि गरुड बोले सुनु ताता ❀ मैं तोहिं कहौं सुनो इक बाता ॥ ८ ॥

वहाँ अंशुमानने मज्जन कर क्रम २ से सबको तिलांजली दी ॥ ७ ॥ फिर गरुड़ बोले हे प्यारे ! मैं तुमसे एक बात कहता हूं सो सुनों ॥ ८ ॥

सो०–करु सुत सोइ उपाइ, गंगा आवहिं अवनिमहँ ॥ ❀
दरसन दे अघ जाइ, मज्जन कीन्हें परम हित ॥ २९ ॥ ❀

हे पुत्र ! वही उपाय करो जिससे पृथ्वीपर गंगाजी आवें, कि जिनके दर्शनसे पाप दूर हों और उनमें मज्जन करनेसे बहुत कल्याण हो ॥ २९ ॥

चौ०–षष्टिसहस सुत तरिहहिं यह बिधि ❀ गंगा पाइ परम पावन निधि ॥ १ ॥
सुनि अस बचन हृदय अति भाए ❀ सहितगरुड मुनिवरपहँ आए ॥ २ ॥

इस भाँति अत्यन्त पवित्रताकी खान गंगाजीको पाकर साठ हजार पुत्र तरेंगे ॥ १ ॥ ऐसे वचन सुनकर मनमें बहुत प्यारे लगे, फिर गरुड़समेत श्रेष्ठ मुनिके पास आये ॥ २ ॥

भूप गरुड मुनिचरनन नायउ ❀ पूर्वकथा नृप ताहि सुनायउ ॥ ३ ॥
आसिस देइ तुरग मुनि दीन्हा ❀ हरषित हृदय गवन तब कीन्हा ॥ ४ ॥

तब राजा और गरुड़जीने मुनिके चरणोंको प्रणाम किया (और मुनिने) राजाको पहली कथा सुनाई ॥ ३ ॥ मुनीश्वरने आशीर्वाद देकर राजाको घोड़ा दिया तब राजा मनमें प्रसन्न हो चले ॥ ४ ॥

नगरसमीप गरुड पहुँचाई ❀ गयउ भवन तब निज रघुराई ॥ ५ ॥
वहाँ तुरग ले नृप सिर नाई ❀ षष्टिसहससुत मरन सुनाई ॥ ६ ॥

हे रामचन्द्र ! गरुड़जी राजाको नगरके पास पहुँचाकर अपने घर गये ॥ ५ ॥ यहाँ घोड़ा लेकर राजाको माथा नवाय साठ हजार पुत्रोंका मरना सुनाया ॥ ६ ॥

बिस्मयहरषबिवस नृप भयऊ ❀ कीन्हा यज्ञ दान बहु दयऊ ॥ ७ ॥
बहुविधि नृपति राज तब कीन्हा ❀ प्रजालोग कहँ अति सुख दीन्हा ॥ ८ ॥

राजाने पुत्रशोकसे दुःखित और घोड़ा मिलनेसे आनन्दके वश होकर यज्ञ कियां और बहुत दान दिये ॥ ७ ॥ तब राजाने बहुत तरह राज्य किया और प्रजाके लोगोंका बहुत आनन्द दिया ॥ ८ ॥

दो०–अंशुमान कहँ राज दे, निज मन हरिपदलाग ॥ ❀
गयउ सगर तपकाज वन, हृदय अधिक अनुराग ॥ २४७ ॥ ❀

राजा सगर अंशुमानको राज्य दे अपना मन भगवान्‌के चरणोंमें लगाकर हृदयमें बड़ा प्रसन्न होता हुआ वनमें तपके लिये गया ॥ २४७ ॥

चौ०–तासु तनय दिलीप नृप भयऊ ❀ तपकर हेतु उतरिदिसि गयऊ ॥ १ ॥
अतिहि अगम तप कीन्ह नृपाला ❀ भए कालबस गए कछु काला ॥ २ ॥

उसका पुत्र राजा दिलीप हुआ. सो अंशुमान् इसे राज्यदेकर तप करनेके लिये उत्तर दिशाको गया ॥१॥ राजाने बहुतही कठिन तपस्या की और कुछ दिन पीछे कालके वश हुआ अर्थात् मर गया ॥२॥

किहिविधि कहुँ दिलीप प्रभुताई ❀ सेवहिं सकल नृपति तिहि आई ॥ ३ ॥
जुवत जासु मुख सुरपति रहई ❀ महिमा तासु कवन कवि कहई ॥ ४ ॥

दिलीपकी बड़ाई किस भाँति कहूँ! जिसकी सब राजा आकर सेवा करते थे ॥ ३ ॥ जिसके मुखको इन्द्र देखता रहता था उसकी बड़ाईको कौन कवि कहै? ॥ ४ ॥

भागीरथ अस सुत भए जासू ❀ पितुसम नीति अधिक उर तासू ॥ ५ ॥
तिन्हहिं बोलि नृप दीन्हेउ राजू ❀ आपु चले उठि तपके काजू ॥ ६ ॥

उसके पुत्र भागीरथ नाम हुए जिनके हृदयमें पिताके समान बहुत नीति हुई ॥ ५ ॥ राजाने उनको बुलाकर राज्य दिया और आप उठकर तपके लिये चले ॥ ५ ॥

मनमहँ करत पंथ अनुमाना ❀ सुरसरि आव तजों नतु प्राना ॥ ७ ॥
अंशुमानसम तनु परिहरऊँ ❀ फिरि निज नगरक नाम न लेऊँ ॥ ८ ॥
इहिविधि करत विचार भुवाला ❀ जाइ कीन्ह तप परमबिशाला ॥ ९ ॥

मार्गमें (चलते हुए) मनमें विचार करते जाते हैं कि या तौ गंगाजी आवें नहीं तौ प्राण छोड़ दूंगा ॥ ७ ॥ अंशुमानके समान अपना प्राण छोड़ फिर अपने नगरका नाम नहीं लूँगा ॥ ८ ॥ इस प्रकार विचार कर राजाने जाकर बहुत कठिन तप किया ॥ ९ ॥

सो०–करत बिचार भुवाल, जाइ कीन्ह बन प्रबल तप ॥ ❀
बीते कछुइक काल, देह तजी कोउ प्रगट नहिं ॥ ३० ॥ ❀

राजाने विचार करते २ वनमें जा बड़ा कठिन तप किया और कुछ समय वीतनेपर देह छोड़दी परंतु गंगा प्रगट नहीं हुई ॥ ३० ॥

चौ०–सुरसरिलागि तजे तनु भूपा ❀ सो तजि मूढ़ पियहिं जलकूपा ॥ १ ॥
इहाँ भगीरथ मन अस भयऊ ❀ पितु न आव बहु दिन चलि गयऊ ॥२॥

राजा (दिलीप) ने गंगाजीके लिये अपना शरीर छोड़ दिया. इसलिये उस गंगाजलको छोड़ जो कुयेका पानी पीते हैं वे मूर्ख हैं ॥ १ ॥ यहाँ भगीरथके मनमें ऐसा (विचार) हुआ कि पिताको गये बहुत दिन हुये और आये नहीं ॥ २ ॥

काकुत्स्थ नाम तासु सुत रहेऊ ❀ दीन्हा राज नीति बहु कहेऊ ॥ ३ ॥
कहि सब पूर्वकथा सुत पाहीं ❀ दीन्ह असीस चलेउ वनमाहीं ॥ ४ ॥

तौ अपने काकुत्स्थ नाम पुत्रको राज्य दे बहुतसी नीति कह सिखाई ॥ ३ ॥ और पुत्रसे पहली सब कथा कह आशीर्वाद देकर राजा वनको चले ॥ ४ ॥

निकसत नगर सगुन भल पाए ❀ अतिहि निबिड बन तहँ नृप आए ॥ ५ ॥
देखि भगीरथ मन अति भावा ❀ सुरसरिहेतु तपहिं मन लावा ॥ ६ ॥

नगरसे निकलतेहीं अच्छे सगुन मिले. और जहाँ बड़ा घना वन था वहाँ राजा आये ॥ ५ ॥ वनको देखतेही भागीरथके मनमें अति भाया और वहाँ गंगाजीके लिये तपमें मन लगाया ॥ ६ ॥

एक चरन दोउ भुजा उठाए ❀ रविसंमुख चितवहिं मन लाए ॥ ७ ॥
वर्षसहस बीते इहिभाँती ❀ जात न जानहिं दिन अरु राती ॥ ८ ॥

एक पाँव और दोनों बाँह उठाकर चित्त लगाकर सूर्यके सन्मुख देखते हैं ॥ ७ ॥ इस भाँति हजार वर्ष वीत गये· और दिन रात वीतते हुये जाने नहीं जाते थे ॥ ८ ॥

देखि उग्र तप बिधि चलि आए ❀ बोले नृपसन बचन सुहाए ॥ ९ ॥
चाहहु नृप सु लेहु बरदाना ❀ बोले नृप करि अजहिं प्रनामा ॥ १० ॥
जो माँगौं सो जानत अहहू ❀ मोसन माँगन प्रभु किमि कहहू ॥ ११ ॥

कठिन तपस्याको देखकर ब्रह्मा चले आये और राजासे सुन्दर वचन बोले ॥ ९ ॥ हे राजा ! जो चाहो वही वरदान लो· तव राजा ब्रह्माको प्रणाम कर बोले॥ १० ॥ हे स्वामी ! जो माँगताहूँ सो आप जानतेही हो, मुझसे माँगनेको क्यों पूछते हो ॥ ११ ॥

सो०–तदपि कहौं प्रभु देहु, वर सुभ संतति वृद्धिकर ॥ ❀
दूसर करहु सनेहु, गंगा आवहिं अवनिपर ॥ ३१ ॥ ❀

हे स्वामी ! तौभी कहता हूँ कि सुन्दर संतानका बढ़ानेवाला वर दो और दूसरी कृपा यह करो कि, गंगाजी पृथ्वीतलपर आवें ॥ ३१ ॥

चौ०–एवमस्तु कहि पुनि विधि कहहीं ❀ सुरसरि देउँ राखि को सकहीं ॥ १ ॥
छूट जाइ पुनि तुरत रसातल ❀ फिरहि न नृपति सुनिय पुनि भूतल ॥२॥

एवमस्तु (ऐसाही हो) यह कहकर फिर ब्रह्मा बोले कि, गंगाजी दूँगा (परंतु उन्हें) कौन रख सकता है? ॥१॥ हे राजा ! छूटकर फिर शीघ्रही पातालको चली जायँगी फिर पृथ्वीपर नहीं लौटेंगी ॥२॥

तेहिते कहुँ इक तोहि उपाहीं ❀ अति दयालु शंकर मनमाहीं ॥ ३ ॥
सोइ सक राखि देवसरि आजू ❀ ताहि जपे तव होइहि काजू ॥ ४ ॥

इसलिये तुझे एक उपाय वतलाता हूँ कि महादेव मनमें बड़ी दया करनेवाले हैं ॥ ३ ॥ वही आज गंगाजीको रख सकते हैं· उन्हीका जप करनेसे तुम्हारा काम होगा ॥ ४ ॥

अस कहि बिधि अंतरहित भयऊ ❀ बहुरि भगीरथ शिवतप ठयऊ ॥ ५ ॥
विबुधवर्ष अंगुष्ठ अधारा ❀ बारबार शिवनाम उचारा ॥ ६ ॥

ऐसा कहकर ब्रह्माजी अंतर्ध्यान हुये· फिर भगीरथ महादेवकी तपस्या करने लगे ॥ ५ ॥ देवताओंके वर्षभर अँगूठेके सहारे (खड़े हो) वारंवार महादेवके नामका उच्चारण करने लगे ॥ ६ ॥

शिव कृपालु प्रगटे तब आई ❀ हाथ जोरि नृप कह सिर नाई ॥ ७ ॥
मैं राखब सुरसरि दे आसा ❀ बहुरि उमापति गे कैलासा ॥ ८ ॥

तब दयासागर शंकर आकर प्रगट हुये तौ राजा हाथ जोड़ शिर नवाय (गंगाजीके विषयमें) कहने लगे ॥७॥ "मैं गंगाजीको धारण करूंगा"ऐसी आशा देकर फिर महादेव कैलास पर्वतको लौट गये ॥ ८ ॥

दो०–वहाँ देवसरि शिववचन, सुनि मन कीन्ह विचार ॥ ❀
जाउँ रसातल शिवसहित, जात न लावौं बार ॥ २४८ ॥ ❀

वहाँ गंगाजीने महादेवके बचन सुन मनमें बिचार किया कि, मैं महादेवसमेत रसातलको चली जाऊँ और जातेमें देर नहीं लगाऊँ ॥ २४८ ॥

चौ०–अंतरयामी शिवहि उपाई ❀ निजसिरजटा सु अगम बनाई ॥ १ ॥
इहाँ भगीरथ अस्तुति कीन्ही ❀ सुनि मृदु गिरा छाँडि बिधि दीन्ही ॥२॥

महादेवजी तौ अंतर्यामी हैं उन्होंने यह उपाय किया कि, अपने शिरपर सुन्दर बड़ी जटाजूट बनाई ॥१॥ यहां भगीरथने प्रार्थना की तौ ब्रह्माने मीठी वाणी सुनकर गंगाको छोड़ दिया ॥ २ ॥

छूटत सोर भयउ अति भारी ❀ चकित देव अहि दिग्गजचारी ॥ ३ ॥
सुरसरि पुनि शिवजटासमानी ❀ एकवर्ष तहँ रहीं भुलानी ॥ ४ ॥

(गंगाजीके) छूटतेही बड़ाभारी शब्द हुआ (जिसको सुनकर) देवता शेषनाग और चारों दिशाओंके हाती हक्के बक्के हो गये ॥ ३ ॥ फिर गंगाजी महादेवकी जटाओंमें समागई और वहाँ एक वर्षतक भूली रहीं ॥ ४ ॥

कौतुक देखि सकल सुर हर्षे ❀ कहि जय जयति सुमन तिन्ह वर्षे ॥५॥
बहुरि भगीरथ सुमिरन कीन्हा ❀ शिव तब डारि बुंद इक दीन्हा ॥ ६ ॥

इस कौतुकको देखकर सब देवता प्रसन्न हुये और उन्होंने जय २ कहकर फूल वर्षाये ॥ ५ ॥ फिर भगीरथने स्मरण किया, तब महादेवजीने एक बूँद डालदी ॥ ६ ॥

तिहिते भई तीनि जलधारा ❀ एक गई नभ एक पतारा ॥ ७ ॥
गइ नभ सो भइ अघकर नाशिनि ❀ देवन धरा नाम मंदाकिनि ॥ ८ ॥

उसमेंसे तीन जलकी धारा हुईं एक आकाशको गई और एक पातालको ॥ ७ ॥ जो आकाशको गई वह पापनाशिनी हुई, और देवताओंने उसका नाम मंदाकिनी रक्खा ॥ ८ ॥

सो०–दूसरि गइ पाताल, नाम प्रभावति हरन दुख ॥ ❀
तीसरि गंग विसाल, सुरसंतनकहँ करन सुख ॥ ३२ ॥ ❀

दूसरी दुःख नाश करनेके लिये पातालको गई और उसका नाम प्रभावती हुआ, तीसरी बड़ी गंगा देवता और साधुओंको सुख करनेवाली हुई ॥ ३२ ॥

चौ०–आइ भगीरथ तब सिर नावा ❀ बोली सुरसरि बचन सुहावा ॥ १ ॥
वेगवंतनृप रथ तैं आनू ❀ तुरग मरुतगति जिमि रथ भानू ॥ २ ॥

फिर भगीरथने जाकर माथा नवाया तौ गंगाजी सुन्दर वचन बोलीं–॥ १ ॥ हे राजा ! पवनकी-सी चालवाले घोड़ोंका जल्दी चलनेवाला सूर्यकासा रथ लाओ ॥ २ ॥

तिहिं रथ चढ़ि नृप चलु मम आगे ❀ चलिहौं मैं तव पाछे लागे ॥ ३ ॥
सुनि नृप तुरग दिव्य रथ आना ❀ चढ़ेउ हृदय सुमिरत भगवाना ॥ ४ ॥

हे राजन् ! उसपर चढ़ तू मेरे आगे २ चल· मैं तेरे पीछे लगी चलूँगी ॥ ३ ॥ राजाने सुनकर तुरत सुन्दर रथ मँगाया और भगवानका स्मरण करते हुये उसपर चढ़े ॥ ४ ॥

राग भैरवी तिताला.

(१) जै गंगा जै जै जगजननी जै संतन सुखदाई ॥ भक्त भूप भागीरथके हित प्रगट अवनिपर आई ॥
चरनकमल अनुराग भाग करि लै ब्रह्मा उरलाई ॥ प्रबल प्रताप कहांलगि बरनों शंकरशीश चढाई ॥
चारि खानि जगजीव उधारन वेद बिमल जस गाई ॥ तरल तरंग पापखल खंडन महिमा बरनि न जाई ॥
गण गंधर्व अमर किन्नर मुनि रहत सदा लव लाई ॥ घोर धार गंभीर विमल जल छुवत अधम तरि जाई ॥
कनक शिखर शिर ललित मनोहर उस जयमाल सुहाई ॥ जाकी कांति देखि यमकिंकर करुणाकर फिरि जाई
राम नाम गंगा कलि केवल और न कछू उपाई ॥ कान्हरदास धन्य जे जगमें बसत सदा शिरनाई ॥

चलीं अग्र करि नृपहिं सुरसरी ❀ देवन मुदित सुमनझर करी ॥ ५ ॥
चलत तेज कछु बरनि न जाई ❀ टूटहिं तरु गिरिसिला सुहाई ॥ ६ ॥

राजाको आगे कर गंगाजी चलीं और देवताओंने प्रसन्न होकर फूलोंकी झड़ी लगादी ॥ ५ ॥ चलनेमें तेजका कुछ वर्णन नहीं किया जाता ! सुन्दर वृक्ष, पर्वत और पत्थर टूटते जाते हैं॥ ६ ॥

करहिं कुलाहल बहु जिय जाती ❀ कमठ नक्र ब्याकुल बहुभाँती ॥ ७ ॥
मज्जन करहिं देवता आई ❀ मुनिगन सिद्ध रहे तहँ छाई ॥ ८ ॥

बहुत जातिके जीव कुलाहल करते हैं. कछुए और घड़ियाल बहुत भाँतिसे विकल हैं ॥ ७ ॥ देवता आकर मज्जन करते हैं और वहां तटपर मुनीश्वरोंके समूह और सिद्ध लोग आश्रम छाकर रहने लगे ॥ ८ ॥

सो०-तर्पन कर मन लाइ, हरष हृदय नहिं जात कहि ॥ ❀
दरसनते अघ जाइ, तरहिं सकल सुरमुनि कहहिं ॥ ३३ ॥ ❀

वे मन लगाकर तर्पण करते हैं और हृदयमें जैसे प्रसन्न हैं उसका वर्णन नहीं किया जाता. सब देवता और मुनीश्वर कहते हैं कि, दर्शनसे पाप दूर होते हैं और (प्राणी) भवसागरसे तर-जाते हैं ॥ ३३ ॥

चौ०-करि जो मज्जन तप मन लाई ❀ तिनकी महिमा कहि न सिराई ॥ १ ॥
स्यंदनपर नृप सोहत कैसे ❀ तेजवंत रवि देखिय जैसे ॥ २ ॥

जो मज्जन कर मन लगाकर तप करते हैं उनकी बड़ाई कहते पूरी नहीं हो सक्ती ॥ १ ॥ राजा रथपर (जाते हुये) कैसे शोभायमान हैं ? जैसे तेजवंत सूर्य दिखाई देते हों ॥ २ ॥

लाँघत शैल सुहावन देसा ❀ पाछे सुरसरि अग्र नरेसा ॥ ३ ॥
हरिद्वारसमीप तब आई ❀ तीर्थ देखि सुरसरि मन भाई ॥ ४ ॥

सुन्दर पर्वत और देशोंको लांघते हुये आगे राजा और पीछे २ गंगाजी चली जाती हैं ॥ ३ ॥ तब हरिद्वारके पास आई और तीर्थके योग्य स्थान देखके गंगाजीके मनमें अच्छा लगा ॥ ४ ॥

तीरथहूँ मन भा सुख भारी ❀ जब प्रयाग पहुँचीं अघहारी ॥ ५ ॥
तहँ मज्जन कीन्हें दुख जाई ❀ बहुरि देवसरि काशी आई ॥ ६ ॥

और तीर्थके मनमेंभी बड़ा सुख हुआ. फिर पापनाशिनी (गंगाजी) प्रयागमें पहुँचीं ॥ ५॥ वहां मज्जन करनेसे दुःख नाश होता है, फिर गंगाजी काशीजीमें आई ॥ ६ ॥

सो शिवपुरी सहज सुखदाई ❀ बरनि न जाइ मनोहरताई ॥ ७ ॥
औरौं तीर्थ विविध विधि जानी ❀ गई तहाँ किमि कहौं बखानी ॥ ८ ॥
मगलोगन कहँ करति सनाथा ❀ जाइ चली इहिविधि रघुनाथा ॥ ९ ॥

वह महादेवकी पुरी स्वभावहीसे सुखदाई है (उसकी) सुन्दरताई गाई नहीं जाती ॥ ७ ॥ और भी बहुतसे तीर्थ जानो कि, जहां गंगाजी गई मैं उनका कैसे बखान करूँ ॥ ८ ॥ हे रामचन्द्र ! मार्गके लोगोंको सनाथ करती हुई इस भांति गंगाजी चली चलीं ॥ ९ ॥

दो०-मिलि बहोरि समुद्रमहँ, उदधिहृदय हरषान ॥ ❀
लगेउ सराहन भगिरथहिं, तुमसम धन्य न आन ॥ २४९ ॥ ❀

फिर समुद्रमें मिलीं तौ समुद्रभी मनमें प्रसन्न हो भगीरथको सराहने लगा कि, तुम्हारे समान धन्य कोई नहीं ॥ २४९ ॥

चौ०–कीन्हेउ अस जस करइ न कोई ❀ तपमहिमा बल कस नहिं होई ॥ १ ॥
सगरतनय तारे ततकाला ❀ हर्षवंत तब भयउ भुवाला ॥ २ ॥

ऐसा किया जैसा कोई न करै. तपकी महिमाका बल ऐसा क्यों न हो ॥ १ ॥ सगरके पुत्रोंको तौ उसी समय तार दिया और राजा आनन्दित हुये ॥ २ ॥

औरौ रहे जे कुलमहँ कोऊ ❀ तिन्हके संग तरे सब ओऊ ॥ ३ ॥
सकल सुरन्हसँग तहाँ विधाता ❀ नृपसन आइ कही असि बाता ॥ ४ ॥

और भी जो कोई कुलमें रहे उनके संग वेभी तर गये ॥ ३ ॥ वहां सब देवताओंको साथ ले ब्रह्माने राजासे यह बात कही कि–॥ ४ ॥

धन्य भगीरथ जगजस लयऊ ❀ तुमसमान नृप और न भयऊ ॥ ५ ॥
अपनी सत्य प्रतिज्ञा करऊ ❀ संमत वेद सबहिं सुख दयऊ ॥ ६ ॥

हे भगीरथ ! तुमको धन्य है ! तुमने संसारमें बड़ाई ली और तुम्हारे समान दूसरा राजा नहीं हुआ ॥ ५ ॥ अपनी पैज सच्ची की, और सब वेदज्ञाताओंको सुख दिया ॥ ६ ॥

गंगासागर सब कोउ कहहीं ❀ अघ उलूक देखत रवि डरहीं ॥ ७ ॥
भागीरथी नाम अस कहहीं ❀ सुर मुनि नाग सिद्ध जस लहहीं ॥ ८ ॥
अस कहि विधि निजलोक सिधाए ❀ इहाँ भगीरथ अति सुख पाए ॥ ९ ॥

इसे सबकोई गंगासागर कहेंगे और पापरूपी उल्लू (गंगारूपी) सूर्यको देखतेही डरैंगे ॥ ७ ॥ गंगाजीका नाम भागीरथीभी होगा और देवता, मुनीश्वर, नाग और सिद्ध ये यश पावैंगे ॥ ८ ॥ ऐसा कहकर ब्रह्मा अपने लोकको सिधाये, और यहां भागीरथने बड़े सुख पाये ॥ ९ ॥

छं०–पाए अमित सुख बहुरि पूजेउ सुरसरिहि मन लाइके, ❀
तब दीन्ह आसिस मुदित गंगा नृप गए सुख पाइके ॥ ❀
इहि भाँति सुनि गंगाकथा तब राम ऋषिचरनन नए, ❀
कह दासतुलसी रामलषनहिं महामुनि आसिस दए ॥ ३३ ॥ ❀

अतुल सुख पाकर और मन लगाकर फिर गङ्गाजीकी पूजा की तब गंगाने प्रसन्न हो आशीर्वाद दिया और राजा सुख पाकर विदा हुये. इस प्रकार रामचन्द्रजीने गङ्गाजीकी कथा सुन ऋषि (विश्वामित्र) के चरणोंको मस्तक नवाया. तुलसीदास कहते हैं कि, मुनिराजने रामचन्द्र और लक्ष्मणको आशीर्वाद दिया ॥ ३३ ॥

दो०–कौशिकआसिस अमियसम, सुनि हरषे रघुनाथ ॥ ❀
प्रभु सुख पाइ कहा बहुरि, बेगि चलिय मुनिनाथ ॥ २५० ॥ ❀

विश्वामित्रके अमृतसमान आशिर्वादको सुनकर रामचन्द्रजी प्रसन्न हुये. फिर भगवान्ने सुख पाकर कहा कि हे मुनिनाथ ? शीघ्र चलिये ॥ २५० ॥

चौ०–गाधिसुवन सब कथा सुनाई ❀ जेहि प्रकार सुरसरि महि आई ॥ १ ॥

इति क्षेपक.

तब प्रभु ऋषिनसमेत अन्हाए ❀ विविधदान महिदेवन पाए ॥ २ ॥

विश्वामित्रने सब कथा सुनाई कि, जिसभांति गंगाजी पृथ्वीपर आई ॥ १ ॥ तब भगवान्ने ऋषियोंसहित स्नान किये और ब्राह्मणोंने अनेक प्रकारके दान पाये ॥ २ ॥

हरषि चले मुनिबृंद सहाया ❀ वेगि विदेहनगर नियराया ॥ ३ ॥
पुररम्यता राम जब देखी ❀ हरषे अनुजसमेत विसेखी ॥ ४ ॥

मुनीश्वरोंके मंडलसहित भगवान् प्रसन्न होकर चले और जनकका नगर तुरंतही पास आया ॥३॥ जब रामचन्द्रजीने नगरकी शोभा देखी तौ छोटे भाई (लक्ष्मण) समेत बहुत प्रसन्न हुये ॥ ४ ॥

बापी कूप सरित सर नाना ❀ सलिल सुधासम मनिसोपाना ॥ ५ ॥
गुंजत मंजु मत्तरस भृंगा ❀ कूजत कल बहु बरन विहंगा ॥ ६ ॥
बरन बरन विकसे जलजाता ❀ त्रिविधसमीर सदा सुखदाता ॥ ७ ॥

बहुतसे बावडी, कुये, नदी और सरोवर हैं कि जिनमें अमृतके समान (मधुर) नीर भर रहा है और मणियोंकी सीढ़ियाँ लगी हैं ॥ ५ ॥ रसमें मतवाले सुन्दर भौंरे गूँजरहे हैं और रंग रंगके पक्षी सुन्दर चुह चुहा रहे हैं ॥ ६ ॥ रंगविरंगके कमल फूल रहे हैं, और तीन प्रकारकी (शीतल, मंद, सुगंध) पवन सदा सुखकी देनेवाली चलरही है ॥ ७ ॥

दो०–सुमनवाटिका बाग बन, विपुल विहंगनिवास ॥ ❀
फूलत फलत सुपल्लवित, सोहत पुर चहुँपास ॥ २५१ ॥ ❀

फूलोंकी बगीची बाग और बन नगरके चारों ओर शोभायमान हो रहे हैं उनमें बहुतसे पक्षी घोंसले बनाय २ रहते हैं फूल खिल रहे हैं, फल लटक रहे हैं और सुन्दर कोमल पत्ते निकल रहे हैं ॥ २५१ ॥

चौ०–बनै न बरनत नगरनिकाई ❀ जहाँ जाइ मन तहाँ लुभाई ॥ १ ॥
चारु बजार विचित्र अटारी ❀ मनिमय विधि जनु स्वकर सँवारी ॥ २ ॥

नगरकी शोभा वर्णन करते नहीं बनती जहां मन जाता है वहांही लुभजाता है ॥ १ ॥ सुन्दर हाटमें ठाट लगरहे हैं और अटारियोंमें रंगरंगकी मणि खची हैं और ऐसी दीखती हैं मानों ब्रह्माने अपने हाथोंसे रची हैं ॥ २ ॥

धनिक बनिकवर धनदसमाना ❀ बैठे सकल वस्तु लै नाना ॥ ३ ॥
चौहट सुंदर गली सुहाई ❀ संतत रहहिं सुगंध सिचाई ॥ ४ ॥

कुबेरके समान बड़े २ धनवान् सेठ अनेक २ भांतिके सब सामान लिये बैठे हैं ॥ ३ ॥ सुन्दर चौराहे और गलियाँ शोभत हैं जो सदा (गुलाब केवड़े आदिके) सुगंधित जलसे छिड़की हुई रहती हैं ४

मंगलमय मंदिर सबकेरे ❀ चित्रित जनु रतिनाथ चितेरे ॥ ५ ॥
पुरनरनारि सकल सुचि संता ❀ धर्मसील ज्ञानी गुनवंता ॥ ६ ॥

सबके मन्दिरोंमें मंगलाचर होरहा है और वे ऐसे चित्रविचित्र (घने) हैं मानों कामदेवने अपने हाथसे रचे हैं ॥ ५ ॥ नगरके सब नरनारी पवित्र साधु धर्मज्ञ ज्ञानवान और गुणवान् हैं ॥ ६ ॥

अति अनूप जहँ जनकनिवासू ❀ विथकहिं विबुध विलोकि विलासू ॥ ७ ॥
होय चकितचित कोट बिलोकी ❀ सकल भुवनसोभा जनु रोकी ॥ ८ ॥

जहां जनकका निवास उपमारहित और सुन्दर है जिसके आनन्दको देख २ कर देवताभी थकजाते हैं; अर्थात् उनके मनमेंभी यही आता है कि इसे देखाही करें ॥ ७ ॥ परकोटेको देखकर तौ चित्तमें हकेबके होते हैं (और ऐसा अनुभव होता है) मानों संपूर्णभुवनोंकी शोभा इसीने रोक रक्खी है–तात्पर्य यह है कि सब भुवनोंकी शोभा परकोटेके भीतर जनकपुरमेंही है बाहर कुछ नहीं ॥ ८ ॥

दो०-धवल धाम मनि पुरट पट्ट, सुघटित नाना भाँति ॥
सीयनिवास सुंदरसदन, शोभा किमि कहि जाति ॥ २५२ ॥

श्वेत राजमन्दिर बने हुये हैं, मणिजटित किवाड़ लगे हुये हैं और अनेक भाँतिसे चित्रविचित्र बनाये हैं, फिर जो जानकीजीके निवासका गृह था उसकी शोभा कैसे कही जासक्ती है ॥ २५२ ॥

चौ०-सुभगद्वार सब कुलिस कपाटा ❀ भूपभीर नट मागध भाटा ॥ १ ॥
बनी विसाल बाजिगजसाला ❀ हयगजरथसंकुल सब काला ॥ २ ॥

गढ़के सब सुंदर दरवाजोंपर वज्रके समान दृढ़ किंवार लगे हुये हैं और उनपर नट मागध और भाटोंकी भीड़ लगी रहती है ॥ १ ॥ वहाँ हाथी और घोड़ोंकी साला बड़ी लंबी चौड़ी बनी हैं, जो सब समय घोड़े हाथी और रथोंसे भरी रहती हैं ॥ २ ॥

सूर सचिव सेनप बहुतेरे ❀ नृपगृहसरिस सदन सबकेरे ॥ ३ ॥
पुरबाहर सरसरितसमीपा ❀ उतरे जहँ तहँ विपुलमहीपा ॥ ४ ॥

बहुतसे योधा, मंत्री और सेनापति हैं और उनके स्थान राजमन्दिर समान बने हैं ॥ ३ ॥ नगरके बाहर सरोवर और नदियोंके निकट जहाँ तहाँ बहुतसे राजा उतरे हुये हैं ॥ ४ ॥

देखि अनूप एक अमराई ❀ सब सुपास सबभाँति सुहाई ॥ ५ ॥
कौसिक कहेउ मोर मन माना ❀ इहाँ रहिय रघुबीर सुजाना ॥ ६ ॥

सबको आनन्द देनेवाली और सब प्रकारसे शोभायमान एक सुन्दर अनुपम आमोंकी बगीची देखकर—॥ ५ ॥ विश्वामित्रजीने कहा—हे चतुर रामचन्द्र! मेरे मनमें तौ यह आई है कि यहां ठहरना चाहिये ॥ ६ ॥

भलेहि नाथ कहि कृपानिकेता ❀ उतरे तहँ मुनिवृंदसमेता ॥ ७ ॥
विश्वामित्र महामुनि आए ❀ समाचार मिथिलापति पाए ॥ ८ ॥

कृपानिधान भगवान् 'अच्छा' कहकर मुनियोंके समाजसमेत वहाँ उतरे ॥ ७ ॥ जनकराजने समाचार पाये कि मुनिराज विश्वामित्रजी आये हैं ॥ ८ ॥

दो०-संग सचिव सुचि भूरि भट, भूसुरवर गुरु ज्ञाति ॥
चले मिलन मुनिनायकहिं, मुदित राउ यह भाँति ॥ २५३ ॥

तौ राजा जनक प्रसन्न हो उत्तम मंत्री, बड़े २ योधा, श्रेष्ठ ब्राह्मण और गुरु जातिके लोगोंको संग लेकर इस भाँति मुनिराज विश्वामित्रसे मिलनेको चले ॥ २५३ ॥

चौ०-कीन्ह प्रनाम धरनि धरि माथा ❀ दीन्ह असीस मुदित मुनिनाथा ॥ १ ॥
विप्रवृंद सब सादर बंदे ❀ जानि भाग्य बड़ राउ अनंदे ॥ २ ॥

(सबने) पृथ्वीपर मस्तक धरकर प्रणाम किया और मुनिनाथ विश्वामित्रने प्रसन्न हो आशीर्वाद दिया ॥ १ ॥ सब ब्राह्मणोंके समाजको आदरसहित प्रणाम किया और राजा अपने भाग्यको बड़ा जान आनन्दित हुये ॥ २ ॥

कुशलप्रश्न कहि बारहिं बारा ❀ विश्वामित्र नृपहिं बैठारा ॥ ३ ॥
तेहि अवसर आए दोउ भाई ❀ गएरहे देखन फुलवाई ॥ ४ ॥

विश्वामित्रने राजासे वारंवार कुशल पूछ बिठलाया ॥ ३ ॥ उस समय दोनोंभाई जो फुलवाई देखने गये थे आये ॥ ४ ॥

स्याम गौर मृदुवयस किसोरा ❀ लोचनसुखद विश्वचितचोरा ॥ ५ ॥
उठे सकल जब रघुपति आए ❀ विश्वामित्र निकट बैठाए ॥ ६ ॥

साँवले गोरे और किशोर अवस्थावाले, नेत्रोंको सुखदायक और संसारके चित्त चुरानेवाले ॥ ५ ॥ जब रामचन्द्र आये तौ सब और विश्वामित्रने निकट बैठाये ॥ ६ ॥

भे सब सुखी देखि दोउ भ्राता ❀ बारिविलोचन पुलकित गाता ॥ ७ ॥
मूरति मधुर मनोहर देषी ❀ भयउ विदेह विदेहविसेषी ॥ ८ ॥

दोनों भाइयोंको देखकर सब सुखी हुये, नेत्रोंसे नीर वहने लगा और शरीर पुलकायमान होगया ॥ ७ ॥ सुन्दर मनहरन माधुरी मूर्त्तिकी झाँकीकर राजा जनक अधिक विदेह हुये (अर्थात् देहका अनुसंधान न रहा) ॥ ८ ॥

दो०-प्रेममगन मन जानि नृप, करि विवेक धरि धीर ॥ ❀
बोलेउ मुनिपद नाइ सिर, गद्गद गिरा गँभीर ॥ २५४ ॥ ❀

राजा (अपने) मनको प्रेममें मगन जान, ज्ञानसे धीरज ठान मुनीश्वरके चरणोंको मस्तक नवाकर गद्गद कंठसे गंभीरवाणी बोले ॥ २५४ ॥

चौ०-कहहु नाथ सुंदर दोउ बालक ❀ मुनिकुलतिलक कि नृपकुलपालक ॥ १ ॥
ब्रह्म जो निगम नेति कहि गावा ❀ उभय वेष धरि सोइकि आवा ॥ २ ॥

हे स्वामी! कहो दोनों सुन्दर वालक मुनिकुलके तिलक हैं या राजाके कुलका पालन करनेवाले हैं ॥ १ ॥ अथवा वेदने जिस परब्रह्मको नेति २ कर गाया है, क्या वही दोनों भेष धरके आये हैं ॥ २ ॥

सहजबिरागरूप मन मोरा ❀ थकित होत जिमि चंद्र चकोरा ॥ ३ ॥
तातें प्रभु पूछौं सदभाऊ ❀ कहहु नाथ जनिकरहु दुराऊ ॥ ४ ॥

स्वभावसे वैराग्यरूप मेरा मन इनके दर्शनसे ऐसा थकित होता है जैसे चकोर चन्द्रमाको (देखकर होता है) ॥३॥ इस कारण हे स्वामी! अच्छे भावसे पूछता हूँ आप कहो छिपाव मत करिये ॥४॥

इनहिं बिलोकत अतिअनुरागा ❀ परबस ब्रह्मसुखहिं मन त्यागा ॥ ५ ॥
कह मुनि बिहँसि कहेउ नृपनीका ❀ बचन तुम्हार न होइ अलीका ॥ ६ ॥

इनको अत्यंत प्रीतिसे देखतेही मनने पराधीन हो, ब्रह्मानन्दको छोड़दिया ॥ ५ ॥ मुनीश्वरने हँसकर कहा हे राजा! तुमने अच्छा कहा तुम्हारा वचन झूँठा नहीं है ॥ ६ ॥

ए प्रिय सबहि जहाँलगि प्रानी ❀ मन मुसुकाहिं राम सुनि बानी ॥ ७ ॥
रघुकुलमनि दसरथके जाए ❀ मम हितलागि नरेस पठाए ॥ ८ ॥

जहाँतक जीव हैं ये सबके प्यारे हैं, यह वचन सुनकर राम मनमें मुसुकाते हैं ॥ ७ ॥ (फिर मुनि बोले कि ये) रघुकुलके मणि दशरथके पुत्र हैं और मेरे हितके लिये राजाने भेजे हैं ॥ ८ ॥

दो०-राम लषन दोउ बंधुवर, रूपसीलबलधाम ॥ ❀
मख राखेउ सब साखि जग, जीत असुरसंग्राम ॥ २५५ ॥ ❀

---

(१) राजाने जो कहाथा कि "ब्रह्म जो निगम नेति कहि गावा । उभयवेष धरि सोइ कि आवा ॥" यह उसीका उत्तर है कि " वचन तुम्हार न होइ अलीका" अर्थात् ये परब्रह्मही हैं परंतु परब्रह्म कहने नहीं पायेथे कि रामचन्द्रजी हँस दिये. क्योंकि मनुष्यतनु धारण किया है, अनेक चरित्र करने हैं; फिर तौ विश्वामित्रजीने यह वात उड़ादी और "ये सबको प्यारे हैं" इत्यादि कहने लगे–

रूप, शील और बलके स्थान सुन्दर दोनों भाई रामचन्द्र और लक्ष्मणने राक्षसोंको लड़ाईमें जीतकर यज्ञकी रक्षा करी इस वातका सब संसार साखी है ॥ २५५ ॥

चौ०-मुनि तव चरन देखि कह राऊ ❀ कहि न सकौं निज पुन्यप्रभाऊ ॥ १ ॥
सुंदर स्याम गौर दोउ भ्राता ❀ आनँदहूके आनँददाता ॥ २ ॥

तव राजा कहने लगे कि हे मुनिराज ! आपके चरणोंके दर्शन कर मैं अपने पुण्यका प्रभाव नहीं कह सकता ॥ १ ॥ ये साँवले और गोरे सुन्दर दोनों भाई आनन्दकोभी आनन्द देनेवाले हैं ॥ २ ॥

इनकी प्रीति परस्पर पावनि ❀ कहि न जाइ मनभाव सुहावनि ॥ ३ ॥
सुनहु नाथ कह मुदित विदेहू ❀ ब्रह्मजीव इव सहज सनेहू ॥ ४ ॥

इनकी आपसकी सुहावनी प्रीति मनमेंही भाती है, कही नहीं जाती है ॥ ३ ॥ जनक प्रसन्न हो कहने लगे हे स्वामी ! सुनो, इनका सनेह ब्रह्मजीवकासा मिला हुआ है ॥ ४ ॥

पुनि पुनि प्रभुहिं चितव नरनाहू ❀ पुलकगात उर अधिक उछाहू ॥ ५ ॥
मुनि प्रसंसि नाइ पद सीसा ❀ चलेउ लिवाइ नगर अवनीसा ॥ ६ ॥

राजा वारंवार रामचन्द्रजीकी ओर देखकर शरीरमें पुलकायमान होगये और मनमें वड़ा उत्साह होने लगा ॥ ५ ॥ और राजा मुनिकी बड़ाईकर चरणोंमें मस्तक नवाय नगरको लिवा चले ॥ ६ ॥

सुंदरसदन सुखद सब काला ❀ तहाँ बास लै दीन्ह भुआला ॥ ७ ॥
करि पूजा सबविधि सेवकाई ❀ गयउ राउ गृह बिदा कराई ॥ ८ ॥

जो सव कालमें सुख देनेवाला सुन्दर स्थान था वहाँ ले जाकर राजाने वास दिया ॥ ७ ॥ सब भाँतिसे सेवा पूजा करके राजा अपने घरको बिदा होकर चले ॥ ८ ॥

दो०-ऋषयसंग रघुबंसमनि, करि भोजन विस्राम ॥ ❀
बैठे प्रभु भ्रातासहित, दिवस रहा भरियाम ॥ २५६ ॥ ❀

जब मुनिके साथ रामचन्द्रजी भोजन और विश्राम कर भाईसहित बैठे तब पहरभर दिन रह गया था ॥ २५६ ॥

चौ०-लषन हृदयलालसा विसेषी ❀ जाइ जनकपुर आइय देषी ॥ १ ॥
प्रभुभय बहुरि मुनिहिं सकुचाहीं ❀ प्रगट न कहहिं मनहिं मुसुकाहीं ॥ २ ॥

लक्ष्मणजीके मनमें वड़ी लालसा हुई कि जाकर जनकपुरको देख आवें ॥ १ ॥ (परंतु प्रथम तौ) भगवान्का डर फिर मुनिसे सकुचते हैं (इसलिये) सामने नहीं कहते मन २ में मुसुकुराते हैं ॥ २ ॥

राम अनुजमनकी गति जानी ❀ भक्तवछलता हिय हुलसानी ॥ ३ ॥
परमबिनीत सकुचि मुसुकाई ❀ बोले गुरुअनुसासन पाई ॥ ४ ॥

रामचन्द्रजीने भाई लक्ष्मणके मनकी गति जानली और उनके हृदयमें भक्तोंके मनोरथ करनेवाली प्रीति उमगी ॥ ३ ॥ तौ वड़ी नम्रतासे सकुचाय मुसकाय गुरुकी आज्ञा पाय बोले ॥ ४ ॥

नाथ लषन पुर देखन चहहीं ❀ प्रभु सकोच डर प्रगट न कहहीं ॥ ५ ॥
जो राउरआयसु मैं पाऊँ ❀ नगर दिखाइ तुरत लै आऊँ ॥ ६ ॥

हे स्वामी ! लक्ष्मणजी नगरको देखना चाहते हैं. आपके डरसे प्रकट नहीं कहते हैं ॥ ५ ॥ जो मैं आपकी आज्ञा पाऊँ तौ नगरको दिखाय शीघ्र ले आऊं ॥ ६ ॥

सुनि मुनीस कह बचन सप्रीती ❀ कस न राम राखहु तुम नीती ॥ ७ ॥
धर्मसेतुपालक तुम ताता ❀ प्रेमबिबस सेवकसुखदाता ॥ ८ ॥

मुनिराज विश्वामित्रने सुनकर स्नेहभरे वचन कहे कि हे राम! तुम नीति(१)को क्यों नहीं धारण करो अर्थात् अवश्यही करते हो ॥ ७ ॥ हे प्यारे! तुम धर्मरूपी पुल कहिये मर्यादाके पालन करनेवाले हो और स्नेहके वश भक्तोंको सुख देते हो ॥ ८ ॥

दो०—जाइ देखि आवहु नगर, सुखनिधान दोउ भाइ ॥ ❀
करहु सफल सबके नयन, सुंदर बदन दिखाइ ॥ २५७ ॥ ❀

हे सुखके धाम! दोनोंभाई जाकर नगरको देख आओ और सुन्दर मुख दिखाकर सबके नेत्रोंको सफल कर आओ ॥ २५७ ॥

चौ०—मुनिपदकमल बंदि दोउ भ्राता ❀ चले लोकलोचनसुखदाता ॥ १ ॥
बालकबृंद देखि अति सोभा ❀ लगे संग लोचन मनलोभा ॥ २ ॥

संसारके नेत्रोंको सुखदाई दोनों भाई मुनीश्वरके चरणोंको वन्दना कर चले ॥ १ ॥ बालकोंके झुंडके झुंड अति शोभाको देखकर साथ हो चले. क्योंकि (भगवान्को देख) उनका मन (वचन सुननेके लिये) और नेत्र (दर्शनके लिये) मोहित होगये थे ॥ २ ॥

पीतवसन परिकर कटिभाथा ❀ चारु चाप सर सोहत हाथा ॥ ३ ॥
तनु अनुरहत सुचंदनखोरी ❀ स्यामल गौर मनोहर जोरी ॥ ४ ॥

कमरमें पीताम्बर धारण किये, फेंटमें तरकस कसे है और हाथोंमें सुन्दर धनुषबाण लिये ॥ ३ ॥ शरीरके योग्य अर्थात् साँवले गोरे रंगपर शोभा देनेवाली केसरके चन्दनकी सुन्दर खौर लगाये सलोनी साँवरी जोड़ी शोभायमान है ॥ ४ ॥

केहरिकंधर बाहु बिसाला ❀ उर अतिरुचिर नागमनिमाला ॥ ५ ॥
सुभग स्रवन सरसीरुहलोचन ❀ बदनमयंक तापत्रयमोचन ॥ ६ ॥

सिंहकेसे कंधे लंबी भुजा और हृदयमें अत्यंत सुन्दर गज मुक्ताओंकी मालायें पड़ी हुई हैं ॥५॥ उनके सुन्दर कान, कमलसे नेत्र हैं और चन्द्रमाकासा मुख तीनों तापोंका नाश करनेवाला है ६

कानन कनक फूल छबि देहीं ❀ चितवत चितहि चोर जनु लेहीं ॥ ७ ॥
चितवनि चारु भ्रकुटिवर बांकी ❀ तिलक रेख सोभा जनुचाकी ॥ ८ ॥

कानोंमें सोनेके फूल ऐसे शोभा देरहे हैं मानों देखतेसे चित्तको चुराय लेते हैं ॥ ७ ॥ मनमोहनी चितवन, सुन्दर टेढ़ी भौंहें और तिलकोंकी रेखा मानों शोभाकी मर्यादा है ॥ ८ ॥

दो०—रुचिर चौतनी सुभग सिर, मेचक कुंचित केस ॥ ❀
नखसिखसुंदर बंधु दोउ, सोभा सकल सुदेस ॥ २५८ ॥ ❀

सुन्दर मस्तकपर चमकती चौगोसी टोपियाँ शोभित हैं और काले घूंघरवाले बाल हैं और नखसे चोटीतक सलोने दोनों भाई संपूर्ण शोभाके धाम दीखते हैं ॥ २५८ ॥,

चौ०—देखन नगर भूपसुत आए ❀ समाचार पुरवासिन पाए ॥ १ ॥
धाये धामकाम सब त्यागे ❀ मनहु रंक निधि लूटन लागे ॥ २ ॥

---

(१) गुरुसे विना पूछे काम नहीं करना यही नीति है.

राजकुमार नगर देखनेको आये. यह समाचार जब नगरनिवासिओंने पाए ॥ १ ॥ तौ सब घरका काम छोड़ २ कर ऐसे धाए मानों कंगाल खजाना लूटने लगे ॥ २ ॥

निरखि सहजसुंदर दोउ भाई ❀ होहिं सुखी लोचन फल पाई ॥ ३ ॥
जुवती भवनझरोखनि लागी ❀ निरखहिं रामरूप अनुरागी ॥ ४ ॥

स्वभावहीसे सुन्दर दोनों भाईयोंको देख नेत्रोंका फल पाकर सुखी होते हैं ॥ ३ ॥ स्त्रियां भवनोंके झरोखोंसे लगीहुई बड़ी प्रीतिसे रामचन्द्रजीके रूपको देखती हैं ॥ ४ ॥

कहहिं परस्पर वचन सप्रीती ❀ सखि इन कोटिकामछबि जीती ॥ ५ ॥
सुरनरअसुरनागमुनिमाहीं ❀ सोभा असि कहुँ सुनियत नाहीं ॥ ६ ॥

आपसमें बड़े प्रेमसे बात कहती हैं कि हे सखी ! इन्होंने तौ करोड़ कामदेवोंकी शोभाकोभी जीतलिया है ॥ ५ ॥ देवता, मनुष्य, दैत्य, नाग और मुनीश्वरोंमेंभी ऐसी शोभा कहीं सुननेमें नहीं आई ॥ ६ ॥

विष्णु चारिभुज विधि मुखचारी ❀ बिकटवेष मुखपंच पुरारी ॥ ७ ॥
अपर देव अस को जग आही ❀ यह छबि सखि पटतरिये जाही ॥ ८ ॥

देखो विष्णु भगवान्के चार भुजा हैं; विधाताके चार मुख हैं, त्रिपुरारी भोलानाथके पाँच मुख हैं, और उनका विकट वेष है फिर भला ॥ ७ ॥ संसारमें ऐसा कौनसा दूसरा देव है कि हे सहेली ! जिससे इनकी छबिकी बराबरी करैं ॥ ८ ॥

दो०–वय किसोर सुखमासदन, स्यामगौर सुखधाम ॥ ❀
अंग अंग परवारिए, कोटिकोटिसत काम ॥ २५९ ॥ ❀

छोटी अवस्थावाले, शोभाके धाम और सुखके ठाम साँवले गोरे (रामलक्ष्मण) के अंग २ पर सौ २ करोड़ कामदेव नौछावर करने चाहियें ॥ २५९ ॥

चौ०–कहहु सखी अस को तनुधारी ❀ जो न मोह यह रूप निहारी ॥ १ ॥
कोउ सप्रेम बोली मृदुबानी ❀ जो मैं सुना सो सुनहु सयानी ॥ २ ॥

हे सखी ! कहो, ऐसा कौन शरीरधारी है जो इस रूपको देखकर मोहित न हो ॥ १ ॥ कोई स्नेहसे मीठी वाणी बोली–हे सजनी ! जो मैंने सुना है वह तौ सुनो ॥ २ ॥

ए दोउ नृपदसरथके ढोटा ❀ बालमरालनके कलजोटा ॥ ३ ॥
मुनिकौसिकमखके रखवारे ❀ जिन रन अजय निसाचर मारे ॥ ४ ॥

ये दोनों राजा दशरथके ढोटे छोटे हंसोंकीसी सुंदर जोड़ी है ॥ ३ ॥ ये विश्वामित्र मुनिके यज्ञके रखवाले हैं, जिन्होंने लड़ाईमें अजय राक्षस मारे हैं ॥ ४ ॥

स्यामगात कलकंजविलोचन ❀ जो मारीचसुभुजमदमोचन ॥ ५ ॥
कौसल्यासुत सो सुखखानी ❀ नाम राम धनुसायकपानी ॥ ६ ॥

जिनका श्याम शरीर और सुन्दर कमलके समान नेत्र हैं और जो मारीच और सुबाहु (राक्षसों) के अभिमानको नाश करनेवाले हैं ॥ ५ ॥ वे कौशल्याके पुत्र सुखकी खान हैं उनका नाम राम है और उनके हाथमें धनुषबाण है ॥ ६ ॥

गौर किसोर वेसवर काछे ❀ कर सरचाप रामके पाछे ॥ ७ ॥
लछिमन नाम रामलघुभ्राता ❀ सुनु सखि तासु सुमित्रामाता ॥ ८ ॥

और जो गौर शरीर और किशोर अवस्थावाले, सुन्दर वेश धारण किए, हाथमें धनुषबाण लिये

रामचन्द्रजीके पीछे २ चलते हैं ॥ ७ ॥ हे सखी ! सुनो, उनका नाम लक्ष्मण है. वह रामचन्द्रके छोटे भाई हैं, और उनकी माता सुमित्रा हैं ॥ ८ ॥

दो०-विप्रकाज करि बंधु दोउ, मग मुनिवधू उधारि ॥
आए देखन चापमख, सुनि हरषीं सब नारि ॥ २६० ॥

दोनों भाई मुनिराजका काम (सिद्ध) कर और मार्गमें मुनिकी स्त्री (अहल्या) का उद्धार कर धनुषयज्ञ देखने आये हैं. यह सुनकर सब स्त्रियाँ प्रसन्न हुई ॥ २६० ॥

चौ०-देखि रामछबि कोउ इक कहई ❀ योग्य जानकी यह वर अहई ॥ १ ॥
जो सखि इनहिं देखि नरनाहू ❀ प्रन परिहरि हठि करै विवाहू ॥ २ ॥

कोईएक रघुनाथजीकी (ऐसी सलोनी) छबि देखकर कहने लगी कि सीताजीके योग्य तौ यही दूलह है ॥१॥ हेसखी ! जो राजा इनको देखले तौ प्रण छोड़कर हठसे इनकेही साथ विवाह करै ॥ २॥

कोउ कह ए भूपति पहिचाने ❀ मुनिसमेत सादर सनमाने ॥ ३ ॥
सखि परंतु प्रन राउ न तजई ❀ विधिवस हठि अविवेकहि भजई ॥ ४ ॥

कोई कहती है ये राजाकी जानपहिचानके हैं (क्योंकि उसने) मुनि विश्वामित्रके साथ इनकाभी आदरसे सत्कार किया है ॥ ३ ॥ परन्तु हे सहेली ! राजा पैजको न छोड़ेगा. प्रारब्धके वश हठसे अज्ञानकोही निवाहेगा ॥ ४ ॥

कोउ कह जो भल अहै विधाता ❀ सबकहँ सुनिय उचितफलदाता ॥ ५ ॥
तौ जानकिहिं मिलिहि वर एहू ❀ नाहिंन आली इह संदेहू ॥ ६ ॥

कोई कहती है सुनो, जो विधाता भला है और सुना जाता है कि सबको जैसा चाहिये वैसे फलका दाता है ॥ ५ ॥ तौ हे सखी ! जानकीजीको यही दूलह मिलैगा इसमें सन्देह नहीं ॥ ६ ॥

जो विधिवस अस बनै सँजोगू ❀ तो कृतकृत्य होहिं सब लोगू ॥ ७ ॥
सखि हमरे अतिआरति ताते ❀ कबहुँक ए आवहिं यहि नाते ॥ ८ ॥

जो होनहारसे ऐसा संयोग बनजाय तौ सब लोग कृतार्थ हों, अर्थात् अपने जन्मका फल पावैं ॥ ७ ॥ हे सहेली ! हमको इससे औरभी अधीरता है कि भला इस नातेसे ये कभी २ यहां आवेंगे तौ सही-॥ ८ ॥

दो०-नाहित हम कहँ सुनहु सखि, इन्हकर दरसन दूरि ॥
यह संघट तब होइ जब, पुन्य पुराकृत भूरि ॥ २६१ ॥

नहीं तौ हे सखी ! हमको इनका दर्शन दुर्लभ होगा. परन्तु यह जोड़ तभी हो सकता है जब पूर्वजन्मके बड़े पुण्य आड़े आवैं ॥ २६१ ॥

चौ०-बोली अपर कहेउ सखि नीका ❀ यहि विवाह अति हित सबहीका ॥ १ ॥
कोउ कह शंकरचाप कठोरा ❀ ए स्यामल मृदुगात किसोरा ॥ २ ॥

और दूसरी बोली हे सखी ! अच्छा कहा, यह विवाह सभीके लिये अति हितकारी है ॥ १ ॥ कोई कहती हैं महादेवका धनुष कठोर है और इन साँवरे बालकोंका कोमल शरीर है ॥ २ ॥

सब असमंजस अहै सयानी ❀ यह सुनि अपर कहै मृदुबानी ॥ ३ ॥
सखि इनकहँ कोउ कोउ अस कहहीं ❀ बड़ प्रभाव देखत लघु अहहीं ॥ ४ ॥

हे सजनी ! सबको यही दुविधा है, यह सुनकर दूसरी कोमलवाणीसे कहने लगी ॥३॥ हे सखी ! कोई २ इनको ऐसा कहते हैं कि इनका बड़ा प्रभाव है, ये देखनेमेंही छोटे लगते हैं ॥ ४ ॥

परसि जासु पदपंकजधूरी ❀ तरी अहल्या कृतअघभूरी ॥ ५ ॥
सोकि रहैं बिनु शिवधनु तोरे ❀ यह प्रतीति परिहरिय न भोरे ॥ ६ ॥

जिनके चरणकमलोंकी धूलके छूतेही बड़ी पापिनी अहल्या तरगई ॥ ५ ॥ सो क्या महादेवका धनुष तोड़े बिन रहैंगे ? इस भरोसेको कभी भूलकरभी न छोड़ना ॥ ६ ॥

जेहि बिरंचि रचि सीय सँवारी ❀ तेहिं स्यामलवर रचेउ बिचारी ॥ ७ ॥
तासु बचन सुनि सब हरषानी ❀ ऐसेइ होउ कहहिं मृदुबानी ॥ ८ ॥

जिस ब्रह्माने सँभालकर जानकीजीको निर्माया है उसीने विचारकर श्यामसुन्दर दुलहाको बनाया है ॥ ७ ॥ उसके वचन सुन सब प्रसन्न हुईं और मीठी वाणीसे कहने लगीं कि (भगवान् करै ऐसाही हो ॥ ८ ॥

दो०–हिय हरषहिं बरषहिं सुमन, सुमुखि सुलोचनिवृंद ॥
जाहिं जहाँ जहँ बंधु दोउ, तहँ तहँ परमानंद ॥ २६२ ॥

सुन्दर मुख और कटीले नेत्रवाली स्त्रियोंकी टोलियाकी टोलियाँ हृदयमें फूली नहीं समातीं और फूल वरसाती हैं और जहाँ २ दोनों भाई जाते हैं वहाँ २ हीं लोग बड़ा आनन्द पाते हैं ॥ २६ ॥

चौ०–पुरपूरबदिसि गे दोउ भाई ❀ जहाँ धनुषमखभूमि बनाई ॥ १ ॥
अति बिस्तार चारु गच ढारी ❀ बिमल बेदिका रुचिर सँवारी ॥ २ ॥

नगरके पूर्व दिशाकी ओर दोनों भाई गये जहाँ धनुषयज्ञके लिये भूमिबनाई गईथी ॥ १ ॥ (उसभूमिके वीचमें धनुष रखनेकेलिये) वड़ी लंवी चौड़ी गचढ़ार सुन्दर निर्मल वेदी वनी हुई है ॥ २ ॥

चहुँदिसि कंचनमंच बिसाला ❀ रचे जहाँ बैठहिं महिपाला ॥ ३ ॥
तेहि पाछे समीप चहुँपासा ❀ अपर मंच मंडलीबिलासा ॥ ४ ॥

उसके चारों दिशाओंमें सुवर्णके वड़े २ मचान सजाये हैं कि जहाँ राजा आकर बैठें ॥ ३ ॥ उसके पीछे चारों ओर पास और मंडलाकार मचान बिछे हैं ॥ ४ ॥

कछुक ऊँच सब भाँति सुहाई ❀ बैठहिं नगर लोग सब आई ॥ ५ ॥
तिनके निकट बिसाल सुहाए ❀ धवलधाम बहु बरन बनाए ॥ ६ ॥

फिर कुछ ऊंचे (चौतरे) सब भाँति सजाये हैं, जहाँ नगरके लोग आकर बैठें ॥ ५ ॥ उनके पास बड़े विशाल सुन्दर उज्ज्वल महल भाँति २ के रंगके बनाये हैं कि–॥ ६ ॥

जहँ बैठी देखहिं पुरनारी ❀ यथायोग्य निज कुलअनुहारी ॥ ७ ॥
पुरबालक कहि कहि मृदुबचना ❀ सादर प्रभुहि दिखावहिं रचना ॥ ८ ॥

जहाँ नगरकी स्त्रियां यथोचित अपने कुलके अनुसार बैठी हुईं देखैं ॥ ७ ॥ नगरके बालक मीठे वचन कह २ कर भगवान्को आदरसे रचना दिखाते हैं ॥ ८ ॥

दो०–सब सिसु इहि मिसु प्रेमबस, परसि मनोहरगात ॥
तनु पुलकहिं अतिहरष हिय, देखि देखि दोउ भ्रात ॥ २६३ ॥

सब बालक इसी बहानेसे प्रेममें मगन हो मनहर शरीरको छूकर और दोनों भाइयोंको देख २ कर मनमें अधिक आनन्दके कारण अंगमें फूले नहीं समाते हैं ॥ २६३ ॥

चौ०-सिसु सब राम प्रेमबस जाने ❀ प्रीतिसमेत निकेत बखाने ॥ १ ॥
निजनिज रुचि सब लेहिं बुलाई ❀ सहितसनेह जाहिं दोउ भाई ॥ २ ॥

सब बालकोंने रामचन्द्रजीको प्रेमके वश जान, प्रीतिसहित अपने अपने घर बतलाये ॥ १ ॥ अपनी २ इच्छासे सब बुलाते हैं तौ दोनों भाई प्रीतिसहित जाते हैं ॥ २ ॥

राम दिखावहिं अनुजहिं रचना ❀ कहि मृदु मधुर मनोहर बचना ॥ ३ ॥
लव निमेषमहिं भुवन निकाया ❀ रचै जासु अनुसासन माया ॥ ४ ॥

और रामचन्द्रजी, कोमल, मीठे, मनहरन वचन कहकर छोटे भाई (लक्ष्मण) को रचना दिखावे हैं ॥ ३ ॥ माया जिनकी आज्ञा पाकर पलभरमें सुन्दर अनेक ब्रह्मांडोंको रचदेती है-॥ ४ ॥

भक्तहेतु सोइ दीनदयाला ❀ चितवत चकित धनुषमखशाला ॥ ५ ॥
कौतुक देखि चले गुरुपाहीं ❀ जानि बिलंब त्रास मनमाहीं ॥ ६ ॥

वेही दीनहितकारी (भगवान्) भक्तोंके कारण चकित चित्तसे धनुपयज्ञकी शालाको देखत हैं ॥ ५ ॥ यह लीला देख गुरुके पास चले, (परंतु) देर जानकर मनमें डर हुआ ॥ ६ ॥

जासु त्रास डरकहँ डर होई ❀ भजनप्रभाव देखावत सोई ॥ ७ ॥
कहि बातैं मृदु मधुर सुहाई ❀ किये बिदा बालक बरिआई ॥ ८ ॥

जिसके भयसे डरकोभी डर होता है (वही भगवान्) भजनकी बड़ाई दिखाते हैं ॥ ७ ॥ (फिर रामचंद्रने) कोमल, मीठी और सुहावनी बातें कहकर बालकोंको ज्यों त्यों कर विदा किया अर्थात् बालक संग छोड़ना नहीं चाहतेथे ॥ ८ ॥

दो०-सभय सप्रेम बिनीत अति, सकुचसहित दोउ भाइ ॥ ❀
गुरुपदपंकज नाइ सिर, बैठे आयसु पाइ ॥ २६४ ॥ ❀

भय[१] और स्नेहसे अत्यंत नम्र हो, सकुचाकर दोनों भाई गुरुके चरणकमलोंको माथा नवाय आज्ञा पाकर बैठगये ॥ २६४ ॥

चौ०-निसिप्रवेस मुनि आयसु दीन्हा ❀ सबही संध्याबंदन कीन्हा ॥ १ ॥
कहत कथा इतिहास पुरानी ❀ रुचिर रजनि युगयाम सिरानी ॥ २ ॥

फिर मुनिने रात्रिका आगमन जान आज्ञा दी तौ सबोंने संध्यावन्दन किया ॥ १ ॥ पुरानी कथा और इतिहास कहते २ सुन्दर दो पहर रात बीत गई ॥ २ ॥

मुनिबर शयन कीन्ह तब जाई ❀ लगे चरन चापन दोउ भाई ॥ ३ ॥
जिनके चरनसरोरुहलागी ❀ करत विविध जप जोगबिरागी ॥ ४ ॥

तब मुनीश्वर (विश्वामित्र) जाकर सोये तौ दोनों भाई चरण दाबने लगे ॥ ३ ॥ जिनके चरणकमलोंके लिये वैरागी बहुतसे जप योग करते हैं-॥ ४ ॥

ते दोउ बंधु प्रेम जनु जीते ❀ गुरुपदकमल पलोटत प्रीते ॥ ५ ॥
बारबार मुनि आज्ञा दीन्हा ❀ रघुबर जाइ शयन तब कीन्हा ॥ ६ ॥

वेही दोनों भाई मानों प्रेमके वश होकर प्रसन्नतासे गुरुके चरणकमल दाबते हैं ॥ ५ ॥ जब मुनि (विश्वामित्र) ने वारंवार आज्ञा दी तब जाकर रामचन्द्रजी सोये ॥ ६ ॥

---

(१) यहाँ भय इस बातका है कि नगर देखनेमें देर हुई और स्नेह, नम्रता, संकोच आदिगुण प्रगट करना तौ बड़ोंके सामने योगही है.

चापत चरन लषन उर लाए ॥ सभय सप्रेम परम सचुपाए ॥ ७ ॥
पुनि पुनि प्रभु कह सोवहु ताता ॥ पौढ़े धरि उर पदजलजाता ॥ ८ ॥

और लक्ष्मणजी मनलगाकर प्रेममें मगनहो चरण दावने लगे परंतु भयसे सकुचाते भी जाते हैं (कि कहीं मेरे कठोर हाथोंसे भगवान्के कोमल चरण ऐसे न दवजांय कि नींद उचट जावै.) ॥ ७ ॥ रघुनाथजी वारंवार कहते हैं-हे प्यारे ! सोओ (तब उनके) चरणकमलोंको हृदयमें धारण कर अर्थात् स्मरण करके सोये ॥ ८ ॥

दो०-उठे लषन निसि विगत सुनि, अरुनसिखा धुनि कान ॥
गुरुते पहिले जगतपति, जागे राम सुजान ॥ २६५ ॥

कानोंसे मुर्गेका शब्द सुन और रातको बीती जान लक्ष्मणजी उठे और संसारके स्वामी चतुर रामचन्द्रजी गुरुसे पहले उठे ॥ २६५ ॥

चौ०-सकल सौच करि जाइ नहाए ॥ नित्य निवाह मुनिहिं सिर नाए ॥ १ ॥
समय जानि गुरु आयसु पाई ॥ लेन प्रसून चले दोउ भाई ॥ २ ॥

संपूर्ण शौच (पवित्रता) से निश्चिन्त हो जाकर स्नान किया और नित्य कर्म (संध्यावंदनादि) कर मुनीश्वरको माथा नवाया ॥ १ ॥ समय जान गुरुकी आज्ञा पाकर दोनों भाई (रामलक्ष्मण) फूल लेने चले ॥ २ ॥

भूपवागवर देखेउ जाई ॥ जहँ वसंतऋतु रही लुभाई ॥ ३ ॥
लागे विटप मनोहर नाना ॥ बरन बरन बर बेलिविताना ॥ ४ ॥

और जाकर राजाका सुन्दर वाग देखा जहां वसंतऋतु लुभारही थी ॥ ३ ॥ अति मनोहर नाना प्रकारके वृक्ष लगे हुये थे और रंग विरंगकी सुन्दर बेलोंके चँदोये बने हुये थे ॥ ४ ॥

नवपल्लव फल सुमन सुहाए ॥ निजसंपति सुरतरुहिं लजाए ॥ ५ ॥
चातक कोकिल कीर चकोरा ॥ कूजत विहँग नाचत कल मोरा ॥ ६ ॥

वृक्षोंमें नवीन कोंपलें निकल रहीं थीं, फल लटक रहे थे, पुष्प खिल रहे थे और वे ऐसे सुहाये थे कि उन्होंने अपनी संपत्तिसे कल्पवृक्षोंकोभी लजाया था ॥ ५ ॥ पपीहा, कोयल, तोते और चकोर ये पक्षी कूज रहे थे और सुन्दर मोर नाच रहे थे ॥ ६ ॥

मध्यभाग सरसोह सुहावा ॥ मनिसोपान विचित्र बनावा ॥ ७ ॥
बिमल सलिल सरसिज बहुरंगा ॥ जलखग कूजत गुंजत भृंगा ॥ ८ ॥

बागके बीचमें सुन्दर सरोवर शोभायमान था जिसमें मणियोंकी चित्र विचित्र सीढ़ियाँ बनी हुई थीं ॥ ७ ॥ उसमें निर्मल नीर भर रहा था और उस जलमें रंगरंगके कमल खिल रहे थे, (और वहाँ) जलपक्षी कूजते और भौंरे गूँजते थे ॥ ८ ॥

---

(१) जैसा मनुस्मृतिमें लिखा है श्लोक—"हीनान्नवस्त्रवेषः स्यात्सर्वदा गुरुसन्निधौ । उत्तिष्ठेत्प्रथमं चास्य चरमं चैव संविशेत्" अर्थात् गुरुके समीप सवकालमें गुरुकी अपेक्षा हीनअन्न, हीनवस्त्र और हीनस्वरूपसे रहै और गुरुके जागनेके पहिले जागै और गुरुके सोनेके पीछै सोवै ॥ १ ॥ (२) इस चौपाईमें 'सोह' और 'सुहावा'को एकार्थी होनेसे लोग पुनरुक्ति दोष लगाते हैं और दोनोंको विशेषण मान एकको सरोवरका विशेषण और दूसरेको वागका विशेषण वतातें हैं, परन्तु मेरी समझमें 'सोह' विशेषण है और 'सुहावा' क्रियापद है. अर्थात् शोभायमान था. क्योंकि आगे इसके साथका क्रियापद "वनावा" लिखा है ॥

दो०–बाग तड़ाग बिलोकि प्रभु, हरषे बंधुसमेत ॥
परम रम्य आराम यह, जो रामहिं सुख देत ॥ २६६ ॥

बाग और सरोवरको देखकर रामचन्द्रजी भाईसहित प्रसन्न हुये यह अति रमणीक बाग था कि जिसने रामचन्द्रजीको आनन्द दिया ॥ २६६ ॥

चौ०–चहुँदिसि चितै पूछि मालीगन ❀ लगे लेन दलफूल मुदितमन ॥ १ ॥
तेहिं अवसर सीता तहँ आई ❀ गिरिजापूजन जननि पठाई ॥ २ ॥

चारों ओर देख और मालियोंसे पूछ मनमें प्रसन्न हो दोनेंमें फूल लेने लगे ॥ १ ॥ उसीसमय वहाँ जानकीजी आईं. जिन्हें माताने पार्वतीजीके पूजनके लिये भेजा था ॥ २ ॥

संग सखी सब सुभग सयानी ❀ गावहिं गीत मनोहर बानी ॥ ३ ॥
सरसमीप गिरिजागृह सोहा ❀ बरनि न जाइ देखि मन मोहा ॥ ४ ॥

साथमें सब सुन्दर चतुर सखियां मनके हरनेवाली वाणीसे गीत गाती जाती हैं ॥ ३ ॥ सरोवरके पास पार्वतीजीका मन्दिर शोभित था, जिसका वर्णन नहीं किया जाता, उसे देखतेही मन मोहित होता था ॥ ४ ॥

मज्जन करि सर सखीसमेता ❀ गई मुदितमन गौरिनिकेता ॥ ५ ॥
पूजा कीन्ह अधिक अनुरागा ❀ निज अनुरूप सुभग बर माँगा ॥ ६ ॥

(सीताजी) सखियोंसमेत सरोवरमें मज्जन कर प्रसन्न मनसे पार्वतीजीके मन्दिरमें गईं ॥ ५ ॥ बड़ी प्रीतिसे पूजा की और अपने समान सुन्दर वर मांगा ॥ ६ ॥

एक सखी सियसंग बिहाई ❀ गई रही देखन फुलवाई ॥ ७ ॥
तेइ दोउ बंधु बिलोकेउ जाई ❀ प्रेमबिबस सीतापहँ आई ॥ ८ ॥

एक सखी जानकीजीका संग छोड़कर फुलवाड़ी देखने चली गई ॥ ७ ॥ उसने जाकर दोनों भाइयोंको देखा और प्रेममें मगन होकर जानकीजीके पास आई ॥ ८ ॥

दो०–तासु दसा देखी सखिन, पुलकगात जलनैन ॥
कहु कारन निजहरष कर, पूछहिं सब मृदु बैन ॥ २६७ ॥

सखियोंने उसकी दशा देखी तौ शरीर पुलकायमान है और नेत्रोंमें जल भररहा है· तब सब मीठे वचनोंसे पूछने लगीं कि अपने आनन्दका कारण तौ बता ॥ २६७ ॥

चौ०–देखन बाग कुँवर दोउ आए ❀ बय किसोर सब भाँति सुहाए ॥ १ ॥
स्याम गौर किमि कहौं बखानी ❀ गिरा अनयन नयन बिनु बानी ॥ २ ॥

(सखी कहती है कि) कोई दो कुँवर बाग देखने आये हैं उनकी बारी उमर है और सब भाँतिसे सुन्दर हैं ॥ १ ॥ उन साँवले गोरेका वर्णन कैसे करूं ? क्योंकि वाणीके नेत्र नहीं और नयनोंके वाणी नहीं, अर्थात् नेत्रोंने देखा परंतु वे वाणी विना कह नहीं सकते, और वाणी कह सकती है परंतु उसने नेत्रोंविना देखे नहीं ॥ २ ॥

सुनि हरषीं सब सखी सयानी ❀ सियहिय अति उतकंठा जानी ॥ ३ ॥
एक कहहि नृपसुत ते आली ❀ सुने जे मुनिसँग आए काली ॥ ४ ॥

सब चतुर सखियां सुनकर प्रसन्न हुईं और सीताजीके मनमें बड़ा प्रेम जानकर ॥३॥ एक कहने लगी हे सखी ! वे राजाके वेही पुत्र हैं कि जिनको सुनती हैं कि मुनीश्वरके साथ कल आये हैं ॥ ४ ॥

निज निज रूप मोहनी डारी ❀ कीन्हे स्ववश नगरनरनारी ॥ ५ ॥
बरनत छबि जहँ तहँ सब लोगू ❀ अवसि देखिये देखन जोगू ॥ ६ ॥

(जिन्होंने) अपने २ स्वरूपकी मोहनी डाल नगरके लोग लुगाई ऐसे अपने वशमें कर लिये हैं कि ॥ ५ ॥ जहाँ (देखो) तहाँ सब लोग उनकी सुन्दरताका वर्णन करते फिरते हैं, (हे सखी!) अवश्य देखिये, देखनेकेही योग्य हैं ॥ ६ ॥

तासु बचन अति सियहि सुहाने ❀ दरसलागि लोचन अकुलाने ॥ ७ ॥
चली अग्रकरि प्रियसखि सोई ❀ प्रीति पुरातन लखै न कोई ॥ ८ ॥

उसके वचन जानकीजीको बहुत सुहाये और दर्शनोंके लिये नेत्र अकुलाए ॥ ७ ॥ सीताजी उसी प्यारी सखीको आगे कर चलीं, कोई पुरानी[1] प्रीतिको नहीं जानता ॥ ८ ॥

दो०-सुमिरि सीय *नारदबचन, उपजी प्रीति पुनीत ॥ ❀
चकित विलोकति सकल दिसि, जनु शिशुमृगी सभीत ॥२६८॥ ❀

सीताजीने नारदजीका वचन स्मरण किया तो मनमें सच्ची प्रीति उत्पन्न हुई और वे भौंचक्कीसी सब दिशाओंमें ऐसे देखने लगीं मानों कोई हिरणकी छौनी डरसे देखती हो ॥ २६८ ॥

चौ०-कंकणकिंकिणिनूपुरधुनि सुनि ❀ कहत लषन सन रामहृदय गुनि ॥ १ ॥
मानहुँ मदन दुंदुभी दीन्ही ❀ मनसा विश्वविजय कहँ कीन्ही ॥ २ ॥

कंकण तागड़ी और पाजेबोंका शब्द सुन रामचन्द्रजी हृदयमें विचार कर लक्ष्मणजीसे कहने लगे कि ॥ १ ॥ (हे लक्ष्मण! देखो कैसा सुन्दर शब्द होता है) मानों कामदेवने नगाड़ा बजाकर विश्वके विजयकी लालसा की हो ॥ २ ॥

अस कहि फिरि चितए तेहिं ओरा ❀ सियमुख ससि भये नयन चकोरा ॥ ३ ॥
भये बिलोचन चारु अचंचल ❀ मनहुँ सकुचि निमि तजेउ दृगंचल ॥४॥

ऐसे कहकर फिर उस ओर देखी तो सीताजीके मुखरूपी चन्द्रमामें (रामचन्द्रके) नेत्र चकोर[2]के समान लगगये ॥ ३ ॥ सुन्दर नेत्रोंका चलना बन्द हुआ मानो निमि (राजा) ने सकुचकर पलक छोड़ दिये ॥ ४ ॥

(*) सीता पार्वतीजीको पूजने जाया करती थीं. एक दिन मार्गमें नारदजी मिले. सीताने उन्होंसे प्रणाम कर कहा कि मैं गिरिजा पूजने जातीहूँ. इसपर मुनिने प्रसन्न हो आशीश दी कि इसी वारीमें तुम्हें रामजी मिलेंगे और तुम्हारे वेही पति होंगे. सीताने पूछा कि मैं कैसे पहिचानूँगी, उन्होंने कहा जिन्हें देखकर तूं मोहित होजाय उन्हेंही जानना ॥

---

(१) पूर्व जन्मकी प्रीति जो भगवान् और लक्ष्मीमें थी । भगवान् राम हुये और लक्ष्मी सीता हुई है ॥

(२) निमि राजा जनकके पुरखा थे, उनका निवास पलकोंपर रहता है और वही पलकोंको चलाता है यहां जानकीकी शोभाको देख वही निमि लजाकर पलकोंको छोड़गया, क्योंकि निमि जनकके पुरखा थे अपने कुलकी कन्याकी प्रीति रामसे होती देख किनारा कर गये, जैसी वड़ोंकी रीति है ॥ इसलिये पलकोंके न चलनेसे नेत्र खुलेके खुले रहगये ॥ अब जो यह शंका करो कि निमिका वास पलकोंपर क्यों है? उसका उत्तर सुनो. राजा निमिने एक समय यज्ञ करानेकी इच्छासे वसिष्ठजीको बुलाया पर वे वहां न आकर इन्द्रके यहां चले गये. इस लिये निमिने दूसरे पुरोहितद्वारा यज्ञ किया और जब वसिष्ठ लौटे तौ राजासे परस्पर ऐसी कहा सुनी हुई कि आपसमें दोनोंने शाप दिया कि शरीर न रहै. इसपर वसिष्ठजीने तौ अपना शरीर छोड़ दूसरा धारण किया और उधर पुरोहितने निमिको पुनर्जीवित करनेका उपाय कहा. परन्तु निमिने इच्छा न कर ऋषियोंसे यह वर मांगा कि में मनुष्योंके पलकोंपर रहूं. तब ऋषियोंने कहा कि तथास्तु अर्थात् ऐसेही होय. तबसे निमि पलकोंपर रहने लगे ॥

देखि सीयसोभा सुख पावा ❀ हृदय सराहत वचन न आवा ॥ ५ ॥
जनु बिरंचि सब निज निपुणाई ❀ बिरचि विश्वकहँ प्रगट दिखाई ॥ ६ ॥

जानकीजीकी शोभाको देख सुख पाय हृदयमें सराहना करने लगे परन्तु मुखसे वचन नहीं आता ॥ ५ ॥ (उनको ऐसा भान हुआ) मानों ब्रह्माने अपनी सब चतुराई रचकर संसारको प्रत्यक्ष कर दिखलाई है ॥ ६ ॥

सुंदरताकहँ सुंदर करई ❀ छबि गृहदीपसिखा जनु बरई ॥ ७ ॥
सब उपमा कबि रहे जुठारी ❀ केहि पटतरिय बिदेहकुमारी ॥ ८ ॥

(सीताजीकी शोभा) सुन्दरताकोभी सुन्दर करती हुई शोभाके घरमें दीपककी लौके समान मानो जलती है. भाव यह निकला कि विधाताने जितनी सुन्दरता रचीथी सब अंधेरी पड़ीथी, उसे सीताजीने अपने स्वरूपसे प्रकाशित करदिया ॥ ७ ॥ कवियोंने अन्य स्त्रियोंमें लगा २ कर सब शोभा जूँठी करडालीं. जनककी पुत्री (सीताजी) को किसके समान कहैं ॥ ८ ॥

दो०–सियसोभा हिय बरनि प्रभु, आपनि दसा बिचारि ॥ ❀
बोले सुचि[1] मन अनुजसन, बचन समयअनुहारि ॥ २६९ ॥ ❀

भगवान् हृदयमें सीताजीकी शोभाका वर्णन कर और अपनी दशा विचारकर सँचे मनसे छोटे भाई (लक्ष्मणजी) से समयके अनुसार वचन बोले ॥ २६९ ॥

चौ०–तात जनकतनया यह सोई ❀ धनुषयज्ञ जेहिकारन होई ॥ १ ॥
पूजन गौरि सखी लै आई ❀ करति प्रकाश फिरति फुलवाई ॥ २ ॥

हे प्यारे! यह वही जनककी[2] बेटी है, जिसके लिये धनुषयज्ञ रचा गया है ॥ १ ॥ सखियाँ इसे पार्वतीके पूजनेके लिये लेआई हैं. और वह फुलवाड़ीमें उजेला करती फिरती है ॥ २ ॥

जासु बिलोकि अलौकिक शोभा ❀ सहज पुनीत मोर मन क्षोभा ॥ ३ ॥
सो सब कारन जान बिधाता ❀ फरकहि सुभग अंग सुनु भ्राता ॥ ४ ॥

जिसकी अनोंखी शोभाको देख स्वभावहीसे पवित्र मेरा मन डिगगया ॥ ३ ॥ हे भाई! सो सब कारण तौ विधाताही जानता होगा (परंतु मेरा) दाहिनाअंग फड़कता है ॥ ४ ॥

रघुबंसिनकर सहज स्वभाऊ ❀ मन कुपंथ पग धरैं न काऊ ॥ ५ ॥
मोहिं अतिशय प्रतीति जियकेरी ❀ जेहि सपनेहु परनारि न हेरी ॥ ६ ॥

रघुवंशियोंका साधारण स्वभाव है कि वे मनसेभी कभी बुरे मार्गमें पैर नहीं रखते ॥ ५ ॥ जिसमें मुझे तौ अपने हृदयका पूरा भरोसा है कि जिसने पराई स्त्रीको स्वप्नमेंभी नहीं देखा ॥ ६ ॥

जिनके लहहिं न रिपुरण पीठी ❀ नहिं लावहिं परतिय मन डीठी ॥ ७ ॥
मंगन लहहिं न जिनके नाहीं ❀ ते नरवर थोरे जगमाहीं ॥ ८ ॥

(हे लक्ष्मण!) जिनके यहां शत्रुओंसे रणमें पीठ नहीं मोड़ते हैं और जो पराई स्त्रीको मनसेभी

---

(१) शुचिमनका प्रयोग इसलिये है कि जो बात कहने योग्य न थीं सोभी कही, कपट न रक्खा—

(२) जाकी देह आगे दुरि जात दुति दामिनिकी दीपति कितीक नीक कुन्दन कनक की।
नीरजसे नैन हैं न बैन ऐसे कोकिलके उपजैं न उपमा अलौकिक कवनकी।
मन्द मन्द चालसों मरालिहू को मारै मान मनहिं चलावै धुनि भूषन भनककी।
जासु हित होय धनुयज्ञकी तयारी भारी सोई देखौ तात जात तनया जनककी ॥ १ ॥

दृष्टिमें नहीं लाते. अर्थात् प्रत्यक्ष तौ क्या मनमेंभी किसी स्त्रीकी ओर नहीं देखते ॥७॥ और जिनके यहाँ मंगते विमुख नहीं जाते ऐसे श्रेष्ठ मनुष्य संसारमें थोड़े हैं ॥ ८ ॥

दो०-करत बतकही अनुजसन, मन सियरूप लुभान ॥
मुखसरोजमकरंदछबि, करत मधुप इव पान ॥ २७० ॥

इस प्रकार छोटे भाई (लक्ष्मण) से बातें करते हैं परंतु मन जानकीजीके रूपपर लुभा रहा है और सीताके मुखरूपी कमलकी छबिरूपी मकरंदको भौरेके समान पान करते हैं अर्थात् देखते हैं ॥२७०॥

चौ०-चितवति चकित चहूँ दिसि सीता ❀ कहँ गए नृपकिशोर मनचीता ॥ १ ॥
जहँ बिलोकि मृगशावकनयनी ❀ जनु तहँ बर्ष कमलसितश्रयनी ॥ २ ॥

जानकीजी चकित हो चारों दिशाओंमें देखने लगीं कि मनके चाहे राजकुमार कहाँ गये ॥१॥ जहाँ २ मृगछौनेके समान नेत्रोंवाली देखती है वहाँ २ मानो श्वेत कमलोंकी धारा बरसती है अर्थात् उधरही संपूर्ण सुखोंका समूह दीख पड़ता है ॥ २ ॥

लताओट तब सखिन लखाए ❀ स्यामल गौर किसोर सुहाए ॥ ३ ॥
देखि रूप लोचन ललचाने ❀ हर्षे जनु निजनिधि पहिचाने ॥ ४ ॥

उतनेमें सखियोंने साँवले गोरे सुन्दर राजकुमारोंको बेलिकी ओटमें दिखादिया ॥३॥ उनके स्वरूपको देख कर नेत्र ललचाने लगे और ऐसे प्रसन्न हुए मानों कोई अपने खजानेको पहिचान कर प्रसन्न होता है ॥ ४ ॥

थके नयन रघुपतिछबि देषी ❀ पलकनहूँ परिहरी निमेषी ॥ ५ ॥
अधिक सनेहबिबस भइ भोरी ❀ सरदससिहिं जनु चितव चकोरी ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीकी सुन्दरताको देखकर नेत्र थकित हो गये और पलक बन्द होना भूल गये ॥ ५ ॥ अत्यंत प्रेमके वश देह भोरी हो गई अर्थात् ऐसी सुधबुध जाती रही जैसे चकोरी शरदके चन्द्रमाको देख भोली हो जाती है ॥ ६ ॥

---

(१) १६८ वें दोहेके पीछे जो प्रसंग छूटाथा फिर चला. (२) मनचीताका यहभी अर्थ हो सक्ता है कि मनमें जिनकी चिन्ता है क्योंकि चिन्ताका अपभ्रंश चीता होसक्ता है, और चिन्ता क्याथी सो यह कि कहीं चले न गये हों, दूसरी यह कि सखी भेद न जानलें, तीसरी पिताके प्रणकी । (३) श्वेत कमलोंकी उपमा देनेसे यह स्पष्ट है कि सीताजी शृंगार किये नहीं हैं-दूसरे, सित कहनेसे भिन्नभावभी प्रगट होता है. क्योंकि नेत्रोंके वर्णनमें तीन रंग मुख्य होते हैं. अर्थात् श्वेत, श्याम और लाल उनमेंसे श्वेतका अमृत गुण है श्यामका विष और रक्तका मध्यस्थ है. जैसा कहा है कि "अमी हलाहल मदभरे श्वेत श्याम रतनार । जियत मरत झुक-झुक परत, जिहि चितवत इकवार॥१॥" अर्थात् नेत्र अमृत, विष और मदसे भरे हैं और कैसे हैं कि श्वेत, श्याम और लाल हैं (क्योंकि अमृतका रंग श्वेत, विषका श्याम और मदका लाल है) जिसको एकवार तू देखती है वह जीता है, मरता है और झुक२ पड़ता है. अर्थात् अमृत भरे श्वेत नेत्रोंसे देखती है तौ जीता है. विष भरे श्याम नेत्रोंसे देखती है तो मरता है. मद भरे रक्त नेत्रोंसे देखतीं है तौ झुक २ पड़ता है, क्योंकि अमृतका गुण जिवाना विषका मारना और मदका मतवाला करना है कि जिसमें मनुष्य झुक २ कर जहाँ तहाँ गिरता पड़ता है अतएव श्वेत वर्णन करना योग्य ठहरा कि जिसका गुण प्राणी आदिको जिवाना और प्रसन्न करना है ॥

(४) यहाँ यह भाव निकलता है-जैसे आतपसे सताई चकोरीको शरदके चन्द्रकी शीतल किरणोंको देख देहकी सुध नहीं रहती वैसेही पिताका कठिन प्रण मानो सूर्य है उससे दुखी हुई जानकीजीको शरदचन्द्रके समान रामचन्द्रके स्वरूपरूपी किरणको देख शरीरकी सुध बुध जाती रही.

लोचन मगु रामहिं उर आनी ❀ दीन्हे पलक कपाट सयानी ॥ ७ ॥
जब सिय सखिन्ह प्रेमबस जानी ❀ कहि न सकहिं कछु मन सकुचानी ॥८॥

(फिर सखियोंकी लाजसे) चतुर (जानकी) ने रामचन्द्रको नेत्रोंके मार्गसे हृदयमें लाकर पलकरूपी किवाड़ बन्दकर लिये ॥ ७ ॥ जब सखियोंने सीताजीको प्रेमके वश जाना तो कुछ कह नहीं सकीं पर मनही मनमें सकुचाईं ॥ ८ ॥

दो०–लताभवनते प्रगट भए, अवसर दोउ भाई ॥ ❀
निकसे जनु जुग विमल विधु, जलदपटल बिलगाई ॥२७१॥ ❀

उस समय दोनों भाई लताकुंजसे ऐसे प्रकट हुए मानों मेघरूपी किवाड़ोंको खोलकर दो निर्मल चन्द्रमा निकले हों ॥ २७१ ॥

चौ०–सोभासींव सुभग दोउ बीरा ❀ नील पीत जलजातसरीरा ॥ १ ॥
काकपक्ष शिर सोहत नीके ❀ गुच्छा बिचबिच कुसुमकलीके ॥ २ ॥

दोनों वीर रामलक्ष्मण बड़े सुन्दर और शोभाकी सीमा है और उनका नीले और पीले कमलके समान शरीर है ॥ १ ॥ शिरपर सुन्दर अलकैं शोभायमान हैं, जिनके बीच २ में फूलोंकी कलियोंके गुच्छे गुथे हैं ॥ २ ॥

भालतिलक स्रमबिंदु सुहाए ❀ स्रवन सुभग भूषन छबि छाए ॥ ३ ॥
विकट भृकुटि कच घूंघरवारे ❀ नवसरोजलोचन रतनारे ॥ ४ ॥

मस्तकपर तिलक और पसीनेकी(1) बूँदें शोभायमान हैं और कानोंमें सुन्दर भूषण अर्थात् मकराकृति कुंडलोंकी शोभा छा रही है ॥३॥ टेढ़ी भौंहैं घूंघरवाले बाल, नये कमलके समान रतनारे नेत्र हैं ॥ ४ ॥

चारु चिबुक नासिका कपोला ❀ हासबिलास लेत जनु मोला ॥ ५ ॥
मुखछबि कहि न जाइ मोहिं पाहीं ❀ जेहि बिलोकि बहु काम लजाहीं ॥ ६ ॥

जिनके ठोड़ी नाक और गाल सुन्दर हैं, और उनके हँसनेका आनन्द मानो (मनको) मोल लिये लेता है ॥ ५ ॥ मुखकी शोभा मुझसे कही नहीं जाती, जिसे देख बहुतसे कामदेव लजाते हैं ॥ ६ ॥

उर मणिमाल कंबु कलग्रीवा ❀ कामकलभकर भुजबल सींवा ॥ ७ ॥
सुमनसमेत वामकर दोना ❀ साँवर कुँवर सखी सुठि लोना ॥ ८ ॥

हृदयमें मणियोंकी माला पड़ी है और शंखसमान (तीन रेखायुक्त) सुन्दर कंठ है और हाथीके बच्चेकी सूंडके समान और बलकी सीमा ऐसी सुन्दर भुजा हैं ॥ ७ ॥ फूलोंसहित बाँये हाथमें दोनें लिये हैं (और उन दोनों कुमारोंमें) हे सखी! साँवला कुँवर अत्यन्त सलोना है ॥ ८ ॥

दो०–केहरिकटि पटपीतधर, सुखमा सीलनिधान ॥ ❀
देखि भानुकुलभूषनहिं, बिसरा सखिन अपान ॥ २७२ ॥ ❀

सिंहकीसी कमरमें पीताम्बर धारण किये शोभा और शीलके धाम, ऐसे सूर्यवंशके आभूषण (रामचन्द्र) को देखकर सखियां अपने आपको भूल गईं ॥ २७२ ॥

चौ०–धरि धीरज इक सखी सयानी ❀ सीतासन बोली गहि पानी ॥ १ ॥
बहुरि गौरिकर ध्यान करेहू ❀ भूपकिसोर देखि किन लेहू ॥ २ ॥

---

(1) पसीनेकी बूंदसे यह अभिप्राय है कि बड़े कोमल अंगवाले हैं ॥

एक चतुर सखी धीरज धर सीताजीसे हाथ[1] पकड़कर बोली ॥ १ ॥ पार्वतीका ध्यान फिर कर लेना पहिले राजाके बालकोंको क्यों नहीं देख लेती हो ॥ २ ॥

सकुचि सीय तब नयन उघारे ❀ संमुख दोउ रघुसिंह निहारे ॥ ३ ॥
नखसिख देखि रामकी सोभा ❀ सुमिरि पिताप्रन मन अति छोभा ॥ ४ ॥

तब सीताजीने सकुचकर[2] नेत्र खोले तौ सामने रघुवंशमें सिंहरूप दोनों (रामलक्ष्मण) देखे ॥ ३ ॥ नखसे चोटीतक रामचन्द्रजीकी शोभा देख, पिताके प्रणका स्मरण कर मन बहुत दुखी हुआ (इस संदेहसे कि ये धनुष तोड़ने योग्य नहीं है) ॥ ४ ॥

परबस सखिन लखी जब सीता ❀ भयउ गहरु सब कहहिं सभीता ॥ ५ ॥
पुनि आउब इहि बिरियाँ काली ❀ अस कहि मन बिहँसी इक आली ॥ ६ ॥

जब सखियोंने जानकीको परवश देखा तौ सब डरकर कहने लगीं कि बड़ी देर होगई ॥ ५ ॥ कल इसी बिरियाँ फिर आना ऐसे कह एक सखी मनमें बड़ी हँसी ॥ ६ ॥

गूढ़ गिरा सुनि सिय सकुचानी ❀ भयउ बिलंब मातु भय मानी ॥ ७ ॥
धरि बड़ि धीर रामउर आनी ❀ फिर आपन प्रन पितुबश जानी ॥ ८ ॥

भीतरी[3] बाणी सुनकर सीताजी सकुचीं और देर हुई इस कारण माताका भय माना ॥ ७ ॥ और बड़ा धीरज धर रामचन्द्रजीको हृदयमें लाई और अपनी पैज पिताके आधीन जानी ॥ ८ ॥

दो०-देखन मिसु मृग बिहँग तरु, फिरै बहोरि बहोरि ॥ ❀
निरखि निरखि रघुबीरछबि, बाढ़ी प्रीति न थोरि ॥ २७३ ॥ ❀

हिरण, पक्षी व वृक्षोंको देखनेके बहानेसे वारंवार लौटती हैं और रामचन्द्रजीकी शोभाको देख २ कर बड़ी प्रीति बढ़ी ॥ २७३ ॥

चौ०-जानि कठिन शिवचाप बिसूरति ❀ चली राखि उर स्यामलमूरति ॥ १ ॥
प्रभु जब जात जानकी जानी ❀ सुखसनेहसोभागुनखानी ॥ २ ॥

महादेवके धनुष टूटनेको कठिन जान हृदयमें साँवली मूरतको रखकर चलीं ॥ १ ॥ जब रामचन्द्रजीने सुख, प्रीति, और गुणकी खानि जानकीको जाते जाना ॥ २ ॥

परम प्रेममय मृदु मसि कीन्ही ❀ चारु चित्तभीतर लिखि लीन्ही ॥ ३ ॥
गई भवानीभवन बहोरी ❀ बंदि चरन बोली कर जोरी ॥ ४ ॥

तब अधिक प्रीतिकी कोमल स्याही बनाय अपने सुन्दर चित्तके भीतर लिख लीनी ॥ ३ ॥ फिर सीता पार्वतीके मंदिरमें गईं और उनके चरणोंको दंडवत कर हाथ जोड़कर बोलीं-॥ ४ ॥

जय जय जय गिरिराजकिशोरी ❀ जय महेशमुखचंद्रचकोरी ॥ ५ ॥
जय गजबदन षडानन माता ❀ जगतजननि दामिनि द्युति गाता ॥ ६ ॥

---

(१) हाथ पकड़नेका यह आशय है कि, जानकीजी नेत्र बंद किये खड़ी हैं, जैसा कह आये हैं कि "दीने पलक कपाट सयानी" ॥ (२) सकुचनेका यह कारण है कि सखीको भेद प्रकट हो गया ॥ (३) यहां गूढ़ गिरासे यही आशय है कि बात चलनेकी कहनी चाहिये थी सो नहीं कही, व्यंग्य वचन कहा कि कल फिर आना इसके और २ अर्थ भ्रमोत्पादक हैं ॥

हे हिमालयनन्दिनि[१] ! तुम्हारी जय हो और हे महादेवके मुख[२]रूपी चंद्रको चकोरीरूप ! तुम्हारी जय हो ॥५॥ हे गणेशजी और स्वामीकार्त्तिककी माता ! और हे संसारके उत्पन्न करनेवाली ! हे विजलीके समान कांतिमान शरीरवाली ! तुम्हारी जय हो ॥ ६ ॥

नहिं तव आदि मध्य अवसाना ❀ अमित प्रभाव वेद नहिं जाना ॥ ७ ॥
भव भव विभव पराभवकारिनि ❀ विश्वविमोहनि स्ववशविहारिनि ॥ ८ ॥

तुम्हारा आदि मध्य और अंत नहीं है और तुम्हारे अतुल प्रभावको वेदभी नहीं जानते ॥ ७ ॥ तुम संसारको उत्पन्न, पालन और नाश करनेवाली हो और संसारको मोहित करनेवाली और अपने आधीन आनन्द करनेवाली हो ॥ ८ ॥

दो०-पतिदेवता सुतीयमहँ, मातु प्रथम तव रेख ॥ ❀
महिमा अमित न कहि सकहिं, सहस शारदा शेस ॥२७४॥ ❀

हे माता ! पतिव्रता सुंदर स्त्रियोंमें पहले तुम्हारी गिनती है और तुम्हारी अपार महिमाको हजार हजार सरस्वती और शेषजी भी नहीं कह सकते हैं ॥ २७४ ॥

चौ०-सेवत तोहिं सुलभ फलचारी ❀ वरदायिनि त्रिपुरारिपियारी ॥ १ ॥
देवि पूजि पदकमल तुम्हारे ❀ सुर नर मुनि सब होहिं सुखारे ॥ २ ॥

हे महादेवके प्यारी ! हे वरके देनेवाली ! तुम्हारी सेवा करनेसे चारों फल अर्थात् धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष सुगम हैं ॥ १ ॥ हे देवि ! तुम्हारे चरणकमलोंके पूजनेसे देवता, मनुष्य और मुनि सब सुखी होते हैं ॥ २ ॥

मोर मनोहर जानहु नीके ❀ बसहु सदा उरपुर सबहीके ॥ ३ ॥
कीन्हेउँ प्रगट न कारनतेही ❀ अस कहि चरन गहे वैदेही ॥ ४ ॥

मेरी कामनाको तुम अच्छी भाँति जानती हो. क्योंकि सबके हृदयरूपी नगरमें सदा बसती हो ॥ ३ ॥ इसलिये मैंने कारण प्रत्यक्ष नहीं किया. ऐसा कहके जानकीजीने चरण पकड़ लिये ॥ ४ ॥

विनयप्रेमबस भई भवानी ❀ खसी माल मूरति मुसुकानी ॥ ५ ॥
सादर सिय प्रसाद उर धरेऊ ❀ बोली गौरि हरष हिय भरेऊ ॥ ६ ॥

जब पार्वतीजी (सीताजीके) विनतीसे प्रेमके वश हुईं तौ चढ़ाई हुई माला शिर[३]परसे गिर

---

(१) गिरिराजकिशोरीका तात्पर्य यह है कि जैसा तुम्हारा पिता परोपकारी है यथा "संत विटप सरिता गिरिधरनी । परहित हेतु सबनकी करनी" वैसीही तुमको होना चाहिये ॥ (२) अभिप्राय यह है कि शंकरके मुखचन्द्रसे जो रामतत्त्व निकलता है उसे तुम चकोरीरूप हो कर पान करती हो, अथवा जैसी तुम महादेवजीके मुखचन्द्रकी चकोरी हो ऐसीही मुझे राममुखचन्द्रकी चकोरी करो ॥ (३) देवतापर जो पुष्पादि चढ़ाये जाते हैं उसमेंसे यदि गिर पड़ें तौ अच्छा शकुन होता है और ऐसा विचार किया जाता है कि देवताने प्रसाद दिया है ॥ औंर मुसक्याईं इसलिये कि जिन सीताजीका ऐसा प्रभाव है कि "उपजहिं जासु अंश गुनखानी । अगनि उमा रमा ब्राह्मानी ॥" सो मुझसे वर याचना करने आई हैं ॥ यह अर्थ यहां पूर्णरीतिसे घटता है, परन्तु लोगोंने कपोलकल्पित अर्थोंसे जो भ्रमा रक्खा है कि "सीताजी जो पहिरानेकेलिये माला लाईथीं सो हाथसे खिसल पड़ी यह देख पार्वतीजी हंसीं, कि मन तो रामजीमें धरा है" अथवा "ख" कहिये आकाश "सी" कहिये समान जो नील कमलकी माला हाथमेंसे खिसकी उसे देख हँसी कि जैसी माला है उसी वर्णका वर चाहती हैं, ऐसे २ अनेक मिथ्या अर्थ लगाये हैं. तहाँ कहते हैं कि वह अर्थ कहांसे लाये-"हाथमें माला कहांथी जो गिरती ? भला इसे ऊपरकी चौपाई तौ पढ़ो कि" "कीन्हेउ प्रगट न कारन तेही । अस कहि चरन

पड़ी और मूर्त्ति हँसीं ॥ ५ ॥ सीताजीने प्रसाद (की माला) को आदरसहित हृदयमें धारण किय तौ पार्वतीका हृदय आनन्दसे भर गया और बोलीं ॥ ६ ॥

सुनु सिय सत्य असीस हमारी ❀ पूरहिं मनकामना तुम्हारी ॥ ७ ॥
नारदबचन सदा सुचि साँचा ❀ सो बर मिलिहि जाहिं मन राँचा ॥ ८ ॥

हे सीताजी ! हमारे सच्चे आशीर्वादको सुनो. तुम्हारा मनोरथ सिद्ध होगा ॥ ७ ॥ नारदजीका पवित्र वचन सदाही सत्य होता है इसलिये जो मनमें विचारा है वही वर मिलैगा ॥ ८ ॥

छं०–मन जाहि राचेउ मिलिहि सो वर सहज सुंदर साँवरो । ❀
करुनानिधान सुजान शील सनेह जानत रावरो ॥ ❀
यहि भाँति गौरि असीस सुनि सिय सहित हिय हरषित अली । ❀
तुलसी भवानिहिं पूजि पुनि पुनि मुदित मन मंदिर चली ॥३४॥ ❀

जिसमें मन लगा है वही स्वभावसे सुंदर साँवला वर मिलैगा. क्योंकि करुणाके समुद्र, शीलवान, चतुर, (रामचन्द्र) तुम्हारे स्नेहको जानते हैं, इस भांति पार्वतीजीकी अशीशको सुनकर जानकीजी सखियोंसमेत हृदयमें प्रसन्न हुई. तुलसीदास कहते हैं कि, वारंवार पार्वतीजीको पूजकर मनमें प्रसन्न होती हुई अपने स्थानको चलीं ॥ ३४ ॥

सो०–जानि गौरि अनुकूल, सिय हिय हरष न जाय कहि ॥ ❀
मंजुल मंगलमूल, वामअंग फरकन लगे ॥ ३४ ॥ ❀

पार्वतीजीको अनुकूल सहायक जानकर सीताजीके मनका आनन्द कहा नहीं जाता; आनन्द के करनेवाले और कोमल वाम अंग फड़कने लगे ॥ ३४ ॥

चौ०–हृदय सराहत सीय लुनाई ❀ गुरुसमीप गवने दोउ भाई ॥ १ ॥
राम कहा सब कौशिक पाहीं ❀ सरल सुभाव छुआ छल नाहीं ॥ २ ॥

जानकीजीकी शोभाको मनमें सराहते हुये दोनों भाई गुरुके पास गये ॥१॥ रामचन्द्रजीने सब विश्वामित्रजीसे कह दिया (क्योंकि रामजीका) सुभाव सीधा है और कपट तौ उनको छू नहीं गया है ॥२॥

सुमन पाइ मुनि पूजा कीन्ही ❀ पुनि असीस दोउ भाइन्ह दीन्ही ॥ ३ ॥
सुफल मनोरथ होंय तुम्हारे ❀ रामलषन सुनि भए सुखारे ॥ ४ ॥

मुनि (विश्वामित्र) ने फूल पाकर पूजन किया फिर दोनों भाईयोंको आशीर्वाद दिया कि ॥ ३ ॥ तुम्हारी मनकी कामनायें सिद्ध हों, यह सुनकर रामचन्द्र और लक्ष्मण सुखी हुये ॥ ४ ॥

करि भोजन मुनिवर विज्ञानी ❀ लगे कहन कछु कथा पुरानी ॥ ५ ॥
बिगतदिवस मुनि आयसु पाई ❀ संध्या करन चले दोउ भाई ॥ ६ ॥

बड़े ज्ञानी, मुनियोंमें श्रेष्ठ (विश्वामित्र) भोजन कर कुछ पुरानी कथा कहने लगे ॥ ५ ॥ दिन वीतनेपर मुनीश्वरकी आज्ञा पाकर दोनो भाई (रामलक्ष्मण) संध्या करने चले ॥ ६ ॥

गहे वैदेही" सीताजीके हाथ तौ पार्वतीके चरनोंमें लगे थे, जिस समय माला खसीथी फिर यह समय माला चढ़ानेका कहां था ? पूजन तौ पहिलेही कर चुकीथीं यथा "पूजा कीन्ह अधिक अनुरागा। निज अनुरूप सुभग वर मांगा" मूर्त्तिका हँसनाआदि शकुन वाराही संहितामें अशुभ लिखे हैं परन्तु सहसा अकारण हो तो अशुभ है, यहाँ तौ सीताजीके प्रेमवश होकर हँसी हैं इसलिये इसकी अशुभमें गिनती नहीं है.

प्राचीदिसि ससि उगेउ सुहावा ❀ सियमुखसरिसदेखि सुख पावा ॥ ७ ॥
बहुरि बिचार कीन्ह मनमाहीं ❀ सीयबदनसम हिमकर नाहीं ॥ ८ ॥

पूर्व दिशामें सुन्दर चन्द्रमा उदय हुआ, उसे सीताजीके मुखके समान देखकर आनन्द पाया ॥७॥ फिर मनमें विचार किया कि, सीताजीके मुखके समान चन्द्रमा नहीं हो सक्ता, क्योंकि ॥ ८ ॥

दो०–जन्म सिंधु पुनि बंधु विष, दिनमलीन सकलंक ॥ ❀
सियमुखसमता पाव किमि, चंद्र बापुरो रंक ॥ २७५ ॥ ❀

एक तौ इसका जन्म समुद्रसे, दूजे विषका भाई, पुनि दिनमें कांतिरहित और कलंकसहित है– तौ कहो, बिचारा दरिद्री चन्द्रमा सीताजीके मुखकी बराबरी कैसे पासक्ता है ॥ २७५ ॥

चौ०–घटै बढ़ै बिरहिनि दुखदाई ❀ ग्रसै राहु निज संधिहि पाई ॥ १ ॥
कोकसोकप्रद पंकजद्रोही ❀ अवगुन बहुत चंद्रमा तोही ॥ २ ॥

(चन्द्रमा) घटता बढ़ता और वियोगियोंको दुःख देनेवाला है और उसको राहुभी अपनी संधि पाकर ग्रसता है (अर्थात् ग्रहण लगता है) ॥ १ ॥ और चकवाओंको दुःख देनेवाला है और कमलका बैरी है इसलिये हे चन्द्रमा ! तुझमें बहुत अवगुण हैं ॥ २ ॥

बैदेहीमुख पटतर दीन्हे ❀ होव दोष बड़ अनुचित कीन्हे ॥ ३ ॥
सियमुखछबि बिधुव्याज बखानी ❀ गुरुपहँ चले निसा बड़ि जानी ॥ ४ ॥

सीताजीके मुखकी समानता देना बड़ा अनुचित करना है और ऐसा करनेमें बड़ा दोष है ॥ ३ ॥ सीताजीके मुखकी शोभाको चन्द्रमाके बहानेसे वर्णन कर और बड़ी रात जान गुरुके पास चले ॥ ४ ॥

करि मुनिचरनसरोज प्रनामा ❀ आयसु पाइ कीन्ह बिस्रामा ॥ ५ ॥
बिगतनिसा रघुनायक जागे ❀ बंधु बिलोकि कहन अस लागे ॥ ६ ॥

मुनि (विश्वामित्र) के चरणकमलोंको प्रणाम किया (और फिर उनकी) आज्ञा पाकर विश्राम किया ॥५॥ रात्रिके बीतनेपर रामचन्द्रजी जागे और भाईको देखकर यों कहने लगे ॥ ६ ॥

उगे अरुन अवलोकहु ताता ❀ पंकजकोकलोकसुखदाता ॥ ७ ॥
बोले लषन जोरि युगपानी ❀ प्रभु प्रभावसूचक मृदु बानी ॥ ८ ॥

हे प्यारे ! देखो अरुणोदय हुआ जो कि, कमल चकवा चकवी और संसारको सुख देनेवाला है ॥ ७ ॥ लक्ष्मणजी दोनों हाथ जोड़कर भगवानके प्रभावको जतानेवाली कोमलवाणी बोले ॥ ८ ॥

दो०–अरुणोदय सकुचे कुमुद, उडुगनजोति मलीन ॥ ❀
तिमि तुम्हार आगमन सुनि, भए नृपति बलहीन ॥ २७६ ॥ ❀

(हे महाराज !) जैसे अरुणोदय होनेसे कुमुद बन्द होगये, और तारागणोंकी ज्योति धूँधली होगई, तैसेही तुम्हारा आना सुनकर राजा निर्बल होगये ॥ २७६ ॥

चौ०–नृप सब नखत करहिं उजियारी ❀ टारि न सकहिं चापतम भारी ॥ १ ॥
कमल कोक मधुरकर खग नाना ❀ पे सकल निसा अवसाना ॥ २ ॥

सब राजा मानों नक्षत्ररूप हैं, ये उजेला कर सक्ते हैं किन्तु धनुष जो मानों घोर अंधकार है उसे दूर नहीं कर सक्ते· अर्थात् जैसे अंधकारको चन्द्रमाही दूर कर सक्ता है तारे नहीं कर सक्ते उसी प्रकार धनुष आप तोड़ेंगे, राजा नहीं तोड़सक्ते ॥ १ ॥ और जैसे कमल चकवा भौरे और बहुतसे पक्षी रात्रिके बीतनेपर सब प्रसन्न हुये ॥ २ ॥

ऐसेहि प्रभु सब भक्त तुम्हारे ❀ होइहहिं टूटे धनुष सुखारे ॥ ३ ॥
उदयभानु बिनुस्रम तम नासा ❀ दुरे नखत जग तेज प्रकासा ॥ ४ ॥

हे स्वामी! ऐसेही धनुष टूटनेसे तुम्हारे सब भक्त सुखी होंगे ॥ ३ ॥ सूर्यके उदय होनेसे विनाही परिश्रमके अंधकार नाश होता है नक्षत्र छिप जाते हैं और संसारमें तेजका उजेला होजाता है ॥ ४ ॥

रवि निजउदयब्याज रघुराया ❀ प्रभुप्रताप सब नृपन दिखाया ॥ ५ ॥
तव भुजबलमहिमाउदघाटी ❀ प्रगटी धनुविघटनपरिपाटी ॥ ६ ॥

हे रामचन्द्र! सूर्यने अपने उदय होनेके वहाने आपका प्रताप सव राजाओंको दिखलाया है, अर्थात् जैसे मैंने उदय होकर अंधकार नाश किया वैसेही रामचन्द्र धनुष तोड़ैंगे ॥ ५ ॥ आपकी भुजाओंके वलकी महिमा उदयाचलकी घाटीके समान अपार है, उसे प्रगट करनेके लिये यह धनुष तोड़नेकी रीति चली है, अर्थात् धनुष टूटनेपर सवको प्रगट हो जायगा कि आपकी भुजाओंमें कितना वल है ॥ ६ ॥

बंधुवचन सुनि प्रभु मुसकाने ❀ होइ सुचि सहज पुनीत अन्हाने ॥ ७ ॥
नित्यक्रिया करि गुरुपहँ आए ❀ चरनसरोज सुभग सिर नाए ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजी भाईके वचन सुन मुसकुराये और फिर स्वभावसे पवित्र ऐसे रामजी शुद्ध होकर नहाये ॥ ७ ॥ नित्य कर्म (संध्या आदि) कर गुरुके पास आये और उनके सुंदर चरणकमलोंको माथा नवाया ॥ ८ ॥

शतानंद तब जनक बुलाए ❀ कौशिकमुनिपहँ तुरत पठाए ॥ ९ ॥
जनकबिनय तिन आय सुनाई ❀ हरषे बोलि लिए दोउ भाई ॥ १० ॥

उसी समय जनकने शतानन्दको वुलाया और तुरन्त विश्वामित्र मुनिके पास भेजा ॥९॥ उन्होंने आकर जनककी विनती सुनाई तौ (विश्वामित्रने) प्रसन्न हो दोनों भाइयोंको बुलालिया ॥ १० ॥

दो०–शतानंदपद वंदि प्रभु, बैठे गुरुपहँ जाइ ॥
चलहु तात मुनि कहेउ तब, पठवा जनक बुलाइ ॥ २७७ ॥

प्रभु (रामचंद्र लक्ष्मण) शतानन्दके चरणोंको वन्दनाकर गुरु (विश्वामित्र) के पास जा बैठे। तब मुनिने कहा हे प्यारे! चलो जनकने बुलावा भेजा है ॥ २७७ ॥

चौ०–सीयस्वयंवर देखिय जाई ❀ ईस काहिधौं देहि बड़ाई ॥ १ ॥
लषन कहा जसभाजन सोई ❀ नाथ कृपा तव जापर होई ॥ २ ॥

चलकर सीताजीका स्वयंवर देखना चाहिये. देखैं महादेव किसको बड़ाई दें ॥ १ ॥ लक्ष्मणजीने कहा हे स्वामी! जिसपर आपकी कृपा होगी वही बड़ाईका पात्र होगा (अर्थात् वही धनुष तोड़ेगा) ॥ २ ॥

हरषे सुनि सब मुनिवर बानी ❀ दीन्हि असीस सबहिं सुख मानी ॥ ३ ॥
पुनि मुनिवृंदसमेत कृपाला ❀ देखन चले धनुषमखशाला ॥ ४ ॥

सब मुनि सुन्दर वाणीको सुनकर प्रसन्न हुये और सुख मानकर सबने आशीर्वाद दिया ॥ ३ ॥ फिर रामचन्द्र मुनियोंके समाजसहित धनुषयज्ञकी शालाको देखने चले ॥ ४ ॥

---

(१) भक्त चार प्रकारके हैं यथा—आरत जैसे जानकी; २ जिज्ञासु जैसे विश्वामित्र ३ अर्थी जैसे जनक आदि, ४ ज्ञानी जैसे विश्वामित्र. (२) कदाचित् रामजी यह जानें कि लक्ष्मण तौ अपना भाई जानकर डींगें मारते हैं, धनुषको तौ नजाने कौनसा राजा तोड़ैगा, तहां लक्ष्मणजीने हठपूर्वक यह कहा है ॥

रंगभूमि आए दोउ भाई ❀ असि सुधि सब पुरवासिन पाई ॥ ५ ॥
चले सकल गृहकाज विसारी ❀ बालक जुवा जरठ नरनारी ॥ ६ ॥

दोनों भाई रंगभूमि (देखने) आये ये समाचार सब नगरनिवासियोंने पाये ॥ ५ ॥ तो सब बालक, जवान, बूढ़े, लोगलुगाई अपने २ घरके कामको छोड़कर चले ॥ ६ ॥

देखी जनक भीर भइ भारी ❀ सुचि सेवक सब लिए हँकारी ॥ ७ ॥
तुरत सकल लोगनपहँ जाहू ❀ आसन उचित देहु सबकाहू ॥ ८ ॥

जनकने देखा कि भारी भीर हुई तौ सब चतुर सेवकोंको बुला लिया ॥ ७ ॥ (और कहा) जल्दी सब लोगोंके पास जाओ और सबको यथोचित आसन दो ॥ ८ ॥

दो०–कहि मृदु बचन विनीत विन, बैठारे नरनारि ॥ ❀
उत्तम मध्यम नीच लघु, निज निज थल अनुहारि ॥२७८॥ ❀

उन्होंने विनयसे मीठे वचन कहकर उत्तम (श्रेष्ठ) मध्यम (बीचके) नीचे और लघु (छोटे) स्त्रीपुरुषोंको अपनी २ जगहके अनुसार बिठाया ॥ २७८ ॥

चौ०–राजकुँवर तेहि अवसर आए ❀ मनहुँ मनोहरता छवि छाए ॥ १ ॥
गुणसागर नागर वर वीरा ❀ सुन्दर स्यामल गौर सरीरा ॥ २ ॥

उस समय राजकुमार आये तौ मानों सुन्दरताकी छवि छागई ॥ १ ॥ गुणके समुद्र, चतुर, और बाँके वीर हैं और उनका सुन्दर साँवला और गोरा शरीर है ॥ २ ॥

राजसमाज विराजत रूरे ❀ उडुगणमहँ जनु जुगविधु पूरे ॥ ३ ॥
जिनके रही भावना जैसी ❀ प्रभुमूरति देखी तिन तैसी ॥ ४ ॥

राजाओंके समाजमें ऐसे सुन्दर विराजमान हैं जैसे तारागणोंके बीचमें दो पूरे चन्द्रमा ॥३॥ जिनकी जैसी भावना थी उन्होंने रामचन्द्रजीकी मूर्त्ति वैसीही देखी ॥ ४ ॥

देखहिं भूप महारणधीरा ❀ मनहुँ बीररस धरे शरीरा ॥ ५ ॥
डरे कुटिल नृप प्रभुहिं निहारी ❀ मनहुँ भयानक मूरति भारी ॥ ६ ॥

बड़े रणधीर राजा ऐसे देखते हैं मानो वीर[2]रस शरीर धारण किये है ॥ ५ ॥ छोटे राजा लोग, रामचन्द्रको देखकर ऐसे डरे मानो यह बड़ी [3]भयानक मूर्ति कहाँसे आई ॥ ६ ॥

रहे असुर छल जो नृपवेषा ❀ तिन प्रभु प्रगट कालसम देषा ॥ ७ ॥
पुरवासिन देखे दोउ भाई ❀ नरभूषन लोचनसुखदाई ॥ ८ ॥

जो राक्षस कपटसे राजाओंके भेषमें थे उन्होंने भगवान्को प्रत्यक्षमें कालके समान देखा ॥ ७ ॥ नगरके रहनेवालोंने दोनों भाइयोंको मनुष्योंके आभूषण और नेत्रोंके सुख देनेवाले देखे ॥ ८ ॥

दो०–नारि विलोकहिं हरषि हिय, निज निज रुचि अनुरूप ॥ ❀
जनु सोहत शृंगार धरि, मूरति परम अनूप ॥ २७९ ॥ ❀

---

(१) आगेकी चौपाईसे नवरसका वर्णन चलैगा. (२) वीररस है. (३) भयानक रस. (४) रौद्र रस. (५) शृंगार रसकी कली है. आगेके दोहेमें इसका खिलाव है.

स्त्रियां मनमें प्रसन्न हो अपनी २ इच्छानुसार[1] देखती हैं. मानों शृंगाररस[2] अत्यंत सुन्दर मूर्ति धारण किये शोभायमान है ॥ २७९ ॥

चौ०–बिदुषन प्रभु बिराटमय दीसा ❀ बहुमुखकरपदलोचनसीसा ॥ १ ॥
जनकजाति अवलोकहिं कैसे ❀ सजन सगे प्रिय लागहिं जैसे ॥ २ ॥

पंडितोंको भगवान् विराट्[3] स्वरूप दिखाई दिये जिनके बहुतसे मुख हाथ चरण नेत्र और मस्तक हैं ॥ १ ॥ जनककी जातिके लोग कैसे देखते हैं जैसे अपने सजन सगे प्यारे लगते हैं ॥ २ ॥

सहितबिदेह बिलोकहिं रानी ❀ सिसुसम प्रीति न जाति बखानी ॥ ३ ॥
योगिन परमतत्त्वमय भासा ❀ संत शुद्ध मन सहजप्रकासा ॥ ४ ॥

रानी (राजा) जनकसहित बालकके[4] समान देखती हैं कि जिसका प्रेम वर्णन नहीं किया जाता ॥ ३ ॥ योगियोंको परम तत्त्वमय (परमेश्वर) दिखाई दिये, और संतोंके शुद्ध मनमें स्वभावसेही प्रकाश[5] करनेवाले मालूम हुये ॥ ४ ॥

हरिभक्तन देखेउ दोउ भ्राता ❀ इष्टदेवइव सब सुखदाता ॥ ५ ॥
रामहिं चितव भाव जेहि सीया ❀ सो सनेह सुख नहिं कथनीया ॥ ६ ॥

भगवान्[6]के भक्तोंने दोनों भाइयोंको इष्टदेवके समान सबको सुख देनेवाला देखा ॥५॥ जानकी[7]-जी जिस भावसे रामचन्द्रजीको देखती थीं वह प्रेम मुखसे कहा नहीं जासक्ता है ॥ ६ ॥

उर अनुभवति न कहि सक सोऊ ❀ कवन प्रकार कहै कबि कोऊ ॥ ७ ॥
जेहि बिधि रहा जाहि जस भाऊ ❀ तेहि तस देखेउ कोसलराऊ ॥ ८ ॥

जो अपने हृदयमें अनुभव करते हैं वेही नहीं कहसक्ते, तौ कोई कवीश्वर किस भाँति कहै[8]? ॥ ७ ॥ जैसा जिसको जिस भांतिकी भाव था उसने रामचन्द्रजीको वैसाही देखा ॥ ८ ॥

दो०–राजत राजसमाजमहँ, कोसलराजकिशोर ॥ ❀
सुंदर स्यामल गौरतनु, बिश्वबिलोचनचोर[9] ॥ २८० ॥ ❀

अयोध्याके राजा (दशरथ) के कुमर सुन्दर साँवला और गोरा शरीर धारण किये संसारके नेत्रोंको चुरानेवाले राजाओंके समाजमें शोभायमान हुए ॥ २८० ॥

---

(१) निज २ रुचि अनुरूपके ऊपर एक जगह ये दोहे लिखे हैं—

दोहा—

अनब्याही हुलसें करें ब्याही मीजें हाथ । गौनेकी मौने रहीं देखि रूप रघुनाथ ॥ १ ॥
फिरकीसी थिरकी फिरैं खिरकिन प्रति नवनारि । सिरकिन तजि रघुनाथ छवि निरखैं पलक बिसारि ॥ २ ॥

(२) शृंगाररस. (३) बीभत्सरस है ॥ यथा श्रुतौ–"सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् । स भूमिं विश्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशांगुलम् ॥"

(४) वत्सल अथवा करुणारस. (५) शांतरस (६) अद्भुतरस. (७) हास्यरस. है. (८) कंसकी रंगभूमिमें जब कृष्णजी गये उनकोभी इसी प्रकार मनुष्य आदिकोंने देखा ।

श्लोक.

मल्लानामशनिर्नृणां नरवरः स्त्रीणां स्मरो मूर्तिमान् गोपानां स्वजनोऽसतां क्षितिभुजां शास्ता स्वपित्रोः शिशुः ।
मृत्युर्भोजपतेर्विराडविदुषां तत्त्वं परं योगिनां वृष्णीनां परदेवतेति विदितो रंगं गतस्साग्रजः ॥ १ ॥

(९) चोर शब्दका तात्पर्य यह है कि, संसारकी दृष्टिको अपनी मोहिनी मूर्तिकी ओर आकर्षण करनेवाले, क्योंकि चोर शब्दका यथार्थ अर्थ करनेसे देवतामें दोष आता है.

चौ०-सहज मनोहर मूरति दोऊ ❀ कोटिकाम उपमा लघु सोऊ ॥ १ ॥
सरदचंदनिंदक मुख नीके ❀ नीरजनयन भावते जीके ॥ २ ॥

दोनों मूर्तियाँ स्वभावहीसे मनमोहिनी थीं करोड़ों कामदेवोंकी उपमाभी उनके लिये छोटी है ॥ १ ॥ शरदके चन्द्रमाकी निन्दा करनेवाला सुंदर मुख और नील कमलका निरादर करनेवाले नेत्र मनको प्यारे लगते थे ॥ २ ॥

चितवनि चारु मारमदहरनी ❀ भावत हृदय जाय नहिं बरनी ॥ ३ ॥
कल कपोल श्रुति कुंडल लोला ❀ चिबुक अधर सुंदर मृदु बोला ॥ ४ ॥

कामदेवके घमंडको हरनेवाली[1] उनकी सुन्दर चितवन मनमें तौ प्रकाशित होती है, परंतु उसका वर्णन नहीं किया जाता ॥३॥ सुन्दर (गोल २ चिकने २) गाल थे और कानोंमें हिलतेहुए (मकराकृति) कुंडल धारण किये थे और जिनकी ठोड़ी और होठ सुन्दर थे और मीठी बोली थी ॥ ४ ॥

कुमुदबंधुकर निंदक हासा ❀ भृकुटी बिकट मनोहर नासा ॥ ५ ॥
भाल बिसाल तिलक झलकाहीं ❀ कच बिलोकि अलिअवलि लजाहीं ॥ ६॥

उनका मुसकुराना चन्द्रमाकी किरणोंकीभी[2] निन्दा करनेवाला था और टेढ़ी भौंहें और मनके हरनेवाली नाक थी ॥ ५ चौड़े माथेपर तिलक शोभायमान था और बालोंको देखकर भौंरोंकी कतारें भी लजाती थीं ॥ ६ ॥

पीत चौतनी सिरन सुहाई ❀ कुसुमकली बिचबीच बनाई ॥ ७ ॥
रेखा रुचिर कंबु कलग्रीवा ❀ जनु त्रिभुवनसुखमाकी सीवा ॥ ८ ॥

पीली चौगोसिया टोपियाँ शिरोंपर शोभायमान थीं कि जिनके बीच २ में फूलोंकी कली बनी हुई थीं ॥ ७ ॥ शंखके समान सुन्दर कंठमें प्यारी (तीन) रेखा ऐसी शोभित थीं मानों तीनों लोकोंके सुखकी सीमा हों ॥ ८ ॥

दो०-कुंजरमणि कंठाकलित, उर तुलसीकी माल ॥ ❀
वृषभकंध केहरिठवनि, बलनिधि बाहुबिसाल ॥ २८१ ॥ ❀

हृदयमें गजमुक्ताओंका सुन्दर कंठा था और तुलसीदलयुक्त वनमाला थी, वैलके ऐसे कंधे सिंहकीसी चाल थी; वे बलके समुद्र थे और उनकी भुजा विशाल थी ॥ २८१ ॥

चौ०-कटितूणीर पीतपट बाँधे ❀ कर सर धनुष बामबर काँधे ॥ १ ॥
पीत यज्ञउपवीत सुहाए ❀ नखसिख मँजु महाछबि छाए ॥ २ ॥

कमरमें तरकस और पीताम्बर बांधे हुये हाथमें बाण और सुन्दर बाँये कंधेपर धनुष धरे थे॥१॥ पीले जनेऊ शोभायमान थे और नखसे चोटीतक बड़ी सुंदर शोभा छारही थी ॥ २ ॥

देखि लोक सब भए सुखारे ❀ इकटक लोचन टरहिं न टारे ॥ ३ ॥
हरषजनक देखि दोउ भाई ❀ मुनिपदकमल गहे तब जाई ॥ ४ ॥

(ऐसी शोभाको) देखकर सब लोग सुखी हुये. उनके नेत्र टकोरी बाँधगये जो छुटानेसेभी नहीं छूटते ॥३॥ (राजा) जनक दोनों भाइयोंको देखकर प्रसन्नहुये और फिर जाकर मुनीश्वरके चरणकमल छुये[3]॥४॥

---

(१) कवित्तरामायणे कवित्त.

वरदंतकि पंगतिकुन्दकली अधराधर पल्लव खोलनकी। चपला चमकै घन बीच जगै छवि मोतिन माल अमोलनकी
घुंघरारिलटैंलटकें मुख ऊपर कुंडललोल कपोलनकी। निवछावरि प्राणकरै तुलसी बलिजाउँ लला इन बोलनकी॥ १

(२) कवीश्वर हास्यका श्वेत वर्णन करते हैं इसलिये चन्द्रकिरणकी उपमा दीहै. (३) चरण छूनेसे यह भाव निकला कि आपने रामलक्ष्मणके अच्छे दर्शन कराये.

करि बिनती निजकथा सुनाई ❀ रंगअवनि सब मुनिहि दिखाई ॥ ५ ॥
जहँ जहँ जाहिं कुँवरबर दोऊ ❀ तहँ तहँ चकित चितव सब कोऊ ॥ ६ ॥

विनती करके अपनी कथा सुनाई और सब मुनियोंको रंगभूमि दिखलाई ॥ ५ ॥ दोनों श्रेष्ठ-कुँवर जहाँ २ जाते हैं वहाँ २ सब कोई चकित हो देखता है ॥ ६ ॥

निज निज रुचि रामहिं सब देषा ❀ कोउ न जान कछु मर्मविसेषा ॥ ७ ॥
भलि रचना नृपसन मुनि कहेऊ ❀ राजा मुदित महासुख लहेऊ ॥ ८ ॥

अपनी २ इच्छाके अनुसार सबने रामचन्द्रजीको देखा परन्तु कोई कुछ भीतरा भेद नहीं जानता ॥ ७ ॥ मुनीश्वरने राजासे कहा सजावट तौ अच्छी करी है. (यह सुन) राजाने प्रसन्न हो वड़ा सुख पाया ॥ ८ ॥

दो०-सब मंचनते मंच इक, सुंदर बिसद बिसाल ॥ ❀
मुनिसमेत दोउ बंधु तहँ, बैठारे महिपाल ॥ २८२ ॥ ❀

सब मंचोंसे सुन्दर उज्ज्वल और वड़ा एक सिंहासन था जिसपर राजाने मुनीश्वरसहित दोनों भाइयोंको विठलाया ॥ २८२ ॥

चौ०-प्रभुहिं देखि सब नृप हियहारे ❀ जनु राकेस उदयभए तारे ॥ १ ॥
असि प्रतीति सबके मनमाहीं ❀ राम चाप तोरब सक नाहीं ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीको देख सब राजा हृदयमें ऐसे हारगये जैसे चन्द्रमाके उदय होनेपर तारे (छवि छीन हो जाते हैं) ॥ १ ॥ और सबके मनमें ऐसा भरोसा होगया कि रामचन्द्रजी धनुषको तोड़ेगे इसमें सन्देह नहीं (और बोले कि) ॥ २ ॥

बिनु भंजेहु भवधनुष बिसाला ❀ मेलहिं सीय रामउर माला ॥ ३ ॥
अस बिचार गवनहु घर भाई ❀ जस प्रताप बल तेज गवाँई ॥ ४ ॥

महादेवके बड़े धनुषको विना तोड़ेभी सीताजी रामचन्द्रके गलेमेंही जयमाला डालेंगी ॥ ३ ॥ हे भाई! यों विचार कर यश, प्रताप, बल और तेजको हार कर घर चलो ॥ ४ ॥

---

(१) कथा यह बताते हैं कि राजा इस धनुषकी नित्य पूजा करने कुछ दूर जाया करते थे, एक दिन सीताजी उनके साथ चली गईं और देखकर विचारा कि पिता इसीके लिये नित्य इतनी दूर हैरान होते हैं इसलिये उठाकर घर ले आईं. पुनि दूसरे कल्पकी कथा है कि जहाँ धनुष धरा था वहाँ पूजनेके लिये सीताजीकी माता चौकादिया करती थी, तौ जिस कोनेमें धनुष धराथा वह नित्यविना लिपा रहजाता था. एक दिन सीताकी माताको अटकाव हुआ तौ सीताजीने उसे उठाकर चारों कोने लीप दिये. पुनि तीसरे कल्पकी यह कथा कहते हैं कि एक दिन सीताजी सहलियोंके साथ आखमिचोली खेल रहीं थीं. इनके हाथके झटकेसे धनुष अपनी जगहसे थोड़ा हटगया. इस वातको देख जनकने आश्चर्यकर यह प्रण किया कि हम जानकीजीको उसेही व्याहेंगे कि जो धनुष तोड़ेगा। यह कथा हमारी सुनी है, अभी कहीं इसका लेख नहीं मिला, वाल्मीकि रामायणमें तौ यह लिखा है कि राजानिमिके ज्येष्ठ पुत्र जिनका नाम देवरात था उनको देवताओंनें धरोहरकी तौरपर यह धनुष दियाथा ! उसकी कथाका सार यों है कि पूर्वकालमें शिवजीने दक्षका यज्ञ विध्वंस कर देवताओंसे कहा कि तुम मुझे यज्ञभाग नहीं देते इसलिये इस धनुषसे तुम्हारे शिर काटडालता हूं और जब देवताओंने बड़ी स्तुति करी तब शंकरने अपना धनुष उनको दे दिया सो यह वही धनुष है ॥ जब जनकराजने यज्ञके लिये पृथ्वी खोदी उसमेंसे सीता निकलीं योनिद्वारसे न होनेके कारण राजाने इनका नाम वीर्यशुल्का (अर्थात् पराक्रमही है कर जिसका) धरा। उसके बढ़नेपर राजा उसे मांगने आने लगे उनका बल देखनेके लिये जनकने धनुष आगे धरा और यही प्रतिज्ञा करी कि इस कन्याको उसेही दूँगा जो इसें तोड़ेगा.

विहँसे अपर भूप सुनि बानी ❀ जे अविवेकअंध अभिमानी ॥ ५ ॥
तोरेहुँ धनुष व्याह अवगाहा ❀ बिनु तोरे को कुँवरिविवाहा ॥ ६ ॥

जो राजा अज्ञानसे अंधे थे वे ऐसी वाणी सुनकर हँसे ॥५॥ (और कहने लगे) धनुष तोड़नेपरभी व्याह होना कठिन पड़ेगा. फिर भला विनातोड़े कुँवरि सीताजीको कौन व्याह सक्ता है ॥ ६ ॥

एकबार कालहु किन होई ❀ सियहित समर जितव हम सोई ॥ ७ ॥
यह सुनि अपरभूप मुसुकाने ❀ धर्मशील हरिभक्त सयाने ॥ ८ ॥

एकवार कालभी क्यों न हो, सीताजीके लिये हम उसकोभी लड़ाईमें जीतेंगे ॥ ७ ॥ यह सुनकर और राजा जो चतुर धर्मज्ञ और हरिभक्त थे वे हँसे ॥ ८ ॥

सो०–सीय विवाहव राम, गर्व दूरि करि नृपनकर ॥ ❀
जीति को सक संग्राम, दशरथके रणवाँकुरे ॥ ३५ ॥ ❀

(और बोले कि) रामचन्द्रजी राजाओंके अभिमानको दूर कर जानकीजीको विवाहेंगे. क्योंकि दशरथके पुत्र लड़ाईमें बड़े बाँके हैं, उनसे कौन संग्राम जीत सक्ता है? ॥ ३५ ॥

चौ०–वृथा मरहु जनि गाल वजाई ❀ मनमोदक नहिं भूख बुताई ॥ १ ॥
सिख हमार सुनु परम पुनीता ❀ जगदंबा जानहु जिय सीता ॥ २ ॥

वृथाही गाल वजाय २ मत मरो. क्योंकि मनके लड्डुओंसे भूख नहीं जाती ॥ १ ॥ हमारी अत्यंत पवित्र सीखको सुनो और मनमें सीताजीको संसारकी माता जानो ॥ २ ॥

जगतपिता रघुपतिहिं बिचारी ❀ भरि लोचन छवि लेहु निहारी ॥ ३ ॥
सुंदर सुखद सकल गुणरासी ❀ ए दोउ बंधु शंभुउरवासी ॥ ४ ॥

और रामचन्द्रजीको संसारके पिता विचारकर नेत्रभरकर इनकी शोभा देखलो ॥३॥ ये दोनों भाई सुंदर हैं सुखके देनेवाले हैं और संपूर्ण गुणोंके निधान हैं और महादेवके हृदयमें निवास करनेवाले हैं ४

सुधासमुद्रसमीप विहाई ❀ मृगजल निरखि मरहु कत धाई ॥ ५ ॥
करहु जाइ जाकहँ जोइ भावा ❀ हम तो आजु जन्मफल पावा ॥ ६ ॥

अमृतके समुद्रको पास छोड़कर मृगतृष्णाको देख दौड़कर क्यों मरते हो? ॥ ५ ॥ आगे जिसको जो भावे, (वही) करो. हमने तौ आज जन्म लेनेका फल पालिया ॥ ६ ॥

अस कहि भले भूप अनुरागे ❀ रूप अनूप बिलोकन लागे ॥ ७ ॥
देखहिं सुर नभ चढ़े विमाना ❀ बरषहिं सुमन करहिं कलगाना ॥ ८ ॥

ऐसे कह अच्छे राजा प्रसन्न हुये और सुन्दर रूपको देखने लगे ॥ ७ ॥ देवता आकाशमें विमानोंपर चढ़े देखते हैं और सुन्दर २ गान करते और फूल वर्षाते हैं ॥ ८ ॥

दो०–जानि सुअवसर सीय तब, पठवा जनक बुलाइ ॥ ❀
चतुर सखी सुंदरि सकल, सादर चलीं लिवाइ ॥ २८३ ॥ ❀

तब जनकने सुन्दर समय जान सीताजीको बुलावा भेजा. तौ सब चतुर सुन्दरी सखियां आदरसे लिवा ले चलीं ॥ २८३ ॥

चौ०–सियसोभा नहिं जाइ बखानी ❀ जगदंबिका रूपगुनखानी ॥ १ ॥
उपमा सकल मोहिं लघु लागी ❀ प्राकृतनारिअंगअनुरागी ॥ २ ॥

सीताजीकी शोभा वर्णन नहीं की जाती. क्योंकि जगत्की माता हैं तथा रूप और गुणकी खानि हैं ॥१॥ मुझे सब उपमा छोटी लगती हैं, क्योंकि सब संसारकी साधारण स्त्रियोंके शरीरमें लगगई हैं॥२॥

सीय बरनि तेहि उपमा देही ❀ को कबि कहइ अजस को लेही ॥ ३ ॥
जो पटतरिय तीयसम सीया ❀ जग असि जुवति कहाँ कमनीया ॥ ४ ॥

सीताजीका वर्णन कर और उनकी उपमा देकर ऐसा कौनसा कवि है जो कहकर अपयशको ले ॥ ३ ॥ जो सीताजीकी (संसारी) स्त्रीके साथ समानता करैं तौ संसारमें ऐसी सुन्दर स्त्री कहाँ है? [और देवताओंकी स्त्रियोंसे उपमा दें तौ] ॥ ४ ॥

गिरामुखर तनुअर्ध भवानी ❀ रति अति दुखित अतनुपति जानी ॥ ५ ॥
बिषबारुनी बंधुप्रिय जेहीं ❀ कहिय रमासम किमि बैदेही ॥ ६ ॥

सरस्वती वाचाल, पार्वतीजी अर्द्धाङ्गी, और रति (कामदेवकी स्त्री) अपने पतिको देहरहित जान बहुत दुखी है ॥ ५ ॥ और विष और मदिरा जिसके प्यारे भाई वहिन हैं उस लक्ष्मीको सीताजीके बराबर कैसे कहैं? ॥ ६ ॥

जो छबिसुधापयोनिधि होई ❀ परमरूपमय कच्छप सोई ॥ ७ ॥
सोभारजु मंदर शृंगारू ❀ मथै पानिपंकज निज मारू ॥ ८ ॥

जो छविरूपी अमृतका समुद्र हो और परम रूपमय अर्थात् अति लावण्यका कछुआ हो ॥७॥ शोभारूपी रस्सी और शृङ्गाररूपी मन्दराचल हो और कामदेव अपने कमलसमान हाथोंसे मथै ॥ ८ ॥

दो०-यहिबिधि उपजै लक्ष्मि जब, सुंदरता सुखमूल ॥ ❀
तदपि सकोचसमेत कवि, कहहिं सीय समतूल ॥ २८४ ॥ ❀

इस प्रकार सुन्दरता और सुखकी मूल लक्ष्मी जब उत्पन्न हो, तौ भी कवीश्वर सकुचाकर सीताजीकी बराबर कहैंगे ॥ २८४ ॥

चौ०-चली संग लै सखी सयानी ❀ गावति गीत मनोहर बानी ॥ १ ॥
सोह नवल तनु सुंदर सारी ❀ जगतजननि अतुलित छबि भारी ॥ २ ॥

चतुर सखियां लिवाकर मनके हरनेवाली वाणीसे गीत गाती हुई चलीं ॥ १ ॥ जानकीजीके शरीरमें सुंदर नवीन साड़ी शोभायमान है, और संसारकी माताकी शोभा इतनी भारी है कि तुल नहीं सकती ॥ २ ॥

भूषन सकल सुदेस सुहाए ❀ अंग अंग रचि सखिन बनाए ॥ ३ ॥
रंगभूमि जब सिय पगु धारी ❀ देखि रूप मोहे नरनारी ॥ ४ ॥

सखियोंने सब सुन्दर गहने जहाँके तहां अंगमें रचकर सजाये हैं ॥ ३ ॥ जब जानकीजीने रंगभूमिमें पैर रक्खा तौ स्वरूपको देखकर स्त्री पुरुष मोहित हुये ॥ ४ ॥

---

(१) जैसे चन्द्रसमान मुख कमलसे नेत्र आदि.

(२) यहां लोग बहुधा शंका करते हैं कि पुरुष तौ स्त्रीपर मोहित हो सक्ता है, परंतु स्त्रीपर स्त्री मोहित नहीं हो सक्ती. जैसा उत्तरकांडमें लिखा है कि–

"मोह न नारि नारिके रूपा । पन्नगारि यह नीति अनूपा ॥"

इसका समाधान यह है कि यहाँ मोहित होनेका अर्थ विषयासक्त होनेका नहीं है किंतु आश्चर्ययुक्त होना है. अर्थात् जब सीताजीने रंगभूमिमें चरण धरा तौ उन्होंके स्वरूपको देख पुरुष स्त्री चित्र लिखेसे रहगयें-जो लोग ये अर्थ करते हैं कि महादेवजी पार्वतीजीसे कहते हैं कि हे नारी! जानकीजीके रूपको देखकर

हरषि सुरन दुंदुभी बजाई ❀ बरष प्रसून अपसरा गाई ॥ ५ ॥
पानिसरोज सोह जयमाला ❀ औचक चितै सकल महिपाला ॥ ६ ॥

देवताओंने प्रसन्न हो नगाड़े बजाये और फूल वर्षाकर अप्सराओंने गीत गाये ॥ ५ ॥ कमलके समान हाथोंमें जयमाला शोभायमान थी उसे देख संपूर्ण राजा हकेबके होगये ॥ ६ ॥

सीय चकितचित रामहिं चाहा ❀ भए मोहबस सब नरनाहा ॥ ७ ॥
मुनिसमीप बैठे दोउ भाई ❀ लगे ललकि लोचन निधि पाई ॥ ८ ॥

जब सीताजीने चकित चित्तसे रामचन्द्रजीको चाहा, तौ सब राजा मोहके वश हुये ॥ ७ ॥ मुनि (विश्वामित्र) के पास बैठे हुये दोनों भाइयोंके नेत्र (सीताजीको देखकर) ऐसे ललक कर लगे जैसे किसीको खजाना मिलै ॥ ८ ॥

दो०-गुरुजनलाज समाज बड़ी, देखि सीय सकुचानि ॥ ❀
लागि विलोकन सखिनतन, रघुवीरहिं उर आनि ॥ २८५ ॥ ❀

बड़े समाजको देखकर और पिताआदि बड़े जनोंकी लाजके मारे सीताजी सकुचायीं और रामचन्द्रजीको हृदयमें धरकर सखियोंके शरीरकी ओर देखने लगीं ॥ २८५ ॥

चौ०-रामरूप अरु सियछबि देखी ❀ नरनारिन परिहरी निमेखी ॥ १ ॥
सोचहिं सकल कहत सकुचाहीं ❀ बिधिसन विनय करहिं मनमाहीं ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीका स्वरूप और सीताजीकी शोभाको देख स्त्रीपुरुषोंने पलक मारना छोड़ दिया ॥ १ ॥ सब सोचते हैं परन्तु कहनेमें सकुचते हैं और मनमें ब्रह्मासे प्रार्थना करते हैं कि—॥ २ ॥

हरु विधि वेगि जनकजड़ताई ❀ मति हमारि अस नेहु सुहाई ॥ ३ ॥
बिनुबिचार प्रण तजि नरनाहू ❀ सीय रामकर करै विवाहू ॥ ४ ॥

हे विधाता! जनककी मूर्खताको जल्दी हरलो और हमारीसी सुन्दर बुद्धी दो कि ॥ ३ ॥ राजा विना विचारे हठको छोड़ सीता और रामचन्द्रका विवाह करै ॥ ४ ॥

जग भल कहहि भाव सबकाहू ❀ हठ कीन्हे अंतहु उरदाहू ॥ ५ ॥
यह लालसामगन सब लोगू ❀ बर सांवरो जानकीजोगू ॥ ६ ॥

इसे संसार अच्छा कहैगा और सबको भला लगैगा और हठ करनेसे अंतको मनमें जलन होगी ॥ ५ ॥ सब लोग तो इस लालसामें मगन हैं, क्योंकि साँवला दूलह सीताजीके योग्यही है ॥ ६ ॥

तब बंदीजन जनक बुलाए ❀ बिरदावली कहत चलि आए ॥ ७ ॥
कह नृप जाइ कहहु प्रण मोरा ❀ चले भाट हिय हरष न थोरा ॥ ८ ॥

तब जनकराजाने भाटोंको बुलाया और वे बंशावली कहते हुये चले आये ॥ ७ ॥ राजाने कहा कि जाकर मेरे प्रणको कहो तब भाट हृदयमें बड़े प्रसन्न होकर चले ॥ ८ ॥

दो०-बोले बंदी बचनवर, सुनहु सकल महिपाल ॥ ❀
प्रण बिदेह कर कहहिं हम, भुजा उठाइ विशाल ॥ २८६ ॥ ❀

मनुष्य मोहित होगये, तबभी अर्थ वही होगा; कि सुन्दरता देख आश्चर्ययुक्त होगये. मोहित होनेसे विषयासक्त होना सिद्ध नहीं होसक्ता, कारण, जगन्माता वर्णन करचुके, और जो नारीसे अनारी शब्द घटित कर अर्थ करते हैं, कि अनाड़ी अर्थात् मूर्ख मनुष्य देखकर मोहित हुए; ऐसे अनाड़ियोंकी नाड़ी देख कौन उपाय कर सक्ता है? अतएव संपूर्ण ऐसे अर्थोंको कपोलकल्पित समझना चाहिये ॥

और भाट सुन्दर बचन बोले कि हे सब राजाओ ! सुनो, हम उँची बाँह उठाकर जनकका प्रण कहते हैं ॥ २८६ ॥

चौ०–नृपभुजबलबिधु शिवधनु राहू ❀ गरुअ कठोर विदित सबकाहू ॥ १ ॥
रावण बाण महाभट भारे ❀ देखि शरासन गवहिं सिधारे ॥ २ ॥

राजाओंकी भुजाओंका बल मानों चन्द्रमा है और उसके लिये महादेवजीका धनुष मानों राहु है, और जैसा भारी और कठोर है, वह सब किसीको प्रगटही है ॥ १ ॥ रावण और बाणासुर बड़े २ भारी योधा धनुषको देखकर चुपके हो घरको चले गये ॥ २ ॥

सोइ पुरारिकोदंड कठोरा ❀ राजसमाज आजु जेहि तोरा ॥ ३ ॥
त्रिभुवनजयससेत बैदेही ❀ बिनहिं बिचार बरै हठि तेही ॥ ४ ॥

महादेवके उसी कठोर धनुषको राजाओंकी सभामें जो आज तोड़ेगा ॥ ३ ॥ जानकीजी उसीको तीनों लोककी जयसमेत बिनाही विचारे हठसे वरैंगीं ॥ ४ ॥

सुनि प्रण सकल भूप अभिलाषे ❀ भट मानी अतिसय मनभाषे ॥ ५ ॥
परिकर बाँधि उठे अकुलाई ❀ चले इष्टदेवन सिर नाई ॥ ६ ॥

सब राजा प्रणको सुनकर प्रसन्न होने लगे और अभिमानी योधा मनमें बड़े क्रोधित हुये ॥५॥ एकसाथ एकत्र हो अकुलाकर उठे और अपने २ इष्टदेवोंको मस्तक नवा २ कर चले ॥ ६ ॥

तमकिताकितकि शिवधनु धरहीं ❀ उठइ न कोटिभाँति बल करहीं ॥ ७ ॥
जिन्हके कछु बिचार मनमाहीं ❀ चापसमीप महीप न जाहीं ॥ ८ ॥

तमक करके और अटकलसे देखकर महादेवके धनुषको उठाते हैं और करोड़ों भांति बल करते हैं परन्तु उठता नहीं हैं ॥ ७ ॥ और जिनके मनमें (अपने अपमानका) कुछभी विचार है वे राजा धनुषके पासभी नहीं जाते ॥ ८ ॥

दो०–तमकि धरहिं धनु मूढ़नृप, उठइ न चलहिं लजाइ ॥ ❀
मनहु पाइ भट बाहुबल, अधिक अधिक गरुआइ ॥ २८७ ॥ ❀

मूर्ख राजा तमक करके धनुषको उठाते हैं पर जब नहीं उठता तो लजाकर चले जाते हैं. मानों वह धनुष योधाओंकी भुजाओंका बल पाकर अधिक २ भारी होता जाता है ॥ २८७ ॥

चौ०–भूपसहसदस एकहिं बारा ❀ लगे उठावन टरइ न टारा ॥ १ ॥
डिगै न शंभुसरासन कैसे ❀ कामीबचन सतीमन जैसे ॥ २ ॥

दसहजार राजा एकही वार (धनुषको) उठाने लगे. पर वह सरकायाभी नहीं सरकता ॥ १ ॥ महादेवका धनुष (उन राजाओंसे) कैसे नहीं डिगता जैसे कामी मनुष्योंके बचनोंसे पतिव्रता स्त्रीका मन नहीं डिगता है ॥ २ ॥

सब नृप भए योगउपहासी ❀ जैसे बिनु विराग संन्यासी ॥ ३ ॥
कीरति बिजय बीरता भारी ❀ चले चापकर सरबसहारी ॥ ४ ॥

---

(१) यहाँ यह शंका होती है कि यदि दशहजार राजा उठालेते तौ कन्या किसे मिलती ? इसका उत्तर यही है कि वे आपसमें युद्ध करते; जो सबको हरा देता वही कन्या पाता. कारण यह था कि उन्होंने यह चाहा कि कन्या राजाओंमेंसेही किसीको मिलै, न कि देव दानव आदिको जो वहां आये थे,–अथवा "वार" कहते हैं दिनको, अर्थात् स्वयम्वरके दिन १०००० राजा क्रम २ से लगे ॥

सव राजा हँसीको योग्य हुये अर्थात् सव राजाओंकी ऐसी हँसी हुई कि जैसे विना वैराग्यके[1] संन्यासीकी हँसी हो ॥ ३ ॥ यश, विजय और वड़ी वीरता ये सरवस धनुषपर हारकर चले ॥ ४॥

श्रीहत भए हारि हिय राजा ❀ बैठे निज निज जाइ समाजा ॥ ५ ॥
नृपन बिलोकि जनक अकुलाने ❀ बोले वचन रोषजनु साने ॥ ६ ॥

राजा लोक कांतिहीन होगये और हृदयमें हारकर अपने २ समाजमें जा वैठे ॥ ५ ॥ राजाओंको देखकर जनक अकुलाये और मानों क्रोधके[2] साने हुए वचन वोले कि–॥ ६ ॥

द्वीपद्वीपके भूपति नाना ❀ आए सुनि हम जो प्रण ठाना ॥ ७ ॥
देव दनुज धरि मनुजशरीरा ❀ विपुल वीर आए रणधीरा ॥ ८ ॥

हमने जो प्रण ठानाथा उसे सुनकर देश २ के वहुतसे राजा आये ॥ ७ ॥ देवता और राक्षस मनुष्योंका शरीर धारण कर और वहुतसे रणवाँकुरे योधा आये ॥ ८ ॥

दो०–कुँवरि मनोहरि विजय बड़ि, कीरति अति कमनीय ॥ ❀
पावनहारविरंचिजनु, रचेउ न धनुदमनीय ॥ २८८ ॥ ❀

कुमारी जानकी परम सुन्दरी है और (जिस धनुषको देखकर रावण आदिका हियाव न पड़ा उसे तोड़नेसे) विजयभी वड़ी है और कीर्त्तिभी उत्तम है.क्योंकि जो तोड़ैगा उसका यशजुगानजुगतक रहैंगा परंतु धनुषको तोड़कर (कुवँरि, विजय और कीर्त्तिका) पानेवाला मानों विधाताने नहीं रचा ॥२८८॥

चौ०–कहहु काहि यह लाभ न भावा ❀ काहु न शंकरचाप चढ़ावा ॥ १ ॥
रहा चढ़ाउव तोरब भाई ❀ तिलभरि भूमि न सके छुड़ाई ॥ २ ॥

कहो यह लाभ किसको अच्छा नहीं लगा, जो किसीने महादेवके धनुषको नहीं चढ़ाया ॥१॥ हे भाई! चढ़ाना, तोड़ना तौ (एक ओर) रहा उसे धरतीसे तिलभरभी नहीं हटा सके ॥ २ ॥

अब जनि कोउ माषै भट मानी ❀ वीरविहीन मही मैं जानी ॥ ३ ॥
तजहु आस निज निज गृह जाहू ❀ लिखा न विधि वैदेहिविवाहू ॥ ४ ॥

अव कोई अभिमानी योधा घमंड न करै. मैंने जान लियाकि पृथ्वी योधाओंसे रहित हो गई ॥३॥ आश छोड़कर अपने २ घर जाओ. ब्रह्माने सीताजीका विवाहही नहीं लिखा ॥ ४ ॥

सुकृत जाइ जो प्रण परिहरऊँ ❀ कुँवरि कुँवारि रहौ का करऊँ ॥ ५ ॥
जो जनतेउँ विनुभटमहि भाई ❀ तौ प्रणकरि होत्यौं न हँसाई ॥ ६ ॥

जो प्रणको छोड़ताहूँ तौ पुण्य[3] नाश हुएजाते हैं. (इसलिये) सीता काँरी भलेही रहै, मैं क्या करूं? ॥५॥ हे भाई! जो यह जानता कि पृथ्वी योधाओंसे खाली है तौ प्रणकर अपनी हँसी नहीं कराता ॥६॥

जनकवचन सुनि सब नरनारी ❀ देखि जानकी भए दुखारी ॥ ७ ॥
माषे लषन कुटिल भइ भौंहैं ❀ रदपुट फरकत नयन रिसौंहै ॥ ८ ॥

सव स्त्री पुरुष जनकके वचन सुन सीताजीको देखकर दुखी हुये ॥ ७ ॥ लक्ष्मणजी क्रोधित हुये उनकी भौंहें टेढ़ी होगई, होठ फड़कने लगे और नेत्र रिससे लाल २ होगये ॥ ८ ॥

---

(१) जैसी संसारमें कहावत है कि 'जोगी जुगत जानी नहीं कपड़े रँगे तौ क्या हुआ' ॥ (२) जनकजी तौ वड़े ज्ञानी थे क्रोध किस कारण भया सो यह सव सांसारिक व्यवहार उक्ति है ॥ (३) जैसा कहा है कि– "संभावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते"–अर्थात् यशस्वीकी अकीर्ति होना मरणसे वड़कर है ॥

दो०-कहि न सकत रघुवीरडर, लगे बचन जनु वान ॥
नाइ राम पदकमल शिर, बोले गिराप्रमान ॥ २८९ ॥

(जनकके) वचन तौ वाणकेसमान लगे, परंतु रघुनाथजीके डरसे कुछ कह नहीं सक्ते. तौभी रामचन्द्रजीके कमल समान चरणोंको माथा नवाकर उचित वाणी बोले कि-॥ २८९ ॥

चौ०-रघुवंशिनमहँ जहँ कोउ होई ❀ तेहि समाज अस कहहि न कोई ॥ १ ॥
कही जनक जस अनुचित वानी ❀ विद्यमान रघुकुलमनि जानी ॥ २ ॥

रघुवंशियोंमेंसे जहां कोई होगा, उस सभामें ऐसे कोई न कहैगा कि- ॥ १ ॥ जैसी जनकने रामचन्द्रजीके होते अयोग्य वात कही है ॥ २ ॥

सुनहु भानुकुलपंकज भानू ❀ कहौं स्वभाव न कछु अभिमानू ॥ ३ ॥
जो राउर अनुसासन पाऊँ ❀ कंदुक इव ब्रह्मांड उठाऊँ ॥ ४ ॥

हे सूर्यवंशरूपी कमलके लिये सूर्यके समान खिलानेवाले प्रभु ! सुनो. स्वभावसे कहता हूँ कुछ अभिमानसे नहीं ॥ ३ ॥ जो आपकी आज्ञा पाऊँ, तौ गेंदके समान ब्रह्मांडको उठाऊँ ॥ ४ ॥

काचेघट जिमि डारौं फोरी ❀ सकौं मेरु मूलक इव तोरी ॥ ५ ॥
तव प्रतापमहिमा भगवाना ❀ का बापुरो पिनाक पुराना ॥ ६ ॥

और कच्चे घड़ेके समान फोड़ डालूँ और सुमेरु पर्वतको मूलीके समान तोड़ सकता हूँ ॥ ५ ॥ हे भगवन् ! तुम्हारे प्रतापकी महिमाके सन्मुख बिचारा पुराना धनुष क्या है ? ॥ ६ ॥

नाथ जानि अस आयसु होऊ ❀ कौतुक करौं विलोकिय सोऊ ॥ ७ ॥
कमलनाल जिमि चाप चढावौं ❀ सतजोजनप्रमान लै धावौं ॥ ८ ॥

हे स्वामी ! ऐसे जान आज्ञा दीजिये. और मैं जो खेल करूं आप उसे देखिये ॥७॥ कमलकी दंडीके समान धनुषको चढ़ाऊं और सौ योजन अर्थात् चारसौ कोसतक लेकर दौडूं ॥ ८ ॥

दो०-तोरौं छत्रकदंड जिमि, तव प्रतापबलनाथ ॥
जो न करौं प्रभुपदशपथ, पुनि न धरौं धनु हाथ ॥ २९० ॥

हे स्वामी ! आपके प्रतापके बलसे (धनुषको) कठफूलकी तरह तोड़ डालूँ, और जो ऐसा न करूं तौ स्वामीके चरणोंकी सौगंध खाता हूं कि फिर धनुषको हाथमें न लूँ ॥ २८९ ॥

चौ०-लषन सकोप बचन जब बोले ❀ डगमगानि महि दिग्गज डोले ॥ १ ॥
सकल लोक सब भूप डराने ❀ सियहिय हरष जनक सकुचाने ॥ २ ॥

जब लक्ष्मणजी क्रोधसे ऐसे वचन बोले तौ पृथ्वी लगी डिगमिग करने और दिशाओंके हाथी चलायमान हुये ॥१॥ सब लोक और संपूर्ण राजा डरे, सीताजीके मनमें आनन्द हुआ और जनक सकुचे॥२॥

गुरु रघुपति सब मुनि मनमाहीं ❀ मुदित भए पुनि पुनि पुलकाहीं ॥ ३ ॥
सैनहिं रघुपति लषन निवारे ❀ प्रेमसमेत निकट बैठारे ॥ ४ ॥

---

(१) कमलकी दंडी कहकर लक्ष्मणजीने जनककी इस बातका उत्तर दिया है कि-

रहा चढ़ाउव तोरब भाई ! तिलभर भूमि न सकेउ छुड़ाई ॥

(२) जनक इसलिये सकुचे कि रामचन्द्रजीका प्रताप मुनिसे सुनकर भी मैंने

"बीरविहीन महीं मैं जानी" इत्यादि वाक्य कहे ॥

गुरु (विश्वामित्र) रामचन्द्र और सब मुनि अपने २ मनमें प्रसन्न हो वारंवार पुलकायमान हुये ॥ ३ ॥ रामचन्द्रने लक्ष्मणजीको सैनसे(१) मने किया और स्नेहसे पास बिठालिया ॥ ४ ॥

विश्वामित्र समय सुभ जानी ❀ बोले अति सनेहु मृदुबानी ॥ ५ ॥
उठहु राम भंजहु भवचापू ❀ मेटहु तात जनकपरितापू ॥ ६ ॥

विश्वामित्र अच्छासमय जान अत्यंत प्रीतिसे मीठी वाणी बोले-॥ ५ ॥ हे राम! उठो महादे(२)वके धनुषको तोड़ो और हे प्यारे! जनकके मनकी जलन दूर करो ॥ ६ ॥

सुनि गुरुबचन चरन सिर नावा ❀ हरष विषाद न कछु उर आवा ॥ ७ ॥
ठाढ़ भये उठि सहज सुभाये ❀ ठवनि युवा मृगराज लजाये ॥ ८ ॥

(रामचन्द्रजीने) गुरुके वचन सुन उनके चरणोंको माथा नवाया और आनन्द और दुःख कुछ मनमें नहीं आया ॥ ७ ॥ साधारण स्वभावसे ऐसे खड़े होगये कि उनके ढंगको देखकर तरुण सिंहभी लजाते थे ॥ ८ ॥

दो०-उदित उदयगिरिमंचपर, रघुवर बालपतंग ॥ ❀
विकसे संतसरोजवन, हरषे लोचनभृंग ॥ २९१ ॥ ❀

मंच(३)रूपी उदयाचलपर रामचन्द्ररूपी बालसूर्य उदय हुये, (उनको देख) संतरूपी कमलोंके वन खिले और नेत्ररूपी भ्रमर प्रसन्न हुये; अर्थात् जैसे जब उदयाचलपर सूर्य उदय होता है तौ कमल खिलते हैं और मदरसिक भौंरे प्रसन्न होते हैं उसीप्रकार जब रघुनाथजी धनुष तोड़नेके लिये सिंहासनसे उठे तौ संतजन अंगमें फूले न समाये और उनके नेत्र भगवान्की झाँकी कर प्रसन्न हुये ॥ २९१ ॥

चौ०-नृपनकेरि आसानिसि नासी ❀ वचननपतअवली न प्रकासी ॥ १ ॥
मानी महिपकुमुद सकुचाने ❀ कपटी भूपउलूक लुकाने ॥ २ ॥

राजाओंकी आशारूपी रात नष्ट होगई, अर्थात् उनको जो आशा लगरहीथी कि धनुषको तोड़ सीताको व्याहैंगे सो जाती रही और उनके वचनरूपी तारोंकी कतारोंका चमकना बंद होगया. अर्थात् वे जो बढ़ २ कर दूनकी हाँकतेथे सो उनकी बोली बंद होगई ॥१॥ घमंडी राजारूपी कुमुद सकुचा गये. अर्थात् जैसे सूर्यको देख कुमुद बंद हो जाते हैं ऐसेही रामको सन्मुख

---

(१) सैनसे इसलिये मने किया कि चिल्लाकर कहनेसे लक्ष्मणजीका अपमान होता। पुनि मने करके पास बिठलानेसे रामजीकी गंभीरता पाई गई कि अपनी प्रशंसा करना नहीं चाहते। और जिनके कोपसे दिग्गज कांप उठे ऐसे पराक्रमी लक्ष्मण रामकी सैनसे बैठ गये इसमें रामजीका अधिक बली होना और लक्ष्मणजीका आज्ञाकारी होना स्पष्ट हुआ। जो कहो कि, रामने बैठा क्यों लिया, धनुष तोड़नेकी आज्ञा क्यों नहीं दी, तहां कहते हैं कि गुरुके सामने राम किसी प्रकारकी आज्ञा नहीं दे सकते थे, और सैनसे मने इसलिये किया कि इतना कहनेपरभी गुरुके होते कुछ अधिक योग्य न बोल उठैं. (२) महादेवका धनुष कहनेसे ऐसा भाव दरसता है कि किसी अन्यका धनुष होता तौ तोड़नेमें बड़ाई न थी, पर इसके तोड़नेमें तौ तुम्हारी बड़ी महिमा प्रगट होगी! क्यौंकि शंकरका धनुष है। जो कहो कि शंकर तौ मेरे इष्टदेव हैं उनका धनुष कैसैं तोड़ूँ? तौ जनकका संताप और जानकीका दुःख कैसे मिटैगा; फिर तुम्हारी भक्तवत्सलतामें भेद आजायगा और इतने राजाओंमें हँसी होगी, अतएव उठकर अवश्य धनुष तोड़ो (३) इस दोहेमें उदयाचल आदिकी उपमा देनेसे यह भाव स्पष्ट है कि सिंहासन अति ऊँचा था, रामजीका प्रकाश और प्रताप सूर्यकेसमान था और भगवान्को कमलकेसमान संत प्यारे हैं, और जैसे भ्रमर कमलके रसके लोभी हैं वैसेही संतजनोंके नेत्र रघुनन्दनकी झाँकीके भूखे हैं.

देख राजा लजा ! गये और कपटी राजारूपी उलूक छुप गये अर्थात् जो राजा लोग देवता और राक्षसोंका स्वरूप धरकर आयेथे वे उलूककी भाँति छिप गये ॥ २ ॥

भए विशोक कोक मुनि देवा ❀ बरषहिं सुमन जनावहिं सेवा ॥ ३ ॥
गुरुपद बंदि सहितअनुरागा ❀ राम मुनिन्हसन आयसु माँगा ॥ ४ ॥

मुनि और देवतारूपी चक्रवाक शोकरहित हुये. अर्थात् जैसे सूर्योदय होनेपर चक्रवाकके जोड़े आपसमें मिलकर प्रसन्न होते हैं ऐसेही देव मुनि प्रसन्न हुये और पुष्प बरसाकर अपनी सेवा जताने लगे ॥३॥ रामचन्द्रने प्रीतिसहित गुरुके चरणोंको वन्दना कर मुनियोंसे आज्ञा माँगी ॥ ४ ॥

सहजहिं चले सकलजगस्वामी ❀ मत्तमंजुकुंजरवरगामी ॥ ५ ॥
चलत राम सब पुरनरनारी ❀ पुलकपूरितनु भये सुखारी ॥ ६ ॥

सब संसारके स्वामी और सुन्दर मतवाले हाथीकीसी झूमती चाल चलनेवाले रामजी साधारणही चले ॥ ५ ॥ रामचन्द्रके चलते (समय) सब नगरके स्त्रीपुरुष शरीरमें पुलकायमान हो सुखी हुये ॥ ६ ॥

वंदि पितर सुर सुकृत सँभारे ❀ जो कछु पुण्यप्रभाव हमारे ॥ ७ ॥
तौ शिवधनु मृणालकी नाँई ❀ तोरहिं राम गणेश गुँसाई ॥ ८ ॥

पितर और देवताओंको वन्दनाकर अपने अच्छे कर्मोंको सम्हाला और (कहा कि) जो हमारे पुण्योंका कुछ प्रभाव है ॥ ७ ॥ तौ हे गणेश गोसाँई ! महादेवके धनुषको रामचन्द्र कमलकी डंडीकी भांति तोड़े ॥ ८ ॥

दो०-रामहिं प्रेमसमेत लखि, सखिनसमीप बुलाइ ॥ ❀
सीतामातु सनेहबस, बचन कहै बिलखाइ ॥ २९२ ॥ ❀

रामचन्द्रजीको बड़े प्रेमसे देख और सखियोंको पास बुलाकर सीताजीकी माता प्रीतिके वश दुखी हो वचन कहने लगी ॥ २९२ ॥

चौ०-सखि सब कौतुक देखनहारे ❀ जेउ कहावत हितू हमारे ॥ १ ॥
कोउ न बुझाइ कहइ नृपपाहीं ❀ ये बालक अस हठ भल नाहीं ॥ २ ॥

हे सखी ! सब खेलके देखनेवाले हैं और वे हमारे हितूभी कहाते हैं ॥ १ ॥ पर राजासे कोई समझाकर नहीं कहता कि ये बालक हैं, तुम्हारी ऐसी हठ अच्छी नहीं; अथवा तुम्हारी यह बालकोंकीसी हठ अच्छी नहीं है ॥ २ ॥

रावण बाण छुआ नहिं चापा ❀ हारे सकल भूप करि दापा ॥ ३ ॥
सो धनु राजकुँवरकर देहीं ❀ बालमराल कि मंदर लेहीं ॥ ४ ॥

रावण और बाणासुरने धनुषको छुआभी नहीं और सब राजा अभिमान कर हार गये ॥ ३॥ उसी धनुषको राजकुमारोंके हाथमें देते हैं; भला हंसका बच्चा कहीं मन्दराचलको उठा सक्ता है ? ॥४॥

भूप सयानप सकल सिरानी ❀ सखि बिधिगति कछु जाइ न जानी ॥५॥
बोली चतुर सखी मृदु बानी ❀ तेजवंत लघु गनिय न रानी ॥ ६ ॥

राजाकी सब चतुराई जाती रही. हे सखि ! विधाताकी गति कुछ जानी नहीं जाती ॥ ५ ॥ फिर चतुर सखि मीठी वाणीसे बोली, हे रानी ! तेजवालोंको छोटा न गिनना चाहिये ॥ ६ ॥

कहँ कुंभज कहँ सिंधु अपारा ❀ सोषेउ सुजस सकल संसारा ॥ ७ ॥
रविमंडल देखत लघु लागा ❀ उदय तासु त्रिभुवनतम भागा ॥ ८ ॥

कहाँ अंगस्त्य ऋषि और कहाँ अपार समुद्र ! उसको सोख लिया ! जिसकी सुन्दर बड़ाई जगत्में फैल रही है ॥ ७ ॥ और सूर्यका मंडल देखनेमें छोटा लगता है परन्तु इसके उदय होनेसे तीनों लोकोंका अंधकार दूर हो जाता है ॥ ८ ॥

दो०–मंत्र परम लघु जासु बस, विधि हरि हर सुर सर्व ॥
महामत्त गजराज कहँ, बस कर अंकुस खर्व ॥ २९३ ॥

और मंत्र बहुत छोटा होता है जिसके वशमें ब्रह्मा, विष्णु, महेश और संपूर्ण देवता होते हैं और बड़े मतवाले हाथीको छोटा अंकुश वशमें करलेता है ॥ २९३ ॥

चौ०–काम कुसुमधनु सायक लीन्हें ❀ सकल भुवन अपने बस कीन्हें ॥ १ ॥
देवि तजिय संसय अस जानी ❀ भंजव धनुष राम सुनु रानी ॥ २ ॥

और कामदेवने फूलोंका धनुषबाण ले सब लोकोंको अपने वशमें करलिया है ॥ १ ॥ हे रानी ! ऐसा जान चिन्ताको छोड़ दो. हे रानी ! सुनो. रामचन्द्र धनुषको तोड़ेंगे ॥ २ ॥

सखीबचन सुनि भइ परतीती ❀ मिटा विषाद बढ़ी अति प्रीती ॥ ३ ॥
तब रामहिं बिलोकि बैदेही ❀ सभयहृदय बिनवति जेहितेही ॥ ४ ॥

सखीके वचन सुन परतीत हुई, दुःख मिटगया और बहुतसा स्नेह बढ़ा ॥ ३ ॥ उस समय सीताजी रामचन्द्रजीको देख मनमें भयसे जिसतिस (देवता) की प्रार्थना करने लगीं ॥ ४ ॥

मनहीं मन मनाय अकुलानी ❀ होहु प्रसन्न महेश भवानी ॥ ५ ॥
करहु सफल आपनि सेवकाई ❀ करि हित हरहु चापगरुआई ॥ ६ ॥

मनही मनमें मनाकर अकुलाई (और कहा कि) हे महादेव पार्वती ! प्रसन्न हूजिये ॥ ५ ॥ अपनी सेवकाईको सफल करो और प्रसन्न होकर धनुषके बोझको हरलो॰ ॥ ६ ॥

गणनायक वरदायक देवा ❀ आजुलगे कीन्ही तव सेवा ॥ ७ ॥
बारबार बिनती सुनि मोरी ❀ करहु चापगरुता अति थोरी ॥ ८ ॥

हे वरके देनेवाले गणेश देवता ! मैने आजहीके लिये आपकी सेवा की है ॥ ७ ॥ सो मेरी प्रार्थनाको वारंवार सुन धनुषके भारीपनको बहुत थोड़ा कर दो ॥ ८ ॥

दो०–देखि देखि रघुवीरतनु, सुरमनाव धरि धीर ॥
भरे विलोचन प्रेमजल, पुलकावली शरीर ॥ २९४ ॥

---

(१) किसी समय समुद्र एक पक्षीके तीन बच्चे वहा ले गया तब उसने क्रोधकर यह प्रण किया कि मैं समुद्रको सुखा दूंगा. निदान रोज २ चोंचसे पानी भर २ बाहर फेंका करै. उसे एक दिन अगस्त्यमुनि मिले, मुनिने उस्से पानी फेंकनेका कारण पूंछा । उसने सब वृत्तांत कहा, तब तौ मुनिको दया आई और उस्से कहने लगे कि समुद्र बड़ा जड़ है, हम उसको दंड देंगे यह जीमें ठान मुनी समुद्रके किनारे जब भजन करने गये उस समय समुद्र उनकी पूजाकी सब सामग्री वहा लेगया तब तौ क्रोधित हो अगस्त्य मुनिने तीन आचमन कर समुद्रको सुखा दिया, फिर कुछ कालपीछे जब देवताओंने मुनिकी स्तुति करी तब उन्होंने लघुशंकाकी राहसे पानी निकाल उसे भर दिया ॥

रामचन्द्रजीके शरीरको देख २ कर धीरज धरकर देवताओंको मनाने लगीं, नेत्रोंमें प्रेमका जल भर आया और शरीरमें पुलकावली छागई, अर्थात् सब रोंगटे खड़े होगये ॥ २९४ ॥

चौ०–नीके निरखि नयनभरि सोभा ❀ पितुपन सुमिरि बहुरि मन छोभा ॥१॥
अहह तात दारुण हठ ठानी ❀ समुझत नहिं कछु लाभ न हानी ॥ २ ॥

अच्छी भाँति नेत्रभर शोभाको देखा परन्तु फिर पिताके प्रणका स्मरण कर मन दुखी हुआ ॥ १ ॥ हाय २, पिताने (कैसा) कठिन[१] प्रण ठाना है, कुछ लाभ और हानिको नहीं समझते है ! ॥ २ ॥

सचिव सभय सिख देइ न कोई ❀ बुधसमाज बड़ अनुचित होई ॥ ३ ॥
कहँ धनु कुलिसहु चाहि कठोरा ❀ कहँ स्यामल मृदुगात किसोरा ॥ ४ ॥

कोई मंत्री डरसे सीख नहीं देता. बुद्धिमानोंके समाजमें बड़ा अयोग्य होता है ॥ ३ ॥ (देखो) कहाँ तौ वज्रके समान कठोर धनुष और कहाँ साँवले सलौने शरीरवाले बालक ! ॥ ४ ॥

बिधि केहि भाँति धरौं उर धीरा ❀ सिरससुमन किमि बेधहि हीरा ॥ ५ ॥
सकल सभाकी मति भइ भोरी ❀ अब मोहिं शंभुचापगति तोरी ॥ ६ ॥

हे विधाता ! मैं किस भाँति मनमें धीरज धरूं ? कहीं सिरस का फूलभी हीरेमें छेद करसक्ता है ॥ ५ ॥ सब सभाकी बुद्धि भोली होगई. अब तौ हे महादेवके धनुष ! मुझे तेरीही शरण है ॥ ६ ॥

निज जड़ता लोगनपर डारी ❀ होहु हरुअ रघुपतिहिं निहारी ॥ ७ ॥
अति परिताप सीयमनमाहीं ❀ लव निमेष युगसम चलिजाहीं ॥ ८ ॥

अपना भारीपन मनुष्योंपर डालकर रामचन्द्रजीको देख हलका होजा ॥ ७ ॥ सीताजीके मनमें बड़ा दुःख है (उनके) पल विपलभी युगकी बराबर वीतते हैं ॥ ८ ॥

दो०–प्रभुहिं चितै पुनि चितव महि, राजत लोचन लोल ॥ ❀
खेलत मनसिजमीनजुग, जनु बिधुमंडल डोल ॥ २९५ ॥ ❀

रामचन्द्रजीको देख फिर पृथ्वीकी ओर देखनेमें (सीताजीके) चञ्चलनेत्र ऐसे शोभायमान हैं मानों कामदेवरूपी दो मछलियां चन्द्रमण्डलरूपी हिंडोलेमें झूल रहीहै ॥ २९५ ॥

चौ०–गिराअलिनि मुखपंकज रोकी ❀ प्रगट न लाजनिसा अवलोकी ॥ १ ॥
लोचनजल रह लोचनकोना ❀ जैसे परम कृपणकर सोना ॥ २ ॥

वाणीरूपी भौंरी मुखरूपी कमलमें रुकगई और लज्जारूपी रातको देख प्रकट नहीं हुई, अर्थात दिनमें कमलका रस पीतीहुई जैसे भौंरी कमलमें रुकजाय और रातको देख बाहर न निकलसकै इसी प्रकार सीताजी जो कुछ कहा चाहती थीं सो उनकी वाणी मुखमें रुकगई और गुरुजनोंकी लाजके मारे उस वाणीको प्रकट न करसकीं ॥ १ ॥ नेत्रोंका जल नेत्रोंके कोने कहिये कोयोंमेंही रहगया, जैसे बड़े कन्जूसका सोना (उसकी गांठमें रहता है) ॥ २ ॥

सकुची व्याकुलता बड़ि जानी ❀ धरि धीरज प्रतीति उर आनी ॥ ३ ॥
तन मन वचन मोर प्रण साँचा ❀ रघुपतिपदसरोज मन रांचा ॥ ४ ॥

---

(१)कमठपृष्ठकठोरमिदं धनुर्मधुरमूर्त्तिरसौ रघुनन्दनः॥कथमधिज्यमनेन विधीयतामहह तात पणस्तव दारुणः९ अर्थात् कहाँ तो कछुएकी पीठके समान यह कठोर धनुष, और कहाँ यह सुकुमारमूर्त्ति रामचन्द्र ! सो ये धनुषको कैसे चढ़ावैंगे ? हा हा पिताजी ! तुम्हारा प्रण बड़ा कठिन है ॥

और बड़ी व्याकुलताको देखकर सकुची, फिर मनमें धीरज धर हृदयमें भरोसा किया कि-॥३॥ जो तन मन और वचनसे मेरा प्रण सच्चा है और रामचन्द्रजीके चरणकमलोंमें मन लगा है ॥ ४ ॥

तौ भगवान सकलउरवासी ❀ करिहहिं मुहिं रघुपतिकी दासी ॥ ५ ॥
जेहिकर जेहिपर सत्य सनेहू ❀ सो तेहि मिलै न कछु संदेहू ॥ ६ ॥

तौ सबके घटघटमें वास करनेवाले भगवान् मुझे रामचन्द्रजीकी दासी करैं ॥ ५ ॥ क्योंकि जिसका जिसपर सच्चा स्नेह होता है वह उसे मिलताही है, इसमें कुछ संदेह नहीं ॥ ६ ॥

प्रभुतन चितै प्रेमप्रण ठाना ❀ कृपानिधान राम सब जाना ॥ ७ ॥
सियहि विलोकि तकेउ धनु कैसे ❀ चितव गरुड़ लघु व्यालहि जैसे ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजीके शरीरको देख (जानकीजीने) जो प्रेमका प्रण ठाना (कि रामजी न मिलैंगे तौ शरीर त्यागदूँगी सो) वह कृपाके समुद्र रामचन्द्रजीने सब जाना ॥ ७ ॥ और सीताजीको देख धनुषको कैसे देखा कि, जैसे गरुड़ छोटे सर्पको देखता है ॥ ८ ॥

दो०-लषन लखेउ रघुवंशमणि, ताकेउ हरकोदंड ॥ ❀
पुलकि गात बोले वचन, चरन चापि ब्रह्मंड ॥ २९६ ॥ ❀

लक्ष्मणजीने देखा कि रघुवंशके शिरोमणि रघुनाथजीने महादेवके धनुषको देखा तौ शरीरमें पुलकायमान होगये और ब्रह्मांडको चरणसे दवाकर वचन बोले कि-॥ २९६ ॥

चौ०-दिशिकुंजरहु कमठ अहि कोला ❀ धरहु धरणि धरि धीर न डोला ॥ १ ॥
राम चहहिं शंकरधनु तोरा ❀ होहु सजग सुनि आयसु मोरा ॥ २ ॥

हे दिशाओंके हाथियो ! कच्छप ! शेषजी ! और वाराह ! धीरजधरकर पृथ्वीको धारण करो, हिलने न पावै ॥ १ ॥ रामचन्द्रजी महादेवके धनुषको तोड़ा चाहते हैं, मेरी आज्ञा सुनकर सावधान होजाओ ॥ २ ॥

चापसमीप राम जब आए ❀ नरनारिन्ह सुर सुकृत मनाए ॥ ३ ॥
सबकर संसय अरु अज्ञानू ❀ मंदमहीपनकर अभिमानू ॥ ४ ॥

जब रामचन्द्रजी धनुषके पास आये, तौ स्त्रीपुरुषोंने देवता और अच्छे कर्मोंको मनाया ॥ ३ ॥ सबका सन्देह और अज्ञान और मूर्ख राजाओंका अभिमान-॥ ४ ॥

भृगुपतिकेरि गर्व गरुआई ❀ सुरमुनिवरनकेरि कदराई ॥ ५ ॥
सियकर सोच जनक पछितावा ❀ रानिनकर दारुण दुखदावा ॥ ६ ॥

परशुरामजीके गर्वका भारीपन और देवता और श्रेष्ठ मुनिश्वरोंका कायरपन, ॥ ५ ॥ सीताजीका शोच, जनकका पछितावा, और रानियोंका कठिन दुःखरूपी दावानल ॥ ६ ॥

शंभुचापबड़वोहित पाई ❀ चढ़े जाइ सब संग बनाई ॥ ७ ॥
रामबाहुबलसिंधु अपारा ❀ चहत पार नहिं कोउ कनहारा ॥ ८ ॥

कवित्त ॥ (१) आयो चापभंग समय सबहि जनायो रंग मानी नृपहिये तबै धरकि धरकि उठे ।
रसिक बिहारी नेहवारी पुरनारिनके कंचुकी सुबंद आप तरकि तरकि उठे ॥
उर उमगैहैं भूप कौशिक लखन आदि रामभुजदंड दोऊ थरकि थरकि उठे ।
जनक किशोरीजूके सखिन समेत दोऊ लोचन सफल चारु फरकि फरकि उठे ॥

महादेवके धनुषको वड़ी नाव पाकर सब संग बनाकर अर्थात् इकट्ठे होकर जाकर चढ़े ॥ ७ ॥ और रामचन्द्रजीकी भुजाओंका वल अपार समुद्र है, उसमें पार होना चाहते हैं परन्तु कोई मल्लाह नहीं है ॥ ८ ॥

दो०-राम बिलोके लोग सब, चित्र लिखेसे देखि ॥ ❀
चितई सीय कृपायतन, जानी बिकल बिसेखि ॥ २९७ ॥ ❀

रामचन्द्रजीने सब लोगोंको देखा तौ चित्रसे लिखे दिखाई दिये और कृपानिधान (रघुनाथजी) ने सीताजीको देखा तौ जाना कि व्याकुल हैं ॥ २९७ ॥

चौ०-देखी बिपुल बिकल बैदेही ❀ निमिष बिहात कलपसम तेही ॥ १ ॥
तृषित वारिबिनु जो तनु त्यागा ❀ मुए करै का सुधातड़ागा ॥ २ ॥

जव सीताजीको ऐसा अति व्याकुल देखा कि उनका एक पलक कल्प कहिये ब्रह्माके दिनकी वरावर वीतरहा है (तब सोचने लगे कि) ॥ १ ॥ जो प्यासेने विना जलके शरीर छोड़ दिया तौं मरनेपर सुधा कहिये जलका सरोवरभी क्या करैगा ? ॥ २ ॥

का बरषा जब कृषी सुखाने ❀ समय चूक पुनि का पछिताने ॥ ३ ॥
अस जिय जानि जानकी देखी ❀ प्रभु पुलके लखि प्रीति बिसेखी ॥ ४ ॥

ऐसेही जब खेती सूखगई तौं वर्षा होनेसे क्या ? (इसी भाँति) समयपर चूककर फिर पछितानेसे क्या होता है ? ॥ ३ ॥ ऐसा मनमें जान प्रभुने सीताजीको देखा और विशेष कहिये एक नवीन प्रकारकी प्रीति देख प्रसन्न हुये ॥ ४ ॥

गुरुहि प्रनाम मनहिं मन कीन्हा ❀ अति लाघव उठाइ धनु लीन्हा ॥ ५ ॥
दमके दामिनि जिमि घन लयऊ ❀ पुनि धनु नभमंडलसम भयऊ ॥ ६ ॥

मनही मनमें गुरुको प्रणाम किया, और वहुत सहजमें धनुषको उठा लिया ॥ ५ ॥ उठातेही धनुष ऐसा चमका जैसे बिजली चमककर बादलमें लय होजाती है, और फिर खिंचकर झट्ट आकाशमंडलके समान गोल होगया ॥ ६ ॥

लेत चढ़ावत खैंचत गाढ़े ❀ काहु न लखा देख सब ठाढ़े ॥ ७ ॥
तेहि छिन मध्य राम धनु तोरा ❀ भरेउ भुवन धुनि घोर कठोरा ॥ ८ ॥

अच्छी भांति लेते चढ़ाते और खैंचतेमें किसीने नहीं देखा. सब ठड़के ठड़े देखतेही रहे ॥ ७ ॥ उसी पलके वीचमें रामचन्द्रजीने धनुष तोड़डाला और (तीनों) लोकोंमें वड़ा भयंकर और कड़ा शोर भरगया ॥ ८ ॥

छं०-भरि भुवन घोर कठोर रव रबिबाजि तजि मारग चले । ❀
चिकरहिं दिग्गज डोल महि अहि कोल कूरम कलमले ॥ ❀
सुर असुर मुनि कर कान दीन्हे सकल बिकल बिचारहीं । ❀
कोदंड भंजेउ राम तुलसी जयति बचन उचारहीं ॥ २५ ॥ ❀

भुवन कहिये तीनों लोकोंमें बड़ा कठोर शब्द भरगया, सूर्यके घोड़े मार्ग छोड़ २ कर लगे भागने और दिशाओंके हाथी लगे चिंघारने, और पृथ्वी लगी हिलने और शेषजी, वाराह और कछुआ

---

(१) यहाँ सुधाशब्दसे अमृतका अर्थ करनेमें दोष होता है. क्योंकि अमृतका गुण जिलादेना है, अतएव लक्षणासे जलार्थका ग्रहण किया. (२) मनमें इसलिये किया कि गुरुके पास जानेमें देरी होगी और यहाँ सीताका कदाचित् मरन होजाय.

लगे किचपिचाने और देवता, राक्षस और मुनीश्वर सबोंने कानोंमें हाथ दे लिये और विकल हो विचारने लगे कि (क्या हुआ ?) तुलसीदास कहते हैं कि रामचन्द्रजीने धनुष तोड़ा (यह सुन) सब लोग जय शब्द उच्चारण करने लगे कि 'बोलो श्रीरामचन्द्रजीकी जय' ॥ ३५ ॥

सो०-शंकरचाप जहाज, सागर रघुवरबाहुबल ॥
बूड़ेउ सकल समाज, चढ़े जे प्रथमहिं मोहबस ॥ ३६ ॥

महादेवजीका धनुष जहाज था और रामचन्द्रजीकी भुजाओंका बल समुद्र था. उसमें जो पहले ही अज्ञानके वश चढ़े थे, उनका संपूर्ण समाज डूबगया ॥ ३६ ॥

चौ०-प्रभु दोउ खंड चाप महि डारे ❀ देखि लोग सब भए सुखारे ॥ १ ॥
कौशिकरूप पयोनिधि पावन ❀ प्रेमवारि अवगाह सुहावन ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीने धनुषके दोनों टुकड़े धरतीपर डाल दिये तो सब लोग देखकर निहाल हुये ॥१॥ विश्वामित्रका रूप पवित्र समुद्र है, जिसमें प्रेमरूपी गहरा जल शोभायमान है ॥ २ ॥

रामरूप राकेश निहारी ❀ बढ़ी बीचि पुलकावलि भारी ॥ ३ ॥
बाजे नभ गहगहे निसाना ❀ देववधू नाचहिं करि गाना ॥ ४ ॥

रामचन्द्रजीके स्वरूपरूपी पूर्ण चन्द्रमाको देख भारी पुलकावलीरूपी तरंगें बढ़ी, अर्थात् जैसे पूर्ण चन्द्रमाको देख समुद्रमें ज्वारभाटा बढ़ता है उसी प्रकार जब विश्वामित्रने रामको देखा तौ उनके शरीरकी रोमावली खड़ी होगई ॥ ३ ॥ आकाशमें गहगहे बाजे बजने लगे और अप्सरा गागाकर नाचने लगीं ॥ ४ ॥

ब्रह्मादिक सुर सिद्ध मुनीसा ❀ प्रभुहि प्रसंसहिं देहि असीसा ॥ ५ ॥
बरषहिं सुमन रंग बहुमाला ❀ गावहिं किन्नर गीत रसाला ॥ ६ ॥

ब्रह्मादिक देवता, सिद्ध और मुनीश्वर भगवानकी बड़ाईकर आशीर्वाद देने लगे ॥ ५ ॥ रंगरंगके फूल और माला वर्षाने लगे और किन्नर रसीले गीत गाने लगे ॥ ६ ॥

रही भुवन भरि जयजयबानी ❀ धनुषभंगधुनि जात न जानी ॥ ७ ॥
मुदित कहहिं जहँ तहँ नरनारी ❀ भंजेउ राम शंभुधनु भारी ॥ ८ ॥

लोकोंमें जय २ शब्द भर रहा है, परंतु धनुषभंगकी धुनिके कारण (स्पष्ट) सुनाई नहीं देता ॥७॥ जहाँ तहाँ लोग प्रसन्न होकर कहते हैं कि रामचन्द्रने महादेवके बड़े धनुषको तोड़ा है ॥ ८ ॥

दो०-बंदी मागध सूतगण, बिरद बदहिं मतिधीर ॥
करहिं निछावर लोग सब, हय गज धन मनि चीर ॥ २९८ ॥

चतुर भाट, मागध और सूत कहिये पौराणिकोंके समूह यशगान करते हैं और सब लोग घोड़े, हाथी, धन, मणि और कपड़े (इनकी) नौछावर करते हैं ॥ २९८ ॥

चौ०-झांझ मृदंग शंख सहनाई ❀ भेरि ढोल दुंदुभी बजाई ॥ १ ॥
बाजहिं बहु बाजने सुहाए ❀ जहँ तहँ जुवतिन मंगल गाए ॥ २ ॥

---

(१) देवताओंने जय २ शब्द किया सो तौ ठीक परन्तु राक्षसोंने क्यों किया ? उनको तौ दुःख होना चाहिये था, इसका यही समाधान है कि रामचन्द्रजी साक्षात् परमेश्वर थे. उनकी मायासे उससमय सबही मोहित होगये, और वैरभावको छोड़ जय २ बोलने लगे ! यहाँ रामजीका अतुल प्रताप प्रगट है कि जिसके कारण शत्रुपक्षभी स्तुति करता है ॥

झाँझ, मृदंग, शंख, सहनाई, (रोशनचौकी), डफ, ढोल और नगाड़े बजने लगे ॥ १ ॥ बहुतसे सुन्दर वाजे बजते हैं और जहाँ तहाँ स्त्रियां मंगलाचार गाती हैं ॥ २ ॥

सखिनसहित हरषित अति रानी ❀ सूखत धान परा जनु पानी ॥ ३ ॥
जनक लहेउ सुख सोच बिहाई ❀ पैरत थके थाह जनु पाई ॥ ४ ॥

रानी सखियोंसमेत ऐसी अति प्रसन्न हैं मानों सूखते हुये धानोंपर पानी पड़ा ॥ ३ ॥ जनकने शोचको छोड़कर ऐसा सुख पाया मानों थके हुये पैरनेवालेको थाह मिल गई ॥ ४ ॥

श्रीहत भये भूप धनु टूटे ❀ जैसे दिवस दीपछबि छूटे ॥ ५ ॥
सियहिय सुख बरनिय केहि भाँती ❀ जनु चातकी पाइ जल स्वाती ॥ ६ ॥

धनुषके टूटतेही राजा ऐसे कांतिहीन होगये जैसे दिनमें दीपक छबिके छूटनेसे हो जाते हैं ॥ ५ ॥ सीताजीके मनका सुख किसभाँति कहा जाय ! मानों पपीहीको स्वातीका जल मिलगया ॥ ६ ॥

रामहिं लषन बिलोकत कैसे ❀ शशिहिं चकोरकिशोरक जैसे ॥ ७ ॥
शतानंद तब आयसु दीन्हा ❀ सीता गमन रामपहँ कीन्हा ॥ ८ ॥

लक्ष्मण रामचन्द्रजीको कैसे देखते हैं जैसे चकोरका बच्चा चन्द्रमाको ॥ ७ ॥ तब शतानन्दने आज्ञा दी तौ सीताजी रामचन्द्रजीके पास चलीं ॥ ८ ॥

दो०-संग सखी सुंदर चतुर, गावहिं मंगलचार ॥ ❀
गवनी बाल मरालगति, सुखमा अंग अपार ॥ २९९ ॥ ❀

संगमें सुन्दर और चतुर सखियां मंगलाचार गाती हुई चलीं और (सीताजी) ऐसी चलीं कि जैसे कोई हंसकी छौनी जाती हो, और (उससमय) उनके शरीरकी शोभा अपार थी ॥ २९९ ॥

चौ०-सखिनमध्य सिय सोहति कैसी ❀ छबिगनमध्य महाछबि जैसी ॥ १ ॥
करसरोज जयमाल सुहाई ❀ विश्वविजय सोभा जनु छाई ॥ २ ॥

सखियोंके बीचमें सीताजी कैसी शोभायमान लगती हैं जैसे शोभाके समूहके बीचमें बड़ी सुन्दरता लगतीहो ॥ १ ॥ कमलसमान हाथोंमें जयमाला ऐसी शोभायमान है मानों संसारके विजयकी शोभा (इसीपर) छा रही है ॥ २ ॥

तनु सकोच मन परम उछाहू ❀ गूढ़ प्रेम लखि परै न काहू ॥ ३ ॥
जाइ समीप रामछबि देषी ❀ रहि जनु कुँवरि चित्र अवरेषी ॥ ४ ॥

शरीरमें लाज और मनमें बड़ा उत्साह है, भीतरा प्रेम किसीको दिखाई नहीं देता ॥ ३ ॥ पास जाकर रामचन्द्रजीकी शोभा देखी तौ मानों कुँवरी चित्रके समान लिखि रहगई ॥ ४ ॥

चतुर सखी लखि कहा बुझाई ❀ पहिरावहु जयमाल सुहाई ॥ ५ ॥
सुनत जुगलकर माल उठाई ❀ प्रेमबिबस पहिराइ न जाई ॥ ६ ॥

जब चतुर सखीने देखा तौ समझाकर कहा कि (रघुनाथजीकी कंठमें) सुन्दर जयमालाको पहनाओ ॥५॥ सुनतेही दोनों हाथोंसे माला उठाई परंतु स्नेहके वश पहराई नहीं जाती. (दोनों भुजा रामके चन्द्रसमान मुखके सामने एक वार तौ उठीकी उठी रहगईं और ऐसी दीखने लगीं-॥ ६ ॥

सोहत जनु जुग जलज सनाला ❀ शशिहिं सभीत देत जयमाला ॥ ७ ॥
गावहिं छबि अवलोकि सहेली ❀ सिय जयमाल रामउर मेली ॥ ८ ॥

मानों डंडीसहित दो खिले कमल चन्द्रमाको भयसहित जयमाला देते शोभितहों ॥७॥ सखियां इस शोभाको देखकर गाने लगीं. (उसी समय) जानकीजीने रामचन्द्रजीके गलेमें जयमाला डाल दी ॥८॥

सो०–रघुबरउर जयमाल, देखि देव बरषहिं सुमन ॥ ❀
सकुचे सकल भुआल, जनु बिलोकि रवि कुमुदगन ॥ २७ ॥❀

रामचन्द्रजीके हृदयमें जयमाला देख देवता फूल वर्षाने लगे और सब राजा ऐसे सकुचाये मानों सूर्यको देखकर कुमुदोंका समूह सकुचाता हैं ॥ २७ ॥

चौ०–पुर अरु ब्योम बाजने बाजे ❀ खल भए मलिन साधु सब गाजे ॥ १ ॥
सुर किन्नर नर नाग मुनीसा ❀ जय जय सब कहि देहिं असीसा ॥ २ ॥

नगर और आकाशमें बाजे बजने लगे, दुष्ट उदास हुये और सब सज्जन प्रसन्न हुये ॥ १ ॥ देवता, किन्नर, मनुष्य, नाग और मुनीश्वर सब जय २ बोलकर आशीर्वाद देते हैं ॥ २ ॥

नाचहिं गावहिं बिबुधबधूटी ❀ बारबार कुसुमावलि छूटी ॥ ३ ॥
जहँ तहँ बिप्र बेदधुनि करहीं ❀ बंदी बिरदावलि उच्चरहीं ॥ ४ ॥

देवताओंकी वधूटियां नाचती गाती हैं, और वारंवार फूलोंकी लड़ियां वर्षाती हैं ॥ ३ ॥ जहाँ तहाँ ब्राह्मण वेदध्वनि करते हैं और भाट वंशकी बड़ाई करते हैं ॥ ४ ॥

महि पाताल नाक जस ब्यापा ❀ राम बरी सिय भंजेउ चापा ॥ ५ ॥
करहिं आरती पुरनरनारी ❀ देहिं निछावरि बित्त बिसारी ॥ ६ ॥

पृथ्वी पाताल और आकाशमें यश छागया कि रामचन्द्रजीने धनुष तोड़कर सीताजी व्याहीं ॥५॥ नगरके नरनारी आरती करते हैं और वित्तको छोड़ अर्थात् वित्तसे अधिक नौछावर देते हैं ॥ ६ ॥

सोहत सीय रामकी जोरी ❀ छबि शृंगार मनहुँ इक ठोरी ॥ ७ ॥
सखी कहहिं प्रभुपद गहु सीता ❀ करति न चरनपरस अति भीता ॥ ८ ॥

सीता और रामचन्द्रजीकी जोड़ी ऐसी शोभायमान लगती है मानों शोभा और शृंगार (रस आकर) इकठौरे मिले हैं ॥ ७ ॥ सखी कहती है, हे सीताजी! रामचन्द्रजीके चरण पकड़ो, परन्तु वह चरण नहीं छूतीं, अति भयभीतसी खड़ी हैं ॥ ८ ॥

दो०–गौतम तिय गति सुरति करि, नहिं परसति पद पानि ॥ ❀
मन बिहँसे रघुबंशमनि, प्रीति अलौकिक जानि ॥ ३०० ॥ ❀

गौतमकी स्त्री अहल्याकी गतिका स्मरण कर (सीताजी) चरणोंको हाथसे नहीं छूती हैं, रामचन्द्रजी इस अनोखी प्रीतिको जानकर हँसे ॥ ३०० ॥

चौ०–तब सिय देखि भूप अभिलाषे ❀ कूर कुपूत मूढ़ मन माषे ॥ १ ॥
उठि उठि पहरि सनाह अभागे ❀ जहँ तहँ गाल बजावन लागे ॥ २ ॥

उससमय सीताजीको देख राजा ललचाने लगे और टेढ़े कुपूत और मूर्ख (राजा) मनमें क्रोधित हुये ॥ १ ॥ और अभागे (राजा) उठ २ कर और कवच पहन २ जहाँ तहाँ गाल बजाने लगे ॥२॥

---

(१) अर्थात् अहल्या जैसे स्पर्श करतेही स्वर्गको चली गई ऐसेही मैंभी न चली जाऊं ॥ अथवा सीताजी जो आभूषण पहिर रही हैं उननें जो मणियाँ जटित हैं वे रामजीके चरणोंका स्पर्श करतेही सजीव स्त्रीरूप हो रघुनाथजीकी प्रीतिके भागी न होजाँय.

लेहु छुड़इ सीय कह कोऊ ❀ धरि बाँधउ नृपबालक दोऊ ॥ ३ ॥
तोरे धनुष चाड़ नहिं सरई ❀ जीवत हमहि कुँवरिको बरई ॥ ४ ॥

कोई कहता है सीताजीको छीनलो और राजाके दोनों बालकोंको पकड़कर बांधलो ॥३॥ धनुषके तोड़नेसे चाह पूरी नहीं होसक्ती. हमारे जीतेजी कुँवरिको कौन व्याह सक्ता है? ॥ ४ ॥

जो विदेह कछु करैं सहाई ❀ जीतहु समर सहित दोउ भाई ॥ ५ ॥
साधु भूप बोले सुनि बानी ❀ राजसमाजहिं लाज लजानी ॥ ६ ॥

और जो जनक (रामचन्द्र लक्ष्मणकी कुछ सहायता करैं तौ उन्हैं भी) दोनों भाईयोंसमेत लड़ाईमें जीतलो ॥ ५ ॥ ऐसी वाणी सुनकर साधु राजा बोले, अरे राजाओंकी सभाको तौ तुमने लाजसे लजादीनी ? ॥ ६ ॥

बल प्रताप बीरता बड़ाई ❀ नाकपिनाकहि संग सिधाई ॥ ७ ॥
सोइ सूरता कि अब कहुँ पाई ❀ अस बुधि तौ विधि मुँह मसिलाई ॥ ८ ॥

(तुम्हारा) बल, पराक्रम, शूरता और बड़ाई और नाक धनुषके साथही चलीगई; अथवा बल बड़ाई आदि धनुषके साथही नाक कहिये स्वर्गको चलीगई ॥ ७ ॥ वही पराक्रम है अथवा अब कहींसे और मिला है? जब ऐसी बुद्धि है तभी तौ ब्रह्माने तुम्हारे मुहमें स्याही लगाई, अर्थात् तुम्हारा काला मुँह किया ॥ ८ ॥

दो०-देखहु रामहिं नयनभरि, तजि ईर्षा मद मोहु ॥ ❀
लषनरोष पावक प्रबल, जानि सलभ जनि होहु ॥ ३०१ ॥ ❀

ईर्षा, अभिमान और अज्ञानके छोड़ नेत्रभरकर रामचन्द्रजीकी झाँकी कर लो और लक्ष्मणजीका क्रोध मानो प्रचंड अग्नि है, उसमें जलनेके लिये जान बूझकर पतंग मत हो ॥ ३०१ ॥

चौ०-बैनतेयबलि जिमि चह कागू ❀ जिमि सस चहहिं नागअरिभागू ॥ १ ॥
जिमि चह कुसल अकारन कोही ❀ सुख संपदा चहहिं शिवद्रोही ॥ २ ॥

जैसे गरुड़के भागको काग चाहे और वाघके भागको खरगोश चाहे ॥ १ ॥ पुनि जैसे विना कारण क्रोध करनेवाला कुशल चाहे और महादेवका वैरी सुख और संपति चाहे ॥ २ ॥

लोभीलोलुप कीरति चहई ❀ अकलंकता कि कामी लहई ॥ ३ ॥
हरिपदविमुख परमगति चाहा ❀ तस तुम्हार लालच नरनाहा ॥ ४ ॥

और लोभियोंकाभी लोभी अर्थात् अत्यंत लालची अथवा लोभी, और लोलुप कहिये परधनहारी यश चाहै, और कामी अकलंकता चाहै ॥३॥ पुनि जैसे भगवान्के चरणोंसे विमुख मुक्ति चाहै, (सोभला कहीं ये वातें मिलसकती हैं, अर्थात् कभी नहीं मिलसकतीं) तैसाही हे राजाओ! तुम्हारा लालच है ॥४॥

कोलाहल सुनि सीय सकानी ❀ सखीं लिवाइ गईं जहँ रानी ॥ ५ ॥
राम सुभाय चले गुरुपाहीं ❀ सिय सनेह बरनत मनमाहीं ॥ ६ ॥

---

(१) जैसा कहा है कि—

यो वासुदेवादन्यत्र मोक्षं प्रार्थयतेऽल्पधीः । अग्निभ्रांतेः स खद्योतं शीतत्राणाय कल्पते ॥ १ ॥ अर्थात् जो भगवान्को छोड़ मोक्षके लिये अन्यकी उपासना करता है वह मानो अग्निकी भ्रांतिसे खद्योतसे शीत दूर किया चाहता है ॥

सीताजी (राजाओंकी इस) चाऊँ म्याँऊँको सुनकर सकुचीं तौ सखी वहाँ लिवा गई जहाँ रानीथी ॥ ५ ॥ और रामचन्द्रजी मनमें सीताके प्रेमका वर्णन करते हुये प्रसन्नतासे गुरुके पास चले ॥ ६ ॥

रानिनसहित सोचबस सीया ❀ अबधौं विधिहि कहा करनीया ॥ ७ ॥
भूपबचन सुनि इतउत तकहीं ❀ लषन रामडर बोल न सकहीं ॥ ८ ॥

जानकीजी रानियोंसमेत इस शोचके वशमें पड़गई कि देखैं अब विधाताको क्या करना है ॥७॥ लक्ष्मणजी राजाओंके वचन सुन इधर उधर देखते हैं परन्तु रामचन्द्रजीके डरसे बोल नहीं सक्ते॥८॥

दो०–अरुणनयन भ्रकुटी कुटिल, चितवत नृपन सकोप ॥ ❀
मनहुँ मत्तगजगण निरखि, सिंहकिशोरहि चोप ॥ ३०२ ॥ ❀

(लक्ष्मणजी) लाल नेत्र और टेढ़ी भौंहैंकर राजाओंको ऐसे क्रोधसे देखते हैं मानों मतवाले हाथियोंके झुंडको देख सिंहके बच्चेको चोंप होती है ॥ ३०२ ॥

चौ०–खरभर देखि विकल पुरनारी ❀ सब मिलि देहिं महीपन गारी ॥ १ ॥
तेहि अवसर सुनि शिवधनुभंगा ❀ आए भृगुकुलकमलपतंगा ॥ २ ॥

कोलाहलको देख नगरकी नारियाँ विकल होती हैं और सब मिल राजाओंको गालियाँ देती हैं ॥ १ ॥ उस समय शंकरके धनुषको टूटाहुआ सुन भृगुकुलरूपी कमलको सूर्यके समान खिलानेवाले (ऐसे परशुरामजी) आये ॥ २ ॥

देखि महीप सकल सकुचाने ❀ बाज झपट जनु लवा लुकाने ॥ ३ ॥
गौर शरीर भूति भलि भ्राजा ❀ भाल विशाल त्रिपुंड्र विराजा ॥ ४ ॥

उन्हें देख सब राजा ऐसे सकुचे मानों बाजके झपटनेसे बटेर छिप जाते हैं ॥३॥ गौर शरीरमें सुन्दर भबूत शोभायमान है और चौड़े माथेपर त्रिपुंड्र विराजमान है ॥ ४ ॥

सीस जटा ससि वदन सुहावा ❀ रिसिवस कछुक अरुण हुइ आवा ॥ ५ ॥
भ्रकुटी कुटिल नयन रिसि राते ❀ सहजहिं चितवत मनहुँ रिसाते ॥ ६ ॥

शीशपर जटा और चन्द्रमाकासा सुंदर मुख रिसके वश कुछ लाल २ हो आया है ॥ ५ ॥ टेढ़ी भौंहैं नेत्र क्रोधसे लाल होरहे हैं और वे सहजमें इसप्रकार देखते हैं मानो क्रोधमें भर रहे हैं ॥६॥

वृषभकंध उर बाहु विशाला ❀ चारु जनेउ माल मृगछाला ॥ ७ ॥
कटि मुनिबसन तूण दुइ बाँधे ❀ धनु शरकर कुठार कल काँधे ॥ ८ ॥

बैलकेसे कंधे, चौड़ी छाती और लंबी २ भुजा (हृदयपर) सुन्दर जनेऊ और (कंठमें) रुद्राक्षकी माला और शरीरपर मृगछाला धारण किये हैं ॥ ७ ॥ कमरमें मुनियोंकीसी लँगोटी है और दो तरकस बँधे हुये हैं तथा हाथमें धनुषबाण और सुन्दर कंधेपर फरसा धरे हुए हैं ॥ ८ ॥

दो०–संतवेष करनी कठिन, बरनि न जाइ स्वरूप ॥ ❀
धरि मुनितनु जनु बीररस, आयउ जहँ सब भूप ॥ ३०३ ॥ ❀

जिनका वेष तौ संतोंकासा और करनी जिनकी कठिन (ऐसा देख) स्वरूपका वर्णन नहीं किया जाता है. मानों जहाँ सब राजा हैं वहाँ वीररस मुनिका शरीर धारणकर आया है ॥ ३०३ ॥

चौ०–देखत भृगुपति वेष कराला ❀ उठे सकल भयविकल भुआला ॥ १ ॥
पितुसमेत कहि कहि निज नामा ❀ लगे करन सब दंड प्रनामा ॥ २ ॥

परशुरामजीके कठिन वेषको देखतेही सब राजा डरसे व्याकुल हो ऊठ खड़े हुए ॥ १ ॥ और पितासहित अपना २ नाम लेकर सब दंडवत प्रणाम करने लगे ॥ २ ॥

जेहि सुभाव चितवहिं हित जानी ❀ सो जानै जनु आयु खुटानी ॥ ३ ॥
जनक बहोरि आइ सिर नावा ❀ सीय बुलाइ प्रणाम करावा ॥ ४ ॥

जिसको साधारणही प्यारा जानकर देखते हैं वही जानता है मानों खोटी अवस्था आई, अर्थात् काल आगया ॥ ३ ॥ फिर जनकने आकर शिर नवाय सीताजीको बुलाकर प्रणाम कराया ॥ ४ ॥

आसिस दीन्ह सखी हरषानी ❀ निजसमाज लै गई सयानी ॥ ५ ॥
विश्वामित्र मिले पुनि आई ❀ पदसरोजमेले दोउ भाई ॥ ६ ॥

(परशुरामने) आशीर्वाद दिया. तव चतुर सखी प्रसन्न हो (सीताजीको) अपने समाजको ले गई ॥ ५ ॥ फिर विश्वामित्र आकर मिले और उनके चरणकमलोंमें दोनों भाईयोंको लिटा दिया ॥ ६ ॥

राम लषन दशरथके ढोटा ❀ दीन्ह असीस जानि भल जोटा ॥ ७ ॥
रामहिं चितय रहे थकि लोचन ❀ रूप अपार मारमदमोचन ॥ ८ ॥

दशरथके पुत्र रामचन्द्र लक्ष्मणका अच्छा जोड़ जान आशीर्वाद दिया ॥ ७ ॥ रामचन्द्रजीको देखकर (परशुरामजीके) नेत्र थकित हुये (क्योंकि उनका) अपार (वड़ा सुंदर) रूप कामदेवके अभिमानको नाश करनेवाला था ॥ ८ ॥

दो०-बहुरि विलोकि विदेहसन, कहहु कहा अति भीर ॥ ❀
पूछत जान अजान जिमि, व्यापेउ कोप सरीर ॥ ३०४ ॥ ❀

फिर देखकर जनकसे कहा कहो यह काहेकी वारी भीड़भाड़ होरही है? जानकरभी अजानकी भाँति पूछते हैं और शरीरमें क्रोध भर आया ॥ ३०४ ॥

चौ०-समाचार कहि जनक सुनाए ❀ जेहि कारण महीप सब आए ॥ १ ॥
सुनत बचन फिरि अनत निहारे ❀ देखे चापखंड महि डारे ॥ २ ॥

जनकने सब समाचार कहकर सुनाये कि जिस लिये सब राजा आयेथे ॥ १ ॥ वचन सुनतेही फिर दूसरी ओर देखने लगे तौ धनुषके टुकडे पृथ्वीवर पड़ हुये देखे ॥ २ ॥

अति रिस बोले बचन कठोरा ❀ कहु जड़ जनक धनुष केहि तोरा ॥ ३॥
बेगि देखाउ मूढ़ नतु आजू ❀ उलटौं महि जहँलगि तव राजू ॥ ४ ॥

वड़े क्रोधसे कठोर वचन वोले कि, हे मूर्ख जनक! वतला धनुष किसने तोड़ा है? ॥ ३ ॥ हे मूर्ख! उसे जल्दी दिखला नहीं तौ आज जहाँतक पृथ्वीपर तेरा राज्य है (वहाँतक पृथ्वीको) लौटता हूं॥४॥

अति डर उतर देत नृप नाहीं ❀ कुटिल भूप हरषे मनमाहीं ॥ ५ ॥
सुर मुनि नाग नगर नरनारी ❀ सोचहिं सकल त्रास उर भारी ॥ ६ ॥

राजा (जनक) तौ अधिक भयके मारे उत्तर नहीं देते. और कुटिल राजा मनमें प्रसन्न होते हैं ॥५॥ देवता, मुनीश्वर, सर्प और नगरके लोगलुगाई सब सोचते हैं और उनके हृदयमें बड़ा डर होगया ६

मन पछितात सीय महतारी ❀ बिधि सँवारि सब बात बिगारी ॥ ७ ॥
भृगुपतिकर सुभाव सुनु सीता ❀ अर्धनिमेष कल्पसम बीता ॥ ८ ॥

सीताजीकी माता मनमें पछिताती है कि विधाताने सम्हालकर सब बात बिगाड़ी ॥ ७ ॥ और परशुरामजीका स्वभाव सुनकर सीताजीका आधा पलक कल्पके समान व्यतीत होने लगा ॥ ८ ॥

दो०-सभय विलोके लोग सब, जानि जानकी भीर ॥ ❀
हृदय न हरष विषाद कछु, बोले श्रीरघुवीर ॥ ३०५ ॥ ❀

श्रीरामचन्द्रजी सब लोगोंको डरा हुआ देख और सीताजीको दुखी जान मनमें कुछ सुख और दुःख न कर बोले-॥ ३०५ ॥

चौ०-नाथ शंभुधनुभंजनिहारा ❀ होइहि कोउ इक दास तुम्हारा ॥ १ ॥
आएसु कहा कहिय किन मोही ❀ सुनि रिसाय बोले मुनि कोही ॥ २ ॥

हे स्वामी! महादेवके धनुषका तोड़नेवाला कोई एक आपकाही सेवक होगा ॥ १ ॥ परंतु आपकी क्या आज्ञा है मुझसे क्यों नहीं कहते? यह सुन क्रोधी मुनीश्वर क्रोधकर बोले कि-॥ २ ॥

सेवक सो जो करै सेवकाई ❀ अरिकरनी करि करिय लराई ॥ ३ ॥
सुनहु राम जेहि शिवधनु तोरा ❀ सहसबाहुसम सो रिपु मोरा ॥ ४ ॥

सेवक तौ वह है जो सेवा करै; और जो वैरीके काम करै उससे लड़ाई करनी चाहिये ॥ ३ ॥ हे राम! सुनो जिसने महादेवके धनुषको तोड़ा है वह सहस्रबाहुके समान मेरा वैरी है ॥ ४ ॥

सो बिलगाइ बिहाइ समाजा ❀ नतु मारे जैंहै सब राजा ॥ ५ ॥
सुनि मुनिवचन लषन मुसुकाने ❀ बोले परशुधरहिं अपमाने ॥ ६ ॥

वह समाजको छोड़कर अलग हो जाय नहीं तौ सब राजा मारे जायँगे ॥ ५ ॥ मुनिके वचन सुन लक्ष्मणजी हँसे और परशुरामजीका निरादर कर बोले ॥ ६ ॥

बहु धनुहीं तोरेउँ लरिकाईं ❀ कबहुँ न अस रिस कीन्ह गुसाँईं ॥ ७ ॥
इहि धनु पर ममता केहि हेतू ❀ सुनि रिसाय कह भृगुकुलकेतू ॥ ८ ॥

हे गोसाँई! लड़कपनमें बहुतसी धनुही अर्थात् छोटे २ धनुष तोड़ डाले परंतु ऐसा क्रोध कभी नहीं किया॥७॥ इस धनुषपर इतनी प्रीति किस कारण है? यह सुन परशुरामजी रिसहोकर कहने लगे॥८॥

दो०-रे नृपबालक कालवस, बोलत तोहिं न सँभार ॥ ❀
धनुहीसम त्रिपुरारिधनु, विदित सकल संसार ॥ ३०६ ॥ ❀

अरे राजाके बालक! तू कालके वशमें है इस लिये सम्हालकर नहीं बोलता· सब संसारमें विदित ऐसा महादेवका धनुष क्या उन्हीं छोटे धनुषोंकी बराबर है? ॥ ३०६ ॥

चौ०-लषन कहा हँसि हमरे जाना ❀ सुनहु देव सब धनुषसमाना ॥ १ ॥
का क्षति लाभ जीर्ण धनु तोरे ❀ देखा राम नयेके भोरे ॥ २ ॥

लक्ष्मणजीने कहा हे देव! सुनो, हमारे जाने सब धनुष बराबर हैं॥ १ ॥ पुराने धनुषके तोड़नेसे क्या हानि और क्या लाभ हुआ! रामचन्द्रजीने नयेके धोखेसे देखा था॥ २ ॥

छुवत टूट रघुपतिहिं न दोषू ❀ मुनि बिनु काज करिय कत रोषू ॥ ३ ॥
बोले चितइ परशुकी ओरा ❀ रे शठ सुनेसि सुभाउ न मोरा ॥ ४ ॥

---

(१) "एक दास" कहना यही गूढ़ है; अर्थात् कोई मुख्य दास होगा. मुख्य दास कौन, कि जिसके हृदयमें तुम्हारे पुरखा भृगुजीने लात मारीथी और फिर कैसा कि, "नाथ शंभु" कहिये स्वामी हैं शंभु जिसके, अर्थात् जैसे तुम शिवजीको अपना गुरु मानते हो मेरेभी वे स्वामी हैं, मैं उनका भक्तहूँ, ऐसा कोई एक तुम्हारा दास होगा. (२) एक समय परशुरामके पिता जमदग्नीने राजा सहस्रबाहुका न्योताकिया और कामधेनुके प्रतापसे षट्रस भोजन कराया, राजाने आश्चर्ययुक्त हो गौ माँगी, मुनिने न दी राजाने कोपकर जमदग्निको मारडाला, गौ इन्द्रलोकको गई और परशुरामजीने सहस्रबाहुको मारकर क्षत्रवंश नष्ट करनेकी प्रतिज्ञा की और २१ बार पृथ्वी क्षत्रियरहित करदी.

सो वह तौ छूतेही टूट गया रामचन्द्रजीकाभी दोष नहीं है हे मुनिराज ! विना काम क्यों रोष करते हो ॥३॥ (परशुरामजी) फरसेकी ओर देख बोले अरे मूर्ख ! तैंने मेरा स्वभाव नहीं सुना ॥ ४॥

बालक बोलि बधौं नहिं तोहीं ❀ केवल मुनि जड़ जानसि मोहीं ॥ ५ ॥
बालब्रह्मचारी अति कोही ❀ बिश्वबिदित क्षत्रीकुलद्रोही ॥ ६ ॥

हे मूर्ख ! मैं तुझे बालक कहचुका इस लिये नहीं मारता हूँ; तू मुझे केवल मुनीश्वरही मत जाने ५ मैं बालकपनसे ब्रह्मचारी और बड़ा क्रोधी हूं और क्षत्रियोंके कुलका वैरी संसारमें प्रसिद्ध हूं ॥ ६ ॥

भुजबल भूमि भूपबिनु कीन्हीं ❀ बिपुलबार महिदेवन दीन्हीं ॥ ७ ॥
सहसबाहुभुजछेदनहारा ❀ परशु बिलोकु महीपकुमारा ॥ ८ ॥

मैंने भुजाओंके बलसे बहुतवार पृथ्वी राजाओंसे रहित करदी और ब्राह्मणोंको देदी ॥ ७ ॥ अरे राजाके बालक ! सहस्रबाहुकी भुजाओंके काटनेवाले फरसेको देख ॥ ८ ॥

दो०-मातुपितहिं जनि सोचबश, करसि महीपकिशोर ॥ ❀
गर्भनके अर्भकदलन, परशु मोर अति घोर ॥ ३०७ ॥ ❀

हे राजकुमार ! मातापिताको शोचके वश मत करे, (क्योंकि) मेरे फरसेके बड़े घोर शब्दको सुनकर गर्भोंके बालक गिर पड़ते हैं ॥ ३०७ ॥

चौ०-बिहँसि लषन बोले मृदु बानी ❀ अहो मुनीस महाभटमानी ॥ १ ॥
पुनि पुनि मोहिं देखाव कुठारा ❀ चहत उड़ावन फूँकि पहारा ॥ २ ॥

लक्ष्मणजी हँसकर मीठी वाणी बोले, हे मुनीश्वर ! आप बड़े अभिमानी योधा हो ॥ १ ॥ मुझे वारंवार फरसा दिखाते हो (सो क्या) फूँकसे पहाड़को उड़ाया चाहते हो ॥ २ ॥

इहाँ कुम्हड़ बतिया कोउ नाहीं ❀ जो तर्जनि देखत डरिजाहीं ॥ ३ ॥
देखि कुठार सरासन बाना ❀ मैं कछु कहा सहितअभिमाना ॥ ४ ॥

यहां कोई कुम्हड़ेकी बतिया अर्थात् कासीफलकी हालकी निकली फली तौ है नहीं जो तर्जनी उंगलीको देखतेही मुरझा जाय ॥३॥ और मैंने तौ धनुषबाणको देखकर कुछ अभिमानसे कहाथा ॥४॥

भृगुकुल समुझि जनेउ बिलोकी ❀ जो कछु कहहु सहौं रिस रोकी ॥ ५ ॥
सुर महिसुर हरिजन अरु गाई ❀ हमरे कुल इन्हपर न सुराई ॥ ६ ॥

और आपको भृगुके कुलमें जान और आपके जनेउको देख जो कुछ आप कहोगे उसे क्रोधको रोककर सहूँगा ॥ ५ ॥ योंकि हमारे कुलमें देवता, ब्राह्मण, हरिभक्त और गाय इनपर शूरता नहीं करते ॥ ६ ॥

बधे पाप अपकीरति हारे ❀ मारतहू पाँ परिय तुम्हारे ॥ ७ ॥
कोटिकुलिससम बचन तुम्हारा ❀ बृथा धरहु धनुबान कुठारा ॥ ८ ॥

इनके मारनेसे पाप और हारनेसे अपयश[2] होता है इसलिये तुम्हारे मारनेपरभी पैरोंही पड़ना

---

(१) बालक मारनेका पाप है, यथा श्लोक—

स्त्रीशूद्रविट्क्षत्रवधो नास्तिक्यं चापि पातकम् । अपहृत्य च निक्षेपं कृत्वा स्त्रीबालघातनम् ॥ १ ॥

अर्थात् स्त्री, शूद्र, वैश्य और क्षत्रीका वध, नास्तिक्य, धरोहर हरना और स्त्री बालकका मारना ये पाप हैं १.

(२) अपयश यह कि क्षत्री होकर डरते हैं. परन्तु इस चौपाईका ऐसा पाठभेदभी है कि "वधे पाप अपि कीरति हारे" अर्थात् मारनेसे पाप और हारनेसे अपि कहिये निश्चय करके कीर्ति होती है इसलिये

चाहिये ॥ ७ ॥ करोड़ों वज्रोंके समान तौ आपका वचनही है (फिर) धनुषबाण और फरसेको वृथा धारण करते हो ॥ ८ ॥

दो०–जो विलोकि अनुचित कहेउँ, क्षमहु महामुनि धीर ॥
सुनि सरोष भृगुवंसमणि, बोले गिरा गँभीर ॥ ३०८ ॥

हे धीर मुनीश्वरजी ! सुनो. जो देखकर कुछ अयोग्य कहा हो तौ क्षमा करो. यह सुनकर परशुरामजी क्रोधसे गंभीर वाणी बोले ॥ ३०८ ॥

चौ०–कौशिक सुनहु मंद यह बालक ❀ कुटिल कालबस निजकुलघालक ॥ १ ॥
भानुवंशराकेशकलंकू ❀ निपट निरंकुश अबुध असंकू ॥ २ ॥

हे विश्वामित्र ! सुनो. यह बालक मूर्ख और कुटिल है और कालके वशहोकर अपने कुलका नाश किया चाहता है ॥ १ ॥ सूर्यवंश मानों चन्द्रमा है उसमें यह कलंकरूपी है और बिलकुल स्वतंत्र अज्ञान और निडर है ॥ २ ॥

काल कबल होइहि छिनमाहीं ❀ कहौ पुकारि खोरि मोहिं नाहीं ॥ ३ ॥
तुम हटकहु जो चहहु उबारा ❀ कहि प्रताप बल रोष हमारा ॥ ४ ॥

यह क्षणभरमें कालका ग्रास हो जायगा. मैं पुकारकर कहे देता हूं, फिर मुझे दोष नहीं है ॥३॥ जो तुम इसे बचाया चाहते हो तौ हमारा तेज, बल, और क्रोध जताकर उसे बरज दो ॥ ४ ॥

लषन कहेउ मुनि सुजस तुम्हारा ❀ तुमहिं अछत को बरनै पारा ॥ ५ ॥
अपने मुख तुम आपनि करनी ❀ बार अनेक भाँति बहु बरनी ॥ ६ ॥

लक्ष्मणजीने कहा हे मुनि ! तुम्हारे सुन्दर यशको तुम्हारे होते कौन वर्णन कर पार पासक्ता है ? ॥ ५ ॥ तुमने अपने मुखसे अपनी करनी अनेकवार बहुत भाँति वर्णन की है ॥ ६ ॥

नहिं संतोष तो पुनि कछु कहहू ❀ जनि रिस रोकि दुसह दुख सहहू ॥ ७ ॥
वीरवृत्ति तुम धीर अछोभा ❀ गारी देत न पावहु सोभा ॥ ८ ॥

और जो अबभी संतोष नहीं है तौ फिर कुछ कहो; रिसको रोककर कठिन दुःखको मत सहो ॥ ७ ॥ तुम्हारी योधाओंकी चेष्टा है, धीरजवान् और क्षोभरहित हो, (इस कारण) गाली देते हुये शोभा नहीं पाते हो ॥ ८ ॥

दो०–सूर समरकरनी करहिं, कहि न जनावहिं आपु ॥
विद्यमान रण पाइ रिपु, कायर कथहिं प्रलापु ॥ ३०९ ॥

योधा लड़ाईमें करनी करते हैं (परन्तु) आपही कह २ कर नहीं जतलाते फिरते हैं. और लड़ाईमें वैरीको खड़ा हुआ पाकर तौ कायर लोग डींगें मारा करते हैं ॥ ३०९ ॥

चौ०–तुम तौ काल हाँकि जनु लावा ❀ बार बार मोहिं लागि बुलावा ॥ १ ॥
सुनत लषनके बचन कठोरा ❀ परशु सुधारि धरेउ कर घोरा ॥ २ ॥

और तुम तौ मानों कालको (साथही) हांके लाये हो जो वारंवार मेरे लिये बुलाते हो ॥१॥ लक्ष्मणजीके कठोर वचन सुनतेही भयंकर फरसा सुधाकर हाथमें लिया और बोले कि ॥ २ ॥

अब जनि देइ दोष मोहिं लोगू ❀ कटुवादी बालक बधयोगू ॥ ३ ॥
बाल बिलोकि बहुत मैं बाँचा ❀ अब यह मरनहार भा साँचा ॥ ४ ॥

तुम्हारे मारनेपरभी चरणोंमें पड़ना चाहिये; जैसे जब तुम्हारे पुरखा भृगुने भगवान्‌के लात मारी तौ उलटा पैरों पड़ पैर दाबने लगे कि आपके चरणमें लगगई होगी ॥

अब लोग मुझे दोष न दें, क्योंकि कटुभाषी बालक मारनेहीके योग्य है ॥ ३ ॥ मैंने बालक देखकर बहुत बचाया, परन्तु अब यह सचमुचही मरनहार है ॥ ४ ॥

कौशिक कहा क्षमिय अपराधू ॥ बालदोष गुन गनहिं न साधू ॥ ५ ॥
कर कुठार मैं अकरन कोही ॥ आगे अपराधी गुरुद्रोही ॥ ६ ॥

विश्वामित्रजीने कहा अपराध क्षमा करो, क्योंकि साधु लोग बालकके दोष और गुणोंको नहीं गिनते ॥ ५ ॥ (परशुरामजी बोले कि) मैं विनाहीकारण क्रोधी हूँ (जिसमें तौ मेरे) हाथमें फरसा है और गुरुका वैरी आगे खड़ा है ॥ ६ ॥

उतर देत छाँडौं विनुमारे ॥ केवल कौशिक शील तुम्हारे ॥ ७ ॥
नतु यहि काठि कुठार कठोरे ॥ गुरुहिं उऋण होतेउँ श्रम थोरे ॥ ८ ॥

और उत्तर देता जाता है, सो हे विश्वामित्र ! केवल तुम्हारेही शीलके कारण इस उत्तर देते हुयेको विनमारे छोड़ताहूं ॥ ७ ॥ नहीं तौ इसको कठोर फरसेसे काटकर थोड़ेही परिश्रमसे गुरुके ऋणसे छूट जाता ॥ ८ ॥

दो०–गाधिसुअन कह हृदय हँसि, मुनिहिं हरि अरे सूझ ॥
अजगव खंडेउ ऊख जिमि, अजहुँ न बूझ अबूझ ॥ ३१० ॥

विश्वामित्रने मनमें हँसके कहा कि मुनीश्वरको भगवान् वैरीही सूझ रहे हैं, जिन्होंने धनुषको गन्नेकी भांति तोड़ डाला. उनका ज्ञान इस अज्ञानीको अबभी नहीं होता. अथवा हरिहरे सूझ यह पाठान्तरभी सुन्दर है. अर्थात् (जैसी संसारमें कहावत है कि सावनके अंधेको सब हराही हरा सूझता है वैसाही) मुनीश्वरको हराही हरा दीख रहा है, अर्थात् धनुषके तोड़नेपरभी रामजीको सब क्षत्रियोंके समानही जान रहे हैं ॥ ३१० ॥

चौ०–कहेउ लषन मुनि शील तुम्हारा ॥ को नहिं जान विदितसंसारा ॥ १ ॥
मातुहि पितुहि उऋण भए नीके ॥ गुरुऋण रहा सोच बड़ जीके ॥ २ ॥

लक्ष्मणजीने कहा हे मुनि ! तुम्हारे स्वभावको कौन नहीं जानता ? संसारमें प्रकटही है ॥ १ ॥ और (रही ऋणकी) सो मातापितासे तौ अच्छी भाँति उऋण होही गये परन्तु गुरुका ऋण रहा है. सो (तुम्हारे) मनको बड़ा सोच है ॥ २ ॥

---

(१) मनमें इसलिये हँसे कि प्रगट हँसनेसे परशुरामका अधिक तिरस्कार होता और इनकी गंभीरतामें दोष आता–इस दोहेमेंभी पाठभेद है. किसी पुस्तकमें ऐसा पाठ है कि "अयमय खाँड न ऊख जिमि" अर्थात् यह लोहेकी खाँड है, ऊखकी नहीं कि जिसे चाट जाओगे. भाव यह हुआ कि, रामचन्द्र क्षत्रिय तौ हैं परन्तु औरोंके समान पंचभूतमय क्षत्रिय नहीं हैं जिन्हें नाश करचुके हो, यह ब्रह्ममय हैं; सो अभीतक नहीं सूझता ॥

(२) मनुष्य संसारमें माता, पिता और गुरुके ऋणको बहुत समझता है सो हे परशुरामजी ! मातापिताके ऋणसे तौ खूब चुक गये. क्या कहना है. लक्ष्मणजी व्यंग्य वचनसे जिस कथाका संकेत करते हैं वह यों है कि "एक दिन परशुरामजीकी माता रेणुका यमुना स्नानकरने गई, वहाँ मछलियोंको केलि करते देख कहने लगी कि मैंभी घरजाकर ऐसेहीं क्रीड़ा करूंगी. यह विचार घर आय कामातुर हो पतिसे इच्छा प्रगट करी तब मुनिने पुत्रोंको अपनी माताका शिर काटनेकी आज्ञा करी, यह सुन जब तीनों बेटोंने आज्ञा न मानी तब मुनिने परशुरामजीसे कहा । उन्होंने पिताकी आज्ञासे तीनों भाइयों और माताका शिर काट लिया ऐसा साहस देख, ऋषि प्रसन्न हो बोले कि वर माँग, उन्होंनें कहा कि ये सब जी उठें और मेरे मारनेका वृत्तान्त न जानें तब उन्होंनें चारोंको जिला दिया. उन्हीं जमदग्निका शिर सहस्रबाहुने काटा था जिसके कारण कईवार परशुरामने क्षत्रियोंका शिर काट संहार किया."

सो जनु हमरेहि माथे काढ़ा ❀ दिन चलि गए ब्याज बहु बाढ़ा ॥ ३ ॥
अब आनिय ब्यवहरिया बोली ❀ तुरत देव मैं थैली खोली ॥ ४ ॥

सो वह मानों हमारे शिर निकाला है और दिनभी बहुत बीतगये (इसलिये) व्याजभी बहुत बढ़ गया होगा ॥ ३ ॥ अब आप बोहरेको बुलवाकर लाइये कि मैं अभी बसनी खोलकर उसे (मूल व्याजसमेत) परखादूं ॥ ४ ॥

सुनि कटु बचन कुठार सुधारा ❀ हाहा कहि सब लोग पुकारा ॥ ५ ॥
भृगुबर परशु दिखावहु मोही ❀ विप्र विचारि बचौं नृपद्रोही ॥ ६ ॥

ऐसे कठोर वचन सुन फरसा सुधारा. तौ सब लोग हाहाकार कर पुकारने लगे ॥ ५ ॥ (फिर लक्ष्मण बोले) हे परशुराम! मुझे फरसा तौ दिखाते हो, और राजाओंके वैरीभी हो! परंतु मैं ब्राह्मण जान तुम्हें छोड़ता हूं ॥ ६ ॥

मिले न कबहुँ सुभट रणगाढ़े ❀ द्विज देवताघरहिके बाढे ॥ ७ ॥
अनुचित कहि सब लोग पुकारे ❀ रघुपति सेनहिं लषन निवारे ॥ ८ ॥

कभी लड़ाईमें गाढ़े योधा नहीं मिले अर्थात् उनसे काम नहीं पड़ा है. ब्राह्मण, देवता घरहीके बड़े होते हैं ॥ ७ ॥ यह सुन सब लोग ऐसा कह कर पुकारने लगे कि यह बात अनुचित है (तब तौ) रामचन्द्रजीने सेनसे लक्ष्मणजीको वरज दिया ॥ ८ ॥

दो०-लषन उतर आहुतिसरिस, भृगुपतिकोपकृसानु ॥ ❀
बढ़त देखि जलसम बचन, बोले रघुकुलभानु ॥ ३११ ॥ ❀

लक्ष्मणजीका उत्तर आहुतिके समान है, उससे परशुरामके अग्निसमान क्रोधको बढ़ता हुआ देख रामचन्द्रजी जलके समान वचन बोले ॥ ३११ ॥

चौ०-नाथ करहु बालकपर छोहू ❀ शुद्धदूधमुख करिय न कोहू ॥ १ ॥
जोपै प्रभुप्रभाव कछु जाना ❀ तौकि बराबर करत अयाना ॥ २ ॥

हे स्वामी! बालकपर दया करो. यह शुद्ध दूधमुख है. अर्थात् जो बच्चा केवल दूध पीता है उसके समान है, इसपर क्रोध मत करो ॥१॥ हे स्वामी! जो आपके प्रतापको कुछभी जानता होता तौ क्या यह अनजान आपकी बराबरी करता? ॥ २ ॥

जो लरिका कछु अनुचित करहीं ❀ गुरु पित मातु मोद मन भरहीं ॥ ३ ॥
करिय कृपा सिसु सेवक जानी ❀ तुम सम सील धीर मुनि ज्ञानी ॥ ४ ॥

जो बालक कुछ अयोग्यभी करै तौ गुरु, पिता, माता मनमें आनन्दित होते हैं ॥ ३ ॥ बालकको सेवक जान कृपा कीजिये. क्योंकि आप तौ समशिल अर्थात् निन्दा और स्तुतिको समान माननेवाले हो, पुनि बड़े धीर और ज्ञानी मुनि हो ॥ ४ ॥

रामवचन सुनि कछुक जुड़ाने ❀ कहि कछु लषन बहुरि मुसकाने ॥ ५ ॥
हँसत देखि नख शिखरिसि व्यापी ❀ राम तोरभ्राता बड़ पापी ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीके वचन सुन कुछ ठंढे हुयेथे कि इतनेमें लक्ष्मणजी फिर कुछ कहकर मुसकुरा

---

(१) इसमेंसे यह ध्वनि निकलती है कि तुम हमसे बदला लेनेके योग्य नहीं हो; अपने गुरु महादेवजी को बुलालाओ, वे आकर बदला ले जाँयगे ॥ (२) अर्थात् घरमेंही माताका शिर काटकर वीर दिखाई है ॥

दिये ॥ ५ ॥ (उनको) हँसते हुये देखतेही नखसे चोटीतक क्रोध भरगया (और कहा) हे राम! तेरा भाई तौ बड़ा पापी है ॥ ६ ॥

गौर सरीर स्याम मनमाहीं ❀ कालकूटमुख पयमुख नाहीं ॥ ७ ॥
सहज टेढ़ अनुहरै न तोही ❀ नीच मीचुसम लखै न मोही ॥ ८ ॥

शरीरका गोरा है परंतु मनमें काला है. (और तुमने जो कहा था कि "शुद्ध दूधमुख करिय न कोहू" सो बात नहीं है यह) दूध पीते बालकके समान नहीं है, यह तौ कालकूट कहिये विष है मुखमें जिसके, ऐसे सर्पके समान है ॥ ७ ॥ यह स्वभावहीसे कुटिल है तेरी बराबरी नहीं कर सक्ता. (और यह) नीच मुझे मौतके समान नहीं देखता ॥ ८ ॥

दो०-लषन कहेउ हँसि सुनहु मुनि, क्रोध पापकरमूल ॥ ❀
जेहिबस जन अनुचित करहिं, चरहिं विश्वप्रतिकूल ॥३१२॥ ❀

लक्ष्मणजीने हँसकर कहा, हे मुनि! सुनो क्रोध[1] पापकी जड़ है कि जिसके वश हो मनुष्य अनुचित करते हैं और संसारमें टेढ़े चलते हैं ॥ ३१२ ॥

चौ०-मैं तुम्हार अनुचर मुनिराया ❀ परिहरि कोप करिय अब दाया ॥ १ ॥
टूट चाप नहिं जुरहि रिसाने ❀ बैठिय होइहिं पाँयपिराने ॥ २ ॥

हे मुनिराज! मैं तौ तुम्हारा सेवक हूं अब क्रोध छोड़ दया कीजिये ॥ १ ॥ टूटा हुआ धनुष रिस होनेसे तौ जुड़ नहीं सकता. अब बैठ जाइये, पैरोंमें पीर होने लगी होगी ॥ २ ॥

जो अति प्रिय तौ करिय उपाई ❀ जोरिय कोउ बड़ गुनी बुलाई ॥ ३ ॥
बोलत लषनहिं जनक डराहीं ❀ मष्टकरहु अनुचित भल नाहीं ॥ ४ ॥

और जो (यह धनुष) बड़ा प्यारा है तो उपाय कीजिये. कोई बड़ा गुणी बुलाकर जुड़वाइये (और दाम मुझसे लीजिये) ॥ ३ ॥ लक्ष्मणजीके बोलतेही जनक डरने लगे कि चुप करो, बहुत अनुचित कहना अच्छा नहीं होता ॥ ४ ॥

थर थर काँपहिं पुरनरनारी ❀ छोट कुमार खोट अति भारी ॥ ५ ॥
भृगुपति सुनि सुनि निर्भय बानी ❀ रिस तनु जरै होइ बलहानी ॥ ६ ॥

नगरके स्त्री पुरुष थरथर काँपते हैं और कहते हैं कि छोठे बालककी बड़ी भारी खोट है ॥५॥ (लक्ष्मणजीकी) निडर वाणीको सुनकर परशुरामजीका शरीर क्रोधसे जला जाता है और बलकी हानि होती है ६

बोले रामहिं देइ निहोरा ❀ बचौं बिचारि बंधु लघु तोरा ॥ ७ ॥
मन मलीन तनु सुंदर कैसे ❀ विषरस भरा कनकघट जैसे ॥ ८ ॥

(परशुराम) रामचन्द्रजीको निहोरा देकर अर्थात् मानों उनपर अहसान करके बोले कि तेरा छोटा भाई जानकर छोड़ें देता हूँ ॥ ७ ॥ यह मनका मैला और शरीरका सुन्दर कैसा लगता है कि जैसे सोनेका घड़ा विषरससे भरा हो ॥ ८ ॥

---

(१) अन्धीकरोति भुवनं बधिरीकरोति धीरं सचेतनमचेतनतां नयेत् क्रुध् ।
कृत्यं न पश्यति न चात्महितं शृणोति धीमानधीतमपि न प्रतिसंदधाति ॥ १ ॥

अर्थात् क्रोध, लोकको अन्धा कर देता है, पण्डितोंको बधिर कर देता है, सचेतनको अचेतन करता है जिस मनुष्यको आता है वह कार्यको नहीं देखता; अपने हितको नहीं सुनता, और पण्डितका ज्ञान पण्डितको नहीं रहता.

दो०–सुनि लक्ष्मण बिहँसे बहुरि, नयन तरेरे राम ॥
गुरुसमीप गवने सकुचि, परिहरि बानी बाम ॥ ३१३ ॥

लक्ष्मणजी सुनकर फिर हँसे, तौ रामचन्द्रजीने नेत्रोंसे डाटा, फिर सकुचकर और टेढ़ी वाणी (जो कहा चाहते थे उसे) रोककर गुरुके पास चले गये ॥ ३१३ ॥

चौ०–अति बिनीत मृदु शीतल बानी ❀ बोले राम जोरि जुगपानी ॥ १ ॥
सुनहु नाथ तुम सहज सुजाना ❀ बालकबचन करिय नहिं काना ॥ २ ॥

फिर रघुनाथजी अति नम्रतापूर्वक मीठी और शीतल वाणीसे दोनों हाथ जोड़कर बोले कि॥१॥ हे स्वामी ! सुनों, तुम तौ स्वभावहीसे ज्ञानवान् हो, बालकके बचनोंपर ध्यान देना नहीं चाहिये २

बररे बालक एक सुभाऊ ❀ इनहिं न संत बिदूषहिं काऊ ॥ ३ ॥
तिन्ह नाहीं कछु काज बिगारा ❀ अपराधी मैं नाथ तुम्हारा ॥ ४ ॥

वर्र और बालकका एकही स्वभाव होता है, संत लोग इनमेंसे किसीको नहीं छेड़ते ॥ ३ ॥ और उसने कुछ कामभी नहीं बिगाड़ा है. हे स्वामी ! आपका अपराधी तौ मैं हूँ ॥ ४ ॥

कृपा कोप वध बंध गुसाँई ❀ मोपर करिय दासकी नाँई ॥ ५ ॥
कहिय बेगि जेहिबिधि रिस जाई ❀ मुनिनायक सोइ करिय उपाई ॥ ६ ॥

हे गोसाँई ! दया, क्रोध, मारना और बाँधना मेरेऊपर ऐसा करो कि जैसा सेवकपर करते हैं. अर्थात् जो करो सो ब्राह्मण बनकर करो और जो क्षत्री बनकर किया चाहो, तौ मुझे स्वीकृत नहीं है ॥ ५ ॥ हे मुनिराज ! जिस भाँति रिस जाय सो जल्दी कहो, वही उपाय किया जाय ॥ ६ ॥

कह मुनि राम जाइ रिस कैसे ❀ अजहुँ अनुज तव चितव अनैसे ॥ ७ ॥
यहिके कंठ कुठार न दीन्हा ❀ तो मैं कहा कोप करि कीन्हा ॥ ८ ॥

मुनिने कहा हे राम ! रिस कैसे जाय, तेरा छोटाभाई तौ अबभी टेढ़ींनिगाहसे देखता है ॥ ७ ॥ सो इसके गलेमें फरसा नहीं दिया तौ मैंने क्रोधकर क्या किया? ॥ ८ ॥

दो०–गर्भ स्रवहिं अवनिपरमनि, सुनि कुठारगति घोर ॥
परशु अछत देखौं जियत, बैरी भूपकिसोर ॥ ३१४ ॥

जिस फरसेके घोर शब्दको सुनकर राजाओंकी रानियोंके गर्भ पृथ्वीपर गिरते हैं उसी फरसेके होते हुये वैरी राजकुमारको जीता देखता हूँ ॥ ३१४ ॥

चौ०–बहै न हाथ दहै रिस छाती ❀ भा कुठार कुंठित नृपघाती ॥ १ ॥
भयउ बाम बिधि फिरेउ सुभाऊ ❀ मोरे हृदय कृपा कस काऊ ॥ २ ॥

रिससे छाती तौ जली जाती है. और हाथ उठता नहीं है. और राजाओंका मारनेवाला फरसा भी भोंतरा पड़गया ॥ १ ॥ (और तौ क्या) विधाताभी टेढ़ा होगया कि जो मेरा स्वभाव बदल गया, नहीं तौ मेरे मनमें किसीके ऊपर कृपा कैसी ? ॥ २ ॥

आजु दैव दुख दुसह सहावा ❀ सुनि सौमित्रि बिहँसि सिर नावा ॥ ३ ॥
नाथ कृपामूरति अनुकूला ❀ बोलत बचन झरत जनु फूला ॥ ४ ॥

आज ब्रह्माने कठिन दुःख सहाया. यह सुनकर लक्ष्मणजीने हँसके माथा नवाया (और बोले) ३

---

(१) गोसाँई शब्दका शुद्ध शब्द गोस्वामी है. अर्थात् इन्द्रियोंके रोकनेवाले यह व्यंग्य वचन कहा ॥

हे स्वामी ! आप तौ दयाकी मूर्तिही हो, और उसीके अनुसार वचन बोलते हो (सो ऐसा भास होता है) मानों फूल झरते हैं ॥ ४ ॥

जौंपै कृपा जरै मुनिगाता ❀ क्रोध भए तनु राख विधाता ॥ ५ ॥
देख जनक हठि बालक एहू ❀ कीन्ह चहत जड़ यमपुर गेहू ॥ ६ ॥

हे मुनिराज ! जो दया करनेसे आपका शरीर जला जाता है तौ क्रोध होनेपर शरीरकी विधाता ही रखता होगा ॥ ५ ॥ (यह सुन परशुराम बोले) हे जनक ! देखो यह मूर्ख बालक हठसे यमपुरमें घर किया चाहता है ॥ ६ ॥

बेगि करहु किन आँखिन ओटा ❀ देखत छोट खोट नृपढोटा ॥ ७ ॥
बिहँसे लषन कहा मुनि पाहीं ❀ मूँदिय आँखि कतहुँ कोउ नाहीं ॥ ८ ॥

जल्दी इसे आँखोंकी ओटमें क्यों नहीं कर देते ? राजाका छोटा ढोटा देखनेमें खोटा हैं ॥ ७ ॥ (यह सुन) लक्ष्मणजी हँसे और मुनिसे कहा, (कि इसका उपाय तौ सहज है कि) आप आँख मूँद लीजिये तौ तुम्हारे लेखे कहींभी कोई नहीं है ॥ ८ ॥

दो०–परशुराम तब राम प्रति, बोले बचन सक्रोध ॥ ❀
शंभुसरासन तोड़ि शठ, करसि हमार प्रबोध ॥ ३१५ ॥ ❀

तब तौ परशुराम रामचन्द्रजीसे क्रोधभरे वचन बोले कि हे मूर्ख ! महादेवके धनुषको तोड़कर हमको ज्ञान सिखाता है ॥ ३१५ ॥

चौ०–बंधु कहै कटु संमत तोरे ❀ तू छल बिनय करसि कर जोरे ॥ १ ॥
करु परितोष मोर संग्रामा ❀ नाहित छाँड़ु कहाउब रामा ॥ २ ॥

(मैंने जान लिया कि) तेरा भाई तेरीही संमतिसे कटुवचन कहता है और तू छलसे बिनती कर हाथ जोड़ता है ॥ १ ॥ यातौ मुझे लड़ाईमें संतुष्टकर नहीं तौ राम कहलाना छोड़दे ॥ २ ॥

छल तजि करहु समर शिवद्रोही ❀ बंधुसहित नतु मारौं तोही ॥ ३ ॥
भृगुपति कहहिं कुठार उठाए ❀ मन मुसुकाहिं राम सिर नाए ॥ ४ ॥

हे महादेवके वैरी ! छलको छोड़ लड़ाई ठान नहीं तौ तुझे भाईसमेत मारूंगा ॥३॥ परशुरामने यह कहकर फरसा उठाया और रामचन्द्रने मनमें मुसक्याय माथा नवाया और बोले कि–॥ ४ ॥

गुनहु लषनकर हमपर रोषू ❀ कतहुँ सुधाइहुते बड़ दोषू ॥ ५ ॥
टेढ जानि शंका सबकाहू ❀ वक्रचंद्रमहिं ग्रसै न राहू ॥ ६ ॥

दोष तौ लक्ष्मणका और हमारेऊपर क्रोध करते हो ! कभी २ सीधेपनसेभी बड़ा दोष होता है ॥ ५ ॥ टेढ़ा जान सब किसीको भय होता है. (देखो) टेढ़े चन्द्रको राहुभी नहीं ग्रसता ॥ ६ ॥

राम कहेउ रिसि तजिय मुनीसा ❀ कर कुठार आगे यह सीसा ॥ ७ ॥
जेहि रिस जाइ करिय सोइ स्वामी ❀ मोहिं जानि आपन अनुगामी ॥ ८ ॥

फिर रामचन्द्रने कहा हे मुनि ! रिस छोड़िये. आपके हाथमें कुठार है और आगे यह मेरा शिर[1] है ॥ ७ ॥ हे प्रभो ! मुझे अपना सेवक जान वही कीजिये जिससे यह रिस जाय ॥ ८ ॥

---

(१) यहां यह भाव है कि हम तौ आधीन होते जाते हैं और आप क्रोधमेंही भुने जाते हो; और आप जो फरसा उठाते हो सो चलताभी तौ नहीं है। फिर वृथा क्रोध कर क्यों ज्ञान भंग करते हो।

दो०–प्रभुसेवकहि समर कस, तजहु विप्रवर रोष ॥
वेष विलोकि कहेसि कछु, बालकहूँ नहिं दोष ॥ ३१६ ॥

हे ब्राह्मणोंके शिरोमणि ! क्रोध छोड़ दो; सेवक स्वामीकी लड़ाई कैसी? (आपके क्षत्री कैसे) वेषको देखकर कुछ कहा था; बालककाभी तौ दोष नहीं है ॥ ३१६ ॥

चौ०–देखि कुठार बाण धनुधारी ❀ भइ लरिकहि रिसवीर विचारी ॥ १ ॥
नाम जान पै तुमहिं न चीन्हा ❀ वंशसुभाव उतर तेहि दीन्हा ॥ २ ॥

फरसा और धनुषबाण धारण किये देख और योधा विचार लड़केको रिस हुई ॥ १ ॥ वह आपका नाम जानता था, परंतु पहँचाना नहीं, और कुलके स्वभावसे उत्तर दिया. अर्थात् रघुवंशमें यही रीति है कि जो सामने शस्त्र लेकर आवै उसे उत्तर अवश्य देते हैं. (यहां यह भाव है कि तुम हमें साधारण क्षत्री मतजानो) ॥ २ ॥

जो तुम अवतेहु मुनिकी नाँई ❀ पदरज शिर सिसु धरत गुसाँई ॥ ३ ॥
क्षमहु चूक अनजानत केरी ❀ चहिय विप्रउर कृपा घनेरी ॥ ४ ॥

हे गोसाँई ! जो तुम मुनिकी भांति आते तौ यह बालक आपके चरणोंकी रजको मस्तकपर धारण करता ॥ ३ ॥ विना जानेकी भूलको क्षमा करो. ब्राह्मणके हृदयमें तौ बड़ी दया चाहिये ॥ ४ ॥

हमहिं तुमहिं सरवरि कस नाथा ❀ कहहु तु कहाँ चरण कहँ माथा ॥ ५ ॥
राममात्र लघु नाम हमारा ❀ परशुसहित बड़ नाम तुम्हारा ॥ ६ ॥

हे स्वामी ! हमारी तुम्हारी बराबरी कैसी, कहिये कहाँ तौ चरण और कहाँ माथा ॥ ५ ॥ हमारा छोटासा केवल रामही[1] नाम है, और आपका परशुसहित बड़ा नाम है ॥ ६ ॥

देव एकगुण धनुष हमारे ❀ नवगुण परम पुनीत तुमारे ॥ ७ ॥
सब प्रकार हम तुमसन हारे ❀ क्षमहु विप्र अपराध हमारे ॥ ८ ॥

हे देव ! हमारा तौ धनुष एकही गुण है, और आपके परम पवित्र[2] नौ गुण हैं ॥ ७ ॥ हे ब्राह्मण देवता ! हम सब भाँति तुमसे हारे, हमारे अपराधोंको क्षमा करो ॥ ८ ॥

दो०–बारबार मुनि विप्रवर, कहा रामसन राम ॥
बोले भृगुपति सरुष हुइ, तुहू बंधुसम बाम ॥ ३१७ ॥

रामचन्द्रजीने बारंबार मुनि और श्रेष्ठ ब्राह्मण कहा, तौ परशुरामजी क्रोधित हो बोले कि तूभी भाईके समाने कुटिल है ॥ ३१७ ॥

चौ०–निपटहिं द्विज करि जानेउ मोहीं ❀ मैं जस विप्र सुनाऊँ तोहीं ॥ १ ॥
चाप स्रुवा सर आहुति जानू ❀ कोप मोर अति घोर कृशानू ॥ २ ॥

मुझे कोरा ब्राह्मणही जानरहा है, मैं जैसा ब्राह्मण हूँ तुझे सुनाता हूँ ॥ १ ॥ धनुषको स्रुवा और बाणोंको आहुति जानो, और मेरा क्रोध बड़ी घोर कहिये धक २ करती हुई अग्नि है ॥ २ ॥

समिध सेन चतुरंग सुहाई ❀ महामहीप भए पशु आई ॥ ३ ॥
मैं यहि परशु काटि बलि दीन्हा ❀ समरयज्ञ जग कोटिन कीन्हा ॥ ४ ॥

---

(१) यहां यह भाव है कि, मेरा तो छोटासा दो अक्षरका नाम है जिसमें सर्व योगीजन रमते हैं, और बड़ा नाम परशुराम तौ आपका है. जिसमें केवल फरसा रमा है ॥ (२) भगवद्गीतायां–

"शमो दमस्तपः शौचं क्षांतिरार्जवमेव च ॥ ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम् ॥ १ ॥

और चार[१]प्रकारकी सुन्दर सेना समिधा है, जिसमें बड़े २ राजा आकर पशु हुये हैं ॥ ३ ॥ मैंने इस फरसेसे उन्हें काट २ आहुति दी और संसारमें लड़ाईरूपी यज्ञ करोड़ों किये ॥ ४ ॥

मोर प्रभाव विदित नहिं तोरे ❀ बोलेसि निदरि विप्रके भोरे ॥ ५ ॥
भंजेउ चाप दाप बड़ बाढ़ा ❀ अहमिति मनहुँ जीति जग ठाढ़ा ॥ ६ ॥

मेरा स्वभाव तुझको विदित नहीं है, (इसलिये) तू कोरे ब्राह्मणके धोखेसे निरादर कर बोलता है ॥ ५ ॥ धनुषके तोड़नेसे तुझे वड़ा अभिमान वढ़गया है और यह अहमत्व छाया है कि जो कुछ हूँ सो मैंही हूँ, मानों सब जगत्को जीतकर ठाढ़ा है ॥ ६ ॥

राम कहा मुनि कहहु विचारी ❀ रिस अति बड़ि लघु चूक हमारी ॥ ७ ॥
छुवतहिं टूट पिनाक पुराना ❀ मैं केहि हेतु करौं अभिमाना ॥ ८ ॥

रामचन्द्रने कहा हे मुनि ! सोच विचार कर कहिये, हमारी जरासी चूकपर इतना भारी कोप? ॥ ७ ॥ पुराना धनुष था, छूतेही टूट गया. मैं किस बिरतेपर घमंड कर सक्ता हूँ ? ॥ ८ ॥

दो०–जो हम निदरहिं विप्रवर, सत्य सुनहु भृगुनाथ ॥ ❀
तौ अस को जग सुभट जिहिं, भयवश नावहिं माथ ॥ ३१८ ॥ ❀

हे द्विजराज ! सची २ सुनों कि जो हम आपको निरादर करते होंय तौ हे भृगुनाथ ! संसारमें ऐसा कौन योधा है कि जिसको डरकर माथा नवायें ॥ ३१८ ॥

चौ०–देव दनुज भूपति भट नाना ❀ समबल अधिक होउ बलवाना ॥ १ ॥
जो रण हमहिं प्रचारे कोऊ ❀ लरहिं सुखेन काल कि न होऊ ॥ २ ॥

और देवता हों वा दानव हों, अनेक राजा हों वा योद्धा हों, समान बलवाले हों या अधिक बलवान् हों ॥ १ ॥ जो लड़ाईमें हमें कोई छेड़ाछाड़ी करै तौ फिर चाहे कालही क्यों न हो हम सुखपूर्वक उससे दो दो हाथ करते हैं ॥ २ ॥

क्षत्रियतनु धरि समरसकाना ❀ कुलकलंक तेहि पामर जाना ॥ ३ ॥
कहौं स्वभाव न कुलहि प्रसंसी ❀ कालहु डरहिं न रण रघुवंसी ॥ ४ ॥

क्योंकि क्षत्रीका चोला पाकर जो लड़ाईसे डरै उसे कुलका कलंकी और नीच जानों ॥ ३ ॥ मैं स्वभाव कहता हूं (कुछ) कुलकी बड़ाई नहीं मारता, कि लड़ाईमें तौ रघुवंशी कालसेभी नहीं डरते (जो कहो कालसेही नहीं डरते तौ हमारे सामने क्यों नाक रगड़ते हो ? तहां कहते हैं कि) ॥ ४ ॥

विप्रवंसकी अस प्रभुताई ❀ अभय होइ जो तुमहिं डराई ॥ ५ ॥
सुनि मृदु गूढ़ वचन रघुपतिके ❀ उघरे पटल परशुधरमतिके ॥ ६ ॥

ब्राह्मणकुलकी ऐसी प्रभुता है, कि जो तुमसे डरता है वह निडर होजाता है. अथवा अपना भृगुलताका चिह्न दिखाकर कहते हैं, कि विप्रवंशकी यह प्रभुताई है कि जिससे हम अभय होकर भी आपसे डरते हैं ॥ ५ ॥ रामचन्द्रजीके कोमल[२] और भीतरे[२] वचन सुनकर परशुरामजीकी बुद्धिके कपाट खुलगये (और बोले) ॥ ६ ॥

रामरमापति कर धनु लेहू ❀ खैंचहु मोर मिटै संदेहू ॥ ७ ॥
देत चाप आपहिं चढ़ि गयऊ ❀ परशुराम मनविस्मय भयऊ ॥ ८ ॥

---

(१) गूढ़ार्थदीपिकामें देखो. २ कोमल वचन ये थे कि "हमहिं तुमहिं सरवरि कस नाथा। कहहु तौ कहाँ चरण कहँ माथा" और भीतरे वचन थे कि "जो हम निदरहिं विप्रवर" इत्यादि दोहा ३१८.

हे राम ! यह लक्ष्मीपति भगवान्का धनुष लो, इसे खैंचो जिससे मेरा सन्देह दूर हो. (क्योंकि यह धनुष मुझे विष्णुने दिया था, और कहदिया था कि जो इसको चढ़ावै उसे तुम मेरा पूर्ण अवतार जानना) ॥७॥ धनुष देतेही अपने आप चढ़गया तब परशुरामके मनमें बड़ा खेद हुआ (कि मुझमें यह अज्ञान कहाँसे आगया था कि मैंने साक्षात् परमेश्वरसे ऐसे २ दुर्वचन कहे.) ॥ ८ ॥

दो०–जाना रामप्रभाव तब, पुलकि प्रफुल्लित गात ॥ ❀
जोरि पाणि बोले वचन, प्रेम न हृदयसमात ॥ ३१९ ॥ ❀

जब रामचन्द्रका प्रताप जानलिया कि बड़े क्षमाशील हैं तब तौ पुलकायमान हो अंगमें फूले न समाये और ऐसा प्रेम उमगा कि हृदयमें नहीं समाता; (उस समय) हाथ जोड़कर यह स्तुति करने लगे कि–॥ ३१९ ॥

चौ०–जय रघुवंशकमलबनभानू ❀ गहन दनुजकुलदहनकृशानू ॥ १ ॥
जय सुरविप्रधेनुहितकारी ❀ जय मद मोह कोह भ्रमहारी ॥ २ ॥

हे रघुवंशरूपी कमलवनको सूर्यके समान और घने राक्षसोंके कुलको भस्म करनेके लिये अग्निरूप, आपकी जय होय ॥ १ ॥ देवता, ब्राह्मण और गौओंकी रक्षा करनेवालेकी जय हो ! अभिमान, अज्ञान, क्रोध और सन्देहके नाश करनेवालेकी जय हो ॥ २ ॥

विनयशीलकरुणागुणसागर ❀ जयति बचनरचना अति आगर ॥ ३ ॥
सेवकसुखद सुभगसबअंगा ❀ जय शरीरछबिकोटिअनंगा ॥ ४ ॥

नम्रता, शील, दया और गुणके समुद्र और बचनोंकी रचनामें बड़े चतुर ऐसे आपकी जय हो॥३॥ भक्तोंको सुख देनेवाले, सब सुन्दर अंगवाले, शरीरमें करोड़ों कामदेवकी शोभावाले, आपकी जय हो ४

करौं कहा मुख एक प्रशंसा ❀ जय महेसमनमानसहंसा ॥ ५ ॥
अनुचित बहुत कहेउँ अज्ञाता ❀ क्षमहु क्षमामंदिर दोउ भ्राता ॥ ६ ॥

मैं एक मुखसे क्या बड़ाई करूं ! हे महादेवके मनरूपी मानससरोवरके हंस ! आपकी जय हो ॥ ५ ॥ विना जाने बहुत अनुचित कहा, सो हे क्षमाके धाम दोनों भाई ! क्षमा करो ॥ ६ ॥

कहि जय जय जय रघुकुलकेतू ❀ भृगुपति गए बनहिं तपहेतू ॥ ७ ॥
अब भय कुटिल महीप डराने ❀ जहँ तहँ कायर गवहिं पराने ॥ ८ ॥

परशुरामजी रामचन्द्रजीकी जय जय जय कहकर तपस्याके लिये बनको गये ॥ ७ ॥ अब डरसे छोटे राजा डरने लगे और काहिल जहां तहां भाग २ कर सटकने लगे ॥ ८ ॥

दो०–देवन दीन्ही दुंदुभी, प्रभुपर बरषहिं फूल ॥ ❀
हरषे पुरनरनारि सब, मिटा मोह भय शूल ॥ ३२० ॥ ❀

देवता डमाडम नगाड़े बजाने और भगवान्पर फूल बरसाने लगे. नगरके स्त्री पुरुष सब प्रसन्न हुये. उनका अज्ञान, भय, और दुःख मिटगया ॥ ३२० ॥

चौ०–अति गहगहे बाजने बाजे ❀ सबहिं मनोहर मंगल साजे ॥ १ ॥
यूथयूथ मिलि सुमुखि सुनयनी ❀ करहिं गान कलकोकिलबयनी ॥ २ ॥

बहुत झमाझम बाजे बजने लगे और सबने सुन्दर मंगलकारी ठाट सजाये ॥ १ ॥ सुन्दर मुख और कमलके नयनवाली और कोकिलबयनी स्त्रियोंकी टोलियांकी टोलियां सुन्दर गाती हैं ॥ २ ॥

सुख बिदेहकर बरनि न जाई ❀ जनमदरिद्रि मनहुँ निधि पाई ॥ ३ ॥
बिगतत्रास भइ सीय सुखारी ❀ जनु बिधुउदय चकोरकुमारी ॥ ४ ॥

जनकका सुख वर्णन नहीं कियाजाता, मानों जन्मके दरिद्रीको खजाना मिलगया ॥ ३ ॥ दुःख दूर होनेसे सीताजी ऐसी सुखी हुई, मानों चन्द्रमाके उदय होनेसे चकोरकी चिड़िया ॥ ४ ॥

जनक कीन्ह कौशिकहिं प्रनामा ❀ प्रभुप्रसाद धनु भंजेउ रामा ॥ ५ ॥
मोहिं कृतकृत्य कीन्ह दुउ भाई ❀ अब जो उचित सो कहिय गुसाँई ॥ ६ ॥

जनकने विश्वामित्रको प्रणाम किया, (और कहा) हे स्वामी ! आपकी कृपासे रामचन्द्रने धनुष तोड़ा ॥५॥ और दोनों भाइयोंने मुझे कृतार्थ किया. अब हे गोसाँई ! जो उचित हो वह कहिये ॥ ६ ॥

कह मुनि सुनु नरनाथ प्रवीना ❀ रहा बिवाह चापआधीना ॥ ७ ॥
टूटतही धनु भयउ बिबाहू ❀ सुर नर नाग बिदित सब काहू ॥ ८ ॥

मुनि (विश्वामित्र) ने कहा, हे राजा ! सुनों (तुम तौ स्वयं) चतुर हो, विवाह धनुषके आधीन था ॥७॥ सो विवाह तौ धनुषके टूटतेही हो गया, और देवता, मनुष्य और सर्प सब किसीको विदित होगया ॥८॥

दो०-तदपि जाइ तुम करहु अब, यथावंश व्यवहार ॥
बूझि विप्रकुल वृद्ध गुरु, वेदविदित आचार ॥ ३२१ ॥

तौभी तुम अब जाकर जैसा तुम्हारे कुलका व्यवहार है और जैसा वेदका आचार है उसे पुरोहित, कुलके वड़े लोक और गुरुसे पूछकर करो ॥ ३२१ ॥

चौ०-दूत अवधपुर पठवहु जाई ❀ आनैं नृप दशरथहिं बुलाई ॥ १ ॥
मुदित राउ कहि भलेहि कृपाला ❀ पठए दूत बोलि तिहि काला ॥ २ ॥

जाकर अयोध्यापुरीको दूत भेजो, वह राजा दशरथको (वरातसहित) बुलालावे ॥ १ ॥ राजाने प्रसन्न हो कहा हे कृपानिधान ! वहुत अच्छा और उसी समय अयोध्यापुरीको दूत भेजे ॥ २ ॥

बहुरि महाजन सकल बुलाए ❀ आइ सबनि सादर सिर नाए ॥ ३ ॥
हाट बाट मंदिर पुरबासा ❀ नगर सँवरहु चारिहु पासा ॥ ४ ॥

फिर सब बड़े लोगोंको बुलाया तौ सबने आकर आदरसहित माथा नवाया ॥ ३ ॥ (तब जनकने कहा)हाट बाट महल और देवताओंके मन्दिर और नगरको चारों ओर सजाओ ॥ ४ ॥

हरषि चले निज निज गृह आए ❀ पुनि परिचारिक बोलि पठाए ॥ ५ ॥
रचहु विचित्र बितान बनाई ❀ सिर धरि बचन चले सचु पाई ॥ ६ ॥

वे प्रसन्न हो चले और अपने २ घर आये, फिर टहलुओंको बुला भेजा ॥ ५ ॥ (और कहा कि) विचित्र मंडप रच रचकर बनाओ. वे आज्ञा पाय वचनको शिर धरकर चले ॥ ६ ॥

पठए बोलि गुणी तिन्ह नाना ❀ जे बितान बिधि कुसल सुजाना ॥ ७ ॥
बिधिहि बंदि तिन्ह कीन्ह अरंभा ❀ बिरचे कनककदलिके खंभा ॥ ८ ॥

फिर उन्होंने वहुतसे गुणवानोंको जो मंडपकी रचना करनेमें पूरे चतुर थे, बुला भेजा ॥ ७ ॥ उन्होंने विधाताको वन्दनाकर आरम्भ किया और (प्रथम) सुवर्णके केलोंके खंभ बनाये ॥ ८ ॥

दो०-हरितमणिनके पत्र फल, पद्मरागके फूल ॥
रचना देखि विचित्र अति, मन बिरंचिके भूल ॥ ३२२ ॥

हरित मणि कहिये पन्नोंके पत्ते और फल और माणिक रत्नके फूल बनाये. जिसकी अत्यंत विचित्र रचनाको देख ब्रह्माके मनमें भ्रम होगया ॥ ३२२ ॥

चौ०–वेणु हरितमणिमय सब कीन्हे ❀ सरल सपर्ण परहिं नहिं चीन्हे ॥ १ ॥
कनककलित अहिबेलि बनाई ❀ लखि नहिं परै सपर्ण सुहाई ॥ २ ॥

और सबबाँस हरित मणियोंके ऐसे सीधे और पल्लवसमेत बनाये कि पहिचाने नहीं पड़ते ॥१॥ और सुवर्णकी सुन्दर नागवेलि पत्तोंसहित ऐसी सुन्दर बनाई कि पहिचानी नहीं जाती ॥ २ ॥

तेहिके रचि पचि बंध बनाए ❀ बिच बिच मुक्तादाम सुहाए ॥ ३ ॥
माणिक मरकत कुलिश पिरोजा ❀ चीर कोर पचि रचे सरोजा ॥ ४ ॥

उस बेलमें रचकर और पच्चे कारीकर लपेटे लगाये और बीच २ में मोतियोंकी लड़ियाँ लटकाई ॥३॥ फिर लाल नीलम हीरे और पिरोजोंकी कोरोंको चीरकर और पच्चेकारी कर कमल बनाये ॥ ४ ॥

किये भृंग बहुरंग बिहंगा ❀ गुंजहिं कूजहिं पवनप्रसंगा ॥ ५ ॥
सुरप्रतिमा खंभन गढ़ि काढ़ीं ❀ मंगल द्रव्य लिये सब ठाढ़ीं ॥ ६ ॥
चौके भाँति अनेक पुराई ❀ सिंधुरमणिमय सहज सुहाई ॥ ७ ॥

इनपर भौंरे और रंगरंगके पक्षी बनाये जो पवनके सहारेसे गूँजते और कूजते हैं॥ ५ ॥ देवताओंकी मूर्त्तियां खंभोंमें गढ़ २ के काढ़ी हैं. जो मंगलकी सामग्री लिये ठाढ़ी हैं ॥ ६ ॥ जो स्वभावहीसे सुहाये हैं ऐसे आँगनोंमें गजमोतिनसे भाँति भाँतिके चौक पुराये हैं (फिर आगे वंदनवार कैसे लगाये सो कहते हैं कि) ॥ ७ ॥

दो०–सौरभपल्लव सुभग सुठि, किये नीलमणिकोर ॥ ❀
हेम मौर मरकत गवरि, लसत पाटमय डोर ॥ ३२३ ॥ ❀

सुन्दर नीलमकी कोरोंसे तौ बड़े मनोहर आमके पत्ते बनाये और उनमें सुवर्णका बौर और हरित मणिकी अंबियाँओंके घवर कहिये गुच्छे बनाये हैं, और उन्हें रेशमकी डोरीसे गूँथकर लटकाया॥३२३॥

चौ०–रचे रुचिरवर बंदनिवारे ❀ मनहुँ मनोभव फंद सँवारे ॥ १ ॥
मंगलकलश अनेक बनाए ❀ ध्वज पताक पट चमर सुहाए ॥ २ ॥

ऐसे सुन्दर मनोहर वंदनवार बनाये हैं मानो कामदेवने (देखनेवालोंके नेत्र और मनको फाँसने के लिये) फंदे तयार किये हैं ॥ १ ॥ अनगिनती मंगलके कलसे सजाये और ध्वजा पताका वस्त्र और चमर जहाँके तहाँ लगाये ॥ २ ॥

दीप मनोहर मणिमय नाना ❀ जाइ न बरनि विचित्र बिताना ॥ ३ ॥
जेहि मंडप दुलहिनि बैदेही ❀ सो बरनै अस मति कवि केही ॥ ४ ॥

जिसमें नानाभाँतिके मणिजटित दीपक जल रहे हैं सो ऐसा विचित्र मंडप बना है कि उसका वर्णन नहीं कियाजाता. (कारण यह है कि) ॥ ३ ॥ जिस मंडपमें (जगन्माता) जानकीजी दुलहिन हैं उसका वर्णन करै सो ऐसी किस कवीश्वरकी बुद्धि है? ॥ ४ ॥

दूलह राम रूपगुणसागर ❀ सो वितान तिहुँ लोक उजागर ॥ ५ ॥
जनकभवनकी शोभा जैसी ❀ गृहगृहप्रति पुर देखिय तैसी ॥ ६ ॥

जहाँ रूप और गुणके सागर रामचन्द्रजी दुलहा है वह मंडप तौ तीनों लोकमें उजागर है ॥ ५ ॥ जनकके राजभवनकी जैसी शोभा है वैसीही नगरके घर २ में दिखाई देती है ॥ ६ ॥

जिहि तिरहुत तेहि समय निहारी ❀ तेहिं लघु लगे भुवन दसचारी ॥ ७ ॥
जो संपदा नीचगृह सोहा ❀ सो विलोकि सुरनायक मोहा ॥ ८ ॥

जिसने उस समय जनकपुरको देखा उसको चौदहों लोक छोटे लगने लगे ॥७॥ (और बड़े घरोंकी तौ क्या कहैं) नीचसे नीच मनुष्य था उसके घरमें जो संपत्ति थी उसे देख इन्द्रभी मोहित होताथा ॥८॥

सो०-बसै नगर जेहि लक्ष्मि करि, कपट नारिवरवेष ॥ ❀
तेहि पुरकी शोभाकहत, सकुचै शारद शेष ॥ ३२४ ॥ ❀

जिस नगरमें कपटसे स्त्रीका सुन्दर भेषधर लक्ष्मीजी स्वयं विराजती हैं उस नगरकी शोभा कहनेमें सरस्वती और शेषजीभी सकुचाते हैं ॥ ३२४ ॥

चौ०-पहुँचे दूत रामपुर पावन ❀ हरषे नगर विलोकि सुहावन ॥ १ ॥
भूपद्वार तिन्ह खबर जनाई ❀ दशरथनृप सुनि लिए बुलाई ॥ २ ॥

दूत चले २ रामचंद्रजीके पवित्र नगरमें पहुँचे और सुहावने नगरको देखकर प्रसन्न हुये ॥ १ ॥ उन्होंने जाकर राजाके द्वारपर खबर कहलाई, तौ राजा दशरथने सुनतेही बुलालिया ॥ २ ॥

करि प्रणाम तिन्ह पाती दीन्हीं ❀ मुदित महीप आपु उठि लीन्हीं ॥ ३ ॥
वारि विलोचन बाँचत पाती ❀ पुलकगात आई भरि छाती ॥ ४ ॥

उन्होंने प्रणाम कर चिठ्ठी दी तौ राजाने प्रसन्न होकर आपही उठकर लेली ॥३॥ पातीके वांचते हीं नेत्रोंमें नीर आगया और शरीर पुलकायमान होगया, और छाती भर आई ॥ ४ ॥

रामलषन उर कर बर चीठी ❀ रहि गए कहत न खाटी मीठी ॥ ५ ॥
पुनि धरि धीर पत्रिका बाँची ❀ हरषी सभा बात सुनि साँची ॥ ६ ॥

हृदयमें रामचन्द्र और लक्ष्मण और हाथमें सुन्दर पाती ले चुप रहगये. कुछ खट्टी मीठी अर्थात् कुछ भली बुरी नहीं कहते ॥ ५ ॥ फिर धीरज धरकर चिठ्ठी बाँची और सब सभा सची बात सुनकर प्रसन्न हुई ॥ ६ ॥

खेलत रहे तहाँ सुधि पाई ❀ आए भरतसहित दोउ भाई ॥ ७ ॥
पूछत अति सनेह सकुचाई ❀ तात कहाँते पाती आई ॥ ८ ॥

भरत शत्रुघ्न दोनों भाई जहां खेलतेथे वहाँ खबर मिली तौ चले आये ॥ ७ ॥ अधिक प्रेमसे सकुचाकर पूछते हैं कि हे पिता ! यह चिठ्ठी कहाँसे आई है ! ॥ ८ ॥

दो०-कुलस प्रानप्रिय बंधु दोउ, अहहिं कहहु केहि देस ॥ ❀
सुनि सनेहसाने बचन, बाँची बहुरि नरेश ॥ ३२५ ॥ ❀

कहिये प्राणोंके प्यारे दोनों भाई प्रसन्न तौ हैं; और वे किसदेशमें हैं ? राजाने प्रीतिके सने हुये वचन सुनकर (चिठ्ठी) फिर बाँची ॥ ३२५ ॥

चौ०-सुनि पाती पुलके दोउ भ्राता ❀ अधिक सनेह समात न गाता ॥ १ ॥
प्रीति पुनीत भरतकी देषी ❀ सकल सभा सुख लहेउ बिसेषी ॥ २ ॥

चिठ्ठीको सुनके दोनों भाई ऐसे प्रसन्न हुये कि अधिक प्रेमके कारण अंगमें नहीं समाते ॥ १ ॥ भरतजीकी सच्ची प्रीतिको देख सब सभाने बहुत सुख पाया ॥ २ ॥

तब नृप दूत निकट बैठारे ❀ मधुर मनोहर बचन उचारे ॥ ३ ॥
भैया कहहु कुसल दोउ बारे ❀ तुम नीके निजनयन निहारे ॥ ४ ॥

तब राजाने दूतोंको पास बिठाय (उनसे) मन हरनेवाले मीठे २ वचन कहे कि ॥ ३ ॥ हे भाई! दोनों कहो बालक प्रसन्न तौ हैं. तुमने अपने नेत्रोंसे देखे हैं न ॥ ४ ॥

स्यामल गौर धरे धनु हाथा ❀ बय किसोर कौशिकमुनिसाथा ॥ ५ ॥
पहिचानेहु तौ कहहु सुभाऊ ❀ प्रेमबिवस पुनि पुनि कह राऊ ॥ ६ ॥

साँवले, गोरे हाथमें धनुष धारण किये, किशोर अवस्थावाले, विश्वामित्रमुनिके साथ हैं ॥ ५ ॥ राजा स्नेहके वश वारंवार कहते हैं कि जो पहचानते हो तौ उनका स्वभाव कहो ॥ ६ ॥

जा दिनते मुनि गए लिवाई ❀ तबसे आजु साँचि सुधि पाई ॥ ७ ॥
कहहु बिदेह कवनबिधि जाने ❀ सुनि नृपबचन दूत मुसुकाने ॥ ८ ॥

जिस दिनसे मुनि (विश्वामित्र) लिवा लेगये हैं, तबसे सची २ सुधि आज मिली है ॥ ७ ॥ (और यह तौ कहो) राजा विदेहने किस भाँति पहिचाने? राजाके ऐसे वचन सुन दूत हँसे[1] ॥ ८ ॥

दो०—सुनहु महीपति मुकुटमनि, तुजसम धन्य न कोउ ॥ ❀
रामलषन जिनके तनय, बिस्वबिभूषन दोउ ॥ ३२६ ॥ ❀

हे राजाओंके शिरोमणि! सुनो. तुम्हारे समान कोई धन्य नहीं है. जिनके रामचन्द्र लक्ष्मण दोनों पुत्र संसारके आभूषण हैं ॥ ३२६ ॥

चौ०—पूछन जोग न तनय तुम्हारे ❀ पुरुषसिंह तिहुँ पुर उजियारे ॥ १ ॥
जिनके जसप्रतापके आगे ❀ ससि मलीन रबि सीतल लागे ॥ २ ॥

तुम्हारे पुत्र पूछनेके योग्य नहीं. (क्योंकि वे) मनुष्योंमें सिंहरूप और तीनों लोकोंमें उजेला करनेवालेहैं॥१॥जिनकी कीर्ति और प्रभावके आगे चन्द्रमा मलीन और सूर्य शीतल लगते हैं ॥ २ ॥

तिन कहँ कहिय नाथ किमि चीन्हें ❀ देखिय रबि कि दीप कर लीन्हें ॥ ३ ॥
सीय स्वयंवर भूप अनेका ❀ सिमिटे सुभट एकतें एका ॥ ४ ॥

सो हे स्वामी! उनको पूछते हो कि किस भाँति पहचाने? (भला) सूर्यको क्या हाथमें दीपक लेकर देखते हैं ॥ ३ ॥ सीताजीके स्वयंवरमें अनेक राजा एकसे एक भारी योधा इकठ्ठे हुये थे ॥ ४ ॥

संभुसरासन काहु न टारा ❀ हारे सकल भूपबरियारा ॥ ५ ॥
तीनिलोकमहँ जे भट मानी ❀ सबकी सक्ति संभुधनु भानी ॥ ६ ॥

परंतु महादेवका धनुष किसीने नहीं हटाया. सब बलवान् राजा हार गये ॥ ५ ॥ और जो तीनों लोकमें बड़े भारी योधा (गिने जाते) थे, उन सबकी शक्ति महादेवके धनुषने भान डाली ॥ ६ ॥

सकै उठाइ सुरासुर मेरू ❀ सोउ हिय हारि गयउ करि फेरू ॥ ७ ॥
जेहिं कौतुक शिवशैल उठावा ❀ सोउ तेंहि सभा पराभव पावा ॥ ८ ॥

जो देवता, राक्षस सुमेरु पर्वतको उठा सकते थे वेभी हियेमें हारके फिर कर चले गये ॥ ७ ॥ जिस (रावण) ने खेलमें कैलासपर्वतको उठालिया था उसनेभी उस समाजमें हार पाई ॥ ८ ॥

---

(१) दूत इसलिये हँसे कि राजाने कहा कि विदेहने अर्थात् जो स्वयं देहरहित कहाता है अथवा जिसे स्वयं अपने देहकी सुध नहीं उसने कैसे पहिचाने, और दूसरा कारण हँसनेका यह कि देखो इतने बड़े बुद्धिमान् राजा होकर परब्रह्म रामको अपना पुत्र मान नादानोंकीसी बातें करते हैं और उनके प्रतापको इस प्रकार नहीं जानते, जैसे तीर्थके रहनेवाले मनुष्य तीर्थका प्रभाव नहीं जानते हैं.

दो०-तहाँ राम रघुबंसमनि, सुनिय महामहिपाल ॥
भंजेउ चाप प्रयास बिनु, जिमि गज पंकजनाल ॥ ३२७ ॥

हे राजाधिराज ! सुनो. वहाँ रघुवंशके मणिरूप रामचन्द्रजीने विनाही परिश्रमके धनुष ऐसे तोड़ डाला जैसे हाथी कमलकी नाल अर्थात् दण्डीको तोड़ डालता है ॥ ३२७ ॥

चौ०-सुनि सरोष भृगुनायक आए ❀ बहुत भाँति तिन आँखि देखाए ॥ १ ॥
देखि रामबल निज धनु दीन्हा ❀ करि बहु बिनय गवन वन कीन्हा ॥ २ ॥

यह सुनकर क्रोधमें भरे परशुराम आये और उन्होंनेभी बहुत भाँति नेत्र दिखाये ॥ १ ॥ अंतमें रामचन्द्रजीका वल देख अपना धनुष दिया और बहुतसी प्रार्थना कर वनको चले गये ॥ २ ॥

राजत राम अतुलबल जैसे ❀ तेजनिधान लषन पुनि तैसे ॥ ३ ॥
कंपहिं भूप बिलोकत जाके ❀ जिमि गज हरिकिसोरके ताके ॥ ४ ॥

जैसे रामचन्द्र अतुल वलसे शोभायमान हैं वैसेही तेजकी खानि लक्ष्मण हैं ॥ ३ ॥ जिनको देखकर राजा लोग ऐसे काँपते हैं जैसे हाथी सिंहके बच्चेको देखकर काँपता हैं ॥ ४ ॥

देव देखि तव बालक दोऊ ❀ अवनि आँखितर आव न कोऊ ॥ ५ ॥
दूत बचन रचना प्रिय लागी ❀ प्रेम प्रताप वीररस पागी ॥ ६ ॥

हे देव ! (आप तौ कहते हो हमारे पुत्रोंको कैसे पहिचाना और हम यह कहते हैं कि) तुम्हारे दोनों पुत्रोंको देख पृथ्वीपर कोई हमारे आँख तले नहीं आता है ॥ ५ ॥ प्रेम प्रताप और वीररससे सनी हुई दूतोंके बचनोंकी रचना प्यारी लगी ॥ ६ ॥

सभासमेत राउ अनुरागे ❀ दूतहिं देन निछावरि लागे ॥ ७ ॥
कहि अनीति तेहि मूँदेउ काना ❀ धरम विचारि सबहिं सुख माना ॥ ८ ॥

राजा सभासहित प्रेममें मगन हो दूतोंको नौछावर देने लगे ॥ ७ ॥ उन्होंने कानोंपर हाथ धरे और कहा कि यह निपट अनीति है (भला हमारे राजाकी लड़की तुम्हारे यहाँ व्याही जावेगी हम कैसे ले सकते हैं) इस धर्मको विचार सबने सुख माना ॥ ८ ॥

दो०-तब उठि भूप वसिष्ठकहँ, दीन्ह पत्रिका जाइ ॥
कथा सुनाई गुरुहिं सब, सादर दूत बुलाइ ॥ ३२८ ॥

तब राजाने उठकर और जाकर वह चिट्ठी वसिष्ठजीको दी और आदरसहित दूतको बुलाय गुरुको सब कथा सुनाई ॥ ३२८ ॥

चौ०-सुनि बोले मुनि अति सुखपाई ❀ पुन्यपुरुष कहँ महि सुख छाई ॥ १ ॥
जिमि सरिता सागरमहँ जाहीं ❀ यद्यपि ताहि कामना नाहीं ॥ २ ॥

मुनीश्वरने सुनकर बहुत सुख पाया और वोले कि पुण्यात्मा जनके लिये तौ पृथ्वी सुखोंसे छाई रहती है ॥ १ ॥ और जैसे नदी समुद्रमें जाती है यद्यपि उसे इच्छा नहीं है ॥ २ ॥

तिमि सुखसंपति बिनहिं बुलाए ❀ धरमसीलपहँ जाहि सुहाए ॥ ३ ॥
तुम गुरु विप्र धेनु सुर सेवी ❀ तस पुनीत कौसल्या देवी ॥ ४ ॥

तैसेही सुख और संपत्ति धर्मशीलके पास बिनाही बुलाये जाती हैं (जो राजा शंका करै कि मैंने ऐसे क्या पुण्य करे हैं तहां वसिष्ठजीका कथन है कि) ॥ ३ ॥ तुम गुरु, ब्राह्मण, गौ और देवताओंके सेवक हो तैसीही पवित्र कौशल्या रानी है ॥ ४ ॥

सुकृती तुमसमान जगमाहीं ❀ भयउ न है कोउ होनेउ नाहीं ॥ ५ ॥
तुमते अधिक पुन्य बड़ काके ❀ राजत रामसरिस सुत जाके ॥ ६ ॥

संसारमें तुम्हारे समान अच्छे कर्म करनेवाला न कोई हुआ न होनेवाला है ॥ ५ ॥ तुमसे अधिक बड़े पुण्य किसके हैं जिनके रामचन्द्रजीसे पुत्र शोभायमान हैं (और एक रामही क्या) ॥ ६ ॥

वीर बिनीत धरमब्रतधारी ❀ गुनसागर बालकवर चारी ॥ ७ ॥
तुम कहँ सर्वकाल कल्याना ❀ सजहु बरात बजाइ निसाना ॥ ८ ॥

शूरवीर, और नम्र तथा धर्म और व्रतके धारण करनेवाले गुणके सागर सुन्दर चारोंही कुँवर हैं ॥ ७ ॥ और तुमको सब समय कल्याण है. (इसलिये) अब निशान बजाकर बरात सजाओ ॥ ८ ॥

दो०–चलेउ बेगि सुनि गुरुबचन, भलेहि नाथ सिर नाइ ॥ ❀
भूपति गवने भवन तब, दूतन्हि बास दिवाइ ॥ ३२९ ॥ ❀

राजा गुरुके वचन सुन माथा नवाय अच्छा कहकर जल्दी चले. और दूतोंको पास दिवाकर तब रनवासमें गये ॥ ३२९ ॥

चौ०–राजा सब रनिवास बुलाई ❀ जनकपत्रिका बाँचि सुनाई ॥ १ ॥
सुनि संदेस सकल हरषानी ❀ अपर कथा सब भूप बखानी ॥ २ ॥

राजाने सब रानियाँ बुलाई और जनककी चिठ्ठी बाँचकर सुनाई ॥ १ ॥ वे समाचार सुनकर सब प्रसन्न हुई और राजाने सब कथा व्योरेवार कही ॥ २ ॥

प्रेमप्रफुल्लित राजहिं रानी ❀ मनहुँ सिखिन सुनि बारिदबानी ॥ ३ ॥
मुदित असीस देहिं गुरुनारी ❀ अति आनंदमगन महतारी ॥ ४ ॥

रानियां (यह समाचार सुन) कैसी प्रफुल्लित हुई मानों मोरनियाँ मेघकी (मंद २) गर्जनाको सुनकर प्रसन्न होती हैं ॥३॥ गुरुकी स्त्री प्रसन्न हो आशीर्वाद देती हैं और माता बड़े आनन्दमें मगन हैं ४

लेहिं परस्पर अतिप्रिय पाती ❀ हृदय लगाइ जुड़ावहिं छाती ॥ ५ ॥
रामलषनकी कीरति करनी ❀ बारहिं बार भूपवर बरनी ॥ ६ ॥

रँगराती प्यारी पातिको आपसमें ले हृदयसे लगाय २ छातीको जुड़ाती हैं ॥ ५ ॥ महाराजने रामचन्द्र लक्ष्मणकी कीर्त्ति और करनी वारंवार वरनी ॥ ६ ॥

मुनिप्रसाद कहि द्वार सिधाए ❀ रानिन्ह तब महिदेव बुलाए ॥ ७ ॥
दिए दान आनंदसमेता ❀ चले बिप्रवर आसिस देता ॥ ८ ॥

और (यह सब) मुनि (विश्वामित्रजी) की कृपा है ऐसा कहकर (राजा) द्वारपर गये और रानियोंने ब्राह्मणोंको बुलाया॥७॥ और आनन्दसहित दान दिये और वे श्रेष्ठ ब्राह्मण आशीर्वाद देते हुए चले॥८॥

सो०–जाचक लिये हँकारि, दीन्ह निछावरि कोटिविधि ॥ ❀
चिरजीवहु सुत चारि, चक्रवर्त्ति दसरत्थके ॥ ३८ ॥ ❀

भिखारियोंको बुलाकर करोड़ों भाँतिकी नौछावरें दीं. (वे आशीर्वाद देने लगे) कि चक्रवर्त्ती दशरथके चारों पुत्र चिरंजीव रहो ॥ ३८ ॥

चौ०–कहत चले पहिरे पट नाना ❀ हरषि हने गहगहे निसाना ॥ १ ॥
समाचार सब लोगन पाए ❀ लागे घर घर होन बधाए ॥ २ ॥

यह कहते हुये भाँति २ के वस्त्र पहन २ कर चले और प्रसन्न हो २ कर लगे घने बाजे बजाने ॥ १ ॥ जब सब लोगोंने समाचार पाये तौ घर २ बधाये होने लगे ॥ २ ॥

भुवन चारि दस भरेउ उछाहू ❀ जनकसुतारघुवीरविवाहू ॥ ३ ॥
सुनि सुभ कथा लोग अनुरागे ❀ मग गृह गली सँवारन लागे ॥ ४ ॥

चौदहों लोकोंमें आनन्द भर गया कि सीता रामचन्द्रका विवाह है ॥ ३ ॥ सबि लोग अच्छे समाचार सुन प्रसन्न हुये और मार्ग घर और गलियोंको सजाने लगे ॥ ४ ॥

यद्यपि अवध सदैव सुहावनि ❀ रामपुरी मंगलमय पावनि ॥ ५ ॥
तदपि प्रीतिकी रीति सुहाई ❀ मंगलरचना रची बनाई ॥ ६ ॥

यद्यपि अवधपुरी सुहावनी बनी है, क्योंकि रामचन्द्रकी पुरी होनेसे सदाही पाविनी और मंगलमयी है ॥ ५ ॥ तौभी सुन्दर प्रीतिकी रीति (दिखानेके लिये) आनन्दकी रचना रचकर बनाई है ॥ ६ ॥

ध्वज पताक पट चामर चारू ❀ छावा परम विचित्र बजारू ॥ ७ ॥
कनककलस तोरन मनिजाला ❀ हरद दूब दधि अक्षत माला ॥ ८ ॥

ध्वजा, पताका, वसन और सुन्दर चमर इनसे हाट बाटको अत्यन्त चित्र विचित्र छादिया ॥ ७ ॥ सुवर्णके कलशे-तोरण-मणियोंके जाल-हलदी-दूब-दही-चावल-और माला ये मंगलकी वस्तु इकट्ठी करीं ॥ ८ ॥

दो०–मंगलमय निज निज भवन, लोगन रचे बनाइ ॥ ❀
बीथी सींची चतुर सब, चौके चारु पुराइ ॥ ३३० ॥ ❀

और लोगोंने अपने २ घर रच २ कर सजाये और मंगलमय कर दिये, अर्थात् जहां देखो तहां मंगल हो रहेहैं और सब चतुर लोगोंने गलियोंमें छिड़काव करके सुन्दर चौक पुराये ॥ ३३० ॥

चौ०–जहँ तहँ यूथ यूथ मिलि भामिनि ❀ सजि नवसप्त सकल दुतिदामिनि ॥ १ ॥
विधुवदनी मृगशावकलोचनि ❀ निजस्वरूप रतिमानविमोचनि ॥ २ ॥

जहाँ तहाँ बिजलीसी चमकीली संपूर्ण स्त्रियां सोलह शृंगार सजाय झुंडके झुंड मिलकर ॥ १ ॥ चन्द्रवदनी मृगनयनी अपने स्वरूपसे (कामदेवकी स्त्री) रतिका मानखंडन करनेवालीं ॥ २ ॥

गावहिं मंगल मंजुल बानी ❀ सुनि कलरव कलकंठ लजानी ॥ ३ ॥
भूपभवन किमि जाइ बखाना ❀ विश्वविमोहन रचेउ विताना ॥ ४ ॥

मधुर २ वाणीसे मंगलाचार गाती हैं, जिनके मनहरन गानको सुनकर कोकिलाभी लजाती हैं ॥ ३ ॥ (जब घर २ का यह हाल है तौ) राजाके राजभवनका किस भाँति वर्णन किया जाय? जिसमें संसारका मोहनेवाला मंडप रचगया है ॥ ४ ॥

मंगलद्रव्य मनोहर नाना ❀ राजत बाजत बिपुल निसाना ॥ ५ ॥
कतहुँ बिरद बंदी उचरहीं ❀ कतहुँ बेदधुनि भूसुर करहीं ॥ ६ ॥

वहाँ मनके हरनेवाली भाँति भाँतिकी मंगलाचारकी सामग्री शोभायमान हैं और बहुतसे बाजे बजते हैं ॥ ५ ॥ कहीं भाट वंशकी बड़ाई करते हैं, और कहीं ब्राह्मण वेदध्वमि कर रहेहैं ॥ ६ ॥

गावहिं सुंदरि मंगल गीता ❀ लै लै नाम राम अरु सीता ॥ ७ ॥
बहुत उछाह भवन अति थोरा ❀ मानहुँ उमगि चला चहुँ ओरा ॥ ८ ॥

स्त्रियां रामचन्द्र और सीताका नाम ले लेकर मंगलाचार और बधावे गारहीं हैं ॥ ७ ॥ आनन्द तौ बड़ा और भवन अति छोटा-(इसलिये) वह मानों चारोंओरको उमड़ चला ॥ ८ ॥

दो०-सोभा दशरथभवनकी, को कवि बरने पार ॥ ❀
जहँ सकल सुरसीसमनि, राम लीन्ह अवतार ॥ ३३१ ॥ ❀

राजा दशरथके महलकी शोभाको कौन कवि वर्णन कर पार पा सकता है? जहाँ सब देवताओंके शिरोमणि रामचन्द्रजीने अवतार लिया है ॥ ३३१ ॥

चौ०-भूप भरत पुनि लिये बुलाई ❀ हय गज स्यंदन साजहु जाई ॥ १ ॥
चलहु बेगि रघुबीर बराता ❀ सुनत पुलक पूरे दोउ भ्राता ॥ २ ॥

फिर राजाने भरतको बुला लिया (और उसने कहा कि) जाकर घोड़े हाथी और रथोंको सजाओ ॥१॥ रामचन्द्रकी बरातमें जल्दी चलो. यह सुनतेही दोनों भाई शरीरमें पुलकावलीसे भरगये ॥२॥

भरत सकल साहनी बुलाए ❀ आयसु दीन्ह मुदित उठि धाए ॥ ३ ॥
रचि रचि जीन तुरग मिन साजे ❀ बरन बरन बर बाजि बिराजे ॥ ४ ॥

भरतने सब प्रधानोंको बुलाया और आज्ञा दी पुनि वे प्रसन्न हो उठकर चले ॥ ३ ॥ उन्होंने जीन रच २ कर घोड़े सजाये तौ रंग २ के सुन्दर घोड़े तयार हुये ॥ ४ ॥

सुभग सकल सुठि चंचल करनी ❀ अयजिमि जरत धरत पगु धरनी ॥ ५ ॥
नाना भाँति न जाहिं बखाने ❀ निदरि पवन जनु चहत उड़ाने ॥ ६ ॥

वे सब बड़े सुन्दर हैं और उनकी करनी कहिये चाल बड़ी चंचल है, और जैसे कोई जलते हुये लोहेपर पैर धरताहो इस प्रकार धरतीपर पैर धरते हैं ॥ ५ ॥ इतनी भाँतिके (घोड़े है कि) वर्णन नहीं किये जाते, मानों पवनका निरादरकर उड़ना चाहते हैं ॥ ६ ॥

तिन सब छयल भए असवारा ❀ भरतसरिस सब राजकुमारा ॥ ७ ॥
सब सुंदर सब भूषनधारी ❀ कर सर चाप तून कटि भारी ॥ ८ ॥

भरतके समान सब छैल राजकुमार उनके ऊपर सवार हुये ॥ ७ ॥ सब सुन्दर और सब गहने पहने हुये हाथमें धनुषवाण और कमरमें भारी तरकस कसे हुये ॥ ८ ॥

दो०-छरे छबीले छयल सब, मूर सुजान नवीन ॥ ❀
जुगपदचर असवार प्रति, जे असिकलाप्रवीन ॥ ३३२ ॥ ❀

सब छैला, पतले, सुन्दर, शूरवीर, चतुर और नई (अवस्थावाले) थे और हरएक सवारके साथ दो पैदल चाकर थे जो तलवारकी कलाओंमें होशियार थे ॥ ३३२ ॥

चौ०-बाँधे बिरद बीर रणगाढ़े ❀ निकसि भये पुर बाहर ठाढ़े ॥ १ ॥
फेरहिं चतुर तुरग गतिनाना ❀ हरषहिं धुनि सुनि पणव निसाना ॥ २ ॥

रणबाँकुरे वीर लड़ाईका बाना बांधे हुए नगरके बाहर निकल खड़े हुये ॥ १ ॥ चतुर, घोड़ोंको भाँति २ की चालोंसे फेरते हैं और ढोल और निशानोंका शब्द सुनकर प्रसन्न होते हैं ॥ २ ॥

रथ सारथिन बिचित्र बनाए ❀ ध्वज पताक मनि भूषन लाए ॥ ३ ॥
चमर चारु किंकिनि धुनि करहीं ❀ भानुयानसोभा अपहरहीं ॥ ४ ॥

सारथियोंने सुन्दर रथोंको ध्वजा, पताका, मणि और आभूषण लाकर नाना भाँतिके बिचित्र

बनाये हैं ॥ ३ ॥ जिनमें सुन्दर चमर लग रहे हैं और छोटी २ घंटालियाँ शब्दकर रहीं हैं और वे रथ ऐसे चमकते हैं मानो सूर्यके रथकी शोभाको लजा रहे हैं ॥ ४ ॥

श्यामकर्ण अगणित हय होते ❀ तेतिन्ह रथन सारथिन जोते ॥ ५ ॥
सुंदर सकल अलंकृत सोहे ❀ जिनहिं बिलोकत मुनिमन मोहे ॥ ६ ॥

अनगिनती श्यामकर्ण घोड़े थे उनको सारथियोंने उन रथोंमें जोड़दिया ॥ ५ ॥ सब सुन्दर गहनोंसे शोभित हैं जिनको देखतेही मुनीश्वरोंके मनभी मोहित होते हैं ॥ ६ ॥

जे जन चलहिं थलहिकी नाईं ❀ टाप न बूड़ बेग अधिकाईं ॥ ७ ॥
अस्त्र शस्त्र सब साज सजाई ❀ रथी सारथिन लिये बुलाई ॥ ८ ॥

जो जलपरभी थकली भाँति चलते हैं और जल्दी चलनेके कारण उनकी टापभी नहीं डूबती ॥ ७ ॥ अस्त्र शस्त्र और सब साजोंको सजाय २ सारथियोंने रथमें बैठनेवालोंको बुला लिया ॥ ८ ॥

दो०–चढ़ि चढ़ि रथ बाहर नगर, लागी जुरन बरात ॥ ❀
होत सगुन सुंदर सबहिं, जो जेहिं कारज जात ॥ ३३३ ॥ ❀

रथोंपर चढ़ २ कर नगरके बाहर बरात जुड़ने लगी और जो जिस कामको जाता है उन सबको शुभ शकुन होने लगे ॥ ३३३ ॥

चौ०–कलित करिबरनि परी अँबारी ❀ कहि न जाइ जेहि भाँति सँवारी ॥ १ ॥
चले मत्त गज घंट बिराजे ❀ मनहुँ सुभग सावनघन गाजे ॥ २ ॥

सुन्दर हाथियोंपर पड़ी हुई अंबारी जिस भाँति सजाई है सो कही नहीं जाती ॥ १ ॥ मतवाले हाथी चले उनके गलेमें लटके हुए घंटे ऐसे (बजते हैं) मानों सुन्दर सावनके मेघ गरजते हैं ॥ २ ॥

बाहन अपर अनेकविधाना ❀ सिबिका सुभग सुखासन याना ॥ ३ ॥
तिन चढ़ि चले विप्रवरवृंदा ❀ जनु तनु धरे सकल श्रुतिछंदा ॥ ४ ॥

औरभी अनेक भाँतिकी सवारी सुन्दर पालकी तामझामा, और विमान चले ॥ ३ ॥ उनपर श्रेष्ठ ब्राह्मणोंके समाज चढ़कर ऐसे चले मानों संपूर्ण वेदोंकी ऋचाओंने शरीर धारण किया है ॥ ४ ॥

मागध सूत बंदि गुनगायक ❀ चले यान चढ़ि जो जेहि लायक ॥ ५ ॥
बेसर ऊंट वृषभ बहु जाती ❀ चले वस्तु भरि अगनित भाँती ॥ ६ ॥

जगानेवाले, पौराणिक, भाट और गुणोंके गानेवाले जो जिस सवारीके योग्य थे (वे उसपर) चढ़कर चले ॥५॥ बहुत जातिके खच्चर, ऊँट और बैल अनगिनति भाँतिकी वस्तुओंसे लदे हुये चले ॥६॥

कोटिन्ह काँबरि चले कहारा ❀ बिबिध वस्तु को बरनै पारा ॥ ७ ॥
चले सकल सेवकसमुदाई ❀ निज निज साज समाज बनाई ॥ ८ ॥

कहार लोग करोड़ों कामरें ले लेकर चले (और उनमें) भाँति २ की इतनी वस्तु थीं, कि वर्णनकर कौन पार पासकता है ? ॥ ७ ॥ सब सेवकोंकी ठठ्ठ अपने २ समाजको सजाय बनाय चले ॥ ८ ॥

दो०–सबके उर निर्भय हरष, पूरित पुलक सरीर ॥ ❀
कबहिं देखि हैं नयनभरि, रामलषन दोउ वीर ॥ ३३४ ॥ ❀

---

१ यहाँ उत्प्रेक्षालंकार है ।

"यथा भाषाभूषणे" दोहा–'उत्प्रेक्षा संभावना, वस्तु हेतु फल लेख ॥
नैनमनों अरविंद हैं, सरस बिसाल विशेख' ॥ १ ॥

सबके हृदयमें अतुल आनन्द भरा हुआ है, और शरीरमें पुलकावली छागई कि रामचन्द्र लक्ष्मण दोनों वीरोंको नयन भरकर कब देखेंके? ॥ ३३४ ॥

चौ०–गर्जहिं गजघंटाधुनि घोरा ❀ रथ रव बाजि हींस चहुँओरा ॥ १ ॥
निदरि घनहिं घूमरहिं निसाना ❀ निज पराय कछु सुनिय न काना ॥ २ ॥

हाथी चिंघारते जाते हैं और गजघंटोंकी घनी झनकार होती जाती है और रथोंकी घरघराहट तथा घोड़ोंकी हिनहिनाहट चारों ओर सुनाई देती है ॥ १ ॥ बाजे ऐसे बजते हैं कि बादलोंकाभी निरादर करते हैं और अपनी पराई कुछ कानोंसे नहीं सुनी जाती ॥ २ ॥

महाभीर भूपतिके द्वारे ❀ रज हो जाइ पषाण पँवारे ॥ ३ ॥
चढ़ी अटारिन देखहिं नारी ❀ लिये आरती मंगलथारी ॥ ४ ॥

राजाके द्वारपर ऐसी भारी भीर है कि पत्थरकी गेरदो तौ चूर २ होजाय अथवा द्वारपर जो पाषाण लगे हैं उन्होंका घिस २ कर चूरा हुआ जाता है ॥ ३ ॥ स्त्रियां अटारियोंपर चढ़ी हुई आरतीके लिये मंगलथार सजाये देख रहीं हैं ॥ ४ ॥

गावहिं गीत मनोहर नाना ❀ अति आनंद न जाइ बखाना ॥ ५ ॥
तब सुमंत दुइ स्यंदन साजी ❀ जोते रविहयनिंदक बाजी ॥ ६ ॥

भाँति २ के मनोहर गीत गाती हैं और ऐसा अधिक आनन्द है कि वर्णन नहीं किया जाता ॥ ५ ॥ तब सुमंत मंत्रीने दो रथोंको सजाय उनमें सूर्यके घोड़ोंकीसी निन्दा करनेवाले घोड़े जोते ॥ ६ ॥

दोउ रथ रुचिर भूप पहँ आने ❀ नहिं शारदप्रति जाहिं बखाने ॥ ७ ॥
राजसमाज एकरथ साजा ❀ दूसर तेजपुंज अति भ्राजा ॥ ८ ॥

दोनों सुन्दर रथ राजाके पास आये, उनका वर्णन सरस्वतीजीसेभी नहीं हो सक्ता ॥ ७ ॥ एक रथ (राजाके लिये) राजसमाजसे सजाया गया है और दूसरा जो (वसिष्ठके लिये सजा है यह) ऐसा अधिक चमकता है मानों तेजका पुंज है ॥ ८ ॥

दो०–तेहि रथ रुचिर वसिष्ठ कहँ, हरषि चढ़ाइ नरेश ॥ ❀
आप चढ़ेउ स्यंदन सुमिरि, हरगुरुगौरिगणेश ॥ ३३५ ॥ ❀

राजा प्रसन्न हो उस तेजपुंज रथपर वसिष्ठजीको चढ़ाकर आपभी महादेव, गुरु, पार्वती और गणेशजीका स्मरण कर रथपर चढ़े ॥ ३३५ ॥

चौ०–सहितवसिष्ठ सोह नृप कैसे ❀ सुरगुरुसंग पुरंदर जैसे ॥ १ ॥
करि कुलरीति वेदविधि राऊ ❀ देखि सबहिं सब भाँति बनाऊ ॥ २ ॥

वसिष्ठजीके साथ राजा कैसे शोभायमान लगते हैं? जैसे बृहस्पतिके साथमें राजा इन्द्र ॥ १ ॥ राजाने कुलकी रीति और वेदकी विधि कर सबको सब भाँति सजा हुआ देखा– ॥ २ ॥

सुमिरि राम गुरु आयसु पाई ❀ चले महीपति शंख बजाई ॥ ३ ॥
हर्षे विबुध विलोकि बराता ❀ बरषहिं सुमन सुमंगलदाता ॥ ४ ॥

और रामचन्द्रजीका स्मरण कर और गुरुसे आज्ञा लेकर राजा शंख बजाकर चले ॥ ३ ॥ देवता बरातको देखकर प्रसन्न हुये और सुन्दर आनन्द मंगलके देनेवाले फूल बर्षाते हैं ॥ ४ ॥

भयउ कोलाहल हय गज गाजे ❀ ब्योम बरात बाजने बाजे ॥ ५ ॥
सुरनरनारि सुमंगल गाई ❀ सरस राग बाजहिं सहनाई ॥ ६ ॥

हाथी और घोड़ोंके गर्जनेसे वड़ा कोलाहल–शब्द हुआ और आकाशमें वरातके वाजे वजने लगे ५ देववधूटियाँ और नरनारियाँ सुन्दर गीत गाती हैं और रसीले रागसे सहनाई (वाजा) वजती है ॥ ६ ॥

घंट घंट धुनि बरनि न जाई ❀ सरब करहिं पायक फहराई ॥ ७ ॥
करहिं विदूषक कौतुक नाना ❀ हासकुशल कलगान सुजाना ॥ ८ ॥

घंटे और घंटियोंका शब्द वर्णन नहीं किया जाता. टहलुये पटेवाजी करते जाते हैं और उनके हाथोंमें झंडियाँ फहराती जाती हैं ॥ ७ ॥ हँसी करनेमें प्रवीण और सुन्दर गानेमें चतुर भाँड़लोग अनेक भांतिके खेल और नकलें करते जाते हैं ॥ ८ ॥

दो०–तुरग नचावहिं कुँवरवर, अंकित मृदंग निसान ॥ ❀
नागर नट चितवहिं चकित, डिगहिं न तालबिधान ॥ ३३६ ॥ ❀

सुन्दर कुँवर मृदंग और निसानका शब्द सुनकर घोड़ोंको ऐसे नचाते हैं, जो तालकी गतीसे नहीं डिगते और चतुर नट उन्हें चकित हो देखते हैं (कि उन्होंने हमैं भी मात किया) ॥ ३३६ ॥

चौ०–बनै न बरनत बनि बराता ❀ होइँ शकुन सुंदर शुभदाता ॥ १ ॥
चारा चाष बामदिसि लेई ❀ मनहुँ सकल मंगल कहिदेई ॥ २ ॥

बरातका वनाव वर्णन नहीं होसक्ता. सव सुन्दर कल्याणके देनेवाले शकुन होतें जाते हैं ॥ १ ॥ नीलकंठ वाई दिशामें चुगा लेता है सो मानों संपूर्ण आनन्दोंको कह देता है ॥ २ ॥

दाहिन काग सुखेत सुहावा ❀ नकुलदरस सबकाहू पावा ॥ ३ ॥
सानुकूल बह त्रिविधि बयारी ❀ सघट सबाल आव बरनारी ॥ ४ ॥

कौआ दहिनी ओर सुंदर खेतमें शोभित है और नौलेका दर्शन सव किसीनें पाया ॥ ३ ॥ तीन प्रकारकी (शीतल मन्द सुगंध) पवन सानुकूल कहिये सामनेसे चली आती है, और घड़े और बालक सहित सुन्दर स्त्री आरही है ॥ ४ ॥

लोवा फिर फिर दरस दिखावा ❀ सुरभी संमुख शिशुहिं पिआवा ॥ ५ ॥
मृगमाला दाहिनदिसि आई ❀ मंगलगण जनु दीन्ह दिखाई ॥ ६ ॥

लोखरीने वारंवार दरश दिखाया और सुरभी गौने सामने बच्चेको पिलाया ॥ ५ ॥ हिरणोका झुंड दहिनी दिशासे आया. मानों आनन्दोंका समूह दिखाई दिया ॥ ६ ॥

क्षेमकरी कह क्षेम बिसेषी ❀ श्यामा वाम सुतरु पर देषी ॥ ७ ॥
संमुख आयउ दधि अरु यीना ❀ कर पुस्तक दुइ विप्र प्रवीना ॥ ८ ॥

सगुन च्चिरैया अधीक कल्याणको कह रही है और श्याम च्चिरैया बाई ओर सुन्दर वृक्षपर दिखाई दे रही है ॥ ७ ॥ (मनुष्योंके शिरपर धरे हुये) दधि और मीन तथा हाथमें पुस्तक लिये दो पंडित ब्राह्मण सामने आये ॥ ८ ॥

दो०–मंगलमय कल्याणमय, अभिमत फलदातार ॥ ❀
जनु सब साँचे होन चित, भए शकुन इकबार ॥ ३३७ ॥ ❀

आनन्द और मंगल तथा मनोवांछित फलोंके देनेवाले सब शकुन मानों सच्चे होनेके लिये एक साथही हुये ॥ ३३७ ॥

चौ०–मंगल शकुन सुगम सुभताके ❀ सगुन ब्रह्म सुंदर सुत जाके ॥ १ ॥
रामसरिस वर दुलहिनि सीता ❀ समधी दशरथ जनक पुनीता ॥ २ ॥

सुन्दर मंगलदायक शकुन उसको सहज हैं कि जिसके सगुण ब्रह्म सुंदर पुत्र हैं ॥ १ ॥ (जिस व्याहमें) रामचन्द्रके समान दूलह और जानकी दुलहिन और दशरथ और जनक पवित्र समधी हैं ॥२॥

सुनि अस ब्याह शकुन सब नाचे ❀ जब कीन्हे विरंचि हम साँचे ॥ ३ ॥
यहि विधि कीन्ह बरात पयाना ❀ हय गज गाजहिं हनहिं निसाना ॥ ४ ॥

ऐसे व्याहको सुन सब शकुन नाचने लगे कि अब हमें ब्रह्माने सच्चा किया ॥ ३ ॥ इस भाँति बरातने प्रस्थान किया तौ हाथी घोड़े लगे चिंघारने, और बाजे लगे बजने ॥ ४ ॥

आवत जानि भानुकुलकेतू ❀ सरितन जनक बँधाये सेतू ॥ ५ ॥
बीच बीच वर बास बनाए ❀ सुरपुर सरिस संपदा छाए ॥ ६ ॥

जनकने सूर्यवंशकी ध्वजा (दशरथ) को आता हुआ जान नदियोंके पुल बँधवा दिये ॥ ५ ॥ बीच २में सुन्दर ठहरनेके लिये स्थान बनवा दिये जिनमें स्वर्गके समान संपदा छारही है ॥ ६ ॥

असन सयन वर बसन सुहाए ❀ पावहिं सब निज निज मत भाए ॥ ७ ॥
नित नूतन सुख लखि अनुकूला ❀ सकल बरातिन मंदिर भूला ॥ ८ ॥

जिसमें सब लोग श्रेष्ठ भोजन पलँग और सुन्दर वस्त्र अपने २ मन भाते पाते चले आते हैं ॥ ७ ॥ सब बराती नित नया मनमाना सुख देख (अपने २) घरोंके सुख भूलगये ॥ ८ ॥

दो०–आवत जानि बरातवर, सुनि गहगहे निसान ॥ ❀
सजि गज रथ पदचर तुरँग, लेन चले अगवान ॥ ३३८ ॥ ❀

(इस भांति) सुन्दर बरात आती हुई जान और घने बाजोंको सुनकर हाथी, घोड़े, रथ और पैदल सजाकर आगौनी लेने चले ॥ ३३८ ॥

चौ०–कनककलस कल कोपर थारा ❀ भाजन ललित अनेक प्रकारा ॥ १ ॥
भरे सुधासम सब पकवाना ❀ भाँति भाँति नहिं जायँ बखाना ॥ २ ॥

सुवर्णके कलशे सुन्दर परात थार और बहुत भाँतिके श्रेष्ठ वर्त्तन ॥ १ ॥ जिनमें सब भाँति २ के अमृतके समान पकवान ऐसे भरे हुये हैं कि वर्णन नहीं किये जाते ॥ २ ॥

फल अनेक वर वस्तु सुहाई ❀ हरषि भेट हित भूप पठाई ॥ ३ ॥
भूषन बसन महामनि नाना ❀ खग मृग हय गज बहुविध याना ॥ ४ ॥

राजाने प्रसन्न होकर सुन्दर फल और अनेक उत्तम वस्तु भेटके लिये भेजीं ॥ ३ ॥ बहुतसे गहने कपड़े और भाँति २ की बड़ी २ मणि, पक्षी और हिरण, और घोड़े हाथी और बहुत भाँतिकी सवारी ४

मंगल शकुन सुगंध सुहाए ❀ बहुतभाँति महिपाल पठाए ॥ ५ ॥
दधि चिउरा उपहार अपारा ❀ भरि भरि काँवरि चले कहारा ॥ ६ ॥

और मंगलकारी बहुत भाँतिकी शकुनकी वस्तु और इतर आदि सुन्दर सुगंध राजाने भिजवाईं ॥ ५ ॥ कहार (लोग) दही, चावल और अपार भेटकी सामग्रीको काँवरोंमें भर २ कर चले ॥ ६ ॥

अगवानन जब दीख बराता ❀ उर आनंद पुलकभर गाता ॥ ७ ॥
देखि बनाव सहित अगवाना ❀ मुदित बरातिन हने निसाना ॥ ८ ॥

जब आगौनीवालोंको बरात दिखाई दी, तौ मनमें बड़ा आनन्द हुआ और शरीर पुलकायमान होगये ॥७॥ बरातियोंने ठाठसहित आगौनीवालोंको देखकर प्रसन्नतासे बाजे बजाये ॥ ८ ॥

दो०-हरषि परस्पर मिलनहित, कछुक चले बगमेल ॥
जनु आनंदसमुद्र दुइ, मिलत बिहाइ सुबेल ॥ ३३९ ॥

कुछ एक प्रसन्न हो मिलनेके लिये बाग छोड़कर (आगे बढ़कर) चले. मानों आनन्दरूपी दो समुद्र मर्यादा छोड़कर मिलते हैं ॥ ३३९ ॥

चौ०-बरषि सुमन सुरसुंदरि गावहिं ❀ मुदित देव दुंदुभी बजावहिं ॥ १ ॥
वस्तु सकल राखी नृप आगे ❀ विनय कीन्ह तिन्ह अति अनुरागे ॥ २ ॥

देवताओंकी स्त्रियां फूल वर्षाकर गीत गाती हैं और देवता प्रसन्न हो नगाड़े बजाते हैं ॥ १ ॥ राजा (दशरथ) के आगे सब पदार्थ रख दिये, और उन्होंने अत्यंत प्रीतिसे विनती की ॥ २ ॥

प्रेमसमेत राउ सब लीन्हा ❀ भइ बकसीस जाचकन दीन्हा ॥ ३ ॥
करि पूजा बहु मान बड़ाई ❀ जनवाँसे कहँ चले लिवाई ॥ ४ ॥

राजाने सब (चीजें) बड़े प्रेमसे लेलीनी फिर भिखारियोंको बकसीस कहिये इनाम बाँटा ॥ ३ ॥ फिर बहुतसी पूजा, सन्मान और बड़ाई कर (अगवानी लोग बरातियोंको) जनवासेको लिवा चले ॥४॥

बसन बिचित्र पाँवड़े परहीं ❀ नृप दशरथ तापर पग धरहीं ॥ ५ ॥
देखि धनद धनमद परिहरहीं ❀ बरषि सुमन सुर जय जय करहीं ॥ ६ ॥

चित्रविचित्र कपड़ोंके पाटंबर पड़ते जाते हैं. उसपर राजा दशरथ पैर रखते जाते हैं ॥ ५ ॥ (इस आनन्दको) देखकर कुबेरभी धनका अभिमान छोड़ते हैं और देवता फूल बर्षाकर जय २ करते हैं ६

अति सुंदर दीन्हेउ जनवासा ❀ जहँ सब कहँ सब भाँति सुपासा ॥ ७ ॥
जानी सिय बरात पुर आई ❀ कछु निज महिमा प्रगटि जनाई ॥ ८ ॥
हृदय सुमिरि सब सिद्धि बुलाई ❀ भूप पहुनई करन पठाई ॥ ९ ॥

अत्यंत सुन्दर जनवासा दिया, जहाँ सबको सब तरह आराम है ॥ ७ ॥ सीताजीने बरातको नगरमें आई हुई जान कुछ अपनी महिमा प्रत्यक्ष दिखाई ॥ ८ ॥ हृदयमें स्मरणकर सब सिद्धियाँ बुलाई और राजाकी मिहमानी करनेको पठाई ॥ ९ ॥

दो०-सियआयसु सिर सिद्धि धर, गई जहाँ जनवास ॥
लियें संपदा सकल सुख, सुरपुरभोगबिलास ॥ ३४० ॥

सिद्धियां सीताजीकी आज्ञाको मस्तकपर धर संपूर्ण सुख और संपत्ति और देवताओंके नगरके भोगबिलासको लिये हुये वहाँ गई कि जनवासा था ॥ ३४० ॥

चौ०-निज निज बास बिलोकि बराती ❀ सुरसुख सकल सुलभ सब भाँती ॥ १ ॥
बिभवभेद कछु काहु न जाना ❀ सकल जनककर करहिं बखाना ॥ २ ॥

सब बरातियोंको अपने २ रहनेकी जगह देख देवताओंका सुख सब भाँति सहज दिखाई देता था. अर्थात् वह सुख देवताओंके सुखसेभी बड़ा था ॥ १ ॥ संपत्तिका भेद तौ किसीने कुछ न जाना सब जनकका किया हुआ वर्णन करते हैं ॥ २ ॥

सियमहिमा रघुनायक जानी ❀ हरषे हृदय हेतु पहिचानी ॥ ३ ॥
पितु आगमन सुनत दोउ भाई ❀ हृदय न अति आनंद समाई ॥ ४ ॥

सीताकी महिमाको रामजी जान कर और मनमें कारण पहिचान प्रसन्न हुये ॥ ३ ॥ पिताका आना सुनतेही दोनों भाइयोंको ऐसा भारी आनन्द हुआ कि हृदयमें नहीं समाता था ॥ ४ ॥

सकुचत कहि न सकत गुरुपाहीं ❀ पितुदरसन लालच मनमाहीं ॥ ५ ॥
विश्वामित्र बिनय बड़ि देषी ❀ उपजा उर संतोष बिसेषी ॥ ६ ॥

[1]संकुचते हैं परन्तु गुरुसे कह नहीं सक्ते; उनके मनमें पिताके दर्शनकी लालसा है ॥ ५ ॥ उनकी बड़ी नम्रताको देख विश्वामित्रके हृदयमें बहुत संतोष उत्पन्न हुआ ॥ ६ ॥

हरषि बंधु दोउ हृदय लगाए ❀ पुलक अंग लोचन जल छाए ॥ ७ ॥
चले जहाँ दशरथजनवासे ❀ मनहुँ सरोवर तकेउ पियासे ॥ ८ ॥

प्रसन्न हो दोनों भाइयोंको छातीसे लगाया तौ शरीर पुलकायमान हुआ और नेत्रोंसे जल भरआया ॥ ७ ॥ (फिर) जहाँ जनवासेमें दशरथ थे (वहाँ) चले. मानों सरोवरने प्यासेको तका ॥ ८ ॥

दो०-भूपविलोके जबहिं मुनि, आवत सुतनसमेत ॥ ❀
उठेउ हरषि सुखसिंधुमहँ, चले थाहसी लेत ॥ ३४१ ॥ ❀

अब राजाने मुनि (विश्वामित्र) को पुत्रोंसहित आते देखा तौ प्रसन्न होकर उठे और सुखरूपी समुद्रमें थाहसी लेते हुये चले ॥ ३४१ ॥

चौ०-मुनिहि दंडवत कीन्ह महीसा ❀ बारबार पदरज धरि सीसा ॥ १ ॥
कौशिक राउ लिये उर लाई ❀ कहि असीष पूछी कुसलाई ॥ २ ॥

राजाने वारंवार मुनिके चरणोंकी रजको मस्तकपर धारण कर दंडवत की ॥ १ ॥ विश्वामित्रने राजाको हृदयसे लगाय आशीर्वाद दे कुशल पूछी ॥ २ ॥

पुनि दंडवत करत दोउ भाई ❀ देखि नृपति सुख उर न समाई ॥ ३ ॥
सुत हिय लाइ दुसह दुख मेटे ❀ मृतक शरीर प्राण जनु भेटे ॥ ४ ॥

फिर दोनों भाइयोंको दंडवत करते हुए देखकर राजाके मनमें सुख नहीं समाता (अर्थात् वहुत होनेके कारण सुख उमड़ा जाता था) ॥ ३ ॥ पुत्रोंको हृदयसे लगाय (पहिले विरह) के कठिन दुःखोंको ऐसे दूर किया, मानों मरे हुये शरीरकों प्राणोंसे भेट हुई ॥ ४ ॥

पुनि वसिष्ठपद सिर तिन्ह नाये ❀ प्रेममुदित मुनिवर उर लाये ॥ ५ ॥
विप्रवृंद वंदे दोउ भाई ❀ मन भावत असीस तिन पाई ॥ ६ ॥

फिर उन राम लक्ष्मणने वसिष्ठजीके चरणोंको मस्तक नवाया तौ श्रेष्ठ मुनिने प्रेममें मगन हो उन्हें छातीसे लगाया ॥ ५ ॥ फिर दोनों भाइयोंने ब्राह्मणोंके समाजको शिर नवाया और उनसे मनभाया आशीर्वाद पाया ॥ ६ ॥

भरत सहानुज कीन्ह प्रनामा ❀ लिए उठाइ लाइ उर रामा ॥ ७ ॥
हरषे लखन देखि दोउ भ्राता ❀ मिले प्रेमपरिपूरितगाता ॥ ८ ॥

भरतने छोटे भाई शत्रुघ्नजीसहित प्रणाम की तौ रामचन्द्रने उठाकर (दोनोंको) हृदयसे लगा लिया ॥ ७ ॥ लक्ष्मणजी दोनों भाइयोंको देख शरीरमें स्नेहसे परिपूर्ण होकर मिले ॥ ८ ॥

दो०-पुरजन परिजन जातिजन, याचक मंत्री मीत ॥ ❀
मिले जथाविधि सबहि प्रभु, परम कृपालु विनीत ॥ ३४२ ॥ ❀

---

(१) सुकुचते इसीलिये हैं कि कहीं गुरु यह न जानें कि इन्हें पिता हमसे अधिक प्यारे हैं ॥

नगरके लोग, कुटुम्बी जातिके लोग, माँगनेवाले मंत्री और मित्र इन सबसे रामचन्द्रजी यथायोग्य मिले क्योंकि प्रभु कृपानिधान और बड़े विनयशील हैं ॥ ३४२ ॥

चौ०–रामहिं देखि बरात जुड़ानी ❀ प्रीतिकि रीति न जाइ बखानी ॥ १ ॥
नृपसमीप सोहहिं सुत चारी ❀ जनु धन धर्मादिक तनुधारी ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीको देखकर बरात प्रसन्न हुई. उनकी प्रीतिकी रीति वर्णन नहीं की जाती ॥ १ ॥ राजाके पास चारों पुत्र कैसे शोभायमान हैं मानों धन और धर्म आदि अर्थात् धर्म अर्थ काम मोक्षने शरीर धारण किया है ॥ २ ॥

सुतन्हसहित दशरथ कहँ देषी ❀ मुदित नगर नर नारि विसेषी ॥ ३ ॥
सुमन बरषि सुर हनहिं निसाना ❀ नाकनटी नाचहिं करि गाना ॥ ४ ॥

पुत्रोंसमेत दशरथको देख नगरके स्त्री पुरुष बहुत प्रसन्न हुये ॥ ३ ॥ देवता फूल वर्षाकर वाजे वजाते हैं और अप्सरा गान करके नाचती हैं ॥ ४ ॥

सतानंद अरु विप्र सचिवगन ❀ मागध सूत बिदुष बंदीजन ॥ ५ ॥
सहित बरात राउ सनमाना ❀ आयसु माँगि फिरे अगवाना ॥ ६ ॥

फिर शतानन्द और ब्राह्मण तथा मंत्रियोंका समूह और नट पौराणिक-भाँड़ और भाट ॥ ५ ॥ ये सब आगोनीवाले बरातसमेत राजाका सत्कारका और आज्ञा माँगकर लौटे ॥ ६ ॥

प्रथम बरात लग्नतें आई ❀ ताते पुर प्रमोद अधिकाई ॥ ७ ॥
ब्रह्मानंद लोग सब लहहीं ❀ बढ़उ दिवस निसि विधिसन कहहीं ॥ ८ ॥

बरात लग्नसे पहिले आई, इससे नगरमें बहुत आनन्दकी अधिकाई छाई ॥ ७ ॥ सब लोग ब्रह्मानन्दकासा आनन्द पाते हैं और ब्रह्मासे रातदिन बढ़ानेके लिये मनाते हैं ॥ ८ ॥

दो०–राम सीय सोभा अवधि, सुकृत अवधि दोउ राज ॥ ❀
जहँ तहँ पुरजन कहहिं अस, मिलि नरनारिसमाज ॥ ३४३ ॥❀

जहाँ तहाँ नगरवासि स्त्रीपुरुषोंके ठठ्ठके ठठ्ठ मिलकर ऐसे कहते हैं कि रामचन्द्र जानकी शोभाकी सीमा और दोनों राजा (दशरथ और जनक) पुण्य कर्मोंकी सीमा हैं ॥ ३४३ ॥

चौ०–जनकसुकृतमूरति वैदेही ❀ दसरथसुकृत राम धरि देही ॥ १ ॥
इनसम काहु न शिव आराधे ❀ काहु न इनसमान फल साधे ॥ २ ॥

और जनकके शुभ कर्मोंकी मूर्त्ति सीताजीने और दशरथके श्रेष्ठ कर्मोंकी देह रामचन्द्रजीने धारण की है ॥१॥ इनके बराबर न तौ किसीने महादेवको मनाया और न इनके समान किसीने फल पाये ॥२॥

इनसम कोउ न भयउ जगमाहीं ❀ है नहिं कतहुँ होनऊँ नाहीं ॥ ३ ॥
हम सब सुफल सुकृतकी रासी ❀ भे जग जन्मि जनकपुरवासी ॥ ४ ॥

इनके समान संसारमें न तौ कोई हुआ, न है और न कभी होनेवाला है ॥ ३ ॥ हम सब भी तौ सुकृत और उसके फलके समूह हैं जो जगतमें जन्म लेकर जनकपुरवासी हुये हैं ॥ ४ ॥

जिन जानकीरामछबि देषी ❀ को सुकृती हमसरिस बिसेषी ॥ ५ ॥
पुनि देखब रघुबीरविवाहू ❀ लेब भलीविधि लोचन लाहू ॥ ६ ॥

जिन हमने सीतारामकी शोभा देखी तौ हमारे समान अधिक पुण्यवान् कौन है? ॥ ५ ॥ फिर रामचन्द्रका व्याह देखेंगे और अच्छी भाँति नेत्रोंका लाभ लेंगे ॥ ६ ॥

कहहिं परस्पर कोकिलबयनी ❀ यहि विवाह बड़ लाहु सुनयनी ॥ ७ ॥
बड़े भाग विधि बात बनाई ❀ नयनअतिथि होइहैं दोउ भाई ॥ ८ ॥

कोकिलवैनी स्त्रियाँ आपसमें कहती हैं, हे सुनयनी! यह विवाह बड़ा लाभकारी है ॥ ७ ॥ बड़े भाग्यसे विधाताने बात बनाई है. जो दोनों भाई (रामलक्ष्मण) नेत्रोंके मिहमान हुआकरैंगे ८

दो०–बारहिंबार सनेहवस, जनक बोलाउब सीय ॥
लेन आइहहिं बंधु दोउ, कोटिकामकमनीय ॥ ३४४ ॥

क्योंकि राजा जनक स्नेहके वश हो सीताजीको वारंवार बुलाया करैंगे, (और तब) करोड़ों कामदेवोंके समान सुन्दर दोनों भाई लेने आया करैंगे ॥ ३४४ ॥

चौ०–बिबिधभाँति होइहि पहुनाई ❀ प्रिय न काहि अस सासुर भाई ॥ १ ॥
तब तब राम लषनहिं निहारी ❀ होइहहिं सब पुरलोग सुखारी ॥ २ ॥

बहुत भाँतिकी मिहमानी हुआ करैंगी भला ऐसी सुसराल किसको प्यारी नहीं ॥ १ ॥ तब सब नगरके लोग रामचन्द्र लक्ष्मणको देखकर सुखी हुआ करैंगे (यह सुन दूसरी बोली कि) ॥ २ ॥

सखि जस राम लषनकर जोटा ❀ तैसेइ भूपसंग दुइ ढोटा ॥ ३ ॥
श्याम गौर सब अंग सुहाए ❀ ते सब कहहिं देखि जे आए ॥ ४ ॥

हे सखी! जैसी रामचन्द्र लक्ष्मणकी जोड़ी है तैसेही दो पुत्र राजाके साथ हैं ॥ ३ ॥ उनकाभी साँवला गोरा रंग और (नखशिखसे) सुन्दर अंग है, जो देख आये हैं वे सब कहते हैं ॥ ४ ॥

कहा एक मैं आजु निहारे ❀ जनु बिरंचि निज हाथ सँवारे ॥ ५ ॥
भरत राम एकहिं अनुहारी ❀ सहसा लखि न सकहिं नरनारी ॥ ६ ॥

एकने कहा मैंने आजही निहारे हैं. (वे ऐसे हैं) मानों विधाताने उन्हें अपने हाथोंसे सम्हारे हैं ५ भरत और रामचन्द्रकी मूर्ति ऐसी एकसी मिलती है कि नरनारी एकाएकी पहँचान नहीं सकते ६॥

लषन शत्रुसूदन इकरूपा ❀ नखसिखते सब अंग अनूपा ॥ ७ ॥
मन भावहिं मुख बरनि न जाहीं ❀ उपमा कहँ त्रिभुवन कोउ नाहीं ॥ ८ ॥

लक्ष्मणजी और शत्रुहनकाभी एकसा रूप है और नखशिखसे सब अंग उपमारहित हैं ॥ ७ ॥ मनमें भाते हैं परंतु मुखसे वर्णन नहीं किये जाते और उनकी उपमा देनेके लिये तीनों लोकमें कोई नहीं पाये जाते ॥ ८ ॥

छं०–उपमा न कोउ कह दास तुलसी कतहुँ कविकोविद कहैं।
बल विनय विद्या शील शोभासिंधु इनसम ये अहैं ॥
पुरनारि सकल पसारि अंचल बिधिहिं बचन सुनावहीं।
ब्याहिय सु चारिउ भाइ यहि पुर हम सुमंगल गावहीं ॥ ३६ ॥

तुलसीदास कहते हैं कि, जब कोई उपमाही नहीं है ता पंडित और कवि कहाँसे कह सक्ते हैं, बल, नम्रता, विद्या, शील और शोभाके समुद्र, इनके समान येही है नगरकी सब स्त्रियां अंचल पसार २ ब्रह्मासे मनाती है कि सुन्दर चारों भाई इसी नगरमें व्याहे जावें और हम सुन्दर मंगलचार गावें ३६

सो०–कहहिं परस्पर नारि, बारिबिलोचन पुलकतनु।
सखि सब करब पुरारि, पुन्यपयोनिधि भूप दोउ ॥ ३८ ॥

स्त्रियां नेत्रोंमें जल भर कर और शरीरमें पुलकायमान हो आपसमें कहती है कि, हे सहेली ! महादेवजी सब मनोकामना पूरी करेंगे क्योंकि ये दोनों राजा पुण्यके समुद्र हैं ॥ ३८ ॥

चौ०–इहिं बिधि सकल मनोरथ बरहीं ❀ आनँद उमगि उमगि उर भरहीं ॥ १ ॥
जे नृप सीयस्वयंवर आए ❀ देखि बंधु सब तिन सुख पाए ॥ २ ॥

इस भाँति सब इच्छा करती है, और उमँग २ कर हृदयमें आनन्द भरती है ॥ १ ॥ जो (भक्त) राजा सीताजीके स्वयंवरमें आये, उन्होंने दोनों भाइयोंको देख सब सुख पाये ॥ २ ॥

कहत रामजस बिसद बिसाला ❀ निज निज भवन गए महिपाला ॥ ३ ॥
गए बीति कछु दिन यहि भाँती ❀ प्रमुदित पुरजन सकल बराती ॥ ४ ॥

और रामजीके बड़े निर्मल यशको कहते हुवे सब राजा अपने २ डेरोंको गये ॥३॥ इस भाँति नगरवासी और सब बरातियोंके कुछ दिन आनन्दमें बीत गये ॥ ४ ॥

मंगलमूल लग्नदिन आवा ❀ हिमऋतु अगहन मास सुहावा ॥ ५ ॥
ग्रह तिथि नखत जोग बरबारू ❀ लगन सोधि बिधि कीन्ह बिचारू ॥ ६ ॥

तब सुन्दर अगहनके[1] महीने और हेमंतऋतुमें आनन्ददायक लग्नका दिन आया ॥ ५ ॥ ब्रह्माने[2] ग्रह, तिथि, नक्षत्र, योग श्रेष्ठवार (इनको) विचार कर और लग्नशोध कर– ॥ ६ ॥

पठै दीन्ह नारद कर सोई ❀ गुनी जनकके गनकन जोई ॥ ७ ॥
सुनी सकल लोगन यह बाता ❀ कहहिं ज्योतिषी अपर बिधाता ॥ ८ ॥

नारदजीके हाथ भेज दीनी और वही जनकके ज्योतिषियोंने निश्चय कीथी ॥ ७ ॥ जब यह बात सब लोगोंने सुनी, तौ कहने लगे कि, ज्योतिषी क्या हैं दूसरे विधाताही हैं ॥ ८ ॥

दो०–धेनुधूलिबेला बिमल, सफल सुमंगलमूल ॥ ❀
बिप्रन कहेउ बिदेहसन, जानि समय अनुकूल ॥ ३४५ ॥ ❀

ब्राह्मणोंने गोधूलि[3] लग्नको निर्मल और सब मंगलोंकी खान जान जनकसे कहाकि, (विवाहका) यह सुन्दर समय है ॥ ३४५ ॥

चौ०–उपरोहितहिं कहेउ नरनाहा ❀ अब बिलंबकर कारन काहा ॥ १ ॥
शतानंद तब सचिव बुलाए ❀ मंगलकलस शकुन सब ल्याए ॥ २ ॥

राजाने (सुनकर) पुरोहितजीसे कहा कि अब देर करनेका क्या कारण है? ॥ १ ॥ तब शतानन्दने मंत्रियोंको बुलाया तौ वे सब मंगलकलश सजा लाये ॥ २ ॥

---

(१) जैसा भगवानने गीतामें कहा है कि–"मासानां मार्गशीर्षोहम्॥" (२) जो यह शंका करो कि जब ब्रह्माजीने स्वयं लग्न शोधा तौ लग्नका फल क्यों न हुआ और सीतारामको वनवास क्यों हुआ? वहां कहते हैं कि लग्नका फल तौ आनन्दपूर्वक विवाह हो जाना है, और बनवास आदि फल तौ जन्मपत्रीके अथवा कर्मपत्रीके अनुसार होता है.

कवित्त. (३) नाहिन विचारनके बुरे तिथिवारनको निन्दित नछत्रके निषेधको प्रथा नहै ।
वरन्यो विधान न अयोग वर्णनको मान्यो ना मुहूरत न वारको मिदान है ॥
अष्टम सुथानके न शोधनको कामकछू जामित्रक आदि दोषहूको ना मिलान है ।
नाथ नक्खण्डमें विवाहकें विधानबीच गोरज समान शुभ लग्न हू न आन है ॥ १ ॥

शंख निसान पणव बहु बाजे ❀ मंगलकलस शकुन सब साजे ॥ ३ ॥ ॥
सुभग सुआसिनि गावहिं गीता ❀ करहिं वेदधुनि विप्र पुनीता ॥ ४ ॥

शंख, ढोल और वहुतसे बाजे वजने लगे और मंगलकलश और सव शकुन सजने लगे ॥ ३ ॥ सुन्दर सुहागिन (स्त्रियाँ) वधावे गाने लगीं और पवित्र ब्राह्मण वेदपाठ करने लगे ॥ ४ ॥

लेन चले सादर यहि भाँती ❀ गए जहाँ जनवास बराती ॥ ५ ॥
कोशलपतिकर देखि समाजू ❀ अति लघु लाग तिनहिं सुरराजू ॥ ६ ॥

इस भाँति आदरसहित लेने चले और वहाँ गये जहाँ जनवासेमें वराती थे ॥ ५ ॥ दशरथके समाजको देखकर उनको इन्द्रका समाजभी बहुत छोटा लगा ॥ ६ ॥

भयउ समय अब धारियपाऊ ❀ यह सुनि परा निसानन घाऊ ॥ ७ ॥
गुरुहिं पूछि करि कुलविधि राजा ❀ चले संग मुनि साधु समाजा ॥ ८ ॥

(और कहा कि) अव समय हुआ चरण पधारिये. यह सुनकर बाजोंपर लगा डंका डमाडम पड़ने ॥ ७ ॥ पुनि राजा (दशरथ) गुरुसे पूछ और कुलकी रीति कर साथमें मुनीश्वर और साधुओंका समाज लेकर चले ॥ ८ ॥

दो०–भाग्यबिभव अवधेसकर, देखि देव ब्रह्मादि ॥ ❀
लगे सराहन सहसमुख, जानि जनम निज बादि ॥ ३४६ ॥ ❀

ब्रह्माआदि देव राजा दशरथके भाग्यके वैभवको देख और अपना जन्म वृथा जानकर हजार मुखसे सराहना करने लगे ॥ ३४६ ॥

चौ०–सुरन सुमंगलअवसर जाना ❀ वरषहिं सुमन बजाइ निसाना ॥ १ ॥
शिब ब्रह्मादिक बिबुधवरूथा ❀ चढ़े विमानन्ह नाना जूथा ॥ २ ॥

सवदेवता सुन्दर आनन्दका समय जान बाजे वजाय २ फूल वर्षाने लगे ॥ १ ॥ महादेव और ब्रह्माआदि देवताओंके समूह भाँति २ के विमानोंपर चढ़े हुये ॥ २ ॥

प्रेमपुलक तनु हृदय उछाहू ❀ चले बिलोकन रामविवाहू ॥ ३ ॥
देखि जनकपुर सुर अनुरागे ❀ निजनिज लोक सबहिं लघु लागे ॥ ४ ॥

प्रेमके कारण शरीरमें पुलकायमान और मनमें प्रसन्न हो, रामचन्द्रजीका विवाह देखने चले ॥ ३ ॥ जनकपुरको देखकर देवता ललचाने लगे और अपने २ लोक सवको छोटे लगने लगे ४

चितवहिं चकित बिचित्र बिताना ❀ रचना सकल अलौकिक नाना ॥ ५ ॥
नगर नारि नर रूपनिधाना ❀ सुघर सुधर्म सुशील सुजाना ॥ ६ ॥

भाँति भाँतिकी रचनाको संसारसे बाहर जान हक्के वक्के होकर विचित्र मंडपको देखते हैं ॥५॥ नगरके स्त्री पुरुष रूपवान्, सुघड़ धर्मज्ञ, सुशील और सज्जन हैं ॥ ६ ॥

तिनहिं देखि सब सुर सुरनारी ❀ भए नखत जनु विधुउजियारी ॥ ७ ॥
बिधिहिं भयो आश्चर्यविसेषी ❀ निज करनी कछु कतहुँ न देषी ॥ ८ ॥

उनको देख सव देवता और देवताओंकी वधूटियां कैसे (छविछीन) हो गयींमानों चन्द्रमाके उजेलेमें तारे ॥ ७ ॥ ब्रह्माको वड़ा अचंभा हुआ कि अपनी करतूत कुछभी कहीं नहीं देखी ॥ ८ ॥

दो०–शिव समुझाए देव सब, जनि आश्चर्य भुलाहु ॥ ❀
हृदय विचारहु धीर धरि, सियरघुवीरविवाहु ॥ ३४७ ॥ ❀

महादेवजीने सब देवताओंको समझाया कि, भूलकरभी अचंभा मत करो. मनमें धीरज धर विचारो कि, यह सीतारामचन्द्रका विवाह है ॥ ३४७ ॥

चौ०–जेहिकर नाम लेत जगमाहीं ❀ सकल अमंगलमूल नसाहीं ॥ १ ॥
करतल होहिं पदारथ चारी ❀ ते सिय राम कहेउ कामारी ॥ २ ॥

जिनका नाम लेतेही संसारमें सब अमंगल जड़से नाश हो जाते हैं ॥ १ ॥ और चारों पदार्थ(धर्म अर्थ काम मोक्ष) हथेलीपर हो जाते हैं. शंकरने कहा वही सीताराम हैं (जिनका व्याह है) ॥२॥

यहिविधि शंभु सुरन समुझावा ❀ पुनि आगे वर वसह चलावा ॥ ३ ॥
देवन देखे दशरथ जाता ❀ महामोदमन पुलकितगाता ॥ ४ ॥

महादेवने देवताओंको इस भांति समझाया, और फिर सुन्दर नादियेको आगे चलाया ॥ ३ ॥ देवताओंने दशरथको जाते हुये देखा तौ मनमें वहुत प्रसन्न हो शरीरमें पुलकायमान हुये ॥ ४ ॥

साधुसमाज संग महिदेवा ❀ जनु तनु धरे करहिं सुख सेवा ॥ ५ ॥
सोहत साथ सुभग सुत चारी ❀ जनु अपवर्ग सकल तनुधारी ॥ ६ ॥

साथमें साधुओंका समाज और ब्राह्मण (ऐसे चले जाते) हैं मानों सब सुखही शरीर धारण किये सेवा करते हैं ॥ ५ ॥ साथमें सुन्दर चारों पुत्र कैसे शोभायमान हैं मानों मोक्षने सब शरीर धारण किये हैं ॥ ६ ॥

मरकत कनक वरन वर जोरी ❀ देखि सुरन भइ प्रीति न थोरी ॥ ७ ॥
पुनि रामहिं बिलोकि हिय हर्षे ❀ नृपहिं सराहिं सुमन तिन्ह वर्षे ॥ ८ ॥

राम और भरतकी मरकत मणिके समान और लक्ष्मण और शत्रुघ्नकी सुवर्णके समान मनमोहिनी दोनों जोड़ीको देखकर देवताओंको थोड़ी प्रीति नहीं हुई, अर्थात् वहुत हुई ॥ ७ ॥ फिर उन्होंने रामचन्द्रजीकों देख मनमें प्रसन्न हो राजाकी सराहना कर फूल बर्षाये ॥ ८ ॥

दो०–रामरूप नखसिख सुभग, बारहिंबार निहारि ॥ ❀
पुलकगात लोचन सजल, उमासमेत पुरारि ॥ ३४८ ॥ ❀

महादेव पार्वतीसहित रामचन्द्रजीके रूपको वारंवार नखशिखसे सुन्दर देख शरीरमें पुलकायमानहुये और नेत्रोंमें जल आगया ॥ ३४८ ॥

चौ०–केकिकंठदुति स्यामल अंगा ❀ तड़ितविनिंदक बसन सुरंगा ॥ १ ॥
व्याहविभूषन विविध बनाए ❀ मंगलमय सब भाँति सुहाए ॥ २ ॥

मोरके कंठकी कांतिके समान श्याम अंग और विजलीकी निन्दा करनेवाले केसरिया बागेधारण कियें ॥ १ ॥ और मंगल शकुनके और विवाहके लिये बनाये गये ऐसे सब सुन्दर अनेक भांतिके आभूषण पहिरे हुये थे ॥ २ ॥

सरदविमल विधुवदन सुहावन ❀ नयन नवल राजीव लजावन ॥ ३ ॥
सकल अलौकिक सुंदरताई ❀ कहि न जाइ मनहीं मन भाई ॥ ४ ॥

शरदके निर्मल चन्द्रमाकासा सुहावना मुख और नेत्र हालके खिले हुये नील कमलको लजानेवाले थे ॥३॥ संपूर्ण सुन्दरताई ऐसी अनोखी छाई है कि कही नहीं जाती मनहीं मनमें भाती है॥४॥

बंधु मनोहर सोहहिं संगा ❀ जात नचावत चपल तुरंगा ॥ ५ ॥
राजकुँवर बरवाजि नचावहिं ❀ वंसप्रसंसक बिरद सुनावहिं ॥ ६ ॥

संगमें मनके हरनेवाले भरतआदि भाई शोभायमान हैं जो चंचल तुरंगोंको नचाते जाते हैं ॥५॥ राजकुमार श्रेष्ठ घोड़ोंको नचाते जाते हैं और कुलकी बड़ाई करनेवाले बड़ाई सुनाते जाते हैं ॥ ६ ॥

जेहि तुरंगपर राम विराजे ❀ गति बिलोकि खगनायक लाजे ॥ ७ ॥
कहि न जाइ सब भाँति सुहावा ❀ वाजिवेष जनु काम बनावा ॥ ८ ॥

और जिस घोड़ेपर रामचन्द्रजी विराजमान हुये उसकी चालको देख तौ गरुड़जीभी शरमा गये ७ कहा नहीं जाता सब भांति ऐसा सुन्दर था, कि मानों कामदेव घोड़ेका रूप धरकर आया है ॥ ८ ॥

छं०-जनु वाजिवेष बनाइ मनसिज रामहित अतिसोहहीं । ❀
अपने सुवय बल रूप गुन गति सकल भुवनि विमोहहीं ॥ ❀
जगमगित जीन जड़ाव जोति सुमोति मनि मानिक लगे ❀
किंकिनि ललाम लगामललित बिलोकि सुर नर मुनि ठगे ३७ ❀

मानों कामदेव घोड़ेका वेष धारण कर रामचन्द्रजीके लिये अत्यंत शोभायमान है और अपनी सुंदर अवस्था बल रूप गुण और चालसे सब लोकोंको मोहित करता है· और जिसमें सुंदर मोती मणि माणिक लगे हैं ऐसी जीनका जड़ाव जगमगाता है और सुन्दर (कंठमें पड़ी हुई) घुंघुरी और मनोहर लगामको देखकर तौ देवता मनुष्य और मुनीश्वर ठगेसे रहगये ॥ ३७ ॥

दो०-प्रभुमनसहिं लवलीन मन, चलत वाजि छवि पाव ॥ ❀
भूषित उडुगन तड़ितघन, जनु वर बर्हि नचाव ॥ ३४९ ॥ ❀

घोड़ा रामचन्द्रके मनसे अपने मनको लवलीनकर (अर्थात् उनके मनकी गतिके अनुसार) चलतेमें ऐसी शोभा पाता है मानों तारागण और बिजलीसे शोभायमान मेघ सुंदर मोरको नचाता हो॥३४९॥

चौ०-जेहि वरवाजि राम असवारा ❀ तेहि शारदहु न बरणै पारा ॥ १ ॥
शंकर रामरूप अनुरागे ❀ नयन पंचदश अति प्रिय लागे ॥ २ ॥

जिस सुंदर घोड़ेपर रामचन्द्रजी सवार हैं उसका वर्णन करनेमें सरस्वतीभी पार नहीं पासक्ती ॥ १ ॥ महादेव तौ रामचन्द्रजीके रूपमें ऐसे मगन हुये कि उनको अपने पन्द्रह नेत्र बहुत प्यारे लगने लगे॥२॥

हरि हितसहित राम जब जोहे ❀ रमासमेत रमापति मोहे ॥ ३ ॥
निरखि रामछबि बिधि हरषाने ❀ आठै नयन जानि पछिताने ॥ ४ ॥

जब भगवान् (विष्णु)ने प्रीतिसहित रामचन्द्रको देखा तौ लक्ष्मीसहित विष्णु मोहित होगये ॥ ३ ॥ रामचन्द्रजीकी शोभाको देखकर ब्रह्माजी प्रसन्न तौ हुये परंतु आठही नेत्र जानकर पछिताये (अर्थात् आठ नेत्रोंसे थोड़ा देखा, बहुत नेत्र होते तौ बहुत देखते ॥ ४ ॥)

सुर सेनप उर बहुत उछाहू ❀ विधिते डेवढ़े लोचन लाहू ॥ ५ ॥
रामहि चितव सुरेश सुजाना ❀ गौतमशाप परम हित माना ॥ ६ ॥

---

(१) यहाँ रामचन्द्रजीको मेघकी और घोड़ेको मोरकी उपमा दी है ॥ जैसे मेघमें तारे और बिजली होती है वेसेही रामजीके आभूषण तारोंके समान हैं, उनकी कान्ति बिजलीके समान है, मेघसमान श्यामवर्ण तो हैंही. और घोड़ाभी मोरके तुल्य श्यामवर्ण है, मोरके शिरपर कलँगी होती है इसकेभी है, और जैसा मोर चित्र विचित्र होता है वैसाही घोड़ाभी भाँति २ के गहने और मणिमुक्ता जटित जीनसे चित्रविचित्र हो रहा है ॥

देवताओंके सेनापति (स्वामिकार्त्तिक)के मनसें बड़ा आनन्द हुआ कि, हमें तौ ब्रह्मासे ड्यौढ़े (अर्थात् बारह) नेत्र मिले हैं ॥ ५ ॥ चतुर इन्द्रने हजार नेत्रोंसे रामचन्द्रजीके दर्शन कर गौतम ऋषिके शापको बड़ा हितकारी जाना ॥ ६ ॥

देव सकल सुरपतिहिं सिहाहीं ❀ आजु पुरंदरसम कोउ नाहीं ॥ ७ ॥
मुदित देवगण रामहिं देषी ❀ नृपसमाज दुहुँ हर्ष विसेषी ॥ ८ ॥

सब देवता इन्द्रको देख डाह करते हैं कि आज इन्द्रके समान कोई नहीं ॥ ७ ॥ फिर रामचन्द्रको देख देवताओंके समान प्रसन्न हुये और दोनों राजाओंकी सभामें बड़ा आनन्द छाया ॥ ८ ॥

छं०-अति हर्ष राजसमाज दुहुँ दिसि दुंदुभी बाजहिं घनी । ❀
वरषहिं सुमन सुर हरषि कहि जयजयति जय रघुकुलमनी ❀
इहि भाँति जानि बरात आवत बाजने बहु बाजहीं । ❀
रानी सुआसिनि बोलि परिछनहेतु मंगल साजहीं ॥ ३८ ॥ ❀

दोनों ओर राजाओंकी सभामें बड़ा आनन्द है और घने नगाड़े बजते हैं, देवताभी प्रसन्न होकर रामचन्द्रजीकी जय जय कहकर फूल वर्षाते हैं इस भाँति बरातको आती हुई जान बहुतसे बाजे बजने लगे और रानी सुहागिन्नोंको बुलाय २ आरतीके लिये मंगल (थार) सजाने लगीं ॥ ३८ ॥

दो०-सजि आरती अनेकविधि, मंगल सकल सम्हारि ॥ ❀
चलीं मुदित परिछनकरन, गजगामिनि वरनारि ॥ ३५० ॥ ❀

हाथीके समान झूम २ कर चलनेवाली सुन्दर स्त्रियां बहुत भाँतिसे आरतीको सजाय संपूर्ण मंगलीक वस्तुओंको सम्हालकर प्रसन्न होकर आरती करने चलीं ॥ ३५० ॥

चौ०-विधुवदनी मृगशावकलोचनि ❀ सब निज तनु छबि रतिमदमोचनि ॥ १ ॥
पहिरे वरन वरन वर चीरा ❀ सकल बिभूषन सजे सरीरा ॥ २ ॥

चन्द्रमुखी मृगछौनेकेसे नयनवाली सब स्त्रियां अपनी शोभासे (कामदेवकी स्त्री) रतिका मान खंडन करनेवाली ॥ १ ॥ रंगरंगके चटकीले भड़कीले कपड़े पहिने सब शरीरमें गहने सजाये ॥ २ ॥

सकल सुमंगल अंग बनाए ❀ करहिं गान कलकंठ लजाए ॥ ३ ॥
कंकण किंकिणि नूपुर बाजहिं ❀ चाल विलोकि कामगज लाजहिं ॥ ४ ॥

सब सुंदर अंगोंको मंगलीक बनाये, कोकिलको लज्जित कर गान करती (चली जाती) हैं ॥ ३ ॥ कंकण तागड़ी और पाजेव बजते हैं और उनकी चालको देख मतवाले हाथी लजाते हैं ॥ ४ ॥

बाजहिं बाजन विविध प्रकारा ❀ नभ अरु नगर सुमंगल चारा ॥ ५ ॥
शची शारदा रमा भवानी ❀ जे सुरतिय शुचि सहज सयानी ॥ ६ ॥

बहुत भाँतिके वाजे वज रहे हैं और आकाश और नगरमें सुन्दर मंगलाचार मच रहे हैं ॥ ५ ॥ इन्द्राणी, सरस्वती, लक्ष्मी और पार्वती और जो देवताओंकी स्त्रियां पवित्र और स्वभावहीसे चतुर थीं. ६

कपटनारिवरवेष बनाई ❀ मिलीं सकल रनिवासहिं आई ॥ ७ ॥
करहिं गान कलमंगल बानी ❀ हरषबिवस सबकाहु न जानी ॥ ८ ॥

वे सब कपटसे पटरानियोंका सुन्दर वेष धर रनिवासमें आमिलीं ॥ ७ ॥ और मंगलमयी वाणीसे मधुर २ गान करने लगीं और आनन्दके वशमें सबको किसीने नहीं पहिचाना ॥ ८ ॥

छं०-को जान केहि आनंदबस सब ब्रह्मवर परिछन चलीं । ❀
कलगान मधुर निसान बरषहिं सुमन सुर सोभा भलीं ॥ ❀
आनंदकंद बिलोकि दूलह सकल हिय हरषित भई । ❀
अंभोज अंबक अंबु उमँगि सुअंग पुलकावलि छई ॥ ३९ ॥ ❀

आनन्दके वशमें कौन किसको पहिचानता है. सब ब्रह्माकी (अथवा दूलह जो परब्रह्म रामचन्द्र हैं उनकी) आरती करने चलीं; सुन्दर गान होरहा है और मधुर २ बाजे बजते हैं, आकाशमें देवता फूलोंकी वर्षा करते हैं, शोभा होरही है और सब (स्त्रियां) आनन्दकंद दूलहको देख मनमें प्रसन्न होगई (उनके) कमलसे नेत्रोंसे जल उमँग चला, सुन्दर अंगमें पुलकावली छागई ॥ ३९ ॥

दो०-जो सुख भा सियमातुमन, देखि राम बरबेष ॥ ❀
सो न सकहिं कहि कलपसत, सहस सारदा सेष ॥ ३५१ ॥ ❀

रामचन्द्रजीके मनोहर वेषको देखकर सीताजीकी माता (सुनयना) के मनमें जो सुख हुआ उसे तौ हजार सरस्वती और शेषनाग सौ कल्पमेंभी नहीं कह सक्ते ॥ ३५१ ॥

चौ०-नयननीरहठि मंगल जानी ❀ परिछन करहिं मुदित मनरानी ॥ १ ॥
वेदबिहित अरु कुलव्यवहारू ❀ कीन्ह भली बिधि सब परिचारू ॥ २ ॥

रानियां आनन्द (का समय) जान नेत्रोंके जलको रोक कर प्रसन्न मनसे आरती करती हैं ॥ १ ॥ वेदमें कही हुई और कुलकी रीतिसे अच्छी भाँति सब नेग आचार किये ॥ २ ॥

पंचशब्दध्वनिमंगल गाना ❀ पट पाँवड़े परहिं बिधि नाना ॥ ३ ॥
करि आरती अर्घ तिन दीन्हा ❀ राम गवन मंडप तब कीन्हा ॥ ४ ॥

पाँच प्रकारके वाजोंकी धुनी होने लगी, मंगलाचार होने लगे और अनेक प्रकारके वस्त्रोंके पाँवड़े पड़ने लगे ॥ ३ ॥ उन्होंने आरती करके अर्घ्य दिया तब रामचन्द्रजी मण्डपमें पधारे ॥ ४ ॥

दशरथ सहित समाज बिराजे ❀ बिभव बिलोकि लोकपति लाजे ॥ ५ ॥
समय समय सुर वर्षहिं फूला ❀ शांति पढ़हिं महिसुर अनुकूला ॥ ६ ॥

दशरथ समाज सहित विराजमान् हुये, उनके ऐश्वर्य्यको देखकर इन्द्रभी लजा गया ॥ ५ ॥ समय २ पर देवता फूल वर्षाते हैं और ब्राह्मण समय २ का स्वस्तिवाचन पढ़ते हैं ॥ ६ ॥

नभ अरु नगर कोलाहल होई ❀ आपन पर कछु सुनै न कोई ॥ ७ ॥
इहिविधि राम मंडपहिं आए ❀ अर्घ देइ आसन बैठाए ॥ ८ ॥

आकाश और नगरमें ऐसा कोलाहल मचा है कि कोई अपनी पराई कुछ नहीं सुनता ॥ ७ ॥ इस भाँति रामचन्द्र मण्डपको आये (तौ) अर्घ्य देकर आसनपर बिठाये ॥ ८ ॥

छं०-बैठारि आसन आरती करि निरखि वर सुख पावहीं । ❀
मनि वसन भूषन भूरि वारहिं नारि मंगल गावहीं ॥ ❀
ब्रह्मादि सुरवर विप्रवेष बनाइ कौतुक देखहीं । ❀
अवलोकि रघुकुलकमलरबिछबि सुफल जीवन लेखहीं ॥ ४० ॥ ❀

स्त्रियां दूलहको आसनपर बिठाय आरती कर और देखकर सुख पाती हैं और बहुतसे मणि वस्त्र और गहने नौछावर कर मंगलाचार गाती हैं. ब्रह्मा आदि देवता श्रेष्ठ ब्राह्मणोंका वेष बनाकर

कौतुक देखते हैं और रघुवंशरूपी कमलको सूर्यके समान खिलानेवाले ऐसे रामचन्द्रजीकी शोभाको देख अपने जीवनको सफल मानते हैं ॥ ४० ॥

दो०-नाऊ बारी भाट नट, रामनिछावरि पाइ ॥
मुदित असीसहिं नाइ शिर, हरष न हृदय समाइ ॥ ३५२ ॥

नाऊ, बारी, भाट और नट रामचन्द्रजीकी नोछावर पाकर और प्रसन्न हो शिर नवाय आशीर्वाद देते हैं और उनके हृदयमें हर्ष नहीं समाता ॥ ३५२ ॥

चौ०-मिले जनक दशरथ अति प्रीती ❀ करि वैदिक लौकिक सब रीती ॥ १ ॥
मिलत यथा दोउ राज विराजे ❀ उपमा खोजि खोजि कवि लाजे ॥ २ ॥

जनक और दशरथ दोनों समधी वेद और कुलकी रीति कर बड़े प्रेमसे मिले ॥ १ ॥ मिलतेमें दोनों राजा ऐसे शोभायमान् लगे कि कवीश्वर उनकी उपमा ढूँढ़ २ कर लज्जित होगये ॥ २ ॥

लही न कतहुँ हारि हिय मानी ❀ इनसम यह उपमा उर आनी ॥ ३ ॥
समधी देखि देव अनुरागे ❀ सुमन वरषि जस गावन लागे ॥ ४ ॥

और जब कहीं न मिली तौ हियमें हार मानी और मनमें ठानी कि इनके समान तौ यही उपमा हैं ॥ ३ ॥ देवता समधियोंको देख प्रसन्न हुए और फूल वर्षाय २ यश गाने लगे कि-॥ ४ ॥

जग विरंचि उपजावा जबते ❀ देखे सुने व्याह बहु तबते ॥ ५ ॥
सकल भाँति समसाज समाजू ❀ समसमधी देखे हम आजू ॥ ६ ॥

ब्रह्माने जबसे संसारमें (हमें) पैदा किया तबसे बहुतसे ब्याह देखे और सुने ॥ ५ ॥ परंतु हमने सब भाँति बराबर समाजका सजाव और बराबरके समधी आजही देखे हैं ॥ ६ ॥

देवगिरा सुनि सुंदर-साँची ❀ प्रीति अलौकिक दुहुँ दिसि माची ॥७॥
देत पाँवड़े अर्घ सुहाए ❀ सादर जनक मंडपहिं ल्याए ॥ ८ ॥

देवताओंकी सुन्दर और सच्ची वाणीको सुनकर लोकसे बाहरी अर्थात् अनोखी प्रीति दोनों और फैल गई ॥ ७ ॥ फिर राजा जनक पाँवड़े फिछाते और अर्घ्य देते हुये दशरथराजको मण्डपके नीचे आदरसहित लिवालाये ॥ ८ ॥

छं०-मंडप विलोकि बिचित्र रचना रुचिरता मुनिमन हरे ।
निज पानि जनक सुजान सब कहँ आनि सिंहासन धरे ॥
कुलइष्ट सरिस वसिष्ठ पूजे विनय करि आशिष लही ।
कौशिकहिं पूजत परम प्रीतिकि रीति तौ न परै कही ॥४१॥

मण्डपकी विचित्र रचना और सुन्दरताको देख मुनीश्वरोंके मन मोहित होगये, (वहां) चतुर जनकने अपने हाथसे लाकर सबको सिंहासन धरे और कुलदेवताके समान वसिष्ठजीका पूजन किया और विनती कर आशीर्वाद लिया और विश्वामित्रकी पूजा जिस परम प्रीतिसे करी उसकी रीति वर्णन नहीं की जाती. (क्योंकि इनकेही कारणसे सब डौल वनाथा) ॥ ४१ ॥

कवित्त. (१) भले भूप कहत भले भदेस भूपनसों लोक लखि बोलिये पुनीत रीती मारखी ।
जगदंबा जानकी जगतपितु रामभद्र जामि जिय होय जो नलागै मुँहकारखी ॥
देखे हैं अनेक व्याह सुने हैं पुरान वेद बूझे हैं सुजान साधु नरनारी पारखी ।
ऐसे सम समधी समाज ना विराजमान रामसे न वर दुलही न सीय सारखी ॥१ ॥

दो०-वामदेव आदिक ऋषय, पूजे मुदित महीस ॥ ❀
दिये दिव्य आसन सबहिं, सबसन लही असीस ॥ ३५३ ॥ ❀

राजाने प्रसन्नतासे वामदेव आदि ऋषियोंका पूजन किया और सबको आसन दिये और सबसे आशीर्वाद पाया ॥ ३५३ ॥

चौ०-बहुरि कीन्ह कोसलपतिपूजा ❀ जानि ईससम भाव न दूजा ॥ १ ॥
कीन्ह जोरि कर बिनय बड़ाई ❀ कहि निजभाग्य बिभव बहुताई ॥ २ ॥

फिर ईश्वरके समान जान दूसरा भाव न मान (राजा) दशरथकी पूजा करी ॥ १ ॥ फिर हाथ जोड़के बिनती और बड़ाई की और अपने अहोभाग्यका ऐश्वर्य्य कहा ॥ २ ॥

पूजे भूपति सकल बराती ❀ समधी सम सादर सब भाँती ॥ ३ ॥
आसन उचित दिए सबकाहू ❀ कहौं कहा मुख एक उछाहू ॥ ४ ॥

राजा (जनकने) सब भाँतिसे आदरसहित समधीके समान सब बरातियोंकी पूजा की ॥ ३ ॥ सबको यथायोग्य आसन दिये. मैं एक मुखसे क्या आनन्द वर्णन करूं! ॥ ४ ॥

सकल बरात जनक सनमानी ❀ दान मान बिनती बरबानी ॥ ५ ॥
बिधि हरि हर दिसिपति दिनराऊ ❀ जे जानहिं रघुबीरप्रभाऊ ॥ ६ ॥

जनकने दान, मान, नम्रता और श्रेष्ठ वाणीसे सब बरातका आदर किया ॥ ५ ॥ फिर ब्रह्मा, विष्णु, महादेव, दिशाओंके स्वामी और सूर्य जो रामचन्द्रके प्रभावको जानते हैं ॥ ६ ॥

कपटबिप्रबर बेष बनाए ❀ कौतुक देखहिं अति सचुपाए ॥ ७ ॥
पूजे जनक देवसम जाने ❀ दिए सुबासन बिन पहिंचाने ॥ ८ ॥

वे कपटसे ब्राह्मणोंका सुन्दर वेष बनाये हुये अत्यंत प्रेमसे कौतुक देख रहे हैं ॥ ७ ॥ जनकने इनका पूजनभी देवताओंके समान किया और विना पहिचाने उनको सुन्दर आसन दिये ॥ ८ ॥

छं०-पहिंचानको केहि जान सबहिं अपान सुधि भोरी भई । ❀
आनंदकंद बिलोकि दूलह उभयदिसि आनँदमई ॥ ❀
सुर लखे राम सुजान पूजे मानसिक आसन दए । ❀
अवलोकि सील सुभाव प्रभुको बिबुधमन प्रमुदित भए ॥ ४२ ॥ ❀

कौन किसको जाने पहिचाने? सबको अपनी २ सुध भूल गई. आनन्दकन्द दूलहको देखकर दोनों ओर आनन्द ही आनन्द छागया. चतुर रामचन्द्रने देवताओंको देख मनमें आसन दे पूजा की तौ भगवानका शीलस्वभाव देखकर देवता मनमें बड़े प्रसन्न हुये ॥ ४२ ॥

दो०-रामचंद्रमुखचंद्र छबि, लोचन चारु चकोर । ❀
करत पान सादर सकल, प्रेमप्रमोद न थोर ॥ ३५४ ॥ ❀

रामचन्द्रके मुखरूपी चन्द्रमाकी शोभाको सबके सुन्दर नेत्र चकोररूप होकर आदरसहित पान करते हैं. अर्थात् जैसे चन्द्रकिरणोंको चकोर पीता है, ऐसेही रामके मुखको सब लोग बड़े आदरसे देखते हैं, और स्नेह और आनन्द थोड़ा नहीं है, अर्थात् बहुत है ॥ ३५४ ॥

---

(१) रामजीने मानसिक पूजन इसलिये किया कि आसनसे उठना अयोग्य समझा; अथवा देवता जो वेष बदलकर आयेथे उठकर पूजा करनेसे उनका भेद खुल जाता; अथवा यों कि मानसिक पूजाका अधिक फल है॥

चौ०–समय बिलोकि वसिष्ठ बुलाए ❀ सादर शतानंद सुनि आए ॥ १ ॥
बेगि कुँवरि अब आनहु जाई ❀ चले मुदित मुनि आयसु पाई ॥ २ ॥

समय देखकर वसिष्ठजीने शतानन्दजीको बुलाया और वे सुनकर आदरसहित आये ॥ १ ॥ (और वसिष्ठजीने कहा कि) अब कुँवरि (सीता) को जल्दी जाकर लाओ. वे मुनिश्वरकी आज्ञा पाय प्रसन्न होकर चले ॥ २ ॥

रानी सुनि उपरोहितबानी ❀ प्रमुदित सखिनसमेत सयानी ॥ ३ ॥
बिप्रबधू कुलवृद्ध बुलाई ❀ करि कुलरीति सुमंगल गाई ॥ ४ ॥

चतुररानी पुरोहितकी वाणी सुनकर सखियोंसहित प्रसन्न हुई ॥ ३ ॥ ब्राह्मणोंकी स्त्रियां और कुलकी बड़ी बूढ़ी स्त्रियोंको बुलाकर और सुन्दर वधावे गाकर कुलकी रीति करी ॥ ४ ॥

नारिवेश जे सुरवर वामा ❀ सकल सुभाव सुंदरी श्यामा ॥ ५ ॥
तिनहिं देखि सुख पावहिं नारी ❀ विनुपहिचानि प्रानते प्यारी ॥ ६ ॥

देवताओंकी सुन्दर स्त्रियां जो स्त्रियोंका वेष धरकर आई थीं वे सब सुशील सुन्दर और सोलह २ वर्षकी नवयौवना थीं ॥ ५ ॥ उनको देख नारियाँ सुख पाती हैं और विनाहीं पहिचाने वे प्राणोंसे प्यारी लगती हैं ॥ ६ ॥

बारबार सनमानहिं रानी ❀ उमा रमा शारदसम जानी ॥ ७ ॥
सीय सम्हारि समाज बनाई ❀ मुदित मंडपहिं चली लिवाई ॥ ८ ॥

रानी (सुनयनाभी) उनको पार्वती, लक्ष्मी और सरस्वतीके समान जान वारंवार आदर करती हैं ॥७॥ (वे सब) सीताजीका शृंगार करके और हिलमिलकर प्रसन्न हो मण्डपको लिवाले चलीं ॥ ८ ॥

छं०–चलि ल्याय सीतहिं सखी सादर सजि सुमंगल भामिनी । ❀
नव सप्त साजे सुंदरी सब मत्तकुंजरगामिनी ॥ ❀
कलगान सुनि मुनि ध्यान त्यागहि कामकोकिल लाजहीं । ❀
मंजीरनूपुर कलित कंकण तालगति वर वाजहीं ॥ ४३ ॥ ❀

स्त्रियां और सखी सुन्दर मंगल सजाकर आदरसहित सीताजीको लिवाले चलीं. वे सब सुन्दरियां मतवाले हाथीकीसी (मंद) २ चाल चलनेवाली और सोलह शृङ्गार सजायें थीं. उनका मधुर २ गान सुनकर मुनीश्वर ध्यान छोड़ते हैं और मतवाली कोकिलाभी लज्जित होती हैं, और उनके सुन्दर पायजेव, विछवा और कंकण ये तालकी सुन्दर गतिके (अनुसार) बजते हैं ॥ ४३ ॥

दो०–सोहति वनितावृंदमहँ, सहज सोहावनि सीय । ❀
छबि ललनागनमध्य जनु, सुखमा अतिकमनीय ॥ ३५५ ॥ ❀

सहज शोभायमान सीताजी स्त्रियोंकी भीड़भाड़में कैसी सुहावनी लगती थीं, मानों छविरूपी स्त्रियोंके झुंडके वीचमें अत्यंत सुन्दर शोभा लगती हो ॥ ३५५ ॥

चौ०–सिय सुंदरता वरनि न जाई ❀ लघुमति बहुत मनोहरताई ॥ १ ॥
आवत देखि बरातिन सीता ❀ रूपराशि सबभाँति पुनीता ॥ २ ॥

कवित्त. (१) प्रथम सकल शुचि मज्जन अमलवास जावक सुदेश केशपास को सुधारवो !
अंगराग भूषण विविध मुख वास राग कज्जल कलित लोललोचन निहारवो !
वोलन हँसन मृदुं चलन चितौनी चारु पल पल प्रति पतिव्रत परि पारवो !
केशोदास सहुलास करहु कुंवरि राधे इहि विधि सोरह सिंगारनि संवारवो ॥ १ ॥

सीताजीकी सुन्दरता वर्णन नहीं की जाती, मेरी वुद्धि छोटी और सुन्दरता वहुत है ॥ १ ॥ वरातियोंने रूपकी राशि और सव भांतिसे पवित्र सीताजीको आते हुये देखा ॥ २ ॥

सबहिं मनहिं मन कीन्ह प्रनामा ❀ देखि राम भए पूरनकामा ॥ ३ ॥
हर्षे दशरथ सुतनसमेता ❀ कहि न जाइ उर आनँद जेता ॥ ४ ॥

(तौ) सवने मनही मनमें प्रणाम किया और रामचन्द्रजीभी देख निहाल होगये ॥ ३ ॥ (राजा) दशरथ पुत्रोंसहित प्रसन्न हुये और उनके मनमें जितना आनन्द हुआ वह कहा नहीं जाता ॥ ४ ॥

सुर प्रनाम करि वरषहिं फूला ❀ मुनि आसिषधुनि मंगलमूला ॥ ५ ॥
गाननिसान कुलाहल भारी ❀ प्रेमप्रमोद नगरनरनारी ॥ ६ ॥

देवता प्रणाम कर फूल वर्षाते हैं और मुनीश्वर आनन्ददायक आशीर्वादोंकी धुनि करतेहैं ॥ ५ ॥ गाने वजानेका बड़ाभारी हुल्लड़ मच रहा है और नगरके स्त्री पुरुष स्नेहमें मगन हैं ॥ ६ ॥

इहिविधि सीय मंडपहिं आई ❀ प्रमुदित शांति पढ़हिं मुनिराई ॥ ७ ॥
तेहि अवसर करि विधि व्यवहारू ❀ दुहुँ कुलगुरु सब कीन्ह अचारू ॥ ८ ॥

इस प्रकार सीताजी मण्डपको आईं तौ मुनिराज प्रसन्न हो स्वस्तिवाचन और वेद पढ़ने लगे ॥ ७ ॥ उस समय दोनों कुलोंके गुरुओंने (शास्त्रकी) विधिसे कुल व्यवहार कर सब रीत भाँति करीं ॥ ८ ॥

छं०-आचार करिगुरु गौरि गणपति मुदित विप्र पुजावहीं । ❀
सुर प्रगटि पूजा लेहिं देहिं असीस अति सुख पावहीं ॥ ❀
मधुपर्क मंगल द्रव्य जो जेहिं समय मुनि मनमहँ चहैं । ❀
भरि कनक कोपर कलस सब कर लिये परिचारक रहैं ॥४४॥ ❀

ब्राह्मण प्रसन्न होकर गणेश, पार्वती और गुरुओंको पुजाते हैं. देवता प्रत्यक्ष हो पूजा लेकर सुख पावे और आशीर्वाद देते हैं. मधुपर्क इत्यादि जो मांगलिक पदार्थ मुनि जिस समय मनमें चाहें (वही) सुवर्णके कलशे और परातोंमें भरकर हाथमें लिये सब सेवक खड़ेही रहते हैं ॥ ४४ ॥

कुलरीति प्रीतिसमेत रवि कहिदेत सब सादर किये । ❀
यहिभाँति देव पुजाइ सीतहि सुभग सिंहासन दिये ॥ ❀
सिय राम अवलोकन परस्पर प्रेम काहु न लखि परै । ❀
मनबुद्धिवरवानीअगोचर प्रगट कवि कैसे करै ॥ ४५ ॥ ❀

सूर्यनारयण कुलकी रीतिको बड़ी प्रीतिसे आप बतलाते जाते हैं और उसे सब आदरसमेत करते हैं. इस भाँति देवताओंको पुजवाय सीताजीको सुंदर सिंहासन दिया. पुनि सीताजी और रामचन्द्रजीका आपसमें देखा भालीका स्नेह किसीसे जाना नहीं जाता; भला जो मन बुद्धि और श्रेष्ठ वाणीसे परे है उसे कवीश्वर कैसे प्रगट करै ? ॥ ४५ ॥

दो०-होमसमय तनु धरि अनल, अतिहित आहुति लेहिं ॥ ❀
विप्रवेष धरि वेद सब, कहि विवाहविधि देहिं ॥ ३५६ ॥ ❀

होमके समय अग्नि शरीर धारण कर अत्यंत स्नेहसे आहुति लेते हैं और सब वेद ब्राह्मणोंका वेष धर विवाहकी रीतिको कह देते हैं ॥ ३५६ ॥

चौ०-जनकपाटमहिषी जग जानी ❀ सीयमातु किमि जाय बखानी ॥ १ ॥
सुयश सुकृत सुख सुंदरताई ❀ सब समेटि विधि रची बनाई ॥ २ ॥

---

(१) क्योंकि "कृत्स्नं रामायणं काव्यं सीतायाश्चरितं महत्" अर्थात् संपूर्ण २४००० रामायणमें सीताजीका ही बड़ा चरित्र है ।

जनककी पटरानी और जगतमें प्रसिद्ध ऐसी सीताकी माता कैसे बखानी जा सकती है? ॥ १॥ मानों सुंदर कीर्ति अच्छे कर्म सुख और सुन्दरता सबको इकट्ठे कर ब्रह्माने रचकर बनाई है॥ २॥

समय जानि मुनिवरन बुलाई ❀ सुनत सुवासिनि सादर ल्याई ॥ ३ ॥
जनक वामदिसि सोह सुनयना ❀ हिमगिरिसंग बनी जनु मयना ॥ ४ ॥

समय जानकर श्रेष्ठ मुनियोंने उसे बुलाया तौ सुनतेही सुहागिनें आदरसहित ले आई ॥ ३ ॥ जनककी बाँई दिशामें सुनयना ऐसी शोभायमान है मानों हिमाचलके साथमें पार्वतीकी माता मयना विराजमान है ॥ ४ ॥

कनककलस मनि कोपर रूरे ❀ सुचि सुगंध मंगल जलपूरे ॥ ५ ॥
निज कर मुदित राउ अरु रानी ❀ धरे रामके आगे आनी ॥ ६ ॥

सुवर्णके कलशे और मणियोंकी सुंदर परात पवित्र सुगंधित मंगलके जलसे भरे हुये हैं ॥ ५॥ राजा और रानीने प्रसन्न होकर अपने हाथोंसे लाकर रामन्द्रके आगे रक्खे ॥ ६ ॥

पढ़हिं वेद मुनि मंगलबानी ❀ गगन सुमन झरि अवसर जानी ॥ ७ ॥
वर बिलोकि दंपति अनुरागे ❀ पाँय पुनीत पखारन लागे ॥ ८ ॥

मुनीश्वर मंगलाचरण[2] और वेद पढ़ते हैं और समय जानकर आकाशसे फूल वरसते हैं ॥ ७॥ दूलहको देखकर राजा रानी प्रसन्न हुये और पवित्र चरणोंको धोने लगे ॥ ८ ॥

छं०-लागे पखारन पाँयपंकज प्रेम तनु पुलकावली । ❀
नभनगर गान निसान जयध्वनि उमँगि जनु चहुँ दिशि चली॥❀
जे पदसरोज मनोजअरि उर सर सदैव विराजहीं । ❀
जे सुकृत सुमिरत विमलता मन सकल कलिमल भाजहीं॥४६॥❀

जब कमलसमान चरणोंको पखारने लगे, तौ स्नेहसे शरीरमें पुलकावली (छागई) आकाश और नगरमेंसे गान और नगाड़ोंका शब्द तथा जय २ शब्द उमड़कर मानों चारों दिशाओंको निकल चला. जो चरणकमल महादेवके हृदयरूपी सरोवरमें सदा विराजते हैं और जिन पुण्यरूप चरणोंके स्मरण करनेसे मन निर्मल होजाता है और कलिरूप सब पाप भाग जाते हैं॥ ४६ ॥

जे परसि मुनिबनिता लही गति रही जो पातकमई । ❀
मकरंद जिनको संभुसिर सुचिता अवधि सुर वर नई ॥ ❀
करि मधुप मुनि मन जोगिजन जेहि सेइ अभिमतगति लहैं। ❀
ते पद पखारत भाग्य भाजन जनक जय जय सब कहैं ॥४७॥ ❀

और जिन (चरणों) को छूकर मुनिकी स्त्री (अहल्या) जो महापापिनी थी वह भी तरगई, जिनि चरणकमलोंके मकरन्दको महादेव मस्तकपर (धारण करते हैं) और जिनको देवता पवित्रताकी मर्यादा वर्णन करते हैं, और मुनीश्वर अपने मनको भौंरा बनाय (जहां रखते हैं) और जिनका सेवन कर योगीलोग मोक्ष प्राप्त करते हैं, उन्ही चरणोंको भाग्यशाली जनक धोते हैं और सब लोग रामचन्द्रजीकी जय बोलते हैं ॥ ४७ ॥

---

(१) सीमंते च विवाहे तु चतुर्थ्यां सहभोजने । व्रते दाने मखे श्राद्धे पत्नी तिष्ठति दक्षिणे ॥ १ ॥

(२) गंगा सिन्धु सरस्वती च यमुना गोदावरी नर्मदा, कावेरी सरयू महेन्द्रतनया चर्मण्वती वेदिका । क्षिप्रा वेत्रवती महासुरनदी ख्याता च या गंडकी, पुण्याः पूर्णजलाः समुद्रसहिताः कुर्वन्तु वो मंगलम् ॥ लक्ष्मीः कौस्तुभपारिजातकसुराधन्वन्तरिश्चन्द्रमा, गावःकामदुघा सुरेश्वरगजो रंभादिदेवांगनाः ॥ अश्वः सप्तमुखो विषं हरिधनुः शंखोऽमृतं चाम्बुधे, रत्नानीति चतुर्दश प्रतिदिनं कुर्वन्तु वो मंगलम् ॥

(३) यहां मकरंदसे गंगाजीका भाव है.

वर कुँवरि करतल जोरि शाखोच्चार दोउ कुल गुरु करैं ।
भयो पानिगहन बिलोकि विधि सुर मनुजमुनि आनँद भरैं ॥
सुखमूल दूलह देखि दंपति पुलकि तनु हुलसैं हिये ।
करि लोक वेदविधान कन्यादान नृप भूषण दिये ॥ ४८ ॥

दोनों कुलोंके गुरु दुलहा दुलहिनके हाथपर हाथ रख शाखोच्चार करते हैं, विवाह हुआ (यही) देखकर ब्रह्मा, देवता, मनुष्य, और मुनि आनन्द मनाते हैं. आनंदकन्द दूलहको देखकर स्त्री पुरुष शरीरमें पुलकायमान हो मनमें प्रसन्न हुये और जनकराजाने लोक और वेदकी रीतिसे कन्यादान दिया और अनेक भूषण दिये ॥ ४८ ॥

हिमवंत जिमि गिरिजा महेशहिं हरिहिं श्री सागर दई ।
तिमि जनक रामहिं सिय समर्पी विश्व कलकीरति नई ॥
किमि करै विनय विदेह कीन्ह विदेह मूरति साँवरी ।
करि होम विधिवत गाँठि जोरी होन लागीं भाँवरी ॥ ४९ ॥

जैसे हिमाचलने पार्वती महादेवको और समुद्रमें लक्ष्मी विष्णुको दी, वैसेही जनकने सीता रामचन्द्रजीको दी, यह संसारमें नया उज्ज्वल यश फैल रहा है ॥ अब विदेह कहिये जनक विनती कैसे करै (एक तौ विदेह थेही) और दूसरे उसको सांवली मूरति (रामचन्द्र)ने औरभी अधिक विदेह करदिया. फिर होम करके विधिपूर्वक गठ जोड़ा बांधा और भांवरैं होने लगीं ॥ ४९॥

दो०–जयधुनि बंदी वेदधुनि, मंगलगान निसान ॥
सुनि हरषहिं बरषहिं विबुध, सुरतरुसुमन सुजान ॥ ३५७ ॥

भाटोंके जयशब्द और ब्राह्मणोंके वेदोंकी धुनि और मंगलाचार बाजोंको सुनकर चतुर देवता प्रसन्न होते हैं, और कल्पवृक्षके[१] फूल वर्षाते हैं ॥ ३५७ ॥

चौ०–कुँवर कुँवरि कल भाँवरि देहीं ❀ नयनलाभ सब सादर लेहीं ॥ १ ॥
जाइ न बरनि मनोहर जोरी ❀ जो उपमा कछु कहौं सो थोरी ॥ २ ॥

दुलहा दुलहिन सुन्दर भाँवरे देते हैं और सब लोग आदरसहित नेत्रोंका लाभ लेते हैं ॥ १ ॥ मनमोहिनी जोड़ी वर्णन नहीं की जाती, जो कुछ उपमा कही जाय सब थोड़ी है अर्थात् कोई योग्य उपमा तौ उनके लिये है नहीं, इस लिये उनकी परछाईकी उपमा आगेकी चौपाईमें देते हैं कि २

राम सीय सुंदर परिछाहीं ❀ जगमगाहिं मनिखंभनमाहीं ॥ ३ ॥
मनहुँ मदन रति धरि बहु रूपा ❀ देखहिं रामविवाह अनूपा ॥ ४ ॥

खंभोंमें जो मणिजड़ रहे हैं उन सब मणियोंमें रामचन्द्र और सीताजीकी सुन्दर परछाँही ऐसी जगमगाती है ॥ ३ ॥ मानों कामदेव और रति बहुतसे रूप धारण कर रामचन्द्रके सुन्दर विवाहको देखते हैं (जो कहो कि कामदेव प्रगट क्यों नहीं होते यों गुप्त देखनेमें तौ जब रामजीकी परछाँई मणियोंमें पड़ैगी तबहीं देखने पावेंगे, तहाँ कहते हैं कि) ॥ ४ ॥

दरसलालसा सकुच न थोरी ❀ प्रगटत दुरत बहोरि बहोरी ॥ ५ ॥
भए मगन सब देखन हारे ❀ जनकसमान अपान बिसारे ॥ ६ ॥

उनको दर्शनोंकी इच्छा तौ है परंतु सकुचभी कुछ थोड़ी नहीं (अर्थात् बहुतही है इस कारण वारंवार प्रगट होते और छिपते हैं, अर्थात् जब रामकी आभा रत्नोंमें पडती है तब प्रगट अन्यथा छुपकरही देखते हैं. (सो यह सब छुपाछुपी और अति संकोच कामारि शंकरके कारणसे है जो रामविवाहमें बिराजमान हैं) ॥५॥ सब देखनेवाले प्रसन्न हो जनकके समान अपनेको भूलगये ॥ ६ ॥

---

(१) आदिमें तौ साधारण फूल बरसाते रहे, अब विवाहके समय कल्पवृक्षके पुष्प बरसाये ॥

प्रमुदित मुनिन भाँवरी फेरी ❀ नेगसहित सब रीति निवेरी ॥ ७ ॥
राम सीय सिर सिंदुर देही ❀ सोभा कहि न जात विधि केही ॥ ८ ॥

मुनीश्वरोंने प्रसन्न हो भाँवरें फेरीं और सब रीतोंको नेगसमेत निवटाया ॥ ७ ॥ रामचन्द्र सीताजीके माथेमें सिन्दूर लगाते हैं, वह शोभा किसी तरह नहीं कही जाती, अथवा विधि जो ब्रह्मा जिसके चार मुख हैं उससेभी नहीं कही जाती (फिर मैं कैसे कहूँ जो कहो कि नहीं कही जाती है तौ आगेकी चौपाईमें क्यों कहते हो ? तहाँ कहते हैं कि जो नहीं कहैं तौ कविताकी सुन्दरता नष्ट हो जाय इसलिये यथामति उत्प्रेक्षा करें लेते हैं) ॥ ८ ॥

अरुनपराग जलज भरि नीके ❀ शशिहिं भूष अहि लोभ अमीके ॥ ९ ॥
बहुरि वसिष्ठ दीन्ह अनुसासन ❀ बर दुलहिनि बैठे इक आसन ॥ १० ॥

(मानो) [1]सर्प लाल पराग कहिये पुष्पकी रजको कमलमें अच्छी भाँति भरकर अमृतके लोभसे चन्द्रमाको भूषित करताहै॥९॥ फिर वसिष्ठजीने आज्ञा दी तौ दुलहा दुलहिन एक आसनपर बैठे॥१०॥

छं०—बैठे बरासन रामजानकि मुदितमन दशरथ भये । ❀
तनु पुलकि पुनि पुनि देखि अपने सुकृतसुरतरुफल नये ॥ ❀
भरि भुवन रहा उछाह रामविवाह भा सबही कहा । ❀
केहि भाँति बरनि सिरात रसना एक मुख मंगल महा ॥५०॥ ❀

रामचन्द्र जानकीको सुन्दर आसनपर बैठे (देख राजा) दशरथ मनमें प्रसन्न हुये और अपने सुकर्मरूपी कल्पवृक्षमें नये फल देखकर शरीरमें वारंवार पुलकायमान हुये· लोकोंमें आनन्द भरगया और 'रामन्द्रजीका विवाह हुआ' ऐसे सब कहते हैं, उसका वर्णन कर जीभ कैसे शांत हो, क्योंकि मुख और जीभ एक एक और आनन्द बहुत हैं ॥ ५० ॥

तब जनक पाइ वसिष्ठ आयसु ब्याहसाज सम्हारिके । ❀
मांडवी श्रुतकीरति उरसिला कुँवरि लईं हँकारिके ॥ ❀
कुशकेतुकन्या प्रथम जो गुन सील सुख सोभामई । ❀
सब रीति प्रीतिसमेत करि सो ब्याहि नृप भरतहिं दई ॥५१॥ ❀

तब जनकराजने बसिष्ठजीकी आज्ञा पाकर व्याहकी सामग्री तयार कर मांडवी श्रुतकीर्त्ति और उर्मिला कुमारियोंको बुला लिया और प्रथम राजा कुशकेतुकी कन्याको(जिसका नाम मांडवी था) जो गुण शील सुख शोभाकी और मूर्त्ति थी उसे सब रीति भाँतिकरके भरतको व्याह दिया ५१

जानकी लघुभगिनि जो सुंदरि शिरोमनि जानिकै । ❀
सो जनक दीन्हीं ब्याहि लषनहि सकल विधि सनमानिकै ॥ ❀
जेहि नाम श्रुतकीरति सुलोचनि सुमुखि सब गुन आगरी । ❀
सो दई रिपुसूदनहि भूपति रूप सील उजागरी ॥ ५२ ॥ ❀

और जो जानकीजीकी छोटी बहन थी उसे सुन्दर स्त्रियोंकी शिरोमणि जानकर जनकने संपूर्ण विधिपूर्वक आदरसहित लक्ष्मणजीको व्याह दिया और जो सुन्दर मुख और सलोने नेत्रवाली गुणोंकी खान, रूप और शीलमें विख्यात, और जिसका नाम श्रुतकीर्त्ति था उसे राजाने शत्रुहनको व्याह दिया ॥ ५२ ॥

---

(१) यहां कविने रामचन्द्रजीके बाहुको सर्प, हाथोंको कमल, सिंदूरको लाल पराग, सीताजीके मुखको चन्द्रमा और मुखके सौन्दर्यको अमृत माना है और जैसे कमल चन्द्रमाको देखकर सकुचता है ऐसेही रामका हाथ सकुचता है ॥ १ ॥

अनुरूप वर दुलहिन परस्पर लखि सकुचि हिय हरषहीं। ❀
सब मुदित सुंदरता सराहहिं सुमन सुरगन वरषहीं॥ ❀
सुंदरी सुंदर बरन युत सब एक मंडप राजहीं। ❀
जनु जीव उर चारिहु अवस्था विभुनसहित विराजहीं॥ ५३॥ ❀

समान दूल्हा दुलहिन आपसमें देख और सकुचकर मनमें प्रसन्न होते हैं, सब लोग प्रसन्न हो शोभाकी सराहना करते हैं और देवताओंके गण फूल वर्षाते हैं. सुन्दर वर्णके दूल्हा दुलहिन सब एक मण्डपमें ऐसे शोभायमान हैं मानों जीवके हृदय (रूपी स्थान) में चारों[1] अवस्था (अपने २) स्वामियोंसहित विराजमान् हैं॥ ५३॥

दो०-मुदित अवधपति सकल सुत, वधुनसमेत निहारि॥ ❀
जनु पाए महिपालमनि, क्रियनसहित फल चारि॥ ३५८॥ ❀

राजा दशरथ सब पुत्रोंको वहुओंसमेत देखकर ऐसे प्रसन्न हुये मानों राजाओंके शिरोमणि राजा दशरथने क्रियाओंसमेत चारों फल पाये॥ ३५८॥

चौ०-जस रघुबीरब्याहविधि बरनी ❀ सकल कुँवर ब्याहे तेहि करनी॥ १॥
कहि न जाइ कछु दाइज भूरी ❀ रहा कनकमनिमंडप पूरी॥ २॥

जैसी विधि रामचन्द्रके व्याहकी कही उसी करनीसे सब पुत्र विवाहे॥ १॥ दहेज इतना है कि कुछ कहा नहीं जाता, मंडप सुवर्ण और मणियोंसे भर रहा है॥ २॥

कंबल बसन विचित्र पटोरे ❀ भाँति भाँति बहु मोल न थोरे॥ ३॥
गज रथ तुरग दास अरु दासी ❀ धेनु अलंकृत कामदुधासी॥ ४॥

शाल दुशाले और सुन्दर रेशमी कपड़े भांति २ के बहुत मोलके (सो भी) थोड़े नहीं (अर्थात् बहुत)॥३॥ हाथी, रथ, घोड़े, सेवक और चेरी और कामधेनुके समान आभूषणसे सजी हुई गायें दीं॥४॥

वस्तु अनेक करिय किमि लेखा ❀ कहि न जाइ जानहिं जिन देखा॥ ५॥
लोकपाल अवलोकि सिहाने ❀ लीन अवधपति सब सुख माने॥ ६॥

और बहुत वस्तु थीं कि जिनका लेखा कैसे होसक्ता है, क्योंकि जिन्होंमें देखीं वेही जानते हैं कही नहीं जासक्तीं॥५॥ (उन्हें) देख लोकपालोंको डाह हुआ और दशरथने सुख मानकर सब लीं॥६॥

दीन्ह याचकन्ह जो जेहिं भावा ❀ उबरा सो जनवासहि आवा॥ ७॥
तब कर जोरि जनक मृदु बानी ❀ बोले सब बरात सनमानी॥ ८॥

जो जिसे भाया वही भिखारियोंको दिया और जो कुछ बचा वह जनवासेको आया॥ ७॥ तब जनक हाथ जोड़कर सब बरातका आदर कर मीठी वाणीसे बोले॥ ८॥

छं०-सनमानि सकल बरात सादर दान विनय बड़ाइके। ❀
प्रमुदित महा मुनिवेद बंदे पूजि प्रेम लड़ाइके॥ ❀
सिर नाइ देव मनाइ सबसन कहत करसंपुट किये। ❀
सुर साधु चाहत भावसिंधुकि तोषजल अंजलि दिये॥ ५४॥ ❀

आदरसहित दान मान दे विनती और बड़ाईसे सब बरातका सन्मान किया और बहुत प्रसन्न हो स्नेह लड़ाय बड़े २ मुनीश्वरोंके समाजको वन्दना कर पूजा की, फिर मस्तक नवाय देवताओंको

---

(१) जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीय. (२) चार क्रिया ये हैं-भक्ति, तपस्या, सेवा और श्रद्धा, और धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, ये फल हैं.

मनाय हाथोंकी अंजली बांध कहने लगे कि देवता और साधु प्रीति चाहते हैं; कहीं समुद्र जलकी अंजली देनेसे प्रसन्न होता है ? अर्थात् जनक विनती करता है कि आप समुद्रवत् और मेरी खातिर अंजलीके समान है इस कारण केवल प्रीतिसे प्रसन्न हूजीये ॥ ५४ ॥

कर जोरि जनक बहोरि बंधुसमेत कोसलरायसों ।
बोले मनोहर वचन सानि सनेह सील सुभायसों ॥
संबंध राजन रावरे हम बड़े अब सबविधि भए ।
यह राजसाज समेत सेवक जानिबी बिनु गथ लए ॥ ५५ ॥

फिर जनक भाईसहित हाथ जोड़ दशरथसे स्नेहमें सने बड़े शील स्वभावसे मनहरन बचन बोले, हे महाराज ! आपके संबंधसे अब हम सब भाँतिसे बड़े हुये; इस सब राज्यको साजसमेत बिना मोल लिये अपना दास जानिये ॥ ५५ ॥

एदारिका परिचारिका करि पालबी करुनामयी ।
अपराध क्षमियो बोलि पठए बहुत हौं ढीठी दयी ॥
पुनि भानुकुलभूषन सकल सनमान विधि समधी किए ।
कहि जात नहिं विनती परस्पर प्रेमपरिपूरन हिए ॥ ५६ ॥

इन कन्याओंको टहलनी जानकर पालन करना. हे कृपानाथ ! आपकोजो बुला भेजा यह मैंने बड़ी ढीठता की सो अपराध क्षमा करना. फिर सूर्यवंशके आभूषण (दशरथ)नें सब भांति समाधी(जनक) का आदर किया और आपसमें प्रेम भरे हृदयसे जो विनती करी वह वर्णन नहीं कीजाती॥५६

वृंदारकागन सुमन बरषहिं राउ, जनवासहिं चले ।
दुंदुभीधुनि वेदधुनि नभ नगर कौतूहल भले ॥
तब सखिन मंगलगान करति मुनीस आयसु पाइकै ।
दूलह दुलहिनिनसहित सुंदरि चलीं कोहवर ल्याइकै ॥५७॥

तब देवताओंके गण फूल बर्षाने लगे और राजा (दशरथ) जनवासेको चले. नगाड़ेके शब्द और वेदोंकी धुनि होनेसे आकाश और नगरमें अच्छा कुतूहल होने लगा, उस समय सुन्दर सखियां मुनीश्वरकी आज्ञा पाकर मंगलगीत गाती हुई दूलह दूलहनके साथ कोहवर लेकर चलीं॥ ५७ ॥

दो०-पुनि पुनि रामहिं चितव सिय, सकुचति मन सकुचैन ।
हरति मनोहर मीनछबि, प्रेमपियासे नैन ॥ ३५९ ॥

---

(१) जनकजीकी ओरसे बिनती ।

कवित्त ॥ सज्जन हमारे भये नाहीं पवाकन नीके, विद्याहू न जानें कुलहू न कछु भारी है ।
नम्रता न निकसी नगीच धनहू न पास, गौरवता आई नहीं निकट हमारी है ॥
हैं तौ सब बातनते हीन हम दीन नाथ, कीन सनबन्ध लई सरन तिहारी है ।
रावरे चरन जलही ते जस्यों अंकुर सो, आये पुनि आप नई कोंपल निकारी है ॥ १ ॥

राजा दशरथकी ओरसे बिनती ।

कवित्त ॥ सो है नीर नीरजतें नीरही तें नीरज त्यों नीरज अरु नीरतें तड़ागकी तयारी है ।
मणि तें जु कंकन सुकंकनते मणि राजै मणि अरु कंकन तें कर छबि भारी है ॥
त्योंही निशि शशितें निशातें शशिरूप लसै शशि औ निशातें आव अंबर अपारी है ।
आपतें सभाकी त्यों सभातें शोभा आपहीकी, आपऽरु सभातें शोभा सकल हमारी है ॥ २ ॥

सीताजी, रामचन्द्रजीको वारंवार देखकर सकुचाती हैं परंतु मन नहीं सकुचता, स्नेहके प्यासे नेत्रोंसे (देखनेमें) मनोहर मछलियोंकी शोभाको चुराती हैं ॥ ३५९ ॥

चौ०–स्याम सरीर सुभाय सुहावन ❀ सोभा कोटिमनोज लजावन ॥ १ ॥
जावकयुत पदकमल सुहाए ❀ मुनिमनमधुप रहत जहँ छाए ॥ २ ॥

साधरणही शोभायमान साँवले शरीरकी शोभासे करोड़ों कामदेवोंको लज्जित करते हैं ॥ १ ॥ महावर जिनमें लग रही है ऐसे चरणकमल शोभायमान हैं और जहां मुनीश्वरोंके मनरूपी भौंरे छाये रहते हैं ॥ २ ॥

पीत पुनीत मनोहर धोती ❀ हरत बालरविदामिनिज्योती ॥ ३ ॥
कलकिंकिनि कटिसूत्र मनोहर ❀ बाहु विशाल विभूषन सोहर ॥ ४ ॥

पवित्र और मनके हरनेवाली धोती प्रातःकालके सूर्य और बिजलीकी चमकको चुरातीहै ॥ ३॥ सुंदर तागड़ी और मनोहर कटिसूत्र और दीर्घ भुजाओंमें आभूषण शोभायमान हैं ॥ ४ ॥

पीत जनेउ महाछबि देई ❀ करमुद्रिका चोरि चित लेई ॥ ५ ॥
सोहत व्याह साज सब साजे ❀ उर आयत सब भूषन राजे ॥ ६ ॥

पीला जनेऊ बड़ी शोभा देता है, हाथकी मुँदरी चित्तको चुराये लेती है ॥ ५ ॥ व्याहके सब शृंगारसे सजे हुये शोभायमान और जिनकी चौड़ी छातीमें सब आभूषण शोभित हैं ॥ ६ ॥

पीत उपरना काँखा सोती ❀ दुहुँ आचरनि लगे मनिमोती ॥ ७ ॥
नयनकमल कलकुंडल काना ❀ वदन सकल सौंदर्यनिधाना ॥ ८ ॥

पीला दुपट्टा जनेऊकी भाँति पड़ाहुआ है जिसके दोनों छोरोंपर मणि और मोती लगे हुयेहैं॥७॥ कमलसे नेत्र और कानोंमें श्रेष्ठ कुंडल पहिने और उनका मुखड़ा सब सुन्दरताकी खान है ॥ ८ ॥

सुंदर भ्रुकुटि मनोहर नासा ❀ भाल तिलक सुचि रुचिर निवासा ॥९॥
सोहत मौर मनोहर माथे ❀ मंगलमय मुक्तामनि गाँथे ॥ १० ॥

सुन्दर भौंहैं और मानके हरनेवाली नाक, ललाटमें सुन्दर तिलक शोभाका धाम है ॥ ९ ॥ सुन्दर माथेपर मौर शोभायमान् है जिसमें मांगलिक मोती और मणि गुथे हैं ॥ १० ॥

छं०–गाँथेमहा मनि मौरमंजुल अंग सब चित चोरहीं । ❀
पुरनारि सुंदर बर विलोकहिं निरखि छबि तृन तोरहीं ॥ ❀
मनिबसन भूषन वारि आरति करहिं मंगल गावहीं । ❀
सुर सुमन बरषहिं सूत मागध बंदि सुजस सुनावहीं ॥ ५८ ॥ ❀

सुन्दर मौरमें बड़ी २ मणि गुथी हुई हैं शरीर सबके मनको चुराते हैं, नगरकी स्त्रियाँ सुन्दर दूलहकी शोभाको देख २ तिनका तोड़ती हैं, मणि कपड़े और गहनोंकी नौछावर कर गीत गाती हुई आरती करती हैं, देवता फूल बर्षाते और पौराणिक जग और भाट सुन्दर कीर्त्ति सुनाते हैं ॥ ५८॥

कोहबरहिं आने कुँवर कुँवरि सुआसिनिन्ह सुख पाइके । ❀
अति प्रीति लौकिकरीति लागीं करन मंगल गाइके ॥ ❀
लहकौरि गौरि शिखाव रामहिं सीयसन सारद कहैं । ❀
रनिवास हास बिलास रस बस जन्मको फल सब लहैं॥५९॥❀

सुहागिनें सुख पाकर दूल्हा दुलहिनको रनिवासमें लाय अत्यंत स्नेहसे गीत गाकर सांसारिक रीति करने लगीं, पार्वतीजी रामचन्द्रको ग्रासलेना सिखाती हैं और सरस्वतीजी सीताको सिखाती हैं, रनिवासमें इस हास बिलासके वश हो सब जीनेका फल प्राप्त करती हैं ॥ ५९ ॥

निज पानि मनि महँ देखि प्रतिमूरति स्वरूपनिधानकी ।
चालति न भुजवल्ली विलोकनि बिरहबस भइ जानकी ॥
कौतुक विनोद प्रमोद प्रेम न जाइ कहि जानहिं अली ।
वर कुँवरि सुंदर सकल सखिन लिवाइ जनवासहिं चली ६०

अपने हाथकी मणिमें सुन्दर रूपके धाम (रामचन्द्र)की परछाईंको देख ऊंगलीको नहीं हटातीं क्योंकि उंगलीके हटानेसे परछाईंका दर्शन न होगा, देखनेमें वियोग होगा. इसलिये सीताजी विरहके वश हुईं अर्थात् वियोगका भय करने लगीं ॥ और सखियाँ सीताजीको सिखाकर जो जो कौतुक कराती हैं उसका आनन्द और स्नेह कहा नहीं जाता. उसे सखियांही जानती हैं, फिर वे सब सुन्दर दुलहा दुलहिनोंको जनवासेमें लिवा चलीं ॥ ६० ॥

तेहि समय सुनिय असीस जहँ तहँ नगर नभ आनँद महा ।
चिरजियहु जोरी चारु चारिउ मुदित मन सबही कहा ॥
योगींद्र सिद्ध मुनीस देव विलोकि प्रभु दुँदुभि हनी ।
चले हरषि बरषि प्रसून निज निज लोक जय जय जय भनी६१

उस समय जहां तहां आशीर्वाद सुनाई देते हैं, नगर और आकाशमें बड़ा आनन्द है, सभीने मनमें प्रसन्न होकर कहा कि सुन्दर चारों जोड़ी चिरंजीव रहो. योगीश्वर, सिद्ध, मुनीश्वर, और देवताओंने भगवान्के दर्शनकर नगाड़े वजाये और प्रसन्न होकर फूल वर्षाय जय जय कहते हुये अपने २ लोकोंको चले ॥ ६१ ॥

दो०-सहितवधूटिन कुँवर सब, तब आये पितुपास ॥
सोभा मंगल मोद भरि, उमगेउ जनु जनवास ॥ ३६० ॥

तव बहुओंसमेत सब कुँवर पिताके पास आये,तौ शोभा और आनन्द मंगल ऐसा भरगया मानों जनवास उमड़ा, अर्थात् ऐसा आनन्द हुआ कि जनवासेमें जो बराती बैठेथे उनके हृदयमें नहीं समाय॥

क्षेपक.

रामकलेवा

छं०-पुनि प्रात जनक नरेश निज सुतसों कही समुझाइकै ।
तुम जाहु जनवासे तुरत युग पालकी सजवाइकै ॥
महाराज दशरथ रायसों मम विनय बहुत सुनाइकै ।
कुँवरन कलेबा हेत सादर आउ संग लिवाइकै ॥ ६२ ॥

फिर प्रातःकाल जनकराजने अपने पुत्रसे समझाकर कहा कि, तुम तुरंत चार पालकियाँ सजवाकर जनवासेको चले जाओ और महाराज दशरथजीको मेरी ओरसे बहुतसी विनती सुनाकर चारों कुमारोंको कलेवा करनेके लिये बड़े आदरसे संग लिवा लाओ ॥ ६२ ॥

तब कुँवर वर सजि बसनभूषन चले आयसु पाइकै ।
कर जोर सीस नवाय विनती करी नृप ढिंग जाइकै ॥

---

१ कवित्तरामायणे–यथा–

सवैया ॥ दूलह श्री रघुनाथवने दुलही सिय सुन्दर मन्दिर माहीं ।
गावति गीत सवै मिलि सुन्दरि वेद युवा जुरिविप्र पढ़ाहीं ॥
रामको रूप निहारति जानकि कंकणके नगकी परछाहीं ।
याते सवै सुधि भूलि गई कर टेक रही पल टारति नाहीं ॥ १ ॥

अवधेश सुतन सजाय सुघर सखान संग कराइकै ।
पठये सुयानन पर चँवर युत वाजने बजवाइकै ॥ ६३ ॥

तब जनक कुमार आज्ञा पाकर सुन्दर वस्त्र और आभूषणोंसे सजकर चले और राजा दशरथके पास जाकर हाथ जोड़ शिर नवाय विनती करी, फिर अवधराजने पुत्रोंको सजाकर और चतुर सखाओंको उनके साथकर सुन्दर पालकियोंपर सवार कराय और वाजे बजवाकर भेजा और संगमें चँवर ढुरते देते हैं ॥ ६३ ॥

आये कुँवर रनिवास सुनि रानी परम सुख पाइकै ।
आंई जु सन्मुख द्वारलौं किय आरती सजवाइकै ॥
भरिथाल बहुमणि लाल नवछावरि करी चित्त चाइकै ।
लैगंई पुनि शुचि भवनमें बहुभांति मंगल गाइकै ॥ ६४ ॥

कुँवर रनिवासको आये यह सुन रानियाँ अति प्रसन्न होकर और आरती सजवाकर दारपर सामने आई और बड़े चावसे लाल मणियोंके थाल भरकर नौछावर करी. फिर बहुत भाँतिसे मंगल बधावे गाकर सुन्दर राजभवनमें लेगईं ॥ ६४ ॥

सिय सखिन कीने हास विविध प्रकारके ढिंग आइकै ।
जोरे बसन युगयुगनके रस घातबात बनाइकै ॥
पुनि जनक युवतिन रतन जटित सुवर्ण थाल भराइकै ।
दिय परसि चौकिनपर अनेक प्रकार व्यंजन लाइकै ॥ ६५ ॥

वहां सीताजीकी सहेलियोंने पास जाकर (राम लक्ष्मण भरत शत्रुघ्नके साथ) अनेक प्रकारकी ठठोलियां करीं और घात पाकर बातोंमें लगाकर चारोंके वस्त्रोंका आपसमें गठवन्धन करदिया. (फिर इस हास्यरसके पीछे) राजा जनककी रानीने मणिजटित सुवर्णके थालोंमें अनेक प्रकारके व्यंजन भरवाकर और लाकर सुन्दर चौकियोंपर धरे ॥ ६५ ॥

पूरी मलाईकी धरीं रसभरी बरफी अकबरीं ।
गुलकन्द गुपचुप गुटा गूँझे गूँझियाँ मेवा भरीं ॥
गुलगुले रसगुल्ले जलेबी गुलाबे जामन खरीं ।
लच्छे घियाके अतिहि अच्छे मधुर मेवाती करीं ॥ ६६ ॥

मलाईकी पूरी–रसभरी–बरफी–अकबरी–गुलकंद–गुपचुप–गट्टे–गूँझेमेवाभरी गुँझियाँ–गुलगुले–रसगुल्ले–जलेबी–सुन्दर गुलाबजामन–बहुत अच्छे घियाके लच्छे और मीठी मेंवाकी खीर ॥ ६६ ॥

उत्तम इमरती अरु अँदरसे रायभोग भलो गनो ।
मोदक मदन माखन सुमिसरी खूबखोवा खुलि बनो ॥
खुरचन खरक खाजेजुखासे खरखरौ खुरमाठनो ।
रसखीर खीर सुखाँड़ गेरीं दूध दधि मीठौ घनो ॥ ६७ ॥

उत्तम इमरतियाँ–अँदरसे–श्रेष्ठ रायभोग, मदनमोदक–मक्खन–मिसरी–खूब सिका हुआ खोवा सुन्दर खुरचन–और पगैमा खाजे–और भुरभुरे खुरमें–गन्नेके रसकी खीर–खाँड गिरी चाँवलोंकी खीर और बहुत मीठा दूध और दही ॥ ६७ ॥

सोहन जु हलुवा सोहनौं लुचई ललित घृतकी भरी ।
सिंवई सुहाई सावनी सिखरन सुधाहू तें खरी ॥

संडेस अरु मंडेस कल कीनी कचौरी करकरी ।
लडुवा अनोखे दूधके पिंडाकरी अति आकरी ॥ ६८ ॥

सुन्दर सोहन हलुवा-घृतभरी अच्छी लुचई-सिंवई-सावौनी-अमृतसेभी वढ़कर शिखरन संदेस-और सुन्दर मंडे-खस्ता कचौरी-दूध मिसरीके लड्डू और अति उत्तम पिंडाकरी ॥ ६८ ॥

पौनाला पट्टी अटपटी अति मृदुल मालपुवा घने ।
माठेरु मोहन थाल मोतीचूरके लडुआ ठने ॥
पेठा सुपेड़ा हेसमी नव नकुल घेवरघृत सने ।
मनहरन मोहन भोग मोतीपाग सीरा सुठि घने ॥ ६९ ॥

अनोखी पौनालपट्टी-अति मृदुल मालपुये-माठे-मोहन थाल-मोतीचूरके लड्डू-पेठा-पेड़े-हेसमी-ताजे नकुल-घृतके चुचैंमा घेवर-अच्छा मोहनभोग-मोतीपाग और सुन्दर सीरा ॥ ६९ ॥

कंचन तबकयुत कलाकन्दनु चारु चन्द्रकला गनी ।
बावर विविध बालूजुसाई सरस वीरबरी बनी ॥
बरफी सुमेवाकी मधुर पयफैनसी फैनी ठनी ।
कपूरवाती वर खजूर सुस्वाद रबड़ी अतिघनी ॥ ७० ॥

सोनेका वर्क लगा हुआ कलाकन्द-सुन्दर चन्द्रकला-वावर-अनेकभाँतिकी वालूसाई-रसयुक्त वीर बरी-मेवाकी मधुर बरफी और दूधके झागोंके समान हलकी फैनी-कपूरवाती-अच्छे खजूर और वहुत स्वाद रवडी ॥ ७० ॥

मक्खन बड़े मीठे महा दधिबड़े अधिक ललामहैं ।
सदकिये सागबड़े बनाय धनाबड़े बहुवामहैं ॥
छुकिवाँ सुमीगि बदामकी अखरोठ अति अभिरामहैं ॥
निमकीन चारु चिरौंजियाँ घृततल करीं निजधामहैं ॥ ७१ ॥

बडे मीठे बड़े, मक्खन बड़े-बड़े सुन्दर दही बड़े, सद करे हुये सागबड़े और धनाबड़े बहुतसी स्त्रियोंने बनाये, बदामकी और सुन्दर अखरोटकी छुकवाँ मीगियाँ-घृतमें तली हुई निमकीन और चिरौंजियाँ अपने घरमें तयार करीं ॥ ७१ ॥

साँखे समोंसे सेव सुन्दर सोंठकी टिकियाँधरीं ।
मठरी मसालेदार चारु रसाल तिरखूंठें करीं ॥
सुठि सौंठके पत्तरे परोसे दालमौंठ महाखरी ।
खजले चनेके खोखले कचरी सुटैंटी करकरी ॥ ७२ ॥

साँखे-समोसे-सेव-सुन्दर सोंठकी टिकियां-सुन्दर मसालेदार मठरी और अच्छे तिरखूँट कर सुंदर सोंठके पतले २ पत्तरे-अच्छी सिकी दालमौंठ, खजले-खोखले चने-कचरी-तली हुई टेंटी॥७२॥

कुरकुरे पापड़ सोंठ मिरचौंनी सुचटनी चरपरी ।
आलू रतालू झोर झूनातूमरी रसकी भरी ॥
कटहर करेला कोइला कचनारकी कोमल करी ।
ककरी करौंदा कैथ कुलफा किंदुरी घृतकी भरी ॥ ७३ ॥

कुरकुरे पापड़-मिरचोंनी सोंठ और चरपरी चटनी-आलू-रतालू-झोर झूना-रसभरी तूमरी

और–कटहर–करेला–कासीफल–कचनारकी कोमल कलियां–ककड़ी–करौंदा–कैथ–कुलफा–घृत-भरी किंदुरी ॥ ७३ ॥

केला कुकंद कचारु कलितकसेरु माटरकी फरीं । ❀
अरुई अनूपम भाँति अदरख दाख नींबू रसडरीं ॥ ❀
सूरन सहजना फूल सोवा सैम सैंगर सैंगरी । ❀
मूरी मसालेदार मेथी तोरई तलिवाँ करीं ॥ ७४ ॥ ❀

केला–जिमीकंद–कचालू–अच्छे कसेरू–मटरकी फलीं–उत्तम अरवी–इनकी तरकारियाँ नींबूके रसमें डलीं हुई–अदरख और दाख–सूरन–सैंजनाके फूल–साग–सैम–सैंगर–सैंगरीं मसालेदार मूली–मेथी–तलवाँ तोरई–॥ ७४ ॥

भिंडी बघाँरी भाँतिनीकी भटनकौ भुरतावनो । ❀
परवर मसालेदार भरमा रायतो बहुविध ठनो ॥ ❀
मीठे मुरब्बा आमआदि अचार उत्तम है घनो । ❀
बहुभाँति और अनेक व्यंजन नाम कहँलग मैं गनो ॥ ७५ ॥ ❀

अच्छी तरह बघारी भिंडी–बैगनका भुरता–मसालेदार परवल–अनेक प्रकारका रायता, आम आदिके मीठे २ मुरब्बे और अनेक प्रकारके उत्तम २ अचार थे, मैं कहाँ तक नाम गिनवाऊँ ॥ ७५ ॥

कीनो कलेवा राम दर्पनधाम शुचि रुचि पाइकै । ❀
कंचन कटोरा नीर निर्मल कियो अचमन जाइकै ॥ ❀
दलदार पीरे पानके बीरे सुवदन चबाइकै । ❀
करि अतर तरवर वसन बैठे जनक नृपढिंग जाइकै ॥ ७६ ॥ ❀

राम आदि चारों भाइयोंने सुन्दर शीश महलमें बैठकर रुचिपूर्वक कलेऊ किया और सुवर्णके कटोरेमेंसे निर्मल जलका आचमन किया. फिर दलदार पीले पानके बीड़े मुखमें चबाकर अतरको सुन्दर वस्त्रोंमें लगाकर जनकराजाके पास जा बैठे ॥ ७६ ॥

लखिभूप परम स्वरूप वर लिय निज निकट बैठाइकै । ❀
अतिप्रेम प्रफुलित गात परसे सीस आनँद लाइकै ॥ ❀
मणिजटित विविध प्रकार भूषन वसन अनुपम भाइकै । ❀
नव नव अमोलिक पात्र सुवरनके लिये मँगवाइकै ॥ ७७ ॥ ❀

राजाने देखकर परम स्वरूपवान् वरोंको पास बैठा लिया अति प्रेमसे शरीर प्रफुल्लित होगया और प्रसन्न होकर उनके शिर स्पर्श करे और अनेक प्रकारके मणिजटित आभूषण और अनुपम वस्त्र और नवीन २ अमोल सोनेके पात्र मँगाये ॥ ७७ ॥

दिय राम लछिमन भरत रिपुहनसीस तिलक लगाइकै । ❀
पुनि किये मंगलचार चारु गनेश गौरि मनाइकै ॥ ❀
तब चले जनवासे हरषि जिय जनक आयसु पाइकै । ❀
आवत सुदेखि बरात प्रमुदित भई अतिसुख पाइकै ॥ ७८ ॥ ❀

और राम लक्ष्मण भरत शत्रुघ्नके माथेपर तिलक लगा दिये. फिर सुन्दर गणेश गौरीको मनाकर मंगलाचार किये. फिर राजकुमार जनकराजकी आज्ञा पाकर प्रसन्न होकर जनवासेको चले और जब बरातने आता देखा तौ सुख पाकर बड़ी प्रसन्न हुई ॥ ७८ ॥

बाजत नगारे ढोल नृत्यत नट अनेकन आइकै ।
पहुँचे स्वपितुके पास बैठे चरण सीस नवाइकै ॥
लहि मोद मन महिपाल मनिगन रतन बहुत मँगाइकै ।
शिर वारि चारों दुलहनके दिय याचकनन लुटाइकै ॥ ७९ ॥

नगारे और ढोल बजते हैं, अनेक नट आदि नृत्य करते हैं; इस प्रकार वे अपने पिता राजा दशरथके पास पहुँचे और चरणोंमें शीश नवाकर बैठ गये· राजाने मनमें प्रसन्न होकर बहुतसे मणिरत्न मँगाकर और चारों दूलहोंके शिरपर नौछावर करके याचकोंको लुटादिये ॥ ७९ ॥

इति क्षेपक.

चौ०–पुनि जेवनार भयउ बहुभाँती ❀ पठए जनक बुलाइ बराती ॥ १ ॥
परत पाँवडे बसन अनूपा ❀ सुतन समेत गवन किय भूपा ॥ २ ॥

फिर बहुत भाँतीकी ज्यौनारें हुईं, तब जनकने बरातियोंको बुलावा भेजा ॥ १ ॥ कपड़ोंके सुन्दर पांवड़े पड़ते जाते हैं, उनपर राजा (दशरथ) पुत्रोंसमेत चले ॥ २ ॥

सादर सबके पाद पखारे ❀ यथायोग्य पीढ़न बैठारे ॥ ३ ॥
धोए जनक अवधपतिचरना ❀ सील सनेह जाहि नहिं बरना ॥ ४ ॥

(जनकने) आदरसहित सबके चरण धोकर यथोचित आसनपर बिठलाया ॥३॥ जनकने दशरथके चरण धोये· (उससमयका) शील और स्नेह वर्णन नहीं किया जाता ॥ ४ ॥

बहुरि रामपदपंकज धोए ❀ जे हरहृदयकमलमहँ गोए ॥ ५ ॥
तीनौं भाइ रामसम जानी ❀ धोए चरन जनक निजपानी ॥ ६ ॥

फिर रामचन्द्रके कमलसमान चरण धोये जो महादेवके हृदयकमलमें छिपे रहते हैं ॥५॥ जनकने तीनों भाइयोंको रामचन्द्रजीके समान जान अपने हाथोंसे (उनके) पैर धोये ॥ ६ ॥

आसन उचित सबहिं नृप दीन्हें ❀ बोलि सूपकारी सब लीन्हें ॥ ७ ॥
सादर लगे परन पनवारे ❀ कनककीलमनि परन सँवारे ॥ ८ ॥

राजाने सबको योग्य आसन दिये और सब रसोइयोंको बुला लिया ॥ ७ ॥ आदरसहित पत्तलें पड़ने लगीं जो मणियोंके पत्तोंमें सुवर्णकी कीलें लगाकर बनाई गईं थीं ॥ ८ ॥

दो०–सूपोदन सुरभीसरपि, सुंदर स्वादु पुनीत ॥
छिनमहँ सबके परुसिगे, चतुर सुआर बिनीत ॥ ३६१ ॥

चतुर परोसनेवाले नम्रतासहित सुन्दर पवित्र और स्वादयुक्त गौका घी और दालभात (अथवा गौका घी मिलाहुआ दालभात) क्षणभरमें सबको परोस गये ॥ ३६१ ॥

चौ०–पंचकबल करि जेवन लागे ❀ गारि गान सुनि अति अनुरागे ॥ १ ॥
भाँति अनेक परे पकवाना ❀ सुधासरिस नहिं जाहिं बखाना ॥ २ ॥

पंचग्रासी कर जीमने लगे और गालियोंका गाना सुनकर बहुत प्रसन्न हुये ॥१॥ अमृतके समान अनेक भाँतिके (औरभी) पकवान परोसे जिनका वर्णन नहीं होसक्ता ॥ २ ॥

परुसन लगे सुआर सुजाना ❀ व्यंजन विविध नाम को जाना ॥ ३ ॥
चारिभाँति भोजनविधि गाई ❀ एक एकविधि बरनि न जाई ॥ ४ ॥

चतुर परसैये अनेक व्यंजन परोसने लगे, उनका नाम कौन जानता है ? ॥ ३ ॥ चार प्रकारके भोजनोंकी विधि कही है उनमेंसे एक २ भांतिकाभी वर्णन नहीं किया जाता ॥ ४ ॥

छरस रुचिर व्यंजन बहु जाती ❀ एक एक रस अगनित भाँती ॥ ५ ॥
जेंवत देहिं मधुर ध्वनि गारी ❀ लै लै नाम पुरुष अरु नारी ॥ ६ ॥

सुन्दर षट् रस और बहुत प्रकारके व्यंजन जिनमें एक २ रस अनगिनती भांतिका था ॥ ५ ॥ नारियाँ जीमतेमें स्त्री और पुरुषोंका नाम लेलेकर मीठे सुरोंसे गाली गाती हैं ॥ ६ ॥

समय सुहावन गारि विराजा ❀ हँसत राउ सुनि सहितसमाजा ॥ ७ ॥
यहि विधि सबही भोजन कीन्हा ❀ आदरसहित आचमन लीन्हा ॥ ८ ॥

समयके अनुसार सुन्दर गालियोंको सुनकर समाजसहित राजा (दशरथ) हँसते हैं ॥ ७ ॥ इस भाँति सभीने भोजन कर आदरसमेत आचमन लिया ॥ ८ ॥

दो०–देइ पान पूजे जनक, दशरथसहित समाज ॥ ❀
जनवासे गवने मुदित, सकल भूपशिरताज ॥ ३६२ ॥ ❀

जनकने पान देकर दशरथकी समाजसहित पूजा की; फिर सब राजाओंके शिरताज (दशरथ) प्रसन्न होकर जनवासेको चले ॥ ३६२ ॥

चौ०–नित नूतन मंगल पुरमाहीं ❀ निमिषसरिस दिन यामिनि जाहीं ॥ १ ॥
बडे भोर भूपति मनि जागे ❀ याचक गुनगन गावन लागे ॥ २ ॥

नगरमें नित नये आनन्द होने लगे और दिनरात्रि पलकके बराबर बीतने लगे ॥ १ ॥ राजाओंके शिरोमणि बड़े प्रातःकाल जगे और माँगनेवाले गुणोंका गान करने लगे ॥ २ ॥

देखि कुँवर वरवधुन समेता ❀ किमि कहि जात मोद मन जेता ॥ ३ ॥
प्रातक्रिया करि गे गुरुपाहीं ❀ महाप्रमोद प्रेम मनमाहीं ॥ ४ ॥

पुत्रोंको सुन्दर बहुओंसमेत देख मनमें जितना आनन्द हुआ वह कैसे कहा जावे॥३॥प्रातःक्रिया कर अर्थात् शौचादिकसे निवृत्त हो गुरुके पास गये और मनमें बड़ा भारी आनन्द और स्नेह भर रहा है ४

करि प्रनाम पूजा कर जोरी ❀ बोले गिरा अमिय जनु बोरी ॥ ५ ॥
तुम्हरी कृपा सुनिय मुनिराजा ❀ भयउ आजु मम पूरन काजा ॥ ६ ॥

प्रणाम और पूजाकर हाथ जोड़कर मानों अमृतकी सनी हुई बाणी बोले ॥ ५ ॥ हे मुनिराज ! सुनो, आपकी कृपासे आज मेरी कामना पूरी हुई ॥ ६ ॥

अब सब विप्र बुलाइ गुसाँईं ❀ देहु धेनु सब भाँति बनाईं ॥ ७ ॥
सुनि गुरु करि महिपाल बड़ाईं ❀ पुनि पठए मुनिवृंद बुलाईं ॥ ८ ॥

हे गोसाँईं ! अब सब ब्राह्मणोंको बुलाकर सब भाँति सजाकर गौयें दीजिये ॥७॥ गुरुने सुनकर राजाकी बड़ाई की, फिर मुनीश्वरोंके समाजको बुलावा भेजा ॥ ८ ॥

दो०–वामदेव अरु देवऋषि, बालमीकि जाबालि ॥ ❀
आए मुनिवरनिकर तब, कौशिकादि तपशालि ॥ ३६३ ॥ ❀

तब तपके समुद्र वामदेव, नारद, वाल्मीक, जाबालि और विश्वामित्र आदि श्रेष्ठ मुनीश्वरोंका समाज आया ॥ ३६३ ॥

चौ०–दंडप्रनाम सबहिं नृप कीन्हा ❀ पूजि सप्रेम बरासन दीन्हा ॥ १ ॥
चारि लक्ष वरधेनु मगाईं ❀ कामसुरभिसम सील सुहाईं ॥ २ ॥

राजाने सबको दंडवत प्रणाम कर स्नेहसहित पूजा करके सुन्दर आसन दिया ॥ १ ॥ कामधेनु के समान शीलवती सुन्दर चार लाख गौयें मँगाईं ॥ २ ॥

दोहा–(१) फीकी पै नीकी लगै, कहिये समय विचारी । सबके मन हर्षित करै, ज्यों विवाहमें गारि ॥१॥
नीकी पै फीकी लगै, विन औसरकी बात । जैसे वरणत युद्धमें, रस सिंगार न सुहात ॥ २ ॥

सब बिधि सकल अलंकृत कीन्ही ❀ मुदित महीप ऋषिनकहँ दीन्ही ॥ ३ ॥
करत विनय बहुबिधि नरनाहू ❀ लहेउ आजु जगजीवनलाहू ॥ ४ ॥

राजाने प्रसन्नतासे सब (गौओं) को सब भांति आभूषणआदिसे सजाकर ऋषियोंको दिया॥३॥ राजा बहुत भाँतिसे विनती करता है कि संसारमें जीनेका लाभ आज पाया ॥ ४ ॥

पाइ असीस महीस अनंदा ❀ लिये बोलि पुनि याचकवृंदा ॥ ५ ॥
कनकवसन मनि हय गज स्यंदन ❀ दिये बूझि रुचि रविकुलनंदन ॥ ६ ॥

राजाने आशीर्वाद पाकर प्रसन्न हो फिर याचकोंको बुलाया ॥५॥ दशरथने इच्छानुसार अर्थात् जो जिसने माँगा उसे कंचन, वसन, मणि, घोड़े हाथी और रथ दिये ॥ ६ ॥

चले पढ़त गावत गुनगाथा ❀ जय जय जय दिनकरकुलनाथा ॥ ७ ॥
इहिविधि रामबिवाह उछाहू ❀ सकै न बरनि सहसमुख जाहू ॥ ८ ॥

(वे याचक) अनेक गुणोंको गाते हुये चले कि दशरथ (महाराज) की वारंवार जय हो ॥७॥ रामचन्द्रके इस विवाहके आनन्दको वहभी नहीं वर्णन करसक्ता जिसके हजार मुख हों ॥ ८ ॥

दो०-बारबार कौशिकचरन, सीस नाइ कह राउ ॥ ❀
यह सब सुख मुनिराज तव, कृपाकटाक्षप्रभाउ ॥ ३६४ ॥ ❀

राजा (दशरथ) विश्वामित्रके चरणोंको माथा नवाकर वारंवार कहते हैं कि हे मुनिराज ! यह सब सुख आपके कृपाकटाक्षके प्रभावसे है ॥ ३६४ ॥

चौ०-जनक सनेह सील करतूती ❀ नृप सबराति सराह बिभूती ॥ १ ॥
दिन उठि बिदा अवधपतिमाँगा ❀ राखहिं सहित जनक अनुरागा ॥ २ ॥

(राजा दशरथ) ने जनकके प्रेम, शील, करनी और वैभवकी सराहना सब रात करी ॥ १ ॥ फिर दशरथजीने प्रात होतेही उठकर बिदा माँगी, परंतु जनक प्रीतिसमेत रखते हैं ॥ २ ॥

नित नूतन आदर अधिकाई ❀ दिनप्रति सहसभाँति पहुनाई ॥ ३ ॥
नित-नव नगर अनंदउछाहू ❀ दशरथगवन सोहाइ न काहू ॥ ४ ॥

नित २ नये २ आदर बढ़ते जाते हैं और हजारों तरहकी मिहमानी होती हैं ॥३॥ नगरमें नित्य नये आनन्द और उत्सव होते हैं. दशरथका जाना किसीको नहीं सुहाता ॥ ४ ॥

बहुत दिवस बीते इहि भाँती ❀ जनु सनेहरज्जु बँधे बराती ॥ ५ ॥
कौसिक सतानंद तब जाई ❀ कहा विदेहनृपहिं समुझाई ॥ ६ ॥

इस भाँति बहुत दिन बीत गये मानों बराती प्रेमकी रस्सीसे बँध गये ॥५॥ तब विश्वामित्र और शतानन्दने जाकर राजा जनकसे समझाकर कहा ॥ ६ ॥

अब दशरथकहँ आयसु देहू ❀ यद्यपि छाँड़ि न सकहु सनेहू ॥ ७ ॥
भलेहि नाथ कहि सचिव बुलाए ❀ कहि जय जीव सीस तिन्ह नाए ॥ ८ ॥

यद्यपि आप प्रीति नहीं छोड़ सक्ते तौभी अब दशरथको आज्ञा दीजिये ॥ ७ ॥ हे स्वामी, बहुत अच्छा(यों कह कर) मंत्रियोंको बुलाया और उन्होंने श्रीमहाराजकी जय कहकर मस्तक नवाया ८

दो०-अवधनाथ चाहत चलन, भीतर करहु जनाउ ॥ ❀
भए प्रेमबस सचिव सुनि, विप्र सभासद राउ ॥ ३६५ ॥ ❀

(तब जनकने कहा) भीतर (रनिवासमें) जताकर कहदो कि दशरथजी जाया चाहते हैं यह सुन मंत्री ब्राह्मण, सभासद और राजा स्नेहके वश हुये ॥ ३६५ ॥

चौ०-पुरवासिन सुनि चली बराता ❀ पूछत बिकल परस्पर बाता ॥ १ ॥
सत्य गवन सुनि सब बिलखाने ❀ मनहुँ सांझ सरसिज सकुचाने ॥ २ ॥

नगरवासियोंने सुना कि बरात चली तौ व्याकुल हो आपसमें बात पूछते हैं ॥ १ ॥ सांचही (बरातका) जाना सुनकर सब दुखी हुये. मानों साँझ के समय कमल सकुचे ॥ २ ॥

जहँ जहँ आवत बसे बराती ❀ तहँ तहँ सिद्धि चली बहुभाँती ॥ ३ ॥
विविधभाँति मेवा पकवाना ❀ भोजनसाज न जाइ बखाना ॥ ४ ॥

आतेमें जहां २ बराती बसे थे तहां २ ही बहुत भाँतिकी सिद्धियां चलीं ॥ ३ ॥ बहुत भांतिकी मेवा पकवान और भोजनकी (इतनी) सामिग्री थी कि भोजनके समाजका वर्णन नहीं किया जाता ४

भरि भरि बसह अपार कहारा ❀ पठए जनक अनेक सुआरा ॥ ५ ॥
तुरग लाख रथ सहसपचीसा ❀ सकल सवाँरे नख अरु सीसा ॥ ६ ॥

जनकने बहुतसे परसैये कहार और अनगिनती बैल (सामिग्रीसे) भर २ कर भेजे ॥ ५ ॥ एक लाख घोड़े, पच्चीस हजार रथ सब नखसे चोटीतक सजाये ॥ ६ ॥

मत्त सहसदस सिंधुर साजे ❀ जिनहिं देखि दिशिकुंजर लाजे ॥ ७ ॥
कनकबसन मणि भरि भरि याना ❀ महिषी धेनु वस्तु विधिनाना ॥ ८ ॥

दश हजार मतवाले हाथी सजाये कि जिनको देखकर दिशाओंके हाथी लजाये ॥ ७ ॥ कंचन, वसन, मणि और भाँति २ की वस्तुओंको छकड़ोंमें भर २ कर और गाय भैंसें ॥ ८ ॥

दो०-दाइज अमित न सकिय कहि, दीन्ह विदेह बहोरि ॥ ❀
जो अवलोकत लोकपति, लोकसंपदा थोरि ॥ ३६६ ॥ ❀

जनकने फिर इतना अपार दहेज दिया जो कहा नहीं जासक्ता. जिसके देखनेसे लोकपति (अर्थात् इन्द्र, कुबेर इत्यादि) भी अपसे लोकोंकी संपत्ति थोड़ी गिनने लगे ॥ ३६६ ॥

चौ०-सब समाज इहि भाँति बनाई ❀ जनक अवधपुर दीन्ह पठाई ॥ १ ॥
चलिहि बरात सुनत सब रानी ❀ बिकल मीनगन जनु लघु पानी ॥ २ ॥

जनकने इस भांति सब समाज बनाकर अयोध्यापुरीको भेज दिया ॥१॥ बरातको चलती हुई सुनकर सब रानियाँ ऐसे व्याकुल हुई जैसे थोड़े पानीमें मछलियां तड़फड़ाती हैं ॥ २ ॥

पुनि पुनि सीय गोद करि लेही ❀ देइ असीस सिखावन देहीं ॥ ३ ॥
होइहहु संतत पतिहि पियारी ❀ चिर अहिवात असीस हमारी ॥ ४ ॥

वारंवार सीताजीको गोदमें लेती हैं और अशीश देकर सीख देती हैं ॥ ३ ॥ तुम सदा पतिकी प्यारी हो, सुहाग चिरंजीव रहै, यही हमारी अशीश है ॥ ४ ॥

सास ससुर गुरुसेवा करीहू ❀ पतिरुख लखि आयसु अनुसरिहू ॥ ५ ॥
अति सनेहबस सखी सयानी ❀ नारिधर्म सिखवहिं मृदु बानी ॥ ६ ॥

सासु ससुर और गुरुकी सेवा करना और स्वामीकी इच्छा देख आज्ञाका पालन करना ॥ ५ ॥ चतुर सखियां अति प्रीतिके वश मीठी वाणीसे स्त्रीयोंका धर्म सिखाती हैं ॥ ६ ॥

सादर सकल कुँवरि समुझाई ❀ रानिन बार बार उर लाई ॥ ७ ॥
बहुरि बहुरि भेटहिं महतारी ❀ कहहिं बिरंचि रची कत नारी ॥ ८ ॥

रानियोंने आदरसहित सब कुमारियोंको समझाया और वारंवार छातीसे लगाया ॥ ७ ॥ माता वार २ मिलतेमें कहती जाती हैं कि ब्रह्माने स्त्री क्यों बनाई ॥ ८ ॥

दो०-तेहि अवसर भाइनसहित, राम भानुकुलकेतु ॥ ❀
चले जनकमंदिर मुदित, बिदा करावनहेतु ॥ ३६७ ॥ ❀

उस समय सूर्यवंशकी ध्वजा (रूप) रामचन्द्र भाइयोंसमेत प्रसन्नतासे विदा करानेकेलिये जनकके महलोंको चले ॥ ३६७ ॥

चौ०–चारिइ भाइ सुभाव सुहाए ❀ नगरनारि नर देखन धाए ॥ १ ॥
कोउ कह चलन चहतहहिं आजू ❀ कीन्ह विदेह विदा कर साजू ॥ २ ॥

स्वभावहीसे शोभायमान चारों भाइयोंको नगरके लोग लुगाई देखने आये ॥ १ ॥ कोई कहते हैं कि ये आज चलना चाहते हैं, जनकने विदाका सामान कर लिया है ॥ २ ॥

लेउ नयन भरि रूप निहारी ❀ प्रिय पाहुने भूपसुत चारी ॥ ३ ॥
को जानै केहि सुकृत सयानी ❀ नयनअतिथि कीन्हें विधि आनी ॥ ४ ॥

नेत्रभर स्वरूपको देखलो. क्योंकि राजाके चारों पुत्र प्यारे पाहुने हैं ॥ ३ ॥ हे सजनी! कौन जानता है, कि किस पुण्यप्रतापसे ब्रह्माने इन्हें लाकर (हमारे) नेत्रोंका अतिथि किया है? ॥ ४ ॥

मरणशील जिमि पाव पियूषा ❀ सुरतरु लहै जनमकर भूषा ॥ ५ ॥
पाव नारकी हरिपद जैसे ❀ इनकर दरशन हमकहँ तैसे ॥ ६ ॥

जैसे मरनेवालेको अमृत मिलै और जन्मके भूखेकों कल्पवृक्ष प्राप्त हो ॥ ५ ॥ और जैसे नरकके रहनेवालोंको भगवान्के चरण (अथवा मोक्ष) प्राप्त हों वैसेही हमको इनके दर्शन हैं ॥ ६ ॥

निरखि रामशोभा उर धरहू ❀ निज मन फणि मूरति मणि करहू ॥ ७ ॥
इहिबिधि सबहिं नयन फल देता ❀ गए कुँवर सब राजनिकेता ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजीकी शोभाको देखकर हृदयमें धारण करो. अपने मनको सर्प और इनकी मूर्त्तिको मणि करो ॥ ७ ॥ इस भांति सबको नेत्रोंके फल देते हुये सब कुँवर राजभवनमें गये ॥ ८ ॥

दो०–रूपसिंधु सब बंधु लखि, हरषि उठेउ रनिवासु ॥ ❀
करहिं निछावरि आरती, महामुदित मन सासु ॥ ३६८ ॥ ❀

रूपके समुद्र सब भाइयोंको देखकर रनिवास प्रसन्न हो उठा और सासू मनमें बहुत प्रसन्न हो नौंछावर और आरती करती हैं ॥ ३६८ ॥

चौ०–देखि रामछबि अति अनुरागीं ❀ प्रेमविवस पुनि पुनि पद लागीं ॥ १ ॥
रही न लाज प्रीति उर लाई ❀ सहज सनेह बरनि किमि जाई ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीकी शोभाको देख अति प्रेममें मगन हुईं और स्नेहके वश हो वारंवार चरणोंमें लगीं॥१॥ लाज जाती रही, हृदयमें प्रेम छागया और स्वाभाविक प्रीति कैसे वर्णन की जावे ॥ २ ॥

भाइनसहित उबटि अन्हवाये ❀ छरस अशन अति हेतु जिंवाये ॥ ३ ॥
बोले राम सुअवसर जानी ❀ शील सनेह सकुचमय वानी ॥ ४ ॥

भाइयोंसमेत उबटना लगाय स्नान करा षट्रस भोजन बड़ी प्रीतिसे जिनाये ॥ ३ ॥ रामचन्द्र जी सुन्दर समय जानकर शील और प्रेमसे सकुचकर वाणी बोले कि–॥ ४ ॥

राउ अवधपुर चहत सिधाए ❀ बिदा होनहित हमहिं पठाए ॥ ५ ॥
मातु मुदितमन आयसु नेहू ❀ बालक जानि करव नित नेहू ॥ ६ ॥

राजा अयोध्यापुरीकों जाया चाहते हैं. (इस लिये) हमको विदा होनेके लिये भेजा है ॥ ५ ॥ सो हे माता ! प्रसन्न मनसे आज्ञा दो और (हमको) बालक जानकर निरंतर प्रीति करती रहना ६

सुनत बचन विलखेउ रनिवासू ❀ बोलि न सकहि प्रेमबस सासू ॥ ७ ॥
हृदय लगाइ कुंवरि सब लीन्हीं ❀ पतिन सौंपि विनती अति कीन्ही ॥ ८ ॥

बचन सुनतेही रनिवास दुखी हुआ और स्नेहके वश सासू बोल नहीं सकती ॥ ७ ॥ सब कुमारियोंको छातीसे लगाय (उनके) पतियोंको सौंपकर बहुत विनती की ॥ ८ ॥

छं०-करि विनय सिय रामहि समरपीं जोरि कर पुनि पुनि कहै। ❀
वलि तात जाउँ सुजान तुम कहँ विदित गति सवकी अहै॥ ❀
परिवार पुरजन मोहिं राजहिं प्रानप्रिय सिय जानवी। ❀
तुलसी सुसील सनेह लखि निज किंकरी करि मानवी॥८०॥ ❀

तुलसीदास कहते हैं कि (रानियोंने) विनतीकर सीताजी रामचन्द्रको सौंपी और हाथ जोड़कर वारंवार कहने लगीं, हे प्यारे! मैं वलि जाती हूं, तुम चतुर हो, सवकी गति जानते हो. कुटुम्बके लोगोंको, नगरके लोगोंको और मुझे तथा राजाको सीताजी प्राणोंसे प्यारी जानना. और इसका सुन्दर शील और प्रीति देख अपनी दासीकर मानना॥ ८०॥

सो०-तुम परिपूरनकाम, ज्ञानशिरोमनि भावप्रिय। ❀
जनगुनगाहक राम, दोषदलन करुनायतन॥ ३०॥ ❀

हे राम! तुम कामनाओंसे परिपूर्ण हो, अर्थात् तुम्हारे यहाँ किसी वातकी कमी नहीं है और तुम ज्ञानियोंके शिरोमणि, प्रेमके भूखे, भक्तोंके गुणोंके ग्राहक, दोषोंके नाश करनेवाले और करुणाके धाम हो॥ ३०॥

चौ०-अस कहि रही चरन गहि रानी ❀ प्रेमपंक जनु गिरा समानी॥ १॥
सुनि सनेहसानी वर वानी ❀ बहुविधि राम सासु सनमानी॥ २॥

ऐसे कहकर रानी चरण पकड़कर ऐसी रहगई मानों उसकी वाणी स्नेहकी कीचमें फँस गई १ रामचन्द्रजीने प्रेमकी सनी हुई सुन्दर वाणी सुनकर वहुत भाँति सासूका सन्मान किया॥ २॥

राम विदा माँगत कर जोरी ❀ कीन्ह प्रनाम बहोरी बहोरी॥ ३॥
पाइ असीस बहुरि सिरनाई ❀ भाइनसहित चले रघुराई॥ ४॥

रामचन्द्रजीने हाथ जोड़कर विदा माँगी और वारंवार प्रणाम किया॥३॥ फिर रामचन्द्र आशीर्वाद पाकर भाइयोंसमेत शिर नवाकर विदा हुये॥ ४॥

मंजु मधुर मूरति उर आनी ❀ भई सनेह सिथिल सब रानी॥ ५॥
पुनि धीरज धरि कुँवरि हँकारी ❀ बारबार भेटहिं महतारी॥ ६॥

कोमल माधुरी मूर्तिको हृदयमें धारणकर सब रानियां प्रेममें वेसुध हो गईं॥ ५॥ फिर धीरज धर कुमारियोंको वुलाकर वारंवार मिलने लगीं॥ ६॥

पहुँचावहिं फिरि मिलहिं बहोरी ❀ बढ़ी परस्पर प्रीति न थोरी॥ ७॥
पुनिपुनि मिलति सखिन बिलगाई ❀ बालवत्स जिमि धेनु लवाई॥ ८॥

पहुँचाती हैं फिर लौटकर मिलती हैं (इस कारण) आपसमें थोड़ी प्रीति नहीं वढ़ी अर्थात् वहुत वढी॥ ७॥ फिर सखियोंको अलग कर माता वारंवार कैसे मिलती हैं जैसे हालकी व्याई हुई गौ अपने छोटेसे वच्चेसे मिलती हो॥ ८॥

दो०-प्रेमबिबस नरनारि सब, सखिनसहित रनिवास॥ ❀
मानहुँ कीन्ह विदेहपुर, करुणा विरहनिवास॥ ३६९॥ ❀

सब स्त्रीपुरुष और सखियोंसमेत रनिवास स्नेहके वशमें कैसा विकल है मानों जनकपुरमें करुणा और वियोगनेही निवास किया है॥ ३६९॥

चौ०-शुकसारिका जानकी ज्याए ❀ कनक पींजरन राखि पढ़ाए॥ १॥
व्याकुल कहहिं कहाँ बैदेही ❀ सुनि धीरज परिहरै न केही॥ २॥

तोता, मैना जो जानकीजीने पाले और सुवर्णके पिंजरोंमें रखकर पढ़ाये थे॥१॥ (वे सब) दुखी होकर कहने लगे सीताजी कहां हैं? यह सुनकर किसका धीरज नहीं छूटता॥ २॥

भए विकल खग मृग इहिभाँती ❀ मनुजदशा कैसे कहि जाती ॥ ३ ॥
बंधुसमेत जनक तब आए ❀ प्रेम उमँगि लोचन जल छाए ॥ ४ ॥

जब पक्षी पशु इस भांति व्याकुल हुये तौ मनुष्योंकी दशा कैसे कही जाय ॥ ३ ॥ तब जनकजी भाई कुशकेतुसहित आये तौ प्रेमकी अधिकतासे उनकेभी नेत्रोंमें जल छागया ॥ ४ ॥

सीय बिलोकि धीरता भागी ❀ रहे कहावत परम बिरागी ॥ ५ ॥
लीन्ह राय उर लागि जानकी ❀ मिटी महामर्याद ज्ञानकी ॥ ६ ॥

(और यद्यपि) बड़े विरक्त कहातेथे, तौभी सीताजीको देखकर उनका धीरज[1] भागगया ॥ ५ ॥ राजा (जनक) ने सीताजीको हृदयसे लगालिया तौ ज्ञानकी बड़ी जो मर्यादा थी सो मिटगई ॥६॥

समुझावत सब सचिब सयाने ❀ कीन्ह बिचार अनवसरु जाने ॥ ७ ॥
बारहिं बार सुता उर लाई ❀ सजि सुंदर पालकी मँगाई ॥ ८ ॥

जब सब चतुर मंत्री समझाने लगे तौ कुअवसर जानकर विचार किया ॥ ७ ॥ और बारंबार पुत्रीको हृदयसे लगाकर सुन्दर पालकी सजाकर मँगाई ॥ ८ ॥

दो०–प्रेमबिबस परिवार सब, जानि सुलगन नरेस ॥ ❀
कुँवरि चढ़ाईं पालकी, सुमिरे सिद्धि गनेस ॥ ३७० ॥ ❀

सब कुटुम्ब स्नेहके वशमें होगया, राजाने सुन्दर लग्न जानकर सिद्धि और गणेशजीको मनाया और पुत्रियोंको पालकीमें चढ़ाया ॥ ३७० ॥

चौ०–बहुबिधि भूप सुता समुझाई ❀ नारिधर्म कुलरीति सिखाई ॥ १ ॥
दासी दास दिए बहुतेरे ❀ शुचि सेवक जे प्रिय सियकेरे ॥ २ ॥

राजा (जनक) ने पुत्रीको बहुत समझाया और स्त्रियोंका धर्म और कुलकी रीति सिखाई॥१॥ सीताजीको बहुतसे दास, दासी और भरोसेके प्यारे सेवक दिये ॥ २ ॥

सीय चलत व्याकुल पुरवासी ❀ होहिं शकुन शुभ मंगलरासी ॥ ३ ॥
भूसुर सचिव समेत समाजा ❀ संग चले पहुँचावन राजा ॥ ४ ॥

सीताजीके चलनेसे नगरके रहनेवाले दुखी हुये और मंगलीक सुन्दर शकुन होने लगे ॥३॥ राजा (जनक) ब्राह्मण और मंत्रियोंके समाजसहित पहुँचानेको साथ चले ॥ ४ ॥

रथ गज वाजि बरातिन साजे ❀ समय बिलोकि बाजने बाजे ॥ ५ ॥
दशरथ विप्र बोलि सब लीन्हें ❀ दानमान परिपूरन कीन्हें ॥ ६ ॥

बरातियोंने रथ, हाथी, घोड़े सजाये और समय देखकर बाजे बजाये ॥५॥ दशरथने सब ब्राह्मणोंको बुलाकर दान मानसे संतुष्ट किया ॥ ६ ॥

चरनसरोज धूरि धरि सीसा ❀ मुदित महीपति पाइ असीसा ॥ ७ ॥
सुमिरि गजानन कीन्ह पयाना ❀ मंगलमूल शकुन भे नाना ॥ ८ ॥

(उनके) चरणोंकी रजको मस्तकपर धारणकर और आशीर्वाद पाकर राजा प्रसन्न हुये ॥ ७ ॥ और गणेशजीका स्मरणकर प्रस्थान किया और मंगलीक बहुतसे शकुन हुये ॥ ८ ॥

दो०–सुर प्रसून बरषहिं हरषि, करहिं अपसरा गान ॥ ❀
चले अवधपति अवधपुर, मुदित बजाइ निसान ॥ ३७१ ॥ ❀

---

(१) जनकजी तौ बड़े ज्ञानी और धैर्यवान् थे, उनका धीरज क्यों जाता रहा तहाँ कहते हैं कि सीताजी साक्षात् भगवती थी, फिर धीरज कहां रहसक्ता है ! चाहै जैसा ज्ञानी क्यों न हो । मार्कण्डेय पुराणमें लिखा है कि—

"ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा । बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति ॥ १ ॥

अर्थात् भगवती बड़े ज्ञानियोंके चित्तोंकोभी बलपूर्वक खैंचकर मोहित करदेती है."

देवता प्रसन्न हो फूल बरसाने लगे, अप्सरा गाने लगीं, राजा दशरथ प्रसन्न हो धौंसा बजाय अयोध्यापुरीको चले- ॥ ३७१ ॥

चौ०-नृप करि बिनय महाजन फेरे ❀ सादर सकल माँगने टेरे ॥ १ ॥
भूषन बसन बाजि गज दीन्हे ❀ प्रेम पोषि ठाढ़े सब कीन्हे ॥ २ ॥

राजाने विनतीकर (ब्राह्मण आदि) बड़े २ मनुष्योंको फेरा और आदरसहित सब याचकोंको टेरा ॥ १ ॥ और उनको गहने, कपड़े, हाथी, घोड़े दिये और स्नेहसे संतुष्टकर सब खड़े किये ॥ २॥

बार बार बिरदावलि भाषी ❀ फिरे सकल रामहिं उर राखी ॥ ३ ॥
बहुरि बहुरि कोसलपति कहहीं ❀ जनक प्रेमबस फिरा न चहहीं ॥ ४ ॥

वे सब वारंवार वंशकी बड़ाईको कहते हुये रामचन्द्रजीको हृदयमें धारणकर चले ॥ ३ ॥ दशरथजी वारंवार कहते हैं परंतु जनक स्नेहके वश लौटना नहीं चाहते ॥ ४ ॥

पुनि कह भूपति बचन सुहाए ❀ फिरिय महीप दूरि बड़ि आए ॥ ५ ॥
राउ बहोरि उतरि भे ठाढ़े ❀ प्रेमप्रवाह बिलोचन बाढ़े ॥ ६ ॥

फिर तौ राजा (दशरथ) ने सुन्दर वचनोंसे कहा कि हे राजन्! वड़ी दूर आगये (अब आप) लौट जाइये ॥५॥ पुनि राजा (दशरथसे) उतरकर खड़े हुये नेत्रोंमें स्नेहका प्रवाह बढ़ा ॥ ६ ॥

तब बिदेह बोले कर जोरी ❀ बचन सनेहसुधा जनु बोरी ॥ ७ ॥
करौं कवनबिधि बिनय बनाई ❀ महाराज मोहिं दीन्ह बड़ाई ॥ ८ ॥

तब जनकराज हाथ जोड़कर मानों स्नेहरूपी अमृतके सने हुये वचन बोले ॥७॥ हे महाराज! मैं किस भांति (आपकी) विनती वनाकर करूं? (क्योंकि) आपने तौ मुझे (सवप्रकार) बड़ाई दी ॥८॥

दो०-कोसलपति समधी सजन, सनमाने सब भाँति ॥ ❀
मिलन परस्पर बिनय अति, प्रीति न हृदय समाति ॥३७२॥ ❀

राजा दशरथने सज्जन समधीका सब भांति सत्कार किया और मिलते समय जो अपसमें अधिक विनती करी वह प्रीति हृदयमें नहीं समाती ॥ ३७२ ॥

चौ०-मुनिमंडलिहिं जनक शिर नावा ❀ आशीर्वाद सबहिंसन पावा ॥ १ ॥
सादर पुनि भेटे जामाता ❀ रूपसील गुननिधि सब भ्राता ॥ २ ॥

जनकने मुनीश्वरोंकी मंडलीको मस्तक नवाया और सबसे आशीर्वाद पाया ॥ १ ॥ फिर जमाइयोंसे आदरसहित मिले कि जो सब भाई रूप, शील और गुणकी खान थे ॥ २ ॥

जोरि पंकरुह पानि सुहाए ❀ बोले बचन प्रेम जनु जाए ॥ ३ ॥
राम करौं केहि भाँति प्रसंसा ❀ मुनि महेसनमानसहंसा ॥ ४ ॥

सुन्दर कमलसमान हाथ जोड़कर मानों प्रेमभरे वचन वोले ॥३॥ हे राम! आपकी किस भांति बड़ाई करूं! आप तौ मुनियोंके और महादेवजीके मनरूपी मानसरोवरमें हंसरूप होकर बसतेहो ॥४

करहिं योग योगी जेहि लागी ❀ कोह मोह ममता मद त्यागी ॥ ५ ॥
व्यापक ब्रह्म अलख अविनासी ❀ चिदानंद निर्गुन गुनरासी ॥ ६ ॥

योगीश्वर जिसके लिये क्रोध, अज्ञान, ममता और अभिमानको छोड़कर योग करते हैं॥५॥जो सब में व्यापक, ब्रह्म, देखनेमें न आवे, नाशरहित, चि(१)दानन्द, गुणोंसे रहित. और गुणका समूह है ॥६॥

---

(१) चित् और आनन्द दो शब्द हैं. चित् उस ज्ञानस्वरूपको कहतेहैं कि जो घटपटादि पदार्थोंका जानने, देखने और अनुभव करनेवाला हो. और आनन्द सुखस्वरूपको कहते हैं।जो दुःखोंसे नष्ट न हो ऐसा ब्रह्म है

मनसमेत जेहिं जान न बानी ❀ तरकि न सकहिं सकल अनुमानी ॥ ७ ॥
महिमा निगम नेति करि कहहीं ❀ जो तिहुँकाल एकरस रहहीं ॥ ८ ॥

जिसको वाणी[१] और मन नहीं जान सकते और संपूर्ण अनुमानी कहिये न्याय जाननेवाले जिसमें तर्क नहीं कर सकते ॥ ७ ॥ जिसकी महिमाको वेद नेति २ कहते हैं और जो (भूत वर्त्तमान भविष्यत्) तीनों समयमें एकसाही रहताहै ॥ ८ ॥

दो०–नयनविषय मोकहँ भयउ, सो समस्त सुखमूल ॥ ❀
सबहिं सुलभ जगजीव कहँ, भए ईश अनुकूल ॥ ३७३ ॥ ❀

सो वही संपूर्ण सुख देनेवाले मेरे दृष्टिगोचर हुये (अर्थात् मुझे दर्शन दिये) और महादेवजीकी कृपासे संसारके सब जीवोंको आप सहजमें मिलने योग्य होगये ॥ ३७३ ॥

चौ०–सबहिं भाँति मोहिं दीन्ह बड़ाई ❀ निज जन जानि लीन्ह अपनाई ॥ १ ॥
होहिं सहसदश शारद शेसा ❀ करहिं कलपकोटिक भरि लेसा ॥ २ ॥

और मुझेभी सभी भांति वड़ाई दी जो अपना भक्त जानकर अपना वना लिया ॥ १ ॥ जो दश हजार सरस्वती और शेष हों और करोड़ों कल्पोंतक गिनती किया करैं ॥ २ ॥

मोर भाग्य राउर गुनगाथा ❀ कहि न सिराहिं सुनिय रघुनाथा ॥ ३ ॥
मैं कछु कहौं एक बल मोरे ❀ तुम रीझहु सनेह सुठि थोरे ॥ ४ ॥

तौ भी हे रामचन्द्र ! सुनो, मेरे भाग्य और आपके गुणोंके समूहको कहकर नहीं सराह सक्तेहैं॥३ परन्तु मैं जो कुछ कहता हूं सो मुझे एकही वल यह है कि आप वहुत थोड़ी सुन्दर प्रीतिसे रीझतेहो४

बारबार माँगों कर जोरे ❀ मन परिहरै चरन जनि भोरे ॥ ५ ॥
सुनि वर वचन प्रेमजल पोषे ❀ पूरनकाम राम परितोषे ॥ ६ ॥

मैं हाथ जोड़कर वारंवार मांगता हूँ कि मेरा मन भूलकरभी (आपके) चरणोंको न त्यागे ॥५॥ स्नेहरूपी जलसे सींचे हुये सुन्दर वचन सुनकर कामनाओंसे पूर्ण रामचन्द्रजी संतुष्ट हुये ॥ ६ ॥

करि वर विनय ससुर सनमाने ❀ पितु कौशिक वसिष्ठसम जाने ॥ ७ ॥
बिनतीबहुरि भरत सन कीन्ही ❀ मिलि सप्रेम पुनि आशिस दीन्ही ॥ ८ ॥

सुन्दर विनती कर जनकका सत्कार किया और उनको पिता (दशरथ) विश्वामित्र और वसिष्ठके समान समझा॥७॥ फिर भरतजीसे विनती की और प्रेमसहित मिलाकर फिर आशीर्वाद दिया ॥८॥

दो०–मिले लषन रिपुसूदनहिं, दीन्ह असीस महीस ॥ ❀
भए परस्पर प्रेमबस, फिरिफिरि नांवहिं सीस ॥ ३७४ ॥ ❀

राजा (जनक) लक्ष्मण और शत्रुहनसे मिले और आशीर्वाद दिया और आपसमें ऐसे प्रेमके वश हो गये कि वार २ मस्तक नवाने लगे ॥ ३७४ ॥

चौ०–बारबार करि बिनय बडाई ❀ रघुपति चले संग सब भाई ॥ १ ॥
जनक गहे कौशिक पद जाई ❀ चरनरेनु शिर नयन न लाई ॥ २ ॥

इस तरह वारंवार विनती और बड़ाई कर रामचन्द्रजी सब भाइयोंको साथ ले विदा हुये॥१॥ जनकने जाकर विश्वामित्रके चरण छुये और उनके चरणोंकी रज मस्तक और नेत्रोंसे लगाई (और कहा)२

सुनु मुनीश वर दरशन तोरे ❀ अगम न कछु प्रतीति मन मोरे ॥ ३ ॥
जो सुख सुजस लोकपति चहहीं ❀ करत मनोरथ सकुचत अहहीं ॥ ४ ॥

---

(१) तैत्तरीयोपनिषदि–"यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह."

आगरानिवासी पंडित रामेश्वरभट्ट.

हे मुनीश्वर ! सुनिये आपके सुन्दर दर्शनसे कुछभी कठिन नहीं है, मेरे मनमें यह विश्वासहै॥३॥ जिस सुख और सुन्दर यशको इन्द्रादि लोकपाल चाहते हैं और मनोरथ करते सकुचाते हैं ॥ ४ ॥

सो सुख सुजस सुलभ मोहिं स्वामी ❀ सब विधि तव दरशन अनुगामी ॥ ५ ॥
कीन्ह विनय पुनि पुनि सिर नाई ❀ फिरे महीपति आसिस पाई ॥ ६ ॥

सो हे स्वामी ! वही सुख और सुन्दर यश मुझे सहजमें प्राप्त हुये. क्योंकि तुम्हारे दर्शनोंसे वे सुखादि सब प्रकार सेवक हो जाते हैं अथवा पीछे २ लगे फिरते हैं ॥ ५ ॥ फिर राजाने वारंवार मस्तक नवाकर विनती की और आशीर्वाद पाकर लौटे ॥ ६ ॥

चली बरात निसान बजाई ❀ मुदित छोट बड़ सब समुदाई ॥ ७ ॥
रामहिं निरखि ग्रामनरनारी ❀ पाइ नयनफल होहिं सुखारी ॥ ८ ॥

धोंसा बजाकर बरात चली, छोटे बड़े सर्वोंका समाज प्रसन्न है ॥७॥ ग्रामके स्त्री पुरुष रामचन्द्रजीको देखकर और नेत्रोंका फल पाकर सुखी होते हैं ॥ ८ ॥

दो०-बीच बीच वरवास करि, मग लोगन सुख देत ॥ ❀
अवधसमीप पुनीत दिन, पहुँची आइ जनेत ॥ ३७५ ॥ ❀

बीच २ में सुंदर निवास कर मार्गके लोगोंको सुख देते हुये शुभ दिनमें अयोध्याके पास बरात पहुँची ॥ ३७५ ॥

चौ०-हने निसान पनब बहु बाजे ❀ भेरि शंखधुनि हय गज गाजे ॥ १ ॥
झांझ मृदंग डिमिडिमी सुहाई ❀ सरस राग बाजैं सहनाई ॥ २ ॥

तब तौ निशान और ढोल बहुतसे बजने लगे, शंख और नगाड़ोंकी धुनि होने लगी और घोड़े हिनहिनाने और हाथी चिंघारने लगे ॥ १ ॥ सुन्दर झांझ, मृदंग डुमडुमी और सहनाई रसीले रागसे बजती हैं ॥ २ ॥

पुरजन आवत अकनि बराता ❀ मुदित सकल पुलकावलि गाता ॥ ३ ॥
निज निज सुंदर सदन सँवारे ❀ हाट बाट चौंहट पुरद्वारे ॥ ४ ॥

नगरके लोग बरातको आती हुई सुनकर सब प्रसन्न हुये और शरीरमें पुलकावली छा गई ॥३॥ अपने २ सुन्दर वर हाट वाट चोराहे और नगरके दर्वाजोंको सजाया ॥ ४ ॥

गली सकल अरगजा सिंचाई ❀ जहँ तहँ चौके चारु पुराई ॥ ५ ॥
बना बजार न जाइ बखाना ❀ तोरण केतु पताक बिताना ॥ ६ ॥

सब गलियोंमें अरगजाका छिड़काव किया और जहा तहां सुन्दर चौक पुराये ॥ ५ ॥ बन्दनवार, ध्वजा, पताका और चंदोओंसे बाजार जैसा सजा है उसका वर्णन नहीं किया जाता ॥ ६ ॥

सफल पुंगिफल कदलि रसाला ❀ रोपे बकुल कदंब तमाला ॥ ७ ॥
लगे सुभग तरु परसत धरनी ❀ मनिमय आलबाल कलकरनी ॥ ८ ॥

सुपारी, केले, आम, बकुल, कदंब और तमालके सब वृक्ष फलयुक्त लगाये ॥७॥ पृथ्वीमें रोपतेहीं वृक्ष बड़ी सुन्दरतासे लग गये अथवा (वृक्ष फल फूलोंके बोझेसे झुककर) पृथ्वीसे लग गये. जिनके थांवलोंमें मणियोंकी सुन्दर चित्रकारी की है ॥ ८ ॥

दो०-विविधभाँति मंगल कलस, गृह गृह रचे सँवारि ॥ ❀
सुर ब्रह्मादि सिहाहिं सब, रघुबरपुरी निहारि ॥ ३७६ ॥ ❀

भाँति २ के मंगल कलश घर २ में रच २ कर सजाये, ऐसी रामचन्द्रजीकी (अयोध्या)पुरीको देख ब्रह्माआदि सब देवता डाह करने लगे ॥ ३७६ ॥

चौ०–भूपभवन तेहि अवसर सोहा ❀ रचना देखि मदन मन मोहा ॥ १ ॥
मंगल शकुन मनोहरताई ❀ ऋधिसिधि सुखसंपदा सुहाई ॥ २ ॥

उस समय राजभवन कैसा शोभित था कि जिसकी रचनाको देख कामदेवकाभी मन मोहितथा ॥ १ ॥ मंगलके शकुन, सुंदरता, ऋद्धि, सिद्धि, सुख, और सुंदर संपत्ति ॥ २ ॥

जनु उछाह सब सहज सुहाए ❀ तनु धरि धरि दशरथगृह आए ॥ ३ ॥
देखत हेतु राम बैदेही ❀ कहहु लालसा होइ न केही ॥ ४ ॥

ये सब मानों बड़े उत्साहसे सहज सुंदर शरीर धारण कर २ के दशरथके घर आये ॥ ३ ॥ क्योंकि रामचन्द्र और सीताजीको देखनेके लिये कहो किसको लालसा नहीं होती ॥ ४ ॥

यूथ यूथ मिलि चली सुआसिनि ❀ निज छबि निदरहिं मदनबिलासिनि ॥ ५ ॥
सकल सुमंगल सजे आरती ❀ गावहिं जनु बहु वेष भारती ॥ ६ ॥

भीड़की भीड़ मिलकर सुहागिनें ऐसी चलीं कि जो अपनी शोभासे कामदेवकी स्त्री (रति) कोभी लज्जित करती हैं ॥ ५ ॥ सब आरती सजाये सुंदर मंगलाचार गाती हैं. मानों सरस्वतीने बहुतसे वेष धारण किये हैं ॥ ६ ॥

भूपतिभवन कोलाहल होई ❀ जाइ न बरनि समय सुख सोई ॥ ७ ॥
कौशल्यादि राममहतारी ❀ प्रेमविवस तनुदसा बिसारी ॥ ८ ॥

राजाके महलमें ऐसा कोलाहल (शब्द) होता है, कि उस समयका सुख वर्णन नहीं किया जाता है ॥ ७ ॥ कौशल्या आदि रामचन्द्रकी माताओंने प्रेमके वश शरीरकी दशा त्याग दी. अर्थात् उनकी सुध बुध जाती रही ॥ ८ ॥

दो०–दिये दान विप्रन विपुल, पूजि गनेश पुरारि ॥ ❀
प्रमुदित परम दरिद्र जनु, पाइ पदारथ चारि ॥ ३७७ ॥ ❀

गणेश और महादेवकी पूजा कर ब्राह्मणोंको बहुतसे दान दिये और ऐसी अधिक प्रसन्न हुईं मानों बड़ा दरिद्री चारों पदार्थ कहिये धर्म, अर्थ, काम और मोक्षको पाकर होता है ॥ ३७७ ॥

चौ०–प्रेमप्रमोद बिबस सब माता ❀ चलहिं न चरन शिथिल भे गाता ॥ १ ॥
राम दरसहित अति अनुरागीं ❀ परिछन साज सजन सब लागीं ॥ २ ॥

प्रेम और आनन्दके वश सब माताओंके पैर नहीं चलते (क्योंकि) शरीर शिथिल होगये हैं ॥१॥ रामचन्द्रजीके दर्शनोंके लिये अत्यंत प्रीतिसे सब आरतीके सामान सजाने लगीं ॥ २ ॥

विविध विधान बाजने वाजे ❀ मंगल मुदित सुमित्रा साजे ॥ ३ ॥
हरद दूब दधि पल्लव फूला ❀ पान पुंगिफल मंगलमूला ॥ ४ ॥

बहुत भाँतिके बाजे बजने लगे और सुमित्राने प्रसन्नतासे मंगल (थार) सजाये ॥ ३ ॥ आनन्दके दाता ऐसे हल्दी, दूब, दही, पत्ते, फूल, पान और सुपारी ॥ ४ ॥

अक्षत अंकुर रोचन लाजा ❀ मंजुल मंजरि तुलसि विराजा ॥ ५ ॥
छुटे पुरट घट सहज सुहाए ❀ मदन शकुनि जनु नीड़ बनाए ॥ ६ ॥

चावल अखुँये (नये उपजे पौदे) गोरोचन, खील और कोमल तुलसीकी मंजरी आदि वस्तुसजाईं५ रंगे हुये सुवर्णके घड़े साधारणहीमें ऐसे शोभायमान् हैं, मानों कामदेवने रहनेको घोंसले बनाये हैं ६

शकुन सुगंध न जाहि बखानी ❀ मंगल सकल सजहिं सब रानी ॥ ७ ॥
रची आरती विविध विधाना ❀ मुदित करहिं कल मंगल गाना ॥ ८ ॥

शकुनके सुगंध (इत्यादिक द्रव्य) वर्णन नहीं किये जाते, सब रानियाँ सब मंगलीक सामग्री सजाने लगीं ॥७॥ आरती बहुत भांतिसे सजाईं, और प्रसन्न होकर सुंदर मंगलाचार गान करती हैं

दो०-कनकथार भरि मंगलन्हि, कमल करनि लिये मात ॥
चलीं मुदित परिछनकरन, पुलकपल्लवितगात ॥ ३७८ ॥

माता सुवर्णके थारोंमें मंगल द्रव्य भरकर कमल समान हाथोंमें लिये प्रसन्नतासे आरती करने चलीं. (उनके) पल्लव समान शरीर पुलकायमान हो रहे हैं ॥ ३७८ ॥

चौ०-धूप धूम नभ मेचक भयऊ ❀ सावनवन घमंड जनु छयऊ ॥ १ ॥
सुरतरु सुमन माल सुर बरषहिं ❀ मनहुँ बलाकअवलि मन कर्षहिं ॥ २ ॥

धूपके धुँएमें बादल ऐसे श्यामबरन होगये मानों सावनके बादल घुमड़ घुमड़कर छा गये ॥ १ ॥ देवता कल्पवृक्षके श्वेत फूलोंकी माला बर्साते हैं सो मानों बगुलोंकी कतारें हैं, और ऐसी शोभित हैं कि मनको खीचती हैं ॥ २ ॥

मंजुल मनिमय बंदनवारा ❀ मनहुँ पाकरिपु चाप सँवारा ॥ ३ ॥
प्रगटहिं दुरहिं अटन्हिपर भामिनि ❀ चारु चपल जनु दमकहिं दामिनि ॥४॥

मणियोंकी सुन्दर वन्दनवारें ऐसी लटकती है मानों इन्द्रने धनुष सम्हाला है ॥ ३ ॥ और बरात देखनेको अटारियों पर जो भामिनी प्रगट होती और छिपती हैं, सो मानों उज्ज्वल और चञ्चल दामिनी दमकती हैं ॥ ४ ॥

दुंदुभिध्वनि घन गरजहिं घोरा ❀ जाचक चातक दादुर मोरा ॥ ५ ॥
सुर सुगंध शुचि बरसहिं वारी ❀ सुखी सकल ससि पुरनरनारी ॥ ६ ॥

नगाड़े ऐसे बजते हैं मानों बादल घोर गर्जते हैं और मांगनेवालेही मानो पपीहे, मेड़क और मोर हैं ॥ ५ ॥ देवता सुगंधयुक्त निर्मल जल बरसाते हैं और नगरके सब स्त्रीपुरुष मानों खेतीरूप हैं सो सुखी होते हैं. अर्थात् जैसे वर्षा होनेसे खेत हरेभरे होजाते हैं ऐसेही सब नर नारी भगवान्‌की झाँकी करके मगन होतें हैं ॥ ६ ॥

समय जानि गुरु आयसु दीन्हा ❀ पुर प्रवेश रघुकुलमनिकीन्हा ॥ ७ ॥
सुमिरि शंभु गिरजा गनराजा ❀ मुदित महीपति सहित समाजा ॥ ८ ॥

गुरु (विश्वामित्र) ने समय जानकर आज्ञा दी तो रामचन्द्रजीने नगरमें प्रवेश किया ॥ ७ ॥ राजा, (दशरथ) महादेव, पार्वती और गणेशजीका स्मरण कर समाजसहित प्रसन्न हुये ॥ ८ ॥

दो०-होहिं शकुन बरसहिं सुमन, सुर दुंदुभी बजाइ ॥
बिबुधवधू नाचहिं मुदित, मंजुल मंगल गाइ ॥ ३७९ ॥

(उस समय शुभ) शकुन होते हैं, देवता नगाड़े बजा कर फूल वर्षाते हैं, देवांगना प्रसन्नतासे सुन्दर गीत गाकर नाचती हैं ॥ ३७९ ॥

चौ०-मागध सूत बंदि नट नागर ❀ गावहिं जस तिहुँ लोक उजागर ॥ १ ॥
जयधुनि बिमल बेदबरबानी ❀ दस दिसि सुनिय सुमंगल सानी ॥ २ ॥

मांगनेवाले पौराणिक, भाट और चतुर नट तीनों लोकमें उजेला करनेवाले यशको गाते हैं॥१॥ सुन्दर आनन्दकी सनी हुई निर्मल जय २ ध्वनि और श्रेष्ठ वेदकी वाणी दशों दिशाओंमें सुनाई देती है२

बिपुल बाजने बाजन लागे ❀ नभ सर नगरलोग अनुरागे ॥ ३ ॥
बने बराती बरनि न जाहीं ❀ महा मुदित मन सुख न समाहीं ॥४ ॥

---

(१) याचकोंकी चातक आदिसे इसलिये उपमा दी है कि, जैसे चातक मेघका अभिलाषी होता है ऐसेही याचकभी श्यामसुन्दर रामके दर्शनोंके लालची हैं; पुनि जैसे मैंड़क मेघके बरसनेपर टर २ मचाते हैं ऐसेही याचक लगातार जय २ शब्द मचाते हैं; और जैसे मेघकी धुनि सुनकर मयूर नाचते गाते हैं ऐसेही याचक मांगलिक बाजोंका शब्द सुनकर नाचते गाते हैं.

बहुतसे बाजे बजने लगे, आकाशमें देवता और नगरमें मनुष्य प्रसन्न हुये ॥ ३ ॥ बराती ऐसे सजे हैं कि वर्णन नहीं किये जाते, और ऐसे प्रसन्न हैं कि उनका सुख मनमें नहीं समाता ॥ ४ ॥

पुरबासिन तब राउ जुहारे ❀ देखत रामहिं भए सुखारे ॥ ५ ॥
करहिं निछावरि मनिगन चीरा ❀ बार बिलोचन पुलक शरीरा ॥ ६ ॥

तब नगरके रहनेवालोंने राजाको जुहार की और रामचन्द्रजीको देखतेही सुखी हुये ॥ ५ ॥ और मणियोंके समूह और वस्त्रोंकी नौछावर करते हैं, नेत्रोंमें जल भर आया और शरीरमें पुलकायमान होगये ॥ ६ ॥

आरति करहिं मुदित पुरनारी ❀ हरषहिं निरखि कुँवरवर चारी ॥ ७ ॥
शिबिका सुभग उघार उघारी ❀ देखि दुलहिनिन्ह होहिं सुखारी ॥ ८ ॥

नगरकी स्त्रियां प्रसन्नतासे आरती करती हैं और सलोने चारों कुँवरोंको देखकर प्रसन्न होती हैं ॥ ७ ॥ और सुंदर पालकियोंके पर्दोंको उघार दुलहिनोंको देखकर सुखी होती हैं ॥ ८ ॥

दो०-इहिबिधि सबहीं देत सुख, आए राजदुआर ॥ ❀
मुदित मातु परिछनकरहिं, बधुनसमेत कुमार ॥ ३८० ॥ ❀

इस भांति सबोंको सुख देते हुये राजद्वार पर आये तौ माता प्रसन्न हो बहुओसमेत कुँवरोंकी आरती करने लगीं ॥ ३८० ॥

चौ०-करहिं आरती बारहिं बारा ❀ प्रेम प्रमोद कहै को पारा ॥ १ ॥
भूषन मनि पट नाना जाती ❀ करहिं निछावरि अगनितभाँती ॥ २ ॥

और वारंवार आरती करती हैं. स्नेह और उस अति आनंदका कौन वर्णन कर पार पा सक्ता है १ बहुत भांतिके गहने मणि और वस्त्रोंसे नौछावर करती हैं कि, जिनकी गिनती नहीं हो सक्ती ॥ २ ॥

बधुनसमेत देखि सुत चारी ❀ परमानंदमगन महतारी ॥ ३ ॥
पुनि पुनि सीय रामछबि देखी ❀ मुदित सफल जग जीवन लेखी ॥ ४ ॥

माता चारों पुत्रोंको बहुओंसमेत देखकर बड़े आनन्दमें मगन होरही हैं ॥ ३ ॥ वारंवार सीता-रामजीकी शोभाको देख प्रसन्न होती हैं और संसारमें अपने जीवनको सफल गिनती हैं ॥ ४ ॥

सखी सीयमुख पुनि पुनि चाही ❀ गान करहिं निज सुकृत सराही ॥ ५ ॥
बरषहिं सुमन च्छिनहिं च्छिन देवा ❀ नाचहिं गावहिं लावहिं सेवा ॥ ६ ॥

सखियां वारंवार सीताजीके मुखको देख गान करती हैं और अपने अच्छे कर्मोंकी सराहना करती हैं ॥ ५ ॥ देवता क्षण २ में फूल बर्साते हैं और नाचते गाते और सेवा जतलाते हैं ॥ ६ ॥

देखि मनोहर चारिउ जोरी ❀ शारद उपमा सकल ढँढोरी ॥ ७ ॥
देत न बनहिं निपट लघु लागी ❀ इकटक रही रूप अनुरागी ॥ ८ ॥

मनमोहिनी चारों जोड़ियोंको देख सरस्वतीने तौ सब उपमा ढूँढ़डालीं॥७॥(परन्तु कोईभी) नहीं बनी और अत्यंत छोटी लगीं तौ रूपपर मोहित होकर टकटकी बाँध देखतीकी देखती रह गई॥८॥

दो०-निगमनीति कुलरीति करि, अर्घ पाँवड़े देत ॥ ❀
बधुनसहित सुत परिछि सब, चलीं लिवाइनिकेत ॥ ३८१ ॥ ❀

वेदकी रीति और कुलकी रीति करके अर्घ्य पांवड़े देती हुईं बहुओंसमेत सब पुत्रोंकी आरती कर घरको लिवा ले चलीं ॥ ३८१ ॥

चौ०-चारि सिंहासन सहज सुहाये ❀ जनु मनोज निज हाथ बनाये ॥ १ ॥
तिनपर कुँवरि कुँअर बैठारे ❀ सादर पाँय पुनीत पखारे ॥ २ ॥

सहजहीमें शोभायमान् चार सिंहासन जो मानों कामदेवनेही अपने हाथोंसे बनाये हैं ॥ १ ॥ उनपर कुँवर कुमारियोंको बैठाया और आदरसहित पवित्र चरण धोये ॥ २ ॥

धूप दीप नैवेद वेदविधि ❀ पूजे वर दुलहिनि मंगलनिधि ॥ ३ ॥
बारहिं बार आरती करहीं ❀ व्यजन चारु चामर सिर ढरही ॥ ४ ॥

और वेदकी विधिके अनुसार धूप दीप नैवेद्यसे आनन्दके समुद्र दुलहा दुलहिनकी पूजा की॥३॥ वारंवार आरती करती हैं और सुंदर पंखे और चमर मस्तकपर ढोरती हैं ॥ ४ ॥

वस्तु अनेक निछावरि होहीं ❀ भरी प्रमोद मातु सब सोहीं ॥ ५ ॥
पावा परमतत्त्व जनु योगी ❀ अमृत लही जनु संततरोगी ॥ ६ ॥

अनेक वस्तु नौछावर होती हैं, (उस समय) सब माता अति आनन्दमें भरी हुई कैसी दीखतीहैं॥५॥ मानों योगीने परम तत्त्व अर्थात् मोक्षकोही पालिया और सदाके रोगीको अमृत मिलगया ॥ ६ ॥

जन्मरंक जनु पारस पावा ❀ अंधहि लोचनलाभ सुहावा ॥ ७ ॥
मूकवदन जनु शारद छाई ❀ मानहुँ समरसूर जय पाई ॥ ८ ॥

जन्मका दरिद्री मानो पारस पागया और अंधेको मानो सुंदर नेत्रोंका लाभ हुआ ॥ ७ ॥ गूंगेके मुखमें मानों सरस्वती आन बैठी और योधाने मानों लड़ाईमें विजय पाई ॥ ८ ॥

दो०-यहि सुखते सतकोटिगुन, पावहिं मातु अनंद ॥ ❀
भाइनसहित विवाहिघर, आये रघुकुलचंद ॥ ३८२ ॥ ❀

माताओंने तौ इस (ऊपर कहे हुए) सुखसेभी सौ करोड़ गुणा अधिक आनन्द पाया कि रामचन्द्रजी भाइयोंसहित व्याह कर घर आ गये ॥ ३८२ ॥

लोकरीति जननी करहिं, वर दुलहिनि सकुचाहिं ॥ ❀
मोद विनोद विलोकि बड़, राम मनहिं मुसुकाहिं ॥ ३८३ ॥ ❀

माता लोकाचार करती हैं (उसे देख) दुलहा दुलहिन सकुचाते हैं और बड़े उत्सवके आनन्दको देखकर रामचन्द्रजी मनही मनमें मुसकुराते हैं ॥ ३८३ ॥

चौ०-देव पितर पूजे विधि नीकी ❀ पूजी सकल बासना जीकी ॥ १ ॥
सबहिं बंदि माँगहिं वरदाना ❀ भाइनसहित रामकल्याना ॥ २ ॥

देवता और पितरोंका अच्छी भांति पूजन किया. (क्योंकि) मनकी सब इच्छा पूरी हुई ॥ १ ॥ सबोंको वन्दनाकर वरदान मांगती हैं कि भाइयोंसमेत रामचन्द्रजीका कल्याण हो ॥ २ ॥

अंतरहित सुर आसिस देहीं ❀ मुदित मातु अंचल भरि लेहीं ॥ ३ ॥
भूपति बोलि बरातिन लीन्हें ❀ यान वसन मनि भूषन दीन्हें ॥ ४ ॥

देवता आकाशसे आशीर्वाद देते हैं उसे माता प्रसन्नतासे अंचलोंमें भरकर लेती हैं॥ ३ ॥ फिर राजाने बरातियोंको बुला लिया और उन्हें सवारी, वस्त्र, मणि और आभूषण दिये ॥ ४ ॥

आयसु पाइ राखि उर रामहिं ❀ मुदित गए सब निज निज धामहिं ॥ ५ ॥
पुरनरनारि सकल पहिराये ❀ घर घर बाजहिं अनँद बधाये ॥ ६ ॥

वे आज्ञा पाय रामचन्द्रजीको हृदयमें धारण कर प्रसन्न होते हुये अपनें २ घरको गये॥५॥ नगरके सब स्त्रीपुरुषोंको (वस्त्रादि) पहिनाये और घर २ में आनन्दके बधाये बजने लगे ॥ ६ ॥

---

(१) राम इसलिये मुसुकुराते हैं कि पूर्वजन्ममें तौ माताने यह वरदान मांगा था कि भगवान् मेरे पुत्र हों और अब हमारी मायाके वश हमसेही लोकरीति कराती हैं.

जाचकजन जाचहिं जोइ जोई ❀ प्रमुदित राउ देहिं सोइ सोई ॥ ७ ॥
सेवक सकल बजनियाँ नाना ❀ पूरन किये दान सनमाना ॥ ८ ॥

मांगनेवाले लोग जो जो मांगते हैं, राजा प्रसन्नतासे वही २ देते हैं ॥ ७ ॥ सब सेवकोंको और नानाभाँतिके बाजेवालोंको दान सन्मानसे पूर्ण किया ॥ ८ ॥

दो०-देहिं असीस जुहारि सब, गावहिं गुनगनगाथ ॥
तब गुरु भूसुरसहित गृह, गवन कीन्ह नरनाथ ॥ ३८४ ॥

वे सब वन्दना कर गुणोंके समूहोंकी कथा गाते और आशीर्वाद देते हैं फिर राजाने गुरु और ब्राह्मणोंके साथ महलको गमन किया ॥ ३८४ ॥

चौ०-जो वसिष्ठ अनुसासन दीन्हा ❀ लोक वेदविधि सादर कीन्हा ॥ १ ॥
भूसुर भीर देखि सब रानी ❀ सादर उठीं भाग्य बड़ जानी ॥ २ ॥

जो वसिष्ठजीने आज्ञा दी (वह राजाने) लोक और वेदकी रीतिसे आदरसहित की ॥ १ ॥ सब रानियां ब्राह्मणोंकी भीड़ देख (अपना) बड़ा भाग्य जान आदरसहित उठीं ॥ २ ॥

पाँय पखारि सकल अन्हवाये ❀ पूजि भली विधि भूप जिवाँये ॥ ३ ॥
आदर दान प्रेम परिपोषे ❀ देत असीस चले मन तोषे ॥ ४ ॥

राजाने सबके चरण धोय स्नान कराये और अच्छी भाँति पूजा करके भोजन जिवायें ॥ ३ ॥ दान मान और स्नेहसे पूर्ण किया (और वे) मनमें संतुष्ट हो आशीर्वाद देते हुये चले ॥ ४ ॥

बहुविधि कीन्ह गाधिसुत पूजा ❀ नाथ मोहिंसम धन्य न दूजा ॥ ५ ॥
कीन्ह प्रसंसा भूपति भूरी ❀ रानिनसहित लीन्ह पदधूरी ॥ ६ ॥

फिर विश्वामित्रकी बहुत भाँति पूजा करी (और कहा) हे नाथ! मेरे समान दूसरा धन्य नहीं॥५॥ राजाने बहुतसी बड़ाई कर रानियोंसमेत (उनके) चरणोंकी रज माथेपर चढ़ाई ॥ ६ ॥

भीतर भवन दीन्ह वर वासू ❀ मन जुगवत रह नृप रनिवासू ॥ ७ ॥
पूजे गुरुपदकमल बहोरी ❀ कीन्ह विनय मन प्रीति न थोरी ॥ ८ ॥

और महलके भीतरही रहनेको सुंदर स्थान दिया मानों जिससे राजा और रनिवासदोनों दर्शन करते रहैं, अथवा राजा और रनिवास उनका मन तकते रहैं(कि जो आज्ञा करैं सो तुरत हम पूर्णकरैं) फिर गुरुके चरणकमलोंकी पूजाकर विनती की मनमें थोड़ी प्रीति नहीं अर्थात् बहुत है ॥ ८ ॥

दो०-बधुनसमेत कुमार सब, रानिनसहित महीस ॥
पुनि पुनि बंदत गुरुचरन, देत असीस मुनीस ॥ ३८५ ॥

दुलहिनोंसहित सब कुंवर और रानियोंसमेत राजा वारंवार गुरुके चरणोंकी वन्दना करते हैं और मुनीश्वर आशीर्वाद देते हैं ॥ ३८५ ॥

चौ०-विनय कीन्ह उर अति अनुरागे ❀ सुतसंपदा राखि सब आगे ॥ १ ॥
नेग माँगि मुनिनायक लीन्हा ❀ आशीर्वाद बहुत विधि दीन्हा ॥ २ ॥

(राजाने) पुत्र और सब संपत्तिको आगे रख विनती की और हृदयमें अत्यंत प्रसन्न हुए ॥ १ ॥ मुनीश्वरने अपना नेग माँगलिया और बहुत भाँति आशीश दी ॥ २ ॥

उर धरि रामहिं सीयसमेता ❀ हरषि कीन्ह गुरु गवन निकेता ॥ ३ ॥
विप्रवधू कुलवृद्ध बुलाई ❀ चीर चारु भूषन पहिराई ॥ ४ ॥

और गुरुने सीताजीसहित रामचन्द्रजीको हृदयमें धारण कर प्रसन्न हों घरको गमन किया ॥३॥ ब्राह्मणोंकी स्त्रियोंको और कुलकी बड़ी अवस्थावालियोंको बुलाया और उनको सुन्दर वासन आभूषण पहिराये ॥ ४ ॥

बहुरि बुलाइ सुआसिनि लीन्हीं ❀ रुचि बिचारि पहिरावनि दीन्हीं ॥ ५ ॥
नेगी देग जोग सब लेहीं ❀ रुचिअनुरूप भूप मणि देहीं ॥ ६ ॥

फिर सुहागिनोंको बुलालीनी (और उनकी) इच्छानुसार पहिरावनी दीनी ॥ ५ ॥ सब नेगी लोग नेग योग लेते हैं और राजाओंके शिरोमणि (दशरथजी) इच्छानुसार देते हैं ॥ ६ ॥

प्रिय पाहुने पूज्य जे जाने ❀ भूपति भली भाँति सनमाने ॥ ७ ॥
देव देखि रघुवीरविवाहू ❀ बरषि प्रसून प्रशंसि उछाहू ॥ ८ ॥

राजाने जिनको प्यारे मिहमान और मान्य जाना (उनका) भली भांति सत्कार किया ॥ ७ ॥ देवता रामचन्द्रजीके व्याहको देख फूल वर्षाय आनन्दकी वड़ाई करने लगे ॥ ८ ॥

दो०–चले निसान बजाइ सुर, निज निज पुर सुख पाइ ॥ ❀
कहत परस्पर रामजस, हरष न हृदय समाइ ॥ ३८६ ॥ ❀

देवता सुखपाय बाजे बजाय आपसमें रामचन्द्रजीकी कीर्त्तिको कहते हुये अपने २ लोकको चले, (उनके) मनमें आनन्द नहीं समाता ॥ ३८६ ॥

चौ०–सब बिधि सबहिं समदि नरनाहू ❀ रहा हृदय भरि पूरि उछाहू ॥ १ ॥
जहँ रनिवास तहाँ पगु धारे ❀ सहितबधूटिन कुँबर निहारे ॥ २ ॥

राजाने सबका सब प्रकार सन्मान किया और मनमें पूरा आनन्द भररहा है ॥ १ ॥ फिर जहां रनिबास था वहाँ चरण पधारे और बहुओंसमेत कुँबर देखे ॥ २ ॥

लिए गोद भरि मोदसमेता ❀ को कहि सकै भयउ सुख जेता ॥ ३ ॥
बधू सप्रेम गोद बैठारीं ❀ बारबार हिय हरषि दुलारीं ॥ ४ ॥

और आनन्दसहित गोदमें लिये (उस समय) जितना सुख हुआ उसे कौन कह सक्ता है ॥ ३ ॥ वहुओंको स्नेह सहित गोदमें विठारी और मनमें प्रसन्न हो वारंवार लाड़ प्यार किया ॥ ४ ॥

देखि समाज मुदित रनिवासू ❀ सबके उर आनँद किय वासू ॥ ५ ॥
कहेउ भूप जिमि भयउ विवाहू ❀ सुनि सुनि हरष होत सबकाहू ॥ ६ ॥

समाजको देख रनिवास ऐसा प्रसन्न है मानों सबके मनमें आनन्दने निवास किया है ॥ ५ ॥ राजाने जिस भाँति विवाह हुआ सो कहा, वह सुन २ कर सब किसीको आनन्द होता है ॥ ६ ॥

जनकराजगुणशीलबड़ाई ❀ प्रीति रीति संपदा सुहाई ॥ ७ ॥
बहुविधि भूप भाट जिमि बरनी ❀ रानी सब प्रमुदित सुनि करनी ॥ ८ ॥

(राजा) जनकरायके गुण, शील, बड़ाई, प्रीतिकी रीति और संपदाकी शोभा ॥ ७ ॥ राजा (दशरथ) बहुत प्रकारसे भाटोंकी भाँति वर्णन करने लगे. सब रानी (ऐसी) करनीको सुनकर बहुत प्रसन्न हुईं ॥ ८ ॥

दो०–सुतनसमेत नहाइ नृप, बोलि लिये गुरु ज्ञाति ॥ ❀
भोजन कीन्ह अनेकविधि, घरी पाँच गइ राति ॥ ३८७ ॥ ❀

फिर राजाने पुत्रोंसहित स्नान कर गुरु और जातिके लोगोंको बुलाया और अनेक प्रकारके भोजन किये (इतनेमें) पांचघड़ी रात बीत गई ॥ ३८७ ॥

चौ०–मंगल गान करहिं वरभामिनि ❀ भइ सुखमूल मनोहर यामिनि ॥ १ ॥
अँचै पान सबकाहुन पाए ❀ स्रगसुगंधभूषित छवि छाए ॥ २ ॥

सुन्दर स्त्रियां मंगलाचार गाने लगीं, वह रात मनके हरनेवाली और सुखदाई हुई ॥ १ ॥ सबने आचमन कर पान खाये, माला और सुगंधसे सजकर शोभासे छागये ॥ २ ॥

रामहिं देखि रजायसु पाई ❀ निज निज भवन चले सिर नाई ॥ ३ ॥
प्रेमप्रमोद विनोद बड़ाई ❀ समय समाज मनोहरताई ॥ ४ ॥

और रामचन्द्रजीको देख आज्ञा पाय मस्तक नवाय २ अपने २ स्थानोंको चले ॥ ३ ॥ प्रेम बड़ा आनन्द, उत्सव बड़ाई और उस समयके समाजकी सुन्दरताको ॥ ४ ॥

कहि न सकहिं श्रुति शारद शेशू ॥ वेद विरंचि महेश गनेशू ॥ ५ ॥
सो मैं कहौं कवन विधि वरनी ॥ भूमिनाग सिर धरै कि धरनी ॥ ६ ॥

वेद, सरस्वती, शेष, ब्रह्मा व महादेव और गणेशभी नहीं कहसक्ते ॥ ५ ॥ उसे मैं किस भाँति वखान कर कहसक्ताहूं ? (कहीं) पृथ्वीके छोटे सर्प अर्थात् केंचुयेभी पृथ्वीको शिरपर धारण कर सक्ते हैं ? अर्थात् नहीं कर सक्ते ॥ ६ ॥

नृप सब भाँति सबहिं सनमानी ॥ कहि मृदु वचन बुलाईं रानी ॥ ७ ॥
वधू लरकिनी परघर आईं ॥ राखेउ नयन पलककी नाईं ॥ ८ ॥

राजाने सब भाँति सबका सत्कार कर और मीठे वचन कहकर रानियाँ बुलाईं॥७॥ (और कहा) ये वहू लड़कियां हैं पराये घर आई हैं (तुम) इनको नेत्र और पलककी भांति रखाना ॥ ८ ॥

दो०-लरिका स्रमित उनींदबस, शयन करावहु जाइ ॥
अस कहि गे विश्रामगृह, रामचरन चित लाइ ॥ ३८८ ॥

और लड़केभी थकगये हैं और नींदके वश हैं (अव इन्हेंभी) जाकर शयन कराओ ऐसे कहकर और रामचन्द्रके चरणोंमें चित्त लगाकर विश्राम भवनको गये ॥ ३८८ ॥

चौ०-भूपबचन सुनि सहज सुहाए ॥ जड़ित कनक मणिपलँग डसाए ॥ १ ॥
सुभग सुरभिपयफेनुसमाना ॥ कोमल कलित सुपेती नाना ॥ २ ॥

साधारणहीमें शोभायमान् राजाके वचन सुनकर मणि जड़े हुये कंचनके पलंग बिछाये ॥ १ ॥ सुन्दर गौके दूधके झागोंके समान कोमल निर्मल नानाभाँतिकी तोशकें बिछाईं ॥ २ ॥

उपबर्हन वर वरनि न जाहीं ॥ स्रगसुगंध मनमंदिरमाहीं ॥ ३ ॥
रत्नदीप सुठि चारु चँदोवा ॥ कहत न बनै जान जेहि जोवा ॥ ४ ॥

कोमल तकिये वर्णन नहीं किये जाते और मणिजडित राजमहलोंमें पुष्पमालाओंकी सुगंध फैल रही है ॥ ३ ॥ सुन्दर रत्नोंके दीपक और बड़े सुंदर चंदोये कहतेमें नहीं बनते. जिसने देखे हैं वही जानता है ॥ ४ ॥

सेज रुचिर रचि राम उठाये ॥ प्रेमसमेत पलँग पौढ़ाये ॥ ५ ॥
आज्ञा पुनि पुनि भाइन दीन्हीं ॥ निज निज सेज सयन तिन कीन्हीं ॥ ६ ॥

सुन्दर सेज सजाय रामचन्द्रजीको उठाय और स्नेह सहित पलँगपर सुलाया ॥ ५ ॥ (रामचन्द्रजी ने) भाइयोंको वारंवार आज्ञा दी और वे अपनी २ सेजपर सोये ॥ ६ ॥

देखि स्याम मृदु मंजुल गाता ॥ कहहिं सप्रेम वचन सब माता ॥ ७ ॥
मारग जात भयावनि भारी ॥ केहि विधि तात ताड़का मारी ॥ ८ ॥

कोमल श्यामसुन्दर शरीरको देखकर सब माता, प्रेमसे पूँछने लगीं ॥ ७ ॥ हे प्यारे ! मार्गमें चलते हुये तुमने अति डरावनी ताड़का किस भांति मारी ? ॥ ८ ॥

दो०-घोर निसाचर विकट भट, समर गनै नहिं काहु ॥
मारे सहित सहाय किमि, खल मारीच सुबाहु ॥ ३८९ ॥

भयंकर राक्षस और बाँके योधा जो लड़ाईमें किसीको नहीं गिनते ऐसे दुष्ट मारीच और सुबाहुको सहायकों समेत कैसे मारा ? ॥ ३८९ ॥

चौ०-मुनिप्रसाद वलि तात तुम्हारे ॥ ईश अनेक करवरे टारे ॥ १ ॥
मख रखवारी करि दुहुँ भाई ॥ गुरुप्रसाद सब विद्या पाई ॥ २ ॥

हे प्यारे ! मैं वलैयां लेतीं हूं, मुनीश्वरकी कृपासे तुम्हारे अनेक विघ्न महादेवने दूर किये (कि जिससे) ॥ १ ॥ तुम दोनों भाइयोंने यज्ञकी रखवाली कर गुरुकी कृपासे सब विद्या सीखी ॥ २॥

मुनितिय तरी लगत पगधूरी ❀ कीरति रही भुवन भरि पूरी ॥ ३ ॥
कमठपीठ पविकूटकठोरा ❀ नृपसमाजमहँ शिवधनु तोरा ॥ ४ ॥

और चरणोंकी रज लगतेही मुनिकी स्त्री (अहल्या) तर गई. यह यश लोकोंमें पूर्ण भर रहाहै ॥३॥ और कछुयेकी पीठ तथा वज्रसेभी कठिन महादेवके धनुषको राजाओंकी सभामें तोड़ा ॥ ४॥

विश्वविजय जस जानकि पाई ❀ आए भवन ब्याहि सब भाई ॥ ५ ॥
सकल असानुस कर्म तुम्हारे ❀ केवल कौशिककृपा सुधारे ॥ ६ ॥

जिसके तोड़नेसे संसारकी जय समेत जानकीजीको पाया और सब भाई विवाह कर घर आये ॥५॥तुम्हारे ये सब काम मनुष्योंके समान नहीं हैं, वे केवल विश्वामित्रकी कृपासे सुधारे हैं ॥ ६ ॥

आजु सफल जग जनम हमारे ❀ देखि तात विधुवदन तुम्हारे ॥ ७ ॥
जे दिन गए तुमहिं विनु देखे ❀ ते विरंचि जनि पारहिं लेखे ॥ ८ ॥

हे प्यारे ! तुम्हारे चन्द्रमाके समान मुख देखनेसे संसारमें आज हमारा जन्म सफल है ॥ ७॥ जो दिन तुम्हारे विना देखे वीते उनको ब्रह्मा (हमारी उमरके) हिसावमें न लगावै ॥ ८ ॥

दो०-राम प्रतोषी मातु सब, कहि विनीतबर बैन ॥ ❀
सुमिरि शंभु गुरु विप्रपद, किये नींदबस नैन ॥ ३९० ॥ ❀

रामचन्द्रजीने नम्रतासे सुन्दर वचन कहकर सब माताओंको संतुष्ट किया. (फिर) महादेव, गुरु, और ब्राह्मणोंके चरणोंको स्मरण कर नेत्रोंको नींदके वश किया (अर्थात् सोये) ॥ ३९० ॥

चौ०-नीदहु बदन सोह सुठिलोना ❀ मनहुँ साँझ सरसीरुह सोना ॥ १ ॥
घर घर करहिं जागरन नारी ❀ देहिं परस्पर मंगल गारी ॥ २ ॥

नींदमेंभी (रामका) सलोना मुख ऐसा शोभायमान है मानों साँझके समय कमल शोभित हो ॥ १ ॥ स्त्रियां घर २ में जागरण करती हैं और आपसमें आनन्दकी गाली देती हैं ॥ २ ॥

पुरी विराजत राजत रजनी ❀ रानी कहहिं विलोकहु सजनी ॥ ३ ॥
सुंदर बधुन सासु लै सोईं ❀ फणिकन्ह जनु शिरमणि उर गोईं ॥ ४ ॥

रानी कहती है हे सखियो ! देखो (आज) पुरीके विशेष शोभायमान होनेसे रातभी कैसी सुन्दर लगती है ॥ ३ ॥ सासू सुन्दर बहुओंको लेकर ऐसे सोईं मानो नागिनियोंने (अपने) मस्तककी मणियोंको हृदयमें छिपालियाहो ॥ ४॥

प्रात पुनीत काल प्रभु जागे ❀ अरुणचूड़ बर बोलन लागे ॥ ५ ॥
बंदी मागध गुनगन गाए ❀ पुरजन द्वार जुहारन आए ॥ ६ ॥

भगवान् सुन्दर प्रातःकाल जगे और श्रेष्ठ मुर्गे बोलने लगे ॥ ५ ॥ भाट और माँगनेवाले गुणोंके समूहोंका गान करनेलगे और नगरके लोग द्वारपर जुहारने आये ॥ ६ ॥

बंदि विप्र सुर गुरु पितु माता ❀ पाइ असीस मुदित सब भ्राता ॥ ७ ॥
जननी सादर बदन निहारे ❀ भूपतिसंग द्वार पगु धारे ॥ ८ ॥

सब भाइयोंने ब्राह्मण, देवता, गुरु, पिता, माताको वन्दना करी और आशीर्वाद पाके प्रसन्न हुये, ॥ ७ ॥ माताओंने आदरसहित मुख देखे फिर राजाके साथ द्वारपर पधारे ॥ ८ ॥

दो०-कीन्ह शौच सब सहज शुचि, सरित पुनीत नहाइ ॥ ❀
प्रातक्रिया करि तात पहँ, आए चारिउ भाइ ॥ ३९१ ॥ ❀

स्वभावसेही पवित्र, सव चारों भाई शौचादि (क्रिया) कर पवित्र नदी अर्थात् सरयूमें स्नान करके और प्रातःक्रिया कहिये संध्यावंदानादि कर पिताके पास आये ॥ ३९१ ॥

चौ०-भूप विलोकि लिये उर लाई ❀ बैठे हरषि रजायसु पाई ॥ १ ॥
देखि राम सब सभा जुड़ानी ❀ लोचनलाभ अवधि अनुमानी ॥ २ ॥

राजाने देख कर छातीसे लगा लिया और वे आज्ञा पाय प्रसन्न हो बैठे ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीको देख कर सब सभा ठंढी हुई और नेत्रोंके लाभकी सीमा अनुमान कर लीनी, अर्थात् नेत्रोंको यदि लाभ होसक्ता है तौ इतनाही हो सक्ता है, अधिक नहीं ॥ २ ॥

पुनि वसिष्ठ मुनि कौशिक आए ❀ सुभग आसनन्हि मुनि बैठाए ॥ ३ ॥
सुतनसमेत पूजि पद लागे ❀ निरखि राम दोउ उर अनुरागे ॥ ४ ॥

फिर वसिष्ठ और विश्वामित्र मुनि आये तौ सुन्दर आसनोंपर मुनीश्वरोंको विठाया ॥३॥ (राजाने) पुत्रोंसहित पूजा कर चरण छुये (और वे दोनों मुनि) रामचम्द्रजीको देख मनमें प्रसन्न हुए ॥४॥

कहहिं वसिष्ठ धर्मइतिहासा ❀ सुनहिं महीपसहित रनिवासा ॥ ५ ॥
मुनिमन अगम गाधिसुत करनी ❀ मुदित वसिष्ठ विपुल विधि बरनी ॥ ६ ॥

वसिष्ठ मुनि धर्मशास्त्र और पुराण बाँचते हैं और राजा रनिवास समेत सुनते हैं ॥ ५ ॥ मुनीश्वरोंकेभी मन जहांतक न पहुँच सकै ऐसी विश्वामित्रकी (तपस्या आदिकी) करनीको वसिष्ठजीने प्रसन्नतासे बहुत भाँति वर्णन किया ॥ ६ ॥

बोले बामदेव सब साँची ❀ कीरति कलित लोक तिहुँ माँची ॥ ७ ॥
मुनि आनंद भये सबकाहू ❀ रामलषनउर अधिक उछाहू ॥ ८ ॥

वामदेवजी बोले कि सब सत्य है. (विश्वामित्रकी) उज्ज्वल कीर्ति तौ तीनों लोकोंमें छारही है ॥ ७ ॥ यह सुनकर आनन्द तौ सब किसीको हुआ पर रामचन्द्र लक्ष्मण मनमें सबसे अधिक प्रसन्न हुये (क्योंकि इनकीही कृपासे सब हुआ) ॥ ८ ॥

दो०-मंगल मोद उछाह नित, जाहिं दिवस इहि भाँति ॥
उमँगी अवध अनंद भरि, अधिक अधिक अधिकाति ॥३९२॥

इस प्रकार नित्य आनन्दमंगल और उत्साहमें दिन वीतते हैं. अयोध्यापुरी आनन्दके भारसे उमँगी और अधिक २ बढ़ती जाती है ॥ ३९२ ॥

चौ०-सुदिन साधि करकंकण छोरे ❀ मंगल मोद विनोद न थोरे ॥ १ ॥
नित नव सुख सुर देखि सिहाहीं ❀ अवध जन्म याचहिं विधिपाहीं ॥ २ ॥

अच्छा दिन साधकर हाथके कंकण खुलवाये और प्रसन्नता और आनन्दमंगल थोड़े नहीं, (अर्थात् बहुत हैं) ॥ १ ॥ देवता नित्य नये सुखको देखकर सिहाते हैं और अयोध्यामें जन्म (होना) ब्रह्मासे मांगते हैं ॥ २ ॥

विश्वामित्र चलन नित चहहीं ❀ राम सप्रेम विनयबस रहहीं ॥ ३ ॥
दिन दिन सतगुन भूपति भाऊ ❀ देखि सराह महा मुनि राऊ ॥ ४ ॥

विश्वामित्र नित्य चलना चाहते हैं परंतु रामचन्द्रजीके प्रेम और विनतीके वश रह जाते हैं ॥ ३ ॥ प्रतिदिन राजाका सौगुना भाव देखकर महामुनिराज विश्वामित्र सराहना करने लगे ॥ ४ ॥

---

[१] **कवित्त**-बोली एक नारी सुनो अवधविहारी यह शंभुधनु है न जाय वेग गहि तोरौंगे ।
रसिक विहारी हौं तिहारी चतुराई तब जानौंगी सुकंकणकी गांठ जब छोरौंगे ॥
ताछिन छवीली एक दूजी हँसि बोली श्याम आज धीरताई वीरताई सब भोरौंगे ।
तुमपै न तोलों कवै छूटि है छवीले लाल जौलौं नाहिं जनकललीके कर जोरौंगे ॥ १ ॥

माँगत बिदा राउ अनुरागे ❀ सुतनसमेत ठाढ़ भए आगे ॥ ५ ॥
नाथ सकलसंपदा तुम्हारी ❀ मैं सेवक समेत सुतनारी ॥ ६ ॥

जब बिदाही माँगी तौ राजा प्रसन्न हो पुत्रोंसहित आगे खड़े होगये (और बोले) ॥ ५ ॥ हे स्वामी ! सब संपदा आपकीही है, और मैं तौ स्त्री और पुत्रोंसहित (आपका) दास हूँ ॥ ६ ॥

करब सदा लरिकनपर छोहू ❀ दरशन देत रहब मुनि मोहू ॥ ७ ॥
अस कहि राउसहितसुतरानी ❀ परेउ चरन मुख आव न बानी ॥ ८ ॥

हे मुनिराज ! लड़कोंपर सदा दया करते रहना और मुझेभी दर्शन देते रहना ॥ ७ ॥ राजा ऐसे कहकर रानी और पुत्रोंसमेत चरणोंमें गिर पड़े और मुखसे वचन नहीं आये ॥ ८ ॥

दीन्हि असीस विप्र बहु भाँती ❀ चले न प्रीतिरीति कहि जाती ॥ ९ ॥
राम सप्रेम संग सब भाई ❀ आयसु पाइ फिरे पहुँचाई ॥ १० ॥

मुनि बहुत भाँति आशीर्वाद देकर चले. स्नेहकी रीति नहीं कही जाती ॥ ९ ॥ सब भाइयोंके साथ रामचन्द्रजी स्नेहसहित (विश्वामित्र) को पहुँचाकर और आज्ञा पाके लौटे ॥ १० ॥

दो०–रामरूप भूपति भगति, व्याह उछाह अनंद ॥
जात सराहत मनहिं मन, मुदित गाधिकुलचंद ॥ ६९३ ॥

विश्वामित्रजी रामचन्द्रका रूप, राजा (दशरथ) की भक्ति और व्याहके उत्सवके आनन्दको मनही मनमें सराहते हुये प्रसन्न होकर चले जाते हैं ॥ ३९३ ॥

चौ०–वामदेव रघुकुलगुरु ज्ञानी ❀ बहुरि गाधिसुत कथा बखानी ॥ १ ॥
सुनि मुनि सुजस मनहिं मन राऊ ❀ बरनत आपन पुन्यप्रभाऊ ॥ २ ॥

फिर ज्ञानी वामदेव और रघुकुलके गुरु (वसिष्ठ) ने विश्वामित्रकी कथा कही ॥ १ ॥ राजा(दशरथ) विश्वामित्र मुनिके सुंदर यशको सुनकर मनही मनमें अपने पुण्यके प्रभावको वर्णन करते हैं ॥ २ ॥

बहुरे लोग रजायसु भयऊ ❀ सुतनसमेत नृपति गृह गयऊ ॥ ३ ॥
जहँ जहँ रामव्याहजस गावा ❀ सुजस पुनीत लोक तिहुँ छावा ॥ ४ ॥

फिर आज्ञा पाकर लोग बिदा हुये और राजाभी पुत्रोंसहित घरको गये ॥ ३ ॥ जहां तहां रामचन्द्रजीके व्याहकी कीर्त्तिको गाते हैं और पवित्र सुंदर यश तीनों लोकोंमें छारहा है ॥ ४ ॥

आए व्याहि राम घर जबते ❀ बसे अनंद अवध सब तबते ॥ ५ ॥
प्रभुविवाह जस भयउ उछाहू ❀ सकहिं न बरनि गिरा अहिनाहू ॥ ६ ॥

(इस प्रकार) जबसे रामचन्द्रजी व्याहिकर घर आये तबसे सबआनन्द अयोध्यापुरीमें बसे ॥ ५ ॥ रामचन्द्रजीके व्याहमें जैसा आनन्द हुआ उसे सरस्वती और शेषजीभी नहीं वर्णन करसक्ते ॥ ६ ॥

कविकुलजीवन पावन जानी ❀ रामसीयजस मंगलखानी ॥ ७ ॥
तेहिते मैं कछु कहा बखानी ❀ करन पुनीत हेतु निज बानी ॥ ८ ॥

रामचन्द्र सीताजीके यशको कविकुलका जीवन, परमपवित्र, तथा आनन्दकी खान जानकर ॥७॥ मैंनेभी अपनी वाणीको पवित्र करनेके लिये कुछ वर्णन कर कहा है ॥ ८ ॥

छं०–निज गिरा पावनकरनकारन रामजस तुलसी कह्यो ।
रघुवीरचरित अपार वारिधि पार कवि कवने लह्यो ॥
उपवीत व्याह उछाह मंगल सुनहिं सादर गावहीं ।
वैदेहिरामप्रसादते जन सर्वदा सुख पावहीं ॥ ८१ ॥

तुलसीदासने अपनी वाणीको पवित्र करनेके लिये रामचन्द्रजीका यश कहा, रामचन्द्रजीका

चरित्र तौ अपार समुद्रके समान है, उसका पार किस कविने पाया है? पर जो जनेऊ और व्याहके भी उत्सवके आनंदको आदरसहित सुनेंगे और गावेंगे वे मनुष्य सीतारामजीकी कृपासे सदासुखपावेंगे ८१

छं०[1]–सुनि कहौं गाय गिरीशकन्या धन्य अधिकारी सही ।
नित प्रीति नूतन सुनत हरिगुन भक्ति अनुपमते लही ॥
रघुवीरपदअनुरागजल लोभाग्नि वेगि बुझावहीं ।
यह जानि तुलसीदास मन क्रम वचन हरिगुन गावहीं ॥८२॥

(महादेवजी कहते हैं) हे पार्वती ! सुनो, (मैं) गाकर कहता हूँ, तुम सचमुच (सुननेकी) अधिकारिणी हो. (तुमको) धन्य है; तुमने नित्य भगवानके गुणोंको सुनतेही नया स्नेह और अनोखी भक्ति पाई है. रामचन्द्रजीके चरणोंका प्रेमरूपी जल लोभरूपी अग्निको शीघ्रही बुझा देता है, ऐसा जानकर तुलसीदास मन क्रम वचनसे भगवान्के गुण गाते हैं ॥ ८२ ॥

दो०[2]–कठिन कालमलग्रसिततनु, साधन कछुक न होइ ॥
यह विचारि विस्वास करि, हरि सुमिरै बुध सोइ ॥ ३९४ ॥

कठिन समय (कलियुग) में मल अर्थात् कामक्रोधलोभादिमें फँसे हुये शरीरसे कुछभी साधन नहीं होता ऐसा विचार जो भरोसाकर भगवान्का स्मरण करै वही चतुर है ॥ ३९४ ॥

सो०–मन हरिपदअनुरागु, करहु त्यागि नाना कपट ।
महा मोह निसि जागु, सोवत बीते काल बहु ॥ ४१ ॥

हे मन ! अनेक कपट छोड़कर भगवान्के चरणोंमें प्रीतिकर; बड़े अज्ञानरूपी रात्रिसे जाग; सोतेहुये बहुत समय बीत गया ॥ ४१ ॥

सो०[2]–सिय रघुवीरविवाह, जे सप्रेम गावहिं सुनहिं ।
तिनकहँ सदा उछाह, मंगलायतन रामजस ॥ ४२ ॥

सीतारामचन्द्रजीके विवाहको जो आदरसहित गायेंगे या सुनैंगे उनको सदा आनन्द (रहैगा क्योंकि) रामचन्द्रजीका यश आनन्दका धाम है ॥ ४२ ॥

छन्द गीति.

शिरनाय शंकर पदपदम पुनि सुमिरि रघुवर जानकी ।
गुरुदेवकौ धरि ध्यान उरविच आन छवि हनुमानकी ॥
अनुसार अनुमति श्रीमहाशय तुकाराम सुजानकी ।
पीयूषधारानाम टीका वर प्रथम सोपानकी ॥ १ ॥
संवत् सुखद शिववदनसर रस इन्दु अंक मिलाइकै ।
ऋतु परमप्रिय पावस मनोहर मास भाद्रव भाइकै ॥
सितपक्ष उत्तम सप्तमी तिथि शुक्रवार जु पाइकै ।
किय पूर्ण रामेश्वर सुघर[3] अकवर नगर विच चाइकै ॥ २ ॥

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विमलविज्ञानवैराग्यसंतोषसंपादनो नाम तुलसीकृतवालकांडः प्रथमः सोपानः समाप्तः ॥ १ ॥

शुभं भवतु ॥

॥ इति बालकांडं समाप्तम् ॥

श्रीसीतारामचंद्रार्पणमस्तु ॥

---

(१) यह छन्द क्षेपक दीखता है, (२) ये दोहा, सोरठा क्षेपक दीखते हैं. (३) सुघर अकवर नगर अर्थात् आगरेका विशेषण है, भाषाकर्त्ताका नहीं.

श्रीगोस्वामी

तुलसीदासकृतरामायणम्

पीयूषधाराहिंदीभाषाटीकासहितम्।

(अयोध्याकांडम्)

वनगमनसमय श्रीरामकौशल्याजीकी भेट.

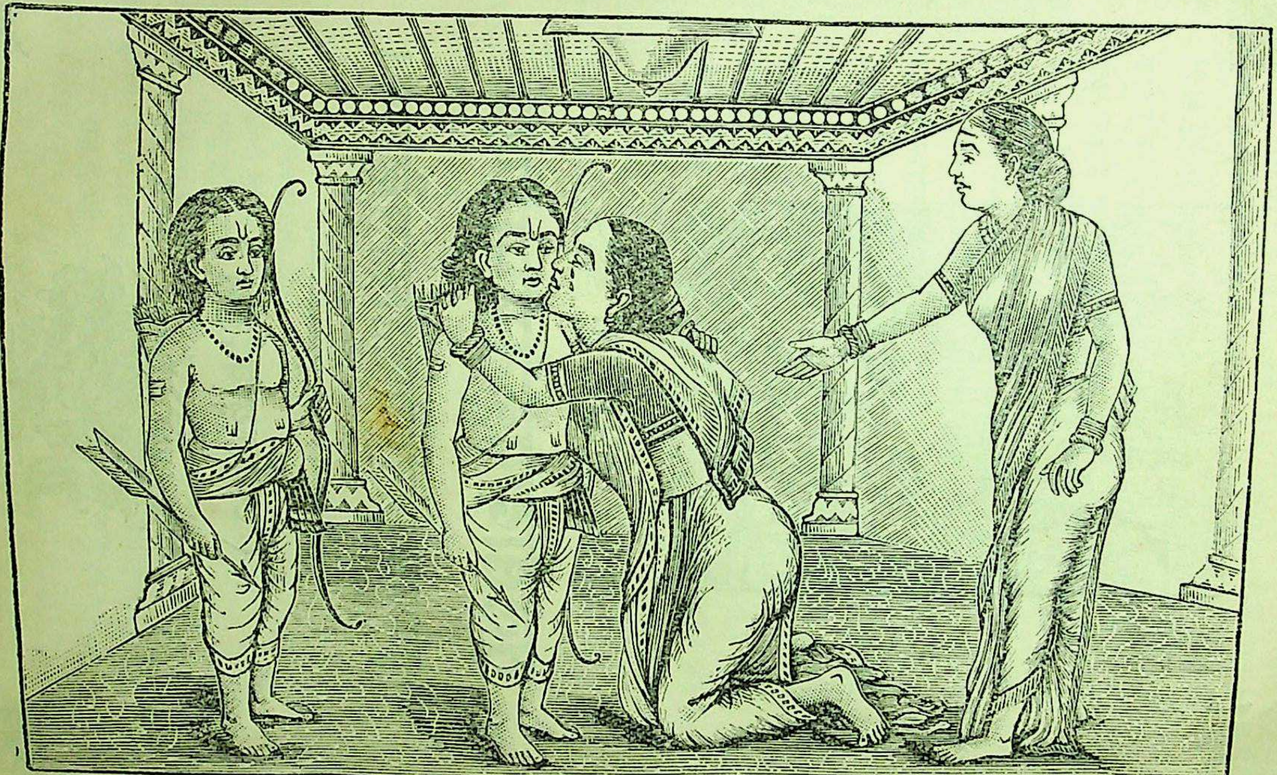

॥ श्रीः ॥

श्रीगोस्वामी

तुलसीदासकृतरामायणम् ।

अयोध्याकांडप्रारंभः ।

श्लोकः-वामांगेचविभातिभूधरसुतादेवापगामस्तके
भालेबालविधुर्गलेचगरलंयस्योरसिव्यालराट् ॥
सोऽयंभूतिविभूषणःसुरवरःसर्वाधिपः सर्वदा
शर्वःसर्वगतःशिवःशशिनिभःश्रीशंकरःपातु माम् ॥ १ ॥
प्रसन्नतांयानगताभिषेकतस्तथानमम्लौवनवासदुःखतः ॥
मुखांबुजश्रीरघुनंदनस्यमेसदास्तुसामंजुलमंगलप्रदा ॥ २ ॥
नीलांबुजश्यामलकोमलांगंसीतासमारोपितवामभागम् ॥
पाणौमहासायकचारुचापंनमामिरामंरघुवंशनाथम् ॥ ३ ॥

मंगलाचरण—सवैया.

सुन्दर श्याम शरीर लसै मुखकौं लखि कोटिक इन्दुलजाईं ।
नैन वने नव नीरजसे भुज हैं जनु कल्पलता लहराईं ।
कंबुसमान विराजत कंठ हियें भृगु पांयनकी परिछाईं ।
मो उरमाँझ निवास करौ सोइ दासनकी निधि राम गुसाईं ॥ १ ॥
शेष सुरेश जपैं जिनकों मनमाँझ दिनेश हमेस मनाईं ।
गावत हैं गुण जासु गणेश गिरा दिन रैन पै पार न पाईं ॥ २ ॥
जापदपंकजकी रजकों अज ईश मुनीश सुशीश चढाईं ।
भट्ट हृदै नित वास करौ सोइ दशरथनन्दन रामगुसाईं ॥ ३ ॥

श्लोकार्थः-जिनके वाम गोदमें पार्वतीजी, मस्तकमें गंगाजी, ललाटपर नवीन चन्द्रमा, गलेमें विष, हृदयपर सर्पराजका यज्ञोपवीत, विभूति रमायें, देवोंके देव, सबके स्वामी, अविनाशी, संहार

करनेवाले, सर्वव्यापी कल्याणस्वरूप, तथा चन्द्रमाके समान गौर वर्ण, ऐसे श्रीमहादेवजी मेरी रक्षा करैं ॥१॥ जो राज्याभिषेकसे प्रसन्नताको और वनोवासके दुःखसे मलीनताको प्राप्त नहीं हुई ऐसी श्रीरामचन्द्रके मुखारविन्दकी सुन्दर कान्ति मुझे श्रेष्ठ कल्याणकी देनेवाली हो ॥ २ ॥ नील कमलके सदृश सुन्दर कोमल अंगवाले, वाम भागमें स्थित श्रीजानकीजीसे शोभायमान, हाथोंमें सुन्दर धनुषवाण लिये हुए, रघुवंशके स्वामी श्रीरामचन्द्रजीको मैं प्रणाम करताहूं ॥ ३ ॥

दो०-श्रीगुरुचरनसरोजरज, निज मनमुकुर सुधारि ॥
बरनौं रघुवरविमलजस, जो दायक फलचारि ॥ १ ॥

श्रीगुरुके चरणकमलोंकी रजसे अपने मनरूपी दर्पणको निर्मल करके रामचन्द्रजीके उज्ज्वल यशका वर्णन करता हूँ, जो चारों फल अर्थात् धर्म, अर्थ, काम, मोक्षका देनेवाला है ॥ १ ॥

चौ०-जबते राम ब्याहि घर आए ❀ नित नवसंगल मोद बधाए ॥ १ ॥
भुवनचारिदस भूधर भारी ❀ सुकृतमेघ बरषहिं सुखवारी ॥ २ ॥

जबसे रामचन्द्रजी विवाह करके घर आये तबसे नित नये आनन्द मंगलके बधाये (होने लगे) ॥ १ ॥ चौदह भुवन मानों बड़े पर्वत हैं, उनपर सुकृत कहिये पुण्य दान यज्ञआदि मानों मेघ हैं सो सुखरूपी जल बरसाते हैं. भाव यह हुआ कि, राजा दशरथने जो बड़े २ पुण्ययज्ञादि किये हैं उनके कारण १४ लोकोंमें सुख फैल गया ॥ २ ॥

ऋधिसिधिसंपतिनदी सुहाई ❀ उमँगि अवधअंबुधि कहँ आई ॥ ३ ॥
मनिगन पुरनरनारि सुजाती ❀ सुचि अमोल सुन्दर सबभाँती ॥ ४ ॥

और जैसे (जब जल बरसता है तो नदियां बरसे हुये नवीन जलको लेकर समुद्रको जातीं हैं उसी प्रकार) ऋद्धिसिद्धि मानों संपत्तिकी सुहावनी नदियां हैं सो उमड़ २ कर समुद्रके समान अवधपुरमें जा मिलीं, अर्थात् अवधमें ऋद्धिसिद्धि फैल गई और नित्य नवीन मंगलाचार होने लगे ॥ ३ ॥ (जहां समुद्र है वहां मणिभी तौ चाहियें सोही कहते हैं कि) पुरके जो सुन्दर स्त्री पुरुष हैं वेही मानों मणियोंके समूह हैं; (जो कहो कि समुद्रमें तौ बुरेभले सभी तरहके मणि होते हैं तहाँ कहते हैं कि यहां तो सब) निर्मल, अमोल और सब भाँति सुन्दरही हैं, बुरे नहीं हैं ॥ ४॥

कहि न जाइ कछु नगरबिभूती ❀ जनु इतनिय बिरंचिकरतूती ॥ ५ ॥
सबबिधि सबपुरलोग सुखारी ❀ रामचंद्रमुखचंद्र निहारी ॥ ६ ॥

नगरका वैभव कुछ कहा नहीं जाता, मानों ब्रह्माकी करतूत इतनीही है. अर्थात् ब्रह्माकी सब चतुराई अयोध्यापुरीमेंही खर्च होगई, अन्यत्र कहीं कुछ नहीं हुई ॥ ५ ॥ रामचन्द्रजीके चन्द्रसमान मुखको देखकर नगरके सब लोग सब भांति सुखी हैं. अर्थात् जैसे समुद्रकी तरंगें चन्द्रमाको देख बढ़ती हैं वैसेही अवधकी प्रजा रामजीका मुख देख प्रसन्न होती है ॥ ६ ॥

मुदित मातु सब सखी सहेली ❀ फलित बिलोकि मनोरथ बेली ॥ ७ ॥
रामरूप गुन सील सुभाऊ ❀ प्रमुदित होहिं देखि मुनिराऊ ॥ ८ ॥

(उनकी) माता और सब सखियाँ सहेलियाँ इच्छारूपी वेलिको फलती हुई देखकर प्रसन्न होती हैं ॥७॥ मुनीश्वर और राजा श्रीरामचन्द्रजीके रूप, गुण, शील और स्वभावको देखकर प्रसन्न होते हैं ॥८॥

दो०-सबके उरअभिलाष अस, कहहिं मनाइ महेस ॥ ६३
आपु अछत जुवराजपद, रामहिं देहिं नरेस ॥ २ ॥

सबके मनमें ऐसी इच्छा है सो महादेवको मनाके कहते हैं कि राजा अपने जीतेजी [illegible] चन्द्रजीको युवराजपद देदें ॥ २ ॥

अथ क्षेपक.

चौ०–एकबार जानकीसमेता ❀ बैठे प्रभु निज रुचिर निकेता ॥ १ ॥
भुज प्रलंब उर नयन विशाला ❀ पीतवसन तनु श्यामतमाला ॥ २ ॥

एक समय सीताजीसहित रामचंद्रजी अपने सुन्दर राजमंदिरमें बैठे हुये थे॥ १॥ लंबी २ भुजायें, चौड़ी छाती, बड़े २ नेत्र थे; और तमाल वृक्षके समान श्याम शरीरपर पीताम्बर धारण कियेथे॥२॥

कोटिमनोज देखि छवि मोहा ❀ सीताकर चामर वर सोहा ॥ ३ ॥
तेहि अवसर मुनि नारद आए ❀ सुरहित लागि विरंचि पठाए ॥ ४ ॥

सीताजीके हाथमें सुन्दर चँवर शोभायमान था और (उनकी) शोभाको देखकर करोड़ों कामदेव मोहित होते थे ॥३॥ उस समय देवताओंके हितके लिये ब्रह्माके भेजे हुये नारदमुनि आये ॥ ४ ॥

तेजपुंजतनु करतलवीना ❀ हरिगुनगन गावत लयलीना ॥ ५ ॥
देखि राम सहसा उठि धाए ❀ करत दंडवत मुनि उर लाए ॥ ६ ॥

जो तेजके पुंजके समान शरीरवाले हाथमें वीणा लिये और उसकी लयमें लवलीन हो भगवान्के गुणोंके समूहको गाते थे ॥ ५ ॥ रामचन्द्रजी उन्हें देखकर शीघ्र उठ खड़े हुये और दंडवत करतेही मुनीश्वरने हृदयसे लगालिया ॥ ६ ॥

सादर निज आसन बैठारे ❀ जनकसुता तब चरण पखारें ॥ ७ ॥
तेहि चरणोदक भवन सिंचावा ❀ जगपावन हरि सीस चढ़ावा ॥ ८ ॥

और आदरसे अपने आसनपर बिठलाया. तब सीताजीने (उनके) चरण धोये; ॥७॥ उनके चरणोदकसे राजमन्दिर छिड़कवाया और संसारको पवित्र करनेवाले भगवान्ने(अपने)मस्तकपर चढ़ाया ८

सुन मुनि विषयनिरत जे प्रानी ❀ हम सारिखे देहअभिमानी ॥ ९ ॥
तिन्हकहँ सतसंगति तब होई ❀ करै कृपा जाकहँ प्रभु सोई ॥ १० ॥

(फिर कहने लगे) हे मुनि ! सुनो, हमारे समान, शरीरमें अभिमान करनेवाले जीव जो विषय (वासनाओं) में लवलीन होरहे हैं ॥ ९ ॥ उनको तभी अच्छी संगति मिलती है जब वे भगवान् उनके ऊपर कृपा करते हैं ॥ १० ॥

ताकहँ मुनि नाहिंन भव आगे ❀ जेहि बिनु हेतु संतप्रिय लागे ॥ ११ ॥
तातें नारद मैं बड़भागी ❀ यद्यपि गृहकुटुंबअनुरागी ॥ १२ ॥

हे मुनि ! उसके आगे संसार (कुछ) नहीं है जिसको विनाकारण संत प्यारे लगते हैं ॥ ११ ॥ इससे हे नारद ! मैं यद्यपि घर और कुटुम्बसे प्रीति करनेवाला हूँ (तौभी) बड़ा भाग्यवान् हूँ. (क्योंकि आपका दर्शन हुआ) ॥ १२ ॥

दो०–सुनि हरिवचन मधुर प्रिय, करि बिचार मुनि धीर ॥ ❀
परम कृपालुक लोकहित, लागि कहत रघुवीर ॥ ३ ॥ ❀

रामजीके मधुर और प्यारे वचन सुनकर बिचार किया और धीरज धरकर कहने लगे कि हे रघुनाथजी ! आप तो बड़े कृपालु और संसारके हित करनेवाले हो ॥ ३ ॥

चौ०–कहमुनि तव महिमा रघुराया ❀ मैं जानउँ कछु तुमारिहि दाया ॥ १ ॥
वचन कहेहु प्राकृतकी नाँई ❀ तातें नहिं कछु घटेउ गुसाँई ॥ २ ॥

फिर मुनिने कहा हे रामचन्द्र ! मैं आपकी महिमाको आपकीही कृपासे कुछ २ जानताहूँ ॥१॥ हे गोसाईं ! (आपने) साधारण मनुष्यके समान वचन कहे इससे कुछ घट नहीं गया ॥ २ ॥

प्रभु यह तुमहिं सदा बनिआई ❀ निज लघुता जनकेरि बड़ाई ॥ ३ ॥
सहज सुभाउ प्रणतअनुरागी ❀ नरतनु धरेउ दासहित लागी ॥ ४ ॥

हे भगवन्! अपना छोटापन और भक्तोंकी बड़ाई करना आपकी यह रीति सदासे चली आई है ॥ ३ ॥ आप अपने सहज स्वभावसे दुखियोंके ऊपर प्रीति करनेवाले हो और सेवकोंका भला करनेके लिये मनुष्यका शरीर धारण किया है ॥ ४ ॥

माया गुण गो ज्ञान अतीता ❀ अजित नाम सो दासन्ह जीता ॥ ५ ॥
जेहि प्रभुसम अतिशय कोउ नाहीं ❀ व्यापक अज समान सब माहीं ॥ ६ ॥

माया गुण इंद्रिय ज्ञानसे परे हो और जो नहीं जीता जाय ऐसे आपके नामको सेवकोंने जीता है ॥ ५ ॥ जिस भगवान्से वढ़कर कोई वड़ा नहीं, जो अज कहिये जन्म नहीं लेनेवाला और सबमें समान व्याप्त है ॥ ६ ॥

उदर चराचर मेलि जो सोवा ❀ स्तन मुख पान लागि सो रोवा ॥ ७ ॥
नाम रूप बपु बरन न भेदा ❀ अविगति अकल नेति कह वेदा ॥ ८ ॥

और जो चराचरको पेटमें रखकर सोता है, वही स्तन पीनेके लिये रोता है! ॥ ७ ॥ वेद कहते हैं कि उसके नाम, रूप, अवस्था, रंगमें भेद नहीं, वह चराचरमें व्याप्त है (हाथ पाँव आदि) अंगरहित है और ऐसा (दूसरा कोई) नहीं है ॥ ८ ॥

निरमम मुक्त निरामय जोई ❀ दशरथसुत कहि गाइय सोई ॥ ९ ॥
जप तप योग यज्ञ व्रत दाना ❀ विमल विराग ज्ञान विज्ञाना ॥ १० ॥

जो ममतारहित मुक्त कहिये सबसे अलग और रोगरहित है, वही दशरथका पुत्र कहके पुकारा जाता है ॥९॥ जप, तप, योगाभ्यास, यज्ञ, व्रत, दान, निर्मल वैराग्य, ज्ञान और विज्ञानसे ॥ १० ॥

करहिं जतन मुनि पावत कोई ❀ देखा प्रगट भक्तवश सोई ॥ ११ ॥
हठवश शठ साधन बहु करहीं ❀ भक्तिहीन भवसिंधु न तरहीं ॥ १२ ॥

कोई २ मुनीश्वर जिसे वड़े यत्नसे पाते हैं उसेही प्रत्यक्षमें भक्तोंके वश देखा ॥११॥ मूर्ख हठकेवश होकर बहुतसे साधन करते हैं, (परंतु) भक्तिके विना संसाररूपी समुद्रसे पार नहीं होते ॥ १२ ॥

दो०-जानि सकहु ते जानहु, निर्गुन सगुन स्वरूप ॥
मम हृद्पंकज भृंगइव, बसहु राम नररूप ॥ ४ ॥

सो आपके निर्गुण और सगुण स्वरूपको तौ जो जान सक्तेहों वे भलेही जानें. परंतु हे रामचन्द्र! मेरे हृदयरूपी कमलमें तौ नररूपसेही भौंरेकी भाँति निवास करो ॥ ४ ॥

चौ०-ब्रह्म भुवन मैं रहेउँ कृपाला ❀ गावत तव गुन दीनदयाला ॥ १ ॥
अस इच्छा उपजी मनमाहीं ❀ देखेउँ चरन बहुत दिन नाहीं ॥ २ ॥

हे कृपानाथ! दीनदयालु! मैं आपके गुण गाता हुआ ब्रह्मलोकमें था ॥ १ ॥ (वहाँ) मनमें ऐसा विचार हुआ कि (भगवान्के) चरणोंका बहुत दिनसे दर्शन नहीं किया ॥ २ ॥

यद्यपि प्रभु सर्वत्र समाना ❀ सगुनरूप मोरे मन माना ॥ ३ ॥
अवध चलत बिरंचि मोहि जाना ❀ कीन्हीं विनय लागि मम काना ॥ ४ ॥

यद्यपि भगवान् सब स्थानोंमें बराबर हैं (परन्तु) मेरे मनको सगुणरूप अच्छा लगा ॥ ३ ॥ (इस लिये मैं वहांसे चला सो) ब्रह्माजीने मुझे अयोध्यापुरीको चलते हुये जान मेरे कानसे लगकर प्रार्थना की कि-॥ ४ ॥

प्रभु जानत सब अंतरजामी ❀ भक्तिवश्य बिनती यह स्वामी ॥ ५ ॥
जिन हित लीन्ह मनुजअवतारा ❀ नाथ वेगि सो करिय सँभारा ॥ ६ ॥

(यद्यपि) भगवान् सब जानते हैं (क्योंकि) अंतर्यामी कहिये घटघटकी जाननेवाले हैं (तोभी) हे स्वामी! भक्तिके वश यह प्रार्थना है कि-॥ ५ ॥ हे नाथ! जिनकेलिये मनुष्यका अवतार लिया है उन्हें शीघ्र सँभाल कर कीजिये ॥ ६ ॥

सुनत वचन रघुपति मुसुकाने ❀ मुनि अजहूँ विरंचि भय माने ॥ ७ ॥
कहेहु तात ब्रह्महिं समुझाई ❀ कछु दिन बीते देखहुँ आई ॥ ८ ॥

वचन सुनतेही रामचन्द्रजी हँसे (और कहा) हे मुनि! ब्रह्माजी अबभी डरते हैं ॥ ७ ॥ हे प्यारे! ब्रह्माजीसे समझाके कहना कि कुछ दिन पीछे आके देखूँगा ॥ ८ ॥

बार बार चरनन्ह शिरनाई ❀ ब्रह्मानंद न हृदय समाई ॥ ९ ॥
रामरूप उर धरि मुनि नारद ❀ चले करत गुनगान विशारद ॥ १० ॥

(नारदजीने) वारंवार (रामचन्द्रजीके) चरणोंको माथा नवाय और ऐसा ब्रह्मानन्द हुआ कि हृदयमें नहीं समाता ॥ ९ ॥ बुद्धिमान् नारदमुनि रामचन्द्रजीके स्वरूपको हृदयमें धारण कर गुणोंका गान करते हुये चले ॥ १० ॥

तब रघुपति सीतहि समुझावा ❀ चहत करन सो चरित सुनावा ॥ ११ ॥
सुरहित लागि करिय सो उपाई ❀ जाइय बन परिहरि ठकुराई ॥ १२ ॥

तब रामचन्द्रजीने सीताको समझाया और जो चरित्र करना चाहते थे वह सुनाया ॥ ११ ॥ देवताओंके भलेके लिये वही उपाय करना चाहिये और राज्यको छोड़ वनको जाना चाहिये ॥ १२ ॥

दो०-जग संभव इस्थिति प्रलय, जाकी भृकुटिविलास ॥ ❀
सो प्रभु जतन विचारही, केहि विधि निशिचरनास ॥ ५ ॥ ❀

जिसकी भृकुटीके फेरनेसे संसारकी उत्पत्ति पालना और नाश होता है वही भगवान् यत्न विचारते हैं कि राक्षसोंका नाश किस भाँति हो ॥ ५ ॥

इति क्षेपक.

चौ०-एक समय सब सहित समाजा ❀ राजसभा रघुराज बिराजा ॥ १ ॥
सकलसुकृतमूरति नरनाहू ❀ रामसुजस सुनि अतिहि उछाहू ॥ २ ॥

एक समय राजा दशरथजी सब समाजसहित राजसभामें विराजमान्थे ॥ १ ॥ और सब श्रेष्ठ कर्मोंकी मानों मूर्त्ति ऐसे राजा (दशरथ) रामचन्द्रजीकी सुदर कीर्त्तिको सुनकर बहुत प्रसन्न हुये २

नृप सब रहहिं कृपा अभिलाषे ❀ लोकप रहहिं प्रीति रुख राखे ॥ ३ ॥
त्रिभुवन तीनिकाल जगमाहीं ❀ भूरिभाग दशरथसम नाहीं ॥ ४ ॥

सब राजा (जिन दशरथजीकी) कृपाकी इच्छा किये रहते हैं और लोकपाल (इन्द्रादिक) भी उनकी प्रीतिका रुख तका करते हैं ॥ ३ ॥ तीनों लोक तीनों काल संसारमें दशरथके समान बड़भागी (कोई) नहीं हुआ ॥ ४ ॥

मंगलमूल राम सुत जासू ❀ जो कछु कहिय थोर सब तासू ॥ ५ ॥
राज सुभाउ मुकुर कर लीन्हा ❀ बदन बिलोकि मुकुट सम कीन्हा ॥ ६ ॥

---

(१) गूढार्थदीपिकामें देखो.

जिनके पुत्र आनन्दकन्द श्रीरामचन्द्रजी हैं उनकेलिये जो कुछ कहा जाय सब थोड़ा है ॥ ५ ॥ राजा (दशरथ) ने साधारणसे दर्पन हाथमें लेकर मुख देख मुकुटको सम्हाला ॥ ६ ॥

श्रवनसमीप भए सित केशा ❀ मनहुँ चौथपन अस उपदेशा ॥ ७ ॥
नृप जुवराज रामकहँ देहू ❀ जीवन जनम सफल करि लेहू ॥ ८ ॥

और देखा कि कानके पासके बाल जो सफेद हुए सो मानों बुढ़ापा ऐसा उपदेश करता हैं कि ॥ ७ ॥ हे राजा ! रामचन्द्रजीको राजतिलक देकर जन्मका जीवन सफल क्यों नहीं करते ? ॥ ८ ॥

दो०–अस विचारि उर आनि नृप, सुदिन सुअवसर पाइ ॥ ❀
तनु पुलकित मन मुदित अति, गुरुहिं सुनायउ जाइ ॥ ६ ॥ ❀

राजाने ऐसा विचार हृदयमें करके सुन्दर दिन और अच्छा समय पाय शरीरमें पुलकायमान और मनमें प्रसन्न होकर गुरुको जाकर सुनाया ॥ ६ ॥

चौ०–कहेउ भुआल सुनिय मुनिनायक ❀ भए राम सबबिधि सबलायक ॥ १ ॥
सेवक सचिव सकल पुरबासी ❀ जे हमार अरि मित्र उदासी ॥ २ ॥

राजाने कहा हे मुनिराय ! सुनो (अब) रामचन्द्र सब भाँति सबलायक हुए ॥ १ ॥ दास, मंत्री और सब नगरके रहनेवाले जो हमारे शत्रु, मित्र और उदासीन हैं–॥ २ ॥

सबहिं रामप्रिय जेहि बिधि मोही ❀ प्रभुअसीस जनु तनु धरि सोही ॥ ३ ॥
विप्रसहित परिवार गुसाईं ❀ करहिं छोह सब रौरेहि नाईं ॥ ४ ॥

सबको रामचन्द्र मेरी भाँति प्यारे हैं, मानो हे स्वामी ! आपका आशीर्वादही शरीर धारण किये शोभायमान् है ॥३॥ हे स्वामी ! ब्राह्मणोंसमेत सब कुटुम्ब आपहीकी भाँति प्रेम करतेहैं ॥४॥

जे गुरुचरनरेनु शिर धरहीं ❀ ते जनु सकल विभव वश करहीं ॥ ५ ॥
मोहिं समान अरु भयउ न दूजे ❀ सब पायउँ प्रभुपदरज पूजे ॥ ६ ॥

जो गुरुके चरणोंकी रजको मस्तकपर धारण करते हैं वह मानो सब संपत्तियोंको (अपने) वश कर लेते हैं ॥ ५ ॥ मेरे समान और दूसरा (कोई) नहीं हुआ. हे स्वामी ! आपके चरणोंकी रजके पूजनेसेही सब कुछ पाया ॥ ६ ॥

अब अभिलास एकमन मोरे ❀ पूजिहि नाथ अनुग्रह तोरे ॥ ७ ॥
मुनि प्रसन्न लखि सहजसनेहू ❀ कहेउ नरेश रजायसु देहू ॥ ८ ॥

अब मेरे मनमें एक इच्छा है सो हें स्वामी ! आपकी कृपासे पूरी होगी ॥७॥ राजा (दशरथ)ने मुनीश्वरको साधारणही प्रेममगन और प्रसन्न देखकर कहा कि अनुमति दीजिये ॥ ८ ॥

दो०–राजन राउर नामजस, सब अभिमतदातार ॥ ❀
फलअनुगामी महिपमनि, मन अभिलास तुम्हार ॥ ७ ॥ ❀

(तब वसिष्ठजीने कहा) हे राजन् ! तुम्हारा नाम और यश सब मनोरथोंका देनेवाला है और हे राजाओंके शिरोमणि ! धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारों फल तौ तुम्हारी मनोकामनाओंके पीछे २ फिरनेवाले हैं; अर्थात् तुम्हारे मनोरथ करतेही तत्काल फल होता है ॥ ७ ॥

चौ०–सबबिधि गुरु प्रसन्न जिय जानी ❀ बोलेउ राउ बिहँसि मृदुबानी ॥ १ ॥
नाथ राम करिये जुवराजू ❀ कहिय कृपाकरि करिय समाजू ॥ २ ॥

राजा गुरुको मनमें सब भाँति प्रसन्न जान हँसकर मीठी वाणी बोले ॥ १ ॥ हे स्वामी ! रामचन्द्रजीको युवराज कीजिये और कृपा करके समाज करनेको आज्ञा दीजिये ॥ २ ॥

मोहिं अछत यह होइ उछाहू ❀ लहहिं लोग सब लोचनलाहू ॥ ३ ॥
प्रभुप्रसाद शिव सबै निवाहीं ❀ यह लालसा इक मनमाहीं ॥ ४ ॥

मेरे जीतेजी यह आनन्द हो और सब लोग नेत्रोंका फल पावैं ॥३॥ हे नाथ! आपकी कृपासे महादेवजीने सब निवाहदी, (अब) यही एक लालसा मनमें बाकी है ॥ ४ ॥

पुनि न सोच तन रहौ कि जाऊ ❀ जेहि न होइ पाछे पछिताऊ ॥ ५ ॥
सुनि मुनि दशरथवचन सुहाए ❀ मंगल मोदमूल मन भाए ॥ ६ ॥

फिर (कुछ) शोच नहीं है, शरीर रहै या चला जाय, जिससेपीछे पछतावा न होगा ॥५॥ दशरथके आनन्दमंगल करनेवाले सुहावने वचन सुनकर मुनीश्वरके मनमें अच्छे लगे (और वे बोले कि) ६

सुन नृप जासु विमुख पछिताहीं ❀ जासु भजन विनु जरनि न जाही ॥ ७ ॥
भए तुम्हार तनय सोइ स्वामी ❀ राम पुनीत प्रेम अनुगामी ॥ ८ ॥

हे राजा ! सुनो, जिसके विमुख होनेसे (जीव) पछिताते हैं और जिसके भजन विना चित्तकी जलन नहीं जाती ॥ ७ ॥ वही प्रभु रामचन्द्र तुम्हारे सच्चे प्रेमके वश हो पुत्र हुये हैं ॥ ८ ॥

दो०-बेगि विलंब न करिय नृप, साजिय सबै समाज ॥
सुदिन सुमंगल तबहिं जब, राम होहिं जुवराज ॥ ८ ॥

हे राजा ! जल्दी सब समाज सजाओ देर न करो. (क्योंकि) सुन्दर दिन और अच्छे आनन्द का समय तबही है कि जब रामचन्द्र युवराज हों ॥ ८ ॥

चौ०-मुदित महीपति मंदिर आए ❀ सेवक सचिव सुमंत्र बुलाए ॥ १ ॥
कहि जय जीव सीस तिन्ह नाए ❀ भूप सुमंगल वचन सुनाए ॥ २ ॥

राजा प्रसन्नतासे महलोंमें आये और सेवक सुमंत मंत्रीको बुलाया ॥ १ ॥ और उन्होंने महाराजकी जय होय ऐसा कहकर माथा नवाया, तब राजाने सुंदर आनन्दके वचन कहे कि ॥ २ ॥

प्रमुदित मोहिं कहेउ गुरु आजू ❀ रामहिं राज देहु जुवराजू ॥ ३ ॥
जो पाँचहिं मत लागै नीका ❀ करहु हरषि हिय रामहिं टीका ॥ ४ ॥

गुरुने आज बहुत प्रसन्नतासे मुझसे कहा है कि रामको युवराजपदवी दो ॥ ३ ॥ जो पंचोंको अच्छी बात लगै तौ मनमें प्रसन्न हो रामचन्द्रजीको राजतिलक करो ॥ ४ ॥

मंत्री मुदित सुनत प्रियबानी ❀ अभिमतबिरव परेउ जनु पानी ॥ ५ ॥
विनती सचिव करहिं करजोरी ❀ जयहु जगतपति बरस करोरी ॥ ६ ॥

मंत्री प्यारी वाणीको सुनतेही ऐसा प्रसन्न हुआ मानों मनोरथरूपी पौधेपर जल पड़ा ॥ ५ ॥ फिर मंत्री हाथ जोड़कर विनती करने लगा कि हे जगतपति ! आप, करोड़ों वर्ष जिओं ॥ ६ ॥

जग मंगल भल काज विचारा ❀ बेगहि नाथ न लाइय वारा ॥ ७ ॥
नृपहिं मोद सुनि सचिव सुभाखा ❀ बढ़त विटप जनु लही सुशाखा ॥ ८ ॥

हे स्वामी ! संसारको आनन्द देनेवाला अच्छा काम विचारा इसे जल्दी करो, देर न कीजिये ॥७॥ राजा मंत्रीकी अच्छी वाणी सुनकर ऐसे प्रसन्न हुये मानों बढ़ते हुये पौधेमें सुंदर टेनियां निकलीं ॥८॥

दो०-कहेउ भूप मुनिराजकर, जो जो आयसु होइ ॥
रामराजअभिषेकहित, बेगि करहु सोइ सोइ ॥ ९ ॥

राजाने कहा मुनिराज (वसिष्ठजी) की जो २ आज्ञा हो सो २ रामचन्द्रके राजतिलकके लिये जल्दी तैयार करो ॥ ९ ॥

चौ०–हरषि मुनीस कहेउ मृदु बानी ❀ आनहु सकल सुतीरथपानी ॥ १ ॥
ओषधि मूल फूल फल पाना ❀ कहे नाम गनि मंगल नाना ॥ २ ॥

मुनिराजने प्रसन्न हो मीठी वाणीसे कहा कि सब अच्छे २ तीर्थोंका जल लाओ ॥ १ ॥ और ओषधियाँ, कंद, फूल, फल और नानाप्रकारकी मांगलिक (वस्तुओंके) नाम गिनकर कहे ॥ २ ॥

चामर चर्म बसन बहुभाँती ❀ रोम पाट पट अगनित जाती ॥ ३ ॥
मनिगन मंगलवस्तु अनेका ❀ जो जग योग भूपअभिषेका ॥ ४ ॥

चँवर, मृगचर्म, बहुत भाँतिके कपड़े और ऊनी साल, दुशाले और अनेकप्रकारके रेशमी वस्त्र ॥ ३ ॥ भाँतिभाँतिकी मणि और भाँति २ की मंगल करनेवाली वस्तु जो संसारमें राजतिलकके योग्य हैं (उन्हें एकत्र करो) ॥ ४ ॥

वेदविहित कहि सकल विधाना ❀ कहेउ रचहु पुर विविध बिताना ॥ ५ ॥
पनस रसाल पुंगफल केरा ❀ रोपहु बीथिन पुर चहुँफेरा ॥ ६ ॥

वेदके अनुसार सब रीति कहकर कहा कि नगरमें बहुतसे चँदोबे बनाओ ॥ ५ ॥ गलियोंमें चारों ओर कटहर, आम, सुपारी और केलेके खंब लगाओ ॥ ६ ॥

रचहु मंजुमनि चौके चारू ❀ कहहु बनावन वेगि बजारू ॥ ७ ॥
पूजहु गनपति गुरु कुलदेवा ❀ सबबिधि करहु भूमिसुरसेवा ॥ ८ ॥

सुन्दर मणियोंके खासे चौंक पूरो और हाटवाट सजानेको कहो ॥ ७ ॥ गणेश, गुरु, और कुलके देवताओंको पूजो और सब भाँतिसे ब्राह्मणोंकी सेवा करो ॥ ८ ॥

दो०–ध्वज पताक तोरन कलस, सजहु तुरग रथ नाग ॥ ❀
शिर धरि मुनिवरवचन सब, निज निज काजहिं लाग ॥१०॥❀

ध्वजा, पताका, वन्दनवार, कलशे, घोड़े, हाथी, और रथोंको सजाओ. (इस प्रकार) श्रेष्ठ मुनीश्वरके वचनोंको शिर चढ़ाय सब अपने २ काममें लगे ॥ १० ॥

चौ०–जेहिमुनीश जो आयसु दीन्हा ❀ सो जन काज प्रथम तेइ कीन्हा ॥ १ ॥
विप्र साधु सुर पूजत राजा ❀ करत रामहित मंगल काजा ॥ २ ॥

मुनीश्वरने जिसको जो आज्ञा दी वह काम मानो उसने पहलेही करलिया ॥ १ ॥ राजा, ब्राह्मण, साधु और देवताओंको पूजते है और रामचन्द्रजीके लिये मंगलाचार करते हैं ॥ २ ॥

सुनत रामअभिषेक सुहावा ❀ बाज गहागह अवध बधावा ॥ ३ ॥
रामसीयतनु शकुन जनाए ❀ फरकहिं मंगल अंग सुहाए ॥ ४ ॥

रामचन्द्रजीके राजतिलकको सुनतेही अयोध्यामें गहगहे बाजे बजने और बधावे होने लगे ॥ ३ ॥ रामचन्द्र सीताजीके शरीरने शकुनोंको प्रकटकर दिखाया (कि उन दोनोंके) मंगलकारी सुन्दर अंग फड़कने लगे ॥ ४ ॥

पुलकि सप्रेम परस्पर कहहीं ❀ भरतआगमन सूचक अहहीं ॥ ५ ॥
भए बहुत दिन अति अवसेरी ❀ शकुन प्रतीति भेट प्रिय केरी ॥ ६ ॥

पुलकायमान हो (राम जानकी) आपसमें प्रेमसे कहते हैं कि (ये शकुन तौ) भरतकेआनेको

---

(१) शंका यहां यह होती है कि जो मंगलकारी शकुन हुये तो फल अमंगल क्यों हुआ ? इसका उत्तर यही है कि रामचन्द्रजी तो वनमें जाने और रावणादिके मारनेसेहीनिष्कंटक भूमंडलका राज्य कर सक्ते थे ॥

जतानेवाले हैं ॥ ५ ॥ बहुत दिन होनेसे अधिक चिन्ता है (परन्तु) शकुनोंसे प्यारेके मिलनेकी परतीत होती है ॥ ६ ॥

भरतसरिस प्रिय को जगमाहीं ❀ यहै शकुनफल दूसर नाहीं ॥ ७ ॥
रामहिं बंधुसोच दिनराती ❀ अंडनि कमठहृदय जेहि भाँती ॥ ८ ॥

भरतकेसमान संसारमें कौन प्यारा है ? यही शकुनोंका फल है, दूसरा नहीं ॥ ७ ॥ रामचन्द्रको दिनरात भाईका ऐसा शोच है जैसे कछुयेके हृदयमें अंडोंका ॥ ८ ॥

दो०-तेहि अवसर मंगल परम, सुनि हरषेउ रनिवास ॥ ❀
सोभित लखि विधु बढत जनु, बारिधि बीचि बिलास ॥ ११ ॥ ❀

उस समय (राजतिलकके) बड़े आनन्दको सुनकर रनिवास ऐसा प्रसन्न हुआ मानो जैसे पूर्ण चन्द्रमाको देखकर समुद्रकी तरंगोंका बिलास बढ़ता है ॥ ११ ॥

चौ०-प्रथम जाइ जिन्ह वचन सुनाए ❀ भूषण बसन भूरि तिन्ह पाए ॥ १ ॥
प्रेम पुलकि तनु मन अनुरागीं ❀ मंगल साज सजन सब लागीं ॥ २ ॥

जिन्होंने (रनिवासमें) जाकर पहले वचन सुनाये उन्होंने बहुतसे गहने और कपड़े पाये ॥ १ ॥ (रानियोंका) शरीर स्नेहसे पुलकायमान होगया और मनमें सब प्रसन्न हो मंगलसाज सजाने लगीं ॥२॥

चौके चारु सुमित्रा पूरे ❀ मणिमय विविध भाँति अतिरूरे ॥ ३ ॥
आनँदमगन राममहतारी ❀ दिए दान बहु विप्र हँकारी ॥ ४ ॥

सुमित्राने मणियोंसे भाँति २ के सुन्दर रंगविरंगे चौक पूरे॥३॥ रामचन्द्रजीकी माताने आनन्दमें मगन हो बहुतसे ब्राह्मणोंको बुलाकर दान दिये ॥ ४ ॥

पूजेउ ग्राम देव सुर नागा ❀ कहेउ बहोरि देन बलि भागा ॥ ५ ॥
जेहि विधि होइ रामकल्याना ❀ देहु दया करि सो वरदाना ॥ ६ ॥
गावहिं मंगल कोकिलबयनी ❀ विधुबदनी मृगसावकनयनी ॥ ७ ॥

गाँवके देवता अर्थात् भुमियाँ तथा शेषनाग और देवताओंको पूजकर फिर बलि[1]दानका भाग देनेको कहा ॥ ५ ॥ और प्रार्थना करी कि कृपा करके वह वरदान दीजिये कि जिस प्रकार रामचन्द्रका भला हो ॥ ६ ॥ चन्द्रमुखी कोकिलबैनी मृगनैनी स्त्रियां मंगलाचार गाने लगीं ॥ ७ ॥

दो०-रामराजअभिषेक सुनि, हिय हरषे नर नारि ॥ ❀
लगीं सुमंगल सजन सब, बिधि अनुकूल बिचारि ॥ १२ ॥ ❀

(सब) स्त्री पुरुष रामचन्द्रजीका राजतिलक सुनकर मनमें प्रसन्न हुये और बिधाताको सीधा जान सब सुन्दर मंगलकी तैयारी करने लगे ॥ १२ ॥

चौ०-तब नरनाह बसिष्ठ बुलाये ❀ रामधाम सिख देन पठाए ॥ १ ॥
गुरुआगमन सुनत रघुनाथा ❀ द्वार आइ नायउ पद माथा ॥ २ ॥

तब राजाने वसिष्ठजीको बुलाकर रामचन्द्रके स्थानमें शिक्षा देनेको भेजा ॥ १ ॥ रघुनाथजीने गुरुका आना सुनतेही द्वारपर आकर (उनके) चरणोंको माथा नवाया ॥ २ ॥

सादर अर्घ देइ घर आने ❀ षोड़शभाँति पूजि सनमाने ॥ ३ ॥
गहे चरन सिय सहित बहोरी ❀ बोले राम कमलकर जोरी ॥ ४ ॥

---

[1] बलिप्रदान देनेसे सब कार्य सिद्ध होते हैं. यथा-'बलिभिः साध्यते मुक्तिर्बलिभिः साध्यते सुखम् । बलिदानेन सततं जयेच्छत्रून्नृपान्नृपः-सरलार्थः—

आदरसहित अर्घ्य देकर महलमें लिवा लाये और सोलह[१] प्रकारसे पूजनकर आदर सत्कारकिया ॥ ३ ॥ फिर सीताजीसहित चरण छूके रामचन्द्रजी कमलसमान हाथ जोड़कर बोले-॥ ४ ॥

सेवकसदन स्वामिआगमनू ❀ मंगलमूल अमंगलदमनू ॥ ५ ॥
तदपि उचित अस बोलि सप्रीती ❀ पठइय नाथ काज अस नीती ॥ ६ ॥

सेवकके घर स्वामीका आना आनन्दका देनेवाला और दुःखोंका नाश करनेवाला होता है ॥ ५॥ तौभी हे स्वामी ! यह उचित था कि कामके लिये प्रीति सहित मुझे बुला भेजते, ऐसी नीतिहै ॥६॥

प्रभुता तजि प्रभु कीन्ह सनेहू ❀ भयउ पुनीत आजु मम गेहू ॥ ७ ॥
आयसु होइ सो करिय गुसाँई ❀ सेवक लहै स्वामि सेवकाई ॥ ८ ॥

हे नाथ ! (अपने) प्रभुताको छोड़कर स्नेह किया (इसलिये) आज मेरा घर पवित्र हुआ ॥ ७ ॥ हे स्वामी ! जो आज्ञा हो वह (मुझसे) कीजिये कि जिससे सेवक स्वामीकी सेवा करै ॥ ८ ॥

दो०-सुनि सनेहसाने वचन, मुनि रघुबरहि प्रशंस ॥ ❀
राम कस न तुम कहहु अस, हंसबंसअवतंस ॥ १३ ॥ ❀

मुनीश्वर स्नेहके सने हुये वचन सुनकर रामचन्द्रजीकी बड़ाई करने लगे कि हे रामचन्द्र ! तुम ऐसे क्यों न कहो, अर्थात् तुम्हें ऐसा कहना योग्यही है क्योंकि तुम सूर्यवंशके भूषण हो ॥ १३ ॥

चौ०-बरनि रामगुन सील सुभाऊ ❀ बोले प्रेम पुलकि मुनिराऊ ॥ १ ॥
भूप सजेउ अभिषेक समाजू ❀ चाहत देन तुमहिं जुवराजू ॥ २ ॥

मुनिराजने रामचन्द्रजीके गुण और शीलस्वभावका वर्णन करके और स्नेहमें पुलकायमान होकर (यह) कहा कि ॥१॥ राजाने राजतिलकका ठाट सजाया है (क्योंकि) तुमको युवराजपद देना चाहते हैं

राम करहु सब संयम आजू ❀ जो बिधि कुसल निबाहै काजू ॥ ३ ॥
गुरु सिख देइ राउपहँ गयऊ ❀ राम हृदय अस बिस्मय भयऊ ॥ ४ ॥

(सो) हे राम ! आज (ब्रह्मचर्यादि) सब संयम करो, जो विधाता कुशलतासे (सब) काम सिद्ध करै ॥३॥ गुरु शिक्षा देकर राजाके पास गये और रामचन्द्रजीके मनमें ऐसा अचरज हुआ कि-॥४॥

जनमे एकसंग सब भाई ❀ भोजन शयन केलि लरिकाई ॥ ५ ॥
कर्णबेध उपबीत बिवाहा ❀ संग संग सब भयउ उछाहा ॥ ६ ॥

सब भाई एकसाथही जनमे और लड़कपनसेही भोजन, शयन, खेलकूद, ॥ ५ ॥ कर्णछेदन, जनेऊ और विवाह (आदि) सब उत्सव साथही साथ हुये ॥ ६ ॥

बिमल बंश यह अनुचित एकू ❀ अनुज बिहाइ बड़ेहि अभिषेकू ॥ ७ ॥
प्रभु सप्रेम पछितानि सुहाई ❀ हरहु भक्त मनकी कुटिलाई ॥ ८ ॥

(परन्तु) निर्मल कुलमें यही एक बात अनुचित है कि छोटे भाइयोंको छोड़कर बड़ेको राजतिलक हो ॥७॥ भगवान्का ऐसा स्नेहसहित सुन्दर पछतावा भक्तोंके मनकी कुटिलाईको दूरकरै॥८॥

दो०-तेहि अवसर आए लषन, मगन प्रेम आनंद ॥ ❀
सनमाने प्रिय बचन कहि, रविकुलकैरवचंद ॥ १४ ॥ ❀

उस समय स्नेहके आनन्दमें मगन होते हुये लक्ष्मणजी आये, तौ सूर्यवंशरूपी कुमुदको (खिलानेके लिये) चन्द्रमारूप (रामचन्द्रजी)ने प्यारे बचन कह कर सत्कार किया ॥ १४ ॥

---

(१) आसनं स्वागतं पाद्यमर्घ्यमाचमनीयकम् ।
मधुपर्कस्तथाम्लानि वसनाभरणानि च ।
गन्धपुष्पे धूपदीपौ नैवेद्यं वंदनं तथा ॥

चौ०–बाजहिं बाजन विविध विधाना ❀ पुरप्रमोद नहिं जाइ बखाना ॥ १ ॥
भरतआगमन सकल मनावहिं ❀ आवहिं वेगि नयनफल पावहिं ॥ २ ॥

भांति २ के बाजे बजते हैं. नगरका बड़ा आनन्द वर्णन नहीं किया जाता ॥ १ ॥ सब भरतके आनेको मनाते हैं कि जल्दी आवें (जिससे) नेत्रोंका फल मिलै ॥ २ ॥

हाट बाट बर गली अथाई ❀ कहहिं परस्पर लोग लुगाई ॥ ३ ॥
कालि लगन भलि केतिक बारा ❀ पूजहि विधि अभिलाष हमारा ॥ ४ ॥

सुन्दर हाट, बाट, गली और अथाइयोंपर लोग लुगाई आपसमें कहते हैं कि–॥ ३ ॥ कल किस समय अच्छी लग्न हैं (कि जिस समय) ब्रह्मा हमारी कामनाको पूरी करैगा ॥ ४ ॥

कनकसिंहासन सीय समेता ❀ बैठहिं राम होइ चित चेता ॥ ५ ॥
सकल कहहिं कब होइहि काली ❀ विघन मनावहिं देव कुचाली ॥ ६ ॥

जो सीतासहित रामचन्द्र सुवर्णके सिंहासनपर बैठें तौ चित्तको आनन्द हो ॥ ५ ॥ सब कहते हैं कि कल कब होगा ? और कुटिल विघ्न मनाते हैं ॥ ६ ॥

तिनहिं सोहाहिं न अवधबधावा ❀ चोरहिं चाँदनि राति न भावा ॥ ७ ॥
शारद बोलि विनय सुर करहीं ❀ बारहिं बार पाँय लै परहीं ॥ ८ ॥

उनको अयोध्याका गाना बजाना ऐसे अच्छा नहीं लगता जैसे चोरको उजेली रात अच्छी नहीं लगती है॥७॥ देवता, सरस्वतीको बुलाय वारंवार (उसके) चरणोंमें गिरते और विनती करते हैं कि॥८

दो०–विपति हमारि बिलोकि बडि, मातु करिय सोइ आज ॥ ❀
राम जाहिं वन राज तजि, होइ सकल सुरकाज ॥ १५ ॥ ❀

हे माता ! हमारे बड़े कष्टको देख आजही वह करो जिससे रामचन्द्रजी राज्यको छोड़कर वनको जाँय और देवताओंके सब काम (सिद्ध) हों ॥ १५ ॥

चौ०–सुनि सुरविनय ठाढ़ि पछितातीं ❀ भयउ सरोजविपिन हिम राती ॥ १ ॥
देखि देव पुनि कहहिं बहोरी ❀ मातु तोहिं नहिं थोरिउ खोरी ॥ २ ॥

(सरस्वती) देवताओंकी विनती सुनके खड़ी हुई और पछिताने लगी कि मैं कमलवत (जो अयोध्या है उसके) लिये हिमऋतुकी रात्रि हुई ॥ १ ॥ देवता देखके फिर कहते हैं, हे माता ! तुम्हारा कुछभी दोष नहीं है ॥ २ ॥

विस्मयहरषरहित रघुराऊ ❀ तुम जानहु रघुबीरसुभाऊ ॥ ३ ॥
जीव करमबस दुखसुखभागी ❀ जाइय अवध देवहित लागी ॥ ४ ॥

(क्योंकि) तुम रामचन्द्रजीके स्वभावको जानती हो कि रघुनाथजी शोकहर्षरहित हैं, अर्थात् उनको दुख सुख कुछ नहीं व्यापता है ॥ ३ ॥ जीव कर्मके वशसे सुखदुःखका भागी होता है. (इसलिये तुम) देवताओंके भलेको अयोध्यापुरीको जाओ ॥ ४ ॥

बार बार गहि चरन सकोची ❀ चली विचारि विबुधमति पोची ॥ ५ ॥
ऊँच निवास नीच करतूती ❀ देखि न सकंहिं पराइ विभूती ॥ ६ ॥

और वारंवार चरण पकड़ कर (सरस्वतीको) संकोचके वश करदिया तब तौ सरस्वती ऐसा विचार कर चली कि देवताओंकी बड़ी नीच बुद्धि है ॥ ५ ॥ (इनका) निवास तो ऊँचा और काम नीचे हैं ! पराई बढ़तीको नहीं देख सकते ! ॥ ६ ॥

---

(१) आज कहनेका यह आशय है कि कल तुम्हारा किया कुछ न होगा.

आगिल काज बिचारि बहोरी ❀ करिहैं चाह कुशल कवि मोरी ॥ ७ ॥
हरषि हृदय दशरथपुर आई ❀ जनु ग्रहदशा दुसह दुखदाई ॥ ८ ॥

फिर आगेका काम विचार कर कि चतुर कवि मेरी चाहना करैंगे, अर्थात् रावण मरैगा और कवि उस कीर्त्तिकों गावैंगे ॥ ७ ॥ मनमें प्रसन्न हो दशरथके नगरको ऐसे आई मानों कठिन दुखदाई ग्रहदशा आती है ॥ ८ ॥

दो०-नाम मंथरा मंदमति, चेरि कैकयीकेरि ॥ ❀
अजसपिटारी ताहि करि, गई गिरा मति फेरि ॥ १६ ॥ ❀

सरस्वती आई और वह केकेयीकी मतिहीन मन्थरा नाम दासीको आपयशकी पिटारी बनाकर और उसकी मति फेरकर चली गई ॥ १६ ॥

चौ०-देखि मंथरा नगरबनावा ❀ मंगल मंजुल बाजु बधावा ॥ १ ॥
पूछेसि लोगन्ह काह उछाहू ❀ रामतिलक सुनि भा उरदाहू ॥ २ ॥

मंथराने नगरका बनाव और सुन्दर मंगलीक गाना बजाना देखा ॥१॥ और लोगोंसे पूछा कि काहेका आन्द होरहा है? फिर रामचन्द्रजीका राजतिलक सुनकर हृदयमें जलन हुई ॥ २ ॥

करै बिचार कुबुद्धि कुजाती ❀ होइ अकाज कवन बिधि राती ॥ ३ ॥
देखि लागि मधु कुटिल किराती ❀ जिमि गौं तकै लेउँ केहि भाँती ॥ ४ ॥

खोटी बुद्धि और खोटी जातिवाली (मंथरा) विचार करती है कि (आजही) रातमें किस भाँति काम बिगड़ै? ॥३॥ जैसे खोटी भीलनी (महूके छत्तेके) शहदकी गों तकती है कि इसे किस भाँतिलूं ऐसे (मंथराभी) देखने लगी ॥ ४ ॥

भरतमातु पहँ गइ बिलखानी ❀ का अनमनि हँसि हँसि कह रानी ॥ ५ ॥
उत्तर देइ न लेइ उसासू ❀ नारिचरित करि ढारति आँसू ॥ ६ ॥

और दुखी होती हुई भरतके माताके पास गई तौ रानीने हँसकर कहा कि तू क्यों उदास होरही है? ॥५॥ (मंथरा) उत्तर नहीं देती, उसास लेती है और तिरिया चरित्र करके आँसूं बहाती है ॥६॥

हँसि कह रानि गाल बड़ तोरे ❀ दीन्ह लषन सिख अस मन मोरे ॥ ७ ॥
तबहुँ न बोलि चेरि बड़ि पापिनि ❀ छाँड़ै श्वास कारि जनु साँपिनि ॥ ८ ॥

रानीने हँसके कहा कि तेरे गाल बड़े हैं अर्थात् तू बड़ी बड़बोला है इसलिये मैं जानती हूँ कि लक्ष्मणने[१] सीख दी है ॥ ७ ॥ तौभी बड़ी पापिनी दासी न बोली और काली सांपिनके समान श्वास छोड़ने लगी ॥ ८ ॥

दो०-सभय रानि कह कहसि किन, कुशल राम महिपाल ॥ ❀
भरत लषण रिपुदमन सुन, भा कुबरीउर शाल ॥ १७ ॥ ❀

तब रानीने डर कर कहा कि कहती क्यों नहीं? राजा रामचन्द्र, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, तौ कुशल हैं? (यह) सुनकर कुवरीके मनमें दुःख हुआ (और कहने लगी कि) ॥ १७ ॥

चौ०-का सोवति सुहागअभिमानी ❀ निकट महाभय तुम न डरानी ॥ १ ॥
कत सिख देइ हमहिं कोउ माई ❀ गाल करव केहिकर बल पाई ॥ २ ॥

सुहागके अभिमानमें क्या पड़ी सोती हो, तुम्हारे पास बड़ा भय है और तुम नहीं डरतीं ॥१॥ हे महारानी! हमैं कोई क्या सीख देगा और हम किसका बल पाकर मुँहजोरी करैंगी ॥ २ ॥

---

(१) लक्ष्मणके नाम लेनेसे यह स्पष्ट हुआ कि लक्ष्मणजीही क्रोधी थे, और सब भाई शांत थे ॥

रामहिं छाँड कुशल केहि आजू ❀ जाहि नरेस देत जुवराजू ॥ ३ ॥
भा कौसल्यहिं विधि अतिदाहिन ❀ देखत गर्व रहत उर नाहिन ॥ ४ ॥

रामको छोड़ आज किसकी कुशल है जिसे राजा राजतिलक देते हैं ॥ ३ ॥ कौशल्याको विधाता अधिक दाहिना हुआ कि देखकर हृदयमें घमंड नहीं समाता ॥ ४ ॥

देखहु कस न जाइ सब सोभा ❀ जो अवलोकि मोर मन छोभा ॥ ५ ॥
पूत विदेस न सोच तुम्हारे ❀ जानति हौ बस नाह हमारे ॥ ६ ॥

जाकर सब शोभाको क्यों नहीं देखतीहो कि जिसे देख मेरे मनमें दुःख होता है॥५॥ (तुम्हारा) पुत्र परदेशमें है तुमको (कुछभी) फिक्र नहीं है; जानतीहो कि राजा हमारे वशमें हैं ॥ ६ ॥

नींद बहुत प्रियसेज तुराई ❀ लखहु न भूपकपट चतुराई ॥ ७ ॥
सुनि प्रियबचन कुटिल मन जानी ❀ झकी रानि अब रहु अरगानी ॥ ८ ॥

तोसक तकिये सहित सेजपर नींदही बहुत प्यारी लगती है, राजाके कपट और चतुराईको नहीं जानती हो ॥७॥ (रानीने) प्यारे वचन सुन और मनमें खोटी जानकर क्रोधसे कहा अबचुप रह८

पुनि अस कबहुँ कहसि घरफोरी ❀ तौ धरि जीभ कटावौं तोरी ॥ ९ ॥

और जो घरके फूट करानेकी बात फिर कभी ऐसे कहैगी तौ पकड़के तेरी जीभ कटवा डालूंगी९

दो०-काने खोरे कूबरे, कुटिल कुचाली जानि ॥ ❀
तिय विशेष पुनि चेरि कहि, भरतमातु मुसुकानि ॥ १८ ॥ ❀

काने, लंगड़े, कुबड़े स्वभावहीसे खोटे होते हैं (और इनमेंभी) स्त्री अधिक खोटी होती है. फिर (स्त्रीयोंमेंभी तू) दासी (तेरा क्या कहना है !) ऐसा कह कर भरतकी माता मुसकुराई १८

चौ०-प्रियवादिनि सिख दीन्हेउँ तोहीं ❀ सपनेहु तोपर कोप न मोहीं ॥ १ ॥
सुदिन सुमंगलदायक सोई ❀ तोर कहा फुर जिहिं दिन होई ॥ २ ॥

हे मिठबोली ! तुझे शिक्षा दी है, मुझे स्वप्नमेंभी तेरे ऊपर क्रोध नहीं है ॥ १ ॥ सुन्दरआनन्दोंका देनेवाला अच्छा दिन वही है कि जिस दिन तेरा कहा हुआ सचा हो ॥ २ ॥

जेठ स्वामि सेवक लघु भाई ❀ यह दिनकरकुलरीति सुहाई ॥ ३ ॥
रामतिलक जो साँचेहु काली ❀ माँगु देउँ मनभावत आली ॥ ४ ॥

सूर्यवंशकी यह सुन्दर रीति है कि बड़ा (भाई) स्वामी और छोटा भाई सेवक हो ॥ ३ ॥ हे सखी ! जो सत्यही रामचन्द्रजीका तिलक कल है तो तू मनमें आवे सो माँग, मैं दूँगी ॥ ४ ॥

कौल्यसासम तब महतारी ❀ रामहिं सहज सुभाव पियारी ॥ ५ ॥
मोपर करहिं सनेह विसेषी ❀ मैं करि प्रीति परीक्षा देषी ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीको तौ सहज स्वभावसेही कौशल्याके समान सब माता प्यारी हैं ॥ ५ ॥ फिर मेरे ऊपर बहुतही प्रीति करते हैं, मैंने स्नेहकी जाँच कर देखा है ॥ ६ ॥

जो विधि जनम देइ करि छोहू ❀ होहिं राम सिय पूत पतोहू ॥ ७ ॥
जीते अधिक राम प्रिय मोरे ❀ तिनके तिलक छोभ कस तोरे ॥ ८ ॥

जो ब्रह्मा कृपा करके जन्म दे तौ रामचन्द्र पुत्र और सीताजी बहू हों ॥ ७ ॥ मुझे रामचन्द्र प्राणोंसेभी विशेष प्यारे हैं, उनका राजतिलक होनेसे तुझे क्यों दुःख है ॥ ८ ॥

दो०-भरतशपथ तोहिं सत्य कहु, परिहरि कपट दुराव ॥ ❀
हरषसमय विस्मय करसि, कारन मोहिं सुनाव ॥ १९ ॥ ❀

तुझे भरतकी सौगंद है, छल और छिपावको छोड़कर सच्ची कह आनन्दके समयमें दुःख करती है (उसका) कारण मुझे सुना दे ॥ १९ ॥

चौ०–सुनत बचन मंथरा रिसानी ❀ बोली बचन कपटछलसानी ॥ १ ॥
एकहिबार आश सब पूजी ❀ अब कछु कहब जीभ करि दूजी ॥ २ ॥

वचन सुनतेही मंथरा क्रोधित हो कपट और छलके सनेहुये वचन बोली ॥१॥ एकहीवारसबआश पूरी होगई (अर्थात् तुमने कहा कि जीभ कटवा डालूंगी) अब दूसरी जीभ बनालूँ तब कुछ कहूँगी २

फोरैजोग कपार अभागा ❀ भलौ कहत दुख रौरेहुलागा ॥ ३ ॥
कहइ झूठ फुर बात बनाई ❀ ते प्रिय तुमहिं करुइ मैं माई ॥ ४ ॥

(यह) अभागा कपाल फोड़नेकेही लायक है. जो अच्छा कहतेमेंभी तुमको दुःख लगा ॥ ३ ॥ जो झूठी बात बनाकर कहते हैं वेही तुमको प्यारे हैं; हे माई ! मैं तौ कड़वी हूं ॥ ४ ॥

हमहुँ कहब अब ठकुर सोहाती ❀ नाहित मौन रहब दिनराती ॥ ५ ॥
करि कुरूप विधि परबस कीन्हा ❀ बवा सो लुनिय लहिय जो दीन्हा ॥ ६ ॥

हमभी अब ठकुर सुहाती कहाकरैंगी नहीं तौ रातदिन चुप रहैंगी ॥ ५ ॥ विधाताने बुरा रूप बनाकर परवश किया है. जो बोया वह काटा और जो दिया वह मिला (रानीने जो कहा कि जेठ स्वामि सेवक लघु भाई,) उसका उत्तर देती है कि–॥ ६ ॥

कोउ नृप होउ हमैं का हानी ❀ चेरी छाँड़ि न होउब रानी ॥ ७ ॥
जारइ जोग सुभाव हमारा ❀ अनभल देखि न जाइ तुम्हारा ॥ ८ ॥
ताते कछुक बात अनुसारी ❀ छमव देवि बड़ि चूक हमारी ॥ ९ ॥

कोई राजा हो, हमैं क्या हानि है ? हम दासी छोड़ क्या अब रानी होसकती हैं ? अर्थात् नहीं होसकतीं ॥ ७ ॥ हमारा स्वभाव जलाने योग्य है कि तुम्हारा बुरा नहीं देखा जाता ॥ ८ ॥ इससे कुछ उचित बात कहीथी सो हमारी बड़ी भूल हुई. हे रानी ! उसे क्षमा करना ॥ ९ ॥

दो०–गूढकपट प्रियबचन सुनि, तिय अधीरबुधि रानि ॥ ❀
सुरमायाबस बैरनिहिं, सुहृद जानि पतिआनि ॥ २० ॥ ❀

स्त्रियां छिनकबुद्धिवाली हुआ करती हैं अर्थात् हालमें कुछ हालमें कुछ, और जिसमेंभी रानी सो वह कपटमें छिपे हुये प्यारे वचन सुन देवताओंकी मायाके बश होकर वैरिनको प्यारी जानकर उससे पतियागई, अर्थात् उसका भरोसा कर लिया ॥ २० ॥

चौ०–सादर पुनिपुनि पूछति ओही ❀ शबरी गान मृगी जनु मोही ॥ १ ॥
तस मतिफिरी अहै जस भावी ❀ रहसी चेरि घात भलि फावी ॥ २ ॥

(कुवरीसे) आदरसहित वारंवार पूछती है (और ऐसी होगई) मानों भीलनीके गानेसे हिरनी मोहित होजाती है ॥ १ ॥ जैसी होनहार है वैसी बुद्धि लौट गई और कुबरी अच्छा दाँव लगा यह जानकर प्रसन्न हुई ॥ २ ॥

तुम पूँछहु मैं कहत डराऊँ ❀ धरेहु मोर घरफोरी नाऊँ ॥ ३ ॥
सजी प्रतीति बहुबिधिगढ़ि छोली ❀ अवधसाढ़साती जनु बोली ॥ ४ ॥

तुम तौ पूछतीहो और मैं कहनेमें डरती हूँ (क्योंकि तुमने पहलेही) मेरा नाम घरफोरी रक्खा है ॥ ३ ॥ इस प्रकार अपनी प्रतीति कराकर (और जैसे लकड़ीको गढ़ कर और छील कर सीधी बनालेते हैं उसी प्रकार) बहुत भाँतिसे चिकनी चुपड़ी बातें गढ़कर जब उस

रानीको छीली अर्थात् सीधी करली तब ऐसे बोली मानों अयोध्यापर असाढ़साती[१] आई ॥ ४ ॥

प्रिय सियराम कहा तुम रानी ❀ रामहिं तुम प्रिय सो फुर वानी ॥ ५ ॥
रहे प्रथमदिन सो अब वीते ❀ समय पाइ रिपु होहिं पिरीते ॥ ६ ॥

हे रानी ! तुमने कहा कि सीताराम मुझे प्यारे हैं और रामको मैं प्यारी हूँ सो बात सच्ची है ॥ ५ ॥ परन्तु पहले थे सो वह दिन अब गये. अवसर पाकर प्यारे भी वैरी होजाते हैं ॥ ६ ॥

भानु कमलकुलपोषनिहारा ❀ विनुजल जारिकरै सोइ छारा ॥ ७ ॥
जर तुम्हारि चह सवति उखारी ❀ रूँधहु करि उपाइ वर वारी ॥ ८ ॥

सूर्य कमलोंके फूलका पालन करनेवाला है (परन्तु) विना जलके वहभी उसे जलाकर नाशकरदेता है ॥ ७ ॥ तुम्हारी सब सौतें जलकर तुम्हारी जड़ उखाड़ना चाहती हैं सो (तुम) उपायरूपी श्रेष्ठजलसे गोड़कर दृढ़ करो ॥ ८ ॥

दो०–तुमहिं न सोच सोहागबल, निजवस जानहु राव । ❀
मनमलीन मुँहमीठ नृप, राउर सरलसुभाव ॥ २१ ॥ ❀

तुमको सुहागके बलमें शोच नहीं है (क्योंकि) राजाको अपने वश जानती हो सो राजा मुँहके मीठे और मनके मैले हैं और तुम्हारा तौ सीधा स्वभाव है ॥ २१ ॥

चौ०–चतुर गँभीर राममहतारी ❀ वीचपाइ निजकाम सम्हारी ॥ १ ॥
पठए भरत भूप ननिऔरे ❀ राममातु मति जान बरौरे ॥ २ ॥

रामचन्द्रकी माता चतुर और बड़ी भीतरी है (इसलिये) समय पाकर (उसने) अपना काम बनाया ॥ १ ॥ (अब रानीका भीतरापन सुनो कि) राजाने भरतको (इसीकी सलाहसे) ननसार भेजदिया है सो रामचन्द्रकी माताको अच्छी अथवा अपनी मत जानो ॥ २ ॥

सेवहिं सकल सबति मोहिं नीके ❀ गर्बित भरत मातु बल पीके ॥ ३ ॥
शालतुम्हार कौशिलहि माई ❀ चतुर कपट नहिं परत लखाई ॥ ४ ॥

(वह जानती है कि) सब सौतें मेरी अच्छी भाँति सेवा करती हैं, परन्तु भरतकी माता पतिके बलसे घमंडमें है ॥३॥ हे माई ! कौसल्याको तुमसे काँटा है, परन्तु चतुरका छल दिखाई नहीं पड़ता ॥४

राजहिं तुमपर प्रीतिविशेषी ❀ सवतिसुभाव सकै नहिं देषी ॥ ५ ॥
रविप्रचंड भूपहिं अपनाई ❀ रामतिलकहित लगन धराई ॥ ६ ॥

(जो कहोकि कैकेयी तौ द्वेष नहीं करती है और कौशल्या क्यों करती है ? तहां मन्थरा कहती है कि) राजाकी तुम्हारे ऊपर वड़ी प्रीति है (इसलिये) सौतिके स्वभावसे देख नहीं सकती ॥ ५ ॥ सूर्यके समान तेजवाले राजा (दशरथ) को अपना वनाकर रामचन्द्रजीके तिलकके लिये लग्न धराई है ॥ ६ ॥

---

(१) शनैश्चर एकराशिपर ढाईवर्ष रहता है आर अपनी राशिसे जब बारहवाँ जन्मका और दूसरा होता है और बुरा फल करता है, बस उसके साढ़ेसातवर्ष बुरा रहनेकोही आसाढ़साती कहते हैं. यहाँ दोवरदानोंका मांगनाही आसाढ़साती है, क्योंकि १४ वर्षके लिये राम वनवास माँगैगी ॥ और शनिके आनेसे जो बुरे फल होते हैं वेही फल कुबरीके बुरे वचनोंसे होंगे–आसाढ़सातीके बुरे फल होते हैं सो ये हैं–

कवित्त–शासन न मानें दास स्वमहूँ न प्यारी आस खासही कुटुम्बी लोग होत रूपकालके ।
नारिहू मचावै रार जात युद्ध माँझ हार जार देत धामको पुलिंगा तनु ज्वालके ॥
अपयश लोक होत पुत्रहूको शोक होत होन पुनि मालिक अपर निज मालके ।
बुद्धि विपरीत होत मित्रहू अमित्र होत नरको जब आवैं शनि साढ़ेसात सालके ॥ १ ॥

इहि कुलउचित रामकहँ टीका ❀ सबहिं सोहाइ मोहिं सुठि नीका ॥ ७ ॥
आगिलबात समुझि डर मोही ❀ देउ दैव फिरि सो फल ओही ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजीको तिलक होना तौ इस कुलके योग्यही है और सबकों भावता है और मुझेभी बहुत अच्छा लगा ॥ ७ ॥ (परंतु) अगली बातको समझकर मुझे डर होता है, फिर ईश्वर जो फल देगा वह भोगनाही पड़ेगा ॥ ८ ॥

दो०–रचि पचि कोटिक कुटिलपन, कीन्हेसि कपटप्रबोध । ❀
कहेसि कथाशत सौतिकर, जाते बढै बिरोध ॥ २२ ॥ ❀

करोड़ों खोटेपनोंसे रचपचके कपटका ज्ञान कराया और सेकड़ों सौतौंकी कथा कही जिससे विरोध बढ़ै ॥ २२ ॥

चौ०–भावीवश प्रतीति उर आई ❀ पूछि रानि निजशपथ दिवाई ॥ १ ॥
का पूछहु तुम अबहुँ नजाना ❀ निजहित अनहित पशु पहिचाना ॥ २ ॥

होनहारके वश मनमें परतीत आगई; फिर रानीने अपनी सौगंद देकर पूछा ॥ १ ॥ (तब चेरी बोली) क्यापूछती हो तुम अबभी नहीं जानती, अपने भले बुरेको तौ पशुभी जानते हैं॥२॥

भयउ पाखदिन सजत समाजू ❀ तुम सुधिपायउ मोसन आजू ॥ ३ ॥
खाइय पहिरिय राज तुम्हारे ❀ सत्य कहौं नहिं दोष हमारे ॥ ४ ॥

समाजको सजते हुये पन्द्रहदिन होगये, तुमने आज मुझसे खबर पाई है ॥ ३ ॥ (यद्यपि सत्यहो परंतु दुसरेको बुरा लगै ऐसा कहना नहीं चाहिये लेकिन्) तुम्हारे राज्यमें खाया पहिरा है इसलिये सत्य कहती हूँ कि जिससे मुझे दोष न लगै अथवा मेरे जाने कोई खाओ कोई पहिरो तुम्हारा राज्य है. मेरा काम तौ सत्य कहदेनेका है. कहेदेती हूँ कि जिसमें हमारे शिर दोष न आवै ॥ ४॥

जो असत्य कछु कहब बनाई ❀ तौ विधि देहहि मोहिं सजाई ॥ ५ ॥
रामहिं तिलक कालि जो भयऊ ❀ तुमकहँ बिपतिबीज विधि बयऊ ॥ ६ ॥

जो कुछ झूँठ बनाके कहूँगी तौ ब्रह्मा मुझे दंड देगा ॥ ५ ॥ जो कल रामचन्द्रको तिलक हुआ तौ तुमको ब्रह्माने दुःखके बीज बोदिये ॥ ६ ॥

रेखा खैंचि कहौं बलभाखी ❀ भामिनि भइहु दूधकी माखी ॥ ७ ॥
जो सुतसहित करहु सेवकाई ❀ तौ घर रहहु न आन उपाई ॥ ८ ॥

रेखा खैंचकर प्रतिज्ञा कर कहती हूँ कि हे भामिनि! (तुम तौ) दूधकी मक्खी होगईं ॥ ७ ॥ जो पुत्रसमेत सेवा करो तौ घर रहो और कुछ उपाय नहीं (अर्थात् सेवा करनेसे घर रह सकती हो और प्रकारसे नहीं रहसकती) ॥ ८ ॥

दो०–कद्रू बिनतहिं दीन्ह दुख, तुमहिं कौसिलादेव । ❀
भरत बंदिगृह सेइहैं, रामलषनकर नेव ॥ २३ ॥ ❀

---

(१) जैसा कहा है कि "सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात्सत्यमप्रियम्" अर्थात् सत्य और प्रियहो ऐसा बोले और सत्यहो और किसीको बुरा लगै ऐसा वाक्य न कहै ॥ (२) दूधकी मक्खी कहनेका यह अभिप्राय है कि कुछ हाथभी न आया और अंगभंग होनेसे गांठका उड़नाभी गया ॥

जैसे कद्रू[1] अर्थात् सर्पोंकी माताने विनता कहिये पक्षियोंकी माताको दुःख दिया था वैसेही तुमको कौशल्या (दुःख) देगी भरत जेलखानेमें रहैंगे और रामचन्द्र (राजा) के लक्ष्मण नायब होंगे ॥२३॥

चौ०–कैकयसुता सुनत कटुबानी ❀ कहि न सकै कछु सहमि सुखानी ॥ १ ॥
तनु पसेव कदलीजिमि कांपी ❀ कुबरी दशनजीह तब चांपी ॥ २ ॥

कैकेयी कठोर वाणीको सुनतेही सहमके सूख गई, कुछ कह नहीं सकती ॥ १ ॥ शरीरमें पसीना (आगया), केलेकी तरह कांपने लगी, तब चेरीने जीभको दांतोंसे दाबा ॥ २ ॥

कहिकहि कोटिक कपटकहानी ❀ धीरज धरहु प्रबोधेसि रानी ॥ ३ ॥
कीन्हेसि कठिन पढ़ाइ कुपाटू ❀ जिमि न नवै फिरि उकठि कुकाटू ॥ ४ ॥

और करोड़ों कपटकी कथा कह २ कर रानीको समझाया कि धीरज धरो ॥ ३ ॥ बुरा पाठ पढ़ाकर कठिन करदी (जिससे फिर न बदलने पावे) जैसे सूखा काठ फिर नहीं नवता ॥ ४ ॥

फिरा कर्म प्रिय लागि कुचाली ❀ बकिहिं सराहति मनहुँ मराली ॥ ५ ॥
सुन मंथरा बात फुर तोरी ❀ दहनि आँखि फरकत नित मोरी ॥ ६ ॥

कर्मके लौटनेसे (यह) बुरी चालवाली (चेरीभी) प्यारी लगी और बगलीके समान उस मन्थराकी हंसनी कैसी सराहना करने लगी ॥ ५ ॥ और कहने लगी कि हे मन्थरा ! सुन तेरी बात सच है मेरी दहिनी आँख नित्य फड़कती है ॥ ६ ॥

दिनप्रति देखौं राति कुसपना ❀ कहौं न तोहि मोहबस अपना ॥ ७ ॥
कहा कहौं सखि शुद्धसुभाऊ ❀ दहिन बाम जानौं नहिं काऊ ॥ ८ ॥

और नित्य रातको खोटे स्वप्न देखती हूँ. (परंतु) अपनी मूर्खताके वश तुझसे नहीं कहतीहूं ॥७॥ हे सखी ! क्या कहूँ (मेरा तौ) सीधा स्वभाव है, किसीको सीधा उलटा नहीं जानती हूँ ॥ ८ ॥

दो०–अपनेचलत न आजुलगि, अनभल काहुक कीन्ह ॥ ❀
केहि अघ एकहिबार मोहि, दैव दुसह दुख दीन्ह ॥ २४ ॥ ❀

(मैंने तौ) अपनी चलतीमें आजतक किसीका बुरा नहीं किया; न जाने दैवने किस पापसे मुझे एकही साथ कठिन दुःख दिया ॥ २४ ॥

चौ०–नैहर जनम भरब बरु जाई ❀ जिअत न करब सवतिसेवकाई ॥ १ ॥
अरिबस दैव जिआवै जाही ❀ मरन नीक तेहि जीवन चाही ॥ २ ॥

पीहरमें जाकर भलेही जन्म बिता दूँ (परंतु) जीतेजी सौतोंकी सेवा नहीं करूँगी ॥१॥ जिसको ईश्वर वैरीके वश (रखके) जिवावे उस जीनेकी इच्छा करनेवालेसे मरजानाही अच्छा है ॥२॥

---

(१) कश्यपमुनिकी दो स्त्रियां थी; सर्पोंकी माताका नाम कद्रू और पक्षियोंकी माताका नाम विनता था. एक दिन कद्रूने विनतासे सूर्यके घोड़ोंकी पूँछका रंग पूछा कि कैसा है, उसने कहा गोरा है, कद्रूने कहा काला है. इस तर्कवितर्कमें यह ठहरा कि चलकर देखो और जिसकी बात झूठी हो वह दासी बनकर रहै. कद्रूको जितानेकेलिये घोड़ोंकी पूँछमें सर्प जा लिपटे तब कद्रूने जाकर विनताको पूँछका रंग काला दिखा दिया कि जिससे विनता लज्जित हो उसकी दासी होकर रहने लगी, तब कद्रूने विनताको दुःख देना आरंभ किया. एक दिन गरुड़जीने अपनी माताको मन मलीन तनछीन देखकर उसके दुःखका कारण पूछा तब उसने सब कथा कही. तब गरुड़ दुखी होकर भगवान्के पास गये और अनेक भांति उनकी सेवा और स्तुति करने लगे. तब भगवान्ने प्रसन्न होकर कहा कि वर मांग. गरुड़ने कहा कि यह वर दीजिये कि मैं सर्पोंका भक्षण करूं और विष न चढ़ै, यह सुन भगवान्ने कहा कि "ऐसाही होय." उस दिनसे गरुड़ सर्पोंका भक्षण करने लगे. तब तौ कद्रू घबराई और विनतासे अपना अपराध क्षमा कराया और आपसमें मिलझुलकर रहने लगीं ॥

दीन बचन कह बहुबिध रानी ❀ सुनि कुवरी तियमाया ठानी ॥ ३ ॥
अस कस कहहु मानि मनऊना ❀ सुख सोहाग तुमकहँ दिन दूना ॥ ४ ॥

रानी वहुत भाँति दीनवचन कहती है (उन्हें) सुनकर चेरीने तिरियाचरित्र फैलाया॥३॥ और बोली हे रानी! मनमें छोटापन मान ऐसे क्यों कहती हो. तुमको दिन दिन दूना सुख और सुहागहै ॥४॥

जो राउर अस अनभल ताका ❀ सो पाइहि यह फल परिपाका ॥ ५ ॥
जबते कुमति सुनी मैं स्वामिनि ❀ भूँख न बासर नींद न यामिनि ॥ ६ ॥

जिसने आपका ऐसा बुरा तका है वही अंतमें इसका फल पावेगा ॥ ५ ॥ हे स्वामिनि! जबसे (यह) बुरी सलाह मैंने सुनी है, (तभीसे) दिनमें भूख और रातको नींद नहीं लगती ॥ ६ ॥

पूछा गुणिन्ह रेख तिन खांची ❀ भरत भुआल होंय यह सांची ॥ ७ ॥
भामिनि करहु तो कहौं उपाऊ ❀ हैं तुम्हरे सेवाबस राऊ ॥ ८ ॥

(मैंने) ज्योतिषियोंसे पूछा तौ उन्होंने रेखा खैंचकर कहा कि भरत राजा होंगे यह सत्य है. ॥ ७ ॥ हे भामिनि! जो करो तौ उपाय कहूँ (क्योंकि) राजा तुम्हारी सेवाके वश हैं ॥ ८ ॥

दो०-परौं कूप तव वचन लगि, सकौं पूत पति त्यागि ॥ ❀
कहुसि मोर दुख दुखि बड, कस न करब हित लागि ॥ २५ ॥❀

(रानीने कहा) तेरे बचनोंसे तौ मैं कुयेमें भी गिर पडूंगी और पुत्र और पतिकोभी छोड़ सक्ती हूं (क्योंकि तू) मेरा बड़ा दुःख देखकर कहती है (फिर अपने) भलेके लिये क्यों न करूंगी? ॥ २५ ॥

चौ०-कुबरी करी कुवलि कैकेई ❀ कपटछुरी उर पाहन टेई ॥ १ ॥
लखै न रानि निकट दुख कैसे ❀ चरै हरित तृन बलिपसु जैसे ॥ २ ॥

कुवरीने कैकेयीको बुरी भाँतिसे वलिप्रदान करनेकेलिये कपटरूपी छुरीको हृदयरूपी पत्थरपर पैनाया ॥ १ ॥ पर रानी पासके दुःखको कैसे नहीं देखती जैसे वलिदानका पशु हरी २ घासचरता है (और तलवारको नहीं देखता) ॥ २ ॥

सुनत बात मृदु अंत कठोरी ❀ देति मनहुँ मधु माहुर घोरी ॥ ३ ॥
कहै चेरि सुधि अहै कि नाहीं ❀ स्वामिनि कहहु कथा मोहिं पाहीं ॥ ४ ॥

वात सुननेमें तौ मीठी है परंतु अंतमें कठोर है (सो ऐसी है) मानों शहदमें विष मिलाकर देती हैं ॥ ३ ॥ चेरी कहती है, हे स्वामिनी! सुध है कि नहीं, मुझसे कथा कहो ॥ ४ ॥

दुइ वरदान भूपसन थाती ❀ माँगहु आजु जुड़ावहु छाती ॥ ५ ॥
सुतहिं राज रामहिं वनवासू ❀ देहु लेहु सब सवति हुलासू ॥ ६ ॥

[1]राजाके पास (तुम्हारे) दो वरदान धरोहर हैं उन्हें आज माँगकर छाती ठंढी करो ॥ ५ ॥ पुत्रको राज्य और रामचन्द्रको वनवास दे, सब सौतौंका आनन्द (छीन) लो ॥ ६ ॥

भूपति रामसपथ जब करई ❀ तब माँगहु जेहि बचन न टरई ॥ ७ ॥
होइ अकाज आज निसिबीते ❀ वचन मोर प्रिय मानहु जीते ॥ ८ ॥

---

(१) एकवार युद्धमें दैत्योंसे इन्द्र हारगया, तव उसने अपनी सहायताके लिये राजा दशरथको वुलाया। राजा कैकेयीके साथ वहां गये परन्तु युद्ध होनेलगा तव रथकी धुरी टूटगई। कैकेयीने उसे शीघ्र रोक अपने हाथके सहारेसे उस रथको ज्योंका त्यों खडा रक्खा। जव राजा विजयकर रथसे उतरे और यह देखा तव प्रसन्न हो रानीसे कहा कि तेरी सहायतासे जय हुई है, तूं दो वर मांग। कैकेयीने कहा मेरे ये दो वर आपपर उधार रहे, जब चाहूंगी तव माँगलूँगी ॥

जब राजा रामचन्द्रकी सौगंद खाँय तब माँगो जिससे बचन (खाली) न जाय ॥ ७ ॥ नहीं तौ आज रात बीतनेपर काम बिगड़ जायगा और मेरे वचनकों प्राणोंसे भी प्यारा जानो ॥ ८ ॥

दो०-बडकुघात करि पातकिनि, कहेसि कोपगृह जाहु ॥ ❀
काज सँवारहु सजग सब, सहसा जनि पतिआहु ॥ २६ ॥ ❀

पापिनीने बड़ा बुरा दाँव लगाकर कहा कि कोपभवनमें जाकर सावधानीसे सब काम सम्हालों. उतावलीसे (राजाका) विश्वास मत करलेना ॥ २६ ॥

चौ०-कुबरिहि रानि प्रानप्रिय जानी ❀ बारबार बड़ि बुद्धि बखानी ॥ १ ॥
तोहिंसम हित न मोहिं संसारा ❀ बहे जातकर भइसि अधारा ॥ २ ॥

रानीने चेरीको प्राणोंसे भी प्यारी समझ वारंवार (उसकी) बुद्धिकी बड़ी सराहना की कि ॥ १ ॥ तेरे समान मेरा भला करनेवाली संसारमें कोई नहीं है (नदीमें) बहकर जानेवाली मुझको (तू) सहारा हुई ॥ २ ॥

जो बिधि पुरव मनोरथ काली ❀ करौं तोहिं चखुपूतरि आली ॥ ३ ॥
बहुविधि चेरिहिं आदर देई ❀ कोपभवन गवनी कैकेई ॥ ४ ॥

हे सखी ! जो ब्रह्मा कल इच्छा पूरी करै तौ तुझे आँखोंकी पुतली करूंगी ॥ ३ ॥ कैकेयी चेरीको बहुत भाँति आदर देकर कोपभवनको चली ॥ ४ ॥

बिपतिबीज बरषाऋतु चेरी ❀ भुइँभइ कुमति कैकयीकेरी ॥ ५ ॥
पाइ कपटजल अंकुर जामा ❀ बरदोउ दल फल दुखपरिणामा ॥ ६ ॥

बिपत्ति मानों बीज है, चेरी वर्षाऋतु है और कैकेयीकी कुमति मानों पृथ्वी हुई ॥५॥ और कपटरूपी जल पाकर पौधा जमगया (जिसमें) दोनों वरदान पत्ते, और अंतका दुःख फल है ॥ ६ ॥

कोपसमाज साजि सजि सोई ❀ राजकरत तेहि कुमति बिगोई ॥ ७ ॥
राउरनगर कोलाहल होई ❀ यह कुचालि कछु जान न कोई ॥ ८ ॥

कोपका साज सजाकर सोगई. राज्य करते हुये उसकी कुमतिने उसका नाश किया ॥ ७ ॥ राजाके नगरमें कोलाहल (शब्द) होता है पर इस बुरी चालको कोई कुछ नहीं जानता ॥ ८ ॥

दो०-प्रमुदित पुरनरनारि सब, साजि सुमंगलचार ॥ ❀
इक प्रविसहिं इक निर्गमहिं, भीर भूपदरबार ॥ २७ ॥ ❀

नगरके सब स्त्री पुरुष बड़े आनन्दसे सुन्दर मंगलाचार सजाकर राजाके (महलोंमें) कोई जाते हैं, कोई निकलते हैं, (इससे) राजदरबारमें भीड़ होरही है ॥ २७ ॥

चौ०-बाल सखा सुनि हिय हरषाहीं ❀ मिलि दसपाँच रामपहँ जाहीं ॥ १ ॥
प्रभु आदरहिं प्रेम पहिचानी ❀ पूछहिं कुशल छेम मृदुबानी ॥ २ ॥

बालपनके मित्र सुनकर मनमें प्रसन्न होते हुये दश पांच मिलकर रामचन्द्रजीके पास जातेहैं ॥१॥ रामचन्द्रजी उनका प्रेम पहिचानकर आदर करते हैं और मीठी वाणीसे क्षेम कुशल पूछते हैं ॥ २ ॥

फिरहिं भवन प्रभु आयसु पाई ❀ करत परस्पर रामबड़ाई ॥ ३ ॥
को रघुवीरसरिस संसारा ❀ शीलसनेहनिवाहनहारा ॥ ४ ॥

वे रामचन्द्रजीकी आज्ञा पाय (अपने २) स्थानोंको लौटते हैं और आपसमें रामचन्द्रजीकी बड़ाई करते हैं कि ॥३॥ संसारमें रामचन्द्रजीके समान शील और सनेहका निबानेवाला कौन है ! ॥ ४ ॥

जेहि जेहि जोनि करमबस भ्रमहीं ❀ तहँ तहँ ईश देहि यह हमहीं ॥ ५ ॥
हम सेवक स्वामी सियनाहू ❀ होउ नात यह ओर निबाहू ॥ ६ ॥

(हम) कर्मके आधीन जिस २ योनिमें घूमें, वहां २ ही ईश्वर हमको यह देवे कि-॥ ५ ॥ हम सेवक और सीतापाति रामचन्द्रजी स्वामी हों और इसी नातेका अंततक निवाह होजाय ॥६॥

अस अभिलाष हृदय सबकाहू ❀ केकयसुता हृदय अतिदाहू ॥ ७ ॥
को न कुसंगति पाइ नसाई ❀ रहै न नीचमते चतुराई ॥ ८ ॥

सब किसीके मनमें ऐसी इच्छा है (परंतु) कैकेयीके हृदयमें बड़ी जलन है ॥ ७ ॥ बुरे साथको पाकर कौन नहीं नाश होता ? जैसे बुरी मतिसे चतुराई नहीं रहती ॥ ८ ॥

दो०-साँझसमय सानंद नृप, गए कैकयीगेह ॥ ❀
गवन निठुरता निकट किय, जनु धरिदेह सनेह ॥ २८ ॥ ❀

राजा (दशरथ) साँझके समय आनन्दसहित कैकेयीके घर ऐसे गये मानों सनेहने शरीर धारण कर कठोरताके पास गमन किया ॥ २८ ॥

चौ०-कोपभवन सुनि सकुचे राऊ ❀ भय बस आगे परैं न पाऊ ॥ १ ॥
सुरपति वसहि बाहुबल जाके ❀ नरपति रहहिं सकल रुख ताके ॥ २ ॥

राजा कैकेयीको कोपभवनमें सुनकर सकुचे और डरके मारे उनके पैर आगेको नहींपड़ने लगे ॥ १ ॥ इन्द्रभी जिसकी भुजाओंके बलसे बसता है और संपूर्ण राजा (जिसका) रुख तके रहतेहैं २

सो सुनि तियरिस गए सुखाई ❀ देखहु काम प्रताप बड़ाई ॥ ३ ॥
सूल कुलिस असि अगँव निहारे ❀ ते रतिनाथ सुमनसर मारे ॥ ४ ॥

सो (दशरथ) स्त्री का क्रोध सुनकर सूख गये. देखो कामदेवके प्रतापकी बड़ाई ! ॥ ३ ॥ जो त्रिशूल वज्र और तलवारको अंगपर नहीं आने देते हैं उनको कामदेवने फूलोंके बाणोंसे मारा॥४॥

सभय नरेश प्रियापहँ गयऊ ❀ देखि दशा दुख दारुन भयऊ ॥ ५ ॥
भूमिशयन पटमोट पुराना ❀ दियेडारि तनुभूषन नाना ॥ ६ ॥

राजा (दशरथ) डरते हुये प्यारी रानीके पास गये (और उसकी) दशाको देख कठिन दुःख हुआ ॥ ५ ॥ पृथ्वीमें सोई है मोटे और पुराने कपड़े (पहने है), शरीरसे बहुतसे गहने (उतारकर) फेंक दिये हैं ॥ ६ ॥

कुमतिहि कस कुरूपता फावी ❀ अनअहिवात सूच जनु भावी ॥ ७ ॥
जाइ निकटनृप कह मृदु बानी ❀ प्राणप्रिया केहिहेतु रिसानी ॥ ८ ॥

खोटी बुद्धिवाली (कैकेयी) को बुरा वेष कैसै फाबा, मानो होनहारने विधवापनको प्रगट कर दिखाया ॥ ७ ॥ राजाने पास जाके कहा हे प्राणप्यारी ! किसलिये रिसहो रही हो ॥ ८ ॥

छं०-केहिहेतु रानि रिसानि परसतपानि पतिहिं निवारई ॥ ❀
मानहुँ सरोषभुजंगभामिनि विषम भाँति निहारई ॥ ❀
द्वौ वासना रसना दसन वर मरम ठाहरु देखई ॥ ❀
तुलसी नृपति भवितव्यताबस कौतुक काम लेखई ॥ १ ॥ ❀

हे रानी ! किस कारण रिस हुई (ऐसे कह राजाने हाथ रक्खा तौ) हाथसे छूतेही पतिको ऐसे मने करती है मानों क्रोधसहित सर्पिणी टेढ़ी भाँति देखती है. दोनों (वरदानोंकी) इच्छा

जीभ, और वरदान दाँत हैं. (उनसे काटनेको) प्राणोंकी जगह देखती है. तुलसीदास कहते हैं कि राजा (दशरथ) होनहारके वश कामदेवका तमासा देखते हैं ॥ १ ॥

सो०–वारवार कह राउ, सुमुखि सुलोचनि पिकवयनि ॥ ❀
कारन मोहिं सुनाउ, गजगामिनि निजकोपकर ॥ १ ॥ ❀

राजा वारंवार कहते हैं कि हे सुन्दरमुखी ! हे सुन्दरनेत्रवाली ! हे गजगामिनी ! हे पिकवयनी ! अपने क्रोधका कारण मुझे तौ सुनाओ ॥ १ ॥

चौ०–अनहित तोर प्रिया केहि कीन्हा ❀ केहि दुइशिर केहि यम चह लीन्हा ॥ १ ॥
कहु केहि रंकहिं करौं नरेशू ❀ कहु केहि नृपहिं निकारौं देशू ॥ २ ॥

हे प्यारी ? तेरा किसने निरादर किया है, किसके दो शिर हैं और किसको यमराज लिया चाहता है? ॥ १ ॥ कहो किस कंगालको राजा करदूं ? कहो किस राजाको देशसे निकाल दूं ॥ २॥

सकौं तोर अरि अमरहु मारी ❀ कहा कीट बपुरे नरनारी ॥ ३ ॥
जानसि मोर सुभाउ वरोरू ❀ मन तव आननचंद्रचकोरू ॥ ४ ॥

तेरे वैरी देवताओंकोभी मारसकता हूँ, बिचारे स्त्री पुरुष तौ क्या कीड़े हैं ॥ ३ ॥ हे सुन्दर जंघाओंवाली ! तू मेरे स्वभावको जानती है कि तेरे मुखरूपी चन्द्रमाको मेरा मन चकोररूप है अर्थात् जैसे चकोर चन्द्रमाको चाहता है वैसेही मेरा मन तेरे मुखको चाहता है ॥ ४ ॥

प्रिया प्राण सुत सर्वस मोरे ❀ परिजन प्रजा सकल वस तोरे ॥ ५ ॥
जो कछु कहौं कपटकरि तोहीं ❀ भामिनि रामसपथ सत मोही ॥ ६ ॥

हे प्यारी ! मेरे प्राण, पुत्र, सर्वस्व, कुटुम्बी और प्रजाके लोग सब तेरे वशमें हैं ॥५॥ हे रानी ! जो मैं तुझसे कुछ कपट कर कहता हूँ, तौ मुझे रामचन्द्रकी १०० वार सौगंद है ॥ ६ ॥

बिहँसि माँगु मनभावतिबाता ❀ भूषन साजु मनोहरगाता ॥ ७ ॥
घरी कुघरी समुझि जिय देखू ❀ बेगि प्रिया परिहरहु कुवेषू ॥ ८ ॥

जो मनमें भावे उसी वातको हँसकर माँग, और मनको हरनेवाले शरीरमें गहने सजा ॥७॥ हे प्यारी ! समयकुसमयको तौ मनमें समझ देख और बुरे वेषको जल्दी त्याग दे ॥ ८ ॥

दो०–यह सुनि मन गुनि सपथबड़ि, बिहँसि उठी मतिमंद ॥ ❀
भुषन सजति विलोकि मृग, मनहुँ किरातिनिफंद ॥ २९ ॥ ❀

यह सुनके मतिमन्द (कैकेयी) मनमें बड़ी सौगंद विचार हँसके उठी और गहने ऐसे सजाने लगी मानों भीलनी हिरणको देखकर फन्द सम्हालती है ॥ २९ ॥

चौ०–पुनि कह राउ सुहृद जिय जानी ❀ प्रेमपुलकि मृदु मंजुल बानी ॥ १ ॥
भामिनि भयउ तोर मनभावा ❀ घरघर नगर अनंदबधावा ॥ २ ॥

फिर राजाने मनमें प्यारी जान स्नेहमें पुलकायमान हो कोमल मीठी वाणी कही कि-॥ १ ॥ हे भामिनी ! तेरा मन भाया हुआ कि नगरमें घर २ आनन्दके बधाये होते हैं ॥ २ ॥

रामहिं देउँ कालि जुवराजू ❀ सजहु सुलोचनि मंगलसाजू ॥ ३ ॥
दलकि उठी सुनि बचन कठोरा ❀ जनु छुइगयउ पाकबरतोरा ॥ ४ ॥

हे सुन्दर नेत्रवाली ! कल रामचन्द्रको राजतिलक दूँगा (सो तुम) आनन्दके साज सजाओ॥३॥ कठोर वचन सुनतेही ऐसे चौंक उठी मानों कोई पके हुये बालतोड़को छूगया ॥ ४ ॥

ऐसी पीर बिहँसि उर गोई ❀ चोरनारि जिमि प्रगट न रोई ॥ ५ ॥
लखी न भूप कपटचतुराई ❀ कोटि कुटिल गुन गुरू पढ़ाई ॥ ६ ॥

(और उसने) हँसकर पीरको मनमें ऐसे छुपाया जैसे चोरकी स्त्री सबके सामने नहींरोतीं॥५॥ राजाने कपटकी चतुराई नहीं पहिचानी (क्योंकि) करोड़ों खोटे गुणोंवाले गुरुने पढ़ाई थी ॥ ६ ॥

यद्यपि नीतिनिपुन नरनाहू ❀ नारिचरित जलनिधि अवगाहू ॥ ७ ॥
कपटसनेह बढ़ाइ बहोरी ❀ बोली बिहँसि नयनमुख मोरी ॥ ८ ॥

यद्यपि राजा नीतिमें चतुर हैं, (परंतु) तिरियाचरित्रभी तौ गहरा समुद्र है ॥ ७ ॥ फिर छलसे प्रीति बढ़ाकर नेत्र और मुंह मोड़ हँसकर बोली ॥ ८ ॥

दो०-माँगु माँगु तुम कहहु पिय, कबहुँ न देहु न लेहु ॥ ❀
देन कहे बरदान दुइ, सोउ पावत संदेहु ॥ ३० ॥ ❀

हे स्वामी ! आप माँगमाँग तौ कहते हो (परंतु) न कभी देते हो, न लेते हो. पहले दो वर दान देने कहे थे उनकेभी मिलनेमें तौ सन्देह है ॥ ३० ॥

चौ०-जानेउ मरम राउ हँसि कहई ❀ तुमहिं कोहाव परमप्रिय अहई ॥ १ ॥
थातीं राखि न माँगेउ काऊ ❀ बिसरिगए मम भोर सुभाऊ ॥ २ ॥

राजाने भेद जाना और हँसके कहने लगे कि तुमको तौ रूठना बड़ा प्यारा है ॥ १ ॥ (तुमने वे दोनों वरदान) धरोहर रखकर कभी नहीं माँगे और मोरा स्वभाव होनेके कारण मुझे भी याद न रही ॥ २ ॥

झूठहु दोष हमहिं जनि देहू ❀ दुइके चारि माँगि किन लेहू ॥ ३ ॥
रघुकुलरीति सदा चलिआई ❀ प्रान जाइ बरु बचन न जाई ॥ ४ ॥

हमको झूठा दोष मत दो. दोके (बदले) चार क्यों नहीं माँगलेतीं? ॥३॥ रघुकुलकी सदासे रीति चली आई है कि प्राण भलेही चले जाँय (परंतु) बचन नहीं जाता है ॥ ४ ॥

नहिं असत्यसम पातकपूंजा ❀ गिरिसम होहिं कि कोटिकगुंजा ॥ ५ ॥
सत्य मूल सब सुकृत सुहाए ❀ बेदपुरानबिदित मुनि गाए ॥ ६ ॥

झूठके बराबर पापके समूहभी नहीं होते. जैसे करोड़ों चिरमिटी (कहीं) पहाड़केबराबरहोसक्ती हैं अर्थात नहीं हो सकतीं (यहां पापचिरमिटीके समान और झूंठ पहाड़के समान है) ॥५॥ सब सुन्दर अच्छे कामोंकी जड़ सत्यही है (यह) वेदपुराणोंमें प्रगट है और मुनीश्वरोंने भी यही गाया है ॥ ६ ॥

तेहिपर रामसपथ करिआई ❀ सुकृत सनेह अवधि रघुराई ॥ ७ ॥
बात दृढ़ाइ कुमति हँसिबोली ❀ कुमतिबिहंग कुलह जनु खोली ॥ ८ ॥

तिस परभी सत्य और प्रेमकी सीमा जो रघुनाथ हैं, उन्हीं रामचन्द्रकी सौगंद खवाई ॥ ७ ॥ इस प्रकार बातको पक्की कर खोटी बुद्धिवाली कैकेयी हँसकर ऐसे बोली मानों कुमतिरूपी पक्षी अर्थात् बाजकी टोपी खोल दी ॥ ८ ॥

दो०-भूपमनोरथ सुभगवन, सुखसुविहंग समाज ॥ ❀
भिल्लिन जनु छाँडनचहति, वचनभयंकरबाज ॥ ३१ ॥ ❀

राजाका मनोरथ सुन्दर बन है और उसमें सुख मानों पक्षियोंका झुंड है उस पर (कैकेयी) रूपी भीलनी अपने वचनरूपी भयंकर बाजको छोड़ा चाहती है ॥ ३१ ॥

चौ०–सुनहु प्राणपति भावत जीका ❀ देहु एकवर भरतहिं टीका ॥ १ ॥
दूसर वर माँगौं करजोरी ❀ नाथ मनोरथ पुरवहु मोरी ॥ २ ॥

हे प्राणनाथ ! सुनो मनको भाता हुआ एक वर तौ यह दो कि भरतको राजतिलक होय ॥ १ ॥ और हे स्वामी ! हाथ जोड़कर दूसरा वर यह माँगती हूँ सो मेरी इच्छाको पूरी कीजिये कि–॥ २ ॥

तापसवेष विशेष उदासी ❀ चौदह वरस राम बनवासी ॥ ३ ॥
सुनि तियबचन भूपउर शोकू ❀ शशिकर छुवत बिकल जिमि कोकू ॥ ४ ॥

तपस्वीका वेष धर बहुत उदासीसे रामचन्द्र चौदह वर्ष वनमें वास करैं ॥ ३ ॥ स्त्रीके वचन सुनकर राजाके हृदयमें ऐसा दुःख हुआ, जैसे चन्द्रमाकी किरणोंके छूनेसे चकवा दुखी हो ॥ ४ ॥

गएसहमि कछु कहि नहिं आवा ❀ जनु सचान वन झपटेउ लावा ॥ ५ ॥
विवरण भयउ निपट महिपालू ❀ दामिनि हनेहु मनहुँ तरुतालू ॥ ६ ॥

राजा सहमि कहिये ऐसे सूख गये कि कुछ कहते नहीं बनता. मानों बटेरके वनमें बाज झपटा ॥ ५ ॥ राजाका रंग बिलकुल ऐसा पीला पड़ गया मानो तालवृक्षको विजलीने मारा ॥ ६ ॥

माथे हाथ मूंदि दोउ लोचन ❀ तनु धरि सोच लागु जनु सोचन ॥ ७ ॥
मोर मनोरथ सुरतरु फूला ❀ फलत करिनि जनु हतेउ समूला ॥ ८ ॥
अवध उजारि कीन्ह कैकेई ❀ दीन्हेसि अचल विपति कै नेईं ॥ ९ ॥

माथेपर हाथ रख दीनों नेत्रोंको मूंदकर (ऐसे सोचने लगे) मानों सोचही शरीर धारण कर सोचता है ॥ ७ ॥ मेरा मनोरथरूपी कल्पवृक्ष फूला था उसके फलतेही मानों (कैकेयीरूपी) हथिनी-ने उसे जड़से उखाड़ डाला ! ॥८॥ कैकेयीने अयोध्या उजाड़ कर दी और विपत्तिकी पक्की नींव जमाई ॥ ९ ॥

दो०–कवने अवसर का भयउ, गयउ नारिविस्वास ॥ ❀
जोगसिद्धि फलसमय जिमि, जतिहि अविद्या नास ॥ ३२ ॥ ❀

क्या (सुखका) समय था और क्या होगया ! स्त्रीका विश्वास जाता रहा (कैकेयीने मेरा ऐसानाश कर दिया कि) जैसे योगीको योगसिद्धि होनेपर फलके समय अज्ञानता नाश कर देती है ॥ ३२ ॥

चौ०–इहिबिधि राउ मनहिं मन झाँषा❀देखि कुभाँति कुमतिमन माँषा ॥ १ ॥
भरत कि राउरपूत न होही ❀ आनेहु मोल बेसाहि कि मोहीं ॥ २ ॥

इस भाँति राजा मनही मनमें झीकने लगे तौ कुभाँति देखकर बुद्धिहीन कैकेयी मनमें क्रोधितहोकर (बोली)॥ १ ॥ क्या भरत तुम्हारा बेटा नहीं है अथवा मुझे मोल खरीदकर लाये हो ? ॥ २ ॥

जो सुनि सरसम लागु तुम्हारे ❀ काहे न बोलेउ बचन सँभारे ॥ ३ ॥
देहु उतर अस कहहु कि नाहीं ❀ सत्यसिंधु तुम रघुकुलमाहीं ॥ ४ ॥

जो (मेरे वर) सुनतेही तुम्हारे बाणकेसमान लगे. (जो ऐसा था तौ पहिलेही) बचन सम्हाल

---

(१) जिव्हापर सरस्वतीने बैठकर कैकेयीद्वारा चौदह वर्षका वनवास इस लिये मँगवाया कि जिसमें राम-चन्द्र १४ वर्षमें चतुर्दश विद्यामें निपुण हो जाँय; अथवा रावणकी मृत्युके १४ वर्ष रह गये; अथवा जब मंथराने कहा कि "भये पाखदिम सजत समाजू । तुम सुधि पायउ मोसम आजू" अर्थात् एक पखवाड़ासमाज सजते होगया तुमने मुझसे आज सुध पाई है सो एक दिन तो वह हुआ जिस दिन खबर मिली बाकी रहे १४ दिन सो खिसिया कर एक एक दिनके लिये एक एक वर्षका वनवास मांगा ॥

कर क्यों नहीं बोले ॥ ३ ॥ या तौ उत्तर दो (नहीं तौ) ऐसे कहो कि नहीं देते. (हे राजन्) तुम तौ रघुवंशमें सत्यके [1]समुद्र हो ॥ ४ ॥

देन कहेउ वर अब जनि देहू ❀ तजहु सत्य जग अपजस लेहू ॥ ५ ॥
सत्य सराहि कहेउ वर देना ❀ जानेहु लेइहि माँगि चबेना ॥ ६ ॥

प्रथम तौ वर देनेको कहा और अब नहीं देते हो तौ सत्यको छोड़ संसारमें अपयश लो ॥ ५ ॥ सत्यकी प्रशंसा कर जो वर देनेकी हाँमी भरीथी सो यह जाना होगा कि चबेना मांगलेगी ॥ ६ ॥

शिबि दधीचि बलि जो कछु भाषा ❀ तनु धन तजेउ बचनप्रन राषा ॥ ७ ॥
अति कटुबचन कहति कैकेई ❀ मानहुँ लोन जरेपर देई ॥ ८ ॥

(देखो) राजा शिबि[2] [3]दधीचि, और [4]बलिने जो कुछ कहा (उसके लिये) शरीर और धनको भलेही छोड़ा परन्तु वचनका प्रण रक्खा ॥ ७ ॥ कैकेयी ऐसे भारी कडुये बचन कहती है, मानों जलेपर नोन बुरकती है ॥ ८ ॥

दो०-धरमधुरंधर धीर धरि, नयन उघारे राउ ॥ ❀
सिरधुनि लीन्हु उसास अति, मारेसि मोहिं कुठाउँ ॥ ३३ ॥ ❀

धर्मधुरंधर राजाने धीरज धर कर नेत्र खोले और शिर धुन कर बड़ी उसास ली (कि इस पापिनीने) मुझपर बुरी जगह चोट की ॥ ३३ ॥

चौ०-आगे देखि जरति रिस भारी ❀ मनहुँ रोषतरवारि उघारी ॥ १ ॥
मूठ कुबुद्धि धार निठुराई ❀ धरि कुबरी खरसान बनाई ॥ २ ॥

(राजाने रानीको) बड़ी रिससे जलता हुआ ऐसा देखा मानों क्रोधरूपी तलवारको उघाड़े खड़ी है ॥१॥ उस तलवारकी कुबुद्धि तौ मूठ है, कठोरता धार है, और कुबरीने उसे धरकर सानपर चढ़ाईहै

लखेउ महीप कराल कठोरा ❀ सत्य कि जीवन लेइहि मोरा ॥ ३ ॥
बोले राउ कठिन करि छाती ❀ बानी बिनय न ताहि सुहाती ॥ ४ ॥

(उसे) राजाने भयंकर और कठोर देख (विचारा कि) क्या यह सचमुच मेरे प्राणोंको लेगी ॥३॥ राजा कड़ी छाती कर बोले. (परन्तु) उसे विनयकी वाणी नहीं सुहाती ॥ ४ ॥

---

(१) कहीं २ "सत्यसंध" ऐसा पाठ है, वहां सत्य प्रतिज्ञा करनेवालेहो ऐसा अर्थ जानना । (२) राजा शिविने जब ९२ यज्ञकर ९३ का आरंभ किया तब इन्द्र भयके मारे अग्निको कबूतर बनाकर जाप बाज बन उसपर झपटा २ राजाके यज्ञस्थानमें गया, राजाने कबूतरको शरणागत जान छुपा लिया और बाजको उड़ाया, तब इसने कहा कि मेरा आहार छीन क्यों अनर्थ करते हो ? राजाने कहा 'इसे छोड़, और कुछ मांग' फिर इसने कबूतरके बराबर राजाके शरीरका मांस चाहा, परन्तु जब राजाने काटकर तराजूमें चढाया और वार २ चढानेपर भी कबूतरके बराबर न हुआ तौ ज्यौंही राजा घबराकर गला काटनेपर उद्यत हुआ त्योंही विष्णुभगवानने इसे दर्शन दे अपने धामको पहुँचाया । (३) एकवार इन्द्र वृत्रासुरसे दुखी हो देवताओंको ले विष्णुके पास गये और अपना कष्ट कहा. उन्होंने कहा कि नैमिषारण्यमें दधीचिऋषि तप कर रहे हैंउन के हाड़से यह असुर मरैगा। जब इनकी आज्ञासे इन्द्रने ऋषिके पास जाकर हाड़ मांगा तब उन्होंने देकर अपना प्राण त्यागा और इन्द्रने वज्र बनाय दैत्योंका नाश किया ॥ (४) जब राजा बलि त्रिलोकीका स्वामी हुआ तब इन्द्र घबराकर विष्णुके पास गये उन्होंने धीरज दे राज्य दिलानेकी प्रतिज्ञा की. और वामनरूप धर बलिसे जाकर ३ चरण भूमि मांगी और जब राजाने इनको दान दिया तब २ चरणमें ब्रह्म लोकपर्यंत नापकर तीसरे चरण पृथ्वी मांगी तब राजाने कहा मेरी पीठ नाप लीजिये तब भगवान उससे प्रसन्न हुये और इन्द्रकी कामना पूरी करी ॥

प्रिया बचन कस कहसि कुभाँती ❀ रीति प्रतीति प्रीति करि हाँती ॥ ५ ॥
मोरे भरत राम दोउ आँखी ❀ सत्य कहौं करि शंकरसाखी ॥ ६ ॥

हे प्यारी! रीति[१] विश्वास और प्रीतिको नष्ट करके बुरी भाँतिके वचन क्यों कहती हो? ॥५॥ (जो कहो कि राजाको रामही प्यारे हैं भरतजी नहीं हैं तहाँ राजा कहते हैं कि) मेरे तौ भरत रामचन्द्र दोनों नेत्र हैं, महादेवको साखी कर सत्य कहता हूँ ॥ ६ ॥

अबसि दूत मैं पठउब प्राता ❀ ऐहैं बेगि सुनत दोउ भ्राता ॥ ७ ॥
सुदिन साधि सबसाज सजाई ❀ देहौं भरतहिं राज बजाई ॥ ८ ॥

मैं निश्चय सवेरेही दूत भेजूँगा, दोनों भाई सुनतेही शीघ्र आजायँगे ॥ ७ ॥ सुन्दर दिन विचार सब साज सजाकर बड़ी धूमधामसे भरतको राज्य दूँगा ॥ ८ ॥

दो०–लोभ न रामहिं राजकर, बहुत भरतपर प्रीति ॥ ❀
मैं बडछोट विचारकरि, करत रहेउ नृपनीति ॥ ३४ ॥ ❀

रामचन्द्रको राज्यका लोभ नहीं और भरतपर स्नेहभी बहुत है. (परंतु) मैं बड़े छोटेका विचार कर राजनीति करता था ॥ ३४ ॥

चौ०–रामशपथ शत कहउँ सुभाऊ ❀ राममातु मोहिं कहा न काऊ ॥ १ ॥
मैं सब कीन्ह तोहिं विनुपूछे ❀ तातें परेउ मनोरथ छूछे ॥ २ ॥

(जो यह संदेह करो कि रामकी माताने कुछ सिखा दिया होगा तहां कहते हैं कि) मुझे रामचन्द्रकी १०० वार सौगंद है और मैं सच्चे मनसे कहता हूँ कि रामचन्द्रकी माताने मुझसे कभी कुछ नहीं कहा ॥१॥ पर मैंने जो सब काम तुझसे विना पूछे किये इसी लिये मेरे मनोरथ निष्फल हुये॥२॥

रिस परिहरु अब मंगल साजू ❀ कछु दिन गए भरतजुवराजू ॥ ३ ॥
एकहि बात मोहिं दुख लागा ❀ वर दूसर असमंजस माँगा ॥ ४ ॥

अब क्रोधको छोड़कर मंगल सजाओ, कुछ दिन बीतनेपर भरत युवराज होंगे ॥३॥ परंतु एकही बातसे मुझे दुःख लगा जो दूसरा कठिन वर माँगा; इसके देनेमें मुझे दुवधा है! ॥ ४ ॥

अजहूँ हृदय दहत तेहि आँचा ❀ रिस परिहास कि साँचहुसाँचा ॥ ५ ॥
कहु तजि रोष रामअपराधू ❀ सब कोउ कहत राम सुठि साधू ॥ ६ ॥

और उस (कठिन वर) की अग्निसे अबभी (मेरा) हृदय जलता है. यह रिस है वा हँसी है अथवा सच्चाही मांगा है? ॥ ५ ॥ रिस छोड़कर रामचन्द्रके अपराधको कहो! सब कोई तौ कहते हैं कि रामचन्द्र बड़ेही सीधे हैं ॥ ६ ॥

तैंहु सराहसि करसि सनेहू ❀ अब सुनि मोहिं भयउ संदेहू ॥ ७ ॥
जासु सुभाव अरिहु अनुकूला ❀ सो किमि करहि मातुप्रतिकूला ॥ ८ ॥

तैनेभी बड़ाई कीथी और प्रीति रखनीथी परंतु अब सुनकर मुझे सन्देह हुआ ॥ ७ ॥ जिसके स्वभावसे वैरीभी मित्रभाव रखते हैं वह माताके विपरीत कैसे करैगा? ॥ ८ ॥

दो०–प्रिया हास रिस परिहरहु, माँग विचारि विवेक ॥ ❀
जेहि देखौं अब नयनभरि, भरतराज अभिषेक ॥ ३५ ॥ ❀

---

(१) रीति यह कि रघुकुलमें सदासे बड़े और श्रेष्ठ पुत्रको राजतिलक होता आया है, विश्वास यह कि पुरुष स्त्रीकी गोदमें सोता है; चाहे जो कुछ कर सक्ती है. प्रीति यह कि रामपर तुम्हारा सबसे अधिक प्रेम था ये तीनों बातें नष्ट भईं ॥

हे प्यारी ! हँसी और क्रोधको छोड़ ज्ञानसे विचार कर माँगो. जिससे अब भरतके राज्याभिषेकको नेत्र भर कर देखूं ॥ ३५ ॥

चौ०–जियै मीन बरु बारि विहीना ❀ मनिबिनु फनिक जियै दुखदीना ॥ १ ॥
कहौं सुभाव न छल मनमाहीं ❀ जीवन मोर राम बिनु नाहीं ॥ २ ॥

जलके विना मछली भलेही जीती रहै और विना मणिके दुखी और दीन होकर सर्प भलेही जिये ॥ १ ॥ पर मैं सच्चे भावसे कहता हूँ, कुछ मनमें कपट नहीं है, कि मेरा जीना रामके विना नहीं हो सकता ॥ २ ॥

समुझिदेखु तैं प्रिया प्रवीना ❀ जीवन रामदरसआधीना ॥ ३ ॥
सुनि मृदुबचन कुमति अतिजरई ❀ मनहुँ अनल आहुतिघृत परई ॥ ४ ॥

हे प्यारी ! तू चतुर है मनमें समझ देख कि (मेरा) जीवन रामचन्द्रके दर्शनोंके आधीन है ॥ ३ ॥ इन मीठे वचनोंको सुनकर कुमति (कैकेयी) ऐसी अधिक जलती है मानों अग्निमें घीकी आहुती पड़ती है ॥ ४ ॥

कहहु करहु किन कोटिउपाया ❀ इहाँ न लागिहि राउरमाया ॥ ५ ॥
देहु कि लेहु अजस कर नाहीं ❀ मोहिं न बहुत प्रपंच सोहाहीं ॥ ६ ॥

(अब कैकेयी कहती है कि) करोड़ों उपाय क्यों न करो, और कहो, यहां आपकी माया नहीं चलेगी ॥ ५ ॥ यातों दो नहीं तो नाहीं कर अपयश लो; मुझे बहुत प्रपंच नहीं सुहाता ॥ ६ ॥

राम साधु तुम साधु सुजाना ❀ राममातु भलि सब पहिचाना ॥ ७ ॥
जसकौसला मोरभल ताका ❀ तस फल देउँ उन्हैं करि साका ॥ ८ ॥

राम सीधे हैं और तुमभी चतुर और सीधे हो, और रामकी माताभी सीधी है यह सब मैंने अच्छीतरह जान लिया ॥७॥ और कौशल्याने जैसा मेरा भला चीता है वैसाही साखा कर उन्हें फल दूँगी ॥ ८ ॥

दो०–होत प्रात मुनिवेष धरि, जो न राम वन जाहिं ॥ ❀
मोरमरन राउर अजस, नृप समझिय मनमाहिं ॥ ३६ ॥ ❀

हे राजन् ! जो प्रातःकाल होतेही मुनिका वेष धर रामचन्द्रजी वनको न जायँगे तो मेरा मरना और अपना अपयश मनमें समझलेना ॥ ३६ ॥

चौ०–अस कहि कुटिल भई उठि ठाढी ❀ मानहुँ रोषतरंगिनि बाढी ॥ १ ॥
पापपहार प्रगट भइ सोई ❀ भरी क्रोधजल जाइ न जोई ॥ २ ॥

ऐसे कह कर कुटिल (कैकेयी) उठकर ऐसे खड़ी हुई मानों क्रोधकी नदी बढ़ी ॥१॥ और वह पापरूपी पहाड़से उत्पन्न हुई ऐसे क्रोधरूपी जलसे भरी है कि देखी नहीं जाती ॥ २ ॥

दोउ बर कूल कठिन हठ धारा ❀ भँवर कूबरीवचनप्रचारा ॥ ३ ॥
ढाहति भूपरूपतरुमूला ❀ चली बिपतिबारिधि अनुकूला ॥ ४ ॥

दोनों वरदान दोनों किनारे हैं और कठिन हठ धार है; कुबरीके वचनोंका प्रचार कहिये मनमें वारंवार याद आना है वही भँवर हैं ॥ ३ ॥ (अब नदीके किनारेपर वृक्ष चाहियें सो कहते हैं कि) राजाही मानों वृक्ष है, उनको जड़से उखाडती हुई (वह क्रोधरूपी नदी) विपत्तिरूपी समुद्रकी ओर चली ॥ ४ ॥

लखी नरेश बात सब साँची ❀ तियमिस मीचु शीसपर नाँची ॥ ५ ॥
गहि कर विनय कीन्ह बैठारी ❀ जनि दिनकरकुल होसि कुठारी ॥ ६ ॥

राजाने सब बात सच्ची देखी (और सोचाकि) स्त्रीके वहानेसे मृत्यु (मेरे) मस्तकपर नाचती है ॥ ५ ॥ (राजाने) हाथ पकड़ कर और विनती करके बिठाई (और कहा कि) सूर्यवंशके (काटनेके) लिये कुल्हाड़ी मत हो ॥ ६ ॥

माँगु माथ अबहीं देउँ तोहीं ❀ रामबिरह जनि मारसि मोहीं ॥ ७ ॥
राखु रामकहँ जेहितेहि भाँती ❀ नाहित जरिहि जनमभरि छाती ॥ ८ ॥

तू (मेरा) मस्तक माँग, मैं तुझे अभी दे सकता हूँ. परंतु रामचन्द्रके वियोगमें मुझे मत मारौ ॥ ७ ॥ जिस भाँति होसकै उसी भाँति रामचन्द्रको रख नहीं तौ जन्मभर छाती जलेगी ॥ ८ ॥

दो०-देखी व्याधि असाध्य नृप, परेउ धरनि धुनि माथ ॥ ❀
कहत परमआरत बचन, रामराम रघुनाथ ॥ ३७ ॥ ❀

जब राजाने बीमारीको उपायरहित देखा तौ माथाकूटकर पृथ्वीपर गिर पड़े और बहुत दीन वचन कहने लगे, हे राम ! हे राम ! हा रघुनाथ !!! ॥ ३७ ॥

चौ०-व्याकुल राउ सिथिलसबगाता ❀ करिनि कलपतरु मनहुँ निपाता ॥ १ ॥
कंठ सूख मुख आव न बानी ❀ जिमि पाठीन दीन बिनुपानी ॥ २ ॥

राजा व्याकुल होगये और सब शरीर ऐसे शिथिल पड़ गये मानों हथिनीने कल्पवृक्षको जड़से उखाड़गेरा ॥ १ ॥ कंठ सूख गया, मुखसे वचन नहीं निकलता और (ऐसे होगये) जैसे बिना पानीके मछली दुखी हो ॥ २ ॥

पुनि कह कटु कठोर कैकेई ❀ मनहु घावमहँ माहुर देई ॥ ३ ॥
जो अंतहु अस करतब रहेऊ ❀ माँगु माँगु तुम किहिबल कहेऊ ॥ ४ ॥

फिर कैकेयी ये कठोर और कडुये (वचन) कहने लगी मानों घावमें विष लगाती है कि ॥ ३ ॥ जो अन्तमें ऐसाही करतब करना था तौ माँग २ किस विरते पर कहते थे ? ॥ ४ ॥

दुइ कि होइँ इकसमय भुआलु ❀ हँसब ठठाइ फुलाउब गालू ॥ ५ ॥
दानि कहाउब अरु कृपणाई ❀ चाहिय क्षेमकुशल रौताई ॥ ६ ॥

हे राजा ! खिलखिली मारकर हँसना और गालोंका फुलाना दोनों बातें एकही समयमें कैसे हो सक्ती हैं ? ॥ ५ ॥ दानी कहाया चाहते हो और सूमपनाभी करते हो, और शूरवीर होकर क्षेम कुशलभी चाहते हो (भला यह कहीं होसक्ता है) ॥ ६ ॥

छाँडहु बचन कि धीरज धरहू ❀ जनि अबलाइव करुणा करहू ॥ ७ ॥
तनु तिय तनय धाम धन धरनी ❀ सत्यसंधकहुँ तृनसम बरनी ॥ ८ ॥

यातौ बचन छोड़ो या (जो सत्य पालनाहै तौ) धीरज धरो. स्त्रीकी भाँति विलाप मत करो ॥ ७ ॥ सत्य प्रतिज्ञा करनेवालेको शरीर, स्त्री, पुत्र, स्थान, धन, और पृथ्वी ये तृणसमान कहे हैं ॥ ८ ॥

दो०-मर्मबचन सुनि राउ कह, कछुक दोष नहिं तोर ॥ ❀
लागेउ मोह पिशाच जिमि, काल कहावस मोर ॥ ३८ ॥ ❀

ऐसे हृदयको लगानेवाले वचन सुन राजाने कहा तेरा कुछभी दोष नहीं, तुझे तौ मानों अज्ञानरूपी पिशाच लगा है और मेरा मरणकाल (तुझसे यह) कहलाता है ॥ ३८ ॥

चौ०-चहत न भरत भूपपद भोरे ❀ विधिवश कुमति बसी उर तोरे ॥ १ ॥
सो सब मोर पापपरिणामू ❀ भयउ कुठाहर जिहि बिधि बामू ॥ २ ॥

भरत राज्यपदको झूठेभी नहीं चाहते. परन्तु होनहारके वश तेरे हृदयमें यह कुमति बसी है ॥ १ ॥ सो सब मेरे पापका फल है, जिससे कुसमयमें विधाता टेढ़ा हुआ ॥ २ ॥

सुवस बसिहि फिरि अवध सुहाई ❀ सबगुणधाम राम प्रभुताई ॥ ३ ॥
करिहहिं भाइ सकल सेवकाई ❀ होइहै तिहुँपुर रामबडाई ॥ ४ ॥

सुन्दर अयोध्यापुरीभी फिर अच्छे प्रकार बसैगी और सब गुणोंके स्थान रामचन्द्रकी प्रभुताभी होगी ॥ ३ ॥ सब भाई सेवाभी करैंगे, तीनों लोकोंमें रामचन्द्रकी बड़ाईभी होगी ॥ ४ ॥

तोर कलंक मोर पछिताऊ ❀ मुयहु न मिटिहि न जाइहि काऊ ॥ ५ ॥
अब तोहिं नीकलागु करु सोई ❀ लोचनओट बैठ मुख गोई ॥ ६ ॥

(परन्तु) तेरा कलंक और मेरा पछितावा मरनेपरभी न मिटैगा, न कभी जायगा ॥ ५ ॥ अब जो तुझे अच्छा लगै वही कर और मुख छिपाकर आंखोंकी ओटमें जा बैठ ॥ ६ ॥

जौलौं जियौं कहौं करजोरी ❀ तौलौं जनि कछु कहसि बहोरी ॥ ७ ॥
फिरि पछितैअसि अंत अभागी ❀ मारेसि गाय नाहरू लागी ॥ ८ ॥

हाथ जोड़कर कहताहूँ, जबतक जीता रहूँ तबतक फिर कुछ मत कहियो ॥ ७ ॥ हे अभागी ! फिर पीछे ऐसे पछितायगी जैसे कोई सिंहके लिये गायको मारै अथवा जैसे नाहरू कहिये तांतके लिये गायको मारे अथवा जैसे कोई बाजके लिये गायको मारता हों (सो बाज गोमांस नहीं खाता. आशय यह निकला कि तू जो भरतको राज्य देनेके लिये रामको बन भेजती है, सो भरतको राज्य अच्छा नहीं लगता) ॥ ८ ॥

दो०-परेउ राउ कहि कोटिविधि, काहे करसि निदान ॥ ❀
कपटसयानि न कहति कछु, जागति मनहुँ मसान ॥ ३९ ॥ ❀

राजा करोड़ भांतिसे कहकर कि (वंशका) अंत क्यों करती है (पृथ्वीपर) गिरपड़े; (पर वह) कपटमें चतुर है कुछ नहीं कहती. (ऐसी मौन साधगई) मानों मसान जगाती है (क्योंकि बोलनेसे सिद्धि नहीं होती है) ॥ ३९ ॥

चौ०-रामराम रटि विकल भुआलु ❀ जनु बिनुपंख विहंग बिहालु ॥ १ ॥
हृदयमनाव भोर जनि होई ❀ रामहिं जाय कहै जनि कोई ॥ २ ॥

राजा (दशरथ) राम २ रटते २ ऐसे व्याकुल होगये, जैसे विना पंखके पक्षी बेहाल होजाता है ॥ १ ॥ मनमें मनाते हैं कि सवेरा नहो और जाकर कोई रामचन्द्रसे न कहदे ॥ २ ॥

उदय करहु जनि रबि रघुकुलगुर ❀ अवध बिलोकि शूल होइहि उर ॥ ३ ॥
भूपप्रीति कैकयिनिठुराई ❀ उभय अवध बिधि रची बनाई ॥ ४ ॥

हे रघुवंशके गुरु सूर्यनारायण ! तुम उदय मत हो (क्योंकि उदयको) देखकर अयोध्याकी छातीमें दुख होगा; अथवा यह कि अयोध्याका बुरा हाल देख तुमारे हृदयमें शूल होगा ॥ ३ ॥ राजाकी प्रीति और कैकेयीकी कठोरता दोनोंको ब्रह्माने अवधि कहिये मर्यादा रचकर बनाया है. अर्थात् राजाकी प्रीतिसे बढ़कर प्रीति नहीं और कैकेयीकी कठोरतासे अधिक संसारमें कठोरता नहीं ४

बिलपत नृपहि भयउ भिनुसारा ❀ बीणा बेणु शंख धुनि द्वारा ॥ ५ ॥
पढहिं भाट गुन गावहिं गायक ❀ सुनत नृपहिं जनु लागहिं सायक ॥ ६ ॥

राजाको विलाप करते हुये सबेरा होगया और दर्वाजेपर बीण, बाँसुरी और शंखध्वनि होने लगीं ॥५॥ भाट यश बखानते हैं और गानेवाले गुणोंको गाते हैं, परन्तु राजाको सुनते ही बाणके समान लगते हैं ॥ ६ ॥

मंगल सकल सुहाइ न कैसे ❀ सहगामिनी विभूषण जैसे ॥ ७ ॥
तेहि निसि नींद परी नहिं काहू ❀ रामदरस लालसा उछाहू ॥ ८ ॥

(राजाको) सब आनन्द कैसे नहीं सुहाते जैसे सतीको गहने ॥७॥ उस रात्रिमें किसीको नींद नहीं आई (क्योंकि) (सबके मनमें) रामदर्शनके उत्सवकी लालसा होरही थी ॥ ८ ॥

दो०-द्वार भीर सेवक सचिव, कहहिं उदित रवि देषि ॥
जागे अजहुँ न अवधपति, कारन कवन विसेषि ॥ ४० ॥

दास और मंत्रियोंकी भीड़ द्वारपर होगई और सूर्यका उदय हुआ देखकर सब कहने लगे कि महाराज दशरथ अभीतक नहीं जगे, इसका कौनसा विशेष कारण है ? ॥ ४० ॥

चौ०-पछिलेपहर भूप नित जागा ❀ आजु हमहिं बड़ अचरज लागा ॥ १ ॥
जाहु सुमंत जगावहु जाई ❀ कीजिय काज रजायसु पाई ॥ २ ॥

राजा तौ नित्य पिछलेपहर जगते थे, आज हमको बड़ा अचम्भा लगता है (कि अभीतक नहीं जगे) ॥ १ ॥ हे सुमंत ! जाकर राजाको जगाओ और आज्ञापाकर काम करो ॥ २ ॥

गे सुमंत नृपमंदिरमाहीं ❀ देखि भयानक जात डराहीं ॥ ३ ॥
धाइ खाइ जनु जाइ न हेरा ❀ मानहुँ बिपतिविषाद बसेरा ॥ ४ ॥

सुमंत राजाके महलमें गये,(परंतु) डरावना देखकर जातेमें ऐसे डरते हैं ॥३॥ मानों (महल)खानेको दौड़ते हैं; देखे नहीं जाते. ऐसा अनुमान होता है कि उनमें विपत्ति और दुःखने वसेरा लियाहै ॥४॥

पूछत कोउ न उतर कछु देई ❀ गे जेहि भवन भूप कैकेई ॥ ५ ॥
कहि जयजीव बैठु सिरनाई ❀ देखि भूपगति गए सुखाई ॥ ६ ॥

पूछनेसे कोई कुछ उत्तर नहीं देता. (फिर) जिस महलमें राजा और कैकेयी थे वहाँ गये॥५॥ महाराजकी जय कहकर माथा नवाय बैठे और राजाकी दशा देखकर सूख गये ॥ ६ ॥

सोचबिकल बिवरन महि परेउ ❀ मानहुँ कमलमूल परिहरेऊ ॥ ७ ॥
सचिव सभीत सकै नहिं पूछी ❀ बोली अशुभभरी शुभछूछी ॥ ८ ॥

शोचमें तनछीन मनमलीन राजा पृथ्वीपर ऐसे पड़े हैं मानों कमल जड़से टूट अलग पड़ा हो ॥ ७ ॥ मंत्री डरके मारे पूछ नहीं सक्ता (तब) अशुभसे भरी हुई शुभकी छूंछ अर्थात् शुभसे रहित ऐसी कैकेयी बोली ॥ ८ ॥

दो०-परी न राजहिं नींद निशि, मरमजान जगदीस ॥
रामराम रटि भोर किय, हेत न कहेउ महीस ॥ ४१ ॥

राजाको रातमें नींद नहीं आई, इस भेदको परमेश्वर जानै. और राजाने राम २ कहके सवेरा किया है और अपना कुछ मर्म नहीं कहा ॥ ४१ ॥

चौ०-आनहु रामहिं बेगि बुलाई ❀ समाचार सब पूंछहु आई ॥ १ ॥
चलेउ सुमंत राउरुख जानी ❀ लखी कुचालि कीन्ह कछु रानी ॥ २ ॥

रामको जल्दी [1]बुलालाओ और आकर सब हाल पूंछलो ॥ १ ॥ सुमंत राजाका रुख जानकर चले और देखा कि रानीने कुछ कुचाल की है ॥ २ ॥

---

(१) कैकेयी रामको इसलिये जल्दी बुलाती है कि राजासे तो पक्की कर चुकी रामजीसे औरभी हांमी भराले. क्योंकि राजा उन्हें सभामें राज्य दे चुके हैं ॥

सोचबिवस मगपरै न पाऊ ❀ रामहिं बोलि कहहिं का राऊ ॥ ३ ॥
उर धरि धीरज गयेउ दुआरे ❀ पूछहिं सकल देखि मनमारे ॥ ४ ॥

शोचके वश रास्तेमें पैर नहीं पड़ते कि रामको बुलाकर राजा क्या कहैंगे ? ॥ ३ ॥ मनमें धीरज धर द्वारपर गये तौ सब लोग (मंत्रीको) मन मारे देख पूछते हैं ॥ ४ ॥

समाधान सो करि सबहीका ❀ गए जहाँ दिनकरकुलटीका ॥ ५ ॥
राम सुमंतहिं आवत देखा ❀ आदर कीन्ह पितासम लेखा ॥ ६ ॥

(सुमंत) सबहीका समाधान कर वहाँ गये कि जहाँ सूर्यवंशके तिलक (रामचन्द्र) थे ॥ ५ ॥ रामचन्द्रजीने सुमंतको आते हुये देखा तो पिताके समान जानकर आदर किया ॥ ६ ॥

निरखि वदन कहि भूप रजाई ❀ रघुकुलदीपहिं चले लिवाई ॥ ७ ॥
राम कुभाँति सचिवसँग जाहीं ❀ देखि लोग जहँतहँ बिलखाहीं ॥ ८ ॥

(सुमंतने रामचन्द्रका) मुख देखा और राजाकी आज्ञा कहकर रघुवंशके दीपक (रामचन्द्र)को लिवा चले ॥ ७ ॥ रामचन्द्रको मंत्रीके साथ बुरी भांति जाते हुये देखकर लोग जहाँ तहाँ दुखी होने लगे ॥ ८ ॥

दो०–जायदीख रघुवंशमणि, नरपति निपट कुसाज ॥ ❀
सहमिपरेउ लखि सिंहिनिहि, मनहुँ वृद्धगजराज ॥ ४२ ॥ ❀

रामचन्द्रजीने जाके राजाको अत्यंत बुरे वेषमें ऐसा देखा मानों बूढ़ा हाथी सिंहिनीको देख सूखकर गिर पड़ा हो ॥ ४२ ॥

चौ०–सूखे अधर जरे सब अंगू ❀ मनहुँ दीन मनिहीन भुजंगू ॥ १ ॥
सरुष समीप देखि कैकेई ❀ मानहुँ मीचु घरी गनि लेई ॥ २ ॥

होठ सूख गये हैं सब अंग जल रहे हैं, मानों मणिरहित दुखी सर्प हो ॥१॥ और पासमें कैकेयीको क्रोधसहित ऐसे देखा मानों मृत्युहीं (राजाके प्राण लेनेको) घड़ियाँ गिन रही है ॥ २ ॥

करुणामय मृदु रामसुभाऊ ❀ प्रथम दीख दुख सुना न काऊ ॥ ३ ॥
तदपि धीर धरि समय बिचारी ❀ पूंछी मधुरबचन महतारी ॥ ४ ॥

रामजीका स्वभाव करुणासहित और कोमल था और पहलेही (वह) दुःख दिखाई दिया जो कभी नहीं सुनाथा ॥ ३ ॥ तौभी समय विचार धीरजधर मातासे मीठे बचनोंसे पूछने लगे ॥ ४ ॥

मोहिं कहु मातु तात दुखकारन ❀ करिय जतन जेहि होइ निवारन ॥ ५ ॥
सुनहु राम सब कारन एहू ❀ राजहिं तुमपर बहुत सनेहू ॥ ६ ॥

हे माता ! पिताके दुःखका कारण मुझसे कहो और (ऐसा) यत्न कीजिये जिससे (यह दुःख) नाश हो ॥५॥ (कैकेयी बोली कि) हे राम ! सुनो सब कारण यही है कि राजाका तुम्हारे ऊपर बड़ा प्रेम है ॥ ६ ॥

देनकहे मोहिं दुइ वरदाना ❀ माँगेउँ जो कछु मोहिं सोहाना ॥ ७ ॥
सो सुनि भयउ भूपउर शोचू ❀ छाँड़ि न सकहिं तुम्हार सकोचू ॥ ८ ॥

मुझे दो वरदान देने कहे थे सो जो कुछ मुझे अच्छे लगे वह माँगे ॥ ७ ॥ उनको सुनकर राजाके हृदयमें शोच[1] हुआ. और तुम्हारे (प्रेमके) दवाबसे (सोच) छोड़ नहीं जाता ॥ ८ ॥

दो०–सुतसनेह इत बचन उत, संकट परेउ नरेश ॥ ❀
सकहु तो आयसु धरहु सिर, मेटहु कठिनकलेश ॥ ४३ ॥ ❀

---

(१) शोच इस बातका हुवा कि एक तो रामजी राज्यके अधिकारी और दूसरे सभामें सबके सामने हम राज्य दे चुके. अब वह राज्य छोड़ बनमें जांयगे या नहीं.

इधर तौ पुत्रीकी प्रीति, उधर वचनोंका पालन; इसलिये राजा संकटमें पड़े हैं (जो तुमसे होसके) तौ आज्ञाको मस्तकपर धारणकर कठिन कलेशको दूर करो ॥ ४३ ॥

चौ०-निधरक बैठि कहति कटुबानी ❀ सुनत कठिनता अति अकुलानी ॥ १ ॥
जीभकमान बचनशर नाना ❀ मन महीप मृदु लक्ष समाना ॥ २ ॥

वेधड़क बैठकर कड़वी वाणी कहने लगी. (जिसे) सुनकर कठिनताभी अधिक अकुलागई॥१॥(कैकेयीकी) जीभ कमान है अनेक वचन बाण हैं और राजाका कोमल मन मानों निशानके समान है अर्थात् जैसे कमानसे वहुतसे तीर निकलते हैं ऐसेही कैकेयीकी जीभसे वहुतसे बुरे वचन निकलेते हैं; और बाण जाकर निशानेपर लगते हैं और बचन राजाके कोमल हृदयमें लगते हैं ॥ २ ॥

जनु कठोरपन धरे शरीरू ❀ सिखै धनुषविद्या वर बीरू ॥ ३ ॥
सबप्रसंग रघुपतिहिं सुनाई ❀ बैठी मनु तनुधरि निठुराई ॥ ४ ॥

(और ऐसा दीखता है) मानों कठोरपन श्रेष्ठ योधाका शरीर धारण किये धनुषविद्या सीखरहाहै ॥३॥रामचन्द्रजीको सब प्रसंग सुनाकर (ऐसी बैठगई) मानों कठोरता शरीर धारण किये बैठी है॥४॥

मनमुसुकाहिं भानुकुलभानू ❀ राम सहज आनंदनिधानू ॥ ५ ॥
बोले बचन विगतसबदूषण ❀ मृदु मंजुल जनु भागविभूषण ॥ ६ ॥

सहज स्वभावसे आनन्दके निधान और सूर्यवंशमें सूर्यके समान रामचन्द्र मनमें मुसकुराने लगे ॥ ५ ॥ सब दोषोंसे रहित ऐसे कोमल और मीठे वचन बोले मानों बाणी जो सरस्वती है उसके आभूषण हैं ॥ ६ ॥

सुनु जननी सोइ सुत बड़भागी ❀ जो पितुमातुबचनअनुरागी ॥ ७ ॥
तनय मातुपितुपोषनहारा ❀ दुर्लभ जननी यह संसारा ॥ ८ ॥

हे माता ! सुनो, वही पुत्र बड़भागी है जो पितामाताके वचनोंको प्रीतिसे करै ॥ ७ ॥ हे माता! मातापिताकी सेवा करनेवाला पुत्र इस संसारमें कठिन है ॥ ८ ॥

दो०-मुनिगनमिलन विशेष वन, सबहिभाँति हित मोर ॥ ❀
तेहिनहँ पितुआयसु बहुरि, संमत जननी तोर ॥ ४४ ॥ ❀

हे माता ! वनमेंभी सब भांति मेरा भला है. क्योंकि विशेष करके मुनियोंकी मंडलीसे मिलना होगा, जिसमें पिताकी आज्ञा और फिर (उसमेंभी) तुम्हारी सम्मति है॥ ४४ ॥

चौ०-भरत प्राणप्रिय पावहिं राजू ❀ बिधि सबबिधि मोहिं सन्मुख आजू॥ १ ॥
जो न जाउँ बन ऐसेहुँकाजा ❀ प्रथम गनिय मोहिं मूढ़समाजा ॥ २ ॥

जो प्राणोंसे प्यारे भरतको राज्य मिलै तौ आज मुझे सब प्रकार ब्रह्मा सीधा है ॥ १ ॥ और जो मैं ऐसे काममेंभी वनको न जाऊं तौ मूर्खोंके समाजमें मुझे पहला गिनना चाहिये ॥ २ ॥

सेवहिं रंड कल्पतरु त्यागी ❀ परिहरि अमिय लेहिं विष माँगी ॥ ३ ॥
तेउ न पाइ अस समय चुकाहीं ❀ देखि विचारि मातु मनमाहीं ॥ ४ ॥

(जैसे कोई) [१]कल्पवृक्षको छोड़ अंडौएका सेवन करै और अमृतको छोड़कर विष मांग लेवै॥ ३ ॥ वहभी ऐसे समयको पाकर न चूकैगा, हे माता ! मनमें विचार देखो ॥ ४ ॥

---

(१) यहां रघुनाथजीके ऐसा कहनेसे यह भाव है कि मातापिताकी आज्ञा कल्पवृक्षके समान है इसे छोड़ जो एरंडसमान राज्यको ग्रहण करूं तो वह ऐसा है जैसे भरतका राजतिलक जो अमृतसम है उसे छोड़ विरोध जो विषके सम है उसे चाहूं ॥

अंब एक दुख मोहिं बिसेषी ❀ निपट बिकल नरनायक देषी ॥ ५ ॥
थोरी बात पितहिं दुख भारी ❀ होति प्रतीति न मुहिं महतारी ॥ ६ ॥

हे माता ! राजाको अत्यंत व्याकुल देख मुझे एक बड़ा दुःख है कि-॥ ५ ॥ बात तौ थोड़ी और पिताकी दुःख बड़ा है. (इससे) हे माता ! मुझको भरोसा नहीं होता ॥ ६ ॥

राउ धीर गुणउदधि अगाधू ❀ भा मोते कछु बड़ अपराधू ॥ ७ ॥
जाते मोहिं न कहत कछु राऊ ❀ मोरशपथ तोहिं कहु सतिभाऊ ॥ ८ ॥

(क्योंकि) राजा धीरजवान और गुणोंके गहरे समुद्र हैं, मुझसे कुछ बड़ाही अपराध हुआ है ॥ ७ ॥ जिससे राजा मुझसे कुछ नहीं कहते. तुझे मेरी सौगंद है सच्चे भावसे कह ॥ ८ ॥

दो०-सहजसरल रघुपतिबचन, कुमति कुटिलकरि जान ॥ ❀
चलै जोंक जिमि वक्रगति, यद्यपि सलिलसमान ॥ ४५ ॥ ❀

रामजीके वचन तौ[1] सहजही सीधे हैं परंतु कुमति कैकेयी टेढ़ेही जानती है, जैसे यद्यपि जल (सब जगह) बराबर हो तौभी जोंक उसमें टेढ़ीही चालसे चलती है ॥ ४५ ॥

चौ०-रहसी रानि रामरुख पाई ❀ बोली कपटसनेह जनाई ॥ १ ॥
शपथ तुम्हाँर भरतकै आना ❀ हेतु न दूसर मैं कछु जाना ॥ २ ॥

रानी (कैकेयी) रामचन्द्रजीका रुख पाकर प्रसन्न हुई और कपटसे प्रीति प्रगटकर बोली ॥ १ ॥ तुम्हारी और भरतकी सौगंद है और दूसरा कुछ कारण मैं नहीं जानती ॥ २ ॥

तुम अपराधयोग नहिं ताता ❀ जननीजनकबंधुसुखदाता ॥ ३ ॥
राम सत्य तुम जो कछु कहहू ❀ तुम पितुमातुबचनरत अहहू ॥ ४ ॥

हे प्यारे ! तुम अपराधके योग्य नहीं हो (तुम तौ) माता पिता और भाइयोंको सुखदेनेवाले हो ॥३॥ हे राम ! तुमने जो कुछ कहा सब सच है. तुम पितामाताके वचनोंमें प्रीति करनेवाले हो ॥४॥

पितहि बुझाइ कहौ बलि सोई ❀ चौथेपन जिहि अजस न होई ॥ ५ ॥
तुमसम सुवन सुकृत जेहि दीन्हे ❀ उचित न तासु निरादर कीन्हे ॥ ६ ॥

(मैं तुम्हारी) वलिजाऊँ तुम पितासे समझाकर वही कहो जिससे चौथेपनमें अपयश न हो॥५॥ जिन अच्छे कर्मोंने तुम्हारे समान पुत्र दिये उन्हीं (सुकर्मों) का निरादर करना योग्य नहीं ॥ ६ ॥

लागहिं कुमुखिबचन शुभ कैसे ❀ मगह गयादिक तीरथ जैसे ॥ ७ ॥
रामहिं मातुबचन सब भाए ❀ जिमि सुरसरिगति सलिल सुहाए ॥८॥

बुरे मुखवाली (कैकेयी) के अच्छे वचन कैसे लगते हैं जैसे कुदेशमें गया आदि तीर्थ ॥ ७ ॥ रामचन्द्रजीको माताके सब वचन कैसे अच्छे लगे जैसे गंगाजीकी धारसें (अपवित्र) जलभी शोभायमान होजाते हैं ॥ ८ ॥

दो०-गइ मूर्च्छा रामहिं सुमिरि, नृप फिरि करवट लीन्ह ॥ ❀
सचिव रामआगमन कहि, बिनय समय सम किन्ह ॥ ४६ ॥ ❀

---

(१) रामजीने सीधा वचन.जो ऊपर यह कहाथा कि

सेवहिं रंड कल्पतरु त्यागी । परिहरि अमी लेहिं विष मांगी ॥

सो इसका उलटा अर्थ समझी कि रघुनाथजीने यह कहा कि कल्पवृक्ष समान हमको छोड एरंडरूपी वरदान लेना चाहती हो और हमारे राजतिलकका यश जो अमृतसमान है उसे छोड विषसमान वनोवास देना ग्रहण करती हो ॥

जब मूर्च्छा गई तौ राजाने रामचन्द्रजीको स्मरणकर फिर करवट ली (उससमय) मंत्री (सुमंत) ने रामचन्द्रजीका आना कहकर समयके अनुसार बिनती की ॥ ४६ ॥

चौ०–अवनिप अकनि राम पगु धारे ❀ धरि धीरज तब नयन उघारे ॥ १ ॥
सचिव सँभारि राउ बैठारे ❀ चरणपरत नृप राम निहारे ॥ २ ॥

जब राजाने रामचन्द्रका पैर धरना सुना तब धीरज धरकर नेत्र खोले ॥ १ ॥ मंत्रीने राजाको सम्हालकर बिठलाया तो राजाने रामचन्द्रको पैरोंमें गिरते देखा ॥ २ ॥

लिये सनेह बिकल उरलाई ❀ गइमणि मनहु फणिक फिरिपाई ॥ ३ ॥
रामहिं चितैरहे नरनाहू ❀ चला बिलोचनवारिप्रवाहू ॥ ४ ॥

(राजाने)प्रेममें व्याकुल हो (रघुनाथजीको)हृदयसे ऐसे लगा लिया मानों सर्पकोखोई हुईमणिफिर मिली ॥ ३ ॥ राजा (दशरथ) रामचन्द्रको देखतेही रहगये और नेत्रोंसे जलकीधारा वह चली ॥४॥

शोकबिवस कछु कहै न पारा ❀ हृदयलगावत बारहिंबारा ॥ ५ ॥
बिधिहिं मनावराउ मनमाहीं ❀ जेहि रघुनाथ न कानन जाहीं ॥ ६ ॥

शोकके वश कुछ पूरी बात कह नहीं सकते. बारंवार छातीसे लगाते हैं ॥ ५ ॥ राजा मनमें विधाताको मनाते हैं जिससे रामचन्द्र बनको न जाँय ॥ ६ ॥

सुमिरि महेशहिं कहहिं निहोरी ❀ बिनती सुनहु सदाशिव मोरी ॥ ७ ॥
आशुतोष तुम औढरदानी ❀ आरति हरहु दीनजन जानी ॥ ८ ॥

महादेवका स्मरणकर निहोरे करके कहते हैं कि हे सदाशिव! मेरी प्रार्थनाको सुनो ॥ ७ ॥ तुम शीघ्र प्रसन्न होनेवाले और जिस (वरको) कोई न दे उसेभी बिनसोचे देनेवाले हो. (सो मुझे) दीन भक्त जानकर दुःखका नाश करो ॥ ८ ॥

दो०–तुम प्रेरक सबके हृदय, सो मति रामहिं देहु ॥ ❀
बचन मोर तजि रहहिं घर, परिहरि शीलसनेहु ॥ ४७ ॥ ❀

तुम सबके हृदयमें प्रेरणा करनेवाले हो, इसलिये रामचन्द्रको ऐसी बुद्धि दो जिससे शील और प्रेमको छोड़ मेरे वचनको न मानकर घर रहैं ॥ ४७ ॥

चौ०–अजस होउ बरु सुजस नसाऊं ❀ नरक परौं बरु सुरपुर जाऊं ॥ १ ॥
सब दुख दुसह सहावहु मोहीं ❀ लोचनओट राम जनि होहीं ॥ २ ॥

भलेही सुयशका नाश और अपयश हो और भलेही नरकमें पड़ूं वा वैकुंठमें जाऊं ॥ १ ॥ सब कठिन दुःख मुझे सहाओ, परन्तु रामचन्द्र आँखोंकी ओटमें नहों ॥ २ ॥

अस मनगुनहि राउ नहिं बोला ❀ पीपरपातसरिस मन डोला ॥ ३ ॥
रघुपति पितहिं प्रेमबस जानी ❀ पुनि कछु कहिहि मातु अनुमानी ॥ ४ ॥

राजा मनमें ऐसे विचार करने लगे परन्तु बोले नहीं. पीपलके पत्तोंके समान (उनका) मन चलायमान होगया ॥ ३ ॥ रामचन्द्रने पिताको स्नेहके वश जान बिचार किया कि माता फिर कुछ (कटु वाणी) कहैगी ॥ ४ ॥

देश काल अवसर अनुसारी ❀ बोले बचन बिनीत बिचारी ॥ ५ ॥
तात कहौं कछु करौं ढिठाई ❀ अनुचित क्षमब जानि लरिकाई ॥ ६ ॥

इसलिये देश काल और अवसरके अनुसार विचारके नम्रतासहित वचन बोले कि ॥५॥ हे पिता! ढीठताकर कुछ कहताहूं (सो आप मेरा) लडकपन जानकर अनुचित हो उसे क्षमा करना ॥ ६ ॥

अति लघुबात लागि दुख पावा ❀ काहे न मुहिं कहि प्रथम सुनावा ॥ ७ ॥
देखि गुसाँइहिं पूछेउ माता ❀ सुनि प्रसंग भए शीतलगाता ॥ ८ ॥

अत्यंत छोटी बातके लिये दुःख पाया; मुझे पहलेही कहकर क्यों न सुना दिया ॥ ७ ॥ हे गोसाँई ! (आप) को देखकर मातासे पूँछा तौ प्रसंग सुनकर शरीर ठंढे हुये ॥ ८ ॥

दो०–मंगलसमय सनेहवस, सोचपरिहरिय तात ॥ ❀
आयसुदेइय हरषिहिय, कहि पुलके प्रभुगात ॥ ४८ ॥ ❀

हे पिता, आनन्दके समय स्नेहके वश सोचको छोड़िये और मनमें प्रसन्न होकर आज्ञा दीजिये, यह कहतेही रामचन्द्रजीका शरीर पुलकायमान होगया ॥ ४८ ॥

चौ०–धन्य जनम जगतीतल तासू ❀ पितहि प्रमोद चरित सुनि जासू ॥ १ ॥
चारिपदारथ करतल ताके ❀ प्रिय पितुमातु प्राणसम जाके ॥ २ ॥

पृथ्वीके ऊपर उसीका जन्म धन्य है जिसके चरित्र सुनकर पिताको अधिक आनन्द हो ॥ १ ॥ जिसको पिता माता प्राणोंके समान प्यारे हैं उसको चारों पदार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) हथेलीपर हैं ॥ २ ॥

आयसु पालि जनमफल पाई ❀ ऐहौं बेगिहि होइ रजाई ॥ ३ ॥
बिदा मातुसन आवौं माँगी ❀ चलिहौं बनहि बहुरि पदलागी ॥ ४ ॥

आज्ञाका पालन कर और अच्छे जन्मका फल पाकर जल्दीही आऊंगा (इसलिये) आज्ञा दीजिये ॥ ३ ॥ मातासे विदा माँग आऊँ, फिर चरण छूकर वनको जाऊँगा ॥ ४ ॥

असकहि राम गवन तब कीन्हा ❀ भूप सोचबस उतर न दीन्हा ॥ ५ ॥
नगरव्यापिगइ बात सुतीछी ❀ छुअत चढी जनु सब तनु बीछी ॥ ६ ॥

ऐसे कहकर जब रामचन्द्र चले तौ राजाने शोचके वश उत्तर नहीं दिया ॥५॥ यह बड़ी तीखी बात नगरमें ऐसे फैल गई जैसे डंकमारतेही सब शरीरमें विच्छूका जहर चढ़ जाता है ॥ ६ ॥

सुनि भए विकल सकल नरनारी ❀ बेलिबिटप जनु लागि दवारी ॥ ७ ॥
जो जहँ सुनै धुनैं सिर सोई ❀ बढ़विषाद नहिं धीरज होई ॥ ८ ॥

सब स्त्री पुरुष सुनकर ऐसे व्याकुल हुये मानों वेलि और वृक्ष वनकी अग्निको देख कुम्हला गये ॥ ७ ॥ जो जहाँ सुनता है वही शिर धुनता है. बड़ा दुःख है (किसीको) धीरज नहीं होता ॥ ८ ॥

दो०–मुख सुखाहिं लोचन स्रवहिं, सोक न हृदय समाइ ॥ ❀
मानहु करुणारसकटक, उतराअवधि बजाइ ॥ ४९ ॥ ❀

(सबके) मुख सूख रहे हैं, नेत्रोंसे जल बहता है और शोक मनमें नहीं समाता. मानों करुणारसकी सेना अयोध्या पुरीमें डंका बजाकर उतरी है ॥ ४९ ॥

चौ०–भलिबनाइ बिधि बात बिगारी ❀ जहँ तहँ देहिं केकइहिं गारी ॥ १ ॥
इहिं पापिनिहिं बूझि का परेऊ ❀ छाइ भवनपर पावक धरेऊ ॥ २ ॥

जहाँ तहाँ कैकेयीको गाली देते हैं और (कहते हैं) विधाताने अच्छी बात बनाकर बिगाड़ दी ॥ १ ॥ इस पापिनी (कैकेयी) को क्या सूझ पड़ी जो छाये हुये घरपर अग्नि रखदी ॥ २ ॥

निज कर नयन काढि चह दीषा ❀ डारि सुधा विष चाहत चीखा ॥ ३ ॥
कुटिल कठोर कुबुद्धि अभागी ❀ भइ रघुवंशवेणुबनआगी ॥ ४ ॥

अपने हाथोंसे (अपने) नेत्र निकालकर देखना चाहती है, अमृतको छोड़कर विष चाखना चा-

हती है ॥ ३ ॥ यह बड़ी खोटी, कठोर, बुरी बुद्धिवाली और अभागी है और रघुवंशरूपी बांसोके बनको अग्निरूप हुई ॥ ४ ॥

पल्लवबैठि पेड़ इन काटा ❀ सुखमहँ शोकठाट धरि ठाटा ॥ ५ ॥
सदा राम यहिं प्राणसमाना ❀ कारन कवन कुटिलपन ठाना ॥ ६ ॥

इसने डालीपर बैठकर पेड़ काटडाला और आनन्दमें दुःखका ठाठ रचदिया ॥ ५ ॥ इसको रामचन्द्रजी सदाही प्राणोंके समान थे फिर क्या कारण जो खोटापन ठान दिया ॥ ६ ॥

सत्य कहहिं कवि नारिसुभाऊ ❀ सबविधि अगम अगाध दुराऊ ॥ ७ ॥
निज प्रतिबिंब मुकुर गहि जाई ❀ जानि न जाइ नारिगति भाई ॥ ८ ॥

कविलोग ठीकही कहते हैं कि स्त्रियोंके स्वभाव सब भांति अगम गहरे और छिपेहुये होते हैं ॥ ७ ॥ हे भाई ! अपनी परछाईको (चाहे) दर्पणमें कोई भलेही पकड़ ले परन्तु स्त्रियोंकी गति नहीं जानी जाती ॥ ८ ॥

दो०–का नहिं पावक जारिसक, का न समुद्र समाइ ॥ ❀
का न करै अवला प्रवल, केहि जग काल न खाइ ॥ ५० ॥ ❀

अग्निमें क्या नहीं जल सकता, समुद्रमें क्या नहीं समाता, खंखा स्त्री क्या नहीं करती और संसारमें काल किसको नहीं खाता ? ॥ ५० ॥

चौ०–का सुनाइ विधि काह सुनावा ❀ का दिखाइ चह काह देखावा ॥ १ ॥
एक कहैं भल भूप न कीन्हा ❀ वर विचारि नहिं कुमतिहिं दीन्हा ॥ २ ॥

ब्रह्माने क्या सुनाकर क्या सुनाया और क्या दिखाकर क्या दिखाया चाहता है ॥ १ ॥ कोई कहता है कि राजाने अच्छा नहीं किया कि कैकेयीको बिचारकर वर नहीं दिया ॥ २ ॥

जो हठ भयउ सकलदुखभाजन ❀ अबलाबिनस ज्ञान गुन गा जन ॥ ३ ॥
एक धरमपरमिति पहिचाने ❀ नृपहिं दोष नहिं देहिं सयाने ॥ ४ ॥

जो हठके कारण (राजा) सब दुःखोंके पात्र हुए और स्त्रीके वश हो ज्ञान और गुणोंका नाश कर दिया ॥ ३ ॥ कोई चतुर जो धर्मकी सीमाको पहचानते हैं वे राजाको दोष नहीं देते ॥ ४ ॥

शिबि दधीचि हरिचंद कहानी ❀ एक एक सन कहहिं बखानी ॥ ५ ॥
एक भरतकर संमत कहहीं ❀ एक उदासभाव सुनि रहहीं ॥ ६ ॥

(राजा) *शिबि दधीचि और हरिश्चन्द्रकी[1] कथा एक दूसरेसे बखान कर कहते हैं ॥ ५ ॥

---

* शिबि दधीचि की कथा ३३६ पत्रमें देखो.

(१) रघुके वंशमें राजा हरिश्चन्द्र बड़ा धर्मात्मा था । एकवार जब वसिष्ठजीने विश्वामित्रसे इसके दान और सत्यकी प्रशंसा की तब उन्होंने परीक्षार्थ उससे संपूर्ण राज्यका संकल्प मांगा और जब उसने दान दिया तब दक्षिणा मांगी परन्तु उसकेपास कहां थी जो देता! यह कहा कि मैं उद्यम करके दूंगा । उन्होंने कहा हम यहाँ उद्यमभी न करने देंगे । तब राजा शिवपुरी काशीको अपने राज्यसे भिन्न भूमि समझ वहाँ गया और जब ऋषि वहाँभी दक्षिणा लेने पहुँचे तब राजाने पुत्रस्त्रीको बेचकर कुछ धन दिया और फिर शेषके लिये आपने चांडालकी सेवा ग्रहण करी और श्मशानपर कर लेना स्वीकार किया और ऋषिकी दक्षिणा चुकाई । कुछ कालमें जब इसका पुत्र मरगया और इसकी स्त्री लड़केको श्मशानपर लेगई तौ राजाने इससेभी कर मांगा और आधीनता करनेपरभी न माना, और जब स्त्रीने दुखी हो अपना आधावस्त्र फाड़नेको हाथ किया सोई भगवानने आकर हाथ रोका और प्रसन्न हो पुत्रको जिलाकर फिर अयोध्याके राजसिंहासनपर बैठाया और अंतमें सबको मुक्ति दी.

कोई २ भरतकी सलाह कहते हैं और कोई २ यह भाव सुनकर उदास हो रह जाते हैं ॥ ६ ॥

कान मूंदिकर रद गहि जीहा ❀ एक कहहिं यहबात अलीहा ॥ ७ ॥
सुकृत जाइ अस कहत तुह्मारे ❀ भरत रामकहँ प्राणपियारे ॥ ८ ॥

कोई २ हाथोंसे कानोंको बन्द कर और दाँतोंमें जीभको दबाकर कहते हैं कि यह बात झूँठहै. ॥७॥ तुम्हारे ऐसे कहनेसे अच्छे कर्म नाश हो जायँगे, रामचन्द्रजीको तो भरत प्राणोंसे प्यारेहैं ॥ ८॥

दो०-चंद्र चुवै बरु अनलकण, सुधा होइ विषतूल ॥ ❀
सपनेहु कबहुँ न करहिं कछु, भरत रामप्रतिकूल ॥ ५१ ॥ ❀

चन्द्रमा भलेही अग्निके टुकड़े बरषावै और अमृत विषके समान भलेही होजाय, परंतु भरतजी स्वप्नमेंभी रामचन्द्रजीके विरुद्ध कुछ नहीं करेंगे ॥ ५१ ॥

चौ०-एक बिधातहिं दूषन देहीं ❀ सुधा देखाइ दीन्ह विष जेहीं ॥ १ ॥
खरभर नगरसोच सबकाहू ❀ दुसह दाह उर मिटा उछाहू ॥ २ ॥

कोई २ ब्रह्माको दोष देते हैं कि जिसने अमृत दिखाकर विष दिया ॥ १ ॥ नगरकी खलबली देख सब किसीके हृदयमें कठिन दाह होने लगा और आनन्द जाता रहा ॥ २ ॥

विप्रबधू कुलमान्य जिठेरी ❀ जे प्रियपरम कैकेयीकेरी ॥ ३ ॥
लगींदेन सिख सील सराही ❀ बचन बाणसम लागहिं ताही ॥ ४ ॥

ब्राह्मणोंकी स्त्रियाँ कुलकी मान्य और बड़ी बूढ़ी जो कैकेयीकी अत्यंत प्यारी थीं ॥ ३ ॥ वे कैकेयीके शीलकी सराहना कर शिक्षा देने लगी. परन्तु उसे बचन बाणके समान लगते हैं ॥ ४ ॥

भरत न प्रिय मोहिं रामसमाना ❀ सदा कहहु यह सबजग जाना ॥ ५ ॥
करहु रामपर सहजसनेहू ❀ केहि अपराध आजु बनदेहू ॥ ६ ॥

(स्त्रियोंने कहा कि तुम) सदा कहाकरतीथी कि मुझे रामचन्द्रजीके समान भरतभी प्यारे नहीं हैं. (इस बातको) सब संसार जानता है ॥ ५ ॥ तुम तो रामचन्द्रजीके ऊपर सहज स्वभावहीसे प्रीति करती थीं; आज किस अपराधसे बनवास देती हो ? ॥ ६ ॥

कबहुँ न कीन्ह सवति अवरेपू ❀ प्रीति प्रतीति जान सब देपू ॥ ७ ॥
कौसल्या अब काह बिगारा ❀ तुम जेहिलागि वज्र पुर पारा ॥ ८ ॥

तुमने कभी सौतका परेखाभी नहीं किया, ऐसी प्रीतिकी परतीत सब जानते और देखते हैं ॥ ७॥ कौशल्याने अब क्या बिगाड़ा ? जिसके लिये तुमने नगरमें वज्र डाल दिया ॥ ८ ॥

दो०-सीयकि पियसँग परिहरिहिं, लषन कि रहिहहिं धाम ॥ ❀
भरत कि भूँजब राज पुर, नृप कि जियहिं विनुराम ॥ ५२ ॥ ❀

सीताजी क्या पतिके संगको छोड़ देंगीं, लक्ष्मणजी क्या घर रहैंगे, भरतजी क्या नगरका राज्य भोगेंगे और राजा (दशरथ) क्या विना रामचन्द्रजीके जियेंगे ? अर्थात् इन चारों बातोंमेंसे एकभी पूरी न होगी ॥ ५२ ॥

चौ०-अस बिचारि जिय छाँड़हु कोहू ❀ सोक कलंककोटि जनि होहू ॥ १ ॥
भरतहिं अवसि देहु युवराजू ❀ कानन कवन रामकर काजू ॥ २ ॥

ऐसा मनमें विचार क्रोध छोड़ दो और शोक तथा कलंककी सीमा मत हो ॥ १ ॥ भरतजीको अवश्य राजतिलक दो. (परंतु) रामचन्द्रजीका बनमें क्या काम है ? (जो कदाचित् कहो कि राम यहां रहकर उपद्रव मचावेंगे, तहाँ कहते हैं कि) ॥ २ ॥

नाहिंन राम राजकर भूखे ❀ धरमधुरीन विषयरस रूखे ॥ ३ ॥
गुरुगृह बसहिं राम तजि गेहू ❀ नृपसन अस बर दूसर लेहू ॥ ४ ॥

रामचन्द्रजी राज्यके भूखे नहीं हैं. किंतु धर्मके अनुसार चलनेवाले और विषयवासनासे रहित हैं ॥ ३ ॥ (और जो घरमेंभी नहीं रक्खाचाहो तौ) रामचन्द्र घर छोड़कर गुरूके घर रहैं, राजासे यह दूसरा वर लेलो ॥ ४ ॥

राम सरिस सुत कानन जोगू ❀ कहा कहहिं सुनि तुमकहँ लोगू ॥ ५ ॥
जो न मानिहौ कहे हमारे ❀ नहिं लागिहि कछु हाथ तुमारे ॥ ६ ॥

(क्यों कि) रामचन्द्रसरीखे पुत्र क्या वनके योग्यहैं? यह सुनकर तुमको लोग क्या कहैंगे? ॥ ५ ॥ जो हमारे कहनेसे न मानौगी तौ तुम्हारे हाथ कुछ नहीं लगैगा ॥ ६ ॥

जो परिहास कीन्ह कछु होई ❀ तौ कहि प्रकट जनावहु सोई ॥ ७ ॥
उठउ बेगि सोइ करहू उपाई ❀ जेहि बिधि शोककलंक नसाई ॥ ८ ॥

जो कुछ हँसी की हो तौ उसे प्रत्यक्ष कहकर जताओ ॥ ७ ॥ और जल्दी उठकर वह उपाय करो जिस विधिसे शोक और कलंकका नाश हो ॥ ८ ॥

छं०–जेहि भाँति शोक कलंक जाइ उपाइ करि कुलपालहू ॥ ❀
हठि फेरि रामहिं जात बन जनि बात दूसरि चालहू ॥ ❀
जिमि भानुबिनुदिन प्राणबिनतनु चंद्रबिनु जिमि जामिनी ॥ ❀
तिमि अवध तुलसीदास प्रभुबिनु समुझिधौं मन भामिनी २ ❀

जिस भाँति शोक और कलंक जाय वही उपाय करके कुलका पालन करो, हठसे रामचन्द्रजीको वनके जानेसे लौटाओ और दूसरी बात मत चलाओ; और जैसे सूर्यके बिना दिन, प्राणोंके बिना शरीर और चन्द्रमाके विना रात होती है, ऐसीही रामचन्द्रजीके विना अयोध्यापुरी होजायगी! हे रानी! मनमें समझ देखो ॥ २ ॥

सो०–सखिन्ह सिखावन दीन्ह, सुनत मधुर परिणाम हित ॥ ❀
तेइ कछु कान न कीन्ह, कुटिलप्रबोधी कूबरी ॥ २ ॥ ❀

सखियोंने सुननेमेंभी मीठी और अंतमें हित करनेवाली शिक्षा दी परंतु उसने कुछ ध्यान नहीं दिया (क्योंकि) खोटी कूबरीने सिखाया था ॥ २ ॥

चौ०–उतर न देइ दुसह रिष रूखी ❀ मृगिहिं चितव जनु बाघिनि भूखी ॥१॥
ब्याधि असाध्य जानि तिन त्यागी ❀ चलीं कहति मतिमंद अभागी ॥ २ ॥

(कैकेयी) बड़े कठिन क्रोधमें भरी हुई है, उत्तर नहीं देती-(ऐसीदीखती है) मानों भूखी सिंहिनी मृगियोंको देखरही है ॥ १ ॥ उन्होने (कैकेयीको) असाध्य रोग जान छोड़ दिया और इसे बुद्धिहीन और अभागी कहती हुई चली ॥ २ ॥

राजकरत इहिं दैव बिगोई ❀ कीन्हेसि अस जस करै न कोई ॥ ३ ॥
यहिविधि बिलपहिं पुरनरनारी ❀ देहिं कुजालिहिं कोटिक गारी ॥ ४ ॥

राज्य करते हुयेभी प्रारब्धने इसका नाश कर दिया क्यौंकि इसने ऐसा किया जैसा कोई न

---

(१) तात्पर्य यह है कि जैसे रोगके असाध्य होजानेसे वैद्य रोगीको छोडजाता है, उसीप्रकार शिक्षा देनेवाली स्त्रियां कैकेयीको छोडकर उसकी निन्दा करती हुई चली गईं.

करै ॥ ३ ॥ इस भाँति नगरके स्त्री पुरुष विलाप करते हैं और बुरी चलनवाली (कैकेयीका) को करोड़ों गाली देते हैं ॥ ४ ॥

जरहिं विषमज्वर लेहिं उसासा ❀ कवन रामबिनु जीवन आसा ॥ ५ ॥
विपुल वियोग प्रजा अकुलानी ❀ जिमि जलचर गण सूखत पानी ॥ ६ ॥

विषम ज्वरकी भाँति जलते हुये उसास लेकर कहते हैं कि रामचन्द्रके विना जीनेकी क्या आशा है ? ॥ ५ ॥ बहुत दिनके वियोगके कारण प्रजा ऐसे अकुलागई जैसे पानीके सूखनेसे जलमें रहनेवाले जीवजन्तुके समूह अकुला जाते हैं ॥ ६ ॥

अतिविषादवश लोगलुगाई ❀ गए मातुपहँ राम गुसांई ॥ ७ ॥
मुखप्रसन्न चितचौगुन चाऊ ❀ मिटा सोच जनि राखहिं राऊ ॥ ८ ॥

जब स्त्री पुरुष बहुत दुःखके वशमें हुये तब रामचन्द्रगोसाँई माताके पास गये ॥ ७ ॥ मुखपर आनन्द और चित्तमें चौगुना[१] चाव है और राजा कहीं रख न लें यह सोच भी मिटगया ॥ ८ ॥

दो०–नव गयंद रघुवंशमणि, राज अलान समान ॥ ❀
छूटे जनु वन गवन सुनि, उर आनँद अधिकान ॥ ५३ ॥ ❀

रघुनाथजीका मन नवीन घेरे हुये हाथीके समान है, और राजतिलक बेड़ीके समान है, सो मानों उससे छूटकर और वनमें जानेकी सुनकर हृदयमें बड़ा आनन्द हुआ ॥ ५३ ॥

चौ०–रघुकुलतिलक जोरि दोउ हाथा ❀ मुदित मातुपद नायव माथा ॥ १ ॥
दीन्ह असीस लाइउर लीन्हें ❀ भूषन बसन निछावरि कीन्हें ॥ २ ॥

रघुकुलके तिलक (रामचन्द्र) ने दोनों हाथ जोड़कर प्रसन्नतासे माताके चरणोंको माथा नवाया ॥ १ ॥ (माताने) आशीर्वाद देकर हृदयसे लगा लिया और भूषन वसन नौछावर किये ॥२॥

बारबार मुख चुंबति माता ❀ नयननेहजल पुलकित गाता ॥ ३ ॥
गोद राखि पुनि हृदयलगाई ❀ स्रवत प्रेमरस पयद सुहाई ॥ ४ ॥

माता वारंवार मुख चूमती है, नेत्रोंमें स्नेहका जल आगया, शरीरमें पुलकावलि छागई ॥ ३ ॥ गोदमें रख फिर छातीसे लगाया और प्रेमके कारण कुचोंसे सुन्दर दूध टपकने लगा ॥ ४ ॥

प्रेम प्रमोद न कछु कहिजाई ❀ रंक धनदपदवी जनु पाई ॥ ५ ॥
सादर सुंदर वदन निहारी ❀ बोली मधुर बचन महतारी ॥ ६ ॥

(इससमय) माताका स्नेह और बड़ा आनन्द कुछ कहा नहीं जाता, मानों कंगालने कुवेरकी पदवी पाई ॥ ५ ॥ आदरसहित सुन्दर मुख देख माता मीठे वचन बोली ॥ ६ ॥

कहहु तात जननी बलिहारी ❀ कबहि लगन मुदमंगलकारी ॥ ७ ॥
सुकृत सील सुखसीम सोहाई ❀ जन्मलाभकी अवधिअथाई ॥ ८ ॥

हे प्यारे! माता बलैयाँ लेती है, कहो आनन्दमंगल करनेवाली (राजगद्दी) की लग्न कब है ॥ ७॥ (जो लग्न) अच्छे कर्म शील और सुखकी सुन्दर सीमा है और जन्मके लाभकी पूर्ण अवधि है ॥ ८ ॥

दो०–जेहि चाहत नरनारि सब, अति आरत इहि भाँति ॥ ❀
जिमि चातकिचातक तृषित, वृष्टिशरदऋतु स्वाति ॥ ५४ ॥ ❀

---

(१) चौगुना कहनेका यह भाव है कि प्रथम पिताकी आज्ञा, दूसरे कैकेयी माताकी सम्मति, तीसरे भरत भाईको राजतिलक और चौथे मुनीश्वरोंके दर्शन आदि.

और जिस (लग्न) को सब स्त्रीपुरुष अत्यंत आतुर हो इस भाँति चाहरहे हैं, जैसे प्यासे पपीहा पपीहरी शरदऋतुमें स्वाति नक्षत्रकी बूँदको चाहते हैं ॥ ५४ ॥

चौ०–तात जाउँ बलि बेगि अन्हाहू ❀ जो मनभाव मधुर कछु खाहू ॥ १ ॥
पितुसमीप तब जायहु भैया ❀ भइ बडिवार जाइ बलि मैया ॥ २ ॥

हे प्यारे ! बलैयाँ लेती हूँ, जल्दी न्हाओ और जो मनमें भावे थोड़ी मिठाई खालो ॥ १ ॥ हे भैया ! तब पिताके पास जाना, अब बड़ी देर हुई. माता (तुम्हारी) बलि जाती है ॥ २ ॥

मातुबचन सुनि अतिअनुकूला ❀ जनु सनेहसुरतरुके फूला ॥ ३ ॥
सुखमकरंद भरे श्रीमूला ❀ निरखि राममन भँवर न भूला ॥ ४ ॥

(रामजीने) माताके सुन्दर वचन सुने (सो वे वचन कैसे हैं कि) मानों प्रेमरूपी कल्पवृक्षसे फूल झड़ते हैं ॥ ३ ॥ (और फिर वे वचन कैसे हैं कि) सुख मानों पुष्परस है उससे भरेहुये हैं और राजलक्ष्मी (जिनकी) जड़ है (ऐसे वचनरूपी पुष्पोंको) देखकर रामचन्द्रजीका मन जो भ्रमररूप है सो नहीं भूला, अर्थात् रामके मनमें यही आई कि माताके वचन सुनाही करूं ॥ ४ ॥

धर्मधुरीण धर्मगति जानी ❀ कहेउ मातुसन अतिमृदुबानी ॥ ५ ॥
पिता दीन्ह मोहिं काननराजू ❀ जहँ सबभाँति मोर बड़ काजू ॥ ६ ॥

धर्मके अनुसार चलनेवाले (रामचन्द्र)ने धर्मकी गति पहिचान मातासे अत्यंत मीठी वाणीसे कहा कि ॥ ५ ॥ पिताने मुझे वनका राज्य दिया है जहाँ सब भाँतिसे मेरा बड़ा काम होगा ॥ ६ ॥

आयसु देहु मुदितमन माता ❀ जेहि मुदमंगल कानन जाता ॥ ७ ॥
जनि सनेहबस डरपसि भोरे ❀ आनँद मातु अनुग्रह तोरे ॥ ८ ॥

सो हे माता ! प्रसन्न मनसे आज्ञा दो जिससे वनको जातेमें आनन्दमंगल हों ॥ ७ ॥ हे माता ! प्रेमके वश भूल करभी मत डरना; तुम्हारी कृपासे (सब) आनन्द होगा ॥ ८ ॥

दो०–वर्ष चारिदश बिपिनवसि, करि पितुबचन प्रमान ॥ ❀
आइ पाँय पुनि देखिहौं, मन जनि करसि मलान ॥ ५५ ॥ ❀

चौदह वर्ष वनमें बसकर और पिताके वचनोंका पालन कर फिर आकर (तुम्हारे) चरणोंके दर्शन करूंगा (इसलिये) मनको मैला मत करो ॥ ५५ ॥

चौ०–बचनबिनीत मधुर रघुवरके ❀ शरसम लगे मातुउर करके ॥ १ ॥
सहमि सूखि सुनि सीतल बानी ❀ जिमि जवासपर पावसपानी ॥ २ ॥

रामजीके नीतिके भरे और मीठे वचन माताके हृदयमें बाणके समान लगे और खटकने लगे ॥ १ ॥ रामजीकी शीतल वाणीको सुनके माता मुरझा कर ऐसी सूख गई मानों जवासे पर बर्सातका पानी पड़ा हो ॥ २ ॥

कहि नजाइ कछु हृदयविषादू ❀ जनु सहमे करि केहरिनादू ॥ ३ ॥
नयनसलिल तनु थर थर कांपी ❀ माँजहि खाइ मीन जनु व्यापी ॥ ४ ॥

मनका दुःख कहा नहीं जाता मानों सिंहके शब्दको सुनकर हथिनी विकल होगई ॥ ३ ॥ नेत्रोंमें जल आगया, शरीर थर २ काँपने लगा, मानों मछलिको मांजा सतागया ॥ ४ ॥

धरि धीरज सुतवदन निहारी ❀ गद्गदवचन कहति महतारी ॥ ५ ॥
तात पितहिं तुम प्रानपियारे ❀ देखि मुदितचित चरित तुम्हारे ॥ ६ ॥

---

(१) मांजा कहते हैं वर्षाके प्रथम जलको, उसे पीकर पछली बड़ी दुखी होती है ॥

धीरज धर कर और पुत्रका मुख देखकर माता भरे कंठसे वचन कहने लगी ॥ ५ ॥ हे पुत्र! तुम पिताको प्राणोंसे प्यारे हो और वे तुम्हारे चरित्र देख मनमें नित्य प्रसन्न होते थे ॥ ६ ॥

राजदेनकहँ शुभदिन साधा ❀ कहेउ जान वन केहि अपराधा ॥ ७ ॥
तात सुनावहु मोहिं निदानू ❀ को दिनकरकुल भयउ कृसानू ॥ ८ ॥

और राज्य देनेके लिये अच्छा दिन विचारा था, अब किस अपराधसे बन जानेके लिये कहा है ॥ ७ ॥ हे पुत्र! मुझे कारण सुनाओ. सूर्यवंशके जलानेके लिये कौन अग्नि हुआ ॥ ८ ॥

दो०–निरखि रामरुख सचिवसुत, कारन कहेउ बुझाइ ॥ ❀
सुनि प्रसंग रहि मूकगति, दशा बरनि नहिं जाइ ॥ ५६ ॥ ❀

सुमंत मंत्रीके पुत्रने रामचन्द्रजीका रुख देख समझाकर कारण कहा. उस प्रसंगको सुनकर रानी ऐसी गूँगीसी होरही कि उसकी दशावर्णन नहीं कीजाती ॥ ५६ ॥

चौ०–राखि न सकहि न कहिसक जाहू ❀ दुहूँभाँति उर दारुन दाहू ॥ १ ॥
लिखत सुधाकर लिखिगा राहू ❀ विधिगति वाम सदा सबकाहू ॥ २ ॥

न तौ रखसक्ती है न जानेकों कह सक्ती है. दोनों भाँतिसे हृदयमें कठिन जलन होरही है ॥ १ ॥ विधाता चन्द्रमा लिखतेमें राहु लिखगया, अर्थात् देते तौ राज्यथे और देदिया वन! इसलिये ब्रह्माकी गति सदा सबके लिये टेढ़ी हैं ॥ २ ॥

धरमसनेह उभय मति घेरी ❀ भइ गति साँपछुछूँदरि केरी ॥ ३ ॥
राखौं सुतहिं करौं अनुरोधू ❀ धरमजाइ अरु बंधु विरोधू ॥ ४ ॥

धर्म और प्रीति दोनोंने (कौशल्याकी) बुद्धि घेरली (और रानीकी) सांप छछूँदरकीसी दशा हो गई, अर्थात् जो सांप छछूँदरको छोड़दे तौ अंधा होजाय और खाय तौ कुष्टी होय ॥ ३ ॥ (और विचारने लगी कि) जो रोक करके पुत्रको रक्खूँ तौ धर्म जायगा और भाईसे विरोध होगा ॥ ४ ॥

कहौं जान बन तौ बड़िहानी ❀ संकटसोचविकल भइ रानी ॥ ५ ॥
बहुरि समुझि तियधरम सयानी ❀ रामभरत दोउ सुत सम जानी ॥ ६ ॥

(और जो) वनके जानेको कहती हूँ तौ बड़ी हानि होती है (इस भाँति) कष्ट और सोचमें रानी व्याकुल होगई ॥ ५ ॥ फिर चतुर रानीने स्त्रियोंका पतिव्रत धर्म समझ कर और राम और भरत दोनों पुत्रोंको बराबर जान कर ॥ ६ ॥

सरलसुभाव राममहतारी ❀ बोलीवचन धीरधरि भारी ॥ ७ ॥
तात जाउँबलि कीन्हेउ नीका ❀ पितुआयसु सबधर्मक टीका ॥ ८ ॥

सीधे स्वभाववाली रामचन्द्रजीकी माता बड़ा धीरज धरके वचन बोली कि ॥७॥ हेपुत्र! मैं तुम्हारी बलैयाँ लूँ, (तुमने) अच्छा किया; पिताकी आज्ञा (का पालन करना) सब धर्मोंका तिलक है८

दो०–राज दीन कह दीन्ह बन, मोहिं न दुख लव लेश ॥ ❀
तुमबिनु भरतहिं भूपतिहिं, प्रजहिं प्रचंडकलेश ॥ ५७ ॥ ❀

राज्य देनेको कहकर बन दिया (इसका तौ) मुझको कुछभी दुःख नहीं है, परंतु तुम्हारे विना भरत, राजा, तथा प्रजाको बड़ा क्लेश होगा ॥ ५७ ॥

चौ०–जो केवलपितुआयसु ताता ❀ तो जनिजाहु जानि बड़िमाता ॥ १ ॥
जो पितुमातु कहेउ बन जाना ❀ तो कानन शतअवधसमाना ॥ २ ॥

सो हे प्यारे ! जो केवल पिताहीकी आज्ञा हो तौ माताको बड़ी[1] जान कर मत जाओ ॥ १ ॥ और जो पिता माता (दोनों) ने वन जानेको कहा है, तौ वन सौ अयोध्याओंकी बराबर है ॥ २ ॥

पितु बनदेव मातु बनदेवी ❀ खग मृग चरनसरोरुहसेवी ॥ ३ ॥
अंतहु उचित नृपहिं बनवासू ❀ वय विलोकि हिय होत हरासू ॥ ४ ॥

वनके देवता तौ पिता होंगे और वनदेवी माता होंगी और पक्षी, तथा मृग, तुम्हारे चरण-कमलोंके सेवक होंगे ॥ ३ ॥ और राजाओंको तौ अंतमें वनका वास करना उचितही है परन्तु तुम्हारी अवस्थाको देख हृदय अकुलाता है ॥ ४ ॥

बड़भागी बन अवध अभागी ❀ जो रघुवंशतिलक तुम त्यागी ॥ ५ ॥
जो सुत कहौं संग मोहिं लेहू ❀ तुम्हरे हृदय होइ संदेहू ॥ ६ ॥

हे रघुवंशके तिलक ! वन तौ बड़े वड़भागी हैं और अयोध्यापुरी अभागी है जो तुमने इसे छोड़ा ॥ ५ ॥ हे लाल ! जो कहूँ कि मुझे साथ लेचलो तौं तुम्हारे मनमें सन्देह होगा ॥ ६ ॥

पुत्र परमप्रिय तुम सबहीके ❀ प्राण प्राणके जीवन जीके ॥ ७ ॥
ते तुम कहहु मातु बन जाऊँ ❀ मैं सुनि वचन बैठि पछिताऊँ ॥ ८ ॥

हे पुत्र ! तुम सभीके अधिक लाड़ले हो, प्राणोंकेभी प्राण और जीवोंके जीवन हो ॥ ७ ॥ सो तुम कहते हो कि माता मैं वनको जाऊँ, और मैं यह सुनकर बैठी[2] पछताती हूँ (इसलिये मेरा स्नेह झूठाही है) ॥ ८ ॥

दो०–यहि बिचारि नहिं करउँ हठ, झूँट सनेह बढ़ाइ ॥ ❀
मानि मातुकर नात बलि, सुरति बिसरि जनि जाइ ॥ ५८ ॥ ❀

यों विचार, झूठी प्रीति बढ़ाकरभी हठ नहीं करती हूँ. अब मैं तुम्हारी बलिजाऊँ, माताका नाता मानकर तुम्हें मेरी याद न भूल जाय ॥ ५८ ॥

चौ०–देव पितर सब तुमहिं गुसाँई ❀ राखहिं पलकनयनकी नाईं ॥ १ ॥
अवध अंबु प्रिय परिजन मीना ❀ तुम करुणाकर धरमधुरीना ॥ २ ॥

(अब आशीर्वाद देती हैं कि) हे पुत्र ! सब देवता और पित्रीश्वर तुमको पलकोंमें नेत्रोंकी भाँति रक्षा करैं ॥ १ ॥ (चौदह वर्ष वनोवासकी) अवधि सोही जल[3] है, प्यारे कुटुम्बी मछली हैं और तुम करुणाके स्थान और धर्मके भारको धारण करनेवाले हो ॥ २ ॥

अस बिचारि सोइ करहु उपाई ❀ सबहिं जियत जेहि भेटहु आई ॥ ३ ॥
जाहु सुखेन बनहिं बलिजाऊँ ❀ करि अनाथ जन परिजन गाऊँ ॥ ४ ॥

ऐसे विचार वही उपाय करो जिससे सबके जीतेही आकर मिलो ॥ ३ ॥ मैं बलि जाती हूँ तुम सेवक कुटुम्बी और गाँवको अनाथ करके सुखपूर्वक वनको जाओ ॥ ४ ॥

---

(१) जैसा कहा है कि "पितुर्दशगुणा माता गौरवेणातिरिच्यते" अर्थात् पितासे माताका दशगुना गौरव अधिक होता है ॥ (२) यहाँ कौशल्याने अपनी आज्ञासे कैकेयीकी आज्ञाका बड़ापन दिखाया. जैसा कहा है कि "मातुर्दशगुणा मान्या विमाता धर्मभीरुणा" अर्थात् धर्मसे भय खानेवालेको मातासे (विमाताकी) दशगुनी मान्यता करनी चाहिये—

(३) भाव यह है कि १४ वर्षकी अवधितक तौ जीती रहैंगी, और फिर तौ जैसे जलविन मीन दीन हो प्राण छोड़ देती हैं इस प्रकार हमभी प्राण छोड़ बैठेंगी. करुणानिधान कहनेसे यह भाव है कि दया करके आजाना और धर्मधुरीनसे यह भाव है कि पिताकी आज्ञासे जानाही पड़ैगा—

सबकर आजु सुकृतफल बीता ❀ भयउ कराल काल बिपरीता ॥ ५ ॥
बहुबिधि बिलपि चरनलपटानी ❀ परम अभागिनि आपुहि जानी ॥ ६ ॥

आज सबके पुण्योंका फल जाता रहा और भयंकर काल उलटा हुआ ॥ ५ ॥ बहुत भाँति विलाप करके चरणोंसे लिपट गई और अपनेको बड़ी अभागिनी जाना ॥ ६ ॥

दारुन दुसह दाह उर व्यापा ❀ बरनि न जाइ बिलापकलापा ॥ ७ ॥
राम उठाइ मातु उर लावा ❀ कहि मृदुबचन बहुत समुझावा ॥ ८ ॥

कठिन और जो सही न जाय ऐसी जलन हृदयमें छागई और ऐसा अधिक विलाप किया कि वर्णन नहीं किया जाता ॥ ७ ॥ रामचन्द्रजीने माताको उठाकर हृदयसे लगा लिया और मीठे वचन कहकर बहुत समुझाया ॥ ८ ॥

दो०-समाचार तेहि समय सुनि, सीय उठी अकुलाइ ॥ ❀
जाइ सासपदकमलजुग, बंदि बैठि सिरनाइ ॥ ५९ ॥ ❀

उससमय सीताजी समाचार सुन अकुलाकर उठी और जाकर सासूके चरणकमलोंको वन्दना कर और माथा नवाकर बैठगईं ॥ ५९ ॥

चौ०-दीन्ह असीस सास मृदुबानी ❀ अतिसुकुमारि देखि अकुलानी ॥ १ ॥
बैठि नमितमुख सोचइ सीता ❀ रूपराशि पति प्रेमपुनीता ॥ २ ॥

सासूने मीठी वाणीसे अशीश दी (परन्तु सीताको) बहुत सुकुमारी देखकर अकुलाईं ॥ १ ॥ रूपकी खान और पतिसे सच्चा प्रेम रखनेवाली सीताजी नीचा मुख करके सोचने लगीं ॥ २ ॥

चलन चहत बन जीवननाथू ❀ केहि सुकृतीसन होइहि साथू ॥ ३ ॥
की तनुप्रान कि केवलप्राना ❀ बिधि करतब कछु जाइ न जाना ॥ ४ ॥

प्राणनाथ (रामचन्द्र) वनको जाया चाहते हैं, किस पुण्यसे मेरा साथ हो ॥ ३ ॥ यातौ शरीर और प्राण (दोनों) से अथवा केवल प्राणोंहीसे (साथ होगा), ब्रह्माकी करतूत कुछ जानी नहीं जाती ॥ ४

चारुचरननख लेखति धरनी ❀ नूपुरमुखर मधुर कवि बरनी ॥ ५ ॥
मनहुँ प्रेमबस बिनती करहीं ❀ हमहिं सीयपद जनि परिहरहीं ॥ ६ ॥

सुन्दर चरणोंके नखोंसे पृथ्वीको कुरेदती हैं, पाजेवोंके मधुर शब्दको कवि ऐसा वर्णन करते हैं कि ॥ ५ ॥ मानों पाजेव स्नेहके वश प्रार्थना करते हैं कि हमको सीताजीके चरण न छोड़ें ॥ ६ ॥

मंजुबिलोचन मोचति वारी ❀ बोली देखि राममहतारी ॥ ७ ॥
तात सुनहु सिय अतिसुकुमारी ❀ सासससुरपरिजनहिं पियारी ॥ ८ ॥

सुन्दर नेत्रोंसे जल बहाती हुई देख रामचन्द्रकी माता बोली ॥ ७ ॥ हे पुत्र! सुनों सीता बड़ी सुकुमारी है और सासु, श्वसुर और कुटुंबियोंको प्यारी है ॥ ८ ॥

दो०-पिताजनक भूपालमनि, ससुर भानुकुलभानु ॥ ❀
पति रविकुलकैरवबिपिन, बिधु गुणरूपनिधानु ॥ ६० ॥ ❀

जिसके पिता तौ राजाओंके शिरोमणि जनकजी हैं, और सूर्यवंशके सूर्य (राजा दशरथ) श्वशुर हैं, और गुण और रूपके निधान तथा सूर्यवंशरूपी कुमुदिनीके वनको खिलानेके लिये चन्द्रमाके समान ऐसे तुम पति हो ॥ ६० ॥

चौ०-मैं पुनि पुत्रवधूप्रिय पाई ❀ रूपरासि पुन सीलसुहाई ॥ १ ॥
नयनपुतरि इव प्रीतिबढ़ाई ❀ राखेउँ प्रान जानकिहि लाई ॥ २ ॥

फिर मैंने रूपकी खान गुण और शीलसे शोभायमान प्यारी बेटेकी बहू पाई ॥१॥ और नेत्रोंकी पुतलीके समान स्नेह बढ़ाकर जानकीजीमें अपने प्राण लगाकर रक्खे हैं ॥ २ ॥

कलपबेलि जिमि बहुविधि लाली ❀ सींचि सनेहसलिल प्रतिपाली ॥ ३ ॥
फूलतफलत भयउ विधिबामा ❀ जानि न जाइ काहपरिणामा ॥ ४ ॥

कल्पलताकी भांति बहुतप्रकारसे लाड़ किया है और प्रेमरूपी जलसे सींचकर पालन किया है ॥ ३ ॥ (उस लताके)फूलते फलतेमें ब्रह्मा टेढ़ा होगया सो न जाने क्या फल होगा ॥ ४ ॥

पलँगपीठ तजि गोद हिंडोरा ❀ सिय न दीन पगु अवनि कठोरा ॥ ५ ॥
जिवनमूरि जिमि जुगवत रहऊँ ❀ दीपबाति नहिं टारन कहऊँ ॥ ६ ॥

पलँग, सिंहासन, हिंडोला और गोदको छोड़कर सीताजीने कठोर पृथ्वीमें पैर नहीं दिया ॥ ५ ॥ जीवन मूरिकी भांति देखती रहती हूं, दीपककी बत्ती उसकाने तककोभी नहीं कहा ॥ ६ ॥

सोइ सिय चलनचहति बन साथा ❀ आयसु काह होइ रघुनाथा ॥ ७ ॥
चन्द्रकिरनरसरसिक चकोरी ❀ रविरुख नयन सकै किमि जोरी ॥ ८ ॥

वही सीताजी (तुम्हारे) साथ बनको चलना चाहती हैं, हे रामचन्द्र ! क्या आज्ञा होती है॥७॥ चन्द्रमाकी किरणोंके रसकी चाहनेवाली चकोरी सूर्यकी ओर नेत्र कैसे जोड़सकती है ॥ ८ ॥

दो०-करि केहरि निशिचर चरहिं, दुष्टजंतु बनभूरि ॥ ❀
विषबाटिका कि सोह सुत, सुभग सजीवनमूरि ॥ ६१ ॥ ❀

हाथी सिंह और राक्षस बहुतसे दुष्ट जीव वनमें फिरते हैं, सो हे पुत्र ! कहीं विषकी बगीचीमें सुन्दर सजीवन मूरिभी शोभित होती है ? अर्थात् नहीं होती ॥ ६१ ॥

चौ०-बनहित कोल किरात किशोरी ❀ रची बिरंचि विषयसुख भोरी ॥ १ ॥
पाहन कृमि जिमि कठिन सुभाऊ ❀ तिनहिं कलेश न कानन काऊ ॥ २ ॥

ब्रह्माने वनके लिये कोल और भीलोंकी कन्या बनाई हैं जो विषयादि सुखोंसे भोरी कहिये उनको नहीं जाननेवाली होती हैं ॥ १ ॥ पत्थरके कीड़ोंकी भाँति जिनका कठिन स्वभाव है उनको वनमें कुछ कलेश नहीं होता ॥ २ ॥

की तापसतिय कानन जोगू ❀ जिन तपहेतु तजे सब भोगू ॥ ३ ॥
सिल बन बसिहि तात केहि भाँती ❀ चित्रलिखित कपि देखि डराती ॥ ४ ॥

वा तपस्वियोंकी स्त्रियां वनके योग्य होती हैं जिन्होंने तपस्याके लिये सब भोग छोड़ दिये हैं ॥३॥ हे पुत्र ! सीताजी वनमें किस भांति बसेंगी जो चित्रके लिखे हुये बन्दरको देखकर भी डरतीहैं ॥ ४ ॥

सुरसर सुभग बनज बनचारी ❀ डावर जोग कि हंसकुमारी ॥ ५ ॥
अस विचारि जस आयसु होई ❀ मैं सिखदेउँ जानकिहि सोई ॥ ६ ॥

मानसरोवरके सुन्दर कमलोंके वनमें फिरनेवाली हंसकी कुमारी क्या पोखरके योग्य होती है? ॥ ५ ॥ ऐसे विचार जैसी आज्ञा हो मैं वही शिक्षा सीताजीको दूं ॥ ६ ॥

जो सिय भवन रहै कह अम्बा ❀ मोकहँ होइ प्रानअवलम्बा ॥ ७ ॥
सुनि रघुबीर मातु प्रियबानी ❀ शीलसनेहसुधा जनुसानी ॥ ८ ॥

---

(१) सीधा अर्थ तो यही है जो लिखा, परन्तु कहीं २ पुराणान्तरोंमें जो कथा पाई जाती है उसेभी लिखते हैं, वह यों कि अवधमें कोई राक्षस आकर उपद्रव मचाताथा तब वसिष्ठादि महामुनियोंने अपने ज्ञानसे यह निश्चय किया कि जो सीताजी अपने हाथसे दियेकी बत्ती आगेको उसका देवें तो उपद्रव नहो, परन्तु कौशल्याजीने इस बातको न माना जौर कहा कि मैं जानकीको इतनाभी परिश्रम न दूंगी, सो वही बात यहां कहती हैं ॥

फिर माता यह कहने लगी कि सीता घर रहै तौ मुझको प्राणोंका सहारा होगा ॥७॥ रामचन्द्रजीने माताकी प्यारी वाणी जो मानों शील सनेहरूपी अमृतसे सनी हुई है उसे सुनकर ॥ ८ ॥

दो०-कहि प्रियबचन विवेकमय, कीन्ह मातु परितोष ॥ ❀
लगे प्रवोधन जानकिहिं, प्रगट विपिनगुनदोष ॥ ६२ ॥ ❀

ज्ञानके प्यारे वचन कहकर माताको संतुष्ट किया और वनके गुणदोष प्रगट करके सीताजीको समझाने लगे ॥ ६२ ॥

चौ०-मातुसमीप कहत सकुचाहीं ❀ बोले समय समुझि मनमाहीं ॥ १ ॥
राजकुमारि सिखावन सुनहू ❀ आनभाँति जिय जनि कछु गुनहू ॥ २ ॥

माताके पास कहतेमें सकुचते हैं परन्तु मनमें समय विचारकर बोले ॥१॥ हे राजकुमारि ! शिक्षा सुनो, और भांतिसे कुछ मनमें मत विचारना (कि हमारा त्याग करते हैं) ॥ २ ॥

आपन मोर नीक जो चहहू ❀ बचन हमार मानि गृह रहहू ॥ ३ ॥
आयसु मोर साससेवकाई ❀ सबबिधि भामिनि भवनभलाई ॥ ४ ॥

जो अपना और मेरा भला चाहो तौ हमारा बचन मानकर घर रहो ॥ ३ ॥ हे भामिनि ! मेरी आज्ञा यह है कि सासुकी सेवा करो और घरमें सब भांतिसे भलाई है ॥ ४ ॥

इहिते अधिक धरम नहिं दूजा ❀ सादर साससुरपदपूजा ॥ ५ ॥
जबजब मातु करिहिं सुधि मोरी ❀ होइहिं प्रेमबिकल मति भोरी ॥ ६ ॥

और आदरसहित सासुश्वशुरके चरणोंकी सेवा करनेसे बड़ा दूसरा धर्म नहीं है ॥ ५ ॥ जब २ माता मेरी सुधि करैं और भोली मतिसे स्नेहमें व्याकुल होजायँ ॥ ६ ॥

तबतब तुम कहि कथा पुरानी ❀ सुंदरि समुझायहु मृदुबानी ॥ ७ ॥
कहौं सुभाव शपथशत मोहीं ❀ सुमुखि मातुहित राखौं तोहीं ॥ ८ ॥

हे सुन्दरि ! तव २ तुम पुरानी कथा कहकर मीठी वाणीसे समझाना ॥७॥ हे सुन्दरमुखी! मैं सच्चे मनसे कहता हूँ और मुझे सौ सौगंद हैं कि मैं तुझे माताके हितके लिये रखताहूँ ॥ ८ ॥

दो०-गुरुश्रुतिसंमत धरमफल, पाइय विनहिं कलेश ॥ ❀
हठबस सब संकटसहे, गालव नहुष नरेश ॥ ६३ ॥ ❀

(यहाँ) गुरु और वेदसे कहे हुए धर्मके फलको विना कलेशके पाओगी, और हठके वश तौ गालव और नहुष (आदि) राजाओंने जैसे सब क्लेश भोगे ऐसे भोगोगी ॥ ६३ ॥

---

(१) गालव मुनि विश्वामित्रके शिष्य थे । विद्या पढ़कर गुरुसे वड़ा हठ किया कि दक्षिणा लाऊं ? गुरुने कहा ८०० श्यामकर्ण घोड़े लाओ; अनेक राजाओंसे घोड़े मांगते फिरे और अंतमें जब पूरा न पड़ा तौ हठके वश वड़े २ संकट सहे ॥ (२) राजा नहुष चन्द्रवंशी प्रतिष्ठानपुरका राजा वड़ा ज्ञानी और धर्मात्मा था। एकवार इन्द्र वृत्रासुरके भयसे भाग मानसरोवरमें जाछुपे, तव वृहस्पतिजीने इन्द्रपदपर राज्यप्रबंधकेलिये इसे बैठाया। इसने नीतिके साथ प्रवंध करना आरंभ किया। परन्तु एकदिन इसके चित्तमें ऐसी नीच इच्छा हुई कि इन्द्राणीके साथ भोग करनेके लिये कहला भेजा । यह सुन रानीको वड़ा क्षोभ हुआ और उसने राजासे कहा भेजा कि यदि तुम पालकीमें बैठकर और उसे ब्राह्मणोंसे उठवाकर आओ तौ भोगकर सक्तेहो । राजा कामांध हो रहाथा, पालकीमें बैठ सप्तऋषियोंसे उठवाकर चला । तव ऋषि धीरे २ चलते थे और यह शीघ्रता करता था, इसपर ऋषियोंने पालकी पटक शाप दिया कि तू मृत्युलोकमें जाकर सर्प हो, तव राजा मृत्युलोकमें आकर सर्प हुआ और उसका युधिष्ठिरने उद्धार किया!

चौ०–मैं पुनि करि प्रमान पितुबानी ❀ बेगि फिरव सुनु सुमुखि सयानी ॥ १ ॥
दिवस जात नहिं लागहि वारा ❀ सुंदरि सिखवनु सुनहु हमारा ॥ २ ॥

हे सुन्दरमुखवाली ! हे सयानी ! सुन. मै पिताका वचन पालनकर फिर जल्दी लौटूँगा ॥ १ ॥ और दिन जातेमें देर नहीं लगती है. हे सुन्दरि ! हमारी शिक्षा सुनो ॥ २ ॥

जो हटकरहु प्रेमबस वामा ❀ तौ तुम दुख पाउव परिनामा ॥ ३ ॥
कानन कठिन भयंकर भारी ❀ घोरघाम हिम वारि वयारी ॥ ४ ॥

हे सुन्दरि ! जो स्नेहसे हठ करोगी तौ तुम अंतमें दुःख पाओगी ॥ ३ ॥ वन बड़ा कठिन और डरावना है (वहां) धूप, सर्दी, जल और पवन बहुत सताते हैं ॥ ४ ॥

कुस कंटक मगु कंकर नाना ❀ चलव पयादेहि विनुपदत्राना ॥ ५ ॥
चरनकमल मृदु मंजु तुम्हारे ❀ मारग अगम भूमिधर भारे ॥ ६ ॥

मार्गमें डाभ कांटे और भांति २ के कङ्कड़ आदि हैं जिनमें बिनाही जूतेके पैदल चलना पड़ेगा ॥ ५ ॥ तुम्हारे चरण सुन्दर और कोमल हैं और रस्तेमें वड़े २ कठिन पहाड़ हैं ॥ ६ ॥

कन्दर खोह नदी नद नारे ❀ अगम अगाध नजाहिं निहारे ॥ ७ ॥
भालु वाघ वृक केहरि नागा ❀ करहिं नाद सुनि धीरज भागा ॥ ८ ॥

कन्दरा, खोह, नदी, नाले, और खार, ऐसे अगम और गहरे हैं कि जो देखे नहीं जाते ॥ ७ ॥ रीछ सिंह भेड़िये व्याघ्र और हाथी ऐसा शब्द करते हैं कि सुनकर धीरज भागता है ८ ॥

दो०–भूमिसयन बलकलवसन, असन कंदफलमूल ॥ ❀
तेकि सदा सबदिन मिलहिं, समय समय अनुकूल ॥ ६४ ॥ ❀

पृथ्वीपर सोना, छालके कपड़े, कंदमूल फलोंका भोजन, सोभी क्या सदा सब दिन मिलेंगे ? अर्थात् नहीं, समय २ के अनुसार मिलेंगे ॥ ६४ ॥

चौ०–नरअहार रजनीचर करहीं ❀ कपटवेष बिधिकोटिन धरहीं ॥ १ ॥
लागै अति पहारकर पानी ❀ बिपिनविपति नहिं जाइ बखानी ॥ २ ॥

(वहाँ) राक्षस मनुष्योंका भोजन करते हैं और करोडो भाँतिसे कपटके वेष धारण करते हैं ॥ १ ॥ पहाड़ोंका पानी अत्यंत लगता है बनका कष्ट वर्णन नहीं किया जाता ॥ २ ॥

व्यालकराल बिहग बन घोरा ❀ निशिचरनिकर नारिनर चोरा ॥ ३ ॥
डरपहिं धीर गहन सुधि आए ❀ मृगलोचनि तुम भीरु सुभाए ॥ ४ ॥

बनमें भयंकर सर्प और डरावने पक्षी रहते हैं और राक्षसोंके झुंडभी स्त्री पुरुषोंके चुरानेवाले होतेहैं ॥३॥ बनकी सुधि करनेसे धीरजवानभी डरते हैं और हे मृगनयनी ! तुम तौ स्वभावहीसे डरपोकहो४

हंसगवनि तुम नहिं बनजोगू ❀ सुनि अपजस देहहिं मोहिं लोगू ॥ ५ ॥
मानस सलिल सुधा प्रतिपाली ❀ जियइ कि लवणपयोधि मराली ॥ ६ ॥

तुम हंसके समान चलनेवाली वनके योग्य नहीं हो लोग सुनकर मुझे अपयश देंगे ॥ ५ ॥ मानसवरोवरके अमृतसमान जलसे पाली हुई हंसिनी क्या नोंनके समुद्रमें जी सक्ती है ॥ ६ ॥

नव रसालबन बिहरनसीला ❀ सोह कि कोकिल बिपिनकरीला ॥ ७ ॥
रहहु भवन अस हृदयविचारी ❀ चंद्रबदनि दुखकानन भारी ॥ ८ ॥

नवीन आमोंके बनमें विहार करनेवाली कोयल क्या करीलके बनमें शोभा पाती है ॥७॥ ऐसे मनमें विचार कर घर रहो, हे चन्द्रमुखी ! बनमें बडे २ दुःख हैं ॥ ८ ॥

दो०-सहज सुहृद गुरु स्वामिसिख, जो न करै सिरमानि ॥
सो पछिताइ अघाइउर, अवसिहोइ हितहानि ॥ ६५ ॥

जो सहज, कहिये विनाकारण, सुहृद, कहिये भला चाहनेवाले ऐसेगुरु, और स्वामीकी शिक्षाको माथे धरकर नहीं करता है वह हृदयमें पूरा पछताता है और उसके हितकी अवश्य हानिहोतीहै॥६५॥

चौ०-सुनि मृदुबचन मनोहर पियके ❀ लोचन ललित भरे जल सियके ॥ १ ॥
सीतलसिख दाहक भइ कैसे ❀ चकइहिं सरदचांदनी जैसे ॥ २ ॥

स्वामीके मनहरन मीठे वचन सुनकर सीताजीके नेत्रोंमें जल भर आया ॥ १ ॥ शीतल शिक्षाभी कैसी जलानेवाली हुई जैसी चकईको शरद (ऋतु) की चाँदनी ॥ २ ॥

उतर न आव बिकल बैदेही ❀ तजन चहत मोहिं परमसनेही ॥ ३ ॥
बरबस रोकि बिलोचनवारी ❀ धरि धीरज उर अवनिकुमारी ॥ ४ ॥

सीताजीसे उत्तर नहीं वनता, व्याकुल होगई (और विचारने लगीं कि) अत्यंत प्रेमीका त्यागना मुझसे सहा नहीं जाता ॥ ३ ॥ सीताजी नेत्रोंके जलको वरवस रोक मनमें धीरज धर ॥ ४ ॥

लागि सासपद कह करजोरी ❀ छमब देवि बड़ि अबिनय मोरी ॥ ५ ॥
दीन्ह प्रानपति मुहि सिखसोई ❀ जेहिं बिधि मोर परमहित होई ॥ ६ ॥
मैं पुनि समुझि दीख मनमाहीं ❀ प्रियबियोगसम दुख जग नाहीं ॥ ७ ॥

सासूके चरण लगके हाथ जोड़कर कहने लगीं हे देवि ! मेरी इस वड़ी ढीठताको क्षमा करना ॥ ५ ॥ प्राणपतिने मुझे वही शिक्षा दी है जिससे मेरा वड़ा कल्याण हो ॥ ६ ॥ फिर मैंने मनमें विचारकर देखा कि स्वामीके वियोगके समान संसारमें दुःख नहीं ॥ ७ ॥

दो०-प्राननाथ करुनायतन, सुंदर सुखद सुजान ॥
तुमबिनु रघुकुलकुमुदबिधु, सुरपुर नरकसमान ॥ ६६ ॥

(फिर सीता रामसे कहने लगी) हे प्राणनाथ ! हे दयानिधान ! हे सुन्दर आनन्ददेनेवाले ! हे चतुर ! हे रघुवंशरूपी कुमुदको चन्द्रमाके समान ! तुम्हारे विना स्वर्गभी नरकके समान है॥६६॥

चौ०-मातु पिता भगिनी प्रिय भाई ❀ प्रिय परिवार सुहृद समुदाई ॥ १ ॥
सास ससुर गुरु सजन सहाई ❀ सुत सुंदर सुसील सुखदाई ॥ २ ॥

माता, पिता, वहन, प्यारे भाई, प्यारा कुटुंब और मित्रोंकी मंडली ॥ १ ॥ सासु, श्वसुर, गुरु, अच्छे लोग, सहायक, और सुन्दर सुशील पुत्र ये सुख देनेवाले होते हैं (परंतु) ॥ २ ॥

जहँलगि नाथ नेह अरु नाते ❀ पियबिनु तियहिं तरनिते ताते ॥ ३ ॥
तनु धन धाम धरनि पुरराजू ❀ पतिविहीन सब सोक समाजू ॥ ४ ॥

हे स्वामी ! जहाँतक प्रेम और नाते हैं स्त्रीको पतिके विना सूर्यसेभी ताते हैं ॥ ३ ॥ शरीर, धन, धाम पृथ्वी और नगरका राज्य ये सब पतिके विना शोकके समान हैं ॥ ४ ॥

भोग रोगसम भूषन भारू ❀ जमजातनासरिस संसारू ॥ ५ ॥
प्राननाथ तुम बिनु जगमाहीं ❀ मोकहँ सुखद कतहुँ कोउ नाहीं ॥ ६ ॥

और भोग रोगके समान, गहने वोझके समान और संसार यमयातनाके समान है ॥ ५ ॥ हे प्राणनाथ ! तुम्हारे विना संसारमें मुझको कहीं कोईभी सुख देनेवाला नहीं है ॥ ६ ॥

जियबिनु देह नदी बिनुवारी ❀ तैसेहिं नाथ पुरुषबिनु नारी ॥ ७ ॥
नाथ सकलसुख साथ तुम्हारे ❀ सरदबिमलबिधु बदननिहारे ॥ ८ ॥

हे स्वामी ! जैसे विना जीवके देह और विना जलके नदी शोभा नहीं पाती है तैसेही विना पुरुषके स्त्री होती है ॥ ७ ॥ हे स्वामी ! शरदके निर्मल चन्द्रमाके समान आपका मुख देखकर (जो दुःख आपने कहे हैं वे) सब आपके साथ रहनेमें सुखही होंगे ॥ ८ ॥

दो०-खग मृग परिजन नगर वन, बलकल विमल दुकूल ॥ ❀
नाथसाथ सुरसदनसम, परनसाल सुखमूल ॥ ६७ ॥ ❀

स्वामीके साथमें पक्षी और मृग तौ कुटुम्बी होंगे, वन नगर होगा, छाल रेशमी वस्त्र होंगे और पर्णकुटी स्वर्गके समान सुखदायक होगी ॥ ६७ ॥

चौ०-वनदेवी वनदेव उदारा ❀ करिहैं सासससुरसम प्यारा ॥ १ ॥
कुस किसलय साँथरी सुहाई ❀ प्रभुसँग मंजु मनोज तुराई ॥ २ ॥

वनकी देवी और वनके देवता सुन्दर सासुश्वशुरके समान प्यार करैंगे ॥ १ ॥ स्वामीके साथमें कुश और पत्तोंका सुन्दर बिछौना कामदेवकी सेजके समान होगा ॥ २ ॥

कंदमूलफल अमिय अहारू ❀ अवधसौधसतसरस पहारू ॥ ३ ॥
छिनुछिनु प्रभुपदकमल विलोकी ❀ रहिहौं मुदित दिवसजिमि कोकी ॥ ४ ॥

कन्दमूलफलका भोजन अमृतके समान और पर्वत अयोध्याके सौ राजमहलोंके समान होंगे ॥ ३ ॥ और स्वामीके कमलसमान चरणोंको छिन २ में देखकर ऐसी प्रसन्न रहूँगी जैसी दिनमें चकवी रहती है ॥ ४ ॥

बनदुख नाथ कहेउ बहुतेरे ❀ भय विषाद परिताप घनेरे ॥ ५ ॥
प्रभुबियोग लवलेससमाना ❀ सब मिलिहोहिं न कृपानिधाना ॥ ६ ॥

स्वामीने बनके बहुतसे दुःख भय संताप और अनेक क्लेश कहे ॥ ५ ॥ (परंतु) हे कृपानिधान ! वे सब मिलकर स्वामीके वियोगके लवलेशकी बराबरभी तौ नहीं होसक्ते ॥ ६ ॥

अस जियजान सुजान सिरोमनि ❀ लेइय संग मोहिं छाँडिय जनि ॥ ७ ॥
बिनती बहुत करौं का स्वामी ❀ करुनामय उरअंतरजामी ॥ ८ ॥

हे चतुरशिरोमणि ! ऐसे मनमें जान मुझे साथ ले चलो, छोड़ो मत ॥७॥ हे प्रभो ! बहुत क्या विनती करूँ ! आप दयालु और घट २ की जाननेवाले हो ॥ ८ ॥

दो०-राखिय अवध जो अवधिलगि, रहत जानिअहिं प्रान ॥ ❀
दीनबंधु सुंदर सुखद, सील सनेहनिधान ॥ ६८ ॥ ❀

हे दीनबंधु ! हे सुन्दर आनन्दके देनेवाले ! हे शील और प्रेमके स्थान ! जो (१४ वर्षकी) अवधितक प्राणोंका जीते जानों तौ अयोध्यामें रक्खो (नहीं तौ साथ लेचलो) ॥ ६८ ॥

चौ०-मोहिं मग चलत न होइहि हारी ❀ छिनछिन चरनसरोज निहारी ॥ १ ॥
सबहिं भाँति पियसेवा करिहौं ❀ मारगजनित सकलस्रम हरिहौं ॥ २ ॥

मुझे क्षण २ में (आपके) चरणकमलोंके देखनेसे मार्ग चलनेमें हार नहीं होगी ॥ १ ॥ सब भाँतिसे प्रभुकी टहल करूंगी और मार्गमें जो खेद होगा उसको दूर करदिया करूंगी ॥ २ ॥

पाँव पखारि बैठि तरुछाहीं ❀ करिहौं बात मुदित मनमाहीं ॥ ३ ॥
स्रमकनसहित स्याम तनु देखैं ❀ कहँ दुख समउ प्रानपति पेखैं ॥ ४ ॥

वृक्षकी छायामें बैठ चरण धोकर मनमें प्रसन्न हो हवा किया करूंगी ॥ ३ ॥ पसीनेकी बूँदों सहित, साँवले शरीरवाले प्राणपतिको देखनेसे दुःखका समय कहाँ होगा (अर्थात् कहीं नहीं) ॥ ४ ॥

सम महि तृनतरुपल्लव डासी ❀ पाँइ पलोटिहि सबनिसि दासी ॥ ५ ॥
बारबार मृदु मूरति जोही ❀ लागहिं ताप बयारि न मोही ॥ ६ ॥

और एकसी पृथ्वीपर घास और वृक्षोंके पत्तोंको बिछाकर यह दासी सब रात चरणदाबा करैगी ॥ ५ ॥ और वारंवार माधुरी मूर्त्तिके दर्शन करनेसे मुझको धूप और हवा न लगैगी ॥ ६ ॥

को प्रभुसँग मोहिं चितवनिहारा ❀ सिंहबधुहिं जिमि ससक सियारा ॥ ७ ॥
मैं सुकुमारि नाथ बनजोगू ❀ तुमहिं उचित तप मो कहँ भोगू ॥ ८ ॥

और (आपने जो कहा कि राक्षस नरनारियोंको चुरा ले जाते हैं) सो स्वामीके साथ मुझे देखनेवाला कौन है (अर्थात् कोई नहीं) जैसे सिंहकी स्त्रीको खरगोश और गीदड़ (नहीं देखसकते) ॥ ७ ॥ और आपने जो कहाथा कि "हंसगमनि तुम नहिं बन जोगू" सो क्या) मैं कोमल और आप बनके योग्य हैं ? और तुमको तपस्या और मुझको संसारके आनंद कैसे उचित हैं ? अर्थात् कभी नहीं जैसी मैं वैसेही तुम हो ॥ ८ ॥

दो०-ऐसेहु बचन कठोर सुनि, जो न हृदय बिलगान ॥ ❀
तौ प्रभु विषमवियोगदुख, सहिहैं पामरप्रान ॥ ६९ ॥ ❀

हे स्वामी ! जो ऐसे कठोर वचन सुनकेभी हृदय नहीं फटा तौ नीच प्राण आपके वियोगके कठिन दुखको सहैंगे ॥ ६९ ॥

चौ०-अस कहि सीय बिकल भइ भारी ❀ बचनबियोग न सकी सँभारी ॥ १ ॥
देखि दसा रघुपति जियजाना ❀ हठराखे राखिहिं नहिं प्राना ॥ २ ॥

ऐसे कहकर सीताजी बहुत व्याकुल हुई (और प्रत्यक्ष वियोगकी तौ क्या चलाई) वचनोंके वियोगमेंभी (अपनेको) सम्हाल न सकीं अर्थात् उनके मनमें यह आई कि रघुनाथजीसे बातें होना बंद न हो ॥ १ ॥ (जब उनकी) दशा देख रामचन्द्रजीने मनमें जाना कि हमारे हठ रखनेसे यह प्राणोंको न रक्खैगी ॥ २ ॥

कहेउ कृपालु भानुकुलनाथा ❀ परिहरि सोच चलहु बन साथा ॥ ३ ॥
नहिं विषादकर अवसर आजू ❀ बेगि करहु बनगवन समाजू ॥ ४ ॥

तौ दयानिधान सूर्यवंशके स्वामीने कहा कि सोचको छोड़कर वनको साथ चलो ॥ ३ ॥ आज दुःखका समय नहीं, जल्दीसे वनको चलनेका सामान करो ॥ ४ ॥

कहि प्रिय बचन प्रियहिं समुझाई ❀ लगे मातुपद आसिस पाई ॥ ५ ॥
बेगि प्रजादुख मेटहु आई ❀ जननी निठुर बिसरि जनि जाई ॥ ६ ॥

मीठे बचन कहकर प्यारी सीताजीको समझाय माताके चरण छुये और आशीर्वाद पाया ॥ ५ ॥ (माताने कहा) जल्दी आकर प्रजाका दुःखनाश करना और कठोर माताको भूल मत जाना ॥ ६ ॥

फिरहि दसा विधि बहुरि कि मोरी ❀ देखिहौं नयनमनोहर जोरी ॥ ७ ॥
सुदिन सुघरी तात कब होई ❀ जननीजियत बदनबिधु जोई ॥ ८ ॥

---

(१) माताकी ओरसे रामचन्द्रजींको अन्तिम शिक्षा—

कवित्त.-जनक कुमारी सुकुमारी है सकल अंग मेरी नैन तारी नैक न्यारी मतकीजियो ।
वन विकराल बाघ व्याल हैं कराल लाल बाल लछिमन काहू काल न पतीजियो ।
शीत घाम मेहसो बचैयो देह कोमल ये नेह जिय राखि वेगि गेहसुधि लीजियो ।
आते जाते हाथनु हमेत हित राखि मोको एरे प्राणप्यारे पूत पाती नित दीजियो ॥ १ ॥

हे ब्रह्मा ! फिर मेरी दशा लौटेगी कि जो इस मनमोहिनी जोड़ीको नेत्रोंसे देखूँगी ॥ ७ ॥ हे पुत्र, ! अच्छा दिन और अच्छी घड़ी कब होगी जो माता अपने जीते जी तुम्हारे चन्द्रमाके समान मुखको देखेगी ॥ ८ ॥

दो०–बहुरि वत्स कहि लाल कहि, रघुपति रघुवर तात ॥
कबहिं बुलाइ लगाइ उर, हरषि निरखिहौं गात ॥ ७० ॥

हे प्यारे ! फिरभी वत्स कहकर, लाल कहकर, रघुपति और रघुवर इन नामोंसे बुलाकर और छातीसे लगाकर तुम्हारे शरीरको प्रसन्न होकर देखूँगी ॥ ७० ॥

चौ०–लखि सनेह कातर महतारी ❀ बचन न आव बिकल भइ भारी ॥ १ ॥
राम प्रबोध कीन्ह बिधिनाना ❀ समय सनेह न जाइ बखाना ॥ २ ॥

जब माताको स्नेहमें कातर और ऐसा भारा व्याकुल देखा कि मुखसे बचन नहीं निकलते हैं ॥ १ ॥ तौ रामचन्द्रजीने बहुत भाँति समझाया; उस समयका प्रेम वर्णन नहीं किया जाता ॥ २ ॥

तब जानकी सासपद लागी ❀ सुनिय मातु मैं परम अभागी ॥ ३ ॥
सेवासमय दैव बन दीन्हा ❀ मोर मनोरथ सफल न कीन्हा ॥ ४ ॥

तब सीताजी सासके चरण छूकर (बोली) हे माता ! सुनों, मैं बड़ी अभागी हूँ ॥ ३ ॥ सेवा करनेके समय ईश्वरने बन दिया, मेरी इच्छा सफल नहीं की ॥ ४ ॥

तजब छोभ जनि छाँड़ब छोहू ❀ करमकठिन कछु दोष न मोहू ॥ ५ ॥
सुनि सियबचन सास अकुलानी ❀ दसा कवनविधि कहौं बखानी ॥ ६ ॥

दुःख छोड़ो पर स्नेह मत छोड़ना, कर्मकी कठिन गति है मुझेभी कुछ दोष नहीं है ॥ ५ ॥ सीताजीके बचन सुनकर सासू जैसी अकुलाई उस दशाको किस भाँति वर्णनकर कहूँ ॥ ६ ॥

बारहिं बार लाइ उर लीन्हीं ❀ धरि धीरज सिष आसिस दीन्हीं ॥ ७ ॥
अचल होउ अहिवात तुम्हारा ❀ जबलगि गंगजमुन जलधारा ॥ ८ ॥

वारंवार छातीसे लगाय धीरज धरके शिक्षा और आशीर्वाद दिया कि ॥ ७ ॥ जबतक गंगा यमुनामें जलकी धार रहै तबतक तुम्हारा सुहाग अचल हो ॥ ८ ॥

दो०–सीतहिं सास असीससिष, दीन्ह अनेकप्रकार ॥
चली नाइ पदपद्म सिर, अतिहित बारहिंबार ॥ ७१ ॥

सासने सीताको अनेक भाँति आशीश और शिक्षा दी (तब सीता) अत्यंत स्नेहसे वारंवार उनके कमलसमान चरणोंको शिर नवाकर चलीं ॥ ७१ ॥

चौ०–समाचार जब लक्ष्मण पाए ❀ व्याकुल बिलखि बदन उठि धाए ॥ १ ॥
कंप पुलक तनु नयन सनीरा ❀ गहे चरन अतिप्रेम अधीरा ॥ २ ॥

जब लक्ष्मणजीको खबर मिली तौ व्याकुल हो उदास मुख किये उठकर (रघुनाथजीके पास) आये ॥ १ ॥ और शरीर काँपने लगा पुलकावली छागई, नेत्रोंमें जल भर आया और अत्यंत स्नेहमें अधीर हो (रामजीके) चरण पकड़ लिये ॥ २ ॥

कहि न सकत कछु हितवत ठाढ़े ❀ मीनदीन जनु जलते काढ़े ॥ ३ ॥
सोचहृदय बिधि का होनिहारा ❀ सब सुख सुकृत सिरान हमारा ॥ ४ ॥

कुछ कह नहीं सकते, खड़े देखते हैं (और ऐसे दुखी थे) मानों जलसे निकाली हुई मछली दुखी हो ॥ ३ ॥ मनमें सोचते हैं कि हे ब्रह्मा ! क्या होनहार है. हमारा सब सुख और पुण्य हो चुका ४

मोकहँ कहाकहब रघुनाथा ❀ रखिहहिं भवनकि लैहहिं साथा ॥ ५ ॥
राम बिलोकी बंधु कर जोरे ❀ देह गेह सब सन तृन तोरे ॥ ६ ॥

मुझको रामचन्द्र क्या कहैंगे, घर रक्खैंगे वा साथ लेंगे ॥ ५ ॥ रामचन्द्रजीने भाईको देखा कि हाथ जोड़े हुये खड़े हैं और शरीर और घर सबसे नाता तोड़ दिया है ॥ ६ ॥

बोले बचन राम नयनागर ❀ सीलसनेहसरल सुखसागर ॥ ७ ॥
तात प्रेमबस जनि कदराहू ❀ समुझि हृदय परिनाम उछाहू ॥ ८ ॥

तब नीतिमें चतुर और शील, सनेह, सरलता तथा सुखके समुद्र ऐसे रामचन्द्रजी कहने लगे ॥७॥ हे प्यारे! अंतमें अर्थात् १४ वर्ष बाद जो सुख होगा उसको समझकर स्नेहके वश घबराओ मत ॥८॥

दो०–मातुपितागुरुस्वामिसिख, सिरधरि करिय सुभाय ॥ ❀
लहेउ लाभ तिन जनमकर, नतरु जनम जग जाय ॥ ७२ ॥ ❀

जो माता, पिता, गुरु और स्वामीकी शिक्षाको माथेपर धर अच्छी जानकर करते हैं उन्होंने जन्म होनेका लाभ लिया, नहीं तौ संसारमें जन्म (वृथा) ही जाता है ॥ ७२ ॥

चौ०–अस जियजानि सुनहु सिख भाई ❀ करहु मातुपितुपद सेवकाई ॥ १ ॥
भवन भरत रिपुसूदन नाहीं ❀ राउ वृद्ध मम दुख मनमाहीं ॥ २ ॥

हे भाई! ऐसे मनमें जान शिक्षा सुनो और मातापिताके चरणोंकी सेवा करो ॥ १ ॥ भरत शत्रुघ्न घर नहीं हैं, राजा वृद्ध हैं और मनमें मेरा दुःख है ॥ २ ॥

मैं बन जाउं तुमहिं लै साथा ❀ होइहि सबबिधि अवध अनाथा ॥ ३ ॥
गुरु पितु मातु प्रजा परिवारू ❀ सब कहँ परै दुसह दुख भारू ॥ ४ ॥

और जो मैं तुम्हैं वनमें साथ लिये चलताहूं तौ अयोध्यापुरी सब भौति अनाथ हो जायगी ३ गुरु, पिता, माता प्रजा और कुटुम्ब सबपर कठिन दुःखका भार पड़ैगा ॥ ४ ॥

रहहु करहु सबकर परितोषू ❀ नतरु तात होइहि बड़ दोषू ॥ ५ ॥
जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी ❀ सो नृप अवसि नरक अधिकारी ॥ ६ ॥

(सो तुम) रहकर सबका संतोष दो नहीं तौ हे प्यारे! बड़ा पाप होगा ॥ ५ ॥ (क्योंकि) जिसके राज्यमें प्यारी प्रजा दुःख पावै वह राजा अवश्य नरकमें जाता है ॥ ६ ॥

रहहु तात असनीति बिचारी ❀ सुनत लषन भये व्याकुल भारी ॥ ७ ॥
सियरे बचन सूखिगये कैसे ❀ परसत तुहिन तामरस जैसे ॥ ८ ॥

हे प्यारे! ऐसी नीति समझकर (घर) रहो, यह सुन लक्ष्मणजी बहुत विकल हुये ॥ ७ ॥ और (रामके) शीतल वचनोंसे ऐसे सूखगये जैसे पाला पड़नेसे कमल कुम्हला जाता है ॥ ८ ॥

दो०–उतर न आवत प्रेमबस, गहेउ चरन अकुलाइ ॥ ❀
नाथ दास मैं स्वामि तुम, तजहु तौ कहा बसाइ ॥ ७३ ॥ ❀

स्नेहके वश उत्तर नहीं आता; दुखी हो चरणोंमें गिरकर बोले हे नाथ! आप स्वामी हो और मैं सेवक हूं, छोड़दोगे तो मेरा क्या वश चलसकता है ॥ ७३ ॥

---

(१) प्रजाकी रक्षा करनाही क्षत्रियोंका धर्म है. जैसा मनुस्मृतिमें लिखा है–

क्षत्रियस्य परो धर्मः प्रजानामेव पालनम् । निर्दिष्टफलभोक्ता हि राजा धर्मेण युज्यते ॥ १ ॥

अर्थात् राजाका परधर्म यह है कि प्रजाका पालन करे, जो कहे हुये फलका भोक्ता है वही धर्मात्मा होता है १

चौ०–दीन्ह मोहिं सिख नीक गुसाँई ॐ लागि अगम आपनि कदराई ॥ १ ॥
नरवर धीर धरमधुरधारी ॐ निगमनीतिके ते अधिकारी ॥ २ ॥

हे स्वामी! आपने तौ मुझे अच्छी सीखदी, परंतु अपनी काहिलीसे कठिन मालूम होती है ॥१॥ जो श्रेष्ठ मनुष्य धीरज और धर्मके भारको धारण करनेवाले हैं वे शास्त्र और नीतिके अधिकारी होते हैं, अर्थात् मेरा धर्म तौ आपकी सेवा करनेका है ॥ २ ॥

मैं सिसु प्रभु सनेहप्रतिपाला ॐ मंदर मेरु कि लेइ मराला ॥ ३ ॥
गुरु पितु मातु नं जानों काहू ॐ कहौं सुभाव नाथ पतिआहू ॥ ४ ॥

हे स्वामी! मैं तौ (आपके) प्रेमसे पाला हुआ बालकहूँ (सो नीतिका बोझ नहीं उठासकता) क्योंकि कहीं हंसभी मंदराचलको उठासक्ता है ॥ ३ ॥ मै गुरु पिता माता किसीको नहीं जानताहूँ. हे नाथ! चित्तसे कहता हूँ, आप सच जानिये ॥ ४ ॥

जहँलगि जगतसनेह सगाई ॐ प्रीतिप्रतीति निगम निजगाई ॥ ५ ॥
मोरे सबै एक तुम स्वामी ॐ दीनबंधु उर अंतरजामी ॥ ६ ॥

जहाँतक संसारमें प्रेम और नाते हैं और शास्त्रोंने अपना स्नेह और विश्वास कहा है ॥ ५ ॥ वे सब हे नाथ! मेरे तौ एक आपहीसे हैं और हे दीनोंके बन्धु (जो झूँठ कहता होऊँ तो आप) घट २ की जाननेवाले हो ॥ ६ ॥

धरमनीति उपदेशिय ताही ॐ कीरति भूति सुगति प्रिय जाही ॥ ७ ॥
मन क्रम बचन चरनरत होई ॐ कृपासिंधु परिहरिय कि सोई ॥ ८ ॥

धर्म और नीति उसीको सिखलानी चाहिये जिसको यश वैभव और अच्छी गति प्यारी लगै ७ और हे कृपासिंधु! जो मन क्रम बचनसे चरणोंमें प्रीति रखता हो उसे कैसे छोड़ना उचित है ॥८॥

दो०–करुनासिंधु सुबंधुके, सुनि मृदु बचन विनीत ॥
समुझाए उर लाइ प्रभु, जानि सनेह सभीत ॥ ७४ ॥

दयासागर (रामजी) ने प्यारे भाईके नम्र और कोमल बचन सुनकर और स्नेह जानकर भयके मारे (लक्ष्मणजीको) छातीसे लगाकर समझाया ॥ ७४ ॥

चौ०–माँगहु विदा मातुसन जाई ॐ आवहु बेगि चलहु बन भाई ॥ १ ॥
मुदित भए सुनि रघुबरबानी ॐ भएउ लाभ बड़ गइ बड़ हानी ॥ २ ॥

हे भाई! जाकर मातासे विदा माँगकर जल्दी आओ और वनको चलो ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीके बचन सुन (लक्ष्मण) ऐसे प्रसन्न हुये मानो बड़ा लाभ हुआ और बड़ी हानि दूर हुई ॥ २ ॥

हरषित हृदय मातुपहँ आए ॐ मनहुँ अंध फिरि लोचन पाए ॥ ३ ॥
जाइ जननिपद नायउ माथा ॐ मन रघुनंदन जानकिसाथा ॥ ४ ॥

मनमें प्रसन्न होते हुये माताके पास आये मानों अंधेको फिर नेत्र मिले ॥३॥ और जाकर माताकेचरणोंको माथा नवाया पर रामचन्द्र और सीताजीके साथ था अर्थात् उनके चरणोंमें धराथा ॥ ४ ॥

पूछेइ मातु मलिनमन देखी ॐ लषन कहेउ सब कथाविसेषी ॥ ५ ॥
गई सहमि सुनि बचन कठोरा ॐ मृगी देखि जनु दव चहुँओरा ॥ ६ ॥

माताने उदास मन देख पूछा तव लक्ष्मणने सब पूरा समाचार कहा ॥५॥ कठोर बचन सुनकर (सुमित्रा) ऐसे सुरझागई, मानों हिरणी चारों ओर दावानल लगी हुई देख मुरझा जाती है ॥ ६ ॥

---

(१) भय इसलिये कि लड़कबुद्धि है, कुछ बुराई न कर बैठैं ॥

लषण लखेउ भा अनरथ आजू ❀ इह सनेहबस करब अकाजू ॥ ७ ॥
माँगत बिदा सभय सकुचाहीं ❀ जान संग बिधि कहिहि कि नाहीं ॥ ८ ॥

लक्ष्मणजीने देखा कि आज अनर्थ हुआ, यह प्रेमके वश काम बिगाड़ैगी, अर्थात् वन न जाने देगी ॥ ७ ॥ विदा माँगतेमें भयसे सकुचाते हैं कि हे ब्रह्मा ! साथ जानेको कहैगी या नहीं ॥ ८ ॥

दो०–समुझि सुमित्रा रामसिय, रूप सुसील सुभाव ॥ ❀
नृप सनेह लखि धुनेउ सिर, पापिनि कीन्ह कुदाव ॥ ७५ ॥ ❀

सुमित्राने रामचन्द्र और सीताजीका रूप और सुंदर शील स्वभाव समझकर और राजाका प्रेम देख शिर धुनना (और कहा कि) पापिनी (कैकेयी) ने बुरा दाव लगाया ॥ ७५ ॥

चौ०–धीरज धरेउ कुअवसर जानी ❀ सहज सुहृद बोली मृदुबानी ॥ १ ॥
तात तुम्हार मातु बैदेही ❀ पिता राम सबभाँति सनेही ॥ २ ॥

पर बुरा समय जान, धीरज धरा और स्वभावहीसे हित करनेवाली सुमित्रा मीठी वाणी बोली ॥१॥ हे प्यारे ! तुम्हारी माता सीताजी और पिता रामचन्द्र सब भाँतिसे प्रेमकरनेवाले हैं ॥ २ ॥

अवध तहाँ जहँ रामनिवासू ❀ तहाँ दिवस जहँ भानुप्रकासू ॥ ३ ॥
जोपै सीयराम बन जाहीं ❀ अवध तुम्हारकाज कछु नाहीं ॥ ४ ॥

जहाँ रामचन्द्रका निवास है वही अयोध्या है. क्योंकि दिन वही होता है कि जहाँसूर्यका प्रकाश हो ॥ ३ ॥ जो सीता रामचन्द्र वनको जाते हैं, तौ अयोध्यामें तुम्हारा कुछ काम नहीं है ॥ ४ ॥

गुरु पितु मातु बंधु सुर साँई ❀ सेइय सकल प्रानकी नांई ॥ ५ ॥
राम प्रानप्रिय जीवनजीके ❀ स्वारथरहित सखा सबहीके ॥ ६ ॥

गुरु, पिता, माता, भाई, देवता और स्वामी (इन सबकी) प्राणोंकी भाँति सेवा करनी चाहिये ॥५॥ रामचन्द्र सबको प्राणोंसे प्यारे, जीवोंके जीवन हैं, और विना स्वारथ सबके मित्र हैं ॥ ६ ॥

पूजनीय प्रिय परम जहाँते ❀ मानिह सबहिं रामके नाते ॥ ७ ॥
अस जिय जानि संग बन जाहू ❀ लेहु तात जग जीवनलाहू ॥ ८ ॥

जहाँतक अपने पूज्य और अधिक प्यारे हैं सब रामचन्द्रजीके संबंधसे माने जाते हैं ॥ ७ ॥ हे प्यारे ? मनमें ऐसा जान वनको साथ जाओ और संसारमें जीनेका लाभ लो ॥ ८ ॥

दो०–भूरिभागभाजन भयउ, मोहिंसमेत बलिजाउँ ॥ ❀
जो तुम्हरे मन छाँड़ि छल, कीन्ह रामपद ठाउँ ॥ ७६ ॥ ❀

(तुम) बड़े भाग्यके पात्र हुये अर्थात् तुम बड़े बड़भागी हो, मैं बलिजाती हूँ जो तुम्हारे मनने कपटको छोड़ रामचन्द्रके चरणोंमें स्थान किया अर्थात् तुम्हारा मन लगा ॥ ७६ ॥

चौ०–पुत्रवती जुवती जग सोई ❀ रघुबरभक्त जासु सुत होई ॥ १ ॥
नतरु बाँझ भलि बादि बियानी ❀ रामबिमुख सुत ते हितहानी ॥ २ ॥

संसारमें वही स्त्री पुत्रवान है, जिसका पुत्र रामचन्द्रजीका भक्त हो ॥ १ ॥ नहीं तो वृथा जननसे वाँझ अच्छी. क्यों कि रामचन्द्रसे विमुख पुत्रके होनेसे कल्याणकी हानि होती है ॥ २ ॥

---

(१) रामं दशरथं विद्धि मां विद्धि जनकात्मजाम् । अयोध्यामटवीं विद्धि गच्छ तात यथासुखम् ॥ स्पष्टार्थः—अटवी कहिये वन और विद्धि अर्थात् जानों ॥ (२) नहीं तौ मित्रता स्वारथसे होती है. जैसा कहा है कि 'सुर नर मुनि सबकी यह रीती । स्वारथलागि करहिं सब प्रीती.'

तुम्हरेहि भाग राम बन जाहीं ❀ दूसर हेतु तात कछु नाहीं ॥ ३ ॥
सकल सुकृतकर फल सुत एहू ❀ रामसीयपद सहज सनेहू ॥ ४ ॥

हे पुत्र ! तुम्हारेही भाग्यसे रामचन्द्र वनको जाते हैं, दूसरा कुछ कारण नहीं. अर्थात् तुम वनमें अच्छी तरह सेवा कर सकोगे ॥ ३ ॥ हे पुत्र ! सब अच्छे कर्मोंका यही फल है कि सीता रामचन्द्रजीके चरणोंमें स्वभावहीसे प्रीति हो ॥ ४ ॥

राग रोष ईर्षा मद मोहू ❀ जनि सपनेहु इनके बस होहू ॥ ५ ॥
सकलप्रकार विकार विहाई ❀ मनक्रमबचन करेहु सेवकाई ॥ ६ ॥

राग, क्रोध, द्वेष, अभिमान और अज्ञान इनके वश स्वप्नमेंभी मत होना ॥ ५ ॥ सब भाँतिके दोषोंको छोड़कर मन क्रम बचनसे सेवा करना ॥ ६ ॥

तुम कहँ बन सबभाँति सुपासू ❀ सँग पितुमातु रामसिय जासू ॥ ७ ॥
जेहि न राम बन लहहिं कलेसू ❀ सुत सो करेहु इहै उपदेसू ॥ ८ ॥

तुमको बन सब भाँति सुखदायक है, क्योंकि तुम्हारे पिता, माता, रामचन्द्र और सीताजी साथ हैं ॥७॥ हे पुत्र ! यही उपदेश है कि जिस भाँतिसे रामचन्द्र बनमें दुःख न पावें वही करना ॥ ८ ॥

छं०–उपदेस यहि जेहि तात तुमते रामसिय सुखपावहीं । ❀
पितु मातु प्रिय परिवार पुरसुख सुरति बन बिसरावहीं ॥ ❀
तुलसी सुतहिं सिखदेइ आयसुदेइ पुनि आसिस दई । ❀
रति होउ अबिरल अमल सियरघुवीरपद नितनित नई ॥३॥ ❀

हे प्यारे ! यही उपदेश है कि तुमसे रामचन्द्र सीताजी सुख पावें और पिता, माता, प्यारे कुटुम्बी और नगरके सुखको वनमें भूल जाँय, तुलसीदास कहते हैं कि पुत्रको शिक्षा देकर फिर अशीश दी कि सदा तुम्हारी सच्ची प्रीति सीतारामके चरणोंमें नित्य २ नई हो ॥ ३ ॥

सो०–मातुचरन सिर नाइ, लषन चले संकितहिये ॥ ❀
वागुरि विषम तुराइ, मनहुँभागु मृगभागवस ॥ ३ ॥ ❀

लक्ष्मणजी माताके चरणोंको शिर नवाय मनमें डरते[१] हुये ऐसे जल्दी चले मानों भाग्यके वश कठिन फन्देको तुड़ा कर मृग भागा होय ॥ ३ ॥

चौ०–गए लषन जहँ जानकिनाथा ❀ भे मन मुदित पाइ प्रियसाथा ॥ १ ॥
वन्दि रामसियचरन सुहाए ❀ चले संग नृपमंदिर आए ॥ २ ॥

जहाँ रामचन्द्र थे तहाँ लक्ष्मणजी गये और प्यारे संगको पाकर मनमें प्रसन्न हुये ॥ १ ॥ और रामचन्द्र तथा सीताजीके सुन्दर चरणोंको वन्दना कर साथ चले और राजाके महलमें आये ॥२॥

कहहिं परस्पर पुरनरनारी ❀ भलि बनाइ विधि बात बिगारी ॥ ३ ॥
तनु कृस मन दुख बदन मलीना ❀ बिकल मनहुँ माखी मधुछीना ॥ ४ ॥

नगरके स्त्री पुरुष आपसमें कहते हैं कि ब्रह्माने अच्छी बात बनाकर बिगाड़ दी ॥ ३ ॥ शरीर दुबला हो रहा है, मनमें दुःख और मुखपर उदासी छारही है और सब ऐसे विकल होरहे हैं मानों शहदके छिन जानेसे मक्खियाँ दुखी होती हैं ॥ ४ ॥

---

(१) डरते हुए कहनेका यह अभिप्राय है कि लक्ष्मणजीके मनमें दो शंकायें हैं कि कहीं राम चले न गये होंय, अथवा मोहके वश माता फिर न रोक ले ॥

करमीजहिं सिरधुनि पछिताहीं ❀ जनु बिनुपंख बिहँग अकुलाहीं ॥ ५ ॥
भइ बड़ि भीर भूपदरबारा ❀ बरनि न जाइ बिषाद अपारा ॥ ६ ॥

हाथ मींजते हैं और शिर धुनकर ऐसे पछताते हैं मानों विना परोंके पक्षी अकुलाता होय॥५॥ राजाके दरवारमें बड़ी भीड़ हुई (उस समयका) बड़ाभारी दुःख वर्णन नहीं किया जाता ॥ ६ ॥

सचिव उठाइ राउ बैठारे ❀ कहि प्रिय बचन राम पगुधारे ॥ ७ ॥
सियसमेत दोउ तनय निहारी ❀ ब्याकुल भए भूमिपति भारी ॥ ८ ॥

मंत्रीने राजाको उठाकर बिठलाया और मीठे बचनोंसे कहा कि रामचन्द्र आये हैं ॥ ७ ॥ सीतासहित दोनों पुत्रोंको देख राजा वहुत व्याकुल हुये ॥ ८ ॥

दो०-सीय सहित सुतसुभग दोउ, देखिदेखि अकुलाइ ॥ ❀
बारहिंबार सनेयबस, राउ लेइ उरलाइ ॥ ७७ ॥ ❀

राजा (दशरथ) ने सीताजीसमेत सुन्दर दोनों पुत्रोंको देखा और दुखी होकर प्रेमके वशमें वारंवार छातीसे लगाया ॥ ७७ ॥

चौ०-सकैं न बोलि बिकल नरनाहू ❀ सोकजनित उर दारुन दाहू ॥ १ ॥
नाइ सीस पद अतिअनुरागा ❀ उठि रघुनाथ बिदा तब माँगा ॥ २ ॥

राजा व्याकुलताके कारण बोल नहीं सकते, क्योंकि शोकसे (सब शरीर) शिथिल हो रहा है और छातीमें कठिन जलन होरही है ॥ १ ॥ तब रामचन्द्रजीने उठकर अत्यंत स्नेहसे (राजाके) चरणोंको माथा नवाकर विदा माँगी ॥ २ ॥

पितुअसीस आयसु मोहिं दीजै ❀ हरषसमय बिसमय कस कीजै ॥ ३ ॥
तात किये प्रिय प्रेम प्रमादू ❀ जस जग जाइ होइ अपवादू ॥ ४ ॥

हे पिता ! मुझे आशीर्वाद और आज्ञा दीजिये, आनन्दके समय दुःख क्यों करते हो ? ॥३॥ हे पिता ! (इस समय) प्यारोंमें स्नेह करना कोरी मूर्खता है, ऐसा करनेसे संसारमेंसे यश जाता रहैगा और बुराई होगी ॥ ४ ॥

सुनि सनेहबस उठि नरनाहू ❀ बैठारे रघुपति गहि बाहू ॥ ५ ॥
सुनहु तात तुम कहँ मुनि कहहीं ❀ राम चराचरनायक अहहीं ॥ ६ ॥

राजाने सुनकर प्रेमके वश उठके रामचन्द्रको बाँह पकड़कर बिठाया ॥ ५ ॥ (और बोले) हे प्यारे ! सुनों. तुमको मुनीश्वर कहते हैं कि रामचन्द्र चर और अचरके स्वामी हैं ॥ ६ ॥

सुभ अरु असुभ करम अनुहारी ❀ ईस देइ फल हृदय बिचारी ॥ ७ ॥
करे जो करम पाव फल सोई ❀ नियम नीति अस कह सबकोई ॥ ८ ॥

ईश्वर मनमें विचारकर भले और बुरे कर्मोंके अनुसार फल देता है ॥ ७ ॥ और वेदशास्त्र तथा नीति सब कोई यों कहते हैं कि जो कर्म करता है वही फल पाता है ॥ ८ ॥

दो०-और करै अपराध कोइ, और पाव फलभोग ॥ ❀
अतिबिचित्र भगवंतगति, को जग जाने जोग ॥ ७८ ॥ ❀

(परन्तु) और कोई तो अपराध करै और दूसरा फलका भोग पावै ईश्वकी यह बड़ी विचित्र गति है. (सो इसके) जाननेके योग्य संसारमें कौन है (अर्थात् कोई नहीं है) ॥ ७८ ॥

चौ०-राउ राम राखनहित लागी ❀ बहुत उपाय कीन्ह छलत्यागी ॥ १ ॥
लखेउ रामरुख रहत नजाने ❀ धरमधुरंधर धीर सयाने ॥ २ ॥

राजा (दशरथ) ने रामचन्द्रजीको रखनेके लिये, कपट छोड़कर बहुत उपाय किये[१] परंतु जबरामचन्द्रका रुख देखकर जाना रहैंगे नहीं, क्योंकि धर्मके भारको धारण करनेवाले बुद्धिमान् और चतुर हैं

तब नृप सीय लाइ उरलीन्हीं ❀ अतिहित बहुतभाँति सिख दीन्हीं ॥३॥
कहि बनके दुख दुसह सुनाये ❀ सास ससुर पितु सुख समुझाये ॥ ४ ॥

तब राजाने सीताजीको छातीसे लगाया और बहुत प्यारसे बहुत भाँतिकी शिक्षा दी ॥ ३ ॥ वनके कठिन दुःख कहकर सुनाये और सास, ससुर और पिताके सुख समझाये ॥ ४ ॥

सियमन रामचरनअनुरागा ❀ घर न सुगम बन विषम न लागा ॥५॥
औरों सबहि सीय समुझाई ❀ कहिकहि बिपिनबिपति अधिकाई ॥६॥

सीताजीके मनमें रामचन्द्रजीके चरणोंकी प्रीति होनेके कारण घर तौ सुख देनेवाला और वन कठिन न लगा ॥ ५ ॥ और सबनेभी वनके बहुत दुःख कहकर सीताजीको समझाया ॥ ६ ॥

सचिवनारि गुरुनारि सयानी ❀ सहितसनेह कहहिं मृदु बानी ॥ ७ ॥
तुम कहँ तौ न दीन्ह वनवासू ❀ करहु जो कहहिं असुर गुरु सासू ॥८॥

मंत्रीकी स्त्री और चतुर गुरुकी स्त्री प्रेमसहित मीठी वाणीसे कहने लगीं ॥ ७ ॥ तुमको तौ वनवास नहीं दिया है, (इसलिये) जो कुछ सासु ससुर और बड़े लोग कहैं वही करो ॥ ८ ॥

दो०–सिष सीतल हित मधुर मृदु, सुनि सीतहि न सोहानि ॥ ❀
सरदचंद चांदनि निरखि, जनु चकई अकुलानि ॥ ७९ ॥ ❀

शीतल, प्यारी, कोमल और मीठी शिक्षा सुनकर सीताजीको ऐसे अच्छी न लगी जैसे शरदके चन्द्रमाकी चांदनीको देखकर चकई अकुलाती है ॥ ७९ ॥

चौ०–सीय सकुचबस उतर न देई ❀ सो सुनि तमकि उठी कैकेई ॥ १ ॥
मुनिपट भूषन भाजन आनी ❀ आगे धरि बोली मृदु बानी ॥ २ ॥

सीताजी सकुचके वश उत्तर नहीं देतीं सो सुनकर कैकेयी क्रोधकर[२] उठी ॥ १ ॥ और मुनियोंके (भोजपत्र आदि छालके) वस्त्र और (तुलसीकी माला खडाँऊँ आदि) आभूषण और तूंबा आदि पात्र लाय आगे रख कोकिल वाणीसे बोली ॥ २ ॥

नृपहिं प्रानप्रिय तुम रघुबीरा ❀ सीलसनेह न छाँड़िहि भीरा ॥ ३ ॥
सुकृत सुजस परलोक नसाऊ ❀ तुमहिं जाग बन कहहिं न राऊ ॥ ४ ॥

हे रामचन्द्र ! तुम राजाको प्राणोंसेभी प्यारे हो इसलिये अघिक शील और प्रेमके कारण छोड़ नहीं सकते ॥ ३ ॥ चाहे पुण्य, सुन्दर कीर्ति और परलोक भलेही बिगड़ो परन्तु राजा तुम्हैं वन जानेको न कहैंगे ॥ ४ ॥

---

(१) बहुतसे उपाय यही करे कि—

विधिहिं मनाव राव मनमाहीं । जिहि रघुनाथ न कानन जाहीं ॥
"सुमिरि महेसहिं कहहिं निहोरि ।" "अजस होउ जग सुजस नसाऊ ॥"
"उदय करहु जनि रवि रघुकुल गुरु ।"

इन वातोंके सिवाय औरभी साम दाम दंड भेद कैकेयीकों दिखाया जैसा—

(साम) सजहु सुलोचनि मंगल साजू ! (दाम) भरतहि अबसि देउं जुवराजू ॥
(दंड) लोचन ओट बैठु मुखगोई । (भेद) चहत न भरत भूप पद भोरे ॥

(२) क्रोध करनेका यह भाव है कि कैकेयीको यह जान पड़ा कि उत्तर नहीं देती है, कहीं रह न जाय ॥

अस बिचारि सोइ करहु जो भावा ❀ राम जननिसिख सुनि सुख पावा ॥५॥
भूपहिं बचन बानसम लागे ❀ करहिं न प्रान पयान अभागे ॥ ६ ॥

ऐसे बिचार जो मनमें अच्छा लगै वही करो अर्थात् राज्य करना है तौ राज्य करो या बनको जाओ, सो रामचन्द्रने तौ माताकी शिक्षाको सुनके सुख पाया ॥ ५ ॥ पर राजाको वचन वाणकी बराबर लगे (और कहने लगे कि) अभागे प्राणभी तौ नहीं निकलते ॥ ६ ॥

सोकबिकल मूर्च्छित नरनाहू ❀ काह करिय कछु सूझ न काहू ॥ ७ ॥
राम तुरत मुनिवेष बनाई ❀ चले जनकजननिहिं सिरनाई ॥ ८ ॥

राजा शोकसे विकल हो मूर्च्छित होगये. (अब) क्या करैं किसीको कुछ नहीं सूझता ॥ ७ ॥ रामचन्द्र मुनीश्वरोंका वेष बनाकर और मातापिताको माथा नवाकर तुरत चल खड़े हुये ॥ ८ ॥

दो०–सजि बनसाज समाज सब, बनिताबंधुसमेत ॥ ❀
बंदि बिप्रगुरुचरन प्रभु, चले करि सबहिं अचेत ॥ ८० ॥ ❀

भगवान्, वनका सब सामान सजाकर स्त्री और भाईसहित, ब्राह्मण और गुरुके चरणोंको वन्दनकर और सबको अचेतकर चले ॥ ८० ॥

चौ०–निकसि बसिष्ठ द्वार भए ठाडे ❀ देखे लोग बिरह दव डाढ़े ॥ १ ॥
कहि प्रिय बचन सबहिं समुझाए ❀ बिप्रबृंद रघुबीर बुलाए ॥ २ ॥

निकलकर वसिष्ठजीके द्वारपर खड़े हुये और देखा कि सब लोग बिरहकी अग्निमें जल रहे हैं ॥ १ ॥ तौ रामजीने प्यारे बचन कहकर सबको समझाया और ब्राह्मणोंकी मंडली बुलाई ॥ २ ॥

गुरुसन कहि बरषासन दीन्हे ❀ आदर दान बिनयबस कीन्हे ॥ ३ ॥
जाचक दानमान संतोषे ❀ मीत पुनीत प्रेमपरितोषे ॥ ४ ॥

गुरुसे कहकर (१४) वर्षके लिये भोजन दिया और आदर दान और विनतीसे राजी किया ॥३॥ भिखारियोंको दानमानसे संतुष्ट किया और मित्रोंको सच्चे प्रेमसे संतुष्ट किया ॥ ४ ॥

दासी दास बुलाइ बहोरी ❀ गुरुहिं सौंपि बोले करजोरी ॥ ५ ॥
सबकर सार सँबारु गुसाईं ❀ करबे जनकजननिकी नाईं ॥ ६ ॥

फिर दासी और सेवकोंको बुलाकर (और उन्हें) गुरुको सौंप हाथ जोड़कर बोले ॥ ५ ॥ हे गोसाँई ! सबकी सार सम्हाल जैसे पिता माता करते हैं इस भांति करना ॥ ६ ॥

बारहिंबार जोरि जुगपानी ❀ कहत राम सबसन मृदुबानी ॥ ७ ॥
सोइ सब भाँति मोर हितकारी ❀ जेहि ते रहइ भुआल सुखारी ॥ ८ ॥

रामचन्द्र वारंवार दोनों हाथ जोड़कर सबसे मीठी वाणी कहनेलगे कि ॥ ७ ॥ वही सब भाँतिसे मेरा भला चाहनेवाला है कि जिससे राजा कहिये मेरे पिता सुख पावें ॥ ८ ॥

दो०–मातु सकल मोरे बिहर, जेहि न होहिं दुखदीन ॥ ❀
सो उपाय तुम करव सब, पुरजन परमप्रबीन ॥ ८१ ॥ ❀

---

(१) कवित्तरामायणमें ऐसा कहा है कि–

सवैया ॥ कीरके कागर ज्यों नृपचीर विभूषण उपमा अंगनिपाई ।
औध तजी मग वासके रूख ज्यों पंथके साथ ज्यों लोग लुगाई ॥
संग सुबन्धु पुनीतप्रिया मनो धर्म क्रिया धरि देह सुहाई ।
राजिवलोचन राम चले तजि वापको राज बटाऊ कि नांईं ॥ १ ॥

हे नगरके लोगो ! तुम सब वही उपाय करते रहना कि जिससे सब माता मेरे वियोगमें दुःखसे दुःखी न हों क्योंकि तुम बड़े चतुर हो ॥ ८१ ॥

चौ०–यहिविधि राम सबहिं समुझावा ❀ गुरुपदपद्म हरषि सिर नावा ॥ १ ॥
गनपति गौरि गिरीस मनाई ❀ चले असीस पाइ रघुराई ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीने इस भांति सबको समझाया और गुरुके कमलसमान चरणोंको माथा नवाया ॥ १ ॥ गणेश, पार्वती और महादेवको मनाय रामचन्द्र आशीर्वाद पाकर चले ॥ २ ॥

राम चलत अति भयउ विषादू ❀ सुनि नजाइ पुरआरतनादू ॥ ३ ॥
कुसकुन लंक अवध अतिसोकू ❀ हरषविषादविबस सुरलोकू ॥ ४ ॥

रामचन्द्रजीके चलतेही बड़ा दुःख हुआ. नगरके दुःखका शब्द सुना नहीं जाता ॥ ३ ॥ लंकामें बुरा शकुन और अयोध्यामें बड़ा शोक होनेलगा और देवताओंका लोक अर्थात् स्वर्ग आनन्द और दुःखके वशमें पड़गया ॥ ४ ॥

गइ मूर्छा तब भूपति जागे ❀ बोलि सुमंत्र कहन अस लागे ॥ ५ ॥
राम चले वन प्रान न जाहीं ❀ केहि सुखलागि रहत तनुमाहीं ॥ ६ ॥

यहां जब मूर्छा गई तौ राजा जगे और सुमंत्रको बुलाकर ऐसे कहने लगे कि ॥ ५ ॥ रामचन्द्र तौ वनको चले पर प्राण नहीं जाते. (न जाने) किस सुखके लिये शरीरमें अटक रहे हैं ॥ ६ ॥

यहिते कवन व्यथा बलवाना ❀ जो दुख पाइ तजिहि तनु प्राना ॥ ७ ॥
पुनि धरि धीर कहहिं नरनाहू ❀ ले रथसंग सखा तुम जाहू ॥ ८ ॥

इससे कठिन कौन दुःख होगा कि जिस दुःखको पाकर प्राण शरीरको छोड़ेंगे ॥ ७ ॥ फिर राजा धीरज धरके कहने लगे कि, हे मित्र ! तुम रथ लेकर साथ जाओ ॥ ८ ॥

दो०–सुठि सुकुमार कुमार दोउ, जनकसुता सुकुमारि ॥ ❀
रथ चढ़ाइ दिखराइ वन, फिरेहु गए दिन चारि ॥ ८२ ॥ ❀

सुन्दर सुकुमार दोनों भाई और सुन्दर सुकुमारी सीताजीको रथपर चढ़ाय वन दिखलाकर चार दिन पीछे लौट आना ॥ ८२ ॥

चौ०–जो नहिं फिरहिं धीर दोउ भाई ❀ सत्यसिंधु दृढव्रत रघुराई ॥ १ ॥
तौ तुम विनय करेहु करजोरी ❀ फेरिय प्रभु मिथिलेसकिसोरी ॥ २ ॥

जो धीरजवान् दोनों भाई न फिरैं, (क्योंकि) रामचन्द्र सत्यके समुद्र और दृढ़ प्रतिज्ञा करनेवाले हैं ॥ १ ॥ तौ तुम हाथ जोड़कर प्रार्थना करना कि हे स्वामी ! मिथिलेशकिशोरी सीताजीकोही लौटा दीजिये ॥ २ ॥

जब सिय कानन देखि डराई ❀ कहेउ मोरिसिख अवसर पाई ॥ ३ ॥
साससुर अस कहेउ सँदेसू ❀ पुत्रि फिरिय बन बहुत कलेसू ॥ ४ ॥

और जब सीताजी बनको देखकर डरैं तौ समय पाकर मेरी शिक्षा कहना कि–॥३॥ हे पुत्री ! सास ससुरने ऐसा सँदेशा कहा है कि बनमें बड़े दुःख हैं इससे लौट चलिये ॥ ४ ॥

पितुगृह कबहुँ कबहुँ ससुरारी ❀ रहेहु जहाँ रुचि होइ तुम्हारी ॥ ५ ॥
इहिबिधि करेहु उपायकदंबा ❀ फिरइ तौ होइ प्रानअवलंबा ॥ ६ ॥

---

(१) इसलिये लौटाना चाहते हैं कि जनकजीके सामने क्या मुख दिखावेंगे ॥

कभी पिताके घर और कभी सुसरालमें जहाँ तुम्हारी इच्छा हो वहाँही रहना ॥ ५ ॥ इस भाँति अनेक उपाय करना, जो लौटेंगी तौ प्राणोंका सहारा होगा ॥ ६ ॥

नाहित मोर मरन परिनामा ❀ कछु न बसाइ भयो विधि वामा ॥ ७ ॥
असकहि मूर्छि परे महि राऊ ❀ राम लषन सिय आनिदेखाऊ ॥ ८ ॥

नहीं तौ अंतमें मेरा मरण है, और कुछ वश नहीं चलता, ब्रह्मा टेढ़ा होगया ॥ ७ ॥ ऐसा कह राजा अचेत हो पृथ्वीपर गिर पड़े (और बोले) राम लक्ष्मण सीताको लाकर दिखाओ ॥ ८ ॥

दो०–पाय रजायसु नाइ सिर, रथ अतिबेगि बनाइ ॥ ❀
गयउ जहाँ बाहर नगर, सीयसहित दोउ भाइ ॥ ८३ ॥ ❀

(सुमंत) आज्ञा पाय माथा नवाकर बहुत जल्दी रथ सजाकर नगरके बाहर गये जहाँ सीतासहित दोनों भाई थे ॥ ८३ ॥

चौ०–तब सुमंत्र नृपबचन सुनाए ❀ करि बिनती रथ राम चढाए ॥ १ ॥
चढि रथ सीयसहित दोउ भाई ❀ चले हृदय अवधहिं सिर नाई ॥ २ ॥

तब सुमंत्रने राजाके बचन सुनाय प्रार्थना कर रामचन्द्रजीको रथपर चढ़ाया ॥ १ ॥ सीताजीसहित दोनों भाई रथपर चढ़ और मनमें अयोध्यापुरीको माथा नवाकर चले ॥ २ ॥

चलत राम लखि अवध अनाथा ❀ बिकल लोग लागे सब साथा ॥ ३ ॥
कृपासिंधु बहुबिधि समुझावहिं ❀ फिरहिं प्रेमवस पुनि फिरि आवहिं ॥४॥

रामचन्द्रजीके चलतेही अयोध्यापुरीको अनाथ देख सब लोग दुखी होकर साथ हो लिये ॥ ३ ॥ दयासागर (रामचन्द्र) बहुत तरह समझाते हैं तौ लौट जाते हैं परंतु स्नेहके वश फिर लौट आते हैं ॥४॥

लागत अवध भयानक भारी ❀ मानहुँ कालराति अँधियारी ॥ ५ ॥
घोर जंतु सब पुरनरनारी ❀ डरपहिं एकहिं एक निहारी ॥ ६ ॥

अयोध्यापुरी बड़ी भयानक लगती है, मानों कालरात्रिकी अंधियारी झुकी है ॥ ५ ॥ सब नगरके स्त्रीपुरुष भयानक जंतुओंके समान हैं और एक दूसरेको देखकर (आपसमें) डरते हैं ॥ ६ ॥

घर मसान परिजन जनु भूता ❀ सुतहित मीत मनहु जमदूता ॥ ७ ॥
बागन बिटप बेलि कुम्हिलाहीं ❀ सरित सरोवर देखि न जाहीं ॥ ८ ॥

घर मशानके समान हैं (और जिनमें) कुटुम्बी लोग मानों भूतके समान लगते हैं और पुत्रहितकारी और मित्र मानों यमके दूतके समान हैं ॥ ७ ॥ बागोंमें वृक्ष और वेलि कुम्हिलाई जाती हैं और नदी सरोवर देखे नहीं जाते ॥ ८ ॥

दो०–हय गज कोटिन केलि मृग, पुरपसु चातक मोर ॥ ❀
पिक रथांग सुक सारिका, सारस हंस चकोर ॥ ८४ ॥ ❀

करोड़ों हाथी, घोड़े, क्रीड़ाके मृग, नगरके पशु, (गाय भैंस आदि) पपीहा, मोर, कोयल, चकवा, चकवी, सूआ, मैना, सारस, हंस और चकोर–॥ ८४ ॥

चौ०–रामवियोग बिकल सब ठाढे ❀ जहँ तहँ मनहुँ चित्रलिखि काढे ॥ १ ॥
नगर सकल वन गहवर भारी ❀ खग मृग विपुल सकल नरनारी ॥ २ ॥

रामचन्द्रके विरहमें सब जहाँ तहाँ ऐसे दुखी खड़े हैं मानों चितेरेने चित्रमें लिखकर काढ़े हैं ॥ १ ॥ संपूर्ण नगर बड़े घने वनके समान और सब स्त्रीपुरुष बहुतसे पक्षियों और हिरणोंके समान हैं ॥ २ ॥

बिधि कैकयी किरातिनि कीन्हीं ❀ जेहि दव दुसह दसहु दिसि दीन्हीं ॥३॥
सहि न सके रघुवरविरहागी ❀ चले लोग सब व्याकुल भागी ॥ ४ ॥

(उस बनके जलानेके लिये) ब्रह्माने कैकेयीको भीलनी किया. जिसने दशों दिशाओंमें दुसह दावानल कहिये बनकी अग्नि लगादी ॥ ३ ॥ सब लोग रामचन्द्रजीके वियोगरूपी अग्निको नहीं सह सके और दुखी हो (अयोध्यारूपी वनको छोड़कर) भाग चले ॥ ४ ॥

सबहिं विचार कीन्ह मनमाहीं ❀ रामलषनसियबिनु सुख नाहीं ॥ ५ ॥
जहाँ राम तहँ सकल समाजू ❀ बिनु रघुवीर अवध केहिकाजू ॥ ६ ॥

सभीने मनमें विचार किया कि राम लक्ष्मण और सीताजीके विना सुख नहीं है ॥ ५ ॥ जहाँ रामचन्द्र हैं वहाँही हमारा सब समाज है. विना रामचन्द्रके अयोध्यामें हमारा क्या काम है ॥ ६ ॥

चले साथ अस मंत्र दृढ़ाई ❀ सुरदुर्लभ सुखसदन विहाई ॥ ७ ॥
रामचरनपंकज प्रिय जिनहीं ❀ विषयभोगबस करै कि तिनहीं ॥ ८ ॥

ऐसी पक्की सलाहकर देवताओंकोभी दुर्लभ ऐसे सुख देनेवाले घरोंको छोड़कर साथ चलदिये ॥ ७ ॥ जिनको रामचन्द्रजीके कमलसमान चरण प्यारे हैं उनको विषयभोग कैसे वशमें कर सकते हैं? अर्थात् नहीं करसकते ॥ ८ ॥

दो०-बालक वृद्ध बिहाइ गृह, लगे लोग सब साथ ॥ ❀
तमसातीर निवास किय, प्रथम दिवस रघुनाथ ॥ ८५ ॥ ❀

बालक बूढ़े सब लोग घर छोड़ २ कर साथ लगलिये और रामचन्द्रजीने पहले दिन तमसा नदीके किनारेपर वास किया ॥ ८५ ॥

चौ०-रघुपति प्रजा प्रेमबस देषी ❀ सदयहृदय दुख भयउ विसेषी ॥ १ ॥
करुनामय रघुनाथ गुसाँई ❀ बेगि पाइअहि पीर पराँई ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीने प्रजाको स्नेहके वशमें देखा तौ बड़ा दुःख हुआ, क्योंकि उनके हृदयमें बड़ी दया है ॥ १ ॥ रामचन्द्र स्वामी करुणासे भरे हुये हैं इस लिये पराये दुःखको जल्दी मान लेते हैं ॥ २ ॥

कहि सप्रेम मृदु बचन सुनाए ❀ बहुविधि राम लोग समुझाए ॥ ३ ॥
किए धर्म उपदेस घनेरे ❀ लोगप्रेमबल फिरहिं न फेरे ॥ ४ ॥

रामचन्द्रजीने स्नेहसहित मीठे वचन सुनाकर लोगोंको बहुत भाँति समझाया ॥३॥ और बहुतसे धर्मके उपदेश किये परन्तु लोग ऐसे प्रेमके वश हुये कि लौटानेसेभी नहीं लौटते हैं ॥ ४ ॥

सीलसनेह छाँड़ि नहिंजाई ❀ असमंजसबस भए रघुराई ॥ ५ ॥
लोग सोकसमबस गे सोई ❀ कछुक देवमाया मति मोई ॥ ६ ॥

शील और प्रेम छोड़ा नहीं जाता, सो रामचन्द्र दुबिधाके वशमें हुये अर्थात् न तौ लेजासकें और न फेर सकें ॥ ५ ॥ कुछ लोग तौ शोक और परिश्रमके वश सोगये और कुछकी मति रामजीकी मायाने फेर दी ॥ ६ ॥

जबहिं जाम जुग जामिनि बीती ❀ राम सचिवसन कहेउ सप्रीती ॥ ७ ॥
खोजमारि रथ हाँकहु ताता ❀ आन उपाय बनहि नहिं बाता ॥ ८ ॥

तौ जब दोहपहर रात बीतगई अर्थात् आधीरात होगई तब रामचन्द्रजीने मंत्रीसे स्नेहसहित कहा ॥७ हे प्यारे! रथको इसप्रकार हांको कि खोज न मिलै; क्योंकि और किसी उपायसे बात न बनेगी॥८॥

दो०-राम लषन सिय यान चढ़ि, संभुचरन सिर नाइ ॥
सचिव चलायउ तुरत रथ, इतउत खोज दुराइ ॥ ८६ ॥

राम लक्ष्मण और सीताजी महादेवके चरणोंको शिर[1] नवाय रथपर चढ़े और मंत्रीने इधर उधर खोज छिपाकर रथ जल्दी हांका ॥ ८६ ॥

चौ०-जागे सकल लोग भए भोरू ❀ गए रघुबीर भयउ अति सोरू ॥ १ ॥
रथकर खोज कतहुँ नहिं पावहिं ❀ रामराम कहि चहुँ दिसि धावहिं ॥ २ ॥

प्रातःकाल होनेपर सब लोग जागे और (इस बातका) बड़ा कोलाहल मचा कि रामजी चले गये ॥ १ ॥ रथकी खोज कहीं नहीं मिलती, राम २ कहते हुये चारों ओर दौड़ते हैं ॥ २ ॥

मनहुँ बारि निधि बूड़ जहाजू ❀ भयउ बिकल सब बनिकसमाजू ॥ ३ ॥
एकहिं एक देहिं उपदेसू ❀ तजेउ राम हम जानि कलेसू ॥ ४ ॥

(और सब ऐसे व्याकुल होगए) मानों समुद्रमें जहाजके डूबजानेसे सब वनियोंका समाज विकल होजाता है ॥३॥ एक दूसरेको उपदेश देते हैं कि रामचन्द्रने दुःख जानकर हमको छोड़ दिया ॥४॥

निंदहिं आपु सराहहिं मीना ❀ धिक् जीवन रघुबीरबिहीना ॥ ५ ॥
जौपै प्रियवियोग बिधि कीन्हा ❀ तौ कस मरन न माँगे दीन्हा ॥ ६ ॥

अपनी निन्दा करते हैं और मछलियोंकी[2] सराहना करते हैं (और कहते) कि रामचन्द्रके विना जीनेको धिक्कार है ॥५॥ जो ब्रह्माने प्यारोंका वियोग किया तौ मांगनेसे मरण क्यों नहीं दिया६

इहिबिधि करत प्रलाप कलापा ❀ आये अवध भरे परितापा ॥ ७ ॥
विषम बियोग न जाइ बखाना ❀ अवधि आस सब राखहिं प्राना ॥ ८ ॥

इसप्रकार वहुतसी बातें करते और दुःखमें भरे हुये अयोध्यापुरीमें आये ॥७॥ ऐसा कठिन वियोग है कि वर्णन नहीं किया जाता. सबने अवधि-कहिये चौदह वर्षकी आशासे प्राण रक्खे ॥ ८ ॥

दो०-रामदरस हित नेमब्रत, लगे करन नरनारि ॥
मनहुँ कोककोकीकमल, दीन बिहीन तमारी ॥ ८७ ॥

सब स्त्रीपुरुष रामचन्द्रजीके दर्शनोंके लिये नियम और व्रत करने लगे. (और ऐसे दीनहोरहे हैं) मानों चकवाचकवी[3] और कमल[3] सूर्यके बिना दीन होजाते हैं ॥ ८७ ॥

चौ०-सीतासचिव सहित दोउ भाई ❀ शृंगबेरपुर पहुँचे जाई ॥ १ ॥
उतरे राम देवसरि देखी ❀ कीन्ह दंडवत हरषबिसेखी ॥ २ ॥

सीता और मंत्रीसहित दोनों भाई जाकर शृंगबेरपुर पहुँचे ॥ १ ॥ रामचन्द्र गंगाजीको देखकर उतरे और बड़े आनन्दसे दण्डवत् करी ॥ २ ॥

---

(१) महादेवके चरणोंको शिर नवानेका यह भाव निकलता है कि, एक तौ रघुनाथजीके इष्टदेव, दूसरे शंकरका स्मरण कल्याणका करनेवाला है, तीसरे पुरवासी लोग जो वियोगके कारण मरनेके लिये आतुरहो रहे हैं उनकी रक्षा रक्खें, क्योंकि ये संसार हर्त्ता हैं इसलिये मृत्यु इनके आधीन है ॥

(२) मछलियोंकी सराहना इसलिये करी कि जल उनका पति है, उसीसे उनका जीवन है और जलसे अलग होतेही प्राण छोड़ देती हैं; और अपनी निन्दा यों करते हैं कि, हम ऐसे हैं कि रामजीके वियोग होनेपर विना प्राण छोड़े वैठे हैं-हमसे तौ मछलियाँहीं अच्छीं, अथवा मीना लोग जो वनमें रहते हैं वे बड़े बड़भागी हैं कि जिनको दरशन होगा और हम तौ अभागे हैं कि रामजी हमें छोड़कर चल दिये.

(३) चकवाचकवीकी उत्प्रेक्षासे स्त्रीपुरुषोंका शृंगार काम आदिका नष्ट होना प्रकट किया और कमलके दृष्टान्तसे उनके रूपरंगका फीकापन दिखाया है ॥

लषन सचिव सिय कीन्ह प्रनामा ❀ सबहिं सहित सुख पायउ रामा ॥ ३ ॥
गंग सकल मुदमंगल मूला ❀ सब सुखकरनि हरनि सब सूला ॥ ४ ॥

फिर लक्ष्मण, मन्त्री और सीताजीनेभी प्रणाम किया और सब सहित रामचन्द्रजीने आनन्द पाया॥ गंगाजी सब आनन्द मंगलकी जड़, सब सुख देनेवाली और सब दुःखोंके नाश करनेवाली हैं॥ ४ ॥

कहि कहि कोटिक कथाप्रसंगा ❀ राम बिलोकत गंगतरंगा ॥ ५ ॥
सचिवहिं अनुजहिं प्रियहिं सुनाई ❀ बिबुधनदी महिमा अधिकाई ॥ ६ ॥

करोड़ों कथाके प्रसंग कह २ कर रामचन्द्रजी गंगाकी तरंगोंको देखने लगे ॥ ५ ॥ और गंगाजीकी अधिक महिमा मंत्री लक्ष्मण और सीताजीकों सुनाई ॥ ६ ॥

मज्जन कीन्ह पंथसम गयऊ ❀ सुचि जल पियत मुदित मन भयऊ ॥ ७ ॥
सुमिरत जाइ मिटहिं भवभारू ❀ तेहि स्रम यह लौकिक व्यवहारू ॥ ८ ॥

मज्जन करनेसे मार्गकी थकावट दूर हुई और पवित्र गंगाजल पीतेही मन प्रसन्न होगया ॥ ७॥ जिसके स्मरण करतेही संसारके भार नास होते हैं उसको थकावट हुई, यह लोककी रीति है ॥८॥

दो०–सुद्ध सच्चिदानंदमय, राम भानुकुलकेतु ॥ ❀
चरित करत नर अनुहरत, संसृतिसागर सेतु ॥ ८८ ॥ ❀

रामचन्द्रजी शुद्ध सच्चिदानन्द और सूर्यवंशके ध्वजारूप हैं और मनुष्योंकेसे चरित्र करते हैं और वे चरित्र संसाररूपी समुद्रके तरनेके लिये पुलके समान हैं ॥ ८८ ॥

चौ०–यह सुधि गुहनिषाद जब पाई ❀ मुदित लिए प्रियबंधु बुलाई ॥ १ ॥
लै फल मूल भेट भरि भारा ❀ मिलन चला हियहरष अपारा ॥ २ ॥

जब गुह निषादने यह खबर सुनी (कि राम आये) तौ प्रसन्नतासे प्यारे कुटुम्बी बुला लिये॥१॥ और भेटके लिये बहुतसे फल और कन्दमूलोंसे भर२ कर मनमें बड़ा प्रसन्न होता हुआ मिलनेको चला॥२॥

करि दंडवत भेट धरि आगे ❀ प्रभुहिं बिलोकत अतिअनुरागे ॥ ३ ॥
सहज सनेहबिबस रघुराई ❀ पूछेउ कुसल निकट बैठाई ॥ ४ ॥

दण्डवतकर भेटको आगे रख बड़ी प्रीतिसे भगवानको देखने लगा ॥ ३ ॥ रामचन्द्रजी तौ स्वभावहीसे प्रीतिके वश हैं; उसे पास बिठाकर कुशल पूँछी ॥ ४ ॥

नाथ कुसल पदपंकज देखे ❀ भयउ भागभाजन जन लेखे ॥ ५ ॥
देव धरनि धन धाम तुम्हारा ❀ मैं जन नीच सहितपरिवारा ॥ ६ ॥

(तब निषादने कहा) हे स्वामी ! आपके चरणकमलोंके दर्शन करनेसे कुशल है, और मैं मनुष्योंकी गिनतीमें भाग्यशाली हुआ ॥५॥ हे देव ! पृथ्वी, धन और महल सब आपके हैं, और मैं तौ नीच कुटुम्बसहित (आपका) दास हूँ ॥ ६ ॥

---

(१) **कवित्त**—कूरमपै कोल कोलहूपै शेषकुंडली हैं कुंडली पै फवी फैल सुफन हजारकी ।
कहैं पदमाकर सुफन पै फवी है भूमि भूमि पै फवी है थिति रजतपहारकी।
रजतपहारपर शंभु सुरनायक हैं शंभु परजोति जटाजूटसों अपारकी ।
शंभु जटाजूटपर चंद्रकी छुटी है छटा चन्द्रकी छटान पै छटा है गंगधारकी ॥ १ ॥
सारमाला सत्यकी विचारमाला वेदनकी भारी भागमाला है भगीरथ नरेशकी ।
तपमाला जह्नुकी सुजपमाला योगिनकी आछी आपमाला या अनादि ब्रह्मवेशकी ।
कहै पदमाकर प्रमाणमाला पुण्यनकी गंगा जूकी धाराधनमाला है धनेशकी ।
ज्ञानमाला गुरुकी गुमानमाला ज्ञाननकी ध्यानमाला ध्रुवकी मौलिमाला है महेशकी ॥ २ ॥

कृपा करिय पुर धारिय पाऊ ❀ थापिय जन सबलोग सिहाऊ ॥ ७ ॥
कहेउ सत्य सब सखा सुजाना ❀ मोहिं दीन्ह पितु आयसु आना ॥ ८ ॥

कृपा करके नगरको चरण पधारिये और मुझे अपना दास बनाइये कि जिससे सब लोग बड़ाई करैं ॥ ७ ॥ (रामचन्द्र बोले) हे सखा ! तुम चतुर हो, तुमने सब ठीक कहा, परन्तु मुझे तौ पिताने औरही आज्ञा दी है कि ॥ ८ ॥

दो०-बरषचारिदस बासबन, मुनिब्रत बेष अहार ॥ ❀
ग्रामबास नहिं उचित सुनि, गुहहिं भयउ दुखभार ॥ ८९ ॥ ❀

चौदह वर्षतक वनमें रहना, मुनियोंकैसा व्रत, वेष और भोजन करना कह दिया है. इसलिये गाँवका रहना योग्य नहीं है, यह सुनकर केवटको बड़ा भारी दुःख हुआ ॥ ८९ ॥

चौ०-राम लषन सियरूप निहारी ❀ कहहिं सप्रेम नगरनरनारी ॥ १ ॥
ते पितुमातु कहहु सखि कैसे ❀ जिन पठए बनबालक ऐसे ॥ २ ॥

राम लक्ष्मण और सीताजीके रूपको देखकर नगरके स्त्री पुरुष प्रेमसे आपसमें कहते हैं ॥ १ ॥ हे सखी ! कहो वे कैसे माता पिता है जिन्होंने ऐसे बालक वनमें भेज दिये हैं ॥ २ ॥

एक कहैं भूपति भल कीन्हा ❀ लोचनलाभ हमहिं बिधि दीन्हा ॥ ३ ॥
तब निषादपति उर अनुमाना ❀ तरुसिंसिपा मनोहर जाना ॥ ४ ॥

कोई २ कहता है कि, राजाने अच्छा किया जो विधाताने हमको नेत्रोंका लाभ दिया ॥ ३ ॥ तब केवटराजने मनमें अनुमान करके और शीशमके वृक्षको मनहरन जान-॥ ४ ॥

लै रघुनाथहिं ठाउँ बतावा ❀ कहेहु राम सबभाँति सुहावा ॥ ५ ॥
पुरजन करि जुहार गृह आए ❀ रघुवर संध्या करन सिधाए ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीको ले जाकर स्थान बतलाया और रामचन्द्रजीने (देखकर) कहा कि सब भांति अच्छा है ॥ ५ ॥ (उस समय) नगरके लोग तौ दंडवत कर २ के (अपने २ घर आये और रामचन्द्र संध्या करनेको गये ॥ ६ ॥

गुह सँभारि साथरी बनाई ❀ कुसकिसलय मृदुपरम सुहाई ॥ ७ ॥
सुचि फलमूल मधुर मृदु जानी ❀ दोनाभरिभरि राखेसि आनी ॥ ८ ॥

गुहने नरम कुश और कोमल पत्तोंकी रचनाकर अत्यंत सुन्दर शय्या बनायी ॥ ७ ॥ और पवित्र फल तथा कन्द मीठे और कोमल जानकर दोनोंमें भर २ के आगे लाकर धरे ॥ ८ ॥

दो०-सिय सुमंत्र भ्रातासहित, कंदमूलफल खाइ ॥ ❀
सयन कीन्ह रघुबंसमनि, पायँ पलोटत भाइ ॥ ९० ॥ ❀

रामचन्द्रजीने सीता, लक्ष्मण और सुमंत्रसहित कन्दमूलफल खाकर शयन किया और भाई (लक्ष्मण) चरण दाबने लगे ॥ ९० ॥

चौ०-उठे लषन प्रभु सोवत जानी ❀ कहि सचिवहिं सोवन मृदुबानी ॥ १ ॥
कछुक दूरि सजि बान सरासन ❀ जागन लाग बैठि बीरासन ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीको सोते हुये जानकर लक्ष्मणजी उठे और मीठी बाणीसे मंत्रीको सोनेकी आज्ञा दीनी ॥ १ ॥ और थोड़ी दूर धनुषबाण सजाकर और वीरासनसे बैठकर जागने लगे ॥ २ ॥

गुह बुलाइ पाहरू प्रतीती ❀ ठाँवठाँव राखे अतिप्रीती ॥ ३ ॥
आपु लषनपहिं बैठेउ जाई ❀ कटि भाथा सर चाप चढाई ॥ ४ ॥

केवटने भरोसेके पहरुओंको बुलाय बड़े स्नेहसे जगह २ रख दिया ॥ ३ ॥ और आपभी कमर में तरकस और धनुषबाण सजाकर लक्ष्मणजीके पास जा बैठा ॥ ४ ॥

सोवत प्रभुहिं निहारि निषादा ❀ भयउ प्रेमबस हृदयविषादा ॥ ५ ॥
तनु पुलकित लोचन जल बहई ❀ बचन सप्रेम लषनसन कहई ॥ ६ ॥

भगवान्को सोते हुये देख प्रेमके वश निषादके मनमें दुःख हुआ ॥ ५ ॥ शरीरमें पुलकावली छागई नेत्रोंसे जल बहने लगा और वह प्रीतिसहित लक्ष्मणजीसे वचन कहने लगा ॥ ६ ॥

भूपतिभवन सुभाय सुहावा ❀ सुरपतिसदन न पटतरपावा ॥ ७ ॥
मनिमय रचित चारु चौबारे ❀ जनु रतिपति निजहाथ सँवारे ॥ ८ ॥

(हे लक्ष्मणजी !) राजाका महल साधारणही ऐसा शोभायमान है कि, जिसकी बराबरी इन्द्रका भवनभी नहीं करसक्ता है ॥ ७ ॥ और जिसमें मणियोंसे जड़े हुये ऐसे उज्ज्वल चौबारे बने हैं, मानों कामदेवने अपने हाथोंसे बनाये हैं ॥ ८ ॥

दो०–सुचि सुबिचित्र सुभोगमय, सुमन सुगंध सुवास ॥ ❀
पलँग मंजुमनिदीप जहँ, सबबिधि सकल सुपास ॥ ९१ ॥ ❀

और वह राजमन्दिर शुचि अर्थात् बड़ा झड़ा बुहरा हुआ, सुन्दर विचित्र कहिये जिसमें अनेक प्रकारकी लाल पीली हरी आदि सफेदी हो रही है, झाड़फानूस तसवीरें लगी हुई हैं और सुन्दर भोगनेके पदार्थोंसे भराहै, और सुन्दर पुष्पोंकी सुगन्धि आरही है, कोमल पलंग बिछ रहे हैं, मणिदीपक जल रहे हैं और जहाँ सबको सब प्रकार आराम है ॥ ९१ ॥

चौ०–बिबिध बसन उपधान तुराई ❀ छीरफेन मृदु बिसद सुहाई ॥ १ ॥
तहँ सियराम सयन निशि करहीं ❀ निजछबि रति मनोज मद हरहीं ॥ २ ॥

और जहाँ भाँति २ के वस्त्र और दूधके झागके समान कोमल और श्वेत तकिये तथा तोशक शोभायमान हैं ॥ १ ॥ तहाँ राम जानकी रातको सोतेमें अपनी शोभासे रति और कामदेवके अभिमानको नाश करते थे ॥ २ ॥

ते सियराम साथरी सोये ❀ स्रमित वसनबिनु जाहिं त जोये ॥ ३ ॥
मातु पिता परिजन पुरवासी ❀ सखा सुशील दास अरु दासी ॥ ४ ॥

वही सीता रामचन्द्र कुशोंकी सेजपर थकित हुये विना बिछौने ऐसे सोरहे हैं कि देखे नहीं जाते ॥ ३ ॥ माता, पिता, कुटुम्बी, नगरवासी मित्र और अच्छे स्वभाववाले दास और दासी–॥ ४ ॥

जुगवहिं जिनहिं प्रानकीनाईं ❀ महि सोवत सो राम गुसांईं ॥ ५ ॥
पिता जनक जग बिदित प्रभाऊ ❀ ससुर सुरेस सखा रघुराऊ ॥ ६ ॥

जिनको प्राणोंकी भाँति देखते रहते थे वही रामचन्द्र स्वामी पृथ्वीपर सोरहे हैं ॥५॥ और जिनका पिता जनक कि जिसका प्रभाव संसारमें प्रगट है और जिनका सुसर राजा दशरथ इन्द्रका मित्र है ॥६॥

रामचंद्र पति सो बैदेही ❀ महि सोवति बिधि बाम न केही ॥ ७ ॥
सियरघुबीरकि काननजोगू ❀ करम प्रधान सत्य कह लोगू ॥ ८ ॥

और जिसके पति रामचन्द्र हैं वही सीता पृथ्वीपर सोती है तौ ब्रह्मा टेढ़ा नहीं है तौ क्या है अर्थात् अवश्यही टेढ़ा है ॥ ७ ॥ सीता रामचन्द्र क्या वनके योग्य हैं, अर्थात् नहीं हैं (परन्तु) कर्मही मुख्य है, लोगोंका ऐसा कहना ठीक है ॥ ८ ॥

दो०–केकयनंदिनि मंदमति, कठिन कुटिलपन कीन्ह ॥ ❀
जेहि रघुनंदन जानकिहिं, सुखअवसर दुख दीन्ह ॥ ९२ ॥ ❀

मतिहीन कैकेयीने बड़ा खोट पन किया कि जिसने रामचन्द्र सीताजीको सुखके समय दुःखदिया ९२

चौ०–भइ दिनकरकुल बिटप कुठारी ❀ कुमति कीन्ह सब बिश्वदुखारी ॥ १ ॥
रामसीय महि सयन निहारी ❀ भयउ बिषाद निषादहिं भारी ॥ २ ॥

कैकेयीकी मति बिगड़ गई जो सूर्यवंशरूपी वृक्षको कुल्हाड़ी हुई और जिसने सब संसारको दुखी किया ॥१॥ (इस प्रकार) रामचन्द्र सीताजीको पृथ्वीमें सोते हुये देखकर निषादको बड़ा दुःख हुआ॥२॥

बोले लषन मधुर मृदु बानी ❀ ज्ञान बिराग भक्तिरस सानी ॥ ३ ॥
कौन काहु दुखसुखकर दाता ❀ निजकृत कर्म भोग सब भ्राता ॥ ४ ॥

(उस समय) लक्ष्मणजी ज्ञान, वैराग्य और भक्तिके रससे सनी हुई मीठी और कोमल वाणी बोले ॥३॥ हे भाई! (संसारमें) कौन किसको सुख दुःखका देनेवाला है (सब अपने किये कर्मोंको भोगते हैं) ४

योग बियोग भोग भल मंदा ❀ हित अनहित मध्यम भ्रमफंदा ॥ ५ ॥
जनम मरन जहँलगि जगजालू ❀ संपति बिपति कर्म अरु कालू ॥ ६ ॥

और मिलना, बिछुड़ना, भला बुरा भोगना, भलाई, बुराई और मित्र, शत्रु तथा उदासीन होना ये सब भ्रम कहिये अज्ञानके फंदे हैं ॥ ५ ॥ संसार एक जाल है, इसमें जहाँतक यह हैं, जन्म और मरण संपत्ति विपत्ति कर्म और काल हैं ॥ ६ ॥

धरनि धाम धन पुर परिवारू ❀ स्वर्ग नरक जहँलगि व्यवहारू ॥ ७ ॥
देखिय सुनिय गुनिय मनमाहीं ❀ मोहमूल परमारथ नाहीं ॥ ८ ॥

और जहांतक पृथ्वी, मकान, द्रव्य, नगर, कुटुम्ब, स्वर्ग, नरक आदि व्यवहार हैं ॥७॥ उन्हें देखिये सुनिये और मनमें विचारिये उन सबकी जड़ अज्ञान है;इनमें परमारथ कहिये मोक्षसाधन कुछभीनहींहै

दो०–सपने होइ भिखारि नृप, रंक नाकपति होइ ॥ ❀
जागे लाभ न हानि कछु, तिमि प्रपंच जिय जोइ ॥ ९३ ॥ ❀

जैसे स्वप्नमें राजा भिखारी और भिखारी इन्द्र होजाय, और जागनेपर कुछ हानि लाभ नहीं. ऐसेही संसारके प्रपंचको मनमें समझना चाहिये, अर्थात् संसारके जो दुःख सुख हैं वे स्वप्नवत मिथ्या हैं ॥ ९३ ॥

चौ०–अस बिचारि नहिं कीजिय रोषू ❀ बादि काहु नहिं दीजिय दोषू ॥ १ ॥
मोहनिसा सब सोवनिहारा ❀ देखहिं स्वप्न अनेकप्रकारा ॥ २ ॥

ऐसे विचार क्रोध न करना चाहिये और न किसीको वृथा दोष देना चाहिये ॥ १ ॥ अज्ञानकी रातमें सब सोनेवाले हैं और वे अनेक भाँतिके स्वप्न देखते हैं ॥ २ ॥

इहि जग जामिनि जागहिं जोगी ❀ परमारथी प्रपंचबियोगी ॥ ३ ॥
जानिय तबहिं जीव जगजागा ❀ जब सबबिषयबिलासबिरागा ॥ ४ ॥

इस संसाररूपी रातमें तौ वे [१]योगी जागते हैं जो परमारथी कहिये मोक्षके अर्थी हैं, और संसारसे जुदे हैं ॥ ३ ॥ और तभी इस जीवको संसारमें जगा हुआ समझना चाहिये कि जब सब विषयभोगसे जुदा होजाय ॥ ४ ॥

---

(१) 'या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी । यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः ॥ अर्थात् सब अज्ञानियोंकी रात्रि कि जिसमें वे सो रहे हैं, ब्रह्मनिष्ठा है; उसमें इन्द्रियोंको वशमें रखनेवाला ज्ञानी जन जागता है, और जिस शब्दादि विषयरूप रात्रिमें सब प्राणी जागते हैं वह आत्मतत्त्व देखनेवाले मुनिकी रात्रि है ॥ १ ॥

होइ विवेक मोह भ्रमभागा ❀ तब रघुवीरचरन अनुरागा ॥ ५ ॥
सखा परम परमारथ एहू ❀ मनक्रमबचन रामपदनेहू ॥ ६ ॥

(क्योंकि जब) ज्ञान होता है तौ अज्ञान और सन्देह दूर होजाते हैं और तभी रामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रीति होती है ॥ ५ ॥ हे मित्र! परम परमारथ अर्थात् परमतत्त्व यही है कि मन क्रम वचनसे रामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रीति हो ॥ ६ ॥

राम ब्रह्म परमारथ रूपा ❀ अविगत अखिल अनादि अनूपा ॥ ७ ॥
सकल विकाररहित गतभेदा ❀ कहि नित नेति निरूपहिं वेदा ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजी पर[1]ब्रह्म और परम मोक्षरूप हैं. इनकी गति किसीने नहीं जानी है. ये अनुभव आदिसेभी नहीं दीखते हैं और अनादि तथा उपमारहित हैं ॥ ७ ॥ सब विकार अर्थात् जन्ममरण आदि संसारके दुखसुखसे रहित हैं, भेद[2]से परे हैं. जिसको वेद नेति २ अर्थात् तुम्हारा अंत नहीं ऐसे कहकर नित्य निश्चय करते हैं ॥ ८ ॥

दो०-भक्तभूमि भूसूरसुरभि, सुरहित लागि कृपालु ॥ ❀
करत चरित धरि मनुजतनु, सुनत मिटहिं जगजालु ॥९४॥ ❀

भक्त, पृथ्वी, ब्राह्मण, गौ और देवताओंके हितके लिये दयानिधान, (भगवान्) मनुष्यका शरीर धारणकर लीला करते हैं, जिन लीलाओंके सुननेसे संसारके फन्दे मिट जाते हैं ॥ ९४ ॥

चौ०-सखा समुझि अस परिहरि मोहू ❀ सिय रघुबीर चरन रत होहू ॥ १ ॥
कहत रामगुन भा भिनुसारा ❀ जागे जगमंगलदातारा ॥ २ ॥

हे मित्र! ऐसे समझ अज्ञानको छोड़कर सीता रामचन्द्रके चरणोंमें प्रीति करो ॥१॥ रामचन्द्रजीके गुण कहते हुये सवेरा होगया और संसारको आनन्द देनेवाले रघुनथजी जागे ॥ २ ॥

सकल शौच करि राम अन्हावा ❀ शुचि सुजान बटक्षीर मँगावा ॥ ३ ॥
अनुजसहित शिरजटा बनाए ❀ देखि सुमंत्र नयनजल छाए ॥ ४ ॥

परमपवित्र और चतुर रामचन्द्रजीने संपूर्ण शौच अर्थात् मलमूत्रादि त्याग किया और स्नानकर बड़का दूध मँगाया ॥ ३ ॥ और छोटे भाई (लक्ष्मण) सहित मस्तकपर जटा बनाई (जिनको) देख सुमंत्रके नेत्रोंमें जल भर आया ॥ ४ ॥

हृदय दाह अति बदन मलीना ❀ कह कर जोरि बचन अतिदीना ॥ ५ ॥
नाथ कहेउ अस कोशलनाथा ❀ लै रथ जाहु रामके साथा ॥ ६ ॥

छाती जलने लगी, मुख अत्यंत मलीन होगया, और हाथ जोड़ बहुत आधीनीसे बचन कहनेलगा ॥५॥ हे स्वामी! राजा दशरथजीने मुझसे ऐसे कहदिया था कि रथ लेकर रामके साथ जाओ ॥६॥

बन देखाइ सुरसरि अन्हवाई ❀ आनेहु बेगि फेरि दोउ भाई ॥ ७ ॥
लषनरामसिय आनेहु फेरी ❀ संसय सकल सकोच निवेरी ॥ ८ ॥

और बन दिखलाकर और गंगाजीके स्नान कराकर दोनों भाइयोंको जल्दी लौटालाना ॥ ७ ॥ (राजाको वेहोशीमे सीताजीकी याद भूलगई है इसलिये दोनों भाइयोंको कहा पर जब फिर याद

---

(१) 'रामः सत्यं परं ब्रह्म रामात्किंचिन्न विद्यते ।'

(२) निषादने पीछेकी चौपाईमें कहा कि 'भगवान् राजमंदिरमें सेजपर सोनेवाले हैं सो आज भूमिपर सोते हैं, विधाता टेढा किसको नहीं होता' उसका उत्तर लक्ष्मणजीने दिया है कि रामजी सब भेदरहित हैं इनको जैसीही सेज बैसीही पृथ्वी ।

उठ आई तब कहने लगे कि,) सब भ्रम और संकोचको दूर कराकर राम, लक्ष्मण और सीताजीको लौटा लाना ॥ ८ ॥

दो०–नृप अस कहेउ गुसाँइ जस, कहइकरौं बलि सोइ ॥ ❀
करि विनती पाँयन परेउ, दीनबाल जिमि रोइ ॥ ९५ ॥ ❀

हे स्वामी! राजाने तौ यों कहा था अब मैं आपकी बलैयाँ लूँ और जैसा आप कहैं वैसा करूं (इस प्रकार) विनती करके और विचारे बालकके समान रोकर चरणोंमें गिर पड़ा ॥ ९५ ॥

चौ०–तात कृपाकरि कीजिय सोई ❀ जाते अवध अनाथ न होई ॥ १ ॥
मंत्रिहि राम उठाइ प्रबोधा ❀ तात धर्म मगु तुम सबसोधा ॥ २ ॥

हे प्यारे ! कृपाकर वही करो जिससे अयोध्यापुरी अनाथ न हो ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीने मंत्रीको उठाकर समझाया कि हे प्यारे ! तुमने तौ धर्मका मार्ग सब शोधडाला है, अर्थात् धर्मकी कोई बात तुमसे नहीं छुपी है ॥ २ ॥

शिबि दधीचि हरिचंद नरेसा ❀ सहे धर्महित कोटिकलेसा ॥ ३ ॥
रंतिदेव बलि भूप सुजाना ❀ धर्मधरेउ सहि संकट नाना ॥ ४ ॥

(देखो) शिवि[1] दधीचि[2] और हरिश्चन्द्र[3] राजाओंने धर्मके लिये करोड़ों दुःख सहे ॥ ३ ॥ बड़े चतुर राजा रंतिदेव[4] और बलि[5]ने अनेक कष्ट सहकर धर्मको धारण किया ॥ ४ ॥

धर्म न दूसर सत्यसमाना ❀ आगम निगम पुरान बखाना ॥ ५ ॥
मैं सोइ धर्म सुलभ करि पावा ❀ तजे सो तिहुँपुर अपजस छावा ॥ ६ ॥

सो सत्यके समान दूसरा धर्म नहीं; यह वेद, शास्त्र और पुराणोंमें वर्णन किया है ॥ ५ ॥ और मैने वही सत्य धर्म सुगमताकरके पाया है; उसके छोड़नेसे तीनो लोकमें बुराई होगी ॥ ६ ॥

संभावितकहँ अपजस लाहू ❀ मरन कोटिसम दारुन दाहू ॥ ७ ॥
तुमसन तात बहुत का कहऊं ❀ दिए उतर फिरि पातक लहऊँ ॥ ८ ॥

यशस्वी[6]को अपयशका प्राप्त होना करोड़ों मरनेके समान कठिन दुःख देनेवाला होता है ॥ ७ ॥ हे प्यारे! तुमसे बहुत क्या कहूँ ? क्यों कि उत्तर देनेसे फिर पाप होगा ॥ ८ ॥

दो०–पितुपद गहि कहि कोटिविधि, विनय करव करजोरि ॥ ❀
चिंता कवनिहुँ बातकी, तात करिय जनि मोरि ॥ ९६ ॥ ❀

तुम पिताके चरण छूकर और करोड़ों भाँतिसे कहकर तथा हाथ जोड़कर विनती करना कि हे पिता ! मेरी किसी बातकी चिन्ता न कीजिये ॥ ९६ ॥

(१–२) इनकी कथा अयोध्याकांडके ३३६ पत्रमें देखो । (३) अयोध्याकांडके ३४७ पत्रमें देखो । (४) राजा रंतिदेव बड़े धर्मात्मा थे । ब्राह्मणोंकी सेवा तथा यज्ञ दान आदि किया करतेथे । फिर संसारको असार समझ स्त्री पुत्रको साथ लेकर वनमें चले गये और तप करने लगे. एक समय ४८ दिन पीछे थोड़ा अन्न हाथ लगा–ईश्वरका भोग लगाकर उसके ३ हिस्से करे । उससमय एक भिक्षुकने आकर याचना करी तौ अपना भाग देदिया; और जब उसने और मांगा तब स्त्रीपुत्रका भागभी देदिया और मनमें विकार नहीं लाये ! तब तौ भगवान्ने प्रसन्न होकर उन्हें दरशन दिया और परधामको पहुँचाया । (५) अयोध्याकांडका ३३६ पत्र देखो ! (६) जैसा कहा है कि–

"संभावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते ।

अर्थात् यशस्वीकी अकीर्ति फैलना मरनेसेभी बढ़ कर है ।

चौ०–तुम पुनि पितुसमान हित मोरे ❀ विनती करौ तात कर जोरे ॥ १ ॥
सबविधि सोइ करतव्य तुम्हारे ❀ दुख न पाव नृप सोच हमारे ॥ २ ॥

फिर तुमभी पिताकेही समान मेरे हितकारी हो सो हे प्यारे! (तुम्हारीभी) हाथ जोड़कर विनती करता हूं कि ॥ १ ॥ सब भाँतिसे तुमको वही करना चाहिये, कि जिससे राजा हमारे सोचसे दुःख न पावैं ॥ २ ॥

सुनि रघुनाथ सचिवसंवादू ❀ भयउ सपरिजन विकल निषादू ॥ ३ ॥
पुनि कछु लषन कहेउ कटुबानी ❀ प्रभु वरजेउ बड़ अनुचित जानी ॥ ४ ॥

रामचन्द्र और मंत्रीकी बातचीतको सुनकर निषादराज अपने कुटुम्बसमेत व्याकुल हुआ ॥३॥ फिर लक्ष्मणजीने कुछ कड़वी बात कही तौ रामचन्द्रने बहुत अयोग्य जानकर वरज दिया ॥ ४ ॥

सकुचि राम निजसपथ दिवाई ❀ लषनसँदेस कहव जनि जाई ॥ ५ ॥
कह सुमंत्र पुनि भूपसंदेसू ❀ सहि न सकिहि सिय विपिन कलेसू ॥६॥

और रामचन्द्रजीने सकुचकर और अपनी सौगंद धराकर कहा कि तुम जाकर लक्ष्मणके समाचार मत कहना ॥५॥ फिर सुमंत्रने राजाका संदेशा कहा कि सीताजी बनके दुःखको न सह सकैंगी ॥ ६ ॥

जेहि विधि अवध आव फिरिसीया ❀ सोइ रघुवीर तुमहिं करनीया ॥ ७ ॥
नतरु निपट अवलंब बिहीना ❀ मैं न जियब जिमि जलबिनु मीना ॥८॥

इसलिये हे रामचन्द्र! तुमको वही करना चाहिये जिससे सीताजी अयोध्यापुरीको लौट आवें ॥ ७ ॥ और नहीं तौ सहारेके बिलकुल न होनेसे मैं ऐसे नहीं जिऊँगा जैसे बिना जलके मछली नहीं जीती है ॥ ८ ॥

दो०–मयके ससुरे सकलसुख, जवहिं जहाँ मनमान ॥ ❀
तब तहँ रहब सुखेन सिय, जबलगि बिपतिविहान ॥ ९७ ॥ ❀

मायके और सासुरेमें सब सुख हैं सो जब जहाँ मनमें आवे तब तहाँ, जबतक आफत दूर हो, तबतक सीताजी आनन्दसहित रहैंगी ॥ ९७ ॥

चौ०–विनती कीन्ह भूप जिहिभाँती ❀ आरति प्रीति न सो कहि जाती ॥ १ ॥
पितुसँदेस सुनि कृपानिधाना ❀ सियहिं दीन्ह सिख कोटि बिधाना ॥२॥

(मंत्री कहता है कि) राजाने जिसप्रकार विनती की थी, वह प्रेम और दुःख कहा नहीं जाता है ॥ १ ॥ पिताके समाचार सुन कृपाके समुद्र (रामचन्द्र) ने सीताजीको करोड़ों भाँतिकी शिक्षा दी कि–॥ २ ॥

सास ससुर गुरु प्रिय परिवारू ❀ फिरहु तो सबकर मिटइ खँभारू ॥ ३ ॥
सुनि पतिवचन कहति बैदेही ❀ सुनहु प्रानपति परमसनेही ॥ ४ ॥

(घरपर) सास, ससुर, गुरु, प्यारे और कुटुम्बी हैं. जो लौट जाओगी तौ सबका दुःख मिटजायगा ॥३॥ पतिके बचन सुन सीताजी कहने लगीं, हे प्राणनाथ! हे परम सनेही! सुनिये ॥४॥

प्रभु करुनामय परमविवेकी ❀ तनु तजि छाँह रहति किमि छेकी ॥५॥
प्रभा जाइ कहँ भानु विहाई ❀ कहँ चंद्रिका चंद्र तजिजाई ॥ ६ ॥

आप तौ करुणानिधान और बड़े ज्ञानवान् हो. हे स्वामी! भला शरीरको छोड़कर छाया कैसे

अलग रहसकती है ॥ ५ ॥ धूप सूर्यको छोड़कर कहाँ जाय और चाँदनी चन्द्रमाको छोड़कर कहाँ जा सकती है ? अर्थात् जैसे सूर्यको धूप और चन्द्रमाको चांदनी नहीं छोड़ सकती, वैसेही मैंभी आपको नहीं छोड़ सकती हूँ ॥ ६ ॥

पतिहि प्रेममय विनय सुनाई ❀ कहत सचिवसन गिरा सुहाई ॥ ७ ॥
तुम पितु ससुर सरिस हितकारी ❀ उतर देउँ फिरि अनुचित भारी ॥ ८ ॥

(सीताजी) पतिको स्नेहसहित प्रार्थना सुनाकर मंत्रीसे सुन्दर वाणी कहने लगीं-॥७॥ तुम पिता और ससुरके समान भलाई करनेवाले हो. (इसलिये) उत्तर देनेसे फिर बड़ा अयोग्य होगा ॥ ८ ॥

दो०-आरतबस सन्मुख भइउँ, बिलग न मानव तात ॥ ❀
आरज सुत पदकमलबिनु, बादि जहाँलगि नात ॥ ९८ ॥ ❀

हे प्यारे ! विपत्तिके वश (आपके) सामने हुई हूँ (नहीं क्यों होती) सो बुरा न मानना. पतिके चरणकमलोंबिना जहाँतक नाते हैं सब वृथा हैं ॥ ९८ ॥

चौ०-पितुवैभव बिलास मै दीठा ❀ नृप मनि मुकुट मिलत पदपीठा ॥ १ ॥
सुखनिधान अस माइक मोरे ❀ पतिबिहीन मनभाव न भोरे ॥ २ ॥

पिताके वैभवके आनन्दकोभी मैंने देखा है, बड़े २ राजाओंके मुकुट उनकी पैर धरनेकी चौकीसे लगते हैं (अर्थात् राजा उनके चरणोंको माथा नवाते हैं) ॥ १ ॥ और ऐसाही सुखका स्थान मेरा पीहर है, परन्तु बिना पतिके भूल करभी मेरे मनमें नहीं भाता ॥ २ ॥

ससुर चक्रवइ कोसलराऊ ❀ भुवनचारिदस प्रगटप्रभाऊ ॥ ३ ॥
आगे हुइ जेहिं सुरपति लेई ❀ अर्धसिंहासन आसन देई ॥ ४ ॥

ससुर चक्रवर्त्ती राजा दशरथ हैं कि जिनका प्रभाव चौदहों लोकोंमें छारहा है ॥ ३ ॥ इन्द्रभी जिन्हें आगे आकर लेता है और आधे सिंहासनपर (बैठनेको) आसन देता है ॥ ४ ॥

ससुर एतादृस अवधनिवासू ❀ प्रियपरिवार मातुसम सासू ॥ ५ ॥
बिनु रघुपतिपदपदमपरागा ❀ मोहि को सपनेहु सुखद न लागा ॥६॥

ऐसे ससुर, अयोध्याका निवास, प्यारा कुटुम्ब और माताके समान सास हैं ॥ ५ ॥ परंतु रामचन्द्रजीके चरणकमलोंकी रजके विना ये मुझको स्वप्नमेंभी सुख देनेवाले नहीं लगते ॥ ६ ॥

अगमपंथ बनभूमि पहारा ❀ करि केहरि सर सरित अपारा ॥ ७ ॥
कोल किरात कुरंग बिहंगा ❀ मोहिं सब सुखद प्रानपति संगा ॥ ८ ॥

और कठिन मार्ग, वनभूमि, पर्वत, हाथी, सिंह और बहुतसे नदी तालाव-॥ ७ ॥ शूकर, भील, हिरण और पक्षी, सब मुझको प्राणनाथके साथ सुख देनेवाले हैं ॥ ८ ॥

दो०-सास ससुरसन मोरिहित, विनय करब परिपाय ॥ ❀
मोर सोच जनि करिय कछु, मैं बन सुखी सुभाय ॥ ९९ ॥ ❀

सो तुम मेरी ओरसे सास और ससुरजीके पैरोंमें गिरकर प्रार्थना करना कि मेरा कुछ सोच न करें, मैं वनमें सुखी हूँ, और मुझे अच्छा लगता है, क्यों कि ॥ ९९ ॥

---

(१) जैसा कहा है कि-

शशिना सह याति कौमुदी सह मेघेन तड़ित्प्रलीयते ।
प्रमदा पतिवर्त्मगा इति प्रतिपन्नं हि विचेतनैरपि ॥ १ ॥

अर्थात् जैसे चन्द्रमाके साथ चाँदनी चली जाती है और मेघके साथ विजली मिलजाती है उसीप्रकार स्त्रीभी पतिके मार्गको जानेवाली है. यह बात जो विचेतन हैं उन्होनेभी निश्चय किया है, (मनुष्योंका क्या कहना है.)

चौ०–प्राननाथ प्रिय देवर साथा ❀ वीरधुरीन धरे धनु भाथा ॥ १ ॥
नहिं मगुस्रम श्रम दुख मन मोरे ❀ मोहिं लगि सोच करिय जनि भोरे ॥२॥

प्राणनाथ (रामचन्द्र) और प्यारे देवर मेरे साथ हैं, जो वीरोंमें धुरंधर हैं. और धनुषबाण धारण किये हैं ॥ १ ॥ और न तौ मुझे मार्गका श्रम है और न मेरे मनमें (किसी प्राकारका) सन्देह और दुःख है. इसलिये भूलकरभी मेरेलिये शोच न करैं ॥ २ ॥

सुनि सुमंत्र सियसीतल बानी ❀ भए विकल जनु फनि मनिहानी ॥ ३ ॥
नयन न सूझ सुनै नहिं काना ❀ कहि न सकै कछु अति अकुलाना ॥ ४ ॥

सुमंत्र सीताजीकी शीतल बाणीको सुनकर ऐसे व्याकुल होगये जैसे मणि खोजानेसे सर्प विकल होजाता है ॥ ३ ॥ जिनको नेत्रोंसे नहीं दीखता, कानोंसे सुनाई नहीं देता और कुछ कह नहीं सकते ऐसे अति विकल होगये ॥ ४ ॥

राम प्रबोध कीन्ह बहुभाँती ❀ तदपि होइ नहिं सीतल छाती ॥ ५ ॥
जतन अनेक साथ हित कीन्हें ❀ उचित उतर रघुनंदन दीन्हें ॥ ६ ॥

रामचन्द्रने बहुत तरह समझाया तौभी छाती ठंढी नहीं होती ॥ ५ ॥ साथ लौटानेके लिये बहुत उपाय किये. (परंतु) रामचन्द्रने यथोचित उत्तर दिये ॥ ६ ॥

मेटिजाइ नहिं रामरजाई ❀ कठिन कर्मगति कछु न बसाई ॥ ७ ॥
रामलषनसियपद सिर नाई ❀ फिरे बनिक जिमि मूर गँवाई ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजीकी आज्ञा मेटी नहीं जाती, कर्मकी गति कठिन है, इससे कुछ वश नहीं चलता ॥ ७ ॥ (यह विचारते हुए) सुमंत, राम, लक्ष्मण और जनकनन्दिनीजीके चरणोंको शिर नवाकर ऐसे लौटे जैसे बनियाँ (अपनी) [1]पूँजीकाभी नाश करके लौटता है ॥ ८ ॥

दो०–रथ हाँके हय रामतनु, हेरिहेरि हिहिनाहिं ॥ ❀
देखि विषादनिषादबस, सिर धुनिधुनि पछिताहिं ॥ १०० ॥ ❀

(जब सुमंत्रने) रथ हांका तौ घोड़े रामचन्द्रजीके शरीरकी याद कर २ के हिनहिनाते हैं और यह देखकर निषादके वश हो शिर धुनधुन करके पछिताते हैं ॥ १०० ॥

चौ०–जासु वियोगविकल पशुऐसे ❀ प्रजा मातुपितु जीवहिं कैसे ॥ १ ॥
बरबस राम सुमंत्र पठाए ❀ सुरसरितीर आपु चलिआए ॥ २ ॥

जिसके वियोगमें पशु ऐसे दुखी हैं उसके माता पिता और प्रजा कैसे जीते होंगे ॥ १ ॥ रामचन्द्रने सुमंत्रको ज्यौं त्यौं करके लौटाया और आप गंगाजीके किनारेपर आये ॥ २ ॥

मांगी नाव न केवट आना ❀ कहेउ तुम्हार मरम मैं जाना ॥ ३ ॥
चरनकमलरज कहँ सब कहई ❀ मानुषकरनि मूरि कछु अहई ॥ ४ ॥

(वहां) केवटसे नाव मांगी तौ वह नहीं लाया और कहने लगा कि मैं तुम्हारे भेदको जानता

---

(१) पूंजी कहनेसे यह भाव है कि चलतेसमय दशरथजीने कहा था कि—

जो नहिं फिरैं धीर दोउ भाई । सत्यसिंध दृढ़व्रत रघुराई ॥
तौ तुम बिनय करहु करजोरी । फेरिय प्रभु मिथिलेसकिसोरी ॥

सो यहाँ सीतारूप गांठकी पूंजीभी गई ॥

हूँ ॥ ३ ॥ सब संसार कहता है कि (आपके) कमलसमान चरणोंकी रज मनुष्य बनानेकी कोई औषधि[1] है ॥ ४ ॥

छुअत सिला भइ नारि सुहाई ❀ बाट पाहनते न काठकठिनाई ॥ ५ ॥
तरनिउ मुनिघरनी होइजाई ❀ बाट परै मोरि नाव उड़ाई ॥ ६ ॥

(जिसके) छूतेही शिला सुन्दर स्त्री होगई सो पत्थरसे काठ कुछ कठोर नहीं होता ॥ ५ ॥ जो नावभी मुनिकी स्त्री हो जायगी तौ मेरी नाव उड़ जानेसे मेरे परिवारकी जीविकाही जाती रहैगी६

यहि प्रतिपालौं सब परिवारू ❀ नहिं जानौ कछु और कबारू ॥ ७ ॥
जो प्रभु अवसि पारगा चहहू ❀ तौ पदपदम पखारन कहहू ॥ ८ ॥

मैं तौ इसीसे सब कुटुम्बका पालन करता हूँ; कुछ और जीविका नहीं जानता ॥ ७॥ हे स्वामी ! जो अवश्यही पार जाना चाहते हो तौ अपने चरणकमलोंको धोनेकी आज्ञा दीजिये ॥ ८ ॥

छं०–पदपदम धोइ चढ़ाइ नाव न नाथ उतराई चहौं । ❀
मोहिं राम राउरि आनि दसरथ सपथ सबसाँची कहौं ॥ ❀
बरुतीरमारहिं लषन जबलगि मैं न पाँव पखारिहौं । ❀
तौलगि न तुलसीदास नाथकृपालु पार उतारिहौं ॥ ४ ॥ ❀

हे स्वामी ! आपके कमलसमान चरणोंको धोकर नवापर चढ़ाऊंगा; उतराई[2] नहीं चाहता हूं. हे रामचन्द्र ! मुझे आपकी आन और दशरथकी सौगंद[3] है सब सच्ची कहता हूँ कि लक्ष्मणजी भलेही तीर मारैं परन्तु जबतक चरण न धोऊँगा तबतक हे नाथ–हे कृपानिधान!(गंगा) पार नहीं उतारूंगा४

सो०–सुनि केवटके बैन, प्रेमलपेटे अटपटे । ❀
बिहँसे करुनाऐन, चितइ जानकीलषनतन ॥ ४ ॥ ❀

केवटके प्रेममें सनेहुये अटपटे वचन सुनकर करुणानिधान (रामचन्द्र) सीताजी और लक्ष्मणके शरीरकी ओर देखकर [4]हँसे ॥ ४ ॥

---

(१) जैसा कहा है कि—

‘क्षालयामि तव पादपङ्कजं नाथ दारुदृषदोः किमन्तरम् ॥
मानुषीकरणरेणुरस्ति ते पादयोरिति कथा प्रथीयसी ॥ १ ॥

अर्थात्–हे नाथ ! मैं आपके चरणकमलोंको धोताहूं; लकड़ी और पाषाणमें क्या अंतर है, तुम्हारे चरणोंकी धूलि मनुष्य करनेकी औषधि है, यह कथा प्रसिद्ध है ॥ पुनि कवित्तरामायणमें कहा है.

सवैया–रावरे दोष न पाँयनको पगधूरिको भूरि प्रभाउ महा है ।
पाहनते वरु बाहन काटको कोमल है जल खाइ रहा है ।
तुलसी सुनि केवटके बरबैन हँसे प्रभु जानकी ओर महा है ।
पावन पायँ पखारिकै नाव चढ़ाइयों आयसु होत कहा है ॥

(२) उतराई नहीं चाहता इससे यह भाव निकलता है कि तुम भवसागरके तारनेवाले हो और मैं नदीका तारनेवाला हूं, एक व्यापार करनेवाले आपसमें मजदूरी नहीं लेते ॥ (३) दशरथजी और रामजीकी सोगन्द खानेसे भाव यह है कि केवट अपनी सौगन्दकी पकावट दिखाता है, कि चरणधोये विना कदापि पार नहीं उतारूंगा और अपनेको दशरथ और रामजीके समान सत्यप्रतिज्ञ होना निश्चय करता है ॥

(४) हँसे इससे यह भाव है कि कहीं केवटकी जिद्द देख सीता लक्ष्मण क्रोध न कर उठें; अथवा चरणसेवाके तौ तुम दोनों अधिकारी हो सो उसका भागी यहभी हुआचाहता है; अथवा इसलिये हँसे कि जनकराजने तौ जानकी देकर चरण धोयेथे, यह जरासी उतराईमें चरण धोना चाहता है ॥

श्रीरामजीका नौकारूढ़हो गंगापार होना.

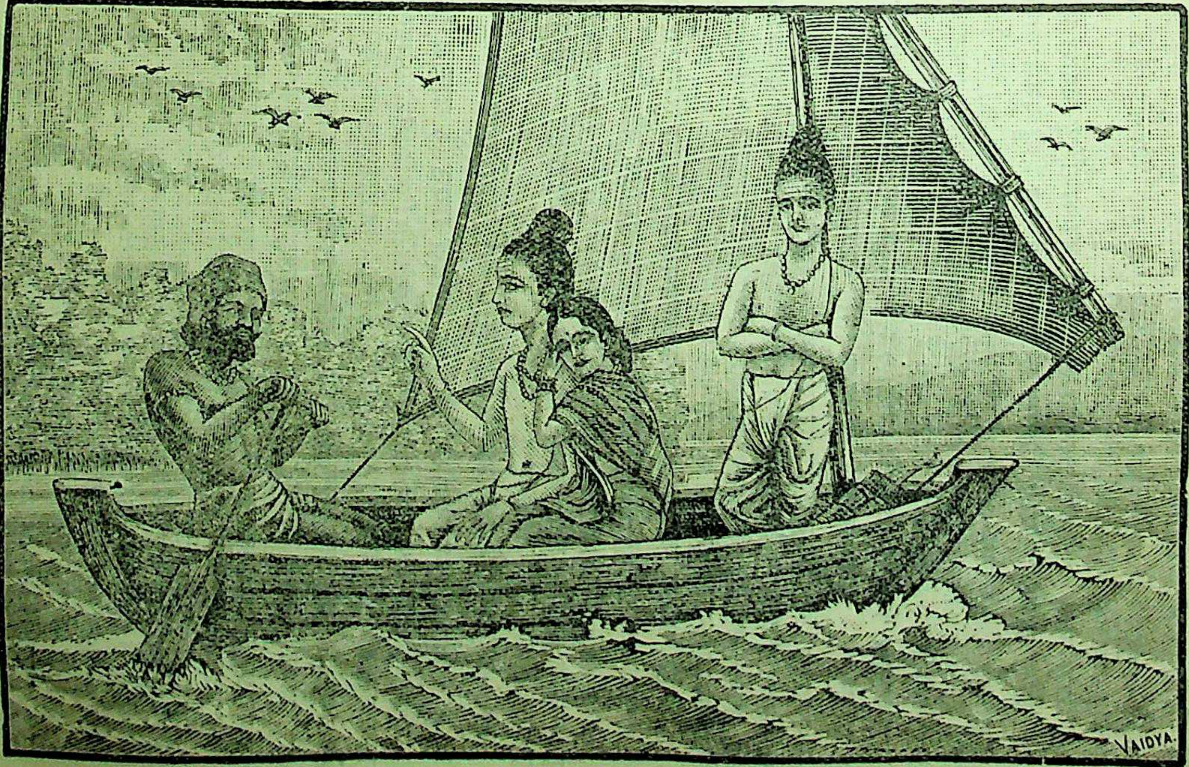

चौ०–कृपासिंधु बोले मुसुकाई ❀ सोइ करहु जेहिं नाव न जाई ॥ १ ॥
बेगि आनि जलपाँव पखारू ❀ होत बिलंब उतारहु पारू ॥ २ ॥

दयाके समुद्र (रामचन्द्र) हँसकर बोले कि अच्छा वही करो जिससे नाव न जाय ॥ १ ॥ जल्दी जल लाकर चरण धोलो, देर होती है पार उतारो ॥ २ ॥

जासु नाम सुमिरत इकबारा ❀ उतरहिं नर भवसिंधु अपारा ॥ ३ ॥
सोइ कृपालु केवटहिं निहोरा ❀ जेहि किय जग तिहुँ पगते थोरा ॥ ४ ॥

एकही बार जिसके नामका स्मरण करनेसे मनुष्य संसाररूपी अपार समुद्रसे पार उतरते हैं ॥ ३ ॥ वेही दया करनेवाले भगवान् केवटका निहोरा करते हैं कि जिन्होंने (वामन अवतार धर) तीनों लोकोंको चरणसेभी छोटा करदिया था ॥ ४ ॥

पदनख निरखि देवसरि हरषी ❀ सुनि प्रभुबचन मोहमति करषी ॥ ५ ॥
केवट रामरजायसु पावा ❀ पानि कठवता भरि लै आवा ॥ ६ ॥

(भगवान्के) चरणोंके नखोंको अपना जन्मस्थान देखकर गंगाजी प्रसन्न हुईं, पर, जब भगवान्के बचन सुने तब गंगाजीकी मतिको मोहने धर खैंचा, अर्थात् उनको यह अज्ञान छागया कि ये भगवान् नहीं हैं. क्यों कि सब प्रकार समर्थ होकर नाव मंगाते हैं ॥ ५ ॥ केवट रामचन्द्रजीकी आज्ञा पाकर कठौतेमें पानी भरलाया ॥ ६ ॥

अति आनंद उमँगि अनुरागा ❀ चरनसरोज पखारन लागा ॥ ७ ॥
बरषि सुमत सुर सकल सिहाहीं ❀ इहिसम पुन्यपुंज कोउ नाहीं ॥ ८ ॥

बड़े आनन्दमें उमँगकर प्रीतिसे चरणकमलोंको धोने लगा ॥ ७ ॥ (उससमय) सब देवता पुष्प वरसाने लगे और उसके भाग्यपर जह करने लगे कि इसके समान पुण्योंका पुंज अर्थात् पुण्यात्मा और कोईभी नहीं है ॥ ८ ॥

दो०–पद पखारि जलपान करि, आप सहितपरिवार ॥ ❀
पितर पार करि प्रभुहिं पुनि, मुदित गयउ लै पार ॥ १०१ ॥ ❀

चरणोंको धोकर और आप कुटुंबसहित चरणामृत पीकरके और फिर पितरोंको (संसारके आवागमनरूपी समुद्रसे) पार करके अर्थात् सबकी मुक्ति करके फिर प्रसन्न होकर रघुनाथजीको पार लेगया ॥

चौ०–उतरि ठाढ भए सुरसरि रेता ❀ सीय राम गुहलषनसमेता ॥ १ ॥
केवट उतरि दंडवत कीन्हा ❀ प्रभु सकुचे यहि कछुक न दीन्हा ॥ २ ॥

रामचन्द्र, सीताजी, लक्ष्मण और निषादसहित उतरकर गंगाजीकी रेतीमें खड़े हुये ॥ १ ॥ केवटने उतर कर दंडवत की (तब) भगवान् सकुचे कि इसे कुछ नहीं दिया ॥ २ ॥

---

(१) **सवैया**–नाम अजामिलसे खलकोटि अवार नदी भव बूड़त काढे ।
जो सुमिरे गिरि मेरु शिला कण होत अजाखुर वारिधि वाढ़े ॥
तुलसी जिहिके पदपंकजतें प्रकटी तटनी जो हरै अघ गाढ़े ।
ते प्रभु या सरिता तरवे कहँ माँगत नाव करारे ह्वै ठाढ़े ॥

(२) **घनाक्षरी**–प्रभु रुख पाइकै वोलाइ बाल घरनिहिं वन्दिकै चरण चहूँदिशि बैटे घेरिघेरि ।
छोटोसो कठौता भरि आनि पानी गंगाजूको धोंइ पाँय पिय पुनीत वारि फेरि फेरि ॥
तुलसी सराहैं ताको भाग सानुराग सुर वरखैं सुमन जय २ कहैं टेरि टेरि ।
विविध सनेह सानी असयानी सुनि हँसे राघो जानकी लषनतन हेरि हेरि ॥ १ ॥

कठौतेमें पानी लानेसे यह भाव निकला कि, परीक्षा करलूं जो यह नहीं उड़ैगा तौ नावभी नहीं उड़ सक्ती है.

पियहियकी सिय जाननि हारी ❀ मनिमुँदरी मनमुदित उतारी ॥ ३ ॥
कहेउ कृपालु लेहु उतराई ❀ केवट चरन गहेउ अकुलाई ॥ ४ ॥

स्वामीके हृदयकी जाननेवाली सीताजीने मनमें प्रसन्न हो मणिजटित अंगूठी उतारी ॥३॥ और रामचन्द्रने कहा उतराई लो, केवटने घबराकर चरण पकड़ लिये (और कहा) ॥ ४ ॥

नाथ आजु हम काह न पावा ❀ मिटे दोष दुखदारिददावा ॥ ५ ॥
असितकाल मैं कीन मजूरी ❀ आजु दीन विधि सब भरिपूरी ॥ ६ ॥

हे स्वामी ! आज हमने क्या नहीं पाया अर्थात् सब कुछ पाया, जो पाप दुःख और दरिद्रतारूपी दावानल नाश होगई ॥ ५ ॥ मैंने बहुत समयसे मजूरी की थी सो आज ब्रह्माने सब भरपूर देदी ॥ ६ ॥

अब कछु नाथ न चाहिय मोरे ❀ दीनदयालु अनुग्रह तोरे ॥ ७ ॥
फिरतीबार जो कछु मोहिं देवा ❀ सो प्रसाद मैं धरि सिर लेवा ॥ ८ ॥

हे नाथ ! हे दीनदयालु ! तुम्हारी कृपासे अब मुझको कुछ नहीं चाहिये ॥ ७ ॥ लौटती विरियाँ जो कुछ मुझे दोगे उस प्रसादको मैं मस्तकपर धारणकर ले लूँगा ॥ ८ ॥

दो०–बहुत कीन्ह हठ लषनप्रभु, नहिं कछु केवट लेइ ॥ ❀
बिदा कीन्ह करुनायतन, भक्ति विमलवर देइ ॥ १०२ ॥ ❀

रामचन्द्र लक्ष्मण और जानकीजीने बड़ी जिद्द की परन्तु जब केवटने कुछ नहीं लिया, तब करुणानिधान (रामचन्द्र) ने निर्मल भक्तिका वरदान देकर बिदा किया ॥ १०२ ॥

चौ०–तब मज्जन करि रघुकुलनाथा ❀ पूजि पारथिव नायउ माथा ॥ १ ॥
सिय सुरसरिहिं कहा करजोरी ❀ मातु मनोरथ पुरउब मोरी ॥ २ ॥

फिर रामचन्द्रजीने मज्जन कर और पार्थिव (महादेव) का पूजन कर माथा नवाया ॥१॥ और सीताजीने गंगाजीसे हाथ जोड़कर कहा, हे माता ! मेरी इच्छा पूरी करना ॥ २ ॥

पति देवरसँग कुसल बहोरी ❀ आइकरौं जेहि पूजा तोरी ॥ ३ ॥
सुनि सियविनय प्रेमरससानी ❀ भइ तब विमलबारिबरबानी ॥ ४ ॥

जो पति और देवरके साथ कुशल सहित लौटकर तुम्हारी पूजा आकरूं ॥ ३ ॥ तब स्नेहके रसमें सनीहुई सीताजीकी विनती सुनकर निर्मल जलमेंसे सुन्दर वाणी हुई कि–॥ ४ ॥

सुनु रघुवीरप्रिया वैदेही ❀ तव प्रभाव जगविदित न केही ॥ ५ ॥
लोकप होहिं बिलोकत तोरे ❀ तोहिं सेवहिं सबसिधि करजोरे ॥ ६ ॥

हे रामचन्द्रकी प्यारी सीताजी ! सुनो· तुह्मारा प्रभाव संसारमें किसको प्रगट नहीं है ॥ ५ ॥ जिसको तुम अपने कृपाकटाक्षसे देखती हो वे लोकपाल होजाते हैं और सब सिद्धियाँ हाथ जोड़कर तुह्मारी सेवा करती हैं ॥ ६ ॥

तुम जु हमहिं बडि बिनय सुनाई ❀ कृपा कीन्ह मोहिं दीन्ह बड़ाई ॥ ७ ॥
तदपि देवि मैं देव असीसा ❀ सफल होनहित निज बागीसा ॥ ८ ॥

तुमने हमको जो बड़ी विनती सुनाई सो कृपा करके मुझे बड़ाई दी ॥ ७ ॥ तौभी हे देवि ! मैं अपनी वाणी सफल होनेके लिये आशीर्वाद देती हूँ कि ॥ ८ ॥

दो०–प्राननाथ देवरसहित, कुसल कोसला आइ ॥ ❀
पूरहिं सब मनकामना, सुजस रहहि जग छाइ ॥ १०३ ॥ ❀

---

(१) इसलिये लौटतीवार लेना चाहता है कि इसी बहाने फिर दर्शन होंगे, अथवा पल्टा चुकाता है कि मैंने इनको नदीपार करदिया और ये मुझे भवसागर पार कर देंगे; 'अब तो बराबर हुये, लौटते समय उतरोगे तो लूंगा॥

पति और देवरसहित प्रसन्नतासे अयोध्यामें आकर तुह्मारी मनोकामना पूरी होंगी और संसारमें सुन्दर यश फैलेगा ॥ १०३ ॥

चौ०–गंगबचन सुनि मंगलमूला ❀ मुदित सीय सुरसरिअनुकूला ॥ १ ॥
तब प्रभु गुहहिं कहाघर जाहू ❀ सुनत सूखमुख भा उदराहू ॥ २ ॥

श्रीगंगाजीके मंगलदायक वचन सुनकर और गंगाजीको कृपालु जान सीताजी प्रसन्न हुईं॥१॥तब भगवान्ने निषादसे कहा, घर जाओ यह सुनतेही उसका मुख सूख गया और मनमें दुःख हुआ ॥२॥

दीनबचन गुह कह करजोरी ❀ विनय सुनिय रघुकुलमनि मोरी ॥ ३ ॥
नाथ साथ रहि पंथ देखाई ❀ करि दिन चारि चरनसेवकाई ॥ ४ ॥

निषाद हाथ जोड़कर दीनताके वचन कहने लगाकि हे रामचन्द्र ! मेरी प्रार्थना सुनिये ॥ ३ ॥ हे नाथ ! आपके साथ रह मार्ग बताकर और चार दिन चरणोंकी सेवा करके ॥ ४ ॥

जेहि बनजाइ रहब रघुराई ❀ परनकुटी मैं करब सुहाई ॥ ५ ॥
तब मोकहँ जस देव रजाई ❀ सो करिहौं रघुवीरदुहाई ॥ ६ ॥

हे रामचन्द्र ! (आप) जिस वनमें जाकर ठहरैंगे (वहाँही) मैं सुन्दर पर्णकुटी बनाऊँगा ॥५॥ तब मुझको, जैसी आज्ञा दोगे वही करूंगा. (मुझे) रामचन्द्रकी सौगंद है ॥ ६ ॥

सहजसनेह राम लखि तासू ❀ संग लीन्ह गुह हृदयहुलासू ॥ ७ ॥
पुनि गुह ज्ञाति बोलि सब लीन्हा ❀ करि परितोष विदा तब कीन्हा ॥ ८ ॥

(रघुनाथजीने) उसकी सहज प्रीति देख मनसे प्रसन्न हो निषादकों साथ ले लिया ॥ ७ ॥ फिर निषादने अपनी जातिके सब लोग बुला लिये और उन्हैं संतुष्ट कर सबको विदा किया ॥ ८ ॥

दो०–तब गणपति शिव सुमिरि प्रभु, नाइ सुरसरिहिं माथ ॥ ❀
सखा अनुजसियसहित बन, गवन कीन्ह रघुनाथ ॥ १०४ ॥ ❀

तब रामचन्द्रजीने गणेश और महादेवजीका सरण कर और गंगाजीको मस्तक नवा कर मित्र कहिये निषाद, छोटे भाई (लक्ष्मण) और जानकीजीसहित बनको गमन किया ॥ १०४ ॥

चौ०–तेहि दिन भयउ बिटप तरवासू ❀ लषन सखासब कीन्ह सुपासू ॥ १ ॥
प्रात प्रातकृत करि रघुराई ❀ तीरथराजदीख प्रभु जाई ॥ २ ॥

उस दिन वृक्षके नीचै निवास हुआ और लक्ष्मण और सखा कहिये निषादने सुन्दर सब आराम की सामग्री इकट्ठी करदी ॥१॥ सवेरा होतेही रामचन्द्रने प्रातःक्रिया अर्थात् (शौच आदि कृत्य) किया और जाकर तीर्थराज प्रयागके दर्शन किये ॥ २ ॥

सचिव सत्य श्रद्धा प्रिय नारी ❀ माधवसरिस मीत हितकारी ॥ ३ ॥
चारि पदारथ भरा भँडारू ❀ पुन्यप्रदेस देस अतिचारू ॥ ४ ॥

जिस तीर्थराजका सत्य मंत्री है, श्रद्धा प्यारी स्त्री है वेनीमाधवसरीखे जिसके हितकारी मित्र हैं ॥ ३ ॥ और जहाँ धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चार पदार्थोंसे भंड़ार भरा है और पुण्यस्थान जिसका अति सुन्दर राज्य है ॥ ४ ॥

क्षेत्र अगम गढ़ गाढ़ सुहावा ❀ सपनेहु जिन्ह प्रतिपक्ष न पावा ॥ ५ ॥
सैन सकल तीरथ वर बीरा ❀ कलुषअनीकदलन रनधीरा ॥ ६ ॥

और जिसका क्षेत्र कहिये वेराही गतिरहित पक्का किला शोभायमान है कि जिसे (पापादिक) शत्रु स्वप्नेमेंभी नहीं पासकते हैं ॥ ५ ॥ सब तीर्थही बड़े २ योद्धाओंकी सेना है, जो पापरूपी सेनाके नाश करनेको रणधीर हैं ॥ ६ ॥

संगम सिंहासन सुठि सोहा ❀ छत्र अछयबट मुनिमनमोहा ॥ ७ ॥
चमर जमुनजल गंगतरंगा ❀ देखि होहिं दुखदारिदभंगा ॥ ८ ॥

(गंगायमुनाका) संगम सुन्दर सिंहासन शोभायमान है और अक्षयवट सुन्दर छत्र है जो मुनियोंके मनको मोहित करता है ॥७॥ यमुना और गंगाजीकी तरंग उसके चमर हैं, और उस प्रयागराजके दर्शनसे दुःख दारिद्य नाश होजाते हैं ॥ ८ ॥

दो०-सेवहिं सुकृती साधु सुचि, पावहिं सब मनकाम ॥ ❀
बंदी वेदपुरानगन, कहहिं विमल गुनग्राम ॥ १०५ ॥ ❀

वड़े २ पुण्यात्मा साधु उसकी सेवा करते हैं और सब मनोवांछित फल पाते हैं, और वेद पुराण उसके वंदीजन हैं सो उसके निर्मल गुणोंका गान करते हैं ॥ १०५ ॥

चौ०-को कहिसकै प्रयागप्रभाऊ ❀ कलुषपुंजकुंजरमृगराऊ ॥ १ ॥
अस तीरथपति देखि सुहावा ❀ सुखसागर रघुवर सुख पावा ॥ २ ॥

प्रयागकी वड़ाईको कौन कहसकता है! जो पापरूपी हाथियोंके झुंडके लिये सिंहके समान है ॥ १ ॥ ऐसे सुन्दर तीरथराजको देख सुखके समुद्र रामचन्द्रजीने सुख पाया ॥ २ ॥

कह सियअनुजहिं सखहिं सुनाई ❀ श्रीमुख तीरथराजबड़ाई ॥ ३ ॥
करि प्रनाम देखत बनबागा ❀ कहत महातम अति अनुरागा ॥ ४ ॥

और अपने श्रीमुखसे प्रयागकी वड़ाई कहकर सीता लक्ष्मण और सखानिषादराजको सुनाई ३ और प्रणाम कर वन और वागोंको देखते हुये और बड़ी प्रीतिसे उसका माहात्म्य कहते हुये (चले) जाते हैं ४

इहिविधि आइ बिलोकिउ बेनी ❀ सुमिरत सकल सुमंगलदेनी ॥ ५ ॥
मुदित अन्हाइ कीन्ह शिवसेवा ❀ पूजि यथाविधि तीरथदेवा ॥ ६ ॥

इसप्रकार (रामजीने) आकर त्रिवेणीके दर्शन किये जो स्मरण करतेही सब सुन्दर आनन्द मंगलकी देनेवाली है ॥५॥ फिर प्रसन्नतासे स्नानकर महादेवकी पूजा करी और तीर्थके देवताओंका यथायोग्य पूजन करके-॥ ६ ॥

तब प्रभु भरद्वाजपहँ आए ❀ करत दंडवत मुनि उर लाए ॥ ७ ॥
मुनि मनमोह न कछु कहिजाई ❀ ब्रह्मानंदराशि जनु पाई ॥ ८ ॥

तव भगवान् भरद्वाजजीके पास आये और मुनिने भगवान्को दंडवत करते देख छातीसे लगा लिया ॥ ७ ॥ (उस समय) मुनिश्वरके मनका आनन्द कुछ वर्णन नहीं किया जाता मानों ब्रह्मानन्दका समूह मिलगया ॥ ८ ॥

दो०-दीन्ह असीस मुनीसउर, अति अनंद असजानि ॥ ❀
लोचनगोचर सुकृतफल, मनहुँ किए विधि आनि ॥ १०६ ॥ ❀

मुनीश्वरने आशीर्वाद दिया और मनमें ऐसा जानकर अति प्रसन्न हुये कि आज विधाताने हमारे पुण्यके फलको आंखोंके सामने लाकर दिखाया ॥ १०६ ॥

चौ०-कुशलप्रश्न करि आसन दीन्हा ❀ पूजि प्रेम परिपूरन कीन्हा ॥ १ ॥
कंद मूल फल अंकुर नीके ❀ दिये आनि मुनि मनहुँ अमीके ॥ २ ॥

मुनिने कुशल पूछकर आसन दिया और प्रेमसे पूजनकर सव प्रकार संतुष्ट किया ॥ १ ॥ फिर मुनिनें अमृतसमान कंदमूलफल और सुन्दर अंकुर लाकर भेट किये ॥ २ ॥

सीय लषन जनसहित सुहाए ❀ अतिरुचि राम मूल फल खाए ॥ ३ ॥
भए विगतस्रम राम सुखारे ❀ भरद्वाज मृदुबचन उचारे ॥ ४ ॥

सीता, लक्ष्मण और भक्त निषाद सहित रामचन्द्रने बड़ी प्रीतिसे सुन्दर मूलफल भोजन किये ॥ ३ ॥ और जब रामचन्द्र श्रमरहित सुखी हुए तौ भरद्वाजने कोमल वचन कहे कि ॥ ४ ॥

आजु सफल तप तीरथजागू ❀ आजु सफल जप योग विरागू ॥ ५ ॥
सकल सफल सुभसाधन साजू ❀ राम तुमहिं अवलोकत आजू ॥ ६ ॥

आज तप, तीर्थ, यज्ञ, सफल हुये और जप, योग, वैराग्यभी आजही सफल हुये ॥५॥ हे रामचन्द्र ! आज तुह्मारे दर्शन होतेही संपूर्ण अच्छे साधनोंका समूह सफल हुआ ॥ ६ ॥

लाभ अवधि सुख अवधि न दूजी ❀ तुम्हारे दरसआस सब पूजी ॥ ७ ॥
अब करि कृपा देहु वर एहू ❀ निजपदसरसिज सहज सनेहू ॥ ८ ॥

लाभकी सीमा और सुखकी सीमा दूसरी नहीं· आपके दर्शनोंसे सब आश पूरी हुई ॥७॥ अब कृपा करके यही वरदान दीजिये जो आपके चरणकमलोंमें सच्ची प्रीति हो ॥ ८ ॥

दो०–काम बचन मन छाँड़ि छल, जबलगि जन न तुम्हार ॥ ❀
तबलगि सुख सपनेहु नहीं, किये कोटि उपचार ॥ १०७ ॥ ❀

मन, कर्म और वचनसे छल छोड़कर जबतक यह मनुष्य तुम्हारा भक्त नहीं होता, तबतक स्वप्नमेंभी सुख नहीं होता, चाहै करोड़ों उपाय क्यों न करै–जैसा कहा कि, "रघुपतिविमुख यत्नकरि कोरी । कौन सकै भवबंधन छोरी" ॥ १०७ ॥

चौ०–सुनि मुनिबचन राम सकुचाने ❀ भावभक्ति आनंद अघाने ॥ १ ॥
तब रघुवर मुनिसुजस सुहावा ❀ कोटिभाँति कहि सबहिं सुनावा ॥ २ ॥

रामचन्द्रजी मुनीश्वरके भावभक्ति और आनन्दसे भरे हुये वचन सुनकर सकुचे ॥ १ ॥ तब रामचन्द्रने मुनीश्वरका सुहावना सुन्दर यश करोड़ों भांतिसे कहके सबको सुनाया ॥ २ ॥

सो बड़ सो सब गुनगनगेहू ❀ जेहिं मुनीस तुम आदर देहू ॥ ३ ॥
मुनि रघुवीर परस्पर नमहीं ❀ बचनअगोचर सुख अनुभवहीं ॥ ४ ॥

हे मुनीश्वर ! वही बड़ा और वही सब गुणोंके समूहका स्थान है जिसे आप आदर दो ॥ ३ ॥ मुनीश्वर और रामचन्द्र आपसमें नवते हैं और जो कहा न जाय ऐसे सुखका अनुभव करते हैं ॥४॥

यह सुधि पाइ प्रयागनिवासी ❀ बटु तापस मुनि सिद्ध उदासी ॥ ५ ॥
भरद्वाजआस्रम सब आए ❀ देखन दशरथसुअन सुहाए ॥ ६ ॥

यह समाचार पाकर प्रयागके रहनेवाले ब्रह्मचारी तपस्वी मुनीश्वर सिद्ध और उदासी ॥ ५ ॥ दशरथके सुन्दर पुत्रोंको देखनेके लिये सब भरद्वाजके स्थानपर आये ॥ ६ ॥

राम प्रनाम कीन्ह सबकाहू ❀ मुदित भए लहि लोचनलाहू ॥ ७ ॥
देहिं असीस परमसुख पाई ❀ फिरे सराहत सुंदरताई ॥ ८ ॥

रामचन्द्रने सब किसीको प्रणाम किया और वे नेत्रोंका लाभ लेकर प्रसन्न हुये ॥७॥ बड़ा सुख पाकर आशीर्वाद देते हैं और सुन्दरताकी सराहना करते हुये लौटे ॥ ८ ॥

दो०–राम कीन्ह विस्राम निसि, प्रात प्रयाग अन्हाइ ॥ ❀
चले लषन सिय जनसहित, मुदित मुनिहिं सिर नाइ ॥१०८॥ ❀

रामचन्द्रजीने रातको (वहीं) विश्राम किया और प्रातःकाल प्रयागका स्नानकर और प्रसन्नतासे मुनीश्वरको माथा नवाय सीता लक्ष्मण और केवटसहित गमन किया ॥ १०८ ॥

चौ०-राम सप्रेम कहेउ मुनिपाहीं ❀ नाथ कहिय हम केहि मगु जाहीं ॥ १ ॥
सुनि मुनि बिहँसि रामसन कहहीं ❀ सुगम सकल मगु तुम कहँ अहहीं ॥२॥

रामचन्द्रने प्रीतिसहित मुनीश्वरसे कहा हे स्वामी! कहिये हम किस मार्गसे जायँ?॥ १ ॥ (यह) सुनके मुनीश्वरने हँसकर रामचन्द्रसे कहा कि तुमको तौ सब मार्ग सुगम हैं ॥ २ ॥

साथलागि मुनि शिष्य बुलाए ❀ सुनि मन मुदित पचासक आए ॥ ३ ॥
सबहिं रामपदप्रेम अपारा ❀ सबहि कहहिं मगु दीख हमारा ॥ ४ ॥

साथके लिये मुनीश्वरने चेले बुलाये तो सुनतेही मनमें प्रसन्न होकर पचास एक चले आये ॥३॥ सभीको रामचन्द्रके चरणोंमें बड़ा प्रेम है. सब कहते हैं कि मार्ग हमारा देखा हुआ है ॥ ४ ॥

मुनि बटु चारि संग तब दीन्हे ❀ जिन्ह बहुजनम सुकृत सब कीन्हे ॥५॥
करि प्रनाम मुनि आसिस पाई ❀ प्रमुदितहृदय चले रघुराई ॥ ६ ॥

तब मुनीश्वरने चार विद्यार्थी साथ किये, जिन्होंने बहुत जन्मोंमें सब अच्छे कर्म कियेथे ॥ ५ ॥ रामचन्द्र मुनीश्वरको प्रणाम कर और आज्ञा लेकर मनमें प्रसन्न होते हुये चले ॥ ६ ॥

ग्रामनिकट जब निकसहिं जाई ❀ देखहिं दरस नारि नर धाई ॥ ७ ॥
होहिं सनाथ जनमफल पाई ❀ फिरहिं दुखित मन संग पठाई ॥ ८ ॥

जब जाकर गांवके पास निकलते हैं तो स्त्रीपुरुष दौड़कर दर्शन करते हैं ॥ ७ ॥ और जन्मका फल पाकर सनाथ होते हैं और मनको (उनके) साथ भेज (आप) दुखी होते हुये लौट आते हैं ॥ ८ ॥

दो०-बिदा किए बहु विनयकरि, फिरे पाइ मनकाम ॥ ❀
उतरि अन्हाने जमुनजल, जो सरीरसम स्याम ॥ १०९ ॥ ❀

विनती करके विद्यार्थींभी विदा किये और वे अपनी मनोकामना पाकर लौटे. (फिर भगवान्) उतरकर यमुनाजीके जलमें न्हाये. जो (उनके) शरीरके समान श्यामवर्ण है ॥ १०९ ॥

चौ०-सुनत तीरबासी नरनारी ❀ धाए निज निजकाज बिसारी ॥ १ ॥
लषनराम सियसुंदरताई ❀ देखि करहिं निजभाग्यबड़ाई ॥ २ ॥

यह सुनतेही किनारेके रहनेवाले स्त्रीपुरुष अपना २ काम छोड़कर दौड़े ॥ १ ॥ और लक्ष्मण रामचन्द्र और सीताजीकी सुन्दरताको देखकर अपने भाग्यकी बड़ाई करने लगे ॥ २ ॥

अतिलालसा सबहिं मनमाहीं ❀ नाम गाँव पूछत सकुचाहीं ॥ ३ ॥
जे तिनमहँ वयवृद्ध सयाने ❀ तिन करि युक्ति राम पहिचाने ॥ ४ ॥

सबके मनमें उनके नाम और गाँव पूछनेकी लालसा तौ बड़ी है परन्तु पूछनेमें सकुचाते हैं ॥ ३ ॥ उनमें जो अवस्थाके बूढ़े और चतुर थे उन्होंने युक्तिसे रामचन्द्रको पहिचाना ॥ ४ ॥

सकल कथा कहि तिनहिं सुनाई ❀ बनहिं चले पितुआयसु पाई ॥ ५ ॥
सुनि सविषाद सकल पछिताहीं ❀ रानी राउ कीन्ह भल नाहीं ॥ ६ ॥

और उन अपने साथ वालोंको सब कथा कहकर सुनाई कि पिताकी आज्ञा पाकर वनको जाते हैं ॥ ५ ॥ यह सुन सब लोग दुःखसे पछताते हैं कि रानी-राजाने अच्छा नहीं किया ॥ ६ ॥

तेहि अवसर इक तापस आवा ❀ तेजपुंज लघुवयस सुहावा ॥ ७ ॥
कबि अलखित गति वेष बिरागी ❀ मनवचकरम रामअनुरागी ॥ ८ ॥

उस समय छोटी अवस्थावाला और तेज[१]का पुंज एक तपस्वी आया ॥७॥ उसकी गतिको कवीश्वर भी नहीं जानते. वह वैरागीके वेषमें मन क्रम बचनसे रामचन्द्रजीसे प्रीति करनेवाला था ॥ ८ ॥

दो०-सजलनयन तनुपुलक निज, इष्टदेव पहिचानि ॥ ❀
परेउ दंडजिमि धरनितल, दसा न जाति बखानि ॥ ११० ॥ ❀

अपने इष्टदेवको पहिचान नेत्रोंमें जलभरके और शरीरमें पुलकायमान हो पृथ्वीके ऊपर दंडकी भाँति (इसप्रकार) पड़गया कि (उसकी) दशा वर्णन नहीं की जाती ॥ ११० ॥

चौ०-राम सप्रेम पुलकि उर लावा ❀ परम रंक जनु पारस पावा ॥ १ ॥
मनहुँ प्रेम परमारथ दोऊ ❀ मिलत धरे तनु कह सब कोऊ ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीने स्नेहसहित पुलकायमान हो छातीसे लगा लिया. (और वह ऐसा प्रसन्न हुआ) मानों बड़े कंगालको पारस मिलगया हो ॥१॥ उस (मिलनेके समय) सब कोई कहने लगे कि (ये दोनों ऐसे मिलते हैं) मानों स्नेह और परमार्थ दोनों शरीर धारण किये मिलते हैं ॥ २ ॥

बहुरि लषन पाँयन सोइ लागा ❀ लीन्ह उठाइ उमगि अनुरागा ॥ ३ ॥
पुनि सियचरनरेनु धरि सीसा ❀ जननि जानि सिसु दीन्ह असीसा ॥४॥

फिर वह लक्ष्मणजीके चरणोंमें गिरपड़ा और इन्होंने स्नेहमें उमँगकर उसे उठा लिया ॥ ३ ॥ फिर सीताजीके चरणोंकी रज माथेसे लगाई और माताने बालक जान आशीर्वाद दिया ॥ ४ ॥

कीन्ह निषाद दंडवत तेही ❀ मिलेउ मुदित लखि रामसनेही ॥ ५ ॥
पिवत नयनपुट रूपपियूषा ❀ मुदित सुअसन पाइ जिमि भूषा ॥ ६ ॥

केवटनेभी उसको दंडवत की और वह रामचन्द्रका प्रेमी जानकर मिला ॥ ५ ॥ और नेत्ररूपी पुट कहिये दोनोंसे स्वरूपरूपी अमृतको ऐसे पान करने लगा, अर्थात् देखकर प्रसन्न होनेलगा, जैसे भूखा सुन्दर भोजन पाकर प्रसन्न होता है ॥ ६ ॥

ते पितुमातु कहौ सखि कैसे ❀ जिन पठए बन बालक ऐसे ॥ ७ ॥
रामलषनसियरूप निहारी ❀ सोच सनेह बिकल नरनारी ॥ ८ ॥

(यह देखकर सखियाँ कहने लगीं कि) हे सखी! कहो वे माता पिता कैसे हैं जिन्होंने ऐसे (सकुमार) बालक वनमें भेजदिये हैं ॥७॥ राम, लक्ष्मण और सीताजीके स्वरूपको देख (सब) स्त्री पुरुष प्रीति और सोचके वश दुखी हुये ॥ ८ ॥

दो०-तब रघुबीर अनेकविधि, सखहिं सिखावन दीन ॥ ❀
रामरजायसु सीस धरि, भवन गवन तेहि कीन ॥ १११ ॥ ❀

---

(१) तेजपुंजसे यह भाव निकलता है कि इनकी रक्षाके लिये अग्नि शरीर धारण करके आये. क्योंकि साथमें कोई अवश्य परिचर्या करनेवाला चाहिये । अग्निका रूप धरके आना इसलिये निश्चय होता है कि एक भाँति ये अग्निके प्रभावसेही हुये हैं । यह कथा बालकांडमें है कि जब दशरथजीने यज्ञ किया और अग्निने प्रगट होकर हवि दियाथा ॥ अयोध्यासे सुमंत साथ रहे, फिर निषाद रहे, अब अग्नि रहे, और इनका रहना आगे आरण्यमेंभी स्पष्ट है कि जहां सुग्रीवकी मित्रता हुई और रामजी सीताजीको अग्निकी रक्षामें छोड़ गये. जैसा कहा है कि—

तुम पावकमहँ करहु निवासा । जबलग करौं निसाचर नासा ॥

और जिन्होंने यह अर्थ किया कि तुलसीदासजी थे सो यह उनका भ्रम है । तब तुलसीदासजी कहा थे ! ऐसी सब कथा पाखंडियोंके गपोड़े हैं ॥

तब रामचन्द्रने बहुत भाँति निषाद सखाको शिक्षा दी और वह रघुनाथजीकी आज्ञाको माथेपर चढ़ाकर घरको गया ॥ १११ ॥

चौ०–पुनि सिय राम लषन करजोरी ❀ जमुनहिं कीन्ह प्रनाम बहोरी ॥ १ ॥
चले ससीय मुदित दोउ भाई ❀ रवितनयाकर करत बड़ाई ॥ २ ॥

फिर सीता राम लक्ष्मणने यमुनाजीको हाथ जोड़कर प्रणाम किया ॥ १ ॥ और सीताजीसमेत दोनों भाई प्रसन्न होकर यमुनाजीकी बड़ाई करते हुये चले ॥ २ ॥

पथिक अनेक मिलहिं मगु जाता ❀ कहहिं सप्रेम देखि दोउ भ्राता ॥ ३ ॥
राजसुलक्षण अंग तुम्हारे ❀ देखि सोच हिय होत हमारे ॥ ४ ॥

अनेक बटोही मार्गमें जाते हुये मिलते हैं तौ दोनों भाइयोंको देखकर प्रेमसे कहते हैं कि ॥३॥ तुम्हारे शरीरमें तौ सब राज्यलक्षण दीखते हैं, यह देख हमारे मनमें बड़ा सोच होता है कि ॥४॥

मारग चलहु पयादहि पाए ❀ ज्योतिष झूँठ हमारे भाए ॥ ५ ॥
अगम पंथ गिरि कानन भारी ❀ तेहिंमहँ साथ नारि सुकुमारी ॥ ६ ॥

तुम नंगे पैरोंही मार्गमें चलते हो इस लिये हमारी समझमें ज्योतिषभी झूठही है ॥५॥ (एकतौ) यह बड़ा अगम वन और इसमें पहाड़ोंका दुर्गम मार्ग है और उसमेंभी साथमें अतिसुकुमारी नारी है॥६॥

करि केहरि बन जाहिं न जोई ❀ हम सँग चलहिं जो आयसुहोई ॥ ७ ॥
जाब जहाँलगि तहँ पहुँचाई ❀ फिरब बहोरि तुमहिं सिर नाई ॥ ८ ॥

और इस वनमें हाथी तथा सिंह ऐसे हैं कि देखे नहीं जाते जो आज्ञा हो तौ हम साथ चलै ॥ ७ ॥ जहाँतक जाओगे वहाँतक पहुँचाकर फिर तुमको शिर नवाकर लौट आवेंगे ॥ ८ ॥

दो०–इहिविधि बूझहिं प्रेमवस, पुलकिगात जलनैन ॥ ❀
कृपासिंधु फेरहिं तिनहिं, कहि बिनीत मृदुबैन ॥ ११२ ॥ ❀

इस भाँति प्रेमके वश पूछते हैं और जब शरीरमें पुलकायमान होजाते हैं और उनके नेत्रोंमें आँसू आजाते हैं तब दयाके समुद्र (रामचंद्र) उनको विनती कर और मीठे वचन कहकर लौटाते हैं ॥११२॥

चौ०–जे पुर ग्राम बसहिं मगुमाहीं ❀ तिनहिं नाग सुर नगर सिहाहीं ॥ १ ॥
केहि सुकृती केहि घरी बसाए ❀ धन्य पुन्यमय परम सुहाए ॥ २ ॥

जो नगर और गांव मार्गमें बसते हैं उनसे नागलोक और देवलोकभी डाह करते हैं ॥ १ ॥ किस पुण्यात्माने किस शुभ मुहूर्त्तमें बसाये हैं; इनको धन्य है; ये तौ परम सुन्दर पुण्यसे भरे पूरे हैं॥२॥

जहँ जहँ रामचरन चलि जाहीं ❀ तेहिं समान अमरावति नाहीं ॥ ३ ॥
पुन्यपुंज मगु निकट निवासी ❀ तिनहिं सराहहिं सुरपुरवासी ॥ ४ ॥

जहाँ २ रामचन्द्रजीके चरण चले जाते हैं, उसके समान इन्द्रकीभी पुरि नहीं है ॥ ३ ॥ मार्गके पास रहनेवाले मनुष्य पुण्योंके ढेर हैं, देवलोकवासीभी उनकी बडाई करते हैं कि ॥ ४ ॥

जे भरिनैन बिलोकहिं रामहिं ❀ सीतालषनसहित घनस्यामहिं ॥ ५ ॥
जेहि सर सरित राम अवगाहहिं ❀ तिनहिं देव सर सरित सराहहिं ॥ ६ ॥

कवित्त–कामनाकी गैयासी मनोरथ भरैया भले अखिल अगरमें सुसम्पति डरैया तू ।
दुरितदरैया विदरैया वदराहनकी जुलुम जरैया टेक यमकी टरैया तू ।
ग्यालकवि भाषै छविछोरन छवैया वेश सुखमें सनैया दुःख हियके हरैया तू ।
शैया करै शेषकी सुज्योतिकी जगैया जोर कान्हकी करैया मैया तरणि तनैया तू ॥ १ ॥

जो ये सीता लक्ष्मणसमेत मेघसमान श्यामवर्ण रामचन्द्रजीको नेत्रोंभर देखते हैं ॥५॥ और जिस सरोवर और नदीमें रामचन्द्रजी स्नान करते हैं उनको मानसरोवर और मन्दाकिनी नदीभी सराहते हैं

जेहि तरुवर प्रभु बैठहिं जाई ❀ करहिं कल्पतरु तासु बडाई ॥ ७ ॥
परसि रामपदपद्मपरागा ❀ मानति भूमि भूरि निजभागा ॥ ८ ॥

जिस वृक्षके नीचे भगवान जाकर विश्राम करते हैं उसकी बड़ाई कल्पवृक्षभी करते हैं ॥ ७ ॥ और रामचन्द्रजीके चरणकमलोंकी रजको छूकर पृथ्वीभी अपने भाग्यको बड़ा मानती है ॥ ८ ॥

दो०–छाँह करहिं घन विबुधगन, बरषहिं सुमन सिहाहिं ॥ ❀
देखत गिरि वन बिहँग मृग, राम चले मगु जाहिं ॥ ११३ ॥ ❀

मेघ छाया करते जाते हैं और देवताओंके समूह पुष्प वरसाते और सराहना करते हैं और रामचन्द्रजी मार्गमें पर्वत वन पक्षी और हिरणोंको देखते हुये चले जाते हैं ॥ ११३ ॥

चौ०–सीतालषनसहित रघुराई ❀ गाँवनिकट जब निकसहिं जाई ॥ १ ॥
सुनि सब बाल वृद्ध नर नारी ❀ चलहिं तुरत गृहकाजबिसारी ॥ २ ॥

सीतालक्ष्मणसमेत रामचन्द्र जब किसी गाँवके पास जाकर निकलते हैं ॥ १ ॥ तौ सुनकर वालकसे वृद्धतक सव नरनारी घरके कामोंको छोड़ २ कर (उनके दर्शनके लिये) जल्दीसे उठ दौड़ते हैं ॥२॥

रामलषनसियरूप निहारी ❀ पाइ नैनफल होहिं सुखारी ॥ ३ ॥
सजलनैन अति पुलकि सरीरा ❀ सब भए मगन देखि दोउ वीरा ॥ ४ ॥

और राम लक्ष्मण और सीताजीके स्वरूपकों देख नेत्रोंका फल पाकर सुखी होते हैं ॥३॥ नेत्रोंमें जल भरकर और शरीरमें अत्यंत पुलकायमान हो दोनों भाइयोंको देखकर सव मगन होगये ॥४॥

वरनि न जाइ दसा तिनकेरी ❀ लही रंक जनु सुरमनिढेरी ॥ ५ ॥
एकहिं एक बोलि सिख देहीं ❀ लोचनलाहु लेहु छन एहीं ॥ ६ ॥

उनकी दशा वर्णन नहीं की जाती. मानों कंगालको देवताओंकी मणि अर्थात् कौस्तुभमणियोंका ढेर मिलगया ॥ ५ ॥ एकको एक बुलाके शिक्षा देते हैं कि इस समय नेत्रोंका लाभ लेलो (फिर कहाँ धरा है) ॥ ६ ॥

रामहिं देखि एक अनुरागे ❀ चितवत चले जात सँग लागे ॥ ७ ॥
एक नैनमगु छबि उर आनी ❀ होहिं सिथिल तनुमानस बानी ॥ ८ ॥

कोई कोई रामचन्द्रजीको देख प्रेमसे साथ लगे हुये देखते चले जाते हैं ॥ ७ ॥ और कोई नेत्रोंके मार्गसे शोभाको हृदयमें धारणकर तन मन और वचनसे शिथिल होजाते हैं ॥ ८ ॥

दो०–एक देखि वटछाँह भलि, डारि मृदुल तृनपात ॥ ❀
कहहिं गवाँइय छिनुकस्रम, गवनब अबहिं कि प्रात ॥ ११४ ॥ ❀

कोई २ सुन्दर घनी वटवृक्षकी छायाको देख कोमल तृण और पल्लव विछाकर कहते हैं कि (हे महाराज !) क्षणभर यहाँ थकावट दूर कीजिये. फिर अभी चले जाना, या सवेरे चले जाना ११४

चौ०–एक कलस भरि आनहिं पानी ❀ अँचइय नाथ कहहिं मृदुबानी ॥ १ ॥
सुनि प्रियवचन प्रीति अति देखी ❀ राम कृपालु सुसील विसेखी ॥ २ ॥

कोई कलशमें जल भरके लाते हैं और कोमल वाणीसे कहते हैं कि हे नाथ ! आचमन कीजिये ॥ १ ॥ परम कृपालु और सुशील रामचन्द्रजीने (उनके) प्यारे वचन सुन बड़ा प्रेम देखा– ॥ २ ॥

जानी सीय स्रमित मनमाहीं ❀ घरिक बिलंव कीन्ह वटछाहीं ॥ ३ ॥
मुदित नारिनर देखहिं सोभा ❀ रूप अनूप नैन मनलोभा ॥ ४ ॥

और मनमें जाना कि सीताजी थकगईं सों घड़ी एक वड़की छायामें विश्राम किया ॥ ३ ॥ नरनारी प्रसन्नतासे शोभा देखते हैं और सुन्दर रूपमें नेत्र और मन लुभागये ॥ ४ ॥

इकटक सब सोहहिं चहुँओरा ❀ रामचंद्रमुखचंद्रचकोरा ॥ ५ ॥
तरुन तमालवरन तनुसोहा ❀ देखत कामकोटिमनमोहा ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीके मुखरूपी चन्द्रमाके चारों ओर सव लोग चकोरके समान टकोरी बांधकर शोभायमान हैं, अर्थात् रामके मुखको सब ऐसे देखते हैं मानों चकोर चन्द्रमाको देखते हों ॥ ५ ॥ और तरुण तमालवृक्षके समान (उनका) शरीर ऐसा शोभायमान है कि देखतेही करोडों कामदेव मनमें मोहित होते हैं ॥ ६ ॥

दामिनिवरन लषन सुठिनीके ❀ नखसिखसुभग भावते जीके ॥ ७ ॥
मुनिपट कटिन्ह कसे तूनीरा ❀ सोहतकर कमलन धनुतीरा ॥ ८ ॥

और लक्ष्मणजी बिजलीके समान सुन्दर और सलोने लगते हैं और नखसे चोटीतक ऐसे मनोहर हैं कि मनको भाते हैं ॥ ७ ॥ मुनियोंके पट कहिये भोजपत्रादिकके वस्त्र धारण किये कमरमें तरकस कसे और कमलसमान कोमल हाथोंमें धनुषबाण लिये हैं ॥ ८ ॥

दो०-जटा मुकुट सीसनि सुभग, उरभुजनैनविसाल ॥ ❀
सरदपर्वविधुवदन वर, लसत स्वेदकनजाल ॥ ११५ ॥ ❀

शीशपर सुन्दर जटाजूटके मुकुट धारण किये हैं और जिनकी चौड़ी छाती लंबी भुजा और नेत्र बड़े विशाल हैं, और शरदपूनोंके चन्द्रमाके समान जिनके सुन्दर मुखपर पसीनेके विन्दुओंका जाल शोभायमान है ॥ ११५ ॥

चौ०-बरनि न जाइ मनोहर जोरी ❀ सोभा अमित मोरि मति थोरी ॥ १ ॥
रामलषनसियसुंदरताई ❀ सब चितवहिं मतिमनचितलाई ॥ २ ॥

मनके हरनेवाली जोड़ी वर्णन नहीं की जाती, (क्यों कि) शोभा अपार और मेरी बुद्धि थोडी है॥१॥ रामचंद्र, लक्ष्मण और सीताजीकी शोभाको (सब लोग) बुद्धि, मन और चित्त लगाकर देखते हैं॥२॥

थके नारिनर प्रेमपियासे ❀ मनहुँ मृगीमृग देखि दियासे ॥ ३ ॥
सीयसमीप ग्रामतिय जाहीं ❀ पूछत अतिसनेह सकुचाहीं ॥ ४ ॥

स्नेहके प्यासे स्त्री पुरुष ऐसे थक गये जैसे हिरणी हिरण दीपकको देखनेसे थकित अर्थात् चित्रवत् रह जाते हैं॥३॥ नगरकी स्त्रियाँ सीताजीके पास जाती हैं और अति प्रेमके वश पूछनेमें सकुचाती हैं४

बारबार सब लागहिं पाए ❀ कहहिं वचन मृदु सरल सुहाए ॥ ५ ॥
राजकुमारि बिनय हम करहीं ❀ तियसुभाउ कछु पूछत डरहीं ॥ ६ ॥

सब वारंवार पैरोंमें पड़ती हैं और कोमल सीधे सुहावने वचन कहती हैं कि-॥ ५ ॥ हे राजकुमारी ! हम विनती करती हैं परंतु स्त्रीस्वभावसे कुछ पूछनेमें डरती हैं ॥ ६ ॥

स्वामिनि अविनय छमव हमारी ❀ बिलगु न मानव जानि गँवारी ॥ ७ ॥
राजकुँवर दोउ सहज सलोने ❀ इनते लहि दुति मरकत सोने ॥ ८ ॥

---

(१) स्त्रियोंका स्वभाव होता है कि चाहै जो विनाविचारे कह उठतीं हैं, इसलिये सकुचकर पूछती हैं कि कहीं पूछनेमें ऐसी वात मुखसे न निकल जाय जिससे हमारा गँवारपन प्रकट हो जावे और इन्हें बुरा लगै।

हे स्वामिनी ! हमारे ढीठपनेको क्षमा करना और गँवारियाँ जानकर (हमारे कहेका) बुरा न मानना ॥७॥ ये जोसहज सुन्दर दोनों राजकुमार हैं कि जिन्होंसे मरकत[1] मणि और सुवर्णने शोभा पाई है ॥८॥

दो०-स्यामल गौर किसोरवर, सुंदर सुखमाऐन ॥
सरदसर्वरीनाथमुख, सरदसरोरुहनैन ॥ ११६ ॥

और सांवले गोरे सुन्दर किशोर (अवस्थावाले) और सुन्दर शोभाके स्थान (जिनके) शरदके चन्द्रमासे मुख और शरदके कमलसमान नेत्र हैं ॥ ११६ ॥

चौ०-कोटिमनोज लजावनहारे ❀ सुमुखि कहहु को अहहिं तुम्हारे ॥ १ ॥
सुनि सनेहमय मंजुल बानी ❀ सकुचि सीय मनमहँ मुसुकानी ॥ २ ॥

और हे सुन्दरसुखवाली ! जो करोड़ों कामदेवोंके लज्जित करनेवाले हैं कहो तुह्मारे कौन[3] हैं ॥ १ ॥ प्रेमसे भरी कोमल वाणीको सुनकर सीताजी सकुचकर मनमें हँसीं ॥ २ ॥

तिनहिं बिलोकि बिलोकेउ धरनी ❀ दुहुँ सकोच सकुचति बरबरनी ॥ ३ ॥
सकुचि सप्रेम बालमृगनैनी ❀ बोली मधुरवचन पिकबैनी ॥ ४ ॥

और उन स्त्रियोंको देख पृथ्वीको देखने लगीं अर्थात् लाजके मारे नीची दृष्टि करली और दो संकोचोंसे सकुचने लगीं ॥३॥ फिर मृगनयनी कोकिलवयनी सकुचाकर स्नेहसहित मीठी वाणीसे बोलीं ॥४॥

सहजसुभाव सुभग तनु गोरे ❀ नाम लषन लघु देवर मोरे ॥ ५ ॥
बहुरि बदनबिधु अंचलढाँकी ❀ पियतन चितै भौंह करि बाँकी ॥ ६ ॥

सहज स्वभाव और सुन्दर गोरे शरीरवाले छोटे (जिनका) नाम लक्ष्मण है सो मेरे देवर लगते हैं ॥ ५ ॥ (यह कहकर) फिर चन्द्रमाके समान मुखको अंचलसे ढक टेढी भौंहकर और स्वामीके शरीरकी ओर देख ॥ ६ ॥

खंजन मंजु तिरीछे नैननि ❀ निजपति कहेउ तिनहिं सियसैननि ॥ ७ ॥
भईं मुदित सब ग्रामवधूटी ❀ रंकन्ह रतनरासि जनु लूटी ॥ ८ ॥

खञ्जन (पक्षी) केसे उज्ज्वल तिरछे कटाक्षोंसे सीताजीने उनकों संकेतसे अपना पति कहा ॥७॥ (इस छविको देख) सब गाँवकी स्त्रियाँ ऐसी प्रसन्न हुईं मानों कंगालोंने रत्नोंकी ढेरी लूटी ॥ ८ ॥

दो०-अति सप्रेम सियपाँय धरि, बहुबिधि देहिं असीस ॥
सदा सोहागिनि रहहु तुम, जबलगि महि अहिसीस ॥ ११७ ॥

अतिही प्रेमसमेत सीताजीके चरण छूकर अनेक भाँति आशीर्वाद देती हैं कि जबतक पृथ्वी शेषनागके मस्तकपर है, (तबतक) तुम सदा सुहागिन रहो ॥ ११७ ॥

चौ०-पारवतीसम पतिप्रिय होहू ❀ देवि न हमपर छाँड़ब छोहू ॥ १ ॥
पुनिपुनि बिनय करहिं करजोरी ❀ जो इहिमारग फिरिय बहोरी ॥ २ ॥

---

(१) मरकत मणिकीसी शोभा रामजीकी और सुवर्णसदृश लक्ष्मणजीकी है.

(२) उत्तररामचरिते-पथि पथिकवधूभिः सादरं पृच्छमाना कुवलयदलनीलः कोऽयमार्ये तवेति ।
स्मितविकसितगंडं व्रीडविभ्रांतनेत्रं मुखमवनमयन्ती स्पष्टमाचष्ट सीता ॥ १ ॥
अर्थात् मार्गमें पथिकोंकी स्त्रियोंने सीताजीसे यह पूछा कि ये नील कमलके समान श्यामवदन तुम्हारे कौन लगते हैं ? यह सुन सीताजीने हँसकर और लज्जायुक्त नेत्र करके और मुखको नीचा करके मानों स्पष्ट यह कह दिया कि मेरे पति हैं ॥

(३) एक तौ यह संकोच है कि जो न कहूंगी तौ गाँवकी स्त्रियां बुरा मानेंगीं, और दूसरा रामजीका संकोच है कि इनके सामने कैसे कहूं कि ये मेरे पति हैं ॥

और पार्वतीके समान पतिको प्यारी हो (परन्तु) हे देवि! हमारे ऊपरसे दया मत छोड़ियो ॥ १ ॥ वारंवार हाथ जोड़के प्रार्थना करती हैं कि जो फिर (तुम) इसी मार्गसे लौटो ॥ २ ॥

दरसन देव जानि निजदासी ❀ लखी सीय सब प्रेमपियासी ॥ ३ ॥
मधुरबचन कहिकहि परितोषी ❀ जनु कुमुदिनी कौमुदी पोषी ॥ ४ ॥

तौ अपनी दासी जानकर दर्शन देती जाना. (इसप्रकार जब) सीताजीने सबकों प्रेमकी प्यासी देखा ॥ ३ ॥ तब तौ मधुर बचन कह २ कर (उनका) ऐसा संतोष किया मानो चांदनीने कुमोदिनीको खिलादिया हो ॥ ४ ॥

तबहिं लषन रघुबररुख जानी ❀ पूँछेउ मगु लोगनि मृदुबानी ॥ ५ ॥
सुनत नारिनर भए दुखारी ❀ पुलकित अंग विलोचन बारी ॥ ६ ॥

फिर लक्ष्मणजीने रामचन्द्रजीका रुख जान लोगोंसे मीठी बाणीसे मार्ग पूछा ॥ ५ ॥ यह सुनकर स्त्री पुरुष दुखी होगये और उनका शरीर पुलकायमान होगया और नेत्रोंमें जल आगया ॥ ६ ॥

मिटा मोद मन भए मलीने ❀ विधि निधि दीन्ह लेत जनु छीने ॥ ७ ॥
समुझि करमगति धीरज कीन्हा ❀ सोधि सुगम मगु तिन्हकह दीन्हा ॥८॥

आनन्द तौ मिटगया और मनमें ऐसे उदास हुये मानों विधाता दीनी हुई संपत्ति फिर छीन लेता है ॥७॥ पर कर्मकी गति समझ धीरज धरा और ढूँढ़कर उनको सीधा मार्ग बतला दिया ॥८॥

दो०-लषनजानकीसहित तब, गवन कीन्ह रघुनाथ ॥ ❀
फेरे सब प्रियबचन कहि, लिए लाय मन साथ ॥ ११८ ॥ ❀

लक्ष्मण और सीताजीसमेत रामचन्द्रजी वनको चले और प्यारे बचन कहकर सब लोग लौटाये पर उनके मन साथही लगा लिये ॥ ११८ ॥

चौ०-फिरत नारि नर अति पछिताहीं ❀ देवहिं दोष देहिं मनमाहीं ॥ १ ॥
सहितविषाद परस्पर कहहीं ❀ विधिकरतब सब उलटे अहहीं ॥ २ ॥

स्त्री पुरुष लौटतेमें बहुत पछताते हैं और मनमें विधाताको दोष लगाते हैं ॥ १ ॥ दुःखसे आपसमें कहते हैं कि विधाताके सब करतब उलटे हैं, अर्थात् अविधना कैसे हैं ॥ २ ॥

निपट निरंकुस निठुर निसंकू ❀ जेहिं ससि कीन्ह सरुजसकलंकू ॥ ३ ॥
रूख कल्पतरु सागर खारा ❀ तेइ पठए वन राजकुमारा ॥ ४ ॥

वह बिलकुल निरंकुश है अर्थात् उसके ऊपर कोई शिक्षा देनेवाला नहीं है, निर्दयी है, कठोर है और निडर है, अर्थात् उसे परलोककाभी डर नहीं है, और जिसने चन्द्रमामें तौ घटने बढ़नेका रोग और कलंक लगा दिया है ॥ ३ ॥ और सब मनोकामनाओंके दाता कल्पतरुको वृक्ष बनाया है, और समुद्रको खारा किया है उसीने ये राजकुमार वनमें भेजे हैं ॥ ४ ॥

जोपैं इनहिं दीन बनबासू ❀ कीन बादि विधि भोगविलासू ॥ ५ ॥
ए विचरहिं मगु विनुपदत्राना ❀ रचे बादि विधि वाहन नाना ॥ ६ ॥

जो इनकोही वनवास दिया तौ विधाताने भोग विलास वृथा बनाये ॥ ५ ॥ और जब येही विना जूतोंके पृथ्वीपर डोलते हैं तौ ब्रह्माने (हाथी, घोड़े, रथ, पालकी आदि) अनेक सवारियाँ वृथाही बनाई. ६

---

(१) कर्मकी गति यह समझी कि जिस कर्मने हमें इनका सुन्दर दर्शन कराया वही अब वियोग कराता है. अथवा यह कि इतनीही कर्मगति अच्छी भई कि इनका दर्शन तो हुआ; अब वियोग भलेही हो; नहीं हम बनवासिनियोंके कहां भाग्यथे जो इन्हें देखते, अथवा यह कि जब इनके कर्मसे मातापितानेही घरसे निकाल वनोंवास दे दिया तौ हम थोड़ी देरके संयोगके कारण क्यों व्याकुल हों? ॥

ए महि परहिं डासि कुसपाता ❀ सुभगसेज कत सृजत विधाता ॥ ७ ॥
तरुवर वास इनहिं बिधि दीना ❀ धवलधाम रचि स्रम कत कीना ॥ ८ ॥

यह पृथ्वीपर कुश और पत्ते बिछाके सोते हैं तो ब्रह्माने सुन्दर सेजें क्यों बनाईं ॥ ७ ॥ और जो ब्रह्माने इनको वृक्षोंके नीचे वास दिया तौ बड़े २ राजमन्दिर बनानेमें क्यों परिश्रम किया ? ८

दो०–जो ए मुनिपटधर जटिल, सुन्दर सुठि सुकुमार ॥ ❀
बिबिधभाँति भूषन बसन, बादि किए करतार ॥ ११९ ॥ ❀

ये अति सुन्दर और सकुमार हैं, और जब येही मुनीश्वरोंके वस्त्र अर्थात् छाल और मृगचर्म आदि धारण किये हुये हैं और जटा बढ़ाये फिरते हैं तौ ब्रह्माने अनेक भाँतिके वस्त्र और आभूषण वृथाही बनाये ॥ ११९ ॥

चौ०–जो ए कंदमूलफल खाहीं ❀ बादि सुधादि असन जगमाहीं ॥ १ ॥
एक कहहिं ये सहजसुहाए ❀ आपु प्रगट भए बिधि न बनाए ॥ २ ॥

जो येही कन्द मूल फल खाते हैं, तो संसारमें अमृत आदि भोजन वृथाही हैं ॥ १ ॥ कोई कहते हैं कि ये सहज शोभायमान आपही उत्पन्न हुये हैं, विधाताने नहीं बनाये हैं ॥ २ ॥

जहँलगि बेद कहेउ बिधिकरनी ❀ स्रवन नैन मन गोचर बरनी ॥ ३ ॥
देखहु खोज भुवनदस चारी ❀ कहँ अस पुरुष कहाँ असि नारी ॥ ४ ॥

जहाँतक वेदोंने विधाताकी करनी वरनी है उसका तौ कान, नेत्र और मनसे गोचर कहिये प्रत्यक्ष होना कहा है, अर्थात् कानोंसे सुननेमें, नेत्रोंसे देखनेमें और मनसे विचारनेमें आ सक्ती है ॥३॥ सो (तुम) चौदहों लोकोंमें ढूँढकर देखो, कहां ऐसे मनुष्य और कहाँ ऐसी स्त्री है (अर्थात् कहीं नहीं) ॥ ४ ॥

इनहिं देखि बिधिमन अनुरागा ❀ पटतरु जोग बनावन लागा ॥ ५ ॥
कीन बहुत स्रम एक न आए ❀ तेहि ईर्षा वन आन दुराए ॥ ६ ॥

इनको देख ब्रह्माके मनमें बड़ी लालसा हुई होगी और इनके समान (दूसरे) बनाने लगा होगा ॥ ५ ॥ और बहुतसा परिश्रम किया होगा परन्तु जब एकसी न बना होगा तब उसी जलन से वनमें लाके इन्हैं छिपाया है ॥ ६ ॥

एक कहहिं हम बहुत न जानहिं❀ आपुहिं परम धन्यकरि मानहिं ॥ ७ ॥
ते पुनि पुन्यपुंज हम लेखे ❀ जे देखहिं दिखहहिं जिन देखे ॥ ८ ॥

कोई कहते हैं कि हम बहुत नहीं जानते (केवल) अपनेको धन्य समझते हैं (कि हमें दरशन होगये) ॥ ७ ॥ और हमारे लेखेवेभी पुण्यात्मा हैं कि जो देखते है, देखेंगे (और जिन्होंने) देखा है ८

दो०–इहिबिधि कहिकहि बचन प्रिय, लेहिं नैनभरि नीर ॥ ❀
किमि चलिहैं मारग अगम, सुठि सुकुमारसरीर ॥ १२० ॥ ❀

इस भाँति प्यारे बचन कह २ कर नेत्रोंमें जल भर लेते हैं. (और विचारते हैं कि) ये सुन्दर कोमल शरीरवाले कठिन मार्गमें कैसे चलैंगे ? ॥ १२० ॥

चौ०–नारि सनेह बिकल सब होहीं ❀ चकई सांझसमय जिमि सोहीं ॥ १ ॥
मृदु पदकमल कठिनमगु जानी ❀ गहबरि हृदय कहहिं मृदुबानी ॥ २ ॥

सब स्त्रियां प्रेमके वश व्याकुल होती हैं जैसे सांझके समय चकई होजाती हैं ॥ १ ॥ कमल समान चरणोंको कोमल और मार्गको कठिन जान गद्गद हृदयसे कोमल वाणी कहती हैं कि–॥ २ ॥

परसत मृदुलचरण अरुनारे ❀ सकुचति महि जिमि हृदय हमारे ॥ ३ ॥
जो जगदीस इनहिं वन दीन्हा ❀ कस न सुमनमय मारग कीन्हा ॥ ४ ॥

इनके कोमल लाल चरणोंको छूतेही पृथ्वी हमारे हृदयोंकी भांति सकुचती है ॥ ३ ॥ हे जगदीश! जो तुमने इनको वन दिया तो फूलोंकाही मार्ग क्यों न वना दिया ॥ ४ ॥

जो माँगे पाइय विधिपाहीं ❀ राखिय सखि इन आँखिनमाहीं ॥ ५ ॥
जे नरनारि न अवसर आए ❀ तिन सियराम न देखनपाए ॥ ६ ॥

हे सखी! जो ब्रह्मासे मांगे मिलै तौ इनको नेत्रोंमें रखना चाहिये ॥ ५ ॥ जो नरनारी उस समयपर न आये और सीता रामचन्द्रजीको देखने न पाये ॥ ६ ॥

सुनि स्वरूप पूछहिं अकुलाई ❀ अबलगि गए कहाँलगि भाई ॥ ७ ॥
समरथ धाइ बिलोकहिं जाई ❀ प्रमुदित फिरहिं नैनफल पाई ॥ ८ ॥

(वे उनके) स्वरूपको सुन अकुलाकर पूछते हैं, हे भाई! अब कहांतक पहुँचे होंगे ? ॥ ७ ॥ समर्थ तौ दौड़कर जा देखते हैं और नेत्रोंका फल पाकर प्रसन्नतासे लौटआते हैं ॥ ८ ॥

दो०–अबला बालक वृद्धजन, कर मींजहिं पछिताहिं ॥ ❀
होहिं प्रेमवस लोग इमि, राम जहाँजहँ जाहिं ॥ १२१ ॥ ❀

स्त्री बालक और बूढ़े हाथ मींजते और पछताते हैं और जहां २ रामचन्द्रजी जाते हैं वहां २ इसी प्रकार सब लोक स्नेहके वश हो जाते हैं ॥ १२१ ॥

चौ०–गाउँगाउँ अस होइ अनंदू ❀ देखि भानुकुलकैरवचंदू ॥ १ ॥
जे कछु समाचार सुनि पावहिं ❀ ते नृपरानिहिं दोष लगावहिं ॥ २ ॥

सूर्यवंशरूपी कुमुदवनको चन्द्रके समान ऐसे रामजीको देखकर गांव २ में ऐसाही आनन्द होजाता है ॥ १ ॥ जो कोई कुछ समाचार सुन पाते हैं तो वे राजारानीको दोष लगाते हैं ॥ २ ॥

कहहिं एक अतिभल नरनाहू ❀ दीन हमहिं जिन लोचनलाहू ॥ ३ ॥
कहहिं परस्पर लोगलुगाई ❀ बातैं सरल सनेहसुहाई ॥ ४ ॥

कोई कहते हैं राजा बहुत अच्छा है जिसने हमको नेत्रोंका लाभ पहुँचाया ॥ ३ ॥ और लोग लुगाई आपसमें सीधी सुन्दर प्रेमसनी बातें कहते हैं कि–॥ ४ ॥

ते पितुमातु धन्य जेहि जाए ❀ धन्य सो नगर जहाँते आए ॥ ५ ॥
धन्य सो सैल देस बन गाऊँ ❀ जहँजहँ जाहिं धन्य सो ठाऊं ॥ ६ ॥

उन मातापिताओंको धन्य है जिन्होंने इनको उत्पन्न किया है और उस नगरको धन्य है जहाँसे आये हैं ॥५॥ उन पर्वत देश वन और गाँव और स्थानोंको धन्य है! जहां २ ये जाते हैं ॥६॥

सुख पायो बिरंचि रचि तेही ❀ ये जिनके सबभाँति सनेही ॥ ७ ॥
रामलषनसियकथा सुहाई ❀ रही सकल मगु काननछाई ॥ ८ ॥

ब्रह्मानेभी तौ इनकोही रचकर सुख पाया है कि जिनके ये सब भाँतिसे प्रेमी हैं ॥ ७ ॥ रामचन्द्र लक्ष्मण और सीताजीकी सुन्दर कथा वनके सब मार्गमें फैल गई ॥ ८ ॥

दो०–इहिविधि रघुकुलकमलरवि, मगु लोगन सुख देत ॥ ❀
जाहिं चले देखत बिपिन, सियसौमित्रिसमेत ॥ १२२ ॥ ❀

इसप्रकार रघुकुलरूपी कमलको सूर्यके समान (खिलानेवाले) रघुनाथजी मार्गके लोगोंको सुख देते हुये सीताजी और लक्ष्मणसमेत वनको देखते हुये चले जाते हैं ॥ १२२ ॥

चौ०–आगे राम लषन पुनि पाछे ❀ तापसवेष बिराजत काछे ॥ १ ॥
उभयमध्य सिय सोहति कैसी ❀ ब्रह्मजीवबिच माया जैसी ॥ २ ॥

आगे रामचन्द्र, पीछे २ लक्ष्मण तपस्वीका वेष धारण किये शोभायमान हैं ॥१॥ दोनोंके बीच जानकीजी कैसी शोभायमान लगती हैं जैसे ब्रह्म और जीवके बीचमें माया लगती हो ॥ २ ॥

वहुरि कहउँ छबि जस मन बसई ❀ जनु मधुमदनमध्य रति लसई ॥ ३ ॥
उपमा बहरि कहौं जिय जोही ❀ जनु बुधबिधुबिच रोहिनि सोही ॥ ४ ॥

फिर मनमें जैसी छवि बसरही है (वह) उपमा कहता हूं, मानों वसंत और कामदेवके बीचमें रति शोभायमान है ॥ ३ ॥ फिर मनमें विचारके उपमा कहता हूं, मानों चन्द्रमा और बुधके बीचमें रोहिणी सुन्दर लगती हो ॥ ४ ॥

प्रभुपदरेख बीच बिच सीता ❀ धरति चरन मगु चलति सभीता ॥ ५ ॥
सीय रामपद अंक बराए ❀ लषन चलहिं मगु दाहिन वाँए ॥ ६ ॥

भगवान्के चरणोंकी रेखाकेबीच २ में चरण रखती हुई सीताजी मार्गमें भयसहित चली जाती हैं५ सीता और रामचन्द्रजीके चरणोंके चिह्नोंको बचाकर लक्ष्मणजी दाँये वाँये (होकर) चलते हैं॥ ६ ॥

रामलषनसियप्रीति सुहाई ❀ वचनअगोचर किमि कहिजाई ॥ ७ ॥
खग मृग मगन देखि छबि होहीं ❀ लिये चोरिचित राम बटोहीं ॥ ८ ॥

रामचन्द्र, लक्ष्मण और सीताजीकी सुन्दर प्रीति वचनोंसे परे है सो कैसे कही जावे ॥ ७ ॥ शोभाको देख खग मृगभी प्रसन्न होते हैं. क्योंकि बटोही रामचन्द्रने (सबके) चित्त चुरालिये ॥८॥

दो०–जिनजिन देखे पथिक प्रिय, सीयसहित दोउ भाइ ॥ ❀
भव मगु अगम अनंद ते, बिनुस्रम रहे सिराइ ॥ १२३ ॥ ❀

जिस २ ने सीताजीसमेत प्यारे पथिक दोनों भाइयोंको देखा वे संसाररूपी कठिन मार्गसे आनन्दसहित विनाही श्रमके पार होगये ॥ १२३ ॥

चौ०–अजहुँ जासुउर सपनेहु काऊ ❀ बसहि राम सिय लषन बटाऊ ॥ १ ॥
रामधामपथ पाइहि सोई ❀ जो पथ पाव कबहुँ मुनि कोई ॥ २ ॥

अबभी जिस किसीके हृदयमें स्वप्नमेंभी रामचन्द्र, लक्ष्मण और सीताजी पथिक बसते हैं ॥ १ ॥ वे रामचन्द्रजीके स्थानके उस मार्गको पावेंगे कि जिस मार्गको कोई २ मुनीश्वर कभी २ पाते हैं ॥२॥

तब रघुवीर श्रमित सिय जानी ❀ देखि निकट बर सीतलपानी ॥ ३ ॥
तहँ वसि कंदमूलफल खाई ❀ प्रात अन्हाइ चले रघुराई ॥ ४ ॥

तब रामचन्द्रने सीताजीको थकित जाना और निकटही वटवृक्ष और शीतल जल देखा–॥ ३ ॥ तौ रघुनाथजी वहां रहे और कन्दमूलफल खाकर प्रातःकाल स्नान करके चलदिये ॥ ४ ॥

देखत बन सर सैल सुहाए ❀ बालमीकिआस्रम प्रभु आए ॥ ५ ॥
राम देखि मुनिवास सुहावन ❀ सुंदरगिरि कानन जल पावन ॥ ६ ॥

और सुन्दर वन सरोवर और पर्वतोंको देखते हुये भगवान् वाल्मीकिजीके स्थानपर आये ॥५॥ रामचन्द्रजीने मुनीश्वरका सुन्दर स्थान देखा कि जहाँ सुन्दर पर्वत, वन और निर्मल नीर वह रहा है ॥६॥

सरनिसरोज विटप बन फूले ❀ गुंजत मंजु मधुप रसभूले ॥ ७ ॥
खग मृग बिपुल कोलाहल करहीं ❀ रहितबैर प्रमुदितमन चरहीं ॥ ८ ॥

सरोवरोंमें कमल खिल रहे हैं, वनमें वृक्ष फूल रहे हैं, और रसमें छके हुये सुन्दर भौंरे जिनपर गुंजार कर रहे हैं ॥ ७ ॥ खग मृग बहुतसा कोलाहल कर रहे हैं और वैर छोड मनमें प्रसन्न होते हुये विचरते हैं ॥ ८ ॥

दो०-सुचि सुंदर आस्रम निरखि, हरषे राजिवनैन ॥ ❀
सुनि रघुवर आगमन मुनि, आगे आए लैन ॥ १२४ ॥ ❀

कमलनयन रामचन्द्रजी पवित्र और सुन्दर आश्रमको देखकर प्रसन्न हुये और मुनि (वाल्मीकि) रामचन्द्रका आना सुनकर आगे लिवाने आये ॥ १२४ ॥

चौ०-मुनिकहँ रामदंडवत कीन्हा ❀ आशीर्वाद बिप्रवर दीन्हा ॥ १ ॥
देखि रामछबि नैन. जुड़ाने ❀ करि सनमान आस्रमहिं आने ॥ २ ॥

रामचन्द्रने मुनीश्वरको दंडवत की और श्रेष्ठमुनिने आशीर्वाद दिया ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीकी मनमोहिनी छबिको देखकर मुनीश्वरके नेत्र ठंढे होगये और बड़े आदरसे आश्रमको लिवा लाये ॥ २ ॥

तब मुनि आसन दिए सुहाए ❀ मुनिवर अतिथि प्रानप्रिय पाए ॥ ३ ॥
कंदमूलफल मधुर मंगाए ❀ सिय सौमित्रि राम फल खाए ॥ ४ ॥

तब श्रेष्ठ मुनिने प्राणोंसेभी प्यारे अतिथि पाकर (उनके) सुन्दर आसन दिये ॥३॥ और मधुर २ कन्दमूलफल मँगाये और सीता, लक्ष्मण और रामचन्द्रजीने फल भोजन किये ॥ ४ ॥

वालमीकिमन आनँद भारी ❀ मंगलमूरति नैन निहारी ॥ ५ ॥
तब करकमल जोरि रघुराई ❀ बोले बचन स्रवनसुखदाई ॥ ६ ॥

आनन्दकी मूर्त्तिको नेत्रोंसे देखकर वाल्मीकिजीके मनमें बड़ा आनन्द हुआ ॥ ५ ॥ तब रामचन्द्रजी कमलके समान कोमल हाथ जोड़कर कर्णसुखदायक वचन बोले कि-॥ ६ ॥

तुम त्रिकालदरसी मुनिनाथा ❀ विस्वबदर जिमि तुम्हरे हाथा ॥ ७ ॥
असकहि प्रभु सब कथा बखानी ❀ जेहिं जेहिं भाँति दीन्ह बन रानी ॥ ८ ॥

हे मुनिराज! तुम तीनों कालकी जाननेवाले हो और संसार बेरके समान तुम्हारे हाथमें है ॥ ७ ॥ ऐसे कहकर भगवान्ने सब कथा सुनाई कि जिस प्रकार (कैकेयी) रानीने वनोवास दिया था ॥८॥

दो०-तातवचन पुनि मातुहित, भाइ भरत अस राउ ॥ ❀
मोकहँ दरस तुम्हार प्रभु, सब मम पुण्यप्रभाउ ॥ १२५ ॥ ❀

पिताका वचन, फिर माताका हित और भरतसरीखे भाईको राज्य और हे प्रभो! मुझको आपका दर्शन होना यह सब मेरे पुण्योंकाही प्रभाव है ॥ १२५ ॥

चौ०-देखि पाँय मुनिराय तुम्हारे ❀ भए सुकृत सब सफल हमारे ॥ १ ॥
अब जहँ राउरआयसु होई ❀ मुनि उद्वेग न पावहिं कोई ॥ २ ॥

हे मुनिराय! तुम्हारे चरणोंके दर्शनोंसे हमारे सब अच्छे कर्म सफल हुये ॥ १ ॥ अब जहाँ आपकी आज्ञा हो और कोई मुनीश्वर दुःख न पावें (वहा रहूं) ॥ २ ॥

मुनि तापस जिनते दुख लहहीं ❀ ते नरेस विनु पावक दहहीं ॥ ३ ॥
मंगलमूल विप्रपरितोषू ❀ दहइ कोटिकुल भूसुररोषू ॥ ४ ॥

(क्यों कि) जिनसे मुनीश्वर और तपस्वी दुःख पाते हैं वे राजा विनाही अग्निके भस्म होजाते हैं ॥३॥ ब्राह्मणोंका सन्तोषही आनन्दकी जड़ है और ब्राह्मणोंका क्रोध करोड़ कुलोंको भस्मकर देता है ॥४॥

अस जिय जानि कहिय सोइ ठाऊँ ❀ सियसौमित्रि सहित जहँ जाऊं ॥ ५ ॥
तहँ रचि रुचिर परनतृनसाला ❀ वास करौं कछुकाल कृपाला ॥ ६ ॥

ऐसे मनमें जान वही स्थान बताइये जहां जानकी और लक्ष्मण सहित रहूँ ॥ ५ ॥ और हे दयानिधान! वहां सुन्दर तृण पल्लवसे कुटी बनाकर कुछ समयतक वास करूं ॥ ६ ॥

सहजसरल सुनि रघुवरबानी ❀ साधु साधु बोले मुनि ज्ञानी ॥ ७ ॥
कस न कहहु अस रघुकुलकेतू ❀ तुम पालक संतत स्रुतिसेतू ॥ ८ ॥

ज्ञानी मुनीश्वर रामचन्द्रजीकी सहज स्वभावसे सीधी वाणी सुनकर बोले कि, (हे राम!) तुम्हें धन्य है ॥ ७ ॥ हे रामचन्द्र! तुम निरन्तर वेदकी मर्यादाके पालन करनेवाले हो, ऐसे क्यो न कहो? (अर्थात् तुमको यह कहना योग्यही है) ॥ ८ ॥

छं०–स्रुतिसेतुपालक राम तुम जगदीस माया जानकी। ❀
जो सृजति जग पालति हरति रुख पाइ कृपानिधानकी ॥ ❀
जो सहससीस अहीस महि धरि लषन सचराचरधनी। ❀
सुरकाज धरि नरराजतनु चल दलन खल निसिचर अनी ॥५॥ ❀

हे रामचन्द्र! तुम वेदकी मर्यादाके पालन करनेवाले संसारके स्वामी हो और सीताजी माया हैं जो कृपाके समुद्र (आपका) रुख पाकर संसारको उत्पन्न, पालन, और नाश करती हैं, और जो शेषजी हजार मस्तकोंसे पृथ्वीको धारण करते हैं वही चराचरके स्वामी लक्ष्मणजी हैं (सो आप सब) देवताओंके कामके लिये राजाओंके शरीर धारणकर दुष्ट राक्षसोंकी सेनाको मारनेके लिये जाते हो ॥ ५ ॥

सो०–राम स्वरूप तुम्हार, बचन अगोचर बुद्धिपर ॥ ❀
अविगत अकथ अपार, नेतिनेति नित निगम कह ॥ ५ ॥ ❀

हे रामचन्द्र! तुम्हारा स्वरूप और वचन बुद्धिसे परे है, अर्थात् न तो मुखसे उसकी बड़ाई हो-सक्ती है और न वहां बुद्धि जाती है, पुनि अविगत है अर्थात् उसकी गति कहिये भेद किसीने न पाया, और कहा नहीं जाता क्योंकि ऐसा अपार है कि जिसको वेदभी नेति २ कहता है ॥ ५ ॥

चौ०–जगपेखन तुम देखनहारे ❀ विधिहरिसंभु नचावनहारे ॥ १ ॥
तेउ न जानहिं मरम तुम्हारा ❀ और तुमहिं को जाननहारा ॥ २ ॥

संसाररूपी खिलौनेके आप देखनेवाले और ब्रह्मा विष्णु और महादेवको नचानेवाले हो ॥ १ ॥ वेभी तुम्हारे भेदको नहीं जानते फिर दूसरा कौन तुमको जाननेवाला है? ॥ २ ॥

सो जानै जेहि देहु जनाई ❀ जानत तुमहिं तुमहिं होइ जाई ॥ ३ ॥
तुम्हरी कृपा तुमहिं रघुनंदन ❀ जानत भक्त भक्तउरचंदन ॥ ४ ॥

वही जानता है जिसे (आप) जता देते हो; और तुम्है जानतेही तुम्हारा रूप हो जाता है ॥ ३ ॥ हे भक्तउरचन्दन! हे रघुनन्दन! तुम्हारी कृपासे तुमको भक्तही जानते हैं ॥ ४ ॥

चिदानंदमय देह तुह्मारी ❀ बिगत बिकार जान अधिकारी ॥ ५ ॥
नरतनु धरेहु संतसुरकाजा ❀ कहहु करहु जन प्राकृतराजा ॥ ६ ॥

तुम्हारी देह चिदानन्दमय और विकाररहित है, इस लिये अधिकारीही जानते हैं ॥ ५ ॥ मनुष्य का शरीर तौ आपने संत और देवताओंके लिये धारण किया है, इस लिये साधारण राजाओंकी भांति कहते और करते हो ॥ ६ ॥

राम देखि सुनि चरित तुम्हारे ❀ जड़ मोहहिं बुध होहिं सुखारे ॥ ७ ॥
तुम जो कहहु करहु सब साँचा ❀ जस काछिय तस चाहिय नाचा ॥ ८ ॥

हे रामचन्द्र ! तुम्हारे चरित्र देख और सुनकर मूर्ख तौ मोहित होजाते हैं और बुद्धिमान् सुखी होते हैं ॥ ७ ॥ तुम जो कुछ कहते हो सब ठीक करते हो (क्यों कि) जैसा स्वाँग बनाया जाय वैसाही नाचना चाहिये ॥ ८ ॥

दो०–पूछेहु मोहिं कि रहौं कहँ, मैं पूछत सकुचाउँ ॥ ❀
जहँ न होहु तहँ देहुँ कहि, तुमहिं दिखावौं ठाउँ ॥ १२६ ॥ ❀

आपने मुझसे पूछा कि कहाँ रहूं, और मैं (आपको सर्वमय जान) पूछनेमें सकुचताहूं, कि [1]जहां (तुम) नहो तहाँ बसनेको कहदूँ, और तुमको स्थान दिखादूँ ॥ १२६ ॥

चौ०–सुनि मुनिबचन प्रेमरससाने ❀ सकुचि राम मनमहँ मुसुकाने ॥ १ ॥
बालमीकि हँसि कहहिं बहोरी ❀ बानी मधुर अमियरसबोरी ॥ २ ॥

मुनीश्वरके स्नेहके रसमें सने हुये वचन सुनकर रामचन्द्रजी मनमें सकुचाकर [2]हँसे ॥ १ ॥ फिर तौ वाल्मीकिजीभी हँसकर अमृतके रसमें सनी हुई मीठी वाणी बोले कि ॥ २ ॥

सुनहु राम अब कहौं निकेता ❀ बसहु जहाँ सियलषन समेता ॥ ३ ॥
जिनके स्रवन समुद्रसमाना ❀ कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना ॥ ४ ॥

हे रामचन्द्र ! सुनो अब स्थान कहता हूँ, जहां सीताजी और लक्ष्मणजी सहित वास करो ॥ ३ ॥ जिनके कान समुद्रके समान हैं और आपकी अनेक कथा बहुतसी नदियोंके समान हैं ॥ ४ ॥

भरहिं निरंतर होहिं न पूरे ❀ तिनके हृदय सदन तव रूरे ॥ ५ ॥
लोचनचातक जिन करि राखे ❀ रहहिं दरस जलधर अभिलाषे ॥ ६ ॥

सो जैसे नदियाँ समुद्रोंको भरती हैं और वे पूरे नहीं होते ऐसेही कथाओंके लगातार सुननेसे जिनके कान तृप्त न हों, अर्थात् उनका जी यही चाहा करै कि आपकी कथा रात दिन सुनाही करैं, उनके हृदय तुम्हारे सुन्दर स्थान हैं ॥ ५ ॥ जिन्होंने (अपने) नेत्रोंको पपीहा कर रक्खा है और जो आपके दर्शनरूपी मेघकीही इच्छा किये रहते हैं ॥ ६ ॥

निदरहिं सिंधु सरित सर बारी ❀ रूपबिंदुजल होहिं सुखारी ॥ ७ ॥
तिनके हृदय सदन सुखदायक ❀ बसहु लषनसियसह रघुनायक ॥ ८ ॥

और जो (अन्यदेवताओंकी भक्तिरूपी) समुद्र, सरिता और सरोवरोंके जलकी निन्दा कर आपके स्वरूपरूपी (स्वाति) जलकी बूँदसेही सुखी होते हैं ॥ ७ ॥ उनके हृदयरूपी मन्दिरमें हे सुखदायक रघुनायक ! आप सीतालक्ष्मणजीसहित निवास करो ॥ ८ ॥

दो०–जस तुम्हार मानसबिमल, हंसिनि जीहा जासु ॥ ❀
मुक्ताफलगुनगन चुनै, बसहु राम हिय तासु ॥ १२७ ॥ ❀

और हे राम ! तुह्मारा यश सोई निर्मल मानसरोवर है, और आपके गुण सोई मोती हैं, उनको

---

(१) त्वमेव सर्वलोकानां निवासस्थानमुत्तमम् । तथापि सर्वभूतानि निवाससदनानि हि ॥ १ ॥ अर्थात् हे राम ! तुम्ही सब प्राणियोंके निवासस्थान हो और सब प्राणी तुम्हारे निवासस्थान हैं, अर्थात् जहाँ तुम नहो ऐसा कोई स्थान नहीं हैं ॥

(२) रघुनाथजी इस लिये हँसे कि हमने तौ मनुष्यकी भांति पूछा औ इन्होंने हमारा सब भेद जान प्रगट करदिया ॥

जिसकी जीभ हंसनीरूप होकर चुगै, अर्थात् जो मनुष्य निरंतर आपके यशमें प्रीति रक्खै और अपनी जीभसे आपके गुणोंको गावै उसीके हृदयमें वास करो ॥ १२७ ॥

चौ०–प्रभुप्रसाद सुचि सुभग सुवासा ❀ सादर जासु लहै नित नासा ॥ १ ॥
तुमहिं निवेदित भोजन करहीं ❀ प्रभुप्रसाद पटभूषन धरहीं ॥ २ ॥

और जिनकी नासिका आपके (फल पुष्पआदि) प्रसादकी पवित्र सुन्दर सुगन्धको आनन्दसे सूंघती है ॥ १ ॥ और जो आपको समर्पण कर भोजन करते हैं और आपहीके प्रसादी कपड़े और गहने पहनते हैं ॥ २ ॥

सीस नवहिं सुर गुरु द्विज देषी ❀ प्रीतिसहित करि विनय विसेषी ॥ ३ ॥
कर नित करहिं रामपद पूजा ❀ रामभरोस हृदय नहिं दूजा ॥ ४ ॥

और जो देवता गुरु और ब्राह्मणोंको देख कर स्नेहसमेत बहुतसी नम्रता करके माथा नवाते हैं ॥ ३ ॥ जिनके हाथ सदा रामचन्द्रजीके चरणोंकी पूजा करते हैं, (जिनको) रामचन्द्रजीका भरोसा है दूसरेका नहीं ॥ ४ ॥

चरन रामतीरथ चलि जाहीं ❀ राम बसहु तिनके मनमाहीं ॥ ५ ॥
मंत्रराज नित जपहिं तुम्हारा ❀ पूजहिं तुमहिं सहितपरिवारा ॥ ६ ॥

और जिनके चरण रामचन्द्रजीके तीर्थोंमें जाते हैं, हे रामचन्द्र ! आप उनके हृदयमें वसो ॥ ५ ॥ और जो तुम्हारे मंत्रराज कहिये (राम) इस नामको नित्य जपते हैं और कुटुम्बसहित आपका पूजन करते हैं ॥ ६ ॥

तर्पन होम करहिं विधिनाना ❀ विप्र जेंवाइ देहिं बहु दाना ॥ ७ ॥
तुमते अधिक गुरुहिं जियजानी ❀ सकल भाव सेवहिं सनमानी ॥ ८ ॥

और जो अनेक प्रकारके तर्पण होम करते हैं और ब्राह्मणोंको भोजन कराकर बहुतसा दान देते हैं ॥ ७ ॥ और जो गुरुको आपसेभी अधिक मनमें समझ सब प्रकार आदरसे सेवा करते हैं ॥ ८ ॥

दो०–सबकरि माँगहिं एक फल, रामचरनरति होउ ॥ ❀
तिनके मनमंदिर बसहु, सियरघुनंदन दोउ ॥ १२८ ॥ ❀

और सबका एक (यही) फल मांगते हैं कि रामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रीति हो, उनके मनरूपी मंदिरमें सीता रामचन्द्रजी दोनों निवास करो ॥ १२८ ॥

चौ०–काम क्रोध मद मान न मोहा ❀ लोभ न छोभ न राग न द्रोहा ॥ १ ॥
जिनके कपटदंभ नहिं माया ❀ तिनके हृदय बसहु रघुराया ॥ २ ॥

(जिनके मनमें) काम, क्रोध, मद, मान, अज्ञान, लोभ, चित्तकी चंचलता, राग और वैर नहीं है ॥ १ ॥ जिनके कपट, अहंकार और माया नहीं है, हे रामचन्द्र ! उनके हृदयमें वास करो ॥ २ ॥

सबके प्रिय सबके हितकारी ❀ दुखसुखसरिस प्रसंसागारी ॥ ३ ॥
कहहिं सत्य प्रियबचन विचारी ❀ जागत सोवत सरन तुम्हारी ॥ ४ ॥

और जो सबके प्यारे और सबके हितकारी हैं, जिनके सुख और दुःख तथा बड़ाई और गाली समान हैं ॥३॥ जो विचारकर सच्चे और प्यारे बचन कहते हैं, जो सोते जागतेमें तुह्मारी शरण रहते हैं ॥४॥

तुमहिं छाँड़ि गति दूसर नाहीं ❀ राम बसहु तिनके उरमाहीं ॥ ५ ॥
जननीसम जानहिं परनारी ❀ धन पराय विषते विष भारी ॥ ६ ॥

और जिनको तुम्हैं छोड़ दूसरी गति नहीं है, अर्थात् जो तुम्हैं छोड़ औरकी शरण नहीं जाते, हे

रामचन्द्र ! उनके हृदयमें बसो ॥ ५ ॥ जो पराई स्त्रीको माताके समान जानते हैं और दूसरेके धनको विषसेभी बड़ा विष समझते हैं—॥ ६ ॥

जे हरषहिं परसंपति देखी ❀ दुखित होहिं परविपति विसेषी ॥ ७ ॥
जिनहिं राम तुम प्रानपियारे ❀ तिनके उर सुभ सदन तुम्हारे ॥ ८ ॥

और जो पराई संपति कहिये बढ़तीको देखकर प्रसन्न होते और पराई विपत्तिको देखकर अधिक दुखी होते हैं ॥ ७ ॥ और हे रामचन्द्र ! जिनको तुम प्राणोंसे प्यारे हो उनके हृदयमें आपका सुन्दर स्थान है ॥ ८ ॥

दो०-स्वामिसखापितुमातुगुरु, जिनके सब तुम तात ॥ ❀
तिनके मनमंदिर बसहु, सीयसहित दोउ भ्रात ॥ १२९ ॥ ❀

और जिनके स्वामी, मित्र, पिता, माता, गुरु, और प्यारे सब तुम्ही हो उनके मनरूपी स्थानमें सीताजीसहित दोनों भाई रहो ॥ १२९ ॥

चौ०-अवगुन तजि सबके गुन गहहीं ❀ विप्रधेनुहित संकट सहहीं ॥ १ ॥
नीतिनिपुन जिनकी जग लीका ❀ घर तुम्हार तिनके मन नीका ॥ २ ॥

जो सबके अवगुणोंको छोड़ गुणोंको लेते हैं और गौ ब्राह्मणोंके लिये दुःख सहते हैं ॥ १ ॥ जिनकी गिनती संसारमें नीतिके अच्छे जाननेवालोमें है,उनके मनमें आपका सुन्दर स्थान है॥२॥

गुन तुम्हार समुझहिं निजदोषू ❀ जेहिं सबभाँति तुम्हार भरोसू ॥ ३ ॥
रामभक्त प्रिय लागहिं जेहीं ❀ तेहिंउर बसहु सहितबैदेही ॥ ४ ॥

जो आपके गुण और अपने दोषोंको समझते हैं और जिन्हैं सब भाँति आपहीका भरोसा है॥३॥ और जिनको रामचन्द्रजीके भक्त प्यारे लगते हैं (उनके) मनमें सीताजीसहित बसो ॥ ४ ॥

जाति पाँति धन धरम बड़ाई ❀ प्रिय परिवार सदन समुदाई ॥ ५ ॥
सब तजि तुमहिं रहै लवलाई ❀ ताके हृदय बसहु रघुराई ॥ ६ ॥

जो जाति, पाँति, धन, धर्म, बड़ाई, प्यारा कुटुम्ब और स्थानोंका समूह-॥ ५ ॥ इन सबको छोड़ तुमसे लौ लगाये रहते हैं हे रामचन्द्र! उनके हृदयमें वास करो ॥ ६ ॥

स्वर्गनरकअपवर्ग समाना ❀ जहँ तहँ दीख धरैं धनुबाना ॥ ७ ॥
मनक्रमबचन जो राउरचेरा ❀ राम करहु ताके उर डेरा ॥ ८ ॥

जिनको स्वर्ग, नरक, मोक्ष बराबर हों और जहां तहां धनुष बाण धारण किये (आपही आप) दिखाई देते होंय॥७॥और हे रामचन्द्र! जो मन क्रमबचनसे आपके दास हों उनके हृदयमें निवास करो.

दो०-जाहि न चाहिय कबहुँ कछु, तुमसन सहजसनेह ॥ ❀
बसहु निरंतर तासुउर, सो राउर निजगेह ॥ १३० ॥ ❀

जिसे कभी कुछ न चाहिये और आपसे साधारणही प्रीति रखता हो उसके हृदयमें निरन्तर वास करो, वही आपका निज स्थान है ॥ १३० ॥

चौ०-इहिबिधि मुनिवर सदन देखाए ❀ बचन सप्रेम राममन भाए ॥ १ ॥
कह मुनि सुनहु भानुकुलनायक ❀ आस्रम कहौं समयसुखदायक ॥ २ ॥

मुनिराज वाल्मीकिजीने इस भांति स्थान दिखाये और (उनके) प्रेम भरे वचन रामचन्द्रजीके मनमें भाये ॥ १ ॥ (फिर) मुनिने कहा, हे सूर्यवंशके स्वामी ! सुनो. अब समयके अनुसार सुख देनेवाला स्थान कहता हूं कि-॥ २ ॥

चित्रकूटगिरि करहु निवासू ❀ तहँ तुम्हार सबभाँति सुपासू ॥ ३ ॥
सैल सुहावन कानन चारू ❀ करि केहरि मृग बिहँग बिहारू ॥ ४ ॥

चित्रकूट पर्वतपर निवास करो, वहां आपको सब प्रकार सुभीता रहैगा ॥ ३ ॥ सुहावना पर्वत और सुन्दर वन है कि जो हाथी, सिंह, हिरण और पक्षियोंके विहारका स्थान है ॥ ४ ॥

नदी पुनीत पुरानबखानी ❀ अत्रिप्रिया निजतपबल आनी ॥ ५ ॥
सुरसरिधार नाम मंदाकिनि ❀ जो सबपातकपोतकडाकिनि ॥ ६ ॥

वहां पवित्र नदी है जिसका यश पुराण गाते हैं और जिसे अत्रिऋषिकी स्त्री (अनुसूया)[1] अपनी तपस्याके बलसे लाई है ॥ ५ ॥ वह गंगाजीकी धार है जिसका नाम मन्दाकिनी है और जो सब पापरूपी बालकोंको (खानेके लिये) डाकिनी है ॥ ६ ॥

अत्रिआदि मुनिवर बहु बसहीं ❀ करहिं जोगजपतप तनु कसहीं ॥ ७ ॥
चलहु सफल स्रम सबकर करहू ❀ राम देहु गौरव गिरिवरहू ॥ ८ ॥

जहां बहुतसे अत्रिआदि श्रेष्ठ मुनि बसते हैं और योगाभ्यास जपतप करते और शरीरको कष्ट देते हैं ॥ ७ ॥ हे रामचन्द्र! (वहां) चलकर सबके परिश्रमको सफल करो और सुन्दर पर्वतको भी बड़ाईदो ८

दो०-चित्रकूटमहिमा अमित, कही महामुनि गाइ ॥ ❀
आइ अन्हाने सरितवर, सीयसहित दोउ भाइ ॥ १३१ ॥ ❀

इस प्रकार जब बड़े मुनि वाल्मीकिजीने चित्रकूटकी अत्यन्त बड़ाई गाकर कही तब तौ जानकीजीसहित दोनो भाई आकर सुन्दर नदीमें नहाये ॥ १३१ ॥

चौ०-रघुवर कहेउ लषन भलघाटू ❀ करहु कतहुँ अब ठाहरठाटू ॥ १ ॥
लषन दीख पय उतर करारा ❀ चहुँ दिसि फिरेउ धनुषजिमि नारा ॥२॥

और रामचन्द्रजीने कहा हे लक्ष्मण! घाटवाट तौ अच्छा है, अब कहीं ठहरनेका ठाट करो ॥ १॥ लक्ष्मणजीने पानी के उत्तरकी और वाले करारको देखा कि जिसका नाला चारों ओर धनुषके समान (गोल) फिरा हुआ है ॥ २ ॥

नदी पनच सर सम दम दाना ❀ सकल कलुष कलिसाउज नाना ॥ ३ ॥
चित्रकूट जनु अचल अहेरी ❀ चूक न घात मारु मुठिभेरी ॥ ४ ॥

नदी मानो उस धनुषकी प्रत्यंचा है, शम दम अर्थात् भीतर बाहरकी इन्द्रियोंका रोकना और दान ये बाण हैं, और कलिके संपूर्ण पाप निशाने हैं ॥ ३ ॥ चित्रकूट (पर्वत) मानो अचल शिकारी है जो दाव नहीं चूकता, एकही मुक्केमें (पापीको) मार देता है ॥ ४ ॥

असकहि लषन ठाउँ दिखरावा ❀ थल बिलोकि रघुपति सुख पावा ॥ ५ ॥
रमेउ राममन देवन्ह जाना ❀ चले सहित सुरपतिपरधाना ॥ ६ ॥

ऐसे कह लक्ष्मणजीने स्थान दिखाया और ठामको देख रामने सुख पाया ॥ ५ ॥ देवता रामचन्द्रजीके मनको लगा जानकर इन्द्रको अपना अगुआ बनाय उसके साथ चले ॥ ६ ॥

कोलकिरातबेष धरि आए ❀ रचेउ परन तृनसदन सुहाए ॥ ७ ॥
बरनि न जाइँ मंजु दुइ साला ❀ एक ललित लघु एक बिसाला ॥ ८ ॥

कोल और भीलोंका वेष धारणकरके आये और तृणपल्लवोंके सुन्दर घर बनाये ॥ ७ ॥ सुन्दर दो पर्णकुटी (बनाईं जिनका) वर्णन नहीं होसकता, एक सुन्दर छोटी और एक बड़ी थी ॥ ८ ॥

---

(१) अनुसूया दक्षकी पुत्री थी.वह–१००००वर्ष तपकर मंदाकिनीको इस लिये लाई थी कि ऋषि वृद्ध थे और बड़े कष्टसे जा सक्तेथे.

दो०-लषनजानकीसहित प्रभु, राजत परननिकेत ॥ ❀
सोह मदन मुनिवेष जनु, रतिऋतुराजसमेत ॥ १३२ ॥ ❀

लक्ष्मण और सीताजीसहित रामचन्द्र पर्णकुटीमें ऐसे शोभायमान हुये मानों रति और वसंतके साथ कामदेव मुनीश्वरका वेष धारण किये शोभायमान है ॥ १३२ ॥

चौ०-अमर नाग किन्नर दिगपाला ❀ चित्रकूट आए तेहिं काला ॥ १ ॥
राम प्रनाम कीन्ह सबकाहू ❀ मुदित देव लहि लोचनलाहू ॥ २ ॥

उस समय देवता, नाग, किन्नर, दिक्पाल चित्रकूटमें आये ॥ १ ॥ रामचन्द्रने सब किसीको प्रणाम किया और देवता नेत्रोंका लाभ पाकर प्रसन्न हुये ॥ २ ॥

बरषि सुमन कहि देवसमाजू ❀ नाथ सनाथ भए हम आजू ॥ ३ ॥
करि बिनती दुख दुसह सुनाए ❀ हरषित निजनिज सदन सिधाए ॥ ४ ॥

देवताओंके समाजने फूल वर्षाकर कहा-हे स्वामी ! हम आज सनाथ हुये ॥ ३ ॥ और प्रार्थना कर (अपना) कठिन दुःख सुनाय प्रसन्न होते हुये अपने २ स्थानको लौटगये ॥ ४ ॥

चित्रकूट रघुनंदन छाए ❀ समाचार सुनि सुनि मुनि आए ॥ ५ ॥
आवत देखि मुदित मुनिवृंदा ❀ कीन्ह दंडवत रघुकुलचंदा ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजी चित्रकूटपर ठहरे हैं यह समाचार सुन २ कर मुनीश्वर (वहां) आये ॥ ५ ॥ रामचन्द्रने मुनीश्वरोंकी मंडलीको आते हुये देख दंडवत की ॥ ६ ॥

मुनि रघुवरहिं लाइ उर लेहीं ❀ सफल होनहित आसिष देहीं ॥ ७ ॥
सियसौमित्रिरामछवि देखहिं ❀ साधन सकल सफल करि लेखहिं ॥८॥

मुनीश्वर रामचन्द्रजीको छातीसे लगा लेते हैं और सफल होनेके लिये आशीर्वाद देते हैं ॥ ७ ॥ और सीता, लक्ष्मण और रामचन्द्रजीकी शोभाको देखते हैं और (अपने जप तप आदि सब) साधनोंको सफल करके मानते हैं ॥ ८ ॥

दो०-जथाजोग सनमानि प्रभु, विदा किए मुनिवृंद ॥ ❀
करहिं जोग जप जज्ञ तप, निजआस्रम स्वच्छंद ॥ १३३ ॥ ❀

भगवान्ने मुनीश्वरोंके समूहोंको यथायोग्य सन्मान करके विदा किया और वे अपनी इच्छानुसार योग, यज्ञ, जप तप करने लगे ॥ १३३ ॥

चौ०-यह सुधि कोलकिरातन पाई ❀ हरषे जनु नवनिधि घर आई ॥ १ ॥
कंदमूलफल भरिभरि दोना ❀ चले रंक जनु लूटन सोना ॥ २ ॥

यह समाचार कोल और भीलोंने सुना तौ ऐसे प्रसन्न हुये मानों नौ निधि[1] घर आगई ॥ १ ॥ दोनोंमें कन्द मूल फल भर २ के ऐसे चले मानों कंगाल सोना लूटने (जाते हैं) ॥ २ ॥

तिनमहँ जिन देखे दोउ भ्राता ❀ और तिनहिं पूछहिं मगुजाता ॥ ३ ॥
कहत सुनत रघुबीरनिकाई ❀ आए सब देखे दोउ भाई ॥ ४ ॥

उनमेंसे जिह्नोंने दोनों भाई देखे थे उनसे और लोग मार्गमें चलते हुये पूछते जाते हैं ॥ ३ ॥ फिर रामचन्द्रजीकी सुन्दरताको कहते सुनते हुये सब आये और दोनों भाई देखे ॥ ४ ॥

---

(१) गूढार्थदीपिका देखो ॥

करहिं जुहार भेट धरि आगे ❀ प्रभुहिं बिलोकत अतिअनुरागे ॥ ५ ॥
चित्रलिखे जनु जहँ तहँ ठाढ़े ❀ पुलकिसरीर नयन जल बाढ़े ॥ ६ ॥

भेटको आगे रख दंडवत् करी और बड़ी प्रीतिसे भगवान्का दर्शन करने लगे ॥ ५ ॥ वे चित्रसे लिखे मानों जहां तहां खड़े हैं; उनका शरीर रोमांचित होगया और नेत्रोंमें नीर आ छाया ॥६॥

राम सनेहमगन सब जाने ❀ कहि प्रिय बचन सकल सनमाने ॥ ७ ॥
प्रभुहिं जोहारि बहोरि बहोरी ❀ बचन बिनीत कहहिं करजोरी ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजीने सबको प्रेममें मगन जान प्यारे वचन कहकर सबका सत्कार किया ॥ ७ ॥ और वे वारंवार भगवानको दंड़वतकर हाथ जोड़कर नम्रताके वचन बोलने लगे ॥ ८ ॥

दो०-अब हम नाथ सनाथ सब, भए देखि प्रभुपाय ॥ ❀
भाग्य हमारे आगमन, राउल कोशलराय ॥ १३४ ॥ ❀

हे स्वामी ! अब आपके चरणोंका दर्शनकर हम सब सनाथ हुये. हे अवधपते ! हमारेही भाग्यसे आपका आना हुआ है ॥ १३४ ॥

चौ०-धन्य भूमि बन पंथ पहारा ❀ जहँ जहँ नाथ पाँव तुम धारा ॥ १ ॥
धन्य विहँग मृग काननचारी ❀ सफल जन्म भे तुमहिं निहारी ॥ २ ॥

हे स्वामी ! पृथ्वी, वन, मार्ग, पर्वत और जहां २ अपने अपने चरण धरे हैं (उन सब स्थानोंको) धन्य है॥१॥ बनके विचरनेवाले पक्षी और हिरणोंको धन्य है, कि आपको देख(सबके)जन्म सफल हुये२

हम सब धन्य सहितपरिवारा ❀ देखि नयनभरि दरस तुम्हारा ॥ ३ ॥
कीन्ह वास भलठाम बिचारी ❀ इहाँ सकल ऋतु रहब सुखारी ॥ ४ ॥

हम सबको कुटुम्बसहित धन्य है जो नेत्रभरके आपका दर्शन किया ॥ ३ ॥ (आपने) अच्छी जगह विचारकर वास किया यहां सब ऋतुओंमें आरामसे रहोगे ॥ ४ ॥

हम सबभाँति करब सेवकाई ❀ करि केहरि अहि बाघ बराई ॥ ५ ॥
बन बेहड़ गिरिकंदर खोहा ❀ सब हमार प्रभु पगुपगु जोहा ॥ ६ ॥

हाथी, सिंह, सर्प और शार्दूलसे बचाकर हम सब भांतिसे आपकी सेवा करेंगे ॥ ५ ॥ हे भगवन् ! वन, बेहड़, पर्वत, कन्दरा और खोह सब हमारा पैर २ देखा पड़ा है ॥ ६ ॥

तहँ तहँ तुमहिं अहेर खेलाउब ❀ सर निर्झर जलठाउँ देखाउब ॥ ७ ॥
हम सेवक परिवारसमेता ❀ नाथ न सकुचब आयसु देता ॥ ८ ॥

तहाँ तहाँ आपको शिकार खिलावेंगे और सरोवर झरने और जलके स्थानोंको दिखलावेंगे ॥७॥ हे स्वामी ! हम कुटुम्बसहित आपके सेवक हैं सो आज्ञा देतेमें मत सकुचाना ॥ ८ ॥

दो०-वेदबचन मुनि मनअगम, ते प्रभु करुना ऐन ॥ ❀
बचन किरातनके सुनत, जिमि पितु बालकबैन ॥ १३५ ॥ ❀

जो वेदके वचन और मुनियोंके मनकोभी अगम हैं वही करुणानिधान भगवान् भीलोंके वचन ऐसे सुनते हैं जैसे पिता बालकके वचनोंको (सुनता है) ॥ १३५ ॥

चौ०-रामहिं केवल प्रेम पियारा ❀ जानिलेहु जो जाननहारा ॥ १ ॥
राम सकल वनचर परितोषे ❀ कहि मृदुबचन प्रेम परिपोषे ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीको केवल स्नेहही प्यारा है, जो जाननेवाला हो वह जानलो ॥ १ ॥ रामचन्द्रने सब वनके रहनेवालोंको संतुष्ट किया और मीठे वचन कहकर प्रेमसे धीरज बँधाया ॥ २ ॥

बिदा किए सिरनाइ सिधाए ❀ प्रभुगुन कहत सुनत घर आए ॥ ३ ॥
इहिंबिधि सीयसहित दोउ भाई ❀ बसहिं बिपिन सुरमुनिसुखदाई ॥ ४ ॥

(फिर) विदा किया तौ (कोलकिरात) माथा नवाकर चले और भगवान्के गुणोंको कहते सुनते हुए अपने २ घर आये ॥ ३ ॥ इस भांति देवता और मुनीश्वरोंके सुख देनेवाले दोनों भाई जानकीजीसहित वनमें रहने लगे ॥ ४ ॥

जबते आइ रहे रघुनायक ❀ तबते भा बन मंगलदायक ॥ ५ ॥
फूलहिं फलहिं बिटप बिधिनाना ❀ मंजु ललितवर बेलिबिताना ॥ ६ ॥

जबसे रामचन्द्रजी आकर ठहरे तबसे वन आनन्दोंका देनेवाला हुआ, अर्थात् सब प्रकारके आनन्द होने लगे ॥ ५ ॥ भांति २ के सुन्दर वृक्ष फूलते हैं और उनपर सुन्दर बेलोंके चँदोए छा रहे हैं ॥ ६ ॥

सुरतरु सरिस सुभाव सुहाए ❀ मनहुँ बिबुधवन परिहरि आए ॥ ७ ॥
गुंजत मंजुल मधुकरस्रेनी ❀ त्रिबिध बयार बहै सुखदेनी ॥ ८ ॥

और कल्पवृक्षके समान स्वभावहीसे शोभायमान हैं, मानों नन्दनवनको छोड़कर आये हैं ॥ ७ ॥ सुन्दर भौंरोंकी कतारें गूंजती हैं और सुख देनेवाली तीन भांतिकी (शीतल, मन्द, सुगंध) पवन चलरही हैं ॥ ८ ॥

दो०–नीलकंठ कलकंठ सुक, चातक चक्र चकोर ॥ ❀
भाँतिभाँति बोलहिं बिहँग, स्रवनसुखद चितचोर ॥ १३६ ॥ ❀

नीलकंठ, कोकिला, तोता, पपीहा, चकवा और चकोर ये भांति २ के पक्षी कानोंको सुख देनेवाले और चित्तको चुरानेवाले शब्दकर रहे हैं ॥ १३६ ॥

चौ०–करि केहरि कपि कोल कुरंगा ❀ बिगत बैर बिहरहिं इकसंगा ॥ १ ॥
फिरत अखेट रामछबि देखी ❀ होहिं मुदित मृगबृंद बिसेषी ॥ २ ॥

हाथी, सिंह, बंदर, सूकर, हिरण वैर छोड़के एकसाथ विहार करते हैं ॥ १ ॥ बहुतसे हरिणोंके झुंडके झुंड शिकार खेलतेमें रामचन्द्रजीकी छबिको देख प्रसन्न होते हैं ॥ २ ॥

बिबुधबिपिन जहँलगि जगमाहीं ❀ देखि राम बन सकल सिहाहीं ॥ ३ ॥
सुरसरि सरस्वति दिनकरकन्या ❀ मेकलसुता गोदावरि धन्या ॥ ४ ॥

संसारमें जहांतक देवताओंके वन हैं सब रामचन्द्रजीके रहनेके वनको देखकर सराहते हैं ॥ ३ ॥ गंगा, सरस्वती, यमुना, नर्मदा और गोदावरी आदि जो धन्य कहिये बड़ी २ (नदियां) हैं ॥ ४ ॥

सब सर सिंधु नदी नद नाना ❀ मंदाकिनि कर करहिं बखाना ॥ ५ ॥
उदय अस्त गिरिवर कैलासू ❀ मंदर मेरु सकल सुरबासू ॥ ६ ॥

और सब सरोवर समुद्र और बहुतसे नदी नाले सब मन्दाकिनीकी बड़ाई करते हैं ॥ ५ ॥ सुन्दर उदयाचल अस्ताचल कैलास मन्दराचल और सुमेरु जो सब देवताओंके रहनेके स्थान हैं ॥ ६ ॥

सैल हिमाचलआदिक जेते ❀ चित्रकूट जस गावहिं तेते ॥ ७ ॥
बिंध्य मुदितमन सुख न समाई ❀ बिनुस्रम बिपुल बड़ाई पाई ॥ ८ ॥

और हिमालयआदि जितने पर्वत हैं सब चित्रकूटका यश गाते हैं ॥ ७ ॥ और विंध्याचलके मनमें बड़ाही आनन्द है, वह तौ सुखसे फूलानहीं समाता कि उसे विनाही परिश्रमके बड़ाई मिली (क्योंकि चित्रकूट उसीका एक शिखर है) ॥ ८ ॥

दो०-चित्रकूटके विहँग मृग, बेलि विटप तृनजाति ॥ ❀
पुन्यपुंज सब धन्य अस, कहहिं देव दिनराति ॥ १३७ ॥ ❀

देवता दिनरात यही कहते है कि चित्रकूटके खग, मृग, वेलि, वृक्ष, और तृणविशेष पुण्यके पुंज और धन्य हैं ॥ १३७ ॥

चौ०-नयनवंत रघुपतिहिं बिलोकी ❀ पाइ जनमफल होहिं बिसोकी ॥ १ ॥
परसि चरनरज अचर सुखारी ❀ भए परमपदके अधिकारी ॥ २ ॥

जिनके नेत्र हैं वे तौ रामचन्द्रजीकी शोभाको देख और जन्मका फल पाकर शोकरहित होते हैं ॥१॥ और अचर अर्थात् पर्वत भूमिआदि चरणोंकी रजको छूकर परमपदके अधिकारी हुये ॥ २ ॥

सो बन सैल सुभाय सुहावन ❀ मंगलमय अतिपावनपावन ॥ ३ ॥
महिमा कहौं कवनविधि तासू ❀ सुखसागर जहँ कीन्ह निवासू ॥ ४ ॥

वह वन और पर्वत स्वभावहीसे सुंदर, मंगल उपजानेवाला, और बड़े पवित्र कोभी पवित्र करनेवाला है ॥ ३ ॥ उसकी बड़ाईको किस भांति कहूँ कि जहां सुखके सागर (रामचन्द्रजी) ने जाकर निवास किया ॥ ४ ॥

पय पयोधि तजि अवध विहाई ❀ जहँ सिय राम लषन रहआई ॥ ५ ॥
कहि न सकहिं सुख भा जस कानन ❀ जो सतसहस होहिं सहसानन ॥ ६ ॥

(वह स्थान बड़ाईके योग्य क्यों न हो कि) जहां राम, लक्ष्मण, जानकी क्षीरसागरको छोड़ (अयोध्यामें) और अयोध्यापुरीको छोड़कर यहाँ आकर रहे ॥ ५ ॥ जैसा वनमें आनंद हुआ है उसे तौ जो सौहजार शेषजी हों तौभी नहीं कहसकते ॥ ६ ॥

सो मैं बरनि कहौं विधि केही ❀ डावरकमठ कि मंदर लेही ॥ ७ ॥
सेवहिं लषन कर्ममनबानी ❀ जाइ न सील सनेह बखानी ॥ ८ ॥

फिर मैं किस भांति वर्णन करसकता हूँ ! भला कहीं पोखरका कछुआ भी मन्दराचलको उठासकता है ॥ ७ ॥ लक्ष्मणजी मनकर्म वचनसे (रामजीकी) सेवा करते हैं, (उनका) शील और प्रेम वर्णन नहीं किया जाता ॥ ८ ॥

दो०-छिन छिन लखि सियरामपद, जानि आपुपर नेह ॥ ❀
करत लषन सपने न चित, बंधु मातु पितु गेह ॥ १३८ ॥ ❀

लक्ष्मणजी क्षण २ में सीता रामचन्द्रजीके चरणोंके दर्शन कर और अपने ऊपर प्रेम जानकर भाई, माता, पिता और घरकी सुप्नेमेंभी याद नहीं करते ॥ १३८ ॥

चौ०-रामसंग सिय रहहि सुखारी ❀ पुरपरीजनगृहसुरति बिसारी ॥ १ ॥
छिन छिन पिय बिधुवदन निहारी ❀ प्रमुदित मनहुँ चकोरकुमारी ॥ २ ॥

सीताजी रामचन्द्रजीके साथ नगर कुटुम्ब और घरकी सुधबुध भूलकर सुखी रहती हैं ॥ १ ॥ और क्षण २ में पतिके चन्द्रसमान मुखको देख ऐसी अधिक प्रसन्न होती हैं जैसे चकोरकी बच्ची चंद्रको देखकर सुखी होती है ॥ २ ॥

नाहनेह नित बढ़त बिलोकी ❀ हरषित रहति दिवस जिमि कोकी ॥३॥
सियमन रामचरनअनुरागा ❀ अवधसहससम बन प्रिय लागा ॥ ४ ॥

और स्वामीके प्रेमको (अपने ऊपर) नित्य बढ़ता देख ऐसी प्रसन्न रहती है जैसे चकवी (सूर्यको देख) दिनमें (प्रसन्न रहती है) ॥ ३ ॥ सीताजीके मनमें रामचन्द्रजीके चरणोंसे स्नेह (होनेके कारण) वन हजार अयोध्याओंके समान प्यारा लगा ॥ ४ ॥

परनकुटी प्रिय प्रियतमसंगा ❀ प्रियपरिवार कुरंगबिहंगा ॥ ५ ॥
सासससुरसम मुनितिय मुनिवर ❀ असन अमियसम कंदमूलफर ॥ ६ ॥

प्रीतमके साथ पर्णकुटी प्यारी लगी और खग मृग कुटुम्बके समान प्यारे लगे ॥ ५ ॥ मुनि और मुनियोंकी स्त्री सास ससुरके समान और कन्द मूल फल अमृतके समान स्वादिष्ट लगते हैं ॥ ६ ॥

नाथसाथ साथरी सुहाई ❀ मयन सयनसतसम सुखदाई ॥ ७ ॥
लोकप होहिं विलोकत जासू ❀ तिहि कि मोह सक विषयविलासू ॥८॥

स्वामीके साथ सुन्दर साथरी कहिये कुशपत्र आदिके बिछौने कामदेवके सजे हुए १०० पलँगोंके समान लगते हैं ॥ ७ ॥ जिसके दर्शन करनेसेही अथवा जिसके कृपाकटाक्षसे लोकपाल अर्थात् इन्द्र आदि होजाते हैं उसे क्या विषय भोग मोहित कर सक्ते हैं? अर्थात् कभी नहीं ॥ ८ ॥

दो०–सुमिरत रामहिं तजहिं जन, तृनसम विषयविलासु ॥ ❀
रामप्रिया जगजननि सिय, कछु न आचरज तासु ॥ १३९ ॥❀

जिन रामचन्द्रजीके स्मरण करतेही मनुष्य विषयभोगको तृणके समान त्याग देते हैं (उन्हीं) रामचन्द्रकी प्यारी और जगत्की माता जानकीजी (यदि विषयभोगकों छोड़ दें) तौ उसका कुछ अचंभा नहीं ॥ १३९ ॥

चौ०–सीयलषन जेहि विधि सुख लहहीं ❀ सोइ रघुनाथ करहिं जोइ कहहीं ॥ १ ॥
कहहिं पुरातनकथा कहानी ❀ सुनहिं लषन सिय अतिसुख मानी ॥२॥

जिस वातसे सीताजी और लक्ष्मणजी सुख पावैं रामचन्द्रजी वही कहते और वही करते हैं ॥१॥ पुरानी कथा वखान २ कर कहते हैं और लक्ष्मण जानकी वहुत सुख मानकर सुनते हैं ॥ २ ॥

जबजब राम अवधसुधि करहीं ❀ तबतब वारि विलोचन भरहीं ॥ ३ ॥
सुमिरि मातुपितुपरिजनभाई ❀ भरतसनेहसीलसेवकाई ॥ ४ ॥

और जव २ रामचन्द्र अयोध्याकी सुध करते हैं तभी तब नेत्रोंमें जल भर २ लेते हैं ॥ ३ ॥ माता, पिता, कुटुम्बी और भाई इनको और भरतके प्रेम, शील और सेवाको स्मरण कर–॥ ४ ॥

कृपासिंधु प्रभु होहिं दुखारी ❀ धीरज धरहिं कुसमय विचारी ॥ ५ ॥
लखि सियँ लषन बिकल होइ जाहीं❀ जिमि पुरुषहि अनुसर परिछाहीं ॥ ६ ॥

कृपानिधान भगवान् दुखी तौ होते हैं परंतु खोटा समय जान धीरज धरते हैं ॥ ५ ॥ और सीता लक्ष्मणजी उनको देखकर ऐसे विकल होजाते हैं जैसे छाया मनुष्यकी नकल करती है (अर्थात् मनुष्य जैसे हिलताचलता है वैसेही छायाभी हिलतीचलती है) ॥ ६ ॥

प्रियाबंधुगति लखि रघुनंदन ❀ धीरकृपालु भक्तउरचंदन ॥ ७ ॥
लगे कहन कछु कथा पुनीता ❀ सुनी सुख लहहिं लषन अरु सीता ॥८॥

भक्तोंके हृदयको चंदनके समान शीतल ऐसे रामजी जो बड़े धैर्यवान् और दयावान् हैं अपनी प्यारी स्त्री और भाईकी यह दशा देखकर ॥ ७ ॥ कोई सुन्दर कथा कहने लगते हैं जिसे सुनकर लक्ष्मण और जानकी सुख पाते हैं ॥ ८ ॥

दो०–राम लषन सीतासहित, सोहत परननिकेत ॥ ❀
जिमि वासव वस अमरपुर, सचीजयंतसमेत ॥ १४० ॥ ❀

रामचन्द्रजी लक्ष्मण और सीताजी समेत पर्णकुटीमें ऐसे शोभायमान हैं जैसे शची[1] और जयंतसहित इन्द्र अमरावतीपुरीमें बसता हो ॥ १४० ॥

---

(१) शची इन्द्रकी स्त्री और जयंत पुत्र है ।

चौ०–जुगवहिं प्रभु सियलषनहिं कैसे ❀ पलक विलोचनगोलक जैसे ॥ १ ॥
सेवहिं लषन सीयरघुबीरहिं ❀ जिमि अविवेकी पुरुष सरीरहिं ॥ २ ॥

रामचंद्रजी सीता और लक्ष्मणजीकी इस प्रकार रक्षा करते हैं जैसे पलक नेत्रोंकी पुतलियोंकी ॥ १ ॥ और लक्ष्मण तथा सीताजी रामचंद्रकी सेवा कैसे करते हैं जैसे अज्ञानी पुरुष शरीरको (मल २ कर धोता और सम्हालता है) ॥ २ ॥

इहिविधि प्रभु वन वसहिं सुखारी ❀ खग मृग सुर तापस हितकारी ॥ ३ ॥
कहेउँ राम वनगमन सुहावा ❀ सुनहु सुमंत्र अवध जिमि आवा ॥ ४ ॥

इस भांति खग, मृग, देवता और तपस्वियोंके हित करनेवाले भगवान् आनंदसहित वनमें वसते हैं ॥ ३ ॥ रामचंद्रका (शृंगवेरसे) वनको जाना तौ भली भांति कहा; अब जैसे सुमंत अयोध्यापुरीको आया सो कथा सुनो ॥ ४ ॥

फिरेहु निषाद प्रभुहिं पहुँचाई ❀ सचिवसहित रथ देखेउ आई ॥ ५ ॥
मंत्री विकल विलोकि निषादू ❀ कहि न सकहिं जस भयउ विषादू ॥६॥

जव निषाद भगवान्को पहुँचाकर अर्थात् यमुना उतारकर लौटा तौ मंत्रीसमेत रथको वहाँही खड़ा देखा कि जहाँ छोड़गया था–॥ ५ ॥ मंत्रीको विकल देखकर निषादको जैसा दुःख हुआ सो कहा नहीं जाता ॥ ६ ॥

रामराम सिय लषन पुकारी ❀ परेउ धरनितल व्याकुल भारी ॥ ७ ॥
देखि दखिन दिसि हय हिहिनाहीं ❀ जिमि विनुपंख विहँग अकुलाहीं ॥ ८ ॥

हा राम! हा राम! हा सीता! हा लक्ष्मण! पुकारकर और वड़ा विकल हो (मंत्री) पृथ्वीपर पड़ा लोटता है ॥ ७ ॥ और दक्षिण दिशाकी ओर देख घोड़े ऐसे हिनहिनाते हैं जैसे विना पंखोंके पक्षी अकुलाते हों ॥ ८ ॥

दो०–नहिं तृन चरहिं न पियहिं जल, मोचत लोचनवारि ॥ ❀
व्याकुल भयउ निषादगन, रघुवर वाजि निहारि ॥ १४१ ॥ ❀

न घास चरते हैं, न जल पीते हैं, नेत्रोमें जल वहाते हैं, निषादके सव साथी रामचंद्रजीके घोड़ोंकी दशा देखकर व्याकुल होगये ॥ १४१ ॥

चौ०–धीरज धरि तव कहहि निषादू ❀ अब सुमंत्र परिहरहु विषादू ॥ १ ॥
तुम पंडित परमारथज्ञाता ❀ धरहु धीर लखि विमुखविधाता ॥ २ ॥

तव तौ धीरज धरकर निषादने कहा, हे सुमंत! अव दुःख छोड़ दो ॥ १ ॥ तुम बुद्धिमान् परमार्थके जाननेवाले हो (इस लिये) ब्रह्माको विमुख देखकर धीरज धरो ॥ २ ॥

विविधकथा कहि कहि मृदुबानी ❀ रथ बैठारेसि बरबस आनी ॥ ३ ॥
सोकसिथिल रथ सकहि न हाँकी ❀ रघुपति विरह पीर उर बाँकी ॥ ४ ॥

मीठी वाणीसे बहुतसी कथायें कह २ कर ज्यों त्यों पकड़कर रथपर बिठाया ॥ ३ ॥ शोकके कारण शिथिल होगया, रथको नहीं हांक सकता (क्योंकि) हृदयमें रामचन्द्रजीके वियोगका बड़ा टेढ़ा दुःख है ॥ ४ ॥

तरफराहिं मगु चलहिं न घोरे ❀ बनमृग मनहुँ आनि रथ जोरे ॥ ५ ॥
अटकिपरहिं फिर चितवहिं पीछे ❀ रामवियोगविकल दुख तीछे ॥ ६ ॥

घोड़े तड़फड़ाते हैं और मार्ग नहीं चलते मानों वनके हिरण लाकर रथमें जोड़ दिये हैं ॥ ५ ॥ ठहर जाते हैं और फिर पीछेको देखते हैं और रामचन्द्रजीके वियोगमें बड़े दुखी हैं ॥ ६ ॥

जो कह रामलषनवैदेही ❀ हिकरि हिकरि हय हेरत तेही ॥ ७ ॥
बाजि बिरहगति किमि कहजाती ❀ मनिबिनु फनिक बिकल जेहि भाँती ॥८॥

जो कोई राम, लक्ष्मण सीताजीका नाम लेते हैं उनकी ओर हिकर २ के (अर्थात् प्रेमसे शब्द करते हुये)देखते हैं ॥७॥ घोड़ोंके वियोगकी दशा कैसे कही जाय, मणिविना सर्पकीसी गति होरही है॥८॥

दो०-भयउ निषाद विषादवस, देखत सचिव तुरंग ॥ ❀
बोलि सुसेवचकचारि तब, दिए सारथी संग ॥ १४२ ॥ ❀

इसप्रकार मंत्री और घोड़ोंको देखतेही निषाद दुःखके वश होगया तब चतुर चार सेवक बुलाकर सुमंत्र सारथीके साथ कर दिये ॥ १४२ ॥

चौ०-गुह सारथिहि फिरे पहुँचाई ❀ बिरहबिषाद बरनि नहिं जाई ॥ १ ॥
चले अवध लै रथहिं निषादा ❀ होत छिनहिं छिन मगन बिषादा ॥ २ ॥

केवट सारथीको पहुँचाकर लौट तौ आया पर (रामजीके) वियोगका दुःख वर्णन नहीं किया जाता ॥ १ ॥ चारों निषाद रथ लेकर अयोध्याको चले, परंतु क्षण २ में (सुमंतके) दुःखमें लवलीन होते हुये चले जाते हैं ॥ २ ॥

सोच सुमंत्र बिकल दुखदीना ❀ धिक जीवन रघुबीरविहीना ॥ ३ ॥
रहहि न अंतहु अधमसरीरा ❀ जस न लहेउ बिछुरत रघुबीरा ॥ ४ ॥

सुमंत्र विकल और दुःखसे उदास होकर सोचते हैं कि रामचन्द्रके विना जीनेको धिक्कार है ॥ ३ ॥ (अब शरीरसे कहते हैं कि) हे पापी शरीर! अंतकोभी तौ न रहैगा (तैंने) रामचन्द्रजीके विछुरतेही यश क्यों न ले लिया ॥ ४ ॥

भयउ अजस अघभाजन प्राना ❀ कौन हेतु नहिं करत पयाना ॥ ५ ॥
अहह मंदमति अवसर चूका ❀ अजहुँ न हृदय होत दुइ टूका ॥ ६ ॥

हाय! मेरे प्राण अपयश और पापके पात्र हुये किस कारण नहीं छूटते? ॥ ५ ॥ हे हृदय! हाय! तूभी बड़ा मूर्ख है; समय तौ चूक गया पर अबभी तेरे दो टुकडे नहीं होते ॥ ६ ॥

मींजि हाथ सिर धुनि पछिताई ❀ मनहुँ कृपन धनरासि गँवाई ॥ ७ ॥
बिरद बाँधि बरबीर कहाई ❀ चले समर जनु सुभट पराई ॥ ८ ॥

(इसप्रकार) हाथमींड़ शिर धुनता है और ऐसे पछताता है मानों कंजूस धनके ढेरको खोकर पछतावै ॥ ७ ॥ और जैसे कोई श्रेष्ठ योद्धा बाना बांधकर और बड़ा वीर कहाकर लड़ाईमें जाय और भागकर पछतावै (ऐसे सुमंत्र पछताने लगा) ॥ ८ ॥

दो०-विप्र विवेकी वेदविद, संमत साधु सुजाति ॥ ❀
जिमि धोखे मदपान कर, सचिव सोच तेहि भाँति ॥ १४३ ॥❀

और जैसे वेदका जाननेवाला ज्ञानवान् कुलवंत बुद्धिमान् और श्रेष्ठ ब्राह्मण धोखेसे मदिरापान कर पछतावे इसी भांति मंत्री (पछताने लगा) ॥ १४३ ॥

चौ०-जिमि कुलीन तिय साधु सयानी ❀ पतिदेवता करममनबानी ॥ १ ॥
रहै करमबस परिहरि नाहू ❀ सचिवहृदय तिमि दारुन दाहू ॥ २ ॥

---

(१) मंत्रीका धोखेमें मद पीना यही है कि कैकेयीकी बातोंमें आकर रामजीको उससे जा मिलाया और उसने रामजीसे बन जाना अंगीकार करालिया ॥

और जैसे मन, कर्म वचनसे सती चतुर सुन्दर कुलवंती स्त्री–॥ १ ॥ कर्मके आधीन पतिको छोड़कर (दुखी) रहै इसी भाँति मंत्रीके मनमें कठिन दुःख होरहा है ॥ २ ॥

लोचन सजल दृष्टि भइ थोरी ❀ सुनै न स्रवन बिकलमति भोरी ॥ ३ ॥
सूखहिं अधर लागि मुहुँ लाटी ❀ जिय न जाइ उर अवधि कपाटी ॥ ४ ॥

नेत्रोंसे जल ढरता है, दृष्टि मंद होगई, कानोंसे नहीं सुनता और (घबराहटके मारे) मतिभी बावलीसी होगई ॥ ३ ॥ होठ सूखते हैं, मुँहसे हँफहँफी लग गई तौभी प्राण नहीं निकलते, क्योंकि हृदयमें चौदह वर्षकी अवधिरूपी किवाड़ लगे हैं ॥ ४ ॥

बिबरन भयउ न जाइ निहारी ❀ मारेसि मनहुँ पितामहतारी ॥ ५ ॥
हानि गलानि बिपुल मन व्यापी ❀ जमपुरपंथ सोच जिमि पापी ॥ ६ ॥

रंगरूप फीका पड़गया, देखाभी नहीं जाता, मानों पिता–माताको मारकर आया है ॥५॥ मनमें (रामजी की) हानिसे ऐसी भारी उदासी व्यापी है कि जैसे यमपुरके मार्गमें पापी सोचता हो ॥६॥

बचन न आव हृदय पछिताई ❀ अवध कहा मैं देखब जाई ॥ ७ ॥
रामरहित रथ देखहिं जोई ❀ सकुचहिं मोहिं बिलोकत सोई ॥ ८ ॥

वचन तौ आते नहीं हैं, मनमें पछताता है कि मैं अयोध्यामें जाकर क्या देखूंगा ?॥७॥ जो रामचंद्रके विना रथको देखेंगे वे मुझे देखतेही शरम दिलावेंगे (कि रामको छोड़ तुम जीते कैसे आये)॥ ८॥

दो०–धाइ पूछिहहिं मोहिं जब, बिकल नगरनरनारि ॥ ❀
उतर देब मैं सबहिं तब, हृदय वज्र बैठारि ॥ १४४ ॥ ❀

जब नगरके स्त्रीपुरुष व्याकुल हो दौड़कर मुझसे पूछैंगे (कि राम कहां है) तब मैं हृदयमें वज्र रखकर सबको उत्तर दूंगा (कि राम वनको गये) ॥ १४४ ॥

चौ०–पुछिहहिं दीन दुखित सब माता ❀ कहब कहा मैं तिनहिं बिधाता ॥ १ ॥
पुछिहहिं जबहिं लषनमहतारी ❀ कहिहौं कवन सँदेस सुखारी ॥ २ ॥

हे विधाता ! जब सब माता दीन दुखी हो पूछैंगी तब उनसे मैं क्या कहूँगा ! ॥ १ ॥ जब लक्ष्मणजीकी माता (सुमित्रा) पूछैंगी तौ कौनसा सुखका संदेश कहूँगा ! ॥ २ ॥

रामजननि जब आइहि धाई ❀ सुमिरि वत्स जिमि धेनु लवाई ॥ ३ ॥
पूछत उतर देब मैं तेही ❀ गे बन रामलषनबैदेही ॥ ४ ॥

जब रामचन्द्रजीकी माता ऐसे दौड़कर आवेगी कि जैसे हालगी व्याही गौ बछड़ेका स्मरणकर आती है ॥ ३ ॥ तौ मैं पूछतेही उसे (वह) उत्तर दूंगा कि रामचन्द्र, लक्ष्मण और सीताजी वनको गये ! ॥ ४ ॥

जेहि पूँछहि तेहि उत्तर देवा ❀ जाइ अवध अब यह सुख लेवा ॥ ५ ॥
पूछहिं जबहिं राउ सुखदीना ❀ जिवन जासु रघुनाथअधीना ॥ ६ ॥

जो पूछेगा उसे यही उत्तर दूंगा और अयोध्यापुरीमें जाकर अब यह सुख लूटूंगा ॥ ५ ॥ जब दुखी और दीन राजा पूछैंगे कि जिनका जीवन (केवल) रघुनाथजीकेही आधीन है ॥ ६ ॥

देहौं उतर कवन मुहँ लाई ❀ आयउँ कुसल कुँवर पहुँचाई ॥ ७ ॥
सुनत लषनसियरामसँदेसू ❀ तृनइव तनु परिहरब नरेसू ॥ ८ ॥

तौ कौनसा मुँह लाकर उत्तर दूंगा कि राजकुमारोंको कुशलसे पहुँचा आया ॥ ७ ॥ सीतारामचन्द्र और लक्ष्मणजीका संदेशा सुनतेही राजा तिनकेकी भांति शरीरको छोड़देंगे ॥ ८ ॥

दो०–हृदय न बिदरत पंकजिमि, बिछुरत प्रियतम नीर ॥ ❀
जानतहौं मोहिं दीन्ह बिधि, जम जातना सरीर ॥ १४५ ॥ ❀

जैसे प्रीतम जलके बिछुड़तेही कीच (फटजाती है) ऐसे (प्यारे रामके बिछुड़नेसे) जो हृदय नहीं फटता है तौ मैं जानता हूँ कि विधाताने यह यमयातना मेरे शरीरको दी है ॥ १४५ ॥

चौ०–इहिविधि करत पंथ पछिताबा ❀ तमसातीर तुरत रथ आवा ॥ १ ॥
बिदा किए करि बिनय निषादू ❀ फिरे पाँय परि बिकल बिषादू ॥ २ ॥

इसभाँति मार्गमें पछितावा करते २ रथ तमसा नदीके किनारेपर शीघ्र आगया ॥ १ ॥ सुमंतने विनती करके निषादोंको विदा किया और वे दुःखमें व्याकुल हो पैरों पड़कर लौट गये ॥ २ ॥

बैठत नगर सचिव सकुचाई ❀ जनु मारेसि गुरु ब्राह्मन गाई ॥ ३ ॥
बैठि बिटपतर दिवस गँवावा ❀ साँझसमय तब अवसर पावा ॥ ४ ॥

अब मंत्री नगरमें धसता हुआ ऐसे सकुचता है मानों कोई गुरु, ब्राह्मण और गायको मारकर (सकुचावै) ॥३॥ दिनतौ पेड़के नीचे बैठकर बिताया और जब सांझ हुई तब अवसर पाया ॥ ४ ॥

अवध प्रवेस कीन्ह अँधियारे ❀ पैठ भवन रथ राखि दुआरे ॥ ५ ॥
जिन्ह जिन्ह समाचार सुनि पाए ❀ भूपद्वार रथ देखन आए ॥ ६ ॥

और अंधेरेमें अयोध्यापुरीमें प्रवेश किया और रथको द्वारपर खड़ाकर महलमें धसा ॥ ५ ॥ जिन २ ने खबर सुनी वे राजाके द्वारपर रथको देखने आये ॥ ६ ॥

रथ पहिचानि विकल लखि घोरे ❀ गरहिं गात जिमि आतप ओरे ॥ ७ ॥
नगरनारि नर ब्याकुल कैसे ❀ निघटत नीर मीनगन जैसे ॥ ८ ॥

रथको पहिचान, घोड़ोंको दुखी देख (मनुष्योंके) शरीर ऐसे छीजने लगे जैसे धूपसे ओले (गल जाते हैं) ॥ ७ ॥ नगरके स्त्रीपुरुष कैसे विकल होगये जैसे जलके घटनेसे मछलियोंका समूह हो जाता है ॥ ८ ॥

दो०–सचिव आगमन सुनत सब, बिकल भयउ रनिवास ॥ ❀
भवन भयंकर लाग तेहिं, मानहुँ प्रेतनिवास ॥ १४६ ॥ ❀

मंत्रीका आना सुनकर सब रनवास व्याकुल होगया और उनको राजभवन ऐसा भयंकर लगने लगा, मानों प्रेतके रहनेका स्थान है ॥ १४६ ॥

चौ०–अति आरत सब पूछहिं रानी ❀ उतर न आव बिकल भइ बानी ॥ १ ॥
सुनै न स्त्रवन नयन नहिं सूझा ❀ कहहु कहाँ नृप जेहितेहि बूझा ॥ २ ॥

सब रानियाँ बहुत दुखी हो पूछती हैं पर उत्तर नहीं आता, वाणी रुक गई ! ॥ १ ॥ कानोंसे सुनाई नहीं देता, नेत्रोंसे दिखाई नहीं देता, जिसतिससे पूछता है कि कहो राजा कहां हैं ॥ २ ॥

दासिन्ह दीख सचिव विकलाई ❀ कौसल्यागृह गईं लिवाई ॥ ३ ॥
जाइ सुमंत्र दीख कस राजा ❀ अमियरहित जनु चंद्रविराजा ॥ ४ ॥

चेरियोंने मंत्रीको दुखी देखा तौ कौशल्याके घर लिवागईं ॥ ३ ॥ सुमंत्रने जाकर राजाको कैसा देखा मानों विना अमृतके चन्द्रमा विराजमान है ॥ ४ ॥

आसन सयन विभूषनहीना ❀ परेउ भूमितल निपट मलीना ॥ ५ ॥
लेइ उसास सोच इहि भाँती ❀ सुरपुरते जनु खसेउ ययाती ॥ ६ ॥

राजा बिछौना पलंग छोड़ आभूषणहीन निपट मलीन कहिये अति मैले वेषसे पृथ्वीपर पड़े हैं॥५॥

उसास लेते हुये राजा इस भांति सोचते हैं मानों ययाति[1] इन्द्रलोकसे गिरा ॥ ६ ॥

लेत सोच भरि छिन छिन छाती ❀ जनु जरि पंख परेउ संपाती ॥ ७ ॥
राम राम कह रामसनेही ❀ पुनि कह राम लषन बैदेही ॥ ८ ॥

सोचसे क्षण २ में छातीको भरलेते हैं मानों पंख जलनेसे संपाती[2] पड़ा है ॥ ७ ॥ राम २ कह स्नेही रामचन्द्र कह, फिर राम, लक्ष्मण सीता कहते हैं ॥ ८ ॥

दो०-देखि सचिव जय जीव कहि, कीन्हेसि दंडप्रनाम ॥ ❀
सुनत उठे व्याकुल नृपति, कहु सुमंत्र कहँ राम ॥ १४७ ॥ ❀

मंत्रीने (राजाको) देख महाराजकी जय होय यह कहकर दंडवत प्रणाम किया तौ सुनतेही राजा व्याकुल हो उठे (और बोले कि) हे सुमंत्र ! कहो रामचन्द्र कहां हैं ॥ १४७ ॥

चौ०-भूप सुमंत्र लीन्ह उरलाई ❀ बूडत कछु अधार जनु पाई ॥ १ ॥
सहितसनेह निकट बैठारी ❀ पूंछत राउ नयन भरि वारी ॥ २ ॥

राजाने सुमंत्रको हृदयसे लगा लिया मानों बूड़ते हुयेने कुछ सहारा पाया ॥ १ ॥ प्रीतिसहित पास बिठलाकर राजा नेत्रोंमें जल भरकर पूछने लगे ॥ २ ॥

राम कुसल कहु सखा सनेही ❀ कहँ रघुनाथ लषन बैदेही ॥ ३ ॥
आनेहु फेरि कि बनहिं सिधाय ❀ सुनत सचिवलोचन जल छाए ॥ ४ ॥

हे प्रेमी मित्र ! रामचन्द्रकी कुशल कहो. रामचन्द्र लक्ष्मण और सीताजी कहाँ हैं ? ॥ ३ ॥ लौटाके लेआये कि वनकोही चले गये ? (यह) सुनतेही मंत्रीके नेत्रोंमें जल भर आया ॥ ४ ॥

सोकविकल पुनि पूछ नरेसू ❀ कहु सियरामलषनसंदेसू ॥ ५ ॥
रामरूपगुनसीलसुभाऊ ❀ सुमिरि सुमिरि उर सोचत राऊ ॥ ६ ॥

फिर शोकसे दुखी हो राजाने पूछा कि सीता रामचन्द्र और लक्ष्मणका सँदेशा कहो॥ ५॥ रामचन्द्रजीके स्वरूप, गुण और शीलस्वभावका स्मरण कर २ के राजा मनमें सोचते हैं कि ॥ ६ ॥

राज सुनाह दीन्ह बनबासू ❀ सुनि मन भयउ न हरष हरासू ॥ ७ ॥
सो सुत बिछुरत गए न प्राना ❀ को पापी बड़ मोहिंसमाना ॥ ८ ॥

हाय मैंने (जिस पुत्रको) राज्यकी कहकर (स्त्रीके कहनेसे) वनवास दिया सो यह सुनकरभी जिसका मन प्रसन्न और हिरासा कुछ न हुआ ॥ ७ ॥ ऐसे पुत्रके विछुड़नेपरभी जो मेरे प्राण न गये तौ मेरे बराबर संसारमें बड़ा पापी और कौन है ? अर्थात् मैंही सबसे बढ़कर हूं ॥ ८ ॥

दो०-सखा रामसियलषन जहँ, तहाँ मोहिं पहुँचाउ ॥ ❀
नाहिंत चाहत चलन अब, प्रान कहौं सतिभाउ ॥ १४८ ॥ ❀

हे मित्र ! जहां रामचन्द्र, सीता, लक्ष्मणजी हैं वहां मुझेभी पहुँचाओ नहीं तौ सचमुच कहता हूं कि अब मेरे प्राण चलना चाहते हैं ॥ १४८ ॥

चौ०-पुनिपुनि पूछत मंत्रिहि राऊ ❀ प्रियतम सुअनसंदेस सुनाऊ ॥ १ ॥
करहु सखा सोइ बेगि उपाऊ ❀ रामलषनसिय नयन दिखाऊ ॥ २ ॥

---

(१) राजा ययाति अपने तपोवलसे इन्द्रपद पानेके लिये सदेह इन्द्रलोकको गये । इन्द्रने बड़े आदरसे इनको सिंहासनपर बैठाया और कहा कि आपने क्या २ धर्म तप किये कि जिनसे आपको मेरा पद मिला । राजाने ज्यों २ कहना आरंभ किया त्यों २ पुण्य घटने लगा, जैसा कहा हे कि "छीजहिं निशिचर दिन अरु राती । निज मुख कहे धरमजिहि भांती" । अंतमें जब सब पुण्य क्षीण होगया तब इन्द्रकी आज्ञासे देवताओंने फिर उसे स्वर्गसे ढकेल दिया । (२) किष्किन्धाकांडकें ४५ वें, दोहकी चौपाईमें संपातीकी कथा है, देखो.

राजा वार २ मंत्रीसे पूछते हैं कि हे प्यारे ! मुझे पुत्रोंका सँदेशा सुनाओ ॥ १ ॥ हे मित्र ! उसी उपायको जल्दी करो और राम लक्ष्मण जानकीको नेत्रोंसे दिखलाओ ॥ २ ॥

सचिव धीर धरि कह मृदुबानी ❀ महाराज तुम पंडित ज्ञानी ॥ ३ ॥
बीर सुधीर धुरंधर देवा ❀ साधुसमाज सदा तुम सेवा ॥ ४ ॥

मंत्री धीरज धरकर मीठी वाणीसे कहने लगा, हे महाराज ! तुम बुद्धिमान और चतुर हो ॥ ३ ॥ तुम बड़े धीरजवान हो, योद्धाओंके धुर कहिये भारको धारण करनेवालोंमें देवतासमान हो और तुम साधुओंके समाजकी सदा सेवा करते रहे हो (और जानते हो कि) ॥ ४ ॥

जनम करम सब सुख दुख भोगा ❀ हानि लाभ प्रियमिलन बियोगा ॥ ५ ॥
कालकरमबस होहिं गुसांईं ❀ परबस रातिदिवसकी नाईं ॥ ६ ॥

जन्म, कर्म, सुख दुःखका भोग, हानि, लाभ, प्यारेका मिलना और बिछुड़ना ये सब–॥ ५ ॥ हे गोसांईं ! पराधीन रातदिनकी भांति कालकर्मके आधीन होते हैं ॥ ६ ॥

सुख हरषहिं जड़ दुख बिलखाहीं ❀ दोउ सम धीर धरहिं मनमाहीं ॥ ७ ॥
धीरज धरहु बिबेक बिचारी ❀ छाँड़िय सोच सकल हितकारी ॥ ८ ॥

मूर्ख सुखमें प्रसन्न होते और दुःखमें झींखते हैं. परन्तु बुद्धिमान् दोनोंको बराबर जान मनमें धीरज रखते हैं ॥ ७ ॥ ज्ञानसे विचार कर धीरज रक्खो (और आप तौ) सबके हितकारी हो सोचको छोड़िये (और सीता राम लषणका समाचार सुनिये) ॥ ८ ॥

दो०–प्रथमबास तमसा भयउ, दूसर सुरसरितीर ॥ ❀
न्हाइ रहे जलपान करि, सियसमेत दोउ बीर ॥ १४९ ॥ ❀

पहला निवास तमसा (नदीके किनारे) पर, और दूसरा गंगाजीके किनारेपर हुआ, और वहां स्नान कर जानकीजीसहित दोनों भाई जलपान करके रहे गये ॥ १४९ ॥

चौ०–केवट कीन्ह बहुत सेवकाईं ❀ सो जामिनि शृंगबेर गँवाईं ॥ १ ॥
होत प्रात बटछीर मँगावा ❀ जटामुकुट निजसीस बनावा ॥ २ ॥

केवटने बहुतसी सेवा की और वह रात शृंगवेरपुरमेंही बिताई ॥ १ ॥ सबेरा होतेही बड़का दूध मँगाया और अपने मस्तपकर जटाओंका मुकुट बनाया ॥ २ ॥

रामसखा तब नाव मँगाई ❀ प्रिया चढ़ाइ चढ़े रघुराई ॥ ३ ॥
लषन धरे धनुबान बनाई ❀ आपु चढ़े प्रभुआयसु पाई ॥ ४ ॥

तब रामचन्द्रजीके मित्र (निषाद) ने नाव मँगवाई (उसपर) सीताजीको चढ़ाय रामचन्द्रजी चढ़े ॥ ३ ॥ लक्ष्मणजी धनुषबाणको अच्छी भांति धारण कर भगवानकी आज्ञा पाकर आपभी चढ़े ॥ ४ ॥

बिकल बिलोकि मोहिं रघुबीरा ❀ बोले मधुर बचन धरि धीरा ॥ ५ ॥
तात प्रनाम तातसन कहेहू ❀ बारबार पदपंकज गहेहू ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजी मुझे दुखी देख धीरज बांधकर मीठे वचन बोले ॥ ५ ॥ हे प्यारे ! मेरी ओरसे वारंवार चरण छूकर पितासे प्रणाम कहना ॥ ६ ॥

करब पाँयपरि बिनय बहोरी ❀ तात करिय जनि चिंता मोरी ॥ ७ ॥
बनमगु मंगल कुसल हमारे ❀ कृपा अनुग्रह पुन्य तुम्हारे ॥ ८ ॥

फिर चरणोंमें गिरकर विनती करना कि हे पिता ! मेरी चिन्ता न कीजिये ॥ ७ ॥ आपके दया अनुग्रह और पुण्योंसे हमें वनके मार्गमें मंगल और कुशल होगा ॥ ८ ॥

छं०-तुम्हारे अनुग्रह तात कानन जात सब सुख पाइहौं ॥ ❀
प्रतिपालि आयसु कुशल देखन पाय पुनि फिरि आइहौं ॥ ❀
जननी सकल परितोषि परिपरि पाँय करि विनती घनी ॥ ❀
तुलसी करेहु सोइ जतन जेहिं विधि कुसल रह कोसलधनी ॥६॥ ❀

हे पिता ! तुह्मारी कृपासे वन जातेमें हम सुख पाऊंगा और आज्ञाका पालनकर फिर आनन्दसे चरणोंके दर्शन आकर करूंगा सब माताओंकोभी संतुष्ट कर और चरणोंमें वार २ पड़कर बहुतसी प्रार्थना करना और वही यत्न करना जिस भांति राजा (दशरथ) प्रसन्न रहैं ॥ ६ ॥

सो०-गुरुसन कहव सँदेस, बारबार पदपदम गहि ॥ ❀
करब सोइ उपदेस, जेहिं न सोच मोहिं अवधपति ॥ ६ ॥ ❀

गुरुके कमलसमान चरणोंको वारंवार छूकर (उनसे) सँदेशा कहना कि, वे वही शिक्षा करते रहैं कि जिससे राजा मेरा सोच न करैं ॥ ६ ॥

चौ०-पुरजन परिजन सकल निहोरी ❀ तात सुनायहु विनती मोरी ॥ १ ॥
सोइ सबभाँति मोर हितकारी ❀ जातें रह नरनाह सुखारी ॥ २ ॥

हे प्यारे ! नगरवासी और कुटुम्बी इन सबसेभी निहोरेकर मेरी विनती सुनाना कि-॥ १ ॥ वही सब प्रकार मेरा हितकारी है कि जिससे राजा प्रसन्न रहैं ॥ २ ॥

कहब सँदेस भरतके आए ❀ नीति न तजब राजपद पाए ॥ ३ ॥
पालहु प्रजहिं करममनबानी ❀ सेइयसु मातु सकल सम जानी ॥ ४ ॥

और भरतके आनेपर (उनसेभी) सँदेशा कहना कि, राज्यपद पाकर नीति मत छोड़ना ॥ ३॥ मन कर्म वचनसे प्रजाका पालन करना और सब माताओंको समान जानकर (उनकी) सेवा करना॥४॥

और निबाहव भायप भाई ❀ करि पितुमातुसुजनसेवकाई ॥ ५ ॥
तात भाँति तेहि राखब राऊ ❀ सोच मोर जेहिं करहिं न काऊ ॥ ६ ॥

और हे भाई ! पिता, माता और श्रेष्ठ मनुष्योंकी सेवा करके भाईपन निवाहना ॥५॥ हे प्यारे! राजाको उसी भाँति रखना जिससे कभी मेरा सोच न करैं ॥ ६ ॥

लषन कहे कछु बचन कठोरा ❀ बरजि राम पुनि मोहिं निहोरा ॥ ७ ॥
बारबार निजसपथ दिवाई ❀ कहब न तात लषन लरिकाई ॥ ८ ॥

लक्ष्मणने कुछ कठोर बचन कहे, फिर रामचन्द्रजीने उन्हैं मने करके मुझे समझाया ॥७॥ और वारंवार अपनी सौगंद दिलाकर कहा कि हे प्यारे ! लक्ष्मणके लड़कपनको पितासे मत कहना॥८॥

दो०-कहि प्रनाम कछु कहन लिय, सिय भइ सिथिलसनेह ॥ ❀
थकित बचन लोचन सजल, पुलकि पल्लवित देह ॥ १५० ॥ ❀

फिर प्रणाम कहकर सीताजी कुछ कहनेके लिये हुईं तौ प्रेममें शिथिल हो गईं, बचन थकित हो गये अर्थात् बोला नहीं गया, नेत्रोंमें जल आगया और शरीर पुलकायमान हो गया ॥१५०॥

चौ०-तेहिं अवसर रघुवररुख पाई ❀ केवट पारहिं नाव चलाई ॥ १ ॥
रघुकुलतिलक चले इहि भाँती ❀ देखेउँ ठाढ़ कुलिसकरि छाती ॥ २ ॥

---

(१) समान इसलिये कहा कि कहीं हमारे वियोगके कारण कैकेयीका अनादर न करैं.

उस समय रामचन्द्रजीका रुख पाखर मल्लाहने पारको नाव चलाई ॥ १ ॥ रामचन्द्र तौ इस भांति (वनको) चले और मैं अपनी छातीको वज्र (समान) करके खड़ा देखता रहा ॥ २ ॥

मैं आपन किमि कहउँ कलेसू ❀ जिअत फिरेउँ लै रामसँदेसू ॥ ३ ॥
कस कहि सचिव वचन रहिगयऊ ❀ हानि गलानि सोचबस भयऊ ॥ ४ ॥

मैं अपना दुःख कैसे कहूं, जो रामचन्द्रजीका संदेशा लेकर जीताही लौट आया ॥ ३ ॥ ऐसा कहते २ मंत्रीका वचन रुक गया और हानि कहिये (रामके) वियोगसे जो दुःख हुआ था उस सोचमें पड़ गया ॥ ४ ॥

सुनत सुमंत्रवचन नरनाहू ❀ परेउ धरनि उर दारुन दाहू ॥ ५ ॥
तलफत बिकल मोह मन मापा ❀ माजा मनहुँ मीनकहँ व्यापा ॥ ६ ॥

सुमंत्रके वचन सुनकर राजा पृथ्वीपर गिरपड़े और हृदयमें बड़ी जलन होने लगी ॥ ५ ॥ अज्ञानसे मतवाले होकर राजा तड़फने लगे और ऐसे व्याकुल हुये मानों मछलीको माजा कहिये वर्षाका प्रथम जल सता गया हो ॥ ६ ॥

करि विलाप सब रोवहिं रानी ❀ महाबिपति किमि जाइ बखानी ॥ ७ ॥
सुनि बिलाप दुखहूँ दुख लागा ❀ धीरजहू कर धीरज भागा ॥ ८ ॥

सब रानी विलाप करके रोती हैं, इस बड़ी आपत्तिका कैसे वर्णन किया जावे ॥ ७ ॥ विलापको सुनकर दुःखकोभी दुख लगा और धीरजकाभी धीरज भाग गया ॥ ८ ॥

दो०–भयो कोलाहल अवध अति, सुन नृपराउर सोर ❀
विपुल विहँग बन परेउ निसि, मानहु कुलिस कठोर ॥१५१॥ ❀

राजाके रनिवासका शब्द सुनकर अयोध्यापुरीमें कैसा भारी कोलाहल हुआ मानों बहुतसे पक्षियोंके वनमें रातको कठिन वज्र गिरा हो ॥ १५१ ॥

चौ०–प्रान कंठगत भयउ भुआलू ❀ मनिबिहीन जिमि व्याकुल व्यालू ॥ १ ॥
इंद्रिय सकल विकल भइँ भारी ❀ जनु सर सरसिज बन बिनु वारी ॥ २ ॥

राजाके प्राण कंठमें आगये (और ऐसे हो गये) जैसे मणिके विना सर्प दुखी हो ॥ १ ॥ सब इन्द्रियाँ ऐसी अधिक शिथिल हो गईं जैसे सरोवरमें विना जलके कमलोंका वन हो जाता है ॥२॥

कौसल्या नृप दीख मलाना ❀ रविकुलरवि अथए जिय जाना ॥ ३ ॥
उर धरि धीर राममहतारी ❀ बोली बचन समयअनुसारी ॥ ४ ॥

कौशल्याने राजाको मलीन देखा और जाना कि सूर्यवंशके सूर्य अस्त हुआ चाहते हैं ॥ ३ ॥ तौ रामचन्द्रजीकी माता (कौशल्या) हृदयमें धीरज रख समयके अनुसार वचन बोलीं–॥ ४ ॥

नाथ समुझि मन करिय बिचारू ❀ रामवियोगपयोधि अपारू ॥ ५ ॥
करनधार तुम अवधिजहाजू ❀ चढ़ेउ सकल प्रिय बनिकसमाजू ॥ ६ ॥

हे स्वामी ! मनमें समुझके विचार कीजिये कि रामचन्द्रजीका वियोग अपार समुद्र है ॥ ५ ॥ (उसमें) आप केवट हैं और (चौदह वर्षकी) अवधि जहाज है (जिसपर) सब प्यारे कुटुम्बी मानों व्यापारियोंका समाज चढ़ा है ॥ ६ ॥

धीरज धरिय तौ पाइय पारू ❀ नाहित बूढहि सब परिवारू ॥ ७ ॥
जो जिय धरिय विनयपिय मोरी ❀ राम लषन सिय मिलवबहोरी ॥ ८ ॥

जो धीरज रक्खोगे तौ पार पाओगे, नहीं तौ सब कुटुम्ब डूब जायगा ॥ ७ ॥ हे स्वामी ! जो मेरी विनती मनमें धारण करोगे तौ रामचन्द्र लक्ष्मण और सीताजी फिरभी मिलेंगे ॥ ८ ॥

दो०–प्रियाबचन मृदु सुनत नृप, चितयउ आँखि उघारि ॥
तलफत मीन मलीन जनु, सींचत सीतल बारि ॥ १५२ ॥

राजा दशरथ प्रिया (कौशल्या) के कोमल वचन सुन आंख खोलकर ऐसे देखने लगे मानों दुखी मछली ठंढे पानीके सींचनेसे तलफने लगती है ॥ १५२ ॥

चौ०–धरि धीरज उठि बैठ भुआलू ❀ कहु सुमंत्र कहँ राम कृपालू ॥ १ ॥
कहाँ लषन कहँ राम सनेही ❀ कहँ प्रियपुत्रवधू बैदेही ॥ २ ॥

राजा धीरज धरके उठ बैठे (और बोले) हे सुमंत्र ! कहो कृपानिधान रामचन्द्र कहां हैं? ॥१॥ लक्ष्मणजी कहां हैं ? प्रेमी रामचन्द्र कहां हैं ? प्यारी पुत्रवधू जानकी कहां हैं ? ॥ २ ॥

बिलपत राउ बिकल बहुभाँती ❀ भइ जुगसरिस सिराति न राती ॥ ३ ॥
तापस अंधसाप सुधि आई ❀ कौसल्यहिं सब कथा सुनाई ॥ ४ ॥

राजा बहुत भाँतिसे दुखी हो विलाप करते हैं; (वह) रात युगके समान हो गई, काटी नहीं कटती है ॥ ३ ॥ (इतनेमें) सरवनके पिता अंधे तपस्वीके शापकी सुध आगई तौ सब कथा कौशल्याको सुनाई ॥ ४ ॥

भयउ बिकल बरनत इतिहासा ❀ रामरहित धिक् जीवनआसा ॥ ५ ॥
सो तनु राखि करब मैं काहा ❀ जेइ न प्रेमप्रन मोर निबाहा ॥ ६ ॥

कथाको कहते २ राजा व्याकुल हो गये (और बोले कि) रामचन्द्रके विना जीनेकी आशा करना धिक्कार है ॥ ५ ॥ उस शरीरको रखके मैं क्या करूंगा जिसने मेरे प्रेमका प्रण नहीं निभाया ॥ ६ ॥

हा रघुनंदन प्रानपरीते ❀ तुमबिनु जिअत बहुत दिन बीते ॥ ७ ॥
हा जानकी लषन हा रघुबर ❀ हा पितुहित चितचातकजलधर ॥ ८ ॥

हा रामचन्द्र ! प्राणोंके प्यारे, तुम्हारे विना जीते हुये बहुत दिन वीत गये ॥ ७ ॥ हा सीता ! हा लक्ष्मण ! हा रामचन्द्र ! हा पिताके स्नेह करनेवाले ! हा चित्तरूपी चातकके लिये मेघसमान ॥८॥

दो०–राम राम कहि राम कहि, राम राम कहि राम ॥
तनु परिहरि रघुबरबिरह, राउ गए सुरधाम ॥ १५३ ॥

(इसप्रकार) राजा दशरथ राम राम कह राम कह फिर राम राम राम कहकर रामचन्द्रजीके वियोगमें शरीर छोड़ देवलोकको गये ॥ १५३ ॥

---

(१) एक बार राजा दशरथ अहेर खेलने गये और रात्रीमें नदीके तीरपर बैठे थे कि इतनेमें श्रवण अपने अंधे पिताके लिये पानी लेने आये । ज्योंहीं तोंबा नदीमें डुबोया और उसका शब्द हुआ त्योंही राजाने हाथीका शब्द जान तीर मारा कि जिससे श्रवण पिताको पुकारने लगे । फिर राजा उस शब्दको मनुष्यका जान व्याकुल हो श्रवणके पास जाकर बोले । तब श्रवणने राजाको धर्मात्मा जान कहा कि मुझे अपने शरीरकी चिन्ता नहीं, पर मेरे अंधे पिता प्यासके मारे बिकल हैं उन्हें जल दे आओ और मेरे शरीरमेंसें वाण निकालो ॥ यह सुन ज्योहीं राजाने वाण निकाला त्योंही श्रवण मरगये । फिर राजा जल लेकर तपस्वीके पास गये और चुपकेसे जल देदिया । तव उन्होंने कहा कि पुत्र बोलते नहींहो यह क्या बात है ? विना वोले हम जल न पियेंगे । तव राजाने विनतीकर सब वृत्तान्त कहा । यह सुन ऋषिने कहा कि अब तुम हमारी दोनों स्त्रीपुरुषोंकी चिता बनादो हम पुत्रको गोदीमें धर जलेंगे, परन्तु जैसे हमारा शरीर पुत्रके वियोगमें जाता है तैसेही तुमभी पुत्रके वियोगमें मरोगे ॥

चौ०–जियनमरनफल दसरथ पावा ❀ अंड अनेक अमलजस छावा ॥ १ ॥
जिअत राम विधुबदन निहारा ❀ रामविरह मरि मरन सँभारा ॥ २ ॥

जीने और मरनेका फल तौ दशरथजीनेही पाया की जिनका निर्मल यश अनेकों ब्रह्मांडोंमें छाया ॥ १ ॥ जीते हुये तौ रामचन्द्रजीका चन्द्रसमान मुख देखा और रामचन्द्रजीके विरहमें मरकर मरनेको सफल किया ॥ २ ॥

सोकविकल सब रोवहिं रानी ❀ रूप सील बल तेज बखानी ॥ ३ ॥
करहिं विलाप अनेकप्रकारा ❀ परहिं भूमितल बारहिंबारा ॥ ४ ॥

सब रानियाँ शोकमें विकल हो २ कर रोती हैं और उनके रूप, शील, बल और तेजका बखान करती हैं ॥ ३ ॥ अनेक भाँतिसे विलाप करती हुई वारंवार पृथ्वीतलपर गिरती हैं ॥ ४ ॥

बिलपहिं बिकल दास अरु दासी ❀ घरघर रुदन करहिं पुरवासी ॥ ५ ॥
अथयउ आजु भानुकुलभानू ❀ धरमअवधि गुनरूपनिधानू ॥ ६ ॥

दास और दासियां व्याकुल हो बिलाप करते हैं और नगरके रहनेवाले घर २ रोते हैं (और कहते हैं कि) ॥५॥ आज धर्मकी सीमा और गुण और रूपके निधान, सूर्यवंशके सूर्य अस्त होगये ॥ ६ ॥

गारी सकल कैकयिहि देहीं ❀ नयनविहीन कीन्ह जग जेहीं ॥ ७ ॥
इहिबिधि बिलपत रैन बिहानी ❀ आए सकल महामुनि ज्ञानी ॥ ८ ॥

सब लोग कैकेयीको गालियां देते हैं कि जिसने संसारको अंधा कर दिया ॥ ७ ॥ इस भांति विलाप करते हुये सब रात बीत गई (फिर प्रात होतेही) बड़े ज्ञानी मुनीश्वर आये ॥ ८ ॥

दो०–तब वसिष्ठमुनि समयसम, कहि अनेक इतिहास ॥ ❀
सोक निवारेउ सबहिंकर, निजविज्ञानप्रकास ॥ १५४ ॥ ❀

तब वशिष्ठ मुनिने समयानुसार अनेक इतिहास कहकर अपने बड़े ज्ञानके प्रकाशके सबका शोक मिटाया ॥ १५४ ॥

---

(१) वसिष्ठजीने कहा कि हे कौशल्या ! तुमको अधिक दुःख न करना चाहिये, दुःखसुख प्रारब्धके अनुसार सभी भोगते हैं, दूसरोंका दुःख सुनने अथवा देखनेसे दूर होता है इसलिये तुमसे राजाओंकी कथा तथा कुछ ज्ञान कहता हूं जिससे तुम्हारा अज्ञान दूर हो। देखो राजा सुहोत्र कैसे थे कि जिनके राज्यमें इन्द्रने सुवर्णकी वर्षा की थी, सारी नदियोंमें जीवजन्तु सब सुवर्णके थे कि जिनको उसने यज्ञमें ब्राह्मणोंको दक्षिणामें दिया, वह राजा दशरथसेभी अधिक यशस्वी था उसकोभी मृत्युने न छोड़ा। और सुनो कि राजा मरुत कैसे धर्मात्मा थे कि जिनका यश इन्द्रसेभी वढ़कर था और उनके राज्यमें विनाही जोते भूमि शस्यसे परिपूर्ण होती थी; उनकोभी कराल कालने न छोड़ा। फिर देखो कि अंगदेशका राजा बृहद्रथ कैसा पुण्यशील और उदार था. एकवार इसने वड़ी धूमधामसे यज्ञ किया था और इसकी दक्षिणामें १० लक्ष श्वेत घोड़े, दसलक्ष कन्याओंको संपूर्ण आभूषणसहित, दशलक्ष हाथी, सुवर्णकी संकलोंसे शोभित एक कोटि बैल, और सहस्र गौ-इत्यादि सब दिये थे उनकोभी मरना पड़ा। और राजा शिबि सारे भूमंडलका राजा था कि जिसने यज्ञमें अपना सर्वस्व दानपर दिया था, और राजा भरत कि जिसने हजार अश्वमेध सौ राजसूययज्ञ किये थे और दक्षिणामें असंख्य धन कण्व ऋषिको दिया था, और राजा भगीरथ जो गंगाजीको लाये थे और जिन्होंने दशलक्ष कन्यादान, अतुल धन और सुवर्णसहित, किये थे, और राजा दिलीप कि जिन्होंने सरल पृथ्वी दान की थी, पुरोहितको दक्षिणामें सहस्र हाथी दिये थे, जिसके यज्ञमें गंधर्व गान करते थे ॥ और राजा मान्धाता कि जिसने एक दिनमें पृथ्वी जीती थी और सौ अश्वमेध और सौ राजसूययज्ञ किये थे और ब्राह्मणोंको दशयोजन लंबी और एक योजन चौड़ी सुवर्णकी मछली दान की थी। और राजा ययाति कि जिन्होंनें-सौ प्रधानयज्ञ तथा सौ वाजपेययज्ञ कर दक्षिणामें तीन सुवर्णके पर्वत दिये थे और अंतमें पुत्रको राज्य

चौ०-तेलनाव भरि नृपतनु राखा ❀ दूत बुलाइ बहुरि अस भाखा ॥ १ ॥
धावहु बेगि भरतपहँ जाहू ❀ नृपसुधि कतहुँ कहहु जनि काहू ॥ २ ॥

(वसिष्ठजीने) तेलकी नाव भरकर उसमें राजाके शरीरको धरवा दिया और दूतोंको बुलाकरके यों कहा ॥१॥ जल्दी दौड़कर भरतके पास जाओ और राजाके (मरनेकी) खवर किसीसे मत कहना ॥२॥

इतनै कहहु भरतसन जाईं ❀ गुरु बुलाइ पठए दोउ भाईं ॥ ३ ॥
सुनि मुनि आयसु धावन धाए ❀ चले वेगि वरवाजि लजाए ॥ ४ ॥

भरतसे जाकर इतनीही कहना कि गुरुने दोनों भाइयोंको बुलाया है ॥ ३ ॥ मुनीश्वरकी आज्ञा सुनतेही हरकारे दौडे और ऐसे वेगसे गये कि (जिनकी चालसे) सुन्दर घोड़ेभी लजाते थे ॥ ४ ॥

अनरथ अवध अरंभेउ जबते ❀ कुसगुन होहिं भरतकहँ तबते ॥ ५ ॥
देखहिं राति भयानक सपना ❀ जागि करहिं कटु कोटि कलपना ॥ ६ ॥

जवसे अयोध्यामें अनर्थ होना आरंभ हुआ तभीसे भरतको अपशकुन होने लगे ॥ ५ ॥ रातको भयंकर स्वप्न देखते हैं और जगतेही करोडों बुरे २ सोच विचार करते हैं ॥ ६ ॥

विप्र जेंवाइ देंहिं दिन दाना ❀ सिवअभिषेक करहिं विधिनाना ॥ ७ ॥
माँगहिं हृदय महेस मनाईं ❀ कुशल मातु पितु परिजन भाईं ॥ ८ ॥

दिनमें ब्राह्मणोंको भोजन कराय दान देते हैं और अनेक भांतिसे शंकरका अभिषेक करते हैं ॥ ७ ॥ मनमें शिवजीको मनाकर माता, पिता, कुटुम्बी और भाइयोंकी कुशल मांगते हैं ॥ ८ ॥

दो०-इहिबिधि सोचत भरतमन, धावन पहुँचे आइ ॥ ❀
गुरुअनुसासन स्रवन सुनि, चले गनेस मनाइ ॥ १५५ ॥ ❀

भरतजी इस भांति मनमें सोचही रहे थे कि हलकारे जा पहुंचे; फिर गुरुकी आज्ञाको कानोंसे सुनकर गणेशजीको मनाकर चले ॥ १५५ ॥

देवनको चले गये थे, और अम्बरीष वड़े प्रजापालनशील धर्ममूर्ति थे कि जिन्होंने ब्राह्मणोंको यज्ञ दक्षिणामें १० लक्ष राजाओंका दान दिया था, और राजा शशिविन्दु कि जिनके १० लक्ष पुत्र थे और बड़े दानी थे, और राजा गय कि जिन्होंने हजार वर्षतक दर्श, पौर्णमास, चातुर्मास्य, तथा अश्वमेध किये थे और दशव्याम लंबी २० व्याम चौड़ी पृथ्वी सुवर्णसे भरकर ब्राह्मणोंको दक्षिणामें दी थी और करोड़ों गोदान किये थे, और इसीवंशके सगर कि जिनका यश धर्म स्वर्गतक छारहा है, और राजा पृथु जो बड़े प्रजाशील थे जिनके समयमें पृथ्वीपर धनधान्य पुष्प पत्र स्वयं उत्पन्न होते थे और जब जलमें यात्रा करते थे तौ समुद्र नदी स्तंभित हो जाते थे और जिसने यज्ञमें सुवर्णके २१ पर्वत दान दिये थे। दूसरे ऐसे २ राजा कि जिनकी साक्षी देनेवाली पृथ्वी वर्तमान है न जाने कहां गये शरीरके संग नाश है संपत्तियोंमें दुःख भरा है संगके साथही बियोग है, और जो उत्पन्न हुआ उसका अवश्य नाश है, यह शरीर क्षण २ में घटता है पर दीखता नहीं है, और यौवन धन ऐश्वर्य पुत्रादिमें कदापि मोह न करना चाहिये, यह तौ जैसे नदीमें दो काठके लट्ठे अपने आप वहते हुए मिल जाते हैं फिर अलग हों जाते हैं इसी प्रकार मनुष्यका स्त्रीपुत्रादिकेसाथ मिलना है । जैसे कोई बटोही मार्गमें छायाके आश्रयसे वैठ जाता है फिर विश्राम करचला जाता है वैसाही प्राणियोंका संसारमें समागम है । और दूसरे, यह देह पंचतत्त्वसे बनी, फिर मरकर उसीमें मिल जाती है; इसका पछतावाही क्या है । मनुष्य जितना स्नेह बढ़ाता है उतनेही शोकके अंकुर हृदयमें जमते हैं । जैसे नदीके प्रवाह जाते हैं और फिर लौटकर नहीं आते हैं वैसेही रात्रि और दिन प्राणियोंकी आयुको लेकर फिर नहीं लौटते हैं जिस दिन प्राणी गर्भमें आता है उसी दिनसे वह मृत्युके पास सरकता जाता है इसलिये अब इस शोककी बार २ याद न करना यही इसकी औषधि है, इसकारण अब दशरथजीके शोकको छोड़ परमेश्वरके चरणोंमें चित्त लगाओ ॥

चौ०–चले समीर वेग हय हाँके ❀ लाँघत सरित सैल बन बाँके ॥ १ ॥
हृदयसोच बड़ कछु न सुहाई ❀ अस जानहिं जिय जाउँ उड़ाई ॥ २ ॥

पवनके समान वेगते घोड़ोंको हांककर बड़े, २ बांके नदी, पहाड़ और सरोवरोंको लांघते हुये चले आरहे हैं ॥ १ ॥ मनमें बड़ा सोच है और कुछ नहीं सुहाता. मनमें ऐसा आता है कि उड़कर चला जाऊं ॥ २ ॥

एक निमेष बरषसम जाई ❀ इहिविधि भरत अवध नियराई ॥ ३ ॥
असगुन होहिं नगर पैठारा ❀ रटहिं कुभाँति कुखेत करारा ॥ ४ ॥

एक एक पल वर्षके समान वीतता है, इस भांति भरतजी अयोध्याके पास आपहुंचे ॥३॥ नगरमें धसतेही अशकुन होने लगे; काले (कौए) बुरे खेतोंमें बुरी तरह टांय टांय कर रहे हैं ॥ ४ ॥

खर सृगाल बोलहिं प्रतिकूला ❀ सुनि सुनि होहिं भरतमन सूला ॥ ५ ॥
श्रीहत सर सरिता बन बागा ❀ नगर विसेष भयावन लागा ॥ ६ ॥

गधे और गीदड़ विपरीत बोलते हैं (जिसे) सुनसुनकर भरतजीके हृदयमें कांटेसे चुभते हैं ॥ ५ ॥ सरोवर, नदी, वन, वाग शोभारहित हो रहे हैं और नगर बड़ाई भयकर लगता है ॥६॥

खग मृग हय गज जाहिं न जोए ❀ रामवियोगकुरोगविगोए ॥ ७ ॥
नगरनारिनर निपट दुखारी ❀ मनहुँ सबनि सब संपति हारी ॥ ८ ॥

खग, मृग, घोड़े, हाथी देखे नहीं जाते हैं; रामचन्द्रजीके वियोगरूपी असाध्य रोगने मरेसे कर दिये हैं ॥ ७ ॥ नगरके स्त्री पुरुष बड़े भारी दुखी हैं मानों सब लोग अपनी सब संपत्ति हारकर बैठे हैं ॥ ८ ॥

दो०–पुरजन मिलहिं न कहहिं कछु, गवहिं जोहारहिं जाहिं ॥ ❀
भरत कुसल नहिं पूछिसक, भय बिषाद मनमाहिं ॥ १५६ ॥❀

नगरके लोग मिलते हैं तौ कुछ नहीं कहते, चुपकेही दंडवत् कर चलेजाते हैं और भरतजीके मनमें भय और शोक है (इस लिये) कुशलभी नहीं पूछ सकते हैं ॥ १५६ ॥

चौ०–हाट बाट नहिं जाइ निहारी ❀ जनु पुर दसदिसि लागि दवारी ॥ १ ॥
आवत सुत सुनि केकयनंदिनि ❀ हरषी रविकुलजलरुहचंदिनि ॥ २ ॥

हाट बाट देखे नहीं जाते मानों नगर और दशों दिशाओंमें दावानल लगी हुई है ॥ १ ॥ सूर्यवंशरूपी कमलको चाँदनीके समान दुखदाइन कैकयी पुत्रको आता हुआ सुनकर प्रसन्न हुई ॥२॥

सजि आरती मुदित उठि धाई ❀ द्वारहिं भेटि भवन लै आई ॥ ३ ॥
भरत दुखित परिवार निहारा ❀ मानहु तुहिन बनज बन मारा ॥ ४ ॥

और प्रसन्न होकर आरती सजाय उठकर चली और द्वारपर मिलके महलमें ले आई ॥ ३ ॥ भरतने कुटुम्बको ऐसा दुखी देखा जैसे पालेका मारा हुआ कमलोंका बन होता है ॥ ४ ॥

कैकेयी हरषित इहि भाँती ❀ मनहुँ मुदित दवलाइ किराती ॥ ५ ॥
सुतहिं ससोच देखि मन मारे ❀ पूछति नैहर कुसल हमारे ॥ ६ ॥

परंतु कैकयी इस भांति प्रसन्न है जैसे भीलनी बनमें आग लगाकर प्रसन्न होती है ॥ ५ ॥ पुत्रको सोचसहित और मन मारे देख पूछती है कि हमारे पीहरमें तौ कुशल है ॥ ६ ॥

सकल कुसल कहि भरत सुनाई ❀ पूछी निजकुलकुसल भलाई ॥ ७ ॥
कहु कहँ तात कहाँ सब माता ❀ कहँ सिय राम लषन प्रियभ्राता ॥ ८ ॥

भरतने सबकी कुशल कह सुनाई और अपने कुटुम्बकी कुशल भलाई पूछी कि ॥ ७ ॥ कहो पिता कहां हैं ? और सब मातायें कहां हैं? और सीताजी तथा राम लक्ष्मण प्यारे भाई कहा हैं ? ॥ ८ ॥

दो०-सुनि सुतबचन सनेहमय, कपटनीर भरि नैन ॥ ❀
भरत स्रवन मन सूलसम, पापिनि बोली बैन ॥ १५७ ॥ ❀

पापिनी (कैकेयी) पुत्रके प्रेमभरे वचन सुन और नेत्रोंमें कपटसे जल भरके भरतजीके कान और मनको शूलके समान (लगनेवाले) वचन बोली ॥ १५७ ॥

चौ०-तात बात मैं सकल सँवारी ❀ भइ मंथरा सहाय बिचारी ॥ १ ॥
कछुक काज बिधि बीच बिगारे ❀ भूपति सुरपतिपुर पगु धारे ॥ २ ॥

हे प्यारे ! मैने सब बात सम्हालली है और बिचारी मंथरा सहायक हुई है ॥ १ ॥ (परन्तु) विधाताने बीचमें कुछ काम बिगाड़ दिया कि राजा देवलोकको गये ॥ २ ॥

सुनत भरत भे बिबस बिषादा ❀ जनु सहमेउ करि केहरिनादा ॥ ३ ॥
तात तात हा तात पुकारी ❀ परे भूमितल व्याकुल भारी ॥ ४ ॥

भरतजी सुनतेही शोकसे ऐसे बिकल हुये जैसे सिंहका शब्द सुनकर हाथी व्याकुल होजाय ॥ ३ ॥ हा तात[1] ! हा पिता ! हा तात ! ऐसे पुकार बहुत दुखी हो पृथ्वीपर गिरपड़े ॥ ४ ॥

चलत न देखन पायउँ तोहीं ❀ तात न रामहिं सौंपेहु मोहीं ॥ ५ ॥
बहुरि धीर धरि उठे सँभारी ❀ कहु पितुमरनहेतु महतारी ॥ ६ ॥

(और कहने लगे कि) मैं चलते समय तुम्हारे दर्शनभी नहीं करने पाया ! हा पिता ! मुझे रामचन्द्रकोभी न सौंप गये ॥ ५ ॥ फिर धीरज रख सम्हालके उठे (और बोले) हे माता ! पिताके मरनेका कारण कहो ॥ ६ ॥

सुनि सुतबचन कहति कैकेयी ❀ मरम पाछि जनु माहुर देई ॥ ७ ॥
आदिहि ते सब आपनि करनी ❀ कुटिल कठोर मुदितमन बरनी ॥ ८ ॥

पुत्रके बचन सुनकर कैकयी ऐसे कहती है मानों घावको पोंछकर विष लगाती है ॥७॥ खोटी और कठोर (कैकयी) ने आरम्भसेही अपनी करतूतको मनमें प्रसन्न हो वर्णन किया ॥ ८ ॥

दो०-भरतहिं बिसरेउ पितुमरन, सुनत रामबनगौन ॥ ❀
हेतु अपुनको जानि जिय, थकित रहे धरि मौन ॥ १५८ ॥ ❀

रामचन्द्रजीका वनोवास सुनकर भरतजी पिताका मरना भूल गये (परन्तु उसमें) अपनेही को कारण समझ चुप साध थकित रह गये ॥ १५८ ॥

चौ०-बिकल बिलोकि सुतहिं समुझावति ❀ मनहुँ जरेपर लोन लगावति ॥ १ ॥
तात राउ नहिं सोचन जोगू ❀ बड़इ सुकृत जस कीन्हेउ भोगू ॥ २ ॥

(कैकेयी) पुत्रको दुखी देखकर समझाती है मानो जले हुये (घाव) पर नोन लगाती है ॥ १ ॥ हे प्यारे ! राजा सोचने योग्य नहीं क्योंकि जैसा उन्होंने भोग किया वह बडेही पुण्यसे मिलता है ॥ २ ॥

जीवत सकल जनमफल पाए ❀ अंत अमरपतिसदन सिधाए ॥ ३ ॥
अस अनुमानि सोच परिहरहू ❀ सहितसमाज राजपुर करहू ॥ ४ ॥

---

(१) कईवार पिता कहनेसे अत्यन्त विकल दशा प्रकट की है; और बहुत दुखी यों भये कि स्वप्न और अशकुनोंसे दुखी तो थेही.

जीते जी जन्मका सब फल पाया और अंतमें स्वर्गको गये ॥ ३ ॥ ऐसे विचार सोचको छोड़ समाज सहित नगरका राज्य करो ॥ ४ ॥

सुनि सहमेउ सुठि राजकुमारू ❀ पाके छत जनु लागु अगारू ॥ ५ ॥
धीरज धरि भरि लेहि उसासा ❀ पापिनि सबहिं भाँति कुलनासा ॥ ६ ॥

राजकुमार (भरत) सुनकर ऐसे अत्यंत मुरझा गये मानों पके हुये घावपर अंगारा लगाहो ॥ ५ ॥ धीरज रख गहरी उसास लीनी (और बोले कि) हे पापिनी ! तैंने सभी भांति कुलका नाश किया ॥ ६ ॥

जोपै कुमति रही अस तोहीं ❀ जनमत काहे न मारेसि मोहीं ॥ ७ ॥
पेड काटि तै पल्लव सींचा ❀ मीन जिअन हित वारि उलीचा ॥ ८ ॥

जो तुझमें ऐसेही कुमति थी, तौ मुझको जन्मतेही क्यों न मार डाला ॥ ७ ॥ तैंने वृक्षको काट कर पत्तेको सींचा और मछलीके जिलानेको जल उलीच डाला ॥ ८ ॥

दो०–हंसबंस दसरथ जनक, रामलषनसे भाइ ॥ ❀
जननी तू जननी भई, विधिसों कहा बसाइ ॥ १५९ ॥ ❀

सूर्यका तौ वंश (जिसमें मेरा जन्म हुआ) और दशरथसे पिता, और राम लक्ष्मणसे भाई मिले परन्तु हे माता ! तुझसी (कलंकनी) मुझे माता मिली सो ब्रह्मासे कुछ बश नहीं चलता (अर्थात् ऐसे समाजमें तू माता होनेयोग्य नहीं थी) ॥ १५९ ॥

चौ०–जबते कुमति कुमत जिय ठयऊ ❀ खंडखंड होइ हृदय न गयऊ ॥ १ ॥
बर मांगत मन भइ नहिं पीरा ❀ जरि न जीह मुँहे परेउ न कीरा ॥ २ ॥

हे दुष्टमतिवाली ! जब तेरे हृदयमें ऐसी कुमति उपजी थी तभी तेरा हृदय टुकड़े २ न हो गया ॥१॥ तेरे मनमें वर मांगते हुये कष्टभी न हुआ, जीभ भी न जली, और मुँहमें कीड़ेभी न पड़े ॥२॥

भूतप्रतीति तोरि किमि कीन्हीं ❀ मरनकाल विधि मति हरिलीन्हीं ॥ ३ ॥
विधिहु न नारि हृदयगति जानी ❀ सकल कपट अघ अवगुन खानी ॥ ४ ॥

राजाने तेरी प्रतीति कैसे करली (मैं जानताहूं) मरनेके समय ब्रह्माने उनकी बुद्धि हरली ॥३॥ स्त्रीके मनकी गतिको ब्रह्माभी नहीं जानता,(वह) संपूर्ण कपट पाप और अवगुणकी खानि होती है ४

सरल सुसील धरमरत राऊ ❀ सो किमि जानहिं तीयसुभाऊ ॥ ५ ॥
अस को जीव जंतु जगमाहीं ❀ जेहि रघुनाथ प्रानप्रिय नाहीं ॥ ६ ॥

राजा सीधे, सुशील और धर्मज्ञ थे वह स्त्रियोंके स्वभावको क्या जानें ? ॥ ५ ॥ संसारमें ऐसा कौन जीवजंतु है जिसे रामचन्द्र प्राणोंसे प्यारे नहों ! ॥ ६ ॥

भे अति अहित रामतेउ तोहीं ❀ को तू अहसि सत्य कहु मोहीं ॥ ७ ॥
जोहसि सोहसि मुँह मसि लाई ❀ आँखि ओट उठि बैठहु जाई ॥ ८ ॥

सो तुझे रामचन्द्रसेभी अत्यंत अनहित हुआ सो मुझसे सच्च कह दे कि तू कौन है ? ॥ ७ ॥ अथवा जो तू है भलेही बनीरह पर अब तौ तू यहाँसे काला मुँह कर और उठकर आंखोंकी ओटमें जा बैठ ॥ ८ ॥

दो०–रामविरोधी हृदयते, प्रगट कीन्ह विधि मोहिं ॥ ❀
मोसमान को पातकी, वादि कहौं कछु तोहिं ॥ १६० ॥ ❀

---

(१) सब भांति नाश यों भया कि राजमरन, राम वनगमन और कुलके चलनके विपरीत छोटेको राज्य मिलन.

(२) यहां भरतजीने वृक्षके स्थानमें राजा दशरथको, जलके स्थानमें रघुनाथजीको, और मछली और पल्लवके स्थानमें अपनेको माना है.

ब्रह्माने रामचन्द्रसे विरोध रखनेवाले तेरे हृदयसे मुझे उत्पन्न किया तौ मेरे बराबर कौनसा पापी है ? और तुझसे कुछ कहना तौ वृथाही है ॥ १६० ॥

चौ०-सुनि शत्रुघ्न मातुकुटिलाई ❀ जरहिं गात रिस कछु न बसाई ॥ १ ॥
तेहि अवसर कुवरी तहँ आई ❀ बसन विभूषन विविध बनाई ॥ २ ॥

शत्रुघ्न माताकी कुटिलाईको सुनकर रिससे शरीरमें भुने जाते हैं पर कुछ वश नहीं चलता ॥१॥ उस समय कुवरी वहुतसे वसन भूषण सजाके वहां अई ॥ २ ॥

लखि रिसभरेउ लषनलघु भाई ❀ बरत अनलघृतआहुति पाई ॥ ३ ॥
हुमकि लात तकिकूवर मारा ❀ परि मुँहभरि महि करति पुकारा ॥ ४ ॥

उसे देखकर लक्ष्मणके छोटे भाइको ऐसी रिस आई मानों जलती हुई अग्निने घीकी आहुति पाई ॥ ३ ॥ और क्रोधकर तकके कूवरमें ऐसी लात मारी कि वह मुँहके बल पृथ्वीपर गिरपड़ी और पुकार करने लगी (कि हायरे ! मार डाला) ॥ ४ ॥

कूवर टूटेउ फूट कपारू ❀ दलित दशन मुख रुधिरप्रचारू ॥ ५ ॥
आहि दइय मैं काह नसावा ❀ करत नीक फल अनइस पावा ॥ ६ ॥

(उसका) कूवड़ टूट गया, माथा फूट गया, दांत टूटनेके कारण मुँहसे रुधिर वहने लगा ॥ ५ ॥ (और बोली कि) हा दैव ! मैंने क्या बिगाड़ा जो अच्छा करतेमें बुरा फल पाया ॥ ६ ॥

सुनि रिपुहन लखि नख सिख खोटी❀ लगे घसीहन धरिधरि चोटी ॥ ७ ॥
भरत दयानिधि दीन्ह छुडाई ❀ कौसल्या पहँ गे दोउ भाई ॥ ८ ॥

यह सुन शत्रुघ्न उसे नखसे शीरतक खोटी देख चोटी पकड़ २ के घसीटने लगे ॥ ७ ॥ (उस समय) दयाके समुद्र भरतने छुड़ादी । फिर दोनों भाई कौशल्याके पास गये ॥ ८ ॥

दो०-मलिनबसन बिवरन बिकल, कृससरीर दुखभार ॥ ❀
कनककलपवरबेलिबन, मानहुँ हनी तुषार ॥ १६१ ॥ ❀

दुःखके भारसे (कौशल्याका) शरीर दुबला होगया है और व्याकुल हुई मैले वस्त्र पहिने, ऐसे छबि छीन मन मलीन हो रही है मानों वनमें सुवर्णकी सुन्दर कल्पलताको पाला मार गया हो १६१

चौ०-भरतहिं देखि मातु उठिधाई ❀ मूर्च्छित अवनि परी झुँइआई ॥ १ ॥
देखत भरत विकल भए भारी ❀ परे चरन तनुदसा बिसारी ॥ २ ॥

भरतजी देखतेही माता उठकर दौड़ी पर घुमेर खाके पृथ्वीपर मूर्च्छित होकर गिरपड़ी ॥ १ ॥ भरतको देखतेही बहुत दुखी हुये; शरीरकी दशा भूल चरणोंमें गिरपड़े ॥ २ ॥

मातु तात कहँ देहु दिखाई ❀ कहँ सियरामलषन दोउ भाई ॥ ३ ॥
कैकेयि कत जनमी जगमाँझा ❀ जो जनमी भइ काहे न बाँझा ॥ ४ ॥

(और कहने लगे कि) हे माता ! पिता कहां हैं ? दिखा दो राम, लक्ष्मण, दोनो भाई और सीताजी कहां हैं ? ॥३॥ कैकेयीका जन्म संसारमें क्यों हुआ, और जो जन्मभी हुआ तौ बाँझ क्यों न हुई ॥४॥

कुलकलंक जेहि जनमेउ मोही ❀ अपजसभाजन प्रियजनद्रोही ॥ ५ ॥
को त्रिभुवन मोहिसरिस अभागी ❀ गति असि तोरि मातु जेहिं लागी ॥ ६ ॥

जिसने मुझसरीखा कुलका कलंकी, बुराईका ठीकरा और प्यारे मनुष्योंका वैरी पुत्र उत्पन्न किया ॥५॥ मेरे समान अभागा तीनों लोकमें कौन है ! हे माता ! जिसके लिये तुम्हारी ऐसी दशा हुई ॥६॥

पितु सुरपुर वन रघुकुलकेतू ❀ मैं केवल सब अनरथहेतू ॥ ७ ॥
धिक् मोहिं भयउ बेनुबनआगी ❀ दुसह दाहदुख दूषनभागी ॥ ८ ॥

पिता देवलोक और रामचन्द्र वनको गये. इस सब बुराईका कारण केवल मैंही हूं ॥ ७ ॥ मुझको धिक्कार है ! जो मैं इस वंशमें वेणु कहिये वांसोंके वनको अग्निके समान हुआ और कठिन जलन, दुःख और पापका भागी हुआ ! ॥ ८ ॥

दो०-मातु भरतके बचन मृदु, सुनि पुनि उठी सँभारि ॥ ❀
लिए उठाइ लगाइ उर, लोचन मोचति वारि ॥ १६२ ॥ ❀

माता (कौशल्या) भरतके कोमल वचन सुन फिर सँभालकर उठी, भरतको उठाकर छातीसे लगा लिया और नेत्रोंसे जल वहने लगा ॥ १६२ ॥

चौ०-सरल सुभाय माय हिय लाए ❀ अतिहित मनहुँ राम फिरि आए ॥ १ ॥
भेटेउ बहुरि लषनलघु भाई ❀ सोक सनेह न हृदय समाई ॥ २ ॥

सहज स्वभावहीसे माताने बड़े प्रेमसहित छातीसे लगा लिया मानों रामचन्द्रजी फिर लौट आये ॥ १ ॥ फिर लक्ष्मणजीके छोटे भाई (शत्रुघ्न) से मिली (उस समयका) शोक और प्रीति हृदयमें नहीं समाते ॥ २ ॥

देखि सुभाव कहत सब कोई ❀ राममातु अस काहे न होई ॥ ३ ॥
माता भरत गोद बैठारे ❀ आँसु पोंछि मृदु बचन उचारे ॥ ४ ॥

ऐसे सुभावको देख सब कोई कहते है कि, रामचन्द्रजीकी माता ऐसी क्यों न हो ॥ ३ ॥ माताने भरतको गोदमें बिठाया और आँसू पोंछकर मीठे बचन कहे ॥ ४ ॥

अजहुँ बत्स बलि धीरज धरहू ❀ कुसमय समुझि सोक परिहरहू ॥ ५ ॥
जनि मानहु हिय हानि गलानी ❀ कालकरमगति अघटित जानी ॥ ६ ॥

हे बचा ! अबभी धीरज धरो और बुरा समय जान शोंक मत करो ॥ ५ ॥ कालकर्मकी गतिको अमिट जान मनमें हानि और ग्लानि मत मानों, अर्थात् जीको खट्टा मत करो ॥ ६ ॥

काहुहि दोष देहु जनि ताता ❀ भा मोहिं सबविधि वाम विधाता ॥७॥
जो ऐसेहु दुख मोहिं जिआवा ❀ अजहुँ को जानै का तेहि भावा ॥ ८ ॥

हे प्यारे ! किसीको दोष मत दो (क्योंकि) विधाता सब भांतिसे मुझको उलटा हो गया ॥७॥ जो ऐसा दुःखमेंभी मुझे जिवाता है, कौन जाने अबभी उसे क्या अच्छा लगता है ! ॥ ८ ॥

दो०-पितुआयसु भूषन बसन, तात तजे रघुबीर । ❀
विस्मय हरष न हृदय कछु, पहिरे बल्कलचीर ॥ १६३ ॥ ❀

हे प्यारे (पुत्र) रामचन्द्रने पिताकी आज्ञासे वसन और भूषण छोड़ छालके वस्त्र धारण किये परन्तु (उनके) मनमें दुःख अथवा आनन्द कुछ न हुआ ॥ १६३ ॥

चौ०-मुख प्रसन्न मन राग न रोषू ❀ सबकर सबविधि करि परितोषू ॥ १ ॥
चले बिपिनसुनि सिय सँग लागी ❀ रहीं न रामचरनअनुरागी ॥ २ ॥

मनमें राग रोष कुछ नहीं हुआ प्रसन्न मुखसे सबको सब भांति संतुष्ट कर ॥१॥ वनको चले. यह सुनकर जानकीजी संग लगीं और रामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रीति (होनेके कारण) न रहीं ॥ २ ॥

सुनतहिं लषन चले उठि साथा ❀ रहे न जतन किए रघुनाथा ॥ ३ ॥
तब रघुपति सबही सिर नाई ❀ चले संग सिय अरु लघुभाई ॥ ४ ॥

सुनतेही लक्ष्मणजीभी उठके साथ चले. रामचन्द्रजीने (बहुत) उपाय किये पर न रहे ॥ ३ ॥ तब रामचन्द्र सबको मस्तक नवाकर सीताजी और छोटे भाईके साथ (वनको) चले ॥ ४ ॥

राम लषन सिय बनहिं सिधाए ❀ गई न संग न प्रान पठाए ॥ ५ ॥
यह सब भा इन्ह आँखिन्ह आगे ❀ तउ न तजा तनु जीवअभागे ॥ ६ ॥

इस प्रकार रामचन्द्र, लक्ष्मण, सीताजी वनको गये और मैं न तो (उनके) साथ गई और न प्राण भेजे ॥ ५ ॥ और यह सब इन्हीं आखोंके आगे हुआ तौभी अभागे जीवने शरीर न छोड़ा ॥ ६ ॥

मोहिं न लाज निजनेह निहारी ❀ रामसरिस सुत मैं महतारी ॥ ७ ॥
जिये मरे भल भूपति जाना ❀ मोर हृदय सतकुलिससमाना ॥ ८ ॥

मुझे अपने स्नेहको देख लाजभी तौ नहीं (आती की) रामचन्द्रके समान तौ पुत्र और मुझसरीखी माता ॥७॥ जीना मरना तौ राजानेही अच्छी तरह जाना. अर्थात् जबतक जिये रामके दर्शन करते रहे और वियोग होतेही प्राण त्याग दिये, और मेरा हृदय तौ सौ वज्रोंके समान कठोर है ॥ ८ ॥

दो०-कौसल्याके वचन सुनि, भरतसहित रनिवास ॥ ❀
व्याकुल विलपत राजगृह, मानहुँ सोकनिवास ॥ १६४ ॥ ❀

कौशल्याके वचन सुनकर भरतजीसमेत रनिवास ऐसा दुखी हो विलाप करने लगा मानों राजाके महलमें शोकने निवास किया है ॥ १६४ ॥

चौ०-विलपहिं विकल भरत दोउ भाई ❀ कौसल्या लिए हृदय लगाई ॥ १ ॥
भाँति अनेक भरत समुझाए ❀ कहि विवेकमय वचन सुनाए ॥ २ ॥

भरत और शत्रुघ्न जब दोनों भाई विकल होकर विलाप करने लगे, तब कौशल्याने उन्हैं छातीसे लगा लिया ॥१॥ भरतको बहुत भांति समझाया और ज्ञानके भरे सुन्दर वचन कहकर सुनाये ॥ २ ॥

भरत हु मातु सकल समुझाई ❀ कहि पुरान श्रुति कथा सुहाई ॥ ३ ॥
छलबिहीन सुचि सरल सुबानी ❀ बोले भरत जोरिजुगपानी ॥ ४ ॥

(तब) भरतजीनेभी वेदपुराणकी सुन्दर कथा कहकर सब माताओंको समझाया ॥ ३ ॥ और भरतजी दोनों हाथ जोड़कर कपटरहित सच्ची और सीधी सुन्दर वाणी बोले कि-॥ ४ ॥

जे अघ मातु पिता गुरु मारे ❀ गाइगोठ महि सुरपुर जारे ॥ ५ ॥
जे अघ तिय बालकवध कीन्हे ❀ मीत महीपति माहुर दीन्हे ॥ ६ ॥

जो पाप माता पिता गुरुके मारने और गोशाला और ब्राह्मणोंके नगर जलानेसे होता है ॥५॥ और जो पाप स्त्री और बालकके मारने और मित्र तथा राजाको विष देनेसे होता है ॥ ६ ॥

जे पातक उपपातक अहहीं ❀ करम वचन मन भव कवि कहहीं ॥७॥
ते पातक मोहिं होउ विधाता ❀ जो यह होइ मोर मत माता ॥ ८ ॥

जो पातक और उपपातक कहिये छोटे पाप हैं कि जिनको कवि लोग मन वचन और कर्मसे उत्पन्न हुये कहते हैं ॥७॥ हे माता ! जो मेरी इसमें संमति हो तौ विधाता मुझे इन सब पापोंका फल देवै ८

दो०-जे परिहरि हरिचरनरति, भजहिं भूतगन घोर ॥ ❀
तिनकी गति मोहिं देउ विधि, जो जननी मत मोर ॥ १६५ ॥ ❀

हे माता ! जो (इसमें) मेरी सलाह होवे तौ जो भगवान्‌के चरणोंकी प्रीति छोड़कर भयंकर भूतोंका सेवन करते हैं विधाता उनकी गति मुझको देवै ॥ १६५ ॥

चौ०-वेचहिं वेद धर्म दुहि लेहीं ❀ पिसुन पराय पापकहिदेहीं ॥ १ ॥
कपटी कुटिल कलहप्रिय क्रोधी ❀ वेदविदूषक विस्वविरोधी ॥ २ ॥

और जो वेद[1]को वेच धर्म[2]को दुहि लेते हैं, और जो चुगलखोर पराये पापोंको कहते फिरते हैं अर्थात् पाप कोई करै और ये गली २ में ढंढोरा पीटते फिरैं ॥ १ ॥ और कपटी, खोटे, (जिनको) क्लेश प्यारा लगै, क्रोध करनेवाले, वेदमें दोष लगानेवाले, संसारके विरोधी ॥ २ ॥

लोभी लंपट लोल लबारा ❀ जे ताकहिं परधन परदारा ॥ ३ ॥
पावउँ मैं तिन्हकी गति घोरा ❀ जो जननी यह संमत मोरा ॥ ४ ॥

और जो लोभी, ठग, लालची, और उठाई गीरे हैं, और जो पराये धन और पराई स्त्रीको ताकते हैं ॥ ३ ॥ मैं उनकी कठिन गतिको पाऊं, हे माता! जो इसमें मेरी संमति होय तौ ॥ ४ ॥

जो नहिं साधुसंग अनुरागे ❀ परमारथ पथ बिमुख अभागे ॥ ५ ॥
जे न भजहिं हरि नरतनु पाई ❀ जिन्हहि न हरिहरसुजस सुहाई ॥ ६ ॥

जिन्होंने साधुओंके साथ प्रीति नहीं की, और जो अभागे परमार्थके मार्गसे विमुख हैं ॥ ५ ॥ और जो मनुष्यका शरीर पाकर भगवान्का भजन नहीं करते, और जिनको विष्णु महादेवके सुन्दर यश अच्छे नहीं लगते ॥ ६ ॥

तजि श्रुतिपंथ वाममगु चलहीं ❀ वंचक बिरचि वेश जग छलहीं ॥ ७ ॥
तिन्हकी गति मोहिं शंकर देऊ ❀ जननी जो यह जानौं भेऊ ॥ ८ ॥

और जो वेदके मार्गको छोड़ उलटे मार्गमें चलते हैं, और छलियों[3]का वेष बनाकर संसारको छलते हैं ॥७॥ इनकी गति शंकर मुझे देवै, हे माता! जो मैं इस भेदको जानताभी हूं तौ-॥ ८ ॥

क्षेपक.

छं०-मनवचनकर्म कृपायतनकर दास मैं सुनु मातुरी ॥ ❀
उरवसत रामसुजान जानत प्रीति अरु छल चातुरी ॥ ❀
अस कहत लोचन बहत जल तनुपुलक नखलेखत मही ॥ ❀
हियलाय लीन बहोरि जननी जानि प्रभुपदरत सही ॥ ७ ॥ ❀

हे माता! सुन मैं मन कर्म वचनसे रामचन्द्रजीका सेवक हूं और वे सुजान रामचन्द्र घट घटमें रहते हैं, और सब कपट और चतुराईको जानते हैं, ऐसे कहते कहते नयनोंसे आँसू बहने लगे. शरीर पुलकायमान होगया और नखोंसे पृथ्वी कुरेदने लगे. तब माता (कौशल्या) ने भगवान्के चरणोंके सच्चे प्रेमी जान उन्हे हृदयसे लगा लियो ॥ ७ ॥ यह छंद क्षेपक है.

इति क्षेपक.

दो०-मातु भरतके बचन सुनि, साँचे सरल सुभाय ॥ ❀
कहत रामप्रियतात तुम, सदा बचनमनकाय ॥ १६६ ॥ ❀

---

(१) वेद वेचनेवाले वे कहाते हैं जो द्रव्यलेकर कुपात्रको पढ़ावें. (२) धर्मको दुहनेवाले वे हैं जो द्रव्य ले कन्याको व्याहते हैं, अथवा जो गायको बेचते हैं.

(३) अन्तःशाक्ता वहिश्शैवाः सभामध्ये च वैष्णवाः । नानारूपधराः कौला विचरन्ति महीतले ॥ अर्थात् भीतर तौ शक्तिके उपासक, और वाहरसे शिवके भक्त, और सभाके बीचमें वैष्णव (खांसा राम फटाका लगा वें) ऐसे कौल लोग अनेक प्रकारके रूप धरकर पृथिवीतलपर विचरते हैं.

माता (कौशल्या) भरतके सीधे और सुभावसे सच्चे बचन सुनकर कहने लगीं, हे पुत्र ! तुम तन मन बचनसे सदा रामचन्द्रके प्यारे हो ॥ १६६ ॥

चौ०-राम प्रानते प्रान तुम्हारे ❀ तुम रघुपतिहिं प्रानते प्यारे ॥ १ ॥
बिधुबिष चुवै स्रवै हिम आगी ❀ होइ बारिचर बारिबिरागी ॥ २ ॥

रामचन्द्र तौ तुह्मारे प्राणोंकेभी प्राण है, और तुम रामचन्द्रको प्राणोंसे प्यारे हो ॥१॥ चन्द्रमासे विष भलेही झरै, बरफ भलेही अग्नि वरसावै और जलके जीव जलसे भलेही अलग हो जायँ ॥ २ ॥

भए ज्ञान बरु मिटै न मोहू ❀ तुम रामहिं प्रतिकूल न होहू ॥ ३ ॥
मत तुम्हार यह जो जग कहहीं ❀ सो सपनेहुँ सुख सुगति न लहहीं ॥ ४ ॥

और ज्ञानके होनेसे अज्ञान भलेही न जाय परन्तु तुम रामचन्द्रसे उलटे नहीं होनेके ॥ ३ ॥ जो लोग संसारमें इसे तुह्मारी संमति कहैं वे स्वप्नेमेंभी सुख और सुन्दर गति नहीं पासकते ॥४॥

अस कहि मातु भरत हिय लाए ❀ स्तनपय स्रवहिं नयन जल छाए ॥ ५ ॥
करत बिलाप विपुल इहभाँती ❀ बैठहिं बीतिगई सब राती ॥ ६ ॥

ऐसे कहकर माताने भरतको छातीसे लगा लिया (उस समय) स्तनोंसे दूध टपकने लगा और नेत्रोंमें नीर भर आया ॥५॥ इस भाँति बहुतसां विलाप करते करते सब रात बैठेही बैठे बीत गई ॥६॥

बामदेव बशिष्ठ तब आए ❀ सचिव महाजन सकल बुलाए ॥ ७ ॥
मुनि बहुभाँति भरत उपदेशे ❀ कहि परमारथबचन सुदेशे ॥ ८ ॥

तब वामदेव और वशिष्ठ मुनिने आकर मंत्री और सब महाजनोंको बुलवाया ॥ ७ ॥ और मुनियोने परमार्थके सुन्दर बचन कह भरतजीको बहुत भांति समझाया कि ॥ ८ ॥

दो०-तात हृदय धीरज धरहु, करहु जो अवसर आजु ॥ ❀
उठे भरत गुरुवचन सुनि, करन कहेउ सब काजु ॥ १६७ ॥ ❀

हे प्यारे ! मनमें धीरज धरो और जो काम आज करना है उसे करो गुरुके ये बचन सुनकर भरतजी उठे और सब काम करनेकी हाँमीं भरी ॥ १६७ ॥

चौ०-नृपतनु वेदविहित अन्हवावा ❀ परम विचित्र विमान बनावा ॥ १ ॥
गहिपद भरत मातु सब राखी ❀ रही रामदरसनअभिलाषी ॥ २ ॥

वेदकी रीतिसे राजाके शरीरको स्नाय कराया और अंत्यंत सुन्दर विमान बनाया ॥ १ ॥ भरतने चरण पकड़कर सब माताओंको (सती होनेसे) रोक लिया और वे रामचन्द्रजीके दर्शनोंकी इच्छासे रह गई ॥ २ ॥

चंदन अगर भार बहु आए ❀ अमित अनेक सुगंध सुहाए ॥ ३ ॥
सरयुतीर रचि चिता बनाई ❀ जनु सुरपुरसोपान सुहाई ॥ ४ ॥

चंदन और अगरके बहुत भार आये और अनेक सुन्दर सुगंध बेमोल मंगाये ॥ ३ ॥ और सरयूनदीके किनारेपर रच रचकर ऐसी चिता बनाई मानों स्वर्ग लोककी सुन्दर सीढ़ी है ॥ ४ ॥

इहिविधि दाहक्रिया सब कीनी ❀ विधिवत न्हाइ तिलांजलि दीनी ॥ ५ ॥
सोधि सम्रृति सब वेद पुराना ❀ कीन भरत दसगात्रविधाना ॥ ६ ॥

---

(१) भार एक प्रकारकी तौल होती है.

इस भांति सब दाहक्रिया करी और स्नान करके विधिसहित तिलांजली दी ॥५॥ सब स्मृति, वेद और पुराणोंका शोधन कर भरतजीने दशगात्रकी विधि करी ॥ ६ ॥

जहँ जस मुनिवर आयसु दीन्हा ❀ तहँ तस सहस भाँति सब कीन्हा ॥७॥
भए विशुद्ध दिए सब दाना ❀ धेनु बाजि गज वाहन नाना ॥ ८ ॥

और मुनिराजने जहां जैसी आज्ञा दी वहां सब वैसाही हजारों भांतिसे करा ॥७॥ अनेक गौ, घोड़े हाथी और सवारी, सब दान देकर शुद्ध हुये ॥ ८ ॥

दो०-सिंहासन भूषन वसन, अन्न धरनि धनधाम ॥ ❀
दिए भरत लहि भूमिसुर, मे परिपूरनकाम ॥ १६८ ॥ ❀

फिर भरतजीने सिंहासन, भूषण, वसन, धन, धान्य, भूमी और महल दान दिये; उन्हें लेकर ब्राह्मण पूर्णकाम हुये, अर्थात् उन्हें फिर याचना करनेका काम न पड़ा ॥ १६८॥

चौ०-पितुहित भरत कीन्हि जस करनी ❀ सो मुखलाख जाइ नहिं बरनी ॥ १ ॥
सुदिन सोधि मुनिवर तब आए ❀ सचिव महाजन सकल बुलाए ॥ २ ॥

भरतजीने पिताके लिये जैसी करनी करी वह लाख मुखोंसेभी वरनी नहीं जासकती ॥१॥ फिर सुन्दर दिन विचारकर मुनिराज वहां आये और मंत्री तथा बड़े लोग सब बुलवाये ॥ २ ॥

बैठे राजसभा सब जाई ❀ पठए बोलि भरत दोउ भाई ॥ ३ ॥
भरत वशिष्ट निकट बैठारे ❀ नीतिधर्ममय बचन उचारे ॥ ४ ॥

सब राजसभामें जाकर बैठे और भरत शत्रुघ्न दोनों भाइयोंको बुलवाया ॥ ३ ॥ वसिष्ठजीने भरतजीको पास बिठलाया और नीति तथा धर्मके वचन कहने लगे ॥ ४ ॥

प्रथम कथा सब मुनिवर बरनी ❀ कैकेयि कुटिल कीन्ह जस करनी ॥ ५ ॥
भूप धरमव्रत सत्य सराहा ❀ जेहिं तनु परिहरि प्रेम निवाहा ॥ ६ ॥

पहिले श्रेष्ठमुनिने जिस प्रकार कुटिल कैकेयीने करनी करी थी वह सब कथा वरनी ॥५॥ फिर राजाके धर्मव्रत और सत्यकी सराहना की, जिस (राजा)ने रामके वियोगसे शरीर छोड़ प्रेमका निवाह किया॥ ६ ॥

कहत रामगुनसीलसुभाऊ ❀ सजलनयन पुलके मुनिराऊ ॥ ७ ॥
बहुरि लषनसियप्रीति बखानी ❀ सोकसनेहमगन मुनिज्ञानी ॥ ८ ॥

पुनि रामचन्द्रजीके गुण और शील सुभावको कहते हुये मुनिराज वसिष्ठजीके नेत्रोंमें जलभर आया और शरीरमें रोमाञ्च होगया ॥ ७ ॥ फिर लक्ष्मण और जानकीजीका प्रेम वर्णन करते २ ज्ञानी मुनीश्वर शोक और प्रेममें डूब गये ॥ ८ ॥

दो०-सुनहु भरत भावी प्रबल, बिलखि कहेउ मुनिनाथ ॥ ❀
हानि लाभ जीवन मरन जस अपजस विधिहाथ ॥ १६९ ॥ ❀

मुनिनाथ (वसिष्ठजी) ने दुखी[१] होकर कहा, हे भरत! सुनो होनेहार[२] बड़ी बलवान है और

---

(१) दुखी होकर इसलिये कहा कि हमारी कुछ चली नहीं ॥

(२) जैसा कहा है—शशिदिवाकरयोर्ग्रहपीडनं गजभुजंगमयोरपि बन्धनम् ।
मतिमतां च विलोक्य दरिद्रतां विधिरहो बलवानिति मे मतिः ॥ १ ॥

अर्थात् सूर्य चन्द्रमाको ग्रहणकी पीड़ा—हाथी और सर्पका बंधन और पण्डितोंकी दरिद्रता देखकर मेरी तौ समझमें यही आता है कि होनहारही बलवान है ॥ १ ॥ और भी कहा है कि—

[१]हानि, लाभ, जीना, मरना, भलाई और बुराई (यह सब) विधाताकेही हाथमें हैं ॥ १६९ ॥

चौ०-अस बिचारि केहि दीजिय दोषू ❀ व्यर्थ काहिपर कीजिय रोषू ॥ १ ॥
तात बिचार करहु मनमाहीं ❀ सोचयोग दशरथनृप नाहीं ॥ २ ॥

ऐसा विचार किसे दोष देना चाहिये और वृथा किसपर रोष करना चाहिये ॥ १ ॥ हे प्यारे! मनमें विचार करो राजा दशरथ शोचने योग्य नहीं हैं ॥ २ ॥

सोचिय बिप्र जु बेद बिहीना ❀ तजि निजधरम बिषय लय लीना ॥ ३ ॥
सोचिय नृपति जो नीति न जाना ❀ जेहि न प्रजा प्रिय प्रानसमाना ॥ ४ ॥

उस ब्राह्मणका सोच करना चाहिये जो वेद पढ़ा हो और अपना धर्म छोड़ विषयोंमें फँसा हो ॥ ३ ॥ और उस राजाका सोच करना चाहिये जो नीति न जाने और जिसको प्रजा प्राणोंके समान प्यारी न हो ॥ ४ ॥

सोचिय वैश्य कृपन धनवानू ❀ जो न अतिथि शिवभक्तिसुजानू ॥ ५ ॥
सोचिय शूद्र विप्रअपमानी ❀ मुखर मानप्रिय ज्ञान गुमानी ॥ ६ ॥

उस वैश्यका सोच करना चाहिये जो धनवान् होकर कृपनता करै और अतिथि तथा महादेवका भक्त न हो ॥ ५ ॥ और हे प्यारे! उस शूद्रका सोच करना चाहिये जो ब्राह्मणोंका निरादर करै बहुत वाचाल और अभिमानी हो और ज्ञानका घमंड करनेवाला हो ॥ ६ ॥

सोचिय पुनि पति वंचक नारी ❀ कुटिल कलहप्रिय इच्छाचारी ॥ ७ ॥
सोचिय बटु निजव्रत परिहरई ❀ जो नहिं गुरु आयसु अनुसरई ॥ ८ ॥

फिर उस नारीका सोच करना चाहिये जो पतिसे छल करै, खोटी हो, कलहकारिणी हो, और स्वेच्छाचारिणि हो ॥ ७ ॥ उस ब्रह्मचारीका सोच करना चाहिये जो अपने व्रत और आचारको छोड़ गुरुकी आज्ञाके अनुसार न चलै ॥ ८ ॥

दो०-सोचिय गृही जो मोहबस, करै कर्मपथ त्याग ॥ ❀
सोचिय जती प्रपंचरत, बिगतबिवेकबिराग ॥ १७० ॥ ❀

उस गृहस्थका सोच करना चाहिये जो अज्ञानके वश धर्मके मार्गको छोड़ दे और उस संन्यासीका सोच करना चाहिये जो ज्ञान वैराग्यको छोड़ प्रपंच कहिये ठगविद्यामें प्रीति करै ॥ १७० ॥

चौ०-बैखानस सोइ शोचनयोगू ❀ तप बिहाय जेहि भावै भोगू ॥ १ ॥
सोचिय पिशुन अकारतक्रोधी ❀ जननि जनक गुरु बंधु बिरोधी ॥ २ ॥

'यस्माच्च येन च यथा च यदा च यच्च यावच्च यत्र च शुभाशुभमात्मकर्म ।
तस्माच्च तेन च तथा च तदा च तच्च तावच्च तत्र च विधातृवशादुपैति ॥ २ ॥

अर्थात् जिस कारणसे, जिसके करनेसे, जिस प्रकारसे, जिस समयमें जिस कालतक और जिस स्थानमें जो कुछ भला और बुरा कर्म है उसी कारणसे, उसीके द्वारा, उसी प्रकारसे, उसी समयमें, वही कर्म, उसी कालतक, उसी स्थानमें मनुष्य प्रारब्धके वशसे पाता है ॥ २ ॥

और होनहारको इसलिये बलवान् ठहराया कि कहीं भरत यह न कहैं कि ऐसे ज्ञानी मुनिके होतेभी यह अनर्थ भये ॥

(१) हानि आदि विधाताके हाथमें इसलिये कहीं कि इसमें किसीकी चलाई नहीं चलती ॥ हानीं लाभ आदि जो ६ बाते कहीं सो रामायणके प्रसंगमें घटती हैं यथा (१) अवधवासियोंकी हानि (२) देवता और वनवासी मुनि आदिकोंको लाभ (३) बिभीषण सुग्रीवका जीवन (४) रावणका मरण (५) भरत और लक्ष्मणजीका यश (६) और मंथरा और कैकेयीका अपयश ॥

वह तपस्वी शोचने योग्य है, जिसे तप छोड़कर भोग अच्छा लगता है ॥ १ ॥ और उसका सोच करना चाहिये जो छलिया हो और विनाकारण रोष करै; और उसका सोच करना चाहिये जो माता, पिता, गुरु और भाईके साथ विरोध करै ॥ २ ॥

सबविधि सोचिय परअपकारी ❀ निजतनुपोषक निर्दय भारी ॥ ३ ॥
सोचनीय सबही विधि सोई ❀ जो न छाँडि छल हरिजन होई ॥ ४ ॥

और उसका सब भाँति सोच करना चाहिये जो दूसरेका अपकार करता हो और अपने शरीरका पोषक तथा बड़ा निर्दई हों ॥ ३ ॥ और उसकाभी सब भाँति सोच करना चाहिये जो छलको छोड़ भगवान्का भक्त न हो ॥ ४ ॥

सोचनीय नहिं कोसलराऊ ❀ भुवनचारिदस प्रगटप्रभाऊ ॥ ५ ॥
भयउ न अहहि न होनिहुँ हारा ❀ भूप भरत जस पिता तुम्हारा ॥ ६ ॥
विधि हरिहर सुरपति दिसिनाथा ❀ बरनहिं सब दसरथ गुनगाथा ॥ ७ ॥

महाराज दशरथ सोचने योचने योग्य नहीं हैं जिनका प्रभाव चौदह लोकोंमें छारहा है ॥५॥ हे भरत! जैसे तुह्मारे पिता थे ऐसा राजा न हुआ, न है और न होनेवाला है ॥ ६ ॥ ब्रह्मा, विष्णु, महादेव, इन्द्र, दिक्पाल सब दशरथजीके गुणोंकी कथाका वर्णन करते हैं ॥ ७ ॥

दो०–कहहु तात केहिभाँति कोउ, करहि बडाई तासु ॥ ❀
राम लषन तुम सत्रुहन, सरिस सुअन सुचिजासु ॥ १७१ ॥❀

हे प्यारे! कहो उसकी बड़ाई कोई किस भांति करै जिसके रामचन्द्र, लक्ष्मण, तुम, और शत्रुहनके समान पवित्र पुत्र हैं ॥ १७१ ॥

चौ०–सबप्रकार भूपति बडभागी ❀ वाद विषाद करिय तेहि लागी ॥ १ ॥
यह सुनि समुझि शोच परिहरहू ❀ सिर धरि राज रजायसु करहू ॥ २ ॥

राजा सब भांति बड़भागी थे उनके लिये शोक करना वृथा है ॥ १ ॥ यह सुनकर और समझकर सोचको छोड़दो और राजाकी आज्ञाको मस्तकपर धारण करो ॥ २ ॥

राउ राजपद तुमकहँ दीन्हा ❀ पितावचन फुर चाहिय कीन्हा ॥ ३ ॥
तजे राम जेहि बचनहिं लागी ❀ तनु परिहरेउ रामबिरहागी ॥ ४ ॥

राजाने तुमको राजतिलक दिया सो पिताके वचनको सत्य करना चाहिये ॥ ३॥ जिस वचनके लिये रामचन्द्रजीको त्याग दिया और रामके वियोगरूपी अग्निमें शरीर छोड़ दिया ॥ ४ ॥

नृपहिं बचन प्रिय नहिं प्रियप्राना ❀ करहु तात पितुबचन प्रमाना ॥ ५ ॥
करहु सीस धरि भूप रजाई ❀ है तुमकहँ सबभाँति भलाई ॥ ६ ॥

राजाको बचन प्यारे थे प्राण नहीं प्यारे थे सोहे प्यारे! पिताके बचनोंको स्वीकार करो ॥५॥ राजाकी आज्ञाको माथेपर धरकर करो (इसीमें) तुमको सब भांति भलाई है ॥ ६ ॥

परशुराम पितुआज्ञा राखी ❀ मारी मातु लोक सब साखी ॥ ७ ॥
तनय ययातिहि यौवन दयऊ ❀ पितुआज्ञा अघ अजस न भयऊ ॥ ८ ॥

परशुरामने पिताकी आज्ञा यहांतक पाली की माताको मार डाला कि जिसका सब लोक

साक्षी है ॥ ७ ॥ ययातिके पुत्रने (पिताको) युवा अवस्था दी और पिताकी आज्ञासे न पाप हुआ और न अपयश हुआ ॥ ८ ॥

दो०-अनुचित उचित बिचार तजि, जे पालहिं पितुबैन ॥ ❀
ते भाजन सुखसुजसके, बसहिं अमरपतिऐन ॥ १७२ ॥ ❀

जो योग्य अयोग्यका विचार छोड़ पिताके वचनोंका पालन करते हैं वे सुख और सुन्दर यशके पात्र होकर स्वर्गमें निवास करते हैं ॥ १७२ ॥

चौ०-अवसि नरेसबचन फुर करहु ❀ पालहु प्रजासोक परिहरहू ॥ १ ॥
सुरपुर नृप पाइहिं उरितोषू ❀ तुम कहँ सुकृत सुजस नहिं दोषू ॥ २ ॥

राजाके वचनोंको अवश्यही सत्य करो और शोकको छोड़ प्रजाका पालन करो ॥ १ ॥ राजा स्वर्गमें संतोष पावेंगे और तुमको बड़ा पुण्य और सुन्दर यश मिलैगा (कुछ) दोष नहीं होगा ॥२॥

बेदबिहित संमत सबहीका ❀ जेहि पितु देइ सो पावै टीका ॥ ३ ॥
करहु राज परिहरहु गलानी ❀ मानहु मोर बचन हितजानी ॥ ४ ॥

वेदमें प्रगट है और सबकी संमति है कि, जिसे पिता दे वही राज्यपद पावे ॥ ३ ॥ ग्लानिको छोड़ राज्य करो और मेरे वचनको हितकारी जानकर मानों ॥ ४ ॥

सुनि सुख लहब राम वैदेही ❀ अनुचित कहहिं न पंडित केही ॥ ५ ॥
कौसल्यादि सकल महतारी ❀ तेउ प्रजासुख होहिं सुखारी ॥ ६ ॥

रामचन्द्र जानकीजीभी सुनकर सुख पावेंगे और कोई बुद्धिमान अयोग्य न कहैगा ॥ ५ ॥ कौशल्या आदि सब माताभी प्रजाके सुखसे सुखी होंगीं ॥ ६ ॥

मरम तुम्हार राम सब जानहिं ❀ सो सबबिधि तुमसम भल मानहिं ॥७॥
सौंपेहु राज रामके आए ❀ सेवा करेहु सनेहसुहाए ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजी तुह्मारे प्रेमको भली भाँति जानते हैं (इस लिये) वे सब भांति तुमसे भला मानैंगे ॥ ७ ॥ रामचन्द्रजी आजायँ तब उन्हैं राज्य सौंप देना और सुन्दर प्रीतिसे सेवा करना ॥ ८ ॥

दो०-कीजिय गुरुआयसु अवसि, कहहिं सचिव करजोरि ॥ ❀
रघुपति आये उचित जस, तब तस करब बहोरि ॥ १७३ ॥ ❀

मंत्री हाथ जोड़कर कहते है कि गुरुकी आज्ञाको अवश्य मानिये और जब रामचन्द्रजी आजायँ तब जैसा उचित हो तैसा करना ॥ १७३ ॥

---

(१) एक समय शुक्राचार्यकी पुत्री देवयानी और वृषपर्वाकी पुत्री शर्मिष्ठा स्नानके लिये गई। वहां भ्रमसे शर्मिष्ठामे देवयानीका वस्त्र धारण कर लिया। इसपर देवयानीने क्रोधकर शुक्राचार्यसे आय कहा· इन्होंने वृषपर्वाके उलाहना दिया। तब वृषपर्वा बोले कि देवयानी जिसमें प्रसन्न हो सो पूछकर कहिये. शुक्राचार्यने पूछकर कहाकि वह शर्मिष्ठाकों अपनी दासी बनाना चाहती है। तब वृषपर्वाने शर्मिष्ठाको हजार दासियोंसहित देवयानीके पास भेजदिया !फिर देवयानीका विवाह राजा ययातिके साथ हुआ और शर्मिष्ठाभी गई। एकदिन देवयानीने राजाको शर्मिष्ठाके संग विषय करते देख क्रुद्धहो अपने पितासे जा कहा। तब शुक्राचार्यने शापसे राजाको वृद्ध करदिया परन्तु जब उसने बहुत प्रार्थना करी तब शुक्राचार्यने कहाकि तेरे पुत्र तुझे युवावस्था देदें तौ तूं युवा हो सक्ता है। उसने अपने पुत्रोंसे अवस्था मांगी परन्तु उन्होंने नहीं दी, और शर्मिष्ठाके छोटे बेटेने दी, तबसे यही वंशमें राज्याधिकारी हुआ और अन्य पुत्रोंको ययातिने शाप दे राज्यसे भ्रष्ट किया ॥

चौ०–कौसल्या धरि धीरज कहई ❀ पूत पथ्य गुरुआयसु अहई ॥ १ ॥
सो आदरिय करिय हित मानी ❀ तजिय विषाद कालगति जानी ॥ २ ॥

कौशल्या धीरज धरकर कहती है कि हे पुत्र! गुरुकी आज्ञा करनेही योग्य है ॥ १ ॥ उसे आदरसे हित मानके कीजिये और कालकी गति जान शोक छोड़ दीजिये ॥ २ ॥

वन रघुपति सुरपुर नरनाहू ❀ तुम इहिभाँति तात कदराहू ॥ ३ ॥
परिजन प्रजा सचिव कह अंबा ❀ तुमहीं सुत सबकहँ अवलंबा ॥ ४ ॥

हे पुत्र! रामचन्द्र वनमें हैं, राजा स्वर्गमें हैं, और तुम इस भांति कचाते हो ॥ ३ ॥ माता कहती है, हे बेटा! कुटुम्बी प्रजा और मंत्री सबको तुम्हीं सहारे हो ॥ ४ ॥

लखि बिधिवाम कालकठिनाई ❀ धीरज धरहु मातु बलिजाई ॥ ५ ॥
सिर धरि गुरुआयसु अनुसरहू ❀ प्रजापालि पुरजनदुख हरहू ॥ ६ ॥

बिधाताको उलटा और समयकी कठिनता देख धीरज धरो; माता (तुम्हारी) बलि जाती है ॥५॥ गुरुकी आज्ञाको माथेपर रखकर मानो और प्रजाका पालन कर कुटुम्बियोंके दुःखका नाश करो ॥६॥

गुरुके बचन सचिव अभिनंदन ❀ सुनत भरत हिय हित जनु चंदन ॥ ७ ॥
सुनी बहोरि मातु मृदुबानी ❀ सील सनेह सरल रससानी ॥ ८ ॥

गुरुके वचन और मंत्रियोंका सराहना सुनतेही भरतजीके हृदयको चन्दनके समान हितकारी हुये ॥ ७ ॥ फिर शील प्रेम और सादेपनके रसमें सनी हूई माताकी मीठी वाणी सुनी ॥ ८ ॥

छं०–सानी सरलरस मातु बानी सुनि भरत ब्याकुल भए ॥ ❀
लोचनसरोरुह स्रवत सींचत बिरह उर अंकुर नए ॥ ❀
सो दसा देखत समय तेहिं बिसरी सबहि सुधि देहकी ॥ ❀
तुलसी सराहत सकल सादर सीम सहजसनेहकी ॥ ८ ॥ ❀

सादेपनके रसमें सनी हुई माताकी वाणी सुन भरतजी घबराये और कमलसमान नेत्रोंसे जल वर्षाकर मानों हृदयमें वियोगरूपी नये पौदोंको सींचने लगे उस समय भरतकी यह दशा देखते ही सबको अपनी देहकी सुधबुध भूलगई- और सब स्वाभाविक प्रेमकी सीमाको आदरसे सराहना करने लगे ॥ ८ ॥

सो०–भरत कमलकर जोरि, धरमधुरंधर धीर धरि ॥ ❀
बचन अमिय जनु बोरि, देत उचित उत्तर सबहिं ॥ ७ ॥ ❀

धर्मके भारको उठानेवाले भरतजी धीरज धर कमलसमान हाथ जोड़ और वचनोंको मानों अमृतसे सानकर सबको यथोचित उत्तर देने लगे कि ॥ ७ ॥

चौ०–मोहिं उपदेश दीन्ह गुरु नीका ❀ प्रजासचिवसंमत सबहीका ॥ १ ॥
मातु उचित पुनि आयसु दीन्हा ❀ अवसि सीस धरि चाहिय कीन्हा ॥ २ ॥

मुझे गुरुने अच्छी शिक्षा दी और प्रजा मंत्री और सबकी संमतिभी है ॥ १ ॥ फिर (जिसपर) माताने उचित आज्ञा दी है सो उसे अवश्यही शिरपर धरके करनी चाहिये ॥ २ ॥

गुरुपितुमातुस्वामिहितबानी ❀ सुनि मन मुदित करिय भलजानी ॥३॥
उचित कि अनुचित किए बिचारू ❀ धरम जाइ सिर पातकभारू ॥ ४ ॥

क्योंकि गुरु पिता माता और स्वामीकी सुन्दर वाणीको सुन मनमें प्रसन्न हो अच्छा जान करनी चाहिये ॥ ३ ॥ और उचित है या अनुचित है ऐसा विचार करनेसे धर्म जाता और माथेपर पापोंका भार होता है ॥ ४ ॥

तुम तौ देहु सरलसिख सोई ❀ जो आचरत मोर हित होई ॥ ५ ॥
यद्यपि यह समुझतहौं नीके ❀ तदपि होत परितोष न जीके ॥ ६ ॥

तुम तौ वही सीधी शिक्षा देते हो जिसके करनेसे मेरा भला हो ॥ ५ ॥ और यद्यपि इसे मैं भी अच्छी भांति समझताहूं तौभी मनको संतोष नहीं होता ॥ ६ ॥

अब तुम बिनय मोरि सुनि लेहू ❀ मोहिं अनुहरत सिखावन देहू ॥ ७ ॥
उत्तर देऊँ छमव अपराधू ❀ दुखित दोषगुन गनहिं न साधू ॥ ८ ॥

अब तुम मेरी विनती सुनलो और मेरी ओर देखकर शिक्षा दो ॥ ७ ॥ उत्तर देताहूं सो अपराधको क्षमा कीजिये. क्योंकि दुखी (मनुष्य) के गुणदोषको सज्जन नहीं गिनते हैं ॥ ८ ॥

दो०-पितु सुरपुर सियराम बन, करन कहहु मोहिं राज ॥ ❀
इहिते जानहु मोर हित, कैआपन बड़ काज ॥ १७४ ॥ ❀

पिता स्वर्गमें हैं, जानकी रामचन्द्र बनमें है, और मुझे राजा करना चाहते हो; क्या इसीसे मेरा भला और अपना बड़ा काम समझते हो ॥ १७४ ॥

चौ०-हित हमार सियपति सेवकाई ❀ सो हरिलीन्ह मातुकुटिलाई ॥ १ ॥
मैं अनुमान दीख मनमाहीं ❀ आन उपाय मोर हित नाहीं ॥ २ ॥

हमारा भला तौ रामचन्द्रकी सेवामेंही था सो माताकी कुटिलताने हर लिया ॥ १ ॥ मैंने मनही मनमें विचारकर देखलिया कि दूसरे उपायसे मेरा भला नहीं है ॥ २ ॥

सोकसमाज राज केहि लेखे ❀ लषनरामसियपद बिनुदेखे ॥ ३ ॥
वादि बसनबिनु भूषनभारू ❀ वादि बिरति बिनु ब्रह्मबिचारू ॥ ४ ॥

लक्ष्मणके बिना देखे और राम जानकीके चरणोंके दर्शन विना शोकका समाज यह राज किस गिनतीमें है ॥३॥ क्योंकि वस्त्रोंके विना भूषणोंका भार ऐसे वृथा है, जैसे ज्ञानके विना वैराग्य वृथा है॥४॥

सरुजसरीर वादि बहुभोगा ❀ बिनु हरिभक्ति जाय जपजोगा ॥ ५ ॥
जाय जीव विनुदेह सुहाई ❀ वादि मोर सब बिनु रघुराई ॥ ६ ॥

और रोगी शरीर हो तौ बहुतसे भोग वृथा हैं, और भगवान्‌की भक्तिके बिना जपयोग वृथा हैं ॥ ५ ॥ और जैसे जीव बिना सुन्दर देह वृथा है (उसी भाँति) रामचन्द्रजीके बिना मेरा सब सुख वृथा है (अर्थात् जो रामजी जीव थे सो तौ वनको गये अब मेरा मुर्देके समान देह है सो सुख क्या कामका ?) ॥ ६ ॥

जाउँ रामपहँ आयसु देहू ❀ एकहि अंक मोर हित एहू ॥ ७ ॥
मोहिं नृप करि आपनभल चहहू ❀ सो सनेह जडताबस कहहू ॥ ८ ॥

(इसलिये) आज्ञा दो तौ रामचन्द्रजीके पास जाऊं क्योंकि एक इसी बातमें मेरा कल्याण है ॥७॥ और तुम जो मुझे राजा बनाकर अपना भला चाहते हो यह प्रेम और अज्ञानके वश कहते हो ॥८॥

दो०-कैकेयीसुत कुटिलमति, रामबिमुख गतलाज ॥ ❀
तुम चाहत सुख, मोहबस मोहिंसे अधमके राज ॥ १७५ ॥ ❀

मैं कैकेयीका तौ पुत्र हूं, कुटिल मेरी बुद्धि है, रामचन्द्रजीसे विमुख और निर्लज्ज हूं, ऐसे मुझसरीखे पापीके राज्यमें तुम अज्ञानके वश होकर सुख चाहते हो (सो कहाँ धराहै) ॥ १७५ ॥

चौ०-कहौं साँच सब सुनि पतियाहू ❀ चाहिय धरमसील नरनाहू ॥ १ ॥
मोहिं राज हठि देहहु जबहीं ❀ रसा रसातल जाइहि तबहीं ॥ २ ॥

(भरतजी बोले) मैं ठीक कहताहूं सो सुनकर सब विश्वास करो कि राजा तौ धर्मशील[1] होना चाहिये ॥१॥ और ज्यौंहीं मुझे हठ करके राज्य दोगे त्यौंहीं पृथ्वी रसातलको चली जायगी ॥२॥

मोहिं समान को पापनिवासी ❀ जेहिलगि सीयराम वनबासी ॥ ३ ॥
राउ रामकहँ कानन दीना ❀ बिछुरत गमन अमरपुर कीना ॥ ४ ॥

मेरे समान कौन दूसरा पापोंका पात्र है जिसके लिये रामचन्द्र सीताजी वनके वासीहुये ॥ ३ ॥ राजाने रामचन्द्रजीको वन दिया (और उनके) बिछुड़तेही (आपभी) स्वर्गको पधारे ॥ ४ ॥

मैं शठ सब अनरथकरहेतू ❀ बैठि बात सब सुनहुँ सचेतू ॥ ५ ॥
बिनु रघुबीर बिलोकि अवासू ❀ रहे प्रान सहि जगउपहासू ॥ ६ ॥

मैं मूर्खही सब अनर्थोंका कारण हूं जो बैठकर सब बातोंको मन लगाकर सुन रहाहूं ॥५॥ विना रामचन्द्रके इन स्थानोंको देखकर जो मेरे प्राण रह गये सो मैंने संसारकी हँसीभी सहलीनी ॥ ६ ॥

राम पुनीत विषयरसरूखे ❀ लोलुप भूमि भोगके भूखे ॥ ७ ॥
कहँलगि कहऊँ हृदयकठिनाई ❀ निदरि कुलिस जेहिं लई बड़ाई ॥ ८ ॥

और मेरे प्राण रामचन्द्रजीके पवित्र विषयके रससे रूखे हैं और राज्यके लोभी और राजभोगके भूखे हैं ॥ ७ ॥ और अपने हृदयकी कठोरताको कहांतक कहूं ! जिसने वज्रकीभी निन्दा करके बड़ाई ली है, अर्थात् वज्रसेभी कठोर है जो रामके वियोगसे नहीं फटगया ॥ ८ ॥

दो०-कारनते कारज कठिन, होइ दोष नहिं मोर ॥ ❀
कुलिस अस्थितें उपलतें, लोह कराल कठोर ॥ १७६ ॥ ❀

कारणसे[2] कार्य कठिन होताही है (इसमें) मेराभी दोष नहीं. जैसे (दधीचि ऋषिकी) हड्डीसे उत्पन्न हुआ वज्र और पत्थरसे उत्पन्न हुआ लोहा महाकठोर होता है ॥ १७६ ॥

चौ०-कैकेयीभव तनुअनुरागे ❀ पामर प्रान अघाइँ अभागे ॥ १ ॥
जो प्रियबिरह प्रान प्रियलागे ❀ देखब सुनब बहुत अब आगे ॥ २ ॥

कैकेयीसे उत्पन्न हुये और शरीरसे प्रीति करनेवाले मेरे प्राण बड़े नीच और पूरे अभागे हैं ॥१॥ जो प्राणोंको प्यारे (रघुनाथजी) का वियोग प्यारा लगा तौ अब आगे बहुत (दुःख) देखैं और सुनैंगे ॥२॥

लषनरामसिय कहँ बन दीन्हा ❀ पठइ अमरपुर पतिहित कीन्हा ॥ ३ ॥
लीन्हेउ विधवन अपजस आपू ❀ दीन्हेउ प्रजहिं सोक संतापू ॥ ४ ॥

कैकयीने लक्ष्मण रामचन्द्र और जानकीजीको वनवास दिया और देवलोक भेजकर पतिका हित किया ॥३॥ और आपने विधवापन और अपयश लिया और प्रजाको शोक तथा संताप दिया ॥४॥

मोहिं दीन सुख सुजस सुराजू ❀ कीन्ह कैकयी सबकर काजू ॥ ५ ॥
इहिते मोर काह अबनीका ❀ तेहिपर देन कहहु तुम टीका ॥ ६ ॥

---

[1] जैसा कहा है कि—

'यः कुलाभिजनाचारे रतिशुद्धः प्रतापवान् । धार्मिको नीतिकुशलः स स्वामी युज्यते भुवि ॥ १ ॥
अर्थात् जो कुलाचार और लोकाचारमें निपुण हो तथा प्रतापी, धर्मशील और नीतिमें निपुण हो वह पृथ्वीपर राजा होनेके योग्य होताहै ॥ १ ॥

(२) जैसे हड्डी और पाषाण कारण हैं उनसे वज्र और लोंहा जो कार्यके स्थानमें हैं सो कठिन हैं इसी प्रकार कैकेयी कारण है, उससे मैं महाकठिन उत्पन्न हुआ.

और मुझे सुख, सुन्दर यश और सुन्दर राज्य दिया सो कैकयीने सबकाही काम किया ॥५॥ अब इससेभी अधिक मेरा क्या भला होना बाकी है, और तिसपर तुम राज्यतिलक देना चाहते हो ॥६॥

कैकेइजठर जनमि जगमाहीं ❀ यह मोहिं कहँ कछु अनुचित नाहीं ॥७॥
मोर बात सबविधिहि बनाई ❀ प्रजा पंचकत करहु सहाई ॥ ८ ॥

सो कैकयीके पेटसे जन्म लेकर यह (बात) संसारमें मुझको कुछ अनुचित नहीं हैं ॥ ७ ॥ मेरी सब बात तौ ब्रह्माहीने बना दी है. प्रजा और पञ्च लोग क्यों सहायता करते हो ॥ ८ ॥

दो०-ग्रहगृहीत पुनि बातबस, तेहि पुनि बीछीमार ॥ ❀
ताहि पियाइय बारुनी, कहहु कौन उपचार ॥ १७७ ॥ ❀

जिसको कठिन ग्रह लगे हैं, पुनि सन्निपात[1] रोगके वश है, तिसपर फिर विच्छूने काट खाया उसेभी फिर मदिरा पिला दी जावे तौ कहो उसके वचनेका क्या उपाय है ? ॥ १७७ ॥

चौ०-कैकेयिसुअन जोग जग जोई ❀ चतुर बिरंचि रचेउ मोहिं सोई ॥ १ ॥
दसरथतनय रामलघु भाई ❀ दीन मोहिं विधि वादि बडाई ॥ २ ॥

कैकेयीके पुत्रके योग्य जो कुछ संसारमें होना चाहिये था सो चतुर विधाताने मेरे लिये वही रच दिया ॥१॥ परंतु मै दशरथका पुत्र और रामचन्द्रका छोटा भाई हूं यह बड़ाई मुझे विधाताने वृथाही दी ॥ २ ॥

तुम सब कहहु कढावन टीका ❀ राय राज सबही कहँ नीका ॥ ३ ॥
उतर देउँ केहि विधि केहि केही ❀ कहहु सुखेन यथारुचि जेही ॥ ४ ॥

और तुम जो सब राजतिलक करानेको कहते हो सो राजा होना और राज्य तो सभीको अच्छा लगता है ॥ ३ ॥ पर मैं किस २ को किस भांति उत्तर दूं इस लिये जिसकी जैसी इच्छा हो वह भलेही कहो ॥ ४ ॥

मोहिं कुमातुसमेत बिहाई ❀ कहहु कहिहि को कीन भलाई ॥ ५ ॥
मोहिं बिनु को सचराचरमाहीं ❀ जेहिं सियराम प्रानप्रिय नाहीं ॥ ६ ॥

(अथवा तुमभी सत्य कहते हो क्योंकि) कुटिल माता और मुझे छोड़कर कहो कौन है जिसने ऐसी भलाई कीहो ॥५॥ मेरेविना चराचरमें कौन है जिसे सीतारामचन्द्र प्राणोंसे प्यारे नहीं हैं ॥६॥

परमहानि सबकहँ बड लाहू ❀ अदिन मोर नहिं दूषन काहू ॥ ७ ॥
संसय सील प्रेमबस अहहू ❀ सबै उचित सब जो कछु कहहू ॥ ८ ॥

रामके वनवाससे इतनी बड़ी तौ हानि हुई पर सबको बड़ा लाभ दीखता है, सो यह मेरा ही कुसमय है, किसीका दोष नहीं ॥ ७ ॥ (अवध उजड़नेके) संदेह और अपने शील, सुभाव और प्रेम इनके वशमें हो रहे हो इस्से जो कुछ कहो वह सब सबको उचित ही है ॥ ८ ॥

दो०-राममातु सुठि सरलचित, मोपर प्रेम विसेषि ॥ ❀
कहहिं सुभाव सनेहबस, मोरि दीनता देषि ॥ १७८ ॥ ❀

रामचन्द्रजीकी माताका सुन्दर सीधा सुभाव है और मुझपर अधिक प्रेम है, सो वह सुभावसे स्नेहके वश मेरी दीनताको देखकर कहती हैं ॥ १७८ ॥

---

(१) यहां यह आशय है–भरतजी कहते हैं कि मैं जो कैकेयीके उदरसे हुआ मानों मुझे ग्रह लगे, और पिताकी मृत्यु सन्निपात रोग हुआ, और रामचन्द्रजीका वनको जाना ऐसा हुआ मानों विच्छूने डंक मारा फिर अब तुम सब मिलकर मुझे राजरूपी मद पिलाते हो, तो बताओ फिर मेरे बचनेका क्या उपाय है ॥

चौ०–गुरुविवेकसागर जगजाना ❀ जिनहिं विस्व कर बदरसमाना ॥ १ ॥
मोकहँ तिलक साज सजि सोऊ ❀ भा विधिविमुख विमुख सब कोऊ ॥ २ ॥

और संसारमें विख्यात, ज्ञानके समुद्र हमारे गुरु कि जिनके हाथमें संसार वेरके समान हो रहा है ॥ १ ॥ वहभी मेरेही लिये तिलकका साज सजा रहे हैं, सो विधाताको विमुख होनेसे सब कोई विमुख हो रहा है ॥ २ ॥

परिहरि रामसीय जगमाहीं ❀ कोइ न कहहिं मोर मत नाहीं ॥ ३ ॥
सो मैं सुनब सहब सुख मानी ❀ अंतहु कीच तहाँ जहँ पानी ॥ ४ ॥

रामचन्द्र जानकीजीको छोड़कर संसारमें कोई न कहैगा कि (रामवनोवासमें) मेरी संमति नहीं है ॥ ३ ॥ सो मैं सुख मानकर सुनूंगा और सहूंगा परंतु अंतमें कीच वहाँही होती है जहां पानी होता है ॥ ४ ॥

डर न मोहिं जग कहहि कि पोचू ❀ परलोकहु कर नाहिंन सोचू ॥ ५ ॥
एकै बड उर दुसह दवारी ❀ मोहिं लगि भे सियराम दुखारी ॥ ६ ॥

संसार मुझे पोच कहै, नीच या डरपोक भलेही कहै, (इसका) मुझे डर नहिं है, और परलोकका भी मुझे सोच नहीं है ॥ ५ ॥ हृदयमें एकही वड़ी कठिन जलन है, कि मेरे लिये सीता रामचन्द्रजी दुखी हुये ॥ ६ ॥

जीवनलाहु लषन भल पावा ❀ सब तजि रामचरन मन लावा ॥ ७ ॥
मोर जनम रघुवरबन लागी ❀ झूठ कहौं पछिताउँ अभागी ॥ ८ ॥

और जीनेका लाभ तौ लक्ष्मणजीने अच्छा पाया जो सबको छोड़ रामचन्द्रजीके चरणोंमें मन लगाया ॥ ७ ॥ और मेरा जन्म तौ रामचन्द्रजीको वनवासके लिये हुआ है, मैं अभागा, झूठ मूठ पछताता और कहताहूं ! ! ॥ ८ ॥

दो०–आपनि दारुन दीनता, सबहिं कहेउँ समुझाय ॥ ❀
देखेबिनु रघुवीरपद, जियकी जरनि न जाय ॥ १७९ ॥ ❀

मैं अपनी कठिन दीनता सबसे समुझाकर कह देताहूँ कि रामचन्द्रजीके चरण देखे विना मेरे हृदयकी जलन नहीं जायगी ॥ १७९ ॥

चौ०–आन उपाय मोहिं नहिं सूझा ❀ को जियकी रघुवरबिनु बूझा ॥ १ ॥
एकहिं आँक इहै मनमाहीं ❀ प्रातकाल चलिहौं प्रभुपाहीं ॥ २ ॥

और दूसरा उपाय मुझे नहीं सूझता परंतु यह रामचन्द्रजीके विना मनकी कौन जान सकता है ॥ १ ॥ सो मनमें एकही ठन रही है कि सबेरे रामचन्द्रजीके पास चलूंगा ॥ २ ॥

जद्यपि मैं अनभल अपराधी ❀ भै मोहिं कारन सकल उपाधी ॥ ३ ॥
तदपि सरन सन्मुख मोहिं देषी ❀ छमि सब करिहहिं कृपाबिसेषी ॥ ४ ॥

यद्यपि मैं निरा खोटा और अपराधी हूं और मेरेही कारण सब उपाधी हुई ॥ ३ ॥ तौभी मुझे शरण (आया हुआ) सामने देखकर सब अपराधको क्षमाकर अधिक कृपा करैंहीगे ॥ ४ ॥

सील सकुच सुठि सरलसुभाऊ ❀ कृपासनेहसदन रघुराऊ ॥ ५ ॥
अरिहू अनभल कीन्ह न रामा ❀ मैं सिसु सेवक जद्यपि वामा ॥ ६ ॥

क्यों कि रामजीका शील सुभाव संकोची और अत्यंत सीधा है और कृपा और प्रेमके स्थान हैं ॥५॥ रामचन्द्रजीने शत्रुकाभी बुरा नहीं किया सो मैं तो बालक सेवकहूं; जो टेढ़ा हूं तौ क्या है ॥ ६ ॥

तुम पै पाँच मोर भलमानी ❀ आयसु आसिष देहु सुवानी ॥ ७ ॥
जेहिं सुनी बिनय मोहिं जन जानी ❀ आवहिं बहुरि राम रजधानी ॥ ८ ॥

सो तुम पंचमी मेरा भला समझकर सुन्दर वाणीसे आशीर्वाद और आज्ञा दो ॥ ७ ॥ जिससे मेरी विनती सुन और मुझे दास जान रामचन्द्रजी राजधानीको लौट आवें ॥ ८ ॥

दो०-जद्यपि जनम कुमातुते, मैं सठ सदा सदोस ॥ ❀
आपन जानि न त्यागिहैं, मोहिं रघुवीरभरोस ॥ १८० ॥ ❀

यद्यपि (मेरा) जन्म बुरी मातासे हुआ है और मैं मूर्ख सदासे दोषी हूं, तौभी मुझे रामचन्द्रजीका भरोसा है कि (वे मुझे) अपना जानकर नहीं छोड़ेंगे ॥ १८० ॥

चौ०-भरतवचन सबकहँ प्रिय लागे ❀ रामसनेहसुधाजनु पागे ॥ १ ॥
लोगवियोग विषम दुख दागे ❀ मंत्र सजीव सुनत जनु जागे ॥ २ ॥

भरतजीके बचन सबको ऐसे प्यारे लगे मानों रामचन्द्रजीके प्रेमरूपी अमृतमें डूबे हुये थे ॥१॥ सब लोग जो रामवियोगरूपी कठिन दुःखसे दगे थे अर्थात् वेहोश हो रहेथे वे इन भरतके वचन सुनकर ऐसे जग उठे जैसे मरा मनुष्य सजीवन मंत्रसे जग उठता है ॥ २ ॥

मातु सचिव गुरु पुरनरनारी ❀ सकल सदेहबिकल भे भारी ॥ ३ ॥
भरतहिं कहहिं सराहिं सराहीं ❀ रामप्रेममूरति तनु आहीं ॥ ४ ॥

माता, मंत्री, गुरु और नगरके नरनारी सब प्रेमसे बहुत विकल होगये ॥ ३ ॥ भरतजीको सराह २ कर कहते हैं कि रामचन्द्रजीके प्रेमने ही मूर्त्तिमान् शरीर धारण किया है ॥ ४ ॥

तातभरत अस काहि न कहहू ❀ प्रानसमान रामप्रिय अहहू ॥ ५ ॥
जो पामर आपनि जडताई ❀ तुमहिं सुगाइ मातुकुटिलाई ॥ ६ ॥

हे प्यारे भरत! ऐसे क्यों न कहोगे (क्यों कि) तुम रामचन्द्रजीको प्राणोंके समान प्यारे हो ॥ ५ ॥ वह नीच है जो अपनी मूर्खतासे माताकी कुटिलाईको तुम्हारे सिर धरै ॥ ६ ॥

सो सठ कोटिनपुरुषसमेता ❀ बसहिं कल्पसत नरकनिकेता ॥ ७ ॥
अहिअघअवगुन मनि नहिं गहई ❀ हरै गरल दुख दारिद दहई ॥ ८ ॥

वह मूर्ख करोड़ों पीढ़ियोंसमेत्त सौ कल्पतक नरक स्थानमें रहैगा ॥ ७ ॥ (यदि आप कहैं कि हम कैकेयीके गर्भसे हुये हैं, तहाँ कहते हैं कि देखो) मणि सर्पके पाप और अवगुणोंको नहीं लेता ७ (वरन्) वह विषके दुखको हरता है और दरिद्रको जला देता है (ऐसेही आपभी रामवियोगरूपी दुःखको दूर कर दर्शनरूपी धनको दिलाकर हमारे दरिद्रको नाश करदोगे) ॥ ८ ॥

दो०-अबसि चलिय वन रामजहँ, भरत मंत्र भल कीन्ह ॥ ❀
सोकसिंधुबूड़त सबहि, तुम अवलंबन दीन्ह ॥ १८१ ॥ ❀

हे भरत! (तुमने) अच्छी बात विचारी. जहाँ वनमें रामचन्द्रजी हैं (वहां) अवश्य चलिये (कदाचित् कहो कि पहिले तौ इसके विपरीत कहते थे और राज्य देना चाहते थे तहाँ कहते हैं

---

(१) कहीं २ इस चौपाइके पाठमें अन्तरभी है जैसे—

"लोग वियोग विषमविष दागे । मंत्र सबीज सुनत जनु जागे"

सो जहाँ ऐसा पाठ है वहाँ यह अर्थ समझना कि 'वे सुनतेही ऐसे सचेत हो जाग उठे जैसे गरुड़जीके बीजयुक्त मन्त्रोंके सुनतेही (सर्पके विषसे अचेत मनुष्य जाग पड़ते हैं)' ॥

कि) हम सब शोकसमुद्रमें डूब रहे थे (हमको इतना होश कहाँ था) अब तुमने सहारा दिया है तब हमारे जीमें जी आया है ॥ १८१ ॥

चौ०–भा सबके मन मोद न थोरा ❀ जनु धन धुनि सुनि चातक मोरा ॥ १ ॥
चलब प्रात लखि निर्नय नीके ❀ भरत प्रानप्रिय भे सबहीके ॥ २ ॥

सबके मनमें ऐसा अधिक आनन्द हुआ जैसे मेघकी गर्जना सुनकर चातक और मोर प्रसन्न होते हैं ॥१॥ सवेरेही चलनेका निश्चय अच्छी भांति देखकर भरतजी सबको प्राणोंसे प्यारे लगने लगे॥२॥

मुनिहिं बंदि भरतहिं सिरनाई ❀ चले सकल घर बिदा कराई ॥ ३ ॥
धन्य भरतजीवन जगमाहीं ❀ सीलसनेह सराहत जाहीं ॥ ४ ॥

मुनीश्वरको दंडवतकर और भरतको शिर नवाय बिदा होकर सब घरको चले॥३॥ और उनके शील और प्रेमकी सराहना करते हुये चलतेमें कहते जाते हैं कि, संसारमें भरतजीके जीनेको धन्य है ॥४॥

कहहिं परस्पर भा बड काजू ❀ सकल चलै कर साजहिं साजू ॥ ५ ॥
जेहिं राखहिं घर रहु रखवारी ❀ सो जानै जनु गरदन मारी ॥ ६ ॥
कोउ कह रहन कहिय नहिं काहू ❀ को न चहै जगजीवनलाहू ॥ ७ ॥

आपसमें कहते हैं कि, बड़ा काम हुआ; और सब चलनेका सामान सजाने लगे ॥ ५ ॥ जिसको रखते हैं कि, घरकी रखवालीपर रहो, वह जानता है मानों गर्दनही मारी ॥६॥ कोई कहते हैं कि किसीको रहनेके लिये मत कहो, क्योंकि संसारमें जीनेके लाभको कौन नहीं चाहता ? ॥ ७ ॥

दो०–जरौ सुसंपतिसदन सुख, सुहृद मातु पितु भाइ ॥ ❀
सन्मुख होत जो रामपद, करै न सहजसहाइ ॥ १८२ ॥ ❀

और यह सुन्दर संपत्ति महल, सुख, मित्र, माता, पिता और भाई सब भलेही जलें, जो रामचन्द्रजीके चरणोंके दर्शन होनेमें चित्तसे सहायता न करै ॥ १८२ ॥

चौ०–घरघर बाहन साजहिं नाना ❀ हरष हृदय परभात पयाना ॥ १ ॥
भरत जाइ घर कीन्ह बिचारू ❀ नगर बाजि गज भवन भँडारू ॥ २ ॥

अब तौ अवधपुरीमें घर २ (हाथी घोड़े पालकी आदि) अनेक वाहन सजने लगे (और सबके) मनमें खुशी है कि, सबेरे कूच होगा ॥ १ ॥ भरतजीने घर आकर विचार किया कि नगर घोड़े हाथी धन और धाम ॥ २ ॥

संपति सब रघुपतिकी आही ❀ जो बिनुजतन चलौं तजि ताही ॥ ३ ॥
तौ परिनाम न मोरि भलाई ❀ पापि सिरोमनि साँइदुहाई ॥ ४ ॥

सब संपत्ति रामचन्द्रजीकीही है जो इसे विना रक्षाके छोड़ चलूं ॥३॥ तौ अंतमें मेरा अच्छा न होगा, मैं स्वामीकी सौगन्द खाकर कहता हूं कि मैं पापियोंका शिरोमणि बाजूंगा ॥ ४ ॥

करहि स्वामिहित सेवक सोई ❀ दूषनकोटि देइ कि न कोई ॥ ५ ॥
अस बिचारि सुचि सेवक बोले ❀ जे सपनेहुँ निजधरम न डोले ॥ ६ ॥

---

(१) कौशल्याने दशरथजीके विलापसमय भरतजीसे कहा था कि–

धीरज धरहु तौ पाइय पारू । नाहिं तौ बूड़िय सब परिवारू ॥

उसीका उद्धार इस दोहेमें किया गया है ॥

(२) रामजीका स्वरूप मेघसमान है, करुणारूप जल उसमें भरा है, उसके पानेकी आशा भई इस लिये 'चातक' शब्दका, और रघुनाथजीसे भेट होना मानों मेघकी गर्जना है, जिसे सुन मोर प्रसन्न होता है इसलिये 'मयूर' शब्दका प्रयोग है ॥

सेवक वही है जो स्वामीका हित करै; चाहै कोई करोड़ दोष क्यों न देवे ॥ ५ ॥ ऐसा विचार भरोसेके सेवक बुलाये जो स्वप्नमेंभी अपने धर्मसे नहीं डिगे थे ॥ ६ ॥

कहि सब मरम धरम सब भाषा ❀ जो जेहिं लाइक सो तहँ राषा ॥ ७ ॥
करि सब जतन राखि रखवारे ❀ राममातुपहँ भरत सिधारे ॥ ८ ॥

सब भेद कहकर सब धर्म समझाया और जो जिस लायक था उसे वहां नियत किया ॥ ७ ॥ सब उपायकर और रखेवारे रखकर भरतजी रामचन्द्रजीकी माताके पास गये ॥ ८ ॥

दो०–आरत जननी जानि सब, भरत सनेह सुजान ॥ ❀
कहेउ सजावन पालकी, सजन सुखासन यात ॥ १८३ ॥ ❀

प्रेमको जाननेवाले भरतजीने सब माताओंकी दुखी जानकर पालकी और सुखसे बैठने योग्य सुखपाल सजानेको कहा ॥ १८३ ॥

चौ०–चक चकईइव पुरनरनारी ❀ चलब प्रात उर आरत भारी ॥ १ ॥
जागत सब निसि भयउ बिहाना ❀ भरत बुलाए सचिव सुजाना ॥ २ ॥

नगरके नरनारियोंके हृदयमें चकवा चकवियोंकी भांति उत्कंठा है कि सवेरे चलैंगे ॥ १ ॥ सब रातभर जगते २ सवेरा होगया तब भरतजीने चतुर मंत्री बुलाये ॥ २ ॥

कहेउ लेहु सब तिलकसमाजू ❀ बनहिं देव मुनि रामहिं राजू ॥ ३ ॥
बेग चलहु सुनि सचिव जुहारे ❀ तुरत तुरँग रथ नाग सँवारे ॥ ४ ॥

और कहा कि तिलकका सब सामान ले चलो. वसिष्ठ मुनि वनमेंही रामचन्द्रजीको राज्य देंगे ॥३॥ सो शीघ्र चलो, यह सुनकर मंत्रियोंनें दंडवत करी और तुरंत घोड़े हाथी और रथ सजाये ॥४॥

अरुंधती अरु अग्निसमाऊ ❀ रथ चढ़ि चले प्रथम मुनिराऊ ॥ ५ ॥
विप्रवृंद चढ़ि वाहननाना ❀ चले सकल तपतेजनिधाना ॥ ६ ॥

और पहले मुनिराज (वसिष्ठजी) अरुंधती (अपनी स्त्री) और अग्निहोत्रके पात्रोंसमेत रथपर चढ़के चले ॥५॥ फिर संपूर्ण तप और तेजकी खानि ब्राह्मणोंके झुंड अनेक वाहनोंपर चढ़कर चले ॥ ६ ॥

नगरलोग सब सजिसजि याना ❀ चित्रकूटकहँ कीन्ह पयाना ॥ ७ ॥
सिबिका सुभग न जाइँ बखानी ❀ चढ़िचढ़ि चलत भईं सब रानी ॥ ८ ॥

और नगरके सब लोगोंने (अपनी २) सवारी सजा२कर चित्रकूटको प्रस्थान किया ॥७॥ और जिनकी सुन्दरताका वर्णन नहीं हो सकता ऐसी सुन्दर पालकियोंपर चढ़२कर सब रानियां चलती हुईं॥८॥

दो०–सौंपि नगर सुचिसेवकन्हि, सादर सबहिं चलाइ ॥ ❀
सुमिरि रामसियचरन तब, चले भरत दोउ भाइ ॥ १८४ ॥ ❀

भरोसेके सेवकोंको नगर सौंपकर और आदरसहित सबको आगे चलाकर सीता रामचन्द्रजीके चरणोंका स्मरण करके फिर भरत और शत्रुघ्न दोनों भाई चले ॥ १८४ ॥

चौ०–रामदरसहित सब नरनारी ❀ जनु करि करिनि चले तकि वारी ॥ १ ॥
बन सियराम समुझि मनमाहीं ❀ सानुज भरत पयादहि जाहीं ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीके दर्शनोंके लिये सब नरनारी कैसे वेगसे जाते हैं मानों (प्यासके मारे) हाथी हथिनी पानी देखकर जाते हैं ॥ १ ॥ सीतारामचन्द्रजी वनमें हैं यह मनमें समझ भरत छोटे भाई शत्रुघ्न सहित पैदलही चले जाते हैं ॥ २ ॥

देखि सनेह लोग अनुरागे ❀ उतरि चले रथ नग हय त्यागे ॥ ३ ॥
जाइ समीप राखि निजडोली ❀ राममातु मृदुबानी बोली ॥ ४ ॥

इस प्रेमको देख सब लोग प्रेममें मग्न होगये और हाथी घोड़े और रथको छोड़ २ उतर कर (पैरों) चलने लगे ॥ ३ ॥ (यह दशा देखकर) रामजीकी माता पास जाकर और अपनी पालकीको ठहराकर मीठी बाणी बोली ॥ ४ ॥

तात चढहु रथ बलि महतारी ❀ होइहि प्रिय परिवार दुखारी ॥ ५ ॥
तुम्हरे चलत चलहिं सब लोगू ❀ सकल सोक कृस नहिं मगजोगू ॥ ६ ॥

हे प्यारे ! माता बलि जाती है, तुम रथपरही चढ़लो क्योंकि प्यारा कुटुंब दुखी होता है ॥५॥ तुम्हारे (सवारीमें) चलनेसे सब लोग सवारीमें चलैंगे, क्योंकि सब दुःखसे दुवले हो रहे हैं मार्गमें चलने योग्य नहीं हैं ॥ ६ ॥

सिरधरि बचन चरन सिर नाई ❀ रथचढ़ि चलत भये दोउ भाई ॥ ७ ॥
तमसा प्रथम दिवस करि वासू ❀ दूसर गोमतितीर निवासू ॥ ८ ॥

(माताके) वचनोंको सिरपर धर चरणोंको सिर नवाय दोनों भाई रथपर चढ़ कर चलते हुये ॥७॥ पहले दिन तमसा नदीपर वास कर दूसरे दिन गोमतीके किनारेपर निवास किया ॥८॥

दो०-पयअहार फलअसन इक, निसिभोजन सब लोग ॥ ❀
करत रामहित नेम व्रत, परिहरि भूषन भोग ॥ १८५ ॥ ❀

सब लोग दूधका आहार वा फल भोजन रातको एकवार करने लगे और रामजीके निमित्त आभूषण और संसारके भोग छोड़कर नेम व्रत करने लगे ॥ १८५ ॥

चौ०-सईतीर वस चलेविहाने ❀ सृंगवेरपुर सब नियराने ॥ १ ॥
समाचार सब सुने निषादा ❀ हृदय विचार करै सविषादा ॥ २ ॥

सई नदीके किनारे रहकर प्रातःकालही चले और सब लोग शृंगवेरपुरके पास पहुँचे ॥ १ ॥ निषादने सब समाचार सुने और वह विषादसहित मनमें बिचार करने लगा कि-॥ २ ॥

कारन कवन भरत बन जाहीं ❀ है कछु कपटभाव मनमाहीं ॥ ३ ॥
जोपै जिय न होति कुटिलाई ❀ तौ कत लीन्हि संग कटाई ॥ ४ ॥

क्या कारण है जो भरतजी वनको जाते हैं; कुछ न कुछ मनमें कपटका भाव है, क्योंकि ॥३॥ जो मनमें कुटिलाई न होती तौ साथमें सेना क्यों लीन्ही है ? ॥ ४ ॥

जानहिं सानुज रामहिं मारी ❀ करौं अकंटक राज सुखारी ॥ ५ ॥
भरत न राजनीति उर आनी ❀ तब कलंक अब जीवन हानी ॥ ६ ॥

यह समझते होंगे कि छोटे भाईसहित रामचन्द्रजीको मार सुखपूर्वक अकंटक राज्य करूं ॥५॥ सो भरतने हृदयमें राजनीति न समझी· तब तौ कलंकही था अब जीनेमेंभी हानि हुई ॥ ६ ॥

सकल सुरासुर जुरहिं जुझारा ❀ रामहिं समर न जीतनहारा ॥ ७ ॥
का आचरज भरत अस करहीं ❀ नहिं विषवेलि अमियफल फलहीं ॥ ८ ॥

जूझनेवाले सब देवता और राक्षस जुड़ जायँ तौभी कोई रामचन्द्रजीको लड़ाईमें जीतनेवाला नहीं है ॥ ७ ॥ और जो भरतजी ऐसाही करते हैं तौभी क्या अचंभा है, कहीं विषकी वेलिमें अमृतके फल नहीं फलते हैं ॥ ८ ॥

दो०-अस बिचारि गुह ज्ञातिसन, कहेउ सजग सब होहु ॥ ❀
अथवा सहु बोरहु तरनि, कीजिय घाटा रोहु ॥ १८६ ॥ ❀

ऐसा विचार निषादने जातिके लोगोंसे कहा कि सब सावधान होजाओ और पतवार और नावको डुबो दो और घाटोंको रोकदो ॥ १८६ ॥

चौ०-होहु सजोइल रोकहु घाटा ❀ ठाटउ सकल मरनकै ठाटा ॥ १ ॥
संमुख लोह भरतसन लेहू ❀ जियत न सुरसरि उतरन देहू ॥ २ ॥

सावधान होकर घाट रोको और मरनेका सब ठाट तयार कर लो ॥ १ ॥ भरतके सामने हथियार लो और जीतेजी गंगाजी मत उतरने दो ॥ २ ॥

समरमरन पुनि सुरसरितीरा ❀ रामकाज छिनभंगु सरीरा ॥ ३ ॥
भरतभाइनृप मैं जन नीचू ❀ बडेभाग अस पाइय मीचू ॥ ४ ॥

लड़ाईमें मरना, गंगाजीका किनारा, रामचन्द्रजीका काम और क्षणमें नाश होनेवाला शरीर ॥ ३ ॥ (इससे अच्छा और क्या होगा) कहां तौ राजा रामचन्द्रजीके भाई भरत और कहां मैं नीच जन; सो बड़े भाग्यसे ऐसी मृत्यु मिलती है ॥ ४ ॥

स्वामिकाज करिहौं रण रारी ❀ जस विधु लहव भुवनदसचारी ॥ ५ ॥
तजौं प्रान रघुनाथनिहोरे ❀ दुहूँहाथ मुदमोदक मोरे ॥ ६ ॥

स्वामीके लिये लड़ाईमें लडूंगा और चौदहों लोकोंमें उज्ज्वल यश लूंगा ॥ ५ ॥ और रामचन्द्रजीके लिये प्राण छोडूँगा तौ मेरे दोनों हाथोंमें आनन्दके लड्डू हैं, अर्थात् जीतनेमें यश, और रणमें मरनेसे मुक्ति होगी ॥ ६ ॥

साधुसमाज न जाकर लेखा ❀ रामभक्तमहँ जासु न रेखा ॥ ७ ॥
जाय जियत जग सो महिभारू ❀ जननी यौवनबिटपकुठारू ॥ ८ ॥

सज्जनोंकी समाजमें जिसका लेखा नहीं, और रामचन्द्रजीके भक्तोंमें जिसकी रेखा नहीं ॥ ७ ॥ वह तौ पृथ्वीका भार है, और उसका जगमें जीना वृथा है, और वह माताके यौवनरूपी वृक्षको कुठार है ॥ ८ ॥

दो०-बिगतविषाद निषादपति, सबहिं बढ़ाइ उछाह ॥ ❀
सुमिरि राम माँगेउ तुरत, तरकस धनुष सनाह ॥ १८७ ॥ ❀

इसप्रकार निषादने दुखको दूर कर सबका उत्साह बढ़ाया और रामचन्द्रजीका सरणकर शीघ्रही तरकस, धनुष और कवच मांगा ॥ १८७ ॥

चौ०-बेगहिं भाइ सजहु संजोऊ ❀ सुनि रजाय कदराय न कोऊ ॥ १ ॥
भलेहिं नाथ सब कहहिं सहर्षा ❀ एकहिं एक बढावहिं कर्षा ॥ २ ॥

हे भाई! जल्दीसे सब सामान सजाओ और आज्ञाको सुनकर कोई कच्चा मत हो ॥१॥ आनन्दसहित सब कहते हैं कि हे स्वामी! बहुत अच्छी बात है और एक दुसरेकी उमंग बढ़ाते हैं ॥२॥

चले निषाद जुहार जुहारी ❀ सूर सकल रण रुचैं सुरारी ॥ ३ ॥
सुमिरि रामपदपंकज पदही ❀ माथा बाँधि चढावहिं धनुही ॥ ४ ॥

वे निषादको जुहार २ के चले, सब योद्धा शूर हैं और उन्हें रणमें लड़ाई बहुत अच्छी लगती है ॥ ३ ॥ रामचन्द्रजीके चरणकमलोंकी पनही[1]का स्मरणकर तरकस बांधके धनुषको चलाते हैं ॥ ४ ॥

---

(१) "पनही" शब्दके प्रयोगसे रघुनाथजीका बड़प्पन दिखाया है, कि उनकी पनहीमेंभी इतनी सत्ता है कि स्मरण करनेसे कार्य होजाता है, फिर उनके तथा उनके चरणोंके स्मरणसे क्यों न होगा ॥

अंगिरि पहिरि कुंडि सिर धरहीं ❀ फरसा बाँस सेल सम करहीं ॥ ५ ॥
एक कुसल अति ओड़न खाँडे ❀ कूदहिं गगनमनहुँ छिति छाँडे ॥ ६ ॥

बख्तर पहिर माथेपर लोहेके टोप रखते हैं और फरसे भाले और बरछीको सीधा करते हैं ॥ ५ ॥ कोई तलवार चलानेमें बहुत चतुर हैं, मानों धरतीको छोड़ आकाशमें कूजते हैं ॥ ६ ॥

निजनिज साज समाज बनाई ❀ गुहरावतहिं जुहारहिं जाई ॥ ७ ॥
देखि सुभट सब लायक जाने ❀ लैलै नाम सकल सनमाने ॥ ८ ॥

अपना २ साज समाज सजाकर सामंत निषादको जाकर जुहार करते हैं ॥ ७॥ निषादने योद्धाओंको देख और सबको योग्य जानकर नाम ले २ कर सबका आदर किया (और कहा) ॥ ८ ॥

दो०-भाइहु लावहु धोख जनि, आजु काज बड़ मोहु ॥ ❀
सुनि सरोष भोले सुभट, वीर अधीर न होहु ॥ १८८ ॥ ❀

हे भाई ! धोखा मत देना, आज मुझको बड़ा काम है, यह सुन सब योद्धा क्रोधसे बोले-हे वीर, अधीर मत हूजिये ॥ १८८ ॥

चौ०-रामप्रताप नाथ बल तोरे ❀ करहिं कटक बिनुभट बिनुघोरे ॥ १ ॥
जीवत पाँव न पाछे धरहीं ❀ रुंडमुंडमय मेदिनि करहीं ॥ २ ॥

हे स्वामी ! रामचन्द्रजीके प्रताप और तुम्हारे बलसे (भरतकी) सेनाको बिना योद्धा और बिना घोड़ोंके करदेंगे ॥ १ ॥ जीते जी पीछेको पैर नहीं रक्खेंगे और पृथ्वीको रुंडमुंड़मय करदेंगे ॥ २ ॥

दीख निषाद नाथ भलटोलू ❀ कहउ बजाउ जुझाऊ ढोलू ॥ ३ ॥
इतना कहत छींक भइ बायें ❀ कहेउ शकुनिअन्ह खेत सुहायें ॥ ४ ॥

निषादने उनकी अच्छी भीड़भाड़ देखकर कहा जुझाऊ ढोल बजाओ ॥३॥ इतना कहतेही बाई ओर छीक हुई तौ शकुन विचारनेवालोंने कहा खेत सुहावना है (अर्थात् लड़ाईमें जीत होगी) ॥४॥

बूढ एक कह शकुन बिचारी ❀ भरतहिं मिलिय न होइहि रारी ॥ ५ ॥
रामहिं भरत मनावन जाहीं ❀ शकुन कहै अस विग्रह नाहीं ॥ ६ ॥

एक बूढ़ेने शकुन विचारकर कहा भरतसे मेल होगा लड़ाई न होगी ॥ ५ ॥ क्योंकि शकुन ऐसा कहता है कि भरत रामचन्द्रजीको मनाने जाते हैं, लड़ाई करने नहीं जाते हैं ॥ ६ ॥

सुनि गुह कहै नीक कह बूढा ❀ सहसा करि पछिताहिं बिमूढा ॥ ७ ॥
भरत सुभाव सील बिनु बूझे ❀ बड़ि हितहानि जानि बिनु जूझे ॥ ८ ॥

(यह सुन) निषादने कहा, बूढ़ा अच्छा कहता है, मूर्ख सहसा करके पीछे पछताते हैं ॥ ७ ॥ भरतका शील सुभाव विना समझे और विना जाने जूझनेसे हितकी बड़ी हानि होगी, इसलिये ॥८॥

दो०-गहहु घाट भट सिमिटि सब, लेउँ मरम मिलिजाइ ॥ ❀
बूझि मित्र अरि मध्यगति, तब तस करव उपाइ ॥ १८९ ॥ ❀

सब योद्धा तौ इकठ्ठे होकर घाटके रोकनेका ठाठ करो और मैं जाकर और मिलकर भेद लूं फिर मित्र शत्रु और समान भाव समझकर वैसाही उपाय करैंगे ॥ १८९ ॥

चौ०-लखब सनेह सुभाव सुहाए ❀ बैर प्रीति नहिं दुरत दुराए ॥ १ ॥
अस कहि भेट सजोवन लागे ❀ कंद मूल फल खग मृग माँगे ॥ २ ॥

उनके सुन्दर स्वभावसे स्नेह देखलूँगा (क्योंकि) वैर और प्रीति छिपानेसे नहीं छिपती ॥ १ ॥ ऐसे कहकर भेट सजोने लगे और कन्द मूल फल और खग मृग मँगाने लगे ॥ २ ॥

मीन पीन पाठीन पुराने ❀ भरि भरि भार कहारन्ह आने ॥ ३ ॥
सकल साज सजि मिलन सिधाए ❀ मंगलमूल शकुन सुभ पाए ॥ ४ ॥

और कहार मोटी और पुरानी पाठीन मछलियोंके भार भर २ कर लाये ॥ ३ ॥ और सब सामान सजाकर मिलने चले तौ आनन्दके अच्छे शकुन मिले ॥ ४ ॥

देखि दूरिते कहि निज नामू ❀ कीन्ह मुनीसहिं दंडप्रनामू ॥ ५ ॥
जानि रामप्रिय दीन असीसा ❀ भरतहिं कहेऊ बुझाय मुनीसा ॥ ६ ॥

निषादने दूरसे देखकर और अपना नाम लेकर (वसिष्ठ) मुनिको दंडवत प्रणाम की ॥ ५ ॥ मुनीश्वरने रामचन्द्रजीका प्यारा जानकर आशीर्वाद दिया और भरतसे समझाकर कहा (कि यह रामका सखा है) ॥ ६ ॥

रामसखा सुनि स्यंदन त्यागा ❀ चलेउ तुरत उमगत अनुरागा ॥ ७ ॥
गाँव जाति गुहनाम सुनाई ❀ कीन जुहारि माथ महि लाई ॥ ८ ॥

(भरतजीने) रामचन्द्रजीका मित्र सुनकर रथको छोड़दिया और प्रेममें उमँगते हुये तुरंतही (उससे मिलने) चले ॥७॥ निषादने अपना गाँव, नाम, जाति कहकर पृथ्वीमें माथा लगाय दंडवत की ॥८॥

दो०-करत दंडवत देखितेहि, भरत लीन्ह उरलाय ॥ ❀
मनहुँ लषनसन भेट भइ, प्रेम न हृदय समाय ॥ १९० ॥ ❀

भरतजीने उसको दंडवत करते हुये देख हृदयसे लगा लिया, मानों लक्ष्मणजीसे भेट हुई (और उस समयका) प्रेम हृदयमें नहीं समाता ॥ १९० ॥

चौ०-भेटेउ भरत ताहि अतिप्रीती ❀ लोग सिहाहिं प्रेमकै रीती ॥ १ ॥
धन्य धन्य धुनि मंगलमूला ❀ सुर सराहिं तेहिं बरसहिं फूला ॥ २ ॥

भरतजी बड़ी प्रीतिसे मिले और लोग स्नेहकी रीतिको देखकर सराहते हैं ॥१॥ और देवता धन्य है ऐसा मंगलका शब्द करते हैं और सराहना कर उसपर फूल वर्षाते हैं और कहते हैं कि-॥ २ ॥

लोक वेद सबभाँतिहिं नीचा ❀ जासु छाँह छुइ लेइअ सींचा ॥ ३ ॥
तेहिं भरि अंक रामलघुभ्राता ❀ मिलत पुलकपरिपूरितगाता ॥ ४ ॥

यह तौ लोक और वेदमें सब भांतिसे ऐसा नीच है कि जिसकी छायाभी छूनेसे स्नान करना पड़ता है ॥३॥ उसीको गोदमें भर रामचन्द्रजीके छोटे भाई शरीरमें पुलकायमान होकर मिलते हैं ॥४॥

राम राम कहि जे जमुहाहीं ❀ तिनहिं न पापपुंज समुहाहीं ॥ ५ ॥
यह तौ राम लाय उर लीन्हा ❀ कुलसमेत जग पावन कीन्हा ॥ ६ ॥

(और कहते हैं कि) जो राम २ कहकर जह्माई लेते हैं उनके सामने पापोंके समूह नहीं रहते ॥५॥ और इसे तौ रामचन्द्रजीने आप हृदयसे लगाया और कुटुंबसहित संसारमें पवित्र किया है ॥६॥

करमनास जल सुरसरि परई ❀ तेहि को कहहु सीस नहिं धरई ॥ ७ ॥
उलटा नाम जपत जगजाना ❀ बालमीकि भए ब्रह्मसमाना ॥ ८ ॥

जैसे कर्मनाशा नदीका जल गंगाजीमें पड़ता है, कहो उसे कौन मस्तकपर नहीं रखता ॥ ७ ॥ संसार जानता है कि वाल्मीकिमुनि उलटा नाम जपते जपतेही ब्रह्मके बराबर हुये ॥ ८ ॥

दो०-स्वपच सबर खल जमन जड, पामर कोल किरात ॥ ❀
राम कहन पावन परम, होत भुवनविख्यात ॥ १९१ ॥ ❀

श्वपच, (भंगी आदि), शवर, यवन, म्लेच्छ, मूर्ख, नीच और कोल भील देभी राम कहते ही वड़े पवित्र और संसारमें विख्यात होजाते हैं ॥ १९१ ॥

चौ०–नहिं अचरज जुग जुग चलि आई ❀ केही न दीन्ह रघुवीर बड़ाई ॥ १ ॥
रामनाममहिमा सुर कहहीं ❀ सुनिसुनि अवधलोग सुख लहहीं ॥ २ ॥

सो कुछ अचरज नहीं, जुगानुजुगसे चलाआया है कि रामचन्द्रजीने किसे वड़ाई नहीं दी, अर्थात् सभीको दी है ॥ १ ॥ देवता रामचन्द्रजीके नामकी वड़ाईको कहते हैं, जिसे सुन २ कर अयोध्यावासी लोग सुख पाते हैं ॥ २ ॥

रामसखहिं मिलि भरत सप्रेमा ❀ पूछहिं कुसल सुमंगल छेमा ॥ ३ ॥
देखि भरतकर सीलसनेहू ❀ भा निषाद तेहि समय विदेहू ॥ ४ ॥

भरत प्रेमसहित रामचन्द्रजीके मित्र (निषाद) से मिलकर सुन्दर क्षेम कुशल पूछते हैं ॥ ३ ॥ भरतके शील और प्रेमको देख उस समय निषाद विदेह होगया (अर्थात् उसे देहकी सुधबुध न रही) ॥ ४ ॥

सकुच सनेह मोद मन बाढ़ा ❀ भरतहिं चितवत इकटक ठाढा ॥ ५ ॥
धरि धीरज पदबंदि बहोरी ❀ बिनय सप्रेम करत करजोरी ॥ ६ ॥

और मनमें सकुच[1], प्रेम[2], और आनन्द[3] ऐसा वढ़ा कि खड़ा हुआ भरतजीको टकोरी बांधकर देखने लगा ॥ ५ ॥ फिर धीरज रख, चरणोंको दंडवत कर, प्रेमसहित हाथ जोड़कर विनती करने लगा कि–॥ ६ ॥

कुसल मूल पदपंकज पेखी ❀ मैं तिहुँकाल कुसल निजलेखी ॥ ७ ॥
अब प्रभु परमअनुग्रह तोरे ❀ सहित कोटिकुल मंगल मोरे ॥ ८ ॥

आनन्दकी जड़ कमलसमान चरणोंको देख मैंने तौ अपनी कुशल (भूत भविष्य वर्त्तमान) तीनों कालोंमें समझलीनी ॥ ७ ॥ हे स्वामी ! अब आपकी अधिक कृपासे मेरे करोड कुलोंतक आनन्द मंगल रहैगा ॥ ८ ॥

दो०–समुझि मोरि करतूति कुल, प्रभुमहिमा जिय जोइ ॥ ❀
जो न भजै रघुवीरपद, जग विधिवंचित सोइ ॥ १९२ ॥ ❀

मेरे कुलके कर्मको समझकर और भगवानकी महिमाको मनमें विचारकरभी जो रामचन्द्रजीके चरणोंका भजन न करै उसे ब्रह्माने संसारमें वंचित किया, अर्थात् उसका जन्म वृथा गया ॥ १९२ ॥

चौ०–कपटी कायर कुमती कुजाती ❀ लोक वेद बाहर सबभाँती ॥ १ ॥
राम कीन्ह आपन जबहीते ❀ भयउँ भुवन भूषन तबहीतें ॥ २ ॥

मैं कपटी, डरपोक, कुबुद्धी, कुजाति और लोकवेदसे सबभांति बाहर था ॥ १ ॥ परंतु जबसे रामचन्द्रजीने मुझे अपना किया तभीसे लोकका आभूषण होगया ॥ २ ॥

देखि प्रीति सुनि बिनय सुहाई ❀ मिले बहोरि लषनलघुभाई ॥ ३ ॥
कहि निषाद निजनाम सुबानी ❀ सादर सकल जुहारी रानी ॥ ४ ॥

(उसके ऐसे) प्रेमको देख और सुन्दर विनती सुनकर फिर लक्ष्मणजीके छोटे भाई शत्रुघ्नभी उससे मिले ॥ ३ ॥ फिर केवटने सुन्दर वाणीसे अपना नाम लेकर आदरसहित सब रानियोंको दण्डवत करी ॥ ४ ॥

---

(१) सकुच इस वातका कि मैंने इनके लिये बुराइ विचारीथी ॥ (२) प्रेम इस वातका कि, भरतजी सुखपूर्वक मिले ॥ (३) आनन्द यह कि लड़ाईकी चिंता छूटी ॥

जानि लषनसम देहिं असीसा ❀ जियहु सुखी सतलाख बरीसा ॥ ५ ॥
निरखि निषाद नगरनरनारी ❀ भए सुखी जनु लषन निहारी ॥ ६ ॥

रानियाँ उसे लक्ष्मणजीके समान जान आशीर्वाद देती हैं कि आनन्दसहित सौ लाख वर्षतक जियो ॥५॥ अवध नगरके लोग लुगाई निषादको देखकर ऐसे सुखी हुये मानो लक्ष्मणजीको देखकर होते हो ६

कहहिं लहेउ यह जीवनलाहू ❀ भेटेउ रामभाइ भरि बाहू ॥ ७ ॥
सुनि निषाद निजभाग्यबड़ाई ❀ प्रमुदित मनमहँ चलेउ लिवाई ॥ ८ ॥

और कहते हैं कि जीनेका लाभ तो इसनेही पाया, जो रामके भाईसे भुजा पसारकर मिला ॥७॥ निषाद अपने भाग्यकी ऐसी बड़ाईको सुन मनमें प्रसन्न होता हुआ (अपने घरपर) लिवा ले चला ॥८॥

दो०-सनकारे सेवक सकल, चले स्वामिरुख पाइ ॥ ❀
घर तरु तर सर बाग वन, वास बनायन्हि जाइ ॥ १९३ ॥ ❀

और सब सेवकोंको सनकारे और वे अपने स्वामीका रुख पाकर चले आये और घरोंमें वृक्षोंके नीचे, सरोवरपर, बगीचे और वनमें जाकर टिकनेको स्थान बनाये ॥ १९३ ॥

चौ०-सृंगबेरपुर भरत दीख जब ❀ भे सनेहबस अंग सिथिल तब ॥ १ ॥
सोहत दिए निषादहिं लागू ❀ जनु तनु धरे विनय अनुरागू ॥ २ ॥

जब भरतजीको शृंगबेरपुर दिखाई दिया तौ प्रेमके वश सब अंग शिथिल होगये ॥ १ ॥ (सो वह) निषादके कंधेपर हाथ रक्खे हुये ऐसे शोभायमान लगते हैं मानों विनय और अनुराग शरीर धारण किये हैं ॥ २ ॥

इहि विधि भरत सेन सब संगा ❀ दीख जाइ जगपावनि गंगा ॥ ३ ॥
रामघाट कहँ कीन्ह प्रनामा ❀ भा मनमगन मिले जनु रामा ॥ ४ ॥

इस भाँति सब सेनाके संग भरतजीने संसारके पवित्र करनेवाली गंगाजीके दर्शन किये ॥ ३ ॥ और रामघाटको प्रणाम किया और मन ऐसा प्रसन्न हुआ मानों रामचन्द्रजी मिलगये ॥ ४ ॥

करहिं प्रनाम नगरनरनारी ❀ मुदित ब्रह्ममय वारि निहारी ॥ ५ ॥
करि मज्जन माँगहिं करजोरी ❀ रामचंद्रपद प्रीति न थोरी ॥ ६ ॥

नगरके स्त्रीपुरुष प्रणाम करते हैं और ब्रह्ममय जलको देखकर प्रसन्न होते हैं॥५॥ और स्नानकर हाथ जोड़कर मांगते हैं कि रामचन्द्रजीके चरणोंमें थोड़ी प्रीति न हो (अर्थात् बहुत हो) ॥ ६ ॥

भरत कहेउ सुरसरि तव रेनू ❀ सकलसुखद सेवकसुरधेनू ॥ ७ ॥
जोरि पानि वर माँगौं एहू ❀ सीयरामपदसहजसनेहू ॥ ८ ॥

भरतजीने कहा हे गंगे! तुह्मारी रज संपूर्ण सुखोंकी देनेवाली और भक्तोंको कामधेनुके समान है ॥७॥ सो हाथ जोड़कर यही वरदान मागता हूँ कि सीतारामचन्द्रजीके चरणोंमें सहजही प्रीति हो॥८॥

दो०-इहिविधि मज्जन भरत करि, गुरुअनुसासन पाइ ॥ ❀
मातु नहानी जानि सब, डेरा चले लिबाइ ॥ १९४ ॥ ❀

इसप्रकार भरतजी स्नान करके और गुरुकी आज्ञा पाकर सब माताओंको स्नान करी हुई जान डेरेको लिवा ले चले ॥ १९४ ॥

चौ०-जहँ तहँ लोगन्ह डेरा कीन्हा ❀ भरत सोध सबहीकर लीन्हा ॥ १ ॥
गुरुसेवा करि आयसु पाई ❀ रममातुपहँ गे दोउ भाई ॥ २ ॥

लोगोंने जहाँ तहाँ डेरा किया और भरतजीने सबकी सम्हाल करली ॥ १ ॥ दोनों भाई गुरुकी सेवा कर और उनकी आज्ञा पाय रामचन्द्रजीकी माताके पास गये ॥ २ ॥

चरन चापि कहि कहि मृदुबानी ❀ जननी सकल भरत सनमानी ॥ ३ ॥
भाइहिं सौंपि मातुसेवकाई ❀ आपु निषादहिं लीन्ह बुलाई ॥ ४ ॥

भरतजीके चरण दाब मीठी वाणी कह २ कर सब माताओंका आदर किया ॥ ३ ॥ फिर भाईको माताओंकी सेवा सौंप अपने निषादको बुला लिया ॥ ४ ॥

चले सखा करसों कर जोरे ❀ सिथिलसरीर सनेह न थोरे ॥ ५ ॥
पूछत सखहिं सो ठाँव देखाऊ ❀ नेकु नयन मन जरनि जुड़ाऊ ॥ ६ ॥

और मित्रके हाथसे हाथ पकड़कर चले, शरीर शिथिल है पर स्नेह थोड़ा है ॥ ५ ॥ मित्रसे पूछते जाते हैं कि वह ठिकाना दिखाकर तनक मन और आखोंकी जलनको ठंढा करो कि-॥६॥

जहँ सियरामलषन निसि सोए ❀ कहत भरे जललोचन कोए ॥ ७ ॥
भरतवचन सुनि भयउ विषादू ❀ तुरत तहाँ लइ गयउ निषादू ॥ ८ ॥

जहाँ सीता रामचन्द्र लक्ष्मणजी रातको सोये थे यह कहते २ नेत्रोंके कोए जलसे भरगये अर्थात् आंसू टपक पड़े ॥ ७ ॥ भरतके वचन सुन निषादको दुख हुवा फिर तुरंतही वहाँ लिवा ले गया कि-॥ ८ ॥

दो०-जहँ सिंसपा पुनीत तरु, रघुबर किय विस्राम ॥ ❀
अति सनेह सादर भरत, कीन्हेउ दंडप्रनाम ॥ १९५ ॥ ❀

जहाँ पवित्र शीशमके वृक्षके नीचे रामचन्द्रजीने विश्राम किया था भरतने उसे आदरसहित बड़े प्रेमसे दंडवत् प्रणाम की ॥ १९५ ॥

चौ०-कुस साथरी निहारि सुहाई ❀ कीन्ह प्रनाम प्रदच्छिनजाई ॥ १ ॥
चरनरेखरज आँखिन्ह लाई ❀ बनै न कहत प्रीति अधिकाई ॥ २ ॥

सुन्दर कुशकी सेजको देख परिक्रमा देकर प्रणाम किया ॥ १ ॥ (रामचन्द्रके) चरणोंकी रज आंखोंसे लगाई; उस प्रेमकी अधिकता कहनेमें नहीं बनती ॥ २ ॥

कनकबिंदु दुइ चारिक देखे ❀ राखे सीस सीयसम लेखे ॥ ३ ॥
सजल बिलोचन हृदय गलानी ❀ करत सखासन बचन सुबानी ॥ ४ ॥

(सीताजीके वस्त्रोंसे गिरे हुये) दो चार सुनहरी सितारे देख जानकीजीके समान जान मस्तकपर रखलिये ॥ ३ ॥ और नेत्रोंमें जल भरके और मनमें दुखी होकरके मित्रसे सुन्दर वाणी कहने लगे कि ॥ ४ ॥

स्रीहत सीयविरहदुतिहीना ❀ यथा अवधनरनारि मलीना ॥ ५ ॥
पिता जनक देउँ पटतर केही ❀ करतल भोग जोग जग जेही ॥ ६ ॥

(हाय यह सितारे) भी सीताजीके वियोगमें अयोध्यापुरीके नरनारियोंके समान छबिहीन मन मलीन हो रहे हैं ॥ ५ ॥ पिता तो जिसके जनक हैं उनको किसकी बराबरी दूं कि जिनकी हथेलीपर संसारके योग और भोग हैं ॥ ७ ॥

सुसर भानुकुलभानु भुवालू ❀ जिहि सिहात अमरावतिपालू ॥ ७ ॥
प्राननाथ रघुनाथ गुसाँई ❀ जो बड़ होत सो रामबड़ाई ॥ ८ ॥

और सूर्यवंशमें सूर्यके समान जिसके श्वशुर राजा दशरथ हैं कि जिन्हें देख इन्द्रभी बड़ाई करता है ॥ ७ ॥ और रामचन्द्र स्वामी जिसके पति हैं, और जो कोई बड़ा होता है वह रघुनाथजीकीही बड़ाई (देनेसे होता है) ॥ ८ ॥

दो०-पतिदेवता सुतीयमनि, सीयसाथरी देखि ॥ ❀
बिदरत हृदय न हहरि करि, पविते कठिन बिसेखि ॥ १९६ ॥ ❀

और जो पतिव्रता सुन्दर स्त्रियोंकी शिरोमणि हैं ऐसी जानकीजीकी सेजको देखकरभी जो मेरा हृदय हहराकर नहीं फटता है तौ यह वज्रसेभी बहुत कठोर है ॥ १९६ ॥

चौ०-लालनजोग लषन लघु लोने ❀ भे न भाइ अस अहहिं न होने ॥ १ ॥
पुरजन प्रिय पितु मातु दुलारे ❀ सियरघुबीरहिं प्रानपियारे ॥ २ ॥

सुन्दर छोटे लक्ष्मणजी प्यार करनेके योग्य हैं ऐसा भाई न हुआ, न है, और न होनेवाला है ॥१॥ नगरनिवासियोंके प्यारे, पिता माताके दुलारे और सीता रामचन्द्रजीको प्राणोंसेभी प्यारे हैं ॥२॥

मृदु मूरति सुकुमार सुभाऊ ❀ तात वाउ तनु लागि न काऊ ॥ ३ ॥
ते वन सहहिं विपति सबभाँती ❀ निदरे कोटि कुलिस यह छाती ॥ ४ ॥

(जिनकी) माधुरी मूर्त्ति और कोमल सुभाव है, और जिनके शरीरमें कभी तत्ती पवनभी नहीं लगी ॥ ३ ॥ वह वनमें सव भांतिका कष्ट सहते हैं सो यह मेरी छाती करोड़ो वज्रोंका निरादर करती है, अर्थात् उनसे भी बढ़कर कड़ी है ॥ ४ ॥

रामनाम जग कीन्ह उजागर ❀ रूप सील सुख सब गुनसागर ॥ ५ ॥
पुरजन परिजन गुरु पितु माता ❀ रामसुभाव सबहिं सुखदाता ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीने जन्म लेकर संसारको प्रकाशित किया क्योंकि वे रूप शील सुख और सव गुणोंके समुद्र हैं ॥ ५ ॥ नगरनिवासी, कुटुम्बी, गुरु, पिता और माता इन सबको रामचन्द्रजी सुभावसेही सुख देनेवाले हैं ॥ ६ ॥

बैरिउ रामबड़ाई करहीं ❀ बोलन मिलन बिनय मनहरहीं ॥ ७ ॥
सारद कोटि कोटिसत सेषा ❀ कर न सकहिं प्रभुगुनगनलेषा ॥ ८ ॥

वैरीभी रामचन्द्रजीकी वड़ाई करते हैं(उनका) बोलना मिलना और विनय मनको चुराता है ॥७॥ करोड़ सरस्वती और सौ करोड़ शेषजीभी भगवान्के गुणोंके समूहोंकी गिनती नहीं करसकते हैं ॥८॥

दो०-सुखस्वरूप रघुबंसमनि, मंगलमोदनिधान ॥ ❀
ते सोवत कुसडासिमहि, विधिगति अति बलवान ॥ १९७ ॥ ❀

और जो रघुनाथजीभी सुखके स्वरूप और आनन्दकी खानि हैं, वे पृथ्वीपर कुश बिछाकर सोते हैं, सो विधाताकी गति बड़ी बलवान् है ॥ १९७ ॥

चौ०-राम सुना दुख कानन काऊ ❀ जीवनतरु जिमि जुगवत राऊ ॥ १ ॥
पलकनयन फनिमनि जेहि भाँती ❀ जुगवहिं जननि सकल दिनराती ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीने तौ कभी कानोंसेभी दुःख नहीं सुना था; राजा दशरथ उन्हें जीवनमूलकी भांति देखते रहते थे ॥ १ ॥ और जैसे पलक नेत्रोंकी, और सर्प मणिकी रक्षा करता है (इसी भांति) रानी दिनरात उन्है देखती रहती थीं ॥ २ ॥

ते अब फिरत बिपिन पदचारी ❀ कंदमूलफलफूलअहारी ॥ ३ ॥
धिक कैकयी अमंगलमूला ❀ भइसि प्रानप्रियतम प्रतिकूला ॥ ४ ॥

अब वेही वनमें पैदल फिरते हुये कन्द मूल फल और फूलोंका भोजन करते हैं ॥ ३ ॥ अमंगलोंकी मूल कैकयीको धिक्कार है, जो प्राणोंसेभी अधिक प्यारेसे उलटी होगई ॥ ४ ॥

मैं धिक्धिक् अघउदधि अभागी ❀ सब उत्पात भयउ जेहिंलागी ॥ ५ ॥
कुलकलंक करि सृजेउ बिधाता ❀ साँइ द्रोहि मोहिं कीन्ह कुमाता ॥ ६ ॥

और पापोंके समुद्र मुझ अभागेको धिक्कार है कि जिसके लिये सब उत्पात हुये ॥ ५ ॥ विधाताने मुझे कुलका कलंकी बनाकर उत्पन्न किया और खोटी माताने मुझे स्वामीका वैरी करदिया ॥ ६ ॥

सुनि सप्रेम समुझाव निषादू ❀ नाथ करिय कतवादि बिषादू ॥ ७ ॥
राम तुमहिं प्रिय तुम प्रिय रामहिं ❀ यहि निरदोष दोष बिधिबामहिं ॥ ८ ॥

यह सुनकर निषाद प्रेमसहित समझाने लगा कि हे स्वामी ! वृथा क्यों विषाद करते हो ॥ ७ ॥ तुमको रामचन्द्र प्यारे और तुम रामचन्द्रको प्यारे हो, इसमें किसीका दोष नहीं हैं, केवल उलटी प्रारब्धका दोष है ॥ ८ ॥

छं०-बिधिबामकी करनी कठिन जेइँ मातु कीन्हीं बावरी । ❀
तेहिंराति पुनिपुनि करहिं प्रभु सादर सराहन रावरी ॥ ❀
तुलसी न तुमसों राम प्रियतम कहत हौं सौहैं किए । ❀
परिनाम मंगल जानि अपने आनिए धीरज हिए ॥ ९ ॥ ❀

वाम विधाताकी करनी कठिन है जिसने माताको बौरा दिया, और भगवान तौ (जिस रात यहाँ रहे थे) उसी रात बड़े आदरसे वारंवार आपकी सराहना करते थे. मैं तुम्हारी सौगंद खाकर कहता हूं कि रामचन्द्रजीको तुमसे अधिक प्यारा कोई नहीं, और अंतमें आनन्द होगा, ऐसा जान अपने हृदयमें धीरज रखिये ॥ ९ ॥

सो०-अंतर्यामी राम, सकुच सप्रेम कृपायतन ॥ ❀
चलिय करिय बिस्राम, यह बिचार दृढ़ आनि मन ॥ ८ ॥ ❀

रामचन्द्रजी घट २ की जाननेवाले, संकोची, प्रेमी और कृपानिधान हैं यह दृढ़ बिचार मनमें करके चलिये और विश्राम कीजिये ॥ ८ ॥

चौ०-सखावचन सुनि उर धरि धीरा ❀ बास चले सुमिरत रघुबीरा ॥ १ ॥
यह सुधि पाइ नगरनरनारी ❀ चले बिलोकन आरति भारी ॥ २ ॥

मित्रके वचन सुन हृदयमें धीरज रख और रामचन्द्रजीको सरण करते हुये (भरतजी) रहनेके स्थानको चले ॥ १ ॥ नगरके स्त्रीपुरुष इस खबरको पाकर बड़े दुखी हो देखने चले ॥ २ ॥

प्रदच्छिनहिं करि करहिं प्रनामा ❀ देहिं कैकयिहिं खोरि निकामा ॥ ३ ॥
भरिभरि बारि बिलोचन लेहीं ❀ बाम बिधातहिं दूषन देहीं ॥ ४ ॥

परिक्रमा करके प्रणाम करते हैं और कैकेयीको बुरे २ दोष देते हैं ॥ ३ ॥ और नेत्रोंमें जल भर २ लेते हैं और वाम विधाताको दोष देते हैं ॥ ४ ॥

एक सराहहिं भरतसनेहू ❀ कोउ कह नृपतिनिबाहेउ नेहू ॥ ५ ॥
निंदहिं आपु सराहि निषादहिं ❀ को कहिसकै बिमोह बिषादहिं ॥ ६ ॥

कोई भरतके प्रेमकी सराहना करते हैं, कोई कहते हैं कि राजाने प्रेमका निवाह किया ॥५॥ और अपनी बुराई करके निषादकी सराहना करते हैं, अधिक मोह और दुखको कौन कह सकता है ॥६॥

इहिविधि राति लोग सब जागा ❀ भा भिनुसार गुदारा लागा ॥ ७ ॥
गुरुहिं सुनाव चढ़ाइ सुहाईं ❀ नईं नाव सब मातु चढ़ाईं ॥ ८ ॥
दंडचारिमहँ भे सब पारा ❀ उतरि भरत तब सबहिं सँभारा ॥ ९ ॥

इस भाँति सब लोग रातमें जागे और जब सबेरा हुआ तौ उतरना आरंभ हुआ ॥ ७ ॥ गुरुको सुन्दर सुहावनी नावपर चढ़ाय सब माताओंको नवीन नावपर चढ़ाया ॥ ८ ॥ चार घड़ीमें सब पार होगये तब भरतजीने उतरकर सबको सम्हाला ॥ ९ ॥

दो०–प्रातक्रिया करि मातुपद, बंदि गुरुहिं सिरनाइ ॥ ❀
आगे किये निषादगन दीन्हा कटक चलाइ ॥ १९८ ॥ ❀

प्रातःक्रिया (शौचादि कृत्य) कर, माताके चरणोंको वन्दना कर और गुरुको शिर नवाकर निषादोंके समूहको आगे करके सेना चलादी ॥ १९८ ॥

चौ०–किए निषादनाथ अगुआई ❀ मातुपालकी सकल चलाई ॥ १ ॥
साथ बुलाइ भाइ लघु दीन्हा ❀ बिप्रनसहित गमन गुरु कीन्हा ॥ २ ॥

भीलोंके राजाको अगुआ कर माताओंकी सब पालकियाँ चलाईं ॥ १ ॥ और छोटे भाईको बुलाकर साथ किया और ब्राह्मणोंसहित गुरुने गमन किया ॥ २ ॥

आपु सुरसरिहिं कीन्ह प्रनामू ❀ सुमिरे लषनसहित सियरामू ॥ ३ ॥
गवने भरत पियदेहिं पाए ❀ कोतलसंग जाहिं डुरिआए ॥ ४ ॥

(भरतने) आप गंगाजीको प्रणाम किया और लक्ष्मणसहित सीतारामका स्मरण किया ॥ ३ ॥ भरतजी पैरों पैरों चले और साथमें बागसे बँधे कोतल घोड़े चले जाते हैं ॥ ४ ॥

कहहिं सुसेवक बारहिं बारा ❀ होइय नाथ अश्व असवारा ॥ ५ ॥
राम पयादेहि पाँव सिधाए ❀ हम कहँ रथ गज बाजि बनाए ॥ ६ ॥

अच्छे सेवक वारंवार कहते हैं, हे स्वामी ! घोड़ेपर सवार हूजिये॥५॥(भरतजी कहते हैं) कि रामचन्द्रजी तौ पैरों पैरों ही गये, और हमारे लिये रथ हाथी और घोड़े सजाये हैं (सो न चाहियें)॥६॥

सिरबल जाउँ उचित अस मोरा ❀ सबते सेवकधरम कठोरा ॥ ७ ॥
देखि भरतगति सुनि मृदुबानी ❀ सब सेवकगन करहिं गलानी ॥ ८ ॥

मुझे तौ ऐसा चाहिये कि माथेकी बलिजाऊँ क्योंकि सेवकका धर्म सबसे कठिन है ॥ ७ ॥ भरतकी दशा देख और मीठी वाणी सुनकर सब सेवकोंका समूह शोक करने लगा ॥ ८ ॥

दो०–भरत तीसरे पहर कहँ, कीन्ह प्रवेस प्रयाग ॥ ❀
कहत रामसिय रामसिय, उँमगि उँमगि अनुराग ॥ १९९ ॥ ❀

भरतने तीसरे प्रहरके समय प्रयागमें प्रवेश किया और प्रेममें उमँग २ कर सीताराम २ कहने लगे ॥ १९९ ॥

चौ०–झलका झलकत पाँयन्ह कैसे ❀ पंकजकोष ओसकन जैसे ॥ १ ॥
भरत पयादेहिं आए आजू ❀ भए दुखित सुनि सकल समाजू ॥ २ ॥

(भरतके) पैरोंमें छाले कैसे चमकते हैं जैसे कमलकी कलियोंपर ओसकी बूंदें चमकती हों ॥ १ ॥ भरतजी आज पैदलही आये यह सुनकर सब समाज दुखी हुआ ॥ २ ॥

खबरि लीन्ह सब लोग अन्हाए ❀ कीन्ह प्रनाम त्रिवेनिहिं आए ॥ ३ ॥
सबिधि सितासितनीर अन्हाने ❀ दिए दान महिसुर सनमाने ॥ ४ ॥

फिर जब भरतजीने खबर पालीन्ही कि सब लोग (त्रिवेणीमें) स्नान कर चुके तब आपभी आये और त्रिवेणीजीको प्रणाम किया ॥ ३ ॥ फिर विधिपूर्वक श्वेत श्याम (गंगायमुनाके) संगम जलमें स्नान किया और दान देकर ब्राह्मणोंका सत्कार किया ॥ ४ ॥

देखत स्यामल धवल हिलोरे ❀ पुलकिसरीर भरत करजोरे ॥ ५ ॥
सकलकामप्रद तीरथराऊ ❀ वेदविदित जगप्रगटप्रभाऊ ॥ ६ ॥

श्याम श्वेत हिलोरोंको देखते हुये भरतजीने शरीरमें पुलकायमान होकर हाथ जोड़े (और वे बोले) ॥ ५ ॥ हे तीर्थराज ! तुम्हारा प्रभाव संसारमें प्रकट और वेदमें विदित है कि तुम सब कामनाओंके देनेवाले हो ॥ ६ ॥

माँगौं भीख त्यागि निजधर्मू ❀ आरत काह न करहिं कुकर्मू ॥ ७ ॥
अस जिय जानि सुजानी सुदानी ❀ सफल करहिं जग जाचकबानी ॥ ८ ॥

सो मैं अपना(१) धर्म छोड़कर भीख माँगता हूं, क्योंकि दुखी क्या क्या कुकर्म नहीं करते ॥ ७ ॥ ऐसा मनमें जान संसारमें विख्यात दान देनेवाले मांगनेवालोंकी वाणीको सफल करते हैं ॥ ८ ॥

दो०–अर्थ न धर्म न काम रुचि, गति न चहउँ निर्वान ॥ ❀
जन्मजन्म रति रामपद, यह बरदान न आन ॥ २०० ॥ ❀

न तौ मेरी धर्म अर्थ और काममें रुचि है, और न मोक्षपदको चाहता हूं परंतु यही वरदान मांगता हूं कि जन्म २ सीतारामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रीति हो, और कुछ नहीं ॥ २०० ॥

चौ०–जानहिं राम कुटिलकरि मोही ❀ लोग कहौ गुरुसाहिबद्रोही ॥ १ ॥
सीतारामचरनरति मोरे ❀ अनुदिन बढ़ै अनुग्रह तोरे ॥ २ ॥

रामचन्द्र मुझे खोटा (भलेहीं) जानैं और लोग मुझे गुरु और स्वामीका वैरी भलेही कहैं ॥ १ ॥ परन्तु तुम्हारी कृपासे मेरी प्रीति सीतारामचन्द्रजीके चरणोंमें दिन २ बढ़ै ॥ २ ॥

जलद जन्मभरि सुरति विसारे ❀ जाचत जल पवि पाहन डारे ॥ ३ ॥
चातक रटनि घटे घटिजाई ❀ बढ़े प्रेम सबभाँति भलाई ॥ ४ ॥

बादल जन्मभर (पपीहेकी) याद भलेही भूला रहै और मांगनेपर ओले और पत्थर बरसावै ॥ ३ ॥ और पपीहेकी रटनाभी घटते २ (भलेही) घटजाय परंतु प्रेमके बढ़नेसे सब भाँति भलाईही होती है ॥ ४ ॥

कनकहि बान चढ़ै जिमि दाहे ❀ तिमि प्रियतमपदप्रेम निबाहे ॥ ५ ॥
भरतवचन सुनि माँझ त्रिवेनी ❀ भइ मृदुबानि सुमंगलदेनी ॥ ६ ॥

जैसे सोनेको जितना २ तपाओ उतनीही रंगत चढ़ती है वैसेही अत्यंत प्यारे स्वामीके चरणोंमें प्रेम करनेसे (सेवकका) निर्वाह होता है ॥ ५ ॥ भरतके वचन सुनतेही त्रिवेणीके बीचमेंसे सुन्दर आनन्द देनेवाली यह मीठी वाणी हुई कि ॥ ६ ॥

तात भरत तुम सबविधि साधू ❀ रामचरनअनुराग अगाधू ॥ ७ ॥
वादि गलानि करहु मनमाहीं ❀ तुमसम रामहिं कोउ प्रिय नाहीं ॥ ८ ॥

हे प्यारे भरत ! तुम सब भाँति साधु हो, (तुम्हारी) रामचन्द्रजीके चरणोंमें गहरी प्रीति है ॥ ७ ॥ मनमें वृथा दुख करते हो, रामचन्द्रजीको तुम्हारे बराबर कोई प्यारा नहीं ॥ ८ ॥

दो०–तनु पुलके हियहरष सुनि, वेनिवचन अनुकूल ॥ ❀
भरत धन्य कहि धन्य कहि, नभ सुर बरषहिं फूल ॥ २०१ ॥ ❀

---

(१) अपना धर्म यह कि क्षत्रिय भीख नहीं माँगते ॥

त्रिवेणीके सुन्दर वचन सुन (भरतजी) शरीरमें पुलकायमान हो मनमें प्रसन्न हुये और देवता भरतको धन्य २ कहकर आकाशसे पुष्प वर्षाने लगे ॥ २०१ ॥

चौ०–प्रमुदित तीरथराजनिवासी ❀ वैखानस बटु गृही उदासी ॥ १ ॥
❀ कहहिं परस्पर मिलि दस पाँचा ❀ भरतसनेह सील सुचि साँचा ॥ २ ॥

प्रयागके रहनेवाले वानप्रस्थ ब्रह्मचारी गृहस्थी और उदासी (भरतजीको देखकर) बहुत प्रसन्न हुये ॥ १ ॥ दस पांच आपसमें मिलकर कहते हैं, कि भरतजीका प्रेम और सील कपटरहित और सच्चा है ॥ २ ॥

सुनत रामगुनग्राम सुहाए ❀ भरद्वाजमुनिवरपहँ आए ॥ ३ ॥
दंडप्रनाम करत मुनि देखे ❀ मूरतिबंत भाग्य निजलेखे ॥ ४ ॥

रामचन्द्रजीके सुन्दर गुणोंके समूहोंको सुनते हुये (भरत) श्रेष्ठमुनि भरद्वाजके पास आये ॥ ३ ॥ मुनिने (भरतको) दंडवत् प्रणाम करते हुये देखा और समझा कि यह मेरे भाग्यकी मूर्त्ति हैं॥४॥

धाइ उठाइ लाइ उरलीन्हें ❀ दीन्ह असीस कृतारथ कीन्हें ॥ ५ ॥
आसन दीन्ह नाइ सिर बैठे ❀ चहत सकुच गृह जनु भजि पैठे ॥ ६ ॥

दौड़कर और उठाय छातीसे लगा लिया और आशीर्वाद देकर निहाल किया ॥ ५ ॥ (फिर मुनिने) आसन दिया (तौ भरतजी) सिर नवाकर ऐसे बैठ गये मानों लाजके घरमें दौड़कर घुसना चाहते हैं, अर्थात् बड़े सकुचकर बैठ गये इस कारण कि ॥ ६ ॥

मुनि पूछहिं कछु यह बड़सोचू ❀ बोले ऋषि लखि सील सँकोचू ॥ ७ ॥
सुनहु भरत हम सब सुधि पाई ❀ विधि करतबपर कछु न बसाई ॥ ८ ॥

(भरतको) यह बड़ा सोच है कि मुनि कुछ पूछैंगे, सो ऐसा सील संकोच देखकर मुनि बोले ॥७॥ हे भरत ! सुनो हमने सब समाचार पा लीने हैं, विधाताकी करतूतपर कुछ वश नहीं चलता ॥८॥

दो०–तुम गलानि जिय जनि करहु, समुझि मातुकरतूति ॥ ❀
❀ तात कैकयिहि दोष नहिं, गई गिरा मतिधूति ॥ २०२ ॥ ❀

हे प्यारे ! माताके कर्तवको समझकर तुम मनको मैला मत करो, क्योंकि कैकेयीकोभी दोष नहीं है, उसकी बुद्धिको तौ सरस्वती बिगाड़ गई थी ॥ २०२ ॥

चौ०–यहहु कहत भल कहहि न कोऊ ❀ लोक वेद बुधसंमत दोऊ ॥ १ ॥
❀ तात तुम्हार विमल जस गाई ❀ पाइहि लोकहु वेद बड़ाई ॥ २ ॥

यह कहतेमेंभी कोई अच्छा न कहैगा क्योंकि बुद्धिमान लोक और वेद दोनोंको मानते हैं ॥ १ ॥ सो हे प्यारे ! तुम्हारे यशको गाकर लोक और वेद दोनों बड़ाई पावेंगे ॥ २ ॥

लोकवेदसंमत सब कहई ❀ जेहि पितु राज देइ सो लहई ॥ ३ ॥
राउ सत्यब्रत तुमहिं बुलाई ❀ देत राज सुख धर्म बड़ाई ॥ ४ ॥

सब जने लोक और वेदकी यही संमति कहते हैं कि जिसे पिता राज्य देवे सो पावे ॥ ३ ॥ सत्यवादी राजा तुमको बुलाकर राज्य देते तौभी सुख, धर्म और बड़ाई होती ॥ ४ ॥

रामगवन बन अनरथमूला ❀ जो सुनि सकलबिस्व भइ सूला ॥ ५ ॥
सो भावीबस रानि अयानी ❀ करि कुचालि अंतहु पछितानी ॥ ६ ॥

(परन्तु) रामचन्द्रजीका वन जाना बुराईकी जड़ है कि जिसे सुनकर सब संसारके हृदयमें सूल है ॥ ५ ॥ और वह अज्ञान रानीभी होनहारके वस उस कुचालको करकेभी अंतमें पछताई ॥ ६ ॥

तहँ न तुम्हार अल्प अपराधू ❀ कहै सो अधम अयान असाधू ॥ ७ ॥
करतेहु राज तुम्हैं नहिं दोषू ❀ रामहुँ होत सुनत संतोषू ॥ ८ ॥

उसमें तुम्हारा कुछभी अपराध नहीं; और जो कहै वह पापी अज्ञानी और खोटा है ॥ ७ ॥ जो राज्य करते तोभी तुम्हारा दोष नहीं था, वरन सुनकर रामचन्द्रजीकोभी संतोष होता ॥ ८ ॥

दो०-अब अति कीन्हेहु भरत भल, तुमहिं उचित मत एहु ॥ ❀
सकल सुमंगलमूल जग, रघुबरचरनसनेहु ॥ २०३ ॥ ❀

हे भरत! (तुमने) अब बहुतही अच्छा किया और तुमको यही बात चाहिये थी, क्योंकि संसारमें रामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रेम होना यह सब सुन्दर आनन्दकी जड़ है ॥ २०३ ॥

चौ०-सो तुम्हार धन जीवन प्राना ❀ भूरिभाग्य को तुमहिं समाना ॥ १ ॥
यह तुम्हार अचरज नहिं ताता ❀ दसरथसुवन रामप्रियभ्राता ॥ २ ॥

और सो (रामचन्द्र) तुम्हारे धनजीवन और प्राण हैं तौ तुम्हारे बराबर बड़भागी (दूसरा) कौन है? ॥ १ ॥ हे प्यारे! तुम्हारी कुछ अचंभेकी बात नहीं, क्योंकि दशरथके पुत्र और रामचन्द्रके प्यारे भाई हो ॥ २ ॥

सुनहु भरत रघुपति मनमाहीं ❀ प्रेमपात्र तुमसम कोउ नाहीं ॥ ३ ॥
लषनरामसीतहिं अतिप्रीती ❀ तेहि निसि तुमहि सराहत बीती ॥ ४ ॥

हे भरत! सुनो रामचन्द्रजीके मनमें स्नेहका पात्र तुम्हारे बराबर कोई नहीं ॥ ३ ॥ योंतौ लक्ष्मण, रामचन्द्र और सीताजीकाभी आपसमें बड़ा प्रेम है, परंतु वह रात तौ तुम्हारीहीं बड़ाई करनेमें पूरी हुई थी ॥ ४ ॥

जाना मरम अन्हात प्रयागा ❀ मगन होहिं तुम्हरे अनुरागा ॥ ५ ॥
तुमपर अस सनेह रघुबरके ❀ सुखजीवन जग जस जड़ नरके ॥ ६ ॥

और मैंने तौ प्रयागके स्नान करतेमें भेद जानलिया कि ("जंबूद्वीपे भरतखंडे" आदि संकल्प पढ़तेही) तुम्हारी प्रीतिमें मगन होगये ॥ ५ ॥ और तुम्हारे ऊपर रामचन्द्रजीका ऐसा प्रेम है जैसे मूर्ख मनुष्यका संसारमें सुखपूर्वक जीनेपर होता है ॥ ६ ॥

यह न अधिक रघुबीर बड़ाई ❀ प्रनत कुटुंबपाल रघुराई ॥ ७ ॥
तुम तौ भरत मोर मत एहू ❀ धरेदेह जनु रामसनेहू ॥ ८ ॥

सो यह रामचन्द्रजीकी कुछ अधिक बड़ाई नहीं, क्योंकि रामचन्द्रजी तौ भक्तोंके कुटुम्बके पालनेवाले हैं ॥ ७ ॥ हे भरत! मेरी समझमें तौ मानों तुम शरीर धारण किये (साक्षात्) रामचन्द्रजीके प्रेमही हो ॥ ८ ॥

दो०-तुमकहँ भरत कलंक यह, हम सबकहँ उपदेस ॥ ❀
रामभक्तिरस सिद्धिहित, भा यह समय गनेस ॥ २०४ ॥ ❀

और हे भरत! तुमको यह कलंक लगना हम सबको उपदेश है, और रामचन्द्रजीकी भक्तिका रस सिद्ध होनेके लिये यह समय गणेशरूप हुआ. अर्थात् सबसे पहले हुआ! सार यह कि सबसे पहले रामभक्तिका रस भरतने सिद्ध किया ॥ २०४ ॥

चौ०-नवबिधु बिमल तात जस तोरा ❀ रघुबरकिंकर कुमुदचकोरा ॥ १ ॥
उदित सदा अथइहि कबहूं ना ❀ घटिहि न जग नभ दिनदिन दूना ॥ २ ॥

हे प्यारे! तुम्हारा निर्मल यश नवीन चन्द्रमा है, और रामचन्द्रजीके दास कुमुद और चकोर

हैं ॥ १ ॥ सो (चन्द्रमा) सदा उदयही रहेगा, अस्त कभी नहीं होगा, और संसाररूपी आकाशमें कभी न घटैगा. (बरन) दिन दिन दूनाही होगा ॥ २ ॥

कोक विलोकि प्रीति अति करहीं ❀ प्रभुप्रताप रवि छविहिं न हरहीं ॥ ३ ॥
निसिदिन सुखद कदा सबकाहू ❀ ग्रसहि न कैकयिकरतब राहू ॥ ४ ॥

(मुक्त, मुमुक्षु, और विषयी) जीवरूपी चकवाचकवी इसे देखकर वहुत प्रीति करैंगे और भगवानका प्रतापरूपी सूर्यभी उसकी शोभाको न हरैगा ॥ ३ ॥ (वह यशरूपी चन्द्रमा) सदा रातदिन सब किसीको सुख देनेवाला है और उसे कैकेयीका करतबरूपी राहुभी नहीं ग्रसैगा ॥ ४ ॥

पूरन रामसुप्रेमपियूषा ❀ गुरु अपमान दोष नहिं दूषा ॥ ५ ॥
रामभक्तिगति अमिय अघाहू ❀ कीन्हेउ सुलभ सुधा बसुधाहू ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीका सुन्दर स्नेहरूपी अमृत उसमें भरा है, और गुरु (बृहस्पतिजी) के निरादररूपी दोषसेभी दूपित नहीं हुआ है ॥ ५ ॥ (भक्तजन) रामचन्द्रजीकी भक्ति गतिरूपी अमृतसे अघावेंगे (क्योंकि) पृथ्वीपर आपने अमृतको सुगम करदिया ॥ ६ ॥

भूप भगीरथ सुरसरि आनी ❀ सुमिरत सकल सुमंगलखानी ॥ ७ ॥
दसरथगुनगन बरनि न जाहीं ❀ अधिक कहा जेहिसम जग नाहीं ॥ ८ ॥

(तुम्हारे कुलमें) राजा भगीरथ गंगाजीको लाये थे जो स्मरण करतेही सब सुन्दर आनन्द मंगलकी खान हैं ॥ ७ ॥ दशरथके गुणोंके समूह वर्णन नहीं किये जाते अधिक तौ कौन है, पर जिनके समानभी संसारमें (कोई) नहीं है ॥ ८ ॥

दो०–जासु सनेहसकोचबस, राम प्रगट भे आइ ॥ ❀
जे हरहिय नयनन्ह कबहुँ, निरखे नाहिं अघाइ ॥ २०५ ॥ ❀

जिनके प्रेम और सकुचके वश रामचन्द्रजी आकर उत्पन्न हुये कि जिनको महादेवजी हृदयके नेत्रोंसे देखते २ कभी नहीं अघाते हैं ॥ २०५ ॥

चौ०–कीरति बिधु तुम कीन्ह अनूपा ❀ जहँ बस रामप्रेम मृगरूपा ॥ १ ॥
तात गलानि करहु जिय जाए ❀ डरहु दरिद्रहिं पारस पाए ॥ २ ॥

तुमने यशरूपी अनोखा चन्द्रमा बनाया, कि जिसमें रामचन्द्रजीका स्नेहरूपी हिरन वसरहा है ॥ १ ॥ हे प्यारे ! मनमें ग्लानि मत करो; पारसके मिलनेसेभी दरिद्रसे डरते हो ॥ २ ॥

सुनहु भरत हम झूठ न कहहीं ❀ उदासीन तापस बन रहहीं ॥ ३ ॥
सब साधन कर सुफल सुहावा ❀ लषनरामसिय दरसन पावा ॥ ४ ॥

हे भरत ! सुनो, हम झूठ नहीं कहते. क्योंकि उदासीन हैं, अर्थात् हमारे मित्रशत्रु एकसें हैं, और तपस्वी हैं (कि जिनमें झूठ न बोलनेका नियम है), और बनमें रहते है, अर्थात् यहां किसीका भयभी नहीं कि झूठ बोलें ॥ ३ ॥ पर सब साधनोंका सुन्दर फल तौ यही है जो राम लक्ष्मण जानकीजीका दर्शन पाया ॥ ४ ॥

तेहि फलकर फल दरस तुम्हारा ❀ सहित प्रयाग सुभाग्य हमारा ॥ ५ ॥
भरत धन्य तुम जगजस लयऊ ❀ कहि अस प्रेममगन मुनि भयऊ ॥ ६ ॥

और (रघुनन्दनके दर्शनके) उस फलके फलसे आपका दर्शन हुआ, सो प्रयागसहित हमारा

---

(१) चन्द्रके विषयमें ऐसा जानना कि चन्द्रमाने गुरु बृहस्पतिजीकी पत्नीसे संभोग किया; उससें बुध उत्पन्न हुआ. इसकारण गुरुने निरादर किया और उसे दोष लगा विशेष आगेके २२३ वें दोहेकी टिप्पणी देखो.

धन्य भाग्य हैं ॥ ५ ॥ हे भरत ! तुमको धन्य है जो संसारमें यश प्राप्त किया, ऐसे कह मुनीश्वर स्नेहमें मगन होगये ॥ ६ ॥

सुनि मुनिबचन सभासद हरषे ❀ साधु सराहि सुमन सुर वरषे ॥ ७ ॥
धन्य धन्य धुनि गगन प्रयागा ❀ सुनि सुनि भरत मगन अनुरागा ॥ ८ ॥

मुनीश्वरके वचन सुन सभासद प्रसन्न हुये, देवताओंने धन्य है २ (इसप्रकार) सराहना करके पुष्प वरसाये ॥ ७ ॥ प्रयागमें और आकाशमें धन्य २ ध्वनि होने लगी, उसे सुन २ कर भरतजी प्रेममें मग्न होगये ॥ ८ ॥

दो०–पुलकगात हियरामसिय, सजलसरोरुहनैन ॥ ❀
करि प्रनाम मुनिमंडलिहिं, बोले गदगद बैन ॥ २०६ ॥ ❀

शरीर पुलकायमान होगया, हृदयमें रामजानकीका स्मरण करते हुये कमलसमान नयनोंमें नीर भर आया; ऐसे भरतजी मुनि मंडलीको प्रणामकर गद्गद वचन बोले ॥ २०६ ॥

चौ०–मुनिसमाज अरु तीरथराजू ❀ साँचेहु सपथ अघाइ अकाजू ॥ १ ॥
इहि थल जो कछु कहिय बनाई ❀ इहिसम अधिक न अघ भाई ॥ २ ॥

यहां मुनियोंका तौ समाज है और यह तीर्थोंका राजा प्रयागराज है. यहां सच्चीभी सौगंद खाना बड़ा बुरा काम है ॥ १ ॥ इस जगह जो कुछ बनाकर कहा जाय तौ इससे बढ़कर संसारमें कोई पाप और नीचता नहीं है ॥ २ ॥

तुम सर्वज्ञ कहौं सतिभाऊ ❀ उर अंतर्यामी रघुराऊ ॥ ३ ॥
मुहिं न मातु करतब कर सोचू ❀ नहिं दुख जिय जन जानहिं पोचू ॥ ४ ॥

आप सर्वज्ञ हो और रामचन्द्रजी अंतर्यामी हैं. मैं सच्चेभावसे कहता हूं कि ॥ ३ ॥ न तौ माताके करतबका सोच है और न मनमें यह दुःख है कि लोग मुझे पोच जानेंगे ॥ ४ ॥

नाहिं न डर बिगरिहि परलोकू ❀ पितुहुँ मरनकर मोहिं न शोकू ॥ ५ ॥
सुकृत सुजस भरि भुवन सुहाए ❀ लक्ष्मनरामसरिस सुत पाए ॥ ६ ॥

और न मुझे परलोक विगड़नेका डर है, और न पिताके मरनेका शोक है ॥ ५ ॥ (क्योंकि पिताके तौ) सुन्दर यश और अच्छे कर्म लोकोंमें भरे हुये हैं और उन्होंने लक्ष्मण और रामचन्द्रजी सरीखे श्रेष्ठ पुत्र पाये ॥ ६ ॥

रामविरह तजि तनु छिनभंगू ❀ भूप सोच कर कौन प्रसंगू ॥ ७ ॥
रामलषनसिय विनु पग पनहीं ❀ करि मुनिवेष फिरहिं वन वनहीं ॥ ८ ॥

और क्षणभरमें नाश होनेवाले शरीरको रामचन्द्रजीके वियोगमें छोड़ दिया तौ राजाके सोच करनेका क्या प्रसंग है ॥ ७ ॥ (परन्तु) रामचन्द्र लक्ष्मण विनाजूतीके पैरों मुनियोंका वेष बनाये वन २ में फिरते हैं ॥ ८ ॥

दो०–अजिनबसन फलअसन महि, सयन डासि कुसपात ॥ ❀
वसि तरुतर नित सहत हिम, आतप वरषा वात ॥ २०७ ॥ ❀

और मृगचर्मके वस्त्र पहिरते ओढ़ते हैं, फल खाते हैं और पृथ्वीपर डाभ और पल्लवकी सेज बिछाकर सोते हैं. और वृक्षोंके नीचे वासकर सरदी, धूप, वर्षा और पवनको नित्य सहते हैं ॥२०७॥

चौ०–इह दुखदाह दहै नित छाती ❀ भूख न वासर नींद न राती ॥ १ ॥
इह कुरोगकर औषध नाहीं ❀ सोधेउँ सकल विश्व मनमाहीं ॥ २ ॥

इसी दुःखकी जलनसे मेरी छाती नित्य जलती है, दिनमें भूख नहीं लगती, और रातको नींद नहीं आती ॥ १ ॥ इस कुरोगकी (रामविना कोई) दवाई नहीं है. मैंने मनमें सब संसारको ढूँढ़ देखा ॥२॥

मातुकुमति बढ़ई अघमूला ❀ तेइ हमार हित कीन्ह बसूला ॥ ३ ॥
कलिकुकाठ कर कीन्ह कुयंत्रू ❀ गाड़ि अवध पढ़ि कठिन कुमंत्रू ॥ ४ ॥

मताकी खोटी बुद्धि जो पापकी जड़ है वह मानों बढ़ई है, उसने हमारा जो हित किया, अर्थात् हमारे लिये जो राज्य चाहा, वही मानों बसूला बनाया ॥ ३ ॥ और (उस बसूलेसे) राज्य माँगनेके कारण जो कलि कहिये कलह सोई कुकाठ[1] अर्थात् बँबूलका महाकठिन काठ है, उसका रामवनोवासरूपी कुयंत्र[2] कहिये कोल्हू तयार किया, और (मंथराके सिखायेहुए वरदानरूपी) कुमंत्रको पढ़कर उसे अवधमें गाड़ दिया ॥ ४ ॥

मोहिं लगि इह कुठाठ तेहिं ठाटा ❀ घालिसि सब जग बाहरवाटा ॥ ५ ॥
मिटै कुरोग राम फिरि आए ❀ बसै अवध नहिं आन उपाए ॥ ६ ॥

सो उसने यह कुठाठ किया तौ मेरे हितके लिये था पर उस बनवासरूपी कोल्हूमें सब जगत्को पेलकर बारह वाट अर्थात् तीन तेरह करदिया ॥ ५ ॥ सो यह कुरोग रामचन्द्रजीके लौट आनेसे और अयोध्यापुरीके बसनेसे मिटैगा, और कोई उपाय नहीं ॥ ६ ॥

भरतवचन सुनि मुनि सुख पाई ❀ सबहि कीन्ह बहुभाँति बड़ाई ॥ ७ ॥
तात करहु जनि सोच विसेषी ❀ सब दुख मिटहिं रामपद देषी ॥ ८ ॥

भरतजीके वचन सुन मुनीश्वरने सुख पाया और सबोंने बहुत भांति बड़ाई की ॥७॥ हे प्यारे, बहुत सोच मत करो रामचन्द्रजीके दर्शनसे सब दुःख मिट जाँयगे ॥ ८ ॥

दो०-करि प्रबोध मुनिवर कहेउ, अतिथि प्रानप्रिय होहु ॥ ❀
कंदमूलफलफूल हम, देहिं लेहु करि छोहु ॥ २०८ ॥ ❀

श्रेष्ठ मुनीश्वरने समझाकर कहा हे प्राणप्यारे! (तुम हमारे) अतिथि हो, हम कन्द मूल फल और फूल जो देवें उन्हें कृपाकरके ग्रहण करो ॥ २०८ ॥

चौ०-सुनि मुनिबचन भरतहिय सोचू ❀ भयऊ कुअवसर कठिन सँकोचू ॥ १ ॥
जानी गरुइ गुरुगिरा बहोरी ❀ चरनबंदि बोले करजोरी ॥ २ ॥

मुनिके वचन सुन भरतजीके मनमें सोच हुआ कि बड़ा कुअवसर आनपड़ा (प्रयागसरीखे तीर्थराजमें और मुनिराजसे भोजनादि लेना) बड़े संकोचकी बात है ॥ १ ॥ फिर गुरु (भारद्वाजजी) की वाणीको बड़ी जान और उनके चरणोंको दंडवत कर हाथ जोड़कर बोले ॥ २ ॥

सिरधरि आयसु करिय तुम्हारा ❀ परमधर्म यह नाथ हमारा ॥ ३ ॥
भरतबचन मुनिवर मन भाए ❀ सुचिसेवक सब निकट बुलाए ॥ ४ ॥

हे स्वामी! हमारा बड़ा धर्म यही है कि आपकी आज्ञाको माथेपर रखकर करैं ॥ ३ ॥ भरतके वचन श्रेष्ठ मुनीश्वरके मनको अच्छे लगे और सब भरोसेके सेवकपास बुला लिये ॥ ४ ॥

चाहिय कीन्ह भरतपहुनाई ❀ कंदमूलफल आनहु जाई ॥ ५ ॥
भले नाथ कहि तिन्ह सिरनाए ❀ प्रमुदित निजनिज काज सिधाए ॥ ६ ॥

---

(१) कुकाठसे बंबूलका ग्रहण इसलिये किया कि तेली बहुधा उसीका कोल्हू बनाते हैं, और वह बुरा काठभी है क्योंकि उसकी लकड़ी किसी शुभकर्ममें नहीं आती है ॥

(२) कुयंत्रसे कोल्हूका ग्रहण प्रसंग वश किया है, अन्यथा चौपाईका अर्थही नहीं जमता है ॥

(और उनसे कहा कि) भरतकी मिहमानी करनी चाहिये सो जाकर कन्द मूल फल लाओ ॥ ५ ॥ हे नाथ! बहुत अच्छा ऐसा कह कर सेवक माथा नवाय अपने २ कामको बहुत प्रसन्नतासे चले ॥६॥

मुनिहिं सोच पाहुन बड़ नेवता ❀ तसि पूजा चाहिय जस देवता ॥ ७ ॥
सुनि ऋधिसिधि अनिमादिक आईं ❀ आयसु होइ सो करहिं गुसाईं ॥ ८ ॥

मुनीश्वरने सोचा कि मिहमान तौ बड़ा न्योता है, और जैसा देवता हो वैसीही पूजाभी चाहिये॥७॥ यह सुन अणिमादिक ऋद्धि सिद्धि आई और (कहा) हे गोसाँई! जो आज्ञा हो सो करें ॥ ८ ॥

दो०–रामविरहव्याकुल भरत, सानुज सकल समाज ॥ ❀
पहुँनाई करि हरहु स्रम, कहेहु मुदित मुनिराज ॥ २०९ ॥ ❀

मुनिराजने प्रसन्नतासे कहा कि छोटे भाई और सब समाज सहित भरतजी रामचन्द्रजीके वियोगमें विकल हैं, उनकी पहुनाई करके (इनकी) थकावटको दूर करो ॥ २०९ ॥

चौ०–ऋधिसिधि सिरधरि मुनिवरबानी ❀ बड़भागिनि आपुहिं अनुमानी ॥ १ ॥
कहहिं परस्पर सिधिसमुदाई ❀ अतुलित अतिथि रामलघुभाई ॥ २ ॥

ऋद्धिसिद्धियोंने मुनीश्वरकी श्रेष्ठ वाणीको शिरपर धर अपनेको बड़भागिनी माना ॥ १ ॥ और सिद्धियां मिलकर आपसमें कहने लगीं कि रामचन्द्रके छोटे भाई बड़े भारी अतिथि हैं ॥ २ ॥

मुनिपद वंदि करिय सोइ आजू ❀ होइ सुखी सब राजसमाजू ॥ ३ ॥
अस कहि रुचिर रचे गृह नाना ❀ जेहिं बिलोकि बिलखाहिं बिमाना ॥ ४ ॥

सो मुनीश्वरके चरणोंको दंडवत कर आज वही करो जिससे सब राजसमाज सुखी हो जाय ॥ ३ ॥ ऐसे कहकर अनेक सुन्दर भवन बनाये, जिन्हें देख विमान भी लजाते थे ॥ ४ ॥

भोग विभूति भूरि भरि राखे ❀ देखत जिनहिं अमर अभिलाषे ॥ ५ ॥
दासी दास साज सब लीन्हे ❀ जुगवत रहहिं मनहिं मन दीन्हे ॥ ६ ॥

और उनमें भोगने योग्य इतनी अधिक सामग्री भर दी कि जिनको देख देवताभी ललचाने लगे ॥ ५ ॥ दास और दासी सब सामान लिये मनमें मन लगाये देखते रहते हैं, अथवा सबका मन लिये रहते हैं कि किसको क्या चाहिये ॥ ६ ॥

सब समाजसजि सिधि पलमाहीं ❀ जे सुख सपनेहुँ सुरपुर नाहीं ॥ ७ ॥
प्रथमहिं वास दिए सबकेहि ❀ सुंदर सुखद जथारुचि जेही ॥ ८ ॥

सिद्धियोंने वह सब ठाठ पलभरमें सजादिया कि जो सुख स्वर्गमें स्वप्नमेंभी नहीं होता ॥ ७ ॥ प्रथम जैसी जिसकी इच्छा थी वैसेही सुन्दर सुख देनेवाले डेरे सबको दिये ॥ ८ ॥

दो०–बहुरि सपरिजन भरतकहँ, ऋषि आयसु अस दीन्ह ॥ ❀
विधिविस्सयदायक विभव, मुनिवर तपबल कीन्ह ॥ २१० ॥ ❀

फिर ऋषिने भरतको कुटुम्बसहित (निवास करनेकी) आज्ञा दी, और श्रेष्ठ मुनिने तपस्याके बलसे ऐसी संपत्ति रची कि, ब्रह्माभी एकदफै आश्चर्य करने लगे ॥ २१० ॥

चौ०–मुनिप्रभाव जब भरत बिलोका ❀ सब लघु लगे लोकपति लोका ॥ १ ॥
सुखसमाज नहिं जाइ बखानी ❀ देखत बिरति बिसारहिं ज्ञानी ॥ २ ॥

जब भरतजीने मुनीश्वरका प्रभाव देखा तौ लोकपाल(इन्द्रादिकों)के लोकभी सब छोटे लगने लगे ॥ १ ॥ सुखका समाज वर्णन नहीं किया जाता। उसे देखतेही ज्ञानी लोग वैराग्यको भूलने लगे॥२॥

आसन सयन बसन सुविताना ❀ वन वाटिका विहँग मृग नाना ॥ ३ ॥
सुरभि फूल फल अमियसमाना ❀ विमल जलासय विविध विधाना ॥ ४ ॥

जिसमें आसन, सेज, वस्त्र, और सुन्दर चँदोए, (शोभायमान हैं,) और वनवाटिका कि जिनमें भांति २ के खग मृग (बोल रहे हैं) ॥ ३ ॥ सुगंधित फूल और फल अमृतके समान फल रहे हैं और अनेक प्रकारके निर्मल सरोवर (भरे हुये हैं) ॥ ४ ॥

असन पान सुचि अमित अमीसे ❀ देखि लोक सकुचात जमीसे ॥ ५ ॥
सुरसुरभी सुरतरुसबहीके ❀ लखि अभिलाष सुरेस सचीके ॥ ६ ॥

खानेपीनेके पवित्र और अमृतके समान अनेक (पदार्थ) भर रहे हैं कि जिन्हैं देख सब लोग संयम नियम करनेवालोंके समान सकुचाते हैं· अर्थात् जैसे संयम नियम करनेवाले योगी विषय उत्पन्न करनेवाली वस्तुओंसे सकुचाते हैं. उसी प्रकार येभी सकुचाये, क्योंकि रामजीके दर्शनोंके लिये मार्गमें व्रतादि नियम करते चले आरहे हैं इसलिये केवल कंदमूल फलही लिये ॥ ५ ॥ सभीके यहां कामधेनु और कल्पवृक्ष हैं जिन्हैं देखकर इन्द्र और इन्द्राणीकोभी इच्छा होती है ॥ ६ ॥

ऋतु बसंत बह त्रिविधबयारी ❀ सबकहँ सुलभ पदारथ चारी ॥ ७ ॥
स्रक चंदन बनितादिक भोगा ❀ देखि हरष विस्मयबस लोगा ॥ ८ ॥

(जहाँ) वसंतऋतु (फैल रही है), तीन प्रकारकी (शीतल मन्द सुगंध) पवन चलरहा है और सबकों चारों पदार्थ अर्थ धर्म काम मोक्ष सुगम हो रहे हैं ॥ ७ ॥ माला चन्दन और स्त्री आदि भोगोंको देख लोग आनन्द[1] और दुःखके वश हो गये ॥ ८ ॥

दो०-संपति चकई भरत चक, मुनि आयसु खेलवार ॥ ❀
तेहिनिसि आस्रमपींजरा, राखे भा भिनुसार ॥ २११ ॥ ❀

वह सब संपत्ति[2] चकई है, भरतजी चकवा हैं और मुनीश्वरकी आज्ञा बहेलिया है (जिसने) उस रातको आश्रमरूपी पिंजरेमें बंद कर रक्खा फिर सबेरा होगया अर्थात् रात्रिके कारण संगम नहीं हुआ ॥ २११ ॥

चौ०-कीन्ह निमज्जन तीरथराजा ❀ नाइ मुनिहिं सिर सहितसमाजा ॥ १ ॥
ऋषिआयसु आसिषसिर राखी ❀ करि दंडवत विनय बहु भाषी ॥ २ ॥

तीर्थराज (प्रयाग) में स्नानकर समाजसहित भरद्वाज मुनिको सिर नवाया ॥ १ ॥ मुनीश्वरकी आज्ञा और आशीर्वादको मस्तकपर रख दण्डवत् करके बहुतसी प्रार्थना की ॥ २ ॥

पथगति कुसल साथ सब लीन्हे ❀ चले चित्रकूटहिं चित दीन्हे ॥ ३ ॥
रामसखा कर दीन्हें लागू ❀ चलत देह धरि जनु अनुरागू ॥ ४ ॥

और मार्गके जानेमें चतुर, अर्थात् मार्ग बतानेवालोंको साथ लेकर चित्रकूटमें मन लगाकर चले ॥ ३ ॥ रामचन्द्रजीके मित्र (निषाद) को अगुआ बनाकर ऐसे चले जाते हैं मानो प्रेमने शरीर धारण किया है ॥ ४ ॥

---

(१) आनन्द इसलिये हुवा कि वे उसके भोगी हैं, और दुखी इसलिये हुये कि ये सब पदार्थ रामजीके वियोगमें मिले ॥ (२) इस दोहेका भाव यह कि जैसे चकवा चकवी रात्रिमें एकत्र नहीं रहते, और जो कदाचित् पास रहभी जाय तो संग नहीं करते, जो कुछ करते हैं सूर्यसाक्षी करते हैं, उसी प्रकार मुनीश्वरकी आज्ञासे भरतजी संपत्तिके पास तौ रहे, पर राम वनवासरूपी रात्रिके कारण भोग न किया, जो रामजीरूपी सूर्य साक्षी होते तौ भोग करते.

नहिं पदत्रान सीस नहिं छाया ❀ प्रेम नेम व्रत धर्म अमाया ॥ ५ ॥
लषनरामसियपंथकहानी ❀ पूछत सखहिं कहत मृदुबानी ॥ ६ ॥

नतौ पैरोंमें जूते हैं और न मस्तकपर छाया है, और प्रेमसे नियम धर्म और व्रतको निष्कपट करते हुये चले जारहे हैं ॥ ५ ॥ लक्ष्मण, रामचन्द्र और सीताजीके मार्गकी कथा (रामजीके) सखासे पूछते हैं और वह मीठी वाणीसे कहता चलता है ॥ ६ ॥

रामवासथल विटप विलोके ❀ उरअनुराग रहत नहिं रोके ॥ ७ ॥
देखि दसा सुर वरषहिं फूला ❀ भइ मृदु महि मग मंगलमूला ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजीके रहनेकी जगहके वृक्षोंको देख (भरतजीके) हृदयका प्रेम रोकनेसेभी नहीं रुकता ॥ ७ ॥ (ऐसी) दशाको देख देवता फूल वर्षाने लगे, और पृथ्वी कोमल, और मार्ग आनन्ददायक हो गया ॥ ८ ॥

दो०–किये जाहिं छाया जलद, सुखद बहै बरवात ॥ ❀
तस मगु भयउ न रामकहँ, जस भा भरतहिं जात ॥ २१२ ॥ ❀

बादल छाया किये जाते हैं और सुन्दर सुख देनेवाली पवन चलती है. जैसा मार्ग[1] भरतके जानेमें हुवा वैसा रामचन्द्रजीकोभी नहीं हुवा ॥ २१२ ॥

चौ०–जड चेतन जग जीव घनेरे ❀ जे चितए प्रभु जिन प्रभु हेरे ॥ १ ॥
ते सब भए परमपदयोगू ❀ भरतदरसभेषज भवरोगू ॥ २ ॥

संसारके बहुतसे जड़ और चैतन्य जीव कि जिन्होंने भगवान्‌को देखा और जिन्हैं भगवानने देखा ॥ १ ॥ वे सब परमपद अर्थात् मुक्तिके योग्य हुये. और भरतजीके दर्शनसे उनका[2] संसाररूपी रोग मिट गया, अर्थात् वे संसारके आगमनसे छुट गये ॥ २ ॥

यह बड़ि बात भरतकी नाहीं ❀ सुमिरत जिनहिं राम मनमाहीं ॥ ३ ॥
बारेक राम कहत जग जेऊ ❀ होत तरन तारन नर तेऊ ॥ ४ ॥

सो भरतके लिये यह कुछ बड़ी बात नहीं कि जिनको रामचन्द्रजी मनमें स्मरण करते हैं ॥ ३ ॥ संसारमें जो एकवारभी राम कहता है, वह मनुष्य तरन तारन हो जाता है, (अर्थात् आप तरता है और दूसरोंको तारता है) ॥ ४ ॥

भरत रामप्रिय पुनि लघुभ्राता ❀ कस न होइ मनु मंगलदाता ॥ ५ ॥
सिद्ध साधु मुनिवर अस कहहीं ❀ भरतहिं निरखि हरष हिय लहहीं ॥ ६ ॥

एकतो भरतजी रामचन्द्रजीके प्यारे और फिर छोटे भाई हैं. उनको मार्ग आनन्द देनेवाला क्यों नहो ॥ ५ ॥ इसप्रकार सिद्ध, साधु और श्रेष्ठ मुनि कहते हैं, और भरतजीको देख मनमें आनन्द पाते है ॥ ६ ॥

---

(१) इस दोहेमें लिखते हैं कि भरतजीको मार्ग जैसा सुखदाई हुआ वैसा रामजीकोभी न हुआ, और पहिले यह कह आये हैं कि "झलका झलकहिं पाँयन कैसे । पंकज कोस ओसकन जैसे" तो यहां पूर्वापर विरोध आता है." समाधान–भरतजीने वसिष्ठादि ऋषियोंसे यह आशीर्वाद मांगा था कि राम बनसे लौट आवें. तब देवताओंने अपने काममें हानि देख इनके लिये मार्गमें विघ्न डाले. परन्तु जब भरतजीने त्रिवेणीजीसे प्रयागमें केवल भक्ति मांगी, तब देवताओंने इनके हृदयको शुद्ध जान मार्गको ऐसा सुगम कर दिया कि जैसा इस दोहेमें लिखा है ॥ (२) उनको यह जो ज्ञान हुआ कि राज्यके कारण निकल गये इसलिये उनको भवरोग अधिक हुआ, क्योंकि उन्होंने राज्यको मुख्य माना. पर जब भरतजीके दर्शन किये और जाना कि राज्यादि सब तुच्छ हैं, तब भवसागरसे पार होगये ।

देखि प्रभाव सुरेसहिं सोचू ❀ जग भल भलहिं पोचकहँ पोचू ॥ ७ ॥
गुरुसन कहेउ करहु प्रभु सोई ❀ रामहिं भरतहिं भेट न होई ॥ ८ ॥

(भरतके) प्रभावको देख इन्द्रको सोच हुआ. (क्योंकि) संसार अच्छेको अच्छा और नीचको नीच है ॥ ७ ॥ (इन्द्रने) बृहस्पतिजीसे जाकर कहा कि हे स्वामी ! वही करो जिससे रामचन्द्र और भरतका मिलाप न हो ॥ ८ ॥

दो०-राम सकोची प्रेमबस, भरत सप्रेमपयोधि ॥ ❀
बनी बात बिगरन चहत, करिय जतन छल सोधि ॥ २१३ ॥ ❀

रामचन्द्रजी तौ स्नेहके वश सकुचा जाते हैं और भरतजी स्नेहके समुद्र हैं, सो बनी हुई बात विगड़ना चाहती है. (इसलिये) कपटको ढूंढकर उपाय कीजिये ॥ २१३ ॥

चौ०-बचन सुनत सुरगुरु मुसुकाने ❀ सहसनयन बिनुलोचन जाने ॥ १ ॥
कह गुरु वादि छोभ छल छाँड़ू ❀ इहाँ कपट करि होइय भाँडू ॥ २ ॥

(इन्द्रके) वचन सुनतेही बृहस्पतिजी हँसे और हजार नेत्रवाले इन्द्रको अंधा जाना ॥ १ ॥ बृहस्पतिजीने कहा कि तुमको अब चालचलना वृथा है, छलको छोड़ दो, क्योंकि यहां कपट करनेसे भाँड़ा फूट जायगा (अर्थात् कपट खुल जायगा) ॥ २ ॥

मायापति सेवकसन माया ❀ करियत उलट परै सुरराया ॥ ३ ॥
तब कछु कीन्ह रामरुचि जानि ❀ अब कुचालि करि होइहि हानी ॥ ४ ॥

हे इन्द्र ! रामचन्द्रजी मायाके स्वामी हैं उनके सेवकसे माया करनेमें उलटी पड़ा करती है॥३॥ तब तौ रामचन्द्रजीकी इच्छा जानकर कुछ करदीनी थी, अब कुचाल करनेसे हानि होगी ॥ ४ ॥

सुनु सुरेस रघुनाथसुभाऊ ❀ निजअपराध रिसाहिं न काऊ ॥ ५ ॥
जो अपराध भक्त कर करई ❀ रामरोषपावक सो जरई ॥ ६ ॥

हे इन्द्र ! सुनो रामचन्द्रजीका स्वभाव है कि वे अपने साथ अपराध करनेवाले किसीपर रोष नहीं करते हैं ॥ ५ ॥ और जो उनके दासका अपराध करता है वह रामचन्द्रजीके क्रोधरूपी अग्निमें जलता है ॥ ६ ॥

लोकहुँ वेदविदित इतिहासा ❀ यह महिमा जानहिं दुर्वासा ॥ ७ ॥
भरतसरिस को रामसनेही ❀ जग जपु राम राम जपु जेही ॥ ८ ॥

लोक और वेदमेंभी कथा प्रसिद्ध है और इस महिमाको दुर्वासा[२] जानते हैं ॥७॥ भरतके बरावर रामचन्द्रजीका प्रेमी कौन है कि संसार रामको जपता है और रामचन्द्र उन (भरत)को जपते हैं ॥८॥

सवैया-(१) वेदरूपी महामुनि सिद्ध सशोक किये सुरलोक उजार्‍यो !
और कहा कहौं सीय हरी तव हूँ करुणानिधि कोप निवार्‍यो ॥
सेवक क्षोभते छांड़ी क्षमा तुलसी लख्यौ राम सुभाव तुम्हार्‍यो ।
तौं लौं न दाविदलो दशकंधर जौ लौं विभीषण लात न मार्‍यो ॥ १ ॥

(२) दुर्वासा और राजा अंवरीषकी कथा भागवतमें लिखी है । जब दुर्वासाने शाप देकर यदुवंशका नाश कर दिया तव तौ कृष्णचन्द्रने क्रोध न किया, पर अपने भक्त अंवरीषके कारण दुर्वासापर अपना सुदर्शनचक्र छोड़ा और उन्हें त्रिलोकीमें घुमाया । यह कथा यों है कि राजा अम्वरीष विष्णुका वड़ा भक्त था । एकादशीका व्रत कर द्वादशीके दिन ब्राह्मणको भोजन कराय आप पारण करता था । एकवार दुर्वासा ऋषिको न्योता दिया । वे स्नानको गये यहां राजाने द्वादशी थोड़ी जान ब्राह्म-

दो०–मनहुँ न आनिय अमरपति, रघुवरभक्त अकाज ॥ ❀
अजस लोक परलोक दुख, दिन दिन सोकसमाज ॥ २१४ ॥ ❀

हे इन्द्र ! रामचन्द्रजीके भक्तका बुरा काम मनमेंभी न सोचना चाहिये, (क्योंकि ऐसा करनेसे) संसारमें बुराई, परलोकमें दुःख और दिन दिन अनेक शोक होते हैं ॥ २१४ ॥

चौ०–सुनु सुरेस उपदेस हमारा ❀ रामहिं सेवक परमपियारा ॥ १ ॥
मानत सुख सेवकसेवकाई ❀ सेवकवैर बैर अधिकाई ॥ २ ॥

हे इन्द्र ! हमारा उपदेश सुनो, रामचन्द्रजीको दास बहुत प्यारा लगता हैं ॥ १ ॥ सेवककी सेवा करनेसे तौ सुख मानते हैं, और सेवकके साथ वैर करनेसे बहुत वैर (करते हैं) ॥ २ ॥

यद्यपि सम नहिं राग न रोषू ❀ गहहिं न पाप पुण्य गुण दोषू ॥ ३ ॥
कर्मप्रधान विश्व करि राखा ❀ जो जस करै सो तस फल चाखा ॥ ४ ॥

यद्यपि (रामचन्द्र) समान हैं (उनको) राग रोष नहीं है, और पाप-पुण्य, गुण और दोषको नहीं ग्रहण करते ॥ ३ ॥ और यद्यपि भगवान्‌ने संसारमें कर्महीको मुख्य कर रक्खा है कि जो जैसा करता है वह वैसा फल भोगता है ॥ ४ ॥

तदपि करहिं सम विषम विहारा ❀ भक्त अभक्त हृदयअनुसारा ॥ ५ ॥
अगुण अलेख अमान एकरस ❀ राम सगुण भए भक्तप्रेमबस ॥ ६ ॥

तौभी भक्त और अभक्तके हृदयके अनुसार सम और विषम विहार करते हैं. भाव यह है-जो सच्चे प्रेमसे भजता है उसके हृदयमें सदा एकरस होकर बसते हैं और उसके पाप दूर करते हैं, और जिसका चंचल चित्त है, कभी लगता है कभी नहीं लगता, उसके हृदयमें विषम रीतिसे विहार करते हैं, अर्थात् जब जी लगता है तब उसके पाप दूर करते हैं अन्यथा नहीं करते ॥५॥ और निर्गुण अलख, अभिमानरहित और एकरस ऐसे रामचन्द्रने भक्तोंके स्नेहवश सगुण अवतार लिया है ॥६॥

राम सदा सेवकरुचि राखी ❀ वेद पुरान साधु सुर साखी ॥ ७ ॥
अस जिय जानि तजहु कुटिलाई ❀ करहु भरतपदप्रीति सुहाई ॥ ८ ॥

जो रामचन्द्र सदा सेवककी रुचि रखते आये हैं, (इसके) वेद, पुराण, साधु, और देवता साक्षी हैं ॥ ७ ॥ ऐसे मनमें समझ कुटिलाईको छोड़ भरतजीके चरणोंमें सुन्दर प्रेम करो ॥ ८ ॥

दो०–रामभक्त परहित निरत, परदुखदुखी दयालु ॥ ❀
भक्तसिरोमनि भरतते, जनि डरपहु सुरपालु ॥ २१५ ॥ ❀

हे इन्द्र ! (भरतजी) रामचन्द्रजीके भक्त हैं, पराये भलेमें प्रीति करनेवाले हैं, और पराये दुःखसे दुखी और कृपा करनेवाले हैं. इसलिये तुम भक्तोंमें शिरोमणि भरतजीसे मत डरो ॥ २१५ ॥

चौ०–सत्यसंध प्रभु सुरहितकारी ❀ भरत रामआयसुअनुसारी ॥ १ ॥
स्वारथविबस विकल तुम होहू ❀ भरतदोष नहिं राउरमोहू ॥ २ ॥

णोंकी आज्ञासे चरणोदक ले भोजन किया । जब दुर्वासाजीने आकर यह जाना तब जटाका एक बाल भूमिपर पटका उससे कृत्या राक्षसी उत्पन्न हो राजाको मारने चली । सो वह तो भूमिपर बेसुध हो गिरा और ऋषिके पीछे सुदर्शनचक्र लगा । तब ऋषि विष्णुकी शरणमें गये, परन्तु इन्होंने न रक्खा, बरन राजाकीही शरणमें भेजा कि वही तुम्हारी रक्षा करैगा । फिर ऋषि राजाके यहां आये । राजाने इन्हें आदरसे बैठाकर चक्रको निवारण किया और ऋषिको षडरस भोजन कराकर सत्कारपूर्वक विदा किया और इनके शापको विष्णुने स्वयं अंगीकार किया ॥

भरतजी सत्य प्रतिज्ञा करनेवाले, रक्षक और देवताओंके हित करनेवाले हैं और रामचन्द्रजीकी आज्ञाके माननेवाले हैं ॥ १ ॥ तुम स्वार्थके वशमें होकर व्याकुल होते हो (इसमें) भरतजीका दोष नहीं, (बरन) तुम्हारा अज्ञान है ॥ २ ॥

सुनि सुरवर सुरगुरुवरबानी ❀ भा प्रबोध मन मिटी गलानी ॥ ३ ॥
बर्षि प्रसून हर्षि सुरराऊ ❀ लगे सराहन भरतसुभाऊ ॥ ४ ॥

बृहस्पतिजीकी ऐसी श्रेष्ठ वाणीको सुनकर इन्द्रके मनमें ज्ञान हुआ और मनकी चिंता दूर हुई ॥ ३ ॥ फिर तौ इन्द्र प्रसन्न हो फूलोंकी वर्षा कर भरतके सुभावकी सराहना करने लगे ॥ ४ ॥

इहिविधि भरत चले मगुजाहीं ❀ दसा देखि मुनि सिद्ध सिहाहीं ॥ ५ ॥
जबहिं राम कहि लेहिं उसासा ❀ उगमत प्रेम मनहुँ चहुँपासा ॥ ६ ॥

इस भाँति भरत मार्गमें चले जाते हैं. (उनकी) दशाको देख मुनीश्वर और सिद्ध सराहना करते हैं ॥ ५ ॥ और जब राम कहकर उसास लेते हैं तौ मानों चारों ओर प्रेम उमड़ता है ॥ ६ ॥

द्रवहिं बचन सुनि कुलिस पषाना ❀ पुरजनप्रेम न जाइ बखाना ॥ ७ ॥
बीच बास करि जमुनहिं आए ❀ निरखि नीर लोचन जल छाए ॥ ८ ॥

वचन सुनकर वज्र और पत्थरभी पिघलते हैं और नगरके मनुष्योंका स्नेह वर्णन नहीं किया जाता ॥ ७ ॥ बीचमें निवास करके यमुना तीरपर आये और जलको देखकर नेत्रोंमें जल भर आया ॥ ८ ॥

दो०-रघुवरबरन बिलोकि बर, बारि समेत समाज ॥ ❀
होत बिरहबारिधि मगन, चढ़े बिबेकजहाज ॥ २१६ ॥ ❀

रामचन्द्रजीके रंगकासा सुन्दर जल देखकर (भरतजी) समाजसहित वियोगरूपी समुद्रमें मगन होते हुये ज्ञानरूपी जहाजपर चढ़े अर्थात् धीरज रक्खा ॥ २१६ ॥

चौ०-जमुनतीर तेहि दिन करि बासू ❀ भयउ समय सबहिं सुपासू ॥ १ ॥
रातिहिं घाटघाटकी तरनी ❀ आईं अगनित जाइँ न बरनी ॥ २ ॥

उस दिन यमुनाजीके किनारेपर निवास कर समयके समान सबको सुख हुआ ॥ १ ॥ रातहीमें घाट २ की अनेक नावें आईं कि जिनका वर्णन नहीं हो सकता ॥ २ ॥

प्रात पार भे एकहिं खेवा ❀ तोषे रामसखा करि सेवा ॥ ३ ॥
चले अन्हाइ नदिहिं सिरनाई ❀ साथ निषादनाथ लघुभाई ॥ ४ ॥

सबेरे एकही खेवेमें पार हुये और रामचन्द्रजीके मित्र (निषाद) ने सेवा कर संतुष्ट किया ॥३॥ (भरत) स्नानकर यमुनाजीको शिर नवाय केवटोंके स्वामी और छोटे भाई शत्रुघ्नसहित चले ॥४॥

आगे मुनिवर वाहन आछे ❀ राजसमाज जाइ सब पाछे ॥ ५ ॥
तेहि पाछे दोउ बंधु पयादे ❀ भूषन बसन वेष सुठि सादे ॥ ६ ॥

आगे तौ श्रेष्ठ मुनियोंकी सुंदर सवारी जा रही है, पीछे २ सब राजसमाज जा रहा है ॥ ५ ॥ उसके पीछे दोनों भाई भूषण वसनसे सुन्दर साधारण वेष बनाये पैदल चले जा रहे हैं ॥ ६ ॥

सेवक सुहृद सचिव सुत साथा ❀ सुमिरत लषन सीय रघुनाथा ॥ ७ ॥
जहँ जहँ रामबासविस्रामा ❀ तहँ तहँ करहिं सप्रेम प्रनामा ॥ ८ ॥

सेवक, मित्र, और मंत्रीके पुत्र साथमें हैं और राम लक्ष्मण जानकीजीका स्मरण करते हुये चले जाते हैं ॥ ७ ॥ और जहां २ रामचन्द्रजीके वास और विश्राम (के स्थान) हैं तहां २ प्रेमसे प्रणाम करते जाते हैं ॥ ८ ॥

दो०–मगवासी नर नारि सुनि, धामकाम तजि धाइ ॥
देखि स्वरूप सनेहवस, मुदित जनमफल पाइ ॥ २१७ ॥

मार्गमें रहनेवाले नर नारी सुनकर घरका काम छोड़ दौड़कर और प्रेमके वश स्वरूपके दर्शन कर जन्मका फल पाय प्रसन्न होते हैं ॥ २१७ ॥

चौ०–कहहिं सप्रेम एक इकपाहीं ❀ राम लषन सखि होहिं कि नाहीं ॥ १ ॥
बय बपु बरन रूप सोइ आली ❀ सील सनेह सरिस सम चाली ॥ २ ॥

(नारियाँ) प्रेमसहित एक दूसरेसे कहती हैं कि, हे सखी! ये रामचन्द्र लक्ष्मण हैं या नहीं ॥ १ ॥ हे सखी! अवस्था अंग और रूप रंग वही है. पुनि शील प्रेम समान और चालढाल एकसीही है ॥ २ ॥

वेष न सो सखि सीय न संगा ❀ आगे अनी चली चतुरंगा ॥ ३ ॥
नहिं प्रसन्नमुख मानसखेदा ❀ सखि संदेह होत इहि भेदा ॥ ४ ॥

(परन्तु) हे सखी! (एक तौ) वह वेष नहीं और सीताजी साथ नहीं हैं. (दूसरे) आगे चतुरंगनी सेना जा रही है ॥ ३ ॥ (इनका) मुखभी प्रसन्न नहीं. मनमें खेद है. हे सखी! इसी भेदसे संदेह होता है ॥ ४ ॥

तासु तर्क तियगन मनमानी ❀ कहहिं सकल तोहिंसम न सयानी ॥ ५ ॥
तेहिं सराहि बानी फुर पूजी ❀ बोली मधुर वचन तिय दूजी ॥ ६ ॥

उसकी तर्कना स्त्रियोंके झुंडकी समझमें आगई तौ सब कहने लगीं कि, तेरे समान कोई चतुर नहीं है ॥ ५ ॥ उसकी सराहना कर सच्ची वाणीकी प्रशंसा करके दूसरी स्त्री मीठी वाणीसे बोली ॥ ६ ॥

कहि सप्रेम सब कथाप्रसंगू ❀ जेहिंबिधि रामराजरसभंगू ॥ ७ ॥
भरतहिं बहुरि सराहन लागी ❀ सील सनेह सुभाव सुभागी ॥ ८ ॥

और प्रेमसे सब कथाका प्रसंग कहा कि जिस ढंगसे रामचन्द्रजीके राज्यमें रंगका भंग हुआ ॥ ७ ॥ फिर भरतके शील, प्रेम, स्वभाव और अच्छे भाग्यकी सराहना करने लगी कि ॥ ८ ॥

दो०–चलत पयादे खात फल, पिता दीन्ह तजि राज ॥
जात मनावन रघुवरहिं, भरतसरिस को आज ॥ २१८ ॥

भरतके समान आज कौन है जो पिताके दिये हुये राज्यको छोड़ रामचन्द्रजीके मनानेके लिये फल खाते हुये पैदल चले जा रहे हैं ॥ २१८ ॥

चौ०–भायप भक्ति भरतआचरनू ❀ कहत सुनत दुखदूषनहरनू ॥ १ ॥
जो कछु कहिय थोर सखि होई ❀ रामबंधु अस काहे न होई ॥ २ ॥

भरतजीका भाईपन भक्ति और आचरण कहने सुननेसे दुःख और पापका नाश होता है ॥ १ ॥ हे सखी! जो कुछ कहा जाय वही थोड़ा है, रामचन्द्रजीका भाई ऐसा क्यों न हो? ॥ २ ॥

हम सब सानुज भरतहिं देखे ❀ भए धन्य जुवतीजनलेखे ॥ ३ ॥
सुनि गुनि देखि दसा पछिताहीं ❀ कैकेयिजननि जोग सुत नाहीं ॥ ४ ॥

हम सब नारियाँ छोटे भाईसहित भरतजीको देख स्त्रीजनोंकी गिनतीमें धन्य हुईं ॥३॥ भरतकी दशाको देख सुन और विचार करके पछताती हैं कि(भरत)कैकेयी माताके योग्य पुत्र नहीं हैं ॥ ४ ॥

कोउ कह दूषन रानिहु नाहिन ❀ बिधि सबभाँति हमहिं जो दाहिन ॥ ५ ॥
कहँ हम लोकवेदबिधिहीनी ❀ लघुकुलतिय करतूति मलीनी ॥ ६ ॥

कोई कहती है कि रानीकाभी दोष नहीं (वरन) जो किया सो ब्रह्माने कियाहै कि जो सब भांति हमको दाहिना है ॥ ५ ॥ कहाँ हम लोक और वेदकी विधिसे हीन, छोटे कुलकी स्त्रियां और मलीन कामकरनेवालीं !॥ ६ ॥

बसहिं कुदेस कुगाँव कुठामा ❀ कहँ यह दरस पुन्यपरिनामा ॥ ७ ॥
अस अनंद अचरज प्रतिग्रामा ❀ जनु मरुभूमि कलपतरु जामा ॥ ८ ॥

बुरे देश, बुरे गांव, और बुरे ठौरमें रहती हैं, हमें (इनका) दर्शन कहां ? यह तौ हमारे पुण्योंका फल है ॥ ७ ॥ ऐसा आनन्द और आश्चर्य हरएक गांवमें होने लगा. मानों रेतीली धरतीमें कल्पवृक्ष पैदा हुआ ॥ ८ ॥

दो०-भरतदरस देखत खुलेउ, मगुलोगन्हकर भाग ॥ ❀
जनु सिंहलवासिन्ह भयो, विधिवस सुलभ प्रयाग ॥ २१९ ॥ ❀

भरतजीका दर्शन देखतेही मार्गके लोगोंका भाग्य खुलगया मानो प्रारब्धके वश सिंहलद्वीपके रहनेवालोंको प्रयाग सुगम होगया २१९ ॥

चौ०-निजगुनसहित रामगुनगाथा ❀ सुनत जाहिं सुमिरत रघुनाथा ॥ १ ॥
तीरथ मुनिआस्रम सुरधामा ❀ निरखि निमज्जहिं करहिं प्रनामा ॥ २ ॥

(भरत) अपने गुणोंसमेत रामचन्द्रजीके गुणोंके समूहको सुनते हुये और रघुनाथजीका स्मरण करते चले जाते हैं॥१॥ तीर्थमें स्नान और मुनियोंके आश्रम और देवमन्दिरोंको देख प्रणाम करते ॥२॥

मनहीं मन माँगहिं बर एहू ❀ सीयरामपद पद्मसनेहू ॥ ३ ॥
मिलहिं किरात कोल बनवासी ❀ वैखानस बटु जती उदासी ॥ ४ ॥

और मनही मनमें यह वरदान मांगते हैं कि सीता रामचन्द्रजीके चरणकमलोंमें प्रेम हो ॥ ३ ॥ कोल, भील, वनके रहनेवाले वानप्रस्थ, ब्रह्मचारी, संन्यासी और यती मिलते हैं, ॥ ४४ ॥

करि प्रनाम पूछहिं जेहि तेहि ❀ केहि बन लषन राम वैदेहि ॥ ५ ॥
ते प्रभुसमाचार सब कहहिं ❀ भरतहिं देखि जनमफल लहहीं ॥ ६ ॥

(उनको) प्रणाम कर जिस तिससे पूछते हैं कि, राम लक्ष्मण, और जानकीजी किस बनमें हैं ॥ ५ ॥ वे भगवानके सब समाचार कहते हैं और भरतको देख जन्मका फल पाते हैं ॥ ४ ॥

जे जन कहहिं कुसल हम देखे ❀ ते प्रिय रामलषनसम लेखे ॥ ७ ॥
इहिबिधि बूझत सबहिं सुबानी ❀ सुनत रामबनबासकहानी ॥ ८ ॥

जो मनुष्य कहते हैं, कि, (रामचन्द्र) हमने कुशलपूर्वक देखे, वे रामलक्ष्मणके समान प्यारे गिने जाते हैं॥७॥ इसभांति सबसे सुन्दर वाणीसे पूछते हैं और रामचन्द्रजीके वनमें रहनेकी कथा सुनते हैं ८

दो०-तेहि बासर बसि प्रातही, चले सुमिरि रघुनाथ ॥ ❀
रामदरसकी लालसा, भरतसरिस सब साथ ॥ २२० ॥ ❀

उस दिन वास करके सबेरेही रामचन्द्रजीका स्मरण करके चले और जैसी भरतको दर्शनकी लालसा है वैसेही सब साथवालोंकोभी रामचन्द्रके दर्शनोंकी चाहना है ॥ २२० ॥

चौ०-मंगलशकुन होहिं सबकाहू ❀ फरकहिं सुखद विलोचन बाहू ॥ १ ॥
भरतहिं सहित समाज उछाहू ❀ मिलिहहिं राम मिटिहिं दुखदाहू ॥ २ ॥

सब किसीको आनन्दके शकुन होते हैं और सुख देनेवाले नेत्र और भुजा फडकती हैं ॥ १ ॥ भरतको समाजसहित ऐसी लालसा है कि, रामचन्द्र मिलैंगे और दुःख और जलन मिटेगी ॥ २ ॥

करत मनोरथ जस जिय जाके ॐ जाहिं सनेहसुधा सब छाके ॥ ३ ॥
सिथिल अंग पग डगमग डोलहिं ॐ विह्वल बचन प्रेमबस बोलहिं ॥ ४ ॥

जैसा जिसके मनमें आवे वैसाही मनोरथ करते हैं और प्रेमरूपी अमृतसे छके हुये सब चले जाते हैं. ॥३॥ शरीर शिथिल है, मार्गमें पैर डगमगाते हुये पड़ते हैं, और प्रेमके वश गदगद बचन बोलते हैं ॥ ४ ॥

रामसखा तेहिं समय दिखावा ॐ सैलसिरोमनि सहज सुहावा ॥ ५ ॥
जासु समीप सरितपयतीरा ॐ सीयसमेत बसहिं दोउ बीरा ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीके मित्र (निषाद) ने उस समय सहजहीमें सुन्दर पर्वतोंके शिरोमणि (चित्रकूट)-के दर्शन कराये ॥ ५ ॥ जिसके निकट मन्दाकिनी नदीके तटपर सीताजीसमेत दोनों भाई निवास करते हैं ॥ ६ ॥

देखि करहिं सब दंडप्रनामा ॐ कहि जय जानकिजीवन रामा ॥ ७ ॥
प्रेममगन अस राजसमाजू ॐ जनु फिर अवध चले रघुराजू ॥ ८ ॥

उसे देख सब दण्डवत प्रणाम करते हैं और सीताजीके जीवन ऐसे रामचंद्रजीकी जय बोलते हैं ॥ ७ ॥ राजसमाज प्रेममें ऐसा मगन है मानो रामचन्द्रही अयोध्याको लौट चले ॥ ८ ॥

दो०–भरतप्रेम तेहि समय जस, तैसा कहिसकै न सेषु ॥ ॐ
कविहि अगम जिमि ब्रह्मसुख, अहमम मलिन जनेषु ॥२२१॥ ॐ

उस समय भरतजीको जैसा प्रेम है तैसा शेषजीभी नहीं कहसकते. वह कविके लिये तौ इसभाँति कठिन है जैसे अहंकार और ममतावाले मलिन मनुष्योंको ब्रह्मानन्द कठिन है ॥ २२१ ॥

चौ०–सकल सनेह सिथिल रघुबरके ॐ गए कोस दुइ दिनकर ढरके ॥ १ ॥
जलथल देखि बसे निसि बीते ॐ कीन्ह गवन रघुनाथ पिरीते ॥ २ ॥

सब लोग रामचन्द्रजीके प्रेममें ऐसे शिथिल हैं कि सूर्यके छिपनेपरभी दो कोस और चले गये ॥१॥ फिर जल और थल देखकर वास किया और रात बीतनेपर रामचन्द्रजीके प्यारके कारण चले ॥२॥

वहाँ राम रजनी अवसेखा ॐ जागे सीय स्वप्न अस देखा ॥ ३ ॥
सहितसमाज भरत जनु आए ॐ नाथवियोगतापतनु ताए ॥ ४ ॥

वहां रामचन्द्रजी रात बाकी रहने जो जगे तो जानकीजीने ऐसा स्वप्न देखा कि–॥ ३ ॥ स्वामीके वियोगरूपी अग्निसे तपे हुये भरतजी मानो समाजसमेत आये हैं ॥ ४ ॥

सकल मलिन मन दीन दुखारी ॐ देखीं सासु आन अनुहारी ॥ ५ ॥
सुनि सियस्वप्न भरे जललोचन ॐ भये सोचबससोचबिमोचन ॥ ६ ॥

और सबके मन मलीन, दीन, दुखी हैं और सासुओंको कुछ औरही प्रकारसे अर्थात् विधवा देखीं ॥ ५ ॥ सीताजीका स्वप्न सुनकर नयनोंमें जल भर आया और शोचके नाश करनेवाले (रामचन्द्रजी) शोचके वश हुये ॥ ६ ॥

लषन स्वप्न यह नीक न होई ॐ कठिन कुचाह सुनाइहि कोई ॥ ७ ॥
अस कहि बंधुसमेत अन्हाने ॐ पूजि पुरारि साधु सनमाने ॥ ८ ॥

(और बोले) हे लक्ष्मण ! यह स्वप्न अच्छा नहीं है, कोई बुरी खोटी वात सुनावेगा ॥ ७ ॥ ऐसे कहकर भाईसमेत न्हाये और महादेवजीका पूजनकर साधुओंका सत्कार किया ॥ ८ ॥

---

(१) इस दोहेका दूसरा अर्थ योंभी घटताहै कि उस समय भरतजीका जैसा प्रेम है उसे शेष कहिये लक्ष्मणजीभी ठीक २ नहीं कहसक्ते, अर्थात् लक्ष्मणजी यही कहैंगे कि रामजीसे लड़नेको आते हैं ॥

छं०-सनमानि सुरमुनि बंदि बैठे उतरदिसि देखत भए ।
नभ धूरि खग मृग भूरि भागे विकल प्रभुआस्रम गए ॥
तुलसी उठे अवलोकि कारन काह चित चकित रहे ।
सब समाचार किरात कोलनि आइ तेहिं अवसर कहे ॥१०॥

देवता और मुनीश्वरोंका सत्कार कर और दण्डवतकरके बैठे और उत्तर दिशाकी ओर देखने लगे तौ आकाशमें धूल छागई, वहुतसे खग मृग व्याकुल होकर और भागकर भगवानके आश्रममें आरहे हैं. ऐसा देख (राम लक्ष्मण) उठे और चित्तमें चकित हो विचारने लगे कि क्या कारण है? उस समय कोल भीलोंने आकर सब समाचार कहे ॥ १० ॥

सो०-सुनत सुमंगल बैन, मन प्रमोद तनु पुलक भर ॥
सरदसरोरुहनैन, तुलसी भरे सनेहजल ॥ ९ ॥

सुन्दर आनन्दके वचन सुनतेही (रघुनाथजीके) मनमें वहुत आनन्द भरगया, शरीर पुलकायमान होगया, शरदके कमलसमान नेत्र प्रेमके जलसे भरगये ॥ ९ ॥

चौ०-वहुरि सोचबस भे सियरमनू ❀ कारन कौन भरतआगमनू ॥ १ ॥
एक आइ अस कहा बहोरी ❀ सेन संग चतुरंग न थोरी ॥ २ ॥

फिर सीतापति (रामचन्द्र) शोचके[1] वश हुये, कि भरतके आनेका क्या कारण है! ॥ १ ॥ फिर एकने आकर ऐसे कहा कि, उनके साथमें चतुरंगिनी सेनाभी कुछ थोड़ी नहीं है ॥ २ ॥

सो सुनि रामहिं भा अतिसोचू ❀ इत पितुबच उत बंधुसकोचू ॥ ३ ॥
भरतसुभाव समुझि मनमाहीं ❀ प्रभुचित हित थिति पावत नाहीं ॥ ४ ॥

सो सुनकर रामचन्द्रजीको वड़ा शोच हुआ कि इधर तौ पिताका वचन, उधर भाईकी सकुच ॥ ३ ॥ (परन्तु) भरतके स्वभावको मनमें समुझ भगवान्‌के चित्तमें कारण जमने नहीं पाता ॥ ४ ॥

समाधान तब भा यह जाने ❀ भरत कहेमहँ साधु सयाने ॥ ५ ॥
लषन लखेउ प्रभुहृदय खँभारू ❀ कहत समयसम नीतिविचारू ॥ ६ ॥

(परंतु जब सोचा कि भरत तौ) साधु और चतुर हैं और मेरे कहेमें हैं यह समझकर तब (जीमें) समाधान हुआ ॥ ५ ॥ लक्ष्मणजीने देखा कि भगवानके हृदयमें अकुलाहट है तौ समयके अनुसार नीति विचारके कहने लगे कि-॥ ६ ॥

बिन पूछे कछु कहहुँ गुसांई ❀ सेवक समय न ढीठ ढिठाई ॥ ७ ॥
तुम सर्वज्ञशिरोमणि स्वामी ❀ अपनी समुझ कहौं अनुगामी ॥ ८ ॥

हे गोसाँई! विना पूछे कुछ कहता हूँ (सो क्षमा करना) क्योंकि समयपर सेवककी ढिठाई नहीं गिनीजाती, अर्थात् जो सेवक समय पाकर ढीठता करै वह ढीठ नहीं गिना जाता। जैसे जहां स्वामीकी भलाई होती दीखै वहां विना आज्ञाकेभी काम कर देनेसे ढिठाई नहीं कहाती है ॥ ७ ॥ हे स्वामी! आप तौ सब जाननेवालोंमें प्रधान हो, पर मैं सेवकभी अपनी समझ कहता हूँ ॥ ८ ॥

दो०-नाथ सुहृद सुठि सरलचित, सीलसनेहनिधान ॥
सबपर प्रीति प्रतीति जिय, जानिय आपुसमान ॥ २२२ ॥

---

(१) रघुनाथजीको सोच कई प्रकारका हुआ कि-हमारी माताने कहीं भरतके राज्यमें विघ्न न डाला हो, अथवा प्रजा तौ कहीं भरतसे नहीं फिर गई, अथवा तीसरा कोई राज्य न दवा वैठा हो, अथवा भरत शत्रुघ्नकी राज्यके पीछे चटकी हों ॥

हे स्वामी! (आपको सब) प्यारे हैं और आप अत्यंत सरल चित्तवाले शील और प्रेमके निधान हैं और मनमें सबकी प्रीतिका विश्वास अपनासाही समझते हैं ॥ २२२ ॥

चौ०-विषयी जीव पाइ प्रभुताई ❀ मूढ़ मोहबस होहिं जनाई ॥ १ ॥
भरत नीतिरत साधु सुजाना ❀ प्रभुपदप्रेम सकल जग जाना ॥ २ ॥

परन्तु विषयी जीव प्रभुताको पाय मूर्ख हो अज्ञानके वश अभिमान करते हैं ॥१॥ भरतजी तौ नीतिके जाननेवाले चतुर और साधु हैं और आपके चरणोंमें उनका स्नेह है इसे सब संसार जानता है२॥

तेऊ आजु राजपद पाई ❀ चले धरममरजाद मिटाई ॥ ३ ॥
कुटिल कुबंधु कुअवसर ताकी ❀ जानि रामबनबास एकाकी ॥ ४ ॥

वहभी आज राज्यपद पाकर कर्मकी मर्यादाको मेट कर चले ॥ ३ ॥ कुटिल और खोटे भाई (भरत) बुरा समय तककर और रामचन्द्रजीको वनमें अकेला जानकर ॥ ४ ॥

करि कुमंत्र मन साजि समाजू ❀ आए करन अकंटक राजू ॥ ५ ॥
कोटि प्रकार कलिप कुटिलाई ❀ आए दल बटोरि दोउ भाई ॥ ६ ॥

मनमें बुरी संमति ठान, समाजको सजाय अकंटक राज्य करने आये हैं ॥ ५ ॥ करोड़ों प्रकारकी कुटिलाई बिचार कर दोनों भाई सेना इकट्ठी करके ले आये हैं ॥ ६ ॥

जो जिय होति न कपट कुचाली ❀ केहि सोहात रथ बाजि गजाली ॥ ७ ॥
भरतहिं दोष देइ को जाए ❀ जग बौराइ राजपद पाए ॥ ८ ॥

जो मनमें कपटकी कुचाल न होती तौ हाथी, घोड़े, और रथ किसे सुहाते? ॥ ७ ॥ भरतको कौन वृथा दोष दे? राज्यपद पानेसे संसारही बौराय[1] जाता है ॥ ८ ॥

दो०-ससि गुरुतियगामी नहुष, चढेउ भूमिसुरयान ॥ ❀
लोकवेदते विमुख भा, अधम को बेनसमान ॥ २२३ ॥ ❀

चन्द्रमाने[2] गुरुकी स्त्रीसे गमन किया, (राजा) नहुष[3] ब्राह्मणोंसे कंधा लगवा कर पालकीपर

---

(१) जैसा कहा है कि दोहा—

१ कनक कनकते सौगुनी, मादकता अधिकाय। वह खाये बौरातें है, यह पाये बौराय ॥ १ ॥

अर्थात् कनक जो धतूरा है उससे कनक जो सुवर्ण उसमें सौगुणा नशा है. धतूरा मनुष्य खानेसे बौराता है, और सुवर्ण पानेसे बौराता है.

(२) चन्द्रमाके गुरु बृहस्पतिजी थे, और उनकी स्त्रीका नाम तारा था। इसने एक दिन कामवश हो चन्द्रमासे कहा कि तुम मेरेसाथ भोग करो. चन्द्रमाने गुरुपत्नीका विचार न कर भोग किया और जब बुध उत्पन्न हुआ और बृहस्पति उसका नामकरन करने उठे तब चन्द्रने कहा, 'हे गुरु! यह पुत्र मुझसे है सो मुझे दीजिये और पूर्वकथा कही. तब गुरु बोले वीर्य तेरा और क्षेत्र मेरा है इससे इसका मैंही अधिकारी हूं। परन्तु जब अधिक विवाद् बढ़ा और म माने तब देवताओंने मिलकर चन्द्रमाको बुध दिलादिया।

(३) राजा नहुष चन्द्रवंशी प्रतिष्ठानपुरका राजा बड़ा ज्ञानी और धर्मात्मा था। एकवार जब इन्द्र वृत्रासुरके भयसे भाग मानससरोवरमें जाछुपे तब बृहस्पतिजीने इन्द्रपदपर राज्यप्रबंधके लिये इसे बैठाया। इसने नीतिके साथ प्रबंध करना आरंभ किया, परन्तु एक दिन इसके चित्तमें ऐसी नीच इच्छा हुई कि इन्द्राणीके साथ भोग करनेके लिये कहला भेजा। यह सुन इन्द्राणीको बड़ा क्षोभ हुआ और उसने राजासे कहला भेजा कि यदि तुम पालकीमें बैठकर और इसे ब्राह्मणोंसे उठवाकर आओ तौ भोग कर सक्ते हो। राजा कामांध हो रहा था, पालकीमें बैठ सप्तऋषियोंसे उठवाकर चला. तब ऋषि धीरे २ चलते थे और यह शीघ्रता करता था उसपर ऋषियोंने पालकी पटक शाप दिया कि तू मृत्युलोकमें जाकर सर्प हो, तब राजा मृत्युलोकमें आकर सर्प हुआ और उसका युधिष्ठिरने उद्धार किया. ॥

चढ़े, और लोक और वेदसे विमुख ऐसे, राजा वेणु[1]के समान कौन नीच हुआ? (कि जिसने ईश्वर होनेका अभिमान किया) ॥ २२३ ॥

चौ०–सहसबाहु सुरनाथ त्रिसंकू ❀ केहि न राजमद दीन्ह कलंकू ॥ १ ॥
भरत कीन्ह यह उचित उपाऊ ❀ रिपु ऋण रंच न राखब काऊ ॥ २ ॥

सहस्रबाहु[2] इन्द्र और त्रिशंकु[3] (इनमेंसे) किसको राज्यके अभिमानने कलंक न दिया ॥१॥ भरतजीनेभी उचितही उपाय किया (क्योंकि) शत्रु[4] और ऋणको कभी कुछभी शेष न रखना चाहिये ॥ २॥

एक कीन्ह नहिं भरत भलाई ❀ निदरे राम जानि असहाई ॥ ३ ॥
समुझि परिहि सो आजु बिसेषी ❀ समर सरोष राममुख देषी ॥ ४ ॥

(परन्तु) एकही भरतजीने अच्छा न किया जो रामचन्द्रजीको विना सहायक जान निरादर किया ॥ ३ ॥ सो आज लड़ाईमें क्रोधयुक्त रामचन्द्रजीका मुख देख सब जान पड़ैगी ॥ ४ ॥

इतना कहत नीतिरस भूला ❀ रणरसविटप पुलक जिमि फूला ॥ ५ ॥
प्रभुपद बंदि सीसरज राषी ❀ बोले सत्य सहज बल भाषी ॥ ६ ॥

---

(१) राजा वेणु लड़कपनसेही उपद्रवी था। इससे राजा तथा प्रजा सब दुखी थे। जब पिता मरा और इसे राजगद्दी हुई तब इसने यह आज्ञा दी कि सब मेरी आज्ञा मानों और वेदपुराणकी रीतिपर मत चलो और परमेश्वरके समान मेरा आदर करो नहीं तौ दंड दूंगा। यह सुनकर ऋषिमुनि प्रजा आदि सब दुखी हुए और एकवार सब ऋषि मिलकर इसे समझाने भी आये और बहुतसी ज्ञानचर्चा करी, परन्तु सब निष्फल हुईं। तब ऋषियोंने क्रुद्ध हो इसे शाप दे मारडाला और वंशको निर्वंश देख इसके शरीरको मथा तब एक जांघमेंसे काला मनुष्य निकला। इसको पापरूप जान फिर मथा तब भुजासे राजा पृथु हुये। इन्हे राज्यपर बैठाया और काले पुरुषको दक्षिणका राज्य दिया कि जिसकी संतान निषाद कहलाई।

(२) राजा सहस्रबाहु कि जिसे कार्तवीर्यार्जुनभी कहते हैं क्षत्री था। इसके महादेवके वरप्रदानसे हजार भुजा थीं और बड़ा बली था। एकवार वनमें मृगया खेलने गयाथा कि वहां उसे प्यास लगी, तब दूतको जल लेनेको भेजा। जब दूतको जल कहीं न मिला तब जमदग्निके आश्रममें जाय राजाके लिये जल मांगा। उन्होंने कहा कि राजासे कहो कि आज यहां आकरही सेनासमेत भोजन करैं और जल पियें। राजाने कहला भेजा कि आपके यहां इतनी सामग्री कहांसे आवैगी? ऋषिने कहा सब हो जायगा, आप पधारिये। राजा वहां गये और ऋषिने कामधेनुकी कृपासे सब भोजन मंगाय राजाका तथा सेनाका अत्यन्त सत्कार किया तब राजाने विस्मित हो कारण पूछा। ऋषिने कहा मेरे यहां कामधेनु है, उसीकी माया है। राजाने गौ मांगी, ऋषिने देनेमें संकोच किया। राजाने सेनाको आज्ञादी कि गौ लेचलो, और जब उसके अनुचर खोलकर लेचले तब गौसे म्लेछ उत्पन्न हुए कि जिनका राजाके साथ युद्ध होनेलगा। राजाने क्रोध कर ऋषिका शिर काटलिया और रेणुकाकोभी घायल करा। तब गऊ भाग कर इन्द्रलोकमें पहुँची, और जब यह समाचार परशुरामको मिले तब उन्होंने आकर सहस्रबाहुको मारकर यह प्रतिज्ञा करी कि पृथ्वीपर किसी क्षत्रियको न रहने दूंगा अंतमें २१ वार पृथ्वीको क्षत्रीरहित किया! (३) एकवार राजा त्रिशंकुने यह विचारा कि यज्ञ कर सदेह स्वर्ग जाऊं और यह बात वसिष्ठजीसे कही; और जब उन्होंने स्वीकार न की तब उनके पुत्रोंसे कहा; और जब उन्होंने भी नाहीं करी तब विश्वामित्रके पास गया। उनका वसिष्ठजीसे द्वेष था अतएव उन्होंने इसकी प्रार्थना स्वीकार करके यज्ञ करना आरंभ किया, और जब वसिष्ठादिऋषि यज्ञमें विघ्न करने लगे तब विश्वामित्रने तपोवलसे नये ऋषि और देवता रचे और यज्ञको पूरा कर त्रिशंकुको सदेह स्वर्ग भेजा॥ परन्तु जब वहाँसे देवताओंने उलटा नीचे ढकेला तब विश्वामित्रने तपोवलसे बीचमेंही रोकदिया॥ वही त्रिशंकुका तारा विदित है और इसीके मुखसे जो लार टपकी उससे कर्मानाशा नदी वही॥ (४) जैसी नीति है कि–

ऋणशेषोऽग्निशेषश्च व्याधिशेषस्तथैव च। पुनः पुनः प्रवर्धन्ते तस्मान्निःशेषमाचरेत् ॥ १ ॥

अर्थात् ऋणका शेष तथा अग्नि ओर व्याधिका शेष ये बार २ बढ़ जाते हैं इसलिये इन्हें निःशेष कर दे, अर्थात् बाकी न रक्खै।

इतना कहतेही नीतिके रसको तौ भूल गये और वीररसका वृक्ष मानों पुलकावली (रूपी पुष्पोंसे) फूल गया ॥ ५ ॥ और भगवान्‌के चरणोंको दंडवत कर रज मस्तकपर रक्खी और सहज ही वल वखान कर सच्च २ वोले ॥ ६ ॥

अनुचित नाथ न मानब मोरा ❀ भरत हमहिं उपचार न थोरा ॥ ७ ॥
कहँलगि सहिय रहिय मन मारे ❀ नाथ साथ धनु हाथ हमारे ॥ ८ ॥

हे स्वामी ! मेरे (कहेका) बुरा न मानना. भरतजीने हमारे (मारनेका) थोड़ा उपाय नहीं किया है ॥ ७ ॥ कहाँतक सहैं और मन मार रहैं हमारे साथ स्वामी हैं और हाथमें धनुष हैं ॥ ८ ॥

दो०-क्षत्रिजाति रघुकुलजनम, रामअनुज जग जान ॥ ❀
लातहुँ मारे चढत सिर, नीच को धूरिसमान ॥ २२४ ॥ ❀

मैं जातिका क्षत्री हूं, रघुकुलमें जन्म है और रामचन्द्रका छोटा भाई हूँ इसे संसार जानता है, (भला) धूलके समान नीचा कौन है, अर्थात् कोईभी नहीं है. परन्तु लात मारनेसे (वहभी बदला लेनेकी इच्छासे) मस्तकहीपर चढ़ती है ॥ २२४ ॥

चौ०-उठि कर जोरि रजायसु मांगा ❀ मनहुँ वीररस सोवत जागा ॥ १ ॥
बाँधि जटासिर कसि कटि भाथा ❀ साजि सरासन सायक हाथा ॥ २ ॥

(लक्ष्मणजी) उठे और हाथ जोड़कर (इसप्रकार) आज्ञा मांगी मानों वीररस सोतेसे जगा हो ॥१॥ शीशपर जटाजूट वांध कमरमें तरकस कस, हाथमें धनुपवाण सजाय (वोले कि) ॥ २ ॥

आजु रामसेवकजस लेऊँ ❀ भरतहिं समरसिखावन देऊँ ॥ ३ ॥
रामनिरादरकर फल पाई ❀ सोवहु समरसेज दोउ भाई ॥ ४ ॥

आज मैं रामचन्द्रजीकी सेवाका यश लूंगा और भरतको लड़ाईमें शिक्षा दूँगा कि ॥ ३ ॥ रामचन्द्रजीके निरादरका यह फल है, इसे पाकर लड़ाईरूपी सेजपर दोनों भाई शयन करो ॥ ४ ॥

आइ बना भल सकल समाजू ❀ प्रकट करों रिसि पाछिल आजू ॥ ५ ॥
जिमि करिनिकर दलै मृगराजू ❀ लेइ लपेटि लवा जिमि बाजू ॥ ६ ॥

सव सामान अच्छा आ बना, पिछले रोषकोभी आजही प्रकट करूंगा ॥ ५ ॥ जैसे सिंह हाथियोंके झुंडको दलता है और जैसे वाज लवापर झपटता है ॥ ६ ॥

तैसेहिं भरतहिं सेनसमेता ❀ सानुज निदरि निपातौं खेता ॥ ७ ॥
जो सहाय कर शंकर आई ❀ तौ मारौं रण रामदुहाई ॥ ८ ॥

तैसेही भरतको सेना और छोटेभाईसहित निरादर कर रणभूमिमें ऐसा गिरा दूंगा कि ॥७॥ जो शंकरभी आकर सहाय करैं तौभी लड़ाईमें मारूंगा. (मुझे) रामचन्द्रजीकी सौगंद है ॥ ८ ॥

दो०-अति सरोष भाषे लषन, लखि सुनि सपथप्रमान ॥ ❀
सभय लोक सब लोकपति, चाहत भभरि भगान ॥ २२५ ॥ ❀

लक्ष्मणजीको अति रोषयुक्त देखकर और जो उन्होंने कहा उसे सुनकर और उन्होंकी सौगन्दको सच्ची जान सब लोक और लोकपाल घवरा गये और भड़भड़ाकर भागना चाहा ॥ २२५ ॥

चौ०-जग भय मगन गगन भै बानी ❀ लषन बाहुबल बिपुल बखानी ॥ १ ॥
तात प्रताप प्रभाव तुम्हारा ❀ को कहिसकै को जाननहारा ॥ २ ॥

जब जगत् घवरा रहा था (उस समय) लक्ष्मणजीके अधिक वाहुवलकी सराहना करती हुई

आकाशवाणी हुई ॥ १ ॥ प्यारे! तुम्हारे प्रताप और प्रभावको कौन कह सकता और कौन जाननेवाला है? ॥ २ ॥

अनुचित उचित काज कछु होई ❀ समुझि करिय भल कह सब कोई ॥ ३ ॥
सहसा करि पाछे पछिताहीं ❀ कहहिं वेद बुध ते बुध नाहीं ॥ ४ ॥

जो कुछ काम बुरा भला हो समझकर करना चाहिये (जिससे) सब कोई अच्छा कहै ॥ ३ ॥ और जो उतावली करते हैं वे पीछे पछताते हैं, (उनको) वेद और बुद्धिमान् चतुर नहीं कहते ॥४॥

सुनि सुरबचन लषन सकुचाने ❀ राम सीय सादर सनमाने ॥ ५ ॥
कही तात तुम नीति सुहाई ❀ सबते कठिन राजमद भाई ॥ ६ ॥

देवताओंके वचन सुन लक्ष्मणजी सकुचे तौ आदरसहित राम जानकीजीने उनका सत्कार किया ॥ ५ ॥ हे प्यारे! तुमने सुन्दर नीति कही· हे भाई! राज्यका अभिमान सबसे कठिन होता है ॥६॥

जो अँचवत नृप मातहिं तेई ❀ नाहिंन साधुसभा जिन सेई ॥ ७ ॥
सुनहु लषन भल भरतसरीखा ❀ विधिप्रपंचमहँ सुना न दीखा ॥ ८ ॥

पर उसके पीतेही वे राजा मतवाले हो जाते हैं, जिन्होंने साधुओंकी सभाका सेवन नहीं किया ॥ ७ ॥ हे लक्ष्मण! सुनो, भरतके समान भला मनुष्य ब्रह्माकी सृष्टिमें न तौ सुना और न देखा॥८॥

दो०-भरतहिं होइ न राजमद, विधिहरिहरपद पाइ ॥ ❀
कबहुँ की काँजीसीकरन्हि, छीरसिंधु बिनसाइ ॥ २२६ ॥ ❀

भरतको ब्रह्मा विष्णु महादेवका पद पानेसेभी राज्यका मद न होगा· भला कांजी अर्थात् मठेके धोवनकी बूंदोंसे कहीं क्षीरसमुद्र फटसक्ता है? अर्थात् कभी नहीं फटसक्ता है ॥ २२६ ॥

चौ०-तिमिर तरुन तरनिहिं सक गिलई ❀ गगनमगन मकु मेघहिं मिलई ॥ १ ॥
गोपदजल बूड़हिं घटयोनी ❀ सहज छमा वरु छाँड़हि छोनी ॥ २ ॥

अंधकार तरुण सूर्यको भलेही निगलसके, और चाहे आकाश बादलमें मिलजावे ॥ १ ॥ अगस्त्यऋषि गौके खुरके जलमें भलेही डूब जावें और पृथ्वी साधारण क्षमाको भलेही छोड़ दे ॥ २ ॥

मसक फूंक बरु मेरु उड़ाई ❀ होइ न नृपमद भरतहिं भाई ॥ ३ ॥
लषन तुम्हार सपथ पितु आना ❀ सुचि सुबंधु नहिं भरतसमाना ॥ ४ ॥

मच्छरकी फूंकसे सुमेरु भलेही उड़जावे परन्तु हे भाई! भरतको राज्यका मद नहीं हो सकता ॥ ३ ॥ हे लक्ष्मण! तुम्हारी और पिताकी सौगंद है, भरतके बराबर कपटरहित सुन्दर भाई नहीं है ॥ ४॥

सुगुन छीर अवगुन जल ताता ❀ मिलेउ रचेउ परपंच विधाता ॥ ५ ॥
भरतहंस रविवंस तड़ागा ❀ जन्मि कीन्ह गुनदोषविभागा ॥ ६ ॥

हे प्यारे! सुन्दर गुण तौ दूधके समान हैं, और अवगुण जलके समान हैं, और विधाताने संसार

---

१ सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम् ।
वृणते हि विमृश्यकारिणं गुणलुब्धाः स्वयमेव संपदः ॥

अर्थात् सहसा काम नहीं करना चाहिये. क्योंकि अज्ञान वड़ी २ आपत्तियोंका स्थान है, और विचार कर करनेवाले मनुष्यके पास संपत्तियां स्वयं आती हैं क्यों कि वे गुणकी लोभी हैं, अर्थात् जिसके पास गुण होता है उसीके पास जाती हैं ॥ १ ॥

(२) लक्ष्मणजीने जो कहा था कि-"कुटिल कुबन्धु कुअवसर ताकी" उसका यह उत्तर है ॥

में इन दोनोंको मिलाकर उत्पन्न किया है ॥ ५ ॥ और सूर्यवंश मानों सरोवर है उसमें भरतजी मानों हंसके समान हैं, उन्होंने जन्म लेकर गुण और दोषको अलग २ कर दिया ॥ ६ ॥

गहि गुनपय तजि अवगुनवारी ❀ निजजस जगत कीन्ह उजियारी ॥ ७ ॥
कहत भरतगुन सील सुभाऊ ❀ प्रेमपयोधिमगन रघुराऊ ॥ ८ ॥

अर्थात् गुणरूपी दूधको ग्रहण कर और अवगुणरूपी जलको छोड़ अपने यशसे संसारको प्रकाशित किया ॥ ७ ॥ भरतके गुण और स्वभावको कहते हुये रामचन्द्रजी स्नेहके समुद्रमें डूब गये ॥ ८ ॥

दो०-सुनि रघुवरवानी विवुध, देखि भरतपर हेतु ॥ ❀
सकल सराहत रामसों, प्रभु को कृपानिकेतु ॥ २२७ ॥ ❀

और देवता रामचन्द्रकी वाणी सुन और भरतपर प्रीति देखकर सराहना करने लगे कि रामचन्द्रके समान कृपानिधान कौन है ? ॥ २२७ ॥

चौ०-जो न होत जग जनम भरतको ❀ सकल धरम धुर धरनि धरतको ॥ १ ॥
कविकुलअगम भरतगुनगाथा ❀ को जानै तुम विनु रघुनाथा ॥ २ ॥

जो संसारमें भरतका जन्म न होता तौ संपूर्ण धर्मकी धुरीको पृथ्वीपर कौन रखता ? ॥ १ ॥ कवियोंके कुलको बड़ी कठिन ऐसी भरतके गुणोंकी कथाको हे रामचन्द्र ! तुम्हारे विना कौन जानसक्ता है ?॥२॥

लषन राम सिय सुनि सुरबानी ❀ अति सुख लहेउ न जाइ बखानी ॥ ३ ॥
इहाँ भरत सबसहित सुहाए ❀ मंदाकिनी पुनीत अन्हाए ॥ ४ ॥

राम लक्ष्मण और जानकीजीने देवताओंकी वाणीको सुनकर ऐसा भारी सुख पाया कि (उसका) वर्णन नहीं किया जाता ॥३॥ यहां भरतजीने सबोंके साथ परमपावनी मन्दाकिनीमें स्नान किये ॥ ४ ॥

सरितसमीप राखि सब लोगा ❀ माँगि मातुगुरुसचिव नियोगा ॥ ५ ॥
चले भरत जहँ सिय रघुराई ❀ साथ निषादनाथ लघु भाई ॥ ६ ॥

और सब लोगोंको नदीके पास बैठा कर और माता, गुरु और मंत्रीसे आज्ञा माँगी ॥ ५ ॥ जहाँ सीता रामचन्द्रजी थे (वहां) भरतजी निषाद और छोटे भाईको साथ लेकर चले ॥ ६ ॥

समुझि मातुकरतब सकुचाहीं ❀ करत कुतर्क कोटि मनमाहीं ॥ ७ ॥
राम लषन सिय सुनि मम नाउँ ❀ उठि जनि अनत जाहिं तजि ठाऊँ ॥ ८ ॥

माताके कर्तव्यको समुझकर सकुचाते हैं और मनमें करोड़ों झूंठी कल्पना करते जाते हैं कि ॥ ७ ॥ राम लक्ष्मण जानकीजी मेरा नाम सुनकर जगहको छोड़कर (और जगह) न चले जाँय ॥ ८ ॥

दो०-मातुमते महँ जानि मोहिं, जो कुछ करहिं सो थोर ॥ ❀
अघ अवगुनि छमि आदरहिं, समुझि आपनी ओर ॥२२८॥ ❀

माताके मतेमें मुझे जान जौ कुछ वे करैं सोई थोड़ा है (परन्तु) अपनी ओर समुझकर मेरे पाप और अवगुणोंको क्षमा कर आदरही करैंगे ॥ २२८ ॥

चौ०-जो परिहरहिं मलिनमन जानी ❀ जो सनमानहिं सेवक मानी ॥ १ ॥
मोरे सरन रामकी पनहीं ❀ राम सुस्वामि दोष सब जनहीं ॥ २ ॥

और चाहे मुझे मनमें मलिन जानकर त्याग दें, चाहें सेवक मानकर आदर करैं ॥१॥ मैं तौ रामचन्द्रकी जूतियोंकी शरण हूं, क्यों कि रामचन्द्र तौ श्रेष्ठ स्वामी है, दोष तौ सब मुझ सेवककाही है ॥२॥

जग जसभाजन चातक मीना ❀ नेम प्रेम निज निपुन नवीना ॥ ३ ॥
अस मन गुनत चले मगु जाता ❀ सकुच सनेह सिथिल सब गाता ॥ ४ ॥

संसारमें पपीहा और मछली यशकी पात्र हैं, जो अपने नियम[1] और प्रेममें सदा पक्के और नये रहते हैं ॥ ३ ॥ ऐसे मनमें विचारते हुये मार्गमें चले जाते हैं, सब शरीर सकुच और प्रेमके कारण शिथिल है ॥ ४ ॥

फेरति मनहुँ मातुकृतखोरी ❀ चलत भक्तिबल धीरजधोरी ॥ ५ ॥
जब समुझहिं रघुनाथसुभाऊ ❀ तब पथ परत उतावल पाऊ ॥ ६ ॥

मानों माताके करतबका खोट तौ (भरतको) पीछे लौटाता है पर रामभक्तिके बलसे धीरज रखकर चलते हैं ॥५॥ जब रामचन्द्रजीके स्वभावको समझते हैं तब मार्गमें जलदीसे पैर पड़ते हैं ॥ ६ ॥

भरतदसा तेहि अवसर कैसी ❀ जलप्रवाह जलअलिगति जैसी ॥ ७ ॥
देखि भरतकर सोच सनेहू ❀ भा निषाद तेहि समय विदेहू ॥ ८ ॥

उस समय भरतकी कैसी दशा है जैसे जलके वहावमें जलके भौंरोंकी दशा होती है ॥७॥ भरतका शोच और प्रेम देख भील उस समय विदेह हुआ, अर्थात् उसे देहकी सुधबुध न रही ॥ ८ ॥

दो०-लगे होन मंगल सकुन, सुनि गुनि कहत निषाद ॥ ❀
मिटहिं सोच होइहि हरष, पुनि परिनाम विषाद ॥ २२९ ॥ ❀

आनन्दके शकुन होने लगे. (उन्हैं) सुन भील विचारकर कहने लगा कि सोच मिटैंगे और आनन्द होगा. पर फिर अंतमें विषादही रहैगा ॥ २२९ ॥

चौ०-सेवकबचन सत्य सब जाने ❀ आस्रमनिकट जाइ निअराने ॥ १ ॥
भरत दीख वन सैलसमाजू ❀ मुदित छुधित जनु पाइ सुनाजू ॥ २ ॥

(भरतने) सेवकके वचन सब सत्य जाने और आश्रमके समीप जा पहुँचे ॥ १ ॥ भरत पर्वतोंका समाज देख (मनमें) ऐसे प्रसन्न हुये जैसे भूखा (मनुष्य) सुन्दर अन्नको पाकर होता है ॥ २ ॥

ईति भीति जनु प्रजा दुखारी ❀ त्रिबिधतापपीड़ित ग्रहमारी ॥ ३ ॥
जाइ सुराज सुदेस सुखारी ❀ होइ भरतगति तेहि अनुहारी ॥ ४ ॥

जैसे ईतिसे[2] डरी हुई, तीनों प्रकारके तापसे पीडित और ग्रहोंकी सताई हुई दुखी प्रजा ॥ ३ ॥ सुन्दर राज्य और सुन्दर देशमें जाकर सुखी होजाती है, उसीके अनुसार भरतकी दशा हो गई ॥ ४ ॥

रामवासबन संप्रति भ्राजा ❀ सुखी प्रजा जनु पाइ सुराजा ॥ ५ ॥
सचिव बिराग बिबेक नरेसू ❀ विपिन सुहावन पावन देसू ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीके निवाससे वनकी संपत्तियां ऐसे शोभित हुईं जैसे सुन्दर राजाको पाकर प्रजा सुखी होते है ॥ ५ ॥ जहां ज्ञान राजा, वैराग्य मंत्री, और सुन्दर वन पवित्र देश है ॥ ६ ॥

भट यम नियम सैल रजधानी ❀ शांति सुमति सुचि सुंदरि रानी ॥ ७ ॥
सकल अंग संपन्न सुराऊ ❀ रामचरनआस्रित चित चाऊ ॥ ८ ॥

---

(१) पपीहेका नियम यही है कि स्वातिबूंदकी राह देखा करता है अन्य जल नहीं पीता। और मछलीका प्रेम यह है कि जलमें रहै, तो जीति रहै, नहीं मरजाय.

(२) ईति ६ प्रकारकी होती है यथा–

अतिवृष्टिरनावृष्टिर्मूषकाः शलभाः शुकाः । अत्यासन्नाश्च राजानः षडेता ईतयः स्मृताः ॥

अर्थात् (१) अधिक वर्षा होना (२) वर्षा न होना (३) खेतमें चूहे होना (४) टीड़ी आना (५) तोते (६) आसपासके राजाओंका मिलकर चढ़आना ये ६ प्रकारकी ईतियां कही हैं ॥

(जिस ज्ञानराजाके) संयम नियम योद्धा हैं, पर्वत राजधानी है, और शांति तथा सुन्दर मति जहां पतिव्रता सुन्दरी रानियां हैं ॥ ७ ॥ संपूर्ण अंगोंसे परिपूर्ण सुन्दर राजा है और रामचन्द्रजीके चरणोंके सहारेसे मनमें प्रसन्न है ॥ ८ ॥

दो०-जीति मोहमहिपाल दल, सहित विवेक भुआल ॥
करत अकंटक राज पुर, सुख संपदासुकाल ॥ २३० ॥

(सो वह) ज्ञानरूपी राजा अज्ञानरूपी राजाको सेनासहित जीतकर नगरका अकंटक राज्य करता है, (और वहां) सुख और संपत्तिका सुकाल बना रहता है, अर्थात् वहां सुख और संपत्ति कभी नहीं घटते ॥ २३० ॥

चौ०-वनप्रदेस मुनिवास घनेरे ❀ जनुपुर नगर गाँव गन खेरे ॥ १ ॥
बिपुल विचित्र विहँग मृग नाना ❀ प्रजासमाज न जाइ बखाना ॥ २ ॥

बनके बीचमें जो मुनीश्वरोंके रहनेके आश्रम हैं वेही मानों बहुतसे नगर गाँव शहर और खेडोंके समूह हैं ॥ १ ॥ बहुतसे रंग बिरंगके अनेक पक्षी और हिरन प्रजाका समाज है, जो वर्णन नहीं किया जाता ॥ २ ॥

खरहा करि हरि बाघ बराहा ❀ देखि महिष वृक साज सराहा ॥ ३ ॥
बैर बिहाय चरहिं इक संगा ❀ जहँ तहँ मनहुँ सेन चतुरंगा ॥ ४ ॥

गधे हाथी सिंह बाघ शूकर भैंसे भेड़िये इनका समाज देखकर सराहने योग्य है ॥ ३ ॥ और वे वैरको छोड़कर जो एकसाथ जहाँतहाँ फिरते हैं सोही मानो चतुरंगिनी सेना है ॥ ४ ॥

झरना झरहिं मत्तगज गाजहिं ❀ मनहु निसान बिबिधविधि बाजहिं ॥ ५ ॥
चक चकोर चातक सुक पिकगन ❀ कूजत मंजु मराल मुदितमन ॥ ६ ॥

और झरने जो झरते हैं और मतवाले हाथी जो गर्जते हैं सोही मानो अनेक भांतिके बाजे बजते हैं ॥५॥ चकवा, चकोर, पपीहा, तोते और कोकिलोंके समूह और सुंदर हंस मनमें प्रसन्न हो कूकते हैं॥६॥

अलिगन गावत नाचत मोरा ❀ जनु सुराज मंगल चहुँओरा ॥ ७ ॥
बेलि बिटप तृन सफल सफूला ❀ सब समाज मृदु मंगलमूला ॥ ८ ॥

भौंरोंके समूह गाते और मोर नाचते हैं, मानों सुन्दर राज्यमें चारों ओर आनन्द हो रहा है॥७॥ वेलि[1] वृक्ष और घास आदि फूल रहे हैं, और सब समाज सुन्दर आनन्ददायक हो रहा है ॥ ८ ॥

दो०-रामसैलसोभा निरखि, भरतहृदय अति प्रेम ॥
तापस तपफल पाइ जिमि, सुखी सिराने नेम ॥ २३१ ॥

रामगिरिकी शोभाको देखकर भरतके मनमें ऐसा भारी स्नेह हुआ जैसे तपस्वी तपका फल पाकर और नियमोंको समाप्त कर सुखी होता है ॥ २३१ ॥

चौ०-तब केवट ऊँचे चढ़ि जाई ❀ कहा भरतसन भुजा उठाई ॥ १ ॥
नाथ देखु यह बिटप बिसाला ❀ पाकरि जंबु रसाल तमाला ॥ २ ॥

तब केवटने ऊंचेपर चढ़ कर भरतसे भुजा उठाकर कहा ॥ १ ॥ हे स्वामी ! देखो यह बड़े वृक्ष जो पाकड़ जामन आम और तमालके (दीखते) हैं ॥ २ ॥

तिन्ह तरुवरन्हमध्य बट सोहा ❀ मंजु बिसाल देखि मन मोहा ॥ ३ ॥
नील सघन पल्लव फल लाला ❀ अविचल छाँह सुखद सब काला ॥ ४ ॥

---

(१) यहां वेलि स्त्रियां, वृक्ष पुरुष और तृण मानो लड़केवाले हैं ॥

उन सुन्दर वृक्षोंके वीजमें बड़का वृक्ष शोभायमान है जो उज्ज्वल और बड़ा और जिसके देखनेसे मन मोहित होता है ॥ ३ ॥ जिसके घने पीले पत्ते हैं, लाल २ फल हैं और उसकी सर्वदा रहनेवाली छाया सब समयमें सुख देनेवाली है ॥ ४ ॥

मानहुँ तिमिर अरुनमय रासी ❀ बिरची बिधि सकेलि सुषमासी ॥ ५ ॥
तेहि तरु सरितसमीप गुसाँई ❀ रघुवर परनकुटी जहँ छाई ॥ ६ ॥

मानों अंधकार और लालाँईके समूहको इकट्ठा कर ब्रह्माने उसकी शोभा रची है ॥ ५ ॥ हे गोसाँई! उसी वृक्षके निकट नदी है, जहां रामचन्द्रजीने पर्णकुटी वनाई है ॥ ६ ॥

तुलसीतरुवर विविध सुहाए ❀ कहुँ सियपिय कहुँ लषन लगाए ॥ ७ ॥
बटछाया बेदिका बनाई ❀ सिय निजपानिसरोज सुहाई ॥ ८ ॥

तुलसीके सुन्दर वृक्ष अनेक प्रकारसे शोभायमान हैं, कहीं रामचन्द्रजीने और कहीं लक्ष्मणने लगाये हैं ॥ ७ ॥ और सीताजीने अपने कमलसमान (कोमल) हाथोंसे बटकी छायामें सुंदर वेदी वनाई है ॥ ८ ॥

दो०-जहँ बैठे मुनिगणसहित, नित सिय राम सुजान ॥ ❀
सुनहिं कथा इतिहास सब, आगम निगम पुरान ॥ २३२ ॥ ❀

जहां मुनीश्वरोंकी मंडलीसहित बैठकर चतुर सीता रामचन्द्रजी नित्य सब कथा इतिहास, वेद, पुराण और शास्त्र सुनते हैं ॥ २३२ ॥

चौ०-सखाबचन सुनि बिटप निहारी ❀ उमगे भरत बिलोचन वारी ॥ १ ॥
करत प्रनाम चले दोउ भाई ❀ कहत प्रीति सारद सकुचाई ॥ २ ॥

मित्रके वचन सुन वृक्षोंको देख भरतजीके नेत्रोंमें नीर भर आया ॥ १ ॥ दोनों भाई प्रणाम करते हुये चले जाते हैं, उनके प्रेमको कहतेमें सरस्वतीभी सकुचती है ॥ २ ॥

हरषहिं निरखि रामपदअंका ❀ मानहुँ पारस पायउ रंका ॥ ३ ॥
रजसिरधरिहिय नयनन्हि लावहिं ❀ रघुवरमिलनसरिस सुख पावहिं ॥ ४ ॥

रामचन्द्रजीके चरणोंके चिन्होंको देखकर ऐसे प्रसन्न होते हैं मानों कंगालको पारस मिलगया ॥ ३ ॥ उन (चिन्होंकी) धूलको मस्तकपर धारण कर हृदय और नेत्रोंसे लगाते हैं और रामचन्द्रजीके मिलनेकी बरावर सुख पाते हैं ॥ ४ ॥

देखि भरतगति अकथ अतीवा ❀ प्रेममगन खग मृग जड़ जीवा ॥ ५ ॥
सखहिं सनेहबिबस मगु भूला ❀ कहि सुपंथ सुर बरषहिं फूला ॥ ६ ॥

भरतजीकी अत्यंत अकथ दशाको देखकर पक्षी हिरण जड़ और जीवभी स्नेहमें मगन होगये ॥ ५ ॥ मित्र (निषाद) भी प्रेमके वश मार्ग भूल गया तब देवता सुन्दर मार्ग बताकर फूल वरसाते हैं ॥ ६ ॥

निरखि सिद्ध साधक अनुरागे ❀ सहज सनेह सराहन लागे ॥ ७ ॥
होत न भूतल भाव भरतको ❀ अचर सचरचर अचर करतको ॥ ८ ॥

यह देख साधु और सिद्ध लोगभी प्रीतिवान् हो स्वाभाविक प्रेमकी सराहना करने लगे कि, ॥ ७ ॥ पृथ्वीपर भरतका जन्म न होता तौ जड़ोंको चैतन्य और चैतन्योंको जड़ कौन करता ! ॥ ८ ॥

---

(१) यहां जड़ चैतन्य होनेका ऐसा भाव है कि देवता जो अपने स्वार्थमें जड़ हो रहे थे उनको तो चैतन्य किया, अर्थात् मार्ग वताने लगे, और निषाद जो चैतन्य था अर्थात् मार्ग बताता जाताथा वह भरतजीके प्रेममें मग्न हो जड़ होकर मार्ग भूल गया.

दो०-प्रेम अमिय मंदर विरह, भरत पयोधि गँभीर ॥
मथि प्रगटे सुरसाधुहित, कृपासिंधु रघुवीर ॥ २३३ ॥

भरतजी गंभीर क्षीरसागर हैं और (वनोवासका) विरह सोई मन्दराचल पर्वत है, उससे मथकर साधु कहिये भक्तजन सोई मानों देवता हैं उनके लिये कृपासागर रघुनाथजीने प्रेमरूपी अमृतको उत्पन्न किया ॥ २३३ ॥

चौ०-सखासमेत मनोहर जोटा ❀ लखेउ न लषन सघनवन ओटा ॥ १ ॥
भरत दीख प्रभुआस्रम पावन ❀ सकल सुमंगलसदन सुहावन ॥ २ ॥

लक्ष्मणजीने घने वनकी ओटमें मित्रसहित मनमोहिनी जोड़ीको न देखा ॥ १ ॥ और भरतने भगवान्‌का पवित्र आश्रम देखा जो सब सुन्दर आनन्दोंका घर था ॥ २ ॥

करत प्रवेस मिटा दुखदावा ❀ जनु जोगी परमारथ पावा ॥ ३ ॥
देखे भरत लषन प्रभु आगे ❀ पूछत बचन कहत अनुरागे ॥ ४ ॥

उसमें प्रवेश करतेही दुःखरूपी दावानल ऐसे मिट गई मानों योगीको मुक्ति प्राप्ति हुई ॥ ३ ॥ भरतने देखा कि लक्ष्मणजी भगवान्‌के आगे (कुछ) पूछ रहे हैं और वे प्रेमसे उत्तर दे रहे हैं ॥४॥

सीस जटा कटि मुनिपट बाँधे ❀ तूण कसे कर सर धनु काँधे ॥ ५ ॥
बेदीपर मुनिसाधुसमाजू ❀ सीयसहित राजत रघुराजू ॥ ६ ॥

मस्तकपर जटाजूट, कमरमें मुनियोंके वस्त्र अर्थात् छालकी कोपीन आदि बाँधे, तरकस कसे हुये, हाथमें बाण और कंधेपर धनुष धरे हैं ॥ ५ ॥ वेदीपर मुनीश्वर और साधुओंके समाज, जानकीजीसमेत रामचन्द्र विराजमान हैं ॥ ६ ॥

बल्कलबसन जटिल तनु स्यामा ❀ जनु मुनिवेष कीन्ह रति कामा ॥ ७ ॥
कर कमलन्ह धनु सायक फेरत ❀ जियकी जरनि हरत हँसि हेरत ॥ ८ ॥

छालके वस्त्र और जटाजूट बाँधे, सांवले शरीरसे (ऐसे शोभायमान हैं) मानो रति और कामदेवने मुनीश्वरका वेष धारण किया है ॥ ७ ॥ और कमलसमान हाथोंमें धनुष बाण फिरा रहे हैं और अपनी मृदु मुसुकानसे (भक्तजनोंके) हृदयकी जलनका दलन कर रहे हैं ॥ ८ ॥

दो०-लसत मंजु मुनिमंडली, मध्य सीय रघुचंद ॥
ज्ञानसभा जनु तनु धरे, भक्ति सच्चिदानंद ॥ २३४ ॥

सुन्दर मुनिमंडलीके बीच सीता रामचन्द्रजी ऐसे शोभित हैं मानों ज्ञानकी समाजमें भक्ति और सच्चिदानंद ब्रह्मने शरीर धारण किया है ॥ २३४ ॥

चौ०-सानुज सखासमेत मगन मन ❀ बिसरे हरषसोकसुखदुखगन ॥ १ ॥
पाहि नाथ कहि पाहि गुसांई ❀ भूतल परे लकुटकी नाईं ॥ २ ॥

भरतजी छोटे भाई शत्रुघ्न और मित्र निषादसहित मनमें मगन हुये और हर्ष शोक और सुख दुःखके समूह भूल गये ॥ १ ॥ हे नाथ! पाहि माम् २ अर्थात् रक्षा करो २ ऐसे कहके पृथ्वीपर दंडकी भाँति गिर पड़े ॥ २ ॥

बचन सप्रेम लषन पहिचाने ❀ करत प्रनाम भरत जिय जाने ॥ ३ ॥
बंधुसनेह सरस इहि ओरा ❀ उत साहिबसेवा बरजोरा ॥ ४ ॥

लक्ष्मणजीने स्नेहसहित बचन पहिचाना और हृदयमें जाना कि भरतजी प्रणाम कर रहे हैं ॥ ३ ॥ इधर तौ भाईका रसयुक्त प्रेम उधर स्वामीकी कठिन सेवा ॥ ४ ॥

मिलि न जाइ नाहिं गुदरत बनई ❀ सुकबि लषनमनकी गति भनई ॥ ५ ॥
रहे राखि सेवा पर भारू ❀ चढ़ी चंग जनु खेंच खेलारू ॥ ६ ॥

सो न तो मिला जाता और न छोड़ना बनता है, लक्ष्मणके मनकी दशाको सुन्दर कवीश्वर (इस भांति) कहते हैं कि-॥ ५ ॥ लक्ष्मणजी सेवाके अनन्त भारको इसप्रकार रखकर रह गये जैसे चढ़ी हुई चंग खिलाड़ीको खेंचती हो और वह न खिंचै ॥ ६ ॥

कहत सप्रेम नाइ महि माथा ❀ भरत प्रनाम करत रघुनाथा ॥ ७ ॥
उठे राम सुनि प्रेमअधीरा ❀ कहुँ पट कहुँ निषंग धनु तीरा ॥ ८ ॥

और पृथ्वीपर माथा नवाय स्नेहसहित कहने लगे कि हे रघुनाथजी ! भरतजी आपको प्रणाम करते हैं ॥ ७ ॥ यह सुनकर रामजी प्रेममें अधीर हो उठे तौ कहीं वस्त्र कहीं तरकस और कहीं धनुष वाण रहगये ॥ ८ ॥

दो०-बरबस लिए उठाइ उर, लाए कृपानिधान ॥ ❀
भरत रामकी मिलन लखि, बिसरेउ सबहिं अपान ॥२३५॥ ❀

कृपाके समुद्र (रामचन्द्रने) बरवश उठाकर (भरत) को छातीसे लगा लिया; (उस समय) भरत और रामजीके मिलापको देखकर सब अपनेको भूल गये ॥ २३५ ॥

चौ०-मिलनप्रीति किमि जाइ बखानी ❀ कबिकुलअगम करम मन बानी ॥ १ ॥
परमप्रेमपूरन दोउ भाई ❀ मन बुधि चित अहमिति बिसराई ॥ २ ॥

मिलनेका प्रेम कैसे वर्णन किया जाय ? क्योंकि वह कवियोंके कुल और मनकर्मवचनसे बाहर है, अर्थात् कवियोंकी बुद्धि वहाँतक पहुँचही नहीं सक्ती ॥ १ ॥ दोनों भाई बहुत स्नेहमें भरकर मन, बुद्धि और चित्तसे अपनेको भूल गये ॥ २ ॥

कहहु सुप्रेम प्रगट को करई ❀ केहि छाया कबिमति अनुसरई ॥ ३ ॥
कबिहिं अर्थ आखर बल साँचा ❀ अनुहर ताल गतिहिं नट नाचा ॥ ४ ॥

कहो उस सुन्दर स्नेहको कौन प्रकट कर सक्ता है ? किस कविकी बुद्धि उसकी छायाके पीछे पीछे जा सक्ती है ? अर्थात् यथार्थ कह सक्ती है ॥ ३ ॥ क्योंकि कवीश्वरको तौ अक्षरके अर्थका सचा बल होता है, जैसे नट तालकी गतिके अनुसार नाचता है ॥ ४ ॥

अगम सनेह भरतरघुबरको ❀ जहँ न जाइ मन बिधिहरिहरको ॥ ५ ॥
सो मैं कुमति कहौं केहि भाँती ❀ बाजु सुरागकि गाडरि ताँती ॥ ६ ॥

भरत और रामचन्द्रका प्रेम अथाह है. जहाँ ब्रह्मा विष्णु महादेवकाभी मन नहीं पहुँच सक्ता ॥ ५ ॥ फिर मैं बुद्धिहीन उसे किस प्रकार कहूँ. भला कहीं गडरियेकी (ऊन धुननेकी) ताँतसेभी सुन्दर राग बज सक्ता है. (अर्थात् मैं ऐसा हूं जैसे सुन्दर २ वाजोंमें गडरियेकी ताँत) ॥ ६ ॥

मिलन बिलोकि भरतरघुबरकी ❀ सुरगन समय धुकधुकी धरकी ॥ ७ ॥
समुझाए सुरगुरु जड़ जागे ❀ बरषि प्रसून प्रसंसन लागे ॥ ८ ॥

---

(१) इसे चौपाईका यह भाव है कि भरतकी प्रीति चंगके समान थी उसने लक्ष्मणजीको बहुतेरा खेंचा पर वे रामचन्द्रजीकी सेवाके बोझके कारण न खिचँसके, अर्थात् उनके मनमें तौ बहुत आया कि उठकर भरतजीसे मिलूं परंतु रघुनाथजीकी सेवाको भरतकी प्रीतिसे अधिक जानकर न उठे, जहांके तहां बैठे रहे ॥

(२) इस चौपाईमें यह संदेह उठता है कि रामजी तौ विष्णुभगवान्‌का अवतारही थे फिर ऐसा क्यों लिखा ? सो उसका समाधान यही है कि गोसाँईजी रामजीके पूर्ण भक्त थे इसलिये उनकोही सर्वोपरी माना है और कहाभी है कि- उपजहिं जासु अंसतें नाना। विष्णु बिरंचि संभु भगवाना ॥

इत्यादि ऐसी जगह भक्तिपक्ष जानना चाहिये ॥

भरत और रामचन्द्रजीके मिलापको देख उस समय देवताओंकी छाती धक २ होने लगी ॥ ७ ॥ जब बृहस्पतिजीने समझाया तौ मूर्ख जगे, अर्थात् आपेमें आये और फूल बरसाय २ (भरतकी) प्रशंसा करने लगे ॥ ८ ॥

दो०–मिलि सप्रेम रिपुसूदनहिं, केवट भेटेउ राम ॥ ❀
भूरिभाग्य भेटे भरत, लक्ष्मन करत प्रनाम ॥ २३६ ॥ ❀

रघुनाथजी स्नेहसहित शत्रुघ्नसे मिलकर, केवटसे मिले और बड़भागी लक्ष्मणजी प्रणाम कर भरतजीसे मिले ॥ २३६ ॥

चौ०–भेटेउ लषन ललकि लघुभाई ❀ बहुरि निषाद लीन्ह उर लाई ॥ १ ॥
पुनि मुनिगन दोउ भाइन्ह वंदे ❀ अभिमत आसिस पाइ अनंदे ॥ २ ॥

लक्ष्मणजी ललककर छोटे भाईसे मिले फिर भीलको हृदयसे लगा लिया ॥ १ ॥ फिर दोनों भाइयोंने मुनीश्वरोंकी मंडलीको दंडवत की और मनभाया आशीर्वाद पाकर प्रसन्न हुये ॥ २ ॥

सानुज भरत उमँगि अनुरागा ❀ धरि सिर सियपदपद्मपरागा ॥ ३ ॥
पुनि पुनि करत प्रनाम उठाए ❀ सिर करकमल परसि बैठाए ॥ ४ ॥

छोटे भाई शत्रुघ्नसहित भरतने प्रेममें उमँग कर सीताजीके कमलसमान चरणोंपर शिर नमाया ॥ ३ ॥ फिर रघुनाथजीने वारंवार प्रणाम करते हुये देख उठाया और उनके मस्तकपर कमलसमान हाथ फेरकर बिठलाया ॥ ४ ॥

सीय असीस दीन्ह मनमाहीं ❀ मगन सनेह देहसुधि नाहीं ॥ ५ ॥
सबविधि सानुकूल लखि सीता ❀ भे निसोच उर अपडर बीता ॥ ६ ॥

सीताजीने मनही मनमें आशीर्वाद दिया क्योंकि प्रेममें मगन होनेसे देहकी सुधबुध न रही. ॥ ५ ॥ (भरतजी) सीताजीको सबभांति अनुकूल देख सोचरहित हुये और हृदयका अपडर जाता रहा ॥ ६ ॥

कोउ कछु कहै न कोउ कछु पूछा ❀ प्रेम भरा मन निजगति छूछा ॥ ७ ॥
तेहि अवसर केवट धीरज धरि ❀ जोरि पानि बिनवत प्रनाम करि ॥ ८ ॥

न कोई कुछ कहता है, न कोई कुछ पूछता है, (सबके) स्नेहसे भरे हुये मन अपनी चालसे रहित अर्थात् बेसुध हैं॥७॥ उसी समय केवट धीरज रखकर हाथ जोड़ प्रणाम करके प्रार्थना करने लगा कि ॥८॥

दो०–नाथ साथ मुनिनाथके, मातु सकल पुरलोग ॥ ❀
सेवक सेनप सचिव सब, आए बिकल बियोग ॥ २३७ ॥ ❀

हे स्वामी ! मुनिनाथ (वसिष्ठ) जीके साथ माता, सब नगरके लोग, सेवक, सेनापति, और मंत्रीभी वियोगमें विकल होकर आये हैं ॥ २३७ ॥

चौ०–सीलसिंधु सुनि गुरुआगमनू ❀ सीय समीप राखि रिपुदमनू ॥ १ ॥
चले सवेग राम तेहि काला ❀ धीर धरमधुर दीनदयाला ॥ २ ॥

शीलके समुद्र (रामचन्द्रजी) गुरुका आगमन सुन और सीताजीके पास शत्रुघ्नको रखकर ॥ १ ॥ धीरजवान, धर्मज्ञ और दीनोंके ऊपर दया करनेवाले रामचन्द्रजी उसी समय उतावलीसे चले ॥ २ ॥

गुरुहिं देखि सानुज अनुरागे ❀ दंडप्रनाम करन प्रभु लागे ॥ ३ ॥
मुनिवर धाइ लिए उर लाई ❀ प्रेम उमँगि भेटे दोउ भाई ॥ ४ ॥

गुरुको देख छोटे भाईसहित भगवान् प्रसन्न हुए और दंडवत् प्रणाम करने लगे ॥ ३ ॥ श्रेष्ठ मुनीश्वरने दौड़कर हृदयसे लगा लिया और वे प्रेममें उमँगकर दोनों भाइयोंसे मिले ॥ ४ ॥

प्रेमपुलकि केवट कहि नामू ❀ कीन्ह दूरि तेहिं दंडप्रनामू ॥ ५ ॥
रामसखा ऋषि बरबस भेटे ❀ जनु महि लुटत सनेह समेटे ॥ ६ ॥

फिर स्नेहमें पुलकायमान हो केवटने (अपना) नाम लेकर (वसिष्ठजीको) दूरहीसे दंडवत प्रणाम की ॥ ५ ॥ ऋषि (वसिष्ठ)जी रामके मित्रसे बरबश होकर मिले मानों पृथ्वीपर गिरे हुए प्रेमको समेटते हैं ॥ ६ ॥

रघुपतिभक्ति सुमंगलमूला ❀ नभ सराहि सुर बरषहिं फूला ॥ ७ ॥
इहि सम निपट नीच कोउ नाहीं ❀ बड़ वसिष्ठसम को जगमाहीं ॥ ८ ॥

देवता आकाशमें सुन्दर आनन्दोंकी देनेवाली रामचन्द्रजीकी भक्तिकी सराहना कर फूल बरसाते हैं कि ॥ ७ ॥ संसारमें इसके समान तौ वड़ा नीच कोई नहीं है और वसिष्ठजीके बराबर कोई बड़ा नहीं है ॥ ८ ॥

दो०-जेहिं लखि लषनहुँते अधिक, मिले मुदित मुनिराउ ॥ ❀
सो सीतापतिभजनको, प्रगट प्रताप प्रभाउ ॥ २३८ ॥ ❀

जिसे देख बड़े मुनिराज लक्ष्मणसेभी अधिक प्रसन्न होकर मिले सो यह रामचन्द्रजीके भजनका प्रताप और प्रभाव प्रत्यक्षही हैं ॥ २३८ ॥

चौ०-आरत लोग राम सब जाना ❀ करुनाकर सुजान भगवाना ॥ १ ॥
जो जेहिभाँति रहा अभिलाषी ❀ तेहि तेहि की तैसी रुचि राखी ॥ २ ॥

करुणानिधान चतुर भगवानने सब लोगोंको दुखी जान ॥ १ ॥ जो जैसी इच्छा करता था उस २ की वैसी इच्छा पूरी की ॥ २ ॥

सानुज मिलि पलमहँ सबकाहू ❀ कीन्ह दूरि दुख दारुन दाहू ॥ ३ ॥
यह बड़ि बात रामकी नाहीं ❀ जिमि घट कोटि एक रबिछाहीं ॥ ४ ॥

और छोटे भाईसहित पलभरमें सब किसीसे मिलकर कठिन दुःख और संताप दूर किया ॥ ३ ॥ यह रामचन्द्रजीकी कुछ बड़ी वात नहीं है, जैसे करोड़ घड़ोंमें (एक साथ) एक सूर्यकी परछाईं पड़ती है ॥ ४ ॥

मिलि केवटहिं उमगि अनुरागा ❀ पुरजन सकल सराहहिं भागा ॥ ५ ॥
देखि राम दुखित महतारी ❀ जनु सुबेलिअवली हिममारी ॥ ६ ॥

फिर तौ प्रेममें उमँग कर और केवटसे मिलकर सब नगरनिवासी भाग्यकी सराहना करने लगे ॥ ५ ॥ रामचन्द्रजीने माताको ऐसा दुखी देखा मानों सुन्दर बेलोंकी पंक्तिको जाडा मार गया हो ॥ ६ ॥

प्रथम राम भेटी कैकेयी ❀ सरल सुभाव भक्ति मति भेयी ॥ ७ ॥
पग परि कीन्ह प्रबोध बहोरी ❀ काल करमविधि सिर धरि खोरी ॥ ८ ॥

रामचन्द्र पहले कैकेयीसे मिले और अपने सरल सुभाव और भक्तिके रससे उसकी बुद्धिको शीतल कर दिया, अर्थात् वह कठोर बुद्धि न रही जो वनवास करते समय थी ॥ ७ ॥ फिर पैरों पड़कर कालकर्म और प्रारब्धके शिर कलंक लगाकर समझाया ॥ ८ ॥

दो०-भेंटी रघुवर मातु सब, करि प्रबोध परितोष ॥ ❀
अंब ईसआधीनजग, काहु न देइय दोष ॥ २३९ ॥ ❀

रामचन्द्रजी सब माताओंसे मिले और समझाकर और भरोसा देकर कहा हे माताओ! संसार ईश्वरके आधीन है किसीको दोष नहीं देना चाहिये ॥ २३९ ॥

चौ०–गुरुतियपद बंदे दोउ भाई ❀ सहित विप्रतिय जे संग आईं ॥ १ ॥
गंगागौरिसम सब सनमानी ❀ देहिं असीस मुदित मृदुबानी ॥ २ ॥

दोनों भाइयोंने गुरुकी स्त्रीके चरणोंको और संग–साथकी ब्राह्मणोंकी स्त्रियोंके चरण छुये ॥ १ ॥ गंगाजीके और पार्वतीजीके समान सबका सत्कार किया और वे प्रसन्न हो मीठी वाणीसे आशीर्वाद देनै लगीं ॥ २ ॥

गहि पद लगे सुमित्राअंका ❀ जनु भेटी संपति अतिरंका ॥ ३ ॥
पुनि जननीचरनन्ह दोउ भ्राता ❀ परे प्रेमव्याकुल सब गाता ॥ ४ ॥

चरण छूकर सुमित्राकी गोदमें ऐसे लिपट गये मानों बड़ेभारी कंगालको संपत्तिसे भेट हुई ॥ ३ ॥ फिर जिनके सब शरीरमें स्नेह भर रहा है ऐसे दोनों भाई (कौशल्या) माताके चरणोंमें गिर पड़े ॥४॥

अति अनुराग अंब उरलाए ❀ नयन सनेहसलिल अन्हवाए ॥ ५ ॥
तेहि अवसरकर हरष विषादू ❀ किमि कवि कहै मूक जिमि स्वादू ॥ ६ ॥

माताने बड़े प्रेमसे छातीसे लगा लिया और नेत्रोंके स्नेहके जलसे स्नान कराया, अर्थात् बहुत प्यार किया ॥ ५ ॥ उस समयके हर्ष और विषादको कवीश्वर कैसे कहे, अर्थात् ऐसे नहीं कह सक्ता जैसे गूँगा स्वादको (नहीं कह सक्ता) ॥ ६ ॥

मिलि जननिहिं सानुज रघुराऊ ❀ गुरुसन कहेउ कि धारिय पाऊ ॥ ७ ॥
पुरजन पाइ मुनीसनियोगू ❀ जल थल तकि तकि उतरे लोगू ॥ ८ ॥

रामचन्द्रने छोटे भाईसहित माताओंसे मिलकर गुरुसे कहा कि (आप आश्रमको) पधारिये ॥ ७ ॥ और नगरवानिवासी मुनीश्वरकी आज्ञा पाय जलथलको देख २ ठहरने लगे ॥ ८ ॥

दो०–महिसुर मन्त्री मातु गुरु, घने लोग लिय साथ ॥ ❀
पावन आस्रम गमन किय, भरत लषन रघुनाथ ॥ २४० ॥ ❀

ब्राह्मण, मंत्री, माता, गुरु और बहुतसे लोगोंको साथमें लिये भरत लक्ष्मण और रामचन्द्रजी पवित्र आश्रमको चले ॥ २४० ॥

चौ०–सीय आइ मुनिवरपद लागी ❀ उचित असीस लही मन मांगी ॥ १ ॥
गुरुपत्निहिं मुनितियन्ह समेता ❀ मिलि सप्रेम कहिजाइ न जेता ॥ २ ॥

सीताजीने आकर श्रेष्ठ मुनिके चरण छुये और मनमाँगी उचित आशीश ली ॥ १ ॥ फिर (सीताजी) गुरुकी स्त्रीसे और मुनीश्वरोंकी स्त्रियोंसे जितने स्नेहसहित मिलीं वह कहा नहीं जाता ॥ २ ॥

बंदि बंदि पद सिय सबहीके ❀ आसिषबचन लहे प्रिय जीके ॥ ३ ॥
सास सकल जब सीय निहारी ❀ मूंदेउ नयन सहमि सुकुमारी ॥ ४ ॥

सीताजीने सभीके चरणोंको दण्डवत कर २ के सबसे मनके प्यारे आशीश बचन लिये ॥ ३ ॥ जब सीताजीने सब सासुओंको देखा तौ सुकुमारी (सीता) ने सहमकर नेत्र मूंद लिये ॥ ४ ॥

परीवधिकबस मनहुँ मराली ❀ काह कीन्ह करतार कुचाली ॥ ५ ॥
तिन्ह सियनिरखिनिपट दुखपावा ❀ सो सब सहिय जो दैव सहावा ॥ ६ ॥

मानों हंसिनी बहेलियेके वश पड़ी हो. हे करतार! तैंने क्या कुचाल करी ॥ ५ ॥ उन्होंनेभी जानकीको देख बहुत दुःख पाया क्योंकि जो दैव सहावे वह सब सहना पड़ता है ॥ ६ ॥

जनकसुता तब उर धरि धीरा ❀ नीलनलिनलोचन भरि नीरा ॥ ७ ॥
मिली सकल सासन्ह सिय जाई ❀ तेहि अवसर करुना महि छाई ॥ ८ ॥

जब जनकलली हृदयमें धीरज रख और नीलकमलसमान नेत्रोंमें जल भर कर ॥ ७ ॥ सब सासुओंसे जाकर मिली उस समय पृथ्वी करुणासे छागई ॥ ८ ॥

दो०-लागि लागि पद सबनि सिय, भेटी अति अनुराग ॥ ❀
हृदय असीसहिं प्रेमबस, रहिहहु भरी सुहाग ॥ २४१ ॥ ❀

सीताजी सबके पैरों पड़ २ कर बड़े प्रेमसे मिलीं (और वे सब) स्नेहके वश मनमें आशीर्वाद देती हैं कि तुम सुहागसे भरी पूरी रहो ॥ २४१ ॥

चौ०-विकल सनेह सीय सब रानी ❀ बैठन सबहिं कहेउ गुरु ज्ञानी ॥ १ ॥
कहि जगगति मायिक मुनिनाथा ❀ कहेउ कछुक परमारथगाथा ॥ २ ॥

ज्ञानवान् गुरुने सीताजी और सब रानियोंको व्याकुल देख बैठनेको कहा ॥ १ ॥ मुनिनाथ वसिष्ठजीने संसारकी मायासे भरी दशा, अर्थात् यह संसार झूठा है ऐसा कहके कुछ परमार्थकी कथा कही ॥ २ ॥

नृपकर सुरपुरगमन सुनावा ❀ सुनि रघुनाथ दुसह दुख पावा ॥ ३ ॥
मरनहेतु निजनेह बिचारी ❀ भे अतिबिकल धीरधुरधारी ॥ ४ ॥

फिर राजाका देवलोकगमन सुनाया, उसे सुनकर (रामचन्द्रजीने) बड़ा दुःख पाया ॥ ३ ॥ धीरजकी धुरीको धारण करनेवाले (रामचन्द्र पिताके) मरनेको अपने स्नेहका कारण समझ बहुत व्याकुल हुये ॥ ४ ॥

कुलिसकठोर सुनत कटु बानी ❀ बिलपत लषन सीय सब रानी ॥ ५ ॥
सोकबिकल अति सकल समाजू ❀ मानहुँ राज अकाजेउ आजू ॥ ६ ॥

वज्रके समान कठोर और कड़ुई वाणीको सुनतेही लक्ष्मण सीता और सब रानियाँ विलाप करने लगीं ॥ ५ ॥ सब समाज शोकमें बहुत व्याकुल है मानों आजही दशरथजीका मरण हुआ है ॥ ६ ॥

मुनिवर बहुरि राम समुझाए ❀ सहित समाज सुसरित अन्हाए ॥ ७ ॥
व्रत निरंबु तेहि दिन प्रभु कीन्हा ❀ मुनिहुँ कहे जल काहु न लीन्हा ॥ ८ ॥

फिर श्रेष्ठ मुनि (वसिष्ठजी) ने रामचन्द्रजीको समझाया और उन्होंने समाजसमेत सुन्दर (मन्दाकिनी) नदीमें स्नान किया ॥ ७ ॥ उस दिन भगवानने निर्जल व्रत किया और मुनीश्वरके कहनेसेभी किसीने जल नहीं लिया ॥ ८ ॥

दो०-भोर भए रघुनंदनहिं, जो मुनि आयसु दीन्ह ॥ ❀
श्रद्धाभक्तिसमेत प्रभु, सो सब सादर कीन्ह ॥ २४२ ॥ ❀

प्रातःकाल होतेही मुनीश्वर (वसिष्ठजी) ने रामचन्द्रजीको जो आज्ञा दी वह सब आदरपूर्वक भगवानने श्रद्धा भक्तिसहित की ॥ २४२ ॥

चौ०-करि पितुक्रिया वेद जसि बरनी ❀ भे पुनीत पातकतमतरनी ॥ १ ॥
जासु नाम पावक अघतूला ❀ सुमिरत सकल सुमंगलमूला ॥ २ ॥

---

(१) मायिक दशा यही है कि–अवधका आनंद उड़ जाना, रामका वनवास आदि ॥

जैसी वेदोंमें वर्णन की है वैसी पिताकी क्रिया करके पापरूपी अंधकारकेलिये सूर्यरूप (रामचन्द्र) पवित्र हुये ॥ १ ॥ जिसका नाम पापरूपी रुईको अग्निरूप है और जो (रामजी) स्मरण करतेही संपूर्ण सुन्दर आनन्दोंके देनेवाले हैं ॥ २ ॥

सुद्ध सो भयउ साधुसंमत अस ❀ तीरथआवाहन सुरसरि जस ॥ ३ ॥
सुद्ध भए दुइ बासर बीते ❀ बोले गुरुसन राम पिरीते ॥ ४ ॥

वे पवित्र हुये, ऐसी साधुओंकी संमति है, सो ऐसी है जैसे सब तीर्थोंके आवाहनसे गंगाको पवित्र मानें ॥ ३ ॥ जब पवित्र हुये दो दिन बीत गये तब प्यारे रामचन्द्र गुरुसे बोले–॥ ४ ॥

नाथ लोग सब निपट दुखारी ❀ कंदमूलफलअंबुअहारी ॥ ५ ॥
सानुज भरत सचिव सब माता ❀ देखि मोहिं पलजिमि युग जाता ॥ ६ ॥

हे स्वामी! सब लोक कंद मूल फल और जलका आहार करते २ बहुत दुखी हो गये हैं ॥५॥ और छोटे भाई शत्रुघ्न, भरत, मंत्री, और सब माताओंको देख मुझे एक पलभी युगकी भांति बीतता है ६

सबसमेत पुर धारिय पाऊ ❀ आपु इहाँ अमरावति राऊ ॥ ७ ॥
बहुत कहेउँ सब कियउँ ढ़िठाई ❀ उचित होइ तस करिय गुसाँई ॥ ८ ॥

सो सबको साथ लेकर नगरमें पधारिये, (क्योंकी) आप यहां हैं और राजा देवलोकमें हैं, अर्थात् अयोध्यापुरी सूनी है इससे पूरा संदेह हैं ॥ ७ ॥ मैने बहुत कुछ कहा सो सब ढीठता करी, सो हे गोसाँई ! जैसा उचित हो वैसा कीजिये ॥ ८ ॥

दो०–धरमसेतु करुनायतन, कस न कहहु अस राम ॥ ❀
लोग दुखित दिन दुइ दरस, देखि लहहिं बिस्राम ॥ २४३ ॥ ❀

हे रामचन्द्र तुम धर्मके सेतु और करुणाके स्थान हो, तुम ऐसे क्यों न कहोगे? परंतु लोग जो दुखी थे दो दिनसे आपका दर्शन पाकर विश्राम ले रहे हैं ॥ २४३ ॥

चौ०–रामबचन सुनि सभय समाजू ❀ जनु जलनिधिमहँ विकल जहाजू ॥ १ ॥
सुनि मुनिगिरा सुमंगलमूला ❀ भयउ मनहुँ मारुत अनुकूला ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीके वचन सुन समाज ऐसा डर गया मानों समुद्रमें जहाज डगमगाता है ॥ १ ॥ पर सुन्दर आनन्दकी जड़ मुनीश्वरकी बाणी सुन (ऐसी थावस हुई) मानों पवन सहायक हुई । (अनुकूल पवनके चलनेसे जहाज नहीं डूबता) ॥ २ ॥

पावनपय तिहुँकाल अन्हाहीं ❀ जेहिं बिलोकि अघओघ नसाहीं ॥ ३ ॥
मंगलमूरति लोचन भरि भरि ❀ निरखहिं हरषि दंडवत करि करि ॥ ४ ॥

तीनों समय पवित्र जलमें स्नान करते हैं कि जिस जलको देखनेहीसे पापोंके समूह नाश हो

---

(१) इस चौपाईका यह भाव है कि जैसे गंगा तौ स्वयं पवित्र और दूसरोंको पवित्र करनेवाली है, उसमें तीर्थोंका आवाहन करनेसे क्या पवित्रता होसक्ती है ? स्नान करतेसमय भलेंही अन्य तीर्थोंका आवाहन करलो. ऐसेही रामजी स्वयं पवित्र हैं और जो उनका नाम लेता है वह पवित्र होजाता है, तौ कर्मकरनेसे वे शुद्ध क्या हो सक्ते हैं ? परंतु मनुष्यरूप धारण किया है इसलिये उन्होंने शास्त्रानुसार कर्म करके लोकरीति दिखलाई है ॥

(२) धर्मसेतु इसलिये कहा कि पिताका वचन मान वनमें आये और पुत्रधर्म पाला.

(३) पवन सहायकसे ऐसा तात्पर्य है कि जैसे जब हवा चलती है तब समुद्रमें जहाज डगमगता है, जब सहायक अर्थात् बंद हो जाती है तब थमजाता है, उसी प्रकार रामजीके वचनसे जो समाज डर गया था सो मुनीश्वरकी वाणीसे उसे थावस हो गई ॥

जाते हैं ॥ ३ ॥ आनन्दकी मूर्ति रामजीको नेत्र भर २ कर देखते हैं और दंडवत कर २ के प्रसन्न होते हैं ॥ ४ ॥

रामसैलवन देखन जाहीं ❀ जहँ सुख सकल कतहुँ दुख नाहीं ॥५॥
झरना झरहिं सुधासम वारी ❀ त्रिविधतापहर त्रिविध बयारी ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीके पर्वत और बनको देखने जाते हैं जहां सब सुख हैं, दुःख कहींभी नहीं ॥ ५ ॥ अमृतकेसमान जलके झरने झरते हैं और तीनों प्रकारके तापोंको हरनेवाली तीन प्रकारकी (शीतल, मन्द, सुगन्धित) पवन चलती है ॥ ६ ॥

विटप वेलि तृन अगनित जाती ❀ फल प्रसून पल्लव बहुभाँती ॥ ७ ॥
सुंदरसिला सुखद तरुछाहीं ❀ जाइ बरनि बनछवि केहिपाहीं ॥ ८ ॥

भांति २ के वृक्ष वेलि और घास लगे हैं कि जिनकी गिनती नहीं हो सक्ती और जिनमें भांति २ के फल फूल और पल्लव लग रहे हैं ॥ ७ ॥ सुहावनी शिला (बिछरही हैं) और वृक्षोंकी सुखदायिनी छाया हो रही है, और बनकी शोभा किससे वर्णन की जा सक्ती है ॥ ८ ॥

दो०-सरनि सरोरुह जलबिहँग, कूजत गुंजत भृंग ॥ ❀
बैरबिगत विहरत बिपिन, मृग बिहंग बहुरंग ॥ २४४ ॥ ❀

सरोवरमें कमल खिल रहे हैं, जलके पक्षी कूजते और भौंरे गूंजते हैं और वनमें अनेक रंगके पक्षी और हिरण वैरको छोड़के विहार करते हैं ॥ २४४ ॥

चौ०-कोल किरात भिल्ल वनबासी ❀ मधु सुचि सुंदर स्वादु सुधासी ॥ १ ॥
भरि भरि परनकुटी रचि रूरी ❀ कंद मूल फल अंकुर जूरी ॥ २ ॥

वनके रहनेवाले कोल, किरात, भील, मीठे पवित्र और अमृतके समान स्वादवाले-॥१॥ बहुतसे कन्द, मूल, फल, और अंकुर पल्लवोंके अत्यंत सुन्दर दोनोंमें भर २ के इच्छापूर्वक-॥ २ ॥

सबहिं देहिं करि विनय प्रनामा ❀ कहि कहि स्वादु भेद गुन नामा ॥ ३ ॥
देहिं लोग बहु मोल न लेहीं ❀ फेरत रामदुहाई देहीं ॥ ४ ॥

उनके स्वाद, भेद, गुण और नाम कह २ कर सबको विनती और दंडवत करके देते हैं ॥ ३ ॥ लोग उनका बहुतसा मोल देते हैं' परन्तु वे नहीं लेते और रामचन्द्रजीकी सौगन्द दे देकर लौटा देते हैं ॥४॥

कहहिं सनेहमगन मृदु बानी ❀ मानत साधु प्रेम पहिंचानी ॥ ५ ॥
तुम सुकृती हम नीच निषादा ❀ पावा दरसन रामप्रसादा ॥ ६ ॥

तब स्नेहमें मगन हो (अयोध्यावासी) मीठी वाणी कहते हैं और वे अच्छा प्रेम पहिचानकर मानते हैं ॥ ५ ॥ (और कहते हैं कि) आप पुण्यात्मा हो, हम नीच भील हैं, सो रामचन्द्रजीकी कृपासे (तुह्मारा) दर्शन पाया ॥ ६ ॥

हमहिं अगम अति दरस तुम्हारा ❀ जस मरुधरनि देवधुनिधारा ॥ ७ ॥
राम कृपालु निषाद नेवाजा ❀ परिजन प्रजहिं चहिय जस राजा ॥ ८ ॥

हमको तुह्मारा दर्शन ऐसा अति कठिन था जैसे मारवाड़ देशमें गंगाजीकी धार कठीन है ॥ ७ ॥ कृपानिधान रामचन्द्रजीने भीलको तारा, आप उनके कुटुम्बी और प्रजा हैं आपकोभी तौ राजाकेही समान होना चाहिये, जैसा कहा कि, "यथा राजा तथा प्रजा" अर्थात् रामराजाने भीलराजाको तारा, आप रामके प्रजागण हैं सो हम भील प्रजागणको तारिये ॥ ८ ॥

दो०-यह जिय जानि सकोच तजि, करिय छोह लखि नेहु ॥ ❀
हमहिं कृतारथ करनलगि, फल तृन अंकुर लेहु ॥ २४५ ॥ ❀

ऐसे मनमें समझकर सकुचको छोड़, प्रेम समझ कृपा कीजिये और हमको कृतार्थ करनेके लिये फल तृण और अंकुर लीजिये ॥ २४५ ॥

चौ०–तुम प्रिय पाहुन बन पगु धारे ❀ सेवाजोग न भाग हमारे ॥ १ ॥
देव कहा हम तुमहिं गुसांई ❀ ईंधन पात किरातमिताई ॥ २ ॥

तुमसरीखे प्यारे अतिथि वनमें पधारे सो हमारे भाग्य (आपकी) सेवाके योग्य नहीं हैं ॥ १ ॥ हे गोसाँई ! हम आपको क्या देवें, किरातोंकी मित्रता तो ईंधन और पत्तोंकी होती है ॥ २ ॥

यह हमार अतिबडि सेवकाई ❀ लेहिं न बासन बसन चुराई ॥ ३ ॥
हम जड़ जीव जीवगनघाती ❀ कुटिल कुचाली कुमति कुजाती ॥ ४ ॥

हमारी यही बहुत बड़ी सेवा है, जो आपके वासन कपड़े नहीं चुराते ॥ ३ ॥ हम मूर्ख प्राणी जीवोंके समूहकी हिंसा करनेवाले, खोटे, कुचाली, बुरी बुद्धिवाले और कुजाति हैं ॥ ४ ॥

पाप करत निसि बासर जाहीं ❀ नहिं कटिपट नहिं पेट अघाहीं ॥ ५ ॥
सपनेहु धरमबुद्धि कस काऊ ❀ यह रघुनंदनदरस प्रभाऊ ॥ ६ ॥

(हमको) पाप करते दिन रात बीतते हैं तोभी कमरमें न तौ कपड़ा है और न पेट भर सक्ते हैं ॥ ५ ॥ स्वप्नमेंभी किसीकी धर्ममें बुद्धि कैसी–(अर्थात् कभी धर्ममें बुद्धि नहीं होती) यह रामचन्द्रजीके दर्शनकाही प्रभाव है कि–॥ ६ ॥

जब ते प्रभुपदपद्म निहारे ❀ मिटे दुसह दुख दोष हमारे ॥ ७ ॥
बचन सुनत पुरजन अनुरागे ❀ तिन्हके भाग्य सराहन लागे ॥ ८ ॥

जबसे भगवान्के कमलसमान चरण देखे (तभीसे) हमारे कठिन दुःख और पाप नाश हो गये ॥ ७ ॥ बचन सुनतेही नगरवासी प्रसन्न हुए और उनके भाग्यकी सराहना करने लगे ॥ ८ ॥

छं०–लागे सराहन भाग्य सब अनुरागबचन सुनावहीं । ❀
बोलनि मिलनि सियरामचरनसनेह लखि सुख पावहीं ॥ ❀
नर नारि निदरहिं नेह निज सुनि कोलभिल्लन्हकी गिरा । ❀
तुलसी कृपा रघुबंसमनिकी लोह लै नौका तिरा ॥ ११ ॥ ❀

सब उनके भाग्यकी सराहना करने लगे और प्रीतिके वचन सुनाते हैं और रामचन्द्रजीके चरणोंमें स्नेह और उनके बोलने और मिलनेको देखकर सुख पाते हैं; सब स्त्री पुरुष कोलभीलोंकी वाणी सुनकर अपने प्रेमकी निन्दा करते हैं, अर्थात् इनका प्रेम हमसेभी बढकर है. सो यह रामचन्द्रजीकी कृपा है कि नाव लोहेको लेकर तर गई ॥ ११ ॥

सो०–बिहरहिं बन चहुँ ओर, प्रतिदिन प्रमुदित लोग सब ॥ ❀
जल ज्यों दादुर मोर, भए पीन पावस प्रथम ॥ ९ ॥ ❀

सब लोग प्रसन्न हुये वनमें चारों ओर ऐसे विहार करने लगे जैसे बरसादके पहलेही जलसे मेंड़क और मोर मोटे हो जाते हैं ॥ ९ ॥

---

(१) यहां ऐसा भाव है कि जैसे लोहा पानीमें डूब जाता है, तर नहीं सक्ता, परंतु जो नावमें जड़ा हो तो तर जाता है, वैसेही लोहेकेसमान हृदयवाले इन किरात भीलोंकी क्या ताकत थी कि जो यह तरते, अगर रामचन्द्रकी कृपारूपी नाव न होती तौ ॥

चौ०-पुरनरनारि मगन अतिप्रीती ❀ बासर जाहिं पलकसम बीती ॥ १ ॥
सीय सास प्रतिवेष बनाई ❀ सादर करहिं सरिस सेवकाई ॥ २ ॥

नगरके नर नारी प्रेममें बहुत मगन हैं और दिन पलकके बराबर बीतते जाते हैं ॥ १ ॥ सीताजी कई वेष बनाकर हरएक सासकी आदरसमेत एकसी सेवा करती हैं ॥ २ ॥

लखा न मरम रामबिनु काहू ❀ माया सब सिय मायानाहू ॥ ३ ॥
सीय सास सेवाबस कीन्ही ❀ तिन्ह लहि सुख सिय आसिष दीन्ही ॥ ४ ॥

(यह) भेद रामचन्द्रजीके बिना किसीने न जाना क्योंकि सीताजीकीही सब माया थी और रामजी उनके पति हैं ॥ ३ ॥ सीताजीने सासुओंको सेवासे वश कर लिया और उन्होंने सुख पाकर सीताजीको अशीश दी ॥ ४ ॥

लखि सियसहित सरल दोउ भाई ❀ कुटिल रानि पछितात अघाई ॥ ५ ॥
अब निजमन जाचति कैकेई ❀ महि न बीचु बिधि मीचु न देई ॥ ६ ॥

सीताजीसमेत दोनों भाइयोंको सरल देखकर कुटिल रानी (कैकेयी) बहुतही पछताने लगी ॥ ५ ॥ अब कैकेयी अपने मनमें मांगती है कि पृथ्वी नहीं फटती (कि जिसमें समाजाऊँ) और विधाता मौतभी नहिं देता ॥ ६ ॥

लोकहुँ वेदविदित कवि कहहीं ❀ रामविमुख थल नरक न लहहीं ॥ ७ ॥
यह संसय सबके मनमाहीं ❀ रामगमन विधि अवध कि नाहीं ॥ ८ ॥

लोक और वेदमेंभी विदित है और कविभी कहते हैं कि रामचन्द्रसे विमुखको नरकमेंभी जगह नहीं मिलती ॥ ७ ॥ सबके मनमें यही सन्देह है कि हे विधाता ! रामचन्द्रका चलना अयोध्याको होगा या नहीं ॥ ८ ॥

दो०-निसि न नींद नहिं भूख दिन, भरत बिकल सुठि सोच ॥ ❀
नीच कीचबिच मगन जस, मीनहिं सलिलसँकोच ॥ २४६ ॥❀

न तौ रातको नींद, न दिनको भूख है और भरतजी ऐसे भारी सोचमें व्याकुल हैं जैसे नीच कीच अर्थात् थोड़ी कीचमें पड़ी हुई मछली जलके संकोचसे व्याकुल होती है ॥ २४६ ॥

चौ०-किन्ह मातुमिस काल कुचाली ❀ ईति भीति जस पाकतसाली ॥ १ ॥
केहिबिधि होइ रामअभिषेकू ❀ मोकहँ फुरत उपाय न एकू ॥ २ ॥

कालने माताके बहानेसे ऐसी कुचाल की जैसे पकी हुई शालिकी खेतीको [2]ईतिसे भय होता है ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीका राजतिलक किस भांति हो, मुझको तौ एकभी उपाय नहीं सूचता ॥२॥

अवसि फिरहिं गुरुआयसु मानी ❀ मुनि पुनि कहब रामरुचि जानी ॥ ३ ॥
मातु कहे बहुरहिं रघुराऊ ❀ रामजननि हठ करब कि काऊ ॥ ४ ॥

गुरुकी आज्ञाको मानकर अवश्य लौटेंगे पर मुनीश्वर रामचन्द्रजीका रुख जानकर कहैंगे ॥ ३ ॥ अथवा माताके कहनेसे रामचन्द्र लौटेंगे. (परन्तु) रामचन्द्रजीकी माताभी कभी हठ न करैंगी॥४॥

---

(१) भरतजीको मछलीकी उपमा इसलिये दी हैं कि जैसे मछली थोड़े जलसे व्याकुल होती है वैसेही भरतजी थोड़े रहनेके कारण व्याकुल हुये ॥ मछलीको बगुलोंका भय है भरतको रामकी आज्ञाका भय है, और जैसे मछली जलविना नहीं जी सक्ती वैसेही भरतजी रामके संयोगरूपी जलविना नहीं जी सक्ते ॥ (२)ईति ६ प्रकारकी होती हैं सो २२९ वें दोहेकी तीसरी चौपाईमें देखो ॥ यहां रामजीको राजगद्दी होना मानों शालिकी पकी खेती थी, उसे कैकेयीके वरदान और टेढ़े वचन जो टीड़ी दल आदिके समान हैं उन्होंने नाश कर दिया ॥

मोहिं अनुचर कर केतिक बाता ❀ तेहिमहँ कुसमय वाम विधाता ॥ ५ ॥
जो हठ करौं तो निपट कुकर्मू ❀ हरगिरितें गुरु सेवकधर्मू ॥ ६ ॥

और मुझ सेवककी कितनी बात है, अर्थात् मेरी क्या चलाई है. तिसमेंभी खोटा समय और विधाता टेढा हो रहा है ॥ ५ ॥ जो हठ करूं तौ बहुतही बुरी बात है क्योंकि सेवकका धर्म महादेवके पर्वत कैलासेभी भारी है ॥ ६ ॥

एकौ युक्ति न मन ठहरानी ❀ सोचत भरतहिं रैन बिहानी ॥ ७ ॥
प्रात अन्हाइ प्रभुहिं सिर नाई ❀ बैठत पठये ऋषय बुलाई ॥ ८ ॥

मनमें एकभी युक्ति न ठहरी और भरतजीको सोच विचार करते २ रात बीत गई ॥ ७ ॥ सवेरेही (मन्दाकिनीमें) स्नानकर भगवान्को शिर नवाय बैठतेही जाते थे कि ऋषिने बुला भेजा ॥ ८ ॥

दो०-गुरुपद्कमल प्रनाम करि, बैठे आयसु पाइ ॥ ❀
विप्र महाजन सचिव सब, जुरे सभासद आइ ॥ २४७ ॥ ❀

तब गुरुके कमलसमान चरणोंको दंडवत कर आज्ञा पाकर बैठे (सोही इतनेमें) ब्राह्मण, बड़े लोग मंत्री और सभासद सब आकर एकत्र हुये ॥ २४७ ॥

चौ०-बोले मुनिवर समयसमाना ❀ सुनहु सभासद भरत सुजाना ॥ १ ॥
धरमधुरीन भानुकुलभानू ❀ राजा राम स्ववस भगवानू ॥ २ ॥

और मुनिराज समयके अनुसार बोले कि हे चतुरसभासदो! और भरतजी! सुनो ॥ १ ॥ धर्मधुरंधर सूर्यवंशके सूर्य ऐसे राजा रामचन्द्र स्वतंत्र और स्वयं भगवान् हैं ॥ २ ॥

सत्यसिंध पालक स्रुतिसेतू ❀ रामजन्म जगमंगलहेतू ॥ ३ ॥
गुरुपितुमातुबचनअनुसारी ❀ खलदलदलन देवहितकारी ॥ ४ ॥

और सत्यके समुद्र, तथा बेदकी मर्यादाके पालन करनेवाले हैं और रामचन्द्रजीका जन्म संसारमें आनन्दके लिये हुआ है ॥ ३ ॥ गुरु, पिता, और माताके आज्ञाकारी हैं और दुष्टोंके दलका नाश और देवताओंका हित करनेवालें हैं ॥ ४ ॥

नीति प्रीति परमारथ स्वारथ ❀ कोउ न रामसम जान जथारथ ॥ ५ ॥
विधिहरिहर ससि रवि दिसिपाला ❀ माया जीव करम कलिकाला ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीके समान नीति, प्रेम, परमार्थ और स्वार्थको कोई नहीं जानता ॥ ५ ॥ ब्रह्मा, विष्णु, महादेव, चन्द्रमा, सूर्य, दिक्पाल, माया जीव, कर्म और सब काल ॥ ६ ॥

अहिप महिप जहँलगि प्रभुताई ❀ जोगसिद्ध निगमागम गाई ॥ ७ ॥
करि विचार जिय देखहु नीके ❀ रामरजाइ सीस सबहीके ॥ ८ ॥

शेषनाग राजा और योगी और सिद्ध जहांतक वेदशास्त्रोंने कहे हैं ॥ ७ ॥ यह अच्छी भाँति मनमें विचार कर देखो सबके मस्तकपर रामचन्द्रजीकी आज्ञा है ॥ ८ ॥

दो०-राखे रामरजाइ रुख, हम सबकर हित होइ ॥ ❀
समुझि सयाने करहु अब, सब मिलि संमत सोइ ॥ २४८ ॥ ❀

---

(१) जैसा कहा है कि–'यद्भयाद्वाति वातोऽयं सूर्यस्तपति यद्भयात् । वर्षतीन्द्रो दहत्यग्निर्मृत्युर्धावति पञ्चमः । अर्थात् जिसके भयसे पवन चलती है, सूर्य तपता है, इन्द्र बरसता है, अग्नि जलती है और मृत्यु दौड़ती है ॥

रामचन्द्रजीकी आज्ञा और रुखके रखनेमेंही हमारा सबका भला हो सक्ता है, सो समझकर और सब चतुर मिलकर अब उसी सलाहको करो ॥ २४८ ॥

चौ०-सबकहँ सुखद रामअभिषेकू ❀ मंगल मोदमूल गुनएकू ॥ १ ॥
केहि विधि अवध चलहिं रघुराई ❀ कहहु समुझि सोइ करिय उपाई ॥२॥

रामचन्द्रजीका राज्यतिलक सबको सुख देनेवाला है और मंगल हर्षकी जड़ यही उसका एक गुण है ॥१॥ सो रामचन्द्र अयोध्याको किस भांति चलैं सो समुझकर कहो, वही उपाय किया जावे २

सब सादर सुनि मुनिवरबानी ❀ नय परमारथ स्वारथसानी ॥ ३ ॥
उतर न आव लोग भे भोरे ❀ तब सिर नाइ भरत कर जोरे ॥ ४ ॥

सबने आदरसे नीति, [1]परमार्थ और [2]स्वार्थकी सनी हुई मुनिराज (वसिष्ठजी) की वाणी सुनी ॥ ३ ॥ पर किसीसे उत्तर नहीं बनता, सब लोग भोरेसे होगये. तब भरतजीने माथा नवाय हाथ जोड़े (और कहा कि-) ॥ ४ ॥

भानुबंस भे भूप घनेरे ❀ अधिक एकते एक बडेरे ॥ ५ ॥
जन्महेतु सबकहँ पितुमाता ❀ कर्म सुभासुभ देइ विधाता ॥ ६ ॥

सूर्यवंशमें अनेक राजा एकसे एक अधिक बडे होगये ॥ ५ ॥ सबके माता पिता, जन्मके कारण होते हैं अर्थात् उत्पन्न कर देते हैं, और अच्छा बुरा कर्म तौ विधाता देता है ॥ ६ ॥

दलि दुख सजइ सकल कल्याना ❀ अस असीस राउर जग जाना ॥ ७ ॥
सो गुसाँई बिधिगति जेइ छेकी ❀ सकै को टारि टेक जो टेकी ॥ ८ ॥

सो आपके आशीर्वादने दुःखोंका नाश कर सब कल्याण किये इसे संसार जानता है ॥ ७ ॥ हे गोसांई! आप वही हैं जिन्हों ब्रह्माकी गति कहिये होनहार भेट दी, आप जिस हठको पकड़ो उसे कौन टाल सकता है ॥ ८ ॥

दो०-बूझिय मोहिं उपाय अब, सो सब मोर अभाग ॥ ❀
सुनि सनेहमय वचन गुरु, उर उमँगा अनुराग ॥ २४९ ॥ ❀

(सो आप) मुझसे उपाय पूछते हैं यह सब मेरा अभाग्य है. ऐसे प्रेमके वचन सुनकर गुरुके हृदयमें स्नेह उत्पन्न हुवा ॥ २४९ ॥

चौ०-तात बात फुर रामकृपाहीं ❀ रामविमुख सुख सपनेहुँ नाहीं ॥ १ ॥
सकुचौं तात कहत इक बाता ❀ अर्ध तजहिं बुध सरबस जाता ॥ २ ॥

हे प्यारे! यह सब सच है परन्तु यह बात रामचन्द्रजीकी कृपासे है और रघुनाथजीसे विमुख होनेमें तो स्वप्नमेंभी सुख नहीं ॥ १ ॥ (परन्तु) हे प्यारे! एक बात कहनेमें सकुचाता हूं. (वह यह है कि) बुद्धिमान् सबको जाते हुये (देख) [2]आधा छोड़ देते हैं ॥ २ ॥

तुम कानन गवनहु दोउ भाई ❀ फेरिय लषन सीय रघुराई ॥ ३ ॥
सुनि सुभ बचन हरष दोउ भ्राता ❀ भे प्रमोदपरिपूरन गाता ॥ ४ ॥

(इसलिये) तुम दोनों भाई बनको जाओ और राम लक्ष्मण जानकीजीको लौटा दो ॥ ॥३॥ ये अच्छे बचन सुन दोनों भाई प्रसन्न हो बड़े आनन्दसे शरीरमें फूल न समाये ॥ ४ ॥

---

(१) परमार्थ यह कि रामजी सर्वोपरि हैं, इनका कहा माननेमें सबहीका भला है; और स्वार्थ यह कि रामचन्द्रजी कैसेही अयोध्याको चलैं!

(२) सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्धं त्यजति पंडितः। अर्धेन कुरुते कार्यं सर्वनाशो हि दुस्तरः ॥ १ ॥ स्पष्टार्थः

मन प्रसन्न तनु तेज बिराजा ❀ जनु जिये राउ राम भे राजा ॥ ५ ॥
बहुत लाभ लोगन्ह लघु हानी ❀ सम दुख सुख सब रोवहिं रानी ॥ ६ ॥

मनमें आनन्द और शरीरमें तेज छागया मानों राजा (दशरथजी) जी उठें और रामचन्द्रजी राजा हुये ॥ ५ ॥ लोगोंको लाभ तौ बहुत और हानि थोड़ी लगने लगी (परन्तु) सब रानियां सुख दुःख समान जान रोने लगीं ॥ ६ ॥

कहहिं भरत मुनि कहा सो कीन्हे ❀ फल जगजीवन अभिमत दीन्हे ॥ ७ ॥
कानन करौं जन्मभरि बासू ❀ इहिते अधिक न मोर सुपासू ॥ ८ ॥

भरतजीने कहा कि हे मुनिराज ! आपने जो कहा है उसके करनेमें संसारमें जीनेका फल पूरा हो सक्ता है ॥ ७ ॥ जो मैं जन्मभर वनमें वास करूँ तौ इससे अधिक मुझे और आनन्द नहीं है ८

दो०–अंतर्यामी राम सिय, तुम सर्वज्ञ सुजान ॥ ❀
जो फुर कहो तौ नाथ निज, कीजिय वचन प्रमान ॥२५०॥ ❀

हे नाथ ! रामचन्द्र सीताजी तौ अन्तर्यामी हैं, और आप चतुर और सर्वज्ञ हो, सो जो सत्य कहते हो तौ अपने वचनको प्रमाण कीजिये (अर्थात् मैं वनको जाताहूं, रामचन्द्रजीको लौटा ले जाइये) ॥ २५० ॥

चौ०–भरतबचन सुनि देखि सनेहू ❀ सभासहित मुनि भयउ विदेहू ॥ १ ॥
भरतमहामहिमा जलरासी ❀ मुनि मतिठाढ़ि तीर अबलासी ॥ २ ॥

भरतके वचन सुन और प्रेम देख मुनीश्वर (वसिष्ठजी) सभासमेत विदेह हो गये (अर्थात् इनको देहकी सुध बुध न रही) ॥ १ ॥ भरतकी अधिक महिमा समुद्रके समान है उसके तीरपर मुनीश्वरकी बुद्धि नारिके समान खड़ी रह गई ॥ २ ॥

गा चह पार जतन बहु हेरा ❀ पावति नाव न वोहित बेरा ॥ ३ ॥
और करहि को भरतबड़ाई ❀ सरसिसीप किमि सिंधु समाई ॥ ४ ॥

पार तौ जाना चाहती है और बहुतसे उपाय सोंचे, परन्तु नाव जहाज और बेड़ा कुछ नहीं पाती ॥ ३ ॥ (जब वसिष्ठजीकी यह दशा है तौ) और कौन भरतजीकी बड़ाई कर सकता है ? क्योंकि सरोवरकी सीपमें समुद्र कैसे समा सकता है ? ॥ ४ ॥

भरत मुनिहि मनभीतर पाए ❀ सहित समाज रामपहँ आए ॥ ५ ॥
प्रभु प्रनाम करि दीन्ह सुआसन ❀ बैठे सब मुनि सुनि अनुसासन ॥ ६ ॥

मुनीश्वरके अंतःकरणमें भरतजी अच्छे लगे और सभाको साथ लेकर रामचन्द्रजीके पास आये ॥ ५ ॥ भगवान्‌ने दंडवत कर सुन्दर आसन दिया तौ सब मुनिकी आज्ञा सुनकर बैठ गये ॥ ६ ॥

बोले मुनिवर बचन बिचारी ❀ देस काल अवसर अनुहारी ॥ ७ ॥
सुनहु राम सर्वज्ञ सुजाना ❀ धर्मनीतिगुनज्ञाननिधाना ॥ ८ ॥

तब मुनिराज (वसिष्ठजी) देश काल और समयके अनुसार विचार कर बचन बोले ॥ ७ ॥ हे राम ! सुनो तुम सर्वज्ञ, सुजान और धर्म, नीति, गुण तथा ज्ञानके निधान हो ॥ ८ ॥

दो०–सबके उरअंतर बसहु, जानहु भाव कुभाव ॥ ❀
पुरजन जननी भरतहित, होइ सो करिय उपाव ॥ २५१ ॥ ❀

---

(१) यहां यह शंका है कि जो सरोवरकी सीपमें समुद्र नहीं समासक्ता है तौ क्या समुद्रकी सीपमें समासक्ता है ? सो यहां कविका तात्पर्य केवल अपनी बुद्धिको अति छोटी कहनेका है, और कुछ नहीं ॥

सबके हृदयके भीतर रहते हो और भाव कुभावको जानते हो. सो जिससे नगरनिवासियों, माता और भरतका हित हो वही उपाय कीजिये ॥ २५१ ॥

चौ०–आरत कहहिं बिचारि न काऊ ❀ सूझ जुआरिहि आपन दाऊ ॥ १ ॥
सुनि मुनिबचन कहत रघुराऊ ❀ नाथ तुम्हारेहि हाथ उपाऊ ॥ २ ॥

दुखी जन तौ कुछ विचार कर नहीं कहते हैं क्योंकि ज्वारीको तौ अपनाही दाव दीखता है ॥१॥ मुनिके वचन सुन रामचन्द्रजी कहने लगे कि हे स्वामी ! आपहीके हाथ उपाय है ॥ २ ॥

सबकर हित रुख राउर राखे ❀ आयसु किये मुदित फुर भाखे ॥ ३ ॥
प्रथम जो आयसु मोकहँ होई ❀ माथे मानि करौं सिख सोई ॥ ४ ॥

आपका रुख रखनेमें सबका हित है और आज्ञा माननेमेंही प्रसन्नता है. (रघुनाथजीने) यह सत्य २ कहा ॥ ३ ॥ पहले जो आज्ञा मुझे हो उसी शिक्षाको मैं शिरपर रखकर करूं ॥ ४ ॥

पुनि जेहिकहँ जस कहहिं गुसांईं ❀ सो सबभाँति करिहि सेवकाईं ॥ ५ ॥
कह मुनि राम सत्य तुम भाषा ❀ भरत सनेह विचार न राषा ॥ ६ ॥

हे गोसांईं ! फिर जिससे जैसे कहोगे वही सब भांतिसे सेवा करैगा ॥ ५ ॥ मुनीश्वरने कहा, हे राम ! तुमने तौ सत्य कहा, पर भरतके स्नेहने मेरा विचार नहीं रक्खा ॥ ६ ॥

तेहिते कहउँ बहोरि बहोरी ❀ भरतभक्तिबस मम मति भोरी ॥ ७ ॥
मोरे जान भरतरुचि राखी ❀ जो कीजिय सो सुभ सिव साखी ॥ ८ ॥

इससे मैं वारंवार कहता हूं कि भरतकी भक्तिके वश मेरी बुद्धि भोली होगई है ॥ ७ ॥ इसलिये मेरे जानमें तौ भरतकी रुचि रखकर जो किया जाय सो अच्छा होगा. मैं यह महादेवजीको साक्षी करके कहताहूँ ॥ ८ ॥

दो०–भरतबिनय सादर सुनिय, करिय बिचार बहोरि ॥ ❀
करब साधु मत लोकमत, नृपनय निगम निचोरि ॥ २५२ ॥ ❀

(वसिष्ठजी रामजीसे कहते हैं कि) प्रथम आप भरतकी विनतीको आदरसे सुनिये, फिर विचार करना और राजनीति और वेदको निचोड़कर वह बात करना कि जो सतोंको अच्छी लगै, और संसारमें बुराईभी न हो ॥ २५२ ॥

चौ०–गुरुअनुराग भरतपर देखी ❀ रामहृदय आनंद विसेखी ॥ १ ॥
भरतहिं धर्म धुरंधर जानी ❀ निजसेवक तनु मानस बानी ॥ २ ॥

गुरुका स्नेह भरतपर देख रामचन्द्रजीके हृदयमें बड़ा आनन्द हुवा ॥ १ ॥ फिर भरतको धर्मके धुरंधर और तन मन वचनसे अपना सेवक जान ॥ २ ॥

बोले गुरुआयसु अनुकूला ❀ वचन मंजु मृदु मंगलमूला ॥ ३ ॥
नाथसपथ पितुचरनदोहाई ❀ भयउ न भुवन भरतसम भाई ॥ ४ ॥

गुरुकी आज्ञाके अनुसार सुन्दर कोमल आनन्ददायक वचन बोले ॥ ३ ॥ हे नाथ! (आपकी) शपथ और पिताके चरणोंकी दोहाईसे कहता हूं कि संसारमें भरतके समान भाई नहीं हुआ ॥४॥

जे गुरुपदअंबुजअनुरागी ❀ ते लोकहुँ वेदहुँ बड़भागी ॥ ५ ॥
राउर जापर अस अनुरागू ❀ को कहिसकहि भरतकर भागू ॥ ६ ॥

---

(१) आनन्द इसलिये हुआ कि जो वसिष्ठजी अपने हाथमें न्याय रखते तौ हम कुछ नहीं कह सक्ते ॥

जो शिष्य गुरके चरणकमलोंसे प्रीति करनेवाला होते है वे लोक और वेदमेंभी बड़भागी होते हैं ॥ ५ ॥ और जिसपर आपका ऐसा प्रेम है उस भरतके भाग्यको कौन कहसक्ता है? ॥ ६ ॥

लखि लघुबंधु बुद्धि सकुचाई ❀ करत बदनपर भरत बड़ाई ॥ ७ ॥
भरत कहहिं सो किये भलाई ❀ अस कहि राम रहे अरगाई ॥ ८ ॥

छोटा भाई देखकर मुखपर भरतकी बड़ाई करनेमें बुद्धि सकुचती है ॥ ७ ॥ जो भरत कहैं उसीके करनेमें भलाई है ऐसे कहकर रामचन्द्रजी चुप साध गये ॥ ८ ॥

दो०–तब मुनि बोले भरतसन, सब सकोच तजि तात ॥ ❀
कृपासिंधु प्रियबंधुसन, कहहु हृदयकी बात ॥ २५३ ॥ ❀

तब (वसिष्ठ) मुनि भरतसे बोले हे प्यारे! सब सकुच छोड़कर दयासागर प्यारे भाईसे मनकी बात कहो ॥ २५३ ॥

चौ०–सुनि मुनिबचन रामरुख पाई ❀ गुरु साहिब अनुकूल अघाई ॥ १ ॥
लखि अपने सिर सब छरभारू ❀ कहि न सकहिं कछु करहिं बिचारू ॥२॥

मुनीश्वरके वचन सुन और रामचन्द्रजीका रुख पाय और गुरु और स्वामीको अति कृपालु जान ॥ १ ॥ और सब बोझ अपनेही शिरपर देख कुछ कह नहीं सक्ते, सोचा विचारी करते हैं ॥ २ ॥

पुलकि सरीर सभा भए ठाढ़े ❀ नीरजनयन नेहजल बाढ़े ॥ ३ ॥
कहब मोर मुनिनाथ निबाहा ❀ इहिते अधिक कहौं मैं काहा ॥ ४ ॥

फिर शरीरमें पुलकायमान हो सभामें खड़े हुये और कमलससमान नेत्र प्रेमके जलसे भर गये (भरतजी कहते हैं कि) ॥ ३ ॥ मेरा कहना तौ हे मुनिनाथ! आपहीने निवाह दिया, इससे अधिक मैं क्या कहूं? ॥ ४ ॥

मैं जानौं निजनाथसुभाऊ ❀ अपराधिहुपर कोह न काऊ ॥ ५ ॥
मोपर कृपा सनेह बिसेखी ❀ खेलत खुनस कबहुँ नहिं देखी ॥ ६ ॥

मैं अपने स्वामीका स्वभाव जानता हूं कि वे अपराधीपरभी कभी क्रोध नहीं करते ॥ ५ ॥ सो मुझपर तौ बडी दया और प्रेम है, कभी खेलतेमेंभी खुनस नहीं देखी ॥ ६ ॥

सिसुपनते परिहरेउ न संगू ❀ कबहुँ न कीन्ह मोर मन भंगू ॥ ७ ॥
मैं प्रभुकृपारीति जिय जोही ❀ हारेउ खेल जितायउ मोही ॥ ८ ॥

बालकपनसे साथ नहीं छोड़ा और न कभी मेरा मन तोड़ा ॥ ७ ॥ मैंने भगवानकी कृपाकी रीति पहिचान ली कि हारे खेलमेंभी मुझेही जिताया, तात्पर्य यह कि अबभी मैं माताकी करनीसे हारा हूँ सो जितावेंगे ॥ ८ ॥

दो०–महूँ सनेह सकोचबस, सन्मुख कहेउँ न बैन ॥ ❀
दर्सनतृप्ति न आजुलगि, प्रेमपियासे नैन ॥ २५४ ॥ ❀

मैंनेभी प्रेम और सकुचके वश सन्मुख वचन नहीं कहे, (अर्थात् बराबरी नहीं की) और प्रेमके प्यासे नेत्र आजतक (रामजीके दर्शनोंसे नहीं भरे) ॥ २५४ ॥

चौ०–विधि न सकेउ सहि मोर दुलारा ❀ नीच बीच जननीमिसु पारा ॥ १ ॥
यहउ कहत मोहिं आजु न सोभा ❀ आपनि समुझ साधु सुचि को भा ॥२॥

---

(१) कहना यह कि–"पुरजनजननी भरतहित, होय सो करिय उपाउ" ॥

पर विधाता मेरे दुलारको न सहसका और नीचपनेसे माताके बहाने आपसमें भेद डाल दिया ॥ १ ॥ आज यह कहतेमेंभी मुझे शोभा नहीं देता, क्योंकि अपनी समझसे कौन साधु पवित्र हुआ है ॥ २ ॥

मातु मंद मैं साधु सुचाली ❀ उर अस आनत कोटि कुचाली ॥ ३ ॥
फरै कि कोदौबालि सुशाली ❀ मुक्ता प्रसव कि संबुकताली ॥ ४ ॥

और जो यह कहूँ कि माताही बुरी और मैं साधु और सुचाली हूं तौ मनमें ऐसा विचारनाभी करोड़ कुचालकी बरावर है ॥ ३ ॥ क्योंकि कभी कोदों अन्नकी भुटिया क्या सुन्दर चावलोंकी भांति फलती है, और तलावकी सीपमेंसे क्या मोती उत्पन्न हो सक्ते हैं? अर्थात् नहीं होते ॥ ४ ॥

सपनेहुँ दोष कलेस न काहू ❀ मोर अभाग्यउदधि अवगाहू ॥ ५ ॥
बिनुसमुझे निजअघपरिपाकू ❀ जारेउँ जाय जननि कहि काकू ॥ ६ ॥

(इसलिये) स्वप्नमेंभी किसीका दोष और क्लेश नहीं, मेराही कुभाग्य अथाह समुद्र है ॥ ५ ॥ सो अपने पापका फल समझे बूझे विना माताको बुरा कहकर वृथाही जलाया ॥ ६ ॥

हृदय हेरि हारेउँ सब ओरा ❀ एकहि भाँति भलहि भल मोरा ॥ ७ ॥
गुरु गुसाँइ साहिब सियरामू ❀ लागत मोहिं नीक परिनामू ॥ ८ ॥

मैं तौ मनमें विचार कर सब ओरसे हारगया, अब तौ एकही प्रकारके भलेमें मेरा भला है कि ॥ ७ ॥ आप तौ गुरु महाराज हैं और स्वामी सीताराम हैं (इसलिये) मुझे परिणाम शुभ दीखता है ॥ ८ ॥

दो०-साधुसभा प्रभु गुरु निकट, कहौं सुथल सतिभाउ ॥ ❀
प्रेम प्रपंच कि झूंठ फुर, जानहिं मुनि रघुराउ ॥ २५५ ॥ ❀

सज्जनोंका समाज है और स्वामी और गुरुके पास सुंदर स्थानमें सच्चे भावसे कहता हूं, और जो प्रेमसे वा प्रपंच कहिये छलसे झूठ सच कहता होउँगा तौ मुनीश्वर और रघुनाथजी जानते हैं (क्योंकि वे अन्तर्यामी हैं) ॥ २५५ ॥

चौ०-भूपतिमरन प्रेमप्रन राखी ❀ जननी कुमति जगत सब साखी ॥ १ ॥
देखि न जाहि बिकल महतारी ❀ जरहिं दुसह ज्वर पुरनरनारी ॥ २ ॥

राजाका मरण तौ प्रेमका प्रण रखनेसे हुआ और माताकी खोटी मतिका सब संसार गवाही है ॥ १ ॥ माताओंकी व्याकुलता देखी नहीं जाती है और सब नगरके नर नारी कठिन ज्वरसे जल रहे हैं ॥ २ ॥

मैंहिं सकल अनरथकर मूला ❀ सो सुनि समुझि सहेउँ सब सूला ॥ ३ ॥
सुनि बन गमन कीन्ह रघुनाथा ❀ करि मुनिवेष लषन सिय साथा ॥ ४ ॥

मैंही सब बुरे कामोंकी जड़ हूं सो सब सुनकर और समझकर सब दुःख सहरहा हूं ॥ ३ ॥ और जो यह सुना कि रामचन्द्रजीने मुनिका वेष धर वनको गमन किया और लक्ष्मण सीताजी संग हैं ॥ ४ ॥

बिनु पनही अरु प्यादेहि पाए ❀ संकरसाखि रहेउँ इहि घाए ॥ ५ ॥
बहुरि निहारि निषादसनेहू ❀ कुलिसकठिन उर भयउ न बेहू ॥ ६ ॥

और नंगे पैरों पैदलही गये हैं, सोही इधरको दौड़ा इसमें महादेव साक्षी है ॥ ५ ॥ फिर भीलका प्रेम देखकरभी वज्रसे कठोर हृदयमें छेद न हुआ ॥ ६ ॥

अब सब आँखिन्ह देखेउँ आई ❀ जियत जीव जड सबै सहाई ॥ ७ ॥
जिन्हहि निरखि मगु साँपिनि बीछी ❀ तजहिं विषम विष तामस तीछी ॥ ८ ॥

अब आकर सब आंखोंसे देख लिया और जीतेही इस जड़ जीवने सब सहा दिया ॥ ७ ॥ जिनको देख मार्गके सर्प और बिच्छूभी कठिन और तीखे विषको त्याग देते हैं ॥ ८ ॥

दो०–ते रघुनंदन लषन सिय, अनहित लागे जाहि ॥ ❀
तासु तनय तजि दुसह दुख, दैव सहावै काहि ॥ २५६ ॥ ❀

वेही रामचन्द्र लक्ष्मण और जानकी जिस (कैकेयीको) बुरे लगे उसके पुत्रको छोड़ विधाता कठिन दुःख और किसको सहावे ॥ २५६ ॥

चौ०–सुनि अतिबिकल भरतवरबानी ❀ आरति प्रीति बिनय नयसानी ॥ १ ॥
सोकमगन सब सभा खँभारू ❀ मनहुँ कमलवन परेउ तुषारू ॥ २ ॥

अति विकल भरतजीकी दुःख, प्रेम, नम्रता[१] और नीतिमें सनी हुई श्रेष्ठ वाणीको सुन ॥ १ ॥ सब सभा शोकमें दुखी हो ऐसी घबरागई मानों कमलोंके वनपर पाला पड़ा, अर्थात् जैसे तुषार पड़नेसे कमलोंका शिर नीचेको लटक जाता है सोही दशा हुई ॥ २ ॥

कहि अनेकविधि कथा पुरानी ❀ भरत प्रमोद कीन्ह मुनि ज्ञानी ॥ ३ ॥
बोले उचितबचन रघुनंदू ❀ दिनकरकुलकैरववनचंदू ॥ ४ ॥

फिर तौ ज्ञानी मुनिराज वसिष्ठजीने अनेक प्रकार पुरानी कथा कहकर भरतको समझाया ॥३॥ तब सूर्यवंशरूपी कुमोदिनीके वनको चन्द्रमाके समान रामचन्द्रजी यथोचित वचन बोले कि–॥४॥

तात जाय जनि करहु गलानी ❀ ईसअधीन जीवगति जानी ॥ ५ ॥
तीनि काल त्रिभुवन मत मोरे ❀ पुन्यसिलोक तात तर तोरे ॥ ६ ॥

हे प्यारे ! वृथा जीको उदास मत करो· और जीवकी गति ईश्वरके अधीन जानो ॥ ५ ॥ मेरे मतसे तौ हे प्यारे ! तीनों काल और तीनों लोकमें पुण्यश्लोक कहिये जो बड़े २ पुण्यात्मा जन हैं सो सब तुह्मारे तले हैं ॥ ६ ॥

उर आनत तुमपर कुटिलाई ❀ जाइ लोक परलोक नसाई ॥ ७ ॥
दोष देहिं जननिहिं जड़ तेई ❀ जिन्ह गुरुसाधुसभा नहिं सेई ॥ ८ ॥

तुह्मारे ऊपर कुटिलाई मनमेंभी बिचारनेसे परलोक बिगड़ जायगा ॥ ७ ॥ और माताकोभी वही मूर्ख लोग दोष देंगे जिन्होंने गुरु और साधुओंकी सभाका सेवन नहीं किया ॥ ८ ॥

दो०–मिटहीं पाप प्रपंच सब, अखिल अमंगलभार ॥ ❀
लोकसुजस परलोकसुख, सुमरत नाम तुम्हार ॥ २५७ ॥ ❀

तुह्मारे नामके स्मरण करतेही सब पाप और प्रपंच कहिये संसारकी माया और सब अमंगलोंके भार मिट जायँगे और लोकमें सुन्दर यश और परलोकमें सुख मिलैगा ॥ २५७ ॥

चौ०–कहौं सुभाव सत्य सिव साखी ❀ भरत भूमि रह राउरि राखी ॥ १ ॥
तात कुतर्क करहु जिय जाए ❀ बैर प्रेम नहिं दुरै दुराए ॥ २ ॥

मैं महादेवको साक्षी कर सत्य भावसे कहता हूं कि हे भरत[२] ! पृथ्वी आपहीके रखनेसे रहैगी ॥ १ ॥ हे प्यारे ! वृथा मनमें कुतर्क मत करो· वैर और स्नेह (कहीं) छिपानेसे नहीं छिपते॥२॥

---

(१) (आरति–) सो सुनि समुझि सह्यो सब सूला–(प्रीति–) महूँ सनेह सकोचवस आदि (विनय)–गुरु गोसाँई साहिब सियरमनू । नीति तौ सबही है ।

(२) क्योंकि तुम उसके भरण पोषण करनेवाले हो ! जैसा कहा है कि–

विश्व भरण पोषण करजोई । ताको नाम भरत अस होई ॥

मुनिगण निकट बिहँग मृग जाहीं ❀ बाधक बधिक बिलोकि पराहीं ॥ ३ ॥
हित अनहित पशु पक्षिउ जाना ❀ मानुषतनु गुणज्ञाननिधाना ॥ ४ ॥

मुनियोंके समूहके पास पक्षी और हिरण जाते हैं और दुःख देनेवाले बहेलियेको देखकर भाग जाते हैं ॥ ३ ॥ भलाई बुराई तौ पशु पक्षीभी जानते हैं सो मनुष्यका शरीर तौ गुण और ज्ञानकी खान होता है ॥ ४ ॥

तात तुमहिं मैं जानत नीके ❀ करौं काह असमंजस जीके ॥ ५ ॥
राखेउ राउ सत्य मोहिं त्यागी ❀ तनु परिहरेउ प्रेमप्रणलागी ॥ ६ ॥

हे प्यारे ! मैं तुमको भलीभाँति जानता हूं. परन्तु क्या करूँ ! मेरे जीमें बड़ी दुबधा हो रही है॥५॥ राजाने मुझे त्यागकर सत्य रक्खा और स्नेहका प्रण रखनेके लिये शरीरकोभी छोड दिया ॥ ६ ॥

तासु बचन मेटत मन सोचू ❀ तेहिते अधिक तुम्हार सँकोचू ॥ ७ ॥
तापर गुरु मोहिं आयसु दीन्हा ❀ अवसि जो कहहु चहौं सोइ कीन्हा ॥८॥

उनके बचन मेटतेमें मनमें शोच होता है और उससेभी विशेष तुह्मारा संकोच है ॥ ७ ॥ तिसपरभी मुझे गुरुने आज्ञा दी (इस कारण) जो कुछ कहो वही अवश्य किया चाहता हूँ ॥८॥

दो०-मन प्रसन्न करि सकुच तजि, कहहु करौं सो आज ॥ ❀
सत्यसिंधु रघुवरबचन, सुनि भा सुखी समाज ॥ २५८ ॥ ❀

मनको प्रसन्न कर और सकुच छोड़ जो कहो वही आज करूं. सत्यके समुद्र रामचन्द्रके ऐसे वचन सुनकर समाज सुखी होगया ॥ २५८ ॥

चौ०-सुरगणसहित समय सुरराजू ❀ सोचत चाहत होन अकाजू ॥ १ ॥
करत बिचार बनत कछु नाहीं ❀ रामसरणसब गे मनमाहीं ॥ २ ॥

देवताओंके समूह सहित इन्द्र भययुक्त हो सोचते हैं, कि काममें विघ्न होना चाहता है ॥ १ ॥ विचार करते हैं (परन्तु) कुछ बनता नहीं बनती (तब) मनहीमें रामचन्द्रजीकी शरणमें गये मनही मनमें इसलिये कि कहीं भेद न खुल जाय ॥ २ ॥

बहुरि बिचारि परस्पर कहहीं ❀ रघुपति भक्तभक्तिवस अहहीं ॥ ३ ॥
सुधि करि अंबरीष दुर्वासा ❀ भे सुर सुरपति निपट निरासा ॥ ४ ॥

फिर आपसमें विचारके कहने लगे कि रामचन्द्रजी तौ भक्तोंकी भक्तिके वश हैं ॥ ३ ॥ और अंबरीष और दुर्वासाकी याद करके देवता और इन्द्र बिरकुल निराश होगये ॥ ४ ॥

सहे सुरन्ह बहुकाल विषादा ❀ नरहरि किए प्रगट प्रह्लादा ॥ ५ ॥
लगि लगि कान कहहिं धुनि माथा❀ अब सुरकाज भरतके हाथा ॥ ६ ॥

(और बिचारने लगे कि पहिलेभी) देवताओंने (हिरण्यकश्यपके राज्यमें) बहुत समय तक कष्ट सहे थे तब प्रह्लादने नृसिंह (भगवान्) प्रकट किये थे ॥५॥ एक दूसरेके कान लग २ कर अर्थात आपसमें कानाफूसी करके और शिर धुन २ कर कहते हैं कि, अब देवताओंका काम भरतके हाथमें है६

आन उपाय न देखिय देवा ❀ मानत राम सुसेवकसेवा ॥ ७ ॥
हिय सप्रेम सुमिरहु सब भरतहिं ❀ निज गुण सील रामबसकरतहिं ॥ ८ ॥

देवताओंको और उपाय नहीं दिखाई दिया (और शोचे कि) रामचन्द्र अच्छे भक्तकी सेवाको

---

१ यह कथा २१३ वें दोहेकी सातवीं चौपाईकी टिप्पणीमें देखो ॥

मानते हैं ॥ ७ ॥ सो सब (अपने २) हृदयमें स्नेहसहित भरतका स्मरण करो जिसने अपने गुण और शीलसे रामचन्द्रजी वशमें किये ॥ ८ ॥

दो०–सुनि सुरमत सुरगुरु कहेउ, भल तुम्हार बड़भाग ॥ ❀
सकल सुमंगलमूल जग, भरतचरणअनुराग ॥ २५९ ॥ ❀

देवताओंकी संमति सुनकर बृस्पतिजीने कहा कि, तुम्हारा बड़ा सुन्दर भाग्य है जो संसारमें सब सुन्दर आनन्दोंकी जड़ भरतजीके चरणोंमें अनुराग है ॥ २५९ ॥

चौ०–सीतापतिसेवकसेवकाई ❀ कामधेनुसमसरिस सुहाई ॥ १ ॥
भरतभक्ति तुम्हरे मन आई ❀ तजहु सोच विधि बात बनाई ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीके दासकी सेवा सौ कामधेनुओंके समान सुन्दर है ॥ १ ॥ सो तुम्हारे मनमें भरतकी भक्ति आई (इस कारण) शोचको छोडदो ब्रह्माने बात बनादी ॥ २ ॥

देखु देवपति भरतप्रभाऊ ❀ सहज सुभावबिवस रघुराऊ ॥ ३ ॥
मन थिर करहु देव डर नाहीं ❀ भरतहिं जानि रामपरछाहीं ॥ ४ ॥

हे देवताओ ! भरतके प्रभावको देखों (जिनके) सहज सुभावके वश रामचन्द्रजी होरहे हैं ॥३॥ हे देवताओ ! मनको स्थिर करो डर नहीं है भरतजीको रामचन्द्रजीकी परछाईं जानो ॥ ४ ॥

सुनि सुरगुरु सुरसंमत सोचू ❀ अंतरयामी प्रभुहिं सँकोचू ॥ ५ ॥
निजसिर भार भरत जिय जाना ❀ करत कोटिविधि उर अनुमाना ॥ ६ ॥

देवता और बृहस्पतिकी संमति तथा (उनके) शोचको सुन अंतर्यामी भगवान्‌को सकुच हुआ ॥ ५ ॥ भरतजी मनमें अपनेही शिर सब भार जान हृदयमें करोड़ों भांतिके अनुमान करते हैं ॥६॥

करि विचार मन दीन्हेउ टीका ❀ रामरजायसु आपन नीका ॥ ७ ॥
निजप्राण तजि राखेउ प्रण मोरा ❀ छोह सनेह कीन्ह नहिं थोरा ॥ ८ ॥

विचार करके मनमें निश्चय किया कि रामचन्द्रजीकी आज्ञामेंही अपना भला है ॥ ७ ॥ (क्योंकि उन्होंने) अपना प्रण छोड़ मेरा प्रण रक्खा सो प्रेम और छोह थोडा नहीं किया ॥ ८ ॥

दो०–कीन्ह अनुग्रह अमित अति, सबविधि सीतानाथ ॥ ❀
करि प्रणाम बोले भरत, जोरि जलजयुग हाथ ॥ २६० ॥ ❀

रामचन्द्रजीने सबभांति बड़ी भारी कृपा की है (ऐसे कह) भरतजी कमलसमान दोनों हाथ जोड़ प्रणाम कर बोले ॥ २६० ॥

चौ०–कहउँ कहावउँ का अब स्वामी ❀ कृपाअंबुनिधि अंतरयामी ॥ १ ॥
गुरु प्रसन्न साहिब अनुकूला ❀ मिटी मलिन मनकल्पित शूला ॥ २ ॥

हे स्वामी ! मैं अब क्या कहूं और कहवाऊँ (आप) कृपासागर और अंतर्यामी हो ॥ १ ॥ और जब गुरु प्रसन्न और स्वामी सहायक हैं (तब तौ मेरे) मैलें मनमें कल्पना किये हुये सब दुःख मिट गये ॥ २ ॥

अपडर डरेउँ न सोच समूला ❀ रबिहि न दोष देव दिस भूला ॥ ३ ॥
मोर अभाग्य मातुकुटिलाई ❀ बिधिगति विषम कालकठिनाई ॥ ४ ॥

मैं अपडरसे वृथाही डर गया उस शोचकी कुछ जड़ नहीं थी दिशाके भूल जानेमें सूर्यको दोष न देना चाहिये ॥ ३ ॥ मेरा अभाग्य, माताका खोटापन, प्रारब्धकी कुचाल और समयकी कठिनता ॥४॥

पाँव रोपि सब मिलि मोहिं घाला ❀ प्रनतपाल प्रन आपन पाला ॥ ५ ॥
यह नइ रीति न राउरि होई ❀ लोकहु वेद विदित नहिं गोई ॥ ६ ॥

इन सबने पाँव रोप कर मुझे मारना चाहा पर दीनोंके पालन करनेवाले (आपने) अपना प्रण रख मुझे बचालिया ॥ ५ ॥ सो यह आपकी (कुछ) नई रीति नहीं है. लोक और वेदमें प्रकट है, कुछ छिपी नहीं है ॥ ६ ॥

जग अनभल भल एक गुसाँई ❀ कहिय होइ भल कासु भलाई ॥ ७ ॥
देव देवतरुसरिस सुभाऊ ❀ सन्मुख विमुख न काहुहि काऊ ॥ ८ ॥

हे स्वामी ! संसार तौ बुरा है, एक आपही भले हो (अर्थात् आपही संसारका भला कर सक्ते हो) फिर कहिये (और किसकी) भलाईसे भला हो सक्ता है ॥ ७ ॥ हे देव ! (आपका) स्वभाव कल्पवृक्षके समान है जो सन्मुख होनेपर कभी किसीसे विमुख नहीं होता ॥ ८ ॥

दो०–जाइ निकट पहिचानि तरु, छाँह समन सब सोच ॥ ❀
माँगत अभिमत पाव जग, राउ रंक भल पोच ॥ २६१ ॥ ❀

जो कल्पवृक्षको पहिचानकर उसके पास जाते हैं तौ उसकी छाया सब सोचोंको नाश करदेती है और मांगनेसे राजा, रंक, भले, बुरे जो चाहते हैं सो पाते हैं ॥ २६१ ॥

चौ०–लखि सबबिधि गुरुस्वामिसनेहू ❀ मिटेउ छोभ नहिं मन संदेहू ॥ १ ॥
अब करुनाकर कीजिय सोई ❀ जनहित प्रभुचित छोभ न होई ॥ २ ॥

सब भांतिसे गुरु और स्वामीका प्रेम देख दुःख मिटगया और मनमें संदेहभी नहीं रहा ॥ १ ॥ हे दयानिधान ! अब वही कीजिये जिसमें मुझ भक्तजनका भला हो और स्वामीके चित्तमें दुःख न हो ॥ २ ॥

जो सेवक साहिब संकोची ❀ निजहित चहै तासु मति पोची ॥ ३ ॥
सेवकहित साहिब सेवकाई ❀ करै सकल सुख लोभ बिहाई ॥ ४ ॥

(क्यों कि) जो दास स्वामीको सकुचाकर अपना भला चाहै उसकी बुद्धि नीच है ॥ ३ ॥ सेवकका (इसमें) भला है कि सब सुख और लोभको छोड़कर स्वामीकी सेवा करै ॥ ४ ॥

स्वारथ नाथ फिरे सबहीका ❀ किए रजाइ कोटिविधि नीका ॥ ५ ॥
इह स्वारथ परमारथ सारू ❀ सकल सुकृतफल सुगति सिगाँरू ॥ ६ ॥

और सबका भला तौ स्वामीके लौटनेमेंही है और (आपकी) आज्ञा करनेमें करोड़ों भांतिका भला है ॥ ५ ॥ और यही सब स्वार्थ और परमार्थका सार है और सब पुण्योंका फल और सुन्दर गतिका सिङ्गार है ॥ ६ ॥

देव एक बिनती सुनि मोरी ❀ उचित होइ तस करब बहोरी ॥ ७ ॥
तिलकसमाज साजि सब आना ❀ करिय सुफल प्रभु जो मनमाना ॥ ८ ॥

हे देव ! मेरी एक विनती सुनिये, फिर जैसा उचित हो तैसा कीजिये ॥ ७ ॥ हे स्वामी ! तिलककी सब सामग्री सजाकर लाया हूं जो मनमें आवे तौ सफल कीजिये ॥ ८ ॥

दो०–सानुज पठइय मोहिं बन, कीजिय सबहिं सनाथ ॥ ❀
नातरु फेरिय बंधु दोउ, नाथ चलौं मैं साथ ॥ २६२ ॥ ❀

हे स्वामी ! छोटे भाई समेत मुझे बनको भेजकर सबको सनाथ कीजिये, नहीं तौ (लक्ष्मण शत्रुघ्न) दोनों भाइयोंको लौटा दीजिये, मैं (आपके) साथ चलूँगा ॥ २६२ ॥

चौ०–न तरु जाहिं बन तीनिउँ भाई ❀ बहुरिय सीयसहित रघुराई ॥ १ ॥
जेहि विधि प्रभु प्रसन्न मन होई ❀ करुनासागर कीजिय सोई ॥ २ ॥

नहीं तौ हे रघुनाथजी ! हम तीनों भाई वनको जायँ, आप सीताजी समेत लौट जाइये ॥ १ ॥ हे करुणासागर ! जिस भांति स्वामीका मन प्रसन्न हो वही कीजिये ॥ २ ॥

देव दीन्ह सब मोपर भारू ❀ मोरे नीति न धर्मविचारू ॥ ३ ॥
कहौं बचन सब स्वारथहेतू ❀ रहत न आरतके चित चेतू ॥ ४ ॥

हे देव ! आपने तौ सब भार मेरेही ऊपर डालदिया सो मुझमें नतौ नीति है, न धर्मका विचार है. (अर्थात् नीति धर्म कुछ नहीं जानता) ॥ ३ ॥ सब वचन (अपने) मतलबके लिये कहता हूँ, क्योंकि दुखी मनुष्यके मनमें विचार नहीं रहता ॥ ४ ॥

उतर देइ सुनि स्वामिरजाई ❀ सो सेवक लखि लाज लजाई ॥ ५ ॥
अस मैं अवगुनउदधि अगाधू ❀ स्वामि सनेह सराहत साधू ॥ ६ ॥

जो स्वामीकी आज्ञाको सुनकर उत्तर देवे उस सेवकको देखके लाजभी लजाती है ॥५॥ सो ऐसा अवगुणोंका अथाह समुद्र मैंही हूँ, और स्वामी मेरी साधुता और प्रेमकी सराहना करते हैं ॥ ६ ॥

अब कृपालु मोहिं सो मत भावा ❀ सकुच स्वामिमन जाइ न पावा ॥ ७ ॥
प्रभुपदसपथ कहौं सतभाऊ ❀ जगमंगलहित एक उपाऊ ॥ ८ ॥

सो अब हे दयालु ! मुझे वही मत अच्छा लगता है जिससे स्वामीका मन सकुचने न पावे ॥ ७ ॥ (और मुझे) स्वामीके चरणोंकी सौगंद है, मैं सच्चे भावसे कहता हूं कि संसारके आनन्दके लिये यह एकही उपाय है ॥ ८ ॥

दो०–प्रभु प्रसन्न मन सकुच तजि, जो जेहि आयसु देव ॥ ❀
सो सिर धरि धरि करहिं सब, मिटिहिं अनट अनरेव ॥२६३॥ ❀

हे स्वामी ! (आप) प्रसन्न मनसे सकुच छोड़कर जिसे जो आज्ञा देंगे उसे मस्तकपर रख २ कर सब करेंगे और सब अमिट परेखेभी मिट जायँगे ॥ २६३ ॥

चौ०–भरतबचन सुचि सुनि हिय हर्षे ❀ साधु सराहि सुमन सुर बर्षे ॥ १ ॥
असमंजसबस अवधनिवासी ❀ प्रमुदितमन तापस बनबासी ॥ २ ॥

देवता भरतके पवित्र कहिये छलरहित वचन सुन मनमें प्रसन्न हुये और सुंदर सराहना करके फूल वर्षाने लगे ॥ १ ॥ अयोध्यावासी दुबिधाके वश और तपस्वी और वनके रहनेवाले मनमें बहुत प्रसन्न होगये ॥ २ ॥

चुप रहिगे रघुनाथ सकोची ❀ प्रभुगति देखि सभा सब सोची ॥ ३ ॥
जनकदूत तेहि अवसर आए ❀ मुनि वसिष्ठ सुनि वेगि बुलाए ॥ ४ ॥

रामचन्द्र सकुचकर चुप रहगये (तब) भगवानकी दशा देख कर सब सभा सोचने लगी ॥३॥ उसी समय जनकके दूत आये (यह) सुनकर वसिष्ठ मुनिने जल्दी बुला लिये ॥ ४ ॥

करि प्रनाम तिन्ह राम निहारे ❀ वेष देखि भे निपट दुखारे ॥ ५ ॥
दूतहिं मुनिवर पूछी बाता ❀ कहहु विदेहभूपकुसलाता ॥ ६ ॥

उन्होंने प्रणाम कर रामचन्द्रजीको देखा तौ उनके वेषको देखतेही बड़े दुखी हुये ॥ ५ ॥ मुनिराज (वसिष्ठजी) ने दूतोंसे बात पूछी कि राजा जनककी कुशल कहो ॥ ६ ॥

सुनि सकुचाइ नाइ महि माथा ❀ बोले चरबर जोरे हाथा ॥ ७ ॥
बूझव राउर सादर सांईं ❀ कुसलहेतु सो भयउ गुसांईं ॥ ८ ॥

सुन्दर दूत सुनकर सकुचे और पृथ्वीपर माथा नवाय हाथ जोड़कर बोले ॥ ७ ॥ हे स्वामी ! जिसे आप आदरसहित पूछें वही कुशलका कारण हुआ ॥ ८ ॥

दो०-नाहित कोसलनाथ के, साथ कुसल गै नाथ ॥ ❀
मिथिला अवध बिसेषते, जग सब भयउ अनाथ ॥ २६४ ॥ ❀

नहीं तौ हे नाथ ! कुशल तौ राजा दशरथके साथ गई. क्योंकि (जिनके मरणसे) सब संसारही अनाथ होगया और अवधपुरी और जनकपुरी तौ विशेष करके अनाथ होगई ॥ २६४ ॥

चौ०-कोसलपतिगति सुनि जनकौरा ❀ भे सब लोग सोकबस बौरा ॥ १ ॥
जेहि देखा तेहि समय बिदेहू ❀ नाम सत्य अस लाग न केहू ॥ २ ॥

(राजा) दशरथकी दशा सुनकर जनकके राज्यके सब लोग शोकके वश बावलेसे होगये. अर्थात् ठीक ज्ञान जाता रहा ॥ १ ॥ जिसने उसमय जनकको देखा तौ (बिदेह अर्थात् देहरहित यह) नाम किसे सच्चा न लगा? (अर्थात् सबको सच्चा लगा) ॥ २ ॥

रानिकुचालि सुनत महिपालहिं ❀ सूझ न कछु जस मनिबिनु ब्यालहिं ॥३॥
भरतराज रघुवर बनबासू ❀ भा मिथिलेसहिं हृदय हरासू ॥ ४ ॥

रानीकी कुचाल सुनतेही राजाको ऐसे कुछ नहीं सूझता जैसे विना मणिके[१] सर्पको कुछ नहीं सूझता ॥ ३ ॥ भरतका राज्य और रामचन्द्रजीका वनवास सुन जनकका मन बड़ा हिरासा हुआ ॥४॥

नृप बूझे बुध सचिवसमाजू ❀ कहहु बिचारि उचित का आजू ॥ ५ ॥
समुझि अवध असमंजस दोऊ ❀ चलिय कि रहिय न कह कछु कोऊ ॥६॥

तब राजाने पंडित और मंत्रियोंकी समाजसे पूछा कि बिचार कर कहो आज क्या करना उचित है? ॥५॥ अयोध्याका दशा और यहांकी चिंता इन दोनोंको समझ कर चलना है या रहना है ? सो कोई कुछ नहीं कहता ॥ ६ ॥

नृपति धीर धरि हृदय बिचारी ❀ पठये अवध चतुर चर चारी ॥ ७ ॥
बूझि भरतगति भाउ कुभाऊ ❀ आयहु बेगि न होइ लखाऊ ॥ ८ ॥

(तब) राजाने धीरज रख और मनमें विचार चतुर चार दूत अयोध्यापुरीको भेजे ॥ ७॥ (और कहा) भरतकी दशा और भावकुभावको पूछकर जल्दी आना और किसीको खबर न हो ॥ ८ ॥

दो०-गए अवध चर भरतगति, बूझि देखि करतूति ॥ ❀
चले चित्रकूटहिं भरत, चार चले तिरहूति ॥ २६५ ॥ ❀

दूत अयोध्याको गये और भरतकी दशा जानकर और उनकी यह करनी देख कर कि भरत चित्रकूटको गये, दूत जनकपूरको लौट गये ॥ २६५ ॥

चौ०-दूतन्ह आइ भरतकी करनी ❀ जनकसमाज यथामति बरनी ॥ १ ॥
सुनि गुरु पुरजन सचिव महीपति ❀ भे सब सोच सनेह बिकलमति ॥ २ ॥

दूतोंने जनकके समाजमें आकर भरतकी करनीको (अपनी) बुद्धिके अनुसार वर्णन किया॥ १ ॥ जिस सुनकर गुरु, नगरवासी, मंत्री और राजा सबकी बुद्धि सोच और प्रेमके वश व्याकुल होगई ॥२॥

---

(१) मणिसर्पका दृष्टान्त इसलिये कहा कि राजा अनर्थ करनेवालोंसे हृदयमें बड़े रुष्ट हुये ॥

धरि धीरज करि भरतबड़ाई ❀ लिये सुभट साहनी बुलाई ॥ ३ ॥
घर पुर देस राखि रखवारे ❀ हय गज रथ बहुयान सँवारे ॥ ४ ॥

फिर धीरज रख भरतकी बड़ाई करके सुन्दर योद्धा और सेनापति बुला लिये ॥ ३ ॥ घर, नगर और देशमें रखवाले रख घोड़े हाथी रथ और बहुतसी सवारियां सजाई ॥ ४ ॥

दुघरी साधि चले ततकाला ❀ किय बिस्राम न मगु महिपाला ॥ ५ ॥
भोरहिं आजु नहाइ प्रयागा ❀ चले यमुन उतरन सब लागा ॥ ६ ॥

फिर राजा उसी समय द्विघटिका (मुहूर्त्त) साधकर चले, और मार्गमें विश्रामतक नहीं किया ॥ ५ ॥ आज सवेरेही प्रयागका स्नान कर चले और सब यमुनाजी उतरने लगे ॥ ६ ॥

खबरि लेन हम पठयउ नाथा ❀ अस कहि तिन्ह महि नायउ माथा ॥७॥
साथ किरात छ सातक दीन्हे ❀ मुनिवर तुरत बिदा चर किन्हे ॥ ८ ॥

सो हे स्वामी ! हमें खबर लेनेको भेजा है ऐसे कह उन्होंने पृथ्वीपर माथा नवाया ॥ ७ ॥ मुनिराजने छः सात भील साथमें देकर उसी समय दूत विदा किये ॥ ८ ॥

दो०–सुनत जनकआगमन सब, हरषेउ अवधसमाज ॥ ❀
रघुनंदनहिं सकोच बड़, सोचबिबस सुरराज ॥ २६६ ॥ ❀

जनकका आना सुनकर अयोध्याका सब समाज प्रसन्न हुआ. रामचन्द्रजीको बड़ी संकुच[१] हुई और इन्द्र सोचके वश हुये ॥ २६६ ॥

चौ०–गरइ गलानि कुटिल कैकेई ❀ काहि कहै केहि दूषन देई ॥ १ ॥
अस मन आनि मुदित नरनारी ❀ भयउ बहोरि रहब दिनचारी ॥ २ ॥

खोटी कैकेयी शोकसे गली जाती है, क्या कहै और किसे दोष दे ॥ १ ॥ स्त्रीपुरुष मनमें यह समझ प्रसन्न हुये कि फिर दो चार दिन तौ और रहना होगा ॥ २ ॥

इहि प्रकार गत बासर सोऊ ❀ प्रात अन्हान लगे सब कोऊ ॥ ३ ॥
करि मज्जन पूजहिं नरनारी ❀ गनपति गौरि पुरारि तमारी ॥ ४ ॥

इस भांति वह दिनभी बीत गया, सवेरेही सबलोग स्नान करने लगे ॥ ३ ॥ (सब) नर नारी स्नान करके गणेश, पार्वती, महादेव और सूर्यको पूजते हैं ॥ ४ ॥

रमारमनपद बंदि बहोरी ❀ बिनवहिं अंजलि अंचल जोरी ॥ ५ ॥
राजा राम जानकी रानी ❀ आनंदअवधि अवधरजधानी ॥ ६ ॥

फिर लक्ष्मीके पति (भगवान्) के चरणोंको दंडवत कर अंजलि और अंचल पसार कर प्रार्थना करते हैं कि ॥ ५ ॥ रामचन्द्र राजा हों, सीताजी रानी हों और आनन्दकी सीमा अयोध्यापुरी राजधानी हो ॥ ६ ॥

स्वबस बसहि फिरिसहितसमाजा ❀ भरतहिं राम करहिं जुवराजा ॥ ७ ॥
इहि सुखसुधा सींच सबकाहू ❀ देव देहु जग जीवनलाहू ॥ ८ ॥

और समाजसहित फिर अपनी इच्छानुसार बसैं और रामचन्द्रजी भरतको युवराज करैं ॥ ७ ॥ हे विधाता ! इस सुखरूपी अमृतसे सब किसीको सींचकर संसारमें जीनेका लाभ दो ॥ ८ ॥

---

(१) रामजीको सोच इसलिये हुआ कि जनकजी क्या कहैंगे और (२) इन्द्रको इसलिये सोच हुआ कि कहीं रामजीको लौटा न ले जाँय, तौ देवताओंका काम बिगड़ै.

दो०-गुरुसमाज भाइन्हसहित, रामराज पुर होउ ॥ ❀
अछत राम राजा अवध, मरिय माँग सब कोउ ॥ २६७ ॥ ❀

और गुरुजनोंका समाज और भइयोंसहित रामचन्द्रजीका राज्य नगरमें हो और रामचन्द्र राजाके जीतेजी अयोध्यामें (हमारा) मरण हों (यह) सब कोई मांगते हैं ॥ २६७ ॥

चौ०-सुनि सनेहमय पुरजनबानी ❀ निंदहिं जोग बिरति मुनि ज्ञानी ॥ १ ॥
इहिविधि नित्यकर्म करि पुरजनु ❀ रामहिं करहिं प्रनाम पुलकि तनु ॥ २ ॥

नगरवासियोंकी प्रेमकी भरी वाणी सुनकर ज्ञानी मुनीश्वर अपने २ योग वैराग्यकी निन्दा करते हैं ॥ १ ॥ इसभांति नगरके लोग नित्यकर्म करके शरीरमें पुलकायमान होते हुये रामचन्द्रजीको प्रणाम करते हैं ॥ २ ॥

ऊँच नीच मध्यम नरनारी ❀ लहहिं दरस निज निज अनुहारी ॥ ३ ॥
सावधान सबहीं सनमानहिं ❀ सकल सराहत कृपानिधानहिं ॥ ४ ॥

ऊंचे, नीचे, मध्यम, नर नारी अपने २ अनुसार दर्शन लेते हैं ॥ ३ ॥ (भगवान्)सबका सावधानीसे सत्कार करते हैं (और वे) सब लोग कृपाके सागर (भगवान्) की सराहना करते हैं॥४॥

लरिकाईंते रघुबरबानी ❀ पालत नीति रीति पहिंचानी ॥ ५ ॥
सीलसकोचसिंधु रघुराऊ ❀ सुमुख सुलोचन सरलसुभाऊ ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीकी लड़कपनहीसे टेवथी कि वे नीतिकी रीतिको पहचानकर (उसका) पालन करते थे ॥ ५ ॥ रघुनाथजी शील और सकुचके समुद्र हैं (और उनका) सुन्दर मुख, सुन्दर नेत्र और सरल स्वभाव है ॥ ६ ॥

कहत रामगुनगन अनुरागे ❀ सब निजभाग्य सराहन लागे ॥ ७ ॥
हमसम पुन्यपुंज जग थोरे ❀ जिनहिं राम जानत करि मोरे ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजीके गुणोंके समूहको प्रीतिसे कहते हुये सब अपने २ भाग्यकी सराहना करने लगे कि॥ ७॥ हमारे समान पुण्योंके समूह संसारमें थोड़े हैं जिनको रामचन्द्र अपना करके जानते हैं॥८॥

दो०-प्रेममगन तेहि समय सब, सुनि आवत मिथिलेस ॥ ❀
सहित सभा संभ्रम उठे, रविकुलकमलदिनेस ॥ २६८ ॥ ❀

उस समय सब स्नेहमें मगन थे कि जनकको आतेहुये सुना तौ सूर्यवंशरूपी कमलके सूर्य (रामचन्द्र) सभासमेत बेगसे उठे ॥ २६८ ॥

चौ०-भाइ सचिव गुरु पुरजन साथा ❀ आगे गमड कीन्ह रघुनाथा ॥ १ ॥
गिरिवर दीख जनकनृप जबहीं ❀ करि प्रनाम त्यागा रथ तबहीं ॥ २ ॥

भाई, मंत्री, गुरु और नगरके लोगोंके साथ रामचन्द्रजीने आगे गमन किया ॥ १ ॥ जब जनकको सुन्दर पर्वत दिखाई दिया तौ उसी समय प्रणाम करके रथको छोड़ दिया ॥ २ ॥

रामदरसलालसा उछाहू ❀ पथस्रमलेस कलेस न काहू ॥ ३ ॥
मन तहँ जहँ रघुवर बैदेही ❀ बिनु मन तनु दुख सुख सुधि केही ॥४॥

रामचन्द्रजीके दर्शनकी इच्छा और उत्साहसे किसीको मार्गकी थकावट और क्लेश तनकभी नहीं व्यापा ॥ ३ ॥ क्योंकि उनका मन तौ वहां था कि जहाँ रामचन्द्र सीताजी हैं फिर विना मनके शरीरके सुखदुःखकी सुध किसे होती है ॥ ४ ॥

आवत जनक चले इहि भाँती ❀ सहित समाज प्रेममदमाती ॥ ५ ॥
आए निकट देखि अनुरागे ❀ सादर मिलन परस्पर लागे ॥ ६ ॥

इसभाँति जनकजी स्नेहमें मदमाती समाजको साथ लिये चले आते हैं ॥ ५ ॥ जब पास आये तौ प्रेमसे देख आदरसहित आपसमें मिलने लगे ॥ ६ ॥

लगे जनक मुनिगनपद बंदन ❀ ऋषिन्ह प्रनाम कीन्ह रघुनंदन ॥ ७ ॥
भाइनसहित राम मिलि राजहिं ❀ चले लिवाइ समेत समाजहिं ॥ ८ ॥

जनक मुनियोंकी मंडलीके चरणोंको दंडवत करने लगे और रामचन्द्रजीने ऋषियोंको प्रणाम करा ॥ ७ ॥ फिर भाइयोंसहित रामचन्द्रजी जनकराजसे मिलकर समाजसहित लिवाले चले ॥८॥

दो०–आस्रम सागर सांतरस, पूरन पावन पाथ ॥ ❀
सेन मनहुँ करुनासरित, लिये जात रघुनाथ ॥ २६९ ॥ ❀

रघुनाथजीका आश्रम मानों समुद्र है और शांति रसरूपी पवित्र जल उसमें भरा है (और जनकजीकी) सेना जो मानों करुणाकी नदी है उसे (रामजी) आश्रमरूपी समुद्रसे–मिलानेके लिये जाते हैं ॥ २६९ ॥

चौ०–बोरत ज्ञान विराग करारे ❀ वचन ससोक मिलत नद नारे ॥ १ ॥
सोच उसाँस समीरतरंगा ❀ धीरज तट तरुवरकरभंगा ॥ २ ॥

यह करुणाकी नदी ज्ञान वैराग्यरूपी दो किनारोंको डुबोती हुई और शोकयुक्त वचनरूपी नदी नालोंके मिलनेसे बढ़ती चली जाती है ॥ १ ॥ शोकके श्वास (रूपी) पवनसे उठी हुई तरंगें किनारेके धीरजरूपी सुन्दर वृक्षोंको तोड़ती जाती है ॥ २ ॥

विषम विषाद तुरावति धारा ❀ भय भ्रम भँवर आवर्त्त अपारा ॥ ३ ॥
केवट बुध विद्या बड़ि नावा ❀ सकहिं न खेइ एक नहिं आवा ॥ ४ ॥

(रामवनवास, राजाका मरण और भरतको राज्य न मिलना) यह बड़ा दुख इस नदीकी प्रचंड धारा है, (और भगवान् अब क्या करैगा यह डर) जिसमें भ्रमर (और रामजी लौटेंगे कि नहीं) यह संदेह जिसमें अनगिनती आवर्त्त (जलके चक्र) हैं ॥३॥ वसिष्ठ आदि पण्डितजन उसके केवट कहिये मल्हाह हैं, और उनकी विद्या बड़ी नाव है, परंतु उस नावका खेना एककोभी नहीं आता ॥ ४ ॥

बनचर कोल किरात विचारे ❀ थके बिलोकि पथिक हिय हारे ॥ ५ ॥
आस्रमउदधि मिलि जब जाई ❀ मनहुँ उठेउ अंबुधि अकुलाई ॥ ६ ॥

वनके रहनेवाले बिचारे कोलभीलही मानों बटोही हैं सो उसे देखकर थक गये, अर्थात् उनका धीरज जाता रहा और मनमें हार गये ॥ ५ ॥ जब वह करुणाकी नदी आश्रमरूपी समुद्रमें जाकर मिलि तौ मानों समुद्रभी अकुलाय उठा. सार यह है कि, समुद्र शांतरससे जो परिपूर्ण था सो इस नदीके मिलनेसे उभर गया, अर्थात् चारों ओर करुणारस फैल गया ॥ ६ ॥

सोकविकल द्वौ राजसमाजा ❀ रहा न ज्ञान न धीरज लाजा ॥ ७ ॥
भूप रूप गुन सील सराहीं ❀ सोचहिं सोकसिंधु अवगाहीं ॥ ८ ॥

दोनों राजसमाज शोकसे विकल होगये और उनको ज्ञान धीरज तथा लज्जा कुछ नहीं रही ॥ ७ ॥ राजा (दशरथ) के रूप, गुण, और शीलकी सराहना करते हुये ऐसे सोचते हैं मानों शोकरूपी गहरे समुद्रमें डुबकी लेते हैं ॥ ८ ॥

छं०-अवगाहिं सोकसमुद्र सोचहिं नारि नर व्याकुल महा ।
दै दोष सकल सरोष बोलहिं बामविधि कीन्हों कहा ॥
सुर सिद्ध तापस जोगिजन मुनिदसा देखि विदेहकी ।
तुलसी न समरथ कोउ जो तरि सकै सरित सनेहकी ॥ १० ॥

नर नारी बड़े दुखी हुये, शोकरूपी गहरे समुद्रमें स्नान कर सोचते हैं और संपूर्ण दोष देकर क्रोधसे कहते हैं, कि, वाम विधाताने क्या किया ! देवता, सिद्ध, तपस्वी, योगी लोग और मुनीश्वर जनककी दशा देखकर कोई समर्थ नहीं रहा जो प्रेमकी नदीको तर सकै ॥ १० ॥

सो०-किये असित उपदेस, जहँ तहँ लोगन्ह मुनिवरन्ह ॥
धीरज धरिय नरेस, कहेउ बसिष्ठ विदेहसन ॥ १० ॥

श्रेष्ठ मुनियोंने जहाँ तहाँ लोगोंको बहुतसे उपदेश किये और वसिष्ठजीने जनकसे कहा कि हे राजन् ! धीरज रखिये ॥ १० ॥

चौ०-जासु ज्ञानरवि भवनिसि नासा ❀ बचनकिरन मनकमल विकासा ॥ १ ॥
तेहि कि मोह ममता नियराई ❀ यह सिय राम सनेह बड़ाई ॥ २ ॥

जिसके ज्ञानरूपी सूर्यसे संसाररूपी रात्रि नाश होती है और वचनरूपी किरणोंसे मनरूपी कमल खिलते हैं ॥ १ ॥ उसके पास क्या अज्ञान और ममता आ सकते हैं ? (परन्तु) यह सीतारामचन्द्रजीके प्रेमकी महिमा है ॥ २ ॥

विषयी साधक सिद्ध सयाने ❀ त्रिविध जीव जग वेद बखाने ॥ ३ ॥
रामसनेह सरस मन जासू ❀ साधुसभा बड़ आदर तासू ॥ ४ ॥

संसारमें विषयी, साधन करनेवाले, और चतुर मुमुक्षु तीन भाँतिके जीव वेदोंने कहे हैं ॥ ३ ॥ परन्तु साधुओंके समाजमें बड़ा आदर उसीका है कि जिसका मन रामचन्द्रजीके प्रेममें सरस अर्थात् मगन हो रहा है ॥ ४ ॥

सोह न रामप्रेम बिनु ज्ञाना ❀ कर्णधार बिनु जिमि जलयाना ॥ ५ ॥
मुनि बहुविध विदेह समुझाए ❀ रामघाट सबलोग अन्हाए ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीके प्रेमके विना ज्ञानकी शोभा ऐसे नहीं होती जैसे विना केवटके नावकी ॥ ५ ॥ मुनीश्वरने जनकको बहुत भाँति समुझाया (फिर) सब लोगोंने रामघाटमें स्नान किया ॥ ६ ॥

सकल सोकसंकुल नरनारी ❀ सो वासर बीते बिनु बारी ॥ ७ ॥
पसु खग मृगन न कीन्ह अहारा ❀ प्रिय परिजनकर कवन बिचारा ॥ ८ ॥

शोकमें भरे हुये सब स्त्रीपुरुषोंको वह दिन विनाही जलपान किये बीतगया ॥ ७ ॥ पशु, पक्षी और हिरणोंनेभी भोजन नहीं किया, प्यारे और कुटुम्बियोंका तौ विचारही क्याथा ॥ ८ ॥

दो०-दोउ समाज मिल राजरघु, राज नहाने प्रात ॥
बैठे सब बटविटपतर, मन मलीन कृसगात ॥ २७० ॥

जनकराज और रघुराजकी दोनों समाजोंने मिलकर प्रातःकालही स्नान किया और सब मन मलीन तनछीन बड़के वृक्षके नीचे बैठे ॥ २७० ॥

चौ०-जे महिसुर दसरथपुरवासी ❀ जे मिथिलापतिनगरनिवासी ॥ १ ॥
हंसबंसगुरु जनकपुरोधा ❀ जिन्ह जग मग परमारथ सोधा ॥ २ ॥

जो ब्राह्मण अयोध्यापुरीके रहनेवाले और जो जनकपुरके रहनेवाले थे ॥१॥ सूर्यवंशके गुरु (वसिष्ठ) और जनकके पुरोहित (शतानन्द) जिन्होंने संसारका मार्ग और परमार्थ विचार किया था ॥ २ ॥

लगे कहन उपदेस अनेका ❀ सहित धर्म नय बिरति बिबेका ॥ ३ ॥
कौसिक कहि कहि कथा पुरानी ❀ समुझाई सब सभा सुबानी ॥ ४ ॥

वे धर्म, नीति, ज्ञान और वैराग्यसमेत अनेक उपदेश कहने लगे ॥ ३ ॥ विश्वामित्रने पुरानी कथा कह कहकर सुन्दर वाणीसे सव सभाको समझाया ॥ ४ ॥

तब रघुनाथ कौसिकहिं कहेऊ ❀ नाथ कालि जलबिनु सब रहेऊ ॥ ५ ॥
मुनि कह उचित कहत रघुराई ❀ गयउ बीति दिन पहर अढाई ॥ ६ ॥

तव रामचन्द्रजीने विश्वामित्रसे कहा, हे स्वामी ! कल सव निर्जलही रहे हैं ॥ ५ ॥ मुनिने कहा रामचन्द्र उचित कहते हैं, ढाई पहर दिन अवमी बीत गया है ॥ ६ ॥

ऋषिरुख लखि कह तिरहुतिराजू ❀ इहाँ उचित नहिं असन अनाजू ॥ ७ ॥
कहा भूप भल सबहि सोहाना ❀ पाइ रजायसु चले नहाना ॥ ८ ॥

ऋषिका रुख देख जनकने कहा कि, यहाँ अन्नका भोजन उचित नहीं है ॥ ७ ॥ राजाका अच्छा कहना सबको सुहाया और आज्ञा पाकर स्नान करने चले ॥ ८ ॥

दो०-तेहि अवसर फल फूल दल, मूल अनेक प्रकार ॥ ❀
लै आए बनचर बिपुल, भरि भरि काँवरि भार ॥ २७१ ॥ ❀

उस समय अनेक प्रकारके फल, फूल, पत्र और मूल वहुतसी काँमरोंमें भर २ कर वहुतसे वनके रहनेवाले ले आये ॥ २७१ ॥

चौ०-कामद भे गिरि रामप्रसादा ❀ अवलोकत अपहरत बिषादा ॥ १ ॥
सर सरिता बन भूमिबिभागा ❀ जनु उमगत आनँद अनुरागा ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीकी कृपासे (चित्रकूट) पर्वत मनोरथोंका देनेवाला हुआ और दर्शन करतेही दुःखको हरने लगा ॥ १ ॥ सरोवर, नदी, वन और पृथ्वीके भाग मानों प्रेम और आनन्दसे उमड़ते हैं॥२॥

बेलि बिटप सब सफल सफूला ❀ बोलत खग मृग अलि अनुकूला ॥ ३ ॥
तेहि अवसर बन अधिक उछाहू ❀ त्रिविध समीर सुखद सबकाहू ॥ ४ ॥

सव वेलि और वृक्ष फल फूलोंसे लदगये, खग, मृग, और भ्रमर सुन्दर बोलने और गुंजारने लगे ॥ ३ ॥ उस समय वनमें बड़ा आनन्द हुआ, तीन प्रकारकी (शीतल, मंद, सुगन्ध) पवन सब किसीको सुख देनेवाली चलने लगी ॥ ४ ॥

जाइ न बरनि मनोहरताई ❀ जनु महि करत जनकपहुनाई ॥ ५ ॥
तब सब लोग नहाइ नहाई ❀ राम जनक मुनि आयसु पाई ॥ ६ ॥

वहाँकी सुन्दरता वर्णन नहीं कीजाती मानों पृथ्वी स्वयं जनककी मिहमानी कर रही है ॥ ५ ॥ तव सव लोग स्नान कर २ के और रामचन्द्र जनक और मुनीश्वरकी आज्ञा पाकरके ॥ ६ ॥

देखि देखि तरुवर अनुरागे ❀ जहँ तहँ पुरजन उतरन लागे ॥ ७ ॥
दल फल फूल कंद बिधि नाना ❀ पावन सुंदर सुधासमाना ॥ ८ ॥

सुन्दर वृक्षोंको देख २ कर प्रसन्न हुये और जहाँ तहाँ नगरके लोग उतरने लगे ॥ ७ ॥ अनेक भाँतिके पवित्र और अमृतसमान सुन्दर कंद मूल फल पुष्प और पत्र- ॥ ८ ॥

प० इन्द्र विद्या वाचस्पति प्रदत्त संग्रह

दो०-सादर सबकहँ रामगुरु, पठए भरि भरि भार ॥ ❀
पूजि पितर सुर गुरु अतिथि, लगे करन फलहार ॥ २७२ ॥ ❀

रामचन्द्रजीके गुरु (वसिष्ठ) ने आदरसहित बहुतसे भार भर २ कर सबके पास भेजे, और सब लोग, पितर, देवता, गुरु, अतिथिका पूजन कर फलाहार करने लगे ॥ २७२ ॥

चौ०-इहिबिधि बासर बीते चारी ❀ राम निरखि नर नारि सुखारी ॥ १ ॥
दुहुँ समाज अस रुचि मनमाहीं ❀ बिन सिय राम फिरब भल नाहीं ॥ २ ॥

इस प्रकार चार दिन बीतगये और रामचन्द्रको देखकर स्त्री पुरुष प्रसन्न होते हैं ॥ १ ॥ दोनों समाजोंके मनमें ऐसी इच्छा है कि, सीता रामचन्द्रके विना लौटना अच्छा नहीं ॥ २ ॥

सीता राम संग बनबासू ❀ कोटि अमरपुरसरिस सुपासू ॥ ३ ॥
परिहरि लषन राम बैदेही ❀ जेहि घर भाव बाम बिधि तेही ॥ ४ ॥

सीता रामचन्द्रजीके साथ वनके रहनेमें करोड़ों इन्द्रलोकोंके समान आनन्द है ॥ ३ ॥ और जिसे राम लक्ष्मण सीताजीको छोड़ घर अच्छा लगै उससे विधाता टेढ़ा समझो ॥ ४ ॥

दाहिन दैव होइ जब सबहीं ❀ रामसमीप बसिय बन तबहीं ॥ ५ ॥
मंदाकिनिमज्जन तिहुँ काला ❀ रामदरस मुदमंगलमाला ॥ ६ ॥

ब्रह्मा तबही सबको दाहिना हो कि जब रामचन्द्रजीके पास वनमें रहैं ॥ ५ ॥ तीनों समय मंदाकिनीका स्नान और रामचन्द्रजीका दर्शन होगा, जो आनन्द मंगलका समूह है ॥ ६ ॥

अटन रामगिरि बन तापसथल ❀ असन अमियसम कंद मूल फल ॥ ७ ॥
सुखसमेत संवत दुइसाता ❀ पलसम होहिं न जानिय जाता ॥ ८ ॥

चित्रकूट, वन और तपस्वियोंके आश्रममें विचरना और अमृतके समान कन्द मूल फल भोजन करना ॥ ७ ॥ सुखसे चौदह वर्ष पलके बराबर हो जायँगे और जाते हुये जानेभी न जायँगे ॥ ८ ॥

दो०-यहि सुखयोग न लोग सब, कहहिं कहाँ अस भाग ॥ ❀
सहजसुभाव समाज दुहुँ, रामचरनअनुराग ॥ २७३ ॥ ❀

सब लोग कहते हैं कि इस सुखके योग्य हम नहीं ऐसे (हमारे) भाग्य कहां हैं? साधारण स्वभावसे दोनों समाजोंकी प्रीति रामचन्द्रजीके चरणोंमें है ॥ २७३ ॥

चौ०-इहिबिधि सकल मनोरथकरहीं ❀ वचन सप्रेम सुनत मन हरेहीं ॥ १ ॥
सीयमातु तेहि समय पठाईं ❀ दासी देखि सुअवसर आईं ॥ २ ॥

इसभाँति सब इच्छा करते हैं. (उनके) प्रेमके वचन सुनतेही मनको हरते हैं ॥ १ ॥ (उस समय) सीताजीकी माताकी भेजी हुई दासी (कौशल्यादिसे मिलनेका) सुन्दर समय देखकर आई ॥ २ ॥

सावकास सुनि सब सियसासू ❀ आयउ जनकराजरनिवासू ॥ ३ ॥
कौसल्या सादर सनमानी ❀ आसन दीन्ह समय सम जानी ॥ ४ ॥

सब (सीताजीकी) सासुओंका अवकाश सुनकर जनक राजाका रनिवास वहाँ आया ॥ ३ ॥ कौशल्याने आदरसहित सत्कार किया और समयके अनुसार सबको आसन दिया ॥ ४ ॥

सील सनेह सरस दुहुँ ओरा ❀ द्रवहिं देखि सुनि कुलिस कठोरा ॥ ५ ॥
पुलक सिथिल तनु वारि बिलोचन ❀ महि नख लिखन लगीं सब सोचन ॥ ६ ॥

दोनों तरफसे रसभरे शील और प्रेमको देख सुनकर कठिन वज्रभी पसीजते हैं ॥ ५ ॥ शरीर पुलकायमान हो शिथिल होगया, नेत्रोंमें जल आगया, सब पृथ्वीपर नखोंसे लिखने और सोचने लगीं ॥ ६ ॥

सब सिय राम प्रेमकी मूरति ❀ जनु करुना बहु वेष बिसूरति ॥ ७ ॥
सीयमातु कह विधिबुधि बाँकी ❀ जो पयफेनु फोर पविटाँकी ॥ ८ ॥

सब सीता रामचन्द्रजीके स्नेहकी मूर्त्ति हैं, और ऐसा मालूम होता है मानों करुणाही बहुतसे वेष धारण किये मन मलीन बैठी हो ॥ ७ ॥ सीताजीकी माताने कहा, ब्रह्माकी बुद्धि बड़ी बाँकी है, जो दूधके झागोंको वज्रकी टांकीसे तोड़ा यहां सीताराम दूधके झागोंके समान हैं और उनका बनोवास होना यहीं वज्रकी टांकीसे तोड़ना है ॥ ८ ॥

दो०-सुनिय सुधा देखिय गरल, सब करतूति कराल ॥ ❀
जहँ तहँ काक उलूक बक, मानस सकृत मराल ॥ २७४ ॥ ❀

विधाताकी सब करतूत बड़ी बाँकी है कि अमृत तौ सुना जाता है और विष देखनेमें आता है जहाँ तहाँ काक उलूक और बगले तौ दीखते हैं पर हंस अकेले मानससरोवरपरही सुने जाते हैं ॥२७४॥

चौ०-सुनि ससोच कह देवि सुमित्रा ❀ विधिगति अति विपरीत विचित्रा ॥ १ ॥
जो सृजि पालै हरिय बहोरी ❀ बाल केलिसम विधि मति भोरी ॥ २ ॥

(सुनयनाके वचन) सुनकर सुमित्राने शोकसे कहा हे रानी ! ब्रह्माकी गति बड़ी उलटी और विचित्र है ॥ १ ॥ जो उत्पन्न करता पालता और फिर नाश करता है सो विधाताकी मति बालकोंके खेलके समान भोली है ॥ २ ॥

कौसल्या कह दोष न काहू ❀ करमबिबस दुख सुख छति लाहू ॥ ३ ॥
कठिन करमगति जान विधाता ❀ जो सुभ असुभ करम फलदाता ॥ ४ ॥

कौशल्याने कहा किसीका दोष नहीं सुख दुःख हानि और लाभ कर्मके आधीन होते हैं ॥ ३ ॥ और कठिन कर्मकी गतिको विधाता जानता है जो भले बुरे कर्मोंके फलका देनेवाला हैं (और वह भोगना पड़ता है यथा "अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्") ॥ ४ ॥

ईसरजाइ सीस सबहीके ❀ उतपति थिति लय विषहु अमीके ॥५॥
देवि मोहबस सोचिय वादी ❀ विधि प्रपंच अस अचल अनादी ॥ ६ ॥

परमेश्वरकी जो आज्ञा है सो उत्पत्ति पालन और नाश तथा विष और अमृत इन सबके माथेपर है, अर्थात् जो कार्य होता है सो ईश्वरकी आज्ञासे होता है ॥ ५ ॥ हे रानी ! अज्ञानके वश सोच करना वृथा है, क्योंकि ब्रह्माका प्रपंच[2] अनादिसे ऐसाही चला आता है ॥ ६ ॥

भूपति जियब मरब उर आनी ❀ सोचिय सखि लखि निजहित हानी ॥७॥
सीयमात कह सत्य सुबानी ❀ सुकृती अवधि अवधपतिरानी ॥ ८ ॥

---

(१) इस दोहेका यह भाव है सो समझो. सुनयना कहती है कि विधाताको क्या करना था और क्या कर दिया–अमृतके समान सुना तौ यह था कि रामचन्द्रको राजगद्दी होगी पर विषके समान बनवास देखनेमें आया. अथवा कैकेयी और रामजीकी प्रीति अमृतके समान सुनीथी परंतु देखनेमें विरोधरूपी विष निकला; और अवधको मानससरोवरके समान और वहांके रहनेवालोंको हंसके समान सुना था, सो बात न निकली । जहां तहां काक उलूक और बगलोंके समान लोगोंको देखा; हंस तो सकृत कहिये एक देखा । यहां हंससे तात्पर्य भरतजीसे है. जैसा कहा है कि–भरत हंस रविवंस तड़ागा । जनमि कीन्ह गुनदोषविभागा ॥

और काक, उल्लू और बगलेके अवगुण कैकेयी मन्थरा आदिमें लगाये हैं ॥

(२) जैसा गीतामें कहा है कि–"जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च । तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि" अर्थात् उत्पन्नकी मृत्यु और मरेहुएका जन्म अवश्य होगा, इसलिए इस परिहाररहित विषयमें क्यों शोच करते हो ॥

जब राजाके मरने जीनेकी हृदयमें याद आती है तौ हे सखी! अपनी हानि और लाभको देख शोच होता है (क्योंकि जो रोता है वह अपने सुख-दुःखको रोता है) ॥ ७ ॥ सीताजीकी माताने कहा रानी! तुझारी सुन्दर बाणी सत्य है; अयोध्याके पति (राजा दशरथ) तौ पुण्योंकी सीमा थे ॥८॥

दो०-लषन राम सिय जाहिं बन, भल परिनाम न पोच ॥ ❀
गहवरि हिय कह कौसला, मोहिं भरतकर सोच ॥ २७५ ॥ ❀

कौशल्याने हृदयमें घबराकर कहा कि लक्ष्मण रामचन्द्र सीताजी बनको जावें तौ अंतमें अच्छाही है, बुरा नहीं परन्तु मुझे भरतका बड़ा शोच है कि (रामजीका विरह भरत सह सकेंगे वा नहीं)॥२७५॥

चौ०-ईसप्रसाद असीस तुम्हारी ❀ सुत सुतवधू देवसरि वारी ॥ १ ॥
रामसपथ मैं कीन्ह न काऊ ❀ सो करि सखी कहौं सतिभाऊ ॥ २ ॥

महादेवकी कृपा और तुह्मारे आशीर्वादसे पुत्र और पुत्रोंकी वहू गंगाजलके समान निर्मल हैं॥१॥ हे सखी! रामचन्द्रकी सौगंद मैंने कभी नहीं खाई, वहभी खाकरके सच्चे भावसे कहती हूँ कि॥२॥

भरतसील गुनबिनय बड़ाई ❀ भायप भक्ति भरोस भलाई ॥ ३ ॥
कहत सारदहु कै मति हीचे ❀ सागर सीप कि जाहिं उलीचे ॥ ४ ॥

भरतके शील गुण नम्रता बड़ाई भाईपनकी भक्ति भरोसा और भलाई॥ ३ ॥ कहतेमें सरस्वतीकीभी बुद्धि हिचकती है, भला कहीं समुद्रभी सीपसे उलीचे जा सक्ते हैं ॥ ४ ॥

जानौ सदा भरत कुलदीपा ❀ बारबार मोहिं कहेउ महीपा ॥ ५ ॥
कसे कनक मनि पारिष पाए ❀ पुरुष परखिये समय सुभाए ॥ ६ ॥

राजाभी मुझसे वारंवार कहा करते थे कि भरतको सदा कुलका दीपक जानो ॥५॥ सुवर्णकी कसौटीपर लगानेसे, मणिकी परखैयेके हाथमें जानेसे, और मनुष्यकी परीक्षा, समय पड़नेपर होती है ६॥

अनुचित आजु कहब अस मोरा ❀ सोक सनेह सयानप थोरा ॥ ७ ॥
सुनि सुरसरिसम पावन बानी ❀ भईं सनेहबिकल सब रानी ॥ ८ ॥

आज मुझे ऐसा कहनाभी अनुचित नहीं है क्योंकि शोक और सनेहसे मुझमें थोड़ी चतुराई है ॥ ७ ॥ गंगाजीके समान पवित्र वाणी सुनकर सब रानियां प्रेममें व्याकुल होगईं ॥ ८ ॥

दो०-कौसल्या कह धीर धरि, सुनहु देवि मिथिलेसि ॥ ❀
को बिवेक निधि वल्लभहि, तुमहिं सकै उपदेसि ॥ २७६ ॥ ❀

(फिर) कौशल्याने धीरज धरकर कहा हे रानी! सुनयना सुनो! तुम तौ ज्ञानके समुद्र (जनक) की प्यारी हो, तुमको कौन उपदेश करसक्ता है ॥ २७६ ॥

चौ०-रानि रायसन अवसर पाई ❀ आपनि भाँति कहब समुझाई ॥ १ ॥
राखिय लषन भरत गवनहिं बन ❀ जो यह मत मानै महीपमन ॥ २ ॥

हे रानी! राजासे समय पाकर अपनी ओरसे समझाकर कहना कि ॥ १ ॥ लक्ष्मणजीको रखिये, भरत बनको चले जायँगे; जो राजाका मन इस मतको मानजाय ॥ २ ॥

तो भल जतन करब सुबिचारी ❀ मोरे सोच भरतकर भारी ॥ ३ ॥
गूढ सनेह भरत मनमाहीं ❀ रहे नीक मोहिं लागत नाहीं ॥ ४ ॥

तौ अच्छीभाँति विचारकर यह सुन्दर उपाय करो, क्योंकि मुझे भरतका वड़ा शोच है ॥ ३ ॥ भरतके मनमें भीतरा स्नेह है सो उनका रहना मुझे अच्छा नहीं लगता है ॥ ४ ॥

लखि स्वभाव सुनि सरल सुबानी ❀ सब भइँ मगन करुनरस सानी ॥ ५ ॥
नभप्रसून झरि धन्य धन्य धुनि ❀ सिथिल सनेह सिद्ध जोगी मुनि ॥ ६ ॥

स्वभावको देख और सीधी सुन्दरवाणी सुनकर सब मगन होगईं ॥ ५ ॥ आकाशमेंसे फूलोंकी वर्षा और धन्य २ शब्द होने लगा. और सिद्ध, योगी और मुनीश्वर प्रेममें शिथिल होगये ॥ ६ ॥

सब रनिवास थकित लखि रहेऊ ❀ तब धरि धीर सुमित्रा कहेऊ ॥ ७ ॥
देवि दंडजुग जामिनि बीती ❀ राममातु सुनि उठी सप्रीती ॥ ८ ॥

सब रनिवास थकित हो देखताही रहगया, तब सुमित्राने धीरज धरकर कहा ॥ ७ ॥ हे रानी ! दो पहर रात बीतगई यह सुनकर रामचन्द्रजीकी माता (कौशल्या) प्रेमसहित उठी ॥ ८ ॥

दो०–बेगि पाँय धारिय थलहि, कहि सनेह सतिभाय ॥ ❀
हमरे तो अब ईसगति, कै सिथिलेस सहाय ॥ २७७ ॥ ❀

और प्रेमसहित सच्चे भावसे कहा कि डेरेको शीघ्र पधारिये, हमारे तो अब महादेवका भरोसा है या (राजा) जनक सहायक हैं ॥ २७७ ॥

चौ०–लखि सनेह सुनि बचन बिनीता ❀ जनकप्रिया गहि पाँव पुनीता ॥ १ ॥
देवि उचित अस विनय तुम्हारी ❀ दसरथघरनि राममहतारी ॥ २ ॥

सनेहको देख और नीतिसहित वचन सुनकर जनककी प्यारी सुनयना (उनके) पवित्र चरणोंको पकड़ (बोली) ॥ १ ॥ हे रानी ! तुह्मारी ऐसी विनती उचितही है, क्योंकि तुम राजा दशरथकी घरवाली और रामजीकी माता हो ॥ २ ॥

प्रभु अपने नीचहुँ आदरहीं ❀ अग्नि धूम गिरि सिर तृन धरहीं ॥ ३ ॥
सेवक राउ कर्म मन बानी ❀ सदा सहाय महेस भवानी ॥ ४ ॥

बड़े लोग अपनेसे नीचकोभी आदर देते हैं (देखो) अग्नि धुंयेको और पर्वत तृण कहिये तुनकोंको शिरपर रखते हैं ॥ ३ ॥ राजा (जनक) मन वचन और कर्मसे (आपके) सेवक हैं और सहायक तौ आपके सदा महादेव पार्वतीही हैं ॥ ४ ॥

रौरे अंग जोग जग कोहै ❀ दीप सहाय कि दिनकर सोहै ॥ ५ ॥
राम जाइ वन करि सुरकाजू ❀ अचल अवधपुर करिहहिं राजू ॥ ६ ॥

आपकेसमान जगत्में कौन है ! भला कहीं दीपककी सहायतासे सूर्यभी शोभा पाता है ॥५॥ रामचन्द्रजी वनमें जाकर और देवताओंका कामकर अयोध्यापुरीमें अटल राज्य करेंगे ॥ ६ ॥

अमर नाग नर रामबाहुबल ❀ सुख बसिहहिं अपने अपने थल ॥ ७ ॥
यह सब याज्ञवल्क्य कहि राखा ❀ देवि न होइ मृषा मुनिभाषा ॥ ८ ॥

देवता, सर्प और मनुष्य रामचन्द्रजीकी भुजाओंके बलसे अपनी २ जगह आनन्दसे रहेंगे ॥७॥ यह सब याज्ञवल्क्यने कह रक्खा है। हे रानी ! मुनिका कहना झूंठ नहीं हो सकता ॥ ८ ॥

दो०–अस कहि पद परि प्रेम अति, सिय हित विनय सुनाइ ॥ ❀
सिय समेत सियमातु तब, चली सुआयसु पाइ ॥ २७८ ॥ ❀

ऐसे कहकर (सुनयनाने कौशल्याके) चरनोंमें गिरकर बड़े प्रेमसे सीताजीके ले जानेके लिये विनती करी (कि तुह्मारी आज्ञा हो तो संग ले जाऊं); तब सुन्दर आज्ञा पाकर सीतासमेत सीताकी माता (अपने डेरेको) चली ॥ २७८ ॥

---

(१) फूलोंकी वर्षा इसलिये करी कि वे कौशल्याके मनकी वात जान गये कि रामवनवास उन्हें पसन्द है ॥

चौ०–प्रिय परिजनहिं मिली बैदेही ❀ जो जेहिजोग भाँति तस तेही ॥ १ ॥
तापसवेष जानकिहिं देखी ❀ भे सब बिकल बिषाद बिसेषी ॥ २ ॥

सीताजी प्यारे कुटुम्बियोंसे जो जिसभांति (मिलने) योग्य था उससे वैसेही मिलीं ॥ १ ॥ सीताजीको तपस्विनीके वेषमें देख सब बहुत दुःखसे विकल हुए ॥ २ ॥

जनक रामगुरु आयसु पाई ❀ चले थलहि सिय देखी आई ॥ ३ ॥
लीन्हि लाइ उर जनक जानकी ❀ पाहुनि पावनि प्रेमप्रानकी ॥ ४ ॥

जनक, रामचन्द्रके गुरु (वसिष्ठजी) की आज्ञा पाकर डेरेको चले और आकर सीताजी देखीं ॥ ३ ॥ राजा जनकने सच्चे प्रेम और प्राणोंकी पाहुनी सीताजीको छातीसे लगा लिया ॥ ४ ॥

उर उमगेउ अंबुधि अनुरागू ❀ भयउ भूपमन मनहुँ प्रयागू ॥ ५ ॥
सियसनेह वट बाढ़त जोहा ❀ तापर रामप्रेम सिसु सोहा ॥ ६ ॥

हृदयमें प्रेमका समुद्र उमड़ा मानों राजाका मन प्रयाग[1] होगया ॥ ५ ॥ और सीताजीका स्नेह मानों वटवृक्ष[2] है, उसको वढ़ते हुये देखा और उसपर रामचन्द्रजीका स्नेह बालकके समान शोभित हो रहा है ॥ ६ ॥

चिरंजीवि मुनि ज्ञान विकल जनु ❀ बूड़त लहेउ बाल अवलंबनु ॥ ७ ॥
मोहमगन मति नहिं विदेहकी ❀ महिमा सियरघुवरसनेहकी ॥ ८ ॥

तौ राजाके ज्ञानरूपी डूबते हुए मार्कंडेय[3] मुनिने बालकरूप (भगवान्)का सहारा लिया ॥ ७ ॥ और राजा जनककी मति कुछ मोहमें मगन नहीं होनेपाई; यह तौ केवल सीता रामचन्द्रके प्रेमकी महिमा है ॥ ८ ॥

---

(१) प्रयाग कहनेसे यह तात्पर्य है कि जब प्रलय होता है तवभी प्रयागका नाश नहीं होता है,(२)इन चौपाइयोंका यह भाव है कि जैसे मुनिने समुद्रमें डूवते समय वालस्वरूप भगवान्का सहारा लियाथा ऐसेही रामजीकी मायासे राजाका ज्ञान प्रेमके समुद्रमें डूवनेको था, परंतु त्योंही सीताजीका स्नेह जो वटके समान था उसपर वालकस्वरूप रामजीका स्नेह देखकर राजाका ज्ञान जो मानों मार्कंडेय था सहारा लेकर वच गया. यदि राजाको यह दीखता कि रामका स्नेह सीताजीपर नहीं है तौ फिर सीताजीको देखकर ज्ञान नष्ट हो जाता और महाशोकसागरमें डूवते; पर रामजीको सीताका रक्षक जान राजाका ज्ञान स्थिर रहा। सोही आगेकी चौपाईमें कहते हैं कि राजा ज्ञान अज्ञानमें मगन न होने पाया; जैसा मार्कंडेयजीको भगवानकी मायाका परिचय मिला था सोही हाल जनकजीके ज्ञानका हुआ, यही तात्पर्य दीखता है. (३) एक समय मार्कंडेयमुनिने भगवानकी वड़ी तपस्या करी। तव भगवान्ने प्रसन्न होकर कहा कि वर माँगो। ऋषिने वर माँगा कि हमको अपनी माया दिखाओ। इस वातपर भगवान् हँसे और वर देकर वदरिकाश्रमको चले गये। फिर एक दिन संध्यासमय पुष्पभद्रानदीके तटपर मुनीश्वरके आगे पवन चलने लगी, विजली दमकने लगी और मूसलधारा मेघ घुमड़ २ कर वरसने लगा, और मुनिने देखा कि समुद्र पृथ्वीको वोरता हुआ चला आता है और जव समुद्रने पर्वतसमेत सव पृथ्वीको डुवादिया और त्रिलोकी जलमई होगई तव तौ अकेले मुनि अपनी जटाओंको फैलाये अंधेके समान जलमें तैरे २ फिरने लगे और अनेक दुःख सहते २ हजारों वर्ष बीतगये। फिर मुनिने एक वटवृक्षको जलमय देखा और उसके ऊपर चढ़गये। वहां एक पत्रपर एक बालकको सोते हुये देखा कि जो अपने पैरके अंगूठेको अपने हाथद्वारा मुखमें दे रहा है ॥ उनके दर्शनसे प्रसन्न होकर मुनिने उनकेपास जाकर सहारा लिया और उस बालकके श्वासकेद्वारा उसके उदरमें मच्छरकी भाँति घुस गये और वहाँ संसारके अनोखे चरित्र हिमालय पुष्पभद्रानदी अपना आश्रम और अपने साथके ऋषि आदिको देख फिर देखकर बालकके उदरसे श्वासकेद्वारा समुद्रमें जा पड़े और वटके पत्रपर फिर बालकको सोता हुआ देखा और ज्योंही उसके पास जाँय त्योंही ऋषिके देखते २ भगवान् अंतर्धान होगये, वटवृक्ष लोप हो गया, जल जाता रहा और ऋषि पहिलेकी तरह स्थित हो गये–यह कथा भागवतके द्वादशस्कंधके नवें अध्यायमें है ॥

दो०–सिय पितुमातुसनेयवस, विकल न सके सँभारि ॥
धरनिसुता धीरज धरेउ, समय सुधर्म विचारि ॥ २७९ ॥

सीताजीके पिता माता प्रेमके वश विकलताको न सम्हाल सके तौ जानकीजीने श्रेष्ठ धर्म और समयको विचारके धीरज धरा ॥ २७९ ॥

चौ०–तापसवेष जनक सिय देखी ❀ भयउ प्रेमपरितोष बिसेषी ॥ १ ॥
पुत्रि पवित्र किए कुल दोऊ ❀ सुजस धवल जग कह सब कोऊ ॥ २ ॥

जनकने सीताजीको तपस्विनीके वेषमें देखा तौ मनमें बड़ा प्रेम और संतोष हुआ (इसलिये कि) इसने रामजीका संग देकर पतिव्रतधर्म पाला ॥ १ ॥ (और बोले) हे पुत्री ! (तुमने) दोनों कुल पवित्र कर दिये, संसारमें (तुम्हारे) उज्ज्वल यशको सब कोई सुन्दर कहैगा ॥ २ ॥

जिमि सुरसरिकीरति सरि तोरी ❀ गवन कीन्ह विधिअंड करोरी ॥ ३ ॥
गंग अवनि थल तीनि बडेरे ❀ इहि किए साधुसमाज घनेरे ॥ ४ ॥

जैसे गंगाजीकी कीर्त्ति है ऐसेही तेरी कीर्त्तिरूपी नदीने करोड़ों ब्रह्मांडोंमें गमन किया ॥ ३ ॥ गंगाजीने पृथ्वीपर (गंगोत्री हरिद्वार और प्रयाग) इन तीन स्थानोंको बड़ा किया है, और इस (तुह्मारी कीर्त्तिने) साधुओंके बहुतसे समाजोंको बड़ा किया है ॥ ४ ॥

पितुकह सत्य सनेह सुबानी ❀ सीय सकुच महँ मनहुँ समानी ॥ ५ ॥
पुनि पितु मातु लीन्ह उरलाई ❀ सिख असीस हित दीन्हि सुहाई ॥ ६ ॥

पिताने प्रेमसे सत्य और सुन्दर वाणी कही तौ (सुनतेही) मानों सीताजी सकुचमें समागई ॥५॥ फिर पिता माताने छातीसे लगालिया और कल्याणकी शिक्षा और सुन्दर आशीर्वाद दिया॥६॥

कहति न सीय सकुचि मनमाहीं ❀ इहाँ बसब रजनी भल नाहीं ॥ ७ ॥
लखि रुख रानि जनायउ राऊ ❀ हृदय सराहत सील सुभाऊ ॥ ८ ॥

सीताजी कह नहीं सकतीं पर मनमें सकुच है कि यहां रातको रहना अच्छा नहीं ॥ ७ ॥ (तब उनका) रुख देख रानीने राजाको जता दिया तौ (राजा) मनमें (सीताके) शील स्वभावकी सराहना करने लगे ॥ ८ ॥

दो०–बार बार मिलि भेटि सिय, बिदा कीन्ह सनमानि ॥
कही समय सम भरतगति, रानि सुबानि सयानि ॥ २८० ॥

वारंवार सीताजीसे मिल भेट और सत्कार करके उन्हैं विदा किया; फिर चतुर रानीने समयके अनुसार मीठी वाणीसे (कौशल्याकी कही हुई) भरतजीकी दशा राजासे कही ॥ २८० ॥

चौ०–सुनि भूपाल भरतव्यवहारू ❀ स्वरन सुगंध सुधाससि सारू ॥ १ ॥
मूँदे सजलनयन पुलकेतन ❀ सुजस सराहन लगे मुदित मन ॥ २ ॥

राजा जनकने भरतजीके व्यवहारको सुनकर सोनी और सुगन्ध तथा चन्द्रमाका साररूप जो

---

(१) सोना और सुगन्धके कहनेका यह मतलब है कि उत्तम और एक अति उत्तम–सोनेको जितना २ तपाओ उतनाही उत्तम निकलता है, पर उसमें सुगन्ध नहीं होती है; और अगर हो तौ क्याही बात ? सोही कहते हैं कि भरतजीका व्यवहार सोनेके समान पाया, अर्थात् ज्यों २ परखा गया त्यों २ उत्तमोत्तम निकला। और इस व्यवहारमें सुगन्ध क्या हुई कि अच्छे व्यवहारसे जो यश फैला वही इस व्यवहाररूपी सोनेमें सुगन्ध हुई, और चंद्रमाका सार कहिये तत्त्वरूप जो अमृत है उसके समान भरतका व्यवहार सर्व साधारणको आनन्दायक हुआ ॥

अमृत है इन दोनोंके समान जाना ॥ १ ॥ जल भरे नैन मूंद लिये और शरीर पुलकायमान हो गया और प्रसन्न मनसे सुन्दर कीर्त्तिकी सराहना करने लगे ॥ २ ॥

सावधान सुनु सुमुखि सुलोचनि ❀ भरतकथा भवबंधविमोचनि ॥ ३ ॥
धरमराजनय ब्रह्म बिचारू ❀ इहाँ जथामति मोर प्रचारू ॥ ४ ॥

हे सुन्दर मुख और सुन्दर नेत्रवाली ! सावधान होकर सुन; भरतकी कथा संसारके बंधनोंको काटनेवाली है ॥ ३ ॥ धर्मशास्त्र राजनीति और ब्रह्मका विचार कहिये वेदान्तशास्त्र इनमें मेरी बुद्धिका जैसा प्रचार है अर्थात् है इनमें जैसी मेरी बुद्धि काम करती है ॥ ४ ॥

सो मति मोरि भरत महिमाहीं ❀ कहौं काह छल छुअति न छाहीं ॥ ५ ॥
बिधिगनपति अहिपति सिवसारद ❀ कवि कोविद बुध बुद्धि बिसारद ॥ ६ ॥

वही मेरी समझ, भरतकी महिमाको क्या कहूँ (वर्णन करना तौ एक ओर रहा), छल करके उसकी छायाकोभी नहीं छूसकती ॥ ५ ॥ ब्रह्मा, गणेश, शेष, महेश, सरस्वती, कवीश्वर, पंडित, बुद्धिमान और चतुर समझनेवाले इनको ॥ ६ ॥

भरतचरित कीरति करतूती ❀ धरम सील गुन बिमल बिभूती ॥ ७ ॥
समुझत सुनत सुखद सबकाहू ❀ सुचि सुरसरि रुचि निदरि सुधाहू ॥८॥

भरतके चरित्र, यश, करतूत, धर्म, स्वभाव, गुण और निर्मल विभूति ॥ ७ ॥ ये समझने और सुननेमें सब किसीको सुखदाई हैं और इनकी पवित्रता गंगाजीके समान और रुचि अमृतकीभी निन्दा करनेवाली है ॥ ८ ॥

दो०-निरबधिगुन निरुपम पुरुष, भरत भरत सम जानि ॥ ❀
कहिय सुमेरु कि सेरसम, कविकुलमति सकुचानि ॥ २८१ ॥ ❀

जिनके गुणोंकी सीमा नहीं और जिनकी उपमाका कोई पुरुष नहीं ऐसे भरतको भरतहीके समान जानकर कवीश्वरोंकी मति ऐसे सकुचागई कि जैसे सुमेरु पर्वतको (तोलनेके) सेरके समान कहतेमें सकुचावै ॥ २८१ ॥

चौ०-अगम सबहिं बरनत बर बरनी ❀ जिमि जलहीन मीनगन धरनी ॥ १ ॥
भरत अमित महिमा सुनु रानी ❀ जानहिं राम न सकहिं बखानी ॥ २ ॥

(भरतकी) मनहरन कथा वर्णन करना सभीको ऐसा कठिन है जैसे जलहीन भूमिमें मछलियोंके समूहका चलना कठिन है ॥ १ ॥ हे रानी ! सुनो, भरतकी असीम बड़ाईको रामचन्द्र जानते हैं (परन्तु वर्णन नहीं करसक्ते) ॥ २ ॥

बरनि सप्रेम भरत सतभाऊ ❀ तिय जियकी रुचि लखि कह राऊ ॥३॥
बहुरहिं लषन भरत वन जाहीं ❀ सबकर भल सबके मनमाहीं ॥ ४ ॥

इस प्रकार प्रेमसमेत भरतके सीधे भावको वर्णनकर स्त्रीके हृदयकी रुचि देख राजा कहने लगे कि ॥३॥ लक्ष्मणजी लौटें और भरत वनको जायँ तौ सबका भला है और सबके मनमेंभी है ॥४॥

देवि परंतु भरत रघुवरकी ❀ प्रीति प्रतीति जाइ नहिं तरकी ॥ ५ ॥
भरत अवधि सनेह ममताके ❀ यद्यपि राम सींव समताके ॥ ६ ॥

परन्तु हे रानी ! रामचन्द्र और भरतकी प्रीति और प्रतीतिमें तर्क नहीं होसकता, अर्थात् कितनी और कैसी है ॥ ५ ॥ यद्यपि भरत प्रेम और ममताकी सीमा हैं अर्थात् इनसे बढ़कर राममें किसीका प्रेम और ममता नहीं और रामचन्द्रके (प्रेम और ममताकी) सीमाभी उसीके समान है, अर्थात् कुछ कमती नहीं है ॥ ६ ॥

परमारथ स्वारथ सुखसारे ❀ भरत न सपनेहुँ मनहुँ निहारे ॥ ७ ॥
साधन सिद्ध रामपद नेहू ❀ मोहिं लखिपरत भरतमत एहू ॥ ८ ॥

परन्तु भरतजीने तौ परमार्थ और स्वार्थके संपूर्ण सुख स्वप्नेमेंभी नहीं देखे (वे तौ सदा रामचन्द्रकी ही आज्ञामें रहे हैं) ॥७॥ और रामके चरणोंमें स्नेह करनेसे सब काम सिद्ध होते हैं सो मुझे भरतका भी यही मत दीख पड़ता है, अर्थात् राममें प्रेमके कारणही इनके सब साधन होते चले जाते हैं ॥८॥

दो०-भोरेहुँ भरत न पेलिहहिं, मनसहँ रामरजाइ ॥ ❀
करिय न सोच सनेहवस, कहेउ भूप बिलखाइ ॥ २८२ ॥ ❀

फिर राजाने दुखी होकर कहा कि, (हे रानी !) प्रेमके वश सोच मत करो. भरत भूल कर भी मनसे रामचन्द्रजीकी आज्ञाको नहीं टालेंगे ॥ २८२ ॥

चौ०-राम भरत गुनगुन तस प्रीती ❀ निसि दंपतिहिं पलकसम बीती ॥ १ ॥
राजसमाज प्रात जुग जागे ❀ न्हाइ न्हाइ सुरपूजन लागे ॥ २ ॥

रामचन्द्र और भरतका जैसा गुणोंका समूह और प्रेम था (उसे कहते हुये) राजा रानीको वह रात पलकके बराबर बीतगई ॥१॥ दोनों राजसमाज सवेरेही जगे और स्नानकरके देवताओंको पूजने लगे ॥२

गे नहाइ गुरुपहँ रघुराई ❀ बंदि चरन बोले रुख पाई ॥ ३ ॥
नाथ भरत पुरजन महतारी ❀ सोकविकल बनबास दुखारी ॥ ४ ॥

रामचन्द्रजी स्नान करके गुरुके पास गये और चरणोंको दंडवतकर उनका रुख पाकर बोले-॥३॥ हे स्वामी ! भरत, नगरके लोग और माता शोकसे व्याकुल और वनके रहनेमें दुखी हो रहे हैं ॥४॥

सहित समाज राउ मिथिलेसू ❀ बहुत दिवस भे सहत कलेसू ॥ ५ ॥
उचित होइ सो कीजिय नाथा ❀ हित सबहीकर रौरेहाथा ॥ ६ ॥

समाजसमेत राजा जनककोभी दुःख सहते हुये बहुत दिन बीतगये ॥ ५ ॥ सो हे स्वामी ! जो उचित हो वही कीजिये, क्योंकि सबका भला आपहीके हाथ है ॥ ६ ॥

असकहि अति सकुचे रघुराऊ ❀ मुनि पुलके लखि सील सुभाऊ ॥ ७ ॥
तुम बिनु राम सकल सुखसाजा ❀ नरकसरिस दुहुँ राजसमाजा ॥ ८ ॥

ऐसे कहकर रामचन्द्र बहुत सकुचे तौ मुनीश्वर (उनका) शील, स्वभाव देखकर पुलकायमान हुये ॥७॥ हे रामचन्द्र ! तुह्मारेविना, सब सुखके साज दोनों राजसमाजोंको नरकके बराबर हैं ॥८॥

दो०-प्रान प्रानके जीयके, जिय सुखके सुख राम ॥ ❀
तुम तजि तात सोहात गृह, जिन्हहिं तिन्हहिं बिधिवाम २८३ ❀

हे रामचन्द्र ! तुम प्राणोंकेभी प्राण हो, और जीवोंके जीव हो और सुखकेभी सुख हो हे प्यारे ! तुमको छोड़ जिन्हें घर अच्छा लगै उनको विधाता वाम है अर्थात् वे बड़े भाग्यहीन हैं ॥ २८३ ॥

चौ०-सो सुख करम धरम जरि जाऊ ❀ जहँ न रामपदपंकज भाऊ ॥ १ ॥
जोग कुजोग ज्ञान अज्ञानू ❀ जहाँ न राम प्रेम परधानू ॥ २ ॥

वह सुख और कर्म, धर्म, भलेही जलै जिनसे रामचन्द्रजीके कमलसमान चरणोंमें प्रीति न हो ॥ १ ॥ योग तौ कुयोग और ज्ञान अज्ञान है कि जहां रामचन्द्रजीका स्नेह मुख्य न हो ॥ २ ॥

तुम विन दुखी सुखी तुम तेही ❀ तुम जानहु जिय जो जेहि केही ॥ ३ ॥
राउर आयसु सिर सबहीके ❀ विदित कृपालहि गति सब नीके ॥ ४ ॥

जो तुह्मारे विना दुखी और तुह्मारे होते सुखी है और जो कुछ जिससे मनमें है उसे आप जानते हैं ३ आपकी आज्ञा सभीके माथेपर है; सो हे कृपानिधान! आपको सबकी गति अच्छी भाँति विदित है ४

आपु आस्रमहिं धारिय पाऊ ❀ भयउ सनेह सिथिल मुनि राऊ ॥ ५ ॥
करि प्रनाम तब राम सिधाए ❀ ऋषि धरि धीर जनकपहिं आए ॥ ६ ॥

आप आश्रमको पधारिये· ऐसे कह मुनीश्वर स्नेहसे शिथल होगये ॥ ५ ॥ तब रामचन्द्रजी प्रणाम करके चले और ऋषि धीरज रखकर जनकके पास आये ॥ ६ ॥

रामबचन गुरु नृपहिं सुनाए ❀ सील सनेह सुभाव सुहाए ॥ ७ ॥
महाराज अब कीजिय सोई ❀ सबकर धरमसहित हित होई ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजीके वचन गुरु (वसिष्ठ) ने राजाको सुनाये जो शील, प्रेम और स्वभावहीसे सुहावने थे ॥ ७ ॥ हे महाराज ! अब वही कीजिये जिससे सबका धर्म सहित भला हो ॥ ८ ॥

दो०-ज्ञाननिधान सुजान सुचि, धरम धीर नरपाल ॥ ❀
तुम बिनु असमंजससमन, को समर्थ इहि काल ॥ २८४ ॥ ❀

हे राजन् ! आप ज्ञानके निधान, परम सुजान, पवित्र, धर्मज्ञ और धीरजवान हो· तुह्मारे विना असमंजस कहिये रघुनाथजीके फेरने और न फेरनेकी दुवधाके नाश करनेमें इस समय कौन सामर्थ्यवान् है? ॥ २८४ ॥

चौ०-सुनि मुनिबचन जनक अनुरागे ❀ लखि गति ज्ञान बिराग बिरागे ॥ १ ॥
सिथिल सनेह गुनत मनमाहीं ❀ आये यहाँ कीन्ह भल नाहीं ॥ २ ॥

मुनीश्वरके वचन सुन जनकजी प्रेममे मगन हो गये और उनकी दशाको देख उनके ज्ञान वैराग्यभी विरागी हुये, अर्थात् ज्ञान और वैराग्य कुछ न रहा ॥ १ ॥ प्रेममें शिथिल हुये मनमें विचारते हैं कि यहां आये सो अच्छा नहीं किया ॥ २ ॥

रामहिं राउ कहेउ बन जाना ❀ कीन्ह आपु प्रियप्रेम प्रमाना ॥ ३ ॥
हम अब बनते बनहिं पठाई ❀ प्रमुदित फिरब बिबेक बढ़ाई ॥ ४ ॥

राजाने रामचन्द्रजीको वन जानेको कहा और अपने प्यारे प्रेमको निवाह अर्थात् अपने प्राणत्याग दिये ॥३॥ और अब हम रामको वनसे वनको भेज प्रसन्न होते हुये ज्ञानको बढ़ाकर लौटेंगे ॥ ४ ॥

तापस मुनी महिसुर गति देखी ❀ भए प्रेमबस बिकल बिसेषी ॥ ५ ॥
समय समुझ धरि धीरज राजा ❀ चले भरतपहिं सहित समाजा ॥ ६ ॥

तपस्वी मुनीश्वर और ब्राह्मण (जनकजीकी) यह दशा देख स्नेहके वश बहुत दुखी हुये ॥ ५ ॥ (फिर) राजा समय विचार धीरज रख समाजको साथ लेकर भरतके पास चले ॥ ६ ॥

भरत आय आगे है लीन्हे ❀ अवसर सरिस सुआसन दीन्हे ॥ ७ ॥
तात भरत कह तिरहुतिराऊ ❀ तुमहिं बिदित रघुबीरसुभाऊ ॥ ८ ॥

भरतने आकर आगे हो कर लिये और समयके अनुसार सुन्दर आसन दिये ॥ ७ ॥ राजा जनकने कहा, हे प्यारे भरत ! तुम रामचन्द्रजीका स्वभाव जानतेही हो ॥ ८ ॥

दो०-राम सत्यव्रत धर्मरत, सबकर सील सनेहु ॥ ❀
संकट सहत सकोचबस, चहिय सो आयसु देहु ॥ २८५ ॥ ❀

---

(१) ज्ञानको बढ़ाकर लौटनेसे मतलब यह है कि जनकजी अपने ज्ञानको धिकार देते हैं कि राजा दशरथने तो विरहमें प्राण त्याग दिये और हम ऐसे ज्ञानी कि न तौ ज्ञान देकर रामको लौटाया और न प्राण त्यागे.

रामचन्द्रजी सत्यव्रत अर्थात् जिस बातकी प्रतिज्ञा करते हैं उसे करके रहते हैं और धर्ममें प्रीति करनेवाले हैं, और सबके शील, प्रेम तथा सकुचके वश दुःख सहते हैं. (इसलिये जैसी) चाहो आज्ञा दो २८५

चौ०–सुनि तनु पुलकि नयन भरि बारी ❀ बोले भरत धीर धरि भारी ॥ १ ॥
प्रभु प्रिय पूज्य पितासम आपू ❀ कुलगुरु सम हित माय न बापू ॥ २ ॥

यह सुनकर शरीरमें पुलकावली छागई, नेत्रोंमें जल भर आया और भरतजी बड़ा धीरज रखकर बोले कि ॥ १ ॥ प्रभु रामचन्द्रजी हमारे प्यारे हैं और आप पिताकेसमान पूज्य हैं और कुलके गुरु वशिष्ठके समान हित करनेवाले न माता हैं न पिता हैं ॥ २ ॥

कौसिकादि मुनि सचिव समाजू ❀ ज्ञान अंबुनिधि आपुन आजू ॥ ३ ॥
सिसु सेवक आयसु अनुगामी ❀ जानि मोहिं सिख देइय स्वामी ॥ ४ ॥

आज विश्वामित्र आदि ऋषियोंका समाज इकट्ठा है और आपभी ज्ञानके समुद्र विद्यमान हैं. ॥ ३ ॥ हे स्वामी ! मुझे बालक (अपना) सेवक तथा आज्ञाकारी जान शिक्षा दीजिये ॥ ४ ॥

इहि समाज थल बूझब राउर ❀ मन मलीन मैं बोलत बाउर ॥ ५ ॥
छोटे बदन कहौं बड़ि बाता ❀ छमब तात लखि बाम बिधाता ॥ ६ ॥

इस समाजके स्थानमें आप पूँछते हो तौ मैं दुखी मनसे बावलासा बोलता हूं ॥ ५ ॥ हे महाराज! छोटे मुँहसे बड़ी बात कहता हूं. सो विधाताको मुझपर उलटा समझ क्षमा करना ॥ ६ ॥

आगम निगम प्रसिद्ध पुराना ❀ सेवाधरम कठिन जग जाना ॥ ७ ॥
स्वामिधरम स्वारथहि बिरोधू ❀ बधिर अंध प्रेमहिं न प्रबोधू ॥ ८ ॥

वेद, शास्त्र और पुराणोंमें यह प्रसिद्ध है और संसारभी जानता है कि सेवाका धर्म बड़ा कठिन है ॥ ७ ॥ स्वामीका धर्म और अपना स्वार्थ इन दोनोंमें विरोध है. जैसे बहिरे अथवा अंधेको प्रेमका पूरा २ ज्ञान नहीं हो सक्ता, अर्थात् एक बात होगी बहिरा होगा देख सक्ता है, अंधा होगा सुन सक्ता है सुनभी ले और देखभी ले सो कैसे हो सक्ता है? ऐसेहि यातौ स्वामीका धर्म रह सक्ता है या स्वार्थ बन सक्ता है, दोनों बातें होना कठिन हैं ॥ ८ ॥

दो०–राखि राम रुख धरमव्रत, पराधीन मोहिं जानि ॥ ❀
सबके संमत सर्वहित, करिय प्रेम पहिचानि ॥ २८६ ॥ ❀

रामचन्द्रजीका रुख तथा धर्मका व्रत रखकर और मुझे पराधीन जान सबकी जो सलाह हो और जिसमें सबका भला हो सो स्नेह पहिचानकर कीजिये ॥ २८६ ॥

---

(१) जैसा कहा है कि–मौनान्मूर्खः प्रवचनपटुर्वातुलो जल्पको वा क्षान्त्या भीरुर्यदि न सहते प्रायशो नाभिजातः।
धृष्टः पार्श्वे वसति नियतं दूरतश्चाप्रगल्भः सेवाधर्मः परमगहनो योगिनामप्यगम्यः ॥

अर्थात् चुप रहनेसे मूर्ख, बहुत बातें करनेसे उन्मत्त अथवा बातून, क्षमाशील होनेसे डरपोक, सहनशील होनेसे नीतिरहित, सर्वदा पास रहनेसे ढीठ, और दूर रहनेसे अभिमानी कहाता है, इसलिये सेवाका धर्म बड़ा कठिन है, यह योगियोंसेभी नहीं हो सकता.

(२) नरपतिहितकर्ता द्वेष्यतां याति लोके जनपदहितकर्ता त्यज्यते पार्थिवेन्द्रैः ।
इति महति विरोधे वर्तमाने समाने नृपतिजनपदानां दुर्लभः कार्यकर्ता ॥ १ ॥

अर्थात् जो मंत्री राजाका हितकारी हो तौ प्रजा उससे वैर करै, और जो प्रजाका हितकारी हो तौ राजा उसे निकाल दे, सो ऐसा समान और बड़ा विरोध आपड़नेपर राजा और प्रजा दोनोंका हितकारी हो ऐसा काम करनेवाला मंत्री मिलना कठिन है ॥

चौ०-भरत बचन सुनि देखि सुभाऊ ❀ सहित समाज सराहत राऊ ॥ १ ॥
सुगम अगम मृदु मंजु कठोरे ❀ अर्थ अमित अति आखर थोरे ॥ २ ॥

राजा (जनक) भरतके वचन सुन और स्वभावको देखकर समाजसहित सराहना करने लगे ॥ १ ॥ (वचन कैसे हैं कि) सुननेमें तौ सुगम कहिये सीधे और अर्थ समझनेमें कठिन तथा मीठे, कोमल, और कठोर हैं और जिनमें अर्थ बहुत और अक्षर थोड़े हैं ॥ २ ॥

ज्यों मुख मुकुर मुकुर निज पानी ❀ गहि न जाइ असि अद्भुत बानी ॥ ३ ॥
भूप भरत मुनि साधु समाजू ❀ गे चह बिबुधकुमुद द्विजराजू ॥ ४ ॥

जैसे मुख दर्पणमें और दर्पण अपने हाथमें होता है परंतु पकड़ा नहीं जाता, ऐसीही अद्भुतवाणी है कि जिसके समझने और ग्रहण करनेमें कठिनता दीखती है ॥३॥ राजा (जनक), भरत, मुनीश्वर और साधुओंका समाज ये वहां गये जहां देवतारूपी कुमुदोंको चन्द्रमा (रूप) रामचन्द्र थे ॥४॥

सुनि सुधि सोच बिकल सब लोगा ❀ मनहुँ मीनगन नवजलजोगा ॥ ५ ॥
देव प्रथम कुलगुरु गति देषी ❀ निरखि बिदेह सनेह बिसेषी ॥ ६ ॥

(यह) समाचार सुन सब लोक सोचमें ऐसे दुखी है, जैसे मछलियोंका समूह नये जलके मिलनेसे होता है ॥ ५ ॥ देवताओंने पहले कुलके गुरु वसिष्ठजीकी दशा देखी और जनकजीके अधिक प्रेमको देखा ॥ ६ ॥

रामभक्तिमय भरत निहारे ❀ सुरस्वारथी हहरि हिय हारे ॥ ७ ॥
सबकहँ राम प्रेममय पेखा ❀ भए अलेख सोचबस लेखा[१] ॥ ८ ॥

और रामचन्द्रजीकी भक्तिमें लवलीन भरतको देख स्वारथी देवता घबराकर मनमें हार गये ॥ ७ ॥ और सबको रामचन्द्रजीके स्नेहमें मगन देख देवता ऐसे सोचके वश हुये कि, लिखा नहीं जा सकता ॥ ८ ॥

दो०-राम सनेह सकोचबस, कह ससोच सुरराज ॥ ❀
रचहु प्रपंचहिं पंच मिलि, नाहित भयउ अकाज ॥ २८७ ॥ ❀

इन्द्रने सोचकर कहा कि रामचन्द्रजी तौ प्रेम और सकुचके वश हैं इसलिये पंच मिलकर प्रपंच रचो नहीं तौ बिगाड़ हुआ ॥ २८७ ॥

चौ०-सुरन्ह सुमिरि सारदा सराही ❀ देवि देव सरनागत पाही ॥ १ ॥
फेरि भरतमति करि निज माया ❀ पालु बिबुधकुल करि छल छाया ॥ २ ॥

देवताओंने सरस्वतीकी सराहना कर स्मरण किया कि हे देवी ! शरण आये देवताओंकी रक्षा करो ॥ १ ॥ अपनी मायाकरके भरतकी बुद्धिको लौट दो और कपटका परदा गेरकर देवताओंके कुलका पालन करो ॥ २ ॥

बिबुध बिनय सुनि देवि सयानी ❀ बोली सुरस्वारथ जड़ जानी ॥ ३ ॥
मोसन कहहु भरतमति फेरू ❀ लोचन सहस न सूझ सुमेरू ॥ ४ ॥

चतुर देवी (सरस्वती) देवताओंकी विनती सुनकर और देवताओंको स्वार्थमें लवलीन जानकर इन्द्रसे बोली ॥ ३ ॥ मुझसे कहतेहो कि भरतकी बुद्धिको फेरदो, सो तुह्मारे नेत्र तौ हजार हैं परंतु दीखता सुमेरु पर्वतभी नहीं है ॥ ४ ॥

---

(१) लेखाका अर्थ देवताओंका है ॥

विधि हरि हर माया बड़ि भारी ❀ सो न भरतमति सकै निहारी ॥ ५ ॥
सो मति मोहिं कहत कर भोरी ❀ चाँदनि कर कि चंद्रकर चोरी ॥ ६ ॥

ब्रह्मा, विष्णु, महादेवकी माया जो वड़ी भारी है वहभी भरतकी बुद्धिको नहीं देख सकती ॥ ५ ॥ उसी बुद्धिके भुलानेको मुझसे कहते हो. भला कहीं चांदनी भी चन्द्रमाको चुरा सकती है ? ॥ ६ ॥

भरतहृदय सियराम निवासू ❀ तहँकि तिमिर जहँ तरनिप्रकासू ॥ ७ ॥
असकहि सारद गइ विधिलोका ❀ बिबुध बिकल निसि मानहुँ कोका ॥ ८ ॥

भरतके हृदयमें सीतारामचन्द्रजीका निवास है सो भला जहां सूर्यका प्रकाश है वहां क्या अंधेरा रह सकता है ? ॥ ७ ॥ ऐसे कहकर सरस्वती तो ब्रह्मलोकको गई और देवता ऐसे दुखी हुये जैसे चकवा रातमें दुखी होता है ॥ ८ ॥

दो०–सुर स्वारथी मलीन मन, कीन्ह कुमंत्र कुठाट ॥ ❀
रचि प्रपंच माया प्रवल, भय भ्रम आर्त्त उचाट ॥ २८८ ॥ ❀

स्वार्थी और कपटी देवताओंने बुरी सम्मतिकर उपद्रव मचाया और संसारकी प्रवल मायाके वश होकर वहाँ भय, भ्रम, दुख और उचाट रच दिये. अर्थात् किसीके मनमें भय, किसीके भ्रम, किसीके दुख और किसीके मनमें उचाट फैल गया ॥ २८८ ॥

चौ०–करि कुचालि सोचत सुरराजू ❀ भरतहाथ सब काज अकाजू ॥ १ ॥
गए जनक रघुनाथ समीपा ❀ सनमाने सब रघुकुलदीपा ॥ २ ॥

कुचालकरके इन्द्र सोचता है कि सव भला बुरा काम भरतके हाथ है ॥ १ ॥ (राजा) जनक रामचन्द्रके पास गये तौ रामचन्द्रजीने सवका आदर किया ॥ २ ॥

समय समाज धर्म अविरोधा ❀ बोले तब रघुवंसपुरोधा ॥ ३ ॥
जनक भरतसंवाद सुनाई ❀ भरत कहाउति कही सुहाई ॥ ४ ॥

तब रघुवंशके पुरोहित (वसिष्ठ) समाजमें धर्मके अनुकूल समयानुसार बोले ॥ ३ ॥ जनक और भरतका संवाद सुनाकर भरतकी सुन्दर कहावत कही ॥ ४ ॥

तात राम जस आयसु देहू ❀ सो सब करै मोर मत एहू ॥ ५ ॥
सुनि रघुनाथ जोरि जुगपानी ❀ बोले सत्य सरल मृदुबानी ॥ ६ ॥

(और बोले) हे प्यारे रामचन्द्र ! मेरीभी यह सलाह है कि तुम जैसी आज्ञा दो वह वैसाही करै ॥ ५ ॥ यह सुनकर रामचन्द्रजी दोनों हाथ जोड़ सच्ची सीधी और कोमल वाणी बोले ॥ ६ ॥

विद्यमान आपुन मिथिलेसू ❀ मोर कहब सबभाँति भदेसू ॥ ७ ॥
राउर राय रजायसु होई ❀ राउरिसपथ सही सिर सोई ॥ ८ ॥

आपके और राजा जनकके होते हुये मेरा कहना सब भांति बुरा है ॥७॥ आपकी और राजाकी जो आज्ञा हो मुझे आपकी सच्ची सौगन्द है कि वही मेरे शिरपर है. (अर्थात् मैं शिरधर वही करूंगा) ॥८॥

दो०–राम सपथ सुनि मुनि जनक, सकुचे सभासमेत ॥ ❀
सकल विलोकहिं भरतमुख, बनै न उत्तर देत ॥ २८९ ॥ ❀

रामचन्द्रजीकी सौगन्द सुनकर वसिष्ठ और जनक सभासहित सकुचे और सब भरतके मुखको देखने लगे पर उत्तर देना (किसीसे) नहीं बनता ॥ २८९ ॥

चौ०–सभा सकुचबस भरत निहारी ❀ रामबंधु धरि धीरज भारी ॥ १ ॥
कुसमय देखि सनेह सँभारा ❀ बढत बिंध्य जिमि घटज निवारा ॥ २ ॥

भरतने सभा सकुचके वश देखी तौ रामचन्द्रजीके भाईने बड़ा धीरज धरा ॥ १ ॥ और कुसमय देख प्रेमको ऐसे सम्हाला जैसे वढ़ते हुये विंध्याचल (पर्वत) को अगस्त्यने छोटा कर दियाथा ॥ २ ॥

सोक कनकलोचन मति छोनी ❀ हरी बिमल गुनगन जगजोनी ॥ ३ ॥
भरत बिबेक बराह बिसाला ❀ अनायास उधरे तिहि काला ॥ ४ ॥

शोकरूपी हिरण्याक्ष[2]ने बुद्धिरूपी पृथ्वीको हर लिया तौ निर्मल गुणोंके समूहरूपी ब्रह्माजीसे- ॥ ३ ॥ भरतके ज्ञानरूपी बड़े वाराह[3]ने उत्पन्न होकर उसी समय अनायासही (शोकरूपी हिरण्याक्षको मार बुद्धिरूपी पृथ्वीका) उद्धार कर लिया ॥ ४ ॥

करि प्रनाम सब कहँ करजोरी ❀ राम राउ गुरु साधु निहोरी ॥ ५ ॥
छमब आजु अति अनुचित मोरा ❀ कहऊँ वदन मृदु वचन कठोरा ॥ ६ ॥

प्रणामकर और सबको हाथ जोड़कर रामचन्द्रका, राजा (जनक) का, गुरुका और साधुओंका निहोरा कर ॥ ५ ॥ (भरत बोले कि) आज मेरे बड़े अयोग्य (वचनों) को क्षमा करना (क्योंकि मैं) कोमल मुखसे कठिन वचन कहता हूं ॥ ६ ॥

हृदय सुमिरि सारदा सुहाई ❀ मानसते मुखपंकज आई ॥ ७ ॥
विनय विवेक धर्म नय शाली ❀ भरत भारती मंजु मराली ॥ ८ ॥

हृदयमें सुन्दर सरस्वतीका स्मरण किया तौ वह मनरूपी मानससरोवरसे मुखकमलमें आगई अर्थात् जो कुछ मनमें था उसे कहना चाहते हैं ॥ ७ ॥ (यहां कवि उत्प्रेक्षा करता है कि) विनय ज्ञान, धर्म और नीति ये मानों (मोतियोंकी) खेती है और भरतजीकी वाणी सुन्दर हंसिनीके समान है, अर्थात् जैसे हंसिनी मोतियोंको चुगती है अन्य पदार्थको नहीं, उसी प्रकार भरतजीकी वाणी विनय ज्ञान धर्म और नीतिसे युक्त है, जब बोलैंगे तब विनय ज्ञान आदि सहितही बोलैंगे, कभी विपरीत न बोलैंगे ॥ ८ ॥

दो०–निरखि विबेक विलोचनन्हि, सिथिल सनेह समाज ॥ ❀
करि प्रनाम बोले भरत, सुमिरि सीय रघुराज ॥ २९० ॥ ❀

सो भरतजी ज्ञानरूपी नेत्रोंसे समाजको प्रेममें शिथिल देख सीता रामचन्द्रजीका स्मरणकर और (सबको) प्रणामकर वचन बोले कि ॥ २९० ॥

चौ०–प्रभु पितु मातु सुहृद गुरु स्वामी ❀ पूज्य परमहित अंतरयामी ॥ १ ॥
सरल सुसाहिब सीलनिधानू ❀ प्रनतपाल सर्वज्ञ सुजानू ॥ २ ॥

हे भगवन् ! मेरे तौ आपही पिता, माता, मित्र, गुरु, स्वामी, पूज्य और अतिहितकारी हो और

---

(१) एक समय सूर्यके तेजसे विंध्याचलके वृक्ष आदि सब झुलसगये । तब पर्वत सूर्यपर क्रोधकर बढने लगा और सूर्यके रथको ढकलिया । तब देवदानव आदि सूर्यके प्रकाश विना सभी दुखी हुए । अगस्त्यजी सबका दुख देख पर्वतकेपास आये और शिरपर हाथ धरकर झुका दिया और कहा कि जबतक हम आवैं ऐसाही पड़ा रह । फिर वह वैसाही रहा ॥ यह कथा पुराणान्तरकी है—

(२) भाव यह हुआ कि शोकने जो बुद्धिको हर लिया था उसे भरतजीके ज्ञानने शोकको दूरकर बुद्धिको जहांकी तहां जैसी थी वैसी करदी । (३) महाप्रलयमें पृथ्वी जलमय हो पातालको गई । वहांसे हिरण्याक्षने हरलीनी । उससमय भगवान् ब्रह्माजीकी नाकके छेदमेंसे छोटासा बाराहरूप धारणकर उत्पन्न हुये, और फिर अपने शरीरको बढाकर जलमें घुस हिरण्याक्षको मार पृथ्वीको दांतपर रख ले आये. यह कथा भागवतके ३ स्कंधके १३ अध्यायमें विस्तारपूर्वक लिखी है.

(जो झूँठ कहता होऊँ तौ आप) अंतर्यामी हो ॥ १ ॥ और आप सरल, सुन्दर स्वामी शीलके समुद्र, दीनोंकी रक्षा करनेवाले, सर्वज्ञ और सुजान हो ॥ २ ॥

समरथ सरनागत हितकारी ❀ गुनग्राहक अवअवगुनहारी ॥ ३ ॥
स्वामि गुसांइहिं सरिस गुसाँई ❀ मुहिं समान मैं स्वामिदुहाई ॥ ४ ॥

और आप समर्थ, शरण आयेहुओंका भला करनेवाले, गुणोंके ग्राहक तथा अवगुण और पापोंके नाश करनेवाले हो ॥ ३ ॥ और हे स्वामी ! आपसरीखे गोसांईके समान तौ आपही हैं, और मैं स्वामीकी शपथ खाता हूँ कि मेरेसमान (नीचभी) मैंही हूँ ॥ ४ ॥

प्रभु पितुबचन मोहबस पेली ❀ आयउँ इहां समाज सकेली ॥ ५ ॥
जगभल पोच उंच अरु नीचू ❀ अमिय अमरपद माहुर मीचू ॥ ६ ॥

जो मैं स्वामी और पिताके वचनोंको अज्ञानके वश उलँघकर समाजको इकट्ठाकरके यहां आया हूं ॥ ५ ॥ संसारमें भले बुरे ऊँच नीच सभी हैं; जैसे अमृत अमरपदका (देनेवाला) और विष मृत्युका देनेवाला है ॥ ६ ॥

रामरजाय मेटि मनमाहीं ❀ देखा सुना कतहुँ कोउ नाहीं ॥ ७ ॥
सो मैं सबविधि कीन्हि ढिठाई ❀ प्रभु मानी सनेह सेवकाई ॥ ८ ॥

(परन्तु) रामचन्द्रजीकी आज्ञाका मेटनेवाला (मैंने) मनमें (विचारा तौ) कहीं कोई न देखा न सुना ॥ ७ ॥ सो मैंने सबभांति ढीठता की, पर हे प्रभो ! आपने उसे प्रेमके वश सेवा मानी ॥ ८ ॥

दो०-कृपा भलाई आपनी, नाथ कीन्ह भल मोर ॥ ❀
दूषन भे भूषनसरिस, सुजस चारु चहुँ ओर ॥ २९१ ॥ ❀

हे स्वामी ! (आपने) अपनी दया और भलाईसे मेरा भला किया (क्योंकि मेरे सब) दूषण भूषणकेसमान होगये और निर्मल सुन्दर यश चारों ओर फैल गया ॥ २९१ ॥

चौ०-राउरि नीति सुबानि बड़ाई ❀ जगतबिदित निगमागम गाई ॥ १ ॥
क्रूर कुटिल खल कुमति कलंकी ❀ नीच निसील निरीस निसंकी ॥ २ ॥

आपकी नीति और सुन्दर वाणीकी प्रशंसा संसारमें प्रकट है और वेदशास्त्रोंने गाई है ॥ १ ॥ क्रूर, कुटिल, दुष्टजन कुबुद्धि लोग, कलंकी, नीच, शीलरहित, निगुरे और निर्भय ॥ २ ॥

ते सुनि सरन सामुहे आए ❀ सकृत प्रनाम किए अपनाए ॥ ३ ॥
देखि दोष कबहुँन उर आने ❀ सुनि गुन साधुसमाज बखाने ॥ ४ ॥

ऐसे मनुष्यभी (यश) सुनकर सामने आये तौ सकृत कहिये एकवार प्रणाम करतेही उनको आपने अपना बना लिया ॥ ३ ॥ और दोष देखकर कभी मनमें न लाये और उनके गुण सुनकर साधुओंके समाजमें कहे ॥ ४ ॥

को साहिब सेवकहि निवाजी ❀ आपुसमान साज सब साजी ॥ ५ ॥
निजकरतूति न समुझिय सपने ❀ सेवक सकुच सोच उर अपने ॥ ६ ॥

कौन स्वामी सेवकका निवाहनेवाला है, जो अपनेसमान आपही सब साज सजा दे ॥५॥ और अपने कर्त्तव्यको तौ स्वप्नेमेंभी नहीं सोचै और अपने मनमें सेवककी सकुचका सोच करै ॥ ६ ॥

सो गुसाँइ नहिं दूसर कोपी ❀ भुजा उठाइ कहौं प्रन रोपी ॥ ७ ॥
पसु नाचत सुक पाठप्रबीना ❀ गुणगति नट पाठक आधीना ॥ ८ ॥

सो (ऐसे) स्वामीही हैं दूसरा कोई भी नहीं, मैं वाँह उठाय प्रण रोपकर कहता हूँ ॥ ७ ॥ पशु (बन्दर आदि) नाचनेमें, तोते (राधा कृष्ण आदि) पाठ करनेमें चतुर होते हैं. (परन्तु उनके) गुणकी गति नट और सिखानेवालोंके आधीन होती है ॥ ८ ॥

दो०-यों सुधारि सनमानि जन, किए साधु सिरमोर ॥
को कृपालु विनु पालहै, बिरुदावलि बरजोर ॥ २९२ ॥

इसी प्रकार सुधारकर और सन्मानकरके आपनेभी भक्तोंको साधुओंका शिरमौर वनाया है सो ऐसा आप कृपानिधानके विना, हठसे यश अथवा भलाई देनेका, कौन पालन करेगा ॥ २९२ ॥

चौ०-सोक सनेह कि बाल सुभाए ❀ आयउँ लाइ रजायसु वाए ॥ १ ॥
तबहुँ कृपालु हेरि निज ओरा ❀ सबहि भाँति भल मानेहु मोरा ॥ २ ॥

शोकसे, प्रेमसे, अथवा लड़कबुद्धिसे आज्ञाको उलाँघकर चला आया ॥ १ ॥ तवभी दया करनेवाले (आप) ने अपनी ओर देख सवही भाँतिसे मेरा भला माना ॥ २ ॥

देखेउँ पाँय सुमंगल मूला ❀ जानेउँ स्वामि सहज अनुकूला ॥ ३ ॥
बड़े समाज विलोकेउँ भागू ❀ बडी चूक साहिब अनुरागू ॥ ४ ॥

सुन्दर आनन्दोंकी जड़ ऐसे चरणोंके दर्शन किये और स्वामीको स्वभावहीसे कृपालु जाना ॥ ३ ॥ वड़े भाग्यसे इस समाजको देखा कि (मेरी) वड़ी चूकपरभी स्वामीका प्रेम है ॥ ४ ॥

कृपा अनुग्रह अंग अघाई ❀ कीन्हि कृपानिधि सब अधिकाई ॥ ५ ॥
राखा मोर दुलार गुसाँई ❀ अपने सील सुभाव भलाई ॥ ६ ॥

आपकी कृपा और अनुग्रहसे शरीरमें फूला नहीं समाया और आप तौ कृपाके समुद्र हैं (आपने जो किया सो) सब अधिकही किया ॥ ५ ॥ और हे स्वामी ! अपने शील स्वभाव और भलाईसे मेरा प्यार रक्खा ॥ ६ ॥

नाथ निपट मैं कीन्हि ढिठाई ❀ स्वामी समाज सकोच बिहाई ॥ ७ ॥
अबिनय विनय यथारुचि बानी ❀ छमिय देव अति आरत जानी ॥ ८ ॥

हे स्वामी ! मैंने स्वामीके समाजमें संकोचको छोड़कर अत्यंत ढीठता की ॥ ७ ॥ विनयरहित होकर अथवा नम्रतासे जो मैंने (अपनी) इच्छानुसार वाणी कही है सो देव ! (मुझे) अति दुखी जानकर क्षमा कीजिये ॥ ८ ॥

दो०-सुहृद सुजान सुसाहिबहि, बहुत कहब बड़ि खोरि ॥
आयसु देइए देव अब, सबहिं सुधारिय मोरि ॥ २९३ ॥

प्यारे, चतुर, सुन्दर स्वामीसे वहुत कहना वड़ा दोष है. (इसकारण) हे देव ! अव आज्ञा दीजिये और मेरी सव वातोंको सुधारिये ॥ २९३ ॥

चौ०-प्रभुपदपद्मपरागदुहाई ❀ सत्य सुकृत सुखसीम सुहाई ॥ १ ॥
सों करि कहौं हिये अपनेकी ❀ रुचि जागत सोवत सपनेकी ॥ २ ॥

सत्य, पुण्य, और सुखकी सुन्दर सीमा ऐसे आपके कमलसमान चरणोंकी रजकी शपथ है ॥ १ ॥ सो सौगंद खाकर अपने मनकी कहता हूँ कि जागते सोते और स्वप्नेमें भी यह रुचि है कि ॥ २ ॥

---

(१) सत्यं, सत्यं पुनः सत्यं भुजमुत्थाप्य चोच्यते । न वेदाच्च परं शास्त्रं न देवः केशवात्परः ॥ १ ॥ सत्य २ भुजा उठाकर कहता हूं कि वेदसे परे कोई शास्त्र और भगवान्से परे कोई देव नहीं है ॥ १ ॥

सहज सनेह स्वामि सेवकाई ❀ स्वारथ छल फलचारि बिहाई ॥ ३ ॥
आज्ञा सम नहिं साहिबसेवा ❀ सो प्रसाद जन पावै देवा ॥ ४ ॥

स्वार्थ, कपट और चारों फल कहिये धर्म, अर्थ, काम, मोक्षको छोड़ सहज प्रेमसे स्वामीकी सेवा करनी चाहिये ॥३॥ स्वामीकी आज्ञाके समान कोई सेवा नहीं, हे देव! (यह) दास वही प्रसाद पावे ४

असकहि प्रेम बिवस भए भारी ❀ पुलक सरीर बिलोचन बारी ॥ ५ ॥
प्रभुपदकमल गहे अकुलाई ❀ समय सनेह न सो कहि जाई ॥ ६ ॥

ऐसे कह बड़े स्नेहके वश हुये, शरीर पुलकायमान हो गया और नेत्रोंमें जल आगया ॥ ५ ॥ और अकुलाकर भगवान्‌के कमलसमान चरण पकड़ लिये उस समयका वह प्रेम कहा नहीं जाता ॥ ६ ॥

कृपासिंधु सनमानि सुबानी ❀ बैठाए समीप गहि पानी ॥ ७ ॥
भरतबिनय सुनि देखि सुभाऊ ❀ सिथिल सनेह सभा रघुराऊ ॥ ८ ॥

कृपासागर (रामचन्द्र) ने सुन्दर वाणीसे सन्मानकर और हाथ पकड़कर पास बैठा लिया ॥ ७ ॥ और भरतकी प्रार्थना सुन और स्वभावको देख सभा (समेत) रामचन्द्र प्रेममें शिथिल होगये ॥ ८ ॥

छं०–रघुराज सिथिल सनेह साधुसमाज मुनि मिथिलाधनी ॥ ❀
मनमहँ सराहत भरत भायपभक्तिकी महिमा घनी ॥ ❀
भरतहिं प्रसंसत बिबुध बरषत सुमन मानस मलिनसे ॥ ❀
तुलसी बिकल सबलोग सुनि सकुचे निसागम नलिनसे ॥ ११ ॥

रामचन्द्र, साधुओंका समाज, मुनि (वसिष्ठादि) और राजा जनक प्रेममें शिथिल हो गये और मनमें भरतके भाईपनेकी, भक्तिकी और महिमाकी बहुत सराहना करने लगे; मनके मलीन देवताभी भरतकी बड़ाई करते और फूल बर्षाते हैं. और सब लोग सुनकर ऐसे बिकल होगये जैसे रात्रिके आनेपर कमल सकुचा जाते हैं ॥ ११ ॥

सो०–देखि दुखारी दीन, दुहुँ समाज नरनारिसब ॥ ❀
मघवा महा मलीन, मुए मारि मंगल चहत ॥ ११ ॥ ❀

अवधवासी और मिथिलावासी इन दोनों समाजोंके सब स्त्रीपुरुषोंको दीन दुखी देखकरभी इन्द्र बड़ा नीच है जो मरेहुओंको[1] मारकर आनन्द चाहता है ॥ ११ ॥

चौ०–कपट कुचालि सीम सुरराजू ❀ परअकाज प्रिय आपन काजू ॥ १ ॥
काक समान पाकरिपुरीति ❀ छली मलीन न कतहुँ प्रतीती ॥ २ ॥

इन्द्र छल और कुचालकी सीमा है, अर्थात् इससे बढकर छलिया और कुचाली नहीं. इसे दूसरेका बुराकाम करना और अपना काम सिद्ध करना प्यारा है. ॥ १ ॥ इन्द्रकी रीति कौएके समान है, जो कपटी और मैला होता है, कहींभी किसीकी प्रतीति नहीं करता ॥ २ ॥

प्रथम कुमति करि कपट सकेला ❀ सो उचाट सबके सिर मेला ॥ ३ ॥
सुरमाया सब लोग बिमोहे ❀ राम प्रेम अतिसय न बिछोहे ॥ ४ ॥

सो पहले तौ कुमतिकरके छल इकठ्ठा किया. फिर (वह) उच्चाटन सबके माथे मढ़ दिया ॥३॥ देवताओंकी मायाने सब लोग मोहित किये तौभी रामचन्द्रजीके अधिक प्रेममें वियोग नहीं चाहते ॥४॥

भए उचाटबस मन थिर नाहीं ❀ छन बन रुचि छन सदन सोहाहीं ॥ ५ ॥
दुबिध मनोगत प्रजा दुखारी ❀ सरित सिंधु संगम जिमि बारी ॥ ६ ॥

---

(१) एक तौ वे रामके दुखसे दुखी होही रहे हैं फिर उन्हें मोहमें डालकर दुखी करना यही मरेको मारना है ॥

उच्चाटनके वश (किसीके) मनमें स्थिरता नहीं, क्षणभरमें तौ वनकी इच्छा होती है और क्षणमें घर अच्छे लगते हैं ॥ ५ ॥ मनमें दुविधा होनेसे प्रजा ऐसे दुखी है जैसे समुद्र और नदीके संगम होनेपर जल लहरा जाता है ॥ ६ ॥

दुचित कतहुँ परितोष न लहहीं ॥ एक एकसन मर्म न कहहीं ॥ ७ ॥
लखि हिय हँसि कह कृपानिधानू ॥ सरिस स्वान मघवाकर वानू ॥ ८ ॥

दुच्चित्ते कहींभी संतोष नहीं पाते, और एक दूसरेसे भेदभी नहीं कहते ॥ ७ ॥ यह दशा देख कृपानिधान रामचन्द्रजी मनमें हँसकर कहने लगे कि इन्द्रकी टेव कुत्तेके समान है ॥ ८ ॥

दो०-भरत जनक मुनिगन सचिव, साधु सचेत विहाइ ॥
लगी देवमाया सबहिं, जथाजोग जन पाइ ॥ २९४ ॥

भरत, जनक, मुनियोंके समूह, मंत्री और महात्मा साधुजन इनको छोड़कर देवताओंकी माया सब मनुष्योंको पाकर यथायोग्य लगगई ॥ २९४ ॥

चौ०-कृपासिंधु लखि लोग दुखारे ॥ निज सनेह सुरपति छल भारे ॥ १ ॥
सभा राउ गुरु महिसुर मंत्री ॥ भरतभक्ति सबकी मति यंत्री ॥ २ ॥

दयाके समुद्र (रामचन्द्र) ने अपने प्रेमके कारण और इन्द्रके भारी कपटसे लोगोंको दुखी देखा ॥ १ ॥ सभा, राजा, गुरु, ब्राह्मण और मंत्री, सबकी बुद्धिको भरतकी भक्तिने जकड़ दिया ॥ २ ॥

रामहिं चितवत चित्रलिखेसे ॥ सकुचत बोलत बचन सिखेसे ॥ ३ ॥
भरतप्रीति नित बिनय बड़ाई ॥ सुनत सुखद बरनत कठिनाई ॥ ४ ॥

वे चित्रमें लिखेसे होंकर रामचन्द्रजीको देखते हैं और सिखायेकेसमान सकुचकर वचन बोलते हैं ॥ ३ ॥ भरतकी नित्यकी प्रीति, नम्रता और बड़ाई सुनतेमें सुखकी देनेवाली और वर्णन करनेमें कठिन है ॥ ४ ॥

जासु बिलोकि भक्ति लवलेसू ॥ प्रेम मगन मुनिगन मिथिलेसू ॥ ५ ॥
महिमा तासु कहै किमि तुलसी ॥ भक्तिप्रभाव सुमति हिय हुलसी ॥ ६ ॥

जिनकी भक्तिके लवलेशको देखकर मुनीश्वरोंके गण और राजा जनक स्नेहमें मग्न होगये ॥ ५ ॥ उनकी बड़ाईको तुलसीदास कैसे कहै ? (उनहीकी) भक्तिके प्रभावसे तौ हृदयमें सुन्दर बुद्धि उत्पन्न हुई ॥ ६ ॥

आपु छोट महिमा बड़ि जानी ॥ कबिकुल कानि मानि सकुचानी ॥ ७ ॥
कहि न सकति गुन रुचि अधिकाई ॥ मतिगति बालबचनकी नाईं ॥ ८ ॥

सो वह बुद्धि अपनेको छोटी और महिमाको बड़ी जानकर और कवीश्वरोंके कुलका भय समझकर सकुचाती है ॥ ७ ॥ इच्छा तौ बहुत है परन्तु गुणोंको कह नहीं सकती, और बुद्धिकी दशा बालकके बचनोंकी भांति होगई, अर्थात् कहती कुछ है और निकलता कुछ है ॥ ८ ॥

---

(१) जैसा बालकांडमें कहा है कि (दोहा)—

सूख हाड़ले भागसठ, स्वान निरखि मृगराज । छीन लेइ जनिजान जड, तिमि सुरपतिहि न लाज ॥

इस चौपाईमें कहीं २ ऐसा पाठान्तरभी पाया जाता है कि–"सरिस श्वान मघवान युवान्"

अर्थात् कुत्ता इन्द्र और युवा पुरुष ये सब समान हैं, अतएव व्याकरणाचार्योंने जो एकही जगह इनका प्रयोग किया है सो ठीक है यथा "श्वयुवमघोनामतद्धिते" ॥

दो०-भरत विमलजस विमलविधु, सुमति चकोर कुमारि ॥ ❀
उदित विमल जन हृदयनभ, इकटक रही निहारि ॥ २९५ ॥ ❀

भरतका निर्मल यश उज्ज्वल पूर्ण चन्द्रमा है, वह कविजनके शुद्ध अन्तःकरणमें उदय हुआ है, उसे सुन्दर बुद्धि जो चकोर कुमारीकेसमान है सो इकटक देख रही है सार यह है कि कविके हृदयमें भरतजीके यशका अनुभव तौ होता है परन्तु बुद्धिकी यह सामर्थ्य नहीं कि कुछ वर्णन करसकै, खड़ी २ गूंगीकी भांति देख रही है. कि जैसा कहा है कि "उर अनुभवति न कहसक सोऊ। कौन प्रकार कहै कवि कोऊ" ॥ २९५ ॥

चौ०-भरतसुभाव न सुगम निगमहूँ ❀ लघुमति चापलता कवि छमहूँ ॥ १ ॥
कहत सुनत सतिभाव भरतको ❀ सीयरामपद होइ न रतको ॥ २ ॥

भरतका स्वभाव वेदोंकोभी सुगम नहीं. सो कविजन मेरी छोटी बुद्धि और चंचलताको क्षमा करना ॥ १ ॥ भरतके सीधे भावको कहते सुनते हुये किसकी प्रीति सीता रामचन्द्रजीके चरणोंमें न होगी ॥ २ ॥

सुमिरत भरतहिं प्रेम रामको ❀ जेहि न सुलभ तेहि सरिस बामको॥३॥
देखि दयालु दसा सबहीकी ❀ राम सुजान जानि जन जीकी ॥ ४ ॥

भरतजीका स्मरण करतेही रामचन्द्रजीका स्नेह जिसको सुलभ न हो उसकेसमान उलटा अर्थात् प्रारब्धहीन कौन है ? ॥ ३ ॥ दयानिधान परमसुजान रामचन्द्रने सबकी दशा देख और भक्तोंके हृदयकी जानकर ॥ ४ ॥

धरमधुरीन धीर नय नागर ❀ सत्य सनेह सील सुखसागर ॥ ५ ॥
देसकाल लखि समय समाजू ❀ नीति प्रीतिपालक रघुराजू ॥ ६ ॥

धर्मधुरंधर, धीरजवान्, नीतिमें चतुर, सत्य, प्रेम शील और सुखके सागर ॥ ५ ॥ नीति और प्रीतिके पालन करनेवाले रामचन्द्रजी देश, काल, समय और समाजको देख-॥ ६ ॥

बोले बचन बानि सरबससे ❀ हितपरिनाम सुनत ससिरससे ॥ ७ ॥
तात भरत तुम धरमधुरीना ❀ लोक वेद विधि परम प्रबीना ॥ ८ ॥

सरस्वतीके सर्वस्वकेसमान वचन बोले, जो अन्तमें हित करनेवाले और सुननेमें चन्द्रमाके रस कहिये अमृतके समान हैं ॥ ७ ॥ हे प्यारे भरत ! तुम धर्मधुरंधर लोक और वेदकी रीतिमें बहुत चतुर हो ॥ ८ ॥

दो०-कर्म वचन मानस बिमल, तुमसमान तुम तात ॥ ❀
गुरुसमाज लघु बंधुगुन, कुसमय किमि कहिजात ॥ २९६ ॥ ❀

हे प्यारे ! कर्म, वचन और मनसे निर्मल तुम्हारे समान तुम्हीं हो. बड़े लोगोंके समाजमें छोटे भाईके गुण कुसमयमें कैसे कहे जावै ? ॥ २९६ ॥

चौ०-जानहु तात तरनिकुलरीती ❀ सत्यसंध पितु कीरति प्रीती ॥ १ ॥
समय समाज लाज गुरुजनकी ❀ उदासीन हित अनहित मनकी ॥ २ ॥

हे प्यारे ! तुम सूर्यवंशकी रीतिको जानते हो और सत्यके समुद्र पिताके स्नेह और कीर्त्तिकोभी जानते हो ॥ १ ॥ और समय, समाज, बड़े लोगोंकी लाज, तथा उदासीन, मित्र और शत्रुके मनकी बातभी जानते हो ॥ २ ॥

तुमहिं विदित सबही कर मरमू ❀ आपन मोर परमहित धरमू ॥ ३ ॥
मोहिं सबभाँति भरोस तुह्मारा ❀ तदपि कहौं अवसर अनुसारा ॥ ४ ॥

तुमको सबका मर्म, अपना और मेरा अत्यंत हित और धर्म विदितही है ॥ ३ ॥ मुझे सब भांति तुम्हारा भरोसा है तौभी समयके अनुसार कहता हूं ॥ ४ ॥

तात तात बिनु बात हमारी ❀ केवल कुलगुरु कृपा सुधारी ॥ ५ ॥
नतरु प्रजा पुरजन परिवारू ❀ हमहिं सहित सब होत दुखारू ॥ ६ ॥

हे तात! पिताकेविना हमारी बात, केवल कुलगुरु (वसिष्ठजी) की दयाने बनाई है ॥ ५ ॥ नहीं तौ प्रजा, कुटुम्बी, नगरके लोग हमसमेत सब दुखी होते ॥ ६ ॥

जो बिनु अवसर अथव दिनेसू ❀ जग कहँ काहे न होइ कलेसू ॥ ७ ॥
तस उत्पात तात बिधि कीन्हा ❀ मुनि मिथिलेस राखि सब लीन्हा ॥ ८ ॥

जो विना समयके सूर्यअस्त हो जाय तौ संसारको क्लेश क्यों न हो ॥ ७ ॥ हे प्यारे! तैसाही उत्पात ब्रह्माने (हमारे लिये) किया. परन्तु मुनि (वसिष्ठ) और राजा जनकने सब रख लिया ॥ ८ ॥

दो०–राजकाज सब लाज पति, धरम धरनि धन धाम ॥ ❀
गुरुप्रभाव पालिहि सबहि, भल होइहि परिनाम ॥ २९७ ॥ ❀

राज्यका काज, सब लाज, प्रतिष्ठा, धर्म, पृथ्वी, धन, और धाम सबको गुरुका प्रभाव पालन करैगा और अंतमें भला होगा ॥ २९७ ॥

चौ०–सहित समाज तुम्हार हमारा ❀ घर बन गुरुप्रसाद रखवारा ॥ १ ॥
मातु पिता गुरु स्वामि निदेसू ❀ सकल धरमधरनी धरु सेसू ॥ २ ॥

समाजसहित हमारा तुम्हारा रक्षक घरमें और वनमें गुरुका प्रसादही है ॥ १ ॥ माता, पिता, गुरु और स्वामीका उपदेश संपूर्ण धर्मरूपी भूमिके धारण करनेमें शेषनागकेसमान है, अर्थात् जो तुम मातापितादिका उपदेश मानोगे तौ सब धर्मको ऐसे रख सकोगे जैसे शेषजी पृथ्वीको धारण करते हैं ॥ २ ॥

सो तुम करहु करावहु मोहू ❀ तात तरनिकुल पालक होहू ॥ ३ ॥
साधन एक सकल सिधि देनी ❀ कीरति सुगति भूतिमय वेनी ॥ ४ ॥

सो तुम करो (अर्थात् पिताकी आज्ञासे राज्य करो) और मुझसे कराओ अर्थात् मुझे पिताने वनोवास दिया है सो मुझे वनमें जाने दो हे प्यारे! तुम (१४ वर्षतक) सूर्यवंशके पालन करनेवाले वनो ॥ ३ ॥ (यही) एक साधना सब सिद्धिओंको देनेवाली है. और कीर्त्ति, सुन्दर गति, और संपत्तिकी वेणीरूप है, अर्थात् इस साधनामें यश, मुक्ति और संपत्ति सब मिले हैं सो तुमको मिलेंगे ॥ ४ ॥

सो बिचारि सहि संकट भारी ❀ करहु प्रजा परिवार सुखारी ॥ ५ ॥
बाँटि विपति सबही मिल भाई ❀ तुमहिं अवधि भरि अति कठिनाई ॥ ६ ॥

सो विचारकर भारी क्लेश सहकर प्रजा और कुटुम्बको सुखी करो ॥ ५ ॥ हे भाई! (यद्यपि) सबहीने मिलकर विपत्ति बँटाई है, तौभी तुमको (चौदह वर्षकी) अवधिपर्यंत बहुत कठीनाई है ॥ ६ ॥

जानि तुमहिं मृदु कहौं कठोरा ❀ कुसमय तात न अनुचित मोरा ॥ ७ ॥
होहिं कुठाँव सुबंधु सुहाए ❀ जोडिय हाथ असिनके घाए ॥ ८ ॥

हे प्यारे! तुमको कोमल जानकर कठोर (वचन) कहता हूँ सो समयही बुरा है मेरा कहना अनुचित नहीं है ॥ ७ ॥ बुरे अवसरपर सुन्दर भाईही सहायक होते हैं. जैसे तलवारके घावको (पहले) हाथही रोकता है ॥ ८ ॥

दो०–सेवक कर पद नयनसे, मुख सों साहिब होइ ॥ ❀
तुलसी प्रीतिकि रीति सुनि, सुकबि सराहहिं सोइ ॥ २९८ ॥ ❀

सेवक[1] तौ हाथ, पैर और नेत्रके समान हो और स्वामी मुखकेसमान हो. तुलसीदास कहते हैं कि (ऐसी) प्रीतीकी रीति सुनकर सुन्दर कवीश्वर (उस सेवककी) सराहना करते हैं ॥ २९८ ॥

चौ०–सभा सकल सुनि रघुवरबानी ❀ प्रेमपयोधि अमिय जनु सानी ॥ १ ॥
सिथिल समाज सनेह समाधी ❀ देखि दसा चुप सारद साधी ॥ २ ॥

सब सभा रामचन्द्रजीकी प्रेमके समुद्रसे निकली हुई अमृतसें मानों सनी हुई वाणी सुनकर ॥ १ ॥ ऐसी शिथिल होगई, मानों समाजने स्नेहकी समाधी लगालीनी, अर्थात् न हलै, न चलै, न बोलै. सब प्रकार जड़ होगई, सो ऐसी इस दशाको देख सरस्वतीनेभी चुप साध लिया ॥ २ ॥

भरतहिं भयउ परम संतोपू ❀ सन्मुख स्वामि विमुख दुख दोपू ॥ ३ ॥
सुख प्रसन्न मन मिटा विषादू ❀ भा जनु गूँगहिं गिराप्रसादू ॥ ४ ॥

भरतने स्वामीको सन्मुख और दुःखदोषोंको विमुख देखा तौ बड़ा संतोष हुआ ॥ ३ ॥ मुखपर प्रसन्नता (छागई) मनकी तपन मिट गयी. मानों गुंगेपर सरस्वतीकी कृपा हुई ॥ ४ ॥

कीन्ह सप्रेम प्रनाम बहोरी ❀ बोले पानिपंकरुह जोरी ॥ ५ ॥
नाथ भयउ सुख साथ गएको ❀ लहेउँ लाभ जग जनम भएको ॥ ६ ॥

फिर स्नेहसे प्रणाम करके और कमलसमान हाथ जोड़कर बोले ॥ ५ ॥ हे स्वामी ! (अब मुझे) साथ जानेका सुख हुआ और मैंने संसारमें जन्म होनेका लाभ लिया ॥ ६ ॥

अब कृपालु जस आयसु होई ❀ करौं सीस धरि सादर सोई ॥ ७ ॥
सो अवलंब देव मोहिं देई ❀ अवधिपार पावउँ जेहि सेई ॥ ८ ॥

अब हे दयानिधान ! जैसी आज्ञा हो वह सब आदरपूर्वक माथेपर रखकर करूं ॥७॥ हे देव ! मुझे वह सहारा दो जिसे सेवन कर (१४ वर्षकी) अवधिका छोर पाऊं ॥ ८ ॥

दो०–देव देव अभिषेकरहित, गुरुअनुसासन पाइ ॥ ❀
आनेउँ सब तीरथसलिल, तेहिकहँ काह रजाइ ॥ २९९ ॥ ❀

हे देव ! (आप) के राजतिलकके लिये गुरुकी आज्ञा पाय सब तीर्थोंका जल लाया हूं उसके लिये क्या आज्ञा है ॥ २९९ ॥

चौ०–एक मनोरथ बड़ मनमाहीं ❀ समय सकोच जात कहिं नाहीं ॥ १ ॥
कहहु तात प्रभुआयसु पाई ❀ बोले बानि सनेह सुहाई ॥ २ ॥

मनमें एक बड़ी इच्छा है, वह समयके सकुचसे कही नहीं जाती ॥ १ ॥ (भगवान् बोले) हे प्यारे ! कहो (तब) स्वामीकी आज्ञा पाय सुन्दर प्रेमकी वाणी बोले कि ॥ २ ॥

चित्रकूट मुनिथल तीरथ वन ❀ खग मृग सरि सर निर्झर गिरि गन ॥३॥
प्रभुपदअंकित अवनि विसेषी ❀ आयसु होइ तो आवउँ देषी ॥ ४ ॥

यों तौ चित्रकूटमें मुनियोंके आश्रम, तीर्थ, वन, पक्षी, हिरण, नदी, सरोवर, झरने और पहाड़ोंके समूह (सबही) हैं ॥ ३ ॥ पर विशेषकर हे प्रभो ! आपके चरणोंसे चिह्नित जो पृथ्वी है उसे आज्ञा हो तौ देख आऊं ॥ ४ ॥

---

(१) सेवकको हाथ पैर और नेत्रोंकेसमान यों कहा कि इन इद्रियोंके द्वारा जो कुछ काम होता है वह सेवकका धर्म है; और उसका फल मुखको मिलता है. इस लिये इसे स्वामी बनाया. जैसे किसीने दूरसे फल देखा फिर चलकर वहाँ गया, हाथसे उठाया मुखमें दिया और आपने लेशमात्रभी नहीं लिया । फिर जैसे मुख जो स्वामीके स्थानमें है वह पाकर सब अंगोंको बराबर पुष्ट करता है, वैसेही स्वामीकोभी चाहिये; यही प्रीति सराहनीय है ॥

अवसि अत्रिआयसु सिर धरहू ❀ तात विगतभय कानन चरहू ॥ ५ ॥
मुनिप्रसाद बन मंगलदाता ❀ पावन परम सोहावन भ्राता ॥ ६ ॥

हे प्यारे ! अत्रि (ऋषि) की आज्ञाको माथेपर रख निर्भय हो वनमें अवश्य ही आओ ॥५॥ हे भाई ! मुनीश्वरकी कृपासे यह बन मंगलदायक परमपावन और सुन्दर सुहावन है ॥ ६ ॥

ऋषिनायक जहँ आयसु देहीं ❀ राखेहु तीरथजल थल तेहीं ॥ ७ ॥
सुनि प्रभुबचन भरत सुख पावा ❀ मुनिपदकमल मुदित सिर नावा ॥ ८ ॥

और ऋषिराज (अत्रि) जहां आज्ञा दे उसी जगह तीर्थोंके जलको रक्खो ॥७॥ भरतने भगवान्के वचन सुन सुख पाया और प्रसन्नतासे मुनीश्वरके कमलसमान चरणोंको मस्तक नवाया ॥ ८ ॥

दो०–भरत रामसंवाद सुनि, सकल सुमंगलमूल ॥ ❀
सुर स्वारथी सराहि कुल, हर्षित वर्षहिं फूल ॥ ३०० ॥ ❀

भरत और रामचन्द्रजीका सुन्दर आनन्दकन्द संवाद सुनकर स्वार्थी देवता (उनके) कुलकी सराहनाकर प्रसन्नतासे फूल वर्षाने लगे ॥ ३०० ॥

चौ०–धन्य भरत जय रामगुसाँई ❀ कहत देव हर्षित बरिआई ॥ १ ॥
मुनि मिथिलेस सभा सभकाहू ❀ भरतवचन सुनि भयउ उछाहू ॥ २ ॥

देवता प्रसन्न होते हुये बार २ कहते हैं कि भरतको धन्य है, गोसाँई रामचन्द्रकी जय हो ॥१॥ भरतके वचन सुन मुनि (वसिष्ठ) जनक, और सब किसीको सभामें आनन्द हुआ ॥ २ ॥

भरत रामगुनग्रामसनेहू ❀ पुलकि प्रसंसत राउ विदेहू ॥ ३ ॥
सेवक स्वामि सुभाव सुहावन ❀ नेम प्रेम अतिपावनपावन ॥ ४ ॥

भरत और रामचन्द्रजीके गुणोंके समूह तथा प्रेमको राजा जनक पुलकितवदन हो सराहने लगे कि ॥ ३ ॥ सेवक और स्वामीका भाव अति सुन्दर है और इनका नेम और प्रेम पवित्रसेभी अत्यंत पवित्र है ॥ ४ ॥

मतिअनुसार सराहन लागे ❀ सचिव सभासद सब अनुरागे ॥ ५ ॥
सुनि सुनि रामभरतसंवादू ❀ दुहुँ समाज हिय हरष विषादू ॥ ६ ॥

मंत्री और सभासद सब प्रसन्न हुये और (अपनी २) बुद्धिके अनुसार सराहने लगे ॥५॥ भरत और रामचन्द्रजीके संवादको सुन २ कर दोनों समाजोंके हृदयमें आनन्द और दुख हुआ ॥ ६ ॥

राममातु दुख सुख सम जानी ❀ कहि गुन दोष प्रबोधी रानी ॥ ७ ॥
एक करहिं रघुबीरबड़ाई ❀ एक सराहत भरतभलाई ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजीकी माताने दुख सुख समान जानकर और गुण दोष कहकर रानियोंको समझाया ॥ ७ ॥ कोई रामचन्द्रकी बड़ाई करते हैं, कोई भरतकी भलाईको सराहते हैं ॥ ८ ॥

दो०–अत्रि कहेउ तब भरतसन, सैलसमीप सुकूप ॥ ❀
राखिय तीरथतोय तहँ, पावन अमल अनूप ॥ ३०१ ॥ ❀

तब अत्रि (ऋषि) ने भरतसे कहा कि पर्वतके पास सुन्दर कुएमें उपमारहित पावन और निर्मल तीर्थोंके जलको रक्खो ॥ ३०१ ॥

चौ०–भरत अत्रि-अनुसासन पाई ❀ जलभाजन सब दिए चलाई ॥ १ ॥
सानुज आपु अत्रिमुनि साधू ❀ संहित गए जहँ कूप अगाधू ॥ २ ॥

भरतने अत्रिकी आज्ञा पाकर जलके पात्र सब भिजवा दिये ॥ १ ॥ और छोटे भाईसहित आप और अत्रिमुनि अन्य साधुओंसमेत वहां गये जहां गहरा कुँआ था ॥ २ ॥

पावन पाथ पुन्यथल राखा ❀ प्रमुदित प्रेम अत्रि अस भाखा ॥ ३ ॥
तात अनादिसिद्ध थल एहू ❀ लोपेउ कालबिदित नहिं केहू ॥ ४ ॥

पवित्र जल पुण्य स्थानमें रख दिया, तब स्नेहमें मगन हो अत्रिने ऐसे कहा ॥ ३ ॥ हे प्यारे ! यह सदासे सिद्ध स्थान है, समय पाकर लुप्त हो गया था सो किसीको प्रगट नहीं है ॥ ४ ॥

तब सेवकन सरस थल देखा ❀ कीन्ह सुजलहित कूप बिसेषा ॥ ५ ॥
बिधिबस भयउ बिस्वउपकारू ❀ सुगम अगम अतिधर्म बिचारू ॥ ६ ॥

तब सेवकोंने जलमय जगह देख सुन्दर जलके लिये उसे विशेष साफ कर डाला ॥ ५ ॥ दैवयोगसे संसारका उपकार होगया और धर्मका विचार जो अति कठिन था सो सहज होगया ॥६॥

भरतकूप अब कहिहहिं लोगा ❀ अतिपावन तीरथजलजोगा ॥ ७ ॥
प्रेम सनेम निमज्जत प्रानी ❀ होइहहिं बिमल करम मन बानी ॥ ८ ॥

अबलोग इसे भरतका कुँआ कहेंगे और यह तीर्थोंके जलके मिलनेसे अत्यंत पवित्र हुआ ॥ ७ ॥ (इसमें) प्रेम और नेमसे मज्जन करतेही जीवधारी मनबचनकर्मसे निर्मल होंगे ॥ ८ ॥

दो०-कहत कूपमहिमा सकल, गए जहाँ रघुराउ ॥ ❀
अत्रि सुनायउ रघुबरहिं, तीरथ पुन्य प्रभाउ ॥ २०२ ॥ ❀

सब जने कूपकी बड़ाई करते हुये वहां गये जहां रामचन्द्रजी थे और अत्रिने रामचन्द्रजीको तीर्थका पुण्यप्रभाव सुनाया ॥ २०२ ॥

चौ०-कहत धर्म इतिहास सप्रीती ❀ भयउ भोर निसि सो सुख बीती ॥ १ ॥
नित्य निबाहि भरत दोउ भाई ❀ राम अत्रिगुरुआयसु पाई ॥ २ ॥

प्रीतिसे धर्मकी कथा कहते हुये वह रात सुखसे बीत गई और सबेरा हुआ ॥ १ ॥ भरत (शत्रुघ्न) दोनों भाई नित्यकर्म करके और रामचन्द्र, अत्रि तथा गुरुकी आज्ञा पाकर ॥ २ ॥

सहित समाज साज सब सादे ❀ चले रामबन अटन पयादे ॥ ३ ॥
कोमल चरन चलत बिनु पनहीं ❀ भइ मृदु भूमि सकुचि मन मनहीं ॥४॥

समाजसहित सब साधारण साजसे पैदलही रामचन्द्रजीके वनमें घूमने चले ॥ ३ ॥ कोमल चरणोंसे विना जूतियोंके चलते हुये (भरतको) देख पृथ्वी मनही मनमें सकुचके कोमल होगई ॥४॥

कुस कंटक काँकरीं कुराईं ❀ कटु कठोर कुबस्तु दुराईं ॥ ५ ॥
महि मंजुल मृदु मारग कीन्हे ❀ बहत समीर त्रिबिध सुख लीन्हे ॥ ६ ॥

कुश काँटे और काँकरियोंको अलग कर और कठिन कठोर बुरी वस्तुओंको छिपाकर ॥ ५ ॥ पृथ्वीने निर्मल सुन्दर मार्ग कर दिया और सुखपूर्वक तीन भांतिकी (शीतल मन्द सुगन्ध) पवन चलने लगी ॥ ६ ॥

सुमन बर्षि सुर घनकरि छाँहीं ❀ बिटप फूलि फलि तृन मृदुलाहीं ॥ ७ ॥
मृग बिलोकि खग बोलि सुबानी ❀ सेवहिं सकल रामप्रिय जानी ॥ ८ ॥

देवता फूल वर्षाते और बादल छाया करते हैं, और वृक्ष फूलते फलते हैं और घास कोमल होती है ॥ ७ ॥ हिरण देखते हैं और पक्षी सुन्दर वाणी बोलते हैं, और रामचन्द्रजीके प्यारे जान सब सेवा करते हैं ॥ ८ ॥

दो०-सुलभ सिद्धि सब प्राकृतहुँ, राम कहत जमुहात ॥ ❀
राम प्रानप्रिय भरतकहँ, यह न होइ बड़ि बात ॥ ३०३ ॥ ❀

जो संसारी मनुष्य जँभाई लेते हुयेभी राव कहते हैं उनको सब सिद्धियाँ सुगम होती हैं सो भरतको तौ रामचन्द्र प्राणोंसे प्यारे हैं (उनको) यह हो तौ (कुछ) बड़ी बात नहीं है ॥३०३॥

चौ०-इहिविधि भरत फिरत बनमाहीं ❀ नेम प्रेम लखि मुनि सकुचाहीं ॥ १ ॥
पुन्यजलासय भूमिबिभागा ❀ खग मृग तरु तृन गिरि बन बागा ॥२॥

इस भांति भरत वनमें फिरते हैं, (उनके) नेम और प्रेमको देख मुनीश्वरभी सकुचाते हैं ॥१॥ पवित्र सरोवर, भूमिके विभाग खग, मृग, वृक्ष, घास, पर्वत, वन और वाग ॥ २ ॥

चारु बिचित्र पवित्र बिसेषी ❀ बूझत भरत दीव्य थल देषी ॥ ३ ॥
सुनि मन मुदित कहत ऋषिराऊ ❀ हेतु नाम गुनपुन्यप्रभाऊ ॥ ४ ॥

सुन्दर विचित्र और अतिपवित्र सुन्दर स्थानोंको देखकर भरत पूछते हैं॥३॥ और ऋषिराज सुनकर मनमें प्रसन्न होते हुये उनके होनेका कारण, नाम गुण और पुण्यका प्रभाव कहते हैं ॥ ४ ॥

कतहुँ निमज्जन कतहुँ प्रनामा ❀ कतहुँ बिलोकत बन अभिरामा ॥ ५ ॥
कतहुँ बैठि मुनि आयसु पाई ❀ सुमिरत सीयसहित दोउ भाई ॥ ६ ॥

कहीं मज्जन करते हैं, कहीं प्रणाम करते हैं और कहीं वनकी सुंदरताको देखते हैं ॥ ५ ॥ कहीं मुनीश्वरकी आज्ञा पाय बैठकर सीताजीसहित दोनों भाइयोंका स्मरण करते हैं ॥ ६ ॥

देखि सुभाउ सनेह सुसेवा ❀ देत असीस मुदित बनदेवा ॥ ७ ॥
फिरहिं गये दिन पहर अढ़ाई ❀ प्रभुपदकमल बिलोकहिं आई ॥ ८ ॥

(उनके) स्वभाव प्रेम और सुन्दर सेवाको देख वनके देवता प्रसन्नतासे-आशीर्वाद देते हैं ॥७॥ ढाईपहर दिन बीतनेपर लौटते हैं और आकर भगवानके कमलसमान चरणोंका दर्शन करते हैं ॥८॥

दो०-देखे थल तीरथ सकल, भरत पाँचदिनमाँझ ॥ ❀
कहत सुनत हरिहरसुजस, गयउ दिवस भइ साँझ ॥ ३०४ ॥ ❀

भरतने पांच दिनमें सब तीर्थ और आश्रम देखे और उनको विष्णु और महादेवका सुन्दर यश कहते सुनते दिन बीतगया और संध्या हुई ॥ ३०४ ॥

चौ०-भोर न्हाइ सब जुरा समाजू ❀ भरत भूमिसुर तिरहुति राजू ॥ १ ॥
भलदिन आजु जानि मनमाहीं ❀ रामकृपालु कहत सकुचाहीं ॥ २ ॥

सबेरेही स्नान कर सब समाज इकठ्ठा मुआ, भरत, ऋषि और राजा जनकभी (इकठ्ठे हुये) ॥१॥ दयासागर रामचन्द्रजी मनमें जानते हैं कीं आज अच्छा दिन है, परन्तु कहतेमें सकुचाते हैं ॥२॥

गुरु नृप भरत सभा अवलोकी ❀ सकुचि राम फिरि अवनि बिलोकी ॥३॥
सील सराहि सभा सब सोची ❀ कहुँ न रामसम स्वामि सकोची ॥ ४ ॥

रामचन्द्रजीने गुरु, राजा (जनक), भरत और सभाकी ओर और सकुचकर फिर फिर पृथ्वीकी ओर देखा ॥ ३ ॥ तौ सब सभाने (उनके) शीलकी सराहना कर विचारा कि रामचन्द्रके समान सकुचनेवाला स्वामी कहीं कोई नहीं ॥४॥

भरत सुजान रामरुख देषी ❀ उठि सप्रेम धरि धीर बिसेषी ॥ ५ ॥
करि दंडवत कहत कर जोरी ❀ राखी नाथ सकल रुचि मोरी ॥ ६ ॥

चतुर भरत रामचन्द्रजीका रुख देख बहुतसा धीरज रख और स्नेहसहित उठे ॥५॥ और दंडवत कर हाथ जोड़ कहने लगे कि हे स्वामी ! आपने मेरी सब इच्छा पूरी की ॥ ६ ॥

मोहिंलगि सहेउ सबहि संतापू ❀ बहुत भाँतिदुख पावा आपू ॥ ७ ॥
अब गुसाँइ मोहिं देउ रजाई ❀ सेवौं अवध अवधिलगि जाई ॥ ८ ॥

आपने मेरे लिये सवही संताप सहे और बहुत प्रकारके दुःख पाये ॥७॥ सो हे गोसाँई ! अब मुझे आज्ञा दो जो (चौदह वर्षकी) अवधितक जाकर अयोध्यापुरीका सेवन करूं ॥ ८ ॥

दो०-जेहि उपाय पुनि पाय जन, देखै दीनदयालु ॥ ❀
सो सिख देइय अवधिलगि, कोसलपाल कृपालु ॥ ३०५ ॥ ❀

हे दयानिधान ! हे अयोध्याके पालन करनेवाले ! दीनदयालु ! जिस उपायसे अवधितक रहकर (यह) दास फिर आपके चरणोंका दर्शन करै वही शिक्षा दीजिये ॥ ३०५ ॥

चौ०-पुरजन परिजन प्रजा गुसाँई ❀ सब सुचि सरस सनेह सगाई ॥ १ ॥
राउर बदि भल भवदुखदाहू ❀ प्रभु बिनु बादि परमपदलाहू ॥ २ ॥

हे प्यारे ! नगरके लोग, कुटुम्बी, और प्रजा सबका आपसे सच्चा सरस प्रेम और नाता है ॥१॥ आपका कहाकर संसारका दुःख दाहभी अच्छा है और स्वामीके विना मोक्षका लाभभी वृथा है ॥२॥

स्वामि सुजान जानिसबहीकी ❀ रुचि लालसा रहनि जन जीकी ॥ ३ ॥
प्रनतपाल पालहिं सबकाहू ❀ देव दुहूँदिसि ओर निबाहू ॥ ४ ॥

हे स्वामी ! (आप) चतुर हैं, सवही भक्तोंकेजीकी रुचि लालसा और रहनि जानते हैं ॥ ३ ॥ हे दीनदयालु ! आप सबका पालन करते हो और हे देव ! आप घर और वन दोनों ओरका निवाह कीजिये ॥ ४ ॥

अस मोहिं सब विधि भूरि भरोसो ❀ किये विचार न सोच खरोसो ॥ ५ ॥
आरति मोरि नाथकर छोहू ❀ दुहुँ मिल कीन्ह ढीठ हठि मोहू ॥ ६ ॥

मुझे सब भाँति ऐसा पूरा भरोसा है और विचार करनेसे कुछभी सोच नहीं ॥ ५ ॥ मेरे दुःख और स्वामीकी दया इन दोनोंने मिलकर मुझे हठसे ढीठ कर दिया ॥ ६ ॥

यह बड दोष दूरिकरि स्वामी ❀ तजि सकोच सिखइय अनुगामी ॥ ७ ॥
भरतबिनय सुनि सबहिं प्रसंसा ❀ छीर नीर बिबरन गति हंसा ॥ ८ ॥

सो हे स्वामी ! इस बड़े दोषको दूर करके और सकुच छोड़कर सेवकको शिक्षा दीजिये ॥७॥ जल और दूधके अलग करनेकी गतिमें हंसके समान ऐसी भरतकी प्रार्थना सुन सभीने बुड़ाई की ॥८॥

दो०-दीनबंधु सुनि बंधुके, बचन दीन छलहीन ॥ ❀
देस काल अवसर सरिस, बोले राम प्रवीन ॥ ३०६ ॥ ❀

दीनबंधु और सुजान रामचन्द्रजी भाईके कपटहीन और दीन वचन सुनकर देश काल और अवसरके समान वचन बोले ॥ ३०६ ॥

चौ०-तात तुम्हारि मोरि परिजनकी ❀ चिंता गुरुहिं नृपहिं घर बनकी ॥ १ ॥
माथेपर गुरु मुनि मिथिलेसू ❀ हमहिं तुमहिं सपनेहु न कलेसू ॥ २ ॥

हे प्यारे ! तुम्हारी, हमारी, कुटुंबकी, घरकी और बनकी चिन्ता गुरु और राजा जनकजीकोही है ॥ १ ॥ गुरु वशिष्ठ मुनि और राजा जनक (हमारे) शिरपर हैं (इसलिये) हम-तुमको स्वप्नेमेंभी क्लेश नहीं ॥ २ ॥

मोर तुम्हार परम पुरुषारथ ❀ स्वारथ सुजस धरम परमारथ ॥ ३ ॥
पितुआयसु पालिय दुहुँ भाई ❀ लोक वेद भल भूपभलाई ॥ ४ ॥

मेरा तुम्हारा बड़ा भारी पुरुषार्थ, स्वार्थ, सुन्दर यश, धर्म और परमार्थ (यही है कि) ॥ ३ ॥ दोनों भाई पिताकी आज्ञा पालन करैं, (इसीमें हम) लोग वेदमें भले होंगे और राजाकीभी भलाई होगी ॥ ४ ॥

गुरु पितु मातु स्वामिसिख पालैं ❀ चलत सुमगु पगु परत न खालैं ॥ ५ ॥
अस बिचारि सब सोच बिहाई ❀ पालहु अवध अवधि भरि जाई ॥ ६ ॥

गुरु, पिता, माता और स्वामीकी शिक्षाका पालन करना ऐसा है जैसा सुन्दर मार्गमें चलनेसे पैर खाली नहीं पड़ता ॥ ५ ॥ ऐसे विचारकर सब शोचोंको छोड़कर (चौदह वर्षकी) अवधितक अयोध्यापुरीका पालन जाकर करो ॥ ६ ॥

देस कोस पुरजन परिवारू ❀ गुरुपदरजहिं लाग छरु भारू ॥ ७ ॥
तुम मुनि मातु सचिव सिखमानी ❀ पालहु पुहुमि प्रजा रजधानी ॥ ८ ॥

देश, खजाना, नगरके लोग और कुटुम्बी (सबका) पूरा भार गुरुके चरणोंकी रजके आसरे रहैगा ॥७॥ तुम वसिष्ठमुनि, माता और मंत्रीकी शिक्षा मान प्रजा पृथ्वी और राजधानीका पालन करो ८

दो०-मुखिया मुख सों चाहिये, खान पान कहँ एक ॥ ❀
पालै पोषै सकल अँग, तुलसी सहित विवेक ॥ ३०७ ॥ ❀

मुखिया मुखके समान चाहिये जो खानेपीनेकी तौ एक हो और बड़ी सोच-बिचारीसे सब अंगोंका पालन पोषण करै ॥ ३०७ ॥

चौ०-राजधर्म सरवत इतनोई ❀ जिमि मनमाँह मनोरथ गोई ॥ १ ॥
बंधु प्रबोध कीन्ह बहु भाँती ❀ बिनु अधार मनतोष न शाँती ॥ २ ॥

राजधर्मका सर्वस्व इतनाही है (जो ऊपरसे दोहेमें कहा और वह ऐसा गुप्त है) जैसा मनमें मनोरथ छिपा रहता है ॥ १ ॥ (इसप्रकार) भाईको बहुत भांति समझाया परंतु आधारकेविना भरतके मनको संतोष और शांति नहीं होती ॥ २ ॥

भरतसील गुरु सचिवसमाजू ❀ सकुच सनेहबिबस रघुराजू ॥ ३ ॥
प्रभु करि कृपा पाँवरी दीन्ही ❀ सादर भरत सीस धरि लीन्ही ॥ ४ ॥

रामचन्द्रजी भरतके शीलसे और गुरु, मंत्रियोंके समाजके संकोचसे प्रेमके वश होगये ॥ ३ ॥ फिर भगवान्ने कृपा करके खड़ाऊं दीं और भरतने आदरसहित माथेपर रखलीं ॥ ४ ॥

चरनपीठ करुनानिधानके ❀ जनु जुग जामिक प्रजा प्रानके ॥ ५ ॥
संपुट भरत सनेहरतनके ❀ आखर जुग जनु जीवजतनके ॥ ६ ॥

करुणासागर (भगवान्) की चरणपादुका मानों प्रजाके प्राणोंके दो रखवाले हैं ॥५॥ भरतके स्नेहरूपी रत्नके लिये संदूक और जीवोंके उद्धार करनेके लिये मानों (रकार मकार) दो अक्षर हैं ॥ ६ ॥

कुल कपाट कर कुसलकर्मके ❀ विमल नयन सेवा सुधर्मके ॥ ७ ॥
भरत मुदित अवलंब लहेते ❀ अस सुख जस सिय राम रहेते ॥ ८ ॥

(रघु) वंशके किवाड़, श्रेष्ठ कर्मके हाथ, और सेवा और सुन्दर धर्मके निर्मल नेत्र हैं ॥ ७ ॥ भरतजी इस सहारेके पानेसे ऐसे प्रसन्न हुये जैसे सीतारामचन्द्रजीके रहनेसे सुख होता है ॥ ८ ॥

दो०-मांगेउ बिदा प्रनाम करि, राम लिए उर लाइ ॥ ❀
लोग उचाटे अमरपति, कुटिल कुअवसर पाइ ॥ ३०८ ॥ ❀

भरतने प्रणामकर बिदा मांगी (तब) रामचन्द्रजीने छातीसे लगा लिया और इसी समय कुटिल इन्द्रने कुसमय पाकर लोगोंको उचाट दिया-॥ ३०८ ॥

चौ०-सो कुचालि सबकहँ भइ नीकी ❀ अवधिआस सब जीवन जीकी ॥ १ ॥
नतरु लपनसियरामबियोगा ❀ हहरि मरत सब लोग कुरोगा ॥ २ ॥

वह कुचाल सबको अच्छी लगी और (१४वर्षकी) अवधीतक सबलोगोंको जीनेकी आशा हुई ॥१॥ नहीं तौ रामचन्द्र सीता और लक्ष्मणजीके वियोगरूपी बुरे रोगमें सब लोग भैराकर मरजाते ॥ २ ॥

रामकृपा अवरेव सुधारी ❀ बिबुध धारि भइ गुनद गुहारी ॥ ३ ॥
भेटत भुज भरि भाइ भरतसो ❀ राम प्रेमरस कहि न परत सो ॥ ४ ॥

रामचन्द्रजीकी दयासे टेढ़ीभी सीधी होगई कि देवताओंकी कुचालभी गुणदायक और सहायक हुई ॥३॥ भाई भरतसे भुजाभरके मिलनेका जो रामचन्द्रजीके स्नेहका रस है वह कहा नहीं जाता ॥४॥

तन मन बचन उमगि अनुरागा ❀ धीर धुरंधर धीरज त्यागा ॥ ५ ॥
बारिजलोचन मोचत वारी ❀ देखि दसा सुरसभा दुखारी ॥ ६ ॥

तनमनवचनसे प्रेम ऐसा उमड़ा कि धर्मधुरंधर धीर (रामचन्द्रजी)नेभी धीरज छोड़ दिया ॥ ५ ॥ कमलसमान नेत्रोंसे जल बहाते हुये देख देवताओंकी सभाभी दुखी हुई ॥ ६ ॥

मुनिगन गुरुजन धीर जनकसे ❀ ज्ञान अनल मन कसे कनकसे ॥ ७ ॥
जे विरंचि निरलेप उपाए ❀ पद्मपत्र जिमि जग जलजाए ॥ ८ ॥

मुनियोंके समूह, और गुरु वसिष्ठ और जनकसरीखे धीरजवान् कि जिन्होंने (अपने) सुवर्णसमान मनको ज्ञानरूपी अग्निमें कस रक्खा है ॥ ७ ॥ और जो संसारमें ब्रह्माके प्रपंचसे इस प्रकार अलग हैं कि जैसे कमलपत्र जलमें रहकरभी अलग रहता है ॥ ८ ॥

दो०-तेउ बिलोकि रघुबर भरत, प्रीति अनूप अपार ॥ ❀
भए मगन मन तनु बचन, सहित बिराग बिचार ॥ ३०९ ॥ ❀

वेभी भरत और रामचन्द्रजीकी अनोखी और अपार प्रीतिको देखकर विचार और वैराग्यसहित तन मन वचनसे (प्रेममें) मगन होगये ॥ ३०९ ॥

चौ०-जहाँ जनक गुरुगति मति भोरी ❀ प्राकृत प्रीति कहत बड़ खोरी ॥ १ ॥
बरनत रघुबर भरत वियोगू ❀ सुनि कठोर कवि जानहिं लोगू ॥ २ ॥

जहां जनक और गुरुकी मतिकी गति भोरी अर्थात् नहीं जासकती है उसको संसारी प्रीति कहना बड़ी बुरी बात है ॥ १ ॥ रामचन्द्र और भरतके वियोगको वर्णन करते हुये सुनकर लोग कवीश्वरको कठोर जानेंगे ॥ २ ॥

सो सकोचबस अकथ सुबानी ❀ समय सनेह सुमिरि सकुचानी ॥ ३ ॥
भेटि भरत रघुबर समुझाए ❀ पुनि रिपुदमन हरषि हिय लाए ॥ ४ ॥

उस सकुचके वश मेरी वाणीभी कुछ नहीं कहसक्ती; उस समयके प्रेमको स्मरणकर सकुचा गई है ॥३॥ रामचन्द्रजीने भरतसे मिलकर (उन्हें) समझाया फिर प्रसन्नतासे शत्रुघ्नको छातीसे लगाया ॥४॥

सेवक सचिव भरतरुखपाई ❀ निज निज काज लगे सब जाई ॥ ५ ॥
सुनि दारुन दुख दुहूँ समाजा ❀ लगे चलनके साजन साजा ॥ ६ ॥

सेवक और मंत्री भरतका रुख पाय सब अपने २ कामोंमें जालगे ॥ ५ ॥ दोनों समाजोंमें सुनकर बड़ा शोक हुआ और चलनेके ठाट सजाने लगे ॥ ६ ॥

प्रभुपदपद्म बंदि दोउ भाई ❀ चले सीस धरि रामरजाई ॥ ७ ॥
मुनि तापस वन देवि निहोरी ❀ सब सनमानि बहोरि बहोरी ॥ ८ ॥

दोनों भाई भगवान् के कमलसमान चरणोंको दंडवतकर रामचन्द्रजीकी आज्ञाको माथेपर रखकर चले ॥७॥ मुनीश्वर तपस्वी और वनदेवियोंकी विनती कर वारंवार सबका आदर किया ॥ ८ ॥

दो०–लषनहिं भेटि प्रनाम करि, सिर धरि सियपदधूरि ॥ ❀
चले सप्रेम असीस सुनि, सकल सुमंगलमूरि ॥ ३१० ॥ ❀

फिर लक्ष्मणजीसे मिलकर और प्रणाम करके सीताजीके चरणोंकी रजको मस्तकपर धरकर सब सुन्दर आनन्दोंकी जड़ अर्थात् करनेवाले ऐसे आशीर्वादको सुनकर बड़े प्रेमसे चले ॥ ३१० ॥

चौ०–सानुज राम नृपहिं सिर नाई ❀ कीन्हि बहुत बिधि बिनय बड़ाई ॥ १ ॥
देव दयाबस बड़ दुख पायउ ❀ सहित समाज काननहिं आयउ ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीने छोटे भाईसमेत राजा (जनक) को शिर नवाय बहुत भाँतिसे प्रार्थना और बड़ाई की ॥१॥ कि–हे देव ! दयाके वश (आपने) बडे दुख पाये जो समाजसमेत वनको आये ॥ २ ॥

पुर पगु धारिय देइ असीसा ❀ कीन्ह धीर धरि गमन महीसा ॥ ३ ॥
मुनि महिदेव साधु सनमाने ❀ बिदा किये हरिहर सम जाने ॥ ४ ॥

अब आशीर्वाद देकर नगरको पधारिये· (फिर) राजाने धीरज धारण कर गमन किया ॥३॥ मुनीश्वर ब्राह्मण और साधुओंका सत्कार किया और विष्णु तथा महादेवकेसमान जानकर बिदा किया ॥४॥

साससमीप गए दोउ भाई ❀ फिरे बंदि पद आसिष पाई ॥ ५ ॥
कौसिक वामदेव जाबाली ❀ परिजन पुरजन सचिव सुचाली ॥ ६ ॥

दोनों भाई सासके पास गये और चरणोंको दंडवत कर आशीर्वाद पाकर बिदा हुये ॥५॥ फिर विश्वामित्र, वामदेव, जाबालि, कुटुम्बी, नगरके लोग और श्रेष्ठ चालचलनवाले मंत्रियोंको ॥ ६ ॥

जथाजोग करि बिनय प्रनामा ❀ बिदा किए सब सानुज रामा ॥ ७ ॥
नारि पुरुष लघु मध्य बड़ेरे ❀ सब सनमानि कृपानिधि फेरे ॥ ८ ॥

छोटे भाईसमेत रामचन्द्रजीने यथायोग्य विनती और प्रणाम करके सबको बिदा किया ॥ ७ ॥ दयाके समुद्र (रामचन्द्रजी) ने छोटे बीचके और बड़े सब स्त्री पुरुष सत्कारकर लौटाये ॥ ८ ॥

दो०–भरत मातु पद बंदि प्रभु, सुचि सनेह मिलि भेटि ॥ ❀
बिदा कीन्ह सजि पालकी, सकुच सोच सब मेटि ॥ ३११ ॥ ❀

भगवानने भरतकी माता (कैकेयी) के चरणोंको दंडवतकर और सच्चे प्रेमसे मिल भेटकर और सब सकुच तथा शोचको त्याग पालकी सजाकर बिदा किया ॥ ३११ ॥

चौ०–परिजन मातुपितुहिं मिलि सीता ❀ फिरी प्रानप्रियप्रेमपुनीता ॥ १ ॥
करि प्रनाम भेटी सब सासू ❀ प्रीति कहत कवि हिय न हुलासू ॥ २ ॥

सीताजी कुटुम्बी और मातापितासे मिलकर प्राणोंके प्यारे (रामचन्द्रजी) के पवित्र स्नेहसे लौटीं ॥ १ ॥ प्रणामकरके सब सासुओंसे मिलीं; उस प्रीतिके कहनेमें कविके हृदयमें आनन्द नहीं होता (क्योंकि) बड़े भारी वियोगका समय है) ॥ २ ॥

सुनि सिख अभिमत आसिष पाई ❀ रही सीय दुहुँ प्रीति समाई ॥ ३ ॥
रघुपति पटु पालकी मँगाई ❀ करि प्रबोध सब मातु चढ़ाई ॥ ४ ॥

शिक्षा सुन और इच्छित आशीर्वाद पाकर सीताजी दोनों अर्थात् सास और माताके स्नेहमें समागई ॥ ३ ॥ रामचन्द्रजीने सुन्दर पालकी मगाई और सब माताओंको समझा बुझाकर (उनपर) चढ़ाया ॥ ४ ॥

बारबार हिलमिलि दोउ भाई ❀ सम सनेह जननी पहुँचाई ॥ ५ ॥
साजि बाजि गज बाहन नाना ❀ भूप भरतदल कीन्ह पयाना ॥ ६ ॥

वारंवार दोनों भाइयोंने हिल मिलकर समान प्रेमसे माता पहुँचाई ॥ ५ ॥ बहुतसे हाथी घोड़े और अनेक वाहनोंको सजाकर राजा (जनक) और भरतने सेना (सहित) प्रस्थान किया ॥ ६ ॥

हृदय राम सिय लषन समेता ❀ चले जाहिं सब लोक अचेता ॥ ७ ॥
बसह बाजि गज पसु हिय हारे ❀ चले जाहिं परबस मन मारे ॥ ८ ॥

सब लोग हृदयमें रामचन्द्र लक्ष्मण और सीताजीको धारण किये वेसुध चले जाते हैं ॥ ७ ॥ खिच्चर घोड़े हाथी और पशु हृदयमें हार, पराये वश मनमारे चले जाते हैं ॥ ८ ॥

दो०–गुरुगुरुतियपद बंदि प्रभु, सीता लषन समेत ॥ ❀
फिरे हरष बिसमय सहित, आए परननिकेत ॥ ३१२ ॥ ❀

भगवान् रामचन्द्रजीभी गुरु और गुरुकी स्त्रीके चरणोंको दंडवत कर सीता और लक्ष्मणजीको साथ लिये आनन्द(१) और सोचसहित पर्णकुटीपर लौटकर आगये ॥ ३१२ ॥

चौ०–बिदा कीन्ह सनमानि निषादू ❀ चलेउ हृदय बड़ बिरह बिषादू ॥ १ ॥
कोल किरात भिल्ल बनचारी ❀ फेरे फिरे जुहारि जुहारी ॥ २ ॥

(भगवान्‌ने) भीलकोभी सत्कार कर विदा किया और (वह) मनमें वियोगका बड़ा विषाद करता चला ॥ १ ॥ फिर कोल किरात भील और वनके रहनेवालोंको लौटाया और वे प्रणाम कर २ के लौटे २

प्रभु सिय लषन बैठि बटछाँहीं ❀ प्रिय परिजनबियोग बिलखाहीं ॥ ३ ॥
भरतसनेह सुभाव सुबानी ❀ प्रिया अनुजसन कहत बखानी ॥ ४ ॥

भगवान् सीता और लक्ष्मणजी वटकी छायामें बैठकर प्यारे कुटुम्बियोंके वियोगमें दुखी होनेलगे ॥ ३ ॥ (भगवान्) भरतके प्रेम स्वभाव और सुन्दर वाणीको प्रिया (सीता) और लक्ष्मणसे वर्णन कर कहते हैं ॥ ४ ॥

प्रीति प्रतीति बचन मन करनी ❀ श्रीमुख राम प्रेमबस बरनी ॥ ५ ॥
तेहि अवसर खग मृग जन मीना ❀ चित्रकूट चर अचर मलीना ॥ ६ ॥

और मनवचनकर्मसे उनकी प्रीति प्रतीति और करणीको रामचन्द्रजीने स्नेहके वश (अपने) श्रीमुखसे कहा ॥ ५ ॥ उस समय चित्रकूटके पक्षी, हिरण, मनुष्य, मछली, चर और अचर सब दुखी हुये ॥६॥

बिबुध बिलोकि दसा रघुबरकी ❀ बर्षि सुमन कहि गति घरघरकी ॥ ७ ॥
प्रभु प्रनाम करि दीन्ह भरोसो ❀ चले मुदितमन डरन खरोसो ॥ ८ ॥

देवताओंने रामचन्द्रजीकी दशा देख फूल वर्षाकर (अपने) घर २ की दशा कही ॥७॥ भगवान्‌ने प्रणाम कर भरोसा दिया और वे मनमें प्रसन्न होते हुये (अपनेस्थानको) गये और कुछभी डर न रहा ॥ ८ ॥

दो०–सानुज सीय समेत प्रभु, राजत परनकुटीर ॥ ❀
भक्ति ज्ञान वैराग्य जनु, सोहत धरे सरीर ॥ ३१३ ॥ ❀

छोटे भाई और सीताजीसहित भगवान् पर्णकुटीमें ऐसे विराजते हैं मानों भक्ति ज्ञान और वैराग्यही शरीर धारण किये शोभायमान हैं ॥ ३१३ ॥

---

(१) आनन्द इस बातका कि सबको विदा किया, और सोच इस बातका कि देवताओंका काम करना है.

चौ०-मुनि महिसुर गुरु भरत भुआलू ❀ रामबिरह सब साज बिहालू ॥ १ ॥
प्रभु गुनग्राम गुनत मनमाहीं ❀ सब चुपचाप चले मगु जाहीं ॥ २ ॥

मुनि ब्राह्मण गुरु भरत और राजा (जनक) रामचन्द्रजीके वियोगमें सब समाज दुखी है ॥ १ ॥ सब लोग मनमें भगवान्के गुणोंके समूहोंको स्मरण करते हुये मार्गमें चुपचाप चले जाते हैं ॥ २ ॥

यमुना उतरि पार सब भयऊ ❀ सो बासर बिनु भोजन गयऊ ॥ ३ ॥
उतरि देवसरि दूसर बासू ❀ रामसखा सब कीन्ह सुपासू ॥ ४ ॥

सब यमुनाजी उतरकर पार हुये और वह दिन विनाही भोजनोंके बीता ॥ ३ ॥ गंगाजी उतरकर दूसरे दिन रामचन्द्रजीके मित्र (निषाद) ने सब सत्कार किया ॥ ४ ॥

सई उतरि गोमती नहाए ❀ चौथे दिवस अवधपुर आए ॥ ५ ॥
जनक रहे पुर बासर चारी ❀ राजकाज सब साज सँभारी ॥ ६ ॥

सई (नदी) को उतर गोमती नदीमें स्नान किया और चौथे दिन अयोध्यापुरीमें आगये ॥ ५ ॥ जनकजी अयोध्यापुरीमें चार दिन रहे और सब राजकाजके समाजको सह्माल कर ॥ ६ ॥

सौंपि सचिव गुरु भरतहिं राजू ❀ तिरहुति चले साजि सब साजू ॥ ७ ॥
नगरनारिनर गुरुसिख मानी ❀ बसे सुखेन रामरजधानी ॥ ८ ॥

और मंत्री, गुरु (वसिष्ठ) और भरतको राज्य सौंप (अपना) सब समाज सजाकर जनकपुरीको चले ॥ ७ ॥ और नगरके स्त्री पुरुष गुरुकी शिक्षा मान सुखपूर्वक रामचन्द्रजीकी राजधानी अयोध्यामें बसे ॥ ८ ॥

दो०-रामदरसलगि लोग सब, करत नेम उपवास ॥ ❀
तजि तजि भूषन भोग सुख, जियत अवधिकी आस ॥२१४॥❀

सब लोग रामचन्द्रजीके दर्शनोंके लिये नियम और उपवास (व्रतादि) करते हैं और भूषण भोग और सुखोंको छोड़ २ कर (केवल चौदह वर्षकी) अवधिकी आशासे जीते हैं ॥ २१४ ॥

चौ०-सचिव सुसेवक भरत प्रबोधे ❀ निज निज काज पाइ सिख सोधे ॥ १ ॥
पुनि सिख दीन्ह बोलि लघु भाई ❀ सौंपी सकल मातुसेवकाई ॥ २ ॥

भरतने मंत्री और अच्छे सेवक समझाये और (उन्होंने) शिक्षा पाकर अपने २ कामको सह्माला ॥ १ ॥ फिर छोटे भाईको बुलाय शिक्षा दे सब माताओंकी सेवा सौंपी ॥ २ ॥

भूसुर बोलि भरत कर जोरे ❀ करि प्रनाम बर बिनय निहोरे ॥ ३ ॥
ऊँच नीच कारज भल पोचू ❀ आयसु देब न करब सकोचू ॥ ४ ॥

भरतने ब्राह्मणोंको बुलाय हाथ जोड़ प्रणाम कर सुन्दर विनती और निहोरे किये ॥ ३ ॥ (और बोले कि) ऊंच नीचे भले बुरे कामकी आज्ञा देतेमें सकुच न करना ॥ ४ ॥

परिजन पुरजन प्रजा बुलाए ❀ समाधान करि सुबस बसाए ॥ ५ ॥
सानुज गे गुरुगेह बहोरी ❀ करि दंडवत कहत कर जोरी ॥ ६ ॥

फिर कुटुम्बी नगरके लोग और प्रजाको बुलाय और समाधान कर सबको अच्छीभांतिसे बसाया ॥ ५ ॥ फिर छोटे भाईसमेत गुरुके घर गये और दंडवत् कर हाथ जोडकर कहने लगे ॥६॥

आयसु होइ तौ रहौं सनेमा ❀ बोले मुनि सुनि पुलकि सप्रेमा ॥ ७ ॥
समुझब कहब करब तुम सोई ❀ धर्मसार जग होइहि जोई ॥ ८ ॥

जो आज्ञा हो तौ नियमसहित रहूं? (यह) सुनकर मुनीश्वर पुलकायमान हो स्नेहसहित बोले कि ॥ ७ ॥ तुम तौ समझकर उसीको कहोगे और करोगे जो संसारमें धर्मका सार होगा ॥ ८ ॥

दो०–मुनिसिख पाइ असीस बड़ि, गनक बोलि दिन साधि ॥
सिंहासन प्रभुपादुका, बैठारी निरुपाधि ॥ ३१५ ॥

मुनीश्वरकी बड़ी शिक्षा और आशीर्वाद पाय ज्योतिषियोंको बुलाय (शुभ) दिन सधाय भगवान्की अच्छीतरह खड़ाऊं सिंहासनपर स्थापन करीं ॥ ३१५ ॥

चौ०–राममातुगुरुपद सिर नाई ❀ प्रभुपदपीठरजायसु पाई ॥ १ ॥
नंदिग्राम करि परनकुटीरा ❀ कीन्ह निवास धर्मधुर धीरा ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीकी माता (कौशल्या) और गुरु इनके चरणोंको शिर नवाकर भगवान्की खड़ाउओंकी आज्ञा पाकर ॥ १ ॥ धर्मधुरंधर धीरजवान् (भरतने) नन्दिग्राममें पर्णकुटी बनाकर निवास किया २

जटाजूट सिर मुनिपद धारी ❀ महि खनि कुससाथरी सँवारी ॥ ३ ॥
असन बसन आसन दृढ़ नेमा ❀ करत कठिन व्रत धर्म सप्रेमा ॥ ४ ॥

माथेपर जटाजूट और (शरीरमें) मुनियोंके वस्त्र धारण किये और पृथ्वी खोदकर कुशोंका बिछौना बनाया ॥३॥ भोजन, वस्त्र, आसन, दृढ़ नियम, और कठिन व्रत तथा प्रेमसे धर्म करने लगे ॥ ४ ॥

भूषन बसन भोग सुख भूरी ❀ मन तनु वचन तजे तृन तूरी ॥ ५ ॥
अवधराज सुरराज सिंहाहीं ❀ दसरथधन लखि धनद लजाहीं ॥ ६ ॥

भूषण वसन भोग और बहुतसे सुख तनमनवचनसे तिनकेकी भांति तुरंत छोड़ दिये ॥ ५ ॥ अवधराजको (देखकर) इन्द्र सिहाता है और दशरथके धनको देख कुबेरभी लजाता है ॥ ६ ॥

तेहि पुर बसत भरत बिनु रागा ❀ चंचरीक जिमि चंपकबागा ॥ ७ ॥
रमाविलास रामअनुरागी ❀ तजत वमनजिमि जन बड़भागी ॥ ८ ॥

उस नगरमें भरतजी ऐसे रागरहित वसते हैं जैसे चंपाके बागमें भौंरा. अर्थात् जैसे भौंरा चंपेकी सुगंधको ग्रहण नहीं करता उसी प्रकार भरतजीने राज्यकी संपत्तिमें मन नहीं लगाया ॥ ७ ॥ क्योंकि रामचन्द्रजीसे प्रेम करनेवाले बड़े बड़भागी होते हैं, वे लक्ष्मीके भोग आदिको वमनके समान त्याग देते हैं ॥ ८ ॥

दो०–रामप्रेमभाजन भरत, बडी न यह करतूति ॥
चातक हंस सराहिअत, टेक बिबेक बिभूति ॥ ३१६ ॥

भरतजी तौ रामचन्द्रजीके प्रेमके पात्र हैं उनको यह करतूत कुछ बड़ी नहीं है, क्योंकि चातक और हंस अपने टेक और विवेककी संपत्तिसेही सराहे जाते हैं ॥ ३१६ ॥

चौ०–देह दिनहिं दिन दूबरि होई ❀ बढ़त तेज बल मुखछबि सोई ॥ १ ॥
नित नव रामप्रेमप्रन पीना ❀ बढ़त धर्मजल मन न मलीना ॥ २ ॥

देह दिन दिन दुबली होती जाती है और तेज बल बढ़ते हैं और मुखकी शोभा ज्योंकी त्यों बनी है ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीमें प्रेम और अपना प्रण दिन२नया होता जाता है, और धर्मका दल बढ़ता जाता है, अथवा धर्मरूपी वृक्षमें दल कहिये शाखापत्रादि बढ़तेही जाते हैं, मन मैला नहीं होता है ॥२॥

---

(१) चातककी टेक और हसंका विवेक–चाहें जो हो चातक स्वातिका जल बरसेगा तभी जल पियेगा नहीं प्यासा मरैगा यही उसकी टेक है। और सिवाय हंसके किसीको इतना ज्ञान नहीं कि दूध पानीको अलग२ करै ॥ जब पक्षियोंका यह हाल है तौ फिर भरतजीने किया तौ क्या बड़ी बात करी ? यही इस दोहेका भाव है.

जिमि जल निघटत सरद प्रकासे ❀ बिलसत बेत सुबनज बिकासे ॥ ३ ॥
सम दम संयम नेम उपासा ❀ नखत भरत हिय बिमल अकासा ॥ ४ ॥

जैसे शरद्ऋतुके प्रकाशसे जल घटता है और बेत फैलता और सुन्दर कमल खिलते हैं ॥ ३ ॥ ऐसेही भरतके हृदयरूपी निर्मल आकाशमें शांति, इन्द्रियोंका रोकना, संयम, नियम, और व्रतरूपी नक्षत्र चमकते हैं ॥ ४ ॥

ध्रुव बिस्वास अवधि राकासी ❀ स्वामिसुरति सुरबीथि बिकासी ॥ ५ ॥
रामप्रेम बिधु अचल अदोषा ❀ सहित समाज सोह नित चोषा ॥ ६ ॥

(रामचन्द्रजीके) आनेका भरोसा सोई ध्रुव (तारा) है, अर्थात् जैसे ध्रुवका तारा नहीं चलसक्ता वैसेही यह आनेका विश्वासभी नहीं जासक्ता; और (चौदह वर्षकी) अवधि पूर्णमासी है और स्वामी (रामचन्द्रजी) की सुरत अर्थात् याद आना सोही सुरवीथी[१] शोभायमान है ॥ ५॥ रामचन्द्रजीका स्नेह मानों कलंक रहित स्थिर चन्द्रमा है, नित्य अपने समाज कहिये तारागणोंसहित अच्छे प्रकारसे शोभायमान है ॥ ६ ॥

भरत रहनि समुझनि करतूती ❀ भक्ति बिरति गुन बिमल बिभूती ॥ ७ ॥
बरनत सकल सुकबि सकुचाहीं ❀ सेष गनेस गिरा गम नाहीं ॥ ८ ॥

भरतकी रहनि, समझ, करतूत,भक्ति, विराग, गुण और निर्मल ऐश्वर्य ॥७॥ (इनका) वर्णन करनेमें सब अच्छे कवि सकुचते हैं, क्योंकि वहां शेषनाग, गणेश और सरस्वतीकीभी बुद्धि नहीं पहुँचती ८

दो०–नित पूजत प्रभुपाँवरी, प्रीति न हृदय समाति ॥ ❀
माँगि माँगि आयसु करत, राजकाज बहुभाँति ॥ ३१७ ॥ ❀

(भरतजी) भगवान्की पादुकाओंको नित्य पूजते हैं, प्रीति हृदयमें नहीं समाती और (उनसे) आज्ञा मांगकर बहुतभांतिके राज्यके काम करते हैं ॥ ३१७ ॥

चौ०–पुलकगात हिय सिय रघुबीरू ❀ जीह नाम जपु लोचन नीरू ॥ १ ॥
लषन राम सिय कानन बसहीं ❀ भरत भवन बसि तप तनु कसहीं ॥ २ ॥

शरीरमें पुलकायमान हो हृदयमें सीता रामचन्द्रजीको धारणकर जीभसे (उनका) नाम जपते हुये नेत्रोंमें जल (भर आता) है ॥ १ ॥ लक्ष्मण रामचन्द्र और सीताजी वनमें रहते हैं और भरत घर रहकर तपसे शरीरको कष्ट देते हैं ॥ २ ॥

दुहुँ दिसि समुझि कहत सबलोगू ❀ सबबिधि भरत सराहन जोगू ॥ ३ ॥
सुनि व्रत नेम साधु सकुचाहीं ❀ देखि दसा मुनिराज लजाहीं ॥ ४ ॥

दोनों ओर समझ सबलोग कहते हैं कि भरत सबभाँति सराहना करने योग्य हैं ॥३॥ (उनके) व्रत और नियमोंको सुनकर साधु सकुचाते और दशाको देख मुनिराज लजाते हैं ॥ ४ ॥

परम पुनीत भरतआचरनू ❀ मधुर मंजु मुद मंगलकरनू ॥ ५ ॥
हरन कठिन कलि कलुष कलेसू ❀ महामोहनिसिदलन दिनेसू ॥ ६ ॥

भरतजीका आचरण बड़ा पवित्र है (कहतेमें जिह्वाको और सुननेमें कर्णोंको) बड़ा मधुर तथा सुन्दर है और आनन्द मंगलका करनेवाला है ॥ ५ ॥ और कलियुगके कठिन पाप और क्लेशोंका हरनेवाला तथा बडे अज्ञानरूपी रातको नाश करनेके लिये सूर्यके समान है ॥ ६ ॥

पापपुंजकुंजरमृगराजू ❀ समन सकल संताप समाजू ॥ ७ ॥
जनरंजन भंजन भवभारू ❀ रामसनेह सुधाकर सारू ॥ ८ ॥

---

(१) सुरवीथी अर्थात् देवगली, एक प्रकारका तारोंका समूह है जो शरद्ऋतुमें दीखा करता है ॥

पापगणरूपी हाथियोंके समूहको सिंह और सब दुःखोंके समूहको नाश करनेवाला है ॥ ७ ॥ भक्तजनोंको आनन्द देनेवाला और संसारके भारोंका नाश करनेवाला है और रघुनाथजीके प्रेमरूपी चन्द्रमाका सार कहिये अमृत है ॥ ८ ॥

छं०-सियरामप्रेम पियूष पूरन होत जन्म न भरत को ।
मुनिमन अगम यम नियम सम दम बिषम व्रत आचरत को ॥
दुख दाह दारिद दंभ दूषन सुजस मिसु अपहरत को ।
कलिकाल तुलसीसे सठहिं हठि रामसनमुख करतको ॥१२॥

सीता रामचन्द्रजीके स्नेहरूपी अमृतसे परिपूर्ण ऐसे भरतका जन्म न होता तौ मुनीश्वरोंके मनसेभी अगम ऐसे यम, नियम, शम, दम और कठिन व्रतोंका आचरण कौन करता? और दुःख, जलन, दरिद्र, पाखंड और पापोंको सुन्दर कीर्तिके बहानेसे कौन नाश करता ? तुलसीदास कहते हैं कि कलियुगमें (मुझसे) मूर्खको हठसे रामचन्द्रजीके सामने कौन करता ? ॥ १२ ॥

सो०-भरतचरित करि नेम, तुलसी जे सादर सुनहिं ॥
सीयरामपदप्रेम, अवधि होइ भवरसबिरति ॥ १२ ॥

तुलसीदास कहते हैं कि जो (मनुष्य) आदरसहित नियम करके भरतके चरित्रोंको सुनेंगे वे संसारके रससे अलग होकर सीता रामचन्द्रजीके चरणोंके स्नेहकी सीमा होंगे, अर्थात् रामजीके चरणोंमें उनका पूर्ण स्नेह होगा ॥ १२ ॥

मंगलविधायक मोददायक सुमिरि रघुवरचरनकौं
शारद रमाकौं ध्याय उरविच लाय संकटहरनकौं ॥

महराज शीलनिधान बालमुकुन्दकी गहि सरनकौं
टीका अयोध्याकांडकी किय जगतजन शुभ करनकौं ॥ १ ॥

शिववदन बाण जु मदनके निधि गणप रदन मिलाइकै
संवत शरदऋतु मास आश्विन पूर्णिमा तिथि पाइकै ॥

मतिमन्द रामेश्वर करी टीका यहै चित्त चाइकै
सज्जन सराहहिं करि कृपा समरत्थ जे सब भाइकै ॥ २ ॥

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विमलविज्ञानवैराग्यसंपादनो
नाम तुलसीकृत अयोध्याकांडः द्वितीयः सोपानः समाप्तः ॥ २ ॥

शुभं भवतु ॥

श्रीसीतारामचन्द्रार्पणमस्तु ॥

इति अयोध्याकाण्डं समाप्तम् ॥

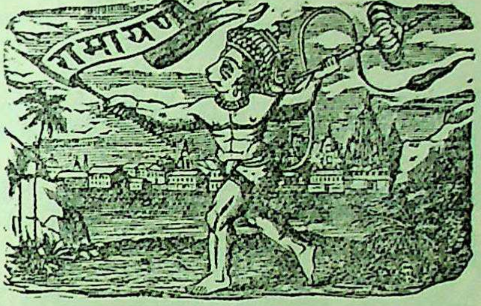

श्रीगोस्वामी

तुलसीदासकृतरामायणम्

पीयूषधाराहिंदीभाषाटीकासहितम्।

(अरण्यकांडम्)

सीताहरण.

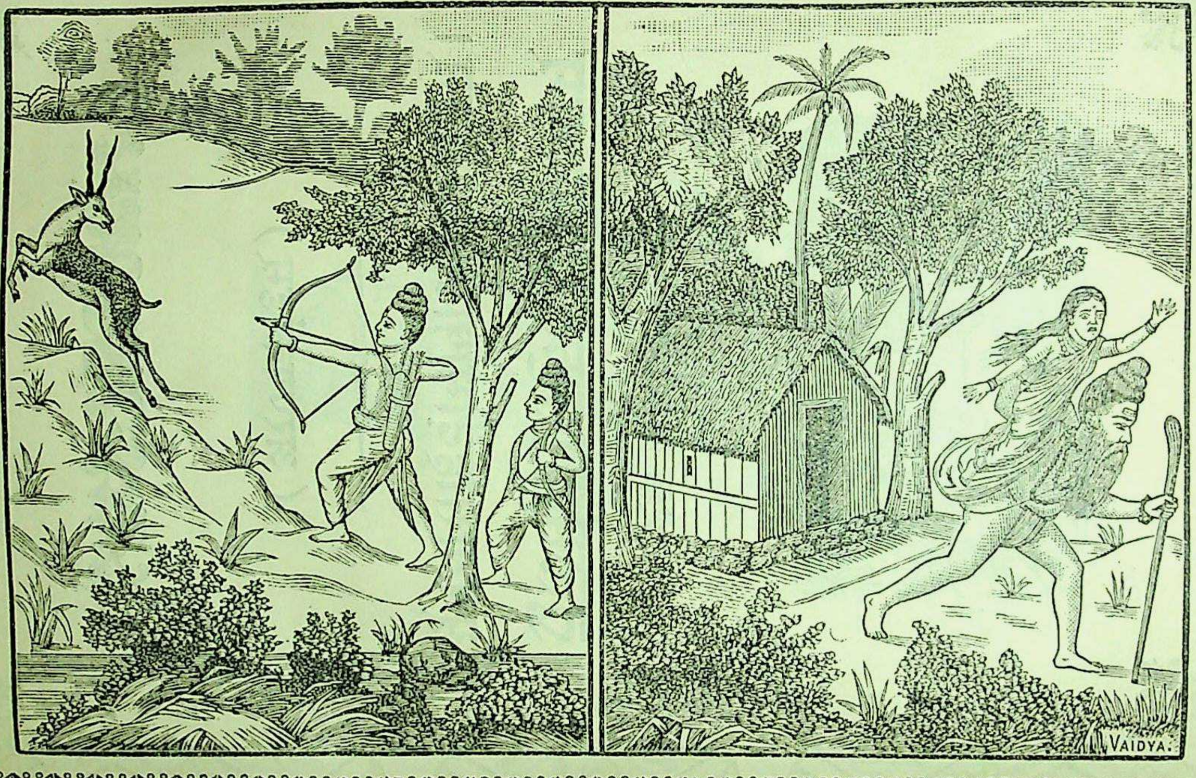

॥ श्रीः ॥

श्रीगोस्वामी

तुलसीदासकृतरामायणम् ।

अरण्यकांडप्रारंभः ।

मंगलाचरणम्.

श्लोकः-मूलं धर्मतरोर्विवेकजलधेः पूर्णेन्दुमानंददं
वैराग्यांबुजभास्करं त्वघहरं ध्वांतापहं तापहम् ।
मोहांभोधरपुंजपाटनविधौ स्वेशं भवं शंकरं
वंदे ब्रह्मकुलं कलंकशमनं श्रीरामभूपप्रियम् ॥ १ ॥
सांद्रानंदपयोदसौभगतनुं पीतांबरं सुंदरं
पाणौ बाणशरासनं कटिलसत्तूणीरभारं वरम् ।
राजीवायतलोचनं धृतजटाजूटेन संशोभितं
सीतालक्ष्मणसंयुतं पथिगतं रामाभिरामं भजे ॥ २ ॥

मंगलाचरण-छन्द गीति.

बुधिसदन वारनवदन राजत अधिक रुचि इक रदनकी ।
शशिभाल नयन विशाल परम कृपाल तन छबि मदनकी ॥
युग पानि सब गुणखानि उर वर वानि दारिदकदनकी ।
सोइ शंभुसुत मति देहु काननकांड भाषा करनकी ॥ १ ॥

श्लोकार्थः-धर्मवृक्षके मूल, विवेकरूपी समुद्रको पूर्ण चन्द्रमाके समान आनन्द देनेवाले, वैराग्य-रूपी कमलके खिलानेके लिये सूर्यरूप, तथा पापनाशक, और अंधकारके दूर करनेवाले, त्रिविध तापके हरनेवाले, और मोहरूपी मेघोंके समूहको तोड़नेके लिये वायुरूप, ब्रह्मकुलके कलंकके नाशक और श्रीराजा रामचन्द्रसे हित करनेवाले शंकरको मैं प्रणाम करता हूं ॥ १ ॥ जलभरेहुए मेघके समान सुन्दर शरीरवाले, पीताम्बर धारण किये, अद्भुतरूप, हाथमें धनुष बाण लिये, कटिमें बाणोंसे भरेहुए तरकसोंसे शोभित, नीलकमलके समान दीर्घ नेत्रवाले, शिरपर जटाजूट बांधे, सीतालक्ष्मण-को साथ लिये मार्गमें जाते हुए, और जानकीजीके प्यारे ऐसे श्रीरामचन्द्रको मैं भजताहूं ॥ २ ॥

सो०-उमा रामगुन गूढ़, पंडित मुनि पावहिं बिरति ।
पावहिं मोह बिमूढ़, जे हरिविमुख न धर्म रति ॥ १ ॥

श्रीमहादेवजी कहते हैं कि हे पार्वती ! रामचन्द्रजीके गुण बड़े छिपे हुये हैं कि जिनसे पंडित और मुनीश्वर तौ वैराग्य पाते हैं और जो मूर्ख हैं और भगवान्से विमुख हैं और जिनकी धर्ममें प्रीति नहीं है वे मोहको प्राप्त होते हैं अर्थात् उनके गुणोंकी निन्दा करते हैं कि रामजी परमेश्वर थे तौ वनमें दुःख क्यों सहते रहे ? घरबैठेही रावणको क्यों न मार दिया ? इत्यादि ॥ १ ॥

चौ०-पुरजन भरतप्रीति मैं गाई ❀ मतिअनुरूप अनूप सुहाई ॥ १ ॥
अब प्रभुचरित सुनहु अतिपावन ❀ करत जु वन सुरनरमुनिभावन ॥ २ ॥

मैने अपनी बुद्धिके अनुसार सुन्दर उपमारहित भरत और पुरजनोंकी प्रीति वर्णन की ॥ १ ॥ अब भगवान्के वे अत्यंत पवित्र चरित सुनो कि जो वनमें करते थे और देवता मुनीश्वर और मनुष्योंके मनको अच्छे लगते थे ॥ २ ॥

एकबार चुनि कुसुम सुहाए ❀ निजकर भूपन राम बनाए ॥ ३ ॥
सीतहिं पहिराए प्रभु सादर ❀ बैठे फटिकसिलापर भाधर ॥ ४ ॥

एक बिरियाँ रामचन्द्रजीने सुन्दर फूल चुनकर अपनेही हाथोंसे आभूषण बनाये ॥ ३ ॥ और भगवान्ने आदरसहित जानकीजीको पहिराये और कांतिमान् स्फटिकशिलापर बैठे थे कि ॥ ४ ॥

सुरपतिसुत धरि वायसवेषा ❀ सठ चाहत रघुपतिबल देखा ॥ ५ ॥
जिमि पिपीलिका सागरथाहा ❀ महामंदमति पावन चाहा ॥ ६ ॥

इन्द्रका पुत्र जयन्त जो अति मूर्ख था उसने कौएँका[2] वेष धारण कर रामचन्द्रजीके बलको

---

(१) सवैया। शिरफूल सज्यो शुचि सेवतिको कलकुन्दकलीनके केश पुहाये ॥
वर बंदियाँ वंजुल बौरनुकी जुहि जूहनु लै झुमका झमकाये ॥
कलकुण्डल काढि कदंबनके बिच काननमें मुकता लटकाये ।
चुनि चारु प्रसून सुरूखनके सियको सब भूपन राम बनाये ॥ १ ॥
नकबेसरि केसरि फूलनकी फुँदना गुलदाउदिके उर गाये ।
गुलबंद गुलाब प्रसूननकौ गल गेरत भौंर घने घिरि आये ॥
रचि चारु चमेलिकी चंपकली हिय मौलसरीके हरा महकाये !
चुनि चारु प्रसून सुरूखनके सियकों बरभूपन राम बनाये ॥ २ ॥
हथफूल हजारेके फूलनुके कल केतकिके कँगना कर ठाये ।
पहुँची सुविचित्र कनेरनुकी गजरा गुलवासनु गूँथि जमाये ॥
गहिकै अहि चंपककी कलियाँ कल चूड़िनते युग पानि सजाये ।
चुनिकै निरदूपन फूलनकौं सियकौं वर भूपन राम बनाये ॥ ३ ॥
पद पाइल मंजु मृणालनुकी घुंघुरू गुलतुर्रनके मन भाये ।
नव नूपुर दाड़िमफूलनकी पदपान पलासप्रसूनन ठाये ॥
कटि कंजकलीनुकी किंकिणि देखि सुमत्त अली उरमें ललचाये ।
चुनिकै निरदूपन फूलनकों सियकों सब भूपन राम बनाये ॥ ४ ॥

(२) यहां शंका यह है कि जयंतने कागहीका वेष धारण क्यों किया, किसी और पक्षीका क्यों नहीं किया ? और रामलक्ष्मण कहां चले गये थे ? इसका समाधान यों है कि जयंतने कागका रूप इसलिये धरा कि यह घर २ में जाता है, कोई मनुष्य इससे भय नहीं खाता है, और दूसरे पक्षीको देख मनुष्य उसी बिरियाँ भय कर उठते हैं. पुनि जयंतको जनकनन्दिनीके चरणमें चोंच मारना यह चांडालकर्म करना है और कागही सब पक्षियोंमें चांडाल गिना गया है, जैसा कहा है कि—

"नराणां नापितो धूर्तः पक्षिणां चैव वायसः ।
दंष्ट्रिणां च शृगालस्तु श्वेतभिक्षुस्तपस्विनाम् ॥"

अर्थात् नरोंमें नाई, पक्षियोंमें वायस, डाढवालोंमें शृगाल और तपस्वियोंमें श्वेतभिक्षु कहिये कोढी, धूर्त

देखना चाहा, अर्थात् यह कि दशरथजी तौ ऐसे थे कि मेरे पिता इन्द्रकोभी कभी २ युद्धमें सहायता देते थे देखूं इनमें कितना पराक्रम है ॥ ५ ॥ सो जैसे चींटी समुद्रकी थाह लेना चाहै इसी प्रकार अतिमन्दबुद्धि (वह जयंत भगवान्के बलकी थाह) लिया चाहता है ॥ ६ ॥

सीताचरन चोंच हति भागा ❀ मूढ मंदमति कारन कागा ॥ ७ ॥
चला रुधिर रघुनायक जाना ❀ सींक धनुष सायक संधाना ॥ ८ ॥

मूर्ख कौआ मन्दबुद्धिके कारण सीताजीके चरणमें चोंच मारकर भागा ॥ ७ ॥ (जब) रामचन्द्रजीने रुधिर बहता जाना तौ सींकका धनुषबाण संधाना ॥ ८ ॥

दो०–अति कृपालु रघुनायक, सदा दीनपर नेह ॥ ❀
तासन आइ सुकीन्ह छल, मूरख अवगुनगेह ॥ १ ॥ ❀

श्रीरामचन्द्रजी तौ अति कृपा करनेवाले और सदा दीनोंसे प्रेम करनेवाले हैं उनसेभी आकर मूर्ख और अवगुणोंके स्थान (जयंत) ने छल किया ॥ १ ॥

चौ०–बिन अपराध प्रभु हतैं न काहू ❀ अवसर परे ग्रसै ससि राहू ॥ १ ॥
जब प्रभु लीन्ह सींक धनु बाना ❀ क्रोध जानि भा अनलसमाना ॥ २ ॥

भगवान् विना अपराध किसीको नहीं मारते; समय पड़नेपर तौ राहुभी चन्द्रमाको ग्रस लेता है ॥ १ ॥ जब भगवान्ने सींकका[1] धनुष वाण ताना तौ वह वाण (भगवान्को) क्रोधित जानकर अग्निके समान होगया ॥ २ ॥

प्रेरितमंत्र ब्रह्मसर धावा ❀ चला भाजि बायस भय पावा ॥ ३ ॥
धरि निजरूप गयउ पितुपाहीं ❀ रामविमुख राखा तिन्ह नाहीं ॥ ४ ॥

और मंत्र पढ़तेही ब्रह्मवाण जो चला सोही कौआ डरके मारे भागा ॥ ३ ॥ और अपना निज[2]-रूप रखकर पिताके पास गया. परन्तु उसने रामचन्द्रजीसे विमुख जान नहीं रक्खा ॥ ४ ॥

भा निरास उपजी उर त्रासा ❀ यथा चक्रभय ऋषि दुर्वासा ॥ ५ ॥
ब्रह्मधाम सिवपुर सब लोका ❀ फिरा असित व्याकुल भय सोका ॥ ६ ॥

फिर तौ उसकी आशा टूट गई और उसके हृदयमें ऐसा दुःख हुआ जैसे दुर्वासा ऋषिके मनमें सुदर्शन चक्रका[3] भय हुआ था (और भागते फिरे थे) ॥ ५ ॥ वह बहुतसा व्याकुल हुआ और भय और शोकके कारण ब्रह्मलोक, शिवलोक, आदि सवही लोकोंमें भागता फिरा ॥ ६ ॥

काहू बैठन कहा न ओही ❀ राखि को सकै रामकर द्रोही ॥ ७ ॥
मातु मृत्यु पितु समनसमाना ❀ सुधा होइ विष सुन हरियाना ॥ ८ ॥

(परंतु) उसे शरण देना तौ एक किनारे रहा किसीने बैठनेतकको तौ कहाही नहीं, (क्योंकि) रामचन्द्रजीके वैरीको कौन रख सक्ता है ? ॥ ७ ॥ कागभुशुंढि कहते हैं कि हे गरुड़ ! सुनो, माता तौ उसकी मृत्यु होजाती है, पिता यम हो जाता है और अमृत विषके समान हो जाता है ॥ ८ ॥

होता है ॥ और लक्ष्मणजी तौ वनमें कन्द मूल फल लेने चलदिये और रामजी जानकीजीकी गोदमें शिर धरकर सोगये; वह कथा इसमें नहीं दीनी परंतु अध्यात्मरामायणमें श्लोक लिखा है कि–

"चित्रकूटगिरौ पूर्वमेकदा रहसि स्थितः !
मदंके शिर आधाय निद्राति रघुनन्दनः ॥ १ ॥

और जानकीजी इस लिये न बोलीं और न हिलीं कि रघुनाथजीकी निद्रामें विक्षेप पडैगा ॥

(१) भगवान्ने सींकका धनुष इसलिये ताना कि उसे तृणवत् समझा और अपना प्रभाव दिखाया ॥

(२) जो अपना रूप न धरता तौ इन्द्र कैसे पहिचानता, और जब इन्द्रने न रक्खा तौ उसने फिर कौए का रूप धरा, क्योंकि अभी बहुत भागना है॥

(३) यह कथा अयोध्याकांडके २१३ दोहे चौपाईकी टिप्पणीमें देखो ॥

मित्र करै सतरिपुकी करनी ❀ ताकहँ बिबुधनदी बैतरनी ॥ ९ ॥
सब जग ताहि अनलते ताता ❀ जो रघुबीरबिमुख सुनु भ्राता ॥ १० ॥

मित्र उसके साथ सौ वैरियोंके समान करनी करने लगता है और गंगाजी उसको वैतरणी नदी हो जाती है ॥ ९ ॥ हे भाई! सुनों, जो रामचन्द्रजीसे विमुख है उसे सब संसार अग्निसेभी तत्ता हो जाता है ॥ १० ॥

दो०–जिमि जिमि भाजत सक्रसुत, व्याकुल अति दुखदीन ॥ ❀
तिमि तिमि धावत रामसर, पाछे परम प्रवीन ॥ २ ॥ ❀

अति व्याकुल, अति दुखी और दीन इन्द्रका पुत्र जैसे२ भागता जाता है तैसे २ रामचन्द्रजीका बड़ा पैना वाण पीछे २ दौड़ता जाता है ॥ २ ॥

चौ०–बचहि उरन वरु ग्रसे खगेसा ❀ रघुपतिसर छुटि बचब अँदेसा ॥ १ ॥
नारद देखा बिकल जयंता ❀ लागि दया कोमलचित संता ॥ २ ॥

गरुड़के पकड़नेसे सर्प भलेही छूट जाय (परंतु) रामजीके वाणसे छूटकर वचनेमें अंदेशा है ॥ १ ॥ जब नारदजीने देखा कि जयंत विकल होगया तौ दया आगई (क्योंकि) संतजनोंके चित्त कोमल हुआ करते हैं ॥ २ ॥

दूरहिते कहि प्रभु प्रभुताई ❀ भजे जात बहुबिधि समुझाई ॥ ३ ॥
पठवा तुरत रामपहँ ताही ❀ कहसि पुकारि प्रनतहित पाही ॥ ४ ॥

सो भागते हुये (जयंत) को दूरहीसे भगवानकी प्रभुता कहकर वहुत भांतिसे समुझाई ॥ ३ ॥ और उसे शीघ्रही रामचन्द्रजीके पास भेजा (और कहा कि) पुकार कर कहियो कि हे दीनहितकारी! (मेरी) रक्षा करो ॥ ४ ॥

आतुर सभय गहेसि पद जाई ❀ त्राहि त्राहि दयालु रघुराई ॥ ५ ॥
अतुलित बल अतुलित प्रभुताई ❀ मैं मतिमंद जानि नहिं पाई ॥ ६ ॥

दुखी (जयंतने) जाकर भयके मारे भगवान्के चरण पकड़ लिये और कहा हे दयानिधान राम! मेरी रक्षा करो ॥ ५ ॥ मेरी मति बड़ी नीच है इसलिये मुझे आपका अतोल बल और अतुलित प्रभुताई नहीं जान पड़ी ॥ ६ ॥

निजकृतकर्मजनित फल पायउँ ❀ अब प्रभु पाहि सरन तकि आयउँ ॥ ७ ॥
सुनि कृपालु अतिआरत बानी ❀ एकनयन करि तजा भवानी ॥ ८ ॥

सो अपने किये कर्मका फल पाचुका, अब हे भगवन्![१] रक्षा करो, मैं आपकी शरण तक कर आया हूं ॥ ७ ॥ महादेव कहते हैं हे पार्वती! दयानिधान भगवान्ने अतिदीन वाणी सुन उसकी एक आंख फोड़ कर छोड़ दिया ॥ ८ ॥

---

(१) यहां यह शंका है कि भगवान्को कृपालु क्यों कहा; जब जयंत शरणही आचुका तौ रामने शरणागतकी आँख क्यों फोड़ी; यह कृपालुता कैसी? और भगवान् जो शरणागतप्रतिपाल कहाते हैं सो बात नहीं रही, इसमें तौ बड़ा बिरोध होगया। तहां कहते हैं कि भगवान्ने तौ कृपाही करी, जो कृपा न होती तौ दोनो आँख फोड़ अंधा कर देते। और एक आँख जो फोड़ी सो उसे जानकीजीसे विरोधका दंड दिया है, जो कहो कि आँखही क्यों फोड़ी, और किसी अंगको भंग करदेते? सो आँख इसलिये फोड़ी कि सुन्दर दो नेत्र होनेपरभी उसको यह नहीं दीख पड़ा कि सीताजी साक्षात् जगन्माता हैं इनके चरणमें चोंच कैसे मारूं? और यहभी कारण है कि शरीरमें नेत्रही प्रधान हैं, अतएव एक आँख फोड़कर उसके शरीरकी सुन्दरता नष्ट कर उसका गर्व और मूर्खता दूर करदी॥ और यह भावभी निकलता है कि एक आँख फोड़नेसें अब वह सबको एक आँखसे देखेगा तौ परमगतिको पावैगा, फिरभी भगवान्की कृपालुता सिद्ध हुई ॥

सो०-कीन्ह मोहवस द्रोह, जद्यपि तेहिकर वध उचित ॥
प्रभु छाँडेउ करि छोह, को कृपालु रघुबीरसम ॥ २ ॥

उसने अज्ञानके वश हो द्रोह किया था सो यद्यपि योग्य तौ उसका मारडालनाही था तौभी भगवान्ने कृपा करके छोड़ दिया, क्योंकि श्रीरामचन्द्रजीके समान दया करनेवाला दूसरा कौन है? २

चौ०-रघुपति चित्रकूट बसि नाना ❀ चरित करत स्रुतिसुधासमाना ॥ १ ॥
बहुरि राम अस मन अनुमाना ❀ होइहि भीर सबहिं मोहिं जाना ॥ २ ॥

रामचन्द्रजी चित्रकूटपर रहकर कानोंको अमृतके समान (सुख देनेवाले) अनेक चरित्र करते रहे ॥ १ ॥ फिर रामचन्द्रजीने मनमें यह अनुमान किया कि यहां तौ (अवधवासियोंकी) भीड़भाड़ लगी रहा करैगी, क्योंकि सबने मुझे जान लिया है ॥ २ ॥

सकल मुनिन्हसन बिदा कराई ❀ सीतासहित चले दोउ भाई ॥ ३ ॥
अत्रीके आस्रम प्रभु गयऊ ❀ सुनत महामुनि हर्षित भयऊ ॥ ४ ॥

इसलिये सब मुनीश्वरोंसे बिदा होकर दोनों भाई जानकीजीसहित चल दिये ॥ ३ ॥ और भगवान् अत्रि (ऋषि) के आश्रममें गये (और उनका आगमन) सुनतेही मुनिराज बड़े प्रसन्न हुये ॥ ४ ॥

पुलकित गात अत्रि उठि धाए ❀ देखि राम आतुर चलि आए ॥ ५ ॥
करत दंडवत मुनि उर लाए ❀ प्रेमबारि दोउ जन अन्हवाए ॥ ६ ॥

अत्रि (ऋषि) शरीरमें पुलकायमान होकर उठ दौड़े और रामचन्द्रजीभी देखकर शीघ्रतासे चलकर आये ॥ ५ ॥ दंडवत करतेही मुनीश्वरने दोनों भाइयोंको हृदयसे लगा लिया और प्रेमके अश्रुजलसे दोनोंको न्हवा दिया ॥ ६ ॥

देखि रामछबि नयन जुड़ाने ❀ सादरनिज आस्रम तब आने ॥ ७ ॥
करि पूजा कहि बचन सुहाए ❀ दिए मूल फल प्रभुमन भाए ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजीकी शोभाको देखकर मुनिके नेत्र शीतल हुये और आदरसहित अपने आश्रमको लिवा लाये ॥७॥ फिर पूजा कर और सुन्दर आधीनीके बचन कहकर भगवान्को मनभावते कंदमूलफल दिये.

सो०-प्रभु आसन आसीन, भरि लोचन सोभा निरखि ॥
मुनिवर परम प्रवीन, जोरि पानि अस्तुति करत ॥ ३ ॥

और आसनपर विराजमान भगवान्की शोभाकी झाँकी कर अतिचतुर मुनिराज हाथ जोड़कर स्तुति करने लगे ॥ ३ ॥

छं०-नमामि भक्तवत्सलं कृपालु शीलकोमलं
भजामि ते पदांवुजं अकामिनां स्वधामदं ॥
निकामश्यामसुदरं भवांवुनाथमंदिरं
प्रफुल्लकंजलोचनं मदादिदोषमोचनं ॥ १ ॥

भक्तोंपर प्यार करनेवाले, कृपालु, कोमल स्वभाववाले ऐसे आपको नमस्कार है ॥ कामनारहित जनोंको अपना धाम देनेवाले, सुन्दर श्याम शरीर धारण किये, संसाररूपी समुद्रके मथनके लिये मन्दराचलरूप, खिलेहुये नीलकमलके समान नेत्रवाले तथा मद आदि दोषोंको छुड़ानेवाले ऐसे आपका मैं भजन करताहूं ॥ १ ॥

प्रलंबबाहुविक्रमं प्रभोऽप्रमेयवैभवं
निषंगचापसायकं धरं त्रिलोकनायकं ॥

दिनेशवंशमंडनं महेशचापखंडनं
मुनींद्रसंतरंजनं सुरारिवृंदभंजनं ॥ २ ॥

हे प्रभो ! आपकी दीर्घ बाहु विक्रमयुक्त हैं, और उनका वैभव परिमाणरहित है. और उनमें तरकस धनुष बाण लियेहो, त्रिलोकीके नाथ हो, सूर्यवंशके शिरोमणि हो, शंकरके धनुषको तोड़नेवाले, मुनींद्र और सन्तोंके प्रसन्न करनेवाले और राक्षसनाशक हो ॥ २ ॥

मनोजवैरिवंदितं अजादिदेवसेवितं
विशुद्धबोधविग्रहं समस्तदूषणापहं ॥
नमामि इंदिरापतिं सुखाकरं सतां गतिं
भजे सशक्तिसानुजं शचीपतिप्रियानुजम् ॥ ३ ॥

शिवजीसे वन्दना किये गये, ब्रह्मादि देवोंसे सेवित, शुद्ध ज्ञानस्वरूप, सम्पूर्ण दुःखोंके नाशक, लक्ष्मीके पति, सुखके निधान, सज्जनोंको मुक्तिदायक, जानकी लक्ष्मणजीको साथ लिये; इन्द्र है प्यारा छोटा भाई जिनका ऐसे रामको प्रणाम कर भजता हूं ॥ ३ ॥

त्वदंघ्रिमूल ये नरा भजंति हीनमत्सराः
पतंति नो भवार्णवे वितर्कवीचिसंकुले ॥
विविक्तवासिनः सदा भजंति मुक्तये मुदा
निरस्य इंद्रियादिकं प्रयांति ते गतिं स्वकाम् ॥ ४ ॥

जो मनुष्य मत्सरहीन होकर आपके चरणकमलोंका भजन करते हैं वे कुतर्करूपी लहरोंसे भरे भवसागरमें नहीं पड़ते हैं, और जो मुक्तिके लिये एकान्तमें बैठकर प्रसन्नतापूर्वक आपको भजते हैं, वे इन्द्रियादिका सुखको छोड़ आपकी गतिको प्राप्त होते हैं ॥ ४ ॥

त्वमेकमद्भुतं प्रभुं निरीहमीश्वरं विभुं
जगद्गुरुं च शाश्वतं तुरीयमेव केवलं ॥
भजामि भाववल्लभं कुयोगिनां सुदुर्लभं
स्वभक्तकल्पपादपं समस्तसेव्यमन्वहम् ॥ ५ ॥

आप एक अद्भुत और समर्थ हैं और इच्छारहित, ईश्वर, सर्वव्यापक, जगद्गुरु, सनातन, तुरीय अर्थात् जाग्रत् स्वप्न सुषुप्तिसे भिन्न, अद्वैत, भक्तिप्रिय, कुयोगियोंको दुर्लभ, अपने भक्तोंको कल्पवृक्षरूप और सम्पूर्ण लोकसे सेवित ऐसे आपका भजन करताहूं ॥ ५ ॥

अनूपरूपभूपतिं नतोऽहमुर्विजापतिं
प्रसीद मे नमामि ते पदाब्जभक्ति देहि मे ॥
पठंति ये स्तवं इदं नरादरेण ते पदं
व्रजंति नात्र संशयस्त्वदीयभावसंयुतम् ॥ ६ ॥

उपमारहित इस राजस्वरूप जानकीपतिको मैं प्रणाम करताहूं. आप प्रसन्न होकर मुझे अपने चरणकमलोंकी भक्ति दीजिये. और जो नर इस स्तुतिको आदरसे पढ़ेंगे वे निस्संदेह तुम्हारी भक्ति पाकर तुम्हारे पदको पावेंगे ॥ ६ ॥

दो०-बिनती करि मुनि लाइ सिर, कह कर जोरि बहोरि ॥
चरनसरोरुह नाथ जनि, कतहुँ तजै मति मोरि ॥ ३ ॥

फिर मुनीश्वर विनती कर शिर नवाय हाथ जोड़कर कहने लगे कि हे स्वामी! मेरी बुद्धि आपके चरणकमलोंका कभी न त्याग करै ॥ ३ ॥

चौ०–जनमजनम तव पद सुखकंदा ॐ बढ़ौ प्रेम चकोर जिमि चंदा ॥ १ ॥
देखि राम मुनिविनय प्रनामा ॐ विविधभाँति पायउ विस्रामा ॥ २ ॥

तुह्मारे सुखदायक चरणोंमें मेरा प्रेम ऐसे बढ़ता रहै जैसे चकोरका (स्नेह) चन्द्रमामें बढ़ता है ॥ १ ॥ रामचन्द्रने मुनीश्वरकी विनती और प्रणाम देखकर बहुतभांति सुख पाया ॥ २ ॥

अनुसूयाके पद गहि सीता ॐ मिली बहोरि सुसील बिनीता ॥ ३ ॥
जो सिय सकललोकसुखदाता ॐ अखिल लोक ब्रह्मांडकि माता ॥ ४ ॥

फिर सीताजी सुन्दर शील और नम्रतासे अनुसूयाके पैरों पड़कर मिलीं ॥ ३ ॥ जो सीताजी सब लोकोंको सुख देनेवाली तथा संपूर्ण लोक और ब्रह्माण्डकी माता हैं ॥ ४ ॥

तेउ पाइ सिय मुनिवरभामिनि ॐ सुखी भई कुमुदिनि जिमि जामिनि ॥ ५ ॥
ऋषिपत्नीमन सुख अधिकाई ॐ आसिष देइ निकट बैठाई ॥ ६ ॥

ऐसे होकरभी जानकीजी श्रेष्ठ मुनीश्वरकी स्त्रीसे मिलीं और ऐसी सुखी हुई जैसे (रातमें चन्द्रको देख) कुमोदिनी खिलती है ॥ ५ ॥ (इस सुशीलताको देख) ऋषिकी स्त्रीके मनमें बड़ा आनन्द हुआ और आशीर्वाद देकर जानकीको पास बिठाया ॥ ६ ॥

दिव्य वसन भूषन पहिराए ॐ जे नित नूतन अमल सुहाए ॥ ७ ॥
जिनहिं निरखि दुख दूरि पराहीं ॐ गरुड़ जानि जिमि पन्नग जाहीं ॥ ८ ॥

और ऐसे सुन्दर वसन भूषण पहिराये जो नित नये निर्मल बने रहते हैं ॥ ७ ॥ और जिन्हें देख दुःख ऐसे दूर भागते हैं जैसे गरुड़को जानकर सर्प भाग जाते हैं ॥ ८ ॥

दो०–ऐसे वसन विचित्र सुठि, दिये सीयकहँ आनि ॥ ॐ
सनमानी प्रियवचन कहि, प्रीति न जाइ बखानि ॥ ४ ॥ ॐ

इस प्रकार सुन्दर विचित्र वस्त्र लाकर सीताजीको दिये और प्यारे वचन कह इतना सत्कार किया कि प्रेम वर्णन नहीं किया जाता ॥ ४ ॥

चौ०–कह ऋषिवधू सरल मृदु बानी ॐ नारिधरम कछु व्याज बखानी ॥ १ ॥
मातु पिता भ्राता हितकारी ॐ मित सुखप्रद सुनु राजकुमारी ॥ २ ॥

ऋषिकी (अनुसूया) ने सीधी कोमलवाणीके बहानेसे स्त्रियोंके कुछ धर्म कहे कि ॥१॥ हे राजकुमारी! सुनो; माता पिता और भाई ये हितकारी तौ होते हैं परन्तु थोड़ेही सुखके देनेवाले होते हैं २

अमितदान भर्ता बैदेही ॐ अधम सो नारि जो सेव न तेही ॥ ३ ॥
धीरज धर्म मित्र अरु नारी ॐ आपदकाल परिखि यहि चारी ॥ ४ ॥

सो हे सीता! अपार सुख देनेवाला तौ स्वामीही होता है; सो वह स्त्री नीच है जो उसका सेवन न करै ॥ ३ ॥ धीरज धर्म मित्र और स्त्री इन चारोंकी विपत्तिके समयमेंही परीक्षा होती है ॥ ४ ॥

वृद्ध रोगवस जड़ धनहीना ॐ अंध बधिर क्रोधी अतिदीना ॥ ५ ॥
ऐसहु पतिकर किय अपमाना ॐ नारि पाव जमपुर दुख नाना ॥ ६ ॥

---

(१) जैसा कहा है कि–

'आपत्सु मित्रं जानीयाद्युद्धे शूरं धने शुचिम् ।
भार्यां क्षीणेषु वित्तेषु व्यसनेषु च बान्धवान् ॥" सरलार्थः ।

वृद्ध रोगी मूर्ख अंधा बहिरा क्रोधी और अति दीन ॥ ५ ॥ ऐसे पतिकाभी निरादर करनेसे स्त्री यमलोकमें अनेक दुःख भोगती है ॥ ६ ॥

एकै धर्म एक व्रत नेमा ❀ काय बचन मन पतिपदप्रेमा ॥ ७ ॥
जग पतिव्रता चारि बिधि अहहीं ❀ वेद पुरान संत अस कहहीं ॥ ८ ॥

(स्त्रीका) यही एक धर्म और यही एक व्रत और नियम है कि तन मन वचनसे पतिके चरणोंमें स्नेह हो ॥७॥ और वेद पुराण और संत यह कहते हैं कि संसारमें पतिव्रता (स्त्री) चार प्रकारकी होती हैं ॥८॥

दो०-उत्तम मध्यम नीच लघु, सकल कहउँ समुझाइ ॥ ❀
आगे सुनहिं ते भव तरहिं, सुनहु सीय चित्त लाइ ॥ ५ ॥ ❀

हे सीता ! चित्त लगाकर सुनो; उत्तम मध्यम नीच लघु सब समझाकर कहती हूं, और जो आगे सुनेंगी वेभी संसारसे तर जायँगी ॥ ५ ॥

चौ०-उत्तमके अस बस मनमाहीं ❀ सपनेहु आन पुरुष जग नाहीं ॥ १ ॥
मध्यम परपति देखहिं कैसे ❀ भ्राता पिता पुत्र निज जैसे ॥ २ ॥

उत्तम (स्त्रियों) के मनमें यह बात रहती है कि (अपने पतिके सिवाय) दूसरा मनुष्य संसारमें नहीं है ॥१॥ मध्यम (स्त्री) पराये पतिको अपने भाई पिता और पुत्रके समान देखती हैं ॥ २ ॥

धर्म विचारि समुझि कुल रहहीं ❀ सो निकृष्ट तिय स्रुति अस कहहीं ॥ ३ ॥
विन अवसर भयते रह जोई ❀ जानेहु अधम नारि जग सोई ॥ ४ ॥

और वेद ऐसा कहते हैं कि जो धर्मको विचार और समझकर कुलमें रह जाती हैं वे बहुत बुरी स्त्री हैं ॥३॥ जो समय न मिलनेसे (अथवा) डरसे (धर्मपर आरूढ) रहती है उसे संसारमें नीच स्त्री जानों ४

पतिबंचक परपतिरति करई ❀ रौरव नरक कलपसत परई ॥ ५ ॥
छिनसुखलागि जनम सत कोटी ❀ दुख न समुझ तेहि सम को खोटी ॥ ६ ॥

जो अपने पतिको धोखा देकर पराये पतिसे प्रीति करती है वह सौ कल्पतक रौरव नरकमें पड़ती है ॥ ५ ॥ जो क्षणभरके सुखके लिये सौ करोड़ जन्मोंके दुःखको न समझे उसके समान खोटी और कौन है ? ॥ ६ ॥

बिनु स्रम नारि परमगति लहई ❀ पतिव्रतधरम छाँड़ि छल गहई ॥ ७ ॥
पति प्रतिकूल जनमि जहँ जाई ❀ विधवा होय पाइ तरुनाई ॥ ८ ॥

जो कपट छोड़कर पतिव्रताधर्मका पालन करै वह स्त्री विनाही परिश्रमके परमगतिको प्राप्त होती है ॥ ७ ॥ और पतिके विपरीत रहनेसे तौ जहां जाकर जन्म लेगी वहांही तरुण अवस्था पाकर विधवा हो जायगी ॥ ८ ॥

सो०-सहजअपावनि नारी, पति सेवत सुभगति लहहिं ॥ ❀
जस गावत स्रुति चारि, अजहुँ तुलसिका हरिप्रिया ॥ ४ ॥ ❀

और स्त्री तौ स्वभावहीसे अपवित्र है, पर पतिकी सेवा करनेसे शुभ गति पाती है, और वेद

---

(१) भागवतमें लिखा है कि—

"दुःशीलो दुर्भगो वृद्धो जडो रोग्यधनोऽपि वा ।
पतिः स्त्रीभिर्न हातव्यो लोकेप्सुभिरपातकी ॥ १ ॥"

इसका अर्थ चौपाईसे मिलता है.

उसका यश गाते हैं (देखो जलंधर राक्षसकी स्त्री वृन्दा अपने पतिव्रत धर्मसे तुलसी हुई कि जो) तुलसी भगवान्‌को अबतक प्यारी है ॥ ४ ॥

सुनु सीता तव नाम, सुमिरि नारि पतिव्रत करहिं ॥
तुमहिं प्रानप्रिय राम, कहेउँ कथा संसारहित ॥ ५ ॥

हे सीता ! सुनो तुह्मारे नामको स्मरण कर स्त्रियाँ पतिव्रत (धर्म) साधैंगी और तुमको रामचन्द्र प्राणोंसे प्यारे हैं और मैंने तौ यह कथा संसारके हितके लिये कही है ॥ ५ ॥

चौ०-सुनि जानकी परम सुख पावा ❀ सादर तासु चरन सिर नावा ॥ १ ॥
तब मुनिसन कह कृपानिधाना ❀ आयसु होउ जाउं वन आना ॥ २ ॥

सीताजीने सुनकर बड़ा सुख पाया और आदरसहित उसके चरणोंमें शिर नवाया ॥ १ ॥ तब दयाके समुद्र (भगवान्) ने मुनीश्वरसे कहा कि आज्ञा दीजिये तौ मैं दूरसे वनको जाऊं ॥ २ ॥

संतत मोपर कृपा करेहू ❀ सेवक जानि तजहु जनि नेहू ॥ ३ ॥
धरमधुरंधर प्रभुकै बानी ❀ सुनि सप्रेम बोले मुनि ज्ञानी ॥ ४ ॥

मेरे ऊपर सदा दया करते रहना और सेवक जान कर स्नेह मत छोड़ना ॥ ३ ॥ धर्मधुरंधर भगवान्‌की वाणी सुनकर ज्ञानी मुनिराज प्रेमसे बोले कि ॥ ४ ॥

जासु कृपा अज सिव सनकादी ❀ चहत सकल परमारथबादी ॥ ५ ॥
ते तुम राम अकाम पियारे ❀ दीनबंधु मृदु बचन उचारे ॥ ६ ॥

जिन (आप) की कृपाको ब्रह्मा शिव सनकादि (ऋषि) और सम्पूर्ण मोक्षके ज्ञाता चाहते हैं ॥ ५ ॥ हे राम ! ऐसे आप बिना प्रयोजन भक्तोंके प्यारे और दीन जनोंके बंधु होकर मुझसे इसप्रकार कोमल बचन बोले ॥ ६ ॥

अब जानी मैं श्रीचतुराई ❀ भजिय तुमहिं सब देव बिहाई ॥ ७ ॥
जेहिं समान अतिसय नहिं कोई ❀ ताकर सील कस न अस होई ॥ ८ ॥

सो अब मैंने लक्ष्मीजीकी चतुराई जान लीनी कि वे इसीलिये सब देवताओंको छोड़ आपको भजती हैं ॥७॥ भला जिसके समान और जिससे बढ़कर कोई नहीं है उसका स्वभाव ऐसा क्यों न हो ? ॥ ८ ॥

केहि बिधि कहौं जाहु अब स्वामी ❀ कहहु नाथ तुम अंतर्यामी ॥ ९ ॥
अस कहि प्रभु बिलोकि मुनि धीरा ❀ लोचन जल बह पुलक सरीरा ॥ १० ॥

हे स्वामी ! भला मैं किसभाँति कहूं कि अब आप जाइये ? हे नाथ ! आपही कहिये, आप तौ अंतर्यामी हैं ॥ ९ ॥ ऐसे कहकर धीर मुनिने भगवान्‌की ओर देखा तौ नेत्रोंसे जल बहने लगा और शरीर पुलकायमान होगया ॥ १० ॥

छं०-तनु पुलक निर्भरप्रेमपूरन नयन मुखपंकज दिए।
मन ज्ञान गुन गोतीत प्रभु मैं दीख जप तप का किए ॥
जप जोग धरमसमूह ते नर भक्त अनुपम पावई।
रघुवीरचरित पुनीत निसिदिन दासतुलसी गावई ॥ ७ ॥

---

(१) वृन्दाकी कथा—जालन्धरकी स्त्री वृन्दा बड़ी पतिव्रता थी; इसकारण जब जालन्धरसे इन्द्रादि सब देवता हारगये तब विष्णु और शिवजीने एकमत किया और विष्णुने तौ उसका पतिव्रत धर्म खोया और शिवजीने जालन्धरको युद्धमें जीत लिया-यह चरित्र देख वृन्दाने विष्णुको शाप दिया कि, पाषाण होजाओ; और विष्णुने वृन्दाको शाप दिया कि तू तुलसीनामक वृक्ष होजा.

मुनिका शरीर पुलकायमान होकर पूर्ण प्रेमसे भरगया और नेत्र भगवान्के कमलसमान मुखकी ओर लगगये और मुनि कहने लगे कि जो भगवान् मन ज्ञान गुण और इन्द्रियोंसे परे हैं उनके दर्शन मिले, ऐसे मैंने क्या जप तप किये हैं (जिसका यह फल है) ! तुलसीदास कहते हैं कि जो (मनुष्य) रामचन्द्रजीके पवित्र चरित्रोंको रातदिन गावैंगे वे मनुष्य जप, योग,धर्म, और उपमारहित भक्तिको पावेंगे ॥७॥

दो०-कलिमलसमन दमन मन, रामसुजस सुखमूल ॥
सादर सुनहिं जे ताहिपर, राम रहहिं अनुकूल ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीका सुन्दर यश कलियुगके पापोंको नाश करनेवाला, मनको रोकनेवाला और आनन्दका देनेवाला है; जो इसे आदरसहित सुनैगा उसपर रामचन्द्रजी कृपा करते रहैंगे ॥ ६ ॥

सो०-कठिनकाल मलकोष, धर्म न ज्ञान न जोग तप ॥
परिहर सकल भरोस, राम भजहिं ते चतुर नर ॥ ६ ॥

यह कलियुग पापका भंडार है, इसमें धर्म, ज्ञान, योग, जप, कुछभी नहीं है, इसलिये जो सबका भरोसा छोड़ रामका भजन करते हैं वेही चतुर मनुष्य हैं ॥ ६ ॥

दो०-मुनिहुँकि अस्तुति कीन्ह प्रभु, दीन्ह सुभग वरदान ॥
सुमनवृष्टि नभसंकुल, जय जय कृपानिधान ॥ ७ ॥

भगवान्नेभी मुनीश्वरकी स्तुति करी और सुन्दर वरदान दिया । आकाश फूलोंकी वर्षासे छागया और हे दयानिधान ! आपकी जय होय २ (ऐसा शब्द होने लगा) ॥ ७ ॥

चौ०-मुनिपदकमल नाइ करि सीसा ❀ चले वनहिं सुर नर मुनि ईसा ॥ १ ॥
आगे राम अनुज पुनि पाछे ❀ मुनिवरबेष बने अति आछे ॥ २ ॥

देवता मनुष्य और मुनीश्वरोंके स्वामी (भगवान्) ने मुनिराजके चरणकमलोंको शिर नवाकर (दंडक) वनके लिये प्रस्थान किया ॥ १ ॥ आगे २ रामचन्द्र पीछे २ लक्ष्मण मुनिका सुन्दर वेष धारण किये हैं ॥ २ ॥

उभय बीच सिय सोहति कैसी ❀ ब्रह्मजीवबिच माया जैसी ॥ ३ ॥
सरिता वन गिरि अवघट घाटा ❀ पति पहिंचानि देहिं बर बाटा ॥ ४ ॥

और दोनोंके बीचमें सीताजी कैसी शोभायमान् लगती हैं जैसे ब्रह्म और जीवके बीचमें माया लगती हो ॥३॥ नदी,वन और पर्वत ऊंचे नीचे मार्गमें अपना स्वामी पहँचान कर सुन्दर मार्ग देते जाते हैं ४

जहँ जहँ जाहिं देव रघुराया ❀ करहिं मेघ नभ तहँ तहँ छाया ॥ ५ ॥
आस्रम बिपुल दीख बनमाहीं ❀ देवसदन तेहि पटतर नाहीं ॥ ६ ॥

और जहाँ २ रामचन्द्रजी जाते हैं तहां २ ही मेघ आकाशमें छाया करते जाते हैं ॥ ५ ॥ वनमें बहुतसे ऐसे आश्रम देखे कि जिनके समान देवताओंके स्थान अर्थात् स्वर्गादिभी नहीं है ॥ ६ ॥

बहु तड़ाग सुंदर अमराई ❀ भाँति भाँति सब मुनिन्ह लगाई ॥ ७ ॥
दिव्य विटप फल चहुँ दिसि सोहैं ❀ देखत सकल सुरन मन मोहैं ॥ ८ ॥
तेहि दिन प्रभु तहँ कीन निवासा ❀ सकल मुनिन मिलि कीन्ह सुपासा ॥९॥

वहुत सरोवरोंपर सब मुनीश्वरोंने भाँति२की सुन्दर आमकी बगीचियां लगा रक्खी हैं ॥ ७ ॥ चारों दिशाओंमें सुन्दर वृक्षोंपर फल लटक रहे हैं जो देखतेही सब देवताओंके मनको मोहित करते हैं ॥८॥ उस दिन भगवान्ने वहाँ निवास किया और सब मुनीश्वरोंने मिलकर उनकी पहुनाई की ॥ ९ ॥

दो०-निज निज आस्रम वेदिका, तेहिपर तुलसि विराज ॥ ❀
अनुजजानकीसहित तहाँ, राजत भए रघुराज ॥ ८ ॥ ❀

अपने २ आश्रममें वेदियाँ बन रही हैं. जिनपर तुलसीके बिरवे शोभायमान हैं. छोटे भाई लक्ष्मण और जानकीजीसहित रामचन्द्रजी वहाँ विराजमान हुये ॥ ८ ॥

आनि सुआसन मुदित मन, पूजि पहुनई कीन्ह ॥ ❀
कंद मूल फल अमियसम, आनि रामकहँ दीन्ह ॥ ९ ॥ ❀

(मुनियोंने) अपने २ सुन्दर आश्रममें लाकर प्रसन्न चित्तसे पूजाकर मिहमानी की और अमृतके समान कन्द मूल फल लाकर रामचन्द्रजीकी भेट किये ॥ ९ ॥

चौ०-अनुजसीय सह भोजन कीन्हा ❀ जो जेहि भाव सुभग वर दीन्हा ॥ १ ॥
होत प्रभात मुनिन्ह सिर नावा ❀ आसीर्वाद सबहिसन पावा ॥ २ ॥

लक्ष्मण और सीताजी सहित भोजन किया और जो जिसे अच्छा लगा (उसे वही) सुन्दर वरदान दिया ॥ १ ॥ सबेरा होतेही मुनियोंको शिर नवाया और सबसे आशीर्वाद पाया ॥ २ ॥

सुमिरि उमापति सिद्धि गनेसा ❀ पुनि प्रभु चले सुनहु विहगेसा ॥ ३ ॥
बन अनेक सुंदर गिरि नाना ❀ लाँघत चले जाइँ भगवाना ॥ ४ ॥

(कागभुशुंडजी कहते हैं कि) हे गरुड़ ! सुनो, फिर सिद्धिदाता गणेश और महादेवका स्मरणकर भगवान् चले ॥ ३ ॥ अनेक वन और बहुतसे सुन्दर पर्वतोंको लाँघते हुये भगवान चले जाते हैं ॥४॥

मिला असुर विराध मगु जाता ❀ गर्जत घोर कठोर रिसाता ॥ ५ ॥
रूप भयंकर मानहुँ काला ❀ वेगवंत धायउ जिमि ब्याला ॥ ६ ॥

मार्ग चलतेमें विराध राक्षस मिला और क्रोध करके वड़ी कठिन घोर गर्जना करने लगा ॥ ५ ॥ भयंकर रूप मानों (साक्षात्) काल है, ऐसा शीघ्र दौड़ा जैसे सर्प दौड़ता है ॥ ६ ॥

गगन देव मुनि किन्नर नाना ❀ तेहि छिन हृदय हारि भय माना ॥ ७ ॥
तुरतहिं सो सीतहि लै गयऊ ❀ रामहृदय कछु बिस्मय भयऊ ॥ ८ ॥

आकाशमें देवता मुनीश्वर और बहुतसे किन्नर उस समय हृदयमें हारकर डरगये ॥ ७ ॥ वह तुरंतही सीताजीको लेगया । तव रामचन्द्रजीके मनमें कुछ दुःख हुआ ॥ ८ ॥

समुझि हृदय कैकेयि कुकरनी ❀ कही अनुजसन बहुबिधि बरनी ॥ ९ ॥
बहुरि लषन रघुवरहिं प्रबोधा ❀ पाँच बान छाँडे करि क्रोधा ॥ १० ॥

कैकेयीकी बुरी करनीको मनमें समझ लक्ष्मणजीसे बहुतभांति बखानकर कही ॥ ९ ॥ फिर लक्ष्मणजीने रामचन्द्रजीको बहुतभांति समझाया और क्रोध करके पांच वाण छोड़े ॥ १० ॥

छं०-भयं क्रोध लषन सँधानि धनु सर मारि तेहि व्याकुल कियो । ❀
पुनि उठि निसाचर राखि सीतहिं सूल लै छाँडत भयो ॥ ❀
जनु कालदंड कराल धावा विकल सब खग मृग भये । ❀
धनु तानि श्रीरघुबंसमनि पुनिकाटि तेहि रज सम किये ॥८॥ ❀

लक्ष्मणजीने क्रोधित हो धनुष संधानकर बाणसे मारकर उस विराधको व्याकुल करदिया । फिर राक्षस उठकर और सीताजीको रखकर त्रिशूल लेकर छोड़ता हुआ ऐसा लगा मानो कठिन यमराज भागा आता है. (उससमय) सब पशु पक्षी दुखी हुये-फिर श्रीरामचन्द्रजीने धनुष्य चढ़ाकर उसके (त्रिशूल) को काटकर धूलके समान करदिया ॥ ८ ॥

दो०–बहुरि एक सर मारेऊ, परा धरनि धुनि माथ ॥
उठा प्रबल सो गर्जेऊ, चलेउ जहाँ रघुनाथ ॥ १० ॥

फिर एक बाण और मारा जिससे वह शिर धुनकर पृथ्वीपर गिर पड़ा. पर फिर वह उठा और बहुत गर्जा और जहां रामचन्द्रजी थे वहां चला ॥ १० ॥

चौ०–ऐसे कहत निसाचर धावा ॥ अब नहिं बचहु तुमहि मैं खावा ॥ १ ॥
आव प्रबल जेहि बिधि जनु भूधर ॥ होइहि कहा कहहिं व्याकुल सुर ॥ २ ॥

राक्षस ऐसे कहता हुआ दौड़ा कि तुम अब न बचोगे, मैं तुम्हें खा जाऊंगा ॥१॥ और वह बली ऐसे आया मानों कोई पर्वत आता होय। (यह देख) देवता दुखी होकर कहने लगे कि क्या होनहार है? ॥२॥

तासु तेज सतमरुतसमाना ॥ टूटहिं तरु बहु उड़हि पषाना ॥ ३ ॥
जीव जंतु जहँलगि रहे जेते ॥ व्याकुल भागि चले सब तेते ॥ ४ ॥

उसका तेज सौ पवनोंकी बरावर है (उसके आनेसे) वृक्ष टूटने और बहुतसे पत्थर उड़ने लगे ॥ ३ ॥ जहांतक जितने जीव जंतु थे उतने सब दुखी होकर भाग चले ॥ ४ ॥

उरगसमान जोरि सर साता ॥ आवतही रघुवीर निपाता ॥ ५ ॥
तुरतहिं रुचिर रूप तेहिं पावा ॥ देखि दुखी निजधाम पठावा ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीने सर्पके समान सात शर जोड़कर उसे आतेही मारड़ाला ॥ ५ ॥ मरतेही उसने तुरंतही सुन्दर रूप पाया और रामने उसे दुखी देखकर अपने धामको पहुँचाया ॥ ६ ॥

तासु अस्थि गाड़ेउ प्रभु धरनी ॥ देव मुदित लखि प्रभुकी करनी ॥ ७ ॥
सीता आइ चरन लपटानी ॥ अनुजसहित तब चले भवानी ॥ ८ ॥

और भगवान्ने उसके हाड़ पृथ्वीमें गाड़ दिये । देवता भगवान्की इस करनीको देखकर प्रसन्न हुये ॥ ७ ॥ (महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! फिर तो सीताजी आकर (रघुनाथजीके) चरणोंमें लिपट गईं और वे लक्ष्मणजीको साथ लेकर आगे चले ॥ ८ ॥

वहाँ शक्र जहँ मुनि सरभंगा ॥ आये सकल देव मुनि संगा ॥ ९ ॥
गए कहन प्रभु देन सिखावन ॥ दिसि बल भेद बसत जहँ रावन ॥१०॥

इतनेमें इन्द्रभी सब देवता और मुनियोंको साथ लेकर जहाँ शरभंग मुनि थे वहाँको पधारे॥९॥और वे भगवान्से जहां रावण रहता था सो दिशा उसका बल और भेद कहने और सिखानेके लिये गये थे १०

दो०–सुरपतिसंसय तिमिरसम, रघुपतितेज दिनेस ॥
रावनजीवन निसासम, बीते छुटहि कलेस ॥ ११ ॥

इन्द्रका भ्रम अंधकारके समान है (उसे दूर करनेके लिये) रघुनाथजीका तेज सूर्यके समान है, सो रावणका जीवन जो रातके समान है इसके वीत जानेपर (इन्द्रादि देवताओंका) क्लेश छूटैगा ॥ ११ ॥

चौ०–सुनासीर प्रभु तेहि छिन देषा ॥ तेज निधान सुभ्र अति वेषा ॥ १ ॥
तुरग चारि बल मरुत समाना ॥ रथ रविसम नहिं जाइ बखाना ॥ २ ॥

उससमय भगवान्ने इन्द्रको ऐसा देखा कि तेजका पुंज और बड़ा सुफेद भेस है ॥ १ ॥ उसका रथ सूर्यके (रथके) समान था और उसमें ऐसे बलवान् और पवनके समान तेज चार घोड़े जुत रहे थे कि वर्णन नहीं किया जाता ॥ २ ॥

---

(१) विराध पूर्वजन्मका गन्धर्व था–एक बार कुवेरके पास कार्यवश समयपर नहीं पहुँच सका–कुवेरने शाप दिया कि तू राक्षस होजा और जव रामके साथ तेरा युद्ध होंगा तब तू दिव्य शरीर धारण कर वैकुंठ जायगा ॥

छिति न परस अंतरहित रहई ❀ स्वेत छत्र चामर सिर ढ़रई ॥ ३ ॥
अनुजहि प्रियहिं कहा समझाई ❀ सुरपतिमहिमा गुन प्रभुताई ॥ ४ ॥

जो (रथ) पृथ्वीको विना छूता हुआ अधर चला आता है और जिसपर श्वेत छत्र है और मस्तकपर चँवर ढुलता आता है ॥ ३ ॥ भगवान्ने इन्द्रकी बड़ाई और गुणोंकी प्रभुता लक्ष्मण और सीताजीसे समझाकर कही ॥ ४ ॥

जेहि कारन बासव तहँ आए ❀ सो कछु बचन कहै नहिं पाए ॥ ५ ॥
बीचहि सुनि आउब प्रभु केरा ❀ कहि सारथिहिं तुरत रथ फेरा ॥ ६ ॥

सो जिस कारण इन्द्र वहां आये थे सो बात तौ कुछ कहने नहीं पाये कि ॥ ५ ॥ बीचमेंही भगवान्का आना सुनकर सारथीसे कहकर तुरन्त रथ लौटाया ॥ ६ ॥

दूरहिंते करि प्रभुहिं प्रनामा ❀ हर्षि सुरेस गयउ निजधामा ॥ ७ ॥
पुनि आये जहँ मुनि सरभंगा ❀ सुन्दर अनुज जानकी संगा ॥ ८ ॥

और दूरहीसे भगवान्को दंडवत कर प्रसन्न होते हुये इन्द्र तौ अपने स्थानको गये (क्यों कि जिसलिये गये थे वह काम तौ होही गया अर्थात् रामजी आगये, अब मुनिके पास जाना वृथा है) ॥७॥ फिर जहां शरभंग मुनिका आश्रम था वहां भगवान् सुन्दर लक्ष्मण और सीताजीको संग लेकर आये८

दो०–देखि राममुखपंकजहिं, मुनिवरलोचनभृंग ॥ ❀
सादर पान करत अति, धन्य जनम सरभंग ॥ १२ ॥ ❀

रामचन्द्रजीके मुखरूपी कमलको देख जिन श्रेष्ठ मुनीश्वरके नेत्ररूपी भ्रमर (छवीरूपी मकरंदको) आदरसहित पान करने लगे, अर्थात् जैसे भ्रमर कमलके रसको पीता है वैसेही ऋषि रामजीकी छविको वड़ी रुचिसे दर्शन करने लगे । ऐसे उन शरभंग मुनिके जन्मको धन्य है ॥ १२ ॥

चौ०–कह मुनि सुनु रघुबीर कृपाला ❀ संकरमानसराजमराला ॥ १ ॥
जात रहेउँ बिरंचिके धामा ❀ सुनेउँ स्रवन वन आवत रामा ॥ २ ॥

मुनिने कहा कि हे महादेवके मनरूपी (मानसरोवर) के राजहंस! हे दयासागर रामचन्द्रजी! सुनिये ॥ १ ॥ मैं ब्रह्मलोकको जाता था सो मेरे कानोंमें भनक पड़गई कि रामचन्द्रजी वनको आते हैं२

चितवत पंथ रहेउँ दिन राती ❀ अब प्रभु देखि जुड़ानी छाती ॥ ३ ॥
नाथ सकल साधन मैं हीना ❀ कीन्हीं कृपा जानि जन दीना ॥ ४ ॥

सो दिन रात राह देखता रहा । अब स्वामीके दर्शन कर छाती ठंडी हुई ॥ ३ ॥ हे प्रभो ! मैं तौ सब साधनहीन हूं आपने जो दीन जन जानकर कृपा की है ॥ ४ ॥

सो कछु देव न मोर निहोरा ❀ निजप्रन राखेउ जन मन चोरा ॥ ५ ॥
तबलगि रहहु दीनहितलागी ❀ जबलगि तुम्हैं मिलौं तनु त्यागी ॥ ६ ॥

सो हे भगवन् ! मेरेलिये निहोरा कहिये नई बात नहीं है, आपने अपना प्रण रक्खा है. (क्यों कि) आप भक्तजनोंके चित्तको मोहनेवाले हो ॥ ५ ॥ अब मुझ दीनके कल्याणके लिये तबतक निवास करो जवतक शरीर छोड़कर आपसे मिलूं ॥ ६ ॥

जोग जज्ञ जप तप व्रत कीन्हा ❀ प्रभुकहँ देइ भक्ति वर लीन्हा ॥ ७ ॥
इहि बिधि सर रचि मुनि सरभंगा ❀ बैठे हृदय छाँड़ि सब संगा ॥ ८ ॥

योग यज्ञ जप तप और व्रत जो कुछ किया था भगवान्को अर्पण कर भक्तिका वरदान मांग लिया ॥ ७ ॥ इसप्रकार शरभंग मुनि चिता वनाकर हृदयसे सब वासना छोड़ उसपर बैठ गये (और यह स्मरण करने लगे कि) ॥ ८ ॥

दो०-सीताअनुजसमेत प्रभु, नील जलज तनु स्याम ॥ ❀
मम हिय बसहु निरंतर, सगुनरूप श्रीराम ॥ १३ ॥ ❀

नील कमलके समान साँवले शरीरवाले और लक्ष्मण जानकीजीको साथ लिये ऐसे भगवान् रामचन्द्रजी सगुणरूपसे मेरे हृदयमें सदा निवास करो ॥ १३ ॥

चौ०-अस कहि जोगअगनितनु जारा ❀ रामकृपा बैकुंठ सिधारा ॥ १ ॥
ताते मुनि हरिलीन न भयऊ ❀ प्रथमहि भेद भक्ति बर लयऊ ॥ २ ॥

ऐसे कहकर योगकी अग्निमें शरीर जलादिया और रामचन्द्रजीकी दयासे वैकुंठको गमन किया ॥ १ ॥ और मुनीश्वर भगवान्में लीन इस कारण न हुए कि उन्होंने पहेलेही भक्तिका अलग वरदान माँन लिया था ॥ २ ॥

ऋषिनिकाय मुनिवरगति देषी ❀ सुखी भए निजहृदय विसेषी ॥ ३ ॥
अस्तुति करहिं सकल मुनिवृंदा ❀ जयति प्रनतहित करुनाकंदा ॥ ४ ॥

ऋषियोंके समूह श्रेष्ठ मुनिकी दशा देखकर अपने मनमें बहुत सुखी हुये ॥ ३ ॥ सब मुनीश्वरोंके समूह स्तुति करने लगे कि दयालु दीनहितकारी (भगवान्) की जय होय ॥ ४ ॥

पुनि रघुनाथ चले बन आगे ❀ मुनिवरवृंद चले सँग लागे ॥ ५ ॥
अस्थिसमूह देखि रघुराया ❀ पूछा मुनिन्ह लागि अति दाया ॥ ६ ॥

फिर रामचन्द्रजी आगे वनको चले तौ श्रेष्ठ मुनियोंके समूहभी साथ लगलिये ॥ ५ ॥ अस्थियोंका ढ़ेर देखकर रामचन्द्रजीको बड़ी दया लगी और मुनियोंसे पूछने लगे ॥ ६ ॥

जानतहू का पूछहु स्वामी ❀ समदरसी तुम अंतरजामी ॥ ७ ॥
निसिचरनिकर सकल मुनि खाए ❀ सुनि रघुनाथनयन जल छाए ॥ ८ ॥

(मुनियोंने कहा) हे प्रभो ! जानकरभी क्या पूछते हो आप समदर्शी और घट २ की जाननेवाले हो ॥ ७ ॥ (हे नाथ) राक्षसोंके समूहने सब मुनीश्वरोंको खाया है (यह) सुनतेही रामचन्द्रजीके नेत्रोंमें आँसू भर आये ॥ ८ ॥

दो०-निसिचरहीन करौं महि, भुज उठाइ प्रन कीन्ह ॥ ❀
सकल मुनिन्हके आस्रमन्ह, जाइ जाइ सुख दीन्ह ॥ १४ ॥ ❀

और भगवान्ने भुजा उठाकर यह प्रतिज्ञा की कि मैं पृथ्वीको राक्षसोंसे रहित करूंगा और फिर सब मुनीश्वरोंके आश्रमोंमें जा २ कर सुख दिया ॥ १४ ॥

चौ०-मुनि अगस्त्यकर शिष्य सुजाना ❀ नाम सुतीछन रत भगवाना ॥ १ ॥
मन क्रम बचन रामपदसेवक ❀ सपनेहु आन भरोस न देवक ॥ २ ॥

अगस्त्य मुनिका एक शिष्य सुतीक्ष्ण था और भगवान्से अति प्रीति रखता था ॥ १ ॥ वह मनक्रमवचनसे रामचन्द्रजीका सेवक था और उसे दूसरे देवताका भरोसा स्वप्नेमेंभी नहीं था ॥ २ ॥

प्रभुआगमन स्रवन सुनि पावा ❀ करत मनोरथ आतुर धावा ॥ ३ ॥
हे बिधि दीनबंधु रघुराया ❀ मोसे सठपर करिहहिं दाया ॥ ४ ॥

(उसने) कानोंसे भगवानका आना सुन पाया तौ उतावलीसे यह बिचार करता हुआ धाया कि ॥ ३ ॥ हे ब्रह्मन् ! दीनबन्धु रामचन्द्र मुझसे मूर्खपर दया करैंगे ॥ ४ ॥

---

(१) जो लवलीन हो जाते तौ भक्तिका साधन कैसे होता ? और वरदान निष्फल जाता.

सहित अनुज मोहिं राम गुसांईं ❀ मिलिहहिं निजसेवककी नाईं ॥ ५ ॥
मोरे दृढ़ भरोस जिय नाहीं ❀ भक्ति न विरति ज्ञान मनमाहीं ॥ ६ ॥

और छोटे भाई (लक्ष्मण) सहित रामचन्द्र स्वामी मुझसे अपने दासकी तरह मिलेंगे ॥५॥ मुझे तौ यह भरोसा है नहीं, क्यों कि मेरे मनमें तौ भक्ति ज्ञान और वैराग्य (कुछभी) नहीं है ॥६॥

नहिं सतसंग जोग जप जागा ❀ नहिं दृढ़ चरनकमलअनुरागा ॥ ७ ॥
एक बानि करुनानिधानकी ❀ सो प्रिय जाके गति न आनकी ॥ ८ ॥

न तौ सत्संग, योग, जप और यज्ञ है और न चरणकमलोंमें पक्की प्रीति है ॥ ७ ॥ परन्तु करुणानिधान भगवान्‌की एक टेव है कि जिसे दूसरेकी शरण नहीं होती है (वह उन्हें) प्यारा होता है ८

छं०-सो परमप्रिय अतिपातकी जिन्ह कबहुँ प्रभुसुमिरन कर्‍यो । ❀
ते आजु मैं निजनयन देखौं पूरि पुलकित हिय भर्‍यो ॥ ❀
जे पदसरोज अनेक मुनि करि ध्यान कबहुँक पावहीं । ❀
ते राम श्रीरघुवंशमनि प्रभु प्रेमते सुख पावहीं ॥ ९ ॥ ❀

उनको वह महापातकीभी बहुत प्यारा है जिसने कभीभी भगवानका स्मरण किया हो, सो आज मैं अपने नेत्रोंसे उनकीही झांकी करूंगा-(यह विचारतेही) हृदय पूर्ण पुलकावलीसे भरगया ॥ जिनके चरणकमलोंको बहुतसे मुनीश्वर ध्यानकरके कभी पाते हैं वही रघुवंशके मणिरूप श्रीरामचन्द्र भगवान् भक्तोंके स्नेहसे सुख पाते हैं ॥ ९ ॥

दो०-पन्नगारि सुनु प्रेमसम, भजन न दूसर आन ॥ ❀
यह बिचारि मुनि पुनि पुनि, करत रामगुनगान ॥ १५ ॥ ❀

(कागभुशुंड कहते हैं) हे गरुड़जी ! सुनो; स्नेहके वरावर दूसरा और कोई भजन नहीं, यह बिचारकर मुनीश्वर बारबार रामचन्द्रजीके गुणोंका गान करते हैं ॥ १५ ॥

चौ०-होइहहिं सफल आजु मम लोचन ❀ देखि बदनपंकज भवमोचन ॥ १ ॥
निर्भर प्रेममगन मुनि ज्ञानी ❀ कहि न जाइ सो दसा भवानी ॥ २ ॥

(मुनीश्वरका शिष्य बिचार करता है) कि आज संसारको छुड़ानेवाले (भगवान्) के मुखकमलको देखकर मेरे नेत्र सफल होंगे ॥ १ ॥ (महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! ज्ञानी मुनि ऐसे अधिक प्रेममें मगन है कि वह दशा कही नहीं जाती ॥ २ ॥

दिसि अरु बिदिसि पंथ नहिं सूझा ❀ को मैं चलेउँ कहां नहिं बूझा ॥ ३ ॥
कबहुँक फिरि पाछे पुनि जाई ❀ कबहुँक नृत्य करै गुन गाई ॥ ४ ॥

दिशा और बिदिशामें मार्ग नहीं दीखता और यहभी नहीं सूझ पड़ता है कि मैं कौन हूं ? और कहाँको जाता हूं ? ॥ ३ ॥ कभी तौ पीछे जाता है कभी आगे जाता है कभी (भगवान्‌के) गुणोंका गान करके नाचता है ॥ ४ ॥

अविरल प्रेम भक्ति मुनि पाई ❀ प्रभु देखहिं तरुओट लुकाई ॥ ५ ॥
अतिसय प्रीति देखि रघुबीरा ❀ प्रगटे हृदय हरन भवभीरा ॥ ६ ॥

मुनीश्वरकी निश्चल भक्ति और प्रेमको पाकर भगवान् वृक्षकी ओटमें छिपकर देखते हैं ॥ ५ ॥ फिर रामचन्द्रजी अपनेमें उसकी बहुत प्रीति देखकर संसारके दुःख अर्थात् जन्ममरणको नाश करनेवाले उसके हृदयमें प्रगट होगये ॥ ६ ॥

मुनि मगुमाँझ अचल होइ बैसा ❀ पुलकि सरीर पनसफल जैसा ॥ ७ ॥
तब रघुनाथ निकट चलि आए ❀ देखि दसा निजजन मन भाए ॥ ८ ॥

तब तौ मुनीश्वर मार्गमें अचल हो बैठ गया और उसका शरीर ऐसा पलकायमान होगया जैसा कटहरका फल होता है ॥ ७ ॥ तब रामचन्द्रजी पास चले आये और अपने दासकी दशा देख मनमें प्रसन्न हुये ॥ ८ ॥

सो०–राम सुसहज सुभाव, सेवकदुखदारिद्दमन ॥ ❀
मुनिसन प्रभु कह आव, उठ उठ द्विज मम प्रानसम ॥ ७ ॥ ❀

रघुनाथजी तौ सुन्दर सहज स्वभावहीसे दासोंके दुःख और दारिद्रके नाश करनेवाले हैं, सो भगवान् मुनीश्वरसे कहने लगे कि हे मुनी! आओ उठो, तुम तौ मुझे प्राणोंके समान प्यारे हो॥७॥

चौ०–मुनिहिं राम बहुभाँति जगावा ❀ जाग न ध्यानजनित सुख पावा ॥ १ ॥
भूप रूप तब राम दुरावा ❀ हृदय चतुर्भुजरूप दिखावा ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीने मुनीश्वरको बहुतेरा जगाया परन्तु वह न जगा क्योंकि उसने ध्यानमेंही (ब्रह्मानन्दका) सुखपाया ॥ १ ॥ तब रामचन्द्रजीने राजाका वेष छिपाकर हृदयमें चतुर्भुजी मूर्त्तिका दर्शन कराया ॥ २ ॥

मुनि अकुलाइ उठा तब कैसे ❀ बिकल दीन मनिबिनु फनि जैसे ॥ ३ ॥
आगे देखि रामतनु स्यामा ❀ सीताअनुजसहित सुखधामा ॥ ४ ॥

तब मुनीश्वर अकुलाकर कैसे उठ बैठा जैसे सर्प बिना मणिके घबराकर उठता हो ॥ ३ ॥ और सुखके धाम श्यामस्वरूप रघुनाथजीको सीता लक्ष्मणसहित आगे देखकर ॥ ४ ॥

परेउ लकुट इव चरनन्ह लागी ❀ प्रेममगन मुनिवर बड़भागी ॥ ५ ॥
भुजबिसाल गहि लिए उठाई ❀ परम प्रीति राखे उर लाई ॥ ६ ॥

बड़भागी मुनीश्वर स्नेहमें मग्न हो लकुटकी भांति चरणोंमे गिरपड़ा ॥ ५ ॥ (भगवान्‌ने) अपनी लंबी भुजाओंसे पकड़कर उठा लिया और बड़े प्रेमस छातीसे लगा लिया ॥ ६ ॥

मुनिहिं मिलत अस सोह कृपाला ❀ कनकतरुहिं जनु भेट तमाला ॥ ७ ॥
रामवदन बिलोकी मुनि ठाढ़ा ❀ मानहुँ चित्रमांझ लिखि काढ़ा ॥ ८ ॥

मुनीश्वरसे मिलतेमें भगवान् कैसे शोभायमान लगते हैं मानों सुवर्णके वृक्षसे तमालवृक्ष मिलता हो ॥ ७ ॥ रामचन्द्रजीके मुखको देखतेही मुनीश्वर ऐसा खड़ेका खड़ाही रहगया मानों चित्रमें लिखकर काढ़ा है ॥ ८ ॥

दो०–तब मुनि हृदय धीर धरि, गहि पद बारहिं बार ॥ ❀
निज आस्रम प्रभु आनि करि, पूजा बिबिध प्रकार ॥ १६ ॥ ❀

तब मुनिने हृदयमें धीरज रख वारंवार चरण छूकर भगवान्‌को अपने आश्रममें लाकर अनेक भांतिसे उनकी पूजा करी ॥ १६ ॥

चौ०–कह मुनि प्रभु सुनु बिनती मोरी ❀ अस्तुति करौं कवनबिधि तोरी ॥ १ ॥
महिमा अमित मोरि मति थोरी ❀ रविसन्मुख खद्योत उँजोरी ॥ २ ॥

मुनिने कहा हे भगवन्! मेरी बिनती सुनिये, मैं किसभाँति आपकी स्तुति करूं ॥ १ ॥ (आपकी) महिमाका पार नहीं और मेरी बुद्धि छोटी है सो ऐसे है जैसे सूर्यके सामने पटबीजनेका प्रकाश २

---

(१) सुवर्णके वृक्षकी उपमा मुनिके लिये और तमालवृक्षको रामजीके लिये है ॥

स्याम तामरस दाम सरीरं ❀ जटामुकुट परिधन मुनिचीरं ॥ ३ ॥
पाणिचापसर कटितूनीरं ❀ नौमि निरंतर श्रीरघुवीरं ॥ ४ ॥

हे भगवन्! नीलकमलके समान शरीरवाले, जटाओंका मुकुट और मुनिवस्त्र धारण किये॥३॥हाथमें धनुषबाण और कमरमें तरकस धारण करनेवाले श्रीरामचन्द्रजीको मेरा निरंतर नमस्कार है ॥ ४ ॥

मोह बिपिनघनदहनकृसानुं ❀ संतसरोरुहकाननभानुं ॥ ५ ॥
निसिचरकरिवरूथमृगराजं ❀ त्रातु सदा नो भवखगबाजं ॥ ६ ॥

आप अज्ञानरूपी घने बनको भस्म करनेके लिये अग्नि और संतरूपी कमलवनको प्रफुल्लित करनेके लिये सूर्य हो ॥ ५ ॥ राक्षसोंके झुंडरूपी हाथियोंको सिंहरूप हो और संसाररूपी पक्षीको बाजके समान ऐसे राम हमारी सदा रक्षा करो ॥ ६ ॥

अरुननयनराजीवसुवेषं ❀ सीतानयनचकोरनिसेसं ॥ ७ ॥
हरहृदि मानसबालमरालं ❀ नौमि राम उरबाहुविसालं ॥ ८ ॥

आपके लाल कमलसे नेत्र हैं और सुन्दर वेष है और सीताजीके नेत्ररूपी चकोरको आप पूर्ण चन्द्रमाके समान हो ॥ ७ ॥ महादेवके हृदयरूपी मानसरोवरको बाल राजहंसके समान हो, आपका विस्तृत हृदय और दीर्घ बाहु हैं, ऐसे आपको नमस्कार है ॥ ८ ॥

संसयसर्पग्रसनउरनादं ❀ समन सकलसंतापविषादं ॥ ९ ॥
भवभंजन रंजनसुरयूथं ❀ त्रातु सदा नो कृपावरूथं ॥ १० ॥

संशयरूपी सर्पोंके पकड़नेको गरुड़के समान हो और संपूर्ण संताप और दुःखके नाश करनेवाले हो ॥ ९ ॥ आप संसारको छुड़ानेवाले और देवताओंके समाजको आनंद देनेवाले हो, हे कृपानिधान! हमारी रक्षा करो ॥ १० ॥

निर्गुन सगुन विषम सम रूपं ❀ ज्ञानगिरागोतीत अनूपं ॥ ११ ॥
अमलमखिलमनवद्यमपारं ❀ नौमि राम भंजन महिभारं ॥ १२ ॥

आप निर्गुण हो, सगुण हो, (दुष्टको) विषम और (साधुओंको) सम हो, और आपका रूप ऐसा अनोखा है कि ज्ञान वाणी और इन्द्रियोंसे परे है ॥ ११ ॥ हे राम! आप निर्मल, अखड, दोषरहित, अनन्त और पृथ्वीके भारको नाश करनेवाले हो, आपको मेरा नमस्कार है ॥ १२ ॥

भक्तकल्पपादप आरामं ❀ तर्जनक्रोधलोभमदकामं ॥ १३ ॥
अतिनागर भवसागरसेतुं ❀ त्रातु सदा दिनकरकुलकेतुं ॥ १४ ॥

आप भक्तोंके लिये कल्पवृक्षोंके बगीचेके समान और क्रोध, लोभ, अभिमान और कामके नाश करनेवाले हो ॥ १३ ॥ आप अत्यंत आतुर और संसाररूपी समुद्रके सेतु हो और सूर्यवंशकी ध्वजा हो, ऐसे चाप सर्वदा मेरी रक्षा करो ॥ १४ ॥

अतुलित भुजप्रतापबलधामं ❀ कलिमलविपुलविभंजन नामं ॥ १५ ॥
धर्म वर्म सर्मद गुनग्रामं ❀ संतत संतनोतु अभिरामं ॥ १६ ॥

आपकी भुजाओंका अतुल प्रताप है, और आप बलके स्थान हो, और आपका नाम कलियुगके अनेक पापोंका नाश करनेवाला है ॥ १५ ॥ (आपके) गुणोंका समूह धर्मका कवच है और कल्याणका देनेवाला है, हे राम! मेरा निरंतर सुंदर कल्याण करो ॥ १६ ॥

यदपि बिरज व्यापक अविनासी ❀ सबके हृदय निरंतर वासी ॥ १७ ॥
तदपि अनुज सियसहित खरारी ❀ बसहु मनसि मम काननचारी ॥ १८ ॥

हे भगवन्! यद्यपि (आप) मायारहित, व्यापक, नाशरहित और सबके हृदयमें निरंतर वास करनेवाले हो ॥ १७ ॥ तौभी हे खरारी राम! लक्ष्मण सीताजीसहित वनमें विचरते हुये आप मेरे हृदयमें निवास करो ॥ १८ ॥

जे जानहिं ते जानहु स्वामी ❀ सगुन अगुन उर अंतर्जामी ॥ १९ ॥
जो कोसलपति राजिवनयना ❀ करो सो राम हृदय मम अयना ॥ २० ॥

हे स्वामी! आपको सगुण निर्गुण और अन्तर्यामी जो जानते हैं सो भलेही जानैं ॥ १९ ॥ परन्तु मेरे हृदयमें तौ हे राम! अयोध्यापति और कमलनयन होकर निवास करो ॥ २० ॥

सो०-मायाबस जिमि जीय, रहहि सदा संतत मगन ॥ ❀
तिमि लागहु मोहिं पीय, करुनाकर सुंदर सुखद ॥ ८ ॥ ❀

(हे राम) आप करुणाके समुद्र और सुन्दर सुख देनेवाले हो, सो जैसे मायाके वशमें जीव लिप्त रहा है ऐसेही मुझे आप प्यारे लगो ॥ ८ ॥

चौ०-अस अभिमान जाइ नहिं भोरे ❀ मैं सेवक रघुपति पति मोरे ॥ १ ॥
रामभक्ति तजि चह कल्याना ❀ सो नर अधम सृगालसमाना ॥ २ ॥

और मेरे मनसे ऐसा अभिमान भूलकर भी न जाय, अर्थात् यही अभिमान रहै कि मैं सेवक हूं और रामचन्द्रजी मेरे स्वामी हैं ॥ १ ॥ जो रामचन्द्रजीकी भक्तिको छोड़कर कल्याण चाहे वह पापी मनुष्य गीदड़के समान है ॥ २ ॥

सुनि मुनिबचन राम मन भाए ❀ बहुरि हर्षि मुनि मुनिवर उर लाए ॥३॥
परमप्रसन्न जानि मुनि मोहीं ❀ जो वर माँगु देउँ मैं तोहीं ॥ ४ ॥

मुनीश्वरके वचन सुनकर रामचन्द्रजीके मनको प्यारे लगे फिर प्रसन्नतासे श्रेष्ठ मुनीश्वरको हृदयसे लगालिया ॥३॥ (और बोले) हे मुनि! मुझे बहुत प्रसन्न जान, और तू जो वर माँगै तुझको वही दूँ४

मुनि कह मैं बर कबहुँ न जाँचा ❀ समुझि न परै झूठ का साँचा ॥ ५ ॥
तुमहिं नीक लागै रघुराई ❀ सो मोहिं देहु दाससुखदाई ॥ ६ ॥

मुनिने कहा, मैंने तौ कभी वरदान मांगा नहीं है सो मुझे नहीं सूझ पड़ता कि कौनसा वरदान झूठा और कौनसा सच्चा होता है ॥ ५ ॥ हे रामचन्द्र! सेवकोंके सुख देनेवाला जो आपको अच्छा लगै वही (वरदान) मुझे दीजिये ॥ ६ ॥

अविरल भक्ति विरति बिज्ञाना ❀ होउ सकलगुनज्ञाननिधाना ॥ ७ ॥
प्रभु जु दीन्ह बर सो मैं पावा ❀ अब सो देहु मोहिं जो भावा ॥ ८ ॥

(जब मुनिने इनके ऊपर भार धर दिया तौ भगवान्‌ने कहा कि) मुझमें तुम्हारी सदा भक्ति हो और तुमका वैराग्य और विशेष ज्ञान हो, और तुम संपूर्ण गुण और ज्ञानके स्थान होजाओ ॥ ७ ॥ (मुनि बोले) हे भगवन्! आपने जो वर दिये सो तौ मैंने पाये, अब वहभी तौ दीजिये जो मुझे अच्छा लगता है अर्थात् ॥ ८ ॥

दो०-अनुज जानकीसहित प्रभु, चाप बान धर राम ॥ ❀
मम हिय गगनइंदु इव, बसहु सदा निःकाम ॥ १७ ॥ ❀

---

(१) यहां यह शंका है कि खरारीका प्रयोग क्यों किया-खरको अभी कहां मारा है? समाधान यह है कि ऋषि लोग त्रिकालज्ञ होते हैं इसलिये कहा है.

हे स्वामी रामचन्द्र ! लक्ष्मण सीताजीसमेत धनुष बाण धारण किये आप चन्द्रमारूप मेरे हृदयरूपी आकाशमें ऐसे निवास करो कि मुझे किसी बातकी कामना न हो ॥ १७ ॥

चौ०–एवमस्तु कहि रमानिवासा ❀ हर्षि चले कुंभजऋषि पासा ॥ १ ॥
पुनि प्रनाम करि युग कर जोरी ❀ सुनहु नाथ बिनती मोरी ॥ २ ॥

श्रीरामचन्द्रजी "एवमस्तु" अर्थात् ऐसाही हो यह कहकर प्रसन्नतासे अगस्त्यऋषिके पासचले १ फिर सुतीक्ष्ण मुनि प्रणाम कर दोनो हाथ जोड़ बोले, हे स्वामी ! मेरी कुछ विनती और सुनो॥२॥

बहुत दिवस गुरुदरसन पाये ❀ भये मोहि यहि आस्रम आये ॥ ३ ॥
अब प्रभुसंग जाऊँ गुरुपाहीं ❀ तुमकहँ नाथ निहोरा नाहीं ॥ ४ ॥

मुझे इस आश्रममें आये हुये और गुरुके दर्शन किये बहुत दिन होगये ॥ ३ ॥ सो अब हे स्वामी ! आपके साथ गुरुके पास जाता हूं, आपके ऊपर कुछ अहसान नहीं धरता हूं ॥ ४ ॥

चले जात मग तब पदकंजा ❀ देखिहौं जो विराधमदगंजा ॥ ५ ॥
देखि कृपानिधि मुनि चतुराई ❀ लिए संग बिहँसे दोउ भाई ॥ ६ ॥

मार्ग चलते हुये विराध (राक्षस) के अभिमानको नाश करनेवाले ऐसे आपके चरणकमलोंका दर्शन करता चलूंगा ॥ ५ ॥ दयाके निधान भगवान् मुनीश्वरकी चतुराई(१) देख दोनों भाई हँसे और उनको साथ ले लिया ॥ ६ ॥

पंथ कहत निजभक्ति अनूपा ❀ मुनिआस्रम पहुँचे सुरभूपा ॥ ७ ॥
आस्रम देखि महासुचि सुंदर ❀ सरित सरोवर कानन भूधर ॥ ८ ॥
बनचर जलचर जीव जहीते ❀ बैर न करहिं प्रीति सबहीते ॥ ९ ॥

मार्गमें अपनी सुन्दर भक्ति कहते हुये देवताओंके राजा (रामचन्द्र) अगस्त्यमुनिके आश्रममें पहुँचे ॥७॥ अत्यंत पवित्र आश्रम और सुन्दर नदी सरोवर वन और पर्वतोंको देखा ॥८॥ वहां वनके रहनेवाले और जलके रहनेवाले जितने जीव हैं (आपसमें) वैर नहीं करते, सबहीसे प्रीति रखते हैं ९

दो०–तरु बहु विविध बिहंग मृग, बोलत विविधप्रकार ॥ ❀
बसहिं सिद्ध मुनि तप करहिं, महिमागुनआगार ॥ १८ ॥ ❀

बहुतसे वृक्षोंपर अनेक पक्षी नानाभांतिसे बोलते हैं और जहाँ महिमा और गुणोंके धाम सिद्ध और मुनीश्वर तप करते हुये निवास करते हैं ॥ १८ ॥

चौ०–तुरत सुतीक्ष्ण गुरुपहँ गयऊ ❀ करि दंड़वत कहत अस भयऊ ॥ १ ॥
नाथ कोसलाधीसकुमारा ❀ आए मिलन जगत आधारा ॥ २ ॥

तब सुतीक्ष्ण नाम (मुनिके शिष्य) गुरुके पास तुरन्त गये और दंडवत करके ऐसे कहने लगे कि ॥१॥ हे स्वामी ! अयोध्याके राजाके पुत्र संसारके आधार आपसे मिलनेको आये हैं ॥२॥

राम अनुज समेत वैदेही ❀ निसि दिन देव जपत हहु जेही ॥ ३ ॥
सुनत अगस्त्य तुरत उठिधाए ❀ हरिहिं बिलोकि नयनजल छाए ॥ ४ ॥

हे देव ! जिन्हें आप रातदिन जपा करते हो वेही रामचंन्द्र, लक्ष्मण और सीताजीसमेत हैं ॥३॥ अगस्त्यमुनि सुनतेही तुरंत उठ दौडे और भगवानको देखतेही नेत्रोंमें जल भर आया ॥ ४ ॥

---

(१) चतुराई यह कि जब सुतीक्ष्ण अगस्त्यजीसे विद्या पढ़ चुके तब गुरुसे पूछा कि महाराज, आपके लिए क्या दक्षिणा लाऊँ ? गुरुने कहा तुम प्रसन्न रहो यही दक्षिणा है । पर जब सुतीक्ष्णने बहुतही हठ किया तब अगस्त्यजीने हँसकर कह दिया कि अच्छा तुम दक्षिणामें हमारे पास परमेश्वरको ले आना ॥

मुनिपदकमल परे दोउ भाई ❀ ऋषि अतिप्रीति लिए उरलाई ॥ ५ ॥
सादर कुसल पूछ मुनिज्ञानी ❀ आसनपर बैठारे आनी ॥ ६ ॥

दोनों भाई मुनीश्वरके कमलसमान चरणोंमें गिर पड़े तौ ऋषिने बड़ी प्रीतिसे उन्हें छातिसे लगा लिया ॥ ५ ॥ ज्ञानी मुनीश्वरने आदरसहित कुशल पूछकर और लाकर (आश्रममें) आसनपर बिठलाया ॥ ६ ॥

पुनि करि बहुप्रकार प्रभुपूजा ❀ मोहिंसम भाग्यवंत नहिं दूजा ॥ ७ ॥
जहँलगि रहे अपर मुनिबृंदा ❀ हरषे सब बिलोकि सुखकंदा ॥ ८ ॥

फिर बहुतभांति भगवान्‌की पूजा कर (कहा) हे भगवन्! आज मेरेसमान भाग्यवान् दूसरा नहीं है ॥ ७ ॥ जहाँतक औरभी जो मुनीश्वरोंके समाज थे सब सुखकी खान (भगवान्) के दर्शन कर प्रसन्न हुये ॥ ८ ॥

दो०–मुनिसमूह महँ बैठ प्रभु, संमुख सबकी ओर ॥ ❀
सरदइंदु जनु चितवत, मानहु निकरचकोर ॥ १९ ॥ ❀

भगवान् मुनियोंके समूहमें सबके सन्मुख बैठे तौ सब मुनि ऐसे देखने लगे जैसे शरदके चन्द्रमाको चकोरोंका समूह देखता है ॥ १९ ॥

चौ०–पाइ सुथल जल हरषित मीना ❀ पारस पाइ सुखी जिमि दीना ॥ १ ॥
प्रभुहिं निरखि सुख भाइहि भाँती ❀ चातक जथा पाइ जलस्वाती ॥ २ ॥

जैसे सुन्दर जलके स्थानको पाकर मछली प्रसन्न हो, और जैसे कंगाल मनुष्य पारसको पाकर सुखी हो ॥ १ ॥ उसी प्रकार भगवान्‌को देख (मुनिको) ऐसा सुख हुआ जैसे पपीहोंका समूह स्वातिके जलको पाकर सुखी होता है ॥ २ ॥

तब रघुवीर कहा मुनिपाहीं ❀ तुमसन प्रभु दुराव कछु नाहीं ॥ ३ ॥
तुम जानहु जेहि कारन आयउँ ❀ ताते तात न कहि समुझायउँ ॥ ४ ॥

तब रामचन्द्रजीने मुनीश्वरसे कहा हे स्वामी! आपसे तौ कुछ छिपा हुआ नहीं है ॥३॥ और हे स्वामी! जिसकारण मैं आया हूं सो तुम जानतेही हो, इसीसे (प्रत्यक्ष) कहकर नहीं समझाया ॥४॥

अब सो मंत्र देहु प्रभु मोही ❀ जेहि प्रकार मारौं सुरद्रोही ॥ ५ ॥
निसिचर अब न बचहिं मुनिराई ❀ जिमि पंकजबन हिमऋतु पाई ॥ ६ ॥

सो हे प्रभो! अब मुझे वह सलाह दो कि जिसभांति मैं देवताओंके वैरी (राक्षसों) को मारूं॥५॥ हे मुनिराज! राक्षस अब ऐसे नहीं बचैंगे जैसे शरदऋतुके आनेपर कमलोंका वन नाश हो जाता है॥६॥

मुनि मुसकाने सुनि प्रभुबानी ❀ पूछहु नाथ मोहिं का जानी ॥ ७ ॥
तुम्हरे भजनप्रभाव अधारी ❀ जानौं महिमा कछुक तुम्हारी ॥ ८ ॥

भगवान्‌की बाणी सुनकर मुनीश्वर हँसे कि हे स्वामी! आप मुझसे क्या जानकर पूछतेहो? (भला मैं क्या जानूं?) ॥७॥ मैं तो आपहीके भजनके सहारेसे आपकी कुछ थोड़ीसी महिमा जानता हूं ॥ ८ ॥

सो०–भ्रकुटी निरखत नाथ, रहत सदा पदकमलतर ॥ ❀
जिन्ह ड़ारे निजगात, बिबुध बिधाता सिद्ध हर ॥ ९ ॥ ❀

हे स्वामी! वह माया आपकी भ्रकुटीको तका करती है और सदा आपके चरणकमलोंके नीचे बसती है कि जिसने अनेक ब्रह्मा सिद्ध और महादेवोंको अपने शरीरमें डाल रक्खा है ॥ ९ ॥

चौ०–अति कराल सबपर जग जाना ॥ औरौ कहौं सुनिय भगवाना ॥ १ ॥
डूमरितरु बिसाल तव माया ॥ फल ब्रह्मांड अनेक निकाया ॥ २ ॥

जगत् जानता है कि आपकी भृकुटी सवपर अति डरावनी है, अर्थात् भृकुटी फेरनेसेही जो चाहो सो करसक्ते हो। औरभी कहता हूँ, हे भगवन्! सुनिये कि ॥१॥ आपकी माया गूलरवृक्षके समान है जिसमें अनेक ब्रह्माण्डोंके गुच्छे लगरहे हैं ॥ २ ॥

जीव चराचर जंतुसमाना ॥ भीतर बसहिं न जानहिं आना ॥ ३ ॥
ते फलभक्षक कठिन कराला ॥ तव भय डरत सदा सो काला ॥ ४ ॥

उनमें चराचर जीवजंतु (भुनगों) के समान भीतर वसते हैं और यह नहीं जानते हैं (कि वाहार क्या है) ॥ ३ ॥ उन फलोंका भक्षण करनेवाला वही कठिन भयंकर काल है जो आपके भयसे सदा डरता रहता है ॥ ४ ॥

ते तुम सकल लोकपति साँई ॥ पूछेहु मोहिं मनुजकी नांई ॥ ५ ॥
यह बर मांगौं कृपानिकेता ॥ बसहु हृदय सियअनुजसमेता ॥ ६ ॥

हे नाथ! सोई आप सव लोकोंके स्वामी होकर मुझसे मनुष्यकी भांति पूछते हो ॥ ५ ॥ हे दयानिधान! मैं अव यह वर माँगता हूं कि मेरे हृदयमें लक्ष्मण सीताजीसमेत निवास करो ॥ ६ ॥

अविरलभक्ति विरति सतसंगा ॥ चरनसरोरुहप्रीतिअभंगा ॥ ७ ॥
यद्यपि ब्रह्म अखंड़ अनंता ॥ अनुभवगम्य भजहिं जे संता ॥ ८ ॥
अस तव रूप बखानौं जानौं ॥ फिरि फिरि सगुनब्रह्मरति मानौं ॥ ९ ॥

और मुझे अपनी निश्चल भक्ति, वैराग्य, सत्संग और चरणकमलोंकी अचल प्रीति दो ॥ ७ ॥ यद्यपि आप अखंड सच्चिदानन्द और अनन्त हो, अर्थात् आपका अंत किसीने नहीं पाया, और यथार्थ ज्ञानसे जाने जाते हो, और इस रूपका जो संत हैं वे भजन करते हैं ॥ ८ ॥ और मैं तौ आपके इस रूपका वर्णन करना ही जानता हूं, परन्तु प्रीति तौ मैं वारंवार सगुण ब्रह्मसे मानताहूँ ॥ ९ ॥

दो०–जाहि जीव पर तव कृपा, संतत रहत हुलास ॥
तिनकी महिमा को कहै, जे अनन्य प्रियदास ॥ २० ॥

जिस जीवके ऊपर आपकी दया होती है वह सदा प्रसन्न रहता है, तौ फिर उनकी महिमाको कौन कह सक्ता है कि जो केवल आपकेही प्यारे सेवक होकर रहते हैं ॥ २० ॥

चौ०–संतत दासन्ह देहु बड़ाई ॥ ताते मोहिं पूछेहु रघुराई ॥ १ ॥
है प्रभु परम मनोहर ठाऊँ ॥ पावन पंचवटी तेहि नाऊँ ॥ २ ॥

हे रघुराई! आप भक्तोंको सदा वड़ाई देते आये हो इसीसे आपने मुझसे पूछा है ॥ १ ॥ सो हे स्वामिन्! अत्यंत पवित्र एक सुन्दर धाम है कि जिसका पंचवटी नाम है ॥ २ ॥

गोदाबरी नदी तहँ बहई ॥ चारिहु जग प्रसिद्ध सो अहई ॥ ३ ॥
दंडकवन पुनीत प्रभु करहू ॥ उग्रसाप मुनिवरकर हरहू ॥ ४ ॥

वहाँ गोदावरी नदी बहती है जो चारों युगोंमें प्रसिद्ध है ॥ ३ ॥ हे स्वामी! वहां दंडकवन है, उसको पवित्र करिये और श्रेष्ठ मुनिके कठिन शापको हरिये ॥ ४ ॥

---

(१) एकवार जव पंचवटीमें अकाल पड़ा तव मुनिलोग गौतम ऋषिके पास पहुँचे। उन्होंने इनका तपोबलसे पोषण किया। पर जव सुकाल हुआ तव ऋषियोंने जनस्थानको जाना चाहा और जव गौतमने रोका तव मु-

वास करहु तहँ रघुकुलराया ॥ कीजै सकल मुनिन्हपर दाया ॥ ५ ॥
चले राम मुनिआयसु पाई ॥ तुरतहि पंचवटीनियराई ॥ ६ ॥

हे रामचन्द्र! वहाँ निवास करके सब मुनीश्वरोंपर कृपा कीजिये ॥ ५ ॥ रामचन्द्र मुनीश्वरकी आज्ञा पाकर चले और शीघ्र पंचवटीके पास पहूँचे ॥ ६ ॥

दिव्यलता द्रुम प्रभुमन भाए ॥ लिरखि राम ते भयउ सोहाए ॥ ७ ॥
लखनरामसियचरन निहारी ॥ काननअघ गा भा सुखकारी ॥ ८ ॥

सुन्दर वेलि और वृक्ष भगवान्के मनमें भाये और वेभी रामचन्द्रजीको देखकर सुहावने लगने लगे ॥ ७ ॥ और लक्ष्मण रामचन्द्र और सीताजीके चरणोंको देख वनका शाप दूर हो गया और वन सुखदाई होगया ॥ ८ ॥

दो०–गीधराजसों भेट भइ, बहुविध प्रीति दृढ़ाइ ॥
गोदावरीसमीप प्रभु, रहे परनगृह छाइ ॥ २१ ॥

और वहाँ गृध्रराज जटायुसे भेट हुई तौ उससे बहुतभांति दृढ प्रीति करके भगवान् गोदावरी नदीके निकट पर्णकुटी बनाकर रहने लगे ॥ २१ ॥

चौ०–जबते राम कीन्ह तहँ बासा ॥ सुखी भए मुनि बीति त्रासा ॥ १ ॥
गिरि बन नदी ताल छबि छाए ॥ दिन दिन प्रति अति होत सुहाए ॥ २ ॥

जबसे रामचन्द्रजीने वहां निवास किया तबहीसे मुनीश्वर सुखी हुये और भय जाते रहे ॥ १ ॥ पर्वत बन नदी और सरोवर शोभासे छागये और दिनपर दिन अधिक सुन्दर लगने लगे ॥ २ ॥

खगमृगवृंद अनंदित रहहीं ॥ मधुर मधुर गुंजत छबि लहहीं ॥ ३ ॥
सो बन बरनि न सक अहिराजा ॥ जहाँ प्रगट रघुबीर बिराजा ॥ ४ ॥

पशु पक्षियोंके झुंड आनन्दसे रहने लगे और भौंरे मधुर २ गूंजते हुये शोभा पाने लगे ॥ ३ ॥ उस वनका वर्णन तौ शेषजीभी नहीं कर सक्ते कि जहाँ साक्षात् रामचन्द्रजी विराजमान् हैं ॥ ४ ॥

एकबार प्रभु सुख आसीना ॥ लक्ष्मण बचन कहे छलहीना ॥ ५ ॥
सुर नर मुनि सचराचर साँई ॥ मैं पूछौं निजप्रभुकी नाँई ॥ ६ ॥

एकवार भगवान् आनन्दसे बैठे थे कि लक्ष्मणजी [२]छलरहित वचन बोले कि–॥५॥ यों तौ आप सुर नर मुनि और चराचरके स्वामी हैं परंतु मैं तौ आपको अपना निजका प्रभु जानकर पूछता हूं ॥६॥

नियोंने एक मायाकी गौ बनाकर और प्रशंसा कर उनके हाथमें देदी, और ऋषिके हाथमें थामतेही गौ गिरकर मरगई तब मुनिलोग ऋषिको हत्या लगाकर जनस्थानको चले गये कि जिसको दंडकवनभी कहते हैं ॥ जब ऋषिको यह छल जानपड़ा तब उन्होंने शाप दिया कि तुम जहाँ बसोगे वह वन होगा और उसमें राक्षस वास करैंगे

(१) **सवैया**—सुचि सौरभ संयुत वायु छुटी मधुरे मकरन्दनसों लपटी ॥
कपि कोकिल कीर कपोतचटी चटकालि चकोर फिरै अलटी ॥
अति निर्मल नीरप्रवाह तटी महिमा जिहि वेदनु जात रटी ॥
रघुनाथ उटी जहँ पर्णकुटी धन धन्य तिहूँपुर पंचवटी ॥ १ ॥
यम संयम साधन योग जटी जप औ तप तीरथ पुण्य पटी ॥
जग यज्ञ व्रतादिक जे प्रगटी सबको फल पेखत पानघटी ॥
सुर सिद्ध मुनीन्द्र महेश रटी छिन वास करै भवफांसि कटी ॥
जहँ पर्णकुटी रघुनाथ उटी बसिरे मन सादर पंचवटी ॥ २ ॥

(२) "छलरहित शब्दसे यह भाव है कि लक्ष्मणजी जान बूझकर परीक्षा करनेको नहीं पूछते हैं, जैसे धूर्त किया करते हैं ॥

मोहिं समुझाइ कहहु सोइ देवा ❀ सब तजि करौं चरनरजसेवा ॥ ७ ॥
कहहु ज्ञान विराग अरु माया ❀ कहहु सो भक्ति करहु जेहि दाया ॥ ८॥

सो हे देव! मुझे समझाकर वही कहो कि (जिससे) सबको छोड़कर आपके चरणोंकी रजका सेवन करूं ॥ ७ ॥ ज्ञान वैराग्य और मायाका वर्णन करिये और उस भक्तिको कहिये जिससे आप (भक्तोंपर) कृपा करते हो ॥ ८ ॥

दो०–ईश्वर जीवहि भेद प्रभु, सकल कहहु समुझाइ ॥ ❀
जाते होइ चरनरति, सोक मोह भ्रम जाइ ॥ २२ ॥ ❀

हे स्वामी! ईश्वर और जीवका सारा भेद समझाकर कहिये जिससे आपके चरणोंमें मेरी प्रीतिहो (और संसारके लोगोंके शोक मोह और सन्देह दूर हों ॥ २२ ॥

चौ०–थोरेमहँ सब कहौं बुझाई ❀ सुनहु तात मति मन चित लाई ॥ १ ॥
मैं अरु मोर तोर तैं माया ❀ जेहिं बस कीन्हें जीवनिकाया ॥ २ ॥

(लक्ष्मणजीके वचन सुनकर रामचन्द्रजी बोले) हे प्यारे! थोड़ेहीमें सब समझाकर कहता हूँ, तुम बुद्धि, मन और चित्त लगाकर सुनो ॥ १ ॥ मैं और मेरा, तू और तेरा यही माया है कि जिसने सब जीवोंको अपने वशमें कर रक्खा है ॥ २ ॥

गोगोचर जहँलगि मन जाई ❀ सो सब माया जानेहु भाई ॥ ३ ॥
तेहिकर भेद सुनहु तुम सोऊ ❀ विद्या अपर अविद्या दोऊ ॥ ४ ॥

पुनि इन्द्रिय और इन्द्रियोंके परे जहांतक मन जाता है हे भाई! वह मायाही जानो ॥ ३ ॥ उसकाभी भेद तुम सुनो एक विद्या और दूसरी अविद्या ये दो हैं ॥ ४ ॥

एक दुष्ट अतिसय दुखरूपा ❀ जाबस जीव परे भवकूपा ॥ ५ ॥
एक रचै जग गुन बस जाके ❀ प्रभुप्रेरित नहिं निजबल ताके ॥ ६ ॥

(उनमेंसे) एक (अविद्या) बड़ी दुष्ट है और दुःखका रूप है जिसके आधीन होकर जीव संसाररूपी कुयेमें पड़े हैं ॥ ५ ॥ दूसरी (विद्या) संसारको उत्पन्न करती है और जिसके वशमें सब गुण है, सो (ये दोनों माया) भगवान्‌की लगाई हुई हैं, उनको अपना बल कुछ नहीं है ॥ ६ ॥

ज्ञान मान जहँ एकौ नाहीं ❀ देखत ब्रह्मरूप सबमाहीं ॥ ७ ॥
कहिये तासों परम विरागी ❀ तृनसम सिद्धि तीनिगुन त्यागी ॥ ८ ॥

और जिसमें ज्ञाति कुल विद्या आदिके मानोंमेंसे एकभी मान नहीं है और जो सबमें ब्रह्मरूपही देखता है उसेही ज्ञान कहते हैं ॥ ७ ॥ और जो सब सिद्धियोंको तृणके समान जानता है और रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण तीनोंको त्याग देता है उसको परवैरागी अर्थात् परमहंस कहना चाहिये॥८

दो०–मायाईस न आपुकहँ, जानि कहै सो जीव ॥ ❀
बंधमोक्षप्रद सर्वपर, मायाप्रेरक सीव ॥ २३ ॥ ❀

जो अपनेको मायाका ईश्वर नहीं जानता है वह जीव है, और जो बंधन मोक्षका देनेवाला है और सबके ऊपर मायाका प्रेरक है वह ईश्वर है ॥ २३ ॥

चौ०–धर्मते विरति योगते ज्ञाना ❀ ज्ञान मोक्षप्रद वेद बखाना ॥ १ ॥
जाते वेगि द्रवौं मैं भाई ❀ सो मम भक्ति भक्तसुखदाई ॥ २ ॥

धर्मसे वैराग्य, वैराग्यसे योग और योगसे ज्ञान होता है, और ज्ञान मोक्षका देनेवाला है यह वेदोंने कहा है ॥ १ ॥ हे भाई! जिससे मैं शीघ्र प्रसन्न होता हूं वह तो मेरी भक्ति है जो भक्तोंको सुख देनेवाली है ॥ २ ॥

सो स्वतंत्र अवलंब न आना ❀ तेहि आधीन ज्ञान विज्ञाना ॥ ३ ॥
भक्ति तात अनुपम सुखमूला ❀ मिलै जो संत होहिं अनुकूला ॥ ४ ॥

और वह भक्ति स्वतंत्र है, अर्थात् उसे दूसरेका सहारा नहीं है, और ज्ञान विज्ञान सब उसीके आधीन हैं ॥ ३ ॥ हे प्यारे! सो भक्ति अनुपम सुखकी मूल अर्थात् देनेवाली है, और वह तव मिलती है जब संत सहायक हों ॥ ४ ॥

भक्तिके साधन कहौं बखानी ❀ सुगमपंथ मोहिं पावहिं प्रानी ॥ ५ ॥
प्रथमहिं विप्रचरन अतिप्रीती ❀ निजनिज धर्मनिरत स्रुतिरीति ॥ ६ ॥

भक्तिके साधन वर्णन कर कहता हूं कि (जिनसे) जीव मुझको सहजमार्गसे पासक्ते हैं ॥ ५ ॥ प्रथम तौ ब्राह्मणोंके चरणोंमें अतिप्रीति करै और वेदकी रीतिसे अपने २ धर्ममें सावधान रहै ॥६॥

यहिकर फल पुनि विषय बिरागा ❀ तब मम चरन उपज अनुरागा ॥ ७ ॥
स्रवनादिक नवभक्ति दृढ़ाहीं ❀ मम लीला रति अति मनमाहीं ॥ ८ ॥

फिर जब इसका फल होगा और विषयोंसे मन हटैगा तव मेरे चरणोंमें प्रेम उत्पन्न होगा ॥७॥ श्रवणादिक नौ प्रकारकी भक्तिको दृढ करै और मनमें मेरी लीलाओंसे विशेष प्रेम करै ॥ ८ ॥

संतचरनपंकज अति प्रेमा ❀ मन क्रम बचन भजन दृढनेमा ॥ ९ ॥
गुरु पितु मातु बंधु पतिदेवा ❀ सब मोहिंकहँ जानै दृढसेवा ॥ १० ॥

और साधुओंके चरणकमलोंमें बहुत स्नेह करै और मनक्रमवचनसे भजनका दृढ़ नियम करै ॥९॥ और गुरु, पिता, माता, भाई, पति, और देवता सब मुझकोही जानकर दृढ़ सेवा करै ॥ १० ॥

मम गुन गावत पुलकि सरीरा ❀ गदगद गिरा नयन वह नीरा ॥ ११ ॥
कामादिक मद दंभ न जाके ❀ तात निरंतर बस मैं ताके ॥ १२ ॥

और मेरे गुणोंको गाते हुये जिसका शरीर तौ पुलकायमान् और वाणी गद्गद होजाय और नेत्रोंमेंसे जल बहने लगै ॥ ११ ॥ और हे प्यारे! जिसके काम आदि अभिमान और पाखंड नहीं हों मैं सदा उसके वश रहता हूं ॥ १२ ॥

दो०-बचन कर्म मन मोरिगति, भजन करै निष्काम ॥ ❀
तिन्हके हृदयकमलमहँ, करौं सदा बिस्राम ॥ २४ ॥ ❀

जो मनवचनकर्मसे मेरीही शरण हैं और कामनारहित होकर मेराहि भजन करते हैं उनके हृदयकमलमें मैं (भ्रमरसमान) सर्वदा वास करता हूं ॥ २४ ॥

चौ०-भक्तियोग सुनि अतिसुख पावा ❀ लषन प्रभुचरनन्ह सिर नावा ॥ १ ॥
नाथ सुने गत मम संदेहा ❀ भयउ ज्ञान उपजेउ नव नेहा ॥ २ ॥

लक्ष्मणजीने भक्तियोग सुनकर बहुत सुख पाया और भगवान्‌के चरणोंको शिर नवाया ॥१॥ (और कहा) हे स्वामी! इसके सुननेसे मेरा सन्देह दूर हुआ और ज्ञान होकर नया प्रेम उत्पन्न हुआ॥२॥

---

(१) भागवतमें लिखा है-

" श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम् ॥
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम् ॥ १ ॥

अर्थात् विष्णु भगवान्‌का चरित्र सुनना, सुनाना; स्मरण करना, चरणसेवा, पूजन, प्रणाम, दासभाव, सखाभाव, और अपनेको अर्पण करना ये नव भक्ति हैं ॥

अनुजबचन सुनि प्रभुमन भाए ❀ हरषि राम निजहृदय लगाए ॥ ३ ॥
इहिबिधि गये कछुक दिन बीती ❀ कहत बिराग ज्ञान गुन नीती ॥ ४ ॥

लक्ष्मणजीके वचन सुन भगवान्के मनको प्यारे लगे तौ रामचन्द्रजीने प्रसन्न हो उन्हें अपनी छातीसे लगा लिया ॥ ३ ॥ इसभांति वैराग्य ज्ञान और नीतिके गुण कहते हुवे कुछ दिन बीतगये ॥४॥

रूपनखा रावनकी बहिनी ❀ दुष्टहृय दारुन जसि अहिनी ॥ ५ ॥
पंचवटी सो गइ इकबारा ❀ देखि बिकल भइ जुगल कुमारा ॥ ६ ॥

तब शूर्पणखा नाम रावणकी वहिन जो हृदयमें ऐसी दुष्ट थी कि जैसी सर्पिणी होती है ॥५॥ सो एक बार पंचवटीमें गई तौ वहां दोनों कुमार (राम लक्ष्मण) को देखतही व्याकुल हो गई६

भ्राता पिता पुत्र उरगारी ❀ पुरुष मनोहर निरखत नारी ॥ ७ ॥
होइ बिकल सक मन नहीं रोकी ❀ जिमि रविमनि द्रव रवहिं बिलोकी ॥८॥

(कागभुशुंडजी कहते हैं) हे गरुड़जी! सुनो भाई, पिता और पुत्र (कोई क्यों न हो) स्त्री सुन्दर पुरुषको देखतेही ॥ ७ ॥ व्याकुल हो मनको ऐसे नहीं रोक सक्ती जैसे सूर्यकांत मणि सूर्यके देखतेही द्रवने लगता है, अर्थात् उसमेंसे आग निकलने लगती है ॥ ८ ॥

दो०–अधम निसाचरि कुटिल अति, चली करन उपहास ॥ ❀
सुनु खगेस भावी प्रबल, भा चह निसिचरनास ॥ २५ ॥ ❀

वह नीच राक्षसी बड़ी कुटिल थी कि (भगवान्से) हँसी करने चली! (कागभुशुंडजी कहते हैं की) हे गरुड़जी! होनहार बड़ी प्रबल है, राक्षसोंका नाश हुआ चाहता है ॥ २५ ॥

चौ०–रुचिर रूप धरि प्रभुपहँ जाई ❀ बोली वचन मधुर मुसुकाई ॥ १ ॥
तुमसम पुरुष न मोसम नारी ❀ यह सँजोग बिधि रचा बिचारी ॥ २ ॥

सुन्दर रूप धारण कर भगवान्के पास जाकर और हँसकर मीठे वचन बोली कि–॥ १ ॥ न तौ तुम्हारे समान मनुष्य है और न मेरे समान कोई स्त्री है, सो विधाताने यह (हमारा तुम्हारा) संयोग विचारकरही रचा है ॥ २ ॥

मम अनुरूप पुरुष जग नाहीं ❀ देखेउँ खोजि लोक तिहुँ माहीं ॥ ३ ॥
ताते अबलगि रही कुमारी ❀ मनमाना कछु तुमहिं निहारी ॥ ४ ॥

मेरे समान सुरूपवाला मनुष्य संसारमें नहीं मिला तीनों लोकमें ढूंढ़ देखा ॥ ३ ॥ इससे अबतक क्वारी रही, अब तुमको देखकर कुछ मनमें आई है ॥ ४ ॥

सीतहिं चितइ कहि प्रभु बाता ❀ अहै कुमार मोर लघु भ्राता ॥ ५ ॥
गई लषन रिपुभगिनी जानी ❀ प्रभु बिलोकि बोले मृदुबानी ॥ ६ ॥

भगवान्ने सीताकी और देख यह बात कही कि (मेरे तौ स्त्री है पर) मेरा छोटा भाई क्वारा[१] है ॥ ५ ॥ वह लक्ष्मणजीके पास गई तौ वे शत्रुकी बहन समझ भगवानको देखकर मीठी वाणी बोले ॥ ६ ॥

सुंदरि सुनु मैं उन्हकर दासा ❀ पराधीन नहीं तोर सुपासा ॥ ७ ॥
प्रभु समर्थ कोसलपुरराजा ❀ जो कछु करहिं उन्हैं सब छाजा ॥ ८ ॥

---

(१) यहां यह शंका है कि भगवान् सत्यभाषी है, यहां मिथ्या क्यों बोलै कि लक्ष्मणजी क्वारे हैं? तहां कहते हैं कि यह तौ सब हास्यरस है, अतएव कुछ डर नहीं है । अथवा कुमारका योंभी अर्थ हो सक्ता है कि कु कहिये बुरा है मार कहिये कामदेव जिससे, अर्थात् लक्ष्मणजी कामदेवसेभी सुन्दर हैं वहां जा–

हे सुन्दर! सुनो, मैं तौ उनका सेवक हूँ और पराधीन हूं, तुम्हारे योग्य नहीं हूं; अर्थात् मेरी स्त्री होकर तौ तू दासी कहावेगी ॥ ७ ॥ इसलिये प्रभु कोशलाधीश सब प्रकार समर्थ हैं, वे जो कुछ करैं उन्है सब शोभा देता है ॥ ८ ॥

दो०-केहरिसम नहिं करिवर, लवा कि बाजसमान ॥
प्रभु सेवक इमि जानहु, मानहु बचन प्रमान ॥ २६ ॥

और जैसे परमसुन्दर हाथी सिंहके समान नहीं होता; और लवापक्षी क्या बाजके बराबर होसक्ता है? ऐसेही स्वामी और सेवकको जानना चाहिये, अर्थात् सेवक स्वामीके समान नहीं होसक्ता सो इन मेरे बचनोंको सत्यही जानो ॥ २६ ॥

चौ०-सेवक सुख चह मान भिखारी ❀ व्यसनी धन सुभगति व्यभिचारी ॥ १ ॥
लोभी जस चह चारु गुमानी ❀ नभ दुहि दूध चहत ए प्रानी ॥ २ ॥

दास होकर सुख चाहै, भिखारी होकर प्रतिष्ठा चाहै, विषयी धन चाहै, और व्यभिचारी शुभ गति चाहै ॥ १ ॥ लोभी यश और अभिमानी सुन्दरता चाहै तौ समझलो कि ये प्राणी आकाशसे दूध दुहना चाहते हैं ॥ २ ॥

पुनि फिरि रामनिकट सो आई ❀ प्रभु लछमनपहँ बहुरि पठाई ॥ ३ ॥
लछमन कहा तोहिं सो बरई ❀ जो तृन तोरि लाज परिहरई ॥ ४ ॥

(लक्ष्मणजीके बचन सुनकर वह) फिर रामचन्द्रजीके पास लौट आई तौ भगवान्ने फिर लक्ष्मणजीके पास भेज दी ॥ ३ ॥ लक्ष्मणजीने कहा तुझे तौ वह बरैगा जो तृण तोड़नेके समान लाजको छोड़ देगा ॥ ४ ॥

तब खिसिआनि रामपहँ जाई ❀ रूप भयंकर प्रगटि देखाई ॥ ५ ॥
बिथुरे केस बदन बिकराला ❀ भृकुटीकुटिल करनिलगि गाला ॥ ६ ॥

तब खिसियाकर फिर रामचन्द्रजीके पास गई और भयंकर रूप प्रगट कर दिखाने लगी ॥ ५ ॥ (जिसके) बाल खुले हुये, भयंकर मुख, टेढ़ी भौं हैं और हाथोंतक (लटकते हूये) गाल थे ॥ ६ ॥

सीतहीं सभय देखि रघुराई ❀ कहा अनुजसन सैन बुझाई ॥ ७ ॥
अनुज राममनकी गति जानी ❀ उठे रिसाइ सो सुनहु भवानी ॥ ८ ॥

जब रामचन्द्रजीने सीताजीको भयभीत देखा तौ छोटे भाई (लक्ष्मण)से सैनमें समझाकर

---

(१) अब यहां यह शंका होती है कि रामचन्द्रजीने सैनसे क्या कहा? और लक्ष्मणजीने सैनहीसे रामचन्द्रके मनकी बात कैसे जानलीनी कि जिस्से नाक कान काट डाले? तहां कहते हैं कि भगवान्के यह इशारा किया कि चार उँगली आकाशकी ओर उठाकर और झटका देकर लक्ष्मणजीको दिखादीं। इस इशारेसे वे नाक कान काठनेका मतलब समझ गये. रघुनाथजीका इशाराभी कूट है, अर्थात् चार उँगलियोंसे वेदका अर्थ निकला. क्योंकि वेद ४ हैं और वेदकों श्रुतिभी कहते हैं और श्रुति कानको कहते हैं, सो ४ उँगली उठानेसे तौ कानका बोध हुआ। अब रही नाक, सो आकाशकी ओर जो ४ उँगली की थीं सो आकाशको नाकभी कहते हैं, जैसा बालकांडमें लिखा है कि–

"महि पाताल नाक यश व्यापा"

इस इशारेसे लक्ष्मणजीको नाकका बोध हुआ और झटकनेसे काटनेका बोध हुआ–गोसाँईजीने यहां तौ स्पष्ट नहीं लिखा परंतु बरवा रामायणके आरण्यकांडमें यह लिखा है. कि–

"वेद नाम गनि अंगुरिन, खंड प्रकास ॥ सूपनखा प्रभु पठई, लछमनपास ॥"

(कुरूप करनेको) कहदिया ॥ ७ ॥ लक्ष्मण रघुनाथजीके मनकी बात जान क्रोधित होकर उठे ! (महादेवजी कहते हैं कि) हे पार्वती ! सुनो ॥ ८ ॥

दो०–लछमन अति लाघव तिहिं, नाककानविनु कीन्ह ॥ ❀
ताके कर रावनकहँ, मनहुँ चुनौती दीन्ह ॥ २७ ॥ ❀

लक्ष्मणजीने अतिशीघ्रतासे उसके नाक कान काटडाले सो मानों उसके हाथ रावणको संग्रामके लिये चुनौती दी ॥ २७ ॥

चौ०–नाककानविनु भइ विकरारा ❀ जनु स्रव सैल गेरुकै धारा ॥ १ ॥
स्याम घटा देखत घनकेरी ❀ तहँ बासवधनु मनहुँ उगेरी ॥ २ ॥

नाककानके विना बड़ी भयंकर होगई (और रुधिर जो बहता था सो ऐसा भासता था) मानोंपहाड़से गेरूकी धारा बहती है ॥ १ ॥ वह तौ देखतमें मेघकी श्याम घटासी दीखती है और उसमें (लोहूकी धार ऐसी सोहती है) मानो इन्द्रधनुष उदय हुआ ॥ २ ॥

खरदूषनपहँ गइ बिलपाता ❀ धिकधिक तव पौरुष बल भ्राता ॥ ३ ॥
तेहिं पूछा सब कहेसि बुझाई ❀ जातुधान सुनि सैन बनाई ॥ ४ ॥

वह खरदूषणके पास बिलाप करती हुई गई (और बोली) हे भाइयो! तुम्हारे बल और पराक्रमको धिक्कार है ॥ ३ ॥ जब उन्होंनें पूछा तौ सब (कारण) समाझाकर कहा, यह सुनतेही राक्षसोंने सेना तयार करी ॥ ४ ॥

चौदहसहस सुभट सँग लीन्हे ❀ जिन्ह सपनेहुँ रणपीठ न दीन्हे ॥ ५ ॥
धाए निसिचरनिकर बरूथा ❀ जनु सपक्ष कज्जलगिरि जूथा ॥ ६ ॥

और चौदह हजार ऐसे बाँके योद्धा साथमें लिये कि जिन्होंने स्वप्नेंमेंभी लड़ाईमें पीठ नहीं दीथी ॥ ५ ॥ (खरदूषणकी आज्ञा पाकर) बहुतसे राक्षसोंके झुंड ऐसे दौड़े मानों पंखसमेत कज्जल[१]गिरिके झुंड दौड़ते हों ॥ ६ ॥

नाना बाहन नानाकारा ❀ नाना आयुध घोर अपारा ॥ ७ ॥
सूर्पनखा आगे करि लीन्ही ❀ असुभ रूप स्रुति नासाहीनी ॥ ८ ॥

अनेक भांतिके वाहन, नानाप्रकारके आकार और अनेकभांतिके अपार आयुध धारण किये ॥ ७ ॥ और नकटी कनकटी कुरूपिनी शूर्पणखाको आगे कर चले ॥ ८ ॥

दो०–निज निज बल सब मिलि कहहिं, एकहिं एक सुनाइ ॥ ❀
बाजन बाजु जुझाऊ, हर्ष न हृदय समाइ ॥ २८ ॥ ❀

एकसे एक सुनाकर सब अपने २ बलको कहते जाते हैं, लड़ाईके बाजे बजने लगे और ऐसा आनन्द हुआ कि हृदयमें नहीं समाता ॥ २८ ॥

चौ०–असकुन अमित होहिं भयकारी ❀ गनहिं न मृत्युबिबस सब झारी ॥ १ ॥
गर्जहिं तर्जहिं गगन उड़ाहीं ❀ देखि कटकभट अति हरषाहीं ॥ २ ॥

अनगिनती भयंकर अशकुन होते हैं पर सब मृत्युके बश हैं सो नहीं गिनते ॥ १ ॥ गर्जते तर्जते हुये आकाशको उड़ते हैं और सेनाको देख योद्धा बहुत प्रसन्न होते हैं ॥ २ ॥

---

(१) कज्जलगिरिकी इसलिये उपमा दी है कि काजल बहुतही हलका होता है, उसे रामजीके पवनसमान वाण उड़ादेंगे.

कोउ कह जिअत धरहु दोउ भाई ❀ धरि मारहु तिय लेहु छुड़ाई ॥ ३ ॥
कोउ कह सुनिय सत्य हम कहहीं ❀ कानन फिरहिं बीर कोउ अहहीं ॥ ४ ॥

कोई कहता है कि दोनों भाइयोंको जीतेही जी पकड़ लो और पकड़कर मार डालो और उनकी स्त्रीको छीन लो ॥ ३ ॥ कोई कहता है सुनो हम ठीक कहते हैं कि ये वनमें फिरतेहैं तौ कोई योद्धाही हैं ॥ ४ ॥

एकहि कहा मष्ट होइ रहहू ❀ खरके आगे अस जनि कहहू ॥ ५ ॥
बहुबिध बचन कहत रणधीरा ❀ आये सकल जहाँ रघुबीरा ॥ ६ ॥

एकने कहा अरे चुपके होरहो खरके सामाने कहीं ऐसे मत कह देना ॥ ५ ॥ रणबाँकुरे सब योद्धा अनेकभाँतिके बचन कहते हुये वहां आये कि जहाँ रामचन्द्रजी थे ॥ ६ ॥

धूरि पूरि नभमंडल रहेऊ ❀ राम बुलाइ अनुजसन कहेऊ ॥ ७ ॥
लै जानकिहि जाहु गिरिकंदर ❀ आवा निसिचरकटक भयंकर ॥ ८ ॥

और जब (उनके चलनेसे) आकाश मंडल धूलसे छागया तब रामचन्द्रजीने बुलाकर लक्ष्मणसे कहा कि ॥ ७ ॥ सीताको लेकर पहाड़की कन्दरामें चलेजाओ (देखो) राक्षसोंकी भयंकर सेना आन पहुँची ॥ ८ ॥

रहेहु सजग सुनि प्रभुकर बानी ❀ चले सहित सिय सरधनुपानी ॥ ९ ॥
देखि राम रिपुदल चलि आवा ❀ बिहँसि कठिन कोदंड चढ़ावा ॥ १० ॥

और तुम सावधान रहना. भगवान्‌की ऐसी वाणी सुन (लक्ष्मण) धनुषबाण हाथमें लेकर सीताजीसमेत चले ॥ ९ ॥ रामचन्द्रजीने देखा कि वैरीकी सेना चली आती है तौ हँसकर कठिन धनुष्य चढ़ाया ॥ १० ॥

छं०–कोदंड कठिन चढ़ाइ प्रभु सिरजटा बांधत सोह क्यों । ❀
मरकत कुधरपर लसत दामिनि कोटिसंजुग भुजग ज्यों ॥ ❀
कटि कसि निषंग बिसाल भुज गहि चाप बिसिख सुधारिकै ❀
चितवत मनहुँ मृगराज प्रभु गजराजघटा निहारिकै ॥ ९ ॥ ❀

[१]कठिन धनुषको चढ़ाकर भगवान माथेपर जटाजूट बांधतेमें कैसे शोभायमान लगते है मानों नीलमणिके पर्वतपर करोड़ों बिजली सर्पोंसहित शोभायमान हैं, कमरमें तरकस कसकर लंबी भुजाओंसे धनुष पकड़ बाणोंको सुधारकर भगवान् ऐसे देखने लगे मानों सिंह हाथियोंकी घटाको देखता हो ॥ ९ ॥

सो०–आइगये बगमेल, धरहु धरहु धावहिं सुभट ॥ ❀
यथा बिलोकि अकेल, बालरबिहिं घेरत दनुज ॥ १० ॥ ❀

राक्षस पास आगये और लीजियो पकड़ियो कह २ कर योद्धा ऐसे दौड़े जैसे बालसूर्यको अकेला देख दैत्य घेर लेते हैं ॥ १० ॥

चौ०–घेरि रहे निसिचरसमुदाई ❀ दंडकखगमृग चले पराई ॥ १ ॥
प्रभु बिलोकि सर सकहिं न डारी ❀ थकित भये रजनीचर झारी ॥ २ ॥

राक्षसोंके झुंड (भगवान्) घेर रहे हैं (यह देख) दंडक वनके खग मृग भाग चले ॥ १ ॥ भगवान्‌को देखकर बाण नहीं छोड़ सक्ते. क्योंकि सब राक्षस (रामकी सुन्दर छबिको देख) थकित होगये ॥ २ ॥

---

(१) यहां मर्कतमणिसे रामजीके शरीरकी, बिजलीसे जटाओंकी और सर्पोंसे हाथोंकी उपमा दीहै ॥

सचिव बोलि बोले खरदूषन ❀ यह कोउ नृपबालक नर भूषन ॥ ३ ॥
सुर नर नाग असुर मुनि जेते ❀ देखे सुने हते हम केते ॥ ४ ॥

मंत्रीको बुलाकर खर दूषण बोले कि यह तौ कोई राजाके बालक मनुष्योंके आभूषणही हैं॥ ३॥ जितने देवता मुनीश्वर मनुष्य सर्प और राक्षस हैं हमने सब देख हैं, सुने हैं और कितनेही मारे हैं॥४॥

हम भरिजनम सुनहु सब भाई ❀ देखी नहिं अस सुन्दरताई ॥ ५ ॥
यद्यपि भगिनिहिं कीन्ह कुरूपा ❀ वधनायक नहिं पुरुष अनूपा ॥ ६ ॥

(परन्तु) हे सब भाइयो ! सुनो. हमने तौ जन्मभरमें ऐसी सुन्दरता देखी नहीं है ॥ ५ ॥ यद्यपि इन्होंने हमारी बहिनको कुरूप कर दिया है (तथापि) ये अनोखे पुरुष मारनेयोग्य नहीं हैं ॥६॥

देहु तुरत निजनारि दुराई ❀ जीवत भवन जाहु दोउ भाई ॥ ७ ॥
मोर कहा तुम ताहि सुनावहु ❀ तासु बचन सुनि आतुर आवहु ॥ ८ ॥

(इसलिये इनसे जाकर कह दो कि) अपनी स्त्रीको कि जिसे छिपादी है उसे शीघ्र देकर दोनों भाई जीते हुये अपने घरको जाओ ॥ ७ ॥ मेरा संदेशा तुम उनको सुनाओ और उनका उत्तर सुनकर तुरंत लौट आओ ॥ ८ ॥

दो०–भए कालबस मूढ़ सब, जानहिं नहिं रघुबीर ॥ ❀
मसक फूक किमि मेरु उड़, सुनहु गरुड़ मतिधीर ॥ २९ ॥ ❀

(कागभुशुंड कहते हैं) हे मतिधीर गरुड़जी ! सुनो वे सब मूर्ख कालके वश होगये हैं इससे रामचन्द्रजीको नहीं जानते हैं. भला ! मच्छरकी फूंकसे सुमेरु पर्वत कैसे उड़ सक्ता है ? ॥ २९ ॥

चौ०–दूतन्ह कहा रामसन जाई ❀ सुनत राम बोले मुसुकाई ॥ १ ॥
आजु भयउ बड़भाग्य हमारा ❀ तुम्हरे प्रभु अस कीन्ह बिचारा ॥ २ ॥

दूतोंने रामचन्द्रजीसे जाकर कहा तौ रामचन्द्र सुनतेही हँसकर बोले कि–॥ १ ॥ (आज हमारा बड़ा भाग्य हुआ जो तुम्हारे स्वामीने ऐसा बिचार किया ॥ २ ॥ (अब हमारी ओरसे कह दो कि)

हम क्षत्रिय मृगया बन करहीं ❀ तुमसे खल मृग खोजत फिरहीं ॥ ३ ॥
रिपु बलवंत लेखि नहिं डरहीं ❀ एकबार कालहुसन लरहीं ॥ ४ ॥

हम तौ क्षत्री हैं वनमें शिकार करते हैं और तुमसरीखे खलरूपी हिरणोंकोही ढूंढते फिरते हैं ॥ ३ ॥ और वैरीको बलवान् देखकर डरतेभी नहीं हैं, एकबार तौ कालसेभी लड़ते हैं ॥ ४ ॥

जद्यपि मनुज दनुजकुलघातक ❀ मुनिपालक खलसालक बालक ॥ ५ ॥
जो न होइ बल घर फिरजाहू ❀ समरबिमुख मैं हतों न काहू ॥ ६ ॥

यद्यपि हम मनुष्य हैं पर राक्षसोंके कुलके नाशक, मुनीश्वरोंके पालक और दुष्टोंके घालक ऐसे बालक हैं ॥५॥ जो बल न हो तौ घरको लौट जाओ मैं लड़ाईसे फिरे हुये किसीको नहीं मारता ॥६॥

रण चढ़ि करिय कपटचतुराई ❀ रिपुपर कृपा परमकदराई ॥ ७ ॥
दूतन्ह जाइ तुरत सब कहेऊ ❀ सुनि खर दूषण उर अति दहेऊ ॥ ८ ॥

और रण चढकर तौ कपट और चतुराई करनी चाहिये और (युद्धके समय) वैरीपर दया करना तौ बड़ी भारी काहिली है ॥ ७ ॥ यह सब (समाचार) दूतोंने तुरंतही जाकर कह दिया सो सुनकर खर दूषण हृदयमें बहुतही जल उठे ॥ ८ ॥

छं०–उर दहेउ कहेउ कि धरहु धावहु बिकट भट रजनीचरा । ❀
शर चाप तोमर शक्ति शूल कृपाण परिघ परशु धरा ॥ ❀

प्रभु कीन्ह धनुटंकोर प्रथम कठोर गोर भयावहा।
भए बधिर व्याकुल यातुधान न ज्ञान तेहि अवसर रहा ॥१०॥

हृदयमें जलकर बोले कि हे बिकट राक्षस योद्धाओ! बाण धनुष तोमर शक्ति त्रिशूल तलवार बरछी और फरसोंको धारण करो और दौड़कर (दोनों भाइयोंको) पकड़ लो. (यह सुन) भगवान्ने पहलेही धनुषकी टंकार करी तौ बड़ा भारी कठोर घोरशोर हुआ और उस समय राक्षस व्याकुल और बहिरे होगये और किसीको ज्ञान न रहा ॥ १० ॥

दो०-सावधान होइ धायऊ, जानि सबल आराति ॥
लागे वर्षण रामपर, अस्त्र शस्त्र बहुभाँति ॥ ३० ॥

और वैरीको बलवान् जान सावधान् होकर दौडे और बहुत प्रकारके अस्त्रशस्त्र रामचन्द्रजी पर बरसाने लगे ॥ ३० ॥

तिनके आयुध तृनसम, करि काटे रघुबीर ॥
तानि सरासन स्रवनलगि, पुनि छाँड़े निजतीर ॥ ३१ ॥

उनके हथियार रामचन्द्रजीने तिनकेके समान काट डाले और फिर कानतक धनुष तानकर अपने बाण छोड़े ॥ ३१ ॥

छं०-तब चले बान कराल। फुकरत जनु बहु व्याल ॥
कोपेउ समर श्रीराम। चले विसिख निसित निकाम ॥११॥

तब (रघुनाथजीके) ऐसे कठिन बाण चले मानो बहुतसे सर्प फुंकारते चले आते हैं. जब श्रीरामचन्द्र लड़ाईमें क्रोधित हुये तौ अति पैने बाण चले ॥ ११ ॥

अवलोकि खरतर तीर। मुरि चले निसिचर वीर ॥
इक एककहँ न सँभार। करै तात मात पुकार ॥ १२ ॥

बड़े पैनेबाणोंको देखकर योद्धा राक्षस लौट चले. एकको दूसरेकी सह्माल नहीं रही और पिता माताको पुकारने लगे ॥ १२ ॥

कोउ कहै खर का कीन्ह। जो युद्ध इन्हसन लीन्ह ॥
जाको बान अतिहि कराल। ग्रसै आय मानहुँ काल ॥ १३ ॥

कोई कहते हैं कि खरने क्या किया जो इनसे लड़ाई ठानी, जिनका अतिही कठिन बाण आकर ऐसा वेधता है मानो काल हो ॥ १३ ॥

भए क्रुद्ध तीनों भाइ। जो भागि रनते जाइ ॥
तेहि बधब हम निजपानि। फिरे मरन मनमहँ ठानि ॥ १४ ॥

फिर तौ तीनों भाई क्रोधित हुये कि जो लड़ाईमेंसे भाग जावेगा उसे हम अपने हाथोंसे मारडालैंगे (यह सुनकर योद्धा) अपने मनमें अपना मरना ठानकर लौटे ॥ १४ ॥

दो०-उमा एक प्रभु दनुज बहु, पुनि इनके बड़भाग ॥
तरन चहहिं प्रभुशर लगे, विना जोग जप जाग ॥ ३२ ॥

(महादेव कहते हैं) हे पार्वती! भगवान् अकेले और राक्षस बहुत हैं फिरभी इनके बड़े भाग्य हैं जो योग जप यज्ञ विनाही भगवान्के बाण लगनेसे तरना चाहते हैं ॥ ३२ ॥

छं०–आयुध अनेक प्रकार, सनमुख ते करहिं प्रहार ॥
रिपु परम कोपे जानि, प्रभु धनुष सर संधानि ॥ १५ ॥

(राक्षस) बहुतभांतिके हथियार सामनेसे मारने लगे। फिर वैरियोंको बहुत क्रोधित जानकर भगवान्ने धनुषपर बाण संधान किया ॥ १५ ॥

छाँडे विपुल नाराच। लगे कटन बिकटपिशाच ॥
उर सीस कर भुज चरन। जहँ तहँ लगे महि परन ॥ १६ ॥

और बहुतसे बाण छोड़े जिनसे विकट राक्षस कटने लगे और उनकी छाती माथा हाथ भुजा और चरण पृथ्वीपर जहां तहां पड़ने लगे ॥ १६ ॥

चिक्करत लागत बान। धर परत कुधर समान ॥
भट कटत तनु सतखंड। पुनि उठत करि पाखंड ॥ १७ ॥

बाणोंके लगतेही चिक्कारते हैं और उनके धड़ पर्वतके समान पृथिवीपर गिरते हैं। एक २ योद्धाके कटनेसे शरीरके सौ सौ खंड हो जाते हैं परंतु फिर मायाकरके उठ खड़े होते हैं ॥ १७ ॥

नभ उड़त बहु भुज मुंड। बिनु मुंड धावत रुंड ॥
खग कंक काग शृगाल। कटकटहिं कठिन कराल ॥ १८ ॥

आकाशमें बहुतसे भुजा और मुंड उड़ते हैं और बिना मुंडके रुंड दौड़ते हैं. कंक नाम पक्षी कोए और गीदड़ अति भयंकरतासे कटकटाते हैं ॥ १८ ॥

छं०–कटकटहिं जंबुक भूत प्रेत पिसाच खप्पर साजहीं।
बैताल वीर कपाल ताल बजाइ योगिनि नाचहीं ॥
रघुबीरबाण प्रचंड खंडहिं भटन्हके उर भुज सिरा।
जहँ तहँ परहिं उठि लरहिं धरु धरु करहिं गिरा भयंकरा १९

गीदड़ तौ कटकटाते हैं और भूत प्रेत पिशाच खप्पर सजाते हैं, बैताल वीरोंकी खोपड़ियोंकी ताली-बजाते हैं, योगिनी नाचती हैं, रामजीके प्रचंड बाण योद्धाओंकी छाती भुजा और मस्तकोंको तोड़ते हैं और वे जहाँ तहाँ गिरते हैं, और उठकर लड़ते हैं और पकड़ो २ ऐसा भयंकर शब्द करते हैं ॥१९॥

अंत्रावरी लै उड़त गीध पिसाच कर गहि धावहीं।
संग्राम पुरवासी मनहु बहु बाल गुड़ी उड़ावहीं ॥
मारे पछारे उर विदारे विपुलभट घूर्णित परे।
अवलोकि निजदल बिकल भटत्रिशिरादि खर दूषण फिरे २०

गिद्ध आंतोंको लेकर उड़ते हैं (और लटकते हुये छोरोंको) पिशाच हाथमें पकड़कर ऐसे दौड़ते हैं मानों लड़ाईरूपी नगरके रहनेवाले बहुतसे बालक पतंग उड़ाते हैं. बहुतसे योद्धा मारडाले, बहुत पछाड़दिये और बहुतसोंके हृदय फाड़ डाले और वे सब घुमेर खा खाकर गिर पड़े; (तब) अपनी सेनामें बाँके योद्धाओंको व्याकुल देखकर खर और दूषण त्रिशिराआदि रामकी ओर फिरे ॥ २० ॥

सर सक्ति तोमर परसु शूल कृपान एकहि बारहीं।
करि कोप श्रीरघुबीरपर अगनित निसाचर डारहीं ॥

प्रभु निमिषमहँ रिपुसर निवारि प्रचारि डारे सायका । ❀
दस दस बिशिख उरमाँझ मारे सकल निसिचरनायका २१ ❀

राक्षस क्रोध करके रामचन्द्रजीके ऊपर वाण, शक्ति, तोमर, फरसा, त्रिशूल और तलवार आदि असंख्य (हथियार) एकही साथ छोड़ने लगे. सो भगवान्ने पलभरमें वैरियोंके वाणोंको काटकर वाणोंसे उन्हें छेदडाला और राक्षसोंके सब नायकोंकी छातीमें दश २ वाण मारे ॥ २१ ॥

महि परत उठि भट भिरत मरत न करत माया अतिघनी । ❀
सुर डरत चौदह सहस निसिचर एक श्रीरघुकुलमनी ॥ ❀
सुर मुनि सभय प्रभु देखि मायानाथ अति कौतुक कर्‍यो । ❀
देखहिं परस्पर राम करि संग्राम रिपुदल लरि मर्‍यो ॥२२॥ ❀

योद्धा बार २ पृथ्वीपर गिरते हैं और फिर उठ २ कर लड़ते हैं, मरते नहीं हैं, बहुतसी माया करते हैं और देवता डरते हैं कि राक्षस चौदह हजार और श्रीरामचन्द्र अकेले हैं. तब मायापति भगवान्ने देवता और मुनीश्वरोंको भयभीत देखकर यह कौतुक किया कि (शत्रुदल) आपसमें एक दूसरेको रामही राम देखने लगा और संग्राम कर लड़ मरा ॥ २२ ॥

दो०–राम राम कहि तनु तजहिं, पावहिं पद निर्वान ॥ ❀
करि उपाय रिपु मारेऊ, छिनमहँ कृपानिधान ॥ ३३ ॥ ❀

यह राम है यह राम है इसप्रकार राम २ कहकर शरीर छोड़ते हैं और मोक्षपदवी पाते हैं ऐसा उपाय करके दयानिधान रामचन्द्रने क्षणभरमें वैरी मारडाले ॥ ३३ ॥

हर्षित वर्षहिं सुमन सुर, बाजहिं गगन निसान ॥ ❀
अस्तुति करि करि सब चले, सोभित विविध बिमान ॥३४॥ ❀

देवता प्रसन्न होकर फूल वर्षाने लगे और आकाशमें बाजे बजने लगे. फिर सब देवता स्तुति कर २ के अनेक सुन्दर विमानोंपर बैठकर चले ॥ ३४ ॥

चौ०–जब रघुनाथ समर रिपु जीते ❀ सुर नर मुनि सबके दुख बीते ॥ १ ॥
तब लछमन सीतहीं लै आए ❀ प्रभुपद परत हरषि उर लाए ॥ २ ॥

जब रामचन्द्रजीने लड़ाईमें शत्रु जीत लिये और देवता मनुष्य और मुनीश्वर इन सबके दुःख दूर हो गये ॥ १ ॥ तब लक्ष्मणजी सीताजीको ले आये और भगवान्ने चरण छूतेही प्रसन्न होकर उनको छातीसे लगा लिया ॥ २ ॥

सीता निरखि स्याम मृदु गाता ❀ परम प्रेम लोचन न अघाता ॥ ३ ॥
पंचवटी बसि श्रीरघुनायक ❀ करत चरित सुरमुनिसुखदायक ॥ ४ ॥

रामजीके सांवले कोमल अंगको देख जानकीजीके नेत्र अधिक प्रीतिके कारण तृप्त नहीं होते ॥ ३ ॥ श्रीरघुनाथजी पंचवटीमें रहकर देवता और मुनीश्वरोंको सुख देनेवाले चरित्र करते हैं॥४॥

धुआँ देखी खरदूषनकेरा ❀ सूर्पनखा तब रावन प्रेरा ॥ ५ ॥
बोली बचन क्रोध करि भारी ❀ देस कोसकी सुरति बिसारी ॥ ६ ॥

जब खरदूषणके दाहका धुआँ देखा तब शूर्पणखाने रावणको उसकाया ॥ ५ ॥ और बड़ा क्रोध करके बोली कि तैंने देश और खजानेकी तौ (बिलकुलही) याद भुलादीनी ॥ ६ ॥

करसि पान सोवसि दिनराती ❀ सुधि न तोहिं सिरपर आराती ॥ ७ ॥
राज नीति बिनु धन बिनु धर्मा ❀ हरिहिं समर्पे बिनु सतकर्मा ॥ ८ ॥

और (मदिरा) पीपीकर रातदिन सोता रहता है तुझे खवर नहीं कि तेरे शिरपर वैरी आनपहुँचे ॥ ७ ॥ विना नीतिके राज्य, विना धर्मके धन, भगवानको समर्पण किये बिना शुभ कर्म नहीं रहते हैं ॥ ८ ॥

विद्या विनु विवेक उपजाये ❀ स्रमफल पढ़े किये अरु पाये ॥ ९ ॥
संगतें यती कुमंत्रतें राजा ❀ मानतें ज्ञान पानतें लाजा ॥ १० ॥
प्रीति प्रणय विनु मदतें गुनी ❀ नासहिं वेगि नेति अस सुनी ॥ ११ ॥

विना ज्ञान उत्पन्न किये विद्या पानेका क्या फल? अर्थात् ज्ञान हो जाय तौ विद्याका फल हुआ और नहीं तो पाठ करने और गानेसे तौ कोरा श्रमही है ॥ ९ ॥ और संग करनेसे संन्यासिका, बुरे मंत्रीसे राजाका, अभिमानसे ज्ञानका, और (मदिरादिक) पीनेसे लाजका नाश हो जाता है १० और नम्रता विना स्नेहका, अभिमानसे गुणका, शीघ्रही नाश हो जाता है ऐसी नीति सुनी है ॥

सो०-रिपु रुज पावकु पाप, प्रभु अहि गनिय न छोट करि ॥ ❀
अस कहि विविध विलाप, पुनि लागी रोदन करन ॥ ११ ॥ ❀

हे रावण ! वैरी, रोग, अग्नि, पाप, स्वामी और सर्प इनको छोटाकरके न गिनना चाहिये ऐसे कह वहुतसा विलाप कर फिर रोने लगी ॥ ११ ॥

दो०-सभामाँझ व्याकुल परी, वहुप्रकार कह रोइ ॥ ❀
तोहिं जियत दसकंधर, मोरि कि अस गति होइ ॥ ३५ ॥ ❀

व्याकुल होकर सभाके वीच गिर पड़ी और रोकर वहुत भांतिसे कहने लगी कि हे रावण ! क्या तेरे जीतेजी मेरी ऐसी दुर्दशा होवै ? ॥ ३५ ॥

चौ०-सुनत सभासद उठि अकुलाई ❀ समुझाई गहि बाहु उठाई ॥ १ ॥
कह लंकेस कहसि निजबाता ❀ केहि तव नासा कान निपाता ॥ २ ॥

सुनतेही सभासद अकुलाकर उठे और वांह पकड़कर उठाकर समझाई ॥ १ ॥ और रावणने कहा कि अपनी वात कह कि तेरे नाक कान किसने काटलिये ? ॥ २ ॥

अवधनृपति दसरथके जाए ❀ पुरुषसिंह बन खेलन आए ॥ ३ ॥
समुझिपरी मोहिं इन्हकै करनी ❀ रहित निसाचर करिहहिं धरनी ॥ ४ ॥

(तव शूर्पणखा बोली) अयोध्याके राजा दशरथके पुत्र जो मनुष्योंमें सिंहसमान हैं सो (दंडक) वनमें खेलनेआये हैं ॥३॥ उनकी करतूतसे मुझको समझ पड़ा कि पृथ्वीको राक्षसहीन करदेंगे ४

जिनकर भुजबल पाइ दसानन ❀ अभय भये मुनि विचरहिं कानन ॥ ५ ॥
देखत बालक कालसमाना ❀ परम धीर धन्वी गुननाना ॥ ६ ॥

हे रावण ! जिनकी भुजाओंका वल पकर मुनीश्वर बेधड़क होकर वनमें फिरते हैं ॥ ५ ॥ वे देखनेमें तौ वालक हैं परंतु कालके समान और वड़े धीरजवान् हैं और इनमें धनुषधारियोंके अनेक गुण हैं ॥ ६ ॥

अतुलित बल प्रताप दोउ भ्राता ❀ खलवधरत सुरमुनिसुखदाता ॥ ७ ॥
सोभाधाम राम अस नामा ❀ तिन्हके सँग इक नारि ललामा ॥ ८ ॥

दोनों भाई अतुल वलवाले और प्रतापी हैं, राक्षसोंके मारनेमें उनकी प्रीति है और देवता और मुनीश्वरोंको सुख देनेवाले हैं ॥ ७ ॥ जिनका नाम राम है वे शोभाके धाम हैं और उनके साथमें एक सुन्दर स्त्री है ॥ ८ ॥

सो०–अतिसुकुमारि पियारि, पटतरजोग न आहि कोउ ॥ ❀
मैं मन दीख विचारि, जहँ रह तेहि सम आन नहिं ॥ १२ ॥ ❀

सो ऐसी अतिसुकुमारी प्यारी नारी है कि जिसकी उपमाके योग्य कोई आतीही नहीं. मैंने मनमें बिचारकर देख लिया कि (यहां तौ क्या) जहांकी वह रहनेवाली है वहांभी उसके बराबर और नहीं होगी ॥ १२ ॥

चौ०–रूपरासि बिधि नारि सँवारी ❀ रति सतकोटि तासु बलिहारी ॥ १ ॥
अजहुँ जाइ देखब्र तुम जबहीं ❀ होइहहु बिकल तासुबस तबहीं ॥ २ ॥

विधाताने उस नारीको ऐसी रूप रंगकी खान बनाया है कि सौ करोड़ रतिभी उसकी नौछावर हैं ॥ १ ॥ अभी जब तुम जाकर उसे देखोगे तभी व्याकुल हो उसके वश हो जाओगे ॥ २ ॥

जीवनमुक्त लोक बस ताके ❀ दससुख सुन सुन्दरि अस जाके ॥ ३ ॥
तासु अनुज काटे स्रुति नासा ❀ सुनि तव भगिनी करि परिहासा ॥ ४ ॥

हे रावण ! सुन जिसके ऐसी स्त्री है वह जीवन्मुक्त है और संसार उसके वशीभूत है ॥ ३ ॥ (हे रावण !) सुन (जिसकी ऐसी नारी है) उसीके छोटे भाई (लक्ष्मणने) तेरी बहन सुनकर और हँसीकरके मेरे नाक कान काटे हैं ॥ ४ ॥

विना चूक अस दसा हमारी ❀ अपराधी किमि बचहिं सुरारी ॥ ५ ॥
खर दूषन सुनि लागु पुकारा ❀ छिनमहँ सकल कटक उन मारा ॥ ६ ॥

हे रावण ! विना चूकके तौ हमारी यह गति हुई फिर अपराधी राक्षस कैसे बचैंगे ? ॥ ५ ॥ क्योंकी खर दूषण सुनकर मेरी सहायताके लिये गये थे सो उन्होंने क्षणभरमें सब सेना मारडाली ॥६॥

खर दूषन त्रिसिराकर घाता ❀ सुनि दससिस जरा सब गाता ॥ ७ ॥
भयो सोचबस नहिं बिस्रामा ❀ बीतहिं पल मानहुँ सत जामा ॥ ८ ॥

खर दूषण और त्रिशिराका मरना सुन रावणके सब अंग जल उठे ॥ ७ ॥ और शोचके वश होगया; चैन नहीं पड़ता; एक २ पल सौ २ पहरके समान कटने लगा ॥ ८ ॥

दो०–सूपनखहिं समुझाइ करि, बल बोलेसि बहुभाँति ॥ ❀
भवन गयउ अति सोचबस, नींद परी नहिं राति ॥ ३६ ॥ ❀

शूर्पनखाको समाझाकर और बहुत प्रकारसे अपना बल कहकर घरको गया परंतु बहुत शोचके वश रातको नींद नहीं आई ॥ ३६ ॥

चौ०–सुर नर असुर नाग जगमाहीं ❀ मोरे अनुचरसम कोउ नाहीं ॥ १ ॥
खर दूषन मोसम बलवंता ❀ तिन्हैं को मारै बिनु भगवंता ॥ २ ॥

(पड़ा २ क्या सोचता है कि) संसारमें देवता मनुष्य राक्षस और सर्प कोई मेरे सेवकोंके बराबरभी तौ नहीं हैं ॥ १ ॥ और खर दूषण तौ मेरे समानही बलवान् थे, उन्हैं भगवान्के विना कौन मार सक्ता है ? ॥ २ ॥

---

(१) इस चौपाईका सीधा अर्थ तौ यही है परंतु कोई, यह शंका करते हैं कि सीताजीकी उत्पत्ति और तरहसे है; ब्रह्माने कहां बनाई है ? अतएव यों अर्थ करते हैं कि विधाताकी बनाई हुई स्त्रियां जो रति आदि रूपकी राशि हैं सो सैकडों इनकी बलिहारी हैं । पर यह अर्थ महाकपोलकल्पित है. यहाँ शंकाका कामहि क्या है ? क्योंकि शूर्पणखा क्या जानैं कि यह सीताजी कैसे हुई हैं ! उसने तौ एक साधारण बात कही है–

सुररंजन भंजन महिभागा ❀ जो जगदीस लीन्ह अवतारा ॥ ३ ॥
तौ मैं जाइ बैर हठि करिहौं ❀ प्रभुकर मरि भवसागर तरिहौं ॥ ४ ॥

सो जो देवताओंके आनन्द देनेवाले और पृथ्वीके भार उतारनेवाले संसारके स्वामी भगवान्ने अवतार लिया है ॥ ३ ॥ तौ मैं जाकर हठसे वैर करूंगा और भगवान्के हाथसे मरकर संसाररूपी समुद्रसे तरजाऊंगा ॥ ४ ॥

होय भजन नहिं तामसदेहा ❀ मन क्रम बचन मंत्र दृढ एहा ॥ ५ ॥
जो नररूप भूपसुत कोऊ ❀ हरिहौं नारि जीति रन दोऊ ॥ ६ ॥

तामसी शरीरसे भजन तौ बनता नहीं है, सो मनक्रमबचनसे यही मंत्र पक्का है ॥५॥ और जो मनुष्यके रूपमें कोई राजाके बालक होंगे तौ दोनोंको लड़ाईमें जीतकर उनकी स्त्री को हर लाऊंगा६

चला अकेल यान चढ़ि तहँवा ❀ बस मारीच सिंधुतट जहँवा ॥ ७ ॥
रथ अनूप जोरे खर चारी ❀ बेगवंत इमि जिमि उरगारी ॥ ८ ॥

(सो ऐसे विचार) रथपर चढ़ अकेला वहांको चला जहाँ समुद्रके किनारेपर मारीच रहता था ॥७॥ सुन्दर रथमें चार गधे जोड़े और वह रथ ऐसा शीघ्र चलनेवाला था जैसे गरुड़ ॥ ८ ॥

छं०-उरगारिसम अतिवेग बरनत जाइ नहिं उपमा कही। ❀
सिरछत्र सोभित स्यामघन जनु चमर स्वेत विराजही ॥ ❀
यहि भाँति लाँघत सरित सैल अनेक वापी सोहहीं। ❀
वन बाग उपबन वाटिका सुचि नगर मुनिमन मोहहीं ॥२३॥❀

गरुड़के समान बहुत जल्दी चलनेवाला कि जिसकी उपमा वर्णन नहीं की जाती है; श्यामघटा समान (रावण) के शिरपर सुंदर छत्र शोभायमान है और श्वेत चँवर विराजमान है; इस प्रकार मुनियोंके मनकोभी मोहित करनेवाले ऐसे अनेक सुन्दर नदी पर्वत और बावड़ी, वन, बाग, बगीचा बगीची और पवित्र नगरोंको लाँघता हुआ वह चला ॥ २३ ॥

दो०-बहु तड़ाग सुचि विहँग मृग, बोलत विविध प्रकार ॥ ❀
यहिबिधि आयो सिंधुतट, सतयोजनविस्तार ॥ ३७ ॥ ❀

(मार्गमें) जहँ बहुतसे निर्मल सरोवर भरे हैं और जलपक्षी और खग मृग भांति २ की बोली बोल रहे हैं (उनको) देखता हुआ इसप्रकार समुद्रके किनारेपर आया कि जिसका सौ योजनका विस्तार है ॥ ३७ ॥

चौ०-सुंदर जीव विविधविध जाती ❀ करहिं कुलाहल दिन अरु राती ॥ १ ॥
कूदहिं ते गर्जहिं घननाई ❀ महाबली बल बरनि न जाई ॥ २ ॥

जहां अनेक भांतिकी जातिके सुन्दरजीव रात दिन कोलाहल शब्द करते हैं ॥१॥ वे कूदते और बादलकी भांति गर्जते हैं, बड़े बलवान् हैं, उनका बल वर्णन नहीं किया जाता ॥ २ ॥

कनकबालु सुंदर सुखदाई ❀ बैठहिं सकल जंतु तहँ जाई ॥ ३ ॥
तेहिपर दिव्य लता द्रुम लागे ❀ जेहि देखत मुनिमन अनुरागे ॥ ४ ॥

जहाँ सुन्दर सुखदाई सुवर्णकी रेति बिछरही है वहां आकर सब जीव बैठते हैं ॥ ३ ॥ उसपर सुन्दर बेल और वृक्ष लगे हुये हैं जिनको देखतेही मुनीश्वरोंकेभी मन ललचाते हैं ॥ ४ ॥

गुहा विविध विधि रहहिं बनाई ❀ बरनत सारदमति सकुचाई ॥ ५ ॥
चाहिय जहाँ ऋषिनकर वासा ❀ तहाँ निसाचर करहिं निवासा ॥ ६ ॥

और वे पशु अनेक भांतिकी गुफा बनाकर रहते हैं जिनका वर्णन करनेमें सरस्वतीकी बुद्धिभी सकुचाती है ॥ ५ ॥ (देखो) जहां ऋषियोंका निवास चाहिये था वहां राक्षस रहते हैं ॥ ६ ॥

दसमुख देखि सकल सकुचाने ❀ जे जड़ जीव सजीव पराने ॥ ७ ॥
इहाँ राम जस जुक्ति बनाई ❀ सुनहु उमा सो कथा सुहाई ॥ ८ ॥

सो रावणको देखतेही जो जड़ अर्थात् वृक्षादि थे सो सब सकुचा गये और जो जीवधारी थे अपना २ जीव लेकर भागे ॥ ७ ॥ (महादेवजी कहते हैं) हे पार्वती ! यहां रामचन्द्रजीने जैसी युक्ति रची वह सुन्दर कथा सुनो ॥ ८ ॥

दो०–लछमन गए बनहि जब, लेन मूल फल कंद ॥ ❀
जनकसुतासन बोलेउ, विहँसि कृपासुखवृंद ॥ ३८ ॥ ❀

जब लक्ष्मणजी कन्द मूल फल लेनेके लिये वनको गये तौ दया और सुखके धाम (रामचन्द्र) हँसकर सीताजीसे वोले ॥ ३८ ॥

चौ०–सुनहु प्रिया व्रत रुचिर सुसीला ❀ मैं कछु करब ललित नरलीला ॥ १ ॥
तुम पावकमहँ करहु निवासा ❀ जौं लगि करौं निसाचर नासा ॥ २ ॥

हे प्यारी ! सुनो, तुम तौ पतिव्रता धर्मको पालनेवाली हो और मैं कुछ सुन्दर मनुष्यलीला किया चाहता हूं ॥१॥ सो तुम (तबतक) अग्निमें निवास करो जवतक मैं राक्षसोंका नाश करूं ॥ २ ॥

जबहिं राम सब कहेउ बखानी ❀ प्रभुपद धरि हिय अनलसमानी ॥ ३ ॥
निजप्रतिबिंब राखि तहँ सीता ❀ तैसेई सील स्वरूप बिनीता ॥ ४ ॥

जब रामचन्द्रजीने यह समझाकर कहा तौ (सीताजी)भगवान्‌के चरणोंको हृदयमें रखकर अग्निमें समागई ॥३॥ और सीताजीने अपनी परछाईको वहां रक्खा जिसका वैसाही नम्र शील स्वभावथा॥४॥

लछमनहू यह मरस न जाना ❀ जो कछु चरित रचा भगवाना ॥ ५ ॥
दसमुख गयउ जहँ मारीचा ❀ नाइ माथ स्वारथरत नीचा ॥ ६ ॥

जो कुछ चरित्र भगवान्‌ने रचा यह भेद लक्ष्मणजीनेभी न जाना ॥५॥ फिर रावण वहां गया जहां मारिच रहता था और उसे मस्तक नवाया क्योंकि नीच लोग अपने मतलबमें बड़े पक्के होते हैं ॥ ६ ॥

नमनि नीचकी अतिदुखदाई ❀ जिमि अंकुस धनु उरग बिलाई ॥ ७ ॥
भयदायक खलकी प्रियबानी ❀ जिमि अकालके कुसुम भवानी ॥ ८ ॥

नीचकी नम्रताईभी बहुत दुखदाई होती है जैसे अंकुश, धनुष, सर्प और बिल्ली ये नवकरही मारते हैं ॥ ७ ॥ (महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! दुष्टोंके प्यारे बचनभी ऐसे भय देनेवाले होते हैं जैसे कुऋतुके फूल ॥ ८ ॥

दो०–करि पूजा मारीच तब, सादर पूछी बात ॥ ❀
कवन हेतु मन व्यग्र अति, अकसर आयहु तात ॥ ३९ ॥ ❀

---

(१) पुष्पोंको देखकर भयका होना यह कि ये पुष्प कुऋतुमें कैसे खिले, भगवान्‌को क्या कर्तव्य है, इत्यादि इस चौपाईको किसी २ ने यों लिखा है कि 'जिमि अकाशके कुसुम भवानी' अर्थात् जैसे आकाशके पुच्छल तारोंसे भय होता हैं यहभी पाठ बुरा नहीं है पर पहिला पाठ बहुधा पाया जाता है ॥

तब मारीचने अपने स्वामी रावणकी पूजा करके आदरसहित बात पूछी कि हे स्वामी ! क्या कारण है जो तुम्हारा मन अति घबरा रहा है और अकेले आये हो ? ॥ ३९ ॥

चौ०–दसमुख सकल कथा तेहि आगे ❀ कही सहित अभिमान अभागे ॥ १ ॥
होहु कपटमृग तुम छलकारी ❀ जेहिविध हरि आनौं नृपनारी ॥ २ ॥

अभागे रावणने (खर दूषण शूर्पणखा आदिकी) सब कथा उसके आगे अभिमानसहित कही और बोला कि ॥ १ ॥ तुमको छल करना खूब आता है, सो ऐसे कपटके हिरण बन जाओ कि जिससे राजा (रामचन्द्र) की स्त्रीको हरलाऊँ ॥ २ ॥

तेहि पुनि कहा सुनहु दससीसा ❀ ते नररूप चराचरईसा ॥ ३ ॥
तासों तात वैर नहिं कीजै ❀ मारे मरिय जिआए जीजै ॥ ४ ॥

उसने उत्तर दिया कि हे रावण ! सुनो वे तौ मनुष्यके रूपमें चराचरके स्वामी[1] (भगवान्) हैं॥३॥ हे स्वामी ! उनसे वैर न करना चाहिये वरन उनके मारनेसे मरना और जिलानेसे जीना चाहिये ४

मुनिमख राखन गये कुमारा ❀ बिनु फर सर रघुपति मोहिं मारा ॥५॥
सत योजन आयउँ छिनमाहीं ❀ तिन्हसन वैर किए भल नाहीं ॥ ६ ॥

जब उनकी बाल्यावस्था थी तब (विश्वामित्र) मुनिके यज्ञकी रखवाली करने गये थे सो वहां रामने मेरे बिना नोंकका ऐसा बाण मारा कि ॥ ५ ॥ मैं पलभरमें सौ योजन (समुद्रके तीरपर) आपड़ा, इसलिये उनसे वैर करना अच्छा नहीं है ॥ ६ ॥

भइ मति कीट भृंगकी नाई ❀ जहँ तहँ मैं देखौं दोउ भाई ॥ ७ ॥
जो नर तात तदपि अतिसूरा ❀ तिनहिं विरोध न आइहि पूरा ॥ ८ ॥

और मेरी मति भृंगी कीड़ेकीसी होगई है अर्थात् जैसे भृंगीका पकड़ा हुआ कीट जो उसके मुखसे छूटजाय तौ उसे सब जगत् भृंगीमय दीखता है वैसेही जहां मैं देखता हूं वहांही वे दोनों भाई दीखते हैं ॥ ७ ॥ हे स्वामी ! जो वे मनुष्यभी हों तौभी बड़े भारी शूर हैं, उनसे लड़ाई करनेमें पूरा न पड़ैगा ॥ ८ ॥

दो०–जेहिं ताड़का सुबाहु हति, खंडेउ हरकोदंड ॥
खर दूषन त्रिशिरा बधेउ, मनुज कि अस बरिबंड ॥ ४० ॥

जिन्होंने ताड़का और सुबाहुको मारा, फिर महादेवके धनुपको तोड़ा और खर दूषण त्रिशिराको मारा, सो क्या मनुष्य ऐसा बलवान् होता हैं ? अर्थात् नहीं होता ॥ ४० ॥

चौ०–रा अस नाम सुनत दसकंधर ❀ रहत प्रान नहिं मम उरअंतर ॥ १ ॥
जाहु भवन कुलकुसल विचारी ❀ सुनत जरा दीन्हेसि बहु गारी ॥ २ ॥

हे रावण ! (रामके) नामका रकार अक्षर सुनतेही मेरे हृदयके भीतर प्राण नहीं रहते ॥१॥ सो तुम कुटुम्बकी कुशल विचारकर घरको जाओ, यह सुनतेही (रावण) जलगया और बहुतसी गालियाँ[2] दीं॥२॥

---

(१) जैसा भारतमें कहा है 'यतः सर्वाणि भूतानि भवंत्यादियुगागमे । यस्मिँश्च प्रलयं यान्ति पुनरेव युगक्षये' अर्थात् जिससे सृष्टिकी आदिसे सब प्राणी उत्पन्न होते हैं और सृष्टिके अंतमें लय हो जाते हैं ॥

(२) जैसा नीतिमें कहा है कि "उपदेशो हि मूर्खाणां प्रकोपाय न शान्तये ।
पयःपानं भुजङ्गानां केवलं विषवर्द्धनम् ॥"
अर्थात् मूर्खोंको उपदेश देनेसे उनको अधिक क्रोध बढ़ता है किन्तु शान्ति नहीं होती जैसे सर्पोंको दुग्धपान केवल विष बढ़ाता है ॥

गुरुजिमि मूढ़ करसि मम बोधा ❀ कहु जग मोहिंसमान को जोधा ॥ ३ ॥
तब मारीच हृदय अनुमाना ❀ नवहिं विरोधे नहिं कल्याना ॥ ४ ॥

हे मूर्ख ! गुरुकी भांति मुझे उपदेश करता है, यह तौ कह संसारमें मेरे बराबर योद्धा कौन है? ॥ ३ ॥ तब मारीचने मनमें बिचार किया कि इन नौ जनोंसे विरोध करनेमें भला नहीं होता है ४

सस्त्री मर्मी प्रभु सठ धनी ❀ वैद बंदि कवि मानस गुनी ॥ ५ ॥
उभय भाँति देखा निजमरना ❀ तब ताकेउ रघुनायकसरना ॥ ६ ॥

हथियारवाला, भेदी, स्वामी, मूर्ख, धनवान्, वैद्य, भाट, कवीश्वर और गुणवान् मनुष्य ॥५॥ जब (मारीचने) दोनों भांतिसे अपना मरण देखा तौ रामचन्द्रजीकीही शरण तकी ॥ ६ ॥

उतर देत मोहिं बधिहि अभागे ❀ कस न मरौं रघुपतिसर लागे ॥ ७ ॥
अस जिय जानि दसाननसंगा ❀ चला रामपद प्रेम अभंगा ॥ ८ ॥
मन अतिहरष जनाव न तेही ❀ आज देखिहौं परमसनेही ॥ ९ ॥

यह अभागा उत्तर देनेसे तौ मुझे मारडालेगा इसलिये रामचन्द्रजीके वाण लगनेसेही क्यों न मरूं? ॥७॥ ऐसे मनमें समझ रामचन्द्रजीके चरणोंमें पूरा स्नेह करके रावणके साथ होलिया ॥८॥ (मारीचके) मनमें बड़ा आनन्द है कि आज बड़े प्रेमी रामचन्द्रजीके दर्शन करूंगा, परंतु उस (रावण) को नही जताता है ॥ ९ ॥

छं०–निजपरमप्रीतम देखि लोचन सफल करि सुख पाइहौं । ❀
श्रीसहित अनुजसमेत कृपानिकेतपद मन लाइहौं ॥ ❀
निर्बाणदायक क्रोध जाकर भक्ति अवसहिं वसकरी । ❀
निजपाणि शर संधानि सो मोहिं बधहिं सुखसागर हरी २४ ❀

अपने बड़े प्रीतमके दर्शन कर नेत्रोंको सफल कर सुख पाऊँगा और जानकी तथा भाई लक्ष्मण समेत कृपानिधान रामचन्द्रके चरणोंमें मन लगाऊंगा। जिनका क्रोधभी मोक्षका देनेवाला है और जिनकी भक्ति अवशकोभी वशमें करलेती है वही सुखके सागर भगवान् अपने हाथसे बाण संधानकर मुझे मारेंगे ॥ २४ ॥

दो०–मम पाछे धर धावत, धरे सरासन बान ॥ ❀
फिरि फिरि प्रभुहिं विलोकिहौं, धन्य न मोसम आन ॥४१॥ ❀

रघुनाथजी मेरे पीछे धनुषवाण धारण करके दौड़िगे और मैं बार २ फिरकर भगवान्को देखता जाऊंगा, फिर मेरेसमान और कोई धन्य नहीं हैं ॥ ४१ ॥

चौ०–सीतालषनसहित रघुराई ❀ जेहि वन बसहिं मुनिन्ह सुखदाई ॥१॥
तेहि बननिकट दसानन गयऊ ❀ तब मारीच कपटमृग भयऊ ॥ २ ॥

फिर मुनीश्वरोंके सुखदायक रघुनायक सीता और लक्ष्मणसहित जिस वनमें रहते थे ॥ १ ॥ उस वनके पास गया और तब मारीच कपटका मृग बनगया ॥ २ ॥

---

(१) हनुमन्नाटके—

"रामादपि च मर्तव्यं मर्तव्यं रावणादपि ।
उभयोर्यदि मर्तव्यं वरं रामो न रावणः ॥"

अर्थात् जो रामसेभी मरना है और रावणसेभी मरना है सो जो दोनोंसेही मरना है तौ रामके हाथसेही मरना श्रेष्ठ है, रावणसे नहीं ॥

अतिविचित्र कछु बरनि न जाई ❀ कनकदेह मनिरचित बनाई ॥ ३ ॥
सीता परमरुचिर मृग देखा ❀ अंग अंग सुमनोहर बेखा ॥ ४ ॥

सो ऐसा अत्यंत विचित्र बना कि कुछ वर्णन नहीं किया जाता; सुवर्णकी मणिजटित देह बनाली ॥ ३ ॥ सीताजीने अति सुन्दर मृग देखा जो अंगमें अति मनोहर वेष किये था ॥ ४ ॥

सुनहु देव रघुबीर कृपाला ❀ यहि मृगकर अतिसुंदर छाला ॥ ५ ॥
सत्यसंध प्रभु बध करि एही ❀ आनहु चर्म कहा बैदेही ॥ ६ ॥

(सीताजी बोलीं) हे महाराज ! कृपानिधान ! रामचन्द्रजी ! सुनो इस मृगकी तौ अति सुन्दर छाला है ॥ ५ ॥ हे भगवन् ! हे सत्यप्रतिज्ञ ! इसे मारकर मृगछाला लाओ ॥ ६ ॥

तब रघुपति जाना सब कारन ❀ उठे हर्षि सुरकाजसँवारन ॥ ७ ॥
मृग बिलोकि कटि परिकर बाँधा ❀ करतल चाप रुचिर सर साँधा ॥ ८ ॥

तब रामचन्द्रजीने सब कारण जानलिया और देवताओंका काम सिद्ध करनेके लिये प्रसन्नतासे उठे ॥ ७ ॥ (भगवान्ने) मृगको देखतेही कमरमें फेंट बांध हाथमें सुन्दर धनुष लेकर उसपर वाण चढ़ाया ॥ ८ ॥

प्रभु लछमनहिं कहा समुझाई ❀ बिरत बिपिन निसिचरसमुदाई ॥ ९ ॥
सीताकेरि करेहु रखवारी ❀ बुधि बिवेक बल समय बिचारी ॥१०॥

भगवान्ने लक्ष्मणसे समझाकर कहा कि वनमें बहुतसे राक्षस फिरते हैं ॥ ९ ॥ (सो तुम) बुद्धि, ज्ञान, बल, और समयको विचार कर सीताजीकी रखवाली करना ॥ १० ॥

दो०-अस कहि चलेउ तहां प्रभु, जहां कपटमृग नीच ॥ ❀
देव हर्षबिस्मय बिवस, चातक वर्षाबीच ॥ ४२ ॥ ❀

ऐसे कहकर भगवान् वहां चले जहां नीच कपटका मृग था। (उन्हें देखकर) देवता [2]आनन्द और खेदके वश ऐसे होगये जैसे वर्षाके बीचमें पपीहा होता है ॥ ४२ ॥

चौ०-प्रभुहिं बिलोकि चला मृग भाजी ❀ धाए राम सरासन साजी ॥ १ ॥
निगम नेति सिव ध्यान न पावा ❀ मायामृग पाछे सो धावा ॥ २ ॥

भगवान्को देखकर मृग भाग चला तौ रामचन्द्रजी धनुष बाण साजकर पीछे दौड़े ॥ १ ॥ जिसको वेद नेति २ कहते हैं और महादेवजीभी जिसको ध्यानमें नहीं पाते सो (रामचन्द्र) मायामृगके पीछे दौड़ते चले जा रहे हैं ॥ २ ॥

कबहुँ निकट पुनि दूरि पराई ❀ कबहुँक प्रगट कबहुँ दुर जाई ॥ ३ ॥
प्रगटत दुरत करत छल भूरी ❀ इहिबिध प्रभुहिं गयो लै दूरी ॥ ४ ॥

---

(१) अध्यात्मरामायणमें इस मृगका ऐसा स्वरूप लिखा है कि–

"रत्नशृंगो मणिखुरो नीलरत्नविलोचनः ।
विद्युत्प्रभो विमुग्धास्यो विचचार वनान्तरे ॥ १ ॥

अर्थात् जिसके रत्नोंके सींग, मणियोंके खुर, नीले रत्नकें नेत्र, बिजलीके समान चमकता शरीर और अति मनोहर मुख था–

(२) आनन्द तौ इस बातका हुआ कि रावण मारा जायगा और खेद यह हुआ कि सीताहरणसे रघुनाथजीको बड़ा दुःख होगा ॥

वह कभी तौ पास आजाता है और फिर दूर भाग जाता है, कभी प्रगट होता है और कभी छिप जाता है ॥ ३ ॥ प्रगट होता हुआ और छिपता हुआ इसप्रकार बहुतसे छल बल करताहुआ भगवान्‌को दूर ले गया ॥ ४ ॥

तब तकि राम कठिन सर मारा ❀ धरनि परेउ करि घोर चिकारा ॥ ५ ॥
लछमनकर प्रथमहिं लै नामा ❀ पाछे सुमिरेसि मनमहँ रामा ॥ ६ ॥

तब रामचन्द्रजीने तक कर पैना वाण मारा और वह घोर चिक्कार शब्द करके पृथ्वीपर गिरपड़ा ॥ ५ ॥ पहले लक्ष्मणजीका नाम लेकर और पीछे मनमें श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण करने लगा ॥ ६ ॥

प्रान तजत प्रगटेसि निजदेही ❀ सुमिरेसि रामसहित वैदेही ॥ ७ ॥
अंतरप्रेम तासु पहिंचाना ❀ मुनिदुर्लभ गति दीन्ह सुजाना ॥ ८ ॥

प्राण छोड़तेही अपनी राक्षसी देह प्रगट की और सीताजीसहित रामचन्द्रका स्मरण किया ॥ ७ ॥ चतुर भगवान्‌ने उसका भीतरा स्नेह पहिंचानकर उसे ऐसी गति दीनी जो मुनियोंकोभी दुर्लभ थी ॥ ८ ॥

दो०–बिपुल सुमन सुर बर्षहिं, गावहिं प्रभुगुनगाथ ॥ ❀
निजपद दीन्हा असुरकहँ, दीनबंधु रघुनाथ ॥ ४३ ॥ ❀

देवता बहुतसे फूल वर्षाने लगे और भगवान्‌के गुण गाने लगे कि रघुनाथजी वड़े दीनबन्धु हैं कि जो राक्षसकोभी अपना धाम दिया ॥ ४३ ॥

चौ०–खल बधि तुरत फिरे रघुबीरा ❀ सोह चाप कर कटि तूनीरा ॥ १ ॥
आरत गिरा सुनी जब सीता ❀ कहेउ लषनसन परम सभीता ॥ २ ॥

राक्षसको मारकर रामचन्द्र हाथमें धनुष और कमरमें तरकससे शोमित तुरन्त लौटे ॥ १ ॥ यहां जब सीताने (हा लक्ष्मण २ ऐसा) आरत शब्द सुना तौ बहुत घबराकर लक्ष्मणजीसे कहने लगीं कि ॥ २ ॥

जाहु बेगि संकट तव भ्राता ❀ लछमन बिहँसि कहा सुनि माता ॥ ३ ॥
भृकुटिविलास सृष्टिलय होई ❀ सपनेहु संकट परै कि सोई ॥ ४ ॥

जल्दी जाओ तुम्हारे भाईपर कष्ट पड़ा. लक्ष्मणने हँसकर कहा हे माता ! सुनो ॥ ३ ॥ (जिसकी) भृकुटीके फेरनेसे संसारका नाश हो जाता है उसपर कहीं स्वप्नमेंभी संकट पड़ सक्ता है ?४

सौंपि गए मोहिं रघुपति थाती ❀ जो तजि जाउँ तोष नहिं छाती ॥ ५ ॥
यह जीय जानि सुनहु मम माता ❀ पूछत कहब कवन मैं बाता ॥ ६ ॥

मुझे रामचन्द्र धरोहर सौंप गये है उसे छोड़कर जाता हूं तौ मनमें संतोष नहीं होता है ॥ ५ ॥ हे माता ! यह मनमें जान मेरी (बात) सुनो कि जो वे पूछेंगे (कि क्यों छोड़ आये तौ) मैं क्या उत्तर दूंगा ? ॥ ६ ॥

मरमबचन सीता जब बोली ❀ हरिप्रेरित लछमनमति डोली ॥ ७ ॥
चहुँदिसि रेख खिंचाइ अहीसा ❀ बार वार नायउ पद सीसा ॥ ८ ॥

---

(१) अध्यात्मरामायणमें लिखा है–

"द्विजो वा राक्षसो वाऽपि पापी वा धार्मिकोऽपि वा ।
त्यजन् कलेवरं रामं स्मृत्वा याति परं पदम् ॥

अर्थात् ब्राह्मण हो, वा राक्षस हो, पापी हो, वा धर्मात्मा हो परंतु अंतसमयमें जो रामका स्मरण करके शरीर त्यागता है वह परमपदको पाता है.

(यह सुनकर) जब सीताजीने मर्मके वचन कहे तौ भगवान्‌की प्रेरणासे लक्ष्मणजीकी बुद्धि चलायमान हुई॥७॥ लक्ष्मणजीने चारों ओर रेखा खींच वारंवार सीताजीके चरणोंको मस्तक नवाया॥८॥

बन दिसि देव सौंपि सबकाहू ❀ चले जहाँ रावनससिराहू ॥ ९ ॥
चितवहिं लषन सियहिं फिरि कैसे ❀ तजत बच्छ निजमातहिं जैसे ॥ १० ॥

वन और दिशाओंके देवता सब किसीको सौंपकर जहां रावणरूपी चन्द्रमाको राहुके समान ग्रसनेवाले रामचन्द्रजी थे वहां चले ॥ ९ ॥ लक्ष्मणजी फिर २ कर सीताजीको कैसे देखते हैं जैसे अपनी माताको छोडतेसमय बछडा देखता हो ॥ १० ॥

दो०–एक डरत डर रामके, दूजे सीय अकेलि ॥ ❀
लषन तेज तनु हत भयो, जिमि डाढ़ी दव बेली ॥ ४४ ॥ ❀

एक तौ रामचन्द्रजीके डरसे डरते हैं दूसरे सीताजी अकेली हैं (यह विचार कर उस समय) लक्ष्मणजीका शरीर ऐसा छबिछीन होगया जैसे दावानलसे जली बेल होजाती है ॥ ४४ ॥

चौ०–सून्य बीच दसकंधर देखा ❀ आवा निकट जतीके भेखा ॥ १ ॥
जाके डर सुर असुर डराहीं ❀ निसि न नींद दिन अन्न न खाहीं ॥ २ ॥

रावणने इस बीचमें सूना देखा और संन्यासीके वेषमें (सीताजीके) पास आया॥१॥ जिस रावणके डरसे देवता और असुर ऐसे डरते हैं कि रातको नींद नहीं आती और दिनमें अन्न नहीं खाते॥२॥

सो दस सीस स्वानकी नाईं ❀ इत उत चितइ चला भँड़िआई ॥ ३ ॥
जिमि कुपंथ पग देत खगेसा ❀ रह न तेज बल बुधि लवलेसा ॥ ४ ॥

सो रावण कुत्तेकी भांति इधर उधर देखकर (कि कहीं राम लक्ष्मण तौ नहीं आते हैं) चोरी करने चला ॥ ३ ॥ (कागभुशुंड कहते हैं) हे गरुडजी ! जैसे बुरे मार्गमें पैर देतेही तेज बल और बुद्धिका लवलेश नहीं रहता ॥ ४ ॥

करि अनेक बिधि छलचतुराई ❀ माँगेउ भिक्षा दसमुख जाई ॥ ५ ॥
अतिथि जानि सिय कंद मूल फल ❀ देन लगी तेहिं कीन्ह बहुरि छल ॥ ६ ॥

(सोही हुआ कि) रावणने बहुतभांति कपट और चतुराई करके जाकर भीख मांगी ॥ ५ ॥ सीताजी अतिथि जानकर उसे कन्द मूल फल देने लगीं परन्तु उसने फिर कपट किया ॥ ६ ॥

कह दसमुख सुनु सुंदरि बानी ❀ बाँधी भीख न लेउँ सयानी ॥ ७ ॥
बिधिगति बाम कालकठिनाई ❀ रेख लाँघि सिय बाहर आई ॥ ८ ॥

रावणने कहा हे सुन्दरी ! तू चतुर है, मेरी बात सुन, मैं (संन्यासी हूं) बँधी हुई भिक्षा नहीं लेता हूं ॥ ७ ॥ (यह सुनकर) विधाताकी वाम गति और समयकी कठिनतासे सीताजी रेखा लाँघकर बाहर आगई ॥ ८ ॥

दो०–विस्वभरनि अघदलदलनि, करनि सकल सुरकाज ॥ ❀
जाना नहिं तेहि समयमहँ, दससिरकपटके साज ॥ ४५ ॥ ❀

संसारका पालन करनेवाली, पापोंके समूहोंको नाश करनेवाली और सब देवताओंके काम सिद्ध करनेवाली होकरभी (सीताजीने) उस समय रावणके कपटका सामान न जाना ॥ ४५ ॥

---

(१) अध्यात्मरामायणमें लिखा है कि सीताजीने कहा, हे लक्ष्मण ! तू भाईका दुःख चाहता है, मुझे जान पड़ाकी भरतने तुझे रामजीको मारनेके लिये भेजा है और उन्हें मारकर तू मुझे लेना चाहता है सो तेरी क्या गूदड़ी है ? मैं अभी प्राण छोड दूंगी. राम अभी यह नहीं जानते हैं कि तू मेरे लेनेकी फिकर्में है, सो तू हो वा भरत हो, मैं रामको छोड़ कीसीका अंगस्पर्श न करूंगी । यह कह छाती कूटकर आठ २ आँसू रोने लगीं ॥

चौ०–नानाविध कहि कथा सुहाई ❀ राजनीति भय प्रीति दिखाई ॥ १ ॥
कह सीता सुनु जती गुसांई ❀ बोलेहु बचन दुष्टकी नांई ॥ २ ॥

(तब रावणने) अनेकभांतिकी सुन्दर कथा कहकर सुनाई और राजनीति भय और प्रीति दिखाई ॥ १ ॥ सीताजीने कहा कि सुनोजी ! हो तौ तुम संन्यासीजी महाराज ! परंतु वचन दुष्टोंकी भांति बोलते हो ॥ २ ॥

तब रावन निजरूप देखावा ❀ भइ सभीत जब नाम सुनावा ॥ ३ ॥
कह सीता धरि धीरज गाढ़ा ❀ आइगए प्रभु रहु खल ठाढ़ा ॥ ४ ॥

तव तौ रावणने अपना रूप दिखाया और जब नाम सुनाया (कि मैं रावण हूँ) तव तौ सीताजीके छक्के छूट गये ॥ ३ ॥ पर सीताजीने वडा धीरज वांधकर कहा अरे दुष्ट ! खडा तौ रह भगवान् आ पहुँचे हैं ॥ ४ ॥

जिमि हरिबधुहिं छुद्र सस चाहा ❀ भयसि कालबस निसिचरनाहा ॥ ५ ॥
वायस करि चह खगपतिसमता ❀ सिंधुसमान होइ किमि सरिता ॥ ६ ॥

जैसे सिंहिनीको (कालके वश होकर) छोटासा खरगोस चाहै इसीप्रकार हे राक्षसराज ! (रावण) तू कालके वश हुआ है ॥ ५ ॥ और जैसे कौआ गरुडकी समानता किया चाहै और नदी समुद्रकी वरावरी किया चाहै सो कहीं होसक्ती है ? ॥ ६ ॥

खरि कि होइ सुरधेनुसमाना ❀ जाहु भवन निज सुनु अज्ञाना ॥ ७ ॥
सुनत वचन दससीस लजाना ❀ मनमहँ चरन बंदि सुख माना ॥ ८ ॥

और गधैया क्या कामधेनुके वरावर हो सक्ती है ? (इसलिये) हे मूर्ख ! सुन(जो खैर चाहे तौ)अपने घर लौट जा॥७॥बचन सुनतेही रावण लजाया और मनमें उनके चरणोंको दंड़वत कर सुख पाया८

दो०–क्रोधवंत तब रावन, लीन्हेसि रथ बैठाइ ॥ ❀
चलेउ गगनपथ आतुर, भय रथ हाँकि न जाइ ॥ ४६ ॥ ❀

तब रावणने क्रोधित होकर (सीताजीको) रथपर बिठा लिया और भयभीत होकर आकाशमार्गसे चला; परन्तु डरके मारे रथ नहीं हांका जाता ॥ ४६ ॥

चौ०–हा जगदीस देव रघुराया ❀ केहिं अपराध बिसारेहु दाया ॥ १ ॥
आरतिहरन सरनसुखदायक ❀ हा रघुकुलसरोजदिननायक ॥ २ ॥

(उससमय सीताजी बिलाप करने लगीं कि) हे संसारके स्वामी वीर रामचन्द्र ! (आपने) किस अपराधसे दया छोड दी ? ॥१॥ आप तौ दुःखके हरनेवाले, शरणागतोंके सुख देनेवाले और रघुकुलरूपी कमलको सूर्यके समान खिलानेवाले हो ॥ २ ॥

हा लछमन तुम्हार नहिं दोषा ❀ सो फल पायउँ कीन्हेउँ रोषा ॥ ३ ॥
कैकेयीमन जो कछु रहेऊ ❀ सो विधि आजु मोहिं दुख दयेऊ ॥ ४ ॥

हा ! लक्ष्मण ! तुह्मारा दोष नहीं है, जैसा मैंने क्रोध किया वैसा फल पाया ॥ ३ ॥ कैकेयीके मनमें जो कुछ था सो दुःख आज विधाताने मुझे दिया ॥ ४ ॥

पंचवटीके खग मृग जाती ❀ दुखी भए वनचर बहुभाँती ॥ ५ ॥
बिबिध बिलाप करति बैदेही ❀ भूरिकृपा प्रभु दूरि सनेही ॥ ६ ॥

पंचवटीके पशु पक्षी और वनचर (सीताजीका विलाप सुनकर) वहुत भांति दुखी हुये ॥ ५ ॥

सीताजी अनेक प्रकारसे विलाप करती जाती हैं कि प्रभुकी तौ मेरे ऊपर बड़ी कृपा और प्रेम है मुझसे दूर क्यों हुये ? ॥ ६ ॥

विपति मोरि को प्रभुहिं सुनावा ❀ पुरोडास चह रासभ खावा ॥ ७ ॥
सीताकर विलाप सुनि भारी ❀ भये चराचर जीव दुखारी ॥ ८ ॥

मेरी विपत्ति भगवान्‌को कौन सुनावै ? (देखो) हवनकी खीरको गधा खाया चाहता है ॥ ७ ॥ सीताजीका भारी विलाप सुनकर चराचर जीव दुखी होगये ॥ ८ ॥

दो०–बहुबिध करति बिलाप नभ, लिए जात दससीस ॥
डरत न खल बर पाइ भल, जो दीन्हों अज ईस ॥ ४७ ॥

सीताजी आकाशमें बहुत भांतिके विलाप करती जाती हैं और रावण लिये जाता है और ब्रह्मा और शंकरके दिये हुये सुन्दर वरको पाकर दुष्ट डरता नहीं है ॥ ४७ ॥

चौ०–गृध्रराज सुनि आरतबानी ❀ रघुकुलतिलकनारि पहिंचानी ॥ १ ॥
अधम निसाचर लीन्हें जाई ❀ जिमि मलेच्छबस कपिला गाई ॥ २ ॥

गिद्धोंका राजा (जटायु) ने दुःखकी वाणी सुन पहिंचानी कि यह तौ रघुकुलशिरोमणि रामचन्द्रजीकी स्त्री हैं ॥ १ ॥ इसे पापी राक्षस लिये जाता है (और वह ऐसे जा रही हैं) जैसे कसाईके वश कपिला गाय जाती हो ॥ २ ॥

अहह प्रथम बल मम तनु नाहीं ❀ तदपि जाइ देखौं बल ताहीं ॥ ३ ॥
सीता पुत्रि करसि जनि त्रासा ❀ करिहौं जातुधानकर नासा ॥ ४ ॥

हा ! मेरे शरीरमें पहलासा बल नहीं है तौभी जाकर उसके बलको देखूँगा (दूरसे पुकारकर बोला कि) ॥ ३ ॥ हे पुत्री सीता ! तू दुख मत करै, मैं राक्षसका नाश करूंगा ॥ ४ ॥

धावा क्रोधवंत खग कैसे ❀ छूटै पवि पर्वतकहँ जैसे ॥ ५ ॥
रे रे दुष्ट ठाढ़ कि न होही ❀ निर्भय चलेसि न जानेसि मोही ॥ ६ ॥

(यह कहकर) गिद्धराज क्रोधित हो (रावणपर) कैसे टूटा जैसे (इन्द्रका) वज्र पर्वतपर छूटता हो ॥ ५ ॥ (और बोला कि) अरेरे दुष्ट ! खड़ा क्यों नहीं होता, कैसा निडर चला जाता है, (क्या) मुझे नहीं जानता ? ॥ ६ ॥

आवत देखि कृतांतसमाना ❀ फिरि दसकंधर कर अनुमाना ॥ ७ ॥
की मैनाक कि खगपति होई ❀ मम बल जान सहित पति सोई ॥ ८ ॥
जाना जरठ जटायू एहा ❀ मम करतीरथ छाँडिहि देहा ॥ ९ ॥

उसे यमराजके समान आता हुआ देख फिर रावणने विचार किया कि ॥ ७ ॥ या तौ यह मैनाक (पर्वत) है या गरुड़ होगा, सो गरुड़ तौ अप[illegible]ामासमेत मेरे बलको जानता है ॥ ८ ॥ फिर जाना कि यह तौ वृद्ध जटायु है सो मेरे हाथरूपी तीर्थमें अपना शरीर छोड़ैगा अर्थात् जैसे बूढ़े गंगादि तीर्थपर शरीर छोड़ने जाते हैं इसप्रकार यह मेरे हाथसे मरने आया है ॥ ९ ॥

दो०–मम भुजबल नहिं जानत, आवत तापन्हसहाइ ॥
समर चढ़ै तो यहि हतौं, जियत न निजथल जाइ ॥ ४८ ॥

मेरी भुजाओंके बलको नहीं जानता इस लिये तपस्वियोंकी सहायताके लिये आ रहा है. जो लड़ाईमें चढ़ै तौ इसे ऐसा मारूं कि जीता हुआ अपने घरको न जाय ॥ ४८ ॥

चौ०–सुनत गृध्र क्रोधातुर धावा ❀ कह सुनु रावन मोर सिखावा ॥ १ ॥
तजि जानकिहिं कुसल गृह जाहू ❀ नाहित अस होइहि बहु बाहू ॥ २ ॥

गिद्ध सुनतेही क्रोधमें भरकर दौड़ा और कहा अरे रावण ! मेरी शिक्षा सुन ॥ १ ॥ सीताजीको छोड़कर कुशलसे घरको जा नहीं तौ तेरी वहुतसी वाहु (होनेपरभी) यह होगा कि ॥ २ ॥

रामरोषपावक अतिघोरा ❀ होइहि सकल सलभ कुल तोरा ॥ ३ ॥
उतर न देत दसाननजोधा ❀ तबहिं गृध्र धावा करि क्रोधा ॥ ४ ॥

रामचन्द्रजीके क्रोधरूपी अतिप्रचंड अग्निमें तेरा सव कुटुम्ब पतंगके समान जल जायगा ॥ ३॥ जव योद्धा रावणने उत्तर नहीं दिया तव गिद्ध क्रोधित होकर दौड़ा ॥ ४ ॥

धरि कच बिरथ कीन्ह महि गिरा❀ सीतहिं राखि गृध्र पुनि फिरा ॥ ५ ॥
दसमुख उठि कृतसरसंधाना ❀ गृध्र आइ काटेउ धनु बाना ॥ ६ ॥
चोंचन्ह मारि बिदारेसि देही ❀ दंड एक भइ मूर्छा तेही ॥ ७ ॥

और (रावणके) वाल पकड़कर रथसे गिरा दिया सो वह पृथ्वीपर जा पड़ा और सीताजीको रखकर गिद्ध फिर लौटा ॥ ५ ॥ रावणने उठकर धनुषमें वाण संधान किया और जटायुने जाकर धनुष वाण काट डाला ॥ ६ ॥ और चोंचोंसे मारकर देह ऐसी छेद डाली कि उस (रावण) को एक घड़ीके लिये मूर्च्छा आगई ॥ ७ ॥

दो०-जेहि रावन निज बस किए, मुनिगन सिद्ध सुरेस ॥ ❀
तेहि रावनसन समर कर, धीर बीर गृध्रेस ॥ ४९ ॥ ❀

जिस रावणने मुनीश्वरोंके गण, सिद्ध और इन्द्रकोभी अपने वश करलिया उसी रावणसे धीर वीर गृध्र (जटायु) ने घोर युद्ध किया ॥ ४९ ॥

चौ०-स्वस्थ भए पुनि उठि सो धावा ❀ मारे गृध्र न सन्मुख आवा ॥ १ ॥
कीन्हेसि बहुविध जुद्ध खगेसा ❀ थकित भयो तब जरठ गृध्रेसा ॥ २ ॥

होशमें आकर वह (रावण) फिर उठ दौड़ा परन्तु जटायुने ऐसा मारा कि सामने न आया ॥ १ ॥ (कागभुशुंडजी कहते हैं) हे गरुड़जी ! जव (रावणने) वहुतभांति युद्ध किया तव वृद्ध जटायु थकित होगया ॥ २ ॥

तब सक्रोध निसिचर खिसिआना❀ काढ़ेसि परम कराल कृपाना ॥ ३ ॥
काटेसि पंख परा खग धरनी ❀ सुमिरि रामकर अद्भुत करनी ॥ ४ ॥

उस समय राक्षस क्रोधसे खिसिया गया और बड़ी भयंकर तलवार निकाली ॥३॥ और (उसके) पंख[1] काट डाले तौ जटायु पृथ्वीपर गिर पड़ा और रामचन्द्रजीकी अद्भुत करनीका स्मरण करने लगा ॥४॥

मनमहँ गृध्र परम सुख माना ❀ रामकाज मम लागेउ प्राना ॥ ५ ॥
सीतहिं यान चढ़ाइ बहोरी ❀ चला उताउल त्रास न थोरी ॥ ६ ॥

गिद्धने (अपने)मनमें बड़ा सुख पाया कि मेरे प्राण रामचन्द्रजीके काममें लगे ॥५॥ फिर रावण सीताजीको रथपर चढ़ाकर जल्दीसे चला मनमें भय थोड़ा नहीं, अर्थात् बहुत है कि कोई आ न जाय ॥६॥

करति बिलाप जाति नभ सीता ❀ ब्याधबिबस जनु मृगी सभीता ॥ ७ ॥
गिरिपर बैठे कपिन्ह निहारी ❀ कहि हरिनाम दीन पट डारी ॥ ८ ॥
इहबिध सीतहि सो लै गयऊ ❀ बन असोकमें राखत भयऊ ॥ ९ ॥

---

(१) यहां यह शंका है कि पंख क्यों काटे ? मारही क्यों न डाला ? तहाँ कहते हैं कि इसलिये न मारा कि यह मेरा पुरुषार्थ रामचन्द्रजीसे कहैगा.

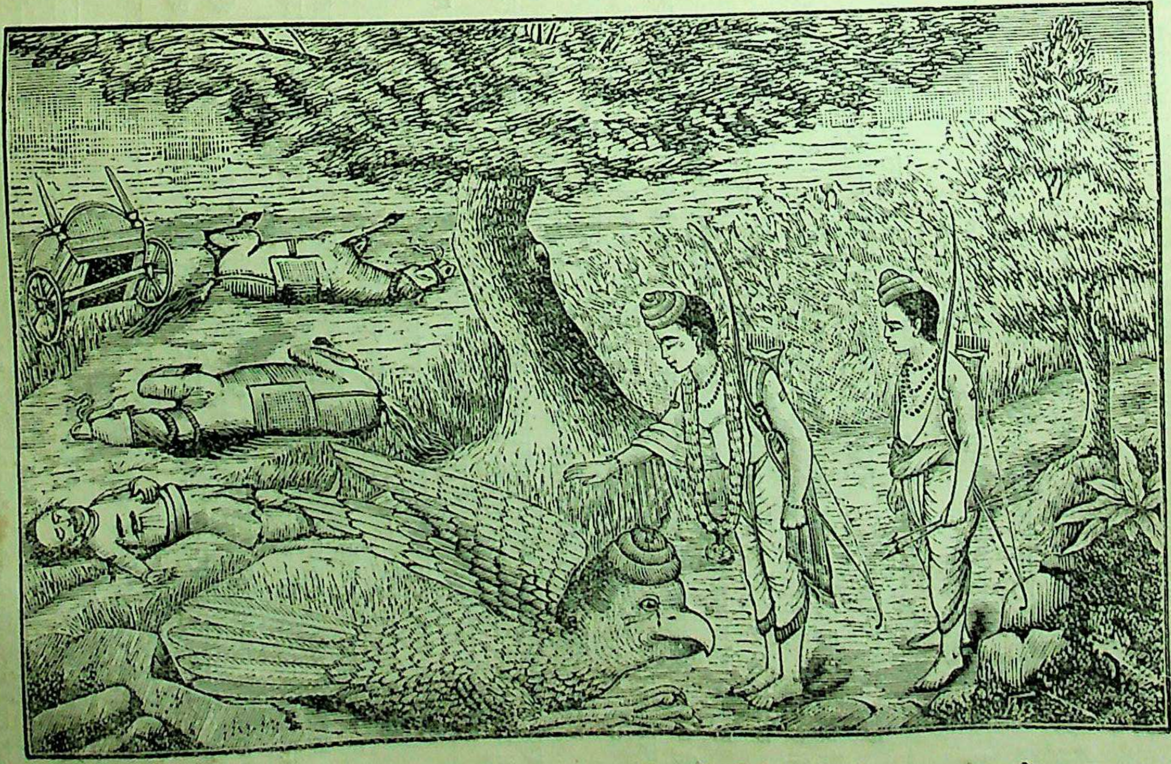

गृध्रराज जटायु और रावणका संग्राम तथा राम लक्ष्मणका सीताकी खोज करतेहुये घायल जटायुके पास आना.

सीताजी विलाप करती हुई आकाशमें ऐसी चली जाती हैं जैसे वहेलियेके वश भयभीत हरिणी जाती होय ॥ ७ ॥ और (ऋष्यमूक) पर्वतपर बैठे हुये (सुग्रीव आदि) वानरोंको देखा तो भगवान्का नाम लिया और वस्त्र डाल दिया ॥ ८ ॥ इसभाँति वह (रावण) सीताजीको ले गया और (ले जाकर) अशोकवाटिकामें रक्खा ॥ ९ ॥

दो०-हारिपरा खल बहुत बिध, भय अरु प्रीति देखाइ ॥
तब असोकपादपतरे, राखेसि जतन कराइ ॥ ५० ॥

जब दुष्ट (रावण) बहुतभांति भय और स्नेह दिखाकर हार गया तब अशोकवृक्षके नीचे यत्न कराकरके रक्खी ॥ ५० ॥

चौ०-वहाँ बिधाता मन अनुमाना ❀ सुरपति बोलि मंत्र अस ठाना ॥ १ ॥
तात जनकतनयापहँ जाहू ❀ सुधि न पाव जिमि निसिचरनाहू ॥ २ ॥

वहाँ ब्रह्माने मनमें विचारा और इन्द्रको बुलाकर यह सलाह की कि ॥ १ ॥ हे प्यारे ! सीताजीके पास ऐसे जाओ जिसमें रावणको खबर न पड़े ॥ २ ॥

अस कहि बिधि सुंदर हबि आनी ❀ सौंपि बहुरि बोले मृदुबानी ॥ ३ ॥
इहि भच्छन कृत छुधा न प्यासा ❀ वर्षसहस दस संसय नासा ॥ ४ ॥

ऐसे कह ब्रह्माने सुन्दर खीर लाकर दी और फिर मीठी वाणीसे बोले कि ॥ ३ ॥ इसके खानेसे भूख प्यास न रहैगी और दशहजार वर्षतक दुःखोंका नाश होगा ॥ ४ ॥

सो प्रसाद लै आयसु पाई ❀ चलेउ हिये सुमिरत रघुराई ॥ ५ ॥
कछु बासव माया निज मोई ❀ रच्छक रहे गये तहँ सोई ॥ ६ ॥

(इन्द्र) उस प्रसादको लेकर और आज्ञा पाकर मनमें रामचन्द्रजीका स्मरण करता हुआ चला ॥ ५ ॥ और इन्द्रने अपनी कुछ ऐसी माया फैलाई कि वहां जो रखवाले थे वे सोगये ॥ ६ ॥

तदपि डरत सीतापहँ आएउ ❀ करि प्रनाम निज नाम सुनाएउ ॥ ७ ॥
निश्चय जानि सुरेस सुजाना ❀ पिताजनक दसरथसम माना ॥ ८ ॥
करि परितोष दूरि करि सोका ❀ हव्य खवाइ गयो निजलोका ॥ ९ ॥

तौभी डरता हुआ सीताजीके पास आया और दंडवत करके अपना नाम बताया ॥ ७ ॥ (सीताजीने) इन्द्रको निश्चय सज्जन जान पिता जनक और दशरथके बराबर माना ॥ ८ ॥ (इन्द्र) सीताजीको संतोष देकर और शोकको दूरकरके और खीर भक्षण कराकर अपने लोकको गया ॥ ९ ॥

दो०-जेहि बिध कपटकुरंग सँग, धाइ चले स्रीराम ॥
सो छबि सीता राखि उर, रटति रहति हरिनाम ॥ ५१ ॥

जिस प्रकार कपटमृगके साथ रामचन्द्रजी दौड़कर चले थे उसी शोभाको हृदयमें रखकर सीताजी भगवान्के नामको जपने लगीं ॥ ५१ ॥

---

(१) यहाँ शंका यह है कि जानकीजीको अशोकवाटिकामें क्यों रक्खा ? घरमें क्यों नहीं रक्खा ? तहाँ कहते हैं कि रावणको नलकूबरका शाप था कि जो रावण स्त्रीकी विना इच्छा उससे भोग करैगा तौ उसके शिरके सात टुकड़े हो जायँगे ? इसी भयके मारे घरमें नहीं ले गया । इस नलकूबरके शापकी सम्पूर्ण कथा बालकाण्डके १५६ पत्रमें देखो-और यह कथा विस्तारपूर्वक वाल्मीकीय रामायणके उत्तर कांडके ३१ वें अध्यायमें है.

चौ०–रघुपति अनुजहिं आवत देषा ❀ मनमहँ चिंता कीन्ह बिसेषा ॥ १ ॥
जनकसुता परिहरेउ अकेली ❀ आयहु तात बचन मम पेली ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीने लक्ष्मणको आते देखा तौ मनमें बहुतही चिन्ता की (और कहा कि) ॥ १ ॥ हे प्यारे! सीताजीको अकेली छोड़ और मेरे बचनको न मानकर यहां चले आये ॥ २ ॥

निसिचरनिकर फिरहिं बनमाहीं ❀ मम मन सीता आस्रम नाहीं ॥ ३ ॥
अहह तात भल कीन्हेहु नाहीं ❀ सीयबिना मम जीवन काहीं ॥ ४ ॥

वनमें राक्षसोंके झुंड फिरते हैं सो मेरे मनमें यह भासता है कि सीता आश्रममें नहीं हैं (क्योंकि वह सुवर्णका मृगभी राक्षसही निकला) ॥ ३ ॥ हे प्यारे! (तुमने) अच्छा नहीं किया, सीताके विना मेरा जीना कहाँ होगा ॥ ४ ॥

यहिते कवन विपति बड़ भाई ❀ खोयउ सीय काननहि आई ॥ ५ ॥
गहि पदकमल अनुज कर जोरी ❀ कहेउ नाथ कछु मोरि न खोरी ॥ ६ ॥

हे भाई! इससेभी बड़ा और कौनसा कष्ट होगा जो वनमें आकर सीताजीकोभी खोदिया ॥ ५ ॥ लक्ष्मणने (भगवान्के) कमलसमान चरण पकड़ हात जोड़कर कहा कि हे स्वामी! मेरा कुछ दोष नहीं है ॥ ६ ॥

अनुजसमेत गए प्रभु तहँवा ❀ गोदावरितट आस्रम जहँवा ॥ ७ ॥
आस्रम देखि जानकीहीना ❀ भए बिकल जस प्राकृत दीना ॥ ८ ॥

फिर लक्ष्मणजीको साथ लेकर भगवान् वहाँ गये जहाँ गोदावरी नदीके किनारेपर आश्रम था ॥७॥ और आश्रमको सीताजीसे रहित देख (भगवान्) ऐसे दुखी हुये जैसे संसारी मनुष्य दीन होता है ८

दो०–कानन रहेउ तड़ागइव, चक चकई सियराम ॥ ❀
रावन निसि बिछुरन भये, दुख बीते चहुँ याम ॥ ५२ ॥ ❀

वन तौ सरोवरकी भांति था उसमें सीता और रामचन्द्रजी चकवाचकवी (के समान विहार करते) थे सो रावणरूपी रातसे वियोग होगया इसलिये चारों पहर दुखहीमें बीतेंगे ॥ ५२ ॥

चौ०–परदुखहरन सोक दुख नाहीं ❀ भा विषाद तिन्हके मनमाहीं ॥ १ ॥
हा गुनखानि जानकी सीता ❀ रूपसीलब्रतनेमपुनीता ॥ २ ॥

(जो भगवान्) पराये दुःखके नाश करनेवाले और जिन्हें कभी शोक और दुःख नहीं उनके मनमेंभी विषाद हुआ ॥ १ ॥ हा गुणोंकी खान जानकी! हा रूप शील व्रत और नियममें पवित्र सीता! २

लछमन समुझाए बहुभाँती ❀ पूछत चले लतातरुपांती ॥ ३ ॥
हे खग मृग हे मधुकरस्रेनी ❀ तुम देखी सीता मृगनैनी ॥ ४ ॥

लक्ष्मणने बहुतभांति समझाया तौभी बेलि और वृक्षोंकी पांतिसे पूछते हुये चले ॥ ३ ॥ हे खग! हे मृग! हे भ्रमरपांति! तुमने मृगनयनी सीताजी देखी हैं? ॥ ४ ॥.

खंजन सुक कपोत मृग मीना ❀ मधुपनिकर कोकिला प्रबीना ॥ ५ ॥
कुंदकली दाड़िम सुदामिनी ❀ सरदकमल ससि उरगभामिनी ॥ ६ ॥

खंजन, तोता, कबूतर, हरिण, मछली, भौंरोंके झुंड और चतुर कोकिल ॥ ५ ॥ कुन्दकी कली, अनार, बिजली, शरदऋतुके कमल, चन्द्रमा, सर्पिणी ॥ ६ ॥

बरुनपास मनोजधनु हंसा ❀ गज केहरि निज सुनत प्रसंसा ॥ ७ ॥
स्रीफल कनक कदलि हर्षाहीं ❀ नेकु न संक सकुच मनमाहीं ॥ ८ ॥

वरुणकी फांसी, कामदेवका धनुष, हंस, हाथी और सिंह, ये अपनी बडाई सुनते हैं ॥७॥ और श्रीफल, सुवर्ण और कदली वृक्ष प्रसन्न होते हैं, कुछभी डर और सकुच इनके मनमें नहीं हैं ॥८॥

सुनु जानकी तोहि बिनु आजू ❀ हरषे सकल पाइ जनु राजू ॥ ९ ॥
किमि सहिजात अनख तोहिं पाहीं❀प्रिया बेगि प्रगटसि कस नाहीं ॥ १० ॥

हे जानकी ! सुन, तेरेविना आज सब ऐसे प्रसन्न होरहे हैं मानों राज्य मिलगया ॥ ९॥ सो हे प्यारी ! इनकी यह ईर्षा तुझसे कैसे सही जाती है ? (इनका मानभंग करनेके लिये) जल्दी प्रगट क्यों नहीं होती ? ॥ १० ॥

दो०–मनिविहीन फनि दीन जिमि, मीन हीन जिमि बारि ॥ ❀
तिमि व्याकुल भए लषन तहँ, रघुबरदसा निहारि ॥ ५३ ॥ ❀

जैसे मणिके विना सर्प और जलविना मीन दुखी हो, तैसेही वहाँ लक्ष्मणजी, रामचन्द्रजीकी दशा देखकर दुखी हुये ॥ ५३ ॥

चौ०–धरि उर धीर बुझावहिं रामहिं ❀ तजहिं न सोक अधिक सुखधामहिं ॥१॥
इहिबिधि खोजत बिलपत स्वामी ❀ मनहु महाबिरही अतिकामी ॥ २ ॥

(लक्ष्मण) हृदयमें धीरज रख रामचन्द्रजीको समझाते हैं परन्तु सुखके धाम भगवान्को तौ शोक छोड़ताही नहीं, अधिक २ बढ़ता जाता है ॥ १ ॥ और भगवान् इसभाँति ढूंढ़ते और विलाप करते फिरते हैं मानों कोई बड़ा वियोगी और बड़ा कामी (मनुष्य) है ॥ २ ॥

पूरनकाम राम सुखरासी ❀ मनुजचरित कर अज अविनासी ॥ ३ ॥
सरवर अमित नदी गिरि खोहा ❀ बहुविध राम लषन तहँ जोहा ॥ ४ ॥

कामनाओंसे पूर्ण, आनन्दकन्द जन्ममरणरहित, रामचन्द्र मनुष्यकीसी लीला करते हैं ॥ ३ ॥ बहुतसे सरोवर, नदी पर्वत और कन्दराओंको रामचन्द्र लक्ष्मणने बहुतभांति खोजा ॥ ४ ॥

सोच हृदय कछु कहि नहिं आवा ❀ टूट धनुष सर आगे पावा ॥ ५ ॥
कहुँ कहुँ सोनित देखिय कैसे ❀ स्रावनजल भा डावर जैसे ॥ ६ ॥

मनमें ऐसा भारी शोच है कि कुछ कहा नहीं जाता । फिर आगे टूटा हुआ धनुष वाण मिला ॥ ५ ॥ कहीं कहीं रुधिर कैसे दिखाई देता है जैसे श्रावणका जल गदला होता है ॥ ६ ॥

कहत राम लछमनहिं बुझाई ❀ काहू कीन्ह जुद्ध यहिं ठाई ॥ ७ ॥
आगे परा गृध्रपति देखा ❀ सुमिरत रामचरन जिन्ह पेखा ॥ ८ ॥

रामचन्द्र लक्ष्मणसे समझाकर कहने लगे कि इस जगह किसीने युद्ध किया है ॥ ७ ॥ फिर आगे उन्होंने जटायुको पड़ाहुआ देखा जो रामचन्द्रजीके चरणोंका सरण कर रहा था कि जिनको (पहले) देख चुका था ॥ ८ ॥

---

(१) भाव यह है कि तेरे नेत्रोंके सामने तौ खंजन, मृग, मछली और कमल लज्जित थे; तेरी नासिकाके सामने तोते, तेरे कंठके सामने कपोत, केशोंके सामने भ्रमर, स्वरके सामने कोकिला, दांतोंके सामने कुन्दकली और अनार, वर्णके सामने विजली, मुखके सामने कमल और चन्द्रमा, चोटीके सामने नागिनी और वरुणका पाश, भृकुटीके सामने कामदेवका धनुष लज्जित थे और चालसे हंस और हाथी और कटिसे सिंह लजाते थे और कुचोंसे श्रीफल कहिये वेल, रंगसे सुवर्ण और जंघासे कदलीखंभ लजाते थे ॥

(२) इतने शोच विलापसे यहां यह प्रगट है कि रावणका उस जगह ऐसा भय था कि कोईभी यह नहीं बतलाता है कि सीताजीको रावण हरलेगया है ॥

दो०-करसरोज सिर परसेउ, कृपासिंधु रघुवीर ॥
निरखि राम छविधाममुख, बिगत भई सब पीर ॥ ५४ ॥

दयाके समुद्र रामचन्द्रने अपना कमलसमान हाथ उसके मस्तकपर फेरा तौ शोभाके स्थान रामचन्द्रजीके मुखको देखतेही (उसकी) सब पीड़ा जाती रही ॥ ५४ ॥

चौ०-तब कह गृध्र बचन धरि धीरा ❀ सुनहु राम भंजन भवभीरा ॥ १ ॥
नाथ दसानन यह गति कीन्ही ❀ तेहिं खल जनकसुता हरि लीन्ही ॥ २ ॥

तब जटायु धीरज रखकर बचन कहने लगा कि हे संसारके दुःखभंजन रामचन्द्रजी! सुनो ॥ १ ॥ हे स्वामी! रावणने मेरी यह दशा करी है और उसी दुष्टने सीताजी हरी है ॥ २ ॥

लै दछिनदिसि गयउ गुसाँई ❀ बिलपति अति कुररीकी नाँई ॥ ३ ॥
दर्स लागि प्रभु राखेउँ प्राना ❀ चलन चहत अब कृपानिधाना ॥ ४ ॥

हे गोसाँई! उन सीताजीको वह दक्षिणदिशाको लेगया और वह कुररी चिड़ियाकी भांति बहुत विलाप करती गई हैं ॥ ३ ॥ हे भगवान्! (मैंने तौ आपके) दर्शनोंके लियेही प्राण रक्खे थे सो हे दयानिधान! वे भी अब चलना चाहते हैं ॥ ४ ॥

राम कहा तनु राखहु ताता ❀ मुख मुसुकाइ कही तेइँ बाता ॥ ५ ॥
जाकर नाम मरत मुख आवा ❀ अधमउ मुक्त होइ स्रुति गावा ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीने कहा हे प्यारे! शरीरको रक्खो, तौ उसने हँसकर बात कही कि ॥ ५ ॥ हे राम! वेद कहते है कि जिसका नाम मरतेसमय मुखपर आवै तो नीचभी मुक्त होजाय ॥ ६ ॥

सो मम लोचनगोचर आगे ❀ राखौं देह नाथ कहि लागे ॥ ७ ॥
जल भरि नयन कहा रघुराई ❀ तात कर्म निजते गति पाई ॥ ८ ॥

सो मेरे नेत्रोंके सामने प्रत्यक्ष हैं, फिर हे स्वामी! किसके लिये देह रक्खूं? ॥ ७ ॥ रामचन्द्रजीने नेत्रोंमें जल भरकर कहा हे प्यारे! (तुमने) अपने कर्मोंसे गति पाई ॥ ८ ॥

परहित बस जिन्हके मनमाहीं ❀ तिनकहँ जग दुर्लभ कछु नाहीं ॥ ९ ॥
तनु तजि तात जाहु मम धामा ❀ देउँ कहा तुम पूरनकामा ॥ १० ॥

जिनके मनमें दूसरेका भला करना रहता है उनको संसारमें कुछभी कठिन नहीं है ॥ ९ ॥ हे प्यारे! तुम शरीर छोड़कर मेरे स्थान अर्थात् वैकुंठको जाओ. और क्या दूं? तुम सब कामनाओंसे पूर्ण हो ॥ १० ॥

दो०-सीताहरन तात जनि, कहहु पितासन जाइ ॥
जो मैं राम तौ कुलसहित, कहहि दसानन आइ ॥ ५५ ॥

हे प्यारे! तुम जाकर सीताका हरण पितासे मत कहना जो कुटुंबसमेत मरकर रावणही कहै तौ मैं राम (नहीं तौ नहीं), अर्थात् रावणको कुलसमेत मारकर पिताके पासही पहुँचा दूंगा तब वही कहदेगा, तुम न कहना ॥ ५५ ॥

---

(१) श्लोक—"अष्टादशपुराणानां व्यासस्य वचनद्वयम् ॥
परोपकारः पुण्याय पापाय परपीडनम् ॥ २ ॥"

अर्थात् अठारह पुराणोंमें व्यासजीके दो वचन हैं पुण्यके लिये तौ उपकार करना, और पापके लिये दूसरेको पीड़ा देना ॥

चौ०-गृध्र देह तजि धरि हरिरूपा ❀ भूषन बहु पट पीत अनूपा ॥ १ ॥
स्याम गात बिसाल भुज चारी ❀ अस्तुति करत नयन भरि वारी ॥ २ ॥

गृध्रने देह छोड़ भगवान्का रूप धरकर बहुतसे आभूषण और सुन्दर पीत वस्त्र धारण करे ॥ १ ॥ श्याम शरीर और विशाल चार भुजाओंसे शोभित जटायु नेत्रोंमें जल भरके स्तुति करने लगा ॥२॥

छं०-जय राम रूप अनूप निर्गुन सगुन गुनप्रेरक सही । ❀
दससीसबाहुप्रचंडखंडन चाप सर मंडन मही ॥ ❀
पाथोदगात सरोजमुख राजीवआयतलोचनं । ❀
नित नौमि राम कृपालु बाहुबिसाल भवभयमोचनं ॥ २४ ॥ ❀

हे राम ! आपके अनूप रूपकी जय होय, वह रूप कैसा है कि, निर्गुण कहिये व्यापकब्रह्म और सगुण कहिये मत्स्यादि अवतार और गुण जो रज सत तम अर्थात् ब्रह्मा विष्णु महेश इनको प्रेरणा करनेवाला है, आपका धनुषवाण रावणकी प्रबल भुजाओंका तोड़नेवाला और पृथिवीका आभूषणरूप है, आपका शरीर श्याम मेघके समान है, मुख कमलके तुल्य है, और नील कमलके समान बड़े २ नेत्र हैं और आपकी विशाल बाहु संसारके भयको छुड़ानेवाली हैं और हे राम! आप कृपालु हो इसलिये आपको निरंतर नमस्कार करता हूं ॥ २४ ॥

बलमप्रमेयमनादिमजव्यक्तमेकमगोचरं । ❀
गोविंद गोपर द्वंद्वहर विज्ञानघन धरनीधरं ॥ ❀
जय राम मंत्र जपंत संत अनंत जनमनरंजनं । ❀
नित नौमि राम अकामप्रिय कामादिखलदलगंजनं ॥ २५ ॥ ❀

हे राम ! आपका बल बेहद्द है अर्थात् ठीक २ ज्ञात नहीं हो सक्ता. आप अनादि, जन्मरहित, अप्रकटशक्ति, और अगोचर हो और इन्द्रियोंके भोक्ता, इन्द्रियोंसे परे, मोहके हरनेवाले, विज्ञानके मेघरूप, और पृथ्वीको धारण करनेवाले हो, और जो कोई संतजन "जय राम" इस मंत्रको निरंतर जपता है उसके मनको प्रसन्न करनेवाले हो, और विनाकामनाके प्यार करनेवाले हो, तथा कामादि दुष्टोंके समूहको नाश करनेवाले हो ऐसे आपको नित्य नमस्कार करताहूं ॥२५॥

जेहि स्रुति निरंतर ब्रह्म व्यापक बिरज अज कहि गावहीं । ❀
करि ध्यान ज्ञान बिराग योग अनेक मुनि जेहि पावहीं ॥ ❀
सो प्रकट करुनाकंद सोभावृंद अग जग मोहई । ❀
मम हृदयपंकजभृंग अंग अनंगबहुछबि सोहई ॥ २६ ॥ ❀

जिनको वेद, निरंतर ब्रह्म, व्यापक, विरज और अज कहकर गाते हैं, और मुनिजन जिनका ध्यान करके ज्ञान, विराग, और योगसे पाते हैं और जो करुणाके कंद और शोभाके समूह तथा जड़ चैतन्योंको मोहनेवाले प्रकट हुए हैं, ऐसे वे अनेक कामदेवके समान सुन्दर कान्तिवाले कमलमें भ्रमरके समान मेरे हृदयमें शोभायमान होवैं ॥ २६ ॥

जो अगम सुगम स्वभाव निर्मल असम सम सीतल सदा । ❀
पस्यंति यं योगी यतन करि कर्म मन गोवस यदा ॥ ❀
सो राम रमानिवास संतत दासबस त्रिभुवनधनी । ❀
मम उर बसहु सो समन संसृति जासु कीरति पावनी ॥२७॥ ❀

जो अगम[1], सुगम, निर्मल स्वभाववाले, टेढे, सीधे और सदा शीतल हो, और जिनको मन कर्म और इन्द्रियोंको वश करनेवाले योगीजन यत्नकरके प्रसन्नतासे देखते हैं; सो हे राम! हे लक्ष्मीरमण! हे त्रिभुवनके धनरूप! आप सर्वदा दासोंके वशमें रहते हो, ऐसे आपकी आवागमनको छुड़ानेवाली पवित्र कीर्त्ति मेरे हृदयमें निवास करै ॥ २७ ॥

दो०–अविरलभक्ति माँगि वर, गृध्र गयउ हरिधाम ॥ ❀
तेहिकी क्रिया यथोचित, निजकर कीन्ही राम ॥ ५६ ॥ ❀

अचलभक्तिका वरदान मांगकर जटायु भगवान्के लोक वैकुंठको गया और रामचन्द्रजीने अपने हाथोंसे उसकी यथोचित क्रिया की ॥ ५६ ॥

चौ०–कोमल चित अति दीनदयाला ❀ कारन विनु रघुनाथ कृपाला ॥ १ ॥
गृध्र अधम खग आमिषभोगी ❀ गति तेहिं दीन्ह जो जाचत जोगी ॥ २ ॥

रघुनाथजी दीनोंके ऊपर दया करनेवाले और अतिकोमल स्वभाव हैं, और विनाकारणही कृपा करते हैं ॥ १ ॥ जिन्होंने नीच गिद्धको कि जो पक्षियोंमें नीच और मांस खानेवाला था उसे वह गति दीनी कि जिसे योगीजन माँगते हैं ॥ २ ॥

सुनहु उमा ते लोक अभागी ❀ हरि तजि होहिं विषयअनुरागी ॥ ३ ॥
पुनि सीतहिं खोजत दोउ भाई ❀ चले बिलोकत बन बहुताई ॥ ४ ॥

(महादेवजी कहते हैं) हे पार्वती! सुनो, वे मनुष्य संसारमें अभागे हैं जो भगवान्को छोड़कर (संसारके) विषयोंमें प्रीति करते हैं ॥ ३ ॥ फिर दोनों भाई सीताजीको ढूँढते हुए और वनकी शोभाको देखते हुये चले ॥ ४ ॥

संकुल लता बिटप घन कानन ❀ बहु खग मृग तहँ गज पंचानन ॥ ५ ॥
आवत पंथ कबंध निपाता ❀ तेहिं सब कही सापकी बाता ॥ ६ ॥

घना वन, जो वेलि और वृक्षोंसे भररहा है और वहाँ वहुतसे पक्षी मृग हाथी और सिंह हैं ॥५॥ मार्गमें आते हुये (रामजीने) कवंधको मारा और उसने (अपने) शापकी सब बात कही कि ६

दुर्बासा मोहिं दीनेउ सापा ❀ प्रभुपद देखि मिटा सो पापा ॥ ७ ॥
सुनु गंधर्व कहौं मैं तोही ❀ मोहिं न सुहाइ ब्रह्मकुलद्रोही ॥ ८ ॥

दुर्वासाऋषिने मुझे शाप[2] दिया था सो भगवान्के चरणोंको देखकर वह शाप मिटगया ॥ ७ ॥ (भगवान्ने कहा) हे गंधर्व! सुन, मैं तुझसे (अपना स्वभाव) कहताहूं कि ब्राह्मणकुलसे विरोध करनेवाला मुझे नहीं सुहाता ॥ ८ ॥

दो०–मन क्रम वचन कपट तजि, जो कर भूसुरसेव ॥ ❀
मोहिंसमेत विरंचि सिव, बस ताके सब देव ॥ ५७ ॥ ❀

जो मनक्रमवचनसे कपट त्यागकर ब्राह्मणोंकी सेवा करता है उसके वशमें मुझसमेत ब्रह्मा महादेव और सब देवता होजाते हैं ॥ ५७ ॥

---

(१) आपका स्वभाव हमारे जाने अगम कहिये कठिन है, और आपकी कृपा हो तौ वही सीधा है और आप कर्मानुसार जो फल देते हो सो टेढ़ा मालूम होता है और भक्ति देनेसे यही एकसा दीखता है (२) कवन्ध पूर्वजन्ममें गंधर्व था, एक समय इसके गानेसे दुर्वासा ऋषि प्रसन्न न भये तव यह उनकी ओर हँसा-ऋषिने शाप दिया कि राक्षस हो, और राक्षस होनेपर जव दुःख देनेलगा तव इन्द्रने ऐसा वज्र मारा कि शिर पेटमें घुसगया तभीसे कवन्ध कहाया. इसकी एक योजनकी बाहु थी इससे खींच २ मनुष्योंको खाता था, परन्तु जव रामको खेंचा तव उन्होंके भुजा खड्गसे काट अलग कीं ।

चौ०–सापत ताडत परुष कहंता ❀ विप्र पूज्य अस गावहिं संता ॥ १ ॥
पूजिय विप्र सीलगुनहीना ❀ सूद्र न गुनगनज्ञानप्रवीना ॥ २ ॥

शाप देता हुआ ताड़ना कहता हुआ और कटु वचन कहता हुआभी ब्राह्मण पूजा करनेके योग्य होता है इस प्रकार संत कहते हैं ॥ १ ॥ शील और गुणसे रहितभी ब्राह्मण पूजना चाहिये और गुणोंकी खान और ज्ञानमें चतुर ऐसे शूद्रको न पूजना चाहिये ॥ २ ॥

कहि निजधर्म ताहि समुझावा ❀ निजपदप्रीति देखि मनभावा ॥ ३ ॥
रघुपतिचरनकमल सिर नाई ❀ गयउ गगन आपनि गति पाई ॥ ४ ॥

(भगवान्ने) ऐसा अपना धर्म कहकर उसे समझाया और अपने चरणोंमें उसका स्नेह देख मनको प्यारा लगा ॥ ३ ॥ फिर वह रामचन्द्रजीके कमलसमान चरणोंको माथा नवाकर और अपनी गति पाकर अर्थात् गंधर्व होकर आकाशको गया ॥ ४ ॥

ताहिं देइ गति राम उदारा ❀ सबरीके आस्रम पगु धारा ॥ ५ ॥
सबरी देखि राम गृह आए ❀ मुनिके बचन समुझि जिय भाए ॥ ६ ॥

और उदार रामचन्द्र उसे गति देकर शबरीके आश्रमको पधारे ॥ ५ ॥ शबरीने देखा कि रामचन्द्रजी मेरे घर आये तौ मुनीश्वरके वचन सच्चे समझ हृदयमें अच्छे लगे ॥ ६ ॥

सरसिजलोचन बाहु बिसाला ❀ जटामुकुट सिर उर बनमाला ॥ ७ ॥
स्याम गौर सुंदर दोउ भाई ❀ सबरी परी चरन लपटाई ॥ ८ ॥

कमलसे नेत्र, लम्बी भुजा, मस्तकपर जटाजूटोंके मुकुट और हृदयमें वनमाला (धारण किये) ॥ ७ ॥ साँवले गोरे सलोने दोनों भाइयोंके चरणोंमें लिपटकर शबरी गिरपड़ी ॥ ८ ॥

प्रेममगन मुख बचन न आवा ❀ पुनि पुनि पदसरोज सिर नावा ॥ ९ ॥
सादर जल लै चरन पखारी ❀ पुनि सुंदर आसन बैठारी ॥ १० ॥

और प्रेममें ऐसी मगन होगई कि मुखसे वचन नहीं आने लगा, वारंवार (भगवान्के) कमलसमान चरणोंकोही शिर नवाया ॥ ९ ॥ और आदरसे जल लेकर चरण धोये और फिर सुन्दर आसनपर बिठलाया ॥ १० ॥

दो०–कंद मूल फल सरस अति, दिये रामकहँ आनि ॥ ❀
प्रेमसहित प्रभु खायउ, बारहिं बार बखानि ॥ ५८ ॥ ❀

और अत्यंत रसीले कन्द मूल फल लाकर रामचन्द्रजीकी भेट किये और भगवान्ने वारंवार बखानकर बड़े प्रेमके साथ भोजन किये ॥ ५८ ॥

---

(१) जैसे भगवान्ने नारदजीको शाप देते, भृगुजीको ताडना देते, अर्थात् जब छातीमें लात मारी थी और परशुरामजीको ताडना करते पूजा—(२) उदार इसलिये हुये कि प्रथम तौ जों मिला उसे गति दी, अब शबरीके घर गति देने पहुँचे. (३) यह भीलनी मतंग ऋषिकी सेवा किया करती थी, जब वे परमधामको जाने लगे तौ इसनेभी जानेके लिये हठ किया। ऋषिने कहा तू यहांही रह. तुझे त्रेतामें भगवान्का दर्शन होगा और तू अविचल भक्ति और परमधाम पावेगी.

कबित्त ॥ (४) बेर बेर बेर लै सराहैं बेर बेर बहु रसिक बिहारी देत बंधुकहँ फेर फेर ॥
चाखि चाखि भाखैं यह वाहूते महान मीठो लेहु तौ लषन यों बखानत हैं हेर हेर ॥
बेर बेर देवे बेर शबरी सुबेर बेर तोऊ रघुबीर बेर बेर तेहि टेर टेर ॥
बेरजनि लावौ बेर बेर जनिलावौ बेर बेर जनिलावौ बेर लावौ कहैं बेर बेर ॥ १ ॥

सूरसागरमें ऐसा लेख मिलता है कि शबरी चाखरकर मीठे२फल रखती जाती थी वही फल अब भेटकिये हैं.

चौ०–पानि जोरि आगे भइ ठाढ़ी ❀ प्रभुहिं बिलोकि प्रीति अति बाढ़ी ॥ १ ॥
केहिविधि अस्तुति करौं तुह्मारी ❀ अधमजाति मैं जड़मति भारी ॥ २ ॥

फिर (शबरी) हाथ जोड़कर आगे खड़ी होगई और भगवान्‌को देखकर बहुतसा प्रेम बढ़ा ॥ १ ॥ (और बोली हे भगवन् !) मैं नीचजाति हूं और मेरी बुद्धि बड़ी भारी जड़ है, मैं किसप्रकार आपकी स्तुति करूं? ॥ २ ॥

अधमते अधम अधम अति नारी ❀ तिनमहँ मैं अतिमंद गँवारी ॥ ३ ॥
कह रघुपति सुनु भामिनि बाता ❀ मानौं एक भक्तिकर नाता ॥ ४ ॥

(क्योंकि) प्रथम तौ नीचसे नीच और उससेभी महानीच ऐसी स्त्री होती है, और मैं तौ उनमेंभी अत्यंतही मूर्ख और गँवारी हूं ॥ ३ ॥ रामचन्द्रजीने कहा हे भामिनी ! मेरी बात सुन, मैं तौ केवल भक्तिका नाता मानता हूं ॥ ४ ॥

जाति पांति कुल धर्म बड़ाई ❀ धन बल परिजन गुन चतुराई ॥ ५ ॥
भक्तिहीन नर सोहै कैसे ❀ बिनु जल बारिद देखिय जैसे ॥ ६ ॥

जाति, पांति, कुल, धर्म, बड़ाई, द्रव्य, बल, कुटुम्ब, गुण, और चतुराई॥५॥ (इन बातोंकरके युक्तभी क्यों न हो परन्तु) बिना भक्तिके मनुष्य कैसा लगता है जैसे बिना जलके बादल दिखाई देते हैं६

नवधा भक्ति कहौं तोहिं पाहीं ❀ सावधान सुनु धरु मनमाहीं ॥ ७ ॥
प्रथम भक्ति संतनकर संगा ❀ दूसरि रति मम कथाप्रसंगा ॥ ८ ॥

नौ प्रकारकी भक्ति तुझसे कहता हूं सो सावधान होकर सुन और मनमें रख ॥ ७ ॥ संतोंका सत्संग करना यह पहिली भक्ति है और मेरी कथाके प्रसंगमें प्रीति करना यह दूसरी भक्ति है ८

दो०–गुरुपदपंकजसेवा, तीसरि भक्ति अमान ॥ ❀
चौथि भक्ति मम गुनगन, करै कपट तजि गान ॥ ५९ ॥ ❀

अभिमान त्यागकर गुरुके चरणकमलोंकी सेवा करना यह तीसरी भक्ति है और कपट त्यागकर मेरे गुणोंका गान करै यह चौथी भक्ति है ॥ ५९ ॥

चौ०–मंत्रजाप मम दृढ़ बिस्वासा ❀ पंचम भजन सो वेदप्रकासा ॥ १ ॥
छठ दम सील बिरति बहु कर्मा ❀ निरत निरंतर सज्जनधर्मा ॥ २ ॥

मेरे मंत्रका जप, मुझमें दृढ़ विश्वास, और मेरा भजन करना यह पांचवीं भक्ति वेदोंमें प्रकट है ॥ १ ॥ इन्द्रियोंका दमन करना, सुन्दर स्वभाव होना, बहुतसे कर्मोंसे विरक्त होना और सज्जनोंके धर्ममें निरन्तर प्रीति करना यह छठी भक्ति है ॥ २ ॥

सप्तम सब मोहिमय जग देखै ❀ मोते संत अधिककरि लेखै ॥ ३ ॥
अष्टम जथालाभ संतोषा ❀ सपनेहु नहिं देखै परदोषा ॥ ४ ॥

---

(१) अध्यात्मरामायणमें लिखा है–

श्लोक–"पुंस्त्वे स्त्रीत्वे विशेषो वा जातीनामाश्रमोद्भवः । न कारणं मद्भजने भक्तिरेव हि कारणम् ॥ १ ॥
यज्ञदानतपोभिर्वा वेदाध्ययनकर्मभिः । नैव द्रष्टुमहं शक्यो मद्भक्तिविमुखैः सदा ॥ २ ॥

अर्थात् रामजी कहते हैं कि पुरुष, स्त्री जाति और आश्रम ये मेरे भजनमें कोई कारण नहीं, केवल भक्ति कारण है, और जो मेरी भक्तिके विमुख हैं वे यज्ञ दान तप और वेदाध्ययन आदि कर्मोंको करके मुझे कभी नहीं देख सक्ते ॥ १ ॥ २ ॥

सब संसारको राममय देखना और संतोंको मुझसेभी अधिक जानना यह सातवीं भक्ति है ॥ ३ ॥ जो कुछ मिलजाय उसीमें संतोष करना और पराये दोषोंको स्वप्नेमेंभी न देखना यह आठवीं भक्ति है ॥ ४ ॥

नवम सरल सबसौं छलहीना ❀ मम भरोस जिय हरष न दीना ॥ ५ ॥
नवमहँ जिन्हके एकौ होई ❀ नारि पुरुष सचराचर कोई ॥ ६ ॥

सबसे सीधा और छलरहित रहना और मनमें मेरा भरोसा रखना और हर्ष शोक न करना यह नवीं भक्ति है ॥ ५ ॥ इस नवोंमेंसे जिसके एकभी हो और वह चराचर संसारमें स्त्री वा पुरुष कोईभी क्यों न हो ॥ ६ ॥

सो अतिसय प्रिय भामिनि मोरे ❀ सकल प्रकार भक्ति दृढ़ तोरे ॥ ७ ॥
योगिवृंद दुर्लभ गति जोई ❀ तोकहँ आजु सुलभ भइ सोई ॥ ८ ॥
मम दरसनफल परम अनूपा ❀ जीव पाव निज सहजस्वरूपा ॥ ९ ॥

हे भामिनी ! वही मुझको वहुत प्यारा है सो तेरे (हृदयमें) तौ सवभांति दृढ़ भक्ति है ॥७॥ (इसलिये) जो गति योगीश्वरोंके समूहकोभी कठिन थी वह आज तुजको सुगम हुई ॥ ८ ॥ मेरे दर्शनका वहुत अनुपम फल है उससे जीव अपने स्वाभाविक रूपको प्राप्त होता है ॥ ९ ॥

दो०–सवप्रकार तव भाग वड़, मम चरनन अनुराग ॥ ❀
तव महिमा जेहि उर बसहि, तासु परम वड़ भाग ॥ ६० ॥ ❀

सब प्रकारसे तेरा वड़ा भाग्य है जो मेरे चरणोंमें प्रेम है और जिसके हृदयमें तेरी महिमा वसैगी उसकाभी वहुत वड़ा भाग्य (जानना चाहिये) ॥ ६० ॥

चौ०–सुनि सुभवचन हरषकहँ पाई ❀ पुनि बोले प्रभु गिरा सुहाई ॥ १ ॥
जनकसुताकै सुधि कहु भामिनि ❀ जानहि कछु जो करिवरगामिनि ॥ २ ॥

(भगवान्के) शुभ वचन सुनकर (शवरीने) आनन्द पाया । फिर भगवान् सुन्दर वाणी वोले ॥ १ ॥ हे शवरी ! सुन्दर हाथीके समान (मंद २) चलनेवाली सीताजीकी कुछ खवर जानती हो तौ कहो ॥ २ ॥

पंपासरहिं जाहु रघुराई ❀ मुनिवर विपुल रहे जहँ छाई ॥ ३ ॥
ऋषिमतंगमहिमा गुन भारी ❀ जीव चराचर रहत सुखारी ॥ ४ ॥

(शवरी वोली) हे रामचन्द्रजी ! पंपासरोवरको जाओ जहाँ बहुतसे श्रेष्ठ मुनीश्वर निवास करते हैं ॥ ३ ॥ और मतंग ऋषिकी महिमाका वड़ा गुण तौ यह है कि वहां चराचर जीव आनन्दपूर्वक रहते हैं ॥ ४ ॥

बैर न कर काहूसन कोई ❀ जासन बैर प्रीति करु सोई ॥ ५ ॥
सिखर सुहावन कानन फूले ❀ खग मृग जीव जंतु अनुकूले ॥ ६ ॥

किसीसे कोई वैर नहीं करता जिससे वैर है वहभी प्रीति करता है ॥ ५ ॥ वहाँ (पर्वतोंके) सुहावने शिखर हैं, वन फूल रहे हैं और पक्षी हरिण और जीवजंतु आपसमें मिलेजुले रहते हैं॥६॥

करहु सफल स्रम सबकर जाई ❀ तहँ होइहि सुग्रीवमिताई ॥ ७ ॥
सो सब कहहि देव रघुवीरा ❀ जानतहू पूंछत मतिधीरा ॥ ८ ॥
बार बार प्रभुपद सिर नाई ❀ प्रेमसहित सब कथा सुनाई ॥ ९ ॥

(वहां) जाकर सबके परिश्रमको सफल करो और (वहांही तुम्हारी) सुग्रीवसे मित्रता होगी ॥७॥

हे देव रामचन्द्र! वह सब (समाचार) कहैगा। आप तौ धैर्य बुद्धिवाले हो, जानकरभी पूछते हो॥८॥ वारंवार भगवान्के चरणोंको मस्तक नवाकर प्रीतिसे (जो सुनी थी) सब कथा सुनाई ॥ ९ ॥

छं०–कहि कथा सकल बिलोकि हरिमुख हृदय पदपंकज धरे।
तजि योगपावक देह धरि पदलीन भइ जहँ नहिं फिरे॥
नर विविध कर्म अधर्म बहु मत शोकप्रद सब त्यागहू।
विस्वास करि कह दासतुलसी रामपद अनुरागहू ॥ २८ ॥

शवरी, सब कथा कह भगवान्के मुखके दर्शन कर, (उनके) चरणकमलोंको हृदयमें धारण-कर और योगकी अग्निमें देह त्यागकर उन चरणोंमें लीन होगई कि जहाँ जाकर फिर नहीं लौटते हैं. तुलसीदास कहते हैं कि हे मनुष्यो! बहुतसे कर्म, अधर्म, और शोकके देनेवाले बहुतसे मतोंको छोड़ो और भरोसा करके रामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रीति करो ॥ २८ ॥

दो०–जातिहीन अघजन्म महि, मुक्त कीन्ह अस नारि॥
महामंद मन सुख चहसि, ऐसे प्रभुहिं बिसारि ॥ ६१ ॥

नीच जाति पृथ्वीपर पापकी मूल ऐसी स्त्रीको जिन्होंने मुक्त करदिया ऐसे भगवान्को छोड़कर जो सुख चाहैं वे बड़े मन्दबुद्धि हैं ॥ ६१ ॥

चौ०–चलेउ राम त्यागा वन सोऊ ❀ अतुलित बल नरकेहरि दोऊ ॥ १ ॥
बिरही इव प्रभु करत बिषादा ❀ कहत कथा अनेक संवादा ॥ २ ॥

रामचन्द्रजी चले और वह वनभी त्याग दिया दोनो अतुल बलवाले नरसिंहरूप हैं ॥१॥ वियोगीकी भांति भगवान् विषाद करते हुये अनेक कथा और संवाद कहते चले जाते हैं कि ॥ २ ॥

लछमन देखहु काननछोभा ❀ देखत केहिकर मन नहिं सोभा ॥ ३ ॥
नारिसहित सब खगमृगवृंदा ❀ मानहु मोरि करतहहिं निंदा ॥ ४ ॥

हे लक्ष्मण! वनकी शोभा देखो इसे देखकर किसका मन नहीं डिगैगा ॥ ३ ॥ सब पशुपक्षियोंके समूह (अपनी २) स्त्रियोंसमेत (ऐसे लगते हैं) मानों मेरी निन्दा करते हैं ॥ ४ ॥

हमहिं देखि मृगनिकर पराहीं ❀ मृगी कहहिं तुमकहँ भय नाहीं ॥ ५ ॥
तुम आनंद करहु मृगजाए ❀ कंचनमृग खोजन ए आए ॥ ६ ॥

हमको देखकर मृगोंके समूह भागते हैं तौ मृगियां कहती हैं कि तुमको इनसे डरना नहीं चाहिये ॥५॥ तुम तौ मृगोंसे उत्पन्न हुये हो सो आनन्द करो, ये तो सुवर्णके मृगको ढूंढने आये हैं॥६॥

संग लाइ करिनी करि लेहीं ❀ मानहु मोहिं सिखावन देहीं ॥ ७ ॥
सास्त्र सुचिंतित पुनि पुनि देखिय ❀ भूप सुसेवित बस नहिं लेखिय ॥ ८ ॥

हाथी हथिनियोंको साथमें लेकर ऐसे चलते हैं मानों मुझे शिक्षा देते हैं (कि तुम इस प्रकार सीताको क्यों नहीं साथ लिये रहे?) ॥ ७ ॥ सो अच्छे प्रकारसे पढ़कर और बिचारे हुयेभी शास्त्रको वारंवार देखता रहै (न देखनेसे शीघ्र विसरण हो जाता है) और सुन्दर रीतिसे सेवा किये गयेभी राजाको अपने वशमें नहीं गिनना चाहिये, अर्थात् उससे भयकी शंकाही करता रहै क्योंकि सेवा आदिमें चूक पड़नेसे वह दंड़ देता है ॥ ८ ॥

---

(१) "शास्त्रं सुचिन्तितमपि प्रतिचिन्तनीयं। स्वाराधितोऽपि नृपतिः परिशंकनीयः॥
अङ्के स्थिताऽपि युवतिः परिरक्षणीया। शास्त्रे नृपे च युवतौ च कुतो वशित्वम् ॥ १ ॥"
इस श्लोकका अर्थ ८ वीं चौपाईसे पूरा २ मिलता है ॥

राखिय नारि जदपि उरमाहीं ❀ जुवती शास्त्र नृपति बस नाहीं ॥ ९ ॥
देखहु तात बसंत सुहावा ❀ प्रियाहीन मोहिं भय उपजावा ॥ १० ॥

और स्त्रीकों छातीसेही क्यों न लगाये रहो परंतु स्त्री शास्त्र और राजा ये वशमें नहीं होते ॥ ९ ॥ हे प्यारे ! देखो वसंत कैसा फूल रहा है परन्तु बिना प्यारीके मुझको तौ दुखदाई है १०

दो०-बिरहबिकल बलहीन मोहिं, जानेसि निपट अकेल ॥ ❀
सहित बिपिन मधुकर खगन्ह, मदन कीन्ह बगमेल ॥ ६२ ॥ ❀

कामदेवने मुझे वियोगसे व्याकुल बलहीन और निपटही अकेला जानकर वनमें भौंरे और पक्षियोंको साथ लेकर आदबाया है ॥ ६२ ॥

देखि गयउ भ्रातासहित, तासु दूत सुनि बात ॥ ❀
डेरा दीन्हेउ मनहु तिन्ह, कटक हटकि मनजात ॥ ६३ ॥ ❀

परंतु उसके दूत जो (शीतल मंद सुगंध पवन) हमको भाईसहित देख गये थे और उन्होंने जो जाकर कहा कि उनके साथ तौ बड़े बाँके वीर भाई संग हैं सो उनकी यह बात सुनकर तुम्हारे डरसे उस मनजात कहिये कामदेवने मानों चलती हुई सेनाको रोककर डेरा डाल दिया है ६३

चौ०-बिपट बिसाल लता अरुझानी ❀ बिबिध बितान दिए जनु तानी ॥ १ ॥
कदलि तालबर ध्वजा पताका ❀ देखि न मोह धीर मन जाका ॥ २ ॥

अब डेरेके समाजका वर्णन करते हैं ॥ बड़े बड़े वृक्षोंपर जो बेलैं लिपट रही हैं सो मानों बहुतसे तम्बू तान दिये हैं ॥ १ ॥ केलेके वृक्ष ध्वजा और तालवृक्ष मानों सुन्दर पताका हैं। इन्है देखकर वही मोहित नहीं होता कि जिसका धीर मन है (नहीं तौ सबही मोहित होजाते हैं) ॥ २ ॥

बिबिध भाँति फूले तरु नाना ❀ जनु बानैत बने बहु बाना ॥ ३ ॥
कहुँ कहुँ सुंदर बिटप सुहाए ❀ जनु भट बिलग बिलग होइ छाए ॥ ४ ॥

जो नाना भांतिके अनेक वृक्ष फूल रहे हैं सो मानों बहुतसे (वेष धारण किये) धनुषधारी[1] बने हैं ॥ ३ ॥ और जो कहीं २ सुन्दर वृक्ष (अकेलेही) शोभायमान् हैं सो मानों योद्धा अलग २ होकर आवसे हैं ॥ ४ ॥

कूजत पिक मानहुँ गज माते ❀ ढेक महोष ऊँट बिसराते ॥ ५ ॥
मोर चकोर कीरवर बाजी ❀ पारावत मराल सब ताजी ॥ ६ ॥

कोकिला ऐसी बोलती हैं मानों मतवाले हाथी (चिंघारते) हैं और ढेक तथा महोष पक्षी मानों ऊंट तथा खच्चर बोलते हैं ॥ ५ ॥ मोर चकोर और तोते मानों श्रेष्ठ घोड़े हैं और कबूतर और हंस मानों ताजी जातिके घोड़े हैं ॥ ६ ॥

तीतर लावा पदचरजूथा ❀ बरनि न जाइ मनोजबरूथा ॥ ७ ॥
रथ गिरि सिला दुंदुभी झरना ❀ चातक बंदीगुनगन बरना ॥ ८ ॥

तीतर और बटेर मानों पैदलोंका समूह है ऐसी कामदेवकी सेनाके समूहका वर्णन नहीं किया जाता ॥ ७ ॥ पर्वतोंकी शिलायें मानों पानीके रथ हैं, झरने मानो नगाड़े बजते हैं और पपीहे मानों गुणोंके समूहोंकी प्रशंसा करनेवाले भाट हैं ॥ ८ ॥

मधुकरमुखर भेरि सहनाई ❀ त्रिबिध बयारि बसीठी आई ॥ ९ ॥
चतुरंगिनी सेन सँग लीन्हे ❀ बिचरत सबहिं चुनौती दीन्हे ॥ १० ॥

---

(१) यहां वृक्षको धनुषधारी, शाखाओंको धनुष और पुष्पोंको बाण समझना चाहिये ॥

गूँजते हुये भौंरे मानों मृदंग और सहनाई बाजे हैं और (शीतल मन्द सुगंध तीन प्रकारकी पवन चलती है सो मानों) दूत आते हैं ॥ ९ ॥ ऐसी चार प्रकारकी सेना साथमें लेकर सबको चिनौती देता हुआ (कामदेव) विचरता है ॥ १० ॥

लछमन देखत कामअनीका ✿ रहहिं धीर तिन्हकै जग लीका ॥ ११ ॥
यहिके एक परम बल नारी ✿ तेहिंते उबर सुभट सो भारी ॥ १२ ॥

हे लक्ष्मण ! कामदेवकी सेनाको देखकर जो धीर बने रहैं उनकी संसारमें गिनती है ॥ ११ ॥ इसको एक स्त्रीका बड़ा बल है सो जो उससे बचै सोई बड़ा वीर है ॥ १२ ॥

दो०–तात तीनि अति प्रबल खल, काम क्रोध अरु लोभ ॥ ✿
मुनि विज्ञाननिधान मन, करहिं निमिषमहँ छोभ ॥ ६४ ॥ ✿

हे प्यारे ! काम [1]क्रोध और लोभ तीन बड़े दुष्ट हैं सो ये बड़े २ ज्ञानके निधान मुनीश्वरोंके मनकोभी पलभरमें डिगा देते हैं ॥ ६४ ॥

लोभके इच्छा दंभ बल, कामके केवल नारि ॥ ✿
क्रोधके परुषवचन बल, मुनिवर कहहिं विचारि ॥ ६५ ॥ ✿

[2]लोभकी सेना तौ इच्छा और पाखंड है और कामकी सेना अकेली स्त्री है, और क्रोधकी सेना कठोर वचन हैं, यह श्रेष्ठ मुनि विचारकर कहते हैं ॥ ६५ ॥

चौ०–गुनातीत सचराचरस्वामी ✿ राम उमा सब अंतरजामी ॥ १ ॥
कामिन्हकी दीनता दिखाई ✿ धीरन्हके मन बिरति दृढाई ॥ २ ॥

महादेव कहते हैं हे पार्वती ! तीनों गुणोंसे परे चराचरके स्वामी रघुनाथजी सबके घट २ की जाननेवाले हैं ॥ १ ॥ सो उन्होंने कामी (पुरुषों) किसी दीनता दिखाकर धीर मनुष्योंके मनमें वैराग्य दृढ़ किया है और अज्ञानियोंके मनमें जो मोह होता है वह तौ उनके अज्ञानका कारण है २

क्रोध मनोज लोभ मद माया ✿ छूटहिं सकल रामकी दाया ॥ ३ ॥
सो नर इंद्रजाल नहिं भूला ✿ जापर होइ सो नट अनुकूला ॥ ४ ॥

क्यों कि रामचन्द्रजीकी कृपासे काम क्रोध लोभ मद और माया सब छूट जाते हैं (तौ भला राममें कैसे हो सक्ते हैं ?) ॥ ३ ॥ जैसे जिसपर वह (इन्द्रजाल करनेवाला) नट सीधा रहता है वह मनुष्य उसके इन्द्रजालमें नहीं भूलता है ॥ ४ ॥

उमा कहौं मैं अनुभव अपना ✿ सत हरिभजन जगत सब सपना ॥ ५ ॥
पुनि प्रभु गए सरोवरतीरा ✿ पंपा नाम सुभग गंभीरा ॥ ६ ॥

(शंकर कहते हैं) हे पार्वती ! मैं अपना अनुभव कहता हूं कि भगवान्का भजनही सत्य है

---

(१) गीतामें लिखा है कि—

" त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः ॥
कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत् " ॥

अर्थात् आत्माके नाश करनेवाले काम क्रोध और लोभ ये नरकके तीन द्वार हैं इसलिये इन तीनोंको त्याग देना चाहिये ॥

(२) इस दोहेका भाव यह है कि जब लोभ घेरता है तौ मनुष्यकी इच्छा और पाखंड बढ़ जाता है, जब काम घेरता है तब उसे स्त्रीकी सूझती है, और जब क्रोध घेरता है तब मनुष्य कटु बचन कहने लगता है ॥

और सब संसार स्वप्न है ॥ ५ ॥ (इसप्रकार कामियोंकी दशा वर्णन करते हुये) भगवान् पंपासरोवरके किनारेपर गये कि जो सुन्दर गहरा था ॥ ६ ॥

संतहृदय जस निर्मल बारी ❀ बांधे घाट मनोहर चारी ॥ ७ ॥
जहँ तहँ पियहिं बिबिध मृग नीरा ❀ जनु उदारगृह जाचकभीरा ॥ ८ ॥

(जिसमें) संतोंके हृदयके समान निर्मल जल भरा था और मनके हरनेवाले चार घाट बने हुये थे ॥ ७ ॥ जहाँ तहाँ वहुतसे मृग इस प्रकार जल पी रहे थे मानों किसी बड़े आदमीके घर माँगनेवालोंकी भीड़ हो रही है ॥ ८ ॥

दो०-पुरइनि सघनि ओट जल, बेगि न पाइय मर्म ॥ ❀
मायाछन्न न देखिये, जैसे निर्गुन ब्रह्म ॥ ६६ ॥ ❀

पुरइनि (काई) जो अति घनी छा रही है इस लिये जलका भेद इस प्रकार शीघ्र नहीं मिलता है कि जैसे मायासे लिपटे हुये जीवको निर्गुण ब्रह्मका भेद नहीं जान पडता है ॥ ६६ ॥

सुखी मीन सब एकरस, अति अगाध जलमाहिं ॥ ❀
जथा धर्मसीलान्हिके, दिन सुखसंजुत जाहिं ॥ ६७ ॥ ❀

वहुतसे गहरे जलमें सव मछलियां एक रस अर्थात् आपसमें मिलकर ऐसी सुखी रहती हैं जैसे धर्मशील (मनुष्यों) के सव दिन सुखसे वीतते हैं ॥ ६७ ॥

चौ०-बिकसे सरसिज नानारंगा ❀ मधुर मुखर गुंजत बहु भृंगा ॥ १ ॥
बोलत जलकुक्कुट कलहंसा ❀ प्रभु बिलोकि जनु करत प्रसंसा ॥ २ ॥

वहुत रंगके कमल खिले हैं उनपर वहुतसे गुंजारी भौंरे मधुर मधुर गुंजार करते हैं ॥ १ ॥ जलमुर्गे और हंस ऐसे वोलते हैं मानों भगवान्‌को देखकर बड़ाई करते हैं ॥ २ ॥

चक्रबाक बक खगसमुदाई ❀ देखत बनै बरनि नहिं जाई ॥ ३ ॥
सुंदर खगगनगिरा सुहाई ❀ जात पथिक जनु लेत बुलाई ॥ ४ ॥

चकवा चकवी, वगुले और पक्षियोंके समूह देखतेही बनते हैं, वर्णन नहीं किये जाते ॥ ३ ॥ सुन्दर पक्षियोंके समूह ऐसी सुन्दर वोली वोलते हैं मानों जाते हुये वटोहियोंको बुलाते हैं ॥ ४ ॥

तालसमीप मुनिन्ह गृह छाए ❀ चहुँ दिसि कानन बिटप सुहाए ॥ ५ ॥
चंपक बकुल कदंब तमाला ❀ पाटल पनस पलास रसाला ॥ ६ ॥

तालके पासही मुनीश्वरोंके आश्रम बने हुये हैं (जिनके) चारों ओर वन और वृक्ष शोभायमान हैं ॥ ५ ॥ चम्पा, मौरसली, कदंव, तमाल, पाटल, कटहर, ढाक और आमके वृक्ष लगेहुये हैं ॥ ६ ॥

नवपल्लव कुसुमित तरु नाना ❀ चंचरीकपटली कर गाना ॥ ७ ॥
सीतल मंद सुगंध सुभाऊ ❀ संतत बहै मनोहर बाऊ ॥ ८ ॥
कुहू कुहू कोकिल ध्वनि करहीं ❀ सुनि रव सरस ध्यान मुनि टरहीं ॥ ९ ॥

अनेक वृक्षोंपर नये पत्ते और फूल खिल रहे हैं और उनपर भौंरोंकी कतारें गुंजार रही हैं ॥ ७ ॥ अपने आप जहाँ सुन्दर शीतल मंद सुगंध पवन सदा चलती है ॥ ८ ॥ कोकिला कुहू२ ऐसा शब्द करती हैं कि उस रसीले शब्दको सुनकर मुनीश्वरोंके ध्यान छूटते हैं ॥ ९ ॥

दो०-फलभर नम्र बिटप सब, रहे भूमि नियराइ ॥ ❀
परउपकारी पुरुष जिमि, नमहिं सुसंपति पाइ ॥ ६८ ॥ ❀

सब पेड़ फलोंसे लदे हुये पृथ्वीसे ऐसे लग रहे हैं जैसे परोपकारी मनुष्य सुन्दर संपत्ति पाकर नवते हैं ॥ ६८ ॥

चौ०–देखि राम अतिरुचिर तलावा ❀ मज्जन कीन्ह परम सुख पावा ॥ १ ॥
देखेउ सुंदर तरुवरछाया ❀ बैठे अनुजसहित रघुराया ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीने बहुत सुन्दर सरोवर देखकर स्नान किया और बहुत सुख पाया ॥ १ ॥ और वृक्षोंकी सुन्दर छाया देखकर रघुनाथजी लक्ष्मणजीसहित बैठे ॥ २ ॥

तहँ पुनि सकल देव मुनि आए ❀ अस्तुति करि निजधाम सिधाए ॥ ३ ॥
बैठे परम प्रसन्न कृपाला ❀ कहत अनुजसन कथा रसाला ॥ ४ ॥

फिर वहां सब देवता और मुनीश्वर आये और स्तुति करके अपने स्थानको चले गये ॥ ३ ॥ दयानिधान रामचन्द्र बहुत प्रसन्नतासे बैठे हुये लक्ष्मणजीसे रसीली कथा कहने लगे ॥ ४ ॥

बिरहवंत भगवंतहिं देखी ❀ नारद मुनि भा सोच बिसेषी ॥ ५ ॥
मोर साप करि अंगीकारा ❀ सहत राम नाना दुखभारा ॥ ६ ॥

भगवान्को वियोगी देखकर नारदमुनिको बहुत शोच हुआ कि ॥ ५ ॥ मेरे शापको अंगीकार कर रामचन्द्रजी अनेक भारी दुःख सह रहे हैं ॥ ६ ॥

ऐसे प्रभुहिं बिलोकौं जाई ❀ पुनि न बनिहि अस अवसर आई ॥ ७ ॥
यह बिचारि नारद कर बीना ❀ गए जहाँ प्रभु सुख आसीना ॥ ८ ॥

ऐसे भगवान्को जाकर देखूं, फिर ऐसा अवसर नहीं बनेगा ॥ ७ ॥ यह बिचार नारदजी हाथमें वीणा लिये वहाँ गये जहां भगवान सुखपूर्वक विराजमान थे ॥ ८ ॥

गावत रामचरित मृदु बानी ❀ प्रेमसहित बहुभाँति बखानी ॥ ९ ॥
करत दंडवत लिए उठाई ❀ राखे बड़ी बार उर लाई ॥ १० ॥
स्वागत पूछि निकट बैठारे ❀ लछमन सादर चरन पखारे ॥ ११ ॥

और स्नेहसहित बहुत भांति वर्णन करके मीठी वाणीसे रामचन्द्रजीके चरित्र गाने लगे ॥ ९ ॥ दंडवत करके हुये (नारदजी) को (भगवान्ने) उठा लिया और बड़ी देरतक छातीसे लगाये रहे ॥ १० ॥ स्वागत पूँछकर पास बैठा लिया और लक्ष्मणजीने आदरसे चरण धोये ॥ ११ ॥

दो०–नानाविधि बिनती करि, प्रभु प्रसन्न जिय जानि ॥ ❀
नारद बोले बचन तब, जोरि सरोरुहपानि ॥ ६९ ॥ ❀

फिर बहुत भांति प्रार्थना कर और भगवान्को मनमें प्रसन्न जानकर नारदजी कमलसमान हाथ जोड़कर बोले ॥ ६९ ॥

चौ०–सुनहु उदार परम रघुनायक ❀ सुंदर अगम सुगम बरदायक ॥ १ ॥
देहु एक बर माँगौं स्वामी ❀ जद्यपि जानत अंतरजामी ॥ २ ॥

हे रघुनाथजी ! आप तौ अतिही उदार हो, सुन्दर हो, कठिनतासे प्राप्त होने योग्य हो और भक्तिके वश सहजमें वरके देनेवाले हो ॥ १ ॥ और हे स्वामी ! यद्यपि आप अंतर्यामी हैं तथापि एक वर तौ मैं मांगता हूं सो मुझे दीजिये ॥ २ ॥

जानहु मुनि तुम मोर सुभाऊ ❀ जनसन कबहुँ कि करौं दुराऊ ॥ ३ ॥
कौन बस्तु अस प्रिय मोहिं लागी ❀ जो मुनिवर न सकहु तुम माँगी ॥ ४ ॥

(भगवान् बोले) हे मुनि! तुम मेरे स्वभावको जानते हो कि मैं भक्तसे कभीभी छुपाव नहीं करता हूं ॥ ३ ॥ सो हे मुनिराज! मुझे कौनसी वस्तु ऐसी प्यारी लगीहै, कि जिसे तुम नहीं मांगसक्ते हो? ॥४॥

जनकहँ कछु अदेय नहिं मोरे ❀ अस विस्वास तजहु जनि भोरे ॥ ५ ॥
तब नारद बोले हर्षाई ❀ अस बर माँगौं करौं ढ़िठाई ॥ ६ ॥

मेरे यहां भक्तोंको न देनेके लिये कोई ऐसी वस्तु नहीं कि जिसे न देसकूं. ऐसी विश्वासको भूलकरभी मत छोड़ना; अर्थात् सबही कुछ दे सक्ता हूं ॥ ५ ॥ तब नारदजी प्रसन्न होकर बोले कि ढीठता करके यह वरदान मागता हूं कि ॥ ६ ॥

जद्यपि प्रभुके नाम अनेका ❀ स्रुति कह अधिक एकते एका ॥ ७ ॥
राम सकल नामन्हते अधिका ❀ होउ नाथ अघखगगनबधिका ॥ ८ ॥

यद्यपि भगवान्‌के अनेक नाम हैं और वेद एकसे एकको अधिक कहते हैं ॥ ७ ॥ तौभी हे स्वामी! पापरूपी पक्षियोंके समूहको बहेलियेके समान ऐसा आपका रामनाम सब नामोंका शिरोमणि होवै ८

दो०–राकारजनि भक्ति तव, राम नाम सोइ सोम ॥ ❀
अपर नाम उडुगन विमल, बसहु भक्तउरव्योम ॥ ७० ॥ ❀

तुम्हारी भक्ति पूर्णमासीकी रात्रि हो, और राम जो नाम है वह पूर्ण चन्द्रमा होकर दूसरे नाम जो निर्मल तारागण हैं सो इनसमेत भक्तोंके हृदयरूपी आकाशमें निवास करै ॥ ७० ॥

एवमस्तु मुनिसन कहेउ, कृपासिंधु रघुनाथ ॥ ❀
तब नारद मन हर्ष अति, प्रभुपद नायउ माथ ॥ ७१ ॥ ❀

दयासागर रामचन्द्रजीने मुनीश्वरसे कहा एवमस्तु (ऐसाही हो)। तब नारदजीने मनमें बहुत प्रसन्न होकर भगवान्‌के चरणोंको माथा नवाया ॥ ७१ ॥

चौ०–अति प्रसन्न रघुनाथहिं जानी ❀ पुनि नारद बोले मृदुबानी ॥ १ ॥
राम जबहिं प्रेरेहु निजमाया ❀ मोहेहु मोहिं सुनहु रघुराया ॥ २ ॥

फिर नारद भगवान्‌को बहुत प्रसन्न जानकर मीठी वाणी बोले ॥ १ ॥ हे रघुनाथ रामचन्द्रजी! सुनिये, जव आपने अपनी मायाको प्रेरणा करके मुझे मोहित किया था ॥ २ ॥

तब बिवाह चाहौं मैं कीन्हा ❀ प्रभु केहि कारन करै न दीन्हा ॥ ३ ॥
सुन मुनि तोहिं कहौं सहरोषा ❀ भजहिं मोहिं तजि सकल भरोसा ॥४॥

तब मैं विवाह किया चाहता था सो हे स्वामी! अपने किस कारण न करने दिया था? ॥ ३ ॥ (रामजी बोले) हे मुनिराज! सुनो, मैं तुमसे प्रसन्न होकर कहता हूं कि जो सब भरोसेको छोडकर मेरा भजन करते हैं ॥ ४ ॥

करौं सदा तिन्हकी रखवारी ❀ जिमि बालकहिं राखु महतारी ॥ ५ ॥
गहि सिसु बच्छ अनल अहि धाई ❀ तहँ राखै जननी अरगाई ॥ ६ ॥

(उनकी) मैं सदा ऐसी रखवाली करता हूं जैसे माता बालककी रक्षा करती है ॥ ५ ॥

---

(१) "सहरोषा" शब्दका अर्थ रामायणोंमें बहुधा 'क्रोध रोककर कहता हूँ' ऐसा लिखा है पर यह अर्थ यहां असंगत दीखता है, क्यों कि यहां रामको गुस्सा कहां है जिसे रोकैं, इसलिये सहरोषा शब्दको सहर्ष शब्दका अपभ्रंश मानकर 'प्रसन्न होकर कहता हूं' यह अर्थ अच्छा जमता है ॥

(२) गीतामें लिखा है—" अनन्याश्चितयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥"
अर्थात् जो मनुष्य अन्यको छोड़ मेरी उपासना करते हैं मैं उनका कल्याण करता हूं ॥

जबै छोटा बालक दौड़कर अग्नि और सर्पको पकड़ता है तौ वहाँ माता शीघ्र पकड़ लेती है ॥ ६ ॥

प्रौढ भए तेहिं सुतपर माता ❀ प्रीति करै नहिं पाछिल बाता ॥ ७ ॥
मोरे प्रौढ़ तनयसम ज्ञानी ❀ बालक सुतसम दास अमानी ॥ ८ ॥

और वही पुत्र जब बड़ा हो जाता है तब माता उस पुत्रपर पिछली वार्तोंकी भांति प्रीति नहीं करती ॥ ७ ॥ सो ज्ञानवान् (मनुष्य) तौ मेरे बड़े पुत्रकी भांति हैं और मानरहित भक्त बालक पुत्रके समान हैं ॥ ८ ॥

जिनहिं मोर बल निजबल ताही ❀ दुहुँकहँ काम क्रोध रिपु आही ॥ ९ ॥
यह बिचारि पंडित मोहिं भजहीं ❀ पायहु ज्ञान भक्ति नहिं तजहीं ॥ १० ॥

जिन (बालक पुत्रों) को मेरा बल है और जिन (ज्ञानी पुत्रोंको) अपना बल है दोनोंके काम और क्रोध शत्रु हैं ॥ ९ ॥ यह विचारकर पंडित मेरा भजन करते हैं और ज्ञान पानेपरभी भक्तिको नहीं छोड़ते ॥ १० ॥

दो०–काम क्रोध लोभादि मद, प्रबल मोहकै धारि ॥ ❀
तिन्हमहँ अतिदारुन दुखद, मायारूपी नारि ॥ ७२ ॥ ❀

और काम क्रोध मद लोभ आदि तौ प्रबल मोहकी सेना है और उनमेंसे मायारूपी स्त्री बड़ी कठिन और दुःखदाई है ॥ ७२ ॥

चौ०–सुनि मुनि कह पुरान स्रुतिसंता ❀ मोहबिपिनकहँ नारि बसंता ॥ १ ॥
जप तप नेम जलासयझारी ❀ होइ ग्रीष्म सोषै सब वारी ॥ २ ॥

हे मुनीश्वर ! सुनो, वेद पुराण और संत कहते हैं कि मोहरूपी वनको खिलानेके लिये स्त्री वसन्त ऋतु है. अर्थात् जैसे वसन्तसे वनकी शोभा अधिक वढ़ती है वैसेही स्त्रीसे मनुष्यको अतिमोह होता है ॥ १ ॥ जप, तप, नियमरूपी जलाशयोंको स्त्री ग्रीष्म ऋतुरूपी होकर सबोंके जलको सोख लेती है, अर्थात् जैसे ग्रीष्मऋतु जलाशयोंका पानी सोख लेती है उसी प्रकार स्त्री जप तप नियम आदिका नाश कर देती है ॥ २ ॥

काम क्रोध मद मत्सर भेका ❀ इन्हहिं हर्षप्रद वर्षा एका ॥ ३ ॥
दुर्वासना कुमुदसमुदाई ❀ तिन्हकहँ सरद सदा सुखदाई ॥ ४ ॥

---

(१) इस चौपाईका किसी२ ने ऐसा अर्थ किया है कि "जब बालक और बछड़ा अग्नि और सांपके पकड़नेको दौड़ते हैं तौ माता और गौ रक्षा करती है"। तहां यह शंका है कि साँप और अग्निको पकड़नेके लिये बालक तौ दौड़ सक्ता है परंतु बछड़ेका दौड़ना और फिर गायका उसको बचाना यह समझमें नहीं आता ॥

पिता माता बच्छ शब्दको लाड़ प्यारमें कहा करते हैं जैसा अयोध्याकांडमें वनवासके समय कौशल्याने रामजीसे कहा है कि–

"बहुरि बच्छ कहि लाल कहि, रघुपति रघुवर तात"

सो यहां बच्छका अर्थ गौका बछड़ा ऐसा करनेसे असंगत है और अर्थमेंभी दूषण आता है इसलिये ऐसा अर्थ कपोलकल्पित समझना चाहिये और यह भ्रम इस चौपाईमें, "अरुगाई" पाठ देखकर होता है इस लिये यहां "अरगाई" पाठ ठीक है ॥

(२) "द्विजराजमुखी मृगराजकटी गजराजविराजितमन्दगतिः ।
यदि सा ललना हृदयंगमिता क जपः क तपः क समाधिविधिः ॥"

अर्थात् चन्द्रमुखी, सिंहकी कटिवाली और हस्तीके समान धीरे २ चलनेवाली जो स्त्री हृदयमें वसी तौ कहां जप ? कहां तप ? और फिर समाधिकी विधि कहां है । अर्थात् फिर कुछ नहीं हो सक्ता है ॥

काम क्रोध अभिमान और ईर्षा अर्थात् डाह ये मानों मेंडक हैं, इनको स्त्री वर्षाऋतु होकर आनन्द देती है, अर्थात् जैसे वर्षाऋतु होनेसे मेंड़क मरे हुयेभी फिर जी उठते हैं उसी प्रकार स्त्रीको देखतेही कामक्रोधादि शांत होकरभी फिर उत्पन्न हो जाते हैं ॥ ३ ॥ खोटी वासना मानों कुमोदिनियोंके समूह हैं (उनको खिलानेके लिये) स्त्री शरदऋतु होकर सदा सुख देनेवाली है. अर्थात् जैसे शरदऋतुमें कुमोदिनी अधिक खिलती है ऐसेही स्त्रीको देख चित्तमें व्यभिचार आदिकी खोटी इच्छा होती है ॥ ४ ॥

धर्म सकल सरसीरुहबृंदा ❀ होइ हिम तिनहिं देति दुख मंदा ॥ ५ ॥
पुनि ममता जवास बहुताई ❀ पलुहै नारि सिसिरऋतु पाई ॥ ६ ॥

सब धर्म मानों कमलोंके समूह हैं उनको मूर्ख स्त्री हिमऋतु होकर दुःख देती है. अर्थात् जैसे हिमऋतुमें अधिक पाला पड़नेसे कमलोंका सत्यानाश हो जाता है वैसेही स्त्री हिमऋतु मनुष्यका सब धर्म कर्म नाश कर देती है और विषयवासनामें लगाती है ॥ ५ ॥ फिर ममतारूपी जवासेके बनको स्त्री शिशिरऋतु होकर बढ़ाती है. अर्थात् जैसे शिशिरऋतुमें जवासा अधिक बढ़ता है उसीप्रकार स्त्रीको देख ममता बढ़ती है ॥ ६ ॥

पाप उलूक निकरसुखकारी ❀ नारि निविड़ रजनी अँधियारी ॥ ७ ॥
बुधिबल सील सत्य सब मीना ❀ बंसी सम त्रिय कहहिं प्रबीना ॥ ८ ॥

पाप मानों उल्लुओंका समूह है इसको स्त्री (सावनभादोंकीसी) महाअँधेरी रात होकर सुख देती है. अर्थात् जैसे अतिअँधेरी रातमें उल्लुओंका खूब दीखता है, जहाँ तहाँ उड़ते फिरते हैं, उसी प्रकार पापी पुरुषभी अँधेरेमें अपनी घात टटोलते फिरते हैं ॥ ७ ॥ पण्डित कहते हैं कि बुद्धि, बल, शील और सत्य मानों सब मछलियां हैं इनको नाश करनेके लिये स्त्री जालके कांटेके समान है. अर्थात् जैसे वंशी कहिये जालका कांटा मछलियोंको मारता है उसी प्रकार स्त्री मनुष्यके बुद्धि, बल, शील और सत्यको हर लेती है ॥ ८ ॥

दो०–अवगुनमूल सूलप्रद, प्रमदा सब दुखखानि ॥ ❀
तातें कीन्ह निवारन, मुनि मैं यह जिय जानि ॥ ७३ ॥ ❀

हे मुनीश्वर ! अवगुणोंकी जड़ और दुःखोंकी देनेवाली स्त्री सब दुःखोंकी खान है इससे मैंने मनमें यह जानकर (तुमसे विवाह करनेके लिये) मने कर दिया था ॥ ७३ ॥

चौ०–सुनि रघुपतिके बचन सुहाए ❀ मुनि तनु पुलकि नयन भरि आए ॥१॥
कहहु कवन प्रभुकी अस रीती ❀ सेवकपर ममता अति प्रीती ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीके सुन्दर बचन सुनकर मुनीश्वर शरीरमें पुलकायमान हुये और नेत्रोंमें जलभर आया ॥१॥ कहो किस स्वामीकी ऐसी रीति है जिसकी दासके ऊपर इतनी भारी ममता और प्रीति हो ॥२॥

जे न भजहिं अस प्रभु भ्रमत्यागी ❀ ज्ञानरंक नर मंद अभागी ॥ ३ ॥
पुनि सादर बोले मुनि नारद ❀ सुनहु राम विज्ञानविसारद ॥ ४ ॥

---

(१) जवासेकी उपमा इसलिये दी है कि उसमें कांटे होते हैं, और जैसे कांटा लग कर दुःख देता है उसीप्रकार ममताभी लगी दुःखदाई होती है ॥

(२) रंभाशुकसम्वादे–श्लोकः—

"मायाकरंडी नरकस्य हंडी तपोविखंडी सुकृतस्य भंडी ।
नृणां विखंडी चिरसेविता चेत् वृथा गतं तस्य नरस्य जीवनम् ॥"

अर्थात् मायाकी पिटारी, नरककी हांडी, तपको भंग करनेवाली, सुकृतको नष्ट करनेवाली और मनुष्योंका नाश करनेवाली ऐसी स्त्रीके साथ जिसने अपना अधिक काल खोया उसका जीवन वृथा गया ॥

जो ऐसे भगवान्का, भ्रम छोडकर, भजन नहीं करते हैं वे मनुष्य ज्ञानके दरिद्री मूर्ख और अभागे हैं ॥ ३ ॥ फिर नारदजी आदरसे बोले कि हे रामचन्द्रजी ! सुनिये, आप तौ बड़े ज्ञानी और पण्डित हो ॥ ४ ॥

संतन्हके लक्षण रघुवीरा ❀ कहहु राम भंजनभवभीरा ॥ ५ ॥
सुनु मुनि संतनके गुन कहऊँ ❀ जेहिते मैं उन्हके बस रहउँ ॥ ६ ॥

हे रघुनन्दन ! आप संसारके दुःखोंको नाश करनेवाले हैं (कृपाकर) संतोंके लक्षण कहिये ॥५॥ (रामचन्द्र बोले) हे मुनि ! सुनो, संतोंके लक्षण कहता हूं कि जिससे मैं उनके वशमें रहता हूं ॥६॥

षट् विकार जित अनघ अकामा ❀ अचल अकिंचन सुचि सुखधामा ॥ ७ ॥
अमितबोध परमारथभोगी ❀ सत्यसार कबि कोबिद जोगी ॥ ८ ॥
सावधान मानद मदहीना ❀ धीर धर्मगति परमप्रवीना ॥ ९ ॥

(वे संत)-छः विकार जो काम क्रोध लोभ मोह ईर्षा और अहंकार हैं इनके जीतनेवाले, पाप और कामनाओंसे रहित, स्थिरचित्त, धनहीन, पवित्र और सुखके स्थान होते हैं ॥ ७ ॥ और बड़े भारी ज्ञानी, परमार्थके भोगनेवाले, सत्यतत्त्वके कहनेवाले पंडित तथा योगी होते हैं ॥ ८ ॥ सावधान, सत्कार करनेवाले अभिमानरहित, धीरजवान् और धर्मकी गतिमें बड़े चतुर होते हैं ॥ ९ ॥

दो०-गुनागार संसारदुख, रहित बिगतसंदेह ॥ ❀
तजि मम चरनसरोज प्रिय, तिन्हकहँ देह न गेह ॥ ७४ ॥ ❀

गुणोंके स्थान, संसारके दुःखसे रहित, सन्देहसे दूर, जिनको मेरे चरणकमल छोड़कर अपना शरीर और घरभी प्यारा नहीं होता है ॥ ७४ ॥

चौ०-निजगुन सुनत स्रवन सकुचाहीं ❀ परगुन सुनत अधिक हर्षाहीं ॥ १ ॥
सम सीतल नहिं त्यागहिं नीती ❀ सरल सुभाव सबहिंसन प्रीती ॥ २ ॥

जो अपने गुणोंको कानसे सुनतेमें सकुचाते हैं और पराये गुण सुननेसे बहुत प्रसन्न होते हैं ॥ १ ॥ सम कहिये शत्रु मित्रके लिये समान, और शांत होते हैं, नीतिको नहीं छोड़ते हैं. उनका स्वभाव सीधा होता है और वे सबसे प्रेम रखते हैं ॥ २ ॥

जप तप व्रत दम संयम नेमा ❀ गुरु गोविंद विप्रपदप्रेमा ॥ ३ ॥
श्रद्धा क्षमा मइत्री दाया ❀ मुदिता मम पदप्रीति अमाया ॥ ४ ॥

जप तप व्रत दम और संयमको नियमसे करते हैं और गुरु और भगवान् तथा ब्राह्मणोंके चरणोंमें उनकी प्रीति होती है ॥ ३ ॥ श्रद्धा, क्षमा, मैत्री और दया करते हैं और प्रसन्नतासे निष्कपट होकर मेरे चरणोंमें प्रीति रखते हैं ॥ ४ ॥

बिरति बिबेक बिनय बिज्ञाना ❀ बोध जथारथ बेद पुराना ॥ ५ ॥
दंभ मान मद करहिं न काऊ ❀ भूलि न देहिं कुमारग पाऊ ॥ ६ ॥

और वे वैराग्य, ज्ञान, नम्रता, और विज्ञानयुक्त होते हैं और उनको वेद और पुराणोंका यथार्थ बोध होताहै ॥ ५ ॥ किसीसे पाखंड, अभिमान और अहंकार नहीं करते और भूलकरभी बुरे मार्गमें पैर नहीं देते ॥ ६ ॥

गावहिं सुनहिं सदा मम लीला ❀ हेतुरहित परहितरतसीला ॥ ७ ॥
सुनु मुनि साधुन्हके गुन जेते ❀ कहि न सकहिं सारद स्रुति तेते ॥ ८ ॥

मेरे चरित्रोंको सदा गाते और सुनते रहते हैं और विना प्रयोजनही पराये कल्याणमें प्रीति करते हैं ॥ ७ ॥ और हे मुनि ! सुनो, संतोंके जितने सब गुण हैं उतने तौ सरस्वती और वेदभी नहीं कह सक्ते ॥ ८ ॥

छं०-कहि सक न सारद सेस नारद सुनत पदपंकज गहे ॥
अस दीनबंधु कृपालु अपने भक्तगुन निजमुख कहे ॥
सिर नाइ बारहिं बार चरनन्ह ब्रह्मपुर नारद गये ॥
ते धन्य तुलसीदास आस बिहाइ जे हरिरँग रये ॥ २९ ॥

सरस्वती और शेषभी नही कह सक्ते । यह सुनतेही नारदजीने (भगवान्के) कमलसमान चरण छुये । इस प्रकार दीनबंधु, कृपानिधान (भगवान्) ने अपने दासोंके गुण अपने मुखसे वर्णन किये और नारदजी (भगवान्के) चरणोंको वारंवार माथा नवाय ब्रह्मलोकको गये. तुलसीदास कहते हैं कि उनको धन्य है जो आश छोड़कर भगवानके रंगमें रँगे हुये हैं ॥ २९ ॥

दो०-रावनारिजस पावन, गावहिं, सुनहिं जे लोग ॥ ❀
रामभक्ति दृढ़ पावहीं, विनु बिराग जप जोग ॥ ७५ ॥ ❀

जो मनुष्य रावणके शत्रु (रामचन्द्र) के पवित्र यशको गावैंगे वा सुनैंगे वे विनाही वैराग्य जप और योगके रघुनाथजीकी दृढ़ भक्तिको पावेंगे ॥ ७५ ॥

दीपसिखासम जुवतिजन, मन जनि होसि पतंग ॥ ❀
भजहिं राम तजि काम मद, करहिं सदा सत्संग ॥ ७६ ॥ ❀

हे मन ! स्त्रियाँ दीपककी शिखाके समान हैं, उनमें तू पतंग मत हो, अभिमान और कामको छोड़कर रामचन्द्रजीका भजन कर और सदा सत्संग कर ॥ ७६ ॥

दोहा.

रघुबरपदपंकज सुमिरि, उरमहँ वारंवार । रामेश्वर टीका करी, निजमतिके अनुसार ॥ १ ॥
वाण पंच रस शशि समा, समाकार्त्तिक मास । भक्त जननके हृदय बिच, करि है पूर्ण प्रकास ॥२॥

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विमलवैराग्यसंपादनो
नाम तृतीयः सोपानः अरण्यकांडः समाप्तः ।

श्रीसीतारामचन्द्रार्पणमस्तु ॥

इति अरण्यकांडं समाप्तम् ॥

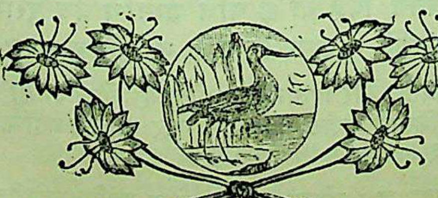

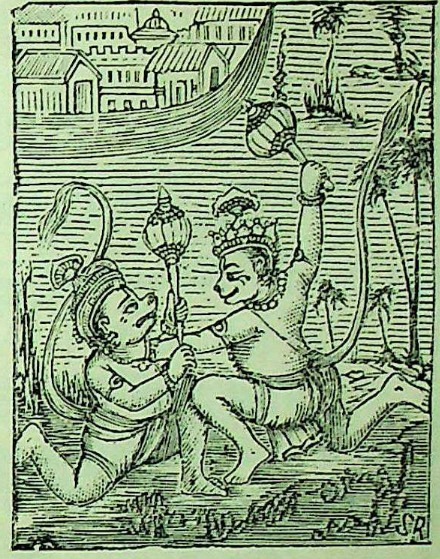

श्रीगोस्वामी

तुलसीदासकृतरामायणम्

पीयूषधाराहिंदीभाषाटीकासहितम्।

(किष्किन्धाकांडम्)

वालिसुग्रीवका युद्ध.

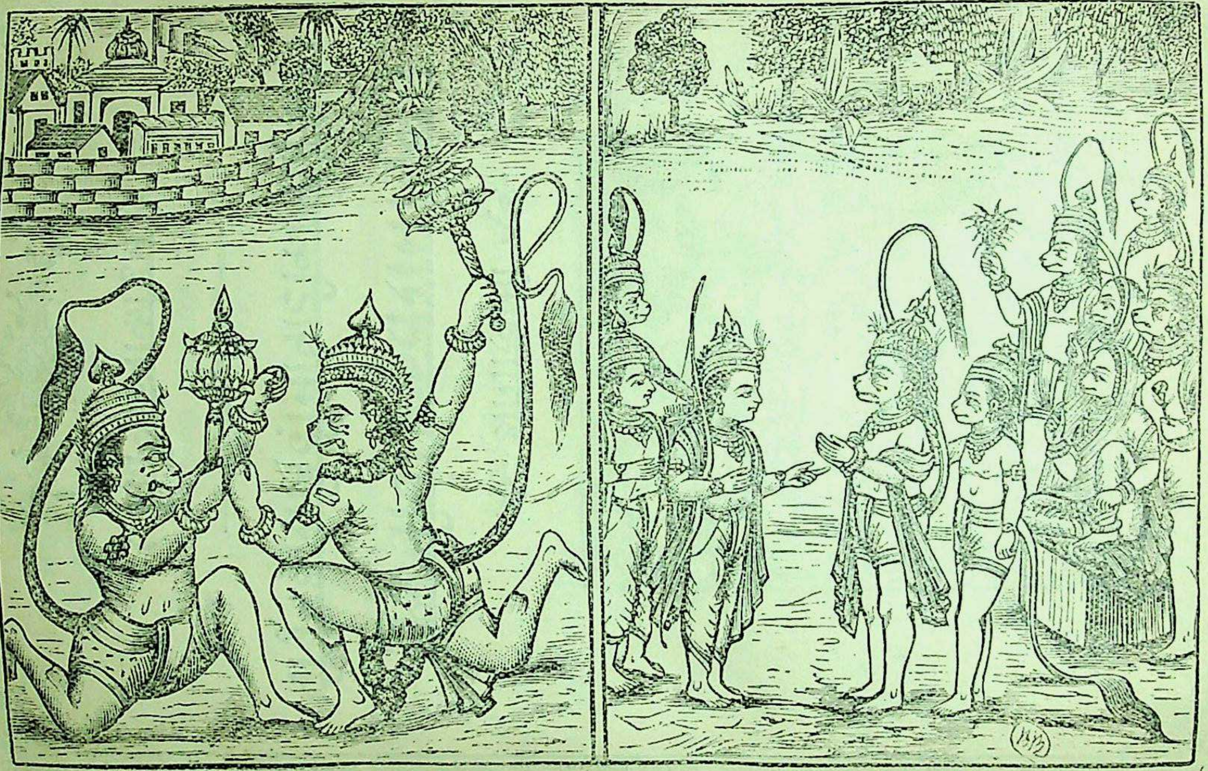

॥ श्रीः ॥

श्रीगोस्वामी

तुलसीदासकृतरामायणम् ।

किष्किन्धाकांडप्रारंभः ।

मंगलाचरणम्.

श्लोकः-कुन्देन्दीवरसुन्दरावतिबलौ विज्ञानधामावुभौ
शोभाढ्यौ वरधन्विनौ श्रुतिनुतौ गोविप्रवृंदप्रियौ ।
मायामानुषरूपिणौ रघुवरौ सद्धर्मवन्तौ हितौ
सीतान्वेषणतत्परौ पथिगतौ भक्तिप्रदौ तौ हि नः ॥ १ ॥

ब्रह्मांभोधिसमुद्भवं कलिमलप्रध्वंसनं चाव्ययं
श्रीमच्छंभुमुखेंदुसुन्दरवरे संशोभितं सर्वदा ।
संसारामयभेषजं सुमधुरं श्रीजानकीजीवनं
धन्यास्ते कृतिनः पिबन्ति सततं श्रीरामनामामृतम् ॥ २ ॥

छन्द गीति.

सोहति शरीर बिभूति भूषित शंख शशि शोभा भरैं ।
गजचर्म चारु निचोल काल कराल अहि भूषण धरैं ॥
काशीश गंग शशांक प्रिय निकलंक कलिकल्मष हरैं ।
सोइ शंभु गिरिसोपानकी भाषा सुभग पूरण करैं ॥ १ ॥

श्लोकार्थः-कुन्दके पुष्पके समान गौरवर्ण लक्ष्मणजी और नीलकमलके समान रामचन्द्रजी दोनों भाई अत्यन्त मनोहर और अतिबली, विज्ञानके धाम, शोभाकरके युक्त सुन्दर धनुष बाण धारें, वेदसे स्तुति किये गये, तथा गौ ब्राह्मणोंको प्यार करनेवाले, मायासे मनुष्यतनु धारण किये रघुकुलमें श्रेष्ठ, सद्धर्मरूपी कवचसे शोभित, सीताजीके ढूंढनेमें तत्पर, मार्गमें फिरते हुए वे दोनों मुझे भक्तिके देनेवाले हैं ॥ १ ॥ उन सुकर्मकर्त्ताओंको धन्य है कि जो, वेदरूपी समुद्रसे उत्पन्न हुआ, कलिके मलोंका नाशक, जन्ममरणादिसे रहित. शंकरके सुन्दर मुखरूपी चन्द्रमामें सदैव शोभायमान्, संसाररूपी रोगका औषधरूप अत्यन्त मधुर और श्रीजानकीजीका जीवनमूल ऐसे श्रीरामनामरूपी अमृतका सर्वदा पान करतेहैं ॥ २ ॥

सो०-मुक्तिजनम महि जानि, ज्ञानखानि अघहानिकर ॥
जहँ बस संभु भवानि, सो कासी सेइय कस न ॥ १ ॥
जरत सकल सुरवृंद, विषम गरल जेहिं पान किय ॥
तेहि न भजसि मतिमंद, को कृपालु संकरसरिस ॥ २ ॥

पृथ्वीपर मुक्तिकी दाता, ज्ञानकी खानि और पापोंके नाश करनेवाली उस काशीका सेवन क्यों न करना चाहिये कि जहां शिव पार्वती निवास करते हैं ॥ १ ॥ जिस हलाहल विषसे संपूर्ण इन्द्रादि देवताओंका समूह जला जाता था उसको जिन्होंने पान कर लिया, हे मतिमंद ! तिनको क्यों नहीं भजता है ? भला शंकरके समान और दूसरा कौन कृपालु है ? ॥ २ ॥

चौ०-आगे चले बहुरि रघुराई ❀ ऋष्यमूक पर्वत नियराई ॥ १ ॥
तहँ रह सचिवसहित सुग्रीवा ❀ आवत देखि अतुल बलसींवा ॥ २ ॥

फिर रामचन्द्रजी (पंपा सरोवरसे) आगे चले और ऋष्यमूक पर्वतके पास पहुँचे ॥ १ ॥ वहां मंत्रीसमेत सुग्रीव रहता था सो अतुल बलकी सीम (रामचन्द्रजी) को आता हुआ देख ॥ २ ॥

अतिसभीत कह सुनु हनुमाना ❀ पुरुषजुगल बलरूपनिधाना ॥ ३ ॥
धरि बटुरूप देखु तैं जाई ❀ कहेसि मोहिं निजसेन बुझाई ॥ ४ ॥

अति भयभीत होकर बोला कि हे हनुमान् ! सुनो; ये दो मनुष्य बल और रूपके निधान चले आ रहे हैं ॥ ३ ॥ सो तुम ब्राह्मणका रूप धरकर और पास जाकर देखो (और भेद लेकर) अपने इशारेसे समझाकर मुझसे कह देना ॥ ४ ॥

पठवा बालि होइ मन मैला ❀ भागों तुरत तजौं यह सैला ॥ ५ ॥
बिप्ररूप धरि कपि तहँ गयऊ ❀ माथ नाइ पूछत अस भयऊ ॥ ६ ॥

जो बालिने मनमें छल कर भेजा हो तौ तुरन्त इस पर्वतको छोड़कर भाग जाऊं ॥ ५ ॥ (सुग्रीवकी आज्ञा पाकर हनूमान्) ब्राह्मणका रूप धरकर वहां गये और मस्तक नवाकर अर्थात् नमस्कार कर यों पूछने लगे कि ॥ ६ ॥

---

(१) यहाँ लोग इस बातकी शंका करा करते हैं कि हनुमान् तौ ब्राह्मणका रूप धरकर गये, इन्होंने क्षत्रीरूप रघुनाथजीको मस्तक क्यों नवाया ? तहां कहते हैं कि यहां ब्राह्मण क्षत्रीका क्या विवाद है, यदि हनूमानजीने विप्ररूप धरा तौ क्या ब्राह्मण होगये ? थे तौ बानरही. और रूप तौ भेद लेनेके लिये धरा था, असलमें तौ ब्राह्मण न थे इसलिये उन्होंने रामजीको तपस्वीके वेषमें देख अपनी ज्ञातिभावसे प्रणाम किया-और हनूमानने उन्हें क्षत्री कब जाना था-जो क्षत्री या अपना इष्ट देव जानते तौ यह क्यों पूछते कि-

को तुम स्यामल गौर सरीरा । क्षत्रीरूप फिरहु बन वीरा ॥
की तुम तीन देवमहँ कोऊ । नर नारायण कै तुम दोऊ ॥

भला हनूमानजीकी इन शंकाओंसे संपूर्ण स्पष्ट है कि उन्होंने रामजीको क्षत्री नहीं जाना. और जब क्षत्रीका न जाननाही सिद्ध है तौ ज्ञातिभावसे अथवा ब्राह्मणवेषसे अतिथि तपस्वीका वेष देख रामजीको प्रणाम करनेमें क्या दूषण आया ? और भला हनुमानजीने तौ विप्रका रूपही धरा था उनके प्रणाम करनेमें तौ पाठकोंको यह शंका, और बडे २ ब्रह्मर्षि और राजर्षि और देवता सभी रामजीको वन्दना करते थे वहां शंका क्यों नहीं करते ? अतएव हनूमानने विप्ररूपसे जो रामजीको प्रणाम किया उसमें कुछ दोष नहीं आता, शंका निर्मूल है ॥ अब कहो कि हनुमानने विप्ररूपही क्यों धरा औरही किसीका रूप धरते ? तहां कहते हैं कि हनुमान् दूत बनकर गये थे और दूतको विप्ररूप धरना यह राजनीति है, जैसा कहा है.

"भक्तो गुणी शुचिर्दक्षः प्रगल्भोऽव्यसनी क्षमी ।
ब्राह्मणः परमर्मज्ञो दूतः स्यात्प्रतिभाववान् ॥"

अर्थात् जो राजभक्त, गुणी, शुद्ध, चतुर, बोलनेमें निपुण, अवगुणरहित, क्षमाशील, बुद्धिमान्, और शत्रुका

को तुम स्यामल गौर सरीरा ❀ क्षत्रीरूप फिरहु बन वीरा ॥ ७ ॥
कठिन भूमि कोमलपदगामी ❀ कवन हेतु विचरहु बन स्वामी ॥ ८ ॥

हे वीर ! तुम साँवले गोरे शरीरवाले कौन हो ? जो क्षत्रीका स्वरूप किये वनमें फिरते हो॥७॥ हे स्वामी, पृथ्वी तौ कठिन है और आपके चरणकमल कोमल हैं सो किसलिये वनमें फिरते हो? ॥८॥

मृदुलमनोहरसुंदरगाता ❀ सहत दुसह बन आतप बाता ॥ ९ ॥
की तुम तीनि देवमहँ कोऊ ❀ नर नारायन कै तुम दोऊ ॥ १० ॥

तुम्हारा शरीर तौ अति सुकुमार, मनहरन, और सुन्दर है और वनमें कठिन धूप और पवन सहते हो ॥ ९ ॥ सो या तौ तुम तीनों देवता (ब्रह्मा विष्णु महादेव) मेंसे कोई हो अथवा तुम दोनों नर नारायण[1] हो ॥ १० ॥

दो०–जगकारन तारन भवहिं, भंजन धरनीभार ॥ ❀
कै तुम अखिलभुवनपति, लीन्ह मनुजअवतार[2] ॥ १ ॥ ❀

या तुम सब लोकोंके स्वामी हो और तुमने जगत्के हितके लिये, संसारका दुःख नाश करनेको और पृथ्वीका भार उतारनेके लिये मनुष्योंका अवतार धारण किया है ॥ १ ॥

चौ०–सुनि बोले रघुबंसकुमारा ❀ विधिकर लिखा को मेटनहारा ॥ १ ॥
कोसलेस दसरथके जाए ❀ हम पितु बचन मानि बन आए ॥ २ ॥

यह सुनकर रघुवंशकुमार (रामचन्द्रजी) बोले कि विधाताके लिखेको मेटनेवाला कौन है? ॥ १ ॥ हम अयोध्याके राजा दशरथके पुत्र है. पिताकी आज्ञा मानकर (१४ वर्षके लिये) वनको आये हैं २

नाम राम लछमन दोउ भाई ❀ संग नारि सुकुमारि सुहाई ॥ ३ ॥
इहाँ हरी निसिचर बैदेही ❀ खोजत विप्र फिरहिं हम तेही ॥ ४ ॥

हमारा नाम राम और लक्ष्मण है और हम दोनों सगे भाई हैं, और साथमें सुन्दर कोमलांगी स्त्री थी ॥ ३ ॥ सो उस सीताजीको यहां राक्षसने हरलिया है. हे ब्राह्मणदेवता ! हम उसीको ढूँढ़ते फिरते हैं ॥ ४ ॥

आपन चरित कहा हम गाई ❀ कहहु विप्र निजकथा बुझाई ॥ ५ ॥
प्रभु पहिंचानि परे गहि चरना ❀ सो सुख उमा जाइ नहिं बरना ॥ ६ ॥

हे ब्राह्मण ! हमने अपना चरित्र तौ सुनाकर कहा. अब तुम अपनी कथा समझाकर कहो कि तुम इस वनमें क्यों फिरते हो? ॥ ५ ॥ (हनूमानजी) भगवान्को पहिचानकर उनके चरण पकड़कर गिर पड़े । (महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! वह सुख बर्णन नहीं किया जाता ॥ ६ ॥

भेद जाननेवाला हो ऐसा ब्राह्मण दूत होना चाहिये–यह तौ शंकाका समाधान हुआ यह अर्थ कि माथनाइ अर्थात् माथन कहिये पर्वत उससे आय कहिये आकर अथवा माथनाइ कहिये नीचा शिरकरके अथवा सुग्रीवको मस्तक नवाकर इत्यादि सब अर्थ कपोलकल्पित निर्मूल और भ्रमोत्पादक हैं.

(१) नरनारायणकी कथा भागवतमें प्रसिद्ध है ॥

(२) जैसा गीतामें कहा है कि–

> “परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
> धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ॥”

अर्थात् साधुओंकी रक्षाके लिये और दुर्जनोंके नाशहेतु और धर्मके स्थापनके लिये मैं युग २ में अवतार लेता हूं ॥

पुलकित तनु मुख आव न वचना ❀ देखत रुचिर वेषकै रचना ॥ ७ ॥
पुनि धीरज धरि अस्तुति कीन्हा ❀ हर्ष हृदय निजनाथहिं चीन्हा ॥ ८ ॥

(भगवान्‌के) सुन्दर वेषकी रचनाको देख (हनुमान्) शरीरमें पुलकायमान होगये और मुखसे वचन नहीं निकलने लगा ॥ ७ ॥ फिर प्रसन्नतासे हृदयमें अपने स्वामीको पहिचान धीरज रखकर स्तुति करी ॥ ८ ॥

मोर न्याउ मैं पूछा सांई ❀ तुम कस पूछहु नरकी नाँई ॥ ९ ॥
तव मायाबस फिरौं भुलाना ❀ ताते मैं नहिं प्रभु पहिंचाना ॥ १० ॥

(और बोले कि) हे स्वामी ! मैंने जो पूछा सो तौ न्याय था, अर्थात् योग्यही था, पर आप मनुष्यकी भांति कैसे पूछते हो ? ॥ ९ ॥ और मैं तौ आपकी मायाके वश भूला हुआ फिरता हूं इससे मैंने आपको नहीं पहिचाना ॥ १० ॥

दो०–एक मंद मैं मोहबस, कुटिलहृदय अज्ञान ॥ ❀
पुनि प्रभु मोहिं बिसारेउ, दीनबंधु भगवान ॥ २ ॥ ❀

क्यों कि एक तौ मैं मूर्ख, फिर मोहके वश हूं और मेरा कठोर हृदय है तथा अज्ञान हूं परंतु हे प्रभो ! आप तौ दीनबन्धु भगवान् होकर मुझे भूल गये ॥ २ ॥

चौ०–जदपि नाथ बहु अवगुन मोरे ❀ सेवक प्रभुहिं परै नहिं भोरे ॥ १ ॥
नाथ जीव तव माया मोहा ❀ सो निस्तरै तुह्मारेहि छोहा ॥ २ ॥

हे नाथ ! यद्यपि मुझमें बहुतसे अवगुण हैं (तथापि) हे स्वामी ! आपने सेवकको कभी भूलकरभी नहीं त्यागा है ॥ १ ॥ क्योंकि हे नाथ ! जीव तौ आपकी मायामें मोहित हो रहा है उसका निस्तारा तौ आपकी कृपासेही होसक्ता है ॥ २ ॥

तापर मैं रघुबीरदोहाई ❀ जानौं नहिं कछु भजन उपाई ॥ ३ ॥
सेवक सुत पितु मातु भरोसे ❀ रहै असोच बनै प्रभु पोसे ॥ ४ ॥

तिसपर मैं तौ हे रामचन्द्र ! (आपकी) सौगंद खाता हूं कि भजन उपाय कुछभी नहीं जानता हूं ॥ ३ ॥ सेवकको तौ उसी प्रकार स्वामीके भरोसे रहना चाहिये जैसे पुत्र पिता माताके भरोसेपर शोचरहित रहता है, फिर स्वामीको पालतेही बनता है ॥ ४ ॥

अस कहि चरन परे अकुलाई ❀ निजतनु प्रगट प्रीति उर छाई ॥ ५ ॥
तब रघुपति उठाइ उर लावा ❀ निजलोचनजल सींचि जुड़ावा ॥ ६ ॥

ऐसे कहकर और अकुलाकर चरणोंमें गिर पड़े तौ निजवानरका शरीर प्रकट होगया और हृदयमें प्रेम छागया ॥ ५ ॥ (जब कपटका बटुस्वरूप जाता रहा) तब तौ रामचन्द्रजीने अपने हृदयसे लगा लिया और अपने नेत्रोंके जलसे सींचकर ठंढ़ा किया (और बोले) ॥ ६ ॥

सुनु कपि जिय जनि मानेसि ऊना ❀ तैं मम प्रिय लछमनते दूना ॥ ७ ॥
समदरसी मोहिं कह सब कोऊ ❀ सेवक प्रिय अनन्यगति होऊ ॥ ८ ॥

हे हनुमान् ! सुन, तू मनमें अपनेको कुछ हेटा मत समझे, तू तौ मुझे लक्ष्मणजीसे दूना प्यारा है॥७॥

---

(१) लक्ष्मण दूना प्यारा इसलिये कहा कि रामजीको सेवक सबसे अधिक प्यारा है, जैसा कहा हैं कि

"मोहिं सेवकसम प्रिय कोउ नाहीं"

सेवक तौ लक्ष्मणजीभी हैं परन्तु हनुमान्‌से ऐसा कहना एक लौकिक रीति है, बहुधा ऐसा कहा जाता है कि तुम मुझे प्राणोंसेभी अधिक प्यारे हो.

मुझे सब कोई समदर्शी कहता है अर्थात् मैं सबको समान देखनेवाला हूं परन्तु जिसे दूसरेका भरोसा नहीं ऐसा सेवक मुझे अधिक प्यारा लगता है ॥ ८ ॥

दो०–सो अनन्य जाके असि, मति न टरै हनुमंत ॥
मैं सेवक सचराचर, रूपरासि भगवंत ॥ ३ ॥

और हे हनूमान् ! अनन्य दास वह कहाता है कि जिसकी बुद्धिसे यह बात नहीं टलती कि मैं तौ सेवक हूं और चराचरके स्वामी रूपकी राशि भगवान् मेरे स्वामी हैं और कोई तीसरा मेरे नहीं है॥३॥

चौ०–देखि पवनसुत पति अनुकूला ॥ हृदय हर्ष बीती सब सूला ॥ १ ॥
नाथ सैलपर कपिपति रहई ॥ सो सुग्रीव दास तव अहई ॥ २ ॥

हनूमान् अपने स्वामी (भगवान्) को कृपाल देख मनमें प्रसन्न हुये और सुग्रीवके दुखी होनेके कारणसे जो दुःख थे वे सब दुःख मिट गये ॥ १ ॥ (और बोले कि) हे नाथ ! पर्वतपर वानरोंका स्वामी रहता है सो वह सुग्रीवभी आपका दास है ॥ २ ॥

तासन नाथ सुमैत्री कीजे ॥ दीन जानि तेहि अभय करीजे ॥ ३ ॥
सो सीताकर खोज कराइहि ॥ जहँ तहँ मर्कट कोटि पठाइहि ॥ ४ ॥

हे स्वामी ! उससे मित्रता कीजिये और दीन जानकर उसको निर्भय कीजिये ॥ ३ ॥ वह सीताजीकी तलाश करा देगा और करोड़ों वन्दरोंको जहां तहां भेजेगा ॥ ४ ॥

इहिविधि सकल कथा समुझाई ॥ लिए दोउ जन पीठ चढ़ाई ॥ ५ ॥
जब सुग्रीव रामकहँ देखा ॥ अतिसय जनम धन्य करि लेखा ॥ ६ ॥

इस भांति सब कथा समझाकर (राम लक्ष्मण) दोनों जनोंको पीठपर चढ़ा लिया ॥ ५ ॥ जब सुग्रीवने रामचन्द्रजीको देखा तौ अपने जन्मको बहुतही धन्य माना ॥ ६ ॥

सादर मिले नाइ पद माथा ॥ भेटे अनुजसहित रघुनाथा ॥ ७ ॥
कपिके मन बिचार यह रीती ॥ करिहहिं विधि मोसन ये प्रीती ॥ ८ ॥

और बड़े आदरसे उनके चरणोंको शीश नवाकर मिला और रामचन्द्रजीभी लक्ष्मणसमेत मिलै ॥ ७ ॥ सुग्रीवके मनमें इस भांतिका शोच विचार है कि हे विधाता ! भला ये मुझसे प्रीति क्यों करेंगे ? अर्थात् कभी नहीं करेंगे ॥ ८ ॥

दो०–तब हनुमंत उभय दिसि, कहि सब कथा बुझाइ ॥
पावक साक्षी देइ करि, जोरी प्रीति दृढ़ाइ ॥ ४ ॥

तब हनूमानने दोनों ओर अर्थात् सुग्रीवसे रामलक्ष्मणकी और रामसे सुग्रीवकी सब कथा समझाकर कही और अग्निको(१) साक्षी कर पक्की प्रीति जोड़ दी ॥ ४ ॥

चौ०–कीन्ह प्रीति कछु बीच न राषा ॥ लछमन रामचरित सब भाषा ॥ १ ॥
कह सुग्रीव नयन भरि वारी ॥ मिलहि नाथ मिथिलेसकुमारी ॥ २ ॥

जब प्रीति करी तौ आपसमें कुछभी भेद न रक्खा और लक्ष्मणने रामचन्द्रजीका (राज्यभंग वनवास सीताहरण आदि) सब समाचार कहा ॥ १ ॥ सुग्रीवने नेत्रोंमें जल भरकर कहा–हे नाथ ! सीताजी मिल जायँगी ॥ २ ॥

---

(१) यहां यह शंका है कि अग्निकोही साक्षी क्यों किया, किसी और देवताको क्यों नहीं किया ? इसका सामाधान यह है कि अग्निको साक्षी करनेसे सब देवता साक्षी होजाते हैं. क्यों कि जो कुछ अग्निमें हवन कियाजाता है उसमें सब देवता अपना २ भाग पा लेते हैं, और जो अन्य देवताको साक्षी करो तो एकही होगा, सब नहीं होसक्ते.

मंत्रिनसहित इहाँ इकबारा ❀ बैठ रहउँ मैं करत बिचारा ॥ ३ ॥
गगनपंथ देखी मैं जाता ❀ परबस परी बहुत बिलखाता ॥ ४ ॥

एक दिन मंत्रियोंसमेत यहां बैठा हुआ विचारकर रहा था ॥ ३ ॥ सो मैंने (सीताजीको) परवश और रोतीहुई आकाशमार्गमें ज़ातीहुई देखी थी ॥ ४ ॥

राम राम हा राम पुकारी ❀ मम दिसि देखि दीन्ह पट ड़ारी ॥ ५ ॥
मांगा राम तुरत सो दीन्हा ❀ पट उर लाइ सोच अति कीन्हा ॥ ६ ॥

राम राम ! हा राम ! पुकारकर मेरी ओर देखकर वस्त्र डाल दिया था (सो मैंने धर रक्खा है) ॥ ५ ॥ रामचन्द्रने (वह वस्त्र) मांगा और उसने तुरंत दे दिया, फिर वस्त्रको छातीसे लगाकर बहुतसा शोच किया ॥ ६ ॥

कह सुग्रीव सुनहु रघुवीरा ❀ तजहु सोच मन आनहु धीरा ॥ ७ ॥
सब प्रकार करिहौं सेवकाई ❀ जेहि विधि मिलहि जानकी आई ॥ ८ ॥

सुग्रीवने कहा हे रामचन्द्र ! सुनो शोच छोड़कर मनमें धीरज रक्खो ॥ ७ ॥ मै सब प्रकार आपकी सेवा करूंगा कि जिससे सीताजी आकर मिल जायँगी ॥ ८ ॥

दो०-सखावचन सुनि हर्षे, कृपासिंधु बलसीव ॥ ❀
कारन कवन बसहु बन, मोसन कहु सुग्रीव ॥ ५ ॥ ❀

दयाके समुद्र और असीम बलवान् (रामचन्द्रजी) मित्रके वचन सुनकर प्रसन्न हुये (और बोले कि) हे सुग्रीव ! क्या कारण है कि जो तुम वनमें रहते हो ? सो तौ मुझसे कहो ॥ ५ ॥

अथ क्षेपक.

चौ०-सुग्रीवहिं प्रभु पूछत कैसे ❀ बहु अजान कोउ मानुष जैसे ॥ १ ॥
मातपिताकर नाम बतावहु ❀ निजउतपति सब मोहिं सुनावहु ॥ २ ॥

भगवान् सुग्रीवसे कैसे पूछते हैं जैसे कोई बहुत अनजान मनुष्य पूछता हो ॥ १ ॥ (हे सुग्रीव !) अपने माता पिताका नाम बताओ और अपनी सब उत्पत्ति मुझे सुनाओ ॥ २ ॥

रामचन्द्रके सुनि अस बचना ❀ कहन लाग सब अपनी रचना ॥ ३ ॥
चतुरानन निज नयन उघारी ❀ कीच काढ़ि महिऊपर डारी ॥ ४ ॥

रामचन्द्रजीके ऐसे वचन सुन (सुग्रीव) अपनी सब उत्पत्ति कहने लगा कि ॥ ३ ॥ ब्रह्माने अपने नेत्र खोल कीच निकालकर पृथ्वीपर डाल दी थी ॥ ४ ॥

तासों भयो एक कपि भारी ❀ तिहि समान नहिं कोउ बलकारी ॥५॥
ऋच्छराज कहि ताहि पुकाऱ्यो ❀ पुनि तिहिं विधि यह वचन उचाऱ्यो॥६॥

सो उससे एक बडा बन्दर उत्पन्न होगया कि जिसके समान बलवान् कोई नहीं हुआ ॥ ५ ॥ लोग उसे ऋच्छराज कहकर पुकारने लगे, फिर ब्रह्माने उससे यह कहा कि ॥ ६ ॥

वनमहँ जाय मधुर फल खावहु ❀ दुष्ट असुर मारहु जहँ पावहु ॥ ७ ॥
विधिकी अस आज्ञा धरि सीसा ❀ दच्छिनदिसि धावा सो कीसा ॥ ८ ॥

वनमें जाकर मीठे फल खाओ और दुष्ट राक्षसोंको जहां पाओ वहीं मारडालो ॥ ७ ॥ ब्रह्माकी ऐसी आज्ञाको माथेपर रख वह बन्दर दक्षिण दिशाको दौड़ा ॥ ८ ॥

दो०-ऋच्छराज वनमहँ फिरत, निजइच्छा अनुसार ॥ ❀
असुर दैत्य जहँ तहँ मिलैं, सबकहँ डारत मार ॥ ६ ॥ ❀

और अपनी इच्छानुसार ऋच्छराज बनमें फिरने लगा और जहां कहीं राक्षस और दैत्य जो मिलें सबको मारडालने लगा ॥ ६ ॥

चौ०–कूप रुचिर इक वनमहँ पावा ❀ ताके निकट तुरत चलिआवा ॥ १ ॥
देखी जलविच निजपरछाहीं ❀ जाना असुर कूपके माहीं ॥ २ ॥

फिर वनमें उसे एक सुन्दर कुँआ मिला उसके पास वह तुरंतही चला आया ॥ १ ॥ और उसने जलके बीचमें अपनी परछांई देखकर जाना कि कुयेके भीतर राक्षस है ॥ २ ॥

ताके बधको सो बलवाना ❀ कूद परयो नहिं मनहिं डराना ॥ ३ ॥
कूदतही कपि दैवबसाना ❀ नारीरूप भयो बलवाना ॥ ४ ॥

सो वह बलवान् उसके मारनेको कूद पड़ा और मनमें भय नहीं किया ॥ ३ ॥ वह बलवान् वन्दर कूदतेही दैवके वश स्त्रीके रूपमें होगया ॥ ४ ॥

सुनहु गौरि कौतुककर बाता ❀ आयो बाहर सहित सुभगाता ॥ ५ ॥
अतिविचित्र लखि सुन्दरताई ❀ तापर मोहे रवि सुरराई ॥ ६ ॥

(महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! और अचरजकी बात सुनो कि फिर यह सुन्दर शरीरसमेत बाहर आया ॥५॥ और उसकी अत्यंत विचित्र सुन्दरताको देख उसपर सूर्य और इन्द्र मोहित होयगे ॥६॥

इन्द्रबीर्य बालनपर गिरेऊ ❀ ताते बालि परगट भयऊ ॥ ७ ॥
वीर्य दिवाकर कंठ गिरायो ❀ उपज्यो मैं सुग्रीव कहायो ॥ ८ ॥

सो इन्द्रका वीर्य तौ उसके बालोंपर गिर पड़ा उससे बालि उत्पन्न हुआ ॥ ७ ॥ और सूर्यका वीर्य उसके कंठपर गिरा कि जिससे मैं सुग्रीव उत्पन्न हुआ ॥ ८ ॥

तापाछे सुनु राम कृपाला ❀ नारीतें भा नर तत्काला ॥ ९ ॥
पुनि मम तात सुखी मनमाहीं ❀ हमहिं संग ले गा विधिपाहीं ॥ १० ॥

फिर हे कृपानिधान रामचन्द्र ! सुनो; वह रीछ तुरंत स्त्रीसे मनुष्य होगया ॥ ९ ॥ फिर मेरा पिता मनमें प्रसन्न हो हम दोनोंको साथ लेकर ब्रह्माके पास गया ॥ १० ॥

दो०–ब्रह्मलोकमें पहुँचिकरि, कीन्हेसि विधिहिं प्रनाम ॥ ❀
सुतउत्पति विधिवत कही, और बताय सुनाम ॥ ७ ॥ ❀

ब्रह्मलोकमें पहुँचकर ब्रह्माकों प्रणामकर विधिपूर्वक पुत्रोंकी उत्पत्ति कही और सुन्दर नाम बताये

चौ०–सुनि ब्रह्मा बोले मुसकाई ❀ हरिइच्छा भावी अधिकाई ॥ १ ॥
अब तुम वास करहु तिहि ठहँवा ❀ किष्किन्धा सुभधाम है जहँवा ॥ २ ॥

सुनकर ब्रह्माजी हँसकर बोले की भगवान्की इच्छा, होनहार बड़ी प्रबल है ॥ १ ॥ अब तुम वहां निवास करो जहां किष्किन्धा सुन्दर स्थान है ॥ २ ॥

दसरथसुत जनमहिं रघुबीरा ❀ विचरन करिहैं वन बलवीरा ॥ ३ ॥
तब तुम उनके दर्सन पाई ❀ ह्वैहौ कृतकृति मर्कटराई ॥ ४ ॥

दशरथके पुत्र बलवीर रामचन्द्र जन्म धारणकर बनमें विचरते हुये आवेंगे ॥ ३ ॥ सो हे वानरराज ! तब तुम उनके दर्शन पाकर निहाल हो जाओगे ॥ ४ ॥

विधिकी आज्ञा सीस चढ़ाई ❀ किष्किन्धा आये दोउ भाई ॥ ५ ॥
वाली राज कियो सुरस्वामी ❀ मोहिं कियो आपन अनुगामी ॥ ६ ॥

इति क्षेपक ॥

फिर ब्रह्माकी आज्ञाको माथेपर रख हम दोनों भाई किष्किन्धामें आये ॥ ५ ॥ हे देवताओंके स्वामी ! बालिने राज्य किया और मुझे अपना सेवक बना लिया ॥ ६ ॥ यहांतक क्षेपक हुआ.

नाथ बालि अरु मैं दोउ भाई ❀ प्रीति रही कछु बरनि न जाई ॥ ७ ॥
मयसुत मायावी तेहि नाऊँ ❀ आवा सो प्रभु हमरे गाऊँ ॥ ८ ॥

हे स्वामी! मुझ और बालि दोनों भाइयोंमें ऐसा स्नेह था कि कुछ वर्णन नहीं किया जाता॥७॥ हे स्वामी ! मयका पुत्र जिसका नाम मायावी था सो हमारे गांव (पंपापुर) में आया ॥ ८ ॥

अर्धराति पुरद्वार पुकारा ❀ बालिहु रिपुबल सहै न पारा ॥ ९ ॥
धावा बाली देखि सो भागा ❀ मैं पुनि गयऊँ बंधुसँग लागा ॥ १० ॥

और आधीरातको नगरके द्वारपर पुकारा वाली बालीभी वैरीके अपार बलको न सह सका ॥ ९ ॥ बाली दौडा, उसे देखकर वह (मायावी) भी भागा फिर मैंभी भाईके साथही लगा चला गया॥१०॥

गिरिबरगुहा पैठ सो जाई ❀ बालि मोहिं तब कहा बुझाई ॥ ११ ॥
परखेहु मोहिं एक पखबारा ❀ नहिं आवौं तौ जानेहु मारा ॥ १२ ॥

वह मायावी पहाड़की सुन्दर गुफामें धस गया तब बालिने मुझसे समझाकर कहा कि ॥ ११ ॥ एक पखवारेतक मेरी राह देखना और जो मैं न आऊं तौ जान लेना कि मारा गया ॥ १२ ॥

मास दिवस तहँ रहेउँ खरारी ❀ निसरी रुधिरधार तहँ भारी ॥ १३ ॥
तब मैं निजमन कीन्ह विचारा ❀ जाना असुर बंधुकहँ मारा ॥ १४ ॥

सो हे राम ! मैं वहां एक मासतक रहा और जब भीतरसे लोहूकी बड़ी धार निकली ॥ १३ ॥ तब मैंने अपने मनमें बिचार किया और जाना कि राक्षसने मेरे भाईको मारडाला होगा ॥ १४ ॥

वालि हतेसि मोहिं मारिहि आई ❀ सिला द्वार दे चलेउँ पराई ॥ १५ ॥
मंत्रिन्ह पुर देखा बिनु सांई ❀ दीन्हेउ राज्य मोहिं बरिआई ॥ १६ ॥

और वालिको तौ मारा और अब आकर मुझेभी मारैगा सो मैं द्वारसे शिला लगाकर भाग आया ॥१५॥ फिर मंत्रियोंने विना राजाके नगरको देखा तौ मुझे हठकरके राज्य दे दिया ॥१६॥

वाली ताहि मारि गृह आवा ❀ देखि मोहिं जिय भेद बढ़ावा ॥ १७ ॥
रिपुसमान मोहिं मारेसि भारी ❀ हरि लीन्हेसि सर्वस अरु नारी ॥ १८ ॥

उसे मारकर वालिभी घर आया और मुझे देखकर मनमें बड़ा वैर बढ़ाया ॥ १७ ॥ और मुझे वैरीके समान बहुत मारा और मेरा सर्वस्व स्त्रीसमेत छीन लिया ॥ १८ ॥

ताके भय रघुवीर कृपाला ❀ सकल भुवन मैं फिरेउँ बिहाला ॥ १९ ॥
इहाँ सापबस आवत नाहीं ❀ तदपि सभीत रहौं मनमाहीं ॥ २० ॥
सुनि सेवकदुख दीनदयाला ❀ फरकि उठे दोउ भुजा बिसाला ॥ २१ ॥

---

(१) इस चौपाईका लोग यों अर्थभी करा करते हैं कि मास दिवस अर्थात् सुग्रीव वहां १२ दिन रहा, परंतु मेरी समझमें यह अर्थ नहीं जमता. कारण एक तौ यह कूट अर्थ है. दूसरे जब वालीने १५ दिनकी अवधि कही थी तौ १२ दिनमें लौटनेसे सुग्रीवका अपराध स्पष्ट दीखता है. परंतु सुग्रीव वालीका आज्ञाकारी था १५ दिनकी बजाय एक महीनेतक राह देखी और फिरभी जब रुधिर निकलता देखा तब लौटा. और अध्यात्मरामायणमेंभी यही लिखा है कि सुग्रीव एक मास रहकर उसके बाद लौटा.

यथा श्लोकौ—

"वाली मामाह तिष्ठ त्वं वहिर्गच्छाम्यहं गुहां । इत्युक्त्वाविश्य स गुहां मासमेकं न निर्ययौ ॥ १ ॥
मासादूर्ध्वं गुहाद्वारान्निर्गतं रुधिरं बहु । तद् दृष्ट्वा परितप्तांगो मृतो वालीति दुःखितः ॥ २ ॥

हे कृपानिधान रामचन्द्र ! उसके डरसे मैं सब लोकोंमें बेहाल फिरा परन्तु कहीं ठिकाना न मिला ॥१९॥ और यद्यपि वह (मतंगऋषिके) शापके वश यहां नहीं आता है तौभी मैं मनमें डरताही रहता हूं ॥२०॥ सेवकका दुःख सुनतेही दीनदयालु भगवान्के दोनों दीर्घ भुजदंड फड़क उठे॥२१॥

अथ क्षेपक ॥

दो०-रामचन्द्र बोले वचन, सुनहु तात सुग्रीव ॥ ❀
दुंदुभिको कैसे हन्यो, वालि महाबलसींव ॥ ८ ॥ ❀

श्रीरामचन्द्र बोले कि हे प्यारे सुग्रीव ! सुनो, बड़े बली वालिने दुंदुभीको कैसे मारा ? ॥ ८ ॥

ऋषि मुनि समदरसी सदा, सबकर चह कल्यान ॥ ❀
चूक परी कह वालिसों, साप दियो सुज्ञान ॥ ९ ॥ ❀

और ऋषि मुनि तौ समान दृष्टिसे सदा सबका कल्याण चाहते हैं फिर वालीसे क्या चूक पड़ी जो चतुर ज्ञानी मुनीश्वरने शाप दिया ॥ ९ ॥

चौ०-ऐसे जब पूछेहु रघुनाथा ❀ सुनि सुग्रीव बखानेहु गाथा ॥ १ ॥
मयदानवते दो सुत भयऊ ❀ मायावी दुंदुभि अस कहेऊ ॥ २ ॥

जब रामचन्द्रजीने ऐसे पूछा तौ सुनकर सुग्रीवने कथा कही कि ॥ १ ॥ मयदैत्यसे दो पुत्र हुये(जिनको) मायावी और दुंदुभी कहते हैं ॥ २ ॥

तिनमहँ दुंदुभि अतिबलधारी ❀ भय माने तासों बलकारी ॥ ३ ॥
एकबार सागरपहँ आयो ❀ कटिसमान सब सिंधु मझायो ॥ ४ ॥

उनमेंसे दुंदुभी बहुत बलवान् था कि जिससे बलवान्भी भय मानते थे ॥ ३ ॥ सो वह एकवार समुद्रपर आया और सब समुद्रकी थाह ली तौ कमरके बराबर आया ॥ ४ ॥

ताहि मथत व्याकुल बारीसा ❀ हाथ जोड़ नायउ तेहि सीसा ॥ ५ ॥
तुमसमान नहिं मैं सुनु भाई ❀ हिमगिरिपहँ जावहु हरसाई ॥ ६ ॥

उसके मथतेही समुद्र दुखी हुआ और हाथ जोड़कर उसको माथा नवाया ॥ ५ ॥ (और बोला) हे भाई ! सुनो, मैं तुम्हारे बराबर नहीं, (तुम) प्रसन्न होकर हिमाचलके पास जाओ ॥ ६ ॥

तब दुंदुभि हिमगिरिपहँ आयउ ❀ ताल ठोंकि हिमवान उठायउ ॥ ७ ॥
तब हिमवंत कहै कर जोरे ❀ हम तुमसम बलमें अति थोरे ॥ ८ ॥
पंपापुर जावहु बलवीरा ❀ वालि महाबल तहँ रणधीरा ॥ ९ ॥

तब दुंदुभी हिमाचलके पास आया और ताल ठोककर हिमाचलको उठाया ॥ ७ ॥ तब हिमाचलने हाथ जोड़कर कहा कि हम तुमसे बलमें बहुत थोड़े हैं ॥ ८ ॥ हे बलवान् योद्धा ! (तुम) पंपापुरको जाओ वहां रणधीर वाली बडा बलवान् है ॥ ९ ॥

दो०-सुनिकै गिरिके वचन तब, आयउ तहाँ तुरन्त ॥ ❀
वालि वालि कहतो भयो, सुन दौड्यो बलवन्त ॥ १० ॥ ❀

तब हिमाचलके वचन सुनकर वालि २ कहता हुआ शीघ्रही वहां आया सो सुनकर बलवान् वालीभी दौड़ा ॥ १० ॥

चौ०-दुंदुभि वाली दोनो योधा ❀ मल्लयुद्ध करते कर क्रोधा ॥ १ ॥
चार प्रहर दोनों बल कीन्हा ❀ वालीने पुनि मुष्टिक दीन्हा ॥ २ ॥

दुंदुभी और वाली दोनों योद्धा क्रोध करके मल्लयुद्ध करने लगे ॥ १ ॥ चार पहरतक दोनोंने वल किया फिर वालीने घूसा मारा ॥ २ ॥

गिरा महीपर गिरिकी नाईं ❀ पशु पक्षी तरु दवे गुसाँईं ॥ ३ ॥
पुनि वाली दुइ फाँक उतारी ❀ इक दक्षिण इक उत्तर डारी ॥ ४ ॥

हे गोसाँई! (वह दुंदुभी) पर्वतकी भांति पृथ्वीपर गिर पड़ा तौ पशु पक्षी और वृक्ष दब गये ॥३॥ फिर वालीने (उसकी) दो फाँक उतार एक उत्तर और दूसरी दक्षिण दिशामें डाल दी ॥ ४ ॥

ऋषिमतंगकर तहँ अस्थाना ❀ रुधिर बह्यो तहँ नदीसमाना ॥ ५ ॥
कर अस्नान ऋषी जब आये ❀ एक जक्ष वृत्तान्त सुनाये ॥ ६ ॥

और जहां मतंग ऋषिका स्थान है वहां नदीके समान लोहू वहने लगा ॥ ५ ॥ जब ऋषि स्नान करके आये तौ एक यक्षने समाचार सुनाया ॥ ६ ॥

सुनि मतंग कीन्हा अति क्रोधा ❀ दियो स्राप यह कीन्ह न सोधा ॥ ७ ॥
इहि गिरि देखत बाली नासा ❀ ताहीते भइ मन कछु त्रासा ॥ ८ ॥

मतंग (ऋषि) ने सुनकर वहुत क्रोध किया और विचार न करके यह शाप दिया कि ॥ ७ ॥ इस पर्वतके देखतेही वाली मर जायगा, इसीसे मनमें कुछ भय हुआ ॥ ८ ॥

दो०–वालि यहाँ आवत नहीं, सुनिये श्री रघुवीर ॥ ❀
करहु निडर मोकहँ प्रभू, दूर होहिं सब पीर ॥ ११ ॥ ❀

इति क्षेपक ॥

हे श्रीरामचन्द्रजी! सुनिये (इस कारण) वालि यहां नहीं आता, हे प्रभो! मुझको निर्भय कीजिये (जिससे) सव दुःख दूर हों ॥ ११ ॥ इति क्षेपक.

दो०–सुनि सुग्रीव मैं मारिहौं, बालिहिं एकहि बान ॥ ❀
ब्रह्म रुद्र सरनागत, भयउ न उबरहिं प्रान ॥ १२ ॥ ❀

(भगवान्) वोले हे सुग्रीव! सुनो. मैं वालीको एकही वाणसे मारूंगा और ब्रह्मा और महादेवकी शरण जानेपरभी उसके प्राण नहीं वचैंगे ॥ १२ ॥

चौ०–जे न मित्रदुख होहिं दुखारी ❀ तिन्हैं बिलोकत पातक भारी ॥ १ ॥
निजदुख गिरिसम रजकै जाना ❀ मित्रक दुख रज मेरुसमाना ॥ २ ॥

जो मनुष्य मित्रके दुःखसे दुखी नहीं होते उनके देखनेसे बड़ा पाप होता है ॥ १ ॥ अपने पहाड़की वरावर दुखको रजकी वरावर जानै और मित्रके धूलकी वरावर दुःखको पहाडके वरावर जानै॥२॥

जिनके अस मति सहज न आई ❀ ते सठ हठ कत करत मिताई ॥ ३ ॥
कुपथ निवारि सुपंथ चलावा ❀ गुन प्रगटे अवगुनहिं दुरावा ॥ ४ ॥

जिनके स्वभावसे ऐसी बुद्धि नहीं होती वे मूर्ख हठकरके क्यों मित्रता करते हैं? ॥ ३ ॥ (मित्रको) बुरे मार्गसे रोक कर अच्छे मार्गमें चलावे और अवगुणोंको छिपाकर गुणोंको प्रकाश करै॥४॥

देत लेत मन संक न धरहीं ❀ बलअनुमान सदा हित करहीं ॥ ५ ॥
बिपतिकाल कर सतगुननेहा ❀ स्रुति कह संत मित्रगुन एहा ॥ ६ ॥

देते लेते हुये मनमें सन्देह न करै और वलके अनुसार सदाही भला करै ॥ ५ ॥ और विपत्तिके समयमें सौगुणा स्नेह करै. अच्छे मित्रोंके यही लक्षण वेदने कहे हैं॥ ६ ॥

आगे कह मृदुबचन बनाई ❀ पाछे अनहित मन कुटिलाई ॥ ७ ॥
जाकर चित अहिगतिसम भाई ❀ अस कुमित्र परिहरे भलाई ॥ ८ ॥

और सामने तौ मीठी २ वातें बनाकर कहै और पीछे[1] मनकी कुटिलतासे बुरा चाहै ॥ ७ ॥ हे भाई ! जिसका मन सर्पकी चालकी भांति हो ऐसे बुरे मित्रको त्याग देनेहीसे भलाई है ॥ ८ ॥

सेवक सठ नृप कृपन कुनारी ❀ कपटी मित्र सूलसम चारी ॥ ९ ॥
सखा सोच त्यागहु बल मोरे ❀ सबबिधि करब काज मैं तोरे ॥ १० ॥
कह सुग्रीव सुनहु रघुबीरा ❀ बालि महाबल अति रनधीरा ॥ ११ ॥

(क्योंकि) मूर्ख[2] सेवक, लोभी राजा बुरी, स्त्री, और कपटी मित्र, ये चारों शूलके समान (दुखदाई) हैं ॥ ९ ॥ सो हे मित्र ! तुम मेरे बल भरोसेसे अपना शोच छोड़ दो, मैं सब प्रकारतुम्हारे काम करूंगा ॥१०॥ सुग्रीवने कहा हे रामचन्द्रजी, सुनो. बालि बड़ा बलवान् और बड़ा रणवाँकुरा है ॥ ११ ॥

अथ क्षेपक ॥

दो०–चन्द्रमण्डलाकार जो, नाथ सात ये ताल ॥ ❀
बेधै जो इक बानते, सो बालीकर काल ॥ १३ ॥ ❀

हे स्वामी ! चन्द्रमण्डलके समान जो ये सात तालके वृक्षहैं (उनको) जो कोई एकही बाणसे वेधै वही वालिका काल है ॥ १३ ॥

सुनि बोले रघुवंशमनि, कहहु तालकर गाथ ॥ ❀
कहन लग्यो जिय हर्ष पुनि, हाथ जोड़ हरिनाथ ॥ १४ ॥ ❀

रामचन्द्रजी सुनकर बोले कि तालवृक्षोंकी कथा कहो. फिर सुग्रीव मनमें प्रसन्न हो हाथ जोड़कर कहने लगा कि ॥ १४ ॥

चौ०–एक दिवस बाली बन आयो ❀ सफल वृक्ष देखत हुलसायो ॥ १ ॥
सात फलन लायो इक बारी ❀ तिन्हैं राखि न्हायो बलधारी ॥ २ ॥

एक समय वालि वनमें आया और फलसहित वृक्षोंको देखते ही प्रसन्न हुआ ॥ १ ॥ सो एकवार सात फल लाया और उनको रखकर बलवान् (वालि)ने स्नान किया ॥ २ ॥

तापर सर्प बैठगो आई ❀ बालि देख बोला झुँझलाई ॥ ३ ॥
कियो नास तैं मोर अहारा ❀ तासों साप देहुँ अति भारा ॥ ४ ॥

उन (फलों) पर आकर एक सर्प बैठ गया उसें देखकर वालि झुंझलाकर बोला कि ॥ ३ ॥ तैंने मेरे भोजनको नाश किया इससे बड़ा भारी शाप देता हूँ ॥ ४ ॥

सात ताल उपजैं तव देहा ❀ जनि कर यामें तू संदेहा ॥ ५ ॥
तालवृक्ष निकसे तनुमाहीं ❀ सर्पपिता लखि साप्यो ताहीं ॥ ६ ॥

---

[1] "परोक्षे कार्यहन्तारं प्रत्यक्षे प्रियवादिनम् ।
वर्जयेत्तादृशं मित्रं विषकुंभं पयोमुखम् ॥ १ ॥"

इस श्लोकका अर्थ चौपाईसे मिलता है.

[2] इस चौपाईका यह भाव है कि मूर्ख सेवककी सेवकोंमें, लोभी राजाकी राजामें, खोटी स्त्रीकी स्त्रीमें और कपटी मित्रकी मित्रमें गिनती नहीं है। सेवकको चतुर, राजाको उदार, स्त्रीको पवित्रता, और मित्रको निष्कपट होना चाहिये.

तेरी देहसे सात ताल वृक्ष उत्पन्न होंगे इसमें तू सन्देह मत करै ॥ ५ ॥ (उसके) शरीरमें ताल वृक्ष उत्पन्न हुये, जिन्हैं देखकर सर्पोंके पिता (तक्षक) ने वालीको शाप दिया कि ॥ ६ ॥

जो इक सरतें ताल गिरावै ❀ वाली तेहिकर मृत्यू पावै ॥ ७ ॥
समाचार यह तुमहिं सुनायउँ ❀ वालिवधनकी रीति जतायउँ ॥ ८ ॥
इति क्षेपक ॥

जो एकही बाणसे ताल वृक्षोंको गिरादे उसीके हाथसे वाली मारा जायगा ॥ ७ ॥ यह समाचार (मैंने) तुमको सुनाया और वालीके मारनेकी रीति समझाई ॥ ८ ॥ इति क्षेपक ॥

दुंदुभि अस्थिताल दिखराए ❀ विनु प्रयास रघुनाथ ढहाए ॥ ९ ॥
देखि अमितबल बाढ़ी प्रीती ❀ बालिबधनकर भइ परतीती ॥ १० ॥

(फिर सुग्रीवने) दुंदुभीकी हड्डी और तालवृक्ष दिखलाये तौ रामचन्द्रजीने अनायासही काट गिराये ॥ ९ ॥ (भगवान्का) ऐसा अतुल बल देखकर (सुग्रीवका) स्नेह बढ़ा और वालीके मारनेकाभी विश्वास हुआ ॥ १० ॥

बारहिंबार नाइ पद सीसा ❀ प्रभुहिं जानि मन हर्ष कपीसा ॥ ११ ॥
उपजा ज्ञान बचन तब बोला ❀ नाथ कृपा मन भयउ अडोला ॥ १२ ॥

सुग्रीवने भगवान्को पहिचाना और उनके चरणोंको वारंवार माथा नवाकर मनमें प्रसन्न हुआ ॥११॥ और जब ज्ञान उत्पन्न हुआ (अर्थात् राम परब्रह्म हैं) तव वचन बोला कि हे स्वामी! आपकी दयासे (मेरा) मन स्थिर हुआ ॥ १२ ॥

सुख संपति परिवार बडाई ❀ लगु परिहरि करिहौं सेवकाई ॥ १३ ॥
यह सब रामभक्तिके बाधक ❀ कहहिं संत तव पदआराधक ॥ १४ ॥

सुख, संपत्ति, कुटुम्ब और बड़ाई सबको छोड़कर (आपकी) सेवा करूंगा ॥ १३ ॥ क्योंकि यह सब रामचन्द्रजीकी भक्तिमें बाधा करनेवाले हैं (यह बात) आपके चरणोंकी सेवा करनेवाले साधु कहते हैं ॥ १४ ॥

सत्रु मित्र सुख दुख जगमाहीं ❀ मायाकृत परमारथ नाहीं ॥ १५ ॥
बालि परमहित जासु प्रसादा ❀ मिलेहु राम तुम समनविषादा ॥ १६ ॥

और शत्रु मित्र और सुखदुःख संसारमें मायाके किये हुये हैं इनमें कुछ परमार्थकी बात नहीं है ॥१५॥ हे राम ! बालि तौ मेरा बडा हितकारी निकला कि जिसकी कृपासे आपके दर्शन हुये और दुःखनाश होयगे (जो वालीसे वैर न होता तो काहेको दर्शन होते) ॥ १६ ॥

सपने जेहिसन होइ लराई ❀ जागे समुझत मन सकुचाई ॥ १७ ॥
अब प्रभु कृपा करहु यहिभांती ❀ सब तजि भजन करौं दिनराती ॥ १८ ॥

और उसकी शत्रुता तौ ऐसी निकली जैसे (किसीसे) स्वप्नमें लड़ाई हो जाय तौ जागनेपर उसके समझतेही मन सकुचता है अर्थात् यह ज्ञान भासता है कि स्वप्न सब असत्य है सो इसी प्रकार संसारभी स्वप्नवत् है इसमें तेरा मेरा अहमत्व आदि ये स्वप्नकीसी लड़ाई है और जब ज्ञानसे नेत्र खुलगये और मोह नष्ट हुआ तब संसार असत्य भासता है यह मुझे आपकी कृपासे दृष्टि पड़ा ॥१७ ॥ हे स्वामी ! अब ऐसी दया करो जो सबको छोड़कर दिनरात (आपका) भजन करूं (मुझे राज्यादि कुछ नहीं चाहिये) ॥ १८ ॥

सुनि बिरागसंयुत कपिबानी ❀ बोले बिहँसि राम धनुपानी ॥ १९ ॥
जो कछु कहेउ सत्य सब सोई ❀ सखा बचन मम मृषा न होई ॥ २० ॥

सुग्रीवकी वैराग्ययुक्त वाणी सुन हाथमें धनुषधारी रामचन्द्रजी हँसकर बोले ॥१९॥ हे प्यारे! जो कुछ कहा वह सब सत्य है (तथापि) मेरा वचन झूँठ नहीं होता ॥ २० ॥

नट मरकट इव सबहिं नचावत ❀ राम खगेस वेद अस गावत ॥ २१ ॥
लै सुग्रीव संग रघुनाथा ❀ चले चापसायक गहि हाथा ॥ २२ ॥

(कागभुशुंड कहते हैं) हे गरुड़! वेद ऐसा कहते हैं कि जैसे नट वानरको नचाता[1] है इसी प्रकार रामजी सबको नचाते हैं ॥ २१ ॥ रामचन्द्रजी धनुषबाणको हाथमें पकड और सुग्रीवको साथ लेकर (पंपापुरको) चले ॥ २२ ॥

तब रघुपति सुग्रीव पठावा ❀ गर्जेसि जाइ निकट बल पावा ॥ २३ ॥
सुनत बालि क्रोधातुर धावा ❀ गहि कर चरन नारि समुझावा ॥ २४ ॥

तब रामचन्द्रजीने सुग्रीवको भेजा तौ वह (रामका) बल पाकर पुरके पास जाकर गर्जा ॥२३॥ गर्जना सुनतेही बाली क्रोधमें भरकर दौडा तौ चरणोंमें गिरकर उसकी स्त्रीने समझाया कि ॥२४॥

सुनु पति जिनहिं मिला सुग्रीवा ❀ ते दोउ बंधु तेजबलसीवा ॥ २५ ॥
कोसलेशसुत लछमन रामा ❀ कालहु जीत सकहिं संग्रामा ॥ २६ ॥
सोइ रघुबीर हृदयमहँ आनहु ❀ छाँड़हु मोह कहा मम मानहु ॥ २७ ॥

हे पति! सुनो, जिनसे सुग्रीव मिला है वे दोनो[2] भाई तेज और बलकी सीमा हैं ॥२५॥ और अयोध्याके राजाके पुत्र रामचन्द्र लक्ष्मण हैं जो लड़ाईमें कालकोभी जीत सक्ते हैं ॥ २६ ॥ उन्हीं रामचन्द्रजीको हृदयमें धारण कर अज्ञान छोड़ दो मेरा कहना मानो ॥ २७ ॥

दो०-कहा बालि सुनु भीरुप्रिय, समदरसी रघुनाथ ॥
जो कदापि मोहिं मारिहै, तौ पुनि होव सनाथ ॥ १५ ॥

बालिने कहा हे प्यारी! तू बड़ी डरपोक है, सुन, रामचन्द्रजी तौ समान देखनेवाले हैं अर्थात् उनके जाने जैसा सुग्रीव तैसा मैं, सो जो कदाचित् मुझे मारेंगे भी तौ फिर मैं सनाथ हो जाऊंगा ॥१५॥

चौ०-अस कहि चला महाअभिमानी ❀ तृनसमान सुग्रीवहिं जानी ॥ १ ॥
बालि देखि सुग्रीवहिं ठाढ़ा ❀ हृदय क्रोध पुनि बहुबिध बाढ़ा ॥ २ ॥

[3]बड़ा अभिमानी बाली, स्त्रीको ऐसे समझाकर और सुग्रीवको तिनकेके समान जानकर चला ॥१॥ बालिने सुग्रीवको खड़ा हुआ देखा तौ फिर हृदयमें बहुत भांति क्रोध बढ़ा ॥ २ ॥

भिरेउ उभय बाली अति तर्जा ❀ मुष्टिक मारि महाध्वनि गर्जा ॥ ३ ॥
तब सुग्रीव बिकल होइ भागा ❀ मुष्टिप्रहार वज्रसम लागा ॥ ४ ॥

(जब) दोनों आपसमें लड़े तौ बाली बहुत क्रोधित हुआ और (सुग्रीवके) घूंसा मारकर बडे शब्दसे गर्जा ॥ ३ ॥ तब तौ सुग्रीव घबराकर भाग चला क्योंकि घूंसेका मारना वज्रके समान लगा ॥ ४ ॥

मैं जो कह रघुबीर कृपाला ❀ बंधु न होइ मोर यह काला ॥ ५ ॥
एकरूप तुम भ्राता दोऊ ❀ तेहि भ्रमते नहिं मारेउँ सोऊ ॥ ६ ॥

---

(१) गीता श्लोक-"ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति। भ्रामयन् सर्वभूतानि यंत्रारूढानि मायया॥" अर्थात् हे अर्जुन! ईश्वर परमात्मा मायाकरके शरीरमें रहकर सब प्राणियोंको भ्रमाता हुआ हृदयमें स्थित है-

(२) यहां यह शंका है कि बालीकी स्त्रीको कैसे खबर पड़ी कि सुग्रीवकी रामसे मित्रता होगई है-इससे अंगदने आकर सब हाल कहा था यह अध्यात्मरामायणमें लिखा है, यथा "आह मामंगदः पुत्रो मृगयायां श्रुतं वचः"

(३) बड़ा अभिमानी इसलिये कहा कि रामको ईश्वर जानकरभी और स्त्रीकी शिक्षाको सुनकरभी लड़नेको चला आया ॥

(और वोला) हे दयानिधान रामचन्द्रजी ! मैंने तुमसे पहिलेही कह दिया था कि यह मेरा भाई नहीं है यह तौ मेरा काल है ॥ ५ ॥ (रामचन्द्र वोले कि) तुम दोनों भाई ऐकही रूपके हो इस धोखेसे मैंने उसको नहीं मारा ॥ ६ ॥

कर परसा सुग्रीवसरीरा ❀ तनु भा कुलिस गई सब पीरा ॥ ७ ॥
मेली कंठ सुमनके माला ❀ पठवा पुनि बल देइ बिसाला ॥ ८ ॥
पुनि नानाविधि भई लराई ❀ बिटपओट देखहिं रघुराई ॥ ९ ॥

(यह कहकर) ज्योंही सुग्रीवके शरीरपर (भगवान्ने अपना) हाथ फेरा सो शरीर तौ वज्रसा होगया और सव पीर जाती रही ॥ ७ ॥ और उसके कंठमें फूलोंकी माला डाली और फिर उसे बड़ा भारी बल देकर भेजा ॥ ८ ॥ पुनि वहुत भांतिसे लड़ाई होने लगी और रामचन्द्रजी पेडकी ओटमेंसे देखते हैं ॥ ९ ॥

दो०–बहु छल बल सुग्रीव करि, हृदय हारि भय मानि ॥ ❀
मारा वालिहिं राम तब, हियेमाँझ सर तानि ॥ १६ ॥ ❀

(जव) सुग्रीव वहुतसे छलवल करके हृदयमें हार कर डरने लगा तव रामचन्द्रजीने वालीके हृदयमें तानके वाण मारा ॥ १६ ॥

चौ०–परा बिकल महि सरके लागे ❀ पुनि उठि बैठ देखि प्रभु आगे ॥ १ ॥
स्यामगात शिर जटा बनाए ❀ अरुननयन सरचाप चढ़ाए ॥ २ ॥

वाणके लगनेसे वाली बिकल होकर पृथ्वीपर गिर पडा, पर भगवान्को सामने देखकर उठ वैठा ॥ १ ॥ (भगवान्का रूप कैसा है कि) सांवला शरीर, माथेपर जटाजूट वांधे, लाल नेत्र किये और धनुषपर वाण चढ़ाये ॥ २ ॥

पुनि पुनि चितै चरन चित दीन्हे ❀ सफल जनम माना प्रभुचीन्हे ॥ ३ ॥
हृदय प्रीति मुख बचन कठोरा ❀ बोला चितै रामकी ओरा ॥ ४ ॥

---

(१) यहां यह शंका है कि जव रामको दोनोंका रूप देखकर यह संदेह हो गया कि कौनसा वाली और कौनसा सुग्रीव है, तौ रघुनाथजीकी सर्वज्ञतामें दोष आता है ॥ तहाँ कहते हैं कि रामने जो दोनोंको एकरूप कहा उसका यह आशय है कि, रामजी तौ समदर्शी हैं उनका कोई न शत्रु है न मित्र है, जो जिसभावसे उनको भजता है उसे वैसाही फल मिलता है ॥ इधर तौ शरणागत सुग्रीवसे मित्रताका होना और वालीके मारनेकी प्रतिज्ञा करना और उधर विन अपराध वालीको मारकर समदर्शीपनेमें दोष लाना ये दोनों पक्ष समान हुये इसलिये रामजीने सुग्रीवसे गुप्तरूपसे कहा कि तुम एकरूप हो, कुछ यह वात नहीं कि मार न सक्ते हों, अतएव सर्वज्ञता स्पष्ट है ॥ दूसरा भाव पहिलीवार, न मारनेका यहभी है कि भाईभाइयोंमें लड़ाई हुआही करती है और फिर आपसमें मेल हो जाता है, जो हम सहसा वालीको मारदें तो कदाचित् सुग्रीवको फिर पछतावा हो जैसा पहिले एकवार कह चुका है कि "वालि परम हित जासु प्रसादा। मिलेहु राम तुम समनविषादा" इसलिये सुग्रीवका अधिक आग्रह देखकर शोच विचारकर मारेंगे–यहां रामचन्द्रकी दयालुता गंभीरता और भक्तवत्सलता पूर्णरूपसे प्रकट है, (२)माला इसलिये डाली कि अवभी सुग्रीवसे लड़ाई छोड़दे और जान जावै कि इसपर रामकी कृपा है ॥ (३) वृक्षकी ओटमें इसलिये देखते हैं कि यह मुझे समदर्शी कह चुका है और मुझे सुग्रीवका पक्ष है, अवभी मान जाय तौ अच्छा है ॥

(४) शंका–रघुनाथजीने तौ सुग्रीवसे प्रतिज्ञा करी थी कि मैं एकही वाणसे वालीको मारूंगा फिर दूसरा वाण क्यों चढ़ाया ? इसलिये चढ़ाया कि यह वानरराज बड़ा वली है और इसका पुत्र अंगदभी वड़ा योद्धा है, कदाचित् वाली न मरै और अचानक आ चढ़ै इसलिये राजनीतिके अनुसार यही योग्य था कि जवतक शत्रु न मरजाय तवतक होशियार रहै ॥

वारवार चरणोंमें चित्त लगकार देखने लगा और भगवान्को पहिचानकर (अपना) जन्म सफल माना ॥ ३ ॥ हृदयमें तौ जिसके प्रीती थी परन्तु रामजीकी ओर देखकर मुखसे कठोर वचन बोलाकि ॥ ४ ॥

धरमहेतु अवतरेहु गुसाँई ❀ मारेउ मोहिं व्याधकी नाँई ॥ ५ ॥
मैं बैरी सुग्रीव पियारा ❀ कारन कवन नाथ मोहिं मारा ॥ ६ ॥

हे गोसाँई ? (आपने) धर्मके लिये तौ अवतार लिया है और मुझे बहेलियेकी भांति कैसे मारा ? ॥ ५ ॥ हे नाथ ! किस कारणसे मैं वैरी और सुग्रीव प्यारा हुआ ? कि जिसका पक्ष कर आपने मुझे मारा ॥ ६ ॥

अनुजवधू भगिनी सुतनारी ❀ सुनु सठ ये कन्या सम चारी ॥ ७ ॥
इन्हैं कुदृष्टि बिलोकै जोई ❀ ताहि वधे कछु पाप न होई ॥ ८ ॥

(भगवान् बोले) अरे मूर्ख ! सुन; छोटे भाईकी वहू, बेटेकी स्त्री और बेटी यह चारों बराबर हैं ॥ ७ ॥ जो इनको बुरी निगाहसे देखै उसके मारनेसे कुछ पाप नहीं होता ॥ ८ ॥

मूढ़ तोहिं अतिसय अभिमाना ❀ नारिसिखावन करेसि न काना ॥ ९ ॥
मम भुजबलआस्रित तेहि जानी ❀ मारा चहसि अधम अभिमानी ॥ १० ॥

अरे मूर्ख ! तुझको बड़ा अभिमान था जो स्त्रीकी शिक्षाभी (तूने) नहीं सुनी ॥ ९ ॥ हे नीच अभिमानी ! (सुग्रीवको) मेरी भुजाओंके बलके सहारे जानकरभी उसे मारना चाहता था, (वालीने कहा) ॥ १० ॥

दो०–सुनहु राम स्वामी सुभग, चल न चातुरी मोरि ॥ ❀
प्रभु अजहूँ मैं पातकी, अंतकाल गति तोरि ॥ १७ ॥ ❀

हे रामचन्द्र स्वामी ! सुनो, आप तौ चतुर हैं (आपके सन्मुख) मेरी चतुराई तौ चल नहीं सक्ती परंतु हे प्रभो ! क्या अबभी मैं पापी ही रहा जो अन्तसमयमें तुम्हारी शरण हुआ ? ॥ १७ ॥

चौ०–सुनत राम अतिकोमल बानी ❀ बालिसीस परसेउ निजपानी ॥ १ ॥
अचल करौं तनु राखहु प्राना ❀ बालि कहा सुनु कृपानिधाना ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीने ऐसी अतिकोमल वाणी सुनतेही बालिके शिरपर अपना हाथ फेरा (और बोले कि) ॥१॥ मैं तेरे शरीरको अचल करता हूं, तू प्राणोंको रख, वालीने कहा–हे दयानिधान ! सुनो ॥२॥

जनम जनम मुनि जतन कराहीं ❀ अंत राम कहि आवत नाहीं ॥ ३ ॥
जासु नामबल शंकर काशी ❀ देत सबहिं समगति अविनाशी ॥ ४ ॥
मम लोचनगोचर सोइ आवा ❀ बहुरि कि प्रभु अस बनहि बनावा ॥५॥

मुनीश्वर जन्मानजन्मतक यत्न करते हैं तौभी अंतसमयमें राम नहीं कहा जाता ॥ ३ ॥ और जिसके नामके बलसे काशीमें[2] अविनाशी महादेव सबको मोक्ष देते है ॥ ४ ॥ वही राम मेरे

---

(१)अध्यात्मरामायणे–श्लोकौ "दुहिता भगिनी भ्रातुर्भार्या चैव तथा स्नुषा । समा यो रमते तासामेका-मपि विमूढधीः ॥ १ ॥ पातकी स तु विज्ञेयः स वध्यो राजभिः सदा । त्वं तु भ्रातुः कनिष्ठस्य भार्यां यो रमसे बलात् ॥ २ ॥" अर्थ चौपाईयोंसे मिलता है.

(२) अध्यात्मरामायणमें वालिका वाक्य–

"यन्नाम विवशो गृह्णन् म्रियमाणः परं पदम् । याति साक्षात्स एवाद्य मुमूर्षोर्मे पुरः स्थितः ॥ १ ॥ अर्थात् जो विवश होकरभी (अर्थात् रोगग्रस्त होकरभी) मरणसमय आपके नामको लेता हुआ शरीरको त्यागता है सो परमपदको पाता है सो साक्षात् आप इस समयमें मुझ मरनेकी इच्छा करनेवालेके सामने खड़े हो फिर मेरे परमपद पानेमें क्या संदेह है ?

नेत्रोंके आगे आये सो फिर क्या ऐसा बनाव बनैगा ? (अर्थात् कदापि नहीं बनैगा) ॥ ५॥

छं०-सो नयनगोचर जासु गुन नित नेति कहि स्रुति गावहीं ।
जिति पवन मन गो निरस करि मुनि ध्यान कबँहुक पावहीं ॥
मोहिं जानि अति अभिमानबस प्रभु कहेउ राखु सरीरही ।
अस कवन सठ हठि काटिसुरतरु वारि करहिं बबूरही ॥ १ ॥

वही (राम) नेत्रोंके आगे हैं जिनके गुणोंको वेद नित्यही नेति २ कहकर गाते हैं और जिन्हें मुनीश्वर (पश्च) पवन और मन इनको जीतकर और इन्द्रियोंको वशमें कर ध्यान करनेसे कभी २ पाते हैं । हे स्वामी ! मुझको वहुत अभिमानके वश जानकर आपने कहा कि शरीरको रख, सो भला ऐसा कौन मूर्ख है जो हठसे कल्पवृक्षको काटकर बबूलकी बाढ़ बांधेगा ? ॥ १ ॥

अब नाथ करि करुना बिलोकहु देहु यह वर मांगऊँ ।
जेहि जोनि जन्मौं करमबस तहँ रामपद अनुरागऊँ ॥
यह तनय मम सम विनय बल कल्यानपद प्रभु दीजिए ।
गहि बाँह सुरनरनाह अंगद दास आपन कीजिए ॥ २ ॥

हे नाथ ! अब तौ दया करके मेरी ओर देखिये और जो बरदान माँगताहूं वह दीजिये कि कर्मके अनुसार जिस२योनिमें जन्म लूं वहांही हे रामचन्द्रजी! तुम्हारे चरणोंसे प्रीति किया करूं और हे प्रभो! यह मेरा पुत्र अंगद मेरे समानही है इसे नम्रता बल और ऐसा पद दीजिये कि इसका कल्याण हो और हे सुरनरमुनिके नाथ ! आप इसकी बाँह पकडकर अपना सेवक कर लीजिये ॥ २ ॥

दो०-रामचरन दृढ़ प्रीति करि, बालि कीन्ह तनु त्याग ॥
सुमनमाल जिमि कंठतें, गिरत न जानै नाग ॥ १८ ॥

रामचन्द्रजीके चरणोंमें अचल प्रीति करके बालिने शरीर ऐसे छोड़ दिया जैसे हाथी गलेमेंसे फूलोंकी मालाको गिरते हुये नहीं जानता ॥ १८ ॥

चौ०-राम बालि निजधाम पठावा ❀ नगरलोक सब व्याकुल धावा ॥ १ ॥
नानाविध बिलाप कर तारा ❀ छूटे केस न देह सँभारा ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीने वालिको अपने स्थान (वैकुंठ) में भेजा (यह सुन) नगरके सब लोग व्याकुल होकर दौड़े ॥ १ ॥ (बालीकी स्त्री) तारा अनेक भांति विलाप करने लगी (जिसके बाल खुलगये और उसे देहकीभी सुध न रही ॥ २ ॥

पुनि पुनि तासु सीस उर धरई ❀ बदन बिलोकि हृदयमहँ हतई ॥ ३ ॥
मैं पति तुमहिं बहुत समझावा ❀ कालबिबस कछु मनहिं न आवा ॥ ४ ॥

बारंबार उसके मस्तकको छातीपर रख मुख देखती है और छाती पीटती है ॥ ३ ॥ हे पति ! मैंने तौ तुमको वहुतसा समझाया परन्तु कालके वश तुम्हारे मनमें कुछभी न आया ॥ ४ ॥

अंगदकहँ कछु कहन न पायहु ❀ बीचहिं सुरपुर प्रान पठायहु ॥ ५ ॥
तारा बिकल देखि रघुराया ❀ दीन्ह ज्ञान हर लीन्ही माया ॥ ६ ॥

अंगदसेभी तौ कुछ न कहने पाये और बीचके बीचमेंही प्राण इन्द्रलोकको पठाये ॥५॥ रामचन्द्रजीने ताराको व्याकुल देखकर ज्ञान दिया और अपनी मोहिनी मायाको हर लिया (और बोले कि) ६

श्रीरामचन्द्रकरके वालीका माराजाना, ताराविलाप और सुग्रीवको राजतिलक ।

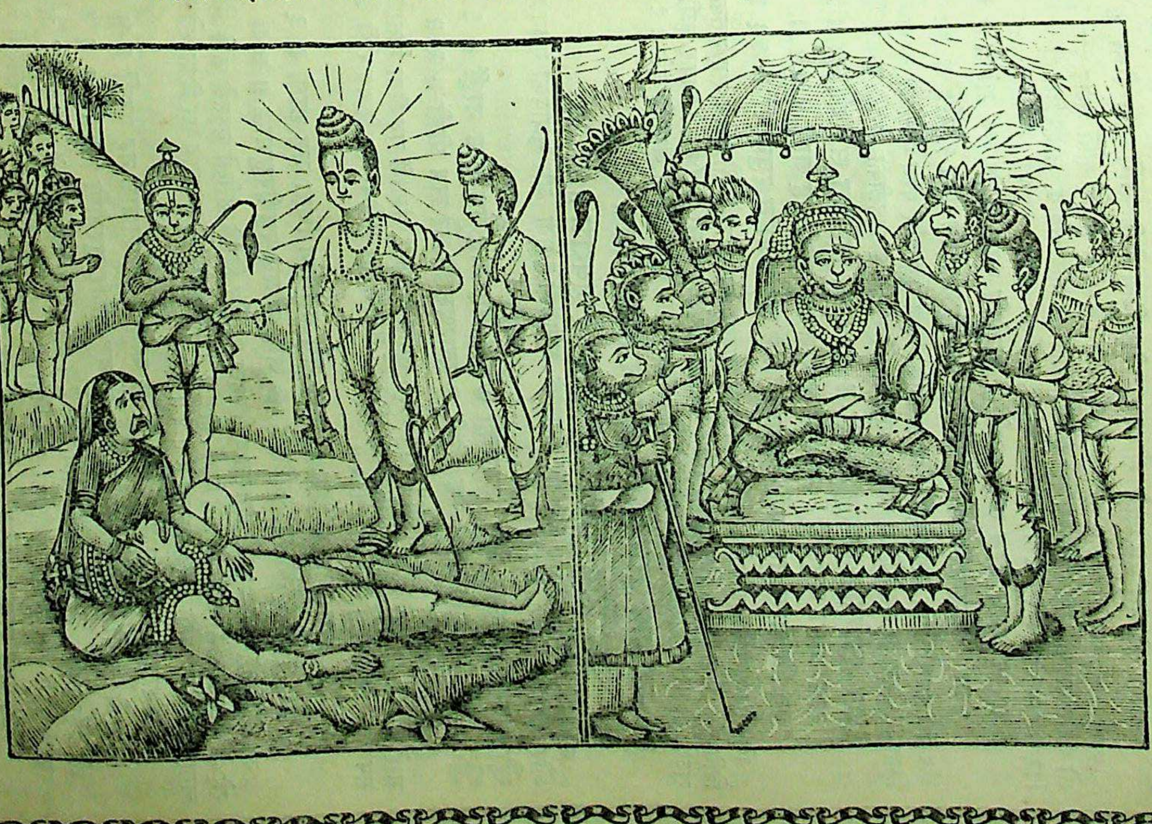

छिति जल पावक गगन समीरा ❀ पंचरचित यह अधम सरीरा ॥ ७ ॥
प्रगट सो तनु तव आगे सोवा ❀ जीव नित्य केहि लगि तुम रोवा ॥ ८ ॥

पृथ्वी, जल, तेज, वायु, और आकाश इन्हीं पांचों (तत्त्वों) से यह पापी शरीर बना है ॥७॥ सो शरीर प्रत्यक्षही तेरे सामने सो रहा है और जीव सो नित्य अर्थात् नाशरहित ही है फिर तू किसके लिये रोती है ? ॥ ८ ॥

उपजा ज्ञान चरन तब लागी ❀ लीन्हेसि परम भक्ति वर मांगी ॥ ९ ॥
उमा दारुयोषितकी नाँईं ❀ सबहिं नचावत राम गुसाँईं ॥ १० ॥

जब (ताराको ज्ञान उत्पन्न हुआ तौ (भगवान्के) चरण छुये और परम भक्तिका वरदान मांग लिया ॥९॥(महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! राम गोसाँईं सबको कठपुतलीकी भांति नचाते हैं १०

तब सुग्रीवहि आयसु दीन्हा ❀ मृतककर्म विधिवत सब कीन्हा ॥ ११ ॥
राम कहा अनुजहिं समुझाई ❀ राज देहु सुग्रीवहिं जाई ॥ १२ ॥
रघुपति चरन नाइ करि माथा ❀ चले सकल प्रेरित रघुनाथा ॥ १३ ॥

फिर (भगवान्ने)सुग्रीवको आज्ञादी (कि अपने भाईकाक्रियाकर्म करो) तौ उसने सब मृतक कर्म विधिपूर्वक किया ॥११॥ फिर रामचन्द्रजीने लक्ष्मणसे समझाकर(१) कहा कि (तुम) जाकर सुग्रीवको राज्य दो ॥१२॥ रामचन्द्रजीके चरणोंको शिर नवाकर सब रघुनाथजीकी आज्ञासे चले ॥ १३ ॥

दो०–लछमन तुरत बुलाए, पुरजन बिप्रसमाज ॥
राज दीन्ह सुग्रीवकहँ, अंगदकहँ जुवराज ॥ १९ ॥

लक्ष्मणने शीघ्रही नगरनिवासी और ब्राह्मणोंके समाजको बुलाया और सुग्रीवको राज्य दिया और अंगदको युवराज किया ॥ १९ ॥

चौ०–उमा रामसम हित जगमाहीं ❀ गुरु पितु मातु बंधु कोउ नाहीं ॥ १ ॥
सुर नर मुनि सबकै यह रीती ❀ स्वारथलागि करैं सब प्रीती ॥ २ ॥

(महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! रामचन्द्रके समान हितकारी संसारमें गुरु पिता माता और भाई कोईभी तौ नहीं है ॥१॥ (रामको छोड़) देवता मनुष्य और मुनीश्वर सबकी यह रीति है कि सब मतलबके लिये प्रीति करते हैं ॥ २ ॥

बालि त्रास व्याकुल दिन राती ❀ तनु बहु व्रण चिंता जरु छाती ॥ ३ ॥
सो सुग्रीव कीन्ह कपिराऊ ❀ अति कोमल रघुबीरसुभाऊ ॥ ४ ॥

जो (सुग्रीव) बालिके भयसे दिनरात दुखी रहता था और जिसके शरीरमें बहुतसे फोड़े निकल रहे थे और जिसकी छाती चिंतासे जलती थी ॥ ३ ॥ उसी सुग्रीवको वानरराज कर दिया, सो रामचन्द्रजीका ऐसा अति कोमल स्वभाव है ॥ ४ ॥

जानतहू अस प्रभु परिहरहीं ❀ काहे न बिपतिजाल नर परहीं ॥ ५ ॥
पुनि सुग्रीवहिं लीन्ह बुलाई ❀ बहु प्रकार नृपनीति सिखाई ॥ ६ ॥

जो ऐसा जानकरभी भगवान्को त्याग करते हैं वे मनुष्य विपत्तिजालमें क्यों नहीं पड़ेंगे ? अर्थात् अवश्यही पड़ेंगे ॥ ५ ॥ फिर सुग्रीवको बुला लिया और बहुत प्रकारसे राजनीति सीखाई ॥ ६ ॥

कह प्रभु सुन सुग्रीव हरीसा ❀ पुर न जाउँ दसचारि बरीसा ॥ ७ ॥
गत ग्रीषम बर्षाऋतु आई ❀ रहिहौ निकट सैलपर छाई ॥ ८ ॥

---

(१) समझानेका यह भाव है कि अब तौ जाकर सुग्रीवको राज्य दो, क्यों कि प्रतिज्ञा कर चुकेहैं. पर बालि जो हमें अंगदकी बाँह पकड़ा गया हैं, इसलिये इसे युवराज अर्थात् सुग्रीवका नायब कर देना ॥

और भगवान्‌ने कहा हे वानरराज सुग्रीव ! सुनो मैं तौ चौदह वर्षतक नगरमें नहीं जाऊंगा ॥ ७ ॥ और अब गर्मी तौ बीत गई और वर्षाऋतु आगई है (इसमें तौ सीताके लिये कुछ यत्न नहीं होसक्ता सो) तेरेपासही पर्वतपर पर्णकुटी छाकर रहूंगा ॥ ८ ॥

अंगदसहित करहु तुम राजू ❀ संतत हृदय राखि मम काजू ॥ ९ ॥
तब सुग्रीव भवन फिरि आए ❀ राम प्रबर्षणगिरिपर छाए ॥ १० ॥

तुम अंगदसमेत राज्य करो और मेरे कामकी सदा मनमें याद रखना ॥ ९ ॥ तब सुग्रीव तौ घरको लौट आये और रामचन्द्रजी प्रवर्षण नाम पर्वतपर निवास करने लगे ॥ १० ॥

दो०-प्रथमहिं देवन गिरि गुहा, राखी रुचिर बनाइ ॥ ❀
राम कृपानिधि कछुक दिन, वास करहिंगे आइ ॥ २० ॥ ❀

देवताओंने पहलेही पर्वतकी खोह सुन्दर बना रक्खी थी, किसलिये कि कृपानिधान रामचन्द्रजी यहाँ आकर कुछ दिन निवास करेंगे ॥ २० ॥

चौ०-सुंदर बन कुसुमिततरुसोभा ❀ गुंजत चंचरीक मधुलोभा ॥ १ ॥
कंद मूल फल पत्र सुहाए ❀ भए बहुत जबते प्रभु आए ॥ २ ॥

सुन्दर बनके प्रफुल्लित होनेसे वृक्षोंकी शोभा होरही है और पुष्पोंके रसके लोभी भौंरे गूँज रहेहैं ॥१॥और जबसे भगवान् पधारे हैं तबसे सुन्दर कन्द मूल फल और पत्र बहुतसे होने लगे हैं ॥२॥

देखि मनोहर सैल अनूपा ❀ रहे तहँ अनुजसहित सुरभूपा ॥ ३ ॥
मंगलरूप भए बन तबते ❀ कीन्ह निवास रमापति जबते ॥ ४ ॥

ऐसे मनोहर सुन्दर पर्वतको देख देवताओंके स्वामी (रघुराई) लक्ष्मणसमेत वहां रहे ॥ ३ ॥ और जबसे लक्ष्मीपति (भगवान्) ने निवास किया तभीसे बन आनन्दरूप होगया ॥ ४ ॥

मधुकर खग मृग तनु धरि देवा ❀ करहिं सिद्ध मुनि प्रभुकी सेवा ॥ ५ ॥
फटिकसिला अतिसुभ्र सुहाई ❀ सुखआसीन तहाँ दोउ भाई ॥ ६ ॥

और देवता सिद्ध मुनीश्वरभी भ्रमर पक्षी और हरिणोंका शरीर धारण करके भगवान्‌की सेवा करने लगे ॥ ५ ॥ अत्यंत श्वेत शोभायमान जो स्फटिकशिला थी उसपर दोनों भाई सुखपूर्वक विराजमान हुये ॥ ६ ॥

कहत अनुजसन कथा अनेका ❀ भक्ति बिरति नृपनीति बिबेका ॥ ७ ॥
वर्षाकाल मेघ नभ छाए ❀ गरजत लागत परम सुहाए ॥ ८ ॥

और (भगवान्) लक्ष्मणसे भक्ति, वैराग्य, राजनीति, और ज्ञानकी अनेक कथायें कहने लगेकि ॥ ७ ॥ वर्षाके समय आकाशमें जो बादल छा रहे हैं सो गर्जतेमें बहुत सुहावने लगते हैं ॥ ८ ॥

दो०-लछमन देखहु मोरगन, नाचत बारिद पेखि ॥ ❀
गृही बिरतिरत हर्ष जस, विष्णुभक्तकहँ देखि ॥ २१ ॥ ❀

हे लक्ष्मण ! देखो मोरोंके समूह बादलोंको देखकर कैसे नाचते हैं जैसे गृहस्थी मनुष्य बैरागी वैष्णवको देखकर प्रसन्न होते हैं ॥ २१ ॥

चौ०-घन घमंड नभ गरजत घोरा ❀ प्रियाहीन डरपत मन मोरा ॥ १ ॥
दामिनि दमकि रहै घनमाहीं ❀ खलकी प्रीति जथा थिर नाहीं ॥ २ ॥

आकाशमें बादल जो घुमड़ २ घोर शब्द करके गर्जते हैं सो प्यारीके बिना मेरा मन डरता है

---

(१)यहां रघुनाथजीने जानकीजीमें अखंड प्रेम दिखानेको ऐसा वचन कहा है,कुछ कामातुर होकर नहीं कहाहै.

॥१॥ और बिजली बादलोंमें चमककर कैसे रहजाती है जैसे दुष्टकी प्रीति स्थिर नहीं होती ॥२॥

वर्षहिं जलद भूमि नियराये ❀ जथा नवहिं बुध विद्या पाये ॥ ३ ॥
बुंदअघात सहैं गिरि कैसे ❀ खलके बचन संत सह जैसे ॥ ४ ॥

बादल पृथ्वीके पास झुक २ कर कैसे बरसते हैं जैसे बुद्धिमान् (मनुष्य) विद्या पाकर नवते हैं ॥३॥ और बूंदोंकी चोटको पर्वत कैसे सहते हैं जैसे खोटे मनुष्यके वचनोंको संत सहते हैं ॥४॥

छुद्र नदी भरि चलि उतराई ❀ जस थोरे धन खल बौराई ॥ ५ ॥
भूमि परत भा डाबर पानी ❀ जिमि जीवहिं माया लपटानी ॥ ६ ॥

छोटी २ नदियां (थोड़े जलकेही भरनेसे) कैसी उमँग चली हैं जैसे थोड़े धनसे नीच जन बौरा जाते हैं ॥ ५ ॥ और पृथ्वीपर पडतेही (निर्मल) जल कैसा मैला होजाता है जैसे (सच्चिदानन्द) जीव मायाके लिपट जानेसे मलीन होजाता है ॥ ६ ॥

सिमिटि सिमिटि जल भरै तलावा ❀ जिमि सद्गुन सज्जनपहँ आवा ॥ ७ ॥
सरिताजल जलनिधिमहँ जाई ❀ होइ अचल जिमि जन हरि पाई ॥ ८ ॥

जल सिमिट २ कर तालाव कैसे भर जाते हैं जैसे अच्छे गुण सज्जनोंके पासही आते हैं ॥७॥ फिर नदियोंका जल (बहता २) समुद्रमें जाकर ऐसे स्थिर होजाता है जैसे जीव (अन्य छोटे२ देवताओंमें भटकते २) भगवान्‌को पाकर स्थिर होजाता है ॥ ८ ॥

दो०-हरित भूमि तृनसंकुल, समुझि परै नहिं पंथ ॥ ❀
जिमि पाषंडविवादतें, गुप्त भये सद्ग्रंथ ॥ २२ ॥ ❀

पृथ्वी हरीही हरी दीखती है और घासके छा जानेसे रास्ता ऐसे नहीं जान पडता जैसे पांखंडके विवादसे अच्छे धर्मग्रंथ लुप्त होजाते हैं ॥ २२ ॥

चौ०-दादुरधुनि चहुँओर सुहाई ❀ वेद पढ़ै जनु बटुसमुदाई ॥ १ ॥
नव पल्लव भय बिटप अनेका ❀ साधकमन जस होइ बिवेका ॥ २ ॥

चारों ओर मेंड़कोंका शब्द कैसा सुन्दर होरहा है मानों विद्यार्थियोंके समूह वेद पढ़ रहे हैं॥१॥ अनेक वृक्षोंमें नवीन २ कोंपलें कैसे निकल रही हैं जैसे साधन करनेवालेके मनमें ज्ञान उत्पन्न हो २

अर्क जवास पात बिनु भयऊ ❀ जस सुराज्य खलउद्यम गयऊ ॥ ३ ॥
खोजत कतहुँ मिलै नहिं धूरी ❀ करै क्रोध जिमि धर्महिं दूरी ॥ ४ ॥

अकौआ और जवासेके पत्ते कैसे झड़गये हैं जैसे अच्छे राज्यमें खलोंका धंधा जाता रहता है ॥ ३ ॥ धूल तौ ढूंढनेसेभी कहीं ऐसे नहीं मिलती जैसे क्रोध धर्मको दूर कर देता है ॥ ४ ॥

ससिसंपन्न सोह महि कैसी ❀ उपकारीकी संपति जैसी ॥ ५ ॥
निसि तमघन खद्योत बिराजा ❀ जनु दंभिनकर मिला समाजा ॥ ६ ॥

दोहा

(१) विनसत बार न लागही, ओछे जनकी प्रीति । अंबर डंबर सांझके, ज्यौं बालूकी भीति ॥

(२) दोहावलीमें गोसांईजीका वचन है–

दोहा–

वदन तूण जिह्वा धनुप, बचन पवनगम तीर । साधुनके लागै नहीं; क्षमा समाह शरीर ॥

अर्थात् मुख तौ तरकस है और जीभ धनुप और वचन पवनके समान जानेवाला तीर है सो वह साधुओंको नहीं लगता है, क्योंकि वे क्षमारूपी बख्तर पहिर रहे हैं ॥

खेतीसे भरी हुई पृथ्वी कैसी शोभायमान् लग रही है जैसी उपकार करनेवाले मनुष्यकी संपत्ति ॥५॥ रातको बादलोंके अँधेरेमें पटबीजने कैसे शोभायमान् लगते हैं ? मानों पाखंडियोंका समाज इकट्ठा हुआ है ॥ ६ ॥

महावृष्टि चलि फूटि कियारी ❀ जिमि स्वतंत्र हुइ बिगरहिं नारी ॥ ७ ॥
कृषी निरावहिं चतुर किसाना ❀ जिमि बुध तजहिं मोह मद माना ॥८॥

बड़ी वर्षा होनेसे क्यारी ऐसी फूट निकली हैं जैसे स्वतंत्र होनेसे स्त्री बिगड़ जाती हैं ॥ ७ ॥ चतुर किसान खेतीको कैसे नरा रहे हैं अर्थात् खेतीमें बाधा करनेवाले तृणादिको कैसे दूर कर रहे हैं जैसे बुद्धिमान् (मनुष्य) अज्ञान, मद और अभिमानको दूर कर देते हैं ॥ ८ ॥

देखिय चक्रबाक खग नाहीं ❀ कलिहिं पाइ जिमि धर्म पराहीं ॥ ९ ॥
ऊषर बरषै तृन नहिं जामा ❀ संतहृदय जस उपज न कामा ॥ १० ॥

चकवा चकवी पक्षी इस प्रकार नहीं दिखाई देते जैसे कलियुगको पाकर धर्म नष्ट होजाते हैं ॥ ९ ॥ ऊसर(१) पृथ्वीमें वर्षा होनेपरभी घास कैसे नहीं जमती है जैसे संतजनोंके हृदयमें काम नहीं उत्पन्न होता ॥ १० ॥

विविधजंतुसंकुल महि भ्राजा ❀ बढै प्रजा जिमि पाइ सुराजा ॥ ११ ॥
जहँतहँ पथिक रहे थकि नाना ❀ जिमि इंद्रियगन उपजे ज्ञाना ॥ १२ ॥

अनेकभांतिके कृमि कीट पतंग आदि जन्तुओंसे भरी हुई पृथ्वी कैसी शोभायमान् लगती है जैसे अच्छे राजाको पाकर प्रजा बढ़तीहै ॥ ११ ॥ जहां तहां अनेक बटोही (वर्षाके कारण) थके हुये कैसे ठहर गये हैं जैसे ज्ञान उत्पन्न होनेसे इन्द्रियोंका समूह स्थिर होजाता है ॥ १२ ॥

दो०—कबहुँ प्रबल चल मारुत, जहँ तहँ मेघ बिलाहिं ॥ ❀
जिमि कुपुत्र कुल ऊपजे, संपति धरम नसाहिं ॥ २३ ॥ ❀

कभी प्रचंड पवनके चलनेसे बादल जहां तहां ऐसे बिला जाते हैं जैसे कुटुम्बमें कुपूतके उत्पन्न होनेसे द्रव्य और धर्म नष्ट होजाते हैं ॥ २३ ॥

कबहुँ दिवसमहँ निबिड़ तम, कबहुँक प्रगट पतंग ॥ ❀
उपजै बिनसै ज्ञान जिमि, पाइ सुसंग कुसंग ॥ २४ ॥ ❀

दिनमें कभी तौ घना अँधेरा होजाता है कभी सूर्य निकल आता है सो ऐसे है जैसे अच्छे सुसंग और बुरे संगको पानेसे ज्ञान उत्पन्न होता और नाश होता है ॥ २४ ॥

चौ०—वर्षा बिगत सरद ऋतु आई ❀ देखहु लछमन परम सुहाई ॥ १ ॥
फूले कास सकल महि छाई ❀ जनु वर्षा कृत प्रगट बुढ़ाई ॥ २ ॥

हे लक्ष्मण ! देखो वर्षा तौ बीत गई और परम सुन्दर शरद्ऋतुने आगई है ॥ १ ॥ फूले हुये काँससे सब पृथ्वी कैसी छा रही है मानों वर्षाऋतुने बुढ़ापा प्रकट किया है ॥ २ ॥

उदित अगस्त्य पंथजल सोसा ❀ जिमि लोभहिं सोषै संतोसा ॥ ३ ॥
सरिता सर जल निर्मल सोहा ❀ संतहृदय जस गत मद मोहा ॥ ४ ॥

---

(१) ऊसर उसे कहते हैं जिसमें बोनेसे कुछ उत्पन्न न हो ॥

अगस्त्यने[1] उदय होकर मार्गका जल कैसा सोख लिया जैसे संतोष लोभको सोखता है ॥ ३ ॥ नदी और तालावोंमें निर्मल जल कैसा शोभायमान है जैसे अभिमान और अज्ञानके जानेसे संतोंका हृदय निर्मल हो जाता है ॥ ४ ॥

रस रस सोस सरित सर पानी ॐ ममतात्याग करहिं जिमि ज्ञानी ॥ ५ ॥
जानि सरदऋतु खंजन आए ॐ पाइ समय जिमि सुकृति सुहाए ॥ ६ ॥

रस २ अर्थात् धीरे २ नदी तालावोंका पानी कैसा सूखता जाता है जैसे ज्ञानी मनुष्य धीरे २ ममताको छोड देते हैं ॥ ५ ॥ शरदऋतुको जानकर खंजन पक्षी कैसे आये हैं जैसे समय पाकर सुकृत कहिये अच्छे कर्म आड़े आते हैं ॥ ६ ॥

पंक न रेनु सोह अस धरनी ॐ नीतिनिपुन नृपकी जस करनी ॥ ७ ॥
जलसंकोच बिकल भे मीना ॐ अबुध कुटुंबी जिमि धनहीना ॥ ८ ॥

अव न तौ कहीं धूल है और न कीच है सो पृथ्वी कैसी शोभायमान् लगती है जैसे नीतिमें चतुर राजाकी करनी होती है ॥ ७ ॥ जलके थोड़े होनेसे मछलियां कैसी दुखी होगई हैं जैसे अज्ञानी और वहुकुटुम्बवाले मनुष्य धनहीन होनेसे दुखी होजाते हैं ॥ ८ ॥

बिनु घन निर्मल सोह अकासा ॐ जिमि हरिजन परिहर सब आसा ॥ ९ ॥
कहुँ कहुँ वृष्टि सारदी थोरी ॐ कोउ इक पाव भक्ति जिमि मोरी ॥१०॥

विना मेघके आकाश कैसा निर्मल शोभायमान लगता है जैसे सव आशाओंको त्यागकर भगवान्का भक्त प्रसन्न होता है ॥ ९ ॥ शरदऋतुमें कहीं २ थोड़ी वर्षा ऐसे होती है जैसे मेरी भक्तिको कोई एक बिरला पाता है ॥ १० ॥

दो०–चले हर्ष तजि नगर नृप, तापस बनिक भिखारि ॥ ॐ
जिमि हरिभक्ती पाइ जन, तजहिं आस्रमी चारि ॥ २५ ॥ ॐ

राजा[2] तपस्वी बनीयां और भिखारी प्रसन्नतासे नगर छोडकर (अपने २ कामको) ऐसे जाते जैसे चारों[3] आश्रमवाले मनुष्य भगवान्की भक्तिको पाकर आश्रम छोड़ देते हैं ॥२५॥

चौ०–सुखी मीन जहँ नीर अगाधा ॐ जिमि हरिशरन न एकौ बाधा ॥ १ ॥
फूले कमल सोह सर कैसे ॐ निर्गुन ब्रह्म सगुन भए जैसे ॥ २ ॥

जहां गहरा जल है (वहां) मछली कैसी सुखी हैं जैसे भगवान्की शरणमें एकभी क्लेश नहीं ॥ १ ॥ कमलोंके खिलनेसे सरोवर कैसे शोभायमान् लगते हैं जैसे निर्गुण ब्रह्म सगुण ब्रह्म हो जाय ॥२॥

गुंजत मधुकरनिकर अनूपा ॐ सुंदर खगरव नानारूपा ॥ ३ ॥
चक्रबाकमन दुख निसि पेखी ॐ जिमि दुर्जन परसंपति देखी ॥ ४ ॥

सुन्दर भौंरोंके झुंड गूंजते हैं और अनेक रूपोंके (जलमुर्गाबियाँ आदि) पक्षी सुन्दर शब्द करते हैं ॥ ३ ॥ रातको देखकर चकवा चकवियोंके मनमें कैसे दुःख होता है जैसे दुर्जनका मन पराई संपत्तिको देखकर दुखी होता है ॥ ४ ॥

---

(१) अगस्त्यका एक तारा है; वह शरदऋतुमें उदय होता है; उसके उदय होनेसे मार्गका जल सूख जात है और सरोवरोंका जल निर्मल हो जाता है, कमलकाँस आदि खिलते हैं। अगस्त्यके तारेसे संवत्के शुभाशुभकाभी विचार होता है सो बाराहीसंहितामें लिखा है ॥ (२) जब वर्षा बीत जाती है तब राजा लोग अपने देशका दौरा करने, वनिये अथवा वंजारे व्यापार करने, तपस्वी तपके और भिखारी फेरी देने निकलते हैं ॥ (३) चारों आश्रम गूढार्थदीपिकामें देखो.

चातक रटत तृषा अति ओही ❀ जिमि सुख लहै न शंकरद्रोही ॥ ५ ॥
सरदातप निसि ससि अपहरई ❀ संतदरस जिमि पातक टरई ॥ ६ ॥

पपीहा वहुत प्यास होनेके कारण ऐसे पुकारता है जैसे महादेवका वैरी सुख नहीं पाता ॥ ५ ॥ शरदऋतुकी धूपको चन्द्रमा रातमें ऐसे हर लेता है जैसे संतोंके दर्शनसे पाप दूर हो जाते हैं ॥६॥

देखहिं बिधु चकोरसमुदाई ❀ चितवहिं हरिजन हरि जिमि पाई ॥७॥
मसक दंस बीते हिमत्रासा ❀ जिमि द्विजद्रोह किये कुलनासा ॥ ८ ॥

चकोरोंका झुंड चन्द्रमाको कैसे देखता है जैसे भगवान्के भक्त भगवान्को पाकर देखते हैं ॥ ७ ॥ सर्दीके दुःखसे मच्छर और डांस कैसे नाश होगये जैसे ब्राह्मणके द्रोहसे कुटुम्बका नाश होजाता है ॥८॥

दो०–भूमि जीव संकुल रहे, गये सरदऋतु पाइ ॥ ❀
सतगुरु मिले जाहि जिमि, संसय भ्रम समुदाइ ॥ २६ ॥ ❀

पृथ्वीपर जो अनेक भांतिके जंतु भर रहे थे वे शरदऋतुको पाकर ऐसे चले गये जैसे संतगुरुके मिलनेसे संशय और भ्रमके समूह दूर होजाते हैं ॥ २६ ॥

चौ०–वर्षागत निर्मल ऋतु आई ❀ सुधि न तात सीताकी पाई ॥ १ ॥
एक बार कैसेउँ सुधि पावौं ❀ कालहु जीति निमिषमहँ ल्यावौं ॥ २ ॥

('इस प्रकार वर्षा और शरदऋतुके वहानेसे ज्ञान वैराग्य और राजनीतिका उपदेश करके रामजी वोले कि') हे प्यारे! वर्षा वीत गई और निर्मल शरदऋतुभी आगई परन्तु सीताकी खवर कुछ नहीं पाई ॥ १ ॥ किसी प्रकार एकवार खवर पाऊँ तौ कालकोभी जीतकर पलभरमें ले जाऊँ ॥२॥

कतहुँ रही जो जीवत होई ❀ तात जतन करि आनौं सोई ॥ ३ ॥
सुग्रीवहुँ सुधि मोरि बिसारी ❀ पावा राज कोश पुर नारी ॥ ४ ॥

हे प्यारे! कहीं होय पर जीती होय तौ उपाय करके उसे लेही आऊंगा ॥ ३ ॥ सुग्रीवभी राज्य खजाना, नगर, और रानीके मिलनेसे मेरी सुध भूल गया ॥ ४ ॥

जेहि सायक मैं मारा बाली ❀ तेहि सर हतौं मूढकहँ काली ॥ ५ ॥
जासु कृपा छूटै मद मोहा ❀ ताकहँ उमा कि सपनेहु कोहा ॥ ६ ॥

सो जिस वाणसे मैंने वालिको माराथा उसी वाणसे मूर्खको कल मारूंगा ॥ ५ ॥ (महादेव कहते हैं हे पार्वती!) जिसकी दयासे मद और अज्ञान छूट जाताहै उसको क्या स्वप्नेमेंभी क्रोध होसक्ता है? अर्थात कभी नहीं होसक्ता. यह तौ केवल नरलीला है जैसा रामजीने कहा है कि "मैं कछु करव ललित नरलीला" ॥ ६ ॥

जानहिं यह चरित्र मुनि ज्ञानी ❀ जिन्ह रघुबीरचरनरति मानी ॥ ७ ॥
लछमन क्रोधवंत प्रभु जाना ❀ धनुष चढाइ गहे कर बाना ॥ ८ ॥

पर इस चरित्रको ज्ञानी मुनीश्वरही जानते हैं जिन्होंने रामचन्द्रजीके चरणोंसे स्नेह किया है ॥ ७ ॥ लक्ष्मणने भगवान्को क्रोधवंत जाना और धनुष चढ़ाकर हाथमें वाण लिया ॥ ८ ॥

दो०–तब अनुजहिं समुझावा, रघुपति करुनासीव ॥ ❀
भय देखाइ लै आवहु, तात सखा सुग्रीव ॥ २७ ॥ ❀

तव करुणानिधान भगवान्ने लक्ष्मणजीको समझाया कि हे प्यारे! सुग्रीव मित्र है, उसको भय दिखाकर ले आओ ॥ २७ ॥

---

(१) यह समझाया कि मैंने तो क्रोधमें कहा है, अग्निको साक्षी कर मित्रता करी है, उसे मारना उचित नहीं है, अपनाभी तौ काम निकालना है.

चौ०-इहाँ पवनसुत हृदय विचारा ❀ रामकाज सुग्रीव विसारा ॥ १ ॥
निकट जाइ चरनन सिर नावा ❀ चारिहु बिधि तेहि कहि समुझावा ॥२॥

यहां (लक्ष्मणजीके आनेसे पहिले) हनूमानने विचार किया कि सुग्रीव (राज्यके मदमें) रामचन्द्रजीके कामको भूल गया ॥ १ ॥ तौ पास जाकर चरणोंमें शिर नवाया और (साम दाम दंड भेद) इन चार प्रकारसे उसे कहकर समझाया ॥ २ ॥

सुनि सुग्रीव परम भय माना ❀ विषय मोर हरि लीन्हेउ ज्ञाना ॥ ३ ॥
अब मारुतसुत दूतसमूहा ❀ पठवहु जहँ तहँ बानरयूहा ॥ ४ ॥
कहेहु पाखमहँ आव न जोई ❀ मोरे कर ताकर बध होई ॥ ५ ॥

सुग्रीवने सुनकर बड़ा भय माना (और कहा) कि हाय! इन विषयोंने मेरा सब ज्ञान हर लिया ॥ ३ ॥ हे हनूमान्! (हो गया सो हो गया) अब बहुतसे दूत बन्दरोंको जहाँ तहाँ बानरी सेना (बुलानेको) भेजो ॥ ४ ॥ और उनसे कह दो कि जो (पन्द्रह दिनमें) नहीं आवैगा मेरे हाथसे उसका मरण होगा ॥ ५ ॥

अथ क्षेपक।

अंगद तब बोले शिर नाई ❀ पवन पुत्रको पठवहु साईं ॥ ६ ॥

तब अंगद शिर नवाकर बोला कि हे स्वामी! हनुमानूको भेजो ॥ ६ ॥

तब सुकंठ हनुमान बुलाये ❀ बोले बचन मधुर मुसक्याये ॥ ७ ॥
रामकाज अरु मोर निहोरा ❀ पठवहुँ मैं तुमकहँ सब ओरा ॥ ८ ॥

तब सुग्रीव हनूमानको बुलाय हँसकर मीठे वचनसे बोले कि ॥ ७ ॥ रामचन्द्रजीका तौ काम है और मेरा निहोरा है सो मैं तुमको सब ओर भेजता हूँ ॥ ८ ॥

सबहिं जाय मम वचन सुनावहु ❀ सेन दलनसन तुरत पठावहु ॥ ९ ॥
यह सुन हनूमान बलधारी ❀ पूरबदिशिकी कीन्ह तयारी ॥ १० ॥

सो तुम जाकर सबको मेरा बचन सुनाओ और दलसमेत सेनाओंको शीघ्र भेजो ॥ ९ ॥ यह सुनकर बलवान् हनूमानने पूर्व दिशाकी तयारी की ॥ १० ॥

जे मिल आन बचन अस कहेऊ ❀ वालिबन्धु तुमकहँ बुलवयऊ ॥ ११ ॥
सुन हनुमन्तवचन सब आये ❀ तुरत सबन सादर शिर नाये ॥ १२ ॥
गव गवाक्ष आये दोउ वीरा ❀ संग लिये सेना रणधीरा ॥ १३ ॥

और जो आकर (हनूमानसे) मिले उनसे यह कहा कि बालिके भाई सुग्रीवने तुझे बुलाया है ॥ ११ ॥ हनूमानके बचन सुनकर सब आये और शीघ्रही सबने आदरसे माथा नवाया ॥१२॥ गव गवाक्ष दोनों योद्धा रणधीर सेनाको साथमें लेकर आये ॥ १३ ॥

दो०-असीलाख अरु सातसौ, कपिसेना बलवान ॥
तिनहिं भेजि रोहितगिरिहिं, गये तुरत हनुमान ॥ २८ ॥

---

(१) यह समझाया कि राजाओंके चार उपाय होते हैं. साम कहिये मेल, दाम कहिये दान, दंड कहिये सजा देना, और भेद कहिये घरमें फूट डलवा देना, सो रामने दो वातोंका वर्त्ताव तौ तुम्हारे साथ करा अर्थात् मेल किया और तुम्हें राज्य दिया, अब दंड भेदकी और कसर है; भेदके लिये तौ युवराज अंगद है, और दंड देनेके लिये वाण है, सो सीताकी सुध लेनेको भेजाभाजी करो.

जो अस्सी लाख और सातसौं (८०००७००) बन्दरोंकी बलवान् सेना थी, उन्हें भेजकर हनूमान् शीघ्रही रोहितगिरिको गये ॥ २८ ॥

चौ०–दुर्धर्षणसन बोले जाई ❀ तुमहिं बुलायो है कपिराई ॥ १ ॥
परी भीर राजापहँ आकर ❀ तुम अब बनहु सहायक जाकर ॥ २ ॥

और जाकर दुर्धर्षणसे बोले कि तुमको वानरोंके राजा सुग्रीवने बुलाया है ॥ १ ॥ राजापर आके आपत्ति पडी है सो तुम अब जाकर सहायक बनो ॥ २ ॥

पुनि कदलीवन गये पलाई ❀ गजसे कथा कही समुझाई ॥ ३ ॥
दुर्धर्षण अरु गज कपि आये ❀ डंक बजाय सेन सब लाये ॥ ४ ॥

फिर दौड़कर कदलीवनको गये और गजसे समझाकर कथा कही ॥ ३ ॥ दुर्धर्षण और गज बन्दर आये और धौंसा बजाकर सब सेनाको साथ लाये ॥ ४ ॥

पद्म सात दल असी करोरा ❀ डिगमिग करैं भूमि अहि कोरा ॥ ५ ॥
हनुमत पुनि व्याहरगिरि आये ❀ बड़ सुत बलबीरहीं बुलाये ॥ ६ ॥

उनकी सात पद्म अस्सी करोड़ (७००००००८००००००००) सेनासे पृथ्वी, शेष और शूकर डिगमिगाने लगे ॥ ५ ॥ फिर हनूमान् व्याहरगिरिपर आये तौ बडे पुत्र बलवीरको बुलाया ॥ ६ ॥

कह्यो तुमहिं टेर्‌यो कपिराजू ❀ तहँ तुम जावहु सहित समाजू ॥ ७ ॥
तीसलाख दल साठ हजारा ❀ लायो सो किष्किन्धमँझारा ॥ ८ ॥
धुंधमारगिरिपर पुनि आये ❀ श्रीखंडहिं सब बचन सुनाये ॥ ९ ॥

और कहा तुमको बन्दरोंके राजा (सुग्रीव) ने बुलाया है सो तुम समाजसहित वहाँ जाओ ॥ ७ ॥ वह तीस लाख साठ हजार (३०६००००) सेना किष्किन्धामें लाया ॥ ८ ॥ फिर (हनूमान्) धुंधमारगिरिपर आये और श्रीखंडको सब समाचार सुनाये ॥ ९ ॥

दो०–छपनकोटि बनचर लिये, आयउ तहँ श्रीखंड ॥ ❀
कपिपतिकहँ शिर नायकरि, बैठ्यो अति बरबंड ॥ २९ ॥ ❀

छप्पन करोड़ (५६००००००) बन्दरोंको लेकर श्रीखंड वहां आया और बन्दरोंके स्वामी (सुग्रीव) को माथा नवाकर बड़ा बलवान् (श्रीखंड) बैठ गया ॥ २९ ॥

चौ०–पुनि हनुमत अंजनगिरि आये ❀ समाचार कुमुदहिं समुझाये ॥ १ ॥
पद्म सात सत्तासीलक्षा ❀ सुनि लै चल्यो कपिनकर कक्षा ॥ २ ॥

फिर हनूमान् अंजनगिरिपर आये और कुमुदको समाचार समझाये ॥ १ ॥ वह सुनकर सात पद्म सत्तासी लाख (७०००००००८७०००००) बन्दरोंकी सेना लेकर चला ॥ २ ॥

नीलगिरी आये हरिनाथा ❀ कही नीलते पुनि सब गाथा ॥ ३ ॥
अर्बुदचार चार शत चारा ❀ चल्यौ नीलदल बिकट जुझारा ॥ ४ ॥

फिर हनूमान् नीलगिरिपर आये और नीलसे सब कथा कही ॥ ३ ॥ नीलकी बिकट जुझाऊ सेना चार अर्ब चारसौ चार (४०००००४०४) चली ॥ ४ ॥

पुनि हनुमान उतरदिशि आये ❀ बदरिकाश्रम जा सुख पाये ॥ ५ ॥
गंधमदनसौं कहि इतिहासा ❀ जावहु तुम सुकंठकर पासा ॥ ६ ॥

फिर हनूमान् उत्तर दिशामें आये तौ बद्रिकाश्रममें जाकर सुख पाया ॥ ५ ॥ और गंधमादनसे समाचार कहकर कहा कि तुम सुग्रीवके पास जाओ ॥ ६ ॥

दो०–अर्जुनगिरिपहँ पुनि गये, ताराकर जहँ तात ॥
नाम सुखेन महाबली, ताहि सुनाई बात ॥ ३० ॥

फिर अर्जुनगिरिपर गये जहाँ बहुत बलवान् सुखेननाम ताराकापिता रहताथा उसे यह बातसुनाई

चौ०–बिदा होय सुमेरुगिरि आये ❀ कह्यो चलहु कपिराज बुलाये ॥ १ ॥
दसकरोड कपि अरु नवलाखा ❀ बीस सहस ऊपर शत भाखा ॥ २ ॥

(वहांसे) बिदा होकर सुमेरुगिरिपर आये और कहा चलो सुग्रीवने बुलाया है ॥ १ ॥ दस करोड़ नौ लाख बीस हजार सौ (१००९२०१००) बन्दर ॥ २ ॥

सब मिलिकरि किष्किन्धा आये ❀ सुग्रीवहिं लखि अति सुख पाये ॥ ३ ॥
तिन्हैं भेजकरि अंजनिनन्दन ❀ शिवपर्वतपर गा दुखभंजन ॥ ४ ॥

सब मिलकर किष्किन्धामें आये और सुग्रीवको देखकर बहुत आनन्द पाया ॥ ३ ॥ उन्हैं भेज कर दुःख नाश करनेवाले हनूमान् शिवपर्वतपर गये ॥ ४ ॥

द्विरद कपी तिहिं नायउ माथा ❀ हनूमान मन भयउ सनाथा ॥ ५ ॥
सुन कपिबचन सेन ले धायो ❀ डिगमिगाइ भू अहि बिचलायो ॥ ६ ॥

द्विरद बन्दरने उनको माथा नवाया तौ हनूमान् मनमें सनाथ हुये ॥५॥ हनूमानके वचन सुनकर द्विरद बन्दर सेना लेकर धाया कि जिससे पृथ्वी डिगमिगाने लगी और शेषनाग बिचलाया ॥ ६ ॥

मैनागिरि हनुमत पुनि आये ❀ अंधकनाम राज तहँ छाये ॥ ७ ॥
ताहि बुझाय कहा हनुमाना ❀ सेनसहित तुम करहु पयाना ॥ ८ ॥

फिर हनूमान मैनागिरिपर आये जहां अंधक नाम राजा रहता था ॥ ७ ॥ उसे समझाकर हनूमानने कहा कि तुम सेनासहित कूंच करो ॥ ८ ॥

यह सुनि सो किष्किंधा आवा ❀ कीशराजकहँ सीस नवावा ॥ ९ ॥
विंध्याचल आये हनुमाना ❀ रह वसंत कपि जहँ बलवाना ॥ १० ॥

यह सुनकर वह किष्किंधामें आया और सुग्रीवको माथा नवाया ॥ ९ ॥ फिर हनूमान् विन्ध्याचलपर आये जहां बलवान् वसंत वानर रहताथा ॥ १० ॥

सुनि लै चल दल कपिपतिपासी ❀ आठ पद्म अरु सहस अठासी ॥ ११ ॥
हनूमान तहँसों पग धारे ❀ कश्यपगिरि पुनि आन पधारे ॥ १२ ॥
नाम मयंद तहाँकर स्वामी ❀ तेजपुंज अरु अतिबलगामी ॥ १३ ॥

वह (समाचार) सुनकर आठ पद्म अठ्ठासी हजार (८००००००००००८८०००) सेना लेकर सुग्रीवके पास चला ॥ ११ ॥ हनूमान् वांसे चले सो फिर कश्यपगिरिपर आये ॥ १२ ॥ वहांका स्वामी मयंद नाम तेजका समूह और बहुत बली चलनेवाला था ॥ १३ ॥

दो०–इकिस कोटि बनचर लिये, आकर नायउ माथ ॥
हनूमान तब सब कही, पंपापुरकी गाथ ॥ ३१ ॥

उसने इक्कीस करोड़ (२१०००००००) बन्दर साथ लिये और आकर माथा नवाया तब हनूमानने पंपापुरकी सब कथा कही ॥ ३१ ॥

चौ०–अट्टहास कर चल्यो मयन्दा ❀ उछला जिमि नभ चलै गयंदा ॥ १ ॥
दल टीड़ीसम सेन चलाई ❀ उठि लँगूर रवि जाइ छिपाई ॥ २ ॥

अट्टहास करके मयंद चला और ऐसा उछला जैसे आकाशमें हाथी चलै ॥ १ ॥ टीड़ीदलके समान लंगूरोंकी सेना उठके चली (जिसकी गर्दसे) सूर्य छिपगया ॥ २ ॥

तीसकरोड़ नीलकी सेना ❀ सब वानर बुधिबलकर ऐना ॥ ३ ॥
सिंहनाद कर वारंवारा ❀ किष्किन्धा भइ भीड़ अपारा ॥ ४ ॥

नीलकी सेना तीस करोड़ (३००००००००) थी और उसमें सब बन्दर बुद्धि और बलके स्थान थे ॥ ३ ॥ सो वारंवार सिंहकासा शब्द करके किष्किंधामें अनगिनती भीड़ भाड़ हुई ॥ ४ ॥

हनूमान सुमिरत रघुवीरा ❀ धौलागिरि आये रनधीरा ॥ ५ ॥
कपि दुर्गन्धनाम जहँ रहही ❀ गाथा वायुपूत तिहिं कहही ॥ ६ ॥

रणधीर हनूमान् रामचन्द्रजीको सरण करते हुये धौलागिरिपर आये ॥ ५ ॥ जहां दुर्गंध नाम बन्दर रहताथा उससे हनूमानने कथा कही ॥ ६ ॥

आठ लाख सौवार गिनायो ❀ सब दल लै पंपापुर आयो ॥ ७ ॥
चहुँ दिशिसे वनचर सब लाये ❀ आय सुकंठहिं पुनि सिर नाये ॥ ८ ॥

आठ लाख सौ बार गिनाये अर्थात् वह आठ करोड़ (८०००००००) सब सेनाको लेकर पंपापुर आया ॥ ७ ॥ चारों ओरसे सब बन्दरोंको लाकर फिर सुग्रीवको आकार माथा नवाया ॥८॥

दो०–तब सुकंठ हनुमानकी, अमित बड़ाई कीन ॥
भा हर्षित धनधन्य कहि, जिमि जल पाये मीन ॥ ३२ ॥

तब सुग्रीवने हनूमान्की बहुत बड़ाई की और धन्य २ कहकर ऐसा प्रसन्न हुआ जैसे मछली जलको पाकर प्रसन्न होती है ॥ ३२ ॥

इति क्षेपक.

चौ०–तब हनुमंत बुलाए दूता ❀ सबकर करि सनमान बहूता ॥ १ ॥
भय अरु प्रीति नीति दिखराई ❀ चले सकल चरनन्ह सिर नाई ॥ २ ॥

तब हनूमान्ने दूतोंको बुलाया और सबका बहुतसा सत्कार कर ॥ १ ॥ भय प्रीति और नीति दिखलाई और वे सब चरणोंको शिर नवा नवा कर चले ॥ २ ॥

तिहि अवसर लछमन पुर आए ❀ क्रोध देखि जहँ तहँ कपि धाए ॥ ३ ॥

उसी समय लक्ष्मणजी नगरमें आये तौ (उनको) क्रोधित देखकर बन्दर जहां तहां धाये ॥ ३ ॥

दो०–धनुष चढाइ कहा तब, जारि करौं पुर छार ॥
व्याकुल नगर देखि तब, आयउ बालिकुमार ॥ ३३ ॥

तब (लक्ष्मणजीने) धनुष चढ़ाकर कहा कि (अरे भागकर कहां जाओगे) नगरको जलाकर छार २ कर दूंगा, अर्थात् धूलमें मिला दूंगा, तब नगरको व्याकुल देखकर अंगद आया ॥ ३३ ॥

चौ०–चरन नाइ सिर बिनती कीन्ही ❀ लछमन अभयबाँह तिहिं दीन्ही ॥ १ ॥
क्रोधवंत लछमन सुनि काना ❀ कह कपीस अतिसय अकुलाना ॥ २ ॥

और उसने चरणोंको माथा नवाकर बिनती की तौ लक्ष्मणने उसको अभयबाँह दी अर्थात् निडर किया ॥ १ ॥ लक्ष्मणजीको कानोंसे क्रोधित सुन सुग्रीव बहुत अकुलाकर कहने लगा ॥ २ ॥

सुनु हनुमंत संग लै तारा ❀ करि बिनती समुझाउ कुमारा ॥ ३ ॥
तारासहित जाइ हनुमाना ❀ चरन बंदि प्रभुसुजस बखाना ॥ ४ ॥

CC-0. In Public Domain. Collection, Haridwar

हे हनूमान् ! सुनो, तुम ताराको साथ लेकर जाओ और प्रार्थना कर कुमार (लक्ष्मणजी) को समझाओ ॥ ३ ॥ हनूमान्ने तारासमेत जाकर (लक्ष्मणजीके) चरणोंको दंडवत कर भगवान्का सुन्दर यश वर्णन किया ॥ ४ ॥

करि विनती मंदिर लै आए ❀ चरन पखारि पलँग बैठाए ॥ ५ ॥
तब कपीस चरनन्ह सिर नावा ❀ गहि भुज लछमन कंठ लगावा ॥ ६ ॥

और विनती करके महलोंमें ले आये और चरण धोय पलँगपर विठलाये ॥ ५ ॥ फिर सुग्रीवने चरणोंमें शिर नवाया तौ लक्ष्मणजीने भुजा पकड़कर कंठसे लगा लिया ॥ ६ ॥

नाथ विषयसम मद कछु नाहीं ❀ मुनिमन मोह करै छिनमाहीं ॥ ७ ॥
सुनत बिनीत बचन सुख पावा ❀ लछमन तेहि बहुबिध समुझावा ॥ ८ ॥
पवनतनय सब कथा सुनाई ❀ जेहि विध गये दूतसमुदाई ॥ ९ ॥

(फिरे सुग्रीव बोला) हे स्वामी ! विषयके समान मद और कुछ नहीं है, जो मुनीश्वरोंके मनकोभी क्षणभरमें मोहित करदेता है ॥७॥ नम्रताके वचन सुनतेही लक्ष्मणजीने सुख पाया और उसे वहुत भांति समझाया ॥ ८ ॥ फिर हनूमानसे सब कथा सुनाई जिस प्रकार दूतोंके समूह गये थे ॥ ९ ॥

दो०–हर्षि चले सुग्रीव तब, अंगदादि कपि साथ ॥ ❀
रामअनुज आगे किये, आए जहँ रघुनाथ ॥ ३४ ॥ ❀

तब सुग्रीव अंगद आदि वन्दरोंके साथ प्रसन्न होकर चले और लक्ष्मणजीको आगे कर जहां रामचन्द्रजी थे वहाँ आये ॥ ३४ ॥

चौ०–नाइ चरन सिर कह कर जोरी ❀ नाथ मोरि कछु नाहिन खोरी ॥ १ ॥
अतिसय प्रबल देव तव माया ❀ छूटै तबहिं करहु जब दाया ॥ २ ॥

(भगवान्के) चरणोंको शिर नवाय हाथ जोड़कर (सुग्रीवने) कहा हे स्वामी ! मेरा कुछभी दोष नहीं ॥ १ ॥ हे देव ! आपकी माया वड़ी प्रबल है, वह तभी छूटती है जव आप कृपा करते हो ॥२॥

विसयबिबस सुर नर मुनि स्वामी ❀ मैं पामर पसु कपि अति कामी ॥ ३ ॥
नारिनयनसर जाहि न लागा ❀ घोर क्रोध तम निसि जो जागा ॥ ४ ॥

हे स्वामी ! देवता, मनुष्य और मुनीश्वरभी विषयोंके वश (होजाते) हैं सो मैं तौ नीच पशु बन्दर वड़ा कामी हूं ॥ ३ ॥ जिसके स्त्रीके नेत्ररूपी वाण नहीं लगे और जो क्रोधरूपी घोर अंधकारकी रातमें जागा हो अर्थात् जो क्रोधके वश न हो ॥ ४ ॥

लोभपास जेहिं गर न बँधाया ❀ सो नर तुमसमान रघुराया ॥ ५ ॥
यह गुन साधनते नहिं होई ❀ तुम्हरी कृपा पाव कोइ कोई ॥ ६ ॥

और जिसने लोभकी फांसीमें (अपना) गला न बँधाया हो, हे रामचन्द्रजी ! वह मनुष्य तौ आपहीके समान है ॥ ५ ॥ सो यह गुण साधना करने नहीं होते किन्तु आपकी दयासे कोई कोई पाता है ॥ ६ ॥

तब रघुपति बोले मुसुकाई ❀ तुम प्रिय मोहिं भरतजिमि भाई ॥ ७ ॥
अब सोई जतन करहु मन लाई ❀ जेहि विधि सीताकी सुधि पाई ॥ ८ ॥

यह सुनकर रामचन्द्रजी हँसकर वोले हे भाई ! तुम मुझे भरतकी भांति प्यारे हो ॥ ७॥ अब मन लगाकर वही उपाय करो जिस तरह सीताकी खबर मिलै ॥ ८ ॥

दो०–इहिबिध होत बतकही, आए बानरजूथ ॥ ❀
नानावरन अतुल बल, देखिय कीसबरूथ ॥ ३५ ॥ ❀

इस प्रकार बातचीत होरही थी कि बन्दरोंके झुंडके झुंड आये और अनेक रंगके अतुल बलवान् बन्दरोंके समूह दिखाई देने लगे ॥ ३५ ॥

चौ०–वानरकटक उमा मैं देखा ❀ सो मूरख जो किय चह लेखा ॥ १ ॥
आइ रामपद नावहिं माथा ❀ निरखि बदन सब होहिं सनाथा ॥ २ ॥

(महादेव कहते हैं) हे पार्वती! बन्दरोंकी सेना मैंने देखी थी, वह मूर्ख है जो उसकी गिनती किया चाहे ॥ १ ॥ सब (बन्दर) आकर रामचन्द्रजीके चरणोंको माथा नवाते हैं और (उनके) मुखको देखकर सनाथ होते हैं ॥ २ ॥

अस कपि एक न सेनामाहीं ❀ राम कुसल पूछा जेहिं नाहीं ॥ ३ ॥
यह न कछुक प्रभुकै अधिकाई ❀ बिस्वरूप ब्यापक रघुराई ॥ ४ ॥

और ऐसा बन्दर सेनामें एकभी नहीं था कि जिसकी कुशल रामचन्द्रजीने न पूछी हो ॥३॥ सो यह भगवान्की कुछभी बड़ाई नहीं, क्योंकि रामचन्द्रजी तौ संसारके चराचररूपमें व्याप्त हैं ॥ ४ ॥

ठाढ़े जहँ तहँ आयसु पाई ❀ कहि सुग्रीव सबहिं समुझाई ॥ ५ ॥
रामकाज अरु मोर निहोरा ❀ वानरजूथ जाहु चहुँ ओरा ॥ ६ ॥

(फिर सब बन्दर) आज्ञा पाकर जहाँ तहाँ खड़े हुये तौ सुग्रीवने सबसे समझाकर कहा ॥ ५ ॥ हे वानरो! रामचन्द्रजीका तौ काम है और मेरा निहोरा है सो तुम चारों ओरको जाओ ॥ ६ ॥

जनकसुताकहँ खोजहु जाई ❀ मासदिवसमहँ आयहु भाई ॥ ७ ॥

और जाकर जनकनन्दिनी सीताजीको ढूंढ़ो और हे भाई! महीनेभरमें आजाना ॥ ७ ॥

अथ क्षेपक.

तब सुकंठ दुइ दूत बुलायसि ❀ सुनतहि गज गवाक्ष उठ धायसि ॥८॥

तब सुग्रीवने दो दूत बुलाये तौ सुनतेही गज गवाक्ष उठ दौड़े ॥ ८ ॥

मन क्रम बचकर विविध प्रकारा ❀ सुधासरिस मधु बचन उचारा ॥ ९ ॥
सिय खोजन तुम पूरब जावहु ❀ रामकाज कर आतुर आवहु ॥ १० ॥

(फिर सुग्रीवने) मन क्रम वचनसे बहुत भांति अमृतके समान मीठे बचन उनसे कहे कि ॥९॥ तुम सीताको ढूंढ़नेके लिये पूर्व दिशामें जाओ और रामचन्द्रजीका काम करके शीघ्र आओ ॥१०॥

उदधि नदी गिरि कानन खोजहु ❀ अमरावति कामावति जोहहु ॥ ११ ॥
सर वापी अरु कंदर देखउ ❀ कूप अगाध खोहादिक पेखउ ॥ १२ ॥

समुद्र, नदी, पहाड़ और वनोंको ढूंढो और अमरावती और कामावती पुरीकोभी खोजो ॥ ११ ॥ तलाव बावड़ीं और कन्दराओंको देखो, गहरे कुये और खोह आदिकोंको देखो ॥ १२ ॥

तुमकहँ मिलै चलत मग कोऊ ❀ सीतासुधि तुम पूँछहु सोऊ ॥ १३ ॥
सातकोटि वानरपरिमाना ❀ पूरबदिसिकहँ चले सुजाना ॥ १४ ॥
गज गवाक्ष जूथप बलधारी ❀ तिनके संग भये हंकारी ॥ १५ ॥

तुमको रस्ता चलतेमें कोई मिलै तौ उससेभी सीताजीके समाचार पूछो ॥ १३ ॥ सात करोड़ (७००००००) के प्रमाण चतुर बन्दर पूर्व दिशाको चले ॥ १४ ॥ और गज गवाक्ष बली सेनापति उनके साथ हंकार कर होलिये ॥ १५ ॥

दो०–पुनि सुग्रीव सुखेन कहँ, समझाई सब गाथ ॥ ❀
आदरकर बोले वचन, गहु मयंदकहँ साथ ॥ ३६ ॥ ❀

CC-0. In Public Domain. ... Collection, Haridwar

फिर सुग्रीवने सुखेनको सब कथा समझाई और आदर करके वचन बोले कि मयंदको साथ लेलो.

चौ०–उत्तर दिसि कहँ तुम चलिजाहू ❀ सीतासुधि पूछहु सबकाहू ॥ १ ॥
मादनगन्ध मेरु धरणीवर ❀ अर्जुन गिरि कैलास महीधर ॥ २ ॥

और तुम उत्तर दिशाको चले जाओ और सब किसीसे सीताजीकी खबर पूछो ॥ १ ॥ गन्धमादन और सुमेरु पर्वत अर्जुनगिरि और कैलाश पर्वत ॥ २ ॥

नीलगिरी अलकापुरि नामा ❀ खोजहु तात सकल शुभधामा ॥ ३ ॥
जहँलग धरणीकर है छोरा ❀ तहँलगि ढूँढ़हु आयसु मोरा ॥ ४ ॥

हे प्यारे! नीलगिरि और अलकापुरी नाम सब सुन्दर स्थानोंको ढूंढो ॥ ३ ॥ और जहाँतक पृथ्वीका छोर है वहांतक मेरी आज्ञासे ढूंढ़ो ॥ ४ ॥

ऋषि तपसिन अरु यक्षकुमारा ❀ पूछहु सकल अनेक प्रकारा ॥ ५ ॥
काकभुशुंडिकेर अस्थाना ❀ जावहु तुम तहँ वीर सुजाना ॥ ६ ॥
जम्बुवृक्ष तहँ लगे अपारा ❀ जम्बुद्वीप अस नाम पुकारा ॥ ७ ॥

ऋषि, तपस्वी,और यक्षकुमार सबसे बहुत भांति पूंछो ॥ ५ ॥ जहां कागभुशुंडका स्थान है वहांभी तुम चतुर योद्धा जाओ ॥ ६ ॥ वहां जामनके अनगिनती वृक्ष लगे हैं इसलिये उसे जम्बूद्वीप कहते हैं ॥ ७ ॥

दो०–गजसमान फल लाग तहँ, सुधासमान सराहिं ॥ ❀
पक पक सो धरणीपरहिं, सुर निजमनहिं सिहाँहिं ॥ ३७ ॥ ❀

जहां हाथीके समान और अमृतके समान फल सराहनाके योग्य लगते हैं और वे पक २ कर पृथ्वीपर गिरते हैं जिनको देखकर देवता मनमें प्रसन्न होते हैं ॥ ३७ ॥

चौ०–निर्मल जल निकसत अति पावन ❀ सुर मुनि नर मज्जहिं मनभावन ॥ १ ॥
अवधसमीप जो नदी सुहाई ❀ सरयूनाम भयो तिहिं आई ॥ २ ॥

(जिनसे) अत्यंत पवित्र निर्मल जल निकलता है और देवता मुनीश्वर और मनुष्य मनमें प्रसन्न हो उसमें स्नान करते हैं ॥ १ ॥ और अयोध्याके पास जो सुन्दर नदी है उसका नाम सरयू है ॥ २ ॥

फल भोजन करि अरु जलपाना ❀ रामकाज धर हृदय सुजाना ॥ ३ ॥
सूरसेनकर मंडप राजै ❀ जहँ लोमश शांडिल्य विराजै ॥ ४ ॥

सो फलोंका भोजन करके और जल पीकर और हे चतुर! रामचन्द्रजीके कामको हृदयमें धारणकर ॥ ३ ॥ जहाँ शूरसेनका मंडप विराजमान् है और जहां लोमश तथा शांडिल्य (ऋषि) रहते हैं ॥४॥

सुमिर राम खोजहु अब जाई ❀ मासदिवसमें आवहु भाई ॥ ५ ॥
राजाकी सुनिकर यह बाता ❀ चले तुरत मनमें हरसाता ॥ ६ ॥

हे भाई! (उन सब जगहोंमें) रामचन्द्रजीका स्मरण करते हुये अब जाकर ढूंढो और महीनेभरमें आजाना ॥ ५ ॥ सुग्रीव राजाकी यह बात सुनकर बन्दर मनमें प्रसन्न होते हुये शीघ्रही चले ॥६॥

पद्म इकादश वानर साथा ❀ चले सकल सुमिरत रघुनाथा ॥ ७ ॥
पुनि सुग्रीव सुबीर बुलायउ ❀ अति हित सों यह वचन सुनायउ ॥ ८ ॥

और ग्यारह पद्म (११००००००००००००००००) बन्दर एक साथ सब रामचन्द्रजीका स्मरण करते हुये चले ॥ ७ ॥ फिर सुग्रीवने सुवीरको बुलाया और बड़े प्रेमसे यह वचन सुनाया कि ॥ ८ ॥

दो०-पश्चिम दिशिकी ओर तुम, खोजहु सीतहिं जाय ॥
रामकाजकहँ तुरत करि, मोहिं सुनावहु आय ॥ ३८ ॥

तुम पश्चिम दिशाकी ओर जाकर सीताजीको ढूँढो और रामचन्द्रजीके कामको जल्दी करके मुझे आकर सुनाओ ॥ ३८ ॥

सरिता सर वन गिरि गुहा, खोजत सबही ठाम ॥
दशषटलख हरि जावहु, लै रघुपतिकर नाम ॥ ३९ ॥

नदी, तलाव, बन, पर्वत, और कन्दरा और सभी जगहोंको ढूँढ़ते हुये सोलह लाख (१६०००००) बन्दर रामचन्द्रजीका नाम लेकर जाओ ॥ ३९ ॥

इति क्षेतक.

चौ०-अवधि मेटि जो बिनु सुधि पाये ❀ अवसि मरिहि सो मम कर आये ॥ १ ॥

जो (महीनेभरकी) अवधिका बिताकर विना खबर पाये आवैगा वह आनेपर अवश्य मेरे हाथसे मारा जायगा ॥ १ ॥

दो०-बचन सुनत सब वानर, जहँ तहँ चले तुरंत ॥
तब सुग्रीव बुलायउ, अंगदादि हनुमंत ॥ ४० ॥

बचन सुनतेही सब वन्दर शीघ्रही जहाँ तहाँ चले, तब सुग्रीवने अंगद और हनूमान् आदिको बुलाया (और कहा) ॥ ४० ॥

चौ०-सुनहु नील अंगद हनुमाना ❀ जांबवंत मतिधीर सुजाना ॥ १ ॥
सकल सुभट मिलि दक्षिण जाहू ❀ सीतासुधि पूछहु सबकाहू ॥ २ ॥

हे नील, अंगद, हनूमान्, और जांबवंत ! सुनो. तुम बडे बुद्धिमान् और चतुर हो ॥ १ ॥ सो सब सुन्दर योद्धा मिलकर और सब किसीसे सीताकी खबर पूछते हुए दक्षिण दिशाको चले जाओ ॥२॥

मन बच क्रम सो जतन बिचारेहु ❀ रामचंद्रकर काज सम्हारेहु ॥ ३ ॥
भानु पीठ सेइय उर आगी ❀ स्वामिहिं भजिय सकल छल त्यागी॥४॥

और मन क्रम वचनसे यत्न विचारकर रामचन्द्रजीके कामको सह्मालो, क्योंकि ॥ ३ ॥ सूर्यको पीठसे, अग्निका हृदयसे, और स्वामीका सब कपट छोड़कर सेवन करना चाहिये ॥ ४ ॥

तजि माया सेइय परलोका ❀ मिटै सकल असंभव सोका ॥ ५ ॥
देह धरेकर यह फल भाई ❀ भजिय राम सब काम बिहाई ॥ ६ ॥

माया छोड़कर परलोककाभी तौ सेवन करना चाहिये (जिससे) संसारके उत्पन्न हुये सब शोक मिट जायँ ॥ ५ ॥ हे भाई ! देह धारण करनेका यही फल है कि सब कामको छोड़कर रामचन्द्रजीको भजो ॥६॥

सोइ गुनज्ञ सोई बड़भागी ❀ जो रघुबीरचरनअनुरागी ॥ ७ ॥
आयसु माँगि चरन सिर नाई ❀ चले हरषि सुमिरत रघुराई ॥ ८ ॥

और वही गुणवान् और वही वड़भागी है जो रामचन्द्रजीके चरणोंसे स्नेह करै ॥ ७ ॥ वे सब आज्ञा माँग चरणोंको शिर नवाय रामचन्द्रजीका स्मरण करते हुये प्रसन्न होकर चले ॥ ८ ॥

श्लोक.

(१) "पृष्ठतः सेवयेदर्कं जठरेण हुताशनम् । स्वामिनं सर्वभावेन परलोकममायया ॥ १ ॥

इसका अर्थ चौपाईसे मिलता है ॥

CC-0. In Public Domain. Collection, Haridwar

पाछे पवनतनय सिर नावा ❀ जानि काज प्रभु निकट बुलावा ॥ ९ ॥
परसा सीस सरोरुहपानी ❀ करमुद्रिका दीन्ह जन जानी ॥ १० ॥

पीछेसे हनूमान्‌जीने प्रणाम किया तौ भगवान्‌ने उसीसे काम होता हुआ जानकर पास बुला लिया ॥ ९ ॥ और उसके शिरपर अपना कमलसमान हाथ फेरा और दास जानकर (अपने) हाथकी अंगूठी दी (और कहा कि) ॥ १० ॥

बहु प्रकार सीतहिं समुझायहु ❀ कहि बल वीर्य वेगि तुम आयहु ॥११॥
हनुमत जन्म सफल करि जाना ❀ चले हृदय धरि कृपानिधाना ॥ १२ ॥
यद्यपि प्रभु जानत सब बाता ❀ राजनीति राखत सुरत्राता ॥ १३ ॥

तुम सीताको बहुतभांति समझाना और हमारा बल और पराक्रम कहकर जल्दी आना ॥ ११ ॥ हनूमान्‌ने (अपना) जन्म सफल जाना और दयाके समुद्र (भगवान्) को हृदयमें रखकर चल दिये ॥ १२ ॥ (महादेव पार्वतीसे कहते हैं कि) यद्यपि भगवान् सब बात जानते हैं तौभी देवताओंके रक्षक राजनीति रखते हैं ॥ १३ ॥

दो०–चले सकल वन खोजत, सरिता सर गिरि खोह ॥ ❀
रामकाज लवलीन मन, बिसरा तनुकर छोह ॥ ४१ ॥ ❀

वनमें नदी, तलाव, पर्वत और कन्दराओंको ढूंढ़ते हुये सव (वन्दर) चले और रामचन्द्रजीके काममें मन लगनेसे शरीरका मोहभी जाता रहा ॥ ४१ ॥

चौ०–कतहुँ होइ निसिचरसन भेटा ❀ प्रान लेहिं इक एक चपेटा ॥ १ ॥
बहु प्रकार गिरि कानन हेरहिं ❀ कोउ मुनि मिलै ताहि सब घेरहिं ॥२॥

कहीं किसी राक्षससे भेट होजाय तौ एकही चपेटमें प्राण ले डालते हैं ॥ १ ॥ अनेक प्रकारसे पर्वतों और वनोंको देखते हैं और कोई मुनीश्वर मिलता है तौ उसे सब घेरते हैं ॥ २ ॥

लागि तृषा अतिसय अकुलाने ❀ मिलै न जल वनगहन भुलाने ॥ ३ ॥
तब हनुमान कीन्ह अनुमाना ❀ मरन चहत सब बिनु जलपाना ॥ ४ ॥

फिर एक घने वनमें भूलकर जा निकले और प्यास लगनेसे बड़े दुखी हुये पर वहां जलका कहां पता था ॥ ३ ॥ तब हनूमान्‌ने मनमें अनुमान किया कि विना जलपानके सब मरा चाहते हैं॥४॥

चढ़ि गिरिसिखर चहूँ दिसि देखा ❀ भूमिविवर इक कौतुक पेखा ॥ ५ ॥
चक्रवाक बल हंस उड़ाहीं ❀ बहुतक खग प्रविसहिं तिहि माहीं ॥६॥

तव पर्वतके शिखरपर चढ़कर चारों ओर देखा तौ पृथ्वीके एक विलमें एक कौतुक देखा कि ॥ ५ ॥ वहां चकवा चकवी बगुला और हंस उड़ते हैं और बहुतेरे पक्षी उसमें घुसते हैं ॥ ६ ॥

गिरिते उतरि पवनसुत आवा ❀ सबकहँ लै सो बिवर दिखावा ॥ ७ ॥
आगे करि हनुमंतहिं लीन्हा ❀ पैठे बिबर विलंब न कीन्हा ॥ ८ ॥

(यह देखकर) हनूमान् पर्वतसे उतरकर नीचे आये और सबको लेजाकर वह बिल दिखलाया ॥ ७ ॥ (फिर सबने) हनूमान्‌को आगे कर लिया और बिलमें धँसे, देर नहीं की ॥ ८ ॥

दो०–देखि जाइ उपवन सुभग, सर बिकसे बहु कंज ॥ ❀
मंदिर एक रुचिर तहाँ, बैठि नारि तपपुंज ॥ ४२ ॥ ❀

उसमें जाकर एक सुन्दर वगीचा देखा कि जहाँ सरोवरमें बहुतसे कमल खिले हुये हैं और वहां एक सुन्दर मन्दिरमें बड़ी तपस्विनी स्त्री बैठी हुई है ॥ ४२ ॥

चौ०-दूरहिते तेहिं सब सिर नावा ❀ पूछेसि निजवृत्तांत सुनावा ॥ १ ॥
तब तेइँ कहा करहु जलपाना ❀ खाहु सरस सुन्दर फल नाना ॥ २ ॥

सर्वोने दूरहीसे उसको शिर नवाया और जब उसने पूछा तब अपना समाचार कहकर सुनाया ॥ १ ॥ तब उसने कहा जल पिओ और रसीले सुन्दर अनेक फल खाओ ॥ २ ॥

मज्जन कीन्ह मधुर फल खाए ❀ तासु निकट पुनि सब चलि आए ॥३॥
तेइँ सब आपनि कथा सुनाई ❀ मैं अब जाउँ जहाँ रघुराई ॥ ४ ॥

मज्जन करके मीठे फल खाये और फिर सब उसके पास चले आये ॥ ३ ॥ फिर उसने अपनी सब कथा सुनाई और कहाकि मैंभी अब जहां रामचन्द्रजी हैं वहां जाऊँगी ॥ ४ ॥

मूँदहु नयन बिवर तजि जाहू ❀ पैहहु सीतहिं जनि कदराहू ॥ ५ ॥
नयन मूँदि तब देखहिं बीरा ❀ ठाढ़े सकल सिंधुके तीरा ॥ ६ ॥

तुम नेत्र मूंदलो जिससे बिलके बाहर जाओ और सीताजीको पाओगे हिम्मत मत हारो ॥ ५ ॥ तब योद्धा नेत्र मूंदकर देखते हैं तौ सब समुद्रके किनारेपर खडे हैं ॥ ६ ॥

सो पुनि गई जहाँ रघुनाथा ❀ जाइ कमलपद नायसि माथा ॥ ७ ॥
नानाभाँति बिनय तेइँ कीन्ही ❀ अनपावनी भक्ति प्रभु दीन्ही ॥ ८ ॥

और वह (स्त्री) फिर वहां गई जहां रामचन्द्रजी थे और जाकर उनके कमलसमान चरणोंको शिर नवाया ॥ ७ ॥ और उसने बहुत भांति बिनती करी तब भगवान्ने अनपावनी अर्थात् जो हर किसीको न मिलसकै ऐसी भक्ति उसे दी ॥ ८ ॥

दो०-बदरी वनकहँ सो गई, प्रभुआज्ञा धरि सीस ॥ ❀
उर धरि रामचरनजुग, जे बंदत अज ईस ॥ ४३ ॥ ❀

वह भगवान्‌की आज्ञाको मस्तकपर रखकर और जिनको ब्रह्मा और महादेव प्रणाम करते हैं ऐसे रामचन्द्रजीके दोनों चरणोंको रखकर बदरीबनको गई ॥ ४३ ॥

चौ०-इहाँ बिचारहिं कपि मनमाहीं ❀ बीती अवधि काज कछु नाहीं ॥ १ ॥
सब मिलि कहहिं परस्पर बाता ❀ बिनु सुधि लिये करब का भ्राता ॥ २ ॥

यहां बन्दरोंको मनमें यह शोच हुआ कि (महीनेभरकी) अवधि तौ बीतनेपर आई और काम कुछ नहीं बना ॥१॥ सब मिलकर आपसमें बात कहते हैं कि हे भाई! बिना खबर लिये क्या करेंगे? ॥२॥

कह अंगद लोचन भरि बारी ❀ दुहुँ प्रकार भइ मृत्यु हमारी ॥ ३ ॥
इहाँ न सुधि सीताकर पाई ❀ वहाँगये मारिहि कपिराई ॥ ४ ॥

अंगद नेत्रोंमें जल भरकर कहने लगा कि हमारि तौ दोनों तरह मृत्यु हुई ॥ ३ ॥ यहां तौ सीताकी खबर न मिली और वहां जानेपर सुग्रीव मारैगा ॥ ४ ॥

पितावधेपर मारत मोहीं ❀ राखा राम निहोर न ओहीं ॥ ५ ॥
पुनि पुनि अंगद कह सब पाहीं ❀ मरन भयो कछु संसय नाहीं ॥ ६ ॥

---

(१) कथा यह सुनाई कि मैं मेरुसावर्णिकी पुत्री हूं, मेरा नाम स्वयंप्रभा है और मैं इसकी रक्षक हूं इस गुफाका नाम ऋक्षबिल है। इसमें जो वन है उसे मयदानवने बनाया था परंतु जब वह हेमा नाम अप्सरापर आसक्त हुआ तब इन्द्रने उसे वज्रसे मारडाला और हेमाको वहाँका अधिकार दिया मैं उसकी सखी हूं और इसकी रक्षा करती हूं-यह कथा वाल्मीकिरामायणमें किष्किन्धाकाण्डके ५१ वें सर्गमें है ॥

CC-0. ... Collection, Haridwar

(वह तौ) पिताके मरनेपरही मुझे मार डालता (परंतु) रामचन्द्रजीने (मेरे पिताके) निहोरेसे रक्खा ॥ ५ ॥ अंगद बारबार सबसे कहता है कि मृत्यु तौ हुई इसमें कुछ सन्देह नहीं है ॥ ६ ॥

अंगदबचन सुनत कपि बीरा ❀ बोलि न सकहिं नयन भरि नीरा ॥७॥
छिन इक सोकमगन है गये ❀ पुनि अस बचन कहत सब भये ॥ ८ ॥

अंगदके वचन सुनतेही योद्धा बन्दर बोल नहीं सक्ते, नेत्रोंमें जलभर लाये ॥ ७ ॥ एक क्षणभर तौ शोकमें मगन होगये फिर सब ऐसे वचन कहने लगे कि ॥ ८ ॥

हम सीताकी सोधिबिहीना ❀ नहिं जैहहिं जुवराज प्रवीना ॥ ९ ॥
अस कहिं लवनसिंधुतट जाई ❀ बैठे कपि सब दर्भ डसाई ॥ १० ॥

हे चतुर युवराज (अंगद) ! हम सीताकी सुधि विना लिये नहीं जायँगे ॥ ९ ॥ ऐसे कह खारी समुद्रके पास जाय सब वन्दर डाभ विछाकर बैठे ॥ १० ॥

जांबवंत अंगददुख देखी ❀ कही कथा उपदेस बिसेखी ॥ ११ ॥
तात रामकहँ नर जनि मानहु ❀ निर्गुन ब्रह्म अजित अज जानहु ॥ १२ ॥
हम सब सेवक अति बड़भागी ❀ संतत सगुन ब्रह्मअनुरागी ॥ १३ ॥

जाम्बवंतने अंगदका दुःख देखकर वहुत उपदेश और कथा कही कि ॥ ११ ॥ हे प्यारे ! रामचन्द्रजीको मनुष्य मत जानो. (किंतु) निर्गुण ब्रह्म जन्मरहित अजित जानो ॥ १२ ॥ हम सब सेवक वड़भागी हैं जो सदा सगुण ब्रह्मसे स्नेह करते हैं ॥ १३ ॥

दो०–निजइच्छा अवतरेउ प्रभु, सुर द्विज गो महि लागि ॥ ❀
सगुन उपासन करहिं सब, मोक्ष सकल सुख त्यागि ॥४४॥ ❀

देवता, ब्राह्मण, गौ और पृथ्वीके लिये भगवान्ने अपनी इच्छासे अवतार लिया है, सो मोक्ष आदि सम्पूर्ण आनन्दोंको छोड़कर सगुण ब्रह्मकी उपासनामें हम सब मगन रहते हैं ॥ ४४ ॥

चौ०–इहिबिधि कहत कथा बहु भाँती ❀ गिरि कंदरा सुना संपाती ॥ १ ॥
बाहिर होइ देखे सब कीसा ❀ मोहिं अहार दीन्ह जगदीसा ॥ २ ॥

इस भांति बहुत प्रकारकी कथा कह रहे थे कि पर्वतकी कन्दरामें (जटायुके भाई) संपातीने सुना ॥१॥ तौ बाहर होकर सब बन्दरोंको देखा (और विचार कियाकि) आज तौ ईश्वरने खूब भोजन दिया २

आजु सबन्हकहँ भक्षण करऊं ❀ दिन बहु गे अहार बिनु मरऊँ ॥ ३ ॥
कबहुँ न मिलि भरि उदर अहारा ❀ आज दीन्ह बिधि एकहिं बारा ॥ ४ ॥

आज सबोंको खाजाऊँगा क्योंकि आहारके बिना मरते २ बहुत दिन होगये ॥ ३ ॥ और पेट भरके भोजन कभी न मिला सो आज ब्रह्माने एकही साथ दे दिया ॥ ४ ॥

डरपे गृध्रबचन सुनि काना ❀ अब भा मरन सत्य हम जाना ॥ ५ ॥
कपि सब उठे गृध्रकहँ देखी ❀ जांबवंतमन सोच बिसेखी ॥ ६ ॥

गृध्रके बचनको कानोंसे सुनकर (बन्दर) डरपे कि हमने जान लिया कि अब सत्यही मरना हुआ ॥ ५ ॥ गृध्रको देखकर सब बन्दर उठे और जाम्बवंतके मनमेंभी वड़ा शोच हुआ ॥ ६ ॥

कह बिचार अंगद मनमाहीं ❀ धन्य जटायुसरिस कोउ नाहीं ॥ ७ ॥
रामकाजकारन तनु त्यागी ❀ हरिपुर गयउ परम बड़भागी ॥ ८ ॥

अंगद मनमें विचारकर कहने लगा कि धन्य तौ जटायुको है (उसके) बराबर कोई नहीं ॥७॥ वह बड़ा बड़भागी था कि रामचन्द्रजीके कामके लिये देह छोड़कर वैकुंठको गया ॥ ८ ॥

जो रघुबीरचरन चित लावै ❀ तिहिं सम धन्य न आन कहावै ॥ ९ ॥
सुनि खग हर्षसोकयुत बानी ❀ आवा निकट कपिन्ह भय मानी ॥१०॥

जो रामचन्द्रजीके चरणोंमें चित्त लगावै उसके समान धन्य और नहीं कहलाता ॥ ९ ॥ पक्षी (गृध्र) आनन्द और शोककी वाणी सुनकर पास आया तौ बन्दर डरे ॥ १० ॥

ताहि देखि सब चले पराई ❀ ठाढ़ कीन्ह तेइँ सपथ दिवाई ॥ ११ ॥
तिन्हैं अभय करि पूछेसि जाई ❀ कथा सकल तिन्ह ताहि सुनाई ॥ १२ ॥
सुनि संपाति बंधुकी करनी ❀ रघुपतिमहिमा बहुविध बरनी ॥ १३ ॥

और उसे देखकर सब भाग चले तब उसने सौगंद देकर खड़े किये ॥ ११ ॥ और उनको निडर करके जाकर पूछा तौ उन्होंने सब कथा उसे सुनाई ॥ १२ ॥ संपातीने भाईकी करनी सुनकर रामचन्द्रजीकी महिमा बहुत भांति वर्णन की (और कहा कि) ॥ १३ ॥

दो०-मोहिं लै चलहु सिंधुतट, देउँ तिलांजलि ताहि ॥ ❀
बचन सहायक करब मैं, पैहहु खोजहु जाहि ॥ ४५ ॥ ❀

मुझे समुद्रके किनारे ले चलो जो उसे तिलाञ्जली दूं, मैं बचनोंसे तुम्हारी सहायता करूंगा और तुम जाकर (सीताजीको) ढूंढो (अवश्य) पाओगे ॥ ४५ ॥

चौ०-अनुजक्रिया करि सागरतीरा ❀ कह निजकथा सुनहु कपि बीरा ॥ १ ॥
हम दोउ बंधु प्रथम तरुनाई ❀ गगन गये रविनिकट उड़ाई ॥ २ ॥

और समुद्रके किनारे छोटे भाई (जटायु) की क्रिया करके अपनी कथा कहने लगा कि हे वीर बन्दरो! सुनो ॥ १ ॥ हम दोनों भाई पहले तरुणाईमें आकाशमें उड़कर सूर्यके पास गये थे ॥२॥

तेज न सहिसक सो फिरि आवा ❀ मैं अभिमानि रविहिं नियरावा ॥ ३ ॥
जरे पंख रवितेज अपारा ❀ परेउँ भूमि करि घोर चिकारा ॥ ४ ॥

जब तेज न सहसका तब जटायु तौ लौट आया और मैं अभिमानी सूर्यके पासही चलागया ॥३॥ सो सूर्यके अपार तेजसे मेरे पंख जलगये और मैं घोर चिकार शब्द करके पृथ्वीपर गिरपड़ा ॥४॥

मुनि इक नाम चंद्रमा ओही ❀ लागी दया देखि करि मोही ॥ ५ ॥
बहु प्रकार तिन्ह ज्ञान सिखावा ❀ देहजनित अभिमान छुड़ावा ॥ ६ ॥

तब एक चन्द्रमा नाम मुनीश्वर थे, मुझको देखकर उन्है बड़ी दया लगी ॥ ५ ॥ उन्होंने मुझे बहुत भांति ज्ञान सिखाया और शरीरसे उत्पन्न हुआ अभिमान मिटा दिया (और कहा कि) ॥६॥

त्रेता ब्रह्म मनुजतनु धरिहैं ❀ तासु नारि निसिचरपति हरिहैं ॥ ७ ॥
तासु खोज पठउब प्रभु दूता ❀ तिन्हैं मिले तुम होव पुनीता ॥ ८ ॥

त्रेतायुगमें ब्रह्म (भगवान्) मनुष्य शरीर धारण करैंगे और उनकी स्त्रीको राक्षसोंका स्वामी (रावण) हरैगा ॥ ७ ॥ उसे ढूँढ़नेको भगवान् दूत भेजैंगे उनके मिलनेसे तुम पवित्र होगे ॥ ८ ॥

जमिहहिं पंख करसि जनि चिंता ❀ तिन्हैं देखाइ देव तैं सीता ॥ ९ ॥
यह कहि मुनि निजआस्रम गयऊ ❀ तिहि छिन हृदय ज्ञान कछु भयऊ ॥१०॥

---

(१) अंगदने ताड़ लिया कि यह जटायुका भाई है इसलिये कहा ॥

चिन्ता मत करे, तेरे पंख जम जांयगे और तू उन्हें सीताजीको दिखा दीजो ॥ ९ ॥ यह कहकर मुनीश्वर (अपने) आश्रमको गये और उसी समय मेरे हृदयमें कुछ ज्ञान हुआ ॥ १० ॥

अथ क्षेपक.

अस इक बात सुनहु मन लाई ❀ दूसरि कथा कहौं रुचि पाई ॥ ११ ॥
क्षुधा एक दिन मोहिं सतायो ❀ निजसुतसों दुख जाइ सुनायो ॥ १२ ॥

इस एक वातको मन लगाके सुनो, मैं (तुम्हारी) इच्छा पाकर दूसरी कथा कहता हूं ॥ ११ ॥ एक दिन भूखने मुझे सताया तौ जाकर मैंने अपने पुत्रसे दुःख कहा ॥ १२ ॥

जीव लेनहित वन सो आवा ❀ गज मृगराजहिं मार गिरावा ॥ १३ ॥
अस्त भये रवि घरकइँ आयउँ ❀ तब मैं मनमें क्रोध बढ़ायउँ ॥ १४ ॥

वह जीवोंको लेनेके लिये वनको आया और हाथी तथा सिंहकों मारकर गिरा दिया ॥ १३ ॥ और सूर्यास्त होनेपर घर आया तब मैंने मनमें क्रोध किया ॥ १४ ॥

पुत्रहि शाप देनकहँ भयऊ ❀ तिहिं विलंबकारण अस कहेऊ ॥ १५ ॥
सुनहु तात चित धर मम बानी ❀ कहहुँ तुमहिं सब कथा बखानी ॥१६॥

और पुत्रको शाप देनेके लिये सिद्ध हुआ तौ उसने देरका कारण यों कहा कि ॥१५॥ हे पिता ! मेरी वातको ध्यान देकर सुनो. मैं तुमसे सब कथा वर्णनकर कहता हूं ॥ १६ ॥

बीसभुजा अरु बड़दश आनन ❀ लिये जात इक नारि सुहावन ॥ १७ ॥
जान जंतु मैं धरा प्रचारी ❀ तुरत छोड़ दीनी तिन नारी ॥ १८ ॥

बीस भुजा और बड़े दशमुखवाला कोई एक सुन्दर स्त्रीको लिये जाता था ॥ १७ ॥ सो मैंने पक्षी जानकर पकड़के पछाड़ा तौ उसने वह स्त्री शीघ्रही छोड़ दी ॥ १८ ॥

मोरि विनय करि कुजदिशि गयऊ ❀ मैं पुनि बाट भवनकी लयऊ ॥ १९ ॥
भयो दुःख मोहिं सुन तत्काला ❀ कह्यो पुत्रते मैं यह हाला ॥ २० ॥

पर मेरी प्रार्थना करके दक्षिणकी दिशाको गया और फिर मैंने घरकी राह ली ॥ १९ ॥ सुनकर उसी समय मुझे दुःख हुवा तौ मैंने पुत्रसे यह हाल कहा कि ॥ २० ॥

अहह तात तैं भल नहिं कीन्हा ❀ रघुपतिनारि छीन नहिं लीन्हा ॥ २१ ॥
पंखहीन मेरे बल नाहीं ❀ जाइ भिरूँ तिहि निश्चरपाहीं ॥ २२ ॥
पुनि मुनिवचन सुरत मोहिं आवा ❀ तुमहिं देख अभिमत फल पावा ॥२३॥

हे पुत्र ! तैंने अच्छा नहीं किया जो रामचन्द्रजीकी स्त्री छीन न ली ॥ २१ ॥ मेरे पंख न होनेसे मेरा बल नहीं जो जाकर उस राक्षससे लडूं ॥ २२ ॥ फिर मुझे मुनीश्वरका बचन याद आया और तुमको देखकर मनवांछित फल पाया ॥ २३ ॥

इति क्षेपक.

निसि दिन मग जोवत दिन भरऊँ ❀ सदा रामको सुमिरन करऊँ ॥ २४ ॥
मुनिकै गिरा सत्य भइ आजू ❀ सुनि मम बचन करहु प्रभुकाजू ॥ २५ ॥

रात दिन रास्ता देखतेही दिन विताता हुआ सदा रामचन्द्रजीका स्मरण करता रहता था ॥२४॥ सो मुनीश्वरकी बाणी आज सच्ची हुई (अब तुम) मेरा बचन सुनकर भगवानूका काम करो॥२५॥

गिरि त्रिकूट ऊपर बस लंका ❀ तहँ रह रावन सहज असंका ॥ २६ ॥
तहाँ असोकवाटिका अहई ❀ सिय बैठी तहँ सोचति रहई ॥ २७ ॥

त्रिकूट पर्वतके ऊपर लंका (पुरी) बसती है और वहां रावण सहजहीमें बेखटके रहता है ॥ २६ ॥ वहां अशोकवाटिका है और तहाँ बैठी हुई सीताजी शोचती रहती हैं ॥ २७ ॥

दो०–मैं देखौं तुम नाहि न, गृध्रहिं दृष्टि अपार ॥
बूढ भयउँ न तु करतेउँ, कछुक सहाय तुम्हार ॥ ४६ ॥

मै तौ देखता हूं, तुम नहीं देखसक्ते, क्योंकि गृध्रकी अपार दृष्टि होती हैं अर्थात् बहुत दूरतक देख सक्ता हैं. क्या करूं ? बूढ़ा होगया, नहीं तौ तुह्मारी कुछ औरभी सहायता करता ॥ ४६ ॥

चौ०–जो लांघै सतजोजन सागर ❀ करै सो रामकाज मतिआगर ॥ १ ॥
जो कोइ करै रामकर काजू ❀ तेहि सम धन्य आन नहिं आजू ॥ २ ॥

जो सौ योजन अर्थात् चारसौ कोस समुद्रको लँघै वही बुद्धिमान् रामचन्द्रजीके इस कामको करैगा ॥ १ ॥ जो कोई रामचन्द्रजीके कामको करै उसके समान आज धन्य नहीं ॥ २ ॥

मोहिं बिलोकि धरहु मन धीरा ❀ रामकृपा कस भयउ सरीरा ॥ ३ ॥
पापिउ जाकर नाम सुमिरहीं ❀ अतिअपार भवसागर तरहीं ॥ ४ ॥

मुझे देखकर मनमें धीरज रक्खो. (देखो) रामचन्द्रजीकी दयासे मेरा शरीर कैसा होगया ? ॥३॥ पापीभी जिनके नामका स्मरण करनेसे अत्यन्त अपार संसाररूपी समुद्रसे पार होजाते हैं ॥ ४ ॥

तासु दूत तुम तजि कदराई ❀ राम हृदय धरि करहु उपाई ॥ ५ ॥
अस कहि उमा गृध्र जब गयऊ ❀ सबके मन अतिविस्मय भयऊ ॥ ६ ॥

सो तुम तौ उन्हींके दूत हो, काहिली छोड़कर रामचन्द्रजीको हृदयमें रखकर उपाय करो ॥५॥ (महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! ऐसे कहकर जब गृध्र उड़गया तौ सबके मनमें बड़ा दुःख हुआ ॥ ६॥

निज निज बल सबकाहू भाखा ❀ पार जानकर संसय राखा ॥ ७ ॥
जरठ भयउँ अब कहेउँ ऋछेसा ❀ नहिं तनु रहा प्रथम बललेसा ॥ ८ ॥
जबहिं त्रिविक्रम भयउ खरारी ❀ तब मैं तरुन रहा बलभारी ॥ ९ ॥

(अर्थात् यह कहने लगे कि सहारा हुआ था सोभी गया अब क्या करैं) फिर तौ अपना २ बल सब किसीने कहा, पर पार जानेका तौ सन्देहही रहा ॥ ७ ॥ जाम्बवंतने कहा कि मैं अब बूढ़ा होगया हूँ इससे शरीरमें पहले बलका लवलेश अर्थात् पासंगभी नहीं रहा ॥ ८ ॥ जब भगवान्ने (राजा बलिको छलनेके लिये) वामनअवतार लिया था तब मैं तरुण और बड़ा बलवान् था ॥ ९ ॥

दो०–बलि बाँधत प्रभु बाढेऊ, सो तनु बरनि न जाइ ॥
उभय घरीमहँ दिन्ह मैं, सात प्रदच्छिन धाइ ॥ ४७ ॥

बलिके बांधनेमें भगवान्ने जो अपना शरीर बढ़ाया था उसका वर्णन नहीं किया जाता, सो उसकी मैंने दोही घडीमें सात परिक्रमा दौड़कर करीं थीं ॥ ४७ ॥

अथ क्षेपक

चौ०–बूढ़ भयो अब बलहि सुनाऊँ ❀ पलमें लाँघि सिंधुकहँ जाऊँ ॥ १ ॥
एक दिन बदरिनाथ मैं आवा ❀ तहँ इक चरित दीख मन भावा ॥ २ ॥

पर अब बूढ़ा होगया हूं तोभी अपना बल सुनाता हूं कि पलभरमें समुद्रको उलाँघ जा सक्ता हूं ॥ १ ॥ मैं एक दिन बद्रीनाथमें आया तौ वहां एक मनभावन चरित्र देखा कि ॥ २ ॥

ब्रह्मज्ञान इक विप्र सुनावै ❀ श्रीभगवतसों ध्यान लगावै ॥ ३ ॥
असुर एक तिहि मारन आवा ❀ ताकहँ देखि कोप महि छावा ॥ ४ ॥

---

(१) यह कथा ३१७ वें पत्रकी टिप्पणीमें देखो.

एक ब्राह्मण ब्रह्मज्ञान सुनाया करता था और भगवान्‌से प्रेम करता था ॥ ३ ॥ एक राक्षस उसे मारनेको दौड़ा उसे देखकर मुझे क्रोध आगया ॥ ४ ॥

योजन तीस शैल परमाना ❀ लै उखाड़ दौड़ा बलवाना ॥ ५ ॥
सो मारेसि मम पदतल आई ❀ नहीं तनिक मोहिं मूर्च्छा आई ॥ ६ ॥

(तब वह) बलवान् तीस योजन प्रमाणके पर्वतको उखाड़कर दौड़ा ॥ ५ ॥ सो मेरे पैरोंमें मारा पर मुझे तनकभी मूर्च्छा न आई ॥ ६ ॥

तब मैं क्रोध कियो अतिभारी ❀ चीर फाँक दोउ महिपर डारी ॥ ७ ॥
शैलप्रहार चरनमें लागी ❀ योजन पाँच जाउँ मैं भागी ॥ ८ ॥

तब मैंने बड़ा भारी क्रोध करके उसकी दो फांक चीरकर पृथ्वीपर डाल दीं ॥ ७ ॥ उस पहाडकी चोट पैरमें लगी है तौभी मैं पांच योजन भाग जा सक्ता हूं ॥ ८ ॥

विकट नाम वानर अस भाखा ❀ योजन बीस जाउँ बल राखा ॥ ९ ॥
नील कहा मैं चालिस जाऊँ ❀ अधिक जात निजमनहिं डराऊँ ॥ १० ॥

विकट नाम बन्दरने यह कहा कि मैं बीस योजन जानेका बल रखताहूं ॥ ९ ॥ नीलने कहा मैं चालीस योजन जा सक्ता हूं और अधिक जानेमें अपने मनमें हिचकता हूं ॥ १० ॥

दुर्धर हाथ जोड़ यों कहही ❀ मम बल पंचाशतकर अहही ॥ ११ ॥
नल बोल्यो दुहुँ बाहँ उठाई ❀ योजन साठ लाँघ हम जाई ॥ १२ ॥

दुर्धरने हाथ जोड़कर यों कहा कि मुझमें पचास (योजन जानेका) बल है ॥११॥ नल दोनों भुजा उठाकर बोला कि हम साठ योजन उलाँघ जाते हैं ॥ १२ ॥

दधिमुख ऐसे बचन सुनावत ❀ असीसात योजन हम धावत ॥ १३ ॥
यह सुनि कह अंगद युवराजू ❀ इतने बलते होत न काजू ॥ १४ ॥

दधिमुखने यह बचन कहा कि हम सत्तासी योजनतक दौड़ते हैं ॥ १३ ॥ यह सुनकर अंगद युवराजने कहा कि इतने बलसे काम न होगा ॥ १४ ॥

इति क्षेपक.

अंगद कहा जाउँ मैं पारा ❀ जिय संसय कछु फिरती बारा ॥ १५ ॥
जांबवंत कह तुम सबलायक ❀ किमि पठवौं सबहीकर नायक ॥ १६ ॥

अंगदने कहा पार तौ मैं जासक्ता हूं (परन्तु) लौटती वारका मनमें सन्देह है ॥ १५ ॥ जाम्बवंतने कहा तुम सब योग्य हो अर्थात् जाकर लौट आना कोई बड़ी बात नहीं, परन्तु तुम तौ सबके नायक हो, भला तुझे कैसे भेजूं ? ॥ १६ ॥

---

(१) यहां अंगदने, अपनी शक्तिको छुपाकर, नहीं लौटनेके बहानेसे इसलिये संदेह प्रगट किया है कि मनमें जानते हैं कि रामजीने अंगूठी तौ हनूमान्‌को दी है, उन्हींसे काम होगा। और कुछ बात नहीं है, और जो लोग ऐसा कहते हैं कि अंगदको किसी ऋषिका शाप था कि जिस जलको लाँघोगे उसे फिर न लाँघ सकोगे सो जो यह होता तौ संदेह क्यों करते, वह तौ निश्चय मने कर देते। कोई कहता है अंगदको अक्षय? कुमार रोक लेता, क्योंकि एकगुरुके चेले थे। कोई कहता है शक्तिके सन्मुख जा सक्ते थे, लौटती वार शक्तिकी ओर पीठ होनेसे नहीं लौट सक्ते इत्यादि अनेक मिथ्या और निर्मूल अर्थ कर पाठकोंको भ्रममें गेरते हैं कारण केवल अंगूठीकाही है. जब रामजीकी आज्ञा हनूमान्‌के लिये हुई फिर अंगद आदि कैसे जासक्ते हैं?

कहा ऋक्षपति सुनु हनुमाना ❀ कस चुप साधि रहा बलवाना ॥ १७ ॥
पवनतनय बल पवनसमाना ❀ बुधिविवेकविज्ञाननिधाना ॥ १८ ॥

फिर जाम्बवंतने कहा हे हनूमान्! सुनो तुम ऐसे बलवान् होकर कैसी चुप साध गये हो ॥१७॥ हे पवनके पुत्र! तुम्हारा बल पवनहीके समान है और बुद्धि ज्ञान और विज्ञानके समुद्र हो ॥१८॥

कौन सो काज कठिन जगमाहीं ❀ जो नहिं तात होइ तुमपाहीं ॥ १९ ॥

हे प्यारे! कौनसा काम संसारमें कठिन है जो तुमसे नहीं हो सक्ता ॥ १९ ॥

अथ क्षेपक.

जन्मकथा तव बरनौं भाई ❀ सादर सुनहु सकल मन लाई ॥ २० ॥

हे भाई! तुम्हारे जन्मकी कथा वर्णन करता हूं तुम आदरसहित मन लगाकर सब सुनो ॥ २० ॥

नाम हिमाचल गिरिकर राजा ❀ कश्यपऋषि रह सहित समाजा ॥ २१ ॥
दिग्गजसम इकहाथी आयो ❀ ऋषिगणसन्मुख तुरतहिं धायो ॥ २२ ॥

हिमाचल नाम पर्वतोंका राजा है जहां समाजसमेत कश्यप ऋषि रहते थे ॥ २१ ॥ (वहां) दिशाओंके हाथीके समान एक हाथी आया और शीघ्रही ऋषियोंके समूहके सामने दौड़ा ॥ २२ ॥

ताहि देख सब ऋषी डराने ❀ भजे सकल लै जीव पराने ॥ २३ ॥
केशरिनाम तहाँकर ईशा ❀ ताहि वध्यो तव तात हरीशा ॥ २४ ॥

उसे देखकर सब ऋषि डरे और (अपना २) जीव लेकर सब भागे ॥ २३ ॥ केशरी नाम वहांके स्वामी और तुम्हारे पिता तथा बन्दरोंके राजाने तब उस हाथीको मारडाला ॥ २४ ॥

तात प्रबल बल मुनिन्ह सराहा ❀ कह्यो माँग बर जो चित चाहा ॥ २५ ॥
सुन तपसिनकी सुन्दर बानी ❀ कह केशरी सुनहु मुनि ज्ञानी ॥ २६ ॥
जो प्रसन्न मोपर मुनिराई ❀ पुत्र देहु बलमें अधिकाई ॥ २७ ॥

हे प्यारे! (उसके) बड़े बलकी मुनियोंने सराहना की और कहा कि जो मनमें आवै वही वर माँग ॥ २५ ॥ तपस्वियोंकी सुन्दर वाणी सुनकर केशरीने कहा हे ज्ञानी मुनीश्वर! सुनो ॥ २६ ॥ हे मुनिराज! जो मुझपर प्रसन्न हो तौ अधिक बलवान् पुत्र दो ॥ २७ ॥

दो०–बेगवंत मारुतसरिस, बुधिबलरूपनिधान। ❀
एवमस्तु कह ऋषि गये, केशरि सुनि सुख मान ॥ ४८ ॥ ❀

जो पवनके समान शीघ्र चलनेवाला, बुद्धि, बल और रूपकी खान हो. तब ऋषि एवमस्तु अर्थात् ऐसाही हो कहकर चले गये और केशरीने सुनकर सुख माना ॥ ४८ ॥

चौ०–अंजनि नाम तुम्हारी माता ❀ रूप अपार जगत विख्याता ॥ १ ॥
करि सिँगार अति रूप बनाई ❀ बैठी सो पर्वतपर जाई ॥ २ ॥

अञ्जनी नाम तुम्हारी माताका अपार रूप संसारमें प्रगट है ॥ १ ॥ (सो वह) शृंगार करके अतिरूप बनाय पर्वतपर बैठी थी ॥ २ ॥

रूप देख मारुत सुख सर्सो ❀ चीर उडाय चाह तिहिं पर्सो ॥ ३ ॥
सती अंजनी देख अनीता ❀ शापहिं लगी देन विपरीता ॥ ४ ॥

(उसके) स्वरूपको देखकर पवन सुखसे चला और उसके वस्त्रको उड़ाकर उसे स्पर्श किया चाहता था ॥ ३ ॥ पतिव्रता अंजनी (उस पवनकी) अनीति देख बुरा शाप देने लगी ॥ ४ ॥

तब मारुत कह मीठी बानी ❀ क्षमा करहु अपराध भवानी ॥ ५ ॥
तव पति मम सम पुत्रहिं याँचा ❀ मुनिबानी नहिं होय असाँचा ॥ ६ ॥
अब मोकहँ कछु शाप न दीजै ❀ कछुक दिवस बीते सुज लीजै ॥ ७ ॥

तब पवनने मीठी वाणीसे कहा हे भवानी ! अपराध क्षमा करो ॥ ५ ॥ तुम्हारे पतिने मेरे समान पुत्र माँगा है सो मुनीश्वरकी वाणी झूंठी नहीं होसक्ती ॥ ६ ॥ (इसलिये) अब मुझको कुछ शाप न दीजिये और कुछ दिन बीतनेपर पुत्र लीजिये ॥ ७ ॥

दो०–चतुर्दशी कातिकबदी, सुभघड़ि अरु सनिवार ॥
तादिन तुम प्रगटे सुनहु, बीच सकल संसार ॥ ४९ ॥

(हे हनूमान् !) सुनो. कार्तिकवदी चौदस शनीचरवार शुभ घड़ी थी जिस दिन तुम संसारमें उत्पन्न हुये ॥ ४९ ॥

चौ०–मुनिअसीस अरु मरुवरदाना ❀ हनुमत तुम जाये बलवाना ॥ १ ॥
इकदिन मात अंक लै ठाढ़ी ❀ करत प्यार उर आनँद बाढ़ी ॥ २ ॥

हे हनूमान् ! मुनीश्वरके आशीर्वाद और पवनके वरदानसे तुम बलवान् उत्पन्न हुये ॥ १ ॥ एक दिन तुम्हारी माता तुमको गोदीमें लिये खड़ी हुई हृदयमें आनन्दसे प्यार कर रही थी कि ॥ २ ॥

देखेउ सूर्य उदय भा लाला ❀ तड़क स्वर्ग पहुँचे तत्काला ॥ ३ ॥
सूर्य गहनको भुजा उठाई ❀ तबहीं कोप कियो सुरराई ॥ ४ ॥

(तुमने) सूर्यको लाल उदय हुआ देखा और उसी समय तुम तड़ककर स्वर्गमें पहुँचे ॥ ३ ॥ और ज्यों सूर्य पकड़नेको भुजा उठाई त्योंही इन्द्रने क्रोध किया ॥ ४ ॥

कर गह वज्र तुरत जब मारा ❀ मूर्च्छिपरे तुम पवनकुमारा ॥ ५ ॥
चिह्न भयो ठोड़ीमहँ लगकर ❀ पर्‍यो नाम हनुमान सुकपिवर ॥ ६ ॥

हे हनूमान् ! जब हाथमें वज्र पकड़कर मारा तौ तुम शीघ्रही मूर्च्छित होकर गिरपड़े ॥ ५ ॥ तुम्हारी, ठोडीमें लगकर चिह्न होगया इससे हे सुन्दर वानर तुम्हारा नाम हनूमान पड़गया ॥ ६ ॥

मूर्च्छा जगी तुम्हार सुजाना ❀ कियो भक्ष रविकहँ बलवाना ॥ ७ ॥
अंधकार सब जगमहँ भयऊ ❀ दान धर्म जप तपसब गयऊ ॥ ८ ॥

हे चतुर बलवान् ! (जब) तुम्हारी मूर्च्छा जगी तौ सूर्यको भक्षण कर गये ॥७॥ सब संसारमें अंधेरा होगया और दान, धर्म, जप, तप, सब जाता रहा ॥ ८ ॥

अस्तुति करत देव सब भागे ❀ लख चरित्र शिव भाषन लागे ॥ ९ ॥
देव धरहु मनमें तुम धीरा ❀ जाय कहहु केसरिसों पीरा ॥ १० ॥

सब देवता स्तुति करते हुये दौड़े और (यह) चरित्र देखकर महादेवजी कहने लगे कि ॥ ९ ॥ हे देवताओ ! तुम मनमें धीरज रक्खो और जाकर केशरीसे (अपना) कष्ट कहो ॥ १० ॥

दो०–सिव ब्रह्मादिक इन्द्र सब, सुर आये, तिहिं पास ॥
पवनदेव पुनि कोप कर, रोक लियो सब स्वास ॥ ५० ॥

महादेव, ब्रह्मा और इन्द्र आदि सब देवता उनके पास आये फिर पवनदेवने क्रोध करके सबकी श्वास रोकली ॥ ५० ॥

चौ०–सब मिलि सुर अस कहैं बखानी ❀ भई चूक हमसों अनजानी ॥ १ ॥
स्वास खोल रवि करौ प्रकासू ❀ सुखप्रद बहै बयार सुतासू ॥ २ ॥

सब देवता मिलकर ऐसे वर्णन कर कहने लगे कि हमसे विना जाने भूल हुई ॥ १ ॥ (अब) श्वास खोलकर सूर्यका प्रकाश करो जिससे सुखदायक पवन चलै ॥ २ ॥

तुमकर सुयस हमहिं कल्याना ❀ जो चाहियमाँगिय बरदाना ॥ ३ ॥
सब देवनकी बानी सुनकर ❀ कहै केसरी मनमहँ गुनिकर ॥ ४ ॥

इससे तुम्हारा सुन्दर यश और हमारा कल्याण होगा और जो चाहो वही वरदान माँगो ॥ ३॥ सब देवताओंकी वाणी सुनकर केशरी मनमें विचारकर कहने लगा कि ॥ ४ ॥

अजर अमर अरु कर बलवाना ❀ मोरपूतसम नहिं कोउ आना ॥ ५ ॥
रामभक्तिमहँ होइ परायन ❀ यह वरदान देहु चतुरानन ॥ ६ ॥

(हनूमानको) अजर अमर और ऐसा बलवान् करो जो मेरे पुत्रकी बराबर कोई दूसरा बलवान् न हो ॥ ५ ॥ और रामचन्द्रजीकी भक्तिमे लगा रहै, हे ब्रह्मन् ! यह वरदान दो ॥ ६ ॥

एवमस्तु कह देव सिधाये ❀ सुन यह बचन कपी हरषाये ॥ ७ ॥
हुइहै सिद्ध रामकर काजू ❀ समुझिपरा चित कह युवराजू ॥ ८ ॥

एवमस्तु अर्थात् ऐसाही हो यह कहकर देवता चले गये यह वचन सुनकर बानर प्रसन्न हुये॥७॥ युवराज (अंगद)कहने लगा कि (मैंने) मनमें समझ लिया कि रामचन्द्रजीका काम सिद्ध होगा॥८॥

दो०–जांबवंत कपि जब कही, उत्पत्ति पवनकुमार ॥ ❀
सुन हर्षे नल नील हरि, द्विविद आदि कपि झार ॥ ५१ ॥ ❀

जब जाम्बवंतने हनूमानकी उत्पत्ति बन्दरोंसे कही तौ सुनकर नल, नील, हरि, और द्विविद आदि सब बन्दर प्रसन्न हुये ॥ ५१ ॥

पुनि हनुमन्त समुद्रकहँ, देखन लग्यो बहोरि ॥ ❀
जाम्बवान कहतो भयो, सुनहु वचन अब मोरि ॥ ५२ ॥ ❀

फिर हनूमान् समुद्रको देखने लगे तौ जाम्बवंत कहने लगा कि अब मेरे बचन सुनो ॥ ५२ ॥

इति क्षेपक.

चौ०–रामकाजलगि तव अवतारा ❀ सुनि कपि भयउ पर्वताकारा ॥ १ ॥
कनकबरन तनु तेज बिराजा ❀ मानहुँ अपर गिरिन्हकर राजा ॥ २ ॥

(हे हनूमान् !)तुम्हारा अवतार रामचन्द्रजीके कामके लिये हुआ है; यह सुनकर हनूमान् फूलकर पर्वतके समान होगये ॥ १ ॥ सुवर्णकेसे रंग समान शरीरमें ऐसा तेज विराजमान् है मानों दूसरे पर्वतोंका राजा है ॥ २ ॥

सिंहनाद करि बारहिं बारा ❀ लीलहि लांघौं जलनिधि खारा ॥ ३ ॥
सहित सहाय रावनहिं मारी ❀ आनौं इहाँ त्रिकूट उखारी ॥ ४ ॥

वारंवार सिंहनाद करके बोले कि खारी समुद्रको लीलाहीसे उलाँघ जाऊँ ॥ ३ ॥ और सहायको समेत रावणको मारकर त्रिकूटको उखाड़कर यहां ले आऊँ ॥ ४ ॥

जाम्बवंत मैं पूछौं तोहीं ❀ उचित सिखावन दीजै मोहीं ॥ ५ ॥
इतना करहु तात तुम जाई ❀ सीतहिं देखि कहौ सुधि आई ॥ ६ ॥
तब निजभुजबल राजिवनैना ❀ कौतुक लागि संग कपिसैना ॥ ७ ॥

हे जाम्बवंत ! मैं तुमसे पूछता हूं सो मुझको योग्य शिक्षा दीजिये (कि मैं लंका जाकर क्या २ काम करूँ) ॥ ५ ॥ (उसने कहा) हे प्यारे ! तुम जाकर इतना करो कि सीताजीको देख आकर समाचार कहो ॥ ६ ॥ फिर तौ कमलनयन (भगवान्) अपनी भुजाओंके बलसे और खेलके लिये बन्दरोंकी सेनाको साथ लेकर आप सब कर लेंगे ॥ ७ ॥

छं०-कपिसेन संग सँहारि निसिचर रामसीतहिं आनिहैं ।
त्रैलोक्यपावन सुजस सुर मुनि नारदादि बखानिहैं ॥
जो सुनत गावत कहत समुझत परमपद नर पावहीं ।
रघुबीरपदपाथोजमधुकर दास तुलसी गावहीं ॥ १ ॥

रामचन्द्रजी बन्दरोंकी सेनाको साथ लेकर और राक्षसोंको मारकर सीताजीको लावेंगे और इस पवित्र सुन्दर यशको देवता और नारद आदि मुनीश्वर तीनों लोकोंमें वर्णन करेंगे ॥ जो मनुष्य रामचन्द्रजीके चरित्रको सुनते, गाते, कहते और समझते है वे परमपद अर्थात् मोक्ष पाते हैं. इसलिये रघुनाथजीके चरणकमलोंको भ्रमरके समान तुलसीदासभी गाते हैं ॥ १ ॥

दो०-भवभेषज रघुनाथजस, सुनैं जो नर अरु नारि ॥
तिनकर सकल मनोरथ, सिद्ध करहिं त्रिपुरारि ॥ ५३ ॥

रामजीका यश संसाररूपी रोगकी औषधि है; इसको जो स्त्री-पुरुष सुनैंगे उनकी सब कामनाओंको महादेवजी पूरी करैंगे ॥ ५३ ॥

सो०-नीलोत्पलतनुस्याम, कामकोटिसोभा अधिक ॥
सुनिय तासु गुनग्राम, जासु नाम अघखगबधिक ॥ ५४ ॥

नीले कमलके समान श्याम शरीरवाले और करोड़ों कामदेवोंसेभी विशेष शोभावाले (जो भगवान्) हैं उन्हींके गुणोंके समूहोंको सुनिये जिनका नाम पापरूपी पक्षियोंको बहेलियेके समान है ॥ ५४ ॥

दोहा.

मंगल करन सुविमल अति, रामचरण उर धारि ॥
किष्किन्धा सोपानकी, टीका करी सुधारि ॥ १ ॥
बान बान निधि जगतपति, शुभ संवतसर जान ॥
मास मार्गशिर शुक्ल छठि, पूरण कियो बखान ॥ २ ॥

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विमलज्ञानवैराग्यसंपादनो नाम तुलसीदासकृतचतुर्थः सोपानः किष्किन्धाकांडः समाप्तः ॥ ४ ॥

शुभं भवतु ॥

श्रीसीतारामचन्द्रार्पणमस्तु ॥

इति किष्किन्धाकांडं समाप्तम् ॥

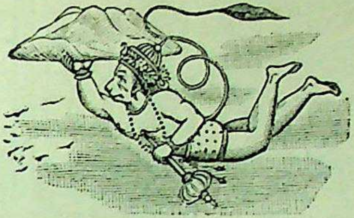

श्रीगोस्वामी

तुलसीदासकृतरामायणम्

पीयूषधाराहिंदीभाषाटीकासहितम्।

(सुंदरकांडम्)

अशोकवाटिका.

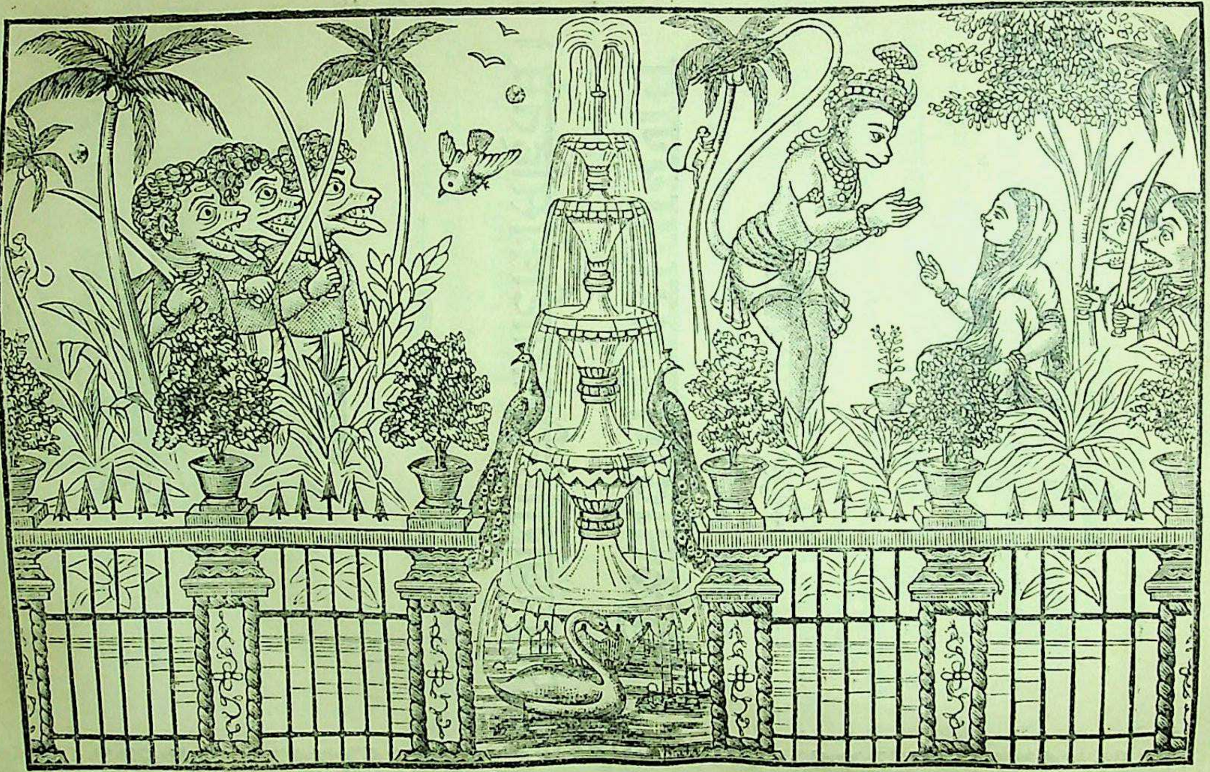

॥ श्रीः ॥

श्रीगोस्वामी

तुलसीदासकृतरामायणम् ।

सुंदरकांडप्रारंभः ।

मंगलाचरणम्.

श्लोकः–शांतं शाश्वतमप्रमेयमनघं गीर्वाणशांतिप्रदं
ब्रह्माशंभुफणींद्रसेव्यमनिशं वेदांतवेद्यं विभुम् ॥
रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुं मायामनुष्यं हरिं
वंदेऽहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूडामणिम् ॥ १ ॥
नान्या स्पृहा रघुपते हृदयेऽस्मदीये
सत्यं वदासि च भवानखिलांतरात्मा ॥
भक्तिं प्रयच्छ रघुपुंगव निर्भरां मे
कामादिदोषरहितं कुरु मानसं च ॥ २ ॥
अतुलितबलधामं स्वर्णशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम् ॥
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिवरदूतं वातजातं नमामि ॥ ३ ॥

छन्द हरिगीतिका.

वामांगमें गिरिजा विराजति, सुरसरित शिरतें ढरैं ।
वर भालमें विधुबाल गल विष, व्यालराज हिये धरैं ॥
सुरवर विभूषण भूति सबकर, ईश तनु शशिछवि हरैं ।
सोइ शर्व सुन्दरकांडकी, भाषा ललित पूरण करैं ॥ १ ॥

श्लोकार्थः–सर्वदा शान्त, प्रमाण और पापरहित, देवताओंको शान्ति देनेवाले, ब्रह्मा शम्भु और शेषनागसे निरन्तर सेवित, वेदान्तसे जाननेके योग्य, अत्यन्तसमर्थ, देवताओंके गुरु मायासे मनुष्यरूप धारण करनेवाले विष्णु भगवान्, करुणानिधान, रघुकुलमें श्रेष्ठ तथा राजाओंके शिरो-

मणि ऐसे रामचन्द्रनामक जगदीश्वरको मैं प्रणाम करताहूं ॥ १ ॥ हे रामचन्द्रजी ! मैं सत्य २ कहताहूं कि मेरे हृदयमें और कोई कांक्षा नहीं है और फिर आप अन्तर्यामी हो घटघटकी जानतेहो अतएव हे रघुकुलनायक ! मुझे पूर्णभक्ति दीजिये और मेरे चित्तको काम क्रोध लोभ मोहसे रहित कीजिये ॥ २ ॥ अतुलबलके धाम, सुमेरुपर्वतके समान सुन्दर शरीरवाले, दैत्यरूपी वनको अग्निरूप, ज्ञानियोंमें अग्रगण्य, संपूर्ण गुणोंके निधान, वानरोंके स्वामी और श्रीरामके श्रेष्ठदूत ऐसे वायुपुत्र हनुमान्जीको मैं प्रणाम करताहूं ॥ ३ ॥

चौ०–जांबवंतके बचन सुहाये ❀ सुनि हनुमानहृदय अति भाये ॥ १ ॥
तबलगि मोहिं परखिहहु भाई ❀ सहि दुख कंद मूल फल खाई ॥ २ ॥

जांबवंतके सुन्दर वचन सुनकर हनूमान्के मनको बहुत प्यारे लगे (और हनुमान् बोले कि) ॥ १ ॥ हे भाई ! कन्द मूल फल खाकर और दुःख सहकर तबतक मेरी राह देखना कि ॥ २ ॥

जबलगि आवौं सीतहिं देषी ❀ होइ काज मन हर्ष बिसेषी ॥ ३ ॥
अस कहि नाइ सबनकहँ माथा ❀ चलेउ हर्षि हिय धरि रघुनाथा ॥ ४ ॥

जबतक मैं सीताजीको देख आऊँ । कार्य सिद्ध होगा, क्योंकि मेरे मनमें विशेष आनन्द होरहा है ॥ ३ ॥ ऐसे कह सबको माथा नवाय रामचन्द्रजीको हृदयमें रखके प्रसन्नतासे चले ॥ ४ ॥

सिंधुतीर इक सुंदर भूधर ❀ कौतुक कूद चढ़े तेहि ऊपर ॥ ५ ॥
बार बार रघुबीर सँभारी ❀ तरकेउ पवनतनय बलभारी ॥ ६ ॥

समुद्रके किनारे एक सुन्दर पर्वत था जिसके ऊपर खेलसे कूदकर चढ़ गये ॥ ५ ॥ और वारंबार रामचन्द्रजीका स्मरण करके अतिवली हनूमानजी गर्जे ॥ ६ ॥

जेहिं गिरि चरन देइ हनुमंता ❀ सो चलिगयउ पताल तुरंता ॥ ७ ॥
जिमि अमोघ रघुपतिके बाना ❀ ताही भाँति चला हनुमाना ॥ ८ ॥
जलनिधि रघुपतिदूत बिचारी ❀ कह मैनाक होउ स्रमहारी ॥ ९ ॥

जिस पहाड़पर हनुमान्जीने चरण रक्खे वह शीघ्रही मानों पातालको चला गया–भाव यह कि नीचेको धसका जाता था ॥ ७ ॥ जैसे रामचन्द्रजीके वाण निष्फल नहीं होते उसी प्रकार हनूमान् चले ॥ ८ ॥ समुद्रने रामचन्द्रजीका दूत विचारके कहा, हे मैनाक! (तुम इनके) परिश्रमको दूर करनेवाले बनो ॥ ९ ॥

सो०–सिंधुवचन सुनि कान, तुरत उठेउ मैनाक तब ॥ ❀
कपिकहँ कीन्ह प्रनाम, पुलकित तनु कर जोरि करि ॥ १ ॥ ❀

तब समुद्रके वचन सुनकर मैनाक प्रसन्न होकर तुरंत उठा और उसने शरीरमें पुलकायमान हो हाथ जोड़कर हनूमान्को प्रणाम किया ॥ १ ॥

दो०–हनूमान तेहिं परसि कर, पुनि तेहिं कीन्ह प्रनाम ॥ ❀
रामकाज कीन्हैं बिना, मोहिं कहाँ बिस्राम ॥ १ ॥ ❀

हनूमान् उससे मिले और फिर प्रणाम करके उससे कहा कि रामचन्द्रजीका काम किये विना मुझको कहाँ चैन है ? ॥ १ ॥

चौ०–जात पवनसुत देवन देषा ❀ जानाचहँ बल बुद्धि बिसेषा ॥ १ ॥
सुरसा नाम अहिनखी माता ❀ पठयहु आइ कही तेहिं बाता ॥ २ ॥

हनूमान्‌को जाते हुये देख देवता उसकी बड़ी बुद्धि और बलको जानना चाहते हैं ॥ १ ॥ सर्पोंकी माता कि जिसका नाम सुरसा था उसको भेजा तौ उसने आकर (हनूमानसे यह) बात कही कि २

आजु सुरन मोहिं दीन्ह अहारा ❀ सुनि हँसि बोला पवनकुमारा ॥ ३ ॥
रामकाज करि फिरि मैं आवौं ❀ सीताकर सुधि प्रभुहि सुनावौं ॥ ४ ॥

आज देवताओंने मुझे भोजन दिया है. यह सुनकर हनूमान् हँसकर बोले कि ॥३॥ रामचन्द्रजीका काम करके (जब) मैं फिर लौट आऊँ और सीताजीके समाचार भगवान्‌को सुना दूं ॥ ४ ॥

तब तुव बदन पैठिहौं आई ❀ सत्य कहौं मोहिं जानदे माई ॥ ५ ॥
कवनिहु जतन देइ नहिं जाना ❀ ग्रससि न मोहिं कहा हनुमाना ॥ ६ ॥

तब आकर तेरे मुखमें धसूंगा. हे माता सत्य कहता हूं मुझे जाने दे ॥५॥ परन्तु वह किसी उपायसे नहीं जाने देती; तौ हनूमान्‌ने कहा मुझे खा क्यों नहीं लेती है? (यह सुनकर) ॥ ६ ॥

जोजनभरि तेहिं बदन पसारा ❀ कपितनु कीन्ह द्विगुन विस्तारा ॥ ७ ॥
सोरह जोजन मुख तेइँ ठयऊ ❀ तुरत पवनसुत बत्तिस भयऊ ॥ ८ ॥

उसने योजन[1]भरका लंबा मुख फैलाया, तौ हनूमान्‌ने (अपने) शरीरको दूना बढ़ाया ॥ ७ ॥ तब सुरसाने सोलह योजनका मुख बनाया तौ हनूमान् शीघ्रही बत्तीस योजनके हो गये ॥ ८ ॥

जस जस सुरसा बदन बढ़ावा ❀ तासु द्विगुन कपिरूप दिखावा ॥ ९ ॥
सतजोजन तेइ आनन कीन्हा ❀ अतिलघु रूप पवनसुत लीन्हा ॥ १० ॥

और जैसा २ सुरसा मुख बढ़ाती गई उससे दूना रूप हनूमान् दिखाते गये ॥ ९ ॥ फिर सुरसाने सौ योजनका मुख किया तौ हनूमानने बहुत छोटा रूप धारण कर लिया ॥ १० ॥

बदन पैठि पुनि बाहर आवा ❀ माँगी बिदा ताहि सिर नावा ॥ ११ ॥
मोहिं सुरन्ह जेहि लागि पठावा ❀ बुधि बल मर्म तोर मैं पावा ॥ १२ ॥

और मुखमें धँसकर फिर बाहर आगये और उसको माथा नवाकर बिदा माँगने लगे ॥ ११ ॥ (तब सुरसा बोली) कि मुझे देवताओंने जिसलिये भेजा था सो तेरी बुद्धि और बलका भेद मैंने पालिया ॥ १२ ॥

दो०–रामकाज सब करिहहु, तुम बलबुद्धिनिधान ॥
आसिष दै सुरसा चली, हर्षि चले हनुमान ॥ २ ॥

तुम बल और बुद्धिके समुद्र हो और रामचन्द्रजीके सब काम करोगे–ऐसे आशीर्वाद देकर सुरसा चली और हनूमान्‌भी प्रसन्न होकर चले ॥ २ ॥

चौ०–निसिचर एक सिंधुमहँ रहई ❀ करि माया नभके खग गहई ॥ १ ॥
जीव जंतु जे गगन उड़ाहीं ❀ जल बिलोकि तिनकी परिछाहीं ॥ २ ॥

एक राक्षस समुद्रमें रहता था और माया करके आकाशके पक्षियोंको पकड़ लिया करताथा ॥१॥ और जो जीवजंतु आकाशमें उड़ते थे उनकी छाया जलमें देखकर ॥ २ ॥

गहै छाहँ सक सो न उड़ाई ❀ इहिबिध सदा गगनचर खाई ॥ ३ ॥
सोई छल हनूमानतें कीन्हा ❀ तासु कपट कपि तुरतहिं चीन्हा ॥ ४ ॥

छाया पकड़ लेता तौ वह (पक्षी) नहीं उड़ सक्ताथा, इस भांति सदा पक्षियोंको खाया करता था ॥३॥ उसने वही कपट हनूमान्‌से किया तो उसका छल हनूमान्‌ने शीघ्रही पहिचान लिया ॥४॥

---

(१) योजन चार कोसका होता है.

ताहि मारि मारुतसुत बीरा ❀ बारिधिपार गयउ मतिधीरा ॥ ५ ॥
तहाँ जाइ देखीभा बनसोभा ❀ गुंजत चंचरीक मधुलोभा ॥ ६ ॥

और उसे मारकर मनमें धीरज रख वीर हनुमान् समुद्रके पार गये ॥ ५ ॥ वहां जाकर वनकी शोभा देखी कि मधुके लोभी भौंरे गूँज रहे हैं ॥ ६ ॥

नाना तरु फल फूल सुहाये ❀ खगमृगबृंद देखि मन भाये ॥ ७ ॥
सैल बिसाल देखि यक आगे ❀ तापर कूदि चढ़ेउ भय त्यागे ॥ ८ ॥

भांति २ के वृक्ष फल शोभायमान् हैं और पक्षी और हरिणोंके समूह देखतेही मनको प्यारे लगे ॥ ७ ॥ आगे एक वड़ा पर्वत देख निडर हो उसपर कूदकर चढ़ गये ॥ ८ ॥

उमा न कछु कपिकी अधिकाई ❀ प्रभुप्रताप जो कालहिं खाई ॥ ९ ॥
गिरिपर चढ़ि लंका तेइ देषी ❀ कहि न जाइ अतिदुर्ग बिसेषी ॥ १० ॥
अति उतंग जलनिधि चहुँ पासा ❀ कनककोटकर परम प्रकासा ॥ ११ ॥

(महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! यह हनुमानकी कुछ वड़ाई नहीं है, भगवान्का प्रताप है; जो कालकोभी खालेता है ॥ ९ ॥ पर्वतपर चढ़कर उन्होंने लंका देखी तौ वर्णन नहीं किया जाता; बहुत बड़ा किला बना हुआ है ॥ १० ॥ और उसके चारों ओर समुद्र और बहुत ऊंचा सुवर्णका परकोटा अत्यंत प्रकाशमान है ॥ ११ ॥

छं०-कनकोट बिचित्रमनिकृत सुंदरायत अतिघना । ❀
चौहट्ट हट्ट सुबट्ट बीथी चारुपुर बहुविध बना ॥ ❀
गजबाजिखिच्चरनिकर पदचर रथवरूथनि को गनैं ॥ ❀
बहुरूप निसिचरजूथ अतिबल सेन बरनत नहिं बनैं ॥ १ ॥ ❀
बन्न बाग उपवन बाटिका सर कूप बापी सोहहीं । ❀
नर नाग सुर गंधर्वकन्यारूप मुनिमन मोहहीं ॥ ❀
कहुँ मल्ल देहबिसाल सैलसमान अतिबल गर्जहीं । ❀
नाना अखारन्ह भिरहिं बहुबिध एक एकन्हि तर्जहीं ॥ २ ॥ ❀
करि जतन भटकोटिन्ह बिकटतनु नगरचहुँ दिसि रच्छहीं । ❀
कहुँ महिष मानुष धेनु खर अज खग निसाचर भच्छहीं ॥ ❀
इहि लागि तुलसीदास इनकी कथा संक्षेपहि कही । ❀
रघुबीरसरतीरथ सरित तनु त्यागि गति पैहैं सही ॥ ३ ॥ ❀

सुन्दर मणियोंसे जड़ा हुआ सोनेका कोट बहुत वड़ा लंबा और चौड़ा शोभायमान् है चौराहे, बाजार, सुन्दर मार्ग और गलियोंसे नगर बहुत भांतिसे सुन्दर बना है. हाथी, घोड़े, और खच्चरोंके समूह तथा पैदल और रथोंके समूहोंको कौन गिन सक्ता है, और वड़े २ बलवान् अनेक रूपके राक्षसोंकी सेना वर्णन करते नहीं बनती ॥ १ ॥ बन, बाग, बगीचा, बगीची, सरोवर, कुयें और बावड़ी शोभायमान् हैं. मनुष्य, नाग, देवता, और गंधर्वोंकी कन्या (अपने) रूपसे मुनियोंके मनको मोहित करती हैं कहीं बहुत बलवान् पर्वतके समान बड़ी देहवाले मल्ल गर्जते हैं और अनेक अखाड़ोंमें बहुत भांति लड़ते हुये एक दूसरेको पछाड़ते हैं ॥ २ ॥ भयंकर शरीरवाले करोड़ों योद्धा यत्न करके नगरकी चारों ओर रखवाली करते हैं. कहीं राक्षस, भैंस, मनुष्य, गाय,

गधा, बकरा, और पक्षियोंको भक्षण करते हैं इस शांति तुलसीदासने इनकी कथा संक्षेपसे कही है, हे रामचन्द्रजीके बाणरूपी तीर्थकी नदीमें शरीर त्यागकर अवश्य मुक्तिको पावेंगे ॥ ३ ॥

दो०-पुर रखवारे देखि बहु, कपि मन कीन्ह विचार ॥
अतिलघु रूप धरौं निसि, नगर करौं पैसार ॥ ३ ॥

(हनूमानजीने) नगरके बहुतसे रखवाले देखकर मनमें विचार किया कि रातको बहुत छोटा रूप धरके नगरमें प्रवेश करूं ॥ ३ ॥

चौ०-मसकसमान रूप कपि धरी ॐ लंका चले सुमिरि नरहरी ॥ १ ॥
नाम लंकिनी एक निसिचरी ॐ सो कह चलेसि मोहिं निन्दरी ॥ २ ॥

हनूमान्‌जी मच्छेरके समान अर्थात् बहुत छोटा रूप रखकर और नरोंमें सिंहरूप ऐसे

---

(१) यहां लोग बहुधा शंका करते हैं कि हनूमानने मच्छरका रूप नहीं धारा, बिलावका धरा क्योंकि मच्छरका रूप धरनेसे अंगूठीका पास रखना सिद्ध नहीं हो सक्ता और बिलावने तौ मुखमें धर लीनी-यह वैसीही मूर्खताकी शंका है जैसी कोई २ किया करते हैं कि जो रावणके दश शिर थे तौ करवट कैसे लेता होगा ? उसका समाधान यह है कि मशक नाम बिलावका तौ किसी जगह नहीं पाया जाता, मशक नाम तौ मच्छरकाही है, मशकका बिलाव अर्थ करना निपट निर्मूल है. लोग बिलावका अर्थ इसलिये करने लगे हैं कि वाल्मीकिरामायणमें लिखा है कि हनूमानने वृषदंशक अर्थात् बिलावके बराबर रूप धरा. यथा "सूर्ये चास्तं गते रात्रौ देहं संक्षिप्य मारुतिः । वृषदंशकमात्रोऽथ बभूवाद्भुतदर्शनः" अर्थात् सूर्यास्तके समय हनूमान् देहको बिलावके बराबर छोटा करके बड़े दर्शनीय हो गये. इसलिये मशक शब्दसे तौ नहीं पर वृषदंशक शब्दसे बिलावका अर्थ स्वीकार करैंगे. परन्तु शंका करनेवालोंको जो यह सूझ रहा है कि मच्छरका रूप धरा तौ अंगूठी कहां धरी होगी, और बिलावने तौ मुखमें धरली होगी सो मशकसमान रूपसे यह तात्पर्य नहीं है कि मच्छरबन गये, अर्थ तो यह है कि मच्छरके बराबर छोटा रूप धरा अर्थात् अतिलघु रूप धरा छोटा रूप धरनेका अध्यात्मरामायणका प्रमाण लो, यथा श्लोक—

"धृत्वा सूक्ष्मं वपुर्द्वारं प्रविवेश प्रतापवान् । तत्र लंकापुरी साक्षाद्राक्षसीवेषधारिणी ॥
प्रविशंतं हनूमंतं दृष्ट्वा लंका व्यतर्जयत् । कस्त्वं वानररूपेण मामनादृत्य लंकिनीम्-॥"

अर्थात् जब रात हुई तब हनुमान् छोटा रूप धारणकर लंकामें घुसे, तहां साक्षात् लंकाही राक्षसीका वेष धारण करके प्रवेश करते हुये हनुमानका तिरस्कार करके बोली कि तुम कौन हो ? और वानररूपसे मुझ लंकिनीका अनादर करके कहां जाते हो ? और बहुधा संसारमें ऐसी कहावतभी है कि वह मनुष्य उसके सामने भुनगा है. इसका यही अर्थ होगा कि वह बहुतही छोटा है. अतएव मशकसमान कहनेसे बहुत छोटा रूप धरना सिद्ध हुआ; और वाल्मीकिरामायणके अनुसारभी यही अर्थ है कि बिलावके समान छोटा रूप धरा न कि बिलाव बनगया; और अंगूठी मुखमें धर ली-मूलश्लोकमें विचारो-

"देहं संक्षिप्य मारुतिः" इस पदसे पूर्ण स्पष्ट है कि "मारुतिः" कहिये हनूमानने "देहं" कहिये देहको "संक्षिप्य" कहिये छोटी करके, कितनी छोटी करके कि "वृषदंशकमात्रः" अर्थात् बिलाव जितना बड़ा होता है उतनी. अब मच्छरका रूप धरलिया इसका औरभी खंडन करते हैं कि जो मच्छरका रूप धरा था तौ फिर बताइये वह मच्छरका रूप कबतक धरा रहा, और जो बिलावका रूप धरा था तौ फिर बिलावसे हनूमान् कब हुये ? इसकाभी तौ प्रमाण चाहिये और हनूमानने मच्छरके समान कपिकाही अति छोटा रूप धरा उसका प्रमाण तौ यह है कि "मुष्टिक एक ताहि कपि हनी" जो बिलाव हो जाते तौ गोसांईजी यों लिखते कि "पंजा इक बिलाव तिहिं मार्‍यो" मुष्टिक क्यों लिखते-बिलावके लिये मुष्टिक शब्द नहीं आ सक्ता. फिर लंकाने कहा है कि "विकल होय जब कपिके मारे-" जो यहां हनूमान् बिलावके रूपमें होते तो लंकाको बिलाव कहना था, क्योंकि बिलावको कोई कपि नहीं कह सक्ता, और 'मशकसमान रूप कपि धरी' इस चौपाईसे लेकर 'देखेउँ नयन रामकर दूता' यहांतक कहीं यह नहीं आया कि बिलावसे फिर हनूमान् होगये. और छोटा रूप धरा उसका प्रमाण तौ फिर आगेकी चौपाईमें है कि 'अति लघु रूप धरेऊ

रघुनाथजीका स्मरण करके लंकाको चले ॥ १ ॥ लंकिनीनामक एक राक्षसी थी वह बोली कि मेरा निरादर करके कहाँ जाता है ? ॥ २ ॥

जानसि नाहिं मरम सठ मोरा ❀ मोर अहार लंककर चोरा ॥ ३ ॥
मुष्टिक एक ताहि कपि हनी ❀ रुधिर बमत धरनी ढनमनी ॥ ४ ॥

अरे मूर्ख ? मेरे भेदको नहीं जानता कि लंकाका चोरही मेरा भोजन है ॥ ३ ॥ हनूमानजीने उसके एक ऐसा घूंसा मारा कि वह पृथ्वीपर गिरकर लोहू बहाने लगी ॥ ४ ॥

पुनि संभारि उठी सो लंका ❀ जोरि पानि करि विनय ससंका ॥ ५ ॥
जब रावनहिं ब्रह्म बर दीन्हा ❀ चलत बिरंचि कहा मोहिं चीन्हा ॥ ६ ॥

पर फिर वह लंकिनी सम्हालकर उठी और हाथ जोड़कर डरके मारे विनती करने लगी कि ॥ ५ ॥ (हे हनुमान् !) जब रावणको ब्रह्माने वरदान दिया था तौ ब्रह्माने मुझे चलते २ यह पहिचान बतादी थी कि ॥ ६ ॥

बिकल होसि जब कपिके मारे ❀ तब जानेसि निसिचर संहारे ॥ ७ ॥
तात मोर अतिपुन्य बहूता ❀ देखेउँ नयन रामकर दूता ॥ ८ ॥

जब तू वन्दरके मारनेसे व्याकुल हो जाय तब जान लीजिओ कि राक्षस मारे जायँगे ॥ ७ ॥ सो हे प्यारे ! मेरा बड़ा भारी पुण्य है जो रामचन्द्रजीके दूतको नेत्रोंसे देखा ॥ ८ ॥

दो०–तात स्वर्ग अपवर्गसुख, धरिय तुला इकअंग ॥ ❀
तुलै न ताहि सकल मिलि, जो सुख लव सत्संग ॥ ४ ॥ ❀

हे प्यारे ! स्वर्ग और मोक्षके सुखको तराजूके एक पलड़ेमें रक्खै तौभी वह सब मिलकर सत्संगके सुखके एक विपलके बराबरभी नहीं हो सक्ता ॥ ४ ॥

चौ०–प्रविसि नगर कीजै सब काजा ❀ हृदय राखि कोसलपुर राजा ॥ १ ॥
गरल सुधा रिपु करै मिताई ❀ गोपद सिंधु अनल सितलाई ॥ २ ॥

(अब) रामचन्द्रजीको हृदयमें रखकर और नगरमें प्रवेशकर सब काम करो ॥ १ ॥ (देखो उसको) विष तौ अमृत हो जाता है, वैरी मित्रता करने लगते हैं, समुद्र गौके खुरके समान छोटा हो जाता है और अग्नि ठंडी हो जाती है ॥ २ ॥

गरुअ सुमेरु रेनुसम ताही ❀ राम कृपा करि चितवहिं जाहीं ॥ ३ ॥
अतिलघु रूप धरेउ हनुमाना ❀ पैठा नगर सुमिरि भगवाना ॥ ४ ॥

और उसको भारी सुमेरु धूलके समान हो जाता है कि जिसे रामचन्द्रजी कृपा करके देखते

हनुमाना'–'पैठा नगर सुमिरि भगवाना' अर्थात् अति लघुरूप जो धरा था उसी रूपसे भगवान्का स्मरण कर नगरमें घुसे. इसलिये हनूमानने मच्छरके समान छोटा रूप धरा यह सिद्ध हुआ और मच्छर या बिलाव बन गये ये अर्थ निर्मूल और कपोलकल्पित हैं, पाठकजन पक्षपातरहित होकर अच्छी तरह विचारैं ॥

(२) नरहरिका लोग नृसिंह आदि जो अर्थ करते हैं सो वृथा हैं, यहां रामजीसेही तात्पर्य है क्योंकि वे हनुमानजीके इष्टदेव हैं ॥

(१) अध्यात्मरामायणमें कहा है कि ब्रह्माजीने इस लंकिनीसे यह कह दिया था कि २८ वें त्रेतायुगमें नारायण दशरथके पुत्र होकर प्रकट होंगे; उनकी योगमाया जनकके यहां होगी, फिर पृथ्वीके भार दूर करनेके लिये म रामसे प्रार्थना करूंगा, फिर रामको वनवास होगा फिर सीताजीको रावण हरैगा, फिर सुग्रीवसे मित्रता होगी, उसके दूत सीताको ढूँढने जायँगे उनमेंसे एक वानर तुझे मारकर जब बेहोश कर दे तभी जान लेना कि लंकाका नाश हुआ ॥

हैं ॥ ३ ॥ हनूमानने जो बहुत छोटा रूप रख लिया था उससे भगवान्‌का स्मरण करके नगरमें प्रवेश किया ॥ ४ ॥

मंदिर मंदिर प्रति करि सोधा ❀ देखे जहँ तहँ अगनित जोधा ॥ ५ ॥
गयउ दसानन मंदिरमांहीं ❀ अतिबिचित्र कहि जात सो नाहीं ॥ ६ ॥

हरएक घरमें ढूंढ़ खोज करी और जहां तहां अनगिनती योद्धा देखे ॥ ५ ॥ (फिर) रावणके महलमें गये वह ऐसा चित्रविचित्र था कि कहा नहीं जाता ॥ ६ ॥

सयन किए देखा कपि तेही ❀ मंदिरमहँ न दीख बैदेही ॥ ७ ॥
भवन एक पुनि दीख सुहावा ❀ हरिमंदिर तहँ भिन्न बनावा ॥ ८ ॥
रामनामअंकित गृह सोहा ❀ बरनि न जाइ देखि मन मोहा ॥ ९ ॥

हनूमानजीने उस (रावण) को सोते हुये देखा (परन्तु) सीताजी उस महलमेंभी नहीं दीखीं ॥ ७ ॥ फिर एक सुन्दर महल दीखा, जहां भगवानका मंदिर अलग बना हुआ था ॥ ८ ॥ और उसपर रामनाम लिख रहे थे; ऐसे सुहावने घरका वर्णन नहीं हो सक्ता, देखतेहीं मनको मोहित करता था ॥ ९ ॥

दो०–रामनामअंकित गृह, सोभा बरनि न जाइ ॥ ❀
नव तुलसीके बृंद बहु, देखि हर्ष कपिराइ ॥ ५ ॥ ❀

रामनाम लिखे हुये घरकी शोभा वर्णन नहीं की जाती, (और वहां) तुलसीके बहुतसे नवीन वनोंको देखकर कपिराय (हनूमान्) प्रसन्न हो गये ॥ ५ ॥

चौ०–लंका निसिचरनिकर निवासा ❀ इहाँ कहाँ सज्जनकर वासा ॥ १ ॥
मनमहँ तर्क करन कपि लागे ❀ तांहीसमय बिभीषन जागे ॥ २ ॥

लंकामें राक्षसोंका समूह रहता है, यहां सज्जनका वास कहाँ ! ॥ १ ॥ (जब) हनूमान् मनमें यह विचार करने लगे तौ उसी समय विभीषण जगे ॥ २ ॥

राम राम तेहिं सुमिरन कीन्हा ❀ हृदय हर्षि कपि सज्जन चीन्हा ॥ ३ ॥
इहसन हठि करिहौं पहिंचानी ❀ साधुते होइ न कारजहानी ॥ ४ ॥

उन्होंने रामके नामका स्मरण किया तौ हनूमान् मनमें प्रसन्न हुये और उसे सज्जन जाना ॥ ३ ॥ (और विचारा कि) चाहे जो होय इससे पहिचान करूंगा क्योंकि साधुसे काममें हानि नहीं होती ॥ ४ ॥

बिप्ररूप धरि बचन सुनावा ❀ सुनत बिभीषन उठि तहँ आवा ॥ ५ ॥
करि प्रनाम पूछी कुसलाई ❀ बिप्र कहहु निजकथा बुझाई ॥ ६ ॥

और ब्राह्मणका रूप रखकर बचन सुनाये तौ सुनतेही बिभीषण वहां उठ आये ॥ ५ ॥ और प्रणाम करके कुशल पूछी कि हे ब्राह्मण ! अपनी कथा समझा कर कहो ॥ ६ ॥

की तुम हरिदासनमें कोई ❀ मोरे हृदय प्रीति अतिहोई ॥ ७ ॥
की तुम राम दीनअनुरागी ❀ आयहु मोहिं करन बड़भागी ॥ ८ ॥

क्या तुम हरिभक्तोंमेंसे कोई हो ? मेरे मनमें बड़ा प्रेम होता है ॥ ७ ॥ अथवा तुम भगवान्‌के भक्त और उनसे प्रेम करनेवाले हो और मुझे बड़भागी करने आये हो ? ॥ ८ ॥

दो०–तब हनुमंत कही सब, रामकथा निजनाम ॥ ❀
सुनत जुगल तनु पुलकि अति, मगन सुमिरि गुनग्राम ॥६॥ ❀

तब हनूमानने अपना नाम और रामचन्द्रजीकी सब कथा कही सुनकर दोनोंजने शरीरमें बहुत पुलकायमान् हुये और गुणोंके स्थान (भगवान्) का स्मरण कर मगन होगये ॥ ६ ॥

चौ०–सुनहु पवनसुत रहनि हमारी ❀ जिमि दसनन्हमहँ जीभ बिचारी ॥ १ ॥
तात कबहुँ मोहिं जानि अनाथा ❀ करिहहिं कृपा भानुकुलनाथा ॥ २ ॥

(बिभीषण बोले) हे हनूमान् ! सुनो जैसे दांतोंमें बिचारी जीभ रहती है (इसी भांति यहां) हमारा रहना है ॥ १ ॥ हे प्यारे ! मुझे अनाथ जान कभी रामचन्द्रजी दयाभी करैंगे ॥ २ ॥

तामस तनु कछु साधन नाहीं ❀ प्रीति न पदसरोज मनमाहीं ॥ ३ ॥
अब मोहिं भा भरोस हनुमंता ❀ बिनु हरिकृपा मिलहिं नहिं संता ॥ ४ ॥

तामसी शरीरसे न तौ कुछ साधन होता है और न (भगवान्के) कमलसमान चरणोंमें स्नेह है ॥ ३ ॥ पर हे हनूमान् ! अब मुझे भरोसा हुआ. क्योंकि भगवानकी दयाके विना साधु नहीं मिलते ॥ ४ ॥

जो रघुबीर अनुग्रह कीन्हा ❀ तो तुम मोहिं दरस हठि दीन्हा ॥ ५ ॥
सुनहु बिभीषन प्रभुकै रीती ❀ करहिं सदा सेवकपर प्रीती ॥ ६ ॥

जो रामचन्द्रजीने कृपा की तौ तुमने मुझे हठसे दर्शन दिया ॥ ५ ॥ (हनूमान् कहने लगे) हे विभीषण ! सुनों भगवानकी यह रीति है कि दासपर सदा प्रीति करते हैं ॥ ६ ॥

कहहु कवन मैं परमकुलीना ❀ कपि चंचल सबही विधि हीना ॥ ७ ॥
प्रात लेइ जो नाम हमारा ❀ ता दिन ताहि न मिलै अहारा ॥ ८ ॥

कहो मैं कौंनसा अच्छा कुलवान् हूं, चंचल बन्दर और सभी भांति नीच हूं ॥ ७ ॥ और जो सबेरेही हमारा नाम ले, तौ उसदिन उसे भोजनभी नहीं मिलै ॥ ८ ॥

दो०–अस मैं अधम सखा सुनु, मोहूंपर रघुबीर ॥ ❀
कीन्हीं कृपा सुमिरि गुन, भरे बिलोचननीर ॥ ७ ॥ ❀

हे मित्र ! सुनो मैं ऐसा नीच हूं (तौभी) मुझपर रामचन्द्रजीने दया की (इस प्रकार उनके) गुणोंका स्मरण करते हुये नेत्रोंमें जल भर आया ॥ ७ ॥

चौ०–जानतहूँ अस स्वामि बिसारी ❀ फिरि ते काहे न होहिं दुखारी ॥ १ ॥
इहिबिधि कहत रामगुनग्रामा ❀ पावन स्रवनसुखद बिस्रामा ॥ २ ॥

जो जानकरभी ऐसे स्वामीको त्यागें फिर वे क्यों न दुखी हो ? अर्थात् होहींगे ॥ १ ॥ इस भांति कानोंको सुख देनेवाले आनन्ददायक और पवित्र रामचन्द्रजीके गुणोंको कहने लगे ॥ २ ॥

पुनि सब कथा बिभीषन कही ❀ जेहि बिध जनकसुता तहँ रही ॥ ३ ॥
तब हनुमंत कहा सुनु भ्राता ❀ देखा चहौं जानकीमाता ॥ ४ ॥

फिर विभीषणने सब कथा कही कि जिस प्रकार सीताजी वहां रहतीथीं ॥ ३ ॥ तब हनूमानने कहा हे भाई ! सुनो सीतामाताको देखा चाहता हूं ॥ ४ ॥

युक्ति बिभीषन सकल सुनाई ❀ चलेउ पवनसुत बिदा कराई ॥ ५ ॥
धरि सोइ रूप गयउ पुनि तहँवा ❀ बन असोक सीता रहि जहँवा ॥ ६ ॥

विभीषणने सब युक्ति बतलाइ तौ हनूमान् (उनसे) बिदा होकर चले ॥ ५ ॥ फिर वही (छोटा) रूप रखकर वहां गये, वहां अशोकवनमें सीताजी रहतीथी ॥ ६ ॥

देखि मनहिं मन कीन्ह प्रनामा ❀ बैठे बीति गई निसि जामा ॥ ७ ॥
कृस तनु सीस जटा इक बेनी ❀ जपति हृदय रघुपतिगुनस्रेनी ॥ ८ ॥

(जानकीको) देखकर (हनुमानने) मनहीमनमें[1] प्रणाम किया और बैठे हुये पहरभर रात बीत गई ॥ ७ ॥ (जानकीजीका) शरीर दुबला हो रहा है, मस्तकपर जटाओंकी एक लट लटकरही है और मनमें रामचन्द्रजीके गुणोंके समूहको जप रहीं हैं ॥ ८ ॥

दो०–निजपद नयन दिये मन, रामचरनमहँ लीन ॥ ❀
परमदुखी भा पवनसुत, निरखि जानकी दीन ॥ ८ ॥ ❀

नेत्र अपने चरणोंमें दे रक्खे हैं और मन रामचन्द्रजीके चरणोंमें लवलीन हो रहा है ऐसी दुखी सीताजीको देखकर हनूमानजी बहुत दुखी हुये ॥ ८ ॥

चौ०–तरुपल्लवमहँ रहा लुकाई ❀ करै विचार करौं का भाई ॥ १ ॥
तेहि अवसर रावन तहँ आवा ❀ संग नारि बहु किये बनावा ॥ २ ॥

वृक्षके पत्तोंमें छिप रहे और विचार करने लगे कि भाँई[2] क्या करूं ? ॥ १ ॥ उसी[3] समय रावणभी बहुतसी शृंगार की हुई स्त्रियोंको साथ लेकर वहां आया ॥ २ ॥

बहुविध खल सीतहिं समुझावा ❀ साम दाम भय भेद दिखावा ॥ ३ ॥
कह रावन सुन सुमुखि सयानी ❀ मंदोदरी आदि सब रानी ॥ ४ ॥

दुष्ट रावणने सीताजीको बहुत भांति समझाया और साम[4], दाम, दंड, भेद दिखाया ॥३॥ रावण कहने लगा हे सुन्दर मुखवाली ! चतुर (सीता) ! सुन मन्दोदरीआदि सब रानियोंको ॥ ४ ॥

तब अनुचरी करौं प्रन मोरा ❀ एकबार बिलोकु मम ओरा ॥ ५ ॥
तृन धरि ओट कहति बैदेही ❀ सुमिरि अवधपति परमसनेही ॥ ६ ॥

तेरी टहलनी कर दूंगा यह मेरी प्रतिज्ञा है. तू एकवार मेरी ओर देख ॥ ५ ॥ सीताजी तिनकेकी[5] ओट करके बड़े प्रेमी रामचन्द्रजीका स्मरण कर कहने लगीं ॥ ६ ॥

सुनु दसमुख खद्योतप्रकासा ❀ कबहुँ कि नलिनी करहिं बिकासा ॥ ७ ॥
अस मन समुझति कहति जानकी ❀ खल सुधि नहिं रघुबीरबानकी ॥ ८ ॥
सठ सूने हरि आनसि मोहीं ❀ अधम निलज्ज लाज नहिं तोहीं ॥ ९ ॥

हे रावण ! सुन कहीं पटवीजनेके प्रकाशसेभी कमलिनी खिलती है, अर्थात् नहीं खिलती. भाव यह हुआ कि तू पटवीजनेके समाय है और मेरे नेत्र कमलिनीके समान हैं, वे सूर्यके समान रामचन्द्रजीकेही सामने खुल सक्ते हैं, अर्थात् जब वह आवेंगे तब मैं उनकी ओर देखूंगी, तेरे सामने

---

(१) मनही मनमें इसलिये प्रणाम किया कि चिल्लानेका मौका नहीं था, राक्षसियां सावधानीसे पहिरा दे रहीं थीं ॥

(२) भाईका संबोधन वृक्षके लियेभी हो सक्ता है. क्योंकि वानरका वृक्षपर अधिक प्रेम होता है ॥ अथवा भाईभाईका संबोधन साधारण कहनेमेंभी कह उठते हैं–(३) अध्यात्मरामायणमें लिखा है कि–रावणको स्वप्न हुआ कि रामजीका भेजा हुआ लघुरूप धरकर कोई वानर आया है इसी कारण रावण सीताको डराने गया कि जिसमें वानर सीताको दुखी देखकर रामजीसे जाकर कहै–

(४) साम-प्रीति करना । दाम-लोभ दिखाना । भय-दंड आदि । भेद आपसमें विगाड़ करा देना.

(५) तृणकी ओट इसलिये करी कि पतिव्रता स्त्री परपुरुषसे दूबरदू वात नहीं करती है इस कारण तृणको मध्यमें किया. जैसा अध्यात्मरामायणमें कहा है कि "रावणस्य वचः श्रुत्वा सीतामर्षसमन्विता । उवाचाधोमुखी भूत्वा निधाय तृणमन्तरे ॥ १ ॥" और जो शंका करो कि तृणकीही ओट क्यों करी और वस्तुकी ओट क्यों न करी ? सो इसलिये कि रावणको सूचना देतीं हैं कि तू रामके सामने तृणके समान है ॥

क्या देखूं ? ॥ ७ ॥ ऐसे मनमें समझती हुई सीताजी कहती हैं अरे दुष्ट ! तुझे रामचन्द्रजीके वाणकी याद नहीं (कि जिसके विषयमें तुझसे मारीचने कहा था) ॥ ८ ॥ और अरे शठ ! तू मुझे अकेलेमें चुरालाया. अरे पापी ! निर्लज्ज तुझे लाज नहीं आती ॥ ९ ॥

दो०–आपुहिं सुनि खद्योतसम, रामहिं भानुसमान ॥ ❀
परुष वचन सुनि काढ़ि असि, बोला अति खिसिआन ॥९॥ ❀

अपनेको पटबीजनेके समान और रामचन्द्रजीको सूर्यको समान ऐसे कठोर वचन सुनकर तलवार निकालली और बड़ा खिसियाकर बोला ॥ ९ ॥

चौ०–सीता तैं मम कृत अपमाना ❀ काटौं तव सिर कठिन कृपाना ॥ १ ॥
नाहित सपदि मानु मम बानी ❀ सुमुखि होत नतु जीबनहानी ॥ २ ॥

हे सीता ! तैंने मेरा निरादर किया सो तेरे शिरको कठिन तलवारसे काटूंगा ॥ १ ॥ हे सुन्दरमुखी ! जल्दीसे मेरी बात मानले नहीं तौ जीनेमें हानि है (अर्थात् तेरा मरण होगा) २ ॥

स्यामसरोजदामसम सुंदर ❀ प्रभुभुजकरिकरसम दसकंधर ॥ ३ ॥
सो भुज कंठ कि तव असि घोरा ❀ सुन सठ अस प्रमान प्रन मोरा ॥ ४ ॥

(सीताजी बोलीं) हे रावण ! श्यामकमलकी मालाके समान सुन्दर और हाथीकी सूँड़के समान जो भगवान्‌की भुजा है ॥ ३ ॥ सो हे शठ ! सुन यातौ वही भुजा, या तेरी कठिन तलवार (मेरे) कंठमें पड़ैगी ऐसी मेरी पक्की प्रतिज्ञा है, (अब आगे सीताजी तलवारसे कहती हैं कि) ॥ ४ ॥

चंद्रहास हरु मम परितापा ❀ रघुपतिबिरहअनलसंतापा ॥ ५ ॥
सीतलनिसि तव असिवरधारा ❀ कह सीता हरु मम दुख भारा ॥ ६ ॥

हे चन्द्रहास[1] ! रामचन्द्रजीके वियोगरूपी अग्निसे उत्पन्न हुआ जो (मेरा) दुःख है उस दुःखको दूर कर ॥ ५ ॥ फिर सीताजी (रावणसे) कहती हैं कि शीतल रात्रि अर्थात् शरदपूर्णिमाकी रात्रिके समान चमकती हुई जो तेरी तलवारकी पैनी धार है उससे मेरे भारी दुःखको दूर कर ॥ ६ ॥

सुनत बचन पुनि मारन धावा ❀ मयतनया कहि नीति बुझावा ॥ ७ ॥
कहेसि सकल निसिचरिन बुलाईं ❀ सीतहिं बहुबिध त्रासहु जाई ॥ ८ ॥
मास दिवसमहँ कहा न माना ❀ तौ मैं मारब कठिन कृपाना ॥ ९ ॥

वचन सुनतेही फिर मारनेके लिनेदौडा तौ मन्दोदरीने नीति [2]कह कर समझाया ॥ ७ ॥ (फिर रावणने) सब राक्षसियोंको बुलाकर कहा कि (तुम) जाकर सीताको बहुत भांति दुःख दो ॥ ८ ॥ जो महीनेभरमें कहना न माना तौ मै कठिन तलवारसे मारूंगा ॥ ९ ॥

दो०–भवन गयेउ दसकंध तब, इहाँ निसाचरिवृंद ॥ ❀
सीतहिं त्रास दिखावहीं, धरहिं रूप बहुमंद ॥ १० ॥ ❀

जब रावण महलोंको गया तब यहां अनेक राक्षसियां बहुत बुरे २ रूप धारण करके सीताजीको भय दिखाने लगीं ॥ १० ॥

चौ०–त्रिजटा नाम राक्षसी एका ❀ रामचरत निपुन विवेका ॥ १ ॥
सबहिं बुलाय सुनायसि सपना ❀ सीतहिं सेह करौ हित अपना ॥ २ ॥

---

(१) चन्द्रहास नाम तलवारका है. जैसा अमरकोशमें कहा है कि "खड्गे तु निस्त्रिंशचन्द्रहासासिरिष्टयः" अर्थात् खड्ग निस्त्रिंश चन्द्रहास और असिरिष्ट आदि तलवारके नाम हैं ॥ यहां वियोगरूपी अग्निके प्रसंगवशसे चन्द्रहास शब्द लिखा है. (२) यह समझाया कि "अवध्यां च स्त्रियं प्राहुस्तिर्यग्योनिगतामपि" अर्थात् पक्षीआदिकी स्त्रीकोभी न मारना चाहिये ॥

त्रिजटा नाम राक्षसी जो रामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रीतिवान् और ज्ञानमें चतुर थी ॥ १ ॥ (उसने) सबको बुलाकर स्वप्न सुनाया और कहा कि सीताजीकी सेवा कर अपना कल्याण करो ॥ २ ॥

सपने वानर लंका जारी ❀ जातुधानसेना सब मारी ॥ ३ ॥
खरआरूढ़ नगन दससीसा ❀ मुंडितसिर खंडित भुजबीसा ॥ ४ ॥

स्वप्नेमें वन्दरोंनें लंका जलाई है और राक्षसोंकी सब सेना मार डाली है ॥ ३ ॥ और रावण नंगा गधेपर चढ़ा हुआ घुटी खोपड़ी और बीसों बांह जिसकी कटी हैं ॥ ४ ॥

यहिबिध सो दक्षिणदिसि जाई ❀ लंका मनहुँ बिभीषन पाई ॥ ५ ॥
नगर फिरी रघुबीरदोहाई ❀ तब प्रभु सीतहिं बोलि पठाई ॥ ६ ॥

इस भांतिसे वह तौ दक्षिणदिशाको जा रहा है और लंका मानों बिभीषणने पाई है ॥ ५ ॥ और नगरमें रामचन्द्रजीकी दुहाई फिर गई है और तब भगवान्ने सीताको बुला भेजा है ॥ ६ ॥

यह सपना मैं कहौं विचारी ❀ होइहै सत्य गए दिनचारी ॥ ७ ॥
तासु बचन सुनि ते सब डरीं ❀ जनकसुताके चरनन परीं ॥ ८ ॥

इस स्वप्नेको मैं विचारकर कहती हूं कि चार दिन पीछे सत्य होगा ॥ ७ ॥ उसके वचन सुनकर वे सब डरीं और सीताजीके चरणोंमें गिरीं ॥ ८ ॥

दो०–जहँ तहँ गईं सकल मिलि, सीताके मन सोच ॥ ❀
मास दिवस बीते जु मोहिं, मारिहि निसिचर पोच ॥ ११ ॥ ❀

और सब मिलकर जहां तहां चली गई तौ सीताके मनमें सोच हुआ कि नीच राक्षस महीना भर वीतनेपर मुझे मार डालेगा ॥ ११ ॥

चौ०–त्रिजटासन बोली कर जोरी ❀ मातु बिपतिसंगिनि तैं मोरी ॥ १ ॥
तजौं देह करु वेगि उपाई ❀ दुसह विरह अब नहिं सहिजाई ॥ २ ॥

(सीताजी) त्रिजटासे हाथ जोड़कर बोलीं कि हे माता! विपत्तिमें तूही मेरा संग देनेवाली है ॥ १ ॥ सो शीघ्रही वह उपाय कर कि जीससे देह छोडूं. क्योंकि अब कठिन वियोग नहीं सहा जाता ॥ २ ॥

आनु काठ रचु चिता बनाई ❀ मातु अनल तुम देहु लगाई ॥ ३ ॥
सत्य करहु मम प्रीति सयानी ❀ सुनै को स्रवनशूलसम बानी ॥ ४ ॥

हे माता! काठ लाकर और चिता बनाकर (उसमें) तू अग्नि लगा दे ॥ ३ ॥ तूतौ चतुर है, मेरी प्रीतिको सच्ची कर. क्योंकि कानोंको त्रिशूलके समान लगनेवाली वाणीको कौन सुनें? ॥ ४ ॥

सुनत बचन पद गहि समुझावा ❀ प्रभुप्रताप बल सुजस सुनावा ॥ ५ ॥
निसि न अनल मिलु राजकुमारी ❀ अस कहि सो निजभवन सिधारी ॥ ६ ॥

(त्रिजटाने) बचन सुनतेही चरण छूकर (सीताको) समझाया और भगवान्का प्रताप[१] बल और सुन्दर कीर्त्ति सुनाई कि ॥ ५ ॥ हे राजकुमारी! सुनो रातमें अग्नि नहीं मिलती–ऐसे कहकर वह (त्रिजटा) अपने घरको[२] गई ॥ ६ ॥

---

(१) यह प्रताप सुनाया कि देखो रामजीने जयंतके पीछे सींकका वाण छोड़ा था तब जयंतको १४ भुवनोंमें किसीने सहारा नहीं दिया इत्यादि. (२) यहां त्रिजटा इसलिये घरको टरक गई है कि जबतक मैं यहां रहूंगी तबतक हनूमान प्रगट न होंगे. और हनूमानका आना तौ त्रिजटाको अपने स्वप्नेसेही निश्चय है ॥

कह सीता विधि भा प्रतिकूला ❀ मिलै न पावक मिटै न सूला ॥ ७ ॥
देखियत प्रगट गगन अंगारा ❀ अवनि न आवत एकौ तारा ॥ ८ ॥

सीताने कहा ब्रह्मा उलटा होगया, जो न तौ अग्नि मिलै और न दुःख दूर हो ॥७॥ क्योंकि आकाशमें प्रत्यक्ष अंगारे दिखाई देते हैं और पृथ्वीपर एकभी तारा नहीं गिरता ॥ ८ ॥

पावकमय ससि स्रवत न आगी ❀ मानहुँ मोहिं जानि हतभागी ॥ ९ ॥
सुनहु बिनय मम बिटप असोका ❀ सत्यनाम करु हरु मम सोका ॥ १० ॥

चन्द्रमामें[1] अग्नि भरी है पर वह मुझको मानों भाग्यहीन जानकर अग्नि नहीं बरसाता ॥ ९ ॥ हे अशोकवृक्ष ! मेरी प्रार्थना सुन और मेरे दुःखको दूर करके (अपने) नामको सत्य कर ॥१०॥

नूतन किसलय अनलसमाना ❀ देहु अगिनि मम करहु निदाना ॥ ११ ॥
देखि परम बिरहाकुल सीता ❀ सो छिन कपिहि कल्पसम बीता ॥१२॥

तेरे नवीन पत्ते अग्निके समान हैं सो अग्नि देकर मेरा अंत कर (अर्थात् मुझे जलादे) ॥११॥ सीताजीको वहुत विरहमें व्याकुल देखकर वह क्षण हनुमान्जीको कल्पके वरावर वीता ॥ १२ ॥

दो०–कपि करि हृदय बिचार, दीन्ह मुद्रिका डारि तब ॥ ❀
जनु असोक अंगार, दीन्ह हर्षि उठि कर गहेउ ॥ २ ॥ ❀

तव (हनुमान्जी) ने मनमें विचार करके अंगूठी डाल दी, मानों अशोकवृक्षने अंगारा दिया (और सीताजीने उसे) प्रसन्नतासे उठकर हाथमें उठालिया ॥ २ ॥

चौ०–तब देखी मुद्रिका मनोहर ❀ रामनाम अंकित अति सुन्दर ॥ १ ॥
चकित चितै मुद्रिक पहिंचानी ❀ हर्ष बिषाद हृदय अकुलानी ॥ २ ॥

तव मनके हरनेवाली अँगूठी देखी कि जिसपर रामका नाम खुदा हुआ था और बड़ी सुन्दर थी ॥ १ ॥ चित्तमें चकित होकर अँगूठीको पहिचाना और प्रसन्न होकर [2]हर्ष और दुःखके मारे हृदयमें अकुलाईं ॥ २ ॥

जीति को सकै अजय रघुराई ❀ मायाते असि रची न जाई ॥ ३ ॥
सीता मन बिचार कर नाना ❀ मधुर बचन बोले हनुमाना ॥ ४ ॥

बिचारने लगी कि रामचन्द्रजीको कौन जीत सक्ता है? वे तौ अजय हैं, और मायासे ऐसी अँगूठी बन नहीं सक्ती ॥ ३ ॥ जब सीताजी मनमें वहुतसे विचार करने लगीं तव हनुमान् मीठे बचन बोले ॥४॥

रामचंद्रगुन बरनन लागे ❀ सुनतहि सीताकर दुख भागे ॥ ५ ॥
लागी सुनै स्रवन मन लाई ❀ आदिहिते सब कथा सुनाई ॥ ६ ॥

और रामचन्द्रजीके गुणोंका वर्णन करने लगे (जिनको) सुनतेही सीताजीके दुःख दूर हो गये ॥ ५ ॥ कान और मन लगा कर सुनने लगीं तौ हनूमान्जीने आदिसे अर्थात् जबसे रघुनाथजी मिले थे और जो जो उपाय करते रहे सो सब कथा कही ॥ ६ ॥

स्रवनामृत जिहिं कथा सुनाई ❀ कहि सो प्रगट होत किन भाई ॥ ७ ॥
तब हनुमंत निकट चलि गयऊ ❀ फिरि बैठी मन बिसय भयऊ ॥ ८ ॥

(सीताने कहा कि) हे भाई ! जिसने कानोंको अमृतसमान सुख देनेवाली कथा सुनाई वह

---

(१) यहां विरहकी परमव्याकुलता स्पष्ट करी है कि चन्द्रमा अग्निमय दीखता है. (२) हर्ष इस बातका कि अँगूठी मिलीं और दुःख यह कि कैसे आई, रामजीको मारकर तौ कोई नहीं ले आया ? ॥

कहो प्रकट क्यों नहीं होता ? ॥ ७ ॥ तव हनूमान् पास चले गये तौ (सीताजी) फिरकर वैठ गईं और उनके मनमें सन्देह[1] हुआ ॥ ८ ॥

रामदूत मैं मातु जानकी ❀ सत्य सपथ करुनानिधानकी ॥ ९ ॥
यह मुद्रिका मातु मैं आनी ❀ दीन्ह राम तुमकहँ सहिदानी ॥ १० ॥
नर बानरहिं संग कहु कैसे ❀ कही कथा संगति भइ जैसे ॥ ११ ॥

(हनूमान् कहने लगे) हे सीतामाता ! मैं रामचन्द्रजीका दूत हूं. करुणाके समुद्र (भगवान्) की सच्ची सौगंद (खाताहूं) ॥ ९ ॥ हे माता ! यह अंगूठी मैंही लाया हूं, रामचन्द्रजीने तुमको निशानी दीहै ॥१०॥ (सीताजी बोलीं) कहो मनुष्य और बन्दरका संग कैसे हो सक्ता है ? फिर हनूमान्जीने जिस भांति साथ हुआ था सो कथा कही ॥ ११ ॥

दो०–कपिबरबचन सप्रेम सुनि, उपजा मन बिस्वास ॥ ❀
जाना मन क्रम बचन यह, कृपासिंधुकर दास ॥ १२ ॥ ❀

(हनूमान्जी) के सुन्दर वचन प्रेमसे सुनकर (सीताजीके) मनमें भरोसा हुआ और जाना कि यह मन क्रम वचनसे दयाके समुद्र (भगवान्) का सेवक है ॥ १२ ॥

चौ०–हरिजन जानि प्रीति अति बाढ़ी ❀ सजलनयन पुलकावलि ठाढ़ी ॥ १ ॥
बूड़त बिरहजलधि हनुमाना ❀ भयहु तात मोकहँ जलयाना ॥ २ ॥

भगवान्का दास जानकर बहुत स्नेह बढा, नेत्रोंमें जल भर आया और रोम खड़े होगये (और बोली कि) ॥ १ ॥ हे हनूमान् ! वियोगरूपी समुद्रमें डूबती हुई मुझको (बचानेके लिये) तुम नावके समान हो गये ॥ २ ॥

अब कहु कुसल जाऊँ बलिहारी ❀ अनुजसहित सुखभवन खरारी ॥ ३ ॥
कोमलचित कृपालु रघुराई ❀ कपि केहि हेतु धरी निठुराई ॥ ४ ॥

मैं बलिहारी जाऊँ अब सुखके स्थान और खर दैत्यके शत्रु भगवान्की लक्ष्मणसमेत कुशल कहो ॥ ३ ॥ हे हनूमान् ! रामचन्द्रजी तौ वड़े कोमल स्वभाव और दयावान् हैं, उन्होंने किस कारण कठोरता धारण की है ? ॥ ४ ॥

सहजबानि सेवकसुखदायक ❀ कबहुँ कि मुहिं सुमिरत रघुनायक ॥५॥
कबहुँ नयन मम सीतल ताता ❀ होइहिं निरखि स्याममृदुगाता ॥ ६ ॥

सहजस्वभावसेहीं सेवकको सुख देनेवाले रामचन्द्रजी कभी मुझेभी स्मरण करते हैं (वा नहीं) ? ॥५॥ हे प्यारे ! कभी मेरे नेत्रभी कोमल और साँवले शरीरवाले रामजीको देखकर शीतल होंगे ॥६॥

बचन न आव नयन भरि वारी ❀ अहो नाथ मोहिं निपट बिसारी ॥ ७ ॥
देखि बिरहब्याकुल अति सीता ❀ बोलेउ कपि मृदुबचन बिनीता ॥ ८ ॥

(सीताजीके मुखसे) वचन नहीं आते, नेत्रोंमें जलभर आया कि हे नाथ ! मुझको बिलकुलही त्याग दिया ॥ ७॥ सीताजीको वियोगमें वहुत व्याकुल देखकर हनूमान् नीतिसहित कोमल वचन बोले ॥८॥

मातु कुसल प्रभु अनुजसमेता ❀ तव दुख दुखी सो कृपानिकेता ॥ ९ ॥
जननी जनि मानहु मन ऊना ❀ तुमते प्रेम रामकहँ दूना ॥ १० ॥

हे माता ! भगवान् लक्ष्मणजीसमेत कुशल हैं (परन्तु) वे कृपानिधान तुम्हारेही दुःखसे दुखी हैं ॥ ९ ॥ हे माता ! मनमें कुछ बुरा मत मानों, रामचन्द्रजीको तुमसे दूना स्नेह है ॥ १० ॥

---

(१) सन्देह इसलिये हुआ कि कहीं यह रावणकी माया तो नहीं है ? ॥

दो०-रघुपतिके संदेस अब, सुनु जननी धरि धीर ॥
अस कहि कपि गद्गद भए, भरे विलोचन नीर ॥ १३ ॥

हे माता ! अब धीरज रखकर रामचन्द्रजीके समाचार सुनो. ऐसे कहकर हनुमान् गद्गद कंठ हो गये अर्थात् उनका गला भर आया और नेत्रोंमें जल छा गया ॥ १३ ॥

चौ०-रामवियोग कहा सुनु सीता ❀ मोकहँ सकल भयउ विपरीता ॥ १ ॥
नूतन किसलय मनहु कृसानू ❀ कालनिसासम निसि ससि भानू ॥ २ ॥

हे सीताजी ! सुनों, रामचन्द्रजीने कहा है कि वियोगमें मुझको सब उलटे हो गये ॥ १ ॥ नवीन कोंपलें मानों अग्निके समान, रात कालरात्रिके समान और चन्द्रमा (ज्येष्ठ मासके) सूर्यके समान होगया ॥ २ ॥

कुवलयविपिन कुंतबनसरिसा ❀ वारिस तप्ततेल जनु बरिसा ॥ ३ ॥
जेहि तरु रहौं करत सोइ पीरा ❀ उरगस्वाससम त्रिविध समीरा ॥ ४ ॥

कमलोंका वन भालोंके वनके समान हो गया और बादलोंसे मानों गरम तेल बरसता है ॥३॥ जिस वृक्षके नीचे रहता हूं वही दुःख देता है और तीन प्रकारकी शीतल, मंद, सुगंध, पवन सर्पकी फुंकारके समान लगती हैं ॥ ४ ॥

कहहूंते कछु दुख घटि होई ❀ काहि कहों यह जान न कोई ॥ ५ ॥
तत्त्व प्रेमकर मम अरु तोरा ❀ जानत प्रिया एक मन मोरा ॥ ६ ॥

कहनेसेभी कुछ दुःख घटता है पर किससे कहूं ? इसको (मेरे हृदयके सिवाय) कोई जानताभी तौ नहीं है ॥ ५ ॥ हे प्यारी ? मेरे और तेरे स्नेहके तत्त्वको एक मेराही मन जानता है ॥ ६ ॥

सो मन सदा रहत तोहिं पाहीं ❀ जानु प्रीतिरस इतनेहि माहीं ॥ ७ ॥
प्रभुसंदेस सुनत बैदेही ❀ मगनप्रेम तनुसुधि नहिं तेही ॥ ८ ॥

सो (वह) मन सदा तेरे पास रहता है (बस) इतनेहीमें प्रेमके रसको जान ले ॥७॥ भगवान्के समाचार सुनतेही सीताजी स्नेहमें मगन हो गईं और उन्हें शरीरकी सुध नहीं रही ॥ ८ ॥

कह कपि हृदय धीर धरु माता ❀ सुमिरि राम सेवकसुखदाता ॥ ९ ॥
उर आनहु रघुपतिप्रभुताई ❀ सुनि मम बचन तजहु बिकलाई ॥१०॥

हनुमान्ने कहा हे माता ! सेवकोंको सुख देनेवाले रामचन्द्रजीका सरण कर मनमें धीरज धरो ॥ ९ ॥ और रामचन्द्रजीकी प्रभुताको हृदयमें धारण करो और मेरे वचन सुनकर व्याकुलताको छोड़ दो ॥ १० ॥

दो०-निसिचरनिकर पतंगसम, रघुपतिबान कृसानु ॥
जननि हृदय निज धीर धरु, जरे निसाचर जानु ॥ १४ ॥

राक्षसोंका समूह पतंगके समान और रघुनाथजीका बाण अग्निके समान है; हे माता ! अपने हृदयमें धीरज धरो और राक्षसोंको जलाही जानो ॥ १४ ॥

चौ०-जो रघुवीर होत सुधि पाई ❀ करते नहिं विलंब रघुराई ॥ १ ॥
रामबान रविउदय जानकी ❀ तमवरूथ कहँ यातुधानकी ॥ २ ॥

जो रामचन्द्रजीने तुम्हारी सुध पाई होती तौ रघुराई देरी नहीं करते ॥१॥ हे सीताजी ! रामचन्द्रजीका बाण सूर्यके उदयके समान है उसके सामने राक्षसरूपी अंधकारका समूह क्या है ? अर्थात् बाणोंके चलतेही एकभी राक्षस न बचैगा ॥ २ ॥

अबहिं मातु मैं जाउँ लेवाई ❀ प्रभुआयसु नहिं रामदुहाई ॥ ३ ॥
कछुक दिवस जननी धरु धीरा ❀ कपिन्हसहित ऐहैं रघुवीरा ॥ ४ ॥

हे माता ! मैं अभी लिवा जाऊं परन्तु मैं रघुनाथजीकी सौगंद खाकर कहता हूं कि भगवान्की आज्ञा नहीं है ॥ ३ ॥ हे माता ! थोड़े दिन धीरज धरो, श्रीरामचन्द्रमहाराज बन्दरोंको साथ लेकर आवेंगे ॥ ४ ॥

निसिचर मारि तुमहिं ले जैहैं ❀ तिहुँपुर नारदादि जस गैहैं ॥ ५ ॥
हैं सुत कपि सब तुमहिं समाना ❀ यातुधान भट अति बलवाना ॥ ६ ॥

और राक्षसोंको मारकर तुमको ले जायँगे और नारद आदि (मुनीश्वर) त्रिलोकीमें यश गावेंगे ॥ ५ ॥ (तब सीताजी बोलीं) हे पुत्र ! सब वानर तुम्हारेही समान (छोटे २) है (तौ आकार क्या करेंगे ? क्योंकि यहां तौ) राक्षस योद्धा बड़े बलवान् भरे पड़े हैं ॥ ६ ॥

मोरे हृदय परम संदेहा ❀ सुनि कपि प्रकट कीन्ह निजदेहा ॥ ७ ॥
कनकभूधराकारसरीरा ❀ समरभयंकर अतिबलवीरा ॥ ८ ॥
सीतामनभरोस तब भयऊ ❀ पुनि लघुरूप पवनसुत लयऊ ॥ ९ ॥

मेरे मनमें बड़ा सन्देह हैं. (यह सुनकर) हनुमान्ने अपने शरीरको प्रकटकर दिखाया ॥ ७ ॥ जिनका सुमेरु पर्वतके समान शरीर लड़ाईमें भयंकर और अत्यंत बलवान् हो गया ॥ ८ ॥ तब जानकीजीके मनमें भरोसा हुआ. फिर हनुमान्ने छोटा रूप धारण करलिया (और कहा) ॥ ९ ॥

दो०–सुनु माता साखामृगहिं, नहिं बलबुद्धिबिसाल ॥ ❀
प्रभुप्रतापते गरुड़ही, खाइ परम लघु व्याल ॥ १५ ॥ ❀

हे माता ! सुनों, बन्दरमें बल और बुद्धि कुछ बहुत नहीं होती; परन्तु भगवान्के प्रतापसे बहुत छोटा सर्प गरुड़को खा सक्ता है ॥ १५ ॥

चौ०–मन संतोष सुनत कपिबानी ❀ भक्तिप्रतापतेजबलसानी ॥ १ ॥
आसिष दीन्ह रामप्रिय जाना ❀ होहु तात बलबुद्धिनिधाना ॥ २ ॥

भक्ति, प्रताप, तेज और बलकी सनी हुई हनुमान्की वाणी सुनकर (सीताजीके) मनमें संतोष हुआ ॥ १ ॥ और रामचन्द्रजीका प्यारा जानकर आशीर्वाद किया कि हे प्यारे ! बल और बुद्धिके निधान हो जाओ ॥ २ ॥

अजर अमर गुननिधि सुत होहू ❀ करहिं सदा रघुनायकछोहू ॥ ३ ॥
करहिं कृपा प्रभु अस सुनि काना ❀ निर्भर प्रेममगन हनुमाना ॥ ४ ॥

हे पुत्र ! जन्ममरणरहित और गुणोंके समुद्र हो जाओ. (तुम्हारे ऊपर) रामचन्द्रजी सदा दया करते रहैं ॥ ३ ॥ "भगवान् कृपा करैं" इस प्रकार कानोंसे सुनकर हनुमान् गाढ़े प्रेममें मगन होगये ॥ ४ ॥

बार बार नायउ पद सीसा ❀ बोले वचन जोरि कर कीसा ॥ ५ ॥
अब कृतकृत्य भयउँ मैं माता ❀ आसिस तव अमोघ विख्याता ॥ ६ ॥

और वारंवार (सीताजीके) चरणोंको माथा नवाय और हाथ जोड़कर हनूमान् बोले ॥ ५ ॥ हे माता ! अब मैं निहाल हुआ क्योंकि तुम्हारा आशीर्वाद सफल होता है यह प्रसिद्ध है ॥ ६ ॥

---

(१) भक्ति, प्रताप, तेज और बल ये सब यहां घटते हैं ॥ भक्ति–"सुमिरि राम सेवकसुखदाता" प्रताप–"प्रभुप्रतापते गरुड़ही, खाय परम लघु व्याल" तेज–"रामबाण रविउदय जानकी" बल –"उर आनउ रघुपतिप्रभुताई ॥"

सुनिय मातु मोहिं अतिसय भूखा ✿ लागि देखि सुंदर फल रूखा ॥ ७ ॥
सुनु सुत करहिं विपिन रखवारी ✿ परम सुभट रजनीचर भारी ॥ ८ ॥
तिनकर भय माता मोहिं नाहीं ✿ जो तुम सुख मानहु मनमाहीं ॥ ९ ॥

हे माता ! सुनिये, मुझे सुन्दर फलोंसे लदे हुए रूख देखकर वहुत भूख लगी है ॥ ७ ॥ (जानकीजी वोलीं) हे पुत्र ! सुनो, वड़े २ वांके योद्धा और राक्षस वागकी रखवाली करते हैं ॥ ८ ॥ (हनूमान् वोले कि) हे माता ! जो मेरे फल खानेसे तुम्हारा मन प्रसन्न हो तौ उनका डर तौ मुझे नहीं है ॥ ९ ॥

दो०-देखि बुद्धिबल निपुन कपि, कहा जानकी जाहु ॥
रघुपतिचरन हृदय धरि, तात मधुर फल खाहु ॥ १६ ॥

हनूमान्की बुद्धि वल और चतुरता देखकर सीताजीने कहाः-हे प्यारे ! जाओ और रामचन्द्रजीके चरणोंको हृदयमें रखकर मीठे फल खावो ॥ १६ ॥

चौ०-चलेउ नाइ सिर पैठेउ बागा ✿ फल खाए तरु तोरन लागा ॥ १ ॥
रहे तहाँ बहु भट रखवारे ✿ कछु मारे कछु जाइ पुकारे ॥ २ ॥

(हनुमान्) शिर नवाकर चले और वागमें (धँसकर) फल खाये और वृक्षोंको तोड़ने लगे ॥ १ ॥ वहांवहुतसे योद्धा जो रखवाले रहते थे (उनमेंसे) कुछ तौ मार डाले और कुछ रावणके पास जा पुकारे कि ॥ २ ॥

नाथ एक आवा कपि भारी ✿ तेइ असोकबाटिका उजारी ॥ ३ ॥
खायसि फल अरु विपट उपारेसि ✿ जहँ तहँ पटकि पटकि भट मारेसि ॥ ४ ॥

हे स्वामी ! एक वडा बन्दर आया है जिसने अशोकवाटिका उजाड़ डाली ॥ ३ ॥ फल तौ खाडाले हैं, और वृक्ष उखाड़ डाले हैं और जहां तहां पटक २ योद्धाओंको मार डालाहै ॥ ४ ॥

सुनि रावन पठए भट नाना ✿ तिन्हहिं देखि गरजेउ हनुमाना ॥ ५ ॥
सब रजनीचर कपि संहारे ✿ गए पुकारत कछु अधमारे ॥ ६ ॥

यह सुनकर रावणने वहुत योद्धा भेजे उनको देखकर हनुमान् गर्जे ॥ ५ ॥ हनुमान्ने सब राक्षस मार डाले और कुछ अधमरे (रावणके पास) जा पुकारे ॥ ६ ॥

पुनि पठवा तेइ अक्षकुमारा ✿ चला संग लै सुभट अपारा ॥ ७ ॥
आवत देखि विटप गहि तर्जा ✿ ताहि निपाति महाध्वनि गर्जा ॥ ८ ॥

फिर उसने अक्षयकुमारको भेजा; वह अनगिनती बड़े २ योद्धाओंको साथ लेकर चला ॥ ७ ॥ (हनूमान् उसे) आता हुआ देख वृक्षको पकड़कर बड़े उछले कूदे और उसे मारकर बड़े शब्दसे गर्जे ॥ ८ ॥

दो०-कछु मारेसि कछु मर्देसि, कछुक मिलायसि धूरि ॥
कछु पुनि जाइ पुकारे, प्रभु मर्कट बलभूरि ॥ १७ ॥

कुछ मारे, कुछ मींड़ डाले और कुछ एक धूलमें मिला दिये, और कुछ फिर जाकर पुकारे कि हे स्वामी ! बन्दर बड़ा बलवान् है ॥ १७ ॥

चौ०-सुनि सुतवध लंकेस रिसाना ✿ पठवा मेघनाद बलवाना ॥ १ ॥
मारेसि जनि सुत बाँधेसि ताही ✿ देखौं कीस कहाँकर आही ॥ २ ॥

पुत्रका मरण सुनकर रावण रोषमें भर गया और बलवान् मेघनादको भेजा ॥ १ ॥ (और कहा) हे पुत्र ! उस बन्दरको मारना मत, वरन बांध लाना; देखूं तौ सही कहांका बन्दर आया है ॥ २ ॥

मेघनादका हनूमानजीको नागपाशमें बांधकर रावणकी सभामें लेजाना.

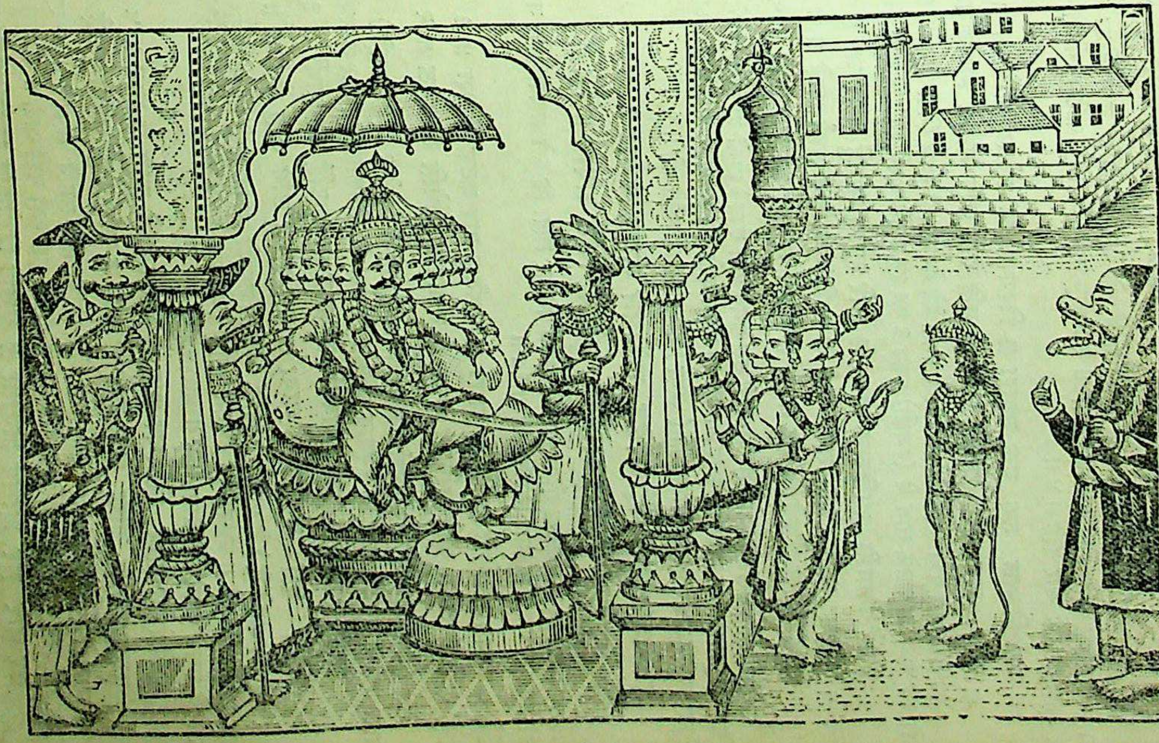

चला इंद्रजित अतुलित जोधा ❀ बंधुवधन सुनि उपजा क्रोधा ॥ ३ ॥
कपि देखा दारुणभट आवा ❀ कटकटाइ गर्जा अरु धावा ॥ ४ ॥

इन्द्रका जीतनेवाला और जिसकी तुतना न होसके ऐसा इन्द्रजीत नाम योद्धा चला और भाईका मरना सुनकर क्रोध उत्पन्न हुआ ॥ ३ ॥ हनूमान्ने देखा कि कठिन योद्धा आया तौ कटकटाकर गर्जे और दौड़े ॥ ४ ॥

अतिविसाल तरु एक उपारा ❀ विरथ कीन्ह लंकेसकुमारा ॥ ५ ॥
रहे महाभट ताके संगा ❀ गहि गहि कपि मर्देसि निजअंगा ॥ ६ ॥

और एक बहुत बड़ा वृक्ष उखाड़ा और रावणके बेटे मेघनादकों रथसे गिरा दिया ॥ ५ ॥ और जो बड़े २ योद्धा उसके साथ थे (उनको) पकड २ कर हनुमान्ने अपने शरीरसे मीज डाला ॥ ६ ॥

तिन्हैं निपाति ताहिसन बाजा ❀ भिरे जुगल मानहुँ गजराजा ॥ ७ ॥
मुष्टिक मारि चढ़ा तरु जाई ❀ ताहि एक छिन मूर्छा आई ॥ ८ ॥
उठि बहोरि कीन्हेसि बहु माया ❀ जीति न जाइ प्रभंजनजाया ॥ ९ ॥

उन्हैं मारकर उस (मेघनाद)से जूझे (तौ उस समय ऐसा सूझा) मानों दो हाथी लड़ते हैं ॥ ७ ॥ फिर (हनूमान्) घूँसा मारकर वृक्षपर जा चढे तौ मेघनादको एक क्षणभरके लिये मूर्च्छा आगई ॥ ८ ॥ फिर उसने उठकर बहुतसी माया की (परन्तु) हनूमान् नहीं जीते गये ॥ ९ ॥

दो०-ब्रह्मअस्त्र तेहिं साधेउ, कपिमन कीन्ह बिचार ॥
जो न ब्रह्मसर मानिहौं, महिमा मिटै अपार ॥ १८ ॥

तब उसने ब्रह्मास्त्र लिया तौ हनूमानने मनमें विचार किया कि जो ब्रह्मवाणको न मानूंगा तौ ब्रह्माकी अपार महिमा मिट जायगी ॥ १८ ॥

चौ०-ब्रह्मबान तेहि कपिकहँ मारा ❀ परतिहु बार कटक संहारा ॥ १ ॥
तेहिं जाना कपि मूर्च्छित भयऊ ❀ नागपास बाँधेसि लै गयऊ ॥ २ ॥

उस (मेघनाद) ने हनूमानको ब्रह्मबाण मारा तौभी गिरते २ (हनूमान्ने) सेनाको मारा ॥ १ ॥ उसने जाना कि हनूमान् मूर्च्छित हो गया तौ नागफांसमें बांधकर ले गया ॥ २ ॥

जासु नाम जपि सुनहु भवानी ❀ भवबंधन काटहिं नर ज्ञानी ॥ ३ ॥
तासु दूत बंधनतर आवा ❀ प्रभु कारज लगि आपु बँधावा ॥ ४ ॥

(महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! सुनो, जिसके नामको जपकर ज्ञानी मनुष्य संसारके बंधन काट डालते हैं ॥ ३ ॥ उसका दूत बंधनमें आया (यह नहीं हो सक्ता, परन्तु) स्वामीके कामके किये उसने अपनेको बंधाया ॥ ४ ॥

कपिबंधन सुनि निसिचर धाए ❀ कौतुकलागि सभा लै आए ॥ ५ ॥
दसमुखसभा दीख कपि जाई ❀ कहि न जाइ कछु अतिप्रभुताई ॥ ६ ॥

हनूमान्को बन्धनमें सुनकर राक्षस धाये और खेलके लिये सभामें ले आये ॥ ५ ॥ हनूमान्ने जाकर रावणकी सभा देखी तौ ऐसी बडी प्रभुता थी कि कुछ कही नहीं जाती ॥ ६ ॥

कर जोरे सुर दिसिप विनीता ❀ भ्रुकुटि विलोकहिं सकल सभीता ॥ ७ ॥
देखि प्रताप न कपिउर संका ❀ जिमि अहिगनमहँ गरुड़ असंका ॥ ८ ॥

देवता और दिक्पाल सब विनयसे हाथ जोड़े खड़े हैं और सब भयके मारे रावणकी भृकुटीको

देख रहे हैं ॥ ७ ॥ इस प्रतापको देखकर हनूमान्‌के मनमें कुछ भय नहीं हुआ जैसे सर्पोंके समूहमें गरुड़ निर्भय रहता है ॥ ८ ॥

दो०-कपिहिं बिलोकि दसानन, बिहँसा कहि दुर्बाद ॥ ❀
सुतवधसुरति कीन्ह पुनि, उपजा हृदय विषाद ॥ १९ ॥ ❀

रावण हनुमान्‌को देखकर और बुरे वचन कहकर हँसा, फिर पुत्रके मरनेकी याद करी तौ मनमें दुःख उत्पन्न हुआ ॥ १९ ॥

चौ०-कह लंकेस कवन तैं कीसा ❀ केहिके बल घालेसि बन खीसा ॥ १ ॥
कीधौं स्रवन सुनेसि नहिं मोही ❀ देखौं अति असंक सठ तोहीं ॥ २ ॥

रावणने कहा हे बन्दर! तू कौन है? और किसके बलसे तैंने वन उजाड़ डाला है ॥ १ ॥ क्या कभी मुझको कानोंसे नहीं सुना? हे शठ! मैं तुझको बहुतही निडर देखता हूँ ॥ २ ॥

मारेसि निसिचर केहि अपराधा ❀ कहु सठ तुहिं न प्रानकी बाधा ॥ ३ ॥
सुनु रावन ब्रह्मांडनिकाया ❀ पाइ जासु बल बिरचित माया ॥ ४ ॥

हे मूर्ख! तैंने राक्षस किस अपराधसे मार डाले! सो कह; क्या तुझे प्राण जानेका भय नहीं है? ॥ ३ ॥ (हनूमान् बोले) हे रावण! सुन, जिसके बलको पाकर माया अनेक ब्रह्मांडोंको रचती है ॥४॥

जाके बल बिरंचि हरि ईसा ❀ पालत हरत सृजत दससीसा ॥ ५ ॥
जा बल सीस धरे सहसानन ❀ अंडकोससमेत गिरि कानन ॥ ६ ॥

और हे रावण! जिसके बलसे ब्रह्मा, विष्णु, महेश (संसारको) उत्पन्न, पालन, और नाश करते हैं ॥ ५ ॥ (और जो तुमको अपने दशशिर होनेका और कैलास पर्वत उठानेका घमंड है तौ सुनो कि) जिसके बलसे हजार शिरवाले शेषजी पर्वत और वनसमेत ब्रह्मांडोंको (अपने) मस्तकपर धारण करते हैं ॥ ६ ॥

धरे जो बिबिध देह सुरत्राता ❀ तुमसे सठन सिखावनदाता ॥ ७ ॥
हरकोदंड कठिन जेइ भंजा ❀ तोहिं समेत नृपदलमदगंजा ॥ ८ ॥
खर दूषन त्रिसिरा अरु वाली ❀ वधे सकल अतुलितबलसाली ॥ ९ ॥

और जो देवताओंकी रक्षा करनेको बहुतसे शरीर धारण करता है (जैसे कच्छ, मच्छ, बाराह, परशुराम आदि) और तुमसे मूर्खोंको शिक्षा देनेवाला है ॥ ७ ॥ और जिसने महादेवके कठिन धनुषको तोड़ा और तुझसमेत राजाओंके दलका अभिमान खंडन किया ॥ ८ ॥ और जिसने बड़े २ बली, खर, दूषण, त्रिशिरा और वाली इन सबको मारा ॥ ९ ॥

दो०-जाके बल लवलेसते, जितेउ चराचर झारि ॥ ❀
तासु दूत हौं जाहिकी, हरि आनेहु प्रिय नारि ॥ २० ॥ ❀

और जिसके बलके लवलेशसे अर्थात् शंकरने जो तुझे बल दिया है वह उसके बलका लवलेश मात्र है उससे तैंने सब चराचर जीत लिया है, और जिसकी प्यारी स्त्रीको चुरा लाया है मैं उसीका दूत हूं २०

चौ०-जानौं मैं तुम्हारि प्रभुताई ❀ सहसबाहुसन परी लराई ॥ १ ॥
समर बालिसन करि जस पावा ❀ सुनि कपि बचन बिहँसि बहलावा ॥ २ ॥

और तुम जो कहते हो कि "कीधौं स्रवन सुनेसि नहिं मोहीं"[2] सो मैं तुम्हारी प्रभुताकोभी जानता हूं कि तुम्हारी [1]सहस्रबाहुसे लड़ाई ठनी थी ॥ १ ॥ और वालिसे लड़ाई करके जैसा यश

---

(१) इसकी कथा बालकांडके १४४ पत्रमें देखना ॥ (२) यह कथा बालकांडके १४२ पत्रमें देखना.

पाया था उसेभी जानता हूं. रावणने हनूमान्के ऐसे वचन सुनकर हँसीमें उड़ा दिये (किये तौ मेरी सव पोल खोले देता है) ॥ २ ॥

खायऊँ फल मोहिं लागी भूखा ❀ कपिस्वभावते तोरेऊँ रूखा ॥ ३ ॥
सबके देह परमप्रिय स्वामी ❀ मारहिं मोहिं कुमारगगामी ॥ ४ ॥

(फिर महावीर बोले) मुझे भूख लगी थी इसलिये फल खाये और (वृक्ष तोड़ना) वन्दर का स्वभाव होता है इसलिये वृक्ष तोड़े ॥ ३ ॥ हे राक्षसराज ! देह तौ सबसीको वहुत प्यारी लगती है पर जब बुरे मार्गमें चलनेवाले राक्षस मुझे मारने लगे ॥ ४ ॥

जिन्ह मोहिं मारा तिन्ह मैं मारा ❀ तेहिपर बाँधेउ तनय तुम्हारा ॥ ५ ॥
मोहिं न कछु बाँधेकर लाजा ❀ कीन्ह चहौं निजप्रभुकर काजा ॥ ६ ॥

तब जिन्होंने मुझे मारा था मैंनेभी उनको मारा; तिसपर तुम्हारे पुत्रने मुझको बांध लिया ॥५॥ सो मुझे कुछ बाँधनेकीभी लाज नहीं है. क्योंकि अपने स्वामीका काज किया चाहता हूं ॥ ६ ॥

विनती करौं जोरि कर रावन ❀ सुनहु मान तजि मोर सिखावन ॥७॥
देखहु तुम निजहृदय बिचारी ❀ भ्रम तजि भयहु भक्तभयहारी ॥ ८ ॥

हे रावण ! मैं हाथ जोडकर विनती करता हूं सो अभिमान छोड़कर मेरी शिक्षाको सुनो ॥७॥ और तुम अपने मनमें विचार देखो और भ्रमको छोड़कर भक्तभयभंजन भगवान्का भजन करो॥८॥

जाके डर अति काल डराई ❀ जो सुर असुर चराचर खाई ॥ ९ ॥
तासों बैर कवहुँ नहिं कीजै ❀ मोरे कहे जानकी दीजै ॥ १० ॥

जिसके डरसे देवता, राक्षस और चराचरका भक्षण करनेवाला कालभी भय खाता है ॥ ९ ॥ उससे वैर कभी न कीजिये और मेरे कहनेसे सीताजीको दीजिये ॥ १० ॥

दो०-प्रणतपाल रघुबंसमनि, करुनासिंधु खरारि ॥ ❀
गए सरन प्रभु राखिहैं, तव अपराध बिसारि ॥ २१ ॥ ❀

दीनोंका पालन करनेवाले, रघुवंशके मणि, दयासागर और खर (दैत्य) के मारनेवाले, भगवान् शरण जानेपर तेरे अपराधोंको क्षमा करके (तुझे) रक्खेंगे ॥ २१ ॥

चौ०-रामचरनपंकज उर धरहू ❀ लंकाअचलराज तुम करहू ॥ १ ॥
ऋषिपुलस्त्यजसविमलमयंका ❀ तेहि कुलमहँ जनि होसि कलंका ॥२॥

जो रामचन्द्रजीके कमलसमान चरणोंको हृदयमें रक्खोगे, तौ तुम लंकाका अचल राज्य करोगे ॥ १ ॥ पुलस्त्यऋषिका यश मानो निर्मल चन्द्रमा है उसके कुलमें तू कलंक (रूप) मत हो ॥२॥

रामनाम बिनु गिरा न सोहा ❀ देखु विचारि त्यागि मद मोहा ॥३॥
सबभूषनभूषित बरनारी ❀ वसनहीन निहिं सोह सुरारी ॥ ४ ॥

अभिमान और अज्ञानको छोड़कर विचारकर देख ले कि रामनामके बिना वाणी सुन्दर नहीं लगती ॥ ३ ॥ हे रावण ! सुन्दर स्त्रीको चाहे सब आभूषणोंसे सजाओ परन्तु वस्त्रविना अच्छी नहीं लगती ॥ ४ ॥

---

(१) यहां लोग यह शंका करते हैं कि, हनूमान्ने हाथ क्यों जोड़े? उसका सीधा समाधान यह है कि जो महादुष्ट हैं उनसे सज्जन हाथ छोड़करहीं अपना पीछा छुटाते हैं, जैसे, गोसाँईजीनेभी दुष्टोंकी कितनी वंदना की हैं और "विनती करहुँ" का अर्थ जो लोग करते हैं कि स्त्रीरहित कर दूंगा और "कर जोरी" अर्थात् हठपूर्वक ये अर्थ कपोलकल्पित और निर्मूल हैं ॥

रामविमुख संपति प्रभुताई ❀ जाइ रही पाई बिनु पाई ॥ ५ ॥
सजलमूल जेहि सरिता नाहीं ❀ बरषि गए पुनि तबहिं सुखाहीं ॥६॥

और रामचन्द्रजीसे जो विमुख है उसकी संपत्ति और प्रभुता रहनेपर तौ गई हुईसी और मिलनेपर न मिलनेके समान है ॥ ५ ॥ जैसे जिस नदीकी जड़में जल नहीं है वह वर्षा बीत जानेपर फिर हालही सूख जाती है ॥ ६ ॥

सुनु दसकंठ कहौं प्रन रोपी ❀ रामविमुखत्राता नहिं कोपी ॥ ७ ॥
शंकर सहस विष्णु अज तोही ❀ सकहिं न राखि रामकर द्रोही ॥ ८ ॥

हे रावण! सुन. मैं हठ रोककर कहता हूं कि रामचन्द्रजीसे विमुखका कोईभी रक्षा करनेवाला नहीं है ॥ ७ ॥ और जो तू रामका विरोधी है, तौ तुझको हजारों ब्रह्मा विष्णु और महेशभी नहीं रख सक्ते ॥ ८ ॥

दो०–मोहमूल बहु सूलप्रद, त्यागहु तुम अभिमान ॥ ❀
भजहु राम रघुनायकहिं, कृपासिंधु भगवान ॥ २२ ॥ ❀

तुम अभिमानको छोड़ दो, यह अज्ञानकी जड़ और बड़ा दुःखदाई है, और दयाके समुद्र रघुकुलके नायक भगवान् रामचन्द्रजीका भजन करो ॥ २२ ॥

चौ०–जद्यपि कहि कपि अतिहित बानी ❀ भक्ति विवेक विरति नयसानी ॥ १ ॥
बोला बिहँसि अधम अभिमानी ❀ मिला हमहिं कपि गुरु बड़ज्ञानी ॥२॥

यद्यपि हनूमान्ने भक्ति, ज्ञान, वैराग्य और नीतिसे सनी हुई बहुत हितकी वाणी कही ॥ १ ॥ (तथापि) नीच अभिमानी (रावण) हँसकर बोला कि हमको बंदर तौ बड़ा ज्ञानी और गुरु मिला ॥ २ ॥

मृत्यु निकट आई खल तोही ❀ लागेसि अधम सिखावन मोही ॥ ३ ॥
उलटा होइ कहा हनुमाना ❀ मतिभ्रम तोरि प्रगट मैं जाना ॥ ४ ॥

अरे दुष्ट! तेरी मौत पास आगई है. जो तू नीच होकर मुझको सीख देने लगा ॥ ३ ॥ हनूमान्ने कहा उलटा होगा अर्थात् तेरी मृत्यु होगी. क्योंकि मैंने जान लिया कि प्रत्यक्षमें तेरी बुद्धिमें भ्रम होगया ॥ ४ ॥

सुनि कपिवचन बहुत रिसआना ❀ वेगि न हरहु मूढ़कर प्राना ॥ ५ ॥
सुनत निसाचर मारन धाए ❀ सचिवन्ह सहित बिभीषन आए ॥६॥

हनूमान्के वचन सुनकर (रावण) बहुत क्रोधित हुआ और बोला कि इस मूर्खके प्राण जल्दी क्यों नहीं हरते हो? ॥ ५ ॥ यह सुनतेही राक्षस मारनेको धाये इतनेमें मंत्रियोंको साथ लिये विभीषण आये ॥ ६ ॥

नाइ सीस करि विनय बहूता ❀ नीतिविरोध न मारिय दूता ॥ ७ ॥
आन दंड कछु करिय गुसाँई ❀ सबही कहा मंत्र भल भाई ॥ ८ ॥
सुनत बिहँसि बोला दसकंधर ❀ अंगभंग करि पठवहु बंदर ॥ ९ ॥

और शिर नवाय बहुतसी प्रार्थना करके कहा कि दूतको न मारिये. यह बात [1] नीतिके विरुद्ध है॥७॥

---

[1] नीतिमें ऐसा कहा है कि–
" उद्यतेष्वपि शस्त्रेषु दूतो वदति नान्यथा । सदैवावध्यभावेन यथार्थस्य हि वाचकः ॥"
अर्थात् शस्त्रोंके उठाये जानेपरभी दूत कुछकी कुछ नहीं कहता है और कभीभी मारनेके योग्य नहीं है इस कारणकि यथार्थही कहता है ॥

हे स्वामी ! कुछ और दंड कीजिये. (यह सुनकर) सबने कहा कि हे भाई ! यह अच्छी सलाह ठहराई ॥ ८ ॥ सुनतेही रावण हँसकर बोला कि (इस) बन्दरको अंगभंग करके भेज दो ॥ ९ ॥

दो०-कपिकर ममता पूँछपर, सबहिं कहा समुझाइ ॥
तेल बोरि पट बाँधि पुनि, पावक देहु लगाइ ॥ २३ ॥

और (रावणने) सबको समझाकर कहा कि बन्दर पूँछकर बडी ममता करता है सो उस पूछमें कपड़े लपेटकर और तेलमें डुबोकर अग्नि लगा दो ॥ २३ ॥

चौ०-पूंछहीन बंदर जब जाइहि ❀ तब सठ निजनाथहिं लै आइहि ॥१॥
जिन्हकर कीन्हेसि अमित बड़ाई ❀ देखौं धौं तिन्हकर प्रभुताई ॥ २ ॥

जब पूंछहीन बन्दर जायगा तौ यह मूर्ख अपने स्वामिको ले आवैगा ॥ १ ॥ जिनकी बहुतसी बड़ाई मारी है देखूं तौ सही उनकी कैसी प्रभुताई है ॥ २ ॥

वचन सुनत कपि मन मुसुकाना ❀ भइ सहाय सारद मैं जाना ॥ ३ ॥
जातुधान सुनि रावनवचना ❀ लागे रचन मूढ़ सोइ रचना ॥ ४ ॥

वचन सुनतेही हनूमान् मनमें हँसे कि मैंने जान लिया कि सरस्वती सहायक हुई ॥ ३ ॥ मूर्ख राक्षस रावणके वचन सुनकर वही रचना रचने लगे ॥ ४ ॥

रहा न नगर बसन घृत तेला ❀ बाढ़ी पूँछ कीन्ह कपि खेला ॥ ५ ॥
कौतुककहँ आए पुरवासी ❀ मारहिं चरन करहिं बहु हाँसी॥६॥

हनूमान्ने अपनी इतनी लंबी पूंछ बढ़ाई कि नगरमें वस्त्र, घी, तेल कुछभी न रहा और फिर खेल किया ॥ ५ ॥ उस खेलको देखनेके लिये नगरवासी आये और लात मारकर बहुत सी हँसी करने लगे ॥ ६ ॥

बाजहिं ढोल देहिं सब तारी ❀ नगर फेरि पुनि पूंछ प्रजारी ॥ ७ ॥
पावक जरत देखि हनुमंता ❀ भयउ परम लघु रूप तुरंता ॥ ८ ॥
निबुकी चढ़ेउ कपि कनकअटारी ❀ भईं सभीत निसाचरनारी ॥ ९ ॥

सब ताल देदेकर ढोल बजाने लगे और (हनूमान्को) नगरमेंघुमाकर फिर पूँछमें आँच लगादी ॥ ७ ॥ हनूमान्ने अग्निको जलता हुआ देखकर तुरंत बहुत छोटासा स्वरूप धारण कर लिया ॥ ८ ॥ और उछलकर सोनेकी अटारीपर चढ़गये. (उन्हें देखकर) राक्षसोंकी नारियां डरने लगीं ॥ ९ ॥

दो०-हरिप्रेरित तेहि अवसर, बहे पवन उनचास ॥
अट्टहास करि गर्जहि, कपि बढ़ि लागु अकास ॥ २४ ॥

उस समय भगवान्की भेजी हुई उंनचास प्रकारकी पवन चलने लगीं और हनूमान् अट्टहास कहिये खिलखिलाकर गर्जे (और अपने रूपको इतना बढ़ाया कि) बढ़कर आकाशसे जा लगे२४

अथ क्षेपक.

छं०-चढ्यो फलांगि धाम लूम लामको उठायऊ । मनो अकाशते नदी कृसा-
नुकी बहायऊ ॥ कि लंक लीलनेक काल जीहसी पसारहू । किधों अनी
महान सूर सैफसी निकार हू ॥१॥ फिराय लाय लाय ऐन मैनसे लगे बरै ।
गयंद छोर वाजि छोर ऊंट छोरिये खरै ॥ अनेक बाल बालकी सुतात मात

---

(१) गूढ़ार्थदीपिकामें देखो.

बोलहीं । बचाय लीजिये हमें समै समान डोलहीं ॥२॥ अनेक नारि मारि रिंभ
डिंभ काढ़ि लावहीं । अनेक डारि डारि वस्तु बारि लेन धावहीं ॥ अनेक
कंत वीरते पुकार बैन यो कहैं । उठाय लेहु लाल माल जालदे परोतहैं॥३॥
गिरे कँगूर दूरते तबै कहै मँदोदरी । विहाय लोकलाज कानि भागती न
क्यों अरी । अनेकबार मैं कही बुझायहू विभीषनं । न मान दाढ़िजारने
कुठारवंश तीक्षणं ॥ ४ ॥ निकेत द्वार अर्द्ध ऊर्द्ध हाटबाटमें जहां । लुकातजाय
नीर कीश तीर देखिये तहां ॥ वधू जो कुम्भकरनकी पसारि हाथ भाषिये ।
दुहाइ रामचन्द्रकेर मोरकन्त राखिये ॥ ५ ॥ अनेक धायधाय जाय रावनै
सुनायहू । विचारि वीर मेघनादसे बली पठायहू ॥ अनेक अस्त्र सस्त्र लाय
आय मारने लगे । घुमाय दीन बालधी पुकार कूरसे भगे ॥ ६ ॥ विशाल
ज्वाल जानि कोप मेघ बोल यों कही । बुझाय देहु आगिरे बहाय कीशको
सही ॥ भले सुनाय मेघ आय पुंज पाथ छांडेऊ । यथा सनेह पाय चौगुनी
कृसानु बाढ़ेऊ ॥ ७ ॥ लगी जु अंग अंग बान प्रान ले भजे सबै । निहार रीत
मालवान स्यान बोलियो तबै ॥ न आहि याहि अग्नि आहि ईशकी जु वामता ।
समीर श्वास सीयकी जु रामरोषमामता ॥ ८ ॥ बुलाय कालते कह्यो लँगूर
लाउ मारिकै । बटोर भूत प्रेत यक्ष दंत चंड धारिकै ॥ विलोक वातजात घात
कीन सैन तासुको । उठाय गालमें धरो परो खँभार जासुको ॥९॥ समेत शंभु
इंद्र वातजातपास आयऊ । सभीत पंकजासनादि वीनती सुनायऊ ॥ १० ॥

(हनूमानजी) फलाँग मारकर महलपर चढ़गये और (पूँछमेंसे अग्निकी) लौ उठाई तौ ऐसा अनुभव हुआ मानों आकाशसे अग्निकी नदी बहाई; अथवा क्या लंकाके निगलनेको कालने जीभ फैलाई है? अथवा सेनाके बड़े योद्धाने बरछी निकाली है? ॥ १ ॥

(हनूमान् पूंछको) फिराने लगे तौ महल जलने लगे (और राक्षस आपसमें कहनेलगे कि) हाथी छोड़ो, घोड़े छोड़ो, और सब ऊंटों तथा गधोंको छोड़ो, उस समय अनेक लड़के और लड़कियां पितामाताओंको पुकारने लगे, बचाओ २! यह कहते डोलते हैं ॥ २ ॥

अनेक स्त्रियां रिसको मारे हुये (मकानोंसे) असबाब निकालती हैं, अनेक वस्तुओंको गेरकर जल लेने दौड़ती हैं—अनेक (स्त्रियां अपने) पति और भाइयोंसे (अथवा) योद्धापतियोंसे कहती हैं कि पुत्रको तौ उठालो और माल चूल्हेमें जाने दो ॥ ३ ॥

जब दूरसे कंगूरे गिरे तब मन्दोदरी कहने लगी कि अरी लोकलाज और कानिको छोड़कर भागती क्यों नहीं हो? मैंने अनेक बार कही और विभीषणनेभी समझाया परंतु कुलको पैने कुठारके समान नाश करनेवाले रावणने न मानी ॥ ४ ॥

राक्षस अनेक घरोंमें, द्वारोंमें, ऊंचेमें, नीचेमें, हाटमें, बाटमें और जलके घाटमें जहां जाकर छिपते हैं वहां बन्दर ही बन्दर दिखाई देते हैं. कुम्भकर्णकी स्त्रीने हाथ पसारकर कहा कि, तुम्हें रामचन्द्रजीकी दुहाई है, तुम मेरे पतिकी तौ रिहाई करो ॥ ५ ॥

अनेक राक्षसोंने दौड़ जाकर (यह समाचार) रावणको सुनाया तौ (उसने) विचार कर मेघनादके समान बलवान् योद्धा भेजे। वे अनेक अस्त्र शस्त्र लाकर मारने लगे। (तब हनूमान्ने पूंछ) घुमा दी तौ (वे सब) बालकोंके समान किलकारकर दौड़े ॥ ६ ॥

(रावणने) प्रचंड अग्निकी ज्वाला देख क्रोधकरके मेघोंको बुला कर यों कहा कि अरे! अग्निको बुझा दो और बन्दरको बहादो. (राक्षसोंने कहा) यह तौ अच्छी सुनाई. तब बादलोंने आकर मूसलधारा बरसाई. मानों अग्निमें तेल डाल उसे चौगुनी बढ़ाई ॥ ७ ॥

जब अंग २ में बाणसमान अग्निकण लगे तौ सब प्राण लेकर भागे फिर इस अनरीतिको देखकर चतुर मंत्री माल्यवंत बोला, यह अग्नि नहीं है किन्तु ईश्वरकी कुदृष्टि है और सीताजीके श्वासकी पवन अथवा रामचन्द्रजीके क्रोधकी वामता है ॥ ८ ॥

(रावणने) कालसे बुलाकर कहा कि लंगूरको मारकर ले आओ और भूत, प्रेत, यक्षोंको इकठ्ठे करके और तीव्र दंड धारण करके जाओ. हनूमान्ने देखकर उसकी सेनाको तौ न मारा (परन्तु) उस कालकोही उठाकर गालमें रख लिया तौ उसकी सेनामें खलबली पड़गयी ॥ ९ ॥

तब इन्द्र महादेवजीको साथ लेकर हनूमान्के पास आये और ब्रह्मा आदिने भयसे (हनूमान्को प्रार्थना सुनाई कि ॥ १० ॥

दो०-देहु छांड़ि यमराजकहँ, यही विनय यक मोर ॥
बरबस आयो लरन सुनि, दीन गालते छोर ॥ २५ ॥

मेरी यह एक विनती है कि तुम यमराजको छोड़ दो, यह जोरावरी लडने आया था, यह सुनकर (हनूमान्ने उसे) गालमेंसे छोड दिया ॥ २५ ॥

इति क्षेपक.

चौ०-देह बिसाल परम हरुआई ❀ मंदिरते मंदिर चढ़ि-जाई ॥ १ ॥
जरै नगर भे लोग बिहाला ❀ लपट झपट बहु कोटि कराला ॥ २ ॥

बड़ी देह बहुतही हलकी होगई और हनूमान् एक महलसे दूसरे महलपर कूदने लगे ॥ १ ॥ नगर जलने लगा, लोग बिहाल होने लगे और बहुतसी करोड़ों कठिन लपटझपट होने लगीं ॥२॥

तात मात सब करहिं पुकारा ❀ यहि अवसर को हमहिं उबारा ॥ ३ ॥
हम जो कहा यह कपि नहिं होई ❀ बानररूप धरे सुर कोई ॥ ४ ॥

सब पिता माताको पुकारते हैं और कहते हैं कि इस समय हमको बचानेवाला कौन है? ॥३॥ हमने जो कहा था कि यह बन्दर नहीं है किंतु कोई देवता बन्दरका शरीर धारण किये है ॥ ४ ॥

साधुअवज्ञाकर फल ऐसा ❀ जरै नगर अनाथकर जैसा ॥ ५ ॥
जारा नगर निमिषइकमाहीं ❀ एक बिभीषणको गृह नाहीं ॥ ६ ॥

सो साधुओंके निरादर करनेका ऐसाही फल होता है कि नगर अनाथके घरकी भांति जल रहा है ॥ ५ ॥ एक पलभरमें (हनूमान्ने) नगर जलादिया; एक विभीषणका घर नहीं जला ॥ ६ ॥

जाकर भक्त अनल जेहँ सिरजा ❀ जरा न सो तेहि कारन गिरिजा ॥ ७ ॥
उलटि पलटि लंका सब जारी ❀ कूदिपरा तब सिंधुमँझारी ॥ ८ ॥

महादेवजी कहते हैं हे पार्वती! विभीषण जिसका भक्त है तिसीने अग्निको उत्पन्न किया है; इसी कारण उसका घर न जला ॥ ७ ॥ और उलट पलटके जब सब लंका जलादी तब समुद्रके बीचमें कूद पड़े ॥ ८ ॥

दो०-पूँछ बुझाई खोइ सम, धरि लघु रूप बहोरि ॥
जनकसुताके आगे, ठाढ़ भयउ करजोरि ॥ २६ ॥

और पूँछको बुझाकर थकावट दूर कर और फिर छोटा रूप धारणकर सीताजीके आगे हाथ जोड़कर खड़े होगये (और कहने लगे) ॥ २६ ॥

चौ०–मातु मोहिं दीजे कछु चीन्हा ❀ जैसे रघुनायक मोहिं दीन्हा ॥ १ ॥
चूड़ामणि उतारि तब दयऊ ❀ हर्षसमेत पवनसुत लयऊ ॥ २ ॥

हे माता ! मुझे कुछ चिन्होंती दीजिये कि जैसे रामचन्द्रजीने मुझको दीथी ॥ १ ॥ तब (सीताने) चूड़ामणि उतार दी सो हनूमान्ने प्रसन्न होकर ले ली (और सीताजीने संदेशा कहा कि)॥ २ ॥

कहेउ तात तुम मोरप्रनामा ❀ सबप्रकार प्रभु पूरनकामा ॥ ३ ॥
दीनदयालु बिरद संभारी ❀ हरहु नाथ मम संकट भारी ॥ ४ ॥

हे प्यारे ! भगवान्से तुम मेरा प्रणाम कहना और यह कहना कि आप तौ सब तरह पूरणकाम हो, अर्थात् तुम्हें कुछ किसी बातकी इच्छा नहीं है ॥ ३ ॥ और दीनोंपर दया करनेवाले, यशकी रक्षा करनेवाले हो, हे नाथ ! मेरेभी तौ भारी दुःखको हरो ॥ ४ ॥

तात शक्रसुतकथा सुनायउ ❀ बानप्रताप प्रभुहिं समुझायउ ॥ ५ ॥
मास दिवसमहँ नाथ न आये ❀ तौ पुनि मोहिं जियत नहिं पाये ॥ ६ ॥

और हे प्यारे ! इन्द्रके पुत्र जयंतकी कथा सुनाना और उसके पीछे जो (सींकका) वाण भेजा था उसका प्रताप भगवान्को समझाना. (तब तेरे यहां आनेकी प्रतीति हो जायगी, क्योंकि इस वृत्तान्तको मेरे और उनके सिवाय कोई नहीं जानता है) ॥ ५ ॥ और जो महीनेभरमें स्वामी न आये तौ फिर मुझे जीती न पावेंगे ॥ ६ ॥

कहु कपि केहिबिधि राखौं प्राना ❀ तुमहूँ तात कहत अब जाना ॥ ७ ॥
तुमहिं देखि सीतल भइ छाती ❀ पुनि मोकहँ सोइ दिन सोइ राती ॥८॥

हे हनूमान् ! भला तुमही कहो कि मैं किस भांति प्राण रक्खूं ? क्यों कि हे प्यारे ! तुमभी अब जाने कहते हो ॥ ७ ॥ तुमको देखकर छाती ठंडी हुई थी सो अब फिर मेरे लिये वेही दिन और वेही रात होंगी ॥ ८ ॥

दो०–जनकसुतहिं समुझाइ करि, बहुविध धीरज दीन्ह ॥ ❀
चरनकमल सिर नाइ कपि, गमन रामपहँ कीन्ह ॥ २७ ॥ ❀

हनूमान्ने सीताजीको समझाकर बहुत भांति धीरज बँधाया और (उनके) कमलसमान चरणोंको माथा नवाकर रामचन्द्रजीके पास चले ॥ २७॥

चौ०–चलत महाध्वनि गरजेउ भारी ❀ गर्भ स्रवेउ सुनि निसिचरनारी ॥ १ ॥
लाँघि सिंधु यहि पारहिं आवा ❀ सब्द किलकिला कपिन्ह सुनावा ॥ २ ॥

चलते समय बड़े भारी शब्दसे गर्जे कि जिसे सुनकर राक्षसोंकी स्त्रियांके गर्भ गिरपड़े ॥ १ ॥ समुद्रको लाँघकर इस पार आये और बन्दरोंको किलकिला शब्द सुनाया ॥ २ ॥

हर्षे सब बिलोकि हनुमाना ❀ नूतन जन्म कपिन तब जाना ॥ ३ ॥
मुख प्रसन्न तनु तेज बिराजा ❀ कीन्हेसि रामचन्द्रकर काजा ॥ ४ ॥

सब वानर हनूमान्को देखकर प्रसन्न हुये और तब वन्दरोंने अपना नया जन्म जाना ॥३॥ हनूमान्का मुख तौ प्रसन्न होगया और शरीरमें तेज छागया. क्यों कि रामचन्द्रजीका कार्य किया है॥४॥

मिले सकल अति भये सुखारी ❀ तलफत मीन पाव जनु बारी ॥ ५ ॥
चले हर्षि रघुनायकपासा ❀ पूछत कहत नवल इतिहासा ॥ ६ ॥

सब मिलकर ऐसे भारी प्रसन्न हुये मानो जैसे तलफती हुई मछली जलको पाकर प्रसन्न हो ॥ ५ ॥ नये समाचारको पूछते-पाँछते हुये प्रसन्न होकर रामजीके पास चले ॥ ६ ॥

तब मधुवनभीतर सब आये ❀ अंगदसहित मधुरफल खाये ॥ ७ ॥
रखवारे तब बरजन लागे ❀ मुष्टिप्रहार करत सब भागे ॥ ८ ॥

तब सब मधुवनके भीतर आये और अंगदसमेत सबने मीठे फल खाये ॥ ७ ॥ तब रखवाले रोकने लगे तौ घूँसा मारतेही सब भाग गये ॥ ८ ॥

दो०–जाइ पुकारे सकल ते, बन उजार जुवराज ॥
सुनि सुग्रीव हर्षि कपि, करि आये प्रभुकाज ॥ २८ ॥

वे सब रखवारे जाकर सुग्रीवसे पुकारे कि युवराज अंगदने वन उजाड़ डाला. यह सुनकर सुग्रीव प्रसन्न हुये (और जान लिया कि) वानर भगवान्का काम कर आये ॥ २८ ॥

चौ०–जो न होत सीतासुधि पाई ❀ मधुवनके फल को सक खाई ॥ १ ॥
यहि बिध मन बिचार कर राजा ❀ आइगए कपि सहित समाजा ॥ २ ॥

क्यों कि जो सीताकी सुधि न पाई होती तौ मधुवनके फलोंका कौन खासक्ता था? ॥ १ ॥ इस भांति राजा सुग्रीव मनमें विचार करही रहे थे कि हनूमान्जी समाजसहित आगये ॥ २ ॥

आइ सबहिं नावा पद सीसा ❀ मिले सबन्हि अतिप्रेम कपीसा ॥ ३ ॥
पूछेउ कुसल कुसल पद देखी ❀ रामकृपा भा काज बिसेखी ॥ ४ ॥

और सबने आकर चरणोंमें शिर नवाया और सुग्रीव बडे स्नेहसे सबसे मिले ॥ ३ ॥ सुग्रीवने पूछा, कहो कुशल तौ है? (बन्दरोंने कहा) आपके चरणोंके दर्शनसे कुशल है और रामचन्द्रजीकी दयासे सब काम सिद्ध हुआ ॥ ४ ॥

नाथ काज कीन्हेउ हनुमाना ❀ राखेउ सकल कपिन्हकर प्राना ॥ ५ ॥
सुनि सुग्रीव बहुरि उठि मिलेऊ ❀ कपिन्हसहित रघुपतिपहँ चलेऊ ॥ ६ ॥

हे स्वामी! हनूमान्ने काम किया और सब बन्दरोंके प्राण रक्खे ॥ ५ ॥ सुनतेही सुग्रीव फिर उठकर मिले और वानरोंको साथ लेकर रामचन्द्रजीके पास चले ॥ ६ ॥

राम कपिन्ह जब आवत देखा ❀ किये काज उर हर्ष बिसेखा ॥ ७ ॥
फटिकसिला बैठे दोउ भाई ❀ परे सकल कपि चरनन जाई ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजीने जब बन्दरोंको आते हुये देखा तौ मनमें बहुत आनन्दित हुये कि वानर काम कर आये ॥ ७ ॥ दोनों भाई स्फटिकशिलापर बैठे हुये थे कि सब वानर जाकर चरणोंमें गिरपड़े ॥ ८ ॥

दो०–प्रीतिसहित भेटे सकल, रघुपति करुनापुंज ॥
पूँछेउ कुसल नाथ अब, कुसल देखि पदकंज ॥ २९ ॥

करुणानिधान रामचन्द्रजी सबसे प्रेमसहित मिले और कुशल पूछी (तौ उन्होंने कहा) हे स्वामी! अब आपके कमलसमान चरणोंको देखकर कुशल हुई ॥ २९ ॥

चौ०–जांबवंत कह सुनु रघुराया ❀ जापर नाथ करहु तुम दाया ॥ १ ॥
ताहि सदा सुभ कुसल निरंतर ❀ सुर नर मुनि प्रसन्न तेहि ऊपर ॥ २ ॥

जाम्बवंतने कहा हे रामचन्द्रजी! सुनो. जिसपर आप कृपा करो ॥ १ ॥ उसका सदा कल्याण है और उसकी सदा कुशल है, और देवता, मनुष्य और मुनी उसके ऊपर प्रसन्न रहते हैं ॥ २ ॥

सो बिजयी बिनयी गुनसागर ❀ तासु सुजस तिहुँ लोक उजागर ॥ ३ ॥
प्रभुकी कृपा भयउ सब काजू ❀ जन्म हमार सफलभा आजू ॥ ४ ॥

वही जीतनेवाला, नीतिज्ञ और गुणोंका सागर है और उसीका सुन्दर यश तीनों लोकोंमें उजागर होता है ॥ ३ ॥ हे स्वामी ! आपकी दयासे सब काम हुआ और आज हमारा जन्म सफल हुआ ॥४॥

नाथ पवनसुत कीन्ह जो करनी ❀ सो मुख लाखउ जाइ न बरनी ॥ ५ ॥
पवनतनयके चरित सुहाये ❀ जांबवंत रघुपतिहिं सुनाये ॥ ६ ॥

हे स्वामी ! हनुमान्ने जो करनी की है वह लाखों मुखसे बरनी नहीं जाती ॥ ५ ॥ हनुमान्के सुन्दर चरित्र जाम्बवंतने रामचन्द्रजीको सुनाये ॥ ६ ॥

सुनि कृपालु उठि हृदय लगाये ❀ जानि सुभट रघुपतिमन भाये ॥ ७ ॥
कहहु तात केहि भांति जानकी ❀ रहति करति रक्षा स्वप्रानकी ॥ ८ ॥

सुनकर कृपानिधान रामचन्द्रजीने उठकर (हनूमान्को) छातीसे लगा लिया और सुन्दर योद्धा जानकर रामचन्द्रजीके मनको प्यारे लगे (और उनसे पूछने लगे कि) ॥ ७ ॥ हे प्यारे! कहो सीताजी किस प्रकार रहती हैं? और कैसे अपने प्राणोंकी रक्षा करती हैं? (हनूमान्जी बोले कि हे रघुनाथजी !) ॥ ८ ॥

दो०–नाम पाहरू दिवसनिसि, ध्यान तुम्हार कपाट ॥ ❀
लोचन निजपदयंत्रिका, प्रान जाहिं केहि बाट ॥ ३० ॥ ❀

तुम्हारा नाम सोई रात दिनका चौकीदार है और तुम्हारा ध्यान सोई किवाड़ है, और नेत्रोंको जो अपने चरणोंमें दिये रहती हैं वह मानों ताला है, फिर प्राण किस मार्गसे निकल सक्ते हैं? ३०

चौ०–चलती बार कह्यो मोहिं टेरी ❀ सुरति कराय सक्रसुतकेरी ॥ १ ॥
चलत मोहिं चूडामनि दीन्ही ❀ रघुपति हृदय लाइ तेहि लीन्ही ॥ २ ॥

चलते समय मुझको बुलाकर और आपको जयंतकी याद दिलानेके लिये कह दिया था ॥ १ ॥ और चलते समय मुझको यह चूड़ामणि दी थी; (यह सुन) रामचन्द्रजीने उसे लेकर छातीसे लगाया (हनूमान्ने औरभी कहा कि) ॥ २ ॥

नाथ जुगल लोचन भरि वारी ❀ बचन कहेउ कछु जनककुमारी ॥ ३ ॥
अनुजसमेत गहेहु प्रभुचरना ❀ दीनबंधु प्रनतारतिहरना ॥ ४ ॥

हे स्वामी ! दोनों नेत्रोंमें आंसू भरकर सीताजीने कुछ बचन कहे हैं कि ॥३॥ भक्तोंके दुःखनाश करनेवाले दीनबन्धु (भगवान्) के छोटे भाई लक्ष्मण(१)समेत चरण छूकर (कहना कि) ॥ ४ ॥

मन क्रम बचन चरनअनुरागी ❀ केहि अपराध नाथ मोहिं त्यागी ॥ ५ ॥
अवगुन एक मोर मैं जाना ❀ बिछुरत प्रान न कीन्ह पयाना ॥ ६ ॥

हे स्वामी ! मैं तौ मन कर्म बचनसे स्नेह करनेवाली हूं, मुझको किस अपराधसे त्याग दिया? ॥ ५ ॥ हाँ एक अवगुण तौ अपना मैं जानती हूं जो बिछुडतेही मेरे प्राण नहीं निकले ॥ ६ ॥

नाथ सो नयनन्हकर अपराधा ❀ निसरत प्रान करहिं हठि बाधा ॥ ७ ॥
विरहअनल तनु तूल समीरा ❀ स्वास जरै छिनमाँह सरीरा ॥ ८ ॥

हे स्वामी ! सो वहभी नेत्रोंका अपराध है, जो प्राणोंके निकलनेमें हठसे बाधा करते हैं ॥ ७ ॥ क्यों कि आपका वियोग अग्नि है, शरीर रुई है और श्वास पवन है, सो क्षणभरमें शरीर जल जाय (जलनेमें क्या लगता है!) ॥ ८ ॥

---

(१) यहां लक्ष्मणजीके चरण छूनेको इसलिये कहा कि पंचवटीमें अपने हरणके समय उनका कहा नहीं मानाथा सो सीताजी अपराधकी क्षमा चाहती हैं ॥

नयन स्रवैं जल निजहित लागी ❀ जरै न पाव देह बिरहागी ॥ ९ ॥
सीताकी अति बिपति बिसाला ❀ बिनहिं कहे भल दीनदयाला ॥ १० ॥

परंतु नेत्र अपने हितके लिये अर्थात् जो जानकीजीके विहरके कारण शरीर छूट जायगा तौ हमभी न रहैंगे और रामदर्शन न होगा इसलिये जल वर्षाते रहते हैं. सो वियोगरूपी अग्निसे देह जलने नहीं पाती है ॥ ९ ॥ हे दीनदयालु ! सीताजीकी इतनी भारी विपत्ति है कि उसका न कहनाही अच्छा है; अर्थात् कहनेसे आपको औरभी दुःख होगा ॥ १० ॥

दो०–निमिष निमिष करुनायतन, जाहिं कल्पसत बीति ॥ ❀
बेगि चलिय प्रभु आनिये, भुजबल खलदल जीति ॥ ३१ ॥ ❀

हे करुणासागर ! उनका एक २ पल सौ २ कल्पके वरावर बीतता है. हे प्रभो ! शीघ्र चलिये और भुजाओंके बलसे राक्षसोंकी सेनाको जीतकर (उनको) ले आइये ॥ ३१ ॥

चौ०–सुनि सीतादुख प्रभु सुखअयना ❀ भरि आये जल राजिवनयना ॥ १ ॥
बचन काय मन ममगति जाही ❀ सपनेहुँ बिपति कि चाहिय ताही ॥ २ ॥

सीताका दुःख सुनकर सुखके स्थान (भगवान्) के कमलसमान नेत्रोंमें जल भर आया (और कहने लगे कि) ॥ १ ॥ जिसे मन वचन और शरीरसे मेरीही शरण है उसको क्या स्वप्नेमेंभी विपत्ति चाहिये ? अर्थात् यों तौ क्या स्वप्नेमेंभी नहीं चाहिये ॥ २ ॥

कह हनुमान विपति प्रभु सोई ❀ जब तव सुमिरन भजन न होई ॥ ३ ॥
कितिक बात प्रभु यातुधानकी ❀ रिपुहिं जीत आनिये जानकी ॥ ४ ॥

हनूमान्ने कहा हे स्वामी ! विपत्ति तौ वह है कि जब आपका स्मरण और भजन न हो (और जो आप इसीको बिपत्ति मानते हो तौ) ॥ ३ ॥ हे भगवान् ! राक्षसोंकी कितनी वात है शत्रुको जीतकर सीताजीको ले आइये (रामजी वोले कि) ॥ ४ ॥

सुनु कपि तोहिं समान उपकारी ❀ नहिं कोउ सुर नर मुनि तनुधारी ॥ ५ ॥
प्रत्युपकार करौं का तोरा ❀ सनमुख हो न सकै मन मोरा ॥ ६ ॥

हे हनुमान् ! सुन तेरे वरावर उपकारी तौ देवता मनुष्य मुनीश्वर और कोई शरीरधारी नहीं ॥ ५ ॥ तेरा क्या प्रत्युपकार करूं? अर्थात् तुझे क्या बदला दूं ? मेरा मन तेरे सामने नहीं होसक्ता ॥ ६ ॥

सुनु कपि तोहिं उऋन मैं नाही ❀ देखउँ करि बिचार मनमाहीं ॥ ७ ॥
पुनि पुनि कपिहिं चितव सुरत्राता ❀ लोचन नीर पुलकि अति गाता ॥ ८ ॥

हे हनूमान् ! सुन मैं तुझसे उऋण नहीं हो सक्ता, मैंने मनमें बिचारकर देख लिया ॥ ७ ॥ देवरक्षक (भगवान्) वारंवार हनूमान्को देखते हैं, नेत्रोंमें जल भर आया और शरीर अति पुलकायमान होगया ॥ ८ ॥

दो०–सुनि प्रभुवचन बिलोकि मुख, हृदय हर्ष हनुमंत ॥ ❀
चरन परेउ प्रेमाकुल, त्राहि त्राहि भगवंत ॥ ३२ ॥ ❀

भगवान्के वचन सुनकर और उनके मुखको देखकर हनूमान् मनमें प्रसन्न हुये और प्रेममें मगन हो चरणोंमें गिर पड़े कि हे भगवान्! रक्षा करो ! रक्षा करो ! ॥ ३२ ॥

चौ०–बार बार प्रभु चहत उठावा ❀ प्रेममगन तेहि उठन न भावा ॥ १ ॥
प्रभुपदपंकज कपिकर सीसा ❀ सुमिरि सो दसा मगन गौरीसा ॥ २ ॥

भगवान् बारबार उठाया चाहते हैं परन्तु उसको प्रेममें मगन होनेके कारण उठना अच्छा नहीं

लगता ॥ १ ॥ भगवान्के कमलसमान चरणोंमें हनूमान्जीका शिर है (और रघुनाथजीका हनूमान्के शिरपर हाथ धरा है) इस दशाको स्मरणकर शिवजी मगन होगये, अर्थात् सुधबुध कुछ न रही ॥ २॥

सावधान मन करि पुनि शंकर ❀ लागे कहन कथा अति सुंदर ॥ ३ ॥
कपि उठाय प्रभु हृदय लगावा ❀ कर गहि परम निकट बैठावा ॥ ४ ॥

फिर शिवजी मनको सावधान कर बड़ी सुन्दर कथा कहने लगे ॥ ३ ॥ भगवान्ने हनूमान्को उठाकर छातीसे लगाया और हाथ पकड़कर बहुत पास बिठाया (और बोले) ॥ ४ ॥

कहु कपि रावनपालित लंका ❀ केहिविध दहेउ दुर्ग अतिबंका ॥ ५ ॥
प्रभु प्रसन्न जाना हनुमाना ❀ बोले बचन विगतअभिमाना ॥ ६ ॥

हे हनूमान् ! कहो जिस लंकाका रावण राज्य करता है और जो बड़ा दुर्गम और बाँका किला है उसे तुमने कैसे जलाया ? ॥ ५ ॥ हनूमान्ने भगवान्को प्रसन्न जाना तौ अभिमानरहित होकर बचन बोले कि ॥ ६ ॥

साखामृगकी बड़ि मनुसाई ❀ साखाते साखापर जाई ॥ ७ ॥
लाँघि सिंधु हाटकपुर जारा ❀ निसिचरगन बधि बिपिन उजारा ॥८॥
सो सब तव प्रताप रघुराई ❀ नाथ न कछुक मोरि प्रभुताई ॥ ९ ॥

बन्दरकी बड़ी बहादुरी यह है की एक डालीसे दूसरी डालीपर कूद जाता है ॥ ७ ॥ समुद्र उलाँघकर सोनेका नगर जला आया और राक्षसोंके समूहको मारकर बाग उजाड़ आया ॥ ८ ॥ सो हे नाथ ! सब आपहीका प्रताप है. हे रघुराई ! इसमें मेरी कुछभी प्रभुताई नहीं है ॥ ९ ॥

दो०-ताकहँ प्रभु कछु अगम नहिं, जापर तुम अनुकूल ॥ ❀
तव प्रताप बड़वानलहिं, जारि सकै खलु तूल ॥ ३३ ॥ ❀

हे स्वामी ! जिसपर आप सहायक हो उसको कुछभी कठिन नहीं. आपके प्रतापसे वड़वानल कहिये समुद्रके अग्निको निश्चय करके रुई जला सक्ती है ॥ ३६ ॥

चौ०-सुनत बचन प्रभु बहु सुख माना ❀ मन क्रम बचन दास निज जाना ॥ १ ॥
माँगु पवनसुत बर अनुकूला ❀ देउँ आज तुमकहँ सुखमूला ॥ २ ॥

बचन सुनतेही भगवान्ने बहुत सुख माना और मन क्रम वचनसे अपना सेवक जाना (और कहा) ॥ १ ॥ हे पवनपुत्र ! जो चाहे सो सुखदायक वरदान माँग, तुझे आज वही दूं (हनूमान्ने कहा) ॥ २ ॥

नाथ भक्ति तव अति अनुपावनि ❀ देहु कृपा करि सिवमनभावनि ॥ ३ ॥
सुनि प्रभु परम सरल कपिबानी ❀ एवमस्तु तब कहेउ भवानी ॥ ४ ॥

हे स्वामी ! अपनी वह परम पवित्र अचल भक्ति दो कि जो महादेवके मनको प्यारी लगती है ॥ ३ ॥ (शंकर कहते हैं) हे पार्वती ! भगवान्ने हनुमान्की बहुतही सीधी वाणी सुनकर कहा “एवमस्तु” अर्थात् ऐसाही हो ॥ ४ ॥

उमा रामसुभाव जिन्ह जाना ❀ ताहि भजन तजि भाव न आना ॥ ५ ॥
यह संवाद जासु उर आवा ❀ रघुपतिचरनभक्ति तेइँ पावा ॥ ६ ॥

---

(१) जैसा हनुमन्नाटकमें लिखा है कि–

“शाखामृगस्य शाखायाः शाखां गन्तुं पराक्रमः ।
यत्पुनर्लंघितोऽम्भोधिः प्रभावोऽयं प्रभो तव ॥”

अर्थ चौपाईसे मिलता है:–

हे पार्वती ! जिन्होंने रामचन्द्रजीके स्वभावको पहिचान लिया उन्हें फिर भजनको छोड़कर और कुछ अच्छा नहीं लगता ॥ ५ ॥ यह संवादभी जिसके हृदयमें आया उसने रामचन्द्रजीके चरणोंकी भक्तिको पाया ॥ ६ ॥

सुनि प्रभुबचन कहहिं कपिवृंदा ❀ जय जय जय कृपालु सुखकंदा ॥ ७ ॥
तब रघुपति कपिपतिहिं बुलावा ❀ कहा चलनकर करहु बनावा ॥ ८ ॥

रघुनाथजीके वचन सुनकर वानरोंके समूह कहने लगे कि, हे दयानिधान ! सुखकी खान भगवान् ! आपकी वारंवार जय होय ॥ ७॥ तव रामचन्द्रजीने सुग्रीवको बुलाकर कहा कि चलनेका ठाठ करो८

अब बिलंब केहि कारन कीजै ❀ तुरत कपिनकहँ आयसु दीजै ॥ ९ ॥
कौतुक देखि सुमन बहु वर्षे ❀ नभते भवन चले सुर हर्षे ॥ १० ॥

अब देर किस कारण करते हो ? शीघ्रही बन्दरोंको आज्ञा दो ॥ ९ ॥ यह कौतुक देखकर देवताओंने आकाशसे फूल वरसाये और प्रसन्न होते हुये अपने २ लोकको सिधाये ॥ १० ॥

दो०-कपिपति बेगि बुलायउ, आए जूथप जूथ ॥ ❀
नाना बरन अतुल बल, वानरभालुबरूथ ॥ ३४ ॥ ❀

सुग्रीवने तुरंतही बुलाये तौं सेनापतियोंके झुंड और अनेक रंग २ के बड़े २ बली वानर और रीछोंके झुंड आगये ॥ ३४ ॥

चौ०-प्रभुपदपंकज नावहिं सीसा ❀ गरजहिं भालु महाबल कीसा ॥ १ ॥
देखी राम सकल कपिसेना ❀ चितइ कृपा करि राजिवनैना ॥ २ ॥

बड़े बलधारी रीछ और वानर भगवान्के कमलसमान चरणोंको मस्तक नवाते हैं और गर्जते हैं ॥१॥ रामचन्द्रजीने सब वानरोंकी सेना देखी और दया करके कमलसमान नेत्रोंसे उसे परखी ॥२॥

रामकृपाबल पाइ कपिन्दा ❀ भए पक्षयुत मनहुँ गिरिन्दा ॥ ३ ॥
हर्षि राम तब कीन्ह प्रयाना ❀ सकुन भए सुन्दर सुभ नाना ॥ ४ ॥

रामचन्द्रजीकी दयाका वल पाकर बन्दर ऐसे होगये, मानों पर्वत पंख पाकर होगये हों ॥ ३ ॥ तब रामचन्द्रजीने प्रसन्न होकर प्रस्थान किया तौं नानाप्रकारके सुन्दर मंगलकारी शकुन होने लगे ॥४॥

जासु सकल मंगलमय कीर्ती ❀ तासु पयान सकुन यह नीती ॥ ५ ॥
प्रभुपयान जाना बैदेही ❀ फरकि वाम अँग जनु कहि देहीं ॥ ६ ॥

जिसके वशमें सब आनन्द मंगल भरे हैं उसके प्रस्थानमें शुभ शकुन हुये. यह (नरलीलाकी) रीति है॥५॥ सीताजीने भगवान्का प्रस्थान जाना सो मानों उनके बाँये अंगोंने फड़ककर जता दिया ॥ ६॥

जो जो सकुन जानकिहिं होई ❀ असकुन भयउ रावनहिं सोई ॥ ७ ॥
चला कटक को बरनै पारा ❀ गजरहिं बानर भालु अपारा ॥ ८ ॥

जो जो शकुन सीताजीको हुये वही रावणको अशकुन हुवे ॥ ७ ॥ जो कटक चला उसका भला कौन पूरा वर्णन कर सक्ता है ? अनगिनती वानर और रीछ गर्जते हैं ॥ ८ ॥

नखआयुध गिरिपादपधारी ❀ चले गगन महि इच्छाचारी ॥ ९ ॥
केहरिनाद भालु कपि करहीं ❀ डगमगाहिं दिग्गज चिकरहीं ॥ १० ॥

नखही उनके हथियार हैं और वे पर्वत और वृक्षोंको ले २ कर आकाश और पृथ्वीपर इच्छानुसार चले ॥ ९ ॥ रीछ और वानर सिंहकासा नाद करते हैं कि जिससे दिशाओंके हाथी डिगमिगाते और चिंघारते हैं ॥ १० ॥

छं०–चिक्करहिं दिग्गज डोल महि गिरि लोल सागर खरभरे। ❀
मनहर्ष दिनकर सोम सुर मुनि नाग किन्नरदुख टरे॥ ❀
कटकटहिं मरकट विकट भट बहु कोटि कोटिन्ह धावहीं। ❀
जय राम प्रबलप्रताप कोसलनाथगुनगन गावहीं॥ ४॥ ❀

दिग्गज चिंघारने लगे, पृथ्वी डिगमिगाने लगी, पर्वत हिलने लगे और समुद्रोंमें खलबली पड़गई, सूर्य चन्द्रमा मनमें प्रसन्न हुये. और देवता, मुनीश्वर, नाग और किन्नर इनके दुःख दूर होगये. वहुतसे करोड़ों बांके योद्धा वन्दर कटकटाते हुये दौड़ते हैं और रामचन्द्रजीके प्रबल प्रतापकी जय बोलते हैं. तथा अयोध्याके स्वामीके गुणोंके समूहोंको गाते हैं॥ ४॥

सहिसक न भार अपार अहिपति बार बार विमोहई। ❀
गहि दसन पुनि पुनि कमठपृष्ठ कठोर सो किमि सोहई॥ ❀
रघुबीररुचिरपयान प्रस्थिति जानि परमसुहावनी। ❀
जनु कमठ खप्पर सर्पराज सो लिखत अविचल पावनी॥५॥❀

शेषजी उस अपार भारको न सह सकनेसे वारंवार मूर्च्छित होते हैं, और बार २ कछुयेकी कठोर पीठको दांतोंसे दाबते हैं. (परन्तु दांत उसमें नहीं धसते निशान होते जाते हैं) सो उस समय कैसी शोभा हो रही है मानों रामचन्द्रजीके सुन्दर प्रस्थानके व्योरेको शेषजी कछुयेकी पीठको अचल और पवित्र मानकर (उसपर) लिख रहे हैं॥ ५॥

दो०–इहिविध जाइ कृपानिधि, उतरे सागरतीर॥ ❀
जहँ तहँ लागे खान फल, भालु विपुल कपि वीर॥ ३५॥ ❀

इस भांति दयासागर (भगवान्) जाकर समुद्रके किनारेपर उतरे और बहुतसे योद्धा रीछ बन्दर जहाँ तहाँ फल खाने लगे॥ ३५॥

चौ०–वहाँ निसाचर रहहिं ससंका ❀ जबते जारिगयउ कपि लंका॥ १॥
निज निज गृह सब करहिं बिचारा ❀ नहिं निसिचरकुलकेर उबारा॥ २॥

वहां (लंकामें) जबसे हनूमान् लंका जलागये तभीसे राक्षस भयसे विकल रहते हैं॥ १॥ सब अपने २ घरमें विचार करते हैं कि राक्षसोंके कुलका बचाव अब नहीं होगा॥ २॥

जासु दूतबल बरनि न जाई ❀ तेहि आये पुर कवनि भलाई॥ ३॥
अति सभीति सुनि पुरजनबानी ❀ मंदोदरी हृदय अकुलानी॥ ४॥

जिसके दूतका बल वर्णन नहीं किया जाता उसके नगरमें आनेसे क्या भलाई होगी?॥ ३॥ नगरके मनुष्योंकी भययुक्त वाणी सुनकर मन्दोदरी हृदयमें अकुलाई॥ ४॥

रहसि जोरिकर पतिपद लागी ❀ बोली बचन नीतिरसपागी॥ ५॥
कंत कर्ष हरिसन परिहरहू ❀ मोर कहा अतिहित चित धरहू॥ ६॥

एकांतमें हाथ जोड़कर और पतिके चरण छूकर नीतिके रसमें सने हुये वेंचन बोली कि॥ ५॥ हे स्वामी! भगवान्से वैर छोड़ दो और मेरे कहनेको बड़ा हितकारी जान मनमें रक्खो॥ ६॥

कवित्त–(१) जैसी मूढाताई छाई कंत तव करेजेमाहिं वैसी मनभाई सब मंत्रिन शठानकी।
चौपट चवाइनकी सीखे बहु गर्वभरी जानि परी आई नाशघरी यातुधानकी॥
अजहूं सबेरो पिय मान कह्यो मेरो जाय करौ न अबेरो करि एतो मंत्र कानकी॥
वैर छोड जानकी जो देहौ खैर जानिकी न देहौ जानि जानकी तौ हैहै हानि जानकी॥१॥ ब० क०

समुझत जासु दूतकी करनी ❀ स्रवहिं गर्भ रजनीचरि धरनी ॥ ७ ॥
तासु नारि निजसचिव बुलाई ❀ पठवहु कंत जो चहहु भलाई ॥ ८ ॥

जिनके दूतकी करणीको समझकर राक्षसोंकी स्त्रियोंके गर्भ धरनीपर गिर पड़ते हैं ॥ ७ ॥ हे पति ! जो भलाई चाहो तौ उसकी स्त्रीको अपने मंत्रीको बुलाकर (उसके साथ) भेज दो ॥ ८ ॥

तव कुलकमलबिपिनदुखदाई ❀ सीता सीतनिसासम आई ॥ ९ ॥
सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हें ❀ हित न तुम्हार संभु अज कीन्हें॥१०॥

तुम्हारे कुटुम्बरूपी कमलवनको सीता शरद (ऋतु) की रातके समान आई है ॥ ९ ॥ हे नाथ! सुनो, सीताके दिये विना महादेव और ब्रह्माके करनेसेभी तुम्हारा कल्याण नहीं होगा ॥ १० ॥

दो०–रामबाण अहिगनसरिस, निकरनिसाचर भेक ॥ ❀
जबलगि ग्रसत न तबहिं लगि, जतन करहु तजि टेक ॥३६॥ ❀

रामचन्द्रजीके बाण सर्पोंके समूहके समान हैं और राक्षसोंका समूह मेंड़कके (समूहके) समान हैं, सो जबतक वह नहीं ग्रसते हैं तभीतक जिद्द छोड़कर उपाय करो ॥ ३६ ॥

चौ०–स्रवन सुनत सठ ताकरि बानी ❀ बिहँसा जगतविदित अभिमानी ॥ १ ॥
सभय सुभाव नारिकहँ साँचा ❀ मंगलमहँ भय मन अति कांचा ॥ २ ॥

मूर्ख रावण उसकी वाणीको कानोंसे सुनकर हँसा, क्यों कि वह जैसा अभिमानी है सो संसारमें प्रसिद्ध है ॥ १ ॥ स्त्रियोंका स्वभाव सच मुच डरपोक होता है (देखो) आनन्द मंगलमें भी भयके मारे मनमें कैसी कचियाती है ॥ २ ॥

जो आवै मरकटकटकाई ❀ जियहिं बिचारे निसिचरखाई ॥ ३ ॥
कंपहिं लोकप जाके त्रासा ❀ तासु नारि सभीति बड़ि हासा ॥ ४ ॥

जो बन्दरोंकी सेना आवै तौ उन विचारोंको राक्षस खाकर जी जायँगे ॥ ३ ॥ जिसके भयसे लोकपालभी कांपते हैं उसकी स्त्री डरै यह बड़ी हँसीकी बात है ॥ ४ ॥

अस कहि बिहँसि ताहि उर लाई ❀ चलेउ सभा ममता अधिकाई ॥ ५ ॥
मंदोदरी हृदय कर चिंता ❀ भयो कंतपर बिधि बिपरीता ॥ ६ ॥

ऐसे कहकर और हँसकर उसे छातीसे लगाया और विशेष घमंडसे सभाको चला ॥ ५ ॥ मन्दोदरी हृदयमें चिन्ता करने लगी कि पतिपर विधाता उलटा होगया ॥ ६ ॥

बैठेउ सभा खबरि अस पाई ❀ सिंधुपार सेना सब आई ॥ ७ ॥
बूझेसि सचिव उचित मत कहहू ❀ ते सब हँसे मष्ट करि रहहू ॥ ८ ॥
जितेहु सुरासुर तब स्रम नाहीं ❀ नर बानर केहि लेखेमाहीं ॥ ९ ॥

(जब रावण) सभामें बैठा सो ऐसी खबर मिली कि (वानरोंकी) सब सेना समुद्रके पार आगई॥७॥ जब तौ मंत्रियोंसे पूछने लगा कि जो ठीक सलाह हो सो कहो. वे सब हँसकर चुप हो रहे कि ॥८॥ जब देवताओं और राक्षसोंको जीता तभी श्रम नहीं हुआ तौ मनुष्य और बन्दर किस गिनतीमें है॥९॥

दो०–सचिव वैद्य गुरु तीनि जो, बोलहिं प्रिय भय आस ॥ ❀
राज धर्म तनु तीनि कर, होइ बेगही नास ॥ ३७ ॥ ❀

जो मंत्री, वैद्य, और गुरु ये तीनों भयके मारे ठकुरसुहाती कहैं तौ राज्य, धर्म और शरीर इन तीनोंका शीघ्रही नाश हो जाता है ॥ ३७ ॥

सोइ रावनकहँ बनी सहाई ❀ अस्तुति करहिं सुनाइ सुनाई ॥ १ ॥
चौ०–अवसर जानि बिभीषन आवा ❀ भ्राताचरन सीस तेहिं नावा ॥ २ ॥

सोई बनता आकर रावणको सहायक बनी है (जो मंत्री) सुना २ कर स्तुति करते हैं ॥ १ ॥
मौका जानकर बिभीषण आया और उसने भाईके चरणोंको मस्तक नवाया ॥ २ ॥

पुनि सिरनाइ बैठि निज आसन ❀ बोला बचन पाइ अनुसासन ॥ ३ ॥
जो कृपालु पूछहु मोहिं बाता ❀ मतिअनुरूप कहहुँ मैं ताता ॥ ४ ॥

फिर शिर नवाकर और अपने आसनपर बैठ आज्ञा पाकर वचन बोला ॥ ३ ॥ हे दयानिधान !
तुम मुझसे बात पूछो तौ हे प्यारे ! मै अपनी बुद्धिके अनुसार कहूँ कि ॥ ४ ॥

जो आपन चाहहु कल्याना ❀ सुजस सुमति सुभगति सुख नाना ॥५॥
तौ परनारिलिलार गुसाँई ❀ तजो चौथिचंदाकी नाँई ॥ ६ ॥

जो तुम अपना भला, सुन्दर यश, सुन्दर बुद्धि, अच्छी गति और अनेक सुख चाहो ॥ ५ ॥
तौ हे स्वामी ! पराई स्त्रीके मस्तकको चौथके चन्द्रमाकी भांति त्याग दो ॥ ६ ॥

चौदह भुवन एकपति होई ❀ भूतद्रोह तिष्ठै नहिं कोई ॥ ७ ॥
गुनसागर नागर नर जोऊ ❀ अल्पलोभ भल कहै न कोऊ ॥ ८ ॥

भगवान् चौंदह लोकोंके एकही स्वामी हैं, उनसे द्रोह करके कोई जीव आनन्द नहीं पासक्ता ॥ ७ ॥ जो
मनुष्य गुणोंका समुद्र और चतुर हो और थोड़ासा लोभ करै तौ उसे कोई अच्छा नहीं कहता ॥ ८ ॥

दो०–काम क्रोध मद लोभ सब, नाथ नरककर पंथ ॥ ❀
सब परिहरि रघुबीरपद, भजहु कहहिं सद्ग्रंथ ॥ ३८ ॥ ❀

हे स्वामी ! काम, क्रोध, मद और लोभ ये सब नरकके मार्ग हैं सो इन सबको छोड़कर रामचन्द्रजीके चरणोंका भजन करो, यों वेदादि अच्छे ग्रंथ कहते हैं ॥ ३८ ॥

चौ०–तात राम नहिं नरभूपाला ❀ भुवनेस्वर कालहुकर काला ॥ १ ॥
ब्रह्म अनामय अज भगवंता ❀ व्यापक अजित अनादि अनंता ॥ २ ॥

हे प्यारे ! रामचन्द्र मनुष्योंकेही राजा नहीं हैं किंतु लोकोंके ईश्वर और कालकेभी काल हैं ॥ १ ॥
भगवान् (रामचन्द्र) जन्ममरणरहित, ब्रह्म, सर्वव्यापक, अजित, आदिरहित और अंतरहित हैं ॥२॥

गोद्विजधेनुदेवहितकारी ❀ कृपासिंधु मानुषतनुधारी ॥ ३ ॥
जनरंजन भंजन खलव्राता ❀ वेदधर्मरक्षक सुरत्राता ॥ ४ ॥

गौ, ब्राह्मण, और देवताओंके हित करनेके लिये दयानिधान भगवान्ने मनुष्यका शरीर धारण किया है ॥ ३ ॥ भक्तोंको आनन्द देनेवाले, दुष्टोंके समूहके नाश करनेवाले, वेद तथा धर्मके
रक्षक और देवताओंकी रक्षा करनेवाले हैं ॥ ४ ॥

ताहि बैर तजि नाइय माथा ❀ प्रनतारतिभंजन रघुनाथा ॥ ५ ॥
देहु नाथ प्रभुकहँ बैदेही ❀ भजहु राम बिनु काम सनेही ॥ ६ ॥

वैर छोड़कर उनकों माथा नवाइये क्यों कि रामचन्द्रजी शरणागतोंके दुःखभंजन हैं ॥५॥ हे स्वामी !
भगवान्को सीताजी देदो और विनाकारण प्रेम करनेवाले रामचन्द्रजीका भजन करो. (जो कहो कि
हमने तौ वड़े पाप किये हैं क्योंकर उनकी शरण जाकर मुँह दिखावें ? तहां कहते हैं कि) ॥ ६ ॥

सरन गये प्रभु काहु न त्यागा ❀ बिस्वद्रोह कृत अघ जेहिं लागा ॥ ७ ॥
जासु नाम त्रयताप नसावन ❀ सो प्रभु प्रगट समुझ जिय रावन ॥ ८ ॥

जिन्हें संसारसे द्रोह करनेका पाप लगा है ऐसे मनुष्यभी[१] जब शरणमें गये हैं उनकोभी भगवान्‌ने नहीं त्यागा ॥ ७ ॥ हे रावण ! जिसका नाम तीनों तापोंका नाश करनेवाला है वही भगवान् प्रगट हुये हैं इसे मनमें समझो ॥ ८ ॥

दो०–वार वार पद लागौं, विनय करौं दससीस ॥
परिहरि मान मोह मद, भजहु कोसलाधीस ॥ ३९ ॥

हे रावण ! वार २ चरण छूकर विनती करता हूं कि अभिमान अज्ञान और घमंडको छोड़कर रामजीका भजन करो ॥ ३९ ॥

मुनिपुलस्त्य निजसिष्यसन, कहि पठई यह बात ॥
तुरत सो मैं तुमसन कही, पाइ सुअवसर तात ॥ ४० ॥

हे प्यारे ! पुलस्त्य मुनिने अपने शिष्यसे यह बात कहला भेजी थी सोई मैंने सुन्दर अवसर पाकर तुमसे तुरंत कहदीनी है ॥ ४० ॥

चौ०–माल्यवंत इक सचिव सयाना ❀ तासु बचन सुनि अति सुख माना ॥१॥
तात अनुज तव नीतिविभूषन ❀ सो उर धरिय जो कहहिं बिभीषन॥२॥

माल्यवंत नाम एक चतुर मंत्रीने उसके वचन सुनकर वहुत सुख माना (और कहा) ॥ १ ॥ हे प्यारे! तुम्हारा भाई नीतिका आभूषण है इसलिये जो कुछ विभीषण कहता है उसे हृदयमें रक्खो ॥ २ ॥

रिपुउत्कर्ष कहत सठ दोऊ ❀ दूरि न करहु इहाँ है कोऊ ॥ ३ ॥
माल्यवंत गृह गयउ बहोरी ❀ कहेउ बिभीषन पुनि कर जोरी ॥ ४ ॥

(रावण बोला) दोनों मूर्खवैरीकी बड़ाई करते हैं. अरे यहाँ कोई है ? इनको अलग क्यों नहीं करते ॥ ३ ॥ फिर माल्यवंत तौ अपने घर चला गया और विभीषणने फिर हाथ जोड़कर कहा ॥४॥

सुमति कुमति सबके उर रहई ❀ नाथ पुरान निगम अस कहई ॥ ५ ॥
जहाँ सुमति तहँ संपति नाना ❀ जहाँ कुमति तहँ विपति निदाना ॥ ६ ॥

हे स्वामी ! पुराण और शास्त्र ऐसे कहते हैं कि सुमति और कुमति सबके हृदयमें रहती है ॥५॥ (परन्तु) जहां सुमति है वहां अनेक प्रकारकी संपत्ति है, जहां कुमति है वहाँ अंतमें विपत्ति है ॥ ६ ॥

तव उर कुमति बसी बिपरीती ❀ हित अनहित मानहु रिपुप्रीती ॥ ७ ॥
कालरात्रि निसिचरकुलकेरी ❀ तेहि सीतापर प्रीति घनेरी ॥ ८ ॥

सो तुम्हारे हृदयमें तौ कुमति बसी है (इस लिये सब बातें) विपरीत हो रहीं हैं कि मित्रको शत्रु और शत्रुओंको मित्र मानते हो ॥ ७ ॥ और जो राक्षसोंके कुलकी कालरात्रि अर्थात् नाश करनेवाली है उस सीतापर तुम्हारी वहुत प्रीति है ॥ ८ ॥

दो०–तात चरन गहि मांगहुँ, राखहु मोर दुलार ॥
सीता देहु रामकहँ, अतिहित होइ तुम्हार ॥ ४१ ॥

हे प्यारे ! चरण पकड़कर मांगता हूं, मेरा लाड़ रक्खो और सीताजीको रामचन्द्रजीको देदो जिसमें तुम्हारा अधिक कल्याण हो ॥ ४१ ॥

चौ०–बुध पुरान स्रुतिसंमत बानी ❀ कही बिभीषन नीति बखानी ॥ १ ॥
सुनत दसानन उठा रिसाई ❀ खल तोहिं मृत्यु निकट चलि आई ॥२॥

---

(१) गूढ़ार्थदीपिकामें देखो.

पंडित, पुराण और वेदके अनुसार बिभीषणने नीति वर्णनकर कही ॥ १ ॥ सुनतेही रावण रिस कर उठा कि अरे दुष्ट ! तेरी मृत्यु पास आ पहुँची है ॥ २ ॥

जियसि सदा सठ मोर जिआवा ❀ रिपुकर पक्ष सदा तोहिं भावा ॥ ३ ॥
कहसि न खल अस को जगमाहीं ❀ भुजबल जेहि जीता हम नाहीं ॥ ४ ॥

अरे मूर्ख ! सदा मेरे जिलानेसे जीता है परन्तु तुझे वैरीका पक्ष सदा अच्छा लगता है ॥ ३ ॥ अरे दुष्ट ! कहता क्यों नहीं कि संसारमें ऐसा कौन है कि जिसको हमने अपनी भुजाओंके बलसे नहीं जीता ? ॥ ४ ॥

मम पुर बसि तपसिनसन प्रीती ❀ सठ मिलु जाइ ताहि कहु नीती ॥ ५ ॥
अस कहि कीन्हेसि चरनप्रहारा ❀ अनुज गहे पद बारहिंबारा ॥ ६ ॥

मेरे नगरमें रहकर तपस्वियोंसे प्रीति (करता) है. हे मूर्ख ! उसीसे जा मिल (वहांही) नीति कहियो ॥ ५ ॥ ऐसे कहकर लात मारी तौभी भाईने बार २ चरण पकड़े ॥ ६ ॥

उमा संतकी इहै बड़ाई ❀ मंद करत जो करै भलाई ॥ ७ ॥
तुम पितुसरिस भले मोहिं मारा ❀ राम भजे हित होइ तुम्हारा ॥ ८ ॥
सचिव संग लै नभपद गयऊ ❀ सबहिं सुनाइ कहत अस भयऊ ॥ ९ ॥

हे पार्वती ! संतोंकी यही बड़ाई है जो बुरा करतेभी भलाई करैं ॥ ७ ॥ (बिभीषणने कहा) तुम पिताके समान हो तुमने मुझे मारा सो भला किया, परंतु तुम्हारा कल्याण तौ रामचन्द्रजीका भजन करनेसेही होगा ॥ ८ ॥ और वह मंत्रीको साथ लेकर आकाशमार्गसे गया और सबको सुनाकर यों कहने लगा कि ॥ ९ ॥

दो०–राम सत्यसंकल्प प्रभु, सभा कालबस तोरि ॥ ❀
मैं रघुनायकसरन अब, जाउँ देहु जनि खोरि ॥ ४२ ॥ ❀

रामचन्द्रस्वामी सत्यसंकल्प हैं अर्थात् जो बात विचारी है करके रहेंगे और तेरी सभा कालके वश है सो मैं अब रामचन्द्रकी शरण जाता हूं मुझे दोष मत दीजियो ॥ ४२ ॥

चौ०–अस कहि चला बिभीषन जबहीं ❀ आयुहीनभे निसिचर तबहीं ॥ १ ॥
साधुअवज्ञा तुरत भवानी ❀ कर कल्यान अखिलक हानी ॥ २ ॥

जब बिभीषण ऐसे कह कर चला राक्षस तौ तभी आयुहीन होगये अर्थात् उनकी अवस्था क्षीण होने लगी ॥ १ ॥ हे पार्वती ! साधुओंकी अवज्ञा तुरंत संपूर्ण कल्याणोंकी हानि करती है ॥ २ ॥

रावन जबहिं बिभीषन त्यागा ❀ भयउ बिभव बिनु तबहिं अभागा ॥ ३ ॥
चलेउ हरषि रघुनायकपाहीं ❀ करत मनोरथ बहु मनमाहीं ॥ ४ ॥

रावणने जब बिभीषणको त्यागा तभीसे उस रावणका भाग्य फूटा और वैभव जाता रहा ॥ ३ ॥ बिभीषण प्रसन्न होकर और मनमें बहुतसे मनोरथ करता हुआ रामचन्द्रजीके पास चला कि ॥ ४ ॥

देखिहौं जाइ चरनजलजाता ❀ अरुन मृदुल सेवकसुखदाता ॥ ५ ॥
जे पद परसि तरी ऋषिनारी ❀ दंडककानन पावनकारी ॥ ६ ॥

---

(१) रावणने अपने मनमें यह संकल्प कर रक्खा था कि रामसे वैर कर और इनके हाथसे मरकर भवसागरसे तरजाऊँ. जैसा आरण्यकांडमें लिखा है कि–

"तासन जाइ वैर हठि करऊँ। प्रभुसर प्रान तजे भव तरऊँ ॥

इस लिये जो कोई कहता है कि रामसे वैर मत कर या सीताको देदे वही उसे बुरा लगता है, सो बिभीषणको इसीलिये लात मारी कि रामसे तौ वैर हैही जो उनके भक्तको लात मारूंगा तौ उन्हें औरभी अधिक क्रोध होगा और वे शीघ्र मुझे मारकर अपने धामको पहुँचावेंगे.

(भगवानके) लाल और कोमल तथा सेवकोंको सुख देनेवाले चरणकमलोंके दर्शन करूंगा॥५॥ जिन चरणोंको छूकर ऋषिनारी (अहल्या) तरगई और जिन चरणोंने दंडकवनको पवित्र किया ॥ ६॥

जे पद जनकसुता उर लाए ❀ कपटकुरंगसंग धर धाए ॥ ७ ॥
हरउर सर सरोज पद जोई ❀ अहोभाग्य मैं देखब सोई ॥ ८ ॥

जो चरण सीताजीने हृदयमें धारण किये और जो कपटके हिरणके साथ धर दौड़े ॥ ७ ॥ और जो चरण शिवजीका हृदय सोई सरोवर है उसमें कमल होकर रहते हैं मैं उन्हींको देखूंगा, सो मेरा अहोभाग्य है ॥ ८ ॥

दो०–जिन पाँयनकर पादुका, भरत रहे मन लाइ ॥
ते पद आज बिलोकिहौं, इन नयनन अब जाइ ॥ ४३ ॥

जिन चरणोंकीखड़ाउओंमें भरत मन लगा रहे हैं उन्हीं चरणोंको आजअब इन नेत्रोंसे जाकर देखूंगा

चौ०–इहिबिधि करत सप्रेम बिचारा ❀ आयउ सपदि सिंधुके पारा ॥ १ ॥
कपिन्ह बिभीषन आवत देखा ❀ जानेउ कोउ रिपुदूत बिसेखा ॥ २ ॥

इस भाँति प्रेमसे विचार करता हुआ शीघ्रही समुद्रके पार आया ॥ १ ॥ वन्दरोंने बिभीषणको आते हुये देखा तौ जाना कि कोई वैरीका खास दूत है ॥ २ ॥

ताहि राखि कपिपतिपहँ आये ❀ समाचार सब जाइ सुनाए ॥ ३ ॥
कह सुग्रीव सुनिय रघुराई ❀ आवा मिलन दसाननभाई ॥ ४ ॥

उसे (वहीं) ठहराकर (बन्दर) सुग्रीवके पास आये और जाकर सब समाचार सुनाये ॥ ३ ॥ सुग्रीवने कहा हे रामचन्द्रजी ! सुनिये, रावणका भाई मिलने आया है ॥ ४ ॥

कह प्रभु सखा बूझिये काहा ❀ कहेउ कपीस सुनहु नरनाहा ॥ ५ ॥
जानि न जाइ निसाचरमाया ❀ कामरूप केहि कारन आया ॥ ६ ॥

भगवान्ने कहा हे मित्र ! (तुम्हारी) क्या सलाह है ? सुग्रीवने कहा हे महाराज ! सुनिये ॥५॥ राक्षसोंकी माया जानी नहीं जाती, वे कामरूप होते हैं, अर्थात् अपनी इच्छानुसार चाहे जैसा रूप धरलेते हैं, न जाने यह किस कारण आया है ? ॥ ६ ॥

भेद हमार लेन सठ आवा ❀ राखिय बाँधि मोहिं अस भावा ॥ ७ ॥
सखा नीति तुम नीक विचारी ❀ मम प्रन सरनागतभयहारी ॥ ८ ॥
सुनि प्रभुबचन हर्ष हनुमाना ❀ सरनागतवत्सल भगवाना ॥ ९ ॥

मेरी समझमें यह आता है कि वह शठ हमारा भेद लेनेको आया है सो उसे बाँध रखिये (रामजी बोले) ॥ ७ ॥ हे मित्र ! तुमने नीती तौ अच्छी बिचारी है परन्तु मेरी प्रतिज्ञा है कि मैं शरणागतोंके भयको दूर करनेवालाहूं ॥ ८ ॥ भगवान्के वचन सुनकर हनूमान् प्रसन्न हुये कि भगवान् शरणागतोंसे वडा दुलार रखते हैं ॥ ९ ॥

दो०–सरनागतकहँ जे तजहिं, निजअनहित अनुमानि ॥
ते नर पामर पापमय, तिनहिं बिलोकत हानि ॥ ४४ ॥

जो अपना अनहित विचार कर शरणागतोंको त्याग देते हैं वे मनुष्य नीच और पापी हैं और उनके देखनेसे हानि होती है ॥ ४४ ॥

चौ०–कोटिविप्रवध लागहिं जाही ❀ आए सरन तजौं नहिं ताही ॥ १ ॥
संमुख होइ जीव मोहिं जबहीं ❀ जन्मकोटिअघ नासौं तबहीं ॥ २ ॥

जिसे करोड़ ब्राह्मणोंके मारनेका पाप लगा हो उसेभी शरण आनेपर नहीं त्यागता हूं ॥ १ ॥ जब जीव मेरे सामने होता है तभी करोड़ों जन्मोंके पापोंका नाश कर देता हूं ॥ २ ॥

पापवंतकर सहज सुभाऊ ❀ भजन मोर तेहि भाव न काऊ ॥ ३ ॥
जो पै दुष्टहृदय सो होई ❀ मोरे संमुख आव कि सोई ॥ ४ ॥

और पापीका साधारण स्वभाव यह होता है, कि उसे मेरा भजन कभी अच्छा नहीं लगता ॥३॥ जो वह मनमें दुष्ट होगा तौ मेरे सामनेही क्यों आवेगा ॥ ४ ॥

निर्मलमन जन सो मोहिं पावा ❀ मोहिं कपट छल छिद्र न भावा ॥ ५ ॥
भेद लेन पठवा दससीसा ❀ तबहुँ न कछु भय हानि कपीसा ॥ ६ ॥

जिस भक्तका मन निर्मल है वह मुझे पाता है. क्योंकि मुझको कपट और छलछिद्र अच्छा नहीं लगता ॥ ५ ॥ हे सुग्रीव ! जो रावणने भेद लेनेकोभी भेजा होगा तबभी कुछ हानि और भय नहीं है ॥ ६ ॥

जगमहँ सखा निसाचर जेते ❀ लछमन हनहिं निमिषमहँ तेते ॥ ७ ॥
जो सभीत आवा सरनाई ❀ रखिहौं ताहि प्रानकी नाँई ॥ ८ ॥

हे मित्र ! संसारमें जितने राक्षस हैं उन सबको (अकेले) लक्ष्मणही पलभरमें मार डालेंगे॥७॥ और जो डरकर मेरी शरण आया होगा तौ उसे प्राणोंकी भाँति रक्खूंगा ॥ ८ ॥

दो०–उभयभाँति ले आवहु, हँसि कह कृपानिधान ॥ ❀
जय कृपालु कहि कपि चले, अंगदादि हनुमान ॥ ४५ ॥ ❀

दयाके समुद्र (भगवान्) ने हँसकर कहा कि (दुष्टभावसे आया हो वा भक्तिभावसे आया हो) दोनों प्रकारसे ले आओ. अंगद और हनूमान् आदि बन्दर, कृपानिधान (भगवान्) की जय कहते हुये चले ॥ ४५ ॥

चौ०–सादर तेहिं आगे करि बानर ❀ चले जहाँ रघुपति करुनाकर ॥ १ ॥
दूरहिं ते देखे दोउ भ्राता ❀ नयनानंद दानके दाता ॥ २ ॥

वानर आदरसहित उस विभीषणको आगे करके (वहां) चले कि जहां करुणाके समुद्र भगवान् थे ॥ १ ॥ नेत्रोंकी आनन्दका दान देनेवाले दोनो भाइयोंको दूरहीसे देखा ॥ २ ॥

---

(१) जैसा कहा है कि–"सर्वकामसमृद्धस्य अश्वमेधस्य यत्फलम् ॥ तत्फलं लभते सम्यग्रक्षिते शरणागते॥" अर्थात् सब मनोरथोंको देनेवाले अश्वमेधयज्ञका जो फल है वही फल शरणागतकी सब प्रकार रक्षा करनेसे मिलता है ॥

औरभी है कि "न भूप्रदानं न सुवर्णदानं न गोप्रदानं न तथान्नदानम् । यथा वदन्तीह महाप्रदानं सर्वेषु दानेष्वभयप्रदानम् ॥" अर्थात् इस संसारमें सब दानोंमें बड़ा दान अभयदान कहा है. वैसा न तो भूमिदान है, न सुवर्णदान है, न गोदान है और न अन्नदान है. यहां एक दृष्टान्तभी है कि "एक बहेलियेने एक कबूतरकी स्त्रीको मारा और दूसरे दिन फिर शिकार खेलने उसी जगह गया और सब दिन घूमनेपरभी कुछ नहीं पाया. रात्रिको भूखका मारा सिंह आदिके भयसे उसी कबूतरवाले वृक्षके नीचे शीतका मारा आया और अति दीन होकर बोला कि जो कोई इस वृक्षपर होवैं, मैं उसकी शरण हूं, यह सुन कबूतरने उसे पहिंचाना और शरणागत जान प्रथम अपना घोंसला गेर दिया, फिर कहींसे जलती हुई लकड़ी लाकर उस घोंसलेपर डाल दी और जब अग्नि प्रज्वलित हुई तब आपभी उसमें गिरकर भुनगया ऐसा करनेसे वधिकका शीत दूर हुआ और क्षुधाभी गई फिर इस शरणागतकी रक्षाके प्रभावसे स्वर्गसे विमान आया. कबूतरने कहा मैं अपने शरणागतको छोड़ नहीं जाऊँगा. तब उसने बधिकसमेत स्वर्गको गमन किया ॥"

बहुरि राम छबिधाम बिलोकी ❀ रहा सो ठाढ़ नयनपल रोकी ॥ ३ ॥
भुज प्रलंब कंजारुनलोचन ❀ स्यामलगात प्रनतभयमोचन ॥ ४ ॥

फिर शोभाके धाम रामचन्द्रजीको देखकर वह (बिभीषण) नेत्रोंके पलकोंको रोककर खड़ा होरहा ॥ ३ ॥ भगवान्की शोभा कैसी है कि लम्बी भुजा, लाल कमलसे नेत्र और साँवला शरीर है और वे भक्तोंका भय नाश करनेवाले हैं ॥ ४ ॥

सिंहकंध आयत उर सोहा ❀ आनन अमित मदनछबिमोहा ॥ ५ ॥
नयननीर पुलकित अति गाता ❀ मन धरि धीर कही मृदु बाता ॥ ६ ॥

सिंहकेसे कंधे और चौड़ी छाती शोभायमान है और मुख अनगिनती कामदेवोंकी शोभाको मोहित करनेवाला है ॥ ५ ॥ (बिभीषणके) नेत्रोंमें जल भर आया और शरीर अति पुलकायमान होगया और मनमें धीरज रखकर कोमल वचन कहे कि ॥ ६ ॥

निसिचरवंस जनम सुरत्राता ❀ नाथ दसाननकर मैं भ्राता ॥ ७ ॥
सहजपाप प्रिय तामसदेहा ❀ यथा उलूकहिं तमपर नेहा ॥ ८ ॥

हे देवरक्षक ! मेरा [१]राक्षसोंके वंशमें जन्म है और हे स्वामी ! मैं रावणका भाई हूं ॥ ७ ॥ तामसी शरीरवालेको सहजहीमें पाप ऐसे प्यारे लगते हैं जैसी उल्लूकी अँधेरेपर प्रीति होती है ॥ ८ ॥

दो०-स्रवन सुजस सुनि आयउँ, प्रभु भंजन भयभीर ॥ ❀
त्राहि त्राहि आरतिहरन, सरनसुखद रघुबीर ॥ ४६ ॥ ❀

आपका सुन्दर यश कानोंसे सुनकर आगा हूं कि भगवान् भय और दुःखके नाश करनेवाले हैं सो हे शरणागतोंके सुखदायक दुःखनाशक ! मेरी रक्षा करो ॥ ४६ ॥

चौ०-अस कहि करत दंडवत देखी ❀ तुरत उठे प्रभु हर्ष बिसेखी ॥ १ ॥
दीनबचन सुनि प्रभु मन भावा ❀ भुजबिसाल गहि हृदय लगावा ॥ २ ॥

ऐसे कहकर दंड़वत करते हुये देख भगवान् बड़े आनन्दसे शीघ्र उठे ॥ १ ॥ उसके दीन वचन सुनकर भगवान्के मनको भाया और बड़ी भुजाओंसे पकड़कर उसे छातीसे लगाया ॥ २ ॥

अनुजसहित मिलि ढिंग बैठारे ❀ बोले बचन भक्तभयहारे ॥ ३ ॥
कहु लंकेस सहित परिवारा ❀ कुसल कुठारह बास तुम्हारा ॥ ४ ॥

लक्ष्मणसमेत मिलकर और पास बिठलाकर भक्तोंके भयको दूर करनेवाले वचन बोले ॥ ३ ॥ हे [२]लंकाके राजा ! कहो परिवारसमेत कुशल तौ है ? क्योंकि तुम्हारा वास कुठौरमें है ॥ ४ ॥

खलमंडली बसहु दिन राती ❀ सखा धर्म निवहै केहि भाँती ॥ ५ ॥
मैं जानौं तुम्हारि सब रीती ❀ अति नयनिपुन न भाव अनीति ॥ ६ ॥

हे मित्र ! दिन रात दुर्जनोंकी मरेलीमें रहते हो (वहां) धर्मका निर्वाह किस प्रकार होता होगा ! ॥ ५ ॥ मैं तुम्हारी सब रीतिको जानता हूं (तुम) नीतिमें बहुत चतुर हो और तुम्हें अनीति अच्छी नहीं लगती ॥ ६ ॥

---

(१) इसका जन्म तौ पुलस्त्यमुनिके वंशमें है, फिर क्यों कहा कि मेरा जन्म राक्षसवंशमें है ? राक्षसवंश इसलिये कहा कि इसकी माता राक्षसी थी इसीसे राक्षसवंश कहाया; जैसे किसी ब्राह्मणसे वेश्यामें पुत्र उत्पन्न हो तौ वह वेश्याकाही पुत्र कहावैगा—

(२) यहां "लंकेश" इस संबोधनसे यह स्पष्ट दिखलाया है कि रघुनाथजी लंकाका राज्य दे चुके—

वरु भल बास नरककर ताता ❁ दुष्टसंग जनि देहि विधाता ॥ ७ ॥
अब पद देखि कुसल रघुराया ❁ जो तुम कीन्हि जानि जन दाया ॥ ८ ॥

हे प्यारे! भलेही नरकका वास अच्छा परंतु ब्रह्मा दुष्टका संग न देवै (बिभीषण बोले) ॥७॥ हे रामचन्द्रजी! अब आपके चरणोंके दर्शनसे कुशल हुई. जो तुमने अपना सेवक जानकर कृपाकी ॥८॥

दो०–तबलगि कुसल न जीवकहँ, सपनेहु मन बिस्राम ॥
जबलगि भजत न रामकहँ, सोकधाम तजि काम ॥ ४७ ॥

जबतक जीव शोकके समूह ऐसे कामको छोडकर रामचन्द्रजीका भजन नहीं करता तबतक उसको कुशल और (उसके) मनको विश्राम स्वप्नेमेंभी नहीं होता ॥ ४७ ॥

चौ०–तबलगि हृदय बसत खल माना ❁ लोभ मोह मत्सर मद नाना ॥ १ ॥
जबलगि उर न बसत रघुनाथा ❁ धरे चाप सायक कटि भाथा ॥ २ ॥

तबतकही हृदयमें अनेक दुष्ट लोभ, मोह, डाह, मद और अभिमान बसते हैं कि ॥१॥ जबतक कमरमें तरकस और धनुषबाण धारण किये रामचन्द्रजी हृदयमें नहीं बसते ॥ २ ॥

ममतातिमिर तरुनअँधियारी ❁ राग द्वेष उलूक सुखकारी ॥ ३ ॥
तबलगि बसत जीव उरमाहीं ❁ जबलगि प्रभुप्रतापरवि नाहीं ॥ ४ ॥

ममता सोई अंधकार है और तरुण अवस्था अंधेरी रात है, वह रागद्वेषरूपी उल्लुओंको सुख देनेवाली है, अर्थात् जब तरुण अवस्था आती है और ममता बढती है तब रागद्वेषभी बहुत हो जाता है ॥ ३ ॥ सो (वह ममता) तभीतक जीवके हृदयमें रहती है, जबतक हे स्वामी! आपका प्रतापरूपी सूर्य नहीं (उदय होता) ॥ ४ ॥

अब मैं कुसल मिटे भय भारे ❁ देखि राम पदकमल तुम्हारे ॥ ५ ॥
तुम कृपालु जापर अनुकूला ❁ ताहि न व्याप त्रिबिध भवसूला ॥ ६ ॥

हे रामचन्द्रजी! आपके कमलसमान चरण देखकर अब मैं कुशल हुआ और बडे २ भय मिटगये ॥५ हे दयानिधान! जिसपर तुम सहाय हो उसे [१]तीन प्रकारके संसारी दुःख नहीं सताते ॥ ६ ॥

मैं निसिचर अति अधम सुभाऊ ❁ सुभ आचरन कीन्ह नहिं काऊ ॥ ७ ॥
जासु रूप मुनिध्यान न आवा ❁ सो प्रभु हर्षि हृदय मोहिं लावा ॥ ८ ॥

मैं राक्षस हुं और मेरा बहुतही नीच स्वभाव है और मैंने कभी अच्छे आचरण नहीं किये ॥ ७ ॥ जिसका स्वरूप मुनीश्वरोंके ध्यानमें नहीं आता उन्हीं भगवान्ने प्रसन्न होकर मुझे छातीसे लगाया ८

दो०–अहो भाग्य मम अमित अति, राम कृपासुखपुंज ॥
देखेउँ नयन बिरंचि सिव, सेव्य जुगलपदकंज ॥ ४८ ॥

मेरा इतना अहोभाग्य है कि जिसका ठिकाना नहीं कि जो दया और सुखके ढेर रामचन्द्रजीको नेत्रोंसे देखा कि जिनके दोनों चरणकमलोंकी सेवा ब्रह्मा और शिव करते हैं ॥ ४८ ॥

चौ०–सुनहु सखा निज कहहुँ सुभाऊ ❁ जान भुसुंडि संभु गिरिजाऊ ॥ १ ॥
जो नर होइ चराचरद्रोही ❁ आवै सभय सरन तकि मोही ॥ २ ॥

(रघुनाथजी कहने लगे) हे मित्र! सुनो, मैं अपना स्वभाव कहता हूं कि जिसे कागभुशुंड महादेव और पार्वती ये जानते हैं ॥ १ ॥ जो मनुष्य चराचरका वैरी होकरभी भयसे मेरी शरण, तक कर आवै ॥ २ ॥

---

(१) गूढार्थदीपिकामें देखो.

तजि मद मोर कपट छल नाना ❀ करौं सद्य तेहि साधुसमाना ॥ ३ ॥
जननी जनक बंधु सुत दारा ❀ तनु धन भवन सुहृद परिवारा ॥ ४ ॥

तौ उसे अहंकार अज्ञान और अनेक कपट छल छुटाकर तत्कालही साधुके समान कर देता हूँ ॥ ३ ॥ माता, पिता, भाई, पुत्र, स्त्री, शरीर, धन, महल, मित्र और कुटुम्ब ॥ ४ ॥

सबकी ममताताग बटोरी ❀ मम पद मनहिं बाँधि बट डोरी ॥ ५ ॥
समदरसी इच्छा कछु नाहीं ❀ हर्ष सोक भय नहिं मनमाहीं ॥ ६ ॥

इन सबकी ममता कच्चे तागेके समान है, उसे बटकर और सुन्दर पक्की डोरसे अपने मनको मेरे चरणोंसे बाँधै, अर्थात् मातापिता आदि सबकी ममता त्यागकर अपने मनको मेरे चरणोंमें लगावै ॥ ५ ॥ और समानदृष्टि होकर कुछ इच्छा न रक्खे, और हर्ष शोक और भय मनमें न रक्खे ॥ ६ ॥

अस सज्जन मम उर बस कैसे ❀ लोभीहृदय बसत धन जैसे ॥ ७ ॥
तुमसे संत सदा प्रिय मोरे ❀ धरेउँ देह नहिं आन निहोरे ॥ ८ ॥

ऐसा सज्जन मेरे हृदयमें कैसे रहता है जैसे लोभी (मनुष्य)के हृदयमें धन बसता है ॥ ७ ॥ तुम्हारे समान संत मुझको सदा प्यारे हैं (उन्हींको लिये) शरीर धारण किया है और किसीके निहोरेसे नहीं किया ॥ ८ ॥

दो०–सगुनउपासक परमहित, निरत नीति दृढ़ नेम ॥ ❀
ते नर प्रानसमान मम, जिनके द्विजपद प्रेम ॥ ४९ ॥ ❀

जिनके सगुण उपासनाहीं परम कल्याण है, जो नीतिमें ततपर और नियममें दृढ हैं, और जिनकी ब्राह्मणोंके चरणोंसे प्रीति है वे मनुष्य मुझको प्राणोंके समान (प्यारे) हैं ॥ ४९ ॥

चौ०–सुनु लंकेस सकल गुन तोरे ❀ ताते तुम अतिसय प्रिय मोरे ॥ १ ॥
रामबचन सुनि वानरजूथा ❀ सकल कहहिं जय कृपावरूथा ॥ २ ॥

हे लंकेश ! (बिभीषण !) सुनो, तुममें सब गुण हैं इसीसे तुम मेरे बडे प्यारे हो ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीके वचन सुनकर बन्दरोंके समूह सब कहते हैं कि दयानिधान (भगवान्) की जय होय ॥ २ ॥

सुनत बिभीषन प्रभुकर बानी ❀ नहिं अघात स्रवनामृत जानी ॥ ३ ॥
पदअंबुज गहि बारहिं बारा ❀ हृदय समात न प्रेम अपारा ॥ ४ ॥

बिभीषण भगवान्की वाणीको सुनकर और कानोंको अमृत समान जानकर तृप्त नहीं होता ॥ ३ ॥ (भगवान्के) कमलसमान चरणोंको बार बार पकडता है और अपार स्नेह हृदयमें नहीं समाता (बिभीषणने कहा) ॥ ४ ॥

सुनिये देव चराचरस्वामी ❀ प्रनतपाल उर अंतरजामी ॥ ५ ॥
उर कछु प्रथम वासना रहेऊ ❀ प्रभुपदप्रीतिसरित सो बहेऊ ॥ ६ ॥

हे देव ! सुनिये. आप तौ चराचरके स्वामी, भक्तोंके पालक और घट २ की जाननेवाला हैं ॥५॥ पहले हृदयमें कुच्छ (लंकाके राज्यकी) इच्छा थी सो (अब वहभी) स्वामीके चरणोंकी प्रीतिरूपी नदीमें बहगई ॥ ६ ॥

अब कृपालु निजभक्ति जो पावनि ❀ देहु दया करि सिवमनभावनि ॥ ७ ॥
एमवस्तु प्रभु कहि रनधीरा ❀ माँगा तुरत सिंधुकर नीरा ॥ ८ ॥

हे दयालु ! अब अपनी पवित्र भक्ति जो महादेवके मनको अच्छी लगती है उसे कृपा करके दो ॥ ७ ॥ लडाईमें धीरज धरनेवाला भगवान्ने एवमस्तु (ऐसाही हो) कहकर फिर तुरंतही समुद्रकी रेती जल माँगी ॥ ८ ॥

जदपि सखा तोहिं इच्छा नाहीं ❀ मम दर्सन अमोघ जगमाहीं ॥ ९ ॥
अस कहि राम तिलक तेहिंसारा ❀ सुमनवृष्टि नभ भयउ अपारा ॥ १० ॥

और बोले, हे मित्र! यद्यपि तुझे इच्छा नहीं है तथापि मेरा दर्शन संसारमें अमोघ है, अर्थात् खालि नहीं जाता, सो जिस राज्यके मदसे रावणने तुमको निकालाहै उसीको दूंगा ॥९॥ ऐसे कहकर रामचन्द्रजीने उसको (लंकाका राज) तिलक किया और आकाशसे बडी भारी फूलोंकी वर्षा हुई ॥ १० ॥

दो०–रावन क्रोधअनल निज, स्वास समीर प्रचंड ॥ ❀
जरत बिभीषन राखेउ, दीन्हउ राज अखंड ॥ ५० ॥ ❀

रावणका क्रोध तौ अग्नि है और उसकी श्वासा प्रचण्ड पवन है, उससे जलते हुये विभीषणको बचाकार उसे अखंड राज्य दिया ॥ ५० ॥

जो संपति सिव रावनहिं, दीन्ह दिए दस माथ ॥ ❀
सो संपदा बिभीषणहिं, सकुचि दीन्ह रघुनाथ ॥ ५१ ॥ ❀

और जो संपत्ति[१] महादेवने रावणको दश माथे (काटकर) चढानेसे दी थी वही संपत्ति रघुनाथजीने विभीषणको सकुच कर दी ॥ ५१ ॥

चौ०–अस प्रभु छाँड़ि भजहिं जे आना ❀ ते नर पसु बिनु पुँछ बिषाणा ॥ १ ॥
निजजन जानि ताहि अपनावा ❀ प्रभुसुभाव कपिकुलमन भावा ॥ २ ॥

ऐसे भगवान्‌को छोड जो औरका भजन करैं वे मनुष्य विना सींग और पूँछके पशु हैं ॥ १ ॥ (भगवान्‌नें) अपना दास जानकर उसको अपना बनाया तौ भगवानका स्वभाव बन्दरोंके समूहको अच्छा लगा ॥ २ ॥

पुनि सर्वज्ञ सर्वउरवासी ❀ सर्वरूप सबरहित उदासी ॥ ३ ॥
बोले बचन नीतिप्रतिपालक ❀ कारनमनुज दनुजकुलघालक ॥ ४ ॥

फिर भगवान् जो सर्वज्ञ हैं सबके हृदयमें निवास करनेवाले हैं सबमें व्याप्त हैं सबसे परे हैं और उदासीन हैं ॥३॥ तथा मायासे मनुष्यरूप, राक्षसोंके कुलके नाशक और नीतिके प्रतिपालक हैं सो ये बचन बोले कि ॥ ४ ॥

सुनु कपीस लंकापति बीरा ❀ केहिबिधि उतरिय जलधि गँभीरा ॥५॥
संकुल उरग मकर झष जाती ❀ अतिअगाध दुस्तर सबभाँती ॥ ६ ॥

हे सुग्रीव ! विभीषण ! हे योद्धाओ ! सुनो. गहरे समुद्रको किस भाँति उतरना चाहिये ॥ ५॥ सर्प मछली और मगरोंके समूहोंसे भरा हुआ, बहुत गहरा, और सब प्रकार दुःखसे तरनेके योग्य है ६

कह लंकेस सुनहु रघुनायक ❀ कोटिसिंधुसोषक तव सायक ॥ ७ ॥
जद्यपि तदपि नीति अस गाई ❀ बिनय करिय सागरपहँ जाई ॥ ८ ॥

विभीषणने कहा हे रामचन्द्रजी ! सुनो, आपका बाण तौ करोडों समुद्रोंको सोखनेवाला है ॥ ७ ॥ यद्यपि (यह बात ठीक है) तथापि नीतिमें यों कहा है कि समुद्रके पास जाकर प्रार्थना करनी चाहिये ॥ ८ ॥

दो०–प्रभु तुम्हार कुलगुरु जलधि, कहिहि उपाय बिचारि ॥ ❀
बिनु प्रयास सागर तरहिं, सकल भालु कपि झारि ॥ ५२ ॥ ❀

---

(१) हनुमन्नाटके "या विभूतिर्दशग्रीवे शिरश्छेदेऽपि शंकरात् । दर्शनाद्रामदेवस्य सा विभूतिर्विभीषणे॥१॥" अर्थ चौपाईसे मिलता है ॥

और हे भगवान् ! समुद्र आपका कुलगुरु है (क्योंकि आपके पूर्वज सगरपुत्रोंने खोदा है) सो वह विचारकर वही उपाय कहैगा कि जिससे विनाही परिश्रमके सब रीछ बन्दरोंकी सेना समुद्रके पार हो जायगी ॥ ५२ ॥

चौ०-सखा कह्यो तुम नीक उपाई ❀ करब दैव जो होइ सहाई ॥ १ ॥
मंत्र न यह लछमनमन भावा ❀ रामबचन सुनि अति दुख पावा ॥ २ ॥

(भगवान् बोले) हे मित्र ! तुमने अच्छा उपाय कहा जो दैव सहायक हो तौ ऐसाही करूंगा ॥१॥ यह सलाह लक्ष्मणके मनमें अच्छी नहीं लगी सो रामचन्द्रजीके वचन सुनकर बहुत दुःख पाया ॥२॥

नाथ दैवकर कवन भरोसा ❀ सोषिय सिंधु करिय मन रोषा ॥ ३ ॥
कादरमनकर एक अधारा ❀ दैव दैव आलसी पुकारा ॥ ४ ॥

(लक्ष्मण बोले) हे स्वामी ! दैवका क्या भरोसा है ? मनमें क्रोध करके समुद्रको सोख लीजिये ॥ ३ ॥ और दैव तौ जिसका मन डरपोक है उसका एक आधार है कि वह आलसी होकर दैवही दैव पुकारता रहता है ॥ ४ ॥

सुनत बिहँसि बोले रघुबीरा ❀ ऐसेइ करब धरहु मन धीरा ॥ ५ ॥
अस कहि प्रभु अनुजहिं समुझाई ❀ सिंधुसमीप गए रघुराई ॥ ६ ॥

वचन सुनतेही रामचन्द्रजी हँसकर बोले कि ऐसेही करेंगे, मनमें धीरज रक्खो ॥ ५ ॥ भगवान् रघुनाथजी ऐसे कहकर और लक्ष्मणको समझाकर समुद्रके पास गये ॥ ६ ॥

प्रथम प्रनाम कीन्ह प्रभु जाई ❀ बैठे तट पुनि दर्भ डसाई ॥ ७ ॥
जबहिं बिभीषन प्रभुपहँ आए ❀ पाछे रावन दूत पठाए ॥ ८ ॥

भगवान्ने जाकर पहले दंडवत की, फिर किनारेपर डाभ बिछाकर बैठ गये ॥७॥ जब विभीषण भगवान्के पास आये थे तौ रावणने पीछे दूत भेजे ॥ ८ ॥

दो०-सकल चरित तिन्ह देखेउ, धरे कपटकपिदेह ॥ ❀
प्रभुगुन हृदय सराहि अति, सरनागतपर नेह ॥ ५३ ॥ ❀

इन्होंने कपटसे बन्दरोंका शरीर धारण कर सब चरित्र देखा तौ मनमें भगवान्के गुणोंकी बहुत सराहना करने लगे कि इनका शरणागतपर बडा प्रेम है ॥ ५३ ॥

चौ०-प्रगट बखानत रामसुभाऊ ❀ अति सप्रेम गा बिसरि दुराऊ ॥ १ ॥
रिपुके दूत कपिन्ह तब जाने ❀ ताहि बाँधि कपिपतिपहँ आने ॥ २ ॥

प्रत्यक्षमें रामचन्द्रजीके स्वभावका वर्णन करने लगे और बडे प्रेमके कारण कपट मिटगया ॥१॥ तब बन्दरोंने उनको वैरके दूत पहिंचाने और बाँधकर सुग्रीवके पास ले आये ॥ २ ॥

कह सुग्रीव सुनहु सब बनचर ❀ अंगभंग करि पठवहु निसिचर ॥ ३ ॥
सुनि सुग्रीवबचन कपि धाए ❀ बाँधि कटक चहुँ पास फिराए ॥ ४ ॥

सुग्रीवने कहा हे सब वन्दरो ! सुनो. इन राक्षसोंको अंगभंग करके भेज दो ॥ ३ ॥ सुग्रीवके वचन सुनकर वन्दर दौडे और बांधकर सेनाके चारों ओर फिराये ॥ ४ ॥

बहुप्रकार मारन कपि लागे ❀ दीन पुकारत तदपि न त्यागे ॥ ५ ॥
जो हमार हर नासा काना ❀ तेहि कोसलाधीसकर आना ॥ ६ ॥

बन्दर बहुत भाँति मारने लगे और वे बिचारे चिल्लाने लगे तौभी नहीं छोडा ॥५॥ (तब दूतोंने कहा) जो हमारे नाककान काटै उसे रामचन्द्रजीकी सौगंद है ॥ ६ ॥

सुनि लछमन तेहि निकट बुलाए ❀ दया लागि हँसि दीन्ह छुड़ाए ॥ ७ ॥
रावनकर दीन्हेहु यह पाती ❀ लछमनबचन बाँचु कुलघाती ॥ ८ ॥

यह सुनकर लक्ष्मणजीने उनको पास बुलाया और दया आई तौ हँसकर छुडादिया (और कहा) ॥७॥ रावणके हाथमें यह चिट्ठी देना कि हे कुलके नाश करनेवाले! लक्ष्मणके वचनोंको बाँच ॥८॥

दो०-कहेहु मुखागर मूढ़सन, मम संदेस उदार ॥ ❀
सीता देइ मिलहु नतु, आवा काल तुम्हार ॥ ५४ ॥ ❀

और उस मूर्खसे जवानीभी मेरा सुन्दर सँदेशा कहना कि या तौ सीताजीको देकर मिलो नहीं तौ तुम्हारा काल आगाया है ॥ ५४ ॥

चौ०-तुरत नाइ लछमनपद माथा ❀ चले दूत बरनत गुनगाथा ॥ १ ॥
कहत रामजस लंका आए ❀ रावनचरन सीस तिन्ह नाए ॥ २ ॥

लक्ष्मणजीके चरणोंको माथा नवाय दूत तुरंतही (उनके) गुणोंकी कथाको वर्णन करते हुये चले ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीके यशको कहते हुये लंकामें आये और उन्होंने रावणके चरणोंको मस्तक नवाया ॥ २ ॥

बिहँसि दशानन पूछेसि बाता ❀ कहसि न सुक आपनि कुसलाता ॥ ३ ॥
पुनि कहु कुसल बिभीषनकेरी ❀ जासु मृत्यु आई अतिनेरी ॥ ४ ॥

रावणने हँसकर बात पूछी कि हे शुक! अपनी कुशल क्यों नहीं कहता? ॥ ३ ॥ फिर विभीषणकी कुशल कह कि जिसकी मृत्यु बहुतही पास आ पहुँची है ॥ ४ ॥

करत राज लंका सठ त्यागा ❀ होइहि जवकर कीट अभागा ॥ ५ ॥
पुनि कह भालुकीसकटकाई ❀ कठिनकालप्रेरित चलि आई ॥ ६ ॥

मूर्ख लंकाका राज्य करता था सो तौ छोड दिया अब अभागा यवका घुन हो जायगा, अर्थात् जैसे अन्नके साथ घुन पिस जाता है उसी प्रकार रीछ वानरोंके साथ मारा जायगा ॥ ५ ॥ फिर रीछ वन्दरोंकी सेनाका हाल कहो जो कठिन कालकी प्रेरी हुई चली आई है ॥ ६ ॥

तिन्हके जीवनकर रखवारा ❀ भयउ मृदुलचित सिंधु बिचारा ॥ ७ ॥
कहु तपसिन्हकर बात बहोरी ❀ जिन्हके हृदय त्रास अति मोरी ॥ ८ ॥

उनके जीवोंका रखवाला कोमल स्वभाववाला विचारा समुद्रही (सहायक) हुआ है ॥ ७ ॥ फिर तपस्वियोंकी बात कहो जिनके मनमें मेरा बड़ा ड़र होरहा हैं ॥ ८ ॥

दो०-भई भेंट की फिरिगए, स्रवन सुनत जस मोर ॥ ❀
कहसि न रिपुदल तेज बल, कस चक्रित चित तोर ॥ ५५ ॥ ❀

(उनसे तुम्हारी) भेट हुई या मेरे यशको कानोंसे सुनकरही लौट गये. शत्रुकी सेना और उसके तेज बलको नहीं कहता, तेरा चित्त कैसा कुछ डामाडोलसा होगया है? (शुक बोला) ॥ ५५ ॥

चौ०-नाथ कृपाकरि पूछहु जैसे ❀ मानहु बचन क्रोध तजि तैसे ॥ १ ॥
मिला जाइ जब अनुज तुम्हारा ❀ जातहि राम तिलक तेहिं सारा ॥ २ ॥

हे स्वामी! जैसे दया करके (आपने) पूछा है वैसेही मेरी बात क्रोध छोडकर समझना ॥ १ ॥ जब तुम्हारा भाई जाकर मिला तौ जातेही रामचन्द्रजीने उसको लंकाका राजतिलक किया ॥ २ ॥

रावनदूत हमहिं सुनि काना ❀ कपिन्ह बाँधि दीन्हेउ दुख नाना ॥ ३ ॥
स्रवन नासिका काटन लागे ❀ रामसपथ दीन्ही हम त्यागे ॥ ४ ॥

हमको रावणका दूत कानोंसे सुनकर वन्दरोंने बांधकर अनेक प्रकारके दुःख दिये ॥ ३ ॥ और नाक कान काटने लगे तो हमने रामचन्द्रजीकी सौगंद दिलाई तब हमें छोडा ॥ ४ ॥

पूछेउ नाथ कीसकटाई ❀ बदन कोटिसत बरनि न जाई ॥ ५ ॥
नाना बरन भालु कपि धारी ❀ बिकटानन बिसाल भयकारी ॥ ६ ॥

और हे नाथ! (आपने जो) वन्दरोंकी सेना पूछी सो सौ करोड मुखोंसेभी नहीं वर्णित हो सक्ती ॥५॥ अनेक रंगोंके रीछ बन्दर हैं और उनके टेढे मेढे मुख और वडे भयंकर शरीर हैं ॥६॥

जेइँ पुर दहेउ बधेउ सुत तोरा ❀ सकल कपिन्हमहँ तेहिं बल थोरा ॥ ७ ॥
अमित नाम भट कठिन कराला ❀ बिपुल नाग बल तेज बिसाला ॥ ८ ॥

और जिसने नगर जलाया था और तुम्हारा पुत्र मारा था वह तौ सव वन्दरोंमें थोडा वलवान् है ॥ ७ ॥ वहुत नामोंके योद्धा वडे २ भयंकर हैं और उनमें वहुतसे हाथियोंका वल है तथा वडा तेज है ॥ ८ ॥

दो०-द्विविद मयंद नील नल, अंगदादि विकटासि ॥ ❀
दधिमुख केहरि कुमुद गव, जांबवंत बलरासि ॥ ५६ ॥ ❀

द्विविद, मयंद, नील, नल, अगंद, विकटाशी, दधिमुख, केहरि, कुमुद, गव और जाम्बवंत आदि (योद्धा) वलकी खान हैं ॥ ५६ ॥

चौ०-ए कपि सब सुग्रीवसमाना ❀ इन्हसम कोटि गणै को आना ॥ १ ॥
रामकृपा अतुलितबल तिनहीं ❀ तृनसमान त्रय लोकहिं गिनहीं ॥ २ ॥

ये सव बन्दर सुग्रीवके बराबरही हैं और इनके समान करोडों और हैं उन्हें कौन गिन सक्ता है? ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीकी दयासे उनमें अतोल वल है सो वे तीनों लोकोंको तिनके समान गिनते हैं॥२॥

अस मैं स्रवन सुना दसकंधर ❀ पदम अठारह जूथप बन्दर ॥ ३ ॥
नाथ कटकमहँ सो कपि नाहीं ❀ जो न तुमहिं जीतै रनमाहीं ॥ ४ ॥

हे रावण! मैंने कानोंसे ऐसा सुना है कि सेनामें अठारह पद्म[1] बन्दर हैं ॥ ३ ॥ और हे स्वामी! सेनामें ऐसा बन्दर कोई नहीं जो तुमको लड़ाईमें न जीत सकै ॥ ४ ॥

परम क्रोध मीजहिं सब हाथा ❀ आयसु पै न देहिं रघुनाथा ॥ ५ ॥
सोषहिं सिंधु सहित झष व्याला ❀ पूरहिं नतु भरि कुधर बिसाला ॥ ६ ॥

वडे क्रोधसे सव हाथ मीड़ते हैं परन्तु रामजी आज्ञा नहीं देते ॥ ५ ॥ (और क्या कहते हैं सो सुनो की) मछली और सर्पोंसहित समुद्रको पी जायँ अथवा वडे२ पर्वतोंसे भरकर उसे पाट दें ॥६॥

मर्दि गर्द मिलवहिं दससीसा ❀ ऐसे बचन कहहिं सब कीसा ॥ ७ ॥
गर्जहिं तर्जहिं सहज असंका ❀ मानहुँ ग्रसन चहतहहिं लंका ॥ ८ ॥

रावणको मींड़कर धूलमें मिला दें-ऐसे २ वचन सव वन्दर कहते हैं ॥ ७ ॥ सहजहीमें ऐसे निर्भय होकर गर्जते और तर्जते हैं मानों लंकाको निगलना चाहते हैं ॥ ८ ॥

दो०-सहजसूर कपि भालु सब, पुनि सिरपर स्रीराम ॥ ❀
रावन काल कोटिकहँ, जीति सकहिं संग्राम ॥ ५७ ॥ ❀

हे रावण! (प्रथम तौ) सव रीछ वन्दर सहजहीमें योद्धा हैं फिर श्रीरामचन्द्र उनके शिरपर हैं जो करोड़ कालोंकोभी जीत सक्ते हैं ॥ ५७ ॥

---

(१) अठारह पद्म बन्दरोंकी संख्यासे जो अधिक हैं वे रीछ हैं-

चौ०–रामतेजबलबुधिविपुलाई ❀ सेष सहससत सकहिं न गाई ॥ १ ॥
सक सर एक सोषि सतसागर ❀ तव भ्रातहि पूछेउ नयनागर ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीके तेज बल और बुद्धिकी अधिकताको सौ हजार शेषजीभी नहीं कह सक्ते ॥ १ ॥ उनका एकही बाण सौ समुद्रोंको सोख सक्ता है पर रामजी नीतिमें बड़े चतुर हैं इसलिये तुम्हारे भाईसे पूंछा ॥ २ ॥

तासु बचन सुनि सागरपाहीं ❀ माँगत पंथ कृपा मनमाहीं ॥ ३ ॥
सुनत बचन बिहँसा दससीसा ❀ जों अस मति सहाय कृत कीसा ॥ ४ ॥

और उसके वचन सुनकर मनमें दया विचारकर समुद्रसे रास्ता मांगते हैं ॥ ३ ॥ वचन सुनते हीं रावण हँसा कि जब ऐसी बुद्धि है तभी बन्दरोंको अपना सहायक बनाया है ॥ ४ ॥

सहज भीरुकर बचन दृढाई ❀ सागरसन ठानी मचलाई ॥ ५ ॥
मूढ़ मृषा का करसि बड़ाई ❀ रिपुबलबुद्धिथाह मैं पाई ॥ ६ ॥

और सहजमें डरपोक (ऐसे बिभीषण) की बातोंमें आकर समुद्रसे मचलाई ठानी है ॥ ५ ॥ अरे मूर्ख ! झूँठ क्या बड़ाई करता है मैंने वैरीके बल और बुद्धिकी थाह पालीनी ॥ ६ ॥

सचिव सभीत बिभीषन जाके ❀ बिजय बिभूति कहाँलगि ताके ॥ ७ ॥
सुनि खलबचन दूतरिसि बाढ़ी ❀ समय बिचारि पत्रिका काढ़ी ॥ ८ ॥

जिसके डरपोक बिभीषण (सरीखे तौ) मंत्री हैं फिर उसकी विजयका वैभव कहांतक अर्थात् कुछ नहीं॥७॥दुष्ट (रावण)के वचन सुनकर दूतको क्रोध बढ़ा तौ समय विचारकर चिट्ठी निकाली ॥ ८ ॥

रामअनुज दीन्हीं यह पाती ❀ नाथ बँचाइ जुड़ावहु छाती ॥ ९ ॥
बिहँसि बामकर लीन्हेसि रावन ❀ सचिव बोलि सठ लागु बँचावन ॥१०॥

(और कहा) हे स्वामी ! रघुनाथजीके छोटे भाई लक्ष्मणजीने यह चिट्ठी दी है इसे पढ़कर जरा छाती ठंढी करो ॥ ९ ॥ मूर्ख रावणने हँसकर (वह चिट्ठी) बाँये(१) हाथमें ली और मंत्रीको बुलाकर पढ़वाने लगा ॥ १० ॥

दो०–बातन्ह मनहिं रिझाय सठ, जनि घालसि कुछ खीस ॥ ❀
रामविरोध न उबरिहहु, सरन विस्नु अज ईस ॥ ५८ ॥ ❀

अरे शठ ! बातोंहीसे मनको रिझाकर कुलका नाश मत करै, क्योंकि रामचन्द्रजीके विरोधसे ब्रह्मा विष्णु और महादेवकी शरणमेंभी नहीं बचैगा ॥ ५८ ॥

होउ मान तजि अनुज इव, प्रभुपदपंकजभृंग ॥ ❀
होहि रामसरअनल खल, जनि कुलसहितपतंग ॥ ५९ ॥ ❀

अभिमान छोड़कर बिभीषण भाईकी भाँति भगवान्‌के कमलसमान चरणोंमें भौंरे के समान हो. अरे दुष्ट ! रामचन्द्रजीके बाणरूपी अग्निमें कुटुम्बसमेत पतंग मत हो ॥ ५९ ॥

चौ०–सुनत सभय मनमहँ मुसुकाई ❀ कहत दसानन सबहिं सुनाई ॥ १ ॥
भूमि परा कर गहत अकासा ❀ लघु तापसकर बागबिलासा ॥ २ ॥

रावण सुनतेही मनमें तौ डर गया पर उपरके मनसे मुसक्याकर कहने लगा ॥ १ ॥ (देखो) जैसे पृथ्वीपर पड़ा हुआ मनुष्य हाथसे आकाश छुआ चाहे उसी प्रकार इस छोटे तपस्वी (लक्ष्मण)की बाणीकासी आनन्द है, अर्थात् कोरी बातेंही बातें हैं ॥ २ ॥

---

(१) बैरीकी चिट्ठी बाँये हाथमें लिया करते हैं.

कह सुक नाथ सत्य सब बानी ❀ समुझहु छाँड़ि प्रकृति अभिमानी ॥ ३ ॥
सुनहु बचन मम परिहरि क्रोधा ❀ नाथ रामसन तजहु विरोधा ॥ ४ ॥

शुकने कहा हे स्वामी ! सब वाणी ठीक है, आप अभिमानके स्वभावको छोड़कर समझो ॥ ३ ॥ क्रोध छोड़कर मेरे वचन सुनो. हे स्वामी ! रामचन्द्रजीसे विरोध छोड़ दो ॥ ४ ॥

अतिकोमल रघुबीरसुभाऊ ❀ यद्यपि अखिललोककर राऊ ॥ ५ ॥
मिलत कृपा प्रभु तुमपर करिहैं ❀ उर अपराध न एकौ धरिहैं ॥ ६ ॥

श्रीरामचन्द्र यद्यपि सब लोकोंके राजा हैं तथापि (उनका) स्वभाव बहुतही कोमल है ॥ ५ ॥ भगवान् मिलतेही तुम्हारे ऊपर दया करैंगे और एकभी अपराधको मनमें न धारण करैंगे ॥ ६ ॥

जनकसुता रघुनाथहिं दीजै ❀ इतनाकहा मोर प्रभु कीजै ॥ ७ ॥
जब तेइँ देन कहेउ बैदेही ❀ चरनप्रहार कीन्ह सठ तेही ॥ ८ ॥

हे स्वामी ! सीताजी रामचन्द्रजीको देदो इतना मेरा कहना करो ॥ ७ ॥ जब उसने सीताजीके देनेको कहा तब तौ मूर्ख (रावण) ने उसके लात मारी. (क्योंकि रावणके मनमें तौ रामके हाथसे मरकर भवसागर तरनेकी लग रही है) ॥ ८ ॥

चरन नाइ सिर चला सो तहँवा ❀ कृपासिंधु रघुनायक जहँवा ॥ ९ ॥
करि प्रनाम निजकथा सुनाई ❀ रामकृपा आपनि गति पाई ॥ १० ॥

(वह रावणके) चरणोंको माथा नवाकर वहाँको चला जहाँ दयाके समुद्र रामचन्द्रजी थे ॥९॥ प्रणाम करके अपनी कथा सुनाई और रामचन्द्रजीकी दयासे अपनी गति पाई ॥ १० ॥

ऋषिअगस्त्यकर साप भवानी ❀ राक्षस भयउ रहा मुनि ज्ञानी ॥ ११ ॥
बंदि रामपद बारहिंबारा ❀ पुनि निजआस्रमकहँ पगु धारा ॥ १२ ॥

(महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! (यह)अगस्त्यऋषिके[१] शापसे राक्षस होगयाथा, पहले ज्ञानी मुनीश्वर था ॥११॥ सो रामचन्द्रजीके चरणोंको वारंवार दंडवत् करके फिर अपने आश्रमको चलागया ॥१२॥

दो०-विनय न मानत जलधि जड़, गए तीन दिन बीति ॥ ❀
बोले राम सकोप तब, भय बिनु होइ न प्रीति ॥ ६० ॥ ❀

मूर्ख समुद्र विनती नहीं मानता, (भगवान्‌को) तीन दिन वीत गये तब रामचन्द्रजी क्रोधित होकर बोले कि विना भयके प्रीति नहीं होती ॥ ६० ॥

चौ०-लछमन बान सरासन आनू ❀ सोषौं बारिधि बिसिख कृसानू ॥ १ ॥
सठसन बिनय कुटिलसन प्रीती ❀ सहजकृपनसन सुंदर नीति ॥ २ ॥

---

(१) शुक पहिले ब्राह्मण था, तपके लिये वनको चलागया था, वहां इसने राक्षसोंके नाशये लिये बहुतसे यज्ञ किये और इसकी राक्षसोंके संग वड़ी लड़ाई रही, फिर एक वज्रदंत राक्षस इसके पीछे पड़गया ॥ एकदिन शुकके आश्रममें अगस्त्यजी आये, शुकने सन्मान कर न्योता दिया तब ऋषि तौ स्नान करने गये और वज्रदंत ऋषिका रूप धर आया और शुकसे कहा कि हमको बकरेका मांस खिलाना यह कह कर लोप होगया ॥ शुकने मांस तयार कराया और ऋषिभी स्नान करके आये इतनेमे वज्रदंत स्त्रीका वेष धरके और ऋषिको नरमांस परोसकर लोप होगया । यह देख ऋषिने शुकको शाप दिया कि तू राक्षस होजा । जब शुकने कहा कि मेरा तौ इसमें कुछ अपराध नहीं है, आपनेही तौ मांसके लिये कहा था, तब ऋषिने तपोवलसे विचारा कि यह काम वज्रदंत का है तौ कहने लगे कि हे शुक ! मेरा शाप तौ निष्फल न होगा पर तू रावणके यहां सेवक बनैगा और रामचन्द्र उसे मारने आवेंगे उनके दर्शनसे तेरा शाप छूट जायगा ॥ यह कथा अध्यात्मरामायणमें है ॥

हे लक्ष्मण ! धनुष्य वाण लाओ; समुद्रको अग्निवाणसे सोख लूं ॥ १ ॥ (क्योंकि) मूर्खसे विनती, कुटिलसे प्रीति और जन्मके कृपणसे सुन्दर नीति कहना ॥ २ ॥

ममतारतसन ज्ञानकहानी ❀ अतिलोभीसन बिरति बखानी ॥ ३ ॥
क्रोधिहिं सम कामिहिं हरिकथा ❀ ऊषर बीज बये फल यथा ॥ ४ ॥

और ममतामें लगे हुयेसे ज्ञानकी कथा और महालोभीसे वैराग्य कहना ॥ ३ ॥ क्रोधीसे इन्द्रियाँ रोंकनेको कहना और कामीसे भगवान्‌की कथा कहना ऊषरभूमिमें बीज बोनेके समान हैं ॥४॥

अस कहि रघुपति चाप चढ़ावा ❀ यह मत लछमनके मन भावा ॥ ५ ॥
संधानेउ धनु बिसिख कराला ❀ उठी उदधिउरअंतर ज्वाला ॥ ६ ॥

ऐसे कहकर रघुनाथजीने धनुष्य चढ़ाया. यह सलाह लक्ष्मणजीके मनको अच्छी लगी ॥ ५ ॥ (भगवान्‌ने) धनुषपर कठिन बाण संधान किया तौ समुद्रके हृदयके भीतर ज्वाला उठी ॥ ६ ॥

मकर उरग झषगन अकुलाने ❀ जरत जंतु जलनिधि पहिंचाने ॥ ७ ॥
कनकथाल भरि मनिगन नाना ❀ बिप्ररूप आयउ तजि माना ॥ ८ ॥

जब मगर सर्प और मछलियोंके समूह अकुलाये और समुद्रने जाना कि जीव जन्तु जले जाते हैं ॥ ७ ॥ तौ सुवर्णके थालमें अनेक प्रकारके बहुतसे मणि भरकर और अभिमान छोड़कर ब्राह्मणका[1] रूप धरकर आया ॥ ८ ॥

दो०–काटेपै कदली फलै, कोटि जतन कोउ सींच ॥ ❀
बिनय न मान खगेश सुनु, डाटेहिंपै नम नीच ॥ ६१ ॥ ❀

कोई करोड़ों उपायोंसे केलेको सींचै पर वह काटनेहीसे फलता है सो हे गरुड़ ! नीचभी विनती नहीं मानता, ताड़नासेही नम्र होता है ॥ ६१ ॥

चौ०–सभय सिंधु गहि पद प्रभुकेरे ❀ छमहु नाथ सब अवगुन मेरे ॥ १ ॥
गगन समीर अनल जल धरनी ❀ इनकै नाथ सहज जड़ करनी ॥ २ ॥

समुद्रने भयसहित भगवान्‌के चरण पकड़कर कहा हे स्वामी ! मेरे सब अवगुणोंको क्षमा करो ॥१॥ हे स्वामी ! पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश इनकी करनी सहजहीमें जड़ होती है ॥२॥

तव प्रेरित माया उपजाए ❀ सृष्टिहेतु सब ग्रंथन गाए ॥ ३ ॥
प्रभु आयसु जेहि कहँ जस अहही ❀ सो तेहिं भाँति अहे सुख लहही ॥ ४ ॥

आपकी प्रेरणासे मायाने (ये सब) संसारके लिये उत्पन्न किये हैं इसे सब ग्रंथ कहते हैं ॥३॥ हे स्वामी ! (आपकी) जिसको जैसी आज्ञा है वह उसी भांति रहनेसे सुख प्राप्त कर सक्ता है ॥४॥

प्रभु भल कीन्ह मोहिं सिख दीन्ही ❀ मर्यादा सब तुम्हरी कीन्ही ॥ ५ ॥
ढोल गँवार सूद्र पसु नारी ❀ ये सब ताड़नके अधिकारी ॥ ६ ॥

हे नाथ ! आपने अच्छा किया जो मुझको शिक्षा दी जैसा कहा है कि "सासति करि पुनिकरहिं पसाऊ। नाथ प्रभुन कर यही स्वभाऊ" और मर्यादा तौ सब आपकी बनाई हुई है ॥५॥ ढोल गँवार शूद्र पशु और स्त्री यह सब ताड़नाहीके अधिकारी हैं (अर्थात् इनको ताड़नाही उपयोगी है) ॥ ६ ॥

प्रभुप्रताप मैं जाब सुखाई ❀ उतरहि कटक न मोरि बड़ाई ॥ ७ ॥
प्रभुआज्ञा अपेल स्रुति गाई ❀ करहु बेगि जो तुमहिं सोहाई ॥ ८ ॥

हे नाथ ! मैं (आपके) प्रतापसे सूख जाऊँ और सेना उतर जावै तौ मेरी बडाई न रहैगी ॥७॥ हे स्वामी ! आपकी आज्ञा वेदोंने अमित कही है (इस कारण) जो आपको अच्छा लगै वही शीघ्र करो ॥८॥

---

(१) ब्राह्मणका रूप इसलिये धरा कि ब्राह्मणके रूपको देख भगवान्‌का अधिक क्रोध शांत होजायगा–

दो०-सुनत बिनीत वचन अति, कह कृपालु मुसुकाय ॥ ❀
जेहि बिधि उतरै कपिकटक, तात सो करहु उपाय ॥ ६२ ॥ ❀

अधिक विनतीके वचन सुनकर कृपाशील रामजीने हँसकर कहा, हे प्यारे! जिस भांति वन्दरोंकी सेना उतरै वही उपाय करो ॥ ६२ ॥

चौ०-नाथ नील नल कपि दोउ भाई ❀ लरिकाई ऋषिआसिष पाई ॥ १ ॥
तिनके परस किये गिरि भारे ❀ तरिहहिं जलधि प्रताप तुम्हारे ॥ २ ॥

(समुद्रने कहा) हे स्वामी ! नील और नल दोनों बानर भाइयोंने लड़कपनसे ऋषिका आशीर्वाद पाया है ॥ १ ॥ उनके छूनेसे बड़े २ पर्वतभी आपके प्रतापसे समुद्रपर तैरेंगे ॥ २ ॥

मैं पुनि उर धरि प्रभु प्रभुताई ❀ करिहौं बलअनुमानसहाई ॥ ३ ॥
इहिबिधि नाथ पयोधि बँधाइय ❀ जिहिं जस सुजस लोक तिहुँ गाइय ॥४॥

फिर मैं स्वामीकी प्रभुताको हृदयमें धारण कर बलके अनुसार सहायता करूंगा ॥३॥ हे स्वामी ! इस प्रकार समुद्र (का पुल) बँधाइये जिससे यह सुन्दर यश तीनों लोकोंमें गाया जावे ॥ ४ ॥

इहि सर मम उत्तरतटबासी ❀ हतहु नाथ नर खल अघरासी ॥ ५ ॥
सुनि कृपालु सागरमन पीरा ❀ तुरतहि हरी राम रनधीरा ॥ ६ ॥

और हे प्रभो ! (आपका वाण निष्फल नही जाता इसलिये) इस वाणसे तौ मेरे उत्तरके(१) किनारेपर रहनेवाले दुष्ट और पापी लोगोंको मारो ॥ ५ ॥ दया करनेवाले रणधीर रामचन्द्रजीने सुनकर समुद्रके मनका दुःख तुरंतही हर लिया ॥ ६ ॥

देखि रामबल अतुलित भारी ❀ हर्षि पयोनिधि भयउ सुखारी ॥ ७ ॥
सकल चरित कहि प्रभुहिं सुनावा ❀ चरन वंदि पाथोधि सिधावा ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजीके अतोल और भारी बलको देखकर समुद्र प्रसन्न होकर सुखी हुआ ॥ ७ ॥ और समुद्रने सब वृत्तान्त भगवान्को कह सुनाया और उनके चरणोंको दंड़वत कर चलागया ॥ ८ ॥

छं०-निजभवन गवनेउ सिंधु श्रीरघुबीरहियमत भायऊ । ❀
यह चरित कलिमलहरन जस मति दासतुलसी गायऊ ॥ ❀
सुखभवन संशयसमन दमनविषाद रघुपतिगुनगना । ❀
तजि आस सकल भरोस गावहिं सुनहिं सज्जन सुचिमना ॥६॥ ❀

समुद्र अपने स्थानको गया; (उसकी) सलाह रामचन्द्रजीके मनको अच्छी लगी; तुलसीदासने कलियुगके पापोंका नाश करनेवाला यह चरित्र अपनी बुद्धिके अनुसार कहा है. सुखके स्थान संशयके दूर करनेवाले, दुःखके नाश करनेवाले, रामचन्द्रजीके गुणोंके समूहोंको पवित्र माननेवाले सज्जन (मनुष्य) सब आशाको छोड़कर विश्वाससमेत गाते और सुनते हैं ॥ ६ ॥

दो०-सकलसुमंगलदायक, रघुनायकगुनगान ॥ ❀
सादर सुनहिं ते तरहिं भव, सिंधु विना जलयान ॥ ६३ ॥ ❀

रामचन्द्रजीके गुणोंका गान करना संपूर्ण सुन्दर आनन्दोंका देनेवाला हैं, इसे जो आदरसहित सुनैंगे वे विनाही नौकाके संसाररूपी समुद्रसे पार हो जायंगे ॥ ६३ ॥

---

(१) समुद्रके उत्तरमें जो दुष्ट रहते थे उस जगहका नाम अध्यात्मरामायणमें द्रुमकुल्य लिखा है ॥ वहांके लोग समुद्रके बार २ बाँधनेका यत्न कर सताते थे ॥

॥ छन्द ॥

सिवचरन सरन सँभारि सोभा सुमिरि स्रीभगवानकी ।
लहिकै अनुज्ञा ज्ञानगुननिधि तुकाराम सुजानकी ॥
विद्वान बालमुकुन्दसुत अपनी जु मति अनुमानकी ।
टीका करी परिपूर्ण सुन्दर पांचवें सोपानकी ॥ १ ॥

दोहा.

आसुग आनन ईशके, अरु रस रसा मिलाय ।
संवतसर मलमास वर, परवहि पार लगाय ॥ २ ॥

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विमलवैराग्यसंपादनो नाम पंचमः सोपानः सुंदरकांडः समाप्तः ॥ ५ ॥

श्रीसीतारामचन्द्रार्पणमस्तु ॥

इति सुंदरकांडं समाप्तम् ॥

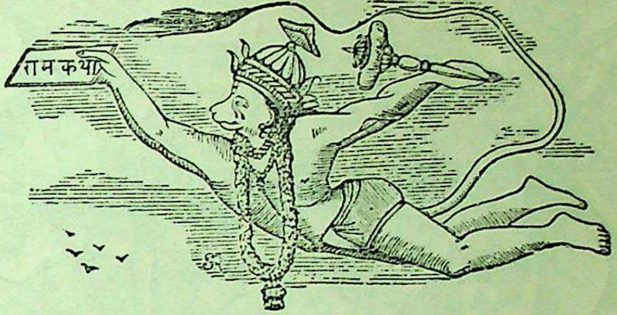

श्रीगोस्वामी

तुलसीदासकृतरामायणम्
पीयूषधाराहिंदीभाषाटीकासहितम्।

(लंकाकांडम्)

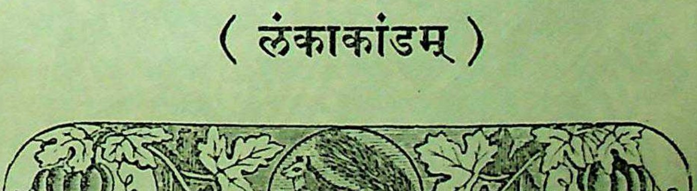

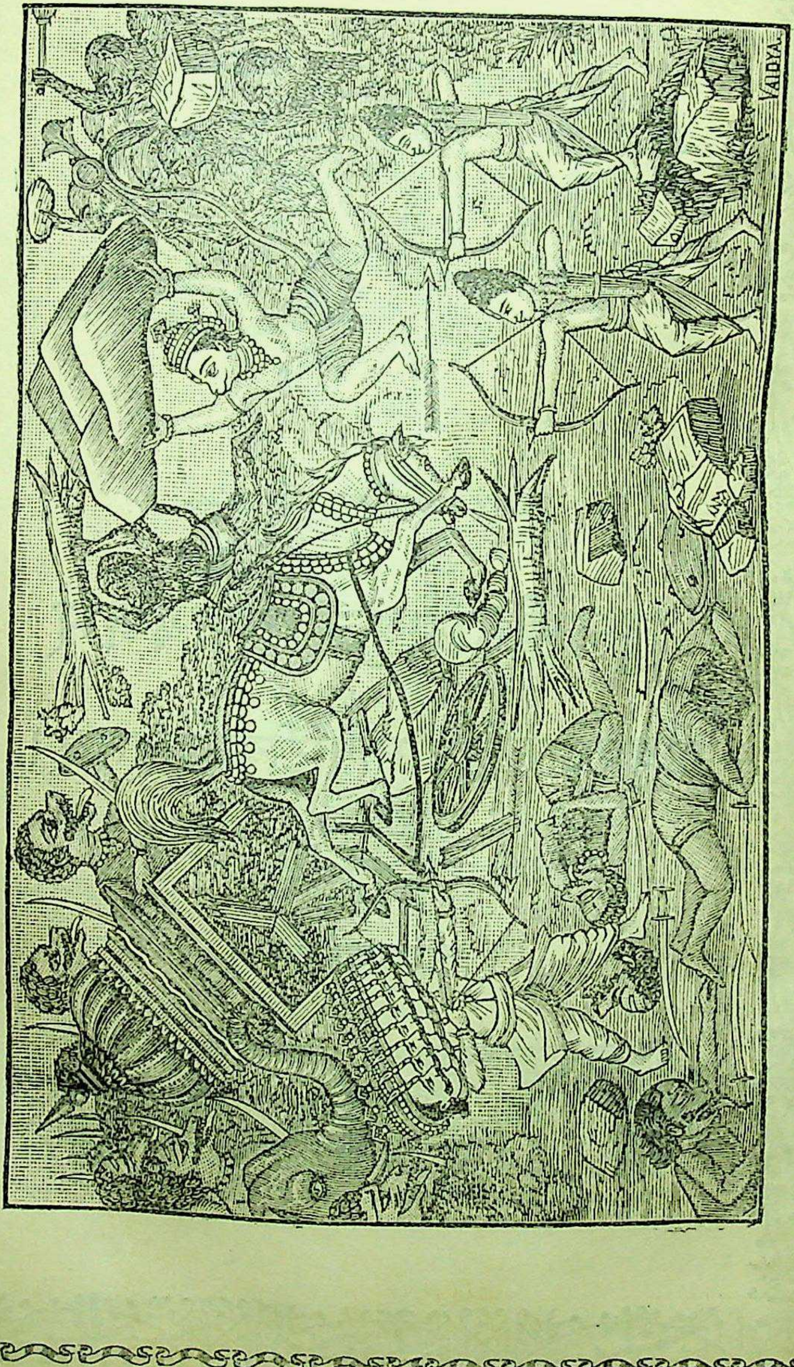

रामरावणका युद्ध.

॥ श्रीः ॥

श्रीगोस्वामी

तुलसीदासकृतरामायणम् ।

लंकाकांडप्रारंभः ।

मंगलाचरणम्.

श्लोकः-रामं कामारिसेव्यं भवभयहरणं कालमत्तेभसिंहं
योगीन्द्रं ध्यानगम्यं गुणनिधिमजितं निर्गुणं निर्विकारम् ॥
मायातीतं सुरेशं खलवधनिरतं ब्रह्मवृंदैकदेवं
वंदे कुंदावदातं सरसिजनयनं देवमुर्वीशरूपम् ॥ १ ॥
शंखेंद्वाभमतीव सुंदरतनुं शार्दूलचर्मांबरं
कालव्यालकपालभूषणधरं गंगाशशांकप्रियम् ॥
काशीशं कलिकल्मषौघशमनं कल्याणकल्पद्रुमं
नौमीड्यं गिरिजापतिं गुणनिधिं श्रीशंकरं कामहम् ॥ २ ॥
यो ददाति सतां शंभुः कैवल्यमतिदुर्लभम् ॥
खलानां दंडकृद्योऽसौ शंकरः शं तनोतु मे ॥ ३ ॥

मंगलाचरण-सवैया ।

पावसके घनसौ तनु श्याम सुसीस जटानको मौर बनायें ॥
नैन विशाल तनी भ्रकुटी शुभभालपै चन्दन चारु लगायें ॥
दाहिनि ओर अनंत विराजत त्योंहिं विभीषण सोहत बाँयें ॥
लूटहिं लेत मनों गढ़ लंक कुशंक मिटै इमि रामहिं ध्यायें ॥ १ ॥

श्लोकार्थः-श्रीमहादेवजीसे सेवित, संसारके भय अर्थात् जरामरणके हरनेवाले, कालरूपी मतवाले हाथीको सिंहरूप, योगियोंके शिरोमणि, ध्यानसे जाननेके योग्य, गुणोंकी खान, अजित, गुणोंसे रहित, और बिकारहीन, मायासे भिन्न, देवताओंके गुरु, दुष्टोंके नाशमें लगे हुये, ब्राह्मणोंके देवता, अथवा ब्राह्मण हैं देवता जिनके, जलसे भरे श्याममेघके समान कान्तिवाले, और कमलसमान नेत्रोंसे शोभायमान, ऐसे राजा रामचन्द्रकी मैं वन्दना करता हूं ॥ १ ॥ शंख और चन्द्रमाके समान अत्यन्त सुन्दर शरीरवाले, व्याघ्रचर्म धारण किये, काले सर्प और मुण्डोंकी मालासे शोभित,

गंगा और चन्द्रमाको प्यार करनेवाले, काशीके स्वामी, कलियुगके पापोंके समूहके नाशक, कल्याणोंके कल्पवृक्ष, पार्वतीके पति, चराचरके पूजनीय, गुणोंके समूह, और कामदेवके भस करनेवाले शंकरको मैं नमस्कार करताहूं ॥ २ ॥ जो शंकर सज्जनोंको अति दुर्लभ मुक्ति और दुष्टोंको दंड देते हैं, वे महादेवजी मुझे कल्याणको दें ॥ ३ ॥

दो०-लव निमेष परमानु जुग, वर्ष कल्प सर चंड ॥ ❀
भजसि न मन तेहि रामकहँ, काल जासु कोदंड ॥ १ ॥ ❀

हे मन ! उन रामचन्द्रजीका भजन क्यों नहीं करता है ? कि जिनका काल तौ धनुष है और लव, निमेष, परमाणु, वर्ष, युग और कल्प जिनके प्रचंड़ वाण हैं ॥ १ ॥

सो०-सिंधुवचन सुनि राम, सचिव बोलि प्रभु अस कहेउ ॥ ❀
अब विलंब केहि काम, करहु सेतु उतरै कटक ॥ १ ॥

समुद्रके वचन सुनकर रामचन्द्रस्वामीने मंत्रीको बुलाकार यह कहा कि अब देरका क्या काम है ? पुल वनाओ तौ सेना उतरै ॥ १ ॥

सुनहु भानुकुलकेतु, जाम्बवंत कर जोरि कह ॥
नाथ नाम तव सेतु, नर चढ़ि भवसागर तरहिं ॥ २ ॥

जाम्बवंतने हाथ जोड़कर कहा हे सूर्यवंशके ध्वजारूप ! हे स्वामी ! सुनिये; आपका नामही ऐसा पुल है जिसपर चढ़कर मनुष्य संसाररूपी समुद्रसे पार होजाते हैं ॥ २ ॥

चौ०-यह लघु जलधि तरत कति बारा ❀ अस सुनि पुनि कह पवनकुमारा ॥ १ ॥
प्रभुप्रताप वड़वानल भारी ❀ सोषेउ प्रथम पयोनिधिबारी ॥ २ ॥

तौ इस छोटेसे समुद्रके पार होनेमें क्या देर लगैगी ? यह सुनकर फिर हनूमानने कहा ॥ १ ॥ हे नाथ ! (आपके) प्रतापरूपी भारी वड़वानल कहिये समुद्रकी अग्नि समुद्रके जलको पहिलेही अर्थात् जब लंकाके लिये यात्रा करी थी तबही सोख चुकी थी ॥ २ ॥

तव रिपुनारिरुदनजलधारा ❀ भऱ्यो बहोरि भयो तेहिं खारा ॥ ३ ॥
सुनि अस उक्ति पवनसुतकेरी ❀ बिहँसे रघुपति कपितन हेरी ॥ ४ ॥

परंतु आपके शत्रुओंकी स्त्रियोंके रोनेसे[२] जो आँसू बहे उनकी धारासे फिर भरगया और इसीसे खारी होगया है (क्योंकि आँसू खारी होते हैं) ॥ ३ ॥ श्रीरामचन्द्रजी हनुमानकी ऐसी युक्ति सुनकर और वानरी शरीरको देखकर हँसे (कि देखो इसने वानर होकर क्या सुन्दर बात कही है ?) ॥ ४ ॥

जांबवंत बोले दोउ भाई ❀ नलनीलहिं सब कथा सुनाई ॥ ५ ॥
रामप्रताप सुमिरि मनमाहीं ❀ करहु सेतु प्रयास कछु नाहीं ॥ ६ ॥

फिर जाम्बवंतने नल नील दोनों भाइयोंको बुलाकर सब कथा सुनाई कि (समुद्र जो ब्राह्मणका वेष धरकर कह गया है कि ऋषियोंके वरदानसे तुम्हारे छुये पाषाण जलपर तैरेंगे) ॥ ५ ॥ सो रामचन्द्रजीके प्रतापको मनमें स्मरण कर पुल वनाओ, कुछभी परिश्रम न होगा ॥ ६ ॥

बोलि लिये कपिनिकर बहोरी ❀ सकल सुनहु विनती इक मोरी ॥ ७ ॥
रामचरनपंकज उर धरहू ❀ कौतुक एक भालु कपि करहू ॥ ८ ॥

और फिर बन्दरोंके समूह बुलालिये (और कहा कि तुम) सब मेरी एक बिनती सुनों ॥ ७ ॥ रीछ और बन्दर रामचन्द्रजीके कमलसमान चरणोंको हृदयमें रखकर एक खेल करो कि– ॥ ८ ॥

---

(१) लव आदिका प्रमाण गूढ़ार्थदीपिकामें देखना. (२) स्त्रियाँ अपने पतिका मरना समझकर रोई हैं.

धावहु मर्कटविकट बरूथा ❀ आनहु बिटप गिरिन्हकर जूथा ॥ ९ ॥
सुनि कपि भालु चले करि हूहा ❀ जय रघुबीरप्रतापसमूहा ॥ १० ॥

विकट बन्दरोंके झुंडके झुंड धावा करो और वृक्ष तथा पर्वतोंके समूहोंको लेले आओ ॥ ९ ॥ यह सुनकर रीछ और वन्दर हूहा (शब्द) करके और रामचन्द्रजीके अतुल प्रतापकी जय (करते हुये) चले.

दो०–अति उतंग तरु सैलगन, लीलहिं लेहिं उठाइ ॥ ❀
आनि देहिं नलनीलकहँ, बिरचहिं सेतु बनाइ ॥ २ ॥ ❀

बड़े २ ऊंचे वृक्ष और पर्वतोंके समूहोंको खेलसेही उठा लेते हैं और लाकर नलनीलको देते हैं, तौ वे रच २ कर पुल बनाते जाते हैं ॥ २ ॥

चौ०–सैल बिसाल आनि कपि देहीं ❀ कंदुक इव नलनील सो लेहीं ॥ १ ॥
देखि सेतु अतिसुंदर रचना ❀ बिहँसि कृपानिधि बोले बचना ॥ २ ॥

वन्दर जो बड़े २ पर्वत लाकर देते हैं (उन्हें) नल नील गेंदकी भांति लें लेते हैं ॥ १ ॥ दयाके समुद्र (रामचन्द्रजी) पुलकी बहुत सुन्दर रचना देखकर और हँसकर यह बात बोले कि ॥ २ ॥

परमरम्य सुन्दर यह धरनी ❀ महिमा अमित जाइ नहिं बरनी ॥ ३ ॥
करिहौं इहाँ संभुथापना ❀ मोरे हृदय परम कलपना ॥ ४ ॥

यह पृथ्वी बड़ी रमणीक और सुन्दर है, इसकी इतनी असीम महिमा है कि वर्णन नहीं की जाती ॥३॥ सो मेरे हृदयमें यह बड़ी लालसा है कि मैं यहां महादेवजीकी स्थापना करूंगा ॥ ४ ॥

सुनि कपीस बहु दूत पठाये ❀ मुनिवर सकल बोलि लै आये ॥ ५ ॥
लिंग थापि बिधिवत करि पूजा ❀ सिवसमान प्रिय मोहिं न दूजा ॥ ६ ॥

सुग्रीवने सुनकर बहुतसे दूत भेजे और वे सब श्रेष्ठ मुनीश्वरोंको बुला लाये ॥ ५ ॥ (भगवान्ने) लिंगकी स्थापना कर और (वेदकी) विधिसे पूजा करके (कहा कि) मुझको शिवके समान दूसरा कोई प्यारा नहीं है ॥ ६ ॥

सिवद्रोही मम भक्त कहावै ❀ सो नर सपनेहु मोहिं न भावै ॥ ७ ॥
संकरबिमुख भक्ति चह मोरी ❀ सो नर मूढ़ मंद मति थोरी ॥ ८ ॥

जो महादेवजीका तौ वैरी और मेरा भक्त कहाता हो वह मनुष्य मुझको स्वप्नेमेंभी अच्छा नहीं लगता ॥ ७ ॥ महादेवजीसे विमुख रहकर जो मेरी भक्ति चाहै वह मनुष्य मूर्ख और नीच है (और उसकी) बड़ी थोड़ी बुद्धि है ॥ ८ ॥

दो०–संकरप्रिय मम द्रोही, सिवद्रोही मम दास ॥ ❀
ते नर करहिं कलपभरि, घोर नरकमहँ बास ॥ ३ ॥ ❀

जिनको शिवजी तौ प्यारे लगते हैं और जो मुझसे वैर करते हैं, अथवा महादेवजीके वैरी और मेरे सेवक हैं वे मनुष्य कल्प कहिये हजार चौकड़ीतक घोर नरकमें वास करते हैं ॥ ३ ॥

चौ०–जे रामेस्वरदरसन करिहहिं ❀ ते तनु तजि मम धाम सिधरिहहिं ॥१॥
जे गंगाजल आनि चढ़ाइहिं ❀ सो सायुज्य मुक्ति नर पाइहिं ॥ २ ॥

(जो मनुष) रामेश्वर[1]जीका दर्शन करेंगे वे शरीर छोड़कर मेरे लोक (वैकुंठ) को जायँगे ॥ १ ॥ और जो मनुष्य गंगाजल लाकर चढ़ावेंगे वे सायुज्य[2] मुक्ति पावेंगे ॥ २ ॥

---

(१) रामजीने शिवकी स्थापना करके रामेश्वर नामसे प्रसिद्ध किया; रामेश्वर अर्थात् रामके ईश्वर ॥ शिव और राममें अभेद होनेसे यहां स्वामिसेवकभाव दिखाया है ॥

(२) ब्रह्ममें लय होजाय उसे सायुज्य मुक्ति कहते हैं ॥

होइ अकाम जो छल तजि सेइहि ❀ भक्ति मोर तेहि संकर देइहि ॥ ३ ॥
मम कृत सेतु जो दर्सन करहीं ❀ सो बिनु स्रम भवसागर तरहीं ॥ ४ ॥

जो कामनारहित और कपट[१] छोड़कर सेवा करेंगे उनको महादेवजी मेरी भक्ति देंगे ॥ ३ ॥ और जो मेरे बनाये हुये पुलका दर्शन करेंगे वे विनाही परिश्रम किये संसाररूपी समुद्रसे पार हो जायँगे ॥४॥

रामबचन सबके मन भाये ❀ मुनिवर निज निज आस्रम आये ॥ ५ ॥
गिरिजा रघुपतिकी यह रीती ❀ संतत करहिं प्रनतपर प्रीती ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीके बचन सबको मनमें अच्छे लगे और श्रेष्ठ मुनीश्वर अपने २ आश्रमोंमें आये ॥५॥ (महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! रामचन्द्रजीकी यह रीति है कि वे सेवकपर सदा स्नेह करते हैं ॥६॥

बाँधेउ सेतु नीलनल नागर ❀ रामकृपा जस भयउ उजागर ॥ ७ ॥
बूड़हिं आनहिं बोरहिं जेई ❀ भये उपल बोहितसम तेई ॥ ८ ॥
महिमा यह न जलधिकी बरनी ❀ पाहनगुन न कपिनकी करनी ॥ ९ ॥

चतुर नील और नलने पुल बांधा और रामचन्द्रजीकी कृपासे उनका यश सब जगह फैल गया ॥ ७ ॥ जो (आप) डूबे और दूसरोंके डुबो दें वे पत्थर नावके समान होगये ॥ ८ ॥ सो यह कुछ समुद्रकी महिमा नहीं कही और न पत्थरोंका गुण और न बन्दरोंकी करतूत है (परंतु केवल) ॥ ९ ॥

दो०-श्रीरघुबीरप्रतापतें, सिंधु तरे पाषान ॥ ❀
ते मतिमंद जे राम तजि, भजहिं जाइ प्रभु आन ॥ ४ ॥ ❀

श्रीरामचन्द्रजीके प्रतापसे समुद्रपर पत्थर तैर गये, सो वे मूर्ख हैं जो रघुनाथजीको छोड़कर और स्वामीका भजन जाकर करते हैं ॥ ४ ॥

चौ०-बाँधि सेतु अति सुदृढ़ बनावा ❀ देखि कृपानिधिके मनभावा ॥ १ ॥
चली सेन कछु बरनि न जाई ❀ गर्जहिं मर्कटभटसमुदाई ॥ २ ॥

पुल बांधकर बहुत सुन्दर पक्का बनाया[२] वह देखकर दयाके समुद्र (भगवान्) के मनको भाया ॥१॥ सेना जो चली उसका कुछ वर्णन नहीं किया जाता; योद्धा बन्दरोंके समूह गर्जते हैं ॥ २॥

सेतुबंधढिंग चढ़ि रघुराई ❀ चितव कृपालु सिंधुबहुताई ॥ ३ ॥
देखनकहँ प्रभु करुनाकंदा ❀ प्रगट भये सब जलचरवृंदा ॥ ४ ॥

दयानिधान रामचन्द्रजी सेतुबंधके पास चढ़कर समुद्रकी चौड़ाई देखने लगे तौ ॥ ३ ॥ करुणाकन्द भगवान्‌को देखनेके लिये सब जलचरोंके समूह प्रगट हुये ॥ ४ ॥

नाना मकर नक्र झष ब्याला ❀ सतजोजन तनु परम बिसाला ॥ ५ ॥
ऐसे एक एक धर खाँहीं ❀ एकनके डर एक पराहीं ॥ ६ ॥

अनेक मगर, घड़ियाल, मछली, और सर्प सौ २ योजन बड़े लंबे और चौड़े शरीरवाले ॥५॥ ऐसे हैं जो एकको एक पकड़कर खाजावें और एकके डरसे एक भाग जावें ॥ ६ ॥

प्रभुहिं बिलोकहिं टरहिं न टारे ❀ मन हर्षित सब भए सुखारे ॥ ७ ॥

---

(१) कपट छोड़नेसे यह भाव हैं कि राम ओर शिवमें भेद न जानै ॥
यों जाने कि "शिवस्य हृदयं विष्णुर्विष्णोश्च हृदयं शिवः" ॥

(२) वाल्मीकिरामायणमें लिखा है कि; समुद्र पांच दिनमें पाट दिया पहिले दिन १४ योजन दूसरे दिन २० योजन तीसरे दिन २१ योजन चौथे दिन २२ योजन और पांचवें दिन २३ योजन–

तिनकी ओट न देखिय वारी ❀ मगन भये हरिरूप निहारी ॥ ८ ॥
चला कटक कछु बरनि न जाई ❀ को कहिसक कपिदलविपुलाई ॥ ९ ॥

वे सब भगवान्‌को देखते हैं और टाले नहीं टलते, मनमें प्रसन्न हो सब सुखी हुये ॥ ७ ॥ (उस समय) उनकी ओटमें जल नहीं दिखाई देता. (मानों दूसरा पुल बँधगया) और वे भगवान्‌के रूपको देखकर प्रसन्न हुये ॥ ८ ॥ और इतनी सेना चली कि कुछ वर्णन नहीं किया जाता बन्दरोंकी सेनाकी भीड़भाड़की कौन कह सक्ता है ? ॥ ९ ॥

दो०-सेतुबंध भइ भीर अति, कपि नभपंथ उड़ाहिं ॥
अपर जलचरन्ह उपर चढ़ि, बिनुस्रम पारहिं जाहिं ॥ ५ ॥

सेतुबंधपर बड़ी भीड़भाड़ हुई (और जब जानेको मार्ग नहीं मिला तब) बन्दर आकाशमार्गमें उड़ने लगे और कितनेही जलचरोंके ऊपर चढ़ २ कर बिनाही परिश्रमके पारको जाने लगे ॥ ५ ॥

चौ०-अस कौतुक बिलोकि दोउ भाई ❀ बिहँसि चले कृपालु रघुराई ॥ १ ॥
सेनसहित उतरे रघुबीरा ❀ कहि न जाइ कछु जूथपभीरा ॥ २ ॥

ऐसे खेलको देखकर दयानिधान रघुकुलराज दोनों भाई रामचन्द्र लक्ष्मण हँसकर चले ॥ १ ॥ रामचन्द्र कटकसमेत उतरे और सेनाकी भीड़ कुछ कही नहीं जाती ॥ २ ॥

सिंधुपार प्रभु डेरा कीन्हा ❀ सकल कपिनकहँ आयसु दीन्हा ॥ ३ ॥
खाहु जाइ फल मूल सुहाये ❀ सुनत भालु कपि जहँ तहँ धाये ॥ ४ ॥

समुद्रके पार भगवान्‌ने डेरा किया और सब बन्दरोंको आज्ञा दी कि ॥ ३ ॥ जाकर सुन्दर फल और कन्द खाओ ! सुनतेही रीछ बन्दर जहां तहां दौड़े ॥ ४ ॥

सब तरु फरे रामहित लागी ❀ ऋतु अरु कुऋतु कालगति त्यागी ॥ ५ ॥
खाहिं मधुर फल बिटप हिलावहिं ❀ लंकासंमुख सिखर चलावहिं ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीके लिये सब वृक्ष ऋतु और कुऋतुके समयकी गतिको छोड़के फले फूले ॥ ५ ॥ मीठे फलोंको खाते हैं, वृक्षोंको हिलाते हैं, और शिखरोंको लंकाके सामने फेंकते हैं ॥ ६ ॥

जहँ कहँ फिरत निसाचर पावहिं ❀ घेरि सकल बहु नाच नचावहिं ॥ ७ ॥
दसनन काटि नासिका काना ❀ कहि प्रभुसुजस देहिं तब जाना ॥ ८ ॥

और जहां कहीं राक्षसोंको फिरते पाते हैं तौ सब (बन्दर) मिलकर उन्हें घेर २ कर बहुतसा नाच नचाते हैं ॥ ७ ॥ दांतोंसे (उनके) नाक कान काटते हैं और (जब वे) भगवान्‌का सुन्दर यश कहते हैं तब जाने देते हैं ॥ ८ ॥

जिनकर नासा कान निपाता ❀ तेइ रावनहिं कही सब बाता ॥ ९ ॥
सुनत स्रवण वारिधिबंधाना ❀ दसमुख बोलि उठा अकुलाना ॥ १० ॥

जिनके नाक कान काट डालेथे उन्होंने आकर रावणसे सब बात कही ॥ ९ ॥ कानोंसे समुद्रको बँधा हुआ सुनकर रावण[1] घबराकर बोल उठा ॥ १० ॥

दो०-बाँधेउ जलनिधि नीरनिधि, जलधि सिंधु बारीस ॥
सत्य तोयनिधि पंकनिधि, उदधि पयोधि नदीस ॥ ६ ॥

---

(१) इस चौपाईमें रावणके लिये " दशमुख " का प्रयोग इसलिये धरा है कि यह एक मुखसे बात किया करताथा, इस समय घबराके दशोंमुखोंसे समुद्रके १० नाम कहने लगा.

पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति प्रदत्त संग्रह

क्या सत्यही, जलनिधि, नीरनिधि, जलधि, सिंधु, वारीश, तोयनिधि, पंखनिधि, उदधि, पयोधि, नदीश को बांधलिया ? ॥ ६ ॥

चौ०–निजव्याकुलता समुझि बहोरी ❀ बिहँसि चला गृह करि भय भोरी ॥१॥
मंदोदरी सुना प्रभु आये ❀ कौतुकही पाथोधि बँधाये ॥ २ ॥

फिर अपनी व्याकुलता समझाकर और भयकी वातको भोरी कहिये सुनी अनसुनी करके हँसता हुआ घरको चला ॥१॥ मन्दोदरीने सुना कि भगवान् आगये और खेलहीसे समुद्र (का पुल) बंधा लिया है ॥ २ ॥

कर गहि पतिहिं भवन निज आनी ❀ बोली परम मनोहर बानी ॥ ३ ॥
चरन नाइ सिर अंचल रोपा ❀ सुनहु बचन प्रिय परिहरि कोपा ॥ ४ ॥

तौ पतिका हाथ पकड़ और अपने महलमें लाकर वहुत सुन्दर वाणीसे वोली–॥३॥ और (उसके) चरणोंको शीश नवाय अंचलपसारा और वोली कि–हे प्यारे! क्रोधको छोड़कर मेरे वचन सुनो ४

नाथ बैर कीजै ताहीसों ❀ बुधि बल जीति सकिय जाहीसों ॥ ५ ॥
तुमहिं रघुपतिहिं अंतर कैसा ❀ खलु खद्योतहिं दिनकर जैसा ॥ ६ ॥

हे स्वामी! वैर तौ उसीसे करना चाहिये कि जिससे वुद्धि और वलमें जीत सके ॥ ५ ॥ तुममें और रामचन्द्रजीमें कैसा अंतर है जैसा निश्चय करके पटवीजने और सूर्यमें होता है ॥ ६ ॥

अतिबल मधु कैटभ जिन मारे ❀ महावीर दितिसुत संहारे ॥ ७ ॥
जेंइ बलि बाँधि सहसभुज मारा❀ सो अवतरेउ हरन महिभारा ॥ ८ ॥
तासु विरोध न कीजिय नाथा ❀ काल कर्म गुन जिनके हाथा ॥ ९ ॥

जिन्होंने वड़े बलवान् मधु कैटभ (दैत्य) मारे और (नृसिंह अवतारसे) वड़े २ योद्धा अदितिके पुत्र (हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष) मारे ॥७॥ जिन्होंने (वामनरूप धरकर) वलिको बांधा और (परशुरामरूपसे) सहस्रवाहुको मारा, वही (विष्णु भगवान्) पृथ्वीका भार उतारनेको राम उत्पन्न हुये हैं ॥८॥ हे स्वामी! उनसे वैर न कीजिये कि जिनके हाथमें काल कर्म और गुण हैं ॥९॥

दो०–रामहिं सौंपहु जानकी, नाइ कमलपद माथ ॥ ❀
सुतकहँ राज समर्पि बन, जाइ भजहु रघुनाथ ॥ ७ ॥ ❀

रामचन्द्रजीको सीताजी, सौंपकर, (उनके) कमलसमान चरणोंको माथा नवाय, पुत्रको राज्य देके, वनमें जाकर रघुनाथजीका भजन कीजिये ॥ ७ ॥

चौ०–नाथ दीनदयालु रघुराई ❀ बाघउ संमुख गये न खाई ॥ १ ॥
चहिय करन सो सब करि बीते ❀ तुम सुर असुर चराचर जीते ॥ २ ॥

हे स्वामी! रामचन्द्रजी दीनोंपर दया करनेवाले हैं और देखो शरण गयेपर तौ सिंहभी नहीं खाता ॥ १ ॥ जो करना चाहिये वह सब तुम करचुके, अथवा जो न करना चाहिये था सो भी सीताहरण आदि तुम करचुके और देवता राक्षस तथा चराचरको जीत चुके ॥ २ ॥

वेद कहहिं अस नीति दसानन ❀ चौथेपन जाइय नृप कानन ॥ ३ ॥
तासु भजन कीजै तहँ भर्ता ❀ जो कर्ता पालक संहर्ता ॥ ४ ॥

हे रावण! वेद ऐसी नीति कहते हैं कि राजाको चौथे पनमें वनको जाना चाहिये ॥ ३ ॥ और हे कंत! वहां उसका भजन करना चाहिये जो उत्पन्न पालन और नाश करनेवाला है ॥ ४ ॥

सोइ रघुबीर प्रनतअनुरागी ❀ भजहु नाथ ममता मद त्यागी ॥ ५ ॥
मुनिवर जतन करहिं जेहिलागी ❀ भूप राज तजि होहिं बिरागी ॥ ६ ॥

वही रामचन्द्र भक्तोंपर प्रेम करनेवाले हैं. सो हे स्वामी! (तुम) ममता और अहंकारको छोड़कर भजन करो ॥ ५ ॥ जिसके लिये बड़े २ मुनीश्वर यत्न करते हैं और राजा राज्य छोड़कर वैरागी हो जाते हैं ॥ ६ ॥

सोइ कोसलाधीस रघुराया ❀ आये करन तोहिंपर दाया ॥ ७ ॥
जो प्रिय मानहु मोर सिखावन ❀ सुजस होइ तिहुँपर अति पावन ॥ ८ ॥

वेही अयोध्याके स्वामी रामचन्द्रजी तुम्हारे ऊपर (घरबैठे) कृपा करने आये हैं. जो कदाचित् कहो कि शत्रुसे मिलनेसे अयश होगा, सो नहीं ॥ ७ ॥ हे प्यारे! जो मेरी शिक्षा मानोगे तौ तीनों लोकोंमें तुम्हारा बड़ा पवित्र और सुन्दर यश होगा ॥ ८ ॥

दो०–अस कहि लोचन वारि भरि, गहि पद कंपितगात ॥ ❀
नाथ भजहु रघुनाथपद, मम अहिवात न जात ॥ ८ ॥ ❀

ऐसे कह और नेत्रोंमें जल भरकर चरण पकड़ लिये, शरीर काँपने लगा, (और बोली) हे स्वामी ! रामचन्द्रजीके चरणोंका भजन करो जिससे मेरा सुहाग न जाय ॥ ८ ॥

चौ०–तब रावन मयसुता उठाई ❀ कहै लाग खल निजप्रभुताई ॥ १ ॥
सुन तैं प्रिया मृषा भय माना ❀ जग जोधा को मोहिं समाना ॥ २ ॥

तब दुष्ट रावणने मन्दोदरीको उठाया और अपनी प्रभुताई कहने लगा कि–॥ १ ॥ हे प्यारी ! सुन. तैने झूठा भय मान रक्खा है, संसारमें मेरे वरावर योद्धा कौन है ?॥ २ ॥

बरुन कुवेर पवन यम काला ❀ भुजबल जिते सकल दिगपाला ॥ ३ ॥
देव दनुज नर सब बस मोरे ❀ कवन हेतु उपजा भय तोरे ॥ ४ ॥

वरुण, कुबेर, पवन, यमराज, काल और संपूर्ण दिक्पाल तौ (अपनी) भुजाओंके बलसे जीतही लिये ॥ ३ ॥ और देवता, राक्षस और मनुष्य सब मेरे वशमें हैं, फिर किस कारण तुझको भय उत्पन्न हुआ ? ॥ ४ ॥

नानाविध तेहिं कहि समुझाई ❀ सभा बहोरि बैठ सो जाई ॥ ५ ॥
मंदोदरी हृदय अस जाना ❀ कालबिबस उपजा अभिमाना ॥ ६ ॥

अनेक भांतिसे कहकर उस (मन्दोदरी) को समझाया और फिर वह सभामें जा बैठा ॥ ५ ॥ मन्दोदरीने मनमें यह जाना कि कालके बश (इसे) अभिमान उत्पन्न हुआ है ॥ ६ ॥

सभा जाइ मंत्रिनसनबूझा ❀ करिय कवनविधि रिपुसन जूझा ॥ ७ ॥
कहहिं सचिव सुनु निसिचरनाहा ❀ बार बार प्रभु पूछहु काहा ॥ ८ ॥
कहहु कवन भय करिय बिचारा ❀ नर कपि भालु अहार हमारा ॥ ९ ॥

(रावणने) सभामें जाकर मंत्रियोंसे पछा कि बैरीसे किसप्रकार लड़ाई ठाननी चाहिये ? (किलेपरसे वा मैदानमें) ॥ ७ ॥ मंत्री कहने लगे, हे राक्षसराज ! आप स्वामी होकर वारवार[1] क्या पूछते हो? ॥ ८ ॥ कहिये क्या डर है जो विचार करैं? मनुष्य, बन्दर और रीछ तौ हमारे भोजन हैं ॥ ९ ॥

दो०–वचन सबनके स्रवण सुनि, कह प्रहस्त कर जोरि ॥ ❀
नीतिबिरोध न करिय प्रभु; मंत्रिनमति अति थोरि ॥ ९ ॥ ❀

सवके बचनोंको कानोंसे सुनकर प्रहस्तने[2] हाथ जोड़कर कहा कि हे स्वामी! नीतिके विरुद्ध न कीजिये, और मंत्रियोंको तौ बहुत थोड़ी बुद्धि है ॥ ९ ॥

---

(१) एकवार सुन्दरकांडमें पूछ चुका है. ॥ (२) प्रहस्त रावणका पुत्र है ॥

क्या सत्यही, जलनिधि, नीरनिधि, जलधि, सिंधु, बारीश, तोयनिधि, पंखनिधि, उदधि, पयोधि, नदीश को बांधलिया ? ॥ ६ ॥

चौ०–निजव्याकुलता समुझि बहोरी ॐ बिहँसि चला गृह करि भय भोरी ॥१॥
मंदोदरी सुना प्रभु आये ॐ कौतुकही पाथोधि बँधाये ॥ २ ॥

फिर अपनी व्याकुलता समझाकर और भयकी बातको भोरी कहिये सुनी अनसुनी करके हँसता हुआ घरको चला ॥१॥ मन्दोदरीने सुना कि भगवान् आगये और खेलहीसे समुद्र (का पुल) बंधा लिया है ॥ २ ॥

कर गहि पतिहिं भवन निज आनी ॐ बोली परम मनोहर बानी ॥ ३ ॥
चरन नाइ सिर अंचल रोपा ॐ सुनहु बचन प्रिय परिहरि कोपा ॥ ४ ॥

तौ पतिका हाथ पकड़ और अपने महलमें लाकर बहुत सुन्दर वाणीसे बोली–॥३॥ और (उसके) चरणोंको शीश नवाय अंचल पसारा और बोली कि–हे प्यारे! क्रोधको छोड़कर मेरे वचन सुनो ४

नाथ बैर कीजै ताहीसों ॐ बुधि बल जीति सकिय जाहीसों ॥ ५ ॥
तुमहिं रघुपतिहिं अंतर कैसा ॐ खलु खद्योतहिं दिनकर जैसा ॥ ६ ॥

हे स्वामी! वैर तौ उसीसे करना चाहिये कि जिससे बुद्धि और बलमें जीत सके ॥ ५ ॥ तुममें और रामचन्द्रजीमें कैसा अंतर है जैसा निश्चय करके पटबीजने और सूर्यमें होता है ॥ ६ ॥

अतिबल मधु कैटभ जिन मारे ॐ महावीर दितिसुत संहारे ॥ ७ ॥
जेंइ बलि बाँधि सहसभुज माराॐ सो अवतरेउ हरन महिभारा ॥ ८ ॥
तासु विरोध न कीजिय नाथा ॐ काल कर्म गुन जिनके हाथा ॥ ९ ॥

जिन्होंने बड़े बलवान् मधु कैटभ (दैत्य) मारे और (नृसिंह अवतारसे) बड़े २ योद्धा अदितिके पुत्र (हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष) मारे ॥७॥ जिन्होंने (वामनरूप धरकर) बलिको बांधा और (परशुरामरूपसे) सहस्रबाहुको मारा, वही (विष्णु भगवान्) पृथ्वीका भार उतारनेको राम उत्पन्न हुये हैं ॥८॥ हे स्वामी! उनसे वैर न कीजिये कि जिनके हाथमें काल कर्म और गुण हैं ॥९॥

दो०–रामहिं सौंपहु जानकी, नाइ कमलपद माथ ॥ ॐ
सुतकहँ राज समर्पि बन, जाइ भजहु रघुनाथ ॥ ७ ॥ ॐ

रामचन्द्रजीको सीताजी, सौंपकर, (उनके) कमलसमान चरणोंको माथा नवाय, पुत्रको राज्य देके, वनमें जाकर रघुनाथजीका भजन कीजिये ॥ ७ ॥

चौ०–नाथ दीनदयालु रघुराई ॐ बाघउ संमुख गये न खाई ॥ १ ॥
चहिय करन सो सब करि बीते ॐ तुम सुर असुर चराचर जीते ॥ २ ॥

हे स्वामी! रामचन्द्रजी दीनोंपर दया करनेवाले हैं और देखो शरण गयेपर तौ सिंहभी नहीं खाता ॥ १ ॥ जो करना चाहिये वह सब तुम करचुके, अथवा जो न करना चाहिये था सो भी सीताहरण आदि तुम करचुके और देवता राक्षस तथा चराचरको जीत चुके ॥ २ ॥

वेद कहहिं अस नीति दसानन ॐ चौथेपन जाइय नृप कानन ॥ ३ ॥
तासु भजन कीजै तहँ भर्ता ॐ जो कर्ता पालक संहर्ता ॥ ४ ॥

हे रावण! वेद ऐसी नीति कहते हैं कि राजाको चौथे पनमें वनको जाना चाहिये ॥ ३ ॥ और हे कंत! वहां उसका भजन करना चाहिये जो उत्पन्न पालन और नाश करनेवाला है ॥ ४ ॥

सोइ रघुबीर प्रनतअनुरागी ॐ भजहु नाथ ममता मद त्यागी ॥ ५ ॥
मुनिवर जतन करहिं जेहिलागी ॐ भूप राज तजि होहिं बिरागी ॥ ६ ॥

वही रामचन्द्र भक्तोंपर प्रेम करनेवाले हैं. सो हे स्वामी! (तुम) ममता और अहंकारको छोड़कर भजन करो ॥ ५ ॥ जिसके लिये वड़े २ मुनीश्वर यत्न करते हैं और राजा राज्य छोड़कर वैरागी हो जाते हैं ॥ ६ ॥

सोइ कोसलाधीस रघुराया ❀ आये करन तोहिंपर दाया ॥ ७ ॥
जो प्रिय मानहु मोर सिखावन ❀ सुजस होइ तिहुँपर अति पावन ॥ ८ ॥

वेही अयोध्याके स्वामी रामचन्द्रजी तुम्हारे ऊपर (घरवैठे) कृपा करने आये हैं. जो कदाचित् कहो कि शत्रुसे मिलनेसे अयश होगा, सो नहीं ॥ ७ ॥ हे प्यारे! जो मेरी शिक्षा मानोगे तौ तीनों लोकोंमें तुम्हारा वड़ा पवित्र और सुन्दर यश होगा ॥ ८ ॥

दो०–अस कहि लोचन वारि भरि, गहि पद कंपितगात ॥ ❀
नाथ भजहु रघुनाथपद, मम अहिवात न जात ॥ ८ ॥ ❀

ऐसे कह और नेत्रोंमें जल भरकर चरण पकड़ लिये, शरीर काँपने लगा, (और बोली) हे स्वामी ! रामचन्द्रजीके चरणोंका भजन करो जिससे मेरा सुहाग न जाय ॥ ८ ॥

चौ०–तब रावन मयसुता उठाई ❀ कहै लाग खल निजप्रभुताई ॥ १ ॥
सुन तैं प्रिया मृषा भय माना ❀ जग जोधा को मोहिं समाना ॥ २ ॥

तब दुष्ट रावणने मन्दोदरीको उठाया और अपनी प्रभुताई कहने लगा कि–॥ १ ॥ हे प्यारी! सुन. तैने झूठा भय मान रक्खा है, संसारमें मेरे बरावर योद्धा कौन है ?॥ २ ॥

बरुन कुवेर पवन यम काला ❀ भुजबल जिते सकल दिगपाला ॥ ३ ॥
देव दनुज नर सब बस मोरे ❀ कवन हेतु उपजा भय तोरे ॥ ४ ॥

वरुण, कुबेर, पवन, यमराज, काल और संपूर्ण दिक्पाल तौ (अपनी) भुजाओंके बलसे जीतही लिये ॥ ३ ॥ और देवता, राक्षस और मनुष्य सव मेरे वशमें हैं, फिर किस कारण तुझको भय उत्पन्न हुआ ? ॥ ४ ॥

नानाविध तेहिं कहि समुझाई ❀ सभा बहोरि बैठ सो जाई ॥ ५ ॥
मंदोदरी हृदय अस जाना ❀ कालबिबस उपजा अभिमाना ॥ ६ ॥

अनेक भांतिसे कहकर उस (मन्दोदरी) को समझाया और फिर वह सभामें जा बैठा ॥ ५ ॥ मन्दोदरीने मनमें यह जाना कि कालके वश (इसे) अभिमान उत्पन्न हुआ है ॥ ६ ॥

सभा जाइ मंत्रिनसनबूझा ❀ करिय कवनविधि रिपुसन जूझा ॥ ७ ॥
कहहिं सचिव सुनु निसिचरनाहा ❀ बार बार प्रभु पूछहु काहा ॥ ८ ॥
कहहु कवन भय करिय बिचारा ❀ नर कपि भालु अहार हमारा ॥ ९ ॥

(रावणने) सभामें जाकर मंत्रियोंसे पूछा कि वैरीसे किसप्रकार लड़ाई ठाननी चाहिये ? (किलेपरसे वा मैदानमें) ॥ ७ ॥ मंत्री कहने लगे, हे राक्षसराज! आप स्वामी होकर वारवार क्या पूछते हो ? ॥ ८ ॥ कहिये क्या डर है जो विचार करैं ? मनुष्य, बन्दर और रीछ तौ हमारे भोजन हैं ॥९॥

दो०–बचन सबनके स्रवण सुनि, कह प्रहस्त कर जोरि ॥ ❀
नीतिबिरोध न करिय प्रभु; मंत्रिनमति अति थोरि ॥ ९ ॥ ❀

सवके बचनोंको कानोंसे सुनकर प्रहस्तने[2] हाथ जोड़कर कहा कि हे स्वामी! नीतिके विरुद्ध न कीजिये, और मंत्रियोंको तौ बहुत थोड़ी बुद्धि है ॥ ९ ॥

---

(१) एकवार सुन्दरकांडमें पूछ चुका है. ॥ (२) प्रहस्त रावणका पुत्र है ॥

चौ०-कहहिं सचिव सब ठकुरसोहाती ❀ नाथ न पुर आई इहि भाँती ॥ १ ॥
बारिधि लाँघि एक कपि आवा ❀ तासु चरित मनमहँ सब गावा ॥ २ ॥

सब मंत्री ठकुरसुहाती कहते हैं, हे नाथ ! इस भाँति पूरा नहीं पडेगा. (ठकुरसुहातीका प्रमाण यह है कि) ॥ १ ॥ एक बन्दर समुद्रको लाँघकर आया था सो उसके चरित्रको सब मनमें गाते हैं (प्रगट नहीं करते) ॥ २ ॥

छुधा न रही तुमहिं तब काहू ❀ जारत नगर न कस धरि खाहू ॥ ३ ॥
सुनत नीक आगे दुख पावा ❀ सचिवन्ह अस मत प्रभुहिं सुनावा ॥ ४ ॥

तौ क्या तब तुम्हें किसीको भूख नहीं लगीथी? नगर जलातेमें पकड़कर क्यों नहीं खालिया? ॥ ३ ॥ स्वामीको मंत्रियोंने ऐसी सलाह सुनाई है जो सुननेमें तौ अच्छी है (परंतु) आगेको दुःख पाओगे ॥ ४ ॥

जो बारीस बँधायउ हेला ❀ उतरे कपिदलसहित सुबेला ॥ ५ ॥
सो जनु मनुज खाव हम भाई ❀ बचन कहहु सब गाल फुलाई ॥ ६ ॥

जिन्होंने हंसीमेंही समुद्रको बाँधलिया और बन्दरोंकी सेनासमेत सुवेल पर्वतपर उतरे हैं ॥ ५ ॥ हे भाई ! (क्या) वे मनुष्य हैं? जो तुम सब गाल फुला २ कर कहते हो कि हम मनुष्योंको खाजायँगे ॥ ६ ॥

सुनि मम बचन तात अतिआदर ❀ जनि मन गुनहु मोहिं करि कादर ॥७॥
प्रियबानी जे सुनहिं जे कहहीं ❀ ऐसे जग निकाय नर अहहीं ॥ ८ ॥

हे पिता ! मेरे वचनको बड़े आदरसे सुनो और मुझे (अपने) मनमें कायर मत गिनो ॥७॥ जो प्यारी वाणी कहैं और सुनैं ऐसे मनुष्य संसारमें बहुतसे हैं ॥ ८ ॥

बचन परम हित सुनत कठोरे ❀ कहहिं सुनहिं ते नर प्रभु थोरे ॥ ९ ॥
प्रथम बसीठ पठाइय नीती ❀ सीतहिं देइ करिय पुनि प्रीती ॥ १० ॥

(परन्तु) हे स्वामी ! जो सुननेमें तौ कड़े लगैं और अंतमें हितकारी हों ऐसे बचन कहने और सुननेवाले थोड़े हैं ॥ ९ ॥ सो नीति तौ यह है कि पहले दूतको भेजिये और फिर सीताजीको देकर मिलाप कर लीजिये ॥ १० ॥

दो०-नारि पाइ फिरि जाहिं जो, तौ न बढ़ाइय रार ॥ ❀
नहिं तो सन्मुख समरमहँ, नाथ करिय हठ मार ॥ १० ॥ ❀

हे स्वामी ! जो स्त्रीको लेकर लौट जावैं तौ लड़ाईको न बढ़ाइये; नहीं तौ लड़ाईमें सन्मुख होकर हठसे मारामारी कीजिये ॥ १० ॥

चौ०-यह मत जो मानहु प्रभु मोरा ❀ उभय प्रकार सुजस जग तोरा ॥ १ ॥
सुतसन कह दसकंठ रिसाई ❀ अस मति सठ तोहिं कवन सिखाई ॥२॥

हे स्वामी ! जो इस मेरी सलाहको मानोंगे तौ दोनों तरहसे संसारमें तुम्हारा सुन्दर यश होगा ॥१॥ रावणने क्रोधित होकर पुत्रसे कहा-अरे मूर्ख ! तुझे ऐसी बुद्धि किसने सिखाई है? ॥ २ ॥

---

(१) "सुलभाः पुरुषाः राजन् सततं प्रियवादिनः ।
अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः" ॥
अर्थ चौपाईसे मिलता है ॥

अबहींते उर संसय होई ❀ वेनुमूल सुत भयउ घमोई ॥ ३ ॥
सुनि पितुगिरा परुष अतिघोरा ❀ चला भवन कहि बचन कठोरा ॥ ४ ॥

जो अभीसे तेरे हृदयमें सन्देह होता है. हे पुत्र! तू तौ बाँसकी जड़में घास फूँस हुआ ॥ ३ ॥ पिताकी कड़ी और बड़ी भयंकर वाणी सुनकर वह कड़े वचन कहता महलको चलागया ॥ ४ ॥

हितमत तोहिं न लागत कैसे ❀ कालबिबसकहँ भेषज जैसे ॥ ५ ॥
संध्यासमय जानि दससीसा ❀ भवन चला निरखत भुज बीसा ॥ ६ ॥

(और कहा) तुझे अच्छी सलाह कैसी नहीं लगती, जैसे कालके वश (मनुष्य) को औषधि नहीं लगती ॥ ५ ॥ संध्यासमय जानकर रावण बीसों भूजाओंको देखता हुआ चला ॥ ६ ॥

लंकासिखर रुचिर आगारा ❀ अतिबिचित्र तँह होइ अखारा ॥ ७ ॥
बैठजाइ तेहि मंदिर रावन ❀ लागे किन्नर गुनगन गावन ॥ ८ ॥
बाजैं ताल पखावज बीना ❀ नृत्य करहिं अप्सरा प्रबीना ॥ ९ ॥

और लंकाके शिखरपर सुन्दर एक बड़ा बिचित्र नृत्यघर है. जहां अखाड़ा होताथा, अर्थात् सब गवैये, बजंत्री इकठ्ठे हुआ करते थे ॥ ७ ॥ सो उस महलमें जाकर रावण बैठा और किन्नर और गंधर्व उसके गुण गाने लगे ॥ ८ ॥ ताल, पखवाज और वीण बजने लगीं और चतुर अप्सरा नाचने लगीं ॥ ९ ॥

दो०–सुनासीरसतसरिस सो, संतत करै बिलास ॥ ❀
परमप्रबल रिपु सीसपर, तदपि न मन कछु त्रास ॥ ११ ॥ ❀

वह (रावण) इन्द्रसेभी सौगुना आनन्द सदा भोगता है, और यद्यपि बड़ा प्रबल शत्रु माथे पर है तौभी उसके मनमें कुछ भय नहीं है ॥ ११ ॥

चौ०–इहाँ सुवेलसैल रघुबीरा ❀ उतरे सेनसहित अति भीरा ॥ १ ॥
सैलसृंग इक सुंदर देखी ❀ अति उतंग सम सुभ्र बिसेखी ॥ २ ॥

यहां रामचन्द्रजी सेनाकी बड़ी धूमधामसमेत सुवेल पर्वतपर उतरे ॥ १ ॥ पर्वतके एक शिखर को सुन्दर देखा जो बहुत ऊँचा है, एकसी जगह है और अधिक उजली है ॥ २ ॥

तहँ तरु किसलय सुमन सुहाये ❀ लछमन रचि निजहाथ डसाये ॥ ३ ॥
तापर रुचिर मृदुल मृगछाला ❀ तेहि आसन आसीन कृपाला ॥ ४ ॥

वहां लक्ष्मणजीने वृक्षोंके कोमल पत्ते और सुन्दर फूल अपने हाथोंसे रचकर बिछाये ॥३॥ और उसपर सुन्दर कोमल मृगछाला बिछाई. उस आसनपर कृपानिधान रामजी विराजमान हुये ॥ ४ ॥

प्रभु कृत सीस कपीसउछंगा ❀ वाम दहिन दिसि चाप निषंगा ॥ ५ ॥
दुहुँ करकमल सुधारत बाना ❀ कह लंकेस मंत्र लगि काना ॥ ६ ॥

भगवान्ने अपना मस्तक तौ सुग्रीवकी गोदमें धर लिया और दाहिनी बाईं और धनुष्य बाण धर दिये ॥ ५ ॥ फिर दोनों कमलसमान हाथोंसे बाण सुधारने लगे और बिभीषण कानसे लगकर सलाह कहने लगे ॥ ६ ॥

बड़भागी अंगद हनुमाना ❀ चरनकमल चापत विधि नाना ॥ ७ ॥
प्रभुपाछे लछमन बीरासन ❀ कटि निषंग कर धरे सरासन ॥ ८ ॥

---

(१) बाँसकी जड़में घास फूँस होनेसे उसकी जड़ गल जाती है, अथवा घमोई नाम घुनकामी पाया जाता है ॥ (२) भुजा इसलिये देखता है कि २० भुजाओंके सामने रामकी दो भुजा क्या करैंगी !

और बड़भागी अंगद और हनुमान् अनेक भाँति (भगवान्के) चरणकमल दावते हैं ॥ ७ ॥ भगवान्के पीछे लक्ष्मणजी वीरासन[1] कहिये (योद्धाओंकासा आसन लगाये) बैठे हुये हैं और कमरमें तरकस तथा हाथमें धनुष बाण धारण किये हैं ॥ ८ ॥

दो०–इहिबिध करुणासील गुन, धाम राम आसीन ॥ ❀
धन्य सो नर यह ध्यानरत, रहत सदा लवलीन ॥ १२ ॥ ❀

इस भाँति करुणा, शील और गुणोंके स्थान रामचन्द्रजी विराजमान हुये. उन मनुष्योंको धन्य है जिनकी इस ध्यानमें प्रीति है और सदा लवलीन रहते हैं ॥ १२ ॥

पूरबदिसा बिलोकि प्रभु, देखा उदित मयंक ॥ ❀
कहेउ सबहिं देखहु ससिहिं, मृगपतिसरिस असंक ॥ १३ ॥❀

भगवान्ने पूर्व दिशामें चन्द्रमाको उदय होते हुये देखा तौ सबसे कहा कि चन्द्रमाको देखो, यह सिंहके समान निर्भय है ॥ १३ ॥

चौ०–पूरबदिसि गिरिगुहानिवासी ❀ परमप्रतापतेजबलरासी ॥ १ ॥
मत्त नाग तम कुंभ विदारी ❀ शशिकेसरी गगन बनचारी ॥ २ ॥

पूर्व दिशा सोई पर्वतोंकी कन्दरा है, उसका रहनेवाला बड़े प्रताप, तेज, और बलकी राशि है ॥ १ ॥ अंधकाररूपी मतवाले हाथीके मस्तकको नाश करनेवाला है. ऐसा चन्द्रमारूपी सिंह आकाशरूपी वनमें विचरता है. (जब सिंह हाथीके मस्तकको चीरता है तौ गजमोती निकलते हैं और स्त्रियां उनसे शृंगार करती हैं सो) ॥ २ ॥

बिथुरे नभ मुकताफल तारा ❀ निसि सुंदरीकेर सृंगारा ॥ ३ ॥
कह प्रभु ससिमहँ मेचकताई ❀ कहहु कहा निज निज मति भाई ॥ ४ ॥

आकाशरूपी वनमें तारागणरूपी मोती बिखर रहे हैं जो रात्रिरूपी स्त्रीका शृंगार हैं ॥ ३ ॥ भगवान्ने कहा, हे भाई ! चन्द्रमामें श्यामता क्या है? सो अपनी अपनी बुद्धिके अनुसार कहो ॥ ४ ॥

कह सुग्रीव सुनहु रघुराई ❀ शशिमहँ प्रगटभूमिकी छाई ॥ ५ ॥
मारेउ राहु शशिकहिं कह कोई ❀ उरमहँ परी स्यामता सोई ॥ ६ ॥

सुग्रीवने कहा–हे रामचन्द्रजी ! सुनो; चन्द्रमामें पृथ्वीकी छाया दीखती है ॥ ५ ॥ कोई कहने लगा की, चन्द्रमाको राहुने मारा है वही श्यामता इसके हृदयमें पड़ गई है ॥ ६ ॥

कोउकह जब बिधि रतिमुख कीन्हा ❀ सारभाग ससिकर हरि लीन्हा ॥ ७ ॥
छिद्र सो प्रगट इंदुउरमाहीं ❀ तेहि मग देखिय नभपरछाहीं ॥ ८ ॥

कोई कहता है कि जब ब्रह्माने रति कहिये कामदेवकी स्त्रीका मुख बनाया था तौ चन्द्रमाका तत्त्वभाग खींच लिया था ॥ ७ ॥ वही छेद चन्द्रमाके हृदयमें प्रगट है, जिसमें होकर आकाशकी परछांई दिखाई देती है ॥ ८ ॥

कह प्रभु गरल बंधु ससिकेरा ❀ अतिप्रियतम उर दीन्ह बसेरा ॥ ९ ॥
विषसंयुत करनिकर पसारी ❀ जारत बिरहवंत नरनारी ॥ १० ॥

भगवान्ने कहा (यह वात नहीं है), चन्द्रमाका भाई बिष है सो बहुत प्यारा होनेके कारण

---

(१) योगशास्त्रे—"एकपादमधः कृत्वा विन्यस्योरौ तथेतरम् । ऋजुकायो विशेद्योगी वीरासनमुदाहृतम् ।" अर्थात् एक पैरको नीचा करके और दूसरेको जंघापर रखकर योगी शरीरको सीधा करके बैठे उसीको वीरासन कहते हैं ॥

इसने उसे हृदयमें वसाया है ॥९॥ इसी लिये विषयुक्त किरणोंके समूहको फैलाकर (हमसरीखे) वियोगी स्त्रीपुरुषोंको जलाता है ॥ १० ॥

दो०-कह हनुमंत सुनहु प्रभु, ससि तुम्हार प्रियदास ॥
तव मूरति तेहि उर बसत, सोइ स्यामता भास ॥ १४ ॥

फिर हनूमान्ने कहा, हे भगवान् ! सुनिये. चन्द्रमा (जलाता होगा जिसे जलाता होगा) आपका तौ प्यारा सेवक है, आपकी मूर्ति उसके हृदयमें रहती है. यह वही श्यामता चमकती है ॥ १४ ॥

पवनतनयके वचन सुनि, बिहँसे राम सुजान ॥
दच्छिनदिसा बिलोकि प्रभु, बोले कृपानिधान ॥ १५ ॥

चतुर रामचन्द्रजी हनूमान्जीके वचन सुनकर हँसे. फिर कृपानिधान भगवान् दक्षिणदिशाको देखकर बोले ॥ १५ ॥

चौ०-देखु बिभीषन दच्छिन आसा ❀ घनघमंड दामिनीबिलासा ॥ १ ॥
मधुर मधुर गर्जत घनघोरा ❀ होइ बृष्टि जनु उपलकठोरा ॥ २ ॥

हे बिभीषण ! दक्षिण दिशामें तौ देखो बादल कैसा घुमड़ रहा है, और बिजली कैसी चमक रही है ॥ १ ॥ बादल मधुर २ घोर शब्दसे ऐसे गर्जते हैं, मानों कठोर ओलोंकी वर्षा होरही है ॥ २ ॥

कहहिं बिभीषन सुनहु कृपाला ❀ होइ न तड़ित न बारिदमाला ॥ ३ ॥
लंकासिखर रुचिर आगारा ❀ तहँ दसकंधरकेर अखारा ॥ ४ ॥

बिभीषण ! कहने लगे हे कृपानिधान ! सुनिये; न तो बिजली है और न मेघोंकी माला है ॥३॥ लंकाके शिखरपर एक सुन्दर महल है तहां रावणका अखाड़ा है ॥ ४ ॥

छत्र मेघडंबर सिरधारी ❀ सो प्रभु जलदघटा अतिकारी ॥ ५ ॥
मंदोदरीस्रवनताटंका ❀ सो प्रभु जनु दामिनीदमंका ॥ ६ ॥

और हे नाथ ! (रावणके) शिरपर जो मेघसमान नील छत्र लटक रहा है सोई मानो मेघकी अति काली घटा है ॥ ५ ॥ और हे प्रभो ! मन्दोदरीके कानोंमें जो कुंडल है (और उनकी आभा जो छत्रमें पड़ती है) सोई मानो बिजली दमकती है ॥ ६ ॥

बाजहिं तालमृदंग अनूपा ❀ सोइ रव सरस सुनहु सुरभूपा ॥ ७ ॥
प्रभु मुसुकान समुझि अभिमाना ❀ चाप चढ़ाइ बान संधाना ॥ ८ ॥

और हे देवराज रामचन्द्र ! सुनो, सुन्दर ताल मृदंग जो बजते हैं सोई (मेघकी) सुन्दर गड़गड़ाहट है ॥७॥ भगवान् (रावणके) अभिमानको समझ कर हँसे और धनुष चढ़ाकर (उसपर) वाण लगाया ॥ ८ ॥

दो०-छत्र मुकुट ताटंक सब, हते एकही बान ॥
सबके देखत महि गिरे, मर्म न काहू जान ॥ १६ ॥

छत्र, मुकुट, कुंडल सब एकही वाणसे काट डाले और वे सबके देखते २ पृथ्वीपर गिर पड़े पर भेद किसीने न जाना ॥ १६ ॥

यह कौतुक करि रामसर, प्रबिशेउ आइ निषंग ॥
रावनसभा ससंक सब, देखि महारसभंग ॥ १७ ॥

रामचन्द्रजीका वाण यह खेल करके और आकर तरकसमें घुस गया, और बड़ा भारी जो

रस कहिये गाना वजाना हो रहा था उसका भंग देखकर रावणकी सव सभा डर गई (कि यह क्या हुआ ?) ॥ १७ ॥

चौ०–कंप न भूमि न मरुतविसेषा ❀ अस्त्र सस्त्र कोउ नयन न देखा ॥ १ ॥
सोचहिं सब निजहृदय विचारी ❀ असकुन भयउ भयंकर भारी ॥ २ ॥

न तौ पृथ्वी हिली, न वहुतसी पवन चली, और कोई अस्त्र शस्त्रभी नेत्रोंसे नहीं देखा ॥ १ ॥ सव अपने २ हृदयमें विचारकर शोचते हैं कि (यह तौ) वड़ा भारी भयंकर अशकुन हुआ ॥ २ ॥

रावन दीख सभा भय पाई ❀ बिहँसि बचन कह युक्ति बनाई ॥ ३ ॥
सिरौ गिरे संतत सुभ जाही ❀ मुकुट गिरे कस असकुन ताही ॥ ४ ॥

रावणने देखा कि सभा डरपी तौ हँसकर युक्ति बनाकर यह बात कहने लगा कि–॥ ३ ॥ मस्तकोंको काट २ कर चढ़ाये तभी जिसका सदा कल्याण होता रहा उसकों मुकुटोंके गिरनेसे अशकुन कैसा? ॥ ४ ॥

सयन करहु निज निज गृह जाई ❀ गवने भवन सकल सिर नाई ॥ ५ ॥
मंदोदरी सोच उर बसेऊ ❀ जबते स्रवनफूल महि खसेऊ ॥ ६ ॥

अपने २ घर जाकर शयन करो· (यह सुन) वे सब माथा नवा २ कर महलोंको गये ॥ ५ ॥ मन्दोदरीके हृदयमें तौ तभीसे शोच बसा कि जबसे उसके कर्णफूल पृथ्वीपर गिरेथे ॥ ६ ॥

सजलनयन कह जुग कर जोरी ❀ सुनहु प्रानपति बिनती मोरी ॥ ७ ॥
रामबिरोध कंत परिहरहू ❀ जानि मनुज जनि हठ उर धरहू ॥ ८ ॥

नेत्रोंमें जल भर और दोनों हाथ जोड़कर कहने लगी कि हे प्राण्यप्यारे! मेरी बिनती सुनो ॥७॥ हे पती! रामचन्द्रजीसे विरोध छोड़ दो और उनको मनुष्य जानकर हृदयमें हठ मत करो ॥ ८ ॥

दो०–विस्वरूप रघुबंसमनि, करहु वचनविस्वास ॥ ❀
लोककल्पना वेद कह, अंगअंगप्रति जास ॥ १८ ॥ ❀

मेरी बातका भरोसा करो कि रामचन्द्रजी विश्वरूप हैं और जिनके अंग २ में लोक भरे हैं ऐसा वेद कहते हैं ॥ १८ ॥

चौ०–पद पाताल सीस अजधामा ❀ अपरलोक अंगन्ह विस्रामा ॥ १ ॥
भ्रुकुटिबिलास भयंकर काला ❀ नयन दिवाकर कच घनमाला ॥ २ ॥

जिनके चरण पातालमें हैं, मस्तक ब्रह्मलोकमें है, और अन्यलोक अंगोंमें विराजमान हैं ॥ १ ॥ (जिनकी) भ्रकुटीका फेरनाही भयंकर काल है, नेत्र सूर्य हैं और बाल बादलोंकी श्याम घटा हैं ॥ २॥

जासु घ्रान अस्विनीकुमारा ❀ निसि अरु दिवस निमेष अपारा ॥ ३ ॥
स्रवन दिसा दस वेद बखानी ❀ मारुत स्वास निगम निजबानी ॥ ४ ॥

जिनकी नाक [१]अश्विनीकुमार है और दिन तथा रात अनगिनती निमेष हैं ॥३॥ जिनके कान दशों दिशा हैं, यह वेदोंने वर्णन किया है, और श्वास पवन है और उनकी वाणी वेद हैं ॥ ४ ॥

अधर लोभ जम दसन कराला ❀ माया हास बाहु दिगपाला ॥ ५ ॥
आनन अनल अंबुपति जीहा ❀ उत्पति पालन प्रलय समीहा ॥ ६ ॥

जिनके होठ लोभ हैं, दांत कठिन यमराज हैं, हँसी माया है और भुजायें दिक्पाल कहिये दिशाओंके रक्षक हैं ॥५॥ मुख अग्नि है, वरुण जीभ है और उत्पत्ति पालन नाश करना उद्यम है ॥६॥

---

(१) अश्विनीकुमार नाम स्वर्गके वैद्योंका है ॥

रोमराजि अष्टादसभारा ❀ अस्थि सैल सरिता नसजारा ॥ ७ ॥
उदर उदधि अधगो जातना ❀ जगबय प्रभुकी बहुत कलपना ॥ ८ ॥

अठारह प्रकारकी वनस्पति जिनके रोम हैं, पर्वत हड्डी और नदी नसोंका जाल हैं ॥ ७ ॥ समुद्र पेट है, नीचेकी इन्द्रियां नरक हैं, ऐसे संसारमें व्यापक भगवान् (के विराट्रूप) की बहुतसी कल्पना है ॥ ८ ॥

दो०–अहंकार सिव बुद्धि अज, मन ससि चित्त महान ॥ ❀
मनुज बास चरअचरमय, रूपरासि भगवान ॥ १९ ॥ ❀

(जिनका) अहंकार, महादेव, बुद्धि, ब्रह्मा, मन, चन्द्रमा, चित्त, महत्तत्त्व है, ऐसे रूपकी राशि भगवान्का मनुष्यादि चर अचर सबमें निवास है ॥ १९ ॥

अस बिचारि सुनु प्राणपति, प्रभुसन बैर बिहाइ ॥ ❀
प्रीति धरहु रघुबीरपद, मम अहिवात न जाइ ॥ २० ॥ ❀

हे प्राणपते ! सुनो. ऐसे बिचारकर और भगवान्से वैर छोड़कर रामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रीति करो (जिससे) मेरा सुहाग नहीं जाय, अर्थात् राँड़ न हो जाऊँ ॥ २० ॥

चौ०–बिहँसा नारिबचन सुनि काना ❀ अहो मोहमहिमा बलवाना ॥ १ ॥
नारिसुभाव सत्य कवि कहईं ❀ अवगुन आठ सदा उर रहईं ॥ २ ॥

स्त्रीके वचनोंको कानोंसे सुनकर (रावण) हँसा कि ओहो, मोहकी महिमा बड़ी बलवान् है ॥ १ ॥ स्त्रियोंके स्वभावको कवीश्वर कहते हैं सो सत्यही है, कि आठ अवगुण तौ सदाही इनके हृदयमें रहते हैं ॥ २ ॥

साहस अनृत चपलता माया ❀ भय अविवेक असौच अदाया ॥ ३ ॥
रिपुकर रूप सकल तैं गावा ❀ अतिविसाल भय मोहिं सुनावा ॥ ४ ॥

साहस[१], झूठे[२], चंचलता[३], माया[४], भय[५], अज्ञान[६], अपवित्रता[७], और कठोरता[८] ॥ ३ ॥ (और कहने लगा) तैने वैरीका सब रूप गाया और मुझको बहुत बड़ा भय सुनाया ॥ ४ ॥

सो सब प्रिया सहज बस मोरे ❀ समुझिपरा प्रसाद अब तोरे ॥ ५ ॥
जानेउँ प्रिया तोरि चतुराई ❀ यहि मिसु कहेहु मोरि प्रभुताई ॥ ६ ॥

सो तेरी कृपासे मुझे जान पड़ा, परन्तु हे प्यारी ! ये तौ सब सहजहीमें मेरे वश हैं ॥ ५ ॥ हे प्यारी ! तेरी चतुराई (मैने) जानली; (तैंने) इसी बहानेसे मेरी प्रभुता कही है ॥ ६ ॥

तव बतकही गूढ़ मृगलोचनि ❀ समुझत सुखद सुनत भयमोचनि ॥ ७ ॥
मंदोदरि मनमहँ यह ठयऊ ❀ प्रियहिं कालबस मतिभ्रम भयऊ ॥ ८ ॥

हे मृगनयनी ! तेरी बात भीतरी है और समझनेमें सुख देनेवाली तथा सुननेमें भयका नाश करनेवाली है ॥ ७ ॥ मन्दोदरीने मनमें यह ठानलिया कि कालके वश प्यारे पतिकी बुद्धिमें भ्रम होगया अर्थात् इसकी मति मारी गई है ॥ ८ ॥

दो०–बहुबिध जल्पेसि सकल निशि, प्रात भये दसकंध ॥ ❀
सहज असंक सो लंकपति, सभा गयो मदअंध ॥ २१ ॥ ❀

---

(१) "असत्यं साहसं माया मात्सर्यं चातिलुब्धता । निर्गुणत्वमशौचत्वं स्त्रीणां दोषाः स्वभावजाः" ॥ अर्थ आगेकी चौपाईसे मिलता है–

सब रात तौ बहुत भाँति बकवाद करता रहा और सवेरा होतेही सहजहीमें निर्भय और मदसे अंधा ऐसा लंकापति रावण सभामें गया ॥ २१ ॥

सो०-फूलै फलै न बेत, जदपि सुधा बरषैं जलद ॥
मूरखहृदय न चेत, जो गुरु मिलहिं बिरंचिसत ॥ ३ ॥

जो बादल अमृत वर्षावें तौभी जैसे बेत नहीं फूलता फलता ऐसेही जो सौ ब्रह्मा गुरु मिलें सौभी मूर्खके हृदयमें ज्ञान नहीं होता ॥ ३ ॥

अथ क्षेपक ॥

दो०-मंत्रिनसहित दसानन, चढेउ धौरहर जाइ ॥
सुकसारन कह राजसन, देखहु दलसमुदाइ ॥ २२ ॥

रावण मंत्रियोंसमेत जाकर लंकाके ऊंचे शिखरपर जा चढ़ा. तब रावणके मंत्री शुकसारनने राजासे कहाकि सेनाकी भीड़भाड़को तौ देखो ॥ २२ ॥

चौ०-यह जो सिंहनाद किलकाईं ❀ तरुवरसप्तसमान उँचाईं ॥ १ ॥
सहसकोटि अतुलित बलवाना ❀ सँग इनके बानरपरिमाना ॥ २ ॥

यह जो सिंहनाद करके किलकारी मारते हैं और सुन्दर सात वृक्षोंके बराबर ऊँचे हैं ॥ १ ॥ इनके साथमें हजार करोड़ बड़े बली बन्दरोका परिमाण है ॥ २ ॥

रनअजीत अरु सहज असंका ❀ नाद सुने काँपै गढ़लंका ॥ ३ ॥
लगि अकास बनचर लंगूरे ❀ जनु ऋतुपावसधनु नभ पूरे ॥ ४ ॥

और जो लड़ाईमें जीते न जाँय और सहजहीमें निर्भय हैं और (जिनके) शब्दको सुनतेही लंकागढ़ काँपता है ॥ ३ ॥ और जिन बनचरोंकी पूंछें आकाशसे ऐसी लग रही हैं मानों वर्षाऋतुके धनुष आकाशमें पड़ रहे हैं ॥ ४ ॥

बिसकर्माके सुत अभिमानी ❀ इन सागर बाँधेउ अनुमानी ॥ ५ ॥
बसहिं ताम्रगिरिकंदरमाहीं ❀ गोदावरी बिमलजल पाहीं ॥ ६ ॥

सो ये विश्वकर्माके अभिमानी पुत्र हैं, इन्होंनेही बिचारकर समुद्र बाँधा है ॥ ५ ॥ ये ताम्रगिरिकी कन्दरामें रहते हैं और गोदावरीका निर्मल जल पीते हैं ॥ ६ ॥

अतिबल आगे धावहिं बीरा ❀ इनपर कृपा करहिं रघुबीरा ॥ ७ ॥
इनके परस किये गिरि सीला ❀ जलमें तरहिं नाम नल नीला ॥ ८ ॥

ये बड़े बली योद्धा आगे दौड़ते हैं और इनपर रामचन्द्रजी दया करते हैं ॥ ७ ॥ इनकेही छूनेसे पर्वतोंकी शिला जलपर तैरती हैं और (इनके) नाम नल और नील हैं ॥ ८ ॥

दो०-पद्म अठारह कपिकटक, चल इनके भुजछाँह ॥
अपने हाथ सुपुष्प लै, रघुपति पूजी बाँह ॥ २३ ॥

---

(१) वेतका अर्थ भाषामें सीधा तौ यही है, परंतु सहस्रों शब्द संस्कृतसे विगड़ कर भाषामें हो गये हैं. अतएव-वेत शब्दको संस्कृतमें वियत् शब्द जो आकाशका वाची है उसका अपभ्रंश मानकर यह अर्थ वड़ा उत्तम है कि आकाश न फूलता है न फलता है चाहें मेघ अमृत वर्षावै. क्यों कि आकाश शून्य है वहां पदार्थ जैसे नहीं ठहर सक्ता है, उसी प्रकार मूर्खका हृदयभी शून्य है. सौ ब्रह्मा गुरु मिलै तौ क्या है ? वहां ज्ञान नहीं ठहर सक्ता-

अठारह पद्म बन्दरोंकी सेना इनकी भुजाओंकी छायामें चलती है, और रामचन्द्रजीने अपने हाथोंसे सुन्दर फूल लेकर भुजाओंकी पूजा करी है ॥ २३ ॥

चौ०-यह जो आवत अचलसमाना ❀ चौदहताल ऊँच परमाना ॥ १ ॥
बास पुलिंदाके तट करई ❀ अंबुदऊपर यह संचरई ॥ २ ॥

यह जो पर्वतके समान आता है कि जो चौदह तालवृक्षोंके समान ऊँचा है ॥ १ ॥ सो पुलिन्दा (नदीके) किनारे रहता है, यह बादलोंके ऊपर भ्रमण करता है ॥ २ ॥

रक्तकमलकेसरसम देहा ❀ जनु अकास संध्याकर मेहा ॥ ३ ॥
हतै मेदिनी पूंछ भ्रमाई ❀ लंकासौंह चितै जनु खाई ॥ ४ ॥

लाल कमलके केसरके समान इसका शरीर (ऐसा लगता है) मानों आकाशमें संध्यासमयका बादल है ॥ ३ ॥ यह पूंछ फिराकर पृथ्वीके टुकड़े २ करा सक्ता है और लंकाकी ओर देखतेमें ऐसा सोहता है मानों खाजायगा ॥ ४ ॥

बालीसुत ताराको जायो ❀ अतिजुझार रघुपतिमन भायो ॥ ५ ॥
मनमें जपै रामकर नाँऊ ❀ निसिदिन तिहिकर एक स्वभाऊ ॥ ६ ॥

यह बालीका पुत्र तारासे उत्पन्न हुआ अंगद बड़ा लड़नेवाला है और रामचन्द्रजीके मनपर चढ़ रहा है ॥ ५ ॥ रातदिन मनमें रामचन्द्रजीका नाम जपता रहता है, इसका यही एक स्वभाव है ॥६॥

करै बज्र बासवकर भंगा ❀ उदयाचलकहँ लेइ उछंगा ॥ ७ ॥
सेनापति यह सबके आगे ❀ रघुपतिकृपा भाग इहि जागे ॥ ८ ॥

यह इन्द्रके वज्रको तोड़ सक्ता है और उदयाचलको गोदीमें ले सक्ता है ॥ ७ ॥ यह सबके आगे सेनापति है, रामचन्द्रजीकी दयासे इसके भाग्य खुल गये हैं ॥ ८ ॥

दो०-पाँव भूमि जो चापही, पन्नग होहि अकाज ॥ ❀
पाँच पद्म बानर लिये, यह अंगद युवराज ॥ २४ ॥ ❀

जो पाँवसे पृथ्वीको दबादे तौ शेषजीका अकाज हो जाय, अर्थात् घबड़ाकर पृथ्वीको धारण न कर सकै, सो पांच पद्म बन्दरोंको साथ लिये यह युवराज अंगद है ॥ २४ ॥

चौ०-यह जो स्वेत लसै तनु रेषा ❀ जनु रूपेकर शृंग सुवेषा ॥ १ ॥
दीर्घकेश दारुन भुजदंडा ❀ चलत चपल बल बुद्धि प्रचण्डा ॥ २ ॥

और यह कि जिसके शरीरमें सफेद २ धारियाँ हो रहीं हैं सो ऐसी लगती हैं जैसे चांदीके पर्वतके सुन्दर शिखर हैं ॥ १ ॥ और जिसके लंबे बाल कठिन भुजदंड हैं और जो चलनेमें चंचल और बल और बुद्धिमें तीव्र है ॥ २ ॥

बास करै जलनिधिके तीरा ❀ पान करै गोमतीसुनीरा ॥ ३ ॥
नृप सुग्रीवकेर अधिकारी ❀ सबल व्यूह यह रचै सँवारी ॥ ४ ॥

और समुद्रके किनारे निवास करता है और गोमतीके सुन्दर जलका पान करता है ॥ ३ ॥ सो राजा सुग्रीवका अधिकारी है. यह बलवान् सेनाको सम्हालकर सजाता है ॥ ४ ॥

बल अरु बुद्धि न इहिसम आना ❀ इहिकर पुरुषारथ जग जाना ॥ ५ ॥
जेहि दिन जनमेउ बलअधिकाई ❀ चढ़ेउ गगन शशि देखी ललाई ॥ ६ ॥
चंद्रहि धरे गगनकहँ उछरेउ ❀ सत्तरि जोजनते पुनि फिरेउ ॥ ७ ॥

इसके समान बल और बुद्धि दूसरेमें नहीं; इसके पराक्रमको संसार जानता है ॥ ५ ॥ जिस दिन जन्म लियाथा (उसी दिन) बलकी अधिकतासे आकाशमें चन्द्रमाकी ललाई देखकर चढ़ गयाथा ॥६॥ और चन्द्रमाको पकड़कर आकाशमें उछल गयाथा और फिर सत्तर योजनसे लौटा ७

दो०-मर्कट कोटिपचाससै, रहैं सर्वदा साथ ॥
कालहुते रणमें जुझै, कुमुदनाथ कपिनाथ ॥ २५ ॥

इसके साथमें पचास सौ करोड़ वानर सदा रहते हैं और यह लड़ाईमें कालसेभी जूझ सक्ता है. इस बन्दरोंके स्वामीका नाम कुमुद है ॥ २५ ॥

चौ०-यह देखहु जो घटा सुहाई ❀ मानों नभभादौं बहुताई ॥ १ ॥
आगे पाछे दस दिसि धावहि ❀ सिला शृंग तरु-तोरत आवहिं ॥ २ ॥

यह देखो कैसी घटासी शोभायमान् है मानों बड़ी भारी सावन भादोंकी घटा है ॥ १ ॥ वानर आगे पीछे दशों दिशाओंको दौड़ते हैं और शिला, शिखर और वृक्षोंको तोड़ते चले आते हैं ॥ २ ॥

सहसनागबलधरहिं समाना ❀ सप्तपद्म इनकर परमाना ॥ ३ ॥
ये ऋच्छप कासीके बासी ❀ अजर अजित अविचल अविनासी ॥ ४ ॥

हजार हाथियोंके समान बल रखते हैं और इनकी संख्या सात पद्म है ॥ ३ ॥ यह रीछोंके पति काशीके रहनेवाले हैं. जो न तो बूढ़े होते हैं, न जीते जाते हैं, न लड़ाईमेंसे टलते हैं, और न इनका नाश होता है ॥ ४ ॥

तीछन दंत नखायुध धारी ❀ गहि मारहिं गज दंत उपारी ॥ ५ ॥
इन ऋच्छनकर यूथ अपारा ❀ धूमकेतु यह पालनहारा ॥ ६ ॥

इनके पैने दांत और नखही हथियार हैं और दांत उखाड़कर हाथियोंको पकड़ २ कर मारते हैं ॥ ५ ॥ इन रीछोंकी सेना अपार है और इसका पालनेवाला धूमकेतु है ॥ ६ ॥

इन्हकर ज्येष्ठबंधु जँबवंता ❀ जिहिके बलकर अहहि न अंता ॥ ७ ॥
तीनिलोक सो जूझै पारै ❀ संकट परै सुमेरु उखारै ॥ ८ ॥
बसै असंक नर्मदातीरा ❀ बज्रसमान अभेदसरीरा ॥ ९ ॥

इसका बड़ा भाई जाम्बवंत है जिसके बलका छोर नहीं है ॥७॥ और जो तीनों लोकोंसे लड़ाई ठान सकता है और कष्ट पड़नेपर सुमेरुको उखाड़ सक्ता है ॥ ८ ॥ सो नर्मदा (नदी) के किनारे निर्भय रहता है, जिसका वज्रके समान अभेद्य (कठोर) शरीर है ॥ ९॥

दो०-राजाकर जह मंतरी, रघुपतिको प्रियदास ॥
कालहुते जूझै समर, नेक न लेइ उसास ॥ २६ ॥

यह राजा (सुग्रीव) का मंत्री और रामचन्द्रजीका प्यारा सेवक है. यह कालसेभी लड़ाईमें लड़ै और तनकभी उसास न लेवै, अर्थात् लड़ाईही करता रहै ॥ २६ ॥

चौ०-अब देखहु जह यूथ अपारा ❀ पीत वर्ण होगयउ पहारा ॥ १ ॥
बालअरुन रविकिरन सछूटी ❀ कुंकुमउवटि दिसा जनु फूटी ॥ २ ॥

अब इस अपार समूहको देखो जिससे पर्वत पीला होगया है ॥ १ ॥ सबेरेके लाल सूर्यकी किरणसी छूटी हुई है मानों दिशामें केसरका माट फूट गया है ॥ २ ॥

चौबिस अर्बुद इहिकर जूहा ❀ सहसबृंद सौकोटिसमूहा ॥ ३ ॥
सिला शृंग जे आने परहीं ❀ पाँयन मीड़ि किरकिरा करहीं ॥ ४ ॥

इसका झुंड चौवीस अर्ब है, और सौ करोड़ हजार वृन्द (इसका) पूरा २ समूह है ॥ ३ ॥ जो शिला और शिखर इसके आगे पडते हैं, उनको यह पैरोंसे मीड़ कर चूर २ कर देता है ॥४॥

कंचनगिरिकंदरको बासी ❀ इहिकर जूथनाथ अविनासी ॥ ५ ॥
अतिबल बासवकर हितकारी ❀ सखा सुकंठकेर सुभकारी ॥ ६ ॥

यह कञ्चनगिरिकी कन्दराका रहनेवाला है. हे नाथ! इसके झुंडका नाश नहीं होता है ॥ ५ ॥ और वह वहुत वलवान् तथा इन्द्रका हित करनेवाला है और सुकंठका शुभकर्त्ता मित्र है ॥ ६ ॥

पान करै गंगाकर नीरा ❀ पर्वतशृंगसमानसरीरा ॥ ७ ॥
क्षण क्षण सिंहनाद जो होई ❀ जह गर्जत आवतहै सोई ॥ ८ ॥

यह गंगाजीका जल पीता है और इसका शरीर पर्वतके शिखरके समान है ॥ ७ ॥ और क्षण २ में जो सिंहकासा शब्द होता है सो यह वही गर्जता आता है ॥ ८ ॥

दो०-यश तिहुँ मंडल गलितगज, बलकर नाहिन अंत ॥ ❀
यह कपिराजा केशरी, जिहिकर सुत हनुमंत ॥ २७ ॥ ❀

इसका यश तीनों लोकोंमें फैल रहा है (इसने वहुतसे) हाथी मारे हैं (और जिसके) वलका छोर नहीं है, यह वही वन्दरोंका राजा केसरी है, जिसका पुत्र हनुमान् है ॥ २७ ॥

चौ०-घटा एक आवत है जूटी ❀ जनु मधुसिंधु बलै निसि फूटी ॥ १ ॥
भूमि अकास अचल अबसाने ❀ उत्तरते जनु शलभ उडाने ॥ २ ॥

एक घटा जो घिरी हुईसी आती है (सो ऐसी दीखती है) मानो रात हो जानेपर मदिराका समुद्र जलता हो ॥ १ ॥ पृथ्वी, आकाश और पर्वत ऐसे ढक गये मानो उत्तरसे टीड़ी दल उड़ा है ॥२॥

यहिकर यूथनाथ जो अहई ❀ अतिबल राजाके सँग रहई ॥ ३ ॥
कपिके रूप अनल अबिनासी ❀ ये दोउ पारिपात्रके बासी ॥ ४ ॥

इसके जो सेनापति हैं सो बड़े बलवान् राजा (सुग्रीव) के साथ रहते हैं ॥ ३ ॥ और बन्दरके स्वरूपमें अग्निके समान अविनाशी ये दोनों परिपात्रके रहनेवाले हैं ॥ ४ ॥

अतिसुंदर अरु समरबिपक्षी ❀ महाबीर दोउ गवय गवक्षी ॥ ५ ॥
पीवहिं तुंगभद्रकर नीरा ❀ मर्दन गंधमदन दोउ बीरा ॥ ६ ॥

और ये दोनों अत्यंत सुन्दर और लड़ाईमें पीठ न देनेवाले, बड़े योद्धा, गव और गवाक्ष हैं ॥५॥ ये तुंगभद्रा (नदी) का जल पीते हैं और दोनों योद्धा गंधमादन (पर्वत) को मीड़ सक्ते हैं ॥ ६ ॥

साठि सहस्रनागबल जाही ❀ इनमहँ एक कहौं मैं ताही ॥ ७ ॥
भेरीनाद सिंहकर ठाना ❀ बिक्रम सारदूल अनुमाना ॥ ८ ॥

अब इनमें एक साठ हजार हाथियोंके समान बलवान् है जिसे मैं कहता हूँ ॥ ७ ॥ जिसका शब्द मृदंगकासा, चाल सिंहकीसी, और पराक्रम बाघके समान है ॥ ८ ॥

दो०-देवनमें जस सुरपती, तेजनमें जस भानु ॥ ❀
पनस नाम मर्कट यहै, अति बलनीतिनिधानु ॥ २८ ॥ ❀

और देवताओंमें जैसे इन्द्र, तेजवानोंमें जैसे सूर्य, ऐसेही बहुत बल और नीतिका समुद्र यह पनस नाम बन्दर है ॥ २८ ॥

चौ०-यह जो कमलपत्रसम देहा ❀ जनु कैलासशृंगकी रेहा ॥ १ ॥
लोचन मधुपिंगल अतिलोने ❀ कामरूप चितवत चहुँ कोने ॥ २ ॥

और यह जिसकी कमलके पत्तेके समान देह है और ऐसा लंबा है मानों कैलास (पर्वत) का शिखर है ॥ १ ॥ और जिसके मधु अर्थात् लाल और पीले मिले हुये बहुत सुन्दर नेत्र हैं और जो चाहे जैसा रूप धर लेता है और चारों ओरको देखता है ॥ २ ॥

लंकासोह लँगूर भ्रमाई ❀ गर्जत आव बज्रकी नाँई ॥ ३ ॥
सुरपतिसंग युद्धकहँ गयऊ ❀ तबते कामरूप जह भयऊ ॥ ४ ॥

और जो लंकाके सामने पूँछ घुमाकर वज्रके समान गर्जता आता है ॥ ३ ॥ यह इन्द्रके साथ लड़ने गया था, तबसे कामरूप अर्थात् इच्छानुसार शरीर धारण करनेवाला होगया है ॥ ४ ॥

यहिकी बासब सन मित्राई ❀ ताते यह देवनको भाई ॥ ५ ॥
सहसकोटि कपि यहिके संगा ❀ राते पीत स्वेत बहुरंगा ॥ ६ ॥

इससे इन्द्रकी मित्रता है इसी कारण यह देवताओंका भाई है ॥ ५ ॥ इसके साथमें हजार करोड़ बन्दर लाल, पीले, श्वेत और बहुतसे रंगके हैं ॥ ६ ॥

बचन मृषा मम प्रभु यह नाहीं ❀ अपर बालि जानहु मनमाहीं ॥ ७ ॥
दर्दुर शैल सदन इहिकेरा ❀ मन बच कर्म रामकर चेरा ॥ ८ ॥

हे स्वामी! मेरा यह वचन झूठा नहीं है. (इसे आप अपने) मनमें दूसरा बालि जानो ॥ ७ ॥ इसका नाम द्विरद है. इसका घर दर्दुर पर्वत है और यह मनक्रमबचनसे रामचन्द्रजीका दास है ॥ ८ ॥

दो०-गिरिवर लांघत आवही, चलत उड़ावै रेनु ॥ ❀
तरनितेज यह रुंधऊ, तारातनय सुषेनु ॥ २९ ॥ ❀

और जो श्रेष्ठ पर्वतोंको उलाँघता चला आता है और चलतेमें धूल उड़ाता आता है इसने सूर्यके तेजको खूंद डाला था, अर्थात् सूर्यका प्रकाश बन्द कर दिया था, और जिसकी तारा बेटी है इसका नाम सुषेणु है ॥ २९ ॥

चौ०-यहि कपिको देखहु तनु फेरा ❀ जनु सपक्ष उड़ चलेउ सुमेरा ॥ १ ॥
एक बार लंका यहिं जारी ❀ पुनि गर्जत आवत यहि बारी ॥ २ ॥

अब इस बन्दरको देखो जो शरीरको घुमाता हुआ कैसा आता है, मानों सुमेरु पर्वत पक्षोंसहित उड़ चला ॥ १ ॥ इसने एकवार तौ लंका जला दी, फिर इसबारभी गर्जता आता है ॥ २ ॥

जेहि दिन गर्भ अंजनी जायो ❀ बाल अरुन मीलनकहँ धायो ॥ ३ ॥
योजन तीनसहस उड़ि गयऊ ❀ उदयाचलऊपर ह्वै गयऊ ॥ ४ ॥

जिसदिन अंजनीने जाया था तभी बाल सूर्यके मीलनेको दौड़ा था ॥ ३ ॥ और तीन हजार योजन उड़ गया और उदयाचलके ऊपर होगया था ॥ ४ ॥

सब देवन्ह मिलि अस्तुति कीन्हा ❀ तब रवि छाँडि पवनसुत दीन्हा ॥ ५ ॥
कामरूप अतुलित बल येही ❀ कालदंड कुलिसनसम देही ॥ ६ ॥

और जब सब देवताओंने मिलकर स्तुति करी, तौ हनुमान्ने सूर्यको छोड़ दिया ॥ ५ ॥ यहभी कामरूप और अतुल बलवान् है और इसका शरीर कालदंड और वज्रोंके समान है ॥ ६ ॥

बेगवंत जस गरुड़ उड़ाहीं ❀ बुद्धिवंत दूसर अस नाहीं ॥ ७ ॥
विद्यापढ़न भानुपहँ जाही ❀ उलटी गति रबिसंग उड़ाही ॥ ८ ॥

जैसे गरुड़ उड़ता है ऐसा शीघ्र चलनेवाला है और ऐसा बुद्धिमान् कोई दूसरा नहीं है ॥७॥ यह सूर्यके पास विद्या पढ़ने गया तौ उल्टी चालसे सूर्यके साथ दौड़ता था ॥ ८ ॥

नाक नाग नरपुर गतिकारी ❀ महा अवधि तप तेज पुरारी ॥ ९ ॥
बारिधि लाँघेउ गोपद जैसे ❀ यह कपीससन जूझब कैसे ॥ १० ॥

स्वर्ग पाताल और मृत्यु लोकमें जानेवाला है, वड़ी अवधितक तप तेजसे पूर्ण रहैगा ॥ ९ ॥ यह समुद्रको गौके खुरकी भांति उलाँघ आया था इस बन्दरसे कैसे लड़ोंगे ? ॥ १० ॥

दो०-तेज दिवाकर अनल इव, पवनते वेग अपार ॥ ❀
कंध लिये दोउ बंधकों, श्रीरघुवंसकुमार ॥ ३० ॥ ❀

इसका तेज सूर्य और अग्निके समान है और वेग पवनसेभी अपार है, कि जिसने श्रीरघुवंशकुमार (रामचन्द्र लक्ष्मण) दोनों भाईयोंको कंधेपर विठा लिया है ॥ ३० ॥

चौ०-अतसीबरन कुसुमतनुरेषा ❀ पुरुषपुरान धरे नरवेषा ॥ १ ॥
मत्तगजेंद्रसुंड़भुजदंडा ❀ धनुस बान असि धरे प्रचंडा ॥ २ ॥

अलसीके फूलके समान रेखा जिनके शरीरमें हैं और जो पुराणपुरुष मनुष्यका वेष धारण किये हैं ॥ १ ॥ और मतवाले ऐरावत हाथीकी सुंड़के समान (जिनके) भुजदंड हैं और प्रचंड धनुषवाण और तलवारके धारण करनेवाले हैं ॥ २ ॥

उर बिसाल अतिउन्नत कंधर ❀ कंबुकंठ रेषा प्रसन्न वर ॥ ३ ॥
मुखछविकी उपमा कवि जोहै ❀ ससिसरोजसम कहे न सोहै ॥ ४ ॥

चौड़ी छाती, वहुत ऊँचे कंधे हैं और कंठमें सुन्दर शंखकीसी तीन रेखा शोभायमान हैं ॥३॥ और जो मुखकी शोभाकी उपमा कवीश्वर ढूंढ़े तौ चन्द्रमा और कमलके समान कहतेमें शोभा नहीं पाते ॥४॥

दसनपाँतिकी कांति कहै को ❀ ललकत मन पटतरहिं लहै को ॥ ५ ॥
देखत अधरनकी अरुनाई ❀ बिंबाफल बंधूक लजाई ॥ ६ ॥

उनके दांतोंकी पंक्तिकी चमकको कौन कह सक्ता है? (जिन्हैं देखकर) मन ललचाता है. उनकी बराबरी कौन पासक्ता है? ॥ ५ ॥ होठोंकी ललाईको देखतेही बिंवाफल और गुलदुपहरियाके पुष्प लज्जित होते हैं ॥ ६ ॥

सुकतुंडहि नासिका लजावै ❀ थके सुकबि नहिं पटतर पावै ॥ ७ ॥
सीर्ष जटाके मुकुट बनाये ❀ भाल बिसाल तिलक अति भाये ॥ ८ ॥
दच्छिन दिसि लछमन बलवीरा ❀ रामबाहुसम अति रनधीरा ॥ ९ ॥

(उनकी नाक तोतेकी चोंचको लज्जित करती है. सुन्दर कवीश्वर थक गये, पर उपमा नहीं मिली ॥७॥ माथेपर जटाओंके मुकुट बँधे हैं और चौड़े माथेपर तिलक वहुत सुन्दर लगा है ॥८॥ उनके दाहिनी ओर वलवीर लक्ष्मण हैं जो रामचन्द्रजीकी भुजाके समान रणधीर हैं ॥ ९ ॥

दो०-वाम बिभीषन सोहहीं, सिर अभिषेका राज ॥ ❀
बीजमंत्र सब जानहीं, अब कस करहिं अकाज ॥ ३१ ॥ ❀

वाँईओर बिभीषण शोभायमान हैं जिनके माथेपर राज्याभिषेकका तिलक लग रहा है और जो तुम्हारे सब बीज कहिये गुप्त मंत्रोंको जानते हैं. अब (रामजीके काममें) विघ्न कैसे करैंगे? ॥ ३१ ॥

चौ०-अब देखहु यह सेना आई ❀ जस भादोंकी घटा सुहाई ॥ १ ॥
किष्किंधापुरि इनकर थाना ❀ देवसरिस मधुवन उद्याना ॥ २ ॥

अब देखो यह सेना आई. जैसे भादोंकी सुहावनी घटा छाईहो ॥ १ ॥ इनका स्थान किष्किंधा नगरमें है कि जहां देवताओंके समान मधुवन वगीचे लगरहे हैं ॥ २ ॥

ऋष्यमूक इनकर बिस्रामा ❀ चातुर्मास्य बसे जहँ रामा ॥ ३ ॥
बाली ज्येष्ठ राम रन मारा ❀ जहि कहुँ राजतिलक प्रभु सारा ॥ ४ ॥

इनका विश्राम ऋष्यमूक पर्वतपर है. जहां रामचन्द्रजी चौमासेमें वसेथे ॥ ३ ॥ (इनमेंसे) वड़े भाई बालीकों तौ रामचन्द्रजीने लड़ाईमें मार डाला और इसको भगवान्ने राजतिलक कर दियाहै

तारा तासु पाटकी रानी ❀ जिहिकर सुत अंगद अभिमानी ॥ ५ ॥
सहस संकुकर अर्बुद एका ❀ अर्बुदसहसकि बृंद बिसेका ॥ ६ ॥

तारा उस वालिराजाकी पटरानी है कि जिसका पुत्र अभिमानी अंगद है ॥ ५ ॥ हजार शंकु का एक अर्ब और हजार अर्बका एक बृन्द होता है ॥ ६ ॥

सहसबृंद जो होइ अमाना ❀ महापद्म तेहिकर परमाना ॥ ७ ॥
ऐसे पद्म अठारह साजा ❀ बिग्रह बढेउ रामके काजा ॥ ८ ॥
बीरवेष अरु नयनबिसाला ❀ कंबुकंठ मोतिनकी माला ॥ ९ ॥

जो पुरे हजार वृन्द हों, तौ उनका परिमाण महापद्म होता है. अर्थात् हजार वृन्दका एक महापद्म होता है ॥ ७ ॥ ऐसे अठारहपद्म (बन्दर) रामचन्द्रजीके कामको लड़ाई करनेके लिये सजे हुये हैं ॥ ८ ॥ और (जिनका) योद्धाओंकासा वेष है, वड़े २ नेत्र हैं और शंखसमान कंठमें मोतियोंकी माला पड़ी हैं ॥ ९ ॥

दो०–हस्ती साठिसहस्रबल, सदा धर्मकी सींव ॥ ❀
स्वेतछत्र सिर सोहही, यह राजा सुग्रीव ॥ ३२ ॥ ❀

और साठहजार हाथियोंका जिसमें वल है, और जो धर्मकी सीमा है, और जिसके मस्तकपर श्वेत छत्र शोभायमान है सो यह राजा सुग्रीव है ॥ ३२ ॥

इहिबिध सकल देखायउ, सारन कपिदलजूह ॥ ❀
गनै न रावन कालबस, अतिशय गर्वसमूह ॥ ३३ ॥ ❀

शारनमंत्रीने इस भांति वन्दरोंकी सेनाका सब समूह दिखलाया. परन्तु रावण कालके वश कुछ नहीं गिनता. क्योंकि वड़ा भारी अभिमानी है ॥ ३३ ॥

इति क्षेपक.

चौ०–इहाँ प्रात जागे रघुराई ❀ पूछा मत सब सचिव बुलाई ॥ १ ॥
कहहु बेगि का करिय उपाई ❀ जांबवंत कह पद सिर नाई ॥ २ ॥

यहां सबेरेही रामचन्द्रजी जागे और सब मंत्रियोंको बुलाकर सलाह पूछी कि–॥ १ ॥ जल्दी कहो क्या उपाय करना चाहिये? तौ जाम्बवंतने (उनके) चरणोंको मस्तक नवाकर कहा ॥ २ ॥

सुनु सर्वज्ञ सकलउरवासी ❀ बुधिबलतेजधर्मगुनरासी ॥ ३ ॥
नीक मंत्र निजमतिअनुसारा ❀ दूत पठाइय बालिकुमारा ॥ ४ ॥

हे महाराज! सुनिये. आप तौ सब जानतेही हो, क्योंकि सबके हृदयमें बास करते हो और बुद्धि, वल, तेजके धाम और गुणके समूह हो ॥ ३ ॥ पर मैंभी अपनी बुद्धिके अनुसार सलाह कहताहूं कि (पहिले) अंगदको दूत बनाकर भेजिये ॥ ४ ॥

नीक मंत्र सबके मन माना ❀ अंगदसन कह कृपानिधाना ॥ ५ ॥
बालितनय बुधिबलगुनधामा ❀ लंका जाहु तात मम कामा ॥ ६ ॥

यह सलाह सबके मनमें अच्छी लगी और दयाके समुद्र (भगवान्)ने अंगदसे कहा ॥ ५ ॥ हे अंगद ! तुम बुद्धि बल और गुणोंके समूह हो. सो हे प्यारे ! तुम मेरे कामके लिये लंकाको जाओ ६

बहुत बुझाइ तुमहिं का कहऊँ ❀ परम चतुर मैं जानत अहऊँ ॥ ७ ॥
काज हमार तासु हित होई ❀ रिपुसन करहु बतकही सोई ॥ ८ ॥

तुमको बहुत समझाकर क्या कहूं ? क्योंकि मै तुझे बहुत चतुर जानता हूं ॥ ७ ॥ जिससे हमारा काम हो जाय और उसका भला हो वही बात चीत वैरीसे करना ॥ ८ ॥

सो०-प्रभुआज्ञा धरि सीस, चरन बंदि अंगद कहेउ ॥ ❀
सो गुनसागर ईस, राम कृपा जापर करहु ॥ ४ ॥ ❀

भगवान्की आज्ञाको माथेपर रखकर और चरणोंको दंडवत् करके अंगदने कहा, हे स्वामी रामचन्द्रजी ! जिसपर आप दया करो वही गुणोंका समुद्र है ॥ ४ ॥

स्वयंसिद्ध सब काज, नाथ मोहिं आदर दयउ ॥ ❀
अस बिचारि जुवराज, तनुपुलकित हर्षित भयउ ॥ ५ ॥ ❀

आपके काम तौ सब अपने आप सिद्ध हैं, परन्तु हे स्वामी ! आपने मुझे आदर दिया है, ऐसे विचार कर युवराज (अंगद) शरीरमें पुलकायमान होकर प्रसन्न होगया ॥ ५ ॥

चौ०-बंदि चरन उर धरि प्रभुताई ❀ अंगद चलेउ सबहिं सिर नाई ॥ १ ॥
प्रभुप्रताप उर सहज असंका ❀ रनबाँकुरा बालिसुत बंका ॥ २ ॥

अंगद (भगवान्के) चरणोंको दंडवत् कर, प्रभुताको हृदयमें धरकर और सबको शिर नवा कर चला ॥ १ ॥ वालिका पुत्र भगवान्के प्रतापसे हृदयमें सहजही निर्भय, लड़ाईमें बाँका वीर और टेढ़ा है ॥ २ ॥

पुर पैठत रावनकर बेटा ❀ खेलत रहा सो होगइ भेटा ॥ ३ ॥
बातहिं बातन रिस बढ़ि आई ❀ जुगल अतुलबल अरु तरुनाई ॥ ४ ॥

नगरमें धसतेही रावणका पुत्र खेलता था सो उससे भेट होगई ॥ ३ ॥ बातोंही बातोंमें रिस बढ़ आई, क्योंकि दोनों अतुल बलवान् और तरुण थे ॥ ४ ॥

तेहिं अंगदकहँ लात उठाई ❀ गहि पद पटकेउ भूमि भ्रमाई ॥ ५ ॥
निसिचरनिकर देखि भट भारी ❀ जहँ तहँ चले न सकहिं पुकारी ॥ ६ ॥

सो उस (रावणके बेटे) ने अंगदपर लात उढाई तौ (अंगदने) पैर पकड़ कर और घुमाकर पृथ्वीपर दे पटका॥ ५ ॥ राक्षसोंके समूह भारी योद्धाको देखकर जहां तहां जाने लगे, पुकार नहीं सक्ते

एक एक सन मर्म न कहहीं ❀ समुझि तासु बध चुप हो रहहीं ॥ ७ ॥
भयउ कोलाहल नगरमँझारी ❀ आवा कपि लंका जेहँ जारी ॥ ८ ॥

एक दूसरेसे भेद नहीं कहते और उस (रावणके पुत्र) का मरना सुनकर चुप हो रहते हैं ॥ ७ ॥ सब नगरमें कोलाहल फैल गया कि जिसने लंका जलाई थी वही बन्दर आया है ॥ ८ ॥

अबधौं कहा करहि करतारा ❀ अति सभीत सब करहि बिचारा ॥ ९ ॥
बिनु पूछे मग देहिं बताई ❀ जिहि चितवहि सो जाइ सुखाई ॥१०॥

बड़े भयसे सब बिचार करते हैं कि देखें अब बिधाता क्या करता है? ॥ ९ ॥ विनाही पूछे रास्ता बता देते हैं और जिसको (अंगद) देखता है वही सूख जाता है ॥ १० ॥

दो०-गयउ सभा दरबार तब, सुमिरि रामपदकंज ॥
सिंहठवनि इत उत चितै, धीर बीर बलपुंज ॥ ३४ ॥

तब रामचन्द्रजीके कमलसमान चरणोंका स्मरण करके धीर योद्धा और बलका समूह (अंगद) सिंहकी तरह इधर उधर देखता हुआ सभाके द्वारपर गया ॥ ३४ ॥

चौ०-तुरत निसाचर एक पठावा ❀ समाचार रावनहिं जनावा ॥ १ ॥
सुनत बचन बोलेउ दससीसा ❀ आनहु बोलि कहाँकर कीसा ॥ २ ॥

(अंगदने) शीघ्रही एक राक्षसको भेजा और रावणको समाचार जतलाया ॥ १ ॥ वचन सुनते ही रावण बोला कि बुलालाओ कहांका वन्दर है ॥ २ ॥

आयसु पाइ दूत बहु धाये ❀ कपिकुंजरहिं बोलि लै आये ॥ ३ ॥
अंगद दीख दसानन वैसा ❀ सहित प्रान कज्जलगिरि जैसा ॥ ४ ॥

आज्ञा पाकर बहुतसे दूत दौड़े और बन्दरोंमें हाथीके समान (अंगद) को बुला लाये ॥ ३ ॥ अंगदको रावण ऐसा दीखा जैसा प्राणसमेत काजलका पर्वत बैठा हो ॥ ४ ॥

भुजा बिटप सिर शृंगसमाना ❀ रोमावली लता तरु नाना ॥ ५ ॥
मुख नासिका नयन अरु काना ❀ गिरिकंदरा खोह अनुमाना ॥ ६ ॥

(जिसकी) भुजायें तौ वृक्षके समान, शिर शिखरके समान और रोंगटे अनेक वेल वृक्षोंके समान हैं ॥ ५ ॥ मुख, नाक, नेत्र और कान पर्वतोंकी गुफा और खोहके समान हैं ॥ ६ ॥

गयउ सभा मन नेकु न मुरा ❀ बालितनय अति बलबाँकुरा ॥ ७ ॥
उठे सभासद कपिकहँ देखी ❀ रावनउर भा क्रोध विसेखी ॥ ८ ॥

अत्यंत बलमें बाँका ऐसा वालीका पुत्र (अंगद) सभामें गया और तनिकभी मनमें न डरा ॥८॥ बंदरको देखकर सभासद उठ खड़े हुये तौ रावणके हृदयमें बहुत क्रोध हुआ ॥ ८ ॥

दो०-जथा मत्तगजजूथमहँ, पंचानन चलि जाय ॥
रामप्रताप सँभारि उर, बैठ सभहिं सिर नाय ॥ ३५ ॥

जैसे मतवाले हाथियोंके समूहमें सिंह चला जावे (इसी भांति अंगद गया) और रामचन्द्रजीके प्रतापको हृदयमें स्मरण कर सभाको माथा नवाकर बैठ गया ॥ ३५ ॥

चौ०-कह दसकंधर कवन तैं बंदर ❀ मैं रघुबीरदूत दसकंधर ॥ १ ॥
मम जनकहिं तोहिं रही मिताई ❀ तब हितकारन आयउँ भाई ॥ २ ॥

रावणने कहा अरे बन्दर ! तू कौन है ? (अंगदने कहा) हे रावण ! मैं रामचन्द्रजीका दूत हूँ, ॥ १ ॥ मेरे पिताकी तुझसे मित्रता थी, सो हे भाई ! तेरे भलेके लिये आया हूँ ॥ २ ॥

उत्तम कुल पुलस्त्यकर नाती ❀ सिव विरंचि पूजेहु बहुभाँती ॥ ३ ॥
बर पायउ कीन्हेउ सब काजा ❀ जीतेहु लोकपाल सुर राजा ॥ ४ ॥

कवित्त—(१) मैं हौं रामदूत आयो तोहिं समझायवेको मान कह्यो मेरो एती उरमें अर न लै ॥
वरनत भट्ट तजि क्रोध मनमांझ मूढ सांझ औ सवेरे रामनामकी रटन लै ॥
जोरि कर बीस दस सीसन नवाय अबं पाहि २ कहि गहि प्रभुके चरन लै ॥
जानकी कुसल जो पै चाहत अजान अरे जानकी समर्पि जानकीसकी सरन लै ॥

उत्तम कुलमें (तुम्हारा जन्म है) पुलस्त्य मुनिके नाती हो और बहुत भाँति (तुमने) महादेव और ब्रह्माकी पूजा करी है ॥ ३ ॥ और (उनसे) वरदान पाकर सब काम किये, सब लोकपाल और इन्द्रकोभी जीत लिया ॥ ४ ॥

नृप अभिमान मोहबस किंवा ❀ हरि आनेहु सीता जगदंबा ॥ ५ ॥
अब सुभ कहा करहु तुम मोरा ❀ सब अपराध छमहिं प्रभु तोरा ॥ ६ ॥

सो हे राक्षसराज ! (तुम) अभिमानसे अथवा अज्ञानके वश होकर जगत्‌की माता (सीताजी)-को हर लाये हो ॥ ५ ॥ सो अब तुम मेरा अच्छा कहना करो. भगवान् तुम्हारे सब अपराधोंको क्षमा करेंगे ॥ ६ ॥

दसन गहहु तृन कंठ कुठारी ❀ पुरजन संग सहित निजनारी ॥ ७ ॥
सादर जनकसुता करि आगे ❀ इहिबिधि चलहु सकल भय त्यागे ॥ ८ ॥

दाँतोंमें तिनका पकड़लो और कंठमें कुल्हाड़ी डाल नगरके मनुष्योंसमेत अपनी स्त्रीको साथ लेकर ॥ ७ ॥ और आदरपूर्वक सीताजीको आगे करके इसभाँति सब भयको छोड़कर चलो ॥ ८ ॥

दो०-प्रनतपाल रघुबंसमनि, त्राहि त्राहि अब मोहिं ॥ ❀
सुनतहि आरत बचन प्रभु, अभय करहिंगे तोहिं ॥ ३६ ॥ ❀

और (वहां कहना) हे दीनोंकी रक्षा करनेवाले ! रघुवंशमें मणिरूप रामचन्द्रजी ! अब मेरी रक्षा करो ऐसे दुखी वचन सुनतेही भगवान् तुझे निर्भय करेंगे (रावणने उत्तर दिया) ॥ ३६ ॥

चौ०-रे कपि पोच बोलु न सम्हारी ❀ मूढ़ न जानसि मोहिं सुरारी ॥ १ ॥
कहु निजनाम जनककर भाई ❀ केहि नाते मानिये मिताई ॥ २ ॥

अरे नीच बन्दर ! सम्हालकर नहीं बोलता. अरे मूर्ख ! तू मुझको नहीं जानता कि मैं देवताओंका वैरी हूं ॥ १ ॥ अरे भाई ! अपना और अपने बापका नाम तौ बता कि किस नातेसे मित्रता मानता है ? (अंगदने कहा) ॥ २ ॥

अंगदनाम बालिकर बेटा ❀ तासों कबहु भई तोहिं भेटा ॥ ३ ॥
अंगदबचन सुनत सकुचाना ❀ रहा बालि बानर मैं जाना ॥ ४ ॥

मेरा नाम अंगद है, मैं बालिका बेटा हूं उससे तेरी कभी भेट हुईथी ? ॥ ३ ॥ अंगदके बचन सुनतेही (रावण) सकुचाया और कहा कि, बालि बन्दर था, मैंने समझ लिया ॥ ४ ॥

अंगद तुम्ही बालिकर बालक ❀ उपजेहु वंसअनल कुलघालक ॥ ५ ॥
गर्भ न खसेहु बृथा तुम जाए ❀ निजमुख तापसदूत कहाए ॥ ६ ॥

हे अंगद ! बालिका पुत्र तूही है. तू अपने कुलका ऐसा सत्यानाशी हुआ जैसे बाँसोंमें अग्नि होती है. (और स्वयं उत्पन्न होकर जला देती है) ॥ ५ ॥ (तेरी मैयाका) गर्भभी न गिरा और तू तौ वृथाही उत्पन्न हुआ जो अपने मुँहसेही तपस्वियोंका दूत कहलाया ॥ ६ ॥

अब कहु कुसल बालि कहँ अहई ❀ बिहँसि बचन अंगद अस कहई ॥ ७ ॥
दिन दस गए बालिपहँ जाई ❀ पूछेहु कुसल सखा उर लाई ॥ ८ ॥

अब कह बालिकी कुशल तौ है ? (तब) अंगद हँसकर यों कहने लगा कि ॥ ७ ॥ दशदिन पीछे बालिके पास जाकर और मित्रको हृदयसे लगाकर कुशल पूँछ लीजिओ ॥ ८ ॥

---

(१) यहां दाँतोंमें तिनका पकड़नेका यह भाव है कि 'मैं आपकी गऊ हूं' कंठमें कुल्हाडीका यह भाव कि 'मेरा गला भलेही काट डालिये' ये दोनों बातें दीनता दिखलानेके लिये हैं.

रामविरोध कुसल जस होई ❀ सो सब तुमहिं सुनाइहि सोई ॥ ९ ॥
सुनु सठ भेद होइ मन जाके ❀ श्रीरघुबीर हृदय नहिं ताके ॥ १० ॥

रामचन्द्रजीके विरोधसे जैसी कुशल होती है सो सब तुझको वही सुनादेगा. (कदाचित् तू समझता हो कि मैं जोड़ तोड़की वातें कर मिलाया चाहता हूं तौ) ॥ ९ ॥ हे मूर्ख ! सुन, जिसके मनमें भेदकहिये जोड़ तोड़ होता है उसीके हृदयमें श्रीरामचन्द्रजी नहीं रहते ॥ १० ॥

दो०–हम कुलघालक सत्य तुम, कुलपालक दससीस ॥ ❀
अंधौ बधिर न कहहिं अस, स्रवन नयन तोहिं बीस ॥३७॥ ❀

हे रावण ! सच है. हम तौ कुलका नाश करनेवाले हैं और तुम कुलका पालन करनेवाले हो. ऐसे तौ जो अंधा और बहिरा होगा वहभी न कहैगा, सो तेरे तौ बीस नेत्र और कान हैं ॥ ३७॥

चौ०–सिव विरंचि सुरमुनिसमुदाई ❀ चाहत जासु चरनसेबकाई ॥ १ ॥
तासु दूत होइ हम कुल बोरा ❀ ऐसी मति उर बिहरु न तोरा ॥ २ ॥

महादेव ब्रह्मा और देवता तथा मुनीश्वरोंके समूह जिसके चरणोंकी सेवाको चाहते हैं ॥ १ ॥ उसके दूत वनकर हमने कुल बोर दिया. सो ऐसी बुद्धि होनेपरभी तेरा हृदय नहीं फटता ॥ २ ॥

सुनि कठोर बानी कपिकेरी ❀ कहत दसानन नयन तरेरी ॥ ३ ॥
खल तव वचन कठिन मैं सहऊँ ❀ नीति धर्म सब जानत अहऊँ ॥ ४ ॥

अंगदकी कठोर वाणी सुनकर रावण नेत्रोंसे डाट कर कहने लगा ॥ ३ ॥ अरे दुष्ट ! मैं तेरे कठोर वचनोंको (इसलिये) सहता हूँ, कि सब नीति धर्मको पहँचानता हूं ॥ ४ ॥

कहँ कपि धर्मसीलता तोरी ❀ हमहुँ सुनी कृत परतिय चोरी ॥ ५ ॥
देखेहुँ नयन दूत रखबारी ❀ बूड़ि न मरहु धर्मव्रतधारी ॥ ६ ॥

अंगदने कहा, तेरी धर्मशीलता हमनेभी सुनी है कि, तैंने पराई स्त्रीकी चोरी करी है ॥ ५ ॥और (मुझ) दूतकी जो तैंने रक्षा करी उसे भी आंखोसे देख लीनी. अर्थात् दूतकी रक्षा करनी चाहिये थी सो तौ न की. राक्षसोंसे कहता है कि खालो मार डालो इत्यादि, सो तू बड़ा धर्मका व्रत रखनेवाला है. (चुल्लुभर पानीमें) क्यों नहीं डूब मरता ? ॥ ६ ॥

नाक कान बिनु भगिनि निहारी ❀ छमा कीन्ह तुम धर्म विचारी ॥ ७ ॥
धर्मसीलता तव जग जागी ❀ पावा दरस हमहुँ बड़भागी ॥ ८ ॥

तैंने (अपनी) बहिनको नकटी बूची देखकर धर्म विचारकरही क्षमा करदिया होगा ॥ ७ ॥ तुम्हारी धर्मशीलता संसारमें फैल रही है, हमभी बड़भागी हैं, जो तुम्हारा दर्शन मिला ॥ ८ ॥ (यह सुन रावण बोला)

दो०–जनि जल्पसि जड़जंतु कपि, सठ विलोकु मम बाहु ॥ ❀
लोकपालबलविपुल ससि, ग्रसनहेतु जिमि राहु ॥ ३८ ॥ ❀

अरे मूर्ख जन्तु वन्दर ! वकवाद मत करै. हे शठ ! मेरी भुजाओंको देख जो लोकपालोंके बहुतसे बलरूपी चन्द्रमाके ग्रसनेके लिये मानों राहु हैं ॥ ३८ ॥

पुनि नभसर मम करनि, कर कमलनपर वास ॥ ❀
सोभित भयउ मराल इव, संभुसहित कैलास ॥ ३९ ॥ ❀

फिर आकाश सोई मानों सरोवर है, और मेरे हाथोंके समूह सोई कमल हैं, उनपर वास करते हुये

महादेवजी कैलास पर्वतसमेत ऐसे शोभित हुये जैसे कमलपर हंस शोभायमान होते हैं, तात्पर्य यह है कि, मैंने विनाही परिश्रमके कैलाससमेत महादेवको उठालिया था; फिर तू क्या है ? ॥ ३९ ॥

चौ०–तुम्हरे कटकमाँझ सुनु अंगद ❀ मोसन भिरहि कवन जोधा बद ॥ १ ॥
सब प्रभु नारिबिरह बलहीना ❀ अनुज तासु दुख दुखित मलीना ॥ २ ॥

हे अंगद ! सुनो, तुम्हारी सेनामें कौन ऐसा योद्धा है जो मुझसे भिड़ै ॥ १ ॥ (क्योंकि) तेरे स्वामी (रामचन्द्र) तौ स्त्रीके विरहमें बलहीन हैं और उनका छोटा भाई उनके दुःखसे दुःखी और उदास हो रहा है ॥ २ ॥

तुम सुग्रीव कूलद्रुम दोऊ ❀ अनुज हमार भीरु अति सोऊ ॥ ३ ॥
जाम्बवंत मंत्री अतिबूढ़ा ❀ सो किमि होइ समरआरूढा ॥ ४ ॥

तुम और सुग्रीव दोनों नदीके किनारेके वृक्षसमान हो, अर्थात् जैसे जब नदी चढ़ती है तौ किनारेके वृक्षोंको वहा ले जाती है ऐसेही जब लड़ाई होगी, तब तुम्हारा पताभी न चलेगा, और हमारा भाई (बिभीषण) है सोभी बहुत डरपोक है ॥ ३ ॥ और जाम्बवंत मंत्री बहुत बूढ़ा है सो वह कैसे लड़ाईमें ठहरैगा ? ॥ ४ ॥

सिलपकर्म जानत नल नीला ❀ है कपि एक महाबलसीला ॥ ५ ॥
आवा प्रथम नगर जेहिं जारा ❀ सुनि हँसि बोलेउ बालिकुमारा ॥ ६ ॥

नल नील हैं सो शिल्पकर्म अर्थात् कारीगिरी जानते हैं. हां एक बन्दर बड़ा भारी बली है, कि ॥ ५ ॥ जो पहले आया था और जिसने नगर जला दिया था. यह सुनकर अंगद हँसकर बोले ॥ ६ ॥

सत्य वचन कह निसिचरनाहा ❀ साँचहु कीस कीन्ह पुरदाहा ॥ ७ ॥
रावननगर अल्प कपि दहई ❀ सुनि अस बचन सत्य को कहई ॥ ८ ॥

हे राक्षसराज ! सच्ची बात कह. क्या उस वन्दरने सचोंही नगर जला दियाथा ? ॥ ७ ॥ रावणका तौ नगर और उसे छोटासा बन्दर जलावे ऐसी बात सुनकर कौन कहैगा कि यह ठीक है ॥ ८ ॥

जो अति सुभट सराहेहु रावन ❀ सो सुग्रीवकेर लघु धावन ॥ ९ ॥
चलै बहुत सो वीर न होई ❀ पठवा खबरि लेन हम सोई ॥ १० ॥

हे रावण ! जिसको (तैने) बड़ा योद्धा सराहा है, सो तौ सुग्रीवका छोटासा हलकारा है ॥ ९ ॥ जो बहुत चलै वह वीर नहीं होता. सो उसे हमने खबर लेनेको भेजा था ॥ १० ॥

दो०–सत्य नगर कपि जारेउ, बिनु प्रभुआयसु पाइ ॥ ❀
फिरि न गयउ सुग्रीवपहँ तेहि भय रहेउ लुकाइ ॥ ४० ॥ ❀

पर अब मुझे जान पड़ा कि बानर विना प्रभुकी आज्ञा नगर जला गया इसीसे फिर लौटकर सुग्रीवके पास नहीं गया. उस भयसे कहीं छिप रहा है ॥ ४० ॥

सत्य कहसि दसकंठ तैं, मोहिं न सुन कछु कोह ॥ ❀
कोउ न हमरे कटक अस, तुमसन लरत जो सोह ॥ ४१ ॥ ❀

हे रावण ! तू ठीक कहता है और मुझेभी सुनकर कुछ क्रोध नहीं है. हमारी सेनामें ऐसा कोई नहीं है जो तुझसे लड़तेमें शोभा पावै ॥ ४१ ॥

प्रीति बिरोध समान सन, करिय नीति असि आहि ॥ ❀
जो मृगपति बध मेंडुकहि, भलो कहै को ताहि ॥ ४२ ॥ ❀

क्योंकि नीति ऐसी है कि, स्नेह और लड़ाई बराबरवालेसे करनी चाहिये. जो सिंह मेंड़कको मारडाले तौ उसे कौन अच्छा कहेगा ? ॥ ४२ ॥

जद्यपि लघुता रामकहँ, तोहिं वधे बड़ दोष ॥
तदपि कठिण दसकंठ सुनु, छत्रिजातिकर रोष ॥ ४३ ॥

हे रावण! सुन. यद्यपि तेरे मारनेमें रामचन्द्रजीका छोटापन है और बड़ा दोषभी है परंतु क्षत्रियजातिका क्रोध कठिन है ॥ ४३ ॥

हँस बोलेउ दसमौलि तब, कपि कर बड़ गुन एक ॥
जो प्रतिपालै तासु हित, करै उपाय अनेक ॥ ४४ ॥

तब रावण दशों मुखसे हँसकर बोला, कि बन्दरका एक बड़ा गुण है, कि जो उसे पालताहै उसके भलेके लिये वह अनेक उपाय करता है ॥ ४४ ॥

चौ०-धन्य कीस जो निजप्रभुकाजा ❀ जहँ तहँ नाचहिं परिहरि लाजा ॥ १ ॥
नाचि कूदि करि लोग रिझाई ❀ पतिहित करहिं धर्मनिपुनाई ॥ २ ॥

बन्दरोंको धन्य है. जो अपने स्वामीके कामको, लज्जा छोड़कर, जहां तहां नाचते हैं ॥ १ ॥ और नाच कूद और लोगोंको रिझाकर अपने स्वामीके लिये धर्म और चतुराईके काम करते हैं ॥ २ ॥

अंगद स्वामिभक्त तव जाती ❀ प्रभुगुन कस न कहसि यहि भाँती ॥ ३ ॥
मैं गुनग्राहक परम सुजाना ❀ तव कटु बचन करौं नहिं काना ॥ ४ ॥

हे अंगद! तेरी जातिही स्वामिभक्त होती है (फिर तू) स्वामीके गुणोंको इस प्रकार क्यों न कहैगा ॥ ३ ॥ मैं बड़ा चतुर और गुणोंका गाहक हूं इसलिये तेरे कडुवे वचनोंका ध्यान नहीं करता ॥४॥

कह कपि तव गुनगाहकताई ❀ सत्य पवनसुत मोहिं सुनाई ॥ ५ ॥
बन विध्वंसि सुत वधि पुर जारा ❀ तदपि न तेहिं कछु कृत अपकारा ॥ ६ ॥

अंगदने कहा कि तेरी गुणग्राहकता सच्ची है. मुझे हनूमान्नेभी सुनाई थी ॥ ५ ॥ वनको उजाड़ पुत्रोंको मार नगरको जलायाथा तौभी तैंने उसका कुछ अपकार नहीं किया था ॥ ६ ॥

सोइ बिचारि तव प्रकृति सुहाई ❀ दसकंधर मैं कीन्ह ढिठाई ॥ ७ ॥
देखेउँ आइ जो कछु कपि भाखा ❀ तुम्हरे लाज न रोष न माखा ॥ ८ ॥

हे रावण! तेरी उसी सुन्दर प्रकृतिको विचारकर मैंने ढ़ीठता करी है ॥ ७ ॥ और जो कुछ हनूमान्जीने कहा था वह आकर देख लिया कि, तुझे न तो लज्जा है न क्रोध है और न खिसियानपन है ॥ ८ ॥

दो०-वक्रउक्ति धनु बचन सर, हृदय दहेउ रिपु कीस ॥
प्रतिउत्तरसनसिन्ह मनहु, काटत भट दससीस ॥ ४५ ॥

अंगदकी वक्र उँक्ति मानों धनुप है और वचन सोही तीर हैं, इनसे जो अंगदने वैरीके हृदयको

---

(१) वक्रोक्तिका लक्षण भाषाभूषणमें ऐसा दिया है-दोहा-"वक्र उक्ति विश्लेषसों, अर्थ फेर जव होय। रसिक अपूरव हौ पिया, वुरो कहत नहिं कोय ॥" अर्थात् कोई नायिका अपने पतिसे कहती है कि हे पिया! तुम ऐसे रसिक हो कि तुम्हारी वरावर कोई रसिक नहीं है और तुम्हें कोई वुरा नहीं कहता है। सीधा अर्थ तौ यह हुआ. परन्तु यहां वक्रोक्तिके कारण अर्थमें यह फेर होता है कि हे पिया! तुम छठे छठाये व्यभिचारी हो सो कोई तुम्हें वुरा न कहता हो सो वात नहीं, अर्थात् सव लोग वुरा कहते हैं ॥ सोही नीचेके उदाहरणमें अर्थ तौ कुछ है और भावमें फेर है. जैसा अंगदने रावणसे कहा "धर्मशीलता तव जग जागी। पावा दरश हमहुँ वड़भागी" इस चौपाईमें सीधा अर्थ तौ प्रकट है परंतु वक्रोक्ति होनेसे यह अर्थ होगा कि तेरी दुष्टता सव जग जानता है, हमाराभी प्रारब्ध फूटा जो तुम्हारी सूरत देखी ॥

वेधा है (सो उनही वचनरूपी तीरोंको) रावण योद्धा अपना प्रतिउत्तर जो मानों सडाँसीके समान है उनसे काटता है. अर्थात् अंगद जो बुरे २ वचन कहता है उन्हें रावण उत्तर देकर खंडन करता जाता है ॥ ४५ ॥

चौ०–जो अस मति पितु खायहु कीसा ❀ कहि अस वचन हँसा दससीसा ॥ १ ॥
पितुहिं खाइ खातेउँ अब तोहीं ❀ अबहीं समुझिपरा कछु मोहीं ॥ २ ॥

हे बन्दर ! जो ऐसी बुद्धि है तभी तौ (तैंने अपने) पिताको खा लिया ऐसे वचन कहकर रावण हँसा ॥ १ ॥ (अंगदने कहा) पिताको तौ खालिया और अब तुझेभी खा लेता परंतु इस समय कुछ मुझे यह समझ पड़ा कि ॥ २ ॥

बालिबिमलजसभाजन जानी ❀ हतौं न तोहिं अधम अभिमानी ॥ ३ ॥
कहु रावन रावन जग केते ❀ मैं निजस्रवन सुने सुनु तेते ॥ ४ ॥

हे नीच अभिमानी ! तू बालिके निर्मल यशका पात्र है, अर्थात् जो तुझे देखते हैं वे यह कहते हैं कि यही रावण बालिकी काँखमें दबाथा इसमें मेरे बापका यश होता है कि तुझसरीखे तौ उसके अंटीमें लगे रहते थे, फिर उसका पराक्रम कितना होगा? यह जानकर तुझे नहीं मारता ॥ ३ ॥ हे रावण ! कह संसारमें कितने रावण हैं ? मैंने अपने कानोंसे सुने हैं उतने सुन ॥ ४ ॥

बलि जीतन इक गयउ पताला ❀ राखा बाँधि सिसुन हयसाला ॥ ५ ॥
खेलहिं बालक मारहिं जाई ❀ दयालागि बलि दीन्ह छुड़ाई ॥ ६ ॥

एक तौ बलिके जीतनेको पातालमें गयाथा सो बालकोंने घुड़सालमें बाँध रक्खा था ॥ ५ ॥ खेलतेहुये बालक जाकर उसे मारने लगे तौ बलिको दया लगी सो छुड़ादिया ॥ ६ ॥

एक बहोरि सहसभुज देखा ❀ धाइ धरा जनु जंतु बिसेखा ॥ ७ ॥
कौतुक लागि भवन लै आवा ❀ सो पुलस्त्यमुनि जाइ छुड़ावा ॥ ८ ॥

फिर एक सहस्रबाहुने देखा तौ दौड़कर ऐसे पकड़ लिया मानों कोई कीड़ा है ॥ ७ ॥ और उसे खेलके लिये (अपने) घर ले आया सो जाकर फिर पुलस्त्य मुनिने छुड़ाया ॥ ८ ॥

दो०–एक कहत मोहिं सकुच अति, रहा बालिकी काँख ॥ ❀
इनमहँ रावन तैं कवन, सत्य कहहु तजि माख ॥ ४६ ॥ ❀

एकको कहतेमें मुझे बड़ी सकुच है जो बालिकी काँखमें रहा था, हे रावण ! क्रोध छोड़कर सत्य कहो इनमेंसे तुम कौनसे हो ? (रावण बोला) ॥ ४६ ॥

चौ०–सुनु सठ सोइ रावन बलसीला ❀ हरगिरि जान जासु भुजलीला ॥ १ ॥
जान उमापति जासु सुराई ❀ पूजे जेहि सिरसुमन चढ़ाई ॥ २ ॥

हे मूर्ख ! सुन. मैं वही बलवान् रावण हूं जिसकी भुजाओंकी लीलाको कैलास पर्वत जानता है॥१॥ और जिसके पराक्रमको महादेव जानते हैं, कि जिनको मस्तकरूपी पुष्प चढ़ा चढ़ाकर पूजा है २

सिरसरोज निजकरन्ह उतारी ❀ पूजेउ अमितबार त्रिपुरारी ॥ ३ ॥
भुजविक्रम जानहिं दिगपाला ❀ सठ अजहूँ जिनके उर साला ॥ ४ ॥

और अपने शिरोंको कमलोंकी तरह अपने हाथोंसे उतार २ कर अनेक बार शंकरकी पूजा की है ॥ ३ ॥ और हे मूर्ख ! मेरी भुजाओंके पराक्रमको दिक्पाल जानते हैं कि जिनके हृदयमें अबतक शूल होरहा है ॥ ४ ॥

जानहिं दिग्गज उरकठिनाई ❀ जब जब भिरेउँ जाइ बरिआई ॥ ५ ॥
जिनके दसन कराल न फूटे ❀ उर लागत मूलकइव टूटे ॥ ६ ॥

और दिशाओंके हाथी मेरे हृदयकी कठिनताको जानते हैं, कि जब २ मैं जाकर उनसे जोरावरी लड़ा ॥ ५ ॥ (तब तब) जिनसे कठिन दाँत जो कभी नहीं टूटते सो मेरे हृदयसे लगतेही मूलीकी भांति टूटगये ॥ ६ ॥

जासु चलत डोलत इमि धरनी ❀ चढ़त मत्तगज जिमि लघु तरनी ॥ ७ ॥
सोइ रावन जगविदित प्रतापी ❀ सुने न स्रवन अलीकप्रलापी ॥ ८ ॥

जिसके चलनेसे पृथ्वी इस प्रकार डिगमिगाती है जैसे मतवाले हाथीके चढ़नेसे छोटी नाव डिगमिगावै ॥ ७ ॥ मैं वही रावण संसारमें विदित और प्रतापी हूं. क्या तैंने कानोंसे नहीं सुना ? झूठी २ डीगें माररहा है ॥ ८ ॥

दो०-तेहि रावनकहँ लघु कहसि, नरकर करसि बखान ॥
रे कपि बर्बर खर्ब खल, तब न जान अब जान ॥ ४७ ॥

उस रावणको तौ छोटा कहता है और बढ़ २ कर मनुष्यकी बातें मारता है, अरे बन्दर ! तू है तौ छोटा पर बड़ा बकवादी और खोटा है. तब नहीं जाना तौ अब तौ जान लिया ॥ ४७ ॥

चौ०-सुनि अंगद सकोप कह बानी ❀ बोलु सँभारि अधम अभिमानी ॥ १ ॥
सहसबाहुभुज गहन अपारा ❀ दहनअनलकुल जासु कुठारा ॥ २ ॥

सुनकर अंगद क्रोधसे यह बात कहने लगे कि, अरे नीच अभिमानी ! सम्हाल कर बोल ॥ १ ॥ जिसका फरसा सहस्रबाहुकी अपार घनी भुजाओंके जलानेको अग्निका पुंज है ॥ २ ॥

जासु परसु सागरखरधारा ❀ बूड़े नृप अगनित बहु बारा ॥ ३ ॥
तासु गर्व जेहि देखत भागा ❀ सो नर किमि दसकंठ अभागा ॥ ४ ॥

और जिसके फरसेरूपी समुद्रकी तीक्ष्णधारमें अनगिनती राजा बहुत बार डूब गये ॥ ३ ॥ उन (परशुराम) का अभिमानभी जिसके देखतेही दूर होगया, हे अभागे रावण ! वह मनुष्य कैसे होसक्ता है४

राम मनुज कस रे सठ बंगा ❀ धन्वी काम नदी पुनि गंगा ॥ ५ ॥
पसु सुरधेनु कलपतरु रूपा ❀ अन्नदान अरु रस कि पियूषा ॥ ६ ॥

अरे शठ ! हे लुच्चे ! रामचन्द्रजी मनुष्य कैसे हैं ? और कामदेव (साधारण) धनुषधारी और गंगाजी (साधारण) नदी कैसे हैं, अर्थात् नहीं हैं. क्योंकि कामने पुष्पोंके धनुषसे त्रिलोकीको वशमें कर लिया और गंगाजीने अपने पवित्र जलसे सगरके पुत्रोंको मुक्ति देदी ॥ ५ ॥ और कामधेनु तौ पशु, कल्पवृक्ष रूख, अन्नका देना दान और अमृत साधारण रस कैसे होसक्ता है ? ॥ ६ ॥

वैनतेय खग अहि सहसानन ❀ चिंतामनि की उपल दसानन ॥ ७ ॥
सुन मतिमंद लोक वैकुंठा ❀ लाभ कि रघुपतिभक्ति अकुंठा ॥ ८ ॥

और हे रावण ! गरुड़ तौ पक्षी, शेषजी सर्प और चिन्तामणि रत्न पत्थर (कैसे हो सक्ता है ?) ॥ ७ ॥ हे मतिमन्द रावण ! सुन, वैकुंठकी तौ अन्यलोकमें और रामचन्द्रजीकी निरंतर भक्तिकी (साधारण) लाभमें कैसे गिनती होसक्ती है ? ॥ ८ ॥

दो०-सेनसहित तव मान मथि, वन उजारि पुर जारि ॥
कस रे सठ हनुमान कपि, गयउ जो तव सुत मारि ॥ ४८ ॥

अरे मूर्ख ! जो सेनासमेत तेरे अभिमानको खंडनकर और वनको उजाड नगरको जलाकर तेरे पुत्रोंको मार गया, वह हनुमान् (साधारण) बन्दर कैसे होसक्ता है ? ॥ ४८ ॥

चौ०-सुनु रावन परिहरि चतुराई ❀ भजसि न कृपासिंधु रघुराई ॥ १ ॥
जो खल भयसि रामकर द्रोही ❀ ब्रह्म रुद्र सक राखि न तोही ॥ २ ॥

हे रावण ! सुन, चतुराईको छोड़कर दयाके समुद्र रामचन्द्रजीको क्यों नहीं भजता ?॥ १ ॥ हे खल ! जो तू रामचन्द्रजीका द्रोही हुआ है तौ तुझे ब्रह्मा और महादेवभी नहीं रख सक्ते ॥ २ ॥

मूढ़ मृषा जनि मारसि गाला ❀ रामवैर होइहि अस हाला ॥ ३ ॥
तव सिरनिकर कपिनके आगे ❀ परिहैं धरनि रामसर लागे ॥ ४ ॥

हे मूर्ख ! वृथाही गाल मत बजावै, रामचन्द्रजीसे वैर करनेसे ऐसा हाल होगा कि ॥ ३ ॥ तेरे शिरोंके समूह रामचन्द्रजीके बाण लगनेसे बन्दरोंके आगे पृथ्वीपर गिरैंगे ॥ ४ ॥

ते तव सिर कंदुक इव नाना ❀ खेलहिं भालु कीस चौगाना ॥ ५ ॥
जबहिं समर कोपिहिं रघुनायक ❀ छुटिहहिं अति कराल बहु सायक ॥ ६ ॥

और रीछ बन्दर उनही तेरे अनेक शिरोंसे गेंदकी भाँति गेंदतड़ी खेलैंगे ॥ ५ ॥ और जब रामचन्द्रजी लड़ाईमें कोपैंगे और बहुत कठिन अनेक बाण छुटैंगे ॥ ६ ॥

तब कि चलिहि अस गाल तुम्हारा ❀ अस विचारि भज राम उदारा ॥ ७ ॥
सुनत वचन रावन परजरा ❀ जरत महानल जनु घृत परा ॥ ८ ॥

तब क्या तेरा ऐसा गाल चलैगा ? सो ऐसे विचारकर उदार रामचन्द्रजीका भजन कर ॥ ७ ॥ वचन सुनतेही रावण ऐसा जल गया मानों जलती हुई अग्निमें घी पड़गया (और बोला) ॥ ८ ॥

दो०–कुंभकरनसम बंधु मम, सुत प्रसिद्ध सक्रारि ॥ ❀
मम बल स्रवन सुनेसि नहिं, जितेउँ चराचर झारि ॥ ४९ ॥ ❀

मेरा कुंभकर्णसा भाई और इन्द्रका शत्रु अर्थात् मेघनाद पुत्र प्रसिद्ध है और मेरा बल तैंने कानोंसे नहीं सुना कि मैंने सब चराचरको जीत लिया ॥ ४९ ॥

चौ०–सठ साखामृगजोरि सहाई ❀ बाँधा सिंधु इहै प्रभुताई ॥ १ ॥
लाँघहिं खग अनेक बारीसा ❀ सूर न होहिं ते सुनु जड़ कीसा ॥ २ ॥

अरे शठ ! बन्दरोंकी सेना इकट्ठी करके समुद्र बांधलिया यही तुम्हारी प्रभुता है न ? ॥ १ ॥ अरे मूर्ख बन्दर ! सुन समुद्रको तौ अनेक पक्षी लांघ जाते हैं, परंतु वे योद्धा नहीं होजाते हैं ॥ २ ॥

ममभुजसागर जल भल पूरा ❀ जहँ बूड़े सुर नर बहु सूरा ॥ ३ ॥
बीस पयोधि अगाध अपारा ❀ को अस बीर जो पावहि पारा ॥ ४ ॥

मेरी भुजारूपी समुद्रमें सुन्दर और पूरा जल भरा हुआ है और जिसमें अनेक देवता, मनुष्य और बड़े २ शूरवीर डूबगये ॥ ३ ॥ सो (मेरे भुजदंडरूपी) बीसों समुद्र ऐसे अपार और गहरे हैं कि ऐसा कौनसा योद्धा है जो (इनका) पार पावे ॥ ४ ॥

दिक्पालनसे नीर भरावा ❀ भूपसुजस खल मोहिं सुनावा ॥ ५ ॥
जोपै समर सुभट तव नाथा ❀ पुनि पुनि कहसि जासु गुनगाथा ॥ ६ ॥

---

(१) **कबित्त**–भ्रात कुंभकर्ण मेघनादसे सपूतपूत महामजबूत मेरे सेना यातुधानकी ।
सागरके अंकमध्य बंक गढ़लंक जहां काहूकी न शंक शूर शत्रुके जुझानकी ॥
एरे सुन अंगद जीते युद्धमें चराचरहू भक्ति सुरशंकरकी शक्ति ये भुजानकी ।
निपट अजानकीसी बात कहै जान कीश कैसे देहुँ जानकी पियारी मेरी जानकी ॥

(२) **कबित्त**–कौन अस वीर जो सहैगो तनु पीर भीर धरि धनुबान जब कानलगि तानि हौं ॥
भूलिजैहैं भानु शशि जान नभ मारग ज्यों रूठि रणभूमिमें अठान ठान ठानि हौं ॥
बरनत भट्ट यही मेरे इक टेक कपि जाहु कढ़ि जीव कही काहूकी न मानि हौं ॥
कहा भयो तापस उलँघ्यौ एक सिंधु आगे मेरे भुज बीस सिंधु लँघै तब जानि हौं ॥

अरे खल! (इन्द्र आदि दश) दिक्पालोंसे तौ मैंने अपने यहां पाणी भरवाया है सो तैंने मुझे राजाओंका यश सुनाया ॥ ५ ॥ जो तेरा स्वामी लड़ाईमें शूरवीर है कि जिसके गुणोंकी कथाको तू बारवार कहता है ॥ ६ ॥

तौ बसीठ पठवा केहि काजा ❀ रिपुसन प्रीति करत नहिं लाजा ॥ ७ ॥
हरगिरिमथन निरखि मम बाहू ❀ पुनि सठ कपि निजप्रभुहिं सराहू ॥ ८ ॥

तौ दूत किसलिये भेजा? वैरीसे प्रीति करनेमें शरम नहीं आती? ॥ ७ ॥ अरे शठ बन्दर! (पहले) कैलासपर्वतके मथनेवाली मेरी भुजाओंको देख फिर अपने स्वामीकी सराहना करियो ॥ ८ ॥

दो०-सूर कवन रावनसरिस, निजकर काटे सीस ॥ ❀
हुलेउँ अनलमहँ बारबहु, हर्षित साखि गिरीस ॥ ५० ॥ ❀

रावणके समान कौनसा योद्धा है जिसने अपने हाथोंसे माथे काट २ कर प्रसन्नतापूर्वक अनेक बार अग्निमें होम दिये कि जिसके साक्षी महादेव हैं ॥ ५० ॥

चौ०-जरत विलोकेउँ जबहिं कपाला ❀ विधिके लिखे अंक निजभाला ॥ १ ॥
नरके कर आपन बध बाँची ❀ हँसेउँ जानि विधिगिरा आसाँची ॥ २ ॥

जब माथोंको जलते हुये मैंने देखा तौ ब्रह्माके लिखे अंक अपने माथेमें वाँचे ॥ १ ॥ सो मनुष्यके हाथोंसे अपना मरना वाँचकर और ब्रह्माकी वाणीको झूँठी समझकर हँसा ॥ २ ॥

सो मन समुझि त्रास नहिं मोरे ❀ लिखा विरंचि जरठ मति भोरे ॥ ३ ॥
आन बीर को सठ मम आगे ❀ पुनि पुनि कहसि लाज परित्यागे ॥ ४ ॥

सो उसे समझकर मेरे मनमें दुःख नहीं है क्योंकि ब्रह्माकी बुढ़ापेमें मति मारी गई है इसलिये लिख दिया है ॥ ३ ॥ अरे शठ! और दूसरा मेरे आगे कौन योद्धा है? जो तू लाजको छोड़कर बार २ कहता है ॥ ४ ॥

कह अंगद सलज्ज जगमाहीं ❀ रावन तव समान कोउ नाहीं ॥ ५ ॥
लाजवंत तव सहज सुभाऊ ❀ निजगुन निजमुख कहसि न काऊ ॥ ६ ॥

अंगदने कहा हे रावण! तेरे समान शरमदार संसारमें कोई नहीं ॥ ५ ॥ शरमदार होना तौ तेरा जन्मसे स्वभाव है. (तैंने) अपने गुण अपने मुखसे कभी नहीं कहे ॥ ६ ॥

सिर अरु सैलकथा चित रहही ❀ ताते बार बीस तैं कहही ॥ ७ ॥
सो भुजबल राखेउ उर घाली ❀ जीतेउ सहसबाहु बलिबाली ॥ ८ ॥

तेरे मनमें माथे और पर्वतहीकी कथा लगी रहती है, अर्थात् मैंने शिर काट २ कर शिवजीको चढ़ाये और कैलास उठालिया, इसीलिये तू उसेही बीस २ बार कहता है ॥ ७ ॥ और उन भुजाओंका बल (क्या तैंने) हृदयमें छिपा रक्खा है कि जिनसे सहस्रबाहु, बलि और वालिको जीता था, अर्थात् उसे क्यों नहीं कहता? ॥ ८ ॥

सुनु मतिमंद देह अब पूरा ❀ काटे सीस न होइहि सूरा ॥ ९ ॥
इंद्रजालिकहँ कहिय न वीरा ❀ काटै निजकर सकल सरीरा ॥ १० ॥

हे मूर्ख! अब सुन देहको पूरा करनेसे अथवा शिर काटनेसे (कोई) योद्धा नहीं होजाता है ॥९॥ इन्द्रजाल करनेवालेको योद्धा नहीं कहते, वह तौ अपने हाथसे अपने सब शरीरको काट डालता है १०

दो०-जरहिं पतंग विमोहबस, भार बहहिं खरवृंद ॥ ❀
ते नहिं सूर कहावहीं, समुझि देख मतिमंद ॥ ५१ ॥ ❀

और अज्ञानके वश पतंग (दियेमें गिरकर) जलजाती है और गधोंके समूह बोझा ढोते हैं (परंतु,) वे योद्धा नहीं कहाते–हे मूर्ख समझ देख ॥ ५१ ॥

चौ०–अब जनि बतबढ़ाव खल करही ❀ सुनु मम वचन मान परिहरही ॥ १ ॥
दसमुख मैं न बसीठी आयउ ❀ अस बिचारि रघुबीर पठायउ ॥ २ ॥

अरे खल ! अब बातोंको मत बढ़ावे और मेरे बचनोंको सुनकर अभिमान छोड़ दे ॥ १ ॥ हे रावण ! मैं दूत बनकर नहीं आया हूं पर रामचन्द्रजीने इस विचारसे मुझे भेजा है ॥ २ ॥

बार बार अस कहेउ कृपाला ❀ नहिं गजारिजस बधे सृगाला ॥ ३ ॥
मनमहँ समुझि वचन प्रभुकेरे ❀ सहेउँ कठोर वचन सठ तेरे ॥ ४ ॥

और कृपानिधान रामचन्द्रजीने बारबार ऐसे कह दिया है कि गीदड़के मारनेमें सिंहका यश नहीं होता ॥३॥ सो हे शठ ! भगवान्के वचनोंको मनमें समझकर मैंने तेरे कठोर वचन सहे हैं॥४॥

नाहित करि मुखभंजन तोरा ❀ लै जातो सीतहिं बरजोरा ॥ ५ ॥
जानेउँ तव बल अधम सुरारी ❀ सूने हरि आनी परनारी ॥ ६ ॥

नहीं तौ तेरा मुख तोड़कर जोराबरी सीताजीको लेजाता ॥ ५ ॥ अरे नीच ! देवताओंके वैरी ! मैंने तेरा बल तौ इसीसे जान लिया कि तू पराई स्त्रीको सूनेमें हर लाया ॥ ६ ॥

तैं निसिचरपति गर्ब बहूता ❀ मैं रघुपतिसेवककर दूता ॥ ७ ॥
जो न रामअपमानहि डरऊँ ❀ तोहिं देखत अस कौतुक करऊँ ॥ ८ ॥

अरे राक्षसराज ! तुझको बड़ा अभिमान है और मैं तौ रामचन्द्रजीके सेवकका दूत हूं ॥ ७ ॥ और जो रामचन्द्रजीके अपमानसे न डरूं तो तेरे देखतेही यह तमाशा करूं कि–॥ ८ ॥

दो०–तोहिं पटकि महि सेन हति, चौपट करि तव गाउँ ॥ ❀
मंदोदरीसमेत सठ, जनकसुतहि लै जाउँ ॥ ५२ ॥ ❀

हे मूर्ख ! तुझे पृथ्वीपर धर मारूं और तेरी सेनाको मारकर और तेरे गाँवको उजाड़कर मंदोदरीसमेत सीताजीको ले जाऊं ॥ ५२ ॥

चौ०–जो अस करउँ तदपि न बड़ाई ❀ मुये बधे कछु नहिं मनुसाई ॥ १ ॥
कौल कामबस कृपन बिमूढा ❀ अति दरिद्र अजसी अति बूढ़ा ॥ २ ॥

सो जो मैं ऐसा करूं तौभी कुछ बड़ाई नहीं है क्योंकि मरेहुयेके मारनेसे कुछ वहादुरी नहीं है ॥ १ ॥ जैसे शराबी, कामी, कंजूस, मूर्ख, वहुत दरिद्री, यशहीन, वहुत बूढ़ा, ॥ २ ॥

सदा रोगबस संतत क्रोधी ❀ रामबिमुख स्रुतिसंतविरोधी ॥ ३ ॥
तनुपोषक निंदक अघखानी ❀ जीवत सवसम चौदह प्रानी ॥ ४ ॥

सदा रोगी, सदा क्रोध करनेवाला, रामचन्द्रजीसे विमुख, देवता, और साधुओंसे शत्रुता करनेवाला ॥ ३ ॥ (अपनेही) शरीरका पालनेवाला, निन्दा करनेवाला और पापोंकी खानि, ये चौदह प्राणी जीतेही हुये मुर्देके समान हैं ॥ ४ ॥

अस विचारि खल बधौं न तोहीं ❀ अब जनि रिसि उपजावसि मोहीं ॥५॥
सुनि सकोप कह निसिचरनाथा ❀ अधर दसन डसि मींजत हाथा ॥ ६ ॥

हे खल ! मैं ऐसा बिचारकर तुझको नहीं मारता (परन्तु) अब तू मुझको क्रोध मत उत्पन्न करावै ॥ ५ ॥ यह सुनकर रावण क्रोधित हो होठोंको दांतोंसे दाबकर और हाथ मींजकर कहने लगा ॥ ६ ॥

रे कपि पोच मरन अब चहसी ❀ छोटे बदन बात बड़ कहसी ॥ ७ ॥
कटु जल्पसि सठ बुधि बल जाके ❀ बल प्रताप बुधि तेज न ताके ॥ ८ ॥

अरे नीचे बन्दर ! अब तू मरना चाहता है जो छोटे मुखसे बड़ी बात कहता है ॥ ७ ॥ अरे मूर्ख ! जिसकी बुद्धि और बलके भरोसे कठोर बकता है उसका बल, प्रताप बुद्धि और तेज तौ कुछभी नहीं है ॥ ८ ॥

दो०–अगुन अमान बिचारि तेहि, पिता दीन्ह बनबास ॥ ❀
सो दुख अरु जुवतीबिरह, पुनि निसिदिन मम त्रास ॥ ५३ ॥❀

क्योंकि उसको गुणरहित और मानहीन विचारकर पिताने वनवास दिया सो एक तौ वह दुःख और दूसरे स्त्रीका वियोग है, और फिर रातदिन मेरा डर लगा रहता है ॥ ५३ ॥

जिनके बलकर गर्व तोहिं, ऐसे मनुज अनेक ॥ ❀
खाहिं निसाचर दिवस निसि, मूढ समुझ तजि टेक ॥ ५४ ॥❀

सो हे मूर्ख ! हठ छोड़कर समझ कि जिनके बलका तुझको अभिमान है ऐसे तौ अनेक मनुष्योंको राक्षस दिन रात खा डालते हैं ॥ ५४ ॥

चौ०–जब तेहिं कीन्ह रामकर निंदा ❀ क्रोधवंत तब भयउ कपिंदा ॥ १ ॥
हरिहरनिंदा सुनहिं जे काना ❀ होइ पाप गोघातसमाना ॥ २ ॥

जब उसने रामचन्द्रजीकी निन्दा की तौ अंगद क्रोधित हुआ ॥ १ ॥ (क्योंकि) जो विष्णु और महादेवकी निन्दा कानोंसे सुनते हैं उनको गौके मारनेकी बराबर पाप होता है ॥ २ ॥

कटकटाइ कपिकुंजर भारी ❀ दोउ भुजदंड तमकि महि मारी ॥ ३ ॥
डोलत धरनि सभासद खसेऊ ❀ चले भागि भय मारुत ग्रसेऊ ॥ ४ ॥

बन्दरोंमें हाथीके समान अंगदने ऐसे बहुत कटकटाकर दोनों भुजदंड तमककर पृथ्वीमें मारे ॥ ३ ॥ सो पृथ्वी डिगमिगाने लगी और सभासद उलटे मुँह गिरपड़े और भयरूपी पवन जो उन्हें लगी सो वे तौ भागने लगे ॥ ४ ॥

गिरत दसानन उठेउ सँभारी ❀ भूतल परे मुकुट षट चारी ॥ ५ ॥
कछु तेहिं लै निजसिरन सँभारे ❀ कछु अंगद प्रभुपास पँवारे ॥ ६ ॥

गिरतेही रावण सम्हालकर उठा (परंतु उसके) दशों मुकुट पृथ्वीपर गिरपड़े ॥ ५ ॥ सो कुछ तौ उसने उठाकर अपने शिरोंपर रख लिये और कुछ अंगदने भगवान्के पास फेंक दिये ॥ ६ ॥

आवत मुकुट देखि कपि भागे ❀ दिनहीं लूक परन बिधि लागे ॥ ७ ॥
कै रावन करि कोप चलाए ❀ कुलिस चारि आवत अति धाए ॥ ८ ॥

सो मुकुटोंको आते हुये देखकर बन्दर दौड़े कि हे विधाता ! क्या दिनमेंही उल्कापात अर्थात् तारे टूट २ कर गिरने लगे ॥ ७ ॥ अथवा रावणने क्रोध करके चार वज्र फेंके हैं जो धड़ाधड़ दौड़ते हुए आ रहे हैं ॥ ८ ॥

कह प्रभु हँसि जनि हृदय डराहू ❀ लूक न असनि केतु नहिं राहू ॥ ९ ॥
ए किरीट दसकंधरकेरे ❀ आवत बालितनयके प्रेरे ॥ १० ॥

(अंगद पैजमेंसे)

कबित्त (१) ऐरे मतिमंद खल बन्दर बकत काह तकत न खोलि चख फुरति भुजानकी ॥
देव नरदेव औ अदेव दिगपाल सब कांपत विलोकि मोहिं गह धनुवानकी ॥
वंदी कवि कान करु मानिकै प्रमान वात जाने नर बानर न बानि अभिमानकी ॥
देह देहौं जानकी औ गेह देहौं जान की औ जान देहौं जानकी न जान देहौं जानकी ॥

भगवान्ने हँसकर कहा मनमें डरो मत. न तौ ये उल्कापात हैं, न वज्र हैं और न राहु केतु हैं ॥ ९ ॥ ये तौ रावणके मुकुट हैं सो अंगदके भेजे हुये आ रहे हैं ॥ १० ॥

दो०–तरकि पवनसुत कर गहे, आनि धरे प्रभुपास ॥ ❀
कौतुक देखहिं भालु कपि, दिनकरसरिस प्रकास ॥ ५५ ॥ ❀

हनूमान्ने कूदकर हाथसे पकड़ लिये और लाकर भगवान्के पास रख दिये तौ सब रीछ बन्दर तमाशा देखने लगे कि जिन (मुकुटों) का प्रकाश सूर्यके समान था ॥ ५५ ॥

चौ०–उहाँ कहत दसकंध रिसाई ❀ धरि मारहु कपि भागि न जाई ॥ १ ॥
इहि बिधि बेगि सुभट सब धावहु ❀ खाहु भालु कपि जहँ तहँ पावहु ॥ २ ॥

वहां रावण क्रोधित होकर कहने लगा कि बन्दरको पकड़कर धर मारो भाग न जावै ॥ १ ॥ और इसी भांति सब सुन्दर योद्धा दौड़ो जहां कहीं रीछ बन्दरोंको पाओ तहां और खा जाओ ॥ २ ॥

मर्कटहीन करहु महि जाई ❀ जियत धरहु तपसी दोउ भाई ॥ ३ ॥
पुनि सकोप बोलेउ जुवराजा ❀ गाल बजावत तोहिं न लाजा ॥ ४ ॥

जाकर पृथ्वीको बन्दरोंसे रहित करदो और दोनों तपसी भाइयोंको जीतेही पकड़ लो ॥ ३ ॥ फिर अंगद क्रोधित होकर बोला कि तुझे गाल बजातेमें शरम नहीं आती ॥ ४ ॥

मरु गरु काटि निलज कुलघाती ❀ बल बिलोकि बिदरति नहिं छाती ॥५॥
रे तियचोर कुमारगगामी ❀ खल मलरासि मंदमति कामी ॥ ६ ॥

अरे बेशरम कुलके घातक, गला काटकर मर जा. मेरे बलको देखकर तेरी छाती नहीं फटती ॥ ५ ॥ अरे स्त्रीके चोर! हे कुमार्गी! हे दुष्ट! हे नरकके टीले! हे मंदबुद्धि और कामी! ॥ ६ ॥

संनिपात जलपसि दुर्बादा ❀ भयसि कालबस खल मनुजादा ॥ ७ ॥
याको फल पावहुगे आगे ❀ बानरभालुचपेटन लागे ॥ ८ ॥

हे दुष्ट मनुष्यभक्षक! क्या तुझे सन्निपात[१] है जो दुर्वचन बक रहा है? या तुझे कालने घेरा है? ॥ ७ ॥ इस बोलनेका फल तौ आगे पावैगा जब रीछ बन्दरोंकी चपेटें लगैंगी ॥ ८ ॥

राम मनुज बोलत अस बानी ❀ गिरहि न तव रसना अभिमानी ॥ ९ ॥
गिरिहै रसना संसय नाहीं ❀ सिरनसमेत समरमहिमाहीं ॥ १० ॥

अरे अभिमानी! रामचन्द्र मनुष्य हैं ऐसी वाणी बोलता है तेरी जीभभी कटकर नहीं गिर पड़ती ॥९॥ सो जीभ गिरैगी तौ सही परंतु मस्तकोंसमेत रणभूमिमें गिरैगी इसमें सन्देह नहीं ॥ १० ॥

सो०–सो नर कस दसकंध, बालि बधेउ जेहि एक सर ॥ ❀
बीसहु लोचन अंध, धिक तव जन्म कुजाति जड़ ॥ ६ ॥ ❀

अरे रावण! जिसने एकही वाणसे वालिको मारा वह मनुष्य कैसे होसक्ता है? तू वीसों नेत्रोंसे अंधा है और हे कुजाति मूर्ख! तेरे जन्मको धिक्कार है ॥ ६ ॥

तव सोनितकी प्यास, तृषित रामसायकनिकर ॥ ❀
तजेउँ तोहिं तेहि आस, कटु जलपसि निसिचर अधम ॥७॥ ❀

अरे नीच राक्षस! रामचन्द्रजीके प्यासे वाणोंके समूह तेरे लोहूके प्यासे हैं सो मैं तौ तुझे इस आशासे छोड़ देता हूं और तू कटुवचन बकताही जाता है ॥ ७ ॥

चौ०–मैं तव दसन तोरिबे लायक ❀ आयसु पै न दीन्ह रघुनायक ॥ १ ॥
असि रिसि होत दसौं मुख तोरौं ❀ लंका गहि समुद्रमहँ बोरौं ॥ २ ॥

---

(१) सन्निपात एक प्रकारका बुखार होता है उसमें मनुष्य अस्तव्यस्त बकने लगता है.

यों तौ मैंही तेरे दाँत तोड़नेलायक था परन्तु रामचन्द्रजीने आज्ञा नहीं दी ॥ १ ॥ और क्रोध तौ ऐसा आता है कि तेरे दशों मुख तोड़ डालूं और लंकाको उठाकर समुद्रमें डुबो दूं ॥ २ ॥

गूलरफलसमान तव लंका ❀ बसहिं मध्य जनु जंतु असंका ॥ ३ ॥
मैं बानर फल खात न बारा ❀ आयसु दीन्ह न राम उदारा ॥ ४ ॥

(क्योंकि) तेरी लंका गूलरके फलके समान है और उसके भीतर राक्षस ऐसे निर्भय रहते हैं जैसे गूलरमें भुनगे ॥ ३ ॥ और मैं बन्दर हूं मुझे फल खातेमें देर नहीं लगती. परन्तु क्या करूं? समर्थ रामचन्द्रजीने आज्ञा नहीं दी ॥ ४ ॥

युक्ति सुनत रावन मुसकाई ❀ मूढ़ सिखेसि कहँ बहुत झुठाई ॥ ५ ॥
बालि कबहुँ अस गाल न मारा ❀ मिलि तपसिन तैं भयसि लबारा ॥ ६ ॥

युक्ति सुनतेही रावण हँसा कि अरे मूर्ख! यह बहुत झूंठ बोलना कहांसे सीख लिया है? ॥५॥ वालिने तौ कभी ऐसा गाल नहीं बजाया परन्तु तू तपस्वियोंसे मिलकर बड़ा मक्कार होगया है (अंगदने कहा) ॥ ६ ॥

साँचहु मैं लबार भुजबीहा ❀ जो न उपारौं तव दसजीहा ॥ ७ ॥
रामप्रताप समुझि कपि कोपा ❀ सभामाँझ प्रन करि पद रोपा ॥ ८ ॥

हे रावण! जो मैं तेरी दशों जीभोंको न उखाड़ूं तौ मैं सचोंही मक्कार बना बनाया हूं ॥ ७ ॥ रामचन्द्रजीके प्रतापको समझकर अंगद क्रोधित हुआ और प्रण करके सभामें पैर जमा दिया (और बोला) ॥ ८ ॥

जो मम चरन सकसि सठ टारी ❀ फिरहिं राम सीतामैं हारी ॥ ९ ॥
सुनहु सुभट सब कह दससीसा ❀ पद गहि धरनि पछारहु कीसा ॥ १० ॥

अरे मूर्ख! जो मेरे पैरको हटा दे तौ रामचन्द्र लौट जायँगे और मैंने जानकी हारी ॥ ९ ॥ रावणने कहा सब योद्धाओ! सुनो, इस वन्दरका पैर पकड़कर पृथ्वीपर पछाड़ दो ॥ १० ॥

इंद्रजीत आदिक बलवाना ❀ हर्षि उठे जहँ तहँ भट नाना ॥ ११ ॥
झपटहिं करि बल विपुल उपाई ❀ पद न टरै बैठहिं सिर नाई ॥ १२ ॥

इन्द्रजीत आदि बलवान् अनेक योद्धा जहां तहां प्रसन्न होकर उठे ॥ ११ ॥ बहुतसे उपाय और बल करके झपटते हैं परन्तु जब पैर नहीं डिगता तब माथा नवाकर बैठ जाते हैं ॥ १२ ॥

पुनि उठि झपटहिं सुरआराती ❀ टरहि न कीसचरन यहि भाँती ॥ १३ ॥
पुरुष कुजोगी जिमि उरगारी ❀ मोहबिपट नहिं सकहिं उपारी ॥ १४ ॥

देवताओंके शत्रु (राक्षस) फिर उठकर झपटते हैं तौभी अंगदका चरण इस प्रकार नहीं टलता ॥ १३ ॥ (कागभुशुंडजी कहते हैं) हे गरुड़! जैसे कुयोगी मनुष्य अज्ञानरूपी वृक्षको नहीं उखाड़ सक्ता ॥ १४ ॥

दो०-भूमि न छाँडत कपिचरन, देखत रिपुमद भाग ॥ ❀
कोटि विघ्न जिमि संतकहँ, तदपि नीति नहिं त्याग ॥ ५६ ॥ ❀

(अंगद पैजनेंसे)

कबित्त (१) भाषै न लबार बार बार रे लबार शठ तेरी शील वीरता न नेक बतलाऊँ मैं ॥
तोहिं सह जेते यातुधान हैं विराजे इत तिनहिं सुनाय पायँरोपि हठ ठाऊँ मैं ॥
कोऊ बलधारी याहि टारै जो पछारे मोहिं आजतें न लेऊँ वन्दि वीरताको नाऊं मैं ॥
जानकी शपथ जानकीशकी शपथ मातु जानकी शपथ जानकीश हार जाऊँ मैं ॥ १ ॥

अथवा अंगदका चरण पृथ्वीको ऐसे नहीं छोड़ता जैसे साधुजन करोड़ विघ्न होनेपरभी नीतिको नहीं छोड़ता. यह देख शत्रुका मद भाग गया ॥ ५६ ॥

चौ०–कपिबल देखि सकल हियहारे ❀ उठा आपु कपिके परचारे ॥ १ ॥
गहत चरन कह बालिकुमारा ❀ मम पद गहे न तोर उबारा ॥ २ ॥

अंगदके बलको देखकर सब हृदयमें हारगये. तब (रावण) आपही अंगदकी परीक्षा करनेको उठा ॥ १ ॥ अंगदने चरण पकड़तेही कहा कि मेरा पैर पकड़नेसे तेरा पीछा नहीं छुटैगा ॥ २ ॥

गहसि न रामचरन सठ जाई ❀ सुनत फिरा मन अतिसकुचाई ॥ ३ ॥
भयउ तेजहत श्री सब गहई ❀ मध्यदिवस जिमि ससि सो अहई ॥ ४ ॥

अरे मूर्ख! जाकर रामचन्द्रजीके चरण क्यों नहीं पकड़ता? (यह) सुनतेही (रावण) मनमें बहुत सकुचाकर लौटा ॥ ३ ॥ तेजहीन होगया और सब छबि ऐसे जाती रही जैसे दुपहरके समय चन्द्रमा (छबिहीन) दीखता है ॥ ४ ॥

सिंहासन बैठा सिर नाई ❀ मानहुँ संपति सकल गँवाई ॥ ५ ॥
जगदाधार प्रनतपति रामा ❀ तासु बिमुख किमि लह बिस्रामा ॥ ६ ॥

और माथा नवाकर सिंहासनपर ऐसे बैठ गया मानों सब संपत्ति खोकर बैठा हो ॥ ५ ॥ संसारके आधार और भक्तोंके स्वामी जो रामचन्द्र हैं उनसे विमुख होकर कैसे आनन्द पासक्ता है? ॥ ६ ॥

उमा रामकर भ्रुकुटिविलासा ❀ होइ बिस्व पुनि पावै नासा ॥ ७ ॥
तृनतें कुलिस कुलिस तृन करहीं ❀ तासु दूत प्रन कहु किमि टरहीं ॥ ८ ॥

(महादेव कहते हैं) हे पार्वती! रामचन्द्रजीकी भौंहके फेरनेसे संसार उत्पन्न होकर फिर नाश होजाता है ॥७॥ और जो तिनकेसे वज्र और वज्रसे तिनका करदें कहो उनके दूतका प्रण कैसे टरै ८

पुनि कपि कहा नीतिविधि नाना ❀ मानत नाहिं काल निअराना ॥ ९ ॥
रिपुमद मथि प्रभुसुजस सुनाये ❀ अस कहि चले बालिनृपजाये ॥ १० ॥

फिर अंगदने अनेक प्रकारकी नीति कही (परन्तु रावण) नहीं मानता. क्योंकि काल पास आगया है ॥ ९ ॥ वैरीके अभिमानको तोड़कर भगवान्का सुन्दर यश सुनाया और यों कहकर अंगद चल दिया कि ॥ १० ॥

अबहीं मुख का करौं बड़ाई ❀ हतिहौं खेत खेलाइ खेलाई ॥ ११ ॥
प्रथमहिं तासु तनय कपि मारा ❀ सो सुनि रावन भयउ दुखारा ॥ १२ ॥
जातुधान अंगदबल देखी ❀ भयव्याकुल सब हृदय विसेखी ॥ १३ ॥

अभी मुखसे तौ क्या बड़ाई करूँ? पर (तुझको) रणभूमिमें खेल खिला खिलाकर मारूँगा ॥ ११ ॥ अंगदने पहलेही उसका पुत्र मारा था सो सुनकर रावण दुखी हुआ ॥ १२ ॥ और सब राक्षसभी अंगदके बलको देखकर मनमें भयके मारे बहुत दुखी हुये ॥ १३ ॥

दो०–रिपुबल धर्षि हर्षि हिय, बालितनय बलपुंज ॥ ❀
सजल नयन तनु पुलकि अति, गहे रामपदकंज ॥ ५७ ॥ ❀

बलके पुंज बालिके पुत्र अंगदने वैरीके बलको मथकर और मनमें प्रसन्न होकर तथा नेत्रोंमें जल भरके और शरीरमें पुलकायमान् होकर रामचन्द्रजीके कमलसमान चरण पकड़ लिये ॥५७॥

साँझ जानि दसकंठ तब, भवन गयउ बिलखाइ ॥ ❀
मंदोदरी अनेकविधि, बहुरि कहा समुझाइ ॥ ५८ ॥ ❀

तव रावण साँझसमय जानकर और दुखी होकर महलोंमें गया तौ मन्दोदरीने फिर अनेक भांति समझाकर कहा ॥ ५८ ॥

चौ०–कंत समुझि मन तजहु कुमतिही ❀ सोह न समर तुमहिं रघुपतिही ॥ १ ॥
रामअनुज धनुरेख खँचाई ❀ सो नहिं लाँघेहु अस मनुसाई ॥ २ ॥

हे पति! मनमें समझकर कुबुद्धिको छोड़ दो, तुमको रामचन्द्रजीसे लड़ाई नहीं फबती ॥ १ ॥ (क्योंकि) लक्ष्मणजीने जो धनुषकी रेखा (सीताजीके चारों ओर) खींच दीथी सोभी तौ तुमसे नहीं उलाँघी गई ऐसी तौ (तुम्हारी) वीरता है ॥ २ ॥

पिय तेहिते जीतब संग्रामा ❀ जाके दूतनके अस कामा ॥ ३ ॥
कौतुक सिंधु लाँघि तव लंका ❀ आयउ कपिकेसरी असंका ॥ ४ ॥

हे पति! क्या उसीसे लड़ाईमें जीतोगे कि जिसके दूतोंके ऐसे काम हैं ॥ ३ ॥ जो वन्दरोंमें सिंहरूप (हनूमान्) खेलहीसे समुद्रको उलाँघकर तुम्हारी लंकामें निडर चला आया ॥ ४ ॥

रखवारे हति बिपिन उजारा ❀ देखत तुमहिं अक्ष जिन्ह मारा ॥ ५ ॥
जारि नगर जेइ कीन्हेसि छारा ❀ कहाँ रहा बलगर्व तुम्हारा ॥ ६ ॥

और रखवालोंको मारकर वन उजाड़ दिया और तुम्हारे देखतेही जिसने अक्षयकुमारको मारा ॥५॥ और जिसने नगरको जलाकर राख कर डाला तव तुम्हारे बलका गर्व कहाँ रहा था? ॥ ६ ॥

अब पति मृषा गाल जनि मारहु ❀ मोर कहा कछु हृदय बिचारहु ॥ ७ ॥
पति रघुपतिहिं नृपति जनि जानहु ❀ अगजगनाथ अतुलबल मानहु ॥ ८ ॥

हे पति! अब वृथाही गाल मत मारो, मेरे कहनेको कुछ हृदयमें बिचारो ॥ ७ ॥ हे पति! रामचन्द्रजीको राजा मत जानो (किंतु) चराचरके स्वामी और अतुल बलवान् जानो ॥ ८ ॥

बानप्रताप जान मारीचा ❀ तासु कहा नहिं मानेहु नीचा ॥ ९ ॥
जनकसभा अगनित महिपाला ❀ रहेउ तहाँ तुम गर्वबिसाला ॥ १० ॥

उनके बाणके प्रतापको मारीच जानता था उसका कहनाभी (तुमने) नीचतासे नहीं माना ॥९॥ (देखो) जनककी सभामें अनगिनती राजा थे वहां तुमभी तौ थे और तुम्हें घमंडभी बड़ा भारीथा ॥१०॥

भंजि धनुष जानकी बिवाही ❀ तब संग्राम जितेहु नहिं ताही ॥ ११ ॥
सुरपतिसुत जाना बल थोरा ❀ राखा जियत आँखि इक फोरा ॥ १२ ॥
सूर्पनखाकी गति तुम देखी ❀ तदपि हृदय नहिं लाज विसेखी ॥१३॥

सो धनुष तोड़कर सीताजी ब्याहीं तव तुमने उनको लड़ाईमें नहीं जीता ॥ ११ ॥ और इन्द्रके पुत्र जयंतने उन्हें थोड़ा बलवान् जानाथा सो (उन्होंने) एक आंख फोड़कर जीता रहने दिया ॥१२॥ और शूर्पणखाकी गति तुमने देखी ही थी तौभी हृदयमें अधिक लाज नहीं आती ॥१३॥

(अंगद पैजमेंसे)

सवैया (१) जैसी कुबुद्धि ठई उरमें अरु जैसे जुड़े सब संगी सलाहक ॥
श्रीरघुवीरके तीरसमीरमें ते उड़ि हैं सब जैसे बलाहक ॥
रामके रोष महानलमें जलजैहो पतंगसे नाह अनाहक ॥
जानकी देहु तौ जानकी खैर नहीं यह जानकी जानकी गाहक ॥ १ ॥

कबित्त (२) जादिनते आय पाँय धऱ्यो है अशोकबाग लागी होन छीन नित्त सेना यातुधानकी ॥
अक्षयकुमार मऱ्यो नगर तमाम जऱ्यो गये गिरि गर्भ सुन हांक हनुमानकी ॥
अंगदने प्रण कऱ्यो काहूते न पांय टऱ्यो तदपि न छांड़ौ बोलि बात अभिमानकी ॥
जानी पति जानकी निसानी नाश जानकी या जानकी न लाये गहि लाये पाशि जानकी ॥१॥

दो०-बधि बिराध खरदूषनहिं, लीला हतेउ कबंध ॥
बालि एक सर मारेउ, तेहि नर कह दसकंध ॥ ५९ ॥

हे रावण ! जिन्होंने विराध और खर दूषणको मारकर कबंधको लीलाहीसे मारा और बालिको एकही बाणसे मारा उनको मनुष्य कहते हो ॥ ५९ ॥

चौ०-जेहिं जलनाथ बँधायउ हेला ❀ उतरेउ कपिदलसहित सुबेला ॥ १ ॥
कारुनीक दिनकरकुलकेतू ❀ दूत पठायउ तव हितहेतू ॥ २ ॥

और जिन्होंने लीलाहीसे समुद्रको बाँधा वेही बन्दरोंकी सेनासमेत सुवेल पर्वतपर उतरे हैं ॥ १ ॥ (और उनही) दयाशील, सूर्यवंशके ध्वजारूप रामचन्द्रजीने तुम्हारे भलेके लिये दूत भेजा था॥२॥

सभामाँझ जेइँ तव बल मथा ❀ करिबरूथमहँ मृगपति यथा ॥ ३ ॥
अंगद हनुमत अनुचर जाके ❀ रनबाँकुरे बीर अतिबाँके ॥ ४ ॥

जिसने सभाके बीचमें तुम्हारे अभिमानका खंडन ऐसे किया जैसे हाथियोंके झुंडमें सिंह करता हो ॥३॥ लड़ाईमें बिकट और बड़े बाँके योद्धा अंगद और हनूमान जिनके सेवक हैं ॥ ४ ॥

तेहिकहँ पिय पुनि पुनि नर कहहू ❀ सुधा मान ममता मद बहहू ॥ ५ ॥
अहह कंत कृत रामबिरोधा ❀ कालबिबस मन होय न बोधा ॥ ६ ॥

हे पति ! उनको बार २ मनुष्य कहते हो, ममता और मदको अमृत मानकर उसमें वहते हो ॥५॥ हा स्वामी ! (तुमने) रामचन्द्रजीसे विरोध किया सो कालके वश मनमें ज्ञान नहीं होता ॥ ६ ॥

काल दंड गहि काहु न मारा ❀ हरै धर्म बल बुद्धि बिचारा ॥ ७ ॥
निकट काल जेहि आवत साँई ❀ तेहि भ्रम होइ तुम्हारिहि नाँई ॥ ८ ॥

कालने किसीको लकड़ी पकड़कर तौ माराही नहीं है (उसका तौ यही मारना है कि जिसको मारा चाहता है उसके) वह धर्म, बल, बुद्धि और विचारको हर लेता है ॥ ७ ॥ और हे स्वामी ! काल जिसके पास आ जाता है उसको आपहीकी भाँति भ्रम हो जाता है ॥ ८ ॥

दो०-दुइ सुत मारेउ दहेउ पुर, अजहूँ परतिय देहु ॥
कृपासिंधु रघुबीर भजि, नाथ बिमल जस लेहु ॥ ६० ॥

हे नाथ ! (तुम्हारे) दो पुत्र मारे और नगर जलाया सो अबभी पराई स्त्रीको देदो और दयाके समुद्र रामचन्द्रजीका भजन करके निर्मल यश प्राप्त करो ॥ ६० ॥

चौ०-नारिवचन सुनि बिसिखसमाना ❀ सभा गयउ उठि होत बिहाना ॥ १ ॥
बैठा जाइ सिंहासन फूली ❀ अतिअभिमान त्रास गा भूली ॥ २ ॥

स्त्रीके वचन बाणसमान सुनकर सबेरा होतेही उठकर सभामें गया ॥ १ ॥ और सिंहासनपर फूलकर जा बैठा और बड़े अभिमानसे दुःख भूलगया ॥ २ ॥

इहाँ राम अंगदहिं बुलावा ❀ आइ चरनपंकज सिर नावा ॥ ३ ॥
अतिआदर समीप बैठारी ❀ बोले बिहँसि कृपालु खरारी ॥ ४ ॥

यहां रामचन्द्रजीने अंगदको बुलाया तौ (उसने) आकर कमलसमान चरणोंको माथा नवाया ॥३॥ और बहुत आदरसे पास बिठलाकर दयानिधान खरदैत्यके शत्रु (भगवान्) हँसकर बोले ॥४॥

बालितनय अतिकौतुक मोहीं ❀ तात सत्य कहु पूछौं तोहीं ॥ ५ ॥
रावन जातुधानकुलटीका ❀ भुजबल अतुल जासु जग लीका ॥ ६ ॥

हे अंगद! मुझे बड़ा अचरज है सो हे प्यारे! सची २ कह मैं तुझसे पूछता हूं कि ॥ ५ ॥ रावण राक्षसोंके वंशका शिरमौर है और संसारमें जिसकी भुजाओंका बल अतुल गिना गया है ॥६॥

तासु मुकुट तुम चारि चलाए ❀ कहहु तात कवनीविधि पाए ॥ ७ ॥
कहा बालिसुत सुनहु खरारी ❀ मुकुट न होइँ भूपगुन चारी ॥ ८ ॥

उसके चार मुकुट तुमने भेजे सो हे प्यारे! कहो किस प्रकार तुमको मिले? ॥ ७ ॥ अंगदने कहा हे भगवन्! सुनो वे मुकुट नहीं थे वे तौ राजाके चार गुण थे ॥ ८ ॥

साम दाम अरु दंड बिभेदा ❀ नृपउर बसहिं नाथ कह बेदा ॥ ९ ॥
नीति धर्मके चरन सुहाए ❀ अस जिय जानि नाथपहँ आए ॥ १० ॥

हे नाथ! वेद कहते हैं कि साम, दाम, दंड भेद, (ये चारोंगुण) राजाके हृदयमें रहते हैं ॥ ९ ॥ यह जानकर ये नीति और धर्मके सुन्दर चरण स्वामीके पास आये हैं ॥ १० ॥

दो०–धर्महीन प्रभुपदबिमुख, कालबिबस दससीस ॥ ❀
आए गुन तजि रावनहिं, सुनहु कोसलाधीस ॥ ६१ ॥ ❀

हे अयोध्यानाथ! सुनो. रावण धर्मरहित आपके चरणोंसे विमुख और कालके वश है सो वे गुण रावणको छोड़कर आये हैं ॥ ६१ ॥

परमचतुरता स्रवन सुनि, बिहँसे राम उदार ॥ ❀
समाचार तब सब कहे, गढ़के बालिकुमार ॥ ६२ ॥ ❀

उदार रामचन्द्रजी (अंगदकी) बहुतसी चतुराईको कानोंसे सुनकर हँसे. तब अंगदने लंका गढ़के सब समाचार कहे ॥ ६२ ॥

चौ०–रिपुके समाचार जब पाए ❀ राम सचिव सब निकट बुलाए ॥ १ ॥
लंका बंका चारि दुआरा ❀ केहिबिधि लागिय करहु विचारा ॥ २ ॥

जब रामचन्द्रजीने वैरीके समाचार पाये तौ सब मंत्री पास बुला लिये (और बोले) ॥ १ ॥ लंकाके चार बाँके दर्वाजे हैं सो किस प्रकार लाँघने चाहियें यह विचार करो ॥ २ ॥

तब कपीस ऋक्षेस बिभीषन ❀ सुमिरि हृदय दिनकरकुलभूषन ॥ ३ ॥
करि बिचार तिन्ह मंत्र दृढ़ावा ❀ चारि अनी कपिकटक बनावा ॥ ४ ॥

तब सुग्रीव, जाम्ववंत, और बिभीषणने मनमें रामचन्द्रजीका स्मरण किया ॥ ३ ॥ और विचार करके उन्होंने पक्की सलाह करी और वन्दरोंके कटककी चार सेना बनाई ॥ ४ ॥

जथाजोग्य सेनापति कीन्हे ❀ जूथप सकल बोलि तिन्ह लीन्हे ॥ ५ ॥
प्रभुप्रताप सब कहि समुझाये ❀ सिंहनाद करि सब कपि धाये ॥ ६ ॥

यथायोग्य अर्थात् लंकाके जिस द्वारका रक्षक जैसा बली था वैसाही सेनापति करके सब यूथपतियोंको उन्होंने बुला लिया ॥ ५ ॥ और भगवानूका प्रताप कहकर सबको समझाया तौ सब बन्दर सिंहकासा शब्द करके दौड़े ॥ ६ ॥

हर्षित रामचरन सिर नावैं ❀ गहि गिरिसिखर वीर सब धावैं ॥ ७ ॥
गर्जहिं तर्जहिं भालु कपीसा ❀ जय रघुवीर कोसलाधीसा ॥ ८ ॥

प्रसन्न होते हुये रामचन्द्रजीके चरणोंको माथा नवाते हैं और सब योद्धा पर्वतोंके शिखर पकड़ २ कर दौड़ते हैं ॥ ७ ॥ रीछ वन्दर गर्जते और तर्जते हैं और अयोध्याके राजा रामचन्द्रजीकी जय होय ऐसे कहते हैं ॥ ८ ॥

जानत परम दुर्ग गढ़ लंका ❀ प्रभुप्रताप कपि चले असंका ॥ ९ ॥
घटाटोप करि चहुँदिसि घेरी ❀ मुखहिं निसान भजावहिं भेरी ॥ १० ॥

बन्दर लंकाके गढ़को बड़ा कठिन तौ जानते हैं परंतु भगवान्के प्रतापसे निर्भय चले ॥ ९ ॥ घटाटोप होकर चारों ओरसे (लंका) घेर ली और मुखसेही बाजे और भेरीके शब्द बजाते हैं ॥१०॥

दो०–जयति राम भ्रातासहित, जय कपीस सुग्रीव ॥
गर्जे केहरिनाद कपि, भालु महाबलसीव ॥ ६३ ॥

और बड़े बलकी सीमा रीछ और बन्दर सिंहकासा शब्द करके गर्जे (और कहने लगे कि) भाई लक्ष्मणसमेत रामचन्द्रजीकी जय हो, और बानरराज सुग्रीवकी जय हो ॥ ६३ ॥

चौ०–लंका भयउ कोलाहल भारी ❀ सुनेउ दसानन अतिहंकारी ॥ १ ॥
देखहु बनरन केरि ढिठाई ❀ बिहँसि निसाचरसेन बुलाई ॥ २ ॥

जब लंकामें बड़ा कोलाहल मचा और रावणने बड़ी हंकार सुनी ॥ १ ॥ तौ हँसकर राक्षसोंकी सेना बुलाई कि बन्दरोंकी ढीठता तो देखो ॥ २ ॥

आये कीस कालके प्रेरे ❀ छुधावंत रजनीचर मेरे ॥ ३ ॥
अस कहि अट्टहास सठ कीन्हा ❀ गृह बैठे अहार बिधि दीन्हा ॥ ४ ॥

ये बन्दर कालके भेजे हुये आये हैं और मेरे राक्षस भूखे हैं ॥ ३ ॥ ऐसे कहकर मूर्ख(रावण)-ने अट्टहास किया अर्थात् खिलखिलाकर हँसा कि घर बैठेही ब्रह्माने भोजन दिया ॥ ४ ॥

सुभट सकल चारिहुँ दिसि जाहू ❀ धरि धरि भालु कीस सब खाहू ॥ ५ ॥
उमा रावनहिं अस अभिमाना ❀ जिमि टिट्टिभ पग सुतै उताना ॥ ६ ॥

अरे सब सुन्दर योद्धाओ! (तुम) चारों ओरको जाओ और सब रीछ बन्दरोंको पकड़ २ कर खा जाओ ॥ ५ ॥ (महादेव कहते हैं) हे पार्वती! रावणको ऐसा अभिमान है जैसे पोदना (अपने) पैरोंको ऊंचे करके सोता है, अर्थात् आकाश गिरैगा तौ पैरोंको रोक दूंगा ॥ ६ ॥

चले निसाचर आयसु माँगी ❀ गहि कर भिंदिपाल बर साँगी ॥ ७ ॥
तोमर मुद्गर परिघ प्रचंडा ❀ सूल कृपानु परसु गिरिखंडा ॥ ८ ॥

राक्षस आज्ञा मांगकर हाथमें भिंदिपाल (हथियार) सुन्दर साँगी ॥ ७ ॥ तोमर, मुद्गर, परिघ, प्रचंड त्रिशूल, तलवार, फरसा, और पहाड़ोंके टौल ले लेकर चले ॥ ८ ॥

जिमि अरुनोपलनिकर निहारी ❀ धावहिं खग सठ मांसअहारी ॥ ९ ॥
चोंचभंग दुख तिनहिं न सूझा ❀ तिमि धाये मनुजाद अबूझा ॥ १० ॥

और जैसे लाल पत्थरके समूहोंको देखकर मांस खानेवाले मूर्ख पक्षी (मांस जानकर) दौड़ते हैं ॥ ९ ॥ और उनकों चोंच टूट जानेका दुःख नहीं सूझता ऐसेही वे मूर्ख राक्षस दौड़े ॥ १० ॥

दो०–नानायुध सर चाप धरि, जातुधान बर बीर ॥
कोट कँगूरन चढ़ि गये, कोटि कोटि रनधीर ॥ ६४ ॥

अनेक हथियार और धनुषबाण धारण करके कोटके एक एक कँगूरेपर करोड़ों २ शूरवीर योद्धा राक्षस चढ़गये ॥ ६४ ॥

चौ०–कोटकँगूरन सोहहिं कैसे ❀ मेरुसृंगपर जनु घन जैसे ॥ १ ॥
बाजहिं ढोल निसान जुझाऊ ❀ सुनि सुनि सुभटनके मन चाऊ ॥ २ ॥

सुवर्णके कोट कँगूरोंपर काले २ राक्षस कैसे शोभायमान् लगते हैं जैसे सुमेरु (पर्वत) के शिखरपर बादल छाये हों ॥ १ ॥ ढोल और जुझाऊ बाजे बजते हैं (जिनको) सुन २ कर सुन्दर योद्धाओंके मनमें चाव होता है ॥ २ ॥

बाजहिं भेरि नफीरि अपारा ❀ सुनि कादरउर होइ दरारा ॥ ३ ॥
देखि न जाँइ कपिनके ठट्टा ❀ अति बिसाल तनु भालु सुभट्टा ॥ ४ ॥

अपार भेरी और नफीरी जो बजती हैं उनको सुनकर काहिलोंके हृदयमें दरारें होती हैं अर्थात् काहिलोंके हृदय फटे जाते हैं ॥ ३ ॥ योद्धा बन्दरोंके ठट्ट और बड़े लंबे २ चोड़े २ शरीरवाले सुन्दर रीछ देखे नहीं जाते ॥ ४ ॥

धावहिं गिनहिं न औघट घाटा ❀ पर्वत फोरि करहिं गहि बाटा ॥ ५ ॥
कटकटाइ कोटिन भट गर्जहिं ❀ दसनन ओंठ काटि अति तर्जहिं ॥ ६ ॥

धावा किये घुसेही जाते हैं औघट घाट अर्थात् (अच्छे बुरे मार्ग) को नहीं गिनते और (जहां मार्ग नहीं मिलता तहां) पर्वतोंको तोड़ २ कर मार्ग बना लेते हैं ॥ ५ ॥ करोड़ों योद्धा कटकटाते और गर्जते हैं और होठोंको दांतोंसे चबा २ कर बहुत उछलते कूदते हैं ॥ ६ ॥

उत रावन इत रामदुहाई ❀ जयति जयति करि परी लराई ॥ ७ ॥
निसिचर सिखरसमूह ढहावहिं ❀ कूदि धरहिं कपि फेरि चलावहिं ॥ ८ ॥

उधर (लंकामें) रावणकी और इधर रामचन्द्रजीकी दुहाई और जय २ कहकर लड़ाई डट गई ॥ ७ ॥ राक्षस जो पर्वतोंके शिखरोंके समूहोंको (ऊपरसे) ढहाते हैं उनको बन्दर कूद २ कर ले लेते हैं और उन्हीं शिखरोंको फिर चलाते हैं ॥ ८ ॥

छं०-धरि कुधर खंड प्रचंड मर्कट भालु गढ़पर डारहीं । ❀
झपटहिं चरण गहि पटकि महिमहँ बारबार प्रचारहीं ॥ ❀
अतितरुण तरल प्रताप तर्जहिं तमकि गढ़पर चढ़ि गये । ❀
कपि भालु चढ़ि मंदिरन जहँ तहँ रामजस गावत भये ॥१॥ ❀

बड़े भयंकर रीछ बन्दर पर्वतोंके टुकड़ोंको लेकर (लंका) गढ़पर फेंकते हैं और झपटकर (राक्षसोंके) पैर पकड़ २ कर पृथ्वीमें गिरा २ कर बार २ ललकारते हैं । बड़े २ जवान चंचल और प्रतापी बानर तथा रीछ क्रोध करके गढ़पर चढ़गये और जहां तहां महलोंपर चढ़कर रामचन्द्रजीका यश गाने लगे ॥ १ ॥

दो०-एक एक निसिचर गहि, पुनि कपि चले पराइ ॥ ❀
ऊपर आपुन तर असुर, गिरहिं धरनिपर आइ ॥ ६५ ॥ ❀

एक २ राक्षसको पकड़ २ कर फिर बन्दर (कोट कँगूरोंसे नीचे) कूदे तौ ऊपर आप और नीचे राक्षस (इसभाँति) पृथ्वीपर आ पड़ते हैं ॥ ६५ ॥

चौ०-रामप्रतापप्रबल कपिजूथा ❀ मर्दहिं निसिचरसुभटबरूथा ॥ १ ॥
चढ़े दुर्ग पुनि जहँ तहँ वानर ❀ जय रघुवीरप्रतापदिवाकर ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीके भारी प्रतापसे बन्दरोंके समूह राक्षसोंके सुन्दर योद्धाओंके समूहको पिचलने लगे ॥१॥ फिर वानर किलेपर जहां तहां चढ़गये और रामचन्द्रजीके प्रतापरूपी सूर्यकी जय कहने लगे ॥२॥

चले निसाचरनिकर पराई ❀ प्रबल पवन जिमि घनसमुदाई ॥ ३ ॥
हाहाकार भयउ पुर भारी ❀ रोवहिं आरत बालक नारी ॥ ४ ॥

(इन्हैं देख) राक्षसोंके समूह ऐसे भाग चले जैसे तेज हवासे बादलोंके समूह उड़ जाते हैं ॥ ३ ॥ नगरमें बड़ा हाहाकार मचगया; बालक और स्त्री दुखी हो रोने लगे ॥ ४ ॥

सब मिलि देहिं रावनहिं गारी ❀ राज करत जेइँ मृत्यु हँकारी ॥ ५ ॥
निजदल बिचल सुना जब काना ❀ फिरे सुभट लंकेस रिसाना ॥ ६ ॥

सब मिलकर रावणको गाली देते हैं, जिसने राज्य करते हुये मृत्युको बुलालिया ॥ ५ ॥ जब अपनी सेना तीन तेरह होगई और कानोंसे सुनलिया कि बड़े २ योद्धा लौटआये तब रावण बड़ा क्रोधित हुआ ६

जो रणविमुख फिरा मैं जाना ❀ तेहि मारिहौं कराल कृपाना ॥ ७ ॥
सर्वस खाइ भोग करि नाना ❀ समरभूमि भा दुर्लभ प्राना ॥ ८ ॥

(रावणने कहा) जो मैंने जाना कि यह लड़ाईसे पीठ देकर भागा है तौ उसे कठिन तलवारसे मारूंगा ॥ ७ ॥ मेरा सर्वस्व खाकर अनेक आनन्द भोगे और अब रणभूमिमें प्राण प्यारे होगये ॥ ८ ॥

उग्र वचन सुनि सकल डराने ❀ फिरे क्रोध करि सुभट लजाने ॥ ९ ॥
सन्मुख मरण वीरकी सोभा ❀ तब तिन तजा प्रानकर लोभा ॥ १० ॥

ऐसे कठोर वचन सुनकर सब डरगये और बाँके योद्धा लज्जित होकर और क्रोध करके लौटे ॥ ९ ॥ और (जब यह शोच लिया कि लड़ाईमें) सन्मुख मरनाही शूरवीरोंकी शोभा है तब उन्होने प्राणोंका लोभ छोड़दिया ॥ १० ॥

दो०-बहु आयुध धरि धरि सुभट, भिरहिं प्रचारि प्रचारि ॥ ❀
कीन्हे व्याकुल भालु कपि, परिघ प्रचण्डनि मारि ॥ ६६ ॥ ❀

बहुतसे हथियारोंको धारण कर सुन्दर योद्धा ललकार २ कर भिड़ने लगे और भारी २ मुद्गरोंसे मार २ कर रीछ बन्दर व्याकुल कर दिये ॥ ६६ ॥

चौ०-भयआतुर कपि भागन लागे ❀ जद्यपि उमा जीतिहैं आगे ॥ १ ॥
कोउ कह कहँ अंगद हनुमंता ❀ कहँ नल नील द्विबिद बलवंता ॥ २ ॥

(महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! यद्यपि पीछेसे जीतैंगे (पर इससमय तौ) बन्दर भयसे दुखी होकर भागने लगे ॥ १ ॥ कोई कहता है अंगद कहां है? कोई कहता है हनूमान् कहां है? कोई कहता है बलवान् नल, नील और द्विविद कहां हैं ? ॥ २ ॥

निजदल बिचल सुना हनुमाना ❀ पश्चिमद्वार रहा बलवाना ॥ ३ ॥
मेघनाद तहँ करै लराई ❀ टूट न द्वार परम कठिनाई ॥ ४ ॥

महावीर हनूमान् जो पश्चिमके दर्वाजेपर थे उन्होंने अपनी सेनाको सुना कि भाग चली ॥ ३ ॥ और यहां मेघनादसे लड़ाई ठन रही थी और द्वार नहीं टूटता था सो बड़ी कठिनाई हुई ॥ ४ ॥

पवनतनय मन भा अति क्रोधा ❀ गर्जेउ प्रलयकालसम योधा ॥ ५ ॥
कूदि लंकगढ़ऊपर आवा ❀ गहि गिरि मेघनादपर धावा ॥ ६ ॥

तब हनूमान्के मनमें बड़ा क्रोध हुआ और महावीर प्रलयकालके समान गर्जे ॥ ५ ॥ और कूद कर लंकागढ़के ऊपर चढ़गये और पर्वतको उठाकर मेघनादपर दौड़े ॥ ६ ॥

भंजेउ रथ सारथी निपाता ❀ तासु हृदयमहँ मारेउ लाता ॥ ७ ॥
दूसर सूत बिकल तेहिं जाना ❀ स्यंदन घालि तुरत घर आना ॥ ८ ॥

और उसका रथ तोड़कर सारथीको गिरा दिया और उसके हृदयमें लात मारी ॥ ७ ॥ सोही दूसरे सारथीने उसको व्याकुल जाना और रथमें डालकर तुरत घरको ले आया ॥ ८ ॥

दो०-अंगद सुनेउ कि पवनसुत, गढ़पर गयउ अकेल ॥ ❀
समरबांकुरा बालिसुत, तरकि चढ़ेउ करि खेल ॥ ६७ ॥ ❀

अंगदने सुना कि हनूमान् अकेलेही गढ़पर गये हैं सो रणबांकुरा अंगदभी खेलसे उछलकर चढ़गया ॥ ६७ ॥

चौ०-जुद्ध विरुद्ध क्रुद्ध दोउ बंदर ❀ रामप्रताप सुमिरि उरअंतर ॥ १ ॥
रावनभवन चढ़े दोउ धाई ❀ करहिं कोसलाधीसदुहाई ॥ २ ॥

और दोनों बन्दर क्रोधित होकर और रामके प्रतापको हृदयमें स्मरण कर लड़ाईमें जूझने लगे ॥ १ ॥ फिर दोनों दौड़कर रावणके महलपर चढ़गये और अयोध्याके राजा (रामचन्द्रजी) की दुहाई मचाने लगे ॥ २ ॥

कलससहित गहि भवन ढहावैं ❀ देखि निसाचर अतिभय पावैं ॥ ३ ॥
नारिबृंद कर पीटहिं छाती ❀ अब दोउ कपि आये उतपाती ॥ ४ ॥

कलशसमेत पकड़ २ कर महलोंको गिराते देख राक्षस बड़े डरने लगे ॥३॥ बहुतसी स्त्रियां हाथोंसे छाती पीटने लिगीं (और कहने लगी) कि अब दोनों उतपाती बन्दर फिर आन पहुँचे ॥४॥

कपिलीला करि सबहिं डरावहिं ❀ रामचंद्रकर सुजस सुनावहिं ॥ ५ ॥
पुनि कर गहि कंचनकर खंभा ❀ करन लगे उतपातअरंभा ॥ ६ ॥

बन्दरखेल कर करके सबको डराते हैं और रामचन्द्रजीका सुन्दर यश सुनाते हैं ॥ ५ ॥ फिर सुवर्णके खंभोंको हाथोंसे पकड़कर उत्पात करना आरंभ किया ॥ ६ ॥

कूदि परे रिपुकटकमँझारी ❀ लागे मर्दन भुजबल भारी ॥ ७ ॥
काहुहिं लात चपेटन केहू ❀ भजेहु न रामहिं सो फल लेहू ॥ ८ ॥

वैरीके कटकमें कूद पड़े और भुजाओंके बड़े बलसे (राक्षसोंको) मलने लगे ॥ ७ ॥ किसके लात, किसके चपेट मारने लगे (और कहने लगे कि)रामचन्द्रजीको नहीं भजा सो उसका फल भोगो ॥ ८ ॥

दो०-एक एकसन मर्दहिं, तोरि चलावहिं मुंड ॥ ❀
रावनआगे परहिं ते, जनु फूटहिं दधिकुंड ॥ ६८ ॥ ❀

एक एकसे भिड़कर और उनके शिरोंको तोड़ २ कर फेंक देते हैं तौ वे रावणके आगे ऐसे जा गिरते है मानों दहीके कुंडे फूटते हैं ॥ ६८ ॥

चौ०-महा महा मुखिया जे पावहिं ❀ ते पद गहि प्रभुपास चलावहिं ॥ १ ॥
कहहिं बिभीषन तिनके नामा ❀ देहिं राम तिन्हकों निजधामा ॥ २ ॥

जो बड़े २ मुखिया मिलते हैं उनको पैर पकड़ २ कर भगवान्के पास फेंक देते हैं ॥१॥ बिभीषण उनकें नाम बताते जाते हैं और रामचन्द्रजी उनको अपना धाम कहिये वैकुंठ देते जाते हैं ॥ २॥

खल मनुजाद द्विजामिषभोगी ❀ पावहिं गति जो याचत योगी ॥ ३ ॥
उमा राम मृदुचित करुनाकर ❀ वैरभाव मोहिं सुमिरत निसिचर ॥ ४ ॥

मनुष्य और ब्राह्मणोंके मांस खानेवाले दुष्ट उस गतिको पाते हैं जिसे योगीश्वर मांगते हैं ॥ ३ ॥ (महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! रामचन्द्रजी कोमल स्वभाव और करुणाके समुद्र हैं (सो विचारते हैं कि) वैरभावहीसे राक्षस मेरा स्मरण तो करते हैं ॥ ४ ॥

देहिं परमगति अस जिय जानी ❀ को कृपालु अस अहै भवानी ॥ ५ ॥
जे अस प्रभु न भजहिं भ्रमत्यागी ❀ ते मतिमंद सो परम अभागी ॥ ६ ॥

हे पार्वती ! मनमें ऐसे जानकर उनको परमगति देते हैं. भला ऐसा दया करनेवाला और कौन है ? ॥५॥ जो ऐसे भगवान्का भजन भ्रम छोड़कर नहीं करते वे मूर्ख और बड़े अभागे हैं ॥ ६ ॥

अंगद अरु हनुमंत प्रवेसा ❀ कीन्ह दुर्ग अस कह अवधेसा ॥ ७ ॥
लँकामहँ कपि सोहहिं कैसे ❀ मथहिं सिंधु दुइ मंदर जैसे ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजीने कहा कि अंगद और हनूमान्ने लंकागढ़में प्रवेश किया ॥७॥ सो लंकामें (दोनों) वन्दर कैसे शोभायमान् लगते हैं जैसे दो मन्दराचल समुद्रको मथते हों ॥ ८ ॥

दो०-भुजवल रिपुदल दलि मलेउ, देखि दिवसकौ अंत ॥ ❀
कूदे जुगल प्रयास विनु, आये जहँ भगवंत ॥ ६९ ॥ ❀

भुजाओंके बलसे वैरीकी सेना मींजकर मार डाली, फिर दिनका अंत अर्थात् संध्यासमय देखकर दोनों विनाही परिश्रमके कूदकर जहाँ भगवान् थे वहां आगये ॥ ६९ ॥

चौ०-प्रभुपदकमल सीस तिन नाये ❀ देखि सुभट रघुपतिमन भाये ॥ १ ॥
राम कृपा करि जुगल निहारे ❀ भये विगतस्रम परम सुखारे ॥ २ ॥

उन्होंने भगवान्के कमलसमान चरणोंको माथा नवाया यह देखकर रामचन्द्रजीके मनमें सुन्दर योद्धा अच्छे लगे ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीने दया करके दोनों देखे तौ उनकी थकावट दूर हुई और वे बहुत सुखी हुये ॥ २ ॥

गये जानि अंगद हनुमाना ❀ फिरे भालुमर्कटभट नाना ॥ ३ ॥
जातुधान प्रदोषबल पाई ❀ धाये करि दससीसदुहाई ॥ ४ ॥

अंगद और हनूमान्को गये जानकर अनेक योद्धा, रीछ और बन्दर लौटे ॥ ३ ॥ और राक्षस सायंकालका बल पाकर रावणकी दुहाई करते हुये दौड़े ॥ ४ ॥

निसिचरअनी देखि कपि फिरे ❀ कटकटाइ जहँ तहँ भट भिरे ॥ ५ ॥
दोउदल भिरहिं प्रचारि प्रचारी ❀ लरहिं सुभट नहिं मानहिं हारी ॥ ६ ॥

राक्षसोंकी सेनाको देखकर बन्दर लौटे और योद्धा जहाँ तहाँ कटकटाकर भिड़ने लगे ॥ ५ ॥ दोनो दल हुमहुमीसे ललकार कर लड़ते हैं और सुन्दर योद्धा लड़तेमें हार नहीं मानते ॥ ६ ॥

वीर निसाचर सब अतिकारे ❀ नाना बरन बलीमुख भारे ॥ ७ ॥
सबल जुगल दल सब अतियोधा ❀ विविधप्रकार लरहिं करि क्रोधा ॥ ८ ॥

वीर राक्षस तौ सब बहुतही काले हैं और बन्दर अनेक रंगके बलवान् और बड़े बड़े हैं ॥ ७ ॥ सो दोनों सेनाओंमें सब बड़े और बलवान् योद्धा अनेक प्रकारसे क्रोध करके ऐसे लड़ते हैं ॥ ८ ॥

प्रावृट सरद पयोद घनेरे ❀ लरत मनहुँ मारुतके प्रेरे ॥ ९ ॥
अवनि अकंपन अरु अतिकाया ❀ बिचलत सेन कीन तिन माया ॥ १० ॥

मानों वर्षा और शरदऋतुके घने वादल पवनके उड़ाये हुये लड़ रहे हैं ॥ ९ ॥ अवनि, अकंपन और अतिकाय (राक्षसों) ने सेनाके बिछलते समय बड़ी माया करी कि ॥ १० ॥

भयउ निमिषमहँ अतिअँधियारा ❀ काहु न सूझै अपन परारा ॥ ११ ॥
मारि खाउ सब करहिं पुकारा ❀ वृष्टि होइ रुधिरोपल छारा ॥ १२ ॥

पलभरमें घोर अंधकार छा गया, किसीको अपना पराया नहीं सूझता ॥ ११ ॥ सब पुकारते हैं कि मार खाओ २ और लोहू पत्थर और धूलकी वर्षा होने लगी ॥ १२ ॥

दो०–देखि निबिड़ तम दसहुँ दिसि, कपिदल भयउ खँभार ॥ ❀
एकहि एक न देख जब, जहँ तहँ करहिं पुकार ॥ ७० ॥ ❀

दशों दिशाओंमें घना अंधकार देखकर बन्दरोंकी सेनामें खलबली पड़ गई और जब एकको एक नहीं दीखने लगा तौ जहां तहां पुकार करने लगे ॥ ७० ॥

चौ०–यह सब मर्म बिभीषन जाना ❀ लिये बोलि अंगद हनुमाना ॥ १ ॥
समाचार सब कहि समुझाये ❀ सुनत कोपि कपिकुंजर धाये ॥ २ ॥

यह सब भेद बिभीषणने पहँचान लिया तौ अंगद और हनूमान्को बुला लिया ॥ १ ॥ और सब समाचार कहकर समझाये तौ सुनतेही बन्दरोंमें हाथीसमान (अंगद और महावीर) क्रोधित होकर दौड़े ॥ २ ॥

पुनि कृपालु हँसि चाप चढ़ावा ❀ पावकसायक सपदि चलावा ॥ ३ ॥
भयउ प्रकास कतहुँ तम नाहीं ❀ ज्ञानउदय जिमि संसय जाहीं ॥ ४ ॥

फिर कृपानिधान रामचन्द्रजीने हँसकर धनुष चढ़ाया और अग्निबाण शीघ्रही चलाया ॥३॥ तौ चाँदना हो गया और अँधेरा कहींभी ऐसे नहीं रहा जैसे ज्ञानके उदय होनेसे संदेह दूर हो जाते हैं॥४॥

भालु बलीमुख पाइ प्रकासा ❀ धाये कोपि विगतसमत्रासा ॥ ५ ॥
हनूमान अंगद रन गाजे ❀ हाँक सुनत रजनीचर भाजे ॥ ६ ॥

रीछ और बन्दर चांदना पाकर दुःख और परिश्रमसे रहित हो क्रोधित होकर दौड़े ॥५॥ हनूमान् और अंगद लड़ाईमें ऐसे गर्जे कि (उनकी) हंकार सुनतेही राक्षस भागने लगे ॥ ६ ॥

भागत भट पटकहिं धरि धरनी ❀ करहिं भालु कपि अद्भुत करनी ॥ ७ ॥
गहि पद डारहिं सागरमाहीं ❀ मकर उरग झष धरि धरि खाहीं ॥ ८ ॥

भागतेमें योद्धाओंको पकड़ २ कर पृथ्वीपर देदे मारते हैं और रीछ बन्दर अचरजके काम करते हैं॥७॥ पैर पकड़ २ कर समुद्रमें डालते हैं सो मगर सर्प और मच्छ पकड़ २ कर खा जाते हैं॥८॥

दो०–कछु घायल कछु रन परे, कछु गढ़ चले पराइ ॥ ❀
गर्जे मर्कट भालु भट, रिपुदलबल बिचलाइ ॥ ७१ ॥ ❀

कुछ राक्षस घायल हो गये. कुछ लड़ईमें मारे गये और कुछ लंकाको भाग चले. तब वैरीकी सेनाके बलको दूर कर, योद्धा रीछ और बन्दर गर्जने लगे ॥ ७१ ॥

चौ०–निसा जानि कपि चारिउ अनी ❀ आये सब जहँ कोसलधनी ॥ १ ॥
राम कृपा करि चितये जबहीं ❀ भये विगतसम वानर तबहीं ॥ २ ॥

बन्दरोंकी चारों सेना रात जानकर रामचन्द्रजीके पास आई ॥ १ ॥ सो ज्योंही रामचन्द्रजीने दया करके उनको देखा त्योंही बन्दरोंकी सब थकावट दूर होगई ॥ २ ॥

वहाँ दसानन सचिव हँकारे ❀ सबसन कहेसि सुभट जे मारे ॥ ३ ॥
आधा कटक कपिन संहारा ❀ कहहु वेगि का करिय बिचारा ॥ ४ ॥

वहां (लंकामें) रावणने मंत्रियोंको बुलाकर जो जो योद्धा मारे गये थे वे सबसे कहा कि ॥३॥ आधा कटक तौ बन्दरोंने मार डाला, अब जल्दी कहो क्या विचार करना चाहिये ? ॥ ४ ॥

माल्यवंत इक जरठ निसाचर ❀ रावनमातुपिता मंत्रीवर ॥ ५ ॥
बोला वचन नीति अति पावन ❀ तात सुनहु कछु मोर सिखावन ॥ ६ ॥

माल्यवंत नाम एक बूढ़ा राक्षस जो रावणकी माताका पिता और श्रेष्ठ मंत्री था ॥ ५ ॥ सो नीतिसहित बड़े पवित्र वचन बोला कि हे प्यारे! कुछ मेरीभी शिक्षा सुनो ॥ ६ ॥

जबतें तुम सीता हरिआनी ❀ असकुन होहिं न जात बखानी ॥ ७ ॥
वेद पुरान जासु जस गावा ❀ रामबिमुख सुख काहु न पावा ॥ ८ ॥

जबसे तुम जानकीजीको हरलाये हो, तभीसे ऐसे अशकुन होने लगे हैं कि वर्णन नहीं किये जाते ॥ ७ ॥ जिनकी कीर्तिको वेद पुराण गाते हैं उन रामचन्द्रजीसे विमुख होकर किसीने सुख नहीं पाया ॥ ८ ॥

दो०–हिरण्याक्ष भ्राता सहित, मधुकैटभ बलवान ॥
जेंइ मारे सोइ अवतरेउ, कृपासिंधु भगवान ॥ ७२ ॥

जिन्होंने भाईसहित हिरण्याक्ष और बलवान् मधुकैटभ (राक्षसों) को मारा उन्हीं दयाके समुद्र भगवान्ने अवतार लिया है ॥ ७२ ॥

कालरूप खलबलदहन, गुणागार घनबोध ॥
जे सेवहिं सिव कमलभव, तासों कवन विरोध ॥ ७३ ॥

जो दुष्टोंके बलको जलानेके लिये कालरूप, गुणोंके स्थान और अत्यंत ज्ञानस्वरूप हैं और जिनकी शिव और ब्रह्मा सेवा करते हैं उनसे लड़ाई कैसे (चल सक्ती है) ॥ ७३ ॥

चौ०–परिहरि वैर देहु वैदेही ❀ भजहु कृपानिधि परम सनेही ॥ १ ॥
ताके वचन बानसम लागे ❀ करिया मुख करि जाहु अभागे ॥ २ ॥

सो वैर छोड़कर सीताजीको देदो और बड़े प्रेमी दयाके समुद्र (भगवान्) का भजन करो ॥१॥ उसके वचन (रावणको) बाणके समान लगे(तो कहने लगा) अरे अभागे! तू काला मुँह कर जा २

बूढ़ भयसि नतु मरत्यों तोहीं ❀ अब जनि बदन देखावसि मोहीं ॥ ३ ॥
तेंइ अपने मन अस अनुमाना ❀ वधै चहत यहि कृपानिधाना ॥ ४ ॥

बूढ़ा हो गया है नहीं तौ तुझे मारता, अब तू मुझे मुँह मत दिखावै ॥३॥ उसने अपने मनमें यह विचार किया कि भगवान् इसे मारना चाहते हैं ॥ ४ ॥

सो उठिगयउ कहत दुर्वादा ❀ तब सकोप बोलेउ घननादा ॥ ५ ॥
कौतुक प्रात देखियहु मोरा ❀ करिहौं बहुत कहतहौं थोरा ॥ ६ ॥

सो (वह) बुरे वचन कहता हुआ उठ गया, तब मेघनाद क्रोधसे बोला कि ॥५॥ सबेरे मेरा तमाशा देखना, मैं थोड़ा कहताहूं पर बहुत करूंगा ॥ ६ ॥

सुनि सुतवचन भरोसा आवा ❀ प्रीतिसमेत निकट बैठावा ॥ ७ ॥
करत विचार भयउ भिनुसारा ❀ लगे भालु कपि चारिहु द्वारा ॥ ८ ॥

पुत्रके वचन सुनकर भरोसा हुआ और प्रेमसे पास बिठा लिया ॥ ७ ॥ विचार करते २ सबेरा होगया और रीछ बन्दर चारों द्वारोंपर आन अड़े ॥ ८ ॥

कोपि कपिन दुर्गम गढ़ घेरा ❀ नगर कोलाहल भयउ घनेरा ॥ ९ ॥
विविध अस्त्र गहि निसिचर धाये ❀ गढ़तें पर्वत सिखरढहाये ॥ १० ॥

बन्दरोंने क्रोधित होकर कठिन गढ़को घेर लिया और नगरमें बहुत कोलाहल होने लगा ॥९॥ राक्षस बहुतसे हथियार लेलेकर दौड़े और गढ़से पर्वतोंके शिखर ढकेलने लगे ॥ १० ॥

छं०-ढाहे महीधरसिखर कोटिन विविध विधि गोला चले ।
घहरात जिमि पबिपात गर्जत प्रलयके जनु बादले ॥
मर्कट विकटभट जुटत कटत न लरत तनु जर्जर भये ।
गहि सैल तेइ गढ़पर चलावहिं जहँ सो तहँ निसिचर हये ॥२॥

पर्वतोंके करोड़ों शिखर ढकेलने लगे और अनेक भांतिसे गोले चलने लगे जो वज्रपातकी तरह घहराते हैं अर्थात् उनका धूँ धूँ शब्द ऐसा होता है मानों प्रलयके बादल गर्जते हैं, बन्दर भयंकर योद्धा जुटते हैं पर कटते नहीं. लड़तेमें उनके शरीर लोहू लुहान हो गये हैं और वे पर्वत लेकर उन्हें गढ़पर ऐसे चलाते हैं कि राक्षस जहाँके तहाँही मरकर रह जाते हैं ॥ २ ॥

दो०-मेघनाद सुनि स्रवन अस, गढ़ पुनि छेका आइ ॥
उतरि दुर्गतें बीरबर, सन्मुख चला बजाइ ॥ ७४ ॥

मेघनादने कानोंसे यह सुना कि बन्दरोंने फिर आकर गढ़ घेर लिया तौ वह शूरवीर किलेसे उतरकर और धौंसा बजाकर सामने चला (और बोला कि) ॥ ७४ ॥

चौ०-कहँ कोसलाधीस दोउ भ्राता ❀ धन्वी सकललोकविख्याता ॥ १ ॥
कहँ नल नील द्विविद सुग्रीवा ❀ कहँ हनुमंत अँगद बलसीवा ॥ २ ॥

अयोध्याके राजा दोनों भाई कहां हैं? कि जो सब लोकोंमें नामी धनुषधारी हैं ॥ १ ॥ नल, नील, द्विविद और सुग्रीव कहां हैं? और अतुलबली अंगद और हनूमान् कहां हैं? ॥ २ ॥

कहँ बिभीषन भ्राताद्रोही ❀ आजु सठहिं हठ मारउँ ओही ॥ ३ ॥
अस कहि कठिन बान संधाने ❀ अतिसय कोपि स्रवनलगि ताने ॥ ४ ॥

भाईका वैरी विभीषण कहां है? आज (उस) मूर्खको तौ अवश्यही मारूंगा ॥ ३ ॥ ऐसे कहकर (धनुषपर) कठिन वाण लगाये और बड़े क्रोधसे कानतक ताने ॥ ४ ॥

सरसमूह सो छाँड़ै लागा ❀ जनु सपंख धावैं बहु नागा ॥ ५ ॥
जहँ तहँ परत देखिये बानर ❀ सन्मुख होइ न सकत तेहि अवसर ॥६॥

और (वह) बाणोंके समूहको ऐसे छोड़ने लगा मानो पंखसमेत बहुतसे सर्प दौड़ रहे हों ॥५॥ बन्दर जहां तहां गिरते दिखाई देने लगे और उस समय उस (मेघनाद)के सन्मुख नहीं हो सक्ते थे ॥६॥

भागे भयव्याकुल कपि ऋच्छा ❀ बिसरी सबहिं युद्धकी इच्छा ॥ ७ ॥
सो कपि भालु न रनमहँ देषा ❀ कीन्हेसि जेहिं न प्रानअवसेषा ॥ ८ ॥

भयसे दुखी होकर रीछ और बन्दर भागने लगे, किसीको लड़नेकी इच्छा नहीं रही ॥ ७ ॥ ऐसा रीछ अथवा बन्दर लड़ाईमें कोई नहीं दीखता था कि जिसके प्राणांतकी नौबत न आई हो ॥ ८ ॥

दो०-मारेसि दस दस बिसिख उर, परे भूमि कपि वीर ॥
सिंहनाद करि गर्जि तब, मेघनाद रणधीर ॥ ७५ ॥

और (एक २ बन्दरकी) छातीमें दश २ बाण ऐसे मारे कि जिससे योद्धा बन्दर पृथ्वीपर गिर पड़े ! फिर तौ रणधीर मेघनाद सिंहकासा शब्द करके गर्जने लगा ॥ ७५ ॥

चौ०-देखि पवनसुत कटक बिहाला ❀ क्रोधवंत धावा जनु काला ॥ १ ॥
महा महीधर तुरत उपारा ❀ अतिरिसि मेघनादपर डारा ॥ २ ॥

हनूमान् सेनाको विहाल देखकर ऐसा क्रोध कर दौड़े मानों काल हों ॥ १ ॥ और शीघ्रही बड़ा भारी पर्वत उखाड़कर बड़े क्रोधसे मेघनादपर फेंका ॥ २ ॥

आवत देखि गयउ नभ सोई ❀ रथ सारथी तुरँग सब खोई ॥ ३ ॥
बार बार प्रचार हनुमाना ❀ निकट न आव मर्म सो जाना ॥ ४ ॥

उसे आता हुआ देखकर वह रथ, सारथी और घोड़े सब छोड़ छाड़कर आकाशमें चला गया ॥३॥ हनूमान् बारंबार ललकारने लगे पर वह भेदको जानता था सो पास नहीं आया ॥ ४ ॥

रामसमीप गयउ घननादा ❀ नानाभाँति कहत दुर्बादा ॥ ५ ॥
अस्त्र सस्त्र बहु आयुध डारे ❀ कौतुकहीं प्रभु काटि निबारे ॥ ६ ॥

मेघनाद अनेक प्रकारके बुरे वचन कहता हुआ रामचन्द्रजीके पास गया ॥ ५ ॥ और बहुतसे अस्त्र और हथियार फेंकने लगा परन्तु भगवान्ने बातकी बातमें सब काट अलग किये ॥ ६ ॥

देखि प्रभाव मूढ़ खिसियाना ❀ करै लाग माया विधि नाना ॥ ७ ॥
जिमि कोउ करै गरुड़सन खेला ❀ डरपावहि गहि स्वल्प सपेला ॥ ८ ॥

(भगवान्के) प्रभावको देखकर मूर्ख (मेघनाद) खिसा गया और अनेक प्रकारकी ऐसी माया करने लगा ॥ ७ ॥ जैसे कोई गरुड़जीसे खेल करै और छोटे सांप सँपोंलियेको पकड़कर उन्हें डरपावै ॥ ८ ॥

दो०-जासु प्रबल मायाबिबस, शिव बिरंचि बड़ छोट ॥ ❀
ताहि देखावै रजनिचर, निजमाया मतिखोट ॥ ७६ ॥ ❀

जिसकी प्रबल मायाके वश महादेव, ब्रह्मा और सब बड़े छोटे जीव हैं उसको राक्षस अपनी माया दिखाता है, ऐसी मति मारी गई है ॥ ७६ ॥

चौ०-नभ चढ़ि बरषै बिपुल अँगारा ❀ महिते प्रकट होइ जलधारा ॥ १ ॥
नानाभाँति पिसाच पिसाची ❀ मारु काटु ध्वनि बोलहिं नाची ॥ २ ॥

आकाशमें चढ़कर बहुतसे अंगारे वर्षाने लगा और पृथ्वीसे जलकी धारा निकलने लगी ॥१॥ अनेक प्रकारके पिशाच और पिशाचनी मारो काटो ऐसे शब्द बोलते हुये नाचने लगे ॥ २ ॥

कीन्हेसि वृष्टि रुधिर कच हाड़ा ❀ वर्षै कबहुँ उपल बहु छाँड़ा ॥ ३ ॥
बर्षि धूरि कीन्हेसि अँधियारा ❀ सूझ न आपन हाथ पसारा ॥ ४ ॥

लोहू बाल और हड्डियोंकी वर्षा करता है और कभी बहुतसे पत्थरोंके टौल वर्षाता है ॥ ३ ॥ धूल वर्षाकर ऐसा अँधेरा कर दिया कि अपना पसारा हुआ हाथभी नहीं दीखता ॥ ४ ॥

अकुलाने कपि माया देखे ❀ सबकर मरन बना यह लेखे ॥ ५ ॥
कौतुक देखि राम मुसुकाने ❀ भये सभीत सकल कपि जाने ॥ ६ ॥

ऐसी मायाको देखकर बन्दर अकुलाये और यह बिचार किया कि सबका मरण हुआ ॥ ५ ॥ यह कौतुक देखकर रामचन्द्रजी हँसे और जाना कि सब बन्दर भयभीत हो गये ॥ ६ ॥

एक बाण काटी सब माया ❀ जिमि दिनकर हर तिमिरनिकाया ॥ ७ ॥
कृपादृष्टि कपि भालु बिलोके ❀ भये प्रबल रन रहहिं न रोके ॥ ८ ॥

तौ एकही बाणमें सब माया ऐसे काट डालीं जैसे सूर्य अंधकारके समूहको नाश कर देता है ॥७॥ और कृपादृष्टिसे बन्दर और रीछोंको देखा तौ वे ऐसे प्रबल हो गये कि लड़ाईमें रोकनेसेभी नहीं रुकते ॥ ८ ॥

दो०-आयसु माँगा रामपहिं, अंगदादि कपि साथ ॥ ❀
लक्ष्मण चले सकोप तब, बाण सरासन हाथ ॥ ७७ ॥ ❀

फिर रामचन्द्रजीसे आज्ञा माँगकर अंगदआदि बन्दरोंके साथ लक्ष्मणजी क्रोधसे हाथमें धनुषबाण लेकर चले ॥ ७७ ॥

चौ०-जलजनयन उर बाहु बिसाला ❀ हिमगिरिनिभतनु कछुइक लाला ॥ १ ॥
वहाँ दसानन सुभट पठाये ❀ नाना अस्त्र शस्त्र गहि धाये ॥ २ ॥

(जिनके) कमलसे नेत्र, हृदय और भुजा विशाल, हिमालयकी कांतिके समान शरीरमें कुछ २ लाल हो रहे हैं ॥ १ ॥ वहां रावणने बड़े २ भारी योद्धा भेजे सो वे अनेक अस्त्र शस्त्र लेकर दौड़े ॥ २ ॥

भूधर नख विटपायुध धारी ❀ धाए कपि जय राम पुकारी ॥ ३ ॥
भिरे सकल जोरीसन जोरी ❀ इत उत जयइच्छा नहिं थोरी ॥ ४ ॥

यहां पर्वत नख और वृक्षोंके हथियार धारण करनेवाले बन्दर जय रामचन्द्रजीकी २ ऐसे कहकर दौड़े ३ जोटसे जोट सब जा भिड़े, इधरभी और उधरभी जीतकी थोड़ी इच्छा नहीं थी अर्थात् बहुत थी ४

मुष्टिन लातन दांतन काटहिं ❀ कपिगिरिसिला मारि पुनि डाटहिं ॥ ५ ॥
मारु मारु मारू धरु मारू ❀ सीस तोरि गहि भुजा उपारू ॥ ६ ॥

बन्दर घूँसे और लातोंसे मारते हैं, दाँतोंसे काटते हैं और पर्वतोंकी शिला मारकर फिर डरपाते हैं ॥५॥ मारो मारो मारो धर मारो और शिर तोड़कर भुजा पकड़कर उखाड़ डालो ॥ ६ ॥

असि ध्वनि पूरि रही नभखंडा ❀ धावहिं जहँ तहँ रुंड प्रचंडा ॥ ७ ॥
देखहिं कौतुक नभ सुरवृंदा ❀ कबहुँक विस्मय कबहुँ अनंदा ॥ ८ ॥

सब आकाशमें ऐसा शब्द भरगया और जहां तहां बड़े २ रुंड दौड़ने लगे ॥ ७ ॥ देवताओंके समूह आकाशमें कौतुक देखते हैं और कभी उनको दुःख और कभी आनन्द होने लगता है ॥ ८ ॥

दो०-जमेउ गाड़ भरि भरि रुधिर, ऊपर धूरि उड़ाइ ॥ ❀
जिसि अंगारन राशिपर, मृतकधूम रहि छाइ ॥ ७८ ॥ ❀

गढोंमें तौ लोहू भर २ कर जम गया है और ऊपरसे धूल उड़ उड़ कर जमगई है. (सो ऐसा भासता है) जैसे अंगारोंके ढेरपर राख छारही है ॥ ७८ ॥

चौ०-घायल बीर बिराजहिं कैसे ❀ कुसुमित किंसुकके तरु जैसे ॥ १ ॥
लक्ष्मण मेघनाद दोउ योधा ❀ भिरहिं परसपर करि अतिक्रोधा ॥ २ ॥

घायल योद्धा कैसे शोभायमान् लगते हैं जैसे फूले हुये ढाकके वृक्ष लगते हों ॥ १ ॥ लक्ष्मण और मेघनाद दोनों योद्धा आपसमें बहुत क्रोध करके लड़ते हैं ॥ २ ॥

एकहि एक सकै नहिं जीती ❀ निसिचर छल बल करै अनीती ॥ ३ ॥
क्रोधवंत तब भयउ अनंता ❀ भंजेउ रथ सारथी तुरंता ॥ ४ ॥

एकको एक नहीं जीतसक्ता और राक्षस (मेघनाद) छल बल करके अनीति करता है ॥ ३ ॥ तब लक्ष्मणजीने क्रोधित होकर रथ और सारथीको तुरंत नाश कर दिया ॥ ४ ॥

नानायुध प्रहार करि देखा ❀ राक्षस भयउ प्रान अवसेखा ॥ ५ ॥
रावणसुत निजमन अनुमाना ❀ संकट भयउ हरिहि मम प्राना ॥ ६ ॥

और अनेक हथियार मारकर देखा कि राक्षसमें अब प्राणही बाकी रहे हैं ॥ ५ ॥ जब रावणके पुत्र (मेघनाद) ने अपने मनमें विचार किया कि बड़ा संकट आपड़ा कि मेरे प्राणही लेगा ॥ ६ ॥

वीरघातिनी छाँड़ेसि साँगी ❀ तेजपुंज लक्ष्मणउर लागी ॥ ७ ॥
मूर्च्छा भई शक्तिके लागे ❀ तब चलि गयउ निकट भय त्यागे ॥८॥

तौ वीरोंके मारनेवाली शक्ति छोड़ी सो तेजके समूह ऐसे लक्ष्मणजीके हृदयमें लगी ॥ ७ ॥ उस शक्तिके लगनेसे (लक्ष्मणजीको) मूर्च्छा होगई तव तो भय छोड़कर पास चला गया ॥ ८ ॥

दो०–मेघनाद सम कोटिसत, योधा रहे उठाइ ॥ ❀
जगदाधार अनंत सो, उठहिं न चला लजाइ ॥ ७९ ॥ ❀

मेघनादके समान सौ करोड़ योद्धा उठाकर रह गये परन्तु वे संसारके आधार लक्ष्मणजी नहीं उठते (तव तौ मेघनाद) लजाकर चल दिया ॥ ७८ ॥

चौ०–सुन गिरिजा क्रोधानल जासू ❀ जारै भुवन चारिदस आसू ॥ १ ॥
सक संग्राम जीती को ताही ❀ सेवहिं सुर नर अग जग जाही ॥ २ ॥

(महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! जिसकी क्रोधरूपी अग्नि चौदहों लोकोंको शीघ्रही जला सक्ती है ॥ १ ॥ और जिसे देवता, मनुष्य और चराचर संसार सेवन करता है उसे लड़ाईमें कौन जीत सक्ता है ? ॥ २ ॥

यह कौतुक जानहिं जन सोई ❀ जेहिपर कृपा रामकी होई ॥ ३ ॥
संध्या भई फिरीं दोउ ऐनी ❀ लगे संभारन निजनिज सैनी ॥ ४ ॥

पर इस कौतुककों वेही मनुष्य जान सक्ते हैं जिनपर रामचन्द्रजीकी कृपा हो ॥ ३ ॥ (फिर) साँझ हुई तौ दोनों सेना लौटीं और (दोनों ओरके सेनापति)अपनी २ सेनाको संभालने लगे ॥४॥

व्यापक ब्रह्म अजित भुवनेश्वर ❀ लक्ष्मणकहँ बूझा करुनाकर ॥ ५ ॥
तबलगि लै आये हनुमाना ❀ अनुज देखि प्रभु अति दुख माना ॥६॥

सवमें व्यापक, ब्रह्म, जो जीते न जाँय; लोकोंके स्वामी, करुणाके समुद्र (भगवान्) ने पूछा कि लक्ष्मण कहाँ हैं ? ॥ ५ ॥ इतनेहीमें हनूमान् (लक्ष्मणको) ले आये तौ भाईको देखकर भगवान्ने वड़ा दुःख माना ॥ ६ ॥

जाम्बवंत कह वैद्य सुषेना ❀ लंका रह पठइय कोउ लेना ॥ ७ ॥
धरि लघु रूप गये हनुमंता ❀ आनेउ भवनसमेत तुरंता ॥ ८ ॥

जाम्बवंतने कहा कि सुषेण वैद्य लंकामें रहता है सो उसे लिवानेके लिये किसीको भेजिये ॥७॥ सो हनूमान् छोटासा रूप धारण करके गये और उसे घरसमेत तुरंत ले आये ॥ ८ ॥

दो०–रघुपतिचरनसरोज शिर, नायउ आइ सुषेन ॥ ❀
कहा नाम गिरि ओषधी, जाहु पवनसुत लेन ॥ ८० ॥ ❀

सुषेणने आकर रामचन्द्रजीके कमलसमान चरणोंको शिर नवाया और पर्वत और औषधिका नाम वतलाकर कहा कि हे हनूमान् (तुम) लेनेको जाओ ॥ ८० ॥

चौ०–रामचरनसरसिज उर राखी ❀ चलेउ प्रभंजनसुत बल भाषी ॥ १ ॥
वहाँ दूत इक मर्म जनावा ❀ रावन कालनेमिगृह आवा ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीके कमलसमान चरणोंको हृदयमें रखकर हनूमान् अपना बल कहकर चले ॥ १ ॥ वहां एक दूतने रावणको भेद जता दिया तौ वह कालनेमिके घर आया ॥ २ ॥

दसमुख कहा मर्म तेंइ सुनेउ ❀ पुनि पुनि कालनेमि सिर धुनेउ ॥ ३ ॥
देखत तुमहिं नगर जेहिं जारा ❀ तासु पंथ को रोकनहारा ॥ ४ ॥

रावणका कहा हुआ भेद उसने सुना तौ कालनेमि बारबार शिर धुनने लगा और कहा कि ॥३॥ जिसने तुम्हारे देखते देखते नगर जला दिया उसके मार्गको रोकनेवाला कौन है? ॥ ४ ॥

भजि रघुपतिहिं करहु हित अपना ❀ तजउ नाथ अब वृथा कलपना ॥ ५ ॥
नीलकंजतनु सुंदर स्यामा ❀ हृदय राखु लोचनअभिरामा ॥ ६ ॥

हे स्वामी ! रामचन्द्रजीका भजन करके अपना भला मनाओ और अव वृथाकी सोचा विचारीको छोड़ दो ॥ ५ ॥ नील कमलके समान सुन्दर श्याम शरीरवाले और सुन्दर नेत्रवाले (भगवान्) को हृदयमें धारण करो ॥ ६ ॥

अहंकार ममता मद त्यागू ❀ महामोहनिसिसोवत जागू ॥ ७ ॥
कालव्यालकर भक्षक जोई ❀ सपनेहुँ समर कि जीतिय सोई ॥ ८ ॥

और अहंकार, ममता और अभिमानको छोड़दो और बड़ी भारी अज्ञानरूपी रातमें सोतेसे जागो७ जो कालरूपी सर्पका भक्षण करनेवाला है क्या वह स्वप्नमेंभी लड़ाईमें जीता जा सक्ता है? ॥ ८ ॥

दो०-सुनि दसकंठ रिसान अति, तेइ मन कीन्ह विचार ॥ ❀
रामदूतकर मरण भल, यह खल नतु मोहिं मार ॥ ८१ ॥ ❀

यह सुनकर रावण बड़ा क्रोधित हुआ तब उसने मनमें विचार किया कि रामचन्द्रजीके दूतके हाथसे मरना अच्छा है नहीं तौ यह दुष्ट मुझे मार डालेगा ॥ ८१ ॥

चौ०-अस कहि चला रची मग माया ❀ सरमंदिर बर बाग बनाया ॥ १ ॥
मारुतसुत देखा सुभ आस्रम ❀ मुनिहिं बूझि जल पियौं जाइ स्रम ॥२॥

ऐसे कहकर चला और रस्तेमें माया रची कि तलाव मन्दिर और सुन्दर बाग बनाया॥१॥ हनूमान्ने सुन्दर आश्रम देखा (तौ विचारा कि) मुनीश्वरसे पूछकर जल पीलूँ तौ थकावट जाती रहै ॥ २ ॥

राक्षस कपटवेष तहँ सोहा ❀ मायापति दूतहिं चह मोहा ॥ ३ ॥
तुरत पवनसुत नायउ माथा ❀ लागा कहन रामगुनगाथा ॥ ४ ॥

(कालनेमी) राक्षस कपटवेष धारण किये वहां बैठा था और मायाके पति (भगवान्) के दूतको मोहित किया चाहता था ॥ ३ ॥ हनूमान्ने शीघ्रही (उसको) माथा नवाया तौ वह रामचन्द्रजीके गुणोंकी कथा कहने लगा कि ॥ ४ ॥

होत महारण रावण रामहिं ❀ जीतहिं राम न संसय यामहिं ॥ ५ ॥
इहाँ भये मैं देखौं भाई ❀ ज्ञानदृष्टिबल मोहिं अधिकाई ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजी और रावणमें बड़ा युद्ध होरहा है सो रामचन्द्रजी जीतैंगे इसमें सन्देह नहीं ॥५॥ हे भाई ! मैं यहां रहकर देखता हूं क्योंकि मुझे ज्ञानकी दृष्टिका बड़ा बल है ॥ ६ ॥

माँगा जल तेंइ दीन्ह कमंडल ❀ कह कपि नहिं अघाउँ थोरे जल ॥ ७ ॥
सरमज्जन करि आतुर आवहु ❀ दीक्षा देउँ ज्ञान जेहि पावहु ॥ ८ ॥

(हनूमान्ने) जल मांगा तौ उसने कमंडलु दे दिया, हनूमान्ने कहा मैं थोड़े जलसे नहीं अघाता ॥ ७ ॥ (तब उसने कहा कि) सरोवरमें स्नान करके जल्दी आओ (तुमको गुरु) दीक्षा दूंगा, जिससे ज्ञान प्राप्त करो ॥ ८ ॥

दो०-सर पैठत कपिपद गहेउ, मकरी तब अकुलान ॥ ❀
मारी सो धरि दिव्य तनु, चली गगन चढ़ि यान ॥ ८२ ॥ ❀

तलावमें धँसतेही एक मैंगरनीने हनूमान्के चरण पकड़े पर जब उन्होंने उसे पैरसे मारा तब तौ बड़ी अकुलाई और सुन्दर शरीर धारण करके और विमानमें बैठकर आकाशको (यह कहती) चली गई कि ॥ ८२ ॥

चौ०–कपि तव दरस भइउँ निष्पापा ❀ मिटा तात मुनिवरकर सापा ॥ १ ॥
मुनि न होइ यह निसिचर घोरा ❀ मानहु सत्य वचन कपिमोरा ॥ २ ॥

हे हनूमान् ! तुम्हारे दर्शनसे मैं पापरहित हुई और हे प्यारे ! श्रेष्ठ मुनीश्वरका शाप मिट गया ॥ १ ॥ हे हनूमान् ! मेरा वचन सत्य मानो (जो तुझे ज्ञान सिखाया चाहता है) यह मुनीश्वर नहीं है यह तौ बड़ा भारी राक्षस है ॥ २ ॥

अस कहि गई अप्सरा जबहीं ❀ निसिचर निकट गयउ कपि तबहीं ॥३॥
कह कपि मुनि गुरुदछिना लेहू ❀ पाछे हमहिं मंत्र तुम देहू ॥ ४ ॥

ऐसे कहकर ज्योंही अप्सरा गई त्योंही हनूमान् राक्षसके पास गये ॥ ३ ॥ हनूमान्ने कहा हे मुनीश्वर ! (पहिले) गुरुदक्षिणा तौ लेलो पीछे तुम मुझको मंत्र देना ॥ ४ ॥

सिर लंगूर लपेटि पछारा ❀ निजतनु प्रकटेसि मरती बारा ॥ ५ ॥
राम राम कहि छाँड़ेसि प्राना ❀ सुनि मन हर्षि चले हनुमाना ॥ ६ ॥

(यों कहकर हनूमाने उसके) शिरमें पूंछ लपेटकर पछाड़ दिया सो (उसने) मरते समय अपनी देह प्रगट की ॥ ५ ॥ और राम २ कहकर प्राण छोड़ दिये. (यह) सुनकर हनूमान् मनमें प्रसन्न होते हुये चले ॥ ६ ॥

देखा सैल न औषधि चीन्हा ❀ सहसा कपि उपारि गिरि लीन्हा ॥ ७ ॥
गहि गिरि निसि नभ धावत भयऊ❀ अवधपुरी ऊपर कपि गयऊ ॥ ८ ॥

और वह पर्वत देखा (परन्तु जब) औषधि नहीं पहिचानी तौ हनूमान्ने शीघ्रही पर्वतको उखाड़ लिया ॥ ७ ॥ पर्वतको लेकर रातमें आकाशमार्ग होकर दौड़ते हुये हनूमान् अयोध्यापुरीके ऊपर गये ॥ ८ ॥

दो०–देखा भरत विसाल अति, निसिचर मन अनुमानि ॥ ❀
विन फर सायक मारेउ, चाप स्रवनलगि तानि ॥ ८३ ॥ ❀

भरतजीने बहुत बड़ा शरीर देखा तौ मनमें राक्षस जानकर और कानतक धँनुष तानकर विना भालका बाण मारा ॥ ८३ ॥

---

(१) पूर्वजन्ममें कालिनेमि गन्धर्व और मकरी अप्सरा थी। एक बार इन्द्रकी सभामें नाचते २ दुर्वासऋषिको देख हँसे तब उन्होंने शाप दिया कि राक्षस हो, पर जब इन्होंने क्षमा माँगी तब मुनि बोले, कि जब त्रेतामें रामावतार होगा और रामचन्द्रजी लंकामें आवेंगे तब उनके दूतके द्वारा तुम्हारा शाप मिटैगा ॥ (२) यहां यह शंका है कि भरतजी तौ अपने नियम और कठिन व्रतमें तत्पर थे और राज्य कार्य सब छोड़ रक्खे थे उनके पास धनुष बाण कहां था जो हनूमान्जीके तीर मारा ? तहां कहते हैं–कि हनुमन्नाटकमें यह लिखा है कि जिस समय हनूमान् संजीविनी बूटी लेनेके लिये गये उसी समय रानी सुमित्राने यह स्वप्न देखा कि एक सर्प बाईं भुजाको संपूर्ण निगल गया, और उठ बैठी ॥ फिर सुमित्राने उस स्वप्नको कौसल्यासे कहा और कौशल्याने वसिष्ठजीसे कहा तब मुनि भरतजीके पास धनुष बाण धराकर घृतके हवनसे शांति कराने लगे और जिस समय वसिष्टजी और भरतजी घृतयुक्त नारियलसे पूर्णाहुति कर रहे थे उस समय महावीर अग्निसमान कांतिवाले पर्वतको लेकर निकले तौ भरतजीने यह विचार करा कि यह क्या है और उनके बाण मारदिया ॥

लक्ष्मणजीकी रणशय्या और अयोध्यामें भरतजीका द्रोणागिरि ले जाते हुये हनुमानको बाण मारना.

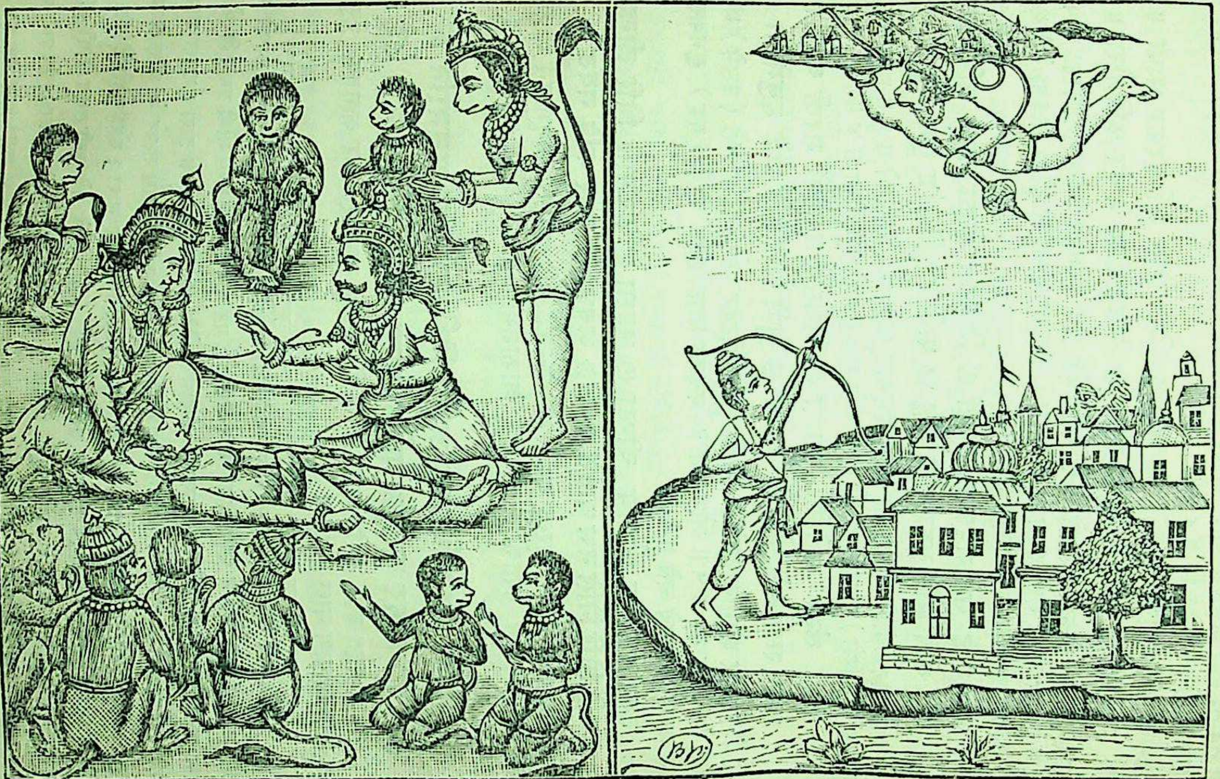

चौ०-पर मूर्च्छित महिलागद सायक ❀ सुमिरत राम राम रघुनायक ॥ १ ॥
सुनि प्रिय वचन भरत उठि धाये ❀ कपि समीप अति आतुर आये ॥ २ ॥

सो बाणके लगतेही (हनूमान्) मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिरपड़े और राम २ स्मरण करने लगे ॥ १ ॥ प्यारे वचन सुनकर भरतजी उठ दौड़े और बड़ी जल्दी हनूमान्के पास आये ॥ २ ॥

बिकल बिलोकि कीस उर लावा ❀ जागत नहिं बहु भाँति जगावा ॥ ३ ॥
मुख मलीन तनु भयउ दुखारी ❀ कहत वचन भरि लोचन बारी ॥ ४ ॥

हनूमान्को व्याकुल देखकर (भरतजीने) हृदयसे लगा लिया और बहुत प्रकार जगाया परन्तु जागते नहीं ॥ ३ ॥ (तब तौ) मुख उदास होगया, शरीरमें दुःखी हुये और नेत्रोंमें जल भरकर वचन कहने लगे कि ॥ ४ ॥

जेहिं बिधि राम बिमुख मोहिं कीन्हा ❀ तेहिं पुनि यह दारुन दुख दीन्हा ॥ ५ ॥
जो मोरे मन वच अरु काया ❀ प्रीति रामपदकमल अमाया ॥ ६ ॥

जिस विधाताने मुझे रामचन्द्रजीके विमुख किया उसीने फिर यह कठिन दुःख दिया ॥ ५ ॥ सो जो मेरी मन वचन और शरीरसे रामचन्द्रजीके कमलसमान चरणोंमें कपटरहित प्रीति है॥६॥

तौ कपि होउ बिगतस्रमसूला ❀ जो मोपर रघुपति अनुकूला ॥ ७ ॥
बचन सुनत उठि बैठु कपीसा ❀ कहि जय जयति कोसलाधीसा ॥ ८ ॥

और जो रामचन्द्रजी मुझपर दयाल हों तौ (यह) बन्दर परिश्रम और दुःखसे रहित हो जावै ॥ ७ ॥ वचन सुनतेही हनूमान् रामचन्द्रजीकी जय २ कहते हुये उठ बैठे ॥ ८ ॥

सो०-लीन्ह कपिहि उर लाइ, पुलक गात लोचन सकल ॥ ❀
प्रीति न हृदय समाइ, सुमिरि राम रघुकुलतिलक ॥ ८ ॥ ❀

भरतजीने हनूमान्को हृदयसे लगाया; तौ शरीर पुलकायमान् हुआ, नेत्रोंमें जल भर आया और रघुवंशके तिलक रघुनाथजीके स्मरणके कारण स्नेह हृदयमें नहीं समाता ॥ ८ ॥

चौ०-तात कुसल कहु सुखनिधानकी ❀ सहित अनुज अरु मातु जानकी ॥ १ ॥
कपि सब चरित समास बखाने ❀ भये दुखित मनमहँ पछिताने ॥ २ ॥

हे प्यारे ! सीता माता और भाई (लक्ष्मण) समेत सुखके निधान भगवान्की कुशल कहो १ हनूमान्ने सब चरित्र संक्षेपसे कहे (उन्हें सुनकर भरतजी) दुखी हुये और मनमें पछताने लगे २

अहह दैव मैं कत जग जायउँ ❀ प्रभुके एकौ काज न आयउँ ॥ ३ ॥
जानि कुअवसर मन धरि धीरा ❀ पुनि कपिसन बोले बलवीरा ॥ ४ ॥

हा दैव ! मैं संसारमें क्यों उत्पन्न हुआ कि जो भगवान्के एकभी काममें न आया ॥ ३ ॥ फिर बलवीर (भरत) कुसमय जानकर और मनमें धीरज धारणकर हनूमान्से बोले ॥ ४ ॥

तात गहरु होइहि तोहिं जाता ❀ काज नसाइहि होत प्रभाता ॥ ५ ॥
चढ़ मम सायक सैल समेता ❀ पठवौं तोहिं जहँ कृपानिकेता ॥ ६ ॥

हे प्यारे ! तुझे जानेमें देर होगी और सबेरा होतेही काम बिगड़ जायगा ॥ ५ ॥ सो पर्वतसहित मेरे बाणपर चढ़ ले, मैं तुझे भगवान्के पास पहुँचादूं ॥ ६ ॥

सुनि कपिमन उपजा अभिमाना ❀ मोरे भार चलिहि किमि बाना ॥ ७ ॥
रामप्रताप बिचारि बहोरी ❀ बंदि चरन बोलेउ कर जोरी ॥ ८ ॥

यह सुनकर हनूमान्‌के मनमें अभिमान उत्पन्न हुआ कि मेरे बोझसे बाण कैसे चलैगा ? ॥ ७॥ फिर रामचन्द्रजीके प्रतापको बिचारकर और चरणोंको दंडवत कर हाथ जोड़के बोले ॥ ८ ॥

तव प्रताप उर राखि गुसाँई ❀ जैहौं नाथ बाणकी नाई ॥ ९ ॥
हर्षि भरत तब आयसु दीन्हा ❀ पद सिर नाइ गवन कपि कीन्हा ॥१०॥

हे गोसाँई ! आपके प्रतापको हृदयमें धारणकर हे नाथ ! बाणकीही भांति जाऊंगा ॥ ९ ॥ तब भरतजीने प्रसन्न होकर आज्ञा दी और हनूमान् उनके चरणोंको शिर नवाकर चले ॥ १० ॥

दो०-भरतबाहुबल सील गुन, प्रभुपदप्रीति अपार ॥
जात सराहत मनहिं मन, पुनि पुनि पवनकुमार ॥ ८४ ॥

हनूमान् भरतजीके भुजाओंके पराक्रम, शील, गुण, और भगवान्‌के चरणोंमें उनके अपार प्रेमको मनही मनमें बार २ सराहते हुये चले जाते हैं ॥ ८४ ॥

चौ०-इहाँ राम लछमनहिं निहारी ❀ बोले बचन मनुजअनुसारी ॥ १ ॥
अर्धराति भइ कपि नहिं आवा ❀ राम उठाइ अनुज उर लावा ॥ २ ॥

यहां रामचन्द्र लक्ष्मणजीको देखकर मनुष्यके समान वचन कहने लगे कि ॥ १ ॥ आधीरात होगई हनूमान् नहीं आया (यह कहकर) रामचन्द्रजीने लक्ष्मणको उठाकर छातीसे लगाया (और बोले) ॥ २ ॥

सकहु न दुखित देखि मोहिं काऊ ❀ बंधु सदा तव मृदुल सुभाऊ ॥ ३ ॥
मम हितलागि तजेहु पितु माता ❀ सहेउ बिपिन हिम आतप बाता ॥ ४ ॥

हे भैया ! तुम मुझे कभी दुःखी नहीं देख सक्ते थे ! तुम्हारा सदासे कोमल स्वभाव था ॥३॥ तुमने मेरे हितके लिये पिता माता छोड़ दिये और बनमें सर्दी गर्मी और पवन सही ॥ ४ ॥

सो अनुराग कहाँ अब भाई ❀ उठहु न सुनि मम वच विकलाई ॥५॥
जौ जन त्यों बन बंधु बिछोहू ❀ पितावचन नहिं मनतेंउ ओहू ॥ ६ ॥

हे भाई ! वह प्रीति अब कहां है ? मेरी विकल वाणी सुनकर उठते क्यों नहीं हो ! ॥ ५ ॥ जो जानता कि बनमें भाईसे वियोग होगा तौ पिताके उन वचनोंको न मानता ॥ ६ ॥

सुत बित नारि भवन परिवारा ❀ होहिं जाहिं जग बारहिं बारा ॥ ७ ॥
अस बिचारि जिय जागहु ताता ❀ मिलहि न जगत सहोदर भ्राता ॥ ८ ॥

पुत्र, धन, स्त्री, गृह, कुटुंब, संसारमें बारंबार होते और नाश होजाते हैं ॥ ७ ॥ परन्तु हे प्यारे ! संसारमें सगा भाई नहीं मिलता ऐसे मनमें बिचारकर जागो ॥ ८ ॥

जथा पंखबिनु खग अति दीना ❀ मनिबिनु फनि करिवर करहीना ॥ ९ ॥
अस मम जिवन बंधु बिनु तोही ❀ जो जड़ दैव जियावै मोही ॥ १० ॥

जैसे पंखोंके विना पक्षी अतिदुःखी होता है और मणिके बिना सर्प और सूंड़के बिना हाथी होता ॥९॥ सो हे भाई ! जो मूर्ख विधाता मुझे जिवावै तौ तुझ भाई बिना मेराभी जीवन ऐसाही है१०

जैहौं अवध कवन मुख लाई ❀ नारिहेतु प्रियबंधु गँवाई ॥ ११ ॥
वरु अपजस सहतेउँ जगमाहीं ❀ नारिहानि बिसेष क्षति नाहीं ॥ १२ ॥

---

(१) यहां भगवान् नरलीला दिखा रहे हैं और सब वचन दुःखकी बेहोशीमें कह रहे हैं जैसा आगेके सोरठेमें कहा है कि "प्रभुप्रलाप सुनि कान, विकल भयहु वानरनिकर।" बहुतसे लोगोंने ऐंचा तानी के अनेक कपोलकल्पित अर्थ लगाये हैं वे समझमें नहीं आते ॥

अयोध्याको कौनसा मुख लेकर जाऊँगा जो स्त्रीके लिये प्यारे भाईको खो दिया ॥ ११ ॥ संसारमें बुराईको भलेही सहता (कि वनमें जाकर स्त्रीकोभी खो दिया परन्तु) स्त्रीकी हानि कुछ बड़ी भारी हानि नहीं थी ॥ १२ ॥

अब अपलोक सोक यह तोरा ❀ सहहि कठोर निठुर उर मोरा ॥ १३ ॥
निजजननीके एक कुमारा ❀ तात तासु तुम प्रान अधारा ॥ १४ ॥

और अब तौ उस निन्दा और तेरे शोक दोनोंको मेरा कठोर और निर्दयी हृदय सहता है ॥ १३ ॥ हे प्यारे ! अपनी माताके ईकलौते पुत्र तुम उसके प्राणोंके आधार थे ॥ १४ ॥

सौंपेसि मोहिं तुमहिंगहि पानी ❀ सब बिधि सुखद परमहित जानी ॥१५॥
उतर ताहि देहौं का जाई ❀ उठि किन मुहिं समुझावहु भाई ॥१६॥

उसने मुझे सब प्रकारसे सुख देनेवाला और बड़ा हितकारी जानकर तुम्हारा हाथ पकड़ाकर सौंपा था ॥१५॥ सो हे भाई ! उसे जाकर क्या उत्तर दूंगा, उठकर मुझे क्यों नहीं समझाते ? ॥१६॥

बहुविध सोचत सोचबिमोचन ❀ स्रवत सलिल राजिवदललोचन ॥१७॥
उमा अखंड एक रघुराई ❀ नरगति भक्त कृपालु देखाई ॥ १८ ॥

शोचके नाश करनेवाले होकर (भगवान्) बहुत भांति शोचते हैं और कमलदलके समान नेत्रोंसे जल बहाते हैं ॥१७॥ (महादेवजी कहते हैं) हे पार्वती ! रामचन्द्रजी तौ अखंड सच्चिदानंद हैं और यह मनुष्यलीला तौ भक्तोंके ऊपर दया करनेके लिये दिखलाई है ॥ १८ ॥

सो०-प्रभुप्रलाप सुनि कान, बिकल भयउ बानरनिकर ॥ ❀
आइ गयउ हनुमान, जिमि करुनामहँ बीररस ॥ ९ ॥ ❀

भगवान्‌के प्रलाप[1] कहिये अस्तव्यस्त वचनोंको कानोंसे सुनकर बन्दरोंका समूह विकल होगया तौ (उसी समय) हनूमान् ऐसे आगये जैसे करुणामें वीररस आता हो ॥ ९ ॥

चौ०-हर्षि राम भेटे हनुमाना ❀ अति कृतज्ञ प्रभु परमसुजाना ॥ १ ॥
तुरत वैद्य तब कीन्ह उपाई ❀ उठि बैठेउ लछमन हर्षाई ॥ २ ॥

उपकारके बड़े माननेवाले और अति चतुर भगवान् रामचन्द्रजी प्रसन्न होकर हनूमान्‌से मिले ॥ १ ॥ तब (सुषेण) वैद्यने शीघ्रही उपाय किया तौ लक्ष्मणजी प्रसन्नतासे उठ बैठे ॥ २ ॥

हृदय लाइ भेटे प्रभु भ्राता ❀ हर्षे सकल भालुकपिव्राता ॥ ३ ॥
पुनि कपि वैद्य तहाँ पहुँचावा ❀ जेहि बिध तबहिं ताहि लै आवा ॥४॥

भगवान् भाईको हृदयसे लगाकर मिले और सब रीछ बन्दोरोंके समूह प्रसन्न होगये ३ तब भगवान्‌के कहेसे हनूमान्‌जीने वैद्यको वहाँही (इस प्रकार) पहुँचा दिया कि जिस प्रकार उसको लाये थे॥४॥

यह बृत्तांत दसानन सुनेऊ ❀ अति बिषाद पुनि पुनि सिर धुनेऊ ॥५॥
ब्याकुल कुंभकर्णपहँ गयऊ ❀ करि बहु जतन जगावत भयऊ ॥ ६ ॥

यह समाचार रावणने सुना तौ बड़े शोकसे वारंवार अपना शिर पीटा ॥ ५ ॥ और दुखी होकर कुंभकर्णके पास गया और बहुतसे उपाय करके जगाने लगा ॥ ६ ॥

जागा निसिचर देखिय कैसा ❀ मानहुँ काल देहधरि जैसा ॥ ७ ॥
कुंभकर्ण पूछा सुन भाई ❀ काहे तव मुख रहा सुखाई ॥ ८ ॥

---

(१) प्रलापयुक्त वचन कहकर नरलीला दिखा रहे हैं । और सब अर्थ ऐंचा तानीसे भरे हैं ॥

राक्षस जगा सो कैसा दिखाई दिया मानों साक्षात् कालही देह धारण किये है ॥ ७ ॥ कुंभकर्णने पूंछा हे भाई ! सुन, तेरा मुख क्यों सूख रहा है ? ॥ ८ ॥

कथा कही सब तेहिं अभिमानी ❀ जेहि प्रकार सीता हरि आनी ॥ ९ ॥
तात कपिन निसिचर संहारे ❀ महा महा योधा सब मारे ॥ १० ॥

तब उस अभिमानी (रावण) ने सब कथा कही कि जिस भांतिसे सीताजीको हर लायाथा और बोला ॥९॥ हे भाई ! वन्दरोंने राक्षसोंका नाश कर दिया और बड़े २ योद्धा सब मारडाले ॥१०॥

दुर्मुख सुररिपु मनुजअहारी ❀ भट अतिकाय अकंपन भारी ॥ ११ ॥
अपर महोदर आदिक बीरा ❀ परे समरमहँ सब रनधीरा ॥ १२ ॥

और देवताओंके वैरी और मनुष्योंको खानेवाले बड़े २ भारी दुर्मुख अतिकाय अकंपन ॥११॥ और महोदर आदिक सब रणधीर योद्धा लड़ाईमें मारे गये ॥ १२ ॥

दो०–सुनि दसकंधरके बचन, कुंभकर्ण बिलखान ॥ ❀
जगदंबा हरि आनिकै, सठ चाहसि कल्यान ॥ ८५ ॥ ❀

कुंभकर्ण रावणके वचन सुनकर दुखी हुआ कि अरे मूर्ख ! जगत्की माता (सीताजी) को हर लाकर कल्याण चाहता है ॥ ८५ ॥

चौ०–भल न कीन्ह तैं निसिचरनाहा ❀ अब मोहिं आनि जगायहु काहा ॥ १ ॥
अजहुँ तात त्यागहु अभिमाना ❀ भजहु राम होइहि कल्याना ॥ २ ॥

अरे राक्षसराज (रावण) तैने अच्छा नहीं किया, और अब आकर मुझको क्यों जगाया ? ॥१॥ हे प्यारे ! अबभी अभिमानको छोड़कर रामचन्द्रजीका भजन करो तो कल्याण होगा ॥ २ ॥

हे दससीस मनुज रघुनायक ❀ जाके हनूमानसे पायक ॥ ३ ॥
अहह बंधु तैं कीन्ह खुटाई ❀ प्रथम न मोहिं जगायहु आई ॥ ४ ॥

हे रावण ! क्या रामचन्द्रजी मनुष्य हैं कि जिनके हनूमान् सरीखे सेवक हैं ॥ ३ ॥ हा भाई तैंने यह बुराई करी कि मुझे पहलेसे आकर न जगाया ॥ ४ ॥

कीन्हेहु प्रभु बिरोध तेहि देवक ❀ सिव बिरंचि सुर जाके सेवक ॥ ५ ॥
नारदमुनि मोहिं ज्ञान जो कहेऊ ❀ कहतेहुँ तोहिं समय नहिं रहेऊ ॥ ६ ॥

हे देव ! तैंने उन भगवान्से विरोध किया कि जिनके महादेव ब्रह्मा और देवता सेवक हैं ॥५॥ [१]नारदमुनिने मुझसे जो ज्ञान कहा था सो तुझसे कहता परन्तु अब समय नहीं रहा ॥ ६ ॥

अब भर अंक भेंट मोहिं भाई ❀ लोचन सफल करौं मैं जाई ॥ ७ ॥
स्याम गात सरसीरुहलोचन ❀ देखौं जाइ तापत्रयमोचन ॥ ८ ॥

सो हे भाई ! अब मुझसे गोद भरकर मिल ले, मैंभी जाकर नेत्रोंको सफल करूं ॥ ७ ॥ साँवले शरीर और कमलसे नेत्रोंवाले तथा [२]तीनों पापोंके नाश करनेवाले (ऐसे भगवान्) के जाकर दर्शन करूं ॥ ८ ॥

दो०–रामरूप गुन सुमिरि मन, मगन भयउ छिन एक ॥ ❀
रावन माँगेउ कोटि घट, मद अरु महिष अनेक ॥ ८६ ॥ ❀

---

(१) नारदमुनिने यही ज्ञान दिया था कि "तुम दोनों भाइयोंके मारनेके लिये रामावतार होगया, इसलिये रामभजन करो" यह कथा संक्षेपरीतिसे अध्यात्मरामायणमें लिखी है ॥ (२) गूढ़ार्थदीपिकामें देखो.

(कुंभकर्ण) रामचन्द्रजीके स्वरूप और गुणोंको मनमें स्मरण करके एक क्षणभर तौ बेसुध होगयां फिर रावणसे करोड़ घड़े मदिराके और अनेक भैंसे (खानेको) माँगे ॥ ८६ ॥

चौ०-महिष खाइ करि मदिरापाना ❀ गर्जेउ वज्राघातसमाना ॥ १ ॥
कुंभकर्ण दुर्मद रनरंगा ❀ चलेउ दुर्ग तजि सेन न संगा ॥ २ ॥

भैंसे खाकर और मदिरा पीकर वज्राघातके समान गर्जा ॥ १ ॥ और बडा अभिमानी रणवाँकुरा कुंभकर्ण लड़ाईके रंगमें रँगा हुआ किलेकों छोड़कर चला, साथमें सेनाभी नहीं ली ॥ २ ॥

देखि बिभीषन आगे आयऊ ❀ पुनि पद गहि निजनाम सुनायउ ॥ ३ ॥
अनुज उठाइ हृदय तेहिं लावा ❀ रघुपतिभक्त जानि मन भावा ॥ ४ ॥

उसे देखकर विभीषण आगे आया और फिर चरण छूकर अपना नाम बताया ॥ ३ ॥ उस (कुंभकर्ण) ने भाईको उठाकर छातीसे लगाया और रामचन्द्रजीका दास जानकर मनको प्यारा लगा (तब विभीषणने कहा) ॥ ४ ॥

तात लात मोहिं रावन मारा ❀ कहत परमहित मंत्र बिचारा ॥ ५ ॥
तेहि गलानि रघुपतिपहँ आयउँ ❀ दीन जानि प्रभुके मन भायउँ ॥ ६ ॥

हे प्यारे ! विचार कर बड़े भलेकी वात कहते हुयेभी मुझे रावणने लात मारी ॥ ५ ॥ उसी घृणासे बुरा मानकर मैं रामचन्द्रजीके पास आया तौ दीन जानकर भगवान्के मनमें अच्छा लगा (कुंभकर्णने कहा) ॥ ६ ॥

सुनु सुत भयउ कायबस रावन ❀ सो किमि मानै परम सिखावन ॥ ७ ॥
धन्य धन्य तैं धन्य बिभीषन ❀ भयहु तात निसिचरकुलभूषन ॥ ८ ॥
बंधु बंस तैं कीन्ह उजागर ❀ भजहु राम सोभासुखसागर ॥ ९ ॥

हे पुत्र ! सुन, रावण तौ कालके वश हुआ है सो वह अच्छी शिक्षाको कैसे मान सक्ता है? ॥ ७ ॥ धन्य है धन्य है, हे बिभीषण ! तुझको धन्य है. हे प्यारे ! तू राक्षसोंके वंशमें आभूषण हुआ ॥ ८ ॥ हे भाई, तैंने कुलको उजागर किया कि जो शोभा और सुखके समुद्र रामचन्द्रजीका भजन किया ॥ ९ ॥

दो०-बचन कर्म मन कपट तजि, भजहु तात रघुबीर ॥ ❀
जाहु न निज पर सूझ मोहिं, भयउँ कालबस बीर ॥ ८७ ॥ ❀

हे प्यारे ! मन कर्म व वचनसे छल छोड़कर रामचन्द्रजीका भजन करो, हे वीर ! (अब तुम) जाओ, मुझे अपना पराया नहीं सूझता (क्योंकि मैंभी) कालके वश होगया हूं ॥ ८७ ॥

चौ०-बंधुबचन सुनि फिरा बिभीषन ❀ आयउ जहँ त्रैलोक्यविभूषन ॥ १ ॥
नाथ भूधराकारसरीरा ❀ कुंभकर्ण आवत रनधीरा ॥ २ ॥

भाईके वचन सुनकर बिभीषण लौटा और वहां आया जहां तीनों लोकोंके आभूषण भगवान् थे और कहा ॥ १ ॥ हे स्वामी ! पर्वतके समान शरीरवाला रणधीर कुंभकर्ण आरहा है ॥ २ ॥

इतना कपिन सुना जब काना ❀ किलकिलाइ धाये हनुमाना ॥ ३ ॥
लिये उठाइ बिपट अरु भूधर ❀ कटकटाइ डारहिं ताऊपर ॥ ४ ॥

जब वन्दरोंने इतनी वात कानोंसे सुनी तौ हनूमान् किलाकिलाकर दौड़े ॥ ३ ॥ और वृक्ष पर्वत उठा लिये और कटकटाकर उसके ऊपर डालने लगे ॥ ४ ॥

---

(१) वाल्मीकीयरामायणमें इसकी लंबाई १२०० गज चौड़ाई २०० गजकी थी और नेत्र छकड़ेके पहियेके समान थे ऐसा लिखा है.

कोटि कोटि गिरि सिखरप्रहारा ❀ करहिं भालु कपि एकहिं बारा ॥ ५ ॥
मुरै न मन तनु टरै न टारे ❀ जिमि गज अर्कफलनके मारे ॥ ६ ॥

करोड़ों २ पर्वतोंके शिखरोंसे रीछ बन्दर उसे एकही साथ मारने लगे ॥ ५ ॥ सो न तौ वह मनमें हारता है और न उसका शरीर हटानेसे हटता है (ऐसा लगता है) जैसे आकके फल अर्थात् डौड़ोंके मारनेसे हाथी लगता हो ॥ ६ ॥

तब मारुतसुत मुष्टिक हनेऊ ❀ परेउ धरनि ब्याकुल सिर धुनेऊ ॥ ७ ॥
पुनि उठि तेंई मारेउ हनुमंता ❀ घूर्णित भूतल परेउ तुरंता ॥ ८ ॥

तब हनूमान्ने एक घूँसा मारा तौ वह व्याकुल होकर पृथ्वीपर गिरपड़ा और अपना शिर धुनने लगा ॥७॥ फिर उसने उठकर हनूमान्को मारा तौ वे शीघ्रही घूमकर पृथ्वीपर गिरपड़े ॥ ८ ॥

पुनि नल नीलहिं अवनि पछारेसि ❀ जहँ तहँ पटकि पटकि भट मारेसि ॥९॥
चली बलीमुखसेन पराई ❀ अतिभयत्रसित न कोउ समुहाई ॥१०॥

फिर नल नीलको पृथ्वीपर पछाड़ डाला और जहां तहां पटक २ के योद्धाओंको मारने लगा ॥९॥ (वन्दरोंकी) सेना भाग चली और भयके मारे ऐसी घबराई कि कोई उसके सामने नहीं पड़ता ॥१०॥

दो०-अंगदादि कपि मूरच्छित, करि समेत सुग्रीव ॥ ❀
काँख दाबि कपिराजकहँ, चला अमितबलसीव ॥ ८८ ॥ ❀

अंगदआदि बन्दरोंको सुग्रीवसहित मूर्च्छित करके और सुग्रीवको काँखमें दबाकर बड़े बलकी सीमा कुंभकर्ण चला ॥ ८८ ॥

चौ०-उमा करत रघुपति नरलीला ❀ खेल गरुड़ जिमि अहिगनमीला ॥ १ ॥
भ्रुकुटिभंग जो कालहि खाई ❀ ताहि कि ऐसी सोह लराई ॥ २ ॥

(महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! रामचन्द्र मनुष्योंके ऐसे चरित्र करते हैं जैसे गरुड सर्पोंके समूहमें मिलकर खेलता हो ॥ १ ॥ जो भृकुटीको टेढी करैं तौ कालकोभी खा जावें, उन्हें क्या ऐसी लड़ाई शोभा देती है ? ॥ २ ॥

जगपावन कीरति बिस्तरहीं ❀ गाइ गाइ नर भवनिधि तरहीं ॥ ३ ॥
मूर्च्छा गइ मारुतसुत जागा ❀ सुग्रीवहिं तब खोजन लागा ॥ ४ ॥

पर वे संसारको पवित्र करनेवाले ऐसे अपने यशको बढ़ाते है कि जिसे गा २ कर मनुष्य संसाररूपी समुद्रसे तर जावैं ॥३॥ जब हनूमान्की मूर्च्छा बीत गई तौ जगे और सुग्रीवको ढूंढ़ने लगे ॥४॥

कपिराजहुकर मूर्च्छा बीती ❀ निबुकिगये तिहि मृतकप्रतीती ॥ ५ ॥
काटेसि दसन नासिका काना ❀ गर्जि अकास चला तेहि जाना ॥ ६ ॥

सुग्रीवकीभी मूर्च्छा बीत गई तौ उस (कुंभकर्ण) को अपना मरण निश्चय कराकर (काँखमेंसे) खसका पड़ा ॥५॥ और दातोंसे नाक कान काटकर और गर्जकर आकाशको चला और जब उस (कुंभकर्ण) ने यह जाना ॥ ६ ॥

गहेसि चरन धरि धरनि पछारा ❀ अति लाघव पुनि उठि तेहि मारा ॥७॥
पुनि आयउ प्रभुपहँ बलवाना ❀ जयति जयति कह कृपानिधाना ॥ ८ ॥

तब पैर पकड़कर पृथ्वीपर धर पछाड़ा (फिर सुग्रीवने) बड़ी शीघ्रतासे उठकर उसे मारा ॥७॥ फिर वह बलवान् (सुग्रीव) भगवान्के पास आया और कृपानिधानकी जय २ कहने लगा ॥ ८ ॥

नाक कान काटे तेंहि जानी ❀ फिरा क्रोध करि मानि गलानी ॥ ९ ॥
सहज भीम पुनि विनु स्रुति नासा ❀ देखत कपिदल उपजी त्रासा ॥ १० ॥

उस (कुंभकर्ण) ने अपने नाक कान कटे हुये जाने तौ ग्लानि मानकर क्रोधकर दौड़ा ॥ ९ ॥ (प्रथम तौ) साधारणहीमें भयंकर फिर नकटा और बूचा सो उसे देखतेही बन्दरोंकी सेनाको बड़ा भय उत्पन्न हुआ ॥ १० ॥

दो०–जय जय जय रघुवंशमनि, धाये कपि कर हूह ॥ ❀
एकहि वार जो तासु पर, छाँड़े गिरि तरु जूह ॥ ८९ ॥ ❀

बन्दर हू हू करके रामचन्द्रजीकी जय जय जय कहते हुये दौड़े और एकही संग उसपर पर्वत और वृक्षोंके समूह छोड़ने लगे ॥ ८९ ॥

चौ०–कुंभकर्ण रनरंग विरुद्धा ❀ सन्मुख चला काल जिमि क्रुद्धा ॥ १ ॥
कोटि कोटि कपि धरि धरि खाई ❀ जनु टीड़ी गिरि गुहा समाई ॥ २ ॥

कुंभकर्ण रणके रंगसे क्रोधित होकर सामने ऐसा चला मानों क्रोधमें भराहुआ काल आरहा हो ॥ १ ॥ और करोड़ २ बन्दरोंको पकड़ २ कर जो खाजाता है (सो ऐसा दीखता है) मानों टीड़ियां पर्वतकी कन्दरामें धस रहीं हैं ॥ २ ॥

कोटिन्ह गहि सरीरसन मर्दा ❀ कोटिन मींजि मिलायसि गर्दा ॥ ३ ॥
मुख नासिका स्रवनकी बाटा ❀ निकसि पराहिं भालुकपिठाटा ॥ ४ ॥

करोड़ोंको पकड़ के शरीरसे मींड़ ड़ाला और करोड़ोंको मींजकर धूलमें मिला दिया ॥३॥ मुख, नाक और कानके रस्तेसे निकल २ रीछ बन्दरोंके समूह भाग जाने लगे ॥ ४ ॥

रनमदमत्त निसाचर दर्पा ❀ मानहु विस्व ग्रसनकहँ अर्पा ॥ ५ ॥
मुरे सुभट रन फिरहिं न फेरे ❀ सूझ न नयन सुनै नहिं टेरे ॥ ६ ॥

लड़ाईके मदमें मतवाले राक्षसका ऐसा घमंड था मानों संसारके ग्रसनेका संकल्प किया है ॥ ५ ॥ फिरे हुये योद्धा लौटानेसे लड़ाईमें नहीं लौटते, नेत्रोंसे दिखाई नहीं देता और पुकारनेसे सुनते नहीं हैं ॥ ६ ॥

कुंभकर्ण कपिफौज बिदारी ❀ सुनि धाये रजनीचर झारी ॥ ७ ॥
देखी राम विकल कटकाई ❀ रिपुअनीक नाना विधि आई ॥ ८ ॥

कुंभकर्णने बन्दरोंकी सेना नाश कर दी यह सुनकर सब राक्षस लौटे ॥ ७ ॥ रामचन्द्रजीने देखा कि सेना तीन तेरह हुई और वैरीकी अनेक प्रकारकी सेना आई (तब) ॥ ८ ॥

दो०–सुनु सौमित्रि बिभीषन, सकल सँभारहु सैन ॥ ❀
मैं देखौं खलबल दलहिं, बोले राजिवनैन ॥ ९० ॥ ❀

कमलसमान नेत्रवाले (भगवान्) बोले कि हे लक्ष्मण ! और बिभीषण सुनो (तुम) सब सेनाको सम्हालो और मैं दुष्टके बल और सेनाको देखूं ॥ ९० ॥

चौ०–कर सर धनुष साजि कटि भाथा ❀ मृगपतिठवन चले रघुनाथा ॥ १ ॥
प्रथम कीन्ह प्रभु धनुषटँकोरा ❀ रिपुदल बधिर भये सुनि घोरा ॥ २ ॥

हाथमें धनुष बाण और कमरमें तरकस सजाकर सिंहकीसी चालसे रघुनाथजी चले ॥१॥ पहलेही भगवान्ने धनुषकी टंकोर की कि जिसके घोर (शब्द) को सुनकर वैरीकी सेना बहिरी होगई॥२॥

धनु संधानि छांड़ शर लक्षा ❀ कालसर्प जनु चले सपक्षा ॥ ३ ॥
अतिबल चले निकर नाराचा ❀ लगे कटक भट बिकट पिसाचा ॥ ४ ॥

और धनुषको संधानकर एक लाख बाण ऐसे छोड़े मानों कालरूपी सर्प पंख फड़फड़ातेहुये चले जारहे हैं ॥३॥ बड़े वलसे बाणोंके समूह चले कि जिनसे योद्धारूपी भयंकर पिशाच कटने लगे॥४॥

कटहिं चरन उर सिर भुजदंडा ❀ बहुतक बीर होहिं सतखंडा ॥ ५ ॥
घूमि घूमि घायल महि परहीं ❀ उठिहिं संभारि सुभट फिरी लरहीं ॥६॥

पैर, हृदय, मस्तक और भुजदंड कटने लगे और बहुतेरे योद्धाओंके सौ २ टुकडे होने लगे॥५॥ घायल घूम २ कर पृथ्वीपर पड़ने लगे और फिर सुन्दर योद्धा सम्हलकर उठ २ के लड़ने लगे ॥६॥

लागत बान जलद जिमि गाजहिं ❀ बहुतक देखि कठिन सर भाजहिं ॥७॥
रुंड प्रचंड मुंड बिनु धावहिं ❀ धरु धरु मारु मारु गुहरावहिं ॥ ८ ॥

बाण लगतेही बादलकी भांति गर्जते हैं और बहुतेरे कठिन बाणोंको देखकरही भाग जाते हैं ॥ ७ ॥ वड़े २ रुंड बिना मुंडके दौड़ते हैं और पकड़ो २ मारो २ ऐसा शोर मचाते हैं ॥ ८ ॥

दो०-क्षनमहँ प्रभुके सायकन्हि, काटे बिकट पिसाच ॥ ❀
पुनि रघुपतिके तूनमहँ, प्रविसे सब नाराच ॥ ९१ ॥ ❀

भगवान्‌के बाणोंने क्षणभरमें भयंकर पिशाच काट डाले और फिर सब बाण रामचन्द्रजीके तरकसमें जा घुसे ॥ ९१ ॥

चौ०-कुंभकर्ण मन दीख बिचारी ❀ छनमहँ हते निसाचर झारी ॥ १ ॥
भयउ क्रोध दारुन बलबीरा ❀ करि मृगनायकनाद गँभीरा ॥ २ ॥

कुंभकर्णने मनमें विचारकर देखा कि सब राक्षस क्षणभरमें मार डाले ॥ १ ॥ तौ बलवान् योद्धा सिंहकासा गंभीर शब्द करके बड़ा भारी क्रोधित हुआ ॥ २ ॥

कोपि महीधर लियउ उपारी ❀ डारेसि जहँ मर्कटभटभारी ॥ ३ ॥
आवत देखि सैल प्रभु भारे ❀ सरनि काटि रजसम करि डारे ॥ ४ ॥

और क्रोध करके पर्वत उखाड़ लिये और जहाँ बड़े २ योद्धा बन्दर थे (वहाँ उनपर) डालने लगा ॥३॥ भगवान्‌ने बड़े २ पर्वतोंकी आते हुये देख बाणोंसे काटकर धूलके समान कर दिया ॥४॥

पुनि धनु तानि कोपि रघुनायक ❀ छाँडे अति कराल बहुसायक ॥ ५ ॥
तनुमहँ प्रविसि निसरि सर जाहीं ❀ जिमि दामिनि घनमाहँ समाहीं ॥ ६ ॥

फिर रामचन्द्रजीने धनुष चढ़ाकर और क्रोधित होकर बड़े भयंकर बहुतसे बाण छोड़े ॥५॥ सो वे बाण शरीरमें घुस करके ऐसे निकल जाने लगे जैसे बिजली बादलोमें समा जाती है ॥ ६ ॥

सोनित स्रवत सोह तनु कारे ❀ जिमि कज्जलगिरि गेरु पनारे ॥ ७ ॥
बिकल बिलोकी भालु कपि धाए ❀ बिहँसा जबहिं निकट चलि आए ॥ ८ ॥

काले शरीरमें लोहू बहता हुआ ऐसा शोभायमान् लगता है मानों कज्जलके पर्वतमें गेरूके पनाले वह रहे हैं ॥ ७ ॥ (उसको) व्याकुल देखकर रीछ बन्दर दौड़े और जब पास आगये तब (कुंभकर्ण) हँसा ॥ ८ ॥

दो०-गर्जत धायउ वेग अति, कोटि कोटि गहि कीस ॥ ❀
महि पटकै गजराज इव, सपथ करै दससीस ॥ ९२ ॥ ❀

और गर्जत हुआ बड़ी शीघ्रतासे दौड़ा और करोड़ २ बन्दरोंको पकड़ २ कर सिंहकी भाँति पृथ्वीपर पटकता हुआ रावणकी दुहाई देने लगा ॥ ९२ ॥

चौ०-भागे भालु कपिनके जूथा ❀ प्रबल पवन जिमि मेघबरूथा ॥ १ ॥
चले भालु कपि भागि भवानी ❀ बिकल पुकारत आरतबानी ॥ २ ॥

रीछ बन्दरोंके समूह ऐसे भागने लगे जैसे भारी पवनसे बादलोंके समूह (उड़ जाते हैं) ॥ १ ॥ (महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! रीछ बन्दर व्याकुल होंकर दुःखकी वाणीसे यह पुकारते हुये भाग चले कि ॥ २ ॥

यह निसिचर दुकालसम अहई ❀ कपिकुल देस परन अब चहई ॥ ३ ॥
कृपावारिधर राम खरारी ❀ पाहि पाहि प्रनतारतिहारी ॥ ४ ॥

यह राक्षस अकालके समान है और बन्दरोंके कुलरूपी देशपर अब पड़ना चाहता है ॥ ३ ॥ सो हे खरारी भक्तदुखभंजन रामचन्द्रजी ! अपनी कृपारूपी मेघसे रक्षा करो रक्षा करो ॥ ४ ॥

करुना बचन सुनत भगवाना ❀ चले सुधारि सरासन बाना ॥ ५ ॥
राम सेन निज पाछे घाली ❀ चले सकोपि महाबलसाली ॥ ६ ॥

करुणायुक्त बचन सुनतेही भगवान् धनुषबाणको सुधारकर चले ॥ ५ ॥ बड़े बलवान् रामचन्द्रजीने अपनी सेनाको तौ [1]पीछे कर लिया और आप क्रोधित होकर चले ॥ ६ ॥

खैंचि धनुष सर सत संधाने ❀ छूटे तीर सरीर समाने ॥ ७ ॥
लागत सर धावा रिसभरा ❀ कुधर डगमगे डोली धरा ॥ ८ ॥

और धनुष खींचकर सौ बाण ऐसे लगाये कि तीर छूटकर (कुंभकर्णके) शरीरमें समा गये ॥७॥ बाणोंका लगतेही क्रोधमें भराहुआ(कुंभकर्ण) दौड़ा तौ पहाड़ डिगमिगाने लगे और पृथ्वी हिलने लगी

लीन्हा तेइँ इक सैल उपाटी ❀ रघुकुलतिलक भुजा सोइ काटी ॥ ९ ॥
धावा बामबाहु गिरिधारी ❀ प्रभु सोउ भुजा काटि महि डारी ॥१०॥

उसने एक पर्वत उखाड़ लिया तौ रामचन्द्रजीने भुजा काट डाली ॥ ९ ॥ फिर बाईं भुजासे पर्वत लेकर दौड़ा तौ भगवान्ने वह भुजाभी काटकर पृथ्वीपर डाल दी ॥ १० ॥

काटे भुज सोहै खल कैसे ❀ पक्षहीन मंदरगिरि जैसे ॥ ११ ॥
उग्र बिलोकनि प्रभुहिं बिलोका ❀ मानहुँ ग्रसन चहत त्रैलोका ॥ १२ ॥

कटी हुई भुजाओंसे दुष्ट कैसा लगने लगा जैसे पंखहीन मन्दराचल पर्वत लगता हो ॥११॥ और आँख फाड़कर भगवान्को ऐसे देखने लगा मानों तीनों लोकोंको निगला चाहता है ॥ १२ ॥

दो०-करि चिक्कार अति घोर रव, धावा बदन पसारि ॥ ❀
गगन सकल सुर त्रास अति, हाहाकार पुकारि ॥ ९३ ॥ ❀

चिक्कार कर और बड़े घोर शब्दसे मुँह पसारकर दौड़ा तौ आकाशमें सब देवता बड़े दुःखसे हाहाकार पुकारने लगे ॥ ९३ ॥

चौ०-समय देव करुनानिधि जाने ❀ सवनप्रयंत सरासन ताने ॥ १ ॥
छाँड़े बिसिखनिकर मुख भरेऊ ❀ तदपि महाबल भूमि न परेऊ ॥ २ ॥

दयाके समुद्र (भगवान्) ने देवताओंको डरा हुआ जाना तौ कानतक धनुष ताना ॥ १ ॥ और ऐसे बाणोंके समूह छोड़े कि(जिनसे)मुख भरगया तौभी ऐसा भारी बलवान् है कि पृथ्वीपर न गिरा २

---

(१) सेनाको पीछे इसलिये कर लिया कि बन्दर हिम्मत हारगये हैं ॥

सरनि भरा मुख सनमुख धावा ❀ कालत्रोन सजीव जनु आवा ॥ ३ ॥
तब प्रभु कोपि तीव्र सर लीन्हा ❀ धरते भिन्न तासु सिर कीन्हा ॥ ४ ॥

और बाणोंके भरे हुये मुखसे सामने ऐसा दौड़ा मानों साक्षात् कालका तरकस आता हो ॥३॥ तब भगवान्ने क्रोध करके पैना बाण लिया और उसके मुंड़को रुंडसे अलग कर दिया ॥ ४ ॥

सो सिर परा दसाननआगे ❀ बिकल भयउ जिमि फनि मनि त्यागे ॥५॥
धरनि धसै धर धाव प्रचंडा ❀ तब प्रभु काटि कीन्ह दुइ खंडा ॥ ६ ॥

सो मुंड रावणके आगे जा पड़ा (जिसे देखकर वह ऐसा) व्याकुल हुआ जैसे मणिके खोजानेसे सर्प होता है ॥ ५ ॥ और भारी रुंड उठकर दौड़ने लगा और पृथ्वी धसकने लगी तब भगवान्ने उसे काटकर दो टुकड़े कर दिये ॥ ६ ॥

परे भूमि जिमि नभते भूधर ❀ होंठ दाबि कपि भालु निसाचर ॥ ७ ॥
तासु तेज प्रभुबदन समाना ❀ सुर मुनि सबहिं अचंभा माना ॥ ८ ॥

(वे दोनों टुकड़े)पृथ्वीपर ऐसे पड़े जैसे आकाशसे पहाड़ गिरे हों और राक्षसके होंठसे रीछ बन्दर दब गये॥७॥उसका तेज भगवान्के मुखमें समा गया तौ देवता और मुनीश्वर सबोंने अचंभा किया॥८॥

नभ दुंदुभी बजावहिं हर्षहिं ❀ जय जय करि प्रसून सुर वर्षहि ॥ ९ ॥
करि विनती सुर सकल सिधाए ❀ तब तेहि समय देवऋषि आए ॥ १० ॥

देवता आकाशमें नगाड़े बजाते और प्रसन्न होते हैं और जय २ कहकर फूलोंकी वर्षा करते हैं ॥ ९ ॥ जब बिनती करके सब देवता चले गये तब उस समय देवऋषि (नारदजी) आये ॥ १० ॥

गगनोपरि हरिगुनगन गाये ❀ रुचिर बीररस प्रभु मन भाये ॥ ११ ॥
वेगि हतहु खल मुनि कहि गयऊ ❀ राम समरमहि शोभित भयऊ ॥ १२ ॥

और आकाशके उपर भगवान्के अनेक गुण गाने लगे और सुन्दर वीररस धारण किये भगवान् मनको प्यारे लगे ॥ ११ ॥ और राक्षसोंको जल्दी मारो ऐसे कहकर मुनीश्वर तौ चले गये और रामचन्द्रजी रणभूमिमें शोभायमान हुये ॥ १२ ॥

छं०-संग्रामभूमि बिराज रघुपति अतुलबल कोसलधनी । ❀
स्रमबिंदुमुख राजीवलोचन रुचिरतनु सोनितकनी ॥ ❀
भुजजुगल फेरतसर सरसरासन भालु कपि चहुँ दिसि बने । ❀
कह दास तुलसी कहि न सक छबि सेष जेहि आनन घने ॥३॥❀

अतुल बली अवधविहारी रामचन्द्रजी रणभूमिमें कैसे शोभित हैं कि जिनके कमलसे नेत्र हैं; मुखपर पसीनेकी बूँदे निकल रहीं है और सुन्दर शरीरपर लोहूकी छीटें पड़ी हैं, दोनों भुजाओंसे धनुष बाण फिरा रहे हैं और उनके चारों ओर रीछ बन्दर खड़े हैं ! तुलसीदास कहते हैं कि उस शोभाको शेषजीभी नहीं कह सक्ते कि जिनके बहुतसे मुख हैं ॥ ३ ॥

दो०-निसिचर अधम मलायतनु, ताहि दीन्ह निज धाम ॥ ❀
गिरिजा ते नर मंदमति, जे न भजहिं स्रीराम ॥ ९४ ॥ ❀

(महादेव कहते हैं) हे पार्वती! नीच राक्षस जिसका शरीर मलसे भराहुआ था उसे (भगवान्ने) अपना धाम अर्थात् वैकुंठ दिया सो वे मनुष्य बड़े मूर्ख हैं जो श्रीरामचन्द्रजीका भजन नहीं करते ॥९४॥

चौ०-दिनके अंत फिरीं दोउ अनी ❀ समर भयउ सुभट न स्रम घनी ॥ १ ॥
रामकृपा कपिदलबल बाढ़ा ❀ जिमि तृन पाइ अनल अति डाढ़ा ॥२॥

संध्यासमय दोनों सेना लौटीं और लड़ाईमें योद्धाओंको बड़ा परिश्रम हुआ ॥ १ ॥ सोबन्दरोंकी सेनाका बल तौ रामचन्द्रजीकी दयासे ऐसे बढ़ गया जैसे तृणको पाकर अग्निकी लपट बढ़ती है ॥२॥

छीजहिं निसिचर दिन अरु राती ❀ निजमुख धर्म कहे जेहि भाँती ॥ ३ ॥
बहु बिलाप दसकंधर करई ❀ पुनि पुनि बंधु सीस उर धरई ॥ ४ ॥

और राक्षस दिन रात ऐसे छीजते जाते हैं जैसे अपने मुखसे कहनेसे (अपने) धर्मनाश हो जाते हैं ॥३॥ रावण बहुतसा बिलाप करता है और वार २ भाईके मस्तकको अपनी छातीपर रखता है ॥४॥

रोवहिं नारि हृदय हति पानी ❀ तासु तेज बल विपुल बखानी ॥ ५ ॥
मेघनाद तेहि अवसर आवा ❀ कहि बहु कथा पितहिं समुझावा ॥६॥

और उसके बलकी विशेषताका बर्णन करके स्त्रियां छातियोंको हाथोंसे कूटती और रोती हैं ॥५॥ उस समय मेघनाद आया और बहुतसी कथा कहकर पिताको समझाया कि ॥ ६ ॥

देखिहु कालिह मोरि मनुसाई ❀ अबहिं बहुत का करौं बड़ाई ॥ ७ ॥
इष्टदेवसन जो बर पायउँ ❀ सो बल तात न तुमहिं सुनायउँ ॥ ८ ॥

कल मेरा पुरुषार्थ देखना अभी बहुत बड़ाई क्या करूं ? ॥७॥ हे पिता ! (मैंने) इष्टदेवतासे जो वरदान पाये हैं वह बल तुमको नहीं सुनाया ॥ ८ ॥

यहिबिधि जलपतभयउ बिहाना ❀ लगे भालु कपि चहुँदिसि नाना ॥ ९ ॥
इत कपि भालु कालसम बीरा ❀ उत रजनीचर अति रनधीरा ॥ १० ॥
लरहिं सुभट निज निज जयहेतू ❀ बरनि न जाइ समर खगकेतू ॥ ११ ॥

इस भांति बकवाद करते २ सवेरा हो गया और अनेक रीछ बन्दर चारों ओर आलगे ॥ ९ ॥ इधर रीछ बन्दर योद्धा कालके समान थे और उधर राक्षस बड़े रणधीर वीर थे ॥ १० ॥ (कागभुशुंड कहते हैं) हे गरुड़ ! योद्धा अपनी २ जीतके लिये लड़ते हैं और वह युद्ध ऐसा है कि वर्णन नहीं किया जाता ॥ ११ ॥

दो०-मेघनाद माया विरचि, रथ चढ़ि गयउ अकास ॥ ❀
गर्जेउ प्रलयपयोदजिमि, भइ कपिदल अतित्रास ॥ ९५ ॥ ❀

मेघनाद माया रचकर और रथपर चढ़कर आकाशको गया और प्रलयके बादलके समान गर्जने लगा कि जिससे बन्दरोंकी सेनामें खलबली पड़ गयी ॥ ९५ ॥

चौ०-सक्ति सूल सर परिघ कृपाना ❀ अस्त्र सस्त्र कुलिसायुध नाना ॥ १ ॥
डाहे परसु प्रचंड पषाना ❀ लागेउ वृष्टि करै बिध नाना ॥ २ ॥

(मेघनाद) शक्ति, त्रिशूल, बाण, परिघ, तलवार, अस्त्र, शस्त्र, वज्र और अनेक हथियार ॥१॥ फर्सा और प्रचंड पत्थर डालने लगा और अनेक प्रकारसे वर्षा करने लगा ॥ २ ॥

रहे दसहु दिसि सायक छाई ❀ मानहुँ मघामेघ झरि लाई ॥ ३ ॥
धरु धरु मारु सुनहिं कपि काना ❀ जो मारै तेहि कोउ न जाना ॥ ४ ॥

दशों दिशाओंमें बाण ऐसे छागये मानों मघानक्षत्रके बादलकी झड़ी लगती है ॥ ३ ॥ धरमारो २ इस प्रकार बन्दर कानोंसे तौ सुनते हैं परन्तु जो मारता है उसे नहीं जानते ॥ ४ ॥

गहिगिरि तरु अकासकपि धावहिं❀ देखहिं ते न दुखित फिरि आवहिं ॥५॥
अवघट घाट बाट गिरि कंदर ❀ मायाबल कीन्हेसि सरपंजर ॥ ६ ॥

बन्दर वृक्ष और पर्वतोंको लेकर आकाशको दौड़ते हैं पर जब उसे नहीं देखते हैं तौ वे लौट आते हैं ॥५॥ बुरे मार्ग और पहाड़ोंकी कन्दराओंको मायाके बलसे बाणोंका पिंजरा बना दिया अर्थात् सब जगह बाण छादिये ॥ ६ ॥

जाहिं कहाँ व्याकुल भे बंदर ❀ सुरपति बंदि परे जनु मंदर ॥ ७ ॥
मारुतसुत अंगद नल नीला ❀ कीन्हेसि बिकल सकल बलसीला ॥८॥

कहां जायँ, बन्दर ऐसे व्याकुल हो गये मानों मन्दराचल इन्द्रकी कैदमें पड़े हैं ॥ ७ ॥ हनूमान्, अंगद, नल और नील सब बलवानोंको व्याकुल कर दिया ॥ ८ ॥

पुनि लछमन सुग्रीव बिभीषन ❀ सरन्हि मारि कीन्हेसि जर्जर तन ॥९॥
पुनि रघुपतिसन जूझै लागा ❀ सर छाँड़त होइ लागहिं नागा ॥१०॥

फिर लक्ष्मण, सुग्रीव और बिभीषणको बाणोंसे मारकर उनके शरीर झोंतरे कर दिये ॥ ९ ॥ फिर रामचन्द्रजीसे जूझने लगा और उसके बाण छोड़तेही सर्प होकर लगने लगे ॥ १० ॥

व्यालपासबस भयउ खरारी ❀ स्ववस अनंत एक अविकारी ॥ ११ ॥
नट इव कपट चरितकर नाना ❀ सदा स्वतंत्र राम भगवाना ॥ १२ ॥
रणसोभालगि आपु बँधावा ❀ देखि दसा देवन भय पावा ॥ १३ ॥

जों अपनेही आधीन, जिनका अंत नहीं है, जो एकरूपसे सबमें व्याप्त हैं, और बिकाररहित हैं, ऐसे खर दैत्यके शत्रु (भगवान्) नागफाँसके वश हो गये ॥ ११ ॥ भगवान् रामचन्द्रजी तौ सदा स्वतंत्र हैं पर नटकी भांति अनेक प्रकारकी कपटलीला करते हैं ॥ १२ ॥ सो लड़ाईकी शोभाके लिये अपनेको बँधा लिया है ऐसी दशाको देखकर देवता घबरा गये ॥ १३ ॥

दो०-गिरिजा जाकर नाम जपि, नर काटहिं भवपास ॥ ❀
सो प्रभु आव कि बंधतर, व्यापक विस्वनिवास ॥ ९६ ॥ ❀

महादेव कहते हैं हे पार्वती ! जिसके नामको जपकर मनुष्य संसाररूपी फाँसीको काटते हैं वे सर्वव्यापी और संसारमें निवास करनेवाले भगवान् क्या बन्धनमें आ सक्ते हैं ? ॥ ९६ ॥

चौ०-चरित रामके सगुन भवानी ❀ तरकि न जाइ बुद्धि मन बानी ॥ १ ॥
अस बिचारि जो परम बिरागी ❀ रामहिं भजहिं तर्क सब त्यागी ॥ २ ॥

हे पार्वती ! रामचन्द्रजीके ये सगुण चरित्र हैं मन बुद्धि और वाणीसे तर्कना नहीं किये जा सक्ते ॥ १ ॥ ऐसा विचार कर जो बड़े भारी वैरागी हैं सो सब तर्कनाओंको छोड़कर रामचन्द्रजीका भजन करते हैं ॥ २ ॥

व्याकुल कटक कीन्ह घननादा ❀ पुनि भा प्रकट कहत दुर्बादा ॥ ३ ॥
जाम्बवंत कह खल रह ठाढ़ा ❀ सुनिकै ताहि क्रोध अति बाढ़ा ॥ ४ ॥

मेघनादने बन्दरोंकी सेना व्याकुल कर दी, फिर बुरे वचन कहता हुआ प्रकट हो गया ॥३॥ तब जाम्बवंतने कहा अरे दुष्ट ! खड़ा तौ रह, यह सुनकर उसे बहुत क्रोध बढ़ा (और कहने लगा)॥४॥

बूढ़ जानि सठ छाँड़ेउ तोहीं ❀ लागेसि अधम प्रचारन मोहीं ॥ ५ ॥
अस कहि तरल त्रिसूल चलावा ❀ जाम्बवंत सो कर गहि धावा ॥ ६ ॥

अरे मूर्ख ! (मैंने) बूढ़ा जानकर तुझको छोड़ दिया था सो अरे नीच ! तू मुझेही ललकारने लगा ॥ ५ ॥ ऐसे कहकर पैना त्रिशूल छोड़ा सो उसेही हाथमें उठाकर जाम्बवंत दौड़ा ॥ ६ ॥

मारेसि मेघनादकी छाती ❀ परा धरनि घूर्णित सुरघाती ॥ ७ ॥
पुनि रिसाइ गहि चरन फिरावा ❀ महि पछारि निजबलहिं देखावा ॥ ८ ॥

और मेघनादकी छातीमें ऐसा मारा कि देवताओंका शत्रु (मेघनाद) घुमेर खाकर पृथ्वीपर गिर पड़ा ॥ ७ ॥ फिर क्रोधकर और पैरको पकड़कर घुमाया और पृथ्वीपर पछाड़कर अपना बल दिखाया ॥ ८ ॥

बर प्रसाद सो मरै न मारा ❀ तब पद गहि लंकापर डारा ॥ ९ ॥
इहाँ देवऋषि गरुड़ पठाये ❀ रामसमीप सपदि चलिआये ॥ १० ॥

पर वह वरदानकी कृपासे मारनेसे नहीं मरता तब (जाम्बवंतने) पैर पकड़कर लंकापर डाल दिया ॥ ९ ॥ यहां नारदजीने गरुड़जीको भेजा सो शीघ्रही रामचन्द्रजीके पास चले आये ॥ १० ॥

दो०-पन्नगारि खाये सकल, छिनमहँ व्यालवरूथ ॥ ❀
भई विगतमायातुरत, हर्षे वानरयूथ ॥ ९७ ॥ ❀

और गरुड़जीने क्षणभरमें सब सर्पोंके समूह खा डाले तौ बन्दरोंके समूह तुरंत मायारहित होकर प्रसन्न हो गये ॥ ९७ ॥

गहि गिरि पादप उपल नख, धाये कीस रिसाइ ॥ ❀
चले तमीचर विकल अति, गढ़पर चढ़े पराइ ॥ ९८ ॥ ❀

बन्दर क्रोधित होकर पर्वत, वृक्ष, पत्थर और नखोंको लेकर दौड़े तब राक्षस बड़े दुखी होकर चले और भागकर गढ़पर चढ़ गये ॥ ९८ ॥

चौ०-मेघनादकर मूर्च्छा जागी ❀ पितहिं बिलोकि लाज अति लागी ॥१॥
तुरत गयउ सो गिरिवरकंदर ❀ करहुँ अजय मख अस मन हठ धर॥२॥

जब मेघनादकी मूर्च्छा जगी तौ पिताको देखकर बड़ी शरम लगी ॥ १ ॥ सो शीघ्रही पर्वतकी सुन्दर गुफामें चला गया और मनमें यह ठान ली कि अजय यज्ञ करूं ॥ २ ॥

सो सुधिपाइ बिभीषन कहई ❀ सुनु प्रभु समाचर अस अहई ॥ ३ ॥
मेघनाद मख करै अपावन ❀ खल मायावी देव सतावन ॥ ४ ॥

इस खबरको पाकर बिभीषण कहने लगा, हे भगवान्! सुनिये, अब तौ यह समाचार है कि॥३॥ दुष्ट मायावी और देवताओंको सतानेवाला मेघनाद अपवित्र यज्ञ करता है ॥ ४ ॥

सो प्रभु सिद्ध होइ जो पाइहि ❀ नाथ बेगि रिपु जीति न जाइहि ॥ ५ ॥
सुनि रघुपति अतिसय सुखमाना ❀ बोलिलिये अंगद हनुमाना ॥ ६ ॥

सो हे स्वामी! जो वह सिद्ध हो जायगा तौ हे नाथ! बैरी जल्दी नहीं जीता जायगा ॥ ५ ॥ रामचन्द्रजीने सुनकर बहुत सुख माना और अंगद और हनूमान्को बुला लिया (और कहा)॥६॥

लछमनसंग जाहु सब भाई ❀ मख विध्वंस कर तुम जाई ॥ ७ ॥
तुम लछमन रन मारेहु ओही ❀ देखि सभय सुर बड़ दुख मोही ॥ ८ ॥

हे भाई! तुम सब लक्ष्मणके साथ जाओ और जाकर यज्ञविध्वंस करो॥७॥ और हे लक्ष्मण! तुम उस (मेघनाद) को लड़ाईमें मारना, देवताओंको घबराता देखकर मुझको बड़ा दुःख है॥८॥

जाम्बवंत कपिराज बिभीषन ❀ सेनसमेत रहहु तीनौ जन ॥ ९ ॥
जब रघुवीर दीन्ह अनुसासन ❀ कटि निषंग कर बान सरासन ॥ १० ॥

जाम्बवंत, सुग्रीव और बिभीषण तुम तीनों जने सेनाके साथ रहो ॥ ९ ॥ जब रामचन्द्रजीने आज्ञा दी तौ कमरमें तरकस और हाथमें धनुषबाण लेकर ॥ १० ॥

प्रभुप्रताप उर धरि रणधीरा ❀ बोछेउ घनइव गिरा गँभीरा ॥ ११ ॥
जो तेहि आजु वधे बिनु आवौं ❀ तौ रघुपतिसेवक न कहावौं ॥ १२ ॥
जो सत संकर करहिं सहाई ❀ तदपि हतौं रघुबीरदुहाई ॥ १३ ॥

और भगवान्के प्रतापको हृदयमें धारणकर रणधीर योद्धा (लक्ष्मणजी) बाजलके समान गंभीर बाणी बोंले कि ॥ ११ ॥ जो आज उसे मारे विना आऊँ तौ रामचन्द्रजीका दास न कहाऊँ ॥१२॥ जो सो शंकरभी सहायता करैं तौभी मारेविना न रहूंगा, मुझे रामकी दुहाई है ॥ १३ ॥

दो०-बंदि रामपदकमजुग, चले तुरंत अनंत ॥ ❀
अंगद नील मयंद नल, संग सुभट हनुमंत ॥ ९९ ॥ ❀

रामचन्द्रजीके कमलसमान दोनों चरणोंको दंडवत करके लक्ष्मणजी शीघ्रही चले और उनके साथमें अंगद, नील, मयंद, नल और हनूमान् सुन्दर योद्धा हैं ॥ ९९ ॥

चौ०-जाइ कपिन्ह देखा सो वैसा ❀ आहुति देत रुधिर अरु भैंसा ॥ १ ॥
तब कीसन कृत यज्ञ विध्वंसा ❀ जब न उठै तब करहिं प्रसंसा ॥ २ ॥

बन्दरोंने जाकर उसे वैसाही देखा कि लोहू और भैंसोंकी आहुती दे रहा है ॥ १ ॥ तब बन्दरोंने यज्ञविध्वंस किया और जब न उठा तौ प्रशंसा करने लगे ॥ २ ॥

तदपि न उठै धरहिं कच जाई ❀ लातन हति हति चलहिं पराई ॥ ३ ॥
लै त्रिसूल धावा कपि भागे ❀ आवा राम अनुजके आगे ॥ ४ ॥

फिरभी नहीं उठा तौ (बन्दर) जाकर बाल खसोटने लगे और लातोंसे मार २ कर भाग जाने लगे ॥३॥ फिर वहभी त्रिशूल लेकर दौड़ा सो बन्दर भागे और वह लक्ष्मणजीके आगे आया ॥४॥

आवत परम क्रोध करि मारा ❀ गर्जि घोररव बारहिं बारा ॥ ५ ॥
कोपि मरुतसुत अंगद धाये ❀ हति त्रिसूल उर धरनि गिराये ॥ ६ ॥

सो आतेही (लक्ष्मणजीने) बड़ा क्रोध करके ऐसा मारा कि गर्जकर बारंबार घोर शब्द करने लगा ॥५॥ अंगद और हनूमान् कोप करके दौड़े सो (उसने) त्रिशूलसे मारकर पृथ्वीपर गिरा दिये ॥६॥

प्रभुकहँ छाँड़ेसि सूल प्रचंडा ❀ सर हति कृत अनंत जुगखंडा ॥ ७ ॥
उठि बहोरि मारुतयुवराजा ❀ हतेउ कोपि तेहि घाव न बाजा ॥ ८ ॥

और प्रभुपरभी बड़ा पैंना त्रिशूल छोड़ा जिसे लक्ष्मणजीने बाणसे काटकर दो टुकड़े कर दिये ॥७॥ फिर हनूमान् और अंगदने उठकर और क्रोध कर उसे मारा पर उसके घाव न आया ॥८॥

फिरे बीर रिपु मरै न मारा ❀ पुनि धावा करि घोर चिकारा ॥ ९ ॥
आवत देखि क्रुद्ध जनु काला ❀ लछमन छाँड़े बिसिख कराला ॥ १० ॥

योद्धा लौट चले, वैरी मार नहीं मरता, फिर (मेघनाद) घोर चिक्कार करके दौड़ा ॥९॥ और जब उसे ऐसा आता हुआ देखा मानों क्रोधकर काल आ रहा है, तौ लक्ष्मणजीने तीखे वाण छोडे॥१०॥

आवत देखे पविसम बाना ❀ तुरत भयो खल अंतरधाना ॥ ११ ॥
बिबिध वेष धरि करै लराई ❀ कबहुँ प्रकट कबहूँ दुरि जाई ॥ १२ ॥

---

(१) यहां लोग शंका करते हैं कि इस चौपाईमें शिवजीकी अवज्ञा हुई, इसलिये कोई यज्ञका अर्थ करते हैं, सो यज्ञका अर्थ तौ कहीं कोषमें मिलता नहीं इसलिये शिवजीका अर्थही ठीक है-लक्ष्मणजी क्रोधमें कह रहे हैं और क्रोधमें छोटे बड़ेका अनुसन्धान नहीं रहता है, सौ शंकर हैं कहां जो आकर सहायता करेंगे? शंकर तो एकही हैं, कविने शत शंकर कहकर लक्ष्मणजीका अतुल प्रताप दिखाया है, अतएव शंका वृथा हैं ॥

वज्रके समान बाणोंको आते हुये देखकर दुष्ट (मेघनाद) तुरंत अंतर्धान हो गया ॥ ११ ॥ और अनेक वेष धारण करके लड़ाई करने लगा, कभी दीख जाता है कभी छुप जाता है ॥ १२ ॥

अथ क्षेपक.

तब त्रिशूल छाँड़ेसि लक्ष्मणपर ❀ काट कान्ह शतखंड धरणिधर ॥ १३ ॥
शिखर एक लै पुनि सो धायो ❀ रामअनुज सो काटि गिरायो ॥ १४ ॥

जब उसने लक्ष्मणजीपर त्रिशूल छोड़ा तब लक्ष्मणजीने काटकर सौ टुकड़े कर दिये ॥ १३ ॥ फिर एक शिखर लेकर दौड़ा सो लक्ष्मणजीने वहभी काटकर चूर २ कर डाला ॥ १४ ॥

दो०–आयुध विविध प्रहार किय, रजसम कीन्ह फणीश ॥ ❀
हर्षविवश कपि रिछ सब, विबुधसहित सुर ईश ॥ १०० ॥ ❀

मेघनादने बहुतसे हथियार मारे परन्तु लक्ष्मणजीने धूलके समान कर दिये और सब रीछ वन्दर और इन्द्र आदि देवता आनन्दके वश हुये ॥ १०० ॥

चौ०–बिबिधायुध पुनि छाँड़न लागा ❀ रणकानन छूटहिं जिमि नागा ॥ १ ॥
रामअनुज शर गरुड़समाना ❀ उमा ग्रसत छूटत अभिमाना ॥ २ ॥

वह (मेघनाद) जो बहुतसे हथियार छोड़ने लगा सो ऐसे छूटने लगे जैसे रणरूपी वनमें सर्प दौड़ते हों ॥ १ ॥ महादेव कहते हैं हे पार्वती ! लक्ष्मणजीके गरुड़समान बाण छूटतेही उनके घमंडको ग्रस लेते हैं, अभिमान नहीं रहता ॥ २ ॥ इति क्षेपक.

देखि अजय रिपु डरपेउ कीसा ❀ परम क्रुद्ध तब भयउ अहीसा ॥ ३ ॥
इहि पापी मैं बहुत खिलावा ❀ अब वध उचित कपिन भय पावा ॥४॥

वैरीको अजय देखकर बन्दर डरपे तब लक्ष्मणजी बहुत क्रोधित हुये (कहने लगे) ॥ ३ ॥ इस पापीको मैंने बहुत खिलाया, अब इसको मारनाही उचित है क्योंकि बन्दर बड़ा भय पा चुके॥४॥

सुमिर कोसलाधीसप्रतापा ❀ सरसंधान कीन्ह करि दापा ॥ ५ ॥
छाँड़ेउ बान माँझ उर लागा ❀ मरतीबार कपट सब त्यागा ॥ ६ ॥

और रामचन्द्रजीके प्रतापको स्मरण कर घमंडसे (धनुषपर) बाण चढ़ाया ॥ ५ ॥ और ऐसा बाण छोड़ा जो (मेघनादकी) वीच छातीमें लगा और मरती बिरियां उसके सब कपट त्याग दिया॥६॥

अथ क्षेपक.

घनसमान सो गर्जि अभागा ❀ शीश भुजा काटे नृपनागा ॥ ७ ॥
शीश परेउ धरणीपर जबई ❀ भुजा दाहिनी नभ सो गहई ॥ ८ ॥

वह अभागा बादलके समान गर्जा तब राजाओंमें हाथीके समान (ऐसे लक्ष्मणजी) ने उसके मस्तक और भुजदंड काट डाले ॥ ७ ॥ और ज्योंही उसका मस्तक पृथ्वीपर गिरा त्योंही दहिनी भुजा आकाशको उड़गई ॥ ८ ॥ इति क्षेपक.

दो०–राम अनुज कहि राम कहि, अस कहि छाँड़ेसि प्रान ॥ ❀
धन्य सक्रजित मातु तव, कह अंगद हनुमान ॥ १०१ ॥ ❀

लक्ष्मण कहकर फिर राम कहकर प्राण छोड़ दिये तब अंगद और हनूमान्ने कहा हे इन्द्रजीत ! तेरी माताको धन्य हैं ॥ १०१ ॥

अथ क्षेपक.

चौ०–जो जगकहँ दंडक यमदंडा ❀ हरिद्रोहीसुत समरप्रचंडा ॥ १ ॥
महिमा अमित महाबलसींवा ❀ जासु प्रताप अभय दसग्रीवा ॥ २ ॥

जो संसारको यमदंडके समान दंड देनेवाला और भगवान्‌का वैरी है (उसका) पुत्र (इन्द्रजीत) भी लड़ाईमें प्रचंड था ॥ १ ॥ जिसकी असीम महिमा थी, जो बलकी सीमा था, जिसके प्रतापसे रावणभी निर्भय था ॥ २ ॥

भुजबल सुरनायक बस कीन्हा ❁ चौदह भुवन जीति यस लीन्हा ॥ ३ ॥
रिपुतरु लषन मूल खनि गंजेउ ❁ जिमि गज कमलनाल गहि भंजेउ ॥४॥

जिसने भुजाओंके बलसे इन्द्रको वशमें किया था और चौदहों लोकोंको जीतकर यश प्राप्त किया था ॥ ३ ॥ उसी वैरीरूपी वृक्षको लक्ष्मणजीने जड़से खोद करके ऐसे नाश कर दिया जैसे हाथी कमलकी दंडीको पकड़कर तोड़ डालता हो ॥ ४ ॥

जिमि बासव गहि कुलिस कराला ❁ कीन्ह बिकल गिरिपक्ष बिहाला ॥ ५ ॥
रनसागरमहँ परेउ सरीरा ❁ तरै दारु जिमि रुधिर सुनीरा ॥ ६ ॥

अथवा जैसे इन्द्रने कठिन वज्रको पकड़कर पर्वतोंके पंखोंके व्याकुल कर विहाल किया था ॥५॥ सो वही शरीर लड़ाईरूपी समुद्रमें पड़ा लोहूरूपी जलमें लकड़ीकी भांति तैर रहा है ॥ ६ ॥

दंत विकट मुख परम भयावन ❁ चिकुर सघन चख असुभ अपावन ॥ ७ ॥
रसना लाल रंग जनु यावक ❁ दवकी सिखा सोह जनु पावक ॥ ८ ॥
पाइ सु आयसु ऋषभ कपीसा ❁ कर गहि लीन्ह दुष्टकर सीसा ॥ ९ ॥

भयंकर दांत, अति डरावना मुख, घने बाल, अशुभ अपवित्र नेत्र हैं ॥७॥ और जीभ ऐसी लाल२ है मानों महावर, दावानल, और अग्निकी शिखा है ॥ ८ ॥ सुग्रीवने (लक्ष्मणकी) सुन्दर आज्ञा पाकर उस दुष्टका माथा हाथमें ले लिया ॥ ९ ॥

दो०-करि श्रम मारेउ महारिपु, रामानुज रनधीर ॥ ❁
निडर सुमन बर्षहिं विबुध, कहि जय गिरा गँभीर ॥ १०२ ॥❁

रणधीर लक्ष्मणने परिश्रम करके बड़े वैरीको मारा तब देवता गंभीर वाणीसे जय २ कहते हुये निडर होकर फूल वर्षाने लगे ॥ १०२ ॥

इति क्षेपक.

चौ०-बिनु प्रयास हनुमान उठावा ❁ लंकाद्वार राखि तिहि आवा ॥ १ ॥
ताखु मरन सुनि सुर गंधर्वा ❁ चढ़ि विमान आए नभ सर्वा ॥ २ ॥

हनूमान्‌ने उसे विनाही परिश्रमके उठा लिया और लंकाके द्वारपर रख आये ॥ १ ॥ उसका मरण सुनकर देवता और गंधर्व सब विमानोंपर चढ़कर आकाशमें आये ॥ २ ॥

वर्षि सुमन दुंदुभी बजावहिं ❁ श्रीरघुविरबिमलजस गावहिं ॥ ३ ॥
जय अनंत जय जगदाधारा ❁ प्रभु तुम सब देवन्ह निस्तारा ॥ ४ ॥

और फूल वर्षाकर नगाड़े बजाने लगे और श्रीरामचन्द्रजीका निर्मल यश गाने लगे ॥ ३ ॥ हे अनन्त! हे संसारके आधार! (तुम्हारी) जय हो जय हो. तुमने सब देवताओंको बचा लिया ॥४॥

अस्तुति करि सुर सिद्ध सिधाए ❁ लछमन कृपासिंधुपहँ आए ॥ ५ ॥
प्रभुहिं बिलोकि सीस पद नाये ❁ उठ प्रभु अनुज हर्ष उर लाये ॥ ६ ॥
मुखप्रसन्नता देखि पूछ जब ❁ रिपुवध कहा बिभीषन हूं तब ॥ ७ ॥

ऐसे स्तुति करके देवता और सिद्ध तौ चले गये और लक्ष्मणजी दयाके समुद्र (भगवान्) के पास

आये ॥५॥ भगवान्‌को, देखकर चरणोंमें माथा नवाया और रामजीने उठकर लक्ष्मणको छातीसे लगा लिया ॥६॥ और जब (रघुनाथजीने) मुखकी प्रसन्नता देखी और पूंछा तब बिभीषणने वैरीका वध कहा ७

अथ क्षेपक.

कृपादृष्टि करि अनुजसहिं हेरा ❀ विगत घाव कीन्हेउँ कर फेरा ॥ ८ ॥
बान बेध देखिय तनु कैसे ❀ कनकतूण शरपूरित जैसे ॥ ९ ॥

(भगवान्‌ने) दयादृष्टि करके लक्ष्मणको देखा और हाथ फेरकर घाव दूर किये, ॥ ८ ॥ बाणोंसे विधाहुआ शरीर कैसा दिखाई देता है जैसा सोनेका तरकस बाणोंसे भरा हुआ हो ॥ ९ ॥

धर तेहि शीश आनि प्रभुआगे ❀ बानर भालु बिलोकन लागे ॥ १० ॥
प्रभु कौतुकी बिलोकेउ शीशा ❀ राखन कहेउ कोशलाधीशा ॥ ११ ॥

उसने (वह मेघनादका) मस्तक भगवान्‌के आगे रक्खा तौ रीछ बन्दर देखने लगे ॥ १० ॥ कौतुकी भगवान् रामजीने मस्तक देखा और उसके रखनेको कहा ॥ ११ ॥

दो०–प्रभुआयसु सुनि कीशपति, राख्यो यतन कराइ ॥
कटकसहित रघुवंशमनि, शोभित दोनों भाइ ॥ १०३ ॥

भगवान्‌की आज्ञा सुनकर सुग्रीवने उसे यत्नसे रखवा दिया और सेनासमेत रघुकुलमणि दोनों भाई शोभित हुये ॥ १०३ ॥

चौ०–कृपादृष्टि कपि भालु निहारे ❀ भे श्रमरहित राम बैठारे ॥ १ ॥
सुनहु उमा यहिविध रिपु मारे ❀ सुर नर मुनि सब भये सुखारे ॥ २ ॥

और दयाकी दृष्टिसे रीछ बन्दर देखे तौ वे परिश्रमरहित होगये और रामचन्द्रजीने उन्हें पास बिठा लिया ॥ १ ॥ (महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! सुनो, भगवान्‌ने उस भांति वैरी मारे और देवता मनुष्य और मुनीश्वर सुखी हुये ॥ २ ॥

अब सो सुनहु बाँह तिहिकेरी ❀ खग ज्यों लंक गई शरप्रेरी ॥ ३ ॥
मेघनाद आंगन महँ परी ❀ बानविद्ध शोनितसों भरी ॥ ४ ॥

अब वह सुनो जो उसकी भुजा बाणकी मारी हुई पक्षीकी भांति लंकाको गई ॥ ३ ॥ और बाणसे बिधी लोहूसे भरीहुई मेघनादके आँगनमें जा पड़ी ॥ ४ ॥

राजति तहँ सुलोचना कैसी ❀ रतिते रुचिर रूप गुन जैसी ॥ ५ ॥
नागसुता दशकंठपतोहू ❀ वासरिवपुतिय छबिमय जोहू ॥ ६ ॥

यहां सुलोचना ऐसी शोभायमान बैठी है जो रति (कामदेवकी स्त्री) सेभी सुन्दर स्वरूप और गुणवती है ॥ ५ ॥ (वासुकी) सर्पकी बेटी, रावणके बेटेकी बहू इन्द्रके शत्रु (मेघनाद) की स्त्री ॥६॥

हेमसिंहासन सोहति बाला ❀ सेवहिं विद्याधरि तियमाला ॥ ७ ॥
पूजहिं बिबुध बिनय करि ताहीं ❀ सुख प्रमोद को सकहि सराहीं ॥ ८ ॥
तहँ पतिभुजा परी यहि भाँती ❀ मनहुँ सकल सुखतरुकी काँती ॥ ९ ॥

नवोढ़ा सुवर्णके सिंहासनपर शोभायमान् है और बहुतसी विद्याधरियाँ जिसकी सेवा कररहीहैं ॥७॥ जिसे देवताभी नम्रता करके पूजते हैं (उसके) सुख और आनन्दकी कौन सराहना कर सक्ता है ? ॥८॥ वहां (उसके) पतिकी भुजा इस प्रकार आपड़ी मानों सुखके वृक्षकी पूरी कांति है ॥९॥

दो०–तिहि दिसि दासी देख कहँ, शोनितस्रव भुजदंड ॥
भयउ समर आश्चर्यमय, मनहुँ अखंडलखंड ॥ १०४ ॥

उस ओर लोहूसे भरीहुई बाँहको देखकर दासीने कहा ओहो ! ऐसा आश्चर्ययुक्त युद्ध हुआ कि अखंडकाभी खंड हो गया ॥ १०४ ॥

चौ०–सुनिकै सकल सखीमुखबयना ❀ तजि सिंहासन उठि सुनयना ॥ १ ॥
नारि सुभाव धुकधुकी धरकी ❀ सूचक अशुभ दहिन भुज फरकी ॥ २ ॥

सखीके मुखसे सब वचन सुनकर सुलोचना सिंहासनको छोड़कर उठी ॥ १ ॥ स्त्रीके स्वभावसे छाती धड़की और अशुभके जतानेवाली दहिनी भुजा फड़की ॥ २ ॥

होत महारन रावनरामहिं ❀ बीरधुरीन मोर प्रिय तामहिं ॥ ३ ॥
सकल सुरासुर सकहिं न जूझी ❀ बिधिकै मतौ परै नहिं बूझी ॥ ४ ॥

(तौ विचार किया कि) रावण और रामचन्द्रजीमें बड़ा युद्ध हो रहा है और बीरोंमें अग्रगामी मेरा पतिभी उसीमें है ॥ ३ ॥ सो यद्यपि सब देवता और राक्षसभी (उससे) युद्ध नहीं कर सक्ते तौभी ब्रह्माकी मति जानी नहीं जाती ॥ ४ ॥

इतना कहति गई चलि आपू ❀ पतिभुज लखि करि कोटि बिलापू ॥५॥
कंकन मनिगन भूषन सोई ❀ महाबिटपसम आन न होई ॥ ६ ॥

इतना कहती हुई आप चली गई और पतिकी भुजा देखकर करोड़ों विलाप करने लगी ॥५॥ कंकण और मणिजडितभूषणयुक्त बड़े वृक्षके समान (मेरे पतिकी भुजाही है) और कुछ नहीं ॥६॥

देखति मनहिं न आवत तेही ❀ तासु प्रभाव सुना पहिलेही ॥ ७ ॥
नींद नारि भोजन परिहरई ❀ बारह बर्ष तासु कर मरई ॥ ८ ॥

सो देखती है पर मनमें भरोसा नहीं होता (क्योंकि) उसका प्रभाव तौ पहिलेही सुनलिया था कि ॥७॥ जो बारह वर्षतक निद्रा, स्त्री और भोजनोंको छोड़ दे उसके हाथसे (मेघनाद) मरैगा ॥८॥

दो०–करि बिचार मन टेक दै, मैं पतिदैवत नारि ॥ ❀
भुज लिखि मेटहु दुचितई, सुनि कर दीन्ह पसारि ॥ १०५ ॥❀

सो विचार करके मनमें प्रतिज्ञा की कि जो मैं पतिव्रता स्त्री हूं तौ हे भुजा ! तू लिखकर मेरे सन्देहको दूर कर, यह सुनकर भुजाने हाथ पसार दिया ॥ १०५ ॥

चौ०–लखि रुख तासु सखी उठि धाई ❀ तुरतहि खोजि खरी लै आई ॥ १ ॥
दीन्ह हाथपर मनिअँगनाई ❀ लिखति लषनकीरती रुचिराई ॥ २ ॥

उसका रुख देखकर सखी उठ दौड़ी और शीघ्रही ढूंढ़कर खड़िया ले आई ॥ १ ॥ सो हाथपर रखदी तौ वह मणियोंके आंगनमें लक्ष्मणजीके सुन्दर यशको लिखने लगी ॥ २ ॥

नींद नारि भोजन शत कोटी ❀ तजै तासु महिमा यह छोटी ॥ ३ ॥
अजित सच्चिदानँद अविनासी ❀ अतुल अमित घटघटके बासी ॥ ४ ॥

सौ करोड़ वर्ष नींद, नारी और भोजनोंको छोड़दे तौभी (लक्ष्मणजीसे) उसकी महिमा छोटी है ॥३॥ जो जीते न जाँय सच्चिदानंद और नाशरहित हैं और जो अतुल, असीम और घट २ के वासी हैं ॥ ४ ॥

प्रकटहिं पालहिं पुनि जग हरहीं ❀ त्रिगुनरूप त्रय मूरति धरहीं ॥ ५ ॥
जो कालहुकर काल भयंकर ❀ वरनत सुयश शारदा शंकर ॥ ६ ॥

जो उत्पन्न करते, पालन करते और फिर नाशकर देते हैं और जो (राजसी, तामसी और सा-

त्विकी) तीनों गुणयुक्त (ब्रह्मा विष्णु महेशके) तीन शरीरोंको धारण करते हैं ॥ ५ ॥ जो कालके भी भयंकर काल हैं, जिनके सुन्दर यशको सरस्वती और महादेवजी वर्णन करते हैं ॥ ६ ॥

धरहि विविध तनु सेवकहेतू ❀ जासु नाम भवसागरसेतू ॥ ७ ॥
मुनिमनपुंडरीक जाके घर ❀ वचन विवेक विचार बुद्धि वर ॥ ८ ॥

जो भक्तोंके लिये अनेक शरीर धारण करते हैं और जिनका नाम संसाररूपी समुद्रका पुल है ॥ ७ ॥ और मुनीश्वरोंके हृदयकमलमें जिनका स्थान है और जो श्रेष्ठ बुद्धि, वचन और ज्ञानसे विचारमें आते हैं ॥ ८ ॥

दो०–कोटिकल्प वरनत निगम, अगम जासु गुनगाथ ॥ ❀
तमसरीर जड़ जीह बिनु, किमि बरनौं लिखि हाथ ॥ १०६ ॥ ❀

जिनके गुणोंकी कथाको शास्त्र करोडों कल्पोंतक वर्णन करते हैं तौभी थाह नहीं पाते उन्हींके गुणोंको मैं क्रोधी शरीर मराहुआ बिना जीभके हाथसे लिखकर कैसे वर्णन करूँ? ॥ १०६ ॥

चौ०–मम सिर गयउ जहाँ रघुराई ❀ तव बचननि लगि भुजा पठाई ॥ १ ॥
यहिविध लिखी सकल भुजबाता ❀ परी भूमितल अतिविलपाता ॥ २ ॥

मेरा शिर रामचन्द्रजीके पास गया और तुझसे बातें करनेके लिये भुजा भेजी है ॥ १ ॥ इस भाँति भुजाकी लिखी हुई सब बात देखकर (सुलोचना) पृथ्वीपर गिरपडी और बहुत विलाप करने लगी ॥२॥

बाँचि सकल भुजलिखित जथारथ ❀ लछमन राम जानि परमारथ ॥ ३ ॥
नारिसुभाव तदपि बहुभाँति ❀ बिलपहि मिलि सखियनिकी पाँती ॥४॥

भुजाके सब लिखे हुएको बाँचकर और उसे ठीक जानकर लक्ष्मण रामचन्द्रजीकोही परमार्थ माना ॥ ३ ॥ तौभी स्त्रियोंके स्वभावसे सखियोंके साथ मिलकर बहुत प्रकार विलाप करती है ॥ ४ ॥

गुनगन साहस सील नाहके ❀ कहि रोवहि बल विजय बाँहके ॥ ५ ॥
जिहि भुजबल सुरनाथ बिगोए ❀ सो प्रभु आजु समरमहि सोए ॥ ६ ॥

स्वामीके गुणोंके समूह, शील और भुजाओंके बल और जीतको कह २ कर रोती है ॥ ५ ॥ जिसने भुजाओंके बलसे इन्द्रको भगाया वही पति आज लड़ाईमें (मारे गये) ॥ ६ ॥

मनिगन भूषण बसन बिसारति ❀ महि लोटति करतल सिर मारति ॥ ७ ॥
मगन सोकसरि तनुसुधि नाहीं ❀ दारुन बिपति कहौं किहिपाहीं ॥ ८ ॥

मणियोंके समूह और गहनोंको फेंकती है और पृथ्वीपर लोटती हुई हाथोंसे शिर धुनती है ॥ ७ ॥ शोकरूपी नदीमें मग्न है, शरीरकी सुध नहीं है (विचारती है कि) कठिन क्लेशको किससे कहूं? ॥ ८ ॥

छिनक प्रबोध सखी कोउ करई ❀ बहुरि सोकदावानल जरई ॥ ९ ॥
छिन छिन उठति परति धरणीतल ❀ पुनि रोवहि सराहि पतिकर बल ॥१०॥

एक क्षणभर कोई सखी समझातीभी है पर फिर वह शोकरूपी दावाग्निमें जलती है ॥ ९ ॥ क्षण २ में उठकर पृथ्वीपर गिरती है और फिर (अपने) पतिके बलकी सराहना करके रोती है ॥ १० ॥

दो०–तिन्हमहँ सखी सयानिइक, कहि समुझाई बैन ॥ ❀
सोक छाँड़ि पतिदेवता, सुमतिकरिय जिय चैन ॥ १०७ ॥ ❀

उनमेंसे एक चतुर सखी थी उसने यह बात कहकर समझाई कि हे पतिव्रता! शोक छोड़ कर और बुद्धि स्थिर करके चित्तको शांत करना चाहिये ॥ १०७ ॥

चौ०–सुनि कह सहसानन तनुजाता ❁ सत्य कहा तुम सखी सुबाता ॥ १ ॥
बिधिनिर्मित मोकहँ दुखलाहू ❁ सुखपरिपूरि भुवन सबकाहू ॥ २ ॥

यह सुनकर सुलोचनाने कहा हे सखी ! तुमने अच्छी और ठीक बात कही ॥ १ ॥ विधाताका रचा हुआ मुझको दुःख मिलनाथा सो मिला, और लोकमें सब किसीको सुख भर रहा है ॥ २ ॥

विजय रामलछिमनकहँ आयउ ❁ सुजस सकल मर्कटकुल पायउ ॥ ३ ॥
कुलकलंक बड़ लहेउ बिभीषन ❁ कुलकुठार अस सुनेउँ न दीषन ॥ ४ ॥

रामचन्द्र लक्ष्मणजीकी विजय हुई और सब वन्दरोंके समूहोंने सुन्दर यश पाया ॥ ३ ॥ विभीषणने कुलमें ऐसा वडा कलंक पाया कि जैसा कुलकुठाररूप कोई देखा न सुना ॥ ४ ॥

छूटि बंदि अब सुरगनकेरी ❁ निज निज पुरनि दुहाई फेरी ॥ ५ ॥
मुनि पुलस्त्यकर भा कुलनासा ❁ अब रवि ससि सुख करहिं प्रकासा ॥ ६ ॥

अब देवताओंके समूहकी कैद छूटी और उन्होंने अपने २ लोकोंमें दहाई फेरी ॥ ५ ॥ पुलस्त्यमुनिके वंशका नाश हुआ, अब सूर्य चन्द्रमा आनन्दसे प्रकाश करैंगे ॥ ६ ॥

तेजवंत पावक परिहरि दुख ❁ बहहि समीर आजु अपने सुख ॥ ७ ॥
सलिल गगन भू निर्मल आजू ❁ सुबस बसहिं सुरनायक राजू ॥ ८ ॥

अग्नि दुःखको छोड़कर प्रज्वलित होगी और आज पवन अपने सुखपूर्वक चलेगी ॥ ७ ॥ आज जल, आकाश और पृथ्वी निर्मल होगये और इन्द्र (अपने) राज्यमें आनन्दसे वसेगा ॥ ८ ॥

दो०–यम कुबेर दिक्पाल सब, प्रमुदित सुर नर नाग ॥ ❁
खाय अघाय बिहाय दुख, पाय सुयज्ञविभाग ॥ १०८ ॥ ❁

यम, कुबेर, सब दिक्पाल, देवता, मनुष्य और सर्प सब यज्ञका भाग पाकर और खाकर तृप्त होंगे, तथा दुःखरहित हो प्रसन्न होंगे ॥ १०८ ॥

चौ०–इतना कहि मंदिरमहँ आई ❁ देखति मनिगन धनबहुताई ॥ १ ॥
सुरपतिभवन पाटतरताई ❁ ऋद्धि सिद्धि जहँ सकल कमाई ॥ २ ॥

इतना कहकर महलमें आई तौ बहुतसे मणियोंके समूह और द्रव्यके समूह देखे ॥ १ ॥ जो महल इन्द्रके महलके समान है, जहां ऋद्धि सिद्धि सब सजीहुई रक्खी हैं ॥ २ ॥

देखत विभव न मन अनुरागेउ ❁ पतिपदनेह निपुन मन लागेउ ॥ ३ ॥
दीन्हें मनिगन भूषण चीरा ❁ धेनु धरनि गज हाटक हीरा ॥ ४ ॥

उस वैभवको देखकरभी उसमें मन नहीं लगा और उस चतुरके मनकी प्रीति पतिके चरणोंमें लगी ॥३॥ मणियोंके समूह, गहने, वस्त्र, गौ, पृथ्वी, हाथी, सुवर्ण और हीरे (ब्राह्मणोंको) दे दिये ॥४॥

मनिमय सिबिका रचेउ बनाई ❁ भुज चढ़ाइ पहराव बनाई ॥ ५ ॥
आपुन चढ़ति भई तहँ आई ❁ सुरदुर्लभ सुखसदन बिहाई ॥ ६ ॥

मणिजडित पालकी रचकर बनाई और उसमें सुन्दर सजाकर भुजा चढ़ाई ॥ ५ ॥ देवताओंकोभी कठिन ऐसे घरके सुखको छोड़कर आपभी वहां आकर चढ़ी ॥ ६ ॥

वीतराग जिमि तजहिं विषयगन ❁ सहस भाँति पतिपद लागेउ मन ॥ ७ ॥
सुक सारिका सुलोचन ज्याए ❁ कनकपींजरन राखि पढ़ाए ॥ ८ ॥

जैसे वैरागी विषयोंके समूहोंको छोड़ दे ऐसेही हजार प्रकारसे पतिके चरणोंमें मन लग गया ॥ ७ ॥ सुलोचनाने तोते मैना पालकर सुवर्णके पिंजरोंमें रखकर पढ़ायेथे ॥ ८ ॥

व्याकुल कह ते कहाँ सुनयना ❀ सुनि धीरज परिहरिय सुबयना ॥ ९ ॥
भये विकल खग मृग यहि भाँती ❀ अपर दसा कैसे कहि जाती ॥ १० ॥
प्रजालोग आतुर सँग लागे ❀ प्रेमउमगि लोचनजलपागे ॥ ११ ॥

वे व्याकुल हुये कहते हैं कि, सुलोचना कहाँ हैं? और उनके सुन्दर शब्दोंको सुनकर सब धीरज छोडते हैं॥ ९॥ जब पक्षी और हिरण इस प्रकार व्याकुल हुये तौ औरोंकी दशा कैसे कही जाय ॥ १० ॥ प्रजाके लोग उतावलीसे साथ लग लिये और स्नेहमें उमड़कर नेत्रोंमें जलभर आया ॥ ११ ॥

दो०-बाजन लगे निसानगन, ढोल दुंदुभी भेरि ॥ ❀
पुरजन परिजन संग सब, चले पालकी घेरि ॥ १०९ ॥ ❀

ढोल, नगाड़े और मृदङ्ग आदि बाजोंके समूह बजने लगे और नगरके मनुष्य और कुटुम्बी लोग सब पालकीको घेरकर साथ चले ॥ १०९ ॥

चौ०-देखि भीर दसकंधरद्वारे ❀ सजग होउ सब बीर प्रचारे ॥ १ ॥
जाना कटक रिपुन्हकर आई ❀ अस्त्र शस्त्र कर धरहु बनाई ॥ २ ॥

रावणके द्वारपर भीड़ देखकर सब योद्धा पुकारने लगे कि होशियार हो जाओ ॥ १ ॥ जान पड़ता है कि वैरियोंकी सेना आ गई सो अस्त्र शस्त्र सुधारकर हाथमें लेलो ॥ २ ॥

धनुष चढ़ाय तून कटि बाँधहिं ❀ गहि असि चर्म वीरवर साजहिं ॥ ३ ॥
तोमर परसु प्रचंड गदा गहि ❀ तीक्षण चोखे सूल शक्ति लहि ॥ ४ ॥

श्रेष्ठ योद्धा धनुष चढ़ाकर कमरमें तरकस बाँधते हैं और तलवार लेकर ढाल सजाते हैं ॥ ३ ॥ मुद्गर, फरसा और प्रचंड गदाको लेकर पैने त्रिशूल और पैनी शक्तिको लेकर ॥ ४ ॥

मारु मारु धरु धरु कहि धावहिं ❀ प्रगट दसाननविजय सुनावहिं ॥ ५ ॥
गर्जि तर्जि कहि गिरा गँभीरा ❀ ससर भयंकर निसिचर बीरा ॥ ६ ॥

मारो २ पकड़ो २ कहकर दौड़ते हैं और प्रगट करके रावणकी जीत सुनाते हैं ॥ ५ ॥ लड़ाईमें भयंकर योद्धा राक्षस गर्जतर्जकर गंभीर वाणी कहते हैं ॥ ६ ॥

निपटहिं निकट पालकी आई ❀ चीन्हि सकल भट रहे लजाई ॥ ७ ॥
देखि जुहारि नागपतिकन्या ❀ सतीसिरोमणि त्रिभुवनधन्या ॥ ८ ॥

जब बहुतही पास पालकी आगई तौ पहिंचानकर सब योद्धा लजाकर रहगये ॥ ७ ॥ देखकर सुलोचनाको प्रणाम किया जो पतिव्रताओंमें शिरोमणि और तीनों लोकोंमें धन्य थी ॥ ८ ॥

दो०-द्वारपाल दसकंधकहँ, खबर सुनायउ जाइ ॥ ❀
भई रजायसु बेगिही, लेहु सु ताहि बुलाइ ॥ ११० ॥ ❀

द्वारपालोंने जाकर रावणको खबर सुनाई तौ आज्ञा हुई कि उसे शीघ्रही बुलालो ॥ ११० ॥

तिहि अवसरहिं सुलोचना, गहे चरन सिर नाइ ॥ ❀
राखि भुजा घननादकी, करुनावचन सुनाइ ॥ १११ ॥ ❀

उस समय सुलोचनाने माथा नवाकर चरण पकड़े और मेघनादकी भुजाको आगे कर करुणाके वचन सुनाये कि ॥ १११ ॥

चौ०-तुमहिं अछत अस दसा हमारी ❀ सुख तजि भयउँ सोकअधिकारी ॥ १ ॥
नभमारग भुज मम गृह परी ❀ संसय जानि दीन्ह कर खरी ॥ २ ॥

तुम्हारे जीतेजी हमारा ऐसा हाल है जो सुखको छोड़कर दुःख भोगना पड़ा ॥ १ ॥ यह भुजा आकाशमार्ग होकर मेरे घरमें आ पड़ी और संदेह जानकर (कि यह भुजा मेरे पतिकी है वा नहीं उसके) हाथमें खडिया देदी थी ॥ २ ॥

लिखी रामलछिमनमहिमा इन्ह ❀ क्रमसों सब बिध कथा कही तिन्ह ॥३॥
ठगिसी रही बाँचि गुनगाथा ❀ जरहुँ संग जो पाऊँ माथा ॥ ४ ॥

सो उसने जो रामचन्द्र लक्ष्मणकी महिमा लिखी और सब कथा क्रमसे सब भांति कही ॥३॥ सो उस गुणोंकी कथाको वाँचकर मैं ठगीसी रहगई और अब जो शिर पाऊँ तौ साथही जल जाऊँ॥४॥

रन कबन्ध भुज मम गृह आई ❀ सिर तहँ जहँ नरेस दोउ भाई ॥ ५ ॥
करिय सो जतन मिलै मोहि सीसा❀ तुम सर्वज्ञ चराचरईसा ॥ ६ ॥

रुंड तौ लड़ाईमें है, भुजा मेरे घर आई और शिर वहाँ है जहाँ दोनों भाई राजा (राम लक्ष्मण) हैं ॥ ५ ॥ आप सब जाननेवाले और चराचरके स्वामी हो सो वह उपाय कीजिये जिससे मुझे शिर मिलै ॥ ६ ॥

सुनत कुलिससम गिरा वधूकी ❀ जीवनआस दसानन मूकी ॥ ७ ॥
तदपि धीर धरि करत प्रबोधा ❀ कहु जग मोहिं समान को जोधा ॥८॥

बहूकी वाणीको वज्रके समान सुनकर रावणने जीनेकी आश छोड़ दी ॥ ७ ॥ तौभी धीरज रखकर समझाने लगा कि कहो संसारमें मेरे बराबर योद्धा कौन है? ॥ ८ ॥

दो०-राम लषन सुग्रीव नल, नील द्विविद हनुमंत ॥ ❀
माथ बिभीषन ऋषभको, आनौं मारि तुरंत ॥ ११२ ॥ ❀

रामचन्द्र, लक्ष्मण, सुग्रीव, नल, नील, द्विविद, हनुमान् और विभीषण जाम्बवंतको मारकर तुरंतही माथा लाऊँगा ॥ ११२ ॥

चौ०-अब लगि रहा भरोसा भारी ❀ कुंभकर्न घननाद सुरारी ॥ १ ॥
मैंहुँ आजुलगि कीन्ह न जूझा ❀ इन्ह सबकर पुरषारथ बूझा ॥ २ ॥

देवताओंके वैरी कुंभकर्ण और मेघनादका अबतक बड़ा भरोसा था ॥ १ ॥ सो मैंनेभी आज तक युद्ध नहीं किया इन सबके पराक्रमको देखता रहा ॥ २ ॥

मरे ते नर वानरके मारे ❀ बात सुनत बड़ि लाज हमारे ॥ ३ ॥
गनना कौन वीरमहँ तिन्हकी ❀ अतिदुर्दसा कीन्ह कपि जिन्हकी ॥ ४ ॥

सो वे मनुष्य और बन्दरोंके मारे मरगये, इस बातके सुननेसेभी हमको बड़ी शरम होती है ॥ ३ ॥ उनकी किन वीरोंमें गिनती है जिनकी बन्दरोंने ऐसी भारी दुर्दशा की ॥ ४ ॥

छाँड़ि सोच कुलबधू पतोहू ❀ जानेउ तिहिसमान जनि मोहू ॥ ५ ॥
पुत्रि विलंब करहु घट चारी ❀ देखहु मोरि भयंकर मारी ॥ ६ ॥

हे कुलवधू! हे पुत्रवधू! शोच छोड़ दे और मुझे उसके समान मत जानियो ॥ ५ ॥ हे पुत्रो! चार घड़ी ठहर, मेरी भयंकर मारको देखियो ॥ ६ ॥

आनि सीस सब सत्रुन्हकेरा ❀ बिनु प्रयास नहिं लागहि बेरा ॥ ७ ॥
भुगवहि जंतु पराकृत भोगा ❀ नतु कत निसिचर वनचरयोगा ॥ ८ ॥

विनाही परिश्रमके सब वैरियोंके माथे लाऊंगा, देर नहीं लगैगी ॥ ७ ॥ जीवको पहिले किये हुये भोग भोगने पड़ते हैं. नहीं तौ कहीं राक्षस बन्दरोंके बराबर हो सक्ते हैं ॥ ८ ॥

दो०–मेरु उपारनहार जे, धरा धरहिं करबीच ॥
ते भट खाए मसकसिसु, कालकुटिलता नीच ॥ ११३ ॥

जो सुमेरु पर्वतके उखाड़नेवाले और पृथ्वीको हाथकी मुठ्ठीमें रखते थे उन योद्धाओंको नीच कालकी कुटिलाईसे मच्छरके बच्चोंने खालिया ॥ ११३ ॥

चौ०–क्रोधावेश घोर रव बोलहि ❀ हृदय सोक तरु अचल न डोलहि ॥ १ ॥
समाधान नहिं मानति सोई ❀ सुनि प्रलाप परितोष न होई ॥ २ ॥

क्रोधसे भरे हुये घोर शब्द बोलता हैं (इससे सुलोचनाके) हृदयमें शोकरूपी वृक्ष स्थिर होगया, चलायमान नहीं होता ॥ १ ॥ वह समझानेको नहीं मानती और उसकी बकवादको सुनकर संतोष नहीं होता ॥ २ ॥

नर वानर पुरुषारथ देखत ❀ बडो प्रपंच छोट करि लेखत ॥ ३ ॥
कूदि सिंधु लंका कपि जारी ❀ लघु करि मानत ताहि सुरारी ॥ ४ ॥

मनमें सोचती है कि मनुष्य और बन्दरोंके पराक्रमको देखते हैं और बड़े प्रपंचको झूठाही जानते हैं ॥ ३ ॥ जिस बन्दरने लंका जलाई और समुद्रमें कूद पड़ा उसे देवताओंका वैरी रावण छोटा करके मानता है ॥ ४ ॥

कुंभकर्ण अतिकाय महोदर ❀ मम पति गिरेउ समेत सहोदर ॥ ५ ॥
तेहि रिपु चहहि दसाननजीती ❀ देखिय महामोहकी रीती ॥ ६ ॥

कुंभकर्ण, अतिकाय, महोदर और मेरे पति भाईसमेत जिस लड़ाईमें मारे गये ॥ ५ ॥ उस वैरीको रावण जीता चाहता है इस बड़े अज्ञानकी रीतिको देखिये ॥ ६ ॥

उतर देउँ तौ पातक होई ❀ करि विवाद अब सर्बसु खोई ॥ ७ ॥
फिरउ राज तो मोहिं न काजू ❀ विनु प्रिय सकल नरक कर साजू ॥ ८ ॥

जो उत्तर देती हूं तौ पाप होता है, और विवाद करके तथा सर्वस्वका नाश करके ॥ ७ ॥ राज्य लौटभी आवै तौ मुझे काम नहीं क्योंकि पतिके विना सब नरकका समान है ॥ ८ ॥

दो०–तुरतहि उठी सुलोचना, गइ मयसुता जु पास ॥
पद गहि रोवति सब कही, प्रगट सोकउपहास ॥ ११४ ॥

सुलोचना शीघ्रही उठकर मन्दोदरीके पास गई और चरण पकड़के रोने लगी, और सब कथा उसके सामने शोक और हँसीकी कहने लगी ॥ ११४ ॥

चौ०–आदिहिते सब कथा बखानी ❀ सुनि सुनि रोवहि रावनरानी ॥ १ ॥
कही सो पतिभुजलिखित बहोरी ❀ रामलषनमहिमा नहिं थोरी ॥ २ ॥

(सुलोचनाने) आरंभहीसे सब कथा कही जिसे सुन २ कर रावणकी रानी रोती हैं ॥ १ ॥ फिर पतिकी भुजाकी लिखी हुई रामचन्द्र लक्ष्मणजीकी बहुतसी महिमा कही ॥ २ ॥

कहेउ बहुरि दसकंधरक्रोधा ❀ सहेउ विडंबन कीन्ह सो योधा ॥ ३ ॥
सुनि सो पुत्रवधूकी बानी ❀ बोली दुखित मँदोदरि रानी ॥ ४ ॥

फिर रावणका क्रोध कहा और जो उस योद्धाने बकवाद की और (सुलोचनाने) सही सो कही ॥ ३ ॥ पुत्रकी बहूकी वाणीको सुनकर मन्दोदरी रानी दुखी होकर बोली ॥ ४ ॥

कहौं सो मानब सत्य सयानी ॐ सुनि जो नारद मुखकी बानी ॥ ५ ॥
पाछिलि बात भई सब साँची ॐ अनुभव कीन्ह न एकौ बाची ॥ ६ ॥

हे चतुर! जो मैं कहूं सो ठीक मानियो, मैंने नारदके मुखकी कही बातें सुनी हैं ॥५॥ उनमेंसे पिछली बातें तौ सब सत्य हुई; मैंने जाँचकर लिया एकभी नहीं बची, अर्थात् सब ज्योंकीत्यों हुई॥६॥

देखि न होइ वृथा ऋषिभाषित ॐ अपने महामोहमनमाखित ॥ ७ ॥
अगिली कथा समाजसमेता ॐ सुनहु पुत्रि ऋषि बरनेउ जेता ॥ ८ ॥

देख ऋषिका कहा हुआ झूँठ नहीं होता चाहे अपने मनमें बड़े अज्ञानसे क्रोधित भलेही हो ॥ ७ ॥ हे पुत्री! सहेलियोंसमेत आगेकी कथा और सुन जो ऋषिने वर्णन की थी कि ॥ ८ ॥

बीरभाव दसकंधर जूझहि ॐ प्रानहुँ गये नीति नहिं बूझहि ॥ ९ ॥
बंधुभेद लंकागढ़ टूटहिं ॐ सुर नर नाग बंदिते छूटहिं ॥ १० ॥

जब सब शूरवीर मरजायँगे तब रावण जूझेगा और प्राण जानेपरभी नीतिको न मानैगा ॥९॥ भाई (बिभीषण) के भेदसे लंकागढ़ टूटैगा और देवता मनुष्य और नाग जेलखानेसे छूटैंगे ॥१०॥

सिया सोकसंकटते छूटहिं ॐ बानर भालु राजगृह लूटहिं ॥ ११ ॥
धन मनि भूषन वसन बिमाना ॐ भोग करहिं मर्कटकुल नाना ॥ १२ ॥

सीताजी शोक और दुःखसे छूटेंगी और रीछ बन्दर राजभवनको लूटेंगे ॥ ११ ॥ द्रव्य, मणि, गहने, वस्त्र और विमानोंको अनेक बन्दरोंके झुंड भोग करेंगे ॥ १२ ॥

दो०-राज्य बिभीषन पाइहै, अमरकल्प निर्वाहि ॥ ॐ
भावीबस सुख दुख जगत, उपदेसिय कहु काहि ॥ ११५ ॥ ॐ

बिभीषण राज्य पावेंगे और कल्पपर्यंत अमर होकर उसे भोगैंगे; सो संसारका सुख दुःख होनहारके आधीन है कहिये किसे समझावैं? ॥ ११५ ॥

चौ०-मुनिबचननिकी मोहिं प्रतीती ॐ अनुभव सदा हारि अरु जीती ॥ १ ॥
तैं पुत्री परिहरि अब सोका ॐ पतिसँग तुरत साध परलोका ॥ २ ॥

मुझे मुनीश्वरके वचनोंका भरोसा है और हारजीतका सदा ज्ञान रहता है ॥ १ ॥ हे पुत्री! अब तू सब शोकको छोड़कर अपने पतिके साथमें शीघ्रही परलोककी तयारी कर ॥ २ ॥

जाहि रामपहिं पतिसिरलागी ॐ तजि सँकोच आनहि सिर माँगी ॥ ३ ॥
होब न लाज आजुको भूषन ॐ समयहीन गुन गनिय न दूषन ॥ ४ ॥

पतिके शिरके लिये रामचन्द्रजीके पास जा और लाज छोड़कर शिर माँग ला ॥ ३ ॥ आज लाज मत करो, बुरे समयमें गुणको दोष नहीं गिनते ॥ ४ ॥

एक नारिब्रत रघुपतिकेरा ॐ लषन सुजस तैं सुना घनेरा ॥ ५ ॥
है पुनि ससुर बिभीषन तोरा ॐ बालिसुवन है बालक मोरा ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीके एक स्त्रीका व्रत है और लक्ष्मणजीकी सुन्दर कीर्ति तो तैंने बहुत सुनीही है ॥ ५ ॥ फिर बिभीषण तेरा ससुर है और वालिका पुत्र सो मेरा बालकही है ॥ ६ ॥

मंत्री जाम्बवंत सुग्रीवा ॐ द्विविद मयंद पनस बलसींवा ॥ ७ ॥

जानहु ब्रह्मचर्य हनुमंता ❀ सिवस्वरूप भवहर भगवंता ॥ ८ ॥
सदा नीतिरत रामनरेसू ❀ तहाँ जात कहु कवन कलेसू ॥ ९ ॥

और जाम्बवंत, सुग्रीव, द्विविद, मयंद, और पनस जो बलकी सीमा हैं वे मंत्रीआदि हैं ॥ ७॥ हनूमान्को ऐसा जानो कि वे तौ ब्रह्मचारी हैं, शिवस्वरूप और दुःखके नाश करनेवाले भगवान् हैं ॥ ८ ॥ और राजा रामचन्द्रजी सदा नीति करनेवाले हैं, वहां जानेमें कहो क्या कलेश है ? ॥ ९ ॥

दो०–बिदित तोहिं पतिभुजलिखित, लछिमनरामप्रभाउ ॥
महासुऋषिभाषित भयहु, अब बिलंब नहिं लाउ ॥ ११६ ॥

पतिकी भुजाका लिखा हुआ लक्ष्मण रामचन्द्रजीका प्रभाव तुझको मालूमही है. सुन्दर महर्षि (नारद) का कथन जो था सो हुआ, अब देर मत करै ॥ ११६ ॥

चौ०–सुनत सासमुखकी हितबानी ❀ जाउँ रामपहँ यह उर आनी ॥ १ ॥
बार बार चरनन सिर नाई ❀ चली जहाँ लछिमनरघुराई ॥ २ ॥

सासके मुखसे अपने भलेकी वाणी सुनतेही (सुलोचनाने) मनमें यह निश्चय किया कि रामचन्द्रजीके पास जाऊँ ॥ १ ॥ सो बार २ (सासके) चरणोंको शिर नवाकर जहां रामचन्द्र लक्ष्मणजी थे वहां चली ॥ २ ॥

देखी कटक भालुकपिकेरी ❀ सिंधु सुबेल महीधर घेरी ॥ ३ ॥
उमगेउ मनहु महोदधि दूसर ❀ हरित पिंग कपि धूमिल धूसर ॥ ४ ॥

रीछ बन्दरोंकी सेनाको देखा जो समुद्र और सुवेल पर्वतको घेरे हुये है ॥ ३ ॥ (सो ऐसे भासती थी) मानो हरे श्वेत धुंधले (लाल काले) और खाकी रंगके वन्दरोंका दूसरा बड़ा भारी समुद्र उमड़ा है ४

स्वर्ग लाल भासत अनहेरी ❀ मनहुँ लपट बड़वानलकेरी ॥ ५ ॥
स्रवत रुधिर भुज सहज भयंकर ❀ जहँ तहँ प्रगट होत जनु जलधर ॥ ६ ॥

आकाश ऐसा लाल विदित होता है और देखा नहीं जाता मानों वडवानल कहिये समुद्रकी अग्निकी लपट है ॥ ५ ॥ लोहू बहती हुई भुजायें साधारणमें ऐसी डरावनी हैं मानों जहां तहां वादल प्रगट होरहे हैं ॥ ६ ॥

लछिमनसेष सु अंक सीस धरि ❀ कटकजलधि सोवत राघव हरि ॥ ७ ॥
अक्षयवट तहँ बैठ बिभीपन ❀ अस सुकृती जग सुना न दीपन ॥ ८ ॥

शेषावतार लक्ष्मणजीकी सुन्दर गोदमें मस्तक रक्खे सेनारूपी समुद्रमें मानों रामचन्द्रजीरूपी विष्णु सोते हैं ॥ ७ ॥ तहां बिभीषणरूपी अक्षयवट बैठा है सो ऐसा पुण्यात्मा है कि संसारमें देखा न सुना ॥ ८ ॥

दो०–देखति हर्ष सुलोचना, धीरज धरति बहोरि ॥
महाराज रघुबीरकहँ, बिनय सुनावहु मोरि ॥ ११७ ॥

सो देखतेही सुलोचना प्रसन्न हुई फिर धीरज रखकर (मनमें) बोली कि महाराज रामचन्द्रजीको मेरी प्रार्थना सुनाओ ॥ ११७ ॥

चौ०–वानर सकल उठे अस बोली ❀ अरिपुरते आवत इक डोली ॥ १ ॥
इह जानिय रावन अब बूझा ❀ भइ मति मेघनाद जब जूझा ॥ २ ॥

सब वन्दर ऐसे बोल उठे कि वैरीके नगरसे एक डोली आती है ॥ १ ॥ सो यह ज्ञात होता है कि रावण अब समझा और जब मेघनाद जूझा तब ज्ञान हुआ ॥ २ ॥

हठ तजि सीतहिं दीन्ह पठाई ❀ तजहु सोच अब मिटी लराई ॥ ३ ॥
जेहिलगि प्रकट कीन्ह पुर आगी ❀ बाँधेउ सेतु हेतु जिहिलागी ॥ ४ ॥

जो हठ छोड़कर सीताजीको भेज दिया, सो सोच छोड़ दो अब लड़ाई मिटगई ॥ ३ ॥ जिसके लिये नगरमें अग्नि लगाई और जिसके लिये पुल बाँधा ॥ ४ ॥

सो सीता अब विनु स्रम पाई ❀ जानहु विधि अनुकूल अघाई ॥ ५ ॥
विजय राम सुग्रीवहिं आयउ ❀ सुजस सकल बानरकुल पायउ ॥ ६ ॥

वही सीताजी अब बिनाही परिश्रमके मिलगई सो ब्रह्माको पूरा सहायक जानों ॥ ५ ॥ रामचन्द्र सुग्रीवको जय मिली और सब बन्दरोंके कुलको सुन्दर यश मिला ॥ ६ ॥

बिरह रामलछिमनकर छूटेउ ❀ बिनु प्रयास लंकागढ़ टूटेउ ॥ ७ ॥
जुग जुग कीरति रहिहि हमारी ❀ कत रन कत हम लघु बनचारी ॥ ८ ॥

रामचन्द्र लक्ष्मणजीका वियोग छूटा और बिनाही परिश्रमके लंकागढ़ टूटा ॥ ७ ॥ हमारा यश युगानुयुगोंतक रहैगा, क्योंकि कहाँ तौ लड़ाई और कहाँ हम छोटे २ वनचर ॥ ८ ॥

दो०–यहि विधि चारु विचार करि, कीन्ह ठीक मनमाहिं ॥ ❀
भयउ काज रघुराजकर, बात दूसरी नाहिं ॥ ११८ ॥ ❀

इस प्रकार सुन्दर विचार करके मनमें निश्चय किया कि रामचन्द्रजीका काम होगया, और कोई बात नहीं ॥ ११८ ॥

चौ०–पैठत कटक अतिहि सकुचाई ❀ अनचिन्हारि जिमि परघर जाई ॥ १ ॥
आगे जाइ दीख रघुबीरहिं ❀ छबिमय स्यामल गौर सरीरहिं ॥ २ ॥

सेनामें धसतेही (सुलोचना) बहुत सकुचाई जैसे कोई विना पहिचाने पराये घर जाय ॥ १ ॥ आगे जाकर शोभायुक्त साँवले गोरे शरीरवाले रामलक्ष्मणजीको देखती हुई ॥ २ ॥

मरकत कनक छबिहिं जनु निंदक ❀ सो जन धन्य उमा जे बंदक ॥ ३ ॥
मत्तगयंदसुंडभुजदंडा ❀ धनुष बान असि धरे प्रचंडा ॥ ४ ॥

जो मानों नीलमणि और सुवर्णकी शोभाकी निन्दा करनेवाले हैं (महादेवजी कहते हैं) हे पार्वती ! जो मनुष्य उनको दंडवत् करते हैं उनको धन्य है. ॥ ३ ॥ मतवाले हाथीकी सूँड़के समान भुजदंडोंमें धनुषबाण और प्रचंड तलवार धारण किये हैं ॥ ४ ॥

उर बिसाल अतिउन्नत कंधर ❀ कंबुकंठ रेखावर त्रयधर ॥ ५ ॥
मुखछबिकी उपमा कबि जोहहिं ❀ ससिसरोजसम कहे न सोहहिं ॥ ६ ॥

चौड़ी छाती, बहुत ऊँचे कंधे, शंखसे सुन्दर कंठमें तीन रेखा धारण किये हैं ॥ ५ ॥ कवीश्वर मुखकी शोभाकी उपमाको ढूँढ़ २ कर चन्द्रमा और कमलके समान कहतेमें शोभा नहीं पाते हैं ॥ ६ ॥

दसनपाँतिकी कांति कहै को ❀ ललकत मन पटतरहि लहै को ॥ ७ ॥
देखत अधरनकी अरुनाई ❀ बिंबाफल बंधूक लजाई ॥ ८ ॥
सुकतुंडहिं नासिका लजावहि ❀ थके सुकबि नहिं पटतर पावहि ॥ ९ ॥

दांतोंकी पंक्तियोंकी झलकको कौन कहै ? मन ललचाता है, उनकी बराबरी कौन कर सक्ता है ? ॥७॥

होठोंकी ललाईको देखकर बिंबाफल और दुपहरियाका फूलभी लज्जित होता है ॥ ८ ॥ उनकी नाक तोतेकी चोंचको लज्जित करती है, सुन्दर कवीश्वर थकगये उपमा नहीं मिलती ॥ ९ ॥

दो०-छबिमय गुनमय तेजमय, राम उदधि अवगाह ॥
जहाँ न पावत पार सुर, को बरनै कवि थाह ॥ ११९ ॥

शोभायुक्त, गुणवान् और तेजमय रामचन्द्रजी गहरे समुद्रके समान हैं. सो जहां देवताभी पार नहीं पाते उसकी थाहको कौनसा कवि वर्णन कर सक्ता है? ॥ ११९ ॥

चौ०-भ्रुकुटी बिकट कपोल सुहाये ❀ सीस जटाके मुकुट बनाये ॥ १ ॥
भाल बिसाल तिलकयुत सोहै ❀ ध्यानसमय लखि मुनिमन मोहै ॥ २ ॥

टेढ़ी भौंहैं, सुन्दर गाल और माथेपर जटाओंका मुकुट बना हुआ है ॥ १ ॥ चौड़े मस्तकपर तिलक शोभायमान् है, जो ध्यानके समयमें देखतेही मुनीश्वरोंके मनको मोहित करता है ॥ २ ॥

वल्कलवसन तून कटि बाँधे ❀ कर सर सुभग सरासन काँधे ॥ ३ ॥
बीरासन आसन मृगछाला ❀ नवपल्लव प्रसूनकी माला ॥ ४ ॥

छालोंके वस्त्र और कमरमें तरकस बँधा है, हाथमें बाण और कंधेपर सुन्दर धनुष है ॥ ३ ॥ बीरासनसे मृगचर्मपर बैठे हुये हैं और नवीन कोंपल और फूलोंकी माला पहिरे हुये हैं ॥ ४ ॥

चरनसरोज बरनि नहिं जाई ❀ जहँ मुनिमधुकर सदा लुभाई ॥ ५ ॥
प्रकट भई जेहि थलते गंगा ❀ स्रुति पुरान कहि कथाप्रसंगा ॥ ६ ॥

कमलसमान चरण वर्णन नहीं किये जाते. तहाँ मुनीश्वररूपी भौरोंके मन सदा लुभाये रहते हैं ॥ ५ ॥ जिस स्थानसे गंगाजी प्रकट हुईं और जिसकी कथाके प्रसंगको वेद पुराण कहते हैं ॥६॥

नवहिं महेस बिरंचि जाहिकहँ ❀ लोचनगोचर होइ काहिकहँ ॥ ७ ॥
भयभंजन जनरंजन जो हित ❀ भवसागरतारनकहँ बोहित ॥ ८ ॥

जिसको ब्रह्मा और महादेवभी नमस्कार करते हैं वह किसके नेत्रोंके सामने होसक्ता है? ॥ ७ ॥ जिनका हित भयका नाश करनेवाले, भक्तोंको सुख देनेवाला और संसाररूपी समुद्रसे पार करनेको नाव है ॥ ८ ॥॥

दो०-प्रनतपालबिरदावली, जिन्ह चरननकी बानि ॥
सोकहरन संसयदरन, सकल सुमंगलखानि ॥ १२० ॥

जिन चरणोंकी यह बानि है कि दीनोंका पालन करके सुन्दर यश प्राप्त करते हैं और वे शोकके दूर करनेवाले संदेहोंके नाश करनेवाले और संपूर्ण सुन्दर आनन्दोंकी खानि हैं ॥ १२० ॥

चौ०-कर जोरे अंगद हनुमाना ❀ द्विबिद मयंद कुमुद बलवाना ॥ १ ॥
जाम्बवंत कपिपति बलसीला ❀ ऋषभ सुषेण सहित नल नीला ॥ २ ॥

जहां बलवान् अंगद, हनूमान्, द्विविद, मयंद, और कुमुद हाथ जोड़ रहे हैं ॥ १ ॥ बलवान् जाम्बवंत और सुग्रीव तथा ऋषभ सुषेण समेत नल नील ॥ २ ॥

महाबीर बानर सब राजहिं ❀ लषन बिभीषन दुहुँ दिसि भ्राजहिं ॥३॥
मितभाषी सर्वज्ञ सुसेवक ❀ चितवहिं रुख रघुनंदन देवक ॥ ४ ॥

बड़े २ योद्धा सब बन्दर शोभायमान् हैं और लक्ष्मण और बिभीषण दोनोंओर बिराजते हैं ॥ ३ ॥ ये प्रमाणसे बोलनेवाले, चतुर सुन्दर सेवक रामचन्द्र देवके रुखकों देखते रहते हैं ॥ ४ ॥

सभामध्य सोभित रघुनंदन ❀ कीन्हेसि सफल निरखि निजअंगन ॥५॥
करति दंडवत सिर धरि धरनी ❀ तब सब कथा बिभीषन बरनी ॥ ६ ॥

सभाके वीचमें रामचन्द्रजी शोभायमान् हैं, उनको देखकर (सुलोचनाने) अपने शरीरको सफल किया ॥५॥ और पृथ्वीपर माथा रखकर दंडवत् करने लगी, तब विभीषणने सब कथा वर्णन की कि ६

पुत्रवधू दसकंधरकी है ❀ पतिदेवता सुलोचन ती है ॥ ७ ॥
मेघनादकी नारि सुशीला ❀ यह गति तब बिरोधकी लीला ॥ ८ ॥

(हे भगवन्! यह) रावणके बेटेकी वहू है. यह पतिव्रता है और इसका नाम सुलोचना है ॥ ७ ॥ यह मेघनादकी स्त्री बड़ी सुशील है और यह गति तौ आपसे विरोध करनेसे हुई है (सुलोचनाने कहा) ॥ ८ ॥

दो०-मुयेज्ञान पतिभुजा लिखि, सब समुझायउ मोहिं ॥ ❀
महाराज ताके सिरहिं, जाचन आई तोहिं ॥ १२१ ॥ ❀

हे महाराज! पतिकी भुजाने पतिके मरनेका ज्ञान लिखकर मुझे सब समझा दिया है, सो मैं आपसे उसके शिरको माँगने आई हूं ॥ १२१ ॥

चौ०-करि प्रनाम आदर नहिं थोरे ❀ करुनाबचन कहत कर जोरे ॥ १ ॥
अति अस्तुति कीन्ही बहु भाँती ❀ हृदय सोच चिंता दिनराती ॥ २ ॥

बड़े आदरसे प्रणाम करके और हाथ जोड़कर करुणायुक्त वचन कहने लगी ॥ १ ॥ बहुत प्रकारसे अत्यंत स्तुति करी, मनमें शोच और दिन रात चिन्ता थी ॥ २ ॥

अस्तुति कीन्ह अहो प्रभु देवा ❀ कृपा अनुग्रह अद्भुत सेवा ॥ ३ ॥
नित सुमिरौं मैं तुम्हें गुसांई ❀ जेहिविधि मोहिं होउ सुखदाई ॥ ४ ॥

स्तुति करके (कहा) हे स्वामी! हे देव! आपकी दया, अनुग्रह और सेवा अद्भुत है ॥३॥ हे गोसाँई! मैं नित्य आपका स्मरण करती थी कि जिस प्रकार आप मुझे सुख दे सक्ते हो (उस प्रकार) ॥४॥

दया करहु देवन्हके देवा ❀ राम नाम हुइए एक खेवा ॥ ५ ॥
दीनदयालु अनुग्रहकारी ❀ मोहिं पतित प्रभु लेहु उधारी ॥ ६ ॥

हे जिवोंके देव! दया करो जिससे रामनामही एक खेवा हो जाय ॥ ५ ॥ हे प्रभो ? आप दीनदयालु और कृपा करनेवाले हो, मुझ नीचका उद्धार कर दीजिये ॥ ६ ॥

पतितहुँ महँ जे पतित कहाई ❀ ताहू गति दीन्ही रघुराई ॥ ७ ॥
तहँ त्रिभुवनपति सकल बिस्रामी ❀ करौ दया प्रभु गरुड़ागामी ॥ ८ ॥

हे रामचन्द्रजी! जो नीचोंमेंभी नीच कहाते थे उन्हेंभी (आपने) गति दी ॥ ७ ॥ तैसेही हे त्रिलोकीनाथ सच्चिदानन्द गरुड़पर गमन करनेवाले प्रभो! (मुझपरभी) दया करो ॥ ८ ॥

दो०-अस प्रभु दीननबंधु हरि, कारनरहित कृपाल ॥ ❀
तुलसिदास सठ ताहि भजु, छाँड़ि कपटजंजाल ॥ १२२ ॥ ❀

ऐसे प्रभु दीनबंधु भगवान् विनाकारण दया करनेवाले हैं. तुलसीदास कहते हैं कि अरे मूर्ख! कपटके जंजालको छोड़कर उन्हीं (भगवान्) को भज ॥ १२२ ॥

चौ०-तुम अंतर्यामी भगवाना ❀ प्रभुता आदि मध्य अवसाना ॥ १ ॥
करुनावचन सुनत रघुबीरा ❀ पुलकरोम भए सिथिलसरीरा ॥ २ ॥

हे भगवन्! तुम अंतर्यामी और प्रभुताके आदि मध्य और अन्त हो ॥ १ ॥ रामचन्द्रजी करुणायुक्त वचन सुनतेही रोमांचित और शरीरमें शिथिल होगये और बोले कि ॥ २ ॥

देउँ जिवाय तोर पति आजू ❀ भुंजहु लंक कलपसत राजू ॥ ३ ॥
छाँड़ि सोच मन अति हरशाई ❀ तुरत भवन अपने फिरि जाई ॥ ४ ॥

तेरे पतिको अभी जिलादूं और तू सौकलपतक लंकाका राज्य कर ॥ ३ ॥ और शोचको छोड़ मनमें अतिप्रसन्न हो शीघ्रही अपने घरको लौट जा ॥ ४ ॥

सुनि अस सत्यसिंधुकी बानी ❀ मनमहँ बानरचमू डरानी ॥ ५ ॥
कहि न सकै कछु प्रभुरुख देखी ❀ कहा करिय करतार अलेखी ॥ ६ ॥

सत्यके समुद्र (रामचन्द्रजी) की ऐसी बाणी सुनकर बन्दरोंकी सेना मनमें घबराई ॥ ५ ॥ पर भगवान्के रुखको देखकर कुछ कह नहीं सक्ती कि न जाने अब अलख कर्तार क्या करैगा? ॥ ६ ॥

सीयसोचकर फल नहिं होइहि ❀ जो करि कृपा राम यहि जोइहि ॥ ७ ॥
सब देवनकर सोच न जाई ❀ जो अस कृपा करैं रघुराई ॥ ८ ॥

जो रामचन्द्रजी इसे दया करके देखेंगे तौ सीताजीके शोच करनेका (कुछ) फल नहीं होगा ॥ ७ ॥ और जो रामचन्द्रजी ऐसी कृपा करैंगे तौ सब देवताओंका शोचभी न जायगा ॥ ८ ॥

दो०-राज्य विभीषन लंककर, केहिविध करिहहिं भाइ ॥ ❀
समुझि बैर घननाद जब, गहहि सरासन जाइ ॥ १२३ ॥ ❀

हे भाई! जब मेघनाद वैर समझकर और धनुषबाण लेकर दौड़ेगा तब बिभीषण लंकाके राज्य कैसे करैंगे? ॥ १२३ ॥

चौ०-मुखरुख लखि कपीस सब जाना ❀ प्रनतपाल भगवान समाना ॥ १ ॥
देखि बहुत रघुपतिकर छोहू ❀ विनय करति दसकंठपतोहू ॥ २ ॥

(भगवान्के) मुखका रुख देखकर सब बन्दरोंने जाना कि दीनोंके पालन करनेवाले भगवान् (सबको) समान हैं ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीकी बहुतसी दयाको देखकर रावणके बेटेकी बहू (सुलोचना) प्रार्थना करने लगी ॥ २ ॥

आपु उदार देव सबलायक ❀ करुनामय देखेउँ रघुनायक ॥ ३ ॥
मैंहुँ विचार कीन्ह मनमाहीं ❀ जीवनते अस मरन सराहीं ॥ ४ ॥

हे देव! आप उदार और सब योग्य हो सो हे रामचन्द्र! मैंने आपको करुणामय देखा ॥ ३ ॥ और मैंनेभी मनमें विचार कर लिया कि जीनेसे तौ ऐसे मरनेहीमें बडाई है कि- ॥ ४ ॥

भुजबल जीति लोक बस कीन्हें ❀ चौदह भुवनभोग करि लीन्हें ॥ ५ ॥
रनतीरथ जाचक भल चीन्हेउँ ❀ प्रान सो धन लछमनकर दीन्हेउँ ॥ ६ ॥

भुजाओंके बलसे जीतकर, लोकोंको वशमें कर लिया और चौदहों भुवनोंके भोग कर लिये ॥ ५ ॥ लड़ाईरूपी तीर्थमें (योद्धारूपी) याचकोंको भली भांति पहिचाना और प्राणरूपी धन सो लक्ष्मणजीके हाथ दिये ॥ ६ ॥

अब न उचित पति लेउँ उभारा ❀ धन्य धन्य भा दरस तुम्हारा ॥ ७ ॥
जानिय मैंहुँ मरब सतसाथी ❀ मिलब तुमहिं जिमि मिलैं समाधी ॥ ८ ॥

अब पतिको फिर जिवा लेना उचित नहीं है. मुझको धन्य है २ जो आपका दर्शन हुआ ॥ ७ ॥

मैंभी सत्यसाधकर मरूंगी और आपमें ऐसे मिलूंगी जैसे (योगिराज) समाधिद्वारा आपसे मिलते हैं, यह जानों ॥ ८ ॥

दो०-निर्मलगतिअवसर भयउ, सुनिय सत्य रघुवीर ॥
तुमहिं मिले नहिं होइ भव, यथासिंधु गत नीर ॥ १२४ ॥

हे रामचन्द्रजी ! सत्य २ सुनिये कि यह निर्मल गतिका समय आन लगा है क्योंकि आपके मिलनेसे फिर जन्म ऐसे नहीं होता जैसे समुद्रमें जानेसे जलकी दशा होजाती है. (अर्थात् वह फिर नहीं लौटता) ॥ १२४ ॥

चौ०-मनकी जाननहार सुदेवा ❀ भवसागर तारहु इहि खेवा ॥ १ ॥
लीन्हेउ ऋछप कपीस बुलाई ❀ मेघनादसिर दीन्ह मँगाई ॥ २ ॥

हे महाराज ! आप तौ हृदयकी जानते हैं, उसी खेवेमें संसाररूपी समुद्रसे पार करिये ॥ १ ॥ (तब भगवान्ने) जाम्बवंत और सुग्रीवको बुलाकर मेघनादका शिर मँगा दिया ॥ २ ॥

पाइ कृतारथ मानेउ आपू ❀ मिटा विरहसंभव परितापू ॥ ३ ॥
अंचल पोंछति मुखकी धूरी ❀ कहि मम प्रान सजीवनमूरी ॥ ४ ॥

उसे पाकर सुलोचनाने अपनेको कृतार्थ माना और वियोगसे उत्पन्न हुआ शोक मिट गया ॥ ३ ॥ हे मेरे प्राणोंके सजीवन मूल ! यों कहकर अंजलिसे मुखकी धूल पोंछने लगी ॥ ४ ॥

देखि करत संसय सुग्रीवा ❀ भुज महि लिखा सो मोहिं न सींवा ॥५॥
हँसै बदन तौ तिय यह साँची ❀ नाहिं तो निसिचरमाया काँची ॥ ६ ॥

यह देखकर सुग्रीव सन्देह करने लगा कि भुजाने पृथ्वीपर लिखा हो यह मुझे विश्वास नहीं होता ॥ ५ ॥ जो मुख हँसे तौ यह स्त्री सच्ची है नहीं तौ राक्षसोंकी माया कच्ची है ॥ ६ ॥

कहँ यह ज्ञान मृतकभुज गावै ❀ जो मुनिबर साधनते पावै ॥ ७ ॥
प्रभु यह कहेउ हँसब यह सीसा ❀ किये कुतर्क न उचित कपीसा ॥ ८ ॥

कहीं इस ज्ञानको मरी हुई भुजा कह सक्ती है कि जिसे श्रेष्ठ मुनि साधनसे पाते हैं ॥ ७ ॥ भगवान्ने कहा, हे सुग्रीव ! यह शिर तौ हँस जायगा परन्तु सन्देह करना ठीक नहीं ॥ ८ ॥

दो०-सिरसों कहति सुलोचना, हँसहु बेगि मम नाथ ॥
नतरु प्रतीति न मानिहैं, लिखा जो तुम्हरे हाथ ॥ १२५ ॥

सुलोचनाने शिरसे कहा, हे मेरे स्वामी ! शीघ्रही हँसो, नहीं तों उसका विश्वास न करैंगे जो आपके हाथने लिखा था ॥ १२५ ॥

चौ०-छिनक विलंब कीन्ह नहिं बोला ❀ मृतक सो मुख मुंदित नहिं खोला ॥१॥
पुनि पुनि कहति सो नागकुमारी ❀ स्रमित भयउ रनमहँ लरि भारी ॥ २ ॥

वह मृतक एक क्षण भरतक नहीं बोला, मुख बंद है खोलता नहीं ॥ १ ॥ सुलोचना बारबार कहती है कि लड़ाईमें बड़ा युद्ध करनेसे थकित हो गये हो ॥ २ ॥

लगे लषनसर छोभ बढ़ावहिं ❀ प्रभुसमीप कत मोहिं लजावहिं ॥ ३ ॥
जो मन बचन कर्म यह देही ❀ पतिदेवता न आन सनेही ॥ ४ ॥

लक्ष्मणजीके लगे हुये बाण संताप तौ बढ़ाते होंगे पर भगवान्के सामने मुझे क्यों लजाते हो ? ॥ ३ ॥ जो मन वचन कर्मसे यह देही पतिव्रता है और इसका दूसरेसे प्रेम नहीं है ॥ ४ ॥

तौ प्रभु सभाबीच शिर बोलहि ❀ रहि जाइहि जग सुजस अमोलहि ॥५॥
जो जानति तब यह गति साँई ❀ बोलि पठावति पितहि सहाई ॥ ६ ॥

तौ हे स्वामी ! सभाके बीचमें शिर बोल उठै और संसारमें अनमोल सुन्दर कीर्ति रहजाय ॥ ५ ॥ हे स्वामी ! जो जानती कि तुम्हारी ऐसी दशा होगी तो सहायताके लिये पिताको बुला भेजती ॥ ६ ॥

सुनि तियबचन हँसेउ तब सीसा ❀ चौंकि उठे सब भालु कपीसा ॥ ७ ॥
हँसे उठाइ बदन सब देखत ❀ बिस्मय भयउ सकल जन पेखत ॥ ८ ॥

जब स्त्रीके वचन सुनकर शिर हँसा तौ सब रीछ बन्दर चौंक उठे ॥ ७ ॥ सब हँसकर और मुहँ उठाकर देखने लगे और सब लोगोंको देखतेही आश्चर्य हुआ ॥ ८ ॥

कोटिमेघरव सुनि नहिं जाई ❀ रहेउ सो बदन बहुरि अरुगाई ॥ ९ ॥
सकुच कपीसहु तोषेउ नारिहिं ❀ बड़ आश्चर्य भयउ बनचारिहिं ॥ १० ॥

करोड़ मेघोंके समान जिसका शब्द हुआ, जो सुना नहीं जाता, और फिर वह मुख चुप हो रहा ॥ ९ ॥ सुग्रीवने सकुचकर स्त्री (सुलोचना) को संतोष दिया तौ बनचारों (रीछ बन्दरों) को बड़ा अचंभा हुआ ॥ १० ॥

कह सुग्रीव चरन सिर नाई ❀ कारन कवन हँसा सिर साँई ॥ ११ ॥
यह सुनि बिहँसि कहा रघुराई ❀ सुनु सुग्रीव कुतर्क बिहाई ॥ १२ ॥

सुग्रीवने (भगवान्‌के) चरणोंको शिर नवाकर कहा हे स्वामी ! क्या कारण है ? जो शिर हँसा ॥ ११ ॥ यह सुनकर रामचन्द्रजीने हँसकर कहा, हे सुग्रीव ! कुतर्क छोड़कर सुनो ॥ १२ ॥

पतिव्रत तिय जिनके गृहमाहीं ❀ यह बड़ि बात तिनहिं कछु नाहीं ॥१३॥
पुनि तव संसय भयउ कपीसा ❀ तिहि कारनहिं हँसा यह सीसा ॥ १४ ॥

जिनके घरमें पतिव्रता स्त्री है उनको यह कुछ बड़ी बात नहीं है ॥ १३ ॥ हे सुग्रीव ! फिरभी तुझे सन्देह हुआ इसलिये यह माथा हँसा ॥ १४ ॥

दो०-सीस पाइ प्रभुचरन गहि, बहुविध विनय सुनाइ ॥ ❀
आजुक दिन रन परिहरहु, मम हित कोसलराइ ॥ १२६ ॥ ❀

(सुलोचनाने अपने पतिका) माथा पाकर और भगवान्‌के चरण छूकर तथा बहुत भांति प्रार्थना करके कहा-हे अयोध्यानाथ ! आजके दिन मेरे कारणसे युद्ध मत करो ॥ १२६ ॥

चौ०-बहुरि बिभीषनपदहिं नमति सो ❀ रघुबरगुनगन हृदय भनति सो ॥ १ ॥
तुम पितुसम दसकंधरभाई ❀ यहि कुलकी तोहिं लाज बड़ाई ॥ २ ॥

फिर वह सुलोचना बिभीषणके चरणोंको दंडवत् करती हुई और रामचन्द्रजीके अनेक गुणोंको हृदयमें स्मरण कर कहने लगी ॥ १ ॥ हे रावणके भाई ! तुम मेरे पिताके समान हो, इस कुलकी लाज और बड़ाई तुम्हैं है ॥ २ ॥

मुनिपुलस्त्यपरिवारके दीपक ❀ पायउ फल रघुबीरसमीपक ॥ ३ ॥
प्रथम मोहबस अनहित मानेउँ ❀ ज्ञान भयो तव गुन पहिचानेउँ ॥ ४ ॥

तुम पुलस्त्य मुनिके कुटुम्बमें दीपकके समान हुये और तुमने रामचन्द्रजीके पास रहनेका फल पालिया ॥ ३ ॥ पहले अज्ञानके वश मैंने बुरा माना था, जब ज्ञान हुआ तौ गुणको पहिंचाना ॥ ४ ॥

जुग जुग करव अकंटकराजू ❀ सहित सुकीरति सुकृत समाजू ॥ ५ ॥
सुमिरत तुमहिं सुजस जन पैहैं ❀ रघुबरचरितसंग कर गैहैं ॥ ६ ॥

तुम सुन्दर यश और धर्मके समाजसहित युगानुयुगतक अकंटक राज्य करो ॥ ५ ॥ मनुष्य तुमको स्मरण करतेही सुन्दर कीर्ति प्राप्त करेंगे और रामचन्द्रजीके चरित्रोंके साथ (तुम्हारे यशकोभी) गावेंगे ॥ ६ ॥

सुनत बिभीषन करुना भारी ❀ प्रगट न करत समय अनुहारी ॥ ७ ॥
काल कर्मगति कहि समुझाई ❀ चली तुरित गुरुआयसु पाई ॥ ८ ॥

सुनतेही बिभीषणको वहुत दया आई परन्तु समयके अनुसार प्रगट नहीं करते ॥ ७ ॥ कालकर्मकी दशा कहकर समझा दीनी और सुलोचना वडोंकी आज्ञा पाकर शीघ्रही चली ॥ ८ ॥

दो०–वाहर करि कपिकटकतें, फिरे बिभीषन आप ॥ ❀
बिसरेउ दसकंधरबयर, निरखि होत संताप ॥ १२७ ॥ ❀

विभीषण उसे वन्दरोंकी सेनासे वाहर पहुँचा कर आपभी लौटे. (उस समय) रावणका वैर जाता रहा और देखकर दुःख होने लगा ॥ १२७ ॥

चौ०–सिर चढ़ाइ पालकी चढ़ी सो ❀ रघुपतिकृपा प्रभाव बढ़ी सो ॥ १ ॥
हृदय राखि मूरति घनस्यामहिं ❀ रसना रटति निरंतर रामहिं ॥ २ ॥

वह (सुलोचना) शिरको पालकीमें रखकर आपभी चढ़ी और रामचन्द्रजीकी दयासे उसका प्रभाव बढ़ गया ॥ १ ॥ हृदयमें साँवले मेघके समान मूर्तिको धारण कर जीभसे निरंतर राम राम रटने लगी ॥ २ ॥

सरितासिंधुसंगम जहँ पावन ❀ गइ सुधि पाइ गये तहँ रावन ॥ ३ ॥
सँग मंदोदरि सब रनिवासू ❀ मनहुँ सोकरबि कीन्ह प्रकासू ॥ ४ ॥

और जहां नदी और समुद्रका पवित्र संगम था (वहां सुलोचना गई) यह समाचार पाकर रावणभी वहां गया ॥ ३ ॥ साथमें मन्दोदरी और सव रनिवास है, मानों शोकरूपी सूर्यने प्रकाश किया ॥ ४ ॥

पाइ रजायसु सेवक धाये ❀ चंदन अगरभार बहु ल्याये ॥ ५ ॥
रची दारुमय चिता बनाई ❀ जनु सुरलोक निसेनी लाई ॥ ६ ॥

आज्ञा पाकर सेवक दौडे और वहुतसे चन्दन और अगरके भार ले आये ॥ ५ ॥ लकडीकी चिता रचकर ऐसी वनाई मानों स्वर्गलोककी निसेनी लगाई ॥ ६ ॥

करि प्रनाम सब जन परितोषे ❀ धीरज धरि सुमिरत सत चोषे ॥ ७ ॥
सिर भुज धरि बैठी करि आसन ❀ भइ जनु जोगसिद्धिको बासन ॥ ८ ॥

(सुलोचनाने) प्रणाम करके सब मनुष्योंको संतुष्ट किया और धीरज रखकर सुन्दर सत्यको स्मरण करने लगी ॥ ७ ॥ (पतिके) मस्तक और भुजाको रख आसन लगाकर ऐसी बैठी मानों योग सिद्ध करती है ॥ ८ ॥

दो०–दीन्ह अग्नि दसमौलि तब, लपट गगनलगि जाइ ॥ ❀
लखी न काहू जात सो, सुरपुर पहुँची धाइ ॥ १२८ ॥ ❀

रावणने अग्निसंस्कार किया तौ लपट आकाशसे जा लगी और उसे जाते हुये किसीसे न देखा, (वह) दौड़कर स्वर्गमें जा पहुँची ॥ १२८ ॥

चौ०–सुतवध दिखत दसानन जबहीं ❀ संभ्रम मूर्च्छि परेउ महि तबहीं ॥ १ ॥
दुःखित हृदय नयन भरि आवा ❀ जनु सिरमनि अहिराज गवाँवा ॥ २ ॥

जब रावणने पुत्रका मरण देखा तौ उसी समय मूर्च्छित होकर शीघ्रही पृथ्वीपर गिरपड़ा ॥ १ ॥ हृदयमें दुखी हुआ, नेत्र भर आये, मानो सर्पराजने (अपने) माथेकी मणि खो दी ॥ २ ॥

हा सुत संतत आज्ञाकारी ❀ करि विलाप दसकंध पुकारी ॥ ३ ॥
सक्र आदि जीतेहु सब देवा ❀ सुर मुनि नाग करायहु सेवा ॥ ४ ॥

रावण विलाप करके यों पुकारने लगा कि हा पुत्र ! तू सदा (मेरा) आज्ञाकारी रहा ॥ ३ ॥ इन्द्रादिक सब देवताओंको जीतकर देवता, मुनीश्वर और नागोंसे सेवा कराई ॥ ४ ॥

दूसर रहा न भुजबल दापा ❀ स्वर्ग भूमितल तपेउ प्रतापा ॥ ५ ॥
इहिविधि करि विलाप लंकेसा ❀ भयउ तेजहत सुनु उरगेसा ॥ ६ ॥

ऐसा भुजबलका अभिमानी दूसरा नहीं था कि जिसके, प्रतापसे स्वर्ग और पृथ्वीतल (जलने) लगे ॥ ५ ॥ (कागभुशुंडी कहते हैं) हे गरुड़ ! सुनो इसभांति विलाप करतेही रावणका सब तेज जाता रहा ॥ ६ ॥

मंदोदरी रुदन करि भारी ❀ उर ताड़हि बहुभाँति पुकारी ॥ ७ ॥
नगरलोक सब व्याकुल सोचा ❀ सकल कहहिं दसकंधर पोचा ॥ ८ ॥

मन्दोदरी बड़ा भारी रुदन करके और बहुत प्रकारसे विलाप कर छाती कूटने लगी ॥ ७ ॥ नगरके सब लोग शोचमें व्याकुल हैं और सब कहते हैं कि रावण नीच है ॥ ८ ॥

दो०–तब लंकेस अनेकविध, समुझाई सब नारि ॥ ❀
नस्वर रूप प्रपंच यह, देखहु हृदय विचारि ॥ १२९ ॥ ❀

तब रावणने सब स्त्रियोंको अनेक भांति समझाया कि हृदयमें विचार कर देखो तौ यह संसार झूठा है ॥ १२९ ॥

चौ०–तिन्हहिं ज्ञान उपदेसहि रावन ❀ आपुन मंद कथा अति पावन ॥ १ ॥
परउपदेसकुसल बहुतेरे ❀ जे आचरहिं ते नर न घनेरे ॥ २ ॥

रावण उन्हें तौ ज्ञानउपदेश करता है, परन्तु अपनेको बुरी बातेंहीं बहुत अच्छी लगती हैं ॥ १ ॥ औरोंको उपदेश करनेमें बहुत लोग चतुर होते हैं परन्तु जो उसपर चलै वे मनुष्य बहुत नहीं होते॥२

तासु क्रिया करि निसिचरनाहा ❀ भयउ सोचबस अति उरदाहा ॥ ३ ॥
सचिव आइ सब लगे बुझावन ❀ बादि विषाद करिय जनिरावन ॥ ४ ॥

रावण उसकी क्रिया करके शोचके वश होगया और हृदयमें बहुतसी जलन होने लगी ॥ ३ ॥ सब मंत्री आकर समझाने लगे कि हे रावण ! वृथा दुःख न कीजिये ॥ ४ ॥

सुत बित नारि विविध सुख कैसे ❀ उपजहिं घटा जाहिं उड़ि जैसे ॥ ५ ॥
तड़ितदमक देखिय घनमाहीं ❀ रहइ न थिर सो बहुरि छिपाही ॥ ६ ॥

पुत्र, धन, स्त्री और अनेक प्रकारके सुख कैसे हैं जैसे (बादलोंकी) घटाएँ उठती हैं और फिर उड़जाती हैं ॥ ५ ॥ बिजलीकी चमक बादलमें दिखाई देती है और वह स्थिर न रहकर फिर छिपजाती है ॥६॥

अस जिय जानि सुनिय दसभाला ❀ बचहि न कोउ जग आए काला ॥ ७ ॥
अब प्रभु जतन बिचारहु सोई ❀ रिपुकर नास कवनबिध होई ॥ ८ ॥
बचन सुनत तेहिं कछु सुख माना ❀ कालबिबस जिमि तीरथज्ञाना ॥ ९ ॥

हे रावण ! ऐसे हृदयमें जानकर सुनिये, संसारमें काल आनेपर कोई नहीं बचता ॥ ७ ॥ हे

स्वामी! अब वही उपाय विचारना चाहिये कि वैरीका नाश किस प्रकार हो? ॥ ८ ॥ वचन सुनतेही उसने थोड़ा सुख ऐसे माना जैसे कालके वश होनेपर किसीको तीर्थ या ज्ञान प्राप्त हो जाय॥९॥

अहिरावणकी कथा ॥ क्षेपक ॥

दो०-लागेउ करन बिचार पुनि, बहुप्रकार दशशीश ॥ ❀
समुझि हृदय अहिरावणहिं, आयउ जहाँ गिरीश ॥ १३० ॥ ❀

रावण बहुत भांति बिचार करने लगा, फिर हृदयमें अहिरावणको समझकर महादेवके पास आया ॥ १३० ॥

चौ०-दंड चारि तब तहँ निशि बीती ❀ संध्यावदन कीन्ह सप्रीती ॥ १ ॥
लागेउ करन ध्यान दशशीशा ❀ बहुरि हर्षि जोरेउ कर बीशा ॥ २ ॥

उस समय वहां चार घड़ी रात बीत गई थी सो बड़े प्रेमसे संध्यावन्दन किया ॥ १ ॥ रावण ध्यान करने लगा, फिर प्रसन्न होकर बीसों हाथ जोड़े ॥ २ ॥

शिवसेवक मनक्रमअनुरागी ❀ सुनु खगेश तिहिते बड़भागी ॥ ३ ॥
मंत्राकर्षक जप दशभाला ❀ अहिरावण चित डोल पताला ॥ ४ ॥

(कागभुशुंड कहते हैं) हे गरुड! सुनो (रावण) महादेवका दास और मनक्रमसे प्रीति करनेवाला है इससे बड़भागी है ॥ ३ ॥ रावणने आकर्षणमंत्र जपा तौ पातालमें अहिरावणका चित्त चलायमान हुआ ॥ ४ ॥

लगेउ करन सो मन अनुमाना ❀ केहि कारण दशमुख अकुलाना ॥ ५ ॥
निशिचरनाह भुवन बश जाके ❀ जीतन कहँ न बीर कोउ ताके ॥ ६ ॥

सो वह मनमें विचार करने लगा कि, क्या कारण है जो रावण अकुलाया? ॥ ५ ॥ जो राक्षसोंका राजा है और लोक जिसके वशमें हैं, और जिसके जीतनेको कोई योद्धा नहीं ॥ ६ ॥

मनक्रमवचन आन नहिं सेवी ❀ धरेउ ध्यान उर कामद देवी ॥ ७ ॥
चलेउ बहुरि आयउ सो तहँवा ❀ शिवमंडप दशमुख रह जहवा ॥ ८ ॥
निशिचरपतिकहँ तेहिं शिर नायउ ❀ कर गही निजआसन बैठायउ ॥ ९ ॥

जो मन क्रम बचनसे (दुर्गाको छोड़) औरका सेवक नहीं ऐसे अहिरावणने कामद अर्थात् कामनाओंकी देनेवाली देवीका ध्यान धरा ॥ ७ ॥ फिर वह चलकर वहां आया जहां महादेवके मंडपमें रावण था ॥ ८ ॥ उसने रावणको माथा नावाया (और रावणने) हाथ पकड़कर उसे अपने आसनपर बिठाया ॥ ९ ॥

दो०-अहिरावण तब रावणहिं, पूछेउ कुशल सप्रीति ॥ ❀
प्रथम कही तेहिं सो कथा, भगिनी कीन्ह अनीति ॥ १३१ ॥ ❀

तब अहिरावणने रावणसे प्रेमसहित कुशल पूंछी तौ पहले उसने वह कथा कही जो बहिनने अर्थात् शूर्पणखाने अनीति की थी ॥ १३१ ॥

चौ०-वध खरदूषन जिमि सुधि पाई ❀ पुनि मरीचकी कथा सुनाई ॥ १ ॥
कहेसि बहुरि सीताकर हरना ❀ पवनतनयबल लंकादहना ॥ २ ॥

फिर जैसे खरदूषणके मरनेकी खबर मिली थी सो कही, और फिर मारीचकी कथा सुनाई ॥ १ ॥ फिर सीताका हरण, हनुमानका बल, और लंकाका दहन कहा ॥ २ ॥

सेतु बांधि जिमि प्रभु चलि आयउ ❀ बालितनयसंवाद सुनायउ ॥ ३ ॥
अवनि अकंपन अरु अतिकाया ❀ परे समरमहँ सुनु अहिराया ॥ ४ ॥

जैसे सेतु बांधकर भगवान् चले आये सो और अंगदका संवाद सुनाया ॥ ३ ॥ हे शेषलोकके राजा (अहिरावण) ! सुनो, अकंपनऔर अतिकाय (आदि योद्धा) भी लड़ाईमें मारे गये ॥ ४ ॥

तात कुसल अब आइ सिरानी ❀ कटक निसाचर सकल नसानी ॥ ५ ॥
कुंभकर्ण गननादउ मारे ❀ रामलषन ते मनुज विचारे ॥ ६ ॥

हे प्यारे कुशल तौ अब दूर गई जो राक्षसोंकी सब सेना नाश होगई ॥ ५ ॥ उन विचारे मनुष्य रामचन्द्र लक्ष्मणने कुंभकर्ण और मेघनादकोभी मारडाला ॥ ६ ॥

आनेउँ बोलि तोहिं निजपासा ❀ कहु सोइ जतन होय रिपुनासा ॥ ७ ॥
सुनत बचन कह केतिक बाता ❀ हरि लै जैहों दोनों भ्राता ॥ ८ ॥

अब तुझे इसलिये अपने पास बुलाया है कि कुछ ऐसा उपाय करो कि जिससे वैरीका नाश हो ॥७॥ वचन सुनतेही (अहिरावणने) कहा कि यह कितनी बात है, मैं दोनों भाइयोंको हरले जाऊंगा॥८॥

लै पताल देविहिं बलि दैहों ❀ यश पूरण निशिचरकुल लैहौं ॥ ९ ॥
लै जाऊँ जानउ तुम तबहीं ❀ रविसम तेज होय निशि जबहीं ॥ १० ॥

और लेकर पातालकी देवीकी भेट देदूंगा और राक्षसोंके कुलका पूरा यश प्राप्त करूंगा ॥९॥जब मैं लेजाऊँगा तुम तभी जान जाओगे, क्योंकि उस समय रातमें सूर्यके समान प्रकाश हो जायगा॥१०॥

दो०–कहि अस बचन प्रवोध तिहि, शीश नाइ बल भाषि ॥ ❀
आयउ रघुपतिकटकमहँ, निज देवी उर राखि ॥ १३२ ॥ ❀

ऐसे वचन कहकर उसे समझाया और शिर नवाकर बल कहकर और अपनी देवीको हृदयमें धारण करके रामचन्द्रजीकी सेनामें आया ॥ १३२ ॥

चौ०–सूझ न पर निशि अति अँधियारी ❀ मर्कटभट जागहिं तहँ भारी ॥ १ ॥
कहहिं जयति जय जयति कृपाला ❀ अतिहि अगम गम नाहिन काला ॥ २ ॥

रातमें कुछ नहीं सूझता है, अँधियारी झुक रही है, बड़े भारी बानर योद्धा तहां जाग रहे हैं॥१॥ कृपालु (रामचन्द्रजीकी) जयजयकार बोलते हैं, बड़े कठिन हैं, वहां कालकीभी पहुँच नहीं है॥२॥

तहँ मारुतसुत रचा उपाई ❀ निज लँगूरकी कोट बनाई ॥ ३ ॥
सो शोभा कछु बरणि न जाई ❀ जनु भुजंगपति रह तहँ छाई ॥ ४ ॥

तहां हनूमान्ने एक उपाय रचा कि अपनी पूंछका परकोटा बनाया ॥ ३ ॥ सो वह शोभा कुछ वर्णन नहीं कीजाती (ऐसा दीखता है) मानों वहां शेषनाग छारहे हैं ॥ ४ ॥

अरु जिमि देखिय शैलसमाना ❀ द्वार विराजत श्रीहनुमाना ॥ ५ ॥
देखि हृदय अहिरावण हारा ❀ जिमि रविउदय न तिमिर प्रसारा ॥ ६ ॥

और वह (परकोटा) पहाड़के समान दिखाई देता है और उसके द्वारपर हनूमान् बैठे हुये हैं॥५॥ उन्हें देखकर अहिरावण हृदयमें ऐसा हारगया जैसे सूर्यके उदय होनेसे अंधकार नहीं फैलता॥६॥

युक्ति एकहू मन न ठरानी ❀ कपटवेष तिहिं कीन्ह भवानी ॥ ७ ॥
वेष बिभीषणकर अनुहारी ❀ पवनतनयपहँ गो छलकारी ॥ ८ ॥

(महादेवजी कहते हैं) हे पार्वती ! एकभी युक्ति मनमें नहीं ठहरी· तब उसने कपटका वेष बनाया ॥ ७ ॥ और बिभीषणके समान वेष बनाकर वह छलिया हनूमानके पास गया ॥ ८ ॥

दो०-सहज प्रतापी पवनसुत, पुनि सुरपतिपतिदास ॥ ❀
तिनहिं निदरि चल रामपहँ, मूढ़ हृदय नहिं त्रास ॥ १३३ ॥ ❀

हनुमान् (प्रथम तौ) स्वभावहीसे प्रतापी, फिर भगवान्के सेवक सो उनका निरादर करके रामचन्द्रजीके पास चला और मूर्खके हृदयमें भय नहीं हुआ ॥ १३३ ॥

चौ०-मर्म न जानेउ कछु सुतपवना ❀ वेष बिभीषण कै सो गवना ॥ १ ॥
ठाढ़ होहु बोलेउ सुनु भ्राता ❀ चलेउँ जहाँ कृपालु जनत्राता ॥ २ ॥

हनुमानजीने कुछ भेद नहीं जाना, वह बिभीषणके वेषमें चला ॥ १ ॥ हनूमान् बोले, खड़े रहो (वह बोला) हे भाई ! सुनो मैं जहां कृपानिधान भक्तोंके रक्षक भगवान् हैं वहाँ जाता हूँ ॥ २ ॥

मैं रघुपतिसन आयसु पाई ❀ संध्याकरन गयउँ सुनु भाई ॥ ३ ॥
तेहिते तुरित चलेउँ प्रभुपाहीं ❀ भइ विलंब जनि राम रिसाहीं ॥ ४ ॥

हे भाई ! सुनो. मैं रामचन्द्रजीसे आज्ञा पाकर संध्या करने गया था ॥ ३ ॥ इसीसे भगवान्के पास शीघ्र जाता हूं कि देर होगई तो रामचन्द्रजी क्रोधित न हो (कागभुशुंडि कहते हैं) ॥ ४ ॥

सत्यवचन कपि निजमनमाना ❀ सुनु खगेश भावी बलवाना ॥ ५ ॥
कपटचतुरगति जानि न जाई ❀ परमन हरै हरै धन भाई ॥ ६ ॥

हे गरुड़ ! सुनो. होनहार बलवान् है. हनूमानने अपने मनमें (उसका) वचन सत्य मानलिया ॥५॥ चतुर कपटकी गति जानी नहीं जाती. हे भाई, वह पराये मन और धनको हर लेता है॥६॥

आयसु पाइ गयउ सो तहँवा ❀ फणिपति प्रभु दोनों रह जहँवा ॥ ७ ॥
कपिपति जाम्बवंत नल नीला ❀ बालितनय सुषेण बलशीला ॥ ८ ॥

आज्ञा पाकर वह वहां गया जहां भगवान् और लक्ष्मण दोनों थे ॥ ७ ॥ बड़े बलवान् सुग्रीव जाम्बवंत, नल, नील, अंगद और सुषेण, ॥ ८ ॥

दो०-द्विविद मयंद कपीशगण, गव गवाक्ष कपिवीर ॥ ❀
सहित बिभीषण अपर भट, सोये सब रणधीर ॥ १३४ ॥ ❀

द्विविद, मयंद, बन्दरोंके समूह, और गव गवाक्ष योद्धा वन्दर, तथा बिभीषण आदि अन्य रणधीर योद्धा सब सोगये ॥ १३४ ॥

चौ०-तिन्हहिं मध्य रावण शशिराहू ❀ एक संग सोवत फणिनाहू ॥ १ ॥
दक्षिण दिशि सोवत रघुनाथा ❀ अनुज वामदिशि तिहिपर हाथा ॥ २ ॥

उनके बीचमें रावणरूपी चन्द्रमाके लिये राहुके समान (ग्रसनेवाले) भगवान् लक्ष्मणसमेत एक साथ सोरहे हैं ॥ १ ॥ दहिनी ओर रामचन्द्रजी सोते हैं और लक्ष्मण बांईतरफ, जिनपर रामजीका हाथ रक्खा हुआ है ॥ २ ॥

प्रभुकर उरपर राजत कैसे ❀ जातरूपपर फणिपति जैसे ॥ ३ ॥
कपि सब हैं जनु सागरक्षीरा ❀ तहँ सोये मानहुँ दोउ बीरा ॥ ४ ॥

भगवान्का हाथ (लक्ष्मणके) हृदयपर कैसा शोभायमान लगता है जैसे सुवर्णपर सर्प सोहता हो ॥ ३ ॥ अथवा वानरोंका समूह मानों क्षीरसमुद्र है, वहां ये दोनों वीर सो रहे हैं ॥ ४ ॥

सुभग बाण धनु धरे बनाई ❀ लक्ष्मणसहित नियर रघुराई ॥ ५ ॥
अहिरावण मन कीन्ह प्रणामा ❀ देखि राम घनसुंदरश्यामा ॥ ६ ॥

---

(१) सुवर्णकासा रंग लक्ष्मणजीका है, और रामजीका श्याम वर्ण है ॥

लक्ष्मणसमेत रामचन्द्रजीके पास सुन्दर धनुषबाण सजे हुये धरे हैं ॥ ५ ॥ मेघके समान श्यामसुन्दर रामजीको देखकर अहिरावणने मनही मनमें प्रणाम किया ॥ ६ ॥

ब्रह्मादिक जेहि ध्यान न पावहिं ❀ मुनि महेश पूजा मन लावहिं ॥ ७ ॥
करहिं बिबिध जप योग बिरागी ❀ रटहिं निरंतर दिन निशि जागी ॥ ८ ॥

ब्रह्मा आदि देवता जिसको ध्यानमेंभी नहीं पाते और मुनीश्वर तथा महादेव जिसकी पूजामें मन लगाते हैं ॥७॥ वैरागी अनेक प्रकारके जप योग करते और दिन रात जगकर जिसको सदा रटते हैं ॥८॥

सो प्रभु तिहिं देखा भरिलोचन ❀ कृपासिंधु सेवकभयमोचन ॥ ९ ॥
बहुरि हृदय तेहि कीन्ह बिचारा ❀ रावणकाज करौं अनुसारा ॥ १० ॥
पुनि निजमायाकृत गुण आई ❀ कवनी भाँति जाइँ दोउ भाई ॥ ११ ॥

उन्हीं दयाके समुद्र और भक्तभयहरन भगवानके दर्शन उसने नेत्रों भरके किये ॥ ९ ॥ फिर उसने मनमें विचार किया कि, रावणका काम कहेके अनुसार सिद्ध करना चाहिये ॥ १० ॥ और अपनी मायाके गुणसे विचारा कि दोनों भाई किस प्रकार जायँ ? ॥ ११ ॥

दो०–मोहनते मोहे सबहिं, मंत्रन्हते मुख मूंदि ॥ ❀
भयउ अदृश्य उठाइ करि, प्रभुहिं चलेउ लै कूदि ॥ १३५ ॥ ❀

मोहनीमंत्रसे सबको मोहित कर, मंत्रोंसे मुख बन्द कर दिया और भगवान्‌को उठाकर और अदृश्य होकर कूदके ले चला ॥ १३५ ॥

चौ०–यहिविध प्रभुहिं गयो लै सोई ❀ नभमारग प्रकाश अति होई ॥ १ ॥
सो प्रकाश जब रावण देखा ❀ बचन प्रमाण तासु करि लेखा ॥ २ ॥

इस भांति वह भगवान्‌को आकाशमार्गसे ले गया सो बड़ा प्रकाश होने लगा ॥ १ ॥ वह प्रकाश जब रावणने देखा तौ उसके वचनोंको सत्य जाना ॥ २ ॥

मनमें हर्ष करै अति भारी ❀ अहिरावण लै गा असुरारी ॥ ३ ॥
लै निजलोक गयो क्षणमाहीं ❀ सोर भयो तब कपिदलमाहीं ॥ ४ ॥

मनमें बड़ा आनन्द मानता है कि अहिरावण राक्षसोंके वैरी (रामचन्द्रजी) को ले गया ॥ ३ ॥ (जब यह) क्षणभरमें अपने लोकको ले गया तब बन्दरोंकी सेनामें शोर हुआ ॥ ४ ॥

जागे बानर श्रीहत झारी ❀ देखिय जिमि सरिता बिनु बारी ॥ ५ ॥
अरु देखिय जिमि निशि बिनु इंदू ❀ तेजहीन वासर जिमि चंदू ॥ ६ ॥

जागनेपर सब बन्दर ऐसे छबिहीन दिखाई देने लगे जैसे बिना जलके नदी हो ॥ ५ ॥ अथवा ऐसे दिखाई देते हैं जैसे बिना चन्द्रमाके रात, अथवा जैसे दिनमें चन्द्रमा तेजहीन हो ॥ ६ ॥

रवि बिनु दिवस जीव बिनु देहा ❀ जिमि दीपक बिनु देखिय गेहा ॥ ७ ॥
एकहि एक लाग तब पूछन ❀ कहाँ गए त्रैलोक्यबिभूषन ॥ ८ ॥

अथवा जैसे सूर्यके बिना दिन, जीवके बिना देह और दीपकके बिना घर दिखाई देता हो ॥ ७ ॥ तब एकसे एक पूंछने लगे कि त्रिलोकीके आभूषण (रामलक्ष्मणजी) कहां गये? ॥ ८ ॥

दो०–शोधा सब मिलि कटक तिन्ह, नहिं पाये दोउ बीर ॥ ❀
भे व्याकुल सब भालु कपि, जिमि जलचर बिनु नीर॥१३६॥❀

उन्होंने मिलकर सब सेना ढूंढ़ी परन्तु दोनों भाइयोंका पता नहीं लगा. तब सब रीछ बन्दर ऐसे दुखीहुये जैसे विना जलके जीव दुखी हों ॥ १३६ ॥

चौ०–सकल कहहिं बिधि का यह कीन्हा ❀ रघुपति बिना प्राण चह लीन्हा ॥ १ ॥
शोकग्रसित धरि सकै न धीरा ❀ कहाँ राम लक्ष्मण दोउ बीरा ॥ २ ॥

सब कहते हैं कि विधाताने यह क्या किया ? जो रामचन्द्रजीसे जुदा कर प्राण लिया चाहता है ॥१॥ शोकके मारे धीरज नहीं रख सक्ते. (सब कहते हैं कि) राम लक्ष्मण दोनों भाई कहां हैं?॥२॥

करुणा करै कपीश अपारा ❀ बनी बात बिधि कहा बिगारा ॥ ३ ॥
कटक निशाचर सकल सँघारी ❀ रहा एक रिपु रावण भारी ॥ ४ ॥

सुग्रीव बड़ी भारी दया विचारता है कि हे ब्रह्मा ! तैंने बनी बात क्यों बिगाड़ी ? ॥ ३ ॥ राक्षसोंकी सब सेना तौ मार डाली, एक बड़ा वैरी रावणही रह गया था ॥ ४ ॥

सोउ न रहत रामशर लागे ❀ भाइहु हमसम कोउ न अभागे ॥ ५ ॥
कबहूँ जो दशशिर अरि जीतहिं ❀ उत्तर कवन देव हम सीतहिं ॥ ६ ॥

सो बहभी रामचन्द्रजीके बाण लगनेसे न रहता. हे भाई ! हमारे समान अभागा कोई नहीं है ॥ ५ ॥ जो कभी हम वैरी रावणको जीतभी लें तौ जानकीजीको क्या उत्तर देंगे ? ॥ ६ ॥

यह कहि विकल मूर्च्छि महि परेऊ ❀ लागे वज्र शैल जिमि गिरेऊ ॥ ७ ॥
कहि न बिभीषणकी गति जाई ❀ फिरे वत्स जनु धेनु लवाई ॥ ८ ॥

यह कहकर दुखी और मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर ऐसे गिरपड़ा जैसे वज्रके लगनेसे पर्वत गिरता हो ॥७॥ विभीषणकी दशा कही नहीं जाती. मानों बछड़ेके चले जानेसे हालकी ब्याई गाय रँभाँती हो ॥८॥

दो०–सहित पवनसुत ऋक्षपति, दुख मन भा बहु भाँति ॥ ❀
खगपति सूझ न कतहुँ कछु, तम अपार तेहि राति ॥१३७॥ ❀

हनुमान् और जाम्बवंतके मनमेंभी बहुत प्रकारसे दुःख हुआ (कागभुशुंड कहते हैं) हे गरुड़! कहीं कुछ नहीं दिखाई देता. उस रातको महाघोर अंधकार छा गया ॥ १३७ ॥

चौ०–पवनतनय पुनि कह सबपाहीं ❀ बिस्मय होइ एक मनमाहीं ॥ १ ॥
कोउ इक आव बिभीषणवेषा ❀ प्रभुके निकट जात मैं देषा ॥ २ ॥

फिर हनूमान् सबसे कहने लगे कि, (मेरे) मनमें एक सन्देह होता है कि ॥ १ ॥ कोई एक विभीषणके वेषमें आया था, उसे मैंने भगवान्‌के पास जाते हुये देखा था ॥ २ ॥

पूछत बचन कहेसि अति नीका ❀ कपट न जानौं निशिचरजीका ॥ ३ ॥
बचन सुनत बोलेउ लंकेशा ❀ अहिरावण लै गा अवधेशा ॥ ४ ॥

पूंछनेसे तौ उसने अच्छी बातें करीं पर मैं राक्षसोंके मनका छल नहीं जानता ॥ ३ ॥ बचन सुनतेही बिभीषण बोला कि अहिरावण रामचन्द्रजीको लेगया ॥ ४ ॥

पन्नगलोक बसतु है सोई ❀ मम तनुवेष अपर नहिं कोई ॥ ५ ॥
महाबली जानै बहु माया ❀ निश्चय वह दशशीश पठाया ॥ ६ ॥

सो वह पाताल लोकमें रहता है मेरे शरीरका वेष और कोई नहीं रख सक्ता ॥५॥ वह बड़ा बलवान् है और बहुतसी मायाको जानता है सो निश्चय करके उसहीको रावणने भेजा होगा॥६॥

जिहिं बल होइ वहाँ सो जाई ❀ ताहि जीति आनै दोउ भाई ॥ ७ ॥
कहहिं भालुपति सुनु हनुमाना ❀ तब बल तात सकल जग जाना ॥ ८ ॥
बेगि सो जतन बिचारहु ताता ❀ कृपासिंधु आनहु दोउ भ्राता ॥ ९ ॥

जिसे वल हो वह जाकर उसे जीतकर दोनों भाइयोंको ले आवै ॥ ७ ॥ जाम्ववंत कहने लगा हे हनूमान् ! सुनो. हे प्यारे ! तुम्हारे वलको सव संसार जानता है ॥ ८ ॥ हे प्यारे ! उस उपायको शीघ्रही विचारो कि, जिससे दयाके समुद्र दोनों भाइयोंको ले आओ ॥ ९ ॥

दो०–बिलखि कहेउ कपिपति बहुरि, मारुतसुत सुनु तात ॥ ❀
बिनु रघुपति धिक् धिक् जनम, पलयुगसरिस बिहात॥१३८॥❀

फिर सुग्रीवने दुखी होकर कहा हे प्यारे हनुमान् ! सुनो, रामचन्द्रजीके विना जन्मको धिक्कार है; एक पल युगके समान बीतता है ॥ १३८ ॥

चौ०–तृषित होय बिनु वारि दुखारी ❀ तैसे हम सब बिना खरारी ॥ १ ॥
रवि बिनु पंकज होइ मलाना ❀ तैसे हम सब हैं हनुमाना ॥ २ ॥

जैसे प्यासा बिना जलके दुखी हो ऐसेही हम सब रामचन्द्रजीके बिना हो रहे हैं ॥ १ ॥ हे हनूमान् ! जैसे सूर्यके बिना कमल मलीन होता है तैसेही हम सब हो रहे हैं ॥ २ ॥

सीतासुधि जिमि औषध आनी ❀ तेहि प्रकार आनहु गुणखानी ॥ ३ ॥
यह सुनि बहुरि पवनसुत बोला ❀ चित्त करहु थिर सेन न डोला ॥ ४ ॥

सो जैसे तुम सीताकी खवर और औषधि लाये थे उसी प्रकार गुणोंकी खानि (रामचन्द्रजी)को लाओ ॥३॥यह सुनकर फिर हनूमान् बोले कि चित्तको स्थिर करो और सेना चलायमान न होने पावै४

भुवन चारिदश तीनिहुँ लोका ❀ आनहुँ प्रभुहिं तजहु तुम शोका ॥ ५ ॥
अबते सजग रहेउ सब भाई ❀ लरेहु कालसों जो चढ़ि आई ॥ ६ ॥

चौदहों भुवन और तीनों लोकोंमेंसे भगवान्को लाऊंगा, तुम शोकको छोड़ दो ॥ ५ ॥ हे भाइयो ! अवसे सव सावधान रहना, जो कालभी चढ़ आवै तौ उससेभी लड़ना ॥ ६ ॥

यह कहि गर्जि चलेउ हनुमाना ❀ प्रलयकालके मेघसमाना ॥ ७ ॥
चले जात इक तरुतर गयऊ ❀ गृध्रनि गृध्र कहत अस भयऊ ॥ ८ ॥

यह कह कर हनूमान् प्रलयकालके वादलके समान गर्जकर चले ॥ ७ ॥ चले जातेमें एक वृक्षके नीचे गये तौ वहां गृध्र गृध्रनी (आपसमें) ऐसे कहे रहे थे ॥ ८ ॥

दो०–गृध्रनारि ही गर्भिणी, बोली पतिसौं बैन ॥ ❀
आनहु आमिष मनुजकर, खाँउ होइ जिय चैन ॥ १३९ ॥ ❀

गृध्रकी स्त्री गर्भवती थी सो अपने पतिसे कहने लगी कि, मनुष्यका मांस लाओ जिसे खाकर जीमें चैन हो ॥ १३९ ॥

चौ०–तासु बचन सुनि खग अस कहेऊ ❀ अहिरावण रामहिं लै गयऊ ॥ १ ॥
देहहि बलि देबिहिं सो जाई ❀ बड़े भाग्य आमिष जो पाई ॥ २ ॥

उसके वचन सुनकर गृध्र पक्षीने यों कहा कि अहिरावण रामचन्द्रजीको ले गया है ॥ १ ॥ सो जाकर देवीको वलिदान देगा. जो वह मांस मिलै तौ वड़े भाग्यकी वात है ॥ २ ॥

कवनिहु जतन देब मैं आनी ❀ अस कहि गृध्रनारि सनमानी ॥ ३ ॥
जबहिं पवनसुत यह सुधि पाई ❀ चले हृदय सुमिरत रघुराई ॥ ४ ॥

सो हे प्यारी ! मैं किसी उपायसे लाऊंगा. ऐसे कहकर गृध्रने अपनी स्त्रीका सत्कार किया॥३॥ जव हनूमान्ने यह समाचार पाये तौ रामचन्द्रजीको मनमें स्मरण करते हुये चले ॥ ४ ॥

तुरत पतालहिं तिहि क्षण गयऊ ❀ अहिरावणपुर प्रविशत भयऊ ॥ ५ ॥
द्वारपाल मकरध्वज कीशा ❀ कपिसन डाटि कहत बहु रीशा ॥ ६ ॥

और शीघ्र उसी समय पातालको गये और अहिरावणके नगरमें धसने लगे ॥ ५ ॥ वहाँ द्वारपाल मकरध्वज बन्दर था सो हनुमानसे डाटकर वड़े क्रोधसे कहने लगा कि ॥ ६ ॥

निदरहि मोहिं तोहिं डर नाहीं ❀ जिमि दीपक न पतंग डराहीं ॥ ७ ॥
मारुतसुतकर हौं मैं बालक ❀ स्वामिभक्त भंजन मुख कालक ॥ ८ ॥

अरे ! तू मेरा निरादर करता है और तुझे ऐसे डर नहीं लगता जैसे दीपकपर जानेसे पतंग नहीं डरता ॥७॥ मैं हनूमान्का पुत्र हूं सो स्वामीका भक्त और कालकाभी मुख तोड़नेवाला हूं ॥ ८ ॥

सो०-सुनत वचन हनुमान, बिस्मयबश बोलत भये ॥
अरे मूढ़ अज्ञान, मोरे सुत सुपने नहीं ॥ १० ॥

हनूमान् उसके बचन सुनतेही सन्देहमें पड़कर कहने लगे कि अरे मूर्ख ! अज्ञान ! मेरे तौ स्वप्नमेंभी पुत्र नहीं हुआ ॥ १० ॥

चौ०-कहत बचन शठ तोहिं न खोरी ❀ कामबिबश कब मति भै मोरी ॥ १ ॥
मम सुत होसि मूढ़ केहि काजा ❀ इतना कहत तोहिं नहिं लाजा ॥ २ ॥

अरे मूर्ख ! तुझे ऐसी वात कहतेमें डर नहीं लगता है ? मेरी बुद्धि कब कामके वश हुई थी ? ॥ १ ॥ अरे मूर्ख ! मेरा किस कारण पुत्र हो सक्ता है ? तुझे इतना कहतेमें लज्जाभी नहीं ? ॥ २ ॥

किहि प्रकार तैं मम सुत भइसी ❀ निजउतपति मोसन किन कहसी ॥ ३ ॥
सुनत कहहि मकरध्वज बचना ❀ कीन्ह तात जब लंकादहना ॥ ४ ॥

तू किस भांति मेरा पुत्र हुआ ? अपनी उत्पत्ति मुझसे क्यों नहीं कहता ? ॥ ३ ॥ सुनतेही मकरध्वज वचन कहने लगा कि, हे पिता! जब तुमने लंका जलाई थी ॥ ४ ॥

जब आयउ चलि उदधिसमीपा ❀ भयउ प्रस्वेद तुमहिं कपिदीपा ॥ ५ ॥
छुटि प्रस्वेद सागरमहँ गयउ ❀ सो झष पियउ तहाँ मैं भयऊ ॥ ६ ॥

और हे बानरोमें दीपके समान ! जब समुद्रके पास चले आयेथे तौ तुमको पसीना आया था ॥ ५ ॥ वह पसीना छूटकर समुद्रमें गया सो मछलीने पिया तौ वहां मैं उत्पन्न हुआ ॥ ६ ॥

इहि प्रकार मैं तव सुत ताता ❀ गोपहुँ नहिं निज पिता न माता ॥ ७ ॥
अहिरावणसेवा मैं करऊँ ❀ प्रभुआयसु इहिं द्वारे रहहुँ ॥ ८ ॥

हे प्यारे ! मैं इसभाँति तुम्हारा पुत्र हूं अपने पितामाताको नहीं छिपाता ॥ ७ ॥ और मैं अहिरावणकी सेवा करता हूं और स्वामीकी आज्ञासे इस द्वारपर रहता हूं ॥ ८ ॥

दो०-सत्य बचन हनुमान कहि, पुनि पूछेउ सब बात ॥
आनेउ लक्ष्मण रामकहँ, कहा करत है तात ॥ १४० ॥

हनूमान्ने कहा कि तुम्हारा कहना ठीक है. फिर सब बात पूछी कि हे प्यारे ! लक्ष्मणरामचन्द्रजीको लाकर (अहिरावण) क्या करता है ? ॥ १४० ॥

चौ०-कहहु तात तिहिं थलको नाऊँ ❀ जान चहौं मैं निजप्रभुठाऊँ ॥ १ ॥
यह बृत्तांत न जानहुँ ताता ❀ अस मैं श्रवण सुनी कछु बाता ॥ २ ॥

हे प्यारे ! उस जगहका नाम बताओ. मैं अपने स्वामीके पास जाना चाहता हूं ॥ १ ॥ (तब

मकरध्वजने कहा) हे पिताजी ! मैं यह समाचार तौ नहीं जानता, परन्तु मैंने कुछ ऐसी बात कानोंसे सुनी है कि ॥ २ ॥

सीतापति अरु फणिपति साथा ❀ सो लै आयउ निशिचरनाथा ॥ ३ ॥
करत सो अहै होम धौं आजू ❀ देबिहिं बलि देइहि अहिराजू ॥ ४ ॥

रामचन्द्र और लक्ष्मणजीको राक्षसोंका स्वामी (अहिरावण) साथ लेआया है ॥ ३ ॥ सो वह आज होम कर रहा हैं और उन्हैं देवीको वलिदान देगा ॥ ४ ॥

जो कछु निजश्रवणन सुनि पायउँ ❀ तात सकल मैं तुमहिं सुनायउँ ॥ ५ ॥
निजप्रभुकाजलागि दुख सहऊँ ❀ तुमसन सत्य मर्म मैं कहऊँ ॥ ६ ॥

हे पिता ! जो कुछ मैंने अपने कानोंसे सुन पाया है वह सब तुमको सुना दिया ॥ ५ ॥ अपने स्वामीके कामके लिये दुःख सहता हूं, सो तुमसे ठीक भेद कह दिया ॥ ६ ॥

जान कहौ पै जान न देऊँ ❀ प्रभुआज्ञा तजि अयश न लेऊँ ॥ ७ ॥
सुनि अस पेलि चलेउ हनुमाना ❀ भयउ क्रोध मकरध्वज जाना ॥ ८ ॥

पर तुम जो जानेको कहते हो सो जाने न दूंगा क्योंकि स्वामीकी आज्ञाको छोड़कर अपयश न लूंगा ॥ ७ ॥ ऐसे सुनकर हनूमान् उसे ढकेलकर चले तौ मकरध्वजने उन्हैं क्रोधित जाना ॥ ८ ॥

दो०–कपिकहँ हनेसि मुष्टिका, कपि पुनि मारा ताहि ॥ ❀
एकहि एक हनेउ तव, बल युग सम घटि नाहिं ॥ १४१ ॥ ❀

और हनूमान्के घूंसा मारा. फिर हनूमान्ने उसे मारा, तव एकको एक मारने लगा. दोनोंमें समान बल था, कम कोई नहीं ॥ १४१ ॥

चौ०–एकहि एक सकै नहिं टारी ❀ मारुतसुत सुत दोउ भट भारी ॥ १ ॥
सुतहिं पूँछ ते बाँधि भवानी ❀ चलेउ बहोरि बिलँब बड़ि जानी ॥ २ ॥

एकको एक नहीं हटा सक्ता, हनूमान् और मकरध्वज दोनों बड़े योद्धा थे ॥१॥ (महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! हनूमानने पुत्रको पूंछसे बांधदिया और फिर बहुत देर हुई जानकर चले ॥ २ ॥

धरि लघुरूप होमगृह देखा ❀ जीव सजीव परै नहिं लेखा ॥ ३ ॥
तहँ देवीकर मंडप रहई ❀ शोणितघट बहु को कहि सकई ॥ ४ ॥

और छोटा रूप धारण कर हवनका घर देखा तौ जीते हुये जीव गिने नहीं जाते ॥ ३ ॥ वहां देवीका मंडप है और लोहूके घड़े रक्खे हैं कि जिन्हैं कौन कह सक्ता है ? ॥ ४ ॥

विविधभाँति मेवा पकवाना ❀ धरे आणि देवीअस्थाना ॥ ५ ॥
मालिनि तहाँ सुमने लै आई ❀ सुमनमध्य प्रविशे कपिराई ॥ ६ ॥

अनेक प्रकारकी मेवा और पकवान लाकर देवीके स्थानमें रक्खे ॥ ५ ॥ तहां मालिन फूल ले आई सो फूलके बीचमें हनूमानजी घुस गये ॥ ६ ॥

सुमनहुते अति कृत हलुकाई ❀ सो लै सुमनमंडपहि आई ॥ ७ ॥
सुमन सकल देवीपर चढ़ेऊ ❀ विकट रूप तब तहँ कपि बढ़ेऊ ॥ ८ ॥

(हनूमान्ने) फूलसेभी बहुत हलकापन किया, (मालिन) उन्हीं फूलोंको लेकर मंडपमें आई ॥ ७ ॥ और सब फूल देवीपर चढ़ेऊ तब वहां हनूमान् विकटरूप धारणकर बढ़े ॥ ८ ॥

दो०–छुवत चरण देवी तबै, धरणी गई समाइ ॥ ❀
मुख पसारि ठाढे भयउ, कपिछबि वरणि न जाइ ॥ १४२ ॥ ❀

तब चरण छूतेहि देवी तौ पृथ्वीमें समागई और हनूमान् मुँह फैलाकर खड़े हुये, सो वह शोभा वर्णन नहीं कीजाती ॥ १४२ ॥

चौ०–रूप देख भा आनँद भारी ❀ करहिं बिचार निशाचर झारी ॥ १ ॥
कहहिं कि देवि प्रकट भइ आजू ❀ बड़भागी भा निशिचरराजू ॥ २ ॥

उस रूपको देखकर बड़ा आनन्द हुआ और सब राक्षस बिचार करने लगे ॥ १ ॥ और कहने लगे कि आज देवी साक्षात् प्रगट हुई और अहिरावण बड़भागी हुआ ॥ २ ॥

करि प्रणाम पुनि पूजा करहीं ❀ जो कछु आव सो कपिमुख भरहीं ॥३॥
रही जो सकल वस्तु समुदाई ❀ बची न एको सब कपि खाई ॥ ४ ॥

प्रणाम करके फिर पूजा करते हैं और जो कुछ आवैं वह हनूमान्के मुखमें भरते हैं ॥ ३ ॥ सब वस्तुओंका जो समूह था उसमेंसे एकभी वस्तु नहीं बची, हनूमान्ने सब खालीनी ॥ ४ ॥

कपिखिलार कौतुक विस्तारा ❀ भाचह निशिचरकुलसंहारा ॥ ५ ॥
अहिरावणउर भा सुख कैसे ❀ चढ़े काँधपर बलिपशु जैसे ॥ ६ ॥

खिलाड़ी हनूमानने खेल किया, क्योंकि राक्षसोंके कुलका नाश हुआ चाहता है ॥ ५ ॥ और अहिरावणके हृदयमें कैसा सुख हुआ जैसे बलिके पशुको कंधेपर चढ़नेसे ॥ ६ ॥

जबहीं होम सिद्ध तिन जाना ❀ लक्ष्मण राम तुरत तहँ आना ॥ ७ ॥
ठाढ़ कीन्ह तहँ प्रभुकहँ आनी ❀ निशिचर बहु आयुध धरि पानी ॥ ८ ॥
धरे गदा कोउ अरु धनु बाणा ❀ शक्ति शूल तरवारि कृपाणा ॥ ९ ॥

जब उसने होमको सिद्ध हुआ जाना तौ शीघ्रही लक्ष्मण रामन्द्रजीको वहां ले आया ॥ ७ ॥ वहां भगवान्को लाकर खड़ा किया और राक्षसोंने हाथोंमे बहुतसे हथियार लिये ॥ ८ ॥ कोई गदा और धनुष बाण धरण किये हैं, कोई शक्ति, त्रिशूल, तलवार और कृपाण (धारण किये हैं) ॥ ९ ॥

दो०–तोमर मुद्गर परशु असि, पाशि फाँसि अरु बेत ॥ ❀
करनि खड्ग धनु शर गहहिं, देखत रहहि न चेत ॥ १४३ ॥ ❀

तोमर, मुद्गर, फरसा, तलवार, पाश, फांसी बेत, खड्ग, धनुषबाण हाथोंमें लिये हैं, जिन्हैं देखतेही ज्ञान नहीं रहता ॥ १४३ ॥

चौ०–मायाबलते सकल विचक्षण ❀ अति बिकराल मूर्ख दुर लक्षण ॥ १ ॥
इहिबिध सकल बीर तहँ रहहीं ❀ अहिरावणआज्ञा अनुसरहीं ॥ २ ॥

वे सब मायाके बलमें बड़े चतुर, बड़े भयंकर, मूर्ख और कुलक्षणी थे ॥ १ ॥ इस भांति सब योद्धा वहां रहते हुये अहिरावणकी आज्ञा पालन करते हैं ॥ २ ॥

आयसु पाइ खड्ग तिन्ह काढ़े ❀ मारनकहँ प्रभुपर भे ठाढ़े ॥ ३ ॥
कोउ कह राजनीति अनुसरहू ❀ तीनि दंड विलंब अब करहू ॥ ४ ॥

आज्ञा पाकर उन्होंने तलवार निकाली और भगवान्पर मारनेको खड़े हुये ॥ ३ ॥ कोई कहते हैं कि राजनीतिके अनुसार तीन घड़ीकी देर अभि और करो ॥ ४ ॥

सुनि अस बचन मूढ़ इमि कहई ❀ सुमिरो जो तुम्हरे कोउ अहई ॥ ५ ॥
नाहित काल आय नियराई ❀ निशि सम्रासम दोऊ भाई ॥ ६ ॥
कहहिं मूढ़ प्रभुकहँ इमि वानी ❀ कहत सकुच मोहिं अतिहि भवानी ॥७॥

ऐसे वचन सुनकर मूर्ख यों कहने लगे कि तुम्हारे जो कोई हो उसका स्मरण कर लो ॥ ५ ॥ नहीं तौ काल पास आगया, दोनों भाई रातके स्वप्नेके समान हो ॥ ६ ॥ (महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! मूर्ख ऐसी २ वाणी भगवान्से कहते हैं कि, मुझे तौ कहतेमें बहुतही शरम आती है ॥७॥

दो०–फणिपति चितवहिं रामकहँ, राम चितव अहिराज ॥ ❀
प्रभुकर कौतुक कहिय किमि, सुनहु गरुड़ खगराज ॥१४४॥ ❀

(कागभुशुंड कहते हैं) हे गरुड़जी ! लक्ष्मण तौ रामचन्द्रजीको देखते हैं और रामचन्द्र लक्ष्मणजीको देखते हैं, सो भगवान्का कौतुक कैसे कहा जाय ? ॥ १४४ ॥

चौ०–पुनि प्रभु मनमहँ कीन्हा बिचारा ❀ जपै सकल जग नाम हमारा ॥ १ ॥
इहि अवसर सुमिरिय हनुमाना ❀ निकटहि अहहि बीर बलवाना ॥ २ ॥

फिर भगवान्ने मनमें विचार किया कि सब संसार तौ हमारे नामको जपता है ॥ १ ॥ तौभी इस समय हनूमानका स्मरण करना चाहिये और वह बलवान् योद्धा जबचाहो पासही है ॥ २ ॥

यह विचारि प्रभु सुमिरण कीन्ह ❀ होइहि सो जो बिधि लिखिदीन्हा ॥ ३ ॥
तब मारणकहँ उद्यत भयऊ ❀ घनसमान कपि गर्जत भयऊ ॥ ४ ॥

यह विचारकर भगवान्ने स्मरण किया और विचारा कि, होगा तौ वही जो विधाताने लिख दिया है ॥ ३ ॥ जब मारनेको उपस्थित हुये तब हनुमान बादलके समान गर्जे ॥ ४ ॥

निशिचर सकल त्रसित से भारी ❀ कहहिं बचन निजहृदय बिचारी ॥ ५ ॥
अहिरावण भल कीन्ह न काजू ❀ आनेउ कपटवेष सुरराजू ॥ ६ ॥

सब राक्षस बहुत दुखी हुये और अपने २ हृदयमें विचारकर वचन कहने लगे कि ॥ ५ ॥ अहिरावणने अच्छा काम नहीं किया जो कपटके वेषसे भगवान्को ले आया ॥ ६ ॥

तिहिंते देवि क्रुद्ध भइ आजू ❀ अब भा सबकर परम अकाजू ॥ ७ ॥
सभय भये तब निशिचर झारी ❀ दुसरे कपि गर्जेउ अतिभारी ॥ ८ ॥

तिसीसे आज देवी क्रोधित हो गई और अब सबका बड़ा अकाज हुआ ॥ ७ ॥ तब सब राक्षस ड़र गये और हनूमान् फिर दूसरी वार बडे भारी गर्जे ॥ ८ ॥

दो०–प्रगट रूप करि पवनसुत, अट्टहास गंभीर ॥ ❀
अतिभय त्रसित निशाचर, सुनहु उमा मतिधीर ॥ १४५ ॥ ❀

(महादेव कहते हैं) हे मतिधीर पार्वती ! सुनो, हनूमान् अपना स्वरूप प्रगट करके गंभीरतासे खिलखिलाकर हँसे कि जिससे राक्षस बड़े भयसे दुखी हो गये ॥ १४५ ॥

चौ०–डगमग भे निशिचर अभिमानी ❀ मारुत बह जिमि सागरपानी ॥ १ ॥
तेहि क्षण कपि लीन्हे दोउ भाई ❀ हते लागि निशिचरसमुदाई ॥ २ ॥

अभिमानी राक्षस ऐसे चलायमान हुये जैसे पवनसे समुद्रका पानी बहने लगता हो ॥ १ ॥ उसी समय हनूमानजी दोनों भाइयोंको लेकर राक्षसोंके समूहको मारने लगे ॥ २ ॥

खड्ग छुड़ाइ लीन्ह हनुमाना ❀ काटै लाग भुजा शिर नाना ॥ ३ ॥
कहुहिं नाक श्रवण विनु कीन्हा ❀ धरि पद डारि अनलमहँ दीन्हा ॥ ४ ॥

हनूमान्जीने तलवार छीनली और उनकी अनेक भुजा और मस्तकोंको काटने लगे ॥ ३ ॥ किसीको नाकसे, किसीको कानसे रहित कर दिया. अर्थात् नाक कान काट डाले और किसीको पैर पकड़कर अग्निमें डाल दिया ॥ ४ ॥

निज लँगूरकी कोट बनाई ॥ जिहिंते कोउ भागि नहिं जाई ॥ ५ ॥
इहिबिध सब निशिचर संहारे ॥ अहिरावण तब वचन उचारे ॥ ६ ॥

और अपनी पूंछका परकोट बनाया कि जिससे कोई भाग न जावे ॥ ५ ॥ इस प्रकार सब राक्षस मार डाले, अहिरावणने वचन कहे ॥ ६ ॥

रे कपि ढीठ त्रास नहिं तोहीं ॥ अहिरावण मैं जान न मोहीं ॥ ७ ॥
जंबुमालिकहँ जिमि तुम मारा ॥ अरुरावणसुत हतेउ बिचारा ॥ ८ ॥

अरे ढीठ बन्दर ! तुझे भय नहीं है, मैं अहिरावण हूं, तू मुझे नहीं जानता ॥ ७ ॥ तैनें जैसे जंबुमालीको मारा और रावणके बिचारे पुत्रोंको मारा ॥ ८ ॥

दो०–कालनेमिसम मैं नहीं, सुनहु बचन हनुमान ॥
अस कहि खड्गप्रहार किय, कपितनु वज्रसमान ॥ १४६ ॥

सो हे हनूमान् ! मेरी बात सुनों, मैं कालनेमिके समान नहीं हूँ । ऐसे कहकर हनूमान्के वज्रसमान शरीरपर तलवार मारी ॥ १४६ ॥

चौ०–लै असि ताहि पवनसुत मारा ॥ काटा शीश अनलमहँ डारा ॥ १ ॥
पूर्णाहुति करि तब सो शीशा ॥ पुनि प्रभुकहँ लै चलेउ कपीशा ॥ २ ॥

हनूमान्ने तलवार लेकर उसे मारा और माथा काटकर अग्निमें डालदिया ॥ १ ॥ तब हनूमान् उस मस्तकसे पूर्णाहुति करके भगवान्को ले चले ॥ २ ॥

मकरध्वज तब बिनती कीन्हा ॥ बंधन छोरि राज तेहि दीन्हा ॥ ३ ॥
इहँकर राज करहु तुम ताता ॥ भजहु सदा मम प्रभु दोउ भ्राता ॥४॥

तब मकरध्वजने प्रार्थना करी तौ बंधनसे खोलकर उसे राज्य देदिया (और कहा) ॥ ३ ॥ हे प्यारे ! तुम यहांका राज्य करो और मेरे स्वामी दोनों भाइयोंका सदा भजन करते रहो ॥ ४ ॥

अस कहि कपि निज दलमहँ आवा ॥ हर्षेउ कटक समर सुख पावा ॥ ५ ॥
मृतक शरीर प्राण फिर आवै ॥ गइ मणि फणिक मनहुँ फिरि पावै ॥६॥

यों कहकर हनूमान् अपनी सेनामें आये तौ सेना प्रसन्न हुई और लड़ाईका ऐसा सुख पाया ॥५॥ जैसे मरे हुये शरीरमें प्राण लौट आवैं, अथवा सर्पकी खोई हुई मणि फिर मिलजाय ॥ ६ ॥

बिछुरा मिलै बहुरि जिमि आई ॥ तिमि सब भये निरखि दोउ भाई ॥७॥
मिलेउ कपीश चरण धरि माथा ॥ पुनि पद धरेउ निशाचरनाथा ॥ ८ ॥

अथवा जैसे खोया हुया फिर आकर मिल जावै तैसेही दोनों भाइयोंको देखकर सब (प्रसन्न) हुये ॥ ७ ॥ सुग्रीव चरणोंमें माथा रखकर मिले फिर बिभीषणने चरण छुये ॥ ८ ॥

दो०–जाम्बवंत अंगद सहित, मिले भालु अरु कीश ॥
सनमाने प्रिय बचन कहि, लषण कोशलाधीश ॥ १४७ ॥

जाम्बवंत और अंगदसमेत रीछ और बन्दर मिले, तब रामलक्ष्मणजीने प्यारे बचन कहकर (सबका) सत्कार किया ॥ १४७ ॥

चौ०–बहुरि सबन्हि भेटे हनुमाना ॥ कहहिं तात तुम राखेउ प्राना ॥ १ ॥
देवन्हि सुमनवृष्टि तब कीन्ही ॥ प्रमुदित हृदय दुंदुभी दीन्ही ॥ २ ॥

फिर सब हनूमानसे मिले और कहने लगे की हे प्यारे ! तुमने प्राण रक्खे ॥ १ ॥ तब देवताओंने फूलोंकी वर्षा करी और प्रसन्न मनसे नगाड़े बजाये ॥ २ ॥

अनुजसहित हर्षे रघुवीरा ❀ कहेउ बचन सुनु तनयसमीरा ॥ ३ ॥
तुहीं समान नहिं कोउ हितकारी ❀ सुर मुनि सिद्ध न कोउ तनुधारी ॥ ४ ॥

लक्ष्मणसमेत रामचन्द्रजीने प्रसन्न होकर ये बचन कहे कि, हे हनूमान् ! सुनो ॥ ३ ॥ तुम्हारे समान हितकारी देवता मुनीश्वर सिद्ध और कोई शरीरधारी नहीं ॥ ४ ॥

यश तुम्हार त्रिभुवनमें भयऊ ❀ सुनि अस बचन चरण कपि नयऊ ॥५॥
नाथ करौ तुम मैं केहि लेखे ❀ तरणी चलै अगम जल देखे ॥ ६ ॥

तुम्हारी कीर्त्ति तीनोंलोकोमें हुई. ऐसे बचन सुनकर हनूमानूने चरणोमें शिर नवाया॥५॥हे स्वामी ! तुम आपही सब करते हो, मैं किस गिनतीमें हूँ ? देखिये ! जैसे नाव गहरे जलमें चलती है॥६॥

तैसे सब प्रताप तव नाथा ❀ सुनि अस कपिहिं मिले रघुनाथा ॥ ७ ॥
कटकसहित हर्षे दोउ भाई ❀ तेहि अवसर सुख कहि किमि जाई ॥८॥

तैसेही हे स्वामी ! सब आपका प्रताप है। ऐसे सुनकर रामचन्द्रजी हनूमानूसे मिले ॥ ७ ॥ सेनासमेत दोनों भाई प्रसन्न हुये, उस समयका सुख कैसे कहा जाय ? ॥ ८ ॥

वहाँ दशानन सब सुधि पाई ❀ दूतन कही खरी सब जाई ॥ ९ ॥
अहिरावणकर वध सुनि काना ❀ भयउ तेजहत अति दुख माना ॥ १० ॥

यहां रावणने सब खबर पाई जो दूतोंने सब ठीक २ जाकर कहीथी ॥ ९ ॥ सो कानोंसे अहिरावणका मरना सुनकर कांतिहीन होगया और बड़ा दुख माना ॥ १० ॥

बचन बाणसम लागेउ ताहीं ❀ संभ्रम मूर्च्छिपरेउ महिमाहीं ॥ ११ ॥
मुख सुखान लोचन जल बहई ❀ बचन आव पुनि पुनि शिर धुनई ॥१२॥

उसे वे बचन बाणोंके समान लगे सो घबराकर और मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिरपड़ा ॥११॥ मुख सूख गया, और नेत्रोंसे जल बहने लगा, बचन नहीं आते, बारंबार माथा कूटता है ॥ १२ ॥

दो०–मयतनया तब आइ करि, बहुप्रकार समुझाव ॥ ❀
मानत मूढ़न कालवश, परम क्रोधकहँ पाव ॥ १४८ ॥ ❀

तब मन्दोदरीने आकर बहुत भांति समझाया. परन्तु मूर्ख (रावण) कालके वश मानता नहीं, बड़ा क्रोधित होता है ॥ १४८ ॥

चौ०–रावणउर अवरै कछु ठयऊ ❀ मेटि को सकै जो बिधि निर्मयऊ ॥ १ ॥
प्रभुविरोध करि चह कल्याना ❀ मूढ़ मोहवश अति अज्ञाना ॥ २ ॥

रावणके हृदयमें कुछ और ही जमी हुई है, जो ब्रह्माने रची है उसे कौन मेट सक्ता है ? ॥ १ ॥ अत्यंत अज्ञान, मूर्ख, मोहके वश भगवानूसे विरोध करके कल्याण चाहता है ॥ २ ॥

॥ इति क्षेपक ॥

यहिबिध जल्पत भा भिनुसारा ❀ लगे भालु कपि चारिहुँ द्वारा ॥ ३ ॥
सुभट बुलाइ दसानन बोला ❀ रनसनूमुख जाकर मन डोला ॥ ४ ॥

इस भांति बकवाद करते हुये सवेरा होगया और रीछ बन्दर चारों दर्वाजोंपर आलगे ॥ ३ ॥ योद्धाओंको बुलाकर रावण बोला कि लड़ाईके सामने जिसका मन चलायमान हो ॥ ४ ॥

सो अबहीं बरु जाइ पराई ❀ रनसनूमुख भागे न भलाई ॥ ५ ॥
निजभुजबल मैं बैर बढ़ावा ❀ देहौं उतर जो रिपु चढ़ि आवा ॥ ६ ॥

वह अभी भलेही भाग जाओ परंतु लड़ाईके सामनेसे भागनेमें अच्छा नहीं ॥ ५ ॥ मैंने अपनी भुजाओंके बलसे वैर बढ़ाया है और जो वैरी चढ़कर आवैगा उसे पलटा दूंगा ॥ ६ ॥

अस कहि मरुतबेग रथ साजा ❀ बाजहिं सकल जुझाऊ बाजा ॥ ७ ॥
चले बीर सब अतुलित बली ❀ जनु कज्जलगिरि आँधी चली ॥ ८ ॥
असकुन अमित होहिं तेहि काला ❀ गनै न भुजबलगर्व विसाला ॥ ९ ॥

ऐसे कहकर पवनके समान चलनेवाला रथ सजाया और सब लड़ाईके बाजे बजने लगे ॥७॥ सब अतुल बलवान् योद्धा ऐसे चले, मानों काजलके पर्वतकी आंधी चली. अर्थात् हरएक योद्धा पर्वतके समान और काला था ॥ ८ ॥ उस समय अनगिनती अशकुन होने लगे, परन्तु वह भुजाओंके बलके भारी अभिमानके कारण गिनता नहीं है ॥ ९ ॥

छं०-अति गर्व गनत न सकुन असकुन स्रवहिं आयुध हाथते । ❀
भट गिरहिं रथते बाजि गज चिक्करहिं भाजहिं साथते ॥ ❀
गोमायु गृध्र कराल खररव स्वान बोलहिं अतिघने । ❀
जनु काल दूत उलूक बोलहिं वचन परम भयावने ॥ ४ ॥ ❀

अत्यंत अभिमानसे शकुन अशकुन नहीं गिनता, हाथसे हथियार गिरते हैं, रथमेंसे योद्धा गिरते हैं, घोड़े, हाथी; चिक्कारसे और साथ छोड़ २ भागते हैं. गीदड़, गृध्र और गधे भयंकर शब्द करते हैं. और बहुतसे कुत्ते भोंकते हैं, उल्लू बड़े २ भयंकर शब्द ऐसे बोलते हैं मानो कालके दूत हों ॥४॥

दो०-ताहि कि संपति सकुन सुभ, सपनेहु मन बिस्राम ॥ ❀
भूतद्रोहरत मोहबस, रामबिमुख रत काम ॥ १४९ ॥ ❀

जिसकी प्राणिमात्रसे बैर करनेमें प्रीति हो, और जो अज्ञानके वश, रामचन्द्रजीसे विमुख, और कामी हो उसे क्या स्वप्नेमेंभी संपत्ति, शुभ शकुन और मनमें आनन्द हो सक्ता है ? अर्थात् कभी नहीं हो सक्ता है ॥ १४९ ॥

चौ०-चली निसाचरअनी अपारा ❀ चतुरंगिनी चमू बहु धारा ॥ १ ॥
विविधभाँति वाहन रथ याना ❀ विपुल बरन पताक ध्वज नाना ॥ २ ॥

राक्षसोंकी सेना तौ अपार थी पर उसमेंसे बहुतसी चतुरंगिनी सेना अपना गोल बनाकर चली१ बहुत प्रकारके घोडे आदि वाहन रथ सवारी और बहुत रंगकी अनेक ध्वजा पताकाँ फहराती जाती हैं २

चले मत्तगजयूथ घनेरे ❀ प्रावृटजलद मरुतके प्रेरे ॥ ३ ॥
बरन बरन बरदैत्यनिकाया ❀ समरसूर जानहिं बहु माया ॥ ४ ॥

मतवाले हाथियोंके बहुतसे झुंड ऐसे. चले जैसे बरसातमें हवाके जोरसे बादल चलते हैं ॥३॥ भांति २ के सुन्दर दैत्योंके समूह हैं, जो लड़ाईमें शूर बहुतसी माया जानते हैं ॥ ४ ॥

अति विचित्र बाहिनी बिराजी ❀ वीर बसंतसेन जनु साजी ॥ ५ ॥
चलत कटक दिगसिंधुर डगहीं ❀ क्षुभित पयोधि कुधर डगमगहीं ॥ ६ ॥

बडी चित्र बिचित्र सेना सजी है. मानो बसंत बीरने सेना सजाई है ॥ ५ ॥ सेनाके चलतेही दिशाओंके हाथी बिचलने लगे, समुद्र, खलबलाने लगा और पर्वत डिगमगाने लगे ॥ ६ ॥

उठी रेनु रवि गयउ छिपाई ❀ पवन थकित बसुधा अकुलाई ॥ ७ ॥
पवन निसान घोररव बाजहिं ❀ महाप्रलयके जनु घन गाजहिं ॥ ८ ॥

धूल उड़ने लगी, जिससे सूर्यनारायण छिप गये, पवनका चलना बंद होगया और पृथ्वी अकुलाने लगी ॥ ७ ॥ ढोल और बाजे ऐसे घोर शब्दसे बजने लगे मानों महाप्रलयके मेघ गर्जते हैं ॥८॥

भेरि नफीरि बाजु सहनाई ❀ मारूराग सूरसुखदाई ॥ ९ ॥
केहरिनाद वीर सब करहीं ❀ निज निज बल पौरुष उच्चरहीं ॥ १० ॥

नगाडे, नफीरी, सहनाई और शूरवीरोंके सुखदाई मारू राग बजते हैं ॥ ९ ॥ सब योद्धा सिंहकासा शब्द करते हैं और अपने २ बल पराक्रमको चिल्ला २ कर कहते हैं ॥ १० ॥

कहै दसानन सुनहु सुभट्टा ❀ मर्दहु भालुकपिनकर ठट्टा ॥ ११ ॥
हौं मारिहौं भूप दोउ भाई ❀ अस कहि सनमुख फौज चलाई ॥ १२ ॥
यह सुधि सकल कपिन जब पाई ❀ धाये करि रघुबीर दुहाई ॥ १३ ॥

रावण कहता है, हे सुन्दर योद्धाओ ! सुनो रीछ बन्दरोंके समूहोंको मींज डालो ॥ ११ ॥ और मैं दोनों भाई राजाओंको मारूंगा ! ऐसे कहकर सेना सामने चलाई ॥ १२ ॥ जब यह समाचार बन्दरोंने पाया तौ सब रामचन्द्रजीकी दुहाई करके दौड़े ॥ १३ ॥

छं०-धाए बिसाल कराल मर्कट भालु कालसमान ते । ❀
मानहु सपक्ष उड़ाहिं भूधरवृंद नाना बानते ॥ ❀
नखदसन सैलन करन द्रुम गहि सबल संक न मानहीं । ❀
जय राम रावन मत्त गज मृगराज सुजस सुनावहीं ॥ ५ ॥ ❀

बडे २ भयंकर रीछ बन्दर कालके समान ऐसे दौडे मानों अनेक बाणोंके लगनेसे पक्षसमेत पर्वत उड़ते हैं, बलसहित नख दांत और हाथोंसे वृक्षों और पर्वतोंके उखाड़तेमें जरा भय नहीं मानते, और रावणरूपी मतवाले हाथीको सिंहरूप ऐसे रामचन्द्रजीकी जय २ कहते हुये (भगवान्का) सुन्दर यश सुनाते हैं ॥ ५ ॥

दो०-दुहुँदिसि जयजयकार करि, निज निज जोरी जानि ॥ ❀
भिरे वीर इत रघुपतिहिं, उत रावनहिं बखानि ॥ १५० ॥ ❀

दोनों दिशाओंमें जयजयकार करके अपनी २ जोड़ी पहिचानकर इधर रामचन्द्रजीका और उधर रावणका बखान करके योद्धा लड़ने लगे ॥ १५० ॥

चौ०-रावन रथी बिरथ रघुबीरा ❀ देखि बिभीषन भयउ अधीरा ॥ १ ॥
अधिक प्रीति उर भा संदेहा ❀ बंदि चरन कह सहित सनेहा ॥ २ ॥

रावण तौ रथपर और रामचन्द्रजी बिना रथके अर्थात् पैदल सो देखकर बिभीषण घबराया ॥१॥ अधिक प्रीतिके कारण हृदयमें सन्देह हुआ, तब चरणोंको दंडवत् कर प्रेमसे कहने लगा कि ॥२॥

नाथ न रथ पद नहिं पदत्राना ❀ केहि बिध जितब बीर बलवाना ॥ ३ ॥
सुनहु सखा कह कृपानिधाना ❀ जेहि जय होइ सो स्यंदन आना ॥ ४ ॥

हे स्वामी ! (आपके पास) न तौ रथ है न पैरोंमें जूते हैं फिर बलवान् वैरीको किस प्रकार जीतोगे ? (यह सुनकर) ॥३॥ भगवान्ने कहा हे मित्र ! सुनो जिससे जीत हो वह रथ दूसरा है॥४॥

शौरज धीर जाहि रथ चाका ❀ सत्यसीलदृढ़ ध्वजा पताका ॥ ५ ॥
बलविवेक दम परहित घोरे ❀ क्षमा दया समता रज्जु जोरे ॥ ६ ॥

जिस रथके शूरता और धीरता तौ पहिये हैं और दृढ़ सत्यशील जिसकी ध्वजा पताका हैं ॥५॥ वल, ज्ञान, दम, और पराये हितरूपी घोड़े जिसमें क्षमा दया और ममतारूपी रस्सीसे जुड़े हुये हैं ॥६॥

ईसभजन सारथी सुजाना ❀ विरतिचर्म संतोषकृपाना ॥ ७ ॥
दानपरसु बुधि सक्तिप्रचंडा ❀ बरविज्ञान कठिन कोदंडा ॥ ८ ॥

और जिसपर महादेवजीका भजनं चतुर सारथी है और बैराग्य ढाल और संतोष तलवार है ॥ ७ ॥ दान फरसा, बुद्धि प्रचण्ड शक्ति और श्रेष्ठ ज्ञान कठिन धनुष है ॥ ८ ॥

संयमनियम सिलीमुख नाना ❀ अमल अचल मन तूनसमाना ॥ ९ ॥
कवच अभेद्य विप्रपदपूजा ❀ यहिसम बिजय उपाय न दूजा ॥ १० ॥
सखाधर्ममय अस रथ जाके ❀ जीतनकहँ न कतहुँ रिपु ताके ॥ ११ ॥

संयम नियम अनेक वाण और निर्मल स्थिर मन तरकस है ॥९॥ ब्राह्मणोंके चरणोंका पूजनही अभेद्य अर्थात् जो छिद न सके ऐसा कवच है, इसके समान जीतका दूसरा उपाय नहीं ॥ १० ॥ हे मित्र ! जिसके पास ऐसा धर्मका रथ है उसके जीतनेको वैरी कहीं नहीं हैं ॥ ११ ॥

दो०-महाअजय संसाररिपु, जीति सकै सो बीर ॥ ❀
जाके अस रथ होइ दृढ़, सुनहु सखा मतिधीर ॥ १५१ ॥ ❀

हे मतिधीर मित्र ! सुन, जिसके पास ऐसा दृढ़ रथ हो वह योद्धा बड़े अजय संसाररूपी शत्रुकोभी जीत सक्ता है ॥ १५१ ॥

सुनत बिभीषन प्रभुवचन, हर्षि गहे पदकंज ॥ ❀
इहिबिध मोहिं उपदेस किय, राम कृपासुखपुंज ॥ १५२ ॥ ❀

बिभीषणने भगवान्के वचन सुनतेही प्रसन्न हो उनके कमलसमान चरण पकड़ लिये (और कहा कि) हे रामजी ! आप दया और सुखके समूह हैं, आपने मुझे इसी बहाने उपदेश किया ॥ १५२॥

उत प्रचार दसकंधर, इत अंगद हनुमान ॥ ❀
लरत निसाचर भालु कपि, करि निज निज प्रभु आन॥१५३॥❀

उधर रावण ललकार रहा है इधर अंगद और हनूमान् ललकारते हैं, और राक्षस, रीछ, बन्दर अपने २ स्वामियोंकी आन करके लड़ रहे हैं ॥ १५३ ॥

चौ०-सुर ब्रह्मादि सिद्ध मुनि नाना ❀ देखहिं रन नभ चढ़े विमाना ॥ १ ॥
मैंहूँ उमा रहेउँ तेहि संगा ❀ देखत रामचरित रनरंगा ॥ २ ॥

ब्रह्मा आदि देवता और अनेक सिद्ध और मुनीश्वर विमानोंपर चढ़े हुये आकाशसे लड़ाई देखते हैं ॥ १ ॥ (महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! मैंभी उनके साथ था और रामचन्द्रजीके चरित और लड़ाईके रंगको देखता था ॥ २ ॥

सुभट समर रस दुहुँदिसि माते ❀ कपि जयसील रामबलताते ॥ ३ ॥
एक एक सन भिरहिं प्रचारहिं ❀ एक एक मर्दहिं महि पारहिं ॥ ४ ॥

दोनों ओरके योद्धा लड़ाईके रसमें चूर हो रहे थे और जयशील बन्दर रामचन्द्रजीके बलसे गरमा रहे थे ॥३॥ एकएकसे भिड़ते और ललकारते हैं और एक एकको मींड़कर पृथ्वीपर डालते हैं ॥४॥

मारहिं काटहिं धरनि पछारहिं ❀ सीस तोरि सीसन्हसन मारहिं ॥ ५ ॥
उदर बिदारहिं भुजा उपारहिं ❀ गहि पद अवनि पटकि भट डारहिं ॥६॥

मारते हैं, काटते हैं, पृथ्वीपर छपाड़ते हैं और शिर तोड़कर शिरोंसे दे दे मारते हैं ॥ ५ ॥ पेट फाड़ते हैं, भुजा उखाड़ते हैं और योद्धाओंको पैर पकड़के पटक २ कर पृथ्वीपर डाल देते हैं ॥६॥

निसिचरभट महि गाड़हिं भालू ❀ ऊपर डारि देहिं बहु बालू ॥ ७ ॥
बीर बलीमुख युद्ध विरुद्धे ❀ देखिय बिपुल काल जनु क्रुद्धे ॥ ८ ॥

और रीछ योद्धा राक्षसोंको पृथ्वीमें गाड़ते हैं और ऊपरसे बहुतसी रेत डाल देते हैं ॥७॥ बहुतसे योद्धा बन्दर लड़ाईमें डटे हुये ऐसे दिखाई देते हैं, मानो बहुतसे काल क्रोधित हुये खड़े हैं ॥८॥

छं०–क्रुद्धे कृतांतसमान कपि तनु स्रवत सोनित राजहीं । ❀
मर्दहिं निसाचरकटकभट भट बलबंत घन जिमि गाजहीं ॥ ❀
मारहिं चपेटनि काठि दाँतनि डारि लातन मींजहीं । ❀
चिक्करहिं मर्कट भालु छलबल करहिं जेहि खल छीजहीं॥६॥❀

बन्दर यमराजके समान क्रोधित हुये, जिनके शरीरमेंसे लोहू चुचा रहा है और वे राक्षसोंकी सेनाके बलवान् योद्धाओंको मीजते हैं, बादलकी भांति गर्जते हैं, चपेटोंसे मारते हैं, दातोंसे काटते हैं, और पटक २ कर लातोंसे मसले डालते हैं और चिक्कारते हैं रीछ बन्दर ऐसे छलबल करते हैं जिससे दुष्ट राक्षस छीजते जाते हैं ॥ ६ ॥

धरि गाल फारहिं उर बिदारहिं गल अँत्रावलि मेलहीं । ❀
प्रहलादपति जनु बिबिध तनु धरि समर अंगन खेलहीं ॥ ❀
धरु मारु काटु पछारु घोर गिरा गगनमहि भरिरही । ❀
जय राम जो तृनते कुलिस करु कुलिस ते करु तृन सही॥७॥❀

पकड़ २ कर गालोंको फाड़ते हैं और छातीको फाड़ २ कर गलेमें आतोंकी माला डालते हैं। (सो ऐसे लगते हैं) मानों नृसिंह भगवान् बहुतसे शरीर धारण करके लड़ाईके आँगनमें खेलते हैं पकड़लो, मारो, काटडालो, पछाड़दो ऐसा घोर शब्द पृथ्वी और आकाशमें भर रहा है। उन रामचन्द्रजीकी जय हो जो तिनकेसे वज्र और वज्रसे तिनका करसक्ते हैं ॥ ७ ॥

दो०–निजदल विचल बिलोकि तब, बीस भुजा दस चाप ॥ ❀
चला दसानन कोप करि, फिरहु फिरहु कहि दाप ॥ १५४ ॥ ❀

तब रावण अपनी सेनाको भागी हुई देखकर बीसों भुजाओंमें दश धनुष लेकर क्रोध करके चला और घमंडसे कहने लगा कि लौटो लौटो ॥ १५४ ॥

चौ०–धायउ परम क्रोध दसकंधर ❀ सन्मुख चले हूहकर बंदर ॥ १ ॥
गहि कर पादप उपल पहारा ❀ डारहिं तेहिपर एकहि बारा ॥ २ ॥

रावण बड़े क्रोधसे दौड़ा तौ बन्दरभी सामनेसे हूहू करके दौड़े ॥ १ ॥ और वृक्ष, वज्र और पहाडोंको हाथोंमें लेकर उसपर एकही साथ डालने लगे ॥ २ ॥

लागहि सैल बज्र तनु तासू ❀ खंड खंड होइ फूटहिं आसू ॥ ३ ॥
चला न अचल रहारथ रोपी ❀ रन दुर्मद रावन अति कोपी ॥ ४ ॥

उसके शरीरमें पर्वत और वज्र लगतेही तत्काल खंड २ होकर फूटने लगे ॥ ३ ॥ रावण चला नहीं और बड़े रथको रोपकर लड़ाईमें मतवाला अति क्रोधित होकर ड़टाही रहा ॥ ४ ॥

इत उत झपटि दपटि कपि जोधा ❀ मर्दन लागु भयउ अति क्रोधा ॥ ५ ॥
चले पराइ भालु कपि नाना ❀ त्राहि त्राहि अंगद हनुमाना ॥ ६ ॥

और इधर उधर झपट लपट कर और बड़ा क्रोध कर योद्धा बन्दरोंको मींजने लगा ॥५॥ बहुतसे रीछ बन्दर भाग चले (और कहने लगे कि) हे अंगद ! हे हनूमान् ! रक्षा करो रक्षा करो ॥६॥

पाहि पाहि रघुबीर गुसाँई ❀ यह खल खाइ कालकी नाईं ॥ ७ ॥
तेहि देखे कपि सकल पराने ❀ दसहु चाप सायक संधाने ॥ ८ ॥

हे गोसाँई रामचन्द्र ! रक्षा करो २ ! यह दुष्ट कालकी भांति खाये जाता है ॥ ७ ॥ उस (रावण) ने सब बन्दर भागते हुये देखे तो दशों धनुषोंपर बाण संधान किये ॥ ८ ॥

छं०–संधानि धनु सरनिकर छाँडेसि उरग जिमि उड़ि लागहीं । ❀
रहे पूरि सर धरनी गगन दिसि बिदिसि कहँ कपि भागहीं॥ ❀
भा अति कोलाहल बिकल दल कपि भालु बोरहिं आतुरे । ❀
रघुबीर करुनासिंधु आरतबंधु जन रक्षा करे ॥ ८ ॥ ❀

धनुषपर संधानकर बाणोंके समूह ऐसे छोड़े जो सर्पकी भांति उड़कर लगने लगे और वे बाण पृथ्वी आकाशमें छागये और बन्दर दिशा विदिशाओंमें भागने लगे बड़ा भारी कोलाहल हुआ । रीछ बन्दरोंकी सेना आतुर हो पुकारने लगी कि हे कृपासागर! दीनबंधु रामचन्द्रजी ! दासोंकी रक्षा करो ॥ ८ ॥

दो०–बिचलत देखा कटक तब, कटि निषंग धनु हाथ ॥ ❀
लछमन चले सकोप तब, नाइ रामपद माथ ॥ १५५ ॥ ❀

तब सेना बिचलाती हुई देखी तौ लक्ष्मणजीके रामचन्द्रजीके चरणोंको माथा नवाकर कमरमें तरकस और हाथमें धनुष ले क्रोधित होकर चले (और बोले) ॥ १५५ ॥

चौ०–रे खल का मारसि कपि भालू ❀ मोहिं बिलोकु तोर मैं कालू ॥ १ ॥
खोजत रहेउँ तोहिं सुतघाती ❀ आजु निपाति जुड़ावौं छाती ॥ २ ॥

अरे दुष्ट ! रीछ बन्दरोंको क्या मारता है? मुझे देख, मैं तेरा काल हूं. (रावणने कहा) ॥१॥ अरे मेरे पुत्रके मारनेवाले ! मैं तुझेही ढूंढ़ रहा था, सो आज तुझे मार छाती ठंढी करूँगा ॥ २ ॥

अस कहि छाँड़ेसि बान प्रचंडा ❀ लछमन किए सकल सतखंडा ॥ ३ ॥
कोटिन सक्ति त्रिसूल पँवारे ❀ तृनसमान प्रभु काटि निवारे ॥ ४ ॥

ऐसे कहकर प्रचंड बाण छोड़े तौ लक्ष्मणजीने सबके सौ २ टुकड़े कर ड़ाले ॥ ३ ॥ फिर करोड़ों शक्ति और त्रिशूल छोड़े सो भगवान् सब तिनकेके समान काट ड़ाले ॥ ४ ॥

पुनि निजबाणन्ह कीन्ह प्रहारा ❀ स्यंदन भंजि सारथी मारा ॥ ५ ॥
सत सत सर मारे दसभाला ❀ गिरि सृंगनि जनु प्रबिसहिं व्याला ॥ ६ ॥

और फिर अपने बाणोंका प्रहार किया और रथ तोड़कर सारथीको मार डाला ॥५॥ और सो २ बाण (रावणके) दशों माथोंमें ऐसे मारे मानों पर्वतके शिखरोंमें सर्प धसते हैं ॥ ६ ॥

पुनि सत सर मारे उरमाहीं ❀ परेउ अवनि तनु सुधि कछु नाहीं ॥ ७ ॥
उठा प्रबल पुनि मूर्च्छा जागी ❀ छाँड़ेसि ब्रह्मदत्त जो साँगी ॥ ८ ॥

फिर सौ वाण हृदयमें मारे जिनसे पृथ्वीपर गिर पड़ा और शरीरकी कुछ सुध न रही ॥ ७ ॥ मूर्च्छाके जगनेपर वह बड़ा वली फिर उठा और उसने ब्रह्माकी दीहुई शक्ति छोड़ी ॥ ८ ॥

छं०-सो ब्रह्मदत्त प्रचंड सक्ति अनंतउर लागी सही । ❀
पऱ्यो बिकल बीर उठाव दसमुख अतुल बल महिमा रही ॥ ❀
ब्रह्मांड भुवन बिराज जाके एक सिर जिमि रजकनी । ❀
सो चह उठावन मूढ़ रावन जान नहिं त्रिभुवनधनी ॥ ९ ॥ ❀

वह प्रचंड ब्रह्मदत्त शक्ति लक्ष्मणजीके हृदयमें लगी जिससे वीर (लक्ष्मण) व्याकुल हो गिर पड़े. रावण उठाने लगा पर लक्ष्मणजीके बलकी महिमा अतुल थी (सो न उठे) जिसके एकही मस्तकपर संपूर्ण ब्रह्मांड रजकणके समान विराजता है उसे मूर्ख रावण उठाना चाहता है और यह नहीं जानता है कि ये त्रिलोकीके स्वामी हैं ॥ ९ ॥

दो०-देखत धावा पवनसुत, बोलत बचन कठोर ॥ ❀
आवत तेहिं उरमहँ हनेउ, मुष्टिप्रहार प्रघोर ॥ १५६ ॥ ❀

देखतेही हनूमान् कठोर वचन बोलते हुए दौड़े सो आतेही उनके हृदयमेंभी एक बड़ा कठिन घूंसा मारा ॥ १५६ ॥

चौ०-जानु टेकी कपि भूमि न परेऊ ❀ उठा सँभारि बहुरि रिस भरेऊ ॥ १ ॥
मुष्टिक एक ताहि कपि मारा ❀ परेउ सैल जिमि बज्रप्रहारा ॥ २ ॥

हनूमान्ने घोंटूं तौ पृथ्वीपर टेक दिया पर गिरे नहीं और फिर क्रोधमें भरेहुये सम्हलकर उठे ॥१॥ और हनूमान्ने उसे एक घूंसा मारा सो वह ऐसा गिरा जैसे वज्रकी चोटसे पर्वत गिरता हो ॥२॥

मूर्च्छा गई बहुरि सो जागा ❀ कपिबल बिपुल सराहन लागा ॥ ३ ॥
धिक्धिक् मम पौरुष धिक् मोही ❀ जो तैं जियत उठा सुरद्रोही ॥ ४ ॥

मूर्च्छा बीतनेपर वह फिर जगा और हनूमान्के बलकी बहुत बड़ाई करने लगा (हनूमान्ने कहा) ॥ ३ ॥ अरे देवताओंके वैरी! जो तू जीताही उठा तौ मेरे पराक्रम और मुझको धिक्कार है ॥ ४ ॥

अस कहि कपि लछमन कहँ ल्यावा ❀ देखि दसानन बिसमय पावा ॥ ५ ॥
कह रघुबीर समुझि जिय भ्राता ❀ तुम कृतांतभच्छक सुरत्राता ॥ ६ ॥

ऐसे कहकर हनूमान् लक्ष्मणजीको ले आये. यह देखकर रावणको बड़ा आश्चर्य हुआ (क्योंकि उससे नहीं उठे थे) ॥ ५ ॥ रामचन्द्रजीने कहा, हे भाई! मनमें समझो, तुम यमराजकेभी भक्षण करनेवाले और देवताओंके रक्षक हो ॥ ६ ॥

सुनत बचन उठि बैठु कृपाला ❀ गगन गई सो सक्ति कराला ॥ ७ ॥
पुनि कोदंड बान गहि धाये ❀ रिपुसन्मुख अति आतुर आये ॥ ८ ॥

वचन सुनतेही दयानिधान (लक्ष्मणजी) उठ बैठे और वह कठिन शक्ति आकाशको चली गई ॥ ७ ॥ फिर धनुषबाण लेकर दौड़े और बड़ी उतावलीसे वैरीके सामने आये ॥ ८ ॥

छं०-आतुर बहोरि बिभंजि स्यंदन सूत हति व्याकुल कियो । ❀
गिऱ्यो धरनि दसकंधर बिकल तब बान सत बेध्यो हियो ॥ ❀
सो सारथी रथ घालि दूसर ताहि लंका लैगयो । ❀
रघुबीरबंधु प्रतापपुंज बहोरि प्रभुचरनन्हि नयो ॥ १० ॥ ❀

और उतावलीसे रथको तोड़ सारथीको मारके व्याकुल कर दिया और जब रावण व्याकुल होकर पृथ्वीपर गिर पड़ा तब सौ बाणोंसे उसका हृदय वेध दिया, सो सरथी उसे दूसरे रथपर बिठाकर लंकाको ले गया ॥ फिर प्रतापके समूह लक्ष्मणजीने रामचन्द्रजीके चरणोंको माथा नवाया ॥१०॥

दो०-वहाँ दसानन जागि करि, करन लागु कछु यज्ञ ॥ ❀
रामविरोधी विजय चह, सठ हठबस अति अज्ञ ॥ १५७ ॥ ❀

रावण वहां जागकर कुछ यज्ञसा करने लगा. मूर्ख हठके वश रामचन्द्रजीसे विरोध करके कुशल चाहता है, वड़ा भारी अज्ञानी है ॥ १५७ ॥

चौ०-इहां बिभीषन सब सुधि पाई ❀ सपदि जाय रघुपतिहिं सुनाई ॥ १ ॥
नाथ करै रावन इक यागा ❀ सिद्ध भये नहिं मरहि अभागा ॥ २ ॥

यहां बिभीषणने सब खवर पाई तौ शीघ्रही जाकर रामचन्द्रजीको सुनाई कि-॥ १ ॥ हे स्वामी ! रावण एक यज्ञ करता है सो सिद्ध होनेपर वह अभागा नहीं मरैगा ॥ २ ॥

पठबहु नाथ वेगि भट बंदर ❀ करहिं विध्वंस याग दसकंधर ॥ ३ ॥
प्रातहोत प्रभु सुभट पठाये ❀ हनुमदादि अंगद सब धाये ॥ ४ ॥

सो हे स्वामी ! योद्धा बन्दरोंको शीघ्रही भेज दीजिये जो रावणके यज्ञको विध्वंस कर डालैं ॥३॥ सवेरा होतेही भगवान्ने सुन्दर योद्धा भेजे सो हनूमान् और अंगद आदि सब दौड़े ॥ ४ ॥

कौतुक कूदि चढ़े कपि लंका ❀ पैठे रावनभवन असंका ॥ ५ ॥
जबहीं यज्ञ करत तेहिं देषा ❀ सकल कपिन्ह भा क्रोध विसेषा ॥ ६ ॥

और बन्दर खेलसे कूदकर लंकापर जा चढ़े और निर्भय हो रावणके महलमें धस गये ॥ ५ ॥ और जब उसे यज्ञ करते हुये देखा तौ सब बन्दरोंको वड़ा क्रोध हुआ (और कहने लगे) ॥६॥

रनते भाजि निलज गृह आवा ❀ इहाँ आइ बकध्यान लगावा ॥ ७ ॥
अस कहि अंगद मारेउ लाता ❀ चितव न सठ स्वारथ मन राता ॥ ८ ॥

अरे बेशरम ! लड़ाईसे भागकर घर चला आया और यहां आकर बगुलेकासा ध्यान लगाया है ॥७॥ ऐसे कहकर अंगदने लात मारी, परन्तु मूर्ख(रावण) देखता नहीं क्योंकि स्वारथमें मन लगा हुआ है८

छं०-नहिं चितव जब कपि कोपि तब गहि दसन लातन्ह मारहीं । ❀
धरि केस नारि निकारि बाहिर ते सो दीनपुकारहीं ॥ ❀
तब उठा कोप कृतांतसम गहि चरन बानर डारहीं । ❀
यहि भाँति यज्ञ विध्वंस करि कपि नेकु मन नहिं हारहीं ॥ ११ ॥ ❀

जब (रावण) नहीं देखता है तब बन्दर क्रोधित हो पकड़कर दांतोंसे काटने और लातोंसे मारने लगे और बाल पकड़ २ कर स्त्रियोंको बाहर निकाल लाये सो वे दीन होकर पुकारने लगीं, तब तौ (रावण) यमराजके समान क्रोध करके उठा और चरण पकड़कर बन्दरोंको पटकने लगा. इस बीचमें बन्दरोंने यज्ञ विध्वंस कर डाला और तनकभी मनमें नहीं हारे ॥ ११ ॥

दो०-मख विध्वंस करि कपि सकल, आए रघुपतिपास ॥ ❀
चला दसानन क्रोध करि, छाँड़ी जियकी आस ॥ १५८ ॥ ❀

जब सब बन्दर यज्ञविध्वंस करके रामचन्द्रजीके पास आये, तब रावण क्रोध करके चला और जीनेकी आश छोड़ दी ॥ १५८ ॥

चौ०–चलत होहिं तेहि असुभ भयंकर ❀ बैठिहिं गृध्र उडाहिं सिरन्हिपर ॥ १ ॥
भयउ कालबस काहु न माना ❀ कहेसि बजावहु युद्ध निसाना ॥ २ ॥

उसे चलतेमें भयंकर अशकुन होते हैं, गृध्र शिरोंपर बैठ २ कर उड़ जाते हैं ॥ १ ॥ रावण कालके वश हो गया है सो किसीको नहीं गिनता, कहता है कि जुझाऊ बाजे बजाओ ॥ २ ॥

चली तमीचरअनी अपारा ❀ बहु गज रथ पदचर असवारा ॥ ३ ॥
प्रभुसंमुख खल धावहिं कैसे ❀ सलभसमूह अनलकहँ जैसे ॥ ४ ॥

राक्षसोंकी अपार सेना चली जिसमें बहुतसे हाथी, घोड़े, पैदल और सवार हैं ॥ ३ ॥ भगवान्‌के सामने दुष्ट कैसे दौड़ते हैं जैसे पतंगोंका समूह अग्निकी ओर दौड़ता हो ॥ ४ ॥

इहाँ देव सब विनती कीन्ही ❀ दारुन विपति हमहिं इन्ह दीन्ही ॥ ५ ॥
अब जनि नाथ खेलावहु एही ❀ अतिसय दुखित होति बैदेही ॥ ६ ॥

यहां सब देवताओंने विनती करी कि इन्होंने हमको बड़ा भारी दुःख दिया है ॥ ५ ॥ सो हे स्वामी ! अब इसे खिलाओ मत, क्योंकि जानकीजी बहुत दुखी होती हैं ॥ ६ ॥

देवबचन सुनि प्रभु मुसुकाना ❀ उठि रघुबीर सुधारेउ बाना ॥ ७ ॥
जटाजूट दृढ़ बाँधी माथे ❀ सोहत सुमन बीच बिच गाथे ॥ ८ ॥

देवताओंके वचन सुनकर भगवान् हँसे और उठकर बाण सुधारे ॥ ७ ॥ और मस्तकपर दृढ़ जटाजूट बाँधी जिसके बीच २ में सुन्दर फूल गुँथे हैं ॥ ८ ॥

अरुननयन वारिद तनु स्यामा ❀ अखिल लोक लोचन अभिरामा ॥ ९ ॥
कटितट परिकर, कसे निषंगा ❀ कर कोदंड कठिन सारंगा ॥ १० ॥

लाल लाल नेत्र हैं, मेघके समान श्याम शरीर है और वे सब लोकोंके नेत्रोंको आनन्द देनेवाले हैं ॥ ९ ॥ कमरमें तरकस, फेंट कसे और हाथमें कठिन धनुष बाण लिये हैं ॥ १० ॥

छं०–सारंग कर सुंदर निषंग सिलीमुखाकर कटि कस्यौ । ❀
भुजदंड पीन मनोहरायत उर धरासुरपद लस्यौ ॥ ❀
कह दास तुलसी जबहिं प्रभु सर चाप कर फेरन लगे । ❀
ब्रह्मांड दिग्गज कमठ अहि महि सिंधु भूधर डगमगे ॥१२॥ ❀

हाथमें सुन्दर धनुष बाण और कमरमें तरकस कसा हुआ है, मोटे २ भुजदंड, सुन्दर चौड़ी छाती जिसमें भृगुलताका चिह्न शोभित है, तुलसीदास कहते हैं कि जब भगवान् धनुषबाणपर हाथ फेरने लगे तौ ब्रह्मांड, दिशाओंके हाथी, कच्छप, शेषनाग, पृथ्वी, समुद्र और पर्वत डिगमिगाने लगे ॥१२॥

दो०–हर्षे देव विलोकि छवि, वर्षहिं सुमन अपार ॥ ❀
जय जय प्रभु गुन ज्ञान बल, धाम हरन महिभार ॥ १५९ ॥ ❀

देवता उस शोभाको देखकर प्रसन्न हुये और अपार फूल वर्षाने लगे और गुण ज्ञान और बलके धाम तथा पृथ्वीके भार उतारनेवाले ऐसे भगवान्‌की वारंवार जय मनाने लगे ॥१५९॥

चौ०–यहिके बीच निसाचरअनी ❀ कसमसाति आई अति घनी ॥ १ ॥
देखि चले सन्मुख कपि भट्टा ❀ प्रलयकालके जिमि घनघट्टा ॥ २ ॥

इसी बीचमें राक्षसोंकी घनी सेना कसमसाती हुई आई ॥ १ ॥ उसे देखकर शूरवीर बन्दर सामने ऐसे चले मानों प्रलयकालके बादलोंके झुंड हों ॥ २ ॥

सक्ति सूल तरवारि चमकहिं ❀ जनु दस दिसि दामिनी दमकहिं ॥ ३ ॥
गज रथ तुरग चिकार कठोरा ❀ गर्जत मनहुँ बलाहक घोरा ॥ ४ ॥

शक्ति, त्रिशूल और तलवार ऐसी चमकती हैं मानों दशों दिशाओंमें बिजली दमकती हो ॥३॥ हाथी, घोड़े और रथोंका कठोर चिकारशब्द ऐसा होने लगा मानों घनघोर बादल गर्जते हैं ॥४॥

कपि लँगूर विपुल नभ छाये ❀ मनहुँ इंद्रधनु उगेउ सुहाये ॥ ५ ॥
उठी रेनु मानहुँ जलधारा ❀ बानबुंद भइ वृष्टि अपारा ॥ ६ ॥

बन्दरोंकी बहुतसी पूंछें आकाशमें ऐसी छारही हैं मानों सुन्दर इन्द्रधनुष उदय हुए है ॥ ५ ॥ धूल ऐसी उड़ने लगी मानों जलकी धारा है, और बाणरूपी बूंदोंकी मूसलधारा वृष्टि होने लगी॥६॥

दुहँदिसि पर्वत करहिं प्रहारा ❀ वज्रपात जनु बारहिं बारा ॥ ७ ॥
रघुपति कोपि बानझर लाई ❀ घायल भे निसिचरसमुदाई ॥ ८ ॥

दोनों ओर पर्वतोंकी ऐसी मार होती है मानों बारंबार वज्रपात होरहा है ॥ ७ ॥ रामचन्द्रजीने क्रोध करके बाणोंकी झड़ी लगादी जिससे राक्षसोंके समूह घायल होगये ॥ ८ ॥

लागत बान बीर चिक्करहीं ❀ घुर्मि घुर्मि अगनित महि परहीं ॥ ९ ॥
स्रवहिं सैल जनु निर्झर बारी ❀ सोनितसरि कादर भयकारी ॥ १० ॥

और बाण लगतेही अनगिनती योद्धा चिक्कारते हुये घूम २ कर पृथ्वीपर ऐसे गिरने लगे ॥९॥ मानों पर्वतके झरनोंसे पानी झरता है; और वह लोहूकी नदी काहिलोंको भय देती हुई (बहने लगी) ॥१०॥

छं०–कादर भयंकर रुधिरसरिता बढ़ी परम अपावनी । ❀
दोउ कूल दल रथ रेत चक्रावर्त बहति भयावनी ॥ ❀
जलजंतु गज पदचर तुरग रथ बिबिध वाहन को गने । ❀
सर सक्ति तोमर सर्प चाप तरंग चर्म कमठ घने ॥ १३ ॥ ❀

काहिलोंको डरानेवाली लोहूकी बड़ी पवित्र नदी बढ़ी, जिसके दोनों सेना किनारे हैं, रथ रेत हैं और (रथके) पहिये भँवर हैं और बड़ी भयंकर बहती है, अनेक सवारी हाथी पैदल घोड़े और रथ जलके जीव इतने हैं कि उन्हें कौन गिन सक्ता है? बाण, शक्ति और तोमर सर्प हैं, धनुष तरंग हैं और बहुतसी ढालें कछुये हैं ॥ १३ ॥

दो०–बीर परे जनु तीरतरु, मज्जा बह जनु फैन ॥ ❀
कादर देखत डरहिं जिय, सुभटनके मन चैन ॥ १६० ॥ ❀

योद्धा जो पड़े हैं वेही मानों किनारेके वृक्षहैं और चर्बी मानों झाग हैं, जिसे देखतेही काहिल मनमें ड़रते हैं और योद्धाओंके मनमें आनन्द होता है ॥ १६० ॥

चौ०–मज्जहिं भूत पिसाच बेताला ❀ केलि करहिं योगिनी कराला ॥ १ ॥
काक कंघ लै भुजा उड़ाहीं ❀ इकते एक छीनी धरि खाहीं ॥ २ ॥

भूत, पिशाच, बैताल, मज्जन करते हैं और भयंकर योगिनी आनन्द मनती हैं ॥ १ ॥ कौए कंधोंमेंसे भुजाओंको ले ले कर उड़ते हैं और एकसे एक छीनकर खाते हैं ॥ २ ॥

एक कहहिं ऐसी समुदाई ❀ सठ तुम्हार दारिद्र न जाई ॥ ३ ॥
कहरत भट घायल तट गिरे ❀ जहँ तहँ मनहुँ अर्धजल परे ॥ ४ ॥

कोई कहते हैं अरे मूर्खो ! ऐसे घमसानमेंभी तुम्हारा दरिद्र नहीं गया ॥ ३ ॥ घायल योद्धा किनारेपर पड़े हुये ऐसे कहरते हैं मानों जहां तहां अधूरे जलमें पड़े हैं ॥ ४ ॥

खैचहिं आँत गृध्र तट भये ❀ जनु बनसी खेलत चित दये ॥ ५ ॥
बहु भट बहे चढ़े खग जाहीं ❀ जिमि नावरि खेलहिं सरिमाहीं ॥ ६ ॥

किनारेपरसे गृध्र आँतोंको ऐसे खैंचते हैं मानों मन लगाकर बैनशीसे खेलते हैं ॥ ५ ॥ बहुतसे योद्धा बहते हैं जिनपर पक्षी ऐसे चढ़े चले जाते हैं जैसे नदीमें नावपर चढ़कर खेलते हैं ॥ ६ ॥

योगिनि भरि भरि खप्पर संचहिं ❀ भूत पिसाच विविध विध नंचहिं ॥ ७ ॥
भट कपाल. करताल बजावहिं ❀ चामुंडा नानाविध गावहिं ॥ ८ ॥

योगिनियां खप्परोंको भर २ के सजाती हैं और भूत पिशाच अनेक प्रकारसे नाचते हैं ॥ ७ ॥ चामुंडा अनेक प्रकारसे गाती हैं, और योद्धाओंकी खोपडियोंसे हाथकी ताल बजाती हैं ॥ ८ ॥

जंबुकनिकर दंत कटकटहीं ❀ खाहिं अघाहिं हुआहिं दपटहीं ॥ ९ ॥
कोटिन रुंड मुंड बिनु डोलहिं ❀ सीस परे महि जय जय बोलहिं ॥ १० ॥

गीदड़ोंके समूह दांतोंको कटकटाते हुये खाते और अघाते हैं और हू हू शब्द कर (एक दूसरेपर) झपटते हैं ॥९॥ करोड़ों रुंड बिना मुंडके डोलते हैं, और मुंड पृथ्वीपर पड़ेहुये जय २ कह रहे हैं॥१०॥

छं०–बोलहिं जो जय जय मुंड रुंड प्रचंड सिर बिनु धावहीं । ❀
परिनाम युद्ध अगुह्य बोलहिं सुभट सुरपुर पावहीं ॥ ❀
निसिचरवरूथनि मर्द गर्जहिं भालु कपि दर्पित भये । ❀
संग्राम आँगन सुभट सोवहिं रामसर निकरन्हि हये ॥१४॥ ❀

मुंड तौ जय २ बोलते हैं और भयंकर रुंड विना मुंडके दौड़ते फिरते हैं. युद्धका फल प्रगट बोलते हैं अर्थात् लड़ाईमें जो मरता है सो स्वर्गको जाता है. रीछ बन्दर घमंडमें भर २ कर राक्षसोंके समूहोंको मार २ कर गर्जते हैं और रामचन्द्रजीके बाणोंके समूहोंसे मारेहुये बड़े २ योद्धा लड़ाईरूपी आँगनमें सोते हैं ॥ १४ ॥

दो०–हृदय बिचारेसि दसवदन, भा निसिचरसंहार ॥ ❀
मैं अकेल कपि भालु बहु, माया करौं अपार ॥ १६१ ॥ ❀

रावणने मनमें बिचारा कि राक्षसोंका तौ नाश हुआ, अब मैं अकेला और रीछ बन्दर बहुत हैं सो बहुतसी माया करूं ॥ १६१ ॥

---

(१) अधूरे जलसे यह भाव है कि जैसे मृत्युके समय मनुष्य गंगाके आधे जलमें पड़ा रहता है इसी प्रकारसे घायल योद्धा मरनेकी आशसे पड़े हैं ॥ (२) बनशी मछली पकड़नेका कांटा होता है.

(३) जैसा नीतिमें लिखा है कि

जये च लभते लक्ष्मीं मृतेनापि सुराङ्गनाम् ॥ क्षणविध्वंसिनः काया का चिन्ता मरणे रणे ॥ १ ॥
मृतः प्राप्नोति वा स्वर्गं शत्रुं हत्वा सुखानि वा ॥ उभावपि हि शूराणां गुणावेतौ सुदुर्लभौ ॥ २ ॥

अर्थात् विजय होनेपर लक्ष्मी और मरनेपर सुरांगना मिलती है, यह काया क्षणभंगुर है फिर संग्राममें मरनेकी क्या चिन्ता है ? युद्धमें मरकर स्वर्ग पाता है अथवा शत्रुको मारकर सुख पाता है, शूरोंके ये दोही गुण बड़े दुर्लभ हैं ॥ २ ॥

चौ०-देवन्हि प्रभुहिं पयादेहिं देखा ❀ उपजा उर अति छोभ बिसेखा ॥ १ ॥
सुरपति निजरथ तुरत पठावा ❀ हर्षसहित मातलि लै आवा ॥ २ ॥

देवताओंने भगवान्‌को पैदल देखा तौ हृदयमें बहुत भय उत्पन्न हुआ ॥ १ ॥ इन्द्रने शीघ्रही अपना रथ भेजा सो सारथी आनंदसे ले आया ॥ २ ॥

तेजपुंज रथ दिव्य अनूपा ❀ बिहँसि चढ़े कोसलपुरभूपा ॥ ३ ॥
चंचल तुरग मनोहर चारी ❀ अजर अमर मन सम गतिकारी ॥ ४ ॥

वह रथ तेजका समूह बड़ा सुन्दर और उपमारहित था सो उसपर रामचन्द्रजी हँसकर चढ़े ॥३॥ उस रथमें अजर अमर और मनके समान चलनेवाले ऐसे मनोहर चंचल चार घोड़े जुते हुये हैं॥४॥

रथारूढ़ रघुनाथहिं देखी ❀ धाये कपि बल पाइ बिसेखी ॥ ५ ॥
सही न जाइ कपिन्हकी मारी ❀ तब रावन माया बिस्तारी ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीको रथपर चढ़े हुये देख बन्दर बहुतसा बल पाकर दौड़े ॥ ५ ॥ बन्दरोंकी मार सही नहीं जाती, तब रावणने माया फैलाई ॥ ६ ॥

सो माया रघुबीरहि बाँची ❀ सबकाहू मानी कर साँची ॥ ७ ॥
देखी कपिन निसाचरअनी ❀ बहु अंगद लछमन कपिधनी ॥ ८ ॥

वह माया रामचन्द्रजीको छोड़ सब किसीको सच्ची होकर लगी ॥७॥ बन्दरोंने राक्षसोंकी सेना देखी तौ उसमें बहुतेरे अंगद, लक्ष्मण और सुग्रीव दीखने लगे ॥ ८ ॥

छं०-बहु बालिसुत लछमन कपीश बिलोकि मर्कट अपड़रे। ❀
जनु चित्रलिखित समेत लछमन जहँ सो तहँ चितवत खरे॥ ❀
निजसेन चकित बिलोकि हँसि धनु तानि शर कोसलधनी। ❀
माया हरी हरि निमिषमहँ हर्षी सकल मर्कटअनी ॥ १५ ॥ ❀

बहुतसे अंगद लक्ष्मण और सुग्रीवोंको देखकर बन्दर ऐसे डरने लगे मानों लक्ष्मणसमेत चित्रमें लिखेसे जहांके तहां खड़े देख रहे हैं. रामचन्द्रजीने अपनी सेनाको चकित देख हँसके धनुष वाण ताना और भगवान्‌ने पलभरमें माया हरली तौ सब बन्दरोंकी सेना प्रसन्न होगई ॥ १५ ॥

दो०-बहुरि राम सबतन चितय, बोले वचन गँभीर ॥ ❀
द्वंद्वयुद्ध देखहु सकल, स्रमित भये कपि वीर ॥ १६२ ॥ ❀

फिर रामचन्द्रजी सबके शरीरकी ओर देख गंभीर बचन बोले कि अब सब (हमारा और रावणका) परस्पर युद्ध देखो, क्योंकि वीर वानर थक गये हैं ॥ १६२ ॥

चौ०-अस कहि रथ रघुनाथ चलावा ❀ बिप्रचरनपंकज सिर नावा ॥ १ ॥
तब लंकेस क्रोध करि धावा ❀ गर्ज तर्ज प्रभुसनमुख आवा ॥ २ ॥

ऐसा कहकर रामचन्द्रजीने ब्राह्मणोंके कमलसमान चरणोंको शिर नवाकर रथ चलाया ॥ १ ॥ तब रावण क्रोध कर दौड़ा और गर्जता हुआ कूदकर भगवान्‌के सामने आया और कहने लगा ॥२॥

जीतेहु जो भट संयुगमाहीं ❀ सुनु तापस मैं तिनसम नाहीं ॥ ३ ॥
रावननाम जगत जस जाना ❀ लोकप जाके बंदीखाना ॥ ४ ॥

हे तपस्वी ! सुन, जो योद्धा तैंने लड़ाईमें जीत लिये हैं मैं उनके बराबर नहीं हूं ॥ ३ ॥ मेरा नाम रावण है, मेरा यश संसार जानता है कि लोकपाल जिसके बन्दीखानेमें पड़े हैं ॥ ४ ॥

खरदूषन कबंध तुम मारा ❀ बधेहु ब्याधइव बालि बिचारा ॥ ५ ॥
निसिचरसुभट सकल संहारे ❀ कुंभकरन घननादहु मारे ॥ ६ ॥

तैने खर दूषण और कबंधको मारा और बिचारे बालिको बहेलियेकी भांति मारा ॥ ५ ॥ और सब राक्षस योद्धा मार डाले और कुंभकर्ण और मेघनादभी मार डाले ॥ ६ ॥

आजु बैर सब लेउँ निबाही ❀ जो रनभूमि भागि नहिं जाही ॥ ७ ॥
आजु करौं खलु काल हवाले ❀ परेहु कठिन रावनके पाले ॥ ८ ॥

सो जो रणभूमिमेंसे भाग न जायगा तौ आज सब वैरको भर पाऊंगा ॥ ७ ॥ और आज निस्संदेह (तुझे) कालके हवाले करदूंगा, अब कठिन रावणके पाले पड़ा है ॥ ८ ॥

सुनि दुर्बचन कालबस जाना ❀ बिहँसि बचन कह कृपानिधाना ॥ ९ ॥
सत्य सत्य तव सब प्रभुताई ❀ जनि जल्पसि देखब मनुसाई ॥ १० ॥

बुरे वचन सुनकर उसे कालके वश जाना और दयाके समुद्र (भगवान्) हँसकर वचन कहने लगे कि–॥ ९ ॥ तेरी सब प्रभुता सच्ची है, डींगें मत मारै, मनुष्यकी बहादुरीभी तौ देखियो ॥ १० ॥

छं०–जनि जल्पना करि सुजस नासहि नीति सुनि सठ करु क्षमा । ❀
संसारमहँ पूरुष त्रिविध पाटल रसाल पनस समा ॥ ❀
इक सुमनप्रद इकसुमनफल इक फलै केवल लागहीं । ❀
इक कहहिं करहिं न करहिं कहि कर एक करहिं न वागहीं ॥१६॥❀

अरे मूर्ख ! वकवाद मत करै, इससे सुन्दर यशका नाश होजाता है. (इस लिये) सहकरके नीति सुन कि संसारमें पाटल आम और कटहरके समान तीन प्रकारके मनुष्य होते हैं. एक फूल देते हैं, जैसे पाटल, एक फूल फल दोनों देते हैं (जैसे आम) और एकमें केवल फलही लगते हैं (जैसे कटहर) तैसेही एक कहते हैं (करते नहीं हैं, ये पाटलके समान हुये) एक कहते है और करतेभी हैं, (ये आमके समान हुये), और एक करतेही हैं न कहते हैं और न डींगें मारते हैं (ये कटहरके समान हुये) ॥ १६ ॥

दो०–रामबचन सुनि बिहँसि कह, मोहिं सिखावहु ज्ञान ॥ ❀
बैर करत नहिं तब डरेहु, अब लागे प्रिय प्रान ॥ १६३ ॥ ❀

रामचन्द्रजीके वचन सुन (रावणने) हँसकर कहा कि मुझे ज्ञान सिखाता है, तब वैर करतेमें तौ नहीं डरा अब प्राण प्यारे लगते हैं ॥ १६३ ॥

चौ०–कहि दुर्बचन क्रुद्ध दसकंधर ❀ कुलिससमान लागु छाँड़ै सर ॥ १ ॥
नानाकार सिलीमुख धाये ❀ दिसि अरु बिदिसि गगन महि छाये ॥२॥

इस प्रकार रावण बुरे वचन कहता हुआ क्रोधित होकर वज्रके समान बाण छोड़ने लगा ॥ १ ॥ अनेक प्रकारके बाण छूटने लगे जो दिशा, विदिशा आकाश और पृथ्वीमें छागये ॥ २ ॥

अनलबान छाँडे रघुबीरा ❀ छिनमहँ जरे निसाचरतीरा ॥ ३ ॥
छाँड़ेसि तीव्र सक्ति खिसिआई ❀ बान संग प्रभु फेरि पठाई ॥ ४ ॥

तब रामचन्द्रजीने अग्निबाण छोड़े जिनसे राक्षस (रावण) के बाण क्षणभरमें जलगये ॥ ३ ॥ (फिर रावणने) खिसियाकर बड़ी पैनी शक्ति छोड़ी सो उसे भगवान्ने बाणके साथही लौटाकर भेजदिया ॥ ४ ॥

कोटिन चक्र त्रिसूल पवाँरे ❀ बिनु प्रयास प्रभु काटि निवारे ॥ ५ ॥
विफल होहिं रावनसर कैसे ❀ खलके सकल मनोरथ जैसे ॥ ६ ॥

करोड़ों चक्र और त्रिशूल फेंकता है और भगवान् तिनकेके समान काट२कर अलग कर देते हैं ॥ ५ ॥ रावणके वाण कैसे निष्फल होते हैं जैसे दुष्टके सब मनोरथ (निष्फल होते हैं) ॥ ६ ॥

तब सत बान सारथिहिं मारेसि ❀ परेउ भूमि जय राम पुकारेसि ॥ ७ ॥
राम कृपा करि सूत उठावा ❀ तब प्रभु परम क्रोध उर छावा ॥ ८ ॥

तब रावणने सौ वाण सारथीके मारे तौ वह रामचन्द्रजीकी जय कहकर पृथ्वीपर गिर पड़ा॥७॥ रामचन्द्रजीने दया करके सारथीको उठाया और तब भगवान्के हृदयमें बड़ा क्रोध भर आया॥८॥

छं०–भये क्रुद्ध युद्ध विरुद्ध रघुपति तूण सायक कसमसे । ❀
कोदंडधुनि अति चंड सुनि मनुजाद सब मारुत ग्रसे ॥ ❀
मंदोदरीउर कंप कंपित कमठ भू भूधर त्रसे । ❀
चिक्करहिं दिग्गज दशनगहि महि देखि कौतुक सुर हँसे ॥१७॥ ❀

रामचन्द्रजी क्रोधित होके युद्धमें रुक गये तौ तरकसमें बाण कसमसाने लगे. धनुषकी अतिप्रचंड टंकार सुनकर सब राक्षस घूम २ कर गिर पड़े, मन्दोदरी हृदयमें कांपने लगी, कच्छपजी फड़कने लगे, पृथ्वी और पर्वत व्याकुल होने लगे, दिशाओंके हाथी पृथ्वीको दांतोंसे दाबकर चिंघारने लगे, और इस कौतुकको देखकर देवता हँसने लगे ॥ ॥ १७ ॥

दो०–तानि सरासन स्रवनलगि, छांड़े बिसिख कराल ॥ ❀
नभमारग सरगन चले, लहलहात जनु व्याल ॥ १६४ ॥ ❀

(भगवान्ने) कानतक धनुष तानकर कठिण बाण छोड़े, वह बाणोंके समूह आकाशमार्गमें होकर ऐसे चले मानों लहलहाते हुये सर्प जाते हों ॥ १६४ ॥

चौ०–चले बान सपक्ष जनु उरगा ❀ प्रथमहि हते सारथी तुरगा ॥ १ ॥
रथ बिभंजि हति केतु पताका ❀ गर्जा अति अंतर बल थाका ॥ २ ॥

सर्पोंके समान जो पंखसहित बाण चले तौ पहिलेही उन्होंने सारथी और घोड़े मार डाले ॥१॥ रथको तोड़ ध्वजापताकोंका नाश किया. (तब रावण) भीतरा बल थक जानेसे बहुत गर्जा ॥ २ ॥

तुरत आनि रथ चढ़ि खिसिआना ❀ अस्त्र सस्त्र छांडेसि विधनाना ॥ ३ ॥
बिफल होइँ सब उद्यम ताके ❀ जिमि परद्रोहनिरत मनसाके ॥ ४ ॥

और खिसियाकर शीघ्रही दूसरा रथ लाया और चढ़कर अनेक भांतिके अस्त्र शस्त्र छोड़ने लगा ॥ ३ ॥ उसके सब उपाय यों निष्फल होते जाते हैं जैसे पराये द्रोहसे प्रीति करनेवालेके मनोरथ (निष्फल होते हैं) ॥ ४ ॥

तब रावन दस सूल चलाये ❀ बाजि चारि महि मारि गिराये ॥ ५ ॥
तुरत उठाइ कोपि रघुनायक ❀ छाँड़े अति कराल बहु सायक ॥ ६ ॥

तब रावणने दश त्रिशूल छोड़े और चारों घोड़े मारकर पृथ्वीपर गिरा दिये ॥ ५ ॥ रामचन्द्रजीने उन्हें शीघ्रही उठाकर और क्रोध करके बहुतसे बड़े भयंकर बाण छोड़े ॥ ६ ॥

रावनसिर सरोजबनचारी ❀ चले रघुनाथ सिलीमुखधारी ॥ ७ ॥
दस दस बान भाल दस मारे ❀ निसरि गये चल रुधिरपनारे ॥ ८ ॥

रावणके मस्तक सोई कमलवन हैं उनमें रामचन्द्रजीके वाण भौंरोंके समान चले ॥ ७ ॥ (भगवान्ने) दश २ वाण दशों मस्तकोंमें मारे जिनसे निकलकर लोहूके पनाले चलने लगे ॥८॥

स्रवत रुधिर धावा बलवाना ❀ प्रभु पुनि कृत धनुसरसंधाना ॥ ९ ॥
तीस तीर रघुबीर पँवारे ❀ भुजनि समेत सीस महि पारे ॥ १० ॥

बलवान् (रावण) रुधिरके निकलते ही दौड़ा तौ भगवान्ने फिर धनुष बाण संधाना ॥ ९ ॥ रामचन्द्रजीने तीस वाण छोड़े और भुजाओंसमेत शिर (काटकर) पृथ्वीपर डाल दिये ॥ १० ॥

काटतहीं पुनि भये नवीने ❀ राम बहोरि भुजा सिर छीने ॥ ११ ॥
प्रभु बहुबार बाहु सिर हये ❀ कटत झटिति पुनि नूतन भये ॥ १२ ॥

काटतेही वे फिर नवीन होगये, तौ रामचन्द्रजीने फिर भुजा और शिर काट गिराये ॥ ११ ॥ भगवान्ने बहुत बार भुजा और मस्तक काटे परन्तु कटतेही फिर शीघ्र नये निकलने लगे ॥ १२ ॥

पुनि पुनि प्रभु काटहिं भुज सीसा ❀ अति कौतुकी कोसलाधीसा ॥ १३ ॥
रहे छाइ नभ सिर अरु बाहू ❀ मानहुँ अमित केतु अरु राहू ॥ १४ ॥

भगवान् वार २ भुजा और मस्तकोंको काटते हैं, क्योंकि रघुनाथजी बड़े खिलाड़ी हैं ॥ १३ ॥ आकाशमें मुंड और भुजा ऐसे छा रहे हैं मानो अनगिनती राहु केतु छारहे हों ॥ १४ ॥

छं०–जनु राहु केतु अनेक नभपथ स्रवत सोनित धावहीं । ❀
रघुबीर तीर प्रचंड लागहिं भूमि गिरन न पावहीं ॥ ❀
इक एक सर सिरनिकर छेदे नभ उड़त इमि सोहहीं । ❀
जनु कोपि दिनकर कर निकर जहँ तहँ बिधुंतुद पोहहीं ॥ १८ ॥ ❀

मानों अनेक राहु केतु लोहू बहते हुये आकाशमार्गमें दौड़ते हैं, और रामचन्द्रजीके तीखे वाण लगते हैं जिससे पृथ्वीपर नहीं गिरने पाते. एक एक वाणमें मस्तकोंके समूह जो छिदे हैं सो आकाशमें उड़ते हुये ऐसे शोभायमान् लगते हैं, मानों सूर्यने क्रोधित हो अपनी किरणोंके समूहमें जहां तहां राहु पोह लिये हैं ॥ १८ ॥

दो०–जिमि जिमि प्रभु हत तासु सिर, तिमि तिमि होहिं अपार ॥ ❀
सेवत विषय बिबर्ध जिमि, नित नित नूतन मार ॥ १६५ ॥ ❀

भगवान् ज्यों २ उसके मस्तकोंको काटते हैं, त्यों त्यों अनगिनती ऐसे होते जाते हैं जैसे विषयके सेवन करनेसे नित्त नया कामदेव बढ़ता जाता है ॥ १६५ ॥

चौ०–दसमुख दीख सिरनकी बाढ़ी ❀ बिसरा मरन भई रिस गाढ़ी ॥ १ ॥
गर्जेउ मूढ़ महाअभिमानी ❀ धायहु दसहुँ सरासन तानी ॥ २ ॥

रावणने मस्तकोंका बढ़ना देखा तौ मरनेको भूलगया और बहुत क्रोधित हुआ ॥ १ ॥ महाअभिमानी मूर्ख गर्जने लगा और दशों धनुष तानकर दौड़ा ॥ २ ॥

समरभूमि दसकन्धर कोपा ❀ बर्षि बान रघुपतिरथ तोपा ॥ ३ ॥
दंड एक रथ देखि न परेऊ ❀ जनु निहारमहँ दिनकर दुरेऊ ॥ ४ ॥

रावणने रणभूमिमें क्रोधित हो बाणोंकी ऐसी वर्षा करी कि रामचन्द्रजीका रथ ढक दिया ॥ ३ ॥ और रथ एक घड़ीतक ऐसे दिखाई नहीं दिया मानों सूर्य कोहरेमें छिप गया हो ॥ ४ ॥

हाहाकार सुरन्ह जब कीन्हा ❀ तब प्रभु कोप धनुष कर लीन्हा ॥ ५ ॥
सरनिवारी रिपुके सिर काटे ❀ ते दिसि बिदिसि गगन महि पाटे ॥ ६ ॥

जब देवताओंने हाहाकार मचाया तब भगवान्ने क्रोधित होकर हाथमें धनुष लिया ॥ ५ ॥ और अपने बाणोंसे वैरीके बाण काट, शिर काट दिये सो वे दिशा, विदिशा, आकाश और पृथ्वीमें छागये ॥ ६ ॥

काटे सिर नभमारग धावहिं ❀ जय जय ध्वनि करि भय उपजावहिं ॥७॥
कहँ लछमन सुग्रीव कपीसा ❀ कहँ रघुबीर कोसलाधीसा ॥ ८ ॥

कटेहुये मुंड आकाशमार्गमें दौड़ते हैं, और जय २ शब्द कहकर भय उत्पन्न करते हैं (कहते हैं कि) ॥ ७ ॥ लक्ष्मण सुग्रीव और हनूमान् कहां हैं? और अयोध्याके राजा रामचन्द्र कहां हैं? ॥ ८ ॥

छं०–कहँ राम कहि सिरनिकर धावहिं देखि मर्कट भजि चले । ❀
संधानि धनु रघुवंशमनि हँस शरनि सिर वेधे भले ॥ ❀
सिरमालिका गहि कालिका तहँ वृंद वृंदनि बहु मिलीं । ❀
करि रुधिरसरि मज्जन मनहुँ संग्रामवट पूजन चलीं ॥१९॥ ❀

राम कहां हैं? ऐसे कहकर मुंडोंके समूह दौंड़ते हैं जिन्हें देखकर बन्दर भाग चले, तब रामचन्द्रजी हँसकर धनुष चढ़ाय माथोंको बाणोंसे भली भांति छेदने लगे ॥ तहां बहुतसी कालिका देवी मुंडोंकी माला लेकर झुंडकी झुंड ऐसी आ मिली मानों लोहूकी नदीमें स्नानकरके संग्रामरूपी वटवृक्षको पूजने जाती हों ॥ १९ ॥

दो०–पुनि रावन अति कोप करि, छाँड़ी सक्ति प्रचंड ॥ ❀
सन्मुख चली बिभीषनहिं, मनहुँ कालकोदंड ॥ १६६ ॥ ❀

फिर रावणने बहुत क्रोध करके प्रचंड शक्ति छोड़ी, सो बिभीषणके सामने ऐसी चली मानों कालका धनुष है ॥ १६६ ॥

चौ०–आवत देखि सक्ति अति भारी ❀ प्रनतारतिहर बिरद सँभारी ॥ १ ॥
तुरत बिभीषन पाछे मेला ❀ सन्मुख राम सहेउ सो सेला ॥ २ ॥

बहुत भारी शक्तिको आती हुई देख (भगवान्ने) भक्तोंके दुःख दूर करनेवाला बाना सम्हाला ॥ १ ॥ और शीघ्रही बिभीषणको पीछे कर रामचन्द्रजीने वह शक्ति सामने सही ॥ २ ॥

लगी सक्ति मूर्च्छा कछु भई ❀ प्रभु कृत खेल सुरन्ह बिकलई ॥ ३ ॥
देखि बिभीषन प्रभु स्रम पायउ ❀ गहि कर गदा क्रोध करि धायउ ॥ ४ ॥

शक्तिके लगनेसे कुछ मूर्च्छासी हुई सो भगवान्ने तौ खेलकिया पर देवताओंको व्याकुलता होगई ॥३॥ बिभीषणने देखा कि भगवान्को परिश्रम हुआ तौ हाथमें गदा ले क्रोध करके दौड़ा (और बोला) ४

रे कुभाग्य सठ मंद कुबुद्धे ❀ तैं सुर नर मुनि नाग बिरुद्धे ॥ ५ ॥
सादर सिवकहँ सीस चढ़ाए ❀ एक एकके कोटिन पाए ॥ ६ ॥

अरे अभागे! तू बड़ा मूर्ख, नीच और दुर्बुद्धि है. तैंने देवता, मनुष्य, मुनीश्वर और नाग (सबसे) विरोध किया है ॥ ५ ॥ तैंने जो महादेवजीपर आदरसे शिर (काट २ कर) चढ़ाये सो एक २ के करोड़ २ पाये ॥ ६ ॥

तेहि कारन खल अबलगि बाँचा ❀ अब तव काल सीसपर नाँचा ॥ ७ ॥
रामबिमुख सठ चहसि संपदा ❀ अस कहि हतेसि माँझ उर गदा ॥ ८ ॥

हे खल! इसी कारण अबतक तू बचारहा परन्तु अब तेरा काल शिरपर नाच रहा है ॥ ७ ॥ अरे मूर्ख! रामचन्द्रजीसे विमुख होकर संपदा चाहता है? ऐसे कहकर उसकी छातीमें गदा मारी ॥८॥

छं०-उरमाँझ गदाप्रहार घोर कठोर लागत महि पर्‍यो।
दसवदन सोनित स्रवत पुनि संभारि धायो रिसभर्‍यो॥
दोउ भिरे अतिबल मल्लयुद्ध बिलोकि एकहिं इक हनै।
रघुबीरबलगर्वित बिभीषन घाव नहिं ताकहँ गनै॥ २०॥

हृदयमें ऐसी कठिन घोर गदा मारी कि जिसके लगतेही पृथ्वीपर गिर पड़ा और दशों मुखोंसे लोहू बहाता हुआ और क्रोधमें भरा हुआ फिर सम्हलकर दौड़ा ॥ दोनों बड़े बली मल्लयुद्ध करके लड़ने लगे और एकको एक देखकर मारने लगा (परन्तु) विभीषण रामचन्द्रजीके बलके घमंडमें है सो उसके किये हुये घावोंको नहीं गिनता ॥ २० ॥

दो०-उमा बिभिषन रावनहिं, सन्मुख चितव कि काउ॥
सो अब भिरते कालसम, स्रीरघुबीरप्रभाउ॥ १६७॥

हे पार्वती ! विभीषण रावणके सन्मुख क्या कभी देखता था, सो अब श्रीरामचन्द्रजीके प्रभावसे कालके समान लड़ता है ॥ १६७ ॥

चौ०-देखा स्रमित बिभीषन भारी ❀ धावा हनूमान गिरिधारी॥ १॥
रथ तुरंग सारथी निपाता ❀ हृदयमाँझ मारेउ तेहिं लाता॥ २॥

जब विभीषणको बहुत थका हुआ देखा तौ हनूमान्‌जी पर्वतको उठाकरके दौड़े ॥ १ ॥ रथके घोड़े और सारथीको तौ मार गेरा और उसके हृदयमें लात मारी ॥ २ ॥

ठाढ़ रहा अतिकंपितगाता ❀ गयउ बिभीषन जहँ जनत्राता॥ ३॥
पुनि रावन तेहिं हतेउ प्रचारी ❀ चला गगन कपि पुच्छ प्रसारी॥ ४॥

सो वह तौ अति कंपित शरीरसे खड़ा रहा और विभीषण भगवान्‌के पास गया ॥ ३ ॥ फिर रावणने ललकारकर हनूमानजीको मारा सो वे पूंछ फैलाकर आकाशको चले ॥ ४ ॥

गहसि पूँछ कपिसहित उड़ाना ❀ पुनि नभ भिरेउ प्रबल हनुमाना॥ ५॥
लरत अकास जुगल सम जोधा ❀ हनत एक एकहिं करि क्रोधा॥ ६॥

रावण पूंछ पकड़कर हनूमान्‌समेत उड़ गया तौ फिर महाबली हनूमान्‌जी उससे आकाशमें भिड़ गये॥५॥ दोनों बराबरके योद्धा आकाशमें लड़ते हैं और क्रोध करके एक एकको मारते हैं॥६॥

सोभित नभ छल बल बहु करहीं ❀ कज्जलगिरि सुमेरु जनु लरहीं॥ ७॥
बुधिबल निसिचर परै न पारा ❀ तब मारुतसुत प्रभुहिं सँभारा॥ ८॥

और आकाशमें बहुतसे छल बल करते ऐसे लगते हैं, मानो कज्जलगिरि और सुमेरु पर्वत लड़ते हैं॥७॥ जब बुद्धि और बलसे राक्षसका पार नहीं पाया, तब हनूमानने भगवान्‌का स्मरण किया॥८॥

छं०-संभारि स्रीरघुबीर धीर प्रचारि कपि रावन हन्यौ।
महि परत पुनि उठि लरत देवनजुगलकहँ जय जय भन्यौ॥
हनुमंत संकट देखि मर्कट भालु क्रोधातुर चले।
रनमत्त रावन सकल सुभट प्रचंड भुजबल दल मले॥ २१॥

हनूमान्‌जीने वीर धीर श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण किया और ललकारकर रावणको ऐसा मारा कि वह पृथ्वीपर गिरपड़ा और फिर उठ २ कर लड़ने लगा और देवता दोनोंका जय २ शब्द कहने

लगे ॥ हनूमान्‌को संकटमें देखकर रीछ बन्दर क्रोधमें ले चले, तौ लड़ाईमें मतवाले रावणने सब शूरवीरोंको अपने प्रचंड भुजदंडोंके बलसे मीज डाला ॥ २१ ॥

दो०-तब रघुवीर प्रचारेउ, धाये कीस प्रचंड ॥
कपिदल प्रबल बिलोकि तेइँ, कीन्ह प्रकट पाषंड ॥ १६८ ॥

तब रामचन्द्रजीको ललकारा तौ प्रचंड वानर दौड़े पर उसने बन्दरोंकी सेनाको प्रबल देखकर यह पाखंड रचा कि ॥ १६८ ॥

चौ०-अंतर्धान भयो छिन एका ❀ पुनि प्रगटेसि खल रूप अनेका ॥ १ ॥
रघुबरकटक भालु कपि जेते ❀ जहँ तहँ प्रगट दसानन तेते ॥ २ ॥

एक क्षणभरको तौ अंतर्धान हो गया और फिर दुष्ट अनेक रूप दिखलाने लगा ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीकी सेनामें जितने रीछ बन्दर थे वे सब जहां तहां उतनेही रावण प्रगट हुये दीखने लगे ॥२॥

देखे कपिन्ह अमित दसशीसा ❀ भागे भालु बिकल भट कीसा ॥ ३ ॥
चले बलीमुख धरहिं न धीरा ❀ त्राहि त्राहि लछमन रघुबीरा ॥ ४ ॥

जब बन्दरोंने अनगिनती रावण देखे तौ यौद्धा, रीछ बन्दर व्याकुल होकर दौड़े ॥३॥ सब ओर बन्दर भाग चले, धीरज नहीं रखते. हे लक्ष्मण! हे रामचन्द्र! रक्षा करो २ (यों पुकारते हैं) ॥४॥

दस दिसि कोटिन धावहिं रावन ❀ गर्जहिं घोर कठोर भयावन ॥ ५ ॥
डरे सकल सुर चले पराई ❀ जयकी आस तजहु अब भाई ॥ ६ ॥

दशों दिशाओंसे करोड़ों रावण दौड़ते हैं और भयंकर घोर कठोर शब्दसे गर्जते हैं ॥ ५ ॥ सब देवता डरकर भाग चले कि हे भाई! अब जीतकी आश छोड़ दो ॥ ६ ॥

सब सुर जीतेउ इक दसकंधर ❀ अब बहु भये तकहु गिरिकंदर ॥ ७ ॥
रहे बिरंचि संभु मुनि ज्ञानी ❀ जिन जिन प्रभुकी महिमा जानी ॥ ८ ॥

क्योंकि एकही रावणने सब देवता जीत लिये थे सो अब तौ बहुत हो गये, सों पर्वतोंकी कन्दराओंको देखो॥७॥ ब्रह्मा महादेव और ज्ञानी मुनीश्वर जो भगवान्‌की महिमा जानते थे वे वहीं खड़े रहे ८

छं०-जानहिं प्रताप ते रहे निर्भय कपिन्ह रिपु मानेहु फुरे ।
चल बिकल मर्कट भालु सकल कृपालु पाहि भयातुरे ॥
हनुमंत अंगद नील नल बलवंत अति रनबाँकुरे ।
मर्दहिं दसानन कोटि कोटिन्ह कपट भटके आँकुरे ॥ २२ ॥

जो प्रतापको जानते थे वे तौ निडर रहे और बन्दरोंने वैरी (रावण) सत्यही जाने सो सब रीछ बन्दर चलविचल हो डरके दुखी होगये (और पुकारने लगे कि) हे दयानिधान! रक्षा करो २; हनूमान्, अंगद, और नल नील जो लड़ाईमें बड़े बलवान् और बाँकुरे थे वे कपटी योद्धाओंके वेषमें जो करोंड़ो रावण थे उनको मींज डालने लगे ॥ २२ ॥

दो०-सुर वानर देखे बिकल, हँसे कोसलाधीस ॥
साजि सरासन निमिषमहँ, हरे सकल दससीस ॥ १६९ ॥

जब रामचन्द्रजीने देवता और बन्दर व्याकुल देखे तौ हँसे और धनुष साजकर पलभरमें सब रावण दूर कर दिये ॥ १६९ ॥

चौ०-प्रभु छिनमहँ माया सब काटी ॐ जिमि रविउदय जाहि तम फाटी ॥ १ ॥
रावन एक देखि सुर हर्षे ॐ विपुल सुमन पुनि प्रभुपर वर्षे ॥ २ ॥

भगवान्ने क्षणभरमें सव माया ऐसी काट डाली जैसे सूर्यके उदय होनेसे अंधकार दूर होजाता है ॥ १ ॥ एक रावणको देखकर देवता प्रसन्न हुये और फिर भगवान्पर वहुतसे फूल वर्षाये ॥ २ ॥

भुज उठाइ रघुपति कपि फेरे ॐ फिरे एक एकन्हिके टेरे ॥ ३ ॥
प्रभुबल पाइ भालु कपि धाये ॐ तरल तमकि संयुगमहँ आये ॥ ४ ॥

रामचन्द्रजीने भुजा उठाकर बन्दर लौटाये तौ एक एकके बुलानेसे सव लौट आये ॥ ३ ॥ भगवान्का वल पाकर रीछ बन्दर दौड़े और वे चञ्चल तमककर युद्धमें आगये ॥ ४ ॥

अस्तुति करत देव तेहि देखे ॐ भयउँ एक मैं इनके लेखे ॥ ५ ॥
सठहु सदा तुम मोर मरायल ॐ अस कहि गगनपंथकहँ धायल ॥ ६ ॥

उस (रावण) ने देवताओंको (भगवान्की) स्तुति करते हुये देखा तौ कहा कि मैं इनके जाने एक होगया हूँ ॥ ५ ॥ पर अरे मूर्खो ! तुम सदा मुझसे पिटते आये हो ऐसे कहकर आकाशमार्गको धर दौड़ा ॥ ६ ॥

हाहाकार करत सुर भागे ॐ खलहु जाहु कहँ मोरे आगे ॥ ७ ॥
देखि विकल सुर अंगद धावा ॐ कूदि चरन गहि भूमि गिरावा ॥ ८ ॥

सो देवता हाहाकार करते हुये भाग चले (तौ रावण बोला) अरे दुष्टो ! मेरे आगेसे कहां जाओगे ? ॥ ७ ॥ देवताओंको व्याकुल देखकर अंगद दौड़ा और कूदकर चरण पकड़कर उसे पृथ्वीपर धर पटका ॥ ८ ॥

छं०-गहि भूमि पार्‌यो लात मार्‌यो बालिसुत प्रभुपहँ गयो । ॐ
संभारि उठि दसकंठ घोर कठोर करि गर्जत भयो ॥ ॐ
करि दाप धनुष चढ़ाइ दस संधानि सर बहु वर्षई । ॐ
किय सकल भट घायल वियाकुल देखि निजबल हर्षई ॥२३॥ ॐ

पकड़कर पृथ्वीपर गिरादिया और लात मारकर अंगद तौ भगवान्के पास गया. फिर रावण सम्हलकर उठा और घोर शब्द करके गर्जने लगा और घमंड करके दशों धनुष चढ़ाकर और उनपर वहुतसे वाण संधान करके ऐसे वर्षाने लगाने लगा, कि सव योद्धा घायल करके व्याकुल कर दिये और अपने बलको देखकर प्रसन्न होने लगा ॥ २३ ॥

दो०-तब रघुपति लंकेसके, सीस भुजा सर चाप ॥ ॐ
काटे भये बहोरि बहु, जिमि तीरथके पाप ॥ १७० ॥ ॐ

तब रामचन्द्रजीने रावनके मस्तक, भुजा और धनुषबाण काट डाले, परन्तु वह फिर बहुत होगये जैसे तीर्थके (किये हुये) पाप (बढ़तेही जाते हैं) ॥ १७० ॥

चौ०-सिर भुज बाढ़ि देखि रिपुकेरी ॐ भालु कपिन्ह रिस भई घनेरी ॥ १ ॥
मरत न मूढ़ कटेहु भुज सीसा ॐ धाये कोपि भालु अरु कीसा ॥ २ ॥

वैरीके शिर और भुजाओंका बढ़ना देखकर रीछबन्दरोंको बड़ा क्रोध हुआ ॥ १ ॥ शीश और भुजाओंके कटनेसेभी मूर्ख (रावण) नहीं मरता, तब रीछ बन्दर क्रोधित होकर दौड़े ॥ २ ॥

बालितनय मारुत नल नीला ❀ द्विविद मयंद महाबलसीला ॥ ३ ॥
बिटप महीधर करहिं प्रहारा ❀ सोइ गिरि तरु गहि कपिन्ह सो मारा ॥४॥

बड़े बलवान् अंगद, हनूमान्, नल, नील, द्विविद और मयंद ॥ ३ ॥ जिन वृक्ष और पर्वतोंसे मारते हैं उन्हीं पर्वत और वृक्षोंको लेकर वह बन्दरोंको मारता है ॥ ४ ॥

एकन नख गहि बपुष बिदारी ❀ भागि चलहिं इक लातन्हि मारी ॥ ५ ॥
तब नल नील सिरनि चढ़ि गयऊ ❀ नखनि ललाट बिदारत भयऊ ॥ ६ ॥

कोई नखोंसे उसके शरीरको फाड़ते हैं और कोई लात मारके भाग जाते हैं ॥ ५ ॥ तब नल नील माथोंपर चढ़गये और नखोंसे मस्तकोंको फाड़ने लगे ॥ ६ ॥

रुधिर बिलोकि सकोप सुरारी ❀ तिनहिं धरनकहँ भुजा पसारी ॥ ७ ॥
गहे न जाहिं सिरनिपर फिरहीं ❀ जनु जुग मधुप कमलबन चरहीं ॥ ८ ॥

लोहू देखकर रावण बड़ा क्रोधित हुआ और उनके पकड़नेको भुजा फैलाई ॥ ७ ॥ पर वे पकड़े नहीं जाते, मस्तकोंपर ऐसे फिरते हैं मानों दो भौंरें कमलोंके वनमें उड़ रहे हैं ॥ ८ ॥

कोपि कूदि दोऊ धरेसि बहोरी ❀ महि पटकेसि गहि भुजा मरोरी ॥ ९ ॥
पुनि सकोपि दस धनुकर लीन्हा ❀ सरनि मारि घायल कपि कीन्हा ॥ १० ॥

फिर तौ क्रोध करके और कूदकर उन दोनोंको पकड़ पृथ्वीपर धर पटका और भुजा पकड़कर मरोड़ दी॥९॥फिर क्रोधसे दश धनुष हाथमें लेकर बाणोंसे मारके बन्दरोंको घायल कर दिया॥१०॥

हनुमदादि मूर्च्छित सब बंदर ❀ पाइ प्रदोष हर्ष दसकंधर ॥ ११ ॥
मूर्च्छित देखि सकल कपि बीरा ❀ जाम्बवंत धावा रनधीरा ॥ १२ ॥

हनूमान् आदि सब बन्दरमूर्च्छित होगये और संध्यासमय पाकर रावण प्रसन्न हुआ ॥ ११ ॥ सब योद्धा बन्दरोंको मूर्च्छित देखकर रणधीर जाम्बवंत दौड़ा ॥ १२ ॥

संग भालु भूधर तरुधारी ❀ मारन लगे प्रचारि प्रचारी ॥ १३ ॥
भयो क्रोध रावन बलवाना ❀ गहि पद महि पटके भट नाना ॥ १४ ॥
देखि भालुपति निजदलघाता ❀ कोपि माँझ उर मारेसि लाता ॥ १५ ॥

साथमें पर्वत और वृक्षोंके धारण करनेवाले रीछ ललकार २ कर मारने लगे ॥ १३ ॥ बलवान् रावण क्रोधित हुआ सो अनेक योद्धाओंके पैर पकड़कर पृथ्वीपर धर पटको ॥ १४ ॥ जाम्बवंतने अपनी सेनाको घायल देख क्रोध करके (रावणकी) छातीमें लात मारी ॥ १५ ॥

छं०-उर लातघात प्रचंड लागत बिकल रथते महि परा । ❀
गहि भालु बीसहु करनि मानहुँ कमल निसि बसि मधुकरा ॥ ❀
मूर्च्छित बहोरि बिलोकि पद हति भालुपति प्रभुपहँ गयो । ❀
निसि जानि स्यंदन घालि तेहिं तब सूत जतन करत भयो ॥२४॥ ❀

सो हृदयमें लातकी भारी चोट लगतेही व्याकुल होके रथसे पृथ्वीपर गिर पड़ा और बीसों हाथोंसे रीछोंको पकड़े हुये ऐसा लगा मानों रातको कमलोंमें भौंरोंने बास किया है. फिर जब जाम्बवंत उसे मूर्च्छित देख लात मारकर भगवान्के पास गया तब रात जानकर सारथी उसे रथमें रख उपाय करने लगा ॥ २४ ॥

दो०-मूर्च्छा खई भालु कपि, सब आये प्रभुपास ॥
सकल निसाचर रावनहिं, घेरि रहे अतित्रास ॥ १७१ ॥

जब मूर्छा जाती रही तौ सब रीछ बन्दर भगवान्के पास आये. और सब राक्षसोंने डरके मारे रावणको घेर लिया ॥ १७१ ॥

चौ०-तेहिं निसिमहँ सीतापहँ जाई ❀ त्रिजटाकहि सब कथा बुझाई ॥ १ ॥
सिर भुज बाढ़ि सुनत रिपुकेरी ❀ सीताउर भइ त्रास घनेरी ॥ २ ॥

उसी रातमें त्रिजटाने सीताके पास जाकर सब कथा सुनाई ॥ १ ॥ वैरीके शिर और भुजाओंका बढ़ना सुनकर सीताके मनमें बड़ा भय हुआ ॥ २ ॥

मुख मलीन उपजी मन चिंता ❀ त्रिजटासन बोली तब सीना ॥ ३ ॥
होइहि कहा कहसि किन माता ❀ केहिविध मरिहि विस्वदुखदाता ॥ ४ ॥

मुख उदास हो गया और मनमें चिन्ता उत्पन्न हुई. तब सीताजी त्रिजटासे बोली. ॥ ३ ॥ हे माता! क्या होगा? कहती क्यौं नहीं? (यह) संसारको दुःख देनेवाला किस भांति मरैगा? ॥४॥

रघुपतिसर सिर कटेहु न मरई ❀ बिधि बिपरीतचरित सब करई ॥ ५ ॥
मोर अभाग्य जियावत ओही ❀ जेहि हौं हरिपदकमल बिछोही ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीके बाणोंसे शिर कटनेपर भी नहीं मरता. ब्रह्मा सब उल्टे चरित्र करता है॥५॥मेरा अभाग्यही उसे जिला रहा है, कि जिसने मुझे भगवान्के कमलसमान चरणोंसे अलग कर दिया ॥६॥

जेइँ कृत कनक कपट मृग झूठा ❀ अजहुँ सो दैव मोहिंपर रूठा ॥ ७ ॥
जेहिंबिधि मोहिं दुख दुसह सहावा❀ लछमनकहँ कटु बचन कहावा ॥ ८ ॥

जिसने झूंठा क़पटी सोनेका हरिण बनाया था वही दैव अब ही मुझे रूठ रहा है ॥ ७ ॥ जिस ब्रह्माने मुझे कठिन दुःख सहाया और लक्ष्मणजीको कडुये वचन कहलाये ॥ ८ ॥

रघुपतिविरह विषम सर भारी ❀ तकि तकि बार बार मोहिं मारी ॥ ९ ॥
ऐसेहु दुख जो राखु मम प्राना ❀ सोइ बिधि ताहि जियाव न आना ॥१०॥

और रामचन्द्रजीके वियोगरूपी बहुत कठिन बाणोंसे तक२के मुझे बार२मारा॥ ९ ॥ ऐसे दुःखमेंभी जिसने मेरे प्राण रक्खे वही ब्रह्मा उस(रावण)को जिवा रहा है, कोई दूसरा नहीं है ॥१०॥

बहुबिध करति बिलाप जानकी ❀ करि करि सुरति कृपानिधानकी ॥ ११ ॥
कह त्रिजटा सुनु राजकुमारी ❀ उर सर लागत मरहि सुरारी ॥ १२ ॥
ताते प्रभु उर हंतहिं न तेही ❀ यहिके हृदय बसति बैदेही ॥ १३ ॥

सीताजी दयाके समुद्र (भगवान्) की याद कर २ के बहुत भांतीके विलाप करती हैं ॥ ११ ॥ त्रिजटाने कहा, हे राजकुमारी! सुन, रावण तौ हृदयमें वाण लगतेही मरजायगा ॥ १२ ॥ परंतु भगवान् उसे इस लिये नहीं मारते कि, इसके हृदयमें सीताजी रहती हैं ॥ १३ ॥

छं०-इहिके हृदय बस जानकी मम जानकीउर वास है।
मम उदर भुवन अनेक लागत बान सबको नास है ॥
अस सुनत हर्ष विषाद उर अति देखि पुनि त्रिजटा कहा।
अब मरहि रिपु इहि भाँति सुंदरि तजहु तुम संसय महा ॥२५॥

इसके हृदयमें सीताजी रहती हैं और सीताजीके हृदयमें मेरा वास है और मेरे उदरमें अनेक ब्रह्मांड हैं सो वाण लगतेही सवका नाश हो जायगा, यह सुनकर (सीताजीके) हृदयमें वड़ा आनन्द और दुःख हुआ यह देखकर फिर त्रिजटाने कहा कि, हे सुन्दरी ! तुम भारी सन्देहको छोड़दो अब वैरी इस प्रकार मरैगा ॥ २५ ॥

दो०–काटत सिर होइहि बिकल, छुटिजाइ तव ध्यान ॥ ❀
तब रावनकर हृदय सर, मारहिं राम सुजान ॥ १७२ ॥ ❀

शिर काटतेही जव (रावण) व्याकुल हो जायगा और तुम्हारा ध्यान छुट जायगा, तव चतुर रामचन्द्रजी रावणके हृदयमें वाण मारेंगे ॥ १७२ ॥

चौ०–अस कहि बहु प्रकार समुझाई ❀ पुनि त्रिजटा निजभवन सिधाई ॥ १ ॥
रामस्वभाव सुमिरि वैदेही ❀ उपजी विरहव्यथा अति तेही ॥ २ ॥

ऐसा कह वहुत भांति समझाया, फिर त्रिजटा तौ अपने घरको चली गई ॥ १ ॥ और सीताजीने रामचन्द्रजीके स्वभावको स्मरण किया सो उनको वियोगका वड़ा कष्ट उत्पन्न हुआ ॥ २ ॥

निसिहिं ससिहिं निंदति बहुभाँति ❀ जुगसम भई बिहाति न राती ॥ ३ ॥
करति बिलाप मनहिं मन भारी ❀ रामबिरह जानकी दुखारी ॥ ४ ॥

रातकी और चन्द्रमाकी वहुत प्रकार निन्दा करने लगी और रात युगके समान हो गई, काटी नहीं कटती ॥३॥ रामचन्द्रजीके वियोगमें दुखी सीताजी मनही मनमें वहुत विलाप करती हैं ॥४॥

जब अति भयउ विरह उर दाहू ❀ फरकेउ वाम नयन अरु बाहू ॥ ५ ॥
सकुन बिचारि धरी मन धीरा ❀ अब मिलिहहिं कृपालु रघुवीरा ॥ ६ ॥

जब वियोगसे हृदयमें वड़ी जलन हुई तौ वायाँ नेत्र और भुजा फड़की ॥ ५ ॥ शकुन विचार कर मनमें धीरज रक्खा कि दयानिधान रामचन्द्रजी अब मिलैंगे ॥ ६ ॥

इहाँ अर्ध निसि रावन जागा ❀ निजसारथिसन खीझन लागा ॥ ७ ॥
सठ रनभूमि छुड़ायो मोहीं ❀ धिक् धिक् अधम मंदमति तोहीं ॥ ८ ॥

यहां आधी रातपर रावण जगा सो अपने सारथीसे झुंझलाने लगा कि ॥ ७ ॥ अरे शठ ! तैंने मुझे रणभूमिसे छुड़ाया, अरे नीच मन्दमती ! तुझको धिक्कार है, धिक्कार है. ॥ ८ ॥

तेइँ पद गति बहुविध समुझावा ❀ भोर भये रथ चढ़ि पुनि आवा ॥ ९ ॥
सुनि आगमन दसानन केरा ❀ कपिदल खरभर भयउ घनेरा ॥ १० ॥
जहँ तहँ भूधर विटप उपारी ❀ धाये कटकटाइ भट भारी ॥ ११ ॥

उसने चरण पकड़कर वहुत भांती समझाया, पर फिर सवेरा होनेपर रथपर चढ़कर आया ॥ ९ ॥ रावणका आना सुनकर बन्दरोंकी सेनामें बड़ी खलबली पड़गयी ॥ १० ॥ बड़े २ योद्धा जहां तहांसे पर्वत और वृक्ष उखाड़ कटकटाकर दौड़े ॥ ११ ॥

छं०–धाये जो मर्कट बिकट भालु कराल कर भूधर धरा । ❀
अतिकोपि करहिं प्रहार मारत भजिचले रजनीचरा ॥ ❀
बिचलाइ दल बलवंत कीसन घेरि पुनि रावन लियो । ❀
दसदिसि चपेटन्ह मारि नखनि बिदारि तेहिं व्याकुल कियो २५ ❀

विकट रीछ बन्दर हाथोंमें भयंकर पर्वत लेकर दौड़े और वहुत क्रोध करके चोटें मारते हैं, सो

सब राक्षस भाग चले. बलवान् बन्दरोंने सेनाको इधर उधर करके फिर रावणको घेर लिया और दशों दिशाओंसे चपेटें मारकर और नखोंसे खसोटकर उसे व्याकुल करदिया ॥ २६ ॥

दो०–देखि महा मर्कट प्रबल, रावन कीन्ह विचार ॥
अंतरहित भा निमिषमहँ, कृतमायाविस्तार ॥ १७३ ॥

बन्दरोंको बड़े प्रबल देखकर रावणने विचार किया और पलभरमें अंतर्धान होगया और अपनी मायाको फैलाने लगा ॥ १७३ ॥

तो० छं०–जब कीन्ह तेइँ पाषंड । भये प्रगट जंतु प्रचंड ॥
बैताल भूत पिसाच । कर धरे धनु नाराच ॥ २७ ॥

जब उसने पाखंड किया तो प्रचंड जीव उत्पन्न होगये और बैताल भूत पिशाचोंने हाथमें धनुषबाण लेलिया ॥ २७ ॥

जोगिनि गहे करवाल । इक हाथ मनुजकपाल ॥
करि सद्य सोनितपान । नाचहिं करहिं गुन गान ॥ २८ ॥

योगिनियोंने एक हाथमें तलवार और एक हाथमें मनुष्योंकी खोपड़ियाँ लेलीं और उनमेंसे हालके निकले हुये रुधिरको पीकर गुण गाने और नाचने लगीं ॥ २८ ॥

धरु मारु बोलहिं घोर । रहि पूर ध्वनि चहुँओर ॥
मुख बाय धावहिं स्वान । तब लगे कीस परान ॥ २९ ॥

'पकड़ियो' 'मारियो' ऐसे घोर शब्द बोलने लगे और यह शब्द चारों ओर छागया. कुत्ते मुँह फाड़ २ कर दौड़ने लगे तब बन्दर भागने लगे ॥ २९ ॥

जहँ जाहिं मर्कट भागि । तहँ बरत देखहिं आगि ॥
भयबिकल बानर भालु । पुनि लागु बर्षन बालु ॥ ३० ॥

जहां बन्दर भागकर जाते हैं वहीं अग्नि जलती हुई देखते हैं. रीछ बन्दर भयसे बिकल होगये. और फिर रेत बरसने लगी ॥ ३० ॥

जहँ तहँ थकित करि कीस । गर्जेउ बहुरि दससीस ॥
लछमन कपीससमेत । भए सकल बीर अचेत ॥ ३१ ॥

जहां तहां बन्दरोंको व्याकुल करके फिर रावण गर्जा तब लक्ष्मण और सुग्रीवसमेत सब योद्धा व्याकुल होगये ॥ ३१ ॥

हा राम हा रघुनाथ । कहि सुभट मींजहिं हाथ ॥
यहि बिध सकल बल तोरि । तेहिं कीन्ह कपट बहोरि ॥ ३२ ॥

हा राम! हा रघुनाथ! ऐसे कहकर योद्धा हाथ मींजने लगे; इस भांति सबका बल खंडन करके उसने फिर पाखंड रचा ॥ ३२ ॥

प्रगटे बिपुल हनुमान । धाये गहे पाषान ॥
तिन राम घेरे जाइ । चहुँदिसि बरूथ बनाइ ॥ ३३ ॥

बहुतसे हनुमान् प्रकट होगये जो पत्थरोंको लिये हुये दौड़े और उन्होंने झुंड बनाकर चारों ओरसे रामचन्द्रजीको घेरलिया ॥ ३३ ॥

मारहु धरहु जन जाइ । कटकटहिं पूँछ उठाइ ॥ ❀
दस दिसि लँगूर बिराज । तेहि मध्य कोसलराज ॥ ३४ ॥ ❀

सब जने जाकर मारो पकड़लो यों पूँछ उठा २ कर कटकटाने लगे और दशों दिशाओंमें पूंछैं फैल गईं और उनके बीचमें रामचन्द्रजी होगये ॥ ३४ ॥

छं०-तेहि मध्य कोसलराज सुंदर स्यामतनु सोभा लही । ❀
जनु इंद्रधनुष अनेककी बर बारि तुंग तमालही ॥ ❀
प्रभु देखि हर्ष विषाद सुरउर बंदि जय जय जय करी । ❀
रघुबीर एकहि तीर कोपि सो निमिषमहँ माया हरी ॥ ३५ ॥ ❀

उनके वीचमें रामचन्द्रजीके श्याम सुन्दर शरीरने ऐसी शोभा पाई मानों अनेक इन्द्रधनुषोंने ऊंचे तमालवृक्षकी सुन्दर बाड़ बांधी है । देवता भगवान्‌को देखकर आनन्द और शोकके वश होगये और हृदयमें दंडवत् करके जय २ शब्द करने लगे. तव रामचन्द्रजीने क्रोध करके एकही वाणसे पलभरमें वह सब माया हरली ॥ ३५ ॥

माया बियत कपि भालु हर्षे विटप गिरि गहि सब फिरे । ❀
सर निकर छांडे राम रावन बाहु सिर महिमहँ गिरे ॥ ❀
स्रीरामरावनसमर चरित अनेक कल्प जे गावहीं । ❀
सत सेष सारद निगम कवि तेउ तदपि पार न पावहीं ॥ ३६ ॥ ❀

मायाके दूर होनेपर रीछ बन्दर प्रसन्न हुये और वृक्ष और पर्वतोंको लेकर सब लौटे. रामचन्द्रजीने वाणोंके समूह छोड़े तौ रावणके भुजा और शिर पृथ्वीपर गिर पड़े. श्रीरामचन्द्रजी और रावणकी लड़ाईके चरित्रको अनेक कल्पोंतक जो सौ शेष सरस्वती वेद और कवीश्वर गावें तौभी वे पार नहीं पासक्ते ॥ ३६ ॥

दो०-कहे तासु गुनगन कछुक, जडमति तुलसीदास ॥ ❀
निजपौरुष अनुसार जिमि, मसक उडहिं आकास ॥ १७४ ॥ ❀

उसीके कुछ एक गुणोंके समूहको मूर्ख बुद्धि तुलसीदासने ऐसे कहा है जैसे मच्छर अपने पराक्रमके अनुसार आकाशमें उड़ते हैं ॥ १७४ ॥

काटि सीस भुज वार बहु, मरै न भट लंकेस ॥ ❀
प्रभु क्रीडति सुर सिद्ध मुनि, व्याकुल देखि कलेस ॥ १७५ ॥ ❀

बहुतबार माथे और भुज काटे तौभी योद्धा रावण नहीं मरता, सो भगवान् तौ खेल करते हैं परंतु देवता सिद्ध और मुनीश्वर इस क्लेशको देखकर व्याकुल हैं ॥ १७५ ॥

चौ०-काटत बढ़हिं सीससमुदाई ❀ जिमि प्रतिलाभ लोभ अधिकाई ॥ १ ॥
मरै न रिपु स्रम भयउ विसेषा ❀ राम बिभीषनतन तव देषा ॥ २ ॥

माथोंके समूह काटतेही ऐसे बढ़ जाते हैं जैसे लाभ होनेसे लोभ बढ़ता है ॥ १ ॥ वैरी नहीं मरता और परिश्रम अधिक हुआ तब रामचन्द्रजीने बिभीषणके शरीरकी ओर देखा ॥ २ ॥

उमा काल मरु जाकी इच्छा ❀ सो प्रभु जनकी लेत परिच्छा ॥ ३ ॥
सुन सर्वज्ञ चराचरनायक ❀ प्रनतपाल सुरमुनिसुखदायक ॥ ४ ॥

(महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! जिनकी इच्छासे कालभी मरजावै वे भगवान् भक्तकी परीक्षा ले रहे हैं (बिभीषण कहने लगा) ॥ ३ ॥ हे चराचरके स्वामी ! आप सर्वज्ञ हैं, भक्तोंकी रक्षा करनेवाले हैं और मुनीश्वरोंको सुख देनेवाले हैं, सुनिये ॥ ४ ॥

नासीकुंड सुधा बस याके ❀ नाथ जियत रावन बल ताके ॥ ५ ॥
सुनत बिभीषन बचन कृपाला ❀ हर्षि गहे प्रभु बान कराला ॥ ६ ॥

हे स्वामी ! इसकि टूंडीके कुंडमें अमृत रहता है उसीके बलसे रावण जीता है ॥ ५ ॥ दयानिधानने बिभीषणके वचन सुनतेही प्रसन्न होकर कठिन बाण लिये ॥ ६ ॥

असकुन होन लगे विधनाना ❀ रोवहिं बहु सृगाल खर स्वाना ॥ ७ ॥
बोलहिं खग अति आरतहेतू ❀ प्रगट भये जहँ तहँ नभकेतू ॥ ८ ॥

अनेक प्रकारके बुरे शकुन होने लगे और बहुतसे गीदड़, गधे, और कुत्ते रोने लगे ॥ ७ ॥ पक्षी बहुत दुःखके कारण वोलने लगे और आकाशमें जहां तहां केतु उदय होगये ॥ ८ ॥

दस दिसि दाह होन तब लागा ❀ भयउ पर्व बिनु रबिउपरागा ॥ ९ ॥
मंदोदरि उर काँपत भारी ❀ प्रतिमा स्रवहिं नयनमग बारी ॥ १० ॥

तब दशों दिशाओंमें जलन होने लगी और अमावसके बिनाहीं सूर्यग्रहण पड़ने लगा ॥ ९ ॥ मन्दोदरी हृदयमें बहुत कांपने लगी और मूर्त्तियां नेत्रोंके मार्गसे जल वहाने लगी ॥ १० ॥

छं०–प्रतिमा रुदहिं पविपात नभ अति वात वह डोलति मही । ❀
बर्षहिं बलाहक रुधिर कच रज असुभ अति सक को कही ॥ ❀
उत्पात अमित बिलोकि सुर नर विकल बोलहिं जय जये । ❀
सुर सभय जानि कृपालु रघुपति चाप सर जोरत भये ॥३७॥ ❀

मूर्त्तियां रोती हैं, आकाशसे वज्रपात होते हैं, बहुतसी पवन चलती है और पृथ्वी डोलती है, मेघ अत्यन्त अशुभ लोहू बाल और धूलकी वर्षा करते हैं जिसे कौन कहसक्ता है ? देवता मनुष्य अनेक उत्पातोंको देख व्याकुल हो जब जय २ बोलने लगे, तौ देवताओंको भययुक्त जानकर दयानिधान रामचन्द्रजी धनुषपर बाण चढ़ाते हुये ॥ ३७ ॥

दो०–आकर्षेउ धनु स्रवनलगि, छाँड़े सर इकतीस ॥ ❀
रघुनायकसायक चले, मानहुँ कालफनीस ॥ १७६ ॥ ❀

और धनुषको कानतक खींचकर इकतीस बाण छोड़े तौ रामचन्द्रजीके बाण ऐसे चले मानों कालरूपी सर्प हैं ॥ १७६ ॥

चौ०–सायक एक नाभिसर सोषा ❀ अपर लगे सिर भुज करि रोषा ॥ १ ॥
लै सिर बाहु चले नाराचा ❀ सिर भुजहीन रुंड महि नाचा ॥ २ ॥

सो एक बाणने तौ टुंडीका कुंड सोख लिया और अन्य बाण क्रोध कर माथे और भुजाओंमें लगे ॥ १ ॥ और शिर तथा भुजाओंको लेकर बाण चले तौ विनाही माथे और भुजाओंके रुंड पृथ्वीपर नाचने लगा ॥ २ ॥

धरनि धसै धर धाव प्रचंडा ❀ तब सर हति प्रभु कृत जुग खंडा ॥३॥
गर्जेउ मरत घोर रव भारी ❀ कहाँ राम रन हतौं प्रचारी ॥ ४ ॥

भयावने धड़के डोलनेसे पृथ्वी धसकने लगी. तब भगवान्ने बाणसे काटकर उसके दो टुकड़े कर

डाले ॥ ३ ॥ मरते समयभी बड़े भारी शब्दसे गर्जा (और कहने लगा कि) राम कहां है ? मैं उसे लड़ाईमें ललकारकर मारूं ॥ ४ ॥

डोली भूमि गरत दसकंधर ❀ क्षुभित सिंधु सरि दिग्गज भूधर ॥ ५ ॥
परेउ भूमि जुग खंड बढ़ाई ❀ चापि भालुमर्कटसमुदाई ॥ ६ ॥

रावणके गिरतेही पृथ्वी लगी हिलने और समुद्र नदी दिशाओंके हाथी और पर्वत चलायमान हुये ॥ ५ ॥ दोनों खंडोंको बढ़ाकर और रीछ बन्दरोंके समूहको दाबकर (रावण) पृथ्वीपर गिर पड़ा॥६॥

मंदोदरि आगे भुज सीसा ❀ धरि शर चले जहाँ जगदीसा ॥ ७ ॥
प्रविसे सब निषंगमहँ जाई ❀ देखि सुरन्ह दुंदुभी बजाई ॥ ८ ॥

और बाण (रावनकी) भुजा और मस्तकोंको मन्दोदरीके आगे रखकर रामचन्द्रजीके पास चले ॥ ७ ॥ और सब जाकर तरकसमें धँस गये. यह देखकर देवताओंने नगाड़े बजाये ॥ ८ ॥

तासु तेज प्रविसेउ प्रभुआनन ❀ हर्षे देखि संभु चतुरानन ॥ ९ ॥
जयध्वनि पूरिरही नभखंडा ❀ जय रघुबीर प्रबलभुजदंडा ॥ ११ ॥
वर्षहिं सुमन देवमुनिवृंदा ❀ जय कृपालु जय जयति मुकुंदा ॥ ११ ॥

उसका तेज भगवान्के मुखमें समागया उसे देखकर महादेव और ब्रह्माजी प्रसन्न हुये ॥ ९ ॥ आकाशके खंडोंमें जय २ धुनि होने लगी कि प्रबल भुजदंडवाले रामचन्द्रजीकी जय हो ॥ १० ॥ देवता और मुनीश्वरोंके समूह फूल वर्षाते हैं और कहते हैं कि दयानिधानकी जय हो, मुकुन्द भगवान्की वारंवार जय हो ॥ ११ ॥

छं०-जय कृपाकंद मुकुंद हरि मर्दननिसाचरमद प्रभो । ❀
खलदलबिदारन परमकारन कारुनीक सदा विभो ॥ ❀
सुर सिद्ध मुनि गंधर्व हर्षे बाज दुंदुभि गहगही । ❀
संग्रामअंगन रामअंग अनंग बहु शोभा लही ॥ ३८ ॥ ❀

हे कृपानिधान मुकुन्द भगवान् ! हे राक्षसोंके अभिमानके नाशकरनेवाले प्रभु ! (तुम्हारी) जय हो. हे दुष्टोंकी सेनाकी नाश करनेवाले ! हे परम कारण ! हे सदा करुणाके समुद्र सर्वज्ञ ! आपकी जय होय-(ऐसे कहकर) देवता, सिद्ध, मुनीश्वर और गंधर्व प्रसन्न होगये और घने नगाड़े बजने लगे और युद्धके आंगनमें रामचन्द्रजीके शरीरकी शोभा अनगिनती कामदेवोंकीसी लगने लगी ॥३८॥

शिरजटामुकुट प्रसून बिच बिच अति मनोहर राजहीं । ❀
जनु नीलगिरिपर तडितपटलसमेत उडुगन भ्राजहीं ॥ ❀
भुजदंड फेरत सर सरासन रुधिरकन तनु अति बने । ❀
जनु राजमुनिय तमाल तरुपर बैठि बहु सुख आपने ॥३९॥ ❀

रामचन्द्रजीके शिरपर तौ जटाओंका मुकुट और तिसके बीच २ में फूल ऐसे अतिमनोहर लगते हैं मानों नीलगिरिपर बिजलीकी चमकसमेत तारागण शोभित हैं; और भुजदंडोंसे धनुषबाण फेरते हुये शरीरमें रुधिरके कण ऐसी शोभा दे रहे हैं मानों तमाल वृक्षपर बहुतसे राजमुनियां पक्षी अपने सुखपूर्वक बैठे हैं ॥ ३९ ॥

दो०-कृपादृष्टि करि वृष्टि प्रभु, अभय किये सुरवृंद ॥ ❀
हर्षे बानर भालु सब, जय सुखधाम मुकुंद ॥ १७७ ॥ ❀

भगवान्‌ने दयादृष्टिकी वर्षा कर देवताओंके समूहको भयरहित कर दिया. सब रीछ बन्दर प्रसन्न हुये (और बोले कि) हे सुखके निधान! भगवान् तुम्हारी जय हो ॥ १७७ ॥

चौ०–पतिसिर दीख जबहिं मंदोदरि ❀ मूर्छित विकल खसी धरनी परि ॥ १ ॥
जुवतिवृंद रोवति उठि धाईं ❀ तेहि उठाइ रावनपहिं ल्याईं ॥ २ ॥

जब मन्दोदरीको पतिका शिर दीखा तबही मूर्छा खाकर और व्याकुल होकर पृथ्वीपर गिर पड़ी ॥ १ ॥ झुंडकी झुंड स्त्रियां रोती हुई उठ दौड़ीं और उसे उठाकर रावणके पास ले आईं ॥ २ ॥

पतिगति देखति करति पुकारा ❀ छूटे केस न देह सँभारा ॥ ३ ॥
उरताड़ना करैं विधिनाना ❀ रोदन करैं प्रताप बखाना ॥ ४ ॥

पतिकी दशाको देखती और पुकारकर कहती है, बाल बिखर रहे हैं, और देहकी खबर नहीं है ॥ ३ ॥ अनेक प्रकारसे छाती कूटती है और प्रतापको बखान २ कर रोती है ॥ ४ ॥

तब बल नाथ डोल नित धरनी ❀ तेजहीन पावक ससि तरनी ॥ ५ ॥
सेष कमठ सहि सकहिं न भारा ❀ सो तनु आजु परा महि छारा ॥ ६ ॥

हे स्वामी! तुम्हारे बलसे नित्य पृथ्वी हिलती थी और अग्नि, चन्द्रमा और सूर्य तेजहीन रहा करते थे ॥ ५ ॥ शेषजी और कच्छपभी जिसके बोझको नहीं सहार सक्ते थे वही शरीर आज पृथ्वीपर धूलमें लोट रहा है! ॥ ६ ॥

बरुन कुबेर सुरेस समीरा ❀ रनसन्मुख धर काहु न धीरा ॥ ७ ॥
भुजबल जीत काल यम साईं ❀ आजु सो परेउ अनाथकी नाईं ॥ ८ ॥

वरुण, कुवेर, इन्द्र और पवन किसीने लड़ाईमें सामने धीरज नहीं रखा ॥७॥ हे स्वामी! आपने भुजाओंके बलसे काल और यमराजकोभी जीत लिया था सो आज अनाथकी भांति पड़े हो ॥ ८ ॥

जगतबिदित तुम्हारि प्रभुताई ❀ सुतपरिजनबल बरनि न जाई ॥ ९ ॥
रामबिमुख अस हाल तुम्हारा ❀ रहा न कुल कोउ रोवनहारा ॥ १० ॥

तुम्हारी प्रभुता संसारमें प्रगट है और पुत्र कुटुम्बियोंका बल वर्णन नहीं किया जाता ॥९॥ रामचन्द्रजीसे विमुख होनेके कारण तुम्हारा ऐसा हाल हुआ कि कुटम्बमें कोई रोनेवाला भी नहीं रहा! १०

तव बस बिधिप्रपंच सब नाथा ❀ सब दिगपति तोहिं नावहिं माथा ॥ ११ ॥
अब तब सिर भुज जंबुक खाहीं ❀ रामबिमुख यह अनुचित नाहीं ॥ १२ ॥
कालबिबस पति कहा न माना ❀ अग जगनाथ मनुज करि जाना ॥ १३ ॥

हे स्वामी! ब्रह्माका सब प्रपंच तुम्हारे हाथमें था और सब (इन्द्रादि दश) दिक्पाल तुम्हें शिर नवाते थे ॥ ११ ॥ अब तुम्हारे शिर और भुजाओंको गीदड़ खाते हैं, सो रामचन्द्रजीके विमुखको यह कुछ अयोग्य नहीं है ॥ १२ ॥ हे पति! कालके वश तुमने कहा नहीं माना, जो अचल संसारके स्वामी (भगवान्) कों मनुष्य करके जाना ॥ १३ ॥

छं०–जान्यो मनुज करि दनुजकाननदहनपावक हरि स्वयम्। ❀
जेहि नमत शिवब्रह्मादि सुर प्रिय भजेहु नहिं करुनामयं ॥ ❀
आजन्मते परद्रोहरत पापौघमय तव तनु अयं। ❀
तुमहूँ दियो निजधाम राम नमामि ब्रह्म निरामयं ॥ ४० ॥ ❀

हे स्वामी! राक्षसरूपी बनके जलानेके लिये अग्निके समान ऐसे साक्षात भगवान्‌को मनुष्य

जाना, और हे प्यारे ! जिसे शिव, ब्रह्मा आदि देवता प्रणाम करते हैं उस करुणामयका भजन नहीं किया, और यह तुम्हारा महापापी शरीर जन्मसे लेकर पराये वैरमेंही प्रीति करता रहा सो तुमको भी रामजीने अपना धाम दिया. ऐसे (संसारके) रोग कहिये आवागमन आदिसे रहित ब्रह्मस्वरूप रामचन्द्रजीको नमस्कार करती हूं ! ॥ ४० ॥

दो०–अहह नाथ रघुनाथसम, कृपासिंधु को आन ॥ ❀
मुनिदुर्लभ जो परमगति, तुमहिं दीन भगवान ॥ १७८ ॥ ❀

हा स्वामी ! रामचन्द्रजीके समान दयाका समुद्र और कौन है? जिन भगवान्ने मुनीश्वरोंकोभी दुर्लभ ऐसी परमगति तुमको दी ॥ १७८ ॥

चौ०–मंदोदरीबचन सुनि काना ❀ सुर मुनि सिद्ध सबहिं सुख माना ॥१॥
अज महेस नारद सनकादी ❀ जे मुनिवर परमारथवादी ॥ २ ॥

मन्दोदरीके वचन कानोंसे सुनकर देवता, मुनीश्वर और सिद्ध सबोंने सुख पाया ॥ १ ॥ ब्रह्मा, महादेव, नारद और सनकादिक श्रेष्ठ मुनीश्वर जो परमार्थके कहनेवाले थे ॥ २ ॥

भरिलोचन रघुपतिहिं निहारी ❀ प्रेममगन सब भयउ सुखारी ॥ ३ ॥
रोदन करत बिलोकेउ नारी ❀ भयउ बिभीषनमन दुख भारी ॥ ४ ॥

सो नेत्रोंभर रामचन्द्रजीको देखकर और स्नेहमें मगन होकर सब सुखी हो गये ॥ ३ ॥ स्त्रियोंको रोते हुये देख बिभीषणके मनमें बड़ा दुःख हुआ ॥ ४ ॥

बंधुदसा देखत दुख भयऊ ❀ तव प्रभु अनुजहिं आयसु दयऊ ॥ ५ ॥
लछमन तेहिं बहुविध समुझाये ❀ सहित बिभीषन प्रभुपहिं आये ॥ ६ ॥

जब भाईकी दशा देखकर बिभीषणको दुःख हुआ तब भगवान्ने लक्ष्मणको आज्ञा दी ॥ ५ ॥ लक्ष्मणजीने उसे बहुतभांति समझाया और फिर बिभीषणसमेत भगवान्के पास आये ॥ ६ ॥

कृपादृष्टि प्रभु ताहि बिलोका ❀ करहु क्रिया परिहरि सब सोका ॥ ७ ॥
कीन्ह क्रिया प्रभुआयसु मानी ❀ विधिवत देस काल जिय जानी ॥ ८ ॥

भगवान्ने उसे दयादृष्टिसे देखा (और कहा कि) शोकको छोड़कर क्रिया कर्म करो॥७॥ भगवान्की आज्ञा मानकर (बिभीषणने) विधिपूर्वक देश–कालको मनमें समझ रावणकी क्रिया करी ॥८॥

दो०–मयतनयादिक नारि सब, देइ तिलांजलि ताहि ॥ ❀
भवन गईं रघुबीरगुन, गन बरनति मनमाहिं ॥ १७९ ॥ ❀

और मन्दोदरी आदि सब स्त्रियां उसे तिलांजली देकर मनमें रामचन्द्रजीके गुणोंके समूहोंको वर्णन करती हुईं महलोंमें गईं ॥ १७९ ॥

चौ०–आइ बिभीषन पुनि सिर नावा ❀ कृपासिंधु तब अनुज बुलावा ॥ १ ॥
तुम कपीस अंगद नल नीला ❀ जाम्बवंत मारुतसुत सीला ॥ २ ॥

फिर बिभीषणने आकर माथा नवाया तब दयाके समुद्र (रामचन्द्रजी) ने लक्ष्मणको बुलाया (और बोले) ॥ १ ॥ तुम सुग्रीव, अंगद, नल, नील, जाम्बवंत और सुशील हनूमान् ॥ २ ॥

सब मिलि जाहु बिभीषनसाथा ❀ सारेहु तिलक कहेउ रघुनाथा ॥ ३ ॥
पिताबचन मैं नगर न जाऊं ❀ आपुसरिस कपि अनुज पठाउँ ॥ ४ ॥

सब मिलकर बिभीषणके साथ जाओ और राजतिलक करो और रामचन्द्रजीने कहा कि ॥ ३ ॥ मैं पिताकी आज्ञासे नगरमें नहीं जा सक्ता, अपने बदलेमें लक्ष्मण और बन्दरोंको भेजता हूं ॥ ४ ॥

तुरत चले कपि सुनि प्रभुबचना ❀ कीन्ही जाइ तिलककी रचना ॥ ५ ॥
सादर सिंहासन बैठारी ❀ तिलकि कीन्ह अस्तुति अनुसारी ॥ ६ ॥

भगवान्के वचन सुनकर बन्दर शीघ्रही चले और जाकर तिलककी तयारी करी ॥ ५ ॥ आदरसहित सिंहासनपर बिठाय स्तुति पढ़ २ कर तिलक किया ॥ ६ ॥

जोरि पानि सबहीं सिर नाये ❀ सहितबिभीषन प्रभुपहिं आये ॥ ७ ॥
तब रघुबीर बोलि कपि लीन्हें ❀ कह प्रियबचन सुखी सब कीन्हें ॥ ८ ॥

हाथ जोड़कर सबने शिर नवाया, फिर बिभीषणसमेत भगवान्के पास आये ॥ ७ ॥ तब रामचन्द्रजीने बन्दरोंको बुला लिया और प्यारे बचन कहकर सबको सुखी किया ॥ ८ ॥

छं०-कीन्हेउ सुखी सब कहि सुबानी बल तुम्हारे रिपु हयौ । ❀
पायो बिभीषन राज तिहुँपुर जस तुम्हारौ नित नयो ॥ ❀
मोहिं सहित सुभ कीरति तुम्हारी परमप्रीति जे गाइहैं । ❀
संसारसिंधुअपारपार प्रयास बिनु तरजाइहैं ॥ ४१ ॥ ❀

सुन्दर वाणी कहकर सबको प्रसन्न किया कि तुम्हारेही बलसे वैरीको मारा और बिभीषणने राज्य पाया. सो तुम्हारा यश तीनों लोकोंमें नित्य नया रहैगा, जो लोग मेरे तुम्हारे सुन्दर यशको बड़े प्रेमसे गावेंगे वे संसाररूपी अपार समुद्रसे विनाही परिश्रमके पार तर जायँगे ॥ ४१ ॥

दो०-सुनत रामके बचन मृदु, नहिं अघात कपिपुंज ॥ ❀
बारबार सिर नावहिं, गहे रामपदकंज ॥ १८० ॥ ❀

रामचन्द्रजीके मधुर बचन सुनतेही बन्दरोंके समूह तृप्त नहीं होते और रामचन्द्रजीके कमलसमान चरण पकड़कर बार २ शिर नवाने लगे ॥ १८० ॥

चौ०-तब प्रभु बोलिलिये हनुमाना ❀ लंका जाहु कहेउ भगवाना ॥ १ ॥
समाचार जानकिहिं सुनावहु ❀ तासु कुसल लै तुम चलि आवहु ॥२॥

तब भगवान्ने हनूमान्को बुलाकर कहा कि तुम लंकाको जाओ ॥ १ ॥ और सीताको समाचार सुनाओ और उसकी कुशल लेकर तुम लौट आओ ॥ २ ॥

तब हनुमंत नगरमहँ आये ❀ सुनि निसिचरी निसाचर धाये ॥ ३ ॥
पूजा बहुप्रकार तिन्ह कीन्ही ❀ जनकसुता दिखाइ सब दीन्ही ॥ ४ ॥

तब हनूमान् नगरमें आये तौ यह सुनकर राक्षस और राक्षसी दौड़े ॥ ३ ॥ उन्होंने बहुत भांति पूजा करी और सबने सीताजी दिखा दीं ॥ ४ ॥

दूरहिं ते प्रनाम कपि कीन्हा ❀ रघुपतिदूत जानकी चीन्हा ॥ ५ ॥
कहहु तात प्रभु कृपानिकेता ❀ कुसल अनुजकपिसेनसमेता ॥ ६ ॥

हनूमान्ने दूरहीसे प्रणाम की तौ सीताजीने पहचान लिया कि रामचन्द्रजीका दूत है. (और बोलीं) ॥ ५ ॥ हे प्यारे ! कहो दयाके स्थान भगवान् लक्ष्मण और बन्दरोंकी सेनासमेत कुशल हैं ? (हनूमान् बोले) ॥ ६ ॥

सबबिध कुसल कोसलाधीसा ❀ मातु समर जीतेउ दससीसा ॥ ७ ॥
अबिचल राज बिभीषन पावा ❀ सुनि कपिबचन हर्ष उर छावा ॥ ८ ॥

हे माता! रामचन्द्रजी सब प्रकार कुशल हैं और लड़ाईमें रावणको जीत लिया ॥७॥ और विभीषणने अचल राज्य पाया. हनूमान्के ऐसे बचन सुनकर (जानकीजीके) हृदयमें आनन्द छागया ॥८॥

छं०-अतिहर्ष मन तनु पुलक लोचन सजल पुनि पुनि कह रमा ।
कह देउँ तोहिं त्रैलोक्यमहँ कपि किमपि नहिं बानीसमा ॥
सुनु मात मैं पायउँ अखिलजगराज आजु न संशयं ।
रन जीति रिपुदल वंधुयुत पश्यामि राममनामयं ॥ ४२ ॥

मनमें वड़ा आनन्द हुआ, शरीरमें पुलकावली छा गई और नेत्रोंमें जल भर आया. सीताजी वार २ कहने लगीं कि हे हनूमान्! मैं तुझे क्या दूं? तुमने जो खबर सुनाई है उसके समान त्रिलोकीमें कुछ नहीं है. (हनूमान्ने कहा) हे माता! सुनो, मैंने आज निस्संदेह संपूर्ण संसारका राज्य पालिया, जो लड़ाईमें वैरीके दलको जीतकर रामचन्द्रजीको भाईसहित कुशल देखता हूं (यह सुनकर जानकीजी आशीर्वाद देती हैं) ॥ ४२ ॥

दो०-सुनु सुत सद्गुन सकल तव, हृदय बसैं हनुमंत ॥
सानुकूल रघुबंसमनि, रहहिं समेत अनंत ॥ १८१ ॥

हे पुत्र हनूमान्! सुनो, सब अच्छे गुण तुम्हारे हृदयमें बसैं और रामचन्द्रजी लक्ष्मणसमेत (तुमपर) सहायक रहैं ॥ १८१ ॥

चौ०-अब सोइ जतन करहु तुम ताता ❀ देखौं नयन स्याममृदुगाता ॥ १ ॥
तब हनुमंत रामपहिं आयउ ❀ जनकसुताकर कुसल सुनायउ ॥ २ ॥

हे प्यारे! अब तुम वही उपाय करो जिससे सांवले कोमल शरीरको नेत्रोंसे देखूं ॥ १ ॥ तब हनूमान् रामचन्द्रजीके पास आये और सीताजीकी कुशल सुनाई ॥ २ ॥

सुनि बानी पतंगकुलभूषन ❀ बोलिलिये कपिराज बिभीषन ॥ ३ ॥
मारुतसुतके संग सिधावहु ❀ सादर जनकसुता लै आवहु ॥ ४ ॥

वाणी सुनकर सूर्यवंशके भूषण (रामचन्द्रजी) ने सुग्रीव और बिभीषणको बुला लिया (और कहा कि) ॥ ३ ॥ हनूमानके साथ जाओ और आदरसमेत सीताजीको ले आओ ॥ ४ ॥

तुरतहिं सकल गये जहँ सीता ❀ सेवहिं सब निसिचरी बिनीता ॥ ५ ॥
बेगि बिभीषन तिन्हहिं सिखावा ❀ तिन्ह बहुविध मज्जन करवावा ॥ ६ ॥

वे सब शीघ्रही वहां गये जहां सीताजी थीं और जिनकी सब राक्षसियाँ आधीनीसे सेवा कर रहीं थीं ॥ ५ ॥ तुरंतही बिभीषणने उनको सिखाया तौ उन्होंने भली भांति स्नान कराया ॥ ६ ॥

बहुप्रकार भूषन पहिराए ❀ सिविका रुचिर साजि पुनि ल्याए ॥ ७ ॥
तेहिपर हर्षि चढ़ी बैदेही ❀ सुमिरि राम सुखधाम सनेही ॥ ८ ॥

अनेक भांतिके गहने पहिराये और फिर सुन्दर पालकी सजा लाये ॥ ७ ॥ उसपर सीताजी प्रसन्न होकर सुखके निधान प्रेमी रामचन्द्रजीको सरण करके चढ़ी ॥ ८ ॥

बेतपानि रक्षक चहुँ पासा ❀ चले सकल मन परम हुलासा ॥ ९ ॥
देखन भालु कीस बहु धाए ❀ रक्षक कोपि निवारन आए ॥ १० ॥

हाथमें बेत लिये रखवाले सब मनमें वहुत प्रसन्न होते हुये चले ॥ ९ ॥ देखनेके लिये बहुतसे रीछ बन्दर दौड़े तौ रखवाले क्रोध करके उन्हें रोकनेको आये ॥ १० ॥

कह रघुवीर कहा मम मानहु ❀ सीतहि सखा पयादेहिं आनहु ॥ ११ ॥
देखहिं कपि जननीका नाँईं ❀ बिहँसि कहा रघुबीर गुसांईं ॥ १२ ॥

रामचन्द्रजीने कहा, हे मित्र ! मेरा कहना मानों कि सीताजीको पैदलही ले आओ ॥ ११ ॥ रामचन्द्रजी महाराजने हँसकर कहा कि ये वन्दर माताकी भांति देखते हैं ॥ १२ ॥

सुनि प्रभुवचन भालु कपि हर्षे ❀ नभते सुरन्ह सुमन बहु वर्षे ॥ १३ ॥
सीता प्रथम अग्निमहँ राखी ❀ प्रकट कीन्हचह अंतरसाखी ॥ १४ ॥

भगवान्के वचन सुनकर रीछ वन्दर प्रसन्न हुये और देवताओंने आकाशसे बहुतसे फूल वर्षाये १३ पहले सीताजी जो अग्निमें रक्खी थी उन्हें अंतःकरणकी जाननेवाले भगवान् प्रकट करना चाहते हैं. ॥ १४ ॥

दो०-तेहि कारन करुनाअयन, कहे कछुक दुर्वाद ॥ ❀
सुनत जातुधानी सकल, लागीं करन बिषाद ॥ १८२ ॥ ❀

इसी कारण करुणाके स्थान (भगवान्) ने कुछ बुरे वचन कहे. सुनतेही सब राक्षसियाँ दुःख करने लगीं ॥ १८२ ॥

चौ०-प्रभुके बचन सीस धरि सीता ❀ बोली मन क्रम बचन पुनीता ॥ १ ॥
लछमन होहु धर्मके नेगी ❀ पावक प्रगट करहु तुम बेगी ॥ २ ॥

भगवान्के वचनोंको सुन सीताजी मन क्रम वचनसे पवित्र वचन बोलीं ॥ १ ॥ हे लक्ष्मण ! तुम धर्मके नेगी बनकर शीघ्रही अग्नि प्रगट करो ॥ २ ॥

सुनि लछमन सीताकी बानी ❀ बिरहविवेकधर्मनयसानी ॥ ३ ॥
लोचन सजल जोरि कर दोऊ ❀ प्रभुसन कछु कहि सकत न ओऊ ॥४॥

लक्ष्मणजीने वियोग, ज्ञान, धर्म और नीतिकी सनी हुई सीताजीकी वाणी सुनकर ॥ ३ ॥ और नेत्रोंमें जल भरकर दोनों हाथ जोड़े, क्योंकि भगवान्से कुछ कह नहीं सक्ते हैं ॥ ४ ॥

देखि रामरुख लछमन धाए ❀ पावक प्रगट दारु बहु लाए ॥ ५ ॥
प्रबल अनल बिलोकि बैदेही ❀ हृदय हर्ष कछु भय नहिं तेही ॥ ६ ॥

फिर रामचन्द्रजीका रुख देखकर लक्ष्मणजी गये और बहुतसी लकड़ी ले आकार अग्नि प्रकट करी ॥ ५ ॥ सीताजी प्रचंड अग्निको देखकर हृदयमें प्रसन्न हुई और उन्हें कुछ भय नहीं हुआ (कहने लगीं कि) ॥ ६ ॥

जो मन कर्म बचन उर माहीं ❀ तजि रघुबीर आनगति नाहीं ॥ ७ ॥
तौ कृसानु सबकी गति जाना ❀ मोकहँ होहु स्रीखंडसमाना ॥ ८ ॥

जो मन क्रम वचनसे मेरे हृदयमें रामचन्द्रजीको छोड़ और दूसरेकी गति नहीं है ॥ ७ ॥ तौ हे अग्नि ! तुम सबकी दशा जानती हो सो मुझको चन्दनके समान (शीतल) हो जाओ ॥ ८ ॥

छं०-स्रीखंडसम पावक प्रविस किय सुमिरि प्रभुपद मैथिली । ❀
जय कोसलेस महेस वंदित चरनरज अतिनिर्मली ॥ ❀
प्रतिबिंब अरु लौकिककलंक प्रचंडपावकमहँ जरे । ❀
प्रभुचरित काहु न लखेउ सुरमुनि सिद्ध सब देखहिं खरे॥४३॥❀

सीताजीने भगवान्के चरणोंका स्मरण करके चन्दनके समान अग्निमें प्रवेश किया (और सीता

जी बोलीं कि) जिनके चरणोंकी अतिनिर्मल रजकी महादेवभी वन्दना करते हैं, ऐसे रामचन्द्रजीकी जय होय. (सीताजीकी) परछांई और संसारका कलंक तौ तेज अग्निमें जल गये और भगवान्का चरित्र किसीने न देखा. देवता, मुनीश्वर और सिद्ध सब खड़ेके खड़े देखतेही रहे ॥ ४३ ॥

तब अनल भुसुररूप कर गहि सत्य श्री स्रुतिविदित सो ।
जिमि छीरसागर इंदिरा रामहिं समर्पी आनि सो ॥
सोइ रामवामविभाग राजति रुचिर अति सोभा भली ।
नवनीलनीरजनिकट मानहुँ कनकपंकजकी कली ॥ ४४ ॥

तब अग्निने ब्राह्मणका रूप धारण करके जो वेदोंमें साक्षात् लक्ष्मीके नामसे प्रसिद्ध है उसका हाथ पकड़कर रामचन्द्रजीको इस भाँति लाकर सौंपदिया जैसे क्षीरसमुद्रने लक्ष्मी (विष्णुको दी थी) वही (सीता) रामचन्द्रजीके बांई ओर विराजमान् हैं, और उनकी ऐसी अति सुन्दर शोभा हो रही है मानों नये नीले कमलके पास सुवर्णके कमलकी कली है ॥ ४४ ॥

दो०–हर्षि सुमन वर्षहिं विबुध, बाजहिं गगन निसान ॥
गावहिं किन्नर अप्सरा, नाचहिं चढ़ी विमान ॥ १८३ ॥

देवता प्रसन्न होंकर फूल वर्षाने लगे, आकाशमें बाजे बजने लगे, किन्नर गाने लगे और विमानोंमें चढ़ी हुई अप्सरा नाचने लगीं ॥ १८३ ॥

श्रीजानकीसमेत प्रभु, सोभा अमित अपार ॥
देखि भालु कपि हर्षेउ, जय रघुपति सुखसार ॥ १८४ ॥

श्रीजानकीजीसहित भगवान्की अतुल अपार शोभाको देखकर रीछ बन्दर प्रसन्न हुये और सुखके सार रामचन्द्रजीकी जय मनाने लगे ॥ १८४ ॥

चौ०–तब रघुपतिअनुसासन पाई ❀ मातलि चले चरन सिर नाई ॥ १ ॥
आए देव सदा स्वारथी ❀ बचन कहहिं जनु परमारथी ॥ २ ॥

तब रामचन्द्रजीकी आज्ञा पाकर मातलि (सारथी) चरणोंको शिर नवाकर चला ॥ १ ॥ फिर सदाके स्वारथी देवता आये और ऐसी बातें कहने लगे मानों बड़े परमारथी हैं ॥ २ ॥

दीनबंधु दयालु रघुराया ❀ देव कीन्ह देवनपर दाया ॥ ३ ॥
विस्वद्रोहरत खल अतिकामी ❀ निजअघ गयउ कुमारगगामी ॥ ४ ॥

हे दीनबन्धु दयालु रामचन्द्र महाराज ! आपने देवताओंपर कृपा की ॥ ३ ॥ संसारसे वैर करनेमें जिसकी प्रीति थी और जो दुष्ट, अतिकामी और कुमार्गमें चलनेवाला था सो अपने पापसे गया, अर्थात् मारा गया ॥ ४ ॥

तुम सर्वज्ञ ब्रह्म अविनासी ❀ सदा एकरस सहजउदासी ॥ ५ ॥
अकल अगुन अज अनघ अनामय ❀ अजित अमोघसक्ति करुनामय ॥ ६ ॥

और आप सर्वज्ञ हो, ब्रह्म और नाशरहित हो, सदा एकरस और सहजहीमें उदासी अर्थात् बिरागवृत्तिवाले हो ॥ ५ ॥ कल्पनारहित, गुणोंसे परे, जन्मरहित, निन्दारहित, रोगरहित, अजित, सफल शक्तिवाले और करुणायुक्त हो ॥ ६ ॥

मीन कमठ सूकर नरहरी ❀ बामन परशुरामबपु धरी ॥ ७ ॥
जब जब नाथ सुरन्ह दुख पावा ❀ नाना तनु धरि तुमहिं नसावा ॥ ८ ॥

आपने मत्स्य, कच्छ, वराह, नृसिंह, वामन और परशुरामका शरीर धारण किया ॥७॥ हे स्वामी ! जब२देवताओंने दुःख पाया, तब२ आपनेही अनेक शरीर धारण करके (दुष्टोंका) नाश किया ॥ ८ ॥

रावन पापमूल सुरद्रोही ❀ काम लोभ मद रत अतिकोही ॥ ९ ॥
सो कृपालु तब धाम सिधावा ❀ यह हमरे मन अचरज आवा ॥ १० ॥

रावण पापकी जड़,देवताओंका वैरी, काम, लोभ और अभिमानमें प्रीति करनेवाला, तथा बड़ा क्रोधि था ॥९॥ सो हे दयालु ! वहभी आपके स्थान अर्थात् वैकुंठको गया यह हमारे मनमें अचंभा है॥१०॥

हम देवता परम अधिकारी ❀ स्वारथरत तव भक्ति बिसारी ॥ ११ ॥
भवप्रवाह संतत हम परे ❀ अब प्रभु पाहि सरन अनुसरे ॥ १२ ॥

(यद्यपि) हम देवताही (उस वैकुंठके) परम अधिकारी हैं, परन्तु स्वार्थमें प्रीतिके कारण आपकी भक्ति भूल गये ॥ ११ ॥ सो हम निरंतर संसाररूपी प्रवाहमें पड़े हैं, अब हे भगवन् ! रक्षा करो. हम (आपकी) शरण हैं ॥ १२ ॥

दो०–करि विनती सुर सिद्ध सब, रहे विरंचि कर जोरि ॥ ❀
अति सप्रेम तनु पुलकित, अस्तुति करत बहोरि ॥ १८५ ॥ ❀

सब देवता और सिद्ध प्रार्थना कर चुके, फिर ब्रह्माजी हाथ जोड़कर बड़े प्रेमसे शरीरमें पुलकायमान हो स्तुति करने लगे ॥ १८५ ॥

छं०–जय राम सदा सुखधाम हरे, रघुनायक सायक चाप धरे ॥ ❀
भववारणदारणसिंह प्रभो, गुणसागर नागर नाथ विभो ॥४५॥ ❀

हे राम ! आप सदा सुखके स्थान और विष्णुस्वरूप हो. हे धनुषबाणधारी रघुनाथजी ! आपकी जय हो. हे स्वामी ! आप संसाररूपी हाथीको नाश करनेके लिये सिंहरूप हो तथा गुणोंके समुद्र चतुर और सर्वज्ञ हो ॥ ४५ ॥

तनु कामअनेक अनूपछवी, गुण गावत सिद्ध मुनींद्र कवी ॥ ❀
यश पावन रावणनाग महा, खगनाथ यथा करि कोप गहा ४६ ❀

आपके शरीरमें अनेक कामदेवोंकी अनुपम शोभा है, (आपके) गुणोंको सिद्ध, मुनीश्वर और कवीश्वर गाते हैं, आपका यश पवित्र है और आपने रावणरूपी बड़े सर्पको गरुड़की भांति क्रोध करके पकड़ लिया ॥ ४६ ॥

जनरंजन भंजनशोकभयं, गतक्रोध सदा प्रभु बोधमयं ॥ ❀
अवतार उदार अपारगुणं, महिभारविभंजन ज्ञानघनं ॥४७॥ ❀

भक्तोंको आनन्द देनेवाले, शोक और भयके नाश करनेवाले हो और हे प्रभो ! आप क्रोध रहित और सदा ज्ञानयुक्त हो, आपके सुन्दर अवतारोंके अपार गुण हैं और आप पृथ्वीके भार दूर करनेको ज्ञानरूपी मेघ हो ॥ ४७ ॥

अज व्यापक एक अनादि सदा, करुणाकर राम नमामि मुदा॥❀
रघुवंशविभूषण दूषणहा, कृतभूप विभीषण दीन रहा ॥४८॥ ❀

आप जन्मरहित, सर्वव्यापक, एकरूप, सर्वदा आदिरहित, करुणाकी खानें हो. हे रामचन्द्र ! आपको प्रसन्नतासे नमस्कार करता हूं. आप रघुवंशके आभूषण और पापोंके नाश करनेवाले हो. आपने विभीषणसरीखे दीनको राजा करदिया ॥ ४८ ॥

गुणज्ञाननिधान अमानमजं, नित राम नमामि विभुं विरजं ॥
भुजदंडप्रचंडप्रतापबलं, खलवृंदनिकंदमहाकुशलं ॥ ४९ ॥

आप गुण और ज्ञानके निधान हो, मानरहित हो, अजन्मा हो, सर्वव्यापक और मायारहित हो; ऐसे आप रामचन्द्रजीको नित्य नमस्कार है. आप अपने भुजदंडके प्रचंड प्रताप और बलसे दुष्टोंके समूहोंके मारनेमें बड़े चतुर हो ॥ ४९ ॥

बिनु कारण दीनदयालुहितं, छबिधाम नमामि रमासहितं ॥
भवतारणकारण कार्यपरं, मनसंभवदारुणदोषहरं ॥ ५० ॥

विना कारणही दीनोंके ऊपर दया और हित करनेवाले हो और शोभाके स्थान हो, ऐसे जानकीजीसमेत आपको नमस्कार है. आप संसारसे तारनेमें कारण हो, कार्यसे परे हो, और मनसे उत्पन्न हुये कठिन पापोंके नाश करनेवाले हो ॥ ५० ॥

शरचापमनोहरतूणधरं, जलजारुणलोचन भूपवरं ॥
सुखमंदिर सुंदर श्रीरमणं, मदमारमहाममताशमनं ॥ ५१ ॥

आप सुन्दर धनुष बाण और तरकसको धारण करते हो, आपके कमलसे नेत्र हैं, राजाओंके शिरोमणि हो, सुखके स्थान हो, सुन्दर लक्ष्मीजीसे रमण करनेवाले हो और कामदेवके अभिमान तथा महाममताके नाश करनेवाले हो ॥ ५१ ॥

अनवद्य अखंड न गोचर सो, सब रूप सदा सब होय न सो ॥
इति वेद वदंति न दंतकथा, रवि आतपभिन्नमभिन्न यथा ॥५२॥

आप निंदारहित, अखंड, इन्द्रियोंसे परे हो सदा सबरूपोंमें व्याप्त हो और सबसे परेभी हो; जैसे सूर्यसे धूप अलग भी है और मिली हुईभी है. यह बात वेद कहते हैं कोरी दंतकथा नहीं है ॥५२॥

कृतकृत्य बिभो सब बानर ए, निरखंति तवानन सादर ए ॥
धिक् जीवन देवशरीर हरे, सब भक्तिबिना भवभूलि परे ॥५३॥

हे प्रभो ! वानरोंके धन्य भाग्य हैं जो ये आदरसे आपके मुखके दर्शन कर रहे हैं. हे भगवन् ! देवताओंके शरीरको धिक्कार है जो सब भक्तिको बिना भूलकर संसारमें पड़े हुये हैं ॥ ५३ ॥

अब दीनदयालु दया करिए, मति मोरि बिभेदकरी हरिए ॥
जेहिते बिपरीत कृपा करिए, दुखमें सुख मानि सुखी चरिए ५४

अब हे दीनदयालु ! कृपा कीजिये और मेरी भेदकी उस बुद्धिको हर लीजिये कि जिससे विपरीत होता है. और सो ऐसी दया कीजिये जिससे दुःखमें सुख मानकर सुखी फिरता फिरूं ॥५४॥

खलखंडन मंडन रक्ष क्षमा, पदपंकजसेवितशंभुउमा ॥
नृपनायक दे वरदानमिदं, चरणांबुजप्रेम सदा शुभदं ॥५५॥

आप दुष्टोंके नाशक, तथा पृथ्वीके रक्षक और आभूषण हो, आपके कमलसमान चरणोंका महादेव पार्वती सेवन करते हैं. सो हे राजाओंके शिरोमणि ! यह वरदान दो कि आपके कमलसमान चरणोंमें कल्याणका देनेवाला प्रेम सदा बना रहै ॥ ५५ ॥

दो०-बिनय कीन्ह बहुभाँति विधि, प्रेमप्रफुल्लित गात ॥
वदन बिलोकत रामकर, लोचन नाहिं अघात ॥ १८६ ॥

ब्रह्माजीने बहुत प्रकारसे प्रार्थना की और स्नेहके कारण शरीरमें पुलकायमान हो गये. रामचन्द्रजीका मुख देखनेसे नेत्र तृप्त नहीं होते ॥ १८६ ॥

चौ०–तेहि अवसर दसरथ तहँ आए ❀ तनय बिलोकि नयनजल छाए ॥ १ ॥
अनुजसहित प्रभु वंदन कीन्हा ❀ आसीर्बाद पिता तब दीन्हा ॥ २ ॥

उस समय दशरथजी वहां आये और पुत्रोंको देखकर नेत्रोंमें जल भर आया ॥१॥ छोटे भाई (लक्ष्मण) सहित भगवान्ने दंडवत् की तब पिताने आशीर्वाद दिया (फिर रामजी कहने लगे) ॥ २ ॥

तात सकल तब पुन्यप्रभाऊ ❀ जीत्यो अजय निसाचरराऊ ॥ ३ ॥
सुनि सुतबचन प्रीति अति बाढ़ी ❀ नयनसलिल रोमावलि ठाढ़ी ॥ ४ ॥

हे पिता ! आपकाही सब पुण्यप्रभाव है जो अजय राक्षसोंके राजाको जीता ॥ ३ ॥ पुत्रके वचन सुनकर बड़ा प्रेम बढ़ा, नेत्रोंमें जल भर आया और रोमावली खड़ी होगई ॥ ४ ॥

रघुपति प्रथम प्रेम अनुमाना ❀ चितइ पितहिं दीन्हेउ दृढ़ ज्ञाना ॥ ५ ॥
ताते उमा मोक्ष नहिं पावा ❀ दसरथ भेदभक्ति मन लावा ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीने पहले प्रेम निभाया फिर पिताकी ओर देख दृढ ज्ञान दिया ॥ ५ ॥ (महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! दशरथजीने भेदभक्तिसे मन लगाया था इससे मुक्ति नहीं हुई ॥ ६ ॥

सगुनोपासक मोक्ष न लेहीं ❀ तिन्हकहँ रामभक्ति निज देहीं ॥ ७ ॥
बारबार करि प्रभुहिं प्रनामा ❀ दसरथ हर्षि गए सुरधामा ॥ ८ ॥

सगुणउपासक मोक्ष नहीं लेते हैं, उनको तौ रामचन्द्रजी अपनी भक्ति देते हैं ॥ ७ ॥ दशरथजी वार २ भगवान्के प्रणाम कर आनन्दसे स्वर्गको लौट गये ॥ ८ ॥

दो०–अनुज जानकीसहित प्रभु, कुसल कोसलाधीस ॥
छबि बिलोकि मन हर्ष अति, अस्तुति कर सुरईस ॥१८७॥

फिर अवधविहारी भगवान् रामचन्द्रजीको लक्ष्मण और जानकीजीसहित कुशलपूर्वक, और उनकी शोभाको देखकर इन्द्र मनमें बड़े प्रसन्न होकर स्तुति करने लगे ॥ १८७ ॥

छं०–जयराम शोभाधाम, दायक प्रणतविश्राम ॥
धृत तूणवरशरचाप, भुजदंडप्रबलप्रताप ॥ ५६ ॥

हे शोभाके स्थान और भक्तोंको आनन्द देनेवाले रामचन्द्रजी ! तुम्हारी जय हो. आप तरकस और श्रेष्ठ धनुषबाण धारण किये हो और आपकी भुजाओंका बड़ा भारी प्रताप है ॥ ५६ ॥

जय दूषणारि खरारि, मर्दननिशाचरझारि ॥
यह दुष्ट मारेहु नाथ, भए देव सकल सनाथ ॥ ५७ ॥

आप खरदूषणके शत्रु और संपूर्ण राक्षसोंके मारनेवाले हो, आपकी जय हो. हे स्वामी ! आपने यह दुष्ट मारा सो सब देवता सनाथ होगये ॥ ५७ ॥

जय हरण धरणीभार, महिमा अपार उदार ॥
जय रावणारि कृपाल, किये यातुधानविहाल ॥ ५८ ॥

आप पृथ्वीके भार हरनेवाले हो आपकी महिमा अपार और बड़ी है. हे दयालु ! रावणके शत्रु, तुम्हारी जय हो. आपने राक्षस विहाल करदिये ॥ ५८ ॥

लंकेश अतिबलगर्व, किये वश्य सुरगंधर्व ॥
मुनि सिद्ध नर खग नाग, हठि पंथ सबके लाग ॥ ५९ ॥

रावण बड़े बल और अभिमानमें था और उसने देवता गंधर्व सब वशमें करलिये थे और मुनीश्वर, सिद्ध, मनुष्य, पक्षी तथा सर्प सबके पीछे हठसे पड़ा रहताथा ॥ ५९ ॥

परद्रोहरति अतिदुष्ट, पायो सो फल पापिष्ठ ॥ ❀
अब सुनहु दीनदयालु, राजीवनयन विशालु ॥ ६० ॥ ❀

सो जैसी उसकी पराये द्रोहमें प्रीति थी और जैसा बड़ा दुष्ट था वैसाही पापीने फल पाया अर्थात् मारा गया. अब हे दीनदयालु ! कमलसमान विशाल नेत्रवाले सुनिये ॥ ६० ॥

मोहिं रहा अति अभिमान, नहिं कोउ मोहिंसमान ॥ ❀
अब देखि प्रभुपदकंज, गत मान प्रददुखपुंज ॥ ६१ ॥ ❀

मुझे बड़ा अभिमान था कि मेरे समान कोई नहीं है सो अब आपके कमलसमान चरण देख कर दुःखके समूहका देनेवाला अभिमान जाता रहा ॥ ६१ ॥

कोउ ब्रह्म निर्गुण ध्याव, अव्यक्त जेहिं श्रुति गाव ॥ ❀
मोहिं भाव कोशलभूप, श्रीराम सगुण स्वरूप ॥ ६२ ॥ ❀

कोई निर्गुण ब्रह्मका ध्यान करते हैं, जिसे वेद अव्यक्त कहते हैं, परंतु मुझे तौ अयोध्याके राजा श्रीरामचन्द्रजीका सगुणस्वरूप अच्छा लगता है ॥ ६२ ॥

वैदेहिअनुजसमेत, मम हृदय करहु निकेत ॥ ❀
मोहिं जानिये निजदास, दै भक्ति रमानिवास ॥ ६३ ॥ ❀

सो जानकीजी और लक्ष्मणसमेत मेरे हृदयमें स्थान करिये. और हे रमानिवास ! (भगवान्) मुझे अपना सेवक जानकर भक्ति दीजिये ॥ ६३ ॥

छं०-दै भक्ति रमानिवास त्रासहरण शरणसुखदायकं । ❀
सुखधाम राम नमामि कामअनेकछवि रघुनायकं ॥ ❀
सुरवृंदरंजन द्वंद्वभंजन मनुजतनु-अतुलितबलं । ❀
ब्रह्मादिशंकरसेव्य राम नमामि करुणाकोमलं ॥ ६४ ॥ ❀

हे रमानिवास ! आप दुःखनाशक और शरणागतोंको सुखदायक हो, मुझे भक्ति दीजिये. हे राम ! आप सुखके स्थान हो और अनेक कामदेवोंके समान आपकी शोभा है. हे रघुनायक (आपको) नमस्कार है. आप देवताओंके समूहको आनन्द देनेवाले और दुखोंके नाश करनेवाले हो, आपने मनुष्यशरीर धारण किया है और आपका अतोल बल है. ब्रह्मा और महादेवआदि आपकी सेवा करते हैं, ऐसे हे कोमलकरुणायुक्त रामचन्द्रजी ! आपको नमस्कार है ॥ ६४ ॥

दो०-अब करि कृपा विलोकि मोहिं, आयसु देहु कृपालु ॥ ❀
कहा करौं सुनिप्रियबचन, बोले दीनदयालु ॥ १८८ ॥ ❀

हे दयानिधान ! अब दया करके मुझे देखिये और आज्ञा दीजिये कि क्या करूं ? ऐसे प्यारे वचन सुनकर दीनदयालु (भगवान्) बोले ॥ १८८ ॥

चौ०-सुनु सुरपति कपि भालु हमारे ❀ परे भूमि निसिचरन्ह जे मारे ॥ १ ॥
मम हित लागि तजे इन्ह प्राना ❀ सकल जियाउ सुरेस सुजाना ॥ २ ॥

हे इन्द्र ! सुनों हमारे रीछ बन्दर जो राक्षसोंने मारे हैं सो पृथ्वीपर पड़े हुये हैं ॥ १ ॥ इन्होंने मेरे लिये प्राण त्यागे हैं, सो हे चतुर इन्द्र ! इन सबको जिलादो ॥ २ ॥

सुनु खगेस प्रभुकै इह बानी ❀ अति अगाध जानहिं मुनि ज्ञानी ॥ ३ ॥
प्रभु सक त्रिभुवन मारि जिआई ❀ केवल सक्रहिं दीन्ह बड़ाई ॥ ४ ॥

(कागभुशुंडि कहते हैं) हे गरुड़जी ! सुनो, भगवान्‌की यह बड़ी गंभीर वाणी है, इसे ज्ञानी मुनीश्वरही जानते हैं ॥ ३ ॥ भगवान् तीनों लोकोंको मारकर जिला सक्ते हैं परंतु केवल इन्द्रको बड़ाई दीन्ही है. ॥ ४ ॥

सुधा बरषि कपि भालु जिआए ❀ हरषि उठे सब प्रभुपहँ आए ॥ ५ ॥
सुधावृष्टि भइ दुहुँदल ऊपर ❀ जिए भालु कपि नहिं रजनीचर ॥ ६ ॥

अमृतकी वर्षा करके रीछ बन्दर जिवादिये और वे सब प्रसन्न होकर उठे और भगवान्‌के पास आये ॥५॥ अमृतकी वर्षा दोनों सेनाओंके ऊपर हुई, परंतु रीछ बन्दर तौ जिये और राक्षस नहीं जिये॥६॥

रामाकार भए तिन्हके मन ❀ गये ब्रह्मपद तजि सरीर रन ॥ ७ ॥
सुरअंसिक सब कपि अरु ऋच्छा ❀ जिए सकल रघुपतिकी इच्छा ॥ ८ ॥

क्योंकि उनके मन तौ राममय होगये सो लड़ाईमें शरीरको छोड़कर ब्रह्मपदको गये ॥ ७ ॥ और सब बन्दर और रीछ देवताओंके अंशसे थे सो सब रामचन्द्रजीकी इच्छासे जीउठे ॥ ८ ॥

राम सरिसको दीनहितकारी ❀ कीन्हे मुक्त निसाचर झारी ॥ ९ ॥
खल मलधाम कामरत रावण ❀ गतिपाई जो मुनिवर पावन ॥ १० ॥

रामचन्द्रजीके समान दीनहितकारी कौन है जिन्होंने सब राक्षस मुक्त करदिये ॥ ९ ॥ दुष्ट, पापोंके स्थान और कामी रावणनेभी वह गति पाई जिसे श्रेष्ठ मुनीश्वरभी नहीं पाते हैं ॥ १० ॥

दो०–सुमन बरषि सब सुर चले, चढ़ि चढ़ि रुचिर विमान ॥ ❀
देखि सुअवसर रामपहिं, आए संभु सुजान ॥ १८९ ॥ ❀

सब देवता फूल वर्षाकर सुन्दर विमानोंपर चढ़ २ कर चले, तौ सुन्दर समय देखकर चतुर महादेवभी रामचन्द्रजीके पास आये ॥ १८९ ॥

॥ अथ क्षेपक ॥

चौ०–नंदी चढ़ेउ महागण संगा ❀ शोभितमान गौरि अरधंगा ॥ १ ॥
झलकगंग शिर चंद्र लिलारा ❀ नीलकंठ छबि गरलकि झारा ॥ २ ॥

नादियेपर चढ़े हुये, अपने बड़े २ गणोंको साथमें लिये, अर्धांगमें पार्वतीजी शोभायमान हैं॥१॥ मस्तकमें गंगाजी और ललाटमें चन्द्रमाको झलकाये और नीलेकंठमें विषकी झलक शोभायमान् है ॥२॥

कर खप्पर गर नरशिरमाला ❀ अहिकुलपति श्रुति गरे बिशाला ॥ ३ ॥
तीन नयन पिंगल शिरजूटा ❀ श्वेत विभूति देह अति छूटा ॥ ४ ॥

हाथमें खप्पर, गलेमें नरमुंडोंकी माला और विशाल कान और गलेमें बड़े २ सर्पोंके समूह लिपट रहे हैं ॥ ३ ॥ तीन नेत्र, माथेपर जटाजूट बांधे और शरीरमें बहुतसी श्वेतभस्म रमाये ॥ ४ ॥

डिमिडिमिडिमि डमरू कर बाजै ❀ शृंगि गरे मृगछाल बिराजै ॥ ५ ॥
तरुण अरुण अंबुजसम चरणा ❀ मयदुति भक्तहृदयतमहरणा ॥ ६ ॥

हाथमें डिम डिम डिम डिम ड्मरू बाजता है और गलेमें शृंगीनाद और मृगछाला पड़ी है ॥५॥ नवीन लाल कमलके समान कांतियुक्त चरण भक्तोंके हृदयमें अंधकारके नाश करनेवाले हैं ॥६॥

मणि बिभूतिभूषण त्रिपुरारी ❀ आनन शरदचंद्रछविहारी ॥ ७ ॥
इहि बिधि सोह काम रिपु कैसे ❀ धरे शरीर शांतरस जैसे ॥ ८ ॥

महादेवके भस्मही मणिजटित गहने हैं और मुख शरदके चन्द्रमाकी शोभाको हरनेवाला है ॥ ७ ॥ इस भांति महादेव कैसे शोभायमान हैं जैसे शांतरस शरीर धारण किये होवै ॥ ८ ॥

दो०–नाशि लंकपति स्वपनसम, बैठ कोशलाधीश ॥ ❀
संग चारि गंधर्वगण, गयउ तहाँ गौरीश ॥ १९० ॥ ❀

और रामचन्द्रजी स्वप्नके समान रावणको मारकर जहां बैठे थे वहां महादेवजी साथमें चार गंधर्वगण लेकर गये ॥ १९० ॥

॥ इति क्षेपक ॥

परम प्रीति कर जोरि जुग, कमलनयन भरि वारि ॥ ❀
पुलकगात गद्गद गिरा, बिनय करत त्रिपुरारि ॥ १९१ ॥ ❀

और महादेवजी बड़े प्रेमसे दोनों हाथ जोड़कर कमलसमान नेत्रोंमें जल भरके शरीरमें पुलकायमन हो गद्गदवाणीसे स्तुति करने लगे ॥ १९१ ॥

चौ०–मामभिरक्षय रघुकुलनायक ❀ धृतवरचापरुचिरकरसायक ॥ १ ॥
मोहमहाघनपटलप्रभंजन ❀ संशयविपिनअनलसुररंजन ॥ २ ॥

हे रघुवंशके स्वामी ! आप सुन्दर हाथमें श्रेष्ठ धनुषबाण धारण किये हो, मेरी रक्षा करो ॥ १ ॥ आप महाअज्ञानरूपी बादलोंके नाश करनेके लिये पवन, संशयरूपी बनके जलानेको अग्नि और देवताओंके आनन्द देनेवाले हो ॥ २ ॥

अगुण सगुण गुणमंदिर सुंदर ❀ भ्रमतमप्रबलप्रतापदिवाकर ॥ ३ ॥
कामक्रोधमदगजपंचानन ❀ बसहु निरंतर जनमनकानन ॥ ४ ॥

आप निर्गुण, सगुण, गुणोंके सुन्दर धाम और भ्रमरूपी अंधकारको बड़े प्रचंड़रूप सूर्य हो ॥ ३ ॥ (आप) काम क्रोध अभिमानरूपी हाथियोंको सिंहके समान हो और भक्तोंके मनरूपी बनमें निरंतर निवास करतेहो ॥ ४ ॥

विषयमनोरथपुंजकंजवन ❀ प्रबलतुषार उदार पारमन ॥ ५ ॥
भवबारिधिमंदर परमंदिर ❀ वारय तारय संसृति दुस्तर ॥ ६ ॥

विषय और कामनाओंके समूहरूपी कमलोंके वनको प्रबल तुषारके समान हो और बड़े उदार तथा मनसे परे हो ॥ ५ ॥ आप संसाररूपी समुद्र (के मथने) को मंदराचलरूप हो, परम धाम हो सो मुझे कठिन संसारसे छुटा कर तारो ॥ ६ ॥

श्यामगात राजीवबिलोचन ❀ दीनबंधु प्रणतारतिमोचन ॥ ७ ॥
अनुजजानकीसहित निरंतर ❀ वसहु रामनृप मम उरअंतर ॥ ८ ॥
मुनिरंजन महिमंडलमंडन ❀ तुलसिदास प्रभु त्रासबिखंडन ॥ ९ ॥

हे दीनबंधु ! (आपका) सांवला शरीर और कमलसे नेत्र दीनोंके दुःखको नाश करनेवाले हैं ॥ ७ ॥ हे राजा रामचन्द्रजी ! लक्ष्मण और सीताजीसहित मेरे हृदयमें सदा निवास करो ॥ ८ ॥ हे भगवान् ! आप मुनीश्वरोंको आनन्द देनेवाले पृथ्वीमंडलके आभूषण और दुःखोंके नाश करनेवाले हो ॥ ९ ॥

दो०–नाथ जबहिं कोसलपुरी, होइहि तिलक तुम्हार ॥ ❀
तब मैं आउब सुनहु प्रभु, देखन चरित उदार ॥ १९२ ॥ ❀

हे स्वामी ! सुनो जब अयोध्यापुरीमें तुम्हारा राजतिलक होगा तब मैं आपका सुन्दर चरित्र देखनेके लिये वहां आऊंगा ॥ १९२ ॥

चौ०–करि बिनती जब संभु सिधाए ❀ तब प्रभुनिकट बिभीषन आए ॥ १ ॥
नाइ चरन सिर कह मृदुबानी ❀ बिनय सुनहु प्रभु सारँगपानी ॥ २ ॥

जब महादेवजी विनती करके चले गये तब बिभीषण भगवान्के पास आये ॥१॥ और चरणोंको माथा नवाकर मीठी बाणीसे कहा, हे शार्ङ्गधनुषधारी प्रभो ! मेरी बिनती सुनिये ॥ २ ॥

सकल सदल प्रभु रावन मारा ❀ पावन जस त्रिभुवन विस्तारा ॥ ३ ॥
दीन मलीन हीनमति जाती ❀ मोपर कृपा कीन्ह बहुभाँती ॥ ४ ॥

हे स्वामी ! आपने कुटुम्ब और सेनासमेत रावणको मारा और पवित्र यश तीनों लोकमें फैलाया ॥३॥ और मैं जो दीन मलीन हीनबुद्धि और हीन जातिवाला हूं सो मुझपर बहुत भांति दया की॥४॥

अब जनगृह पुनीत प्रभु कीजै ❀ मज्जन करिय समरस्रम छीजै ॥ ५ ॥
देस कोस मंदिर संपदा ❀ देहु कृपालु कपिन्हकहँ मुदा ॥ ६ ॥

हे नाथ ! अब सेवकके घरको पवित्र कीजिये और स्नान कीजिये जिससे युद्धकी थकावट दूर हो॥५॥ हे कृपानिधान ! देश, खजाना, महल और संपत्ति प्रसन्न होकर वन्दरोंको दे दीजिये॥६॥

सब विधि नाथ मोहिं अपनाइय❀ पुनि मोहिं सहित अवधपुर जाइय॥७॥
सुनत बचन मृदु दीनदयाला ❀ सजल भये दोउ नयन बिसाला ॥ ८ ॥

हे स्वामी ! मुझे सब प्रकारसे (अपना कीजिये) और फिर मुझे साथ ले अयोध्यापुरीको चलिये ॥ ७ ॥ ऐसे कोमल और मीठे बचन सुनतेही दीनदयालु भगवान्के दोनों विशाल नेत्रोंमें जलभर आया और (कहने लगे) ॥ ८ ॥

दो०–तोर कोस गृह मोर सब, सत्य बचन सुन तात ॥ ❀
दसा भरतकी सुमिरि मोहिं, निमिष कलपसम जात ॥१९३॥ ❀

हे प्यारे ! सुन, तेरा कहना ठीक है, और तेरा खजाना घर सब मेराही है, परन्तु मुझे भरतकी दशा सरणकर एक २ पलक कल्पके समान बीतता है ॥ १९३ ॥

तापसवेष सरीर कृस, जपत निरंतर मोहि ॥ ❀
देखौं वेगि सो जतन करु, सखा निहोरौं तोहि ॥ १९४ ॥ ❀

वह तपस्वीके वेषमें दुबले शरीरसे निरंतर मेराही ध्यान करता रहता है. सो हे मित्र ! तेरा निहोरा करता हूं कि तू वह उपाय कर कि जिससे उसे जल्दी देखूं ॥ १९४ ॥

जो जैहों बीते अवधि, जियत न पाऊँ बीर ॥ ❀
प्रीति भरतकी समझ प्रभु, पुनि पुनि पुलकसरीर ॥ १९५ ॥ ❀

जो अवधिके बीतनेपर जाऊँगा तौ भाईको जीता न पाऊंगा. भगवान् भरतकी प्रीतिको समझके बार २ शरीरमें पुलकायमान हुये और (बोले कि) ॥ १९५ ॥

करहु कल्पभरि राज तुम, मोहि सुमिरहु मनमाहिं ॥ ❀
पुनि मम धाम सिधारहु, जहाँ संत सब जाहिं ॥ १९६ ॥ ❀

तुम कल्पभर (यहांका) राज्य करो और मनमें मेरा सरण करते रहो, फिर मेरे धामको सिधारोगे जहां सब संत जाते हैं ॥ १९६ ॥

चौ०–सुनत बिभीषन बचन रामके ❀ हरषि गहे पद कृपाधामके ॥ १ ॥
बानर भालु सकल हरषाने ❀ गहि प्रभुपद गुन विमल बखाने ॥ २ ॥

विभीषणने रामचन्द्रजीके वचन सुनतेही प्रसन्नतासे उनके चरण छुये ॥ १ ॥ रीछ बिन्दर सब प्रसन्न हुये और भगवान्के चरण पकड़कर उनके निर्मल गुण वर्णन करने लगे ॥ २ ॥

बहुरि बिभीषन भवन सिधावा ❀ मनिगन बसन बिमान भरावा ॥ ३ ॥
लै पुष्पक प्रभु आगे राखा ❀ हँसिकै कृपासिंधु अस भाखा ॥ ४ ॥

फिर विभीषण घरको गया और मणियोंके समूह और वस्त्रोंसे विमान भराया ॥३॥ और पुष्पक (विमान) लाकर भगवान्के आगे रक्खा. तव दयाके समुद्र (भगवान्) ने हँसकर यों कहा कि ॥४॥

चढ़ि विमान सुनु सखा बिभीषन ❀ गगन जाइ वर्षहु पट भूषन ॥ ५ ॥
नभपर जाइ बिभीषन तबहीं ❀ वर्षिदिये पट भूषन सबहीं ॥ ६ ॥

हे मित्र विभीषण ! सुनो, विमानपर चढ़कर और आकाशमें जाकर वस्त्र और आभूषणोंकी वर्षा करदो ॥ ५ ॥ विभीषणने उसी समय आकाशमें जाकर वस्त्र और आभूषण वर्षा दिये ॥ ६ ॥

जो जेहि मन भावै सो लेई ❀ मनि मुख मेलि ड़ारि कपि देई ॥ ७ ॥
हँसत राम सिय अनुजसमेता ❀ परम कौतुकी कृपानिकेता ॥ ८ ॥

जो जिसके मनमें अच्छा लगता है वह वही लेते हैं और बन्दर मणियोंको मुखमें दे दे कर फिर डालदेते हैं ॥७॥ सो दयानिधन वड़े खिलाड़ी रामचन्द्रजी सीता लक्ष्मणसहित हँसतें हैं॥ ८ ॥

दो०–मुनि जेहिं ध्यान न पावहीं, नेतिनेति कह वेद ॥ ❀
कृपासिंधु सोइ कपिनसों, करत अनेक विनोद ॥ १९७ ॥ ❀

मुनीश्वर जिसको ध्यानमेंभी नहीं पाते और वेद जिसे नेति २ कहते हैं वेही कृपासिंधु रघुनाथजी बन्दरोंसे अनेक खेल करते हैं ॥ १९७ ॥

उमा जोग जप दान तप, नाना व्रत मख नेम ॥ ❀
राम कृपा नहिं करहिं तसि, जसि निष्केवल प्रेम ॥ १९८ ॥ ❀

(महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! रामचन्द्रजी योग, जप, दान, तप, अनेक व्रत, यज्ञ और नेमके करनेसेभी ऐसी दया नहीं करते जैसी कि केवल प्रीतिसे दया करते हैं ॥ १९८ ॥

चौ०–भालु कपिन पट भूषन पाये ❀ पहिरि पहिरि रघुपतिपहिं आये ॥ १ ॥
नाना जिनस देखि प्रभु कीसा ❀ पुनि पुनि हँसत कोसलाधीसा ॥ २ ॥

रीछ बन्दरोंने वस्त्र और आभूषण पाये और पहन २ कर रामचन्द्रजीके पास आये ॥ १ ॥ भगवान् अयोध्यानाथ अनेक अनेक रंगके बन्दरोंको देख बार २ हँसते हैं ॥ २ ॥

चितै सबनिपर कीन्हीं दाया ❀ बोले मधुर बचन रघुराया ॥ ३ ॥
तुम्हरे बल मैं रावन मारा ❀ तिलक बिभीषनकहँ पुनि सारा ॥ ४ ॥

रामचन्द्रजी सबकी ओर देख दयाकरके मीठे वचन बोले कि ॥ ३ ॥ तुम्हारे बलसे मैंने रावण मारा और फिर बिभीषणको राज्यतिलक किया ॥ ४ ॥

निज निज गृह अब तुम सब जाहू ❀ सुमिरहु मोहिं डरहु जनि काहू ॥ ५ ॥
सुनत वचन प्रेमाकुल बानर ❀ जोरि पानि बोले सब सादर ॥ ६ ॥

अब तुम सब अपने २ घरको जाओ और मेरा सरण करो और किसीसे मत डरो ॥ ५ ॥ सब बन्दर वचन सुनतेही प्रेममें डूब गये और हाथ जोड़कर आदरसे बोले कि ॥ ६ ॥

प्रभु जो करहु तुमहिं सब सोहा ❀ हमरे हिय ऊपजै सुनि मोहा ॥ ७ ॥
दीन जानि कपि किये सनाथा ❀ तुम त्रैलोक्यईस रघुनाथा ॥ ८ ॥

हे भगवन्! जो कुछ करो तुमको सब सोहता है, परन्तु सुनकर हमारे हृदयमें तौ माया-मोह उत्पन्न होता है ॥ ७ ॥ हे रामचन्द्रजी! आप तीनों लोकोंके स्वामी हो, आपने बन्दरोंको दीन जानकर सनाथ किया ॥ ८ ॥

सुनि प्रभुबचन लाज हम मरहीं ❀ मसक कबहुँ खगपतिहित करहीं ॥ ९ ॥
देखि रामरुख वानर ऋच्छा ❀ प्रेममगन नहिं गृहकी इच्छा ॥ १० ॥

सो हे स्वामी! आपके बचन सुनकर हम लाजसे मरे जाते हैं क्योंकि भला कहीं मच्छरभी गरुडजीका हित कर सक्ते हैं ॥ ९ ॥ रामचन्द्रजीका रुख देखकर रीछ बन्दर स्नेहमें मगन हैं और घर जानेकी इच्छा नहीं है ॥ १० ॥

दो०—प्रभुप्रेरित कपि भालु सब, रामरूप उर राखि ॥ ❀
हर्ष बिषाद समेत तब, चले बिनय बहु भाखि ॥ १९९ ॥ ❀

भगवान्की आज्ञासे सब रीछ बन्दर रामचन्द्रजीके स्वरूपको हृदयमें धारणकर और बहुत सी बिनती करके आनन्द और दुःखसमेत उसी समय बिदा हुये ॥ १९९ ॥

जाम्बवन्त कपिराज नल, अंगदादि हनुमान ॥ ❀
सहितविभीषन अपर जे, जूथप अति बलवान ॥ २०० ॥ ❀

जाम्बवंत, सुग्रीव, नल, अंगद और हनूमान् आदि बिभीषणसहित जो और बडे २ बलवान् सेनापति थे ॥ २०० ॥

कहि न सकहिं कछु प्रेमवस, भरि भरि लोचनबारि ॥ ❀
संमुख चितवहिं रामतन, नयन निमेष निवारि ॥ २०१ ॥ ❀

सो स्नेहके वश कुछ कह नहीं सक्ते किंतु नेत्रोंमें जल भर २ के और नेत्रोंके पलक रोक २ कर रामचन्द्रजीके शरीरको पाससे देखते हैं ॥ २०१ ॥

चौ०—अतिसय प्रीति देखि रघुराई ❀ लीन्हें सकल विमान चढ़ाई ॥ १ ॥
मनमहँ बिप्रचरन सिर नावा ❀ उत्तर दिसहिं बिमान चलावा ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीने उनकी बड़ी प्रीति देखकर सबको विमानपर चढ़ा लिया ॥ १ ॥ और मनमें ब्राह्मणोंके चरणोंको माथा नवाकर उत्तर दिशाको विमान चलाया ॥ २ ॥

चलत विमान कोलाहल होई ❀ जय रघुबीर कहैं सबकोई ॥ ३ ॥
सिंहासन अति उच्च मनोहर ❀ सियसमेत बैठे प्रभु तापर ॥ ४ ॥

विमानके चलतेही कोलाहल होने लगा और सब कोई रामचन्द्रजीकी जय बोलने लगे ॥ ३ ॥ अत्यंत ऊंचा और मनोहर एक सिंहासन था उसपर सीताजीसहित भगवान् विराजमान् हुये ॥ ४ ॥

राजत राम सहित भामिनी ❀ मेरुसृंग जनु घनदामिनी ॥ ५ ॥
रुचिर विमान चला अति आतुर ❀ कीन्ही सुमनवृष्टि हर्षे सुर ॥ ६ ॥

रामचन्द्रसमेत सीताजी ऐसी शोभायमान हैं मानों सुमेरु पर्वतके शिखरपर बादलके साथ बिजली हो ॥ ५ ॥ सुन्दर विमान बहुत शीघ्रतासे चला तौ देवताओंने प्रसन्न होकर फूलोंकी वर्षा करी ॥ ६ ॥

परम सुखद चलि त्रिविध बयारी ❀ सागर सर सरि निर्मल वारी ॥ ७ ॥
सकुन होहिं सुंदर चहुँ पासा ❀ मन प्रसन्न निर्मल आकासा ॥ ८ ॥

अति सुख देनेवाली (शीतल मन्द सुगन्ध) तीन प्रकारकी पवन चलने लगी और समुद्र और तलावोंमें जल निर्मल होगये ॥ ७ ॥ चारों ओर सुन्दर शकुन होने लगे और सबके मन तथा आकाश निर्मल हो गये ॥ ८ ॥

कह रघुबीर देख रन सीता ❀ लछमन हतेउ इहाँ इँद्रजीता ॥ ९ ॥
अंगद हनूमानके मारे ❀ रनमहँ परे निसाचर भारे ॥ १० ॥

रामचन्द्रजीने कहा, हे सीता ! देख, लड़ाईमें यहां लक्ष्मणने मेघनादको मारा था ॥ ९ ॥ और अंगद तथा हनूमान्के मारे हुये बड़े २ राक्षस लड़ाईमें पड़े हैं ॥ १० ॥

कुंभकर्न रावन दोउ भाई ❀ इहाँ हतेउँ सुरमुनिदुखदाई ॥ ११ ॥

और मैंने देवता और मुनीश्वरोंके दुःख देनेवाले कुंभकर्ण और रावण दोनों भाइयोंको यहां मारा था ॥ ११ ॥

दो०–सुन्दर सेतु देखु यह, थापेउँ सिव सुखधाम ॥ ❀
सीतासहित कृपायतन, संभुहिं कीन्ह प्रनाम ॥ २०२ ॥ ❀

इस सुन्दर पुलको देखो. यहां मैंने सुखके धाम महादेवजीकी स्थापना कीथी. फिर जानकीजी समेत भगवान्ने शिवजीको प्रणाम किया ॥ २०२ ॥

जहँ जहँ कृपासिंधु बन, कीन्ह बास बिस्राम ॥ ❀
सकल देखाए जानकिहिं, कहि कहि सबके नाम ॥ २०३ ॥ ❀

दयाके समुद्र (रामचन्द्र) ने जहां जहां बनमें बसकर विश्राम किया था सो सबके नाम कह २ कर सीताजीको सब दिखाये ॥ २०३ ॥

चौ०–सपदि विमान तहाँ चलि आवा ❀ दंडकबन जहँ परम सुहावा ॥ १ ॥
कुंभजादि मुनिनायक नाना ❀ गये राम सबके अस्थाना ॥ २ ॥

विमान शीघ्रही वहाँ चला आया जहां परम शोभायमान दंडकबन था ॥ १ ॥ अगस्त्य आदि जो अनेक मुनिराज थे रघुनाथजी उन सबके स्थानोंपर गये ॥ २ ॥

सकल ऋषिन्हसों पाइ असीसा ❀ आये चित्रकूट जगदीसा ॥ ३ ॥
तहँ करि ऋषिन्हकेर संतोषा ❀ चला विमान तहाँते चोषा ॥ ४ ॥

तब ऋषियोंसे आशीर्वाद पाकर भगवान् चित्रकूटपर आये ॥ ३ ॥ और वहां ऋषियोंका संतोष करके सुन्दर विमान वहांसे आगे चला ॥ ४ ॥

बहुरि राम जानकिहिं दिखाई ❀ यमुना कलिमलहरनि सुहाई ॥ ५ ॥
पुनि देखी सुरसरी पुनीता ❀ राम कहा प्रनाम करु सीता ॥ ६ ॥

फिर रामचन्द्रजीने सीताजीको कलियुगके पाप नाश करनेवाली यमुनाजीके दर्शन कराये ॥ ५ ॥ फिर पवित्र गंगाजी देखीं तौ रामचन्द्रजीने कहा, हे जानकी ! (गंगाजीको) प्रणाम करो ॥ ६ ॥

तीरथपति पुनि दीख प्रयागा ❀ देखत जाहि पाप सब भागा ॥ ७ ॥
देखि राम पावन पुनि वेनी ❀ हरनसोक सुरलोकनिसेनी ॥ ८ ॥
देखि अवधपुरी अति पावनि ❀ त्रिविधताप भवरोगनसावनि ॥ ९ ॥

फिर तीर्थराज प्रयाग दिखाई दिया जिसे देखतेही सब पाप भाग जाते हैं ॥ ७ ॥ फिर रामचन्द्रजीने पवित्र त्रिवेणीका दर्शन किया जो शोकके नाश करनेवाली और स्वर्गलोककी निसेनी है ॥ ८ ॥ फिर अति पवित्र अयोध्यापुरी देखी जो तीनों प्रकारके ताप और संसारी रोगोंके नाश करनेवाली है ॥ ९ ॥

दो०–तब रघुनंदन सियसहित, अवधहिं कीन्ह प्रनाम ॥ ❀
सजल विलोचन पुलकतनु, पुनि पुनि हर्षित राम ॥ २०४ ॥ ❀

तब रामचन्द्रजीने सीतासमेत अयोध्यापुरीको प्रणाम किया और रघुनाथजी नेत्रोंमें जल भरकर और शरीरमें पुलकायमान हो वार २ आनन्दित हुये ॥ २०४ ॥

बहुरि त्रिवेनी आय प्रभु, हर्षित मज्जन कीन्ह ॥ ❀
कपिन्हसमेत महीसुरन्हि, दान विविधविधि दीन्ह ॥ २०५ ॥❀

फिर भगवान्‌ने त्रिवेणीपर आकर प्रसन्नतासे स्नान किया और बन्दरोंसहित ब्राह्मणोंको अनेक प्रकारके दान दिये ॥ २०५ ॥

चौ०–प्रभु हनुमंतहिं कहा बुझाई ❀ धरि द्विजरूप अवधपुर जाई ॥ १ ॥
भरतहिं कुसल हमारि सुनावहु ❀ समाचार लै पुनि चलि आवहु ॥ २ ॥

भगवान्‌ने हनुमान्‌से समझाकर कहा कि तुम ब्राह्मणका रूप धारणकर अयोध्यापुरीको जाओ ॥ १ ॥ और भरतको हमारी कुशल सुनाओ और समाचार लेकर फिर चले आओ ॥ २ ॥

तुरत पवनसुत गवनत भयऊ ❀ तब प्रभु भरद्वाजपहँ गयऊ ॥ ३ ॥
नानविधि पूजा मुनि कीन्ही ❀ अस्तुति करि पुनि आसिष दीन्ही ॥४॥

हनूमान् शीघ्र चलदिये. तब भगवान् भरद्वाज मुनिके पास गये ॥ ३ ॥ मुनीश्वरने अनेक भांति पूजा करी और स्तुति करके फिर आशीर्वाद दिया ॥ ४ ॥

मुनिपद बंदि जुगल कर जोरी ❀ चढ़ि विमान प्रभु चले बहोरी ॥ ५ ॥
इहाँ निषाद सुना प्रभु आए ❀ नाव नाव कहि लोक बुलाए ॥ ६ ॥

मुनीश्वरके चरणोंको दंडवतकर और दोनों हाथ जोड़ फिर भगवान् विमानपर चढ़कर चले ॥ ५ ॥ यहां निषादने सुना कि भगवान् आये तौ नाव लाओ २ ऐसे कहकर लोगोंको बुलाने लगा ॥ ६ ॥

सुरसरि लाँघि यान जब आवा ❀ उतरा तहँ प्रभुआयसु पावा ॥ ७ ॥
तब सीता पूजी सुरसरी ❀ बहुप्रकार पुनि चरनन्हि परी ॥ ८ ॥

गंगाजी उतरकर जब विमान आया तौ भगवान्‌की आज्ञा पाकर वहां उतरा ॥ ७ ॥ तब सीताजीने गंगजीका पूजन किया और फिर बहुत भांति चरणोंमें पड़ीं ॥ ८ ॥

दीन्ह असीस मुदित मन गंगा ❀ सुंदरि तब अहिवात अभंगा ॥ ९ ॥
सुनतहिं गुह धावा प्रेमाकुल ❀ आवा निकट परम सुखसंकुल ॥ १० ॥

गंगाजीने प्रसन्न मनसे आशीर्वाद दिया कि हे सुंदरी! तुम्हारा सुहाग अचल होगा ॥ ९ ॥ निषाद सुनतेही प्रेममें व्याकुल होकर दौड़ा और बड़े सुखसे मगन होता हुआ पास आया ॥ १० ॥

प्रभुहिं विलोकि सहित बैदेही ❀ परेउ अवनी तनुसुधि नहिं तेही ॥११॥
परम प्रीति विलोकि रघुराई ❀ हर्षि उठाइ लीन्ह उर लाई ॥ १२ ॥

भगवान्‌को सीताजी समेत देख पृथ्वीपर गिरपड़ा और उसे शरीरकीभी सुध नहीं रही ॥ ११ ॥ रामचन्द्रजीने उसका बड़ा स्नेह देख प्रसन्नतासे उठाकर हृदयसे लगा लिया ॥ १२ ॥

छं०-लिय हृदय लाइ कृपानिधान सुजान राम रमापती ।
बैठारि परम समीप पूछी कुसल सो करि वीनती ॥
अब कुसल पदपंकज बिलोकि बिरंचि संकरसेव्य जे ।
सुखधाम पूरनकाम राम नमामि राम नमामि ते ॥ ६५ ॥

दयाके समुद्र चतुर रामचन्द्र लक्ष्मीके पतिने हृदयसे लगा लिया और बहुतही पास बिठाकर कुशल पूछी. (तब निषादने) प्रार्थना करके कहा कि जिन कमलसमान चरणोंका ब्रह्मा और महादेव आदि सेवन करते हैं उन्हींका दर्शन करके अब कुशल है. हे सुखके स्थान पूर्णकाम रामचन्द्रजी! आपको वारंवार नमस्कार है ॥ ६५ ॥

सब भाँति अधम निषाद सो हरि भरत ज्यों उर लाइये ।
मतिमंद तुलसीदास सो प्रभु मोहबस बिसराइये ॥
यह रावनारिचरित्र पावन रामपदरतिप्रद सदा ।
कामादिहर बिज्ञानकर सुर सिद्ध मुनि गावहिं मुदा ॥ ६६ ॥

निषाद सब प्रकारसे नीच था उसे भगवान्ने भरतकी भांति हृदयसे लगा लिया, तुलसीदास अपनेको कहते है कि हे मूर्ख! क्या उन भगवान्को अज्ञानके वश भूलना चाहिये? रावणके शत्रु रघुनाथजीका यह पवित्र चरित्र रामजीके चरणोंमें सदा प्रीतिका देनेवाला, काम क्रोध लोभ मोहका हरनेवाला और परम ज्ञानका देनेवाला है; इसे देवता सिद्ध और मुनीश्वर आनन्दसे गाते हैं ॥६६॥

दो०-समरबिजय रघुबीरके, सुनहिं जे संत सुजान ॥
बिजय बिबेक बिभूति नित, तिनहिं देहिं भगवान ॥ २०६ ॥

जो चतुर संत रामचन्द्रजीके युद्धमें बिजयको प्रगट करनेवाले चरित्रको सुनैंगे उन्हैं भगवान् सर्वदा विजय ज्ञान और संपत्ति देंगे ॥ २०६ ॥

यह कलिकाल मलायतनु, मन करि देखु बिचार ॥
श्रीरघुनायकनाम तजि, नहिं कछु आन अधार ॥ २०७ ॥

मनमें विचार करके देखो कि यह कलिकाल पापोंका घर है; (सो इसमें) श्रीरामचन्द्रजीके नामको छोड़ और कुछ अधार नहीं है; ॥ २०७ ॥

छन्द.

भैरवभवानीनाथके चरणारविन्द मनाइकै ॥ भजि भारती भुवनेश्वरी भगवतीको शिर नाइकै ॥ वर तुकाराम सुजानकी अनुमति अनूपम पाइकै ॥ किय पूर्ण लंकाकांडकी टीका ललित चित चाइकै ॥ १ ॥

दोहा.

शंकरमुख शर खण्ड शशि, संवतसर वर पाय ॥
माघमास मावस करी, परिपूरण रुचि लाय ॥ २ ॥

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विमलवैराग्यसंपादनो
नाम षष्ठः सोपानः समाप्तः ॥ ६ ॥

शुभं भवतु ॥

श्रीसीतारामचन्द्रार्पणमस्तु ॥

श्रीगोस्वामी

तुलसीदासकृतरामायणम्

पीयूषधाराहिंदीभाषाटीकासहितम्।

(उत्तरकांडम्)

भरतका मिलाप.

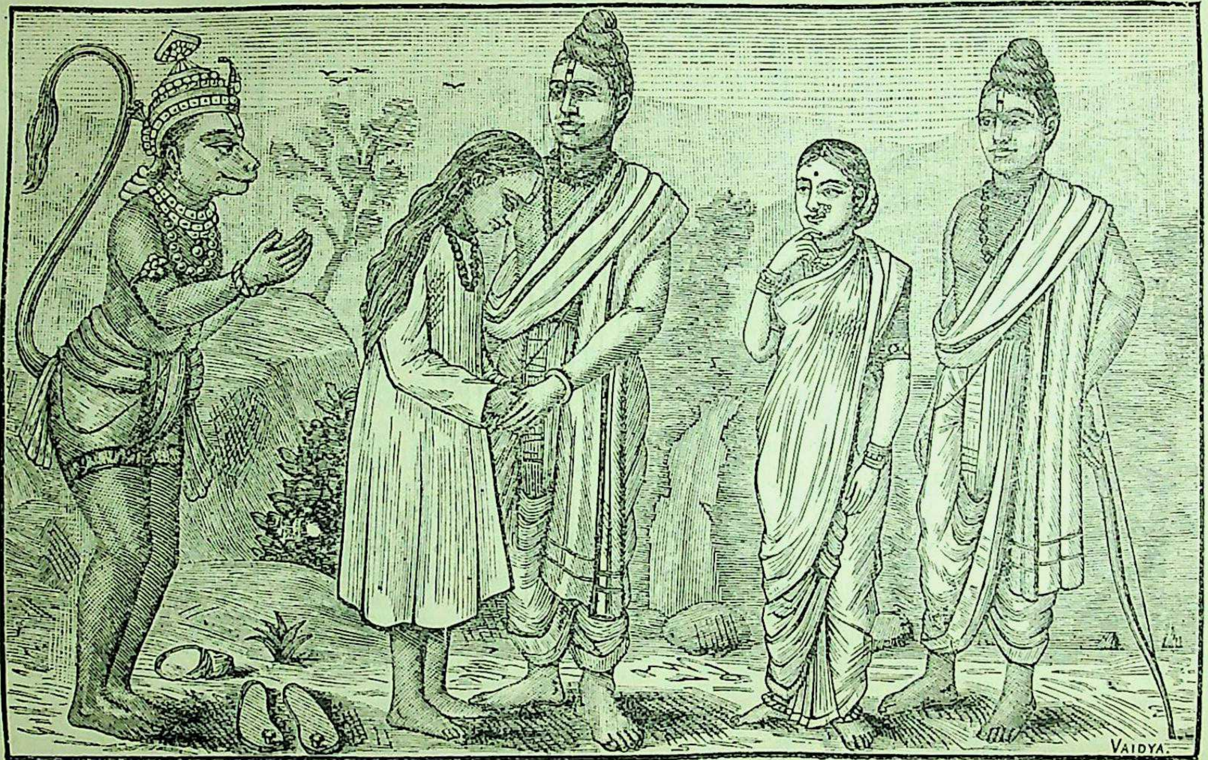

॥ श्रीः ॥

श्रीगोस्वामी

तुलसीदासकृतरामायणम् ।

उत्तरकांडम् ।

मंगलाचरणम्.

श्लोकः-केकीकण्ठाभनीलं सुरवरविलसद्विप्रपादाब्जचिह्नं
शोभाढ्यं पीतवस्त्रं सरसिजनयनं सर्वदा सुप्रसन्नम् ॥
पाणौ नाराचचापं कपिनिकरयुतं बंधुना सेव्यमानं
नौमीड्यं जानकीशं रघुवरमनिशं पुष्पकारूढरामम् ॥ १ ॥
कोशलेंद्रपदकंजमंजुलौ कोमलावजमहेशवंदितौ ॥
जानकीकरसरोजलालितौ चिंतकस्य मनभृंगसंगिनौ ॥ २ ॥
कुंदइंदुदरगौरसुंदरं अंबिकापतिमभीष्टमंदिरम् ॥
कारुणीककलकंजलोचनं नौमि शंकरमनंगमोचनम् ॥ ३ ॥

मंगलाचरण-सवैया ।

संतत शांत सरूप अनूप विना अघ हैं निरवानके दायक ।
सेवत हैं किधि शंभु सुरेश निरंतर वेद विधान विधायक ॥
वंदतु हौं करुणाकर सो प्रभु भूपशिरोमणि श्रीरघुनायक ।
उत्तर कांड करौ अब पूरन सज्जनभक्तनके मनभायक ॥ १ ॥

श्लोकार्थः-मयूरके कंठकी आभाके समान सुन्दर शरीरवाले, देवताओंके शिरोमणि, हृदयमें ब्राह्मण (भृगु) के चरणकमलके चिह्नसे शोभित, कान्तिकरके युक्त, पीतांबर धारण किये, कमलके समान नेत्रवाले, सर्वदा प्रसन्नस्वरूप, हाथोंमें धनुषबाण लिये, वानरोंके समूहको साथ लिये लक्ष्मणजीसे सेवित, और पुष्पक विमानपर विराजमान ऐसे सीतापति रामचन्द्रको मैं प्रणाम करताहूं ॥१॥ ब्रह्मा और शंकरसे बन्दना कियेगये और जानकीके करकमलोंसे स्पर्श कियेगये तथा भक्तोंके मनरूपी भ्रमरके साथ रहनेवाले ऐसे रामचन्द्रजीके कोमल और सुन्दर चरणकमलोंको बन्दना करताहूं ॥२॥ कुन्दके पुष्प, चन्द्रमा और शंखके समान सुन्दर गौरवर्णवाले पार्वतीके पति,

तथा वांछित फलके दाता, करुणासे पूर्ण, सुन्दर कमलके समान नेत्रोंसे शोभित तथा कामदेवके भस्म करनेवाले ऐसे शंकरको मैं प्रणाम करताहूं ॥ ३ ॥

दो०-रहा एक दिन अवधिकर, अतिआरत पुरलोग ॥ ❀
जहँ तहँ सोचहिं नारि नर, कृसतनु रामबियोग ॥ १ ॥ ❀

अवधिका एक दिन बाकी रहगया है इस कारण नगरके लोग बड़े बेचैन हैं और स्त्रीपुरुष जहां तहां सोचते हैं (अशक्त होनेके कारण कोई किसीसे पूछ नहीं सक्ते) क्योंकि रामचन्द्रजीके वियोगमें उनके शरीर दुवले पड़गये हैं ॥ १ ॥

सकुन होहिं सुन्दर सकल, मन प्रसन्न सबकेर ॥ ❀
प्रभुआगमन जनाव जनु, नगर रम्य चहुँफेर ॥ २ ॥ ❀

परन्तु सब सुन्दर शकुन जो होते हैं इससे सबके मन प्रसन्न होरहे हैं और नगरकी सुन्दरता मानों चारों ओरसे भगवान्के आगमनको जतारही है ॥ २ ॥

कौसल्यादिक मातु सब, मन अनंद अस होइ ॥ ❀
आये प्रभु सिय अनुजयुत, कहन चहत अस कोइ ॥ ३ ॥ ❀

कौशल्या आदि सब माताओंके मनमें ऐसा आनन्द होता है कि "सीता और लक्ष्मणसमेत भगवान् आगये" ऐसा कोई कहनाही चाहता है ॥ ३ ॥

भरतनयनभुज दछिन, फरकहिं बारहिं बार ॥ ❀
जानि सकुन मन हर्ष अति, लागे करन विचार ॥ ४ ॥ ❀

भरतके दहिने नेत्र और भुजदंड वारंवार फडकते हैं सो (अच्छे) शकुन जानकर बड़े आनन्दसे मनमें विचार करने लगे कि (रामजीके वियोगमें) ॥ ४ ॥

चौ०-रहा एक दिन अवधिअधारा ❀ समुझत मन दुख भयउ अपारा ॥ १ ॥
कारन कवन नाथ नहिं आयउ ❀ जानि कुटिल प्रभु मोहिं विसरायउ ॥२॥

अवधिहीका एक आधार था सो उसका एकही दिन बाकी रहगया है। यह समझतेही मनमें अपार दुःख होने लगा ॥ १ ॥ क्या कारण है कि भगवान् नहीं आये? स्वामीने मुझे कुटिल जानकर त्याग दिया ॥ २ ॥

अहह धन्य लछमन बडभागी ❀ रामपदारविंदअनुरागी ॥ ३ ॥
कपटी कुटिल मोहिं प्रभु चीन्हा ❀ ताते नाथ संग नहिं लीन्हा ॥ ४ ॥

अहा! धन्य तौ बड़भागी लक्ष्मण हैं जिन्होंने रामचन्द्रजीके कमलसमान चरणोंमें प्रीति करी ॥३॥ भगवान्ने मुझे तौ कपटी और कुटिल जाना इसीसे स्वामीने अपने साथ नहीं लिया ॥ ४ ॥

जो करनी समुझैं प्रभु मोरी ❀ नहिं निस्तार कलपसत कोरी ॥ ५ ॥
जनअवगुन प्रभु मान न काउ ❀ दीनबंधु अतिमृदुल सुभाउ ॥ ६ ॥

जो भगवान् मेरी करनीको समझै तौ सौ करोड़ कल्पोंतकभी मेरा निस्तारा नहीं होसक्ता ॥५॥ परन्तु भगवान् तौ मानों किसीके अवगुणोंको नहीं मानते हैं, क्योंकि दीनबंधु और अति कोमल स्वभाव हैं ॥ ६ ॥

मोरे जिय भरोस दृढ सोई ❀ मिलिहहिं राम सकुन सुभ होई ॥ ७ ॥
वीते अवधि रहैं जो प्राना ❀ अधम कवन जग मोहिं समाना ॥ ८ ॥

सोही मेरे हृदयमें पक्का भरोसा है और शकुनभी ऐसे होरहे हैं (इसलिये) रामचन्द्रजी मिलेंगे ॥ ७ ॥ और जो अवधि वीतनेपरभी प्राण रहजायँ तौ मेरे समान पापी संसारमें कौन है ? ॥ ८ ॥

दो०-रामबिरहसागरमहँ, भरत मगन मन होत ॥
विप्ररूप धरि पवनसुत, आयगयउ जिमि पोत ॥ ५ ॥

रामचन्द्रजीके वियोगरूपी समुद्रमें भरतका मन डूबने लगे उसी समय हनुमान् ब्राह्मणका रूप धारणकरके नौकाके समान आगये (हनुमान्‌जीने भरतजीको जिस दशामें देखा सो आगे कहते हैं) ५

बैठे देखि कुसासन, जटामुकुट कृसगात ॥
राम राम रघुपति जपत, स्रवत नयनजलजात ॥ ६ ॥

भरतजी कुशाके आसनपर बैठे है जटाओंका मुकुट (धारण किये हैं), शरीर कृश हो रहा है राम २ और रघुपति जप रहे हैं और कमलसमान नेत्रोंसे जल वह रहा है ॥ ६ ॥

चौ०-देखत हनूमान अति हर्षेउ ❀ पुलकगात लोचन जल वर्षेउ ॥ १ ॥
मनमहँ बहुत भाँति सुख मानी ❀ बोलेउ स्रवनसुधासम वानी ॥ २ ॥

हनूमान् देखतेही बहुत प्रसन्न हुये, उनका शरीर पुलकायमान होगया और नेत्रोंसे आँसू टपकने लगे ॥ १ ॥ मनमें बहुत भाँति सुख मानकर कानोंको अमृतके समान वाणी बोले कि (हे भरतजी !) ॥ २ ॥

जासु बिरह सोचहु दिन राती ❀ रटहु निरंतर गुनगनपाँती ॥ ३ ॥
रघुकुलतिलक सुजन सुखदाता ❀ आये कुसल देवमुनित्राता ॥ ४ ॥

जिनके वियोगको दिनरात सोचते रहते हो और जिनके अनेक गुणानुवादोंको लगातार रटते रहते हो ॥ ३ ॥ वेही रघुवंशके तिलक सुन्दर नररूप, आनन्द देनेवाले और देवता तथा मुनीश्वरोंके रक्षक कुशलपूर्वक आन पहुँचे हैं ॥ ४ ॥

रिपु रन जीती सुजस सुर गावत ❀ सीताअनुजसहित प्रभु आवत ॥ ५ ॥
सुनत बचन बिसरे सब दूखा ❀ तृषावंत जनु पाव पियूखा ॥ ६ ॥

वे भगवान् जिनके सुन्दर यशको देवता गाते हैं वैरीको लड़ाईमें जीतकर जानकी और लक्ष्मणको साथ लिये आरहे हैं ॥ ५ ॥ बचन सुनतेही (भरतके) सब दुःख ऐसे जाते रहे, मानों प्यासेको अमृत मिल गया (और बोले) ॥ ६ ॥

को तुम तात कहाँते आए ❀ मोहिं परम प्रिय बचन सुनाए ॥ ७ ॥
मारुतसुत मैं कपि हनुमाना ❀ नाम मोर सुनु कृपानिधाना ॥ ८ ॥

हे प्यारे ! तुम कौन हो? कहाँसे आये हो? जो मुझे ऐसे बहुतही प्यारे बचन सुनाये हैं (हनूमान्‌जीने कहा) ॥ ७ ॥ हे कृपानिधान ! सुनो मैं पवनका पुत्र वानर हूँ और हनूमान् मेरा नाम है ॥ ८ ॥

दीनबंधु रघुपतिकर किंकर ❀ सुनत भरत भेटे उठि सादर ॥ ९ ॥
मिलत प्रेम नहिं हृदय समाता ❀ नयन स्रवत जल पुलकित गाता ॥ १० ॥

दीनबन्धु रामचन्द्रजीका मैं सेवक हूं. यह सुनतेही भरतजी आदरसे उठकर मिले ॥ ९ ॥ मिलतेमें स्नेह हृदयमें नहीं समाता, नेत्रोंसे जल बहने लगा और शरीर पुलकायमान होगया (और बोले) ॥ १० ॥

कपि तव दरस सकल दुख बीते ❀ मिले आजु मोहिं राम सप्रीते ॥ ११ ॥
बार बार पूंछी कुसलाता ❀ तोकहँ कहा देउँ सुनु भ्राता ॥ १२ ॥

हे हनूमान्! तुम्हारे देखनेसे सब दुःख दूर होगये (और ऐसा दीखा मानो) आज मुझे स्नेहसहित रामचन्द्रजीही मिले ॥ ११ ॥ बार २ कुशल पूछी (और कहा) हे भाई! सुन, तुझे क्या दूं? ॥ १२ ॥

यहि संदेससरिस जगमाहीं ❀ करि बिचार देखेउँ कछु नाहीं ॥ १३ ॥
नाहिन उऋन तात मैं तोही ❀ अब प्रभुचरित सुनावहु मोही ॥ १४ ॥

क्योंकि मैंने बिचारकर देख लिया कि इस सँदेशेके समान संसारमें कुछ नहीं है ॥ १३ ॥ हे प्यारे! मैं तुझसे उऋण नहीं होसक्ता अब मुझे भगवान्के चरित्र सुनाओ ॥ १४ ॥

तब हनुमान नाइ पद माथा ❀ कही सकल रघुपतिगुनगाथा ॥ १५ ॥
कहु कपि कबहुँ कृपालु गुसाँई ❀ सुमिरत मोहि दासकी नाँई ॥ १६ ॥

तब हनूमान्ने चरणोंको शिर नवाकर रामचन्द्रजीके गुणोंकी सब कथा कही (फिर भरतजी पूछने लगे कि) ॥ १५ ॥ हे हनूमान्! कहो दयानिधान भगवान् कभी मुझेभी सेवकके समान (जानकर) याद करते थे ॥ १६ ॥

छं०-निजदास ज्यों रघुवंसभूषन कबहुँ मम सुमिरन कऱ्यो। ❀
सुनि भरतबचन बिनीत अति कपि पुलकितनुचरनन्हि पऱ्यो ❀
रघुबीर निजमुख जासु गुनगन कहत अगजगनाथ सो। ❀
काहे न होहु बिनीत परम पुनीत सद्गुनसिंधु सो ॥ १ ॥ ❀

रघुवंशके आभूषण रामचन्द्रजीने अपने सेवककी भांति कभी मेराभी स्मरण कियाथा? ऐसे भरतके बहुत बड़े आधीनीके वचन सुनकर हनूमान्जी शरीरमें पुलकायमान हो चरणोंमें गिरपड़े (और सोचने लगे कि) चराचरके स्वामी रामचन्द्र जिसके गुणोंके समूहोंको अपने मुखसे वर्णन करते हैं सो (भरत) नम्र, परम पवित्र और अच्छे गुणोंके समुद्र क्यों न हों, अर्थात् होनेही चाहियें १

दो०-रामप्रानप्रिय नाथ तुम, सत्य वचन मम तात ॥ ❀
पुनि पुनि मिलत भरतसन, प्रेम न हृदय समात ॥ ७ ॥ ❀

हे स्वामी! तुम रामचन्द्रजीको प्राणोंसे प्यारे हो, यह मेरे बचन सत्य मानना (यह कहकर) भरतजीसे बार २ मिलते हैं और हृदयमें प्रेम नहीं समाता ॥ ७ ॥

सो०-भरतचरन सिर नाइ, तुरत गयउ कपि रामपहँ ॥ ❀
कही कुसल सब जाइ, हर्षि चले प्रभु यान चढ़ि ॥ १ ॥ ❀

फिर हनूमान्जी भरतजीके चरणोंको शिर नवाकर शीघ्रही रामचन्द्रजीके पास गये और जाकर सब कुशल कही. तौ भगवान् प्रसन्न हो विमानपर चढ़कर चले ॥ १ ॥

चौ०-हर्षि भरत कोसलपुर आए ❀ समाचार सब गुरुहिं सुनाए ॥ १ ॥
पुनि मंदिरमहँ बात जनाई ❀ आवत नगर कुसल रघुराई ॥ २ ॥

भरतजी प्रसन्न होकर अयोध्यापुरीमें आये और सब समाचार गुरूको सुनाये ॥ १ ॥ फिर महलमें समाचार जताये कि रामचन्द्रजी कुशलपूर्वक नगरमें आते हैं ॥ २ ॥

सुनत सकल जननी उठि धाईं ❀ कहि प्रभुकुसल भरत समुझाईं ॥ ३ ॥
समाचार पुरबासिन्ह पाए ❀ नर अरु नारि हर्षि उठि धाए ॥ ४ ॥

सुनतेही सब माता उठ दौड़ीं और भरतने भगवानकी कुशल कहकर सबको समझाया ॥ ३ ॥ यह समाचार नगरवासियोंने पाये तो स्त्री और पुरुष प्रसन्न होकर उठ धाये ॥ ४ ॥

दधि दूर्वा रोचन फल फूला ❀ नव तुलसीदल मंगलमूला ॥ ५ ॥
भरि भरि हेमथार बर भामिनि ❀ गावति चलीं सिंधुरागामिनि ॥ ६ ॥

दही, दूध, गोरोचन, फल, फूल और आनन्ददायक नवीन तुलसीके पत्र इनको ॥ ५ ॥ सुन्दर गजगामिनी स्त्रियां सुवर्णके थालोंमें भर २ के गाती हुई चलीं ॥ ६ ॥

जो जैसे तैसेहि उठि धावहिं ❀ बाल वृद्ध कोउ संग न लावहिं ॥ ७ ॥
एक एकसन पूछहिं धाई ❀ तुम देखे दयालु रघुराई ॥ ८ ॥

जो जैसे थे तैसेही उठकर दौड़ रहे हैं, बालक और वृद्धको कोई साथमें नहीं लेते ॥ ७ ॥ एक एकसे दौड़कर पूछते हैं कि तुमने दयानिधान रामचन्द्रजीको देखा है? ॥ ८ ॥

अवधपुरी प्रभु आवत जानी ❀ भई सकल सोभाकी खानी ॥ ९ ॥
भइ सरयू अतिनिर्मल नीरा ❀ बहै सुहावन त्रिविध समीरा ॥ १० ॥

जब अयोध्यापुरीने भगवान्‌को आता हुआ जाना तौ संपूर्ण शोभाओंकी खानि होगई ॥ ९ ॥ सरयू नदीका जल बहुत निर्मल होगया और तीन प्रकारकी (शीतल, मन्द, सुगंध) पवन चलने लगी ॥१०॥

दो०-हर्षित गुरु परिजन अनुज, भूसुरवृंदसमेत ॥ ❀
चले भरत अतिप्रेम मन, सन्मुख कृपानिकेत ॥ ८ ॥ ❀

भरतजी प्रसन्न होकर गुरु, कुटुम्बी, छोटे भाई शत्रुघ्न और ब्राह्मणोंके समूहसमेत मनमें बड़े स्नेहसे दयासागर रामचन्द्रजीके सामने चले ॥ ८ ॥

बहुतक चढीं अटारिन्ह, निरखहिं गगन विमान ॥ ❀
देखि मधुर स्वर हर्षित, करहिं सुमंगल गान ॥ ९ ॥ ❀

बहुतसी (स्त्रियां) अटारियोंपर चढ़ी हुई आकाशमें विमानको देखती हैं और देखकर प्रसन्न हो मीठे २ स्वरसे मंगलाचार गाती हैं ॥ ९ ॥

राकाससि रघुपतिपुरी, सिंधु देखि हर्षान ॥ ❀
बढ़ेउ कोलाहल करत जनु, नारि तरंगसमान ॥ १० ॥ ❀

रामचन्द्रजी मानों पूर्णमासीके चन्द्रमा हैं और उनको देखकर अवधपुररूपी समुद्र प्रसन्न हो उमगा, और उसके बढ़नेपर स्त्रियां सोई मानों तरंग हैं, सो कोलाहल करने लगीं ॥ १० ॥

चौ०-रविकुलकमलदिवाकर आवत ❀ नगर मनोहर कपिन्ह देखावत ॥ १ ॥
सुनु कपीस अंगद लंकेसा ❀ पावनि पुरी रुचिर यह देसा ॥ २ ॥

सूर्यवंशरूपी कमलोंको सूर्यके समान ऐसे रामचन्द्रजी रीछ बन्दरोंको मनहरन नगर दिखाते हुये आरहे हैं ॥ १ ॥ हे सुग्रीव! हे अंगद! और हे बिभीषण! सुनो, यह पवित्र पुरी और यह सुन्दर देश है ॥ २ ॥

जद्यपि सब वैकुंठ बखाना ❀ वेदपुरानविदित जग जाना ॥ ३ ॥
अवधसरिस प्रिय मोहिं न सोऊ ❀ यह प्रसंग जानै कोउ कोऊ ॥ ४ ॥

---

(१) इस दोहेका भाव यह है कि जैसे पूर्ण चन्द्रमाको देखकर समुद्र बढता है वैसेही अवधपुर प्रसन्न होगया, और जैसे समुद्रके बढनेसे तरंगें उठती हैं और शब्द करती हैं वैसेही स्त्रियां कोलाहल करने लगीं. जैसे चंद्रमा आकाशमें है, वैसेही रामजी विमानपर बैठे है. चंद्रमाके साथ रोहिणी और बुध हैं. रामजीके साथ जानकी और लक्ष्मण हैं; चन्द्रमाके पास तारे हैं, रामजीके साथ वानर हैं. चन्द्रमा तापको मिटाता है; रामजीने वियोगरूपी संताप मिटा दिया—इत्यादि.

यद्यपि सबने वैकुंठका वर्णन किया है जैसा वेद पुराणोंमें विदित है और जिसे संसार जानता है ॥ ३ ॥ परन्तु मुझे वहभी अयोध्याके समान प्यारा नहीं लगता, सो इस प्रसंगको कोई२जानता है ॥४॥

जन्मभूमि मम पुरी सोहावनि ❀ उत्तर दिसि सरयू बह पावनी ॥ ५ ॥
जे मज्जहिं सो विनहिं प्रयासा ❀ मम समीप नर पावहिं वासा ॥ ६ ॥

मेरी जन्मभूमिकी पुरी बड़ी सुन्दर है जिसकी उत्तरदिशामें पवित्र सरयू नदी बहती है ॥ ५ ॥ जो इसमें स्नान करते हैं वे मनुष्य बिनाही परिश्रमके मेरेपास निवास पाते हैं ॥ ६ ॥

अतिप्रिय मोहि इहाँके बासी ❀ मम धामदा पुरी सुखरासी ॥ ७ ॥
हर्षे कपि सुनि प्रभुकी बानी ❀ धन्य अवध जेहि राम बखानी ॥ ८ ॥

यहांके निवासी मुझे बहुत प्यारे हैं (क्योंकि विना किसी अन्य तपादिके) यह पुरी मेरे धामकी देनेवाली और सुखकी राशि है ॥ ७ ॥ भगवानकी वाणी सुनकर बन्दर प्रसन्न हुये कि अयोध्यापुरीको धन्य है कि जिसकी रामचन्द्रजीने बड़ाई करी ॥ ८ ॥

दो०–आवत देखे लोग सब, कृपासिंधु भगवान ॥ ❀
नगरनिकट प्रभु आयउ, उतरेउ भूमि विमान ॥ ११ ॥ ❀

सब लोगोंने दयासागर भगवान्को आते हुये देखा कि भगवान् नगरके पास आगये और विमान पृथ्वीपर उतरा ॥ ११ ॥

उतरि कहेउ प्रभु पुष्पकहिं, तुम कुबेरपहँ जाहु ॥ ❀
प्रेरित राम चलेउ सोइ, हर्ष विरह अति ताहु ॥ १२ ॥ ❀

भगवान्ने उतरकर पुष्पकविमानसे कहा, तुम कुवेरके पास जाओ; वह रामचन्द्रजीकी प्रेरणासे चला तौ सही पर उसे हर्ष और विरह अधिक हुआ ॥ १२ ॥

चौ०–आए भरतसंग सब लोगा ❀ कृसतनु स्रीरघुवीरवियोगा ॥ १ ॥
वामदेव वसिष्ठ मुनिनायक ❀ देखे प्रभु महि धरि धनु सायक ॥ २ ॥

भरतजीके साथ सव लोग आये परन्तु रामचन्द्रजीके वियोगमें सब लोगोंका शरीर दुर्बल होरहा है ॥ १ ॥ भगवान्ने वामदेव और वसिष्ठ मुनिराजको देखा तौ पृथ्वीपर धनुष बाण रखदिये ॥ २ ॥

धाइ धरे गुरुचरनसरोरुह ❀ अनुजसहित अतिपुलक तनूरुह ॥ ३ ॥
भेटे कुसल पूछि मुनिराया ❀ हमरे कुसल तुम्हारिहिं दाया ॥ ४ ॥

और दौड़कर भाई लक्ष्मणसहित गुरुके कमलसमान चरण छुये, (उस समय) उनका शरीर पुलकायमान हो गया ॥ ३ ॥ मुनिराज कुशल पूछकर मिले, (भगवान्ने कहा) कि आपहीकी कृपासे हमारे कुशल है ॥ ४ ॥

सकल द्विजनिकहँ नायउ माथा ❀ धर्मधुरंधर रघुकुलनाथा ॥ ५ ॥
गहे भरत पुनि प्रभुपदपंकज ❀ नमहिं जिनहिं संकर सुरमुनि अज ॥६॥

---

(१) पद्मपुराणे—

"मन्वन्तरसहस्रेषु काशीवासेन यत्फलम् । तत्फलं समवाप्नोति सरयूदर्शने कृते" ॥ १ ॥

अर्थात् हजारों मन्वन्तरतक काशीवासका जो फल है वह केवल सरयूके दर्शनमात्रसे होता है ॥

(२) गीतायां "यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम" अर्थात् प्राणी जहां प्राप्त होकर फिर नहीं लौटता वही मेरा परमधाम है. भाव यह है कि मुक्ति हो जाती है ॥ (३) हर्ष इस बातका हुआ कि, रावणकी कैदसे छूटा और रघुनाथजी वियोगसे दुःख हुआ ॥

धर्मके भारको धारण करनेवाले रघुनाथजीने सब ब्राह्मणोंको मस्तक नवाया ॥ ५ ॥ फिर भरतने भगवान्के कमलसमान चरण छुये कि जिनको महादेव, देवता, मुनीश्वर और ब्रह्माभी नमस्कार करते हैं ॥ ६ ॥

परे भूमि नहिं उठत उठाये ❀ बल करि कृपासिंधु उर लाये ॥ ७ ॥
स्यामलगात रोम भए ठाढ़े ❀ नवराजीवनयनजल बाढ़े ॥ ८ ॥

पृथ्वीपर गिर पड़े, उठानेसेभी नहीं उठते, तब भगवान्ने बलपूर्वक उठा छातीसे लगा लिया ॥ ७ ॥ साँवले शरीरमें रोमांच खड़े हो गये और नवीन कमलसे नेत्रोंमें जल भर आया ॥ ८ ॥

छं०–राजीवलोचन स्रवत जल तनु ललित पुलकावलि बनी । ❀
अति प्रेम हृदय लगाय अनुजहिं मिले प्रभु त्रिभुवनधनी ॥ ❀
प्रभु मिलत अनुजहिं सोह मोपहँ जात नहिं उपमा कही । ❀
जनु प्रेम अरु सृंगार तनु धरि मिलत वर सुषमा लही ॥२॥ ❀

कमलसमाने नेत्रोंसे जल बहनेलगा, सुन्दर शरीरमें पुलकावली छा गई. यों त्रिलोकीके नाथ भगवान् बड़े स्नेहसे भरतको छातीसे लगाकर मिले ॥ भगवान् भरतसे मिलतेमें जैसे शोभायमान लगते हैं वह उपमा मुझसे कही नहीं जाती. (ऐसा भासता है) मानों प्रेम और शृंगारने शरीर धारण करके मिलतेमें शोभा पाई हो ॥ २ ॥

पूछत कृपानिधि कुसल भरतहिं बचन बेगि न आवई । ❀
सुनु सिवा सो सुखवचन मनते भिन्न जान न पावई ॥ ❀
अब कुसल कोसलनाथ आरत जानि जन दर्सन दियो । ❀
बूड़त बिरहबारिधिकृपानिधिकाढि मोहि कर गहि लियो ॥३॥ ❀

कृपानिधान रामजी भरतजीसे कुशल पूँछते हैं (परन्तु भरतजीसे) शीघ्र बचन नहीं आते. (महादेवजी कहते हैं) हे पार्वती ! सुनो, वह सुखके बचन मनसे अलग नहीं जाने पाते, अर्थात् कहे नहीं जा सक्ते. (फिर भरतजी बोले) हे कोशलनाथ महाराज ! अब कुशल है जो दासको दुखी जालकर आपने दर्शन दिया. और हे दयानिधान ! मुझको वियोगरूपी समुद्रमें डूबतेसे हाथ पकड़कर निकाल लिया ॥ ३ ॥

दो०–पुनि प्रभु हर्षित सत्रुहन भेटे हृदय लगाइ ॥ ❀
लछ्मन भेटे भरत पुनि, प्रेम न हृदय समाइ ॥ १३ ॥ ❀

फिर भगवान् आनन्दसे शत्रुघ्नको छातीसे लगाकर मिले और फिर लक्ष्मणजी जैसे भरतजीसे मिले वह स्नेह हृदयमें नहीं समाता ॥ १३ ॥

चौ०–भरतअनुज लछमन तब भेटे ❀ दुसहबिरहसंभव दुख मेटे ॥ १ ॥
सीताचरन भरत सिर नावा ❀ अनुजसमेत परम सुख पावा ॥ २ ॥

तब लक्ष्मण शत्रुघ्नसे मिले और कठिन वियोगसे उत्पन्न हुआ दुःख मिटादिया ॥ १ ॥ शत्रुघ्नसमेत भरतने सीताजीके चरणोंको शिर नवाकर सुख पाया ॥ २ ॥

प्रभु बिलोकि हर्षे पुरबासी ❀ जनित बियोग बिपति सब नासी ॥ ३ ॥
प्रेमातुर सब लोग निहारी ❀ कौतुक कीन्ह कृपालु खरारी ॥ ४ ॥

भगवानको देखकर नगरवासी प्रसन्न हुये और वियोगसे उत्पन्न हुई सब विपत्ति नष्ट हो गई ॥३॥ सब लोगोंको प्रेममें मगन देख दयानिधान खरदैत्यके शत्रु रामजी एक खेल किया कि॥४॥

अमितरूप प्रगटे तेहिं काला ❀ यथायोग्य मिलि सबहिं कृपाला ॥ ५ ॥
कृपादृष्टि सब लोग बिलोकी ❀ किये सकल नर नारि बिसोकी ॥ ६ ॥

उसी समय अपने अनगिनती रूप प्रगट करदिये और कृपानिधान सबसे यथायोग्य मिले ॥५॥ दयादृष्टिसे सब लोगोंको देखकर सब स्त्रीपुरुषोंको शोकरहित कर दिया ॥ ६ ॥

छिनमहँ सबहिं मिले भगवाना ❀ उमा मर्म यह काहु न जाना ॥ ७ ॥
इहिबिध सबहिं सुखी करि रामा ❀ आगे चले सीलगुनधामा ॥ ८ ॥
कौसल्यादि मातु सब धाई ❀ निरखि वत्स जनु धेनु लवाई ॥ ९ ॥

(महादेवजी कहते हैं) हे पार्वती ! भगवान् क्षणभरमें सबसे मिले परन्तु यह भेद किसीने न जाना ॥७॥ शील और गुणके समुद्र रामचन्द्रजी इसभांति सबको सुखी करके आगे चले ॥ ८ ॥ कौशल्या आदि सब माता ऐसे उठ दौड़ीं जैसे हालकी ब्याई हुई गाय बछड़ेको देखकर दौड़ती हो ९

छं०–जनु धेनु बालक वत्स तजि गृह चरन वन परवस गईं । ❀
दिनअंत पुर रुख स्रवत थन हुंकार करि धावति भईं ॥ ❀
अतिप्रेम प्रभु सब मातु भेटीं बचन मृदु बहुविध कहे । ❀
गइ विषम बिपति वियोगभव तिन्ह हर्षसुख अगनित लहे॥४॥ ❀

जैसे गाय छोटे बछड़ेको घर छोड़कर पराधीन वनमें चरने गई हों और दिन छिपनेपर नगरकी ओर रुखकरके थनोंसे दूध टपकाती हुई और हुंकारकरके दौड़ती हुई आई हों (इस प्रकार सब माता धाईं.) तब भगवान् बड़े प्रेमसे सब माताओंसे मिले और बहुत भांति मीठे वचन कहे जिनसे उनकी कठिन वियोगसे उत्पन्न हुई विपत्ति जाती रही और उन्होंने प्रसन्न होकर अनगिनती सुख पाये४

दो०–भेटेउ तनय सुमित्रा, रामचरनरत जानि ॥ ❀
रामहिं मिलति कैकयी, हृदय बहुत सकुचानि ॥ १४ ॥ ❀

सुमित्रा रामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रीतियुक्त जानकर लक्ष्मणसे मिली और कैकेयी रामचन्द्रजीसे मिलतेमें मनमें बड़ी सकुचाई ॥ १४ ॥

लछमन सबमातन्हि मिले, हर्ष आसिष पाइ ॥ ❀
कैकयिकहँ पुनि पुनि मिले, मनकर छोभ न जाइ ॥ १५ ॥ ❀

लक्ष्मण सब माताओंसे मिले और आशीर्वाद पाकर प्रसन्न हुये और कैकेयीसे बार २ मिले परंतु मनका क्षोभ नहीं जाता ॥ १५ ॥

चौ०–सासुन्हि सबहिं मिली वैदेही ❀ चरनन्हि लागि हर्ष अति तेही ॥ १ ॥
देहिं असीस बूझि कुसलाता ❀ होहु अचल तुम्हार अहिवाता ॥ २ ॥

---

(१) शंका—यहां जो कौशल्यादि माताओंके विषयमें वनसे आती हुई गौओंका दृष्टान्त दिया है सो यह विषम अर्थात् उलटा दृष्टान्त है. क्योंकि रामजीरूप वत्स बनसे आये हैं, कौशल्याआदि रानियाँरूप गैय्याँ बनसे कहां आई हैं, तहां कहते हैं कि—

"अवध तहां जहँ रामनिवासू"

इस प्रमाणसे जहाँ रघुनाथजी हैं वही अवध है और जिस अवधमें राम नहीं वह वनके समान है, और उसी अवधसे कौशल्या आदि रानियोंका आगमन हुआ है इस लिये पूर्वोक्त दृष्टान्त ठीक है.

सीताजी सब सासुओंसे मिलीं और बड़े आनन्दसे सबके पैरों पड़ीं ॥ १ ॥ माताजी कुशल पूछकर आशीर्वाद देती हैं कि तुम्हरा सुहाग अचल हो ॥ २ ॥

सब रघुपतिपदकमल बिलोकहिं ❀ मंगल जानि नयनजल रोकहिं ॥ ३ ॥
कनकथार आरती उतारहिं ❀ बार बार प्रभुगात निहारहिं ॥ ४ ॥

सब रामचन्द्रजीके कमलसमान चरणोंको देखती हैं और आनन्द (का समय) जानकर नेत्रोंके जलको रोकती हैं॥३॥सुवर्णके थालोंसे आरती उतारती हैं और बार २ भगवान्के शरीरको देखती हैं ४

नानाभाँति निछावरि करहीं ❀ परमानंद हर्ष उर भरहीं ॥ ५ ॥
कौसल्या पुनि पुनि रघुबीरहिं ❀ चितवति कृपासिंधु रनधीरहिं ॥ ६ ॥

अनेक भांति नौछावर करती हैं और बड़े आनन्दसे हृदयमें प्रसन्न होती हैं ॥ ५ ॥ कौशल्या दयाके समुद्र रणधीर रामचन्द्रजीको बार २ देखती हैं ॥ ६ ॥

हृदय विचारति बारहिं बारा ❀ कवनि भाँति लंकापति मारा ॥ ७ ॥
अतिसुकुमार जुगल मम बारे ❀ निसिचर सुभट महाबल भारे ॥ ८ ॥

और बार २ हृदयमें सोचती हैं कि इन्होंने किस प्रकार रावणको मारा होगा ? ॥ ७ ॥ मेरे दोनों पुत्र बड़े सुकुमार और छोटे हैं और राक्षस योद्धा बड़े भारी बलवान् थे ॥ ८ ॥

दो०-लछमन अरु सीता सहित, प्रभुहिं बिलोकहिं मात ॥ ❀
परमानंदमगन मन, पुनि पुनि पुलकित गात ॥ १६ ॥ ❀

फिर कौशल्या, लक्ष्मण और जानकीजीसमेत भगवान्को देखने लगीं, मन परमानन्दमें मगन है और बार २ शरीरमें पुलकायमान होती हैं ॥ १६ ॥

चौ०-लंकापति कपीस नल नीला ❀ जाम्बवंत अंगद सुभसीला ॥ १ ॥
हनुमदादि सब बानर बीरा ❀ धरे मनोहर मनुजसरीरा ॥ २ ॥

अच्छे स्वभाववाले बिभीषण, सुग्रीव, नल, नील, जाम्बवंत, अंगद ॥ १ ॥ और हनूमान आदि सब योद्धा बन्दर मनहरन मनुष्योंका शरीर धारण किये हैं॥ २ ॥

भरतसनेह सील जुत नेमा ❀ सादर सब बरनहिं अति प्रेमा ॥ ३ ॥
देखि नगरबासिन्हिकै रीती ❀ सकल सराहहिं प्रभुपदप्रीती ॥ ४ ॥

भरतके प्रेम शील और नियमको सब जने बड़े प्रेम और आदरसहित वर्णन करने लगे ॥ ३ ॥ और नगरवासियोंकी रीति और भगवान्के चरणोंमें उनकी प्रीति देखकर सब सराहना करते हैं ॥ ४ ॥

पुनि रघुपति निजसखा बुलाए ❀ मुनिपद लागहु सबन्हि सिखाए ॥ ५ ॥
गुरु बसिष्ठ कुलपूज्य हमारे ❀ इनकी कृपा दनुज रन मारे ॥ ६ ॥

फिर रामचन्द्रजीने सब सखाओंको बुलाया और सबको सिखाया कि मुनीश्वरजीके चरण छुओ ॥ ५ ॥ ये गुरु वसिष्ठजी हमारे कुलके पूज्य हैं, इनकी ही दयासे लड़ाईमें राक्षस मारे थे (फिर भगवान् वसिष्ठजीसे बोले) ॥ ६ ॥

ए सब सखा सुनहु मुनि मेरे ❀ भये समरसागरकहँ बेरे ॥ ७ ॥
मम हित लागि जन्म इन्ह हारे❀ भरतहुँते मोहिं अधिक पियारे ॥ ८ ॥
सुनि प्रभुबचन मगन सब भयऊ ❀ निमिष निमिष उपजत सुख नयऊ ॥९॥

हे मुनिराज ! सुनिये, ये सब मेरे मित्र हैं और ये समररूपी समुद्रमें मुझे बेड़ेके समान सहायक

हुये थे ॥ ७ ॥ इन्होंने मेरे हितके लिये प्राण हार दिये हैं और ये मुझे भरतसेभी विशेष प्यारे हैं ॥ ८ ॥ भगवान्के वचन सुनकर सब मगन हो गये और पल २ में नवीन सुख उत्पन्न होने लगा ॥९॥

दो०-कौसल्याके चरननिंह, पुनि तिन्ह नायउ माथ ॥ ❀
आसिष दीन्हीं हर्षि हिय, तुम प्रिय जिमि रघुनाथ ॥ १७ ॥ ❀

फिर उन्होंने कौशल्याके चरणोंको शिर नवाया, तौ उसने मनमें प्रसन्न हो आशीर्वाद दिया और कहा कि तुम मुझे रामचन्द्रजीके समान प्यारे हो ॥ १७ ॥

सुमनवृष्टि नभ संकुल, भवन चले सुखकंद ॥ ❀
चढ़े अटारिन्ह देखहिं, नगरनारिनरवृंद ॥ १८ ॥ ❀

फिर आनन्दकन्द भगवान् महलोंको चले तौ आकाश फूलोंकी वर्षासे छा गया. नगरके स्त्रीपुरुषोंके समूह अटारियोंपर चढ़े हुये देखते हैं ॥ १८ ॥

चौ०-कंचनकलस विचित्र सँवारे ❀ सबहिं धरे सज निज निज द्वारे ॥ १ ॥
बंदनवार पताका केतू ❀ सबन्हि बनाये मंगलहेतू ॥ २ ॥

सबोंने सुवर्णके विचित्र कलश सजा २ कर अपने २ द्वारपर रखा दिये हैं ॥ १ ॥ सबोंने मंगलाचारके लिये वन्दनवार पताका और ध्वजा आदि वनाये ॥ २ ॥

बीथिन सकल सुगंध सिचाँई ❀ गजमनि रचि बहु चौक पुराई ॥ ३ ॥
नानाभाँती सुमंगल साजे ❀ हर्षि निसान नगर बहु बाजे ॥ ४ ॥

सब गलियोंको सुगंधसे सिंचाया और गजमोंतियोंके रच २ कर वहुतसे चौक पुरवाये ॥३॥ अनेक प्रकारसे सुन्दर मंगल सजाये और नगरमें वहुतसे आनन्दके वाजे वजने लगे ॥ ४ ॥

जहँ तहँ नारि निछावरि करहीं ❀ देहिं असीस हर्ष उर भरहीं ॥ ५ ॥
कंचनथार आरती नाना ❀ जुवती साजि करहिं कलगाना ॥ ६ ॥

जहां तहां स्त्रियां नौछावर करने लगीं और आशीर्वाद देकर आनन्दसे हृदयको तृप्त करती हैं ॥ ५ ॥ स्त्रियां सुवर्णके अनेक थालोंमें आरती सजा २ कर सुन्दर गान करती हैं ॥ ६ ॥

करहिं आरती आरतिहरकी ❀ रघुकुलकमलविपिनदिनकरकी ॥ ७ ॥
पुरसोभा संपति कल्याना ❀ निगम सेष सारदा बखाना ॥ ८ ॥

दुःखके दूर करनेवाले रघुवंशरूपी कमलोंके वनको सूर्यके समान खिलानेवाले रामचन्द्रजीकी आरती करती हैं ॥ ७ ॥ जो नगरकी शोभा, संपत्ति और मंगल साजको वेद, शेष, और सरस्वतीभी वर्णन करैं तौ ॥ ८ ॥

ते यह चरित देखि ठगि रहहीं ❀ उमा तासु गुन नर किमि कहहीं ॥९॥

(महादेवजी कहते हैं) हे पार्वती! वेभी इस चरित्रको देखकर ठगेसे रह जायँ, फिर उसके गुणोंको मनुष्य कैसे कहैं ॥ ९ ॥

दो०-नारि कुमुदिनी अवध सर, रघुपतिविरह दिनेस ॥ ❀
अस्त भये बिकसित भईं, निरखि रामराकेस ॥ १९ ॥ ❀

अवधपुर सोही सरोवर है, और स्त्रियाँ मानों कुमोदिनियाँ हैं, सो रघुनाथजीके वियोगरूपी सूर्यके कारण वंद थीं, अब उसके अस्त होनेपर और रामरूपी चन्द्रमाके उदय होनेपर खिल गईं ॥ १९ ॥

होहिं सकुन सुभ बिबिधबिध, बाजहिं नाक निसान ॥ ❀
पुरनरनारि सनाथ करि, भवन चले भगवान ॥ २० ॥ ❀

अनेक प्रकारके शुभ शकुन होने लगे और आकाशमें वाजे वजने लगे. इस प्रकार भगवान् नगरके स्त्रीपुरुषोंको सनाथ करके घरको चले ॥ २० ॥

चौ०–प्रभु जानी कैकयी लजानी ❀ प्रथम तासु गृह गये भवानी ॥ १ ॥
ताहि प्रबोधि बहुत सुख दीन्हा ❀ पुनि निजभवन गमन प्रभु कीन्हा ॥२॥

महादेव कहते हैं, हे पार्वती! भगवान्ने जाना कि कैकयी लजा गई है सो पहले उसके घर गये ॥ १ ॥ उसे समझाकर वहुत सुख दिया. फिर भगवान् अपने महलको गये ॥ २ ॥

कृपासिंधु जब मंदिर गयऊ ❀ पुरनरनारि सुखी सब भयऊ ॥ ३ ॥
गुरुबसिष्ठ द्विज लिये बुलाई ❀ आजु सुघरी सुदिन सुखदाई ॥ ४ ॥

जब भगवान् अपने महलोंमें गये तौ नगरके सब स्त्री पुरुष सुखी हुये ॥ ३ ॥ गुरु वसिष्ठजीने ब्राह्मण बुला लिये (और कहा कि) आज सुन्दर घड़ी और सुन्दर सुखदायक दिन है ॥ ४ ॥

सब द्विज देहु हर्षि अनुसासन ❀ रामचंद्र बैठहिं सिंहासन ॥ ५ ॥
मुनि बसिष्ठके बचन सुहाए ❀ सुनत सकल विप्रन्हि अति भाए ॥ ६ ॥

सो सब ब्राह्मण प्रसन्नतासे आज्ञा दो जो रामचन्द्रजी सिंहासनपर बैठें ॥ ५ ॥ वसिष्ठ मुनिके सुन्दर वचन सुनतेही सब ब्राह्मणोंको बहुत अच्छे लगे ॥ ६ ॥

कहहिं बचन मृदु विप्र अनेका ❀ जग अभिराम रामअभिषेका ॥ ७ ॥
अब मुनिवर बिलंब नहिं कीजै ❀ महाराजकहँ तिलक करीजै ॥ ८ ॥

ब्राह्मण अनेक भांति कोमल वचनसे कहने लगे कि रामचन्द्रजीका अभिषेक तौ संसारभरको आनन्ददायक है ॥ ७ ॥ हे मुनिराज! अब देर न कीजिये और महाराज (रामचन्द्रजी) को राजतिलक कीजिये ॥ ८ ॥

दो०–तब मुनि कहेउ सुमंत्रसन, सुनत चलेउ सिर नाइ ॥ ❀
रथ अनेक बहु बाजि गज, तुरत सम्हारे जाइ ॥ २१ ॥ ❀

तब मुनिने सुमंतसे कहा. वह सुनतेही शिर नवा कर चला और जाकर तुरंत अनेक रथ और बहुतसे हाथी घोड़े सजाने लगा ॥ २१ ॥

जहँ तहँ धावन पठय पुनि, मंगलद्रव्य मँगाइ ॥ ❀
हर्षसमेत बसिष्ठपद, पुनि सिर नयउ आइ ॥ २२ ॥ ❀

फिर जहाँ तहाँ दूत भेजकर मंगलवस्तु मँगाई और फिर आनन्दसे आकर वसिष्ठजीके चरणोंको शिर नवाया ॥ २२ ॥

चौ०–अवधपुरी अतिरुचिर बनाई ❀ देवन्हि सुमनवृष्टि झरि लाई ॥ १ ॥
राम कहा सेवकन्ह बुलाई ❀ प्रथम सखन्ह अन्हवावहु जाई ॥ २ ॥

अयोध्यापुरी बहुत सुन्दर सजाई और देवताओंने फूलोंकी वर्षा की झड़ी लगाई ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीने सेवकोंसे बुलाकर कहा कि पहले (बानर आदि) सखाओंको जाकर स्नान कराओ ॥ २ ॥

सुनत बचन जहँ तहँ जन धाए ❀ सुग्रीवादि तुरत अन्हवाए ॥ ३ ॥
पुनि करुनानिधि भरत हँकारे ❀ निजकर जटा राम निरवारे ॥ ४ ॥

वचन सुनतेही लोग जहां तहां दौड़े और सुग्रीव आदिको शीघ्रही स्नान कराया ॥ ३ ॥ फिर करुणानिधान (भगवान्) ने भरतजीको बुलाया और अपने हाथोंसे उनकी जटा सुलझाई ॥ ४ ॥

श्रीरामचन्द्रजीको राजगद्दी.

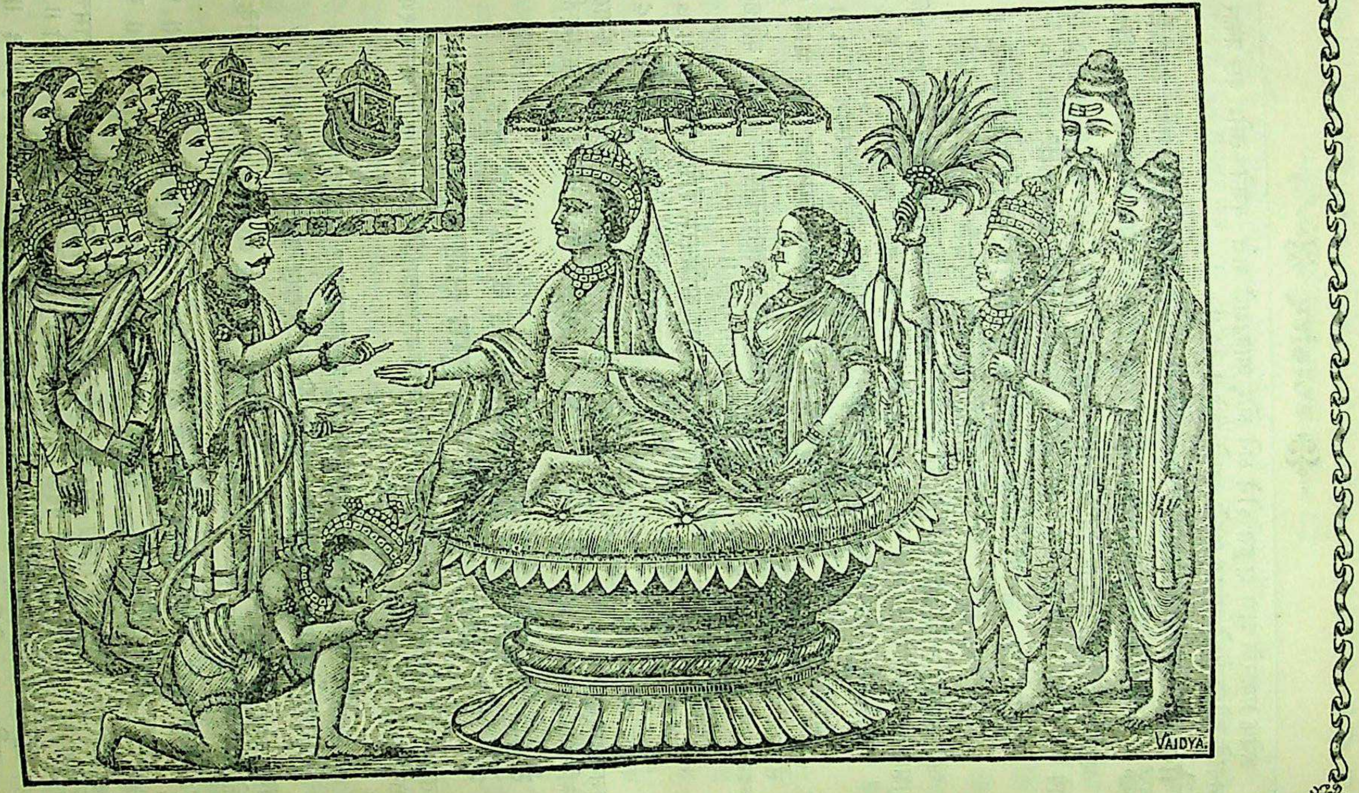

अन्हवाए पुनि तीनहु भाई ❀ भक्तबछल कृपालु रघुराई ॥ ५ ॥
भरतभाग्य प्रभुकोमलताई ❀ सेषकोटिसत सकहिं न गाई ॥ ६ ॥

फिर भक्तवत्सल दयानिधान रघुनाथजीने तीनों भाइयोंको स्नान करवाया ॥ ५ ॥ भरतजीके भाग्य और भगवान्की कोमलताको सौ करोड़ शेषजीभी नहीं कह सक्ते ॥ ६ ॥

पुनि निजजटा राम बिवराये ❀ गुरुअनुसासन माँगि अन्हाये ॥ ७ ॥
करि मज्जन भूषन प्रभु साजे ❀ अंग अनंगकोटिछबि लाजे ॥ ८ ॥

फिर रामचन्द्रजीने अपनी जटा सुलझाई और गुरुकी आज्ञा मांगकर स्नान किया ॥ ७ ॥ और जब भगवान्ने स्नान करके (शरीरपर) आभूषण सजाये तौ करोड़ कामदेवोंके अंगकी शोभाभी लजाने लगी ॥ ८ ॥

दो०–सासुन सादर जानकिहि, मज्जन तुरत कराइ ॥ ❀
दिव्य वसन मनि भूषन, साजे अंग बनाइ ॥ २३ ॥ ❀

सासुओंने आदरसे शीघ्रही सीताजीको स्नान कराकर सुन्दर वस्त्र और मणिजडित आभूषणोंसे उनके अंगोंको रच २ कर सजाया ॥ २३ ॥

रामवामदिसि सोभित, रमा रूपगुनखानि ॥ ❀
देखि मातु सब हर्षित, जन्म सफल निज जानि ॥ २४ ॥ ❀

रामचन्द्रजीके बाँईं ओर रूप और गुणकी खानि जानकीजी शोभायमान हुईं; उन्हैं देखकर सब माता अपना २ जन्म सफल जानकर प्रसन्न हो गईं ॥ २४ ॥

सुनु खगेस तेहि अवसर, ब्रह्मा सिव मुनिवृंद ॥ ❀
चढ़ि विमान आए सबै, सुर देखन सुखकंद ॥ २५ ॥ ❀

(कागभुशुंडि कहते हैं) हे गरुड़ ! सुनो, उस समय ब्रह्मा, महादेव, मुनियोंके समूह और संपूर्ण देवता विमानोंपर चढ़ २ कर आनन्दकन्द भगवान्के दर्शन करने आये ॥ २५ ॥

चौ०–प्रभु बिलोकि मुनिमन अनुरागा ❀ तुरत दिव्य सिंहासन माँगा ॥ १ ॥
रबिसम तेज बरनि नहिं जाई ❀ बैठे राम द्विजन्हि सिर नाई ॥ २ ॥

भगवान्को देखकर (वसिष्ठ) मुनिके मनमें प्रेम हुआ और शीघ्रही सुन्दर सिंहासन माँगा ॥ १॥ जिसका सूर्यके समान ऐसा तेज था कि वर्णन नहीं किया जाता. (उसपर) रामचन्द्रजी ब्राह्मणोंको शिर नवाकर बैठे ॥ २ ॥

जनकसुतासमेत रघुराई ❀ देखि प्रहर्षे मुनिसमुदाई ॥ ३ ॥
वेदमंत्र तब द्विजन्हि उचारे ❀ नभ सुर मुनि जय जयति पुकारे ॥४॥

सीताजीसहित रामचन्द्रजीको देखकर मुनीश्वरोंकी सभा बहुत प्रसन्न हुई ॥ ३ ॥ उस समय ब्राह्मणोंने वेदके मंत्र पढ़े और आकाशमें देवता और मुनीश्वर जय जय कहने लगे ॥ ४ ॥

प्रथम तिलक वसिष्ठमुनि कीन्हा ❀ पुनि सब विप्रन्हि आयसु दीन्हा ॥ ५ ॥
सुत बिलोकि हरषी महतारी ❀ बार बार आरती उतारी ॥ ६ ॥

पहले वसिष्ठमुनिने तिलक किया फिर सब ब्राह्मणोंको आज्ञा दी ॥ ५ ॥ पुत्रोंको देखकर माता प्रसन्न हुई और बार २ आरती उतारी ॥ ६ ॥

बिप्रन्ह दान बिबिधबिध दीन्हें ❀ याचक सकल अयाचक कीन्हें ॥ ७ ॥
सिंहासनपर त्रिभुवनसाँईं ❀ देखि सुरन्हि दुंदुभी बजाईं ॥ ८ ॥

ब्राह्मणोंको अनेक भांतिके दान दिये और संपूर्ण माँगनेवालोंको अयाचक कर दिया ॥ ७ ॥ त्रिलोकिनाथ भगवान्को सिंहासनपर देखकर देवताओंने नगाड़े बजाये ॥ ८ ॥

छं०-नभ दुंदुभी बाजहिं विपुल गंधर्व किन्नर गावहीं ॥
नाचहिं अपसरावृंद परमानंद सुर मुनि पावहीं ॥
भरतादि अनुज बिभीषणांगद हनुमदादिसमेत जे ॥
गहे छत्र चामर व्यजन धनु असि चर्म शक्ति बिराजते ॥५॥

आकाशमें बहुतसे नगाड़े बजने लगे, गंधर्व और किन्नर गाने लगे और अप्सराओंके समूह नाचने लगे. (जिन्हें देखकर) देवता और मुनीश्वर बड़ा आनन्द पाते हैं. भरतको आदि ले छोटे भाई तथा बिभीषण, अंगद और हनूमान् आदिसमेत जो हैं, सो छत्र, चामर, पंखा, धनुष, तलवार, ढाल, और शक्ति धारण किये बिराजमान हैं ॥ ५ ॥

सियसहित दिनकरवंसभूषन काम बहु छबि सोहहीं ॥
नव अंबुधर बरगात अंबर पीत मुनिमन मोहहीं ॥
मुकुटांगदादि विचित्र भूषन अंग अंगनिप्रति सजे ॥
अंभोजनयन बिसाल उर भुज धन्य नर निरखंत जे ॥ ६ ॥

सीताजीसमेत रविकुलभूषण (रामचन्द्रजी) की बहुतसे कामदेवोंकीसी शोभा होरही है. नवीन मेघके समान सुन्दर शरीर और पीतांबर मुनियोंके मनको मोहित करते हैं, मुकुट और बाजू आदि विचित्र आभूषण प्रत्येक अंगमें सजेहुवे हैं, और कमलसे नेत्र, चौड़ी छाती और दीर्घ भुजा हैं. जो मनुष्य उनका दर्शन करते हैं उन्हें धन्य है ॥ ६ ॥

दो०-वह सोभा सुसमाजसुख, कहत न बनै खगेस ॥
बरनै सारद सेष स्रुति, सो रस जान महेस ॥ २६ ॥

हे गरुड़ ! वह शोभा और उस समाजका सुख कहनेमें नहीं बनता, यों तौ सरस्वती शेष और वेद वर्णन करतेही हैं पर उस रसको तौ महादेवजीही जानते हैं ॥ २६ ॥

भिन्न भिन्न अस्तुति करि, गे सुर निज निज धाम ॥
बंदिवेद धरि वेद तब, आए जहँ स्रीराम ॥ २७ ॥

देवता अलग २ स्तुति करके अपने २ लोकोंको गये. तब (चारों) वेद भाटोंका वेष धारण करके रामचन्द्रजीके पास आये ॥ २७ ॥

प्रभु सर्वज्ञ कीन्ह अति, आदर कृपानिधान ॥
लखेउ न काहू मर्म कछु, लगे करन गुनगान ॥ २८ ॥

कृपानिधान भगवान् तौ सब जानते हैं सो उन्होंने तौ उनका बहुत आदर किया; पर किसीने कुछ भेद नहीं जाना. (वेद भगवान्के) अनंत गुणोंका गान करने लगे ॥ २८ ॥

छं०-जय सगुणनिर्गुणरूप राम अनूप भूपशिरोमने ॥
दशकंधरादिप्रचंडनिशिचरप्रबलखल भुजबल हने ॥
अवतारनर संसारभार बिभंजि दारुण दुख दहे ॥
जय प्रणतपाल दयालु प्रभु संयुक्तशक्ति नमामहे ॥ ॥ ७ ॥

हे अनूपस्वरूप राजशिरोमणि ! आपकी जय होय. आप सगुण हो, अर्थात् जब धर्मादिकोंमें बाधा पड़ती है तब अपनी मायाको स्वीकार करके अनेक रूप धारण करते हो; और निर्गुण हो, अर्थात् अपनी मायाके जो सत्वादिगुण हैं तिनसे रहित हो. आपने अपने भुजबलसे रावणादि उग्र राक्षसों तथा प्रबल दुष्टोंका नाश किया है और नररूप धारण कर और संसारके भारको दूर कर कठिन २ दुःख भस्म कर दिये. अतएव हे दीनोंके पालक ! दयालु प्रभु ! शक्तिसे शोभित आपको हम नमस्कार करते हैं ॥ ७ ॥

तव विषममायावश सुरासुर नाग नर अग जग हरे । ❀
भवपंथभ्रमित सुश्रमित दिन निशि कालकर्मगुणनिर्भरे ॥ ❀
जेहि नाथ करि करुणा बिलोकहु त्रिबिध दुख ते निर्वहे । ❀
भवखेदछेदनदक्ष हमकहँ रक्ष राम नमामहे ॥ ८ ॥ ❀

हे राम ! आपकी टेढ़ी मायाके वश होकर देवता, असुर, नाग, नर, और जड़ चैतन्यादिक संसारमार्गमें रात्रिदिन भ्रमते २ थक गये हैं तिसपरभी कालकर्मगुणोंके बोझसे दबरहे हैं परन्तु हे नाथ ! जिनको आप दयादृष्टिसे देखते हैं वे काल कर्म गुणके बोझसे उत्पन्न हुए तीन प्रकारके दुःखसे छूट जाते हैं. अतएव हे संसारके दुःख काटनेमें कुशल रामचन्द्रजी ! आप हमारी रक्षा करो. हम आपको प्रणाम करते हैं ॥ ८ ॥

जे ज्ञानमानविमत्त तव भवहरनि भक्ति न आदरी । ❀
ते पाइ सुरदुर्लभ पदादपि परत हम देखत हरी ॥ ❀
विश्वास करि सब आश परिहरि दास तव जे होइ रहे । ❀
जपि नाम तव बिनु श्रम तरहिं भव नाथ सो समरामहे॥९॥❀

हे राम ! जिन्होंने ज्ञानके अभिमानसे उन्मत्त होकर संसारकी हरनेवाली आपकी भक्तिका आदर नहीं किया तथा देवताओंकोसी दुर्लभ ऐसे पदको पाकर भी फिर नीच योनिमें गिरते हम देखते हैं, और जो विश्वास करके और आशाको दूर कर आपके दास होरहे हैं, सो हे नाथ! वे आपका नाम जपकर बिनाही श्रमके भवसागरसे तरजाते हैं. अतएव हम आपका स्मरण करते हैं ॥ ९ ॥

जे चरण शिव अज पूज्यरज शुभ परसि मुनिपत्नी तरी । ❀
नखनिर्गता सुरवंदिता त्रैलोक्यपावनि सुरसरी ॥ ❀
ध्वजकुलिशअंकुशकंजयुत बन फिरत कंटक किन्ह लहे । ❀
पदकंजद्वंद्व मुकुंद राम रमेश नित्य भजामहे ॥ १० ॥ ❀

हे लक्ष्मीपति रामचन्द्रजी! जिन चरणोंको शिव ब्रह्मा पूजते हैं और जिनकी सुन्दर रजको स्पर्श करके अहल्या तरगई और जिनके नखसे सुरवन्दनीय त्रैलोक्यपावनी गंगाजी निकली हैं

---

(१) गीतायाम्— श्लोक ।

"यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत । अभ्युत्थानमधर्मस्य तदाऽऽत्मानं सृजाम्यहम् ॥ १ ॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् । धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ॥ २ ॥"

अर्थात् हे भारत ! जब २ वेदोक्त वर्णाश्रमधर्मकी हानि होती है तब २ अधर्मके नाश करनेके लिये मैं अपनेको उत्पन्न करता हूं ॥ १ ॥ और साधुओंकी रक्षाके लिये और दुष्टोंके नाश करनेकें लिये, और धर्मके संस्थापनके लिये मैं युग २ में अवतार लेता हूं ॥ १ ॥

और जिनमें ध्वजा, कुलिश, अंकुश तथा कमलके चिह्न हैं, और वनमें फिरते २ जिनमें कांटे चुभनेसे गट्टे पड़गये हैं, ऐसे मोक्षके देनेवाले आपके चरणकमलोंका हम नित्य भजन करते हैं ॥ १० ॥

अव्यक्तमूलमनादि तरुत्वच चारि निगमागम भने ।
षटकंध शाखा पंचविंश अनेक पर्ण सुमन घने ॥
फलयुगलविधि कटु मधुर बेलि अकेलि जेहि आश्रित रहे ।
पल्लवित फूलत नवल नित संसारविटप नमामहे ॥ ११ ॥

संसाररूपी वृक्षकी जड़ तौ अदृश्य माया है और यह वृक्ष अनादि है. इसकी अंडज, पिंडज, स्वेदज और जरायुजरूपी ४ त्वचा हैं. यह हम वेद और शास्त्र कहते हैं, और इसके सुख, दुःख, शीत, उष्ण, ज्ञान, अज्ञान ये छः गुदे हैं, और पच्चीस शाखा हैं, और यह अनेक वासनारूपी पत्ते और संकल्परूपी पुष्पोंसे युक्त हैं, और इसके पापपुण्यरूपी दो प्रकारके फल हैं एक खट्टा दूसरा मीठा और एक बेलि इसपर चढ़ रही है. उसमें नित्य नवीन पल्लव और पुष्प लगे रहते हैं. ऐसे संसारवृक्षस्वरूप आपको नमस्कार है ॥ ११ ॥

जे ब्रह्म अज अद्वैत अनुभवगम्य मनपर ध्यावहीं ।
ते कहहु जानहु नाथ हम तव सगुणयश नित गावहीं ॥
करुणायतन प्रभु सद्गुणाकर देव यह बर मांगहीं ।
मन कर्म बचन बिकार तजि तव चरण हम अनुरागहीं ॥ १२ ॥

जो लोग आपको ब्रह्मरूप, जन्मरहित. एक, अनुभवसे ध्यानके योग्य, तथा मनसे परे ध्यान करते हैं सो वेही कहैं और वेही जानैं. हम तौ नित्य आपके सगुण स्वरूपका यश गाते हैं. हे करुणानिधान ! हे प्रभु ! सुन्दर गुणोंके निधि ! हे देव ! हम आपसे यही वर माँगते हैं कि मन, वचन और कर्मके विकारको तजकर तुम्हारे चरणोंमें हमारा स्नेह होय ॥ १२ ॥

दो०-सबके देखत वेद सब, बिनती कीन्ह उदार ॥
अंतरध्यान भये पुनि, गये ब्रह्मआगार ॥ २९ ॥

सबके देखते २ सब वेदोंने बहुतसी बिनती करी और फिर अंतर्धान होकर ब्रह्मलोकको गये २९

बैनतेय सुनु संभु तब, आए जहँ रघुबीर ॥
बिनय करत गद्गद गिरा, पूरित पुलक सरीर ॥ ३० ॥

(कागभुशुंडि कहते हैं) हे गरुड़ ! सुनो, फिर महादेवरामचन्द्रजीके पास आये और शरीरमें पूर्ण पुलकायमान होकर गद्गद २ वाणीसे विनती करने लगे ॥ ३० ॥

छं०-जय राम रमारमणं शमनं, भवतापभयाकुल पाहि जनं ॥
अवधेश सुरेश रमेश विभो, शरणागत मांगत पाहि प्रभो ॥ १३ ॥
दशशीशविनाशन बीस भुजा, कृत दूरि महामहि भूरिरुजा ॥
रजनीचरवृंदपतंग रहे, शरपावकतेजप्रचंड दहे ॥ १४ ॥

हे राम ! हे लक्ष्मीपति ! आप संसारके संतापनाशक, भयाकुलजनोंके रक्षक हो; अवध, देवता और लक्ष्मीके स्वामी हो. हे विभु ! हे प्रभु ! शरणागतकी रक्षा करो ॥ १३ ॥ दशशिर और बीस भुजावाले रावणको मार आपने पृथ्वीका बड़ा रोग दूर किया और पतंगरूपी राक्षसोंका समूह आपके बाणरूपी प्रचंड अग्निके तेजमें भस्म होगया ॥ १४ ॥

महिमंडलमंडन चारुतरं धृतसायकचापनिषंगवरं ॥ ❀
मदमोह महाममता रजनी, तमपुंज दिवाकरतेजअनी ॥१५॥❀
मनुजात किरात निपात किये, मृगलोक कुभोग सरे न हिये ॥❀
हित नाथ अनाथनि पाहि हरे, विषयावन पामर भूलि परे ॥१६॥

आप भूमण्डलके अत्यन्त सुन्दरभूषण हो, धनुषवाण तरकस लिये हो, और मद, मोह तथा ममताकी महाअँधेरी रात्रिके अंधकारके समूहके लिये तेजोंकी सेनाके सूर्य हो ॥ १५ ॥ और कामदेवरूपी बहेलियेने मृगरूपी लोगोंको कुभोगरूपी वाण हृदयमें मार गिरादिया, इसलिये मैं आपकी शरण हूं. आप अनाथोंके नाथ हो, मेरी रक्षा करो ॥ और जो पांवर विषयरूपी वनमें भूले थे ॥ १६ ॥

बहुरोग वियोगन्ह लोग हये, भवदंघ्रिनिरादरके फल ये ॥ ❀
भवसिंधु अगाध परे नर ते, पदपंकज प्रेम न जे करते ॥१७॥ ❀
अतिदीन मलीन दुखी नितहीं, जिनके पदपंकज प्रीति नहीं ॥ ❀
अवलंब भवंतकथा जिन्हके, प्रिय संत अनंत सदा तिन्हके ॥१८॥

उनमेंसे कोई रोगसे और कोई वियोगमें नष्ट होगये. सो यह फल आपके चरणोंके निरादरका है वे मनुष्य संसाररूपी अथाह सागरमें पड़े हैं जो आपके चरणकमलोंमें स्नेह नहीं कहते ॥ १७ ॥ और जिन्होंने आपके चरणकमलोंमें प्रीति नहीं करी वे नित्य अति दीन, मलीन और दुखी रहते हैं. और जिनको आपका वा आपकी भवनाशक कथाका सहारा है उनको सर्वदा संत प्यारे हैं ॥ १८ ॥

नहिं राग न रोष न मान मदा, तिन्हके सम वैभव वा विपदा❀
यहि ते तव सेवक होत मुदा, मुनि त्यागहिं योग भरोस सदा१९❀
करि प्रेम निरंतर नेम लिये, पदपंकज सेवत शुद्ध हिये ॥ ❀
सम मान निरादर आदरही, सव संत सुखी विचरंति मही ॥२०❀

और जिनके राग, द्वेष, मान, मद, नहीं है और जिनके सम्पत्ति, विपत्ति समान हैं ऐसे आपके सेवक प्रसन्न होते हैं और मुनीश्वर आपके भरोसेपर सदा योग त्यागते हैं ॥ १९ ॥ और जो लोग सर्वदा नियमपूर्वक प्रीतिसे और शुद्ध अन्तःकरणसे आपके चरणकमलोंकी सेवा करते हैं और आदर और निरादरको एकसा समझते हैं वे सन्त पृथ्वीपर सुखी हो विचरते हैं ॥ २० ॥

मुनिमानसपंकजभृंग भजे, रघुवीर महारणधीर अजे ॥ ❀
तव नाम जपामि नमामि हरी, भवरोगमहामद मान अरी२१ ❀
गुणशीलकृपापरमायतनं, प्रणमामि निरंतर श्रीरमणं ॥ ❀
रघुनंदनिकंदन द्वंद्वघनं, महिपाल विलोकिय दीनजनं ॥२२॥ ❀

आप मुनियोंके मानसरूपी कमलको भ्रमरके समान सेवते हो. रघुकुलमें वीर, रणमें धीर अजेय हो. संसाररूपी रोग, महामद और अहंकारके नाशक ऐसे आपके नामको मैं जपता हूं ॥ २१ ॥ और विष्णुस्वरूप! आपको प्रणाम करताहूं. आरोप गुण, शील, कृपा और शोभाके निधान हो. अतएव हे लक्ष्मीरमण! हे रघुनन्दन! हे रावण कुम्भकर्णका नाश करनेवाले! राजभूषण! मुझ दीनजनकी ओर देखिये । मैं आपको निरन्तर प्रणाम करताहूं ॥ २२ ॥

दो०-बार बार बर माँगहूं, हर्षि देहु श्रीरंग ॥ ❀
पदसरोज अनपायिनी, भक्ति सदा सत्संग ॥ ३१ ॥ ❀

हे श्रीरंग! मैं बार २ (यह) वरदान मांगताहूं सो प्रसन्न होकर दीजिये. (एक तौ आपके) कमलसमान चरणोंमें अचल भक्ति और (दूसरा) सदा सत्संग हो ॥ ३१ ॥

बरनि उमापति रामगुन, हर्षि गये कैलास ॥ ❀
तब प्रभु कपिन्ह दिवायउ, सबबिध सुखप्रद बास ॥ ३२ ॥ ❀

महादेवजी रामचन्द्रजीके गुणोंका वर्णन कर और प्रसन्न होकर कैलास पर्वतको गये. तब भगवान्‌ने वन्दरोंको सब प्रकार सुखदायक स्थान (रहनेके लिये) बताये ॥ ३२ ॥

चौ०-सुनु खगपति यह कथा सुपावनि ❀ त्रिविधताप भवदोष नसावनि ॥ १ ॥
महाराजकर सुभ अभिषेका ❀ सुनत लहहिं नर बिरति बिवेका ॥ २ ॥

(कागभुशुंड कहते हैं) हे गरुड़! यह परमपवित्र कथा सुनों जो तीनों प्रकारके ताप और संसारके दोषोंका नाश करनेवाली है ॥ १ ॥ महाराज (रामचन्द्रजी) के शुभ राजतिलककी कथा सुनतेही मनुष्य वैराग्य और ज्ञान पावेंगे ॥ २ ॥

जे सकाम नर सुनहिं जे गावहिं ❀ सुख संपति नानाबिध पावहिं ॥ ३ ॥
सुरदुर्लभ सुख करि जगमाहीं ❀ अंतकाल रघुपतिपुर जाहीं ॥ ४ ॥

जो मनुष्य कामनासहित सुनैंगे और गावैंगे वे अनेक प्रकारकी सुख संपत्ति पावेंगे ॥ ३ ॥ और देवताओंकोभी कठिन ऐसा सुख संसारमें भोग करके अंतसमयमें रामचन्द्रजीके लोकको जायँगे ॥४॥

सुनहिं बिमुक्त बिरति अरु बिषई ❀ लहहिं भक्ति सुखसंपति नितई ॥ ५ ॥
खगपति रामकथा मै बरनी ❀ सुमतिबिलास त्रासदुखहरनी ॥ ६ ॥

मोक्ष चाहनेवाले ज्ञानी और विषयी मनुष्य जो (इस कथाको) सुनैंगे वे नित्य भक्ति और सुख संपत्ति पावेंगे ॥ ५ ॥ (कागभुशुंडि कहते हैं) हे गरुड़! मैंने रामचन्द्रजीकी कथा वर्णन की सो सुन्दर बुद्धिको प्रकाश करनेवाली, भय और दुःखके नाश करनेवाली है ॥ ६ ॥

बिरति बिबेक भक्ति दृढ़ करनी ❀ मोहनदीकहँ सुंदर तरनी ॥ ७ ॥
नित नव मंगल कोसलपुरी ❀ हर्षित रहहिं लोग सब कुरी ॥ ८ ॥

वैराग्य, ज्ञान और भक्तिके दृढ़ करनेवाली है और अज्ञानरूपी नदीके तरनेके लिये सुन्दर नौका है ॥ ७ ॥ अयोध्यापुरीमें नित्य नये आनन्द होते हैं और सब जातिके लोग प्रसन्न रहते हैं ॥ ८ ॥

नित नव प्रीति रामपदपंकज ❀ सेवत जेहिं संकर सुर मुनि अज ॥ ९ ॥
मंगन बहुप्रकार पहिराए ❀ द्विजन दान नानाविध पाए ॥ १० ॥

रामचन्द्रजीके कमलसमान चरणोंमें नित्य नया स्नेह करते हैं, कि जिन्हैं महादेव, ब्रह्मा, देवता और मुनीश्वर सेवन करते हैं ॥ ९ ॥ मँगतोंको बहुत भांति (वस्त्रादि) पहिराये और ब्राह्मणोंने अनेक प्रकारके दान पाये ॥ १० ॥

दो०-ब्रह्मानंदमगन कपि, सबयहँ प्रभुपदप्रीति ॥ ❀
जात न जानेउ दिवस निसि, गये मास षट बीति ॥ ३३ ॥ ❀

---

(१) गूढार्थदीपिकामें देखो।

सब वानर ब्रह्मानन्दमें मगन हैं और उनकी भगवान्के चरणोंमें प्रीति है. दिन रात जाते हुये नहीं जाने और यों छः महीने बीतगये ॥ ३३ ॥

चौ०–बिसरे गृह सपनेउ सुधि नाहीं ❀ जिमि परद्रोह संतमनमाहीं ॥ १ ॥
तब रघुपति सब सखा बुलाए ❀ आइ सबहि सादर सिर नाए ॥ २ ॥

सबको अपने २ घरकी याद भूल गई और स्वप्नेमेंभी ऐसी सुध नहीं रही जैसे संतोंके मनमें पराये द्रोहकी नहीं रहती॥१॥तब रामचन्द्रजीने सब मित्रोंको बुलाया तौ सबोंने आकर आदरसे शिर नवाया

प्रेमसमेत निकट बैठारे ❀ भक्तसुखद मृदु बचन उचारे ॥ ३ ॥
तुम अति कीन्ह मोरि सेवकाई ❀ मुखपर केहि बिध करौं बड़ाई ॥ ४ ॥

प्रेमसहित पास बिठाया और भक्तोंके सुख देनेवाले (भगवान्) ने मीठे बचन कहे कि ॥ ३ ॥ तुमने मेरी बड़ी सेवा की है, मुखपर किस भांति बड़ाई करूं ? ॥ ४ ॥

ताते मोहि तुम अति प्रिय लागे ❀ मम हितलागि भवनसुख त्यागे ॥ ५ ॥
अनुद राजसंपति बैदेही ❀ देह गेह परिवार सनेही ॥ ६ ॥

इससे तुम मुझको बहुत प्यारे लगे. तुमने मेरे हितके लिये घरोंके सुख छोड़ दिये ॥ ५ ॥ छोटे भाई, राज्य, संपत्ति, सीताजी, शरीर, घर, कुटुम्ब, मित्र ॥ ६ ॥

सब मोहिं प्रिय नहिं तुमहिं समाना❀ मृषा न कहौं मोर यह बाना ॥ ७ ॥
सबकहँ प्रिय सेवक यह नीती ❀ मोरे अधिक दासपर प्रीती ॥ ८ ॥

ये सब मुझे तुम्हारे समान प्यारे नहीं हैं और मैं झूठ नहीं बोलता, यह मेरी टेव है ॥ ७ ॥ सबको सेवक प्यारे हैं यह नीति है परन्तु मेरा दासपर अधिक प्रेम है ॥ ८ ॥

दो०–अब गृह जाहु सखा सब, भजहु मोहि दृढ़ नेम ॥ ❀
सदा सर्वगत सर्वहित, जानि करेहु अति प्रेम ॥ ३४ ॥ ❀

हे मित्र ! तुम अब सब घरको जाओ और दृढ़ नियमसे मेरा भजन करो और मुझे सदा सर्वव्यापक और सबका हितकारी जानकर अत्यंत प्रेम करते रहना ॥ ३४ ॥

चौ०–सुनि प्रभुबचन मगन सब भयऊ ❀ को हम कहाँ बिसरि तनु गयऊ ॥१॥
इकटक रहे जोरि कर आगे ❀ कहि न सकहिं कछु अति अनुरागे ॥२॥

भगवान्के बचन सुनकर सब ऐसे मगन होगये कि हम कौन और कहां हैं शरीरको भूल गये ॥ १ ॥ और हाथ जोड़ कर सामने टकोरी बाँध कर रह गये, अत्यंत प्रेममें मगन होनेके कारण कुछ कह नहीं सक्ते ॥ २ ॥

परम प्रेम तिन्हकर प्रभु देषा ❀ कहा बिविधबिध ज्ञान बिसेषा ॥ ३ ॥
प्रभुसंमुख कछु कहैं न पारहिं ❀ पुनि पुनि चरनसरोज निहारहिं ॥ ४ ॥

भगवान्ने उनका बड़ा स्नेह देखा तौ अनेक प्रकारसे बहुतसा ज्ञान समझाया ॥ ३ ॥ भगवान्के सामने कुछ कहते नहीं बनता, बार २ उनके कमलसमान चरणोंको देखते हैं ॥ ४ ॥

तब प्रभु भूषन बसन मँगाए ❀ नानारंग अनूप सुहाए ॥ ५ ॥
सुग्रीवहिं प्रथमहिं पहिराये ❀ भरत बसन निजहाथ बनाये ॥ ६ ॥

तब भगवान्ने अनेक रंगके सुन्दर सुहावने भूषण और वस्त्र मँगाये ॥ ५ ॥ और भरतजीने अपने हाथोंसे सुधार २ कर प्रथम सुग्रीवको वस्त्र पहिराये ॥ ६ ॥

प्रभुप्रेरित लछमन पहिराये ❀ लंकापति रघुपतिमन भाये ॥ ७ ॥
अंगद बैठि रहे नहिं डोले ❀ प्रीति देखि प्रभु ताहि न बोले ॥ ८ ॥

और लक्ष्मणजीने भगवान्की आज्ञासे बिभीषणको पहिराये और भगवान्के मनको प्यारे लगे ॥ ७ ॥ अंगद बैठाही रहगया, हटा नहीं, तौ उसकी प्रीति देखकर भगवान्ने उसे नहीं बुलाया ॥ ८॥

दो०–जाम्बवंत नीलादि सब, परिराए रघुनाथ ॥ ❀
हिय धरि रामस्वरूप सब, चले नाइ पद माथ ॥ ३५ ॥ ❀

जाम्बवंत और नील आदि इन सबको रामचन्द्रजीने वस्त्र पहिराये और वे सब हृदयमें रामचन्द्रजीका स्वरूप धारण कर और उनके चरणोंको शिर नवाकर चले ॥ ३५ ॥

तब अंगद उठि नाइ सिर, सजलनयन कर जोरि ॥ ❀
अति बिनीत बोलेउ वचन, मनहु प्रेमरस बोरि ॥ ३६ ॥ ❀

तव अंगदने उठकर शिर नवाया और नेत्रोंमें जल भरके हाथ जोड़ प्रेमके रसमें पगे हुये अतिनीतियुक्त वचन कहने लगा ॥ ३६ ॥

चौ०–सुनु सर्वज्ञ कृपासुखसिंधो ❀ दीनदयाकर आरतबंधो ॥ १ ॥
मरतीबार नाथ मोहिं बाली ❀ गये तुम्हारे पगतर घाली ॥ २ ॥

हे सर्वज्ञ ! सुनिये आप दया और सुखके सागर हो, दीनदयालु और दीनबन्धु हो ॥ १ ॥ हे स्वामी ! बाली मरते समय मुझे तुम्हारे चरणोंमें पटक गया था ॥ २ ॥

असरनसरन बिरद संभारी ❀ मोहिं जनि तजहु भक्तभयहारी ॥ ३ ॥
मोरे प्रभु तुम गुरु पितु माता ❀ जाउँ कहाँ तजि पदजलजाता ॥ ४ ॥

और आप अशरणके शरणदायक, वंशकी रीति रखनेवाले और भक्तभयहारी हो, मेरा त्याग न कीजिये ॥ ३ ॥ हे स्वामी ! मेरे तौ गुरु, पिता, माता आपही हो. (आपके) कमलसमान चरणोंको छोड़कर कहाँ जाऊँ ॥ ४ ॥

तुमहिं बिचारि कहहु नरनाहा ❀ प्रभु तजि भवन काज मम काहा ॥५॥
बालक अबुध ज्ञानबलहीना ❀ राखहु सरन जानि जन दीना ॥ ६ ॥

हे महाराज ! आपही बिचार कर कहो कि स्वामीको छोड़कर घरमें मेरा क्या काम है ॥ ५ ॥ मैं तौ अज्ञान बालक हूं तथा ज्ञान और बलरहित हूं. सो मुझे दीन जन जानकर शरणमें रखिये ॥६॥

नीच टहल गृहकी सब करिहौं ❀ पद बिलोकि भवसागर तरिहौं ॥ ७ ॥
अस कहि चरन परेउ प्रभुपाहीं ❀ अब जनि नाथ कहहु गृह जाहीं ॥ ८ ॥

आपके घरकी सब नीच टहल कर दिया करूंगा और चरणोंके दर्शन कर संसाररूपी समुद्रसे तर जाऊँगा ॥ ७ ॥ ऐसे कहकर भगवान्के चरणोंमें गिरपड़ा (और बोला कि) हे स्वामी ! अब घर जानेको न कहियेगा ॥ ८ ॥

दो०–अंगदबचन बिनीत सुनि, रघुपति करुनासीव ॥ ❀
प्रभु उठाइ उर लायऊ, सजल नयनराजीव ॥ ३७ ॥ ❀

अंगदकी विनतीकी बातें सुनकर करुणानिधान रामचन्द्र भगवान्ने उसे उठाकर हृदयसे लगा लिया और कमलसमान नेत्रोंमें जल भर आया ॥ ३७ ॥

निजउरमाला बसन मनि, बालितनय पहिराइ ॥ ❀
बिदा कीन्ह भगवान तब, बहु प्रकार समुझाइ ॥ ३८ ॥ ❀

तब भगवान्‌ने अपने गलेकी माला, वस्त्र और मणि अंगदको पहिराकर और बहुत भांति समझकर बिदा किया ॥ ३८ ॥

चौ०–भरत अनुज सौमित्रिसमेता ❀ पठवन चले भक्तकृतचेता ॥ १ ॥
अंगदहृदय प्रेम नहिं थोरा ❀ फिरि फिरि चितवत प्रभुकी ओरा॥२॥

भरत शत्रुघ्न और लक्ष्मणजीको साथ लेकर भक्तवत्सल भगवान् उसे पहुँचाने चले ॥ १ ॥ अंगदके हृदयमें इतना अधिक स्नेह है कि फिर २ कर भगवान्‌की ओर देखता है ॥ २ ॥

बार बार करि दंडप्रनामा ❀ मन अस रहन कहहिं मोहिं रामा ॥३॥
रामविलोकनि बोलनि चलनी ❀ सुमिरि सुमिरि सोचत हँसि मिलनी॥४॥

और वार २ दंडवत् प्रणाम करता है सो मनमें यह है कि, रामचन्द्र अवभी मुझसे रहनेको कहदें ॥३॥ रामचन्द्रजीकी चितवन, बोलचाल और हँसकर मिलनेको याद कर २ के सोचता है ॥ ४ ॥

प्रभुरुख देखि बिनय बहु भाखी ❀ चलेउ हृदय पदपंकज राखी ॥ ५ ॥
अति आदर सब कपि पहुँचाए ❀ भाइन्ह सहित राम फिर आए ॥ ६ ॥

भगवान्‌का रुख देखकर बहुतसी बिनती करी और कमलसमान चरणोंको हृदयमें रखकर बिदा हुआ ॥५॥ रघुनाथजीने बड़े आदरसे सब बन्दरोंको पहुँचाया और भाइयोंसमेत लौट आये ॥६॥

तब सुग्रीवचरन गहि नाना ❀ भांति बिनय कीन्हीं हनुमाना ॥ ७ ॥
दिन दस करि रघुपतिपदसेवा ❀ तब फिरी चरन देखिहौं देवा ॥ ८ ॥

तब हनूमान्‌ने सुग्रीवके चरण पकड़कर अनेक प्रकारसे प्रार्थना करी कि ॥ ७ ॥ हे देव ! दश दिन रामचन्द्रजीके चरणोंकि सेवा करके तब फिर आपके चरणोंके दर्शन करूंगा ॥ (सुग्रीवने कहा) ॥ ८ ॥

पुन्यपुंज तुम पवनकुमारा ❀ सेवहु जाइ कृपाआगारा ॥ ९ ॥
अस कहि कपिपति चले तुरंता ❀ अंगद कहेउ सुनुहु हनुमंता ॥ १० ॥

हे हनूमान् ! तुम बड़े पुण्यात्मा हो, सो जाकर कृपानिधान (रामचन्द्रजी) की सेवा करो ॥ ९ ॥ ऐसे कहकर सुग्रीव शीघ्रही चले. तब अंगदने कहा, हे हनूमान् ! सुनो ॥ १० ॥

दो०–कहेहु दंडवत प्रभुसन, तुमहि कहौं कर जोरि ॥ ❀
बार बार रघुनायकहिं, सुरति करायहु मोरि ॥ ३९ ॥ ❀

तुमसे हाथ जोड़कर कहताहूं कि भगवान्‌से मेरी दंडवत् कहना और रामचन्द्रजीको वार २ मेरी याद दिलाते रहना ॥ ३९ ॥

अस कहि चलेउ बालिसुत, फिरि आयउ हनुमंत ॥ ❀
तासु प्रीति प्रभुसन कही, मगन भये भगवंत ॥ ४० ॥ ❀

ऐसे कहकर अंगद तौ चले, हनूमान् लौट आये और अंगदकी प्रीति भगवान्‌से कही, तौ भगवान् प्रसन्न हुये ॥ ४० ॥

कुलिसहुँ चाहि कठोर अति, कोमल कुसुमहुँ चाहि ॥ ❀
चित खगेस रघुनाथ अस, समुझि परै कहु काहि ॥ ४१ ॥ ❀

(कागभुशुंडि कहते हैं) हे गरुड़ ! (जब कठोर होता है) तब वज्रकोभी मात करता है (और

जब नम्र होता है) तौ फूलसेभी अधिक कोमल होजाता है, ऐसा रामचन्द्रजीका चित्त कहो किसे समझ पड़सक्ता है? ॥ ४१ ॥

चौ०–पुनि कृपालु लिय बोलि निषादा ❀ दीन्हेउ भूषन बसन प्रसादा ॥ १ ॥
जाहु भवन मम सुमिरन करहू ❀ मन क्रम बचन धर्म अनुसरहू ॥ २ ॥

फिरदयानिधान (भगवान्) ने निषादको बुलालिया और अपने प्रसादी भूषण और वस्त्र दिये (फिर कहा कि) ॥ १ ॥ घर जाओ, मेरा स्मरण करते रहना और मन क्रम वचनसे धर्मका पालन करते रहना ॥ २ ॥

तुम मम सखा भरतसम भ्राता ❀ सदा रहहु पुर आवत जाता ॥ ३ ॥
वचन सुनत उपजा सुख भारी ❀ परेउ चरन लोचन भरि बारी ॥ ४ ॥

हे भाई! तुम भरतके समान मेरे सखा हो, सो सदा पुरमें आते जाते बने रहना ॥३॥ वचन सुनतेही निषादको बड़ा सुख उत्पन्न हुआ और नेत्रोंमें जल भरकर चरणोंमें गिरपड़ा ॥ ४ ॥

चरनकमल उर धरि गृह आवा ❀ प्रभुप्रभाव परिजनहिं सुनावा ॥ ५ ॥
रघुपतिचरित देखि पुरवासी ❀ पुनि पुनि कहहिं धन्य सुखरासी ॥ ६ ॥

(भगवान्के) कमलसमान चरणोंको हृदयमें रखकर घर आया और भगवान्का प्रभाव कुटुम्बियोंको सुनाया ॥ ५ ॥ रामचन्द्रजीके चरित्र देखकर नगरनिवासी बार २ कहते हैं कि सुखकी राशि (रामचन्द्रजी) को धन्य है ॥ ६ ॥

रामराज बैठे त्रयलोका ❀ हर्षित भयउ गयउ सब सोका ॥ ७ ॥
बैर न करहिं काहुसन कोई ❀ रामप्रताप विषमता खोई ॥ ८ ॥

जब रामचन्द्रजी राज्यपर बैठे तौ तीनों लोक प्रसन्न हुये और सब शोक जाता रहा ॥ ७ ॥ कोई किसीसे वैर नहीं करता, रामचन्द्रजीके प्रतापसे शत्रुता जाती रही ॥ ८ ॥

दो०–वरनास्रम निज निज धरम, निरत वेदपथ लोग ॥ ❀
चलहिं सदा पावहिं सुखहिं, नहिं भय सोक न रोग ॥ ४२ ॥ ❀

सब लोग वर्ण, आश्रम और अपने २ धर्ममें प्रीति करके वेदमार्गपर चलते हैं और सदा सुख पाते हैं. भय, शोक और रोग नहीं रहा ॥ ४२ ॥

चौ०–दैहिक दैविक भौतिक तापा ❀ रामराज नहिं काहुहिं व्यापा ॥ १ ॥
सब नर करहिं परस्पर प्रीती ❀ चलहिं सुधर्म निरतस्रुतिरीती ॥ २ ॥

देहसे उत्पन्न हुआ, दैवका किया हुआ, और मनसे उत्पन्न हुआ दुःख रामचन्द्रजीके राज्यमें किसीको नहीं व्यापा ॥ १ ॥ सब मनुष्य आपसमें प्रेम करते हैं और अच्छे धर्मपर चलते हैं और वेदकी रीतिमें तत्पर हैं ॥ २ ॥

चारिउ बरन धर्म जगमाहीं ❀ पूरिरहा सपनेहुँ अघ नाहीं ॥ ३ ॥
रामभक्तिरत नर अरु नारी ❀ सकल परमगतिके अधिकारी ॥ ४ ॥

संसारमें चारों वर्णोंमें धर्म छारहा है, पाप स्वप्नेमेंभी नहीं है ॥ ३ ॥ स्त्री और पुरुष रामचन्द्रजीके भक्त है और संपूर्ण मोक्षके अधिकारी हैं ॥ ४ ॥

अलपमृत्यु नहिं कवनिउ पीरा ❀ सब सुंदर सब निरुज सरीरा ॥ ५ ॥
नहि दरिद्र कोउ दुखी न दीना ❀ नहिं कोउ अबुध न लछनहीना ॥ ६ ॥

---

(१) गूढ़ार्थदीपिकामें देखो।

थोड़ी अवस्थामें मृत्यु और कोईभी पीड़ा नहीं होती है, सब सुन्दर हैं और सबके शरीर निरोग हैं ॥५॥ न तौ कोई दरिद्री है और न कोई दीन दुखी है और न कोई अज्ञ और लक्षणरहित है ॥६॥

सब निर्दंभ धर्मरत धरनी ❀ नर अरु नारि चतुर सुभकरनी ॥ ७ ॥
सब गुनज्ञ सब पंडित ज्ञानी ❀ सब कृतज्ञ नहिं कपट सयानी ॥ ८ ॥

पृथ्वीपर सब स्त्रीपुरुष पाखंड़रहित, धर्ममें रत, चतुर और शुभकर्म करनेवाले हैं ॥ ७ ॥ सब लोग गुणवान्, ज्ञानी, पंडित, गुण माननेवाले हैं और कोई कपटमें चतुर नहीं है ॥ ८ ॥

दो०-रामराज्य बिहगेस सुनु, सचराचर जगमाहिं ॥ ❀
काल कर्म स्वभाव गुन, कृत दुख काहुहिं नाहिं ॥ ४३ ॥ ❀

(कागभुशुंडि कहते हैं) हे गरुड़ ! सुनो, रामचन्द्रजीके राज्यमें संसारमें जितने चराचर जीव हैं तिन्हें काल, कर्म, स्वभाव और गुणोंसे उत्पन्न हुआ दुःख किसीकोभी नहीं होता ॥ ४३ ॥

चौ०-भूमि सप्त सागर मेखला ❀ एक भूप रघुपति कौसला ॥ १ ॥
भुवन अनेक रोमप्रति जासू ❀ यह प्रभुता कछु बहुत न तासू ॥ २ ॥

पृथ्वीके सात समुद्र मेखला हैं और एक रामचन्द्रजी अयोध्याधिपतिही राजा हैं ॥ १ ॥ जिसके रोम २ अनेक लोक हैं उसकी यह प्रभुता कुछ बहुत नहीं है ॥ २ ॥

सोउ महिमा समुझत प्रभुकेरी ❀ यह बरनत हीनता घनेरी ॥ ३ ॥
यह महिमा खगेस जिन्ह जानी ❀ फिरि यह चरित तिन्हहु रति मानी ॥४॥

सो भगवान्की उस महिमाको समझकर इसके वर्णन करनेमें बहुत छोटापना है ॥३॥ (कागभुशुंडि कहते हैं) हे गरुड़ ! जिन्होंने यह महिमा जानी उन्होंने फिरभी इस चरित्रसे प्रीति की ॥ ४ ॥

सो जानेकर फल यह लीला ❀ कहहिं महामुनि सुमिति सुसीला ॥ ५ ॥
रामराज्यकर सुख संपदा ❀ बरनि न सकहिं फनीस सारदा ॥ ६ ॥

उसके जाननेका फल इस चरित्रमें प्रीति होना है. इसे श्रेष्ठबुद्धिवाले और सुशील बड़े २ मुनीश्वर कहते हैं॥५॥ रामचन्द्रके राज्यकी सुख और संपत्तिको शेष और सरस्वतीभी वर्णन नहीं कर सक्ते॥६॥

सब उदार सब परउपकारी ❀ द्विजसेवक सब नर अरु नारी ॥ ७ ॥
एकनारिव्रतरत नर झारी ❀ ते मनवचक्रम पतिहितकारी ॥ ८ ॥

उस राज्यमें सब उदार, सब परोपकारी थे और सब स्त्रीपुरुष ब्राह्मणोंकी सेवा करते थे ॥ ७ ॥ सब मनुष्य एकनारीव्रतमें थे, अर्थात् अपनीही स्त्रीसे भोगविलास करतेथे; और वे स्त्रियांभी मन क्रम वचनसे पतिका हित करनेवालीं थीं ॥ ८ ॥

दो०-दंड जतिनकर भेद जहँ, नर्तक नृत्यसमाज ॥ ❀
जीतहिं मनहिं सुनिय अस, रामचंद्रके राज ॥ ४४ ॥ ❀

जिस रामचन्द्रजीके राज्यमें यह सुनाई देता था कि दंड केवल संन्यासियोंके हाथमें रहगया अर्थात् प्रजाके ऊपर दंड नहीं होता. और भेद अर्थात् ताल स्वरका फरक जहां नाचनेवालोंके समाजमें रहगया और जीतनेको केवल मन रहगया अर्थात् शत्रुआदि जीतनेको कोई न रहा ॥४४॥

चौ०-फूलहिं फलहिं सदा तरु कानन ❀ रहहिं एक सँग गज पंचानन ॥ १ ॥
खग मृग बैर सहज बिसराई ❀ सबनि परस्पर प्रीति बढ़ाई ॥ २ ॥

वनमें वृक्ष सदा फूलते फलते हैं और हाथी और सिंह एकसाथ फिरते हैं ॥ १ ॥ सब पशुपक्षियोंने स्वाभाविक वैर छोड़कर आपसमें दृढ़ प्रीति करली ॥ २ ॥

कूजहिं खग मृग नानावृंदा ❀ अभय चरहिं वन करहिं अनंदा ॥ ३ ॥
सीतल सुरभि पवन बह मंदा ❀ गुंजत अलि लैचलु मकरंदा ॥ ४ ॥

नानाभांतिके पशु पक्षी शब्द करते हैं और निर्भय चरते हुये वनमें आनन्द करते हैं ॥ ३ ॥ शीतल, मन्द, सुगंधित पवन चलती है और भौंरे गूंजते हुये परागको लेकर उड़ते हैं ॥ ४ ॥

लता विटप मांगे फल द्रवहीं ❀ मनभावते धेनु पय स्रवहीं ॥ ५ ॥
ससिसंपन्न सदा रह धरनी ❀ त्रेता भइ सतजुगकी करनी ॥ ६ ॥

वेलि और वृक्ष मनमांगे फल देते हैं और गायें मनमाना दूध देती हैं ॥ ५ ॥ पृथ्वी सदा अन्नसे भरी रहने लगी और त्रेतामें सतयुगकी करनी होने लगी ॥ ६ ॥

प्रगटे गिरि नाना मनिखानी ❀ जगदातमा भूप पहिंचानी ॥ ७ ॥
सरिता सकल बहैं बर बारी ❀ सीतल कमल स्वादु सुखकारी ॥ ८ ॥

संसारके आत्मा ऐसे राजा (रामचन्द्र) जीको पहिचानकर पर्वतोंमें अनेक मणियोंकी खानें प्रगट होगईं हैं ॥७॥ सब नदियोंमें शीतल निर्मल स्वादिष्ट और सुखदायक श्रेष्ठ जल बहने लगा ॥ ८ ॥

सागर निजमर्यादा रहहीं ❀ डारहिं रत्न तटन्हि नर लहहीं ॥ ९ ॥
सरसिजसंकुल सकल तड़ागा ❀ अतिप्रसन्न दस दिसाविभागा ॥ १० ॥

समुद्र अपनी मर्यादापर रहने लगे. रत्नोंको किनारेपर डालते हैं और उन्हें मनुष्य ले लेते हैं ॥ ९ ॥ सब सरोवर कमलोंसे भरगये और दशों दिशाओंके विभाग बहुत निर्मल होरहे हैं ॥१०॥

दो०-बिधु महिपूर पियूषन, रवि तप जितनहिं काज ॥
माँगे वारिद देहिं जल, रामचंद्रके राज ॥ ४५ ॥

रामचन्द्रके राज्यमें चन्द्रमा अमृतसे पृथ्वीको परिपूर्ण करे रहता है, सूर्य उतनाही तपता है जितना काम पड़े, और वादल जब मांगो तबही जल देते हैं ॥ ४५ ॥

चौ०-कोटिन्ह वाजिमेध प्रभु कीन्हे ❀ अमित दान विप्रनकहँ दीन्हे ॥ १ ॥
श्रुतिपथपालक धर्मधुरंधर ❀ गुनातीत अरु भोगपुरंदर ॥ २ ॥

भगवान्ने करोड़ों अश्वमेध यज्ञ किये और ब्राह्मणोंको अनगिनती दान दिये ॥ १ ॥ रघुनाथजी वेदका मार्ग पालन करनेवाले, धर्ममें धुरंधर, गुणोंसे परे और भोगमें इन्द्रके समान हैं ॥ २ ॥

पतिअनुकूल सदा रह सीता ❀ सोभाखानी सुसील बिनीता ॥ ३ ॥
जानति कृपासिंधुप्रभुताई ❀ सेवति चरनकमल मन लाई ॥ ४ ॥

शोभाकी खानि सुशील और नीतियुक्त सीताजी सदा पतिकी आज्ञामें रहती हैं ॥ ३ ॥ दयाके सागर (भगवान्) की प्रभुताको जानती हैं और उनके कमलसमान चरणोंका सेवन मन लगाकर करती हैं ॥ ४ ॥

जद्यपि गृह सेवक सेवकिनी ❀ सब प्रकार सेवाविधि लीनी ॥ ५ ॥
निजकर गृहपरिचर्या करहीं ❀ रामचन्द्रआयसु अनुसरहीं ॥ ६ ॥

यद्यपि घरमें दास दासी हैं तौभी सब भांति सेवाकी बिधि आपही लीनी है ॥ ५ ॥ अपने हाथोंसे घरकी सब टहल करती हैं और रामचन्द्रजीकी आज्ञा मानती हैं ॥ ६ ॥

जेहिबिध कृपासिंधु सुख मानहिं ❀ सोइ सिय सेवाबिधि उर आनहिं ॥७॥
कौसल्यादि सासु गृहमाहीं ❀ सेवहिं सबै मान मद नाहीं ॥ ८ ॥
उमा रमा ब्रह्मानि वंदिता ❀ जगदंबा संतत अनिंदिता ॥ ९ ॥

जिस प्रकार भगवान् सुख मानें सीताजी उसी सेवाकी विधिको हृदयमें धारण करती हैं ॥ ७॥ कौशल्याआदि सासु जो घरमें हैं उन सबकी मान मद छोड़कर सेवा करती हैं ॥८॥ और पार्वती लक्ष्मी और सावित्रीसे वन्दन कीगई जगतकी माता जानकीजी सदा आनन्दित रहती हैं ॥ ९ ॥

दो०–जाकी कृपाकटाक्ष सुर, चाहत चितवनि सोइ ॥
रामपदारविंदरत, करति स्वभावहिं खोइ ॥ ४६ ॥

जिसकी कृपाकटाक्ष और चितवनको देवता चाहते हैं वेही (सीताजी) स्वभावको छोड़कर रामचन्द्रजीके चरणकमलोंमें ध्यान लगाये रहती हैं ॥ ४६ ॥

चौ०–सेवहिं सानुकूल सब भाई ❀ रामचरनरत प्रीति सुहाई ॥ १ ॥
प्रभुपदकमल विलोकत रहहीं ❀ कबहुँ कृपालु हमहिं कछु कहहीं ॥ २ ॥

सब भाई आज्ञाकारी रहकर सेवा करते हैं और उनकी रामचन्द्रजीके चरणोंमें अत्यन्त प्रीति है ॥१॥ भगवान्के कमलसमान चरणोंको देखते रहते हैं, कि कब दयानिधान हमसे कुछ कहैं ॥२॥

राम करहिं भ्रातन्हपर प्रीती ❀ नानाभाँति सिखावहिं नीती ॥ ३ ॥
हर्षित रहहिं नगरके लोगा ❀ करहीं सकल सुरदुर्लभभोगा ॥ ४ ॥

रामचन्द्रजी भाइयोंपर प्रीति करते हैं और अनेक प्रकारकी नीति सिखाते हैं ॥ ३ ॥ नगरके लोग प्रसन्न रहते हैं और सब देवताओंकोभी दुर्लभ ऐसे आनन्द भोगते हैं ॥ ४ ॥

अहनिसि बिधिहि मनावत रहहीं ❀ श्रीरघुवीरचरनरति चहहीं ॥ ५ ॥
दुइ सुत सुंदर सीता जाये ❀ लव कुस वेदपुराननिह गाये ॥ ६ ॥

दिनरात विधाताको मनाते रहते हैं और श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रीति चाहते हैं ॥ ५ ॥ जानकीजीके सुन्दर दो २ पुत्र हुये जिनका नाम वेद और पुराणोंने लव कुश गाया है ॥ ६ ॥

दोउ विजयी विनयी अतिसुन्दर ❀ हरिप्रतिबिंब मनहुँ गुनमन्दिर ॥ ७ ॥
दुइ दुइ सुत सब भ्रातन्हकेरे ❀ भये रूपगुनशीलघनेरे ॥ ८ ॥

दोनों विजयी नम्र और गुणोंके धाम ऐसे अधिक सुन्दर हैं मानों भगवान्कीही सूरतके हैं ॥ ७ ॥ सब भाइयोंके दो २ पुत्र हुये जो बड़े रूप गुण और शीलयुक्त थे ॥ ८ ॥

दो०–ज्ञान गिरा गोगीत अज, मायागुनगोपार ॥
सोइ सच्चिदानंदघन, करत चरित्र उदार ॥ ४७ ॥

जो ज्ञान वाणी और इन्द्रियोंसे परे हैं और जन्मरहित तथा मायाके गुणोंके परे हैं वेही सच्चिदानन्द अनेक चरित्र करते हैं ॥ ४७ ॥

चौ०–प्रातकाल सरयू करि मज्जन ❀ बैठहिं सभा संग द्विज सज्जन ॥ १ ॥
वेद पुरान बसिष्ठ बखानहिं ❀ सुनहिं राम जद्यपि सब जानहिं ॥ २ ॥

प्रातःकाल[1] सरयूनदीमें स्नानकर ब्राह्मण और सज्जनोंके साथ सभामें बैठते हैं ॥ १ ॥ वसिष्ठजी वेद पुराण बाँचते हैं और रामचन्द्रजी यद्यपि सब जानते हैं तौभी सुनते हैं ॥ २ ॥

अनुजन्हसंयुत भोजन करहीं ❀ देखि सकल जननी सुख भरहीं ॥ ३ ॥
भरत सत्रुहन दोनों भाई ❀ सहित पवनसुत उपवन जाई ॥ ४ ॥

---

(१) "पञ्च पञ्च उषःकालः षट्पञ्चाशारुणोदयः ।
सप्तपञ्च भवेत् प्रातः शेषः सूर्योदयः स्मृतः ॥" अर्थात् ५५ घड़ीके पीछे उषःकाल ५६ घड़ी पीछे अरुणोदय ओर ५७ घड़ी पीछे प्रातःकाल होता है ।

छोटे भाइयोंको साथ बिठलाकर भोजन करते हैं, जिन्हैं देखकर सब माता सुख पाती हैं ॥३॥ भरत और शत्रुघ्न दोनों भाई हनुमानसमेत बगीचोंमें जाकर ॥ ४ ॥

बूझहिं बैठि रामगुनगाहा ❀ कह हनुमान सुमति अवगाहा ॥ ५ ॥
सुनतविमलगुनअतिसुखपावहिं ❀ बहुरि बहुरि करि विनय सुनावहिं ॥ ६ ॥

और बैठकर रामचन्द्रजीके अनेक गुणोंको पूछते है और परमबुद्धिमान् हनूमान्जी कहते हैं ॥ ५ ॥ निर्मल गुणोंको सुनतेही बहुतसा सुख पाते हैं और वार २ बिनती सुनाते हैं ॥ ६ ॥

सबके गृह गृह होइ पुराना ❀ रामचरित सुन्दर विध नाना ॥ ७ ॥
नर अरु नारि रामगुनगानहिं ❀ करहिं दिवस निसि जात न जानहिं ॥८॥

सबके घर २ में पुराण और सुन्दर रामचन्द्रजीका चरित्र अनेक प्रकारसे होता है ॥७॥ स्त्री और पुरुष रामचन्द्रजीके गुणोंका गान करते हैं जिससे दिनरात जाते हुये जाने नहीं जाते ॥ ८ ॥

दो०-अवधपुरीवासीन्हकर, सुखसंपदासमाज ॥ ❀
सहस सेष नहिं कहि सकहिं, जहँ नृप राम विराज ॥ ४८ ॥ ❀

अयोध्यापुरीनिवासियोंके सुख और संपत्तिके समाजको हजार शेषजीभी नहीं कहसक्ते कि जहां रामचन्द्रजी विराजमान हैं ॥ ४८ ॥

चौ०-नारदादि सनकादि मुनीसा ❀ दर्सनलागि कोसलाधीसा ॥ १ ॥
दिनप्रति सकल अयोध्या आवहिं ❀ देखि नगर बिराग बिसरावहिं ॥ २ ॥

नारद और सनकादि मुनराज रामचन्द्रजीके दर्शनोंके लिये ॥ १ ॥ सब प्रति दिवस अयोध्यामें आते हैं नगरको देखकर वैराग्यको भूल जाते हैं ॥ २ ॥

रत्नजटितमनि कनकअटारी ❀ नानारंग रुचिर गच ढारी ॥ ३ ॥
पुर चहुँपास कोट अतिसुंदर ❀ रचे कँगूरा रंगरंग वर ॥ ४ ॥

रत्न और मणिजटित सुवर्णकी अटारियां बनी हैं जिनमें अनेक रंगकी सुन्दर गच ढारी हैं ॥३॥ नगरके चारोंओर बहुत सुंदर परकोटा बना है जिसमें रंगबिरंगके कंगूरे छिके हुये हैं ॥ ४ ॥

नव गृह सुंदर निकट बनाई ❀ जनु दूसरि अमरावति आई ॥ ५ ॥
महि बहुरंग रचित गज काँचा ❀ जो बिलोकि मुनिवर वन राँचा ॥ ६ ॥

नवीन घर अथवा नौ खनके घर ऐसे सुन्दर और पास २ बने हैं मानों दूसरी इन्द्रपुरी आई हो ॥५॥ पृथ्वीमें बहुत रंगके जड़ाऊ फर्श बनाये हैं जिन्हैं देखकर श्रेष्ठ मुनिश्वरोंके मन लुभाते हैं ॥६॥

धवल धाम ऊपर नभ चुंबत ❀ कलस मनहुँ शशि रवि द्युति निंदत ॥७॥
बहुमनिरचित झरोखा भ्राजहिं ❀ गृहगृहप्रति मनिदीप विराजहिं ॥ ८ ॥

ऊपर श्वेत २ महल ऐसे उँचे हैं कि आकाशको छूते हैं और जिनके कलश मानों सूर्यचन्द्रकी कांतिकी भी निन्दा करते हैं ॥ ७ ॥ बहुतसे मणिजटित झरोखे शोभायमान हैं और हरएक घरमें मणियोंके दीपक विराजमान हैं ॥ ८ ॥

छं०-मनिदीप राजहिं भवन भ्राजहिं देहरी विद्रुमरची । ❀
सुंदर मनोहर मंदिरायत अजिर अति फटिकन्ह खची ॥ ❀
मनिखंभ भित्ति विरंचिबिरचित कनकमनि मरकत रचे । ❀
प्रतिद्वार द्वार कपाट पुरट बनाइ बहु बज्रन खचे ॥ २३ ॥ ❀

घर २ में मणियोंके तो दीपक शोभायमान हैं और मूंगोंकी देहलियाँ बनाई गई हैं, सुन्दर मनहरन लंबे चौड़े महलोंके आंगनमें बहुतसे स्फटिक जड़े हुये हैं और मणियोंके खंभ और दीवारें ऐसी हैं मानों विधाताने कनकमणि कहिये पुखराज और मरकतमणिकी बनाई हैं, और हरएक द्वारके किवाड़ सोनेके बनाकर बहुतसे उनमें बहुतसे हीरे जड़े हैं ॥ २३ ॥

दो०-चारु चित्रसाला अमित, गृह गृह रचे बनाइ ॥ ❀
रामधाम जो निरखत, मुनिमन लेत चोराइ ॥ ४९ ॥ ❀

घर २ में बहुतसी उज्वल चित्रशाला रचकर बनाई हैं, रामचन्द्रजीका स्थान ऐसा है जो देखतेही मुनियोंके मनकोभी चुरा लेता है अर्थात् उनका यही मन करता है कि देखाही करें ॥४९॥

चौ०-सुमनवाटिका सबहि लगाई ❀ विविधभाँति करि जतन बनाई ॥ १ ॥
लता ललित बहुभाँति सुहाई ❀ फूलत सदा बसंतकि नाई ॥ २ ॥

फूलोंकी बगीचियाँ सबोंने लगाई हैं और अनेक भांतिसे रच २ कर बनाई हैं ॥ १ ॥ सुन्दर २ बेलें बहुत प्रकारकी सुहा रही हैं और सदा बसंतकी भांति फूलती रहती हैं ॥ २ ॥

गुंजत मधुकर मुखर मनोहर ❀ मारुत त्रिविध सदा बह सुंदर ॥ ३ ॥
नानाखग बालकन्ह जिआए ❀ बोलत मधुर उडात सोहाए ॥ ४ ॥

सुन्दर भौंरे मनोहर शब्दसे गूंजते रहते हैं और सुन्दर तीन भांतिकी (शीतल, मन्द, सुगन्धित) पवन सदा चलती रहती है ॥ ३ ॥ भांति २ के पक्षी बालकोंने पाल रक्खे हैं जो मीठे बोलते हैं और सुन्दर उड़ते हैं ॥ ४ ॥

मोर हंस सारस पारावत ❀ भवनन्हिपर सोभा अति पावत ॥ ५ ॥
जहँ तहँ देखहिं निजपरिछाहीं ❀ बहुविध कूजहिं नृत्य कराहीं ॥ ६ ॥

मोर, हंस, सारस, और कबूतर, महलोंपर बैठे बड़ी शोभा पाते हैं ॥ ५ ॥ और जहां तहां शीशेकी गचोंमें अपनी २ परछाईंको देखकर बहुत भांति कूजते और नाचते हैं ॥ ६ ॥

सुक सारिका पढ़ावहिं बालक ❀ कहहु राम रघुपति जनपालक ॥ ७ ॥
राजद्वार सबहींविध चारू ❀ बीथी चौहट रुचिर बजारू ॥ ८ ॥

बालक, तोते-मैनाओंको पढाते हैं (और उनसे कहते हैं कि) राम २ कहो. भक्तप्रतिपालक रघुनाथजीका नाम लो ॥ ७ ॥ राजद्वार सब प्रकारसे उज्वल होरहा है और गली चौराहे तथा बाजार सुन्दर सजे हैं ॥ ८ ॥

छं०-बाजारु चारु न बनै बरनत वस्तु बिनु गथ पाइये । ❀
जहँ भूप रमानिवास तहँकी संपदा किमि गाइये ॥ ❀
बैठे बजाज सराफ वनिक अनेक मनहुँ कुबेर ते । ❀
सब सुखी सब सुचरित्र सुंदर नारि नर सिसु जरठते ॥२४॥❀

बाजार ऐसा सुन्दर सजा है कि वर्णन नहीं किया जाता और जहाँ विनाही मूल्यके वस्तु मिलती हैं, सो जहां साक्षात् लक्ष्मी निवास (भगवान्) राजा हैं वहांकी संपत्ति कैसे कही जासक्ती है ? वहां अनेक बजाज सराफ और महाजन ऐसे बैठे हैं मानों कुबेर हैं, और स्त्रीपुरुष बालक और बूढ़े जितने हैं वे सब सुन्दर सुखी और अच्छे चरित्रवाले हैं ॥ २४ ॥

दो०-उत्तर दिसि सरयू बहै, निर्मल जल गंभीर ॥
बाँधे घाट मनोहर, स्वल्प पंक नहिं तीर ॥ ५० ॥

उत्तरदिशामें सरयू नदी वहती है जिसमें गहरा निर्मल जल भराहुआ है, और घाट ऐसे मनोहर बनाये हैं कि जिनके किनारेपर तनिकभी कीच नहीं ॥ ५० ॥

चौ०-दूरि फराक रुचीर सो घाटा ❀ जहँ जल पिवहिं वाजिगजठाटा ॥ १ ॥
पनिघट परम मनोहर नाना ❀ तहाँ न पुरुष करहिं अस्नाना ॥ २ ॥

उससे कुछ दूर लंवा चौड़ा सुन्दर वह घाट बना है जहां हांथी घोड़ोंके झुंड जल पीते हैं ॥१॥ अत्यंत सुन्दर पनिघट बने हुए हैं वहां मनुष्य स्नान नहीं करने पाते (क्योंकि वहां स्त्रियाँ गागर भरने आती हैं) ॥ २ ॥

राजघाट सबहीविध सुंदर ❀ मज्जहिं नहाँ बरन चारिउ नर ॥ ३ ॥
तीरतीर देवन्हकर मंदिर ❀ चहुँदिसि तेहिकें उपवन सुंदर ॥ ४ ॥

राजाघाटका क्या कहना है वह तो सव प्रकारसे सुन्दर बना है और वहां (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र) चारों वर्णके मनुष्य स्नान करते हैं ॥ ३ ॥ किनारे २ पर देवताओंके मन्दिर बने हैं और जिनके चारों ओर सुन्दर बगीचे लगरहे हैं ॥ ४ ॥

कहुँ कहुँ सरितातीर उदासी ❀ बसहिं ज्ञानरत मुनि संन्यासी ॥ ५ ॥
जहँ तहँ तुलसी वृंद सुहाये ❀ बहुप्रकार सब मुनिन्ह लगाये ॥ ६ ॥

नदीके किनारे कहीं २ ज्ञानी उदासी मुनीश्वर और संन्यासी रहते हैं ॥ ५ ॥ जहां तहां मुनीश्वरोंने तुलसीके सुन्दर वृक्ष बहुत भांतिसे लगा रक्खे हैं ॥ ६ ॥

पुरसोभा कछु बरनि न जाई ❀ बाहर नगर परम रुचिराई ॥ ७ ॥
देखत पुरी अखिल अघ भागा ❀ बन उपवन नापीका तड़ागा ॥ ८ ॥

नगरकी शोभा कुछ वर्णन नहीं कीजाती, नगरके बाहर तौ परमसुन्दरता होरही है ॥ ७ ॥ वन, उपवन, वावड़ी, तालाव और पुरीके देखतेकी सव पाप नाश होजाते हैं ॥ ८ ॥

छं०-वापी तड़ाग अनूप कूप मनोहरायत सोहई ।
सोपान सुंदर नीर निर्मल देखि सुर मुनि मोहई ॥
बहुरंगकंज अनेक खग कूजहिं मधुप गुंजारहीं ।
आराम रम्य पिकादि खगरव मनहुँ पथिक हँकारहीं ॥२२॥

सुन्दर बावड़ी तलाव और मनोहर लंबे चौड़े कुये ऐसे शोभायमान हैं जिनमें सीढ़ियाँ लगरही हैं, निर्मल जल बह रहा है; जिन्हें देखकर मुनीश्वरोंके मन मोहित होते हैं. बहुतसे रंग २ के कमल खिल रहे हैं, जिनपर अनेक पक्षी कूजते हैं, और भौंरे गूंजते हैं, और सुन्दर बगीचोंमें कोयल आदि पक्षियोंके ऐसे सुन्दर शब्द होते हैं मानों वे बटोहियोंको बुला रहे हैं ॥ २२ ॥

दो०-रमानाथ जहँ राज्यपति, सो पुर बरनि कि जाइ ॥
अनिमादिक सुखसंपदा, रहीं अवधपुर छाइ ॥ ५१ ॥

जहां लक्ष्मीके पती (रामचन्द्र) राजा हैं वह नगर किस प्रकार वर्णन किया जासक्ता है?

अणिमा आदि (ऋद्धि सिद्धि) जो सुखकी संपत्ति हैं वे अयोध्यापुरीमेंही छारही हैं ॥ ५१ ॥

चौ०–जहँ तहँ नर रघुपतिगुन गावहिं ❀ बैठि परस्पर इहै सिखावहिं ॥ १ ॥
भजहु प्रनतप्रतीपालक रामहिं ❀ सोभासीलरूपगुनधामहिं ॥ २ ॥

जहां तहां मनुष्य रामजीके गुण गाते हैं और आपसमें बैठकर यही शिक्षा देते हैं कि ॥ १ ॥ भक्तोंके प्रतिपालक और शोभा शील रूप तथा गुणोंके स्थान रामचन्द्रजीका भजन करो ॥ २ ॥

जलजबिलोचन स्यामलगातहिं ❀ पलकनयन इव सेवकत्रातहिं ॥ ३ ॥
धृतसररुचिरचापतूनीरहिं ❀ संतकंज बनरबि रनधीरहिं ॥ ४ ॥

वे कमलनयन श्यामसुंदर सेवकोंकी ऐसे रक्षा करते हैं कि जैसे पलक नेत्रोंकी ॥ ३ ॥ सुन्दर धनुष वाण और तरकसके धारण करनेवाले हैं और संतरूपी कमलबनको सूर्यके समान तथा युद्धमें धीरहैं ॥ ४ ॥

काल कराल व्याल खगराजहिं ❀ नमित राम अकाम ममता जहिं ॥ ५ ॥
लोभ मोह मृगयूथ किरातहिं ❀ मनसिज करिहरि जनसुखदातहिं ॥ ६ ॥

जो कालरूपी भयंकर सर्पको गरुडके समान हैं और जिन रामजीको भक्तोंसे, विनाकारण ममता है ॥ ५ ॥ जो लोभ और मोहरूपी हरिणोंके समूहको बहेलियेके समान और कामदेवरूपी हाथीको सिंहरूप तथा भक्तोंके सुख देनेवाले हैं (उनका भजन करो) ॥ ६ ॥

संसयसोकनिबिड़तमभानुहिं ❀ दनुअ गहनबन दहनकृसानुहिं ॥ ७ ॥
जनकसुतासमेत रघुबीरहिं ❀ कस न भजहु भंजन भवभीरहिं ॥ ८ ॥

संशय और शोकरूपी घने अंधकारको सूर्य रूप और राक्षसरूपी घने वनके जलानेको अग्निस्वरूप (ऐसे रामजीका भजन करो) ॥ ७ ॥ जानकीजीसमेत रामचन्द्रजीको क्यों नहीं भजतेहो जो संसारके आवागमनको छुड़ानेवाले हैं ॥ ८ ॥

बहुबासनामसक हिमरासिहिं ❀ सदा एकरस अज अविनाशिहिं ॥ ९ ॥
मुनिरंजन भंजनमहिभारहिं ❀ तुलसिदासके प्रभुहि उदारहिं ॥ १० ॥

जो अधिक वासनारूपी मच्छरोंको शीतके समूहके समान हैं और सदा एकरस तथा जन्ममरणरहित हैं (ऐसे रामचन्द्रजीका भजन करो) ॥ ९ ॥ मुनियोंको आनन्द देनेवाले पृथ्वीका भार उतारनेवाले उदार स्वामी रघुनाथजीका भजन करो ॥ १० ॥

दो०–यहिविध नगरनारिनर, करहिं रामगुनगान ॥
सानुकूल संतत रहत, सबपर कृपानिधान ॥ ५२ ॥

इस भांति नगरके स्त्रीपुरुष रामचन्द्रजीके गुणोंका गान करते हैं और कृपानिधान रघुनाथ जी सबके ऊपर सदा अनुकूल रहते हैं ॥ ५२ ॥

चौ०–जबते रामप्रतापखगेसा ❀ उदित भयउ अति प्रबल दिनेसा ॥ १ ॥
पूरि प्रकास रहेउ तिहुँलोका ❀ बहुतन्ह सुख बहुतन्ह मन सोका ॥ २ ॥

(कागभुशुंड कहते हैं) हे गरुड़ ! जबसे रामचन्द्रजीका प्रतापरूपी प्रचंड सूर्य उदय हुआ ॥ १ ॥ तबसे तीनों लोकोंमें प्रकाश छागया बहुतोंके मनमें सुख और बहुतोंके मनमें शोक फैलगया ॥ २ ॥

जिनहिं सोक तेहिं कहौं बखानी ❀ प्रथम अविद्यानिसा सिरानी ॥ ३ ॥
अघउलूक जहँतहाँ लुकाने ❀ कामक्रोधकैरव सकुचाने ॥ ४ ॥

---

(१) गूढ़ार्थदीपिकामें देखो ।

जिनको शोक हुआ उनका वर्णन कर कहताहूं कि पहिले तौ अविद्यारूपी रात नष्ट होगई ॥ ३ ॥ पापरूपी उल्लू जहां तहां छिप गये और काम क्रोधरूपी कुमुद सकुचा गये ॥ ४ ॥

विविधकर्म गुनकालसुभाऊ ❀ ये चकोर सुख लहहिं न काऊ ॥ ५ ॥
मत्सर मान मोह मद चोरा ❀ इनकहँ सुख नहिं कवनिहुँ ओरा ॥६॥

अनेक प्रकारके कर्म अर्थात् आगामिसंचित और प्रारब्ध तथा कर्मोंके गुण, काल और स्वभाव येही ठहरे चकोर सो कहींभी सुख नहीं पाने लगे ॥ ५ ॥ मत्सर, मान, मोह और मद सोई मानों चोर हैं, इनको किसी ओर सुख नहीं मिलने लगा. (अब उनका वर्णन सुनो जिनको सुख हुआ) ॥६॥

धर्मतड़ाग योग बिज्ञाना ❀ ये पंकज बिकसे बिध नाना ॥ ७ ॥
सुखसंतोष बिराग बिबेका ❀ बिगतसोक ये कोक अनेका ॥ ८ ॥

धर्मरूपी सरोवरमें योग और विज्ञानरूपी नाना भांतिके कमल खिलगये ॥ ७ ॥ सुख संतोष वैराग्य और ज्ञान ये मानों अनेक चकवा चकवी थे सो शोकरहित होगये अर्थात् सुख संतोष और वैराग्य फैल गये ॥ ८ ॥

दो०–यह प्रतापरवि जासु उर, जब प्रभु करहिं प्रकास ॥ ❀
पाछिल बाढ़हिं प्रथम जे, कहे ते पावहिं नास ॥ ५३ ॥ ❀

यह प्रतापरूपी सूर्य जब जिसके हृदयमें भगवान् प्रकाश करते हैं तब (उसके हृदयमें) पिछले कहे हुये (ज्ञान वैराग्य आदि) तौ बढ़ते हैं और पहले कहे हुये (मत्सर मोह आदि) नाश होजाते हैं ॥ ५३ ॥

चौ०–भ्रातन्हिसहित राम इकबारा ❀ संग परमप्रिय पवनकुमारा ॥ १ ॥
सुंदर उपवन देखन गयऊ ❀ सब तरु कुसुमित पल्लव नयऊ ॥ २ ॥

एक समय रामचन्द्रजी भाइयोंसमेत परम प्यारे हनूमान्को साथ लेकर ॥ १ ॥ सुन्दर बगीचेको देखने गये तौ सब वृक्ष पुष्पपत्रोंसे झुक गये ॥ २ ॥

जानि समय सनकादिक आए ❀ तेजपुंज गुन सील सुहाए ॥ ३ ॥
ब्रह्मानंद सदा लयलीना ❀ देखत बालक बहु कालीना ॥ ४ ॥

---

(१) आगामि कर्म उसे कहते हैं किः–

"ज्ञानोत्पत्त्यनन्तरं ज्ञानिदेहकृतं पुण्यपापरूपं कर्म यदस्ति तदागामीत्यभिधीयते ॥"

अर्थात् ज्ञान उत्पन्न होनेके पीछे ज्ञानी पुरुष अपनी देहसे जो कुछ पाप पुण्य करते हैं उसीको आगामि कर्म कहते हैं ॥ संचित कर्म उसे कहते हैं कि–

"अनन्तकोटिजन्मनां बीजभूतं सत् यत्कर्मजातं पूर्वार्जितं तिष्ठति तत्संचितं ज्ञेयम् ॥"

अर्थात् अनेक कोटि जन्मोंके बीजरूप होकर जो कर्म हुआ और जो पूर्वजन्मका किया स्थित है उसे संचित कर्म कहते हैं ॥ प्रारब्ध उसे कहते हैं कि–

"इदं शरीरमुत्पाद्य इह लोके एवं सुखदुःखादिप्रदं यत्कर्म तत् ।
प्रारब्धं भोगेन नष्टं भवति प्रारब्धकर्मणां भोगादेव क्षय इति ॥"

अर्थात् इस शरीरको उत्पन्न करके इस लोकके सुखदुःखादिका देनेवाला जो कर्म है वही प्रारब्ध है और वह भोगनेसे नष्ट होजाता है, क्योंकि प्रारब्धके कर्मोंका क्षय भोगनेसेही होता है जैसा कहा हैं कि

"अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम् ॥ नाभुक्तं क्षीयते कर्म कल्पकोटिशतैरपि ॥"

अर्थात् किया हुआ जो कर्म है सो अवश्य भोगना पड़ैगा, क्योंकि विना भोगे कर्म करोड़ों कल्पतक क्षीण नहीं होते हैं ॥

अवसर जानकर तेजके पुंज, गुण और शीलयुक्त सनक सनन्दन, सनातन, सनत्कुमार, चारों ऋषि (रामजीके पास) आये ॥ ३ ॥ जो सदा ब्रह्मानन्दमें लय लगाये रहते हैं, देखनेमें तौ वालक परन्तु वहुत पुराने धुराने हैं (सो ऐसे लगते हैं) ॥ ४ ॥

धरे देह जनु चारिउ वेदा ❀ समदर्सी मुनि विगतबिभेदा ॥ ५ ॥
आसाबसन व्यसन यह तिनहीं ❀ रघुपतिचरित होइ तहँ सुनहीं ॥ ६ ॥

मानों चारों वेद शरीर धारण किये आये हैं. और वे मुनि समदर्शी तथा भेदरहित हैं ॥ ५ ॥ पुनि दिगम्बर हैं, अर्थात् नग्न रहते हैं, और उनको यही व्यसन है कि जहां रामचरित्र होता है वहांही सुनते हैं ॥ ६ ॥

तहाँ रहे सनकादि भवानी ❀ जहँ घटसंभव मुनिवर ज्ञानी ॥ ७ ॥
रामकथा मुनि बहुबिध बरनी ❀ ज्ञानजोगपावक जिमि अरनी ॥ ८ ॥

(महादेवजी कहते हैं) हे पार्वती! जिस समय सनकादिक ऋषि दंडकारण्यमें थे कि जहाँ श्रेष्ठ ज्ञानी मुनि अगस्त्यजी थे ॥ ७ ॥ उस समय मुनीश्वरने रामचन्द्रजीकी कथा वहुत भांति वर्णन की थी जो ज्ञान और योगके उत्पन्न करनेको अरणी लकड़ीके समान है ॥ ८ ॥

दो०-देखि राम मुनि आवत, हर्षि दंड़वत कीन्ह ॥ ❀
स्वागत पूछी पीतपट, प्रभु बैठनकहँ दीन्ह ॥ ५४ ॥ ❀

रामचन्द्रजीने मुनीश्वरको आते हुये देखकर प्रसन्न हो दंडवत् की और स्वागत पूछकर भगवान्ने पीताम्वर वैठनेको विछा दिया ॥ ५४ ॥

चौ०-कीन्ह दंडवत तीनिउँ भाई ❀ सहित पवनसुत सुख अधिकाई ॥ १ ॥
मुनि रघुपतिछबि अतुल बिलोकी ❀ भये मगन मन सकत न रोकी ॥ २ ॥

हनूमान्‌समेत तीनों भाइयोंनेभी बड़े आनन्दसे दंडवत् की ॥ १ ॥ मुनीश्वर रामचन्द्रजीकी अतुल शोभाको देखकर मगन होगये और मनको नहीं रोक सक्ते ॥ २ ॥

स्यामलगात सरोरुहलोचन ❀ सुंदरतामंदिर भवमोचन ॥ ३ ॥
इकटक रहे निमेष न लावहिं ❀ प्रभु कर जोरे सीस नवावहिं ॥ ४ ॥

(भगवान्‌का)साँवला शरीर है, कमलसे नेत्र हैं और वे सुन्दरताके स्थान संसारबंधनको काटनेवाले हैं॥३॥ टकोरी बाँधकर रहगये, पलक नहीं लगाते और भगवान्‌को हाथ जोड़कर मस्तक नवाते हैं ॥४॥

तिन्हकी दसा देखि रघुबीरा ❀ स्रवत नयनजल पुलकसरीरा ॥ ५ ॥
कर गहि प्रभु मुनिवर बैठारे ❀ परम मनोहर बचन उचारे ॥ ६ ॥

उनकी दशा देखकर रामचन्द्रजी नेत्रोंसे जल वहाने लगे और शरीरमें पुलकायमान होगये५और भगवान्ने हाथ पकड़कर श्रेष्ठ मुनीश्वरको विठलाया और बड़े मनहरन वचन कहने लगे कि ॥६॥

आजु धन्य मैं सुनहु मुनीसा ❀ तुम्हरे दरस जाँहि अघ खीसा ॥ ७ ॥
बड़े भाग्य पाइय सत्संगा ❀ बिनहिं प्रयास होइ भवभंगा ॥ ८ ॥

हे मुनिराज! सुनिये, आज मुझको धन्य है, आपके दर्शनोंसे पाप नाश होजाते हैं ॥७॥ बड़े भाग्यसे आपका सत्संग मिलता है जिससे बिनाही परिश्रमके संसार छूट जाता है ॥ ८ ॥

दो०-संतपंथ अपवर्गके, कामीभवकर पंथ ॥ ❀
कहहिं संत कबिकोविद, स्रुति पुरान सद्‌ग्रंथ ॥ ५५ ॥ ❀

---

(१) अरणी एकप्रकारकी लकड़ी होती है, यज्ञमें इसीसे अग्नि निकालते हैं ॥

संत, कवीश्वर, पंडित, वेद, पुराण और अच्छे २ ग्रंथ कहते हैं कि संत लोग तौ स्वर्गके मार्ग और कामी पुरुष संसारके मार्ग हैं ॥ ५५ ॥

चौ०-सुनि प्रभुवचन हर्षि मुनि चारी ❀ पुलकगात अस्तुति अनुसारी ॥ १ ॥
जय भगवंत अनंत अनामय ❀ अनघ अनेक एक करुनामय ॥ २ ॥

भगवान्के बचन सुनकर चारों मुनीश्वर शरीरमें पुलकायमान हो स्तुति करने लगे ॥ १ ॥ हे भगवान् आप अनंत हो अर्थात् आपके स्वरूपका देशकालवस्तुसे अथवा प्रत्यक्षादि प्रमाणोंसे अथवा देव पितृमनुष्यादि करके अंत नहीं पाया जाता, कि आप ऐसे और इतने हो. पुनि रोगरहित, पापरहित और अनेक रूप होनेपरभी एकरूप हों. वे करुणानिधान ! आपकी जय हो ॥ २ ॥

जय निर्गुन जय जय गुनसागर ❀ सुखमंदिर तिहुँलोकउजागर ॥ ३ ॥
जय इंदिरारमन जय भूधर ❀ अनुपम अज अनादि सोभाकर ॥ ४ ॥

आप निर्गुण हो अर्थात् अपने सच्चिदानंदादिलक्षणरूप गुणोंसे रहित हो, और आप गुणोंके समुद्र, सुखके स्थान, और तीनों लोकोंमें उजागर हो, ऐसे आपकी वारंवार जय होय ॥ ३ ॥ हे लक्ष्मीरमण ! (आपकी)जय हो, आप पृथ्वीधर हो (क्योंकि अनंत कोटि ब्रह्मांडोंको अपनी एक आकर्षणशक्तिसे धारण करते हो.) आप उपमारहित हो, आप अज हो, आदि अंतरहित और शोभाकी खानि हो ऐसे आपकी जय हो ॥ ४ ॥

ज्ञाननिधान अमान मानप्रद ❀ पावन सुजस पुरान वेद वद ॥ ५ ॥
तज्ज्ञ कृतज्ञ अज्ञताभंजन ❀ नाम अनेक अनाम निरंजन ॥ ६ ॥

पुनि ज्ञानकी खानि हो, (स्वयं) तौ मानरहित और (भक्तोंको) मान देनेवाले हो और आपकी परम पवित्र और सुन्दर यशको वेद पुराण गाते हैं ॥ ५ ॥ आप तत्वरूपके ज्ञाता, उपकारके माननेवाले, और अज्ञानताके नाशक हो. आपके अनेक नामभी हैं और आप नामरहितभी हो और निरंजन कहिये अविद्यारूपी श्यामतासे रहित हो ॥ ६ ॥

सर्व सर्वगत सर्वउरालय ❀ बसहु सदा हमकहँ परिपालय ॥ ७ ॥
द्वंद्वविपति भवफंदबिभंजन ❀ हृद वसु राम काममदगंजन ॥ ८ ॥

आप कल्याणकर्त्ता हो, सर्वव्यापक हो, सबके[1] हृदयमें सदा निवास करनेवाले हो, सो हमारा सदा प्रतिपालन करो ॥ ७ ॥ आप झगड़े टंटे आपत्ति और भवबन्धनके नाश करने और कामदेवके अभिमानको खंडन करनेवाले हो. हे राम ! हमारे हृदयमें निवास करो ॥ ८ ॥

दो०-परमानंद कृपायतन, मनपरिपूरनकाम ॥ ❀
प्रेमभक्ति अनपायिनी, देहु हमहिं श्रीराम ॥ ५६ ॥ ❀

हे दयानिधान परमानन्दस्वरूप श्रीरामचन्द्रजी, हमारा मन सब कामनाओंसे परिपूर्ण है, हमको (केवल) अटल प्रेम और भक्ति दो ॥ ५६ ॥

चौ०-देहु भक्ति रघुपति अतिपावनि ❀ त्रिविधतापभवताप नसावनि ॥ १ ॥
प्रनतपाल सुरधेनु कल्पतरु ❀ होइ प्रसन्न प्रभु दीजै यह बरु ॥ २ ॥

हे रामचन्द्रजी ! तीनों प्रकारके[2] ताप और संसारके दुःख नाश करनेवाली परमपवित्र भक्ति दीजिये ॥१॥आप भक्तोंके पालक हो, दाता ऐसे हो कि कामधेनु जो औरोंको जितनी चाहो उतनी संपत्ति

---

(१) यथा श्रुतौ "अंगुष्ठमात्रः पुरुषोऽन्तरात्मा सदा जनानां हृदये सन्निविष्टः" । (२) गूढ़ार्थदीपिकामें देखो ।

देती है उसको कल्पवृक्षके समान हो. सो हे स्वामी ! प्रसन्न होकर यह वरदान दीजिये ॥ २ ॥

भवबारिधिकुंभज रघुनायक ❀ सेवकसुलभ सकलसुखदायक ॥ ३ ॥
मनसंभव दारुण दुख दारय ❀ दीनबंधु समता विस्तारय ॥ ४ ॥

हे रघुराई ! आप संसाररूपी समुद्रको अगस्त्यके समान हो. (क्योंकि आपकी प्राप्तिसे संसारका अभाव हो जाताहै) और सेवकोंको सुलभ और सब सुखदाई हो ॥ ३ ॥ मानसिक कठिन दुःखोंको दूर करनेवाले और हे दीनबन्धु ! समदर्शिताको विस्तार करनेवाले हो ॥ ४ ॥

आशत्रासईर्षादिनिवारक ❀ विनयविवेकबिरतिविस्तारक ॥ ५ ॥
भूपमौलिमणिमंडनधरणी ❀ देहु भक्ति संसृतिसरितरणी ॥ ६ ॥

आप आशा दुःख और ईर्षा आदिके नाश करनेवाले हो, नम्रता, ज्ञान और वैराग्यके विस्तार करनेवाले हो ॥ ५ ॥ आप राजाओंके शिरोमणि और पृथ्वीके आभूषण हो, सो संसारसागरको नौकाके समान ऐसी अपनी भक्ति दीजिये ॥ ६ ॥

मुनिमनमानसहंसनिरंतर ❀ चरणकमलवंदितअजशंकर ॥ ७ ॥
रघुकुलकेतु सेतु श्रुतिरक्षक ❀ कालकर्मस्वभावगुणभक्षक ॥ ८ ॥
तारणतरण हरण सबदूषण ❀ तुलसिदासप्रभु त्रिभुवनभूषण ॥ ९ ॥

मुनीश्वरोंका मन सोई मानससरोवर है उसमें आप हंसरूप होकर निरंतर निवास करते हो और आपके कमलसमान चरणोंकी ब्रह्मा और महादेवजी बन्दना करते हैं ॥ ७ ॥ आप रघुकुलके ध्वजारूप हो, वेदकी मर्यादाके रक्षक हो, और काल, कर्म स्वभाव और गुणोंको भक्षण करनेवाले हो ॥८॥ हे प्रभो ! आप तारण तरण हो, सब दूषणोंके हरनेवाले और तीनों लोकोंके आभूषण हो ॥९॥

दो०–बारबार अस्तुति करि, प्रेमसहित सिर नाइ ॥ ❀
ब्रह्मभवन सनकादि गे, अति अभीष्ट वर पाइ ॥ ५७ ॥ ❀

सनकादिक (ऋषि) वार २ स्तुति करके और प्रेमसे मस्तक नवाकर तथा अपना मनोवांछित बरदान पाकर ब्रह्मलोकको गये ॥ ५७ ॥

चौ०–सनकादिक विधिलोक सिधाये ❀ भ्रातन्ह रामचरन सिर नाये ॥ १ ॥
पूछत प्रभुहिं सकल सकुचाहीं ❀ चितवहिं सब मारुतसुतपाहीं ॥ २ ॥

सनकादि (ऋषि) तौ ब्रह्मलोकको गये और भाइयोंने रामचन्द्रजीके चरणोंको शिर नवाया ॥ १ ॥ भगवान्से पूछतेमें सब सकुचाते हैं और सब हनुमान्की ओर देखते हैं कि ये पूँछें ॥ २ ॥

सुना चहहिं प्रभुमुखकी बानी ❀ जो सुनि होइ सकलभ्रमहानी ॥ ३ ॥
अंतरजामी प्रभु सब जाना ❀ बूझत कहहु कहा हनुमाना ॥ ४ ॥

भगवान्के मुखकी वाणी सुना चाहते हैं जिसके सुननेसे सब संदेहोंका नाश हो ॥३॥ अंतःकरणकी जाननेवाले भगवान्ने सब जान लिया और कहा हे हनूमान् ! कहो क्या पूछते हो सो पूछो ? ॥४॥

जोरि पानि तब कह हनुमंता ❀ सुनिये दीनबन्धु भगवंता ॥ ५ ॥
नाथ भरत कछु पूछन चहहीं ❀ प्रश्न करत मन सकुचत अहहीं ॥ ६ ॥

तब हनुमान्ने हाथ जोड़कर कहा कि हे दीनबन्धु भगवान् ! सुनिये ॥५॥ हे स्वामी ! भरतजी कुछ पूछना चाहते हैं. परन्तु प्रश्न करतेमें मनमें सकुचाते हैं (भगवान् बोले) ॥ ६ ॥

तुम जानहु कपि मोर सुभाऊ ❀ भरतहिं मोहिं न कछुक दुराऊ ॥ ७ ॥
सुनि प्रभुबचन भरत गहि चरना ❀ सुनहु नाथ प्रनतारतिहरना ॥ ८ ॥

हे हनुमान् ! तुम मेरे स्वभावको जानते हो कि मुझे भरतसे कुछ छुपाव नहीं है ॥ ७ ॥ भगवान्‌के वचन सुनकर भरतजीने चरण पकड़ लिये और बोले कि, हे स्वामी ! आप भक्तोंके दुःख दूर करनेवाले हैं सुनिये ॥ ८ ॥

दो०-नाथ न मोहिं संदेह कछु, स्वप्नेहु सोक न मोह ॥
केवल कृपा तुम्हारि प्रभु, चिदानंदसंदोह ॥ ५८ ॥

हे नाथ ! मुझे स्वप्नमेंभी कुछ संदेह, शोक, मोह नहीं है. सो हे प्रभो ! हे सच्चिदानन्द ! यह केवल आपकीही कृपा है ॥ ५८ ॥

चौ०-करौं कृपानिधि एक ढिठाई ॥ मैं सेवक तुम जनसुखदाई ॥ १ ॥
संतनकी महिमा रघुराई ॥ बहुबिध वेदपुरानन्ह गाई ॥ २ ॥

हे कृपासागर ! एक ढीठता करताहूं. क्योंकि मैं तौ सेवक और आप दासोंको सुख देनेवाले हो ॥ १ ॥ हे रघुराई ! संतोंकी बड़ाई वेद पुराणोंने बहुत प्रकार गाई है ॥ २ ॥

श्रीमुख तुम्ह पुनि कीन्ह बड़ाई ॥ तिन्हपर प्रभुहिं प्रीति अधिकाई ॥ ३ ॥
सुना चहौं प्रभु तिन्हकर लक्षण ॥ कृपासिंधु गुनज्ञानबिचक्षण ॥ ४ ॥

फिर आपनेभी अपने श्रीमुखसे बड़ाई की और उनपर आपकी प्रीतिभी अधिक है ॥ ३ ॥ सो हे स्वामी ! उनके लक्षण सुना चाहताहूं. आप कृपासागर और गुण तथा ज्ञानके पंडित हो ॥ ४ ॥

संतअसंतभेद बिलगाई ॥ प्रनतपाल मोहिं कहिय बुझाई ॥ ५ ॥
संतनके लक्षण सुनु भ्राता ॥ अगनित स्रुतिपुरानविख्याता ॥ ६ ॥

हे भक्तप्रतिपालक ! संत और असंतोंके अलग २ लक्षण मुझसे समझाकर कहिये (भगवान् बोले) ॥ ५ ॥ हे भाई ! संतोंके लक्षण सुनो. वे अनगिनती हैं और वेद पुराणोंमें प्रगट हैं ॥ ६ ॥

संतअसंतनकी अस करनी ॥ जिमि कुठार चंदन आचरनी ॥ ७ ॥
काटे परसु मलय सुनु भाई ॥ निजगुन देइ सुगंध बसाई ॥ ८ ॥

संत और असंतोंकी ऐसी करणी है जैसे कुल्हाड़े और चन्दनका आचरण होता है ॥७॥ हे भाई ! सुनो, कुल्हाड़ा चन्दनको काटता है तौभी वह अपने गुण देकर उसे सुगंधित कर देता है ॥ ८ ॥

दो०-ताते सुरसीसन चढत, जगवल्लभ स्रीखंड ॥
अनल दाहि पीटत घनहिं, परसुबदन यह दंड ॥ ५९ ॥

इसीसे चंदन संसारको प्यारा है और देवताओंके माथेपर चढता है, और कुल्हाड़ेके मुखको अग्निमें जलाकर घनसे पीटते हैं, यह उसको दंड (मिलता) है ॥ ५९ ॥

चौ०-बिषयअलंपट सीलगुनाकर ॥ परदुख दुख सुख सुख देखे पर ॥ १ ॥
सम अभूत रिपु बिमद बिरागी ॥ लोभामर्ष हर्षभयत्यागी ॥ २ ॥

सज्जन जो हैं सो विषयरहित, शील और गुणकी खान, पराये दुखसे दुखी, और पराया सुख देखनेसे सुखी होते हैं ॥ १ ॥ समदर्शी, जिनका कोई वैरी नहीं, अभिमानसे रहित विरक्त, लोभ, क्रोध, आनन्द और भयके त्यागनेवाले होते हैं ॥ २ ॥

कोमलचित दीननपर दाया ॥ मनवचक्रम मम भक्त अमाया ॥ ३ ॥
सबहिं मानप्रद आपु अमानी ॥ भरतप्रानसम मम ते प्रानी ॥ ४ ॥

कोमल चित्त, दीनोंपर दया करनेवाले और मायारहित होकर मन, क्रम, वचनसे मेरे भक्त होते

हैं ॥ ३ ॥ जो सबको मान देनेवाले और आप मानरहित होते हैं, हे भरत ! वे प्राणी मुझको प्राणोंके समान हैं ॥ ४ ॥

बिगतकाम मम नामपरायन ❀ सांत विरक्त नीतिमुदितायन ॥ ५ ॥
सीतलता सु सरलता मैत्री ❀ द्विजपदप्रेम धर्मजनयित्री ॥ ६ ॥

कामनारहित होकर मेरे नामको रटते रहतेहैं और शांति,वैराग्य, नीति और प्रसन्नताके स्थान होते हैं ॥५॥ शीतलता और सरलतायुक्त मित्रताके स्थान होते हैं, अर्थात् जो उनसे मित्रता करै उससे शीतल और सीधी वाणी बोलते हैं तथा ब्राह्मणोंके चरणोंमें प्रेम करनेवाले और धर्मके ज्ञाता होते हैं ॥६॥

यह सब लक्षण बसहिं जासु उर ❀ जानेहु तात संत संतत फुर ॥ ७ ॥
समदमनियम नीति नहिं डोलहिं ❀ परुष बचन कबहूँ नहिं बोलहिं ॥ ८ ॥

ये सब लक्षण जिसके हृदयमें रहते हैं, हे भाई ! उनको सदा सच्चे संत जानो ॥ ७ ॥ [1]शम, दम, नियम और नीतिसे नहीं डिगते और कठोर बचन कभी नहीं कहते ॥ ८ ॥

दो०-निंदा अस्तुति उभय सम, ममता मम पदकंज ॥ ❀
ते सज्जन मम प्रानप्रिय, गुनमंदिर सुखपुंज ॥ ६० ॥ ❀

जो निन्दा और स्तुति दोनोंको तौ समान मानते हैं और मेरे चरणोंमें प्रीति करते हैं वे सज्जन गुणके स्थान और सुखके समूह मुझको प्राणोंसे प्यारे हैं ॥ ६० ॥

चौ०-सुनहु असंतनकेर सुभाऊ ❀ भूलेहु संगति करिय न काऊ ॥ १ ॥
तिन्हकर संग सदा दुखदाई ❀ जिमि कपिलहिं घालै हरहाई ॥ २ ॥

अब असंतोंके स्वभाव सुनो–उनकी संगति कभी भूलकरभी न करनी चाहिये ॥ १ ॥ उनका संग सदा ऐसा दुःखका देनेवाला है जैसे हरहाई कहिये मरखनी गौ कपिला गौको मारती रहती है ॥ २ ॥

खलन्हहृदय अतिताप बिसेषी ❀ जरहिं सदा परसंपति देषी ॥ ३ ॥
जहँ कहुँ निंदा सुनहिं पराई ❀ हर्षहिं मनहुँ परी निधि पाई ॥ ४ ॥

खलोंके हृदयमें बड़ी भारी जलन होती है, वे [3]पराई संपत्तिको देखकर सदा जलते रहते हैं ॥३॥ जहाँ कहीं दूसरेकी निन्दा सुनैं तौ ऐसे प्रसन्न होते हैं मानों पड़ा हुआ खजाना मिलगया ॥ ४॥

कामक्रोधमदलोभपरायन ❀ निर्दय कपटी कुटिल मनायन ॥ ५ ॥
बैर अकारन सबकाहूसों ❀ जो करु हित अनहित ताहूसों ॥ ६ ॥

काम, क्रोध, और लोभसे प्रीति करनेवाले, दयारहित, कपटी, खोटे और अपवित्र होते हैं ॥५॥

---

(१) 'मनोनिग्रहः शमः' अर्थात् मनके रोकनेको शम कहते हैं ।

'दमश्चक्षुरादिबाह्येन्द्रियनिग्रहः ॥'

अर्थात् नेत्र आदि बाहरकी इन्द्रियोंके रोकनेको दम कहते हैं ॥

(२) गीतायां–

"तुल्यनिन्दास्तुतिर्मौनी संतुष्टो येन केनचित् ॥ अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान्मे प्रियो नरः ॥"

अर्थात् जिसको निन्दा स्तुति बराबर है, जो मौन रहता है, जो मिल जाय उसीमें संतोष करता है, जहां जगह मिली वहांही पड़रहता है, और जिसकी निश्चल बुद्धि है तथा भक्त है ऐसा मनुष्य मुझे प्यारा लगता है॥१॥

दोहा.

(३) "पर सुख संपति देखि सुख, जरहिं जे जड़ बिनु आगि ॥ तुलसी तिनके भागते चलै भलाई भागि॥१॥"

सब किसीसे विना कारण वैर करते हैं, और जो भलाई[1] करे उससेभी बुराई करते हैं ॥ ६ ॥

झूठै लेना झूठै देना ❀ झूठै भोजन झूठ चवेना ॥ ७ ॥
बोलहिं वचन मधुर जिमि मोरा ❀ खाहिं महाअहि हृदय कठोरा ॥ ८ ॥

उनका झूंठही[2] लेना, झूंठही देना, झूंठही भोजन और झूंठही चवेना है ॥७॥ वचन ऐसे बोलते हैं जैसे मोर बोलता है, परन्तु हृदयके ऐसे कठोर होते हैं कि बड़े सर्पोंको निगल जायँ ॥ ८ ॥

दो०-परद्रोही परदाररत, परधन परअपवाद ॥ ❀
ते नर पामर पापमय, देय धरे मनुजाद ॥ ६१ ॥ ❀

दूसरेसे द्रोह[3] करनेवाले, पराई स्त्रीसे प्रीति करनेवाले, पराये द्रव्यके ग्राहक और पराये निन्दक ऐसे वे नीच और पापी मनुष्यदेह धारण किये मानों राक्षसही हैं ॥ ६१ ॥

चौ०-लोभै ओढ़न लोभै डासन ❀ सिस्नोदरपर जमपुरत्रास न ॥ १ ॥
काहूकी जो सुनहिं बड़ाई ❀ स्वास लेहिं जनु जूड़ी आई ॥ २ ॥

जिनका लोभहीका उढ़ौना और लोभहीका बिछौना होता है, अर्थात् बड़े लोभी, और उनको लिंग तथा पेटहीकी लगी रहती है, अर्थात् जब करैंगे तब परस्त्रियोंके साथ संभोग, और भोजनकीही बातें करैंगे, और ऐसे लोगोंको यमपुरकाभी भय नहीं रहता ॥ १ ॥ जो किसीकी बड़ाई सुनैं तौ ऐसे श्वास लेते हैं मानों बुखार चढ़ आया ॥ २ ॥

जब काहूके देखहि बिपती ❀ सुखी होहिं मानहुँ जगनृपती ॥ ३ ॥
स्वारथरत परिवारविरोधी ❀ लंपट काम लोभ अतिक्रोधी ॥ ४ ॥

और जब किसीकी बिपत्ति देखैं तौ ऐसे सुखी हों मानों संसारभरके राजा होगये ॥३॥ मतलबमें पक्के (अर्थात् जब काम आन अटकै तब अपने बनकर काम निकालनेवाले) कुँटुम्बके विरोधी (अर्थात् अपने कुटुंब या जातमें किसीकी उन्नति देखें तौ भस्म होकर वृथा वैर साधें) लपाटिये अर्थात् (झूंठी बातें मार २ कर ठगविद्या करें) कामी कहिये वेश्यागामी, लोभी अर्थात् निन्दा भलेही हो पर रुपये लिये विना न मानें, और बड़े क्रोधी अर्थात् जहां किसीने पतेवार कही और सिंहरूप हुये ॥ ४ ॥

---

(१) नीतौ–"खलः सत्क्रियमाणोऽपि ददाति कलहं सताम्। दुग्धधौतोऽपि किं याति वायसः कलहंसताम्॥" अर्थात् दुष्टके संग भलाई करो पर वह सज्जनोंके साथ बुराईही करैगा, काकको दूधसे भलेही धोओ पर कहीं हंस होसक्ता है ॥

(२) यहां ऐसा भाव है कि जो दुष्ट हैं उनका ऐसा व्यवहार होता है कि झूंठही कहते हैं, हमे वहांसे ५०० रुपये भेटमें मिले, हमने सब पुण्य कर दिये ॥ घरमें चूहे नित्य एकादशीव्रत करते हों और आप कहैं कि आज खूब माल उड़े; और चने तौ चवाते हों पूछनेपर कहै कि मेवा खा रहे हैं ॥

(३) "अकरुणत्वमकारणविग्रहः परधने परयोषिति च स्पृहा ।
सुजनबन्धुजनेष्वसहिष्णुता प्रकृतिसिद्धमिदं हि दुरात्मनाम् ॥"

अर्थात्–दयारहित, विनाकारण लड़ना, पराये धन और स्त्रीको चाहना, अपने मित्र और बन्धुकी बात न सहना, यह बात दुष्टोंमें स्वभावसेहो होती है ॥

श्लोक.

(४) "यस्मिन् वंशे समुत्पन्नस्तमेव निजचेष्टितैः । दूषयत्यचिरेणैव घुणकीट इवाधमः ॥"

अर्थात् दुष्ट जिस वंशमें उत्पन्न हो उसीको अपने कार्योंसे शीघ्र ऐसे दूषित करै जैसे नीच घुन काठको कर देता है ॥

मातु पिता गुरु विप्र न मानहिं ❀ आपु गए अरु घालहिं आनहिं ॥ ५ ॥
करहिं मोहबस द्रोह परावा ❀ सत्संगति हरिभक्ति न भावा ॥ ६ ॥

माता पिता गुरु और ब्राह्मणोंको नहीं मानते तथा आप गये सो तौ गये दूसरोंकाभी सत्यानाश करते हैं. जैसी कहावत है–"आप डुबंते बामना, ले डूबें जिजमान" ॥ ५ ॥ अज्ञानके वश दूसरेसे द्रोह करते हैं, उन्हें सत्संग और रामजीकी भक्ति अच्छी नहीं लगती ॥ ६ ॥

अवगुनसिंधु मंदमति कामी ❀ वेदविदूषक परधन स्वामी ॥ ७ ॥
विप्रद्रोह परद्रोह विसेषी ❀ दंभ कपट जिय धरे सुवेषी ॥ ८ ॥

अवगुणके समुद्र अर्थात् जैसे समुद्रमें कच्छ, मच्छ, शंख आदि भरे रहते हैं वैसेही इनमें अवगुण भरे रहते हैं, मन्दबुद्धि, पराई स्त्रियोंसे व्यभिचार करते फिरें. वेदमें दोष लगानेवाले, अर्थात् अर्थ तौ कुछ है और कर दिया रेल तार और ११ खसमका. और पराये धनको मार वैठते हैं ॥ ७ ॥ ब्राह्मणोंसे वैर करते हैं, विशेष करके पराये द्रोही होते हैं, पाखंड और कपटको हृदयमें धारण कर सुन्दर वेष बनाये रहते हैं ॥ ८ ॥

दो०–ऐसे अधम मनुज खल, कृतयुग त्रेता नाहिं ॥ ❀
द्वापर कछुक वृंद बहु, होइहैं कलियुगमाहिं ॥ ६२ ॥ ❀

ऐसे नीच दुष्ट मनुष्य सतयुग, त्रेतामें नहीं होंगे; द्वापरमें थोड़ेसे होंगे और कलियुगमें तौ वड़ी अंधाधुंद मचैगी ॥ ६२ ॥

चौ०–परहित सरिस धर्म नहिं भाई ❀ परपीडासम नहिं अधमाई ॥ १ ॥
निर्नय सकल पुरानवेदकर ❀ कहेउँ तात जानहिं कोविद नर ॥ २ ॥

हे भाई! पराये हितके समान तौ धर्म, और दूसरेको दुःख देनेके समान पाप नहीं है ॥ १ ॥ हे प्यारे! सब वेद पुराणोंका निर्णय कहा है, इसे पंडित मनुष्यही जानते हैं ॥ २ ॥

नरसरीर धरि जे परपीरा ❀ करहिं ते सहहिं महाभवभीरा ॥ ३ ॥
करहिं मोहबस नर अघ नाना ❀ स्वारथरत परलोक नसाना ॥ ४ ॥

जो मनुष्यका शरीर धारण कर दूसरेको दुःख देते हैं वे संसारमें बड़ी २ विपत्ति भोगते हैं ॥ ३ ॥ जो मनुष्य अज्ञानके वश बहुतसे पाप करते हैं और स्वारथमें प्रीति करते हैं उनका परलोक नाश होजाता है ॥ ४ ॥

कालरूप मैं तिन्हकहँ ताता ❀ सुभ अरु असुभकर्मफलदाता ॥ ५ ॥
अस बिचारि जो परम सयाने ❀ भजहिं मोहिं संसृतिदुख जाने ॥ ६ ॥

हे प्यारे! मैं उनको कालरूप होजाताहूं क्योंकि भले और बुरे कर्मोंका फल देनेवाला मैंही हूं ॥ ५ ॥ ऐसा बिचार कर जो वड़े चतुर हैं वे संसारको दुःखमय जानकर मुझे भजते हैं ॥ ६ ॥

त्यागहिं कर्म सुभासुभदायक ❀ भजहिं मोहिं सुरनरमुनिनायक ॥ ७ ॥
संतअसंतनके गुन भाखे ❀ ते न परहिं भव जिन्ह लखि राखे ॥८॥

शुभ और अशुभ फलके देनेवाले कर्मोंको त्यागते हैं और देवता मनुष्य और मुनिराज मुझको भजते हैं ॥७॥ संत असंतोंके ये गुण कहे हैं सो जिन्होंने देख रक्खे हैं वे संसारमें नहीं पड़ते॥८॥

---

(१) "अष्टादशपुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयम् । परोपकारः पुण्याय पापाय परपीडनम् ॥ १ ॥" अर्थ चौपाईसे मिलता है–"अहिंसा परमो धर्मः" इत्यादि श्रुतिः—

दो०-सुनहु तात मायाकृत, गुन अरु दोष अनेक ॥ ❀
गुन इह उभय न देखि अहि, देखिय सो अविवेक ॥ ६३ ॥ ❀

हे प्यारे ! सुनो. मायाके कियेहुये गुण और दोष अनेक हैं. उनमेंसे गुण तौ यह है कि (गुण दोष) दोनोंको नहीं देखे और जो देखता है वह अज्ञान है ॥ ६३ ॥

चौ०-श्रीमुखबचन सुनत सब भाई ❀ हर्षे प्रेम न हृदय समाई ॥ १ ॥
करहिं बिनय अति बारहिं बारा ❀ हनूमानहिय हर्ष अपारा ॥ २ ॥

भगवान्के मुखसे बचन सुनतेही सब भाई प्रसन्न हुये और आनन्द हृदयमें नहीं समाता ॥ १ ॥ बार २ बहुतसी प्रार्थना करते हैं और हनूमान्के मनमें अपार आनन्द होता है ॥ २ ॥

पुनि रघुपति निजमंदिर गए ❀ इहिबिध चरित करत नित नए ॥ ३ ॥
बार बार नारदमुनि आवहिं ❀ चरित पुनीत रामकर गावहिं ॥ ४ ॥

फिर रामचन्द्रजी अपने महलमें गये और इसभांति नित्य नये चरित्र करने लगे ॥ ३ ॥ बार २ नारदमुनि आते हैं और रामचन्द्रजीके पवित्र चरित्रोंको गाते हैं ॥ ४ ॥

नित नव चरित देखि मुनि जाहीं ❀ ब्रह्मलोक सब कथा कहाहीं ॥ ५ ॥
सुनि बिरंचि अतिसय सुख मानहिं ❀ पुनि पुनि तात करहु गुनगानहिं ॥ ६ ॥

मुनीश्वर नित्त नये चरित्र देख जाते हैं और ब्रह्मलोकमें सब कथा सुनाते हैं ॥ ५ ॥ ब्रह्माजी सुनकर बहुत सुख मानते हैं और बार २ कहते हैं कि हे प्यारे ! गुणोंका गान करो ॥ ६ ॥

सनकादिक नारदहिं सराहहिं ❀ यद्यपि ब्रह्मनिरत मुनि आहहिं ॥ ७ ॥
सुनि गुनगान समाधि बिसारी ❀ सादर सुनहिं प्रेमअधिकारी ॥ ८ ॥

यद्यपि सनकादिक मुनि ब्रह्ममें निरत हैं तौभी नारदजीकी सराहना करते हैं ॥ ७ ॥ सुनो, जो समाधि छोड़कर (रामजीके) गुणोंका गान सुनते हैं वेही इसके परम अधिकारी हैं ॥ ८ ॥

दो०-जीवन्मुक्त ब्रह्मपर, चरित सुनहिं तजि ध्यान ॥ ❀
जे हरिकथा न करहिं रति, तिनके हृदय पषान ॥ ६४ ॥ ❀

(यद्यपि सनकादिक मुनि) जीवन्मुक्त है तथापि परब्रह्म भगवान्के चरित्रोंको ध्यान छोड़कर सुनते हैं. जों भगवान्की कथामें प्रीति नहीं करते उनके हृदय पत्थरके समान हैं ॥ ६४ ॥

चौ०-एकबार रघुनाथ बुलाए ❀ गुरु द्विज पुरवासी सब आए ॥ १ ॥
बैठे गुरु द्विजवर मुनि सज्जन ❀ बोले बचन भक्तभयभंजन ॥ २ ॥

एक बार रामचन्द्रजीके बुलाये हुये गुरु, ब्राह्मण और नगरनिवासी सब आये ॥ १ ॥ गुरु श्रेष्ठ ब्राह्मण, मुनिराज और सज्जन बैठे तो भगवान् यह कहने लगे कि ॥ २ ॥

सुनहु सकल पुरजन मम बानी ❀ कहौं न कछु ममता उर आनी ॥ ३ ॥
नहिं अनीति नहिं कछु प्रभुताई ❀ सुनहु करहु जो तुमहिं सुहाई ॥ ४ ॥

सब नगरनिवासी मेरी बात सुनो, मैं हृदयमें कुछ ममता धारण करके नहीं कहता ॥ ३ ॥ न तौ अनीति है, न कुछ प्रभुता है, सो सुनो, फिर जो तुमको सुहावै सो करना ॥ ४ ॥

सोइ सेवक प्रियतम मम सोई ❀ मम अनुसासन मानै जोई ॥ ५ ॥
जो अनीति कछु भाषौं भाई ❀ तौ मोहिं बरजहु भय बिसराई ॥ ६ ॥

वही सेवक और वही मेरा बहुत प्यारा है जो मेरी आज्ञा माने ॥ ५ ॥ हे भाई! जो कुछ अयोग्य कहूँ तो निडर होकर मुझे वरजो ॥ ६ ॥

बड़े भाग्य मानुपतनु पावा ॐ सुरदुर्लभ सद्ग्रंथन गावा ॥ ७ ॥
साधनधाम मोक्षकर द्वारा ॐ पाइ न जेइँ परलोक सँवारा ॥ ८ ॥

वड़े भाग्यसे मनुष्यशरीर पाया है जो देवताओंकोंभी दुष्प्राप्य है. यह अच्छे ग्रंथोंमें कहा है॥७॥ और साधनोंका स्थान तथा मोक्षका द्वार है. सो (मनुष्यशरीर) पाकर जिसने परलोक न संभाला ॥८॥

दो०–सो परत्र दुख पावई, सिर धुनि धुनि पछिताइ ॥
कालहि कर्महि ईस्वरहि, मिथ्या दोष लगाइ ॥ ६५ ॥

सो वह अंतमें दुःख पाता है और शिर धुन २ कर पछताता है तथा काल कर्म और ईश्वरको झूँठा दोष देता है ॥ ६५ ॥

चौ०–एहि तनुकर फल विषय न माई ॐ स्वर्ग स्वल्प अंतहु दुखदाई ॥ १ ॥
नरतनु पाइ विषय मन देहीं ॐ पलटि सुधा ते सठ विष लेहीं ॥ २ ॥

हे भाई! इस शरीरका फल विषय नहीं है, (इस शरीरको तौ) स्वर्ग मिल जाय सोभी थोड़ा है कि जो अंतमें दुःख देनेवाला है, अर्थात् कर्मानुसार स्वर्गका सुख भोगकर फिर मृत्युलोकमें आना पड़ता है, जैसा कहा है कि "क्षीणे पुण्ये मृत्युलोके विशंति" ॥ १ ॥ इसलिये जो मनुष्यका शरीर पाकर विषयोंमें मन लगाते हैं वे मूर्ख अमृतके वदले विष ग्रहण करते हैं ॥ २ ॥

ताहि कबहुँ भल कहै न कोई ॐ गुंजा गहै परसमनि खोई ॥ ३ ॥
आकर चारि लाख चौरासी ॐ योनिन भ्रमत सीव अविनासी ॥ ४ ॥

उसे कभी कोई अच्छा नहीं कहता जो पारसमणिको छोडकर चिरमिटीको ग्रहण करता है ॥३॥ चार तौ खानि हैं और चौरासी लाख योनि हैं जिनमें यह अविनाशी जीव भ्रमता है ॥४॥

फिरत सदा मायाके प्रेरे ॐ काल कर्म सुभाव गुन घेरे ॥ ५ ॥
कबहुँक करि करुना नरदेही ॐ देत ईस विनु हेतु सनेही ॥ ६ ॥

मायाकी प्रेरणासे सदा भ्रमता है और इसे काल, कर्म, स्वभाव और गुण घेरे रहते हैं ॥५॥ कभी कृपा करके भगवान् (जीवको) मनुष्यकी देह दे देते हैं क्योंकि वे विना कारण स्नेह करनेवाले हैं ॥६॥

नरतनु भववारिधिकहँ वेरे ॐ संमुखमरुत अनुग्रह मेरे ॥ ७ ॥
कर्नधार सद्गुरु दृढ़नावा ॐ दुर्लभसाज सुलभ करि पावा ॥ ८ ॥

मनुष्यका शरीर संसाररूपी समुद्रके लिये बेड़ारूप है और (उसके पार लगानेको) मेरी दया सोही सन्मुखकी पवन है (क्योंकि विना सन्मुख पवनके जहाज नहीं चलता ॥ ७ ॥ (वेड़ेके चलानेके लिये मल्लाहभी तौ चाहिये सोही कहते हैं कि) ॥ इस मनुष्यशरीररूपी दृढ़ नावके चलानेके लिये सद्गुरुही[3] मल्लाह है. (सद्गुरु कैसा अर्थात् ऐसा गुरु जो काम, क्रोध, लोभ, मोहसे रहित हो

---

(१) कालको दोष देना यह है कि "काल बड़ा बलवान् है; इसने हमें अशक्त कर दिया." कर्मदोष यह है कि "भाई, जैसे तुम्हारे कर्म थे वैसा फल पाया." ईश्वरको दोष यों देते हैं–जो ईश्वरकी इच्छा थी सो हुआ

(२) गूढ़ार्थदीपिकामें देखो–

श्लोक.

(३) गुरुसेवां विना कर्म यः कुर्यान्मूढचेतनः ॥ स याति निष्फलत्वं हि स्वप्नलब्धं यथा धनम् ॥ १ ॥
विद्यां ग्रहीतुमिच्छन्ति चौर्यच्छद्मबलादिना ॥ न तेषां सिध्यते किंचिन्मणिमंत्रौषधादिकम् ॥ २ ॥

अर्थात् जो मन्दबुद्धि गुरुसेवाके विना कर्म करता है उसका वह कर्म स्वप्नमें पायेहुये धनके समान

ऐसा न हो कि "लोभी गुरु लालची चेला ॥ घोर नरकमें ठेलमठेला" जैसा आज कल चेले चेलियोंसे तन मन धन श्रीकृष्णार्पण करा लेते हैं ॥ सो शरीररूपी नौकाका साज पाना बड़ा कठिन है (और जो सद्गुरु मिल गया तौ संसारसागरसे) पार पाना सहज है ॥ ८ ॥

दो०-जो न तरै भवसागरहि, नर समाज अस पाइ ॥ ❀
सो कृतनिंदक मंदमति, आतमहागति जाइ ॥ ६६ ॥ ❀

जो मनुष्य ऐसा समाज पाकरभी संसाररूपी समुद्रसे पार न हो वह निन्दाका पात्र मन्दबुद्धि है और [1]आत्मघातियोंकी गतिको पाता है ॥ ६६ ॥

चौ०-जो परलोक इहाँ सुख चहहू ❀ सुनि मम बचन हृदय दृढ़ गहहू ॥ १ ॥
सुलभ सुखद मारग यह भाई ❀ भक्ति मोरि पुरान स्रुति गाई ॥ २ ॥

जो परलोकमें और यहां सुख चाहो तौ मेरे बचन सुनकर मनमें दृढ़ पकड़ो ॥ १ ॥ हे भाई! सुगम और सुखका देनेवाला यह मेरा भक्तिमार्ग है जो वेद पुराणोंने गाया है. (अब जो यहां यह शंका करो कि मुक्ति तौ ज्ञानसेही होती है). जैसा कहा है "ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः" "ज्ञानादेव तु कैवल्यं" अर्थात् विना ज्ञानके मुक्ति नहीं होती, तहां कहते हैं, ज्ञानसे मुक्ति तौ होती है परन्तु॥२॥

ज्ञानअगम प्रत्यूह अनेका ❀ साधन कठिन न मनकहँ टेका ॥ ३ ॥
करत कष्ट बहु पावइ कोऊ ❀ भक्तिहीन प्रिय मोहिं न सोऊ ॥ ४ ॥

वह ज्ञान वड़ा [2]कठिन है और उसमें अनेक विघ्न हैं, तथा उसका साधन वड़ा कठिन है, क्योंकि मनकी स्थिरता नहीं होती ॥ ३ ॥ उसे साधन करतेमें कोई बहुतसा कष्ट भलेही पावै परन्तु जो भक्तिहीन है वह मुझे प्यारा नहीं लगता ॥ ४ ॥

भक्ति स्वतंत्र सकलसुखखानी ❀ बिन सत्संग न पावहिं प्रानी ॥ ५ ॥
पुन्यपुंज बिनु मिलहिं न संता ❀ सत्संगति संसृतिकर अंता ॥ ६ ॥

भक्ति स्वतंत्र है अर्थात् उसके लिये कोई कष्टसाधन नहीं करना पड़ता है और सब सुखोंकी खाना है परन्तु विना सत्संगके प्राणी उसे नहीं पाता ॥ ५ ॥ बिना वड़े २ पुण्योंके संत नहीं मिलते और [3]सत्संगतिही आवागमनसे छुटानेवाली है ॥ ६ ॥

पुन्य एक जगमहँ नहिं दूजा ❀ मन क्रम वचन विप्रपदपूजा ॥ ७ ॥
सानुकूल तेहिपर मुनिदेवा ❀ जो तजि कपट करै द्विजसेवा ॥ ८ ॥

नष्ट होजाता है ॥ १ ॥ और जो चोरी, छल अथवा बलसे विद्या ग्रहण करना चाहते हैं, उनको मंत्र ओषधि कुछभी सिद्ध नहीं होता है ॥ २ ॥

(१) भागवते-"नृदेहमाद्यं सुलभं सुदुर्लभं प्लवं सुकल्पं गुरुकर्णधारम् ॥
मयानुकूलेन नभस्वतेरितं पुमान् भवाब्धिं न तरेत्स आत्महा ॥ १ ॥"

इसका अर्थ पिछली चौपाई और इस दोहेसे मिलता है ॥

(२) दोहावली

दोहा.

"कहत कठिन समुझत कठिन, साधन कठिन विवेक ॥ होइ घुणाक्षरान्याय जो, पुनि प्रत्यूह अनेक ॥१॥

(३) (भा. वि.)

श्लोक.

"दूरीकरोति कुमतिं विमलीकरोति चेतश्चिरंतनमघं चुलुकीकरोति ॥
भूतेषु किंच करुणां बहुलीकरोति संगः सतां किमु न मंगलमातनोति ॥ १ ॥"

अर्थात् सत्संग कौनसा मंगल नहीं करता ? कुमतिको दूर करता है, अंतःकरणको निर्मल करता है, जन्मान्तरोंके पापोंको घटाता है और प्राणियोंमें दयाको बढ़ाता है ॥

संसारमें यह एकही पुण्य है इसके समान दूसरा नहीं कि मनक्रम वचनसे ब्राह्मणोंके चरणोंकी पूजा करै ॥७॥ जो कपट छोड़कर ब्राह्मणोंकी सेवा करता है उसपर देवता और मुनि कृपालु रहते हैं ८

दो०–औरौ एक गुप्त मत, सबहिं कहौं कर जोरि ॥
संकरभजन विना नर, भक्ति न पावै मोरि ॥ ६७ ॥

औरभी एक गुप्त मत है सो सबसे हाथ जोड़कर कहताहूं कि महादेवजीके भजन विना मनुष्य मेरी भक्ति नहीं पाता–जैसा कहा है कि "जेहिपर कृपा न करहिं पुरारी । सो न पाव मुनि भक्ति हमारी" ॥ पुनि गीतामें कहा है कि "रुद्राणां शंकरश्चास्मि" ॥ ६७ ॥

चौ०–कहहु भक्तिपथ कवन प्रयासा ❀ योग न मख जप तप उपवासा ॥ १ ॥
सरल सुभाव न मन कुटिलाई ❀ यथालाभ संतोष सदाई ॥ २ ॥

कहो भक्तिके मार्गमें क्या परिश्रम है ? न यज्ञ है, न योग है, न जप, तप और उपवास है ॥१॥ सरल स्वभावसे मनमें कुटिलता न रखकर जो कुछ लाभ हो इसीमें सदा संतोष करै ॥ २ ॥

मोर दास कहाइ नर आसा ❀ करै कहहु तो कहँ बिस्वासा ॥ ३ ॥
बहुत कहौं का कथा बड़ाई ❀ यहिं आचरन बस्य मैं भाई ॥ ४ ॥

और जो मेरा दास कहाकर दूसरेकी आशा करै तौ कहो मेरा उसे क्या विश्वास हुआ ? ॥३॥ हे भाई ! कथाको बहुत बढ़ाकर क्या कहूं, जो ऐसा आचरण करते हैं मैं उनके वशमें हूं ॥ ४ ॥

बैर न बिग्रह आस न त्रासा ❀ सुखमय ताहि सदा सब आसा ॥ ५ ॥
अनारंभ अनिकेत अमानी ❀ अनघ अरोष दक्ष विज्ञानी ॥ ६ ॥

जिसे किसीसे न वैर है, न लड़ाई झगड़ा है, न आशा है, न दुःख है उसे सदा सब दिशाओंमें सुखही सुख है ॥ ५ ॥ जो किसी कामका यत्न नहीं करता, जिसकी घरसे ममता नहीं, जो मानरहित, पापरहित, क्रोधरहित, चतुर, और ज्ञानवान् है ॥ ६ ॥

प्रीति सदा सज्जनसंसर्गा ❀ तृनसम विषय स्वर्ग अपवर्गा ॥ ७ ॥
भक्तिपक्ष हठ नहिं सठताई ❀ दुष्टकर्म सब दूरि विहाई ॥ ८ ॥

जिसकी सज्जनोंके सत्संगमें सदा प्रीति है और जो स्वर्ग मोक्षके विषयोंको तिनके समान जानता है॥७॥और जो भक्तिपक्षमें हठ और शठता नहीं करता है और सब दुष्ट कर्मोंको त्याग देता है ॥८॥

दो०–मम गुनग्रामनामरत, गतममतामदमोह ॥
ताकर सुख सोइ जानै, परानंदसंदोह ॥ ६८ ॥

जो मेरे गुणोंके समूह और नाममें प्रीति करता है, जो ममता मद मोहरहित है, इन बातोंका सुख वही जानता है जो ब्रह्मानंदके सुखका पात्र है ॥ ६८ ॥

चौ०–सुनत सुधासम बचन रामके ❀ सबन्हि गहे पद कृपाधामके ॥ १ ॥
जननि जनक गुरु बंधु हमारे ❀ कृपानिधान प्रानते प्यारे ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीके अमृतके समान बचन सुनतेही सबने कृपानिधान (भगवान्) के चरण छुए और कहने लगे ॥१॥ हे दयासागर ! (आप)हमारे माता पिता गुरु भाई और प्राणोंसेभी प्यारे हो ॥२॥

तनु धन धाम राम हितकारी ❀ सबबिध तुम प्रनतारतिहारी ॥ ३ ॥
अस सिख तुम बिनु देइ न कोऊ ❀ मातु पिता स्वारथरत ओऊ ॥ ४ ॥

हे रामचन्द्र ! (आप हमारे) शरीर धन धाम और हितकारी हो और सब प्रकारसे भक्तोंके

दुःख दूर करनेवाले हो ॥ ३ ॥ ऐसी शिक्षा आपके विना और कोई नहीं दे सक्ता है क्योंकि माता पिता तौ मतलबी होते हैं ॥ ४ ॥

हेतुरहित जुगजुग उपकारी ❀ हम तुम्हार सेवक असुरारी ॥ ५ ॥
स्वारथमित्र सकल जगमाहीं ❀ सपनेहु प्रभु परमारथ नाहीं ॥ ६ ॥

और आप विनाकारण युग २ में उपकार करते हो, सो हे दैत्योंके नाश करनेवाले ! हम आपके सेवक हैं ॥ ५ ॥ संसारमें सब स्वारथके मित्र हैं, हे प्रभो ! परमार्थी स्वप्नमेंभी नहीं ॥ ६ ॥

सबके बचन प्रेमरससाने ❀ सुनि रघुनाथ हृदय हर्षाने ॥ ७ ॥
निज निज गृह गे आयसु पाई ❀ बरनत प्रभुबतकही सुहाई ॥ ८ ॥

सबके स्नेहमें सनेहुये बचन सुनकर रामचन्द्रजी मनमें प्रसन्न हुये ॥ ७ ॥ और सब आज्ञा पाकर भगवान्‌की सुन्दर बातचीतको वर्णन करतेहुये अपने २ घर गये ॥ ८ ॥

दो०–उमा अवधवासी नर, नारि कृतारथरूप ॥ ❀
ब्रह्म सच्चिदानंदघन, रघुनायक जहँ भूप ॥ ६९ ॥ ❀

(महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! अयोध्यापुरीके रहनेवाले स्त्रीपुरुष कृतार्थरूप हैं कि जहाँ ब्रह्म सच्चिदानन्द रामचन्द्र राजा हैं ॥ ६९ ॥

चौ०–एकबार वसिष्ठ मुनि आए ❀ जहाँ राम सुखधाम सुहाए ॥ १ ॥
अतिआदर रघुनायक कीन्हा ❀ पद पखारि चरनोदक लीन्हा ॥ २ ॥

जहां सुखके धाम रामचन्द्रजी शोभायमान थे वहां एक वार वसिष्ठमुनि आये ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीने बड़ा आदर किया और चरण धोकर चरणामृत लिया ॥ २ ॥

राम सुनहु मुनि कह कर जोरी ❀ कृपासिंधु बिनती कछु मोरी ॥ ३ ॥
देखि देखि आचरन तुम्हारा ❀ होत मोह मम हृदय अपारा ॥ ४ ॥

मुनीश्वरने हाथ जोड़कर कहा हे दयासागर ! रामचन्द्रजी मेरी कुछ विनती है ॥ ३ ॥ तुम्हारे आचरण देख २ कर मेरे हृदयमें अत्यन्त मोह[1] होता है ॥ ४ ॥

महिमा अमित वेद नहिं जाना ❀ मैं केहि भाँति कहौं भगवाना ॥ ५ ॥
उपरोहितीकर्म अतिमंदा ❀ वेद पुरान सुमृति कर निंदा ॥ ६ ॥

हे भगवान् ! (आपकी) महिमा अपार है जिसे वेदभी नहीं जानते सो भला मैं किस प्रकार कहूं ? ॥५॥ पुरोहिताईका काम बहुत बुरा है, इसकी वेद पुराण और स्मृति सब निन्दा करते हैं ६

जब न लेउँ मैं तब विधि मोहीं ❀ कहा लाभ आगे सुत तोहीं ॥ ७ ॥
परमातमा ब्रह्म नररूपा ❀ होइहि रघुकुलभूषन भूपा ॥ ८ ॥

सो मैं जब नहीं लेताथा तब ब्रह्माजीने कहा कि हे पुत्र ! आगे तुझे इसमें लाभ होगा ॥ ७ ॥ परब्रह्म परमात्मा मनुष्यके रूपमें रघुवंशका शिरोमणि राजा होगा ॥ ८ ॥

दो०–तब मैं हृदय विचार किय, जोग जज्ञ जप दान ॥ ❀
जेहि नित करिय सो पाईय, धर्म न यहिसम आन ॥ ७० ॥❀

---

(१) मोह यह होता है कि आप आचरण तौ मनुष्योंसे करते हैं, ईश्वर कैसे होसक्ते हैं ? और जब यह सोचताहूं कि आपने जगद्विजयी रावणादिकोंको मारा तब इन अमानुषीय चरित्रोंको देख आपको ईश्वर निश्चय कर लेता हूं–यही मोह है ॥

तब मैने हृदयमें बिचार किया कि जिसके लिये नित्य योग यज्ञ जप दान करते हैं सो इस कर्मसेही उसे पालूं तौ इसके समान और दूसरा धर्म कौनसा होगा ? ॥ ७० ॥

चौ०–जप तप नियम जोग व्रत धर्मा ❀ स्रुतिसंभव नानाविधि कर्मा ॥ १ ॥
ज्ञान दया मति तीरथमज्जन ❀ जहँलगि धर्म कहैं स्रुति सज्जन ॥ २ ॥

जप, तप, नियम, योग, व्रत और धर्म ये वेदमें कथित अनेक प्रकारके कर्म हैं ॥ १ ॥ और ज्ञान दयायुक्त बुद्धि; तीर्थस्नान इत्यादि भी जो जहांतक वेद और सज्जनोंने धर्म कहे हैं ॥ २ ॥

आगम निगम पुरान अनेका ❀ पढ़े सुनेकर फल प्रभु एका ॥ ३ ॥
तव पदपंकजप्रीति निरंतर ❀ सब साधनकर फल यह सुंदर ॥ ४ ॥

(उनका तथा) वेद शास्त्र और अनेक पुराणोंके पढ़ने और सुननेका एकही फल है ॥ ३ ॥ आपके कमलसमान चरणोंमें निरंतर प्रीति होना, यही सब साधनोंका सुन्दर फल है ॥ ४ ॥

छूटै मल कि मलहिके धोए ❀ घृत कि पाव कोउ वारि बिलोए ॥ ५ ॥
प्रेमभक्तिजल बिनु रघुराई ❀ अभ्यंतरमल कबहुँ कि जाई ॥ ६ ॥

क्या मलसे धोनेसे मल छूटसक्ता है? और क्या जलके विलोनेसे कोई घी पासक्ता है ॥ ५ ॥ हे रामचन्द्रजी ! प्रेम और भक्तिरूपी जलके विना कहीं अंतःकरणका मल जासक्ता है? अर्थात् नहीं जासक्ता है ॥ ६ ॥

सोई सर्वज्ञ तज्ज्ञ सोइ पंडित ❀ सोइ गुनज्ञ विज्ञान अखंडित ॥ ७ ॥
दक्ष सकललक्षणयुत सोई ❀ जाके पदसरोजरति होई ॥ ८ ॥

वही सर्वज्ञ, तत्त्वज्ञानी और वही पंडित कहिये समदर्शी है और वही पूर्ण गुणवान् और परम ज्ञानी है ॥७॥ और वही चतुर संपूर्ण लक्षणयुक्त है जिसकी आपके चरणकमलोंमें प्रीति हो ॥८॥

दो०–नाथ एक वर माँगों, राम कृपा करि देहु ॥
जन्म जन्म प्रभुपदकमल, कबहुँ घटै जनि नेहु ॥ ७१ ॥

हे स्वामी रामचन्द्र ! एक वरदान मांगता हूं सो दया करके दीजिये कि जन्म २ में आपके चरणकमलोंमें कभी प्रेम न घटै ॥ ७१ ॥

चौ०–अस कहि मुनि वसिष्ठ गृह आए ❀ कृपासिंधुके मन अति भाए ॥ १ ॥
हनूमान भरतादिक भ्राता ❀ संग लिये सेवकसुखदाता ॥ २ ॥

ऐसा कहकर वशिष्ठ मुनि आश्रमको आये और दयाके सागर (भगवान्) के मनको बहुत प्यारे लगे ॥ १ ॥ सेवकोंके सुखदाई रघुराईने हनूमान् और भरत आदि भाइयोंको साथ ले लिया ॥२॥

श्लोक.

(१) महाभारते–

"आत्मा नदी संयमपुण्यतीर्था सत्योदका शीलतटा दयोर्मिः ।
तत्राऽभिषेकं कुरु पाण्डुपुत्र न वारिणा शुद्धयति चान्तरात्मा ॥"

अर्थात् हे युधिष्ठिर ! इन्द्रियोंका रोकनाही जिसका पुण्य तीर्थ है, सत्यही जिसका जल है, शील जिसका तट है, और दयाही जिसमें तरंगोंकी माला है ऐसी आत्मरूपी नदीमें स्नान कर. क्योंकि केवल जलसेही भीतरकी आत्मा शुद्ध नहीं होती है ॥

(२) गीतायाम्–"विद्याविनयसंपन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि । शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः ।"

अर्थात् विद्या और विनययुक्त ब्राह्मणमें और गाय, हाथी, कुत्ता तथा चांडाळ इनमें पण्डित लोग समदर्शी होते हैं, क्योंकि भेद तौ शरीरमें है आत्मा तौ ज्ञानाकारसे सर्व समान है ॥

पुनि कृपालु पुरबाहिर गये ❀ गज रथ तुरग मँगावत भये ॥ ३ ॥
देखि कृपा करि सकल सराहे ❀ दिये उचित जिन्ह जिन्ह जो चाहे ॥४॥

और फिर कृपानिधान नगरके बाहर गये और उन्होंने हाथी घोड़े तथा रथ मँगाये ॥ ३ ॥ देखकर पुनि दया करके सबकी सराहना की और जो जिसको उचित था और जो जिस २ ने चाहा वही उसे दिया ॥ ४ ॥

हरन सकल स्रम प्रभु स्रम दाई ❀ गए जहाँ सीतल अमराई ॥ ५ ॥
भरत दीन्ह निजबसन डसाई ❀ बैठे प्रभु सेवहिं सब भाई ॥ ६ ॥

भगवान्को परिश्रम हुआ इसलिये वे सब परिश्रमको दूर करनेके लिये आपकी एक शीतल वगीचीमें गये॥५॥भरतजीने अपना वस्त्र बिछा दिया जिसपर भगवान् बैठ गये और सब भाई सेवा करने लगे ॥६॥

मारुतसुत तब मारुत करई ❀ पुलकगात लोचनजल भरई ॥ ७ ॥
हनूमानसम को बड़भागी ❀ नहिं कोउ रामचरनअनुरागी ॥ ८ ॥
गिरिजा जासु प्रीति सेवकाई ❀ बार बार प्रभु निजमुख गाई ॥ ९ ॥

उस समय हनूमान्जी पवन करने लगे और शरीरमें पुलकायमान हो गये, नेत्रोंमें जल भर आया ॥ ७ ॥ हनूमान्के समान बड़भागी कौन है ? और न कोई इतना रामचन्द्रजीके चरणोंसे प्रीति करनेवाला है ॥ ८ ॥ (महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! जिसकी प्रीति और सेवा भगवान्ने बार २ अपने मुखसे कही ॥ ९ ॥

दो०-तेहि अवसर मुनिनारद, आए करतल बीन ॥ ❀
गावन लागे रामगुन, कीरति सदा नवीन ॥ ७२ ॥ ❀

उसी समय नारदमुनि हाथमें वीणा लियेहुये आये और रामचन्द्रजीके गुण और सदा नवीन बनी रहे ऐसी कीर्तिको गाने लगे ॥ ७२ ॥

चौ०-मामवलोकय पंकजलोचन ❀ कृपाबिलोकनि सोचबिमोचन ॥ १ ॥
नीलतामरसस्याम कामअरि ❀ हृदयकंजमकरंदमधुप हरि ॥ २ ॥

हे कमलनयन ! आप शोकनाशक हैं, मुझे दयाकी दृष्टिसे देखिये ॥ १ ॥ आपका नीले कमलके समान श्याम शरीर है और आप कामदेवके शत्रु (महादेव) के हृदयकमलके परागके भ्रमररूप हो ॥ २ ॥

जातुधानबरूथबलभंजन ❀ मुनिसज्जनरंजन अघगंजन ॥ ३ ॥
भूसुरससि नवबृंद बलाहक ❀ असरनसरन दीनजनगाहक ॥ ४ ॥

राक्षसोंकी सेनाके बलके नाश करनेवाले, मुनीश्वर और सज्जनोंको आनन्द देनेवाले तथा पापोंके नाश करनेवाले हो ॥ ३ ॥ ब्राह्मणरूपी नवीन खेतीके समूहोंके लिये आप मेघरूप हो, अशरणोंको शरण देनेवाले और दीन मनुष्योंके रक्षक हो ॥ ४ ॥

भुजबलविपुलभारमहिखंडित ❀ खरदूषनबिराधबधपंडित ॥ ५ ॥
रावनारि सुखरूप भूपवर ❀ जय दसरथकुलकुमुदसुधाकर ॥ ६ ॥

भुजाओंके बलसे पृथ्वीके बहुतसे भारको खंडन करनेवाले और खर दूषण तथा विराधके मारनेमें चतुर हो ॥ ५ ॥ रावणके शत्रु हो, सुखके स्वरूप हो, और महाराज दशरथके वंशरूपी कुमुदको चन्द्रमाके समान खिलानेवाले हो. (तुम्हारी) जय हो ॥ ६ ॥

सुजस पुरान विदितनिगमागम ❀ गावत सुरमुनिसंतसमागम ॥ ७ ॥
कारुनीक बालीमदखंडन ❀ सबविध कुसल कोसलामंडन ॥ ८ ॥
कलिमलमथन नाम ममताहन ❀ तुलसिदास प्रभु पाहि प्रनतजन ॥ ९ ॥

आपका सुन्दर यश वेद, पुराण, तथा शास्त्रमें विदित है और देवता मुनीश्वर और संतोंके समागममें गाया जाता है ॥ ७ ॥ आप करुणाशील, बालिके अभिमानको खंडन करनेवाले, सब प्रकार चतुर और अयोध्यापुरीके आभूषण हो ॥ ८ ॥ आपका नाम कलियुगके पापोंका मथनेवाला और ममताका नाश करनेवाला है, हे स्वामी! भक्तजनोंकी रक्षा करो ॥ ९ ॥

दो०-प्रेमसहित मुनि नारद, बरनि रामगुनग्राम ॥ ❀
सोभासिंधु हृदय धरि, गए जहाँ बिधिधाम ॥ ७३ ॥ ❀

नारदमुनि प्रेमसे रामचन्द्रजीके गुणोंका वर्णन कर शोभाके समुद्र (भगवान्) को हृदयमें धारण कर ब्रह्मलोकको गये ॥ ७३ ॥

चौ०-गिरिजा सुनहु बिसद यह कथा ❀ मैं सब कही मोरि मति जथा ॥ १ ॥
रामचरित सतकोटि अपारा ❀ स्रुति सारदा न बरनै पारा ॥ २ ॥

(महादेव कहते हैं) हे पार्वती! सुनो यह कथा बड़ी सुन्दर मैंने अपनी बुद्धिके अनुसार सब कही है ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीके चरित्र सौ करोड़ और अपार हैं, उनका वेद और सरस्वतीभी वर्णन कर पार नहीं पा सक्ते ॥ २ ॥

राम अनंत अनंत गुनानी ❀ जन्म कर्म अगनित नामानी ॥ ३ ॥
जलसीकर महिरज गनि जाहीं ❀ रघुपतिचरित न बरनि सिराहीं ॥ ४ ॥

रामजी अनंत, उनके गुण अनंत, उनके जन्म कर्म अनंत, और उनके नामभी अनंत हैं ॥३॥ जलके कण और पृथ्वीकी रेणु चाहे गिन लिये जाँय परन्तु रामचन्द्रजीके चरित्र वर्णन करनेसे पूरे नहीं हो सक्ते ॥ ४ ॥

बिमल कथा यह हरिपददायिनि ❀ भक्ति होइ सुनि अतिअनपायिनि ॥ ५ ॥
उमा कहेउँ सो कथा सुहाई ❀ जो भुसुंडि खगपतिहिं सुनाई ॥ ६ ॥

यह निर्मल कथा भगवान्के चरणोंकी देनेवाली है, इसके सुननेसे बड़ी अटल भक्ति मिलती है ॥ ५ ॥ हे पार्वती! मैंने वह सुन्दर कथा सुनाई है जो कागभुशुंड़ने गरुड़को सुनाई थी ॥ ६ ॥

कछुक रामगुन कहेउँ बखानी ❀ अब का कहौं सो कहहु भवानी ॥ ७ ॥
सुनि सुभ कथा उमा हर्षानी ❀ बोली अतिबिनीत मृदुबानी ॥ ८ ॥
धन्य धन्य मैं धन्य पुरारी ❀ सुनेउँ रामगुन भवभयहारी ॥ ९ ॥

मैंने रामचन्द्रजीके थोड़ेसे गुण वर्णन कर कहे हैं. हे पार्वती! अब क्या कहूं, सो कहो? ॥ ७ ॥ ऐसी शुभ कथाको सुनकर पार्वतीजी प्रसन्न हुई और अति आधीनीसे मीठी बाणी बोली कि ॥ ८ ॥ हे शंकर! आपको धन्य है २ और मुझकोभी धन्य है जो मैंने संसारके भयभंजन (भगवान्) के गुण सुने ॥ ९ ॥

---

[1] प्रह्लादने पितासे कहा है कि–

"रामनाम जपतां कुतो भयं सर्वपापशमनैकभेषजम् ।
पश्य तात मम गात्रसन्निधौ पावकोऽपि सलिलायतेऽधुना ॥ १ ॥

अर्थात् हे पिता! रामका नाम सब पाप दूर करनेके लिये औषधि है, इसके जपनेवालेको भय कहाँ? देखो मेरे शरीरके पास जलती हुई अग्निभी जलके समान शीतल हो गई ॥

दो०-तुम्हरी कृपा कृपायतन, अब कृतकृत्य न मोह ॥
जानेउँ रामप्रताप प्रभु, चिदानंदसंदोह ॥ ७४ ॥

हे कृपानिधान! आपकी दयासे मैं अब कृतार्थ हुई, मेरा अज्ञान जाता रहा और मैंने सच्चिदानंद भगवान् रघुनाथजीका प्रताप जाना ॥ ७४ ॥

नाथ तवाननससि स्रवत, कथासुधा रघुबीर ॥
स्रवनपुटन्हि मन पान करि, नहिं अघात मतिधीर ॥ ७५ ॥

हे नाथ! आपका मुख सोई चन्द्रमा है, उससे रामचन्द्रजीकी कथारूपी अमृतकी वर्षा होती है, उसे कानरूपी दोनोंसे मनमें पीकर धीरबुद्धिवाले तृप्त नहीं होते ॥ ७५ ॥

चौ०-रामचरित जे सुनत अघाहीं ❀ रसबिसेष जाना तिन्ह नाहीं ॥ १ ॥
जीवनमुक्त महामुनि जेऊ ❀ हरिगुन सुनत निरंतर तेऊ ॥ २ ॥

जो रामचन्द्रजीके चरित्र सुनतेमें तृप्त हो जायँ उन्होंने बहुत रस नहीं जाना ॥ १ ॥ जो बड़े २ मुनीश्वर जीवन्मुक्त हैं वेभी भगवान्के गुण निरंतर सुनते हैं ॥ २ ॥

भवसागर चह पार जो पावा ❀ रामकथा ताकहँ दृढ़ नावा ॥ ३ ॥
बिषयिनकहँ पुनि हरिगुनग्रामा ❀ स्रवनसुखद अरु मनबिस्रामा ॥ ४ ॥

जो संसाररूपी समुद्रका पार पाया चाहै उसको रामचन्द्रजीकी कथा दृढ़ नौका है ॥३॥ फिर विषयीजनोंको भगवान्के गुणोंका समूह कानोंको सुख देनेवाला और मनको आनंद देनेवाला है ॥४॥

स्रवनवंत अस को जगमाहीं ❀ जाहि न रघुपतिकथा सुहाहीं ॥ ५ ॥
ते जड़ जीव निजातम घाती ❀ जिनहिं न रघुपतिकथा सोहाती ॥ ६ ॥

जिनके कान हैं उनमेंसे संसारमें ऐसा कौन है कि जिसे रामचन्द्रजीकी कथा अच्छी न लगै ? ॥ ५ ॥ वे मूर्ख जीव अपने आत्मघाती हैं जिनको रघुनाथजीकी कथा नहीं सुहाती है ॥६॥

हरिचरित्रमानस तुम गावा ❀ सुनि मैं नाथ परम सुख पावा ॥ ७ ॥
तुम जो कहा यह कथा सुहाई ❀ काकभुसंडि गरुड़प्रति गाई ॥ ८ ॥

हे स्वामी! आपने रामचरित्र मानस गाया सो सुनकर मैंने बड़ा सुख पाया ॥ ७ ॥ आपने जो कहा कि यह सुहावनी कथा कागभुशुंडिने गरुड़से कही सो ॥ ८ ॥

दो०-बिरति ज्ञान बिज्ञान दृढ़, रामचरन अति नेह ॥
बायसतनु रघुपतिभगति, मोहिं परम संदेह ॥ ७६ ॥

मुझे बड़ा सन्देह है कि कागके शरीरमें रामचन्द्रजीकी भक्ति (कहांसे आई?) और उसे वैराग्य ज्ञान और दृढ़ विज्ञान तथा रामचन्द्रजीके चरणोंमें अत्यन्त प्रेम (कैसे हुआ?) ॥ ७६ ॥

चौ०-नरसहस्रमहँ सुनहु पुरारी ❀ कोउ इक होइ धर्मब्रतधारी ॥ २ ॥
धर्मसील कोटिकमहँ कोई ❀ बिषयबिमुख बिरागरत होई ॥ २ ॥

हे महादेवजी! सुनो हैजारों मनुष्योंमें कोई एक धर्मव्रतका धारण करनेवाला होता है ॥ १ ॥

---

(१) गीतामें लिखा है—

"मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये ॥ यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः ॥ १ ॥"

अर्थात्—हजारों मनुष्योंमेंसे कोई एक यत्न करता है, और यत्न करनेवाले सिद्धोंमेंसे कोई एक मुझे तत्त्वज्ञानसे जानताहै ॥ १ ॥ श्रीमन्महारामायणे शिववाक्यं पार्वतीं प्रति—

करोड़ों धर्मशीलोंमेसे कोई एक विषयोंसे विमुख और वैराग्यमें प्रीतिवान् होता है ॥ २ ॥

कोटि बिरक्तमध्य स्रुति कहई ❀ सम्यक्ज्ञान सुकृत कोउ लहई ॥ ३ ॥
ज्ञानवंत कोटिकमहँ कोई ❀ जीवन्मुक्त सुकृत जग सोई ॥ ४ ॥

और वेद कहते हैं कि करोड़ों विरक्तोंमेंसे कोई एक पुण्यातमा पूर्ण ज्ञान पाता है ॥ ३ ॥ और करोड़ों ज्ञानवानोंमेंसे कोई एक पुण्यातमा संसारमें जीवन्मुक्त होता है ॥ ४ ॥

तिन सहस्रमहँ सब सुखखानी ❀ दुर्लभ ब्रह्मनिरत बिज्ञानी ॥ ५ ॥
धर्मसील बिरक्त अरु ज्ञानी ❀ जीवन्मुक्त ब्रह्मपर प्रानी ॥ ६ ॥

उन हजारों (जीवन्मुक्तों)मेंसेभी सुखकी खान, ब्रह्मज्ञानी मिलना दुर्लभ है ॥ ५ ॥ धर्मशील, विरक्त, ज्ञानी, जीवन्मुक्त, ब्रह्मपरायण इन प्राणियोंमें ॥ ६ ॥

सबते सो दुर्लभ सुरराया ❀ रामभक्तिरत गतमदमाया ॥ ७ ॥
सो हरिभक्ति काक किमि पाई ❀ बिस्वनाथ मोहिं कहहु बुझाई ॥ ८ ॥

हे देवराज! जो रामचन्द्रजीकी भक्तिमें तत्पर हो और मद तथा मायासे रहित हो वह सबसे कठिन है ॥ ७ ॥ हे विश्वनाथ! वह भगवान्की भक्ति कौएने कैसे पाई? यह मुझे समझा कर कहिये ॥ ८ ॥

दो०–रामपरायन ज्ञानरत, गुनागार मतिधीर ॥ ❀
नाथ कहहु केहि कारन, पायउ काकसरीर ॥ ७७ ॥ ❀

जो रामचन्द्रजीका प्रेमी, महाज्ञानी, गुणोंका धाम और जिसकी निश्चल मति थी उसने-कौएका शरीर किस कारण पाया सो कहिये? ॥ ७७ ॥

चौ०–यह प्रभुचरित पवित्र सुहावा ❀ सुनहु कृपालु काक कहँ पावा ॥ १ ॥
तुम केहिभाँति सुना मदनारी ❀ कहहु मोहिं अति कौतुक भारी ॥ २ ॥

हे दयानिधान! सुनो यह भगवान्का सुन्दर पवित्र चरित्र कागने कहां पाया? ॥ १ ॥ हे कामदेवके शत्रु! आपने किस प्रकार सुना सो कहो; मुझे (सुननेका) बड़ा चाव है ॥ २ ॥

गरुड़ महाज्ञानी गुनरासी ❀ हरिसेवक अति निकट निवासी ॥ ३ ॥
तिहिं केहि हेतु काकसन जाई ❀ सुनी कथा मुनिनिकर बिहाई ॥ ४ ॥

और गरुड़जी तौ बड़े ज्ञानवान्, गुणकी राशि, भगवान्के सेवक और उनके बहुतही निकट रहनेवाले थे ॥ ३ ॥ उन्होंने किस कारण मुनीश्वरोंके समूहको छोड़कर कौएसे जाकर कथा सुनी ॥४॥

कहहु कवनि बिध भा संबादा ❀ दोउ हरिभक्त काक उरगादा ॥ ५ ॥
गौरिगिरा सुनि सरल सुहाई ❀ बोले सिव सादर सुख पाई ॥ ६ ॥

कागभुशुंड और गरुड़ इन दोनों हरिभक्तोंका संवाद किस प्रकार हुआ? ॥ ५ ॥ पार्वतीकी सुन्दर और सीधी वाणी सुनकर महादेवजी सुख पाकर आदरसहित बोले ॥ ६ ॥

"मुग्धे शृणुष्व मनुजोऽपि सहस्रमध्ये, धर्मव्रती भवति सर्वसमानशीलः ।
तेष्वेव कोटिषु भवेद्विषये विरक्तः सदासक्तो भवति कोटिविरक्तमध्ये ।
ज्ञानीषु कोटिषु नृजीवनकोऽपि मुक्तः कश्चित्सहस्रनरजीवनमुक्तमध्ये ।
विज्ञानरूपविमलोऽप्यथ ब्रह्मलीनस्तेष्वेव कोटिषु सकृत् खलु रामभक्तः ॥ २ ॥

अर्थ चौपाइयोंसे मिलता है ॥

धन्य सती पावनि मति तोरी ❀ रघुपतिचरन प्रीति नहिं थोरी ॥ ७ ॥
सुनहु परम पुनीत इतिहासा ❀ जो सुन होइ सकल भ्रम नासा ॥ ८ ॥
उपजहि रामचरन विस्वासा ❀ भवनिधि तरु नर विनहिं प्रयासा ॥ ९ ॥

हे सती! तेरी पवित्र बुद्धिको धन्य है और रामचन्द्रजीके चरणोंमें तेरी थोड़ी प्रीति नहीं है अर्थात् बहुत है ॥ ७ ॥ परमपवित्र इतिहास सुनो जिसके सुननेसे सब सन्देहोंका नाश हो ॥८॥ रामचन्द्रजीके चरणोंमें विश्वास उत्पन्न हो और विनाही परिश्रमके मनुष्य संसाररूपी समुद्रसे तर जावे (और जैसे तुमने प्रश्न किये हैं) ॥ ९ ॥

दो०-ऐसेइ प्रश्न विहंगपति, कीन्ह काकसन जाइ ॥ ❀
सो सब सादर कहहुँ मैं, सुनहु उमा चित लाइ ॥ ७८ ॥ ❀

ऐसेही प्रश्न गरुड़जीने जाकर कागभुशुंडसे किये थे सो हे पार्वती! मैं सब आदरसहित कहता हूं, तुम चित्त लगाकर सुनो ॥ ७८ ॥

चौ०-मैं जिमि कथा सुनी भवमोचनि ❀ सो प्रसंग सुनु सुमुखि सुलोचनि ॥ १ ॥
प्रथम दक्षगृह जब अवतारा ❀ सती नाम तब रहा तुम्हारा ॥ २ ॥

हे सुन्दरमुखी! हे सुनयनी! जैसे मैंने संसारसे तारनेवाली कथा सुनी है वह प्रसंग सुनो ॥ १ ॥ पहले जब दक्षके घर तुम्हारा अवतार हुआ तब तुम्हारा नाम सती था ॥ २ ॥

दक्षयक्ष मम भा अपमाना ❀ तुमअतिक्रोध तजा तहँ प्राना ॥ ३ ॥
मम अनुचरन्ह कीन्ह मखभंगा ❀ जानहु सो तुम सकल प्रसंगा ॥ ४ ॥

और दक्षके यज्ञमें जब मेरा अपमान हुआ था तब तुमने बड़े क्रोधसे वहां प्राण छोड़ दिया था ॥ ३ ॥ और मेरे गणोंने जो यज्ञ विध्वंस कर दिया था सो तुम सब प्रसंगको जानतीही हो ॥४॥

तब अति सोच भयउ मन मोरे ❀ दुखित भयउँ वियोग प्रिय तोरे ॥ ५ ॥
सुंदर बन गिरि सरित तड़ागा ❀ कौतुक देखत फिरौं बिरागा ॥ ६ ॥

तब मेरे मनमें बड़ा सोच हुआ और हे प्रिया! तेरे वियोगमें दुखी हुआ था ॥ ५ ॥ और विरक्त हुआ सुन्दरबन, नदी, पर्वत और सरोवरोंके कौतुकोंको देखता फिरा ॥ ६ ॥

गिरि सुमेरु उत्तर दिसि दूरी ❀ नीलसैल इक सुंदर भूरी ॥ ७ ॥
तासु कनकमय सिखर सुहाए ❀ चारि चारु मोरे मन भाए ॥ ८ ॥

सुमेरु पर्वतसे उत्तरदिशामें कुछ दूर एक बड़ा सुन्दर नीलपर्वत है ॥ ७ ॥ उसके सुवर्णके चार शिखर हैं और ऐसे उज्वल हैं कि मेरे मनको अच्छे लगे ॥ ८ ॥

तेहिपर इक इक बिपट बिसाला ❀ बट पीपर पाकरी रसाला ॥ ९ ॥
सैलोपरि सर सुंदर सोहा ❀ मनिसोपान देखि मन मोहा ॥ १० ॥

उसकर बड़, पीपल, पाकर, और आमका एक २ बड़ा उँचा वृक्ष लगा हुआ है ॥ ९ ॥ पर्वतके ऊपर (एक) सुन्दर सरोवर शोभायमान है जिसमें मणियोंकी सीढीयाँ लगी हैं जो देखतेही मनको मोहित करती हैं ॥ १० ॥

दो०-सीतल अमल मधुर जल, जलज बिपुल बहुरंग ॥ ❀
कूजत कलरव हंसगन, गुंजत मंजुल भृंग ॥ ७९ ॥ ❀

---

(१) इसकी सब कथा बालकांडके ६३ वें सफेमें है.

जिसमें निर्मल जल भररहा है, रंग २ के बहुतसे कमल खिल रहे हैं, मनहरन शब्दसे बहुतसे हंस कूजते और सुन्दर भौंरे गुंजार कर रहे हैं ॥ ७९ ॥

चौ०–तिहिगिरि रुचिर बसै खग सोई ❀ तासु नास कल्पांत न होई ॥ १ ॥
मायाकृत गुन दोष अनेका ❀ मोह मनोजआदि अविवेका ॥ २ ॥

उसी पर्वतमें वह पक्षी रहता है कि जिसका कल्पांतमेंभी नाश नहीं होता ॥ १ ॥ मायाके किये हुये अनेक गुण, दोष, मोह, काम और अज्ञान आदि ॥ २ ॥

रहे व्यापि समस्त जगमाहीं ❀ तिहिगिरिनिकट कबहुँ नहिं जाहीं ॥ ३ ॥
तहँ बसि हरिहिं भजै जिमि कागा ❀ सो सुनु उमा सहित अनुरागा ॥ ४ ॥

सब संसारमें व्याप रहे हैं परन्तु उस पर्वतके पास कभी नहीं जाते ॥ ३ ॥ हे पार्वती! वहाँ रहकर जिस प्रकार कानभुशुंड भगवान्‌का भजन करता है सो चित्त लगाकर सुनो ॥ ४ ॥

पीपरतरुतर ध्यान सो धरई ❀ जाप यज्ञ पाकरतर करई ॥ ५ ॥
आमछाँह करि मानसपूजा ❀ तजि हरिभजन काज नहिं दूजा ॥ ६ ॥

(प्रथम प्रहरमें तौ) वह पीपल वृक्षके नीचे (सतयुगके धर्मानुसार) ध्यान धरता है और (द्वितीय प्रहरमें) पाकर वृक्षके नीचे (त्रेतायुगके धर्मानुसार) जप और यज्ञ करता है जैसा गीतामें लिखा है कि "यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि" ॥५॥ और (तीसरे प्रहर) आमकी छायामें (द्वापरके धर्मानुसार) मानसिक पूजन करता है और भगवान्‌के भजनको छोड़ उसे दूसरा काम नहीं ॥६॥

बटतर कह हरिकथाप्रसंगा ❀ आवहिं सुनन अनेक बिहंगा ॥ ७ ॥
रामचरित विचित्र विध नाना ❀ प्रेमसहित करु सादर गाना ॥ ८ ॥

(चौथे प्रहरमें) वटवृक्षके नीचे (कलियुगके धर्मानुसार) भगवान्‌की कथाका प्रसंग कहता है जिसे सुननेके लिये अनेक पक्षी आते हैं ॥ ७ ॥ वह रामचन्द्रजीके नानाप्रकारके विचित्र चरित्रोंको आदर और प्रेमसे गान करता था ॥ ८ ॥

सुनहिं सकल मतिबिमल मराला ❀ बसहिं निरंतर जे तेहि काला ॥ ९ ॥
तब मैं जाइ सो कौतुक देखा ❀ उर उपजा आनंद विसेखा ॥ १० ॥

और सब निर्मल बुद्धिवाले हंस, जो उस समय वहां रहते थे, निरंतर सुना करते थे ॥ ९ ॥ तब मैंनेभी जाकर वह कौतुक देखा तौ हृदयमें बड़ा आनन्द उत्पन्न हुआ ॥ १० ॥

दो०–तब कछु काल मरालतनु, धरि तहँ कीन्ह निवास ॥ ❀
सादर सुनि रघुपतिचरित, पुनि आयउँ कैलास ॥ ८० ॥ ❀

और तब मैंने कुछ समयतक हंसका शरीर धारण कर वहां निवास किया और आदरसहित रामचन्द्रजीके चरित्र सुनकर फिर कैलासपर आया ॥ ८० ॥

चौ०–गिरिजा कहेउँ सो सब इतिहासा ❀ मैं जेहि लमय गयउँ खगापासा ॥ १ ॥
अब सो कथा. सुनहु जेहि हेतू ❀ गयउ काकपहँ खगकुलकेतू ॥ २ ॥

---

(१) भागवते—

श्लोक.

"कृते यद्ध्यायतो विष्णुं त्रेतायां यजतो मखैः। द्वापरे परिचर्यायां कलौ तद्धरिकीर्तनात् ॥"

अर्थात् जो फल सतयुगमें विष्णुके ध्यानसे, त्रेतामें यज्ञोंसे, और द्वापरमें पूजनेसे होता था, वह फल कलियुगमें भगवान्‌की कथासे होता है ॥

हे पार्वती ! मैंने वह तौ सब इतिहास कह दिया कि जिस समय मैं कागभुशुंडिके पास गया था ॥ १ ॥ अब वह कथा सुनो जिस कारण कागभुशुंडिके पास गरुड़ गये थे ॥ २ ॥

जब रघुनाथ कीन्ह रनक्रीड़ा ❀ समुझत चरित होति मोहिं व्रीड़ा ॥ ३ ॥
इंद्रजीतपर आपु बँधावा ❀ तब नारदमुनि गरुड पठावा ॥ ४ ॥

जब रामचन्द्रजीने युद्धलीला करी थी तब ऐसे चरित्र किये कि जिसको समझकर मुझेभी लज्जा होती है ॥ ३ ॥ जब मेघनादके हाथोंसे आप बँध गये तब नारदमुनिने गरुड़जीको भेजा ॥ ४ ॥

बंधन काटि गयउ उरगादा ❀ उपजा हृदय प्रचंड विषादा ॥ ५ ॥
प्रभुबंधन समुझत बहुभाँती ❀ करत विचार उरगआराती ॥ ६ ॥

सो गरुड़जी बंधन काटकर चले तौ गये परन्तु हृदयमें बड़ा भारी शोक उत्पन्न हुआ ॥ ५ ॥ भगवान्‌के बंधनको समझ कर गरुड़जी अनेक भांतिके विचार करने लगे कि ॥ ६ ॥

व्यापक ब्रह्म विरज बागीसा ❀ मायामोहपार परमीसा ॥ ७ ॥
सो अवतार सुनेउँ जगमाहीं ❀ देखेउँ सो प्रभाव कछु नाहीं ॥ ८ ॥

जो व्यापक ब्रह्म, अजन्मा, वाणीपति और माया मोहके परे साक्षात् परमेश्वर है ॥ ७ ॥ उसी (परमेश्वर) का अवतार रघुनाथजीने लिया है ऐसा संसारमें सुना था परन्तु वैसा कुछ प्रभाव नहीं देखा (मुझे बंधन काटने आना पड़ा) ॥ ८ ॥

दो०-भवबंधनते छूटहीं, नर जपि जाकर नाम ॥ ❀
खर्व निसाचर बाँधेउ, नागपास सोइ राम ॥ ८१ ॥ ❀

जिसका नाम जपकर मनुष्य संसाररूपी बंधनसे छूट जाते हैं उनहीं रामचन्द्रको एक छोटेसे राक्षसने नागफाँसमें बाँध दिया ॥ ८१ ॥

चौ०-नानाभाँति मनहिं समुझावा ❀ प्रगट न ज्ञान हृदय भ्रम छावा ॥ १ ॥
खेदखिन्न मन तर्क बढ़ाई ❀ भयउँ मोहबस तुमरिहि नाई ॥ २ ॥

अनेक प्रकारसे मनको समझाया परन्तु ज्ञान प्रगट नहीं होता, मनमें सन्देह छागया ॥ १ ॥ खेदसे दुखी होकर मनमें तर्कना बढ़ाकर तुम्हारीही भांति मोहमें पड़ गये ॥ २ ॥

व्याकुल गयउ देवऋषिपाहीं ❀ कहेसि जो संसय निजमनमाहीं ॥ ३ ॥
सुनि नारदहिं लागि अति दाया ❀ सुनु खग प्रबल रामकी माया ॥ ४ ॥

और व्याकुल होकर देवऋषि नारदके पास गये और जो कुछ सन्देह अपने मनमें था वह कहा ॥३॥ सुनकर नारदजीको बड़ी दया लगी तौ बोले हे गरुड़ ! सुनो रामचन्द्रजीकी माया बड़ी प्रबल है ॥४॥

जो ज्ञानिन्हकर चित अपहरई ❀ बरिआई विमोहबश करई ॥ ५ ॥
जेहि बहु बार नचावा मोही ❀ सोइ व्यापेउ विहंगपति तोही ॥ ६ ॥

जो ज्ञानियोंकेभी चित्तको हरलेती है और बलपूर्वक अज्ञानके वशमें कर देती है ॥ ५ ॥ हे गरुड़ ! जिसने मुझेभी बहुत बार नचाया वही माया तुमको व्यापी ॥ ६ ॥

महामोह उपजा मल तोरे ❀ मिटिहि न वेगि कहे खग मोरे ॥ ७ ॥
चतुराननपहिं जाहु खगेसा ❀ सोइ करेहु जो देहि निदेसा ॥ ८ ॥

हे गरुड़ ! तुम्हारे मनमें जो बड़ा मोह उत्पन्न हुआ है सो मेरे कहनेसे वह शीघ्रही दूर न होगा ॥ ७ ॥ हे गरुड़ ! तुम ब्रह्माजीके पास जाओ और जो ये आज्ञा दें वही करना ॥ ८ ॥

दो०-अस कहि चले देवऋषि, करत रामगुनगान ॥ ❀
हरिमायाबल बरनत, पुनि पुनि परम सुजान ॥ ८२ ॥ ❀

ऐसा कहकर जब परमचतुर नारदजी रामचन्द्रजीके गुण गाते हुये और भगवान्‌की मायाके बलको बार २ वर्णन करते हुये चले ॥ ८२ ॥

चौ०-तब खगपति विरंचिपहँ गयऊ ❀ निजसंदेह सुनावत भयऊ ॥ १ ॥
सुनि बिरंचि रामहिं सिर नावा ❀ समुझि प्रताप प्रेम उर छावा ॥ २ ॥

तब गरुड़जी ब्रह्माके पास गये और अपना संदेह सुनाया ॥ १ ॥ सुनकर ब्रह्माजीने रामचन्द्रजीको शिर नवाया और उनका प्रताप समझकर हृदयमें प्रेम छागया ॥ २ ॥

मनमहँ करहिं बिचार बिधाता ❀ मायाबस कबि कोबिद ज्ञाता ॥ ३ ॥
हरिमायाकर अमित प्रभावा ❀ विपुलबार जेहिं मोहिं नचावा ॥ ४ ॥

ब्रह्माजी मनमें विचार करते हैं कि कवीश्वर, पंडित और ज्ञानी सब मायाके वशमें हैं ॥ ३ ॥ भगवान्‌की मायाका असीम प्रभाव है जिसने मुझेभी बहुत वार नचाया है ॥ ४ ॥

अग जगमय सब मम उपजाया ❀ नहिं आश्चर्य मोहिं खगराया ॥ ५ ॥
पुनि बोले बिधि गिरा सुहाई ❀ जानु महेस रामप्रभुताई ॥ ६ ॥

हे गरुड़! स्थावरजंगमात्मक सब (संसार) मेराही उत्पन्न किया है सो मुझे (भगवान्‌की मायाका) कुछ आश्चर्य नहीं ॥ ५ ॥ फिर ब्रह्माजी सुन्दर वाणी बोले कि रामचन्द्रजीकी प्रभुताको तौ महादेवजी जानते हैं ॥ ६ ॥

बैनतेय संकरपहँ जाहू ❀ तात अनत पूंछहु जनि काहू ॥ ७ ॥
तहँ होइहि तव संसयहानी ❀ चलु विहंगपति सुनि बिधिबानी ॥ ८ ॥

सो हे गरुड़! तुम महादेवजीके पास जाओ; हे प्यारे! और जगह किसीसे मत पूछो ॥ ७ ॥ वहाँ तुम्हारा संशय दूर हो जायगा. गरुड़जी ब्रह्माजीकी वाणी सुनकर चले ॥ ८ ॥

दो०-परमातुर विहंगपति, तब आयउ मम पास ॥ ❀
जात रहेउँ कुबेरगृह, रहिहु उमा कैलास ॥ ८३ ॥ ❀

और तब बड़ी उतावलीसे गरुड़ मेरेपास आये सो हे पार्वती! (उस समय) मैं तौ कुबेरके स्थानको जाता था और तुम कैलाशपर्वतपर थी ॥ ८३ ॥

चौ०-तेहि मम पद सादर सिर नावा ❀ पुनि आपन संदेह सुनावा ॥ १ ॥
सुनि ताकर बिनीत मृदुबानी ❀ प्रेमसहित मैं कहेउँ भवानी ॥ २ ॥

उन्होंने आदरपूर्वक मेरे चरणोंको शिर नवाया और फिर अपना संदेह सुनाया ॥ १ ॥ हे पार्वती! उनकी अधीनीकी कोमल बाणी सुनकर मैंने प्रेमसे कहा ॥ २ ॥

मिलेहु गरुड मारगमहँ मोहीं ❀ कवनभाँति समुझावौं तोहीं ॥ ३ ॥
जब बहुकाल करिय सत्संगा ❀ तब यह होहि मोहभ्रमभंगा ॥ ४ ॥

हे गरुड़! तुम मुझको मार्गमें मिले सो तुमको किसप्रकार समझाऊँ! ॥ ३ ॥ जब बहुत समयतक सत्संग किया जाय तब यह मोहका भ्रम नाश हो सक्ता है ॥ ४ ॥

सुनिय तहां हरिकथा सुहाई ❀ नानाभाँति मुनिन्ह जो गाई ॥ ५ ॥
जेहिमहँ आदि मध्य अवसाना ❀ प्रभु प्रतिपाद्य राम भगवाना ॥ ६ ॥

उस सत्संगमें भगवान्की सुन्दर वह कथा सुननी चाहिये जो मुनीश्वरोंने अनेक प्रकारसे गाई है ॥ ५ ॥ उसमें आदि मध्य और अंतमें प्रभु रामचंद्र भगवान्का प्रतिपादन होता है ॥ ६ ॥

नित हरिकथा होति जहँ जाई ❀ पठवौं तोहिं सुनहु तहँ जाई ॥ ७ ॥
जाइहि सुनत सकल संदेहा ❀ होइहि रामचरन दृढ़ नेहा ॥ ८ ॥

सो हे भाई ! जहां नित्य भगवान्की कथा होती है तुम्हें वहां भेजता हूं सो वहाँ जाकर सुनो ॥ ७ ॥ सुनतेही तुम्हारा सब संदेह जाता रहेगा और रामचन्द्रजीके चरणोंमें दृढ़ प्रेम होगा ॥ ८ ॥

दो०–बिनु सत्संग न हरिकथा, तेहि बिनु मोह न भाग ॥ ❀
मोह गए बिनु रामपद, होइ न दृढ़ अनुराग ॥ ८४ ॥ ❀

बिना सत्संगके भगवान्की कथा नहीं (प्राप्त होती), और बिना उस (कथा) के मोह नहीं जाता, और मोहके गए बिना रामचन्द्रजीके चरणोंमें दृढ़ प्रेम नहीं होता है ॥ ८४ ॥

चौ०–मिलहिं न रघुपति बिनु अनुरागा ❀ किये जोग जप ज्ञान बिरागा ॥ १ ॥
उत्तर दिसि सुंदर गिरि नीला ❀ तहँ रह काकभुशुंडि सुसीला ॥ २ ॥

बिना प्रेमके रामचन्द्रजी नहीं मिलते; योग जप ज्ञान और वैराग्य भलेही किया करो ॥ १ ॥ सो उत्तर दिशामें सुन्दर नीलगिरि पर्वत है वहाँ सुशील कागभुशंडि रहता है ॥ २ ॥

रामभक्तिपथपरमप्रबीना ❀ ज्ञानीगुनगृहबहुकालीना ॥ ३ ॥
रामकथा सोइ कहै निरंतर ❀ सादर सुनहिं बिबिध बिहंगवर ॥ ४ ॥

वह रामचन्द्रजीकी भक्तिके मार्गमें बड़ा चतुर, ज्ञानवान्, गुणोंका धाम और बहुत वृद्ध है ॥ ३ ॥ वह निरंतर रामचन्द्रजीकी कथा कहा करता है और उसे आदरपूर्वक नाना प्रकारके सुन्दर पक्षी सुना करते हैं ॥ ४ ॥

जाइ सुनहु तहँ हरिगुन भूरी ❀ होइहि मोहजनित दुख दूरी ॥ ५ ॥
मैं सब जब तेहिं कहा बुझाई ❀ चलेउ हरषि मम पद सिर नाई ॥ ६ ॥

वहाँ जाकर भगवान्के बहुतसे गुणोंको सुनो जिससे मोहसे उत्पन्न हुआ दुःख दूर हो जायगा ॥५॥ मैंने जब उससे सब समझाकर कहा तौ वह प्रसन्न होकर और मेरे चरणोंको शिर नवाकर चला ॥६॥

ताते उमा न मैं समुझावा ❀ रघुपतिकृपा मर्म सब पावा ॥ ७ ॥
होइहि कीन्ह कबहुँ अभिमाना ❀ सो खोवाचह कृपानिधाना ॥ ८ ॥

हे पार्वती ! मैंने इसलिये नहीं समझाया कि रामचन्द्रजीकी दयासे मैंने सब भेद जान लिया कि ॥ ७ ॥ गरुड़ने कभी अभिमान किया होगा (कि मैं तौ भगवान्के पास रहता हूं, मुझे उनकी माया क्या व्यापैगी ?) सो कृपानिधान भगवान् उसके अभिमानको खोना चाहते हैं (जो कदाचित् ब्रह्माजी अथवा मैं बतादेता तौ उसका अभिमान नहीं जाता, सो गरुड़ तौ पक्षियोंका राजा है और काग सब पक्षियोंमें नीच और दुष्ट गिना गया है, इसलिये जब कागभुशुंडिको गुरु बनावै तब इसका घमंड जाय) ॥ ८ ॥

कछु तेहिते पुनि मैं नहिं राखा ❀ खग जानैं खगहीकी भाषा ॥ ९ ॥
प्रभुमाया बलवंत भवानी ❀ जाहि न मोह कवन अस ज्ञानी ॥ १० ॥

और कुछ मैंने इसलियेभी अपनेपास नहीं रक्खा कि पक्षी पक्षीकी ही भाषा समझताहै ॥९॥ हे पार्वती ! भगवान्की माया बड़ी बलवान् है, ऐसा कौनसा ज्ञानी है जिसे मोहित न करै ? ॥ १० ॥

दो०-ज्ञानी भक्तसिरोमनि, त्रिभुवनपतिकर यान ॥
ताहि मोह माया प्रबल, पामर करहिं गुमान ॥ ८५ ॥

जो ज्ञानवान् भक्तोंमें शिरोमणि, और जिसपर त्रिलोकीके स्वामी सवार हों उसेभी प्रबल मायाने मोहित कर लिया, फिर छोटे २ जन (किस बिरतेपर) अभिमान कर सक्ते हैं ॥ ८५ ॥

सिवविरंचिकहँ मोहही, कोहै बपुरा आन ॥
अस जिय जानि भजहिं मुनि, मायापति भगवान ॥ ८६ ॥

जो माया महादेव और ब्रह्माजीको मोहित करती है तौ और बिचारे किस गिनतीमें हैं (जिन्हें मोहित न करै), ऐसा हृदयमें जानकर मुनिजन माया पति भगवान्का भजन करते हैं ॥ ८६ ॥

चौ०-गयउ गरुड़ जहँ बसै भुसुंडी ❀ मति अकुंठ हरिभक्ति अखंडी ॥ १ ॥
देखि सैल प्रसन्न मन भयऊ ❀ माया मोह सोच भ्रम गयऊ ॥ २ ॥

फिर गरुड़ वहाँ गये जहाँ प्रखर बुद्धिवाले और भगवान्की भक्तिमें अखंड ऐसे कागभुसुंडि रहते थे ॥ १ ॥ पर्वतको देखतेही मनमें प्रसन्न हुये और माया, मोह, शोच और सन्देह सब जाता रहा ॥२॥

करि तड़ागमज्जन जलपाना ❀ बटतर गयउ हृदय हर्षाना ॥ ३ ॥
वृन्द वृन्द बिहंग तहँ आए ❀ सुने रामके चरित सुहाए ॥ ४ ॥

सरोवरमें स्नान करके और जल पीकर मनमें प्रसन्न होते हुये वटवृक्षके नीचे गये ॥ ३ ॥ झुंड़के झुंड पक्षी वहां रामचन्द्रजीके सुन्दर चरित्र सुननेके लिये आये ॥ ४ ॥

कथाअरंभ कर सोइ चाहा ❀ ताही समय गयउ खगनाहा ॥ ५ ॥
आवत देखि सकल खगराजा ❀ हर्षेउ बायस सहित समाजा ॥ ६ ॥

वह (कागभुशुंडि) कथाका आरंभ कियाही चाहते थे कि इतनेहीमें गरुड़जी पहुँच गये ॥ ५ ॥ सो गरुड़जीको आते हुये देखकर सब समाजसमेत कागभुशुंड प्रसन्न हो गये ॥ ६ ॥

अतिआदर खगपतिकर कीन्हा ❀ स्वागत पूँछि सुआसन दीन्हा ॥ ७ ॥
करि पूजा समेत अनुरागा ❀ मधुर बचन तब बोलेउ कागा ॥ ८ ॥

गरुड़जीका बहुतसा आदर किया और कुशल पूँछकर सुन्दर आसन दिया ॥७॥ बड़ी प्रीतिसे पूजन करके फिर कागभुशंडिजी मधुर वचन बोले ॥ ८ ॥

दो०-नाथ कृतारथ भयउँ मैं, तव दर्सन खगराज ॥
आयसु देहु सो करौं अब, प्रभु आयहु केहि काज ॥ ८७ ॥

हे स्वामी गरुड़जी ! आपके दर्शनसे मैं कृतार्थ हुआ, अब जो आज्ञा हो सो करूं. आप किस कारण आये हो ? ॥ ८७ ॥

सदा कृतारथरूप तुम, कह मृदुबचन खगेस ॥
जाकी अस्तुति सादर, निजमुख कीन्ह महेस ॥ ८८ ॥

---

(१) अब यहाँ यह शंका है कि ब्रह्मलोक और कैलाशके दर्शनसे तौ गरुड़जीकी माया नहीं गई और कागभुशुंडिके आश्रमके दर्शनमात्रसे जाती रही ॥ तहां कहते हैं कि यहां कागभुशुंडिके आश्रमकी केवल महिमा दिखानेको ऐसा लिखा है. और ब्रह्म शिवलोकके दर्शनसेभी जा सक्ती थी पर भगवान्को तौ गरुड-का अभिमान तोड़ना है अतएव कागभुशुंडिके स्थानके दर्शनसे ही छूटी ॥

गरुड़जीने कोमल वचनोंसे कहाकि तुम तौ सदा कृतार्थरूप हो, जिनकी स्तुति महादेवजीने आदरपूर्वक अपने मुखसे करी है ॥ ८८ ॥

चौ०-सुनहु तात जेहि कारज आयउँ ※ तो सब भयउ दरस तव पायउँ ॥ १ ॥
देखि परम पावन तव आस्रम ※ गयउ मोह संसय नाना भ्रम ॥ २ ॥

हे प्यारे ! सुनो, जिस कामके लिये मैं आया था सो तौ सब आपका दर्शन पातेही हो गया ॥ १ ॥ आपका परमपवित्र आश्रम देखकर मोह सन्देह और अनेक भ्रम जाते रहे ॥ २ ॥

अब स्रीरामकथा अतिपावनि ※ सदा सुखद दुखपुँजनसावनि ॥ ३ ॥
सादर तात सुनावहु मोहीं ※ बार बार बिनवौं प्रभु तोहीं ॥ ४ ॥

अब श्रीरामचन्द्रजीकी परम पवित्र कथा जो सदा सुखकी देनेवाली और दुःखोंके समूहको नाश करनेवाली है ॥ ३ ॥ उसे हे प्यारे ! मुझे आदरसहित सुनाओ. हे प्रभो ! मैं वारंवार तुम्हारी प्रार्थना करता हूं ॥ ४ ॥

सुनत गरुड़की गिरा बिनीता ※ सरल सप्रेम सुखद सुपुनीता ॥ ५ ॥
भयउ तासु मन परम उछाहा ※ कहै लाग रघुपतिगुनगाहा ॥ ६ ॥

गरुड़जीकी नीतियुक्त, सीधी, प्रेमभरी और सुखदायिनी सुन्दर पवित्र वाणी सुनकर ॥ ५ ॥ मनमें बड़ा आनन्द हुआ और वे रामचन्द्रजीके गुणोंकी कथा कहने लगे ॥ ६ ॥

प्रथमहिं अतिअनुराग भवानी ※ रामचरित सब कहेसि बखानी ॥ ७ ॥
पुनि नारदकर मोह अपारा ※ कहेसि बहुरि रावनअवतारा ॥ ८ ॥
प्रभुअवतारकथा पुनि गाई ※ पुनि सिसुचरित कहेसि मन लाई ॥ ९ ॥

हे पार्वती ! पहले बड़े प्रेमसे रामचन्द्रजीका सब चरित्र वर्णन कर कहा ॥ ७ ॥ फिर नारदजीका अपार मोह और फिर रावणका अवतार कहा ॥ ८ ॥ फिर भगवान्‌के अवतारकी कथा कही, फिर मन लगाकर (भगवान्‌का) बालचरित्र कहा ॥ ९ ॥

दो०-बालचरित कहि बिबिधविध, मनमहँ परम उछाह ॥
ऋषिआगमन कहेसि पुनि, स्रीरघुवीरविवाह ॥ ८९ ॥

फिर मनमें परम आनन्दित होकर और अनेक प्रकारके बालचरित्र कहकर ऋषि (विश्वामित्र)का आगमन कहा और फिर सीतारामचन्द्रजीका विवाह कहा ॥ ८९ ॥

चौ०-बहुरि रामअभिषेकप्रसंगा ※ पुनि नृपवचन राजरसभंगा ॥ १ ॥
पुरबासिनकर बिरह बिषादा ※ कहेसि रामलछमनसंवादा ॥ २ ॥

फिर रामचन्द्रजीके राजतिलकका प्रसंग और पुनि राजाके दो वरदानोंका देना और राज्यके रस का भंग होना कहा ॥१॥ पुनि नगरवासियोंका बियोग, दुःख और रामलक्ष्मणका संवाद कहा ॥२॥

बिपिनगमन केवटअनुरागा ※ सुरसरि उतरि निवास प्रयागा ॥ ३ ॥
वालमीकिप्रभुमिलन बखाना ※ चित्रकूट जिमि बस भगवाना ॥ ४ ॥

फिर वनगमन, केवटकी प्रीति और गंगाजी उतरकर प्रयागका निवास कहा ॥ ३ ॥ पुनि वाल्मीकि और भगवान्‌का मिलना और भगवान् जिस प्रकार चित्रकूटमें बसे थे सो कहा ॥ ४ ॥

सचिवागमन बगर नृपमरना ※ भरतागमन प्रेम पुनि बरना ॥ ५ ॥
करि नृपक्रिया संग पुरबासी ※ भरत गए जहँ प्रभु सुखरासी ॥ ६ ॥

फिर नगरमें मंत्रीका आगमन, राजाका मरण, भरतजीका आगमन और उनके प्रेमका वर्णन किया ॥ ५ ॥ फिर जैसे राजाकी क्रिया करके नगरके लोगोंके साथमें भरत वहां गये कि जहां सुखकी राशि (भगवान्) थे (सो कहा) ॥ ६ ॥

पुनि रघुपति बहुविध समुझाए ❀ ले पादुका अवध फिरि आए ॥ ७ ॥
भरतरहनि सुरपतिसुतकरनी ❀ प्रभु अरु अत्रिभेट पुनि बरनी ॥ ८ ॥

फिर जैसे रामचन्द्रजीने बहुत प्रकार समझाया और चरणपादुका लेकर अयोध्याको लौट आये सो कहा॥७॥फिर भरतकी रहनि, जयंतकी करनी, भगवान् और अत्रि ऋषीकी भेट वर्णन की॥८॥

दो०–कहि बिराधवध जाहि बिध, देह तजी सरभंग ॥ ❀
बरनि सुतीछनप्रेम पुनि, प्रभुअगस्त्यसत्संग ॥ ९० ॥ ❀

बिराधका वध कहकर जिस प्रकार शरभंगने देह छोड़ी उसका वर्णन करके फिर सुतीक्ष्णका प्रेम और अगस्त्य (ऋषि) का सत्संग कहा ॥ ९० ॥

चौ०–कहि दंडक वन पावनताई ❀ गृध्रमैत्री पुनि तेहिं गाई ॥ १ ॥
पुनि प्रभुपंचवटीकृतवासा ❀ भंजी सकल मुनिन्हकी त्रासा ॥ २ ॥

दंड़कवनकी पवित्रता कहकर फिर उसनें गृध्रकी मित्रता कही ॥ १ ॥ फिर भगवान्का पंचवटी-निवास और जिस प्रकार सब मुनीश्वरोंका दुःख नाश किया था सो (सब कहा) ॥ २ ॥

पुनि लछमनउपदेस अनूपा ❀ सूर्पनखा जिमि कीन्ह कुरूपा ॥ ३ ॥
खरदूषनवध बहुरि बखाना ❀ जिमि सब मर्म दसानन जाना ॥ ४ ॥

फिर लक्ष्मणका सुन्दर उपदेश और जिस भांति शूर्पनखाको कुरूप किया था (सो कथा कही)॥३॥ फिर खरदूषणका वध बर्णन किया और जैसे रावणने सब भेद जाना (सो सब कथा कही) ॥ ४॥

दसकंधरमारीचबधकही ❀ जेहि बिध भई सकल तेहि कही ॥ ५ ॥
पुनि मायासीताकर हरना ❀ स्रीरघुबीर बिरह कछु बरना ॥ ६ ॥

फिर रावण और मारीचकी वातचीत जिस प्रकार हुई थी सो सब उसने कही ॥ ५ ॥ फिर मायाकी सीताका हरण और श्रीरामचन्द्रजीका कुछ वियोग वर्णन किया ॥ ६ ॥

पुनि प्रभु गृध्रक्रिया जिमि कीन्ही ❀ बधि कबंध सबरिहिं गति दीन्ही ॥ ७ ॥
बहुरि बिरह वर्णन रघुवीरा ❀ जेहिविध गयउ सरोवरतीरा ॥ ८ ॥

फिर जैसे भगवान्ने गृध्रकी क्रिया की और कबंधको मारकर शबरीको गति दी सो कहा ॥ ७ ॥ फिर जिस भांति रामचन्द्रजी वियोग वर्णन करते हुये पंपासरोवरके किनारेपर गये (सो सब कहा)॥८॥

दो०–प्रभुनारदसंवाद कहि, मारुतिमिलनप्रसंग ॥ ❀
पुनि सुग्रीवमिताई, वालिप्रानकर भंग ॥ ९१ ॥ ❀

फिर भगवान् और नारदका संवाद कहकर हनुमान्के मिलनेका प्रसंग, सुग्रीवकी मित्रता और वालिका मरण कहा ॥ ९१ ॥

कपिहिं तिलक करि प्रभुकृत, सैलप्रवर्षनवास ॥ ❀
बरनत वर्षा सरद ऋतु, रामरोष कपित्रास ॥ ९२ ॥ ❀

फिर सुग्रीवका राजतिलक और भगवान्ने जो प्रवर्षण पर्वतपर निवास किया था सो और वर्षा तथा शरदऋतुका वर्णन, रामचन्द्रजीका क्रोध और सुग्रीवका भय कहा ॥ ९२ ॥

चौ०–जेहिबिधि कपिपति कीस पठाए ❀ सीताखोज सकल दिसि धाए ॥ १ ॥
विवरप्रवेस कीन्ह जेहि भाँती ❀ कपिन्ह बहोरि मिला संपाती ॥ २ ॥

फिर जिस प्रकार सुग्रीवने दूत भेजे और वे सीताजीके ढूंढ़नेको सब दिशाओंमें गये ॥ १ ॥ और जिस प्रकार बिलमें प्रवेश किया, और फिर बंदरोंको संपाती मिला सो कहा ॥ २ ॥

सुनि सब कथा समीरकुमारा ❀ लाँघत भयउ पयोधि अपारा ॥ ३ ॥
लंका कपि प्रवेस जिमि कीन्हा ❀ पुनि सीतहिं धीरज जिमि दीन्हा ॥ ४ ॥

फिर सब कथा सुनकर हनुमान् जैसे अपार समुद्रको लाँघ गये ॥ ३ ॥ और जैसे हनुमान्ने लंकामें प्रवेश किया जैसे सीताजीको धीरज दिया ॥ ४ ॥

वन उजारि रावनहिं प्रबोधी ❀ पुर दहि लाँघेउ बहुरि पयोधी ॥ ५ ॥
आए कपि सब जहँ रघुराई ❀ वैदेहीकी कुसल सुनाई ॥ ६ ॥

और वनको उजाड़ रावणको समझाय नगरको जलाकर फिर समुद्रको उलांघकर आये सो सब कहा ॥ ५ ॥ और फिर सब बन्दर वहाँ आये जहाँ रामचन्द्रजी थे और आकर सीताजीकी कुशल सुनाई सो कहा ॥ ६ ॥

सेनसमेत यथा रघुबीरा ❀ उतरे जाइ बारिनिधितीरा ॥ ७ ॥
मिला बिभीषन जेहि विध आई ❀ सागरनिग्रहकथा सुनाई ॥ ८ ॥

फिर जैसे सेनासमेत रामचन्द्रजी समुद्रके किनारे जाकर उतरे ॥ ७ ॥ और जिस प्रकार बिभीषण आकर मिला सो और समुद्रके मानभंगकी कथा कही ॥ ८ ॥

दो०–सेतु बांधि कपिसेन जिमि, उतरे सागरपार ॥ ❀
गयो बसीठी बीरवर, जेहिबिध बालिकुमार ॥ ९३ ॥ ❀

फिर जैसे पुल बांधकर बन्दरोंकी सेना समुद्रके पार उतरी और शूरवीर बालिका पुत्र अंगद जिस प्रकार दूत बनकर गया था (सो कथा कही) ॥ ९३ ॥

निसिचरकीस लराइ बहु, बरनिसि बिबिध प्रकार ॥ ❀
कुंभकर्नघननादकर, बलपौरुष संहार ॥ ९४ ॥ ❀

राक्षस और बन्दरोंकी बहुतसी लड़ाई अनेक प्रकारसे वर्णन की और कुंभकर्ण मेघनादका बल पराक्रम और उनका मरण (कहा) ॥ ९४ ॥

चौ०–निसिचरनिकरमरन विधनाना ❀ रघुपतिरावनसमर बखाना ॥ १ ॥
रावनवध मंदोदरिसोका ❀ राजबिभीषन देव असोका ॥ २ ॥

राक्षसोंके समूहोंका अनेक प्रकारसे मरण और रामरावणका युद्ध कहा ॥ १ ॥ रावणका मरण, मन्दोदरीका शोक, बिभीषणका राजतिलक और देवताओंका शोकरहित होना कहा ॥ २ ॥

सीतारघुपतिमिलन बहोरी ❀ सुरन्ह कीन्ह अस्तुति कर जोरी ॥ ३ ॥
पुनि पुष्पक चढ़ि सीय समेता ❀ अवध चले प्रभु कृपानिकेता ॥ ४ ॥

फिर सीता रामचन्द्रजीका मिलना, और देवताओंने हाथ जोड़कर जो स्तुति करी थी (सो कही) ॥३॥ फिर जैसे दयानिधान भगवान् (रामचन्द्र) पुष्पक (विमान) पर चढ़कर अयोध्यापुरीको चले ॥४॥

जेहि बिध राम नगर नियराये ❀ वायस विसद चरित सब गाये ॥ ५ ॥
कहेसि बहोरि रामअभिषेका ❀ पुरबरनन नृपनीति अनेका ॥ ६ ॥

और जिस प्रकार रामचन्द्रजी नगरके पास आये सो सब सुन्दर चरित्र कागभुशुंडिने कहे ॥ ५ ॥ फिर रामचन्द्रजीका राजतिलक, नगरका वर्णन और अनेक राजनीति कहीं ॥ ६ ॥

कथा समस्त भुसुंडि बखानी ❀ जो मैं तुमसन कहा भवानी ॥ ७ ॥
सुनि सुभ रामकथा खगनाहा ❀ बिगतमोह मन परम उछाहा ॥ ८ ॥

हे पार्वती ! जो कागभुशुंडिने सब कथा कहीथी सो मैने तुम्हें कह सुनाई ॥ ७ ॥ रामचन्द्रजीकी इस शुभ कथाको सुनकर गरुडजीका अज्ञान जाता रहा और मनमें बड़ा आनन्द हुआ (फिर गरुड़जी बोले) ॥ ८ ॥

सो०–गयउ मोर संदेह, सुनेउँ सकल रघुपतिचरित ॥ ❀
भयउ रामपदनेह, तव प्रसाद वायसतिलक ॥ २ ॥ ❀

हे कागशिरोमणि ! रामचन्द्रजीके चरित्र सुनतेही मेरा सब सन्देह जाता रहा और आपकी दयासे रामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रेम हुआ ॥ २ ॥

मोहिं भयउ अति मोह, प्रभुबंधन रनमहँ निरखि ॥ ❀
चिदानंदसंदोह, राम बिकल कारन कवन ॥ ३ ॥ ❀

भगवान्‌को लड़ाईमें बँधा हुआ देखकर मुझे बड़ा मोह हुआ था कि राम तौ पूर्ण सच्चिदानन्द हैं उनके व्याकुल होनेका क्या कारण है ? ॥ ३ ॥

चौ०–देखि चरित अति नरअनुसारी ❀ भयउ हृदय मम संसय भारी ॥ १ ॥
सो भ्रम अब मैं हित करि माना ❀ कीन्ह अनुग्रह कृपानिधाना ॥ २ ॥

और मनुष्यके समान बहुतसे चरित्र देखकर मेरे हृदयमें बड़ा सन्देह हुआ था ॥ १ ॥ पर वह भ्रम अब मैंने हित करके माना अर्थात् अच्छा हुआ जो मुझे ऐसा भ्रम हुआ, इसी बहाने दयासागर (भगवान्) ने अनुग्रह किया ॥ २ ॥

जो अतिआतपव्याकुल होई ❀ तरुछायासुख जानै सोई ॥ ३ ॥
जो नहिं होत मोह अति मोहीं ❀ मिलतेउँ तात कवनि बिध तोहीं ॥ ४ ॥

जो बहुत धूपसे व्याकुल होता है वही वृक्षकी छायाके सुखको जानता है ॥ ३ ॥ हे प्यारे ! जो मुझे महामोह नहीं होता तौ तुमसे किस प्रकार मिलता ? ॥ ४ ॥

सुनतेउँ किमि हरिकथा सुहाई ❀ अतिविचित्र बहुविध तुम गाई ॥ ५ ॥
निगमागमपुरानमत एहा ❀ कहहिं सिद्ध मुनि नहिं संदेहा ॥ ६ ॥

और भगवान्‌की परम विचित्र और सुहावनी कथा कैसे सुनता ? जिसे तुमने अनेक प्रकारसे कहा ॥ ५ ॥ वेद, शास्त्र और पुराणोंकी यह सम्मति है और सिद्ध और मुनीश्वरभी कहते हैं इसमें संदेह नहीं कि ॥ ६ ॥

संत बिसुद्ध मिलहिं पुनि तेही ❀ चितवहिं राम कृपा करि जेही ॥ ७ ॥
रामकृपा तव दर्शन भयऊ ❀ तव प्रसाद मम संसय गयऊ ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजी जिसे दया करके देखैं फिर उसे अच्छे संत मिलते हैं ॥ ७ ॥ सो रामचन्द्रजीकी दयासे तुम्हारा दर्शन हुआ और तुम्हारे प्रसादसे मेरा सन्देह जाता रहा ॥ ८ ॥

दो०–सुनि विहंगपति बानी, सहित बिनय अनुराग ॥ ❀
पुलकगात लोचन सजल, मन हर्षेउ अति काग ॥ ९५ ॥ ❀

नम्रता और प्रीतियुक्त गरुड़की वाणी सुनकर कागभुशुंडि शरीरमें पुलकायमान हो गये, नेत्रोंमें जल भर आया और मनमें बड़े प्रसन्न हुये ॥ ९५ ॥

स्रोता सुमति सुसील अति, कथा रसिक हरिदास ॥
पाइ उमा यह गोप्य मत, सज्जन करहिं प्रकास ॥ ९६ ॥

(महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! जब सुशील, सुन्दर बुद्धिवाले पवित्र कथाके रसिक और हरिभक्त श्रोताको पाते हैं तब सज्जन पुरुष इस गुप्त मतकोभी प्रकाशित कर देते हैं ॥ ९६ ॥

चौ०-बोलेउ कागभुसुंडि बहोरी ❀ नभगनाथपर प्रीति न थोरी ॥ १ ॥
सबबिध नाथ पूज्य तुम मेरे ❀ कृपापात्र रघुनायककेरे ॥ २ ॥

फिर गरुड़जीपर बड़ी प्रीति होनेके कारण कागभुशुंडि बोले कि ॥ १ ॥ हे स्वामी ! तुम सब प्रकार मेरे पूज्य हो और रामचन्द्रजीकी कृपाके पात्र हो ॥ २ ॥

तुमहि न संसय मोह न माया ❀ मोपर नाथ कीन्ह तुम दाया ॥ ३ ॥
पठै मोहमिसु खगपति तोहीं ❀ रघुपति दीन्ह बडाई मोहीं ॥ ४ ॥

हे स्वामी ! तुमको न संशय है, न मोह है, न माया है; तुमने तौ मुझपर दया की है ॥ ३ ॥ हे गरुड़ ! रामचन्द्रजीने अज्ञानके बहानेसे तुमको भेजकर मुझे बड़ाई दी है ॥ ४ ॥

तुम निजमोह कहा खगसाँई ❀ सो नहिं कछु आश्चर्य गुसाँई ॥ ५ ॥
नारद सिव बिरंचि सनकादी ❀ जे मुनिनायक आतमवादी ॥ ६ ॥

हे गरुड़ ! तुमने अपना मोह कहा सोहे गोसाँई ! कुछ अचंभा नहीं है ॥ ५ ॥ नारद, शिव, ब्रह्मा और सनकादिक ऋषीश्वर जो आत्मज्ञानी हैं ॥ ६ ॥

मोह न अंध कीन्ह केहि केही ❀ को जन काम नचाव न जेही ॥ ७ ॥
तृष्णा केहि न कीन्ह बौराहा ❀ केहिके हृदय क्रोध नहिं दाहा ॥ ८ ॥

(उनमेंसे) मोहने किस २ को अंधा नहीं किया, और संसारमें ऐसा कौन है जिसे कामदेवने नहीं नचाया हो ? ॥७॥ तृष्णाने किसे बावला नहीं किया ? और क्रोधने किसके हृदयमें दाह नहीं किया ॥८॥

दो०-ज्ञानी तापस सूर कबि, कोबिद गुनआगार ॥
केहिके लोभ विडंबना, कीन्ह न यहि संसार ॥ ९७ ॥

और इस संसारमें ऐसा कौनसा ज्ञानी, तपस्वी, योद्धा, कवि, पंडित और गुणी है जिसकी लोभने ख्वारी न की हो ? ॥ ९७ ॥

स्रीमद बक्रन कीन्ह केहि, प्रभुता बधिर न काहि ॥
मृगनयनीके नयनसर, को अस लागु न जाहि ॥ ९८ ॥

लक्ष्मीके मदने किसको टेढ़ा नहीं किया ? प्रभुताने किसको बहिरा नहीं किया ? और ऐसा कौन है जिसके मृगनयनीके नेत्ररूपी बाण नहीं लगे हों ॥ ९८ ॥

चौ०-गुनकृत सन्निपात नहिं केही ❀ को न मान मद व्यापेहु जेही ॥ १ ॥
यौबनज्वर केहि नहिं बहँकावा ❀ ममता केहिकर जस न नसावा ॥ २ ॥

गुणोंका किया हुआ सन्निपात किसको नहीं होता ? और ऐसा कौन है जिसे मान मद नहीं व्यापा हो ? ॥१॥ यौवनरूपी ज्वरने किसे बावला नहीं किया ? और ममताने किसके यशका नाश नहीं किया ?

मत्सर काहि कलंक न लावा ❀ काहि न सोकसमीर डोलावा ॥ ३ ॥
चिंता साँपिनि काहि न खाया ❀ को जग जाहि न व्यापी माया ॥ ४ ॥

ईर्षाने किसे कलंक नहीं लगाया? और शोकरूपी पवनने किसे नहीं हिलाया? ॥ ३ ॥ चितारूपी साँपिनने किसे नहीं डसा, और संसारमें ऐसा कौन है जिसे माया न व्यापी हो? ॥ ४ ॥

कीट मनोरथ दारु सरीरा ❀ जेहि न लागु घुनको अस धीरा ॥ ५ ॥
सुत बित नारि ईषना तीनी ❀ केहिकी मति इन्ह कृत न मलीनी ॥ ६ ॥

शरीररूपी लकड़ींमें मनोरथरूपी घुन जिसके न लगा ऐसा कौनसा मतिधीरहै? ॥ ५ ॥ पुत्र, धन और स्त्री ये तीन प्रकारकी (संसारमें) ईषणा कहिये इच्छा हैं सो इन्होंने किसकी बुद्धि मलीन नहीं की? अर्थात् सबके मनमें इन तीनोंके पानेकी रात दिन लगी रहती है और पानेपरभी मन नहीं भरता ॥ ६ ॥

यह सब मायाकर परिवारा ❀ प्रबल अमित को बरनै पारा ॥ ७ ॥
सिव चतुरानन देखि डराहीं ❀ अपरजीव केहि लेखेमाहीं ॥ ८ ॥

यह सब मायाका परिवार बड़ा भारी प्रबल है, (इसका) कौन वर्णन कर पार पासक्ता है? ॥ ७ ॥ महादेव और ब्रह्माजीभी देखकर डरते हैं, फिर और जीव किस लेखेमें है? ॥ ८ ॥

दो०–व्यापि रहेउ संसारमहँ, मायाकटक प्रचंड ॥ ❀
सेनापति कामादि भट, दंभ कपट पाषंड ॥ ९९ ॥ ❀

संसारमें मायाकी प्रचंड सेना व्याप्त होरही है जिसमें काम, क्रोध, लोभ तौ सेनापति हैं और दंभकपट पाखंड योद्धा हैं ॥ ९९ ॥

सो दासी रघुबीरकी, समुझै मिथ्या सोऽपि ॥ ❀
छुटै न रामकृपा बिन, नाथ कहौं पद रोपि ॥ १०० ॥ ❀

यह माया रामचन्द्रजीकी दासी है और समझनेसे वहभी मिथ्या है, सो हे स्वामी! पदरोप अर्थात् हठ करके करताहूं कि वह रामचन्द्रजीकी दयाके बिना नहीं छूटति ॥ १०० ॥

चौ०–सो माया सब जगहिं नचावा ❀ जासु चरित लखि काहु न पावा ॥ १ ॥
सोइ प्रभु भ्रूबिलास खगराजा ❀ नाच नटी इव सहित समाजा ॥ २ ॥

उस मायाने सब संसारको नचा रक्खा है और उसका चरित्र किसीने नहीं देख पाया है? ॥१॥ हे गरुड़जी! वही माया भगवान्के भृकुटी फेरनेसे समाजसमेत नटीकी भांति नाचति है ॥ २ ॥

---

(१) जो वस्तु होय नहीं और भासमान हो उसीको माया जानो, जैसे संसार झूठा है और सत्य प्रतीत होता है अँधेरेमें रस्सीसे सर्पका भ्रम होता है, परंतु जब पास जाकर और उठाकर देख लो तब समझनेसे मिथ्या ठहरता है.

जैसा गीतामें भगवानने कहा है. यथा–

"दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया। मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते ॥"

अर्थात् तीन गुण जो राजस, तामस और सात्विक हैं इनकरके युक्त जो मेरी माया है वह बडी कठिन है इसलिये जो मेरी शरण आते हैं वेही इस मायासे पार होते हैं ॥

अध्यात्मरामायणमेंभी रामजीने लक्ष्मणजीसे कहा है. यथा–

"भ्रातर्यदीयं परिदृश्यते जगत् मायैव सर्वं परिहृत्य चेतसा।
मद्भावनाभावितशुद्धमानसः सुखी भवानन्दमयो निरामयः ॥"

अर्थात्–हे भाई! यह सब जगत् जो दिखाई देता है सो मायाही है. इसे चित्तसे त्यागकर मेरी भावना अर्थात् ध्यानसे अंतःकरणको शुद्धकरके सब दुःखरहित, सुखी और परमानन्दस्वरूप होजाओ.

व्यापक ब्रह्म अखंड अनंता ❀ अखिल अमोघ एक भगवंता ॥ ३ ॥
सोइ सच्चिदानंद घनस्यामा ❀ अज विज्ञानरूप गुनधामा ॥ ४ ॥

और भगवान् सर्वव्यापक, ब्रह्म, खंडरहित, अनंत, और सर्वत्र सफलरूप, है ॥ ३ ॥ वेही सच्चिदानन्दघन, मेघवत् श्याम सुन्दर, जन्मरहित विशेष ज्ञानस्वरूप, और गुणोंके स्थान हैं ॥ ४ ॥

अगुन अदंभ गिरागोतीता ❀ समदर्सी अनवद्य अजीता ॥ ५ ॥
निर्गुन निराकार निर्मोहा ❀ नित्य निरंजन सुखसंदोहा ॥ ६ ॥

पुनि गुणोंसे परे, पाखंडरहित, वाणी और इन्द्रियोंसे परे, समदर्शी, दूषणरहित, अजय ॥ ५ ॥ निर्गुण, निराकार, मोहरहित, नित्य, मायारहित और सुखके स्थान हैं ॥ ६ ॥

प्रकृतिपार प्रभु सबउरबासी ❀ ब्रह्म निरीह बिरज अबिनासी ॥ ७ ॥
इहाँ मोहकर कारन नाहीं ❀ रबिसंमुख तम कबहुँ कि जाहीं ॥ ८ ॥

और प्रकृतिसे परे ऐसे भगवान् सबके हृदयमें निवास करनेवाले ब्रह्म, चेष्टारहित, परब्रह्म और नाशरहित हैं ॥ ७ ॥ यहां अर्थात् भगवान्में मोहका कारण नहीं है क्योंकि सूर्यके सामने क्या कभी अंधकार जासक्ता है ? ॥ ८ ॥

दो०–भक्तहेतु भगवान प्रभु, राम धरेउ तनु भूप ॥
किये चरित पावन परम, प्राकृतनरअनुरूप ॥ १०१ ॥

भगवान् रामचन्द्र स्वामीने भक्तोंके लिये राजाका शरीर धारण किया और संसारी मनुष्योंके समान परमपवित्र चरित्र किये ॥ १०१ ॥

यथा अनेकन वेष धरि, नृत्य करै नट कोइ ॥
जोइ जोइ भाव दिखावै, व्यापु न सोइ न होइ ॥ १०२ ॥

और जैसे कोई नट अनेक वेष धारण करके नाचता है और जो २ स्वांग दिखाता है उनमें न तौ आप व्याप्त होता है न (वह स्वांग यथार्थमें) सत्य होता है ॥ १०२ ॥

चौ०–अस रघुपतिलीला उरगारी ❀ दनुजविमोहन जनसुखकारी ॥ १ ॥
जे मतिमलिन विषयवस कामी ❀ प्रभुपर मोह धरहिं इमि स्वामी ॥ २ ॥

ऐसेही हे गरुड़जी ! रामचन्द्रजीकी ऐसी लीला दैत्योंको मोहित करनेवाली और भक्तोंको सुख देनेवाली है ॥ १ ॥ हे स्वामी ! जो मंदबुद्धि विषयोंके वश कामी हैं वे इसभांति भगवान् पर दोष रखते हैं ॥ २ ॥

---

(१) "यतो वाचो निवर्तंते अप्राप्य मनसा सह" इति श्रुतेः ।

(२) जैसा गीतामें भगवान्ने अर्जुनसे कहा है–

"यच्चापि सर्वभूतानां बीजं तदहमर्जुन । न तदस्ति विना यत्स्यान्मया भूतं चराचरम् ॥"

अर्थात् हे अर्जुन- चराचर मेरे विना होय सो नहीं है ऐसा जानो. क्योंकि मैं सबका अंतर्यामी हूं ॥

(३) गीतायां–"परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् । धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगेयुगे ॥"

अर्थात्–अपने साधुभक्तोंकी रक्षाके लिये, दुष्टोंके नाशके लिये, और धर्मके स्थापनके लिये युग २ में अवतार लेता हूं.

(४) इस दोहेका भाव यह है कि जैसे नट खाने कमानेके लिये अनेक स्वांग रचता है इसी प्रकार परमात्माने अवतार लेकर जो भूपशरीर धारण किया और प्राकृत मनुष्यवत् अनेक चरित्र किये सो केवल राक्षसादि मारनेके और धर्मस्थापनके लिये किये, उन स्वाँगोंमें न तौ यथार्थमें आप व्याप्त हुआ और न वह स्वाँग सत्य थे- जैसे नट अपना वेष उतारतेही अपने वास्तविक रूपमें आजाता है इसी प्रकार रामजीके विषयमें जानो ॥

नयनदोष जाकहँ जब होई ❀ पीत बरन ससिकहँ कह सोई ॥ ३ ॥
जब जेहिं दिसिभ्रम होइ खगेसा ❀ सो कह पच्छिम उगेउ दिनेसा ॥ ४ ॥

सो जब जिसको कमलवाय अर्थात् पीलिया हो जाता है तब वह चन्द्रमाको पीले रंगका कहने लगता है ॥ ३ ॥ और हे गरुडजी ! जब जिसको दिशाओंका भ्रम होता है वह कहता है कि पश्चिममें सूर्य उदय हुआ ॥ ४ ॥

नौकारूढ़ चलत जग देखा ❀ अचल मोहबस आपुहिं लेखा ॥ ५ ॥
बालक भ्रमहिं न भ्रमहिं गृहादी ❀ कहहिं परस्पर मिथ्यावादी ॥ ६ ॥

और जो नावमें बैठा है उसको संसार चलता दिखाई देता है और अज्ञानके वश अपनेको अचल देखता है ॥ ५ ॥ अथवा जैसे बालक आप तौ घूमते हैं और घरआदि जो नहीं घूमते उनको घूमता हुआ कहते हैं, इसी प्रकार जो मिथ्यावादी हैं, अर्थात् जिनको मिथ्या अज्ञानने घेर रक्खा है, वे आपसमें रामजीको (प्राकृत मनुष्य) कहते हैं ॥ ६ ॥

हरिविषयक अस मोह विहंगा ❀ स्वपनेहु नहिं अज्ञानप्रसंगा ॥ ७ ॥
मायाबस मतिमंद अभागी ❀ हृदय जवनिका बहुविध लागी ॥ ८ ॥
ते सठ हठबस संसय करहीं ❀ निजअज्ञान रामपर धरहीं ॥ ९ ॥

हे गरुड़जी ! भगवान्के विषयमें ऐसा अज्ञानका प्रसंग मुझे स्वप्नमेंभी नहीं ॥ ७ ॥ जो अभागे और मतिमन्द हैं उनके हृदयमें मायाके वश अनेक प्रकारका पर्दा पड़ा हुआ है, अर्थात् (भगवान्को मनुष्यरूपही जानते हैं) ॥ ८ ॥ वे मूर्ख हठकेवश सन्देह करते हैं और अपना अज्ञान रामचन्द्रजीपर रखतें हैं ॥ ९ ॥

दो०-कामक्रोधमदलोभरत, गृहासक्त दुखरूप ॥ ❀
ते किमि जानहिं रघुपतिहिं, मूढ़ परे तमकूप ॥ १०३ ॥ ❀

जो काम, क्रोध, मद लोभमें तत्पर हैं और दुःखरूप घरमें आसक्त हैं वे मूढ़ रामचन्द्रजीको कैसे जान सक्ते हैं ? वे मूर्ख तौ आपही अज्ञानरूपी अंधे कुएमें पड़े हैं ॥ १०३ ॥

निर्गुनरूप सुलभ अति, सगुन न जानै कोइ ॥ ❀
सुगम अगम नानाचरित, सुनि मुनिमन भ्रम होइ ॥ १०४ ॥ ❀

निर्गुणरूप तौ बहुत सुगम है (क्योंकि सदा एकसा रहता है) और सगुणको कोई नहीं जानता क्योंकी उसके सुगम और अगम अनेक चरित्र हैं, जिनको सुनकर मुनीश्वरोंके मनमेंभी भ्रम होजाता है ॥ १०४ ॥

चौ०-सुनु खगपति रघुपतिप्रभुताई ❀ कहूँ जथामति कथा सुहाई ॥ १ ॥
जेहिविध मोह भयउ प्रभु मोही ❀ सो सब चरित सुनावो तोहीं ॥ २ ॥

हे गरुड़जी ! रामचन्द्रजीकी प्रभुता सुनो, मैं अपनी बुद्धिके अनुसार सुन्दर कथा कहता हूं ॥ १ ॥ हे स्वामी ! जिस प्रकार मुझे मोह हुआ सो सब चरित्र तुमको सुनाता हूं ॥ २ ॥

---

(१) गीतायां-
"अवजानन्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितम् । परं भावमजानंतो मम भूतमहेश्वरम् ॥"
अर्थात्-मूर्ख लोग मुझे मनुष्य शरीरमें स्थित देख मेरी अवज्ञा करते हैं, और मैं ईश्वरोंकाभी ईश्वर हूं इस मेरे परमभावको नहीं जानते है ॥

रामकृपाभाजन तुम ताता ❀ हरिगुनप्रीति मोहिं सुखदाता ॥ ३ ॥
ताते नहिं कछु तुमहि दुरावौं ❀ परमरहस्य मनोहर गावौं ॥ ४ ॥

हे प्यारे ! तुम रामचन्द्रजीकी कृपाके पात्र, भगवान्‌के गुणोंमें प्रीति करनेवाले और मुझे सुखदायक हो ॥३॥ इसलिये मैं तुमसे कुछ नहीं छिपाता हूं और अत्यंत सुन्दर गुप्त कथा कहता हूं ॥४॥

सुनहु रामकर सहजसुभाऊ ❀ जनअभिमान न राखहिं काऊ ॥ ५ ॥
संसृतिमूल सूलप्रद नाना ❀ सकल सोकदायक अभिमाना ॥ ६ ॥

सुनो, रामचन्द्रजीका सहज स्वभाव है कि वे कभी किसी जनसे अभिमान नहीं रखते ॥ ५ ॥ क्योंकि यह अभिमानही जन्ममरणका मूल कारण है और नाना प्रकारके दुःख तथा संपूर्ण शोकोंका देनेवाला है ॥ ६ ॥

ताते करहिं कृपानिधि दूरी ❀ सेवकपर ममता अति भूरी ॥ ७ ॥
जिमि सिसुतनु ब्रण होइ गुसाँई ❀ मातु चिराव कठिनकी नाँई ॥ ८ ॥

इससे कृपानिधान उसे दूर करते हैं, क्योंकि वे दासपर बहुत प्रीति विशेष करते हैं ॥ ७ ॥ हे गोसाँई ! जैसे बालकके शरीरमें फोड़ा हो तौ उसे माता बहुत कठोर बनकर चिरवाती है ॥ ८ ॥

दो०–जदपि प्रथम दुख पावै, रोवै बाल अधीर ॥ ❀
व्याधिनासहित जननी, गनइ न सो सिसुपीर ॥ १०५ ॥ ❀

और जैसे बालक पहले दुख पाता और अधीर होकर रोता है परंतु माता उसका कष्ट नाश होनेके लिये उस बालकके दुखको नहीं गिनती ॥ १०५ ॥

तिमि रघुपति निजदासकर, हरहिं मान हित लागि ॥ ❀
तुलसिदास ऐसे प्रभुहिं, कस न भजसि भ्रम त्यागि ॥१०६॥ ❀

तैसेही रामचन्द्रजी अपने भक्तोंके अभिमानको हितके लिये हरते हैं सो ऐसे भगवान्‌को सन्देह छोड़कर क्यों न भजो ? ॥ १०६ ॥

चौ०–रामकृपा आपनि जडताई ❀ कहौं खगेश सुनहु मन लाई ॥ १ ॥
जब जब राम मनुजतनु धरहीं ❀ भक्तहेतु लीला बहु करहीं ॥ २ ॥

हे गरुड़ ! रामचन्द्रजीकी दया और अपनी मूर्खता कहताहूँ, तुम मन लगाकर सुनो ॥ १ ॥ जब २ रामचन्द्रजी मनुष्यका शरीर धारण करैं और भक्तोंके कारण बहुतसी लीला करैं ॥ २ ॥

तब तब अवधपुरी मैं जाऊँ ❀ बालचरित विलोकि हर्षाऊँ ॥ ३ ॥
जन्ममहोत्सव देखौं जाई ❀ वर्ष पांच तहँ रहौं लुभाई ॥ ४ ॥

तब २ मैं अयोध्यापुरीमें जाकर उनके बालचरित्रोंको देखकर प्रसन्न होऊँ ॥ ३ ॥ (भगवान्‌के) जन्मदिनका बड़ा उत्सव जाकर देखूं और पांच वर्षतक लुभाकर रहूं ॥ ४ ॥

इष्टदेव मम बालक रामा ❀ सोभावपुष कोटिसतकामा ॥ ५ ॥
निजप्रभुवदन निहारि निहारी ❀ लोचन सफल करौं उरगारी ॥ ६ ॥
लघु वायसबपु धरि हरिसंगा ❀ देखौं बालचरित बहुरंगा ॥ ७ ॥

बालस्वरूप रामचन्द्रजी मेरे इष्टदेव हैं, जिनके शरीरकी शोभा सौ करोड़ कामदेवोंके समान है ॥ ५ ॥ हे गरुड़ ! अपने स्वामीके मुखको देखकर नेत्रोंको सफल करता रहूं ॥ ६ ॥ छोटे कौएका शरीर धारण कर भगवान्‌के साथमें बहुत रंगके बालचरित्र देखता रहूं ॥ ७ ॥

दो०-लरिकांई जहँ जहँ फिरहिं, तहँ तहँ संग उड़ाउँ ॥
जूठन परै अजिरमहँ, सो उठाइ पुनि खाउँ ॥ १०७ ॥

बालक (रामचन्द्र) जहाँ २ डोलें फिरें तहां २ ही मैं साथ उड़ता फिरूँ और जो झूंठन आँगनमें गिरें उसे उठाकर खाजाऊँ ॥ १०७ ॥

एकबार अतिसैसव, चरित किए रघुवीर ॥
सुमिरत प्रभुलीला सोई, पुलकित भयउ शरीर ॥ १०८ ॥

एक बार रघुनाथजीने बहुत बालचरित्र किये सो भगवान्की उस लीलाको सरण करतेही शरीर पुलकायमान होगया ॥ १०८ ॥

चौ०-कहै भुसुंडि सुनहु खगनायक ❀ रामचरित सेवकसुखदायक ॥ १ ॥
नृपमंदिर सुंदर सबभांति ❀ खचित कनकमनि नानाजाती ॥ २ ॥

कागभुशुंडि कहते हैं, हे गरुडजी ! सुनो, रामचन्द्रजीके चरित्र सेवकोंको सुख देनेवाले हैं॥१॥ राजाका महल सबप्रकारसे सुन्दर था, जिसमें अनेक जातिकी मणियां सुवर्णमें जड़ी हुई थीं ॥ २ ॥

बरनि न जाइ रुचिर अँगनाई ❀ जहँ खेलहिं नित चारिउ भाई ॥ ३ ॥
बालविनोद करत रघुराई ❀ बिचरत अजिर जननिसुखदाई ॥ ४ ॥

अँगनाई ऐसी सुन्दर कि वर्णन नहीं किया जाता, जहां चारों भाई नित्य क्रीड़ा करते थे ॥ ३ ॥ माताको सुखदाई रघुराई बाललीला करते हुये आँगनमें खेलते थे ॥ ४ ॥

मरकतमृदुल कलेवर स्यामा ❀ अंगअंगप्रति छबि बहुकामा ॥ ५ ॥
नवराजीवअरुनमृदु चरना ❀ पदपंकजनख ससिदुतिहरना ॥ ६ ॥

मरकत (मणि)के समान उनका साँवला और कोमल शरीर था और अंग २ में अनेक कामदेवोंकी छबि छारही थी ॥ ५ ॥ नवीन कमलके समान लाल २ कोमल चरण थे और कमलसमान चरणोंके नख चन्द्रमाकी कांतिके हरनेवाले थे, अर्थात् चन्द्रमासेभी उज्वल थे ॥ ६ ॥

ललित अंक कुलिसादिक चारी ❀ नूपुर चारु मधुररवकारी ॥ ७ ॥
चारु पुरटमनि रचित बनाई ❀ कटि किंकिनि कल मुखर सुहाई ॥ ८ ॥

चरणोंमें सुन्दर वज्र[2] अंकुश[3] कमल[4] और ध्वजाके[5] चारों चिह्न शोभायमान थे और मधुर २ शब्द करनेवाले उज्ज्वल झाँझन पडेथे ॥ ७ ॥ कमरमें सुवर्णकी मणिजटित सुन्दर बजनी तागडी शोभायमान थी ॥ ८ ॥

दो०-रेखात्रय सुंदर उदर, नाभि रुचिर गंभीर ॥
उर आयत भ्राजत बिबिध, बालबिभूषन चीर ॥ १०९ ॥

---

(१) भाव यह हुआ कि जो मनुष्य अपने हृदयमें रामजीके चरणोंका ध्यान करते हैं उनके हृदयका मोहान्धकार नाश होजाता है और हृदय शीतल पड़जाता है ॥

(२) वज्रके चिह्नसे यह लक्ष्य होता है कि जैसे वज्रके प्रहारसे बडे २ पर्वतोंका चूर्ण होजाता है ऐसेही भक्तजनोंके बडे २ पाप नाश होजाते हैं. (३) अंकुशके चिह्नसे यह लक्ष्य होता है कि जो रामजीके चरणका ध्यान करते हैं उनका मनरूपी मदांध हाथी वशमें होजाता है कि जिसका वश करना ब्रह्मादिकोंकोभी कठिन है. (४) कमलके चिह्नसे यह लक्ष्य होता है कि जैसे भ्रमर सब पुष्पोंपर घूमता है और रस पीता है पर निश्चल होकर कमलपरही बैठता है; इसी प्रकार जो रामजीके चरणकमलोंका ध्यान करेंगे उनका मन अन्यदेवताओंमें भटक २ कर रामजीके चरणोंमें स्थिर हो जायगा तौवे मुक्ति पावेंगे ॥ (५) ध्वजासे यह भाव है कि जो भक्त चरणोंका सरण करेंगे उनकी कीर्ति ऐसी सर्वोपरि होगी जैसी ध्वजा ऊँची फहराती है ॥

उदरपर सुन्दर तीन[1] रेखा थीं और सुन्दर गंभीर नाभि और चौडी छाती थी और उस छातीपर बालकोंके भांति २ के आभूषण शोभायमान थे ॥ १०९ ॥

चौ०-अरुन पानि नख करज मनोहर ❀ बाहु बिसाल बिभूषन सोहर ॥ १ ॥
कंध बालकेहरि दरग्रीवा ❀ चारु चिबुक आनन छबिसीवा ॥ २ ॥

लाल २ हाथ, सुन्दर उँगली और नख थे और बडी २ भुजाओंमें आभूषण शोभायमान थे ॥१॥ बालसिंहके समान कंधे, शंखसा कंठ, उज्ज्वल ठोडी और शोभाकी सीमा मुख था ॥ २ ॥

कलबल बचन अधर अरुनारे ❀ दुइ दुइ दसन बिसद बर बारे ॥ ३ ॥
ललित कपोल मनोहर नासा ❀ कमलसुखद शसिकरसम हासा ॥ ४ ॥

तोतले बचन, लाल २ होंठ और सुन्दर तथा श्वेत छोटे २ दो दो दाँत थे ॥ ३ ॥ सुन्दर २ गाल, मनोहर नाक और सबको सुख देनेवाली चन्द्रमाकी किरणोंके समान हँसी थी ॥ ४ ॥

नीलकंजलोचन भयमोचन ❀ भ्राजत भाल तिलक गोरोचन ॥ ५ ॥
बिकट भृकुटि सम स्रवन सुहाए ❀ कुंचित कच मेचकछबिछाए ॥ ६ ॥

नील कमलके समान भयमोचन नेत्र थे और माथेमे गोरोचनका तिलक शोभायमान था ॥५॥ टेंढी भौंहैं कानोंतक शोभायमान थी और घूंघरवाले काले २ बालोंकी छबि छारही थी ॥ ६ ॥

पीत झीन झँगुली तनु सोहीं ❀ किलकनि चितवनि भावति मोही ॥ ७ ॥
रूपरासि नृपअजिरबिहारी ❀ नाचहिं निजप्रतिबिंब निहारी ॥ ८ ॥

[2]पीली और पतली झँगुलियां शरीरमें पहिर रहे थे और उनकी किलकनि और चितवनि मुझे बडी प्यारी लगती थी ॥ ७ ॥ रूपके राशि बालस्वरूप राजा (दशरथ) के आँगनमें खेलते हुये अपनी परछांईको देख २ कर नाचने लगते थे ॥ ८ ॥

मोहिंसन करहिं बिबिधबिध क्रीडा ❀ बरनत चरित होति मन ब्रीडा ॥ ९ ॥
किलकत मोहिं धरन जब धावहिं ❀ चलौं भाजि तब पूप दिखावहिं ॥ १० ॥

और मुझसे अनेक भांतिके ऐसे २ खेल करते थे जिन चरित्रोंके वर्णन करनेसे मनमें लज्जा होती है ॥ ९ ॥ जब किलकारकर मुझे पकड़नेको दौड़ें और मैं भाग जाऊँ तब मुझे पूआ दिखाते थे ॥ १० ॥

दो०-आवत निकट हँसहिं प्रभु, भाजत रुदन कराहिं ॥ ❀
जाउँ समीप गहन पद, फिरि फिरि चितै पराहिं ॥ ११० ॥ ❀

भगवान् मेरे पास आनेसे हँसते थे और उड़जानेसे रोने लगते थे, और जब मैं चरन छूनेके लिये पास जाऊँ तौ फिर २ के देखते हुये भाग जाते थे ॥ ११० ॥

प्राकृतसिसु इव लीला, देखि भयउ मोहिं मोह ॥ ❀
कवन चरित्र करत प्रभु, चिदानन्दसंदोह ॥ १११ ॥ ❀

संसारी बालकोंके समान लीलाको देखकर मुझे मोह हुआ कि भगवान् सच्चिदानंद होकर क्या चरित्र करते हैं ? ॥ १११ ॥

चौ०-इतना मन आनत खगराया ❀ रघुपतिप्रेरित व्यापी माया ॥ १ ॥
सो माया न दुखद मोहिंकाहीं ❀ आन जीवइव संसृति नाहीं ॥ २ ॥

---

(१) इससे यह लक्ष्य हुआ कि रघुनाथजीके उदरमें तीनों लोक बसते हैं ॥ (२) यहां ऐसी उपमा है कि जैसे श्याममेघपर बिजली स्थिरताको प्राप्त हो ॥

हे गरुड़! मनमें इतना विचारतेही रामचन्द्रजीकी प्रेरित माया व्याप्त होगई ॥१॥ परन्तु वह माया मुझे कुछ दुखदायक नहीं हुई और न अन्य जीवोंकी भाँति उसने मुझे संसार (चक्र) में डाला ॥ २ ॥

नाथ इहाँ कछु कारन आना ❀ सुनहु सो सावधान हरियाना ॥ ३ ॥
ज्ञान अखंड एक सीतावर ❀ मायाबस्य जीव सचराचर ॥ ४ ॥

हे स्वामी गरुड़जी ! यहाँ कुछ औरही कारण है सो उसे सावधान होकर सुनो ॥ ३ ॥ सीतापति (रामचन्द्र) तौ केवल अखंडज्ञानस्वरूप हैं और सब चराचर जीव मायाके वशमें हैं ॥ ४ ॥

जो सबके रह ज्ञान एक रस ❀ ईश्वर जीवहिं भेद कहहु कस ॥ ५ ॥
मायाबस्य जीव अभिमानी ❀ ईसबस्य माया गुणखानी ॥ ६ ॥

जो सबका ज्ञान एकरस रहै तौ फिर ईश्वर और जीवमें क्या भेद है? ॥ ५ ॥ अभिमानी जीव मायाके वशमें है और माया गुणोंकी खान ईश्वरके वशमें है ॥ ६ ॥

परबस जीव स्वबस भगवंता ❀ जीव अनेक एक स्रीकंता ॥ ७ ॥
द्विविध भेद जद्यपि कृत माया ❀ बिनु हरि जाइँ न कोटि उपाया ॥ ८ ॥

जीव परवश हैं और ईश्वर स्ववश है· जीव अनेक हैं और ईश्वर एक है ॥ ७ ॥ यद्यपि मायाके किये हुये (जीव ईश्वर) दो प्रकारके भेद हैं (परन्तु) बिना भगवान्‌की दयाके करोड़ों उपायोंसेभी नहीं मिटसक्ते ॥ ८ ॥

दो०-रामचन्द्रके भजन बिनु, जो चह पद निर्बान ॥ ❀
ज्ञानवंत अति सोपि नर, पसु बिनु पूँछ बिषाण ॥ ११२ ॥ ❀

मनुष्य चाहै जैसा अधिक ज्ञानी हो परंतु जो रामचन्द्रजीके भजनबिना निर्वाणपद चाहै तौ वह बिना पूँछ और सींगका पशु है ॥ ११२ ॥

राकापति षोड़स उगहिं, तारागनसमुदाय ॥ ❀
सकल गिरिन्ह दव लाइय, रबिबिनु राति न जाय ॥ ११३ ॥ ❀

चाहे चन्द्रमा सोलहों कलाओंसे उदय होजाय, सब तारागण छिटकैं और सब पर्वतोंमें भलेही आग लगा दी जाय पर जैसे सूर्यके बिना रात नहीं जाती ॥ ११३ ॥

चौ०-ऐसे बिनु हरिभजन खगेसा ❀ मिटै न जीवनकेर कलेशा ॥ १ ॥
हरिसेवकहिं न व्याप अविद्या ❀ प्रभुप्रेरित तेहि व्यापै विद्या ॥ २ ॥

ऐसेही हे गुरुड़जी! भगवान्‌के भजन बिना जीवोंका क्लेश नहीं मिटता ॥ १ ॥ भगवान्‌के सेवकको अविद्या(१) नहीं व्यापती किंतु प्रभुकी भेजी हुई उसे विद्या व्यापती है ॥ २ ॥

ताते नास न होइ दासकर ❀ भेद भक्ति बाढ़ैं बिहंगवर ॥ ३ ॥
भ्रमते चकित राम मोहिं देखा ❀ बिहँसे सो सुनु चरित बिसेखा ॥ ४ ॥

इसलिये सेवकका नाश नहीं होता बरन् हे गरुड़! भेद भक्तिकी वृद्धि होती है ॥ ३ ॥ रामचन्द्रजीने भ्रमसे चकित होकर मुझे देखा तौ हँसे सो उस विशेष चरित्रको सुनो ॥ ४ ॥

तेहि कौतुककर मर्म न काहू ❀ जाना अनुज न मातु पिताहू ॥ ५ ॥
जानु पानि धाए मोहिं धरना ❀ स्यामलगात अरुन कर चरना ॥ ६ ॥

जिस चरित्रका भेद (उनके) किसी भाई, माता, अथवा पितानेभी न जाना ॥ ५ ॥ घोंटू और हाथोंके बलसे मुझे पकड़नेको दौड़े, जिनका साँवला शरीर और लाल २ हाथ पैर थे ॥ ६ ॥

---

(१) जैसा गीतामें लिखा है—"कौन्तेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति ॥"

तब मैं भागिचलेउँ उरगारी ❀ राम गहन कहँ भुजा पसारी ॥ ७ ॥
जिमि जिमि दूरि उडाउँ अकासा ❀ तिमि तिमि भुज देखौं निजपासा ॥ ८ ॥

हे गरुड़ ! तव मैं भाग चला और रामचन्द्रजीने पकड़नेको भुजा पसारी ॥ ७ ॥ सो जैसे २ आकाशमें दूर उड़ता जाऊँ तैसे २ भुजाको अपने पासही देखता जाऊँ ॥ ८ ॥

दो०-ब्रह्मलोकलगि गयउँ मैं, चितयउँ पाछ उड़ात ॥ ❀
जुग अंगुलकर बीच रह, रामभुजहिं मोहिं तात ॥ ११४ ॥ ❀

सो मैं ब्रह्मलोकतक गया परन्तु भुजाको पीछेही उड़ता हुआ देखा और हे प्यारे ! रामचन्द्रजीकी भुजा और मुझमें दो अंगुलका अंतर रहता था ॥ ११४ ॥

सप्तावरन भेद करि, जहँलगि गति रहि मोरि ॥ ❀
गयउँ तहाँ प्रभुभुज निरखि, व्याकुल भयउँ बहोरि ॥ ११५ ॥ ❀

सीतों आवरणोंको फोड़कर जहांतक मेरी गतिथी वहांतक गया परन्तु (वहाँभी) भगवान्की भुजाको देखा तब तौ फिर व्याकुल होगया ॥ ११५ ॥

चौ०-मूंदेउँ नयन त्रसित जब भयउँ ❀ पुनि चितवत कोसलपुर गयऊँ ॥ १ ॥
मोहिं बिलोकि राम मुसुकाहीं ❀ बिहँसत तुरत गयउँ मुखमाहीं ॥ २ ॥

जब दुखी हुआ और नेत्र मूंद लिये सो फिर देखा कि अयोध्यापुरीमें आगया ॥ १ ॥ मुझे देखकर रामचन्द्रजी हँसे तौ हँसतेहीं मैं तुरंत (उनके) मुखमें चला गया ॥ २ ॥

उदरमाझ सुनु अंडजराया ❀ देखेहुँ बहु ब्रह्मांडनिकाया ॥ ३ ॥
अति बिचित्र तहँ लोक अनेका ❀ रचना अधिक एकतें एका ॥ ४ ॥

हे गरुड़जी ! सुनो पेटमें बहुतसे ब्रह्मांडोंके समूह देखे ॥ ३ ॥ तहाँ अत्यंत विचित्र अनेक लोक थे और जिनकी रचना एकसे एककी बढ़ कर थी ॥ ४ ॥

कोटिन चतुरानन गौरीसा ❀ अगणित उडुगण रवि रजनीसा ॥ ५ ॥
अगनित लोकपाल जम काला ❀ अगनित भूधर भूमि बिसाला ॥ ६ ॥

करोड़ों ब्रह्मा, महादेव, अनगिनती तारागण, सूर्य और चन्द्रमा थे ॥ ५ ॥ अनगिनती लोकपाल, यमराज, काल और असंख्य पर्वत थे और बड़ी २ पृथ्वी थीं ॥ ६ ॥

सागर सरिता बिपिन अपारा ❀ नानाभाँति सृष्टिबिस्तारा ॥ ७ ॥
सुर मुनि सिद्ध नाग नर किन्नर ❀ चारि प्रकार जीव सचराचर ॥ ८ ॥

अपार समुद्र, नदी तथा वन थे और अनेक प्रकारसे सृष्टिका विस्तार होरहा था ॥ ७ ॥ देवता, मुनीश्वर, सिद्ध, सर्प, मनुष्य, किन्नर और चार भाँतिके चराचर जीव थे ॥ ८ ॥

दो०-जो नहिं देखा नहिं सुना, जो मनहूँ न समाइ ॥ ❀
अस अद्भुत तहँ देखेउँ, बरनि कवनि बिधि जाइ ॥ ११६ ॥ ❀

जो कभी न देखा था, न सुना था और न मनमें आसके ऐसा अद्भुत (चरित्र) वहाँ देखा सो किस प्रकार वर्णन किया जासक्ता है ? ॥ ११६ ॥

एकएक ब्रह्मांडमहँ, रहेउँ वर्षसतएक ॥ ❀
यहिबिध मैं देखत फिरेउँ, अंडकटाह अनेक ॥ ११७ ॥ ❀

---

(१) गूढ़ार्थदीपिकामें देखो.

एक २ ब्रह्मांडमें सौ सौ वर्षतक रहा और इस प्रकार मैं अनेकों ब्रह्मांडोंको देखता फिरा ॥११७॥

चौ०–लोक लोक प्रति भिन्न विधाता ❀ भिन्न विष्णु सिव मुनि दिसित्राता ॥ १ ॥
नर गंधर्व भूत बैताला ❀ किन्नर निसिचर पसु खग व्याला ॥ २ ॥

प्रत्येक लोकमें अलग २ ब्रह्मा, अलग २ ही विष्णु, महादेव मुनि और दिक्पाल थे ॥ १ ॥ मनुष्य, गंधर्व, भूत, वेताल, किन्नर, राक्षस, पशु, पक्षी, सर्प, ॥ २ ॥

देव दनुजगन नाना जाती ❀ सकल जीव तहँ आनहि भाँती ॥ ३ ॥
महि सर सागर सरि गिरि नाना ❀ सब प्रपंच तहँ आनै आना ॥ ४ ॥

देवता और राक्षसोंके समूह अनेक जातिके सब जीव तहाँ और २ ही प्रकारके थे ॥ ३ ॥ पृथ्वी, सरोवर, समुद्र, नदी और अनेक पर्वत सब प्रपंच तहां औरका औरही था ॥ ४ ॥

अंडकोस प्रति प्रति निजरूपा ❀ देखेउँ जिनिस अनेक अनूपा ॥ ५ ॥
अवधपुरी प्रति भुवन निहारी ❀ सरयू भिन्न भिन्न नर नारी ॥ ६ ॥

प्रत्येक ब्रह्मांडमें अपना रूपभी देखा और अनेक पदार्थ ऐसे देखे कि जिनकी उपमा नहीं ॥ ५ ॥ लोक २ में अयोध्यापुरी देखी तौ वहाँ सरयू और स्त्री पुरुष सब अलग २ ही थे ॥ ६ ॥

दसरथ कौशल्यादिक माता ❀ बिबिधरूप भरतादिक भ्राता ॥ ७ ॥
प्रतिब्रह्मांड राम अवतारा ❀ देखेउँ बालविनोद उदारा ॥ ८ ॥

दशरथ और कौशल्या आदि माता तथा अनेक रूपसे भरत आदि भाई देखे ॥ ७ ॥ प्रत्येक ब्रह्मांडमें रामचन्द्रजीका अवतार और उनकी सुन्दर बाललीला देखी ॥ ८ ॥

दो०–भिन्न भिन्न सब देखेउँ, अतिबिचित्र हरियान ॥ ❀
अगनित देखत फिरेउँ मैं, राम न देखेउँ आन ॥ ११८ ॥ ❀

हे गरुड़जी ! मैंने सब (पदार्थ) अलग २ परमविचित्र देखे और बहुतसे देखता फिरा परंतु रामचन्द्र दूसरे न देखे ॥ ११८ ॥

सोई सिसुपन सोइ सोभा, सोइ कृपालु रघुबीर ॥ ❀
भुवन भुवन देखत फिरेउँ, प्रेरित मोह सरीर ॥ ११९ ॥ ❀

अपने मोहित शरीरसे वही बालकपन, वही शोभा और उन्हीं दयालु रामचन्द्रजीको लोक २ में देखता फिरा ॥ ११९ ॥

चौ०–भ्रमत मोहिं ब्रह्मांड अनेका ❀ बीते मनहुँ कल्पसत एका ॥ १ ॥
फिरत फिरत निज आस्रम आयउँ ❀ तहँ पुनि रहि कछु काल गवाँयउँ ॥ २ ॥

इस प्रकार मुझको अनेक ब्रह्मांडोंमें भ्रमण करते हुये मानों सौ कल्प बीत गये ॥ १ ॥ फिरता २ अपने आश्रममें आजाया करूं और तहां रहकर कुछ समय व्यतीत किया करूं ॥ २ ॥

निजप्रभुजन्म अवध सुनि पायउँ ❀ निर्भर प्रेम हर्षि उठि धायउँ ॥ ३ ॥
देखेउँ जन्ममहोत्सव जाई ❀ जेहिबिध प्रथम कहा मैं गाई ॥ ४ ॥

फिर जब अपने स्वामीका जन्म अयोध्यापुरीमें सुन पाया तब बड़े स्नेहसे प्रसन्न होकर उठ दौड़ा ॥ ३ ॥ और जाकर जन्मका महोत्सव देखा कि जिस प्रकार मैंने पेहले वर्णन कर कहा है ॥ ४ ॥

---

(१) अर्थात् बालकांडमें.

रामउदर देखेउँ जग नाना ❀ देखन बनै न जाइ बखाना ॥ ५ ॥
तहँ पुनि देखेउँ राम सुजाना ❀ मायापति कृपालु भगवाना ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजीके उदरमें अनेक संसार देखे जो देखतेही बनते हैं, वर्णन नहीं किये जाते ॥ ५ ॥ तहाँ फिर चतुर रामचन्द्र मायाके पति दयानिधान भगवान् देखे ॥ ६ ॥

करौं बिचार बहोरि बहोरि ❀ मोहकलित व्यापित मति मोरी ॥ ७ ॥
उभय घरीमहँ मैं सब देखा ❀ भयउ भ्रमित मन मोह बिसेखा ॥ ८ ॥

सो वारंबार विचार किया करा कि अज्ञानमें व्याप्त होकर मेरी बुद्धि चलायमान होगई ॥ ७ ॥ और जब मैं दो घड़ीमें यह सब देखचुका तब तौ मनमें बड़ा भ्रम और मोह हुआ ॥ ८ ॥

दो०-देखि कृपालु बिकल मोहिं, बिहँसे तब रघुबीर ॥ ❀
बिहँसतहिं मुखबाहर, आयउँ सुनु मतिधीर ॥ १२० ॥ ❀

और हे मतिधीर गरुड़जी ! सुनो, कृपालु रामचन्द्र मुझे व्याकुल देख कर जब हँसे तौ हँसते ही मैं मुखके बाहर आगया ॥ १२० ॥

सोइ लरिकाई मोसन, लगे करन पुनि राम ॥ ❀
कोटि भाँति समुझावौं, मन न लहै बिस्राम ॥ १२१ ॥ ❀

फिर रामजी वही लड़कपन मुझसे करने लगे और मैं करोड़ों भाँतिसे मनको समझाता था परंतु मनको विश्राम नहीं मिलता था ॥ १२१ ॥

चौ०-देखि चरित इह सो प्रभुताई ❀ समुझत देहदसा बिसराई ॥ १ ॥
धरनि परेउँ मुख आव न बाता ❀ त्राहि त्राहि आरतजनत्राता ॥ २ ॥

यह चरित्र और वह प्रभुता देखदेखकर और समझकर मेरे शरीरकी दशा बिसरगई ॥ १ ॥ पृथ्वीपर गिर पड़ा, मुखसे बचन नहीं निकलने लगे (और मनही मनमें कहने लगा कि) हे दीनजनरक्षक ! मेरी रक्षा करो ॥ २ ॥

परमाकुल प्रभु मोहिं बिलोकी ❀ निजमायाप्रभुता तब रोकी ॥ ३ ॥
करसरोज प्रभु मम सिर धरेऊ ❀ दीनदयालु दुसह दुख हरेउ ॥ ४ ॥

जब भगवान्ने मुझे बहुत व्याकुल देखा तब अपनी मायाकी प्रभुताको रोक लिया ॥३॥ और रामजीने (अपना) कमलसमान हाथ मेरे शिरपर फेरा और दीनदयालुने कठिन दुःख हरलिया ॥४॥

कीन्ह राम मोहिं बिगतबिमोहा ❀ सेवकसुखद कृपासंदोहा ॥ ५ ॥
प्रभुता प्रथम बिचारि बिचारी ❀ मनमहुँ होइ हर्ष अति भारी ॥ ६ ॥

और सेवकसुखदायक कृपानिधान रामचन्द्रजीने मुझे मोहरहित किया ॥ ५ ॥ (फिर भगवान्की) पहली प्रभुता विचार २ कर मेरे मनमें बड़ा भारी आनन्द होने लगा ॥ ६ ॥

भक्तबछलता प्रभुकी देखी ❀ उपजी मम उर प्रीति बिसेषी ॥ ७ ॥
सजल नयन पुलकित कर जोरी ❀ कीन्हीं बहुबिध बिनय बहोरी ॥ ८ ॥

और भगवान्की भक्तवत्सलता देखकर मेरे मनमें बड़ी प्रीति उत्पन्न हुई ॥ ७ ॥ फिर मैंने नेत्रोंमें जल भरकर शरीरमें पुलकायमान हो और हाथ जोड़कर बहुत प्रकारसे प्रार्थना की ॥ ८ ॥

दो०-सुनि सप्रेम मम बानी, देखि दीन निजदास ॥ ❀
बचन सुखद गंभीर मृदु, बोले रमानिवास ॥ १२२ ॥ ❀

मेरी प्रेमभरी वाणी सुनकर और अपने दासको दीन देखकर लक्ष्मीपति भगवान् सुखके देनेवाले मीठे और गंभीर बचन बोले ॥ १२२ ॥

कागभुसुंडी मांगु वर, अति प्रसन्न मोहिं जानि ॥ ❀
अनिमादिक सिधि अपरऋधि, मोक्ष सकलसुखखानि॥१२३॥❀

हे कागभुशुंडी ! मुझे बहुत प्रसन्न जानकर अणिमा आदि सिद्धि और ऋद्धि और सब सुखोंकी खानि मोक्ष आदि बरदान माँग ॥ १२३ ॥

चौ०–ज्ञान विवेक बिरति बिज्ञाना ❀ मुनिदुर्लभ गति जे जन जाना ॥ १ ॥
आजु देउँ तब संसय नाहीं ❀ माँगु जो तोहिं भाव मनमाहीं ॥ २ ॥

ज्ञान, विवेक, बैराग्य, अज्ञान और जो गति मुनीश्वरोंकोभी दुर्लभ है जिसे संसार जानता है ॥ १ ॥ (सो सब) आज तुझे दूँ (इसमें) सन्देह नहीं, जो तेरे मनमें भावे सो माँग ॥ २ ॥

सुनि प्रभुबचन अधिक अनुरागेउँ ❀ मन अनुमान करन तब लागेउँ ॥ ३ ॥
प्रभु कह देन सकल सुख सही ❀ भक्ति आपनी देन न कही ॥ ४ ॥

भगवान्‌के वचन सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ और तब मनमें विचार करने लगा कि ॥ ३ ॥ भगवान्‌ने सब सुख देनेको तौ कहा सों ठीक है, परंतु अपनी भक्ति देनेको न कहा ॥ ४ ॥

भक्तिहीन गुण सुख सब ऐसे ❀ लवन बिना बहु व्यंजन जैसे ॥ ५ ॥
भक्तिहीन सुख कवने काजा ❀ अस बिचारि बोलेउँ खगराजा ॥ ६ ॥

सो भक्ति के बिना सब गुण और सुख ऐसे हैं जैसे विना नोनके बहुतसे व्यंजन ॥ ५ ॥ भक्तिके बिना सुख किस कामका; ऐसा विचार कर गरुड़जी बोला कि ॥ ६ ॥

जो प्रभु हुए प्रसन्न वर देहू ❀ मोपर करहु कृपा अरु नेहू ॥ ७ ॥
मनभावत वर मागौं स्वामी ❀ तुम उदार उरअंतरजामी ॥ ८ ॥

हे भगवान् ! जो प्रसन्न होंकर वर देते हो और मुझपर दया और प्रेम करते हो तौ ॥ ७ ॥ हे स्वामी । जो मेरे मनमें अच्छा लगता है वह वरदान मांगता हूं, आप उदार हों और अंतःकरणकी जाननेवाले हो ॥ ८ ॥

दो०–अविरल भक्ति विसुद्ध तव, सुतिपुरान जो गाव ॥ ❀
जेहि खोजत जोगीस मुनि, प्रभुप्रसाद कोउ पाव ॥ १२४ ॥ ❀

आपकी अचल और परमपावनी भक्ती जिसे वेदपुराण गाते हैं, जिसे योगीश्वर तथा मुनि ढूँढ़ते रहते हैं और आपकी कृपासे कोई २ पाते हैं ॥ १२४ ॥

भक्तकल्पतरु प्रणतहित, कृपासिंधु सुखधाम ॥ ❀
सोइ निजभक्ति मोहिं प्रभु, देहु दया करि राम ॥ १२५ ॥ ❀

सो हे रामजी ! कृपा करके अपनी वही भक्ति मुझे दीजिये, क्योंकि हे प्रभो ! आप भक्तोंके लिये कल्पवृक्ष हो अर्थात् भक्त जों माँगता है, उसे वही देते हों दीनहितकारी, कृपाके समुद्र और सुखके धाम हो ॥ १२५ ॥

चौ०–एवमस्तु कहि रघुकुलनायक ❀ बोले बचन परम सुखदायक ॥ १ ॥
सुनु बायस तैं परम सयाना ❀ काहे न माँगसि अस बरदाना ॥ २ ॥

रघुकुलनायक भगवान् "एवमस्तु" अर्थात् ऐसाही हो कहकर बड़े सुखदायक बचन बोले ॥ १ ॥ हे कागभुशुंड़ि ! सुन्, तूं बड़ा चतुर है सो ऐसा वरदान क्यों न माँगे ॥ २ ॥

सब सुखखानि भक्ति तैं माँगी ❀ नहिं कोउ तोहिं समान बडभागी ॥ ३ ॥
जे मुनि कोटि जतन नहिं लहहीं ❀ जे जप योग अनल तनु दहहीं ॥ ४ ॥

तैने सब सखोंकी खानि भक्ति माँगी सो तेरेसमान वड़भागी कोई नहीं ॥ ३ ॥ जिस भक्तिको मुनीश्वर करोड़ो उपायोंसेभी नहीं पाते बहुतेरेही जप योग करते और धूनी रमाते हैं ॥ ४ ॥

रीझेउँ देखि तोरि चतुराई ❀ माँगेहु भक्ति मोहिं अति भाई ॥ ५ ॥
सुनु विहंग प्रसाद अब मोरे ❀ सब सुभ गुन बसिहैं उर तोरे ॥ ६ ॥

सो तेरी चतुराई देखकर मैं प्रसन्न हुआ और जो भक्ति तैंने माँगी सो मुझे बहुत प्यारी लगी ॥ ५ ॥ हे कागभुशुंडि ! सुन अब मेरी कृपासे सब अच्छे २ गुण तेरे हृदयमें बसैंगे ॥ ६ ॥

भक्ति ज्ञान विज्ञान विरागा ❀ जो सब चरित रहस्य विभागा ॥ ७ ॥
जानब तैं सबहीकर भेदा ❀ मम प्रसाद नहिं साधन खेदा ॥ ८ ॥

भक्ति, ज्ञान, विज्ञान, और वैराग्य सब चरित्र और जो उनके गुप्त विभाग हैं अर्थात् जिन्हैं कोई नहीं जानताहै ॥ ७ ॥ उन सबका भेद तू जानैगा, और मेरी कृपासे तुझे साधनोंका खेद न होगा ॥ ८ ॥

दो०-मायासंभव भ्रम सबै, अब नहिं व्यापिहि तोहिं ॥ ❀
जानेसि ब्रह्म अनादि अज, अगुन गुनाकर मोहिं ॥ १२६ ॥ ❀

और अब तुझे मायासे उत्पन्न हुये सब भ्रम नहीं व्यापैंगे. मुझे अनादि,[1] आजन्मा गुणरहित और गुणोंकी खानि परब्रह्म जानियो ॥ १२६ ॥

मोहिं भक्त प्रिय संतत, अस बिचारि सुनु काग ॥ ❀
कायबचन मन मम चरन, करेसु अचल अनुराग ॥ १२७ ॥ ❀

हे कागभुशुंडि ! सुन, मुझे भक्त निरंतर प्यारे हैं ऐसा बिचार कर मन वचन शरीरसे मेरे चरणोंमें दृढ़ प्रीति कर ॥ १२७ ॥

चौ०-अब सुनु परम विमल मम बानी ❀ सत्य सुगम निगमादि बखानी ॥ १ ॥
निजसिद्धांत सुनावौं तोहीं ❀ सुनि मन धरु सब तजि भजु मोहीं ॥२॥

अब अतिनिर्मल मेरी वाणी सुन जो सत्य और सुगम है और वेदशास्त्रोंमें कही है ॥ १ ॥ अपना[2] सिद्धांत तुझे सुनाताहूं इसे सुनकर मनमें रख और सब छोड़कर मेरा भजन कर ॥ २ ॥

मम मायासंभव संसारा ❀ जीव चराचर विविधप्रकारा ॥ ३ ॥
सब मम प्रिय सब मम उपजाए ❀ सबसे अधिक मनुज मोहिं भाए ॥ ४ ॥

---

(१) जैसा भगवान्ने गीतामें कहा है—

"यो मामजमनादिं च वेत्ति लोकमहेश्वरम् । असंमूढः स मर्त्येषु सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥

अर्थात् जो मुझको अजन्मा, अनादि और सबलोकोंका महेश्वर जानता है सो मनुष्योंमें मोहरहित हो सब पापोंसे छूट जाता है.

(२) गीतायां—

"सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज । अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥"

अर्थात्—संपूर्णधर्मोंको त्यागकर एक मेरी शरणको प्राप्त हो, मै तुझें सब पापोंसे छुंड़ाऊँगा, शोच मत कर ॥

यह संसार मेरी मायासे उत्पन्न हुआ है और उसमें अनेक प्रकारके चराचरजीव हैं॥३॥सो (यद्यपि) सब मेरे प्यारे हैं औरसब मेरेही उत्पन्न किये हैं (तथापि) मुझे मनुष्य सबसे अधिक प्यारे हैं॥४॥

तेहिमहँ द्विज द्विजमहँ स्रुतिधारी ❀ तिनमहँ निगमधर्मअनुसारी ॥ ५ ॥
तिन्हमहँ प्रिय विरक्त पुनि ज्ञानी ❀ ज्ञानिहुते अतिप्रिय विज्ञानी ॥ ६ ॥

उन मनुष्योंमेंभी ब्राह्मण, ब्राह्मणोमें वेदपाठी, उन वेदपाठियोंमेंभी वेदके धर्मपर चलनेवाले (विशेष प्यारे हैं)॥ ५॥ उन (वेदके धर्मपर चलनेवालों) मेंभी विरक्त, फिर विरक्तोमेंभी ज्ञानी प्यारे हैं और ज्ञानीसेभी विज्ञानी विशेष प्यारे हैं ॥ ६ ॥

तिन्हते पुनि मोहिं प्रिय निजदासा ❀ तेहिंगति मोरि न दूसरि आसा ॥ ७ ॥
पुनि पुनि सत्य कहौं तोहिंपाहीं ❀ मोहिं सेवकसम प्रिय कोउ नाहीं ॥ ८ ॥

फिर उन (विज्ञानियों)सेभी मुझे अपना भक्त प्यारा है जिसको मेरी गति छोड़कर दूसरेकी आशा नहीं है ॥ ७ ॥ मैं तुझसे बारंबार सत्य कहता हूं कि मुझे सेवकके समान कोई प्यारा नहीं है ॥ ८ ॥

भक्तिहीन विरंचि कि न होई ❀ सब जीवनसम प्रिय मोहिं सोई ॥ ९ ॥
भक्तिवंत अति नीचौ प्रानी ❀ मोहिं प्रानप्रिय सुनु मम बानी ॥ १० ॥

भक्तिसे रहित ब्रह्माभी क्यों न हो वह मुझे सब जीवोंके समान साधारण प्यारा है॥ ९॥ मेरी वाणी सुन, कि भक्तियुक्त चाहै जैसा नीच प्राणी हो वहभी मुझे प्राणोंके समान है ॥ १० ॥

दो०–सुचि सुसील सेवक सुमती, प्रिय कहु काहि न लाग ॥ ❀
स्रुति पुराण कह नीति अस, सावधान सुनु काग ॥ १२८ ॥ ❀

पवित्र सुशील और बुद्धिमान् सेवक कहो किसे प्यारा नहीं लगता ? हे कागभुशुंडि, सावधान होकर सुन, वेद पुराण और नीति ऐसा कहते है ॥ १२८ ॥

चौ०–एक पिताके विपुल कुमारा ❀ होइँ पृथक गुन सील अचारा ॥ १ ॥
कोउ पंडित कोउ तापस ज्ञाता ❀ कोउ धनवंत सूर कोउ दाता ॥ २ ॥

एक पिताके बहुतसे पुत्र होते है, परंतु गुण शील और रीति-भांतिसे अलग २ होते हैं ॥ १ ॥ कोई पंडित, कोई तपस्वी, कोई ज्ञानी, कोई धनवान्, कोई योद्धा और कोई दाता होता है ॥ २ ॥

कोउ सर्वज्ञ धर्मरत कोई ❀ सबपर पितहिं प्रीति सम होई ॥ ३ ॥
कोउ पितुभक्त वचन मन कर्मा ❀ सपनेहु जान न दूसर धर्मा ॥ ४ ॥

कोई सर्वज्ञ और कोई धर्ममें तत्पर होता है और पिताकी प्रीति सबपर समान होती है॥३॥परंतु जो कोई मन कर्म बचनसे पिताका भक्त होता है और वह स्वप्नमेंभी दूसरे धर्मको नहीं जानता॥४॥

सो प्रिय सुत मम प्रानसमाना ❀ जद्यपि सो सब भाँति अयाना ॥ ५ ॥
यहिविध जीव चराचर जेते ❀ त्रिजग देव नर असुर समेते ॥ ६ ॥

वह प्यारा पुत्र मुझे प्राणोंके समान हैं, यद्यपि वह सब प्रकारसे अज्ञान हो॥५॥ इसी प्रकार जितने चराचर जीव त्रिलोकीमें देवता, मनुष्य और राक्षस हैं उन सबपर मेरी बराबर दया है ॥ ६ ॥

---

(१) गीतामें भगवान्‌का वाक्य है–

"अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक् ! साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः ॥"

अर्थात्–दुराचारी ही क्यों न हो जो मुझे अनन्य भक्त होकर भजता है, वह साधु है, क्योंकि उसने मेरा भली प्रकार निश्चय करलिया है ॥

अखिल बिस्व यह मम उपजाया ❀ सबपर मोहिं बराबरि दाया ॥ ७ ॥
तिन्हमहँ जो परिहरि मद माया ❀ भजहिं मोहिं मन वच अरु काया ॥ ८ ॥

क्योंकि यह सब संसार[1] मेरा उत्पन्न किया हुआ है और सबपर मेरी बराबर दया है ॥ ७ ॥ तौभी उनमें जो अभिमान और मायाको छोड़के मन कर्म वचनसे मेरा भजन करते हैं ॥ ८ ॥

दो०-पुरुष नपुंसक नारि नर, जीव चराचर कोइ ॥ ❀
सर्वभाव भजु कपट तजि, मोहिं परम प्रिय सोइ ॥ १२९ ॥ ❀

मनुष्य हो वा[2] नपुंसक स्त्री हो वा पुरुष चराचरमेंसे कोई जीव क्यों न हो जो सब भावसे छल छोड़कर मेराही[3] भजन करता है मुझे वही बहुत प्यारा लगता है ॥ १२९ ॥

सो०-सत्य कहौं खग तोहिं, सुचि सेवक मम प्रानप्रिय ॥ ❀
अस बिचारि भज मोहि, परिहरि आसभरोस सब ॥ ४ ॥ ❀

हे कागभुशुंडि ! तुझसे सत्य कहता हूं कि पवित्र सेवक मुझको प्राणोंसे प्यारा है ऐसा विचारकर सब आँशाभरोसेको छोड़कर मेरा भजन कर ॥ ४ ॥

चौ०-कबहुँ काल नाहिं ब्यापिहि तोहीं ❀ सुमिरेहु भजेहु निरंतर मोहीं ॥ १ ॥
प्रभुबचनामृत सुनि न अघाऊँ ❀ तनु पुलकित मन अति हर्षाऊँ ॥ २ ॥

तुझे कभी काल न सतावेगा, निरंतर मेराही स्मरण भजन करता रहियो ॥१॥ भगवान्‌के अमृतसमान वचनसुनकर तृप्त न होऊँ, और शरीरमें पुलकायमान हो मनमें बहुत प्रसन्न होता जाऊँ ॥२॥

सो सुख जानैं मन अरु काना ❀ नहिं रसनापहिं जाइ बखाना ॥ ३ ॥
प्रभुसोभासुख जानहिं नयना ❀ किमि कहिसकैं तिन्हैंनहिं बयना ॥ ४ ॥

उस सुखको मन और कान जानते हैं, जीभसे वर्णन नहीं किया जाता ॥ ३ ॥ भगवान्‌की शोभाके सुखको नेत्र जानते हैं, परंतु वे कैसे कह सकैं ? क्योंकि वे बोल नहीं सक्ते हैं ॥ ४ ॥

बहुबिध राम मोहिं सिख देईं ❀ लगे करन सिसुकौतुक तेईं ॥ ५ ॥
सजल नयन कछु मुख करि रूषा ❀ चितै मातुतन लागी भूषा ॥ ६ ॥

रामचन्द्रजी मुझे बहुत प्रकार शिक्षा देकर फिर वैसीही बाललीला करने लगे ॥ ५ ॥ नेत्रोंमें आसू भरकर और कुछ रूखासा मुख कर माताके शरीरकी और देखने लगे मानों भूख लगी ॥ ६ ॥

देखि मातु आतुर उठि धाई ❀ कहि मृदु बचन लिए उर लाई ॥ ७ ॥
गोद राखि कराव पयपाना ❀ रघुपतिचरित ललित करि गाना ॥ ८ ॥

माता देखकर जल्दीसे उठ दौड़ी और मीठे वचन कहकर छातीसे लगा लिया ॥ ७ ॥ गोदमें रखकर रामचन्द्रजीकें सुंदर चरित्रों कों गाती हुई (माता) ने दूध पिलाया ॥ ८ ॥

---

(१) गीतायां-"मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्तमूर्त्तिना ।" अर्थात् मेरा जो सूक्ष्म अंतर्यामीस्वरूप है उसीके द्वारा यह सब संसार विस्तारको प्राप्त हुआ है.

(२) गीतायां-"अनन्यांश्चिंतयंतो मां ये जनाः पर्य्युपासते । तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥" अर्थात् जो अन्यको छोडकर मेरीही उपासना करते हैं उन अपने भक्तोंको अपना संयोग देता और उनका क्षेम करताहूँ.

(३) गीतायां-"सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज" अर्थात् सर्व धर्मोंको छोड मेरी शरणको प्राप्त हो.

सो०-जेहि सुखलागि पुरारि, असिव वेष कृत सिव सुखद ॥
अवधपुरीनरनारि, तेहि सुखमहँ संतत मगन ॥ ५ ॥

जिस सुखके लोभसे कल्याणस्वरूप शिवजीने भयंकर[1] वेष धारण कर लिया है और जिस सुखमें अयोध्यापुरीके स्त्री पुरुष निरंतर मगन रहते हैं ॥ ५ ॥

सोइ सुखकर लव लेस, निज बारक सपनेहु लहेउ ॥
ते नहिं गनहिं खगेस, ब्रह्मसुखहिं सज्जन सुमति ॥ ६ ॥

उसी सुखका लवलेश जिन्होंने एकबार स्वप्नमेंभी लिया है; हे गरुड़जी ! वे बुद्धिमान् सज्जन ब्रह्मानन्दकोभी कुछ नहीं गिनते ॥ ६ ॥

चौ०-मैं पुनि अवध रहेउँ कछु काला ❀ देखेउँ बालविनोद रसाला ॥ १ ॥
रामप्रसाद मुक्ति वर पायउँ ❀ प्रभुपद वंदि निजास्रम आयउँ ॥ २ ॥

फिर मैं कुछ समयतक अयोध्यापुरीमें रहा और सुन्दर बाललीला देखता रहा ॥१॥ और रामचन्द्रजीकी दयासे भक्तिका वरदान पाकर भगवान्के चरणोंको दंडवत कर अपने आश्रममें चला आया॥२॥

तबते मोहिं न व्यापी माया ❀ जबते रघुनायक अपनाया ॥ ३ ॥
यह सब गुप्त चरित मैं गावा ❀ हरिमाया जिमि मोहिं नचावा ॥ ४ ॥

फिर तबसे मुझे माया नहीं व्यापी कि जबसे रामचन्द्रजीने मुझे अपना बना लिया ॥ ३ ॥ यह सब गुप्त चरित्र मैंने वह कहा है कि जैसे भगवान्की मायाने मुझे नचाया था ॥ ४ ॥

निजअनुभव अब कहौं खगेसा ❀ बिनु हरिभजन न जाहिं कलेसा ॥ ५ ॥
रामकृपा बिनु सुनु खगराई ❀ जानि न जाइ रामप्रभुताई ॥ ६ ॥

हे गरुड़जी ! अब अपना अनुभव कहताहूं कि भगवान्के भजनके विना दुख नहीं जाते ॥५॥ हे खगराज ! सुनो रामचन्द्रजीकी दयाके विना रामजीकी प्रभुता नहीं जानी जाती ॥ ६ ॥

जाने विनु न होइ परतीती ❀ बिनु परतीति होइ नहिं प्रीती ॥ ७ ॥
प्रीती बिना नहिं भक्ति दृढ़ाई ❀ जिमि खगेस जलकी चिकनाई ॥ ८ ॥

विना (प्रभुताके) जाने प्रतीति नहीं होती और बिना प्रतीतिके प्रीति नहीं होती ॥ ७ ॥ हे खगेश ! विना प्रीतिके दृढ़ भक्ति नहीं होती जैसे जलकी चिकनाई अर्थात् जैसे जलमें चिकनाई नहीं होती वैसेही स्नेहके विनादृढ़ भक्ति नहीं होती ॥ ८ ॥

सो०-विनु गुरु होइ कि ज्ञान, ज्ञान कि होइ बिराग बिनु ॥
गावहिं वेद पुरान, सुख कि लहहिं हरिभक्ति बिनु ॥ ७ ॥

गुरुके विना क्या ज्ञान होता है ? और ज्ञानके विना क्या वैराग्य होता है ? वेद पुराण कहते हैं कि भगवान्की भक्तिके विना क्या सुख मिल सक्ता है ? ॥ ७ ॥

कोउ बिस्राम कि पाव; तात सहज संतोष बिनु ॥
चलै कि जल बिनु नाव, कोटि जतन करि पचि मरिय ॥ ८ ॥

---

[1] पद्मपुराणे— श्लोक ।

"त्वं च रुद्र महाभाग मोहनार्थं सुरद्विषाम् । पाखडाचरणं धर्मं कुरुष्व सुरसत्तम ॥ १ ॥"

भगवान् कहते हैं हे रुद्र । हे देवश्रेष्ठ ! आप असुरोंके मोहनेके लिये पाखंड आचरण करो अर्थात् अपना भयंकर रूप रख लो ॥

और हे प्यारे! स्वाभाविक संतोषके विना क्या कोई विश्राम पाता है? और चाहे करोड़ यत्न करके पच मरो तौ क्या जलके विना नाव चल सक्ती है? अर्थात् नहीं चल सक्ती है ॥ ८ ॥

चौ०–बिनु संतोष न काम नसाहीं ❀ काम अछत सुख सपनेहु नाहीं ॥ १ ॥
रामभजन बिनु मिटहिं कि कामा ❀ थलबिहीन तरु कबहुँ कि जामा ॥ २ ॥

विना संतोषके कामनाओंका नाश नहीं होता, और कामनाओंके नाश हुये विना स्वप्नमेंभी सुख नहीं होता ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीके भजनविना क्या कामना मिट सक्ती है? विना पृथ्वीके क्या कभी वृक्ष जम सक्ताहै? ॥ २ ॥

बिनु बिज्ञान कि समता आवै ❀ कोउ अवकास कि नभ बिनु पावै ॥३॥
स्रद्धा बिना धर्म नहिं होई ❀ बिनु महि गंध कि पावै कोई ॥ ४ ॥

विज्ञानके विना क्या समता आती है? और आकाशके विना क्या कोई अवकाश पा सक्ता है? ॥ ३ ॥ श्रद्धाके विना धर्म नहीं होता; विना पृथ्वीके क्या कोई गंध पा सक्ता है? ॥ ४ ॥

बिनु तप तेज कि करु बिस्तारा ❀ जल बिनु रस कि होइ संसारा ॥ ५ ॥
सील कि मिलु बिनु बुधसेवकाई ❀ जिमि बिनु तेज न रूप गुसाँई ॥ ६ ॥

विना तपके क्या कोई तेज फैला सक्ता है? और संसारमें जलके विना क्या रस हो सक्ता है? ॥ ५ ॥ हे गोसाई जैसे विना तेजके रूप नहीं होता ऐसेही क्या विना पंडितोंकी सेवाके शील मिल सक्ता है? अर्थात् नहीं मिलता ॥ ६ ॥

निजसुख बिनु मन होइ कि थीरा ❀ परस कि होइ बिहीन समीरा ॥ ७ ॥
कवनिउँ सिद्धि कि बिनु बिस्वासा ❀ बिनु हरिभजन न भवभयनासा ॥ ८ ॥

अपने सुखके विना क्या मनमें स्थिरता हो सक्ती है? विना पवनके क्या स्पर्श हो सक्ता है? ॥ ७ ॥ विना विश्वासके क्या कोईभी सिद्धि हो सक्ती है? और विना भगवान्‌के भजनके क्या संसारके भयका नाश हो सक्ता है? ॥ ८ ॥

दो०–बिनु बिस्वास भक्ति नहिं, तेहि बिनु द्रवहिं न राम ॥ ❀
रामकृपा बिनु सपनेहुँ, जीव न लह बिस्राम ॥ १३० ॥ ❀

विना विश्वासके भक्ति नहीं होती, उस भक्तिके विना रामचन्द्रजी प्रसन्न नहीं होते और रामचन्द्रजीकी दयाके विना जीव क्या स्वप्नमेंभी आनन्द प्राप्त कर सक्ता है? ॥ १३० ॥

सो०–अस बिचारि मतिधीर, तजि कुतर्क संसय सकल ॥ ❀
भजहु राम रघुबीर, करुनाकर सुंदर सुखद ॥ ९ ॥ ❀

हे मतिधीर! ऐसा विचार कर सब कुतर्क और सन्देहोंको छोड़कर करुणाके धाम, सुन्दर सुख देनेवाले रघुवीर रामचन्द्रजीका भजन करो ॥ ९ ॥

चौ०–निजमतिसरिस नाथ मैं गाई ❀ प्रभुप्रतापमहिमा खगराई ॥ १ ॥
कहेउँ न कछु करि युक्ति बिसेखी ❀ यह सब मैं निजनयनन्ह देखी ॥ २ ॥

हे नाथ गरुड़जी! मैंने जो अपनी बुद्धिके अनुसार रामचन्द्रजीके प्रतापकी बड़ाई करी है ॥ १ ॥ सो कुछ विशेष युक्ति करके नहीं कही है, यह सब मैंने अपने नेत्रोंसे देखी है ॥ २ ॥

महिमा नाम रूप गुननाथा ❀ सकल अमित अनंत रघुनाथा ॥ ३ ॥
निज निजमति मुनि हरिगुनगावहिं ❀ निगम सेष सिव पार न पावहिं ॥ ४ ॥

रामन्द्रजीकी महिमा, नाम, रूप, गुण और कथा सब असंख्य और अपार हैं ॥३॥ मुनीश्वर अपनी २ बुद्धिके अनुसार भगवान्के गुण गाते हैं, और वेद, शेष और महादेव पार नहीं पाते हैं ॥४॥

तुमहीं आदि खग मसकप्रयंता ❀ नभ उड़ाहिं नहिं पावहिं अंता ॥ ५ ॥
तिमि रघुपतिमहिमा अवगाहा ❀ तात कबहुँ कोउ पाव कि थाहा ॥ ६ ॥

तुमसे आदि लेकर मच्छरतक जितने पक्षी हैं वे सब जैसे आकाशमें उड़ते हैं परंतु पार नहीं पाते ॥५॥ हे प्यारे! तैसेही रामचन्द्रजीकी अथाह महिमाका पार क्या कभी कोई पा सक्ता है?॥६॥

राम कामसतकोटिसुभगतनु ❀ दुर्गमकोटिअमितअरिमर्दनु ॥ ७ ॥
सक्रकोटिसतसरिस विलासा ❀ नभसतकोटिअमित अवकासा ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजीका शरीर सौ करोड़ कामदेवोंसेभी सुन्दर है और वे करोड़ों कठिन और अनगिनती शत्रुओंके नाश करनेवाले हैं ॥ ७ ॥ सौ करोड़ इन्द्रोंके समान (उनका) आनन्द है और सौ करोड़ आकाशोंके समान विस्तार है ॥ ८ ॥

दो०–मरुतकोटिसत विपुल बल, रविसतकोटिप्रकास ॥ ❀
ससिसतकोटि सुसीतल, समन सकल भवत्रास ॥ १३१ ॥ ❀

सौ करोड़ पवनोंसेभी विशेष उनका बल है, सौ करोड़ सूर्योंके समान प्रकाश है; वे सौ करोड़ चन्द्रमाओंके समान शीतल और संसारके सब दुखोंके नाश करनेवाले हैं ॥ १३१ ॥

कालकोटिसतसरिस अति, दुस्तर दुर्ग दुरंत ॥ ❀
धूमकेतुसतकोटितम, दुराधर्ष भगवंत ॥ १३२ ॥ ❀

सौ करोड़ कालके समान अत्यंत दुस्तर कहिये तरनेके अयोग्य, दुरंत (जिनका अन्त नहीं) और दुर्ग कहिये कठिनतासे प्राप्त होने योग्य हैं, और भगवान् सौ करोड़ धूमकेतु कहिये अग्निके समान कठिनतासे धारण करनेके योग्य हैं ॥ १३२ ॥

चौ०–प्रभु अगाध सतकोटिपताला ❀ समन कोटिसतसरिस कराला ॥ १ ॥
तीरथ अमितकोटिसत पावन ❀ नाम अखिल अघपुंजनसावन ॥ २ ॥

भगवान् सौ करोड़ पातालोंके समान गहरे और सौ करोड़ यमराजोंके समान भयंकर हैं ॥ १ ॥ सौ करोड़ तीर्थोंके समान पवित्र हैं, जिनका नाम सब पापोंके समूहोंको नाश करता है ॥ २ ॥

हिमगिरिकोटि अचल रघुबीरा ❀ सिंधुकोटिसतसम गंभीरा ॥ ३ ॥
कामधेनुसतकोटिसमाना ❀ सकल कामदायक भगवाना ॥ ४ ॥

रामचन्द्रजी करोड़ हिमाचलोंके समान स्थिर और सौ करोड़ समुद्रोंके समान गहरे हैं ॥३॥ भगवान् सौ करोड़ कामधेनुओंके समान संपूर्ण कामनाओंके देनेवाले हैं ॥ ४ ॥

सारदकोटिअमितचतुराई ❀ विधिसतकोटि अमितनिपुनाई ॥ ५ ॥
विष्णुकोटिसतपालनकर्ता ❀ रुद्रकोटिसतसम संहर्ता ॥ ६ ॥

करोड़ वाणियोंसे अधिक उनकी चतुराई है और सौ करोड़ ब्रह्माओंसे विशेष निपुणाई है॥५॥ सौ करोड़ विष्णुके समान पालन करनेवाले और सौ करोड़ महादेवके समान नाश करनेवाले हैं ॥६॥

धनदकोटिसतसम धनवाना ❀ मायाकोटि प्रपंचनिधाना ॥ ७ ॥
धराधरन सतकोटि अहीसा ❀ निरवधि निरुपम प्रभु जगदीसा ॥ ८ ॥

---

(१) " यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा " सह इति श्रुतेः ।

सौ करोड़ कुबेरोंके समान धनवान् और करोड़ मायाओंके प्रपञ्चकी खानि हैं ॥७॥ पृथ्वीके धारण करनेको सौ करोड़ शेषके समान ऐसे संसारके स्वामी भगवान् अवधि और उपमारहित हैं ॥८॥

छं०-निरवधिरु निरुपम रामसम नहिं आन निगमागम कहैं । ❀
जिम कोटिसतखद्योत रविसम कहत अतिलघुता लहैं ॥ ❀
यहिभाँति निजनिजमतिविलास मुनिस हरिहिं बखानहीं । ❀
प्रभु भावगाहक अतिकृपालु सप्रेम सुनि सुख मानहीं ॥५६॥❀

रामचन्द्रजीके समान अवधि और उपमारहित और कोई नहीं है, इसे वेदशास्त्र ऐसे कहते हैं कि जैसे सौ करोड़ पटबीजनोंको सूर्यके समान कहतेमें वहुत छोटापन लगता है इस प्रकार अपनी २ बुद्धिके आनंदके अनुसार मुनीश्वर भगवान्का वर्णन करते, हैं और प्रेमके गाहक अत्यंत दयालु भगवान् प्रीतिसे सुनकर सुख मानते हैं ॥ ५६ ॥

दो०-राम अमितगुनसागर, थाह कि पावै कोइ ॥ ❀
संतनसन जस कछु सुनेउँ, तुमहिं सुनायउँ सोइ ॥ १३३ ॥ ❀

रामचन्द्रजीके गुण अपार समुद्र हैं; क्या कोई उनकी थाह पासक्ता है ? मैंने तो जैसा कुछ संतोंसे सुना था वहीं तुमको सुना दिया है ॥ १३३ ॥

सो०-भाववस्य भगवान, सुखनिधान करुनाभवन ॥ ❀
तजि ममता मद मान, भजिय राम सीतारमन ॥ १० ॥ ❀

सुखके समुद्र और करुणाके स्थान भगवान् प्रेमके वश हैं सो ममता मद और मान छोड़कर सीतारमण रामचन्द्रजीका भजन करना चाहिये ॥ १० ॥

चौ०-सुनि भुसुंडिके वचन सुहाये ❀ हर्षित खगपति पंख फुलाये ॥ १ ॥
नयन नीर मन अतिहर्षाना ❀ श्रीरघुपतिप्रताप उर आना ॥ २ ॥

कागभुशुंडिके सुन्दर वचन सुनकर गरुड़जीने प्रसन्नतासे पंख फैला दिये ॥१॥ और श्रीरामचन्द्रके प्रतापको हृदयमें धारण करते करतेही नेत्रोंमें जल भर आया और मनमें बहुत प्रसन्न हुए॥२॥

पाछिल मोह समुझि पछिताना ❀ ब्रह्म अनादि मनुज करि जाना ॥ ३ ॥
पुनि पुनि काकचरन सिर नावा ❀ जानि रामसम प्रेम बढ़ावा ॥ ४ ॥

परन्तु पिछले मोहको समझकर पछताये कि मैंने अनादि ब्रह्मको मनुष्य करके जाना ॥३॥ और बारंबार कागभुशुंडिके चरणोंको शिर नवाया और रामचन्द्रजीके समान जानकर स्नेह बढ़ाया ॥४॥

गुरु बिनु भवनिधि तरै न कोई ❀ जो बिरंचिसंकरसम होई ॥ ५ ॥
संसयसर्प ग्रसेउ मोहिं ताता ❀ दुखद लहरि कुतर्क बहुव्राता ॥ ६ ॥

विना गुरुके संसाररूपी समुद्रसे कोई पार नहीं हो सक्ता, चाहे वह ब्रह्मा और महादेवके समान क्यों न हो (फिर गरुड़जी कहने लगे) ॥ ५ ॥ हे प्यारे ! मुझे संशयरूपी सर्पने ग्रस लिया था इसलिये बड़ी दुःखदाइन कुतर्करूपी भारी लहर आती थी ॥ ६ ॥

तव स्वरूप गारुड़ि रघुनायक ❀ मोहिं जियायहु जनसुखदायक ॥ ७ ॥
तव प्रसाद मम मोह नसाना ❀ रामरहस्य अनूपम जाना ॥ ८ ॥

सो भक्तोंके सुखदायक रघुनाथजीने आपसरीखे गारुडी मंत्रवेत्ताके पास भेजकर मुझे जिवा लिया ॥ ७ ॥ आपकी कृपासे मेरा मोह नाश हुआ और मैंने रामचन्द्रजीका अनुपम गुप्त भेद जाना ॥८॥

दो०-ताहि प्रसंसेउ विविधविध, सीस नाइ कर जोरि ॥
वचन सप्रेम विनीत मृदु, बोलेउ गरुड़ बहोरि ॥ १३४ ॥

गरुड़जीने उन (कागभुशुंडि) कि अनेक भांति प्रशंसा करी और फिर वे माथा नवाय हाथ जोड़ स्नेहसे नीतियुक्त कोमल बचन बोले कि ॥ १३४ ॥

प्रभु अपने अविवेकतें, बूझौं स्वामी तोहिं ॥
कृपासिंधु सादर कहहु, जानि दास निजमोहिं ॥ १३५ ॥

हे प्रभो! हे नाथ! मैं अपने अज्ञानके कारण तुमसे पूछता हूं, सो हे दयासागर! मुझे अपना सेवक जानकर आदरसहित बताइये ॥ १३५ ॥

चौ०-तुम सर्वज्ञ तज्ज्ञ तमपारा ❀ सुमति सुसील सरल आचारा ॥ १ ॥
ज्ञान बिरति बिज्ञाननिवासा ❀ रघुनायकके प्रिय तुम दासा ॥ २ ॥

आप सर्वज्ञ, तत (ईश्वर) के ज्ञाता, अज्ञानके परे हो, प्रखरबुद्धि, सुशील, और सुन्दर आचरणशील हो ॥ १ ॥ तुम ज्ञान, वैराग्य विज्ञानके निवास और रामचन्द्रजीके प्यारे दास हो ॥ २ ॥

कारन कवन देह यह पाई ❀ तात सकल मोहिं कहहु बुझाई ॥ ३ ॥
रामचरितसर सुंदर स्वामी ❀ पायहु कहाँ कहहु नभगामी ॥ ४ ॥

परंतु क्या कारण जो यह कागकी देह (तुमने) पाई? हे प्यारे! यह सब मुझसे समझाकर कहो ॥ ३ ॥ हे स्वामी! रामचन्द्रजीके चरित्ररूपी सरोवरको कहासे पाया? तुम तौ आकाशमें गमन करनेवाले हो, सो कहो ॥ ४ ॥

नाथ सुना मैं अस सिवपाहीं ❀ महाप्रलयहु नास तव नाहीं ॥ ५ ॥
मृषा बचन नहिं संकर कहहीं ❀ सो मोरे मन संसय अहहीं ॥ ६ ॥

और हे स्वामी! मैंने महादेवजीसे यहभी सुना है कि तुम्हारा महाप्रलयमेंभी नाश नहीं होता ॥ ५ ॥ शंकर झूंठे बचन नहीं कहते हैं, सो मेरे मनमें सन्देह है ॥ ६ ॥

अग जग जीव नाग नर देवा ❀ नाथ सकल जग कालकलेवा ॥ ७ ॥
अंडकटाह अमित लयकारी ❀ काल महा दुरतिक्रम भारी ॥ ८ ॥

हे स्वामी! पर्वत आदि, जगत्के जीव, सर्प, मनुष्य और देवता ये सब संसार कालका कलेवा है ॥ ७ ॥ और काल अनेकों ब्रह्मांडोंका नाश करनेवाला बड़ा भारी कठिन है ॥ ८ ॥

सो०-तुमहिं न व्यापत कालु, अतिकराल कारन कवन ॥
सो मोहिं कहहु कृपालु, ज्ञानप्रभाव कि जोगबल ॥ ११ ॥

और तुमको अत्यंत कठिन काल नहीं व्यापता सो क्या कारण है? हे दयालु! मुझसे कहो, यह ज्ञानका प्रभाव है कि योगका बल है? ॥ ११ ॥

दो०-प्रभु तव आस्रम आयउँ, मोर मोह भ्रम भाग ॥
कारन कवन सो नाथ सब, कहहु सहित अनुराग ॥१३६॥

हे प्रभो! आपके आश्रममें आतेही मेरा मोह और भ्रम जाता रहा. सो हे नाथ! क्या कारण है? सब स्नेहपूर्वक कहो ॥ १३६ ॥

चौ०-गरुड़गिरा सुनि हर्षेउ कागा ❀ बोलेउ उमा परम अनुरागा ॥ १ ॥
धन्य धन्य तव मति उरगारी ❀ प्रस्न तुम्हारि मोहिं अतिप्यारी ॥ २ ॥

हे पार्वती! गरुड़की बाणी सुनकर कागभुशुंडि प्रसन्न होकर वड़े प्रेमसे बोले ॥१॥ हे गरुडजी! तुम्हारी बुद्धिको धन्य है! धन्य है! तुम्हारा प्रश्न मुझे बहुत प्यारा लगा ॥ २ ॥

सुनि तव प्रश्न सप्रेम सुहाई ❀ बहुत जन्मकी सुधि मोहिं आई ॥ ३ ॥
सब निजकथा कहौं मैं गाई ❀ तात सुनहु सादर मन लाई ॥ ४ ॥

तुम्हारा स्नेहसहित सुन्दर प्रश्न सुनकर मुझे बहुत जन्मकी याद आई ॥ ३ ॥ मैं अपनी सब कथा बर्णन करके कहता हूं. हे प्यारे! आदरसहित मन लगाकर सुनो ॥ ४ ॥

जप तप मख सम दम व्रत दाना ❀ बिरति बिबेक जोग बिज्ञाना ॥ ५ ॥
सबकर फल रघुपतिपदप्रेमा ❀ तेहि बिनु कोउ न पावै छेमा ॥ ६ ॥

जप, तप, यज्ञ, शम, दम, व्रत, दान, विराग, ज्ञान योग, विज्ञान ॥ ५ ॥ सबका फल रामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रीति होना है, उसके विना कोई कल्याण नहीं पाता ॥ ६ ॥

यहि तनु रामभक्ति मैं पाई ❀ ताते मोहिं ममता अधिकाई ॥ ७ ॥
जेहिते निजस्वारथ कछु होई ❀ तेहिपर ममता करु सबकोई ॥ ८ ॥

इस शरीरसे मैंने रामचन्द्रजीकी भक्ति पाई है इस कारण मुझे (इस शरीरसे) बहुत प्रीति है ॥ ७ ॥जिससे अपना कुछ स्वार्थ होता है उसपर सब कोई प्रीति करता है ॥ ८ ॥

सो०-पन्नगारि अस नीति, स्रुतिसंमत सज्जन कहहिं ॥ ❀
अति नीचहुसन प्रीति, करिय जानि निज परमहित ॥ १२ ॥ ❀

हे गरुड़जी! नीति और वेदोंकी यह सम्मति है और सज्जनोंकीभी कहावत है कि अपना परमहित जानकर अतिनीचसेभी प्रीति करनी चाहिये ॥ १२ ॥

पाट कीटते होइ, तेहिते पाटांबर रुचिर ॥ ❀
कृमि पालै सब कोइ, परम अपावन प्रानसम ॥ १३ ॥ ❀

देखो रेशम कीड़ेसे उत्पन्न होता है और उससे सुन्दर पट्टाम्बर बना जाता है, सो यद्यपि वह कीड़ा बड़ा अपवित्र है तौभी सब लोग उसे प्राणोंके समान पालते हैं ॥ १३ ॥

चौ०-स्वारथ सर्व जीवकहँ एहा ❀ मन क्रम बचन रामपदनेहा ॥ १ ॥
सोइ पावन सोइ सुभग सरीरा ❀ जो तनु पाइ भजिय रघुबीरा ॥ २ ॥

सब जीवोंका स्वार्थ यही है कि मन क्रम बचनसे रामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रेम हो! ॥ १ ॥ वही पवित्र और वही सुन्दर शरीर है जिस शरीरको पाकर रघुनाथजीका भजन किया जाय ॥ २ ॥

रामबिमुख लहि बिधिसम देही ❀ कबि कोबिद न प्रसंसहिं तेही ॥ ३ ॥
रामभक्ति यहि तनुमहँ जामी ❀ ताते मोहिं परम प्रिय स्वामी ॥ ४ ॥

रामजीसे विमुख ब्रह्माके समानभी शरीर क्यों न पावै कवीश्वर और पंडित उसकी प्रशंसा नहीं करते ॥ ३ ॥ हे स्वामी! इस शरीरमें रामचन्द्रजीकी भक्ति उत्पन्न हुई है इससे मुझे (यह शरीर) बहुत प्यारा है ॥ ४ ॥

तजौं न तनु निजइच्छामरना ❀ तनु बिनु बेद भजन नहिं बरना ॥ ५ ॥
प्रथम मोह मोहिं बहुत बिगोवा ❀ रामबिमुख सुख कबहुँ न सोवा ॥ ६ ॥

और मरण तौ अपनी इच्छानुसार है, परंतु मैं देहको यों नहीं छोड़ता कि बिना शरीरके वेदोंने कहा है कि भजन नहीं हो सक्ता ॥ ५ ॥ पहले मुझे मोहने बहुत तंग किया सो रामचन्द्रजीसे विमुख होनेके कारण मैं कभी सुखसे नहीं सोया ॥ ६ ॥

नाना जन्म कर्म पुनि नाना ❀ किए जोग जप तप मख दाना ॥ ७ ॥
कवन जोनि जन्मेउँ जहँ नाहीं ❀ मैं खगेस भ्रमि भ्रमि जगमाहीं ॥ ८ ॥

अनेक जन्म लिये, अनेक कर्म किये अनेक योग, जप, तप, यज्ञ और दान किये ॥ ७ ॥ और

हे खगेश! ऐसी कौनसी योनि है कि जिसमें मैं जन्म लेकर संसारमें नहीं भ्रमा होऊं? अर्थात् सब योनियोंमें जन्म पाकर भ्रमता रहा ॥ ८ ॥

देखेउँ सब करि कर्म गुसाँई ❀ सुखी न भयउँ अबहिंकी नाँई ॥ ९ ॥
सुधि मोहिं नाथ जन्म बहुकेरी ❀ सिवप्रसाद मति मोह न घेरी ॥ १० ॥

हे गोसाँई! मैंने सब कर्म कर देखे परन्तु अबके समान कभी सुखी नहीं हुआ ॥ ९ ॥ हे स्वामी! मुझे बहुत जन्मका स्मरण है, शिवजीकी दयासे अज्ञानने मेरी बुद्धि नहीं घेरी ॥ १० ॥

दो०-प्रथम जन्मके चरित अब, कहौं सुनहु बिहगेस ॥ ❀
सुनि प्रभुपदरति ऊपजै, जाते मिटै कलेस ॥ १३७ ॥ ❀

हे गरुड़जी! सुनो, अब पूर्वजन्मके चरित्र कहता हूं; जिनके सुननेसे भगवान्‌के चरणोंमें प्रीति उत्पन्न हो और उससे क्लेश मिट जाँय ॥ १३७ ॥

पूर्व कल्पमें एक प्रभु, कलियुग मलकर मूल ॥ ❀
नर अरु नारि अधर्मरत, सकल निगमप्रतिकूल ॥ १३८ ॥ ❀

हे स्वामी! पहले कल्पमें एक कलियुग पापोंकी जड़ था जिसमें सब स्त्री पुरुष अधर्मसे प्रीति करनेवाले और वेदके विरुद्ध थे ॥ १३८ ॥

चौ०-तेहि कलियुग कोसलपुर जाई ❀ जन्मत भयउँ सूद्रतनु पाई ॥ १ ॥
सिवसेवक मन क्रम अरु बानी ❀ आनदेवनिंदक अभिमानी ॥ २ ॥

उसी कलियुगमें मैंने अयोध्यापुरीमें जाकर शूद्रका शरीर पाकर जन्म लिया ॥१॥ मन क्रम वचनसे महादेवजीका तौ सेवक था और अन्य देवताओंकी निन्दा किया करता था और अभिमानी था ॥२॥

धनमदमत्त परम बाचाला ❀ उग्र बुद्धि उर दंभ बिसाला ॥ ३ ॥
जदपि रहेउँ रघुपतिरजधानी ❀ तदपि नहीं कछु महिमा जानी ॥ ४ ॥

द्रव्यके अभिमानसे मतवाला, बड़ा बकवादी और तीव्रबुद्धि था और मेरे हृदयमें बड़ा पाखंड था ॥ ३ ॥ यद्यपि रामचन्द्रजीकी राजधानीमें रहता था तथापि कुछ (उसकी) महिमा न जानी ॥ ४ ॥

अब जाना मैं अवधप्रभावा ❀ निगमागम पुरान अस गावा ॥ ५ ॥
कवनेहु जन्म अवध बस जोई ❀ रामपरायन सो परि होई ॥ ६ ॥

अब मैंने अयोध्याका प्रभाव जाना, वेद, शास्त्र और पुराणोंने ऐसा कहा है कि ॥ ५ ॥ कोई किसी जन्ममेंभी अयोध्यापुरीमें बसे वह रामचन्द्रजीका पूरा प्रेमी होता है ॥ ६ ॥

अवधप्रभाव जान तब प्रानी ❀ जब उर बसहिं राम धनुपानी ॥ ७ ॥
सो कलिकाल कठिन उरगारी ❀ पापपरायन सब नर नारी ॥ ८ ॥

अयोध्याके प्रभावको प्राणी तभी जानता है जब हाथमें धनुषधारी रामचन्द्रजी उसके हृदयमें निवास करते हैं ॥ ७ ॥ हे गरुड़जी! सो वह कलिकाल बड़ा कठिन था. उसमें जितने स्त्री पुरुष थे, सबकी पापमें प्रीति थी ॥ ८ ॥

दो०-कलिमल ग्रसेउ धर्म सब लुप्त भए सद्ग्रंथ ॥ ❀
दंभिन निजमत कल्प करि, प्रगट कीन्ह बहु पंथ ॥ १३९ ॥ ❀

कलियुगके पापोंने सब धर्म ग्रस लिये जिससे अच्छे ग्रंथ तौ लोप हो गये और पाखंडियोंने अपनी बुद्धिसे कल्पना कर २ के बहुतसे पंथ चला दिये ॥ १३९ ॥

भयउ लोक सब मोहबस, लोभ ग्रसेउ सुभ कर्म ॥ ❀
सुनु हरियान ज्ञाननिधि, कहौं कछुक कलिधर्म ॥ १४० ॥ ❀

सब लोग मोहके वश हो गये, लोभने अच्छे कर्म ग्रस लिये, हे ज्ञाननिधि गरुड़जी ! सुनो, कलियुगके थोड़ेसे धर्म कहता हूं ॥ १४० ॥

चौ०– बरन धर्म नहिं आस्रम चारी ❀ स्रुतिविरोधरत सब नर नारी ॥ १ ॥
द्विज स्रुतिवंचक भूप प्रजासन ❀ कोउ नहिं मानु निगमअनुसासन ॥ २ ॥

चारों वर्ण और उनके धर्म और चार आश्रम (कलियुगमें) नहीं रहे. सब स्त्री पुरुष वेदके विरुद्ध चलनेवाले होते हैं ॥ १ ॥ ब्राह्मण वेदवंचक हो गये अर्थात् उलटे अर्थ कर २ के लोगोंको ठगने लगे और राजा प्रजाको लूटने लगे. कोई वेदकी आज्ञाको नहीं मानता ॥ २ ॥

मारग सोइ जाकहँ जो भावा ❀ पंडित सोइ जो गाल बजावा ॥ ३ ॥
मिथ्यारंभ दंभरत जोई ❀ ताकहँ संत कहैं सबकोई ॥ ४ ॥

जो जिसको अच्छा लगै वही मार्ग है, और पंडित वही है जो गाल बजावै ॥ ३ ॥ जो झूंठ बोलै और पाखंड रचै अर्थात् रामफटाका तिलक लगावै और तुलसीकी माला गलेमें डालै उसे सब कोई संत कहते हैं ॥ ४ ॥

सोइ सयान जो परधनहारी ❀ जो कर दंभ सो बड़ आचारी ॥ ५ ॥
जो कह झूठ मसखरी जाना ❀ कलियुग सोइ गुनवंत बखाना ॥ ६ ॥

जो पराया द्रव्य मारै वही चतुर और जो पाखंड करै वही बड़ा आचारी कहता है ॥ ५ ॥ जो झूँठ कहना और मसखरी करना जानता हो, कलियुगमें वही गुणवान् कहाता है ॥ ६ ॥

निराचार जो स्रुतिपथत्यागी ❀ कलिजुग सोइ ज्ञानी वैरागी ॥ ७ ॥
जाके नख अरु जटा बिसाला ❀ सोइ तापस प्रसिद्ध कलिकाला ॥ ८ ॥

जो आचाररहित और वेदमार्गका त्यागनेवाला हो वही कलीयुगमें ज्ञानी और वैरागी कहाता है ॥ ७ ॥ जिसके नख और जटा वड़े हों वही कलियुगमें प्रसिद्ध तपस्वी है ॥ ८ ॥

दो०–असुभ वेष भूषन धरें, भक्ष्याभक्ष्य जे खाहिं ॥ ❀
ते जोगी ते सिद्ध नर, पूजित कलियुगमाहिं ॥ १४१ ॥ ❀

जो अशुभ अर्थात् ज्ञातिकुलमर्यादारहित वेष और भूषण धारण करैं और भक्ष्याभक्ष्य खायें, पियें, वेही मनुष्य योगी, वेही सिद्ध, और वेही कलियुगमें पूजे जाते हैं ॥ १४१ ॥

सो०–जे अपकारी चार, तिन्हकर गौरव मान्यता ॥ ❀
मन क्रम बचन लबार, ते वक्ता कलिकालमहँ ॥ १४ ॥ ❀

और जो पराया बुरा करैं उनहींका वड़ापन और मान्यता होती है, और जो मन क्रम वचनसे लपाटिये होंगे वेही कलियुगमें कथक्कड़ होते हैं ॥ १४ ॥

चौ०–नारिबिबस नर सकल गुसाँई ❀ नाचहिं नट मर्कटकी नाईं ॥ १ ॥
सूद्र द्विजन्हि उपदेसहिं ज्ञाना ❀ मेलि जनेऊ लेहिं कुदाना ॥ २ ॥

हे गोसाँई ! सब मनुष्य स्त्रीके वश रहते हैं और जैसे नट बन्दरको नचाता है इसी भाँति वे स्त्रियोंके नचाये नाचते हैं ॥ १ ॥ शूद्र ब्राह्मणोंको ज्ञान उपदेश करते हैं और जनेऊ पहिरकर बुरे २ दान लेते हैं ॥ २ ॥

सब नर कामलोभरत क्रोधी ❀ देवविप्रगुरुसंतविरोधी ॥ ३ ॥
गुनमंदिर सुंदर पति त्यागी ❀ भजहिं नारि परपुरुष अभागी ॥ ४ ॥

---

(१) गूढ़ार्थदीपिकामें देखो.

सव मनुष्य कामी लोभी और क्रोधी होते हैं और देवता, ब्राह्मण, गुरु और संतोंसे विरोध करते हैं ॥३॥ अभागी स्त्रियाँ गुणवान् और सुन्दर पतिको छोड़कर परपुरुषका सेवन करने लगती हैं. (फिरा जिसपर कलिके अवतार करुणाआह्लाद भारतीजीकी आज्ञा होगई कि "पतिमेकादशं कुधि" अर्थात् हे स्त्री! तू ग्यारह पति कर ॥ फिर क्या है एक तौ गिलोय और फिर नीमपै चढ़ी) ॥ ४ ॥

सौभागिनी विभूषनहीना ❀ विधवन्हिके सृंगार नवीना ॥ ५ ॥
गुरु सिष अंध बधिरकैं लेखा ❀ एक न सुनै एक नहिं देखा ॥ ६ ॥

सुहागिनी गहने नहीं पहिरती और विधवाओंके नित्य नवीन २ शृंगार होते हैं ॥ ५ ॥ गुरु शिष्यका [१]अंधे वहिरेकासा हिसाव होता है. एक सुनता नहीं और एकको दीखता नहीं, अर्थात् गुरु तौ शिष्यके गुण अवगुण देखता नहीं, लोभके मारे शिष्य करलिया है, और जो गुरु कहता है उसे चेला सुनता नहीं ॥ ६ ॥

हरै सिष्यधन सोक न हरई ❀ सो गुरु घोर नरकमहँ परई ॥ ७ ॥
मातु पिता बालकन्हि बुलावहिं ❀ उदर भरै सोइ धर्म सिखावहिं ॥ ८ ॥

गुरु शिष्यके धनको हर लेते हैं अर्थात् फुसलाकर तन, मन, धन, श्रीकृष्णार्पण करा लेते हैं और शोकको नहीं हरते, ऐसे गुरु घोर नरकमें पड़ते हैं ॥ ७ ॥ माता पिता वालकोंको बुलाते हैं और (जिस प्रकार) उनका पेट भरे वही कर्म सिखाते हैं ॥ ८ ॥

दो०-ब्रह्मज्ञान विनु नारि नर, कहहिं न दूसरि वात ॥ ❀
कौड़िउ कारन मोहवस, करहिं विप्रगुरुघात ॥ १४२ ॥ ❀

स्त्री पुरुष ब्रह्मज्ञानके विना दूसरी वात नहीं करते हैं, अर्थात् सव ब्रह्मज्ञानि होते हैं जिससे दान धर्म न करना पड़ै, और (आचरण ऐसे कि) अज्ञानके वश कौड़ीके लियेभी गुरु और ब्राह्मणका घात कर डालते है ॥ १४२ ॥

बाद सूद्र कर द्विजन्हसन, हम तुमते कछु घाटि ॥ ❀
जानै ब्रह्म सो विप्रवरि, आँखि दिखावहिं डाटी ॥ १४३ ॥ ❀

शूद्र (लोग) ब्राह्मणोंसे वाद विवाद अर्थात् बहस करते हैं कि क्या हम तुमसे कुछ कम है? "ब्रह्म जानाति ब्राह्मणः" जो ब्राह्म जानै वही श्रेष्ठ ब्राह्मण है, और आंख फाड़ २ कर डाट वताते है ॥१४३॥

चौ०-परतियलंपट कपटसयाने ❀ मोहद्रोहममतालपटाने ॥ १ ॥
तेइ अभेदवादी ज्ञानी नर ❀ देखा मैं चरित्र कलियुगकर ॥ २ ॥

जो लोग पराई स्त्रियोंसे भोग करनेवाले, छलमें बड़े चतुर और अज्ञान, द्रोह, और ममतामें लिपटे हुए होते हैं ॥ १ ॥ वेही अभेदवादी (अद्वैतवक्ता) और ज्ञानी कहलाते हैं. यह कलियुगका चरित्र मैंने देखा है ॥ २ ॥

---

(१) अंधे गुरुसे यह तात्पर्य नहीं है कि वे सूरदासजीके पड़पोतेही हों. परंतु जिनको शास्त्र नहीं आता है उनकीही गणना है. यथा—"श्रुतिस्मृती उभे नेत्रे ब्राह्मणानां प्रकीर्तिते । एकेन विकलः काणो द्वाभ्यामन्ध प्रकीर्त्तितः" अर्थात् वेद और धर्मशास्त्र ये दोनों ब्राह्मणोंके नेत्र हैं, जो इनमेंसे एक विषय जानता है वह काणा है और दोनों नहीं जानता वह अंधा है, सो कलिकालमें ऐसेही गुरु बहुधा होंगे कितनेही वाममार्गी और कितनेही मूर्ख तुलसीकी मालाकी दुकान लगाकर बैठेंगे. सो ऐसेके चेले होनेमें जो मनें करनेसे न माने वही शिष्य वहिरा है, और कर्णेन्द्रियसे बहिरा हो यह तात्पर्य नहीं है.

(२) एकवार राजा जनकने अपने गुरु याज्ञवल्क्यऋषिसे अनेक प्रश्न किये जब राजा संशयसे निवृत्त होकर अभय ब्रह्मपदको प्राप्त हुये तब राजाने गुरुसे कहा कि हे भगवन्। मेरे सब संदेह दूर भये इसकी दक्षिणामें सव राज्य आपके अर्पण है, तव ऋषिने कहा मैंने इसे अंगीकार करके फिर प्रसन्न हो तुझे प्रसाद दिया; तुम इस राज्यको गुरुका प्रसाद समझ प्रतिपालन करो. पहिले ऐसे गुरु होतेथे.

आपु गये अरु आनहिं घालहिं ❀ जो कोइ स्रुतिमारग प्रतिपालहिं ॥ ३ ॥
कल्प कल्प भरि इक इक नर्का ❀ परहिं जे दूषहिं स्रुति करि तर्का ॥ ४ ॥

आप तौ नष्ट हुये, सो हुये और दूसरे जो कोई वेदमार्गका पालन करैं उनकोभी नष्ट करते हैं ॥३॥ (वे मनुष्य) जो वेदमें तर्क करके दोष लगाते हैं, कल्प २ भर एक २ नरकमें पड़ैंगे ॥ ४ ॥

जे वर्णाधम तेलि कुम्हारा ❀ स्वपच किरात कोल कलवारा ॥ ५ ॥
नारि मुई गृहसंपति नासी ❀ मुंड़ मुँड़ाइ भये संन्यासी ॥ ६ ॥

जो नीचजाति अर्थात् तेली, कुम्भार, चांडाल, भील, कोल, और कलार हैं ॥५॥ जब उनकी स्त्री मर गई और घरकी सब संपत्ति नाश होगई तौ मूँड़ मुड़ाकर (दमड़ीके गेरूमें कपड़े रँगकर) संन्यासी हो जाते हैं ॥ ६ ॥

ते विप्रनसन पाँव पुजावहिं ❀ उभयलोक जिजहाथ नसावहिं ॥ ७ ॥
विप्र निरक्षर लोलुप कामी ❀ निराचार सन वृषलीस्वामी ॥ ८ ॥

और वे ब्राह्मणोंसे पैर पुजाकर दोनों लोकोंको अपने हाथ नष्ट करते हैं ॥ ७ ॥ ब्राह्मण कोरे निरक्षरभट्टाचार्य, लोभी, महानीचजातिके यहांभी भोजन करनेवाले, कामी, आचाररहित, और मूर्ख होते हैं और वृषली कहिये जिसके माँवापका ठीक नहीं उनके पति बन जाते हैं ॥ ८ ॥

सूद्र करहिं जप तप व्रत नाना ❀ बैठे बरासन कहहिं पुराना ॥ ९ ॥
सब नर कल्पित करहिं अचारा ❀ जाइ न बरनि अनीति अपारा ॥ १० ॥

शूद्र (लोग) जप, तप, व्रत, दान करते हैं और सुन्दर आसनपर बैठकर पुराण कहते हैं ॥९॥ सब मनुष्य कल्पना किये अर्थात् जो मनमें आवै सोई आचरण करते हैं और ऐसी २ अधिक अनीति करते हैं कि वर्णन नहीं की जाती ॥ १० ॥

दो०–भए बरनसंकर कलिहिं, भिन्न सेतु सब लोग ॥
करहिं पाप दुख पावहिं, भय रुज सोक वियोग ॥१४४॥

कलियुगमें मनुष्य बहुधा वर्णसंकर पैदा होते हैं और सब मर्यादारहित हो पाप करते हैं; जिससे दुःख, भय, बीमारी, शोक और वियोग भोगते हैं ॥ १४४ ॥

स्रुतिसंमत हरिभक्तिपथ, संयुत ज्ञान विवेक ॥
ते न चलहिं नर मोहबस, कल्पहिं पंथ अनेक ॥ १४५ ॥

वेदकी संमति और ज्ञानवैराग्ययुक्त ऐसा जो रघुनाथजीकी भक्तिका मार्ग है उसपर तौ मनुष्य मोहके वश होकर चलते नहीं हैं और हठ कर करके अनेक नये मत चलाते हैं ॥ १४५ ॥

---

(१) "गुरोर्गिरः पञ्च दिनान्यधीत्य वेदान्तशास्त्राणि दिनत्रयं च ।
अमी समाघ्राय वितर्कवादान् समागताः कुक्कुटमिश्रपादाः ॥
"अर्थात् पांचदिन मीमांसाशास्त्र और तीन दिन वेदान्तशास्त्र पढ़कर और न्यायशास्त्रको नाकसे सूंघकर ये कुक्कुटमिश्रजी आये. ऐसे पण्डित ब्राह्मण बहुत होंगे.

श्लोक-(२) "विप्राः शूद्रासमाचाराः संध्यावन्दनवर्जिताः। शूद्रान्नभोजिनः क्रूराः वृषलीरतिकामुकाः ॥१॥
दास्यन्ति धनलोभेन स्वदारान्नीचजातिषु ॥"
अर्थात्–ब्राह्मण शूद्रकेसे आचरण करेंगे, संध्यावन्दन छोड़ देंगे, शूद्रोंके यहां खाते फिरेंगे, बड़े क्रूर और वेश्यागामी होंगे और धनके लोभसे अपने यहाकी स्त्रियोंको नीचजातिको भोगनेको दे देंगे ॥

(३) जिनकी मा कोई वाप कोई ॥

(४) "न मां दुष्कृतिनो मूढाः प्रपद्यंते नराधमाः । माययाऽपहृतज्ञाना आसुरं भावमाश्रिताः"
अर्थात्–मायाके वश जिनका ज्ञान नष्ट हो गया और असुरपनेको प्राप्त ऐसे दुराचारी नीच मनुष्य मेरी शरण नहीं आते ।

छं०-बहु धाम सँवारहिं जोगजती, विषया हरि लीन्हि रही बिरती ॥
तपसी धनवंत दरिद्र गृही, कलिकौतुक तात न जात कही २७

योगी और यती बहुतसे धामकहिये मन्दिर मकानोंको सम्हालते हैं, उनका, जो वैराग्य था सो विषयोंने हर लियाहै. तपस्वी, धनवान् और गृहस्थ दरिद्री होतेहैं. हेप्यारे! कलियुगके कौतुक कहे नहीं जाते

कुलवंति निकारहिं नारि सती, गृह आनहिं चेरिहिं चोर गती॥
सुत मानहिं मातु पिता तबलों, अबलानन दीख नहीं जबलों२८

अच्छे कुलकी पतिव्रता स्त्रियोंको निकाल देते हैं और घरमें चेरियोंको चुरा २ के लाते हैं और मातापिताको पुत्र तभीतक मानते हैं जबतक स्त्रीका मुख नहीं दिखाई देता ॥ २८ ॥

ससुरारि पियारि लगी जबते, रिपुरूप कुटुंब भयो तबते ॥
नृप पापपरायन धर्म नहीं, करु दंड विडंब प्रजा नितहीं ॥२९॥

जबसे ससुराल प्यारी लगी तभीसे कुटुम्ब वैरीका रूप हो गया. राजा पापमें प्रीति करते हैं, धर्म नहीं रहता, नित्यही प्रजापर दंड करते और सताते हैं ॥ २९ ॥

धनबंत कुलीन मलीन अपी, द्विजचिह्न जनेउ उघार तपी ॥
नहिं मान पुरानहिं वेदहिंसो, हरिसेवक संत सही कलि सो ३०

धनवानही अच्छे कुलके हैं चाहे मलिनही क्यों न हों। ब्राह्मणोंका चिह्न जनेऊ[1] और तपस्वियोंका नग्न रहना है, जो वेदपुराणको न मानैं वही कलियुगमें सच्चा संत और भगवान्का सेवक है ॥३०॥

कविवृंद उदार ध्वनी न सुनी, गुनदूषक बात न कोपि गुनी ॥
कलि बारहिं बार दुकाल परैं, बिनु अन्न दुखी सबलोग मरैं ३१

श्रेष्ठ कवियोंके समाजकी ध्वनि तो सुनाई नहीं देती गुणोंमें दोष निकालनेवाले रह गये हैं, बातका जाननेवाला गुणी कोई नहीं रहा ॥ कलियुगमें बारंबार अकाल पड़ते हैं और बिना अन्नके दुखी होकर सबलोग मरते हैं ॥ ३१ ॥

दो०-सुनु खगेस कलि कपट हठ, दंभ द्वेष पाखंड ॥
काम क्रोध लोभादि मद, व्यापि रहेउ ब्रह्मंड ॥ १४६ ॥

हे गरुड़जी! सुनो! कलियुगमें कपट, हठ, दंभ, द्वेष, पाखंड, काम, क्रोध, लोभ, और अभीमान आदि संसारमें व्याप्त रहते हैं ॥ १४६ ॥

तामस धर्म करहिं नर, जप तप मख व्रत दान ॥
देव न बरषै धरनिपर, बये न जामहिं धान ॥ १४७ ॥

मनुष्य तामसी[2] धर्म, जप, तप, यज्ञ, व्रत और दान करते हैं, जिससे पृथ्वीपर मेघ नहीं बरसते और बोए हुये धान नहीं उपजते ॥ १४७ ॥

छं०-अबला कचभूषन भूरि छुधा, धनहीन दुखी ममता बहुधा ॥
सुख चाहहिं मूढ न धर्मरता, मति थोरि कठोर न कोमलता३२

---

(१) यथा-"ब्राह्मण्यचिह्नमेतावत् केवलं सूत्रधारणम् ॥" अथ छन्दसे मिलता है.

(२) गीतायां-"अदेशकाले यद्दानमपात्रेभ्यश्च दीयते ॥ असत्कृतमवज्ञातं तत्तामसमुदाहृतम् ॥ १ ॥ अर्थात्-जो दान असत्कार और अवज्ञायुक्त देशकालके विना कुपात्रोंको दिया जाता है उसे तामस दान कहते हैं ॥

कलिमें स्त्रियोंके बालही गहने होते हैं, भूख बहुत लगही है, मनुष्य धनसे रहित दुखी होते हैं, ममता बहुत होती है, मूर्ख सुख चाहते हैं. और धर्ममें प्रीती नहीं करते, बुद्धि थोड़ी होती है, कठोर होते हैं, उनमें कोमलता नहीं होती ॥ ३२ ॥

नर पीडित रोग न भोग कहीं, अभिमान विरोध अकारनही ॥❀
लघु जीवन संवत पंच दसा, कल्पांत न नास गुमान असा॥३३ ❀

मनुष्य रोगोंसे दुखी रहते हैं, आनन्द कहीं नहीं, विना कारणही अभिमान और विरोध करते हैं, थोड़ा जीवन दश पांच वर्षका होता है जिसमें अभिमान ऐसा होता है कि कल्पके अंतमेंभी नाश न होगा ॥ ३३ ॥

कलिकाल विहाल किये मनुजा, नहिं मानत कोउ अनुजा तनुजा ❀
नहिं तोष विचार न सीतलता, सब जाति कुजाति भये मँगता॥३४❀

कलियुगने मनुष्य विहाल कर दिये, कोई बहन बेटीको नहीं मानते, न संतोष है, न विचार है, न शीतलता है, सब जाति कुजातिके मांगनेवाले हो गये ॥ ३४ ॥

इरषा परुषा छल लोलुपता, भरिपूरि रही समता बिगता ॥ ❀
सब लोग वियोग बिसोक हुए, बरनाश्रमधर्म अचार गए ॥३५॥❀

ईर्षा, कठोरता, छल, और अति लोभ आदि भरपूर छाये रहते हैं और मिलनसारीका तो नाश हो गया. सब लोग वियोगमें दुखी होते हैं और वर्ण और आश्रमोंके धर्म और आचार चले गये ॥३५॥

दम दान दया नहिं जान पनीं, जड़ता परवंचकता सु घनीं ॥ ❀
तनुपोषक नारि नरा सगरे, परनिंदक जो जगमें बगरे ॥ ३६ ॥ ❀

दम, दान दयाको कोई रत्तीभर नहीं जानता (जहां देखो वहां) मूर्खता और ठगई अधिक सुनी जाती है. सब स्त्रीपुरुष शरीरके पोषण करनेवाले होते हैं और संसारमें पराई निन्दा करनेवाले फैल जाते हैं ॥ ३६ ॥

दो०–सुनु व्यालारि कराल कलि, मल अवगुन आगार ॥ ❀
गुनौं बहुत कलिकालकर, बिनु प्रयास निस्तार ॥ १४८ ॥ ❀

हे गरुड़जी ! सुनो, कठिन कलियुग पाप और अवगुणोंका स्थान है. पर कलियुगके गुणभी बहुत हैं जिनसे लोग विनाही परिश्रमके संसारसे पार हो जाते हैं ॥ १४८ ॥

कृतयुग त्रेता द्वापरहुँ, पूजा मख अरु जोग ॥ ❀
जो गति होइ सो कलिहिं हरि, नामते पावहिं लोग ॥ १४९ ॥ ❀

सतयुग, त्रेता और द्वापरमें पूजा यज्ञ और योगसे जो गति होतीथी वही कलियुगमें लोग भगवान्के नामसे पाते हैं ॥ १४९ ॥

चौ०–कृतयुग सब जोगी बिज्ञानी ❀ करि करिध्यान तरहिं भव प्रानी ॥ १ ॥
त्रेता बिबिध यज्ञ नर करहीं ❀ प्रभुहिं समर्पि कर्म भव तरहीं ॥ २ ॥

सतयुगमें सब योगी और विज्ञानी भगवान्का ध्यान करके तर जाते हैं ॥ १ ॥ त्रेतामें मनुष्य बहुतसे कर्म करते हैं और कर्मोंको भगवान्के अर्पण कर संसारसे पार हो जाते हैं ॥ २ ॥

द्वापर करि रघुपतिपदपूजा ❀ नर भव तरहिं उपाय न दूजा ॥ ३ ॥
कलि केवल हरिगुनगनगाहा ❀ गावत नर पावहिं भवथाहा ॥ ४ ॥

द्वापरमें रामचन्द्रजीके चरणोंकी पूजा कर मनुष्य संसारसे तर जाते हैं, दूसरा उपाय नहीं ॥ ३ ॥ कलियुगमें केवल भगवान्के गुणोंके समूहोंके गानेसे मनुष्य संसारकी थाह पाते हैं ॥ ४ ॥

कलियुग जोग जज्ञ नहिं ज्ञाना ❀ एक अधार रामगुनगाना ॥ ५ ॥
सब भरोस तजि जो भजु रामहिं ❀ प्रेमसमेत गाव गुनग्रामहिं ॥ ६ ॥

कलियुगमें योग, यज्ञ और ज्ञान कुछ नहीं हैं, केवल रामचन्द्रजीके गुणोंका गानही एक आधार है ॥ ५ ॥ जो सब भरोसेको छोड़कर एक रामचन्द्रजीका भजन करते हैं और स्नेहसहित उनके गुणोंके समूहोंका गान करते हैं ॥ ६ ॥

सो भव तरु कछु संसय नाहीं ❀ नामप्रताप प्रगट कलिमाहीं ॥ ७ ॥
कलिकर एक पुनीत प्रतापा ❀ मानस पुण्य होइ नहिं पापा ॥ ८ ॥

वे संसारसे तर जाते हैं (इसमें) सन्देह नहीं. नामका प्रताप कलियुगमें प्रत्यक्ष है ॥ ७ ॥ कलियुगका एक पवित्र प्रताप है कि मानसिक पुण्य होता है और पाप नहीं होता ॥ ८ ॥

दो०–कलियुगसम युग आन नहिं, जो नर करि बिस्वास ॥ ❀
गाइ रामगुनगन विमल, भवतरु विनहिं प्रयास ॥ १५० ॥ ❀

जो मनुष्य विश्वास करै तो कलियुगके समान और युग नहीं, जिसमें रामचन्द्रजीके निर्मल गुणोंको गाकर मनुष्य विनाही परिश्रमके तर जाते हैं ॥ १५० ॥

प्रगट चारि पद धर्मके, कलिमहँ एक प्रधान ॥ ❀
येन केन विध दीनहुँ, दान करै कल्यान ॥ १५१ ॥ ❀

धर्मके चार पद प्रगट हैं, अर्थात् तप, ज्ञान, यज्ञ और दान–उनमेंसे कलियुगमें एक प्रधान है अर्थात् जैसे बनै वैसे दीनोंको दान करनेसे कल्याण होता है ॥ १५१ ॥

चौ०–कृत युगधर्म होहिं सब केरे ❀ हृदय राम मायाके प्रेरे ॥ १ ॥
सुद्धतत्त्व समता विज्ञाना ❀ कृतप्रभाव प्रसन्न मन जाना ॥ २ ॥

सतयुग आदि चारों युगोंमें धर्म तौ सबके हृदयमें प्रसन्न रामचन्द्रजीकी मायाकी प्रेरणासे होते हैं ॥ १ ॥ सतयुगमें मनुष्य शुद्ध सतोगुण समता और विज्ञानके प्रभावसे मनमें प्रसन्न रहते हैं ॥ २ ॥

सत्व बहुत कछु रज रति कर्मा ❀ सबबिध सुभ त्रेताकर धर्मा ॥ ३ ॥
बहु रज स्वल्प सत्य कछु तामस ❀ द्वापर हर्षसोकभयमानस ॥ ४ ॥

और सतोगुण तौ बहुत और रजोगुणमें थोड़ी प्रीति हो ऐसे सब काम सुन्दर त्रेताके धर्म हैं ॥ ३ ॥ द्वापरमें बहुतसा रजोगुण,थोड़ा सतोगुण और कुछ तमोगुण होता है उससे मन हर्ष शोक और भययुक्त रहता है ॥ ४ ॥

---

(१) श्लोक—"रामेति वर्णद्वयमादरेण सदा स्मरन्मुक्तिमुपैति जन्तुः ॥
कलौ युगे कल्मषमानसानामन्यत्र धर्मे खलु नाधिकारः ॥"

अर्थात् राम इन दो अक्षरोंको सदा आदरपूर्वक जपनेसे प्राणी मुक्ति पाता है, कलिकालमें पापी मनुष्योंको और धर्ममें अधिकार नहीं है ॥

(२) श्लोक—"कलेर्दोषनिधे राजन्नस्ति ह्येको महागुणः ।
कीर्तनादेव कृष्णस्य मुक्तसंगः परं व्रजेत् ॥"

अर्थात् दोषोंके निधि ऐसे कलियुगमें एक बड़ा भारी गुण है कि रामकृष्णके कीर्तनसेही मनुष्य मुक्तिको प्राप्त होता है ॥

(३) श्लोकः—"तपः परं कृतयुगे त्रेतायां ज्ञानमुच्यते ॥
द्वापरे यज्ञमेवाहुर्दानमेकं कलौ युगे ॥ १ ॥"
अर्थ दोहेसे मिलता है.

तामस बहुत रजोगुन थोरा ❀ कलिप्रभाव विरोध चहुँओरा ॥ ५
बुध जुगधर्म जानि मनमाहीं ❀ तजि अधर्मरति धर्म कराहीं ॥ ६ ॥

और कलियुगमें तमोगुण बहुत और रजोगुण थोड़ा रहता है (और सतोगुणका नाम नहीं) इस कारण कलिप्रभावसे चारों ओर विरोध फैल जाता है ॥ ५ ॥ बुद्धिमान् युगोंके धर्मोंको मनमें जानकर अधर्मसे प्रीति छोड़ धर्म करते हैं ॥ ६ ॥

कालधर्म नहिं ब्यापहि ताही ❀ रघुपतिचरनप्रीति अति जाही ॥ ७ ॥
नटकृत कपट बिकट खगराया ❀ नट सेवकहिं न व्यापै माया ॥ ८ ॥

कालकर्म उसे नहीं व्यापता जिसकी रामचन्द्रजीके चरणोंमें विशेष प्रीति होती है ॥ ७ ॥ हे गरुड़जी ! नटका कियाहुआ कपट विचित्र होता है परंतु वह नटके सेवकको नहीं व्यापता ॥ ८ ॥

दो०-हरिमायाकृत दोष गुन, बिनु हरिभजन न जाहिं ॥ ❀
भजिय राम सब काम तजि, अस बिचारि मनमाहिं ॥१५२॥❀

भगवान्की मायाके किये हुये दोष गुण विना भगवान्के भजनके नहीं जाते ऐसा मनमें विचार सब कामनाओंको छोड़कर रामचन्द्रजीका भजन करना चाहिये ॥ १५२ ॥

तेहि कलिकाल वर्ष बहु, बसेउँ अवध बिहगेस ॥ ❀
परेउ दुकाल बिपत्तिवस, तब मैं गयउँ बिदेस ॥ १५३ ॥ ❀

हे गरुड़जी ! उस कलियुगमें मैं बहुत वर्षोंतक अयोध्यापुरीमें रहा फिर अकाल पड़ा तौ विपत्तिके वश मैं परदेशको गया ॥ १५३ ॥

चौ०-गयउँ उजैनि सुनहु उरगारी ❀ दीन मलीन दरिद्र दुखारी ॥ १ ॥
गए काल कछु संपति पाई ❀ तहँ पुनि करौं संभुसेवकाई ॥ २ ॥

हे गरुड़जी ! सुनो, मैं दीन, मलीन, दरिद्री और दुखी होकर उज्जैन नगरीको गया ॥१॥ और कुछ समय बीतनेपर मुझे कुछ संपत्ति मिलगई तौ फिर वहां महादेवकी सेवा करने लगा ॥ २ ॥

विप्र एक वैदिक सिवपूजा ❀ करै सदा तेहि काज न दूजा ॥ ३ ॥
परमसाधु परमारथविंदक ❀ संभुउपासक नहिं हरिनिंदक ॥ ४ ॥

वहां एक ब्राह्मण वेदकी रीतेसे महादेवकी पूजा सदा करता था उसे और दूसरा कुछ काम नहीं था ॥ ३ ॥ सो वह बड़ा साधु, परमार्थका जाननेवाला, महादेवका उपासक था और भगवान्की निन्दा नहीं करता था ॥ ४ ॥

सेवौं मैं तेहि कपटसमेता ❀ द्विज दयालु अति नीतिनिकेता ॥ ५ ॥
बाहर नम्र देखि मोहिं साँईं ❀ बिप्र पढ़ाव पुत्रकी नाईं ॥ ६ ॥

मैं कपटसे उसकी सेवा करनेलगा, परंतु ब्राह्मण बड़ा नीतिका जाननेवाला और दयालु था. ॥ ५ ॥ हे स्वामी ! उस ब्राह्मणने मुझे बाहरसे नम्र देखकर पुत्रकी भांति पढ़ाया ॥ ६ ॥

संभुमंत्र मोहिं द्विजवर दीन्हा ❀ सुभ उपदेस बिबिधबिध कीन्हा ॥ ७ ॥
जपौं मंत्र सिवमंदिर जाई ❀ हृदय दंभ अहमिति अधिकाई ॥ ८ ॥

श्रेष्ठ ब्राह्मणने मुझको महादेवका (पंचाक्षरी) मंत्र दिया और अनेक प्रकारसे अच्छा उपदेश किया ॥७॥ महादेवके मन्दिरमें जाकर मंत्र जपा करूं परंतु हृदयमें कपट और अहंकार विशेष होगया ॥८॥

दो०-मैं खल मलसंकुलमति, नीचजाति बस मोह ॥ ❀
द्विज हरिजन देखत जरौं, करौं विष्णुकर द्रोह ॥ १५४ ॥ ❀

मैं दुष्ट, पापबुद्धि, नीचजाति और ऐसा अज्ञानके वश था कि ब्राह्मण और हरिभक्तोंको देखतेही जलजाऊँ और विष्णुसे वैर करूँ ॥ १५४ ॥

सो०–गुरु नित मोहिं प्रबोध, दुखित देखि आचरन मम ॥ ❀
मोहिं उपजै अति क्रोध, दंभिहिं नीति कि भावई ॥ १५ ॥ ❀

गुरु मुझे नित्य समझावें और मेरे आचरणोंको देखकर दुखी रहैं परन्तु मुझे बड़ा क्रोध उत्पन्न हो, क्योंकि पाखंडीको क्या नीति अच्छी लगती है? अर्थात् नहीं लगती ॥ १५ ॥

चौ०–एक बार गुरु लीन्ह बुलाई ❀ मोहिं नीति बहु भाँति सिखाई ॥ १ ॥
सिवसेवाकर फल सुत सोई ❀ अविरल भक्ति रामपद होई ॥ २ ॥

एकवार गुरुने मुझे बुलाकर बहुत प्रकार नीति सिखाई कि ॥ १ ॥ हे पुत्र! महादेवजीकी सेवाका यही फल है कि रामचन्द्रजीके चरणोंमें अचल भक्ति हो ॥ २ ॥

रामहिं भजहिं तात सिव धाता ❀ नर पामरकर केतिक बाता ॥ ३ ॥
जासु चरन सिव अज अनुरागी ❀ तासु द्रोह सुख चहसि अभागी ॥ ४ ॥

हे प्यारे! महादेव और ब्रह्मातक रामचन्द्रजीका भजन करते हैं, फिर नीच मनुष्यका क्या कहना है ? ॥३॥ जिसके चरणोंसे महादेव और ब्रह्मा प्रीति करते हैं, उससे विमुख होकर सुख चाहैं सो अभागा है ॥ ४ ॥

हरकहँ हरिसेवक गुरु कहेऊ ❀ सुनि खगनाथ हृदय मम दहेऊ ॥ ५ ॥
अधम जाति मैं विद्या पाए ❀ भयउँ यथा अहि दुग्ध पिआए ॥ ६ ॥

हे गरुड़! (एकदिन) गुरुने महादेवको विष्णु भगवान्‌का सेवक कहा, यह सुनकर मेरा हृदय जलने लगा ॥ ५ ॥ मैं नीच जाति विद्या पानेसे ऐसा होगया जैसा दूध पिलानेसे सर्प हो जाता है ॥ ६ ॥

मानी कुटिल कुभाग्य कुजाती ❀ गुरुसन द्रोह करौं दिन राती ॥ ७ ॥
अति दयालु गुरु स्वल्प न क्रोधा ❀ पुनि पुनि मोहिं सिखाव सुबोधा ॥ ८ ॥

मैं अभिमानी, कुटिलदुर्भाग्य और नीच जाति ऐसा होगया कि रातदिन गुरुसे द्रोह करने लगा ॥ ७ ॥ परंतु गुरु बड़े कृपा करनेवाले थे, उन्हैं थोड़ाभी क्रोध नही था. वारंवार मुझे अच्छा ज्ञान सिखाया करतेथे ॥ ८ ॥

जेहिते नीच बड़ाई पावा ❀ सो प्रथमहिं हठि ताहि नसावा ॥ ९ ॥
धूम अनलसंभव सुन भाई ❀ तेहि बुझाव घनपदवी पाई ॥ १० ॥

परन्तु नीच जिससे बड़ाई पाता है उसेही वह पहले हठपूर्वक नाश करता है ॥ ९ ॥ हे भाई! सुनो धुँआ अग्निसे उत्पन्न होता है परन्तु वह बादलकी पदवी पाकर उसको बुझा देता है ॥ १० ॥

रज मगु परी निरादर रहई ❀ सबकर पदप्रहार नित सहई ॥ ११ ॥
मरुत उड़ाव प्रथम तेहि भरई ❀ पुनि नृप नयन किरीटन्हि परई ॥ १२ ॥

धूलमार्गमें निरादरसे पड़ी रहती है और नित्य सबके पैरोंकी लात सहती है ॥११॥ पर पवनके उड़ानेसे पहले तौ उस पवनहीमें भर जाती फिर राजाओंके नेत्र और मुकुटोंमें पड़ती है ॥ १२ ॥

---

(१) नीतौ—"पयःपानं भुजङ्गानां केवलं विषवर्धनम्। उपदेशो हि मूर्खाणां प्रकोपाय न शान्तये"—अर्थात् जैसे सर्पोंको दूध पिलानेसे केवल विष बढ़ता है वैसेही मूर्खोंको उपदेश देनेसे वे कोप करते हैं, कुछ शांत नहीं होते ॥

(२) जैसा कहा है कि "कृतमपि महोपकारं पय इव पीत्वा निरातंकम्। प्रत्युत हन्तुं यतते काकोदरसोदरः खलो जगति" कि अर्थात् खल मनुष्य किये हुये उपकारको सर्पवत् दुग्धके समान निर्भय पीकर उलटा उपकारीके प्राण लेनेका यत्न करता है.

सुनु खगपति अस समुझि प्रसंगा ❀ बुध नहिं करहिं अधमकर संगा ॥ १३ ॥
कवि कोविद गावहिं अस नीती ❀ खलसन कलह नहीं भल प्रीती ॥ १४ ॥

हे गरुड़जी! सुनो ऐसा प्रसंग समझकर बुद्धिमान् नीचोंका साथ नहीं करते ॥ १३ ॥ कवीश्वर और पंढित ऐसी नीति कहते हैं कि दुष्टोंसे वैर और प्रीति दोनों अच्छे नहीं ॥ १४ ॥

उदासीन बहु रहिय गुसाँई ❀ खल परिहरिय स्वानकी नाँई ॥ १५ ॥
मैं खल हृदय कपट कुटिलाई ❀ गुरु हित कहैं न मोहिं सुहाई ॥ १६ ॥

हे गोसाँई! उनसे अति उदासीन रहिये और दुष्टोंको कुत्तेके भांति त्याग देना चाहिये ॥ १५ ॥ मैं ऐसा दुष्ट, हृदयका कपटी और कुटिल था कि गुरुतौ हितकी कहैं और मुझे अच्छा न लगै ॥ १६ ॥

दो०-एकबार हरमंदिर, जपत रहेउँ सिवनाम ॥ ❀
गुरु आयउ अभिमानते, उठि नहि कीन्ह प्रनाम ॥ १५५ ॥ ❀

मैं एकवार महादेवजीके मन्दिरमें शिवजीका नाम जपता था सो गुरु चलेआये तौ मैंने अभिमानके मारे उठकर प्रणाम नहीं किया ॥ १५५ ॥

सो दयालु नहिं कहेउ कछु, उर न रोष लवलेस ॥ ❀
अति अघ गुरुअपमानता, सहि नहिं सकेउ महेस ॥ १५६ ॥ ❀

उन कृपालु गुरुने न तो कुछ कहा और न उनके हृदयमें लेशमात्र क्रोध हुआ, परन्तु गुरुको निरादरके बड़े पापको महादेवजी नहीं सह सके ॥ १५६ ॥

चौ०-मंदिरमाँझ भई नभवानी ❀ रे हतभाग्य अधम अभिमानी ॥ १ ॥
यद्यपि तव गुरु स्वल्प न क्रोधा ❀ अति कृपालु चित सम्यक बोधा ॥ २ ॥

सो मन्दिरमें आकाशवाणी हुई कि अरे अभागे! अरे नीच अभिमानी! ॥ १ ॥ यद्यपि तेरे गुरुको जराभी क्रोध नहीं और चित्तके वड़े कृपालु और वड़े ज्ञानवान् हैं ॥ २ ॥

तदपि साप देहौं सठ तोहीं ❀ नीतिविरोध सोहाइ न मोहीं ॥ ३ ॥
जो नहिं करौं दंड खल तोरा ❀ भ्रष्ट होइ स्रुतिमारग मोरा ॥ ४ ॥

तौभी हे मूर्ख! मैं तुझे शाप दूंगा क्योंकि मुझे नीतिके विरुद्ध अच्छा नहीं लगता ॥ ३ ॥ अरे खल! जो तुझे दंडित नहीं करूंगा तौ मेरा वेदमार्ग भ्रष्ट हो जायगा ॥ ४ ॥

---

(१) नीतौ श्लोकः–"मैत्री न मंगलकरी कलहो न योग्यो न श्रेयसेऽनुचरता प्रभुता न वृद्ध्यै । दूरातिदूरतरदूरतरातिदूरादौदास्यमेव सुखदं खलु दुर्जनानाम् ॥"अर्थात् दुष्टोंकी मित्रता मंगलकारी नहीं और न उनसे कलह करना योग्य है, न उनकी सेवासे यश होता है और न प्रभुतासे वृद्धि होती है, तौ क्या करना चाहिये, कि उन दुष्टोंसें दूर अति दूर उससेभी दूर और उससे महादूर रहै, इस प्रकार उनसे उदासीनताही सुखदायक है॥

(२) ऐसा लेख है कि—"गुरुं दृष्ट्वा समुत्तिष्ठेदभिवाद्य कृताञ्जलिः" अर्थात् गुरूको देखतेही नमस्कार करके अंजली वांधकर स्थित होजाय ॥

(३) तंत्रसारे श्लोकः—"गुरौ सन्निहिते यस्तु पूजयेदग्रतो न तम् ॥ स दुर्गतिमवाप्नोति पूजा च विफला भवेत् ॥१॥ ज्ञानार्णवे—"गुरुः पिता गुरुर्माता गुरुर्देवो गुरुर्गतिः । शिवे रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन॥२॥ गुरोर्हितं प्रकर्त्तव्यं वाङ्मनःकायकर्मभिः । अहिताचरणाद्देवि विष्ठायां जायते कृमिः ॥३॥ क्रियासारे–"गुरुर्माता पिता स्वामी वान्धवः सुहृदः शिवः । इत्याधाय मनो नित्यं भजेत् सर्वात्मना गुरुम् ॥ ४ ॥

अर्थात्–गुरुके पास आनेपर जो आगे बढ़कर उसका सत्कार नहीं करता वह दुर्गतिको प्राप्त होता है, उसकी सब पूजा निष्फल होती हैं. यह **तंत्रसारमें** लिखा है ॥ और **ज्ञानार्णवमें** लिखा है कि गुरुही माता पिता देवता और सद्गति हैं. यदि शिव रुष्ट हो जाँय तौ गुरु वचा ले, और जो गुरु रूस जाँय तौ वचानेवाला कोई नहीं है ॥ २ ॥ इसलिये गुरुका हित मन कर्म वचनसे करना चाहिये. और महादेव कहते हैं हे देवी! गुरुके विरुद्ध

जे सठ गुरुसन ईर्षा करहीं ❀ रौरव नरक कल्पसत परहीं ॥ ५ ॥
तिर्यकयोनि पुनि धरहिं सरीरा ❀ अयुत जन्मभरि पावहिं पीरा ॥ ६ ॥

जो मूर्ख गुरूसे ईर्षा करते हैं वे सौ कल्पतक रौरव नरकमें पड़ते हैं ॥ ५ ॥ फिर तिर्यक्‌योनिमें (पक्षीआदिका) शरीर धारण करके दस हजार जन्मतक दुःख भोगते हैं ॥ ६ ॥

बैठि रहेसि अजगर इव पापी ❀ सर्प होहु खल मल मति ब्यापी ॥ ७ ॥
महाबिटपकोटरमहँ जाई ❀ रहु रे अधम अधोगति पाई ॥ ८ ॥

अरे पापी! अजगरकी भाँति बैठा रहा (सो इस कारण) सर्प होगा. अरे खल! तेरी बुद्धिमें पाप समा गया है ॥ ७ ॥ हे नीच! किसी बड़े वृक्षके घोंसलेमें जाकर और अधोगतिको पाकर रह ॥ ८ ॥

दो०-हाहाकार कीन्ह गुरु, सुनि दारुन सिवसाप ॥ ❀
कंपित मोहिं बिलोकि अति, उर उपजा परिताप ॥ १५७ ॥ ❀

महादेवके कठिन शापको सुनकर गुरुने बड़ा हाहाकार किया और मुझे बहुत काँपता हुआ देखकर उनके मनमें बड़ा संताप उत्पन्न हुआ ॥ १५७ ॥

करि दंडवत सप्रेम गुरु, सिवसन्मुख कर जोरि ॥ ❀
बिनय करत गद्गद गिरा, समुझि घोर गति मोरि ॥ १५८ ॥ ❀

गुरुजी मेरी घोर गतिको समझ स्नेहसहित दंडवत् करके और महादेवके सन्मुख हाथ जोड़कर गद्गद वाणीसे स्तुति करने लगे ॥ १५८ ॥

छंद भुजंगप्रयात-रुद्राष्टकस्तोत्रम् ।

छं०-नमामीशमीशाननिर्वाणरूपम् । विभुं व्यापकं ब्रह्म वेदस्वरूपम् ॥ ❀
अजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहम् । चिदाकाशमाकाशवासं भजेऽहम्

हे शंकर! स्वामी, मुक्तिस्वरूप, समर्थ, व्यापक, ब्रह्म और वेदमूर्त्ति, मैं आपको प्रणाम करताहूं। जन्मरहित, निर्गुण, संकल्पविकल्परहित, चेष्टारहित, ज्ञानस्वरूप, सूक्ष्म, और स्थूल, आकाशोंमें बसनेवाले आपको भजताहूं ॥ ३७ ॥

निराकारमोंकारमूलं तुरीयम् । गिराज्ञानगोतीतमीशं गिरीशम् ॥ ❀
करालं महाकालकालं कृपालुम् । गुणागारसंसारपारं नतोऽहम् ॥ ३८ ॥ ❀

निराकार ओंकारके कारण, जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्तिसे परे, वाणी और ज्ञानेन्द्रियोंसे दूर, कैलासके वासी, भयंकर, महाकालके कालस्वरूप, दयालु, गुण तथा संसारसे परे ऐसे आपको नमस्कार करताहूं ॥ ३८ ॥

तुषाराद्रिसंकाशगौरं गभीरम् । मनोभूतकोटिप्रभाश्रीशरीरम् ॥ ❀
स्फुरन्मौलिकल्लोलिनी चारुगंगा । लसद्भालबालेंदुकंठेभुजंगा ॥ ३९ ॥ ❀

हिमगिरिके समान श्वेतवर्ण, गंभीर स्वभाव, कोटि कामदेवोंके समान सुन्दर शरीरवाले, जटाजूटमें लहरें लेतीहुई सुन्दर गंगाजीको धारण किये, ललाटपर बाल चन्द्रसे शोभित, कंठमें सर्प लपेटे ॥ ३९ ॥

चलत्कुंडलं शुभ्रनेत्रं विशालम् । प्रसन्नाननं नीलकंठं दयालुम् ॥ ❀
मृगाधीशचर्मांबरं मुंडमालम् । प्रियं शंकरं सर्वनाथं भजामि ॥ ४० ॥ ❀

कर्णोंमें चंचल कुंडल पहिरे, श्वेत और विशाल नेत्रवाले, प्रसन्नमुख, नीलकंठ, दयालु, सिंहचर्मके वस्त्र तथा मुंडमालामें प्रीति करनेवाले, देवोंके देव ऐसे कल्याण मूर्त्ति महादेवजीको भजताहूं ॥ ४० ॥

करनेसे वह मनुष्य विष्टाका कीड़ा होता है ॥ ३ ॥ **क्रियासारमें** लिखा है कि गुरुही माता, पिता, स्वामी बांधव, मित्र और शिव हैं ऐसा ध्यान करके तनमनसे नित्य गुरुका भजन करना चाहिये.

प्रचंडं प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशम् । अखंडं अजं भानुकोटिप्रकाशम् ॥
त्रयीशूलनिर्मूलनं शूलपाणिम् । भजेऽहं भवानीपतिं भावगम्यम्॥४१॥

उग्र, श्रेष्ठ, सर्वव्यापक वा प्रत्युत्पन्नमतिवाले, ईश्वर, खंडरहित, जन्मरहित, कोटिसूर्यवत् देदीप्यमान, तीन प्रकारके दैहिक, दैविक, और भौक्तिक शूलोंके नाशक, त्रिशूल धारण किये, भक्तिसे प्राप्त होनेवाले पार्वतीपतिको मैं भजताहूं ॥ ४१ ॥

कलातीतकल्याणकल्पांतकारी । सदा सज्जनानंददाता पुरारी ॥
चिदानंदसंदोहमोहापहारी । प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी ॥ ४२ ॥

हे प्रभो ! कलाओंसे परे, कल्याण तथा कल्पांतके करनेवाले, सर्वदा सत्पुरुषोंको आनन्ददायक त्रिपुरासुरके शत्रु, ज्ञानानन्दके समूह, और मोहके नाशक, कामदेवके शत्रु, आप प्रसन्न हूजिये ॥४२॥

न यावत् उमानाथपादारविंदम् । भजंतीह लोके परे वा नराणाम् ॥
न तावत्सुखं शांतिसंतापनाशः । प्रसीद प्रभो सर्वभूताधिवासिन्॥४३॥

हे उमानाथ ! जबतक आपके चरणकमलोंका स्मरण न करैं तबतक मनुष्योंको इस लोक और परलोकमें सुखशान्ति नहीं होती है और न संतापका नाश होता है. इसलिये हे सब प्राणियोंमें व्यापक प्रभु ! आप प्रसन्न होओ ॥ ४३ ॥

न जानासि योगं जपं नैव पूजाम् । नतोऽहं सदा सर्वदा शंभु तुभ्यम्॥
जराजन्मदुःखौघतातप्यमानम् । प्रभो पाहि आपन्नमामीश शंभो॥४४॥

मैं योग जप और पूजा कुछ नहीं जानताहूं किन्तु हे शंकर ! आपको सर्वदा प्रणाम करता हूं. हे प्रभु ! हे शंभु ! बार २ वृद्धावस्था और जन्मके दुःखसे संतापित मुझ दुखीकी आप रक्षा कीजिये ॥ ४४ ॥

श्लो०–रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतुष्टये ॥
ये पठंति नरा भक्त्या तेषां शंभुः प्रसीदति ॥ १ ॥

अर्थात्–ब्राह्मणने महादेवजीके प्रसन्नतार्थ यह रुद्राष्टक कहा है. जो नर भक्तिसे इसे पढ़ते हैं उनपर महादेव प्रसन्न होते हैं ॥ १ ॥

दो०–सुनि बिनती सर्वज्ञ सिव, देखि विप्रअनुरागु ॥
पुनि मंदिर नभवानि भइ, हे द्विज अब वर मांगु ॥ १५९ ॥

सर्वज्ञ महादेवजी बिनती सुनकर और ब्राह्मणकी प्रीति देखकर प्रसन्न हुये और मन्दिरमें फिर आकाशवाणी हुई कि हे ब्राह्मण ! अब वरदान माँग (गुरुने कहा) ॥ १५९ ॥

जो प्रसन्न प्रभु मोहिंपर, नाथ दीनपर नेहु ॥
निजपदभक्ति देहु प्रभु, पुनि दूसर वर देहु ॥ १६० ॥

हे स्वामी ! जो मुझपर प्रसन्न हो और दीनपर प्रेम है तौ हे नाथ ! अपने चरणोंकी भक्ति दो, और फिर दूसरा वरदान यह दो कि ॥ १६० ॥

तव मायावस जीव जड़, संतत फिरै भुलान ॥
तेहिपर क्रोध न करिय प्रभु, कृपासिंधु भगवान ॥ १६१ ॥

हे कृपासिंधु भगवान् ! यह मूर्ख जीव आपकी मायाके वश निरंतर भूलाहुआ फिरता है. हे प्रभो ! उसपर क्रोध नहीं करना चाहिये ॥ १६१ ॥

संकर दीनदयालु अब, यहिपर होहु कृपालु ॥
सापानुग्रह होहि जेहि, नाथ थोरही कालु ॥ १६२ ॥

हे दीनदयालु शंकर! अब इस (मेरे शिष्यपर) ऐसी कृपा करो कि जिससे हे नाथ! थोड़ेही समयमें यह शाप मिटजाय ॥ १६२ ॥

चौ०-यहिकर होइ परम कल्याना ❀ सोइ करहु अब कृपानिधाना ॥ १ ॥
विप्रगिरा सुनि परहितसानी ❀ एवमस्तु इति भइ नभवानी ॥ २ ॥

और हे दयासागर! इसका अत्यंत कल्याण हो वही करो ॥ १ ॥ ब्राह्मणकी परोपकारयुक्त वाणी सुनकर आकाशवाणी हुई कि "एवमस्तु" अर्थात् ऐसाही होय ॥ २ ॥

जदपि कीन्ह इहिं दारुन पापा ❀ मैं पुनि दीन्ह क्रोध करि सापा ॥ ३ ॥
तदपि तुम्हारि साधुता देखी ❀ करिहौं यहिपर कृपा बिसेखी ॥ ४ ॥

यद्यपि इसने कठिन पाप किया और फिर मैंनेभी क्रोध करके शाप दे दिया ॥ ३ ॥ तौभी तुम्हारी साधुताको देखकर इसपर बहुत कृपा करूंगा ॥ ४ ॥

क्षमासील जे परउपकारी ❀ ते द्विज प्रिय मोहिं यथा खरारी ॥ ५ ॥
मोर साप द्विज व्यर्थ न जाइहि ❀ जन्मसहस्र अवसि यह पाइहि ॥ ६ ॥

हे ब्राह्मण! जो क्षमाशील और परोपकारी हैं वे मुझे रामचन्द्रके समान प्यारे हैं ॥ ५ ॥ हे ब्राह्मण! मेरा शाप तौ निष्फल नहीं जायगा और हजार जन्मतक यह अवश्य भोगेगा ॥ ६ ॥

जन्मत मरत दुसह दुख होई ❀ यहिकहँ स्वल्प न व्यापिहि सोई ॥ ७ ॥
कवनेहु जन्म मिटिहिं नहि ज्ञाना ❀ सुनहु सूद्र मम बचन प्रमाना ॥ ८ ॥

परन्तु जन्म लेनेमें और मरनेमें जो कठिन दुःख होता है वह इसको कुछभी नहीं व्यापैगा ॥ ७ ॥ और हे शूद्र! सुन, तेरा किसी जन्ममें ज्ञान नहीं मिटैगा. यह मेरा सत्य वचन है ॥ ८ ॥

रघुपतिपुरी जन्म तब भयऊ ❀ पुनि तैं मम सेवा मन दयऊ ॥ ९ ॥
पुरीप्रभाव अनुग्रह मोरे ❀ रामभक्ति उपजिहि उर तोरे ॥ १० ॥

तेरा जन्म रामचन्द्रजीकी पुरीमें हुआ, फिर तैंने मेरी सेवामें मन लगाया ॥ ९ ॥ सो पुरीके प्रभाव और मेरी कृपासे तेरे हृदयमें रामचन्द्रजीकी भक्ति उत्पन्न होगी ॥ १० ॥

सुनु मम बचन सत्य अब भाई ❀ हरितोषनव्रत द्विजसेवकाई ॥ ११ ॥
अब जनि करेसि विप्रअपमाना ❀ जानेसि संत अनंतसमाना ॥ १२ ॥

हे भाई! अब मेरे सच्चे बचन सुन, ब्राह्मणकी सेवा करना यही भगवान्के प्रसन्न करनेका व्रत है ॥ ११ ॥ अब ब्राह्मणका निरादर मत करियो और संतोंको भगवान्के समान जानियो ॥ १२ ॥

इंद्रकुलिस मम सूल विसाला ❀ कालदंड हरिचक्र कराला ॥ १३ ॥
जो इन्हकर मारा नहिं मरई ❀ विप्रद्रोहपावक सो जरई ॥ १४ ॥

इन्द्रका वज्र, मेरा वड़ा त्रिशूल, यमराजका दंड़, भगवान्का कठिन (सुदर्शन) चक्र, ॥ १३ ॥ जो इनकाभी मारा न मरै वह ब्राह्मणकी द्रोहरूपी अग्निमें भस्म होजाता है ॥ १४ ॥

अस बिबेक राखेहु मनमाहीं ❀ तुमकहँ जग दुर्लभ कछु नाहीं ॥ १५ ॥
औरो एक आसिषा मोरी ❀ अव्याहत गति होइहि तोरी ॥ १६ ॥

ऐसा ज्ञान मनमें रखियो तुझे संसारमें कुछ कठिन नहीं होगा ॥ १५ ॥ औरभी मेरा एक आशीर्वाद है कि तेरी स्वच्छंद गति होगी अर्थात् जहाँ चाहैगा वहाँ जा सकैगा ॥ १६ ॥

दो०-सुनि सिवबचन सप्रेम गुरु, एवमस्तु इति भाखि ॥ ❀
मोहिं प्रबोधि गयउ गृह, संभुचरन उर राखि ॥ १६३ ॥ ❀

गुरुने प्रेमयुक्त महादेवके वचन सुने और "ऐसाही होगा" यों कहकर मुझे समझाया और महादेवके चरणोंको हृदयमें रखके घरको गये ॥ १६३ ॥

प्रेरित काल सुविंध्यगिरि, जाइ भयउँ मैं व्याल ॥ ❀
पुनि प्रयास बिनु सो तनु, तजेउँ गए कछु काल ॥ १६४ ॥ ❀

कालकी प्रेरणासे विंध्याचलमें जाकर मैं सर्प हुआ, फिर कुछ समय बीतनेपर अनायास वह शरीर छोड दिया ॥ १६४ ॥

जो तनु धरौं तजौं पुनि, अनायास हरियान ॥ ❀
जिमि नूतन पट पहिरिकै, नर परिहरै पुरान ॥ १६५ ॥ ❀

हे गरुड़जी ! जिस शरीरको धारण करूँ उसेही फिर अनायास ऐसे छोड़ दूं जैसे मनुष्य नया कपड़ा पहनकर पुरानेको छोड़ देता है ॥ १६५ ॥

सिव राखेउ स्रुति नीति अरु, मैं नहिं पाव कलेस ॥ ❀
इहिबिध धरेउँ बिबिध तनु, ज्ञान न गयउ खगेस ॥ १६६ ॥ ❀

हे गरुड़जी ! महादेवजीने तो वेद और नीति रक्खी और मैंने क्लेश नहीं पाया, इस प्रकार बहुतसे शरीर धारण किये परन्तु ज्ञान नहीं गया ॥ १६६ ॥

चौ०–त्रिजगयोनि नर जोइ तनु धरेऊँ ❀ तहँ तहँ रामभक्ति अनुसरेऊँ ॥ १ ॥
एक सूल मोहिं बिसरु न काऊ ❀ गुरुकर कोमल सील सुभाऊ ॥ २ ॥

तिर्यक् योनि अर्थात् पक्षी आदि और मनुष्यका जो २ शरीर धारण किया वहाँ २ ही रामचन्द्रजीकी भक्तिके अनुसार रहा ॥ १ ॥ एक शूलको तौ मैं कभी नहीं भूलता कि जो मेरे गुरुका कोमल शील स्वभाव था ॥ २ ॥

चरम देह द्विजकर मैं पाई ❀ सुरदुर्लभ पुरान स्रुति गाई ॥ ३ ॥
खेलौं तहाँ बालकन्हि मीला ❀ करौं सकल रघुनायकलीला ॥ ४ ॥

अंतको मैंने ब्राह्मणका शरीर पाया, जिसको वेद पुराण देवताओंकोभी मिलना कठिन बताते हैं ॥ ३ ॥ वहां बालकोंमें मिलकर खेलता और रामचन्द्रजीकी सब लीला करता था ॥ ४ ॥

प्रौढ़ भये मोहिं पिता पढ़ावा ❀ समुझौं सुनौं गुनौं नहिं भावा ॥ ५ ॥
मनते सकल वासना भागी ❀ केवल रामचरन लय लागी ॥ ६ ॥

बड़ा होनेपर पिताने मुझे पढ़ाया तौ समझूँ सुनूँ और विचारूँ परन्तु मनमें अच्छा न लगै ॥ ५ ॥ मनसे सब कामना जाती रहीं, केवल रामचन्द्रजीके चरणोंमें लैव लगगई ॥ ६ ॥

कहु खगेस अस कवन अभागी ❀ खरी सेव सुरधेनुहिं त्यागी ॥ ७ ॥
प्रेममगन मोहिं कछु न सोहाई ❀ हारेउ पिता पढ़ाइ पढ़ाई ॥ ८ ॥

---

(१) गीतायां–

" वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही ॥"

अर्थ–चौपाईसे मिलता है ॥

(२) जैसा कहा है–

श्लोक.

"पूजाकोटिसमं स्तोत्रं स्तोत्रकोटिसमो जपः । जपकोटिसमं ध्यानं ध्यानकोटिसमो लयः ॥" सरलार्थः.

हे गरुड़ ! कहो ऐसा कौन अभागी होगा ? जो कामधेनुको छोड़कर गधीका सेवन करैगा ॥ ७ ॥ मैं स्नेहमें मग्न होगया, मुझे कुछ अच्छा न लगने लगा, पिता पढ़ा २ कर हार गये पर मैंने न पढ़ा ॥८॥

भयउ कालबस जब पितुमाता ❀ मैं बन गयउँ भजन जनत्राता ॥ ९ ॥
जहँ जहँ बिपिन मुनीस्वर पावौं ❀ आस्रम जाइ जाइ सिर नावौं ॥ १० ॥

जब पिता माता कालके वश हुये तौ मैं रामचन्द्रजीका भजन करनेको वनमें चलागया ॥ ९ ॥ वनमें जहां २ मुनीश्वरोंको पाऊं तहाँ २ ही आश्रमोंमें जाकर शिर नवाऊँ ॥ १० ॥

बूझौं तिनहिं रामगुनगाहा ❀ कहौं सुनौं हर्षित खगनाहा ॥ ११ ॥
सुनत फिरौं हरिगुनानुवादा ❀ अव्याहतगति संभुप्रसादा ॥ १२ ॥

और हे गरुड़ ! उनसे रामचन्द्रजीके गुणानुवाद पूछूं और प्रसन्नतासे कहूँ सुनूं ॥ ११ ॥ महादेवकी कृपासे जहाँ मन आवै तहाँही भगवान्के गुणानुवाद सुनता फिरूं ॥ १२ ॥

छूटी त्रिविध ईषना गाढ़ी ❀ एक लालसा उर अति बाढ़ी ॥ १३ ॥
रामचरनपंकज जब देखौं ❀ तब निजजन्म सफल करि लेखौं ॥१४॥

तीन प्रकारकी कठिन ईषणा तौ छूटगई पर एक लालसा हृदयमें बहुत बढ़ी कि ॥ १३ ॥ जब रामचन्द्रजीके चरणकमलोंका दर्शन करूं तब अपने जन्मको सफल मानूँ ॥ १४ ॥

जेहि पूछौं सो मुनि अस कहई ❀ ईश्वर सर्व भूतमय अहई ॥ १५ ॥
निर्गुन मत नहिं मोहिं सोहाई ❀ सगुन ब्रह्मरति उर अधिकाई ॥ १६ ॥

सो जिससे पूछूँ वही मुनीश्वर यों कह दे कि ईश्वर सब जीवोंमें है ॥ १५ ॥ परन्तु मुझे निर्गुण मत अच्छा न लगै क्योंकि हृदयमें सगुण ब्रह्मसे विशेष प्रीति थी ॥ १६ ॥

दो०–गुरुके बचन सुरति करि, रामचरन मन लाग ॥ ❀
रघुपतिजस गावत फिरौं, छिन छिन नव अनुराग ॥ १६७ ॥ ❀

गुरुके वचनोंको स्मरण कर रामचन्द्रजीके चरणोंमें मन लगगया और क्षण २ में नवीन प्रेमसे रामजीका यश गाता फिरूं ॥ १६७ ॥

मेरुसिखर बटछाया, मुनि लोमस आसीन ॥ ❀
देखि चरन सिर नायउँ, बचन कहेउँ अति दीन ॥ १६८ ॥ ❀

सुमेरु (पर्वत) के शिखरपर बड़की छायामें लोमश मुनि विराजमान थे, उनको देखकर मैंने चरणोंमें शिर नवाया और बहुतसे दीन वचन कहे ॥ १६८ ॥

सुनि मम बचन विनीत मृदु, मुनि कृपालु खगराज ॥ ❀
मोहिं सादर पूछत भयउ, द्विज आयउ केहि काज ॥१६९॥ ❀

हे गरुड़जी ! मेरे नीतियुक्त कोमल वचन सुनकर कृपानिधान मुनीश्वर मुझसे आदरसहित पूछने लगे कि हे ब्राह्मण ! किस कामके लिये आया है ? ॥ १६९ ॥

तब मैं कहेउँ कृपानिधि, तुम सर्वज्ञ सुजान ॥ ❀
सगुनब्रह्मआराधना, मोहिं कहहु भगवान् ॥ १७० ॥ ❀

तब मैंने कहा हे दयासागर ! आप सर्वज्ञ और चतुर हो. सो हे भगवन् ! सगुण ब्रह्मकी आराधना मुझे सुनाइये ॥ १७० ॥

चौ०–तब मुनीस रघुपतिगुनगाथा ❀ कहेउ कछुक सादर खगनाथा ॥ १ ॥
ब्रह्मज्ञानरत मुनि विज्ञानी ❀ मोहिं परम अधिकारी ज्ञानी ॥ २ ॥

हे गरुड़जी! तब मुनीश्वरने आदरसहित रामचन्द्रजीके गुणोंकी कुछ कथा सुनाई ॥ १ ॥ फिर ब्रह्मज्ञानमें तत्पर ऐसे परम ज्ञानी मुनीश्वर मुझे (ब्रह्मविद्याका) परम अधिकारी जान ॥ २ ॥

लागे करन ब्रह्मउपदेसा ❀ अज अद्वैत अगुन हृदयेसा ॥ ३ ॥
अकल अनीह अनाम अरूपा ❀ अनुभवगम्य अखंड अनूपा ॥ ४ ॥

ब्रह्मका उपदेश करने लगे कि (हे ब्राह्मण!) वह ब्रह्म जन्मरहित है और अद्वैत है, अर्थात् सजातीय विजातीय और स्वगतभेदशून्य एक है, और निर्गुण कहिये माया और उसके सत्वादिगुण रहित है और सबके अंतःकरणमें स्थित है ॥ ३ ॥ प्राण आदि कलाओंसे रहित, निरीह, निराकार और (बुद्धि आदि इंद्रियोंके विषयसे परे होनेके कारण) अनुभवसे जानने योग्य है और उसका देशकाल निश्चय न होनेसे अखंड है और अनुपम है अर्थात् उसकी उपमा और प्रमाण कुछ नहीं ॥ ४ ॥

मनगोतीत अमल अबिनासी ❀ निर्विकार निरवधि सुखरासी ॥ ५ ॥
सो तैं तोहिं ताहि नहिं भेदा ❀ बारिबीचि इव गावहिं वेदा ॥ ६ ॥

मन और इन्द्रियोंसे परे है, निर्मल अर्थात् अविद्या आदि मलरहित है, नाशरहित, विकाररहित, अवधिरहित और आनन्दस्वरूप है ॥ ५ ॥ सो वह (तत्त्वमसि) तूही है; तुझमें और उसमें ऐसे भेद नहीं है जैसे वेदके प्रमाणसे जल और तरंगमें भेद नहीं ॥ ६ ॥

बिबिध भाँति मोहिं मुनि समझावा❀ निर्गुन मत मम हृदय न आवा ॥ ७ ॥
पुनि मैं कहेऊँ नाइ पद सीसा ❀ सगुनउपासन कहहु मुनीसा ॥ ८ ॥

मुनीश्वरने मुझे अनेक प्रकारसे समझाया परन्तु निर्गुण मत मेरे हृदयमें न आया ॥ ७ ॥ फिर मैंने उनके चरणोंको शिर नवाकर कहा कि हे मुनिराज! सगुणउपासना कहो ॥ ८ ॥

रामभक्ति जल मम मन मीना ❀ किमि बिलगाइ मुनीस प्रबीना ॥ ९ ॥
सोइ उपदेस करहु करि दाया ❀ निज नयनन्हि देखौं रघुराया ॥ १० ॥

हे मुनीश्वरजी! आप तौ चतुर हो, रामचन्द्रजीकी भक्तिरूपी जलमें मेरा मन मछली हो रहा है सो कैसे अलग हो?[1] ॥ ९ ॥ कृपा करके वही उपदेश करो जिससे अपने नेत्रोंसे रामचन्द्रजीके दर्शन करूँ ॥ १० ॥

भरि लोचन बिलोकि अवधेसा ❀ तब सुनिहौं निर्गुन उपदेसा ॥ ११ ॥
पुनि पुनि कहि मुनि कथा अनूपा ❀ खंडि सगुनमत अगुन निरूपा ॥ १२ ॥

नेत्रोंभर रामचन्द्रजीके दर्शन करके तब निर्गुण उपदेश सुनूंगा ॥ ११ ॥ परंतु मुनिश्वरने वारंवार सुन्दर कथा कहकर सगुणमतका खंडन कर निर्गुणकाही मंडन किया ॥ १२ ॥

तब मैं निर्गुनमत करि दूरी ❀ सगुन निरूपौं करि हठ भूरी ॥ १३ ॥
उत्तर प्रत्युत्तर मैं कीन्हा ❀ मुनितन भयउ क्रोधकर चीन्हा ॥ १४ ॥

तब मैं निर्गुणमतको दूर कर बहुतसा हठ करके सगुणकाही निरूपण करता गया ॥ १३ ॥ और फिर जब यह जाना कि मैंने जो उत्तर प्रत्युत्तर किया इससे मुनीश्वरके हृदयमें क्रोध हुआ (तौकहा)१४

सुनु प्रभु बहुत अवज्ञा कीए ❀ उपज क्रोध ज्ञानिहुके हीए ॥ १५ ॥
अतिसंघर्षन करै जो कोई ❀ अनल प्रगट चंदन ते होई ॥ १६ ॥

हे स्वामी! सुनो, बहुत अवज्ञा करनेसे तौ ज्ञानीके हृदयमेंभी क्रोध उत्पन्न होता है ॥१५॥ जैसे (चंदन चाहै जैसा शीतल है परंतु) जो कोई उसे बहुत घिसे तौ चन्दनसेभी अग्नि उत्पन्न हो जाती है॥१६॥

---

(१) यहां यह भाव है कि मेरा मन तौ रामभक्तिमें रम रहा है, और मेरे मनरूपी मत्स्यको रामभक्तिरूपी जलमेंसे निकालकर ज्ञानरूपी सूखी भूमिमें डाले देते हो, इसीसे मेरे मनमें नहीं आता।

दो०–बार बार सकोपि मुनि, करहिं निरूपन ज्ञान ॥
मैं अपने मनवैठि तव, करौं विविध अनुमान ॥ १७१ ॥

फिर मुनीश्वर वारंवार क्रोधमें भरकर ज्ञानका निरूपण करने लगे तब मैं बैठकर अपने मनमें बहुतसा अनुमान करने लगा कि ॥ १७१ ॥

क्रोध कि द्वैतवुद्धि विनु, द्वैत कि विनु अज्ञान ॥
मायावस प्रच्छन्न जड़, जीव कि ईससमान ॥ १७२ ॥

क्रोध क्या द्वैतवुद्धिके विना होता है? अर्थात् जव द्वैतवुद्धि होती है तभी दूसरेपर क्रोध होगा. और द्वैतवुद्धि क्या विना अज्ञानके होती है? (इसलिये मुनिने जो मुझसे कहा कि जो ब्रह्म है सो तू है, सो हो नहीं सक्ता) क्योंकि मायाके वश ढका हुआ जड़ जीव क्या ब्रह्मके समान हो सक्ता है? ॥१७२॥

चौ०–कबहुँ कि दुख सबकर हित ताके ❀ तेहि कि दरिद्र परसमनि जाके ॥ १ ॥
कामी पुनि कि रहै अकलंका ❀ परद्रोही किमि होइ निसंका ॥ २ ॥

जो सवका हित करता है उसको क्या कभी दुःख हो सक्ता है? जैसे जिसके दास पारसमणि है उसको क्या दरिद्र हो सक्ता है? ॥ १ ॥ फिर कामी क्या कलंकरहित रह सक्ता है? और पराया द्रोह करनेवाला निर्भय कैसे हो सक्ता है? ॥ २ ॥

वंस कि रह द्विजअनहित कीन्हें ❀ कर्म कि होहिं स्वरूपहिं चीन्हें ॥ ३ ॥
काहुहि सुमति कि खलसँग जामी❀ सुभ मति पाव कि परतियगामी ॥ ४ ॥

ब्राह्मणका अनहित करनेसे क्या वंश रह सक्ता है? और अपने स्वरूपको पहँचाननेसे क्या शुभाशुभ कर्म रह सक्ते हैं? ॥ ३ ॥ क्या दुष्टोंके संगसें किसीकोभी श्रेष्ठ बुद्धि हुई है? और पराई स्त्रीसे गमन करनेवाला क्या अच्छी वुद्धि पासक्ता है? ॥ ४ ॥

राज कि रहै नीति बिनु जाने ❀ अघ कि रहै हरिचरित बखाने ॥ ५ ॥
भव कि परहिं परमात्माबिंदक ❀ सुखी कि होहिं कबहुँ परनिंदक ॥ ६ ॥

नीति जाने विना क्या राज्य रहसक्ता है? और भगवान्‌के चरित्र वर्णन करनेसे क्या पाप रह सक्ता है? ॥ ५ ॥ परमात्माके जाननेवाले क्या संसारसें पड़सक्ते हैं, और पराई निन्दा करनेवाले क्या कभी सुखी हो सक्ते हैं? ॥ ६ ॥

पावन जस कि पुन्य विनु होई ❀ विनु अघ अजस कि पावै कोई ॥ ७ ॥
लाभ कि कछु हरिभक्तिसमाना ❀ जिहि गावहिं स्रुति संत पुराना ॥ ८ ॥

विना पुण्योंके क्या पवित्र यश होता है? और विना पापके क्या कोई अपयश पासक्ता है ॥७॥ क्या भगवान्‌की भक्तिके समान कुछ और लाभ हो सक्ता है? जिसे वेदपुराण और संत गाते हैं ८

हानि कि जग यहिसम कछु भाई ❀ भजिय न रामहिं नरतनु पाई ॥ ९ ॥
अघ कि बिना तामस कछु आना ❀ धर्मकि दयासरिस हरियाना ॥ १० ॥

हे भाई? संसारमें इसके समान क्या कोई और हानि है कि मनुष्यका शरीर पाकर रामचन्द्रजीका भजन न करै ॥ ९ ॥ हे गरुड! विना क्रोधके क्या कुछ दूसरा पाप है? और दयाके समान क्या कोई और धर्म है? ॥ १० ॥

इहिबिध अमित युक्ति मन गुनेऊँ ❀ मुनिउपदेस न सादर सुनेऊँ ॥ ११ ॥
पुनि पुनि सगुनपक्ष मैं रोपा ❀ तब मुनि बोले बचन सकोपा ॥ १२ ॥

इस भांति अनेक युक्ति मनमें बिचारीं परंतु मुनीश्वरका उपदेश आदरसमेत नहीं सुना ॥ ११ ॥ जब मैंने बार २ सगुण पक्षकोही दृढ़ किया तब मुनीश्वर क्रोध करके बोले ॥ १२ ॥

मूढ़ परम सिख देउँ न मानेसि ❀ उत्तर प्रत्युत्तर बहु आनेसि ॥ १३ ॥
सत्य बचन बिस्वास न करही ❀ बायस इव सबहीसन ड़रही ॥ १४ ॥

अरे मूर्ख ! मैं अच्छी शिक्षा देता हूं सो तू नहीं मानता है और उत्तर प्रत्युत्तर बहुतसे करता है ॥ १३ ॥ सत्य वचनोंकाभी विश्वास नहीं करता और कौएकी भांति सभीसे डरता है ॥ १४ ॥

सठ सपक्ष तव हृदय बिसाला ❀ सपदि होहु पक्षी चंडाला ॥ १५ ॥
लीन्ह साप मैं सीस चढ़ाई ❀ नहिं कछु भय न दीनता आई ॥ १६ ॥

अरे मूर्ख ! तेरे हृदयमें वड़ा भारी पक्ष है सो तू शीघ्रही चांडालपक्षी (काग) हो जा ॥१५॥ वह शाप मैंने शिरपर चढ़ाकर लेलिया और न तौ मुझको कुछ भय हुआ और न दीनता हुई ॥१६॥

दो०-तुरत भयउँ मैं काग तब, पुनि मुनिपद सिर नाइ ॥ ❀
सुमिरि राम रघुवंसमनि, हर्षित चलेउँ उड़ाइ ॥ १७३ ॥ ❀

तब मैं शीघ्रही कौआ हो गया फिर मुनीश्वरके चरणोंको शिर नवाय रघुवंशके शिरोमणि रामचन्द्रजीका स्मरण करके प्रसन्न होता हुआ उड़ चला ॥ १७३ ॥

उमा जे रामचरनरत, विगत काम मद क्रोध ॥ ❀
निजप्रभुमय देखहिं जगत, कासन करहिं विरोध ॥ १७४ ॥ ❀

(महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! जो मनुष्य काम क्रोध मदरहित रामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रीति करते हैं वे अपनेके समान संसारको राममय देखते हैं फिर बिरोध किससे करें ? ॥ १७४ ॥

चौ०-सुनु खगेस नहिं कछु ऋषिदूषन ❀ उरप्रेरक रघुवंसविभूषन ॥ १ ॥
कृपासिंधु मुनिमति करि भोरी ❀ लीन्हीं प्रेमपरीक्षा मोरी ॥ २ ॥

हे गरुड़जी ! सुनो, ऋषिका कुछ दोष नहीं है, हृदयमें प्रेरणा करनेवाले तौ रघुवंशमणि (रामचन्द्रजी) हैं ॥१॥ दयासागर रामजीने मुनीश्वरकी भोरी बुद्धि करके मेरी प्रेमकी परीक्षा ली ॥ २ ॥

मनक्रमबचन मोहिं जन जाना ❀ मुनिमति पुनि फेरी भगवाना ॥ ३ ॥
ऋषि मम सहनसीलता देखी ❀ रामचरन बिस्वास बिसेखी ॥ ४ ॥

फिर भगवान्‌ने मन क्रम वचनसे मुझे दास जान मुनीश्वरकी बुद्धि बदल दी ॥ ३ ॥ मुनीश्वर मेरी सहनशीलता और रामचन्द्रजीके चरणोंमें बहुत विश्वास देख ॥ ४ ॥

अतिबिस्मय पुनि पुनि पछिताई ❀ सादर मुनि मोहिं लीन्ह बुलाई ॥ ५ ॥
मम परितोष बिबिध बिधि कीन्हा ❀ हर्षित राममंत्र तब दीन्हा ॥ ६ ॥

वड़े दुःखसे बार २ पछिताकर मुनीश्वरने मुझे आदरसहित बुलालिया ॥ ५ ॥ और मुझे अनेक प्रकारसे संतुष्ट कर और तब प्रसन्न होकर राममंत्र दिया ॥ ६ ॥

बालकरूप रामकर ध्याना ❀ कहेउ मोहिं मुनि कृपानिधाना ॥ ७ ॥
सुंदर सुखद मोहिं अति भावा ❀ सो प्रथमहिं मैं तुमहिं सुनावा ॥ ८ ॥

कृपानिधान मुनीश्वरने वालस्वरूप रामचन्द्रजीका ध्यान मुझे बतलाया ॥ ७ ॥ वह सुन्दर सुखदायक मुझे बहुत प्यारा लगा सो मैंने पहलेही तुमको सुना दिया ॥ ८ ॥

मुनि मोहिं कछुक काल तहँ राखा ❀ रामचरितमानस तब भाखा ॥ ९ ॥
सादर यह मोहिं कथा सुनाई ❀ पुनि बोले मुनि गिरा सुहाई ॥ १० ॥

मुनीश्वरने थोड़े समयतक वहां मुझे रक्खा और तब यह रामचरित्र मानस कहा ॥ ९ ॥ और आदरसमेत मुझे यह कथा सुनाकर फिर मुनीश्वर सुन्दर वाणी बोले ॥ १० ॥

रामचरितसर गुप्त सुहावा ❀ संभुप्रसाद तात मैं पावा ॥ ११ ॥
तोहिं निज भक्त रामकर जानी ❀ ताते मैं सब कहेउँ बखानी ॥ १२ ॥

हे प्यारे! रामचन्द्रजीका चरित्ररूपी सरोवर बड़ा गुप्त और सुन्दर है और मैंने महादेवकी कृपासे इसे पाया है ॥ ११ ॥ तुझे रामचन्द्रजीका निजभक्त जाना इसीसे मैंने सब वर्णन करके कहा है ॥ १२ ॥

रामभक्ति जिनके उर नाहीं ❀ कबहुँ न तात कहिय तिन्हपाहीं ॥१३॥
मुनि मोहिं बिबिध भाँति समुझावा ❀ मैं सप्रेम मुनिपद सिर नावा ॥ १४ ॥

हे प्यारे! जिनके हृदयमें रामचन्द्रजीकी भक्ति न हो उनसे कभी न कहना चाहिये ॥ १३ ॥ मुनीश्वरने मुझे अनेक प्रकार समझाया मैंनेभी स्नेहसहित मुनीश्वरके चरणोंको शिर नवाया ॥ १४ ॥

निजकरकमल परसि मम सीसा ❀ हर्षित आसिष दीन्ह मुनीसा ॥ १५ ॥
रामभक्ति अविरल उर तोरे ❀ बसिहि सदा प्रसाद अब मोरे ॥ १६ ॥

मुनीश्वरने अपना कमलसमान हाथ मेरे मस्तकपर फेरा और प्रसन्न होकर आशिर्वाद दिया कि ॥ १५ ॥ अब मेरी कृपासे तेरे हृदयमें सदा रामचन्द्रजीकी अचल भक्ति रहैगी ॥ १६ ॥

दो०-सदा रामप्रिय होव तुम, सुभगुनभवन अमान ॥ ❀
कामरूप इच्छामरन, ज्ञानविरागनिधान ॥ १७५ ॥ ❀

तुम सदा रामचन्द्रजीके प्यारे, सुन्दर गुणोंके स्थान और मानरहित होगे, और कामरूप अर्थात् जैसी इच्छा करोगे वहीरूप धारण कर सकोगे. तुम्हारा मरण तुम्हारी इच्छानुसार होगा और तुम ज्ञानगुणके निधान होगे ॥ १७५ ॥

जेहि आस्रम तुम बसहु पुनि, सुमिरत स्रीभगवंत ॥ ❀
ब्यापिहि तहँ न अविद्या, योजन इक पर्यंत ॥ १७६ ॥ ❀

फिर जिस आश्रममें तुम श्रीभगवान्‌का स्मरण करते हुये बसोगे वहां एक योजनतक अविद्या नहीं व्यापेगी ॥ १७६ ॥

चौ०-कालकर्मगुनदोषसुभाऊ ❀ कछु दुख तुमहिं न ब्यापिहि काऊ ॥१॥
रामरहस्य ललित बिधनाना ❀ गुप्त प्रगट इतिहास पुराना ॥ २ ॥

काल कर्म गुण दोष और स्वभाव इनका कुछ दुःख तुमको कभी नहीं व्यापेगा ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीका अनेक प्रकारका सुन्दर चरित्र गुप्त और प्रगट इतिहास और पुराण ॥ २ ॥

बिनु स्रम तुम जानब सब सोऊ ❀ नित नव नेह रामपद होऊ ॥ ३ ॥
जो इच्छा करिहहु मनमाहीं ❀ हरिप्रसाद कछु दुर्लभ नाहीं ॥ ४ ॥

उस सबको तुम बिनाही परिश्रमके जानोगे और रामचन्द्रजीके चरणोंमें (तुम्हारा) नित नया प्रेम होगा ॥३॥ जो इच्छा मनमें करोगे वह भगवान्‌की कृपासे कुछभी कठिन नहीं होगी ॥ ४ ॥

सुनि मुनि आसिष सुनु मतिधीरा ❀ ब्रह्मगिरा भइ गगन गभीरा ॥ ५ ॥
एवमस्तु तव बच मुनि ज्ञानी ❀ यह मम भक्त कर्ममनबानी ॥ ६ ॥

हे मतिधीर! सुनो, मुनीश्वरका आशीर्वाद सुनकर आकाशमें गंभीर ब्रह्मवाणी हुई कि ॥ ५ ॥ हे ज्ञानी मुनीश्वर! तुम्हारा वचन सत्य होगा, क्योंकि यह कर्म मन और वाणीसे मेरा भक्त है ॥६॥

सुनि नभगिरा हर्ष मम भयऊ ❀ प्रेममगन मन संसय गयऊ ॥ ७ ॥
करि बिनती मुनिआयसु पाई ❀ पदसरोज पुनि पुनि सिर नाई ॥ ८ ॥

आकाशवाणीको सुनकर मुझे आनन्द हुआ, मैं स्नेहमें मगन होगया और मनका सन्देह जाता रहा ॥७॥ मैं मुनीश्वरकी बिनती कर और आज्ञा पाय बार २ उनके चरणकमलोंको शिर नवाकर ॥ ८ ॥

हर्षसहित यहि आस्रम आयउँ ❀ प्रभुप्रसाद दुर्लभ बर पायउँ ॥ ९ ॥
इहाँ बसत मोहिं सुनु खगईसा ❀ बीते कल्प सात अरु बीसा ॥ १० ॥

फिर भगवान्‌की कृपासे अतिदुर्लभ वरदान पाकर आनन्दसे इस आश्रममें आया ॥ ९ ॥ हे गरुड़ ! सुनो, यहां बसते हुये मुझे सत्ताईस कल्प बीत गये ॥ १० ॥

करौं सदा रघुपतिगुनगाना ❀ सादर सुनहिं बिहंग सुजाना ॥ ११ ॥
जब जब अवधपुरी रघुबीरा ❀ धरहिं भक्तहित मनुजसरीरा ॥ १२ ॥

सदा रामचन्द्रजीके गुणोंका गान करताहूं और चतुर पक्षी आदरसमेत सुनते हैं ॥ ११ ॥ जब रामचन्द्रजी अयोध्यापुरीमें भक्तोंके हितके लिये मनुष्यका शरीर धारण करते हैं ॥ १२ ॥

तब तब जाइ रामपुर रहऊँ ❀ सिसुलीला बिलोकि सुख लहऊँ ॥१३॥
पुनि उर राखि रामसिसुरूपा ❀ इह आस्रम आवौं खगभूपा ॥ १४ ॥

तभी तब जाकर मैंभी अयोध्यापुरीमें रहता हूं और भगवान्‌की बाललीलाको देखकर सुख प्राप्तकरता हूं ॥१३॥ हे गरुड़ ! फिर रामचन्द्रजीके बालस्वरूपको हृदयमें रखकर इसी आश्रममें आजाताहूं ॥१४॥

कथा सकल मैं तुमहिं सुनाई ❀ कागदेह जेहि कारन पाई ॥ १५ ॥
कहेउँ तात सब प्रश्न तुम्हारी ❀ रामभक्ति महिमा अति भारी ॥ १६ ॥

मैंने जिस कारण कौएकी देह पाई थी सो सब कथा तुमको सुनाई ॥ १५ ॥ हे प्यारे ! तुम्हारे सब प्रश्न कह दिये और रामचन्द्रजीकी भक्तिकी महिमा तौ वड़ी भारी है ॥ १६ ॥

दो०-ताते यह तनु मोहिं प्रिय, गयउ भयउ रामपद नेह ॥ ❀
निजप्रभुदर्सन पायउ, गयउ सकल संदेह ॥ १७७ ॥ ❀

इसीसे मुझको यह शरीर प्यारा है कि इससे रामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रेम हुआ और अपने भगवान्‌का दर्शन पाया और सब सन्देह जाता रहा ॥ १७७ ॥

भक्तिपक्ष हठ करि रहेउँ, दीन्ह महाऋषि साप ॥ ❀
मुनिदुर्लभ वर पायउँ, देखहु भजनप्रताप ॥ १७८ ॥ ❀

मैं भक्तिपक्षका हठ कर रहा था सो महर्षिने शाप दिया, पर भजनका प्रताप देखो कि जो मुनीश्वरोंकोभी कठिन ऐसा वरदान पाया ॥ १७८ ॥

चौ०-जे असि भक्ति जान परिहरहीं ❀ केवल ज्ञानहेतु स्रम करहीं ॥ १ ॥
ते जड़ कामधेनु गृह त्यागी ❀ खोजत आक फिरहिं पयलागी ॥ २ ॥

जो ऐसी भक्तिको जानकर त्यागते और केवल ज्ञानके लिये परिश्रम करते हैं ॥ १ ॥ वे मूर्ख कामधेनुको घर छोड़कर आकके दूधके लिये आकोंको ढूंढ़ते फिरते हैं ॥ २ ॥

सुनु खगेस हरिभक्ति बिहाई ❀ जे सुख चाहहिं आन उपाई ॥ ३ ॥
ते सठ महासिंधु बिनु तरनी ❀ पैरि पार चाहत जड़ करनी ॥ ४ ॥

हे गरुड़ ! सुनो, भगवान्‌की भक्तिको छोड़कर जो दूसरे उपायसे सुख चाहैं ॥ ३ ॥ वे मूर्ख वड़े समुद्रको विना नौकाके अपनी जड़ करनीसे पैर कर पार होजाना चाहते हैं ॥ ४ ॥

---

(१) महारामायणे–

श्लोक.

"ये रामभक्तिममलां सुविहाय रम्यां ज्ञाने रताः प्रतिदिनं परिक्लिष्टमार्गे ।
आरान्महेन्द्रसुरभीं परिहृत्य मूर्खा अर्कं भजन्ति सुभगे सुखदुग्धहेतुम् ॥"

अर्थ चौपाईसे मिलता है.

सुनि भुसुंडिके बचन भवानी ❀ बोलेउ गरुड़ हर्षि मृदुबानी ॥ ५ ॥
तव प्रसाद प्रभु मम उरमाहीं ❀ संसय सोक मोह भ्रम नाहीं ॥ ६ ॥

हे पार्वती ! कागभुशुंडिके बचन सुनकर गरुड़ प्रसन्न हो मीठी वाणी बोले ॥ ५ ॥ हे स्वामी ! आपकी कृपासे मेरे हृदयमें सन्देह शोक अज्ञान और भ्रम कुछ नहीं रहा ॥ ६ ॥

सुनेउँ पुनीत रामगुनग्रामा ❀ तुम्हरी कृपा लहेउँ बिस्रामा ॥ ७ ॥
एक बात प्रभु पूछौं तोहीं ❀ कहहु बुझाइ कृपानिधि मोहीं ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजीके पवित्र गुण सुने सो आपकी दयासे विश्राम पाया ॥ ७ ॥ हे नाथ ! मैं एक बात तुमसे और पूछता हूं सो हे दयासागर ! मुझे समझाकर कहो ॥ ८ ॥

कहहिं संत मुनि वेद पुराना ❀ नहिं कछु दुर्लभ ज्ञानसमाना ॥ ९ ॥
सो मुनि तुमसन कहेउ गुसाँई ❀ नहिं आदरेउ भक्तिकी नाँई ॥ १० ॥

संत मुनीश्वर वेद और पुराण कहते हैं कि ज्ञानके समान दुर्लभ और कुछ नहीं है॥९॥सो हे गोसाँई! वही ज्ञान तुमसे मुनीश्वरने कहा था परन्तु आपने भक्तिकी भाँति उसका आदर नहीं किया ॥१०॥

ज्ञानहिं भक्तिहिं अंतर केता ❀ सकल कहहु प्रभु कृपानिकेता ॥ ११ ॥
सुनि उरगारि बचन सुख माना ❀ सादर बोलेउ काग सुजाना ॥ १२ ॥

सो हे दयानिधान ! ज्ञान और भक्तिमें कितना अंतर है सो सब कहो ॥ ११ ॥ गरुड़जीके बचन सुनकर चतुर कागभुशुंडिजी प्रसन्न हुये और आदरसहित बोले कि ॥ १२ ॥

ज्ञानहिं भक्तिहिं नहिं कछु भेदा ❀ उभय हरहिं भवसंभवखेदा ॥ १३ ॥
नाथ मुनीस कहहिं कछु अंतर ❀ सावधान होइ सुनु बिहंगवर ॥ १४ ॥

ज्ञान और भक्तिमें कुछ भेद नहीं है, दोनों संसारके दुःखोंका नाश करनेवाले हैं ॥१३॥ परन्तु हे स्वामी ! मुनीश्वर कुछ इनमें अन्तर कहते हैं उसे हे गरुड़जी ! सावधान होकर सुनो ॥ १४ ॥

ज्ञान बिराग योग बिज्ञाना ❀ ए सब पुरुष सुनहु हरियाना ॥ १५ ॥
पुरुषप्रताप प्रबल सबभाँती ❀ अबला अबल सहज जड़जाती ॥ १६ ॥

हे हरियान-गरुड़जी ! सुनो, ज्ञान, वैराग्य, योग और विज्ञान ये सब पुरुष हैं ॥१५॥ सो पुरुषका प्रताप सब प्रकार प्रबल होता है और स्त्री तौ निर्बल सहजहीमें जड़ जाति होती है ॥ १६ ॥

दो०-पुरुष त्यागि सक नारिकहँ, जो बिरक्त मतिधीर ॥ ❀
नतु कामी जो विषयवस, विमुख जे पद रघुवीर ॥ १७९ ॥ ❀

जो मतिधीर विरागी पुरुष हैं वे स्त्रीको त्याग सक्ते हैं और जो विषयोंके वश, कामी और रामचन्द्रजीके चरणोंसे विमुख हैं वे नहीं त्याग सक्ते॥ १७९ ॥

सो०-सोउ मुनि ज्ञाननिधान, मृगनयनीबिधुमुख निरखि ॥ ❀
विकल होहिं हरियान, नारि विष्णुमाया प्रगट ॥ १६ ॥ ❀

हे गरुड़जी ! जो ज्ञानके निधान मुनीश्वर होते हैं वेभी मृगनयनी चंद्रमुखीको देखकर व्याकुल होजाते हैं, यह स्त्री विष्णुकी साक्षात् माया है ॥ १६ ॥

चौ०-इहाँ न पक्षपात कछु राखौं ❀ वेदपुरानसंतमत भाखौं ॥ १ ॥
मोह न नारि नारिकेरूपा ❀ पन्नगारि यह नीति अनूपा ॥ २ ॥

---

(१) गीतायाम्-

"न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते । ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति ॥"

अर्थात्-संसारमें ज्ञानके समान कुछ पवित्र नहीं है. ज्ञानको पाकर मनुष्य शीघ्रही परम शांतिको प्राप्त होता है.

यहां कुछ पक्षपात रखनेकी वात नहीं है. वेद, पुराण और संतोंका जो मत है सो कहताहूं॥१॥ हे गरुड़जी ! स्त्रीके रूपको देखकर स्त्री नहीं मोहित होती–यह बड़ी अनोखी नीति है ॥ २ ॥

माया भक्ति सुनहु प्रभु दोऊ ❀ नारिवर्ग जानै सब कोऊ ॥ ३ ॥
पुनि रघुबीरहिं भक्ति पियारी ❀ माया खलु नर्तकी बिचारी ॥ ४ ॥

हे स्वामी ! सुनो, माया भक्ति दोनों स्त्रीसंज्ञक हैं इसे सब कोई जानता है ॥ ३ ॥ परंतु रामचन्द्रजीको भक्ति प्यारी है, क्योंकि माया तौ विचारी निश्चय करके नाचनेवाली है ॥ ४ ॥

भक्तिहिं सानुकूल रघुराया ❀ ताते तेहि डरपति अति माया ॥ ५ ॥
रामभक्ति निरुपम निरुपाधी ❀ बसै जासु उर सदा अबाधी ॥ ६ ॥

और भक्तिके रामचन्द्रजी सहायक हैं इस कारण उससे माया बहुत डरती है ॥५॥ रामचन्द्रजीकी भक्ति उपमारहित और उपाधिरहित है, सो जिसके हृदयमें सदा उपाधिरहित रहती है॥६॥

तेहिं बिलोकि माया सकुचाई ❀ करि न सकै कछु निजप्रभुताई ॥ ७ ॥
असि बिचारि जो मुनि विज्ञानी ❀ याचहिं भक्ति सकल गुनखानी ॥ ८ ॥

उसे देखकर माया सकुचा जाती है, अपनी कुछ प्रभुता नहीं कर सक्ती ॥ ७ ॥ ऐसा विचार कर जो परम ज्ञानी मुनीश्वर हैं सो सब गुणोंकी खानि भक्तिको मांगते हैं ॥ ८ ॥

दो०–यह रहस्य रघुनाथकर, बेगि न जानै कोई ॥ ❀
जानेते रघुपतिकृपा, सपनेहु मोह न होइ ॥ १८० ॥ ❀

रामचन्द्रजीके इस गुप्त भेदको कोई जलदी नहीं जानता; जिनपर रामचन्द्रजीकी दया होती है वेही जानते हैं, उनको स्वप्नमेंभी मोह नहीं होता ॥ १८० ॥

औरो ज्ञान भक्तिकर, भेद सुनहु परवीन ॥ ❀
जो सुनि होहि रामपद, प्रीति सदा अवछीन ॥ १८१ ॥ ❀

हे चतुर ! औरभी ज्ञान और भक्तिका भेद सुनो. जिसके सुननेसे रामचन्द्रजीके चरणोंमें सदा अघट प्रीति हो ॥ १८१ ॥

चौ०–सुनहु तात यह अकथ कहानी ❀ समुझत बनै न जाइ बखानी ॥ १ ॥
ईस्वरअंस जीव अविनासी ❀ चेतन अमल सहज सुखरासी ॥ २ ॥

हे प्यारे ! यह कथा सुनो जो न तौ कही जासक्ती है, न समझते बनती है, और न वर्णनही की जाती है ॥ १ ॥ यह जीव अविनाशी ईश्वरका अंश[1] है, जो चैतन्य, निर्मल और सहजहीमें सुखकी खानी है ॥ २ ॥

सो मायाबस भयउ गुसाँई ❀ बँध्यो कीर मर्कटकी नाँई ॥ ३ ॥
जड़ चेतनहिं ग्रंथि परिगई ❀ जदपि मृषा छूटन कठिनई ॥ ४ ॥

हे गोसाँई ! सो जीव मायाके वश होनेसे तोते[2] और बन्दरकी भाँति फँस गया है ॥ ३ ॥ जड़

---

(१) गीतायाम्–

" ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः ॥ "

(२) जब लड़के तोतेको पकड़ते हैं तौ नली लगाते हैं और कुछ खानेको दाना गेरते हैं, इसी कारण वह फँस जाता है, और ऐसेही बहुत छोटे मुहँके बासनमें अन्न भरकर धर देते हैं; बंदर उसमें हाथ गेरकर मुट्ठी भरकर निकालता है सो वह निकलती नहीं और लालचके मारे अन्नभी नहीं छोड़ता, स्वयं फँस जाता है और तब लोग पकड़ लेते हैं. सो जैसे तोता और बन्दर चैतन्यरूप होकर जड़ वस्तुमें फँसकर नहीं निकलते ऐसेही जीव मायामें फँसकर नहीं निकलता है ॥

कहिये माया और चैतन्य कहिये जीव, इन दोनोंमें गाँठ पड़गई है सो यद्यपि झूँठी है तथापि कठिनतासे छूटती है ॥ ४ ॥

जबते जीव भयउ संसारी ❀ ग्रंथि न छूट न होइ सुखारी ॥ ५ ॥
स्रुति पुरान बहु कहेउ उपाई ❀ छूट न अधिक अधिक अरुझाई ॥ ६ ॥

जबसे जीव संसारी हुआ तबसे न तौ गांठ छूटै और न सुखी हो ॥ ५ ॥ (यद्यपि) वेद पुराणोंने बहुतसे उपाय कहे हैं (तथापि) छूटती नहीं, बरन विशेष २ उलझतीही जाती है ॥ ६ ॥

जीवहृदय तममोह बिसेखी ❀ ग्रंथि छूट किमि परै न देखी ॥ ७ ॥
अस संजोग ईस जब करई ❀ तबहुँ कदाचित सो निरुअरई ॥ ८ ॥

जीवके हृदयमें अज्ञानरूपी अंधकार विशेष है सो गांठ कैसे छूटे, क्योंकि देख नहीं पड़ती ॥ ७ ॥ जो कभी ईश्वर ऐसा संयोग करै तभी कदाचित् वह छूट सकै ॥ ८ ॥

सात्विकि स्रद्धा धेनु सुहाई ❀ जो हरिकृपा हृदय बस आई ॥ ९ ॥
तप व्रत संयम नियम अपारा ❀ जे स्रुति कह सुभधर्म अचारा ॥ १० ॥

सात्विक श्रद्धारूपी सुहावनी गौ जो भगवान्‌की कृपासे हृदयमें आकर बसे ॥ ९ ॥ और तप, व्रत, संयम और अपार नियम जिनको वेदोंने अच्छे धर्म आचार कहे हैं ॥ १० ॥

सोइ तृन हरित चरै जब गाई ❀ भाववत्ससिसु पाइ पन्हाई ॥ ११ ॥
नोइनि वृत्ति पात्र विस्वासा ❀ निर्मल मन अहीर निजदासा ॥ १२ ॥

वे मानों हरीघास हैं, उसे जब वह गाय चरै और प्रेमरूप बछड़ेको पाकर दूधको पाँसे ॥ ११ ॥ फिर निवृत्तिरूपी रस्सीसे (उस गौको) बांधकर विश्वासरूपी पात्रमें निर्मल मनरूपी निजभक्त अहीर उसको दुहे ॥ १२ ॥

परमधर्ममय पय दुहि भाई ❀ अवटै अनल अकाम बनाई ॥ १३ ॥
तोष मरुत तब क्षमा जुड़ावै ❀ धृतिसम जावन देइ जमावै ॥ १४ ॥

और हे भाई! परमधर्मरूपी दूधको दुहके निष्कामनारूपी अग्निसे औंटावै ॥ १३ ॥ संतोष और क्षमाकी पवनसे उसे ठंड़ा करै और धैर्य्यका जामन देकर उसे जमावै ॥ १४ ॥

मुदिता मथै विचार मथानी ❀ दम अधार रजु सत्य सुबानी ॥ १५ ॥
तब मथि काढ़ि लेइ नवनीता ❀ विमल विराग सुभग सुपुनीता ॥ १६ ॥

फिर प्रसन्नतारूपी (हाथोंसे) विचाररूपी रईसे बिलोवै जिसमें दमका आधार और सत्यवाणीरूपी सुन्दर डोरी लगावे ॥१५॥ तब मथकर निर्मल वैराग्यरूपी सुन्दर पवित्र मक्खन निकाल ले ॥ १६ ॥

दो०–योगअग्नि करि प्रगट तव, कर्म सुभासुभ लाइ ॥ ❀
बुद्धि सिरावै ज्ञान घृत, ममतामल जरि जाइ ॥ १८२ ॥ ❀

फिर योगरूपी अग्नि प्रगट करके शुभ अशुभ कर्मरूपी (ईंधन) लगाकर बुद्धिसे ठंडाकर ज्ञानरूपी घी निकाल ले और जब ममतारूपी मैल जल जाय ॥ १८२ ॥

तब विज्ञाननिरूपिनी, बुद्धि बिसद घृत पाइ ॥ ❀
चित्त दिया भरि धरै दृढ़, समता दिअटि बनाइ ॥ १८३ ॥ ❀

तब विज्ञानके निरूपण करनेवाली बुद्धि निर्मल घीको पाकर चित्तरूपी दीपकमें भरकर समतारूपी दृढ़ दीवट बनाके (उसपर) रक्खे ॥ १८३ ॥

तीन अवस्था तीन गुन, तिहि कपासते काढ़ि ॥
तूल तुरीय सँवारि पुनि, बाती करै सुगाढ़ि ॥ १८४ ॥

तीनों अवस्थारूपी कपासमेंसे तीनों गुण (रूपी बिनोलौं) को निकालकर तुरीय (अवस्था)-रूपी रुईको सम्हालकर उसकी सुन्दर कड़ी बत्ती बनावे ॥ १८४ ॥

सो०-यहिविधि लेसो दीप, तेजरासि बिज्ञानमय ॥ ❀
जातहिं जासु समीप, जरहिं मदादिक सलभ सब ॥ १७ ॥ ❀

इस भांति तेजके समूह विज्ञानसहित उस दीपकको लेकर जलावे, जिसके पास जातेही मद-आदिरूपी सब पतंग जल जायँ ॥ १७ ॥

चौ०-सोहमस्मि इति वृत्ति अखंडा ❀ दीपसिखा सोइ परम प्रचंडा ॥ १ ॥
आतम अनुभव सुख स्वप्रकासा ❀ तब भवमूलभेदभ्रमनासा ॥ २ ॥

"सोहमस्मि" यह जो अखंडित वृत्ति है सो अत्यंत प्रचंड दीपककी शिखा है॥१॥तब आत्माका ज्ञान होनेसे सुख अपने आप प्रकाशित होता है और संसारकी जड़ भेद भ्रमका नाश होजाता है ॥ २ ॥

प्रबल अविद्याकर परिवारा ❀ मोह आदि तम मिटै अपारा ॥ ३ ॥
तब सोइ बुद्धि पाइ उजिआरा ❀ उरगृह बैठि ग्रंथि निरुआरा ॥ ४ ॥

और जब प्रबल अविद्याका मोह आदि परिवाररूप अपार अंधकार मिट जाता है ॥ ३ ॥ तब वह बुद्धि उजेला पाकर हृदयरूपी घरमें बैठके गाँठ खोलती है ॥ ४ ॥

छोरन ग्रंथि पाव जब सोई ❀ तब यह जीव कृतारथ होई ॥ ५ ॥
छोरत ग्रंथि जानि खगराया ❀ विघ्न अनेक करहि तब माया ॥ ६ ॥

सो जब वह गांठ खुल जाय तब यह जीव कृतार्थ हो ॥ ५ ॥ हे गरुड़जी ! तब गाँठको खुलती हुई जानकर माया अनेक विघ्न करती है ॥ ६ ॥

ऋद्धि सिद्धि प्रेरै बहु भाई ❀ बुद्धिहिं लोभ देखावहिं जाई ॥ ७ ॥
कल बल छल करि जाइ समीपा ❀ अंचलबात बुझावहिं दीपा ॥ ८ ॥

हे भाई ! बहुतसी ऋद्धिसिद्धियोंको भेजती है, सो वे जाकर बुद्धिको लोभ दिखाती हैं ॥ ७ ॥ कलाकरके, वा छल बल करके पास जाकर अंचलकी पवनसे दीपकको बुझा देती हैं ॥ ८ ॥

होइ बुद्धि जो परम सयानी ❀ तिन्हतन चितव न अनहित जानी ॥९॥
जो तेहि विघ्न बुद्धि नहिं बाधी ❀ तौ बहोरि सुर करहिं उपाधी ॥ १० ॥

यदि बुद्धि बहुत चतुर हो तौ (अपना) अनहित जानकर उनके शरीरकी ओर न देखे ॥९॥ जो उन विघ्नोंनेभी बुद्धिको बाधा न करी तौ फिर देवता उपाधि करते हैं ॥ १० ॥

इंद्रियद्वार झरोखा नाना ❀ तहँ तहँ सुर बैठे करि थाना ॥ ११ ॥
आवत देखहिं विषयबयारी ❀ ते हठि देहिं कपाट उघारी ॥ १२ ॥

इन्द्रियरूपी अनेक दर्वाजे और झरोखे हैं सो तहां तहां देवता (अपना) थाना लगाये बैठे हैं अर्थात् नेत्रोंमें सूर्य, कानोंमें दिशा, नाकमें अश्विनीकुमार, मुखमें अग्नि, त्वचामें पवन इत्यादि ॥ ११ ॥ सो वे विषयरूपी पवनको आते हुये देखकर हठसे किवाड़ खोल देते हैं ॥ १२ ॥

जब सो प्रभंजन उरगृह जाई ❀ तबहिं दीपबिज्ञान बुझाई ॥ १३ ॥
ग्रंथि न छूटि मिटा स्वप्रकासा ❀ बुद्धि बिकल भइ विषयबतासा ॥ १४ ॥

जब वह आँधी हृदयरूपी घरमें जाती हैं तभी विज्ञानरूपी दीपक बुझ जाता है ॥ १३ ॥ गाँठ न खुली और प्रकाश मिट गया तब विषयरूपी पवनसे बुद्धि व्याकुल हुई ॥ १४ ॥

इंद्रिय सुरन्ह न ज्ञान सुहाई ❀ विषय भोगपर प्रीति सदाई ॥ १५ ॥
विषयसमीर बुद्धि कृत भोरी ❀ तेहि विध दीप को बार बहोरी ॥ १६ ॥

इन्द्रियोंके देवताओंके ज्ञान अच्छा नहीं लगता. क्योंकि उनका प्रेम सदा विषय भोगपर रहता है ॥१५॥ जब विषयरूपी पवनने बुद्धि भोरी करदी तौ फिर उस प्रकार दीपकको कौन जलावै ॥१६॥

दो०–तव फिर जीव विविधविध, पावै संसृतिक्लेस ॥
हरिमाया अतिदुस्तर, तरि न जाइ बिहगेस ॥ १८५ ॥

हे गरुड़ ! तव फिर जीव संसारमें अनेक प्रकारके दुःख भोगता है. भगवान्‌की माया बहुत कठिन है, तरी नहीं जाती ॥ १८५ ॥

कहत कठिन समुझत कठिन, साधन कठिन विवेक ॥
होइ घुनाक्षरन्याय जो, पुनि प्रत्यूह अनेक ॥ १८६ ॥

ज्ञान कहनेमें कठिन, समझनेमें कठिन, और उसका साधनभी कठिन है. (जो कदाचित्) घुनके अक्षरोंकी भाँति अर्थात् जैसे घुनके कीड़ेके काटते २ कभी २ राम बन जाता है ऐसा न्यायभी हो जाय तौ फिर अनेक विघ्न होते हैं ॥ १८६ ॥

चौ०–ज्ञानकपंथ कृपानकै धारा ❀ परत खगेस न लागै बारा ॥ १ ॥
जो निर्विघ्न पंथ निर्वहई ❀ सो कैवल्यपरमपद लहई ॥ २ ॥

ज्ञानका मार्ग तलवारकी धार है उसके लगतेमें देर नहीं लगती ॥ १ ॥ जो विघ्नरहित मार्गमें निभजाय सो (प्राणी) कैवल्यके परमपदको प्राप्त होता है ॥ २ ॥

अतिदुर्लभ कैवल्यपरमपद ❀ संत पुरान निगम आगम बद ॥ ३ ॥
रामभजन सोइ मुक्ति गुसाँई ❀ अनइच्छित आवै बरिआई ॥ ४ ॥

कैवल्य परमपद बहुत कठिन है यह बात संत, पुराण और वेदशास्त्र कहते हैं ॥ ३ ॥ पर हे गोसाँई ! रामचन्द्रजीके भजनसे वही मुक्ति विनाही इच्छाके स्वयं आती है ॥ ४ ॥

जिमि थल बिनु जल रहि न सकाई ❀ कोटिभाँति कीउ करै उपाई ॥ ५ ॥
तथा मोक्षसुख सुनु खगराई ❀ रहि न सकै हरिभक्ति बिहाई ॥ ६ ॥

जैसे कोई करोड़ों प्रकारसे उपाय करै परंतु पृथ्वीके विना जल नहीं रह सक्ता ॥ ५ ॥ हे गरुड़ ! सुनो, ऐसेही मोक्षका सुख भगवान्‌की भक्तिको छोड़कर रह नहीं सक्ता ॥ ६ ॥

अस विचारि हरिभक्त सयाने ❀ मुक्ति निरदारि भक्ति लुभाने ॥ ७ ॥
भक्ति करत बिनु जतन प्रयासा ❀ संसृतिमूल अविद्या नासा ॥ ८ ॥

ऐसा बिचारके चतुर हरिभक्त मुक्तिका निरादर करके भक्तिके लोभी रहते हैं ॥ ७ ॥ भक्ति करतेही बिना यत्न और परिश्रमके संसारकी जड़ जो अविद्या है उसका नाश होजाता है ॥ ८ ॥

भोजन करिय तृप्तिहित लागी ❀ जिमि सो असन पचवै जठरागी ॥ ९ ॥
अस हरिभक्ति सुगम सुखदाई ❀ को अस मूढ़ न जाहि सुहाई ॥ १० ॥

जैसे तृप्ति होनेके लिये जो भोजन किया जाता है वह जठराग्नि कहिये पेटकी आँचसे पच जाता है, ऐसेही रामभक्त जो कर्म करते हैं उन्हें भक्ति पचा देती है ॥ ९ ॥ भगवान्‌की भक्ति ऐसी सुगम सुखकी देनेवाली है फिर कौन ऐसा मूर्ख है ? जिसे यह अच्छी न लगे ॥ १० ॥

---

(१) गीतायाम् श्लोकः–"दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया । मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते ॥" अर्थात् यह तीनों गुणोंसे युक्त देवसंवन्धिनी मेरी माया दुःखसेभी तरनेमें नहीं आती, इसलिये जो मेरी शरण आते हैं वेही इस मायाको तरते हैं,

(२) यथा–"क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्गमथ यत् कवयो वदन्ति ॥" इति श्रुतिः ! अर्थ चौपाईसे मिलता है–

(३) जैसा कहा है कि–" क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे " इति ॥

दो०-सेवकसेव्यभाव बिनु, भव न तरिय उरगारि ॥ ❀
भजहु रामपदपंकज, अस सिद्धांत बिचारि ॥ १८७ ॥ ❀

हे गरुड़जी ! सेवक और स्वामीके भाव विना संसारसे पार नहीं होते ऐसा सिद्धांत विचारकर रामचन्द्रजीके कमलसमान चरणोंका भजन करना चाहिये ॥ १८७ ॥

जो चैतनकहँ जड़ करै, जड़हि करै चैतन्य ॥ ❀
अस समर्थ रघुनायकहि, भजहिं जीव ते धन्य ॥ १८८ ॥ ❀

जो चैतन्यको जड़ करै और जड़को चैतन्य करै ऐसे समर्थ रामचन्द्रजीको जो जीव भजते हैं उनको धन्य है ॥ १८८ ॥

चौ०-कहेउँ ज्ञानसिद्धांत बुझाई ❀ सुनहु भक्तिमनिकी प्रभुताई ॥ १ ॥
रामभक्ति चिंतामनि सुंदर ❀ बसे गरुड़ जाके उरअंतर ॥ २ ॥

ज्ञानका सिद्धांत तौ समझाकर कहा (अव) भक्तिरूपी मणिकी प्रभुता सुनो ॥१॥ हे गरुड़जी ! रामचन्द्रजीकी भक्ति सुन्दर चिन्तामणि है सो जिसके अंतःकरणके भीतर रहती है ॥ २ ॥

परमप्रकासरूप दिन राती ❀ नहिं कछु चहिय दिया घृत बाती ॥३॥
मोह दरिद्र निकट नहिं आवा ❀ लोभवात नहिं ताहि बुझावा ॥ ४ ॥

वहाँ दिन रात स्वयं प्रकाशित रहती है, उसको दीपक घी और बत्ती कुछभी नहीं चाहिये ॥ ३ ॥ मोहरूपी दरिद्र पास नहीं आता और लोभरूपी पवनभी उसे नहीं बुझाती ॥ ४ ॥

प्रबल अविद्यामत मिटिजाई ❀ हारहिं सकल सलभसमुदाई ॥ ५ ॥
खल कामादि निकट नहिं जाहीं ❀ बसै भक्तिमनि जेहि उरमाहीं ॥ ६ ॥

प्रबल अविद्यारूपी अंधकार मिट जाता है और सब कामादि पतंगोंके समूह हार जाते हैं, पास नहीं आने पाते ॥५॥ काम आदि दुष्ट पास नहीं जाते जिसके हृदयमें भक्तिरूपी मणि रहती है॥६॥

गरल सुधासम अरि हित होई ❀ तेहि मनि बिनु सुख पाव न कोई॥७॥
ब्यापहिं मानसरोग न भारी ❀ जेहिके बस सब जीव दुखारी ॥ ८ ॥

उसको विष अमृतके समान और वैरी हितकारी होजाते हैं. और उस मणिके बिना कोई सुख नहीं पाता ॥ ७ ॥ बड़े बड़े मानसिक रोग (उसको) नहीं ब्यापते, कि जिनके कारण सब जीव दुखी होते हैं ॥ ८ ॥

रामभक्तिमनि उर बसु जाके ❀ दुख लवलेस न सपनेहुँ ताके ॥ ९ ॥
चतुरसिरोमनि तेइ जगमाहीं ❀ जे मनिलागि सुजतन कराहीं ॥ १० ॥

रामचन्द्रजीकी भक्तिरूपी मणि जिसके हृदयमें बसती है उसको स्वप्नमेंभी दुःखका लवलेश नहीं ॥ ९ ॥ वेही संसारमें चतुरशिरोमणि हैं जो मणिके लिये सुन्दर उपाय करते हैं ॥ १० ॥

सो मनि जदपि प्रगट जग अहई ❀ रामकृपा बिनु नहिं कोउ लहई ॥११॥
सुगम उपाय पाइबेकेरे ❀ नर हतभाग्य देत भटभेरे ॥ १२ ॥

सो वह मणि यद्यपि संसारमें प्रगट है परंतु रामचन्द्रजीकी दयाके विना कोई नहीं पाता ॥ ११ ॥ उसके पानेके उपाय तौ सुगम हैं परंतु भाग्यहीन मनुष्य उसे ठुकरा देते हैं ॥ १२ ॥

पावन पर्वत बेद पुराना ❀ रामकथा रुचिराकर नाना ॥ १३ ॥
मर्मी सज्जन सुमति कुदारी ❀ ज्ञान बिराग नयन उरगारी ॥ १४ ॥

वेदपुराणरूपी पवित्र पर्वतोंमें रामचन्द्रजीकी कथारूपी अनेक सुन्दर खानें हैं ॥ १३ ॥ हे गरुड़ ! इसके भेद जाननेवाले तौ सज्जन हैं, श्रेष्ठबुद्धि कुदारी है, और ज्ञान वैराग्य नेत्र हैं ॥ १४ ॥

भावसहित खोजैं जेइ प्रानी ❀ पाव भक्तिमनि सब सुखखानी ॥ १५ ॥
मोरे मन प्रभु अस बिस्वासा ❀ रामतें अधिक रामके दासा ॥ १६ ॥

जो प्राणी प्रीतिभावसे ढूंढ़ते हैं वे सब सुखोंकी खानि भक्तिरूपी मणिको पाते हैं ॥ १५ ॥ हे नाथ ! मेरे मनमें ऐसा विश्वास है कि, रामचन्द्रजीका सेवक रामचन्द्रजीसेभी विशेष है ॥ १६ ॥

राम सिंधु घन सज्जन धीरा ❀ चंदनतरु हरिसंतसमीरा ॥ १७ ॥
सबकर फल हरिभक्ति सुहाई ❀ सो बिनु संत न काहुहिं पाई ॥ १८ ॥
अस बिचारि जोइ करु सत्संगा ❀ रामभक्ति तेहिं सुलभ बिहंगा ॥ १९ ॥

रामचन्द्रजी समुद्र हैं, और धीरजवान् संत मेघ हैं, अर्थात् जैसे मेघ समुद्रका जल लेकर सब देशोंपर वर्षा करते हैं तैसेही शास्त्ररूपी समुद्रसे भक्तिरूपी जल लेकर सन्तरूपी मेघ अन्य भक्तरूपी देशोंपर बरसाते हैं; और भगवान् तौ चन्दनके वृक्ष और संत पवनरूप हैं; जर्थात् जैसे मलयागिरिमें चन्दनके वृक्षसे स्पर्शित पवन दूर२के अन्य वृक्षोंकोभी चन्दन कर देती है तैसेही सन्तरूप पवन रामभक्तिसे स्पर्शित हो अन्य पुरुषोंकोभी संत कर देती है ॥ १७ ॥ सबका फल सुन्दर हरिभक्ति है सो बिना संतोंके किसीने नहीं पाईहै ॥ १८ ॥ हे विहगेश ! ऐसा विचार कर जो सत्संग करै उसको रामचन्द्रजीकी भक्ति सुगम है ॥ १९ ॥

दो०-ब्रह्म पयोनिधि मंदर, ज्ञान संत सुर आहि ॥ ❀
कथासुधा मथि काढहीं, भक्तिमधुरता जाहि ॥ १८९ ॥ ❀

ब्रह्म समुद्र है. ज्ञान मंदराचल है और संत देवतारूप हैं सो उसे मथकर कथारूपी अमृतको निकालते हैं, जिसमें भक्तिरूपी मधुरता है ॥ १८९ ॥

बिरति चर्म असि ज्ञान मद, लोभ मोह रिपु मारि ॥ ❀
जय पाइय सो हरिभगत, देखु खगेस बिचारि ॥ १९० ॥ ❀

हे खगेश ! विचारकर देखो जिन्होंने वैराग्यरूपी ढाल और ज्ञानरूपी तलवारसे लोभ, मोह और मदरूपी शत्रुओंको मारकर जय पाई है, वेही हरिभक्त हैं ॥ १९० ॥

चौ०-पुनि सप्रेम बोलेउ खगराऊ ❀ जो कृपालु मोहिं ऊपर भाऊ ॥ १ ॥
नाथ मोहिं निजसेवक जानी ❀ सप्त प्रश्न मम कहहु बखानी ॥ २ ॥

फिर गरुड़ स्नेहसहित बोले कि हे दयासागर ! जो मुझपर आपका प्रेम है तौ ॥ १ ॥ हे स्वामी ! मुझे अपना दास जानकर मेरे सात प्रश्नोंका वर्णन कर कहो ॥ २ ॥

प्रथमहिं कहहु नाथ मतिधीरा ❀ सबतें दुर्लभ कवन सरीरा ॥ ३ ॥
बड़ दुख कवन कवन सुख भारी ❀ सो संक्षेपहिं कहहु बिचारी ॥ ४ ॥

हे स्वामी ! आप धैर्यबुद्धि हैं, पहिले यह कहो कि सबसे दुर्लभ कौनसा शरीर है ? ॥ ३ ॥ बड़ा दुःख कौनसा है ? और बड़ा सुख कौनसा है ? सो संक्षेपसे विचार कर कहो ॥ ४ ॥

संत असंत मर्म तुम जानहु ❀ तिन्हकर सहजसुभाव बखानहु ॥ ५ ॥
कवन पुन्य स्रुतिविदित बिसाला ❀ कहहु कवन अघ परम कराला ॥ ६ ॥

संत असंतोंके भेद तुम जानतेही हो, उनके सहजस्वभावका वर्णन करो ॥ ५ ॥ वेदोंमें कौनसा पुण्य बहुत बड़ा प्रकट है ? और बड़ा भयंकर पाप कौनसा है ? सो कहो ॥ ६ ॥

मानसरोग कहहु समुझाई ॐ तुम सर्वज्ञ कृपा अधिकाई ॥ ७ ॥
तात सुनहु आदर अतिप्रीती ॐ मैं संक्षेप कहौं यह नीती ॥ ८ ॥

मानस रोग समझाकर कहो, तुम सर्वज्ञ हो और मुझपर अधिक कृपा है ॥ ७ ॥ कागभुशुंडि वोले हे प्यारे! वड़े प्रेमसे आदरपूर्वक सुनो. मैं संक्षेपसे इस नीतिको कहता हूं ॥ ८ ॥

नरतनुसम नहिं कवनिउ देही ॐ जीव चराचर जाचत जेही ॥ ९ ॥
नरकस्वर्गअपवर्गनिसेनी ॐ ज्ञान विराग भक्ति सुख देनी ॥ १० ॥

मनुष्यदेहके समान कोई शरीर नहीं कि जिसे चराचर सब जीव माँगते हैं ॥ ९ ॥ यही देह, नरक, स्वर्ग और मोक्षकी निसेनी, और यही ज्ञान वैराग्य भक्तिकी सुख देनेवाली है ॥ १० ॥

सो तनु धरि हरि भजहिं न जे नर ॐ होइँ विषयरत मन्द मन्दतर ॥ ११ ॥
कंचन काँच बदल सठ लेहीं ॐ करते डारि परसमनि देहीं ॥ १२ ॥

उस देहको पाके जो मनुष्य भगवान्का भजन नहीं करते और विषयोंमें प्रीति करते हैं वे महामूर्ख हैं ॥ ११ ॥ वे मूर्ख सुवर्णसे बदलकर काँच लेते हैं और हाथसे छूकर मणिको डाल देते हैं ॥ १२ ॥

नहिं दरिद्रसम दुख जगमाहीं ॐ संतमिलनसम सुख कछु नाहीं ॥ १३ ॥
परउपकार बचन मन काया ॐ संतसहज सुभाव खगराया ॥ १४ ॥

संसारमें दरिद्रके समान दुःख नहीं और संतोंके मिलनेकी बराबर कुछ सुख नहीं ॥ १३ ॥ हे गरुड़! मन वचन कर्मसे परोपकारही संतोंका सहज स्वभाव है ॥ १४ ॥

संत सहहिं दुख परहितलागी ॐ परदुखहेतु असंत अभागी ॥ १५ ॥
भूर्ज तरू सम संत कृपाला ॐ परहित सह नित बिपति बिसाला ॥ १६ ॥

संत पराये कल्याणके लिये दुःख सहते हैं और अभागे असंत पराये दुःखके लिये दुःख सहते हैं ॥ १५ ॥ दया करनेवाले संत भोजपत्रके वृक्षके समान हैं जो दूसरोंके भलेके लिये नित्य बड़ा कष्ट सहते हैं ॥ १६ ॥

सन इव खल परबंधन करई ॐ खाल कढ़ाइ विपति सहि मरई ॥ १७ ॥
खल बिनु स्वारथ परअपकारी ॐ अहि मूषक इव सुनु उरगारी ॥ १८ ॥

और खोटे मनुष्य सनकी भांति हैं; वे पराया वंधन करते हैं और अपनी खाल खिंचाकर कष्ट सहकर मरते हैं ॥ १७ ॥ हे गरुड़! सुनो, खोटे मनुष्य सर्प और मूसेकी भांति विनाही प्रयोजनके पराया अपकार करते हैं ॥ १८ ॥

परसंपदा विनासि नसाहीं ॐ जिमि कृषि हति हिमउपल बिलाहीं ॥ १९ ॥
दुष्टउदय जग आरतिहेतू ॐ यथा प्रसिद्ध अधम ग्रह केतू ॥ २० ॥

पराई संपत्तिको नष्ट करके आपभी नष्ट होते हैं, जैसे ओले खेतीको नाश कर आपभी नाश हो जाते हैं ॥ १९ ॥ दुष्टोंका उदयभी संसारके दुःखके लिये है, जैसे नीच केतुग्रह प्रसिद्धही है, अर्थात् जब उदय होगा प्रजाको दुःख देगा ॥ २० ॥

संतउदय संतत सुखकारी ॐ विस्वसुखी जिमि इंदु तमारी ॥ २१ ॥
परमधर्म स्रुतिबिदित अहिंसा ॐ परनिंदासम अघ न गरिंसा ॥ २२ ॥

---

(१) जैसा कहा है–" शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम् " इति।

(२) बालकांडके सातवें पत्रमें देखो।

संतोंका उदय निरंतर सुख करनेवाला है जैसे अंधकारके दूर करनेवाले चन्द्रमासे संसार सुखी होता है ॥ २१ ॥ वेदोंमें बड़ा धर्म अहिंसा कहा है । यथा–"अहिंसा परमो धर्मः" और परई निन्दाके बराबर बड़ा पाप नहीं ॥ २२ ॥

हरिगुरुनिंदक दादुर होई ❀ जन्म सहस्र पाव तनु सोई ॥ २३ ॥
द्विजनिंदक बहु नरक भोगकरि ❀ जग जन्मै वायससरीर धरि ॥ २४ ॥

विष्णु और गुरुकी निन्दा करनेवाला मेंडक होकर हजार जन्मतक उसी शरीरको पाता है ॥ २३ ॥ ब्राह्मणकी निन्दा करनेवाला बहुतसे नरक भोगकर कौएका शरीर धारणकर संसारमें जन्म लेता है ॥ २४ ॥

सुरस्तुतिनिंदक जे अभिमानी ❀ रौरव नरक परहिं ते प्रानी ॥ २५ ॥
होहिं उलूक संतनिंदारत ❀ मोहनिसाप्रिय ज्ञानभानुगत ॥ २६ ॥

जो अभिमानी देवता और वेदोंकी निन्दा करते हैं वे प्राणी रौरव नरकमें पड़ते हैं ॥ २५ ॥ संतोंकी निन्दामें जिनकी प्रीति है वे उल्लू होते हैं जिनको अज्ञानरूपी रात प्यारी है जिसमें ज्ञानरूपी सूर्य नहीं रहता ॥ २६ ॥

सबकी निंदा जे जड़ करहीं ❀ ते चमगादुर हुइ अवतरहीं ॥ २७ ॥
सुनहु तात अब मानसरोगा ❀ जिन्हते दुख पावहिं सब लोगा ॥ २८ ॥

जो मूर्ख सबकी निन्दा करते हैं वे चिमगादर होकर अवतार लेते हैं, (जो भोजन और बीट मुखसेही करते हैं.) ॥२७॥ हे प्यारे ! अब मानसिक रोग सुनो, जिनसे सब लोग दुःख पाते हैं ॥२८॥

मोह सकल व्याधिनकर मूला ❀ तेहिते पुनि उपजहिं बहु सूला ॥ २९ ॥
कामवात कफलोभ अपारा ❀ क्रोधपित्त नित छातीजारा ॥ ३० ॥

सब दुःखोंकी जड़ मोह है कि जिससे फिर बहुतसे कष्ट उत्पन्न होते हैं ॥ २९ ॥ काम वात है, महालोभ कफ है और क्रोध पित्त है. ये नित्यही छातीको जलाते हैं ॥ ३० ॥

प्रीति करहिं जो तीनउँ भाई ❀ उपजै सन्निपात दुखदाई ॥ ३१ ॥
विषयमनोरथ दुर्गम नाना ❀ ते सब सूल नाम को जाना ॥ ३२ ॥

जो ये तीनों भाई प्रेम करैं तौ दुखदाई सन्निपात उत्पन्न होता है ॥ ३१ ॥ अनेक विषयोंके मनोरथ जो कठिन हैं उनके नामको कौन जानसक्ता है ? ॥ ३२ ॥

ममता दादु कंडु ईर्षाई ❀ हर्ष विषाद गहरु बहुताई ॥ ३३ ॥
परसुख देखि जरनि सो छाई ❀ कुष्ठ दुष्टता मनकुटिलाई ॥ ३४ ॥

ममता दाद है, ईर्षा खुजली है, हर्ष विषाद बड़ा भारी गहरुनाम रोग है ॥ ३३ ॥ पराये सुखको देखकर जो जलन होती है वह छई है, और दुष्टता तथा मनकी कुटिलताही कोढ़ है ॥ ३४ ॥

अहंकार जो दुखद डमरुआ ❀ दंभ कपट मद मान नहरुआ ॥ ३५ ॥
तृष्णा उदरवृद्धि अतिभारी ❀ त्रिविध ईषना तरुन तिजारी ॥ ३६ ॥
जुगबिधिज्वर मत्सर अविवेका ❀ कहँलगि कहों कुरोग अनेका ॥ ३७ ॥

जो अहंकार है वही दुःखदाई डमरू रोग, और पाखंड, कपट, मद और मान ये नहरुआ हैं ॥ ३५ ॥ तृष्णा बड़ा भारी जलंधर रोग है और तीन प्रकारकी ईषणा बलवान् तिजारी है ॥ ३६ ॥ मत्सर कहिये पराई भलाईका न देखना और अज्ञानही दोप्रकारके ज्वर है. इस प्रकार अनेक बुरे रोग हैं मैं कहांतक कहूं ॥ ३७ ॥

दो०-एक व्याधिबस नर मरहिं, ए असाध्य बहु व्याधि ॥ ❀
संतत पीडहिं जीवकहँ, सो किमि लहहिं समाधि ॥ १९१ ॥❀

मनुष्य एकही व्याधिसे मर जाते हैं और ये तौ अनेक असाध्य रोग हैं जो निरंतर जीवको दुःख देते रहते हैं, फिर वह कैसे सुख पा सक्ता है ? ॥ १९१ ॥

नेम धर्म आचार तप, ज्ञान यज्ञ जप दान ॥ ❀
भेषज पुनि कोटिन्ह करहिं, रुज न जाहिं हरियान ॥ १९२ ॥❀

हे गरुड़ ! नेम, धर्म, आचार, तप, ज्ञान, यज्ञ, जप और दानरूपी करोड़ों औषधी करते हैं, फिरभी रोग नहीं जाते ॥ १९२ ॥

चौ०-इहिविधि सकल जीव जग रोगी ❀ सोक हर्ष भय प्रीति वियोगी ॥ १ ॥
मानसरोग कछुक मैं गाए ❀ हैं सबके लखि बिरलन्ह पाए ॥ २ ॥

इस भांति संसारके सब जीव रोगी हैं और कभी शोक, कभी आनन्द, कभी भय, कभी प्रेम, और कभी वियोग हो जाता है ॥ १ ॥ मैंने जो मानसिक थोडेसे रोग कहे हैं वे हैं तौ सभीको परंतु किसी २ ने देख पाये हैं ॥ २ ॥

जानेते छीजहिं कछु पापी ❀ नास न पावहिं जन परितापी ॥ ३ ॥
विषय कुपथ्य पाइ अंकुरे ❀ मुनिन्ह हृदय का नर बापुरे ॥ ४ ॥

वे पापी रोग जाननेसे कुछ घट जाते हैं, परंतु वे मनुष्योंके दुःख देनेवाले नाश नहीं होते ॥ ३ ॥ वे रोग विषयरूपी कुपथ्यको पाकर मुनीश्वरोंके हृदयमेंभी बढ़ जाते हैं, फिर बिचारे मनुष्य किस गिनतीमें हैं ? ॥ ४ ॥

रामकृपा नासहिं सब रोगा ❀ जो यहि भाँति बनै संयोगा ॥ ५ ॥
सद्गुरुवैद्य बचनविस्वासा ❀ संयमग्रहण विषयकर आसा ॥ ६ ॥

रामचंद्रजीकी दयासे जो इस प्रकार संयोग बनै तौ सब रोगोंका नाश होजाय कि ॥ ५ ॥ श्रेष्ठ गुरुरूपी वैद्य मिलै और उसके वचनोंका विश्वास हो, और विषयोंकी आशासे जीको रोकने का पथ्य किया जाय ॥ ६ ॥

रघुपतिभक्ति सजीवनमूरी ❀ अनोपान स्रद्धा अति भूरी ॥ ७ ॥
इहिविध भले कुरोग नसाहीं ❀ नाहित जतन कोटि नहिं जाहीं ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजीकी भक्ति सजीवन मूल (औषधी) है और बड़ी भारी श्रद्धाही अनोपान है ॥ ७ ॥ इसप्रकार भलेही कुरोगोंका नाश हो, नहीं तौ करोडों उपायोंसेभी नहीं जाते ॥ ८ ॥

जानिय तब मन विरुज गुसाँई ❀ जब उर बल बिराग अधिकाई ॥ ९ ॥
सुमतिछुधा बाढ़ै नित नई ❀ विषयआस दुर्बलता गई ॥ १० ॥

हे गोसाँई ! मनको रोगरहित तभी जानना चाहिये जब हृदयमें वैराग्यरूपी बलकी विशेपता हो ॥ ९ ॥ (उस समय)श्रेष्ठबुद्धिरूपी भूख नित्य नई बढ़ती है और विषयोंकी आशारूपी दुर्बलता चली जाती है ॥ १० ॥

विमलज्ञानजल पाय अन्हाई ❀ तब रहु राजभक्ति उर छाई ॥ ११ ॥
सिव अज सुक सनकादिक नारद ❀ जे मुनि ब्रह्मविचारविसारद ॥ १२ ॥

निर्मल ज्ञानरूपी जलको पाकर स्नान करै तब रामचन्द्रजीकी भक्ति हृदयमें छाई रहती है ॥ ११॥ महादेव, ब्रह्मा, शुक, सनकादिक और नारद आदि जो मुनीश्वर ब्रह्मके बिचारमें बड़े २ पंडित हैं ॥ १२॥

सबकर मत खगनायक एहा ❀ करिय रामपदपंकजनेहा ॥ १३ ॥
स्रुति पुरान सद्ग्रंथ कहाहीं ❀ रघुपतिभक्ति बिना सुख नाहीं ॥ १४ ॥

हे गरुड़ ! उन सबका यही मत है कि रामचन्द्रजीके चरणकमलोंमें प्रेम करना चाहिये ॥ १३ ॥ वेद, पुराण और अच्छे ग्रंथ कहते हैं कि रामचन्द्रजीकी भक्तिके बिना सुख नहीं है ॥ १४ ॥

कमठपीठ जामहिं बरु बारा ❀ बंध्यासुत बरु काहुहिं मारा ॥ १५ ॥
फूलहिं नभ बरु बहुविध फूला ❀ जीव न लह सुख प्रभुप्रतिकूला ॥ १६ ॥

कछुएकी पीठपर भलेही वाल उगैं, और वांझका पुत्र भलेही किसीको मारै ॥ १५ ॥ आकाशमें भलेही अनेक भाँतिके फूल फूलें, परंतु भगवान्‌से विमुख होकर जीव सुख नहीं पाता ॥ १६ ॥

तृषा जाइ बरु मृगजलपाना ❀ बरु जामहिं सससीस बिषाना ॥ १७ ॥
अंधकार बरु रविहिं नसावै ❀ रामविमुख सुख जीव न पावै ॥ १८ ॥
हिमते अनल प्रगट बरु होई ❀ रामविमुख सुख पाव न कोई ॥ १९ ॥

भलेही मृगजलके पीनेसे प्यास जाती रहै और खरगोशके माथेपर भलेही सींग उत्पन्न हो जाँय ॥ १७ ॥ अंधकार भलेही सूर्यका नाश कर दे, परंतु रामचन्द्रजीके विमुख होनेसे जीव सुख नहीं पाता ॥ १८ ॥ पालेमेंसे अग्नि भलेही पैदा हो, परंतु रामजीसे बिमुख कोई सुख नहीं पा सक्ता ॥ १९ ॥

दो०–बारि मथे बरु होइ घृत, सिकताते बरु तेल ॥ ❀
बिनु हरिभजन न भव तरिय, यह सिद्धांत अपेल ॥ १९३ ॥ ❀

पानीके मथनेसे भलेही घी उत्पन्न हो, और बालूसे भलेही तेल निकले, परंतु भगवान्‌के भजनविना संसारसे पार नहीं हो सक्ता, यह सिद्धान्त अमिट है ॥ १९३ ॥

मसकहिं करहिं बिरंचि प्रभु, अजहिं मसकते हीन ॥ ❀
अस बिचारि तजि संसय, रामहिं भजहिं प्रवीन ॥ १९४ ॥ ❀

भगवान् मच्छरको ब्रह्मा और ब्रह्माको मच्छरसेभी छोटा कर सक्ते हैं; ऐसा विचार कर संशयको छोड़कर चतुर मनुष्य रामचन्द्रजीका भजन करते हैं ॥ १९४ ॥

छं०–विनिश्चितं वदामि ते न अन्यथा बचांसि मे ॥ ❀
हरिं नरा भजंति येऽतिदुस्तरं तरंति ते ॥ ४५ ॥ ❀

हे गरुड़ ! मैं तुमसे यह निश्चय किया हुआ सिद्धांत कहता हूं; मेरा बचन झूठा नहीं, कि जो मनुष्य भगवान्‌का भजन करते हैं वे अत्यंत कठिन (संसाररूपी समुद्र) के पार हो जाते हैं ॥ ४५ ॥

चौ०–कहेउँ नाथ हरिचरित अनूपा ❀ व्यास समास स्वमतिअनुरूपा ॥ १ ॥
स्रुतिसिद्धांत इहै उरगारी ❀ राम भजिय सब काम बिसारी ॥ २ ॥

कवित्त–

(१) जप जोग विराग महामख साधन दान दया दम कोटि करै ।
मुनि सिद्ध सुरेश गणेश महेशसे सेवत जन्म अनेक मरै ॥
निगमागम जानि पुराण पढ़ै तपसाधनमें युग पुंज मरै ।
मनसों प्रण रोपि कहै तुलसी रघुनाथ बिना दुख कौन हरै ॥ १ ॥

हे नाथ! भगवान्‌के सुन्दर चरित्र कोई विस्तारपूर्वक और कोई संक्षेपसे अपनी बुद्धिके अनुसार कहे हैं ॥ १ ॥ हे गरुड़जी! वेदोंका यही सिद्धान्त है कि सब कामनाओंको छोड़कर रामचन्द्रजीका भजन करना चाहिये ॥ २ ॥

प्रभु रघुपति तजि सेइय काही ❀ मोहिंसे सठपर ममता जाही ॥ ३ ॥
तुम विज्ञानरूप नहिं मोहा ❀ कीन्ह नाथ मोपर अतिछोहा ॥ ४ ॥

भगवान् रघुनाथजीको छोड़कर किसका सेवन करना चाहिये? जिनकी मुझसे शठपर प्रीतिहै ॥३॥ हे नाथ! तुम ज्ञानस्वरूप हो. (तुमको) अज्ञान नहीं है, तुमने मुझपर बड़ी दया की ॥ ४ ॥

पूँछेहु रामकथा अतिपावनि ❀ सुकसनकादिसंभुमनभावनि ॥ ५ ॥
सत्संगति दुर्लभ संसारा ❀ निमिषदंडभरि एकौ बारा ॥ ६ ॥

जो शुकसनकादिक और महादेवजीके मनको अच्छी लगनेवाली परम पवित्ररामचन्द्रजीकी कथा पूँछी ॥ ५ ॥ संसारमें तौ एक बार एक घड़ी अथवा पलभरकोभी सत्संग मिलना दुर्लभ है ॥ ६ ॥

देखु गरुड़ निजहृदय बिचारी ❀ मैं रघुबीरभजनअधिकारी ॥ ७ ॥
सकुनाधम सबभाँति अपावन ❀ प्रभु मोहिं कीन्ह बिदित जगपावन॥८॥

हे गरुड़! अपने हृदयमें विचारकर देखो कि मैं क्या रामचन्द्रजीके भजनका अधिकारी हूं? ॥७॥ हे नाथ! पक्षियोंमें महानीच औरसव प्रकारसे अपवित्र हूं सो प्रभुने मुझको संसारमें पवित्र प्रगट किया ॥

दो०-आजु धन्य मैं धन्य अति, जद्यपि सबबिधि हीन ॥ ❀
निजजन जानि राम मोहिं, संतसमागम दीन ॥ १९५ ॥ ❀

यद्यपि मैं सब प्रकारसे दीन हूं तथापि आज मुझको धन्य है! परम धन्य है! जो रामचन्द्रजीने मुझको अपना दास जानकर संतोंका समागम दिया ॥ १९५ ॥

नाथ जथामति भाषेउँ, राखेउँ कछु नहिं गोइ ॥ ❀
चरितसिंधु रघुनाथकर, थाह कि पावै कोइ ॥ १९६ ॥ ❀

हे नाथ! मैंने अपनी बुद्धिके अनुसार कुछभी छिपाकर नहीं रक्खा है, परंतु रामचन्द्रजीके चरित्ररूपी समुद्रकी क्या कोई थाह पा सक्ता है? ॥ १९६ ॥

चौ०-सुमिरि रामके गुनगुन नाना ❀ पुनि पुनि हर्ष भुशुंडि सुजाना ॥ १ ॥
महिमा निगम नेति करि गाई ❀ अतुलित बल प्रताप प्रभुताई ॥ २ ॥

चतुर कागभुशुंडि रामचन्द्रजीके अनेक गुणोंके समूहोंका स्मरण करके वारंवार प्रसन्न हुये (और कहने लगे कि) ॥ १ ॥ जिनकी बड़ाई वेदोंने नेति २ करके गाई है और जिनका बल, प्रताप और प्रभुता अतोल है ॥ २ ॥

सिवअजपूज्यचरन रघुराई ❀ मोपर कृपा परम मृदुलाई ॥ ३ ॥
अस सुभाव केहु सुनौं न देखौं ❀ केहि खगेस रघुपतिसम लेखौं ॥ ४ ॥

और जिन रामचन्द्रजीके चरणोंकी महादेव और ब्रह्माजी पूजा करते हैं उन्होंने मुझपर दया की, यही तौ परमकोमलता है ॥ ३ ॥ ऐसा स्वभाव किसीका देखा न सुना. हे गरुड़जी! रामचन्द्रजीके समान किसे गिनू ॥ ४ ॥

---

(१) "न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः"।

साधक सिद्ध विमुक्त उदासी ❀ कवि कोविद कृतज्ञ संन्यासी ॥ ५ ॥
योगीश्वर अरु तापस ज्ञानी ❀ धर्मनिरत पंडित विज्ञानी ॥ ६ ॥

साधक, सिद्ध, विमुक्त, उदासी, कवीश्वर, कोविद, कृतज्ञ और संन्यासी ॥ ५ ॥ योगीश्वर, ज्ञानी, तपस्वी, धर्मात्मा, विज्ञानी और पंडित ॥ ६ ॥

तरहिं न विनु सेये मम स्वामी ❀ राम नमामि नमामि नमामी ॥ ७ ॥
सरण गए मोसे अघरासी ❀ होहि सुद्ध नमामि अविनासी ॥ ८ ॥

विना मेरे स्वामी रघुनाथजीका सेवन किये नहीं तर सक्त, ऐसे रामचन्द्रजीको वारंवार नमस्कार करता हूँ ॥ ७ ॥ जिनकी शरण जानेसे मुझसरीखे पापके पुंज पवित्र होते हैं ऐसे अविनाशी रामजीको नमस्कार है ॥ ८ ॥

दो०-जासु नाम भवभेषज, हरन घोर त्रयसूल ॥ ❀
सो कृपालु मोहिं तोहिं पर, सदा रहहिं अनुकूल ॥ १९७ ॥ ❀

जिनका नाम संसारकी औषधि है और तीनों कठिन तापोंका हरनेवाला है, वही दया करनेवाले (रामचन्द्र) मेरे और तुम्हारे ऊपर सदा सहायक रहैं ॥ १९७ ॥

सुनि भुसुंडिके बचन वर, देखि रामपद नेह ॥ ❀
बोले प्रेमसहित गिरा, गरुड़ बिगतसंदेह ॥ १९८ ॥ ❀

कागभुशुंडिके श्रेष्ठ बचन सुनकर और रामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रेम देखकर गरुड़जी सन्देहरहित होकर प्रेमसमेत बाणी बोले कि ॥ १९८ ॥

चौ०-मैं कृतकृत्य भयउँ तव बानी ❀ सुनि रघुबीरभक्तिरससानी ॥ १ ॥
रामचरन नूतन रति भई ❀ मायाजनित विपति सब गई ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीकी भक्तिके रसमें सनी हुई तुम्हारी वाणी सुनकर मैं कृतकृत्य हुआ ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीके चरणोंमें नया प्रेम हुआ और मायासे उत्पन्न हुई सब विपत्ति जाती रही ॥ २ ॥

मोहजलधि वोहित तुम भयऊ ❀ मोकहँ नाथ विविध सुख दयऊ ॥ ३ ॥
मोसन होइ न प्रत्युपकारा ❀ बंदौं तव पद बारहिं बारा ॥ ४ ॥

हे स्वामी ! तुम मोहरूपी समुद्रको (पार करनेके लिये मुझे) नौकारूप होगये और मुझको नानाप्रकारका सुख दिया ॥३॥ मुझसे इसका बदला नहीं हो सक्ता. इसलिये बारंवार तुम्हारे चरणोंको दंडवत करता हूं ॥ ४ ॥

पूरनकाम रामअनुरागी ❀ तुमसत तात न कोउ बड़भागी ॥ ५ ॥
संत बिटप सरिता गिरि धरनी ❀ परहित हेतु सबन्हकर करनी ॥ ६ ॥

हे प्यारे ! तुम पूर्णकाम और रामचन्द्रजीके भक्त हो सो तुम्हारे समान बड़भागी कोई नहीं ॥५॥ संत, वृक्ष, नदी, पर्वत, और पृथ्वी, और इन सबकी करनी परायेही हितके लिये होती है॥६॥

संतहृदय नवनीतसमाना ❀ कहा कविन पै कहै न जाना ॥ ७ ॥
निजपरिताप द्रवै नवनीता ❀ परदुख द्रवहिं सुसंत पुनीता ॥ ८ ॥

कवीश्वरोंने संतोंका हृदय मक्खनके समान कहा तौ है, परंतु कह नहीं जाना ॥ ७ ॥ क्योंकि मक्खन तौ (जब गरमी लगती है तब) अपनेही तापसे पिघलता है, और पवित्र संत पराये दुःखसे पिघलते हैं ॥ ८ ॥

जीवन जन्म सफल मम भयऊ ❀ तव प्रसाद सब संसय गयऊ ॥ ९ ॥
जानेहु सदा मोहिं निजकिंकर ❀ पुनि पुनि उमा कहै बिहंगवर ॥ १० ॥

मेरा जन्म और जीवन सफल हुआ और आपकी दयासे मेरा सब सन्देह जाता रहा ॥ ९ ॥ (महादेव कहते हैं) हे पार्वती ! गरुड़ (कागभुशुंडिजीसे) बारंबार कहने लगे कि मुझे सदा अपना सेवक जानना ॥ १० ॥

दो०-तासु चरन सिर नाइ करी, प्रेमसहित मतिधीर ॥ ❀
गरुड़ गयउ बैकुंठ तब, हृदय राखि रघुबीर ॥ १९९ ॥ ❀

और फिर मतिधीर गरुड़जी उनके चरणोंको प्रेमसहित शिर नवाकर और रामचन्द्रजीको हृदयमें धारण कर वैकुंठको गये ॥ १९९ ॥

गिरिजा संतसमागम, सम न लाभ कछु आन ॥ ❀
बिनु हरिकृपा सो होइ नहीं, गावहिं वेद पुरान ॥ २०० ॥ ❀

महादेवजी कहते हैं, हे पार्वती ! संतोंके संगके समान और कुछ लाभ नहीं. परंतु वेद, पुराण यों कहते हैं कि वह सत्संग भगवान्‌की दयाके बिना नहीं होता ॥ २०० ॥

चौ०-कहेउँ परम पुनीत इतिहासा ❀ सुनत सबन छूटहिं भवपासा ॥ १ ॥
प्रनतकल्पतरु करुनापुंजा ❀ उपजै प्रीति रामपदकंजा ॥ २ ॥

यह जो अत्यंत पवित्र इतिहास कहा है. इसको कानोंसे सुननेसे (प्राणी) संसाररूपी बंधनसे छूटजाते हैं ॥ १ ॥ और यह भक्तोंको कल्पवृक्षके समान है और इससे करुणापुंज रामचन्द्रजीके चरणकमलोंमें स्नेह उत्पन्न होता है ॥ २ ॥

मनबचकर्मजनित अघ जाई ❀ सुनै जो कथा सबन मन लाई ॥ ३ ॥
तीर्थाटना साधनसमुदाई ❀ जोगबिरागज्ञाननिपुनाई ॥ ४ ॥

जो मन लगाकर कानोंसे कथा सुने उसका मन वचन कर्मसे उत्पन्न हुआ पाप जाता रहता है ॥ ३ ॥ तीर्थयात्रा, अनेक साधनोंका पुंज, योग, वैराग्य, ज्ञान और चतुराई ॥ ४ ॥

नाना कर्म धर्म व्रत दाना ❀ संयम नियम जज्ञ जप नाना ॥ ५ ॥
भूतदया द्विजगुरुसेवकाई ❀ विद्या बनय विवेक बड़ाई ॥ ६ ॥

अनेक कर्म, धर्म, व्रत, दान, संयम, नियम, यज्ञ, जप और दान ॥ ५ ॥ प्राणिमात्रपर दया, ब्राह्मण और गुरुकी सेवा, विद्या, नम्रता, ज्ञान, बड़ाई आदि ॥ ६ ॥

जहँलगि साधन वेद बखानी ❀ सबकर फल हरिभक्ति भवानी ॥ ७ ॥
सोइ रघुनाथभक्ति स्रुति गाई ❀ रामकृपा काहू यक पाई ॥ ८ ॥

जहांतक वेदोंने साधन कहे हैं हे पार्वती ! सबका फल हरिभक्ति है ॥ ७ ॥ वही रामचन्द्रजीकी भक्ति वेदोंने कही है. परंतु रामचन्द्रजीकी दयासे किसी एकहीको मिलती है ॥ ८ ॥

दो०-मुनिदुर्लभ हरिभक्ति नर, पावहिं बिनहिं प्रयास ॥ ❀
जो यह कथा निरंतर, सुनहिं मानि बिस्वास ॥ २०१ ॥ ❀

जो इस कथाको विश्वास करके निरंतर सुनते हैं वे मनुष्य मुनीश्वरोंकोभी दुर्लभ ऐसी भगवान्‌की भक्तिको विनाही परिश्रमके पाते हैं ॥ २०१ ॥

चौ०–सोइ सर्वज्ञ गुनी सोइ ज्ञाता ❀ सोइ महिमंडन पंडित दाता ॥ १ ॥
धर्मपरायन सोइ कुलत्राता ❀ रामचरन जाकर मन राता ॥ २ ॥

वही सर्वज्ञ, वही गुणवान्, वही ज्ञानी, वही पृथ्वीका आभूषण, वही पंडित, और वही दानी है ॥ १ ॥ और वही धर्मात्मा और वही कुलरक्षक है कि जिसका मन रामचन्द्रजीके चरणोंमें लगाहै॥२॥

नीतिनिपुन सोइ परम सयाना ❀ स्रुतिसिद्धांत नीक तेहिं जाना ॥ ३ ॥
सोइ कबि कोबिद सोइ रनधीरा ❀ जो छल छाँड़ि भजै रघुबीरा ॥ ४ ॥

वही नीतिमें निपुण और वही परम चतुर है और उसीने वेदका सिद्धांत भलीभांति जाना है ॥३॥ और वही कवीश्वर, वही पंडित और वही रणधीर है; जो कपट छोड़कर रामचन्द्रजीका भजन करै ॥४॥

धन्य नारि पतिब्रत अनुसरी ❀ धन्य सो देस जहँ सुरसरी ॥ ५ ॥
धन्य सो भूप नीति जो करई ❀ धन्य सो द्विज निजधर्म न टरई ॥ ६ ॥

उसी स्त्रीको धन्य है जो पतिव्रतका पालन करती है और उसी देशको धन्य है जहां गंगाजी हैं ॥ ५ ॥ उसी राजाको धन्य है जो नीति करता है और उसी ब्राह्मणको धन्य है जो अपने धर्मसे नहीं डिगता है ॥ ६ ॥

सो धन धन्य प्रथम गति जाकी ❀ धन्य पुन्यरत मति सोइ पाकी ॥ ७ ॥
धन्य घरी सोइ जब सतसंगा ❀ धन्य जन्म द्विजभक्त अभंगा ॥ ८ ॥

उसी धनको धन्य है जिसकी पहली[2] गति अर्थात् दान करना है. और उसी बुद्धिको धन्य है जिसकी पुण्यमें दृढ़ प्रीति हो ॥ ७ ॥ उसी गड़ीको धन्य है जब सत्संग हो, और उसी प्राणीको धन्य है जो ब्राह्मणोंका दृढ़भक्त हो ॥ ८ ॥

दो०–सो कुल धन्य उमा सुनु, जगतपूज्य सुपुनीत ॥ ❀
श्रीरघुबीरपरायन, जेहि नर उपज बिनीत ॥ २०२ ॥ ❀

हे पार्वती ! सुनो, संसारमें वही कुल जगतपूज्य और पवित्र है और उसी कुलको धन्य है जिसमें श्रीरामचन्द्रजीका भक्त और सुशील मनुष्य उत्पन्न हो ॥ २०२ ॥

चौ०–मतिअनुरूप कथा मैं भाखी ❀ जद्यपि प्रथम गुप्त करि राखी ॥ १ ॥
जब मन प्रीति देखि अधिकाई ❀ तब मैं रघुपतिकथा सुनाई ॥ २ ॥

यद्यपि पहले मैंने यह कथा गुप्त रक्खी थी (तथापि) अब अपनी बुद्धिके अनुसार कही है ॥ १ ॥ जब मैंने तुम्हारे मनमें प्रेमकी विशेषता देखी तब रामचन्द्रजीकी कथा तुमको सुनाई ॥ २ ॥

यह नहिं कहिय सठहिं हठसीलहिं ❀ जो मन लाइ न सुनु हरिलीलहिं ॥३॥
कहिय न लोभिहिं क्रोधिहिं कामिहिं ❀ जो न भजै सचराचरस्वामिहिं ॥ ४ ॥

---

(१) स्मृतौ श्लोकः–अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा ।
दानं प्रतिग्रहश्चैव षट् कर्माण्यग्रजन्मनः ॥”
अर्थात्–ब्राह्मणके छः कर्म हैं-पढ़ना, पढ़ाना, यज्ञ कराना, यज्ञ करना, और दान देना, दान लेना,

(२) “दानं भोगो नाशस्तिस्रो गतयो भवन्ति वित्तस्य ।
यो न ददाति न भुंक्ते तस्य तृतीया गतिर्भवति ॥”
अर्थात्–दान, भोग और नाश ये धनकी तीन गति हैं. जो न दान करता है, न खाता है उसकी तीसरी गति होती है, अर्थात् उसके धनका नाश हो जाता है ॥

यह कथा मूर्खको, और जो हठ करै और भगवान्की लीलाको मन लगाकर न सुनै उसे नहीं सुनानी चाहिए ॥ ३ ॥ लोभी, क्रोधी, और कामीसे और जो चराचरके स्वामी रामचन्द्रजीको न भजता हो उससे न कहनी चाहिये ॥ ४ ॥

द्विजद्रोहिहिं न सुनाइय कबहूँ ❀ सुरपतिसरिस होइ नृप जबहूँ ॥ ५ ॥
रामकथाके ते अधिकारी ❀ जिनके सत्संगति अति प्यारी ॥ ६ ॥

और जो ब्राह्मणसे द्रोह करता है उसको कभी न सुनानी चाहिये, चाहे वह इन्द्रके समान राजाही क्यों नहो? ॥ ५ ॥ रामचन्द्रजीकी कथाके तौ वे अधिकारी हैं, जिनको सत्संग प्यारा है ॥ ६ ॥

गुरुपदप्रीति नीतिरत जोई ❀ द्विजसेवक अधिकारी सोई ॥ ७ ॥
ताकहँ यह विशेष सुखदाई ❀ जाहि प्रानप्रिय श्रीरघुराई ॥ ८ ॥

और जिसकी गुरुके चरणोंमें प्रीति है और जो नीतिज्ञ और ब्राह्मणका सेवक है इसका तौ वही अधिकारी है ॥ ७ ॥ और जिसे श्रीरामचन्द्रजी प्राणोंसे प्यारे हैं उसीको यह कथा अधिक आनन्द देनेवाली है ॥ ८ ॥

दो०–रामचरनरति जो चहै, अथवा पद निर्वान ॥ ❀
भावसहित सो यह कथा, करै स्रवनपुटपान ॥ २०३ ॥ ❀

जो रामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रीति चाहै-अथवा मुक्ति चाहै तौ वह कानरूपी दोनोंसे प्रेमसहित इस कथाको पीवै ॥ २०३ ॥

चौ०–रामकथा गिरिजा मैं बरनी ❀ कलिमलसमन मनोमलहरनी ॥ १ ॥
संसृतिरोगसजीवनमूरी ❀ रामकथा गावहिं स्रुतिभूरी ॥ २ ॥

हे पार्वती ! रामचन्द्रजीकी कथा मैंने वर्णन की जो कलियुगके पापोंकी नाश करनेवाली और मनके पापोंको दूर करनेवाली है ॥ १ ॥ संसाररूपी रोगको सजीवन मूल है. और रामचन्द्रजीकी कथाको बड़े २ वेदान्ती गाते हैं ॥ २ ॥

यहिंमहँ रुचिर सप्त सोपाना ❀ रघुपतिभक्तिकेर पथ नाना ॥ ३ ॥
अति हरिकृपा जाहिपर होई ❀ पाँव देइ यहि मारग सोई ॥ ४ ॥

इसमें सुन्दर सात कांड हैं जिनमें रामचन्द्रजीकी भक्तिके अनेक मार्ग हैं ॥ ३ ॥ परंतु जिसपर भगवान्की बड़ी कृपा हो वही इस मार्गमें पैर देता है ॥ ४ ॥

मनकामनासिद्धि नर पावै ❀ जो यह कथा कपट तजि गावै ॥ ५ ॥
कहहिं सुनहिं अनुमोदन करहीं ❀ ते गोपद इव भवनिधि तरहीं ॥ ६ ॥

जो मनुष्य इस कथाको छल छोड़कर गावैगा उसकी मनोकामना सिद्ध होगी ॥ ५ ॥ जो (मनुष्य) कहैंगे सुनैंगे और विचारैंगे वे गौके खुरके समान संसाररूपी समुद्रसे तर जायँगे ॥ ६ ॥

सुनि सब कथा हृदय अति भाई ❀ गिरिजा बोली गिरा सुहाई ॥ ७ ॥
नाथकृपा मम गत संदेहा ❀ रामचरन उपजेउ नव नेहा ॥ ८ ॥

जब सब कथा सुनकर हृदयमें बहुत प्यारी लगी तब पार्वती सुन्दरबाणी बोलीं ॥७॥ हे स्वामी ! आपकी कृपासे मेरा सन्देह जाता रहा और रामचन्द्रजीके चरणोंमें नया प्रेम उत्पन्न हुआ ॥ ८ ॥

दो०–मैं कृतकृत्य भयउँ अब, तव प्रसाद विस्वेस ॥ ❀
उपजी रामभक्ति दृढ़, बीते सकल कलेस ॥ २०४ ॥ ❀

हे विश्वनाथ ! अब मैं आपकी कृपासे कृतकृत्य हुई, मनमें रामचन्द्रजीकी दृढ भक्ति उत्पन्न हुई और सब क्लेश मिट गये ॥ २०४ ॥

चौ०–यह सुभ संभुउमासंवादा ❀ सुखसंपादन समन विषादा ॥ १ ॥
भवभंजन गंजन संदेहा ❀ जनरंजन सज्जनप्रिय एहा ॥ २ ॥

यह महादेव पार्वतीका शुभ संवाद सुखका देनेवाला और शोकका नाश करनेवाला है ॥ १ ॥ संसारके आवागमनका नाश करनेवाला, सन्देहोंका दूर करनेवाला, भक्तोंको आनन्द देनेवाला और सज्जनोंको प्यारा है ॥ २ ॥

रामउपासक जे जगमाहीं ❀ यहिसम प्रिय तिनकहँ कछु नाहीं ॥३॥
रघुपति कृपा जथामति गावा ❀ मैं यह पावन चरित सुहावा ॥ ४ ॥

जो संसारमें रामउपासक हैं उनको इसके समान कुछ प्यारा नहीं ॥ ३ ॥ मैंने यह सुन्दर पवित्र चरित्र रामचन्द्रजीकी दयासे अपनी बुद्धिके अनुसार कहा है ॥ ४ ॥

यहि कलिकाल न साधन दूजा ❀ जोग जज्ञ जप व्रत तप पूजा ॥ ५ ॥
रामहिं सुमिरिय गाइय रामहिं ❀ संतत सुनिय रामगुणग्रामहिं ॥ ६ ॥

इस कलियुगमें (कथाके सिवाय) दूसरा कोई साधन जप, तप, योग, यज्ञ, व्रत, और पूजा नहीं है ॥ ५ ॥ रामचन्द्रजीकाही स्मरण करना चाहिये और रामचन्द्रजीकोही गाना चाहिये और रामचन्द्रजीकेही गुणोंके समूहोंको निरंतर सुनना चाहिये ॥ ६ ॥

जासु पतितपावन भगवाना ❀ गावहिं कवि स्रुति संत पुराना ॥ ७ ॥
जाहि भजिय तजि मन कुटिलाई ❀ राम भजे गति केहिं नहि पाई ॥ ८ ॥

जिस भगवान्के पतितपावनपनेको कवीश्वर, वेद, संत और पुराण गाते हैं ॥ ७ ॥ मनकी कुटिलता छोड़कर उसीका भजन करना चाहिये, क्योंकि रामचन्द्रजीका भजन करनेसे किसने गति नहीं पाई हैं ? ॥ ८ ॥

छं०–पाई न गति केहिं पतितपावन राम भजु सुनु सठ मना । ❀
गनिका अजामिल गृध्र व्याध गजादि खल तारेउ घना ॥ ❀
आभीर यवन किरात खल स्वपचादि अतिअघरूप जे । ❀
कहि नाम बारइक तेऽपि पावन होत राम नमामि ते ॥ ४६ ॥ ❀

किसने गति नहीं पाई ? अर्थात् सबनेही पाई है. अरे मूर्ख मन ! सुन, उनही पापियोंके पवित्र करनेवाले रामचन्द्रजीका भजन कर जिन्होंने वेश्या, अजामिल, गृध्र, व्याध और गज आदि अनेक दुष्ट तार दिये. अहीर, यवन, किरात और श्वपच आदि दुष्टवर्ण जो बड़े २ पापी हैं वेभी एक बार रामका नाम कहकर पवित्र होजाते हैं; ऐसे रामचन्द्रजीको नमस्कार है ॥ ४६ ॥

---

(१) गीतायाम्–

“मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु । मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोसि मे ॥”

अर्थात्–हे अर्जुन ! तुम मुझहीमें मन लगाओ, मेरीही भक्ति करो, मेराही पूजन करो, मुझेही नमस्कार करो, तिससे मेरेहीको प्राप्त होगे. यह मैं सत्य प्रतिज्ञा करता हूं; क्योंकि तुम मेरे प्रिय हो.

रघुबंसभूषनचरित यह नर कहहिं सुनहिं जे गावहीं ।
कलिमल मनोमल धोइ बिनु स्रम रामधाम सिधावहीं ॥
सतपंच चौपई मनोहर जानि जे नर उर धरैं ।
दारुन अविद्यापंचजनित बिकार स्रीरघुपति हरैं ॥ ४७ ॥

रघुवंशके आभूषण रघुनाथजीके इस चरित्रको जो मनुष्य कहते, सुनते और गाते हैं वे कलियुगके पाप और मनके पापोंको धोकर बिनाही परिश्रमके रामचन्द्रजीके धामको सिधारेंगे. जो मनुष्य पाँचसौ मनोहर चौपाइयोंको अथवा पाँच सात चौपाइयोंको जानकर हृदयमें धारण करेंगे उनकी कठिन अविद्या और पांच (इन्द्रियों)से उत्पन्न हुये बिकारको श्रीरामचन्द्रजी हरेंगे ॥ ४७ ॥

सुंदर सुजान कृपानिधान अनाथपर करु प्रीति जो ।
सो एक राम अकामहित निरबानप्रदसम आन को ॥
जाकी कृपालवलेसते मतिमंद तुलसीदासहूं ।
पायो परम बिस्राम रामसमान प्रभु नाहीं कहूं ॥ ४८ ॥

सुन्दर, चतुर, दयाके समुद्र, जो अनाथोंपर स्नेह करते हैं, उन्हीं एक निष्कारणहितकारी रामचन्द्रजीके समान मोक्षका देनेवाला और कौन है ? जिसकी दयाके लवलेशसे मूर्ख तुलसीदासनेभी बड़ा विश्राम पाया, ऐसे रामचन्द्रजीके समान स्वामी कहींभी नहीं हैं ॥ ४८ ॥

दो०-मोसम दीन न दीनहित, तुमसमान रघुबीर ॥
अस बिचारि रघुबंसमनि, हरहु बिषम भवपीर ॥ २०५ ॥

हे रामचन्द्रजी ! मेरे समान तौ दीन और तुम्हारे समान दीनहितकारी कोई नहीं है. हे रघुवंशमणि ! ऐसा विचारकर संसारकी कठिन बाधाको हरो ॥ २०५ ॥

कामिहिं नारि पियारि जिमि, लोभिहिं प्रिय जिमि दाम ॥
तिमि रघुनाथ निरंतर, प्रिय लागहु मोहिं राम ॥ २०६ ॥

और जैसे कामी पुरुषको स्त्री और लोभीको दाम प्यारा होता है तैसेही हे रघुकुलनाथ रामचन्द्रजी, मुझे आप प्यारे लगो ॥ २०६ ॥

छंद०-विधि वृषभवाहन विष्णु शक्तिनुसहित नाम बखानिकै ॥
सियराम सगुणस्वरूप सुन्दर इष्ट अपने जानिकैं ॥
शिर नाय तुलसीदासकौं उर अंजनीसुत आनिकैं ॥
टीका सु उत्तरकांडकी किय भट्ट भाव पिछानिकै ॥ १ ॥
दोहा-पंच पंच नव शुक्रके, नयन समासम जानि ॥
फाल्गुनमास सुपक्षमहँ, टीका करी बखानि ॥ १ ॥

॥ इति ॥

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विमलवैराग्यसंपादनो नाम सप्तमः सोपानः उत्तरकांडः समाप्तः ॥ ७ ॥

श्रीसीतारामचन्द्रार्पणमस्तु ॥

---

(१) गीतायाम्-

" यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम "

अर्थात्-जहां जाकर फिर नहीं लौटे वही मेरा धाम है ॥

श्लोकः.

यत्पूर्वं प्रभुणा कृतं सुकविना श्रीशम्भुना दुर्गमं
श्रीमद्रामपदाब्जभक्तिमनिशं प्रार्थ्यैव रामायणम् ॥
मत्वा तद्रघुनाथनामनिरतः स्वान्तस्तमःशांतये
भाषाबद्धसिदं चकार तुलसीदासस्तथा मानसम् ॥ १ ॥
पुण्यं पापहरं सदा शिवकरं विज्ञानभक्तिप्रदं
मायामोहभवापहं सुविमलं प्रेमाम्बुपूरं शुभम् ॥
श्रीमद्रामचरित्रमानसमिदं भक्त्याऽवगाहंति ये
ते संसारपतंगघोरकिरणैर्दह्यन्ति नो मानवाः ॥ २ ॥
यः पृथ्वीभरवारणाय दिविजैः संप्रार्थितश्चिन्मयः
संजातः पृथिवीतले रविकुले मायामनुष्योऽव्ययः ॥
निश्चक्रं हतराक्षसः पुनरगाद्ब्रह्मत्वमाद्यं स्थिरां
कीर्तिं पापहरां विधाय जगतां तं जानकीशं भजे ॥ ३ ॥

अब गोसाँईजी रामायणके माहात्म्यको कहते हैं॥ जिस रामायणको पूर्वकालमें महाकवि भगवान् शिवजीने[१] रचाथा उसी रामायणको कठिन जान रामजीके चरणकमलोंकी भक्तिको पाकर रघुनाथजीके नाममें लवलीन ऐसे तुलसीदासने अपने अंतःकरणके मोहान्धकारको नाश करनेके लिये भाषाके छंदोंमें बनाया है ॥ १ ॥ यह कैसी रामायण है कि पवित्र, पापहारिणी, कल्याणकारिणी ज्ञान तथा भक्तिदायिनी और मायामोह तथा भयकी हरनेवाली है और इसमें प्रेमरूपी सुन्दर निर्मल जल भर रहा है. सो इस रामचरित्ररूपी मानससरोवरमें जो स्नान करते हैं वे मनुष्य संसाररूपी सूर्यकी प्रचंड किरणोंसे नहीं जलते हैं ॥ २ ॥ जिन अविनाशी सच्चिदानंद भगवान्ने देवताओंकी प्रार्थनासे इस पृथ्वीतलपर रघुकुलमें मनुष्यावतार लिया था और राक्षसोंको मार और जगत्में पापको हरनेवाली स्थिर कीर्तिको फैलाकर फिर ब्रह्मत्वको प्राप्त हुये, ऐसे रघुनाथजीको भजता हूं ॥ ३ ॥

---

(१) गोसाँईजीने शिवजीकी बनाई अध्यात्मरामायणसे बहुतसा भाग लिया है.

॥ आरती रामायणजीकी ॥

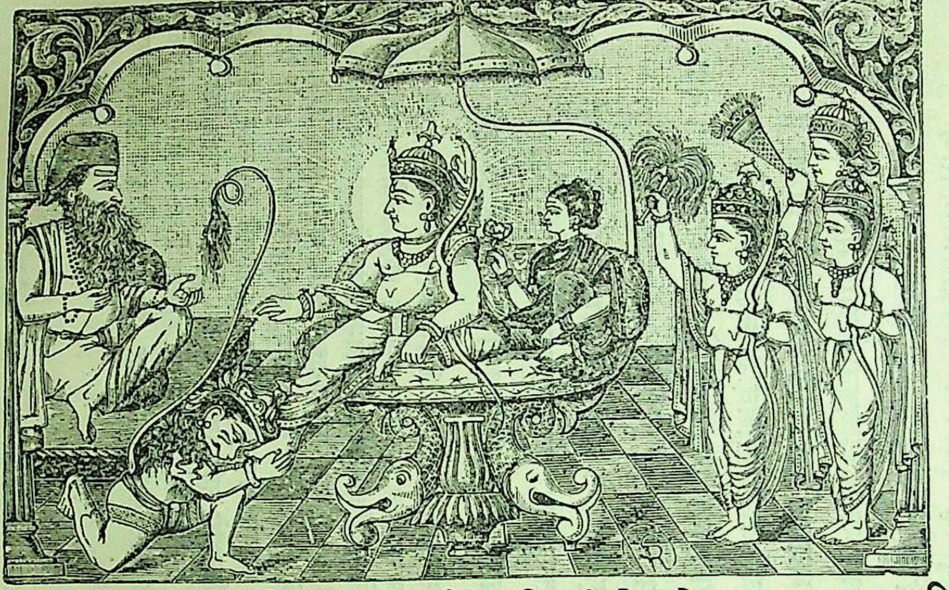

आरति श्रीरामायणजीकी ॥ कीरति कलित ललित सियपीकी ॥ टेक ॥ गावत ब्रह्मादिकमुनि नारद ॥
वाल्मीकि विज्ञानविशारद ॥ शुकसनकादि शेष अरु शारद ॥ वरणि पवनसुत कीरति नीकी ॥ १ ॥ संतत
गावत शम्भु भवानी ॥ औ घटसंभव मुनिवर ज्ञानी ॥ व्यास आदि कविपुंग बखानी ॥ कागभुशुण्डि गरुड़के
हियकी ॥ २ ॥ चारिउ वेद पुराण अष्टदश ॥ छइउ शास्त्र सब ग्रन्थनिको रस ॥ तन मन धन संतनको
सर्वस ॥ सार अंश सम्मत सबहीकी ॥ ३ ॥ कलिमलहरणि विषयरस फीकी ॥ सुभगशृँगार मुक्तियुवती-
की ॥ हरणि रोगभव भूरि अमीकी ॥ तात मात सबविधि तुलसीकी ॥ ४ ॥

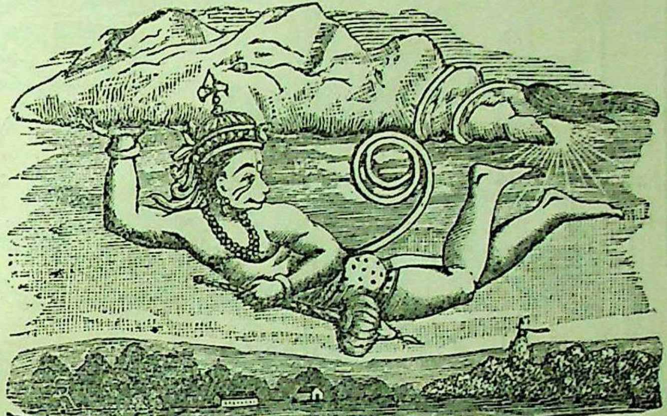

श्रीगोस्वामी

तुलसीदासकृतरामायणम्

पीयूषधाराहिंदीभाषाटीकासहितम्।

(लवकुशकांडम्)

लवकुशकाण्डयुद्ध.

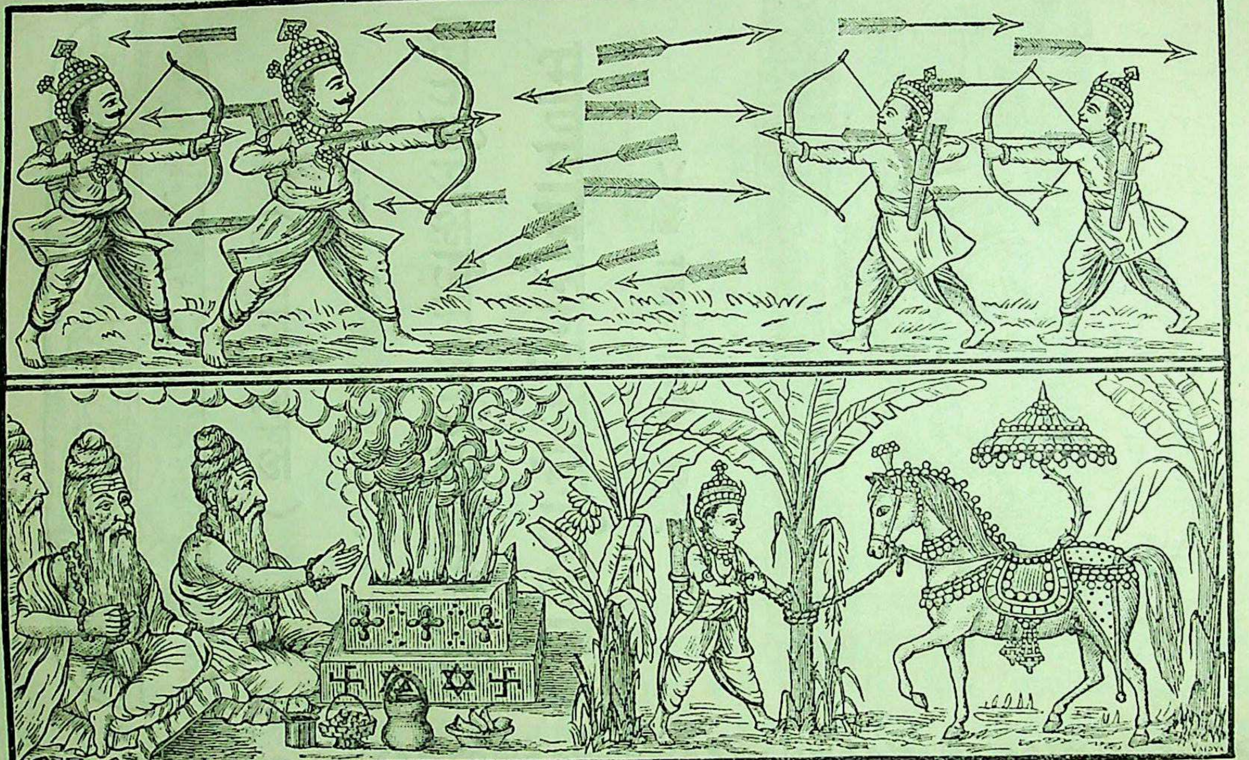

॥ श्रीः ॥

श्रीगोस्वामी

तुलसीदासकृतरामायणम् ।

लवकुशकांडप्रारंभः ।

दो०–श्रीभुशुंडिके सुनि वचन, देख रामपदप्रीति ॥
हुइ प्रसन्न बोले गरुड़, वाणी परम पुनीति ॥ १ ॥

श्रीकागभुशुंडिजीके वचन सुनकर और उनकी रामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रीति देखकर गरुड़जी प्रसन्न होकर अत्यंत पवित्र वाणी बोले ॥ १ ॥

सुरसरिसम पावन भयो, नाथ हृदय अब मोर ॥
जन्म जन्म छूटै नहीं, नाथ पदाम्बुज तोर ॥ २ ॥

हे स्वामी ! अब मेरा हृदय गंगाजीके समान पवित्र हो गया और हे नाथ ! आपके कमलसमान चरण जन्म २ में मुझसे न छूटेंगे ॥ २ ॥

चौ०–सुने अखिल गुणगण प्रभुकेरे ❀ पूरे नाथ मनोरथ मेरे ॥ १ ॥
तव प्रसाद वायसकुलनाथा ❀ हृदय बसहि अब प्रभुगुणगाथा ॥ २ ॥

हे स्वामी ! मैंने भगवान्‌के गुणोंके समूह सब सुने सो मेरे सब मनोरथ पूर्ण हुये ॥ १ ॥ हे कागभुशुंडिजी ! तुह्मारी दयासे अब मेरे हृदयमें भगवान्‌के गुणोंकी कथा वसैगी ॥ २ ॥

मनसन्तोष न चित्त अघाहीं ❀ यथा उदधि सरिता सर जाहीं ॥ ३ ॥
पक्षी पशु जंगम जड़ जाती ❀ चर अरु अचर बरण किहि भाँती ॥ ४ ॥

मनमें तौ संतोष है, परंतु चित्त नहीं अघाता. सो ऐसे है कि जैसे नदी और तलावोंके मिलनेसे समुद्र नहीं भरता ॥ ३ ॥ पशु और पक्षी, जंगम और जड़, चर और अचर जिनका वर्णन नहीं हो सक्ता इनको ॥ ४ ॥

जे जन अवध वसहिं सुखधामा ❀ लिये संग सादर श्रीरामा ॥ ५ ॥
तजि सब अवध गये सहदेहा ❀ इहिं सुनि नाथ परम सन्देहा ॥ ६ ॥

और जो मनुष्य सुखके स्थान अयोध्यापुरीमें रहते थे उनको आदरसमेत साथमें लेकर श्रीरामजी ॥५॥ अयोध्यापुरीको छोड़कर सदेह स्वर्गको गये. हे स्वामी ! यह सुनकर मुझे बड़ा सन्देह है ॥६॥

अब प्रभु मोहिं सब कहौ बुझाई ❀ पिता जानि मैं करौं ढिठाई ॥ ७ ॥
इह इतिहास पुनीत कृपाला ❀ जिमि मख कीन्ह राम महिपाला ॥ ८ ॥

सो हे नाथ ! अब मुझे सब समझाकर कहो. मैने तुह्में पिता जानकर ढीठता की है ॥७॥ हे दयालु ! यह पवित्र कथा और जिस प्रकार राजा रामचन्द्रजीने यज्ञ करा सो (सब कथा) कहो ॥८॥

दो०-अस कहि गद्गदबचन मृदु, पुलकावली सरीर ॥ ❀
सुनि सप्रेम हर्षे विहँग, वायस मति अतिधीर ॥ ३ ॥ ❀

गरुड़जी ऐसे कोमल और गद्गद वचन कहकर शरीरमें पुलकायमान हुये और अत्यंत मतिधीर कागभुशुंडिजी स्नेहसहित (बचन सुनकर) प्रसन्न हुये और बोले ॥ ३ ॥

चौ०-धन्य धन्य तुम धनि खगराया ❀ कीन्हीं अमित मोहिंपर दाया ॥ १ ॥
रामकृपा तुम्हरे मनमाहीं ❀ संशय शोक मोह भ्रम नाहीं ॥ २ ॥

हे गरुड़ ! तुमको बारंवार धन्य है. तुमने मुझपर बड़ी कृपा की ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीकी दयासे तुह्मारे मनमें सन्देह, शोक, अज्ञान और भ्रम कुछ नहीं है ॥ २ ॥

अतिप्रियवचन रसज्ञ तुम्हारे ❀ लागत नाथ मोहिं अतिप्यारे ॥ ३ ॥
अब प्रभुकथा विशद विस्तारी ❀ सकल सुनावहु प्रभु हितकारी ॥ ४ ॥

हे स्वामी ! तुम्हारे अत्यंत प्यारे और रसीले बचन मुझको बहुत प्यारे लगते हैं ॥ ३ ॥ हे हितकारी प्रभु ! अब भगवान्‌की उज्ज्वल कथाको विस्तारपूर्वक सब सुनाताहूं ॥ ४ ॥

तव मन प्रीति देखि खगराया ❀ मिटे अमंगल कोटिहु माया ॥ ५ ॥
सुनु अब रामरहस्य अनूपा ❀ चरित पुनीत अवधपुरभूपा ॥ ६ ॥

हे गरुड़ ! तुम्हारे मनके प्रेमको देखकर करोड़ों दुःख और माया मिट गईं ॥ ५ ॥ अब रामचन्द्रजीके गुप्त, अनुपम और पवित्र चरित्र सुनो ॥ ६ ॥

अज अद्वैत अमल अविनासी ❀ रहित सकल कलिमलकर फाँसी ॥ ७ ॥
नव सहस्र नवशत कम वासी ❀ कृत चरित्र रह पुर जगदासी ॥ ८ ॥

रामजी अजन्म द्वैतरहित निर्मल नाशरहित और कलियुगके सब पापोंके फंदसे रहित हैं ॥ ७ ॥ नौसौ कम नौ हजार वर्षतक भगवान्‌ने इस नगरमें वास करके चरित्र किये ॥ ८ ॥

दो०-विधिवरवचन सँभारि उर, राजत करुणागार ॥ ❀
युगल जोरि शोभा निरखि, लजित कोटिशत मार ॥ ४ ॥ ❀

फिर ब्रह्माके सुन्दर बचनोंको हृदयमें धारण करके करुणासागर विराजमान हुये. युगल जोड़ीकी शोभाको देखकर सौ करोड़ कामदेवभी लज्जित होते हैं ॥ ४ ॥

चौ०-अनुज सचिव प्रभु प्रजा बुलाये ❀ गुरुगृह सादर तिनकहँ लाये ॥ १ ॥
मकरमास रविपर्व सुहावा ❀ बिदा माँगि गुरुपद शिर नावा ॥ २ ॥

भगवान्‌ने (एक समय) छोटे भाई मंत्री और प्रजाके लोगोंको बुलाया और उनको साथ लेकर आदरसमेत गुरुके घर आये ॥ १ ॥ और (रामजीने) मकरके सूर्यमें सूर्यग्रहण जानकर गुरुके चरणोंको शिर नवाकर (किसी क्षेत्रमें जानेके लिये) बिदा मांगी ॥ २ ॥

काशीक्षेत्र, धर्ममय जाना ❀ सकल सजायउ बाहन नाना ॥ ३ ॥
चतुरंगिनी अनी सबि साजा ❀ किय प्रस्थान राम रघुराजा ॥ ४ ॥

काशीक्षेत्र धर्ममय है ऐसा जानकर वहांके लिये अनेक सवारी सजाईं ॥ ३ ॥ और सब चतुरंगिनी सेना सजा कर रघुराज रामचन्द्रजीने प्रस्थान किया ॥ ४ ॥

बीच वास करि शिवपुर आये ❀ सादर पुरहिं शीश सब नाये ॥ ५ ॥
आय सुरसरिहिं कीन्ह प्रणामा ❀ अभय अनंत पाय विश्रामा ॥ ६ ॥

वीचमें बास करके काशी पुरीमें आये, आदरसमेत सबने पुरीको शिर नवाया ॥ ५ ॥ और आकर गंगाजीको प्रणाम किया और बहुतसा आनन्द पाकर निर्भय हुये ॥ ६ ॥

महिसुर दंडि यती संन्यासी ❀ पूजेउ कृपासिंधु सुखरासी ॥ ७ ॥
दान दिये वरणे किमि जाई ❀ धनद कुबेर सुरेश लजाई ॥ ८ ॥

दयासागर, सुखके धाम भगवान्‌ने ब्राह्मण, दंडी, यती और संन्यासिओंका पूजन किया ॥ ७ ॥ और ऐसे दान दिये कि जिनका वर्णन नहीं किया जासकता. जिनको देखकर धनपति कुबेर और इन्द्रभी लज्जित होते हैं ॥ ८ ॥

दो०-प्रभू रहे इसि अमित दिन, सुखी किये मुनिवृन्द ॥ ❀
आये पुनि निजनगरमहँ, रविकुलकैरवचन्द ॥ ५ ॥ ❀

भगवान्‌ने इस भांति बहुत दिन रहकर मुनीश्वरोंको प्रसन्न किया और फिर सूर्यवंशरूपी कुमोदिनीको चन्द्रमाके समान ऐसे रामचन्द्रजी अपने नगरमें आये ॥ ५ ॥

चौ०-प्रतिदिन अवध अनंत उछाहू ❀ दान देहिं प्रतिदिन नरनाहू ॥ १ ॥
दुःख प्रपंच शोच नहिं काहू ❀ व्याप न कबहुँ सुना खगनाहू ॥ २ ॥

अयोध्यापुरीमें प्रतिदिवस बहुतसा आनन्द होने लगा, राजा रामचन्द्र प्रतिदिवस दान देने लगे ॥ १ ॥ हे गरुड़ ? वहाँ प्रपंच, दुःख और शोच किहीको व्यापते हुये न सुना ॥ २ ॥

सुनहिं जहाँ तहँ वेद पुराना ❀ दूसर धर्म न काहू जाना ॥ ३ ॥
दिन दिन प्रीति देखि भगवाना ❀ अमित अनंद सकल पुर जाना ॥ ४ ॥

जहां तहां वेद पुराण सुनते हैं, दूसरे धर्मको कोई नहीं जानता ॥ ३ ॥ भगवान्‌ने प्रतिदिन स्नेह देखकर सब नगरको बहुत आनन्दित जाना ॥ ४ ॥

शतसंवत परिमाण हमारा ❀ भये शोचवश राम उदारा ॥ ५ ॥
अश्वमेध मख करौं सुहावन ❀ गाइ तरहिं भव दुःखनशावन ॥ ६ ॥

और उदार रामचन्द्रजी शोकके वश हुये कि हमारा प्रमाण सौ वर्षका है, अर्थात् अब हमें सौ वर्ष और रहना है ॥ ५ ॥ सो सुन्दर और दुःखोंका नाशक अश्वमेध यज्ञ करूं, जिसे गाकर (मनुष्य) संसारसे तर जायँगे ॥ ६ ॥

पुनि निजधामहिं तुरत सिधावौं ❀ विधिके वचन विलंब न लावौं ॥ ७ ॥
प्रात जाय गुरुभवन सप्रीती ❀ कहौं करौं सब सुन्दर रीती ॥ ८ ॥

फिर अपने धामको शीघ्रही पधारूंगा. ब्रह्माके वचनोंमें देर नहीं करी जायगी ॥ ७ ॥ इसलिये सवेरे गुरुके घर जाऊंगा और प्रेमसहित जो कुछ वे कहैंगे उसे सब सुन्दर रीतीसे करूँगा ॥ ८ ॥

दो०-अस बिचार उर राखि कर, कृपासिंधु मतिधीर ॥ ❀
किये चरित नाना असित, हरण शोक भवभीर ॥ ६ ॥ ❀

दयाके समुद्र मतिधीर (रामचन्द्र) जीने ऐसा विचार हृदयमें धारण करके संसारकी विपत्ति और शोकको दूर करनेवाले अनेक और अपार चरित्र किये ॥ ६ ॥

चौ०-कहहुँ सुनहु रघुपतिप्रभुताई ❀ जो पुराण श्रुति नारद गाई ॥ १ ॥
रामचन्द्रमहिमा अतिभूरी ❀ सो वर्णत कवि मन कदरूरी ॥ २ ॥

अब रामचन्द्रजीकी प्रभुताको कहता हूं सो सुनो, जो वेद पुराण और नारदने गाई है ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीकी महिमा बहुत बड़ी है. उसके वर्णन करनेमें कवियोंके मन काहिल होते हैं ॥ २ ॥

मैं मतिमन्द कहौं किहि भाँती ❀ सोहत काग कि हंससुपाँती ॥ ३ ॥
सुनिय न पुहुमि कतहुँ अघ काना ❀ पढ़हिं चतुर नर वेद पुराना ॥ ४ ॥

उसे मैं मन्दबुद्धि किस प्रकार कहूं ? कहीं बगुलाभी हंसोंकी सुन्दर पंक्तिमें शोभित होता है ॥३॥ पृथ्वीपर कहींभी कानोंसे पाप नहीं सुनाई देता, चतुर मनुष्य वेद पुराण पढ़ते हैं ॥ ४ ॥

गावहिं प्रभुगुणगण भयहारी ❀ निन्दहिं अमरलोक नर नारी ॥ ५ ॥
आज्ञा मात पिता गुरु करहीं ❀ तप मख दान करहिं हरि भजहीं ॥ ६ ॥

भयके दूर करनेवाले भगवान्के गुणोंके समूहोंको गाते हुये स्त्री, पुरुष स्वर्गकीभी निन्दा करते हैं ॥ ५ ॥ माता, पिता और गुरुकी आज्ञा, पालन करते हैं. प्रसन्नतासे तप, यज्ञ, दान करते हुये भगवान्का भजन करते हैं ॥ ६ ॥

प्रजा अनंद राज प्रभुकेरे ❀ मानहु शक्र कुवेर घनेरे ॥ ७ ॥
राजत सब रनिवास अनंदा ❀ सुखी चकोर लखत जिमि चंदा ॥ ८ ॥

भगवान्के राज्यमें प्रजा ऐसा आनन्द करती है, मानों अनेक इन्द्र और कुबेर हैं ॥ ७ ॥ सब रनिवास आनन्दसहित ऐसा शोभित है जैसे चन्द्रमाके देखनेसे चकोर सुखी होते हैं ॥ ८ ॥

दो०–रघुवरराज विराज, अति, सकल अवनि अघ भाग ॥
विचरहिं मुनि कानन विपुल, बसहिं सहित अनुराग ॥ ७ ॥

रामचन्द्रजीका राज्य ऐसा सुन्दर था कि सब पृथ्वी पापरहित हो गई, बहुतसे मुनीश्वर वनमें विचरने और प्रीतिसे रहने लगे ॥ ७ ॥

चौ०–मही सुहावनि कानन चारू ❀ खग मृग इकसँग करहिं विहारू ॥ १ ॥
वैर न सुनिय रामके राजा ❀ मिलि विचरहिं वन सकल समाजा ॥२॥

सुहावनी पृथ्वी और उज्ज्वल बन है जिसमें पक्षी और हरिण एकसाथ विहार करते हैं ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीके राज्यमें वैर नहीं सुनाई देता सब इकट्ठे मिलकर बनमें घूमते हैं ॥ २ ॥

नाना ग्रन्थ स्मृतिसमुदाई ❀ गाय सकहिं न रामप्रभुताई ॥ ३ ॥
सादर कोटि कोटि अहिईशा ❀ अगणित चतुरानन गौरीशा ॥ ४ ॥

अनेक ग्रंथ और बहुतसी स्मृतियाँभी रामचन्द्रजीकी प्रभुताको नहीं गा सक्ते ॥ ३ ॥ आदरसहित करोड़ २ शेषजी, असंख्य ब्रह्मा, महादेव ॥ ४ ॥

जहँलगि जग कोविद कबिराई ❀ रामराजगुण नहिं सक गाई ॥ ५ ॥
असित आदि कज्जलगिरि भूरी ❀ पात्र समुद्र मसी भरि पूरी ॥ ६ ॥

और संसारमें जहांतक पंडित और कवीश्वर हैं, वे रामचन्द्रजीके राज्यके गुणोंको नहीं गा सक्ते ॥५॥ जो कज्जल गिरिआदि (पर्वतों) की बहुतसी श्याही बनाकर समुद्ररूपी दवातमें भरी जाय ॥६॥

कर जु लेखनी सुरतरु डारी ❀ सप्तद्वीप महिपत्र विचारी ॥ ७ ॥
सरसुति हरि हर विधि अरु शेषा ❀ सहसकल्प शत लिखहिं विशेषा ॥ ८ ॥

और उसमें कल्पवृक्षकी कलम बनाके डालै और सातों द्वीप पृथ्वीको पत्र बनावैं ॥ ७ ॥ और सरस्वती, विष्णु, महादेव, ब्रह्मा और शेषजी सौ हजार कल्पतक खूब लिखें ॥ ८ ॥

सो०–तदपि न पावहिं पार, रामराजकौतुक असित ॥
सुन अब चरित अपार, जस खगपति आगे भयउ ॥ १ ॥

तौभी रामचन्द्रजीके राज्यके अपार कौतुकोंका पार नहीं पासक्ते. हे गरुड़ ! अब जैसे आगे अपार चरित्र हुये सो सुनो ॥ १ ॥

चौ०–राजत राम सभा सहभाई ❀ तहँ आयो इक द्विज बिलखाई ॥ १ ॥
परुष वचन मुख कहत पुकारा ❀ हंसवंश बूड़्यो संसारा ॥ २ ॥

रामचन्द्रजी भाइयोंसमेत सभामें विराजमान थे कि एक दुखी ब्राह्मण तहां आया ॥ १ ॥ मुखसे कठोर वचन पुकारकर कहता हुआ कि संसारमें सूर्यवंश डूबगया ॥ २ ॥

रघु दिलीप अरु सगरनरेशा ❀ अतुलप्रभाव भये अवधेशा ॥ ३ ॥
पितु जीवत सुत त्यागेउ प्राना ❀ अंतर्यामी सुन प्रभु काना ॥ ४ ॥

रघु, दिलीप और सगर राजा ये अयोध्याके राजा बड़े २ प्रभावशाली हुये ॥ ३ ॥ परंतु ऐसा नहीं हुआ कि पिताके बैठे पुत्रने प्राण छोड़ दिये हों. अंतर्यामी भगवान्‌ने कानोंसे सुनकर ॥ ४ ॥

नरलीला कर राम कृपाला ❀ लगे विचार करन तेहि काला ॥ ५ ॥
कारण कवन मृतक सुत भयऊ ❀ द्विजदुख देख विकल प्रभु भयऊ ॥ ६ ॥

उस समय दयानिधान रामचन्द्रजी मनुष्यलीला करके विचार करने लगे ॥ ५ ॥ क्या कारण जो पुत्र मरगया. ब्राह्मणका दुःख देखकर भगवान् व्याकुल हुये ॥ ६ ॥

प्रभुचित देख गगन भइ बानी ❀ शूद्र तपै सुनु शारँगपानी ॥ ७ ॥
विंध्याचल गहवर बन जाहाँ ❀ द्विजसुतमरणहेतु नरनाहाँ ॥ ८ ॥

भगवान्‌का चित्त देखकर आकाशवाणी हुई कि, हे धनुषधारी ! सुनो. शूद्र तपस्या करता है ॥ ७ ॥ विंध्याचल पर्वतमें जहाँ गह्वर बन है तहां वह है. हे राजा ! यही ब्राह्मणके पुत्रके मरनेका कारण है ॥ ८ ॥

छं०–इहि भांति द्विजसुतमृतक सुनि रथ साजि प्रभु आतुर चले । ❀
दुइ परमशैल विलोकि पावन मुदितचित सन्मुख भले ॥ ❀
पुनि क्रोधसंयुत विशिष छाँड़ेउ शूद्रको शिर कट गिऱ्यो । ❀
वर भक्ति पावन जान तेहि दै आप तीरथ व्रत कऱ्यो ॥ १ ॥ ❀

इस भांति ब्राह्मणके पुत्रका मरना सुनकर भगवान् रथ सजाकर शीघ्रतासे चले और सामने दो बड़े पवित्र पर्वत देखकर मनमें बड़े प्रसन्न हुये ॥ फिर जब भगवान्‌ने क्रोधकर बाण छोड़ा तब शूद्रका तौ शिर कटकर गिर पड़ा और रामजीने उसे पवित्र जान भक्तिके वरदानको दिया और आप तीर्थ व्रत किया ॥ १ ॥

दो०–द्विजवरबालकमृतक सो, उठि बैठ्यो हर्षाय ॥ ❀
आये पुर रघुपति भगत, दुखभंजन सुखदाय ॥ ८ ॥ ❀

ब्राह्मणका वह सुन्दर बालक प्रसन्न होके उठ बैठा. तब भक्तोंके दुःखको दूर करके सुखदाई रघुराई नगरमें आये ॥ ८ ॥

चौ०–उठि रघुवर किय सन्ध्यावन्दन ❀ पूजे शंभु भक्तउरचंदन ॥ १ ॥
भोजन शयन जगतपति कीन्हा ❀ आयसु पुनि सबहीकहँ दीन्हा ॥ २ ॥

और भक्त उर चन्दन रघुनन्दनने उठकर प्रातःसंध्या और महादेवजीका पूजन किया ॥ १ ॥ फिर जगत्पतिने भोजन करके शयन किया और सबको आज्ञा दी ॥ २ ॥

रह्यो दिवस जब घटिका चारी ❀ सभा जुरी तब आय खरारी ॥ ३ ॥
सुनि पुराण प्रभु अनुजसमेता ❀ संध्या भई दान शुभ देता ॥ ४ ॥

जब चार घड़ी दिन रहा, तब रामचन्द्रजीकी सभा आकर इकठ्ठी हुई ॥ ३ ॥ भगवान्‌ने छोटे भाईयोंसमेत पुराण सुनी फिर साँझ होगई तौ सुन्दर दान देना आरंभ किया ॥ ४ ॥

भवन चले प्रभु आयसु पाई ❀ सबही संध्या कीन्ह सुहाई ॥ ५ ॥
दूत अवध निशिवासर धावहिं ❀ आय साँझ सब खबर सुनावहिं ॥ ६ ॥
पृथक् पृथक् सुनि चरचरबानी ❀ बोल न एक सो सुनहु भवानी ॥ ७ ॥

भगवान्‌की आज्ञा पाकर सब अपने २ घरको चले और सबोंने सुन्दर संध्या की ॥ ५ ॥ अयोध्यापुरीमें रातदिन दूत फिरा करैं और साँझको आकर सब खबर सुनाया करैं ॥ ६ ॥ एकदिन श्रेष्ठ दूतोंकी अलग २ वाणी सुनी पर हे पार्वती ! सुनो एक दूत कुछ नहीं बोला ॥ ७ ॥

छं०-गहु कह्यो नहिं तेहिं पूछि सादर बचन बेग न आवही । ❀
इक रजक पत्निहिं कहत डाटत व्यंग वचन सुनावही ॥ ❀
सुनि वचन कृपानिधान चरके मध्य उर राखत भये । ❀
निशि स्वप्न देखत जगतपति उठि जागि दारुण दुख छये ॥२॥ ❀

जब दूतने कुछ कहा नहीं, तौ भगवान्‌ने उससे आदरपूर्वक पूछा सो उससे शीघ्र नहीं बोला जाता. उसने कहा कि एक धोवी अपनी स्त्रीको ताड़नाकर टेढ़े वैचन कह रहा था. दयासागर भगवान्‌ने दूतके वचन सुनकर हृदयमें रक्खे और रातमें स्वप्नमेंभी वही देखकर सबेरे जगे, तौ कठिन दुःखमें भरगये ॥ २ ॥

दो०-बीती अवधि प्रमाणयुग, कीन्ह विचार कृपाल ॥ ❀
इक सहस्र पितुराजको, भोगहुँ मैं इहिकाल ॥ ९ ॥ ❀

जब एक युगके प्रमाण समय बीतगया तव भगवान्‌ने बिचार किया कि पिताके राज्यको मैं अभी एकहजार वर्षतक और भोगूं ॥ ९ ॥

चौ०-त्यागहुँ जनकसुता वनमाहीं ❀ राखहुँ श्रुतिपथ धर्म न जाहीं ॥ १ ॥
करि मन तुरत सीयपहँ आये ❀ सादर बोले बचन सुहाये ॥ २ ॥

सीताको वनमें त्याग दूं और वेदकी मर्यादा रक्खूं, जिससे धर्म न जाय ॥ १ ॥ यह मनमें निश्चय करके शीघ्रही सीताके पास आये और आदरसमेत सुन्दर वचन बोले कि ॥ २ ॥

निजछाया धरि यहाँ विनीता ❀ रहहु जाय निजधामा पुनीता ॥ ३ ॥
प्रभुपद वंदि गई नभ सोई ❀ जीव चराचर लखी न कोई ॥ ४ ॥

अपनी छायाको यहां रखकर नीतिसहित अपने पवित्रस्थानमें रहो ॥ ३ ॥ भगवान्‌के चरणोंको दंडवत् करके वह आकाशको गई और चराचर जीवोंमेंसे किसीने न देखा ॥ ४ ॥

तिहिसन प्रभु अस कहा बुझाई ❀ मनभावत माँगहु वर गाई ॥ ५ ॥
नाथसाथ मुनिधाम विहाई ❀ आयउँ तुम गृह मन सकुचाई ॥ ६ ॥

उनसे भगवान्‌ने समझाकर यों कहा कि जो मनमें आवै वही वरदान मांगो ॥ ५ ॥ सीताजीने कहा कि स्वामी ! मुनीश्वरोंके स्थानको छोड़ आपके साथ घर आई हूं इससे मनमें बड़ी सकुच होगई ॥ ६ ॥

मुनितियभूषण वसन सुहाये ❀ पहिराये प्रभु जो मन भाये ॥ ७ ॥
हँसि कह कृपानिकेत सकारे ❀ पूजैं मन अभिलाष तुम्हारे ॥ ८ ॥

तब तौ भगवान्‌ने मुनीश्वरोंकी स्त्रियोंके सुहावने वस्त्र और भूषण जो मनको अच्छे लगे ते पहराये ॥ ७ ॥ और कृपनिधानने हंसकर कहा कि सबेरे तुह्मारे मनकी इच्छा पूरी होगी ॥ ८ ॥

---

(१) एक धोबिन घरसे बाहर निकल गई थी, जब वह आई तौ धोवीने कहा कि, मैं अब तुझे नहीं रख सक्ता. मैं रामचन्द्र नही हूं कि सीताजी इतने दिन राक्षसके यहां रहीं और रामने उन्हैं घरमें रख लिया॥

दो०-होत प्रात जब जगतपति, जागे रमानिवास ॥ ❀
याचक जन गावत मुदित, लखि मुखकंजप्रकास ॥ १० ॥ ❀

सबेरा होतेही जब संसारके स्वामी लक्ष्मीनिवास रामचन्द्रजी जगे तौ उनके कमलके समान प्रकाशमान मुखको देखकर मांगनेवाले प्रसन्नतासे गुण गाने लगे ॥ १० ॥

चौ०-भरत लषण रिपुदमनसमेता ❀ आये जहँ प्रभु कृपानिकेता ॥ १ ॥
कीन्ह प्रणाम माथ महिलाई ❀ बोले नहिं कछु स्रीरघुराई ॥ २ ॥

भरतजीने क्या किया कि लक्ष्मण और शत्रुघ्नको साथ लेकर भगवान्के पास आये ॥ १ ॥ और पृथ्वीपर माथा नवाकर दंडवत् की, परंतु श्रीरामचन्द्रजी कुछ नहीं बोले ॥ २ ॥

वदन बिलोकि सशंकित अंगा ❀ श्रीहत देख वपुषकर रंगा ॥ ३ ॥
थर थर काँपहिं तीनों भाई ❀ जानि न जाय चरित रघुराई ॥ ४ ॥

उनके शरीरकी कांतिको छबिछीन और उनके मुखकी ओर देखकर शरीरमें भयभीत हुये ॥ ३ ॥ तीनों भाई थर २ कांपने लगे, रामचन्द्रजीके चरित्र जाने नहीं जाते ॥ ४ ॥

ऐंचि श्वास अरु कुसमय जानी ❀ बोले गूढ़ मनोहर बानी ॥ ५ ॥
सुनि लघुभाइ कहेउ रघुनाथा ❀ ले बन जाहु जानकिहिं साथा ॥ ६ ॥

भगवान् साँस भरकर और कुसमय जानकर गूढ़ और प्यारी वाणी बोले ॥ ५ ॥ रामचन्द्रजीने कहा हे छोटे भाई! सुनो जानकीजीको साथ लेकर वनको जाओ ॥ ६ ॥

सूखि सहमि सुनि बचन कराला ❀ जरेउ गात उपजी उर ज्वाला ॥ ७ ॥
हँसत कि साँच कहत रघुराई ❀ असमंजस मन दुख अधिकाई ॥ ८ ॥

कठोर बचन सुनतेही मुरझाकर सूख गये, शरीर जलने लगा और हृदयमें ज्वाला उत्पन्न हुई ॥ ७ ॥ और रामचन्द्रजी हँसते हैं या सची कहते हैं इस दुविधासे मनमें बड़ा दुःख हुआ ॥ ८ ॥

दो०-भरतादिक भ्राता बिकल, मुख आवत नहिं बैन ॥ ❀
जोरि युगलकर शत्रुहन, भये नीर भरि नैन ॥ ११ ॥ ❀

भरत आदि भाई व्याकुल होगये. उनके मुखसे बचन नहीं आते. तब शत्रुघ्नने दोनों हाथ जोड़े और उनके नेत्रोंमें आँसू भर आये ॥ ११ ॥

चौ०-सुनि प्रभुवचन हृदय बिलखाना ❀ जगतजननि सिय सब जग जाना ॥ १ ॥
जगतपिता प्रभु सब उरवासी ❀ जड़ चेतनघन आनँदरासी ॥ २ ॥

भगवान्के वचन सुनकर हृदयमें दुखी हुये (और कहने लगे कि) सीताजी तौ संसारकी माता हैं, इस बातको सब जगत् जानता है ॥ १ ॥ और संसारके पिता भगवान् सबके हृदयमें वास करनेवाले जड़ और चैतन्यको आनन्दघनके समूह हैं ॥ २ ॥

कारण कवन जानकी त्यागी ❀ मन क्रम बचन चरणअनुरागी ॥ ३ ॥
सुनि प्रभु भ्रातनकर मुखबानी ❀ परम प्रीतिमय करुणासानी ॥ ४ ॥

सो क्या कारण जो मन क्रम बचनसे चरणोंमें प्रींति करनेवाली सीताजी त्याग दीं? ॥ ३ ॥ प्रभुने भाइयोंकी वाणी परम प्रीति भरी और करुणाकी सनी हुई सुनी ॥ ४ ॥

पंकजनयन नीर भरि आये ❀ कहि प्रियबचन अनुज समुझाये ॥ ५ ॥
आयसु मम टारहि जो ताता ❀ रहै न प्राण तात मम गाता ॥ ६ ॥

तौ कमलसमान नेत्रोंमें जल भर आया और प्यारे बचन कहकर छोटे भाइयोंको समझाया॥५॥ हे प्यारे! जो मेरी आज्ञाको टालोगे तौ मेरे शरीरमें प्राण न रहैगा ॥ ६ ॥

विधिइच्छा भावी बलवाना ❀ तुमकहँ तात सर्व कल्याना ॥ ७ ॥
मम यह वचन पालु लघु भाई ❀ प्रात जानकिहिं जाहु लिवाई ॥ ८ ॥

हे प्यारे! विधाताकी इच्छा और होनहार बलवान् है और तुमको तो सब कल्याणही है ॥ ७ ॥ हे छोटे भाई! मेरे इस बचनका पालन करो और सबेरे सीताको लिवा जाओ ॥ ८ ॥

दो०–भरत कहेउ युग जोरि कर, सुनि प्रभुवचन कठोर ॥ ❀
सुनु बिनती सर्वज्ञ प्रभु, नाथ हमहिं मति थोर ॥ १२ ॥ ❀

भरतने भगवान्के कठोर बचन सुनकर दोनों हाथ जोड़कर कहा. हे प्रभो! आप तौ सर्वज्ञ हो, मेरी प्रार्थना सुनो. मेरी बुद्धि तौ थोड़ी है ॥ १२ ॥

चौ०–हंसवंश जगमें विख्याता ❀ दशरथ पिता कौशला माता ॥ १ ॥
त्रिभुवनपति प्रभु सब जग जाना ❀ गावहिं यश सब वेद पुराना ॥ २ ॥

सूर्यवंश संसारमें प्रगट है और दशरथ पिता और कौशल्या माता हैं ॥ १ ॥ तीनों लोकोंके स्वामी आपको सब संसार जानता है और सब वेद पुराण यश गाते हैं ॥ २ ॥

सत्य शक्ति तब प्रकट सुहाई ❀ वरणि न सकहिं वेद अहिराई ॥ ३ ॥
शोभाखानि जगतकी माता ❀ रहित अमंगल मंगलदाता ॥ ४ ॥

तुह्मारी सत्य शक्ति प्रत्यक्षमें शोभायमान है जिसका वेद और शेषजीभी नहीं वर्णन कर सक्ते ॥ ३ ॥ शोभाकी खानि, जगतकी माता, अमंगलरहित, आनन्दकी देनेवाली है ॥ ४ ॥

छाया जेहि तिय पतिव्रत करहीं ❀ तुमहि विहाय क्षणहुँ किमि भरहीं ॥५॥
विनु जल मीन कि जियै कृपाला ❀ कृषी कि रह बिनु वारिदमाला ॥ ६ ॥

जिनकी छायासे स्त्रियां पतिव्रत धारण करती हैं वे आपको छोड़कर क्षणभरभी कैसे रह सक्ती हैं? ॥ ५ ॥ हे दयानिधान! विना जलके क्या मछली जी सक्ती है? और विना बादलोंकी पंक्तिके क्या खेती रह सक्ती है? ॥ ६ ॥

जीवहिं क्षण तुम बिनु किमि सीता❀ ज्ञानवन्ति अति चतुर विनीता ॥ ७ ॥
सुनि करुणामय वचन सप्रीती ❀ कही भरत तुम सुन्दर नीती ॥ ८ ॥

अत्यंत चतुर, ज्ञानवान् और नीतिज्ञ सीताजी तुम्हारे विना क्षणभरभी कैसे जी सक्ती हैं? ॥७॥ करुणा और प्रीतिसमेत वचन सुनकर (भगवान्ने कहा) हे भरत! तुमने निती तौ सुंदर कही ॥८॥

दो०–तदपि नृपहिं चहिये सदा, राजनीति धन धर्म ॥ ❀
वसुधा, पालहि शोच तजि, बचन प्रीति शुचिकर्म ॥ १३ ॥ ❀

परंतु राजाको सदाही राजनीति, धन और धर्म चाहिये और शोचको छोड़कर प्रीतिके वचन और धर्म कर्मसे पृथ्वीका पालन करना चाहिये ॥ १३ ॥

चौ०–दूतन कहा सो अपयश कहऊ ❀ कुलकलंक यह दारुण भयऊ ॥ १ ॥
तरणिवंश नृप भये अनेका ❀ एक एकतें निपुण विवेका ॥ २ ॥

दूतोंने जो कहा उस अपयशको बिचारो तौ यह शोच हुआ कि यह तौ कुलको कठिन कलंक लगा ॥ १ ॥ सूर्यवंशमें अनेक राजा एकसे एक ज्ञानमें चतुर हुये ॥ २ ॥

स्वायंभुवमनु रघु नृप जानौं ❀ सगर भगीरथ बिरद बखानौं ॥ ३ ॥
दशरथ दीख सदा तुम नीके ❀ बचन न टारेउ लालच जीके ॥ ४ ॥

स्वायंभुव मनु, रघु, राजा सगर और भगीरथके यशको बर्णन करते हैं ॥ ३ ॥ दशरथजीको तौ तुमने सदाही भली भांति देखाथा जिन्होंने प्राणोंके लोभसेभी बचन न छोड़ा ॥ ४ ॥

तेहि कुल रंचक सुनत कलंकू ❀ रहै जीव तौ अधम अशंकू ॥ ५ ॥
सुन सर्वज्ञ सकल अघहारी ❀ विनु कलंक यह जनककुमारी ॥ ६ ॥

उसी कुलमें थोड़ासी कलंक सुनतेही जो प्राण रहे, तौ महानीच और निडर हैं ॥ ५ ॥ भरतजी बोले हे सर्वज्ञ! आप तौ सब पापोंके हरनेवाले हो, सुनो; यह सीताजी कलंकरहित है ॥ ६ ॥

बिधि हरि हर दिवि देखि सुहाई ❀ पावक अविटि अनट सब भाई ॥ ७ ॥
जो सुर नर मुनि स्वप्नेहुँ माहीं ❀ यह चरित्र जग लखि हरषाहीं ॥ ८ ॥

हे भाई! ब्रह्मा, विष्णु, महादेव और सब देवताओंने सुन्दर तरहसे देखा और अग्निमें तपाके आपने सब प्रकार परीक्षा करली है ॥ ७ ॥ जो देवता, मनुष्य, मुनीश्वर स्वप्नमेंभी इस चरित्रको देखकर संसारमें प्रसन्न हों ॥ ८ ॥

दो०–ते शठ रौरव नरकमहँ, कोटि कल्प करि वास ॥ ❀
रहहिं कल्पशत रोगवश, भोगहिं नरकनिवास ॥ १४ ॥ ❀

तौ वे मूर्ख करोड़ कल्पतक रौरव नरकमें वास करके और सौ कल्पतक रोगके वश रहकर नरक भोगेंगे ॥ १४ ॥

चौ०–रिसरुख देखि नयन करि तीछे ❀ आयउ भरत लषणकर पीछे ॥ १ ॥
सुन सौमित्रि छाँड़ि हठ शोचू ❀ जग भल कहै कहौ किन पोचू ॥ २ ॥

तीक्ष्ण नेत्र किये हुये रिसका रुख देखकर भरतजी तौ लक्ष्मणजीके पीछे होगये ॥ १ ॥ (तब प्रभुने कहा) हे लक्ष्मण! हठ और शोकको छोड़कर सुनो, संसार चाहे भला कहै या बुरा कहै ॥२॥

तजि आज्ञा प्रत्युत्तर करिहौ ❀ मोहिं विन सोच जन्मभरि मरिहौ ॥३॥
जनकसुता रथ तुरत चढ़ाई ❀ गंगसमीप फिरहु पहुँचाई ॥ ४ ॥

जो आज्ञा छोड़कर जवाबदेही करोगे तौ मेरे विना जन्मभर सोचमें मरोगे ॥ ३ ॥ इसलिये सीताजीको शीघ्रही रथपर चढ़ाकर और गंगाजीके पास पहुँचाकर लौट आओ ॥ ४ ॥

अति गह्वर वन जहाँ न कोई ❀ छाँड़हु तात यतन कर सोई ॥ ५ ॥
फेरहु तुम मति वचन उदासा ❀ मरण ठानकर चलेउ निरासा ॥ ६ ॥

हे प्यारे! बड़े घने बनमें जहां कोई हो नहीं वहां उपाय करके छोड़ आओ ॥ ५ ॥ (जब भगवान्‌ने यह कहा कि) तुम उदास होकर वचनोंको मत फेरो. यह सुनकर लक्ष्मणजी अपना मरण निश्चय करके निराश होकर चले ॥ ६ ॥

सुभग विमान सीय बैठारी ❀ भूषण पट बहु धरे सँभारी ॥ ७ ॥
अति अनंद मन चली जानकी ❀ अतिशय प्रिय करुणानिधानकी ॥ ८ ॥

सुन्दर विमानमें सीताजीको विठाकर बहुतसे गहने और वस्त्र सह्मालकर रक्खे ॥ ७ ॥ करुणाके निधान भगवान्‌की परम प्यारी सीताजी मनमें बहुत प्रसन्न होती हुई चलीं ॥ ८ ॥

दो०–विवरण लषण निहारिकर, सोच विकल भइ बाल ॥ ❀
हृदय विचार न कहि सकती, मणि विनु व्याकुल व्याल ॥१५॥ ❀

सीताजी लक्ष्मणको मलीन देखकर सोचसे ऐसी व्याकुल होगई जैसे मणिविना सर्प होता है और हृदयमें विचारती हैं परंतु कह नहीं सक्तीं ॥ १५ ॥

चौ०–उतरि देवसरि यान सुहावा ❀ देखत घन वन मन भय पावा ॥ १ ॥
कारण अपर जानि भयभीता ❀ बोली वचन मनोहर सीता ॥ २ ॥

सीतावनवास.

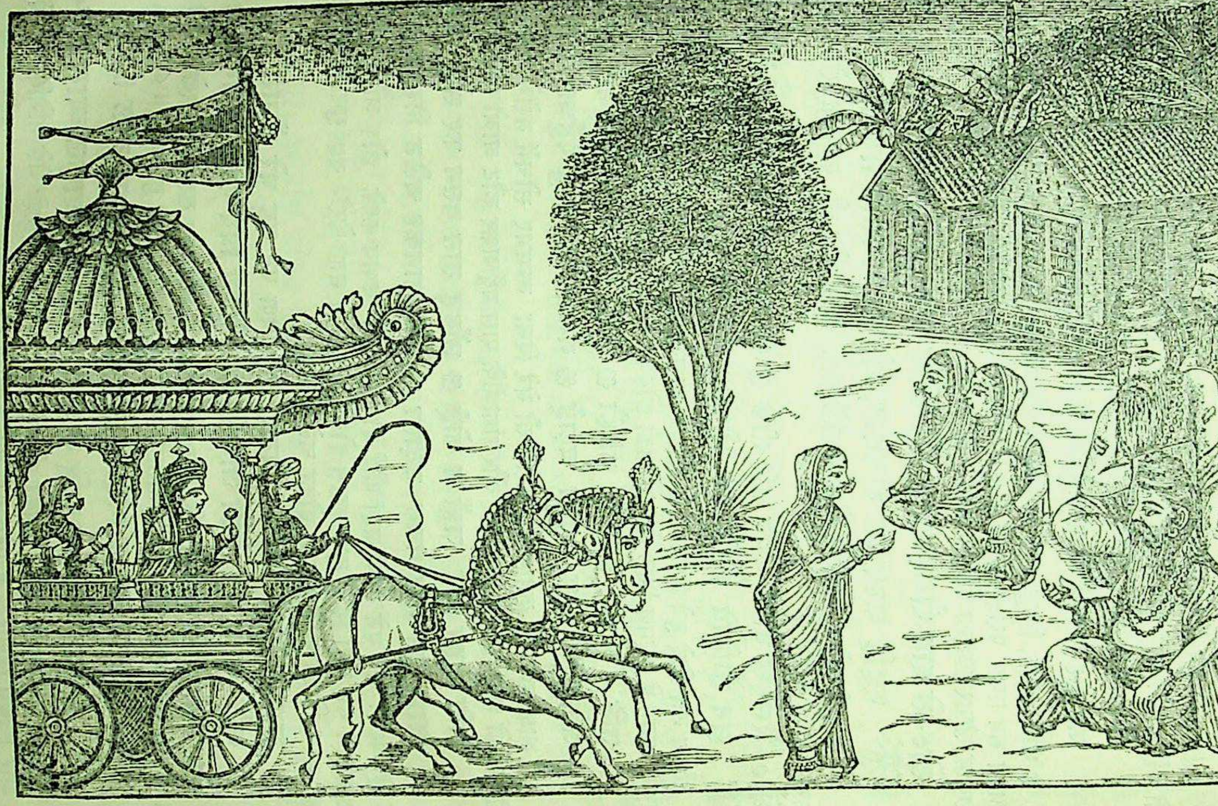

गंगाजीसे उतरके सुन्दर विमानको घने वनमें देखकर मनमें बहुत डरीं ॥ १ ॥ और कोई अन्य कारण जानकर सीताजी डरकर मनहरन बचन बोलीं ॥ २ ॥

दीखत नहीं मुनिनकर धामा ❀ जात कहाँ प्रिय अनुज सकामा ॥ ३ ॥
खग मृग केहरि विषधर व्याला ❀ करि बराह वृक बाघ कराला ॥ ४ ॥

हे देवर ! यहाँ मुनीश्वरोंके स्थानभी नहीं दिखाई देते सो तुम कहां किस कामके लिये जाते हो ? ॥ ३ ॥ पक्षी, हरिण, सिंह, और विषैले सर्प, हाथी, शूकर, भेडिये और कठिन बघेरे यहां हैं ॥४॥

को मुनि मिलत न आवत जाता ❀ निकसत प्राण तात मम गाता ॥ ५ ॥
सीय विकल लखि मनहिं अहीशा ❀ कहन लगे कह कीन्ह विधीशा ॥ ६ ॥

कोई मुनीश्वर आता जाता नहीं मिलता. हे प्यारे! मेरे शरीरसे तौ प्राण निकले जाते हैं ॥५॥ सीताजीको मनमें व्याकुल देखकर लक्ष्मणजी कहने लगे कि ब्रह्मा और महादेवजीने यह क्या किया ? ॥ ६ ॥

मूर्च्छित रथते भे विकराला ❀ गिरत भूमि तब आप सँभाला ॥ ७ ॥
सिय विलोकि मन धीरज आना ❀ तृषा विना अब जैयत प्राना ॥ ८ ॥

मूर्च्छित होकर बेकरार होगये और रथसे भूमिपर गिरने लगे तब अपनेको सम्हाला ॥ ७ ॥ सीताजीको देखकर मनमें धीरज किया और बोले कि प्यास विना अब प्राण निकलना चाहते हैं ॥८॥

दो०-धरणिसुता व्याकुल निरख, प्राण कंठगत जान ॥ ❀
तजन चहत तनु शेष तब, धिकधिक जीवनप्राण ॥ १६ ॥ ❀

सीताजी कंठमें प्राण आये हुये जानकर व्याकुल हुई कि मेरे जीवन प्राण लक्ष्मण शरीरको छोड़ना चाहते हैं मुझे धिक्कार है ॥ १६ ॥

चौ०-देखि लषण सिय मूर्छा आई ❀ गगनगिरा तब भई सुहाई ॥ १ ॥
सुनु सौमित्रि जाहु सिय त्यागी ❀ जनकपुत्रिका जियहि सुभागी ॥ २ ॥

और लक्ष्मणको देखकर सीताजीको तौ मूर्च्छा आई और उस समय सुन्दर आकाशवाणी हुई कि ॥ १ ॥ हे लक्ष्मण ! सुनो सीताजीको छोड़ जाओ. सौभाग्यवती सीता जीती रहेगी ॥ २ ॥

ब्रह्मगिरा सुनि धीरज कीन्हा ❀ हाथ जोरि परिदक्षिण दीन्हा ॥ ३ ॥
ले रथ चरण बंदि सियकेरे ❀ चले अवधपुर त्रास घनेरे ॥ ४ ॥

ब्रह्मवाणी सुनकर धीरज किया और हाथ जोड़कर परिक्रमा दी ॥ ३ ॥ और सीताजीके चरणोंको दंडवत् कर रथ लेकर बड़े दुःखसे अयोध्यापुरीको चले ॥ ४ ॥

जागी सिया सकल दिशि देषा ❀ नहिं रथ अश्व नहीं कहिं शेषा ॥ ५ ॥
सहि दुख प्रथम रहे हैं प्राना ❀ पुनि सोइ चहत न करन पयाना ॥ ६ ॥

सीताजीने जगकर सब दिशाओंमें देखा तो न रथ है, न घोड़े हैं, न कहीं लक्ष्मण हैं, (फिर बोलीं) ॥ ५ ॥ ये प्राण पहिलेसेही दुःख सह रहे हैं इसलिये अब निकला नहीं चाहते ॥ ६ ॥

करुणा करत विपिन अति भारी ❀ वाल्मीकि आये वनचारी ॥ ७ ॥
पुत्री वाल्मीकि कह ज्ञानी ❀ वन आवन निजचरित बखानी ॥ ८ ॥

वनमें बहुतसी दीनता कर रहीथीं कि वाल्मीकि ऋषि आये ॥ ७ ॥ ज्ञानी वाल्मीकिने कहा हे पुत्री ! अपने वनमें आनेका चरित्र कहो ॥ ८ ॥

दो०-मुनि पुत्री मैं जनककी, रामप्रिया जग जान ॥ ❀
त्यागनहेतु न जानु कछु, विधिगति अतिबलवान ॥ १७ ॥ ❀

सीता बोलीं हे मुनीराज ! मैं जनककी बेटी और रामचन्द्रजीकी स्त्री हूं जिनको संसार जानता है. त्यागनेका कारण मैं कुछ नहीं जानती. ब्रह्माकी गति बहुत बलवान् है ॥ १७ ॥

चौ०–देवर लषण गये पहुँचाई ❀ तब सब हेतु लख्यो मुनिराई ॥ १ ॥
सुनु सीता मिथिलापति मोरा ❀ परम शिष्य मम अरु पितु तोरा ॥ २ ॥

देवर लक्ष्मण मुझे पहुँचा गये हैं. तब मुनीश्वरने (योगबलसे) सब कारण जाना (और कहा) ॥ १ ॥ हे सीता ! सुन, जनक और तेरा पिता मेरा परम शिष्य है ॥ २ ॥

चिंता अब जनि करसि कुमारी ❀ मिलिहहिं तोहिं शेष हितकारी ॥ ३ ॥
सादर पर्णकुटी सिय आनी ❀ करि मज्जन पुनि सबगति जानी ॥ ४ ॥

हे कुमारी ! अब चिंता मत करै, तुझे हितकारी लक्ष्मण मिल जायँगे ॥ ३ ॥ आदरसमेत सीताजीको पर्णकुटीमें ले आये और मज्जन करके फिर सब गति जानली ॥ ४ ॥

विविध भाँति मुनि धीरज दीन्हा ❀ सिय तब सुरसरिमज्जन कीन्हा ॥ ५ ॥
सुमिरि राममूरति उर राखी ❀ दीने फल मुनि आयसु भाखी ॥ ६ ॥

मुनीश्वरने अनेक प्रकार धीरज दिया तब सीताने गंगाजीमें मज्जन किया ॥ ५ ॥ रामचन्द्रजीका स्मरण कर मूर्तिको हृदयमें धारण करी और मुनीने आशीर्वाद पढ़कर फल दिये ॥ ६ ॥

मुनिवर कथा अनेक प्रसंगा ❀ कहैं सुनैं सियसंग विहंगा ॥ ७ ॥
ज्ञान अनेक प्रकार दृढ़ावा ❀ लक्ष्मण अवध सुनो जब आवा ॥ ८ ॥

श्रेष्ठ मुनीश्वर अनेक प्रसंग और कथा कहा करैं और सीताजी पक्षियोंके साथ सुना करैं ॥ ७ ॥ और अनेक भांतिसे ज्ञान समझाया. अब लक्ष्मण अयोध्याको आये सो सुनो ॥ ८ ॥

छं०–आये जो लक्ष्मण त्यागि सीतहिं विकल निजआश्रम गये। ❀
बहुभांति रोवत मातुसन कहि सीय दारुण दुख दये ॥ ❀
सुनि सहमि मूर्च्छित मातु वाणी विकल फणि जिमि मणि दये। ❀
तिमि मातु विलपति जान व्याकुल कौशलहि दुखवश भये ३ ❀

लक्ष्मण सीताजीको त्याग कर आये तौ व्याकुल होते हुये अपने भवनको गये और माताके सामने अनेक प्रकार रोने लगे कि सीताको बड़े २ कठिन दुःख दिये ॥ माता इस बाणीको सुनकर मुरझा कर ऐसी मूर्च्छित हो गई, जैसे मणिके जानेसे सर्प व्याकुल हों और माताओंको इस प्रकार व्याकुल और विलाप करती हुई जान रामचन्द्रभी दुःखके वश हुये ॥ ३ ॥

रोदति वदति बहुभाँति को कह बिपति यह दारुण अये। ❀
सुनि शोर रावरसहित लक्ष्मण राम निजमंदिर गये ॥ ❀
निजज्ञान दे समझाय तेहि तब खुले पट अंतर नये। ❀
हम जानि तुम सुत मान प्रभु जग भूल भ्रम फंदन भये ॥ ४ ॥ ❀

माता अनेक प्रकार रोती हुई कहती हैं कि अरे ! इस कठिन दुःखको कौन कह सक्ता है ? इस (कोलाहल) को सुनकर रामचन्द्रजी लक्ष्मणसमेत आपभी अपने महलमें गये और जब उन माताओंको अपना ज्ञान देकर समझाया तौ उनके हृदयके किवाड़ खुल गये। कहने लगीं कि हे प्रभो ! हम तुमको अपना पुत्र समझके भूलकर भ्रमके फन्देमें पड़ी थीं ॥ ४ ॥

अब कृपा करि जगदीश रघुवर देहु भक्ति सुहावनी। ❀
जेहि खोज मुनि योगीश तापस परम अविचल पावनी ॥ ❀

वर चह्यो सोइ सोइ दियो मातुहिं कारुणिक रघुपति तबै। ❀
मन शोधकर निज योगपावक तजा तनु सादर सबै ॥ ५॥ ❀

हे संसारके स्वामी रामजी ! अब दया करके सुन्दर अपनी वह पवित्र निश्चल भक्ति दो कि जिसे मुनीश्वर, योगी और तपस्वी ढूंढ़ते हैं. तब करुणानिधान रामचन्द्रजीने जो जो वरदान चाहा वही माताओंको दिया और उन सबने मन शुद्ध करके अपने २ योगकी अग्निमें आदरसमेत शरीर त्याग दिया ॥ ५ ॥

दो०–योगअग्नि तनु भस्म करि, सकल गईं पतिधाम ॥ ❀
भरत शत्रुसूदन लषण, शोकभवन मे राम ॥ १८ ॥ ❀

योगकी अग्निमें शरीरको भस्म कर सब पतिके लोकको गईं. तब भरत, शत्रुघ्न, लक्ष्मण और रामचन्द्रजी शोक करने लगे ॥ १८ ॥

चौ०–विधिवत किये कर्म श्रुतिगाये ❀ प्रभुते गुरु सादर करवाये ॥ १ ॥
दीन दान पुनि कोटि प्रकारा ❀ को अस कवि जग वरणै पारा ॥ २ ॥

वेदमें कहे हुये कर्म विधिपूर्वक किये और गुरुने भगवान्से आदरसहित करवाये ॥ १ ॥ फिर करोड़ों प्रकारके दान दिये, संसारमें ऐसा कौन कवीश्वर है जो वर्णन कर पार पासके ॥ २ ॥

धेनु वसन हाटक मणि हीरा ❀ हय गज गो मुक्ता वर चीरा ॥ ३ ॥
पुनि परलोकहेतु धन धामा ❀ दिये किये द्विज पूरणकामा ॥ ४ ॥

गौ, वस्त्र, सुवर्ण, मणि, हीरा, घोड़ा, हाथी, मोती, और श्रेष्ठ वस्त्र ॥ ३ ॥ फिर परलोकके लिये धन और स्थान देकर ब्राह्मणोंको पूर्णकाम किया ॥ ४ ॥

रही न चाह याचकनकेरी ❀ रंक धनदपदवी जनु हेरी ॥ ५ ॥
वेद पढ़हिं द्विज देहिं अशीशा ❀ चिर जीवहु कोशलपुरईशा ॥ ६ ॥

मांगनेवालोंको चाहना न रही. मानों कंगालोंने कुबेरकी पदवी पाई ॥ ५ ॥ ब्राह्मण वेद पढ़ते हुये आशीर्वाद देते हैं कि अयोध्यापुरीके राजा चिरंजीव रहैं ॥ ६ ॥

राम दान दे सबबिधि तोषे ❀ भये निवर्त काज करि चोखे ॥ ७ ॥
गृह द्विज याचक सकल सिधाये ❀ असित प्रकार राम सुख पाये ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजीने दान देकर सब प्रकारसे संतुष्ट किया और अच्छे प्रकार काम करके निवृत्तहुये ॥ ७ ॥ सब ब्राह्मण और मांगनेवाले अपने २ घरको गये और रामचन्द्रजी बहुत भांति सुखी हुये ॥ ८ ॥

दो०–करहुँ अजय मख एक पुनि, अश्वमेध जग जान ॥ ❀
कलुष सकल संतापहर, जगत परम सुखदान ॥ १९ ॥ ❀

फिर (रामचन्द्रजीने विचारा कि) एक अजय और जगत्प्रसिद्ध अश्वमेध यज्ञ करूं. वह संपूर्ण पाप और दुःखोंका नाश करनेवाला और संसारको सुख देनेवाला है ॥ १९ ॥

चौ०–एक बार गुरुगृह अवधेशा ❀ गये अनुज सँग सचिव खगेशा ॥ १ ॥
कीन्ह दंडवत पद शिर नाई ❀ सादर हर्षि मिले मुनिराई ॥ २ ॥

हे गरुड़ ! एकवार रामचन्द्रजी छोटे भाई और मंत्रीसमेत गुरुके घर गये ॥ १ ॥ और उनके चरणोंको माथा नवाकर दंडवत् करी तौ मुनीश्वर प्रसन्न होकर आदरसहित मिले ॥ २ ॥

देखि कुशल पूछी मृदु गाता ❀ कुशल देखि तव पदजलजाता ॥ ३ ॥
गुरुपद बंदि द्विजन शिर नाई ❀ बैठे अमित अशीशहिं पाई ॥ ४ ॥

और कोमल शरीरको देखकर कुशल पूंछी. (भगवान्ने कहा) हे नाथ! आपके कमलसमान चरणोंके दर्शनसे कुशल है ॥ ३ ॥ गुरुके चरणोंको दंडवत् कर ब्राह्मणोंको माथा नवाय बहुत सी अशीश पाकर बैठे ॥ ४ ॥

कहत पुराण नवल इतिहासा ❀ सुनत कृपानिधि परम हुलासा ॥ ५ ॥
भाइन असित राम सुख दीन्हा ❀ मुनि तन लखेउ प्रेमकर चीन्हा ॥ ६ ॥

गुरु पुराण और नये २ इतिहास कहते हैं और भगवान् बड़े आनन्दसे सुनते हैं ॥ ५ ॥ भगवान्ने भाइयोंको अपार सुख और सुन्दर शिक्षा दीनी और प्रेम देखकर मुनीश्वरके शरीरकी ओर देखा ॥६॥

दोउ कर जोरि सच्चिदानंदा ❀ बोले वचन भानुकुलचंदा ॥ ७ ॥
नाथ चरण तव सकल प्रसादा ❀ भै जगविदित मोर मर्यादा ॥ ८ ॥

और सूर्यवंशमें चन्द्रके समान ऐसे सच्चिदानन्द भगवान् दोनों हाथ जोड़कर वचन बोले ॥ ७ ॥ हे स्वामी! आपके चरणोंकी पूर्ण कृपासे मेरी मर्यादा संसारमें विदित है ॥ ८ ॥

दो०-समय समुझि करुणायतन, सादर बचन बहोरि ॥ ❀
प्रभु अंतर्यामी करहु, सफल कामना मोरि ॥ २० ॥ ❀

फिर करुणानिधान रामजी समय समझ कर आदरसहित वचन बोले कि हे नाथ! आप अंतर्यामी हो सो मेरी मनोकामना पूरी करो ॥ २० ॥

चौ०-तव प्रसाद जग यज्ञ अनेका ❀ कीने अधिक एकते एका ॥ १ ॥
नाथ सकल पुर जन मन कहहीं ❀ देखन अश्वमेध अब चहहीं ॥ २ ॥

आपकी दयासे संसारमें अनेक यज्ञ एकसे एक अधिक किये ॥ १ ॥ तौभी हे स्वामी! नगरके सब लोग मनमें कहते हैं और सब अश्वमेध यज्ञ देखा चाहते हैं ॥ २ ॥

जस कछु आयसु दीजिय नाथा ❀ सो मैं करब नाय पद माथा ॥ ३ ॥
तनु पुलके सुनि बचन सप्रीती ❀ कस न कहौ तुम सुंदर नीती ॥ ४ ॥

हे स्वामी! जैसी कुछ आप आज्ञा दीजियेगा उसे मैं आपके चरणोंको माथा नवाकर करूँगा ॥ ३ ॥ प्रेमसहित वचन सुनकर मुनी शरीरमें पुलकायमान हुये और बोले हे रामचन्द्र! तुम सुन्दर नीति कैसे न कहों? ॥ ४ ॥

पूजिहि मनअभिलाष तुम्हारी ❀ उठहु भरत अब करहु तयारी ॥ ५ ॥
सुनि मुनिबचन भरत रिपुदमनू ❀ हर्षि सचिव लक्ष्मण गृह गमनू ॥ ६ ॥
विविध प्रकार चरण करि सेवा ❀ चले भरत सँग सब महिदेवा ॥ ७ ॥

तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी. हे भरत! उठकर अब चलकर तयारी करो ॥ ५ ॥ मुनीश्वरके बचन सुनकर भरत, शत्रुघ्न और लक्ष्मण प्रसन्नतासे घरके लिये बिदा हुये ॥ ६ ॥ और अनेक प्रकारसे चरणोंकी सेवा कर भरतजीके साथ सब ब्राह्मण चले ॥ ७ ॥

दो०-सेवक पुरजन सचिव सब, सादर तुरत बुलाय ॥ ❀
हाट बाट पुर द्वार गृह, रचहु वितान बनाय ॥ २१ ॥ ❀

सेवक, नगरके सब लोगों और मंत्री आदिको आदरसमेत शीघ्र बुलाकर कहा कि हाट, वाट नगर द्वार और घरोंमें मंडप बनाकर सजाओ ॥ २१ ॥

चौ०-चले सकल किंकर सुनि बानी ❀ सुनत बचन हर्षीं सब रानी ॥ १ ॥
रचे वितान अनेकन भारी ❀ देखि अवध विधि बिलपत भारी ॥ २ ॥

इस बाणीको सुनकर सब सेवक चले और यह बचन सुनतेही सब रानियाँभी प्रसन्न हुईं ॥ १ ॥

अनेक सुन्दर मंडप बनाये और अयोध्याको देखकर ब्रह्मा भी बहुत खेद करने लगे (कि मेरी सृष्टिमें कोईभी ऐसा स्थान नहीं) ॥ २ ॥

लगे सँवारन गज रथ वाजी ❀ सुनि सुर मगन दुन्दुभी बाजी ॥ ३ ॥
तुरत सचिव चर विपुल बुलाये ❀ कहि जय जीव शीश तिन नाये ॥ ४ ॥

हाथी घोड़े और रथोंको सह्मालने लगे सुनकर देवता प्रसन्न होगये और नगाड़े बजाने लगे ॥ ३ ॥ मंत्रीने शीघ्रही बहुतसे दूत बुलाये. उन्होंने महाराजकी जय कह कर माथा नवाया ॥ ४ ॥

जाहु मुनिन्हके आश्रम माहीं ❀ सादर न्योत देहु सबकाहीं ॥ ५ ॥
वहाँ राम पूँछउ गुरुदेवा ❀ आज्ञा देउ करौं सोइ सेवा ॥ ६ ॥

मंत्रीने कहा मुनियोंके आश्रममें जाकर आदरसहित सबको न्योता दे आओ ॥ ५ ॥ वहाँ रामचन्द्रजीने गुरुदेवसे पूछा कि जो आज्ञा दो वह सेवा करूं ॥ ६ ॥

प्रभुमनकी गति मुनिवर जानी ❀ बोले अतिसनेह वर बानी ॥ ७ ॥
पठवहु दूत जनकपुर आजू ❀ आवहिं जनक समेत समाजू ॥ ८ ॥

श्रेष्ठ मुनि भगवान्के मनकी गति जानकर बड़े प्रेमसे श्रेष्ठ बाणी बोले कि ॥ ७ ॥ आज जनकपुरको दूत भेजो. राजा जनक समाजसहित आवैं ॥ ८ ॥

दो०-सुनहु रामरघुवंशमणि, न्योति सकल पुर जाति ॥ ❀
वरुण कुबेरहि इन्द्र यम, पुनि मुनिवर सब ज्ञाति ॥ २२ ॥ ❀

हे रघुवंशमणि रामचन्द्र! सुनो, संपूर्ण नगर और जातिके लोगोंको न्योता दो और वरुण, कुवेर इन्द्र, यम तथा श्रेष्ठ मुनीश्वरोंकी सब मंडलीको न्योता दो ॥ २२ ॥

चौ०-गुरुसमेत प्रभु अवधहिं आये ❀ देखि बनाव अमित सुख पाये ॥ १ ॥
जनकनगर चर तुरत पठाये ❀ देश देशके नृपति बुलाये ॥ २ ॥

भगवान् गुरुसमेत अयोध्यापुरीमें आये और रचनाको देखकर अपार सुख पाया ॥ १ ॥ जनकके नगरको शीघ्रही दूत भेजे और देश २ के राजा बुलाये ॥ २ ॥

जाम्बवन्त सुग्रीव बिभीषण ❀ अरु नल नील द्विविद कुलभूषण ॥ ३ ॥
आये सब जहँ राम कृपाला ❀ वरुण कुबेर इन्द्र यम काला ॥ ४ ॥

जाम्ववंत, सुग्रीव, विभीषण, नल, नील, और द्विविद जो अपने २ कुलके आभूषण थे उन्हें बुलाया ॥ ३ ॥ और वरुण, कुवेर, इन्द्र, यमराज और काल ये सब दयानिधान रामचन्द्रजीके पास आये ॥४॥

चढ़ि विमान सुरनारि सिहाँहीं ❀ करहिं गान कलकंठ लजाहीं ॥ ५ ॥
आये मुनिवरयूथ घनेरे ❀ देहिं कृपानिधि सुंदर डेरे ॥ ६ ॥

विमानोंपर चढ़कर देवताओंकी स्त्रियां प्रसन्न होती हैं और इस प्रकार गाती हैं कि कोकिलभी लजाती हैं ॥ ५ ॥ श्रेष्ठ मुनियोंके बहुतसे समूह आये और भगवान्ने सुन्दर डेरे दिये ॥ ६ ॥

शशि हर हरि विधि रविसनकादी❀ आये सुर जे परम अनादी ॥ ७ ॥
विश्वामित्रसंग मुनिझारी ❀ सहससात ऋषि इच्छाचारी ॥ ८ ॥

चन्द्रमा, महादेव, विष्णु, ब्रह्मा, सूर्य और सनकादिक जो परम अनादि देवता थे ये सब आये ॥ ७ ॥ विश्वामित्रके साथमें सब सात हजार मुनिश्वर आये, जो स्वेच्छाचारी थे ॥ ८ ॥

दो०-आये ऋषि भृगु अंगिरा, नारद व्यास अगस्त्य ॥ ❀
नानायूथप मुनि सकल, देव समस्त पुलस्त्य ॥ २३ ॥ ❀

भृगु, अंगिरा, नारद, व्यास, अगस्त्य और पुलस्त्य आदि सम्पूर्ण मुनियोंके समूह और सब देवता आये ॥ २३ ॥

चौ०–मखथल वर अति दीख सुहाये ❀ नाना भाँति देखि सुख पाये ॥ १ ॥
मिथिलापुर जे दूत पठाये ❀ देखि नगरवासिन मन भाये ॥ २ ॥

यज्ञका स्थान बहुत सुन्दर दिखाई दिया सो देखकर अनेक भांतिसे सुख पाया ॥ १ ॥ जनकपुरको जो दूत भेजे उन्हें देखकर नगरके रहनेवालोंके मनमें वे अच्छे लगे ॥ २ ॥

द्वारपाल सब खबरि जनाई ❀ अवधनगरसन पाती आई ॥ ३ ॥
सुनि विदेह सहसा उठि धाये ❀ तन मन पुलकि नयन जल छाये ॥४॥

द्वारपालने सब खबर जनकसे कही कि अयोध्यापुरीसे चिठ्ठी आई है ॥३॥ जनकराज सुनकर शीघ्रतासे उठ चले, तनमनसे पुलकायमान होगये और नेत्रोंमें जल भर आया ॥ ४ ॥

भयो नृपतिमन आनँद जेता ❀ कहि न सकैं शारद अहि तेता ॥ ५ ॥
शिथिल आपु उठि द्वारे आये ❀ देखि दूत अतिशय सुख छाये ॥ ६ ॥
कहहु कुशल रघुपतिकर भाई ❀ गद्गदकंठ न कछु कहि जाई ॥ ७ ॥

राजा जनकके मनमें जितना आनन्द हुआ उसे सरस्वती और शेषनागभी नहीं कह सक्ते ॥५॥ शिथिलतासे उठकर आपही द्वारपर आये और दूतोंको देखकर बड़ा आनन्द पाया ॥ ६ ॥ और बोले हे भाई ! रामचन्द्रजीकी कुशल कहो ? तौ दूत गद्गदकंठ होगये, कुछ कहा नहीं जाता ॥ ७ ॥

दो०–भूपप्रेम तिहि समय जस, तस न कहहिं मतिधीर ॥ ❀
तुलसी भयउ उछाहवश, जय जय शब्द गँभीर ॥ २४ ॥ ❀

उस समय राजा जनकको जैसा स्नेह है उसे कविभी नहीं कह सक्ते. आनंदके वश हो गंभीर जय जय शब्द करने लगे ॥ २४ ॥

चौ०–बाँचत प्रीति न हृदय समानी ❀ चरवर बोलि कही हँसि बानी ॥ १ ॥
नगर ग्राम पुर मंगल साजहु ❀ बाजन अमितप्रकार बजावहु ॥ २ ॥

चिठ्ठी बाँचतेही हृदयमें प्रीति नहीं समाती, अपने श्रेष्ठ दूतोंको बुलाकर और हँसकर यों कहा ॥ १ ॥ नगर, गांव और शहरमें मंगल सजाओ और बहुतप्रकारके बाजे बजाओ ॥ २ ॥

सचिव बोलि नृप पाती दीन्ही ❀ उठि कर जोरि विनय कर लीन्ही ॥३॥
पढ़ी सचिव अति प्रेमानंदा ❀ सुमिरि राम कोशलपुरचंदा ॥ ४ ॥

मंत्रीको बुलाकर राजाने चिठ्ठी दी और उसने उठकर हाथ जोड़कर नम्रतापूर्वक ली ॥ ३ ॥ मंत्रीने अयोध्यापुरीके चन्द्रमारूप रामचन्द्रजीका सरण करके बड़े आनन्दसे पढ़ा ॥ ४ ॥

घर घर खबरिव्यापि क्षणमाहीं ❀ मंगल कलश साजि सब पाहीं ॥ ५ ॥
भयो अनंद न जाय बखाना ❀ कीन्ही विविध भाँति नृपदाना ॥ ६ ॥

क्षणभरमें घर २ खबर होगई सो सबने आनन्दके कलश सजाये ॥ ५ ॥ जो कुछ आनन्द हुआ सो वर्णन नहीं किया जाता. राजाने अनेक प्रकारके दान दिये ॥ ६ ॥

धरि तनु देव अमित नभवासी ❀ आये भूपनगर सुखरासी ॥ ७ ॥
कहहिं वचन नृपके हितकारी ❀ चलो अवध सबकाज बिसारी ॥ ८ ॥

आकाशवासी बहुतसे देवता नरशरीर धारण कर सुखके समूह ऐसे जनकपुरमें आये ॥ ७ ॥ और राजासे हितकारी बचन कहने लगे कि सब कामको छोड़कर अयोध्यापुरीको चलिये ॥ ८ ॥

दो०–कहि कहि सुर सादर चले, वाहन रचे बनाय ॥
जोरि युगल कर मुकुटमणि, अस्तुति करहिं सुभाय ॥ २५ ॥

इसप्रकार देवता कहकर आदरसमेत चले और जाकर रच २ कर विमान बनाये और दोनों हाथ जोड़कर भगवान्‌की सुन्दर स्तुति करने लगे ॥ २५ ॥

छं०–सुमिरत चरण श्रीराम रघुकुलचंद सीतानायकं ।
श्रीसहित अनुजसमेत सुस्थिर बसहु मम उर लायकं ॥
अंभोजनयन विशालभाल कृपालु दशरथनंदनं ।
शतकोटिमार उवारशोभा अतुलबल महिमंडनं ॥ ६ ॥

हे रामचन्द्र ! करुणाकन्द ! रघुकुलचन्द ! सीतानाथ ! आपके चरणोंका सरण करते हैं ! आप सीता और लक्ष्मणसमेत हमारे हृदयमें निश्चल होकर निवास करो ॥ आपके कमलसे नेत्र हैं और विशाल मस्तक है, आप दयाके निधान और दशरथनन्दन हो, आपकी शोभा सौ करोड़ कामदेवोंके समान बड़ी है और आपका अपार बल है और पृथ्वीके आभूषण हो ॥ ६ ॥

दो०–पूजे विविध प्रकार नृप, सादर दूत हँकारि ॥
गुरुगृह गवनेउ मुकुटमणि, पाय पदारथ चारि ॥ २६ ॥

राजाने आदरसमेत दूतोंको बुलाके अनेक प्रकारसे सन्मान किया, फिर राजाओंमें मुकुटमणि जनक मानों चारों पदार्थोंको पाकर गुरुके घर गये ॥ २६ ॥

चौ०–सकल कथा महिपाल सुनाई ❀ शतानंद आनंद अघाई ॥ १ ॥
चलहु नृपति मख देखहिं जाई ❀ साजहु जाय सकल कटकाई ॥ २ ॥

राजाने सब कथा (गुरुसे) कही तौ शतानन्द आनन्दसे अघा गये और बोले ॥ १ ॥ हे राजा ! चलो, जाकर यज्ञ देखैं. जाओ सब सेनाको सजाओ ॥ २ ॥

करि विनती नृप मंदिर आई ❀ बाँच पत्रिका सकल सुनाई ॥ ३ ॥
आनँदयुत सब करी बधाई ❀ दिये दान महिदेव बुलाई ॥ ४ ॥

राजा (गुरुकी) प्रार्थना करके महलमें आये और सबको चिठ्ठी बांच कर सुनादी ॥ ३ ॥ आनन्दसहित सबने बधाई करी और ब्राह्मणोंको बुलाकर दान दिये ॥ ४ ॥

याचक सकल अयाचक कीन्हे ❀ सादर बोलि युगल चर लीन्हे ॥ ५ ॥
बिलग बिलग सब पूछहिं वामा ❀ सुने रामके पूरण कामा ॥ ६ ॥

सम्पूर्ण माँगनेवाले धनवान करदिये, फिर आदरसमेत दो दूत बुलालिये ॥ ५ ॥ सब स्त्रियाँ अलग २ पूछती हैं और रामचन्द्रजीके संपूर्ण चरित्र दूतोंसे सुनती हैं ॥ ६ ॥

छं०–सब काम पूरण रामके सुनि विपुल बाजन बाजहीं ।
पुरद्वार घर रखवार राखे सैन्य भट सब साजहीं ॥
दशसहस सिंधुर षष्टिशत रथ वाजि वर्णत नहिं बनै ।
जगमगत जीन जड़ाव रविमणि देखि कवि कैसे भनै ॥ ७ ॥
चढ़ि शूर प्रबल प्रवीण जे असि चलत सब सादर भये ।
सुखपाल परम विशाल युग चढ़ि गुरुहिं लै आदर नये ॥
महि डोल धसकत कमठ अहि दल देखि अमित विदेहको ।
रथ यूथ पदचर अमित वर्णहि जगत अस कवि मूढ़को ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजीके सब काम पूर्ण सुनकर बहुतसे वाजे वजते हैं, नगरके द्वार और घरोंपर रखवाले रखकर सब योद्धा सेनाको सजाने लगे. दश हजार हाथी, छः हजार रथ और घोड़े वर्णन नहीं किये जाते. जड़ाऊ जीनोंमें सूर्यकांत मणि जगमगाते हैं, जो देखतेही वनते हैं; कवीश्वर कैसे वर्णन करै? ॥ ७ ॥ जो योद्धा तलवार चलानेमें चतुर हैं वे सब आदरसहित चढ़कर चलते हुये और राजा जनक बहुत बहुत बड़े २ दो सुखपालोंपर चढ़कर आदरसमेत गुरुको लेकर चले. जनककी अपार सेनाको देखकर पृथ्वी चलायमान हुई, कच्छप और शेषजी धसकने लगे. रथ और पैदलोंका समूह ऐसा अपार है कि संसारमें ऐसा कौन मूर्ख कवि है जो वर्णन करसकै ॥ ८ ॥

दो०-चलेउ राव मुनिगणसहित, विपुल निशान बजाय ॥ ❀
प्रात तीसरे पहर सोइ, अवधनगर नियराय ॥ २७ ॥ ❀

राजा (जनक) मुनीश्वरोंके समूहसहित वाजे वजवाकर चले और सवेरे तीसरे पहर अयोध्यापुरीके पास पहुँचे ॥ २७ ॥

चौ०-पुरबाहर सरयू शुचि तीरा ❀ वास दीन्ह हर्षित रघुबीरा ॥ १ ॥
सौंपि अनुजकहँ राजसमाजू ❀ आये प्रभु जहँ नृपमणि राजू ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीने प्रसन्न होकर पवित्र सरयूके किनारे वास दिया ॥ १ ॥ लक्ष्मणजीको राजसमाज सौंपकर भगवान् जनकजीके पास आये ॥ २ ॥

मिल पुनि नृपति निकट बैठारे ❀ गद्गद गिरा सुवचन उचारे ॥ ३ ॥
बदनमयंक निरखि सब गाता ❀ आनँदमगन न हृदय समाता ॥ ४ ॥

फिर राजाने मिलकर पास बिठलाये और गद्गद वाणीसे सुन्दर बचन कहे ॥ ३ ॥ चन्द्रमासे मुख और सब शरीरको देखकर मगन होगये. आनन्द हृदयमें नहीं समाता ॥ ४ ॥

प्रभु बिनीत सब करि सेवकाई ❀ सचिव भरत पुनि लिये बुलाई ॥ ५ ॥
नृपसेवा सब भरत सँभारी ❀ सुनि खगपति जस कीन्ह खरारी ॥ ६ ॥

फिर नीतिज्ञ भगवानने सबकी विनती और सेवा कर मंत्री और भरतको बुलालिया ॥ ५ ॥ हे गरुड़! राजाकी सब सेवा तौ भरतने सम्हाली और भगवानने जैसा किया सो सुनो ॥ ६ ॥

आय गुरुहिं सादर शिर नाई ❀ मन भावत आशिष तिन पाई ॥ ७ ॥
पुनि प्रभु सकल देव गुरु वंदे ❀ अभिमत आशिष पाइ अनंदे ॥ ८ ॥

आकर आदरसहित गुरुको माथा नवाया और मनमानी आशिष पाई ॥ ७ ॥ फिर भगवान्ने सब देवता और गुरुओंको दंडवत की और इच्छानुसार आशीर्वाद पाकर प्रसन्न हुये ॥ ८ ॥

दो०-दश सहस्र मुनिवरसहित, आये प्रभु मखधाम ॥ ❀
बोले बचन बिनीत गुरु, मंत्र सुनहु मम राम ॥ २८ ॥ ❀

दश हजार श्रेष्ठ मुनीश्वरोंसमेत भगवान् यज्ञके स्थानमें आये; तब (गुरु) वसिष्ठ नीतिसहित वचन बोले कि हे रामचन्द्र! मेरी सलाह सुनो ॥ २८ ॥

चौ०-धर्म सकल जेहि वेद बखाने ❀ संत पुराण लोक सब जाने ॥ १ ॥
बिनतिय नहिं फल होय खरारी ❀ अब चहिये मिथिलेशकुमारी ॥ २ ॥

जिसे जब वेद वर्णन करते और संत पुराण और सब लोक जानते हैं उस धर्मका ॥ १ ॥ फल हे रामचन्द्र! विना स्त्रीके नहीं होता, इसलिये अब जानकीजी होनी चाहिये ॥ २ ॥

सुनि मुनिवचन मौन गहि रहेऊ ❀ सत्य असत्य न एकौ कहेऊ ॥ ३ ॥
मम प्रण विरद जान मुनिराया ❀ रहै सुकृत जेहि करहु सो दाया ॥ ४ ॥

रामजी मुनीश्वरके बचन सुनकर चुप साधके रह गये, एकबार तौ सच झूंठ कुछभी न कहा

(फिर बोले) ॥ ३ ॥ हे मुनीश्वर मेरी प्रतिज्ञा और यशको तौ आप जानतेहीहो, अब जिस प्रकार धर्म रहै वही दया करो ॥ ४ ॥

द्वै गुरु मिल नारद सनकादी ❀ वचन कहेउ सुन परम अनादी ॥ ५ ॥
कनकजटित मणि सुंदर बाला ❀ रचि सिय रूप सुशील विशाला ॥ ६ ॥

नारद और सनकादि तथा दोनों गुरुओंने मिलकर बचन कहे कि हे परम अनादि पुरुष! सुनिये ॥५॥ सुवर्णकी मणिजटित सुन्दर युवा स्त्री सीताजीके रूपके समान बड़ी और सुशील बनाओ ॥६॥

अंग अंग सब भूषण साजे ❀ तासु रूप लखि रतिपति लाजे ॥ ७ ॥
सहसा लखि न सकहिं नर नारी ❀ सिय देखेउ अब अचरज भारी ॥ ८ ॥

(फिर तौ वैसीही सीताजी बनाकर) उनके अंग २ में सब गहने ऐसे सजाये कि जिसके रूपको देखकर कामदेवभी लजाये ॥ ७ ॥ स्त्री पुरुष एकाएकी पहिचान नहीं सक्ते. सीताजीको देखकर सबको बड़ा अचम्भा हुआ ॥ ८ ॥

दो०-तेहि अवसर शोभा अमित, को कवि बरणै पार ॥ ❀
जगदातार कृपालु प्रभु, कीन्हे चरित अपार ॥ २९ ॥ ❀

उस समयकी अपार शोभाको कौन कवीश्वर वर्णन कर पार पा सक्ता है? संसारके दाता दयानिधान भगवानने अपार चरित्र किये ॥ २९ ॥

चौ०-जटित कनक सुंदर मृगछाला ❀ तिहि आसन आसीन कृपाला ॥ १ ॥
सियासहित लखि सुर मुसुकाहीं ❀ कीन्ह प्रणाम सबन हर्षाहीं ॥ २ ॥

सुवर्णसे मढ़ीहुई सुन्दर मृगछालापर आसन लगाकर भगवान् विराजमान हुये ॥ १ ॥ जानकीसमेत (भगवान्को) देखकर देवता मुझकराने लगे और सबोंने प्रसन्नतासे प्रणाम किया ॥ २ ॥

भीर अपार देखि गुरुज्ञानी ❀ ऋधि सिधि बोलि सकल सनमानी ॥३॥
कहा जाय जो उचित सो करहू ❀ जो जेहि चहिय सकल अनुसरहू ॥ ४ ॥

ज्ञानवान् गुरुने बहुतसी भीड़ भाड़ देख सब ऋद्धिसिद्धियोंको बुलाकर सबका सत्कार किया ॥ ३ ॥ और कहा कि जो उचित हो सो जाकर करो और जो वस्तु जिसे चाहिये (उसे वही दो) सबकी इच्छा पूरी करो ॥ ४ ॥

सुनि रजाय रघुपतिरुख पाई ❀ रचे कोट गृह विधिहु सिहाई ॥ ५ ॥
सुरसुरभी सुरतरु सुखखानी ❀ शारद शेष न सकहिं बखानी ॥ ६ ॥

(वे ऋद्धि सिद्धि) आज्ञा सुन और रामचन्द्रजीका रुख पाकर कोट और भवन बनाने लगीं (जिन्हैं देख) ब्रह्माभी प्रशंसा करने लगे ॥ ५ ॥ सुखकी खानि कामधेनु और कल्पवृक्ष (सब घरोंमें बनाये) जिनका सरस्वती और शेषभी वर्णन नहीं कर सक्ते ॥ ६ ॥

पुर गृह बाहर गली अटारी ❀ भरि सुगंध सब रची सँभारी ॥ ७ ॥
रहे तहाँ दिशिपाल अनेका ❀ जे परमारथ निपुण विवेका ॥ ८ ॥

नगर घर बाहर गली और अटारी इनको बहुत सम्हाल २ कर रचा और सुगंधिसे भर दिया ॥ ७ ॥ वहाँ अनेक दिशाओंके रक्षक (पहिरेपर) रख दिये जो परमार्थमें बड़े ज्ञानवान् थे ॥ ८ ॥

छं०-जे निपुण परमविवेक पावन भरत लै राखे तहीं। ❀
निजभाग्य प्रबल सराह निदरहिं धनदकी पदवी सही ॥ ❀
आये त्रिलोकी नाग खग सुर असुर जे विधिने रचे। ❀
सन्मानि सकल सनेह सादर रामसन कोउ नहिं बचे ॥९॥ ❀

जो चतुर बड़े ज्ञानी और पवित्र थे उन्हें भरतने वहां रक्खा. उन्होंने भाग्यकी बड़ी सराहना की और कुवेरकी पदवीकीभी निन्दा करने लगे. तीनों लोकोंके नाग पक्षी देवता और राक्षस जो ब्रह्माने वनाये थे सब आये और रामचन्द्रजीने प्रेम और आदरसहित सवका सत्कार किया, अर्थात् कोईभी ऐसा न वचा कि सत्कार न किया हो ॥ ९ ॥

दो०-युगसहस्र जे विप्रवर, सुन्दर परम प्रवीन ॥
जानहिं श्रुतिकर मत सकल, रहि मखसंग अधीन ॥ ३० ॥

दो हजार श्रेष्ठ ब्राह्मण जो सुन्दर अत्यंत चतुर और वेदके सव मतको जानते थे वे भगवान् के साथ यज्ञमें आधीन रहे ॥ ३० ॥

चौ०-मकरमास ऋतु शिशिर सुहाई ❀ मखमंडप बैठे रघुराई ॥ १ ॥
तब बोले गुरु वचन सुहाये ❀ आनहु वाजि जो वेद बताये ॥ २ ॥

मकरमास सुन्दर शिशिर ऋतुमें रामचन्द्रजी यज्ञके मंडपमें बैठे ॥ १ ॥ तब गुरु सुन्दर वचन बोले कि जैसा वेदमें कहा है वैसा घोड़ा लाओ ॥ २ ॥

लक्ष्मण सुनि गुरुवचन अनंदे ❀ बार बार पदपंकज बंदे ॥ ३ ॥
हयशाला सादर चलि आये ❀ विविध विभूषण तेहि पहिराये ॥ ४ ॥

लक्ष्मण गुरुके वचन सुनकर प्रसन्न हुये और बार २ उनके कमलसमान चरणोंको दंडवत् की ॥ ३ ॥ आदरसमेत घुड़शालमें चले आये और अनेक आभूषण तिसे पहराये ॥ ४ ॥

श्वेतवर्ण सुंदर श्रुति कारे ❀ रविहय निदरि मनोज सँवारे ॥ ५ ॥
जीन जराव न जाय बखाना ❀ चढ़ि रविरथ आवत जग जाना ॥ ६ ॥

श्वेतरंगका सुन्दर घोड़ा था कि जिसके कान काले थे और जो सूर्यके घोड़ोंकीभी निंदा करताथा और ऐसा था मानों कामदेवनेही बनाया है ॥ ५ ॥ जड़ाऊ जीनका वर्णन नहीं किया जाता, जगतने ऐसा जाना मानों साक्षात् सूर्यही रथपर चढ़कर आरहे हैं ॥ ६ ॥

माथे मोरपक्ष मणि लागे ❀ सोइ नभ नखत देव अनुरागे ॥ ७ ॥
सेवक चारु पाटमय डोरी ❀ दामिनि दमकि निपट अतिथोरी ॥ ८ ॥

माथेमें मोरके पंख मणियाँ लगी हुई हैं वही मानों आकाशके तारे हैं जिन्हें देख देवता प्रीति करने लगे ॥ ७ ॥ सेवकके हाथमें सुन्दर रेशमकी डोरी है जिसके सामने बिजलीकी चमकभी बहुतही थोडी लगती ॥ ८ ॥

दो०-षष्टिसहस दशवीरवर, रामानुज रणधीर ॥
मध्य ताहि आनेहु तहाँ, जहाँ राम रघुवीर ॥ ३१ ॥

रणधीर लक्ष्मणजी साठ हजार और दश श्रेष्ठ योद्धाओंको साथ लेकर उस घोड़ेको रामचन्द्रजीके पास लाये ॥ ३१ ॥

चौ०-पूजेहु हय प्रभु जय जगहेतू ❀ जस कछु कहा गाधिकुलकेतू ॥ १ ॥
दीन्ह विविध विधि दान अनेका ❀ लिखो पत्र सोइ करि अभिषेका ॥ २ ॥

भगवान्ने जैसा कुछ विश्वामित्रने कहाथा तैसाही घोड़ेका पूजन किया ॥ १ ॥ और अनेक प्रकारके बहुतसे दान दिये और अभिषेक करके एक पत्र लिखा कि ॥ २ ॥

एक वीर कौशलपुरमाहीं ❀ अरिदलदलन सुरेश सकाहीं ॥ ३ ॥
जिह बल होइ गहौ सोइ बाजी ❀ देहु दंड वन जाहु कि भाजी ॥ ४ ॥

अयोध्यापुरीमें एक योद्धा वैरियोंकी सेनाका नाश करनेवाला है, जिससे इन्द्रभी लज्जित होता है ॥ ३ ॥ (उसकाही यह घोड़ा है) सो जिसे बल हो वह इस घोड़ेको पकड़ो या दंड दो, या भाग जाओ ॥ ४ ॥

लखि बाँधो हयशीश सँभारी ❀ यह सुन बचन चले मुनिचारी ॥ ५ ॥
भार्गवआदि सकल मुनि संगा ❀ रहे जहाँ रघुवंशपतंगा ॥ ६ ॥

सो लिखकर और सम्हालकर घोड़ेके माथेमें बांधा. यह बचन सुनकर बहुतसे मुनि चले ॥ ५ ॥ और भार्गवआदि सब मुनि इकट्ठे होकर रघुकुलके सूर्य ऐसे रामजीके पास आये ॥ ६ ॥

कथा सकल लवणासुरकेरी ❀ मुनिन त्रास जिन दीन घनेरी ॥ ७ ॥
सुनि ऋषिवचन नयन जल छाये ❀ बिहँसि राम निजत्रोण मँगाये ॥ ८ ॥

लवणासुरकी सब कथा कही, जिसने मुनीश्वरोंको बहुत दुःख दिया था ॥ ७ ॥ ऋषिके बचन सुन (रामचन्द्रजीके) नेत्रोंमें जल भर आया, फिर हँसकर अपना तरकस मँगाया ॥ ८ ॥

दो०-दीन्हें रिपुसूदनहि सोइ, बाण अमोघ कराल ॥ ❀
मंत्रमोर पढ़ ताहि हति, जीतहु सकल भुआल ॥ ३२ ॥ ❀

और शत्रुघ्नको वही अमोघ कठिन बाण दिया और कहा कि मेरा मंत्र पढ़कर उस (लवणासुर) को मारकर सब राजाओंको जीतो ॥ ३२ ॥

चौ०-बहुरि बिभीषण राम बुलाये ❀ सादर आय माथ तिन नाये ॥ १ ॥
लवणासुरके चरित अपारा ❀ पूछेउ दिनमणिवंशउदारा ॥ २ ॥

फिर रामचन्द्रजीने बिभीषणको बुलाया और उसने आकर आदरसहित माथा नवाया ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीने लवणासुरके अपार चरित्र पूंछे ॥ २ ॥

करयुग जोरि निशाचरनाहा ❀ सत्य कहौं अब सुन अवगाहा ॥ ३ ॥
भगनि विमात्र नाथ सोइ मोरी ❀ कुंभनिशा तेहि नाम बहोरी ॥ ४ ॥

बिभीषण दोनों हाथ जोड़कर बोला हे महाराज! सत्य कहताहूं अब सब सुनो ॥ ३ ॥ हे स्वामी! एक मेरी सौतेली बहन थी और उसका कुंभनिशा नाम था ॥ ४ ॥

मधुदानवकहँ रावण दीनी ❀ बहु विनीति कर बिनय बसीनी ॥ ५ ॥
तनय तासु लवणासुर भयऊ ❀ शिवसेवा सादर मन दयऊ ॥ ६ ॥

रावणने उसे मधु (नाम) दैत्यको बहुतसी विनती और प्रार्थना करके दिया ॥ ५ ॥ उसका पुत्र लवणासुर हुआ, जिसने महादेवकी सेवामें बड़े आदरसे मन लगाया ॥ ६ ॥

अगम तासु तप शंकर जाना ❀ दीन्ह त्रिशूल सुकृपानिधाना ॥ ७ ॥
जेहिकर रहै अस्त्र यह भारी ❀ चौदह भुवन जीति सब झारी ॥ ८ ॥

हे दयासागर! महादेवने उसका कठिन तप जानकर त्रिशूल दिया ॥ ७ ॥ (और कहा कि) जिसके हाथमें यह बड़ा हथियार रहैगा वह झारकर चौदहों लोकोंमें सबको जीत लेगा ॥ ८ ॥

दो०-तेहि बल प्रभु सो नहिं गनहि, अमर दनुज नर नाग ॥ ❀
जीति सकल वश कीन्ह सोइ, हठपथ सबके लाग ॥ ३३ ॥ ❀

हे नाथ! उसीके बलसे वह देवता, राक्षस, मनुष्य और सर्प किसीको नहीं गिनता. उसने सबको जीतकर वशमें कर लिया है और हठसे सबको दुःख देता है ॥ ३३ ॥

चौ०-तासु चरित सुनि मन मुसकाने ❀ रिपुहिं हतहु बल दे सनमाने ॥ १ ॥
सैन्य सुभग चतुरंग बनाई ❀ लिये साथ दोउ तनय सुहाई ॥ २ ॥

उसके चरित्र सुनकर (भगवान्) मनमें हँसे और कहा कि वैरीको मारो और बल देकर सत्कार

किया ॥ १ ॥ उन्होने चतुरंगिनी सेना सजाई और साथमें दोनों सुन्दर कुमार कर लिये ॥ २ ॥

सुनि प्रभुवचन निशान अपारा ❀ तीन सहस्र हने इकबारा ॥ ३ ॥
दलकै वसुधा कुंजर गाजै ❀ दशसहस्र रथ रविरथ लाजै ॥ ४ ॥

भगवान्‌के वचन सुनकर तीन हजार नगाड़े एक साथही बजाये ॥ ३ ॥ हाथियोंके गर्जनेसे पृथ्वी डोलने लगी, दशहजार रथ ऐसे चले जो सूर्यके रथको लज्जित करते हैं ॥ ४ ॥

पूरो शंख चलो दल साजी ❀ अमित अकाश दुंदुभी बाजी ॥ ५ ॥
पुरबाहर सब कीन्ह सँभारी ❀ तनय युगल लखि परम सुखारी ॥ ६ ॥

शंख बजाकर सेना सजकर चली और अकाशमें अपार नगाड़े बजने लगे ॥ ५ ॥ नगरके बाहर सबकी सम्हाल करी और दोनों पुत्रोंको देखकर बहुत सुखी हुये ॥ ६ ॥

द्वादशनिशि बीते मगमाहीं ❀ पहुँचे जाय यमुनतटपाहीं ॥ ७ ॥
दिनप्रति दान देहिं बहु भाँती ❀ प्रभुपद पूजें दिन औ राती ॥ ८ ॥

बारह रात मार्गमें बिताकर यमुनाजीके किनारेपर जाय पहुँचे ॥ ७ ॥ प्रतिदिवस अनेक प्रकारके दान देने लगे और दिनरात भगवान्‌के चरण पूजने लगे ॥ ८ ॥

दो०-रवितनयापद वंदिकै, सादर पूजि पुरारि ॥ ❀
चलेहु शत्रुसूदन सुमिरि, स्वामिहिं राम खरारि ॥ ३४ ॥ ❀

यमुनाजीके चरणोंको दंडवत् कर आदरसमेत महादेवका पूजन करके अपने स्वामी खरारी रामचन्द्रजीको सुमिरकर शत्रुहन चले ॥ ३४ ॥

चौ०-चमू चपल अति सुभट जुझारा ❀ घेर्‌यो नगर वीर बरियारा ॥ १ ॥
विपुल निसान हने तिहि काला ❀ सुनि निश्चरपति गर्व विशाला ॥ २ ॥

अत्यंत सुन्दर जुझाऊ योद्धाओंकी सेनाने वीर (लवणासुर) का नगर जोरावरी घेर लिया ॥ १ ॥ उस समय बहुतसे बाजे बजे, जिन्हैं सुनकर लवणासुरको बड़ा अभिमान हुआ ॥ २ ॥

षष्टि सहस बर शूर जुझारा ❀ लवणासुरसँग अनी अपारा ॥ ३ ॥
सुभट प्रचारत गज रथ आवा ❀ देख कटक निज अति सुख पावा ॥ ४ ॥

साठहजार जुझाऊ योद्धाओंकी सेना लवणासुरकेभी साथ थी ॥ ३ ॥ योद्धाओंको ललकारता हुआ हाथी और रथ लेकर आया, और अपनी सेनाको देखकर बड़ा आनन्द पाया ॥ ४ ॥

मारहु खावहु नृप धरि बाँधहु ❀ जेहि जय होय यत्न सोइ साधहु ॥ ५ ॥
अस कहि सन्मुख सैन्य चलाई ❀ कज्जलगिरि जनु आँधी आई ॥ ६ ॥

कहने लगा कि मारो २ खाओ २ और राजाको पकड़कर बांधलो. जिससे जीतहो सो उपाय करो ॥ ५ ॥ ऐसे कहकर सेना सामने चलाई, मानों कज्जलगिरिकी आंधी आई है ॥ ६ ॥

मारू शब्द सुनत भट गाजहिं ❀ विपुल बाजने दुहुँदिशि बाजहिं ॥ ७ ॥
निजप्रभु कहि जय जोरी जानी ❀ हर्षि भिरे भट मन हठ ठानी ॥ ८ ॥

मारू (बाजेका) शब्द सुनतेही योद्धा गर्जने लगे और दोनों ओर बहुतसे बाजे बजने लगे ॥७॥ अपने २ स्वामीकी जय कहकर सेना जुट गई और योद्धा प्रसन्नतासे मनमें हठकर २ के भिड़ने लगे॥८॥

छं०-हठठानि प्रबल प्रवीण जे असि भिरे अति रिपु प्रबलसे । ❀
इक मल्लयुद्ध सराहि रोकहिं एक एकन कर खसे ॥ ❀
शर शक्ति तोमर शूल परशु कृपाण शूर चलावहीं । ❀
कर चरण शिर हति तीर धारहिं भूमि जान न पावहीं ॥१०॥❀

भट गिरहिं पुनि उठि भिरहिं धरुकहि करहिं माया अति घनी । ❀
प्रभुतनय सुंदर बीर बाँके हनहिं रिपु निश्चरअनी ॥ ❀
देखहिं परस्पर युद्धकौतुक सुभट एकहिं इक हने । ❀
सजि कोटि रथ सुर आय नभपथ सुमनवर्षा करि भने ॥११॥ ❀

जो तलवार चलानेमें चतुर थे वे पैज करके प्रबल शत्रुओंसे जा भिड़े, कोई मल्लयुद्धकी सराहना करके एक दूसरेका हाथ पकड़कर रोकने लगे ॥ योद्धा लोग बाण, शक्ति, तोमर, त्रिशूल, कुल्हाड़ा और तलवार चलाते हैं और हाथ, पैर और मस्तकोंको काट २ के बाणहीपर रोक लेतेहैं. पृथ्वीपर नहीं जानेदेते॥१०॥ योद्धा गिरते हैं और फिर उठकर लड़ने लगते हैं. पकड़ो २ कहकर बहुत बड़ी माया फैलाते हैं. भगवान्‌के भाई सुन्दर बांके योद्धा वैरी राक्षसोंकी सेनाको मारते हैं ॥१॥ और जब सुन्दर योद्धा आपसमें युद्धके कौतुकको देखते हुये एक दूसरेको मारने लगे तब देवता सजे हुये करोड़ों रथोंपर (बैठ२) आये और आकाशमार्गमें फूलोंकी बर्षा कर जय २ कहने लगे ॥११॥

दो०-बिचलत अनी बिलोकि निज, लवणासुर बरबंड ॥ ❀
संग तनय मातंगभट, दूसर केतु अखंड ॥ ३५ ॥ ❀

बरबंड लवणासुर अपनी सेनाको विचरते देख साथमें अपने पुत्र मातंग और दूसरे अखंड़केतु नाम योद्धा पुत्रोंको लाया ॥ ३५ ॥

चौ०-अरिसुत ज्येष्ठ सुबाहु विशाला ❀ भिरा मतंग हृदय जनु काला ॥ १ ॥
यूपकेतु अरु केतु प्रचारी ❀ लड़हिं सुखेन न मानहिं हारी ॥ २ ॥

शत्रुघ्नके बड़े पुत्र सुबाहुके हृदयमें मतंग कालके समान भिड़ा ॥१॥ यूपकेतु और केतु ललकार २ कर सुखसे लड़ते हैं हार नहीं मानते ॥ २ ॥

अनीसमूह जानि निज जोरी ❀ अस्त्र शस्त्र गहि भिरे बहोरी ॥ ३ ॥
विषम युद्ध लखि देव सकाने ❀ पूछेउ सुरगुरु कहि मुसकाने ॥ ४ ॥

फिर सब सेनाका समूह अपनी २ जोड़ीसे अस्त्र शस्त्र लेकर लड़ने लगा ॥ ३ ॥ इस बांके युद्धको देखकर देवता सकुचे और बृहस्पतिजीसे पूछने लगे कि कहो (अब क्या होना चाहिये) तब बृहस्पतिजी हँसे ॥ ४ ॥

जनि हिय सोच अमरपति करहू ❀ रामप्रताप सुमिरि उर धरहू ॥ ५ ॥
यूपकेतु कर कोप अपारा ❀ हन रिपुकेतु खंड महि डारा ॥ ६ ॥
इहाँ सुबाहु मत्त गहि मारा ❀ कर पद काटि अवनीपर डारा ॥ ७ ॥

और बोले कि हे इन्द्र! मनमें सोच मत करो, रामचन्द्रजीके प्रतापको स्मरण करके हृदयमें रक्खो ॥ ५ ॥ यूपकेतुने बहुतसा क्रोध करके रिपुकेतुको मार टुकड़े २ करके पृथ्वीपर गिरा दिया ॥६॥ यहां सुबाहुने मतंगको पकड़के मार डाला और हाथ पैर काटके पृथ्वीपर डाल दिया ॥ ७ ॥

छं०-महि डारि कर पद शीश आतुर तूण शर प्रविशत भये । ❀
रविवंशके अवतंस दूनो समरमहि राजत भये ॥ ❀
सुनि मरण युगसुत विकल निशिचर भूमिपर घूर्मित गिर्‍यो।❀
पुनि जागि शूल सँभारि प्रभुके समर सम्मुख सो भिर्‍यो॥१२❀
दोउ प्रबल वीर प्रताप निशिचर सैन्य दुहुँ दिशि मुरि चली। ❀
शिर बाहु चरण उड़ात नभपथ योगिनी आनँद भली ॥ ❀

बहु रुधिर मज्जन करहिं सादर गुहहिं नरशिरमालिका ।
आनंद ह्वै मन मुदित गावहिं गीत खेचरबालिका ॥ १३ ॥
धुनि बढ़हि शंख मृदंगकी सुनि शूर हर्ष बढ़ावहीं ।
गति लेत निर्तत प्रेततिय शिरमाल हर्ष चढ़ावहीं ॥
कहुँ करत पान प्रमाण नर कहुँ भरी शोणित शाकिनी ।
सब मेद मांस अहार कर नभ मुदित बोलहिं डाकिनी ॥१४॥

हाथ पैर और मस्तकको पृथ्वीपर डालकर बाण तरकसमें घुस गये, सूर्यवंशके भूषण दोनों कुमार रणभूमिमें शोभित हुये; राक्षस (लवणासुर) अपने दोनों पुत्रोंका मरना सुन व्याकुल होकर घूमकर पृथ्वीपर गिरपड़ा, फिर वह जगकर त्रिशूल लेकर प्रभुके सन्मुख लड़ने चला ॥ १२ ॥ दोनों प्रवल प्रतापी योद्धाओंके मारे, दोनों ओरकी सेना मुड़ चली. शिर भुजा और चरण आकाशमार्गमें उड़ने लगे, योगिनियोंको वड़ा आनन्द होरहा है, आदरसहित वहुतसे लोहूमें मज्जन करती हैं, मनुष्योंके मस्तकोंकी माला पोहती हैं, और प्रसन्नतासे मनमें आनन्द भरकर अप्सरा गीत गाती हैं ॥ १३ ॥ शंख और मृदङ्गकी धुनि बढ़ने लगी, जिसे सुनकर योद्धा बहुत प्रसन्न होने लगे. प्रेतोंकी स्त्रियां गतिके साथ नाचने लगीं और प्रसन्न हो २ कर मुंडोंकी मालाको अपने ऊपर चढ़ाने लगीं. कहीं लोहूसे भरेहुये मनुष्योंके रुधिरको शाकिनी पान करने लगीं, कहीं डाकिनी सब मेदमांसका आहार करके आकाशमें प्रसन्नतासे विचरने लगीं ॥ १४ ॥

दो०-मारे रघुवर वीर बहु, गिरे समर रणधीर ॥
क्षणइक निश्चरबध निरखि, अंतर हुइ बलवीर ॥ ३६ ॥

शत्रुघ्नजीने बहुतसे योद्धा मारे वे रणधीर युद्धमें गिरपड़े, फिर राक्षसोंका मरना देखकर योद्धा राक्षस क्षणभरके लिये अंतर्ध्यान होगये ॥ ३६ ॥

चौ०-करि छल प्रगटसो विविध वरूथा ❀ अस्त्र शस्त्र लै सब सुरयूथा ॥ १ ॥
धाये अज अरु शिव सनकादी ❀ जे मुनि अपर कहे श्रुतिवादी ॥ २ ॥

और कपटरूप धरकर सब देवताओंके रूपमें बहुतसे समूह अस्त्र शस्त्र लेकर प्रगट होगये ॥ १ ॥ ब्रह्मा महादेव और सनकादिक तथा और अन्य मुनीश्वर जो वेदके जाननेवाले थे आये ॥ २ ॥

शक्ति शूल असि चर्म सुहाई ❀ गदा परशु धनु बाण बनाई ॥ ३ ॥
धरु धरु मारु मारु सुर करहीं ❀ लरत न भट बिस्मित हो रहहीं ॥ ४ ॥

शक्ति, त्रिशूल, तलवार, ढाल, गदा, कुल्हाड़ा, और सुन्दर धनुषबाण धारणकर ॥ ३ ॥ देवता "पकड़ो २ मारो २" ऐसा कहते हैं पर योद्धा लड़ते नहीं, चकित हो रहते हैं ॥ ४ ॥

निश्चर प्रबल भये रघुनाथा ❀ केतिक धीर मलैं निजहाथा ॥ ५ ॥
सैन्य विकल लखि नारद आये ❀ समाचार सब कह समुझाये ॥ ६ ॥

जब शत्रुघ्नजीसे राक्षस प्रबल हुये तौ कितनेही धीरजवान योद्धा अपने हाथ मलने लगे ॥ ५ ॥ सेनाको दुखी देखकर नारदजी आये और सब समाचार कहके समझा दिये ॥ ६ ॥

रिपुसूदन प्रभुविशिष सँभारी ❀ जोर धनुष सुमिरे त्रिपुरारी ॥ ७ ॥
जिमि तम अँचै तरणि गो सोई ❀ समर अमर नहिं दीसै कोई ॥ ८ ॥

शत्रुघ्नने भगवान्‌का बाण सम्हाल धनुषमें जोड़ महादेवका स्मरण किया ॥ ७ ॥ जैसे सूर्यके पास गये हुये अंधकारको सूर्य पी लेता है इसी भांति लड़ाईमें कोई देवता नहीं दिखाई देने लगा ॥ ८ ॥

दो०-मंत्र प्रेरि चल कोटि शर, रहे जहँ तहँ नभ छाय ॥
मनहुँ बलाहक प्रवल बहु, मारुत देखि विलाय ॥ ३७ ॥

मंत्रोंके भेजे हुये करोड़ों बाण चले, सो जहां तहां आकाशमें ऐसे छागये मानों बहुतसे प्रवल मेघ पवनको देखके छुप जाते हैं ॥ ३७ ॥

चौ०-सुरसमाज कितहूँ नहिं देखा ❀ चलेहु सुबाहु केतु जनु वेषा ॥ १ ॥
खल सम्हारु गहु शूल सुरारी ❀ अस कहि गदा कोप उर मारी ॥ २ ॥

देवताओंका समूह ऐसे कहीं नहीं दिखाई देता, मानों वे बाण सुबाहु और केतुके वेषमें चले थे ॥ १ ॥ शत्रुघ्न बोले अरे दुष्ट देवताओंके शत्रु ! त्रिशूलको सम्हालकर धारण कर ऐसा कहकर क्रोधित हो उसके हृदयमें गदा मारी ॥ २ ॥

सहि न सका सोइ तेज अपारा ❀ मूर्च्छित अवनि परा विकरारा ॥ ३ ॥
निजपति विकल देखि भट भारी ❀ धाये बहु कर शस्त्र सँभारी ॥ ४ ॥

वह उसके अपार तेजको न सहसका और व्याकुलतासे मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिरपड़ा ॥ ३ ॥ बहुतसे योद्धा अपने स्वामीको व्याकुल देख हाथमें बहुतसे हथियार लेकर दौड़े ॥ ४ ॥

कैटभ नाम वीर बलवाना ❀ मूर्च्छित लवणासुर मनजाना ॥ ५ ॥
तीन सहस्र लिये रण गाढ़े ❀ आइ सुबाहु सामुहे ठाढ़े ॥ ६ ॥

कैटभनाम वलवान् योद्धाने मनमें लवणासुरको मूर्च्छित जानकर ॥ ५ ॥ तीन हजार लड़ाईमें गाढ़े योद्धा लिये और वे जाकर सुबाहुके सामने खड़े हुए ॥ ६ ॥

कटुक बचन कहि छाँड़ेसि बाना ❀ तिन काटे सुबाहु बलवाना ॥ ७ ॥
तब खिसियान शूल ले धावा ❀ यूपकेतुके सन्मुख आवा ॥ ८ ॥

और कठोर वचन कहकर बाण छोड़ने लगे. तिनको वली सुबाहुने काटडाला ॥ ७ ॥ तब खिसियावा और त्रिशूल लेकर दौड़ता हुआ यूपकेतुके सामने आया ॥ ८ ॥

सो०-मारेसि हृदय सँभारि, गिरे जपत करुणायतन ॥
मूर्च्छित बेर पुकारि, रामचन्द्र दिनमणितिलक ॥ ३ ॥

और बाण सम्हालकर उनकी छातीमें मारा तौ वह मूर्च्छित होकर गिरपड़े और करुणाके स्थान सूर्यवंशके तिलक रामचन्द्रजीको पुकार कर जपने लगे ॥ ३ ॥

चौ०-मूर्च्छित बंधु सुबाहु विलोकी ❀ भै रिस अमित रहै नहिं रोकी ॥ १ ॥
कठिन बाण कर क्रोध अपारा ❀ छाँड़ेउ तीनि सहस इक बारा ॥ २ ॥

सुबाहु अपने भाईको मूर्च्छित देखकर बहुत क्रोधित हुआ रोकनेसे नहीं रुकता ॥ १ ॥ बहुत क्रोध करके तीनहजार बाण एकही साथ छोड़े ॥ २ ॥

ताहि बिकल करि अनुजसमीपा ❀ आतुर आये निजकुलदीपा ॥ ३ ॥
लागो बाण तासु उरमाहीं ❀ पऱ्यो अवनितल सुधि कछु नाहीं ॥ ४ ॥

और उसे व्याकुल कर अपने कुलके दीपक छोटे भाईके पास शीघ्र आये ॥ ३ ॥ उसके हृदयमें ऐसा बाण लगा कि पृथ्वीपर पड़ाथा, शरीरकी कुछ सुध नहीं रही ॥ ४ ॥

खैंच शूल उर बाहर कीन्हा ❀ रामनाम वर ओषधि दीन्हा ॥ ५ ॥
उठि शुचि अंग अनुजके संगा ❀ लीन्ह बिहँसि धनुबाण निषंगा ॥ ६ ॥

बाण खैंचकर शरीरके बाहर किया और रामनामकी श्रेष्ठ ओषधि दी ॥ ५ ॥ रामका नाम सुनतेही सुन्दर अंग होगया, उसने उठकर भाईके साथ हँसकर धनुषबाण और तरकस लिया ॥ ६ ॥

आय समरमहि सुभट प्रचारा ❀ बाणते विपुल देवअरि मारा ॥ ७ ॥
मूर्च्छा गत कैटभ बलवाना ❀ रथ चढ़ाय तिहिं तुरत सिधाना ॥ ८ ॥

लड़ाईमें आकर योद्धाओंको ललकारा और बाणोंसे देवताओंके वैरीको मारा ॥ ७ ॥ बलवान् कैटभको मूर्च्छित देख (लवणासुर) उसे रथपर चढ़ाकर तुरंत लेगया ॥ ८ ॥

दो०-कर उपाय रथ राखि तेहि, पठै भवन रणधीर ॥ ❀
आय समर गर्जत भयो, संग महाबलवीर ॥ ३८ ॥ ❀

उपाय करके उस योद्धाको तौ रथमें रखकर घर भेज दिया और साथमें बड़े बलवान् योद्धाओंको ले आकर लड़ाईमें गर्जने लगा ॥ ३८ ॥

चौ०-जागा कैटभ पुनि घर जाई ❀ आयो कुमक संग निज भाई ॥ १ ॥
शूरवीर जेहि काल सकाई ❀ हारेउ समर सुनहु खगराई ॥ २ ॥

घर जाकर कैटभ मूर्च्छासे जगा और अपने भाई कुमकको साथ लेकर आया ॥ १ ॥ वह वीर ऐसा योद्धा था जिससे कालभी डरताथा. सो हे गरुड़ ! सुनो वहभी इस लड़ाईमें हार गया ॥ २ ॥

नायउ माथ आनि कर जोरी ❀ तात समर रुचि पूजेउ मोरी ॥ ३ ॥
रावणरिपु लघु भ्राता जानू ❀ तनय तासु बलरूपनिधानू ॥ ४ ॥

तौ उसने आकर हाथ जोड़कर (लवणासुरको) माथा नवाया कि हे प्यारे ! लड़ाईमें मेरी इच्छा पूरी हुई ॥ ३ ॥ रावणके वैरी (रामचन्द्रजी)के छोटे भाई और उनके पुत्र बल और रूपके समुद्र हैं ॥४॥

कोटिन शूर समर हम मोरे ❀ बालक नृपति निरखि हिय हारे ॥ ५ ॥
रिपुगुण सुनि करि उर अतिदापू ❀ कह्यो करहु जनि हृदय बिलापू ॥ ६ ॥
रवितनयामहि सैन्यहि डारूँ ❀ तनय अनुज समेत रिपु मारूँ ॥ ७ ॥

करोड़ों योद्धा हमने लड़ाईमें मारे हैं, परन्तु उन राजपुत्रोंको देखकर हम हृदयमें हारते हैं ॥ ५ ॥ वैरीके गुन सुनकर और हृदयमें अति घमंडकर बोला कि तुम अपने हृदयमें विलाप मत करो ॥ ६ ॥ मैं सेनाको यमुनाजीमें डालकर पुत्र और भाईसहित वैरीको मारूंगा ॥ ७ ॥

छं०-रिपु अनुज मारूं सैन यमुनहि डार नृप शिर नायऊ । ❀
तज सोच सैन सँभार चल भट वेगि जो अरि पायऊ ॥ ❀
दोउ मत्त गर्व विशाल निशिचर आय रण गर्जत भये । ❀
इत यूपकेतु सुबाहु शर धनु हाथ लै आतुर गये ॥ १५ ॥ ❀
भट भिरे निज निज जयति कह निज जान जोरी समरकी । ❀
शिर कटत खंडन चरण योगिनि खात बालक बालकी ॥ ❀
हठि गीध जंबुक काक शोणित पिवहिं अति सुख पावहीं । ❀
बहु दान देहिं अनेक मनमहँ बिहँसि मंगल गावहीं ॥ १६ ॥ ❀

वैरीको भाईसहित मार उसकी सेनाको यमुनामें बहाकर राजाको शिर नवाऊंगा. सोचको छोड़कर सेनाको सम्हालके योद्धा चला, और शीघ्रतासे बैरियोंके पास पहुँचा. दोनों मतवाले बड़े अभिमानी योद्धा राक्षस आकर लड़ाईमें गर्जने लगे. इधरसे यूपकेतु और सुबाहु हाथमें धनुषबाण लेकर शीघ्रतासे गये ॥ १५ ॥ योद्धा (लोग) अपनी २ जय २ कहकर और लड़ाईमें अपने २ जोड़ जान कर लड़े, माथे और पैर टुकड़े २ होकर कटते हैं जिन्हें योगिनियोंके बाल बच्चे खाते

हैं और गिद्ध गीदड़ और कौए हठ करके रुधिर पीतेहुये बहुत सुख पाते हैं और बहुतसे दान देते और मनमें हँसकर मंगलाचार गाते हैं ॥ १६ ॥

दो०-भिरे शूर सहरोष अति, फिरे आकरे कूर ॥
लागे लोहे रुप रहे, समर धीर वर शूर ॥ ३९ ॥

लड़ाईमें बहुत क्रोध करके शूर तौ लड़े और काहिल कौटने लगे. लोहा बजने लगा और जो लड़ाईमें धीर और सुन्दर शूरवीर थे वे रुप गये ॥ ३९ ॥

चौ०-कहहिं शूर किमि होन न ठाढ़े ❀ फिरे लजाय क्रोध कर गाढ़े ॥ १ ॥
भिरे प्रचार सुभटसमुदाई ❀ भयो युद्ध तेहि वरणि न जाई ॥ २ ॥

जब योद्धाओंने कहा कि तुम क्यों नहीं लड़नेको खड़े होते हो ? तब वे लज्जित हो बहुत क्रोध करके लौटे ॥ १ ॥ योद्धाओंके समूह ललकार कर भिड़े (उस समय) जो युद्ध हुआ उसका वर्णन नहीं किया जाता ॥ २ ॥

वर्षहिं समर शूर शर कैसे ❀ प्राविटसमय जलद जल जैसे ॥ ३ ॥
हय पग उठे धूर नभ छाई ❀ भयो प्रदोष सुनहु खगराई ॥ ४ ॥

योद्धा लड़ाईमें कैसे बाण वर्षाते हैं जैसे वर्षाकालमें बादलोंसे जल बरसता है ॥ ३ ॥ हे गरुड़! सुनो, घोड़ोंकी टापोंसे उठीहुई धूलके छाजानेसे आकाशमें संध्या होगई ॥ ४ ॥

समर देख रिपु प्रबल प्रभाये ❀ प्रभुसमीप सादर सुत आये ॥ ५ ॥
देख तनयबल विपुल विशाला ❀ रिपुहन हर्ष मनुज सुर व्याला ॥ ६ ॥

लड़ाईमें वैरियोंका प्रबल प्रभाव देखकर पुत्र प्रभुके पास आदरसहित आये ॥ ५ ॥ पुत्रोंका बहुत बड़ा बल देख कर शत्रुघ्न और देवता तथा सर्पोंको आनन्द हुआ ॥ ६ ॥

यातुधान बल बुद्धि गँवाई ❀ निजपुर गये राज यश पाई ॥ ७ ॥
निशि निशिचर सब बात बिचारी ❀ होत प्रात पुनि लाग गुहारी ॥ ८ ॥

राक्षस बल और बुद्धिको खोकर अपने नगरको गये और महाराजने यश पाया ॥ ७ ॥ राक्षस रातमें सब बात समझ सवेरा होतेही फिर लड़ने लगे ॥ ८ ॥

दो०-साजि वाजि गज वाहनहिं, गहगह हने निशान ॥
आयो समर सकोप अति लवणासुर बलवान ॥ ४० ॥

बलवान् लवणासुर हाथी, घोड़े और सवारियोंको सजाकर घने बाजे बजाय अत्यंत क्रोधित होकर फिर लड़ाईमें आया ॥ ४० ॥

चौ०-शिवहिं सुमिर लै शूल विशाला ❀ रिपुबल पुर्‌यो मनहुँ यमकाला ॥ १ ॥
क्षणकमाहिं मोरे बहु योधा ❀ चलो सकोप मनुज करि क्रोधा ॥ २ ॥

महादेवका स्मरणकर बड़ा त्रिशूल लेकर वैरियोंपर बलसमेत ऐसा दौड़ा मानों साक्षात् कालरूप यमराज है ॥ १ ॥ क्षणभरमें बहुतसे योद्धा मार डाले फिर मनुष्योंपर क्रोध करके चला ॥ २ ॥

आवत शूल हन्यो प्रभु छाती ❀ गिरे घूर्मि अवनी रिपुघाती ॥ ३ ॥
मूर्च्छित देखि खड्ग लै धावा ❀ निरखि सुबाहु क्रोध उर छावा ॥ ४ ॥

और आतेही भगवान्की छातीमें त्रिशूल मारा सो शत्रुघ्न घूमकर पृथ्वीपर गिरपड़े ॥ ३ ॥ उन्हें मूर्च्छित देखी (लवणासुर) तलवार लेकर दौड़ा. यह देखकर सुबाहुके हृदयमें क्रोध छागया ॥ ४ ॥

बिहँसि महाबल रिपुदल गंजा ॥ ५ ॥
प्रबल गदा रथ सारथि भंजा ❀ मूर्च्छित पर्‌यो अवनि सुधि नाहीं ॥ ६ ॥
रथविहीन व्याकुल मनमाहीं ❀

तौ बड़ी गदासे रथ तोड़कर उसका सारथी मारडाला और महाबली उस वैरीकी सेनाका नाशकरके हँसा॥५॥विना रथके (लवणासुर) मनमें दुखी हो मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिरपड़ा सुध नहीं रही॥६॥

पुनि उठि गर्जि सकोप सुरारी ❀ अस्त्र सँभारि क्रोध करि भारी ॥ ७ ॥
उठे शत्रुहन मन अनुमाने ❀ सादर सब हियते सनमाने ॥ ८ ॥
बिस्मित विकल देख सब जाने ❀ रामबाण अति सादर आने ॥ ९ ॥

फिर देवताओंका वैरी (लवणासुर) उठा और गर्जता हुआ बड़ा भारी क्रोध कर हथियार सम्हालके चला ॥ ७ ॥ शत्रुघ्न मनमें बिचारकर उठे तौ सबने हृदयसे आदर सत्कार किया ॥८॥ इधर शत्रुघ्नजीने सबको दुखी और व्याकुल जानकर बड़े आदरसहित रामचन्द्रजीके दिये हुये बाण लिये ॥ ९ ॥

दो०–सुमिरि अवधपतिचरणयुग, छांडे युग नाराच ॥ ❀
पर्‌यो अवनि तनु भिन्न ह्वये, व्याकुल बिकट पिशाच ॥ ४१ ॥ ❀

और रामचन्द्रजीके दोनों चरणोंका स्मरण कर दो बाण ऐसे छोड़े जिनसे भयंकर राक्षस व्याकुल होकर और शरीरसे खंड २ होकर गिरपड़ा ॥ ४१ ॥

चौ०–तासु मरण सुनि सब सुरयूथा ❀ चढ़ि विमान नभ सकल वरूथा ॥ १ ॥
बाजहिं दुंदुभि वर्षहिं फूला ❀ आज नाथ बीते सब शूला ॥ २ ॥

उसका मरना सुनकर सब देवताओंके बहुतसे समूह आकाशमें विमानोंपर चढ़कर ॥१॥ नगाड़े बजा २ कर फूल वर्षाने लगे और कहने लगे कि हे स्वामी ! आज सब दुःख दूर होगये ॥ २ ॥

जय जय धुनि सब देव सुकरहीं ❀ वेदमंत्र पढ़ि आशिष वरहीं ॥ ३ ॥
यातुधानपति दीन विलोकी ❀ कैटभ पुनि रिस सक्यो न रोकी ॥ ४ ॥

सब देवता सुन्दर जय २ धुनि करते हैं और वेदके मंत्र पढ़ २ कर आशीर्वाद देते हैं ॥ ३ ॥ (लवणासुरको) दीन देखकर कैटभ क्रोधको नहीं रोकसका ॥ ४ ॥

करि किलकार गर्जि अतिघोरा ❀ शिला एक लै आयहु जोरा ॥ ५ ॥
शर शत शैल सुबाहु प्रचारी ❀ काटी दुष्ट भुजा महि डारी ॥ ६ ॥

उसने किलकिला कर बड़ी घोर गर्जना करी और जोरसे एक शिला लेकर आया ॥ ५ ॥ सुबाहुने प्रचार कर सौ बाणोंसे उस दुष्टकी भुजा काटकर पृथ्वीपर डालदी ॥ ६ ॥

वदन पसारि ताहि तक धावा ❀ देव सुबाहु प्रबलपहँ आवा ॥ ७ ॥
खैंचि धनुष्य पुनि श्रवणप्रयंता ❀ छोड़्यो बाण सुबाहु तुरंता ॥ ८ ॥

फिर वह उसे देखकर मुँह फैलाकर दौड़ा और प्रबल सुबाहुके ऊपर आया ॥ ७ ॥ फिर तौ सुबाहुने कानतक धनुष तानकर एक बाण छोड़ा ॥ ८ ॥

काटि शीश तिहिं भूमि गिरावा ❀ सुनासीर आतुर चलि आवा ॥ ९ ॥
जोरि युगल कर अति अनुरागे ❀ बोले वचन प्रेमरसपागे ॥ १० ॥

और जब उसका माथा काटकर पृथ्वीपर गिरादिया तौ इन्द्र शीघ्रही चला आया ॥ ९ ॥ और दोनो हाथ जोड़कर बड़े प्रेमसे स्नेहके रसमें सनेहुये वचन बोला कि ॥ १० ॥

हमहिं सहित सुर कीन्ह सनाथा ❀ अस्तुति योग नाहिं हम ताता ॥ ११ ॥
अस्तुति विनय शक्र पुनि कीन्ही ❀ बार बार बहु आशिष दीन्ही ॥ १२ ॥

हे प्यारे! तुमने हमें और सब देवताओंको सनाथ किया, हम तुम्हारी स्तुति करनेके योग्य नहीं (यहकह कर) ॥ ११ ॥ फिर इन्द्रने स्तुति और प्रार्थना की और बार २ बहुतसे आशीर्वाद दिये ॥१२॥

दो०-देवनसहित सु देवगुरु, आये जहँ मखधाम ॥ ❀
समाचार सादर सकल, कहे सबनके नाम ॥ ४२ ॥ ❀

देवताओंसमेत बृहस्पति यज्ञके स्थानमें आये और आदरसहित सब समाचार तथा सबके नाम कहे ॥ ४२ ॥

चौ०-तहँ युग नगररचे अतिरूरे ❀ राखे तनय युगल बलपूरे ॥ १ ॥
मथुरा नाम जगत यश जाना ❀ दूसर विश्व जो वेद बखाना ॥ २ ॥

यहां दो सुन्दर नगर रचे जिनमें पूरे बलवान् दोनों पुत्र रक्खे ॥ १ ॥ एक नगरका मथुरा नाम है जिसके यशको संसार जानता है. दूसरा विश्व जो वेदोंने वर्णन किया है ॥ २ ॥

ज्येष्ठ तनय बलबुद्धिविशाला ❀ नाम सुबाहु विदित महिपाला ॥ ३ ॥
राखेउ यमुनातट बलभूरी ❀ विश्व नगर पश्चिम दिशि दूरी ॥ ४ ॥

बड़ा पुत्र जो बल और बुद्धिमें तीव्र था उसे मथुराका राज्य दिया ॥ ३ ॥ और बहुत बलवान् यूपकेतुको विश्वनगरका राज्य दिया जो यमुनातटपर है ॥ ४ ॥

यूपकेतु पुनि साथ रखावा ❀ राजनीति दोउ सुत समुझावा ॥ ५ ॥
सौंपि नगर बहु आशिष दीनी ❀ नृपमणि गवन विजयकहँ कीनी ॥ ६ ॥

फिर यूपकेतुको साथ रक्खा और दोनों पुत्रोंको राजनीति समुझाई ॥ ५ ॥ (दोनों पुत्रोंको) नगर सौंपकर बहुतसा आशीर्वाद दिया और शत्रुघ्नजीने जीतके लिये गमन किया ॥ ६ ॥

चिरंजीव करि हन्यो निशाना ❀ दक्षिण अश्व चला जग जाना ॥ ७ ॥
सचिवसमेत राखि सुत संगा ❀ उतरे सब जल यमुनतरंगा ॥ ८ ॥

चिरंजीव कहकर बाजे बजाये सो दक्षिण दिशाको घोड़ा चला कि जिसे संसार जानता है ॥ ७ ॥ मंत्रीसहित पुत्रोंको छोड़कर सब यमुनाजलकी लहरोंके पार हुये ॥ ८ ॥

दो०-रवितनयाकहँ वंदिकै, चली अनी हयसंग ॥ ❀
हर्षित शूरसमूह अति, देखि सैन्य चतुरंग ॥ ४३ ॥ ❀

यमुनाजीके चरणोंको दंडवतकर घोड़ेके साथमें सेना चली, योद्धाओंके समूह चतुरंगिनी सेना देखकर बहुत प्रसन्न चले जाते हैं ॥ ४३ ॥

चौ०-वालमीकीथल सैन्यसमेता ❀ कानन घन गे कृपानिकेता ॥ १ ॥
सियसुत युगल वीर बरबंडा ❀ भुजबल अमित दिनेश प्रचंडा ॥ २ ॥

और कृपानिधान सेनासहित वाल्मीकिके स्थानमें जो घने बनमें था पहुँचे ॥ १ ॥ जहाँ सीताजीके दोनों बलवान् पुत्र थे, जिनकी भुजाओंका अपार बल सूर्यके समान प्रचंड था ॥ २ ॥

वीरबली हय देख्यो आई ❀ पत्र बँध्यो शिर बाँच्यो ताई ॥ ३ ॥
घोड़ा तिन तुरंत तरु बाँध्यो ❀ नेकु विचार न उरमें साध्यो ॥ ४ ॥

उन बलवान् वीरोंने आकर घोड़ेको देखा और उसके शिरमें जो पत्र लिखा था उसे बाँचा ॥ ३ ॥ और उन्होंने तुरंत घोड़ेको एक पेड़से बाँध दिया. मनमें जराभी बिचार नहीं किया ॥४॥

कटि कसि त्रोण हाथ धनु तीरा ❀ समरहेतु उमगे बलबीरा ॥ ५ ॥
शूर सहस्र साठि हय साथा ❀ आयगये जहँ रघुकुलनाथा ॥ ६ ॥

और कमरमें तरकस बांध हाथमें धनुषबाण लेकर बली योद्धा लड़ाईके लिये तयार होगये ॥५॥ साठ हजार योद्धा जो घोड़ेके साथ थे वेभी रघुकुलनाथकुमारोंके पास आगये ॥ ६ ॥

तहँ तरु बाँध्यो बाजि विलोकी ❀ बालक जानि सकल रिस रोकी ॥ ७ ॥
देहु तुरग घर जाहु सुहाये ❀ धन्य मातु पितु जिन तुम जाये ॥ ८ ॥
माँगहु भीख समर चढ़ि भाई ❀ क्षत्रियकुलहि कलंक लगाई ॥ ९ ॥

और वहां वृक्षसे घोड़ेको बँधा हुआ देख और योद्धाओंको बालक जानकर सबोंने क्रोध रोका ॥ ७ ॥ (और कहा कि) घोड़ा देकर अच्छी भांति घर जाओ. उन मातापिताओंको धन्य है जिन्होंने तुमको उत्पन्न किया है ॥ ८ ॥ (तब कुमार बोले) हे भाइयो! लड़ाईमें चढ़कर भीख मांगते हो! यह क्षत्रियोंके कुलको कलंक लगाते हो ॥ ९ ॥

छं०-जनि क्षत्रिकुलहिं कलंक लावहु समरशूर सुहावने। ❀
बलहीन तुरँग प्रबीन छांड्यो धरा विनु भट जानने ॥ ❀
सुनि वचन कटुक कठोर बालक जानि भट धावत भये। ❀
शर तानि एकहिं बार लव हँसि हने तनु जर्जर भये ॥१७॥ ❀

तुम लड़ाईमें सुन्दर योद्धा हो, क्षत्रियोंके कुलको कलंक मत लगाओ. और तुमने जो विना ही बलके घोड़ा छोड़ दिया सो क्या पृथ्वी योद्धाओंसे रहित जानी थी? ऐसे कडुये और कठोर वचन सुनतेही योद्धा उन्हैं बालक जानकर दौड़े तब लवने हँसकर एकही वारमें तान २ कर ऐसे बाण मारे कि सबके शरीर जर्जर होगये ॥ १७ ॥

महि परे पुनि कछु भिरे योधा जाय रिपुहनसो कहा। ❀
मुनिबाल हति संग्राम सैन्यहिं बाजि लै रणमहँ रहा ॥ ❀
सुनि कोप करि अति शत्रुहन तब सैन्य लै धावत भयो। ❀
रणमाहिं गाजत वीर बाँके कोप लखि लज्जित भयो ॥१८॥ ❀

कुछ योद्धा तौ पृथ्वीपर गिरपड़े, कुछ फिर लड़ने लगे और जाकर शत्रुघ्नसे कहा कि मुनीश्वरके बालकने लड़ाईमें सेना मारी और घोड़ेको लिये लड़ाईमें डटा हुआ है. यह सुनकर शत्रुघ्न बहुत क्रोध करके सेना लेकर दौड़े पर बांके योद्धा जो लड़ाईमें गर्जते हैं उनके क्रोधको देखकर लज्जित होगये और कहने लगे कि ॥ १८ ॥

सो०-सुन मुनिबालमराल, देहु अश्व तजि कोप निज। ❀
पूजि तुमहिं तेहि काल, करिहहिं जन्म सफल प्रभु ॥ ४ ॥ ❀

हे मुनीश्वरोंके हंससमान बालको! अपना क्रोध छोड़कर घोड़ेको दो. उस समय तुम्हाराभी पूजन करके भगवान् अपना जन्म सफल करैंगे. (यह सुन बासक बोले कि) ॥ ४ ॥

चौ०-कौन नाम नृप किहि पुरबासी ❀ फिरहु विपिन सँग सैन्य प्रकासी ॥ १ ॥
छाँड़ेउ वाजि हेतु किहि लागी ❀ लिख्यो पत्र बाँध्यो भय त्यागी ॥ २ ॥

हे राजा! तुम्हारा क्या नाम है? किस नगरके रहनेवाले हो? जो जंगलमें सेनाको साथ लिये प्रकाश करते फिरते हो ॥ १ ॥ घोड़ा किस कारण छोड़ा है? और निंडर होकर पत्र लिखकर क्यों बांधा है? ॥ २ ॥

नहिं तव तनु बल पौरुष भाई ❀ छोड़हु पत्र वाजि गृह जाई ॥ ३ ॥
सुनि रिपुहन कटु गिरा लजाने ❀ गहहु अस्त्र अस कहि मुसकाने ॥ ४ ॥

हे भाइयो! जो तुम्हारे शरीरमें बल पराक्रम नहीं है तौ पत्र और घोड़ेको छोड़कर घरजाओ ॥ ३ ॥ शत्रुघ्न कडुये वचन सुनकर लज्जित होगये और मुसकराकर बोले कि हथियार हाथमें लो ॥ ४ ॥

हमहिं प्रचारत नृप बल भारी ❀ डरपहिं सिंह बाजते तारी ॥ ५ ॥
अस कहि धनुषबाण कर लीना ❀ मुनिवर विनय चरण शिर दीना ॥ ६ ॥

आप बड़े बली राजा हैं जो ललकारते हैं, सो भला कहीं तालीके बजानेसे सिंहभी डरते हैं?॥५॥ ऐसा कहकर हाथमें धनुषबाण लिया और श्रेष्ठ मुनीश्वरके चरणोंको शिर नवाकर प्रार्थना की ॥ ६ ॥

मरेसि रथ सारथी तुरंगा ❀ कोटिन बाण हने सब अंगा ॥ ७ ॥
करि मूर्च्छित नृपकटक सँहारा ❀ खाहिं मांस अति गीध करारा ॥ ८ ॥

रथ, घोड़े और सारथीको मारा और सब शरीरमें करोडों बाण मारे ॥ ७ ॥ राजाको मूर्च्छित करके राजाकी सेनाका नाश कर दिया बड़े २ कठिन गिद्ध मांस खाने लगे ॥ ८ ॥

दो०-एकहि एक प्रचार कर, हने सकल रण शूर ॥ ❀
आये तव रघुबीरपहँ, कायर करनी धूर ॥ ४४ ॥ ❀

एक २ को ललकारकर सब योद्धा लड़ाईमें मारे तब काहिल अपनी करनीको धूल करके रामचन्द्रजीके पास आये ॥ ४४ ॥

चौ०-पूछेहु सकल भानुकुलनाथा ❀ रिपुके सबन कहे गुणगाथा ॥ १ ॥
मुनिबालक दोउ कटक सँहारा ❀ रिपुहन आदि समरमहँ डारा ॥ २ ॥

रघुनाथजीने सम्पूर्ण कथा पूछी तौ सबने वैरीके गुणानुवाद कहे कि ॥ १ ॥ मुनिके बालकोंने सब सेना मारडाली और शत्रुघ्न आदिकों लड़ाईमें गिर दिया ॥ २ ॥

रिपु बालक सुनि विकल खरारी ❀ विकल होय पुनि कहेउ पुकारी ॥ ३ ॥
लक्ष्मण संग जाउ दोउ भाई ❀ मुनिबालक बाँध्यो बरियाई ॥ ४ ॥

शत्रुओंको बालक सुनकर भगवान् व्याकुल हुये फिर व्याकुल होकर पुकारके कहा ॥ ३ ॥ हे लक्ष्मण! तुम दोनों भाई साथ जाओ. और मुनिके बालकोंको जोरावरी बांध लो ॥ ४ ॥

मारहु जनि आनहु पुरमाहीं ❀ ऋषिसुतबधन उचित नहिं काहीं ॥५॥
चल्यो शेष संग सैन्य अपारा ❀ आयउ तुरत समर जेहि मारा ॥ ६ ॥

मारना मत, परन्तु नगरमें लेआओ. (क्योंकि) ऋषिके पुत्रोंको मारना योग्य नहीं ॥ ५ ॥ लक्ष्मण अपार सेनाको साथ लेकर चले और शीघ्रही रणभूमिमें आगये ॥ ६ ॥

लै घर जीव जाहु मुनिबालक ❀ जिनकरवंश देवद्विजपालक ॥ ७ ॥
आँखिनओट होहु अब ताता ❀ लखि अति कोप बढ़त मम गाता ॥८॥

और बोले हे मुनिके बालको! तुम अपना जीव लेकर घरको जाओ. क्योंकि सूर्यवंश देवता और ब्राह्मणोंका पालन करनेवाला है ॥ ७ ॥ हे प्यारे! अब आंखोंकी ओटमें होजाओ. क्योंकि देखकर मेरे शरीरमें बड़ा क्रोध उमगता है ॥ ८ ॥

दो०-सुनि लक्ष्मणके बचन तव, विहँसे बालक बीर ॥ ❀
अनुज विलोकहु जाय अब, प्रबल महारणधीर ॥ ४५ ॥ ❀

तब लक्ष्मणके वचन सुनकर योद्धा बालक हँसे और कहा कि हे प्रबल रणधीर! पहिले भाईको तौ जाकर देखो ॥ ४५ ॥

चौ०-अनुज विलोकि बचन सुनि काना ❀ धनुष चढ़ाय गहे कर बाना ॥ १ ॥
वेष विलोकि बाल मुनि जाना ❀ निजकुल समुझि करौं मन काना ॥ २ ॥

भाईका देखना कानोंसे सुनतेही धनुष चढ़ाकर हाथमें बाण लिये ॥ १ ॥ परन्तु वेष देखकर

मुनिके वालक जान कहा कि, अपने कुलको समझकर मनमें हिचकताहूं; अर्थात् मेरे कुलमें ब्राह्मणोंको नहीं मारते हैं ॥ २ ॥

निजसहाय शठ आन बुलाई ❀ केवल तोहिं हते न भलाई ॥ ३ ॥
सुनि कुश कठिन बाण संधाने ❀ कांपी पुहुमि शेष अकुलाने ॥ ४ ॥

अरे मूर्खो ! अपने हिमायतीको बुलालाओ क्योंकि अकेले तुम्हारेही मारनेसे अच्छा नहीं ॥३॥ कुशने सुनकर कठिन बाण संधान किये तौ पृथ्वी कंपायमान हुई और शेषजी अकुलाये ॥ ४ ॥

छूटे विशिष रहे नभ छाई ❀ बाण भानुप्रतिबिंब छिपाई ॥ ५ ॥
रिपुहिं प्रबल लखि चला सकोपी ❀ डरा न मनहिं रहा रथ रोपी ॥ ६ ॥

बाण जो छूटे सो आकाशमें ऐसे छागये कि बाणोंसे सूर्यका प्रतिबिंबभी छिपगया ॥ ५ ॥ और वैरीको महाबली देखकर क्रोध करके चला, मन डरा नहीं; रथको रोपकर खड़ाही रहा ॥ ६ ॥

काटे विशिष विशिषसन भाई ❀ कौतुक करहिं विविध खगराई ॥ ७ ॥
झपटि गदा लक्ष्मण तब झारी ❀ गिऱ्यो भूमि कुश मूर्च्छित भारी ॥ ८ ॥

हे गरुड़ ! बाणसे बाण काटडाले और हे भाई ! वे अनेक कौतुक करने लगे ॥ ७ ॥ तब लक्ष्मणने झपटकर गदा मारी तौ कुश बहुत मूर्च्छित होकर गिर पड़ा ॥ ८ ॥

दो०-मूर्च्छित कुशहिं निहारि करि, धाये लव करि शोर ॥ ❀
आवतही शर उर हन्यो, गिऱ्यो न महि बल जोर ॥ ४६ ॥ ❀

कुशको मूर्च्छित देखकर लव बड़ा हल्ला करके दौड़ा और आतेही (लक्ष्मणजीके) हृदयमें बाण मारा पर वे अपने बलके जोरसे पृथ्वीपर न गिरे ॥ ४६ ॥

चौ०-मल्लयुद्ध दोउ भिरे प्रचारी ❀ लरहि सुखेन न मानत हारी ॥ १ ॥
भिरहिं उपाय विपुल बलकरहीं ❀ गिरतहिं धरणि बहुरि उठि लरहीं ॥ २ ॥

दोनो मल्लयुद्ध करके और ललकारकर लड़ने लगे. सुखपूर्वक लड़ते हैं, हार नहीं मानते ॥ १ ॥ बहुतसे उपाय और बल करके लढते हैं और पृथ्वीपर गिरतेही फिर उठकर लड़ने लगते हैं ॥ २ ॥

विकल सैन्य सब मानु सँहारी ❀ सुमिरि कौशलाधीश खरारी ॥ ३ ॥
मारेउ बाण लवहिं क्षिति डारा ❀ मूर्च्छित होय गिऱ्यो विकरारा ॥ ४ ॥

सब सेनाको व्याकुल देखकर और मरीहुई जानकर अयोध्याधिपति खरारी रामजीका स्मरण किया ॥३॥ और लवको बाण मारकर पृथ्वीपर डाल दिया, सो वह मूर्च्छित और विकल होकर गिरपड़ा ॥४॥

सुमिरि सिय मुनिचरण सुहाये ❀ गतमूर्च्छा कुश आतुर आये ॥ ५ ॥
विकल विलोकि बंधु लघु जानी ❀ चल्यो वीर मन बहुत गलानी ॥ ६ ॥

सीताजी और मुनीश्वरके चरणोंका स्मरण करनेसे ज्योंही कुशकी मूर्च्छा जाती रही त्योंही शीघ्रतासे आया ॥५॥ और छोटे भाईको व्याकुल हुआ देखकर योद्धा मनमें बड़ी ग्लानि मानकर चला ॥६॥

लक्ष्मण देखि बीरवर धाये ❀ धनुष बाण धरि आगे आये ॥ ७ ॥
शक्रजीत अरि जे शर मारेउ ❀ ते सब बालक काटि निवारेउ ॥ ८ ॥

लक्ष्मणने देखा कि श्रेष्ठ योद्धा आया तौ धनुष बाणको लेकर आगे आये ॥ ७ ॥ लक्ष्मणजीने जो बाण मारे वे सब बालकोंने काटकर अलग कर दिये ॥ ८ ॥

दो०-रामानुज विस्मित विकल, देख सबल आराति ॥ ❀
सीय त्याग उर शोच बड़, प्राणदेन वर भाति ॥ ४७ ॥ ❀

बलवान् शत्रुओंको देखकर लक्ष्मण दुखी और व्याकुल हुये और हृदयमें सीताजीके त्यागनेका बड़ शोच हुआ और प्राण छोड़नेनाहीं अच्छा लगा ॥ ४७ ॥

चौ०–कुश करि क्रोध विशिख सो लीने ❀ मंत्र प्रेरि मुनिवर जो दीने ॥ १ ॥
नाक रसातल भूतलमाहीं ❀ यह शर छुटे बचै कोउ नाहीं ॥ २ ॥

फिर कुशने क्रोध करके वह बाण लिया जो श्रेष्ठ मुनिने मंत्रित करके दियाथा (और कह दिया था कि) ॥ १ ॥ स्वर्ग, पाताल और मृत्युलोकमें इस बाणके छूटनेसे कोई नहीं बचेगा ॥ २ ॥

मोहन अस्त्र नाम तेहि जानो ❀ विष्णु महेश ब्रह्म जेहि मानो ॥ ३ ॥
मारेसि ताकि शेष उरमाहीं ❀ परे धरणितल सुधि कछु नाहीं ॥ ४ ॥

उसका नाम मोहन अस्त्र था, जिसे विष्णु, महादेव और ब्रह्माभी मानते हैं ॥ ३ ॥ सो तककर लक्ष्मणके हृदयमें मारा जिससे वह पृथ्वीपर गिरपड़े और शरीरकी कुछ सुध नहीं रही ॥ ४ ॥

चली सैन्य सब भागि अपारा ❀ कौशलपुरमहँ जाय पुकारा ॥ ५ ॥
करनी सकल युद्धकैं बरणी ❀ लक्ष्मण वीर परे जिमि धरणी ॥ ६ ॥

सब अपार सेना भाग चली और अयोध्यापुरीमें जाकर पुकारी ॥ ५ ॥ सब युद्धकी करनीका वर्णन किया और जिस प्रकार योद्धा लक्ष्मण पृथ्वीपर गिरे थे वह सब कहा कि ॥ ६ ॥

जेहि विधि कटक सकल संहारा ❀ निजलोचन हम नाथ निहारा ॥ ७ ॥
वय किशोर दोउ बाल अनूपा ❀ तब प्रति बिंब मनहुँ सुरभूपा ॥ ८ ॥
काकपक्ष शिर धरे बनाई ❀ बालक वीर वरणि नहिं जाई ॥ ९ ॥

हे स्वामी ! जिस प्रकार सब सेना मारी सो सब हमने अपनी आंखोंसे देखी है ॥ ७ ॥ हे देवेन्द्र ! दोनों सुन्दर बालक किशोर अवस्थावाले ऐसे हैं मानों आपहीकी सूरत हैं ॥ ८ ॥ वे बालक मस्तकपर सुन्दर लटूरिया धारण किये हैं और ऐसे योद्धा हैं कि वर्णन नहीं किये जाते ॥ ९ ॥

दो०–भरत जोरि करकै कहेउ, वचन असित विलखाय ॥ ❀
सीयत्यागफल दीन विधि, प्रभु कहि देखहु जाय ॥ ४८ ॥ ❀

भरतने हाथ जोड़ बहुत दुखी हो यह वचन कहे कि विधाताने सीताजीके त्यागनेका फल दिया है, यह सुन भगवान्ने कहा तुम जाकर देखो ॥ ४८ ॥

चौ०–अनुज समरमहँ तुम हिय हारे ❀ साजहु हय गज रथ मतवारे ॥ १ ॥
रहौ यज्ञ रिपु देखहु जाई ❀ बालक रावणके दुखदाई ॥ २ ॥

हे भाई ! तुम लड़ाईसे हृदयमें हार गये, मतवाले घोडे, हाथी और रथोंको सजाओ ॥ १ ॥ यज्ञ भलेही रहजाय पर मैं जाकर वैरियोंको देखूंगा, हो नहो वे रावणके दुखदाई बालक हैं ॥ २ ॥

तीव्रवचन सुनि भरत लजाने ❀ बहुतभाँति रघुपति सनमाने ॥ ३ ॥
जाम्बवंत कपिराज बिभीषण ❀ द्विविद मयंद नील नल भूषण ॥ ४ ॥

कठोर वचन सुनकर भरत लज्जित हुये, तब रामचन्द्रजीने अनेक प्रकार सत्कार किया ॥ ३ ॥ और जाम्ववंत, सुग्रीव, बिभीषण, द्विविद, मयंद, नील और नल जो आभूषणरूप थे ॥ ४ ॥

प्रथम सखा सब लिये बुलाई ❀ हनुमदादि अंगद समुदाई ॥ ५ ॥
रिपुहिं मारिकै समर भगाई ❀ तात अनुज दोउ आनहु जाई ॥ ६ ॥

और हनूमान् और अंगद आदिके समूह जो पहलेके मित्र थे उन सबको बुला लिया (और बोले कि) ॥ ५ ॥ वैरियोंको मारकर और लड़ाईमें सेनाको भगाकर हे प्यारे ! जाकर दोनों भाइयोंको ले आओ ॥ ६ ॥

माथ नाय सँग कटक विशाला ❀ चले भरत उर उपजी ज्वाला ॥ ७ ॥
शोणितसरिता समर विलोकी ❀ डरपेउ वीर आश रण रोकी ॥ ८ ॥

भरत माथा नवाकर बडी सेनाके साथ चले और हृदयमें महाक्रोध उत्पन्न हुआ ॥ ७ ॥ रणभूमिमें लोहूकी नदी देखकर योद्धा डरे और लड़नेकी आशा त्यागदी ॥ ८ ॥

दो०-समर सीय दोउ वीर वर, आयगये बलवान ॥
देख डरे कपि भालु सब, तब बोलेउ हनुमान ॥ ४९ ॥

सीताजीके दोनों पुत्र बलवान् श्रेष्ठ योद्धा लड़ाईमें आगये जिन्हैं देखकर सब रीछ बन्दर डरने लगे. तब हनूमान् बोले ॥ ४९ ॥

चौ०-धन्य मातु पितु जेहिं तुम जाये ❀ पुरुष युगल घर जाहु सुहाये ॥ १ ॥
समरविमुख सुन भट विलखाने ❀ हनुमत प्रति बोले रिसठाने ॥ २ ॥

उन मातापिताओंको धन्य है जिन्होंने तुम्हैं उत्पन्न किया है. तुम दोनों सुन्दर पुरुष हो. अपने घर जाओ ॥ १ ॥ लड़ाईसे विमुख होनेके समाचार सुनकर योद्धा (लव कुश) क्रोध कर हनूमान्जीसे बोले ॥ २ ॥

नहिं बल होइ जाहु घर भाई ❀ हतौं न ठौर जान कदराई ॥ ३ ॥
भाषै बचन भरत सुनि काना ❀ लेहु सँभार बाल धनु बाना ॥ ४ ॥

हे भाई! जो तुम्हैं बल नहीं हो तो अपने घर जाओ, काहिल जानकर हम किसीको नहीं मारते ॥ ३ ॥ भरतने कानोंसे बचन सुनकर कहा, हे बालको ! धनुष बाण सम्हाल लो ॥ ४ ॥

कटकटाय कपि भालुसमूहा ❀ लीन्ह उपार प्रबल तरुजूहा ॥ ५ ॥
एकहि बार सकल तिन मारा ❀ लव काटहिं तिलसम करि डारा ॥ ६ ॥

और रीछ बन्दरोंके समूहने कटकटाकर बड़े २ वृक्षोंके समूह उखाड़ लिये ॥ ५ ॥ उन्होंने वे सब एकही साथ मारे सो लवने काटकर तिलके समान कर डाले ॥ ६ ॥

रिपुशर काटि निमिष यकमाहीं ❀ यथा मनोरथ खल मिटि जाहीं ॥ ७ ॥
कर लव क्रोध बाण फटकारे ❀ मारे बीर भूमि क्षण डारे ॥ ८ ॥

एक पलभरमें वैरियोंके बाण ऐसे काट डाले जैसे दुष्टोंके मनोरथ मिट जाते हैं ॥ ७ ॥ लवने क्रोध करके बाण चलाये तो योद्धाओंको मारकर क्षणभरमें पृथ्वीपर गिरा दिया ॥ ८ ॥

पु०छं०-पल भषहिं कंक कराल जहँ तहँ गीध सब प्रमुदित भये ।
तहँ प्रेत सिद्ध समाज सोहत व्याहप्रति मंगल ठये ॥
तहँ डाकिनी मन मुदित डोलहिं शाकिनी शोणितभरी ।
दोउ करन खैंचहिं कालिका शिवगण करत क्रीडा खरी १९
अंतावरी गहि गर लपेटहिं पिवत शोणित आतुरे ।
गजखाल खैंचहिं भूत शंकर प्रेत संगरचातुरे ॥
वैताल वीर कराल करवर करीकर इककर धरे ।
वै भार रुधिर प्रवाह पूरण पान करत हरे हरे ॥ २० ॥

जहां तहां कठिन गिद्ध और चीलह मनमें प्रसन्न हुये, मांस खाने लगे. वहां भूतप्रेतोंका समाज शोभायमान होगया और व्याहके समान आनन्द करने लगा. डाकिनी मनमें प्रसन्न हो २ कर फिरने लगीं, शाकिनी लोहूसे तरबोंर हो रही हैं, कालिका दोनों हाथोंसे लोथोंको खींचती हैं और महादे-

वजीके प्रेतगण बड़ी २ क्रीड़ा करते हैं ॥ १९ ॥ आंतोंको पकड़ २ कर गलेमें लपेटते और उतावलीसे रुधिर पीते हैं. लड़ाईमें चतुर महादेवके भूत प्रेत हाथियोंकी खाल खींचते हैं, और कठिन वेताल वीर श्रेष्ठ हाथियोंकी सूंड़की हाथमें लेकर उनके रुधिरके वहावसे तृप्त होकर हर हर कहकर पान करते हैं ॥ २० ॥

दो०-विषम युद्ध दोउ वंधु करि, जीते कपिसंग्राम ॥
आयउ पुनि तहँ नृपभरत, सुमिरि विधाता वाम ॥ ५० ॥

दोनों भाइयोंने कठिन युद्ध करके वन्दरोंको संग्राममें जीत लिया. तव भरतजी विधाताको प्रतिकूल समझ उस युद्धस्थानमें आये ॥ ५० ॥

चौ०-कपि भालुहि घायल सब आवहिं ❀ बाणत्रास मन अति दुख पावहिं ॥ १ ॥
जाम्बवंत कपिराज बुलाये ❀ अंगद हनूमान सुन आये ॥ २ ॥

सव रीछ वन्दर घायल हुये आते हैं और बाणोंके भयसे मनमें बड़ा दुःख पाते हैं ॥ १ ॥ (भरतने) जाम्बवंत और सुग्रीवको बुलाय और सुनतेही अंगद और हनूमान् आये. (फिर भरतजीने कहा कि) ॥ २ ॥

सब मिलि सहित निशाचरराजा ❀ धरि आनहु दोउ बालसमाजा ॥ ३ ॥
आय जुटे कपि भालु भवानी ❀ तिन कछु प्रभुमहिमा नहिं जानी ॥ ४ ॥

सब मिलकर बिभीषणसहित जाओ और दोनों भाइयोंको पकड़ लाओ ॥ ३ ॥ महादेव कहते हैं हे पार्वती! रीछ वन्दर आकर लड़ने लगे, उन्होंने भगवान्‌की कुछ महिमा नहीं जानी ॥ ४ ॥

बोले कुश सुन बालिकुमारा ❀ तुम बल विदत जान संसारा ॥ ५ ॥
पितहिं मराय मातु पर हेली ❀ सकल लाज आये तुम पेली ॥ ६ ॥

कुश बोले, हे अंगद! सुनो, तुम्हारा बल संसारमें प्रगट है ॥ ५ ॥ तुम पिताको मरवाकर माताको पराये घरमें करके और सब लाजको छोड़कर आये हो ॥ ६ ॥

सो फल लेहु समरमहँ आजू ❀ त्यागहु सकल कलंकसमाजू ॥ ७ ॥
सुनत क्रोध अंगदउर छावा ❀ गहि गिरि एक ताहि पर धावा ॥ ८ ॥

आज उसका फल लड़ाईमें लो और सब कलंकको मिटाओ ॥ ७ ॥ सुनतेही अंगदके हृदयमें क्रोध छागया और एक पर्वत लेकर उसपर दौड़ा ॥ ८ ॥

दो०-आवत शैल विशाल लखि, तिलसम शर हति कीन ॥
जस अंगद बल गर्व अति, तस फल रघुपति दीन ॥ ५१ ॥

उसने बड़े पर्वतको आता हुआ देखकर बाणोंमें काटकर तिलके समान करडाला और अंगदके मनमें जैसा अभिमान था वैसाही भगवान्‌ने फल दिया ॥ ५१ ॥

चौ०-तमकिताहि कुश बाण चलावा ❀ अंगद नील अकाश उड़ावा ॥ १ ॥
आवत जानिपुहुमि कपि भारी ❀ मारे बाण प्रचारि प्रचारी ॥ २ ॥

उसे क्रोधित देखकर कुशने बाण चलाया तौ अंगद और नील आकाशको उड़गये ॥ १ ॥ और बड़े २ वन्दरोंको फिर पृथ्वीपर आता हुआ जानकर ललकार २ कर फिर बाण मारे ॥ २ ॥

इत उत जान कतहुँ नहिं पावै ❀ पवन बहै जिमि महि नहिं आवै ॥ ३ ॥
क्षण अकाश क्षण भूतलओरा ❀ बोलेउ शरण नाथ अस तोरा ॥ ४ ॥

वे इधर उधर कहीं नहीं जाने पाते, जैसे पवन चलती है परन्तु पृथ्वीपर नहीं गिरती ॥ ३ ॥

इसी प्रकार क्षणभरमें आकाशमें, और क्षणभरमें पृथ्वीकी ओर आते हैं, तव बोले हे प्रभो! अव आपकी शरण हैं ॥ ४ ॥

रहेउ गर्व हमकहँ भगवाना ❀ अग जगनाथ न हम पहिचाना ॥ ५ ॥
पाँच बाण वेधेउ कपि दोऊ ❀ दीन जानि त्यागेउ हँसि सोऊ ॥ ६ ॥

हे भगवान्! हमें अभिमान था इसलिये हमने चराचरके स्वामीको नहीं पहँचाना॥५॥उन्होंने पांचवाणोंसे दोनों वन्दरोंको वेध कर फिर दीन जानकर और हँसकर उन्हें छोड़ दिया ॥ ६ ॥

परे भरतके सन्मुख जाई ❀ दशा देखि कपिदशा भुलाई ॥ ७ ॥
जाम्बवंत हनुमान कपीशा ❀ धाये तरु गिरि लै बहु कीशा ॥ ८ ॥

सो जाकर भरतके आगे पड़े (उनकी) दशा देखनेसे जान पड़ा कि वन्दरोंको अपनी दशाका ज्ञान नहीं रहा ॥ ७ ॥ फिर जाम्ववंत, हनुमान्, सुग्रीव, तथा अन्य वन्दर वहुतसे वृक्ष और पर्वत लेकर दौड़े ॥ ८ ॥

दो०-हँसे कुमर कुश देखि कपि, अनुजहिं कहेउ बुझाय ॥ ❀
आज समर जितिहहुँ भरत, भालु कपिन बिलगाय ॥ ५२ ॥ ❀

कुमार कुश वन्दरोंको देखके हँसे और छोटे भाई (लव) से समझाकर कहा कि आज रीछ वन्दरोंको भगाकर भरतको जीतूंगा ॥ ५२ ॥

चौ०-प्रभुसुत समर किन्ह जस करणी ❀ निगम शेष शारद नहिं वरणी ॥ १ ॥
चरित तासु सुनु शैलकुमारी ❀ मारेउ समर शूर कपि भारी ॥ २ ॥

भगवान्के पुत्रोंने लड़ाईमें जैसी करनी की वह वेद, सरस्वती और शेषजीसेभी वर्णन नहीं होसक्ती ॥ १ ॥ हे पार्वती! उनके चरित्र सुनो. उन्होंने लड़ाईमें वड़े योद्धा बन्दर मारे ॥ २ ॥

समरधीर दोउ बाल विराजे ❀ निरखि भालु कपि मन अति लाजे ॥ ३ ॥
ऐंचि धनुष गुण छाँड़ेउ सायक ❀ कपिपति आजि हने कपिनायक ॥ ४ ॥

लड़ाईमें धीरजवान् दोनों कुमार विराजमान हुए. जिन्हें देखकर रीछ वन्दर बहुत लज्जित हुए ॥ ३ ॥ धनुपकी डोरी खींचकर वाण छोडे और सुग्रीव आदि वन्दरोंके स्वामी मारे ॥ ४ ॥

मूर्च्छित सैन्य परी महिमाहीं ❀ बचो न कपि घायल जो नाहीं ॥ ५ ॥
देखि भरत सब सैन निपाती ❀ कोपि बाण मारेउ लव छाती ॥ ६ ॥

सेना मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिरपड़ी, एकभी बन्दर न वचा जो घायल न हुआ हो ॥ ५ ॥ भरतने सब सेनाको पड़ी हुई देख क्रोध करके लवकी छातीमें बाण मारा ॥ ६ ॥

मूर्छित विकल परेउ महिमाहीं ❀ अति अचेत तनुकी सुधि नाहीं ॥ ७ ॥
दुखित देखि कुश अमित रिसाना ❀ चाप चढ़ाय बाण संधाना ॥ ८ ॥

वह मूर्च्छित और व्याकुल होकर पृथ्वीमें ऐसा बेहोश गिर पड़ा कि शरीरकी सुध नहीं रही ॥ ७ ॥ (लवको) दुखी देखकर कुशने वहुत क्रोध कर वाणसंधान किया ॥ ८ ॥

श्रवणप्रयंत खैंचि धनु बीरा ❀ भरतहृदय मारेउ शत तीरा ॥ ९ ॥
भयो युद्ध तहँ विविध प्रकारा ❀ बीर बाँकुरे सुभट अपारा ॥ १० ॥

और उस योद्धाने कानतक धनुष तानकर भरतके हृदयमें सौ बाण मारे ॥ ९ ॥ तहाँ वाके वीर अपार योद्धाओंमें अनेक प्रकारका सुन्दर युद्ध हुआ ॥ १० ॥

दो०-समरभूमि सोये भरत, लवहिं लीन उरलाय ॥ ❀
सुमिर मातु गुरुचरणयुग, रहे समर जय पाय ॥ ५३ ॥ ❀

भरत रणभूमिमें सोगये और जब लव जगे तौ कुशने हृदयसे लगालिया, फिर वे दोनों माता और गुरुके चरणोंका सरण कर लड़ाईमें जीत पाकर खड़े रहे ॥ ५३ ॥

चौ०–आये खबर लेन चर चारी ❀ भरतसैन्य तिन सकल निहारी ॥ १ ॥
शोणितसरिता देखि डराने ❀ हय गय बहेजात रथ जाने ॥ २ ॥

चार दूत जो समाचार लेनेके लिये आये थे उन्होंने भरतकी सब सेना देखी ॥ १ ॥ और लोहूकी नदी देखकर डरे. जिसमें घोड़े, हाथी, और रथ बहे जातेथे ॥ २ ॥

देखी सरित भयंकर भारी ❀ कठिन कराल सुनहु उरगारी ॥ ३ ॥
बहुतक उछरि बूड़ि पुनि जाईं ❀ चर्म मनहु कच्छपकी नाईं ॥ ४ ॥

हे गरुड़ ! सुनों, बहुत कठिन बड़ी भयंकर नदी देखी ॥ ३ ॥ बहुतेरे उछलके डूब जातेथे (उस नदीमें) ढाल मानों कछुये थे ॥ ४ ॥

महातरंग बीर बह जाहीं ❀ घायल पैर तीर लपटाहीं ॥ ५ ॥
फिरे दूत कौशलपुर आये ❀ समाचार सब राम सुनाये ॥ ६ ॥

बड़ी २ तरंगोंमें योद्धा बहे जातेथे और घायल पैरके किनारे लग जातेथे ॥ ५ ॥ दूत लौटकर अयोध्यापुरीमें आये सब समाचार रामचन्द्रजीको सुनाये ॥ ६ ॥

चरवरवचन सुनत दुख पावा ❀ त्यागेउ मख निजकटक बनावा ॥ ७ ॥
चले सकोप कृपालु उदारा ❀ आये जहँ प्रभु कटक सँहारा ॥ ८ ॥
मुनिवरबालक देख सुहाये ❀ शिर नवाय प्रभु निकट बुलाये ॥ ९ ॥

श्रेष्ठ दूतोंके वचन सुनतेही (भगवान्‌ने) दुःख पाया और यज्ञ छोड़कर अपनी सेना तयार कर ॥ ७ ॥ दयानिधान भगवान् क्रोध करके चले और वहां आये जहां सेनामारी गई थी ॥ ८ ॥ श्रेष्ठ मुनिके सुहावने बालक देखकर भगवान्‌ने माथा नवाकर पास बुला लिये ॥ ९ ॥

दो०–पूंछेउ बोल बुलाय दोउ, कहहु मातु पितु नाम ॥ ❀
देश ग्राम निज कहहु सब, बड़ जीतेहु संग्राम ॥ ५४ ॥ ❀

दोनों बालकोंको बुलाकर पूछा कि अपने माता पिताके नाम बताओ और देश और नगरका नाम कहो ? तुमने बड़ा युद्ध जीता ॥ ५४ ॥

चौ०–गहहु अस्त्र जनि कहहु कहानी ❀ पूछहु नाम गाँव कह जानी ॥ १ ॥
समर बात बहु अति कदराई ❀ छाँड़ि सोच अब करहु लराई ॥ २ ॥

(लव कुशने कहा) हथियार पकड़ो, कहानी मत बको, तुम नाम गांव क्या जानकर पूछते हो ? ॥ १ ॥ लड़ाईमें बहुत बात करना अत्यंतही कायरता है. इसलिये सोच छोड़कर अब लड़ाई करो ॥ २ ॥

वंश नाम बिनु पूछेहु ताता ❀ हतौं न बाण मनोहर गाता ॥ ३ ॥
माता सीयजनककी जाता ❀ वाल्मीकि पाल्यो मुनि ताता ॥ ४ ॥

(रामचन्द्र बोले) हे प्यारे ! कुटुम्बका नाम पूछे विना सुन्दर शरीरमें बाण न मारूंगा ॥ ३ ॥ (तब उन्होंने कहा) हमारी माता सीताजी जनककी पुत्री हैं और वाल्मीकि मुनिने पालन किया है ॥ ४ ॥

पितावंश नहिं जानहिं आजू ❀ लव कुश नाम सुनहु रघुराजू ॥ ५ ॥
सुनि सब कथा राखि मनमाहीं ❀ बाल विलोकि बधब भल नाहीं ॥ ६ ॥

पिताके वंशको अबभी नहीं जानते. हे रघुराज ! लव कुश हमारा नाम है ॥ ५ ॥ सब कथा सुनकर मनमें रखली और बालक देखकर विचारा कि इनका मारना अच्छा नहीं (और बोले) ६

आवत सुभटसमूह हमारे ❀ लरिहहिं तुमसन समर सुखारे ॥ ७ ॥
अस कहि अंगद नील उठावा ❀ जाम्बवंत कपिपतिहिं बुलावा ॥ ८ ॥

हमारे साथ सुन्दर योद्धा आते हैं वे तुमसे लड़ाईमें भली भांति लड़ैंगे ॥ ७ ॥ ऐसे कहकर अंगद और नीलको उठाया और जाम्बवंत और सुग्रीवको बुलाया ॥ ८ ॥

छं०-कपिराज अंगद जाम्बवानहि बोलि निशिचरनायकं।
हनुमान द्विविद मयंद नीलहि सुभट जे अतिलायकं ॥
तव हरण शूलहि पापनाशन कह्यो हँसि रघुनंदनं।
भरतादि रिपुहन सहितलक्ष्मण परे खलमदगंजनं ॥ २१ ॥
लंकेश आदिक सुभट मारे वीर जे महिमंडनं।
ते आज बालक विप्रसो रणपरे रिपुमदगंजनं ॥
कुलकान अब निज जान लरहु सो शैल तरु बहु लैं चले।
दैं हूह वानरजूह पर्वत डारि पुनि रण मुरि चले ॥ २२ ॥

सुग्रीव, अंगद, जाम्बवंत और बिभीषण तथा हनूमान्, द्विविद, मयंद और नील जो अच्छे सुन्दर योद्धा थे उनको बुलाकर दुखभंजन पापनाशक रामचन्द्रजीने हँसकर कहा कि दुष्टोंके अभिमानका नाश करनेवाले भरत, शत्रुघ्न और लक्ष्मण आदि लड़ाईमें पड़े हैं ॥ २१ ॥ जिन्होंने रावण आदि योद्धाओंको मारा वे पृथ्वीके आभूषण, वैरियोंके मदका नाश करनेवाले, आज ब्राह्मणोंके बालकोंसे लड़ाईमें हारे पड़े हैं ॥ कुलकी कानि जानकर लड़ो (यह सुन) योद्धा बहुतसे वृक्ष और पर्वत लेकर चले और बन्दरोंके समूह हूहा शब्द करके पर्वत डालनेके लिये लड़ाई करनेको फिर लौट चले ॥ २२ ॥

दो०-सावधान धनु बाण लै, धायउ लव बलवान ॥
संमुख आनि बिभीषणहिं, बोलेउ बहुरि रिसान ॥ ५५ ॥

सावधानीसे धनुष बाण लेकर बलवान् लव आया और बिभीषणके सामने आकर फिर क्रोध करके बोला ॥ ५५ ॥

चौ०-सुन सठ बंधुहिं समर जुझाई ❀ शत्रुहिं मिलेउ निपट कदराई ॥ १ ॥
पितासमान बंधु बड़ तोरा ❀ त्रिया तासु लै घर बरजोरा ॥ २ ॥

अरे मूर्ख! सुन, भाईको लड़ाईमें मरवाकर और बहुतसी कायरतासे वैरीसे आन मिला ॥ १ ॥ तेरा बड़ा भाई जो पिताके समान था उसकी स्त्रीको जोरावरीसे घरमें रक्खा ॥ २ ॥

पापी मातु कहि कइ बारा ❀ सो पत्नी यह धर्म तुम्हारा ॥ ३ ॥
बूड़ मरहु सागरमहँ जाई ❀ मर गर काटि अधम अन्याई ॥ ४ ॥

अरे पापी! कई बार उसको माता कहा होगा, उसेही स्त्री करली यह तेरा धर्म है? ॥ ३ ॥ समुद्रमें जाकर डूब मर. अरे नीच! अन्यायी! गला काटके मर जा ॥ ४ ॥

समरभूमि मम सन्मुख आवा ❀ लाज होत नहिं गाल बजावा ॥ ५ ॥
आँखिन आगेते हटि जाई ❀ नहिं तौ मृत्यु निकट चलि आई ॥ ६ ॥

रणभूमिमें मेरे सामने आया, तुझे गाल बजातेमें लाज नहीं आती? ॥ ५ ॥ तू आंखोंके सामनेसे हटजा नहीं तौ मौत तेरे पास आगई है ॥ ६ ॥

सुनि खिसियान गदा तेहिं लीनी ❀ शर हति खंड खंड लव कीनी ॥ ७ ॥
सात बाण मारेउ करि क्रोधा ❀ गिर्‍यो धरणि शर लागत योधा ॥ ८ ॥
गिरत कोपि कर शूल चलाया ❀ लव तनु तडितसमान समाया ॥ ९ ॥

यह सुनकर उसने खिसियाकर गदा ली सो लवने बाणोंसे कटकर टुकड़े २ कर डाली ॥ ७ ॥

और क्रोध करके सात वाण मारे सो वाण लगतेही योद्धा पृथ्वीपर गिरपड़ा ॥ ८ ॥ गिरतेही (विभीषणने) क्रोध करके त्रिशूल चलाया सो लवके शरीरमें विजलीके समान समागया ॥ ९ ॥

दो०–दूरि शूल करि वंधु दोउ, शर मारेउ पुनि दाप ॥
जाम्बवंत कपिराज नल, अंगद करहिं विलाप ॥ ५६ ॥

दोनों भाइयोंने त्रिशूलको दूरकर फिर घमंडसे वाण मारे सो जाम्बवंत, सुग्रीव, नल और नील विलाप करने लगे ॥ ५६ ॥

चौ०–जो गिरि तरु कपि डारहिं आईं ❀ रजसमान तेहीं देहिं उड़ाईं ॥ १ ॥
निजबाणन कपि घायल कीने ❀ जो जेहिं उचित सुतस फल दीने ॥ २ ॥

बन्दर जो वृक्ष और पर्वत आकर डालें उसे (लव कुश) धूलके समान उड़ादें ॥ १ ॥ अपने वाणोंसे वन्दरोंको घायल किया और जो जिसको उचित था उसको वैसाही फल दिया ॥ २ ॥

रघुकुल तिलक प्रचारति पाछे ❀ वीरधुरीण हते सब आछे ॥ ३ ॥
अंगद हनूमान भट भारी ❀ ते धाये तरु शैल उपारी ॥ ४ ॥

पीछेसे रघुवंशतिलक लव कुशने जो वीरोंमें पराक्रमी अच्छे थे उनकों ललकारा ॥ ३ ॥ अंगद और हनूमान् जो वड़े योद्धा थे वे वृक्ष और पर्वत उखाड़ २ कर दौडे ॥ ४ ॥

डारि शैल दोउ भिरे रिसाईं ❀ खड्गन हने वीर बरिआईं ॥ ५ ॥
कपिन कोप करि उर हत तेहीं ❀ जिमि खग मशक चाटि मजदेहिं ॥ ६ ॥

दोनों जन पर्वत डालकर क्रोधकर लड़े उन्हैं वीर कुमारोंने तलवारोंसे मारा ॥ ५ ॥ फिर बन्दरोंने क्रोध करके हृदयमें चोट मारी सो ऐसी लगी जैसे कोई पक्षी या मच्छर हाथीको चाटै ॥ ६ ॥

हति दोनों कपि भूमि गिराये ❀ जाम्बवंत कपिपतिपहँ आये ॥ ७ ॥
इहि तनु कोटिक समर लड़ाईं ❀ जीते लड़े बहुत हम भाईं ॥ ८ ॥

और जब दोनों वन्दर मारकर पृथ्वीपर गिरा दिये तव तौ जाम्बवंत सुग्रीवके पास आये ॥ ७ ॥ और वोले हे भाई ! इस शरीरसे रणभूमिमें करोडों युद्ध हमने जीते हैं ॥ ८ ॥

दो०–ये बालक त्रिभुवनवली, जीत सकै नहिं कोय ॥
चलहु प्राण दीजै समर, अमर जगत नहिं होय ॥ ५७ ॥

परन्तु ये वालक तीनों लोकोंमें बलवान् हैं इनको कोई नहीं जीतसक्ता, चलकर लड़ाईमें प्राण दो. संसारमें कोई अमर नहीं है ॥ ५७ ॥

चौ०–आये भालु बली भट नाना ❀ तानि शरासन शर संधाना ॥ १ ॥
हृदय तानि लव मारेउ सायक ❀ योजन सात गयो कपिनायक ॥ २ ॥

तव तौ अनेक वली योद्धा रीछ बन्दर आये और धनुष तान कर बाणसंधान किये ॥ १ ॥ सो लवने तानकर हृदयमें ऐसा बाण मारा जिससे सुग्रीव सात योजन जा पड़ा ॥ २ ॥

घायल भालु लपेटे जाहीं ❀ मल्लयुद्ध कुश कीन्ह तिन्हाहीं ॥ ३ ॥
निजबल ऋच्छहिं अवनि पछारा ❀ दुइ कर चरण बाँधि विकरारा ॥ ४ ॥

तव तौ घायल रीछ बन्दर लिपटने लगे सो कुशने उनसे मल्लयुद्ध किया ॥ ३ ॥ और अपने बलसे जाम्बवंतकों पृथ्वीपर पछाड़ दिया और दोनों हाथ पैर बांधकर ब्याकुल करदिया ॥ ४ ॥

हनुमंतहिं बाँध्यो लव धाईं ❀ राखेउ निकट अश्वथल लाईं ॥ ५ ॥
रखवारी छँड़ेउ कुश वीरा ❀ आप गयो रघुनायक तीरा ॥ ६ ॥

लवने दौड़कर हनूमान्को बांध लिया और घोड़ा जहां था उस जगह लाकर रक्खा ॥ ५ ॥ वीर कुशको तौ रखवालीपर छोड़ा, आप रामचन्द्रजीके पास गया ॥ ६ ॥

देखेउ रथपर श्रीपति सोये ❀ फिरेउ बीर लव लाज बिगोये ॥ ७ ॥
सुभग अस्त्र पट भूषण नाना ❀ चले अश्वधरि लै हनुमाना ॥ ८ ॥

पर रामचन्द्रजीको रथपर सोये हुये देख वीर लव लज्जासे लौट आया ॥ ७ ॥ सुन्दर हथियार अनेक वस्त्र, तथा आभूषण घोडेपर रखकर और हनूमान्को साथ लेकर चला ॥ ८ ॥

छं०–शुभ अस्त्र पट भूषण सुमर्कट ऋच्छसँग हय घर चले। ❀
सियनिकट नायो माथ दोउ सुत भेट भूषण जे भले ॥ ❀
पहिंचानि कपि दोउ निरखि भूषण सहसि सिय धरणी परी। ❀
इहि बीच मुनिवर सघन आये सियहिं अति विनती करी ॥२३॥ ❀
हनुमान भालुहिं छोडि वेगहिं त्यागि बहु समझायऊ। ❀
रिपुदमन लछिमन सहित भरतहिं राम समर सुवायऊ ॥ ❀
सुत कीन्ह कर्म कलंक कुलमहँ मोहिं विधि विधवा करी। ❀
तजि सोच चंदन अगर आनहु जाउँ पियसँग अब जरी ॥२४॥ ❀
मुनि धीर जानकि देइ लवकुश संग लै सादर चले। ❀
रण देखि बालकचरित देखत विहँसि मन प्रमुदित भले ॥ ❀
रथ देखि हय पहिंचानि प्रभुकहँ जाय मुनि आगे भये। ❀
उठि बैठु कोशलनाथ आरत तनय तव आगे छये ॥ २५ ॥ ❀

सुन्दर हथियार, वसन, भूषण और हनूमान् तथा रीछोंके साथ घरको चले और सीताजीके पास दोनों पुत्रोंने आकर माथा नवाया; अच्छे २ गहने भेट किये, सीताजी दोनों बन्दरोंको पहिचाना और आभूषणोंको देखकर मुरझाकर पृथ्वीपर गिर पड़ीं। इसी बीचमें श्रेष्ठ मुनीश्वर वनसे आगये और सीताजीने बहुत प्रार्थना करी ॥ २३ ॥ और हनूमान् तथा जाम्बवंतको शीघ्र छोड़ो यह कहकर वहुत समझाया कि हे पुत्र! शत्रुघ्न, लक्ष्मण, भरत और रामचन्द्रजीको लड़ाईमें सुला दिया सो हे पुत्र! तुमने कुलमें कलंक लगाया और मुझे ब्रह्माने विधवा किया सो अव सोच छोड़कर चन्दन और अगर लाओ जिससे मैं स्वामीके साथ सती होजाऊं ॥ २४ ॥ धीर मुनीश्वर सीताजीको धीरज देकर लव कुशको आदरसे साथ लेकर रणभूमिमें आये और वालकोंके चरित्रको देखकर और हँसकर मनमें बड़े प्रसन्न हुये, फिर रथ देख घोडोंको पहिचान मुनीश्वर भगवान्के आगे खडे हुये और कहा, हे कौशलनाथ! उठ वैठो. ये तुम्हारे दीन पुत्र आगे खडे हैं ॥ २५ ॥

सो०–सुनि मुनिवर वर वैन, जागे रघुपति भयहरन ॥ ❀
विहँसि उघारे नैन, लीन्हें हृदय लगाय मुनि ॥ ५ ॥ ❀

श्रेष्ठ मुनिके सुन्दर वचन सुनकर भयहारी रामचन्द्रजी जगे और हँसकर नेत्र उघाड़े तौ मुनीश्वर ने हृदयसे लगा लिया ॥ ५ ॥

चौ०–प्रभुहिं देख मुनि अति हर्षाने ❀ बार बार निजभाग्य बखाने ॥ १ ॥
जेहिविधि शेष सीय बन आनी ❀ मुनि सो सबही कह्यो बखानी ॥ २ ॥

भगवान्को देखकर मुनीश्वर बहुत प्रसन्न हुये और वार २ अपने भाग्यकी प्रशंसा करी ॥ १ ॥ जिस भांति लक्ष्मण सीताजीको वनमें लायेथे सो सब मुनीश्वरने वर्णन कर कहा ॥ २ ॥

लवकुशकथा सकल मुनि भाखी ❀ शिव विरंचि सूरज कर साखी ॥ ३ ॥
मिले तनय दोउ हृदय लगाई ❀ सुधावर्ष सुर सैन्य जिवाई ॥ ४ ॥

मुनीश्वरने महादेव ब्रह्मा और सूर्यको साक्षी करके लव कुशकी सब कथा कही ॥ ३ ॥ तब रामजी दोनों पुत्रोंको छातीसे लगाकर मिले और देवताओंने अमृतकी वर्षा करके सेना जिताई ॥४॥

भरत आदि जागे सब भ्राता ❀ लक्ष्मण चले जहाँ सिय माता ॥ ५ ॥
बहुरि राम लक्ष्मणहिं बुलाई ❀ सुनहु तात अस वचन सुनाई ॥ ६ ॥

भरत आदि सब भाई जगे और लक्ष्मण सीता माताके पास चले ॥ ५ ॥ फिर रामचन्द्रजीने लक्ष्मणको बुलाकर कहा, हे प्यारे! सुनो, मेरे वे वचन सुनाकर ॥ ६ ॥

ऐसे बचन मानि मम भाई ❀ सियसन शपथ लेहु तुम जाई ॥ ७ ॥
लक्ष्मण जाय शीश सियनावा ❀ कुशल कही बहुविधि समझावा ॥ ८ ॥
हरिइच्छा सियमन अस आवा ❀ सेष सहसफणि आनि दिखावा ॥ ९ ॥

हे भाई! मेरा कहा मानकर तुम जाकर सीताजीसे शपथ लो ॥ ७ ॥ लक्ष्मणने जाकर सीताजीको मस्तक नवाया और कुशल कहकर बहुत भांति समझाया ॥ ८ ॥ भगवान्की इच्छासे सीताके मनमेंभी ऐसेही आगई सोई शेषजीने आकर हजार फण दिखलाये ॥ ९ ॥

दो०-जटित मणिन सिंहासनहिं, सादर सीय चढाय ॥ ❀
भये अलोप पतालमहँ, महिमा किमि कहिजाय ॥ ५८ ॥ ❀

और मणियोंसे जड़े हुये सिंहासनपर आदरसहित सीताजीको चढ़ाकर पातालमें अलोप होगये; वह महिमा कैसे कही जाय ॥ ५८ ॥

चौ०-लक्ष्मणचरित देख सब ठाढ़े ❀ नयन प्रवाह चले अति गाढ़े ॥ १ ॥
सकल चरित सुनि कृपानिधाना ❀ चलन हमार सीय मन जाना ॥ २ ॥

सब लोग और लक्ष्मणजी खड़े २ चरित्रको देखते रहे और उनके नेत्रोंसे बहुत जल वह चला ॥ १ ॥ दयाके निधान भगवान्ने सब चरित्र सुनकर जाना, सीताजीने हमारा चलना मनमें जान लिया ॥ २ ॥

तनयसहित निजपुर प्रभु आये ❀ दान दीन शुभ यज्ञ कराये ॥ ३ ॥
जेहि जेहि विधि सुर आयसु दीने ❀ कोटि कोटिविधि सोइ प्रभु कीने ॥ ४ ॥

सो पुत्रोंसमेत भगवान् अपने नगरमें आये और दान देकर शुभ यज्ञ किया ॥ ३ ॥ जिस २ प्रकार देवताओंने आज्ञा दी, वही भगवान्ने करोड़ भांतिसे पालन की ॥ ४ ॥

कोटिकधेनु धाम धन धरणी ❀ दीन कृपानिधि को सक वरणी ॥ ५ ॥
भोजन विविधभाँति करवाये ❀ बिदा कीन्ह मुनिवृंद बुलाये ॥ ६ ॥

करोड़ों गौ, धन, धाम और पृथ्वी भगवान्ने दी जिन्हें कौन वर्णन करसक्ता है ? ॥ ५ ॥ मुनीश्वरोंके समूह बुलाय अनेक प्रकारके भोजन कराकर बिदा किये ॥ ६ ॥

जनकहिं पूजि बिदा प्रभु कीना ❀ सुत प्रभु पूजि पयोदक लीना ॥ ७ ॥
आये जनक गुरुहिं पहुँचाई ❀ बैठे प्रभु महिदेव बुलाई ॥ ८ ॥

जनकका पूजन कर भगवान्ने बिदा किया और भगवान्के दोनों पुत्रोंने पूजन करके चरणोदक लिया ॥ ७ ॥ जनकको गुरुसमेत पहुँचाकर आये और भगवान् ब्राह्मणोंको बुलाकर बैठे ॥ ८ ॥

दो०-लक्ष लक्ष वर धेनु धन, पूजि पूजि द्विज पाय ॥ ❀
एक एक विप्रन दई, हर्षित कौशलराय ॥ ५९ ॥ ❀

रामचन्द्रजीने प्रसन्नतासे ब्राह्मणोंके चरणोंका पूजन करके एक एक ब्राह्मणको लाख २ श्रेष्ठ गौ और द्रव्य दिया ॥ ५९ ॥

चौ०-गे सब मुनि सज्जन निजधामा ❀ पायो अमित अमित सुख रामा ॥ १ ॥
पुरवासी आये सब झारी ❀ सुनहिं पुराण अनंद सुखारी ॥ २ ॥

सब मुनीश्वर और सज्जन अपने २ स्थानको गये और रामचन्द्रजीने बड़ा सुख पाया ॥ १ ॥ सब पुरवासी आये और आनन्दपूर्वक पुराण सुनकर सुखी हुये ॥ २ ॥

जे जड़ चेतन जीव घनेरे ❀ सचराचर कौशलपुरकेरे ॥ ३ ॥
तिन सुख बढ़त सुनत सुरराया ❀ करहिं विनोदविहाय अमाया ॥ ४ ॥

जो जड़ चैतन्य अनेक चराचर जीव अयोध्यापुरीके थे ॥ ३ ॥ उनके सुखको बढ़ता हुआ सुनकर इन्द्रभी मायारहित हो आनन्द मनाता है ॥ ४ ॥

इहिबिधि विपुल काल चलि गयऊ ❀ निजपुरगमन सो अवसर भयऊ ॥ ५ ॥
बीती अवधि ब्रह्म तब जानी ❀ नारदमुनिसन कहा बखानी ॥ ६ ॥

इस भांति वहुतसा समय वीतगया, फिर अपने २ स्थानमें जानेका समय हुआ ॥ ५ ॥ तब ब्रह्माने अविधि वीति जानी तौ नारदमुनिसे वर्णन कर कहा कि ॥ ६ ॥

निजपुर आवन कहहिं खरारी ❀ धर्मराजकहँ करहु हँकारी ॥ ७ ॥
विनती बहु बिरंचि तब भाखी ❀ चले धर्म रघुपति उर राखी ॥ ८ ॥

भगवान् अपने नगरको आया चाहते हैं सो धर्मराजको बुलाओ ॥ ७ ॥ तब ब्रह्माने वहुतसी प्रार्थना की तौ धर्मराज रामचन्द्रजीको हृदयमें धारण कर चले ॥ ८ ॥

दो०-आयउ यम रघुवीरपुर, मुनिवरवेष बनाय ॥ ❀
तेजपुंज सुंदर तरुण, कटि मृगत्वचा सुहाय ॥ ६० ॥ ❀

तेजके पुंज तरुण अवस्थावाले, जिनकी सुन्दर कमरमें मृगचर्म शोभायमान् है ऐसा श्रेष्ठ मुनिका वेष धरकर यमराज अवधपुरीमें आये ॥ ६० ॥

चौ०-द्वारपाल लक्ष्मणकहँ जानी ❀ बोलेउ तापस अति मृदु बानी ॥ १ ॥
तुरत शेष तब खबर जनाई ❀ सुनत बचन आये रघुराई ॥ २ ॥

लक्ष्णको द्वारपाल जान तपस्वी वहुत मीठी वाणीसे वोले ॥ १ ॥ लक्ष्मणजीने शीघ्रही खबर कही सो वचन सुनतेही रामचन्द्रजी आये ॥ २ ॥

मुनिहिं निरखि प्रभु कीन्ह प्रणामा ❀ सादर उचित कहेउ श्रीरामा ॥ ३ ॥
अर्घ्य दीन्ह आगे बैठारी ❀ मुनिवर सुंदर गिरा उचारी ॥ ४ ॥

मुनीको देखकर भगवान्ने प्रणाम किया और आदरसहित श्रीरामचन्द्रजीने उचित वचन कहे ॥ ३ ॥ आगे विठलाकर अर्घ्य दिया तब श्रेष्ठ मुनीने सुन्दर वाणी कही ॥ ४ ॥

सुन सर्वज्ञ कृपालु दिनेशा ❀ आयउँ मुनिबर तापसबेषा ॥ ५ ॥
हम तुम रहैं और ना कोई ❀ तिसरे सुनत नाश तेहि होई ॥ ६ ॥

हे सर्वज्ञ ! हे कृपालु ! आप सूर्य हैं, सुनिये, मैं श्रेष्ठ मुनि तपस्वीका वेष करके आयाहूं ॥ ५ ॥ सो हम तुमही रहैं और कोई न रहै (तब मैं कहूंगा) क्योंकि तीसरेके सुनतेही उसका नाश हो जायगा ॥ ६ ॥

सुनै शब्द तेहि देउँ शरापू ❀ विधि हरि हर आवें जो आपू ॥ ७ ॥
सुनहु लषण चलि बैठहु द्वारे ❀ ना कोउ आव न गिरा उचारे ॥ ८ ॥
इतनेउ पर आवै पुनि कोई ❀ मरहि सत्य यह वृथा न होई ॥ ९ ॥

और जो शब्द सुनेगा उसे शाप दूंगा चाहे वह साक्षात् ब्रह्मा, विष्णु, महादेव क्यों न हो ॥ ७ ॥ (भगवान् बोले) हे लक्ष्मण ! सुनो, चलके द्वारपर बैठो, न कोई आने पावै न शब्द करै ॥ ८ ॥ इतने कहनेपरभी जो फिर आवैगा तौ सत्यही मरैगा, यह वृथा नहीं होसक्ता ॥ ९ ॥

दो०-बोलेउ तापस वचन मृदु, पाहि पाहि रघुनाथ ॥ ❀
कहा सकल इतिहास मुनि, कहि पुनि नायो माथ ॥ ६१ ॥ ❀

तपस्वी कोमल वचन बोला हे रामचन्द्र ! रक्षा करो ! रक्षा करो ! ! फिर सव इतिहास कहकर मुनिने बार २ माथा नवाया ॥ ६१ ॥

चौ०-प्रभुइच्छा भावी बलवाना ❀ दुर्वासा मुनि आय तुलाना ॥ १ ॥
मुनिहिं देखि लक्ष्मण चलि आगे ❀ गये निकट विनती अनुरागे ॥ २ ॥

भगवान्‌की इच्छा होनहार बलवान् है. इस समय वहां दुर्वासा ऋषि आकर प्राप्त हुए ॥ १ ॥ मुनीश्वरको देखकर आगे बढ़ और पास जाकर प्रीतिसे प्रार्थना की ॥ २ ॥

पूंछेउ मुनि कहँ रघुकुलईसा ❀ जाउँ तहाँ मैं सुनहु अहीसा ॥ ३ ॥
जो उत्तर प्रति करिहौ आजू ❀ भस्म करौं तव घर पुर राजू ॥ ४ ॥

मुनीश्वरने पूछा रामचन्द्रजी कहां हैं ? हे लक्ष्मण ! सुनो मैं वहांही जाताहूं ॥ ३ ॥ और जो प्रत्युत्तर करोगे तौ अभी तुम्हारे घर नगर और राज्यको भस्म कर दूंगा ॥ ४ ॥

कंपेउ लषण सुनत मुनिबानी ❀ निजबध जान सो चलेउ भवानी ॥५॥
दोउ कर जोर कहे प्रभुसनही ❀ दुर्वासा मुनि आवन चहहीं ॥ ६ ॥

लक्ष्मण मुनीकी वाणी सुनकर कंपायमान हुये और हे पार्वती ! अपना मरण जानकर वह चले ॥ ५ ॥ दोनों हाथ जोड़कर भगवान्‌से कहा कि दुर्वासा ऋषि आना चाहते हैं ॥ ६ ॥

बड अपराध कीन्ह तुम भारी ❀ कालकर्मगति टरै न टारी ॥ ७ ॥
कीन्ह बचन दिनकरकुलकेतू ❀ सुनहु खगेश कथाकर हेतू ॥ ८ ॥

(भगवान् बोले) हे प्यारे ! तुमने बड़ा अपराध किया. कालकर्मकी गति टालनेसे नहीं टलती ॥ ७ ॥ रामचन्द्रजीने वचन पूरा किया. यही कथाका कारण है सो हे गरुड़ सुनो ॥ ८ ॥

दो०-तुरत कहेउ मुनि आनहू, सादर कृपानिधान ॥ ❀
चलहु वेगि मुनि तुरत अव, कहा राम भगवान ॥ ६२ ॥ ❀

दयाके समुद्र (भगवान्) ने कहा कि मुनिको शीघ्रही ले आओ. (तव लक्ष्मणने कहा) हे मुनीश्वरजी ! अव शीघ्र चलिये, रामचन्द्र भगवान्‌ने कहा है ॥ ६२ ॥

छं०-अतितेजपुंज बिलोकि प्रमुदित उचित उठि आसन दियो। ❀
जल आनि सादर चरण धोये सुभग पादोदक लियो ॥ ❀
जन जानि मुनिवर देहु आयसु बेगी सो सादर करौं। ❀
बहुकाल क्षुधित कृपायतन अव अशन बिन भूखो मरौं ॥२६॥ ❀
मनभाव भोजन दीन रघुपति बहुत विधि विनती करी। ❀
संतोष पाय मुनीश अस्तुति करि विनय आशिषभरी ॥ ❀

करि विदा मुनिवर देखि लक्ष्मण हृदय दारुण दुख भये ।
भरतादि अनुजसमेत पुरजन ताहि छिन देखत भये ॥२७॥
पद वंदि ठाढे जोरि दोउ कर बदन लखि अति कंपही ।
भरि नयनपंकज नीर आरत भरतसम प्रभु सब कही ॥
अब गुरुहिं आनहु बेगि सादर दुखित अति आतुर गये ।
सब कथा गुरुहिं सुनाय आतुर यान चढ़ि आवत भये॥२८॥
आये वसिष्ठ विलोकि रघुपति विकल उठि चरणन परे ।
संवाद सुनि मुनि समय जान्यो लागिहैं हमको हरे ॥
सुनि वचन शेष विचार निजउर राम विन धिक जीवना ।
गहि चरण सरयूतीर आये देखि जल शुभ पीवना ॥२९॥

अत्यंत तेजस्वी मुनीको देखकर (भगवान्‌ने) प्रसन्नतासे उठकर उचित आसन दिया. जल लाकर आदरसमेत चरण धोये और सुन्दर चरणोदक लिया और बोले हे मुनिराज ! मुझे दास जानकर आज्ञा दीजिये, जिसे आदरसमेत शीघ्र करूं. (तव मुनी बोले) हे दयानिधान ! मैं वहुत समयसे भूखा हूं, विना भोजनके मरताहूं ॥ २६ ॥ रामचन्द्रजीने मनभाते हुये भोजन देकर वहुत प्रकार प्रार्थना की तव संतोष पाकर मुनीश्वरने स्तुति और प्रार्थना करके आशीर्वाद दिया ॥ श्रेष्ठ मुनिको विदा कर लक्ष्मणको देखकर (भगवान्‌के) हृदयमें कठिन दुःख हुआ जिसको भरतआदि भाइयोंसहित नगरके सव लोग उस समय देखने लगे ॥ २७ ॥ (भगवान्‌के) चरणोंको दंडवत कर दोनों हाथ जोडकर खड़े हुये और जव मुखको देखकर अत्यंत कांपने लगे तव भगवान्‌ने कमलसमान नेत्रोंमें जलभरकर और आर्त होकर सव वात भरतसे कही, कि अव आदरसमेत गुरुको शीघ्र लिवा लाओ. सो भरत दुखी हो बहुत शीघ्रतासे चले और सव कथा गुरुको सुनाय रथपर चढ़कर जल्दीसे आये ॥ २८ ॥ वसिष्ठजीको आये देख रामचन्द्रजी व्याकुल हुये और उठकर चरणोंमें गिरपड़े. संवाद सुनतेही मुनीने उस समय जाना कि भगवान् हमको त्याग करेंगे ॥ और वचन सुनकर लक्ष्मणने अपने हृदयमें विचारा कि रामचन्द्रजीके विना जीवनको धिक्कार है. सो उनके चरण छूकर सरयूके किनारेपर आये और पवित्र जलका आचमन किया ॥ २९ ॥

दो०-कटिप्रमाण जलमध्यसें, कीनो ध्यान अखण्ड ॥
योगयत्न करि राम कहि, फोऱ्यो निज ब्रह्माण्ड ॥ ६३ ॥

कमरकी वराबर जलके वीचमें अखंड ध्यान किया और योगकी रीतिसे राम कहकर अपना ब्रह्मांड फोड़ दिया ॥ ६३ ॥

रामधाम पहुँचे तुरत, लषण चतुर्थम भाग ॥
सुनि व्याकुल रघुपति भरत, मिटेउ सकल अनुराग ॥६४॥

(भगवान्‌के) चौथे अंश लक्ष्मण शीघ्रही रामचन्द्रजीके स्थानमें पहुँचे, यह सुनकर रामचन्द्र, भरत व्याकुल हुये और सव आनन्द मिटगया ॥ ६४ ॥

चौ०-मैं नहिं तज्यों तज्यो मोहिं ताता ❀ अब करु यत्न सो देखहुँ भ्राता ॥ १ ॥
करहु भरत पुरजन्म सुखारी ❀ सुनत गिरेउ महि व्याकुल भारी ॥ २ ॥

(भगवान्‌ने कहा) मैंने नहीं छोड़ा और मुझे भाईने त्याग दिया सो अव वह उपाय करो जिससे भाईको देखूं ॥ १ ॥ हे भरत ! तुम नगरवासियोंके जन्मको सुखी करो. (अर्थात् राज्य करो) यह सुनतेही भरत अति व्याकुल होकर पृथ्वीपर गिरपड़े और बोले ॥ २ ॥

चलन चहत अब प्राण गुसाईं ❀ प्रभु लक्ष्मण विनु रह न सकाईं ॥ ३ ॥
ताति चलहु कहि तनय बुलाई ❀ कीन्ह तिलक बहु नीति सिखाई ॥ ४ ॥

हे गोसाँई अब प्राण चलना चाहते हैं. क्योंकि आप लक्ष्मणके बिना रह नहीं सक्ते ॥ ३ ॥ हे प्यारे ! चलो यह कहकर पुत्रोंको बुलाया और राज्यतिलक किया और वहुतसी नीति सिखाई ४

भरत सु तनय शील वैनामा ❀ दक्षिण नगर दियो तिहि रामा ॥ ५ ॥
दूसर पुष्कल जेहि जग जाना ❀ पुहकर नगर दीन भगवाना ॥ ६ ॥
चित्रकेतु अंगद रणधीरा ❀ लक्ष्मणतनय सुभट गंभीरा ॥ ७ ॥

भरतका सुन्दर शीलवान् वैनामा जो पहला पुत्र था उसको दक्षिण दिशाका राज्य दिया ॥ ५ ॥ दूसरा पुष्कल जिसे संसार जानता है उसे भगवान्ने पुष्कर नगर दिया ॥ ६ ॥ रणवीर चित्रकेतु और अंगद जो लक्ष्मणके पुत्र सुन्दर गंभीर योद्धा थे ॥ ७ ॥

दो०-पश्चिम दिशा पिशाच बहु, जीति हते संग्राम ॥ ❀
तहँ राखे सुत सरिस दोउ, बिलग बिलग कहि नाम ॥६५॥ ❀

उन्होंने पश्चिमकी दिशामें बहुतसे पिशाचोंको लड़ाईमें जीतकर मारा था; वहां दोनों सुन्दर पुत्रोंको अलग २ नामके राज्य देकर रक्खा ॥ ६५ ॥

चौ०-अवधनृपति कुश कीन्ह बहोरी ❀ सिखै नीति तब कह्यो बहोरी ॥ १ ॥
भ्रातनपर सुत दया करेहू ❀ राजनीति उरमाहिं धरे हू ॥ २ ॥

फिर कुशको अयोध्याका राजा किया और नीति सिखाकर फिर कहा ॥ १ ॥ हे पुत्र ! भाइयोंपर दयाकरना और राजनीतिको हृदयमें धारण करना ॥ २ ॥

उत्तर नगर सु उत्तर दूरी ❀ सुख संपदा जहाँ अति रूरी ॥ ३ ॥
लवकहँ दीन कृपानिधि सोई ❀ पटतरि अवध नगर नहिं कोई ॥ ४ ॥

उत्तर दिशामें जो उत्तराखंड है, जहां बहुत सुन्दर सुखसंपदा हैं ॥ ३ ॥ दयाके समुद्र (भगवान्) ने वह लवको दी, तथापि अयोध्यापुरीके समान कोई नहीं ॥ ४ ॥

आठसहसरथ तुरँग पचासा ❀ दशसहस्र गज मत्त विलासा ॥ ५ ॥
लजहिं इन्द्रगज तिनहिं बिलोकी ❀ दिगपालन निजप्रभुता रोकी ॥ ६ ॥

आठ हजार रथ, पचास हजार घोड़े और दशहजार मतवाले हाथी ॥ ५ ॥ जिन्है देखकर इन्द्रके हाथी लज्जित होतेथे और दिक्पालोनेभी अपनी प्रभुता रोकली ॥ ६ ॥

शक्र कुबेर देखी सकुचाने ❀ तिनकी महिमा कौन बखाने ॥ ७ ॥
इक इक सुनत दीन रघुराया ❀ वरणि को सकै सुनहु खगराया ॥ ८ ॥
धनद कोटिसम भरे भँडारा ❀ यथायोग्य करि भाग उदारा ॥ ९ ॥

जब इन्द्र कुबेरभी देखकर लज्जित हुये फिर उनकी बड़ाई कौन बखानै ॥ ७ ॥ हे गरुड़ ! सुनो (इतना २ सामान) रामचन्द्रजीने एक २ पुत्रको दिया जिसे कौन वर्णन करसक्ता है ! ॥ ८ ॥ करोड़ों कुबेरोंके समान भंडार थे सो उदार भगवान्ने सबका यथायोग्य भाग कर दिया ॥ ९ ॥

दो०-सकल तनय परितोष करि, बिदा कीन्ह रघुवीर ॥ ❀
विप्रवृन्द याचक सकल, लिये बोलि मतिधीर ॥ ६६ ॥ ❀

सब पुत्रोंको संतोष करके रामचन्द्रजीने विदा किया फिर मतिधीर (रामचन्द्रजी) ने ब्राह्मणोंके समूह और सब याचकोंको बुला लिया ॥ ६६ ॥

चौ०-धेनु वसन धरती धन धामा ❀ दिये द्विजन किय पूरण कामा ॥ १ ॥
याचक तबै अवधके वासी ❀ बोले प्रभु सुन अज अविनाशी ॥ २ ॥

गौ, वस्त्र, पृथ्वी, धन, धाम, ये ब्राह्मणोंको देकर पूर्णकाम किये ॥ १ ॥ अयोध्याके रहनेवाले सब याचक बोले कि हे प्रभो ! हे अज ! अविनाश ! सुनिये ॥ २ ॥

हम भरि जन्म चरण अनुरागी ❀ अंतकाल अब होत अभागी ॥ ३ ॥
जो जन जान लेहु प्रभु साथा ❀ करहु कृपानिधि सकल सनाथा ॥ ४ ॥

हमने जन्मभर चरणोंमें स्नेह किया और अब अन्त समयमें अभागे होते हैं ॥३॥ हे प्रभु ! जो जो हमको अपना दास बनाकर साथ लोगे तौ हे दयासागर ! सबको सनाथ करोगे ॥ ४ ॥

सुनि सनेहमय बचन सुहाये ❀ चलहु कहेउ प्रभु अति सुख पाये ॥५॥
समय जानि कपिपति तहँ आवा ❀ अंगद राजदीन सुख पावा ॥ ६ ॥

प्रेमसहित सुहावने वचन सुनकर भगवान्ने बहुत सुख पाकर कहा चलो ॥ ५ ॥ समय जानकर सुग्रीव वहां आया और प्रसन्न होकर अंगदको राज्य दिया ॥ ६ ॥

जाम्बवंत लंकापति बीरा ❀ नल अरु नील द्विविद रणधीरा ॥ ७ ॥
कोटिन कीश जु सुरअवतारी ❀ आये जहाँ कृपालु खरारी ॥ ८ ॥

जाम्बवंत, बिभीषण, नल, नील और रणधीर द्विविद ॥ ७ ॥ करोड़ों बन्दर जो देवताओंके अवतार थे वे दयानिधान भगवान्के पास आये ॥ ८ ॥

सो०-कह प्रभु सुन लंकेश, राज कल्पशत करहु तुम ॥ ❀
वचन अचल मम शेश, अंत अमरपुर गमन करु ॥ ६ ॥ ❀

भगवान्ने कहा, हे विभीषण ! सुनो, तुम सौ कल्पतक राज्य करो, मेरा वचन अचल है; अन्तमें देवलोकको जाना ॥ ६ ॥

चौ०-जाम्बवंतसन कह मृदु बानी ❀ रहु द्वापरभर तुम गुणखानी ॥ १ ॥
कृष्ण रूप धरि मिलिहौं तोही ❀ समरभूमि तुम जानेसि मोहीं ॥ २ ॥

जाम्बवन्तसे मीठी वाणीसे कहा कि तुम गुणकी खान हो, द्वापरतक रहो ॥ १ ॥ मैं कृष्णरूप धारण करके तुमसे मिलूंगा और तुम लड़ाईमें मुझे पहिचानना ॥ २ ॥

सबकहँ सब विधि धीरज दीना ❀ आप गमन सरयूतट कीन्हा ॥ ३ ॥
दक्षिण भरत वाम रिपुदमनू ❀ पुरवासी सब निजकुल तरनू ॥ ४ ॥

सबको सब प्रकार धीरज देकर आप सरयू नदीके किनारे गये ॥ ३ ॥ दहिनी ओर भरत बाईं ओर शत्रुघ्न थे और सब नगरवासी और कुटुंबी पीछे चले ॥ ४ ॥

अग्नि बेद गायत्री छन्दा ❀ धरि निजरूप चले सुरवृन्दा ॥ ५ ॥
पीताम्बर पट सुन्दर धारी ❀ जड़ चेतन चर अचर सुखारी ॥ ६ ॥

अग्नि, वेद, गायत्री और छन्द अपना २ रूप धारण करके ब्राह्मणोंके समूहमें चले ॥ ५ ॥ पीताम्बर और सुन्दर वस्त्र धारण करके जड़ चैतन्य चराचर सुखी होकर चले ॥ ६ ॥

अमर रूप धरि सुन्दर आई ❀ जस कछु कीन्ह सो सुनि खगराई ॥७॥
समय जानि तब पवनकुमारा ❀ बोले बचन कृपाआगारा ॥ ८ ॥

देवता सुन्दर स्वरूप धारण कर २ के आये. हे गरुड़ ! जैसा कुछ (भगवान्ने) किया सो सुनो ॥ ७ ॥ तब समय जानकर कृपानिधान भगवान् हनूमान्से बोले ॥ ८ ॥

दो०-चिरंजीव सुत रहहु तुम, जबलगि रवि शशि शेष ॥
तुहिं सेवत मिटिहहिं सकल, दुस्तर कठिन कलेश ॥ ६७ ॥

हे पुत्र ! जबतक सूर्य चन्द्रमा और शेषनाग रहैं तबतक तुम चिरंजीव रहो. जो तुम्हारी सेवा करैगा उसके सब दुस्तर कठिन क्लेश मिटजायँगे ॥ ६७ ॥

चौ०-चतुराननपहँ धर्म सिधाये ❀ सरयूतीर जगतपति आये ॥ १ ॥
चले देव अज भव सनकादी ❀ जो मुनि परम अलौकि अनादी ॥ २ ॥

धर्मराजने ब्रह्माके पास आकर कहा कि भगवान् सरयूके किनारे आगये ॥ १ ॥ ब्रह्मा, महादेव, सनकादि और सब देवता तथा मुनीश्वर जो अत्यंतही अलौकिक और अनादि थे सो चले ॥ २ ॥

कोटिन रथ वाहन विधिनाना ❀ अरुण अकाश न जाय बखाना ॥ ३ ॥
नभपर जयजयजयधुनि होई ❀ पावहिं वर सुर याचहिं जोई ॥ ४ ॥

करोड़ो रथ और अनेक प्रकारके विमानोंसे आकाश लाल हो गया जिसका वर्णन नहीं किया जाता ॥३॥ आकाशमें जय जय जय शब्द होता है, देवता जो वरदान मांगते हैं वही पातेहैं ॥४॥

देखि नाकरथ मग परछाई ❀ जिमि गिरिकृमिनभपंथ उड़ाई ॥ ५ ॥
करि पुर सजग देव तनुधारी ❀ पाइ चतुर्भुज रूप सुखारी ॥ ६ ॥

आकाशके रथोंकी परछांई मार्गमें ऐसी दीखती थी जैसे टीड़ियां आकाशमार्गमें उड़ती हैं ॥५॥ नगरको सावधान कर दिव्य शरीर धारण करके चतुर्भुजी स्वरूप पाकर सुखी हुये ॥ ६ ॥

चढ़ि विमान प्रभु धाम सिधाये ❀ सकल अमरपतिकहँ सकुचाये ॥ ७ ॥
सुमनवृष्टि नभ होत अपारा ❀ होइ नाद विधि वेद उचारा ॥ ८ ॥

और विमानपर चढ़कर भगवान् अपने धामको चलने लगे तौ वैभवको देखकर इन्द्रभी लज्जित हुआ ॥७॥ आकाशसे अपार फूलोंकी वर्षा होने लगी और विधिपूर्वक वेदपाठका शब्द होने लगा ॥ ८ ॥

छं०-उच्चरित वेद प्रसन्न भरत कृपालु हँसि सादर लयो ।
जल परसि कर रिपुदमन सादर पन्नबन राजा भयो ॥
कपि आदि यूथप राखि उर प्रभु सकल निजनिज घर गये ।
सुग्रीव प्रभुपद वंदि बारहिंबार रविमंडल छये ॥ ३० ॥
सुरसहित दिनकरवंशभूषण आय जलआश्रित रहे ।
तेहि समय बोलि अनादि प्रभुजू वचन पावनमय कहे ॥
इक मास रहु तुम नीर यहँ ममपुरी जीव जु आवहीं ।
तेहि सुभग देहु विमान पदनिर्वान जो मम पावहीं ॥ ३१ ॥
अतिप्रीति सरयू सहित मज्जहिं मम चरण रति कर सदा ।
तरि जाय सुरपुर सकल सादर सुनहु मम वाणी मुदा ॥
जे जन्म भरि मम संग कोशलपुर रहे निशिदिन सदा ।
तिन तुरत आनौ धाम मम सादर सुनहु वाणी मुदा ॥३२॥
कहि वचन अंतरध्यान प्रभु जिमि दामिनी घनमें धसै ।
नभ जयति जयजयकार जय जय जयति कर लै सुर लसै ॥

इहिभाँति रघुपतिसह चराचर लै गये निजधामको ।
सो कह्यो उमहिं कृपायतन उर राखि सादर रामको ॥३३॥

वेद उच्चारण करते हुये भरतजी प्रसन्न होकर आदरसमेत हँसते हुये भगवान्में लीन होगये और शत्रुघ्न जलका स्पर्श करके आदर समेत पद्मवनके राजा हुये ! बन्दर आदिकोंके सब सेनापति भगवान्को हृदयमें धारणकर अपने २ घर गये. सुग्रीव वारंवार भगवान्के चरणोंको दंडवत् कर सूर्यमंडलमें लीन होगये ॥ ३० ॥ भगवान् देवताओंसहित आकर जलके सहारेसे रहेथे उस समय ब्रह्मादि देवताओंको बुलाकर भगवान्ने पवित्र वचन कहे कि, एक महीनेतक तुम इस किनारेपर रहो; जो जीव मेरी पुरीमें आवैं उन्हैं सुन्दर विमान दो कि वे मोक्षपदवीको पावें. जो बड़े प्रेमसे सरयू नदीमें स्नान करेंगे वे सदा मेरे चरणोंमें प्रीतिकर आदरसहित तर कर वैकुंठ लोकको जायँगे ॥ ३१ ॥ और प्रसन्न होकर मेरी वाणी सुनो कि जो जन्मभर मेरे संग अयोध्यामें रह रात दिन सदा मेरे साथ रहे हैं उनको आदरसमेत शीघ्र वैकुंठमें लाओ ॥ ३२ ॥ ऐसे वचन कहकर भगवान् ऐसे अंतर्ध्यान होगये जैसे बिजली बादलमें समाजाती है. आकाशमें देवता जयजयकार करने लगे. उस प्रकार रामचन्द्रजी चराचरको साथ लेकर अपने धामको गये. यह कथा महादेवने रामचन्द्रजीको हृदयमें धारणकर पार्वतीसे कही ॥ ३३ ॥

दो०-गिरिजा संतसमागमहिं, सम न लाभ कछु आन ॥
बिनु हरिकृपा न होय सो, गावहिं वेद पुरान ॥ ६८ ॥

हे पार्वती ! संतोंके समागमके समान और कुछ लाभ नहीं. परंतु वह भगवान्की दयाके विना नहीं होता इसे वेद पुराण कहते हैं ॥ ६८ ॥

दो०-इहि विधि सब संवाद सुनि, प्रफुलित गरुडशरीर ॥
बारबार तेहि चरण गहि, जानि दास रघुवीर ॥ ६९ ॥

इस प्रकार सब संवाद सुनतेही गरुड़जीका शरीर पुलकायमान होगया और रामचन्द्रजीका सेवक जानकर उन (कागभुशुंडि) के चरण वारंवार छुये ॥ ६९ ॥

दो०-तासु चरण शिरनाय करि, हृदय राखि रघुवीर ॥
गयउ गरुड वैकुंठ तब, प्रेमसहित मतिधीर ॥ ७० ॥

और मतिधीर गरुड़ प्रेमसहित उनके चरणोंको शिर नवाय हृदयमें रामचन्द्रजीको धारण करके वैकुंठको गये ॥ ७० ॥

इति लवकुशकांडं समाप्तम् ।

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने श्रीगोस्वामितुलसीदासकृते
अविरलभक्तिवरसंपादनो नाम अष्टमः सोपानः समाप्तः ॥ ८ ॥

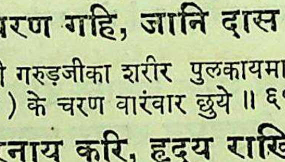

चौ०-भा बड़ शोक राजगृहमाहीं ❀ विविधभाँति रानी बिलखाहीं ॥ १ ॥
तब वसिष्ठ भरतहिं बुलवावा ❀ जो लखि मातु करनि अकुलावा ॥ २ ॥
भूपक्रिया श्रुतिविधि सब कीन्ही ❀ आयसु मुनिकर सिर धर लीन्ही ॥ ३ ॥
पुनि सब साजेउ रामसमाजा ❀ पहुँचे निकट राम रघुराजा ॥ ४ ॥
देखेउ भरतहिं राम सप्रेमा ❀ उठि करि मिलि पूछी शुभ क्षेमा ॥ ५ ॥
भरत छुए पदकंज[1] रामकर ❀ तिलकहेत पुनि कहे वचनवर ॥ ६ ॥
तब रघुपति भरतहिं समुझाये ❀ दै पादुक[2] निज भवन पठाये ॥ ७ ॥

दो०-चित्रकूटतें पुनि चले, असुर विराधहिं मार ॥ ❀
मिले ऋषी शरभंगसन, सहित अनुज अरु दार ॥ ५ ॥ ❀

चौ०-ऋषि अगस्त्यके आश्रम आये ❀ इहिविधि द्वादश वर्ष गँवाये ॥ १ ॥
पुनि प्रभु पंचवटीमहँ छाये ❀ खर दूषण तहँ मार गिराये ॥ २ ॥
अरु दशमुखभगिनीके[3] काना ❀ नाकसहित काटे भगवाना ॥ ३ ॥
चौदह सहस निशाचर मारे ❀ देव मुनी ऋषि भये सुखारे ॥ ४ ॥
यह सुनि रावण गा विकलाई ❀ मारीचहिं छलकुरँग[4] बनाई ॥ ५ ॥
वर्षत्रयोदशकर अनुमाना ❀ माघशुक्ल आठें जग जाना ॥ ६ ॥
दिन मध्याह्न दशानन आई ❀ छलकर हरी जानकी माई ॥ ७ ॥
कपट निरखि रोदति वैदेही[5] ❀ सुमिरि लषण रघुनाथ सनेही ॥ ८ ॥
गृध्रराज लखि विकल जानकिहिं ❀ परमप्रिया करुणानिधानकिहिं ॥ ९ ॥
तुरत आय किन्हों संग्रामा ❀ रावण मार गयो लै वामा[6] ॥ १० ॥
मिले जटायूसन दोउ भाई ❀ तहँ सब सुधि सीताकर पाई ॥ ११ ॥
कर उद्धार जटायुहिं तारा ❀ आगे दैत्य कबन्ध सँहारा ॥ १२ ॥
शबरिहिं गति दै जग यश पावा ❀ इहिविधि पंचम मास बितावा ॥ १३ ॥
पुनि पंपापुर गे रघुनाथा ❀ रोवत सुमिरत सियकर गाथा ॥ १४ ॥
लगा अषाढ़ मिले सुग्रीवा ❀ मारा वाली अतिबलसीवा ॥ १५ ॥
चार मास तहँ कीन्हेउ वासा ❀ ऋष्यमूक गिरि परम प्रकासा ॥ १६ ॥
पुनि सीताकर खोज कराई ❀ जहँ तहँ वानरयूथ पठाई ॥ १७ ॥

दो०-पहुँचे सागरतीर सब, सुमिरत श्रीजगदीश ॥ ❀
संपाती देख्यो तहाँ, डरपेउ भालु कपीश ॥ ६ ॥ ❀

चौ०-भ्रातमरन सुनि खगपतिवीरा ❀ बंधुक्रिया करि जलनिधितीरा[7] ॥ १ ॥
खबर सुनाइ दई सीताकर ❀ दक्षिणदिशि खोजहु तुम जाकर ॥ २ ॥

---

१ चरणकमल. २ खडाउँ. ३ सूर्पनखा. ४ हरिण. ५ सीता. ६ युवा स्त्री. ७ समुद्र.

अगहन द्वादशि पवनकुमारा ❀ सिन्धु लाँघ गे लंकमँझारा ॥ ३ ॥
तिथित्रयोदशीकहँ हनुमाना ❀ जनकसुतासन मिलि बलवाना ॥ ४ ॥
चिह्नमुद्रिका प्रभुकर दीन्ही ❀ सीता हर्पित हुइ कर लीन्ही ॥ ५ ॥
पुनि हनुमान अशोक[1] उजारा ❀ चौदसतिथि अक्षय[2]कहँ मारा ॥ ६ ॥
बिनु प्रयास[3] पुनि लंका जारी ❀ बिकल कियो निशिचरगण भारी ॥ ७ ॥
लंकदाह करि सियपहँ आवा ❀ चूड़ामणि प्रभुके हित लावा ॥ ८ ॥
सिन्धु लाँघ निजकटकहिं आये ❀ समाचार सुनि कपि हरषाये ॥ ९ ॥
मार्गशीर्ष प्रतिपदतिथिमाहीं ❀ चले भालु कपि रघुवरपाहीं ॥ १० ॥
पाँचदिवस मगमाहिं बिताये ❀ गुह[4]तिथिमें किष्किन्धा आये ॥ ११ ॥
शुक्रवार सातेंतिथि आई ❀ सीताकी सुधि प्रभुहिं सुनाई ॥ १२ ॥
सिया विकल सुनि राजिव[5]नयना ❀ भये शोकवश आव न बयना[6] ॥ १३ ॥

दो०-मार्गशीर्षकर अष्टमी, दिन शनिवार बखान ॥ ❀
उतराफाल्गुनि नखतमें, रघुवर कीन्ह पयान[7] ॥ ७ ॥ ❀

चौ०-सातदिवस मगमाहिं गँवाये ❀ पूनौं सिन्धुकिनारे आये ॥ १ ॥
पौषकृष्णकर तीज सुहावन ❀ बास कियो वारिधितट[8] पावन ॥ २ ॥
पौषकृष्णकर चौथ सुहाई ❀ मिल्यो विभीषण प्रभुसों आई ॥ ३ ॥
तिथि आठेंलगि श्रीरघुराई ❀ विनय कीन्ह वारिधिपहँ जाई ॥ ४ ॥
विप्ररूप करि सागर आये ❀ नवमीको यह वचन सुनाये ॥ ५ ॥
हर्षित हो तुम सेतु बँधावहु ❀ सेनसहित प्रभु पारहिं जावहु ॥ ६ ॥
दशमी सेतु बनावन लागे ❀ दशयोजन पाट्यौ भय त्यागे ॥ ७ ॥
हरितिथि विंशति योजन पाटा ❀ द्वादशि तीससिन्धु भरभाटा[9] ॥ ८ ॥
तेरसतिथिकहँ चालिस योजन ❀ रच्यो सेतु नलनील सुयोधन[10] ॥ ९ ॥
दशयोजन आयत विस्तारा ❀ शतयोजन लंबा न सँवारा ॥ १० ॥

दो०-चौदसतें उतर्‍यो कटक, द्वितियावासर अंत ॥ ❀
कपिदल सागरपार भा, भये सुखी भगवंत ॥ ८ ॥ ❀

चौ०-गिरि सुमेरु ऊपर कटकाई[11] ❀ घटाटोप[12] भट[13] परे बनाई ॥ १ ॥
दशमीतिथिकहँ डंक बजाई . ❀ घेरी लंक कीशसमुदाई ॥ २ ॥
पौषशुक्क आवा हरिवासर[14] ❀ शुकसारन इक नाम निशाचर ॥ ३ ॥
गढ़पर चढ़ि कपिसेन दिखाई ❀ कह बल बुद्धि नीति समुझाई ॥ ४ ॥

---

[1] बगीची. [2] रावणका पुत्र. [3] कठिनता. [4] छठ. [5] कमलसे नेत्रवाले अर्थात् राम. [6] वचन. [7] यात्रा. [8] समुद्रका किनारा. [9] पाटा. [10] योद्धा. [11] फौज. [12] झुंड़. [13] योद्धा. [14] द्वादशी.

द्वादशितिथि रघुपति हरषाई ❀ चार भाग करि अनी[1] सजाई ॥ ५ ॥
ता दिन राम साजि धनु सायक ❀ रावणमुकुट काट रघुनायक ॥ ६ ॥
कटक दशाननकी दिन तीनी ❀ भई तयार समर[2]रँगभीनी ॥ ७ ॥
माघकृष्ण प्रतिपद जब आई ❀ अंगद फिरि आये समुझाई ॥ ८ ॥
द्वितियाते नवमीपर्यन्ता ❀ मेघनाद युध कीन्ह अनन्ता[3] ॥ ९ ॥
नागफाँसमहँ प्रभुकहँ घेरेउ ❀ दशमी गरुड़ काटि तिहिं गेरेउ ॥ १० ॥
द्वादशिलगि करि युद्ध कठोरा ❀ धूम्रनेत्र माऱ्यो बलजोरा ॥ ११ ॥

दो०-मावसलगि मरकटन ने, मारे दैत्य अपार ॥ ❀
माघशुक्लकर चौथलगि, करी दशानन रार ॥ ९ ॥ ❀

चौ०-युगलयुद्ध किमि बरणौं जाई ❀ रघुवर सब खल दिये भगाई ॥ १ ॥
तब खिसियाय मूढ मनमाहीं ❀ कुंभकर्ण सोवत गा ताहीं ॥ २ ॥
पाँचै तिथिकहँ अमित[4] उपाई ❀ करि रावण तिहिं दीन्ह जगाई ॥ ३ ॥
चार दिवसलगि मांसअहारा ❀ करि मदपान अतुल भटभारा ॥ ४ ॥
सुनि रावणबच कोपेउ चंडा ❀ आयो समरखेत बलबंडा[5] ॥ ५ ॥
नवमीते चौदसलग भारा ❀ युद्ध कीन्ह पुनि प्रभु तिहिं मारा ॥ ६ ॥
पूनो माघ शुक्ल दुख भारी ❀ शोक ग्रसित तिन्ह करी न रारी[6] ॥ ७ ॥
फागुन प्रथम चार दिन ताहीं ❀ निशिचर पाँच वधे रणमाहीं ॥ ८ ॥
कपट उदधि दुर्मद अरु बाजी ❀ मेघसहित बलवत रण गाजी ॥ ९ ॥
कृष्णापांचै फागुनमासा ❀ कियो नरांतक कर पुनि नासा ॥ १० ॥
आठैं लगि पुनि दैत्य अपारा ❀ मारे रघुपति परमउदारा ॥ ११ ॥
कुंभ निकुंभ बड़े जे पापी ❀ परेउ भूमि तेरसकहँ दाँपी ॥ १२ ॥
बहुरि तीनदिन करि संग्रामा ❀ मकरनेत्रकहँ मारेउ रामा ॥ १३ ॥
पुनि शुक्ला द्वितीयातिथि आई ❀ जमुकदैत्य मारो रघुराई ॥ १४ ॥
फागुनसुदि तेरस जग जामा ❀ मेघनाद माऱ्यो बलवाना ॥ १५ ॥
चौदस लंका शोक जु छायउ ❀ युद्ध करन रावण नहिं आयउ ॥ १६ ॥

दो०-फागुनसुदि पूनों दिवस, लडन चल्यो दशमाथ[8] ॥ ❀
सेनापति मारेउ सकल, आठैंतक रघुनाथ ॥ १० ॥ ❀

चौ०-चैत्र कृष्ण नवमीभइ रारी ❀ रावण शक्ति लषणकहँ मारी ॥ १ ॥
लाय सजीवनि पुनि हनुमाना ❀ लषण सचेत किये भगवाना ॥ २ ॥
दशमी दिवस युद्ध अति कीन्हेउ ❀ रावणकहँ मूर्छित कर दीन्हेउ ॥ ३ ॥
हरिवासर[9]कहँ मातलि आये ❀ दोउ बन्धु रथपर बैठाये ॥ ४ ॥

---

१ सेना २ लड़ाईकी. ३ लक्ष्मणजी. ४ बहुतसे. ५ बडावली. ६ लडाई. ७ घमंडी. ८ रावण. ९ द्वादशी.

रथारूढ़ हुइ कर भगवाना ❀ द्वादशि समर[1] घोर अति ठाना ॥ ५ ॥
अष्टादश दिन भई लराई ❀ युद्ध कियो बहु भाँति अघाई ॥ ६ ॥
चैत्रशुक्ल चौदश रघुराई ❀ रावणवध कीन्हे हरषाई ॥ ७ ॥
हहाकार लंकामें छायउ ❀ देवन मिलि दुंदुभी बजायउ ॥ ८ ॥
दाहकर्म किय भ्रात विभीषण ❀ सुन्दरगति दीन्ही आनँदघन ॥ ९ ॥

दो०–प्रतिपदकहँ वैशाखकी, इन्द्र सुधा[2] वरषाय ॥ ❀
भालु कीश रण जे मरे, तिनकहँ दियो जिवाय ॥ ११ ॥ ❀

चौ०–शुभदिन द्वितियाकर प्रभु जाना ❀ दीन्ह विभीषण राज सुजाना ॥ १ ॥
माधव[3]कृष्ण तीज तिथिमाहीं ❀ जनकसुता आई प्रभुपाहीं ॥ २ ॥
दशदिन चौदह मास लगाई ❀ रही सीय लंकामहँ जाई ॥ ३ ॥
प्रविशीं अग्निचितामहँ सीता ❀ राख्यो पतिव्रतधर्म पुनीता[4] ॥ ४ ॥
निकसि वन्हितें जनकदुलारी ❀ अचरज कपिन्ह हुओ अतिभारी ॥ ५ ॥
राम चौथ चढ़ि पुष्पकयाना ❀ गये अवधकहँ कृपानिधाना ॥ ६ ॥
पांचैं पहुँचे तीरथराजा ❀ राम लषण सिय सहित समाजा ॥ ७ ॥
भरद्वाजके दर्शन कीन्हें ❀ अपने जन्म सफल कर लीन्हें ॥ ८ ॥
बहुरि छठ्ठ तिथि नन्दीग्रामा ❀ भरतमिलन आये श्रीरामा ॥ ९ ॥
इहविध गये चतुर्दश बरखा ❀ आये अवध सकल मन हरखा ॥ १० ॥
माधवमास सप्तमीके दिन ❀ सबसन मिलि निजराज लियो तिन ॥ ११ ॥

दो०–इकतालिसके वर्षमहँ, प्रविशे राम सुजान ॥ ❀
जनकसुताकी आयु जब, वर्ष बतीस प्रमान ॥ १२ ॥ ❀

चौ०–इह अवसरमहँ श्रीभगवाना ❀ बैठे सिंहासन जग जाना ॥ १ ॥
भाद्रमास नवमीतिथि पावन ❀ गर्भवती भइ सीय सुहावन ॥ २ ॥
राम एक दिन दूत पठावा ❀ अपयश तिन्ह इक आय सुनावा ॥ ३ ॥
रजकवचन सुनि मन भइ त्रासा ❀ वामविधाता किय सुखऱ्हासा ॥ ४ ॥
चैत्रद्वादशी शुक्ला आई ❀ कह्यो लषणसन श्रीरघुराई ॥ ५ ॥
जनकसुताकहँ सँग ले जावहु ❀ छोड़ गहर[5] वन तुम फिर आवहु ॥ ६ ॥
वालमीकि तहँ रक्षा कीन्ही ❀ पुत्रीसम सीता रख लीन्ही ॥ ७ ॥
नवमीतिथि अषाढ़की आई ❀ जन्मे लव कुश दोनों भाई ॥ ८ ॥
यहँ अगस्त्य कीन्हेउ उपदेशा ❀ करहु राम हयमेध[6] सुरेशा ॥ ९ ॥
अश्वमेध कीन्हों जब रघुवर ❀ छोड़ो हय इक श्याम सुमनहर ॥ १० ॥
सुन्यो अमित बल जब कुशलवकर ❀ गये राम देखन बालकवर ॥ ११ ॥

---

[1] लड़ाई. [2] अमृत. [3] वैशाख. [4] पवित्र. [5] गहरा. [6] अश्वमेध.

लै आये सँग सीय ललामा ❀ सुत पाये भे पूरणकामा ॥ १२ ॥
वर्ष एकदश सहस प्रमाना ❀ धर्मराज कीन्हेउ भगवाना ॥ १३ ॥

दो०-कुशको दई कुशावती, नगरी कौशलदेश ॥
लवको दयी अवन्तिका, उत्तर उत्तम वेश ॥ १३ ॥
पुनि दीन्ह्यो उपदेश सुत, और प्रजाको भार ॥
सुरपुर गमन सुखेन किय, छोड सकल परिवार ॥ १४ ॥
राम पंच नव चन्द्र मित, ज्येष्ठ शुक्र तिथि काम ॥
रघुवनवास चरित्र यह, पूरण हुओ ललाम ॥ १५ ॥

इति रा० भ० कृतं वनवासतिथिपत्रं संपूर्णम् ॥

अथ

वैराग्यसंदीपिनीप्रारम्भः ॥

॥ दोहा ॥ रामवामदिसि जानकी, लषण दाहिनी ओर ॥ ध्यान सकल कल्यानमय, सुरतरु तुलसी तोर ॥ १ ॥ तुलसी मिटै न मोहतम, किए कोटि गुनग्राम ॥ हृदयकमल फूलै नहीं, बिनु रविकुलरवि राम ॥ २ ॥ सुनत लखत स्रुति नयन बिनु, रसना बिनु रस लेत ॥ वासनासिका बिनु लहै, परसै बिना निकेत ॥ ३ ॥ ॥ सोरठा ॥ अज अद्वैत अनाम, अलखरूप गुनरहित जो ॥ मायापति सोइ राम, दासहेतु नरतनु धरेउ ॥ ४ ॥ ॥ दोहा ॥ तुलसी यह तनु खेत है, मन वच कर्म किसान ॥ पाप पुण्य द्वै बीज हैं, बवै सो लहै निदान ॥५॥ तुलसी यह तनु तवा है, तपत सदा त्रय ताप ॥ सांत होहि जब सांतिपद, पावै रामप्रताप ॥ ६ ॥ तुलसी वेद पुराना मत, पूरन सास्त्र विचार ॥ यह विरागसंदीपिनी, अखिल ज्ञानको सार ॥ ७ ॥ (अथ संतस्वभाववर्णनम्) ॥ दोहा ॥ सरल वरन भाषा सरल, सरल अर्थमय मानि ॥ तुलसी सरले संतजन, ताहि परी पहिंचानि ॥ ८ ॥ ॥ चौपाई ॥ अतिसीतल अतिही सुखदाई । सम दम रामभजन अधिकाई ॥ जड़ जीवनको करै सचेता । जगमाहीं विचरत यहि हेता ॥९॥ ॥ दोहा ॥ तुलसी ऐसे कहुँ कहुँ, धन धरनी बहु संत॥ परकाजे परमारथी, प्रीति लिए निबहंत ॥ १० ॥ की मुख पट दीन्हैं रहै, यथा अर्थ भाषंत ॥ तुलसी या संसारमें, सो विचारयुत संत ॥ ११ ॥ बोलै वचन बिचारिकै, लिन्हें संत सुभाव ॥ तुलसी दुख दुर्वचनके, पंथ देत नहिं पाव ॥ १२ ॥ सत्रु न काहू करि गनै, मित्र गनै नहिं काहि ॥ तुलसी यह मत संतको, बोलै समतामाहिं ॥ १३ ॥ ॥ चौपाई ॥ अति अनन्यगति इंद्रियजीता । जाको हरि बिनु कतहुँ न चीता ॥ मृगतृष्णासम जग जियजानी । तुलसी ताहि संत पहिंचानी ॥ १४ ॥ ॥ दोहा ॥ एक भरोसो एक बल, एक आस बिस्वास ॥ रामरूप स्वातिजलद, चातक तुलसीदास ॥ १५ ॥ सो जन जगत जहाज है, जाके राग न दोष ॥ तुलसी तृष्णा त्यागिकै, गहेउ सील संतोष ॥ १६ ॥

सीलगहनि सबकी सहनि, कहनि हीय मुख राम ॥ तुलसी रहिवौ यहि रहति, संतजननको काम ॥ १७ ॥ निजसंगी निजसम करत, दुर्जन मन दुख दून ॥ मलयाचल हैं संत जन, तुलसी दोषविहून ॥ १८ ॥ कोमल वानी संतकी, सवै अमृतमय आय ॥ तुलसी ताहि कठोरमन, सुनत मौन होइ जाय ॥ १९ ॥ अनुभव सुख उतपति करत, भवभ्रम धरै उठाय ॥ ऐसी वानी संतकी, जो उर भेदै आय ॥ २० ॥ सीतल वानी संतकी, ससिहूते अनुमान ॥ तुलसी कोटि तपनि हरे, जो कोउ धारै कान ॥ २१ ॥ ॥ **चौपाई** ॥ पाप ताप सब सूल नसावै । मोह अंध रवि वचन बहावै ॥ तुलसी ऐसे सद्गुरु साधू । वेदमध्य गुन विदित अगाधू ॥ २२ ॥ ॥ **दोहा** ॥ तन करि मन करि वचन करि, काहू दूषत नाहिं ॥ तुलसी ऐसे संतजन, रामरूप जगमाहिं ॥ २३ ॥ मुख देखत पातक हरै, परसत कर्म बिलाहिं ॥ वचन सुनत मनमोह गत, पूरवभाग मिलाहिं ॥ २४ ॥ अतिकोमल अरु विमल रुचि, मानस में मल नाहिं ॥ तुलसी रत मन हो रहै, अपने साहिबमाहिं ॥ २५ ॥ जाके मनते उठि गई, तिल तिल तृष्णा चाहि ॥ मनसा वाचा कर्मना, तुलसी बंदत ताहि ॥ २६ ॥ कंचन काँचहि सम गनै, कामिनि काठ पषान ॥ तुलसी ऐसे संतजन, पृथिवी ब्रह्म समान ॥२७॥ ॥ **चौपाई** ॥ कंचनको मृतिका करि मानत । कामिनि काठ सिला पहिचानत ॥ तुलसी भूलि गयो रस एहा ॥ ते जन प्रगट रामकी देहा ॥ २८ ॥ ॥ **दोहा** ॥ निष्किंचन इंद्रियदमन, रमन राम इक तार ॥ तुलसी ऐसे संत जन, बिरले या संसार ॥ २९ ॥ अहंबाद मैं तैं नहीं, दुष्टसंग नहीं कोइ ॥ दुखते दुख नहिं ऊपजै, सुखते सुख नहिं होइ ॥ ३० ॥ सम कंचन काँचै गिनत, सत्रु मित्र सम दोइ ॥ तुलसी या संसारमें, कहत संतजन सोइ ॥ ३१ ॥ बिरले बिरले पाइए, मायात्यागी संत ॥ तुलसी कामी कुटिल कलि, केकी काक अनंत ॥ ३२ ॥ मैं तैं मेट्यो मोहतम, उगो आतमाभानु ॥ संतराज सो जानिए, तुलसी या सहिदानु ॥ ३३ ॥

इति श्रीवैराग्यसंदीपिन्यां महामोहविध्वंसिन्यां संतस्वभाववर्णनं नाम प्रथमः प्रकाशः ॥ १ ॥

(अथ संतमहिमावर्णनम्) ॥ **सोरठा** ॥ को बरनै मुख एक, तुलसी महिमा संतकी ॥ जिन्हके विमल विवेक, सेष महेस न कहि सकत ॥ १ ॥ ॥ **दोहा** ॥ महि पत्री करि सिंधु मसि, तरु लेखनी बनाइ ॥ तुलसी गनपतिसों तदपि, महिमा लिखी न जाइ ॥ २ ॥ धन्य धन्य माता पिता, धन्य पुत्र वर सोइ ॥ तुलसी जो रामहिं भजै, जैसेहु कैसेहु होइ ॥ ३ ॥ तुलसी जाके वदनते, धोखेउ निकसत राम ॥ ताके पगकि पगतरी, मेरे तनुको चाम ॥ ४ ॥ तुलसी भक्त स्वपच भलो, भजै रैनि दिन राम ॥ ऊँचो कुल केहि कामको, जहाँ न हरिको नाम ॥ ॥ ५ ॥ अतिऊँचे भूधरनि पर, भुजगनके अस्थान ॥ तुलसी अतिनीचे सुखद, ऊख अन्न अरु पान ॥ ६ ॥ ॥ **चौपाई** ॥ अति अनन्य जो हरिको दासा । रटै नाम निसि दिन प्रति स्वासा ॥ तुलसी तेहि समान नहिं कोई । हम नीके देखा सब लोई ॥ ७ ॥ जदपि साधु सबही विधि हीना । तद्यपि सम ताके न कुलीना ॥ यह दिन रैनि नाम उच्चरैं । वह नित मानअगिनिमें जरैं ॥ ८ ॥ ॥ **दोहा** ॥ दासरता इक नामसों, उभयलोकसुख त्यागि ॥ तुलसी न्यारे है रहैं, दहैं न दुखकी आगि ॥९॥

इति श्रीवैराग्यसंदीपिन्यां महामोहविध्वंसिन्यां संतमहिमावर्णनं नाम द्वितीयः प्रकाशः ॥ २ ॥

(अथ शांतिवर्णनम्) ॥ **दोहा** ॥ रैनिको भूषन इंदु है, दिवसको भूषन भान ॥ दासको भूषण भक्ति है, भक्तिको भूषन ज्ञान ॥ १ ॥ ज्ञानको भूषन ध्यान है, ध्यानको भूषन त्याग ॥ त्यागको भूषन सांतिपद, तुलसी अमल अदाग ॥ २ ॥ ॥ **चौपाई** ॥ अमद अदाग सांतिपद सारा । सकल कलेसन करत प्रहारा ॥ तुलसी उर धारै जो कोई ॥ रहै अनंदसिंधुमहँ सोई ॥ ३ ॥ त्रिविधपापसंभव जो तापा ॥ मिटहि दोष दुख दुसह कलापा ॥ परम सांतिसुख रहै समाई ॥ तहँ उतपात न भेटै आई ॥ ४ ॥ तुलसी ऐसे सीतल संता ॥ सदा रहैं यहिभाँति एकंता ॥ कहा करैं खललोगभुजंगा ॥ कीन्ह्यो गरल सील जो अंगा ॥ ५ ॥ ॥ **दोहा** ॥ अतिसीतल अतिही अमल, सकल कामनाहीन ॥ तुलसी ताहि अतीत गनि, वृत्ति सांति लयलीन ॥ ६ ॥

२२ **त्रिताप**—आध्यात्मिक, आधिभौतिक, आधिदैविक.

२३ **त्रिदेव**—ब्रह्मा, विष्णु, महेश,

२४ **त्रिविध कर्म**—संचित, प्रारब्ध, क्रियमाण.

२५ **त्रिविध श्रोता**—मुक्त, मुमुक्षु, विषयी.

२६ **त्रिविधसमीर**—शीतल, मंद, सुगन्ध.

२७ **तीन अवस्था**—बालक, युवा, वृद्ध.

२८ **तीन ईषणा**—१ लोकबडाई, २ धनराज्यादि, ३ स्त्रीपुत्र.

२९ **दिक्पाल**—पूर्वसे आदिलेकर इन्द्र, यम, वरुण, कुबेर, अग्नि, राक्षस, वायु, शिव.

३० **द्वीप**—जम्बू, शाक, कुश, क्रौंच, पुष्कर, शाल्मली, गोमेद.

३१ **नरक—२८ हैं—**

३२ **नवगुण**—(ब्राह्मणके) १ धृति, २ क्षमा, ३ दम, ४ अस्तेय, ५ शौच, ६ इन्द्रियनिग्रह, ७ ज्ञान, ८ विद्या, ९ सत्य.

३३ **नवखंड**—इलावृत्ति, रम्यक, हिरण्यमय, कुरु, हरि, भारत, केतुमाल, भद्राश्व, किंपुरुष.

३४ **पंचतत्त्व**—पृथ्वी, आप, तेज, वायु आकाश.

३५ **पंचपवन**—प्राण, अपान, उदान, व्यान, समान.

३६ **पंचमहायज्ञ**—वेदपाठ, तर्पण, होम, बलिवैश्वदेव, अतिथिसत्कार.

३७ **पुराण**—१८ हैं ब्रह्मपुराण, पद्मपु. विष्णुपु. शिवपु. श्रीमद्भागवत. नारदपु. मार्कंडेयपु. अग्निपु. भविष्यपु. ब्रह्मवैवर्त्तपु. लिंगपु. वाराहपु. स्कन्दपु. वामनपु. कूर्मपु. मत्स्यपु. गरुडपु. ब्रह्माण्डपु.

३८ **भक्त**—आर्त्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी, विज्ञान, निवास.

३९ **भक्ति**—९ प्रकारकी है—श्रवण, कीर्त्तन, अर्चन, वन्दन, चरणसेवा, स्मरण, आत्मनिवेदन, दासत्व, सख्य.

४० **मद**—जातिमद, कुलमद, युवावस्थामद, रूपमद, विद्यामद, ज्ञानमद, ध्यानमद, धनमद, राज्यमद.

४१ **युग**—सत्ययुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग.

४२ **योनि**—(८४) ९ लाख जलचर, ४ लाख मनुष्य, २७ लाख स्थावर, ११ लाख कृमि, १० लाख पक्षी, २३ लक्ष चौपाये.

४३ **राम**—१ परशुराम, २ रामचन्द्र, ३ बलराम.

४४ लोक—१४ हैं—तल, अतल, वितल, सुतल, तलातल, रसातल, पाताल, भूर्लोक, भुवर्लोक, स्वर्गलोक, महर्लोक, जनलोक, तपोलोक, सत्यलोक.

४५ विद्याचतुर्दश—१ ब्रह्मज्ञान, २ रसायन, ३ वेद, ४ वैद्यक, ५ ज्योतिष, ६ व्याकरण, ७ धनुर्विद्या, ८ जलमें तैरना, ९ संगीत, १० नाटक खेलना, ११ अश्वारोहण, १२ कोकशास्त्र, १३ कृषी, १४ न्याय.

४६ वेद—ऋग्वेद, यजुर्वेद, साम और अथर्वण.

४७ वेदांग—६ हैं—शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष.

४८ शास्त्र—६ हैं—सांख्य, योग, वेदान्त, मीमांसा, न्याय, वैशेषिक.

४९ श्रृंगार—१६ हैं—यथा १ अंगशुचि, २ मज्जन, ३ दिव्यवस्त्र, ४ महावड, ५ केशसंभारना, ६ भाँगमें सिंदूर, ७ ठोडीपरतिल, ८ माथेमें बिन्दी, ९ मेहदी, १० अरगजा लगाना, ११ भूषण, १२ सुगन्ध, १३ मुखराग, १४ दंतराग १५ अधरराग, १६ काजल.

५० षड्रस—छः हैं—कटु, तीखा, अम्ल, मधुर, कषाय, लवण.

५१ सप्तर्षी—वसिष्ठ, अत्रि, कश्यप, विश्वामित्र, भरद्वाज, जमदग्नि, गौतम.

५२ सप्तावरण—१ जल २ पवन, ३ अग्नि, ४ आकाश, ५ अहंकार, ६ महत्तत्त्व, ७ प्रकृति.

अक्षौहिणी सेनाका चक्र.

नाम	रथ	हाथी	घोड़े	प्यादे	जोड़
परिमाण	२१८७०	२१८७०	६५६१०	१०९३५०	२१८७००

ज्ञानमय भजन.

राग विलावल ।

रामचंद्र रघुनायक तुमसौं हौं विनती केहि भाँति करौं ॥
अघ अनेक अवलोकि आपने अनघनाम अनुमानि डरौं ॥
परदुख दुखी सुखी परसुखते संतशील नहिं हृदय धरौं ॥
देखिआनकी विपति परमसुख सुनि संपति विनुआगि जरौं ॥
भक्ति विराग ज्ञान साधन कहि वहुविधि डहँकत लोग फिरौं ॥
शिव सरवस सुखधाम नाम तव बेंचि नरक प्रद उदरभरौं ॥
जानतहूं निजपाप जलधिजिय जलसीकर सम सुनत लरौं ॥
रजसम पर अवगुण सुमेरुकरि गुण गिरि सम रजतैं निदरौं ॥
नाना वेषवनाइ दिवस निशि परवित जेहि तेहि जुगतिहरौं ॥
एकौ पल न कबहुँ अलोलचित हित दै पदसरोज सुमिरौं ॥
जो आचरण विचारहु मेरो कलपकोटिलगि औटिमरौं ॥
तुलसिदासप्रभु कृपाविलोकनि गोपदज्यों भवसिंधु तरौं ॥ १ ॥

अंतिम ज्ञान.

राग झंझौटी.

मन पछतै है अवसर वीते ।   (टेक)
दुर्लभ देह पाइ हरिपद भजु कर्म वचन अरु ही ते ॥
सहसबाहु दशवदन आदि नृप वचे न कालबलीते ।
हम हम करि धन धाम सँवारे अंत चले उठरीते ॥
सुत वनितादि जानि स्वारथ रत न करु नेह सबहीते ।
अन्तहु तोहि तजैंगे पामर तू न तजहि अबहींते ॥
अब नाथहिं अनुरागु जागु जड़ त्याग दुराशा जीते ।
वुझै न काम अग्नि तुलसी कहु विषय भोग बहु घीते ॥
मन पछितै है अवसर वीते ॥ १ ॥

॥ ग्रन्थसमाप्ति ॥

दो०-लसत आगरा नगरवर, रवितनया के तीर ॥
तहँ द्विजकुल संकुल वसत, गोकुल पुरा गँभीर ॥ १ ॥
परम ज्योतिषी वेदविद, गुर्जर विप्र प्रवीन ॥
पूरव मम पुरखा भये, तेजवंत गुनलीन ॥ २ ॥
धरमकरम रति हरि भगत, त्रिकालज्ञ विद्वान ॥
जिनकर राज प्रजानने, कियो अमित सन्मान ॥ ३ ॥
तिहि कुल पुनि पण्डित भये मम पितु बालमुकुन्द ॥
ग्रहन मध्य जिमि दिवसपति, उडुगनमें ज्यों चन्द ॥ ४ ॥
राजकीय कालेजमें, राज जीविका पाय ॥
पण्डित संस्कृत के प्रथम, सोहे सरल सुभाय ॥ ५ ॥
ताप तत्त्व रस शशि समय, पाय पौष पर पक्ष ॥
अनायास दशमी दिवस, गे बैकुंठ प्रतक्ष ॥ ६ ॥
तासु तनय अब एकहौं, यदपि मंदमतिखान ॥
तदपि कृपा तिहि पदनुकी, प्राप्त भयो कछु ज्ञान ॥ ७ ॥

[कुंडलिया]

तिनकी पदवी लहनके लायक हौं न कदापि ॥
श्रीयुत सर ए. टामसन कीनी कृपा तदापि ॥
कीनी कृपा तदापि दयानिधि पर उपकारी ॥
सब विद्या परवीन दीनहितकर दातारी ॥
सब तें गौरव गिनी जिनौं गाहकता गुनकी ॥
कृपापात्र मोहीं जान दई पुनि पदवी उनकी ॥ १ ॥

दो०-पाय पाठशाला करहुँ, कुल पालन व्यवहारु ॥
क्षणभंगुर यह देहके, दिवस बितावहुँ चारु ॥ ८ ॥

॥ **चौपाई** ॥ जो कोइ कोपभरै मुख वैना ॥ सन्मुख हतै गिरासर पैना ॥ तुलसी तऊलेस रिस नाहीं ॥ सो सीतल कहिए जगमाहीं ॥७॥

॥ **दोहा** ॥ सातद्वीप नव खण्डलौं, तीनि लोक जगमाहिं ॥ तुलसी सांतिसमान सुख, अपर दूसरो नाहीं ॥ ८ ॥ ॥ **चौपाई** ॥ जहां सांति सतगुरुकी दई । तहां क्रोधकी जर जरिगई ॥ सकल काम बासना बिलानी ॥ तुलसी यही सांति सहिदानी ॥ ९ ॥ तुलसी सुखद सांतिको सागर। संतन गायो करत उजागर ॥ तामें तन मन रहे समोई । अहं अग्नि नहिं दाहै कोई ॥ १० ॥ ॥ **दोहा** ॥ अहंकारकी अग्निमें, दहत सकल संसार ॥ तुलसी बांचे संतजन, केवलसांति अधार ॥ ११ ॥ महासांति जल परसिकै, सांत भए जन जोय ॥ अहं अग्निते नहिं दहे, कोटि करै जो कोय ॥ १२ ॥ तेज होत तनु तरनिको, अचरज मानत लोइ ॥ तुलसी जो पानी भया, बहुरि न पावक होइ ॥ १३ ॥ जद्यपि सीतल सम सुखद, जगमें जीवनप्रान ॥ तदपि सांति-जल जनि गनो, पावक तेज प्रमान ॥ १४ ॥ ॥ **चौपाई** ॥ जरै बरै अरु खीझि खिझावै । रागद्वेषमहँ जन्म गँवावै ॥ स्वप्नेहु सांति नहीं उन देही । तुलसी जहाँ तहाँ व्रत एही ॥ १५ ॥ ॥ **दोहा** ॥ सोइ पंडित सोइ पारखी, सोई संत सुजान ॥ सोई सूर सचेत सो, सोई सुभट प्रमान ॥ १६ ॥ सोइ ज्ञानी सोई गुनी, जन सोइ दाता ध्यानि ॥ तुलसी जाके चित भई, रागद्वेषकी हानि ॥ १७ ॥ ॥ **चौपाई** ॥ रागद्वेषकी अग्नि बुझानी । काम-क्रोध-वासना नसानी ॥ तुलसी जबहिं सांति गृह आई । तब उरहीउर फिरी दोहाई ॥ १८ ॥ ॥ **दोहा** ॥ फिरी दोहाई रामकी, गे कामादिक भाजि ॥ तुलसी ज्यों रविके उदय, तुरत जात तम लाजि ॥ १९ ॥ यह विरागसंदीपिनी, सुजन सुचित सुनि लेहु ॥ अनुचित वचन विचारिकै, जस सुधारि तस देहु ॥ २० ॥

इति श्रीतुलसीदासविरचितवैराग्यसंदीपिन्यां महामोहविध्वंसिन्यां शांतिवर्णनं नाम तृतीयः प्रकाशः समाप्तः ॥ ३ ॥ इति वैराग्यसंदीपिनी समाप्ता ।

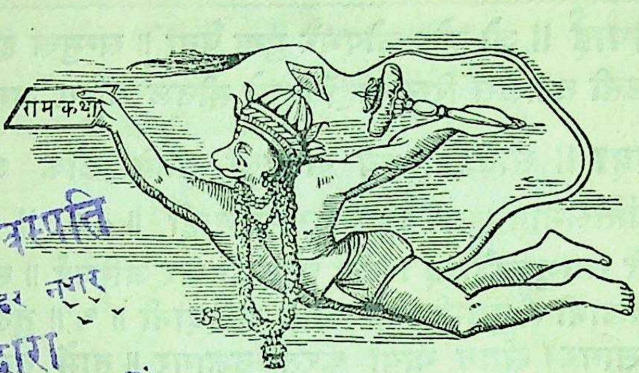

विद्यावाचस्पति
इन्द्रलोक, जवाहर नगर
दिल्ली द्वारा
गुरुकुल कांगड़ी पुस्तकालय को
भेंट

श्रीः

अथ हनूमानचालीसा प्रारंभ।

॥ दोहा ॥ श्रीगुरुचरनसरोज रज, निजमनमुकुरसुधार। वरनौं रघुवरविमलजस, जो दायक फलचार ॥ बुद्धिहीन तनु जानिकै, सुसिरौं पवनकुमार ॥ बलबुधिबिद्या देहु मोहिं, हरहु कलेस बिकार ॥

॥ चौपाई ॥ जयहनुमानज्ञानगुनसागर। जयकपीसतिहुँ लोकउजागर ॥ रामदूत अतुलित बलधामा। अंजनिपुत्र पवनसुत नामा ॥ महावीर विक्रमबजरंगी। कुमतिनिवारसुमतिकेसंगी ॥ कंचनवरनविराजसुबेसा। काननकुंडलकुंचितकेसा ॥ हाथवज्र अरु ध्वजाबिराजै। कांधेमूंजजनेऊसाजै ॥ संकरसुवनकेसरीनंदन ॥ तेजप्रतापमहाजगवंदन ॥ विद्यावानगुनीअतिचातुर ॥ रामकाजकरिबेकोआतुर ॥ प्रभुचरित्रसुनिबेकोरसिया। रामलषनसीतामनबसिया ॥ सूक्ष्मरूपधरिसियहिंदिखावा। बिकटरूपधरिलंकजरावा ॥ भीमरूपधरिअसुरसँहारे। रामचन्द्रकेकाजसँवारे। लाय सजीवनलषन जिवाये। श्रीरघुवीर हर्षि उरलाये ॥ रघुपतिकीन्हीबहुतबड़ाई। तुमममप्रियभरतथसमभाई ॥ सहसबदन तुम्हरोजसगायो। असकहिस्त्रीपतिकण्ठलगायो ॥ सनकादिक ब्रह्मादिमुनीसा ॥ नारदसारदसहसअहीसा ॥ यमकुबेरदिगपालजहाँते। कविकोविदकहिसकै कहाँते ॥ तुमउपकारसुग्रीवहि कीन्हा।

रामस्लिायराजपददीन्हा ॥ तुम्हरोमंत्रविभीषनमाना । लंकेस्वरभये सबजग ज्ञाना ॥ जुगसहस्रजोजनजोभानू । लीलाताहिमधुरफलजानू ॥ प्रभुमुद्रिकामेलि मुखमाहीं । जलधिलाँघिगयेअचरजनाहीं ॥ दुर्गमकाजजगतकेजेते । सुगमअनुग्रहतुम्हरेतेते । रामदुआरेतुमरखवारे । होतनआज्ञाविनपैसारे ॥ सबसुखलहैतुम्हारीसरना । तुमरक्षककाहूकोडरना ॥ अपना तेज सम्हारौ आपै ॥ तीनोलोक हाँकतेकाँपै ॥ भूतपिसाचनिकटनहिंआवे । महावीरजवनामसुनावे ॥ नासैरोगहरैसवपीरा । जपतनिरंतरहनुमतबीरा ॥ संकटसेहनुमान छुड़ावै । मनक्रम बचनध्यानजोलावै ॥ सबपररामतपस्वीराजा । तिनकेकाज सकलतुम साजा ॥ औरमनोरथजोकोइलावै । तासुअमितजीवनफलपावै ॥ चारों जुग परताप तुम्हारा । हैपरसिद्धजगतउजियारा ॥ साधुसंतकेतुम रखवारे । असुरनिकंदनरामदुलारे ॥ अष्टसिद्धिनवनिधिकेदाता । अस वर दीन जानकीमाता ॥ रामरसायनतुम्हरेपासा । सादरतुमरघुपतिकेदासा । तुम्हरेभजनरामकोपावै । जन्मजन्मको दुखविसरावै ॥ अंतकालरघुवरपुरजाई । जहांजन्महरिभक्तकहाई ॥ औरदेवताचित्तन धरई । हनुमतसेयसर्वसुखकरई ॥ संकटहरैमिटैसबपीरा । जोसुमिरै हनुमतबलवीरा । जयजयजयहनुमानगोसाईं । कृपाकरोगुरुदेवकिनाईं ॥ यहसतबारपाठकरजोई । छूटैबँदिमहासुखहोई ॥ जो पढ हनूमान चालीसा । होइसिद्धसाखीगौरीसा ॥ तुलसीदास सदाहरिचेरा । कीजैदासहृदयमहडेरा ॥ ॥ दोहा ॥ पवनतनयसंकटहरन, मंगलमूरतिरूप । रामलषनसीतासहित, हृदयबसोसुरभूप ॥ ॥ ॥

इति श्रीहनूमानचालीसा सम्पूर्ण ॥

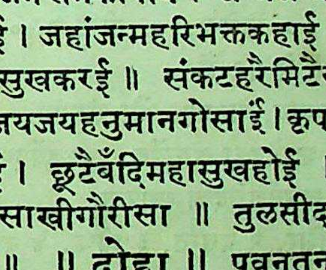

गूढार्थचिन्तामणि कोश.

१ **अग्नित्रय**—१ दक्षिणाग्नि, २ गार्हपत्य, ३ आहवनीय.

२ **अवस्था**—१ जाग्रत्, २ स्वप्न, ३ सुषुप्ति, ४ तुरीय ये चार हैं—

३ **अविद्या**—ईश्वरकी मोहशक्ति.

४ **अष्टसिद्धि**—१ अणिमा, २ महिमा, ३ लघिमा, ४ गरिमा, ५ प्राप्ति, ६ प्राकाम्य, ७ ईशित्व, ८ वशित्व.

५ **आकर**—१ जरायुज, २ अंडज, ३ स्वेदज, ४ उद्भिज्ज ये चार हैं—

६ **आभरण**—१ नूपुर, २ चूडी, ३ हार, ४ कंकण, ५ अँगूठी, ६ बाजूबंद, ७ बेसर, ८ बिरिया, ९ टीका, १० शीशफूल, ११ तागडी, १२ कंठश्री ये १२ हैं.

७ **आश्रम**—ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास.

८ **उपवेद**—चार हैं-१ ऋग्वेदका आयुर्वेद, २ यजुर्वेदका धनुर्वेद, ३ सामवेदका गांधर्व, ४ अथर्वणवेदका स्थापत्य.

९ **ऋतु**—छः हैं-१ शिशिर, २ वसन्त, ३ ग्रीष्म, ४ वर्षा, ५ शरद, ६ हेमन्त.

१० **कला**—६४ हैं.

११ **कल्प**—चार युगोंकी १ चौकडी, और हजार चौकडीका एक कल्प.

१२ **गुण**—सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण.

१३ **गुरु**—तीन हैं-१ माता, २ पिता, ३ आचार्य.

१४ **चतुरंगिणी सेना**—१ हाथी, २ रथ, ३ पैदल, ४ घोडा.

१५ **चतुर्गुण,**—चार हैं-१ साम, २ दाम, ३ दंड, ४ भेद.

१६ **चतुर्युग**—सत्ययुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग.

१७ **चतुर्वर्ग**—चार हैं. १ धर्म, २ अर्थ, ३ काम, ४ मोक्ष.

१८ **चारआश्रम**—१ ब्रह्मचर्य, २ गार्हस्थ्य, ३ वानप्रस्थ, ४ संन्यास.

१९ **चाररिपु**—१ काम, २ क्रोध, ३ लोभ, ४ मोह.

२० **चारवर्ण**—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र.

२१ **त्रिगुण**—सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण.

छन्दअरिल्ल.

मृत्युलोकके मध्य एक मुंबापुरी ॥
मानहुँ मघवावती महीपर दूसरी ॥
उन्नति जाकी देख लजै अलकापुरी ॥
कंचनहू की पुरी लखें लागै बुरी ॥ १ ॥

जहाँ अनेक प्रकार पाठशाला बनीं ॥
पढहिं बाल षट् शास्त्र लहैं उन्नति घनीं ॥
उरदू अरबी आदि अधिक इंगलिसठनी ॥
विद्या बहुत प्रकार जात कोपै गनी ॥ २ ॥

ओषधि अयन अनेक महीपति भवन हैं ॥
यंत्रालय बहुतेक न्याय के सदन हैं ॥
बड़े २ धनवंत गुनी जिहि ठाँ बसैं ॥
सूरवीर साहसी लोग केते लसैं ॥ ३ ॥

करत राज जिहि समय जहाँ विक्टोरिया ॥
बड़े २ महराज बने जिमि पौरिया ॥
जाकौ शासन सकल लोग सिर पर धरैं ॥
सुजन सराहैं सदा नित्त दुर्जन डरैं ॥ ४ ॥

निर्णयसागर यंत्र भवन तिहिठाँ बन्यो ॥
सब यंत्रनमें श्रेष्ठ बुधन जाकों गन्यो ॥
बड़े २ गुनवंत जहाँ नित आवहीं ॥
अधिक अधिक प्रति दिवस सुआदर पावहीं ॥ ५ ॥

छप्पय—ताके अधिपति बड़े योग्य दाता उपकारी ॥
जावजी दादाजी भये द्विज जन हितकारी ॥
पुत्र पौत्र संपदा सरस सब बिधिसों पाई ॥
तदपि तुच्छ सुख समझि जगतसों तजी मिताई ॥
निसिदिवसध्यान हरिको धरत करत आचरन बिमलतन ॥
अधिकार पाय पूरन प्रगट कियो न कछु अभिमानतन ॥ १ ॥

तासु तनय अब तुकाराम जावजी नाम कहि ॥
नीतिनिपुण गुणशीलधाम दातार एक महि ॥

पर उपकार विचार रहत जिनके मन माहीं ॥
दयावंत प्रियसंत सकल विद्या अवगाहीं
सर शस्त्र भक्ति भुवि अब्द में तिनकी अनुमति पाइ कै ॥
भूषण समेत भाषा करी रामायण चित चाइकै ॥ २ ॥

छन्दअरिल्ल.

रामायण यह ग्रन्थ गूढ़ गाथिन भऱ्यो ॥
राम कृपा तें भाषा भूषित मैं कऱ्यो ॥
सादर श्रीहरि चरण समर्पण करत हौं ॥
क्षमहु सुजन जन जानि जो अनुचित धरतुहौं ॥ ८ ॥

दो०-इहिकों सीताराम प्रभु, ह्वै प्रसन्न कर लेहिं ॥
निजपद पद्मनकी भगति, रामेश्वरको देहिं ॥ ९ ॥
तुकारामजी जावजी, पांडुरंगजी भ्रात ॥
सुख संपति संतति लहहु, रहहु निरोगी गात ॥ १० ॥
मंडहु यश मंडल विमल, महिमंडल नवखंड ॥
रामकृपा तें होहु रवि, सम ऐश्वर्य अखंड ॥ ११ ॥
जगत उजागर जावजी, दादाजी गुणवान ॥
तासु विठोबा जावजी, मध्यम पुत्र प्रमान ॥ १२ ॥
भोगहु स्वर्ग महान सुख, धरि निर्मल निजदेह ॥
संतत रहहु प्रसन्नमन, करि श्रीहरिसों नेह ॥ १३ ॥

इति ।

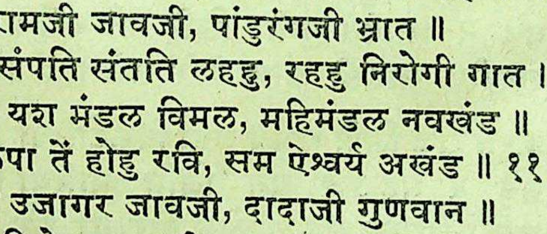STOCK VERIFY 2020 K.V. L